हिन्दी

विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक

श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,

सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस,

तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित।

तृतीय भाग

[इ—कपिरोमा]

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

VOL. III.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, Prāchyavidyāmahārnava,

Siddhānta-vāridhi, Sabda-ratnākara, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia; the late Editor of Bangiya Sāhitya Parishad and Kāyastha Patrikā; author of Castes & Sects of Bengal, Mayurabhanja Archæological Survey Reports and Modern Buddhism; Hony. Archæological Secretary, Indian Research Society; Member of the Philological Committee, Asiatic Society of Bengal; &c. &c. &c.

Printed by R. C. Mitra, at the Visvakosha Press.

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu

9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1919.

हिन्दी विश्वकोष

इ

इ—१ संस्कृत और हिन्दी वर्णमालाका तृतीय स्वर। इकारका उच्चारणस्थान तालु है। संस्कृतव्याकरणके मतसे इसे अट्ठारह प्रकार बोलते हैं। प्रथम ह्रस्व दीर्घ और प्लुत तीन भेद हैं। फिर उनमें प्रत्येक उदात्त, अनुदात्त और स्वरित रहता है। यथा,—१ ह्रस्व उदात्त, २ ह्रस्व अनुदात्त, ३ ह्रस्व स्वरित, ४ दीर्घ उदात्त, ५ दीर्घ अनुदात्त, ६ दीर्घ स्वरित, ७ प्लुत उदात्त, ८ प्लुत अनुदात्त, ९ प्लुत स्वरित। उपरोक्त नौ उच्चारण अनुनासिक और निरनुनासिक होनेसे अट्ठारह रूप धारण करते हैं। इकारके पर्याय यह हैं—सूक्ष्म, शाल्मली, विद्या, चन्द्र, पूषा, सुगुह्यक, सुमित्र, सुन्दर, वीर, कोटर, पद्म, भ्रूमध्य, माधव, तुष्टि, दक्षनेत्र, नासिका, शान्त, कान्त, कामिनी, काम, विघ्नविनायक, नेपाल, भरणी, रुद्र, नित्या, क्लिन्ना, पावका। (वर्णाभिधान) इकार सुगन्धयुक्त, कुसुमसदृश और हरि, ब्रह्मा, शक्ति, परमब्रह्म एवं रुद्रमय है। यही मूर्तिमान् कुण्डली मालूम पड़ता है। (कामधेनुतन्त्र)

(सं० पु०) अस्य विष्णोरपत्यम्, अ-इञ्। २ विष्णुके अपत्य कामदेव। यह रुक्मिणीके गर्भसे उत्पन्न रहे। (हरिवंश ११२ अ०) (अव्य०) अजय्यकम्प्य इदम्, अ-इञ्। ३ खेद। अफसोस। हाय। ४ प्रकोपोक्ति। गुस्सेकी बात। ५ निष्ठुर वाक्य। सख्त बातचीत। ६ दया। रहम। रामराम। ७ निराकरण। दूर। ८ प्रत्यक्ष। आंखके सामने। ९ सन्निधि। नजदीकी। १० दुःखभावन। तकलीफदिही। ११ क्रोध। गुस्सा। १२ विक्रोध। झुंझलाहट। १३ विस्मय। ताज्जुब। १४ सम्बोधन। पुकार। १५ माधव। १६ सूक्ष्मयज्ञ। १७ विद्या। इल्म। १८ दक्षिण लोचन। दाहनी आंख। १९ गन्धर्व। २० पापभक्ष्य। २१ भयातुर।

इंगुरौटी (हिं० स्त्री०) इंगुर रखनेकी डब्बी।

इंगुवा (हिं०) इङ्गुदी देखो।

इंचना (हिं० क्रि०) आकर्षित होना, खिंचना, तनना।

इंटकोहरा (हिं० पु०) ईंटका घर।

इंटाई (हिं० स्त्री०) पक्षिविशेष, किसी किस्मकी पेड़की।

इंडहर (हिं० पु०) भक्ष्यद्रव्यविशेष, किसी किस्मका सालन। उड़द और चनेकी दाल साथ-साथ भिगोकर बारीक-बारीक पीस डालते और लम्बे-लम्बे

टुकड़े उतारते हैं। वह टुकड़े अदहनमें उबाले जाते हैं। अच्छीतरह पक जानेपर टुकड़ेको काटकर छोटा-छोटा बना लेते हैं। अखीरको उन्हें घी या तेलमें तल और सुर्ख़ पड़ जानेसे रसामें छोड़ धीमी आगपर पकाते हैं। इंडहर खानेमें बहुत अच्छा लगता है।

इंडुरी (हिं० स्त्री०) कुण्डली, चक्कर, गुंडरी।

इंडुवा (हिं० पु०) कुण्डल, दायरा, गेंडुरी। यह कपड़ेसे गोल-गोल बनाया और बोझ उठाते समय नीचे लगाया जाता है।

इंदारा (हिं० पु०) कूप, कूवा।

इंदारुन (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी देखो।

इंदुवा, इंडुवा देखो।

इंधरौड़ा (हिं० पु०) इन्धन रखनेका स्थान, जिस जगहपे जलानेकी चीज़ रहे।

इक (हिं०) एक देखो।

इक-आंक (हिं० क्रि० वि०) १ निःसन्देह, अवश्य। २ अनवरत, लगातार।

इकइस, इक्कीस देखो।

इकछत्र राज करना (हिं० क्रि०) विश्वका स्वामित्व रखना, कुलिया बादशाहतका मालिक होना।

इकटक (हिं० वि०) स्थिर, अचल, साकिन, क़ायम।

"इकटक लोचन टरहिं न टारे।" (तुलसी)

इकट्ठा (हिं० वि०) १ एकत्र, मिला हुवा। (क्रि० वि०) २ साथ-साथ मिलकर।

इकड़ाल, एकडाल देखो।

इकतर (हिं०) एकत्र देखो।

इकतरफा (हिं० वि०) एक ओरसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो एक ही तर्फ़को झुका हो। (क्रि० वि०) २ एक ओरसे, दूसरी तर्फ़से तालुक़ छोड़कर।

इकतरा (हिं० पु०) एक दिनके अन्तर आनेवाला ज्वर, अंतरा, जो बुखार एक दिनके फ़र्क़से चढ़ता हो।

इकता (हिं०) एकता देखो।

इकताई (हिं०) एकता देखो।

इकतागा (हिं० वि०) सदृश, अभिन्न, एकसा, एक डोरेमें मिला हुवा।

इकतार, एकतार देखो।

इकतारा (हिं० पु०) १ वाद्यविशेष, एक ही तारसे बजनेवाला बाजा। बांसकी डण्डीके छोरमें एक तोंबीको लगा चमड़ेसे मढ़ देते हैं। चमड़ेपर घोड़िया रहती है। तोंबीके नीचे बांसमें एक तारको बांधते और घोड़ियोंपर चढ़ा ऊपरकी ओर लगी हुयी खूंटीमें लपेटते हैं। इसी खूंटीको चढ़ाने उतारनेसे तार ढीला या कड़ा पड़ता है। तर्जनीके आघातसे तार बजानेपर बोल निकलता है। साधु इसे बजा बजाकर भिक्षा मांगा करते हैं।

२ वस्त्रविशेष, किसी क़िस्मका कपड़ा। यह भारतमें हाथसे बुना जाता है।

इकताला, एकताला देखो।

इकतालीस (हिं० वि०) एकचत्वारिंशत्, चालीस और एक, ४१।

इकतीस (हिं० वि०) १ एकत्रिंशत्, तीस और एक, ३१।

इकत्तीस, इकतीस देखो।

इक़दाम (अ० पु०) १ अपराध करनेकी चेष्टा, क़सूर करनेकी कोशिश। २ सङ्कल्प, क़सद।

इकपेचा (हिं० पु०) एक पगड़ी या दस्तार। इसका प्रचार दिल्ली और आगरेमें अधिक है। इकपेचा मस्तकका आभूषण है।

इकबारगी, एकबारगी देखो।

इक़बाल (अ० पु०) १ अङ्गीकार, मञ्ज़ूरी। २ आदान, रज़ामन्दी। ३ भाग्य, क़िसमत।

इक़बाल-उद्-दौला—अवधके नवाब सादत अली ख़ान्‌के पौत्र। इनका पूरा नाम इक़बाल-उद्-दौला मुहसिन अली ख़ान् रहा। १८३८ ई०के जनवरी मास यह अवधकी नवाबीपर अपना स्वत्व प्रमाणित करने इङ्गलेण्ड गये थे। किन्तु जब किसीने इनकी बात न सुनी, तब इन्होंने तुर्की अरबस्थानमें अपनी बाक़ी ज़िन्दगी भजनभावसे काटनेकी ठानी। 'इक़बाल-फ़िरङ्ग' नामक पुस्तकके यह रचयिता रहे।

इक़बाल् ख़ान्—फ़ीरोज़शाह तुगलकके पौत्र और ज़फ़र ख़ान्‌के पुत्र। १४०० ई०को यह नसरत अली ख़ान्‌का छत्र दिल्लीके सिंहासनपर बैठे थे। किन्तु १४०५

ई०को मूलतानके शासक खिज़र् खान्से जो युद्ध हुआ, उसमें इनका वध किया गया। इनके मरनेपर सुलतान् महमूद शाहने दिल्लीका साम्राज्य पाया था।

इक़बालदावा (अ० पु०) दण्डाज्ञा-ग्रहण, हुक्म मान लेनेकी बात।

इक़बालमन्द (अ० वि०) १ भाग्यशाली, क़िस्मती। २ शुभ, मुबारक, अच्छा।

इक़बालमन्दी (अ० स्त्री०) सौभाग्य, नेकबख़्ती, लहर-बहर।

इक़राम (अ० पु०) १ उपहार, भेंट। २ सम्मान, क़दर, इज़्ज़त।

इक़राम-उद्-दौला—लखनऊ नवाब वाजिद अली शाहके प्रधान मन्त्री। १८७८ ई०को इनकी मृत्यु हुयी थी।

इक़रार (अ० पु०) १ स्वीकार, मञ्ज़ूरी। २ प्रतिज्ञा, वादा। ३ क्रयविक्रय-नियम, बातचीत, ठेका। ४ स्वीकारपत्र, रसीद।

इक़रार करना (हिं० क्रि०) वचन देना, वादा बदना। २ कहना, सुनाना। ३ स्वीकृत होना, मान लेना। ४ नियुक्त करना, लगाना।

इक़रारनामा (अ० पु०) १ निर्धारण, फ़ैसला। २ प्रतिज्ञापत्र, तमस्सुक, टीप।

इक़रारनामा-बन्दोबस्त (अ० पु०) १ शासनपत्र, इन्तज़ामका काग़ज़। २ सरकारके साथ मालगुज़ार और गांवके हिस्सेदारका तमस्सुक।

इक़रारनामा सालिसी (अ० पु०) मध्यस्थ-प्रतिज्ञापत्र, पञ्चायती तमस्सुक।

इक़रारी (अ० वि०) १ सम्मत, राज़ी। २ अनुमोदनकारी, मान लेनेवाला।

इकलड़ा (हिं० वि०) एक गुणविशिष्ट, जो एकही डोरीसे बना हो। यह शब्द 'हार'का विशेषण है।

इकला, अकेला देखो।

इकलाई (हिं० स्त्री०) १ वस्त्रविशेष, किसी क़िस्मका कपड़ा। एक पाटकी बारीक गोटा-किनारी लगी चादरको इकलाई कहते हैं। २ निर्द्वन्द्वता, तनहायी, अकेलापन।

इकलोई (हिं० वि०) एक ही लोई रखनेवाली, जो एकही तवेसे बनी हो। जिस कड़ाहीके पेंदेमें एकही तवा होनेसे जोड़ नहीं लगता, उसका नाम इकलोई पड़ता है।

इकलौता (हिं वि०) एकाकी, अपने मा-बापका अकेला, भाई-बहन न रखनेवाला।

इकल्ला, अकेला देखो।

इकवाई (हिं० स्त्री०) खुपी विशेष, किसी क़िस्मकी निहायी। यह भरन लेसी बनती और एक ही ओर झोर लगती है।

इकसठ (हिं० वि०) एकषष्टि, साठ और एक, ६१।

इकसर (हिं० वि०) १ दूसरा पर्त न रखनेवाला। २ अकेला। (क्रि० वि०) ३ प्रायः, अक्सर।

इकसार (हिं० वि०) १ समतल, हमवार, जो ऊंचा-नीचा न हो। २ समान, हमसर, बराबर। ३ सदृश, मिलता-जुलता।

इकसार करना (हिं० क्रि०) १ समतल बनाना, हमवार निकालना, ऊंचा-नीचा मिटाना। २ खोदना और जोतना।

इकसूत (हिं० वि०) एकत्र, इकट्ठा, मिला हुआ।

इकहत्तर (हिं० वि०) एकसप्तति, सत्तर और एक, ७१।

इकहरा (हिं० वि०) १ केवल, अकेला, एकही टुकड़ा रखनेवाला। २ एक विधानविशिष्ट, एक परदा रखनेवाला।

इकहरी नाग (हिं० स्त्री०) दैराशिक, अरबा-मुतनासिबा।

इकहाई (हिं० क्रि०-वि०) १ साथ-साथ, एकही बारमें, सब मिलकर।

इकाई (हिं० स्त्री०) एकाङ्क, वाहिद, इकम।

इकादशी (हिं०) एकादशी देखो।

इकान्त (हिं०) एकान्त देखो।

इका पण्डित—आगरा दुर्गके एक महाराष्ट्र सूबेदार। शाह आलम और माधवराव सेंधियाके समय यह विद्यमान रहे।

इकेला, अकेला देखो।

इकौठ, इकहा देखो।

इकोत्तर (हिं०) एकोत्तर देखो।

इकौंज (हिं० स्त्री०) काकवन्ध्या, एक ही बार सन्तान उत्पन्न करनेवाली स्त्री, जिस औरतके दूसरी बार बच्चा न निकले। "बांझ भली इकौंज बुरी।" (लोकोक्ति)

इकौता (हिं० पु०) पादपर उत्पन्न होनेवाला स्फोट, पैरका फोड़ा।

इकौना (हिं० पु०) १ निश्चित भय, जो अनाज कटा न हो।

२ युक्तप्रान्तके बहराइच ज़िलेका परगना। फ़ीरोज़ शाह तुग़लक़के समयतक इस प्रान्तपर लूट-मार मचानेवाले भड़इयोंका राज्य रहा। १३७४ ई०को जंवार राजपूत बरियार शाहने उक्त डाकूवोंको दबाया और शान्ति रखनेकी शर्तपर इस प्रान्तका दानपत्र सरकारसे लिखाया था। किन्तु सिपाही विद्रोहमें योग देनेसे यह राज्य ज़ब्त किया और कपूरथलाके महाराज तथा बलरामपुरके नवाबको सौंप दिया गया। १७१६ ई०को राजा प्रतापसिंहके समय इसी परगनेमें जो गंगवाल राज्य निकला, उस-पर आज भी उनके वंशजोंका अधिकार बना है। रापती, सिंधिया और कोहानी प्रधान नदी हैं। क्षेत्र-फल २५८ वर्गमील लगता है। ब्राह्मण, अहीर और कुर्मी अधिक रहते हैं। सीताधाममें शाक्य-बुद्ध-माताकी मूर्ति पुजती है। ३ अपने परगनेका शहर। यह नगर बहराइचसे २२ मील दूर बलरामपुरको जानेवाली सड़कपर अक्षा० २७° ३३′ ११″ उ० तथा द्राघि० ८१° ५८′ ३८″ पू० पर अवस्थित है। सिपाही विद्रोहके समय तक इकौनाके राजावोंका यही वास-स्थान रहा।

इकौसो (हिं० वि०) पृथक्, निराला, अलग।

इक्कट (सं० पु०) ईयते, इ-क्विप्-इत्-सिद्ध-कटो यस्मात् पृषोदरादित्वात् तस्य कः। १ कटसाधन तृण विशेष, चटाई वगैरहके काम आनेवाली घास। २ बदरवृक्ष, बेरका पेड़।

इक्कवाल (सं० पु०) सौभाग्यप्रद योगविशेष। ताजकके मतानुसार लग्नग्रहके केन्द्र (१, ४, ७, १०) अथवा पणफर (२, ५, ८, ११) में पड़ने और दूसरे स्थान (३, ६, ९, १२) खाली रहनेसे इक्कवाल योग आता है।

इक्कस (हिं० स्त्री०) ईर्ष्या, हसद, डाह।

इक्कस करना, इक्कस रखना देखो।

इक्कस रखना (हिं० क्रि०) ईर्ष्या मानना, डाह करना।

इक्का (हिं० वि०) १ केवल, अकेला, दूसरेको साथमें न रखनेवाला। २ अद्वितीय, अनोखा, निराला। (पु०) ३ कानकी बाली। इसमें एक ही मोती पड़ता है। ४ योद्धा विशेष, सिपाही। यह युद्धमें अकेले ही लड़ता है। ५ पशुविशेष, कोई जानवर। यह अपने साथियोंको छोड़ अकेले घूमता है। ६ यान विशेष, एक घोड़ेकी गाड़ी। ७ एक बूटीका ताश। यह सबसे बढ़कर रहता और किसीसे कट नहीं सकता।

इक्का-दुक्का (हिं० वि०) दो-एक, बहुत कम।

इक्कावन, इक्यावन देखो।

इक्कासी, इक्यासी देखो।

इक्की (हिं० स्त्री०) एक बूटीका ताश। इसे इक्का भी कहते हैं।

इक्कीस (हिं० वि०) एकविंशति, दो दहाई और एक एकाई रखनेवाला, बीस और एक, २१।

इक्कीस रहना (हिं० क्रि०) किञ्चित् उत्तम होना, बढ़कर निकलना, जीतना।

इक्केरी—महिसुर राज्यके शिमोगा ज़िलेका गांव। यह अक्षा० १४° ७′ २०″ उ० तथा द्राघि० ७५° ३′ ४५″ पू० पर अवस्थित है। १५६० से १६४० तक इक्केरीमें लिङ्गायत वंशके केलादी राजावोंकी राजधानी रही। उनका सिक्का भी इक्केरी पगोडा कहाता है। १७६३ ई०को हैदर अलीने केलादी राजावोंका राज्य छीन महिसुरमें मिला लिया था। इक्केरीकी दीवारें बहुत लम्बी-चौड़ी और तीन ओरसे घिरी रहीं। बीचमें राजप्रासाद और दुर्ग खड़ा था। नक़ाशी और सोनेके कामकी झलक बहुत अच्छी रही। किन्तु अब कुछ नहीं, केवल अघोरेश्वरका मन्दिर देख पड़ता है।

इक्केड़ (हिं० पु०) दारुखण्डको आघातसे प्रतिद्वन्द्वीकी सीमामें पहुंचाना, गेंदोको मारकर मुक़ाबिलकी हदमें रखना।

इक्यानवे (हिं० वि०) एकनवति, नव्वे और एक, ९१।

इक्यावन (हिं० वि०) एकपञ्चाशत्, पचास और एक, ५१।

इक्यासी (हिं० वि०) एकाशीति, अस्सी और एक, ८१।

इक्षव (सं० पु०) इक्षु साधारण, मामूली नायशकर या गन्ना।

इक्षापिका (सं० स्त्री०) अनिक्षु, किलक, सरकण्डा। यह वृक्ष भी बिलकुल गन्ने-जैसा ही मीठा होता है। बालक इसका कलम बनाते हैं। प्रायः इक्षापिका जलके निकट होती है।

इक्षु (सं० पु०) इष्यते, मधुरत्वात्, इष-क्सुः। वाच्छे इषेः क्सुः। उण् ३।१५७। १ मधुर रसयुक्त स्वनामख्यात वृक्षविशेष, नायशकर, ईख, गन्ना। (Saccharum officinarum) हिन्दुस्थानमें प्रायः इसे ऊख या पौंड़ा कहते हैं। इक्षु शब्दके पर्याय यह हैं,—रसाल, कर्कोटक, वंश, कान्तार, सुकुमारक, असिपत्र, मधुतृण, वृष्य, गुड़तृण, मृत्यु पुष्प, महारस, असिपत्र, कोशकार, इक्षव और पयोधर। रक्तेक्षुको सूक्ष्मपत्र, शोण अथवा लोहित कहते हैं।

इक्षु सुदृढ़ बेंत जैसा डण्ठल रखता और ८से १२ फीट तक बढ़ता है। पुष्पोंकी चूड़ा पक्षतुल्य होती है।

इक्षुमूल शामक और मूत्रवर्धक है। बाजारमें गन्ना खानेके लिये बिकता है। कोयी-कोयी इसके टुकड़े उतार कर रखता है। गन्नेको छीलकर जो आंवले जैसा खण्ड किया, वह गंडेरी कहा और भोजनोपरान्त खानेका मुख्य द्रव्य गिना जाता है। पत्ती पशुके चारेका काम देती है।

इक्षु प्रायः सकल पृथिवीके देशमें उपजता है। भारतवर्षके अनेक स्थानोंमें इसकी कृषि करते हैं। इक्षुके फोकसे कागज़ बनता है। पत्रसे चटायी तैयार कर सकते हैं।

इक्षु बारह प्रकारका होता है,—१ पौण्ड्रक, २ भीरुक, ३ वंशक, ४ शतपोरक, ५ कान्तार, ६ तापसेक्षु ७ काष्ठेक्षु, ८ सूचिपत्रक, ९ नैपाल, १० दीर्घपत्रक, ११ नीलक और १२ कोशकृत्। पौण्ड्रक एवं भीरुक वायु और पित्तको मिटाता है। इसका रस और गुड़ मधुर, अति शीतल तथा बलवर्धक है। कोशकृत्—गुरु, शीतल और रक्त तथा पित्तको नाश करनेवाला निकलता है। कान्तार गुरु, बलकारी, श्लेष्मावर्धक, स्थूलतासम्पादक और रेचक है। दीर्घपत्र अति कठिन होता है। वंशक क्षारलवणाक्त है। शतपोरक कुछ-कुछ कोशकृत्का गुण रखता; किन्तु अल्प उष्ण, लवणाक्त और वायुनाशक ठहरता है। तापसेक्षु मृदु मधुर, श्लेष्मावर्धक, प्रीतिप्रद, रुचिजनक, शक्तिवृद्धिकारक और बलकर है।

सामान्य इक्षु खानेसे रक्तपित्त घटता और बल, शुक्र तथा कफ बढ़ता है। पका लेनेसे यह मधुर, स्निग्ध, गुरु, अतिशय शीतल और मूत्रको परिष्कार करनेवाला है। इक्षुका मध्य तथा मूल मधुर और स्वादु होता है। गांठ, छाल और अग्रभाग लवणाक्त है। मूलके ऊपरका भाग सुमिष्ट और मध्यभाग अति मधुर लगता, फिर क्रमसे आगे नीरस एवं लवणाक्त निकलता है। भोजनसे पहले चूसनेपर इक्षु पित्त और पीछे वायुको बढ़ाता है। रोटी खाते समय लेनेपर यह गुरुपाक हो जाता है। दांतसे छीलकर खानेपर इक्षु क्षुधा बढ़ाता, शुक्रका ह्रास करता और जीवनका हित साधता है। इससे वायु, रक्त और पित्त नष्ट होता है। यह अधिक मिष्ट और प्रीतिजनक है। रक्त और धातु बढ़ता है। रक्तदोष और भ्रम दूर होता है। अल्प परिमाण श्लेष्मावर्धक, मनस्तुष्टिकर एवं मुख-रुचिजनक है। शरीरमें कान्ति और बलकी वृद्धि होती है। खानेमें यह अमृततुल्य निकलता, अथच विदोषनाशक रहता है। यन्त्रसे निकाल कर पीनेपर रस अति शीतल, कोष्ठपरिष्कारक, मुखरुचिकर और गात्रदाहकर है। बासी इक्षुका रस अच्छा नहीं होता। वह अम्ल एवं वातनाशक तथा गुरु, पित्तकर, शोषकर, भेदक और अतिमूत्रकर है। गर्म करनेसे रस स्निग्ध, गुरु, अल्प तीक्ष्ण, वातघ्न और कफ तथा किञ्चित् पित्तनाशक होता है। अतिपाकमें विदाह, पित्तदोष

और रक्तदोष उपजता है। कच्चा इक्षु खानेसे कफ, मांसधार और मेद बढ़ता है। युवा वातहारक, स्वादु, ईषत् तीक्ष्ण और पित्तनाशक है। पका रक्त तथा पित्तको दूर करता, क्षत मिटाता और वीर्य उपजाता है। साधारण इक्षु उत्कृष्ट रसायनकारी, बलकर, रोगनाशक, स्निग्ध, तृप्तिजनक, स्थूलतासम्पादक, शक्तिजनक, आयुष्कर और श्लेष्माकर है। अत्यन्त स्वादु होनेसे यह वात और पित्तको नष्ट करता, किन्तु शक्तिजनक रहते भी अन्तर्विदाह उपजाता है। काला इक्षु शोपापहारक और शोफ तथा व्रणजनक है।

इक्षुविकार अर्थात् ऊखके रससे बनी चीज़को ऌसीका, फाणित, गुड़, खण्ड, मत्स्याण्डी और सिता कहते हैं। यह द्रव्य निर्मल होनेसे लघु, शीतल और वीर्यकर होता है। पक्व और गाढ़ रसका नाम फाणित है। यह धातुवर्धक, वातपित्त एवं भ्रमनाशक और मूत्र तथा वस्तिशोधक होता है। मत्स्याण्डी गाढ़ और अल्प शिरा-युक्त रहती है। यह भेदक, बलकर, लघु, पित्त तथा वातनाशक, धातुवर्धक, पुष्टिकर और रक्तदोषनाशक है। गुड़, खण्ड, फाणित प्रभृति शब्द द्रष्टव्य है।

२ कोकिलाक्ष वृक्ष, तालमखानेका पेड़। ३ नदी विशेष। मत्स्यपुराणमें दो इक्षु नदीका नाम मिलता है। एक जम्बूद्वीप और अपर शाकद्वीपमें बतायी गयी है। जम्बूद्वीपकी इक्षुनदी अक्सस (Oxus) और ऋग्वेदमें 'अक्षु' नामसे प्रसिद्ध है। आर्यावर्त्त देखो।

इक्षुक (सं° पु°) इक्षु प्रकारार्थे कन्। स्थूलादिभ्यः प्रकारवचने कन्। पा ५।४।३। १ एक प्रकार इक्षु, किसी किस्मकी ऊख। २ इक्षुगन्धा, कुस, कांस। ३ भूमिकुष्माण्ड, बिलायीकन्द। ४ काकोली।

इक्षुकण्डिका (सं° स्त्री°) १ इक्षुकाण्ड, मूंज, कांस। २ काकोली। ३ भूमिकुष्माण्ड, बिलायीकन्द।

इक्षुकन्दा (सं° स्त्री°) श्वेतभूमिकुष्माण्ड, सफ़ेद बिलायीकन्द।

इक्षुकाण्ड (सं° पु°) इक्षोः वृक्षस्य काण्डः दण्ड इव काण्डो यस्य, बहुव्री°। १ काशवृक्ष, कुश, कांस। २ मुञ्ज, मूंज। इक्षुः काण्डइव। ३ इक्षुदण्ड, पौंड़ेका डण्ठल।

इक्षुकाश (सं° पु°) काशतृण, कांस, कुस।

इक्षुकीय (सं° त्रि°) इक्षुयुक्त, ऊखसे भरा हुवा।

इक्षुकीया (सं° स्त्री°) इक्षुयुक्त देश, ऊखसे भरी जमीन्, जिस जगहपे पौंड़ा ज्यादा उपजे।

इक्षुकुट्टक (सं° पु°) इक्षून् कुट्टयति, इक्षु-कुट्ट-ण्वुल् ६-तत्। १ इक्षुसंग्राहक, ऊख काटनेका हंसुआ।

इक्षुगण्डिका (सं° स्त्री°) काशतृण, कांस।

इक्षुगन्ध (सं° पु°) इक्षोः गन्धइव गन्धो यस्य, बहुव्री°। १ काशतृण, कांस। २ क्षुद्र गोक्षुरक वृक्ष, छोटा गोखरू।

इक्षुगन्धा (सं° स्त्री°) इक्षु-गन्ध-टाप्। १ कोकिलाक्ष, तालमखाना। २ गोक्षुरक, छोटा गोखरू। ३ क्षीरविदारी, सफ़ेद बिलायीकन्द। ४ वाराहीकन्द, रामशर। ५ शृगाली, मादा गीदड़। ६ श्वेत भूमिकुष्माण्ड, सफ़ेद भुयिंकुम्हड़ा।

इक्षुगन्धिका, इक्षुगन्धा देखो।

इक्षुज (सं° त्रि°) इक्षु-जन-ड। इक्षुसे उत्पन्न, गन्नेसे निकला हुवा। यह शब्द फाणित, मत्स्याण्डी, खण्डक, सिता और सितोपलका विशेषण है।

इक्षुजटा (सं° स्त्री°) इक्षुमूल, ऊखकी जड़।

इक्षुतुल्या (सं° स्त्री°) इक्षोः इक्षुणा वा तुल्या। १ इक्षुविशेष, एक ऊख। २ काशतृण, कांस। ३ यावनाल, ज्वार।

इक्षुदण्ड (सं° पु°) इक्षुः दण्डइव, उप° कर्मधा°। ऊख, सांटा।

इक्षुदर्भा (सं° स्त्री°) इक्षोरिव दर्भो गन्धो यस्याः, बहुव्री°। तृणविशेष, किसी किस्मकी घास। यह सुमधुर, शीतल, अल्प कषाय, कफपित्तहारक, रुचिकर, लघुपाक और तृप्तिजनक होती है। (राजनिघण्टु)

इक्षुदा (सं° स्त्री°) इक्षुं तद्रसास्वादं ददातीति, इक्षु-दा-क। नदीविशेष, एक दरया (Oxus)। यह इन्द्रपर्वतसे निकली है।

इक्षुनेत्र (सं° क्ली°) इक्षोर्नेत्रमिव, ६-तत्। इक्षुग्रन्थि, ऊखकी गांठ।

इक्षुपत्र (सं° पु°) इक्षोः पत्रमिव पत्रं यस्य, बहुव्री°। यावनाल, ज्वार।

इक्षुपत्रक, इक्षुपत्र देखो।

इक्षुपत्रा (सं० स्त्री०) इक्षुपत्र देखो।

इक्षुपत्री (सं० स्त्री०) १ वचा, वच। २ शुक्ल भूमिकुष्माण्ड, सफेद भुयिंकुम्हड़ा।

इक्षुपर्णी, इक्षुपत्री देखो।

इक्षुपाक (सं० पु०) इक्षोः पाकः, ६-तत्। गुड़।

इक्षुपुष्पा (सं० स्त्री०) शरपुङ्खा, सरफोंका।

इक्षुभ (सं० पुं०) इक्षुरिव भूयते इक्षु पृषोदरादित्वात् कः। शरतृण, रामशर।

इक्षुप्रमेह, इक्षुमेह देखो।

इक्षुवालिका (सं० स्त्री०) इक्षोर्वाल इव वालः केशः शीर्षस्थपत्रादिर्यस्याः। १ इक्षुतुल्या, एक ऊख। २ कोकिलाक्ष, तालमखाना। ३ काशतृण, कांस।

इक्षुभक्षिका (सं० स्त्री०) इक्षुरसनिष्कासनयन्त्र, ऊख पेरनेका कोल्हू।

इक्षुमती (सं० स्त्री०) इक्षुस्वादुद्रसो विद्यतेऽस्यां नद्याम्, मतुप्। कुरुक्षेत्रप्रवाहित नदीविशेष। इसी नदीके तीर साङ्काश्या नगरी रही। (रामायण १।७०।३)

इक्षुमद्य (सं० क्ली०) इक्षुविकारज मद्य, ऊखकी रससे बनी शराब। इक्षुरस, मरिच, दद्रु, तथा दधि और अन्नको लवण मिलानेसे यह बनता है। (वैद्यकनिघण्टु)

इक्षुमालवी, इक्षुदा देखो।

इक्षुमालिनी, इक्षुदा देखो।

इक्षुमूल (सं० क्ली०) इक्षोर्मूलं ग्रन्थिरिव मूलं यस्य १ इक्षुविशेष, किसी किस्मकी ऊख। २ इक्षुका मूल, ऊखकी जड़।

इक्षुमेद (सं० पु०) इक्षुवाटिका, ऊखका बाग़।

इक्षुमेह (सं० पु०) इक्षुरसतुल्यो मेहः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। कफज मूत्रदोष, इक्षुरस-जैसे मूत्रका होना। इक्षुमेहमें मूत्रके साथ मधु गिरता है। इक्षुमेहीके मूत्रपर मक्खी बैठती और चींटी चढ़ती है। दिवानिद्रा, व्यायाम तथा आलस्यमें आसक्त रहने और शीतल, स्निग्ध, मधुर एवं मद्य-द्रव्य-युक्त अन्न खानेसे यह रोग लग जाता है। सुश्रुतने इक्षुमेहपर सरस्वतीकषायके सेवनकी व्यवस्था बतायी है। मेह देखो।

इक्षुमेहिन् (सं० त्रि०) इक्षुमेह-युक्त, मिसमिसबीनका मरीज़, जिसके कुल्लक-मुत्तीका रोग रहे।

इक्षुयन्त्र (सं० क्ली०) इक्षोः निष्पीडनं यस्मात्, शाकतत्। ऊखके रसको निकालनेका कोल्हू।

इक्षुयोनि (सं० पु०) इक्षोर्योनिः जन्म यस्मात्। पुण्ड्रेक्षु, पौंढा। २ कादम्बशालि, किसी किस्मकी ऊख।

इक्षुर (सं० पु०) इक्षुं तद्रसं राति, इक्षु-रा-क। १ कोकिलाक्ष, तालमखाना। २ इक्षु, ऊख। ३ गोक्षुरक, गोखुरू। ४ काशतृण, कांस। ५ शरतृण, रामशर। ६ कृष्णेक्षु, काली ऊख।

इक्षुरक, इक्षुर देखो।

इक्षुरबीज (सं० क्ली०) कोकिलाक्ष बीज, तालमखानेका तुख़्म।

इक्षुरस (सं० पु०) इक्षोरस इव रसो यस्य सः। १ काशतृण, कांस। ६-तत्। २ इक्षुका रस, ऊखका निचोड़। ३ गुड़।

इक्षुरसक्काथ (सं० पु०) इक्षुरसस्य क्काथः, ६-तत्। इक्षुगुड़, ऊखका गुड़।

इक्षुरसवल्लरी (सं० त्रि०) क्षीरविदारी, सफ़ेद बिलायीकन्द।

इक्षुरसविकार (सं० पु०) इक्षुगुड़, ऊखका गुड़।

इक्षुरसशुक्त (सं० क्ली०) तैल, कन्द, शाक और फल पड़नेसे खट्टा हो जानेवाला इक्षुरस, सिरका। यह गुरु और अनभिष्यन्दि होता है। (सुश्रुत)

इक्षुरसोद (सं० पु०) इक्षुरसवत् मिष्टमुदकं यस्य, बहुव्री० उदकस्योदादेशश्च। इक्षुसमुद्र, शर्करा सागर। पुराणानुसार लवण, इक्षु, सुरा, सर्पि, दधि, दुग्ध और जल सात वस्तुका समुद्र होता है।

इक्षुरालिका, इक्षुवालिका देखो।

इक्षुला, इक्षुदा देखो।

इक्षुवाटिका (सं० स्त्री०) इक्षुयोनि देखो।

इक्षुवण (सं० क्ली०) इक्षुका वन, ऊखका जङ्गल।

इक्षुवल्लरी, इक्षुवल्ली देखो।

इक्षवल्लरी, इक्षुवल्ली देखो।

इक्षुवल्ली (सं० स्त्री०) इक्षुरिव स्वादु वल्ली वल्लरी वा। कृष्णक्षीरविदारी, काला बिलायीकन्द।

इक्षुवाटिका, इक्षुवाटी देखो।

इक्षुवाटी (सं० स्त्री०) इक्षोर्वाटीव। १ पुण्ड्रक, पौंड़ा। २ करङ्कशालीक्षु, मामूली ऊख।

इक्षुवारि, इक्षुरसोद देखो।

इक्षुविकार (सं० पु०) इक्षोर्विकारः, ६-तत्। गुड़ प्रभृति; शीरा, राब, गुड़, चीनी, मिसरी वग़ैरह।

इक्षुविकृति (सं० स्त्री०) खण्ड, खांड़।

इक्षुविदारिका (सं० स्त्री०) भूमिकुष्माण्ड, भूयिं-कुम्हड़ा।

इक्षुविदारी, इक्षुविदारिका देखो।

इक्षुवेष्ट, इक्षुवेष्टन देखो।

इक्षुवेष्टन (सं० पु०) इक्षोरिव वेष्टनमस्य, बहुव्री०। मुञ्जतृण, मूंज।

इक्षुवेष्टल, इक्षुवेष्टन देखो।

इक्षुशर (सं० पु०) इक्षुरिव शृणाति, इक्षु-शृ-अच्। काशतृण, रामशर।

इक्षुशाकट (सं० क्ली०) इक्षूणां भवनम्, इक्षु-शाकट। इक्षुका क्षेत्र, ऊखका खेत।

इक्षुशाकिन, इक्षुशाकट देखो।

इक्षुसमुद्र, इक्षुरसोद देखो।

इक्षुसार (सं० पु०) इक्षोः सारः, ६-तत्। गुड़।

इक्षूरक (सं० क्ली०) कोकिलाक्षवीज, तालमखा-नेका तुख़्म।

इक्षूरकवीज, इक्षूरक देखो।

इक्ष्वाकु (सं० पु०) १ वैवस्वत मनुके पुत्र। सूर्य-वंशीयोंमें यह अयोध्याके प्रथम नरेश रहे। इनके एक शत पुत्रोंमें विकुक्षि ज्येष्ठ थे। रामचन्द्रजीने इन्हींके कुलमें जन्म लिया। २ वाराणसीके एक राजा। बौद्धोंके महावस्त्ववदान नामक संस्कृत ग्रन्थमें इनके सम्बन्धपर अद्भुत गल्प लिखा है। एकदिन वाराणसी-के राजा सुबन्धुने स्वप्न देखा, कि उनके शयनागारमें इक्षुदण्ड भर गया था। नींद टूटनेपर स्वप्न प्रकृत निकला। क्रमसे सकल इक्षुदण्ड सूखा, केवल एक इक्षु बचा था। सुबन्धुने दैवज्ञोंको बुला इसका कारण पूछा। उन्होंने कहा,—इस इक्षुके मध्यसे उपजने-वाला बालक ही आपका पुत्र होगा। दैवज्ञोंकी बात ठीक निकली। इक्षुको तोड़कर एक बालक उत्पन्न हुवा था। इक्षुके मध्य रहनेसे उसका नाम इक्ष्वाकु पड़ा। सुबन्धुके मरनेपर वही वाराणसीका राजा बना था। इक्ष्वाकुकी प्रधान महिषीका नाम अलिन्दा रहा। उनके ही गर्भसे कुशने जन्म लिया था। (कुशजातक) (सं० स्त्री०) ३ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी।

इक्ष्वाकुकुलज (सं० त्रि०) इक्ष्वाकुके वंशमें उत्पन्न।

इक्ष्वाद (सं० त्रि०) इक्षुभक्षक, ऊख चूसनेवाला।

इक्ष्वारि (सं० पु०) इक्षोः अरिः, ६-तत् वा इक्षुरि-वाऽलति, इक्षु-ऋ-इन्। काशतृण, कांस।

इक्ष्वालि, इक्ष्वालिक देखो।

इक्ष्वालिक (सं० पु०) इक्षुरिव अलति व्याप्नोतीति, इक्षु-ण्वुल्। १ काशतृण, कांस। २ इक्षुविशेष, किसी क़िस्मकी ऊख। ३ वनखड़िका, नरकुल।

इक्ष्वालिका (सं० क्ली०) इक्ष्वालिक देखो।

इकट्ठा (हिं० क्रि० वि०) १ एकत्र होकर, मिलके। २ एककाल, साथ, उसी वक़्त। ३ अधिक, ज़्यादा।

इकट्ठा करना (हिं० क्रि०) १ बटोरना, संगेरना। २ बुला भेजना। ३ जोड़ना, मौजान् लगाना। ४ मिलाना।

इकट्ठा होना (हिं० क्रि०) १ जमना, मिलना, आना। २ भीड़ लगना, गोल बंधना। ३ जुड़ना, शुमारमें आना।

इखद (हिं०) ईखत् देखो।

इख़फ़ा-वारदात (फ़ा० पु०) अगोप्य विषयका गोपन, न छिपाने लायक़ बातका छिपाना।

इख़राज (अ० पु०) १ अपसारण, बेदख़ली, निकाला। २ आहरण, बदर, निकासी। ३ निर्हरण, खिंचाव।

इख़राजात् (अ० पु०) व्यय, ख़र्च। यह शब्द 'इख़-राज'का बहुवचन है।

इख़लास (अ० पु०) १ बैमल्य, पाकीज़गी, सफ़ायी। २ अनुराग, वफ़ादारी, खरापन।

"इख़लासमें इख़लास पैदा होता है।" (लोकोक्ति)

३ प्रणय, आशनापरस्ती, मेहरबानी।

इख़लास ख़ान्—१ सम्राट् शाहजहान्के समयवाले एक सम्भ्रान्त पुरुष। सन् १६३८ ई०को इनकी मृत्यु हुयी। २ सम्राट् औरङ्गजेबकी सेनाके एक सरदार।

१६८८ ई०को इन्होंने अपने पिता तकरीब खान्‌के साथ महाराष्ट्र-नृपति सम्भाजीको कैद किया और तुलापुरमें औरङ्गजेबके सामने ला फांसीपर चढ़ाया था।

इख़लास जोड़ना (हिं० क्रि०) मैत्री उत्पन्न करना, दोस्ती लगाना।

इख़लासमन्द (अ० वि०) १ निर्व्याज, बेरिया, साफ्। २ हितकाम, मुआफ़िक़, मेहरबान। ३ प्रियतम, आशना, हिला-मिला।

इख़लास रखना (हिं० क्रि०) १ निर्व्याज होना, साफ़ रहना। २ प्रीति पालना, प्यार करना।

इख़ु (हिं०) इच देखो।

इख़्तियार (अ० पु०) १ रुचि, पसन्दीदगी, मर्ज़ी। २ इच्छा, खुशी। ३ स्वतन्त्रता, आज़ादी। ४ संयम, ज़ब्त। ५ स्वत्व, हक़। ६ अधिकार, क़ब्ज़ा। ७ नियम, क़ायदा। ८ अधिकारपद, ओहदा।

इख़्तियार अदालत (अ० पु०) न्यायप्रभुत्व, हुक्म।

इख़्तियार अमलमें लाना (हिं० क्रि०) नियम बांधना, क़ायदा लगाना।

इख़्तियार आम (अ० पु०) साधारणाधिकार, मामूली हुकूमत।

इख़्तियार-आमद-रफ़्त (अ० पु०) गमनागमनका स्वत्व, आने-जानेका हक़।

इख़्तियार-इब्तिदायी (अ० पु०) प्रथमाधिकार, औवल हुक्म।

इख़्तियार-उद्-दीन—एक मुसलमान वीर। १२५६-५७ ई०को इन्होंने आक्रमण कर आसामदेशके कामरूप प्रान्तकी राजधानी छीनी। राजा पर्वतपर जा छिपे थे। इन्होंने वहां मसजिद बनवायी और बङ्गाल एवं कामरूपकी शाही पायी। किन्तु १२५७ ई०को हिन्दुवोंने पर्वतसे उतर इख़्तियार-उद्-दीन मलिक उस-बेगको घोर रूपसे आहत किया और समग्र सैन्यको बन्दी बनाया था।

इख़्तियार करना (हिं० क्रि०) १ चुनना, छांटना। २ करनेको ठानना, इरादा बांधना। ३ अपने ऊपर लेना, हिम्मत बांधना, उठाना। ४ अवलम्ब पकड़ना, सहारे बैठना।

इख़्तियार क़ानून (अ० पु०) नियमाधिकार, क़ानून्‌का ज़ोर।

इख़्तियार कामिल (अ० पु०) पूर्णाधिकार, पूरा हुकूमत।

इख़्तियार जायज़ (अ० पु०) स्वत्व, हक़, क़ानूनी क़ुव्वत।

इख़्तियार-तजवीज़-क़ानून (अ० पु०) व्यवस्थापक अधिकार, इजतिहादी ताक़त।

इख़्तियार-तजवीज़-मुक़दमा (अ० पु०) व्यवहाराधिकार, इनसाफ़ी ज़ोर।

इख़्तियार-नाजायज़ (अ० पु०) अधर्म्याधिकार, खिलाफ़-क़ानून हुकूमत।

इख़्तियार नाफ़िज़ करना, इख़्तियार अमलमें लाना देखो।

इख़्तियारपुर—युक्तप्रान्तके रायबरेली ज़िलेका एक नगर। इसे जहांनाबाद भी कहते हैं। इख़्तियारपुर रायबरेली नगरके निकट अक्षा २६° १२′ ५०″ उ० तथा द्राघि० ८१° १६′ १५″ पू० पर अवस्थित है। इस नगरको जहान्-खान्‌ने प्रतिष्ठित किया था। इमारतमें रङ्गमहल, रौज़ा, बाज़ार और सराय प्रधान है। यहां गाढ़ा नामक स्थूल वस्त्र बहुत अच्छा बनता है।

इख़्तियार मिलना (हिं० क्रि०) अधिकार प्राप्त करना, हुकूमत पाना।

इख़्तियार मुतलक़ (अ० पु०) पूर्णाधिकार, पूरी पूरी हुकूमत।

इख़्तियार मुनसिफ़ी, इख़्तियार-तजवीज़-मुक़दमा देखो।

इख़्तियार मुनासिब (अ० पु०) योग्याधिकार, वाजिब हुक्म।

इख़्तियारमें होना (हिं० क्रि०) अपने अधिकारमें रहना, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलना।

इख़्तियार रखना (हिं० क्रि०) १ स्वत्व पाना, हक़ हासिल करना। २ योग्य होना, लायक़ बनना।

इख़्तियार-शौहरी (अ० पु०) पति-विषयक अधिकार, खाविन्दका ज़ोर।

इख़्तियार सरसरी (अ० पु०) संक्षिप्ताधिकार, मुख़तसर हुकूमत।

इख्तियारसे (हिं० क्रि० वि०) स्वेच्छापूर्वक, दिलसे, खुशी-खुशी।

इख्तियारसे बाहर होना (हिं० क्रि०) अपने अधिकारकी सीमाको उल्लङ्घन करना, अपनी हुकूमतकी हद छोड़ना।

इख्तियार हासिल होना, इख्तियार रखना देखो।

इख्तियार होना, इख्तियार रखना देखो।

इख्तिरा (अ० पु०) १ आविष्कार, ईजाद। २ प्रकाशन, फैलाव।

इख्तिलात (अ० पु०) १ मिलन, मेल। २ परिचय, जानपहचान। ३ अनुराग, प्यार।

इख्तिलाफ़ (अ० पु०) १ अन्तर, फ़र्क़। २ विरोध, अनबर्न। ३ स्फोटन, बिगाड़।

इख्तिलाफ़ रखना (हिं० क्रि०) असम्मत होना, फ़र्क़ पड़ना।

इख्तिलाफ़-राय (अ० पु०) सम्मतिभेद, खयालका फ़र्क़।

इख्तिसार (अ० पु०) १ अविस्तार, इजमाल, कोताही। २ संक्षेप, खुलासा।

इख्तिसार करना (हिं० क्रि०) १ संक्षिप्त बनाना, छांटना। २ सार निकालना, खुलासा बनाना। ३ गणित शास्त्रानुसार न्यूनता लाना, उतारना।

इगतपुरी—१ बम्बई प्रान्तके नासिक जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ३७६ वर्गमील है। उत्तर-पश्चिम और दक्षिणकी भूमि प्रस्तरमय, अल्पजल और परिक्षीण है। जलवायु शीतल तथा स्वास्थ्यकर रहता है। २ अपनी तहसीलका शहर। अप्रेल और मई मास युरोपीय यहां हवा खाने आते हैं; ग्रेट-इण्डियन-पेनिन-सुला रेलवेका ष्टेशन बना है। पिम्पी ग्राममें सदर-उद्-दीनकी कब्र देखते हैं।

इगलास—१ युक्तप्रान्तके अलीगढ़ जिलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल २११ वर्गमील है। इसमें हंसगढ़ और गोरायीका परगना लगता है। भूमि समतल और उपजाऊ है। २ अपनी तहसीलका नगर। यह अलीगढ़से १८ मील दूर मथुराको जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। १८५७ ई०को सिपाही विद्रोहके समय जाटोंने इस नगरपर आक्रमण मारा था, किन्तु साफल्य न पाया।

इगारह (हिं० वि०) एकादश, याज़दा, दश औरएक, ११।

इग्गली—महीसुर राज्यका एक प्राचीन स्थान। यहां जो शिलालेख मिला, उसमें सत्यवाक्य-कोंगुनीवर्मा परमानड़ी और यरेयप्पाका नाम तथा सत्यवाक्यके इक्कीसवें वर्षका वृत्तान्त लिखा है।

इग्गुतप्पाकुण्ड—बम्बई प्रान्तके कुर्ग जिलेका एक पहाड़। पश्चिम घाटकी पर्वतश्रेणीमें इग्गुतप्पा कुण्डका शेखर सबसे ऊंचा है। ऊपर दुर्ग और मन्दिर बना है। पर्वतका पार्श्व अभेद्य वनसे परिपूर्ण है।

इग्यारह, इगारह देखो।

इङ्क (अं० स्त्री०=Ink) मसि, रोशनायी, स्याही। स्याही दो तरहकी होती हैं। लिखनेकी कसीस, हड़, माजू प्रभृतिको औंट और छपनेकी राल, तेल, काजल वगैरहको घोंटकर बनती है।

इङ्कटेबुल (अं० पु०=Ink-table) मुद्रण-यन्त्रालयमें मसि लोढ़ेकी चौकी। यह मेज़ दो प्रकारकी होती है, मामूली और बेलनदार। मामूली चिकनी साफ़ और ढली रहती है। बेलनदारमें एक ओर लोहेका लोढ़ा लगता और उसके पीछे स्याही भरनेका नल रहता है। उसमें कुछ पेंच जड़े जाते, जिनको कसनेसे अधिक और ढीला करनेसे अल्प स्याही आती तथा कुट-पिसकर समान बन जाती है। इसमें स्याहीवान्‌को अधिक काम करना नहीं पड़ता।

इङ्कमैन (अं० पु०=Ink-man) यन्त्रालयमें मसी देनेवाला मनुष्य, छापेखानेका स्याहीवान्।

इङ्क-रोलर (अं० पु०=Ink-roller) मसीवर्तिनी, स्याहीका बेलन। छापेखानेमें इसीसे स्याही कागज़पर चढ़ती है। यह तीन प्रकारका है,—१ लकड़ीके बेलनपर ऊनी कपड़ा लगा चमड़ा चढ़ानेसे यह प्रस्तुत और प्रस्तरमय यन्त्रमें व्यवहृत होता है। २ यह लकड़ीके बेलनपर रबर लगानेसे बनता, किन्तु अधिक व्यवहारमें नहीं आता। ३ गराड़ीदार लकड़ीपर गलित गुड़ तथा सरेस लगाकर यह बनता और अधिक काम देता है।

इङ्ग (सं० पु०) इग-क-तुम्। १ अद्भुत, ताज्जुब। २ ज्ञान, इल्म। भावे घञ्। ३. इङ्गित, इशारा। ४ जङ्गम, चलने-फिरनेवाली चीज़। ५ चराचर, दुनिया। (त्रि०) ६ गतिविशिष्ट, हिलने-डुलनेवाला। ८ आश्चर्यमय, अनोखा।

इङ्गन (सं० क्ली०) इगि भावे ल्युट्। १ इङ्गित भाव, दिली मतलब। २ चलन, चलफिर। ३ ज्ञान, समझ। ४ सङ्केत, इशारेबाज़ी। ५ चालन, हेरफेर। ६ व्याकरणानुसार समासान्त पदके एक शब्दको दूसरेसे पृथक् करनेका विधान।

इङ्गनी (हिं० स्त्री०) धातु सम्बन्धी रसायन पदार्थ। (Manganese) पहले लोग इसके सारको लोहेका आकर्षणशील सार समझते थे। किन्तु अन्तको प्रमाणित हुआ, कि इसमें लोहेका नाम नहीं, लवणका लेश रहा। इङ्गनी प्रकृतिमें विस्तृत रूपसे व्याप्त है। सूर्याकाश, समुद्रजल और अनेक धातुद्रव्यमें इसका अंश मिलता है। रसज्ञोंने बड़े यत्नसे तपा और अन्य द्रव्य मिला इसे विशुद्ध बनाया है। इङ्गनी फौलाद तैयार करनेमें काम आती है। मध्यप्रदेश, मध्यभारत, महिसुर राज्य और मन्द्राजमें खानि है। यह कांचका हरितत्व निकालती और उसपर कान्ति चढ़ाती है।

इङ्गल (सं० पु०) १ इङ्गुदीवृक्ष, देशी बादाम।

इङ्गला, (हिं०) इड़ा देखो।

इङ्गलिश (अं० वि०=English.) १ इङ्गलेण्ड देश सम्बन्धी, अंगरेज़ी। (स्त्री०) २ पेन्शन, वज़ीफा। ३ छुट्टी। सिपाही वज़ीफा और छुट्टीको इङ्गलिश कहते हैं। ४ अंगरेज़ोंकी भाषा, जिस ज़बान्में अंगरेज़ बोलें। इङ्गलिश कहनेसे केवल इङ्गलेण्डके प्राचीन अधिवासी एङ्गलोंकी ही भाषाका बोध नहीं होता। यह लाटिन, ग्रीक, हिब्रू, केलटिक, दानिश, साक्सन, फ्रान्सीसी, स्पेनीय, इटलीय, जर्मन्, संस्कृत, हिन्दी, मलय, चीन प्रभृति नाना भाषाके संमिश्रणसे बनी है। संस्कृतकी तरह इङ्गलिशको पूर्ण भाषा कह नहीं सकते। इस भाषामें अनेकानेक शब्दकी सृष्टि हुवा करती है। इङ्गलिशका सम्पूर्ण व्याकरण आज भी प्रस्तुत नहीं।

इस भाषाको चार अंशमें बांटा जाता है,—१म एङ्गलो-साक्सन (४४८ से १०६६ ई०), २य अर्ध साक्सन (१०६६ से १२५०), ३य प्राचीन (१२५० से १५५० ई०) और ४र्थ वर्तमान काल (१५५० से आजतक)। इस समयके मध्य इङ्गलिश भाषामें अनेक रूपान्तर पहुंचा है। पहले यह भाषा जिस प्रकार चलते रही, आज वह बात देख नहीं पड़ती। इङ्गलिश भाषामें २६ अक्षर हैं। २६ अक्षरमें विजातीय शब्दसमूह प्रकृतरूपसे लिखा जा न सकनेपर उच्चारणके लिये नूतन-नूतन वर्ण बना करता है।

इङ्गलिस्थान (हिं० पु०) इङ्गलेण्ड, अंगरेज़ोंके रहनेका देश। इङ्गलेण्ड देखो।

इङ्गलिस्थानी (हिं० वि०) इङ्गलिश, अंगरेज़ी, इङ्गलेण्डसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

इङ्गलेण्ड (अं० स्त्री०=England.) देशविशेष, ग्रेटब्रिटेन द्वीपका दक्षिणांश। इङ्गलेण्डका प्राचीन इतिहास अधिक नहीं मिलता। पुराकालमें टीन लेनेको फिनिकीय जाति इस देशको आते और प्राचीन रोमक ब्रटेनिया नाम बताते थे। ग्रेटब्रिटेन शब्दमें पुरातत्त्व देखो। एङ्गल नामक जातिके वास करनेसे इस स्थानका नाम इङ्गलेण्ड पड़ा है।

एडवार्ड नामक नृपतिने नरमाण्डीके विलियमको इङ्गलेण्डका राज्यभार सौंपा था। किन्तु विलियम जब यहां आये, तब लोगोंके बनाये हेरल्ड नरेशको राज्य करते देख बहुत घबराये। विलियम और हेरल्डमें घोर युद्ध हुआ था। १०६६ ई०को इङ्गलेण्ड नरमानोंके अधिकारमें जा पड़ा। नरमानों और तत्कालीन साक्सनोंके सम्मिलनसे वर्तमान अंगरेज़ी जाति तथा भाषाकी उत्पत्ति हुई है। निम्नलिखित राजावोंने इङ्गलेण्डमें राजत्व किया है,—

एङ्गलो-साक्सनवंश।

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
आलफ्रेड (ओयेसेक्सके राजा)	८७१	३०
एडवार्ड (१म)	९०१	२४
एथेलष्टन (इङ्गलेण्डके राजा)	९२५	१५
एडमण्ड (१म)	९४०	६
एड्रेड	९४६	९

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
एडवी	९५५	४
एडगार	९५९	१६
एडवार्ड (२य)	९७५	३
एथेलरेड	९७८	३८
एडमण्ड (२य)	१०१६	१
दानिश-वंश।		
कानिउट	१०१८	१९
हेरल्ड (१म)	१०३६	३
हार्डिकानिउट	१०३९	२
साक्सन-वंश।		
एडवार्ड (३य)	१०४१	२५
हेरल्ड (२य)	१०६६	
नरमान-वंश।		
विलियम (१म)	१०६६	२१
„ (२य)	१०८७	१३
हेनरी (१म)	११००	२५
ष्टेफेन (ब्लुअ वंशीय)	११३५	१९
प्लाण्टाजेनेट-वंश।		
हेनरी (२य)	११५४	३५
रिचार्ड (१म)	११८९	१०
जन	११९९	१७
हेनरी (३य)	१२१६	५६
एडवार्ड (१म)	१२७२	३५
„ (२य)	१३०७	२०
„ (३य)	१३२७	५०
रिचार्ड (२य)	१३७७	२२
लङ्कास्तार-वंश।		
हेनरी (४र्थ)	१३९९	१४
„ (५म)	१४१३	९
„ (६ष्ठ)	१४२२	३९
इयर्कका-राजवंश।		
एडवार्ड (४र्थ)	१४६१	२२
„ (५म)	१४८३	
रिचार्ड (३य)	१४८३	२

नाम	खृष्टाब्द	वर्ष
टूडरका राजवंश।		
हेनरी (७म)	१४८५	२४
„ (८म)	१५०९	३८
एडवार्ड (६ष्ठ)	१५४७	६
मेरी	१५५३	५
एलिजाबेथ	१५५८	४५
ष्टुयार्ट-वंश।		
जेम्स (१म)	१६०३	२२
चार्लस (१म)	१६२५	२४
साधारणतन्त्र	१६४९	१०
ष्टुयार्ट-वंश।		
चार्लस (२य)	१६६०	२५
जेम्स (२य)	१६८५	३
अरेञ्जका राजवंश।		
विलियम (३य) और मेरी	१६८८	१४
ष्टुयार्ट-वंश।		
आनी	१७०२	१२
ब्रन्सुइक-वंश।		
जर्ज (१म)	१७१४	१३
„ (२य)	१७२७	३३
„ (३य)	१७६०	६०
„ (४र्थ)	१८२०	१२
विलियम (४म)	१८३०	७
विक्टोरिया	१८३७	६४
एडवार्ड (७म)	१९०१	१०
जर्ज (५म)	१९१०	ष्टेन देखो।

इङ्गालकर्म (हिं० पु०) अङ्गारकर्म, आगसे बननेवाला काम। जैनमतमें लोह, स्वर्ण, इष्टक आदिका कर्म जो अग्निसे बनता वही इङ्गालकर्म कहलाता है।

इङ्गिद (सं० पु०) इगि-इलच्। इङ्गुदवृक्ष, जङ्गली बादाम, बादामी।

इङ्गित (सं० क्लो०) इङ्ग-क्त। स्पन्दन, अभिप्राय-मत चेष्टाका प्रकाशन, धड़क, आवाजकी लबदोली, अन्दरूनी हरकत। २ सङ्केत, इशारा। ३ अन्वेषण, तलाश, खोज। ४ चेष्टा, कोशिश। ५ अभिप्राय, मतलब।

इङ्गितकोविद, इङ्गितज्ञ देखो।

इङ्गितज्ञ (सं॰ त्रि॰) इङ्गितं जानातीति, इङ्गित-ज्ञा कर्तरि कः। सङ्केत समझनेवाला, जो इशारेको पहचानता हो।

इङ्ग् (सं॰ पु॰) इङ्गति कम्पते येन, इगि बाहुलकात् उण्। रोग, जिसको हिला देनेवाली बीमारी।

इङ्गुद (सं॰ पु॰) इङ्गुं रोगं द्यति, इङ्गु-दो कर्तरि कः। १ तापसद्रुम, हिंगोटका पेड़। २ ज्योतिष्मती लता, मालकंगनीका दरख़्त। यह मदगन्धि, कटु, उष्ण, फेनिल, लघु, रसायन और क्रमि-वात-कफ-व्रणघ्न होता है। (राजनिघण्टु) इङ्गुद कुष्ठ, भूतग्रह, व्रण, विष एवं क्रमिको खोता और उष्ण, श्वित्र एवं शूलघ्न, तिक्त तथा कटु होता है। (भावप्रकाश) इसका पुष्प मधुर, स्निग्ध, उष्ण तथा तिक्त लगता और उसके सेवनसे वात एवं कफ भगता है। (कैयदेवनिघण्टु) फल स्निग्ध, उष्ण, तिक्त, मधुर और वातश्लेष्मघ्न है। (सुश्रुत)

इङ्गुदी (सं॰ स्त्री॰) इङ्गुद देखो।

इङ्गुदीचार (सं॰ पु॰) इङ्गुद वृक्षका चार, हिंगोटका नमक।

इङ्गुदीतैल (सं॰ क्ली॰) इङ्गुदी-फलोत्थ तैल, हिंगोटका तेल। यह स्निग्ध, मधुर, पित्तघ्न, शीतल, बल्य, कान्तिद, केश्य और केशवर्धन होता है। (राजनिघण्टु) पहले मुनि लोग प्रस्तरादिसे तोड़ फलका तैल व्यवहार करते थे।

इङ्गुर, ईंगुर देखो।

इङ्गुल, इङ्गुद देखो।

इङ्गुली (सं॰ स्त्री॰) इङ्गुद देखो।

इङ्ग्य (सं॰ त्रि॰) इगि-यत्। गमनयोग्य, चल सकनेवाला। प्रातिशाख्यमें इङ्ग्य उस शब्द अथवा समासान्त पदके उस अंशके लिये आता, जो किसी व्याकरणसम्बन्धी कार्यको अपने पूर्व भागसे पृथक् किया जा सकता है। पदपाठमें इङ्ग्य शब्द अवग्रहसे विभक्त होता है।

इङ्ग्रेज (सं॰ पु॰) इङ्गलैण्ड देशजात लोक सकल, अंगरेज, इङ्गलिस्तानमें पैदा होनेवाला शख़्स।

"पूर्णाख्यावे नवशतं षडशीतिः प्रकीर्तिता।
फिरङ्गभाषया मन्त्रास्तेषां संसाधनात् कलौ॥
अधिपा मण्डलानाञ्च संग्रामेष्वपराजिताः।
इङ्ग्रेजा नव षट् पञ्च लण्डुजाश्चापि भाविनः॥" (मेरुतन्त्र)

इचक—हजारीबाग जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २४° ५′ २४″ उ॰ और द्राघि॰ ८५° २८′ २३″ पू॰पर अवस्थित है। इसमें एक गढ़ या किला बना, जिसमें बहुत दिन तक रामगढ़के राजाका परिवार रहा है। स्थान विचित्र है।

इचकना (हिं॰ क्रि॰) क्रोधसे दांत दिखाना, खीस काढ़ना।

इचकिल (सं॰ पु॰) तड़ाग, तालाब, चहला।

इचावर—मध्यभारतके भूपाल राज्यका एक परगना और शहर। यह एक फ्रान्सीसी महिलाको जागीरमें मिला था। वार्षिक आय प्रायः पौन लाख है। कुछ ईसायी भी इचावरमें रहते हैं।

इचौली—युक्तप्रान्तके बाराबङ्की जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° ५८′ उ॰ और द्राघि ८१° ३७′ पू॰पर बाराबङ्की नगरसे साढ़े बारह कोस पूर्व-उत्तर अवस्थित है। महमूद गजनवीने भर-सरदार भगा इचौली नगर अपने सेनापतियोंको जागीरमें दे दिया था। उन्होंने भरोंका किला तोड़ा और अपने अनुयायियोंका दल जोड़ा। आसफ-उद्दौलाके प्रधान मन्त्री महाराज टिकाइतरायने इसी नगरमें जन्म लिया था। उनका बनवाया पक्का तड़ाग अभी विद्यमान है। पुराने जागीरदारोंका अधिकार उठा नहीं।

इच्छक (सं॰ पु॰) इच्छा अस्ति अस्मिन्निति, मत्वर्थीय अच् ततः कप् स्वार्थे कन् वा। १ जम्बीर वृक्ष, तुरञ्जका दरख़्त, बिजौरेका पेड़। २ इच्छायुक्त व्यक्ति, चाहनेवाला शख़्स। ३ प्रश्न, सवाल। (त्रि॰) ४ अभिलाषी, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छत् (सं॰ त्रि॰) इच्छायुक्त, ख़्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छता (हिं॰ स्त्री॰) अभिलाष, ख़्वाहिश, चाह।

इच्छत्व (सं॰ क्ली॰) इच्छता देखो।

इच्छना (हिं॰ क्रि॰) इच्छा रखना, ख़्वाहिश करना, चाहना।

इच्छा (सं॰ स्त्री॰) इष्-भावे श-टाप्। १ मनका

धर्म, दिमका ज्ञाविता। २ वाञ्छा, ख्वाहिश, चाह। ३ स्पृहा, लालच। ४ उत्साह, हौसला। सत् और असत् भेदसे इच्छा दो प्रकार होती है। दानध्याना-दिकी सत् और मद्यपान चौर्यादिकी इच्छा असत् है। आत्मासे इच्छा, इच्छासे कृति, कृतिसे चेष्टा और चेष्टासे क्रिया निकलती है। (न्यायसिद्धान्त)

इच्छाकृत (सं० त्रि०) इच्छया कृतम्, ३-तत्। अभि-लाषसे किया हुआ, जो ख्वाहिशसे किया गया हो।

इच्छादान (सं० क्ली०) अभिलाषोपहार, ख्वाहिशकी बख्शिश, मुंहमांगी या मनमानी चीजका देना।

इच्छानिमित्तक (सं० त्रि०) इच्छा इव निमित्तं यस्य, बहुव्री०। अभिलाषके कारण होनेवाला, जो ख्वाहिश-की सबब हो। मनुष्य अपनी इच्छाके निमित्त हो चोर या साधु बन जाता है।

इच्छानिवृत्ति (सं० स्त्री०) इच्छायाः निवृत्तिः, ६-तत्। वाञ्छाका दमन, ख्वाहिशका दबना, चाहका दबाव। इच्छानिवृत्तिसे ही प्रकृत आनन्द आता है।

इच्छानुगत (सं० त्रि०) इच्छाया अनुगतम्, ६-तत्। स्वतन्त्र, आजाद, मनमाना, ख्वाहिशके मुवाफ़िक़ रहनेवाला।

इच्छानुरूप (सं० त्रि०) इच्छाया वा इच्छया अनु-रूपम्, ६-तत् वा ३-तत्। इच्छामत यथासाध्य, मर्जीके मुवाफ़िक़।

इच्छानुसारिणी क्रियाशक्ति (सं० स्त्री०) अभिलाषके अनुरूप कार्य करनेका बल, मर्जीके मुवाफ़िक़ काम करनेकी ताक़त। जैनशास्त्रके मतानुसार यह शक्ति योगसे प्राप्त होती है। योगी अपनी इच्छाके अनुसार विना कारण कार्यसम्पादन कर सकता है। मट्टी न रहते भी घड़ा बनता और बीज न पड़ते भी पेड़ उगता है।

इच्छान्वित (सं० त्रि०) इच्छायुक्त, ख्वाहिशमन्द, चाहनेवाला।

इच्छाफल (सं० क्ली०) इच्छायाः फलम्, ६-तत्। इच्छाका परिणाम या उद्देश्य, ख्वाहिशका नतीजा या मक़सद। गणितमें प्रश्नकी उपपत्तिको इच्छाफल कहते हैं।

इच्छावत् इच्छान्वित देखो।

इच्छाभेदीरस (सं० पु०) भेदक रस विशेष, जुलाबकी एक दवा। टङ्कण, पारद, मरिच तथा गन्धक बराबर, विश्वा द्विगुण और जयपालचूर्ण नवगुण डालनेसे इच्छाभेदी रस बनता है। एक गुञ्जाके बराबर यह रस खानेसे रेचन होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इच्छाभेदीगुड़िका (सं० स्त्री०) भेदक रसभेद, जुलाबकी दवा। पारद, गन्धक, सोहागा तथा पिप्पली समान एवं सबके बराबर जयपालचूर्ण मिलानेसे यह गोली बनती और शीतल जलके साथ खानेसे खासा दस्त लाती है। किन्तु उष्ण जलके साथ इच्छाभेदीगुड़िका सेवन करनेसे दस्त बन्द हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इच्छाभोजन (सं० क्ली०) १ इच्छानुरूप अदन, मर्जी-के मुवाफ़िक़ खवायी। २ इच्छानुरूप खाद्य, मर्जीके मुवाफ़िक़, खानेकी चीज।

इच्छावती (सं० स्त्री०) इच्छा विद्यतेऽस्याः, इच्छा-मतुप् मस्य वः। कामुकी, दौलत वग़ैरहकी ख्वाहिश रखनेवाली औरत।

इच्छावसु (सं० पु०) इच्छया एव वसु धनोत्पत्ति-र्यस्य, बहुव्री०। कुवेर।

इच्छासम्पद् (सं० स्त्री०) वाञ्छासिद्धि, ख्वाहिशकी तहसील

इच्छित (सं० त्रि०) इच्छा अस्य जाता, इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। वाञ्छित, कामना किया हुआ, जो चाहा गया हो।

इच्छु (सं० त्रि०) इच्छतीति, इष-उ निपातनम्। बिन्दुरिच्छुः। पा ३।२।१६८। १ इच्छाशील, ख्वाहिशमन्द, चाहनेवाला। (पुं० पु०) २ इक्षु, ऊख।

इच्छुक (सं० त्रि०) इच्छु स्वार्थे कन्। १ इच्छा-शील, ख्वाहिशमन्द। (पु०) २ मातुलुङ्ग वृक्ष, बिजौरे नीबूका पेड़।

इच्छुरस (पुं० पु०) इक्षुरस, ऊखका अर्क।

इछाखादा—बङ्गाल प्रान्तके यशोर जिलेका एक ग्राम। यह मागुरासे पश्चिम दो कोस पड़ता है। पहले नवाब की यहां छोटीसी छावनी रही। आजकल इछाखादेमें सड़ककी बग़ल बाजार लगता और गुड़, आलू तथा अनवास वग़ैरह बिकता है।

इच्छापुर (इच्छापुर)—१ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १९° ६´ ४०´´ उ० और द्राघि० ८४° ४४´ १०´´ पू० बरहामपुरसे आठ कोस दक्षिण-पश्चिम बड़ी सड़कपर अवस्थित है। नगरकी भूमिका क्षेत्रफल ३७२० एकर है। तीन कोस दक्षिण-पश्चिम बोदागिरि (बौद्धगिरि) पर्वत विद्यमान है। पहले यहां मुसलमानी नायब रहते थे। २ बङ्गाल प्रान्तके चौबीस-परगने जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° २६´ उ० और द्राघि० ७८° २२´ पू०पर अवस्थित है। इस नगरमें सरकारी युद्धास्त्र-निर्माणशाला बनी है। कलकत्तेसे इष्टर्न बङ्गाल रेलवेका इच्छापुर ष्टेसन पौने नौ कोस पड़ता है।

इच्छामती—१ बङ्गाल प्रान्तके पाबना जिलेकी एक नदी। यह पद्मा वा गङ्गाकी शाखा लगती और पाबना शहरसे सात मील दक्षिण-पूर्व दोगाछी ग्रामके पास बहती है। पाबना शहर पहुंच कर इच्छामती बड़ाल नदी सङ्गमके नीचे हुड़ासागरमें जा गिरती है। यह बत्तीस मील लम्बी है। वर्षाऋतुमें इच्छामती प्रशस्त एवं सुन्दर देख पड़ती, किन्तु आठ मास सूखी ही-जैसी रहती है।

२ बङ्गाल प्रान्तके नदीया जिलेकी एक नदी। यह माथाभंगा नदीकी शाखा है। छण्यागञ्जसे निकल नदीया जिलेमें बहती हुयी, जब इच्छामती चौबीसपरगना जिले आती, तब यमुना नाम पाती है। नदी बहुत गहरी है। बारहो महीने व्यापारके बड़े-बड़े नौका आ-जा सकते हैं।

इजतिनाब (अ० पु०) १ त्याग, वर्जन, परहेज, बचावा। २ स्वार्थत्याग, इनहिराफ़ नाइं। ३ व्रत, फ़ाका। ४ संयम, परहेजगारी। ५ वैराग्य, दरवेशी।

इजपुर—गुजरात प्रान्त महीकण्ठा-जिलेका अन्तर्गत एक राज्य। वार्षिक आय प्रायः छः हज़ार रुपया है। बड़ोदेके गायकवाड़की चौथी ढायी सौ रुपया वार्षिक कर देना पड़ता है। इजपुर राज्य सप्तम श्रेणीमें परिगणित है।

इजमाल (अ० पु०) १ संक्षिप्त वर्णन, मुख़्तसर बयान, संक्षेप, निचोड़। २ संयुक्ताधिकार, मिला हुआ क़ब्ज़ा।

इजमाली (अ० वि०) १ परिमित, सारभूत, मुख़्तसर, खुलासा। २ संयुक्ताधिकार-युक्त, जो कयी लोगोंके क़ब्ज़ेमें हो।

इजरा (हिं० स्त्री०) भूमिविशेष, कोई जमीन्। जो भूमि जोतने-बोनेसे बिगड़ और कृषिके योग्य बनानेको परती पड़ जाती वही इजरा कहलाती है।

इजराय (अ० पु०) १ प्रचार-प्रतिपादन, गर्दिश देनेका काम। २ निर्गम, निःसरण, बरामद, निकास।

इजलाफ़ (अ० पु०) नीचलोक, कमीने। यह शब्द 'जल्फ़'का बहुवचन है।

इजलास (अ० स्त्री०) १ उपवेशन, बैठक। २ न्यायालय, अदालत, कचहरी।

इजलास करना (हिं० क्रि०) सभापति बनना, न्यायालयमें बैठना, कचहरी लगाना, हुकूमत चलाना।

इजलासमें (हिं० क्रि० वि०) न्यायालयके मध्य, बर-सर-इजलास, कचहरीमें बैठे-बैठे।

इज़हार (अ० पु०) १ निवेदन, बयान्। २ समाचार, आगाही, जतावा। ३ साक्ष्य, गवाही।

इज़हार करना (हिं० क्रि०) १ निवेदन सुनाना, अर्ज़ लगाना। २ प्रकाशमें लाना, बताना। ३ प्रकाश्य रूपसे कहना, देखाना। ४ वर्णन निकालना, बयान् देना।

इज़हार-क़ानूनी (अ० पु०) अदालती बयान्, न्यायालयमें दिया जानेवाला साक्ष्य।

इज़हार ज़बानी (अ० पु०) वाचिक साक्ष्य, तक़रीरी गवाही, जो बात लिखी न गयी हो।

इज़हार तहरीरी (अ० पु०) लिखित साक्ष्य, क़लमी बयान्, जो बात लिखी गयी हो।

इज़हार देना (हिं० क्रि०) वर्णन करना, शहादत सुनाना।

इज़हारनवीस (अ० पु०) साक्ष्यलेखक, गवाही लिखनेवाला शख़्स।

इज़हारनामा (अ० पु०) विज्ञापन, साक्ष्यपत्र, इत्तिलानामा, एलान।

इज़हारनामा तहरीरी (अ० पु०) लिखित साक्ष्यपत्र, क़लमी एलान, लिखी हुयी गवाहीका कागज़।

इज़हार लादावी (अ० पु०) स्वत्वप्रतिपादन-निषेध, मुतालबेका इनकार।

इज़हार लेना (हिं० क्रि०) साक्ष्यग्रहण करना, गवाह जाँचना।

इज़हारसलामी (अ० पु०) साक्ष्यलेखकको दिया जानेवाला अन्याय्य पारितोषिक, नाजायज़ तौरपर इज़हार नवीसको दिया जानेवाला मेहनताना।

इजाज़त (अ० स्त्री०) १ अनुज्ञा, परवानगी। २ आज्ञा, रज़ामन्दी। ३ प्रत्यादेश, रज़ा, विदा। ४ अनुमतिपत्र, हुक्मनामा, परवाना।

इजाज़तख़्वाह (अ० पु०) याचक, निवेदक, सायल, अर्ज़ी देनेवाला।

इजाज़त चाहना (हिं० क्रि०) जानेके लिये आज्ञा मांगना, रवाना होनेको छुट्टी मिलनेकी दरख़्वास्त करना।

इजाज़त देना (हिं० क्रि०) १ आज्ञा करना, हुक्म निकालना। २ अनुमति प्रदान करना, छुट्टी बख़्शना। ३ गमनार्थ अनुमोदन करना, जानेके लिये छुट्टी बख़्शना। ४ स्वीकार करना, मान लेना। ५ अधिकार प्रदान करना, मुख़्तार बनाना।

इजाज़तनामा (अ० पु०) आज्ञापत्र, हुक्मनामा।

इजाज़त-फ़रोख़्त (अ० पु०) विक्रय करनेकी अनुमति, बेचनेका हुक्म।

इजाज़त मिलना (हिं० क्रि०) आज्ञा प्राप्त करना, हुक्म पाना।

इजाज़त वापस लेना (हिं० क्रि०) अनुज्ञा फेरना, हुक्म लौटाना।

इज़ाफ़ा (अ० पु०) वृद्धि, बढ़ती।

इज़ार (फ़ा० स्त्री०) जङ्घात्राण, पायजामा, सुथना।

"सूखी मूछें टांगें फटी इजार।
अक़लमें बुक़रात अपनी आगार॥" (लोकोक्ति)

इज़ारबन्द (फ़ा० पु०) जङ्घात्राणका गुण, नारा, पायजामेकी डोरी।

इज़ारबन्दका ढीला (हिं० वि०) कामासक्त, नफ़्सपरस्त, मस्त। (स्त्री०) इज़ारबन्दकी ढीली।

इज़ारबन्द न खुलना (हिं० क्रि०) कामासक्तिसे दूर रहना, लंगोटा सच्चा रखना।

इज़ारबन्द पे हाथ डालना (हिं० क्रि०) जङ्घात्राणका गुण पकड़ना, नाड़ा खोलना।

इज़ारबन्दी रिश्ता (फ़ा० पु०) खीसरहा, लहँगेका लगाव।

इजारा (अ० पु०) १ नियत धनपर बेचा या उठाया हुआ स्वाधिकार, मुक़र्रर क़ीमतपर फ़रोख़्त किया या किराये दिया हुआ हक़। २ पट्टा, ठेकेपर ली हुयी ज़मीन्। ३ एक व्यापार, बयका इख़्तियार-ख़ास। "तोड़न आये यारा बिगड़े इजारा।" (लोकोक्ति) ४ ग्राम या प्रान्तके आयका पट्टा, गांव ज़िलेकी आमदनीका ठेका।

इजारा करना (हिं० क्रि०) अपने ऊपर लेना, जवाबदेह बनना।

इजारादार (अ० पु०) पट्टोलिकाधारी, पट्टेदार। २ एकाधिकारी, पूरा मालिक।

इजारा देना (हिं० क्रि०) पट्टोलिका सौंपना, ठेकेदार बनाना।

इजारानामा (अ० पु०) पट्टोलिका सरखत, ठेका।

इज़ाला (अ० पु०) १ विचालन, तग़य्युर, सरकाव। २ व्याकरणानुसार लोप, हज़्फ़, अक्षरगिराव।

इज़ाला-अमान् (अ० पु०) दण्डदान, ज़ब्ती, क़ुर्क़ी।

इज़ाला करना (हिं० क्रि०) अपसरण, पहुंचाना, हटाना।

इज़ाला बिक्रय करना (हिं० क्रि०) कौमारीत्व उतारना, क्वारपन बिगाड़ना।

इज़ाला-हैसियत-उर्फ़ी (अ० पु०) अपभाषण, हतक, लालीका बिगाड़ना।

इज़्ज़त (अ० स्त्री०) सत्कार, मान, बड़ायी।

"अपनी इज़्ज़त अपने हाथ है।" (लोकोक्ति)

इज़्ज़त उतारना, इज़्ज़त बिगाड़ना देखो।

इज़्ज़त करना (हिं० क्रि०) आदर देना, बड़ायी बताना।

इज़्ज़तका लागू होना (हिं० क्रि०) अपमान करनेपर कमर बांधना, आबरू लेनेकी ठानना।

इज़्ज़तके पीछे पड़ना, इज़्ज़तका लागू होना देखो।

इज़्ज़तदार (अ० वि०) सम्मानित, आबरू रखनेवाला।

इज़्ज़त देना (हिं० क्रि०) आदर खोना, छोटा बनना।

इज्जत बनाना (हिं॰ क्रि॰) प्रतिष्ठा प्राप्त करना, आबरू बढ़ानेकी कोशिशमें लगना।

इज्जत बिगाड़ना (हिं॰ क्रि॰) मान घटाना, आबरू उतारना।

इज्जतमें फर्क आना, इज्जतमें बट्टा लगना देखो।

इज्जतमें बट्टा लगना (हिं॰ क्रि॰) मानभङ्ग होना, बेआबरू बनना।

इज्जतवाला (हिं॰) इज्जतदार देखो।

इज्जल (सं॰ पु॰) एति गच्छतीति, इ-क्विप्-तुक्‌च, इत् सन्निकृष्टतया गच्छत् जलमस्य, बहुव्री॰। इज्जल-वृक्ष, समुद्रफल। यह शीतल, संग्राही, वातकोपन और विशेषतः विघ्न होता है। (मदनपाल) इज्जल कुष्ठघ्न और वातकोपन है। (भावप्रकाश)

इज्य (सं॰ पु॰) इज्या यागः विद्यतेऽस्य, इज्या-अच्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। १ बृहस्पति, देवगुरु। २ पुष्यानक्षत्र। ३ विष्णु। ४ परमेश्वर। ५ शिक्षक। ६ पूजनीय व्यक्ति।

इज्या (सं॰ स्त्री॰) यज भावे क्यप्-टाप्। १ यज्ञ। २ दान। ३ सङ्गम, मिलन। कर्मणि क्यप्। ४ प्रतिमा, तसवीर। ५ गो, गाय। ६ पूजा, परस्तिश। ७ दूती, दल्लाला, कुटनी।

इज्याशील (सं॰ पु॰) इज्या एव शीलं यस्य, बहुव्री॰। अथवा इज्यां शीलयति; इज्या-शील-अच्। पुनःपुनः यागकारी, बार-बार यज्ञ करनेवाला।

इञ्च (अं॰ क्ली॰=Inch) अङ्गुल, तसू, गजका छत्तीसवां या फुटका बारहवां हिस्सा।

इञ्चाक (सं॰ पु॰) इञ्चा दीर्घा अस्ति यस्य। जल-वृश्चिक, झींगा मछली।'

इञ्चुक, इञ्चाक देखो।

इञ्जन (अं॰ क्ली॰=Engine) १ यन्त्र, आला, कल। २ उपकरण, औज़ार, हथियार। ३ साधन, वसीला।

इञ्जीनियर (अं॰ पु॰-स्त्री॰=Engineer) १ यन्त्र-कार, कलसाज़, गढ़ कपतान। २ यन्त्रकलाभिज्ञ, कल चलानेवाला। ३ वास्तुविद्याविशारद, मुहिन्दिस-फ़न-मेमारी; सड़क, मकान और पुल बनवानेवाला अफ़सर।

इञ्जीनियरिङ्ग (अं॰ क्ली॰=Engineering) १ यन्त्र-कारका व्यापार, कलसाज़ीका हुनर। २ वास्तुविद्या, इल्ममेमारी।

इञ्जील (यू॰ स्त्री॰) १ सुसमाचार, खुशखबरी। २ धर्मग्रन्थ, ईसाके दीन और हालकी किताब।

इट् (सं॰ स्त्री॰) इष-क्विप्। इच्छा, मर्ज़ी, तबीयत।

इट (दे॰ पु॰) १ वेत्र या तृण, बेंत या घासकी चटायी।

इटचर, इट्वर देखो।

इटत (सं॰ पु॰) ऋग्वेदीय सूक्तप्रकाशक भार्गव।

इटली (इटालो=Italy) युरोप महादेशके दक्षिणांशस्थित एक प्रायद्वीप। इटलीसे उत्तर अष्ट्रीया तथा स्विटजर-लेण्ड, पश्चिम फ्रान्स एवं भूमध्यसागर, दक्षिण भूमध्य-सागर और पूर्व योनियान एवं आड्रियातिक समुद्र पड़ता है। इसमें अंशतः द्वीप और मध्यभूमि सम्मिलित है। इटली अक्षा॰ ३६° ३८′ से ४६° ४०′ उ॰ और द्राघि॰ ६° ३०′ से १८° ३०′ पू॰के मध्य अवस्थित है। अधिकसे अधिक दैर्घ्य ७०८ और आयाम ३१० मील लगता है। किन्तु केन्द्रमें यह १५० मील ही विस्तृत है। सागरतटकी रेखा २००० मील दीर्घ समझी जाती है। पश्चिममें गाएता, जिनोआ, नेपल्स, सालेर्नो एवं पोलिकास्त्रो, दक्षिण-पूर्वमें स्कुइल्लेस तथा तारान्तो और आड्रियातिकमें मानफ्रेदोनिया, वेनिस, तथा त्रीस्त प्रधान उपसागर है। मेस्सिना वा-वोनिफे-सियो और फारो खाड़ी विद्यमान है। काम्पानेल्ला, स्पार्तिवेन्तो, दी लिउका, पस्सारो, कोर्सो और कारबो-नारा प्रधान अन्तरीप है। सिसिली तथा लिपारि, इसचिया, एलबा और सारदिनिया प्रधान द्वीप हैं। भूमितल सर्वत्र एकप्रकार देख नहीं पड़ता। उत्तरमें लोम्बार्डीका समतल क्षेत्र शस्यप्रद है। दक्षिणमें वेनिस, काम्पो-फेलिस और वासिलिकाता समस्थली विस्तृत है। रोम एवं समुद्रके बीच पोण्टाइन झील और त्रीस्त तथा वेनिस-खाड़ीके मध्यकी समभूमिमें दलदल पड़ता है। आल्पस एवं अपेनाइन पर्वतकी शोभा देखते ही बन आती है। नेपल्सके निकट वेसुवियस आग्नेय-गिरि भड़का करता है। उत्तरमें जलवायु साधारणतः

मनोज्ञ, नियत तथा स्वास्थ्यकर और केन्द्रस्थलमें सविशेष सुखप्रद है। किन्तु दक्षिणकी ओर उष्णता अधिक रहती और प्रायः अफ्रीकाकी उत्तप्त वायु आनेसे बढ़ जाती है। वसन्त और ग्रीष्म ऋतुमें मलेरियाके प्रकोपमें कितने ही स्थानका स्वास्थ्य बिगड़ता है। कारण—आवद्ध कच्छसे जो वायु उठता, वह मारात्मक होता है। पो प्रधान और त्रिसोन, सेरा, ग्रना, दोरा-रिपारिआ, दोरा बालतिआ, बोरमिदा, तनारो, सेसिआ, तिसिनो, अद्दा, ओगलिओ, मिनसिओ, टेब्बिआ, परमा एवं पनारो शाखा नदी है। उत्तरपश्चिममें आडिज, ब्रेन्ता, पिआव और तगलिआमेन्तो आल्पससे निकल दक्षिणको बहती है। मध्यस्थलको प्रधान नदी ताइबेर भूमध्यसागरमें जाकर गिरती है। किन्तु अनेक नदीमें जहाज चल नहीं सकता। इस अभावको दूर करनेके लिये तिकिनो और मिलनके बीच २८ मील लम्बी नहर निकली, जिसमें बड़ीसे बड़ी नाव चली है। दूसरी नहर एदिज और पोको मिलाती है। उत्तरमें सब मिलाकर ५१०से अधिक नहरें हैं। गार्दा और लागो माग्गिओर या लोकारनो ह्रद प्रधान है। लुगानो, कोमो, लेक्को, इसको, पेरुजिआ, बोलसेना, कास्तेल, गानडोलफो, ब्रेस्सिआनो, सेलानो, वारानो और आवार्नो छोटा ह्रद है। विचित्र दृश्यके लिये इनमें कितने ही ह्रद प्रशंसनीय हैं। मेग्गिओर परमसुन्दर और कोमो अत्यन्त चित्ताकर्षक है।

द्राक्षा, जितवृक्ष, जम्बीर, न्यग्रोध, तरम्बुज, पिस्ता, सुपारी तथा कितने ही दूसरे फल होते और स्वादु लगते हैं। उत्तर प्रान्तमें दाल, चावल, ज्वार और दूसरे शाक उपजते हैं। लोमबार्डीमें रेशमके कीड़े पालनेको लाखों शहतूतके पेड़ लगाये जाते हैं। पो नदीके मैदानमें सहस्र-सहस्र गो चरा करती हैं। इटलीका पना पनीर अमोघ होता और पृथिवीके प्रत्येक प्रान्तमें बिकने जाता है। उत्तर अर्मण-सीमान्तके समीप और वेनिस, जिनोआ और तासकेनीमें मरमरपत्थरको खानि है। अपेनाइनसे जराइत, सूर्यकान्त, मरकत, शिलास्फटिक, वैदूर्य और अपर रत्न निकलता है। उपरोक्त पर्वतमें क्षार, घनीभूत आग्नेयोद्गार, गन्धक, वालुका प्रभृति पदार्थ भरा है। ताम्र, लोह और फिटकरीको भी खानि है। विभिन्न प्रान्तमें उष्ण तथा शीतल जलके प्रस्रवण मिलते हैं।

पर्वत और वनमें शूकर, हरिण, वृक, विच्छू, वातप्रमी और अज, आरण्यपशु रहते हैं। आवरुजो पर्वतमें वनमार्जार और दक्षिणांशमें शिखायुक्त भल्लको देख पड़ता है। शशक, शृगाल और वन्यपक्षीको कोई कमी नहीं। दक्षिण सागरतटपर अफ्रीकाके जलचर पक्षी प्रायः वर्तमान रहते हैं। कहीं कहीं समुद्रमें विद्रुम भी विद्यमान है। नदीमें अनेक प्रकारके मत्स्य तैरते हैं।

इटलीमें रेशमका काम बहुत बनता है। सन और ऊनकी चीज भी तैयार होती है। कितना ही मद्य टपकाया जाता है। फ्रान्स, ग्रेटब्रिटेन, ग्रीस और स्विटजलैण्डके साथ प्रधानतः व्यवसाय चलता है। फ्रान्सके साथ प्रति वर्ष करोडों रुपयेका लेन-देन होता है। अन्न और रुई बाहरसे मंगाते हैं। रेशम, शराब और तैल दूसरी जगह भेजा जाता है। क्षेत्रफल ११०६२३ वर्गमील है। १९०१ ई०की मनुष्य-गणनाके अनुसार लोकसंख्या ३२९६५५०४ रही। इटलीमें सैकड़े पीछे ८७·१२% लोग रोमन काथलिक हैं। प्रायः २०००० प्रोटेष्टाण्ट और ४०००० यहूदी निकलेंगे। तीन-चौथायी आदमी लिख-पढ़ नहीं सकते। दश-बीस प्राचीन प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय विद्यमान हैं।

प्रायः ५००० मील रेलवे और १५००० मील टेलीग्राफ विस्तृत है। इटलीका प्रान्तीय विभाग यह है,—मोदेना, पार्मा, वेनुनो, पादुआ, रोविगो त्रेविसो, उदाइन, वेनेज़िआ, वेरोना, विसेन्ज़ा, आरेज्जो, फ्लोरेन्स, ग्रोस्सेतो लेघोरन, लुक्का, पिसा, सीना, अनकोना, अर्कोनो, पिकेनो, बोलोना, फेरारो, फोर्ली, मासेराता, पेसारो, उर्बिनो, रावेना, रोम, तेमनो, एक्विला, बासिलिकाता, कालेब्रिआ, कितेरिओर, रेग्गिओ, काटनज़ारो, केवितानाता, मोलिस, नापोली, प्रिन्सिपाती कितेरिओर, प्रिन्सिपाती उलतेरिओर, तेरा दी बरी, तेरा दी लिवोरो, तेरा दी ओत-

रांती, कालतानीसेत्ता, कातानिया, गिरगेंती, मेस्सिना, पालेर्मो, सिराकुसा, भपानी, जेनोवा, काग-लिआरी, सस्सारी अलेसुसन्द्रिया, वेनेवेन्तो, वेर्गामो, कोमो, क्रेमोना, क्ुनेओ, मानतुआ, मिलन, नोवारा, पेविआ, पिआसेनजा, पोर्तो माउरिजिओ, रेग्गिओ, एमिलिआ, सोन्द्रिओ, तूरिन और उब्रिआ। नेपिल्स, मिलन, रोम, पालेर्नो, तूरिन, फ्लोरेन्स, जिनोआ, वेनिस, वोलोना, मेस्सिना, लेघोरन, और कातानिया, बड़ा नगर है।

इटलीमें श्रमजीवियोंका वेतन अधिक और खाद्य वस्तुवोंका मूल्य न्यून है। व्यापारके केन्द्र लोमवार्डी और पीडमोण्टमें हड़ताल बहुत पड़ती है। किन्तु कितनी ही सेविङ्गबङ्क, बीमा कम्पनी और परस्पर-साहाय्य-समिति खुली हैं। को-आपरेशन वा सम्भूय व्यवसायका भी बड़ा वैभव है। उसमें छोटे-छोटे व्यवसायी और कृषक् योग देते हैं। अब लोगोंको अधिक व्याज देनेका कष्ट उठाना नहीं पड़ता।

पाठशाला सरकारके हाथ है। विनामूल्य शिक्षा मिलती है। सरकार और व्यवसायी पर पाठशालाके व्ययका भार पड़ता है। पढ़े-लिखोंकी संख्या दिन दिन बढ़ती जाती है। पुस्तकालय बहुत हैं। हस्तलिखित और बहुमूल्य पुस्तकोंकी कोई कमी नहीं। थोड़े दिन हुये, कोई दो सहस्र पुस्तकालय गिने गये थे। स्थानीय इतिहासका अन्वेषण हुवा करता है। शिल्पसम्बन्धीय पुस्तक खरीदनेको करोड़ो रुपया जमा है।

दरिद्रोंको अन्न-वस्त्र देनेके लिये सार्वजनिक संस्था यें प्रतिष्ठित हैं। रोगियोंके लिये औषधालय, अना-थोंके लिये निवासस्थान और लूलों, लंगड़ों, बहरों तथा अन्धोंके लिये विद्यालय और विश्रामालय बनाये गये हैं।

इटली राज्य एक राजाके अधीन है। वही लोगोंको पदाधिकार देते और पार्लियामेण्टको एकत्र कर लेते हैं। अदालतका काम फ्रान्सकी तरह चलता है। विचारपतिका वेतन कम है। मुकदमा जल्द नहीं निबटता।

सेनाविभागमें विभिन्न प्रान्तके लोग एकत्र भरती कर लिये जाते हैं। सिपाही बननेसे कोई इनकार कर नहीं सकता। शान्तिके समय सेनाकी संख्या ढायी या तीन और युद्धके समय साढ़े सात लाख रहती है। स्पेजिया, नेपल्स, वेनिस, तारान्तो और मड्डा लोनाद्वीपमें जङ्गी जहाजोंका अड्डा है। इटलीका आय-व्यय बढ़ते जाता है। सोने, चांदी रूपे और कांसेका सिक्का चलता है। कर अधिक लगता है।

इतिहास—अतिशय रमणीय देश होने और जलवायु स्वास्थ्यप्रद रहनेसे पुराकाल उत्तरसे कितने ही लोगोंने इटलीपर आक्रमण किया था। इसीसे नाना प्रकारकी भाषाका प्रचार हुवा। रोमक ऐतिहासिकों-के कथनानुसार ई॰से ३८० वर्ष पहले गालोंका दल रोमनगर मारते-काटते पहुंचा था। रोमकोंने इटली-की जीत अच्छी-अच्छी सड़कें बन वायीं। ४७६ ई॰ को हेरुदलीयोंके राजा ओडोआकर रोमुलस्‌को सिंहासनच्युत कर सम्राट् बने थे। ४८८ ई॰को ग्रीक-सम्राट् जेनोकी आज्ञासे पूर्व गालके नरेश थिओ-डोरिकने ओडोआकरको हराया और ४८३ ई॰को जानसे मार डाला। फिर गालों और यूनानियोंमें ५३८से ५५३ ई॰ तक खूब युद्ध हुवा था। अन्तको गालीय नृपति टेइगा वेलुविअस्‌के पास यूनानियोंसे हार गये और यूनानी इटलीके अधिपति बने। ५६८ ई॰को लोमवार्डोंने गालोंको मार भगाया था। ५८०से ६०४ ई॰ तक ग्रिगोरीने लोमवार्डोंको मूर्ति-पूजक बनाया और ७२६ ई॰को द्वितीय ग्रिगोरीने रोममें स्वतन्त्र राज्य प्रतिष्ठित किया। ७५६ ई॰को फ्रान्स-सरदारने इटलीका कितना ही उत्तरांश जीत पोपको सौंप दिया था। ७७४ ई॰को चार्लस अपने श्वशुर देसीदेरिअसको सिंहासनसे उतार इटलीके सम्राट् बने। चार्लस वंशके आठ नरेशोंने इटलीमें राज्य किया था। ८८८ ई॰को चार्लस दी फाट (मोटे) सिंहासन-च्युत हुये। ८६१ ई॰को इटलीय नृपति द्वितीय वेरेङ्गरने अपना राज्य ओटोको दिया था। चार्लस और ओटोके समय अराजकताकी धूम रही। चारो ओर लूट-मार होनेसे किले बहुत बने

थे। ९७३ को द्वितीय और ९९६ ई०को तृतीय ओटो सिंहासन पर बैठे। १००२ ई०को तृतीय ओटोके मरनेपर इवरियाके अधिपति आरडोइन लोम्बार्डीके राजा हुये और १०१५ ई०को मर गये। बैवेरियाके हेनरीने अपने वैरी पेवियाको विनष्टकर रोममें सिंहासन पाया था, किन्तु १०२४ ई०को परलोक गमन किया। बाकी इटलीके राजाओंका शासन-समय नीचे लिखते हैं,—

नाम	ईसवी
हेनरी	१०२४
४र्थ हेनरी	१०५६
७म ग्रेगोरी	१०७३
पोपाधिकार	१०७७
लोदर माक्सन	११२५—११३७
कोनराड स्वावीय	११३८—११५२
फ्रेडरिक	११५४
६ष्ठ हेनरी	११९१
२य फ्रेडरिक	१२२०
कोनराड	१२५०
कोनराडिन	१२५४
पादरी युद्ध और अनमनीय	१२५८—१३०१
रवार्ट	१३०९
जोन	१३४३
चार्लस	१३८२
लाडिसलाउस	१३८०
२य जोन	१४१४
आल्फोन्सो	१४३५
स्वतन्त्र शासन	१४४२—१४९१
८म चार्ल्स्	१४९४—१४९५
१२श लूई	१४९९
१०म लियो	१५१३
आद्रियानो	१५२०
कोसिमो	१५३७
फर्डीनण्ड	१५५७
विक्टर आमोडियस	१७१३
३य एमानुएल	१७२०
इमानुएल कार्लोसओरानी	१७३०
२ लोईस	१७८०
विश्वोदोल्फ	१७९०
प्रजातन्त्र	१७९६
७म पायस	१८००
नेपोलियान-शासन	१८०५
मूरट	१८०८
आष्ट्रीय अधिकार	१८१५—१८७०
इटलीय शासनतन्त्र	१८७१ ई०से आजतक

ई०के १९वीं शताब्द पहले इटली देश भीषण युद्ध और स्व-स्व जातीय उन्नतिके लिये स्पेन, फ्रान्स तथा जर्मनीके विग्रहसे प्रायः जनशून्य हो गया था। १५२५ ई०को पेवियाके युद्धने जर्मन-सम्राट्का प्रभुत्व प्रतिष्ठित किया, किन्तु ई०के १८वें शताब्दारम्भ अष्ट्रीयाका आतङ्क जम गया। १७९७-९८ ई०को नेपोलियनका विजय होनेसे शासन बदला और कयी वर्षतक इस प्रायद्वीपका अधिकांश फ्रान्सके अधीन रहा। १८१४ ई०को सन्धि होनेपर लोम्बार्डो-वेनिशीय प्रान्त अष्ट्रीया और सारदिनिया राज्य तथा गेनाइस प्रदेश सेवायके राजपरिवारने पाया था। लुक्का नव्वाबी बना और तासकनीकी नव्वाबीका पुनरुद्धार हुआ। बोरबोनोंको नेपल्स, पोपको अपने राज्य और इष्ट वंशको मोडेने तथा अन्य प्रान्तका पुनरधिकार मिला था। १८४८ ई०को मिलानीसों और वेनिशीयोंने अष्ट्रीयाके विरुद्ध व्यर्थ विप्लव बढ़ाया। १८५९ ई०को पीडमोण्ट और अष्ट्रीयामें जो युद्ध हुवा, उसमें पीडमोण्ट हार गया। १८६१ ई०को पीडमोण्ट-नरेशके अधीन इटली एक राज्य बना था। १८६६ ई०को अष्ट्रीयाने नये राज्यके हाथ वेनशिया सौंपा। १८७० ई०की ११ वीं सितम्बरको इटलीय सेनापति कादोरनाने ६०००० फौजके साथ पोपके अधिकृत रोमराज्यमें प्रवेश किया था। पोपने नाममात्र बाधा डाली। अवशेषको रोम इटलीय शासनतन्त्रके अधीन हुवा था। वाटिकान (Vatican) मात्र पोपके अधिकारमें रहा। १८७१ ई०की २२ वीं जुलायीको राजा विक्टर एमानुएलने जयोल्लाससे, सदलबल पहुंच रोम नगरको इटलीकी राजधानी बनाया था। अर्ध शताब्दकी चेष्टाके बाद इटली फिर स्वाधीन हुवा।

१८७८ ई०की ९वीं जनवरीको विक्टर एमानुएल

(२य) कालग्रासमें पड़े और उनके पुत्र ह्यामबर्ट राजसिंहासनपर बैठे। १८८१ ई०को राजा ह्यामबर्ट अष्ट्रीया-सम्राट्के आमन्त्रणसे सस्त्रीक वियाना गये थे। २७वीं से ३१वीं अक्तोबरतक अष्ट्रीया-राजधानीमें वह ठहरे। उससे जर्मनी और अष्ट्रीयाके साथ इटलीका सद्भाव स्थायी हुआ था। १८८२ ई०की २०वीं मईको तीनों राज्यके मध्य (Triple Alliance) सन्धिपत्र लिखा गया। इस सन्धिपत्रके अनुसार रूस, फ्रान्स या कोई दूसरा राज्य जर्मनी, अष्ट्रीया वा इटलीसे लड़नेपर उक्त तीनों राज्य उसके विरुद्ध अस्त्र धारण करनेपर सम्मत हुये थे। इस सन्धिसे इटलीको राज्यकी उन्नति करने और सेना तथा नौ विभागमें बल बढ़ानेका बहुत सुभीता पड़ा है।

१८८१ ई०के जून मास जर्मन और इटलीय मन्त्रीकी चेष्टासे वाणिज्यवृद्धिके अभिप्राय फिर उक्त सन्धिपत्र गृहीत हुआ। १९०० ई०को २९वीं जुलाई-को ब्रेस्की नामक किसी राजद्रोहीने इटलीराज ह्याम-बर्टको गोलीसे मार डाला। पीछे उनके एकमात्र पुत्र ३य विक्टर एम्मानुएल इटलीके राजा हुये। यह अति शान्तिप्रिय नृपति हैं। इन्होंके समय १९०८ ई०को २८वीं दिसम्बरको सवेरे पांच बजे अतिहृदय-विदारक भूमिकम्पसे समग्र दक्षिण कलब्रिया और सिसिलीका पूर्वांश विध्वस्त हो गया था। उससे बहुतसे जनपद टूटे और अकेले मसीना नगरमें डेढ़ लाख मनुष्य मरे।

१९०३ ई०के अक्तोबर मास राजा एम्मानुएल सपत्नीक फ्रान्स-राजधानी पारिस गये थे। उससे दोनों राज्यके मध्य यथेष्ट सद्भाव स्थापित हुआ। १९०८ ई०के अक्तोबर मास अष्ट्रीय-सम्राट् फ्रान्सिस् जोसेफने बोसनियाको अपने राज्यमें मिला लिया था। इस संवादसे राजा एम्मानुएल और अपरा पर नृपति विचलित हुवे। उसी समयसे अष्ट्रीयाके साथ इटलीका मनोमालिन्य बढ़ा। जर्मनी एवं अष्ट्रीयाके साथ रूस, फ्रान्स और इङ्गलैण्डके लड़ते भी कुछ दिन इटली-नरेश निरपेक्ष रहे। किन्तु अपनी स्वार्थहानि भयानक रूपमें होते देख १९१५ ई० इटलीकी फौज आगे बढ़ी और अष्ट्रीयासे लड़ बैठी। इटली बड़े बलविक्रमसे आजकल अष्ट्रीयाके साथ युद्ध कर रहा है।

रोम, पोप, नेपोलियान्, गारिवल्डी, माजिनि, अष्ट्रीया प्रभृति शब्दमें और विवरण देखो।

इटमून (वै० क्लो०) इट-क-क्विप्-क्त पृषोदरादित्वात् अस्य सः। शाखामय काट, बंसकी चटाई। "इतेव इटमूनेउत्तरतोऽवसायनन्ति।" (शतपथब्राह्मण १।३।३।१६।) 'इटसून तन्निर्मेव शाखामये काटे।' (हरिस्वामी)

इटालिक (अं० पु०=Italic) वक्राक्षर,टेढ़े छापेके हर्फ़।

इटालियन (अं० पु०) १ इटलीवासी। २ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। प्रथमत: इटलीमें बननेसे ही इस वस्त्रको इटालियन कहते हैं। अस्तरको से इटालियन बनता और खूब चमकदार निकलता है। रङ्ग काला होता है।

इट्चर (सं० पु०) इष भावे क्विप्-चर-अच्, इषा कामेन चरतीति। षण्ड, स्वतन्त्र घूमनेवाला सांड।

इठलाना (हिं० क्रि०) १ साहङ्कार गमन करना, गुरूरके साथ चलना। २ अव्यक्त भाषण करना, तुत-लाना, साफ़-साफ़ न बोलना। ३ वक्रोत्तर प्रदान करना, टेढ़े जबाब देना। ४ तिर्यक् सम्भाषण करना, गुस्ताख़ीके साथ बोलना, उलटी बात बताना। ५ छद्म दिखाना, मटियाना, नावाफ़िक़ होनेका बहाना करना। ६ विरोध करना, झगड़ा लगाना।

इठलायी (हिं० स्त्री०) साहङ्कार गमन, ठसककी चाल, इठलाहट।

इठलाहट, इठलायी देखो।

इठायी (हिं० स्त्री०) अभिलाष, ख़ाहिश, चाह, प्यार।

इठिमिका (सं० स्त्री०) काठक शाखाभेद, यजुर्वेद-की एक शाखा।

इड़ (सं० स्त्री०) इल्-क्विप् वा लस्य ड:। १ भूमि, ज़मीन्। २ अन्न, अनाज। ३ वर्षाकाल, बरसात। ४ तृतीय प्रयाज। ५ यज्ञाङ्ग। ६ षष्ठ प्रयाज। (वै० त्रि०) ७ स्तुतियोग्य, तारीफ़के क़ाबिल।

"परिधिरसपिरिड़इडितम्।" (वाजसनेयस० २।३)
'इयते स्तूयते इतीड़: स्तुतियोग्यः।' (महीधर)

इडरहर, इंडर देखो।

इड़स्पति (सं० पु०) विष्णु।

इड़हर, इंडहर देखो।

इड़ा (सं० स्त्री०) इल-क-टाप्, डस्य लत्वं वा। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ धेनु, गाय। ३ त्वरा, शिताबी, जल्दी। ४ सरस्वती। ५ हविः, यज्ञ। ६ देवी। ७ दुर्गा। ८ स्तुति, तारीफ़। ९ यज्ञपात्रविशेष। १० सन्तोष, तसल्ली। ११ भोजन, खुराक। १२ आहुति विशेष। यह आहुति प्रयाज अनुयाजके बीच होती है। इड़ापर चार प्रकारका दूध तैयारकर जलमय पात्रमें डालते और फिर होता और यजमान मिलकर पी जाते हैं। १३ अमिय देवता विशेष। यह असोमपा हैं। १४ आकाशदेवता। १५ मनुकी कन्या, बुधपत्नी। शतपथब्राह्मण-(१।८।१।१—१३)में मनुकन्या इड़ाकी उत्पत्ति-सम्बन्धपर इस प्रकार गल्प कहा है,—मनुने प्रजासृष्टि करनेके लिये पाकयज्ञका अनुष्ठान किया था। घृत,नवनीत और आमिक्षा जलमें छोड़नेसे संवत्सरके मध्य एक कन्या उत्पन्न हुयी। बालिका सुस्निग्ध जलसे उठी थी। मित्रावरुण निकट आये। उन्होंने प्रश्न किया,—तुम कौन हो। जवाब मिला—मनुकी कन्या। उन्होंने फिर कहा,—तुम हमारी हो। इड़ाने उत्तर दिया—नहीं, हम अपने जन्म देनेवालेकी ही हैं। किन्तु मित्रावरुणने पुनः इनको और प्यारसे देखा। यह कुछ उत्तर न दे मनुके समीप जा पहुंचीं। मनुने भी पूछा,—तुम कौन हो। इड़ाने कहा,—हम आपकी कन्या हुयी, आपके घृत, नवनीत तथा आमिक्षा प्रदानसे निकली हैं। हमें यज्ञमें अर्पण कीजिये। आपकी मनस्कामना पूर्ण होगी। मनुने इड़ाके साथ कठोर यज्ञका अनुष्ठान किया। अन्तको मनु प्रजापति बन गये। इला देखो। १६ वामपार्श्वस्थ रक्तवाही नाड़ी। मेरुदण्डके बहिर्भाग वाम तथा दक्षिण पार्श्वपर चन्द्रसूर्यात्मक इड़ा पिङ्गला नामक दो नाड़ी होती, जो चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनोंका गुण रखती हैं। साधकके पक्षमें इड़ा नाड़ी गङ्गा और पिङ्गला यमुनाका स्वरूप है। इन दोनों नाड़ीके मध्य सुषुम्णा सरस्वती-जैसी रहती है। इड़ा पिङ्गला और सुषुम्णा तीनों नाड़ीके मिलनको त्रिवेणी कहते हैं। योगी इस त्रिवेणीके सङ्गमपर स्नानकर सर्वपापसे छूट जाते हैं। प्राणायाममें पूरक करते समय इड़ा नाड़ीसे ही वायुको ऊपर चढ़ाते हैं। जब इड़ा नाड़ीमें स्वर चलता तब प्रत्येक शुभकार्य करनेमें साफल्य मिलता है। सुषुम्णा ब्रह्मनाड़ी है। उसीमें जगत् प्रतिष्ठित है। इड़ा, इरा और इला तीनों रूप सिद्ध हो सकते हैं।

इड़ाचिका (सं० स्त्री०) इड़ेव आचति सूक्ष्मं मध्यभागम्, इड़ा-अच्-ण्वुल्-टाप्, अत इत्। १ बरटा, बर। २ गन्धोली, ककड़ी।

इड़ाजात (सं० पु०) भूमिज गुग्गुल, ज़मीनसे पैदा गूगुर।

इड़ावत् (वै० त्रि०) १ इड़ा-मतुप्। इड़ानाड़ीविशिष्ट, जो इड़ाको रखता हो। २ आनन्दप्रद, फ़रहत बख्श। ३ आप्यायित, तरोताज़ा बना हुआ। ४ हविः-विशिष्ट।

इड़िक, इंडिक देखो।

इड़िका (सं० स्त्री०) इड़ा स्वार्थे क, इत्वञ्चाकारस्य। पृथिवी, ज़मीन्।

इड़िक्क (सं० पु०) इड़िक् इति कायति शब्दायते, इड़िक्-कै-ड। १ वन्य छागल, जङ्गली बकरा। २ बानर, बन्दर।

इड़ीय (सं० त्रि०) इड़ाया अन्नस्य अदूरदेशः, इड़ा-छ। उत्करादिभ्यश्च। पा ४।२।९०। अन्न-सम्बन्धीय, अनाजसे भरा हुआ।

इड्देवता (सं० स्त्री०) उदकदानकी देवी।

इड्वर (सं० पु०) इच्छति दमिति, इष-क्षिप्-इट् उपस्यन्तीतया ध्रियते, इट् वृ कर्मणि अच्। वृष, छोड़देने लायक सांड़।

इण्ट्रेन्स (अं० स्त्री० = Entrance) १ प्रवेश, दखल, पैठ। २ प्रवेशाज्ञा, पैठका हुक्म। ३ द्वार, दरवाज़ा, पौली। ४ आरम्भ, शुरू। ५ अंगरेजी पाठशालाकी एक कक्षा, अंगरेजी मदरसेका एक दरजा।

इण्डरी (सं० स्त्री०) पक्वान्नविशेष, किसी क़िस्मके पके अनाजकी बनी चीज़।

इण्डिया (अं॰ स्त्री॰ = India) भारतवर्ष, हिन्दुस्थान।
इण्डीन्य (सं॰ पु॰) छुरी, चाकू।
इण्डु (वै॰ क्ली॰) मुञ्जापत्र, मूंजकी चद्दर। कड़ा ही चूल्हेसे उतारते समय यह हाथमें लपेट लेनेके काम आता है।
इण्डेरिका (सं॰ स्त्री॰) वटिका, बाटी, भौंरिया।
इत् (सं॰ त्रि॰) एतीति, इ-क्विप्। देखते-देखते चला जानेवाला, जो बातकी बातमें उड़ जाता हो। व्याकरणका प्रयोग साधनेके लिये जो अक्षर आते हो चल जाता, वह इत् कहाता है।
इत (सं॰ त्रि॰) इ-क्त। १ गत, गुज़रा हुआ, गया-बीता। (क्ली॰) भावे क्यप्। २ गमन, चाल। ३ ज्ञान, समझ। ४ प्राप्ति, याफ़्त। (हिं॰ क्रि॰ वि॰) ५ इस ओर, इधर, यहां।
इत:, इतस् देखो।
इत:पर (सं॰ अव्य॰) इसके पीछे, इसके बाद, इसपर।
इत-उत (हिं॰ क्रि॰-वि॰) १ इधर-उधर, जहां-तहां। (पु॰) २ छल फ़रेब।
इत ऊति (वै॰ त्रि॰) इस ओरसे लम्बायमान, जो इधरसे फैला या पहुंचा हो। २ भविष्यत्, वर्तमान समयसे अधिक स्थायी, आयिन्दा, जो ज़माना-हालसे ज़्यादा ठहरता हो।
इतना (हिं॰ वि॰) एतावत्, इस क़दर, इत्ता, इतेक।
इतनो, इतना देखो।
इतम (सं॰ त्रि॰) अन्य, दूसरा, और।
इतमाम (अ॰ पु॰) पूर्णता, कमाल, पूरापन।
इतमीनान् (अ॰ पु॰) १ सन्तोष, आराम, ढारस। २ बन्धक, ज़मानत।
इतमीनान् करना (हिं॰ क्रि॰) विश्वास मानना, खुश रहना।
इतमीनान् खातिर होना (हिं॰ क्रि॰) सन्तुष्ट रहना, यक़ीन् रखना।
इतमीनान् न करना (हिं॰ क्रि॰) सन्देह रखना, यक़ीन् न लाना।
इतमीनान् होना (हिं क्रि॰) सन्तुष्ट रहना, खुशी मनाना।
इतमीनानी (अ॰ वि॰) विश्वस्त, एतबारी, जिसमें यक़ीन् रहे।
इतर (सं॰ त्रि॰) इना कामेन तरति तीर्यते, इतं प्राप्तं रातीति; इत-रा-क, इ-तॄ-अप् वा अच्। १ नीच, कमीना। २ अन्य, दूसरा। ३ अवशेष, बाक़ी।
इतरजन (सं॰ पु॰) इतरश्चासौ जनश्चेति, कर्मधा॰। जन साधारण, आम लोग।

"कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिता श्रुतम्।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति मिष्टान्नमितरे जनाः॥" (प्रकनोति)

इतर जाना (हिं॰ क्रि॰) दस्युके विरुद्ध प्रथम ही समाचार पाना, डाकुवोंकी खबर पहले ही लगना।
इतरतः (सं॰ अव्य॰) विभिन्न रीतिसे, दूसरे तौरपर।
इतरथा (सं॰ अव्य॰) इतर-थाल्। प्रकारवचने थाल्। पा ५।३।२३। विपरीत, बरक्स, ज़िदसे।
इतरविशेष (सं॰ पु॰) इतरस्मात् विशेषः, ५-तत्। अन्य प्रभेद, दूसरा फ़र्क़।
इतरा (सं॰ स्त्री॰) ऐतरेयकी माता। ऐतरेय देखो।
इतराजी (हिं॰ स्त्री॰) विरोध, एतराज़, अनबन।
इतराना (हिं॰ क्रि॰) अभिमान देखाना, ठसक करना, अपनेको बड़ा समझना।
इतराहट (हिं॰ स्त्री॰) अभिमान, ग़ुरूर, ठसक।
इतरीफल (हिं॰ पु॰) अवलेह विशेष। इसमें आंवला, धनिया और शहद डालते हैं।
इतरेतर (सं॰ वि॰) इतरं इतरं निपातनात् द्वन्द्वम्। अन्योन्य, मुतफ़रिक़, अलग, दो-चार।
इतरेतरकाम्या (सं॰ स्त्री॰) १ अन्योन्य वासना, मुतफ़रिक् खयाल।
इतरेतरयोग (सं॰ पु॰) ६-तत्। १ परस्पर सम्बन्ध, आपसका ताल्लुक़। २ द्वन्द्वनामक समास, इसमें परस्पर पदार्थका योग रहता है।
इतरेतराभाव (सं॰ पु॰) अन्योन्याभाव, एकका दूसरेसे न मिलना। घटका पट और पटका घट न होना इतरेतराभाव है। अन्योन्याभाव देखो।
इतरेतराश्रय (सं॰ पु॰) इतरेतरं आश्रयति, आ-श्रि-अच्। अन्योन्याश्रयरूप न्यायका दोषविशेष। अन्योन्याश्रय देखो।

इडरहर, ईंडरहर देखो।

इड़स्पति (सं॰ पु॰) विष्णु।

इड़हर, ईंडहर देखो।

इड़ा (सं॰ स्त्री॰) इल-क-टाप्, डस्य लत्वं वा। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ धेनु, गाय। ३ त्वरा, शिताबी, जल्दी। ४ सरस्वती। ५ हविः, मन्न। ६ स्वर्गी। ७ दुर्गा। ८ स्तुति, तारीफ। ९ यज्ञपात्रविशेष। १० सन्तोष, तसल्ली। ११ भोजन, खुराक। १२ आहुति विशेष। यह आहुति प्रयाज अनुयाजके बीच होती है। इड़ापर चार प्रकारका दूध तैयारकर जलमय पात्रमें डालते और फिर होता और यजमान मिलकर पी जाते हैं। १३ अप्रिय देवता विशेष। यह असोमपा हैं। १४ आकाशदेवता। १५ मनुकी कन्या, बुधपत्नी। शतपथब्राह्मण-(७।८।१।१—१२)में मनुकन्या इड़ाकी उत्पत्ति-सम्बन्धपर इस प्रकार गल्प कहा है,—मनुने प्रजासृष्टि करनेके लिये पाकयज्ञका अनुष्ठान किया था। घृत,नवनीत और आमिक्षा जलमें छोड़नेसे संवत्सरके मध्य एक कन्या उत्पन्न हुयी। बालिका सुस्निग्ध जलसे उठी थी। मित्रावरुण निकट आये। उन्होंने प्रश्न किया,—तुम कौन हो। जवाब मिला—मनुकी कन्या। उन्होंने फिर कहा,—तुम हमारी हो। इड़ाने उत्तर दिया—नहीं, हम अपने जन्म देनेवालेकी ही हैं। किन्तु मित्रावरुणने पुनः इनको और प्यारसे देखा। यह कुछ उत्तर न दे मनुके समीप जा पहुंचीं। मनुने भी पूछा,—तुम कौन हो। इड़ाने कहा,—हम आपकी कन्या हुयी, आपके घृत, नवनीत तथा आमिक्षा प्रदानसे निकली हैं। हमें यज्ञमें अर्पण कीजिये। आपकी मनस्कामना पूर्ण होगी। मनुने इड़ाके साथ कठोर यज्ञका अनुष्ठान किया। अन्तको मनु प्रजापति बन गये। इला देखो। १६ वामपार्श्वस्थ रक्तवाही नाड़ी। मेरुदण्डके बहिर्भाग वाम तथा दक्षिण पार्श्वपर चन्द्रसूर्यात्मक इड़ा पिङ्गला नामक दो नाड़ी होती, जो चन्द्र, सूर्य और अग्नि तीनोंका गुण रखती हैं। साधकके पक्षमें इड़ा नाड़ी गङ्गा और पिङ्गला यमुनाका स्वरूप है। इन दोनो नाड़ीके मध्य सुषुम्णा सरस्वती-जैसी रहती है। इड़ा पिङ्गला और सुषुम्णा तीनो नाड़ीके मिलनको त्रिवेणी कहते हैं। योगी इस त्रिवेणीके सङ्गमपर स्नानकर सर्वपापसे छूट जाते हैं। प्राणायाममें पूरक करते समय इड़ा नाड़ीसे ही वायुको ऊपर चढ़ाते हैं। जब इड़ा नाड़ीमें स्वर चलता तब प्रत्येक शुभकार्य करनेमें साफल्य मिलता है। सुषुम्णा ब्रह्मनाड़ी है। उसीमें जगत् प्रतिष्ठित है। इड़ा, इरा और इला तीनो -रूप सिद्ध हो सकते हैं।

इड़ाचिका (सं॰ स्त्री॰) इड़ेव आचति सूक्ष्मं मध्यभागम्, इड़ा-अच्-ण्वुल्-टाप्, अत इत्। १ वरटा, वर। २ गन्धोली, ककड़ी।

इड़ाजात (सं॰ पु॰) भूमिज गुग्गुल, जमीनसे पैदा गूगुर।

इड़ावत् (वै॰ त्रि॰) १ इड़ा-मतुप्। इड़ानाड़ीविशिष्ट, जो इड़ाको रखता हो। २ आनन्दप्रद, फरहत बख्श। ३ आप्यायित, तरोताज़ा बना हुआ। ४ हविःविशिष्ट।

इड़िक, ईड़िक देखो।

इड़िका (सं॰ स्त्री॰) इड़ा स्वार्थे क, इत्वञ्चाकारस्य। पृथिवी, ज़मीन्।

इड़िक्क (सं॰ पु॰) इड़िक् इति कायति शब्दायते, इड़िक्-कै-ड। १ वन्य छागल, जङ्गली बकरा। २ वानर, बन्दर।

इड़ीय (सं॰ त्रि॰) इड़ाया अमस्य अदूरदेशः, इड़ा-छ। उत्करादिभ्यश्छः। पा ४।२।९०। अन्न-सम्बन्धीय, अनाजसे भरा हुआ।

इड़्देवता (सं॰ स्त्री॰) उदकदानकी देवी।

इड्डर (सं॰ पु॰) इच्छति वृषमिति, इष-क्विप्-इट् वृषस्तन्तीसया म्रियते, इट् दृ कर्मणि अप्। वृष, छोड़देने लायक सांड़।

इण्ट्रेंन्स (अं॰ स्त्री॰=Entrance) १ प्रवेश, दखल, पैठ। २ प्रवेशाज्ञा, पैठका हुक्म। ३ द्वार, दरवाज़ा, पौरी। ४ आरम्भ, शुरू। ५ अंगरेज़ी पाठशालाकी एक कक्षा, अंगरेज़ी मदरसेका एक दरजा।

इण्डरी (सं॰ स्त्री॰) पक्वान्नविशेष, किसी किस्मकी पके अनाजकी बनी चीज़।

इण्डिया (अं० स्त्री० = India) भारतवर्ष, हिन्दुस्थान।
इण्डोन्य (सं० पु०) छुरी, चाकू।
इण्ड् (हिं० स्त्री०) मुञ्जापत्र, मूंजकी चद्दर। कड़ा ही चूल्हेसे उतारते समय यह हाथमें लपेट लेनेके काम आता है।
इण्डेरिका (सं० स्त्री०) वटिका, बाटी, मौरिया।
इत् (सं० त्रि०) एतीति, इ-क्विप्। देखते-देखते चला जानेवाला, जो बातकी बातमें उड़ जाता हो। व्याकरणका प्रयोग साधनेके लिये जो अक्षर आते हो चल जाता, वह इत् कहाता है।
इत- (सं० त्रि०) इ-क्त। १ गत, गुज़रा हुआ, गया-बीता। (क्ली०) भावे क्यप्। २ गमन, चाल। ३ ज्ञान, समझ। ४ प्राप्ति, याफ़्त। (हिं० क्रि० वि०) ५ इस ओर, इधर, यहां।
इतः, इतस् देखो।
इतःपर (सं० अव्य०) इसके पीछे, इसके बाद, इसपर।
इत-उत (हिं० क्रि०-वि०) १ इधर-उधर, जहां-तहां। (पु०) २ छल फ़रेब।
इत ऊति (वै० त्रि०) इस ओरसे लम्बायमान, जो इधरसे फैला या पहुंचा हो। २ भविष्यत्, वर्तमान समयसे अधिक स्थायी, आयिन्दा, जो ज़माना-हालसे ज़्यादा ठहरता हो।
इतना (हिं० वि०) एतावत्, इस क़दर, इत्ता, इतेक।
इतनो, इतना देखो।
इतम (सं० त्रि०) अन्य, दूसरा, और।
इतमाम (अ० पु०) पूर्णता, कमाल, पूरापन।
इतमीनान् (अ० पु०) १ सन्तोष, आराम, ढारस। २ बन्धक, ज़मानत।
इतमीनान् करना (हिं० क्रि०) विश्वास मानना, खुश रहना।
इतमीनान् खातिर होना (हिं० क्रि०) सन्तुष्ट रहना, यक़ीन् रखना।
इतमीनान् न करना (हिं० क्रि०) सन्देह रखना, यक़ीन् न लाना।
इतमीनान् होना (हिं क्रि०) सन्तुष्ट रहना, खुशी मनाना।
इतमीनानी (अ० वि०) विश्वस्त, एतबारी, जिसमें यक़ीन् रहे।
इतर (सं० त्रि०) इना कामेन तरति तीर्यते, इतं प्राप्तं रातीति; इत-रा-क, इ-तृ-अप् वा अच्। १ नीच, कमीना। २ अन्य, दूसरा। ३ अवशेष, बाक़ी।
इतरजन (सं० पु०) इतरश्चासौ जनश्चेति, कर्मधा०। जन साधारण, आम लोग।

"कन्या वरयते रूपं माता वित्तं पिता श्रुतम्।
बान्धवाः कुलमिच्छन्ति मिष्टान्नमितरे जनाः॥" (पञ्चनीति)

इतर जाना (हिं० क्रि०) दस्युके विरुद्ध प्रथम ही समाचार पाना, डाकुवोंको खबर पहले ही लगना।
इततः (सं० अव्य०) विभिन्न रीतिसे, दूसरे तौरपर।
इतरथा (सं० अव्य०) इतर-थाल्। प्रकारवचने थाल्। पा ५।३।२३। विपरीत, बरअक्स, ज़िद्दसे।
इतरविशेष (सं० पु०) इतरस्मात् विशेषः, ५-तत्। अन्य प्रभेद, दूसरा फ़र्क़।
इतरा (सं० स्त्री०) ऐतरेयकी माता। ऐतरेय देखो।
इतराजी (हिं० स्त्री०) विरोध, एतराज़, अनबन।
इतराना (हिं० क्रि०) अभिमान देखाना, ठसक करना, अपनेको बड़ा समझना।
इतराहट (हिं० स्त्री०) अभिमान, ग़ुरूर, ठसक।
इतरीफल (हिं० पु०) अवलेह विशेष। इसमें आंवला, धनिया और शहद डालते हैं।
इतरेतर (सं० त्रि०) इतरं इतरं निपातनात् द्वन्द्वम्। अन्योन्य, मुतफ़रिक़, अलग, दो-चार।
इतरेतरकाम्या- (सं० स्त्री०) १ अन्योन्य वासना, मुतफ़रिक़ ख़याल।
इतरेतरयोग (सं० पु०) ६-तत्। १ परस्पर सम्बन्ध, आपसका ताल्लुक़। २ द्वन्द्वनामक समास, इसमें परस्पर पदार्थका योग रहता है।
इतरेतराभाव (सं० पु०) अन्योन्याभाव, एकका दूसरेसे न मिलना। घटका पट और पटका घट न होना इतरेतराभाव है। अन्योन्याभाव देखो।
इतरेतराश्रय (सं० पु०) इतरेतरं आश्रयति, आ-श्री-अच्। अन्योन्याश्रयरूप न्यायका दोषविशेष। अन्योन्याश्रय देखो।

इतरेद्युस् (सं॰ अव्य॰) इतर-एद्युस्। सद्यःपरुदित्यादिना। पा ५।३।२२। अन्य दिन या समय, दूसरे रोज या वक्त।
इतरौहाँ (हिं॰ वि॰) सगर्व, मगरूर, इतरानेवाला।
इतलाक (अ॰ पु॰) प्रार्थना, अनुसन्धान, अर्ज़, हवाला।
इतलाक रखना (हिं॰ क्रि॰) लगना, मिलना।
इतलौं, इतनौ देखो।
इतवरो (हिं॰) इतरौ देखो।
इतवार (हिं॰ पु॰) आदित्यवार, एकशम्बा, एतवार।
इतस्तत (सं॰ अव्य॰) इतश्च दिवम्। इधर-उधर, इस तर्फ़ उस तर्फ़।

"मनोरामतरुवां दन मृतं ज्ञानचेतसाम्।
कुतमउनमृत्यानामितयं तव यावताम्॥" (हितोपदेश)

इतस् (सं॰ अव्य॰) इदम् तसिल्। १ इस स्थानमें यहां, इस जगह। २ इहलोकमें, इस दुनियामें।
इतस्ततः (सं॰ अव्य॰) इदम्-तद्-त्रसिल्। नाना स्थानपर, इधर-उधर, यहां वहां।
इताति (हिं॰) इतायत देखो।
इताब (अ॰ पु॰) १ क्रोध, गुस्सा। २ निन्दा, मला-मत, भिड़की।
इताब-खिताब (अ॰ पु॰) क्रोधयुक्त शब्द, गुस्सेकी बात।
इतायत (अ॰ स्त्री॰) अधीनता, मातहती।
इतायत करना (हिं॰ क्रि॰) १ आज्ञा मानना, हुक्म बजा लाना। २ आदर देना, झुकना।
इतानी, इतनी देखो।
इति (सं॰ अव्य॰) इ-क्तिन्। १ अतएव, इससे। २ इसी हेतु, इसी सबबसे। ३ प्रकाश्य रूपसे, खुले तौर-पर। ४ निदर्शनपूर्वक, देख-सुनकर। ५ प्रकार, तरह। ६ अनुकर्षसे, पहली बातके मुवाफ़िक़। ७ समाप्तिमें, पूरा होनेपर। ८ स्वरूप, जैसे। ९ प्रक-रणपूर्वक, हिकायतसे। १० सान्निध्यमें, नज़दीक। ११ नियमपूर्वक, क़ायदेसे। १२ मतमें, रायसे। १३ प्रत्यक्ष, सामने। १४ अवधारणपूर्वक, सोच-समझ-के। १५ व्यवस्थासे, तजवीज़ करके। १६ परामर्श द्वारा, मशौरतसे। १७ मानपूर्वक, इज़्ज़तसे। १८ इसी प्रकार, इस तरह। १९ प्रकर्षमें, ज़ोरसे। २० उपक्रम-पूर्वक, सिलसिलेमें। प्रकृत रूपसे इति शब्द कहे या विचारे हुये विषयको बताता और पूर्वगामी शब्दपर प्रभाव डालता है। ब्राह्मणमें यह श्रोताको समझी हुयी रीतिका कारण दिखाता है। उद्धृत वाक्यमें इससे प्रमाणित होता, पूर्व विषय किसी अन्य लेखक या ग्रन्थकारका कहा है। कभी-कभी इति एक ही विषयके विभिन्न शब्द जोड़ता है। किसी ग्रन्थकारके नाममें लगनेसे यह क्रियाविशेषण हो जाता है।

(स्त्री॰) भावे क्तिन्। २१ गमन, चाल। २२ ज्ञान, समझ। २३ मुनिविशेष।
इतिक (सं॰ त्रि॰) इतं गतिरस्त्यस्येति, ठन्। १ गमन विशिष्ट, चलनेवाला। (पु॰) २ जातिविशेष।
इतिकथ (सं॰ त्रि॰) इति इत्थं कथा यस्य, बहुव्री॰। १ अश्रद्धेय, न मानने लायक। २ नष्ट, बरबाद। अर्थशून्य वाक्यका वक्ता इतिकथ कहाता है।
इतिकथा (सं॰ स्त्री॰) इति इत्थं कथा। अर्थशून्य कथा, वेहूदी बात।
इतिकरण (सं॰ क्ली॰) इति शब्द।
इतिकर्तव्य (सं॰ त्रि॰) इति इत्थं कर्तव्यम्, सुप्-सुपा समा॰। १ नियमानुसार करने योग्य, क़ायदेके मुवाफ़िक़ किया जानेवाला। (क्ली॰) २ धर्म, फ़र्ज़।
इतिकर्तव्यता (सं॰ स्त्री॰) इतिकर्तव्यस्य भावः, इति-कर्तव्य-तल्-टाप्। धर्म, फ़र्ज़, वाजिबात्।
इतिकर्तव्यतामूढ़ (सं॰ त्रि॰) आकुल, गूंगा बना हुआ, जिसे अपना काम बिलकुल समझ न पड़े।
इतिकार्यता, इतिकर्तव्यता देखो।
इतिकृत्यता, इतिकर्तव्यता देखो।
इतिथ (वै॰ त्रि॰) ऐसा-वैसा, एक न एक।
इतिमात्र (सं॰ त्रि) इति स्वार्थे मात्रच्। केवल इतना ही, इससे काम न ज़्यादा।
इतिवत् (सं॰ अव्य॰) एक ही प्रकार, एक ही तरह।
इतिवृत्त (सं॰ क्ली॰) इत्थं वृत्तम्, सुप्सुपा समा॰। १ पुरावृत्तान्त। २ ऐसा ही चरित्र, इसी क़िस्मका हाल। ३ इतिहास, तवारीख़। इतिहास देखो।

इतिश (सं० पु०) एक ऋषि। इनके गोत्रापत्यको ऐतिशायन कहते हैं।

इतिह (सं० अव्य०) एवं ह किल, द्वन्द्व-समा०। पुराणानुसार, निःसन्देह इस प्रकार, हकीकतमें इसी तरह।

इतिहास (सं० पु०) इतिह पुरावृत्तं आस्ते अस्मिन्; इतिह-आस-घञ्, ६-तत्। पुरावृत्त, प्राचीन आख्यान, तवारीख। पुरावृत्तकथा ही इतिहास है। इसे अष्टादश शास्त्रके अन्तर्गत मानते हैं। "ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानि।" (यजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण १४।५।४।१०)

उपरोक्त ब्राह्मण और अपरापर प्राचीन ग्रन्थमें इतिहास और पुराण वाक्यका उल्लेख देख अति प्राचीन कालसे इतिहास और पुराण नामके स्वतन्त्र ग्रन्थकी विद्यमानता समझ पड़ती है।

अथर्व-संहिता (१५।६।४), और छान्दोग्योपनिषद् (७।१।१) मध्य इतिहासका उल्लेख पाते हैं। छान्दोग्योपनिषत् तथा कौटिल्यके अर्थशास्त्रमें इतिहास पञ्चमवेद कहकर निर्दिष्ट हुआ है। महाभारतकार कृष्णद्वैपायनने कहा है—

"धर्मार्थकाममोक्षाणामुपदेशसमन्वितम्।
पूर्ववृत्तकथायुक्तमितिहासं प्रचक्षते॥"

जिसमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका उपदेश एवं पुरावृत्त कथा रहता, वह इतिहास कहाता है।

विष्णुपुराणकी टीकामें (३।४।१०) श्रीधरस्वामीने भी ऐसा और एक प्राचीन वचन उद्धृत किये हैं—

"आर्षादि बहुव्याख्यानं देवर्षिचरिताश्रयम्।
इतिहासमिति प्रोक्तं भविष्याद्भुतधर्मयुक्॥"

ऋषिप्रोक्त बहु व्याख्यान, देवर्षिचरित तथा अद्भुत धर्मकथादि जिसमें हो वह इतिहास है।

महात्मा चाणक्यने निर्देश किया है—"पुराणमितिवृत्तमाख्यायिकोदाहरणं धर्मशास्त्रं अर्थशास्त्रं चेतिहासः।" (कौटिलीय अर्थशास्त्र) पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र यह सब ही इतिहास हैं।

इतिहासमें चतुर्वर्ग फल-लाभकी कथा है; अतएव इतिहास पञ्चमवेद स्मृतिमें कीर्तित हुआ और इसी लिये स्मरणातीत कालसे भारतमें इतिहासका समादर भी होता आया। गृह्यसूत्र तथा मन्वादि धर्मशास्त्रमें श्राद्धादि पितृकार्यमें इतिहास और पुराण सुनानेकी जो व्यवस्था लिखी, उसका कारण भी यही है। यथा—

"आयुष्मता कथाः कीर्तयन्तो माङ्गल्यानीतिहासपुराणानीत्याख्यापयमानाः।" (आश्वलायनगृह्यसूत्र ४।५)

"स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैव हि।
आख्यानानीतिहासांश्च पुराणान्यखिलानि च॥" (मनु ३।७२)

महाभारतमें लिखा है—

"आरण्यकञ्च वेदेभ्य ओषधिभ्योऽमृतं यथा।
ह्रदानामुदधिः श्रेष्ठो गौर्वरिष्ठा चतुष्पदाम्॥
यथैतानीतिहासानां तथा भारतमुच्यते।
यश्चैनं श्रावयेच्छ्राद्धे ब्राह्मणान् पादमन्ततः॥
अक्षय्यमन्नपानं वै पितॄंस्तस्योपतिष्ठते।
इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्॥" (आदिपर्व, १५०)

अर्थात् वेदोंमें जैसे आरण्यक, ओषधियोंमें अमृत, जलाशयोंमें समुद्र और चतुष्पदोंमें गौ श्रेष्ठ है, वैसा ही इतिहासोंमें भारत श्रेष्ठ है। जो व्यक्ति श्राद्धके समय ब्राह्मणसे इस भारतका अन्ततः एक चरण भी सुन पाता उसका दिया अन्नपान पितृलोकमें अक्षय होता है। इतिहास और पुराणोंके द्वारा वेदका ही अर्थ प्रकाशित होता है।

उद्धृत महाभारतीय श्लोकसे जान पड़ता, कि महाभारत हमारा इतिहास है, इसके पूर्व भी बहु इतिहास रहा उनमें भारत श्रेष्ठ इतिहास कह परिचित हुआ था। आश्वलायन-गृह्यसूत्रके (३।४।४) "*भारत-महाभारत-धर्माचार्याः*" इत्यादि वचनसे मालूम होता है, उस समय 'भारत' और 'महाभारत' नाममें विभिन्न इतिहास प्रचलित था। इस प्रचलित महाभारतसे भी जान सकते, कि पहले लक्ष श्लोकी महाभारत प्रचलित नहीं रहा, महाभारतमें ही है—

"चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावद्भारतं प्रोच्यते बुधैः॥"

व्यासदेवने प्रथम २४००० श्लोकमयी भारत-संहिता बनायी थी। वास्तविक वर्तमान प्रचलित संस्करण-समूहमें उस आदि संहिताकी अनेक कथा रहते भी

उपाख्यान प्रभृतिके साथ बहुत अवान्तर विषय प्रविष्ट हो जानेसे आज महाभारतको कितने ही लोग इतिहास माननेसे हिचकते हैं। किन्तु जिन युरोपीय ऐतिहासिकोंके आदर्शपर हम वर्तमान कालके इतिहासका उपादान मानते, वह जानते हैं,—

"* * * * It is evident that Freeman's definition of history as 'past politics' is miserably inadequate. Political events are mere externals. History enters into every phase of activity, and the economic forces which urge society along are as much its subject as the political result. In short the historical spirit of the age has invaded every field." *Encyclopædia Britannica*, 11th. Ed. (1911), Vol. XIII, p 527.

'फ्रीमैनकी यह परिभाषा अतिशय अपर्याप्त आती, कि इतिहासकी गणना 'गत राजनीति'में जाती है। राजनीतिक काण्ड केवल बहिरङ्ग होते हैं। इतिहास व्यापारके प्रत्येक अंशको छूता है। निर्वाहसम्बन्धी बल राजनीतिक फलको भांति इतिहासका विषय बन जाता है। संक्षेपमें कहनेसे सामयिक इतिहासकी शक्तिने प्रत्येक क्षेत्रपर अपना प्रभाव डाला है।'

सुतरां पाश्चात्य वर्तमान ऐतिहासिकोंके मतसे महाभारतको भी इतिहास माननेमें कोई आपत्ति न पड़ेगी। हमारे आदि इतिहासके सार महाभारतमें ब्रह्माण्डकी उत्पत्तिसे स्थावर-जङ्गम सकल प्रकार सृष्टि-तत्त्व, देव ऋषि पितृ प्रभृति जीवका संक्षिप्त परिचय, भारतके प्राचीन राजवंशका विवरण, दुर्ग नगर तीर्थ-क्षेत्र प्रभृति समुदाय जीवस्थान, धर्मरहस्य, कामरहस्य, वेदचतुष्टय, योगशास्त्र, विज्ञानशास्त्र, धर्मार्थकाम-विषयक नाना शास्त्र और लोकयात्राविषयक आयुर्वेद धनुर्वेद आलोचित हैं। कहनेसे क्या! वर्तमान पाश्चात्य इतिहासविद् इतिहासका जैसा व्यापकत्व और विषयनिर्धारण ठहराते, महाभारतरूप भारतके प्राचीन इतिहासमें, वैसा ही आयोजन पाते भी हैं।

जो विषय ध्रुव सत्य रहता और प्रत्यक्ष वा परोक्ष प्रमाण द्वारा प्रतिष्ठित होता, वही इतिहास बनता है। इसीसे भगवान् शङ्कराचार्यने इतिहासका प्रामाण्य मान बता दिया है,—"इतिहासपुराणमपि पौरुषेयत्वात् प्रमाणान्तरमूलतामाकाङ्क्षते।" (शारीरकभाष्य १।३।३३)

अर्थात् इतिहास पुराणको भी पौरुषेय समझकर प्रमाणान्तरमूलता वा वेदके बाद गौणप्रमाण मानना पड़ेगा कैसे स्वीकार करेंगे। उत्तरमें शङ्कराचार्यने कहा है,—

"इतिहासपुराणमपि व्याख्यातेन मार्गेण सम्भवन् मन्त्रार्थवादमूलत्वात् प्रभवति देवताविग्रहादि प्रपञ्चयितुम्। प्रत्यक्षमूलमपि सम्भवति। भवति हि अस्माकमप्रत्यक्षमपि चिरन्तनानां प्रत्यक्षम्। तथा च व्यासादयो देवताभिः प्रत्यक्षं व्यवहरन्तीति स्मर्यते।"

अर्थात् इतिहास और पुराण जिस भावसे व्याख्यात हुआ, मन्त्र और अर्थवाद होनेसे वह देवता विग्रहादिके प्रपञ्चनिर्णयमें समर्थ है। इसका प्रत्यक्ष-मूलक होना भी सम्भवपर है। हमारे पक्षमें अप्रत्यक्ष रहते भी प्राचीनोंके लिये यह प्रत्यक्ष हुआ। इसीसे स्मृतिमें कहा, कि व्यासप्रभृतिने देवताओंके साथ प्रत्यक्षरूपसे व्यवहार किया था।

भारतका प्राचीन ऋषिगण समझते, जो प्रत्यक्ष-मूलक वा समसामयिक लोगोंके रचित रहता और जिसकी मौलिकताके सम्बन्धपर कुछ सन्देह उठने न पाता वही प्रकृत इतिहास कहाता था।

हमारे महाभारतीय इतिहासकी मौलिकता और प्रामाणिकता आजकलकी अवस्था देख विचारनेसे नहीं बनता। उसे भगवान् शङ्कराचार्य भी अच्छी-तरह देखा गये हैं। समसामयिकी घटना समसामयिक मनीषी द्वारा लिपिबद्ध हुयी थी। पुराकालकी सकल विक्षिप्त कथाको जिसने परवर्ती कालमें एकत्र सङ्कलन किया, उसीने व्यासदेव वा संग्रहकार नाम कमा लिया। हमारे प्राचीन इतिहासका अधिकांश विलुप्त वा विकृत पड़ जाना अत्यन्त दुःखका विषय है। अतिप्राचीन भारतका विशुद्ध इतिहास ढूंढ निकालना एकप्रकार दुःसाध्य व्यापार हो गया है। इसीसे वर्तमान ऐतिहासिक 'महाभारत'को इतिहास नहीं समझते। तथापि कितनी ही मिलावट रहते और प्रक्षिप्त उपकरण बढ़ते भी भारतवर्षीय पण्डित समाजमें महाभारत इतिहास ही कहाता है।

महाभारतीय युगके बाद भी लगातार इतिहास

अपने-अपने राजवंशके चरिताख्यायक वा सूतमागधादि द्वारा लिपिबद्ध होता था। किन्तु राष्ट्रविप्लवसे वह समुदाय बिगड़ गया। हमारे पुराणोंमें राजवंशके प्रसङ्गपर राजगणका नाम और राज्यशासनकाल मात्र मिलता है। विस्तृत इतिहास विलुप्त होते भी हमारे श्राद्धादि कार्यमें इतिहासपुराण अवश्यपाठ करनेसे अवधारित रहनेपर एककाल वह मिट नहीं सका। इसी कारण पुराणसे प्रकृत ऐतिहासिक युगके क्षीण कङ्कालका सन्धान लगता है।

पाश्चात्य पुराविद् बताते, कि मकदुनिया-वीर अलेक्सन्दरके समयसे ही प्रकृत प्रस्तावपर वैज्ञानिक प्रणालीमें भारतीय इतिहास-रचनाकी सूचना पाते हैं। तदनुसार अनेक ही मौर्याधिपत्यकालसे हमारे भारतके प्रकृत ऐतिहासिक युगका आरम्भ समझते हैं। समसामयिक लिपिसे इसका प्रमाण यथेष्ट मिला, कि उस समय वास्तविक पाश्चात्य और प्राच्य जगत्में धारावाहिक इतिहास रचनाका समादर बढ़ा था। बहुतसे लोग सोचते, कि भारतमें यवन वा ग्रीक-प्रभावके फल और आदर्शसे ही नाना शिलालेखका उत्कीर्ण होना देखते हैं। प्रवादानुसार उपाख्यान वा कल्पनाके हाथसे निष्कृति ले उसी समय प्रकृत घटना खोदी जाने लगी और साथ ही साथ भारतमें विज्ञान-सम्मत इतिहासकी भित्ति पड़ी। किन्तु पिपरावेमें एक खोदित शिलालेख निकला है। उसमें शाक्यबुद्धके भस्माधारपर निर्वाणके बाद जो लिखा गया, उससे भारतमें पारसिक वा यवन-प्रभाव-विस्तारके बहुत पहले समसामयिक घटना पत्थरपर खुदनेको पद्धतिके प्रचारका निदर्शन स्पष्ट हाथ लगा है। अलेक्सन्दरसे बहुत पहले नाना भावमें विभिन्न देशका इतिहास लिखा जाता था। उक्त विषय महापुराण-वर्णित राजवंशके विवरणमें ही प्रमाणित होता। अलेक्सन्दरके समय जिन सकल महात्माओंने भारत आकर यहांको कथा लिखी उनकी विवरणीसे भी कितनी ही बात चली है। अलेक्सन्दरके तिरोधान बाद ही मेगस्थेनिस दौत्यकार्यपर पाटलिपुत्रकी राजसभामें उपस्थित रहे। उन्हीं मेगस्थेनिसपर निर्भर कर प्राचीन पुराविद् आरियानने लिखा है,—"डाइओनिसस्से चन्द्रगुप्त पर्यन्त भारतीय राजन्यवर्गने ६०४२ वर्ष राजत्व रखा था। राजाओंकी संख्या एक-सौ तिरपन रही। फिर भी उक्त समयके मध्य तीन बार साधारणतन्त्र चला।"* इस विवरणीसे अच्छीतरह समझते—जिस समयसे विज्ञानसम्मत ऐतिहासिक युगका सूत्रपात मानते, उससे छः हजार वर्ष पूर्वकाल होते भी धारावाहिक रूपमें भारतका इतिहास लिखा देखते हैं। आजकल उसका अधिकांश विलुप्त है। महाभारत और पुराणमें क्षीण स्मृतिमात्र मिलता है। इसी कारण, महाभारत और पुराण हमारे भारतके प्राचीन इतिहासका अङ्ग समझा जाता है। परवर्ती काल नाना स्थानसे विभिन्न सम्प्रदायके जो शत-शत शिलालेख, ताम्रपत्र वा सामयिक इतिवृत्त निकला, उससे भारत-पुराणका प्रभाव सुस्पष्ट झलका है।

प्रारम्भमें ही कहा इतिहासकी *व्यापकता* अति विशाल और विस्तृत है। स्थावर-जङ्गम, जीव-अजीव और मूर्त-अमूर्त क्या—ऐसा कौन पदार्थ होता, जिसका इतिहास नहीं रहता। साहित्य, विज्ञान, दर्शन, तथा शिल्पकलादि सभीका इतिहास विद्यमान है। इसीसे आधुनिक पाश्चात्य ऐतिहासिक डाक्टर जे, टि, सोटवेलने कहा है,—

"History in the wider sense is all that has happened, not merely all the phenomena of human life, but those of the natural world as well. It includes everything that undergoes change; and as modern science has shown that there is nothing absolutely static, therefore the whole universe and every part of it, has its history. * * * Solids are solids no longer. The universe is in motion in every particle of every part, rock and metal merely a transition stage between crystallization and dissolution. This idea of universal activity has in a sense made physics itself a branch of history. It is the same with the other sciences—especially the biological division, where the doctrine of evolution has induced an attitude of mind which is distinctly historical."†

* Arrian's Indica.

† *Encyclopaedia Britannica*, 11th ed Vol. XIII, p. 527.

इदङ्कार्या (सं० स्त्री०) दुरालभा लता, जवासा।
इदद्दसु (वै० त्रि०) इसमें और उसमें सम्बद्ध, इसका और उसका अमीर।
इदन्तन (सं० त्रि०) यस्मिन् काले भवः, निपातनात् ख्यु ल् तुट् च। इदानीन्तन, आधुनिक, नया।
इदन्ता (सं० स्त्री०) अस्य भावः, इदम्-तल्। अङ्गुल्यादि द्वारा बतानेका विषय, गिनाख्त, पहचान।
इदम्प्रकार (सं० अव्य०) इस रीतिसे, ऐसे तौरपर।
इदम्प्रथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहले-पहल काम करनेवाला।
इदम्मय (सं० पु०) इदम्-मयट्। इसके द्वारा प्रस्तुत, जो इससे बना हो।
इदा (वै० अव्य०) इदम्-दाच् वेदे निपातनात्। इस समय, अब।
इदानीं (सं० अव्य०) इदम्-दानीम्। दानीं च। पा ५।३।१८। अधुना, सम्प्रति, अब, इस समय।
इदानीन्तन (सं० त्रि०) वर्तमान, मौजूद, नापायदार।
इदावत्सर (सं० पु०) इदा इति वत्सरः, शाकतत्। पांच संवत्सरादिके मध्य एक। संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और उदावत्सर पांच वर्ष होते हैं। संवत्सरमें तिल, परिवत्सरमें यव, इदावत्सरमें अन्न एवं वस्त्र, अनुवत्सरमें धान्य और उदावत्सरमें रौप्य दान करनेसे अधिकतर फल मिलता है। नभोमण्डल सूर्य और चन्द्रमण्डलके साथ जो समग्रकाल बिताता, उसमें शुक्ल प्रतिपत्‌को सूर्यसंक्रान्ति पड़ने और सौर तथा चान्द्रमासका एककालीन उपक्रम लगनेसे संवत्सर आता है। फिर सौर मास पड़नेसे वत्सरमें छः दिन बढ़ते और चान्द्र मास आनेसे छः दिन घटते हैं। इसी प्रकार बारह दिनके व्यवधानसे दोनोंका अग्र पश्चात् भाव कम हो जाता है। ऐसे ही पांच वत्सर बीतनेपर दो मलमास पड़ते हैं। फिर षष्ठ वत्सर संवत्सर होता है। समकालमें लगने और सौर तथा चान्द्रमासयुक्त रहनेवाले वत्सरको संवत्सर कहते हैं। सौर तथा चान्द्रमास आरम्भ होते जिस वत्सर विषम मास आता, वह परिवत्सर कहाता है।

इदावत्सरीय (सं० त्रि०) इदा वत्सर-सम्बन्धीय, इदावत्सरवाला।
इदुवत्सर, इदावत्सर देखो।
इद्दत (अ० स्त्री०) शास्त्रविहित परीक्षाका समय, क़ानूनी जांचका वक़्त। पतिकी मृत्यु होनेपर स्त्रीको दूसरा विवाह करनेके लिये चालीस दिन राह देखना पड़ती है। इसीको इद्दत कहते हैं। इद्दतसे स्त्रीके गर्भ रहने या न रहनेका पता लगता है।
इद्दतमें बैठना (हिं० क्रि०) एकान्तमें रहना, किसी पुरुषसे न मिलना।
इद्ध (सं० क्ली०) इन्ध भावे क्त। १ रौद्र, धूप। २ दीप्ति, चमक। ३ आश्चर्य, ताज्जुब। (त्रि०) ४ निर्मल, साफ़। ५ दग्ध, जला हुआ। ६ प्रदीप्त, रौशन। ७ आश्चर्यमय, अनोखा। ८ अप्रतिहत, आज़ाद, जो रुका न हो।

"तमिद्धमाराधयितुं सकर्णकैः।" (माघ)

इद्धमन्यु (सं० त्रि०) क्रुद्ध, ग़ुस्सेमें आया हुआ, जिसके ग़ुस्सा सुलग उठे।
इद्धा (सं० अव्य०) प्रकाश्य, खुले तौरपर।
इद्धाग्नि (वै० त्रि०) प्रदीप्त अग्नियुक्त, जिसके आग जले।
इद्वत्सर, इदावत्सर देखो।
इद्वत्सरीय, इदावत्सरीय देखो।
इध् (सं० त्रि०) प्रदीप्त, चमकता हुआ। यह शब्द समासके अन्तमें आता है, जैसे—अग्नीध।
इधर (हिं० क्रि० वि०) १ अब, यहां, इस तर्फ़, इस राह, इस जगह। २ इहलोकमें, इस दुनियापर।
इधर-उधर (हिं० क्रि० वि०) १ इतस्ततः, जहां-तहां। २ चारो ओर, सब तर्फ़, नीचे ऊपर। ३ दाहने-बायें, आगे-पीछे।
इधरसे उधर करना (हिं० क्रि०) स्थानमें परिवर्तन डालना, सरकाना, बेजगह रख देना।
इधरसे उधर होना (हिं० क्रि०) १ खो जाना, चल पड़ना, लम्बो लेना। २ स्थानच्युत किया जाना, बेतरतीबीमें पड़ना। ३ लुढ़कना, उलट जाना।
इध्म (सं० क्ली०) इध्यतेऽग्निरनेनेति, इन्ध-मक्।

"इषि युधीन्धिदसिश्याधृभ्यो मक्।" उण् १।१४४। १ यज्ञीय समिध, होमकी लकड़ी। (पु०) २ अग्निदीपनकाठ, आग जलानेकी लकड़ी। ३ प्रियव्रतके पुत्र। (भागवत)

इध्मजिह्व (सं० पु०) इध्मं काष्ठं जिह्वेव यस्य, बहुव्री०। १ अग्नि, लकड़ीकी जीभ रखनेवाली आग। २ प्रियव्रतके एक पुत्र।

इध्मप्रव्रश्चन (सं० पु०) वृक्षादनी, लकड़ी काटनेका कुल्हाड़ा।

इध्मवाह (सं० पु०) इध्मं समिधं वहति, इध्म-वह-विण्। अगस्त्यके पुत्र दृढ़स्यु। महातेजा अगस्त्यके पुत्रने बाल्यकाल होसे पितृभवनमें रहने और पिताके होमकाठका भार उठानेसे इध्मवाह नाम पाया है।

इध्या (सं० स्त्री०) प्रकाशन, सुलगाव।

इन् (सं० पु०) इनोति गच्छतीति, इन्-नक्। "इण्सिञ्जिदीङुष्यविभ्यो नक्। उण् ३।२।" १ राजा, बादशाह, नवाब। २ प्रभु, मालिक। ३ सूर्य। ४ हस्तानक्षत्र। ५ ईश्वर (वै० त्रि०) ६ योग्य, लायक़। ७ शक्तिशाली, ताक़त-वर। ८ प्रथित, मशहूर।

"इनो राजानो पतिरिनः पुष्टीनां सखा।" (ऋक् १।०२६।७)

(हिं० सर्व०) ९ 'इस'का बहुवचन।

इनकम (अं० स्त्री०=Income) अर्थप्राप्ति, आमदनी, कमायी।

इनकम टैक्स (अं० स्त्री०=Incom-tax) अर्थप्राप्तिका शुल्क, आमदनी पर लगनेवाला महसूल।

इनकार (अ० पु०) १ निषेध, नहीं। २ प्रत्याख्यान, खिलाफ़ बयानी। ३ मतिभेद, नाराज़ी। ४ निवर्तन, दस्तबरदारी। ५ आक्षेप, एतराज़।

इनकार करना (हिं० क्रि०) १ निषेध निकालना, न मानना। २ प्रत्याख्यान पहुंचाना, झुटलाना। ३ निवारण लगाना, इजाज़त न देना। ४ अपह्नव अड़ाना, दस्तबरदार होना। ५ विरोध बढ़ाना, बात काटना। ६ परित्याग देना, छोड़ना।

इनकार करनेवाला (हिं० पु०) बाधक, अपवाधक, मुनकिर, सरकश।

इनकार दावा (अ० पु०) स्वत्वप्रतिपादननिषेध, मुताल्बेसे दस्तबरदारी।

इनफ़िकाक (अ० पु०) परिक्रय, उद्धार, खलासी, छुटकारा। क़ानूनमें यह शब्द बन्धक छोड़नेका अर्थ रखता है।

इनफ़िसाल (अ० पु०) निर्णय, निष्पत्ति, फैसला, चुकौता।

इनफ़्लुयेञ्जा (अं० पु०=Influenza) प्रबल श्लेष्मा, गहरा ज़ुकाम। यह एकाएक उत्पन्न हो जाता और साथ ही अशक्त बना देनेवाला ज्वर चढ़ आता है। इनफ़्लुयेञ्जा प्रायः महामारीका रूप बनाता और समाजके अनेक व्यक्तियोंपर शीघ्र अपना प्रभाव जमाता है।

इनशा (अ० स्त्री०) १ लिपि, लिखावट। २ भाषा-सरणि, इबारत।

इनष्टिट्यूट (अं० स्त्री०=Institute) १ विधि, नियम, क़ायदा। २ समाज, अञ्जुमन।

इनष्ट्रुमेण्ट (अं० पु०=Instrument) १ यन्त्र, आला, हथियार। २ कारण, सबब। ३ कारक, ग्रवस-दरमियानी, बिचौलिया। ४ लेखपत्र, क़बाला।

इनसाफ़ (अ० पु०) धर्म, न्याय, अदल, दियानत-दारी।

इनसाफ़ करना (हिं० क्रि०) न्याय निकालना, दाद देना।

इनसाफ़ चाहना (हिं० क्रि०) न्याय मांगना, दावेदार होना।

इनसाफ़से (हिं० क्रि० वि०) न्यायपूर्वक, ब-इनसाफ़, ठीक-ठीक।

इनस्पेक्टर (अं० पु०=Inspector) निरीक्षक, निगहबान्, देखने-सुननेवाला अफ़सर।

इनानी (सं० स्त्री०) वटपत्री वृक्ष।

इनाम (अ० पु०) १ पारितोषिक, कामका फल। २ प्रीतिदाम, शुकराना, भेंट।

इनाम-इकराम (अ० पु०) दान-दाक्षिण्य, माल-पान।

इनामका पैसा (हिं० पु०) पारितोषिक वृत्ति, पलटेका भत्ता।

इनामदार (अ० पु०) निष्कर भूमिका अधिपति, बेलगान जमीनका मालिक।

इनाम देना (हिं॰ क्रि॰) पारितोषिक बांटना, पलटा पहुंचाना।
इनाम पाना (हिं॰ क्रि॰) पारितोषिक मिलना, कामका नतीजा निकलना।
इनायत (अ॰ स्त्री॰) १ अनुग्रह, मेहरबानी। २ साहाय्य, मदद।
इनायत करना (हिं॰ क्रि॰) १ देना, बख़्शना। २ कृपा देखाना, मेहरबानी लाना।
इनायत रखना (हिं॰ क्रि॰) कृपा देखाना, मेहरबानीकी नजर डालना।
इनायती (अ॰ वि॰) दिया हुआ, जो बख़्शा गया हो।
इनारा, इंदारा देखो।
इनु (सं॰ पु॰) गन्धर्व विशेष।
इने-गिने (हिं॰ क्रि॰) अल्प, परिमित, चन्द, थोड़े, भूले-भटके।
इन्तिक़ाम (अ॰ पु॰) प्रत्यपकार, बदला।
इन्तिक़ाम लेना (हिं॰ क्रि॰) प्रत्युपकार पहुंचना, बदला चुकाना।
इन्तिक़ाल (अ॰ पु॰) १ स्थानान्तर प्रापण, तहवील। २ प्रवासन, जलावतनी, देशनिकाला। ३ उत्सारण, सरकाव। ४ समर्पण, पहुंचाव। ५ मृत्यु, मौत।
इन्तिज़ाम (अ॰ पु॰) १ रचना, आरास्तगी, सजावट। २ प्रणयन, कारवायी। ३ उपाय, तदबीर, ढङ्ग। ४ राजव्यवस्था, क़ानून। ५ विधि, क़ायदा।
इन्तिज़ाम ख़ानगी (अ॰ पु॰) गृहरचना, घराव सजावट।
इन्तिज़ार (अ॰ पु॰) अपेक्षा, भरोसा।
इन्तिज़ार करना (हिं॰ क्रि॰) अपेक्षा रखना, राह देखना।
इन्तिहा (अ॰ स्त्री॰) अत्यन्तता, परमावधि, अख़ीर, किनारा, छोर।
इन्थिहा—ताजकोक्त मुथहा। इसका आनयन प्रकारादि नीलकण्ठ-ताजकमें लिखा है—मुथहा अपने-अपने जन्म लग्नसे प्रतिवत्सर क्रमशः एक-एक स्थान भोग करती है। सूर्य तष्टगत एवं अरदयुक्त हो स्व-स्व जन्म लग्नमें व्याप नचवगणसे प्रथम पड़ता है। इन्थिहा प्रत्यह अनुपाद क्रमसे अरलिप्तके साथ बढ़ती है। किसी-किसीके मतानुसार यह मासमें डेढ़ अंशपर व्याप्त होती है। स्वामिसौम्यतामें सौम्यता रहती और क्रूर दृष्टिसे भय तथा रोगकी वृद्धि लगती है। इसके भावावलोकनका फल वर्षलग्नमें सुखप्रद और अन्त्यरिपुरन्ध्रमें अशुभ निकलता है। पुण्यक्रमें एवं आयगामी होनेसे मुथहा स्वामित्व और अपुण्यक्रमें पड़नेसे उद्यमवश धन देती है। यह शरीरस्थ होनेसे शत्रुक्षय, मनस्तुष्टि लाभ, प्रतापवृद्धि, राजप्रसाद, शरीर पुष्टि, विविध उद्यम और सुखप्रदान करती है। अर्थभावमें पड़नेसे मुथहा उत्साहके साथ अर्थ लाती, यशः फैलाती, बन्धु मिलाती, मान बढ़ाती, उत्तम खाद्य पहुंचाती और सुख प्रभृति उपजाती है। पराक्रम हेतु वित्त, यशः एवं सुखप्राप्ति और सौन्दर्यसुख, देवता-ब्राह्मणभक्ति तथा दूसरेके उपकारकी प्रवृत्ति होती है। इसके तृतीय लग्नमें जानेसे शरीर पुष्ट पड़ता, कान्तिका प्रभाव बढ़ता और राजाश्रय हाथ पड़ता है। इन्थिहाके सुखभावमें पहुंचनेसे शत्रुभय, आत्मीय विरोध, मनस्ताप, निरुद्यम, लोकापवाद, पीड़ाभार और दुःखकी वृद्धि होती है। जब यह पञ्चम स्थानमें आती; तब सदबुद्धि सौख्य, पुत्र, धन, प्रताप, विविध विलास, देवता-ब्राह्मण-भक्ति एवं राजप्रसाद बढ़ाती है। मुथहाके अरिगत होनेसे अङ्गमें क्लम पैठता, शत्रु बढ़ता, भय लगता, रोग उपजता, और चढ़ता, राजा भड़कता, कार्य बिगड़ता, अर्थ घटता, दुर्बुद्धिका प्रभाव पड़ता और अनुताप उठता है। स्मरमें आनेसे यश स्त्रीपुत्रादि व्यसन लगाती, शत्रुभय देखाती, उत्साह घटाती, धन एवं धर्म बिगाड़ती, शारीरिक पीड़ा उपजाती और मोह तथा विरुद्ध चेष्टा लगाती है। मुथहाके मृत्युस्थ होनेसे शत्रु तथा चोरका भय लगता, धर्म एवं अर्थ घटता, अत्यन्त शोक उपजता, पीड़ाका प्रभाव बढ़ता, सैन्य बिगड़ता और दूरदेश जाना पड़ता है। भाग्यगत होनेसे यह प्रभुत्व बढ़ाती, धनोपार्जन कराती; राजाके निकट आनन्द उठाती, स्त्रीपुत्र सुखलाभ देती,

देवादि-भक्ति उपजाती; यश: फैलाती और धन दिलवाती है। भ्रमरस्थ सुथहामें राजप्रसाद, लोकोपकार, सत्कर्मलाभ, देवादि-अर्चन, यश: और धन होता है। इसके लाभगत होनेपर विलास, सौभाग्य, आरोग्य, सन्तोष, राजसेवामें धन, सद्वस्तु और पुत्रादि मिलता है। सुथहाके व्ययमें आनेसे अधिक व्यय, कुसंसर्ग, रोग, कार्यनाश, धर्म एवं अर्थक्षय और सद्व्यक्तिके साथ बैर बढ़ता है। इसी प्रकार क्रूर तथा शुत दृष्टिसे भी इन्थिहाका फल शुभाशुभ होता है। रविसे युक्त वा दृष्ट होनेपर यह राज्य, मङ्गल और अतिशय गुणप्राप्ति करती है। मङ्गलसे सुथहाके युक्त वा दृष्ट होनेपर पित्त एवं उष्ण बढ़ता, अस्त्राघात लगता और रक्तप्रकोप उठता है। शनिके विषयमें भी उक्त ही फल मिलता है। सोमसे युक्त वा दृष्ट होनेपर यह धर्म, यश:, आरोग्य, और सन्तोष बढ़ाती है। पापग्रहके साथ सुथहा रहते दुःख उपजता है। बुध वा शुक्र युक्त अथवा दृष्ट होनेपर यह स्त्री, सद्बुद्धि, सुख, धर्म और अतुल यशोलाभ करती है। बृहस्पतिके साथ सुथहा आने वा तद्युक्त नक्षत्रसे देखे जानेपर स्त्री, सद्बुद्धि, पुत्र, सुख, स्वर्ण, रौप्य, वस्त्र, मणि और मुक्तादि लाभ होता है। शनिके गृहमें पड़ने अथवा उसके द्वारा देखे जानेपर यह वातरोग, मानभङ्ग और अग्नि धनक्षयादि करती है। किन्तु गुणयोगसे धन मिलता है। राहुसे युक्त वा दृष्ट होनेपर सुथहा धन, यश:,सुख,धर्म और उन्नत भाव बढ़ाती है। चन्द्रयोगसे सत्पद और स्वर्ण रत्नादि प्राप्त होता है। राहुके भोग्य एवं पृष्ठगत लव और सप्तम नक्षत्रयुक्त पुच्छको देखकर शुभाशुभ फल कहना चाहिये। सुथहाके शुभपृष्ठ एवं राहुपुच्छ गत होनेसे आपद् आती और शत्रुभय तथा दुःखकी मात्रा बढ़ जाती है। पापयोगमें दर्शनसे अर्थ और सुख बिगड़ता है। जो जन्मकालमें बली और वत्सरान्तमें दुर्बल होता, उसके लिये एक ही अशुभ ठहरता है। जिसकी दोनो ओर समान पड़ती, उसके फलकी मीमांसा भी नहीं घटती-बढ़ती। षष्ठ, अष्टम वा शेष अथवा इसी पृथिवीपर इन्थिहाधिपतिके अन्तुगत किंवा क्रूर होनेसे अदृष्ट अशुभ मिला करता है। यह क्रूरताश्र चतुर्थ यदि अस्तगत मङ्गलजनक नहीं पड़ती, तो रोगवृद्धि और धनहानि होती है। अष्टमाधिपके साथ सुथहा युक्त और अदृष्ट सुताख्य दृष्टिसे शुभ न होनेपर दोनोमें मरण तथा एक योगमें मरणतुल्य क्लेश मिलता है। सुथहा वा उसका अधिप लग्नमें शुभलक्षणयुक्त पड़नेसे वर्षारम्भ पर शुभदायक और वर्षके पीछे अशुभ है।

इन्दम्बर (सं० क्ली०) नीलपद्म, आस्मानी कमल।

इन्दर (हिं०) इन्द्र देखो।

इन्दव (हिं०) ऐन्दव देखो।

इन्दाम्बर (सं० क्ली०) इन्दं बहुमूल्यं अम्बरं नीलवस्त्रमिव, उप० कर्मधा०। १ नीलपद्म, आस्मानी कमल। (पु०) २ भ्रमर, भौंरा।

इन्दि (सं० स्त्री०) इदि-इनि वा ङीप्। लक्ष्मी, दौलत।

इन्दिन्दिर (सं० पु०) इन्दि-किरच् निपातनात्। मधुप, भौंरा।

इन्दिया (अ० पु०) १ मत, राय। २ मनोयोग, मनशा, इरादा। (अं० स्त्री०=India) ३ भारतवर्ष।

इन्दिरा (सं० स्त्री०) इदि-किरच्-टाप्। लक्ष्मी, विष्णुप्रिया।

इन्दिरामन्दिर (सं० पु०) १ इन्दिरायां मन्दिरं आश्रय-इव। विष्णु, लक्ष्मीपति, भगवान्। (क्ली०) २ लक्ष्मीगृह।

इन्दिरालय (सं० क्ली०) १ इन्दिराया: आलय:, ६-तत्। नीलोत्पल,लक्ष्मीके रहनेका स्थान पद्म। २ लक्ष्मीगृह।

इन्दिरावर (सं० क्ली०) इन्दिराया: श्रीया: वरं प्रियम्। नीलपद्म, आसमानी कमल।

इन्दी, इन्दि देखो।

इन्दीवर (सं० क्ली०) इन्दि-ङीप् इन्दी तस्या: वरं वरणीयं प्रियम्। १ नीलपद्म, आसमानी कमल। २ साधारण उत्पल, मामूली कमल। ३ पद्मलता, गुलाबका झाड़।

"इन्दीवरश्यामं रामं कमललोचनम्।" (रामायण)

इन्दीवरा, इन्दीवरी देखो।

इन्दीवरिणी (सं० स्त्री०) इन्दीवराणां समूह:, इनि-ङीप्। पद्मलता, कमलकी बेल।

इन्दीवरी (सं० स्त्री०) इन्दीवरमस्त्यस्याः, अच्-ङीप्। १ शतमूली, सतावर। नीलपद्म सदृश पुष्प निकलनेसे शतमूलीका नाम यह पड़ा है। २ अज-शृङ्गी, मेढ़ासींगी। ३ इन्द्रचिर्भिटी, कुंदुरु। ४ कदली-वृक्ष, केला।

इन्दीवार (सं० पु०) नीलपद्म, आसमानी कमल।

इन्दु (सं० पु०) उनत्ति अमृतधारया भुवं क्लिन्नां करोति, उन्द-उ। उन्दे रिचादेः। उण् १।११। १ चन्द्र, चांद। "शमति तव सुवेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय।" (शृङ्गारतिलक) २ मृग-शिरा नक्षत्र। इस नक्षत्रका देवता चन्द्र है। ३ एक संख्या, एकायी। ४ कपूर, काफूर।

इन्दुक (सं० पु०) इन्दु स्वार्थे क। अश्मन्तक वृक्ष। इसके तन्तुसे ब्राह्मण अपनी मौञ्जी-मेखला बनाते हैं।

इन्दुकक्षा (सं० स्त्री०) इन्दोश्चन्द्रस्य कक्षा। राशि-चक्रस्थ चन्द्रमण्डल। चन्द्रकक्षाका परिमाण ३२४००० योजन है। चन्द्र देखो।

इन्दुकमल (सं० क्ली०) इन्दुरिव शुक्लं कमलम्, उप० कर्मधा०। शुक्लकमल, कुमुद, बघोला, कोका-बेली।

इन्दुकर (सं० पु०) चन्द्रकिरण, चांदनी।

इन्दुकला (सं० स्त्री०) इन्दोः कला अंशः। चन्द्र-रेखा, चांदका सोलहवां हिस्सा। इन्दुकी सोलह कला यह हैं,—१ पूषा, २ यशा ३ सुमनसा, ४ रति, ५ प्राप्ति, ६ धृति, ७ ऋद्धि, ८ सौम्या, ९ मरीचि, १० अंशुमालिनी, ११ अङ्गिरा, १२ शशिनी, १३ छाया, १४ सम्पूर्णमण्डला, १५ तुष्टि और १६ अमृता।

चन्द्रकी प्रथम कला अग्नि, द्वितीय सूर्य, तृतीय विश्वेदेवगण, चतुर्थ वरुण, पञ्चम वषट्कार, षष्ठ इन्द्र, सप्तम स्वर्गीय ऋषि, अष्टम विष्णु, नवम यम, दशम वायु, एकादश उषा, द्वादश अग्निष्वात्तादि पितृगण, त्रयोदश कुबेर, चतुर्दश शिव और पञ्चदश ब्रह्मा पी जाते हैं। किन्तु षोड़श कला सर्वदा ही जलमें प्रविष्ट रहती है। ओषधिमें परिणत होनेसे अमावस्याको चन्द्र देख नहीं पड़ता। फिर उक्त ओषधि गोचर लेती हैं। इससे दुग्ध और घृत उपजता है। उसी दुग्धघृतादिसे ब्राह्मण यज्ञ करते हैं। यज्ञके फलसे अमृत निकलता है। अमृतसे फिर चन्द्रकला पूर्ण हो जाती है। (कालमाधव)

इन्दुकलावटिका (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, दवाकी एक गोली। शिलाजतु, लौह एवं स्वर्ण समभाग डाल तुलसीके रसमें घोंटे और रत्ती-रत्तीकी गोली बना डाले। यह मसुरिका, विस्फोटक, लोहितज्वर, सर्वप्रकार व्रण और शीतला रोगके लिये विशेष उपकारी होती है।

इन्दुकलिका (सं० स्त्री०) इन्दुरिव शुभ्रा कलिका यस्याः, बहुव्री०। १ केतकी वृक्ष, केवड़ेका पेड़। २ श्वेत केतकी।

इन्दुकान्त (सं० पु०) इन्दुः कान्तः मनोज्ञः यस्य, बहुव्री०। चन्द्रकान्त मणि, हजर-उल्-कमर, चन्दर-गांठ। २ चन्द्रकला।

इन्दुकान्ता (सं० स्त्री०) इन्दुः कान्तः पतिः यस्याः, बहुव्री०। १ रात्रि, रात। इन्दुः कान्तइव प्रकाशक-त्वात् यस्याः। २ केतकी, केवड़ा। ३ चन्द्रप्रिया, रोहिणी।

इन्दुखण्डा (सं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, ककड़ासींगी।

इन्दुचन्दन (सं० क्ली०) हरिचन्दन।

इन्दुज (सं० पु०) इन्दोः जायते, इन्दु-जन-ड। ताराके गर्भसे चन्द्र कर्तृक उत्पादित बुधग्रह, दवीर-फ़लक। चन्द्रने राजसूययज्ञ करनेपर विवेकशून्य बन बृहस्पति-की स्त्री ताराको हरण किया था। देवतावोंके यह बात बतानेपर ब्रह्माने स्वयं ताराको ले जाकर बृह-स्पतिके हाथ सौंपा। बृहस्पतिने ताराको गर्भवती देख कहा था,—हमारे घरमें रहकर तुम इस गर्भको कभी रख न सकोगी। ताराने स्वामीके वाक्यानुसार तत्क्षण गर्भस्थ पुत्रको निकाल शरस्तम्भपर फेंक दिया। सद्यप्रसूत कुमार शरस्तम्भपर पड़ते ही ज्वलन्त अग्निके समान चमकने लगा था। उसका रूप देख देवतावोंने भी हार मानी। ब्रह्माने तारासे पूछा, कि वह पुत्र किसका था—चन्द्र या बृहस्पतिका। ताराने अतिकष्टसे शिरः झुकाकर कहा, कि पुत्र चन्द्रका रहा। उस समय चन्द्रने पुत्रको गोदमें ले बुध नाम रखा था। (हरिवंश २६ अ०)

इन्दुजनक (सं० पु०) इन्दोश्चन्द्रस्य जनकः। १ अत्रि-मुनि। अत्रिशब्द शब्द देखो। २ समुद्र। समुद्रमन्थनसे चन्द्र निकला है। (भारत आदि १८ अ०)

इन्दुजा (सं० स्त्री०) इन्दोर्जाता, इन्दु-जन-ड-टाप्। नर्मदा नदी।

इन्दुदल (सं० पु०) चन्द्रकला, चांदका सोलहवां हिस्सा।

इन्दुपत्र (सं० पु०) भूर्जवृक्ष, भोजपत्रका पेड़।

इन्दुपुत्र, इन्दुज देखो।

इन्दुपुष्पिका (सं० स्त्री०) इन्दोरिव शुक्लं पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। लाङ्गलीवृक्ष, नारियलका पेड़।

इन्दुपोदकी (सं० स्त्री०) वेल्लिका, किसी किस्मकी बेल।

इन्दुफल (सं० पु०-क्ली०) आम्रातक, आमड़ा।

इन्दुभ (सं० क्ली०) ६-तत्। १ मृगशिरा नक्षत्र। २ मृगशिरा नक्षत्रका स्वामी चन्द्र। ३ कर्कटराशि।

इन्दुभा (सं० स्त्री०) इन्दुना भाति, इन्दु-भा-ड-टाप्। १ कुमुदिनी, कोकाबेली। २ चन्द्रकिरण, चांदनी।

इन्दुभूषण (सं० पु०) इन्दुना भूषति, ३-तत्। नील-पद्म, आसमानी कमल।

इन्दुभृत् (सं० पु०) इन्दुं बिभर्ति, इन्दु-भृ-क्विप्। महादेव, चन्द्रको सर्वदा कपालपर धारण करनेवाले शङ्कर।

इन्दुमणि (सं० पु०) इन्दुप्रियो मणिः, शाक-तत्। १ चन्द्रकान्त, हजर-उल्-कमर, चन्दरगांठ। इन्दुरिव शुभ्रा मणिर्वा। २ मुक्ता, मोती।

इन्दुमण्डल (सं० क्ली०) इन्दोर्मण्डलम्, ६-तत्। चन्द्रबिम्ब, चांदका घेरा। चन्द्रमण्डलका परिमाण ४८०० योजन है। (सिद्धान्त शिरोमणि)

इन्दुमत् (सं० पु०) इन्दुर्विद्यतेऽत्र, इन्दु-मतुप्। १ रात्रि, रात। २ शिव। ३ मयूर। ४ पूर्णिमा। (वै०) ५ अग्नि।

इन्दुमती (सं० स्त्री०) प्रशस्तः इन्दु विद्यतेऽस्याः। १ पूर्णिमा। २ अजराजकी पत्नी और विदर्भराजकी भगिनी।

इन्दुमुखी (सं० स्त्री०) पद्मिनी, कमलकी बेल।

इन्दुमौलि (सं० पु०) इन्दुः प्रीतिजनकतया मौलौ शिरसि यस्य, बहुव्री०। महादेव। तपस्यासे तुष्ट हो शङ्कर सर्वदा ही इन्दुकलाको अपने मस्तकपर धारण किये रहते हैं। (काशीखण्ड)

इन्दुर (सं० पु०) मूषिक, चूहा। इन्दुर विलेशय अर्थात् बिलका रहनेवाला है। बिलमें रहनेसे इसका मांस वातघ्न, मधुर, वृंहण, बद्धविण्मूत्र और वीर्योष्ण होता है। (भावप्रकाश) इन्दूर देखो।

इन्दुरत्न (सं० क्ली०) ६-तत् वा इन्दुरिव शुभ्रं रत्नम्, कर्मधा०। मुक्ता, मोती। देवता चन्द्र होने और चन्द्र-जैसा शुभ्र रहनेसे मुक्ताका नाम इन्दुरत्न पड़ा है।

इन्दुरसा (सं० स्त्री०) पिष्टकभेद, अंदरसा। चावल-को पीस दो हिस्से चीनी मिलाते और दहीका मोवन डाल दूसरे दिन घीमें उसकी छोटे-छोटे पूवे सावधानसे पकाते हैं। यह अति शीत, हृद्य और बलपुष्टिकर होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

इन्दुरा (सं० स्त्री०) सोमराजी, बाकची।

इन्दुराज (सं० पु०) इन्दुना राजते, ३-तत्। १ चन्द्र-कान्तमणि, चन्दरगांठ। २ कुमुद, कोकाबेली।

इन्दुराजि, इन्दुरा देखो।

इन्दुराजी, इन्दुरा देखो।

इन्दुरेखा (सं० स्त्री०) इन्दोर्लेखेव लेखा, रस लव ६-तत्। चन्द्रकला, चांदका सोलहवां हिस्सा। २ सोमलता। ३ सोमराजी, बाकची। ४ गुड़ूची, गुर्च। ५ यमानी, अजवायन।

इन्दुलेखा, इन्दुरेखा देखो।

इन्दुलोक (सं० पु०) इन्दोर्लोकः, ६-तत्। चन्द्रलोक।

इन्दुलोह, इन्दुलोहक देखो।

इन्दुलोहक (सं० क्ली०) इन्दोर्लोहम्, स्वार्थे कन्। रौप्य, चांदी। चन्द्रदोषकी शान्तिके लिये इन्दुलोहक दान करना पड़ता है।

इन्दुलौह (सं० क्ली०) ६-तत्। लोह-धातु, आहन, लोहा।

इन्दुवटी (सं० स्त्री०) औषधविशेष, एक दवा। शिलाजतु, अभ्र एवं लोह एक-एक और स्वर्ण चौथायी भाग कूट-पीस वढ़त्ते, शतमूली, आमलकी

है। यह उत्तरसे दक्षिण १२० मील लम्बा और ८२ मील चौड़ा है। बीचो बीच नर्मदा नदी बहती है। राज्यका दूसरा बड़ा भाग अक्षा० २४° ३´ एवं २४° ४०´ उ० और द्राघि० ७५° ६´ तथा ७६° १२´ पू०के बीच पड़ता है। यह प्रदेश पूर्वसे पश्चिम ७० मील लम्बा ४० मील चौड़ा है। प्रधान नगर रामपुरा, भानपुरा और चंदवाड़ा है। तीसरा भाग अक्षा० २३° २९´ उ० तथा द्राघि० ८५° ४२´ पू०पर अवस्थित और महीदपुर नगरसे संयुक्त है। चौथे भागमें अक्षा० २२° १०´ उ० और द्राघि० ७४° ३९´ पू०पर धीनगर विद्यमान है। कई छोटे-छोटे राज्य इन्दौरके अधीन हैं। सिवा इसके खासगी या सरकारी १५०से भी अधिक ग्राम लगते हैं। ग्राम समृद्ध हैं। प्रायः दश लाख रुपये वार्षिक ग्रामोंका आय है।

उत्तरमें चम्बल और दक्षिणमें नर्मदा नदी बहती है। दक्षिण दिक् विन्ध्याचल पर्वत खड़ा है। राज्यके मध्यकी मन्दसोर उपत्यका समुद्रतलसे छः-सात हज़ार फीट ऊंची है। ढाक, बबूल और दूसरे झाड़का जङ्गल पड़ता है। भूमि उर्वरा है। प्रधानतः गेहूं, चावल, बाजरा, दाल, राई, सरसों, गन्ना और रुईकी फसल होती है। अहिफेनकी कृषिके लिये भूमि अतिशय उपयुक्त है। उमदा तम्बाकू भी बहुत पैदा होती है। जङ्गलमें लाखकी बोड़ लगायी जाती है। वन्य पशुमें सिंह, चित्रव्याघ्र, बिडाल, तरक्षु, शृगाल, नीलगाव, और जङ्गली भैंसा मिलता है। नक्र और विषाक्त सर्पकी कोई कमी नहीं।

इन्दौरमें राजवंशीय महाराष्ट्र, हिन्दू, कुछ मुसलमान और बहुतसे गोंड तथा भील रहते हैं। सेनामें युक्तप्रदेश और पञ्जाबके लोग अधिकांश हैं। भील वन्यद्रव्य खा, आखेट मार और सभ्य प्रतिवासीको लूट अपना निर्वाह करते हैं। किन्तु अब युद्धपाठशालामें शिक्षा पानेसे यह पुलिस और पलटनमें अच्छा काम देने लगे हैं। लोकसंख्या दश लाखसे अधिक है।

बम्बईसे २५२ मील दूर खंडवा जङ्क्शनसे होलकर-ष्टेट-रेलवे मवूकी राह इन्दौर नगरको जाती है। महाराजको अतिरिक्त लाभका अर्धांश मिलता है। १८७६ ई०का नर्मदापर पुल बंधा था। इन्दौरसे नीमचको जानेवाली पक्की सड़कपर ही मवू नगर पड़ता है। इन्दौरसे खंडवेको भी पक्की सड़क निकली है।

इन्दौर नगरमें महाराज रुईका एक पुतलीघर चलाते हैं। अफीम धड़ाधड़ बाहर भेजी जाती है। अन्नका चालान अधिक नहीं होता।

इतिहास—होलकर वंश गड़रिये महाराष्ट्रोंसे सम्बन्ध रखता है। किसी गड़रियेके लड़के मल्हार रावने इस वंशकी प्रतिष्ठा की है। वह १६९३ ई०को दक्षिणमें नीरा नदीपर होल नामक ग्राममें उत्पन्न हुये थे। करका अर्थ अधिवासी है। इसीसे इस वंशका उपाधि होलकर अर्थात् होल ग्रामका अधिवासी पड़ गया है। युवावस्था पर मल्हार राव अपने घरका काम छोड़ किसी महाराष्ट्र पदाधिकारीकी अश्वारोही सेनामें भरती हुये थे। १७२४ ई०को वह पेशवाके अधीन पांच सौ सवारोंके नायक बने। थोड़े ही दिनमें मल्हार रावको कितनी ही भूमि पुरस्कार स्वरूप मिली थी। १७३२ ई०को उन्होंने पेशवाके प्रधान सेनापति बन मालवेके मुग़ल सूबेदारको युद्धमें नीचा देखाया, इस विजयके उपलक्षमें मल्हाररावको इन्दौर और जीते प्रान्तका अधिकांश सैनिक व्ययके लिये दिया गया था। १७३५ ई०को वह नर्मदासे उत्तर रहनेवाली महाराष्ट्र-सेनाके अध्यक्ष बने। फिर बारह वर्षतक मल्हारराव मुग़लोंसे लड़ने और वसईसे पोर्तगीजोंको निकालने तथा रुहेलोंसे लखनऊकी नवाबी बचानेमें सहायता पहुंचाते रहे। इसी बीच अधिकार और प्रभाव बढ़नेसे यह भारतीय नरेशोंमें अग्रगण्य हो गये थे। १७६१ ई०को पाणिपथ युद्धसे मल्हारराव सकुशल पीछे हट आये। वह मध्य-भारत पहुंचते ही अपने विशाल राज्यको घटा सम्बद्ध और नियमित बनानेमें लगे। १७६५ ई०को मल्हारराव स्वर्गवासी हुये। मल्हाररावके पुत्र मालीरावको राज्यका उत्तराधिकार मिला था। किन्तु वह सिंहासनपर बैठनेके नौ मास बाद ही पागल होकर मर गये। मालीरावके बाद सुप्रसिद्ध अहल्या-बाईने सेनापति तुकाराव जीके साथ

राज्यका प्रबन्ध अपने हाथ ले शान्तिपूर्वक ३० वर्षतक शासन चलाया था। १७९५ ई०को अहल्या-बाईके मरनेपर गृहविवादसे होलकर वंशका बल घटा। किन्तु तुकारावजीके जारजपुत्र यशोवन्त-रावने बिगड़ा काम बनाया था। एकबार भीषण रूपसे सेंधियाके साथ हारते ही उन्होंने अपनी सेना सुधारनेके लिये युरोपीय अफसर नौकर रखे। १८०२ ई०को यशोवन्त-रावने पेशवा और सेंधियाकी संयुक्त सेना हरा पूना नगर अधिकार किया था। किन्तु बसईमें जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार यशोवन्त-रावको सवारी इन्दौर वापस आयी और पेशवाको उनकी राजधानी मिल गयी। १८०३ ई०के महाराष्ट्र-युद्धसे यशोवन्त-राव अलग रहे। अन्तको वह अंगरेज सरकारसे लड़ गये थे। पहले तो उन्होंने करनल मोनसनको पीछे हटाया और अंगरेज राज्यपर आक्रमण मारा, किन्तु अन्तको लार्ड लेकसे हारनेपर १८०५ ई०के दिसम्बर मास बियास नदी किनारे आत्मसमर्पणकर सन्धिपत्र लिख दिया। सन्धिके अनुसार युद्धमें जीता प्रान्त अंगरेजोंको मिला था। किन्तु दूसरे वर्ष अंगरेजोंने उनका अधिकार वापस किया। १८११ ई०को यशोवन्तराव पागल होकर मर गये। उनके लड़के मल्हार-राव रहे, जो तुलसी-बाई नामक रानीसे पैदा हुये थे। कुछ वर्षतक राज्यमें कितना ही झगड़ा चला और पिण्डारी डाकुवोंका उपद्रव बढ़ा। सेनाके विप्लव मचाने पर रानीने अपनी और मल्हार रावकी रक्षाके लिये अंगरेज सरकारसे सहायता मांगी थी। इसी बीच पेशवा और अंगरेज सरकारमें युद्ध लग गया। इन्दौरने भी पेशवाके साथ योग दिया था। रानीका वध हुआ और महीदपुरमें इन्दौरकी सेनाको पूर्ण रीतिसे नीचा देखना पड़ा। १८१८ ई०को मन्दसोरमें जो सन्धि हुयी, उससे कितनी ही भूमि राज्यसे निकल गयी थी। १८३३ ई०को मल्हाररावके मरनेपर उनकी विधवा रानीने मार्तण्ड-रावको गोद लिया। किन्तु कुछ सप्ताह बाद मार्तण्ड-रावको निकाल हरिरावने राज्यका भार अपने हाथ उठाया था। हरिरावके समय समस्त राज्यमें अराजकताकी धूम रही। १८४३ ई०को हरिराव मरे और उनके दत्तकपुत्र भी कुछ मास बाद चल बसे। १८५१ ई०को तुकारावजी सिंहासनारूढ़ हुये थे। १८५७ ई०को इन्दौरकी सेनाने अंगरेजी पोलिटिकल रेसिडेण्ट सर हैनरी डूरण्डको घेर लिया। मुश्किलसे वह अपने बालबच्चोंको ले भूपाल पहुंचे थे। किन्तु सेनाके कुछ सप्ताह बाद हथियार रख देनेसे फिर शान्ति हो गयी।

१८९९ ई०को इन्दौरमें वृटिश रेसिडेण्ट नियुक्त हुआ। उस समय राज्य-शासन-संक्रान्त कितने नियम परिवर्तित और मन्त्रिसभा स्थापित हुई। १९०३ ई० महाराज शिवाजीराव होलकर अपने १२ वर्षके अवस्थावाले पुत्र तुकाजी रावको राज्यभार सौंपा। बाद १९०८ ई०को महाराज शिवाजीका परलोक हुआ। महाराज तुकारावजी इस समय वर्तमान महीप हैं। होलकर देखो।

इन्दौर राज्यकी लोकसंख्या नौ लाखसे ऊपर है। अंगरेज इन्दौरकी रक्षा करते और दूसरे राज्यसे विवाद बढ़नेपर मिटा देते हैं। इन्दौरके महाराज दूसरे राज्यसे सीधे पत्रव्यवहार न चलाने, अधिक सेना न रखने, किसी युरोपीय या अमेरिकनको अपने राज्यमें नौकरी न देनेपर बाध्य हैं। उन्हें गोद लेनेकी सनद दी गयी है। अंगरेजोंमें १९ और अपने राज्यमें २१ तोपोंकी सलामी वह पाते हैं। ३१०० मामूली तथा २१५० गैरपाबन्द पैदल और ३१०० मामूली एवं १२०० गैरपाबन्द सवार रहते हैं। २४ तोपोंमें ३४० आदमी लगते हैं। महाराजको फांसी देनेका अधिकार प्राप्त है।

राज्यका आय: बढ़ते जाता है। इन्दौरकी रेसिडेन्सीमें मध्य-भारतीय राजावोंके लड़कोंको शिक्षा देनेके लिये राजकुमार-कालेज बना है। किन्तु वह राज्यसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता, समस्त व्यय अंगरेज-सरकारसे मिलता है। १२से २० पर्यन्त राजकुमार शिक्षा पाते हैं। महाराजके स्कूलमें केवल दक्षिणी ब्राह्मण पढ़ते हैं। मन्दसोर और खारगांवमें भी अंगरेजी स्कूल हैं।

२ इन्दौर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २२°

४२° उ० और द्राघि० ७५° ५४' पू०पर अवस्थित है। इन्दौरमें महाराज और बड़ेलाटके पोलिटिकल एजण्ट रहते हैं। अहल्या-बाईने मल्हार-रावके मरनेपर यह नगर बनवाया था। राजप्रासाद, लालबाग, टकसालघर, हाईस्कूल, बाज़ार, पुस्तकालय, अस्पताल और रूईका पुतलीघर देखने योग्य है। नगरसे मिली अंगरेज़ी रेसीडेन्सीका अस्पताल बहुत बढ़िया है। कृत्रिम नाक प्रस्तुत होती है।

इन्द्र (सं० पु०) इदि परमैश्वर्ये रन्। ऋजेन्द्राग्र...... वज्रविप्राः। उण् २।२८। १ शक्र, देवराज। यह वेदोक्त प्राचीन देवता हैं। वैदिक ऋषि जिन देवताओंकी आराधना करते, उनमें इन्द्र ही प्रधान रहे। ऋक्संहिताके मतमें इन्द्र निष्टिग्रीके पुत्र हैं। "निष्टिग्राः पुत्रमाच्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह।" (ऋक् १०।१०१।१२) माताने इनको सहस्र मास और अनेक वर्ष गर्भमें रखा था। उसके बाद इन्द्रने वीर्यपूर्ण हो स्वयं जन्मग्रहण किया। उस समय इनकी माता प्रमत्त हो गयी थीं। (ऋक् ४।१८।५—८) इन्द्रने अपने पिताका पादद्वय ग्रहणकर उनको मार डाला। (ऋक् ४।१८।१२, तै० सं० ६।१।३।६)

इन्द्रकी माताका नाम एकाष्टका रहा—

"एकाष्टका तपसा तप्यमाना
जजान गर्भं महिमानमिन्द्रम्।
तेन देवा अव्यसहन्त शत्रून्
हन्ता दस्यूनामभवत् शचीपतिः॥" (अथर्व ३।१०।१२)

एकाष्टकाने घोरतर तपस्या करके महिमान् इन्द्रको उत्पन्न किया था। इन्होंके द्वारा देवताओंने शत्रुओंपर आक्रमण मारा। शचीपति दस्युओंके हन्ता हुये थे। सोम इन्द्रके जनक हैं। "सोम...जनिता इन्द्रस्य" (ऋक् ९।९६।५) इन्द्रने अग्नि सहित पुरुषके मुखसे जन्मग्रहण किया। "मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत।"(पुरुषसूक्त) ऋक्संहिताके मतमें इन्द्र एक आदित्य होते भी द्वादश आदित्यसे भिन्न हैं। इन्द्र प्रजापतिसे भी उत्पन्न माने गये हैं। (शतपथ ११।१।६।१४) कहते हैं,—"प्रजापतिर्देवासुरानसृजत। स इन्द्रमपि न असृजत। तं देवा अब्रुवन्निन्द्रं नो जनय इति। सो ऽब्रवीद् यथा ऽहं युष्मांस्तपसा असृक्षि एवमिन्द्रं जनयध्वमिति। ते तपो ऽतप्यन्त ते आत्मन्निन्द्रमपश्यन्। तमब्रुवन् जायस्व इति। अब्रवीत् किम् भागधेयमभिजनिष्ये इति। ऋतून् संवत्सरान् प्रजाः पशून् लोकानित्यब्रुवन्।" (तैत्तिरीय ब्राह्मण)

प्रजापतिने देवों एवं असुरोंकी सृष्टि की, किन्तु इन्द्रकी उत्पत्ति न हुयी। देवगणने उनसे इन्द्रको भी उत्पादन करनेको कहा था। उन्होंने उत्तर दिया,—हमारी तरह तपोबलसे तुम भी इन्द्रको उत्पादन करो। इसके बाद देवता तपस्यामें प्रवृत्त हुये थे। देवताओंने इन्द्रको अपने आत्मामें देख जन्म लेनेकी प्रार्थना की इन्द्रने कहा—किस भाग्यमें जन्मग्रहण करें। देवताओंने ऋतु, वत्सर, प्रजा, पशु एवं इह लोकादिका नाम ले दिया था।

उक्त श्रुतिके अन्यस्थलमें, प्रजापति द्वारा इन्द्रका उत्पादन किया जाना भी लिखा है। (ऐतरेयब्राह्मण ३।२) इन्द्रकी पत्नी इन्द्राणी हैं (ऋक् १।२२।१२)। स्त्रीका नाम प्रसहा भी लिखा है। (ऐतरेयब्राह्मण ३।२)

वैदिक देवताओंमें इन्द्र प्रधान योद्धा एवं श्रेष्ठ शक्तिसम्पन्न थे। ऋक्संहितामें इनके असीमगुणका परिचय पाया जाता है।

सामार्चिकमें भी लिखा है—

"इन्द्रस्य बाहू स्थविरौ युवानावनाधृष्यौ सुप्रतीकावसह्यौ।
तौ युञ्जीत प्रथमौ योग आगते याभ्यां जितमसुराणां सहो महत्॥"

समय आनेपर (युद्धकालमें) इन्द्रने स्थविर, युवा, अनाधृष्य, सुप्रतीक और शत्रुके असह्य बाहुद्वयको पहले ही योजना कर डाली, जिसके प्रभावसे असुरोंकी शक्ति पराजित हो गयी। यह सुवर्णमय कोड़ाधारण करते और सूर्यके अश्व या कभी हिरण्मय रथपर चढ़ते थे। वायु इनके सारथी रहे। (ऋक् ८।३४।११, १०।४९।७, ८।१।२४, ८।४८।२)

अस्त्रोंमें वज्र और अङ्कुश ही इन्द्र सदा व्यवहार करते थे। उस समय वृत्र नामक एक असुर देवताओंका सर्वदा अनिष्ट करता था। देवताओंने जाकर अपना दुःख इनसे कहा। इन्द्र देवताओंके साथ वृत्र-संहारमें अग्रसर हुये थे। इस युद्धमें सब देवता भागे, केवल मरुद्गण और विष्णु साहाय्यार्थ रह गये। इन्द्रने वज्रके द्वारा वृत्रको विनाश किया।

एतद्भिन्न अहि, शुष्ण, नमुचि, पिप्रु, शम्बर, उरण,

पपि वृत्र प्रभृति प्रधान प्रधान असुरोंको भी इन्द्रने मारा था। (ऋक् १।१७।१९, १।१२।८-१०, ४।१८।१२ इत्यादि) नमुचि-वधके समय अश्विद्वय एवं सरस्वतीने इन्द्रको साहाय्य दिया।

इस सम्बन्धपर एक गल्प है—

"इन्द्रस्य इन्द्रियमन्नस्य रसं सोमस्य भक्षं सुरया नमुचिरहरत्। सोऽश्विनौ च सरस्वतीञ्च उपधावत्। शेपानोऽस्मि नमुचये न त्वा दिवा न नक्तं हनानि न दण्डेन न धन्वना न पृथेन न मुष्टिना न शुष्केण न आर्द्रेण अथ मे इदमहार्षीत्। इदं मे आजिहीर्षथ इति। तेऽब्रुवन्नस्तु नोऽवाप्यथ आहराम इति। सह न एतदथ आहरत इत्यब्रवीदिति। तावश्विनौ च सरस्वती च अपां फेनं वज्रमसिञ्चन् न शुष्को न आर्द्रः इति। तेन इन्द्रो नमुचेरासुरस्य व्युष्टायां रात्रौ अनुदिते आदित्ये न दिवा न नक्तमिति शिर उदवासयत्। तस्य शीर्षच्छिन्ने लोहितमिश्रः सोमोऽतिष्ठत्।" (शतपथ-ब्राह्मण १२।७।३।१)

नमुचि नामक असुर इन्द्रका इन्द्रिय, अन्नरस और सुराके साथ सोमपान अपहरण कर ले गया। पीछे उन्होंने अश्विद्वय एवं सरस्वतीके निकट जाकर कहा, मैंने नमुचिको दिवा अथवा रात्रिमें यष्टि, धनु:, चपेटिका मुष्टिसे शुष्क अथवा आर्द्र स्थानपर न मारनेका शपथ किया है। इस समय मेरी सर्व शक्ति हरण कर ली है। क्या आपलोग मेरा उद्धार कर सकते हैं?" उसके बाद अश्विद्वय एवं सरस्वतीने जलके फेनसे वज्रको सिञ्चन कर उत्तर दिया, 'यह शुष्क वा आर्द्र नहीं है'। इन्द्रने उसी वज्रसे नमुचिका मस्तक खण्ड खण्ड कर डाला। उस समय रात्रि बीतनेपर भोर हो रहा था। सूर्योदय न होनेसे वह समय रात्रि दिन कैसे समझा जा सकता था। नमुचिके मस्तक-छेदन काल सोम रक्त मिश्रित होने पर अवज्ञा करने लगे, किन्तु पीछे सब कोई पी गये।

अथर्वसंहितामें लिखते,—इन्द्र असुरनारीके प्रेममें मुग्ध हुये थे। काठकके (१३.५) मतसे यह विलिस्तेङ्गा नामक दानवीपर अनुरक्त रहे। ऋक्संहितामें इन्द्रके अतिशय सोमप्रिय होनेका विस्तर प्रमाण मिलता है।

इन्द्र वारिवर्षण करते और वज्र एवं विद्युत् चलाते हैं। इन्होंने असुरोंके लोहनिर्मित नगर तोड़ असंख्य दस्यु वा दास जातिको विनाश किया था।

पौराणिकके मतमें इन्द्रके पिता कश्यप रहे। माताका नाम अदिति था। इन्होंने वृत्रादि असुरोंका वध करनेसे वृत्रहा नाम पाया। इन्द्र पूर्वदिक्के पालक और सबको जलदान करनेवाले हैं।

तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें लिखा, इन्द्रको अपर किसी देवीके रूपपर मोह नहीं हुआ। इन्होंने केवल इन्द्राणीको ही रूपपर मोहित हो पत्नी बनाया था। किन्तु पौराणिक मतसे इन्द्रने पुलोमा दैत्यको मार उसकी कन्या ग्रहण की थी। वही कन्या इन्द्राणी हुई। इन्होंने दितिके गर्भस्थ पुत्रको नाश करनेके लिये खण्ड खण्ड किया, उसीसे मरुद्गणने जन्म लिया। दिति और मरुत् देखो।

पारिजातके लिये इन्द्रके साथ कृष्णका विवाद हुआ था। कृष्ण और पारिजात देखो। व्रजके गोप इन्द्रकी पूजा करते रहे। किन्तु पीछे कृष्णने उस पूजाको उठा दिया था। इन्द्र क्रुद्ध हो अनवरत जल बरसाने और व्रज डुबाने लगे। कृष्णने गोवर्द्धन धारणकर व्रजवासियोंकी रक्षा की। (हरिवंश) इन्द्रके पुत्र जयन्त, ऋषभ और मीढ़ रहे। तृतीय पाण्डव अर्जुन भी इन्द्रपुत्र कहे जाते हैं। राज्यका अमरावती, उद्यानका नन्दन, अश्वका उच्चैःश्रवा, हस्तीका ऐरावत, रथका विमान, सारथिका मातलि, धनु:का इन्द्रधनु: और असिका नाम परञ्ज है। इन्द्र सब देवताओंके राजा हैं। गुरुपत्नी अहल्याको हरण करनेसे इनके सहस्र चक्षु: हुआ। अहल्या देखो। प्रधान अस्त्र वज्र है। एक एक मनु पर्यन्त इन्द्रका अधिकार रहता है। राजत्वके बाद यह १०० वर्ष पर्यन्त ब्रह्माके निकट ब्रह्मविद्या अध्ययन करते, उसके बाद कैवल्य पाते हैं। इन्द्र त्वष्टपुत्र विश्वरूपके वध पापसे राज्यच्युत हुये। अनन्तर इन्होंने पाप भोग करनेपर फिर अपना राज्य प्राप्त किया था। इन्होंने पर्वतोंका पक्ष छेदनेसे गोत्रहा और १०० शत अश्वमेध यज्ञ करनेसे शतक्रतु नाम पाया है। इन्द्रजित देखो। इन्द्रके नाम अनेक हैं—महेन्द्र, शक्रधनु, ऋभुक्ष, अर्ह, दत्तेय, वज्रपाणि, मेघवाहन, पाकशासन, देवपति, दिवस्पति, स्वर्गपति, उलूक, जिष्णु, मरुत्वान्,

उग्रधन्वा इत्यादि है। प्रति मन्वन्तरमें इन्द्रके नाम पृथक् पृथक् पड़ते हैं—१ यज्ञ, २ रोचन, ३ सत्यजित्, ४ त्रिशिख, ५ विभु, ६ मन्त्रद्रुम, ७ पुरन्दर, ८ बलि, ९ श्रुत, १० शम्भु, ११ वैधृत, १२ ऋतधामा, १३ दिवस्पति और १४ शुचि।

२ परमात्मा। ३ योगविशेष। ४ श्रेष्ठ। ५ कुटजवृक्ष। ६ रात्रि। ७ प्रथम। ८ राजा। ९ ज्येष्ठानक्षत्र। १० धनवान्। ११ अन्तरात्मा। १२ धन। १३ इन्द्रिय। १४ छन्दोविशेष, चौदह संख्या। १५ बङ्गालमें दक्षिणराढीय और बङ्गज कायस्थोंका एक उपाधि।

इन्द्रऋषभ (वै० त्रि०) इन्द्रको वृषभकी भांति रखनेवाली, जिसे इन्द्र हामला बनाये। यह शब्द पृथिवीका विशेषण है।

इन्द्रक (सं० क्ली०) इन्द्रस्य धनिनः कं सुखं यत्र, बहुव्री०। १ सभागृह, बैठकखाना। २ इन्द्रका सुख। ३ मन्दरगिरि।

इन्द्रकर्णक (सं० पु०) रक्तैरण्ड, लाल रेंड़का पेड़।

इन्द्रकर्मन् (सं० पु०) इन्द्रस्येव ऐश्वर्यान्वितं कर्मास्य। विष्णु, इन्द्रका काम करनेवाले भगवान्।

इन्द्रकर्मा इन्द्रकर्मन् देखो।

इन्द्रकील (सं० पु०) इन्द्रस्य कील इव। १ मन्दरपर्वत। यह बड़ा पहाड़ है। नाना प्रकार मणिमुक्ता विद्यमान हैं। शिशुपाल-वधके समय श्रीकृष्णने पहले यहां क्रीड़ा की थी। २ पर्वत, पहाड़।

"न विशन्ति इन्द्रकीलचतुष्पथप्रभावासुपरिष्टात्।" (सुश्रुत)

इन्द्रकुञ्जर (सं० पु०) ऐरावत, इन्द्रका हाथी। समुद्रमन्थनके समय इन्द्रने इसे पाया था।

इन्द्रकूट (सं० पु०) इन्द्रः ऐश्वर्यवान् कूटोयस्य, बहुव्री०। एक पर्वत। यह कैलासके निकट विद्यमान है। "महामेघ सकैलासं इन्द्रकूटस्य नामतः।" (हरिवंश १००।१५)

इन्द्रकृष्ट (सं० त्रि०) कृष भावे क्त तत् अस्ति अस्मिन्, अर्श आदित्वात् अच्; इन्द्रेण इन्द्रहेतुकं कृष्टम्। इन्द्रकर्षित, जङ्गलमें पैदा होनेवाला। वृष्टिपड़नेसे जो धान्यादि स्वभावतः उपजता, वह इन्द्रकृष्ट कहता है।

"इन्द्रकृष्टैर्वर्तयन्ति धान्यै र्ये च नदीमुखैः।" (महाभारत सभा० ५१।८)

'इन्द्रकृष्टैः इन्द्रे वाकृष्टैर्न तु कर्षणादि देवियत्न यत्नापेक्षैः।' (नीलकण्ठ)

इन्द्रकेतु (सं० पु०) इन्द्रका ध्वज, विमानकी पताका।

इन्द्रकोश, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रकोष (सं० पु०) ६-तत्। १ मञ्च, मचान। २ खट्वा, खाट। ३ निर्यूह, फलीका काढ़ा। ४ निर्यास, पेड़का दूध। ५ तमङ्गक, छज्जा।

इन्द्रकोषक, इन्द्रकोष देखो।

इन्द्रगिरि (सं० पु०) इन्द्रनामा गिरिः, शाक-तत्। महेन्द्रपर्वत।

इन्द्रगुप्त (सं० क्ली०) १ उशीर, खस। (वै० त्रि०) २ इन्द्रद्वारा रक्षित, जिसके इन्द्र हिफाज़त रखे।

इन्द्रगुरु (सं० पु०) १ वृहस्पति। २ कश्यप।

इन्द्रगोप (सं० पु०) इन्द्रः गोपः रक्षकः यस्य, बहुव्री०। १ शक्रगोप, वीरबहूटी। यह श्वेत और रक्त दोनो प्रकारका होता है। (वै० त्रि०) २ इन्द्रकर्तृक रक्षित। (ऋक् ८।४६।३२)

इन्द्रघोष (सं० पु०) इन्द्र इति स्पष्टं घुष्यते, घुष्-घञ्। इन्द्र।

इन्द्रचन्दन (सं० क्ली०) इन्द्रस्य इन्द्रप्रियं वा चन्दनं, ६-तत् वा शाक-तत्। १ हरिचन्दन, श्वेतचन्दन। २ रक्तचन्दन, लाल चन्दन।

इन्द्रचाप (सं० पु०) इन्द्रे इन्द्रस्वामिके मेघे चाप इव, शाक-तत्। १ इन्द्रधनुः। ६-तत्। २ इन्द्र-शरासन।

इन्द्रचिर्भिटा, इन्द्रचिर्भिटी देखो।

इन्द्रचिर्भिटी (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया चिर्भिटी, शाक-तत्। एक लता। वैद्यशास्त्र-मतसे इसके पर्याय हैं, इन्दीवरा, युग्मफला, दीर्घवृन्ता, उत्तमारणी, पुष्पमञ्जरिका, द्रोणी, करम्भा और नलिका। इन्द्रचिर्भिटी तिक्त, शीतल और श्लेष्मनाशक होती है। यह पित्त, कास, व्रणदोष और कृमिको नष्ट करती है। चक्षुरोगमें इन्द्रचिर्भिटी विशेष उपकारी है। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रच्छन्द (सं० क्ली०) इन्द्र-इव सहस्रनेत्रे य सहस्रगुच्छेन छाद्यते, छद-असुन्-ल्युट् निपातनात्। सहस्रगुच्छ-हार, हजार लड़ीकी माला।

इन्द्रज (सं० पु०) १ इन्द्रयव। २ कुटजवृक्ष।

इन्द्रजतु (सं० क्ली०) शिलाजतु।

इन्द्रजनन (सं० क्ली०) इन्द्रस्यात्मनः जननं देह

सम्बन्धः, छः। १ इन्द्रका जन्म। २ परमात्माका देह-सम्बन्ध विशेष।

इन्द्रजननीय (सं० वि०) इन्द्रजन्म-सम्बन्धीय, इन्द्रकी पैदायशका हाल बतानेवाला।

इन्द्रजम्बूकवत्पत्रा (सं० स्त्री०) श्यामालता, काली सतावर।

इन्द्रजव (हिं०) इन्द्रयव देखो।

इन्द्रजा (वै० त्रि०) इन्द्रसे उत्पन्न, जो इन्द्रसे पैदा हो।

इन्द्रजानु (सं० पु०) वानरविशेष, किसी बन्दरका नाम।

इन्द्रजाल (सं० क्ली०) इन्द्राणां इन्द्रियाणां जालं आवरकं यद्वा इन्द्रस्येश्वरस्य जालं मायेव। १ इन्द्रका पाश। २ युद्ध-कल्पना, जङ्गका फरेब। ३ छल, धोखा। ४ माया, हस्तलाघव, तिलस्म, बाजीगरी। ५ तन्त्रशास्त्र विशेष।

मन्त्र एवं द्रव्य द्वारा किसी वस्तुको अन्य प्रकार बनाना इन्द्रजाल नामक स्वतन्त्र शास्त्र तन्त्रके अन्तर्गत है। गुरु उपदेश विना इसकी शिक्षा नहीं मिलती। इन्द्रजालमें नाना विषय वर्णित हैं। उसे दृष्टान्त स्वरूप कुछ नीचे लिखते हैं,—

१, एक प्रस्थ (२ सेर परिमाण) महाकाल या लाल इन्द्रायणकी बीजमें धावीरसकी सात भावना दे और उसे गोली-जैसा बना मुखके भीतर रखें तो मनुष्य कपोत बन जाता है। २, छागलके मस्तकपर काली मट्टी रखनेसे और उसमें धतूरेका बीज बोनेसे जो फूल आता है,उसको गात्रमें लगाते ही मनुष्य बकरा बन जाता है। ३, कृष्णचतुर्दशीको मयूरके मस्तक-पर काली मट्टी चढ़ा सनका बीज डालनेसे जब फल-फूल उतरे, तब उसको गलेमें बांधते ही मनुष्य मयूरका रूप धारण कर लेता है। ४. कृष्णचतुर्दशीको मयूरके मस्तकपर काली मट्टी लगा कपासका बीज बोनेसे जब फल-फूल लगे; तब उसे कूट-पीसकर गात्रपर मलनेसे मनुष्य पानीमें नहीं डूबता और भूमिकी तरह जलपर खड़ा रहता है। ५, काले कौवेके मस्तक-पर मट्टी डाल बृहती या बटन्तेका बीज बोये। और उसके फलको मुखमें दबा लेनेपर मनुष्य कौवेकी तरह उड़ता है, किन्तु उसे उगल देनेसे वह फिर मनुष्य हो जाता है। ६, कृष्णचतुर्दशीको कबूतरके मस्तकपर मट्टी डाल तिल बोये और दूधमें पानी मिला उसे सींचता रहे। फूल निकलनेपर उसे मुखमें रखनेसे कोई उस मनुष्यको देख नहीं सकता। और उस तिलके फलको कूटपीस गात्रमें लगा देनेसे मनुष्य किङ्कर बन जाता है। तथा समग्र धन-सम्पत्ति स्वेच्छाक्रमसे छोड़ बैठता है। ७, फिर उसी तिलको कपिलाके दूधमें पीस गोली बनावे और सात राततक पकाता रहे। पीछे गोली मुखमें दबा लेनेसे देवता भी उस मनुष्यको देख नहीं सकते। किन्तु गोली उगल देनेसे उसको सब लोग फिर देख सकते हैं। वह सौ वर्षतक जीता है और क्या स्त्री क्या पुरुष सब कोई उसके वश हो जाते हैं। ८,कृष्ण-चतुर्दशीको शकुनिके मस्तक पर मट्टी डाल लहसुन लगाइये और फूल आनेपर पुष्यानक्षत्रमें तोड़ कपिलाके घृतसे काजल पारिये। उस फूलको उक्त काजलमें मिला आंखमें लगानेसे सौ योजन पर्यन्त दीख पड़ता है। दिनके समय नक्षत्र दृष्टिगोचर होते हैं। ऊंट, गर्दभ, महिष प्रभृति बड़े-बड़े जन्तुके मस्तकपर यदि लहसुन बोवे और फल-फूल ताड़ रखे तो फिर इस फल-फूलको मुंहमें डालनेसे उक्त जन्तुके जीवित हो जानेमें कोई सन्देह नहीं रहता।

उक्त सकल धारणाका मन्त्र 'ॐ ह्रीं ह्रौं ह्रं ऐं लं लं ॐ भौ स्वाहा' लक्षजप करनेसे पुरश्चरण और सहस्र जप करनेसे होम होता है। घृत द्वारा तर्पण और मार्जन करना चाहिये। ब्राह्मणभोजनादि करानेसे सिद्धि मिलती है।

उल्लूकी खोपड़ीमें घृतसे कज्जल पार उसे आंखमें आंजनेपर अन्धकारमें भी पुस्तक पढ़ सकते हैं। 'ॐ नमो नारायणाय विश्वम्भराय इन्द्रजाल-कौतुकानि दर्शय सिद्धिं कुरु स्वाहा' मन्त्र १०८ बार जपनेसे कार्यसिद्धि होती है। उक्त मन्त्र सिद्ध न होनेसे कार्यमें सफलता नहीं मिलती।

'ॐ नमः परब्रह्म परमात्मने मम शरीरं पाहि पाहि कुरु कुरु' रक्षामन्त्र है। इसी मन्त्रसे रक्षा बांध कार्य करना चाहिये।

वृहस्पतिवारको हाथीकी खोपड़ीमें अङ्कोलका बीज बो मन्त्रपाठपूर्वक जलसेचन करे और फल लगनेपर एक बीजको त्रिलोहसे लपेट मुखमें दबा ले। इस प्रक्रियासे मनुष्य हस्ती-जैसा बलवान् और वायु-तुल्य पराक्रमी हो सकता है। त्रिलोह सकल कार्यमें प्रसिद्ध है। दश भाग सोना, बारह भाग तांबा और सोलह भाग रूपा मिलानेसे त्रिलोह बनता है। महा-देवका वाक्य मिथ्या नहीं,—किसी बीजको अङ्कोलके बीजमें मिला मट्टीमें बावे और फिर मन्त्र पढ़कर त्रि-लोहसे लपेट उसे मुखमें रखे तो साधक बिलकुल वैसा ही बन सकता है। कई बीज अङ्कोलमें मिलाकर बोनेसे उसी समय वृक्ष जगता है। अङ्कोलके फलका तैल एक बिन्दु मुखमें डालनेसे मुर्दा प्रहरके मध्य ही जी उठता है।

शोभाञ्जनाका तैल, कपोतकी विष्ठा, शूकर तथा गर्दभकी चर्बी, हरिताल और मनःशिला एकमें मिला टीका लगानेसे मनुष्य वारण-जैसा बन सकता है।

पेचककी विष्ठा एरण्डतैलके साथ रगड़ गात्रमें लगाते ही लोग पागल हो जाते हैं।

सर्पका दन्त, काले बिच्छूका कण्टक और छिप-कली (छकलास) का रक्त एकमें पीस गात्रपर लगाते ही मनुष्य मरता है।

सिन्दूर, गन्धक, हरिताल तथा मनःशिलाको एकत्र पीस वस्त्रपर डालने और पीछे उसी वस्त्रको मस्तक पर बांधनेसे समस्त जगत् अग्निमय दीख पड़ता है।

विकोरण, वट और उडुम्बरका दुग्ध किसी पात्रके मध्य लगा कर जल डालनेसे दूध निकलता है।

अङ्कोलके फलका तैल अङ्गमें मलनेसे मनुष्य राक्षस-जैसा लगता है और उसे देखते ही सब कोई भय खाकर भागते हैं।

अङ्कोलके फलका तैल रात्रिको प्रदीपमें जलानेसे आकाशका भूत सकल भूमिपर दीख पड़ता है।

बुध वा शनिवारको छकलास मारकर शत्रुगणके मूत्रोत्सर्ग-स्थानमें गाड़ दे। पीछे उसे न उखाड़नेसे शत्रु क्लीब हो जाते हैं।

गन्धक, हरिताल, गोमूत्र और विष एकत्र पीस अग्निमें छोड़नेसे समस्त विघ्न मिटता है। (दत्तात्रेयतन्त्र)

वशीकरण एवं आकर्षण वसन्त, विद्वेषण ग्रीष्म, स्तम्भन वर्षा, मारण शिशिर, शान्तिकर्म शरत् और उच्चाटनकार्य हेमन्तकी पूर्णिमाको करना चाहिये। वशीकरण देखो। दिनके पूर्वाह्न वसन्त, मध्याह्न ग्रीष्म, अपराह्न वर्षा, सन्ध्या शिशिर, अर्धरात्र हेमन्त और फिर शरत् ऋतुका समय आता है।

पक्षादि निर्णय—मारणादि अभिचार कृष्णमें, और शान्ति प्रभृति मङ्गलकर्म शुक्लपक्षमें करना उचित है। द्वादशी तथा एकादशीको मारण; तृतीया एवं नवमी-को वशीकरण; चतुर्दशी, चतुर्थी तथा प्रतिपत्‌को स्तम्भन और द्वितीया, षष्ठी एवं अष्टमीको शान्तिकर्म होता है।

अश्विनी, मृगशिरा, मूला, पुष्या तथा पुनर्वसुमें वशीकरण और अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तराषाढ़ा एवं रोहिणी नक्षत्रमें मारण, विजय, शान्ति तथा स्तम्भन किया जाता है। इस सकल कार्यमें तिथि और नक्षत्रकी विवेचना आवश्यक होती है, नहीं तो मन्त्रा-दिकी सिद्धि बिगड़ जाती है।

जय—पुष्या नक्षत्रमें गोजिह्वा और अपामार्गका मूल उखाड़ मस्तकपर रखनेसे सकल विवादमें जय मिलता है।

सौभाग्य—पुष्यानक्षत्रमें श्वेत विकोरणका मूल उखाड़ दक्षिण बाहुपर बांधनेसे सौभाग्य बढ़ता है।

क्रोधोपशम—'ॐ शान्ते प्रशान्ते सर्वक्रोधोपशमनी स्वाहा' मन्त्र इक्कीस बार जपकर जो मनुष्य मुख धोता है, उसके प्रति किसीको क्रोध नहीं होता।

श्वेत अपराजिताका मूल हस्तपर बांधने और शिवजटाका मूल मुखमें डालनेसे हस्ती निकट नहीं आ सकता।

वृहतीमूल हस्त और मुखमें धारण करनेसे व्याघ्र-का भय छूट जाता है।

'ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं स्वाहा' मन्त्र पढ़कर पत्थर फंकनेसे व्याघ्र न तो मुख भुका सकता है और न चल ही सकता है। नारिकेलमूल कृष्णचतुर्दशीको धारण करनेसे व्याघ्रका भय नहीं होता। (इन्द्रजालतन्त्र)

स्तम्भन—जिस व्यक्तिके मुखमें सफेद चिरमिटीकी जड़ रहती है उसके सामने किसीकी बात नहीं चलती।

'ॐ क्रों क्रों रक्ष रक्ष चामुण्डे कुरु कुरु अमुकं मे वशमानय वशमानय स्वाहा' मन्त्रसे कार्यसिद्धि होती है। रविवारको पुष्यानक्षत्रमें यष्टिमधुका मूल उखाड़ सभामें फेंक देनेसे सबका मुंह बन्द हो जाता है।

मेघस्तम्भन—एक ईंटपर चार चतुष्कोण रेखा खींच दूसरी ईंटसे दबावे और 'ॐ मेघान् स्तम्भय, स्तम्भय स्वाहा' मन्त्र पढ़कर किसी बागमें गाड़ देवे तो मेघकी वृष्टि रुकती है।

भरणीनक्षत्रमें उदुम्बर प्रभृति क्षीरोवृक्षके मूलको और पांच अङ्गुल परिमाण एकखण्ड काठको नौकामें डाल देनेसे उसकी चाल रुक जाती है।

निद्रास्तम्भन—यष्टिमधु और वृहतीका मूल बारीक पीसकर सूंघनेसे निद्रा नहीं आती।

अस्त्रस्तम्भन—कपित्थका मूल कृत्तिका-नक्षत्रमें उखाड़ धारण करनेसे देवगणका अस्त्र भी स्तम्भित होता है।

गुलञ्चका मूल उखाड़ हस्तपर धारण करनेसे अस्त्र-भय छूट जाता है।

'ॐ अहो कुम्भकर्ण महाराक्षस निकषागर्भसम्भूत परसैन्यस्तम्भन महाभय रुद्र आज्ञापय स्वाहा' मन्त्र १०८ बार जप करने और अपामार्गमूल शुभ नक्षत्रमें उखाड़ शरीरपर मलनेसे समस्त शस्त्रका स्तम्भन होता है।

पेटकी हड्डी गोष्ठकी चारो ओर भूमिमें गाड़ देनेसे गो, मेष, महिष, अश्व प्रभृति स्तम्भित हो जाते हैं।

भृङ्गराज, अपामार्ग, श्वेत सर्षप, सहदेविका, अर्घ्य, वच और श्वेत विकौरणका मूल उखाड़ लौह पात्रमें रखे और दो दिनके बाद निकाले। फिर उसका तिलक लगावे और 'ॐ नमो भगवते विश्वामित्राय नमः सर्वसुखीभ्यो विश्वामित्र आगच्छ स्वाहा' मन्त्रका जप करे तो सब प्राणियोंकी बुद्धि स्तम्भित होती है।

'ॐ नष्टवेशिनि शिरे रक्ष रक्ष स्वाहा' मन्त्र पढ़कर सात पांसे उठायिये। उनमेंसे तीन कटिमें बांधने पर और बाकी हाथमें रखनेपर चौरगति रुक जाती है।

देहरञ्जन—कदम्बपत्र, लोध्र और अर्जुनपुष्पो एकत्र पीस अङ्गमें लगानेसे दुर्गन्ध दूर होती है।

एला, शटी, तेजपत्र, रक्तचन्दन, हरीतकी, शोभाञ्जन, मुस्तक, कुष्ठ और अन्यान्य सुगन्ध द्रव्य पीस गात्रमें मलनेसे जो सौरभ उठता है, उससे सकल हो मोहित हो जाते हैं।

आम्र एवं जम्बुकी आठी तथा पद्ममूल पास मधुके साथ रात्रिको मुखमें रखनेसे पुरुषके मुखका दुर्गन्ध दूर होता है और सुगन्ध आने लगती है। मुरामांसी, नागकेशर एवं कुष्ठको बांटकर पन्द्रह दिन तक प्रातः तथा सन्ध्याकाल चाटनेसे स्त्रीके मुखमें कपूरकी गन्ध भर जाती है।

लोहका मल, जवापुष्प और आमलकी बांटकर शिरःपर लगानेसे तीन मासके मध्य सफेद बाल काले हो जाते हैं।

छागीके दुग्ध द्वारा सात दिन पर्यन्त भावना दे तिलका तैल निकाले और फिर उसे शिरःमें लगावे तो काले बाल सफेद हो जाते हैं।

अश्विनी नक्षत्रमें वटकी जीवन्तिका दुग्धके साथ खानेसे पुरुष बलवान् बनता है। पुष्यनक्षत्रमें विकौरणका मूल उखाड़ गोदुग्धसे बांटकर खानेपर सात दिनमें वृद्ध भी युवाके समान कूदने लगता है।

जन्मवन्ध्या-चिकित्सा—रविवारको मूलपत्र तथा शाखा सहित गन्धनाकुली उखाड़ एकवर्ण गौके दुग्धमें अविवाहित कन्यासे पिसा ऋतुकालमें चार तोले परिमाण सात दिन पर्यन्त खावे और दुग्ध एवं मूंगकी दाल प्रभृति लघु पथ्य खावे तो वन्ध्याके गर्भ रह जाता है। इस औषधको खाकर उद्वेग, भय, शोक और दिवानिद्रा त्याग कर देना चाहिये। परिश्रमका कार्य करना भी मना है। केवल पतिका सहवास रखना कहा है। अन्यथा होनेसे गर्भ नहीं रहता।

कृष्ण अपराजिताका मूल छागीके दुग्धमें बांटकर ऋतुकालपर पीनेसे वन्ध्या गर्भधारण करती है।

इन्द्रतूलक, इन्द्रतूल देखो।

इन्द्रतोया (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रं ऐश्वर्यान्वितं तोयं यस्याः या इन्द्रेण पूरितं तोयं यस्याः, बहुव्री॰। गन्धमादन पर्वतके निकट बहनेवाली नदी।

इन्द्रत्व (सं॰क्ली॰) १ इन्द्रका बल और वैभव, इन्द्रको ताक़त और हैसियत। २ राजत्व, बादशाही।

इन्द्रत्वोत (वै॰ त्रि॰) हे इन्द्र! तेरे द्वारा रचित।

इन्द्रदत्त (सं॰ पु॰) एकजन ग्रन्थकार। इनकी उपाधि 'उपाध्याय' थी। इन्द्रदत्तने 'सिद्धान्तकौमुदी-गूढ़-फक्किका-प्रकाश' नामक ग्रन्थ बनाया था।

इन्द्रदमन (सं॰ पु॰) १ बाणासुरका पुत्र। (हरिवंश १ अ॰) २ पर्वविशेष। जलप्लावनके समय कुण्ड, तड़ाग, वट वा पिप्पलवृक्ष पर्यन्त जल बढ़कर पहुंचनेसे यह पर्व पड़ता है। ७ मेघनाद, इन्द्रजित्।

इन्द्रदारु (सं॰ पु॰) १ देवदारु। २ तैल-देवदारु वृक्ष।

इन्द्रदेवी (सं॰ स्त्री॰) काश्मीरराज मेघवाहनकी पत्नी। इन्होंने इन्द्रदेवीभवन नामक विहार बनवाया था। (राजतरङ्गिणी)

इन्द्रद्युति (सं॰ क्ली॰) चन्दन, सन्दल।

इन्द्रद्युम्न (सं॰ क्ली॰) १ ह्रद विशेष, एक झील। (पु॰) २ एक राजा। स्कान्दपुराणके उत्कलखण्डमें लिखा है, कि मालव देशमें इन्द्रद्युम्न नामक एक राजा था। उन्होंने ही उत्कलस्थ पुरुषोत्तम देवका मन्दिर बनवाया था। उसमें विश्वकर्मा स्वयं आ दारुमयी मूर्ति निर्माण कर गये थे। (कपिलसंहिता और पुरुषोत्तममाहात्म्य)। मुकुन्दरामकृत जगन्नाथमङ्गलमें लिखा है, कि इन्द्रद्युम्न एक मन्दिर बनवा ब्रह्माके निकट मूर्तिस्थापनके लिये उपदेश लेने पहुंचा था। ब्रह्मलोक पहुंचने और अनेक स्तव-स्तुति सुनानेपर इन्द्रद्युम्नसे ब्रह्माने सन्तुष्ट हो एक मुहूर्त ठहरने तथा सन्ध्यावन्दनके बाद वर देनेको कहा। ब्रह्माके एक मुहूर्तमें मनुष्यके साठ हजार वर्ष बीतते हैं। किन्तु वहां यह कुछ समझ न सके थे। जब ब्रह्मा सन्ध्या करके आये, तब इन्द्रद्युम्नसे कहने लगे—अपने राज्य एकबार जाकर वापस आओ तब हम आपको मूर्ति देंगे। वे अपने राज्य वापस आये, किन्तु उसके चिह्न भी कहीं न पाये। समयके फेरसे समस्त ध्वंस हो गया था। इन्द्रद्युम्न अपने राज्यको पहचान भी न सके। जिसीको देखते, उसीसे पूछते थे—इस राज्यका नाम क्या है। अवशेषमें एक पेचक और कूर्मने इनको पूर्वकथा बतायी थी। इन्द्रद्युम्न फिर राजा हुये और कौमाध्य राजाकी कन्या मालावतीके साथ ब्याहे गये। उसके बाद इन्होंने प्रस्तरमय जगन्नाथका मन्दिर बनवाया था। किसी दिन एक दूतने आकर कहा, समुद्रके तीरपर एक काष्ठ तैर रहा है। इन्द्रद्युम्नने उससे पहले ब्रह्माके मुख सुनते रक्खा था—भगवान् कृष्ण निम्ब वृक्षपर प्राण छोड़ेंगे और बहकर समुद्रतीर पहुंचेंगे। इसलिये दूतको बात कानमें पड़ते ही वे महासमारोहके साथ उस काष्ठको समुद्रसे जाकर उठा लाये। विश्वकर्माने आकर उसी काष्ठसे जगन्नाथकी मूर्ति बनायी थी। जगन्नाथ देखो। इन्द्रद्युम्नने जगन्नाथ देवसे अपनी कन्या सत्यवतीका विवाह कर दिया। २ अन्य एक गङ्गवंशीय नृपति। ११९८ ई॰को इन्होंने जगन्नाथ देवके मन्दिरका पुनः संस्कार कराया था। ३ एक असुरका राजा। कृष्णने इन्हें मार डाला था। (महाभारत वन॰ १२ अ॰) ४ ऋषिविशेष। शतपथब्राह्मणमें इन्हें भाल्लवेय कहा है। ५ राजर्षि विशेष। (महाभारत वन॰ १९८ अ॰) ६ मगधके पालवंशीय शेष राजा।

इन्द्रद्रु (सं॰ पु॰) इन्द्रस्य द्रुः, ६-तत्। १ अर्जुनवृक्ष। २ कुटजवृक्ष। ३ देवदारु वृक्ष।

इन्द्रद्रुम (सं॰ पु॰) इन्द्रस्य द्रुमः, ६-तत्। अर्जुन वृक्ष।

इन्द्रद्वीप (सं॰ पु॰-क्ली॰) पौराणिक मतसे भारतके नौ विभागोंमेंसे एक विभाग। वर्तमान ब्रह्मदेश।

इन्द्रधनुस् (सं॰ क्ली॰) इन्द्रे तत्स्वामिके मेघे धनुः इव, ७-तत्। इन्द्रायुध, कौस-कुज़ह। वर्षाकालके उदय या अस्त होनेके समय सूर्यको विपरीत दिशामें यह प्रायः देख पड़ता है। दृष्टिजल-कणोंकी आणविक शक्तिके प्रभावसे नाना वर्ण बन उक्त नैसर्गिक काण्ड उत्पन्न होता है। इसी प्रकार चन्द्रकी आभासे कभी-कभी रामधनुः निकलता है, किन्तु यह बहुत कम देख पड़ता है।

इन्द्रध्वज (सं° पु°) इन्द्रार्थो ध्वजः, शाक-तत् ६-तत् वा। भाद्र शुक्लाद्वादशीके दिन इन्द्रतुष्टिके निमित्त ध्वज-दान। इस दिन प्रजाके मङ्गलके लिये राजा ध्वज बना द्वारपर गाड़ते हैं और इष्टदेवको पूजते हैं। इससे प्रचुर वृष्टि और सुचारुरूप शस्यादिकी उत्पत्ति होती है। वृहत्संहिताके मतमें असुरों द्वारा अधिक पीड़ित होनेसे देवगणने ब्रह्मासे कहा था,—असुरोंसे हम लड़ नहीं सकते; आपके शरण आये हैं, कोई प्रतिविधान कर दीजिये। ब्रह्माने उत्तर दिया,—तुम क्षीरोद-सागर जा नारायणका स्तव करो; वह जो केतु तुम्हें देंगे, उसे देखते ही असुर अपनी राह लेंगे। इन्द्र और अन्यान्य देवगणने वही किया। विष्णुने स्तवसे तुष्ट हो उक्त केतु (ध्वज) देवताओंको दिया और इन्द्रने उससे दुर्दान्त अरिकुलको मार अपना बदला चुका लिया। चेदिराजके वेणुमय यष्टि गाड़ यथा-विधि पूजा करनेसे इन्द्रने अतिशय तुष्ट हो कहा था,—जो राजा इसी प्रकार इन्द्रध्वज पूजेगा, उसके राज्यमें प्रजा एवं शस्यादिका आधिक्य होगा और कोई रोग न रहेगा।

इन्द्रनक्षत्र (सं° क्ली°) इन्द्रस्वामिकं नक्षत्रम्, शाक-तत्। १ ज्येष्ठानक्षत्र। इन्द्रनामकं नक्षत्रम्। २ फल्गुनी नक्षत्र।

इन्द्रनील (सं° पु°) इन्द्रइव नीलः श्यामलः। मर-कत मणि, नीलम। इन्द्रनील डाल देनेसे दूधका रङ्ग काला पड़ जाता है। संस्कृत भाषामें सौरिरत्न, नीलाश्म, नीलोत्पल, तृणग्राही, महानील प्रभृति अनेक इसके नाम हैं। इन्द्रनील शनिग्रहको प्रिय है। इससे शनिदोष शान्त हो जाता है। इन्द्रनीलका वर्ण निविड़ मेघ-जैसा रहता है। यह मध्यम रत्न है। (शुक्रनीति) मानसोल्लासके मतमें अतसी पुष्प-जैसा इन्द्र-नीलका वर्ण होता है, जो कि छाया और रोहिणाद्रिसे उपजता है। सिंहल और कलिङ्ग देशमें इसकी खानि है। (गरुड़) जहां-जहां महादानवकी आंख चुयी, वहां-वहां, इसकी उत्पत्ति हुयी। सिंहलोत्पन्न महानील और तद्भिन्न मणि इन्द्रनील कहाता है। इसमें कोयी नीलपद्म, कोयी नीलाम्बर, कोयी खड्ग-धारा, कोयी शिवनीलकण्ठ वा नीलकण्ठ पक्षीके गले, कोयी उड़दके फूल, कोयी गिरिकर्णिका, कोयी निर्मल समुद्रके जल, कोयी मयूर तथा कोकिलके कण्ठ और नीले रङ्गके बुलबुल-जैसा होता है।

दोष और गुण—मृत्तिका, पाषाण, शिला, वज्र, कङ्कड़, अभ्रिका, पटलाख्य छायादि और वर्णदोषसे मणि बिगड़ जाता है। व्यवहार्य पद्मरागका गुण इन्द्रनीलमें भी मिलता है। पद्मराग देखो।

परीक्षा—पद्मरागके समस्त कारण और उपकरण द्वारा इन्द्रनील परीक्षित होता है। पयःस्थ पद्म-रागकी अपेक्षा यह अधिक उत्ताप सह सकता है। होते रहते भी अग्निसे इसकी परीक्षा करना न चाहिये। क्योंकि अग्निका परिमाण समझ न सकने पर दाहदोषसे बिगड़ इन्द्रनील धारणकारी, परीक्षक और अनुमति देनेवाले सकलके अनिष्टका कारण बन जाता है।

वैजात्य निर्णय—काच, उपल, करवी, स्फटिक और वैदूर्य देखनेमें बिलकुल इन्द्रनील-जैसा ही होता है। किन्तु अल्प ताम्रवर्ण धारण करनेवाला इन्द्रनील रखने योग्य है। फिर जिसमें रामधनुःका रङ्ग झलकता हो, वह दुर्लभ और महामूल्य निकलता है। अधिक रङ्ग-वाले और डाल देनेसे समस्त दुग्धको नीलवर्ण बनाने-वालेको महानील कहते हैं।

मूल्य—महागुण पद्मराग और इन्द्रनीलका मूल्य एक एकसा होता है। (गरुड़पुराण)

इन्द्रनीलक (सं° पु°) हरिन्मणि, पन्ना।

इन्द्रनेत्र (सं° पु°) इन्द्रस्य नेत्रम्, ६-तत्। इन्द्रका चक्षुः, हजार संख्या।

इन्द्रपति (महामहोपाध्याय)—१ मीमांसापल्वल नामक ग्रन्थके रचयिता। २ रीवां प्रदेशस्थ इस्तोगी जातिकी एक शाखा।

इन्द्रपत्नी (सं° स्त्री°) इन्द्रस्य पत्नी, ६-तत्। १ शची-देवी। इन्द्रस्य पतिः पालयित्री, इन्द्र-पति-ङीप्-एक्, नकारादेशः। विभाषा सपूर्वस्य। पा ४।१।३४। २ इन्द्रको पाल यित्री, जो इन्द्रकी परवरिश करती हो।

इन्द्रपर्णी (सं° स्त्री°) इन्द्रवत् नीलं पर्णं

बहुव्री०। १ इन्द्रवारुणी, कुंदरू। २ लाङ्गलिका, कलिहारी।

इन्द्रपर्वत (सं० पु०) इन्द्रनामकः वा इन्द्रवर्णः पर्वतः, शाक-तत्। १ महेन्द्रपर्वत। २ नीलपर्वत।

इन्द्रपातम (वै० वि०) दूसरेकी अपेक्षा अधिक प्रीतिसे इन्द्र द्वारा पान किया हुआ।

इन्द्रपान (वै० वि०) इन्द्र द्वारा पान किया हुआ।

इन्द्रपीत, इन्द्रपान देखो।

इन्द्रपुत्रा (सं० पु०) इन्द्रः पुत्रो यस्याः, बहुव्री०। अदिति।

इन्द्रपुरी (सं० स्त्री०) अमरावती।

इन्द्रपुरोगम (सं० वि०) इन्द्रको आगे रखनेवाला, जिसके इन्द्र रहनुमा रहे।

इन्द्रपुरोहित (सं० पु०) बृहस्पति।

इन्द्रपुरोहिता (सं० स्त्री०) पुष्या नक्षत्र।

इन्द्रपुष्प (सं० क्ली०) लवङ्ग, लौंग।

इन्द्रपुष्पा (सं० स्त्री०) १ लाङ्गलीवृक्ष, कलिहारी। २ पूतीकरञ्ज, वनकरेला।

इन्द्रपुष्पिका, इन्द्रपुष्पा देखो।

इन्द्रपुष्पी, इन्द्रपुष्पा देखो।

इन्द्रप्रमति (सं० पु०) इन्द्रः प्रमतिः प्रकृष्टा मतिः यस्याः, बहुव्री०। १ ऋङ्मन्त्रद्रष्टा एक पृथक् वसिष्ठ ऋषि। (ऋक् ९।९७।४—६)। २ व्यासशिष्य पैल ऋषिके शिष्य। (अग्निपुराण तथा भागवत)

इन्द्रप्रसूत (वै० वि०) इन्द्र द्वारा उत्पादित वा प्रोत्साहित, जिसे इन्द्र निकाले या बढ़ाये।

इन्द्रप्रस्थ—एक प्राचीन नगर। इन्द्रप्रस्थ खाण्डवारण्यके मध्य था। महाराज युधिष्ठिरने इस नगरमें राजधानी स्थापित की थी। उस समय इन्द्रप्रस्थ समुद्र-सदृश परिखा द्वारा अलङ्कृत और गरुड़की तरह द्विपक्ष द्वार तथा परम रमणीय सौधसमूहसे समाकीर्ण था। इसके परम रमणीय प्रदेशमें कुवेरागार-सदृश कौरव-गृह बना था। चारो ओर उद्यानमें नानाजातीय फलशाली वृक्ष थे। (महाभारत आदि)

इन्द्रप्रस्थ एक पवित्र तीर्थ माना गया है,—

"इन्द्रप्रस्थमिदं चैव स्थापितं देवतैः पुरा।
पूर्वपश्चिमयोस्तात पञ्चयोजनविस्तृतम् ॥ ७५ ॥
कालिन्द्या दक्षिणे यावद्योजनानां चतुष्टयम्।
इन्द्रप्रस्थस्य मर्यादा कथितेयं महर्षिभिः ॥ ७६॥"
(सौभरिसंहिता २य अ०)

अर्थात् पूर्वकालमें देवगणने इस इन्द्रप्रस्थको स्थापन किया था। यह पूर्व-पश्चिम एक ओर यमुनाके दक्षिण तक चार योजन विस्तृत था। महर्षियोंने इन्द्रप्रस्थकी मर्यादा इसीप्रकार बतायी है।

हमारी समझमें पूर्वसमयमें इन्द्रने विष्णुकी पूजाकी इससे इस स्थानका नाम इन्द्रप्रस्थ पड़ा है। इन्द्रप्रस्थमें देहत्याग करनेसे मनुष्य विष्णुतुल्य हो जाता है,—

"इन्द्रप्रस्थाख्यमेतद्वै यत्रेमिन्द्रस्य पावनम्।
तेनात्र पूजितो विष्णुः क्रतुभिर्भूरिदक्षिणैः ॥ २४ ॥
तुष्टेन विष्णुना तस्मै वरो दत्तो निगम्यताम्।
भो शक्र तावते चैते सर्वतीर्थमया जनाः ॥ २५ ॥
तनुं त्यजन्ति ये ते वै मत्तुल्या हिंसका अपि ॥" (२ अ०)
"इन्द्रस्य स्थापनात्क्षेत्रं इन्द्रप्रस्थाभिधं शुभम्।"
(सौभरिसंहिता ८ अ०)

वर्तमान दिल्लीमें ही यह प्राचीन नगर था। अब इसका सामान्य ध्वंसावशेष मात्र बचा है। 'इन्दर-पत' नाम चला जाता है। सुना जाता है, कि दिल्लीपति पृथ्वीराजके समय यहां एक गढ़ बना हुआ था। चन्द कविने कहा है,—

"गढ इन्द्रपत्थ सहाय सुकन्ने।
उभे दीन सूरं करै यगृग यज्ञे ॥" (पृथ्वीराजरायसा १०।७५)

आज भी दिल्लीमें 'पुराना किला' नामक प्राचीन दुर्ग देख पड़ता है। उसे कोई-कोई 'इन्दरपत' कहते हैं। यद्यपि यह मुसलमानोंका बनाया है तो भी यह किसी हिन्दू द्वारा निर्मित दुर्गपर रचित है।
(Archaeological Survey Reports of India, Vol. IV. p. 2.)

इन्द्रप्रहरण (सं० क्ली०) वज्र। यह दधीचि मुनिकी हड्डीसे बना था।

इन्द्रफल, इन्द्रयव देखो।

इन्द्रभाष (हिं० स्त्री०) तालविशेष। इसमें बादलके गर्जन-जैसा शब्द निकलता है।

इन्द्रब्रह्मवटी (सं० स्त्री०) अपस्मारनाशक वटी विशेष, मृगी रोगकी गोली। रससिन्दूर, अभ्र, लौह, रौप्य, स्वर्णमाक्षिक, विष एवं पद्मकेशर समभाग ले खदि,

अग्नि, विजया, एरण्ड, वचा, निष्पाव, शूरण तथा निर्गुण्डीके द्रवमें घोंटे। फिर सबको कङ्गुनी सर्षपोंके तेलमें पकाते और चणमात्र वटी बनाते हैं। आर्द्रकके रसमें देनेसे इन्द्रमलयवटी अपस्मार रोगको नाश करती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इन्द्रभगिनी (सं० स्त्री०) शिवपत्नी। यह इन्द्रकी बहन थी।

इन्द्रभूति (सं० पु०) गणधरभेद। जैनियोंके चौबीसवें तीर्थङ्कर महावीर स्वामीके ११ गणधर थे। सर्वज्ञ तीर्थङ्करकी दिव्य ध्वनिका जो अर्थ समझकर लोगोंके लिये उपदेश देते हैं वे श्रावक, श्राविका, मुनि और आर्यिका रूप चारप्रकारके गणके धारक-स्वामी गणधर वा गणेश कहलाते हैं। गणधर भिन्न भिन्न तीर्थङ्करोंके भिन्न भिन्न होते हैं। तदनुसार अन्तिम तीर्थङ्कर महावीर भगवान्के इन्द्रभूति प्रथम और मुख्य गणधर थे। इनके जीवनका वृत्तान्त जैनशास्त्रोंमें यों लिखा है,—

इन्द्रभूति जातिके गौतम ब्राह्मण थे। इनका जन्मस्थान गौतम नामक नगर था। ये अपने मा बापके इन्द्रभूति, वायुभूति और अग्निभूति नामके तीन पुत्र थे। ये तीनों ही भाई वैदिक धर्मानुयायी महाविद्वान् थे। इनके पास देशदेशान्तरोंसे अनेक छात्र शास्त्राध्ययन करने आया करते थे। इन्द्रभूतिकी जिह्वापर समस्त वेद और शास्त्र नृत्य किया करते थे। इस कारण इनको अपनी विद्यावत्ताका बड़ाही घमण्ड था। ये उस समय अपने शास्त्रज्ञानके सामने संसारके विद्वानोंको तुच्छ समझते थे।

जब महावीर स्वामी चार घातिया (आत्माकी अनन्त-ज्ञानशक्ति, अनन्त-दर्शनशक्ति, अनन्त-सुखशक्ति और अनन्त वीर्यशक्तिको आच्छादन कर देनेवाले कर्म) कर्मोंको नष्टकर वैशाख शुक्लदशमीके दिन सर्वज्ञ हो गये और इन्द्रकी आज्ञानुसार कुवेरने भगवान्का समवशरण (व्याख्यानसभा) रचकर तयार कर दिया, तो उनके व्याख्यानको सुननेके लिये देशदेशान्तरोंसे मनुष्य, तिर्यञ्च और स्वर्गोंसे देवता आने लगे। जब सभाके बारहो प्रकोष्ठ भर गये और सम्पूर्ण आगन्तुक जीव व्याख्यान सुननेकी प्रतीक्षा करने लगे, तो भगवान्की दिव्यध्वनि ही न निकली (तीर्थङ्करोंकी वाणी ओष्ठ, तालु और जिह्वाके संसर्गसे नहीं निकलती, बल्कि मेघके गर्जनके समान मूर्धासे स्वरव्यञ्जनरहित निकलती है। उसमें तपके प्रभावसे ऐसा अतिशय होता है कि सब देशवासी सब जातिके मनवाले प्राणी अपनी अपनी भाषामें उसे समझने लगते हैं।) दिव्यध्वनिकी प्रतीक्षा करते करते एक दिन दो दिन यहांतक कि छासठ दिनतक बीत गये, परन्तु भगवान्को उपदेश वृष्टि न हुई। जब यह सब वृत्तान्त इन्द्रने देखा, तो उसने अपने अवधिज्ञानसे (अवधिज्ञान शब्द देखो) निश्चय किया कि "भगवान्का कोई गणधर तो है ही नहीं, जो उनके दिव्य उपदेशको धारणा रख लोगोंको समझा सके, इसलिये ही वाणी नहीं निसृत हुई है।" अब तो इन्द्रको गणधरके खोजनेकी आवश्यकता हुई। उसने अपने अवधिज्ञानसे जब इन्द्रभूतिको भावी गणधर जाना, तो वह सीधा एक विद्यार्थीका वेशधारण कर उनके पास गया। उस समय इन्द्रभूति अपने छात्रोंको पढ़ा रहे थे। इसलिये इन्द्र भी उन छात्रोंमें जा कर ही बैठ गया और उनका व्याख्यान सुनने लगा।

उस समय किसी विषयका प्रतिपादन करके इन्द्रभूतिने अपने विद्यार्थियोंसे पूछा—"क्यों! तुम सब लोगोंको समझमें आ गया न?" उत्तरमें अन्य विद्यार्थियोंने तो 'हां' कह दिया, परन्तु छात्रवेशधारी इन्द्र अपनी नाक भौं सिकोड़ अरुचि प्रकट करने लगा। उसके इस व्यापारसे असन्तुष्ट हो छात्रोंने इन्द्रभूतिसे कहा—"महाराज! यह नवीन छात्र आपकी अवज्ञा करता है।" यह सुन इन्द्रभूतिने कहा—"क्यों! मैं समस्त शास्त्रोंका वेत्ता हूं। मेरे व्याख्यानको सब लोग पसन्द करते हैं फिर क्या कारण है कि वह तुम्हें नहीं रुचा?" उत्तरमें इन्द्रने कहा—"यदि आप सम्पूर्ण शास्त्रोंके ज्ञाता हैं, तो मेरे एक आर्याछन्दका ही अर्थ कह दीजिये वह आर्या यह है—

"षड्‌द्रव्य नवपदार्थ त्रिकाल-पञ्चास्तिकाय-षट्‌कायान्।
विदुषां वरः स एव हि यो जानाति प्रमाणनयैः॥"* (कथाकोष)

इस जैनधर्मके मर्मको कहनेवाले अश्रुतपूर्व विषम आर्याको देखकर इन्द्रभूति बड़े चकराये। उन्होंने क्रोधमें आकर इन्द्रसे कहा कि "तेरा कौन गुरु है? मैं उसीसे शास्त्रार्थ करूंगा। तुझ छात्रके साथ वाद विवाद करनेसे मेरी प्रतिष्ठामें क्षति पहुंचती है।" इसके उत्तरमें इन्द्रने कहा—"मेरे जगद्‌पूज्य महावीर भगवान् गुरु हैं।" इन्द्रभूति बोले—"क्या वही अपने इन्द्रजालसे आकाशमें देवोंको दिखानेवाला सिद्धार्थ राजाका पुत्र महावीर? क्या तू उसीका शिष्य है! अच्छा चल! उसीके साथ शास्त्रार्थ करूंगा।" इन्द्र अपने प्रयोजनको सिद्ध हुआ जान प्रसन्नतासे बोला—"आइये! मेरे साथ आइये। मैं आपको अपने गुरुके साथ मुलाकात करा दूंगा।" अपने वचनानुसार इन्द्रभूति इन्द्रके साथ चल दिये। यह देख उनके अन्य दो भाई अग्निभूति, वायुभूति और अनेक शिष्य भी साथ साथ हो लिये। चलकर वे लोग महावीर भगवान्‌के समवसरणके पास आये। समवसरणमें जो चारो दिशाओंमें चार बहुत विशाल स्तम्भ (मानस्तम्भ) होते हैं, (जिन्हें देखकर मानियोंका मानभङ्ग हो जाता है।) उन्हें देखते ही उन सब लोगोंका मान गलित हो गया, वे लोग स्पर्धा छोड़ भगवान्‌की प्रदक्षिणा दे उनकी स्तुति करने लगे। उनमेंसे इन्द्रभूति तत्काल ही समस्त परिग्रह (धन धान्य वस्त्र आदि) छोड़ मुनि हो गये।

ये ही इन्द्रभूति बादको तपस्याके बलसे अवधिज्ञान और मनःपर्ययज्ञानके (दूसरेके मनकी बातको जाननेवाला ज्ञान) स्वामी हो गये। सात ऋद्धि प्रकट हो गईं और समस्त तपस्वियोंमें मुख्य हो ये भगवान्‌के प्रधान गणधर हो गये। बस! इनके गणधर होते ही महावीर स्वामीका दिव्य उपदेश होने लगा। उसे इन्द्रभूति गणधरने धारण कर आचाराङ्ग, सूत्रकृताङ्ग आदि बारह अङ्गोंमें रचा और उसका भव्योंको ज्ञान कराया।

जब तक महावीर स्वामी इस संसारमें रहे, तब तक तो ये उनके गणधर रहे, बादको जब वे मोक्षधाममें पधार गये, तब इन्हें भी सर्वज्ञता हुई। इन्होंने १२ वर्ष तक इस पृथ्वीमण्डलपर जैनधर्मका प्रचार किया। अन्तमें अविनाशी पदप्राप्तकर सर्वदाके लिये अनन्त सुखका अनुभव करने लगे।

इन इन्द्रभूतिका गोत्र गौतम था, इसलिये इनको लोग गौतम नामसे भी कहते हैं। बहुतसे लोग बौद्धधर्मके नेता गौतमको और इन गौतमको नाम-साम्यसे एक ही समझते हैं, परन्तु यह ठीक नहीं। ये दोनो भिन्न भिन्न मतके प्रचारक भिन्न भिन्न व्यक्ति थे।

* जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, आकाश और काल ये छः द्रव्य, जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष, पाप और पुण्य ये नौ पदार्थ, अतीत, अनागत, और वर्तमान ये तीनकाल, जीव, अजीव, धर्म, अधर्म, और आकाश ये पांच अस्तिकाय, एवं पृथ्वी, जल, तेज, वायु और वनस्पति जातिके शरीरवाले पांचप्रकारके जीव और त्रसकाय (चलकाय)के धारी जीव ये षट्‌काय इनको जो प्रमाण और नयोंसे जानता है वह ही विद्वानोंमें श्रेष्ठ है।

इन्द्रभेषज (सं० क्लो०) इन्द्रं महत् भेषजमौषधम्, कर्मधा०। शुण्ठी, सोंठ।

इन्द्रमख (सं० पु०) इन्द्रकी प्रीतिके लिये होनेवाला यज्ञ।

इन्द्रमण्डल (सं० पु०) नक्षत्रमण्डलविशेष। इसमें अभिजित्‌से अनुराधातक नक्षत्र रहते हैं।

इन्द्रमद (सं० पु०) तरुगुल्म-ज्वर, पेड़पौधेको लगनेवाला बुखार। यह एक प्रकारका विष होता है और प्रथम वृष्टिके जलसे उपजता है। इन्द्रमदसे तरु तथा गुल्म झुलस जाते हैं और मीन एवं जलौकादि मर जाते हैं।

इन्द्रमह (सं० क्लो०) इन्द्र-प्रीतिजनक उत्सव-यज्ञादि। यह यज्ञ 'इन्द्रं अहं' प्रभृति शब्दसे आरम्भ होता है।

इन्द्रमहकामुक (सं० पु०) इन्द्रमहं कामयते, इन्द्रमह-कम-उकञ्। कुक्कुर, कुत्ता।

इन्द्रमादन (सं० त्रि०) इन्द्रको प्रसन्न करनेवाला।

इन्द्रमार्ग (सं० पु०) इन्द्रलोकप्रापयिता मार्गः, शाक-तत्। बदरीपावनका निकटवर्ती तीर्थ। इस स्थानमें मयिष्ठका आश्रम था। (भारत, वन ८४ अ०)

इन्द्रमेदिन् (सं० त्रि०) इन्द्रसे मित्रता रखनेवाला।

इन्द्रयव (सं॰ पु॰) इन्द्रस्य कुटजवृक्षस्य यवः बीजमिव, उप॰ ६-तत्। कुटजबीज, कोरैयाका तुख्म, कुड़ा। (Wrightia antidysenterica) इन्द्रशब्द पर्यायमात्र और कुटज-वाचक है। यह त्रिदोषघ्न, धारक, कटु, शीतल, दीपन और ज्वर, अतीसार, रक्तार्शः, वमि, वीसर्प, कुष्ठ, वातरक्त, कफ एवं शूलको नाश करनेवाला है। (भावप्रकाश) मध्यभारत, पश्चिमप्रायद्वीप और ब्रह्ममें इन्द्रयव पाया जाता है। वृक्ष पतनशील है। लकड़ी हाथी दांत-जैसी सफेद, कड़ी और दानेदार होती है। तराश और खराद कर उसे इमारतमें लगाते हैं। पत्तीदार सोकेमें दो-दो फलियां निकलती हैं, जो एक २ हाथ लम्बी होती हैं। फलियोंका मुख दोनो ओर एक दूसरेसे मिला रहता है और भीतरके रूवेंमें बीज पड़ता है। बम्बईमें कोमल पत्तियां और फलियां खाई भी जाती हैं। सफेद और सुन्दर फूलोंके गुच्छोंमें चमेलीकी तरह खुशबू आती है। अतिप्राचीन कालसे दाक्षिणात्यके लोग इन्द्रयवकी पत्तियोंका नीला रङ्ग बनाते चले आते हैं।

इन्द्रयु (वै॰ त्रि॰) इन्द्रके समीप पहुंचनेका अभिलाषी।

इन्द्रयोग (वै॰ पु॰) इन्द्रका संयुक्त बल।

इन्द्रराज (सं॰ पु॰) १ देवराज। इन्द्र और इन्द्रलोक देखो।

२ कान्यकुब्जका एक प्राचीन नृपति, ई॰के ८म शतकमें समस्त उत्तरभारतमें कुछकाल तक इसका अधिकार था। यह गौड़ाधिप धर्मपाल कर्तृक परास्त और राज्यच्युत हुआ था। कान्यकुब्ज देखो। ३ लाटदेशके राष्ट्रकूटवंशीय एकाधिक नृपतिका नाम। राष्ट्रकूट शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

इन्द्रलाजी (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रस्य कुटजस्य लाजा इव लाजा यस्याः। ओषधि वृक्षभेद।

इन्द्रलाज्य, इन्द्रयव देखो।

इन्द्रलुप्त (सं॰ पु॰) इन्द्राणां तद्वर्णानां केशानां लुप्तं लोपः यस्मात्, बहुव्री॰। श्मश्रुकेशघ्न रोग, बालखोरा, गञ्ज। (Alopecia, baldness) पहले मूर्च्छित पित्त वातके साथ रोमकूपोंमें पहुंच रोमोंको उखाड़ डालता है, फिर श्लेष्मा रोमकूपोंको रूंध देता है। इससे दूसरोंका जन्म असम्भव हो जाता है। (सुश्रुत) यह रोग सर्वाङ्गीन दुर्बलता, ज्वर, पारददोष, उपदंशविष एवं रक्तस्राव प्रभृति कारणोंसे उपजता है। केशग्रन्थि सम्पूर्णरूपसे रुग्ण या विनष्ट होने पर भी इन्द्रलुप्त प्रायः नहीं मिटता।

अवधौत मलसे कड़वी तरोयीके पत्तेका रस रगड़ देनेपर यह रोग अच्छा हो जाता है। हस्तिदन्तभस्म और रसाञ्जन छागीके दुग्धमें घोल लेपन करनेसे शीघ्र केश निकलते हैं। आलपीन या सूई द्वारा रुग्ण स्थानको छेद प्याज काटकर रगड़नेसे भी बाल आनेमें देर नहीं लगती। गोक्षुर, तिलपुष्प, मधु एवं घृत एकत्र पीस मरहमकी तरह चढ़ानेपर उपकार होता है। श्वेत वृश्चिकपालीका बीज घिसनेसे एक सप्ताहके मध्य ही लोम निकलता है। भिलावें, वृहतीफल और घुंघचीके फल तथा मूलको मधुके साथ पीसकर इन्द्रलुप्त पर चढ़ाना चाहिये। यष्टिमधु, नीलोत्पल, मूंगकी जड़, तिल, घृत, दुग्ध एवं भृङ्गराज एकसाथ पीसकर लगानेसे घन, दृढ़मूल तथा घना केश उपजते हैं। इस रोगमें बार-बार शिरका मुंडाना और गर्म पानीसे धो डालना अच्छा है।

होमियोपाथिक डाक्टर कोयी कठिन रोग अच्छा होने वा सर्वाङ्गीन दुर्बलता रहनेसे एसिडाम फसफरिकाम्, क्षायवीय ज्वरसे एसिडाम् फ्लारिकम, हिपार एवं सालफर, उपदंश किंवा पारद दोषसे आर्सेनिक, नेट्राम म्यूरोटिकम्, केलकेरिया, हिपार तथा फसफरस और प्राचीन शिरःपीड़ासे केश गिरनेपर सालफरका व्यवहार करते हैं। किंवदन्ती है कि खरवाट निर्धन नहीं रहते।

इन्द्रलोक (सं॰ पु॰) इन्द्रस्य लोकः भवनम्, ६-तत्। १ अमरावती, स्वर्ग। २ इन्द्रका स्थान।

इन्द्रलोकगमन (सं॰ क्लो॰) इन्द्रलोकको अर्जुनका जाना।

इन्द्रलोकेश (सं॰ पु॰) १ इन्द्र। २ विभिन्न भवनका राजा।

जैन-शास्त्रानुसार इन्द्र सौ हैं। और वे इस प्रकार हैं—

"भवनाधिप चालीसा वितरदेवाण होंति बत्तीसा।

कप्पामर चउवीसा चन्दो सूरो नरो तिरियो॥" ([illegible])

अर्थात् भवनवासी देवोंके चालीस, व्यन्तरोंके बत्तीस कल्पवासियोंके चौबीस, ज्योतिषियोंके दो (चन्द्र और सूर्य), मनुष्योंका एक (चक्रवर्ती) और तिर्यंचोंका एक (सिंह) इस तरह सब मिलाकर सौ इन्द्र होते हैं।

देव चार प्रकारके होते हैं—भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और वैमानिक। इस पृथ्वीके नीचे रत्नप्रभा नामकी एक पृथ्वी है। उसके खरभाग, पङ्कभाग और अब्बहुलभाग ये तीन भाग हैं। उनमें आदिके जो दो भाग हैं उनमें असंख्य देवोंके भवन हैं उनमें जो देव रहते हैं, वे भवनवासी कहलाते हैं। इनके दश भेद हैं—असुरकुमार, नागकुमार, विद्युत्कुमार, सुपर्णकुमार, अग्निकुमार, वातकुमार, उदधिकुमार, स्तनितकुमार, द्वीपकुमार और दिक्कुमार। हर एक भेदमें दो दो इन्द्र और उनके दो दो प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल इनमें चालीस इन्द्र है। इन्द्रोंके समान प्रतीन्द्रोंकी विभूति होती है, अतः प्रतीन्द्रोंको भी इन्द्र कहा है।

पहाड़ नदी शून्यगृह वृक्ष और विविध देशदेशान्तरोंमें जो देव रहते हैं, उन्हें व्यन्तर देव कहते हैं। उनके आठ भेद हैं—किन्नर, किंपुरुष, महोरग, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, भूत, और पिशाच। इनके भी हर एक भेदमें दो इन्द्र और दो प्रतीन्द्र होते हैं। इसलिये बत्तीस इन्द्र हैं।

सूर्य चन्द्रमा आदि ज्योतिषी देव कहलाते हैं। इनके पांच भेद हैं—सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र, तारागण। इनके दो ही सूर्य और चन्द्रमा इन्द्र हैं।

विमानोंमें रहनेवाले देव वैमानिक देव कहलाते हैं। उनमें प्रथम दो भेद हैं—कल्पवासी और कल्पातीत। कल्पवासियोंके बारह भेद हैं। ये कल्पवासी देव सोलह स्वर्गोंके पटलोंमें रहते हैं और इनके बारह इन्द्र और बारह प्रतीन्द्र हैं। इसलिये कुल चौबीस इन्द्र हैं। सोलह स्वर्गोंके ऊपर जो विमान हैं उनके रहनेवालोंको कल्पातीत कहते हैं। उनमें इन्द्र और सामान्यदेवोंकी कल्पना नहीं है। वे सब समान होते हैं। मनुष्योंमें सबसे बड़ा राजा चक्रवर्ती इन्द्र है। और तिर्यंचोंमें सबसे श्रेष्ठ सिंह इन्द्र है। (जैनशास्त्र)

२ अतिथि, मेहमान।

इन्द्रलोहक (सं० क्ली०) रौप्य, चांदी।

इन्द्रवंशा (सं० स्त्री०) वृत्तविशेष, एक छन्द। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें बारह वर्ण रहते हैं। इन्द्रवंशाके तृतीय, षष्ठ, सप्तम, नवम एवं एकादश वर्ण लघु तथा अवशिष्ट गुरु होते हैं।

"स्यादिन्द्रवंशा ततजै रसंयुतैः।" (वृत्तरत्नाकर)

इन्द्रवचा (सं० स्त्री०) इन्द्रयव।

इन्द्रवज्रा (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। इसमें चार पाद और प्रत्येक पादमें ग्यारह अक्षर होते हैं। तृतीय, षष्ठ, सप्तम एवं नवम लघु तथा अवशिष्ट वर्ण गुरु होते हैं।

"स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः।" (वृत्तरत्नाकर)

इन्द्रवटी (सं० स्त्री०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, एक दवा। मृत सूत तथा वङ्ग और अर्जुनकी त्वक्को तुल्यांश ले. शाल्मली-मूलज द्रवमें घोटे और रत्ती प्रमाण वटिका बनाये। मधु तथा शाल्मलीमूलचूर्ण अथवा शर्कराके साथ खानेपर इन्द्रवटी प्रमेहको दूर कर देती है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

इन्द्रवधू (सं० स्त्री०) वीरबहूटी, रामकी गुड़िया। यह कीड़ा प्रायः लाल होता है और वृष्टि पड़नेपर अपने आप भूमिसे उपजता है।

इन्द्रवल—मध्यप्रदेशका एक प्राचीन शबर राजा। यह उदयनका पुत्र था। शबर होते भी इसने अपनेको पाण्डुवंशीय बताया है।

इन्द्रवल्लरी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्यासौ वल्लरी चेति, कर्मधा०। इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायन। इस लताका रस तिक्त, पुष्प पीतवर्ण और मूल शुभ्र होता है।

इन्द्रवल्लिका, इन्द्रवल्ली देखो।

इन्द्रवल्ली (सं० स्त्री०) इन्द्रप्रिया वल्ली लता, शाक० तत्। १ पारिजात लता। २ इन्द्रवारुणी।

इन्द्रवस्ति (सं० पु०) इन्द्रस्यात्मनो वस्तिरिव। जङ्घाका मध्य भाग, साक, पिंडली। प्रति पार्ष्णि-जङ्घाके स्थानको इन्द्रवस्ति कहते हैं। (सुश्रुत)

इन्द्रवायु (सं० पु०) इन्द्र और वायु।

इन्द्रवारुणि (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी देखो।

इन्द्रवारुणिका, इन्द्रवारुणी देखो।

इन्द्रवारुणी (सं० स्त्री०) इन्द्रवरुणयोरियं वा इन्द्र-वरुणौ देवते अस्याः इत्यण्-ङीप्; इन्द्रस्य आत्मनो वारुणीव प्रिया। १ लताविशेष, इन्द्रायन। (Citrullus Colocynthis) वैद्यशास्त्रके मतसे इसके पर्याय वाचक ये शब्द हैं,—विशाला, ऐन्द्री, इन्द्र, अरुण, गवादनी, क्षुद्रसहा, इन्द्रचिर्भिटी, सूर्या, विषघ्नी, गजकर्णिका, अमरा,माता,सुकर्णी, सुफला,वारुणी,बालकप्रिया, रक्तैर्वारु,तारका, हपभाक्षी, पीतपुष्पा, इन्द्रवल्लरी, हैमपुष्पी, क्षुद्रफला, वल्ली, चित्रफला, चित्रा, गवाक्षी, गजचिर्भिटी, मृगेर्वारु, पिटङ्कोकी और मृगादनी। इन्द्रवारुणी उत्तमाशा अन्तरीप, मिश्र, तुर्किस्तान, भूमध्य-सागरके द्वीपसमूह और भारतवर्षमें स्वयं उत्पन्न होती है। गुणमें यह तिक्त, कटु, शीतल, रेचन और गुल्म, पित्त, श्लेष्मा, कृमि, कुष्ठ तथा ज्वरको नाश करनेवाली है। (राजनिघण्टु) आलोपाथिक मतसे इन्द्रवारुणी अति विरेचक होती है, क्योंकि यह अन्त्रकी श्लैष्मिक झिल्लीको उग्रता प्रदान करती है। इसको अधिक मात्रामें सेवन करनेसे यह प्रदाहिक विषक्रिया फैलाती है। शोथ, उदरी, कोष्ठबद्ध एवं सन्न्यास प्रभृति रोगमें विरेचन और प्रत्युग्रता लानेके लिये इन्द्रवारुणीका व्यवहार किया जाता है। इसके सेवनसे कभी-कभी उदरमें वेदना उठती है,तबीयत मिचलाती और कै आने लगती है। ऐसी अवस्थामें कर्पूर किंवा कोनारम देनेसे पीड़ा मिटती है। आलोपाथिक मात्रामें इन्द्रवारुणी खानेसे अनेक समय नाना रूप विघ्न पड़ सकता है। इसलिये इससमय इसे कोई व्यवहारमें नहीं लाता। विशेष आवश्यक होनेसे विवेचनापूर्वक इन्द्रवारुणीको खाना चाहिये। इसका सार और वटिका व्यवहार्य है। मात्रा दो से दश ग्रेन तक होती है। होमिओपाथिक मतसे यह सरल अन्त्रके प्रदाह, अतिसार, रक्तातिसार, गृध्रसी, अर्धशिरःशूल, स्नायुशूल, अन्त्रशूल, वात, सन्धिवात, डिम्बाशयके स्नायवीय रोग और नानाप्रकारकी पीड़ाओंमें दी जाती है। अत्यन्त उदर-वेदनासंयुक्त, विशेष कष्टदायक रक्तातिसार, मारक्यूरियस करोसाइवास और इन्द्रवारुणीके यथाक्रम सेवनसे निवृत्त हो जाता है। डाक्टर ह्यूसने शूलरोग पर इस औषधका व्यवहार किया था। उदर ढोल-जैसा फूलने, तीव्र वेदनाविशिष्ट पैत्तिक विवमिषा तथा वमन लक्षण झलकने और वृहत् एवं सरल अन्त्रमें प्रदाह उठनेपर इन्द्रवारुणी देते हैं। डाक्टर ह्यूसके मतसे यह तरुण गृध्रसीपर पुरातन रोगकी अपेक्षा अधिक उपकार करती है। अचिरात् अङ्गके उत्तोलनसे वेदना बढ़ने एवं क्रमागत सञ्चालनसे उपशम आने और साथ ही उदरामय तथा अन्त्रशूल उठनेपर इन्द्रवारुणी अत्यन्त लाभदायक है। पहले जलवत् एवं आममिश्रित, पीछे पित्त तथा रक्तमिश्रित और प्रस्तरखण्डके मध्य प्रेषित अन्त्र जैसी उदरवेदनाविशिष्ट रक्त आमाशयमें केलोसिन्थ उपयोगी है। मस्तक भारी पड़ने, चक्षुः तथा कपालके मध्य अत्यन्त ज्वाला उठने, और सूच या आलपीन विद्ध-जैसी यन्त्रणासे विशिष्ट अर्धशिरःशूल होनेपर इन्द्रवारुणीका प्रयोग करना चाहिये। इसका फल नारङ्गी-जैसा पीला या लाल होता है। उसपर खरबूजाकी तरह फांक होती है। खानेमें वह अतिशय कटु लगता है। इसके गूदेसे औषध बनती है। और महिष एवं उष्ट्रपक्षी उसे खाते हैं। अफ्रीकामें कोई-कोई इसके बीजको भी खाते हैं। इन्द्रवारुणीका ताज़ा मूल दन्तमाञ्जनमें काम आता है। अफ्रीकाके नीलनद-तीरवर्ती कोयो-कोयो लोग इसके फलसे एकप्रकारका रस निकालते हैं और उसे पानी भरनेकी मशकमें लगाते हैं। इसके गन्धसे ऊंट मशकको काट नहीं सकते। २ गोरक्षकर्कटी, फूट।

इन्द्रवाह (वै० पु०) इन्द्रको ले जानेवाला।

इन्द्रविद्धा (सं० स्त्री०) व्रणरोगविशेष, किसी किस्मकी फुन्सी। यह वात-पित्त बिगड़नेसे त्वक्पर जलपूर्ण क्षुद्र-क्षुद्र किंवा वृहत् वृहत् स्तवकमें पड़ जाती है। इन्द्रविद्धाका उद्भेद (खाज)की तरह एकत्र न हो स्वतन्त्र भावमें अवस्थित रहती है। इस रोगमें प्रथम परिष्कार जल वा दुग्धके समान स्राव निकलता है। उसके सूखनेसे चिपचिपी पिपिटिका उपजती है। चिकित्सकोंके मतसे इन्द्रविद्धा चार प्रकारकी होती है,—विम्बाकार (Herpes-phlyctenoæs), चक्राकार (Herpes-circinatus), राम-

धनुषाकार (Herpes-zoster) और कटिबन्धाकार (Herpes-iris)। सिवा इसके यह रोग (Herpes-prepulacis), शिश्नत्वक् और (Herpes-labialis) ओष्ठमें भी उपजता है। स्नायुमें उपदाह उठना ही इन्द्रविद्धाका प्रधान कारण है। इस रोगमें शरीर ग्लानिसे भरा रहता, शिर: दुखता, पार्श्वमें शूल उठता और ईषत् ज्वर चढ़ आता है। दश-बारह दिनमें ही इन्द्रविद्धा आरोग्य हो जाती है। यह दद्रुजातीय रोग है।

वैद्योंके मतसे पित्तजन्य विसर्पकी भांति इन्द्रविद्धाकी चिकित्सा करना और सकल फुंसियोंके पकने पर काकोल्यादि गणोक्त द्रव्यको घृतपाक करके लगाना चाहिये। होमिओपाथिक डाक्टर युवकके यह रोग होनेपर रसटक्सका और वृद्धके होनेपर मेजेरियमका प्रधानत: व्यवहार करते हैं। सामान्य इन्द्रविद्धापर सलफर और सिपियाको,उपद्रवरहितपर मार्कुरिसको, लिङ्गचर्मके पूययुक्तरोगपर फाइटो और श्राफाइटीसको, अत्यन्त पीड़ादायकपर आर्मेनिकको और दुर्बल एवं शूलग्रस्तपर टेलुरियम्को लगाते हैं।

इन्द्रवीज (सं० पु०) इन्द्रस्य कुटजस्य वीजम्। इन्द्रयव, कुड़ा।

इन्द्रवृक्ष (सं० पु०) इन्द्रस्य वृक्ष:। १ देवदारु। इसपर लोग इन्द्रध्वज लगाते हैं इसलिये इसका नाम इन्द्रवृक्ष पड़गया है। २ श्वेत कुटजवृक्ष। ३ अर्जुनवृक्ष।

इन्द्रवृद्ध (सं० पु०) १ सुश्रुतवर्णित कुलक्षणाश्व विशेष, किसी किस्मका खराब घोड़ा।

इन्द्रवृद्धा, इन्द्रविद्धा देखो।

इन्द्रवृद्धिक, इन्द्रवृद्ध देखो।

इन्द्रवैदूर्य (सं० क्ली०) बहुमूल्य रत्नविशेष, किसी किस्मका कीमती पत्थर।

इन्द्रव्रत (सं० क्ली०) इन्द्रस्येव व्रतम्। व्रतविशेष। इन्द्र जैसे लोकका उपकार करनेके लिये चार मास तक जल बरसाते हैं, वैसे ही राजा भी अपनी प्रजाको सुख देनेके लिये धनादि प्रदान किया करते हैं। इसी नियमका नाम इन्द्रव्रत है।

इन्द्रशक्ति (सं० स्त्री०) इन्द्राणी, इन्द्रकी पत्नी।

इन्द्रशत्रु (सं० पु०) इन्द्र: शत्रु: यस्य, बहुव्री०। वृत्रासुर। "इन्द्रोऽस्य शमयिता वा तस्मात् इन्द्रशत्रु:।" (निरुक्त)

इन्द्रशैल (सं० पु०) इन्द्राभिध: शैल:, शाक-तत्। इन्द्रकील-पर्वत।

इन्द्रश्रेष्ठ (वै० त्रि०) इन्द्रको प्रधानकी भांति रखनेवाला।

इन्द्रसन्धा (सं० स्त्री) इन्द्रके साथ संसर्ग।

इन्द्रसारथि (सं० पु०) इन्द्रस्य सारथि:। १ मातलि, इन्द्रका रथचालक। २ वायु, हवा। (ऋक् ३।३४।१)

इन्द्रसावर्णि (सं० पु०) इन्द्रस्य सावर्णि:। चतुर्दश मनु।

इन्द्रसुत (सं० पु०) १ जयन्त। २ अर्जुन। ३ वानरराज बाली। ४ अर्जुनवृक्ष।

इन्द्रसुरस (सं० पु०) इन्द्र: कुटज: इव सुरस:, उप० कर्मधा०। निर्गुण्डी वृक्ष, संभालू।

इन्द्रसुरसा (सं० स्त्री०) इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसुरा (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य आसव: सुरा इव प्रिया। गोरक्षकर्कटिका, फूट।

इन्द्रसुरिष, इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसुरिस, इन्द्रसुरस देखो।

इन्द्रसूक्त (सं० क्ली०) इन्द्र-देवतं सूक्तम्, शाक० तत्। इन्द्रदैवत मन्त्र सूक्त। इसी मन्त्रसे इन्द्रका स्तव करते हैं।

इन्द्रसूनु (सं० पु०) १ वानरपति बालि। २ अर्जुन वृक्ष।

इन्द्रसेन (सं० पु०) इन्द्रस्य सेनेव महती सेना यस्य, बहुव्री०। १ परीक्षितके स्वनाम-प्रसिद्ध पुत्र। २ युधिष्ठिरके पुत्र। ३ नलके पुत्र। ४ किसी नागका नाम।

इन्द्रसेना (सं० स्त्री०) १ इन्द्रसैन्य, इन्द्रकी फौज। २ मौद्गल्यकी ज्येष्ठ पुत्रवधू और भ्रमकी माता। ३ नलकी कन्या।

इन्द्रसेनानी (सं० पु०) सेनां नयति सेनानी क्विप्, ६-तत्। कार्तिक। इन्द्रने कार्तिकका बल-पराक्रम देख कहा था,—'आप इन्द्रत्व लीजिये। हम आपके आदेशपर चलेंगे।' किन्तु इन्होंने उत्तर दिया,—'हमें इन्द्रत्व न चाहिये। आप ही उसे अपने हाथमें रखिये। हम आपकी आज्ञानुसार सर्वथा कार्य

'करेंगे।' इन्द्रने तब इन्हें सेनापति बननेको कहा। इन्होंने उसे मान लिया। (भारत, आदि, ८४ अ०)

इन्द्रस्तुत् (सं० पु०) इन्द्रः स्तूयते यस्मिन्, इन्द्र-स्तु-क्विप्। इन्द्रयज्ञ। इस यज्ञमें इन्द्रकी आराधना होती है।

इन्द्रस्तोम (सं० पु०) इन्द्रस्य स्तोमः स्तुतिः यस्मिन्। अतिरात्राङ्गभूत यागविशेष। राजाका अनुष्ठेय यज्ञ। इसकी दक्षिणा १००००) रु० है। (कात्यायन ३।३।१६)

इन्द्रस्वरस (सं० पु०) वृष्टिजल, बारिशका पानी।

इन्द्रस्वत (वै० त्रि०) इन्द्रकी समता करनेवाला, इन्द्र-जैसा।

इन्द्रहव (वै० पु०) इन्द्रका आह्वान।

इन्द्रहू (सं० स्त्री०) इन्द्रः ह्वयतेऽनया, इन्द्र-ह्वे-क्विप् सम्प्रसारणम्, ६-तत्। इन्द्रकी आराधनाका मन्त्र।

इन्द्रा (सं० स्त्री०) १ इन्द्रकी पत्नी शचीदेवी। २ फणिज्झक वृक्ष। ३ इन्द्रवारुणी।

इन्द्राग्निदेवता (सं० स्त्री०) अनुराधा नक्षत्र।

इन्द्राग्निधूम (सं० पु०) इन्द्राग्नेः मेघानलस्य धूम इव, उप० ६-तत्। १ हिम, बरफ। २ अग्निविशेष। यह अग्नि प्रति वर्ष वैशाख और ज्येष्ठ मासमें प्रायः पृथिवीपर गिरती है। इससे महिष, गो, वृक्ष तथा गृह आदि जल जाते हैं।

इन्द्राणिका (सं० स्त्री०) १ निर्गुण्डीवृक्ष, संभालू। २ नीलसिन्दुवार, काला संभालू।

इन्द्राणिकापत्र (सं० क्ली०) निर्गुण्डीपत्र, संभालूका पत्ता।

इन्द्राणी (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य पत्नी, ङीप्। पाणिनि ४। १। ४९। १ इन्द्रकी स्त्री शची। इनके परम ऐश्वर्य है। २ दुर्गाशक्ति। देवदानव इनके अधीन रहते हैं। ये सकलको मङ्गलदात्री हैं। "ऐश्वर्यं परमं यस्याः वशे चैव सुरासुराः। इदि परमैश्वर्ये च इन्द्राणी तेन सा स्मृता।" (देवीपुराण) ३ स्थूलैला, बड़ी इलायची। ४ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ५ स्त्रीन्द्रिय। ६ सिन्दुवार, संभालू। ७ इन्द्रायन।

इन्द्राहृग (सं० पु०) इन्द्रस्येवादर्शनमस्य, इन्द्र-आ-दृश-टक्, ६-तत्। इन्द्रगोप कीट।

इन्द्रानुज (सं० पु०) वामनावतारी भगवान्। इन्द्रके बाद अदितिके गर्भ और काश्यपके औरससे वामनने जन्म लिया था। इसलिये इनका यह नाम पड़ा है। सम्यविवरण वामन शब्दमें देखो।

इन्द्राभ (सं० पु०) इन्द्रस्येवाभा यस्य अथवा इन्द्र इवा-भाति, इन्द्र-आ-भा-क। कुरुवंशीय धृतराष्ट्रके सप्तम पुत्र।

इन्द्राभा (सं० स्त्री०) कङ्कपक्षिभेद, किसी किस्मका बगला।

इन्द्रायन (हिं० पु०) इन्द्रवारुणी देखो।

इन्द्रायुध (सं० क्ली०) इन्द्रस्यायुधमिव, ६-तत्। १ इन्द्रका अस्त्र वज्र। २ रामधनुः। इसकी उत्पत्तिका विवरण इन्द्र शब्दमें देखो। आकाशमें रामधनुष देखकर वह किसीको न दिखाना चाहिये,—"न दिशेन्द्रायुधं इष्टं, कस्यचिद्दर्शयेत् बुधः॥" (मनु) किन्तु किसी-किसीके मतानुसार पर्वतपर खड़े होकर देखनेसे दिखा देनेमें कोई दोष नहीं लगता,—"केचित्तु पर्वतादिस्थस्य दर्शने न दोषः।" (मेधातिथि) ३ वज्रकमणि, हीरा। ४ स्थावर विषान्तर्गत कन्दविष। ५ कान्यकुब्जका एक पराक्रान्त नृपति। कान्यकुब्ज देखो।

इन्द्रायुधशिखिन् (सं० पु०) किसी नागका नाम।

इन्द्रायुधा (सं० स्त्री०) इन्द्रायुधवत् कर्धराज-सविष जलायुका, किसी किस्मकी ज़हरीली जोंक। इसकी पीठ इन्द्रधनुष-जैसी चमकती है।

इन्द्रारि (सं० पु०) असुर, राक्षस। सर्वदा ही असुर इन्द्रकी यज्ञमें विघ्न डाला करते हैं।

इन्द्रार्धपादप (सं० पु०) क्रमुकवृक्ष, सुपारीका पेड़।

इन्द्रालिश (सं० पु०) इन्द्रं आलिशति, इन्द्र-आ-लिश-क। इन्द्रगोप कीट, एक कीड़ा।

इन्द्रावरज, इन्द्रानुज देखो।

इन्द्रावसान (सं० पु) इन्द्रस्यावसानः यत्र बहुव्री०। मरुभूमि, रेतीली ज़मीन्।

इन्द्राशन (सं० पु०) १ सिद्धि, भांग। २ गुञ्जा, घुंघची।

इन्द्राशनक, इन्द्राशन देखो।

इन्द्रासन (सं०-पु०-क्ली०) इन्द्र आस्या अस्यते क्षिप्यते येन, इन्द्र-अस करणे ल्युट्। १ इन्द्रका सिंहासन। २ राजाका सिंहासन। ३ पञ्चमात्रिक प्रस्तारविशेष।

इन्द्राक्षा (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रवारुणी लता, इन्द्रायण।

इन्द्रिय (सं॰ क्ली॰) इन्द्रस्यात्मनो लिङ्गमनुमापकम्, इन्द्र-घ। इन्द्रलिङ्गेत्यादि। पा ५।२।९३। १ बल, ज़ोर। २ शुक्र, मनी। ३ शारीरिक शक्ति, जिस्मानी ताक़त। ४ पांचकी संख्या। ५ ज्ञानसाधन, कुव्वत मुदरिका।

इन्द्रिय तीन प्रकारकी होती हैं,—ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रिय और अन्तरेन्द्रिय। चक्षुः, कर्ण, जिह्वा, नासिका और त्वक्‌को ज्ञानेन्द्रिय कहते हैं। वाक्य, पाणि, पाद, पायु और उपस्थका नाम कर्मेन्द्रिय है। मनः, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको अन्तरेन्द्रिय समझना चाहिये। इस प्रकार सब मिलाकर चौदह इन्द्रिय हैं। मनः सकल इन्द्रियका नियामक है। कर्णके दिक्, चर्मके वायु, चक्षुःके सूर्य, जिह्वाके वरुण, नासिकाके अश्विनीकुमार, वाक्यके अग्नि, हस्तके इन्द्र, चरणके विष्णु, पायुके मित्र, उपस्थके प्रजापति, मनःके चन्द्र, बुद्धिके ब्रह्मा, अहङ्कारके शङ्कर और चित्तके देवता अच्युत हैं। न्यायमतसे पृथिवीका नासिका, जलका जिह्वा, तेजःका चक्षुः, वायुका चर्म और आकाशका इन्द्रिय कर्ण होता है। सुश्रुतने बुद्धिका ब्रह्मा, अहङ्कारका ईश्वर, मनःका चन्द्र, गात्रका दिक्, चर्मका वायु, चक्षुःका सूर्य, जिह्वाका जल, नासिकाका पृथिवी, वाक्यका अग्नि, हस्तका इन्द्र, चरणका विष्णु और पायुका देवता मित्रको माना है।

इन्द्रियका व्यापार सकल कर्ताके अधीन रहता है, इसलिये इन्द्रियका अपर नाम करण है,—

"स्वाधीनः कर्ता कर्त्रधीनं करणम्।" (पद्मनाभ)

नैयायिकोंके कथनानुसार मन कभी कर्ता और कभी करण बन जाता है। क्योंकि किसी रूपको देखनेके पहले मन चले, फिर दृष्टि डालनेपर दर्शनजन्य सुखको भी वही अनुभव करेगा। दूसरे मनःके द्वारा आत्मा भी दर्शनसुख पाता है। ज्ञानका कार्य मन है। कारणसे भिन्न वेदान्तिक मनको इन्द्रिय नहीं समझते और बुद्धिको भी इन्द्रियसे पृथक् मानते हैं। कर्ण द्वारा बाहरी शब्द सुन पड़ता है, फिर ढांक देनेपर भी भीतर ही भीतर आया करता है।

चर्म द्वारा स्पर्शका अनुभव होता है। चक्षुःसे रूप दीख पड़ता है। नासिकासे गन्धको ग्रहण करते हैं। वाक्येन्द्रियसे बात करते हैं। हस्त द्वारा समस्त वस्तु उठायी जाती हैं। चरण यातायातका कार्य चलाता है। पायु मल और उपस्थ मूत्रको त्याग करता है।

अन्तःकरण तीन प्रकारका होता है,—बुद्धात्मक, अहङ्कारात्मक और मनसात्मक। शरीरके मध्य कार्य होनेसे ही मन, बुद्धि और अहङ्कारको अन्तःकरण कहते हैं। कोई दश, कोयी ग्यारह, कोयी बारह, कोयी तेरह और कोई कोई चौदह इन्द्रियतक मानते हैं।

जैन-शास्त्रानुसार इन्द्रियके दो भेद हैं द्रव्येन्द्रिय और भावेन्द्रिय। द्रव्येन्द्रिय स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु, और श्रोत्रके भेदसे पांच प्रकार है। द्रव्येन्द्रियोंके निर्वृत्ति और उपकरण ये दो और उत्तर भेद हैं। शरीरकी रचना करनेवाले नाम कर्मकी सहायतासे जो रचना विशेष हो उसे निर्वृत्ति कहते हैं और जो निर्वृत्तिका उपकार (रक्षण) करे वह उपकरण है। निर्वृत्ति और उपकरणके भी दो दो भेद हैं—बाह्य और आभ्यन्तर। आत्माके प्रदेशोंका इन्द्रियोंके आकाररूप होना सो आभ्यन्तर-निर्वृत्ति है। पुद्गल (जिस द्रव्यमें स्पर्श, रस, गन्ध और वर्ण पाये जांय उसे पुद्गल कहते हैं। यह मूर्तिक है और सब लोकमें देखा जाता है) परमाणुओंकी इन्द्रियरूप रचना होना सो बाह्यनिर्वृत्ति है। जैसे नेत्र इन्द्रियमें नेत्र इन्द्रियके आकाररूप आत्माके जितने प्रदेश मसूरके समान फैले हैं, वे आभ्यन्तर-निर्वृत्ति हैं। और उसमें जितने पुद्गल परमाणु मसूरके आकारमें परिणत हुये हैं वे बाह्य निर्वृत्ति हैं। नेत्र इन्द्रियमें कृष्ण शुक्ल मण्डलकी तरह सब इन्द्रियोंमें जो निर्वृत्तिका उपकार करे उसको आभ्यन्तर उपकरण कहते हैं। और उसी नेत्रमें पलक आदिके समान जो निर्वृत्तिका उपकार करे उसको बाह्योपकरण कहते हैं।

भावेन्द्रिय दो प्रकारकी है—लब्धि और उपयोग। जिसके होनेसे आत्मा द्रव्येन्द्रियकी रचनामें प्रवृत्ति करे ऐसी ज्ञानावरणीय कर्म (आत्माके ज्ञान गुणको आच्छादन करनेवाले कर्म) की क्षयोपशम रूप

शक्ति विशेषको लब्धि कहते हैं। क्षयोपशम शब्द देखो। और क्षयोपशम लब्धिके निमित्तसे आत्माका पदार्थोंके प्रति परिणमन होनेसे जो आत्मामें ज्ञान उत्पन्न होता है वह उपयोग है। जैसे कोई जीव सुनना तो चाहे परन्तु सुननेकी क्षयोपशमरूप शक्ति न हो तो वह सुन नहीं सकेगा। इसलिये ज्ञानका कारण होनेसे ज्ञानावरणीय कर्मको क्षयोपशम शक्तिरूप लब्धिको इन्द्रिय माना है। एवं उपयोग इन्द्रियका फल वा कार्य है इसलिये कार्यमें कारणका उपचारकर उसे इन्द्रिय कहा है। अथवा जिस प्रकार चक्षु आदिक इन्द्रियां आत्माके परिचय करानेमें हेतु हैं उसीप्रकार उपयोग भी उसमें मुख्य हेतु है इस कारण उपयोगको इन्द्रिय (इन्द्र-आत्माका परिचायक) कहा है।

ऊपर कही गई स्पर्शन आदिक पांचों इन्द्रियां हर एक जीवमें समान नहीं होतीं। वे किसीमें एक, किसीमें दो, किसीमें तीन किसीमें चार और किसीमें पांच तक होती हैं। पृथ्वीकायिक (जिनका पृथ्वी ही शरीर है), जलकायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक, और वनस्पतिकायिक जीवोंके एक स्पर्शन ही इन्द्रिय रहती है। कृमि आदि जीवोंके स्पर्शन और रसना ये दो इन्द्रियां होती हैं। पिपीलिका (चिंवटी) आदि जीवोंके स्पर्शन, रसना और घ्राण ये तीन इन्द्रियां होती हैं। भ्रमर मक्खी वगैरहके श्रोत्रके सिवाय चार इन्द्रियां होती हैं। और घोड़े आदि पशु मनुष्य देव और नारकी जीवोंके पांचों इन्द्रियां होती हैं।

मन भी आत्माका परिचायक होनेसे इन्द्रिय है। परन्तु उसे शास्त्रोंमें अनिन्द्रिय कहा है। क्यों कि जिस प्रकार ईषत् कृश उदरवाली कन्याको अनुदरी कन्या कहते हैं उसीप्रकार ईषत् इन्द्रियोंके समान होनेसे मन भी ईषत् इन्द्रिय अनिन्द्रिय कहा गया है। इन्द्रियोंका जिस प्रकार विषय परिमित है—ये देश काल क्षेत्रकी मर्यादामें स्थित ही पदार्थोंका ग्रहण कर सकती हैं उस प्रकार मन पदार्थोंका ग्रहण नहीं करता। मनका विषय क्षेत्र अपरिमित है। परन्तु आत्माका परिचायक है इसलिये अन्य इन्द्रियोंके साथ सौसादृश्य न होनेसे ईषत् इन्द्रिय है। (तत्त्वार्थसूत्रानुसार)

(हिं०) ६ कुश्तीका एक पेंच। जब एक पहलवान् दूसरेको नीचे गिरा देता है और उसके हाथको कलायी पकड़ उलटे तौरपर घुमा ऊपरको खींचता है, तब इन्द्रिय चढ़ानेका पेंच काममें आता है। इस पेंचसे नीचेवाले पहलवान्का हाथ उखड़ जाता है।

इन्द्रियकर्म, इन्द्रियकार्य देखो।

इन्द्रियकाम (वै० त्रि०) शक्ति पानेका अभिलाषी, जो ताक़त हासिल करना चाहता हो।

इन्द्रियकार्य (सं० क्ली०) चक्षुः प्रभृतिका कर्म, आंख वगैरहका काम। शब्दाकर्षण, स्पर्शग्रहण, रूपदर्शन, रसास्वादन, गन्धग्रहण, वचनादान, विसर्ग, गमन, और आनन्दको इन्द्रियकार्य कहते हैं। (सुश्रुत)

इन्द्रियगोचर (सं० त्रि०) उपलभ्य, व्यक्त, ज़ाहिर समझ पड़ने क़ाबिल। चक्षुः, कर्ण, जिह्वा, नासिका, त्वक् और मनः इन्द्रिय द्वारा छः प्रकारका ज्ञान उपजता है। प्रथमतः इन्द्रिय और वस्तुका संयोग होता है, फिर आत्मामें उसका ज्ञान आता है। इसलिये इन्द्रियां ज्ञानका मार्ग हैं। और उस ज्ञानपथमें पतित वस्तु इन्द्रियगोचर कहाती है—

"घ्राणजादिप्रभेदेन प्रत्यक्षं षड्विधं मतम्।
घ्राणस्य गोचरो गन्धो गन्धत्वादिरपि स्मृतः॥
उद्भूतस्पर्शवद्द्रव्यं गोचरं सोऽपि च त्वचः।" (भाषापरिच्छेद)

घ्राणज आदि छः प्रकारका प्रत्यक्ष होता है। गन्ध एवं गन्धत्वकी भांति गन्धगत सकल धर्म घ्राणके और उद्भूत अर्थात् प्रत्यक्ष होनेवाला स्पर्श, स्पर्शविशिष्ट द्रव्य तथा स्पर्शका धर्म स्पर्शत्व प्रभृति सकल पदार्थ त्वक्के गोचर हैं।

"तथा रसो रसज्ञायास्तथा शब्दोऽपि च श्रुतेः।"

अम्ल-तिक्त-कटु-कषायादि रस एवं रसगत धर्म रसत्वादि रसनाके और शब्द तथा शब्दगत धर्म शब्दत्व प्रभृति सकल पदार्थ श्रवणके गोचर होते हैं।

"उद्भूतरूपं नयनस्य गोचरो द्रव्याणि तद्वन्ति पृथक्त्वसंख्ये।
विभाग-संयोग-परापरत्वे स्नेहद्रवत्वं परिमाणयुक्तम्॥"

रूप रस प्रभृति सकल गुण उद्भूत और अनुद्भूत भेदसे दो प्रकारके होते हैं। दीख पड़नेवालेको उद्भूत और छिपे रहनेवालेको अनुद्भूत कहते हैं। जैसे घटादिका

रूपतो स्पष्ट दीख पड़नेसे उद्भूत है और भर्जन-कपालस्थ अग्निका रूप 'यदि इस कपालमें अग्नि न होती तो किसी तरह भी जौ आदिका भुंजना न होता' इस अनुमानसे गम्य होनेके कारण, अनुद्भूत है। इसी प्रकार रस गन्धादिको भी समझना चाहिये। इसमें उद्भूत रूप, उद्भूत रूपविशिष्ट द्रव्य, पृथक्त्व (विभिन्नता), संख्या (एकत्व द्वित्वादि), विभाग (बांध), संयोग (मेल), परत्व (दूरत्व), अपरत्व (निकटत्व), स्नेह (तैल जलादिमें रहनेवाले स्निग्ध-करण-समर्थ पदार्थ), द्रवत्व (तरलत्व) और परिमाण (मिकदार) ये समस्त पदार्थ चक्षुः द्वारा ग्राह्य हैं।

"क्रियां जातिं योग्यवृत्तिं समवायञ्च तादृशम्।
गृह्णाति चक्षुः सम्बन्धादालोकोद्भूतरूपयोः॥"

उत्क्षेपण, अवक्षेपण, गमन प्रभृति क्रिया, मनुष्यत्व पशुत्व प्रभृति जाति और सम्बन्धविशेष समवायको योग्यवृत्ति होनेपर चक्षुः आलोक और उद्भूत रूपके सहारे ग्रहण करता है। चक्षुः द्वारा किये गये प्रत्यक्षको चाक्षुष-प्रत्यक्ष कहते हैं।

"उद्भूतस्पर्शवद्द्रव्यं गोचरः सोऽपि च त्वचः।
रूपान्यच्चक्षुषो योग्यं रूपमत्रापि कारणम्॥"

पहले जिस स्पर्श शैत्य उष्ण एवं रूपका वर्णन कर आये हैं, वही स्पर्श उद्भूत होनेपर त्वक् द्वारा ग्राह्य होता है। एवं इसप्रकारके स्पर्शसे विशिष्ट द्रव्य भी त्वक्के गोचर होता है। रूपके सिवाय चक्षुःगोचर वस्तुमात्र त्वक्के ग्राह्य है। इस त्वाच प्रत्यक्षमें भी रूप कारण होता है। क्योंकि जिस वस्तुमें उद्भूत रूप नहीं रहता, उसका त्वाच प्रत्यक्ष भी नहीं होता। अतएव उद्भूत रूप होनेसे ही वह होता है।

इन्द्रियग्राम (सं॰ पु॰) १ शरीर, जिस्म। २ इन्द्रिय-समूह, हवास।

इन्द्रियघात, इन्द्रियवध देखो।

इन्द्रियघ्न (सं॰ पु॰) इन्द्रियं हन्ति, इन्द्रिय-हन-क। १ रोग, पीड़ा। २ चक्षुरोग-विशेष, आंखकी बीमारी।

इन्द्रियज (सं॰ त्रि॰) इन्द्रियेभ्यो जायते, इन्द्रिय-जन-ड, ५-तत्। इन्द्रियसे उत्पन्न होनेवाला। जिसप्रकार बिना पीये दूधका स्वाद नहीं जाना जा सकता और पीने मात्रसे तो उसका ज्ञान प्रत्यक्ष हो जाता है उसीप्रकार विषय-सन्निकर्ष द्वारा समस्त अनुभव प्राप्त होता है इसीसे सकल इन्द्रियां ज्ञानमें कारण मानी गयी हैं। विषय-सन्निकर्ष उसका व्यापार होनेसे जनक और ज्ञान जन्य है।

इन्द्रियजित् (सं॰ त्रि॰) इन्द्रियको जीतनेवाला, जो इन्द्रियके वशमें न हो।

इन्द्रियज्ञान (सं॰ क्ली॰) इन्द्रियजन्य वा प्रत्यक्ष ज्ञान, देखो-सुनी बात।

इन्द्रियदमन (सं॰ पु॰) इन्द्रियगणको निग्रह करनेका कार्य, इन्द्रियकी वृत्ति घटानेका काम।

इन्द्रियदोष (सं॰ पु॰) इन्द्रिय-जन्य दोष। परस्त्री-गमन, चौर्य प्रभृतिको इन्द्रियदोष कहते हैं।

इन्द्रियनिग्रह (सं॰ पु॰) स्वेच्छाचार-प्रवृत्त इन्द्रिय-गणका निज-निज विषयमें स्थापन अर्थात् इन्द्रियके अधीन न हो उनका दमन करना। यह समस्त धर्मों में साधारण धर्म है। सन्तोष, क्षमा, दया, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, सद्बुद्धि, विद्या, सत्यपालन और क्रोधपरित्याग ये दश धर्म मनुने कहे हैं। योग-साधनके समय भी नासिका, कर्ण, वाक्य, मनः प्रभृति इन्द्रियोंको अपने-अपने विषयसे रोकना पड़ता है। इन्द्रियगणके मध्य कोई भी इन्द्रिय यदि स्वेच्छाचारिणी रहेगी तो योगसाधनादि धर्मकार्य कुछ नहीं बन सकते। मन रोकनेसे ही सब इन्द्रियां वशमें रहती हैं। इसलिये मननिरोध न होनेसे योगीको किसी भी कर्ममें सफलता नहीं होती।

इन्द्रियप्रयोग (सं॰ पु॰) विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध।

इन्द्रियवध (सं॰ पु॰) अपने-अपने विषयमें इन्द्रियकी शक्तिका प्रतिघात अर्थात् आघात।

इन्द्रियवृत्ति (सं॰ स्त्री॰) इन्द्रियज्ञान देखो।

इन्द्रियबोधन (सं॰ त्रि॰) इन्द्रियं बोधति, इन्द्रिय-बुध-णिच्-ल्यु। १ इन्द्रियको चेतन करनेवाला, जो सबको जगाता हो। (क्ली॰) २ इन्द्रियका उत्तेजन, हवासका जोश। ३ पानाध्य विक्रमतावोध मद्य, किसी किस्मकी शराब। इसको पी लेनेसे सकल इन्द्रियां स्व-स्व कार्यमें उत्तेजित हो जाती हैं।

इन्द्रियवर्ची (हिं० स्त्री०) वाजीकरण-भेद, नामर्दी दूर करनेकी एक तदबीर।

इन्द्रियवत् (सं० त्रि०) प्रशस्तं वा वश्यं इन्द्रियं अस्त्यस्य, इन्द्रिय-मतुप्, मस्य वः। १ इन्द्रियको वशमें रखनेवाला। २ प्रशस्त इन्द्रिययुक्त, अच्छे हवासवाला।

इन्द्रियवर्ग (सं० पु०) एकादशेन्द्रिय, इन्द्रियसमूह, ग्यारहो हवास।

इन्द्रियविप्रतिपत्ति (सं० स्त्री०) इन्द्रियकी विकृति, हवासका बिगाड़।

इन्द्रियवृत्ति (सं० स्त्री०) शब्द, स्पर्श प्रभृति विषयमें बहिरेन्द्रियको आलोचना, हवासका काम। वचन, आदान, विहार, त्याग एवं आनन्द ये पांच कर्मेन्द्रियों की और सङ्कल्प, विकल्प तथा अध्यवसाय ये मनःकी वृत्ति हैं।

इन्द्रियवैकल्य (सं० क्ली०) इन्द्रियदुर्बलता, हवासकी कमजोरी।

इन्द्रियसन्ताप (सं० पु०) इन्द्रियवैकृति, हवासकी बीमारी।

इन्द्रियसन्निकर्ष (सं० पु०) स्व स्व विषयके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध, प्रत्यक्ष-जनक व्यापार, अपने-अपने काममें हवासका लगाव। इन्द्रियसन्निकर्ष कार्यमात्र दो प्रकारके कारणसे उपजता है। एक करण-विधायक अर्थात् परम्परासे सम्बन्ध रखनेवाला और दूसरा व्यापार-विधायक अर्थात् साक्षात्कारण होता है। जैसे—काष्ठच्छेदन कार्यमें, कुठार करण-विधायक और चीरनेवाली संयोजना क्रिया व्यापार-विधायक कारण है।

इसमें नासिका, कर्ण, चक्षुः, जिह्वा, त्वक् और मनः इन छः इन्द्रियों द्वारा प्रत्यक्ष होता है। इस छहो तरहके प्रत्यक्षका सन्निकर्ष-व्यापार साक्षात् कारण है। तथा वह संयोग, संयुक्तसमवाय, संयुक्त समवेतसमवाय, समवाय, समवेतसमवाय और विशेषणविशेष्यभावके भेदसे छः प्रकारका है। वस्तुके साथ इन्द्रियका सम्बन्ध संयोग व्यापार कहाता है। क्योंकि प्रत्यक्षमें द्रव्यके साथ इन्द्रियका संयोग होते ही उसका ज्ञान हो जाता है। जैसे—त्वक्के संयोगसे स्पर्शयुक्त द्रव्यका वा स्पर्शका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवाय व्यापार कारण होता है। जैसे—किसी द्रव्यके दृष्टिगोचर होनेसे उसका गुण रूप प्रभृति भी देखनेमें आता है। यहां उस गुणके साथ इन्द्रियका संयोग हो नहीं सकता। क्योंकि गुणसे गुण कभी नहीं मिलता अर्थात् रूप और इन्द्रियसंयोग दोनो गुण हैं। और गुणमें इन्द्रियसंयोग कभी रह नहीं सकता। इसलिये इन्द्रिय-संयोगको गुणका प्रत्यक्ष कारण कह नहि सकते इसीसे संयुक्त-समवाय व्यापार माना है। संयुक्त वस्तु होती है, क्योंकि उसमें इन्द्रियका संयोग रहता है। इन्द्रियसंयुक्त रहनेसे ही वस्तु नाम पड़ा है। उस संयुक्त वस्तुमें रहनेवाले गुणादिमें समवाय है। अतः इन्द्रियसंयुक्त समवाय सम्बन्धसे द्रव्यमें रहनेवाले गुणक्रिया जाति प्रभृति पदार्थका प्रत्यक्ष होता है।

द्रव्यमें समवेत-समवाय सम्बन्धसे रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें इन्द्रियसंयुक्त समवेत-समवाय संबंध कारण है। इसलिये द्रव्यमें समवेत-रहनेवाले पदार्थके प्रत्यक्षमें संयुक्त-समवेत-समवायको व्यापार माना है। द्रव्यमें समवेत गुणक्रिया और उसमें रहनेवाली जाति है। इसलिये उसका प्रत्यक्ष इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवायसे होता है। इन्द्रिय-संयुक्त द्रव्य होता है। उसमें समवेत गुणक्रिया इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत है। गुणक्रियामें गुणत्व-कर्मत्व जातिका समवाय है अत इन्द्रिय-संयुक्त समवेत समवाय-सम्बन्धसे जातिके प्रत्यक्ष होनेमें इन्द्रिय-संयुक्त-समवेत-समवाय कारण अवश्य स्वीकार करना चाहिये।

शब्दके प्रत्यक्षमें समवाय-व्यापार कारण है। शब्द गुण और कर्ण द्रव्य पदार्थ है। कर्णमें शब्द समवाय सम्बन्धसे रहता है। सुतरां कर्णके समवाय सम्बन्धसे शब्दका प्रत्यक्ष होता है। अतएव शब्दके प्रत्यक्षमें कारण समवाय सन्निकर्ष है।

शब्द-समवेत शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें कारण समवेत समवाय व्यापार है। शब्द कर्णमें समवेत है। उसमें शब्दत्व जातिका समवाय है। इसलिये शब्दत्व जातिके प्रत्यक्षमें समवेत समवाय कारण माना है।

अभाव भी एक पदार्थ है। उसके प्रत्यक्षका कारण इसप्रकार है।

सारांश—जहां जिस वस्तुका स्वरुप बिलकुल दीख नहीं पड़ता, वहां उसका एक विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध माना है।

अभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध व्यापार है। जैसे जलमें अग्नि नहीं, किन्तु अग्निका अभाव रहता है। फिर अग्निके अभावका कोई आकार नहीं होता। हम जलमें अग्निके अभावको कैसे देख सकते हैं। परन्तु जलमें अग्निका अभाव देख न पड़ते भी विशेषणता-विशेषरूप सम्बन्ध से उसका ज्ञान होता है। अर्थात् जल विशेष्य है और अग्निका अभाव विशेषण है इसलिये विशेषणता-विशेष रूप सम्बन्धसे अभावका प्रत्यक्ष होता है। नहीं तो जलपर चक्षुः जाते ही अभाव कैसे समझ सकते हैं। अतएव अभावके प्रत्यक्षमें विशेषणता विशेष रूप सन्निकर्षको ही व्यापार अर्थात् साक्षात् कारण माना है।

जैनसिद्धान्तमें नैयायिक मतके समान इन्द्रिय-सन्निकर्षको प्रत्यक्षमें कारण नहि माना है, क्योंकि यदि समस्त इन्द्रियोंका सन्निकर्ष होता अर्थात् यदि समस्त इन्द्रियां विषयोंसे सन्निकृष्ट हो ज्ञान करातीं तब तो स्वीकार भी कर लिया जाता कि इन्द्रिय-सन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण है सो तो है नहीं क्योंकि यह स्पष्टरुपसे देखनेमें आता है कि नेत्र असन्निकृष्ट होकर ही पदार्थ ज्ञान कराता है। यदि कहोगे कि जिसप्रकार स्पर्शन आदि इन्द्रियां पदार्थसे संयुक्त हो कर ज्ञान कराती हैं उसीप्रकार नेत्र भी संयुक्त होकर ही ज्ञान कराता है। सो ठीक नहीं, क्योंकि यदि ऐसा माना जायगा तो जिसप्रकार स्पर्शन इन्द्रियसे बिलकुल सन्निकृष्ट शीत वा उष्ण पदार्थ जाना जाता है उसीप्रकार चक्षु इन्द्रियसे भी उसमें लगे हुये काजलका ज्ञान होना चाहिये क्योंकि कज्जल नेत्रके बिलकुल सन्निकृष्ट है।

यदि यह कहा जायगा कि (चक्षुरप्राप्यकारि—व्यावृतानवग्रहात्) अर्थात् स्पर्शन इन्द्रिय जिसप्रकार ढके हुये पदार्थके शीत उष्णका ज्ञान नहि करा सकती क्योंकि वह सन्निकृष्ट नहीं है उसीप्रकार चक्षु भी व्यवहित पदार्थको नहीं जनाता क्योंकि व्यवहित पदार्थके साथ उसका सम्बन्ध नहीं है। सो भी अयुक्त है क्योंकि ऐसा माननेसे हेतुको अव्यापक और सन्दिग्ध मानना पड़ेगा. अर्थात् यह स्पष्ट रूपसे देखनेमें आता है कि चक्षु, स्वच्छ कांचके भीतर रक्खे हुये पदार्थको और स्वच्छ जलके भीतर पड़े हुये भी व्यवहित पदार्थको देख लेता है। इसलिये पक्षमें साध्यके रहनेसे और साधनके अभावसे वह अव्यापक हो जाता है तथा लोहकान्त मणि लोहके पास न भी जाकर लोहसे संबद्ध हो जाती है। इसलिये उपर्युक्त हेतु संदिग्ध है अर्थात् लोहकान्त मणिद्वारा व्यवहित पदार्थका ग्रहण न होनेसे हेतु की सत्ताका तो निश्चय हो जाता है। परन्तु वह "प्राप्त होकर लोहको ग्रहण नहि करती" इसलिये साध्यके अभावसे वहां यह सन्देह हो जाता है कि चक्षु भी व्यवहित पदार्थको ग्रहण नहि करता इसलिये यह सन्निकृष्ट होकर पदार्थका ग्रहण करता है वा असन्निकृष्ट, इसलिये उपर्युक्त अनुमानमें हेतुके दुष्ट हो जानेसे चक्षु सन्निकर्ष सिद्ध नहीं हो सकता।

यदि मानोगे कि अग्निके समान चक्षु भौतिक पदार्थ है इसलिये जिसप्रकार अग्निका प्रकाश संबद्ध हो पदार्थका ज्ञान कराता है। उसीप्रकार चक्षुकी किरण भी पदार्थसे संबद्ध होकर ही ज्ञान कराती हैं। इसलिये चक्षुसन्निकर्ष युक्त है? सो भी ठीक नहीं, क्योंकि लोहकान्त मणिसे ही यहां व्यभिचार आता है अर्थात् लोहकान्त मणि भी भौतिक पदार्थ है परन्तु वह पदार्थके पास जाकर संबद्ध नहीं होती उसीप्रकार मान भी लो कि चक्षु भौतिक पदार्थ है तथापि वह पदार्थसे सन्निकृष्ट हो ज्ञान नहीं करा सकता।

यदि कहोगे चक्षु बाह्य इन्द्रिय है। इसलिये जिस प्रकार स्पर्शन आदि इन्द्रियां पदार्थसे सन्निकृष्ट हो उसका ज्ञान कराती हैं। उसीप्रकार चक्षुभी पदार्थसे सन्निकृष्ट होकर ही ज्ञान कराता है? सो भी ठीक नहीं। क्योंकि इन्द्रियां (इन्द्रिय शब्द देखो) दो प्रकारकी

मानी है एक द्रव्येन्द्रिय जो बिन्नी पलक गोलक आदि हैं और दूसरी भावेन्द्रिय जो ज्ञानात्मक हैं उनमें भावेन्द्रियां प्रधान हैं और द्रव्येन्द्रियां गौण हैं इसलिये चक्षु आदि इन्द्रियां सर्वथा बाह्य इन्द्रियां ही हैं यह बात मिथ्या है और चक्षु सर्वथा बाह्य इन्द्रिय नहीं इस बातके सिद्ध हो जानेपर वह सन्निकृष्ट होकर ही पदार्थको दिखाता है यह बात भी सर्वथा अयुक्त है।

यदि यह कहा जायगा कि चक्षु 'असन्निकृष्ट पदार्थका जनानेवाला है' अर्थात् चक्षुरिन्द्रिय और पदार्थका सन्निकर्ष न हो तो व्यवहित जो जमीन आदिके भीतर रहनेवाले पदार्थ हैं और मेरु कैलास आदि पदार्थ जो अत्यन्त दूर हैं इनका भी चक्षुसे दर्शन होना चाहिये क्योंकि उनके न देखनेमें कोई प्रतिबन्धक कारण नहिं जान पड़ता। और हमारे (प्रतिवादियोंके) मतमें तो कोई दोष नहि आता क्योंकि हम चक्षुको तैजस पदार्थ और उससे सूर्य आदि तैजिसी पदार्थोंके समान रश्मि निकलतीं हैं ऐसा मानते हैं इसलिये जहांतक रश्मिका संबन्ध रहता है वहां तकका पदार्थ दीखता है और जिस पदार्थके साथ रश्मिका संबध नहीं होता वह पदार्थ नहीं दीखता तथा कठिन मूर्तिक पदार्थमें रश्मियां प्रतिबद्ध भी हो जाती हैं इसलिये हमारे मतमें मेरु वा कैलास पर्वतके अन्तरालमें स्थित बहुतसे वन पर्वत आदिसे स्खगित हो जानेसे नेत्रोंकी रश्मियां आगे नही बढ़ पातीं अतः मेरु कैलास आदिका ज्ञान नहीं होता? सो भी सर्वथा अयुक्त है, क्योंकि इस शङ्काका समाधान लोहमणिसे ही होजाता है अर्थात् जिसप्रकार लोहमणि लोहेको यद्यपि खींचती है परन्तु वह व्यवहित लोहेको वा अधिक दूरपर पड़े हुये लोहेको नही खींचती उसीप्रकार चक्षु भी पदार्थको दिखाता है परन्तु अयोग्य व्यवहित और अधिक दूरवर्तीको नहीं। तथा प्रतिवादियोंने जो चक्षुको तैजस पदार्थ मानकर उसकी रश्मिकी कल्पना और उनका व्यवधान माना है वह प्रमाणबाधित है—कोई भी प्रमाण इस बातको सिद्ध नहि कर सकता।

कहोगे कि चक्षु सन्निकृष्ट होकर पदार्थको नहीं दिखाता इसमें संशय और भ्रान्ति है अर्थात् यह निश्चित रूपसे नहीं कहा जा सकता कि चक्षु असन्निकृष्ट होकर ही पदार्थको दिखाता है। सो भी ठीक नहीं, क्योंकि 'चक्षु सन्निकृष्ट हो करही पदार्थोंका ज्ञान कराता है' इस सिद्धान्तमें भी उपर्युक्त दूषण मौजूद है अर्थात् चक्षु सन्निकृष्ट ही पदार्थका दर्शन कराता है वा असन्निकृष्ट ही यह संशय वा असन्निकृष्ट होकर ही कराता है यह विपर्यय वहांपर भी निर्विघ्नरूपसे विद्यमान है।

यदि कहोगे कि जिसप्रकार अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें रश्मियां विद्यमान रहती हैं उसी प्रकार चक्षु भी तैजस पदार्थ है इसलिये उसमें भी रश्मियां विद्यमान है तथा रश्मियुक्त अग्नि जिसप्रकार सन्निकृष्ट हो पदार्थोंका प्रकाशन करती है उसीप्रकार चक्षु भी सन्निकृष्ट हो पदार्थोंका प्रकाशन करता है सो भी ठीक नहीं, क्योंकि जैनसिद्धान्तमें चक्षुको तैजस नही माना तथा जिसमें तेज रहता है वह उष्ण होता है इसरीतिसे चक्षुका स्थान भी उष्ण मानना पड़ेगा और वह प्रत्यक्षबाधित है क्योंकि यह कोई नहीं कह सकता कि चक्षुका स्थान अग्निके समान उष्ण है। तथा तेजका भासुरशुक्लरूप माना है यदि चक्षुको तैजस माना जायगा तो उसमें भासुरशुक्लरूप दीखना चाहिये।

कहोगे अदृष्टकी कृपासे चक्षुमें अनुष्णपना और अभासुरपना है सो भी ठीक नहो, क्योंकि अदृष्टको गुण माना है और वह निष्क्रिय है इसलिये उससे स्वरूपका नाश नहीं हो सकता—भासुरपना या उष्णपना नहीं मिट सकता।

यदि कहोगे नक्तंचर मार्जार आदिके नेत्रोंमें रश्मि देखनेमें आती हैं इसलिये अवश्य चक्षु तैजसपदार्थ है। सोभी ठीक नहीं क्योंकि किसी किसीके पुद्गलमय चक्षु भासुररूप भी परिणत हो जाते हैं पुद्गलमय देखो। इसलिये नक्तंचर जीवोंके चक्षुओंमें रश्मि देखकर सब जीवोंके चक्षुओंमें रश्मिका निश्चय करनेसे कभी चक्षु तैजस पदार्थ सिद्ध नही हो सकता।

तथा यह नियम है कि जो पदार्थ गतिमान होता है वह समीपवर्ती दूरवर्ती पदार्थको एक साथ नहीं देख सकता। चक्षुकी रश्मि भी गमनशील हैं इसलिये उनसे भी दूरवर्ती या समीपवर्ती पदार्थका एकसाथ ज्ञान न होना चाहिये किन्तु देखनेमें आता है कि जिस समय वृक्षके नीचे खड़े होकर चन्द्रमाको देखते हैं उस समय वृक्षकी शाखा और चन्द्रमा एकसाथ दीख पड़ते हैं इसलिये मालूम पड़ता है कि चक्षुमें रश्मियां नहीं, रश्मियोंके अभावसे वह तैजस नहीं, और तैजस न होनेसे वह पदार्थोंको सन्निकृष्ट होकर नहीं जनाता।

यदि चक्षुको सन्निकृष्ट होकर पदार्थको जाननेवाला ही माना जायगा तब 'जब कि रात्रिमें बहुत दूर जलती हुई अग्नि दीखती है और उसके पासके पदार्थ नहिं दीखते हैं उसी प्रकार जहांपर प्रकाश नहीं रहता वहांके पदार्थ भी दीखने चाहियें क्योंकि चक्षुरश्मियोंकी सन्तति तो बराबर अग्नितक विद्यमान रहती है इसलिये जान पड़ता है कि चक्षुमें रश्मि नहीं इसलिये उसका पदार्थोंके साथ सन्निकर्ष भी नहीं होता।

यदि कहोगे जहांपर अग्नि है वहींके पदार्थ दीख सकते हैं क्योंकि वहांपर प्रकाश रहता है बीचके पदार्थोंपर प्रकाश नहीं रहता इसलिये उन्हें चक्षु नहीं देख सकता। सो भी ठीक नहीं क्योंकि अग्नि तैजस पदार्थ है इसलिये उसको जिसप्रकार पदार्थोंके प्रकाशनमें अन्य प्रकाशकी अपेक्षा नहीं करनी पड़ती उसीप्रकार चक्षु भी तैजसपदार्थ है इसलिये उसके लिये भी अन्य प्रकाशकी अपेक्षाकी आवश्यकता नहीं इसलिये यह बात सिद्ध हुई कि चक्षु और पदार्थका सन्निकर्ष नहीं होता अतः इन्द्रियसन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं हो सकता। किन्तु पदार्थोंके नियमित रूपसे और स्पष्टतासे जनानेवाली क्षयोपशम रूप शक्ति कारण है अर्थात् जिस पदार्थका हम ज्ञान या दर्शन करते हैं उस पदार्थके ज्ञान या दर्शनमें जो ज्ञानावरण या दर्शनावरण रूप प्रतिबन्धक हैं वे जिस समय क्षय और उपशमरूप अवस्थाको प्राप्त हो जाते हैं उससमय उस पदार्थका स्पष्ट ज्ञान या दर्शन होता है। तथा यहांपर यह भी समझ लेना चाहिये कि जिसप्रकार इन्द्रिय सन्निकर्ष प्रत्यक्षमें कारण नहीं उसीप्रकार पदार्थ और प्रकाश भी कारण नहीं क्योंकि अन्वय व्यतिरेक व्यभिचार आदि दोषोंसे उनमें भी कारणता सिद्ध नहीं हो सकती। (तत्त्वार्थवार्तिकालङ्कार)

इन्द्रियस्वाप (सं० पु०) १ सुषुप्ति, नींद। सोते समय इन्द्रियवर्गके उपरम अर्थात् विरामका समय रहता है, अतः न कुछ दीख पड़ता है, और न अनुभव होता है। २ प्रलय। मरणकालमें इन्द्रियोंका प्रलय होता है। ३ चेष्टानाश, घबराहट।

इन्द्रियागोचर (सं० त्रि०) अतीन्द्रिय, जो समझ न पड़ता हो।

इन्द्रियात्मन् (सं० पु०) इन्द्रियमेवात्मा, कर्मधा०। १ विष्णु। २ इन्द्रिय, अङ्ग।

इन्द्रियादि (सं० पु०) इन्द्रियका कारण-रूप अहङ्कार, अभिमान।

इन्द्रियाधिष्ठातृ (सं० पु०) अचेतन इन्द्रियोंको निज-निज कार्यमें व्यापृत करनेके लिये ईश्वर द्वारा नियुक्त देवता। इन्द्रिय शब्द देखो।

इन्द्रियायतन (सं० क्ली०) १ शरीर, जिस्म। चक्षुः, कर्ण प्रभृति इन्द्रियगणका आधार होनेसे शरीरको इन्द्रियायतन कहते हैं। २ आत्मा, रूह। नैयायिकोंके मतसे स्थूल देह और वेदान्तिकोंके कथनानुसार सूक्ष्म शरीर इन्द्रियायतन है।

इन्द्रियाराम (सं० पु०) इन्द्रियेषु आरमति, इन्द्रिय-आ-रम-घञ्। इन्द्रियोंको चरितार्थ करनेके लिये भोगासक्त व्यक्ति, रिन्द मस्त।

इन्द्रियार्थ (सं० पु०) रूप रस स्पर्श प्रभृति इन्द्रियोंके विषय, इल्मकी चीज़। जैसे—मनोहर युवती, वंशीगीत, स्वादुविशिष्ट रस, कर्पूरादि गन्ध और अनुरागान्वित स्पर्श। इन्द्रियार्थमें लोलुपी हुये लोग प्रायश्चित्त करने योग्य हो जाते हैं,—

"इन्द्रियार्थेषु सर्वेषु न प्रसज्येत कामतः।" (मनु ४।१६)

इन्द्रियावत् (सं० त्रि०) इन्द्रिय-मतुप् मस्य [illegible]

विश्वदेव्यस मतौ। पा ६।३।१३१। इति दीर्घः। इन्द्रियविशिष्ट, रुक्न या ताक़त रखनेवाला।

इन्द्रियाविन् (सं॰ त्रि॰) इन्द्रियं प्राशस्त्येन वास्त्यस्य बहु॰, विनि। प्रशस्त इन्द्रिय-विशिष्ट, अच्छे रुक्न रखनेवाला।

इन्द्रियासङ्ग (सं॰ पु॰) आत्मसंयम, खुशी और रामसे बेपरवायी।

इन्द्रियेश (सं॰ पु॰) १ जीव, जान्। २ इन्द्रियका देवता।

इन्द्री (हिं) इन्द्रिय देखो।

इन्द्रीजुलाब (हिं॰ पु॰) मूत्र लानेवाला औषध, पेशाबर दवा। भारतमें प्रायः आधा जल और आधा दुग्ध मिलाकर इन्द्रीजुलाब लिया जाता है। शोरा वग़ैरह खानेसे भी पेशाब बहुत उतरता है। इसमें ठण्डी ही चीज पड़ती है। मूत्र रुकनेपर भात या खिचड़ी खाना चाहिये।

इन्द्रेज्य (सं॰ पु॰) वृहस्पति।

इन्द्रेश्वर (सं॰ पु॰) इन्द्रेण स्थापितः ईश्वरः शिवलिङ्गम्। शिवलिङ्गविशेष।

इन्द्रोक्तरसायन (सं॰ क्लो॰) १ इन्द्रकथित रसायनवर्ग। २ ऐन्द्री, कुंदरू। ३ महाश्रावणी।

इन्द्रोपल (सं॰ क्लो॰) नीलहीरक, काला हीरा।

इन्ध (सं॰ पु) इन्ध करणे घञ्। १ दीप्ति, चमक। २ ऋषिविशेष। ३ प्रदीप, चिराग़। (त्रि॰) ४ सुलगा देनेवाला, जो जलाता हो।

इन्धन (सं॰ क्लो॰) इन्धे दीप्यतेऽनेन, इन्ध करणे ल्युट्। १ काष्ठ, लकड़ी। २ अग्निके ज्वालनार्थ उपकाष्ठ, आग जलानेकी लकड़ी। (त्रि॰) ३ अग्निको चैतन्य करनेवाला, जिससे आग जले।

इन्धनवत् (सं॰ त्रि॰) इन्धनं प्रज्वालनं विद्यतेऽस्मिन्, मतुप्। ज्वालायुक्त, जलता हुवा।

इन्धन्वन् (वै॰ त्रि) इन्धनमस्त्यस्यैयः, वेदे वनिप् निपातनात् अलोपः। ज्वालायुक्त, जो जल रहा हो।

इन्नर (हिं॰ पु॰) मसाला मिला हुवा गायका दूध। यह गाय ब्यानेसे दश दिनके भीतर ही बनता है।

इन्वका (सं॰ स्त्री॰) इन्व इव काययति, इन्व-अद्-के-क। इन्वल, मृगशिरा नक्षत्रके उपरिस्थित पांच तारा।

इन्साफ़, इनसाफ़ देखो।

इबरायनामा (फ़ा॰ पु॰) त्यागपत्र, जिस काग़ज़में अपने हक़ छोड़नेकी बात लिखी जाय।

इबरानी (अ॰ वि॰) १ यहूदी, यहूद जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला। (स्त्री॰) २ यहूदियोंकी भाषा।

इबलीस (अ॰ पु॰) पिशाच, शैतान्, खबीस।

इबादत (अ॰ स्त्री॰) पूजा, अर्चना, वन्दगी।

इबादतगाह (अ॰ स्त्री॰) मन्दिर, पूजा करनेकी जगह।

इबारत (अ॰ स्त्री॰) १ प्रबन्ध, वाक्य-रचना, जुमलेकी बनावट। २ भाषा, लेख, ज़बान्, तर्ज़-तहरीर। सालङ्कारको रङ्गीन, प्रबलको ज़ोरदार, विस्तीर्णकी तूल-तवील और शिथिल भाषाको लचर इबारत कहते हैं।

इबारत-आरायी (अ॰ स्त्री॰) शब्द चित्र, लफ़्ज़ोंकी सजावट।

इबारती (अ॰ वि॰) लेखसम्बन्धीय, लिखावटके मुताल्लिक़। जो सवाल लिखकर लगाया जाता हो, वह इबारती कहाता है।

इब्तिदा (अ॰ स्त्री॰) १ आदि, आरम्भ, शुरू। २ उत्पत्ति, पैदायश, निकास।

इब्तिदायी (अ॰ वि॰) १ प्रस्तावना-रूप, तमहीदी। २ अग्र, आद्य, साबिक़, पहला।

इब्न आबू उसैबिया—एक मुसलमान् ग्रन्थकार। इन्हें सुवफ़िफ़क्-उद्-दीन अबू अब्बास अहमद भी कहते थे। इन्होंने ई॰के १३वें शताब्दमें संस्कृतसे अरबीभाषामें 'अयून्-अल्-अम्बा-फ़ि-तबक़ात-उल्-अतिब्बा (अर्थात् वैद्यसम्प्रदाय-सम्पर्कीय संवाद-निर्भर) नामक ग्रन्थका अनुवाद किया था। भारतवर्षीय जो-जो प्राचीन वैद्य विदेशमें पहुंचते, उन सबका कुछ-कुछ विवरण इस ग्रन्थमें लिखा जाता था। १२६८ ई॰में इनकी मृत्यु हुई थी।

इब्नबतूता—अरबके एक भ्रमणकारी। मुहम्मद तुग़लकके समय यह भारतवर्षमें पो थे। मुहम्मदने इन्हें दीक्षीका विचार-पति बनाया था। इन्होंने

अपना भ्रमण-वृत्तान्त पुस्तकाकारमें लिखा है। उक्त ग्रन्थमें भारतवर्षके तत्सामयिक भाव, इतिहास, भूतत्त्व प्रभृतिका खासा विवरण मिलता है। १३३२ ई०में ये मक्केको तीर्थयात्रा करने गये थे।

इब्राहीम-आदिल शाह (१म)—ये इस्मायिल आदिलशाहके पुत्र, दक्षिण विजयपुरके सुलतान् थे। १५३५ ई०में इब्राहीम विजयपुरके सिंहासनपर बैठे थे। १५४३ ई०को इन्होंने अला उद्दीन इमाद शाहकी कन्या रबिया सुलतानासे विवाह किया था। और २४ वर्ष तक राजत्व किया था एवं १५५८ ई०में ये परलोक सिधारे थे।

इब्राहीम आदिलशाह (२य)—तहमास्पके पुत्र। इनका दूसरानाम अबुल मुज़फ्फर था। १५८० ई०के अप्रेल मासमें ८ वर्षकी अवस्थामें ये दक्षिण-विजयपुर (बीजा-पुर)के सिंहासनपर बैठे थे। इनकी नाबालिगीमें कमाल ख़ान् और चांद बीबी सुलताना ने रक्षककी भांति इनके राज्यका कार्य चलाया था। प्रथम तो कमाल खां सरल भावसे ही रहते थे, किन्तु पीछे चांद बीबीसे बिगड़ पड़े उस समय चांद बीबीके समान बुद्धिमती रमणी बहुत थोड़ी थीं। इन्होंने हाजी किशवर खांको अपने पास रख कमाल ख़ान्का प्राणवध कराया था। इसके बाद किशवर ख़ान् राज्यके संरक्षक बने। किन्तु उनके भी मारे जानेपर अखलास ख़ान्को राजकीय पद मिला था। कुछ दिन पीछे दिलावर ख़ान्ने अखलास ख़ान्की आंखें निकाल साम्राज्यका कर्तृत्व अपने हाथ में लिया था। १५८० ई०में इब्राहीमने दिलावरको राजकीय पदसे हटाया था और १५८२ ई०में आंखें खिंचा उसको कैदखाने पहुंचाया था। १६२६ ई०में ४८ वर्ष राजत्व करने बाद इनकी मृत्यु हुई। इब्राहीम रौज़ा नामक इनकी क़ब्र विजयपुरमें बहुत अच्छी बनी है। पत्थरकी दीवार पर कुरान्की आयतें अरबी हर्फोंमें खुदी हैं। इनके पुत्र मुहम्मद आदिल-शाहको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

इब्राहीम कुतुब शाह—गोलकुण्डाके राजा कुली कुतुब शाहके पुत्र। कुली कुतुब शाहके भ्राता जमशेद कुतुब शाहका जब देहान्त हो गया, तब अमात्यवर्गने तत्पुत्र सुभान कुलीको राजा बना दिया। उस समय सुभानकी उम्र केवल बारह वर्ष की थी। इस-लिये राजभार ग्रहण करनेमें इसको बिलकुल अक्षम देख सब लोगोंने इब्राहीमको राज्यके लिये पसन्द किया। ये विजयनगरमें रहते थे। १५५० ई०की २८वीं जुलायीको गोलकुण्डेमें इन्हें राजपद मिला। इन्होंने अपर मुसलमान् राजगणके साथ योग लगा विजयनगराधिप रामराजसे युद्ध किया और उन्हें मारकर समग्र देश आपसमें बांट लिया। १५८१ ई०की ५वीं जूनको ३२ वर्ष राजत्व करने बाद ये अकस्मात् मर गये। इनके पुत्र मुहम्मद कुतुब शाह पीछे राजा हुये थे।

इब्राहीम ख़ान्—अमीर-उल्-उमरा अली मर्दान् ख़ान्के पुत्र। १६५८ ई०के समय बादशाह आलमगीरने इन्हें पञ्चहजारी बनाया था। पीछे इब्राहीम ख़ांने काश्मीर, लाहोर, विहार, बङ्गाल प्रभृति स्थानके शासनकर्ताका भी पद पाया था। बहादुरके राजत्व-कालमें इनकी मृत्यु हुयी थी।

इब्राहीम ख़ान् फ़तेहजङ्ग—नूरजहां बेगमके मौसा। १६१६ ई०को क़ासिम ख़ान्के पदच्युत होनेपर जहांगीर बादशाहने इन्हें चार हज़ार सिपाही सौंप विहारका शासनकर्ता बनाया था। शाहजहांके अपने पिता जहांगीरसे विरोध करनेपर यह ढाकेमें लड़े और अन्तको कट मरे।

इब्राहीम ख़ान् सूर—बयान शासनकर्ता गाज़ी ख़ान्के पुत्र और मुहम्मद शाह आदिलीके भगिनीपति। १५५५ ई०में इन्होंने बहुसंख्यक सैन्य संग्रहकर यद्यपि दिल्ली और आगरा नगर जीत लिये थे तो भी सिंहासनपर जमकर बैठ न सके। अहमद ख़ान्ने पञ्जाबसे बल बढ़ाकर युद्धमें इन्हें हरा गमनको भगा दिया और दिल्ली तथा आगरे पर अपना अधिकार जमा लिया। १५६७ ई०को उड़ीसेमें एक युद्ध हुया था। उसीमें बङ्गालके नवाब सुलैमान्ने इन्हें को मार डाला था।

इब्राहीम निज़ामशाह—बुरहान् निज़ाम शाहके पुत्र। १५९५ ई०के अप्रेल मासमें इन्हें दक्षिण-अहमद-

नगरका राजत्व मिला था। चार मास राजत्व करनेके बाद इन्हें (निज़ाम-शाहको) बीजापुरके नवाब इब्राहीम आदिलशाहसे लड़ना पड़ा। इसी युद्धमें ये मारे गये।

इब्राहीम शाह शरकी—युक्तप्रदेश जौनपुरके एक नवाब। १४०२ ई०में अपने भ्राता मुबारिक शाहके मरनेसे ये गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने अराजकता रहते भी साहित्य-की बड़ी उन्नति की। उस समय हिन्दुस्थानमें जौनपुर विद्याका भवन बन गया था। १४४० ई०की शरकीकी मृत्यु हुयी। प्रजा इनसे बहुत सन्तुष्ट रहती थी।

इब्राहीम हुसेन लोदी—सिकन्दर शाह लोदीके लड़के। १५१० ई०के फरवरी मासमें पिताकी मृत्यु होनेसे आगरेमें ये सिंहासनपर बैठे। इन्होंने सोलह वर्ष राजत्व किया था। १५२६ ई०की २०वीं फरवरीको पानीपतमें बाबर शाहसे लड़ने पर ये मारे गये।

इब्राहीमी (अ० पु०) मुद्राविशेष, एक सिक्का। यह इब्राहीम लोदीके समय प्रचलित था।

इभ (सं० पु०) इ-भन्। इयः कित्। उण् ३।१५१। १ हस्ती, हाथी। २ आठकी संख्या। आठों दिशाओंमें एक-एक दिग्गज रहता है इसलिये इभ शब्द आठकी संख्याका बोधक है। ३ नागकेशर। (वै० पु०) ४ अनुचर, नौकर। ५ निर्भय शक्ति। (त्रि०) ६ अनुचर द्वारा आवृत, जो नौकरोंसे घिरा हो।

इभकणा (सं० स्त्री०) इभोपपदा कणा पिप्पली, शाक० तत्। गजपिप्पली, गजपीपर।

इभकुम्भ (सं० पु०) हस्तीका मस्तक, हाथीका सर।

इभकृष्णा (सं० पु०) इभकणा देखो।

इभकृष्णा, इभकणा देखो।

इभकेशर (सं० पु०) इभमद इव केशरः यस्य, बहुव्री०। १ नागकेशर- वृक्ष। यह वृक्ष ठीक बबूल-जैसा होता है। इसके पुष्पकी सुगन्ध एक कोसतक पहुंचती है। २ नागकेशर पुष्प।

इभकेसर, इभकेशर देखो।

इभगन्धा (सं० स्त्री०) इभस्य गन्ध एकदेशो दन्त इव पुष्पं यस्याः, बहुव्री०। नागदन्ती वृक्ष, हल्लाजोरी, सरियारी। इस वृक्षके फल, पुष्प, पत्र, वल्कल प्रभृति समस्त अङ्ग ही विषैले होते हैं। नागदन्ती देखो।

इभगन्धिका, इभगन्धा देखो।

इभदन्ता (सं० स्त्री०) इभस्य दन्तवत् शुभ्रं पुष्पमस्याः। १ हस्तिशुण्डीवृक्ष, हाथीसूंड़। २ नागदन्तीवृक्ष, सरियारी।

इभदन्ताह्वा (सं० स्त्री०) नागदन्ती, सरियारी।

इभनिमीलिका (सं० स्त्री०) इभस्येव निमीलिका, इभ-निमील-क-टाप्, ६-तत्। १ सिद्धि, भाग। इस वृक्षके पत्र वा बीज खानेसे नशा चढ़ता है और चक्षुः हाथीकी तरह बैठ जाते हैं। इसीसे भांगको इभ-निमीलिका कहते हैं। २ पटुता, रसिकता, होशियारी, क़द्रदानी।

इभपत्रिका (सं० स्त्री०) चिल्लीशाक, एक सब्ज़ी।

इभपालक (सं० पु०) हस्तिपक, महावत।

इभपुष्पा (सं० स्त्री०) नागकेशर।

इभपोटा (सं० स्त्री०) पोटा पुंलक्षणा इभी, जाति-त्वात् पूर्वनिपातनात् पुंवद्भावश्च। १ पुरुषहस्तीकी भांति चिह्नयुक्त हस्तिनी। २ करियावक, हाथीका बच्चा।

इभबला (सं० स्त्री०) नागबला, पान।

इभभर (सं० पु०) हस्तिसमूह, हाथीका झुण्ड।

इभमस्तक (सं० पु०) पुत्रदात्री लता, बेटा देनेवाली बेल।

इभमाचल (सं० पु०) इभमाचलयति, इभ-आ-चल् बाहुलकात् णिच्। सिंह, शेर। पर्वतोंपर सर्वदा रक्तपानके लिये हाथियोंको मारता फिरता है इस-लिये सिंहका नाम यह पड़ा है।

इभमूलक (सं० स्त्री०) १ हस्तिमूलक। २ गन्ध-वृक्ष।

इभया (सं० स्त्री०) इभैर्यायते भक्ष्यते, इभ-या कर्मणि घञर्थे क, ३-तत्। स्वर्णचीरी वृक्ष। हाथीके खानेसे इस वृक्षका नाम यह पड़ा है।

इभयुवति (सं० स्त्री०) युवतिः इभी, पूर्वनिपातनात् पुंवत् च। १ युवति हस्तिनी, नौजवान् हथिनी। २ करिशावक, हाथीका बच्चा।

इभराज (सं० पु०) ऐरावत हस्ती। यह संपूर्ण हस्तियोंका राजा होता है।

इभराट्, इभराज देखो।

इभगण्डी (सं॰ स्त्री॰) हस्तिशुण्डी, हाथीसूंड़।

इभपा (सं॰ स्त्री॰) इभ-पा-क-टाप्। स्वर्णक्षीरी वृक्ष।

इभाख्य (सं॰ पु॰) इभस्याख्या नाम यस्य वा यस्मिन्। नागकेशर वृक्ष।

इभानन (सं॰ पु॰) इभाननमिवाननं यस्य। गणेश, गजानन।

इभारि (सं॰ पु॰) हस्तीका शत्रु, सिंह, शेर।

इभावती (सं॰ स्त्री॰) वटपत्री वृक्ष।

इभी (सं॰ स्त्री॰) हस्तिनी, हथिनी।

इभोषणा (सं॰ स्त्री॰) इभोपपदा उषणा, शाक-तत्। गजपिप्पली, बड़ी पीपर।

इभ्य (सं॰ पु॰) इभ-य। १ शत्रु, दुश्मन्। २ हस्तिपालक, हाथीका महावत। (वै॰ त्रि॰) ३ भृत्यसम्बन्धीय, नौकरके मुताबिक्। ४ धनवान्, दौलतमन्द, जिसके बहुत नौकर रहें।

इभ्यका (सं॰ स्त्री॰) इभ्य स्वार्थे कन्-टाप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शल्लकी वृक्ष, लोबानका पेड़।

इभ्यतिल्विल (वै॰ त्रि॰) इभ्यः तिल्विल इव। अनेक हस्ती और भृत्य रखनेवाला, जिसके कितने ही हाथी-घोड़ा हों।

इभ्या (सं॰ स्त्री॰) इभमर्हतीति यत्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शल्लकी वृक्ष, लोबानका पेड़।

इभ्यिका, इभ्यका देखो।

इम, इदं देखो।

इमक, इदं देखो।

इमकान (अ॰ पु॰) १ सम्भव, एहतिमाल। २ शक्ति, मक़्दूर। ३ शक्ति, मजाल, बस।

इमकोस (हिं॰ पु॰) असिकोश, तलवारका म्यान।

इमचार (हिं॰ पु॰) गुप्तचर, छिपा जासूस।

इमथा (वै॰ अव्य॰) इदं इवार्थे थाल्, इमादेशश्च निपातनात् वेदे। प्रत्न-पूर्व-विश्वे-मात्थाल् छन्दसि। पा ५।३।१११। इदानीमान तुल्य, इसतरह।

इमदाद (अ॰ स्त्री॰) १ साहाय्यकार्य, मदद देनेका काम। २ दान, बख्शिश।

इमदादी (अ॰ वि॰) साहाय्यप्राप्त, जिसे मदद मिले।

इमरती (हिं॰ स्त्री॰) मिष्टान्नविशेष, एक मिठायी। पहिले उर्दकी पीठी को खूब बारीक बांट चौरेठा मिलाते हैं और दोनोंको खूब फेंट डालते हैं। फिर छोटेसे चौखुण्टे कपड़ेमें यह फेंटी हुयी चीज़ रख दी जाती है और घी तईमें डाल गर्म किया जाता है। कपड़ेके बीचमें एक छेद रहता है। चारो खूंट समेटकर उसे उठाते हैं और खौलते घीमें फेंटी हुयी चीज़ घुमा-घुमाकर चुवाते हैं। गोल-गोल घेरा बन जानेपर उस पर फिर छल्ले छोड़ देते हैं। जब यह छल्लेदार घेरा पककर लाल हो जाता है तब चीनीकी चाशनीमें डुबोया जाता है। इसतरह अन्तमें इमरती बन जाती है और खानेमें बहुत अच्छी लगती है।

इमली (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह वृक्ष बड़ा होता है और सदा हरा-भरा रहता है। इसकी लम्बायी ८० और चौड़ायी २५ फीटतक होती है। सम्भवतः अफ्रीका और दक्षिण भारतमें इमली अपने आप उपजती है इसकी पत्ती पतली और बहुत छोटी होती है। लम्बी-लम्बी फली बारीक और कड़े गूदेसे ढकी रहती है। काला और मैला इसका गोंद किसी काममें नहीं आता। फल,फूल और पत्तीमें खूब खटायी होती है। पत्तियोंके भिगोनेसे लालरङ्ग उतरता है।

इसके बीजको चीया कहते हैं। चीयायोंके पेरनेसे जो तैल निकलता है,वह न तो धुंधनेमें किसी किस्मकी गन्ध ही देता है और न खानेमें मीठा ही लगता है।

भारतवर्षमें अनादिकालसे इमलीका औषधार्थ व्यवहार किया जाता है। हिन्दुओंने ही अरबोंको इसका उपयोग बताया था। वैद्यमतसे इमली—दाहहर, पाचन, अग्निवर्धक तथा रेचक होती है और पित्तज व्याधिमें अधिक लाभ पहुंचाती है। इसके खानेसे धतूरे और शराबका नशा उतर जाता है।

दाल, तरकारी और चटनीमें इमली पड़ती है। नमक, मिर्च, मसाला और तैल मिलाकर इसकी खटायी भी बनाते हैं। इसके कोमल-कोमल पत्तियों और फूलोंको बड़े चावसे खाते हैं।

विवाहादि उत्सवों पर बांदी इमलीकी पत्तियोंसे बड़ी-बड़ी पत्तरें बना लोगोंको दिखाता है और पुरस्कार पाता है।

इमाद-उल्-मुल्क—दक्षिणापथमें इमाद-शाही राजवंशके स्थापयिता। विजयनगरवाले किसी मुसलमान्‌के घर इनका जन्म हुवा था। बाल्यकालमें ये बन्दी बन बरार आये थे। कुछ दिन बाद बरारके सेनापति और शासनकर्ता जहान् खान्‌ने इन्हें अपने शरीररक्षीके पद पर नियुक्त किया था। मुहम्मद शाह बहमानीके राजत्व कालमें इन्होंने इमाद्-उल्-मुल्ककी उपाधि और बरार-सेनानायकका पद पाया था। अपने परिपोषक ख्वाजा महमूदके मरनेपर ये बरारके शासनकर्ता बने। जब सुलतान् महमूद बहमानी बरारके नवाब हुये, तब यह मन्त्रीके पदपर बैठे थे। किन्तु अपरापर अमात्यके वैभव देख न सकनेसे इन्होंने मन्त्रिपद छोड़ दिया। पीछे ये स्वतन्त्र नवाब हो गये। एलिचपुर इन्होंने अपनी राजधानी बनाई थी। १५१२ ई०को इनकी मृत्यु हुयी। बादमें इनके ज्येष्ठपुत्रको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

इमाम (अ० पु०) प्रधान याजक, स्तुतिपाठ करनेवाला। मुसलमानोंका शीया सम्प्रदाय, मुहम्मदके जामाता अलीको और उनके परा-पर वंशधरोंको इसी नामसे पुकारते आया है। सब मिलाकर १२ इमाम हुये हैं,—

१	इमाम	अली
२	,,	हसन
३	,,	हुसैन
४	,,	जैन-उल्-आबिदीन्
५	,,	मुहम्मद बाकिर
६	,,	जाफर सादिक
७	,,	मूसा काज़िम
८	,,	मुहम्मद तकी
९	,,	अली नकी
१०	,,	हुसैन अस्करी
११	,,	महदी
१२	,,	अली मूसा रज़ा

किसी-किसीके मतमें जन्म लेनेपर भी इमाम महदी छिपे हुये हैं। वेही जगत्‌में इसलाम धर्मका प्रचार करेंगे। कितने ही वर्ष पहिले मिश्रमें युद्ध होते समय एक इमाम महदी देख पड़े थे। वे अपनेको बारहवें इमाम बताते थे। चारो ओरसे मुसलमानोंने अफ्रीका पहुंच उन्हें साहाय्य दिया। धर्मयुद्धमें विधर्मियोंको हराना और मुसलमान्‌को बचाना ही उनका उद्देश्य था।

सुन्नी सम्प्रदायका मत स्वतन्त्र है। उसके कथनानुसार प्रत्येक भजनमन्दिरमें रहनेवाले साक्षात् गुरु ही इमाम कहला सकते हैं। वह चार इमाम मानता है,—हनीफ, मालिक, शफी और हनबल।

इमामदस्ता (हिं० पु०) उलूखल-मुसल, खरल और खुट्का। यह लोहे, पत्थर या पीतलका बनता है और मसाला तथा दवा कूटनेके काममें आता है।

इमामबाड़ा (हिं० पु०) १ ताज़िया रखने और गाड़नेकी जगह। यहां मुसलमान् शवपर भेंट चढ़ाते हैं। २ मुहरम त्यौहार सम्पन्न करनेका भवन। इमामबाड़ेमें मुहरमके समय अली और तत्पुत्र हसन तथा हुसैनके स्मरणार्थ उपासना की जाती है।

इमारत (अ० स्त्री०) १ अमीरके राज्यका ज़िला। २ शासन, हुकूमत। ३ वैभव, दौलत। ४ चमत्कार, रौनक। ५ विशाल भवन, आलीशान मकान्।

इमि (हिं०-क्रि०-वि०) एवम्, इसतरह, ऐसे।

इम्तेहान् (अ० पु०) १ विचार, परख। २ परीक्षा, जांच, पूछताछ।

इल्ला (अ० पु०) सेहुमप्रणाली, हिल्ले।

इयक्षु (वै० त्रि०) यज-उ वेदे निपातनात् सम्प्रसारणम्। यज्ञ करनेकी इच्छा रखनेवाला। (ऋक् १०।७८।१)

इयत् (वै० त्रि०) इदं परिमाणमस्य, वतुप् घादेशश्च। किमिदम्भ्यां वो घः। पा ५।२।४०। एतावत्, इसक़दर, इतनाभर।

इयत्तक (वै० त्रि०) इयत्ता इति कुत्सितार्थं कन् कृत्सनं। निन्दित इयत्ता, अल्प-प्रमाण, बहुत छोटा।

'इयत्तकः कुत्सितयत्तः अल्पप्रमाणः।' (सायण)

इयत्ता (सं० स्त्री०) इयतो भावः इति तल्। एतावत्ता, इतना परिमाण, मुक़र्रर मिक़दार, अन्दाज़।

इयम् (वै० त्रि०) कर्तरि असुन् किच। १ गन्ता, चलनेवाला। (क्ली०) भावे असुन्। २ गमन, चाल।

इर (सं० पु०) इर-क। उर्वरा भूमि, उपजाऊ ज़मीन्।

इरंमद (वै० पु०) इरया जलेन माद्यति, इरा-मद-खच् निपातनात् ह्रस्वः। उग्रम्पश्यादि। पा ३।२।३८। १ वज्रानल, बिजलीकी आग। २ बड़वानल।

इरज्य (वै० पु०) पृथिवीका ईश्वर। 'इरज्ये भुवनाना-मीश्वरः।' (सायन)

इरण (सं० क्ली०) इरया ईरिण, ऋ-अण् पृषोदरा-दित्वात्। ऊषर भूमि, रेगस्तान, जिस ज़मीन्पर कुछ न उगे।

इरशाद (अ० पु०) १ प्रशासन, हिदायत। २ आदेश, हुक्म। ३ इच्छा, मरज़ी।

इरसाल (अ० पु०) १ वाचिकपत्र, ज़रूरी चिट्ठी। २ मासिक राजस्व, माहवार आमदनी। छोटा अफसर बड़े अफ़सरके पास प्रत्येक मास इरसाल पहुंचाता है।

इरसी (हिं० स्त्री०) चक्रध्रुव, पहियेका मड़वर।

इरा (सं० स्त्री०) इ-क्रन् गुणाभावश्च निपातनात् अथवा इ कामं राति, इ-रा-क-टाप्। १ भूमि, ज़मीन्। २ रात्रि, रात। ३ जल, पानी। ४ अन्न, अनाज। ५ सुरा, शराब। ६ वाक्य, बात। ७ सर-स्वती। ८ कश्यपकी स्त्री। इरादेवी तृणलता, वृक्ष और समस्त तृणजातिको पैदा करती है। ९ आनन्द, खुशी।

इराक़—१ पारस्यस्थ प्रदेश-विशेष, ईरानका एक भाग। यह खुरासानसे पूर्व अवस्थित है। इराक़ उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्व ६०० मील लम्बा और उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिम ३०० मील चौड़ा है। मुसलमान् नवाबोंके समय इराक़ी भारतवर्षका सैनिक कार्य करते थे। २ एशियायी तुर्कस्थानका एक प्रदेश। यहांके लोग अरबी बोलते हैं। यह देश दो भागोंमें विभक्त है,—सूखा और गीला। सूखेका जलवायु अच्छा और गीलेका ख़राब है। किन्तु गीले भागमें कृषिकार्य अधिक होता है। यहां तिगरिस और यूफ्रेतस दो नदी बहती हैं। इनके किनारे-किनारे खजूरके पेड़ लगे हैं। गीले भागमें दलदल बहुत है। वहां बद्दू रहते हैं। यहांके राजाओंके क़िले मिट्टीके होते हैं। वो चावल बोते और चटायी बुनते हैं। मरुस्थल-वासियोंके लोग बड़े उपद्रवी हैं। यहां यात्री प्रायः लुट जाते हैं। उत्तरसे गमार आकर और भी अधिक उपद्रव उप-स्थित किया करते हैं। किन्तु तुर्क-सरकार अब धीरे-धीरे तिगरिस पर अपना प्रभाव बढ़ा रही है। यूफ्रेतसकी बाढ़ रुकने और दलदल सूखनेका प्रबन्ध भी हुवा है। यहांके अधिवासी अधिकतर शीया हैं। इनकी बुद्धि तीक्ष्ण होती है। गर्मीमें यहांके अमीर लोग हिन्दुस्तानी पङ्खा व्यवहार करते हैं।

बग़दाद और बसरा दोनो स्थान इराक़में हो हैं। यहांसे खजूर, अनाज, चावल और ऊन बाहर भेजा जाता है। बाहरसे आनेवाले मालमें कपड़ा, मट्टीका तेल और पत्थरका कोयला प्रधान है। तिगरिसमें व्यापारी जहाज़ चलते हैं। यूफ्रेतसमें यात्रियोंकी नौका रस्सीसे आदमी खींचते हैं। यहां पक्की सड़कें नहीं हैं। इसलिये बाढ़ आ जाने और दल-दल रहनेसे ऊंटपर लादकर माल भेजनेमें असुविधा होती है।

ई०के ७वें शताब्दमें ईराक़की अधिक श्रीवृद्धि हुयी थी। अब्बासी ख़लीफ़ोंकी अधीनतामें यहां कृषिकार्य बड़े ज़ोर शोरसे चला था। किन्तु उनका अधिकार उठजानेसे फिर यह देश पूर्ववत् वन्य हो गया। अब अंगरेज़ोंने बग़दाद जीत लिया है। अंगरेज़ी होनेसे फिर यहां धनधान्य बढ़नेकी आशा होती है। इराक़में बाबि-लन, सिल्यूकिया, तेसिफोन प्रभृति प्राचीन नगरोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। ३ सिन्धुप्रदेशकी एक नदी। यह अक्षा० २५° २०´ उ० तथा द्राघि० ६७° ४५´ पू० पर हट्टल पर्वतके नीचेसे निकलती है और दक्षिणपूर्व ४० मील बहकार कच्छ झीलमें जा गिरती है।

इराक़ी (अ० त्रि०) इराक़ देशीय, इराक़ मुल्कके मुताल्लिक़।

इराक्षीर (सं० पु०) इरा जलं क्षीरमिव यस्य, बहुव्री०। क्षीरसमुद्र। इस समुद्रके जलमें दूधका स्वाद है।

इराचर (सं० क्लो०) इरायां चरति, इरा-चर-ट। चरेट। पा ३।२।१६। १ करका, ओला। चैत्र-वैशाख मासमें मेघ बरसनेसे प्रायः ओले पड़ते हैं। २ भूचर, जमीन्‌का जानवर। ३ खेचर, आसमानी लोग—जैसे देवता भूतप्रेतादि।

इराज (सं० पु०) इरायां जायते, इरा-जन-ड। कन्दर्प, काम।

इरादा (अ० पु०) १ इच्छा, मरज़ी। २ अभिप्राय, मतलब। ३ सङ्कल्प, क़स्द। ४ विचार, तजवीज़। ५ निर्दिष्ट स्थान, ठिकाना। ६ अर्थ, मुराद।

इरामुख (सं० क्लो०) १ असुरनगर विशेष। यह मेरुके निकट था। २ प्रदोष, सन्ध्या, शाम पड़नेका वक्त।

इरावत् (सं० पु०) इरा विद्यतेऽत्र, इरा भूम्नि मतुप् मस्य च वः। १ समुद्र, बहर। २ मेघ, बादल। ३ राजा, नवाब। ४ अर्जुनके एक पुत्र। इन्होंने नाग-राजकी कन्या उलूपीके गर्भ और अर्जुनके औरससे जन्म लिया था। अर्जुनसे क्रुद्ध हो इरावान्‌को पितृव्य-ने छोड़ दिया, इसलिये ये जननी द्वारा नागलोक हीमें प्रतिपालित हुये थे। एक दिन अर्जुन नागलोक गये और इन्होंने उन्हें वह अपना सकल वृत्तान्त बताया। पिताकी आज्ञासे ये रणमें पहुंचे और आर्यशृङ्ग राक्षस द्वारा मार डाले गये। (वै० त्रि०) ५ सुखद, जिससे आराम मिले। ६ खाद्य-सम्पन्न, जिसके पास खानेका सामान रहे। ७ आश्वासक, तसल्ली देनेवाला।

इरावती (सं० स्त्री०) इरा वन तदस्या अस्ति, इरा-मतुप् वत्वं ङीप्। १ नदी, दरया। २ नदीविशेष, पञ्जाबका एक दरया। अब इसे रावी कहते हैं। रावी देखो। ३ वटपत्री, पथरचटा। ४ वट्टपत्नी। ५ ब्रह्म-देशस्थ एक नदी। इरावदी देखो।

इरावदी—ब्रह्मदेशकी प्रधान नदी। यह ब्रह्मदेशके पेगू और इरावदी विभागमें उत्तरसे दक्षिणको बहती है। इसकी उत्पत्तिका स्थान अनिश्चित है। सम्भवतः इरावदी पतकोयी पर्वतकी दक्षिण-घाटीसे निकली है। छोटी और बड़ी दो शाखा मिलकर यह नदी बनी है। इरावदीमें कितनी ही नदी आ कर गिरती हैं। भोगाङ्गके सङ्गमपर यह ५०से २५० गज़ तक चौड़ी हो जाती है। वहां इसकी धारा बहुत ही तीव्र बहती और पानीमें घूम-घूमकर लहर उठती है। भामोमें जहां तापिङ्ग मिली है,वहां इसकी अपूर्व शोभा खिली है। मन्दालयसे थोड़ी दूर इरावदीके किनारे सब्ज़ी खूब लगती है। इसकी उपत्यकामें चावलकी कृषि की जाती हैं। मैदानमें प्रतिवर्ष बाढ़ आती है। नदी ८०० मील लम्बी है। भकाकताङ्ग तक तो इसका तल पथरीला पड़ता, उसके बाद रेत तथा दलदल मिलता है। बारहो मास इसमें छोटे-छोटे जहाज चला करते हैं। वर्षामें रंगूनसे बड़े२ जहाज़ भी आते जाते हैं। रंगूनसे वाणिज्य और मन्दालयको सप्ताहमें दो बार जहाज़ छूटता है।

इरावेल्लिका, इरिवेल्लिका देखो।

इरिका (सं० स्त्री०) इरेव, इरा-कन् अत इत्वम्। जल, पानी।

इरिकावन (सं० क्लो०) इरिका प्रधानं वनम्, शाक-तत् वा ६-तत्, णत्वं बाहुलकात्। प्रनिरन्तःशरेक्षुप्लक्षाम्र...। पा ८।४।५। जलके निकटस्थ वन, पानीके पासका जङ्गल।

इरिकील (सं० पु०) अङ्कोलवृक्ष, ढेरेका पेड़।

इरिण (सं० क्लो०) ऋ अर्तेः किदिच्च इनन्। १ ऊषर भूमि, बञ्जर जमीन्। २ जलप्रवाह, नाला, कुर्वा। ३ भूमिच्छिद्र, खन्दक। ४ मरुभूमि, रेगस्तान। ५ वेदोक्त प्राचीन जनपद। आर्यावर्त देखो।

इरिण्य (वै० त्रि०) १ मरुभूमिसम्बन्धीय, रेगस्तानसे मुताल्लिक। (क्लो०) २ ऊषर क्षेत्र, बञ्जर खेत। (सायण-कृत शतपथब्राह्मणभाष्य ५।२।३।२)

इरिन् (वै० त्रि०) इरि कड़ारादित्वात् घिनि यलोपः। १ प्रेरक, भेजनेवाला। 'इरी ईरीता प्रेरिता।' (ऋग्भाष्ये सायण ५।८७।१) २ ईर्ष्यक, हसदी।

इरिमेद (सं० पु०) इरी व्याधिजनकतया ईर्ष्यकः मेदो निर्यासो यस्य, बहुव्री०। अरिमेद, विट्‌खदिर। यह एक प्रकारका खैर होता और गुणमें कषाय तथा उष्ण रहता है। इससे मुख एवं दन्तरोगका औषध बनता है और रक्त गिरना बन्द हो जाता है। कण्डू, विष, श्लेष्मा, कृमि, कुष्ठ और विषाक्त व्रणको इरिमेद शीघ्र ही नष्ट कर देता है।

इरिम्बिठि (सं० पु०) काण्ववंशीय एक व्यक्ति।

इरिविल्ला (सं० स्त्री०) इरिणो चासौ विल्ला चेति। मस्तकका एक क्षुद्र व्रण।

इरिवेल्लि, इरिवेल्लिका देखो।

इरिवेल्लिका (सं० स्त्री०) त्रिदोष-लक्षणाक्रान्त मस्तककी गोलाकार पिड़काविशेष, (Carbuncle of head) माथेका एक फोड़ा। इसके होनेसे बड़ी ही वेदना होती है। कभी कभी तो ज्वर तक चढ़ जाता है। पित्तजन्य विसर्प रोगकी तरह वैद्य इसकी भी चिकित्सा करते हैं। होमियोपाथिकके मतमें ऐसे रोगपर हिपार सलफर लगानेसे विशेष फल मिलता है। कोई-कोई चिकित्सक सिलिसिया, बेलेडोना प्रभृति अन्यान्य औषधियोंको भी प्रयोग करना अच्छा समझते हैं।

इरेश (सं० पु०) १ विष्णु। २ वरुण। ३ राजा। ४ वागीश।

इर्द-गिर्द (हिं० क्रि० वि०) समन्ततः, चारो ओर, दाहने-बायें।

इर्म (सं० स्त्री०) १ व्रण, फोड़ा। २ क्षत, ज़ख़्म, घाव।

इर्य (वै० वि०) इरस्-यक् वेदे निपातनात्। प्रेरक, भेजनेवाला।

इर्वारु (सं० पु०) इरुं बीजं इयर्त्ति व्याप्नोति, इरु-ऋ बाहुलकात् उण्। कर्कटी, ककड़ी।

इर्वाहक (सं० पु०) मृगविशेष, एक जानवर। यह पर्वतको गुहाओंमें रहता है।

इर्वारुशुक्ति, इर्वारुशुक्तिका देखो।

इर्वारुशुक्तिका (सं० स्त्री०) इर्वारुः शुक्तिका इव, उप० कर्मधा०। निर्भिन्नकर्कटी, फूट।

इर्वालु, इर्वारु देखो।

इर्शाद, इरशाद देखो।

इर्षना (हिं०) ईर्षा देखो।

इल (सं० पु०) इल-क। कर्दम प्रजापतिके पुत्र।

इलज़ाम (अ० पु०) १ कलह, बदनामी। २ अपराध, जुर्म। ३ निन्दा, धिक्कारत।

इलविल (सं० पु०) दशरथके एक पुत्र।

इलविला (सं० स्त्री०) कुबेरकी माता, पुलस्त्यकी पत्नी और तृणविन्दुकी कन्या।

इलहाक़ (अ० पु०) १ योग, जोड़। २ वादी तथा प्रतिवादीसे लिया जानेवाला शुल्क, जो मेहनताना मुहर्रिर और मुहाफ़िज़से मिलता हो।

इलहाम (अ० पु०) १ सुश्राव्य शब्द, अच्छी आवाज़। २ आकाशवाणी, परमेश्वरकी बात।

इला (सं० स्त्री०) इल-क-टाप्। १ पृथिवी, ज़मीन। २ वाक्य, बोली। ३ गो, गाय। ४ स्वप्नशीला, ख़्वाब देखने या ज़्यादा सोनेवाली औरत। ५ जम्बूद्वीपके नव वर्षमें एक वर्ष। ६ वैवस्वत मनुकी कन्या। यह विष्णुके वरसे पुरुष हो सुद्युम्न कहायी थीं। अनन्तर महादेवके अभिशप्त कुमारवनमें घुसनेसे यह फिर स्त्री हो गईं। बुधने इनसे विवाह कर पुरूरवा नामक पुत्र उत्पन्न किया था। किन्तु इनके पुरोहित वशिष्ठदेवने शिवकी उपासना कर इनके एकमास पुरुष और एक मास स्त्री रहनेका वर प्राप्त कर लिया था। ७ कर्दम प्रजापतिके पुत्र इल। कार्तिकेयके जन्मस्थानमें जानेसे ये स्त्री हुये और इला नामसे प्रसिद्ध रहे। पीछे इन्होंने भगवतीकी आराधनासे एकमास स्त्री और एक मास पुरुष रहनेका वर पा लिया था। इडा देखो।

इलाक़ा (अ० पु०) १ सम्पर्क, ताल्लुक़, लगाव। २ नियोग, सरोकार। ३ उद्देश, ज़िक्र। ४ ग्रहण, क़ब्ज़ा, पकड़। ५ राज्य, रियासत। ६ विभाग, हिस्सा। ७ न्यायप्रभुत्व, हुक्मरानी। ८ पद, ओहदा।

इलाक़ाबन्द (अ० पु०) दीर्घपट्टकार, पटवा।

इलाक़ाबन्दी (अ० स्त्री०) १ दीर्घपट्टकारकी वृत्ति, पटवेका काम। २ वस्त्राभरणक्रिया, गोटे-किनारीका काम।

इलाची (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, किसी क़िस्मका कपड़ा। इसमें रेशम और सूत दोनो चीज़ें मिली रहती हैं।

इलागोल (सं० स्त्री०) पृथिवी, ज़मीन।

इलाची, इलायची देखो।

इलाज (अ० पु०) १ उपाय, तदबीर, दौड़-धूप। २ निवृत्ति, छुटकारा। "वहम बिदेश का इलाज।" (लोकोक्ति) ३ चिकित्सा, दवा-दारमा। ४ दण्ड, सज़ा।

इलातल (सं० स्त्री०) १ राशिचक्रका चतुर्थ स्थान। २ पृथिवीतल, सतह-ज़मीन।

इलादध (सं० पु०). यज्ञविशेष।

इलान्द (सं० क्ली०) १ उत्सव वा छन्दोविशेष, वक्र खास जलसा या बहर। २ एक सामन्।

इलापत्र (सं० पु०) नागविशेष।

इलाम (हिं०) ऐलान् देखो।

इलायची (हिं० स्त्री०) एला, इलाची। (Cardamom) संस्कृतमें इसे बहुलगन्धा, ऐन्द्री, द्राविड़ी, कपोतपर्णी, वाला, बलवती, हिमा, चन्द्रिका, सागरगामिनी, गन्धालीगर्भा, एलीका और कायस्था कहते हैं। इलायची छोटी और बड़ी या गुजराती और पूर्वी दो प्रकारकी होती है। छोटीका संस्कृत नाम उपकुञ्चिका, तुत्था, कोरङ्गी, त्रिपुटा, त्रुटिवयस्था, तीक्ष्णगन्धा, सूक्ष्मैला तथा त्रिपुटि और बड़ीका पृथ्विका, चन्द्रबाला, निष्कुटि, बहुला, स्थूलैला,



इलायचीका वृक्ष।

सालेया एवं ताड़काफल आदि है। छोटी और बड़ी दोनो इलायची वैद्यकमतसे शीतल, तिक्त, उष्ण, सुगन्धित, हृद्रोगकारक और पित्तरोग, कफ, मलभेद, वमन एवं शुक्रको नाश करनेवाली हैं। बड़ी विशेषतः शूल, कोष्ठबद्ध, पिपासा, छर्दि एवं वायु और छोटी कफ, श्वास, काश, अर्शः. तथा मूत्रकृच्छ्रको मिटाती है।

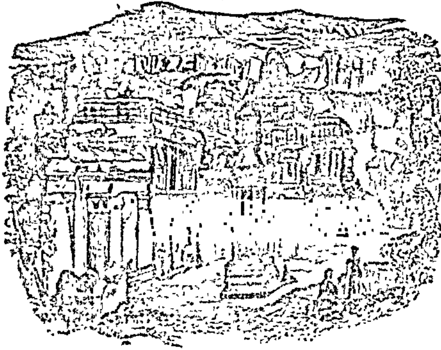
इसका पौदा चारसे आठ फीटतक ऊंचा होता और सदा हरा-भरा रहता है। इसकी मोटी लकड़ीको जड़ ज़मीनमें लगती और उसके ऊपरी भागसे इधर उधर खड़ी डाली निकलती है। इलायची पर फल-फूल दोनो लगते हैं। भारतवर्षके नाना स्थानोंमें इलायची उपजती है। दक्षिणकी ओर कनाड़े, महिसुर, कोड़ग, तिरुवाङ्कोर और मदुराकी पार्वत्यभूमिमें इसका जङ्गल खड़ा है। इसका वृक्ष चार वर्षमें बढ़ता और मासमें फलता है। फल आनेपर क्षपक शाखा-प्रशाखासे बीजकोष तोड़ लाते हैं। भुरभुरे पत्थरकी भूमि इसके लिये उपयुक्त है।

युरोपमें पहले इलायची न होती थी। पीछे भारतवर्षसे वहां लोग इसे ले गये। मुसलमान् वैद्य छोटीको स्त्री और बड़ीको पुंजातीय समझते हैं। छोटी इलायची सफ़ेद रहती, दाक्षिणात्यमें उपजती और पान तथा मिठाईमें पड़ती है। यह भी कयी तरहकी होती है—कागज़ी, मालाबरी, गुजराती और सिंहली आदि। बड़ी नैपाल तथा बङ्गालमें उपजती और दालतरकारीके काम आती है।

इलायचीको कन्दमूल और बीज दो प्रकारसे तैयार करते हैं। भूमि चिक्कण और उर्वर रहना चाहिये। अधिक वायु वा ताप लगनेसे वृक्ष मर जाता है। खेतमें इधर-उधर कुछ दूसरे बड़े बड़े वृक्षोंके रहनेसे लाभ होता है। दो तीन वर्षके वृक्षका कन्दमूल भी लगा सकते हैं। गढ़ा एक फुट गहरा और अट्ठारह इंच चौड़ा होना चाहिये। इसके पौदोंके बीच १२ फीटतक अन्तर रखते हैं। खेतका घासफूस, कङ्कड़-पत्थर और झाड़झंखाड़ साफ़ कर दिया जाता है। किन्तु पौदा निकल आनेपर निरानेकी आवश्यकता नहीं पड़ती। क्योंकि इलायचीके नीचे दूसरी चीजका उगना असम्भव है। सावधानतासे बीजको डालते हैं। किन्तु बीजको गहरेमें बोना अच्छा नहीं। इसे ८ इंच बढ़नेपर पौदेको उखाड़कर दूसरी जगह लगा देना चाहिये।

'रावणकी खाई' गुहाके चारों ओर प्रदक्षिणा है। मन्दिरके मध्य महिषमर्दिनी, हरपार्वती, शिव-ताण्डव प्रभृति सुन्दर सुन्दर देवोंकी मूर्तियां शोभित हैं। इसमें किसी स्थानपर दशस्कन्ध रावणके कैलास उठानेका दृश्य है; तो कहीं एक हस्तमें असि और दूसरे हस्तमें पात्र लिये करिचर्मसे आवृत भयङ्कर भैरवमूर्ति रक्तासुरका विनाश कर रही है। कहीं यदि ऐरावतपर इन्द्राणी विराजमान हैं तो कहीं शूकरपर वाराही बैठी है। कहीं यदि गरुड़पर कौमारी शोभित हैं तो कहीं वृषभपर माहेश्वरी मूर्ति स्थित है और कहीं यदि हंसपर सरस्वती बैठी हैं, तो कहीं निर्जनस्थानमें बैठकर शङ्कर डमरु बजा रहे हैं। इस प्रकार इस निर्जन पार्वत्य प्रदेशमें नाना देवदेवी मूर्तियोंके देखने-से हिन्दूमात्रके हृदयमें भक्तिका सञ्चार हो जाता है।

'दश-अवतार-गुहा' और भी चमत्कारिणी है। दशावतार और उनके लोकाधिपके सिवा गणपति, पार्वती, सूर्य, अर्धनारीश्वर प्रभृति अनेक देवमूर्तियां यहां बनी हैं। इस मन्दिरमें अस्पष्ट शिलालेख विद्यमान है। अनुमानसे मन्दिरकी प्रतिष्ठाका विवरण उक्त प्रस्तरखण्डपर लिखा गया होगा। परन्तु काल पाकर वह अस्पष्ट हो गया है। खेद है कि कोटि-कोटि मुद्रा व्ययसे इस अमानुषी कीर्तिको प्रतिष्ठित करनेवालोंके नामका परिचय देनेवाला निदर्शन भी आज कोई हमें नहीं मिलता।



कैलास।

इलोरेका कैलास या रङ्गमहल भारतवर्षके मध्य गुहामन्दिर-निर्माणकी पराकाष्ठा दिखाता है। पर्वत खोदकर ऐसे सुबृहत् देवालय अति अल्प ही बने हैं। कैलास देखनेसे समझ पड़ता है कि, प्राचीन भारतीय शिल्पी, भास्कर और स्थपतिगणोंने किस प्रकार अपनी असाधारण क्षमताका परिचय दिया है। इस निर्जन-वनराजि-वेष्टित कैलासभवनमें पहुंचनेसे देवादि-देव महादेवके कैलासमें पहुंचने-जैसा आनन्द आता है। जो लोग मिसरके पिरामिडकी बात सुनकर चकराते हैं, चीना प्राचीरकी प्रशंसा सुनाते हैं और आगरेके ताजमहलपर लट्टू हो जाते हैं, उन्हें हम एकबार उक्त कैलास देख आनेका आग्रह करते हैं। इसके देखनेसे हृदयमें धर्म, भक्ति एवं शान्तिका उदय होगा। प्राचीन हिन्दू-राजगणकी असाधारण देवभक्ति, स्वधर्मानुराग, निःस्वार्थपरोपकारिता और अलौकिक कीर्ति दृग् परिलक्षित हो जाती है।

पाश्चात्य पुरातत्त्ववित् कैलासमन्दिरको राष्ट्र-कूटाधिपति दन्तिदुर्गकर्तृक ई० ८म शतकमें निर्मित बताते हैं। किन्तु इस मन्दिरका उसकी अपेक्षा पूर्वकालमें निर्माण होना भी सम्भव है। दक्षि-

दुर्गने इसे पुनः सज्जित और संस्कृत किया होगा। कैलासके मध्य हमारी प्रधान देवदेवियोंकी तथा रामायण एवं महाभारतके वीरोंकी मूर्तियां और देवलीलायें खुदी हैं। चित्रविचित्र चित्रित रहनेसे इसे रङ्गमहल भी कहते हैं।

सिवा कैलासके रामेश्वर और नीलकण्ठ प्रभृति गुहायें भी दर्शनीय हैं। इन गुहाओंमें भी नाना प्रकार खोदाईका काम और देवदेवियोंकी मूर्तियां हैं।

इलोरा-पर्वतकी उत्तरभुजके प्रान्तमन्दिरका नाम पार्श्वनाथ है। यह भूमिसे ४८० हस्त ऊर्ध्व, अप्राचीन और इष्टक-निर्मित है। ई०के १८वें शताब्दमें औरङ्गाबादस्थ किसी जैन सेठने यह मन्दिर बनवाया था। इसमें पार्श्वनाथ भगवान्‌की ६॥ हाथ ऊंची दिगम्बर मूर्ति ध्यान लगाये विराजमान है। गुजरातके जैन भाद्रमासमें शुक्ल चतुर्दशीको इलोरा आ कर इस मूर्तिकी पूजा करते हैं। उस समय इसका अभिषेककार्य एक मन घृतसे किया जाता है।

पार्श्वनाथके मन्दिरसे दक्षिण इन्द्रसभा है। यह तीन गुहाओंमें विभक्त है। पहली ४० हस्त दीर्घ और २० हस्त विस्तृत है। इसमें १६ खम्भा और १२ कड़ी हैं। प्राचीरके चारो ओर जैन देवदेवियोंकी मूर्तियां अङ्कित हैं। रचनाचातुर्य प्रशंसनीय है। दूसरी जगन्नाथ-सभा है। इसके मध्यमें प्रकाण्ड गर्भगृह बना है। पार्श्वनाथ, महावीरप्रभृति जैन तीर्थङ्करों और अम्बिका प्रभृति जैन देवियोंकी मूर्तियां विद्यमान हैं। तीसरी गुहा रणछोड़जीका मन्दिर है। इसके गर्भगृह एवं प्राचीरमें सर्वत्र तीर्थङ्कर और गणधर प्रभृतिकी मूर्तियां उल्लिखित हैं। इन समस्त मूर्तियोंको लोग आजकल रणछोड़जी कहते हैं। इसके सामने बरामदेमें एक पुरुष तथा एक स्त्रीकी मूर्ति हस्तिपृष्ठपर आरूढ़ है। ब्राह्मण लोग इन दोनोंको इन्द्र और इन्द्राणीकी मूर्ति समझते हैं। उनके मतमें इन्हीं दोनों मूर्तिके नामानुसार इस गुहाको इन्द्रसभा कहते हैं। वस्तुतः इन्द्रदेवकी पूजाके लिये यह मन्दिर न बना था।

सिवा इसके इलोरेकी दुमारलेना वा विवाह-सभा, सीताकी नानी, एहरभद्र-गुहा प्रभृति भी देखने योग्य वस्तु हैं। इसकी उत्पत्तिके विषयमें अनेक तरहका वादप्रतिवाद सुनाई पड़ता है,—

कोई कहते हैं, कि बुधपत्नी इलाके नामानुसार इस नगरका नाम इलोरा हुवा है। यहां भुवनाश्व, दण्डक, इन्द्रद्युम्न, दशरथ, राम प्रभृति राजा राजत्व करते थे।*

मुसलमान् इसे राजा इलकर्दक स्थापित बताते हैं। पूर्वकालमें उन्होंने पर्वत खोदकर ये समस्त मन्दिर बनवाये थे। आजसे नौ सौ वर्ष पहले वे जीवित थे।

इधर ब्राह्मण कहते हैं कि १८४४ वर्ष पहले एलिचपुरमें इलुनामक एक राजा राज्य करते थे। दैवदुर्विपाकसे उनके सर्वशरीरमें कोड़े पड़ गये। उन्होंने इलोराशृङ्गस्थ शिवालय-सरोवर नामक तीर्थमें स्नान करनेकी इच्छासे यात्रा की थी। यह तीर्थ पहले साठ धनुष परिमित था, किन्तु यमकी प्रार्थनासे विष्णुने पीछे गोष्पदतुल्य खर्व बना दिया। इलु राजाने यहां पहुंचकर और तीर्थजलमें वस्त्र भिगोकर अपना क्षत शरीर धो डाला। इससे उनकी व्याधि चली गई थी। इसलिये कृतज्ञता चिरस्मरणीय रखनेके अभिप्रायसे इलोरेका पर्वत उन्होंने खुदाया और गुहाओंमें नानाप्रकारकी देवमूर्तियां प्रतिष्ठित करायीं।†

इलय (सं० पु०) स्वर्गस्थ आश्चर्य वृक्ष, विहिश्तका अजीब दरख़्त।

इल्म (अ० पु०) १ विद्या, जानकारी। २ विज्ञान, हिकमत। ३ मन्त्र, जादू। अरबीमें उपदेश-विद्याको इल्म-अख़लाक़, साहित्यको इल्म-अदब, जलविद्याको इल्म-आब, शब्दविद्याको इल्म-आवाज़, मल्लविद्याको इल्म-इलाही, छन्दःशास्त्रको इल्म-उरूज़, सामुद्रिकको इल्म क़ियाफ़ा, अलङ्कारशास्त्रको इल्म-कलाम, रसायन-विद्याको इल्म-कीमिया, गूढ़ार्थको इल्म-ग़ैब, आत्मविद्याको इल्म-जान, धातुविद्याको इल्म-तयरी, इतिहास-शास्त्रको इल्म-तवारीख़, शरीरव्यवच्छेद-शास्त्रको इल्म-तशरीह, धर्मशास्त्रको इल्म-दीन, उद्भिद्विद्याको

* Wilson's Analysis of the Mackenzie Manuscripts, Vol. I. p. cir.

† Asiatic Researches, Vol. VI, p. 383.

इल्म-अखलाक, ज्योतिषशास्त्रको इल्म-नजूम, न्याय-शास्त्रको इल्म-बहस या इल्म-मन्तिक़, लोहकान्तधर्मको इल्म-मक़्नातीस, विषयरीतिको इल्म-मजलिस, दृग्विद्याको इल्म-मनाज़िर, राजनीतिको इल्म-मुदन, विश्वोप-सितिको इल्म-मूसीक़ी, वायुविद्याको इल्म-हवा, रेखा-गणितको इल्म हिन्दसा, खगोलविद्याको इल्म-हैयत और पशुविद्याको इल्म-हैवानात कहते हैं।

इल्लत (अ० स्त्री०) १ कारण, वायस। २ अभियोग, इलज़ाम। ३ दुर्व्यसन, बुरी आदत। ४ अपराध, क़सूर। ५ मल, कूड़ा।

इल्लती (अ० वि०) दुर्व्यसनमें फंसा हुआ, जो बुरी आदत रखता हो।

इल्लल (सं० पु०) पक्षिभेद, एक चिड़िया।

इल्ला (हिं० अव्य०) १ परन्तु, लेकिन। (स्त्री०) २ पिटका विशेष, एक फुन्सी। यह त्वक्के ऊपर उठती है और कठिन तथा मस्से-जैसी होती है।

इल्लिश (सं० पु०) मत्स्यभेद, इलीश। इलीश देखो।

इल्लाका, इलाका देखो।

इल्लाह, इलाह देखो।

इल्वल (सं० पु०) इल्-वल वा इल-क्विप्-वलच्। १ मत्स्यभेद, बाम मछली। २ दैत्यविशेष। यह सिंहिकाके गर्भ और विप्रचित्तिके औरससे उत्पन्न हुआ था। इसका अपर नाम सैंहिकेय था। व्यंश, शल्य, नभ, वातापि, नमुचि, खसृम, अञ्जिक, नरक, कालनाभ और राहु (शक, चीरख, वज्रनाभ) इसके भ्राता थे। इसका वासस्थान मणिमतीपुर था। कनिष्ठ भ्राता वातापिने किसी तपस्वी ब्राह्मणसे इन्द्र-तुल्य पुत्र पानेका वर मांगा था। किन्तु अभिमत वर न मिलनेसे वातापि और इल्वल दोनों उस ब्राह्मण-पर क्रुद्ध हो गये। उसी समयसे इल्वलने ब्रह्महत्यापर कमर बांधी थी। अपने कनिष्ठ भ्राता वातापिको वह भेड़ बनाकर ब्राह्मणके सामने लाता और अच्छीतरह पका-भुना मांस रांधकर खिला देता। फिर बाहर बैठ वातापिको बुलाता था। वह आवाज़ पाते ही ब्राह्मणका पेट फाड़ निकल आता और बेचारा ब्राह्मण उसी समय मर जाता। इल्वल अपने मायाबलसे मृत-व्यक्तिको सशरीर यमके सदनसे बुला सकता था। किसी दिन अनेक राजर्षि मुनिगणके साथ इसके मकानपर आये। इल्वलने अति समादरसे इनकी अभ्यर्थना की और फिर भेड़का रूप रखनेवाले वातापिको काटकर इसने मांस बनाया। उसे देख ऋषि घबराये। किन्तु अगस्त्यने कहा,—'कोई भय नहीं, हमीं यह मांस खायेंगे। आप ठहर जाइये।' इल्वल उन्हें मांस खिला जब वातापिको पुकारने लगा, तब अगस्त्यका वायु निकल पड़ा। उन्होंने उत्तर दिया,—'आपका वातापि कहां है? उसे तो हमने पेटमें पचा डाला।' उसपर वह धमकी देने लगा। अवशेषको इल्वल भी अगस्त्यके नेत्रसे निर्गत अग्नि द्वारा जल गया। (रामायण और महाभारत)

इल्वला (सं० स्त्री०) मृगशिरानक्षत्रके शिरःपर स्थित पांच क्षुद्र तारा।

इव (सं० अव्य०) १ सदृश, मानिन्द, बराबर। २ जिसप्रकार, जैसे। ३ किसीप्रकार, शायद; कुछ-कुछ। ४ प्रायः, क़रीब-क़रीब। ५ इसप्रकार, ठीक तौरपर।

इवीलक (सं० पु०) लम्बोदरके पुत्र। (विष्णुपुराण)

इवेपोरेशन (अं० पु० = Evaporation) वाष्पभाव, तबख़ीर, पानीका भाप बनना। भाप देखो।

इशरत (अ० स्त्री०) सन्तोष, तुष्टि, खुशी, आराम, चैन। आनन्द-भवनको इशरत-कदा, इशरत-ख़ाना या इशरतगाह कहते हैं।

इशारा (अ० पु०) १ सङ्केत, रम्ज़, सैन। २ चिह्न, निशान्। ३ मूकदर्शन, गूंगा दिखाव। ४ प्रेम, प्यार।

"अक़्लमन्दको इशारा। [illegible]" (लोकोक्ति)

इशिका, इषीका देखो।

इषीका (सं० स्त्री०) १ हस्तीका चक्षुःगोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ शरकाण्ड, रामशरका तना।

इश्क़ (अ० पु०) १ अनुराग, प्यार।

"[illegible]" (लोकोक्ति)

२ महाव्यसन, ख़ब्त, दीवानगी।

३ सुप्रसिद्ध मुसलमान कवि शाह कुतुब-उद्-दीनका उपनाम। ये शाह आलमके समयमें वर्तमान थे।

इश्क़पेचा (हिं॰ पु॰) मल्लिका विशेष, अमरीकाकी चमेली। (Quamoclit vulgaris) यद्यपि यह प्रधानतः अमेरिकामें उपजता है, तो भी इस वृक्षकी भारतमें कोई कमी नहीं। यह दो प्रकारको होती है। एकमें लाल और दूसरेमें सफेद फूल आते हैं। इसका पत्र सूत्र-जैसा सूक्ष्म रहता है। इश्क़पेचा ठण्डा है। आघात लगनेसे क्षतपर इसकी पत्तीका पुलटिस चढ़ाते और रस गर्म घीमें मिला रोगीको पिलाते हैं। विस्फोटपर पत्रका लेप भी लगाया जाता है।

इश्क़बाज़ (अ॰ पु॰) कामुक, रसिया, छैला।

इश्क़बाज़ी (अ॰ स्त्री॰) कामचेष्टा, हुस्नपरस्ती।

इश्क़मजाज़ी (अ॰ पु॰) सांसारिक प्रेम, दुनियावी मुहब्बत।

इश्क़हक़ीक़ी (अ॰ पु॰) ईश्वरीय प्रेम, सच्ची मुहब्बत।

इश्क़ है (हिं॰ अव्य॰) धन्य धन्य! क्या खूब! शाबाश!

इश्क़ी—१ एक प्रसिद्ध कवि। यह मुहम्मद शाहके समयमें वर्तमान थे। १७२८ ई॰में इनकी मृत्यु हुई। २ पटनाके रहनेवाले एक मुसलमान कवि, शाह शेख़ मुहम्मद वजीहका उपनाम। इनके पिताका नाम गुलाम हुसैन मुजरिम था। इश्क़ीने अंगरेज सरकारके अधीन दश वर्ष ख़ुरदारमें तहसीलदारी की। १८०८ ई॰में यह जीवित थे।

इश्तहार (अ॰ पु॰) १ घोषणा, इत्तिला, ब्यौरा। २ प्रकाशन, तशहीर, फैलावा। ३ विज्ञापन, एलान। ४ जवाब, हरकारा।

इश्तहारी (अ॰ पु॰) पलायित व्यक्ति, भागा हुआ मनुष्य।

इश्तियाक़ (अ॰ पु॰) १ अभिलाष, चाह। २ प्रबलेच्छा, लालच। ३ प्रेम, प्यार।

इश्तियालक (अ॰ स्त्री॰) १ उत्तेजना, भड़क। २ दीपकमें बत्ती सरकानेकी सींक।

इष् (सं॰ त्रि॰) इष इच्छार्थे क्विप्। १ इच्छायुक्त, ख़्वाहिशमन्द। कर्मणि क्विप्। २ अभिलषित, ख़्वाहिश किया हुआ। ३ खाद्य, खाने-लायक़। ४ अभिलापके योग्य, जिसे चाहें। (स्त्री॰) भावे क्विप्। ५ यात्रा, रवानगी। ६ अभिलाप, ख़्वाहिश।

इष (सं॰ पु॰) इष यात्रा विद्यते यस्मिन् मासे, इष गत्यर्थे क्विप्-इट्-अच्। १ सौर एवं चान्द्र आश्विनमास।

"इषे मासासिते पक्षे भवमायाई योगतः।"

(तिथितत्त्वधृत देवीपुराण)

२ प्रेषण, भेजना। ३ अन्न।

इषण (हिं॰) एषण देखो।

इषणि (वै॰ स्त्री॰) इष निपातनात् अणि। १ प्रेषण, प्रेरण, भेजनेका काम। २ इच्छा, ख़्वाहिश।

इषण्य (सं॰ स्त्री॰) इषणिमिच्छतीति, इषणिक्यच्-अङ् भावे टाप्। प्रेरण, ख़्वाहिश, चाह।

इषव्य (सं॰ त्रि॰) इषुणा विध्यति इषौ कुशलो वा, इषु-यत्। १ शरलक्ष्य, जिसपे तीरका निशाना लगे। २ सम्यक्‌रूपमे वाण चला सकनेवाला, जो तीर मारनेमें होशियार हो।

इषिका (सं॰ स्त्री॰) इष-वुन्। क्वादिभ्यो इन्। इष् ३।१५। १ गजाक्षिगोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ चित्रकर्मका यन्त्रविशेष, बालोंका क़लम। यह घोड़े या सूअरके बालसे बनता है।

इषित (सं॰ त्रि॰) १ चलित, प्रेरित, जो सरकाया या पहुंचाया गया हो। २ उत्तेजित, भड़काया हुआ। ३ चपल, तेज़।

इषिर (सं॰ त्रि॰) इष-किरच्। इषिमदीत्यादिना। उण् १।५१। १ गमनशील, चल सकनेवाला। (पु॰) २ अग्नि, आग।

इषीक (सं॰ पु॰) जातिविशेष, एक क़ौम।

इषीकतूल (सं॰ क्ली॰) शरहणका उपरिभाग, रामशरका ऊपरी हिस्सा।

इषीका (सं॰ स्त्री॰) ईष-इकन्। ईषेः किट् ह्रस्वश्च। उण् ३।४१। १ गजाक्षिगोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ काशतृण, मूंज। ३ मुञ्जामध्यवर्ती तृण, मूंजके बीचकी सींक। इसीपर घोश लगता है। ४ शरकाण्ड, रामशरका तना। ५ वेणाका काण्ड, वेणाका तना। इस तृणसे एक प्रकारका अस्त्र बनता है।

"तमिषीकास्त्रविरोधकाम्।" (रघुवंश)

इषु (सं॰ पु॰-स्त्री॰) ईष-उ। ईषेः किच्च। उण् १।१३। १ वाण, तीर। २ संख्या, अदद। ३ उत्तरपेडके मध्यको

देखा, दायरेके भीतरकी सतर। ४ सामवेदविहित यज्ञ विशेष।

इषुक (सं॰ त्रि॰) बाण सदृश, तीरके मानिन्द।

इषुका (सं॰ स्त्री॰) बाण, तीर।

इषुकामशमी (सं॰ स्त्री॰) इषौ कामः इषुकामः स शाम्यति यत्र, इषुकाम-शम अधिकरणे घञ्-ङीप्। ग्रामविशेष, एक बस्ती।

इषुकार (सं॰ पु॰) इषुं करोतीति, इषु-कृ-अण्, उप॰ समा॰। बाण बनानेवाला, जो शख्स तीर तैयार करता हो।

इषुकृत् (सं॰ पु॰) इषु-कृ-क्विप्। कर्मकार, लोहार, तीर तैयार करनेवाला।

इषुगोलक (सं॰ पु॰) कोकिलाक्ष वृक्ष, तालमखानेका पेड़।

इषुधर (सं॰ पु॰) इषु-धृ-अच्, ६-तत् वा उप-तत्। बाणधारी, तीरन्दाज़। इषुधत् प्रभृति शब्दोंका अर्थ भी बाणधारी ही है।

इषुधि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) इषु-धा अधिकरणे कि। बाणाधार, तूण, तरकश।

इषुधिमत् (वै॰ त्रि) तूणयुक्त, तरकश रखनेवाला।

इषुधी (हिं॰) इषुधि देखो।

इषुध्या (वै॰ स्त्री॰) इषुधि कण्ड्वादित्वात् यक्-अ-टाप्। प्रार्थना, अर्ज़।

इषुध्यु (वै॰ त्रि॰) १ प्रार्थी, अर्ज़ लगानेवाला। २ गमनशील, जानेवाला। (सायण)

इषुप (सं॰ पु॰) इषु-पा-क, उप-तत्। असुरविशेष। यही असुर अंशरूपसे अवतीर्ण हो नग्नजित् नामक राजा बना था।

इषुपत्रिका, इषुपत्री देखो।

इषुपर्णी (सं॰ स्त्री॰) अर्कमूला, ईश्वरमूल।

इषुपथ (सं॰ पु॰) बाणका पथ, तीरका टप्पा।

इषुपुङ्खा, शरपुङ्खा देखो।

इषुपुङ्खिका (सं॰ स्त्री॰) शरपुङ्खा, सरफोंका।

इषुपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) इषुरिव पुष्पं यस्याः, दूर-विसारिगन्धत्वात् बहुव्री॰। शरपुष्पा वृक्ष। इस वृक्षके पुष्पका गन्ध बाणकी तरह बहुत दूरतक पहुंचता है।

इषुबल (वै॰ त्रि॰) बाणका बल रखनेवाला, जिसका तीरकी ताकत हो।

इषुभृत् (सं॰ त्रि॰) इषु-भृ-क्विप्। बाणधारी, जो तीर लिये हो।

इषुमत् (वै॰ त्रि॰) इषु अस्त्यर्थे भावार्थे मतुप्, मस्य व वः। प्रशस्त बाणधारी, तीरन्दाज़।

इषुमात्र (सं॰ त्रि॰) इषुः प्रमाणमस्य, इषु-मात्रच्। प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः। पा ५।२।३७। १ बाणप्रमाण, तीरके बराबर, जो तीन फीट हो। (अव्य॰) २ बाणके प्रमाण पर्यन्त, तीरके टप्पेतक। (पु॰) ३ कर्मेन्द्रियोंका कुण्ड।

इषुमान्, इषुमत् देखो।

इषुविक्षेप (सं॰ पु॰) बाण मारनेका स्थान, तीर फाड़नेकी जगह। १५० हस्त परिमाण-विशिष्ट प्रदेशको इस नामसे पुकारते हैं।

इषुत्रिकाण्डा (सं॰ स्त्री॰) मृगशिरा नक्षत्रका तारा-मण्डल। इसमें तीन तारे होते हैं।

इषुहस्त (सं॰ त्रि॰) बाण हाथमें लिये हुआ, जिसके हाथमें तलवार रहे।

इषूपल (सं॰ पु॰) अस्त्रविशेष, एक तोप। यह दुर्गके द्वारपर रहता और प्रस्तरादि निक्षेप करता है।

इषेत्वाक (सं॰ पु॰) इषेत्वा इति अस्ति यस्मिन्, इषेत्वा-वुन्। गोषदादिभ्यो वुन्। पा ५।२।६२। इषेत्वा शब्द-युक्त अनुवाक या अध्याय। यजुर्वेदके प्रथम अध्यायको इस नामसे पुकारते हैं।

इष्कर्तृ (वै॰ त्रि॰) निस्-कृ-तृच्। निसो गत्यर्थे। प्रातिशाख्य सूत्रे च नलोपः। निष्कर्ता, निष्पादनकारी, बनानेवाला।

इष्कृति (वै॰ स्त्री॰) निस-कृ-क्तिन् इष्कर्तृवत् नलोपः। जननी, धात्री, मा, धाय।

इष्ट (सं॰ त्रि॰) यज वा इष कर्मणि क्त। १ अभि-लषित, ख्वाहिश किया हुआ। २ प्रिय, प्यारा। ३ पूजित, परस्तिश किया हुआ। ४ हित, फायदेमन्द। ५ अन्वेषण किया हुआ, जो ढूंढा गया हो। ६ अभि-मत, खुशगवार। ७ ईप्सित, पसन्द किया हुआ। ८ प्रबल, ज़ोरदार। (क्ली॰) भावे क्त। १० यज्ञादि-

कर्म। ११ संस्कार, सुधार। १२ श्रौतकर्म, वेदका ढङ्ग। १३ जातूकर्णोक्त धर्मकार्य। १४ हत, एहसान्। (पु॰) १५ एरण्ड वृक्ष, रेंड़का पेड़। १६ उशीर, खस। १७ यज्ञद्वारा तुष्ट परमात्मा। १८ विष्णु। १९ पति, खाविन्द। (अव्य॰) २० इच्छापूर्वक, राज़ीसे।

इष्टक (सं॰ पु॰) दग्ध मृत्तिकाखण्ड, ईंट।

इष्टकचित (सं॰ त्रि॰) ३-तत्, अकारस्य ह्रस्वत्वम्। इष्टकेषीकामालानां चिततूलभारिषु। पा ६।३।६५। इष्टक द्वारा व्याप्त, ईंटसे भरा हुआ।

इष्टकर्मन् (सं॰ क्ली॰) इष्ट प्रसिद्धार्थं कर्म, शाक-तत्। गणित विशेष, फ़र्ज़ी अददसे हिसाब लगानेका क़ायदा।

"उद्दे शकालापवदिष्टराशिः क्षुण्णो हृतोऽंशैः रहितो युतो वा।
इष्टाहतं दृष्टमनेन भक्तं राशिर्भवेत् प्रोक्तमितीष्टकर्म॥" (लीलावती)

इष्टका (सं॰ स्त्री॰) १ गृहादिके निर्माणार्थं दग्ध मृत्खण्ड, ईंट। २ संग्रह, ढेरी।

इष्टकागृह (सं॰ क्ली॰) दग्ध मृत्खण्ड द्वारा निर्मित भवन, पक्का मकान्, ईंटका घर।

इष्टकाचित (सं॰ त्रि॰) दग्ध मृत्खण्ड द्वारा निर्मित, पक्की ईंटसे बना हुआ।

इष्टकान्यास (सं॰ पु॰) गृहकी भित्तिमूलका संस्था-पन, मकान्की नीवका डालना।

इष्टकापथ (सं॰ क्ली॰) इष्टकायामपि पन्था यस्य इष्टं कापथं अगम्यवर्त्म यस्य इष्टकेव सुदृढ़ः पन्थाः यस्येति वा, सर्वत्र अच् समासान्तः। ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। १ वीरणमूल, खस। २ इष्टकनिर्मित पथ, ईंटकी बनी राह, पक्की सड़क।

इष्टकापथक, इष्टकापथ देखो।

इष्टकामदुह् (सं॰ स्त्री॰) इष्टं प्रियं काममभिलषितम्, इष्ट-काम-दुह-क। अभिलषित प्रियकार्य सम्पादन करनेवाली, जो मन मांगी मुराद बख़्शती हो।

इष्टकामधुक्, इष्टकामदुह् देखो।

इष्टकाराशि (सं॰ पु॰) दग्ध मृत्खण्डनिचय, ईंटका ढेर।

इष्टकारिन् (सं॰ त्रि॰) इष्टं करोतीति णिनि। हितैषी, भलायी करनेवाला।

इष्टकाल (सं॰ पु॰) ज्योतिष मतसे सन्तान उपजने या अन्यकार्य लगनेका निर्दिष्ट समय।

इष्टकाव (सं॰ त्रि॰) इष्टका विद्यतेऽत्र, इष्टका-वः। इष्टकायुक्त, पोख़्ता, पक्का।

इष्टकावत् (सं॰ त्रि॰) इष्टका-मतुप् मध्वादित्वात्, मस्य च वः। मधुर्व्याम्। पा ४।२।८६। दग्ध मृत्खण्ड-सम्पन्न, ईंट रखनेवाला।

इष्टगन्ध (सं॰ त्रि॰) इष्टो गन्धो यस्य, बहुव्री॰ इष्ट-श्चासौ गन्धश्चेति वा कर्मधा॰। १ सुगन्ध, ख़ुशबूदार। (पु॰) २ सुगन्धिद्रव्य, ख़ुशबूदार चीज़। (क्ली॰) ३ वालुका, बालू, रेत।

इष्टजन (सं॰ पु॰) इष्टश्चासौ जनश्चेति, कर्मधा॰। १ प्रियव्यक्ति, प्यारा शख़्स। २ प्रियतम, माशूक़।

इष्टतम (सं॰ त्रि॰) अयमेषां अतिशयेन इष्टः, इष्ट-तमप्। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। १ अतिशय प्रिय, निहायत प्यारा। गृहस्थको स्त्रीपुत्रादि और उदा-सीनको ब्रह्म इष्टतम है। २ अत्यन्त मनोमत, निहायत मुवाफ़िक़।

इष्टतर (सं॰ त्रि॰) अधिक प्रिय, ज़्यादा प्यारा।

इष्टता (सं॰ स्त्री॰) इष्टत्व देखो।

इष्टत्व (सं॰ क्ली॰) स्पृहणीयता, पसन्दीदगी, प्यार या परस्तिश किये जानेकी हालत।

इष्टदेव (सं॰ पु॰) इष्टदेवता देखो।

इष्टदेवता (सं॰ स्त्री॰) उपास्यदेवता, जो देव बरा-बर पूजा जाता हो।

इष्टप्रयोग (सं॰ पु॰) शिष्टप्रयोग, महत्का वाक्य।

इष्टमूलांशजाति (सं॰ पु॰) लीलावती-कथित मूलांश जाति विशेष। मूलांशजाति देखो।

इष्टयजुः (वै॰ त्रि॰) जिसके लिये याज्ञिक गीत निकले।

इष्टयामन् (वै॰ त्रि॰) इच्छानुकूल गमनशील, मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलनेवाला।

इष्टरश्मि (वै॰ त्रि॰) ईप्सित प्रग्रहसे सम्पन्न, जो पसन्दीदा लगाम रखता हो।

इष्टवत् (सं॰ त्रि॰) यज वा इष-क्त-वतु। १ यज्ञ-कारी। २ इच्छाविशिष्ट, ख़्वाहिशमन्द। ३ इष्टकर्म-कारी, वेदादिका अध्ययन करनेवाला।

इष्टव्रत (सं० त्रि०) अपनी इच्छाका आज्ञाकारी, जो अपनी मर्जीके मुताबिक चलता हो।

इष्टागमन (सं० क्ली०) अभीष्टसिद्धि, मुरादका बर आना।

इष्टा (सं० स्त्री०) यज कर्मणि क्त टाप्। शमीवृक्ष, होममें लगनेसे समिधका नाम यह पड़ा है।

इष्टादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। इस गणमें इष्ट, पूर्त, उपसादित, निगदित, परिगदित, परिवादित, निकथित, निषादित, निपठित, सङ्कलित, परिकलित, संरक्षित, परिरक्षित, अर्चित, गणित, अवकीर्ण, आयुक्त, गृहीत, आम्नात, श्रुत, अधीत, अवधान, आसेवित, अवधारित, अवकल्पित, निराकृत, उपकृत, उपाकृत, अनुयुक्त, अनुगणित, अनुपठित और व्याकुलित शब्द पड़ता है।

इष्टापत्ति (सं० स्त्री०) अभिलषित-प्राप्ति, इष्टसिद्धि, लाभ, फायदा।

इष्टापूर्त (सं० क्ली०) समाहारद्वन्द्वः पूर्वपददीर्घश्च। १ अग्निहोत्रादि यज्ञ। २ साधारणके उपकारको यज्ञ एवं कूपखननादि कर्म। तालाब, कूआं, बावली आदि बनाने और उपवन लगानेका पुण्य पूर्त कहाता है। एकाग्नि कर्म होमादि त्रेताग्निमें जो जाता और वेदीके मध्य दिया जाता, वह इष्ट कहाता है। उपरोक्त दोनोंका नाम इष्टापूर्त है।

इष्टार्थ (सं० पु०) ईप्सित अथवा प्रियवस्तु, मनभाव चीज।

इष्टार्थोद्युक्त (सं० त्रि०) उत्साहयुक्त, अभीष्टप्राप्तिके लिये उत्साहित, मनभायी चीजके लिये जी-जानसे कोशिश करनेवाला।

इष्टालाप (सं० पु०) सदालाप, परस्पर सद्भाषण, मेलकी बातचीत।

इष्टाश्व (वै० त्रि०) अभिलषित अश्व रखनेवाला, जो बहुत अच्छे घोड़े रखता हो।

इष्टि (सं० स्त्री०) यज वा इष-क्तिन्। १ यज्ञ। २ इच्छा, मर्जी। ३ अभिप्राय, ख्वाहिश। ४ शीघ्र-संग्रह। ५ दानसंग्रह। ६ निमन्त्रण, बुलावा। ७ अन्वेषण, तलाश। ८ अभिलषित वस्तु, ख्वाहिशकी चीज। (पु०) ९ यथाद्युम्न, इक्ष्वाकुसुत।

"[illegible]" (मनु)

इष्टिका (सं० स्त्री) इष्टका, ईंट।

"[illegible]" (सुश्रुत)

इष्टिकापथिक, इष्टकापथ देखो।

इष्टिकृत् (सं० त्रि०) इष्टि-कृ-क्विप्-तुक्। यज्ञकारी, यज्ञ करनेवाला।

इष्टिन् (सं० त्रि०) इष्टमनेन, इष्ट-इनि। इष्टादिभ्यश्च। पा ५।२।८८। यज्ञकारी, जो यज्ञ कर चुका हो।

इष्टिपच (सं० पु०) इष्टये पचति, इष्टि-पच्-अच्। १ कृपण, कंजूस। २ असुर, दानव। असुर अपने ही लिये पाक बनाता है, यज्ञके लिये नहीं; इसीसे उसका नाम इष्टिपच पड़ा है।

इष्टिमुष् (सं० पु०) इष्टिं मुष्णाति, इष्टि-मुष-क्विप्। दैत्य, राक्षस।

इष्टीकृत (सं० क्ली०) नेष्टमिष्टं कृतम् इष्ट-कृ-च्विः। अभूततद्भावे कृभ्वस्तियोगे च्विः। पा ५।४।५०। १ न चाहे जानेवाले वस्तुकी इच्छाका करना। २ यज्ञविशेष।

इष्टु (सं० स्त्री०) इष-तुन्। इच्छा, मर्जी।

इष्ट्ययन (सं० क्ली०) इष्टिभिरयनं गमनं यत्र, बहुव्री०। यागविशेषका अनुष्ठान, सांवत्सरिक यागादि। अग्निदैवत्य प्रभृति अनेक प्रकार इसका भेद होता है।

इष्म (सं० पु०) इष-मक्। इषियुधीन्धिदसिश्याधूसूभ्यो मक्। उण् १।१४५। १ कामदेव। २ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ गमन, रवानगी।

इष्य (सं० पु०) इष कर्मणि यत्। वसन्तकाल, मौसम-बहार।

इष्व (सं० पु०) इष-वन्। [illegible] उण् १।१५२। आचार्य, मुर्शिद।

इष्वग्र (सं० क्ली०) वाणका अग्रभाग, तीरकी नोक।

इष्वग्रीय (सं० त्रि०) वाणके अग्रभागमें उत्पन्न होनेवाला, जो तीरकी नोकसे निकला हो।

इष्वनीक (सं० क्ली०) वाणका अवयव, तीरकी अणी।

इष्वसन (सं० क्ली०) इषु-अस करणे ल्युट्। धनुः कमान्।

इष्वस्त्र (सं॰ क्ली॰) इषुरेवास्त्रम्। वाणास्त्र, तीर हथियार। "इष्वस्त्रे व्यंहो बभूव।" (रामायण)

इष्वास (सं॰ त्रि॰) इषवोऽस्यन्ते अनेन, इषु-अस करणे घञ् कर्तरि अण् वा। १ वाणक्षेपक, तीरन्दाज़। (क्ली॰) २ चाप, कमान्।

इस् (सं॰ अव्य॰) १ कोप! गुस्सा! मारो! पकड़ो! २ सन्ताप! जलन! ३ दुःख! अफसोस! हाय! ४ भावना! खयाल! देखो!

इस (हिं॰ सर्व॰) 'यह' शब्दका रूप विशेष। विभक्ति जुड़ते समय 'यह' शब्द बदल कर 'इस' हो जाता है। जैसे—इसने, इसको, इससे, इसके लिये, इसमें, इसका, इसपर।

इसकन्दर—सिकन्दर बादशाह। अलेक्षन्दर देखो।

इसपञ्ज (अं॰ पु॰=Sponge) इसफञ्ज, मुर्दा-बादल। यह समुद्रमें रहनेवाला एक प्रकारका जीव है। यूनानी शूरवीर इसे अपनी टोपीपर लगाते थे। कोई इसपञ्ज बहुत छोटा और कोई बड़ा होता है। इसके भीतर चक्कर और ऊपर छेद रहते हैं। इन्हीं छेदोंसे जल और वायु इसपञ्जके भीतर पहुंचता और बाहर निकलता है। यह बहुत कोमल और प्रायः तीन प्रकारका है। इसपञ्ज भूमध्यसागर, फ़्लोरिडा-सागरतट और बहामा द्वीपसे आता है। स्नानका इसपञ्ज उथले जलमें उपजता है। लोग गोता या कांटा लगा इसे समुद्रसे निकालते हैं।

इसपञ्जका रेशा पानीसे अलग होते ही छूट जाता है। फिर इसे धो कूटकर साफ़ करते और डोरीमें लटका सुखा लेते हैं। इसपञ्जका भार बढ़ानेके लिये नमक, गुड़, शीशा, कङ्कड़, बालू और पत्थर भर देते हैं। यह बहुत जल्द बढ़ा करता है।

इसपात (हिं॰ पु॰) अयसत्व, फौलाद, कड़ा लोहा। आजकल कितने ही बड़े-बड़े मकान् इससे बनाये जाते हैं। वह बहुत मज़बूत होते और आग लगनेसे भी खड़े रहते हैं। लौह देखो।

इसपार (हिं॰ क्रि॰ वि॰) इस ओर, इस तर्फ़।

इसपिरिट (अं॰=Spirit) १ प्राण, जान्। २ आत्मा, रूह। ३ चित्त, तबीयत। ४ उत्साह, हौसला। ५ भावार्थ, मतलब। ६ सार, निचोड़। ७ प्रकृति, क़ुदरत। ८ भूत, शैतान्। ९ रस, अर्क़। १० सुरा, शराब। चीन और भारतवर्षमें इसपिरिट बहुत प्राचीन समयसे बनते आयी है। यह विशुद्ध सुरा होती, जो आग लगते ही भड़क उठती है। मद्य, सुरा और सुरासार देखो।

इसपेशल (अं॰=Special) १ असामान्य, ग़ैर-मामूली। (स्त्री॰) २ असामान्य रेलगाड़ी, ग़ैर-मामूली ट्रेन। यह किसी समय विशेष या व्यक्ति विशेषके लिये छूटती है। प्रायः बड़ेलाट, छोटेलाट और राजा-महाराज इसपेशल पर ही आते-जाते हैं। कहीं बड़ा मेला लगनेसे रेलवे-कर्मचारी इसे समय-समयपर छोड़ा करते हैं।

इसबगोल (फ़ा॰ पु॰) एक प्रकारका वृक्ष, कोई दरख़्त (Plantago ovata) यह पौदा पञ्जाबमें सतलजसे पश्चिम सिन्धतक उत्पन्न होता है। प्रथमतः ईरानसे इसे लोग भारतवर्ष लाये थे। बीज ही व्यवहारमें आता, जो तिल-जैसा, भूरा और गुलाबी होता है। इसबगोल शीतल एवं कोमल है। यह प्रदाह तथा पित्तको बढ़ाता और पाकयन्त्रीय रोगमें विशेष उपकार देखाता है। बीजको तिलके साथ कूट-पीस और तेल मिला पुलटिस चढ़ानेसे ग्रन्थिवातका स्फीत स्थान अच्छा हो जाता है। पुरातन उदरामयपर इसबगोल बहुत हितकर है। इसका क्वाथ कासरोग पर चलता है। ईरानसे कितना ही बीज बम्बई शहर आता है। यूनानी हकीम इसे बहुत व्यवहार करते हैं। यह चिपचिपा, शीतल एवं सङ्कोचक होता और मूत्रकृच्छ्र, मूत्ररोध, मूत्राघात, आमरक्त, रक्तातिसार, उन्माद, दाह प्रलाप, तथा मादकताको खोता है।

इसबन्द (फ़ा॰ पु॰) कालादाना, राई।

इसमाईल—१ प्रथम इब्राहीमके पुत्र। २ एक मुसलिम योगी। बाज़ीगर खेल देखाते समय इसमाईलका नाम ले लेते हैं। ३ ईरानके एक सम्राट्। इनके पूर्वज साधु समझे जाते थे। यह १४८० ई॰को उपजे और १५२४ ई॰को मर गये।

इष्टव्रत (सं० त्रि०) अपनी इच्छाका आज्ञाकारी, जो अपनी मर्ज़ीके मुवाफ़िक़ चलता हो।

इष्टसाधन (सं० क्ली०) अभीष्टसिद्धि, मुरादका बर आना।

इष्टा (सं० स्त्री०) यज करणे क्त टाप्। शमीवृक्ष, होममें लगनेसे समिधका नाम यह पड़ा है।

इष्टादि (सं० पु०) पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष। इस गणमें इष्ट, पूर्त, उपसादित, निगदित, परिगदित, परिवादित, निकथित, निषादित, निपठित, सङ्कलित, परिकलित, संरचित, परिरचित, अर्चित, गणित, अवकीर्ण, आयुक्त, गृहीत, आम्नात, श्रुत, अधीत, अवधान, आसेवित, अवधारित, अवकल्पित, निराकृत, उपकृत, उपाकृत, अनुयुक्त, अनुगणित, अनुपठित और व्याकुलित शब्द पड़ता है।

इष्टापत्ति (सं० स्त्री०) अभिलषित-प्राप्ति, इष्टसिद्धि, लाभ, फ़ायदा।

इष्टापूर्त (सं० क्ली०) समाहारद्वन्द्वः पूर्वपददीर्घश्च। १ अग्निहोत्रादि यज्ञ। २ साधारणके उपकारको यज्ञ एवं कूपखननादि कर्म। तालाब, कूयां, बावड़ी आदि बनाने और उपवन लगानेको पण्डित पूर्त कहते हैं। एकाग्नि कर्म होमादि त्रेतामें जो डाला और वेदीके मध्य दिया जाता, वह इष्ट कहाता है। उपरोक्त दोनोंका नाम इष्टापूर्त है।

इष्टार्थ (सं० पु०) ईप्सित अथवा प्रियवस्तु, मनभाव चीज़।

इष्टार्थोद्युक्त (सं० त्रि०) उत्साहयुक्त, अभीष्टवस्तुके लिये त्वरायित, मनभायू चीज़के लिये जी-जान्से कोशिश करनेवाला।

इष्टालाप (सं० पु०) सदालाप, परस्पर भद्रालाप, मेलकी बातचीत।

इष्टाश्व (सं० त्रि०) अभिलषित अश्व रखनेवाला, जो बहुत अच्छे घोड़े रखता हो।

इष्टि (सं० स्त्री०) यज वा इष-क्तिन्। १ यज्ञ। २ इच्छा, मर्ज़ी। ३ अभिलाष, ख़ाहिश। ४ श्लोक-संग्रह। ५ दानसंग्रह। ६ निमन्त्रण, बुलावा। ७ अन्वेषण, तलाश। ८ अभिलषित वस्तु, ख़ाहिशकी चीज़। (पु०) ९ पश्चाद्गमन, हिफ़ाज़त।

"इष्टीः पार्वायणान्तीयाः केवला निर्वपेत् सदा।" (मनु)

इष्टिका (सं० स्त्री) इष्टका, ईंट।

"छदयं चास्तिष्टकया वासुकीउविनाशनम्।" (सुश्रुत)

इष्टिकापथिक, इष्टकापथ देखो।

इष्टिकृत् (सं० त्रि०) इष्टि-कृ-क्विप्-तुक्। यज्ञकारी, यज्ञ करनेवाला।

इष्टिन् (सं० त्रि०) इष्टमनेन, इष्ट-इनि। इष्टादिभ्यश्च। पा ५।२।८८। यज्ञकारी, जो यज्ञ कर चुका हो।

इष्टिपच (सं० पु०) इष्टये पचति, इष्टि-पच्-अच्। १ कृपण, कञ्जूस। २ असुर, दानव। असुर अपने ही लिये पाक बनाता है, यज्ञके लिये नहीं; इसीसे उसका नाम इष्टिपच पड़ा है।

इष्टिमुष् (सं० पु०) इष्टिं मुष्णाति, इष्टि-मुष-क्विप्। दैत्य, राक्षस।

इष्टीकृत (सं० क्ली०) नेष्टमिष्टं कृतम् इष्ट-कृ-च्वि। कृभ्वस्तियोगे सम्पद्यकर्तरि च्विः। पा ५।४।५०। १ न चाहे जाने-वाले वस्तुकी इच्छाका करना। २ यज्ञविशेष।

इष्टु (सं० स्त्री०) इष-तुन्। इच्छा, मर्ज़ी।

इष्ट्ययन (सं० क्ली०) इष्टिभिरयनं गमनं यत्र, बहुव्री०। यागविशेषका अनुष्ठान, सांवत्सरिक श्राद्धादि। अग्निदैवत्य प्रभृति अनेक प्रकार इसका भेद होता है।

इष्म (सं० पु०) इष-मक्। इषियुधीन्धिदसिश्याधूसूभ्यो मक्। उण् १।१४४। १ कामदेव। २ वसन्तकाल, मौसम-बहार। ३ गमन, रवानगी।

इष्य (सं० पु०) इष करणे क्यप्। वसन्तकाल, मौसम-बहार।

इष्व (सं० पु०) इष-वन्। सर्वनिघृष्व्रिष्व...। उण् १।१५३। आचार्य, मुर्शद।

इष्वग्र (सं० क्ली०) बाणका अग्रभाग, तीरकी नोक।

इष्वग्रीय (सं० त्रि०) बाणके अग्रभागमें उत्पन्न होनेवाला, जो तीरकी नोकसे निकला हो।

इष्वनीक (सं० क्ली०) बाणका अवयव, तीरका अनी।

इष्वसन (सं० क्ली०) इषु-अस करणे ल्युट्। धनुः, कमान्।

इष्वस्त्र (सं॰ क्लौ॰) इषुरेवास्त्रम्। बाणास्त्र, तीर हथियार। "इष्वस्त्रे क्वेश्हो बभूव।" (रामायण)

इष्वास (सं॰ त्रि॰) इषवोऽस्यन्ते अनेन, इषु-अस करणे घञ् कर्तरि अण् वा। १ बाणक्षेपक, तीरन्दाज। (क्लौ॰) २ चाप, कमान्।

इस् (सं॰ अव्य॰) १ कोप। गुस्सा। मारो। पकड़ो। २ सन्ताप। जलन। ३ दुःख। अफसोस। हाय। ४ भावना। खयाल। देखो।

इस (हिं॰ सर्व॰) 'यह' शब्दका रूप विशेष। विभक्ति जुड़ते समय 'यह' शब्द बदल कर 'इस' हो जाता है। जैसे—इसने, इसको, इससे, इसके लिये, इसमें, इसका, इसपर।

इसकन्दर—सिकन्दर बादशाह। अलेकसन्दर देखो।

इसपञ्ज (अं॰ पु॰=Sponge) इसफञ्ज, सुवा-बादल। यह समुद्रमें रहनेवाला एक प्रकारका जीव है। यूनानी शूरवीर इसे अपनी टोपीपर लगाते थे। कोई इसपञ्ज बहुत छोटा और कोई बड़ा होता है। इसके भीतर चक्कर और ऊपर छेद रहते हैं। इन्हीं छेदोंसे जल और वायु इसपञ्जके भीतर पहुंचता और बाहर निकलता है। यह बहुत कोमल और प्रायः तीन प्रकारका है। इसपञ्ज भूमध्यसागर, फ्लोरिडा-सागरतट और बहामा द्वीपसे आता है। स्नानका इसपञ्ज उथले जलमें उपजता है। लोग गोता या कांटा लगा इसे समुद्रसे निकालते हैं।

इसपञ्जका रेशा पानीसे अलग होते ही कूट जाता है। फिर इसे धो सूटकर साफ करते और डोरीमें लटका सुखा लेते हैं। इसपञ्जका भार बढ़ानेके लिये नमक, गुड़, शोरा, कङ्कड़, बालू और पत्थर भर देते हैं। यह बहुत जल्द बढ़ा करता है।

इसपात (हिं॰ पु॰) अयस्सत्र, फौलाद, कड़ा लोहा। आजकल कितने ही बड़े-बड़े मकान् इससे बनाये जाते हैं। वह बहुत मज़बूत होते और आग लगनेसे भी खड़े रहते हैं। लौह देखो।

इसपार (हिं॰ क्रि॰ वि॰) इस ओर, इस तर्फ।

इसपिरिट (अं॰=Spirit) १ प्राण, जान्। २ आत्मा, रूह। ३ चित्त, तबीयत। ४ उत्साह, हौसला। ५ भावार्थ, मतलब। ६ सार, निचोड़। ७ प्रकृति, कुदरत। ८ भूत, शैतान्। ९ रस, अर्क। १० सुरा, शराब। चीन और भारतवर्षमें इसपिरिट बहुत प्राचीन समयसे बनते आयी है। यह विशुद्ध सुरा होती, जो आग लगते ही भड़क उठती है। मद्य, सुरा और सुरासार देखो।

इसपेशल (अं॰=Special) १ असामान्य, ग़ैर-मामूली। (स्त्री॰) २ असामान्य रेलगाड़ी, ग़ैर-मामूली ट्रेन। यह किसी समय विशेष वा व्यक्ति विशेषके लिये छूटती है। प्रायः बड़ेलाट, छोटेलाट और राजा-महाराज इसपेशल पर ही आते-जाते हैं। कहीं बड़ा मेला लगनेसे रेलवे-कर्मचारी इसे समय-समयपर छोड़ा करते हैं।

इसबगोल (फ़ा॰ पु॰) एक प्रकारका वृक्ष, कोई दरख़्त (Plantago ovata) यह पौदा पञ्जाबमें सतलजसे पश्चिम सिन्धतक उत्पन्न होता है। प्रथमतः ईरानसे इसे लोग भारतवर्ष लाये थे। बीज ही व्यवहारमें आता, जो तिल-जैसा, भूरा और गुलाबी होता है। इसबगोल शीतल एवं कोमल है। यह प्रदाह तथा पित्तको बढ़ाता और पाकयन्त्रीय रोगमें विशेष उपकार देखाता है। बीजको तिलके साथ कूट-पीस और तेल मिला पुलटिस चढ़ानेसे ग्रन्थिवातका स्फीत स्थान अच्छा हो जाता है। पुरातन उदरामयपर इसबगोल बहुत हितकर है। इसका क्वाथ कासरोग पर चलता है। ईरानसे कितना ही बीज बम्बई शहर आता है। यूनानी हकीम इसे बहुत व्यवहार करते हैं। यह चिपचिपा, शीतल एवं सङ्कोचक होता और मूत्रकृच्छ्र, मूत्ररोध, मूत्राघात, आमरक्त, रक्तातिसार, उन्माद, दाह प्रलाप, तथा मादकताको खोता है।

इसबन्द (फ़ा॰ पु॰) कालादाना, राई।

इसमाईल—१ प्रथम इब्राहीमके पुत्र। २ एक मुसलिम योगी। बाजीगर खेल देखाते समय इसमाईलका नाम ले लेते हैं। ३ ईरानके एक सम्राट्। इनके पूर्वज साधु समझे जाते थे। यह १४८७ ई॰को उपजे और १५२४ ई॰को मर गये।

इसमाईल-श्रादिलशाह—दक्षिणविजयपुरके एक नवाब। यह युसफ-श्रादिलशाहके लड़के थे। १५१० ई०में इन्हें राजसिंहासन मिला था। पचीस वर्षतक शान्ति पूर्वक शासनकर १५३४ ई०को २० वीं अगस्तको इनकी मृत्यु हुई।

इसमाईल निज़ामशाह—बुरहान शाहके लड़के। इनके पिता अपने भाई मुर्तजा निज़ाम शाहसे लड़ अकबरके पास भाग कर आ रहे थे। उसी समय ये और इनके बड़े भाई इब्राहीम लोहागढ़के किलेमें कैद किये गये। १५८८ ई०के मार्च मासमें मीरान् हुसेन शाहके मरनेपर जमाल-ख़ान्ने इन्हें अहमदनगरका राजसिंहासन सौंपा था। अकबरसे साहाय्य पा इनके पिता इनसे लड़ने आये, किन्तु हार गये। दूसरी बार उन्होंने राजमन्त्री जमालखान्का वध किया था। बुरहान् निज़ाम शाहने अन्तको इन्हें बन्दी बना राज्य अपने हाथमें ले लिया। इन्होंने प्रायः दो वर्ष शासन चलाया था।

इसर—विहारस्थ दोसाद और बांसफोड़ डोमोंकी एक शाखा।

इसरार (अ० पु०) १ गोपनकार्य, छिपाव। २ भेद। ३ प्रेतबाधा, प्रेतानका साया। ४ वादित्र विशेष, एक बाजा। यह सितार-जैसा रहता और गजसे बजता है।

इस्राएल—उत्तर पालेस्तिन वा सामारियावासी प्राचीन जाति। खृष्टधर्म-प्रचारक ईसा इसी जातिमें आविर्भूत हुए थे। ईसा और यहदी देखो।

इसलाम (अ० पु०) मुहम्मद द्वारा प्रवर्तित धर्म, मुसलमानोंका शास्त्रमार्गावलम्बन।

मुसलमान और इसलाम ये दोनों शब्द अरबी भाषाके 'सलम्' धातुसे बने हैं। इसका अर्थ "विपत्तिरहित मुक्तिसुखको देना" है। जिस धर्मके धारण करनेसे संसारयात्रा निर्विघ्नरीतिसे परिसमाप्त हो जाय और अन्तमें निर्बाध सुख प्राप्त हो सके, उस धर्मको मुहम्मदने इसलामधर्म कहकर प्रसिद्ध किया। सलाम, तसलीम, सलामत, और मुसल्लीम आदि शब्द उपयुक्त धातुके ही भिन्न भिन्न प्रत्ययोंसे बने हैं। मुसल्लिम और ईमान् शब्दके योगसे मुसलमान् शब्द बनता है। भारतमें जो मुसलमान् पाये जाते, वे दो तरहके हैं। एक तो मुसल्लीम अर्थात् आदि मुसलमान् और दूसरे नवमुसलीम (नवमुस्ल) अर्थात् अपने अपने पूर्व धर्मोको छोड़कर इसलामधर्म धारण किये हुये मुसलमान्। ये लोग अपनेको महम्मदी वा मोमिन् भी कहते हैं। ये लोग जिस धर्मका आचरण करते हैं, वह 'दीन-इसलाम' नामसे प्रसिद्ध है।

इस धर्मके प्रवर्त्तक मुहम्मदने ५८३ खृष्टाब्दमें अरब देशके मक्का नगरमें जन्मग्रहण किया था। उन्होंने अपने बाल्यकालमें उपयुक्त शिक्षा पाई। जिस समय उनका जन्म हुआ, उस समय अरब देशमें सेविय, मगो और खृष्टानादि मतोंका प्राबल्य था। भिन्न भिन्न मतोंके अभ्युदयसे देशमें विशृङ्खलताके सूत्रपात और धर्मविप्लवकी आशङ्का कर उन्होंने दुःखोंसे निर्मुक्त करनेके लिये एक नवीन धर्मका आविष्कार करना उपयुक्त समझा। जिस समय उनकी उम्र ४० वर्षके क़रीब हुई, उस समय उन्होंने अपने नवीन आविष्कृत मतके विचार सर्वसाधारणमें प्रकट किये और अपनेको ईश्वरका प्रेरित पैगम्बर बताया।

मक्कावासी लोगोंने और उनमें भी विशेषतः कोराइस् जातिने मुहम्मदके इस नव्य मतको पुरातन प्रथाका विरोधी समझा और उनके विरुद्ध खड़े हो मार डालनेतकका यत्न प्रारम्भ कर दिया। मुहम्मदने जब अपने विरुद्ध यह सब चरित्र देखा और अपने बलको पुरातन प्रथावलम्बियोंसे हीन समझा, तो वह मक्का छोड़ देनेके लिये लाचार हुये। मक्का छोड़ देनेके बाद १५ दिन तक बराबर चलकर वह 'यात्रेब' नगरमें पहुंचे और वही नगर फिर 'मदीना' नामसे लोकमें प्रसिद्ध हुआ।

६२२ ई०की १६वीं जुलाईके दिन मुहम्मद मक्का छोड़ 'मदीनात्-अल्-नबी'में पहुंचे थे। फिर इसी दिनसे इसलाम धर्मकी अभिव्यक्ति प्रतिष्ठित हुई। इसलिये खलीफ़ा और उमर लोग उसी दिनको मुसलमानोंका अभ्युदय दिन समझ कर तबसे ही हिजरी अब्दकी गणना करते हैं। फिर उसके अनुसार

ही तबसे आजतक मुसलमानोंका चान्द्रवत्सर गणित होता आता है।

मदीनामें आकर मुहम्मद अपनी शिष्यमण्डलीके उपदेष्टा, पुरोहित, दलपति वा राजा नियुक्त हुये। इस जगह उन्होंने अपने सदस्यों और मित्रोंकी सहायतासे जिसप्रकार इसलामधर्मकी पुष्टि और उन्नति की, उसे यथास्थान हमने लिखा है। मुहम्मद देखो।

६३२ ई०में अरब देशके मुक्तिपथप्रदर्शक महात्मा मुहम्मदने अपना चौसठ वर्षका आयु समाप्त और संसारमें शान्तिधर्म स्थापितकर ऐहिक लीला संवरण की। जब उनका तिरोधानसमय निकट आया, तब वह अपनी प्रियपत्नी आयेसाके बाहुभागमें शिर रखकर आकाशकी तरफ शान्तिपूर्णहृदयसे देखने लगे और अस्फुट स्वरमें "स्वर्गके सर्वश्रेष्ठ सङ्गी"को उद्देशकर अपने प्राणोंका अभाव बतलाते हुये इस लोकको छोड़ चल बसे। इस घटनासे ऐसा स्पष्ट मालूम होता है कि मुहम्मद अपने अन्तसमयमें स्वर्गप्राप्तिकी प्रत्याशासे प्रफुल्लित हो गये थे।

मुहम्मद जिस दिन मक्काको छोड़ मदीना आये थे अर्थात् जिस दिन हिजरी संवत्की प्रतिष्ठा हुई थी, उस दिनसे लेकर मुहम्मदकी मृत्युपर्यन्त अर्थात् हिजरी संवत्के १० वर्ष भीतर भीतर मुसलमानधर्म और मुसलमान जाति एसियाप्रदेशमें इस रूपसे दृढ़ संघटित हो गई, कि उसे वहांके राजधर्म, जातिविप्लव आदि कोई भी विघ्न कम्पित न कर सके। इस समय भी यह मुहम्मदप्रचारित इसलामधर्म चौदह करोड़ मनुष्योंके हृदयमें अपने शक्तिमय अनुशासनके प्रभावसे अप्रतिहत रूपमें अवस्थिति कर रहा है।

जब मुहम्मद मदीनामें आ गये, तब उनके अनुचर लोग वहां ही जाकर रहने लगे और उन सबके मध्यमें मुहम्मदी सम्प्रदायका प्रथम मुसलमानतनय जाबिरका पुत्र अबदुल्ला हुआ। फिर उसके बाद क्रम क्रमसे मुसलमानजाति मुहम्मदकी शक्तिके प्रभावसे तलवार और कुरानको हाथमें लेकर 'दीन, दीन' शब्द बोलते यूरोपके समस्त दक्षिण भागमें विस्तृत हो गई।

इतिहास-पाठक प्रायः सबलोग ही इस बातसे सुपरिचित हैं कि मुहम्मदी इसलामधर्मकी उत्पत्तिसे पहिले अरबमें सूर्योपासक मगी, पौत्तलिक और खृष्टान सम्प्रदायका प्रादुर्भाव था। भिन्न भिन्न सम्प्रदायावलम्बी जब एकत्र होते हैं, तब प्रायः वैरका अङ्कुर फूट निकलता है। इसी नियमके अनुसार जब अरबमें दो भिन्न भिन्न सम्प्रदायोंका सङ्गम हुआ, तब वहां भी सूर्योपासक मगोंके साथ बैजयन्ती (Byzantine) साम्राज्यकी आभ्यन्तरमें तत्परता होनेसे विरोध खड़ा हो गया। परस्परमें झगड़ा होनेसे दोनों पक्षोंका बल घटता है, इसलिये करकी अधिकता और मनुष्योंकी न्यूनतासे पारससाम्राज्य धीरे धीरे हीनशक्ति होने लगा। पारस्य देखो।

सुप्राचीन जरथुस्त्र (Zoroaster)के मतानुयायी पारसिक लोग परस्परमें एकता न रखनेके कारण नवोत्थित महम्मदी सम्प्रदायकी शक्तिके सामने अपने धर्मकी यथावत् रक्षा न कर सके। इसलिये अचिरोत्थित अरब जातिके राज्यभयके साथ ही पासके दो हीनशक्ति साम्राज्य मुसलमानोंके हाथ लग गये। अब तो महम्मदी सम्प्रदायका विस्तार अनिवार्य हो गया और अपनी तलवारकी सहायतासे अपने मतका प्रचार करने लगा। जो मनुष्य उसके कथनानुसार इसलामधर्मको न स्वीकार करता वह उसे अपनी तलवारकी धनी धारसे, उड़ा दिया करता था फिर जो भयभीत हो उसका अनुयायी हो जाता था, उसे ससम्मान अपनेमें परिगणित करता था। परन्तु ऐसे समयमें भी बहुतसे यहूदी और खृष्टान अपने सम्मानकी कुछ भी परवा न कर अधिक करप्रदान कर किसी तरह अपनी रक्षाकर बच गये।

जिस समय यह समस्त परिवर्त्तित चरित्र अरब देशमें हुआ, उस समय वहां मुसलमान जातिके अधिनायक, साम्राज्यके अधीश्वर एवं इसलामधर्मप्रवर्त्तक मुहम्मद ही थे। उनकी मृत्युके बाद खलीफा लोगोंने मुसलमान समाजका नेतृत्व ग्रहण किया। उनकी राजशक्ति धर्मप्रणोदित होनेका कारण जातीय-एकता द्वारा शासन करनेसे अनुपरीत्या देशदेशान्तरोंमें विस्तृत हो गई।

खलीफा वंशके प्रथम शताब्दका इतिहास पढ़नेसे यह बात जानी जाती है, कि मुसलमान सम्प्रदायने शृङ्खलाबद्ध विजयाभिमान द्वारा अपने साम्राज्यको समृद्धिरूपी भूषणसे अलङ्कृत किया था। अबूबकरके राजत्वकालमें वीरवर खालिदने समग्र सिरिया और मिसोपोटमिया राज्यको तथा उमरके प्रधान सेनापति अमरुबिन्-लेसने समग्र मिस्र राज्यको अरब साम्राज्यके अधीन कर दिया था। इसके बाद उन्होंने १४ महीने तक अवरुद्ध होकर अलेकजेन्द्रिया और मेंफिसका जय तथा फोस्तात् (प्राचीन कायारो) नगरका स्थापन किया था।

मिस्रराज्य विजय करनेके बाद ही मुसलमान-सेनादलने भूमध्यसागरके तीर साइरेणिका प्रभृति क्षुद्र क्षुद्र राज्य अपने वश कर लिये। इसी समय अफ्रीकाके हबशी लोगोंके साथ अरब देशीय मरुपुत्र लोगोंकी मित्रता स्थापित हुई और इससे मुसलमान सम्प्रदायकी शक्ति और भी दृढ़ हो गई।

सैयद बिन आबि बख्शने ६१५ ई०के समय कादिसियाके युद्धमें। ६३० ई०के समय जलूला रणक्षेत्रमें, और ६४२ ई०के समय हालेवन और नेहवन्दके रणप्राङ्गणमें एकके बाद एक पारसिक सेनाको परास्त किया और पारस्य सिंहासनपर मुसलमान अधीश्वर की स्थापना की। उस्मानके राजत्वकालमें ६४२ ई०की समय साइप्रासद्वीप लुण्ठित हुआ था। इसके बाद अबदुल्ला बिन-उमर खुरासानने अपने अधिकार की विस्तृति वाल्हिकराज्य पर्यन्त कर मुसलमान साम्राज्य का पत्तन किया।

अली-बिन-आबी-तालेबरके राज्यकालमें गृहविवाद होनेसे राष्ट्रविप्लव खड़ा हो गया। उन्होंने उस विप्लवके शान्त होनेकी चेष्टा की, तो भी वे अबदुर-रहमान बिन मुलजिम नामक प्रबल विद्रोहीके हाथ मार डाले गये। बस! इन्होंके राजत्वकी समाप्ति होते ही महम्मदी खलीफा-वंशके शासन की भी समाप्ति हो गई। फिर इनका सिंहासन उमैयदगणने सुशोभित किया।

इसी उमैयद वंशके प्रथम खलीफा मुआवियाने यूफेटिस तीरवर्ती किडेयग नगरीसे उठाकर दमास्कास नगरीमें अपनी राजधानी स्थापित की। उसके राजत्वकालमें मुसलमान-सेनापति उकबा-बिन-नफीरके उद्योगसे ६७५ ई०में कैरवान नगरकी स्थापना हुई। इसके बाद उकबा ताञ्जियारसे लेकर अतलान्तिक महासागरके तीर पर्यन्त मुसलमान साम्राज्यकी प्रभुता फैल गई। यहांसे जब इन्होंने समुद्रपारकर स्पेन राज्यमें जानेका उद्योग किया, तब इनकी यहीं मृत्यु हो गई। इसलिये किसी प्रधानके न होनेसे मुसलमानोंकी शक्ति छिन्न भिन्न हो गई और सुदूर अफ्रीकाके पश्चिम भूभागमें मुसलमानों द्वारा विध्वस्त समस्त राज्य फिर स्वतन्त्र हो गये।

इसके बाद फिर ६८८ ई०में जिब्राल्तार-प्रणाली पर्यन्त समग्र उत्तर अफ्रीका अरबजातिके हस्तगत हो गया। खलीफा प्रथम वालिदके राज्यकालमें (७०५—७१५ ई०) अरबके साम्राज्यकी खूब ही विस्तृति हुई। इसी समय स्पेनराज रेडाविक-किउटारने शासनकर्ता जुलियानासकी कन्याको विशेषरूपसे लाञ्छित और अपमानित किया, इसलिये जुलियानास उनसे विरुद्ध हो गया। उसने अफ्रीकाके तात्कालिक प्रतिनिधि मूसाबिन नोशेरको स्पेनराजके विरुद्ध उभाड दिया। तदनुसार अरब-सेनापति तारीख बिन-जियाद समुद्रको पारकर स्पेनराज्यमें पदार्पण किया, उनके नामानुसार तबसे उस स्थानका नाम 'जेबेल तारीख' (तारीख पर्यन्त) पड़ा। एवं क्रमसे अपभ्रंश होते होते ही वह अब जिब्रालतार (Gibraltar) अन्तरीप कहलाने लगा है।

तारीख-बिन-जियादने स्पेनराज्यमें पहुंच कर ७११ ई०की १८ वीं जुलाइको जेरेज डिला फ्रोण्टेरके युद्धमें स्पेनराज रेडाविकको पराजित किया और स्वयं वहांके राजा बने। इसके थोड़े ही दिन बाद आन्दालसिया, आगाडा और मार्सिया प्रभृति स्थानोंमें भी उन्होंने मुसलमान शक्तिका प्रभाव विस्तृत कर दिया। इस तरफ पूर्वाञ्चलमें खुरासानपति कोतिवा बिन्-मुसलिम नवराल-नहरने बोखारा तुर्कस्थान और खारिजम् राज्यपर अपना अधिकार कर लिया एवं

वहां मुसलमान साम्राज्यकी परिवृद्धि की।' इसके ही राजत्वकालमें मुहम्मद बिन्-कासिमने ७१२ ई०में सिन्धुप्रदेशपर आक्रमण किया। इसके बाद गुर्जर जयकर चित्तौर पर धावा मारा, किन्तु उसमें बप्प-रावसे उन्हें पराजित होना पड़ा।

७१४ ई०में मुसलमान साम्राज्यके कलेवरकी जिस प्रकार वृद्धि हुई, उसका वृत्तान्त इतिहासमें उल्लिखित है। इस समय मुसलमान वीरोंने एसिया और युरोप इन दोनों महादेशोंमें अपने साम्राज्य और इसलाम धर्मकी यथेष्ट श्रीवृद्धि की थी। इन दोनों देशोंके मध्य-भागमें एक समुद्रसे दूसरे समुद्र पर्यन्त मुसलमानोंकी विजय-पताका उस समय फहरायी थी। पश्चिममें अत-लान्तिक महासागर, उत्तरमें पिरिनिज् पर्वतमाला, दक्षिणमें साहारा मरु पर्यन्त विस्तृत समग्र उत्तर अफ्रीकाके राज्य (इजिप्त और आबिसिनिया राज्य) और पूर्वमें अर्थात् एसिया खण्डमें समग्र सिनाइ प्रायोद्वीप (अरब), पालेस्तिन, सिरीया, आर्मेनियाका कुछ अंश, एसिया-माइनर, मिसोपोटेमिया, पारस्य, काबुल और सिन्धुनदके पश्चिमदिग्वर्ती समस्त प्रदेश मुसलमान साम्राज्यके अधिकारभुक्त और इसलाम धर्ममें दीक्षित हो मुसलमान संप्रदायकी परिपुष्टि करनेमें सहायक हुये थे।

इसी समय मुसलमान लोग भारतके विजय करनेमें भी उद्यत हुये।' इसके बाद तातार जातिको भी शक्तिशाली संप्रदायमें सम्मिलित कर इन्होंने अपने संप्रदायके कलेवरकी वृद्धि की थी। इसी सुविस्तृत मुसलमान-साम्राज्यमें परवर्ती ११श शताब्दमें और भी अनेक क्षुद्र क्षुद्र राज्य सन्निविष्ट हो गये, जिससे इसलामकी शक्ति और भी बढ़ गई। किन्तु बहुत काल पर्यन्त मुसलमान शासनाधीशों द्वारा परिचालित इस समस्त साम्राज्यमें एकमात्र स्पेनराज्यको छोड़कर अन्य कोई भी राज्य इसलामधर्मकी छायाको दूर करनेमें समर्थ न हुआ।

सुलेमान्के राजत्वकालमें (७१५—७१७ ई०) एसिया-माइनर तथा कनस्तान्तिनोपल, और उमर बिन्-अब्द-अल् अजीजके शासन समयमें (७१७—७२० ई०) जोर्जन और तबरिस्तान राज्य मुसलमानोंके शासन-से शासित हुये। उमरके वंशधर २रे यजीद (७२०—७२५ ई०) एवं परवर्ती खलीफागणकी शासनशक्तिके नष्ट हो जानेसे और हिसामकी बढ़ती हुई तीव्र राज्यप्राप्तिकी अभिलाषसे मुसलमानराज्यमें अन्तर्विप्लव उपस्थित हुआ। विशृङ्खल शासन होनेसे प्रजा विद्रोही हो गई और खलीफा-पदाकाङ्क्षी नूतन नेताओंको मुसलमान् साम्राज्य प्रदान कर सन्तुष्ट हुई। ७२४ ई०से ७४३ ई०तक खलीफा हिसामके राजत्वकालमें मुसलमानोंका विजयी बाहु सबसे प्रथम पराभूत हुआ। ७३२ ई०को पइटियर्के युद्धमें मुसल मान्सेनापति अब्दुर-रहमान् बिन् अब्दुल्ला चार्लस माटेलसे पराजित हुये। इसी युद्धके बाद युरोप महादेशमें अरबी लोगोंका अप्रतिहत प्रताप क्रमशः लुप्त होने लगा।

इसके बाद ७४९ ई०में जिस समय अब्बासवंश धर्मप्राण मुसलमान-समाजका नेता बना था, उस समय उमैयद वंशके लोग अति निष्ठुरभावसे निहत हुये थे। इसी वंशके एकमात्र राजा अब्दुर-रहमान्-बिन्-मुयाबियाने स्पेनराज्यमें भाग कर अपना प्राण बचाया और कर्डोभा नगरमें ७५८ ई०को उमैयाद-राजपाटकी स्थापना कर स्वयं खलीफापद ग्रहण किया था।

अब्बासवंशके अधिकारके समय बगदाद नगरमें राजपाट परिवर्तित हुआ था। उसीके यत्नसे उस समय कई मुसलमान राज्य स्थापित हुये। भूमध्य-सागरके क्रीट, कर्सिका, सार्डिनिया और सिसिली द्वीप भी अफ्रीकाके मुसलमानोंके अधिकारमें आ गये थे।

पूर्ववर्ती खलीफाओंने अपने अपने वीर्यके प्रभावसे सभ्य जगत्में राज्यप्रतिष्ठा-प्रसङ्गपर जैसा सुयश कमाया था, वैसा ही अब्बासियोंने भी शिल्पविद्या और साहित्य सम्बन्धपर अपना विशेष आग्रह एवं अनुराग दिखा विद्वन्मण्डली तथा सभ्यसाधारणमें अपना गौरव जमाया। मन्सूर, हारुन् अल् रसीद और मामून् प्रभृति खलीफा-ओंने उससमय साहित्य-जगत्में शीर्षस्थान पाया था।

उनका राज्यकाल भी मुसलमानोंकी शक्तिसमृद्धिका उज्ज्वल निदर्शन है।

मानसिक एवं ऐकान्तिक चित्तवृत्तिके उन्नति-साधनकी आसक्तिसे अब्बास-वंशीय लोग क्रमशः निर्जनताप्रिय और विलासी बन गये थे। सुतरां राजकार्यमें अवश्यम्भावी अमनोयोग देख मुसलमान प्रतिनिधियोंने स्वत्वविच्छेद बढ़ाया। धीरे-धीरे राज-द्रोहिता फैलने लगी। बग़दादकी राजशक्ति उस समय बाह्यतः अक्षुण्ण थी तो भी वस्तुतः अन्तरङ्गमें वह घट रही थी। यह विद्रोहवह्नि साम्राज्यके एक सुदूर प्रान्तमें प्रथम भड़की। अबदुर-रहमान्‌का स्पेनराज्यमें स्वतन्त्र एवं स्वाधीन उमैयद राज्य स्थापन इसका प्रारम्भ था। इस दृष्टान्तको देखकर अपरापर स्थानके मुसलमान-प्रतिनिधियोंने भी स्वाधीन बननेका प्रयास उठाया।

विद्यानुरक्त एवं विलासी अब्बासवंशीय ख़लीफ़ाओंने इस राष्ट्रविप्लवके समय अपना अवस्थान विपज्जनक विचारा इसलिये उन्होंने सिंहासनकी तथा अपनी रक्षा करने लिये वेतनभोगी तुर्कप्रहरी नियुक्त किये और नियमातिरिक्त क्षमता प्रदान कर प्रधान-प्रधान अमात्योंके (अमीर-उल्-उमरा) हाथ राज्यपरिचालनके कार्य सौंप दिये।

राज्य-शासनहेतु एतादृश व्यवस्थाके निर्देश, सल-जूक़ी तुर्कवंशके उपर्युपरि आक्रमण और सरकार-दरबारमें तुर्कोंके प्राधान्य-विस्तारसे ख़लीफ़ा नाममात्र मुसलमान् समाजके नेता माने जाते थे। १२५८ ई०में हुलाकूके बग़दाद आक्रमण तथा अधिकार करते ही अब्बास वंशका अवसान हुआ।

उमैयद-वंशीय ख़लीफ़ा मुआवियाके दामास्कस-नगरमें राजधानी जमाने और परवर्ती अब्बासवंशके बग़दाद नगरमें प्रतिपत्ति कमाने पर्यन्त मुसलमान् जातिका अभ्युदयहेय अरब-राज्य समग्र साम्राज्यसे नगण्य प्रदेश समझा जाता था। अधिकन्तु ही वह विभिन्न सामन्तराज्यमें बंट गया। इस सकल विभागके मध्य एकमात्र यमन प्रदेशने मुहम्मदके समयसे ई०के १५वें शताब्द पर्यन्त विशेष प्रतिष्ठा पाई थी। प्रति वत्सर पवित्र नगरमें तीर्थयात्रियोंके समागम, वह सरदारोंके परस्पर विरोध और नेजद प्रदेशमें वहहाबी राजवंशके अभ्युत्थान एवं अवसानके सिवा अरबी राज्यमें दूसरी किसी इतिहास-प्रसिद्ध घटनाका उल्लेख नहीं मिलता।

सीरिया, फ़ारस, मोरिटोनिया और स्पेन राज्य जीतनेपर अरब जातिका वाणिज्य बढ़ा था। एकमात्र इसलामधर्म और अरबी भाषाका प्रचलन रहनेसे तथा पर्यटक वणिकोंके यातायातको विशेष सुविधा पड़नेसे विस्तीर्ण मुसलमान-साम्राज्यमें एक वाणिज्य-साम्राज्य-के स्थापनका भी सुन्दर सुयोग लगा। बग़दाद-राज-वंशकी विलासिता एवं अब्बास-वंशीय ख़लीफ़ाओंकी सुखसमृद्धि तथा विलासवासना परिपूरणके निमित्त मुसलमान वणिकोंको भारतीय उत्तम द्रव्य ले जानेके लिये पैदलकी राह भारत आना पड़ता था। ई० ८म शताब्दके प्रारम्भमें अरब भारतके नाना स्थानमें पहुंच बसने लगे और उसी समयसे बहुसंख्यक भारतीय राजन्य अपने धर्मका आश्रय छोड़ इसलाम धर्ममें दीक्षित होने लगे। अतःपर अरबोंने भारतीय द्वीप-पुञ्ज, सिंहल, सुमात्रा, यव, सिलेबिस प्रभृति द्वीपराज्य और सुदूर चीनसाम्राज्यमें भी वाणिज्यके व्यपदेशसे इसलाम धर्मका प्रभाव जा फैलाया।

पदव्रजसे गमनकारी अरबी वणिक्‌सम्प्रदाय इसी प्रकार स्थलपथ द्वारा तातार राज्य और साइबेरियाके उत्तरांश पर्यन्त पहुंचकर अबाध वाणिज्य-कार्य चलाता था। अफ़रीका-खण्डमें वह नाइगार पर्यन्त अग्रसर हुआ था। यहीं ई० १०वें शताब्दसे मुसलमानोंके प्रभाव द्वारा घाना, वङ्गारा, तोमबूर, कुकू, सेवायार, दर्फूर, बुरनू, तिम्बाकतू और मेली प्रभृति अनेक सामन्त राज्य जम गये। अफ़रीकाके पूर्वोपकूलमें वायेलमान्देब प्रणालीसे जञ्जीबार तक समुद्रतटपर उनके यत्नसे मकदाशया, मेलिन्दे, सोफला, केलू और मोजाम्बिक बन्दर बसे थे। यहांसे वह मादागास्करवासी लोगोंके साथ वैदेशिक वाणिज्य चलाते थे। तुर्किस्तानियावासी वाणिज्यप्रिय वणिक् जलपथसे पण्यद्रव्य ले ई० ११वें शताब्दको सुदूर अमेरिका-खण्डमें जा पहुंचे। सावा-

रणको विश्वास होता है, कि अरब सम्प्रदाय ही प्रकृत पक्षमें अमेरिका महादेशका आविष्कर्ता है।

वसुन्धराके भोगविलासकी भूमि भारत ही मुसलमान सम्प्रदायके साम्राज्य-विस्तारका सर्वशेष निदर्शन है। किन्तु प्रकृतपक्षमें ई० ७वें शताब्दके अन्त और ८वें शताब्दके आरम्भसे भारतवर्षपर मुसलमान सम्प्रदायका अधिष्ठान हुआ था। खलीफ़ाओंकी भोगलालसा पूरी करनेको ही मुसलमान् वणिकोंने भारतके साथ संस्रव जमाया। मीरक़ासिमके सिन्धुपर आक्रमण करनेसे भारतमें मुसलमानोंका समागम हुआ और इसलामधर्म फैला। उसके बाद १० और ११ वें शताब्द गज़नीपति महमूदकी चेष्टासे भारतमें मुसलमानी शक्ति प्रतिष्ठित हुई। उक्त मुसलमान पुङ्गवने सप्तदश बार भारतपर आक्रमण मार बहु अर्थ लुण्ठनपूर्वक स्वदेशको पलायन किया था। विख्यात सोमनाथ-मन्दिर और वहांकी देवमूर्ति दोनोंही उनके द्वारा धूलिमें मिल गये। महमूद गज़नवीने ईरान्से भारतके उत्तर-पश्चिम पञ्जाब प्रदेश पर्यन्त अपना राज्य बढ़ाया था। इससे प्रायः दो शताब्द बाद ११८२ ई०को मुहम्मद घोरीने दिल्ली अधिकारपूर्वक भारतकी सर्वप्राचीन राजधानीमें मुसलमानी शासन चला दिया। १८५७ ई०के सिपाही-विद्रोह पर्यन्त दिल्ली मुसलमान् बादशाहोंकी राजधानी गिनी जाती थी। यहां पठानोंका प्रादुर्भाव मिटनेपर ई० १४वें शताब्दमें मुग़ल वंशका अभ्युदय हुआ। मुग़ल सम्राट् अकबर और उनके प्रपौत्र औरङ्गजेबके समय भारतमें मुसलमानी प्रभावने पराकाष्ठा पायी थी।

भारतवासी इसलाम धर्मावलम्बी मुसलमान् विभिन्न जातिसे समुद्भूत हैं। उनमें कितने ही विभिन्न शाखायुक्त अरब जातिके सन्तान हैं। कितने ही पारस्यवासी ईरानियों, शकों, तातारों मुग़लों, तुर्कों, बलूचियों, अफ़ग़ानों, अग्निकुल-राजपूतों, जाटों और आर्योपनिवेशके पूर्ववर्ती भारतसमागत मोङ्गलीय शाखा जातिके लोगोंसे इसलामी धर्मान्तर लेने बाद भारतीय विभिन्न मुसलमान् सम्प्रदाय परिपुष्ट हुआ है। आर्यावर्त भूमिमें मोङ्गलीय सम्प्रदायके मुग़ल, अफ़ग़ान, पाठान और विशुद्ध अरबी मुसलमान शेख़ कहाते हैं। मुहम्मद, मुसलमान, खलीफ़ा प्रभृति शब्द देखिये।

इसलामखान्—१ मीर ज़िया-उद्-दीन बदख़्शीका उपाधि। कवितामें इनका उपनाम वाला रहा। बादशाह आलमगीरके अधीन इन्होंने कार्य किया था। १६६३ ई०को आगरेमें इनकी मृत्यु हुयी। नवाब हिम्मत खान्, सैफ़खान् और अबदुर-रहीम खान् इनके बेटे थे।

२ सफ़ी ख़ान्के पुत्र और इसलाम खान् मशहदीके पौत्र। बादशाह फ़र्रुख़-सियारके समय यह लाहोरके सूबेदार थे। मुहम्मद शाहने इन्हें सात हज़ार सवार रखनेका अधिकार दिया था।

इसलाम खान् मशहदी—बङ्गालके एक सूबेदार। प्रथम यह मशहदमें रहते थे। उस समय इनका नाम मीर अबदुस्सलाम रहा। जहांगीरके राजत्वकालमें ये पांच हज़ार, मनसबदार और बङ्गालके सूबेदार बने थे। सम्राट् शाहजहान्ने भी इन्हें छः हज़ारी मनसबदार किया और मोतमद्-उद्-दौलाकी उपाधि तथा दक्षिणापथके शासनकर्ताको पदवी दी। शाहजहान् इन्हें बहुत चाहते थे। मृत्युसे कई वर्ष पहले इन्हें सात हज़ारी मनसबदार और मन्त्रीका पद मिला। १५८० ई०में यह दक्षिणापथमें मरे थे। औरङ्गाबादमें इनकी क़ब्र बनी है। कोई-कोई भूलसे इन्हें इसलाम खान् रूमी भी कहते हैं।

इसलाम ख़ान् रूमी—अली पाशाके लड़के। इनका प्रकृत नाम हुसेन पाशा था। यह बसराके शासनकर्ता थे। अपने चाचा द्वारा उक्त पदसे निकाले जानेपर इन्हें भारतवर्ष आना पड़ा। आलमगीर बादशाहने इन्हें पांच हज़ारी मनसबदार बनाया था। १६७६ ई०को १२ वीं जूनको यह विजयपुरके युद्धमें मारे गये। इन्होंने आगरा दुर्गके समीप यमुना किनारे अपना गृह बनाया और उद्यान लगाया था।

इसलाम ख़ान् शेख़—शेख़ सलीम चिश्तीके पौत्र। १६०८ ई०को बादशाह जहांगीरने इन्हें बङ्गालका सूबेदार बनाया था। इनके पुत्रका नाम इकराम खान् और भ्राताका नाम क़ासिम खान् था। १६११ ई०में इस-

लाम खान् मरे और इकराम खान् बङ्गालके सूबेदार बने। आगरेके पास फतेहपुर-सीकरीमें इनकी कबर है।

इसलामगढ़—राजपूताना प्रान्तभागमें भावलपुरके अन्तर्गत एक दुर्ग। खानपुरसे जैसलमेर जानेके पथपर यह दुर्ग खड़ा है। पहले इसपर जैसलमेरके राजपूतोंका अधिकार था, किन्तु भावलपुरके खानोंने उनके हाथसे छीन लिया।

इसलामनगर—युक्तप्रदेशस्थ बदायूं ज़िलेके अन्तर्गत बिसौली परगनेका एक नगर। यह अक्षा० २८° १८´ ४५´´ उ० और द्राघि० ७८° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है। इस नगरके चारो ओर आमका बाग़ लगा है।

इसलामाबाद—१ बङ्गालके चट्टग्राम ज़िलेका एक प्रधान नगर। चट्टग्राम देखो। २ काश्मीरका एक नगर। यह अक्षा० ३३° ४१´ उ० तथा द्राघि० ७५° १७´ पू०के मध्य झेलम नदी किनारे गिरिशृङ्गपर अवस्थित है। गिरिके नीचे प्रस्रवण है। सुननेमें आता है, कि विष्णुने उक्त प्रस्रवण बनाया था। इसका प्राचीन नाम अनन्तनाग है। अम्बरनाथ जानेवाले यात्री इसी स्थानसे आहार्य संग्रह करते हैं। ई०के १८वें शताब्दमें मुसलमानोंने इस नगरका नाम इसलामाबाद रक्खा था। यहां काश्मीरी शाल और नानाप्रकार रूई एवं ऊनका कपड़ा बिकने आता है। केसर खूब मिलती है।

इसलाह (अ० स्त्री०) १ संशोधन, दुरुस्ती, सुधार। २ चिबुककेश, ठुड्डीका बाल।

इसहाक़ खान्—दिल्ली-सम्राट् मुहम्मद शाहके एक अति प्रियपात्र वस्तु। इनकी उपाधि मोतमिन-उद्-दौला और प्रकृत नाम मिर्ज़ा गुलाम अली था। ये अच्छी कविता बनाते थे। १७४० ई०में इनकी मृत्यु हुई। १७४६ ई०में इनकी कन्याका विवाह सफदर-जङ्गके पुत्र शुजा-उद्-दौलाके साथ धूमधामसे किया गया था।

इसहाक़ मौलाना—पञ्जाब प्रान्तस्थ मूलतान ज़िलेवाले उच्चा स्थानके एक पढ़े-लिखे मुसलमान्। युवावस्थामें इन्होंने अपनेको बाबा सैयद सदर-उद्-दीन राजू कत्तालकी देख रेखपर छोड़ रक्खा था। १४५६ ई०में इनकी मृत्यु हुयी। सहारनपुरमें अपने मकानपर ही मौलानाकी कबर बनी है।

इसायी, ईसाई देखो।

इसीका (हिं०) १ 'यह'का सम्बन्ध कारक। इसीका देखो।

इसे (हिं० सर्व०) इसको, इसकेलिये। 'इसे' यह शब्दके कर्मकारक और सम्प्रदानकारकका रूप है।

इस्क़ात (अ० पु०) पतन, गिराव।

इस्क़ात-हमल (अ० पु०) गर्भपात, पेटका गिराना।

इस्क़ातर (=पोर्तुगीज Escritoire) सम्पुटविशिष्ट लेखनमञ्च, खानेदार लिखनेका मेज़।

इस्कार्दो (स्कार्द)—काश्मीर-राज्यान्तर्गत बलती नामक प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० ३५° १२´ उ० और द्राघि० ७५° ३५´ पू०के मध्य अवस्थित तथा पर्वतमाला द्वारा वेष्टित है। नगरमें एक दुर्ग बना है, जो पर्वतपर निकटस्थ सिन्धुनदीसे ८०० फीट ऊंचा खड़ा है। काश्मीरराज गुलाबसिंहने स्थानीय राजा अहमद-शाहसे इसे छीन अपने राज्यमें मिला लिया था।

इस्तमरार (अ० पु०) १ सनातनत्व, क़याम, ठहराव। २ एकाधिकार, बेरोक क़ब्ज़ा। कानूनमें नियत और अपरिवर्तनशील करको इस्तमरार कहते हैं।

इस्तमरारदार (अ० पु०) खेत या पट्टेका सनातन अधिकारी, जो शख्स खेत या पट्टेपर हमेशाके लिये क़ब्ज़ा रखता हो।

इस्तमरारी (अ० वि०) १ सनातन, क़ायम, कभी न बदलनेवाला। (स्त्री०) २ नियत पट्टेकी भूमि, क़ायम पट्टेकी ज़मीन्।

इस्तिक़बाल (अ० पु०) १ स्वागत, अगवानी। २ भविष्यत्काल, ज़माना आइन्दा।

इस्तिक़लाल (अ० पु०) १ दृढ़ता, मज़बूती। २ स्थिरता, क़याम।

इस्तिङ्गी (हिं० स्त्री०) लचाकी रस्सी। यह छिपीमें लगती है। पालकी इसीमें तानते और खींचते हैं। यह अंगरेजी string शब्दका अपभ्रंश है।

इस्तिञ्जा (अ० पु०) १ मूत्रोत्सर्ग, पेशाब करना, मुतायी। २ मूत्रपुरीषोत्सर्गके पश्चात् करशौच, हाथ-पानीका लेना। ३ मूत्रोत्सर्गके पश्चात् मृत्तिका-

खण्डसे मूतके बिन्दुका सुखाना, मूतनेके बाद मट्टीके ढेलेसे पेशाबके बूंदका जज़्ब करना। किसी तुच्छ वस्तुको 'इस्तिञ्जेका ढेला' कहते हैं।

इस्तिरजा (अ० स्त्री०) स्वीकृति, रज़ामन्दी।

इस्तिरी (हिं० स्त्री०) १ स्तरी, कपड़ेको बराबर और कड़ा करनेका औज़ार। यह लोहेकी बनती और खोखली होती है। नीचेकी ओर पीतल लगाते हैं। खोखली जगह गर्म कोयला भरा जाता है। जब कपड़ा धुलकर साफ होता, तब धोबी इस्तिरीको उसपर फेरता है। इससे कपड़ेका शिकन मिट और तह बराबर जम जाता है। दरजी भी इससे काम लेते हैं। किसी-किसीके मतानुसार यह अंगरेजी steel शब्दका अपभ्रंश है। २ स्त्री, लोगाई। ३ पत्नी, जोड़ू।

इस्तिसना (अ० पु०) १ वर्जन, इखराज, छूट। २ निराकरण, नामञ्ज़ूरी, इनकार।

इस्तेदाद (अ० स्त्री०) १ योग्यता, लियाक़त। २ बुद्धि, समझ। ३ अंश, हिस्सा। ४ विज्ञान, हुनर।

इस्तेफ़ा (अ० पु०) उत्सर्ग, तर्क, छोड़।

इस्तेमाल (अ० पु०) १ अभ्यास, रब्त। २ व्यवहार, चाल। ३ कार्य, काम।

इस्तेमाली (अ० वि०) १ व्यवहृत, पुराना। २ साधारण, मामूली। (पु०) ३ उत्तम शालि, बढ़िया चावल।

इस्म (अ० पु०) १ अभिधान, लक़ब, नाम। २ व्याकरणमें—संज्ञा।

इस्मनवीसी (अ० स्त्री०) १ नाम लिखनेका काम। २ नामका रजिष्टर। ३ नामसूची, लक़बनामा।

इह (सं० अव्य०) इदं-ह। इदमो हः। पा ५।३।११। १ इस स्थानपर, इस जगह, यहां। २ इस स्थानको, इस जगहके तईं। ३ इस लोकमें, इस दुनियाके बीच। ४ इस पुस्तकमें, इस क़ायदेमें। ५ इस अवस्थामें, इस हालतमें। ६ सम्प्रति, अब।

इहकाल (सं० पु०) इदम्-हः, कर्मधा०। स्वराभ्योऽपि दृश्यते। पा ५।३।१४। वर्तमान समय, ज़माना हाल, यह जिन्दगी।

इहक्रतु (वै० त्रि०) इस लोक या स्थानका ध्यान रखनेवाला, जिसे इस दुनिया या जगहका ख़याल रहे।

इहचित्त, इहक्रतु देखो।

इहतन (सं० त्रि०) इदम् भावार्थे ट्यु,न् तुट्‌च। इस जगत्‌में जन्म लेनेवाला, जो इस दुनियामें पैदा हो।

इहतियात (अ० स्त्री०) १ सावधानता, ख़बरदारी, चौकसी। २ अप्रमाद, होशियारी।

इहत्य (सं० त्रि०) इह भवम्, अव्ययात् त्यप्। अव्ययात् त्य.प्। पा ४।२।१०४। इहकालमें होनेवाला, जो इस वक़्त हो।

इहत्र (सं० अव्य०) इस स्थानपर, इस दुनियामें, यहां।

इहभोजन (वै० त्रि०) जिसके वस्तु और दान यहां पहुंचे, जिसके चीज़ और बख्शिश यहां आये।

इहद्वितीया (सं० स्त्री०) इस कालकी द्वितीया, इस वक़्तकी दूज।

इहपञ्चमी (सं० स्त्री०) इस समयकी पञ्चमी।

इहलोक (सं० पु०) इदम् प्रथमाया हः, कर्मधा०। १ यह जगत्, यह जिन्दगी। (अव्य०) २ इस लोकमें, इस दुनियामें।

इहवां (हिं० क्रि० वि०) इस स्थानपर, यहां।

इहसान, एहसान् देखो।

इहस्थ (सं० त्रि०) इस स्थानपर उपस्थित, जो यहां खड़ा हो।

इहस्थान (सं० क्ली०) १ यह जगत्, यह दुनिया। (वि०) २ पृथिवीपर निवास करनेवाला, जो इस दुनियामें रहता हो। (अव्य०) ३ इस स्थानपर, इस जगह।

इहां, यहां देखो।

इहागत (सं० त्रि०) इस स्थानपर आ पहुंचनेवाला, जो यहां आ गया हो।

इहामुत्र (सं० अव्य०) इहलोक और परलोकमें, इस दुनिया और उस दुनियामें, यहां और वहां।

इहेह (सं० अव्य०) अत्र-तत्र, अत्र-तत्र, बारबार।

इहेहमातृ (वै० त्रि०) जिसके सर्वत्र माता रहे, जो अपनी माको सब जगह रखता हो।

ई

ई—हिन्दी वर्णमालाका चतुर्थ स्वरवर्ण। यह इकारका दीर्घ रूप है। तालुसे निकलनेके कारण इसे तालव्य वर्ण कहते हैं। ईका उच्चारण कभी दीर्घ और कभी प्लुत होता है। तन्त्रके मतसे यह कुण्डलिनी है। ब्रह्मा, विष्णु, शिव प्रभृति देव इसमें रहते हैं। इसकी उपासनासे चतुर्वर्ग फल मिलता है। (कामधेनुतन्त्र)

वर्णोद्धारतन्त्रके मतसे ई लिखनेका नियम यह है,—ऊपर-नीचे और मध्यदिक् पर यह कुञ्चित होता है। अधोगत तीन कोण रहते, जो दक्षिण दिक्से ऊपरको सिकुड़ते हैं। ऊपरी दक्षिण कोणपर कोणयुक्त एक दूसरी रेखा कुञ्चित भावसे खींचना पड़ती है। ईमें चन्द्र, सूर्य और अग्नि विद्यमान हैं। इसकी मात्रा शक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र) ईको तन्त्रमें त्रिमूर्ति, महामाया, लोलाक्षी, वामलोचन, गोविन्द, शेखर, पुष्टि, सुभद्रा, रतिसंज्ञा, विष्णु, लक्ष्मी, प्रहास, वाग्विशुद्ध, परापर, कालोत्तरीय, भेरुण्डा, रौति, पौण्ड्रवर्धन, शिवोत्तम, शिवा, तुष्टि, चतुर्थी, विन्दु, मालिनी, वैष्णवी, वैन्दवी, जिह्वा, कामकला, सनादका, पावक, कोटर, कीर्ति, मोहिनी, कालकारिका, कुचद्वन्द्व, तर्जनी, शान्ति और त्रिपुरसुन्दरी भी कहते हैं। मातृकान्यासमें इसका स्थान वामचक्षु है। (ईं नमो वामचक्षुषि)

हिन्दीमें ई प्रत्ययका काम भी देती है। इसके लगाने विशेष्य और विशेषण दोनो बनते हैं। जैसे—[illegible]से [illegible] और लेटासे लेटी। कभी-कभी विशेष्यके अन्तमें लगनेसे विशेषण और विशेषणके अन्तमें ई लगनेसे विशेष्य हो जाता है। जैसे—[illegible] और लालसे लाली।

ई (सं० अव्य०) १ विषाद। अफसोस! हाय! २ अनुकम्पा। तरस। ३ क्रोध। गुस्सा। ४ दुःखानुभव। तकलीफ। ५ प्रत्यक्ष। आंखके सामने। ६ सन्निधि। नजदीकी। (स्त्री०) अस्य विष्णोः पत्नी, अ-ङीप्। ७ लक्ष्मी। ८ माया। (पु०) ९ शान्ति। १० कामदेव। ११ गोविन्द। १२ त्रिमूर्तीश। १३ वामलोचन। १४ नृसिंहशास्त्र। १५ सुरेश्वर। १६ कन्यायुग्म। १७ कर्कट।

ईंगुर (हिं० पु०) सिन्दूर, शिङ्गरफ, लालसीस। यह भारतमें बनता और बाहरसे भी आता है। गलते सीसको वायुप्रवाहमें रखनेसे ईंगुर तैयार होता है। यह विशेषतः महावीर पर चढ़ता है। सौभाग्यवती स्त्री अपनी मांग इससे भरती हैं। ईंगुरसे पारा भी निकालते हैं। सिन्दूर और हिङ्गुल देखो।

ईंघे (हिं० क्रि० वि०) इधर, यहां, इस ओर।

ईंचना (हिं० क्रि०) १ आकर्षण करना, खींचना। २ लिखना, घसीटना। ३ असि निकालना, तलवारको म्यानसे बाहर करना। ४ फांसी चढ़ाना। ५ शोषण करना, सोख लेना। ६ पान करना, दम लेना, पीना। ७ ग्रहण करना, ऐंठ लेना। ८ रख छोड़ना, दाब रखना। ९ बांधना, अंगेजना।

ईंचमनौती (हिं० स्त्री०) भूमिपतिका अपने कृषकके महाजनसे कर ग्रहण करना। कृषक भूमिकर देनेमें असमर्थ होनेसे ज़मीन्दार महाजनसे वह धन लेता है और उसके खातेमें कृषकके नाम जमा करा देता है। इसीका नाम ईंचमनौती है।

ईंट (हिं० स्त्री०) १ इष्टका, मट्टीका टुकड़ा। यह चौखूंटी और लम्बी रहती तथा सांचेमें ढलती है। ईंट कच्ची और पक्की दो तरहकी होती है। पक्की ईंट पजावेमें पकती है। इसे लखौरी, मम्बरी और पुख्ती कहते हैं। लखौरी पतली और छोटी होती है। इसका चलन अब बन्द हो गया है। पुराने समय

इसे घिस घिस कर सुन्दर गृह बनाये जाते थे। सम्बरी मोटी और लम्बी होती है। आजकल पक्के मकानमें यही लगती है। पुट्ठीको गण भी कहते हैं। यह चौड़ी और परिधिके खण्ड जैसी रहती है। कूएंकी जोड़ायी इसीसे होती है। क्योंकि दूसरी ईंट लगनेसे गोलायी आ नहीं सकती। तामड़ा, फररा, ककैया, ननिहारी, नौतेरही और मेज़ा आदि अन्य प्रकारकी होती है। ईंट सोने, चांदी, तांबे, पीतल और जस्ते आदिकी भी बनती है।

चोरीकी ईंट चौबारे चढ़ी। (लोकोक्ति)

२ ताशका एक रङ्ग।

ईंटका घर मट्टी होना (हिं क्रि०) विनष्ट होना, बिगड़ना। "ईंटका घर मट्टी हो गया।" (लोकोक्ति)

ईंटकारी (हिं० स्त्री०) इष्टका-स्थापन, ईंटकी जोड़ाई।

ईंटमार चहाकड़ा (हिं० पु०) क्रीड़ाविशेष, लड़कोंका एक खेल। कितने ही लड़के इकट्ठे होकर यह खेल खेलते हैं। कोई लड़का एक ईंट दूर फेंक देता और दूसरोंसे उसपर निशाना लगानेको कहता है। जो अपने ढेलेसे फेंकी हुयी ईंटको मारता, वह ईंट फेंकनेवाले लड़के पर चढ़कर ईंटकी जगह तक जाता है।

ईंटा (हिं० पु०) ईंट देखो।

ईंडवा (हिं० पु०) १ गोलाकार पुट विशेष, चक्करदार तह, इंडुरी। इसे शिरपर रख जलकुम्भ उठाते हैं।

ईंडवी (हिं० स्त्री०) शिरोवेष्टन, पगड़ी।

ईंढ (हिं० वि०) सदृश, बराबर।

ईंत (हिं० पु०) ईंटका टुकड़ा। यह औज़ारकी धार पैनानेके लिये सानके नीचे रखा जाता है।

ईंदर (हिं० पु०) किदार, नये दूधकी मिठाई। गाय या भैंस व्यानेपर आठ-दश दिनके अन्दर दूधको औट कर जो मिठाई बनती, वह ईंदर कहती है।

ईंदूर (हिं० पु०) इन्दूर, चूहा। इन्दूर देखो।

ईंधन (हिं० पु०) १ इन्धन, जलानेकी लकड़ी। २ तृण, घास-फूस। "बापको आटा न मिले, सो ईंधनको भेजै।" (लोकोक्ति)

ईकार (सं० पु०) ई स्वार्थे कार। चतुर्थ वर्ण ई।

ईक्षक (सं० पु०) ईक्ष-ण्वुल्। दर्शक, नाज़िरीन, देखनेवाला शख़्श।

ईक्षण (सं० क्ली०) ईक्ष भावे ल्युट्। १ दर्शन, नज़र, देखावा। करणे ल्युट्। २ चक्षुः, आंख। ३ पर्यावेक्षण, ख़बरदारी, चौकसी।

"मौर्वे धर्मेक्षणपदार्थ पारिषाद्यस वैदवे।" (मनु ७।११)

ईक्षणिक (सं० पु०) ईक्षणं हस्तपादादि रेखा शुभाशुभं अस्ति अस्मिन्, ईक्षण-ठन्। दैवज्ञ, पेशीनगो, हाथ-पैरके निशान् देखकर भला-बुरा बता देनेवाला शख़्स। "मद्राशे क्षणिकैः सह।" (मनु ९।२५८)

ईक्षणिका (सं० स्त्री०) ईक्षणिक-टाप्। गणककी स्त्री, नजूमीकी औरत।

ईक्षमाण (सं० त्रि०) पर्यावेक्षक, जांचनेवाला।

ईक्षा (सं० स्त्री०) ईक्ष दर्शने अ टाप् च। दर्शन, नज़र, देख-रेख।

ईक्षित (सं० त्रि०) पर्यावेक्षित, देखा हुआ, जो समझा गया हो।

"एकोऽहमस्मीत्यात्मानं यत् त्वं कल्याणमन्यसे।
नित्यं स्थितस्ते हृद्येष पुण्यपापेक्षिता मुनिः॥" (मनु ८।९१)

ईक्षित्‌ (सं० त्रि०) द्रष्टा, देखनेवाला।

ईक्षेण्य (वै० त्रि०) अद्भुत, अनोखा, देखने लायक़।

ईक्ष्यमाण (सं० त्रि०) देखा जानेवाला, जो जांचा जा रहा हो।

ईख (हिं० स्त्री०) इक्षु देखो।

ईखना (हिं० क्रि०) ईक्षण करना, देखना।

ईखराज (हिं० पु०) इक्षु वपन करनेका प्रथम दिवस, जिस दिनको पहले पहल जख बोई जाती हो।

ईछन (हिं०) ईक्षण देखो।

ईछना (हिं० क्रि०) इच्छा रखना, ख़ाहिश करना, चाहना।

ईछा (हिं०) इच्छा देखो।

ईज़ा (अ० स्त्री०) दुःख, मुसीबत, तकलीफ़।

ईजाद (अ० स्त्री०) आविष्कार, सृष्टि, उत्पादन, दरियाफ़्त, बनावट।

ईजान (सं० त्रि०) यजमान, जो यज्ञ करता हो।

ईजाब (अ० पु०) १ स्वीकार, मञ्ज़ूरी। २ प्रथम

प्रस्ताव, पहली तजवीज। इसे दोमें एकदल कोयी कार्य हाथमें लेनेसे प्रथमतः उपस्थित करता है।

ईलिक (सं॰ पु॰) जनपद विशेष, एक गांव। कहीं-कहीं ईलक भिन्न पाठ भी मिलता है। यहां अनेक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य प्रभृति रहते हैं। (भीष्मपर्व)

ईण्या (सं॰ स्त्री॰) १ भूमि, ज़मीन्। २ गो, गाय।

ईंट (हिं॰) इष्ट देखो।

ईंठि (हिं॰) इष्टि देखो।

ईंठी (हिं॰ स्त्री॰) बरछी, भाला।

ईंठीदाड़ (हिं॰ पु॰) चौगानका डण्डा। इससे हाकी या पोलो खेलते हैं।

ईड् (वै॰ स्त्री॰) उदकदान, देवतापर धारका चढ़ाना।

ईडन (सं॰ क्ली॰) प्रशंसाकार्य, तारीफ़का करना।

ईड़ा (सं॰ स्त्री॰) ईड-अ-टाप्। १ स्तुति, तारीफ़। २ नाड़ी, नब्ज़। नाड़ी देखो।

ईड़ित (सं॰ त्रि॰) ईड कर्मणि क्त। स्तुत, जो तारीफ़ पा चुका हो। ईलित रूप भी होता है।

ईडेन्य, ईय देखो।

ईड्य (वै॰ त्रि॰) ईड-ण्यत्। ईडवन्दवृशंसदुहां ण्यतः। पा ३।१।१२४। स्तवके योग्य, जो तारीफ़के क़ाबिल हो। ईलेन्य रूप भी बनता है।

ईड्यमान (सं॰ त्रि॰) प्रशंसा पानेवाला, जो तारीफ़ किया जा रहा हो।

ईड्या (सं॰ स्त्री॰) भूम्यामलकी, भूईं आंवला।

ईढ़ (हिं॰ स्त्री॰) हठ, ज़िद।

ईढ़ी (हिं॰ वि॰) हठी, ज़िद्दी।

ईत (हिं॰ स्त्री॰) वनमक्षिका, डांस।

ईतर (हिं॰ पु॰) १ चामण्डाधी, शेख़ीबाज़, जो अन्दाज़ इतराता हो।

"ईतर है पर तीतर बाहर बांध्यो जि भीतर।" (लोकोक्ति)

(वि॰) २ इतर, मामूली, छोटा।

ईति (सं॰ स्त्री॰) ईयते गम्यते, ई भावे क्तिन्। १ डिम्ब, झगड़ा। २ प्रवास, डेरा। ३ सांसर्गिक रोग, लगनेवाली बीमारी। ४ राज्योपद्रव विशेष, आफ़त, स्मृतिमें छः प्रकारकी ईति कही है,—

"अतिवृष्टिरनावृष्टिः शलभा मूषिकाः शुकाः।
प्रत्यासन्नाश्च राजानः षडेता ईतयः स्मृताः॥" (कामन्दक)

अर्थात् अधिक वर्षा होना, बिलकुल पानी न बरसना, टिड्डी आना, चूहे लगना, पक्षी पड़ना और अन्य राजाका चढ़ना ईति कहाता है। उक्त छः प्रकार उपद्रव उठनेसे शस्य नहीं उपजता और प्रजाको बड़ा ही कष्ट मिलता है।

ईथर (अं॰=Æther) १ पदार्थविज्ञानके अनुसार अधिक स्थितिस्थापकता और अत्यन्त क्षीणताका कल्पित साधन। यह पदार्थ समस्त स्थानमें भरा है। घन द्रव्यका भीतरी भाग भी इससे खाली नहीं होता। प्रकाश और उष्णताके सञ्चारणका द्वार ईथर ही है। २ रसतन्त्रानुसार अत्यन्त लघु, वायु-परिणामशील और दाहात्मक द्रव पदार्थ। यह गन्धकके अम्ल साथ सुरासार मरण करनेसे बनता है। सुरासारकी अपेक्षा ईथर अल्पभार होता और अद्भुत भेदक गन्ध तथा प्रखर, शीतल एवं सुगन्धि स्वाद रखता है। यह दश अंश जलमें हल पड़ और वायु लगनेसे उड़ जाता है। अधिक शीतल रहनेसे ईथर बरफ़ जमानेके काम आता है। इसे सूंघनेसे अचेतनता भी बढ़ती है। ३ वायुके ऊपरका कल्पित पदार्थ। यह अतिसूक्ष्म होता है और चक्षुसे देख नहीं पड़ता। शून्य स्थानमें इसकी स्थिति समझी जाती है। तारागण इसीमें घूमता और हमारे एक अङ्गका अनुभव दूसरेको इसीके सहारे मिलता है। प्रकाशके आने-जानेका द्वार ईथर ही है। निकटस्थ द्रव्यके चलते-फिरते भी इसमें गतिसञ्चार नहीं होता।

ईद (अ॰ स्त्री॰) १ मुसलमानोंके धर्मोत्सवका दिन। यह रमज़ान् महीनेके अन्तमें पड़ती है। ईदसे पहले मुसलमान् तीस दिन रोज़ा रखते यानी दिनको भूखे-प्यासे रह शाम पड़ते ही भोजन करते हैं। वर्षमें चार ईद होती हैं—आखिरी चहार शम्बा, शाबन, रमज़ान् और बक़रीद। इनमें ईद-उल्-फ़ितर् और ईद-उज़्-ज़ुहा या बक़रीद बड़ी है। उस अवसर पर विद्वान् और मूर्ख सभी मुसलमान् ईदगाहमें नमाज़ पढ़ने जाते हैं। सिवा इनके अमूर और

शबरात भी एक प्रकारकी ईद है। किन्तु इसमें सिर्फ़ प्रधान साधुओंके नामपर फ़ातिहा पढ़ा जाता है।

नौरोज़ भी कोई छोटी ईद नहीं होती। सूर्यके मेषराशिपर आनेसे यह उत्सव मनाया जाता है। सब लोग क़रीब काले या किरमिज़ी रङ्गका कपड़ा पहनते हैं। राजा अपने सिंहासनपर बैठते हैं और अमीर-उल्-उमरा, दरबारी तथा नौकर चाकर नज़र गुज़ारते तथा मुबारक बाद देते हैं। 'मुबारक नौरोज़' कहकर सलाम किया जाता है। इस दिन खेल-तमाशा होता है, नज़राना दिया जाता और दरबारमें खानेके लिये नाश्ता मिलता है। लोग आपसमें एक दूसरेसे मुलाक़ात करने भी जाते हैं।

२ उत्सव, जलसा।

ईद-उज़्-ज़ुहा (अ० स्त्री०) बक़रीद, मुसलमानोंका एक उत्सव। यह ज़िलहज महीनेमें होती है।

ईद-उल्-फ़ितर (अ० स्त्री०) उत्सव विशेष, मुसलमानोंका एक जलसा। यह शव्वाल महीनेमें पड़ती है।

ईदगाह (अ० स्त्री०) उन्नतस्थान विशेष, एक चबूतरा। मुसलमान प्रधानतः ईद या दूसरे धर्मोत्सवके दिन इस जगह नमाज़ पढ़नेको इकट्ठा होते हैं।

ईदी (अ० स्त्री०) १ उत्सवोपहार, ईद या किसी जलसेकी भेंट। २ उत्सव-सम्बन्धीय कविता, ईद या किसी जलसेकी शायरी। ३ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पत्र, जिस काग़ज़में ईद या किसी जलसेकी शायरी लिखी जाय। ४ उत्सव-सम्बन्धीय कविता लिखनेका पारितोषिक, ईदकी शायरी बनानेका इनाम। इसे छात्र अपने मुसलमान गुरुको देते हैं। ५ उत्सवके दिन बालकोंको दिया जानेवाला धन, जो रुपया-पैसा ईदके दिन लड़कोंको खाने और खेलनेको दिया जाता हो।

ईदृक् (सं० त्रि०) इदमिव दृश्यते, इदम्-दृश्-क्विप्, 'इदं किमोरीश्की'। पा ६।३।९०। इति ईश्, इत्यादेशः। १ एवम्भूत, ऐसा। (स्त्री०) २ एवम्भूत अवसर, ऐसी हालत।

ईदृक्ता (सं० स्त्री०) ईदृशो भावः, ईदृश्-तल्-टाप्। इस प्रकारका भाव, ऐसी हालत।

"विश्वीरिवात्मानमवर्धयीयमीदृक्तया रूपमियत्तया वा।" (रघु १३।५)

ईदृश, ईदृक् देखो।

ईदृश (सं० त्रि०) इदम्-दृश्-कञ्। १ एवम्भूत, ऐसा। (अव्य०) २ इसप्रकार, इसतरह, ऐसे।

ईप्सन (सं० क्ली०) ईप्सा देखो।

ईप्सा (सं० स्त्री०) आप्-सन्-अङ्-टाप्। वाञ्छा, ख़ाहिश, चाह।

ईप्सित (सं० त्रि०) आप्तुमिष्टम्, आप्-सन् कर्मणि क्त। वाञ्छित, ख़ाहिश किया हुआ, जो चाहा गया हो।

ईप्सितफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

ईप्सु (सं० त्रि०) आप्-सन्-उ। १ प्राप्तिकी चेष्टा करनेवाला, जो हासिल करनेकी कोशिशमें लगा हो। २ प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला, जो हासिल करना चाहता हो।

"धर्मेप्सवस्तु धर्मज्ञाः सतां वृत्तिमनुष्ठिताः।" (मनु १०।१२७)

ईशयज्ञ (सं० पु०) सोमयज्ञ विशेष। सोमयाग देखो।

ईफ़ा (अ० पु०) निष्पत्ति, साधन, अञ्जामदिही, नबेड़ा। यह यौगिक शब्दोंमें लगता है।

ईफ़ा-डिगरी (अ० और अं० मिश्रज) डिगरीके रुपयेकी निष्पत्ति, डिगरीका रुपया दे देना।

ईफ़ावादा (अ० पु०) प्रतिज्ञा साधन, इक़रारकी अञ्जामदिही, बातका पूरा करना।

ईबीसीबी (हिं० स्त्री०) सम्भोगजनित शब्द विशेष, सीसीकी आवाज़, सिसकारी।

ईब्नबतूता (इब्नबतूता)—एक अरब पर्यटक। इन्हें मुहम्मद तुग़लक़ने दिल्लीका विचारपति बना दिया था। 'सफ़र इब्नबतूता' नामक ग्रन्थ इन्होंने लिखा है। १३३२ ई०में ये मक्के तीर्थयात्रा करने गये थे। इनके उक्त ग्रन्थमें अरबका विशेष वर्णन नहीं मिलता। मक्केके विषयमें इन्होंने इतना ही कहा है,—"परमेश्वर इसे बड़ा बनाये।"

ईम् (वै० अव्य०) १ अच्छा। हां। ठीक है। २ बस! ठहरो! यह प्रायः छोटे शब्दोंके अन्तमें वाक्य आरम्भ होते समय अथवा सम्बन्धवाचक सर्वनाम, यद् अव्यय, उपसर्ग और आत्, उत् तथा अध आदि निपातोंके पीछे लगता है।

"श्रुतिरपि च पुरुषस्याध्यासक्तिः।" (५।८)

वस्तुतः प्रकृतिमें पुरुषका अध्यास सिद्ध होता है। क्योंकि वेदने भी निर्देश किया है, कि पुरुषसे जगत् निकला है। (आत्मासे नहीं)

ईश्वरवादीने ब्रह्म और हिरण्यगर्भ शब्दसे जैसे ईश्वरको समझा है, वैसे ही कपिलने भी समुदय जीवका आदिबीज एक पुरुषको माना है।

"ईदृशेश्वरसिद्धिः सिद्धा।" (३।५७)

इस प्रकार (प्रकृतिलीन) जन्येश्वर अवश्य मानना पड़ेगा।

"प्रधानसृष्टिः परार्थं स्वतोऽप्यभोक्तृत्वादुष्ट्रकुङ्कुमवहनवत्।"

(उस) प्रधानकी जगत्सृष्टि दूसरेके लिये है। क्योंकि उष्ट्रके कुङ्कुम वहनकी तरह वह स्वयं भोक्ता नहीं होता।

"प्रकृतिपुरुषयोरन्यत् सर्वमनित्यम्।" (५।७२)

प्रकृति और पुरुषको छोड़ कर सभी अनित्य है। (अतएव प्रकृति और पुरुष ही जगत्का उपादान-कारण ठहरता है)

अवशेषमें महर्षि कपिलने धारणा, ध्यान, आसन, विहित कर्मानुष्ठान और वैराग्यको ही मोक्षका द्वार बतलाया है। सांख्यसूत्र ३।३०—३६ देखो।

योगसूत्रमें पतञ्जलि मुनिने प्रकाशित किया है,—

"क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः।" (योगसू० १।२४)

क्लेश, कर्म, विपाक एवं आशय जिसे छू नहीं सकता और जो कालत्रयसे पृथक् तथा आत्मासे स्वतन्त्र रहता है, वही ईश्वर है।

"तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्।" (१।२५)

ईश्वर निरतिशय ज्ञान रखनेसे सर्वज्ञ है।

"पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।" (१।२६)

वह पूर्वतनों (आदि सृष्टिकर्तावों)का भी गुरु है। वह किसी काल द्वारा अवच्छिन्न नहीं होता।

"तस्य वाचकः प्रणवः।" (१।२७)

प्रणव उसका बोधक है।

"तज्जपस्तदर्थभावनम्।" (१।२८)

उस प्रणवका जप और उसके अर्थका ध्यान करना ही उपासना है।

"ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च।" (१।२९)

(पूर्वोक्त उपासना द्वारा चित्त निर्मल होनेपर) उसके प्रत्यक्चैतन्यका (अर्थात् शरीरान्तर्गत आत्म-सम्बन्धीय) ज्ञान उपजता है। उस समय दूसरा कोई विघ्न नहीं पड़ता। (निर्विघ्न समाधि लग जाता है)

कणाद ऋषिने ईश्वर अथवा पुरुष नामसे किसीका अस्तित्व नहीं माना है। (इसीसे अनेक उन्हें नास्तिक कहा करते हैं) किन्तु उनके भी गौणरूपसे ईश्वर माननेका प्रमाण मिलता है। कणादके मतमें—

"वृक्षाभिसर्पणमित्यदृष्टकारितम्।" (वैशेषिक ५।२।७)

वृक्षमें रस सञ्चार होनेका कारण अदृष्ट ही है।

"अपसर्पणमुपसर्पणमशितपीतसंयोगाः
कार्यान्तरसंयोगाश्चेत्यदृष्टकारितानि।" (५।२।१७)

अपसर्पण, उपसर्पण और भुक्त एवं पीत वस्तुका संयोग अदृष्टसे ही उत्पन्न होता है।

सिवा इसके अन्यान्य स्थलमें अदृष्टको अनेक वस्तुका कारण कहा है। इससे समझ पड़ता है कि कणाद-कथित अदृष्ट ही (अर्थात् जिसका कार्यकारण प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर नहीं होता) ईश्वर है। कणादमतमें अदृष्ट कारण-विशेष द्वारा परमाणु समुदायका संयोग होनेसे यह विश्वब्रह्माण्ड बना है। परमाणु देखो।

महर्षि गौतमके मतसे—

"ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्यदर्शनात्।" (न्यायसू० ४।१।१९)

ईश्वर ही कारण ठहरता है, क्योंकि मनुष्य-कृत कर्म सर्वदा सफल नहीं होता। न्याय देखो।

गौतमके मतसे परमेश्वरमें नित्य ज्ञान, इच्छा और यत्नादि कतिपय गुण रहते हैं। वह जगत्का केवल निमित्त कारण है, उपादान कारण नहीं। जैमिनि ऋषिके मतमें वैदिक कर्मानुष्ठान द्वारा पुरुषार्थ सिद्ध सकता है। उन्होंने भी ब्रह्मका अस्तित्व स्वीकार किया है,—

"ब्रह्मापीति चेत्।" (पूर्वमीमांसा १२।१।११)

महर्षि बादरायणने समग्र उपनिषद्का सार निकाल वेदान्तसूत्रमें अच्छीतरह ईश्वरतत्त्वकी मीमांसा लिखी है। उन्होंने कपिल, कणाद, गौतम प्रभृतिका मत काटकर एक अद्वितीय परब्रह्मका स्वरूप दिखा दिया है। उनके मतसे—

"जन्माद्यस्य यतः।" (वेदान्तसू० १।१।२)

जिससे जन्मादि (उत्पत्ति, स्थिति, भङ्ग) होते हैं, वही ब्रह्म है।

"आनन्दमयोऽभ्यासात्।" (१।१।१२)

परमात्म विषयमें आनन्द शब्दका बहु उच्चारण सुनते हैं। (इसी हेतु श्रुति-उक्त आनन्दमय परमात्मासे भिन्न नहीं है)

"नेतरोऽनुपपत्तेः।" (१।१।१६)

क्योंकि आनन्दमयमें जीवत्व नहीं है (परमात्मा और जीव भिन्न है)

"गतिसामान्यात्।" (१।१।१०)

समानरूपसे चेतनमें ही जगत्‌की कारणता प्रतीत होती है।

"श्रुतत्वाच्च।" (१।१।११)

श्रुतिके मतमें सर्वज्ञ ईश्वर ही जगत्‌का कारण है।

"अनुपपत्तेस्तु न शारीरः।" (१।२।३)

ब्रह्ममें जीवका धर्म मिल सकता है, किन्तु जीवमें ब्रह्मका धर्म नहीं रहता।

"परात्तु तच्छ्रुतेः।" (२।३।४१)

क्या कर्तृत्व और क्या भोक्तृत्व समस्त ही परमात्माके अधीन हैं। परमात्मा और वेदान्त देखो।

प्रधानके जगत्कर्तृत्वको छोड़, वेदान्तका अपरापर मत अनेकांशमें सांख्यसे मिल जाता है। किन्तु इतने दिनोंसे कर्म एवं ज्ञानकाण्डपर जो झगड़ा था और दर्शनकारोंमें अपने-अपने विभिन्न मतपर जो विवाद बढ़ा था, श्रीकृष्णने जन्म ले उसको साधारणका सन्देह हटाकर मिटा दिया और सर्वशास्त्र-सङ्गत विशुद्ध ईश्वरतत्त्व देखा दिया। श्रीकृष्ण-प्रोक्त गीता, वेद उपनिषद् और दर्शनशास्त्रके एकत्र मिलनकी परिचायक है। वास्तवमें भगवद्गीताके तुल्य सार्वजनिक उपदेशशास्त्र आजतक कहीं देख नहीं पड़ता। गीतामें भगवान्‌ने सांख्यके 'प्रधान', योगके 'ईश्वर', वैशेषिकके 'परमाणु', न्यायके 'कारण' और मीमांसाके 'ब्रह्म'को ईश्वर मान लिया है। उन्होंने लोगोंको समझाया—वेदोक्त कर्मकाण्ड और उपनिषद्प्रोक्त ज्ञानकाण्ड दोनोंसे ईश्वर वा मोक्ष मिला जुला है। उनके मतमें—

"त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किञ्चित् करोति सः॥ २०
निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥ २१
यदृच्छालाभसन्तुष्टो द्वन्द्वातीतो विमत्सरः।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते॥ २२
गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते॥ २३
ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतं।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना॥" २४ (गीता ४ अध्याय)

'जो कर्मफलकी आसक्ति छोड़ चिरतृप्त और सबके आश्रयसे दूर रहता है, वह सम्यक् प्रवृत्त होते भी कोई कर्म नहीं करता। जो कामना और सकल परिग्रह छोड़कर अपने आत्मा तथा मनको विशुद्ध रखता है, वह केवल शरीर द्वारा कर्मानुष्ठान करते भी पापभोगी नहीं बनता। जो यदृच्छा लाभसे सन्तुष्ट, शीतउष्ण एवं सुखदुःखादि द्वन्द्वसहिष्णु, मत्सरविहीन और सिद्धि तथा असिद्धिको समान माननेवाला है, वह कर्म करते भी किसी बन्धनमें नहीं पड़ता। जो कामना छोड़कर, रागादिसे मुक्त हो ज्ञानको चित्तमें अवस्थान देता है उसके यज्ञार्थ कर्मानुष्ठान करनेसे सकल कर्म विलुप्त हो जाते हैं। स्रुक् स्रुवादि सकल पात्र ब्रह्म, हवनीय घृतादि ब्रह्म, अग्नि ब्रह्म और होम करनेवाला भी ब्रह्म ही है। कर्मस्वरूप ब्रह्म जिसका समाधि लगता, उसीको ब्रह्म मिलता है।'

इस प्रकार भगवान्‌ने कर्मयोगीको ईश्वरतत्त्वका उपदेश दे पीछे प्रकाश किया है,—

"आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते॥" (गीता ६।३)

जो मुनि ज्ञानयोग पर आरोहण करना चाहता है, कर्म ही उसका सहाय बनता है। अनन्तर योगपर आरोहण करनेवालेको कर्मत्यागका सहारा लेना पड़ता है।

इसी प्रकार कर्म और ज्ञानकाण्डका मिलन हुआ है। गीतामें व्यक्त किया है—एकके अभावमें दूसरा हो नहीं सकता।

श्रीकृष्णके मतमें (उपनिषद्प्रोक्त) अज, अव्यय और जगत्‌का मूलकारण जो ब्रह्म है। (गीता ८।१) वह जन्मरहित, अनश्वर-स्वभाव और सकलका ईश्वर होते भी मायामें पड़कर जन्मान्तरीय कर्मानुसार प्रलयकाल-विलीन कर्मादि परवश समस्त भूतोंको बनाता है, किन्तु स्वयं उस सकल सृष्टिके आयत्त नहीं होता। माया उसका अधिष्ठान ले इस चराचर विश्वको उपजाती है। ईश्वरके अधिष्ठान निमित्त ही यह जगत् पुनः पुनः उत्पन्न होता है।

"...............विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्॥ ८
न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु॥ ९
मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम्।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते॥" १० (गीता ९ अध्याय)

मैं स्वीय प्रकृतिका आश्रय पकड़ अविद्या-परवश प्राणिसमूहको बारबार सृष्टि करता हूं, किन्तु उस सृष्ट कर्मके आयत्त नहीं रहता। मैं सकल ही कर्ममें अनासक्त हो उदासीनकी भांति सर्वदा अवस्थान रखता हूं। प्रकृति मेरा अधिष्ठान पकड़ इस चराचर जगत्‌को बनाती है। मेरे अधिष्ठानके हेतु ही जगत् नियत रूपमें बदलता (पुनः पुनः उत्पन्न होता) रहता है। वह सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है। (गीता ८।१) वह स्वीय प्रकृतिका आश्रय ले समय-समय पर जन्म-ग्रहण किया करता है।

"अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥ ६
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ ७
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥" ८ (गीता ४ अध्याय)

यद्यपि मैं जन्मरहित, अव्ययात्मा एवं सर्वभूतका ईश्वर हूं तो भी नित्य प्रकृतिका आश्रय ले जन्मग्रहण करता हूं। जिस जिस समय धर्मका विप्लव और अधर्मका प्रादुर्भाव होता है, उसी उसी समय मैं आत्माको सृष्टि किया करता हूं। मैं साधुके परित्राण, असाधुके विनाश और धर्मके संस्थापनके लिये युग-युगमें जन्म लेता हूं।

ईश्वरको जो जिस भावसे पुकारता है, वह उसी भावसे उन्हें पा जाता है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और स्त्री सब कोई उस परमपुरुषका आश्रय ले अत्युत्कृष्ट गति पा सकते हैं। (गीता ९ अध्याय)

इसी प्रकार गीतामें सर्ववादिसम्मत ईश्वरतत्त्व स्थापित हुआ है। गीतामें ईश्वरके अवतारकी कथा लिखी है और पुराणमें उसी महापुरुषकी लीला वर्णित हुई है। सकल पुराणके मतमें ईश्वरने अपनी मायासे सगुण बन ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर संज्ञा पायी है।

मत्स्यपुराणमें लिखा है, कि प्रकृतिके गुणत्रयका नाम ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर पड़ा है। रजोगुण ब्रह्मा, सत्वगुण विष्णु और तमोगुण रुद्रका स्वरूप है।

"सत्वरजस्तमश्चैव गुणत्रयमुदाहृतम्।
साम्यावस्थितिरेतेषां प्रकृतिः परिकीर्तिता॥ १४
केचित् प्रधानमित्याहुरव्यक्तमपरे जगुः।
एतदेव प्रजासृष्टिं करोति विकरोति च॥ १५
गुणेभ्यो क्षोभमाणेभ्यस्त्रयो देवा विजज्ञिरे।
एका मूर्तिस्त्रयो भागा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः॥" १६
(मात्स्य ३ अध्याय)

पुराणमें इन तीनों देवताओंकी उपासना वर्णित है और यही त्रयीमूर्ति सर्वशक्तिमान् ईश्वरभावसे पूजित है। सिवा इसके महामाया, लक्ष्मी प्रभृति देवियों और दूसरे देवताओंकी उपासना भी देख पड़ती है। किन्तु सकल ही विशुद्ध सत्त्वोपाधिविशिष्ट परातीत परब्रह्म माने गये हैं। सकल पुराणमें प्रधानतः ईश्वरकी साकार उपासना निरूपित है। पुराणके मतसे इसी उपासना द्वारा ईश्वर मिल सकता है। ऐसे स्थलपर अनेक लोग आश्चर्यमें आकर पूछ बैठेंगे—जिस देशमें ज्ञान-प्रधान उपनिषद् एवं दर्शन द्वारा ईश्वरकी निराकार उपासना ठहरायी, और ईश्वरको सर्वव्यापी सर्वनियन्ता बता सर्वत्र घोषणा की गयी, उसी ज्ञानप्रधान देशमें जगद्व्यापी ईश्वरकी रूपकल्पना कैसे अव-धारित हुयी? जिसे निराकार कहा गया, उसके आकारकी कल्पना करनेका क्या प्रयोजन पड़ा?

पुराणकार व्यासदेवने देखा—ऐसा समय है,

उसके अनुसार ईश्वरोपासनाका प्रचार करना भी कर्तव्य है। कर्म एवं ज्ञानमार्ग पर अनेक चलना चाहते हैं सही, किन्तु सहज ही उसे समझ नहीं सकते—कैसे उस परमेश्वरकी कल्पना की जाय। कर्म करते हैं सही और ज्ञानालोचना भी चलाते हैं सही, किन्तु उससे मनको तृप्ति दे नहीं सकते। हम संसारी है और संसारबन्धनमें प्राय: जड़ीभूत रहते हैं, जो कुछ समय मिलता है, उसमें मन इतना नहीं लगता—कि उस निराकार अद्वितीय परमेश्वरका ध्यान बंध सके। संसारमें ऐसा निभृत स्थान ढूंढ़ नहीं पाते, जहां रहकर मनको ठहरावें और चित्तवृत्तिको निरोधमें ला सके। जितने समय कर्मकाण्ड एवं ज्ञानकाण्डकी आलोचना चलाते हैं, उसमें मनको शान्त नहीं पाते और न प्राणमें भक्तिका भाव ही बढ़ाते हैं; केवलमात्र संसारके वैराग्यमें ही पड़ जाते हैं। संसारमें रहकर कैसे उस परमपिताको पहचान सकेंगे? इसलिये संसारियोंको उपासनाका भेद सिखाने और सहज ही ईश्वरका रूप समझानेके लिये भक्तिप्रधान अष्टादश महापुराण एवं उपपुराण बनाये गये। भगवान्‌ने भी कहा है,—

"पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥" (गीता ९।२६)

जो भक्ति सहकारसे मुझे पत्र, पुष्प, फल और जल देता है, मैं संयमी व्यक्तिका वही द्रव्य खा पी लेता हूं।

इसीसे पुराणमें पत्र, पुष्प, फल और जलसे सहज उपासना प्रचारित हुई है। पुराणकारके ईश्वरकी असंख्य मूर्ति माननेका यह कारण है—कि जिसे जिस रूपकी भक्ति रहे, वह उसी रूपकी पूजा करे।

हमारे शास्त्रमें ईश्वरके शरीरकी जो कथा है वह समस्त ही रूपक है। वेदान्तसूत्रमें स्पष्ट लिखा है—

"आनुमानिकमप्येकेषामिति चेन्न शरीररूपकविन्यस्तगृहीतेर्दर्शयति च।"
(ब्रह्मसूत्र १।४।१)

कुछ स्थिर होकर विचारनेसे स्पष्ट ही समझ पड़ता है कि पुराणोक्त ईश्वरके अवतारकी सकल लीला प्रकृत घटना नहीं—समस्त ही रूपक है। भगवान्‌के कूर्म अवतारमें समुद्रमन्थनका उपाख्यान आया है। इस उपाख्यानके पाठसे यही उपलब्धि होती है—

'देहिमात्र इन्द्रियरूपी असुरगण-कर्तृक परिपीड़ित है। उसका कर्तव्य इन्द्रियगणको वशीभूत बना विवेकादि देवताके साहाय्यसे कैवल्यरूप अमृत उत्पादन करना है। किन्तु यह कोई साधारण बात नहीं है। इन्द्रियरूपी असुरगणका सहजमें वशीभूत होना कठिन है। इसीसे भगवान्‌ने प्रथम विवेकादि देवतागणसे उनको मिला दिया था। पीछे इन्द्रियादिके अधिपति मोह अर्थात् देहात्मबोधसे विवेकादिने सन्धि की और श्रुतिसमुद्र मथनेके लिये उभय दलने बुद्धिकी मन्थनदण्ड बना आत्माको रज्जु हाथमें ली। आत्मा कूटस्थ है। इसीसे कूर्म उपाधि विशिष्ट आत्मा मन्दार नामक देहकूटमें था। मन्थनसे प्रथम ही उपसर्गरूप कालकूट निकला। महादेवरूप तमोलयकारी गुरुदेवने उसे पीकर शिष्यगणका व्याघात हटा दिया। (क्योंकि प्रथम गुरुके अशेष कष्ट उठानेसे शिष्यको ज्ञान आता है) फिर निर्विघ्न वेदाभ्यास होने लगा। क्रम-क्रमसे यज्ञरूप सुरभि, ऐश्वर्यरूप उच्चैःश्रवा घोटक, सांख्ययोगरूप ऐरावत नामक हस्ती, अष्टाङ्गयोग-रूप अष्ट दिग्हस्ती, अष्टसिद्धिरूप अष्टहस्तिनी, जीवोपाधिरूप कौस्तुभमणि, आत्मोपाधिक पद्मराग, चित्तोल्लास-जनक आनन्दमय पारिजात वृक्ष, शान्ति एवं करुणा, श्रद्धादि अप्सरागण, चित्शक्तिरूप लक्ष्मी और मिथ्यादृष्टि अर्थात् अविद्यारूपी वारुणीकी उत्पत्ति हुई। परिशेष कैवल्यामृत हाथमें लिये ज्ञानरूप धन्वन्तरि निकले। इन्द्रियादि असुरगण अमृतरूप कैवल्य पानेके अयोग्य था। इसीसे भगवान्‌ने विद्यारूप मोहिनीके वेशसे उन्हें मोहित कर विवेकादि देववर्गको वह दे चिरजीवी बनाया। इसी समय तमः (राहु) ने गुप्तभावसे अमृत पिया और रजः एवं सत्त्वरूपी चन्द्रसूर्यने उसका परिचय दिया। अनन्तर अन्तर्यामी भगवान्‌ने ज्ञानतत्त्वरूप चक्र द्वारा उसका शिरश्छेदन किया।'

पुराणकारने यह भी सबको बारंबार समझाया—

यथार्थमें ईश्वरका रूप एवं वर्ण इत्यादि कुछ भी नहीं है, कल्पनामात्र है। ([illegible])

पुराणके मतमें ईश्वर ही पुरुष है। द्विजातिगण उसीको ब्रह्म बताते हैं और लयकालमें वही सङ्कर्षण नाम पाता है,—

"पुराणं पुरुषः प्रोक्तो ब्रह्म प्रोक्तो द्विजोत्तमैः ।
[illegible] सङ्कर्षणः प्रोक्तस्तस्मात् [illegible] ॥" ([illegible] अध्याय)

पुराणमें गीताका वही मूलतत्त्व कहा गया है,—

"मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥ २
ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते ।
सर्वत्रगमचिन्त्यञ्च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥ ३
संनियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥ ४
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥ ५
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥ ६
तेषामहं समुद्धर्त्ता मृत्युसंसारसागरात् ।" (गीता १२ अध्याय)

जो मेरे (ईश्वरके) प्रति अत्यन्त अनुराग और निविष्टमना हो श्रद्धापूर्वक उपासना करता है, वही प्रधान योगी है। एवं जो जितेन्द्रिय है सबको समान समझता है और अक्षर, अनिर्दिष्ट, अव्यक्त, अचिन्त्य, सर्वव्यापी, ह्रास-वृद्धिहीन, कूटस्थ तथा नित्य परब्रह्मकी उपासना करता है, वह भी मेरे ही पास पहुंचता है। देही अतिकष्टसे अव्यक्त गति पा सकता है। जो अव्यक्त ब्रह्ममें आसक्तमना होता है,वह अधिकतर दुःख उठाता है। जो मेरेपर सकल निर्भर कर एकान्त भक्तिपूर्वक मेरा ही ध्यान धरता है और मेरी ही उपासना करता है, उसे मैं मृत्युके आकार इस संसार-सागरसे छुड़ा देता हूं।

इससे संसारी समझ सकता है, कि भक्तिसहकारसे इष्टदेवको सकल समर्पण कर ध्यान-उपासना करने पर मोक्ष मिलता है।

पहले ही लिख दिया है, कि केवल साधककी सुविधाके लिये पुराणमें ईश्वरका नानारूप मान लिया है। वस्तुतः नाना रूपकल्पना रूपक मात्र है। पुराणमें भगवान्‌के मत्स्य, कूर्म, वराहादि नाना देह धारण-पूर्वक अवतार होनेका जो प्रसङ्ग है, उसके विवरण पाठसे समझ पड़ता है, कि वह सर्वगियन्ता सुर, नर, तिर्यगादि यावतीय जीवके आभासरूपमें अवस्थान करता है। तन्त्रमें ईश्वर आकर्षणशक्तिके नामसे भी निर्दिष्ट है,—

"[illegible] यदा च [illegible] ।
[illegible] ॥
[illegible] यदा च [illegible] ।
[illegible] यदा च [illegible] ॥
[illegible] यदा च [illegible] पुनः ।
[illegible] तदा ॥"([illegible] (पटल)

तन्त्रमें भी यही घोषणा हुई है,—

"चिन्मयस्याप्रमेयस्य निष्कलस्याशरीरिणः ।
साधकानां हितार्थाय ब्रह्मणो रूपकल्पना ॥"
(कुलार्णवतन्त्र ? पटल (अध्याय)

चिन्मय, अप्रमेय, निष्फल और अशरीरी ब्रह्मकी रूप-कल्पना केवल साधकके हितार्थ है।

इसीप्रकार साकार उपासना चली है। साकार उपासनाके प्रचारका प्रधान कारण यही है, कि मन अदृश्य वस्तुकी धारणा कर नहीं सकता। विशेषतः निराकार अक्षय अव्यक्त इत्यादि विशेषण-युक्त नाम सुननेसे प्रथम उसकी चिन्ता करना दुःसाध्य हो जाता है। सुतरां ऐसी साकार मूर्ति रखना चाहिये,जिससे सहज ही किसी प्रकार धारणा हो सके। आकार अवलम्बन करनेसे ध्यान और दर्पणा उभयका काम निकल आता है। मन नियत ही परिवर्तनशील है और नियत ही नव नव भाव ग्रहण करनेका प्रयासी है। इसीसे साकार-उपासक संसारी नाना मूर्तिमें ईश्वरकी पूजा करते हैं। आज षोड़शोपचारसे दशभुजाको और दो दिन पीछे भयङ्करा श्मशान महाकालीकी मूर्ति पूजते हैं। किन्तु साधक समझता है, कि दोनोंमें उसी एक महाशक्तिका पूजन होता है; केवल रूप और उपाधिका भेद रहता है।

आजकल शाक्त, शैव, वैष्णव, गाणपत्य प्रभृति विविध मतावलम्बी देख पड़ते हैं। शाक्त इसप्रकार स्तव करते हैं—

"नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्॥ ७
अतिसौम्यातिरौद्रायै देव्यै ह्रत्यै नमो नमः।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः॥ ११
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥ १२
या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥"

(मार्कण्डेयपुराण ८५ अध्याय)

"नमो देवि महामाये सृष्टिसंहारकारिणि।
अनादिनिधने चण्डि भुक्तिमुक्तिप्रदे शिवे॥
न ते रूपं विजानामि सगुणं निर्गुणन्तथा।
चरित्राणि कुतो देवि संख्यातीतानि यानि ते॥"

(देवीभागवत १।८।४०—४१)

शैव पुकारते हैं,—

"तं प्रपद्ये महादेवः सर्वमपराजितम्।
विभूतिः सकलं यस्य चराचरमिदं जगत्॥"

(शिवपुराण—वायुसंहिता १।७)

वैष्णवोंकी स्तुति है,—

"अविकाराय शुद्धाय नित्याय परमात्मने।
सदैकरूपरूपाय विष्णवे सर्वजिष्णवे॥
नमो हिरण्यगर्भाय हरये शङ्कराय च।
वासुदेवाय ताराय सर्गस्थित्यन्तकारिणे॥"

(विष्णुपुराण १।२।१४)

यद्यपि भिन्न भिन्न सम्प्रदाय भिन्न रूप और भिन्न नामसे अपने उपास्य देवताको पुकारते हैं तो भी यह अनायास ही समझ पड़ता है, कि वे समस्त मतावलम्बी उसी एक अद्वितीय ईश्वरको लक्ष्यकर अपनी-अपनी स्तुति करते हैं।

तन्त्रमें कहा है,—

"निर्गुणा प्रकृतिः सत्यमहमेव च निर्गुणः।
यदैव सगुणा त्वं हि सगुणोऽहं सदाशिवः॥
त्वं हि सगुणा देवी सत्यं हि निर्गुणः शिवः।
उपासकानां सिद्ध्यर्थं सगुणा सगुणो मतः॥"

(मुण्डमालातन्त्र ७ पटल)

मेरा (ईश्वरका) और प्रकृतिका निर्गुण होना सत्य है। किन्तु आपके सगुण होनेसे मैं भी सगुण (मूर्तिमान्) बन जाता हूं। देवीके सगुण और शिवके निर्गुण रहनेमें कोई सन्देह नहीं। हां, उपासकको कार्यसिद्धिके निमित्त उभय सगुण हो जाते हैं।

यह साकार उपासना आजकल सकल संसारी ईश्वर-तत्त्वानुसन्धायी प्राथम-कल्पिक भावको ग्रहण करना उचित है। श्रीमद्भागवतमें लिखा है,—

"अर्च्चादावर्च्चयेत् तावदीश्वरं मां स्वकर्मकृत्।
यावन्नवेद स्वहृदि सर्व्वभूतेष्ववस्थितम्॥" (भागवत ३।२९।२५)

मैं ईश्वर हूं। मुझे प्रतिमादिमें पूजना कर्मी लोगोंका तभीतक कर्तव्य है, जबतक उन्हें निज हृदय एवं सर्वभूतमें मेरा अवस्थान समझ नहीं पड़े।

किन्तु जब देही निज हृदय एवं सर्वभूतमें ईश्वरका अवस्थान पावे और प्रकृत ज्ञानमें समा जावे, तब उसे प्रतिमाका पूजन आवश्यक नहीं है। भगवान्ने समझाया है,—

"अथ मां सर्वभूतेषु भूतात्मानं कृतालयम्।
अर्हयेद्दानमानाभ्यां मैत्र्याभिन्नेन चक्षुषा॥" (भागवत ३।२९।२७)

अनन्तर मुझे सर्वभूतमें अवस्थित समझ सकनेपर मनुष्य सर्वत्र सकलको दान, मान तथा मैत्रीसे पूजे और अभिन्न दृष्टिसे देखे। (यही मेरी प्रकृत पूजा है)

हमारे प्राचीन शास्त्रोंमें जिस प्रकार ईश्वरका ग्रहण किया गया है उसे हमने अलग-अलग दिखा दिया। अब चार्वाकादि भिन्न सम्प्रदाय जिस प्रकार ईश्वरका अस्तित्व मानते या नहीं मानते उसे भी नीचे दिखाते हैं।

चार्वाकके मतमें ईश्वर कोई वस्तु नहीं। चैतन्य-विशिष्ट देह ही आत्मा है। उसे छोड़ स्वतन्त्र आत्माका रहना असङ्गत है। लोकसिद्ध राजा परमेश्वर और देहका उच्छेद ही मोक्ष है।

जैनमतमें अनन्तज्ञान, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य आदि अनेक गुणोंसे विशिष्ट आत्माको ईश्वर माना है। संसारमें जितने आत्मा हैं, वे सब शक्तिकी अपेक्षा ईश्वर हैं, परन्तु ज्ञानावरण आदि आठ कर्मोंसे उनके गुण आहत हो रहे हैं, इसलिये वे इस समय अल्पज्ञता, अल्पशक्तिता आदि दूषणोंसे दूषित होनेके कारण ईश्वर नहीं हैं। जिस समय यह जीव अपने तप और ध्यानके प्रभावसे कर्मोंको नष्टकर डालता है, उस समय

सर्वज्ञता आदि गुणोंसे विशिष्ट हो जाता है और उसी समयसे ईश्वर कहलाने लगता है। फलतः जिसने आत्माओंने मुक्ति (ज्ञानावरणादि कर्मोंसे शून्यता) प्राप्त कर ली है, वे सब ही ईश्वर हैं। जैनलोग ऐसे ही आत्माओंको पूजते हैं, ऐसोंका ही ध्यान करते हैं और ऐसोंको ही ईश्वर नामसे पुकारते हैं। नैयायिक आदि मतावलम्बियोंके समान जैनशास्त्र ईश्वरको सृष्टिका कर्ता नहीं स्वीकार करता। उसके मतमें यह जगत् अनादि-निधन है। इसको न तो किसीने उत्पन्न किया और न कोई इसका सर्वथा नाश ही कर सकता है। जो कुछ हमको इस समय वर्त्तमान मालूम पड़ता है और थोड़ी देर बाद उसीका जो हम नाश देखते हैं, वह और कुछ नहीं केवल पदार्थका पर्याय मात्र बदलना है, ऐसे पर्याय तो सर्वदा बदला करते हैं, परन्तु ऐसा कोई समय न था और न हो सकता है जिस समय कोई पदार्थ न हो या न रहा हो। क्योंकि सत्‌का अभाव और असत्‌की उत्पत्ति प्रमाण-बाधित है।

समन्तभद्रस्वामीने अपने 'रत्नकरण्डश्रावकाचार'में ईश्वरका जो लक्षण बतलाया है, वह यह है—

"आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥ ५
क्षुत्पिपासाजरातङ्कजन्मान्तकभयस्मयाः।
न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥" ६
परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती।
सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७

अर्थात् जिसके भूख, प्यास, बुढ़ापा, रोग, जन्म, मरण, भय, गर्व, राग, द्वेष, मोह और 'च'से रति अरति, खेद, स्वेद, निद्रा, चिन्ता, आश्चर्य ये अठारह दोष न हों जो सर्वज्ञ हो, समस्त प्राणियोंका हितैषी हो, कर्ममल रहित हो, कृतकृत्य हो, और जो परम पदमें रहनेवाला हो वही आप्त है।

बहुतसे लोगोंका ख्याल है, कि जैनी ईश्वर नहीं मानते या चौबीस तीर्थंकरोंको ही ईश्वर मानते हैं। परन्तु यह बात ठीक नहीं। जैनशास्त्रमें उपर्युक्त गुणवाला ईश्वर माना गया है। चौबीस तीर्थंकरोंको जो विशेष रीतिसे जैनी पूजते हैं, उसका कारण यह है कि सामान्य मुक्तात्माओंकी अपेक्षा उन्होंने समय समयपर सदुपदेश द्वारा आत्माके कल्याणका विशेष रीतिसे मार्ग बतलाया है। उन्हींके आविर्भूत मार्गपर चलकर लोगोंने मुक्ति पाई है और सामान्योंने बहुत थोड़ा उपदेश दिया है। जैनदर्शन और जैनधर्म शब्द देखो।

बौद्धोंमें प्रधानतः हीनयान और महायान दो सम्प्रदाय हैं। हीनयान गौतमबुद्धका प्रचारित धर्ममत मानते हैं। उनके मतसे देह क्षणभङ्गुर है, ध्यान, धारणा एवं योग द्वारा ज्ञान मिलता है; और उसके पीछे निर्वाण होता है। ये ईश्वरका अस्तित्व स्वीकार नहीं करते। महायान शून्यवाद मानते हैं। उनके शास्त्रमें ईश्वरकी बात बिलकुल नहीं लिखी। परवर्तीकालमें उन्होंने हमारे तन्त्रोक्त देवताओंको स्वीकार किया सही, किन्तु एक अद्वितीय ईश्वरको माननेसे मुंह मोड़ लिया। ये आत्माको भोगी, विनाशी और क्षणस्थायी बताते हैं। शून्यता ही नित्य, अक्षय और अव्यय है। शरीरस्थ इन्द्रियगण अवधि अभावविशिष्ट रहता है अर्थात् आत्मदर्शन करनेकी क्षमता नहीं रखता। अत-एव अभाव-स्वभाव समझ भवार्णव अतिक्रम करना मुमुक्षुका धर्म है। जगत्‌की उत्पत्तिसे पूर्व केवल शून्य था, इसीसे शून्यके आश्रयका प्रयोजन पड़ा। शून्य व्यतीत सकल पदार्थ मिथ्या हैं। शून्यमें मन लगा समाधिस्थ होनेसे क्रमशः देही निर्वाणपद पाता है। समाधिराज, माध्यमिकसूत्रवृत्ति और अभिधर्मकोष-व्याख्या नामक बौद्धग्रन्थमें यह बात अच्छीतरह लिखी है। बौद्धधर्म देखो।

उक्त जैनों और बौद्धोंको छोड़कर पहले दूसरे भी अनेक सम्प्रदाय थे; जिनमें कोई ईश्वरको मानते, कोई ईश्वरको जड़रूप जानते और कोई ईश्वरको बिलकुल नहीं मानते न थे। आनन्दगिरि-कृत शङ्कर-दिग्विजयमें उनका विवरण विद्यमान है।

बौद्ध और जैनोंका प्राधान्य बढ़ने पर भारतवर्षमें सनातन ब्राह्मण धर्मके लोप होनेका उपक्रम चला था। उसी समय भगवान् शङ्कराचार्यने जन्म ग्रहणकर

विधर्मियोंके कराल कवलसे सनातन धर्मको निकाल अद्वैतवाद प्रचार किया। उनके मतसे—

"न तावदयमेकान्तेनाविषयः। अस्मत् प्रत्ययविषयत्वात् अपरोक्षत्वाच्च प्रत्यगात्मप्रसिद्धेः। न चायमस्ति नियमः पुरोऽवस्थित एव विषये विषयान्तरमध्यसितव्यमिति। अप्रत्यक्षेऽपि ह्याकाशे बालास्तलमलिनताद्यध्यस्यन्ति। एवमविरुद्धः प्रत्यगात्मन्यप्यनात्माध्यासः।" (शारीरिकभाष्य १।१)

यह कथन ठीक नहीं कि आत्मा बिलकुल अविषय है और उसमें किसी प्रकार विषय लगना सम्भव नहीं। इस जीवावस्थामें अस्मद् प्रत्ययकी विषयता होती है और अन्तरात्म-रूपसे प्रतीत पड़नेपर अपरोक्षता भी रहती है। आत्मा 'अहं' (मैं) ज्ञानका विषय होनेसे बिलकुल अविषय और अपरोक्ष कहा जा नहीं सकता। अविद्या-कल्पित 'अहं' जबतक रहेगा, तबतक उसे अहं वृत्तिका विषय कौन न कहेगा! आत्मा अप्रत्यक्ष नहीं, पूर्ण प्रत्यक्ष है। क्योंकि जीवमात्र आत्मा अर्थात् अपनेको अहं (मैं) रूपसे देखा करता है। बालक अप्रत्यक्ष आकाशमें मलिनताका दोष लगा देते हैं। अतएव साक्षात् प्रत्यक्ष और इन्द्रियग्राह्य न होते भी आत्माके समझनेमें कोई बाधा नहीं पड़ती।

"योत्पत्तिर्ब्रह्मणः कारणात् तत्रैव स्थितिः प्रलयश्च ते प्रत्याख्याताः। न यथोक्तविशेषणस्य जगतो यथोक्तविशेषणमीश्वरं मुक्त्वान्यतः प्रधानादचेतनादणुभ्योऽभावाद्वा संसारिणो वा उत्पत्त्यादि सम्भावयितुं शक्यम्।" (शारीरकभाष्य १।१।२)

ब्रह्मसे जगत् उपजता, ब्रह्ममें ठहरता और ब्रह्ममें ही समा जाता है। बस! ईश्वर व्यतीत शून्य, अभाव, जड़प्रकृति, परमाणु किंवा जन्म-मृत्युके अधीन किसी संसारी जीवसे इस प्रकार सृष्टि, स्थिति और लय होना विज्ञ मतमें सम्भावित नहीं होता।

शङ्कराचार्यने भिन्न भिन्न मतको काट इसप्रकार विशुद्ध वेदान्त मत प्रचार किया था,—

"अयं यत् सृजते विश्वं तदन्यथयितुं पुमान्।
न कोऽपि शक्तस्तेनायं सर्वेश्वर इति स्मृतः॥१०७
अशेषप्राणिबुद्धीनां वासनास्तत्र संस्थिताः।
ताभिः क्रोडीकृतं सर्वं तेन सर्वज्ञ ईरितः॥१०८
विज्ञानमयमुख्येषु कोशेष्वन्यत्र चैव हि।
अन्तस्तिष्ठन् यमयति तेनान्तर्यामितां व्रजेत्।
बुद्धौ तिष्ठन्नान्तरोऽस्या धियानीक्ष्यश्च धीवपुः।
धियमन्तर्यमयतीत्येवं वेदेन घोषितम्॥" १०९
(पञ्चदशी ६ परिच्छेद)

ईश्वरने जो कुछ बनाया, उसे कोई बिगाड़ नहीं सकता; इसीसे वह सर्वेश्वर कहलाता है। कारण, समस्त प्राणीको बुद्धि वासना उसी ईश्वरमें रहती है। बुद्धिवासनासे ही यह ब्रह्माण्ड व्याप्त है। बुद्धिवासना पराधीन होनेसे ईश्वरको सर्वज्ञ कहते हैं। अन्तर्यामी होनेका कारण यह है, कि विज्ञानमय प्रभृति कोष और अन्यान्य वस्तुसमूहमें रह ईश्वर उसको यथानियम नियुक्त करता है। जो बुद्धिमें रहते भी बुद्धिसे दूर पड़ता है और धीमय होते भी धीका विषय नहीं बनता, वही ईश्वर बुद्धिसे अन्तरस्थ रहते भी बुद्धिको नियुक्त कर देता है।

"नार्थः पुरुषकारेणेत्येवं मा शङ्क्यतां यतः।
ईशः पुरुषकारस्य रूपेणापि विवर्तते॥" ११९

इसप्रकार आशङ्का न कीजिये, कि कुछ भी पुरुषका कृतिसाध्य होना असम्भव है। क्योंकि ईश्वर ही पुरुषरूपमें परिणत होता है।

"रात्रिघस्रौ सुप्तिबोधावुन्मीलननिमीलने।
तूष्णीम्भावमनोराज्ये इव सृष्टिलयाविमौ॥" १११

जैसे दिवा एवं रात्रि, जाग्रत एवं सुषुप्ति; चक्षुःके उन्मीलन एवं निमीलन और तूष्णीभाव एवं मनोराज्य प्रभृतिमें ज्ञानका, वैसे ही ईश्वरमें जगत्‌का तिरोभाव तथा आविर्भाव स्पष्ट समझ पड़ता है और प्रलय तथा उत्पत्ति कहा जाता है।

"मायी सृजति विश्वं सन्निरुद्धस्तत्र मायया।
अन्य इत्यपरा ब्रूते श्रुतिस्तेनेश्वरः सृजेत्॥
आनन्दमय ईशोऽयं बहु स्यामित्यवैक्षत।
हिरण्यगर्भरूपोऽभूत् सुप्तिः स्वप्नो यथा भवेत्॥" ११०

मायासे ईश्वर अपनी मायामें बद्ध हो इस समस्त विश्वकी सृष्टि करता है। श्रुतिमें हो उसे परब्रह्मसे भिन्न कहा है। सुषुप्तिके अवस्थाभेदसे स्वप्नरूपमें परिणत होनेकी भांति ईश्वरने बहु शरीरमें प्रविष्ट होनेके सङ्कल्प द्वारा हिरण्यगर्भरूप पाया है।

ईश, हिरण्यगर्भ, विराट्, प्रजापति, विष्णु, रुद्र,

इन्द्र, अग्नि, विश्वेदेव, मैनाक, मारिक, यक्ष, राक्षस, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, गो, अश्व, मृग, पक्षी, अश्वत्थ, वट, आम्र, यव, धान्य, तृण, जल, प्रस्तर, मृत्तिका, काष्ठ, एवं कुद्दाल प्रभृति सकल ही उसके अवयव हैं और पूजा पानेसे शुभफल देते हैं।

"अद्वितीयब्रह्मतत्त्वे स्वप्नोऽयमखिलं जगत्।
ईशजीवादिरूपेण चेतनाचेतनात्मकम्॥
आनन्दमयविज्ञानमयावीश्वरजीवकौ।
मायया कल्पितावेतौ ताभ्यां सर्वं प्रकल्पितम्॥" ११६

ईश्वर, जीव एवं देह प्रभृति चेतन और अचेतन नामक जगत्‌समुदाय अद्वितीय ब्रह्मतत्त्वमें माया-कल्पित स्वप्नस्वरूप है। क्योंकि आनन्दमय ईश्वर और विज्ञानमय जीव दोनो माया द्वारा कल्पित हैं। इन्हीं दोनोंसे समुदाय विश्व बना है।

"ईक्षणादिप्रवेशान्ता सृष्टिरीशेन कल्पिता।
जाग्रदादि विमोक्षान्तः संसारो जीवकल्पितः॥" ११७ (पञ्चदशी)

सृष्टिविषयक सङ्कल्पसे सर्ववस्तुमें प्रवेश पर्यन्त ईश्वर और जाग्रत अवस्थादिसे मोक्ष पर्यन्त व्यापार समुदाय जीवकल्पित है। ब्रह्म और ब्रह्मवाद देखो।

कुछ पीछे पूज्यपाद रामानुजने प्रचार किया,—ईश्वर सकलका अन्तर्यामी है। जगत्‌सृष्टिके प्रारम्भमें चित् तथा अचित् सूक्ष्मभावसे उसके अङ्गरूपमें रहता है, किन्तु चित्, अचित् और ईश्वर तीनोंमें परस्पर भेद है। स्थूल रूपमें परिणत होनेसे चित् और अचित्‌का अन्तर्यामी ईश्वर होता है। जीवसमूह और जड़जगत्‌के नाना उपकरणमें ईश्वर सर्वदा वर्तमान रहता है।

चैतन्यदेवको रामानन्दने इसप्रकार ईश्वरतत्त्व समझाया था,—

"ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्दविग्रहः।
अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणम्॥" (ब्रह्मसंहिता)

अर्थात् सच्चिदानन्द-मूर्ति, सर्वकारणका कारण, अनादि और आदि गोविन्द ही परमकृष्ण ईश्वर है।

इसप्रकार रामानन्दने विष्णुपुराणका वचन उद्धृतकर जो ईश्वर-तत्त्व समझाया, 'चैतन्यचरितामृत' ग्रन्थमें वही विस्तृत भावसे बताया है। हम नीचे उसीका सार संक्षेपमें लिखते हैं,—

'कृष्णका स्वरूप सत्, चित् और आनन्दमय है। अतएव स्वरूप-शक्ति तीनप्रकार होती है। आनन्दांशमें आह्लादिनी, सदंशमें सन्धिनी और चिदंशमें सम्वित् शक्ति रहती है। कृष्णको आह्लाद देनेसे आह्लादिनी नाम पड़ा है। सुखरूप कृष्ण सुखास्वादन करता है। भक्तको सुख देनेका कारण आह्लादिनी ही है। आह्लादिनी जिसका अंश है, उसकी संज्ञा प्रेम है। प्रेम आनन्द और चिन्मय रूप-रसका आख्यान है। प्रेमका परम सार और भाव महाभावरूप श्रीराधा रानीको समझना चाहिये।' गौड़ीय वैष्णवसमाजके ईश्वरतत्त्वका सार यही है।

रामानुजके बाद भारतमें नाना सम्प्रदायों द्वारा वैष्णवधर्म प्रवर्तित हुआ था। मध्वाचार्यसे वल्लभाचार्य पर्यन्त विभिन्न वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तकोंने ज्ञान और कर्मकाण्डका प्राधान्य न मान भक्तिकाण्डको ही ईश्वर या भगवत् प्राप्तिका प्रकृष्ट मार्ग बताया। अवशेषमें महाप्रभु चैतन्यदेवने विशुद्ध प्रेम ही ईश्वर या कृष्ण-प्राप्तिका मुख्य कारण प्रदर्शित किया था। तदवधि चैतन्यदेव गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदायके प्रवर्तक हैं। इसीकि प्रभावसे परवर्तिकाल भारतखण्डमें नाना वैष्णव सम्प्रदायका प्रकाश हुआ। उसमें कोई श्रीकृष्ण, कोई राधा और कोई राधाकृष्णकी युगल मूर्तिको ईश्वर भावसे पूजते हैं। वैष्णवधर्म शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

बङ्गालके परमसाधक रामप्रसादके वचनानुसार शक्ति ही मूलाधार है। उसीके करनेसे सब कुछ होता है। उसके रूपकी कल्पना इस बार नहीं सकती। मन ही उसे पूजता और देखता है। प्रकृति-पुरुषसे विश्व बनता है।

महात्मा राममोहनरायके मतसे ब्रह्मका नामी-रूपादि रूपधारण केवल मायाका कार्य है। इसीसे भक्त केवल रूप माननेसे बद्ध नहीं रहता। उपासनाके भङ्गका कारण समझ सकनेसे भी ईश्वरको उपासना की सकती है। बाणीयाम, मण्डपप्रतिष्ठा और वेदमन्त्रयुक्त देवीपूजनसे भी आविर्भाव दर्शन-

पूर्वक साधक उसकी पूजा करता है। जिसका मन भगवद्भक्ति और ब्रह्मज्ञानसे परिपूर्ण रहता है, वह ही सकल प्रकार उसे पूज सकता है। वस्तुतः प्रतिमादि अर्चना और व्रतहोमादि कर्म साधकके पक्षमें ईश्वरभक्तिके उद्दीपक होते हैं। परमेश्वर सर्वजीव और सर्वत्र विचित्र व्यष्टि प्रकृतिमें विराजमान है। सर्वत्र दर्शनपूर्वक भगवान्‌के पवित्र आविर्भावको प्रसन्न साधु हृदयमें अर्घ करता है। ईश्वरकी शक्ति बहुत ही विचित्र है। वह भक्तके मङ्गलार्थ अवश्य युग युगमें अवतीर्ण हो सकता है। प्रकृति और जीवमें अवतीर्ण होनेकी भांति ईश्वर स्वेच्छारचित शरीरमें भी अवतार लेता है। इसीलिये शास्त्रमें रामकृष्णादि अवतारों कथा है।

स्वामी दयानन्द सरस्वतीने अपने मतका इस प्रकार प्रचार किया है,—

"यज्ञो वै विष्णुः। (शतपथब्रा० १का० १ अ० १) इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। (ऋक् १।२२।१७) इति सर्वजगत्कर्तृत्वं विष्णौ परमेश्वर एव घटते नान्यत्र विवेष्टि व्याप्नोति चराचरं जगत् स विष्णुः परमेश्वरः॥१॥ 'यस्मादृचो'० (अथर्व० १०।७।२०) यस्मात् सर्वशक्तिमतः ऋचः ऋग्वेदः अपातक्षन् उत्पन्नोऽस्ति यस्मात् परब्रह्मणः यजुर्वेदः अपाकषन् प्रादुर्भूतोऽस्ति। तथैव यस्मात् सामानि सामवेदः आङ्गिरसः अथर्ववेदोऽप्युत्पन्नो ऽस्ति। एवमेव यस्येश्वरस्याङ्गिरसोऽथर्ववेदमुखं मुखवत् मुख्योऽस्ति। सामानि लोमानीव सन्ति। यजुर्यस्य हृदयमृचः प्राणश्चेति रूपकालङ्कारः। यस्माच्चत्वारो वेदा उत्पन्नाः स कतमः स्विद्देवोऽस्तीति त्वं ब्रूहीति प्रश्नः। अस्योत्तरं तं स्कम्भं सर्वजगद्धारकं परमेश्वरं त्वं जानीहीति तस्मात् स्कम्भात् सर्वाधारात् परमेश्वरात् पृथक् कश्चिदप्यन्यो देवो वेदकर्ता नैवास्तीति मन्तव्यम्॥२"

अर्थात् शतपथब्राह्मण और, वेदमन्त्रके प्रमाणसे सिद्ध होता है, कि यज्ञ शब्दसे विष्णु एवं विष्णु शब्दसे सर्वव्यापक परमेश्वर ही लिया जाता है, कारण जगत्‌को उपजाना एक परमेश्वरसे भिन्न अन्य व्यक्ति द्वारा हो नहीं सकता। जिस सर्वशक्तिमान् परमेश्वरसे ऋक्, यजुः, साम और अथर्व ये वेदचतुष्टय उपजे हैं; उसका अथर्व मुख, साम लोम, यजुः हृदय और ऋग्वेद प्राणस्वरूप है। इस मन्त्रमें रूपकालङ्कार द्वारा ईश्वरने वेदोत्पत्ति दिखायी है। (पुनः वेदशास्त्रमें ईश्वरने प्रश्नोत्तरके बहाने बतलाया है) जिससे चारों वेद निकले, वह कौनसा देव है? उसको आप बतला दीजिये। इस प्रश्नके उत्तरमें भगवान्‌ने कहा—समग्र जगत्‌का धारणकर्ता परमेश्वर ही स्कम्भ है और वही वेद सकलका कर्ता समझा जाता है। उस सर्वाधार परमेश्वरसे भिन्न न तो कोई वेदकर्ता है और न मनुष्यकी उपासनाके योग्य इष्टदेव ही है। इसलिये जो मनुष्य वेदकर्ता परमात्माको छोड़ दूसरेको पूजता है, वह हतभाग्य गिना जाता है।

"ईश्वरस्य सकाशाद्वेदानामुत्पत्तौ सत्यां स्वतो नित्यत्वमेव भवति तस्य सर्वसामर्थ्यस्य नित्यत्वात्।"

परमेश्वरका यावतीय सामर्थ्य नित्य है और उसी परमेश्वरसे उत्पन्न होनेके कारण वेद भी स्वतः नित्य स्वरूप है।

"तद्यथा। तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम्॥१ (ऋग्वेद १।२२।२०) अस्यायमर्थः। यत् विष्णोः व्यापकस्य परमेश्वरस्य परमं प्रकृष्टानन्दस्वरूपं पदं पदनीयं सर्वोत्तमोपायैर्मनुष्यैः प्रापणीयं मोक्षाख्यमस्ति तत् सूरयः विद्वांसः सदा सर्वेषु कालेषु पश्यन्ति कीदृशं तत् आततम् आसमन्तात् ततं विस्तृतं यद्देशकालवस्तुपरिच्छेदरहितमस्ति। अतः सर्वैः सर्वत्र तदुपलभ्यते तस्य ब्रह्मस्वरूपत्वात् विभुत्वात्। कस्मिन् किमिव दिवीव चक्षुराततम् दिवि मार्तण्डप्रकाशे नेत्रदृष्टेर्व्याप्तिर्यथा भवति। तथैव तत्पदं ब्रह्मापि वर्तते मोक्षस्य च सर्वस्मादधिकोत्कृष्टत्वात्। तदेव द्रष्टुं प्राप्तुमिच्छन्ति। अतो वेदा विशेषेण तस्यैव प्रतिपादनं कुर्वन्ति एतद्विषयकं वेदान्तसूत्रं व्यासोऽप्याह। तत्तु समन्वयात्। (१।१।४) अस्यायमर्थः। तदेव ब्रह्म सर्वेषु वेदवाक्येषु समन्वितं प्रतिपादितमस्ति। क्वचित् साक्षात् क्वचित्परम्परया च। अतः परमोऽर्थो वेदानां ब्रह्मैवास्ति। तथा यजुर्वेदे प्रमाणम्। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति य आविवेश भुवनानि विश्वा। प्रजापतिः प्रजया संरराणस्त्रीणि ज्योतींषि सचते स षोडशी। (शुक्लयजुः ८।३६) एतस्यार्थः—यस्मात् नैव परब्रह्मणः सकाशात् परः उत्तमः पदार्थः जातः प्रादुर्भूतः प्रकटः अन्यः भिन्नः कश्चिदप्यस्ति प्रजापतिः प्रजापतिरिति ब्रह्मणो नामास्ति प्रजापालकत्वात् य आविवेश यः परमेश्वरः विश्वा विश्वानि सर्वाणि भुवनानि सर्वजीवान् आविश्य व्याप्तवानस्ति संरराणः सर्वप्राणिभ्योऽत्यन्तं सुखं दत्तवान् सन् त्रीणि ज्योतींषि सोऽग्निसूर्यविद्युदाख्यानि सर्वजगत्प्रकाशकानि प्रजया स्थितिहेत्वा सृष्ट्या सह तानि सचते समवेतानि करोति कृतवानस्ति च अतः स एवेश्वरः षोडशी येन षोडशकला जगति रचितास्ता विद्यन्ते यस्मिन् यस्य वा तस्मात् स षोडशीत्युच्यते। अतोऽयमेव परमोऽर्थो वेदितव्यः। षोडशकला ... व्याख्यातम्। इदं ... अस्यायमर्थः। ... नामानि तदक्षरम्। यह चौपाई कदाचिदक्षरार्थं ... तदङ्गं वास्तीति निश्चयम्। सर्वे च सर्वैर्वेदैर्वेद्यः ... "

[illegible]
"[illegible] सर्वं [illegible]" (ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका)

पुनः इस विषयमें ऋग्वेदका प्रमाण है—विष्णु अर्थात् व्यापक परमेश्वरका जो अत्यन्त आनन्दस्वरूप प्राप्तिके योग्य होता और मुक्ति कहाता है, वह विद्वान्को सर्वदा वा सकल काल देखाता है। (अर्थात् योगी पुरुष सदा उस परमात्माके आनन्दस्वरूपको ज्ञाननेत्रसे देखते या केवल हृदयमें रखते हैं) वही समस्त पदार्थोंमें व्याप्त है। उसमें देश, काल और वस्तुका भेद नहीं पड़ता अर्थात् ऐसा नहीं—वह अमुक स्थानमें रहता है, इस स्थानमें नहीं; अमुक समय था, इस समय नहीं अथवा अमुक वस्तुमें है, इस वस्तुमें नहीं। सब पदार्थोंमें विराजनेसे वह ब्रह्म सब समय सर्वांश परिपूर्ण रूपसे अधिष्ठित रहता है। सूर्यके प्रकाशसे आवरणरहित आकाश और नेत्र भर जानेकी भांति, परब्रह्मका अवस्थान स्वप्रकाश और व्याप्तवान् है। इस परब्रह्मके परमपदकी प्राप्तिसे श्रेष्ठ दूसरी प्राप्ति ब्रह्माण्डमें नहीं, इसीसे चारो वेदमें यह पद-प्राप्ति विशेष प्रतिपादित है। इस विषयमें व्यासदेव-निर्मित वेदान्तशास्त्रका प्रमाण भी मिलता है,—'समस्त वेदवाक्योंमें उसी ब्रह्मका ही विशेष प्रतिपादन विद्यमान है।' वही ब्रह्म वेदके किसी स्थानमें साक्षात् और किसी स्थानमें परम्परासम्बन्धसे प्रतिपादित है। इसीसे परब्रह्म वेदका परम अर्थ वा परम प्रतिपादक पदार्थ बना है। यजुर्वेदमें भी इसका दिया ही प्रमाण है—उस परब्रह्मसे अधिक श्रेष्ठ वा उत्कृष्ट द्वितीय पदार्थ अन्य कोई नहीं, वह सर्वत्र समस्त विश्वमें व्याप्त है, समस्त जगत्का पालनकर्ता तथा अध्यक्ष है और अग्नि सूर्य एवं विद्युत् तीन ज्योतिर्मयको अन्यान्य दृष्ट पदार्थमें मिलनेके कारण षोड़शी अर्थात् षोड़शकला कहाता है। यथा—१ ईक्षण वा यथार्थ विचार, २ समस्त विश्वको धारण करनेवाले प्राण, ३ श्रद्धा वा सत्य विषयके विश्वास, ४ आकाश, ५ वायु, ६ अग्नि, ७ जल, ८ पृथिवी, ९ ज्ञानेन्द्रिय, १० मन अर्थात् ज्ञान, ११ अन्न, १२ वीर्य अर्थात् बल एवं पराक्रम, १३ तप अर्थात् धर्मानुष्ठानरूप सदाचार, १४ मन्त्र वा वेदविद्या, १५ कर्म वा चेष्टा और १६ नाम अर्थात् दृष्ट वा एवं अदृष्ट पदार्थकी संज्ञाको षोड़श कला कहते हैं। ईश्वर व्याप्तिसे इनमें ही कलाका षोड़शी नाम इन्होंने पाया है। इन षोड़श कलाका प्रतिपादन प्रश्नोपनिषत्के षष्ठ प्रश्नमें लिखा है। इस स्थानमें वेद शब्दका मुख्यार्थ परमेश्वरके स्वरूपका ही प्रतिपादन करना है। परमेश्वरसे पृथक् रूप जगतादि वेद शब्दका गौणार्थ है। इसीसे मुख्य और गौणार्थमें मुख्य ही अवलोक्य है। पुनः लिखा है,—उस अक्षर वा अविनश्वर परमात्माका नाम ॐ है। जो सर्वत्र व्याप्त और सर्वश्रेष्ठ है, वही ब्रह्म है। इससे हमने यह समझा है कि वेदका मुख्य तात्पर्य परब्रह्मका प्रतिपादन और उससे जीवको किसी प्रकार मिला देना है। परमेश्वरका उपदेशरूप वेद तीन प्रकारके अवयवसे युक्त है—कर्म, उपासना और ज्ञान, इन तीनों काण्डसे इहकाल तथा परकालका व्यवहारिक फल पाने और यथावत् उपकारार्थ सकल मनुष्यके उपरोक्त तीन प्रकार अनुष्ठान विषयमें पुरुषकार मानेको ही वेदपाठका फल समझना चाहिये। आर्यसमाज और दयानन्द सरस्वती शब्द लिखित विवरण देखिये।

महात्मा केशवसेनके मतसे वेदका ईश्वर निश्चेष्ट और पुराणका ईश्वर कर्मशील है। निश्चेष्ट और कर्मशील दोनों प्रकारका इसतरह सिद्ध होता है कि—ईश्वर मनुष्यकी भांति इधर-उधर नहीं घूमता और न बारबार कोई कर्म ही करता है। वह हमारे और तुम्हारे सुखसे प्रकाश्य अपने अव्यक्त ज्ञान समस्त ब्रह्माण्डकी शक्तिके भीतर उसका सम्बन्ध बांधता है। ब्रह्म निष्क्रिय रहते भी गूढ़ नियमसे हमारा समुदाय अभाव मोचन करता है। इस देश, नगर एवं ग्राममें सर्वत्र ब्रह्मको पूजें और उन्हींको अपने भवनको सर्वस्व समझें। विश्वमें निगूढ़ कल्याणके योगकी कार्यका स्रोत निकल

अच्छा करता है। ईश्वर उसी कल्याणके कौशलसे भक्तको सुखी बनाता और सबको जिलाता है।

(सेवकका निवेदन १म और २य खण्ड, १०६ पृष्ठ)

केशवका कहना है—जो दुर्गा है, वही काली है। पूजा करनेवालेने दोनोंमें एकही शक्ति पायी। केवल मनके भावने देवीको दो वर्णमें प्रतिफलित किया था। जिस मूर्तिको देख पहले भक्तिभाव बढ़ा और मन मुग्ध पड़ा, उसीका परिवर्तन वा ऐसा भय उपस्थित हुआ! भक्तिपूर्वक एकबार हृदयके मध्य पहुंचने और वहां ही ढूंढ़नेसे यह मूर्ति देखनेको मिलती है। भीतर आलोक न आये और अन्धकार समा जायेगा। अनन्त आकाश काला है। उसी अनन्त आकाशमें यह शक्ति विलीन रहती है। इस स्थानपर अन्धकारमें अन्धकार बना और एक निराकारमें सकल एकाकार बना है। आकाश और अन्धकारमें कुछ भी प्रभेद पड़ नहीं सकता। उसी गहरे काले आकाशमें अन्धकारके भीतर ब्रह्मशक्ति ब्रह्मज्ञान है। बाहर उसीकी कालीमूर्ति बनी है। बाहर देवी और भीतर ब्रह्मज्ञानरूप ब्रह्मशक्ति है।" (सेवकका निवेदन ४र्थ खण्ड १४०-८ पृष्ठ)

परमहंस रामकृष्णने कहा है,—सच्चिदानन्द हरि बहुरूपी हैं। वह एक है, वह अनन्त है, वह विश्वरूपी भगवान् है। जो उसको नहीं देखता, वह उसका मर्म नहीं समझता और साकार निराकार पर तर्क भी करता है। किन्तु प्रकृत भक्त उसे साकार और निराकार दोनो रूपमें पूजता है। ब्रह्मका अनन्त नाम और अनन्त भाव है। जिसे जो भाव और जो नाम अच्छा लगता है, उसे उसी नाम और उसी भावसे पुकारने पर ईश्वर मिलता है। अहम्भाव छूटनेसे ईश्वर देख पड़ता है। कलिकालमें ईश्वरका नाम ही एकमात्र साधन है। रामकृष्ण और विवेकानन्द देखो।

खृष्टानोंकी बाइबिलके मतसे ईश्वर सृष्टिकर्ता है। सृष्टिके पूर्व एकमात्र वही विद्यमान था। उसीसे यह चराचर जगत् निकला है। ईसाई देखो।

कुरान्के मतसे ईश्वर सर्वशक्तिमान, सर्वश्रेष्ठ और सबका स्रष्टा है। उसने मूतन रक्तसे मनुष्यको बनाया है। वह सर्वदर्शी, असीम, अमर इत्यादि विशेषणसे संयुक्त है। इसलाम और मुहम्मद देखो।

वर्तमान समयमें खृष्टानोंका धर्मसम्प्रदाय नाना श्रेणियोंमें विभक्त हो गया है। कोई ईश्वरको सर्वस्रष्टा समझता और कोई ईश्वरसे नहीं—स्वभावसे ही जगत्की उत्पत्ति मानता है। कोई संयोग-वियोग द्वारा पृथिवीकी उत्पत्ति ठहराता है और ईश्वरके अस्तित्वपर विश्वास नहीं लाता। पाश्चात्य दर्शन शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

ईश्वरकवि—एक प्रसिद्ध हिन्दुस्थानी कवि। ये औरंगजेबकी राजसभामें रहते और सरस कविता करते थे।

ईश्वरकृष्ण—एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार। इनकी बनायी सांख्यकारिका हमारे दर्शनशास्त्रमें चिरप्रसिद्ध है। ५५७ से ५८८ ई॰के मध्य चनती (परमार्थ)-ने चीना भाषामें उक्त ग्रन्थका अनुवाद किया था। ईश्वरकृष्णको कोई-कोई कालिदास समझते हैं। पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे ये ई॰के ६ठें शताब्दमें विद्यमान थे। किन्तु उनका यह मत माना जा नहीं सकता। क्योंकि जो ग्रन्थ ६ठें शताब्दमें चीन देशमें जा कर अनुवादित हुआ, वह उक्त समयसे अन्ततः बहु वर्ष पूर्व अवश्य बना था। बनते ही सांख्यकारिका कुछ चीनदेश पहुंच न गयी होगी। नाना स्थानोंमें विख्यात होनेपर चीन देशके लोग भारतवर्ष आ उसे ले गये होंगे। अनुवाद करनेमें भी कम समय लगा न होगा। अतएव ६ठें शताब्दसे बहुपूर्व ईश्वरकृष्णका विद्यमान रहना समझ पड़ता है। इस देशके कोई पण्डित भगवान् श्रीकृष्णको ही सांख्यकारिकाका रचयिता मानते हैं। कृष्णद्वैपायन प्रभृति अपर कृष्णोंसे भिन्न रखनेके लिये ईश्वरकृष्ण नाम पड़ा है। नारायणने 'सांख्यचन्द्रिका' नाम्नी सांख्यकारिकाकी टीका एवं विज्ञानभिक्षुने 'आर्यभाष्य' नामक सांख्यकारिकाका भाष्य बनाया है।

ईश्वरगीता (सं॰ स्त्री॰) कूर्मपुराणका अंशविशेष।

ईश्वरचन्द्र—वङ्गदेशान्तर्गत कृष्णनगरके एक राजा। ये शिवचन्द्रके पुत्र थे। १०१८ ई॰में शिवचन्द्रके मरनेपर इन्हें राजपद मिला था। ईश्वरचन्द्र रूपवान्, बलवान् और सङ्गीतप्रिय थे। १८०२ ई॰में ४५

वर्षके वयसमें शारीरिक नियमके लङ्घनसे इनकी मृत्यु हुई। गिरीशचन्द्र नामक इनके एक पुत्र थे। ईश्वरचन्द्रकी सभामें एक प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् रहते थे। इन्होंने सारदामङ्गल नामक एक सङ्गीत ग्रन्थ बंगलामें बनाया था।

ईश्वरचन्द्र गुप्त—विख्यात बङ्गाली कवि। ये कांचरापाड़ा निवासी हरिनारायण गुप्तके पुत्र थे। इनकी माताका नाम श्रीमती देवी था। १७३२ शकमें फाल्गुन शुक्लपञ्चमी शुक्रवारके दिन ईश्वरचन्द्र गुप्तने जन्म लिया था। बाल्यकालमें ये बड़े ही दुरन्त थे। लिखने-पढ़नेमें इनका विशेष मन न लगता था। किन्तु बाल्यकालसे ही कविता लिखनेका कौतूहल था। मामला धपराधर नामक एक मनुष्य फारसी पढ़ते थे। ईश्वरचन्द्र उनके मुखसे फारसी कविताका अर्थ सुनते और स्वयं फिर बंगलामें कविता बनाते।

ईश्वरचन्द्र जन्मकवि थे। बाल्यावस्थामें ये केवल कविताकी चर्चा करते थे। मानो कविता ही इनका जीवन और कविता ही इनका प्रधान लक्ष्य था। कवित्वशक्तिकी भाँति ईश्वरचन्द्रकी स्मृतिशक्ति भी अद्भुत चमत्कारिणी थी। १७।१८ वर्षके वयसमें तीन मासके मध्य इन्होंने मुग्धबोध व्याकरण कण्ठस्थ किया। कलकत्तेके ठाकुरगोष्ठीसे ईश्वरचन्द्रके मातामह वंशकी कुछ मित्रता थी। इसी सूत्रसे ठाकुरबाड़ीमें ये सर्वदा आते-जाते थे। क्रम-क्रमसे पथुरियाघाटा-निवासी गोपीमोहन ठाकुरके पौत्र योगेन्द्रमोहनसे ईश्वरचन्द्रका बन्धुत्व बढ़ा। उभय समवयस्क थे। इनके सहवाससे योगेन्द्रमोहनमें भी रचनाशक्ति उपजी थी।

१५ वर्षके वयःक्रमकालमें गुप्तपाड़ा-निवासी गौरहरि मल्लिककी कन्यासे ईश्वरचन्द्रका विवाह हुआ। दुर्गामणि देखनेमें बहुत अच्छी न लगती थी, गूँगी-जैसी समझ पड़ती थीं। इसलिये उनसे इनका मन न भरा और विवाहके बाद ही बोलचाल बन्द हो गयी। दोनों चिरदिन मौन-मौनकर बसने लगे।

१७५३ शकमें योगेन्द्रमोहन ठाकुरके साहाय्यसे ईश्वरचन्द्रने 'संवादप्रभाकर' नामक एक साप्ताहिक पत्र निकाला था। १७५४ शकमें योगेन्द्रमोहनके मरनेसे संवादप्रभाकर बन्द हुआ। परन्तु इसी मध्य इनकी कवित्व एवं रचनाशक्ति देख अन्दूलके जमींदार बाबू जगन्नाथप्रसाद मल्लिकने 'संवादरत्नावली' निकाली थी। ईश्वरचन्द्र इस पत्रिकामें विशेष साहाय्य करते थे।

कुछ दिन पीछे ये तीर्थादिके दर्शन करनेको कटक पहुंचे। यहां ये अपने मौसा श्याममोहन रायके घरपर रह एक दण्डीसे तन्त्रादि सीखते थे। १७५६ शकके वैशाखमासमें ईश्वरचन्द्र कलकत्ते वापस आये। इसी वर्ष श्रावण मासके अन्तिम बुधवारको इन्होंने कन्हाईलाल ठाकुरके साहाय्यसे 'प्रभाकर' निकाला। १७५८ शकका आषाढ़ मास आरम्भ होने ही प्रभाकर त्र्याह्निक रूपसे प्रकाशित होने लगा। देशीय त्र्याह्निक संवादपत्रमें प्रभाकर ही प्रथम था। इसी समय पण्डित और नगर तथा ग्रामके सम्भ्रान्त जमींदार नानाप्रकारसे ईश्वरचन्द्रको साहाय्य देने लगे।

१७६० शकके आषाढ़ मास इन्होंने 'पाषण्डपीड़न' नामक दूसरा पत्र निकाला था। इसी समय 'भास्कर'-सम्पादक गौरीशङ्कर तर्कवागीश 'रसराज' नामक एक पत्र प्रकाश कर ईश्वरचन्द्रसे कविता-युद्धमें प्रवृत्त हुये। इन्होंने भी 'पाषण्डपीड़न' पत्रमें 'भास्कर'-सम्पादकको कविताका प्रतिवाद आरम्भ किया था। इसी तरह दोनोंमें अनेक दिन कुत्सापूर्ण कविताकी लड़ाई लगी रही। किन्तु कुछ समय बाद दोनों पत्र बन्द हो गये।

पाषण्डपीड़नके उठ जानेसे १७६८ शकके वैशाख मासमें इन्होंने 'साधुरञ्जन' नामक दूसरा पत्र निकाला। इसमें ईश्वरचन्द्रके छात्रोंकी कविता और प्रबन्धादि छपती थी। १७७४ शकके वैशाख मासमें यह एक वृहत् कलेवरका प्रभाकर निकालने लगे। यह प्रतिमासकी पहली तिथिको निकलता और इसका कलेवर कविताहीसे पूर्ण रहता था। उक्त रूपसे मासिक प्रभाकर निकालनेमें ईश्वरचन्द्रको अतिरिक्त परिश्रम उठाना पड़ा, इसीसे इनका क्रमशः स्वास्थ्य भङ्ग होने लगा। इससमय ईश्वरचन्द्र कलकत्तेमें रह अधिकांश समय किसी बागमें बिताते थे। इन्होंने

पूर्ववङ्गके अनेक प्राचीन स्थानोंका वृत्तान्त एवं वङ्गीय कवियोंका जीवनचरित लिखा और भारतचन्द्रकी लुप्तप्राय कविताको बड़े परिश्रमसे ढूंढ़कर छपा दिया। प्रबोध-प्रभाकर, हितप्रभाकर और बोधेन्दु-विकाश नामक ग्रन्थ भी इन्होंने प्रभाकरमें प्रकाशित किये। पीछे श्रीमद्भागवतका पद्यानुवाद करना ईश्वरचन्द्रने हाथमें लिया था। किन्तु १७८० शकको माघकृष्ण दशमी को आधीरातके समय इनका स्वर्गवास हो गया। ये वङ्गभाषाके एक असाधारण कवि थे।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर—वङ्गदेशके एक ख्यातनामा पण्डित। १७४२ शक (१८२० ई०) को आश्विन कृष्ण मङ्गलवारके दिन मेदिनीपुर ज़िलेके वीरसिंह नामक ग्राममें इन्होंने जन्म लिया। इनके पिताका नाम ठाकुरदास वन्द्योपाध्याय था। १८२८ ई०को १ली जूनको विद्यासागरने विद्यार्थिरूपसे संस्कृत-कालेजमें प्रवेश किया। गभीर गवेषणा और धीशक्तिके प्रभावसे अल्प दिवसके मध्य ही संस्कृत साहित्य-शास्त्रमें इन्होंने पारदर्शिता पायी थी। विद्यासागरने गङ्गाधर तर्कवागीशसे व्याकरण, जयगोपाल तर्कालङ्कारसे साहित्य, प्रेमचन्द्र तर्कवागीशसे अलङ्कार, शम्भुचन्द्र विद्यावाचस्पतिसे वेदान्त, रामचन्द्र विद्यावागीशसे स्मृति और पहले निमाईचन्द्र शिरोमणिसे तथा पीछे जयनारायण तर्कपञ्चाननसे न्याय पढ़ा। संस्कृत कालेजसे इन्हें 'विद्यासागर' उपाधि मिला था।

विद्यासागरके पिताकी आर्थिक अवस्था अच्छी न थी। अतएव बाल्यकालसे पाठावस्था पर्यन्त इन्हें दरिद्रतावश अनेक कष्ट उठाना पड़े।

१८४१ ई०के दिसम्बर मासमें विद्यासागर फोर्ट-विलियम कालेजमें प्रधान पण्डित रूपसे नियुक्त हुये। कार्यकारिता और विचक्षणतादर्शनसे संस्कृत कालेजके कर्तृपक्षने १८४६ ई०के अपरेल मास इन्हें संस्कृत-कालेजमें सहकारी कर्माध्यक्ष (Assistant secretary)का पद सौंप दिया, किन्तु उसके दूसरे वर्ष ही विद्यासागरने उक्त पदसे अवसर ग्रहण कर लिया। १८४८ ई०के फरवरी मास ये फिर फोर्ट विलियम कालेजमें पहुंचे और 'हेड रैटर' (Head-writer)के कार्यमें नियुक्त हुये। विद्यासागरकी सुख्याति क्रमशः बढ़ने लगी। १८५० ई०के दिसम्बर मासमें इन्हें संस्कृत कालेजके साहित्याध्यापकका पद मिला था। अनेक विषयोंमें पाण्डित्य देख तत्कालीन भारतस्थ संस्कृतज्ञ साहब विद्यासागरके पक्षपाती बने। उन्होंके यत्नसे दूसरे वर्ष ही विद्यासागर संस्कृत कालेजके अध्यक्ष (Principal) हुये। इसी समय इन्होंने संस्कृत कालेजके सम्बन्धमें अनेक सुनियम बनाये थे। १८५५ ई०में कालेजका अध्यक्षता रहते भी गवरनमेण्टने इनपर 'विशेष विद्यालय-परिदर्शक' (Special Inspector of Schools)का भार डाला। उस कार्यमें इन्होंने सुख्याति पायी थी।

फोर्ट विलियम कालेजमें रहते समय कप्तान मार्शल साहबने विद्यासागरसे अंगरेजी पढ़नेको कहा। उसके बाद ही ये अंगरेजी सीखनेमें लग गये। उस समय सिविलियनोंको पढ़ानेके लिये हिन्दीभाषाका प्रयोजन पड़ता था। इसी लिये विद्यासागरने हिन्दी-भाषा भी पढ़ ली।

संस्कृत-कालेजकी अध्यापनाके समय तत्कालीन गवरनमेण्ट-सेक्रेटरी हालिडे साहबसे इनका आलाप परिचय हुआ। वे नाना विषयोंका परामर्श करनेके लिये सप्ताह पीछे एकदिन विद्यासागरको अपने घर ले जाते और अनेक समय विद्यासागरका सत्परामर्श ग्रहण करते। उन्होंके यत्नसे ये 'स्कूल-इनसपेक्टर' हुये। उस समय वङ्गला विभागके चार ज़िलोंमें कुल २० मडेल-स्कूल थे। उन्हीं बीस विद्यालयके परिदर्शनका भार विद्यासागरपर न्यस्त था। इसी समय बेथन साहबके मरनेपर तत्प्रतिष्ठित बालिका-विद्यालय गवरनमेण्टके हाथ आया। ये बेथन स्कूलके तत्त्वावधायक रहे और स्त्रीशिक्षाके सम्बन्धमें विशेष यत्न करते थे। हालिडे साहबके उत्साहवाक्यसे उत्साहित हो बङ्गालमें स्थान-स्थान पर विद्यासागरने ५०।६० बालिका-विद्यालय खोल दिये। किन्तु दुःखका विषय है, गवरनमेण्टने उस महत् कार्यमें मन न लगाया। कुछ दिन पीछे इन्होंने समस्त बालिका-विद्यालयोंके खरचाका बिल बनाकर

होता, किन्तु गवर्नमेण्टसे रुपया दिया न जाता। जिससे तत्क्षणात् सकल विद्यालय खुले, वह हालिडे साहब भी उस समय कुछ उत्तर दे न सके। विद्यासागरने अपने पाससे रुपये दे थोड़े दिन विद्यालय चलाये थे।

उसी समय विद्यासागरके एक बन्धु 'तत्त्वबोधिनी पत्रिका'के सम्पादक थे। जो विषय तत्त्वबोधिनीके लिये और लिखकर भेजता, वह इनके देखनेमें आता और पीछे उस पत्रिकामें छपता था। विद्यासागर अपने बन्धुके निकट अंगरेजी आलोचना करने पहुंचते और उन्हीं बन्धुवरके अनुरोधसे तत्त्वबोधिनीके लेखक इनका परिचय पाते। तत्त्वबोधिनी-पत्रिकाके तत्कालीन सम्पादक अक्षयकुमार दत्त स्वयं निकट जा विद्यासागरसे प्रबन्धादि लिखनेका अनुरोध करते और जो प्रबन्ध लिखते, उन्हें संशोधन करा छपनेको भेजते थे। वस्तुतः इन्हींकी सहायतासे अक्षयकुमारकी रचनाप्रणाली इतनी मार्जित हुई। विद्यासागर कभी कभी तत्त्वबोधिनीमें प्रबन्धादि लिखते थे। इन्होंने सबसे आगे महाभारतका बङ्गला अनुवाद उस पत्रिकामें प्रकाशित किया। किन्तु विद्यासागर-विरचित महाभारतका बङ्गला अनुवाद सम्पूर्ण हुआ न था। स्वर्गीय कालीप्रसन्न सिंहने पीछे देश इनके परामर्शानुसार पण्डितोंके साहाय्यसे उसे पूरा कराया। तत्त्वबोधिनी-सभावालोंके सभीके अनुरोधसे विद्यासागर तत्त्वावधायक बने थे। किन्तु कुछ दिन पीछे ही किसी विशेष कारणसे इन्होंने तत्त्वबोधिनीका संस्रव त्याग किया।

१८५३ ई०को विद्यासागरने निज जन्मभूमि वीरसिंह ग्राममें निर्धन बालकबालिकाओंके उपकारार्थ अवैतनिक विद्यालय खोला था। दरिद्र बालकोंको सारा दिन अवकाश न मिलनेसे रात्रिकालमें भी शिक्षा देनेके लिये विद्यालय खुलता। विद्यालय खोलनेके बाद निज ग्राममें इन्होंने एक दातव्य-चिकित्सालय भी स्थापन किया था।

इसी समय गवर्नमेण्टने संस्कृत शिक्षा निकाल देनेका प्रस्ताव किया। अनेक कृतविद्य साहबों और अङ्गरेजोंने इस प्रस्तावका समर्थन किया था। किन्तु विद्यासागर उस प्रस्तावको रद करनेके लिये विशेष चेष्टित हुये। इन्होंने उस समय अनेक अनेक कृतविद्योंका मत छांटा और भारतवर्षमें संस्कृत शिक्षा प्रचलित रखनेके लिये गवर्नमेण्टके निकट आवेदन किया। विद्यासागरका जय और सरकारसे भारतवर्षके यावतीय विद्यालयोंमें संस्कृत शिक्षाके प्रचारका आदेश हुआ। लोगोंको सहजमें संस्कृत सीखनेके लिये इन्होंने सरल संस्कृत पाठ्य पुस्तक सङ्कलन किये थे।

विद्यासागर केवल स्त्रियों और साधारण निर्धनोंकी शिक्षाके लिये ही यत्नवान् न हुये, किन्तु विधवाविवाह चलानेको भी आगे बढ़े। इनके द्वारा विधवाविवाहके विषयमें समस्त स्मृतिशास्त्रोंसे जो व्यवस्था उद्धृत, उससे इनकी शास्त्र-पारदर्शिता विलक्षण मालूम पड़ती थी। इसी समय अपने समाजवाले अनेक कृतविद्य, सम्भ्रान्त और मूर्ख प्रभृति सकल श्रेणियोंके लोग विद्यासागरपर खड्गहस्त हुये। ये देशीय लोगोंकी ग्लानि, कुत्सा और निन्दाका वाद अकातर सहते भी प्रतिवादियोंका मत काट लोग गन्तव्य पथमें आगे बढ़े थे। तत्काल तारानाथ तर्कवाचस्पति, भरतचन्द्र शिरोमणि, गिरिशचन्द्र विद्यारत्न, रामगति न्यायरत्न प्रभृति पण्डितोंने विद्यासागरको साहाय्य दिया। इन्हींके यत्न और उद्योगसे सरकारने विधवाविवाह चलानेको १८५६ ई०का १५ वां आईन छपा था। विद्यासागरके यत्नसे कई विधवाविवाह भी शान्तिपूर्वक हो गये। इसी समय इन्होंने समाजके एक विशेष हितकर कार्यमें मन लगाया। इस देशमें बहुविवाहरूप कुप्रथा बहुत दिनोंसे चल रही है। इससे प्रमाद देनेका प्रयोजन नहीं, कि उस सामाजिक कार्यमें हमारे समाजका कितना अनिष्ट होता है। इस कुप्रथाको रोकनेके लिये विद्यासागरने साध्यपर यथासाध्य चेष्टा की। इसी उपलक्षमें बहुविवाह पर विचार करनेके लिये दो ग्रन्थ इन्होंने बनवाये। उन ग्रन्थोंका नाम 'बहुविवाहके उचितरूपसे रोकने या न रोकनेका विचार था।' इनमें प्रायः समस्त देशीय

कृतविद्य पण्डितों और सम्भ्रान्त व्यक्तियोंको बहु-विवाह रोकनेके लिये उभारा था। इस कार्यमें कृष्ण-नगरके राजा श्रीशचन्द्रने विद्यासागरको यथेष्ट साहाय्य दिया। किन्तु सिपाही-विद्रोह लग जानेसे सरकार बहुविवाह रोकनेका कानून् बना न सकी थी।

१८५८ ई०में नाना कारणोंसे विरक्त हो इन्होंने कालेजकी अध्यक्षता और स्कूल-इन्सपेक्टरीको छोड़ दिया। कुछ दिन पीछे विद्यासागरने अपने तत्त्वाव-धानमें निज व्ययसे 'मेट्रोपलिटन' नामक अंगरेजी विद्यालय खोला था। किन्तु विद्यालयके कर्टपक्ष साहब मिल-जुलकर कहने लगे,—बङ्गाली अंगरेजी कालेज चलानेकी क्षमता नहीं रखते। सिवा अंगरे-जोंके दूसरेसे कालेजका प्रबन्ध होना असम्भव है। इन्होंने उनकी बात न मान निज विद्यालयमें बङ्गालि-योंके मध्य ही सर्वप्रथम कालेज क्लास खोला। इसी कालेजपर छोटेलाट ई० सी० बेलीसे अनेक कथा-वार्ता हुयी थी। ई० सी० बेलीने कहा, "विद्यासागर! किस प्रकार आप निज कालेज चलायेंगे? अंगरेजोंके साहाय्य भिन्न अंगरेजी कालेज चल नहीं सकता।" विद्यासागरने उत्तर दिया,—"अपने छात्रोंको अंगरेजी पढ़ा न सकते भी उन्हें परीक्षा पास करा देना निश्चित है।" पीछे वही हो गया। आजकल इनके स्थापित एक कालेज और पांच विद्यालयोंमें भली भांति पठन-पाठन होता है।

विद्यासागरसे पूर्व बङ्गलाभाषा सरल, सुगम और इस समय-जैसी परिशुद्ध न थी। ये पाठ्यपुस्तक इस उद्देश्यसे बनाने लगे, जिसमें सब कोई सहज ही बंगला भाषा सीख सके। विद्यासागरके बनाये ग्रन्थ-की तालिका नीचे लिखी है,—

वेतालपञ्चविंशति, बङ्गालका इतिहास, जीवन-चरित, बोधोदय, उपक्रमणिका व्याकरण, ऋजुपाठ (तीन भाग), शकुन्तला, विधवाविवाह, वर्णपरिचय, कथामाला, संस्कृतप्रस्ताव, चरितावली, महाभारतकी उपक्रमणिका, सीताका वनवास, व्याकरणकौमुदी, आख्यानमञ्जरी, भ्रान्तिविलास और बहुविवाह रहित होना उचित है या नहीं।

वर्तमान विशुद्ध बंगला भाषाने जो आकार बनाये, उनके आदि प्रवर्तक विद्यासागर ही हैं। उक्त विषयको विद्वान् मात्र मानते और उसी प्रथाको को पकड़कर अनेक वर्तमान बङ्गाला-लेखक नाना छन्दों और भावोंमें अपनी लेखनी चलाते हैं।

विद्यासागर केवल समाज-संस्कार और बंगला भाषाके उन्नतिकल्पमें ही प्रसिद्ध नहीं। इनकी परोपकारिता और दानशीलताको भी बङ्गदेशके महा-धनवान्‌से लेकर दीन दरिद्र पर्यन्त सकल ही जानते थे। विद्यासागर देशीय विपन्न, दरिद्र और विधवाओंके लिये प्रति मास अनेक रुपये दे देते। किन्तु इन्होंने प्रकाश्य रूपसे नहीं, गुप्तभावसे ही दानकार्य सम्पन्न किया था। धनाढ्य न होते भी १८६५ ई०के दारुण दुर्भिक्ष समय विद्यासागरने प्रायः छः मास पर्यन्त वीरसिंहमें प्रत्यह सहस्रों व्यक्तियोंको अन्न और वस्त्रहीन दरिद्रोंको प्रायः दो हजार रुपयेका वस्त्र दिया। इन्होंने यह दानशीलता और परदुःख-कातरता अपनी मातासे सीखी थी। प्रवादानुसार विद्यासागरकी माता अतिशय दानशीला थीं। किसीका दुःख देख उनका हृदय फट जाता और उसके दूर करनेका प्रयास उठाना पड़ता। उन्हीं सदाशय जननीके नाना गुण इनमें भी आ गये थे। विद्यासागरके कथनानुसार—दरिद्रोंकी पीड़ा कितनोंने देखी और उनके हृदयकी व्यथा कितनोंने सुनी है! वास्तविक दरिद्रका दैन्य और विधवाका दुःख देखनेपर नयन-जलसे इनका वक्षस्थल डूब जाता था। दुःखीका दुःख किसीसे कहते समय भी अश्रु बहने लगते। इस चरित्रको कोई अतिरञ्जित न समझे। यह साक्षुप-प्रत्यक्ष है। मुक्तकण्ठसे कहनेपर ऐसे हृदयवान् पुरुष बङ्गदेशमें अतिविरल हैं। विद्यासागर सामान्य मेथपालकसे लेकर बहुत बड़े राजातक सकलके ही बन्धु थे। अपनी विपद बतानेपर ये अर्थ, परिश्रम, परामर्श, दूसरेके साहाय्य अथवा किसी न किसी उपायसे यथासाध्य लोगोंका उपकार कर देते।

वैद्यनाथके निकट कर्माटांड नामक एक ग्राम

है। विद्यासागर स्वास्थ्यरक्षाके लिये समय समय पर यहां आकर रहते और सन्थालोंका बड़ा उपकार करते, वे भी इन्हें देवतातुल्य समझते थे।

विद्यासागरका हृदय भक्तिमय रहा। वे माता-पिताको ईश्वर-जैसा मानते थे। माता-पिता भी इनके आराध्य देवता थे। जब मातापिताकी बात कोई उठाता, तब देखते-देखते पुलक, भक्ति अथवा अदर्शन-निबन्धनके दुःखसे महात्माका हृदय से आंसुसे भर आता। संक्षेपमें कहनेसे विद्यासागर एक भाषा-विशारद, समाजसंस्कारक, राजनैतिक और देश-हितैषी महापुरुष थे। अधिक क्या, वे वर्तमान बङ्गसाहित्य-जगत्के पितास्वरूप माने जा सकते हैं। १८९१ ई०के जुलाई मासमें (१२९८ बंगला सन्के १३ श्रावण) महात्मा विद्यासागरका परलोक हुआ।

ईश्वरता, ईश्वरत्व देखो।

ईश्वरदास—१ ज्योतिषरायके पुत्र। इन्होंने 'मुहूर्तरत्न' नामक ज्योतिषग्रन्थ लिखा था। २ प्रयुक्तपदमञ्जरी-कोषके रचयिता। अपर नाम ईश्वरलघु-कालिदास रहा।

ईश्वरदीक्षित—रामायण-व्याख्याके रचयिता।

ईश्वरनिषेध (सं० पु०) १ नास्तिक्य, जड़वाद, ईश्वरका न मानना। २ अनिष्टजनक कार्य, जिस कामसे बुराई आये।

ईश्वरनिष्ठ (सं० त्रि०) ईश्वरमें निष्ठा रखता या भक्ति-शील, बहुव्री०। ईश्वरपरायण, ईश्वरको माननेवाला।

ईश्वरपरायण (सं० त्रि०) ईश्वर एव परं मुख्यं अयनं आश्रयो यस्य, बहुव्री०। भक्त, सिर्फ ईश्वरका सहारा लेनेवाला।

ईश्वरपुरी—एक साधु। गया धाममें इन्हीसे महाप्रभु चैतन्यदेवने दीक्षा ली थी। चैतन्य देखो।

ईश्वरपूजक (सं० त्रि०) ईश्वरकी उपासना करने-वाला, जो ईश्वरकी पूजा करे।

ईश्वरपूजा (सं० स्त्री०) भगवान्की आराधना, खुदा-परस्ती।

ईश्वरप्रणिधान (सं० क्ली०) समाधि कर्मविशेष, सकल कर्मोंका त्याग। यह योगके पांच नियमोंमें अन्तिम है। सकल जगत्को ईश्वरमय देखना और सबके सम्बन्धमें वस्तुको अर्पित मानना ईश्वरप्रणिधान कहाता है। इसके अवधारणसे मनुष्य योगरूढ़ हो जाता है।

ईश्वरप्रसाद (सं० पु०) ईश्वरका अनुग्रह, खुदाकी मिहरबानी।

ईश्वरभाव (सं० पु०) राजदशा, शाहाना हालत।

ईश्वरमल्लिका (सं० स्त्री०) बकवृक्ष, अगस्त्यका पेड़।

ईश्वरमिश्र—१ उपसर्गवृत्ति-व्याकरणके रचयिता। २ लघुजातकके टीकाकार।

ईश्वरमूलक (सं० पु०-क्ली०) तरुभेद, एक पेड़।

ईश्वरमोठे—कृतिकल्पद्रुम-रचयिता।

ईश्वरविभूति (सं० स्त्री०) ईश्वरका ऐश्वर्य, खुदाकी शान्। यह संसारमें सर्वत्र विराजती है। आकाशमें ईश्वरकी विभूतिका प्रत्यक्ष प्रमाण विद्यमान है।

ईश्वरशर्मा—व्यवस्थासेतु नामक स्मृतिग्रन्थके रचयिता।

ईश्वरसत्व, ईश्वरत्व देखो।

ईश्वरसद्म (सं० क्ली०) १ मन्दिर, मसजिद। २ त्रिभु-वन, जहान्।

ईश्वरसभा (सं० स्त्री०) राजपरिषत्, शाही मजलिस।

ईश्वरसाक्षिन् (सं० पु०) ईश्वर एव साक्षी, कर्मधा०। वेदान्तिक मतसिद्ध मायागत चैतन्य विशेष। माया द्वारा आच्छादित चैतन्यको ईश्वरसाक्षी कहते हैं। क्योंकि ईश्वरका उपाधि मायाकार-स्वरूप है, माया और तद्गत चैतन्यमें कोई भेद नहीं।

ईश्वरसाधन (सं० क्ली०) भगवत्पूजा, खुदाकी परस्तिश।

ईश्वरसुमति—पार्वतीपरिणय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

ईश्वरसेवा (सं० स्त्री०) ईश्वरकी उपासना, खुदाकी परस्तिश।

ईश्वरा (सं० स्त्री०) ईश्वरस्य स्त्री, ईश्वर-टाप्। ईश्वरकी स्त्री दुर्गा। "[illegible]" ([illegible])

ईश्वराधीन (सं० त्रि०) भगवान्के वशीभूत, जो मालिकके मातहत हो।

ईश्वराधीनता (सं० स्त्री०) ईश्वरतन्त्रता, मालिककी मातहती।

ईश्वराधीनत्व (सं० क्लो०) ईश्वराधीनता देखो।

ईश्वरानन्द (सं० पु०) १ ईश्वरका आमोद, खुदाकी खुशी। २ महाभाष्यप्रदीप-विवरणके रचयिता।

ईश्वरी (सं० स्त्री०) अश्-वरट्, चकारात् उपधाया ईत्वं टित्वात् ङीप्। अशोतेराशुकर्मणि वरट् च। उण् ५।५७। १ दुर्गा। २ लक्ष्मी। ३ सरस्वती। ४ सकल प्रकार शक्ति। ५ लिङ्गिनीवृक्ष। ६ वन्ध्याकर्कोटकी लता, कड़वी ककड़ी। ७ नागदमनी, नागदेवना। ८ नाकुलीकन्द, बांदा। ९ रुद्रजटा। १० ऐश्वर्यान्वित स्त्री, शानदार औरत।

ईश्वरीदत्त—शब्दबोधतरङ्गिणी-व्याकरणके रचयिता।

ईश्वरीनारायण सिंह (महाराज)—काशीके एक विद्योत्साही नृपति और महाराज उदितनारायण सिंहके भ्रातुष्पुत्र। उदितनारायणके मरने बाद १८३५ ई०में ये वाराणसीके राजपदपर अभिषिक्त हुए थे। ईश्वरीनारायण सुकवि और शिल्पी रहे। इनका रचित सुन्दर गान और स्वहस्त-निर्मित विविध हस्तिदन्तका कारुकार्य रामनगरके राजभवनमें विद्यमान है। ईश्वरीनारायण बहुतसे कवियोंके आश्रयदाता थे। देव, हरिजन एवं उनके पुत्र सरदार, गणेश, बन्दन पाठक प्रभृति बहुतसे हिन्दुस्थानी कवि इनके आश्रय और साहाय्यसे कितनी ही कविता बना गये हैं। १८८९ ई०के ज्येष्ठ-मास महाराज ईश्वरीनारायणके परलोक पधारनेपर उनके पुत्र महाराज प्रभुनारायणको राजपद मिला।

ईश्वरीप्रसाद—शब्दकौस्तुभ-व्याकरणके रचयिता।

ईश्वरीप्रसाद त्रिपाठी—सीतापुर जिलेके पीरनगर ग्राममें रहनेवाले एक हिन्दुस्थानी कवि। १८८३ ई०में यह जीवित रहे। इन्होंने विभिन्न छन्दोंमें वाल्मीकि-रामायणका हिन्दी अनुवाद लिखा, जिसका नाम 'रामविलास' रखा है।

ईश्वरीय (सं० त्रि०) दिव्य, देव, रब्बानी।

ईश्वरेच्छा (सं० स्त्री०) भगवान्‌की आकाङ्क्षा, खुदाकी मर्जी।

ईश्वरोपासना (सं० स्त्री०) भगवान्‌की पूजा, खुदाकी परस्तिश।

ईष्—तुदा० पर० सक० सेट् धातु। १ उञ्छवृत्ति। भ्वा० आत्म० सक० सेट् धातु। २ इससे दान, दर्शन, गमन और हिंसाका अर्थ निकलता है।

ईष (सं० पु०) ईष्-क। १ तृतीय मनु उत्तमके पुत्र। २ आश्विनमास। ३ शिवके एक भृत्य।

ईषच्छ्वास (सं० त्रि०) अल्पसुखरित, थोड़ा गूंजनेवाला।

ईषज्जल (सं० क्लो०) अल्प नीर, कुछ पानी।

ईषण (सं० त्रि०) सत्वर, त्वरा करनेवाला, जल्दबाज।

ईषणा (सं० स्त्री०) त्वरा, शिताबी, जल्दी।

ईषणिन्, ईषण देखो।

ईषत् (सं० अव्य०) ईष् बाहुलकात् अति। अल्प, किञ्चित्, खफीफ, जरासा, थोड़ा, कुछ, कम।

ईषत्कर (सं० त्रि०) ईषत्-कृ-खल्। १ अल्पक्ष, बहुत काम। २ अल्पप्रयाससाध्य, आसानीसे होनेवाला। ३ अल्पकारी, थोड़ा काम करनेवाला।

ईषत्कार्य (सं० त्रि०) अल्प चेष्टाविशिष्ट, खफीफ कोशिशसे ताल्लुक रखनेवाला।

ईषत्पाण्डु (सं० त्रि०) ईषत् चासौ पाण्डुश्च। १ धूसर, हलका भूरा। (पु०) २ धूसरवर्ण, हलका-भूरा रङ्ग।

ईषत्पान (सं० त्रि०) १ अल्प पीया हुआ, जो ज्यादा पीया न गया हो। (क्लो०) २ सूक्ष्म पानीय, जरासा घूंट।

ईषत्प्रलम्भ (सं० त्रि०) अल्पार्थ प्राप्य, थोड़ेसे हासिल किया जानेवाला।

ईषत्स्पृष्ट (सं० त्रि०) अल्प संस्पृष्ट, कुछ छूआ हुआ। यह शब्द अर्धस्वरका विशेषण है।

ईषद्, ईषत् देखो।

ईषदुष्ण (सं० त्रि०) ईषत् च तदुष्णञ्चेति, कर्मधा०। अल्पतप्त, खफीफ गर्म। इसके पर्यायमें कोष्ण, कवोष्ण, मन्दोष्ण और कदुष्ण शब्द भी आते हैं।

ईषदून (सं० त्रि०) किञ्चित् न्यून, कुछ कम।

ईषद्गुण (सं० त्रि०) अल्प उत्कर्ष-युक्त, कम-कदर, जो थोड़ा वस्फ रखता हो।

ईषद्दर्शन (सं० क्लो०) कटाक्ष, नजर, चितवन।

ईषद्दीर्घ (सं० क्लो०) वातामफल, बादाम।

ईषद्धास (सं० पु०) स्मित, मुसकराहट, हलकी हंसी।

ईषद्रक्त (सं० पु०) अत्यल्प रक्तवर्ण, निहायत हलका सुर्खरङ्ग।

ईषदुद्घाटित (सं॰ त्रि॰) अल्पोद्घाटित, थोड़ा खुला।

ईषद्रोषा (सं॰ स्त्री॰) त्रिदोषाग्निका पित्र।

ईषना (हिं॰) ईषणा देखो।

ईषदाढ्य (सं॰ त्रि॰) अल्प सम्पत्कर, थोड़ी सम्पत्ति रखनेवाला। यह शब्द आकाङ्क्षारहित वाक्य समर्थका निमित्त है।

ईषद्विचल (सं॰ त्रि॰) अल्पार्थे परिचलित, थोड़ासे हिलता हुआ।

ईषल्लाभ, ईषल्लभ्य देखो।

ईषा (सं॰ स्त्री॰) ईष्-क-टाप्। १ लाङ्गलदण्ड, हल या गाड़ीका डण्डा, हरीस।

ईषादण्ड (सं॰ पु॰) लाङ्गलमुष्टि, हलका दस्ता।

ईषादन्त (सं॰ पु॰) ईषा इव दन्तोऽस्य, बहुव्री॰। दीर्घ-दन्त-गज, लम्बे दांतका हाथी।

ईषाधार (सं॰ पु॰) १ लाङ्गल रथ प्रभृति, हल गाड़ी वगैरह। २ एक नागका नाम।

ईषिका (सं॰ स्त्री॰) ईष्-ण्वुल्-टाप्। १ गजाक्षि-गोलक, हाथीकी आंखका ढेला। २ तूलिका, मुसव्वरकी कूंची। ३ एकप्रकार अस्त्र, किसी किस्मका हथियार। ४ काशतृण, कांस। ५ अक्षिकूट, आंखका ढेला।

ईषिकास्त्र (सं॰ क्ली॰) अस्त्रविशेष, एक हथियार। "[illegible]" (महाभारत अनुशासनपर्व)

ईषिर (सं॰ पु॰) ईष्-किरच्। अग्नि, आग।

ईषीका (सं॰ स्त्री॰) १ वीरणादि शलाका। २ अन्तर प्रविष्ट मूर्ति, अन्दर पहुंची हुयी सूरत। ३ निरञ्जन-शलाका, सुरमेकी सीख। इसे तैलमायविनी (कुठाली)में डालकर देखते हैं—धातु गला है या नहीं। ४ चित्रकारकी चायपेंसी, मुसव्वरकी कूंची।

ईष्म (सं॰ पु॰) ईष्-मक्। उणादि॰ १।१४४। १ कामदेव। २ वसन्त ऋतु, मौसम-बहार।

ईष्य (सं॰ पु॰) आचार्य, उपाध्याय, मजहबी तालीम देनेवाला उस्ताद।

ईस (हिं॰ पु॰) ईश्वर, खुदा।

"[illegible]" (तुलसी)

ईसबगोल, इसबगोल देखो।

इसरगोल, इसबगोल देखो।

ईसवी (अ॰ त्रि॰) ईसा-सम्बन्धीय, ईसाके मुताल्लिक। (पु॰) २ ख्रीष्टीय संवत्, ईसाका सन्। यह संवत् ईसा मसीहके जन्मसे आरम्भ हुआ है। पहली जनवरीसे इसकी गणना की जाती है। ईसवीमें ३६५ दिन होते हैं। जिस वर्ष यह सन् चार संख्यासे पूर्ण रीतिपर कटता, उस वर्ष अधिमास पड़ता अर्थात् फरवरीमें एक दिन बढ़ता है।

ईसा (अ॰ पु॰) यीशुख्रीष्ट, ईसा मसीह। (Jesus Christ) ईसाई-धर्म-प्रवर्तक एक साधु। ईसाई धर्मावलम्बी इन्हें जगत्‌का त्राणकर्ता (Savior), ईश्वरका पुत्र (the Son of God) और त्रित्व (Trinity)का एकाङ्ग मानकर पूजते हैं। बाइबिल ग्रन्थके 'आदिभाग'में भविष्यत्कारी यहूदी बताते हैं, मसीहा या 'त्रिताता' अवतीर्ण होंगे। किन्तु ईसाका अवतारत्व वे सर्वतोभावसे स्वीकार नहीं करते। इस विषयपर ईसाइयों और यहूदियोंमें बड़ा वाद-प्रतिवाद हुआ था। ईसाइयोंकी मनीषिमण्डलीने ईसाका देवत्व एवं अवतारत्व अनेक तर्क तथा युक्ति द्वारा प्रमाणित किया। इस बाइबिल ग्रन्थकी इञ्जील या नव संहिता (New Testament)से ईसाई-जगत्‌में पूज्य इस अद्वितीय महापुरुषकी एक सूक्ष्म जीवनी-मात्र सङ्कलन करते हैं,—

राजा हेरोदके राजत्वकालमें युदिया राज्यान्तर्गत बेथलेहेम (Bethlehem) नगरमें ईसाने जन्म लिया था। सेण्ट मथी (Mathew)-लिखित सुसमाचारके १म अध्याय पर इब्राहीम और दाऊद (David)के वंशमें इनके पिता युसुफके जन्म लेनेकी कथा लिखी है। किन्तु सेण्ट लूकके ३य अध्यायमें आदमसे युसुफकी वंशलता कल्पित है। इन दोनों स्थलोंमें दाऊदसे युसुफकी वंशावलीका गड़बड़ देखकर धर्मग्रन्थके टीकाकारोंने विविध सिद्धान्त द्वारा उसके निराकरण का प्रयास उठाया है।

महात्मा लूक ईसाका जन्मवृत्तान्त अत्यन्त रहस्य-पूर्ण बताते हैं। इनकी माता मेरीका विवाह जब युसुफसे हुआ, तब उनके गर्भ रहा। गर्भका सञ्चार

होनेपर यूसुफ समझ गये—मेरी पत्नी मेरी अमूढ़ावस्थासे ही गर्भवती है। सुतरां उन्होंने सुपके स्वीय पत्नीको छोड़ पृथक् रहनेकी ठहरायी। उनके चित्तका भाव परख परम पिताने देवदूत भेजा था। यूसुफने निद्रावस्थामें स्वप्न देखा, मानो देवदूतने उनको लक्ष्य कर कहा—मेरीके गर्भमें भ्रूणरूपसे विद्यमान शिशुको पवित्रात्मा (Holy Ghost)का बालक-जैसा समझो; जितने दिन वह प्रसूत न हो, उतने दिन मेरीसे यह संवाद छिपावो; उन्हें पत्नी-रूपसे ग्रहण करो और जातबालकका नाम ईसा (Jesus) रखो।

यथेच्छाचारी राजा हिरोद ईसाके जन्म-समय अलौकिक और अत्याश्चर्यंकर घटना पड़ते देख विस्मयाविष्ट हुये। पूर्वप्रोक्त भविष्यद्वाणी-वर्णित जन्मका वृत्तान्त एवं स्थानादिका ऐक्य गंठ जानेसे वह मन ही मन अपनेको विपद्ग्रस्त समझने और इस भयसे बालकके ध्वंससाधन पर झपटने लगे, कहीं परिणाममें वह परम शत्रु न निकले। तदनुसार ईसाकी मृत्यु अलङ्घनीय बनानेके लिये राजाने बेथलेहेम और तत्पार्श्ववर्ती स्थानवासी दो वर्षवयस्क यावतीय शिशु मार डालनेका आदेश दिया था। इसी दुर्घटनाके समय एक देवदूतने पहुंच निशायोगसे निद्रित मेरी और यूसुफको स्वप्नमें चेताया,—तुम इस बालकको उठा शीघ्र ही मिश्चर राज्यमें भाग जायो।

महात्मा मथी इतना ही लिखकर निश्चिन्त हो गये हैं। किन्तु लूक (St Luke)के सुसमाचारमें प्रकाशित है—सूतिकाके शौचान्त मेरी और यूसुफ पवित्र मन्दिरमें समर्पणार्थ बेथलेहेमसे जातबालक ईसाको उठा जेरुसलम नगर पहुंचे थे। वहां यथाविधि कृत्य सम्पादनके बाद वह पुत्रको क्रोड़में दबा जन्मभूमि (गालिलीके अन्तर्गत) नजरेथ नगरकी ओर चले। इस स्थानपर बालोचित शिक्षाके साथ-साथ ईसाके ज्ञानका विकाश भी बढ़ने लगा। तीक्ष्णबुद्धि और प्रतिभाने ही भविष्यत्में इन्हें जगत्का उच्च पद सौंपा था। कहना दुःसाध्य है—ईसाने विद्यालयमें शिक्षा पायी या नहीं।

इनके ग्रीक, अर्मीय, हिब्रू और लातिन भाषा जाननेका आभाष मिलता है। बाइबिल देखनेसे मालूम पड़ता है—ईसाके गृहमें अध्ययन होता था (Deut, vi. 4, Psalms cxiv—cxvii)। धर्मपुस्तककी आलोचना ही इनका मुख्य उद्देश्य रही। ईश्वरप्रसिद्ध ग्रन्थावलीने प्रश्नपत्रमें ईसाका आचार्यपद पाया था। इनके चित्तमें सर्वदा ईश्वरका पवित्र वाक्य गूंजते रहता।

द्वादश वर्षके वयःक्रमकाल शिक्षा समापन करनेपर यहूदी-बालक ईसाकी व्युत्पत्ति धर्मशास्त्रमें विशेष बढ़ गयी थी। उस समय लोग इन्हें सर्वत्र 'क़ानूनके बेटे' (Son of law) कहने लगे। मातापिताके प्रति ईसाकी भक्ति और श्रद्धा यथेष्ट रही। यह कभी कभी पिताकी सूत्रधारवृत्ति उठा उनका परिश्रम घटा देते थे। तीस वर्षके वयःक्रम पर्यन्त ईसाने सांसारिक जीवन अतिदीन भावसे बिताया (Mark 6-3)। द्वादश वर्ष शिरोभूषा (Phylacteries) पहना धर्मतत्त्वोपदेशकके पदपर अभिषिक्त करनेके मानस मेरी और यूसुफके जेरुसलम नगर लानेसे ईसाकी प्रतिभा प्रवीण यहूदी-पण्डित-समाजमें समा गयी थी। एक दिन मन्दिरमें बैठ ईसाने मनीषियों-(Doctors)से इतना धर्मविषयक प्रश्नोत्तर किया, कि अतिकाल हो जानेका बिलकुल अवधारण न रहा। मातापिताने समझा, पुत्र कहीं खो गया था। वे इतस्ततः अन्वेषणमें व्यापृत हुये। अवशेषमें अबोध बालकको पण्डितमण्डलीकी मीमांसामें पड़ा देख उन्हें बहुत विस्मय लगा था।

द्वादशवर्ष जेरुसलम आने और त्रिंशवर्ष यहूदी पुरोहित-पुत्र जोहन-दी-बापिस्तसे जर्डन नदीतीर दीक्षा लेनेतक अष्टादश वर्षकाल वे गार्हस्थ-जीवनमें व्यस्त रहे। दीक्षाके बाद ईसा धर्मप्रचार पर व्रती हुये। इन्होंने स्वीय धर्म फैलाने, ईश्वरकी प्रेरणासे देवकार्य (Divine mission) बनाने और अपना मत चलानेको प्रायः तीन वर्ष नानारूप अलौकिक कर्म देखाया था। ईसाने ईश्वरसे जो पवित्र धर्म पाया, साधारणमें उसी पवित्र वाक्यके प्रचारार्थ द्वादश सच्चरित्र साधु पुरुषको मनोनीत कर अपना साथी

बनाया। आज कई-कई लोग अपने इनके धर्मोपदेशमें वक्तिकता या गडी थी। धर्मप्रचारमें पक्षीको द्वादश 'अपोसल' (Apostles ईसानुवर्ती व्यक्ति) माना है। उनके मृत्युके पीछे यह धर्मानिर्व्याज धीरे धीरे फैलाने लगे थे। ईसाने उन द्वादश व्यक्तियोंको निज मतमें विशेषरूप दीक्षित किया था। यह 'अपोसल' अशिक्षित, अज्ञान, निर्धन और मर्यादाहीन रहे। इनकी अलौकिकघटनाका प्रतिभामें देखे सामर्थ्य लोग भी साधारणके हितमें बहुमूल विश्वास संस्कार, श्रेष्ठ धर्मोपदेशको प्रतिपादित धर्मतत्त्वों और इसमसीहपर प्रतिष्ठित ऐहिक आचारादि समूल उत्पाटित कर सके थे। अतःपर ईसाने अपने मतावलम्बियोंमें ७० व्यक्तियोंको शिष्य (Disciple) बना वाञ्छित पथपर दो-दो भेज दिये (Luke x. 1.)। इन सत्तर शिष्योंके नियोगकी कथा अन्यान्य ईसाचरितकार (Evangelist)-ने नहीं लिखी।

जब ईसा इस प्रकार शिष्यगण धीरे-धीरे अपना धर्म फैलानेको आगे बढ़े, तब पाश्चात्य सभ्य-जगत्‌में अद्वितीय रोमक सम्राट्‌की कीर्तिकौमुदी पर चढ़े थे। जूलियस सीजरके प्रभाव और अगस्तसके कूट शासनसे साम्राज्य उन्नतिके चरम पदपर पहुंचने भी ऐश्वर्य-मदमत्त रोमकोंने दाम्भिकता वा क्रमशः अवनत होने लगा। टाइबिरियस्के राजत्वकालमें यह अवनति-शील साम्राज्यमें टला। ईसाके जन्मसे बाहर रोम-साम्राज्यपर अत्याचार और अनाचारकी घोर छाया पड़ी थी। रोमक भूपतिके प्रभुविशारद आर्मीय शासनकर्त्ताने भरसक राज्यमध्य विवादकालिमा बढ़ी और अधीनस्थ दास्याग्रस्तों निर्दय एवं अत्याचारी यहूदीय हेरोद राजाके हस्त जाति यहूदियाराज्य-की अधीनता उसमें भी अधिक बढ़ी। यहूदियाके अत्याचारजनित राज्यका अनुष्ठित बीभत्स हत्याकाण्ड प्राचीन जगत्‌में बहुत कम देखनेमें नहीं आता।

शासनकर्त्ताकी ऐसी दारुण उपद्रव अवस्थामें रोम-देशवासियोंके हृदयमें क्रमशः प्राचीन धर्मभाव घट रहा था। अनेक धनवान् व्यक्तिने दार्शनिकका निरीश्वर-वाद (Atheism) माना और कोयोंने प्रायः एक प्रकार नास्तिकता (Atheism) को अपना परम धर्म माना। जब प्रतीच्य जगत्‌का पौत्तलिक सम्प्रदाय उच्छृङ्खल नास्तिकतामें डूबा और यहूदीय सम्प्रदायका धर्म शास्त्रीय आचारके प्रतिपालनमें रुकता रहके पर हृदयसे छूटा, तब ईसा तारेकी तरह मानो आकाशसे टूटा था।

धर्मनैतिक तथा राजनैतिक जगत्‌में ऐसा विप्लव पहले भी कभी पड़ता था। विनाशक—सबके परित्राणमार्गी जो किसी परित्राताके आनेकी राह देखने लगे। पैगम्बर-परम्परासे ईश्वरके अवतारका भी उल्लेख होने आया, सरलचित्त इसराइलोंके हृदय पर भी उसी विश्वासने अपना प्रभाव जमाया। आरिस्, मानिलास्, सुयेटोनियास्, कोरिकास् प्रभृतिने लिखा, कि तत्कालके पाश्चात्य सभ्य जगत्‌ने प्राच्य देशमें ही अपने परित्राताको ढूंढ लिया था।

इसी उत्कण्ठा और अवतारागमनकी आशाके दिन ईसाके-धर्मगुरु बप्तिस्त जोहन (John) गलदेशमें फैलाने लगे। उन्होंने कहा था,—मूसाके विधि माननेवाली यहूदीगणकी यहूदी जातिसे समीक्षा अवतार होंगे। उनके भाव, भक्ति, भविष्यत् और परिच्छदादिको देख लोगोंके मनमें एलिजा प्रभृति पैगम्बरकी आयाका भ्रम भी आता था। अनेक लोग उनके बातपर विश्वास लाये। यह्वाण और निर्जन प्रदेशका योगासन देख लोग उनपर बहुत विश्वास करते थे। धर्मोपदेश सुनकर साधारणमें इतना उत्साह बढ़ा, कि हजार-हजार लोगोंने यर्दन-नदीनीरपर आकर जोहनसे दीक्षा ली।

महात्मा ईसाको यज्ञमध्य इसने ज्ञान ईश्वरप्रतिमासे निमग्न रहने भी मानवमात्रकी आशासे निर्लिप्त प्राप्त होके देखा और ईश्वर-पिताका पद परिष्कार करनेकी प्रथासे ईश्वरवादविरोधक अपने अनुगामी हुई महापुरुषके पास पहुंच यर्दनपर दीक्षाकी भिक्षा की। उसी समय इनकी निष्कलङ्क सौम्यमूर्ति देख विचक्षण विशिष्ट प्रचारक जोहनका हृदय भर गया था। उन्होंने अविनाशी प्रतिमूर्ति निष्पाप-देख ईसाको दीक्षा देना न चाहा। क्योंकि उन्हें

स्वयं अपने निष्पाप होनेमें सन्देह था। किन्तु निष्पाप ईसाको बारम्बार अनुरोधसे जोहन उसे दीक्षा देनेको बाध्य हुआ। दीक्षाकालमें उन्होंने इनके शरीरमें दिव्यज्योतिः देखा था। उसी समय जोहनके प्रति आकाशसे देववाणी हुई, यही प्रतिश्रुत मसीहा और यही मसीहा ईश्वरके पुत्र हैं।

दीक्षाके बाद ईसाने ईश्वरलाभकी आशासे वनगमनपूर्वक सन्यास लिया था। द्वादश अपोसल-कथित अभिव्यक्तिसे समझ पड़ता है—ये जेरिका मरुभूमिके कोयावान्तानिया प्रदेशमें योगसिद्ध हो ऐश्वरिक प्रत्यादेशसे बलीयन् बने। योगाभ्यासके समय पापसहचर (Powers of Evil)से इन्हें लड़ना पड़ा था।

पापपर जय पा ईसा जर्दन नदीतीर फिर आये। इसी स्थानसे इनका धर्मप्रचार-कार्य आरम्भ हुआ था। ईसायी लोग इस धर्मप्रचार-कालको प्रधानतः आठ भागमें बांटते हैं,—

१ जोहन-विहृत प्राथमिक चित्र अर्थात् गालिलीके साधारण प्रचारारम्भ पर्यन्त।

२ गालिलीका प्रचार—जोहनकी हत्या पर्यन्त।

३ विरोधकाल अर्थात् गालिलीवासी फारासियों और स्क्राइबोंसे ईसाका मतद्वैध।

४ विपद्ग्रस्त हो गालिलीसे चिरप्रस्थान और इनके पलायनकालका वृत्तान्त।

५ उक्त सुदीर्घ प्रवासप्रव्रज्यासे जेरुसलम आगमन और वहांसे गुप्तहत्याके भय इफ्राइम ग्राममें पलायन एवं लुक्कायित भावपर अवस्थान। टेवारनकलके भोजोत्सव दिन ईसा सहसा जेरुसलमके पवित्र मन्दिर में आ पहुंचे थे। 'अन्धोंको चक्षुदान' (Healing of the blind) और Woman taken in adultery नामक घटनाद्वयसे इन्होंने अलौकिक करुणा और ज्ञानशक्तिका जो परिचय दिया, उसने इन्हें उस पवित्र नगरके पदार्पणप्रसङ्गपर चिरस्मरणीय बना लिया है। उसी समय उत्सर्गभोजके दिन जेरुसलम मन्दिरमें यहूदियोंसे ईसाका घोर मतद्वैध उपस्थित हुआ। विवाद इतना बढ़ा, कि उन्होंने एकबार उठकर इन्हें प्रस्तर-निक्षेप द्वारा मार डालनेका भय देखाया था। उसीके अनुसार अपना प्राण बचानेको ये नाना स्थानमें घूमे-फिरे। लाजारासके मृत्यु उपलक्षमें ईसाको बेथनी जाना पड़ा था। वहां स्वीय शक्तिबलसे मृत लाजारासको पुनर्जीवित करनेपर सानहेड्रिन इतने उभरे, कि कायाफास (Caiaphas)के नेतृत्वमें इनके ध्वंससाधनको खड़े हुये। ईसाने वनप्रान्तस्थित इफ्राइम पहुंच आत्मरक्षा की थी।

६ इफ्राइममें रहनेसे 'पासोवर' (The passover)-के भोजोत्सव पर्यन्त। इस समय कुष्ठरोगमुक्त साइमानके भोजदान उपलक्षपर भक्तिमती मेरीकर्तृक उनके अभिषेकमें युदासकी प्रतिहिंसावृत्ति ऐसे जले, कि यहूदी-पुरोहित एकत्र कर ईसाको मारने चले। महसी, स्क्राइब, हिरोदीय, फाराम् और सानहेड्री इनके उपदेशसे क्रमशः विरक्त बने जाते थे। एकदिन प्रकाश्य वक्तृतामें इन्होंने विद्वेषी यहूदियोंसे अभिसम्पातपूर्वक कह दिया,—'रे धूर्त स्क्राइबो और फारासियो तुम उत्सन्न हो' (Woe unto you, Scribes and Pharisees, hypocrites.) यहूदी ईसाके इस घृणासूचक वाक्यसे इतने बिगड़े, कि अविलम्ब इन्हें मार डालनेकी मन्त्रणा करने लगे। अवशेषमें पश्चात् पहुंच उन्होंने ईसाको पकड़ बन्दी बना लिया।

७ इसके पीछे शेषभोज (Last supper), ईश्वरप्रेम, अपूर्व निग्रह, विचार (Trial) और क्रुशारोप (Crucifixion) पर्यन्त।

८ सर्वशेषमें इनके समाधिसे पुनरभ्युत्थान (Resurrection) और स्वर्गारोहण (Ascension) पर्यन्त।

पूर्वमें लिखा जा चुका है कि ईसाने बेथनी भागकर शरण लिया था। उहत यहूदी एकदिन सन्ध्याको शीतल समीरण लेते-लेते इनके पदानुसरणपूर्वक चलकर बेथनी पहुंचे। ठीक उसी समय युदा-प्रमुख यहूदी ईसाको झटका पकड़नेके लिये पुरोहितोंसे कुमन्त्रणा करते थे। सम्भवतः ३० ई०को ३१ वीं मार्च शुक्रवारको ये बेथनी आये थे। परवर्ती बुधवार पर्यन्त ईसा वहां सुखसे सोये, किन्तु वृहस्पतिको प्रातःकाल शय्या छोड़ जागने पीछे फिर

सुनते थोड़ कहा न सके, दूसरे दिन अपना शिष्योंमें शामिल हुये।

प्रभुभोजनके पश्चात् ये पुरोहितका अति-सत्य-प्राप्त ईसाको-शासनास-ओलीवपर्वत पर्व समाने मन्दिर गिरजाघरमें गये थे। वहां मोशमनदर भेंट ईसाने योहन और पीटरसे अपने कष्टादिकोंको बात कही। अनन्तर वे गेथसेमन (Gethsemane)के उद्यान बागमें जा अति घोर वेदना विह्वल हो गये थे। उसी समय मशाल लिये युदास और विनाश-घातक पुरोहित वहां आ पहुंचे। उन्होंने सम्मानपूर्वक ईसाको क्रमशः पकड़ लिया था। पीटरका निषेध न मान इन्होंने उनके साथ आत्मसमर्पण किया। शत्रुके हाथ इनको होनेवाद ईसाको छोड़ शिष्य भाग गये।

यहूदी ईसाको पकड़ उसी रात विचारार्थ हनान नामक वृद्धतम पुरोहितके पास लाये। मध्यरात्रिको ही इनका विचार होने लगा। विचारक पुरोहितके सम्मुख ईसाने आत्मरक्षार्थ कोई बात कही न थी। विचारक नाराज होकर भी जब इनके मुखसे कोई बात निकला न सके, तब इन्हें-बद्ध कर प्रधान-धर्माध्यक्ष कायाफास (the de facto high-priest)-के पास ले गये। उस समय भी रात बीती न थी। कायाफासने सानहेड्रिनकी विचारसमितिका संगठन किया। वहां दो कट्टर पुरोहित आ पहुंचे थे। कायाफस सबके बाद उन्होंने ईसासे पूछा,—"तुम मसीह या ईश्वरके पुत्र हो, या नहीं?" इन्होंने उत्तरमें कहा था,—"हां, मैं ही मसीह या ईश्वरका पुत्र हूं।" इन्होंने दूसरी बार भी बताया था,—"तुम मनुष्यके पुत्रको शक्तिमान्के दहिने हाथ बैठे और आकाशके मेघोंपर आते देखोगे।" कायाफस यह बात सुन, क्रोधसे अधीर बन, अपने वस्त्रका कपड़ा फाड़ और ईसाको ईश्वरनिन्दक बता दिया। उठे—सानहेड्रिन-समितिने इनके प्रति मृत्युदण्डका आदेश दिया था।

द्वितीय विचारके बाद ईसा कारागारमें बन्द रक्षी-प्रहरियोंके कठोर व्यङ्ग्य-अत्याचार सहते रहे। दूसरे दिन सवेरे सानहेड्रिनने एकत्र हो फिर विचार आरम्भ किया। इस बार भी ये मृत्युदण्डके ही उपयुक्त हुये। इस समय इस प्रदेशमें रोमनोंका अधिकार विस्तृत था। सुतरां यहूदियोंमें प्राणदण्ड देनेकी शक्ति न रही। उन्होंने अपना दोष छोड़ानेको ईसाको दण्डका भार रोमक शासनकर्ता (Procurator)के ऊपर डाला था। रोमक शासनकर्ता पिलेट (Pilate) बिना विचार अपराधीका दण्ड दे न सके। प्रेटोरियम (Praetorium)में लाना ठहरनेके बाद पिलेटने इन्हें छोड़ा था। अनन्तर यहूदियोंके मध्य सारका सद्दूकी समाजने पिलेटको गालिलीमें ईसाके रहनेकी बात मालूम पड़ी। इसीसे उन्होंने इनको राजा हेरोदके निकट विचारार्थ भेजा था। हेरोदने निर्दोष ईसाको छोड़ फिर पिलेटके पास पहुंचा दिया।

द्वितीय बार विचारमें इनको निर्दोषिता प्रमाणित होने भी उद्धत यहूदियोंके सन्तोषार्थ पिलेट फिर तृतीय बार विचारमें प्रवृत्त हुए। फरीसियों, सामरियों तथा गालिलियोंके अपने विरुद्ध राजद्रोही बन कोई राष्ट्रविप्लव उठानेके भय, अपनी कोई प्रार्थना और दण्डादिप्रापनकारियोंको प्रमाण-मूर्तिके मनुष्योंको अदृश्यादि लिखा था उन्होंने ईसाका प्राणपात करना और देनेको ठहराया था। किन्तु पुरोहितों एवं सानहेड्रिनोंके घोर चीत्कार और उत्तेजित मांगोंके उपरोक्तकोलाहलमें वह अपना अभिप्राय पूर्ण कर न सके। पिलेट इस भयसे उनके विरुद्ध कोई प्रस्ताव कैसे करते—पीछे कहीं शासनकर्ताके विरुद्ध कोप न उठाये। तत्काल 'पासोवर' उत्सवके भेटको लाइ इन्हें छोड़नेकी प्रथा रही। ईसाके विरोधियोंने इसी उपलक्षमें उनसे दूसरे पकड़नेको छोड़ देनेकी प्रार्थना की थी। पिलेट इस बातको टाल न सके, किन्तु ईसाको छोड़नेके लिये बार बार उन्हें समझाने लगे। इसी पिछली भी वे उत्तेजित यहूदियोंको शान्त कर न सके थे। उन्होंने राजद्रोही तथा हत्याकारी बारब्बास अपराधीको छोड़ दिया, किन्तु ईसाको कोड़ोंसे चढ़ानेके लिये उन्होंने प्रधानको स्वीकार किया। उसी समय यहूदी ईसाको रक्त-वर्णका चोगा दरबार सब समय लाये थे। इनके शिरपर कण्टकमय मुकुट और हाथमें राजदण्ड-सदृश

सठ रहा। लोग ईसाको 'यहूदियोंका राजा' कहकर चिढ़ाते और निर्दय सिपाही 'रोमके वेत्रदण्डकी भांति' दारुण रूपसे आघात लगाते थे। ऐसी अवस्थामें भी पिलेटने फिर एकबार यहूदियोंका चित्त खींचनेको करुण कण्ठसे स्वीय आवेदन ज्ञापन किया। शेषको पुरोहितोंका तर्जन-गर्जन सुन उन्हें साधारणके समक्ष इनके क्रूशारोपणका आदेश देना पड़ा।

अनन्तर यहूदी दो दस्यु और ईसाको क्रूशपर चढ़ानेके लिये गोलगोथिकी ओर ले चले। अपने हस्तमें कील ठुंकते समय भी इन्होंने हत्याकारियोंकी मुक्तिके लिये प्रार्थना की थी। ईसाके मृत्युकालकी वाक्यावली ईश्वर-विश्वासकी सुगभीर परिचायक है।

जो विद्वेषी और अत्याचारी यहूदी इनके क्रूशपर चढ़ते समय उपस्थित रहे, वे भी उदारता एवं गाम्भीर्य देख नयनजलमें डूब और 'हा हतोऽस्मि' कहते तथा करसे वक्ष कूटते जेरूसलम नगर लौट गये। सन्ध्याके प्राक्काल सिपाहियोंने क्रूशपर चढ़े दस्युद्वयके पदद्वय तोड़ कर भेज दिये थे। तत्काल उन्होंने मरने या न मरनेकी परीक्षा लेनेको ईसाके मृत वक्षमें अस्त्र भोंका। अनन्तर सन्ध्याके बाद समाधिकार्य-सम्पादनको असम्भव समझ उन्होंने झटपट इन्हें मट्टी दी थी। शासनकर्ताके आदेशक्रमसे निकोदिमास और आरमाथियावासी यूसुफने ईसाके मृतशवको यथारीति कब्रमें रखा। शुक्रवारको सन्ध्या समय महात्मा ईसा मसीहका समाधि लगा था। रविवारको अतिप्रत्यूष मेरी इनके समाधिस्थानपर पहुंचीं। रजनीको देवदूतसे ईसाके पुनरभ्युत्थानकी बात सुन वहां गयी थीं।

बाइबिल ग्रन्थके John xx. 17, xxi. 1-24, Matt xxviii. 9-10, Luke xxiv. 13-32, 34, I Cor. xv. 3, 5, 8, प्रभृति स्थलमें ईसाके पुनराविर्भावका उल्लेख मिलता है। प्रथम ईष्टर दिवस (Easter day)से ४० दिन पर्यन्त इन्होंने स्वीय भक्त शिष्यों और अपोसलोंके सम्मुख आविर्भूत हो उनके प्रति धर्मतत्त्व सम्बन्धमें उपदेश दिया था। शेष दिन ईसा भक्तप्राण शिष्योंको बेथनीके अभिमुख ले गये। वहां उनकी मङ्गलकामना कर इन्होंने अपना शेष आदेश माननेको समझाया था। इसी प्रकार आशीर्वाद देते देते ईसा उनके सामने मेघ मध्य समा गये। चालीस दिन पीछे इन्होंने स्वर्गारोहण किया।

स्वर्गारोहणके पचास दिन पीछे ईसाकी शिष्यमण्डली पेण्टेकष्ट भोजोत्सवके समय जेरूसलम नगरमें समवेत हुई थी। इस दिन शिष्योंपर परमात्माका भर हुआ और उन्होंने सकल भाषाओंमें उपदेश दे जनसाधारणको विमोहित किया। इसी दिन इसी मुहूर्तपर उनके भावसे मुग्ध हो प्रायः तीन सहस्र लोग ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए थे। अतःपर ईसा-नियोजित अपोसलों और शिष्योंने पृथिवीके नाना स्थानोंमें जा ईसाईधर्म प्रचार करना आरम्भ किया। सब पहिले मध्य-एसियामें धर्मप्रचार कार्यपर व्रती बने थे। विश्वासघातक युदासके बदले मथियास (Matthias) अपोसल मनोनीत हुये। (ये यहूदीवंश सम्भूत थे पीछे पल नामसे प्रसिद्ध हुये।) दूसरे एक जोहन भी 'अपोसल' बने थे।

मथी, मार्क, लूक और जोहन प्रभृति महात्माओंने जो लिखा, उससे ईसाकी ऐसी एक पार्थिव जीवनीका चित्र उतारा गया। इनका आध्यात्मिक जीवन वा धर्मतत्त्व (Christianity) जिस सकल उपादानसे गंठा, वह यथास्थान लिखा है। ईसाई देखो।

पाश्चात्य ऐतिहासिकोंने इसका कोई प्रमाण नहीं दिया, पौत्तलिक-प्रधान पाश्चात्य जगत्में किस उद्दीपनासे कौन उपादान उठा ईसाने नूतन धर्मप्रचारमें अग्रगमन किया था। ईसाई भी इसका कोई ठीक प्रमाण बता न सके, अपने अज्ञातवासकाल ईसा किस देशमें रहे। सम्भवतः इनके पिता इन्हें मिसर ले आये थे। बाइबिलके नाना स्थलोंमें जेरूसलमनगरके पूर्वदिक्से मसीहाके आविर्भूत होनेका प्रसङ्गादि विहृत रहने पर स्पष्ट ही समझ पड़ता है, कि यहूदी-प्रधान पालेस्तिनके पूर्वाञ्चल ही ईसाईधर्मका झगड़ा उड़ा था।

पूर्वाञ्चलवासियोंपर ईसा और उनके भक्तोंके एतादृश अनुराग रहनेका कारण क्या है? इस बातको प्राच्य वा प्रतीच्य बुधमण्डलीका कोई व्यक्ति इतने दिनतक

[illegible] था। यथा— आर्मिनीय, आबिसीनीय, काप्टीय, सीरीय प्रभृति प्राचीन भाषाओंमें बहु पुराणोंमें प्राचीन [illegible] किया, उसी समय- समूहमें [illegible] ईसाकी इसकी आलोचना बहुत हुआ था। ईसा मसीहके अज्ञात [illegible] जीवनी (Unknown life of Christ) प्रभृति [illegible] प्राचीन भाषामें लिखी है। यह ग्रन्थ ईसाकी जीवनीका मूलक और पाली भाषामें लिखित है। भारत तथा और देश जाकर अज्ञातवासमें [illegible] और [illegible] इस ग्रन्थमें [illegible] है। रूस-देशके नोटोविच (Nicholas Notovitch) तिब्बतमें [illegible] इस ग्रन्थको [illegible] भाषामें अनुवाद किया था। [illegible] अनुवाद [illegible] भाषामें अनुदित हुआ।*

इस ग्रन्थमें ईसाके अज्ञातवासकालकी शिक्षा और बौद्ध धर्मचर्याकी कथा लिखी है। [illegible] ईसाइयोंका [illegible] है, कि धर्मचर्याके लिये इन्होंने और इनके सम्प्रदायवालोंने [illegible] प्राचीन समय भारतमें [illegible] था। क्योंकि प्राचीन ईसाई सम्प्रदाय और भारतीय [illegible] [illegible] प्रतिमाका [illegible] किया है। बौद्ध धर्मानुसार [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible] प्रभृति [illegible] ईसाई [illegible] प्रचलित हुये हैं। (Muller's Origin & Growth of Religion, p. [illegible]) [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] ईसाके [illegible] [illegible] कोई [illegible] नहीं। ईसा [illegible] [illegible] (New Testament) [illegible] [illegible] [illegible] बौद्धोंके

* The Unknown Life of Christ, by Nicolas Notovitch, translated from the French by Violet Crispe, 1895.

[illegible] [illegible] (St. Augustine) [illegible] और [illegible] (St. Thomas) [illegible] ईसाई [illegible] [illegible] है—प्राचीन [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] है, कि बुद्ध (बुद्ध) [illegible] [illegible] थे। [illegible] (St. Jerome) और [illegible] (L. D. Achery) और [illegible] [illegible] [illegible] है।

[illegible] लिखा है,—

"This mad man then, Manis (also called Scythianus) was by race a Brachman, and he had for his teacher Budas, formerly called Terebinthus, who having been brought up by Scythianus in the learning of the Greeks, became a follower of the sect of Empedocles (who said there were two first principles opposed to one another), and when he entered Persis, declared that he had been born of a virgin and had been brought up among the hills..........and this Budas (also Terebinthus) did perish, crushed by an unclean spirit."

[illegible] [illegible] कहा है,—"This wonderful jumble, mainly copied, we see,—from Socrates, seems to bring Buddha and Manes together, many of the ideas of Manicheism were but fragments of Buddhism."

ईसाई [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ईसाई [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] [illegible] (Saint of Church) [illegible] [illegible] है।*

* Cf. [illegible] IV, 176. Academy, Sept 1, 18[illegible], p. 156.

मुहम्मदके मतसे ईसा मसीह 'रुह-अल्ला' या जगदीश्वरके आत्मा, कुमारी मेरीके सन्तान और एक पैगम्बर समझे गये हैं। मुसलमान इनके आगमनसे पौत्तलिकताके स्रोतका कितना ही रुकना और सनातन धर्मका जमना मानते भी इन्हें जगत्‌का परित्राता (Redeemer and Saviour) नहीं समझते। स्वयं मुहम्मदने ईसा मसीहका जन्म, ईश्वर कर्तृक अद्भिकारसे उत्पत्ति और मेरीके निकट देवदूतका समागम प्रभृति घटनायें कुरान्‌में लिखी हैं।

ईसाइयोंने इनकी जीवनी नाना प्रकारसे सङ्कलित की है। सकल ही ग्रन्थोंमें ईसाका मत विशदरूपसे मीमांसित और आलोचित है। अनेकोंने ईसा-प्रवर्तित धर्ममतको विचार विशेष निन्दा भी की है, जिसकी आलोचनाका यहां कोई प्रयोजन नहीं। ईसाइयोंमें जिन सकल महात्माओंने इनकी जीवनी देखकर हृदयमें उन्नत भाव प्राप्त किये, उनमें कई लोगोंके मत यहां लिखे जाते हैं। काण्टने ईसाकी अभिव्यक्तिसे पूर्णज्ञानकी पराकाष्ठा पायी थी। हेगेलने इनमें नर और नारायणका एकत्र समावेश (The union of the human and the divine) देखा था। बहुत बड़े नास्तिक (sceptics) भी ईसाकी सम्मानना कर गये हैं। स्पिनोजाने इन्हें स्वर्गीय ज्ञानकी प्रतिमूर्ति बताया है। वोलतार (Voltaire) ईसा-चरित्र-चित्रके सौन्दर्य और गाम्भीर्यपर मुग्ध हुए थे। जगत्‌के विख्यात वीर नेपोलियनने सेण्टहेलेना द्वीपमें रहते समय कहा था—इनके साथ किसी अपर व्यक्तिका सामञ्जस्य ठहर नहीं सकता। इसीने ईसाका जन्म और मृत्यु देवताकी भांति माना है। पतद्भिन्न ष्ट्रायास, रेनान, जनष्टुयार्टमिल प्रभृतिने इन्हें मनुष्यजीवनका नेता और आदर्शपुरुष लिखा है।

एक ओर जैसे ईसाई ईसाके गुण गाते हैं, दूसरी ओर वैसे ही अनेक ईसाई पुराविद् धराधाममें उन्न अवतारके होनेपर बिलकुल विश्वास नहीं लाते। इनके अवतार होनेपर सन्देह कर नेपोलियनने पहले डार्डरसे पूछा था,—"ईसा नामक कोई व्यक्ति धरातल-पर रहा या नहीं।" पुराविदोंने उक्त वचनमें मतकी पोषकतापर अनेक ग्रन्थ भी लिखे हैं। किन्तु ईसाई धर्मपर प्रकृत विश्वास रखनेवाले अयौक्तिक युक्तिको मूर्ख व्यक्तिका प्रलाप कहा करते हैं। उनके कथनानुसार कुइरिनियाम्, पिलेट वा टाइबिरियाम्‌की राजतालिकामें लिखा न रहते भी तासितास्‌को लेखनसे उसका प्रमाण मिलता है। तासितास्‌ने लिखा है—टाइबिरियासके राजत्वकालमें शासनकर्ता पान्तियास् पिलेटकी आज्ञासे ईसाईधर्म-प्रवर्तक (Founder of Christianity) मारा गया था। पिलेटने ईसाई मतके अनुसरणसे हीनमति बालकोंको सतर्क करनेके लिये एक राजाज्ञा (Act of Pilate) निकाली थी, और वह ई०के २रे शताब्दतक बलवती रही।

ईसाई (फा० वि०) १ खृष्टीय, नसरानी, मसीही। (पु०) २ खृष्टान, मसीहको माननेवाला।

यह ईसा मसीहका भक्त और तन्मतावलम्बी सम्प्रदाय है। ईसाके भक्त कहा करते हैं,—"उसी असीम अनन्त शक्तिमान् विश्वव्यापी जगदीश्वरने परम प्रीतिसे पवित्रात्मासमूह और इस जगत्‌को बनाया था। पवित्रात्मा ईश्वरका माहात्म्य, प्रेमसम्भोग और कियत् परिमाण उनकी पवित्रता पानेके अधिकारी हुये। पीछे ईश्वरने कामावसायिता (Free Will) उन्हें दे डाली। सुतरां वे इच्छानुसार चलने लगे। स्वेच्छावश क्रमशः उनका मन कलुषित हुआ। उसीसे पापकी उत्पत्ति, धीरे-धीरे पापकी वृद्धि और उसीके साथ दारुण मनस्ताप आया है! शैतानके साथ उसके दूतभी ऐसी ही अवस्थामें पड़ गये। उन्होंने सारे पापका भार सरलप्रकृति मानवपर डालना चाहा था। उनकी मनोवाञ्छा पूर्ण हुई। इसीसे मानवजाति इतनी सन्तप्त, इतनी पीड़ित और इतनी पापग्रस्त है। मानवके पापमोचन, जगत्‌में न्याय एवं सुखराज्यस्थापन और मानवजातिको फिर पवित्रता तथा पूर्वगौरव प्रदान करनेके लिये भगवान्‌ने अपना प्रियपुत्र ईसाको धरातलपर प्रेरण किया था। जो ईसा मसीहका धर्मोपदेश प्रकृतरूपसे समझते हैं, वे जो उनकी इच्छाके अनुकूल

कहते हैं, ये ही उनको ख्रष्टका नाम करनेवाले ईसाई कहलाते हैं।"*

१०६ ई०में [illegible] ने लिखा है,—"जो लड़कपनमें चोरी और कपटपनमें रहते जाते हैं, वे ईसाई हो नहीं सकते। जो, पति वा पुत्रघातियों, [illegible], इन्द्रियोंके परितृप्तिके लिये दूसरेसे [illegible] या भिन्न पुरुषके साथ [illegible] किसीको ईसाई नहीं कहते। किसी प्रकारका पाप करने और रखने भी [illegible] ईसाई कभी नहीं।"

ईसाई धर्मतत्त्व प्रतिपन्न करते हैं,—"जो धन-स्पृहा नहीं रखते, जो निज अधिकार सम्पत्ति अन्यके बलात्पूर्वक लेने भी कुण्ठित नहीं होते और जो सरलता, पवित्रता एवं उदारताको व्यवहार मानते हैं, वही लोग ईसाईधर्मको मानते हैं।"†

ठीक और पर कह नहीं सकते—ईसा मसीहके मरनेके बाद किसके द्वारा ख्रष्टान वा ईसाई नाम पाया। किन्तु उसके अन्तियोक नगरमें यह नाम प्रथम निकला था। वही [illegible] सम्प्रदाय यहूदियोंसे पृथक् करनेके लिये ईसाइयोंको विद्रूपभावसे 'ख्रष्टान' कहकर पुकारते थे। उसी समयसे यह नाम चला आता है।

प्रधानतः ईसाई सम्प्रदायको इन कई मतोंको मानकर चलना पड़ता है—१ बाइबिल वा ईसाई धर्मपुस्तक ईश्वरका वाक्य होनेसे [illegible] है। २ बाइबिल सर्वतोभाव [illegible] है। ३ ईसाईके पक्ष, ईश्वर और ईसा तथा पवित्रात्मा (Holy Ghost)का त्रित्व (Trinity) स्वीकार्य है। ४ आदि मानवका पतन ही मानवजातिके पापका कारण है। ५ मानव-जातिके लिये ईसाका आविर्भाव, उनका ईश्वरके निकट तथा अवतार होना और उनका [illegible] एवं [illegible] है। ६ भक्ति और [illegible] विश्वासमें पापोंको क्षमा होते हैं। ७ पापोंको परित्राण एवं पवित्रात्मा [illegible] रहता है। ८ आत्मा अविनश्वर है।* ईसाका देह मर जानेपर भी उठा था। [illegible] ईसाके [illegible] दुष्टोंको अनन्त शास्ति और शिष्टोंका अनन्त [illegible] पुरस्कृत हुए। ९ ईसाई धर्मग्रन्थोंका सब ऐतिहासिक [illegible] स्वीकार किया जाता है। ईसाई धर्ममें दीक्षित होनेका [illegible] नित्यदिन प्रतिपाल्य और अवश्यकर्तव्य है। ईसाके क्रूशोपर चढ़नेसे पूर्वरात्रि अन्तिम भोज (Lord's Supper)का होना [illegible] विश्वासका विषय है।

ईसा मसीहके पूर्व जेरुसलम, अन्तियोक प्रभृति स्थानमें यहूदियोंने कुसंस्कारावच्छिन्न और उनके [illegible] तथा अत्याचारी हो गये थे। कुसंस्कार और अत्याचार हटानेके लिये ईसा नाना स्थानोंमें अपना मत फैलाते रहे। उन्होंने जो सकल मत फैलाया, उसका अधिकांश यहूदी जातिके प्राचीन धर्मग्रन्थोंमें पाया जाता है। इससे बोध होता है—ईसा-प्रवर्तित ईसाईधर्म यहूदी धर्मका ही संस्कार ठहरता और प्राचीन यहूदी धर्मसे ही [illegible] है।

ईसाने अपने प्रधान बारह शिष्योंको धर्मप्रचार कुसंस्कार छुड़ानेके लिये नियुक्त किया। ये बारहो लोग धन, मान वा विद्या कुछ भी न रखते थे। तथापि उनको साथ [illegible] व्यक्ति ईसाई धर्ममें दीक्षित हुये। सर्वप्रथम जेरुसलम नगरमें ईसाई-समिति स्थापित हुई थी। उसी समय यहूदियोंने ईसाइयोंपर घोरतर अत्याचार किया। अनेक कष्ट एवं अनेक दुःख सहकर ईसाके प्रधान शिष्योंने जेरुसलम, अन्तियोक, [illegible] और [illegible] नगरमें ईसाई धर्ममन्दिर बनवाया था। सर्वप्रथम जेरुसलम नगरमें ईसाई धर्ममन्दिर स्थापित हुआ। वहांके ईसाई जेरुसलमको अपनी [illegible] और [illegible] मानते हैं।

[illegible]

ईसाके प्रधान शिष्योंने भी सकल [illegible] लिये, [illegible] ईसाई-[illegible]

* Rev. Charles Buck's Theological Dictionary, p 63, 83

† J. Eadie's Biblical Cyclopaedia.

पुण्यस्थान और भक्तिके पात्र बने। उसी समय पश्चिममें रोमनगर और पूर्वमें अन्तियोक ईसाई समाजका प्रधानस्थान माना गया।

ईसा मसीहका धर्ममत एक ही है। किन्तु उत्तर काल नाना जातिके नाना मत और विश्वास मिल जानेसे अकेले ईसाई धर्मने नाना आकार बना लिये। अब उसके कई समाज हो गये हैं, जैसे—रोमन-कायोलिक, सिरीयक, याकूबी, नेष्टोरी, अर्मनी, ग्रीक, प्रोटेष्टाण्ट, जेसुट इत्यादि।

रोमक-समाज।

विपक्षवादियोंके अत्याचारसे आदि ईसाइयोंने "कायोलिक" अर्थात् सार्वजनिक वा साधारण मतावलम्बीके नामसे अपना परिचय दिया था। उसी समयसे यह नाम पड़ा। अब कायोलिक कहनेसे रोमनकायोलिक (Roman Catholic) नामक ईसाई समाज समझा जाता है। कायोलिक रोमराज्यके अधिपति पोपको उसे यावतीय ईसाइयोंका धर्मपिता मान अतिशय भक्तिश्रद्धा करते हैं। उनके कथनानुसार मानव मेषपाल थे। पीछे एकताका बन्धन टूटा; इसीसे ईसा मसीहने अपने प्रधान शिष्य सेण्टपीटरको मेषपाल रूपसे नियुक्त किया। रोम नगरमें सेण्टपीटर रहते थे। वहां ठहरकर उन्होंने साम्य और मुक्तिमार्ग लोगोंको देखाया। ईसाका आदेश था—सेण्टपीटरके पीछे उनका उत्तराधिकारी भी 'मेषपालक' होगा। रोमके पोप सेण्टपीटरके स्वत्वाभिषिक्त और उत्तराधिकारी हैं। सुतरां जिस समय जो पोप होंगे, उस समय वेही 'मेषपालक' रहेंगे।

रोमन कायोलिकोंको धर्मरक्षार्थ सात शपथ मानना पड़ते हैं,—ईसाईधर्मकी दीक्षा, धर्मसम्बन्धीय उपासनादिका क्रियाकलाप, क्रूशारोपके पूर्वरात्र ईसाका सशिष्य भोजपर्व, निग्रहस्वीकार (Penance), मृत्युकालमें तैलका अवलेपन (Extreme unction), धर्माधिकार (Orders) और पाणिग्रहण।

इस समाजके धर्माधिकारमें अनेक पद पड़ते हैं,—प्रथम पोप (Pope) अर्थात् सकलके धर्मपिता, तत्पर कार्डिनाल (Cardinal) अर्थात् ईसाई समाजके राजा प्रभृति महाजन, (जो पोपके निर्वाचनमें अधिकारी होते हैं) उसके पर पेट्रियार्क (Patriarch) अर्थात् प्रधान धर्मगुरु, उनके अधीन आर्क बिशप (Archbishop) अर्थात् धर्माचार्य, उनके नीचे बिशप (Bishop) अर्थात् महापुरोहित, तत्पर पुरोहित (Priest) और सामान्य याजक (Deacon)।

रोमन कायोलिक साकार उपासक हैं। ईश्वर, ईसा और दिव्यात्मा (Holy Ghost) उनके उपास्य देव हैं। सिवा इसके वे मूसा प्रभृति सिद्धपुरुषोंकी भी विशेष भक्ति और पूजा करते हैं।

ई० द्वादशसे चतुर्दश शताब्द मध्य रोमाधिपति पोपके प्रबल प्रतापसे समस्त युरोपमें कायोलिक धर्म फैला था। उक्त महादेशमें प्रबल पराक्रान्त राजाधिराजसे कुटीरवासी दीन दरिद्र पर्यन्त सकल ही पोपके पदावनत हुए। पोप अथवा तन्नियुक्त धर्माधिकारियोंके विना आदेश कोई धर्मकर्म कर न सकता था। उस समय अनेकोंने समझा—पोप ही सम्भवतः ईश्वर और ईश्वरका अंश हैं! उनके भयसे कोई एक बात भी मुंह खोलकर कह न सकता था। उस समय पोपने ईसाई धर्मासन पर बैठ जो अत्याचार किया, उसे सुननेसे किसे हृत्कम्प नहीं हुआ। जो ईसाई पोपका नियम लांघता, वह यथाकाल उनके उपचार प्रदानसे विमुख जाता अथवा जो भ्रुणाक्षरसे भी किसी विधर्मीका संसर्ग करलेता किंवा जो विधर्मी पोपका आदेश न मानता, उसका निस्तार हो न होता था। इसी प्रकार सैकड़ों व्यक्तियोंने अकालमें कालका आतिथ्य स्वीकार किया और हजारों लोगोंने कारायन्त्रणाका दुःख अपने ऊपर लिया। आबालवृद्धवनिता हजारों व्यक्तियोंने असीम मनोकष्ट पाया था। युरोपमें ऐसा कोई प्रदेश नहीं, जो पोपके उस दारुण दण्डविधि (Inquisition)से अव्याहति पाता। सर्व जीवोंपर प्रेम रखना जिस धर्मका मूलमन्त्र है, उसी धर्मके सर्वमय कर्ताका ऐसा कार्य! ईसाई इतिहासपर विषम कलङ्क लगाता है।

कायोलिकसे जेसुट (Jesuit) सम्प्रदायका जन्म हुआ है। जेसुट शब्दसे ईसाके समाजका अर्थ निकलता

है। ई० [illegible] शताब्दीमें [illegible] ([illegible] Legends) नामक [illegible] एक फरमान लिखा था। यह फरमान भी [illegible] दोनोंको [illegible] प्राप्त थे। [illegible] अधिकारको [illegible] लिए किसीको अधिकार न था। दूसरे लोगोंने दोनोंको समाचार दिया,—"[illegible] एक फरमान [illegible] हुई है। अब आपको अनुमति [illegible] है।" [illegible] और [illegible] लोगोंका [illegible] हुआ था। लोगोंने [illegible] दोनोंके [illegible] लिखा कठिन है। इसलिए फिर [illegible] दिया,—"यह फरमान दोनोंके सम्पूर्ण अधीन है। इनके [illegible], दोनोंको [illegible] अधीन और [illegible] हुए हैं। इनके [illegible] को भी कुछ मिलेगा, [illegible] अधिकार रहेगा। जो [illegible], कुमाऊँ [illegible] और दोनोंको [illegible] लाभेगी।" इतना [illegible] देख [illegible] किसी [illegible] न रहे; [illegible] सिद्ध [illegible] हुई।

पूर्वकाल कुमाऊँ राजको और दलितोंके विषय कहा था—[illegible] किसी [illegible] न [illegible], [illegible] ईसाइयोंके [illegible] और [illegible] हैं। किन्तु [illegible] एक [illegible] था—[illegible] ईसाई [illegible] और [illegible] जो [illegible] करेंगे, [illegible] कोई [illegible] न रहेगा। [illegible] और [illegible] ईसाई [illegible] ईसाई [illegible] है।

[illegible] थी। [illegible] दोनों [illegible] और [illegible] ईसाई [illegible] था। [illegible] और [illegible] शिल्पकारों [illegible] था। [illegible] ईसाई धर्मकी दीक्षा दी। [illegible] शिल्पकारोंमें [illegible] दिया,—[illegible] शिल्पकारों [illegible] और [illegible] हैं।

ई०की १९वीं और २०वीं शताब्दीमें [illegible] बहुत काम किया। [illegible] किन्तु [illegible] और [illegible] ईसाई [illegible] ईसाई [illegible] किया। ईसाई [illegible] ईसाई [illegible]।

[illegible] राजा [illegible] (१८६८—१९४१ ई०) और उनके पुत्र [illegible] (१८९८—१९७ ई०) [illegible]

वासियोंको ईसाई-धर्मकी दीक्षा देनेके लिये बड़ा उद्योग किया था। उन्हींके यत्नसे दुआर्ति-नुनेज (Duarte Nunéz a Dominican) नामक एक व्यक्ति (१५१४—१७ ई०) सर्वप्रथम विशप (Bishop) बन भारत आये। वे जन-डि-आलवुकार्क (John de Albuquerque) गोया-नगरके सर्वप्रथम विशप हुये। किन्तु उस समय भी काथोलिक समाज भारतमें अपना अभीष्ट बना न सका था।

१५४२ ई०में सेण्ट जे,वियर नामक एक जेसुट भारत आये। मलवार, मदुरा तथा दक्षिण मन्द्राजके अनेक असभ्यों और तेनिवल्ली जिलेके परवर नामक कैवर्तोंने सेण्टजे,वियरसे दीक्षा ली थी। दाक्षिणात्यके वे लोग आज भी सेण्टजे,वियर पर अतिशय भक्तिश्रद्धा रखते और अपनेको 'जे,वियरके सन्तान' कहते हैं।—जेसुट समाजमें सेण्टजे,वियर अतिशय सम्मानित हैं। उन्होंने भारतवर्ष व्यतीत भारत-महासागरके द्वीपपुञ्ज और जापानमें भी ईसाई धर्म चलाया था। अन्तसमय चीन-राज्यमें धर्म चलानेके लिये गये और वहां जा अनाहार अनिद्रासे १५५२ ई०की २२वीं दिसम्बरको नाङ्किन नगरमें कालके ग्रास पतित हुये। १५५४ ई०को १५ वीं मार्चको उनका अस्थि मंगाकर गोया नगरके रौप्याधारमें रखा गया।—१५४८ ई०को उक्त तेनिवल्ली जिलेमें एण्टानिओ-क्रिमिनेल नामक एक विख्यात जेसुट किसी भारतवासीके हाथों निहत हुआ था। उसके पर वर्ष भी अनेक सम्भ्रान्त जेसुटोंने धर्म चलाने आ विषम शास्ति उठायी। १५५० ई०को बम्बई प्रदेशके अन्तर्गत थाने नगरमें जेसुटोंका एक धर्मालय बना। इस स्थानमें विस्तर असभ्योंको ईसाई धर्मकी दीक्षा मिली। थाना देखो।

१६०६ ई०में राबर्ट डि नोबिली नामक एक सम्भ्रान्त जेसुट इटलीसे मन्द्राजके उपकूल आये। उन्होंने जिस प्रकार यहां आकर ईसाई धर्म चलाया, वह बहुत ही अद्भुत और कौतूहलोद्दीपक था। उन्होंने सोचा,—'भारतवासी हिन्दू युरोपीयोंसे म्लेच्छकी तरह अतिशय घृणा करते हैं, सुतरां कोई उस हिन्दू सहजमें युरोपीयोंके मुखसे धर्मकी बात नहीं सुनते। विशेषत: बहुदिनसे वे जिस धर्म और विश्वासपर चलते हैं, उसे भी एककाल सामान्य मानव हटा नहीं सकते।' इसीसे उन्होंने प्रथम भारतका आचार-व्यवहार समझा। वे अपनेको नाम तथा जन्मस्थान छिपा 'रोमक ब्राह्मण' बताया करते थे। फिर उन्होंने अनेक कष्ट उठा सन्यासीके वेशमें ब्राह्मण पण्डितोंसे संस्कृत और तामिल भाषा सीखी। कुछ दिन बाद नोबिलीका नाम 'तत्त्वबोधस्वामी' पड़ गया। द्राविड़के ब्राह्मणोंने तत्त्वबोधको 'रोमक ब्राह्मण' मान लिया था। जेसुट सन्यासी उन लोगोंके आश्रयसे घूमफिर स्वकार्य बनाने लगे। प्रथम उन्होंने तामिल भाषामें 'आत्मनिर्णयविवेक' और 'पुनर्जन्म आक्षेप' नामक दो ग्रन्थ लिखे। उनमें उन्होंने वेदान्तके मतसे सिद्ध आत्मतत्त्व एवं परलोकका विषय और पुनर्जन्मके सम्बन्धमें पुराणका मत काट डाला। हिन्दू दार्शनिकोंमें बहुतसे उनके ग्रन्थ पढ़कर चिढ़ गये और उनकी बात शास्त्रके विरुद्ध समझ उपहास करने लगे। इसपर उन्होंने निज मतको समर्थन करनेके लिये कल्पित वेद और उपवेद लिखना आरम्भ किया। उनके रचित एक कल्पित उपवेदमें लिखा है,—

"ब्रह्मा न ईश्वरो नित्य आवतारश्च निश्चयः।
न सृष्टिः तस्य जगतः केवलं नरसत्तमः॥
यथा त्वं तथा स हि विशेषो नास्ति किञ्चन।
सृष्टिं नाशं पालनञ्च करोति स स्वयम्भुः।
तस्यावतारो नास्त्येव गुणादि स्वर्गं तथा॥"

ब्रह्मा न तो नित्य ईश्वर, न ईश्वरके अवतार और न जगत्के स्रष्टा ही हैं। वे सामान्य मानवमात्र ठहरते हैं। स्वयम्भू ईश्वर ही सृष्टि, नाश और पालन करता है। उसमें अवतार किंवा स्वर्गादि गुण नहीं होता।

इसीप्रकार गुप्त भावमें जेसुट सन्यासीने हिन्दुओंके धर्मपर आक्रमण किया। अनेक अल्पबुद्धि ब्राह्मणोंने उनके कल्पित वेदपर विश्वासकर और उसे वैदिक धर्म समझ ईसाई धर्म मान लिया था। (ऐसे ही कल्पित वेदका एक पुस्तक श्रीरङ्गके प्रधान देवमन्दिरमें मिला है।)*

* Asiatic Researches, Vol. xiv. p. 2.

अच्छूअप्रान्तके अनेक ग्राम हिन्दुओंके धर्ममें ईसाई धर्म लिया गया। पोर्तगाल कोलिनोंने ४५,००० मनुष्योंको ग्रामा-ओंके बैठनी रख और गुप्तरूप अन्य अता सैकड़ों विशेष हिन्दुओंको ईसाई धर्मकी दीक्षा दी थी। आज भी सम्प्रदायके लिखनमें अनेक देशी ईसाई कोलियोंको 'अछूतोपाध्याय' और 'सिन्दूरत' कहलाते हैं। ईसाई धर्मइतिहासोंमें लिखा है,—ईसाके आसमान लिख रोम दौलत और उनके बहुत पीछे सेन्ट फ़िलिप भी भार न सके, सिरिय धर्मकी रक्षा-कि-कोलियोंको उनके पास शुरू कर्म करके ईसाई गये। ईसाई-धर्मिक समाजमें आदमें रचित ईसाई-शास्त्रोंके इतिहासमें कहा है,—"भारतमें सिरिय धर्मको ध्वंस करते थे। कहा जाता है, कि सिरिय-शासकोंमें अत्याचार और अन्याय बढ़ाया था। किन्तु वास्तविक वैसा नहीं हुआ। वे ईसाईमें गमनकी रहे, किन्तु इधर कुछ ज्यादा अधर्म होने, लोभ करने और लालचोंकी शिक्षा करते थे।"*

१५२१ ई०में सिरिय-गिर्जाकी रक्षाके बहानेपर सिरियोंके पादरी पोर्तुगीज़ कुछ दिन ईसाई धर्मको चलाया। उनके उद्योगसे मदुरा, त्रिचिनापल्ली, तञ्जोर, तिनेवल्ली, कोचीन प्रभृति स्थानोंके अनेक लोग ईसाई धर्ममें दीक्षित हुए।

इधर गोवा नगरमें ईसाई-धर्माचार्य प्रतिष्ठित होकर पोर्तुगीज ईसाई दल और भारतमें राज्य और दूसरी ओर अनेक ईसाई धर्म चलाने लगे। इन्होंने युरोपमें जो दारुण दण्डविधि (Inquisition) चलाया, हिन्दुओंके विरुद्ध भारतमें भी उसीका नियम निकाल दिया। पोर्तुगीजोंका अत्याचार भारतमें शुरू हुआ और इसी दोषके कारण भारतमें पोर्तुगीज राजत्व छिन्न भिन्न हुआ। पोर्तुगीज देखो।

ई० १६वीं शताब्दीके शेष भागमें युरोपके प्रधान प्रधान ईसाई सिरियोंके धर्मयाजकोंका ऐक्य प्रतिपादन करनेके लिये सिरियोंके धर्माचार्योंके ऐक्य प्रतिपादन करते हैं, उनका मत बदल दिया,—"सिरियोंको इनका धर्मशास्त्र ग्रहण नहीं करने, वे सम्प्रदायके पादरियोंके अधीन शासन नहीं, कुमार-

* Richard's Religions of India.

मानोंमें कुमारको छोड़ाई देते और हिन्दुओंके धर्मको ध्वंस करते थे। ऐसे अत्याचार और अत्या-चार करनेसे ईसाई धर्मका प्रभाव विस्तार नहीं हो सकता।"

सिरिय धर्म माननेवाले नेस्तोरिय सिरिय ईसाई-लिम लिया वहमत किसी व्यक्तिको कभी नहीं ग ये। पोर्तुगीजोंने अच्छूतके लोगोंको धर्मान्तरित करनेका चेष्टा की और युरोपके प्रधान प्रधान ईसाई-धर्मिकोंके उनको उपदेश करते। अब सिरिय गोवाको इधर आनेके लिये भी सिरिय निस्तार कर न सके। क्योंकि उनको धर्मनीतिमें पोप और सिरिय समाजका सर्व-था। सिरियोंमें धर्माधारक पदिक्रम और अनेक महापुरुष उत्पन्न होने लगे और उनका अधःपतन हुआ। १६०४ ई०में पादरियोंके सिरिय निकाले गये। पीछे वे अपने रास्तेसे भी शामिल हुये। १७७१ ई०में नोमिन्ड नामक पोपके धर्माध्यक्षके अधिकारसे बहुत भी विरक्त हो सिरिय समाज बिलकुल तोड़ दिया गया। अनन्तर सिरिय रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय बने।

जातिभेदका व्यवहार और सार्वजनिक स्वाधीनताका शासन ईसाई धर्मका प्रधान अङ्ग है। आदि ईसाई इसीसे साधारणको अधिक धर्म भारतके दास बने और इसीसे समस्त युरोपके लोग उनका दास मानते थे। किन्तु रोमन-समाजके प्रादुर्भाव क्रमसे यह नियम न रहा। दाक्षिणात्यके अनेक लोगोंको ईसाई धर्ममें दीक्षित करने भी वे जातिभेदको दूर रोक न सके। किसीने भी समाजके समस्त व्यवहारिके जाति और नीच जातिके लोग पीछे बैठते, किन्तु ऊँची-जाती नीचोंको स्पर्श करते न थे। दाक्षिणात्यमें जो सब नये लोग ईसाई दीक्षित हुवे, वे नीच जातियोंपर अत्यन्त और दासवत रहते; किन्तु नीच जाति-वाले उन ऊँचेलोगोंका कोई कार्य कभी कर न सकते। अद्भुत दाक्षिणात्यमें जो ईसाई हुवे, वे आजतक भी ईसाई रहे। उस जातिका प्रयोग अब उपदेशको नहीं बल्कि थे। आज भी दाक्षिणात्यमें प्रायः अनेक हिन्दू ईसाइयोंके वंशोंके

प्रायः कितना ही पूर्वभाव बनाया है। किन्तु अब ईसाईधर्मका प्रबल स्रोत वह निकला है इसलिये किसी बातका ठिकाना नहीं लगता। इसी भारतवर्षमें देशी और विदेशी मिलाकर चौदह लाखसे ऊपर कायोलिक ईसाई रहते हैं। अंगरेजोंके राजत्वसे प्रायः सकल युरोपीय देशोंके धर्मप्रचारक भारतमें आ टिके हैं। अधिकांश कायोलिक गिर्जा और ईसाई-याजक गोया-वाले धर्माचार्यके अधीन हैं।

सिरीयक-समाज।

सिरीयक ईसाई समाज अतिप्राचीन और अन्तियोक तथा जेरूसलमवाले प्रधान धर्मगुरुके (Patriarch) अधीन है। पूर्वकालमें यह समाज अतिशय समृद्धिशाली हो गया था। ई०के ४र्थ शताब्दमें इस समाजके अधीन ११८ बिशप (Bishop) और प्रायः दश लाखसे अधिक ईसाई रहे। आजकल यह समाज मेरोनाइट, याकूबी, असली सिरीयक और मेलकाइट (ग्रीक) चार संप्रदायोंमें विभक्त हो गया है। ई०के पञ्चम शताब्दमें ईसा मसीहके अवतार सम्बन्धपर इस समाजमें एक झगड़ा पड़ा। ४४४ ई०को यूटिकेस (Eutyches) नामक एक पादरीने कनस्तान्तिनोपलमें प्रचार किया—'अवतार होनेसे पूर्व ईसा मसीहका आत्मा ईश्वरसे मिला था; अवतार होनेसे पीछे भी वह पूर्वभाव नहीं गया। ईसाके देव और मानव दोनो प्रकृति रहते भी मानवप्रकृति देवप्रकृतिसे जा मिली थी।' इसी मतभेदपर सिरीयक-समाजमें विषम तर्क वितर्क खड़ा हुआ। कनस्तान्तिनोपलके प्रधान धर्मगुरु (Patriarch) फ्लूरियान्ने एक महासमिति आह्वान की। इस महासमितिने उक्त मत न माना। किन्तु ४४८ ई०को जोफेसासकी महासभामें मिसर्-वाले ईसाई उदासीनके प्रबल आन्दोलनसे यूटिकेसका मत फिर सादर मान लिया गया। फ्लूरियान् और उनके सहचरका पद घटा था। उस समय सिरीयकसमाजमें उपरोक्त मत ईसाई धर्मके मूलतत्त्वकी तरह चल पड़ा; किन्तु अधिक दिन न ठहरा। कालसिडनकी महासभामें ६५० बिशप लोगोंके विचारसे माना गया था,—'पूर्वमत अत्यन्त असङ्गत और ईसाई धर्मके विरुद्ध रहनेसे अग्राह्य है। ईसा मसीहकी देव और मानव प्रकृति एकत्र निबद्ध है। वस्तु गतिसे कोई प्रभेद नहीं।' यूटिकेसके मतको मानकर उस समय कई समाज बन गये थे। उनके मरनेपर भी उक्त मत सैकड़ोंवर्ष चला। इस समाजके लोगोंमें परवर्तीकाल कोई कोई फिर मोनोफिसाइट (Monophysites) अर्थात् ईसाके एक-प्रकृतिवादी नामसे विख्यात हुये। वही एकप्रकृतिवाद आज भी याकूबी (Jacobites) समाजमें चलता है।

यूफाइटोंके मत-वैषम्यसे सिरीयक समाजका पूर्व गौरव घटने लगा। शेषमें इसलाम धर्मके अभ्युदयसे अत्यन्त अवनति हुई। ई०के ७म शताब्दमें इस समाज-पर अधिक विपद् पड़ी थी। ई०के ८म शताब्दमें मेरो-नाइटोंने मुसलमानोंके अत्याचारसे लेबेनन पर्वतपर रह स्व-धर्म बचाया। ये मेरोनाइट ही आदि सिरीयक ईसाईवंशसे उत्पन्न हैं। किसीके मतानु-सार ६१०ई०को सम्राट् हेराक्लियसके समय सिरीयक समाजमें मोनोथेलाइट (Monothelite) अर्थात् ईसाके एकेच्छावादी नामसे निकलने और ६८० ई०को षष्ठ महासमितिमें ईसाई धर्मका विरुद्धवादी माना जानेसे उठनेवाले सम्प्रदायके ही ये मेरोनाइट सन्तान हैं। ई०के ५म शताब्दको मेरोण-आश्रममें मेरो नामक एक धर्मगुरु रहते थे। उन्हींको इस सम्प्रदायके अपना प्रधान-जैसा माननेसे 'मेरोनाइट' (Meronite) नाम निकला। मुसलमानोंके आधिपत्यकाल सिरीयक समाजमें केवल मेरोनाइट ही धर्म और स्वाधीनता बचा सके थे। ई०के १२श शताब्दको जेरूसलममें रोमक समाज जमनेसे इन्होंने एकेच्छावाद छोड़ रोमक समाजकी अधीनता मान ली। १५८४ ई०को मेरो-नाइट याजकोंकी अध्यापनाके लिये रोममें एक विश्व-विद्यालय खुला था। रोमक समाजकी अधीनता माननेसे भी इस सम्प्रदायके ईसाई जातीय क्रियाकलाप और आचार-व्यवहारमें सम्पूर्ण अधिकार रखते हैं। सिरीयक-भाषामें उपासनादि काम होता है। याज-कता करनेसे पूर्व विवाहित होनेपर याजक साथ रह सकता है, किन्तु

करनेका अधिकार नहीं रखता। इस समाजको प्रति दमन एवं पोपसे धर्मराज्यकी आभ्यन्तरिक अवस्था बताना पड़ती है।

याकूबी या जाकोबाइट (Jacobite) सम्प्रदायके लोग पहले आदि-सिरीयक समाजका मत मानकर चलते थे। याकूब-बरदाई (Jacobus Baradaeus) नामक एक सिरीयक यति इस सम्प्रदायके थे। उन्हींके नामपर यह सम्प्रदाय याकूबी कहाया है। इसका पूर्वनाम मोनोफिसाइट (Monophysite) अर्थात् एकप्रकृतिवादी है। मोनोफिसाइटोंके मतसे ईसाकी प्रकृति एक ही रही, मानवप्रकृति ही क्रमसे दैवी प्रकृति बन गयी। नेष्टोरियास्के मत विरुद्ध प्रथम यह मत निकला था। यूटिकेस्का मत उठनेपर काल्सिडनकी सभामें ही मोनोफिसाइट नाम चल पड़ा। इस सभामें स्थिर हुआ था,—'ईसामें एकाधार दो प्रकृति विद्यमान हैं। उनका परिवर्तन या विभाग कोई समझ नहीं सकता।' किन्तु साधारण सिरीयक ईसाइयोंका मन इस बातसे बिगड़ गया था। तर्क-वितर्क, वाद-प्रतिवाद, विरुद्धवादियोंमें परस्पर लड़ाई झगड़ा लातजूता और शेषमें लाठी-सोटा चलने लगा। ई०के ६ठे शताब्दको मोनोफिसाइट सम्प्रदाय आदि सिरीयक समाजसे पृथक् हुआ। उसके पीछे सम्राट् जष्टिन् और जष्टिनियानके इस सम्प्रदायको छोड़ रोमक-समाजमें जा मिलनेसे इन लोगोंपर बड़ा गड़बड़ पड़ा था। इनमें परस्पर एकता न रही। फिर इस समाजसे कितने ही नूतन दल निकले थे। उनमें एक दलका नाम 'अकेफोलोई' (Akepholoi) पड़ा। ११८ ई०को विषम तर्क उठा था—ईसाका शरीर भ्रष्ट है या नहीं। अन्तियोकके सेवेरास् नामक पदच्युत बिशपके शिष्योंने (Seberians) प्रचार किया, ईसाका शरीर भ्रष्ट है। उधर गजनास् नामक बिशपके शिष्य (Gajanites) कहते फिरे,—ईसाका शरीर कभी भ्रष्ट नहीं। इसीप्रकार प्रथम दल 'फर्तोलोट्रिष्ट' (Phthartolotrist) अर्थात् भ्रष्टोपासक और द्वितीय दल 'अफर्तादोसिटो' (Aphthartadocetæ) अर्थात् पूतदेह-पूजक या शिष्यक कहाया। द्वितीय दलने फिर तर्क उठाया था,—ईसाका देह सृष्ट है या नहीं? 'अक्तिस्तेतोई' (Aktistetoi) अर्थात् असृष्टिवादीने कहा—सृष्ट नहीं। 'क्रिष्टोलाट्रिष्ट' (Kistolatrist) अर्थात् सृष्टिवादीने प्रमाण करके देखा दिया—हां सृष्ट है।

इन लोगोंमें फिर 'अग्नितोई' (Agnœtoi) नामक तीसरा दल निकला था। उसने प्रचार किया,—ईसा मानव नहीं, सर्वशक्तिमान् थे। ५६० ई०को एकप्रकृतिवादीमें अस्कुनगेस (Askunages) नामक एक व्यक्ति और उनके पीछे फिलोपोनस् (Philoponus) नामक किसी पण्डितने घोषणा की,—ईश्वर, ईसा और दिव्यात्मा तीनो अलग-अलग स्वतन्त्र हैं। किन्तु इस मतको एकप्रकृतिवादीने ईसाई धर्मके विरुद्ध समझ माना न था। मिसर, सिरीया और मेसोपोटेमिया प्रभृति स्थानोंमें उक्त मतावलम्बी बहुत दिनतक प्रबल रहे। ये अलेकजन्द्रिया और अन्तियोकके धर्मगुरुका धर्मानुशासन स्वीकार करते थे। ई०के ६ठें शताब्दमें याकुब-बर्दाइयोंके अभ्युदयसे उन्होंने स्वाधीन समाज बना लिया। उनमें कोई-कोई आर्मनी समाजसे जा मिला था।

आदि-सिरीयक ईसाई पोपका प्राधान्य नहीं मानते। उनकी बाइबिल सिरीयक भाषामें लिखी है। उसीके द्वारा उपासनादि कर्म होता है। दूसरा धर्मकाण्ड ग्रीक-समाज-जैसा है। उनके पुरोहित याजक होनेसे पूर्व विवाह कर सकते हैं, किन्तु पीछे नहीं। उन्हें द्वितीय दारपरिग्रह करनेका भी अधिकार प्राप्त नहीं। बिशपोंको एकबारगी ही विवाह करना मना है। वे मिश्रपुरुषका चित्र रखते और उसका स्तव करते हैं। रमणी बहुत धर्मशीला होती हैं। स्त्री-पुरुष उभय उपवासादि किया करते हैं, किन्तु उनकी संख्या अति अल्प है।

नेष्टोरियन (Nestorians)

ई०के ५वें शताब्द सिरीयक-समाजमें नेष्टोरियास् नामक एक महात्माने जन्म लिया था। उनके वाक्पटुता और सदुपदेशसे देशीय सकल लोग मुग्ध हुये। ४२८ ई०को वह कनष्टान्तिनोपलके धर्मगुरु

(Patriarch) बने थे। उक्त उच्चासन मिलनेसे अल्प-काल पीछे ही ईसाके देव और मानव प्रकृति-सम्बन्धपर घोरतर तर्क चला। अनाष्टेसिया नामक एक पुरोहित नेष्टोरियाके साथ कनस्तान्तिनोपल पहुंचे थे। एक दिन उन्होंने उपदेश देते समय कहा,—कुमारी मेरी ईश्वर वा देवपुरुषकी माता हो नहीं सकती. वह मानव ईसाकी माता हैं। इस बातको सुनकर अनेकोंने समझा, कि वह नेष्टोरियाका मत था। नेष्टोरियाने अपनी *बात समर्थन* करनेके लिये घोषणा की—'ईसाकी दोनो प्रकृतिमें भेद है। उनका देह मानवप्रकृतिसे बना, किन्तु उनका उपदेश देवप्रकृतिसे हुना है।' उस समय ईसाई-जगत्में इस बातपर तुमुल आन्दोलन उठा था। अलेकज़न्ड्रियाके धर्माचार्य सेण्ट-साइरिल उनसे बिगड़ पड़े। फिर रोमने बिशप सिलेष्टाइनने नेष्टोरियासे कहला भेजा,—यदि तुम अपना मङ्गल चाहो, तो शीघ्र ही इस दुष्ट मतको छोड़ो। किन्तु नेष्टोरियाने किसी बातसे महासभामें पदच्युत होते भी अपना मत न छोड़ा। इसलिये कनस्तान्तिनोपलके एक धर्माश्रममें चार वर्षतक वह कैद रहे थे। किन्तु उससे भी उनका विश्वास किसी प्रकार न घटा। अतःपर वह मिशरकी महामरुभूमिमें निर्वासित किये गये।

नेष्टोरियाके मत माननेवाले व्यक्तिको ही नेष्टोरियान् (Nestorian) कहते हैं। आजकल नेष्टोरियान् एक पृथक् समाज समझा जाता है। इफेसासकी सभासे पदच्युत होनेपर भी नेष्टोरियाका मत आसीरिया, पारस्य प्रभृति नाना स्थानोंमें बढ गया था। अल्प दिनमें रोमके शासनाधीन सकल स्थानोंसे उठ जाते भी ईरान, अरब, भारतवर्ष प्रभृति नाना स्थानमें नेष्टोरियान् समाज स्थापित हुआ। सिरीय भाषामें लिखित एक शिलालिपि द्वारा मालूम पड़ा है,—ई०के ७वें शताब्दमें नेष्टोरियान् ईसाई चीन राज्यमें धर्मप्रचार करने गये थे। तुर्कस्थानमें खलीफ़ावों और मध्य एशियामें मुग़ल-बादशाहोंने नेष्टोरियानोंको आश्रय दिया। प्रसिद्ध चङ्गेज़ खान्की पत्नी एक नेष्टोरियान्-कन्या थीं। सुनते हैं—मध्य एशियासे नेष्टोरियान् धर्मग्रहण करनेवाले मुगल बादशाहोंमें कराकोरमके अधिपति अवङ्गखान् प्रधान थे। चङ्गेज़ खान्के हारनेपर उन्होंने अपनेको प्रेष्टर-जोयानो (Prester John) अर्थात् जोहन (नामक) याजक बताया था।

ई०के १६वें शताब्दको नेष्टोरियान् समाजमें कुछ गड़बड़ पड़ा था। उस समय कितने ही लोगोंने बाध्य हो पोपकी अधीनता स्वीकार की। आजकल उन्हें *कालदी ईसाई कहते हैं। वे सकल ही* प्राचीन मत मानते हैं। कुर्दिस्थानके पार्वतीय राज्यमें इस समय प्रधानतः नेष्टोरियान् रहा करते हैं। किन्तु वे दरिद्र और मूर्ख हो गये हैं। उनके पुरोहित और निम्नश्रेणीके *याजक विवाह कर सकते हैं।* विवाहादिमें धर्माचार्यका मत लेना पड़ता है। वह मृतकी मूर्तिके उद्देशसे मन्त्रपाठ करते और सिवा क्रूशके ईसाकी दूसरी मूर्ति नहीं पूजते।

भारतवर्षमें भी बहु दिनसे नेष्टोरियान् देखाते और वे दक्षिणापथके मलबारमें सिरीयक ईसाई कहाते हैं। त्रिवाङ्कुड़में सिरीयक ईसायियोंके सन्तान आजकल 'नसरानी मापिल्ला' नामसे अभिहित हैं। इसके सम्बन्धमें कुछ मतभेद है—किस समय भारतमें सर्वप्रथम ईसाई आये। किसी-किसी मतसे ईसा मसीहके अन्यतम शिष्य सेण्ट टोमस अरब, ईरान् आदि स्थानोंमें धर्मप्रचार कर ६५ ई०को भारत पहुंचे थे। उन्हींसे यहां सिरीयक ईसायियोंकी उत्पत्ति है।

दाक्षिणात्यके 'नसरानी मापिल्लों' और नीच-जातीय ईसायियोंमें अनेक सेण्ट टोमसको धर्मपिता एवं खास ईसा मसीह समझते हैं। बहुतसे लोगोंको विश्वास है—६८ ई०को २१ वीं दिसम्बरको सेण्ट टोमस ही मन्द्राजके पार्श्ववर्ती माइलापुर नामक स्थानमें ब्राह्मणोंकी उत्तेजनासे हिन्दू अधिवासीकर्तृक निहत हुये थे। कोई कोई कहता है—पारस्यवासी मनिके शिष्य टोमस-मनिकीयने (Thomas the Manichæan) ई०के ३रे शताब्दमें भारत पहुंच अभिनव ईसाई धर्म चलाया था। दाक्षिणात्यवासी टोमस उन्हींके शिष्य हैं।

एक दूसरा प्रवाद है—'ई॰के ८वें शताब्दमें टोमस-कामा नामक एक धर्मज्ञ वणिक् मलबार उपकूलपर वाणिज्य करने आये थे। उन्होंने दो सुन्दर केरल-रमणीसे विवाह किया। देशी राजगणसे सद्भाव रहा। उन्होंने देखा—पूर्व मलबार उपकूलपर* जो ईसाई थे, वे हिन्दुओंके अत्याचारसे एककाल ही विलुप्त हो गये हैं। अति अल्प संख्यक देशीय ईसाई वनमें पर्वत-पर गुप्त जीवन बिताते हैं। उनके मनमें ईसाई धर्म चलानेकी आयी। देशीय राजगणसे उन्होंने अनुमति ले ली—ईसाई स्व-स्व धर्मकी प्रथासे जो कार्य करेंगे, उसमें देशी लोग कोई बाधा डाल न सकेंगे। राजगणकी अनुमतिपर उन्होंने वन पर्वतसे ईसाइयों-को फिर ला मलबारमें बैठा दिया। टोमस स्वयं उनके प्रधान धर्माचार्य बने थे। उसी समयसे यहांके ईसाई अपनेको टोमसके शिष्य बताने लगे।

उपरोक्त तीनो टोमसोंपर ही झगड़ा है। इसमें कोई सन्देह नहीं, कि शेषोक्त टोमससे भी पूर्व-भारतमें ईसाई धर्म आ घुसा था। ई॰के ३रे शताब्दमें हिपोलिटसने (Hippolytus, Bishop of Portus) लिखा है,—ईसाके बारह प्रधान शिष्योंमें सेण्ट बार्थलमेउ (St. Bartholomew) ईसाई धर्म चलाने भारत गये थे। फिर सेण्ट टोमस पारस्य और मध्य-एशियामें ईसाई धर्म चला शेषको भारतके 'कालमिना' नगर पहुंच मरे।

५४० ई॰को कोसमोस् इण्डिकोप्लुष्टेसने (Cosmos Indico-pleustes) भी लिखा है—मलबारके बिशप पारस्यसे नियुक्त हुये। किन्तु उन्होंने सेण्ट टोमसका नाम नहीं लिया। यदि ईसाके शिष्य सेण्ट टोमससे मलबारवासी ईसाइयोंका कोई संस्रव रहता, तो अवश्य ही उन्होंने लिख दिया होता। इससे समझ पड़ता है—ईसाके शिष्य सेण्ट टोमस मलबार उपकूलमें अपना धर्म चलाने आये न थे। फिर भी उत्तर भारतके किसी स्थानमें वे मरे होंगे।

मन्द्राजके-पार्श्वपर सेण्ट टोमस नामक एक पर्वत है। यहां प्राचीन पह्लवी भाषामें क्रशपर खुदी एक लिपि निकली है। साधारणका विश्वास है—इसी पर्वतके पास सेण्ट टोमस मारे गये थे। किन्तु क्रश खुदी पह्लवी लिपि द्वारा अनायास ही मालूम पड़ता है—पारस्यवासी मनिके* शिष्य सेण्ट टोमसने ही

* कारबिकाम् नामक एक क्रीतदास मनुष्य थे। जब उनका वयस सात वत्सर हुआ, तब कालिसकी किसी विधवा रमणीने उन्हें मोल ले अपने घर रखा। विधवा मरने पर सोलहवर्ष कारबिकाम् उसकी सम्पत्तिके उत्तराधिकारी बने। अतुल ऐश्वर्य पाकर उन्होंने अपना पहला नाम बदला और नये मनि नामसे परिचय दिया। फिर वे पारस्य-राजधानी जाकर रहने लगे। अपनी प्रतिपालिकाके साहाय्यसे मनिको विविध विद्या मिली थी। पारस्यमें रह मनिने इञ्जील (New Testament) और अपरापर ईसाई धर्मके ग्रन्थोंको पढ़ा, तथा ईसाई धर्मके अंशविशेषसे पारसीक एवं बौद्ध धर्मका कितना ही मतामत जुड़ा एक अभिनव ईसाई सम्प्रदाय स्थापन करनेका उद्योग लगाया। यह उद्देश्य साधन करनेके लिये उन्होंने अपनेको ईसाका प्रेरित शिष्य या दूत (Apostle) बताया था। इससे भी सन्तुष्ट न हो उन्होंने कहा,—'मैं वही पारासिट हूं, जिसे ईसा मसीहने भविष्यत्में भेजनेकी प्रतिज्ञा की थी। मेरे देहमें ईश्वरका स्वाधीन भावसे रहता है।'

अपना दिखाकर पारस्य-राजने उन्हें निज पुत्रकी चिकित्साको बुलाया था। किन्तु राजपुत्रको आरोग्य कर न सकनेसे पारस्यराजने उन्हें कारागारमें डाल दिया। कारागारसे मनि कौशलपूर्वक भागे, किन्तु फिर पकड़ लिये गये। २७७ ई॰को जोनदिसापुरमें पारस्यराजके आदेशसे मनिका वध हुआ। शरीरका चर्म पावकमें खींच उधेड़ डाला था। अद्दाउ, टोमस, हरमूज प्रभृति कई शिष्य उनका सिद्धान्त लिखित ईसाई धर्म चलाते रहे। उनके प्रवर्तित ईसाई सम्प्रदायका नाम मनिकीय (Manichaean) है।

यह सम्प्रदाय वर्तमान ईसाई समाजसे अनेक विभिन्न है। मनिने प्रचार किया था,—यह ब्रह्माण्ड और अन्तर्जगत जगत्के केवल दो मूल कारण हैं, एक सत् या आलोक (सुप्रकृति Good or light) और दूसरा तमः (कुप्रकृति Evil or Darkness)। मनिकीय उसी मतको मानते हैं। मनिकीयोंके मतसे आत्मा सुप्रकृति और शरीर कुप्रकृतिसे उपजा है। यह अविनश्वर अनन्तकारी सर्वशक्तिमान् जगदीश्वरका अंशमात्र है। एकमात्र ईश्वरसे ही ज्योतिका (Light) मूलकारण निर्दिष्ट होता है। तामसिक शक्ति (Darkness)-का राज्य एकमात्र प्रेत या शैतान् (Demon) द्वारा परिचालित है। परन्तु विरोध करनेपर ईश्वरने प्रेतको कर्तृत्वसे निकाल दिया था। प्रेतने सर्वोत्तमसे आदि मानव (Adam and Eve)को बनाया। प्रेत द्वारा बनाये जानेसे ही मनुष्यके शरीरमें पाप और आत्मामें पुण्यने आश्रय लिया। आत्मा भी क्रमशः पापसे संसर्ग कलुषित हो गया। कलुषित आत्माके लिये ईश्वरने अपने दुलारे और दोनों देवविभूति आत्मा निकालके ढंग

दाक्षिणात्यमें सर्वप्रथम ईसाई धर्म चलाया था। दाक्षिणात्यवासी देशी ईसाई उन्हींको अपना धर्मपिता और ई०के १४वें शताब्दसे पूर्वावधि स्वयं ईसा मसीह जैसा समझते थे। वे पारस्यसे आये नेष्टोरियान विशपकी आज्ञाके अधीन थे। ई०के ७वें शताब्दमें पारस्यके ईसाई-समाजने अपनेको टोमस ईसाईके नामसे अभिहित किया, जिसके अनुसार मलवारस्थ अपर ईसाइयोंने भी अपना नाम 'टोमस ईसाई' रख लिया। मलवारस्थ ईसाइयोंकी संख्या अधिक रहते भी देशी लोगोंके उत्पीड़नसे अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी। ६६० ई०को धर्माचार्य जेसजाबुसने (Jesajabus) पारस्यके प्रधान ईसाई याजकको एक पत्र लिखा। उसके पढ़नेसे समझ पड़ता है—ऐसा कोई आदमी न था, जो मलवार उपकूलके देशी ईसाइयोंको भलीभांति उपदेश देता। ई०के ८वें शताब्दमें अर्मनी टोमसने लिखा था,—मलवारके ईसाई वन्यपशुकी तरह वन और गिरि-गह्वरमें रहते हैं। ई०के १४वें शताब्दमें जार्दनास्‌ने (Friar Jordanus) देखा था—वे नाममात्रके ईसाई हैं, उनमें दीक्षा (Baptism) नहीं। आज भी कनाड़ाप्रदेशके अनेक असभ्य हिन्दुओंमें ईसाई धर्मके चिह्न मिलते हैं। इससे बोध होता है—'वे सकल असभ्य अनेक दिन ईसाई रहे होंगे। उन्होंने हिन्दुओंका भय अथवा अपनी शोचनीय अवस्था देख और हिन्दुओंके समाजमें समानेका कोई उपाय न पा क्रम-क्रमसे हिन्दूधर्म पकड़ा होगा।' वास्को-डि-गामाके आनेसे पहले मलवारी ईसाई स्थानीय नृपतिके अधीन सैनिक विभागमें घुस सके। उस समय धर्मकर्म चलानेको नेष्टोरियान् विशप, याजक, पुरोहित प्रभृति लगे थे। पोर्तुगीज नौसेनापति भारतमें जहां प्रथम उतरे, वहीं ईसाई उनसे जा मिले। पोर्तगीजोंके साथ जो सकल याजक रहे, वह उक्त ईसाइयोंको कार्योलिक समाजमें मिलानेकी चेष्टा करने लगे। उनको उत्तेजनासे १५६० ई०को भारतमें पोर्तुगीजोंके अधिकृत स्थानपर विधर्मियोंका विचारालय खुला था। अनेक तर्कवितर्क पर इतना विसम्वाद बढ़ा, कि बहुतोंको समक्ष रक्षार्थ रख बचाना पड़ा।

१५९८ ई०को कोचीनके निकटवर्ती उदयम्पूर नगरमें गोयाके प्रधान धर्माचार्यने (Arch-bishop) एक महासभा लगायी थी। वहां विस्तर आलोचनाके बाद सिरीयक ईसाई रोमक-समाजमें मिल गये।* इसी प्रकार भारतसे नेष्टोरियान् समाज उखड़ा था। सिरीयक ईसाइयोंने रोमक-समाजकी अधीनता

पापसे उक्त स्वर्गीय पदार्थ बचानेके लिये ईसा मसीह एवं दिव्यात्माको बनाया था। पवित्रात्मा (Intelligences)-के मध्य ईसा मसीह भी एक जन हैं। वे सूर्यलोकमें रहते थे। फिर मानवका पाप छोड़ाने और आत्माकी मुक्ति बनानेको यहूदियोंमें मनुष्यके शरीरपर ईसा अवतीर्ण हुये। यहूदियोंने समोहे अभ्रे बन उन्हें क्रूशपर चढ़ाया था। किन्तु उनका मरण न हुआ, उन्होंने मानवका पाप निज रक्तसे धो डाला। शिष्योंके सङ्ग आधे शेष बार पुनरुत्थानपूर्वक ईसा निज धाम सूर्यलोकको चले गये। उन्होंने जाते समय निज धर्म चलाने और निज शिष्यको सान्त्वना पहुंचानेके लिये दूतस्वरूपसे पाराक्लिट भेजनेकी बात कही थी। मनि ही ईसाके प्रेरित थे सान्त्वनाकारी दूतरूप पाराक्लिट रहे।

मनिके मतानुसार आत्मा चन्द्रलोक और सूर्यलोकसे पाप छोड़ाने पर परमपुरुषमें समाता है। मनिकीय ईसाके देहका पुनरुत्थान नहीं मानते। उनके मतसे पापी आत्मा स्वर्गलोकको जा नहीं सकता, किसी पशुदेहमें पहुंच जीवरूपसे जन्म लेता है। बाइबिलका मूसा-कृत धर्मशास्त्र ईश्वर-प्रणोदित नहीं, शयतान प्रेत ही उसका प्रणयनकर्ता है। इसीसे कोई बाइबिलके आदिमाङ्गको नहीं मानता। धर्मपरायण मनिकीयोंको मांस खाना मना है। उन्हें बाल्यकालसे चिरदिन ब्रह्मचारी की तरह रहना पड़ता है।

मनिकीयोंमें धर्मनिष्ठ और अल्पधी दो प्रकारके ईसाई होते हैं। धर्मनिष्ठ ईसाई मांस, डिम्ब, दुग्ध, मत्स्य, मद्य एवं अपरापर मादक द्रव्य नहीं खाते और रोटी, दाल, तरकारी तथा फलमूलादिसे अति कष्टके साथ अपना काम चलाते हैं। कामक्रोधादि षड्रिपुकी मारना ही उनका मुख्य उद्देश्य है। अल्पधी दुर्बल ईसाई स्त्री-पुत्रके साथ सकल-प्रकार सुख उठा सकते हैं। उनके धर्मसमाजका कार्य देखनेको एक सभापति (ईसा मसीहके प्रतिनिधिस्वरूप), बारह प्रधान (ईसाके दूतस्वरूप) और बारह विशप रहते हैं। उनके नीचे अध्यक्ष याजक हैं। वे ईसाई सम्प्रदायकी दीक्षा और प्रीतिभोजपर्व (Eucharist) को मानते हैं। अनेक रविवार, ईसाके पुनरुत्थान (Easter) और यहूदियोंके पेण्टिकष्ट (Pentecost) पर्वादिमें उपवास करते हैं।

* उसी समय पोर्तुगीज राजप्रतिनिधियोंने भारतके सब बन्दरोंमें इश्तिहार लगा दिये, जिसमें लिखा कि विद्रोहकार नेष्टोरियान् विशप आने न पावें।

मानते भी अपना कर्मकाण्ड न छोड़ा। ये आज भी सिरीयक भाषामें ही उपासना किया करते हैं।

१६६५ ई०को अन्तियोकके धर्माचार्यने अनाथ सिरीयक समाजकी रक्षा करनेके लिये मार-ग्रेगरी नामक एक विशपको भारत भेजा था। मलवारमें पहुंचनेपर अनेक सिरीयक ईसाइयोंने मार-ग्रेगरीका मत पकड़ लिया। उस समय सिरीयक ईसाई दो भागमें बंट गये थे। उनमें एक दलका नाम 'पजईया कुत्तकार' अर्थात् प्राचीन समाज है। उदयम्पुरकी सभासभामें ही 'पजईया कुत्तकार' की उत्पत्ति है। इस समाजके सिरीयक ईसाई पोपका प्राधान्य मानते हैं। फिर मार-ग्रेगरीसे 'पुत्तेन कुत्तकार' अर्थात् नूतन समाज निकला है। नूतन समाज याकूबी धर्ममतपर चलता है। इस दलके सिरीयक ईसाई रोमके विशप और नेष्टोरियास् पर अनेक दोष लगाते हैं। उनके मतसे कुमारीपुत्र पूर्वरात ईसाके सशिष्य भोजोपलक्ष्यपर ईसाई समाजमें होनेवाले पर्वके दिन जो रोटी और शराब बंटती है, वही ईसाका प्रकृत शरीर तथा रक्त ठहरती है। भारतके सिरीयक ईसाई अधिकांश धीवर और नौकाजीवी हैं।

ग्रीक-समाज।

ईसाई सम्प्रदायमें ग्रीक समाजका कर्मकाण्ड और मतामत स्वतन्त्र है। ईसाइयोंमें इस स्वतन्त्र समाजके बननेका कारण यह है—ग्रीक ईसाइयोंने रोमके एक मात्र पोप और उनके बनाये नियमसे विरुद्ध नाना तर्कयुक्ति लगा अपनेको विभिन्न बना लिया है। आजकल ग्रीस, योनीय द्वीपपुञ्ज, वालेशिया, मोल्दाविया, मिशर, आबिसीनिया, न्यूबिया, लिबिया, अरब, मेसोपटेमिया, सिरीया, मारशिमिया, पालेस्तिन, रूस-साम्राज्य, अष्ट्राकान, ख्यामान, जर्जिया प्रभृति स्थानवासी अधिकांश व्यक्ति इस समाजमें आ मिले हैं। यह समाज तीन शाखामें बटा है। उनमें १म कनस्तान्तिनोपलके धर्मगुरु, २य ग्रीकराज और ३य शाखा रूसी जारके अधीन है।*

किन्तु पोपकी धर्मप्रणालीपर गड़बड़ पड़ा था। ई० ९वें शताब्दके मध्य भागमें (८६२ ई०) पोप निकोलासने ग्रीकसमाजके धर्मगुरु फोटिउस्‌को (Photius) अपने समाजसे निकाल दिया। फोटिउस्‌ने उसी कारण एक साधारण धर्मसभा लगायी। इस सभामें रोमक-समाजके प्रवर्तित कई मतपर विचारकार्य आरम्भ हुआ था—

१म—रोमक-समाजके मतमें ईश्वर और तत्पुत्र ईसासे दिव्यात्माने अवतरण किया है। किन्तु ग्रीक-समाज इस बातको नहीं मानता। इसके मतानुसार दिव्यात्मा एकमात्र ईश्वरसे ही अवतीर्ण होता और तत्पुत्र कहाता है अथवा ईश्वरके पुत्र ईसामें ही दिव्यात्मा दिखाता है।

२य—याजक विवाहादि सांसारिक धर्म चला न सकेंगे, केवलमात्र ब्रह्मचर्यको पकड़े रहेंगे।

३य—पुरोहित दीक्षाके बाद किसी व्यक्तिका धर्मसंस्कार कर न सकेंगे।

इसी प्रकार कई मतविरोधसे रोम और कनस्तान्तिनोपलका धर्मसमाज पृथक् हो गया। फिर ८६९ ई०में सम्राट् बेसिल्‌ने एक सभा लगा उभय सम्प्रदायके मध्य शान्ति और एकताकी स्थापन किया था। सर्व समाजका शीर्षस्थान रोम रहने और कनस्तान्तिनोपल अधीन बननेसे पोपके लिये कार्यकलापपर हस्तक्षेप करनेकी विशेष असुविधा पड़ने लगी। पोपके गर्व और औद्धत्यसे धीरे धीरे ग्रीक ईसाइयोंका मन श्रद्धाहीन हो गया था। शेषका १०५४ ई०में कनस्तान्तिनोपलके धर्मगुरु माइकेल सेरुलेरियास्‌ने (Michael Cerularius) ईसाकी मृत्यु स्मरण रखनेके लिये शेष भोजपर्वको (Eucharist) खामिर रोटीके (Unleavened bread) व्यवहार, रविवारको क्रियाकलापके अनुष्ठान, शनिवारको उपवासके शुभकार्य और याजकोंके साथ एकत्र वासकी बात उठा विवाद बढ़ाया। इसी समय पोप ९म लियोने केरुलेरियास्‌को धर्मच्युत किया और समस्त ग्रीक धर्मप्रणालीको मिथ्या कह दिया। परिशेषपर उन्होंने निज दूत द्वारा साण्टा-साफियाके

* [illegible] चलता है।

धर्मगुरुको पदच्युत किया। इसमें ग्रीक विद्वेषानलसे जलने लगे थे। बस! चिरकालके लिये रोमक-समाजसे ग्रीक-समाज स्वतन्त्र हुआ।

ग्रीक समाजके लिये ईसाइयोंको निम्नलिखित व्यवस्थाके वशीभूत हो चलना पड़ता है,—

१, पोपका प्राधान्य कोई न मानेगा। ग्रीक ईसाई रोमकसमाजको यथार्थ कार्थोलिक समाज न समझेंगे।

२, तीन वत्सरसे न्यून वयस रहते पुत्रादिको दीक्षा देना नियमविरुद्ध है। फिर अष्टादश वत्सर तक दीक्षा दे सकते हैं। तीन बार जर्डन नदीका जल मस्तक पर छिड़क देनेसे ही दीक्षा हो जाती है।

३, ईसाके सम्मिश्र भोजपर्वमें (Lord's Supper) रोटी और शराब रहना चाहिये। दीक्षाके पीछे ही पवित्र भोज-सम्बन्धीय द्रव्य पुत्रादिको देना पड़ता है।

४, रोमक समाजकी भांति पापका प्रायश्चित्त करनेकी कोई मुद्रा निर्धारित नहीं।

५, रोमन कार्थोलिकोंके मतसे देह छोड़नेपर पाप-क्षालनके लिये जो स्थान होता, उसे ग्रीक समाज नहीं मानता; तथा मृतके शेष विचारसे कल्याण होनेकी भावनापर ईश्वरकी उपासना करता है।

६, ईश्वर और मनुष्यके मध्यस्थ समझ ग्रीक ईसाई पुण्यात्मा साधु (Saint) लोगोंको पूजते हैं।

७, रोमक समाजका धर्मसंस्कार (Confirmation), विपद्जनक रोगमें पवित्र तैलम्रक्षण (Extreme unction) और विवाहबन्धन (Matrimony) छोड़ा गया है।

८, सुधके सुधके पाप मान लेनेको ईश्वर आदेश नहीं देता।

९, ईसाकी मृत्युसे पूर्वका भोजपर्व (Eucharist) धर्मकाण्डमें गिना नहीं जाता।

१०, रोगी एवं बलिष्ठ व्यक्ति उभय भोजके अंशका अधिकार रखते हैं। किन्तु जो पुरोहितके (Confessor) निकट पापको स्वीकार करता है, उसे उक्त अंश बांटकर देना नहीं पड़ता। क्योंकि धर्मजिज्ञासी व्यक्ति मात्र इस भोजका अंश पानेके उपयुक्त होते हैं।

११, केवल एकमात्र ईश्वरसे ही दिव्यात्मा आविर्भूत होते हैं।

१२, अदृष्टवाद पर विश्वास रखना चाहिये।

१३, गिर्जामें ताम्र एवं रौप्यके फलकपर मेरी और उनके पुत्र ईसाकी प्रतिमूर्ति खोदाकर रखना ग्रीक समाजका मुख्य कर्तव्य है।

१४, धर्मालयमें नियुक्त होनेसे पूर्व पुरोहित विवाह कर सकते हैं। किन्तु विधवा-विवाह करनेपर कोई याजक बन नहीं सकता।

१५, कितने ही पर्वके दिन उपवास करना चाहिये।

१६, मृत्युके पूर्वभोज (Lord's Supper) की-रोटी और शराब ईसाके मांस एवं रक्तका रूपान्तर समझी जाती है।

१७, गिर्जामें किसी प्रकारका वाद्ययन्त्र आवश्यक नहीं। केवल गानसे ही उपासना होती है।

१८, यहूदियोंके पेण्टेकोष्ट (Pentecost) पर्वपर घुटने टेक भजना और अपर सकल ही समय खड़े होकर उपासना करना पड़ती है।

१९, सभी को क्रूश पहनना चाहिये।

२०, स्त्री-पुरुष उभय ब्रह्मचर्य अवलम्बन कर सकते हैं।

तुर्कराज्यके अधीन ग्रीसराज्य जानेपर यह धर्म-समाज अतिशय विशृङ्खल हो गया था। उस समय कनस्तान्तिनोपलके धर्माचार्य ही ग्रीक और रूसी समाजके दलपति बने थे। पीछे पीटर दी ग्रेट (Peter the Great) यह प्रथा उठा डाली। फिर ज़ार द्वारा निर्वाचित धर्मसमितिने इस राज्यके धर्मसमाज-का कार्य चलाया। १८२८ ई०को स्वाधीन होनेपर ग्रीसके सभापति कापोदिस्त्रियसने नूतन राज्यकी भांति समाजको भी पृथक् कर लिया था। आज-कल समग्र ग्रीस राज्यका धर्मकार्य सिर्फ दश बिशप चलाते हैं।

धर्मविषयमें पोपका एकाधिपत्य मान और अपने अपने समाजका कार्यकलापादि पालकर जो सम्प्रदाय रोमक समाजका प्राधान्य स्वीकार करता है, उसका नाम 'दी यूनाइटेड ग्रीक चर्च' (The United Greek Church) पड़ता है।

अर्मनी समाज।

ई॰के २य शताब्दको अर्मनिया राज्यमें ईसाई धर्म पहले पहुंचा था। उस समय सेण्ट थेडिअस नामक एक व्यक्ति विद्यमान रहे। किन्तु लोग ईसाई धर्मको अधिक मानते न थे। ३०१ ई॰के समय सेण्ट ग्रेगरीने आकर अर्मनीराज तिरिदतेसको ईसाई धर्मकी दीक्षा दी। उसी समयसे अर्मनोंमें ईसाई धर्म प्रबल पड़ा है। ई॰के ७वें शताब्दको अर्मनी भाषामें बाइबिलका अनुवाद हुआ। ईसा मसीहको दो प्रकृति पर गड़बड़ पड़नेसे अर्मनियोंने काल्सिडन-महासभाका आदेश न सुन एक प्रकृतिवादीका पक्ष पकड़ा था। फिर अर्मनी-समाज पृथक् हुआ और ग्रेगोरीके कारण प्रथम नाम ग्रेगोरीय (Gregorian) पड़ा। कुछ काल-तक इस समाजमें शान्तत्वपर घोरतर आन्दोलन रहा। ई॰के १२वें शताब्दको अर्मनी ईसाइयोंमें 'क्ला' (Klah) नामक एक महात्माने जन्म लिया था। उनके सकल आध्यात्मिक ग्रन्थोंको अर्मनी अति समादरकी दृष्टिसे देखते हैं। इस समाजके लोग हमेशा रोमक-समाजसे घृणा करते हैं। जब इसलाम धर्मकी रणभेरी अर्मनोंमें बजी, तब अर्मनी समाजने युरोपके राजगणसे सहायता देनेको कहा। उसी समय पर पोपने कई बार (११४५, १३४१, १४४० ई॰) अर्मनियोंको रोमके शासनाधीन बनानेकी चेष्टा की थी। अर्मनीके कितने ही सम्भ्रान्त व्यक्ति सम्मत भी हो गये। किन्तु जनसाधारणका मनोभाव किसी प्रकार न बदला। इसपर पोप (१२श) बेनिडिक्टने अर्मनी-समाजकी तीव्र समालोचना कर ११७ दोष दिखाये थे। उसी समय कितने ही अर्मनी रोमक समाजमें मिल गये। इन्हींसे उन्हें संयुक्त अर्मनी (United Armenians) कहते हैं। इस मिलित समाजके लोग आजकल पारस्य, रूस, मार्सेल्स, इटली, पोलेण्ड प्रभृति स्थानोंमें रहते हैं। ई॰के १७वें शताब्दमें मुसलमानोंके प्रबल आक्रमणसे बहुतसे लोगोंने बाध्य हो इसलाम धर्म पकड़ा था। फिर भी अधिकांश अर्मनी आजतक पूर्वमत और विश्वासको बचाते चले आते हैं।

अर्मनी समाज ईसापर एक ही प्रकृतिका आरोप करता है। उनके मतमें केवल ईश्वरसे ही दिव्यात्मा (Holy Ghost)ने अवतरण किया। दीक्षाके समय मस्तकपर तीन बार जल छिड़कना पड़ता है। ईसाके भोजोत्सवक पर्वपर सबको खालिस शराब और पावरोटी देनेसे पहले शराबमें पावरोटी डुबायी जाती है। याजक, पुरोहित प्रभृति धर्माध्यापक ही मरने-पर तेल लगानेका अधिकार रखते हैं, दूसरे नहीं। ईसाई महापुरुष भी अर्मनी ईसाई समाजके उपास्य हैं। ये लोग अधिक धर्मोत्सव नहीं मनाते, फिर भी ग्रीक समाजकी अपेक्षा अधिक उपवास करते हैं। पुरोहित एकबार विवाह कर सकते हैं। रूसाधिकृत अर्मनी एरिवान नगरके निकट 'एतमियाद्जिन' नामक आश्रममें प्रधान धर्माचार्य रहते हैं। यह स्थान अर्मनी समाजका महातीर्थ है। प्रत्येक अर्मनी ईसाईको जीवनमें एकबार इस महातीर्थका दर्शन करना पड़ता है।

प्रोटेस्टाण्ट सम्प्रदाय।

ई॰के १६वें शताब्दमें यह सम्प्रदाय उपजा है। इस सम्प्रदायके अभ्युदयसे पूर्व पोपने अपनेको समस्त ईसाई जगत्का अधिपति बताया था। जहां ईसाई न रहते, वहां पोपके मतसे जन-मानवशून्य वन थे। वह ईसाई समाजके शीर्षस्थानपर बैठ बाइबिल और ईसाई मतके विरुद्ध अनेक अन्याय-कार्य करने लगे। इसपर धार्मिक ईसाई मात्र उनसे मन ही मन अत्यन्त विरक्त हो गये। किन्तु प्रबल पराक्रान्त पोपके विरुद्ध बात कहनेका साहस किसीको न था। अनेक लोग पोपका अत्याचार सह और मुख बन्दकर रह न सके।

१५१७ ई॰में महात्मा मार्टिन-लूथरने समाजके संस्कार करने पर कमर कसी। वे जर्मनीके अन्तर्गत विटेम्बर्ग नगरमें पुस्तकके प्रधान अध्यापक हो गये। उसी समय टेजेल नामक एक ईसाई उदासीन विटेम्बर्गमें आ पहुंचे। वे साधारणको पोपका मुक्तिपत्र दे कर ठग रहे थे। धर्मवीर लूथरको यह अच्छा न लगा। उन्होंने अपने ९५ प्रधान शिक्षोंको टेजेलकी गति रोकने पर रखा। [illegible]

पीठ दिखायी। पोपने लूथरके विरुद्ध द्वयमाद्धित दण्डनियोग-पत्र भेजा था। किन्तु लूथरने पोपको न मान १५२० ई०की १६वीं दिसम्बरको विटेम्बर्गके तोरणद्वार पर सबके समक्ष दण्डनियोगका पत्र जला दिया।

इसी समय पर स्विजरलैण्डमें कई अनुचर पोपका मुक्तिपत्र (Indulgences) बांटते थे। हिन्दुओंमें जैसे पापका प्रायश्चित्त करनेको अर्थ देकर ब्राह्मण-पण्डितसे व्यवस्थाको लेना पड़ता, वैसेही रोमक-समाजमें उक्त मुक्तिपत्रका व्यवहार चलता है। उस कालमें अनेक ईसाइयोंको विश्वास था,—इस मुक्तिपत्रको* खरीदनेसे हमारे पापका प्रायश्चित्त होगा और पापका दुःख उठाना न पड़ेगा। उस समय स्विजरलैण्डमें जुइङ्गली नामक एक महापण्डित थे। वे मुक्तिपत्रके घोरतर विरोधी बने। लूथरकी तरह वे भी पोपके समाजका बन्धन एककाल ही तोड़नेकी चेष्टामें लगे थे। जूरिच, बरन, बेसिल प्रभृति स्थानके लोगोंने उनका मत मान लिया।

इधर लूथरने जर्मनीके उच्चपदस्थ व्यक्तिको सम्बोधन कर कहा,—"भ्रातृगण! रोमके विपक्षमें खड़े हो जायो। यही प्रकृत समय है। घर घर मूष-युद्धकी बातका ध्यान रहना चाहिये। भयङ्कर रोमक तुर्कमें सभीको खा डाला है। जगत्‌के धनसे रोमक-भाण्डार भर गया है।" लूथरने रोमक-समाजके सात अङ्ग माने न थे। उनके मतसे धर्मकी दीक्षा, ईसाका अन्तिम भोजपर्व और निग्रह स्वीकार, तीन ही ईसाई धर्मके प्रधान अङ्ग हैं।

१५२१ ई०को ५म चार्लस् जर्मनीमें रहे। पोप-पर वे कुछ भक्तिश्रद्धा रखते थे। रोमक-समाजके कार्य्यपक्षगणने लूथरका दोष देखा सम्राट्‌को भड़काया। सम्राट् समाजसंस्कारके विरोधी बन गये। उन्होंने लूथरके पुस्तकादि ध्वंस करनेको आदेश दिया था। किन्तु राज्यके प्रधान प्रधान सचिव उससे असम्मत हुये। उनके परामर्शसे वारमस् नगरमें एक महासभा लगी। इस सभामें जर्मनीके सकल राजा और अध्यापक आ पहुंचे। संस्कारके विरुद्ध कितनी ही बातें निकली थीं। लूथर भी इस सभामें आये। सभाने लूथरसे कहा,—'तुमने रोमक-समाजके विरुद्ध जो आपत्ति उठायी, वह बहुत ठीक है। इस सुयोगमें परिवर्तन करो। तुम्हारा मङ्गल होगा।' लूथरने निर्भीक चित्तसे उत्तर दिया,—'सच बात कहूंगा। प्राण जानेमें कोई क्षति नहीं। मैं ईश्वरके आदेशसे बंधा हूं। मेरे हृदयका बलवान् विश्वास जबतक भ्रान्त प्रमाणित न होगा, तबतक रोमक समाजका गौरव कैसे समझ पड़ेगा!' उनकी यह बात जर्मनीमें सर्वत्र चल पड़ी। विपक्षने लूथरके प्राण लेनेका बीड़ा उठाया था। किन्तु साक्सनी-राज फ्रेडरिकके सत्परामर्शसे लूथर कुछ दिन छिपे रहे। उसी समयपर साक्सनीमें सर्वत्र उनका मत सादर माना गया। इङ्गलैण्ड* और डेनमार्कके अधिपति तथा प्रजावर्ग भी समाज-संस्कारके पक्षपाती हुये थे। डेनमार्कके राजा लूथरका एक शिष्य बुला निज राज्यमें यह नया मत चलाने लगे।

१५२२ ई०को लूथरने मेलङ्कथन (Melancthon)के साथ बाइबिलके शेषभाग इञ्जील (New Testament)-को अनुवाद कर छपाया था। अनुवाद देखकर लोग चकराये। उन्होंने समझ लिया—'पोपके नियमसे ईसा मसीहका मत सम्पूर्ण विभिन्न है। लूथर जो मत चलाते, उसीको यथार्थ ईसाका मत मानते हैं।' फिर जर्मनीके अनुच्चव्यक्तिने प्रकाश्यरूपसे रोमका धर्मानुशासन छोड़ा था। जर्मनीके लपकने धर्मके लिये अस्त्र उठाये। जर्मन राज्यमें सर्वत्र घोरतर युद्ध चलने लगा।

१५२१ ई०में फ्रान्स्-राज फ्रान्सिस्‌की भगिनी मार्गारेटने नूतन मतका पक्ष लिया और फ्रान्स-राज्यके नाना स्थानोंमें बहुतसे लोगोंने इस मतको ग्रहण किया। फ्रान्सराज प्रथम संस्कारके पक्षपाती

* इस देशमें जैसे अल्प एवं अधिक पापके अनुसार धर्म लगाकर प्रायश्चित्त करता, वैसेही पोपका मुक्तिपत्र खरीदनेमें विभिन्न मूल्य देना पड़ता था।

* किसी किसीके मतानुसार १३८१ ई०को धर्मयाजक विक्लिफ (Wicliffe)ने इङ्गलैण्डमें समाजसंस्कारका सूत्रपात किया।

स्थानोंमें सूअरका मत चला। अनेक नीचजातियोंने ईसाई धर्मकी दीक्षा ले ली। किन्तु हिन्दुस्थानमें ईसाई धर्मका आदर बढ़ा न था। क्योंकि नवाबोंके भयसे ईसाई पास न फटके। राज्य कम्पनीके हाथ जाते भी पहले कोई ईसाईधर्म-प्रचारक इस देशमें घुसने पाया न था। राजत्वका नियम रहा—कोई युरोपीय कम्पनीके अधिकारमें धर्मप्रचार कर न सकेगा। क्योंकि उससे देशीयगणके धर्मपर आघात पड़ेगा और सकल अधिवासीके बिगड़नेसे राज्यमें विस्तर उत्पात उठेगा।

१८१३ ई०को अंगरेज-सरकार ईसाई धर्मप्रचारक पर सदय हुई। मिशनरियोंको हिन्दुस्थानमें धर्म-प्रचारकरनेका अधिकार मिल गया। उनके अध्यवसायसे अल्प दिनमें ही नीच श्रेणीके अनेक हिन्दुस्थानियोंने ईसाई धर्म पकड़ा। शेषको ईसाई-महिमा शिक्षाके पीछे अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तिके घरमें घुस ईसाई आलोक डालने लगी। अनेक हिन्दुस्थानियोंने अपनी प्रकृत जातीयता खो दी। धीरे-धीरे उस शिक्षाका स्रोत घटा। बालफोर साहबने लिखा है—इस उच्च शिक्षाको पाकर फिर कोई ईसाई होना नहीं चाहता। ईसाई भाव रखते भी बहुतसे लोग धर्ममें नास्तिक रहते हैं।

१७९४ ई०को बंगला मुद्रायन्त्रके प्रवर्तक केरी साहब इस देशमें धर्मप्रचार करने आये थे। उन्होंने असाधारण अध्यवसाय एवं सहिष्णुताके गुणसे अनेक विपद् आपद् सह और सुन्दरवनमें रह असभ्यलोगोंको शुभ भावसे दीक्षा दी। किन्तु प्रकाश्य भावसे कम्पनीके राज्यमें उन्हें आश्रय न मिला था। शेषको डचेस्ट-वासिगणके अधिकृत श्रीरामपुरमें ठिकाना लगा। श्रीरामपुरमें ही मार्शमान और वार्ड नामक दो विख्यात पण्डित भारतकी नाना भाषाओंके जाननेवाले केरी साहबसे मिल गये। इसी स्थानपर उक्त बापटिष्ट प्रोटेष्टाण्टोंके उत्साहसे प्रथम बंगला मुद्रायन्त्र बना था। १८०० ई०के मार्च मासकी १८वीं तारीखको वार्ड साहबने अपने हाथसे प्रथम बंगला अक्षर संवारे। छापाखाना, केरी और मार्शमान शब्द देखो।

ईष्—भ्वादि० आत्म० सक० सेट् धातु। यह चेष्टा और बध अर्थमें आता है। सं पूर्वक रहनेसे ईष् सकर्मक है।

ईह (सं० त्रि०) सचेष्ट, कोशिशकरनेवाला। (पु०) २ चेष्टा, तदबीर।

ईहग (हिं० पु०) इच्छानुसार चलनेवाला, कवि, शायर।

ईहमान (सं० त्रि०) चेष्टित, तदबीर लड़ानेवाला।

ईहा (सं० स्त्री०) ईह् भावे अ-टाप्। १ उद्यम, कारबार। २ वाञ्छा, ख्वाहिश। ३ चेष्टा, तदबीर।

"ईहा जगावे काम ईहगावों लिखवै है।" (रामदेव)

ईहात: (सं० अव्य०) परिश्रमपूर्वक, ज़ोरसे।

ईहामृग (सं० पु०) १ कोक, भेड़िया। पर्यायमें इसे कोक, ईहा, अरण्यश्वा और वनकुक्कुर भी कहते हैं। ईहामृगकी आकृति बिलकुल कुत्ते-जैसी होती है। यह पीत और नील अर्थात् पिङ्गल रहता है। यह हरिण प्रभृतिको मार सकता है। २ रूपक नाटक विशेष। मृगकी भांति नायकके नायिकाको ढूंढ़ लेनेसे यह नाम पड़ा है। ईहामृग नाटक चार अङ्कसे विशिष्ट होता है। इसमें प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध उभय इतिवृत्त दिखाये जाते हैं। ईहामृगमें मनुष्य अथवा देवता नायक और प्रतिनायक दोनों हो सकते हैं। नायक गूढ़भावसे नायिकाको ढूंढ़ता है। नायकको मनुष्य और नायिकाको देवता समझाते हैं। नायक उद्धत गुणयुक्त और नायिका मूढ़भाव संयुक्त रहती है। बलात्कार या छलना द्वारा भी नायिकाहरण लगता है। थोड़ा बहुत शृङ्गाररस होना आवश्यक है। प्रतिनायकको जो क्रोध उपजता, उसे किसी कार्य-च्छलसे निवृत्त करता है। महात्माका वध वर्जनीय है। एक अङ्कमें देवविग्रह रहता है। दिव्यहेतु युद्ध वर्णन करते हैं। सिवा इसके अन्य दो नायक भी रहते हैं।

ईहार्थिन् (सं० त्रि०) किसी वस्तुकी चेष्टा रखनेवाला, जो दौलत ढूंढ़ता हो।

ईहावृक, ईहामृग देखो।

ईहित (सं० त्रि०) ईह्-क्त। १ चेष्टित, कोशिश किया गया। २ अपेक्षित, चाहा गया। (क्ली०) ३ उद्योग, तदबीर। ४ चरित, चाल।

उ

उ—(ह्रस्व उकार)—१ स्वरके मध्य पञ्चमवर्ण। इसके उच्चारणका स्थान ओष्ठ है। ओष्ठजावुपु। (शिक्षा) ह्रस्व स्वरोंमें उकार तीसरा है। ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित् भेदसे यह नौ प्रकारका होता है। फिर प्रत्येक अनुनासिक और अननुनासिक रहनेसे इसके अट्ठारह भेद होते हैं। यह स्वयं कुण्डलनी है। उकारका वर्ण चम्पेके फल-जैसा होता है। इसमें पञ्चदेव और पञ्चप्राण रहते हैं। उकार चतुर्वर्गका फल देनेवाला है। (कामधेनुतन्त्र)

लिखनेका नियम—ऊर्ध्व, अधः और मध्यस्थानमें वाम दिग्गामी तीन ऋजुरेखा खींचनेसे यह बनता है। इन रेखावोंमें अग्नि, वायु और इन्द्र रहते हैं। मात्रामें शक्तिका वास है। (वर्णोद्धारतन्त्र) मातृकान्यासमें इसका स्थान दक्षिण कर्ण पड़ता है। उकारको शङ्कर, वर्त्तुलाक्षी, भूत, कल्याण, अमरेश, दक्षकर्ण, षड्वक्त्र, मोहन, शिव, उग्र, प्रभु, धृति, विष्णु, विश्वकर्मा, महेश्वर, शत्रुघ्न, चटिका, पुष्टि, पद्मी, वह्निवासिनी, कामघ्न, कामना, ईश, मोहिनी, विघ्नहृत्, मही, उटघ, कुटिला, श्रोत्र, पारद्वीपी, हय और हर भी कहते हैं। २ भ्वादि० आत्म० अक० अनिट् धातु। यह शब्द करनेके अर्थमें आता है। (अव्य०) उ-क्विप् तुगभावः। ३ हे! ए! सुनिये! ४ कोपप्रकाश! देखेंगे! ५ अनुकम्पा! रहम! बचावो! ६ नियोग, राय! कहिये! ७ पदपूरण! जुमलेका पुराव! ८ कोपयुक्त कथा! गुस्सेकी बात! ९ अङ्गीकार! मञ्जूरी! हां! ठीक! १० प्रश्न! सवाल! क्या! क्यों! ११ वितर्क! बहस! १२ विमर्श, अफ़सोस! हाय! १३ विकल्प, शक! शायद! १४ सम्भावना! इमकान! हो सकता है! "क्रियः सतोशां च मि ड़ुं च चा.।" (ऋक् १।११८।१६) "उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा।" (कुमार) (पु०) अनु-ड १५ शिव। १६ ब्रह्म। १७ ब्रह्मा।

उं (हिं० अव्य०) १ क्या! क्यों! २ नहीं! ३ अरे! कारणवश मुख न खुलनेपर यह अव्यय आता है।

उंकन (हिं०) उङ्कन देखो।

उंकीत (हिं० पु०) रोग विशेष, एक बीमारी। इसमें प्रायः वर्षाकालपर पदको अङ्गुलि पिड़िका पड़नेसे सड़ने लगती हैं।

उंखारी (हिं० स्त्री०) इक्षुक्षेत्र, ऊखका खेत।

उंगनी (हिं० स्त्री०) गाड़ी औंगनेका काम, पहियेमें तेलकी दिवाई। इससे पहिया खूब घूमता है और बैलोंको गाड़ी खींचनेमें ज्यादा जोर नहीं लगाना पड़ता। उंगनी न होनेसे पहिया बिगड़ जाता है। गाड़ीवान् जोतनेसे पहले उंगनी कर लिया करते हैं। इसमें प्रायः रेंड़ीका तेल लगता है।

उंगलाई (हिं० स्त्री०) अङ्गुलि नियोजन, उंगली चलानेका काम।

उंगलाना (हिं० क्रि०) अङ्गुलि चलाना, उंगली करना, उंगलीसे इशारा लगाना।

उंगली (हिं०) अङ्गुलि, अङ्गुष्ठ। अङ्गुलि देखो।

"पांचो उंगलियां बराबर नहीं।" (लोकोक्ति)

तर्जनीको कलमेकी उंगली, मध्यमाको डारम, अनामिकाको पूजाउंगली और कनिष्ठाको कानकी उंगली, छुंगलिया या पिठली उंगली कहते हैं।

उंगलीकी मोक (हिं० स्त्री०) अङ्गुलिकी शिखा, अङ्गुलका छोर।

उंघाई (हिं० स्त्री०) निद्रा, सुस्ती, झपकी।

उंचन (हिं० पु०) १ उदञ्चन, ऊपरी खिंचाव। २ अदवान। यह रस्सी खाटमें गोंयेकी ओर सिरहानेमें लगती है और बुनावटको आयतामें खींच देती है। इससे खाटका ढीलापन निकल जाता है।

उंचना (हिं॰ क्रि॰) उदघाटन करना, ऊपर उठाकर खींचना, पटवाल तानना।

उंचनाव (हिं॰ पु॰) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह एक प्रकारका चारखाना होता है।

उंघाई (हिं॰ स्त्री॰) १ उंघना, झुनझुनी। २ शिथि-लता, मन्दाई।

उंघान (पु॰) उंघाई देखो।

उंघाना (हिं॰ क्रि॰) ऊंघ लगाना, झुनझुनी लगना, लंबा करना।

उंघाव (पु॰) उंघाई देखो।

उंघास, उंघाई और उनवाह देखो।

उचोभी (हिं॰ स्त्री॰) १ भाली, नोकदार। २ प्रहार, मार।

उंदरी (हिं॰ स्त्री॰) गन्ध्र, पानखोरा।

उंदरू (हिं॰) उन्दुर देखो।

उंह (हिं॰ अव्य॰) १ नहीं! दूर हो! २ दुःख! अफसोस! हाय!

उगना (हिं॰) उदय होना, निकलना।

उगाई (हिं॰ स्त्री॰) उदय, निकास।

उगाना (हिं॰ क्रि॰) १ उदय करना, जगाना। २ प्रहारार्थं उद्यत होना, मारनेको उठना।

उऋण (हिं॰ वि॰) ऋण न रखनेवाला, जो कर्ज दे चुका हो। "[illegible]
[illegible]" (तुलसी)

उकचन (हिं॰ पु॰) मुचुकुन्द पुष्प, मुचकुन्दका फूल।

उकचना (हिं॰ क्रि॰) १ निकल जाना, छुटना। २ ऊपर पड़ना, पर्त छोड़ना। ३ भागना, दूर होना।

उकटना (हिं॰ क्रि॰) १ उखाड़ना, तोड़ डालना। २ भेद लेना, पूछना। ३ अन्वेषण करना, ढूंढ़ना। ४ स्मरण दिलाना, याद कराना। ५ अपमान करना, गाली देना। ६ लुण्ठन करना, डाका डालना, लूटना।

उकटा (हिं॰ वि॰) १ कृतका पुनः पुनः स्मरण दिलानेवाला, जो दूसरेको किसी एहसानकी याद कराता हो। "[illegible]" (गोविन्द)
२ तुच्छ, कमीना, हलका। किसी विषयका पुनः पुनः सविस्तार प्रकाश उकटा-पुराण या उकटा-सेती कहाता है।

उकठना (हिं॰ क्रि॰) शुष्क होना, सूखना।

उकठा (हिं॰ क्रि॰) शुष्क, सूखा, जो हरा न हो।

उकठापन (हिं॰ पु॰) शुष्क हो जानेका भाव, सूखनेकी हालत।

उकडूं (हिं॰ पु॰) मुद्राविशेष, एक बैठक। इसमें घुटने मुड़कर तलवे भूमिपर जम और चूतड़ एड़ियोंसे लग जाते हैं।

उकड़ूं बैठना (हिं॰ क्रि॰) घुटने ऊपर उठाकर एड़ियोंके बल बैठना।
"[illegible]" (सूरदास)

उकत (हिं॰) उक्ति देखो।

उकताना (हिं॰ क्रि॰) १ घृणा करना, थक जाना, जब उठना। २ असन्तुष्ट होना, नाखुशी पाना, थक जाना। ३ विह्वल होना, घबरा जाना।

उकताव (हिं॰ पु॰) घृणा, हानि, विह्वलता, नफरत, नाखुशी, घबराहट।

उकति (हिं॰) उक्ति देखो।

उकनाह (सं॰ पु॰) पीत-रक्त-वर्ण घोटक, पीला-लाल घोड़ा।

उकलघेव—बदायूं जिलेके अन्तर्गत जोरीका एक प्राचीन नगर।

उकलना (हिं॰ क्रि॰) पृथक् पड़ना, अलग होना, तह छोड़ना, उधेड़ने जाना।

उकलवाना (हिं॰ क्रि॰) पृथक् कराना, तह छुड़वाना, उधड़वाना।

उकलाई (हिं॰ स्त्री॰) वमन, कै, मिचलाई।

उकलाना (हिं॰ क्रि॰) १ उकताना, घबराना। २ श्रान्त होना, थकना। ३ बयाला पड़ना, बेचैन होना। ४ रोगवश क्षोभ होना, बीमार मालूम पड़ना। ५ वमन करना, ओकना।

उकलेसरी (हिं॰ वि॰) उकलेसरमें सम्बन्ध रखनेवाला, उकलेसरका बना हुआ। उकलेसर दक्षिणमें विद्यमान है। जो कागज उक्त स्थानपर बनता है, वह भी उकलेसरी ही कहता है।

उकलैद (Euclid)—ई॰से पहले तृतीय शताब्दके एक यवनानी गणितज्ञ। इनके जन्म-स्थान, मातापिता,

गियक और यादिनिवासका विषय अज्ञात है। कोई-कोई इन्हें भूलसे सोक्रतिस‌के शिष्य मेगारेन्सिस समझते हैं। मिस्रके राजा १म टलेमीके समय (ई०से प्रायः ढाई तीन सौ वर्ष पहले) ये विद्यमान थे। उकलेदने अलेकजन्द्रियाकी सुप्रसिद्ध गणितपाठशाला खोली थी। ये मृदुस्वभाव, निश्छल और गणितके प्रकृत विद्यार्थियोंपर कृपालु रहते थे। ज्यामिति देखो।

उकवथ (हिं०) उकौथ देखो।

उकवां (हिं० क्रि० वि०) अनुमानसे, अन्दाज़न्, मोटे हिसाबमें।

उकसना (हिं० क्रि०) १ बाहर निकलनेकी चेष्टा करना, झगड़ना। २ फूलना, उछलना, फूटना, निकल पड़ना। ३ उत्तेजित होना, जोशमें आना, उभरना। ४ उधड़ आना, टूटने लगना।

उकसनि (हिं० स्त्री०) उत्तेजना, उभार, घबराहट, उधेड़, टूट।

उकसवाना (हिं० क्रि०) बाहर निकालनेकी चेष्टा कराना, झगड़ाना, निकलवा देना।

उकसाई (हिं० स्त्री०) निकलवा देनेका काम, उभराई, निकसाई, हटाई।

"दमड़ीका बुलबुल टका उकसाई।" (लोकोक्ति)

उकसाना (हिं० क्रि०) १ उठाना, चढ़ाना, ऊंचा करना। २ आगे बढ़ाना, सुलगाना, भड़काना। ३ हांकना, चलाना। ४ प्रलोभन दिखाना, वरगलाना, हिम्मत देना। ५ हटाना, दूर करना। ६ उत्तेजित करना, उभारना। ७ छेड़ना, जलाना।

उकसौंहां (हिं० वि०) उठता हुआ, जो उभर रहा हो।

उकाब (अ० पु०) गरुड़, श्येन, गीध। इसकी दृष्टि बहुत तीव्र होती है। सुनते हैं—उकाब या शार्दूलकी छाया पड़नेसे दीनदरिद्र भी राजा बन जाता है।

उकारान्त (सं० वि०) उकारको अन्तमें रखनेवाला, जिसके अखीरमें उ हर्फ रहे।

उकालना, उकेलना देखो।

उकासना, उकसाना देखो।

उकासी (हिं० स्त्री०) १ उद्घाटित होनेकी स्थिति, खुल जानेकी हालत। २ अवकाश, छुट्टी, फ़ुरसत।

उकिड़ना, उकसना देखो।

उकिलना, उकसना देखो।

उकिलवाना, उकसवाना देखो।

उकिसना, उकसना देखो।

उकीरना (हिं० क्रि०) १ खनन करना, खोदना। २ उखाड़ डालना, नोच लेना, ढकेल देना।

उकुण (सं० पु०) १ शिरःकीट, जूं, चिल्लड़। २ मत्कुण, खटमल।

उकुति (हिं०) उक्ति देखो।

उकुति-जुगुति (हिं०) उक्तियुक्ति देखो।

उकुरू, उकड़ूं देखो।

उकुसना, उकसना देखो।

उकेलना (हिं० क्रि०) निकाला, उधेड़ बुन करना, उखाड़ डालना, बकला निकालना।

उकेला (हिं० वि०) १ उधेड़ा, उखाड़ा, निकाया। (पु०) २ कम्बलका बाना।

उकौथ (हिं०) उकौत देखिये।

उकौथा (हिं०) उकौत देखिये।

उक्त (सं० वि०) १ कथित, कहा हुआ। (क्ली०) २ शब्द, वाक्य, लफ्ज़, जुमला।

उक्तत्व (सं० क्ली०) कथनका भाव, कहे जानेकी हालत।

उक्तनिर्वाह (सं० पु०) कथनका पालन, बातका निबाह।

उक्तपुंस्क (सं० क्ली०) शब्दविशेष, एक लफ्ज़। जिस स्त्रीलिङ्ग शब्दका पुंलिङ्ग भी रहता है, वही इस नामसे पुकारा जाता है। ऐसे शब्दोंके अर्थमें सिवा स्त्रीलिङ्ग और पुंलिङ्गके दूसरा भेद नहीं पड़ता। जैसे शोभना शब्द उक्तपुंस्क है, किन्तु गङ्गा शब्द नहीं।

उक्तप्रत्युक्त (सं० क्ली०) वाक्य एवं उत्तर, वार्तालाप, सवालजवाब, गुफ्तगू, कहासुनी, बातचीत।

उक्तवत् (सं० त्रि०) कथन कर चुकनेवाला, जो बोला हो।

उक्तवर्ज्ज (सं० अव्य०) कथित विषय भिन्न, कही हुई बातोंको छोड़कर।

उक्तवाक्य (सं० त्रि०) १ सम्मति दे चुकनेवाला, जो राय बता चुका हो। (क्ली०) २ आदेश, हुक्म, कानून।

उक्तानुक्त (सं० त्रि०) कथित एवं अकथित, कहा और न कहा।

उक्ति (सं० स्त्री०) वाक्य, निर्देश, सुखन, इज़हार, बयान।

उक्तोपसंहार (सं० पु०) संक्षिप्त वर्णन, मुख़्तसर बयान, थोड़ेमें कही हुई बात।

उक्त्वा (सं० अव्य०) कथन करके, कहकर।

उक्थ (सं० क्ली०) १ वाक्य, सुखन, कहावत। २ क्रियासंस्कारमें एक प्रकारका पठन वा उच्चारित पाठ। उक्थ शास्त्रका एक अवयव है। यह प्रायः परिपाटी निर्माण करता और साम तथा यजुःके प्रतिकूल चलता है। महद् वा बृहद्-उक्थ तीन श्रेणियोंमें पठनकी परिपाटी डालता है। उक्त तीनों श्रेणियोंमें अग्नि अलग रहता, जो अग्निचयनके पीछे सम्यपाठमें कही जाती है। ४ सामवेदका एक नाम। (पु०) ५ अग्निका एक रूप।

उक्थपत्र (वै० त्रि०) श्लोकोंको पत्रकी भांति रखनेवाला।

उक्थपात्र (सं० क्ली०) उक्थ पढ़ते समय चढ़ाया जानेवाला पात्र वा तर्पणोदक।

उक्थभृत् (वै० त्रि०) उक्थको समर्पण करने वा चढ़ानेवाला।

उक्थवत् (वै० त्रि०) उक्थसे मिला हुआ।

उक्थवर्धन (वै० त्रि०) प्रशंसासे प्रसन्न हो अपना बल बढ़ानेवाला।

उक्थवाहस् (वै० त्रि०) १ श्लोक समर्पण करनेवाला। २ श्लोकका समर्पण पानेवाला।

उक्थशंसिन् (वै० त्रि०) १ प्रशंसा करनेवाला। २ उक्थ पढ़नेवाला।

उक्थशस् (पु०) उक्थशंस देखो।

उक्थशास (वै० त्रि०) श्लोक कहनेवाला, जो प्रशंसा करता हो।

उक्थशासन् (स्त्री०) उक्थशस देखो।

उक्थशुष्म (वै० त्रि०) उच्च स्वरसे श्लोक पढ़नेवाला।

उक्थामद (वै० क्ली०) प्रशंसा एवं प्रसन्नता।

उक्थार्क (वै० क्ली०) उद्गार एवं भजन।

उक्थावी (वै० त्रि०) श्लोकका प्रेमी।

उक्थाशासा (वै० क्ली०) पठन एवं प्रशंसा।

उक्थिन् (वै० त्रि०) १ श्लोक पढ़नेवाला। २ जिसके साथ प्रशंसा गायी जाये वा (क्रियासंस्कारमें) उक्थ रहे।

उक्थ्य (वै० त्रि०) १ श्लोक या प्रशंसा सुनानेवाला, जो प्रशंसा करनेमें निपुण हो। (पु०) २ प्रातःकाल और मध्याह्नके यज्ञका तर्पणोदक। ३ एक सोमयज्ञ। ४ प्रार्थना मार्गका एक संस्कार। यह ज्योतिष्टोमका एक भाग है।

उक्लेद (सं० पु०) वह्नि, आग।

उक्ष—भ्वादि० पर० सक० सेट्। यह निम्नलिखित अर्थोंमें आता है—१ आर्द्र करना, २ बिन्दु डालना, ३ बिखेरना, ४ परिष्कार करना, ५ अङ्कुरित होना, ६ अपना बल बढ़ाना और ७ बलवान् बनना।

उक्ष (सं० त्रि०) १ उन्नत, बड़ा। २ शुद्ध, साफ़। इस अर्थमें यह शब्द किसी-किसी यौगिक पदके पीछे लगता है।

उक्षण (सं० क्ली०) उक्ष भावे ल्युट्। सेचन, प्रोक्षण, छिड़काव। "[illegible]" (रघु [illegible])

उक्षण्यायन (वै० पु०) उक्षण्य का गोत्रापत्य।

उक्षण्यु (वै० त्रि०) उक्षन्‌की भांति व्यवहार वा कार्य करनेवाला, धनकी वर्षा करनेवालेका अभिलाषी।

उक्षतर (सं० पु०) उक्ष् इति टरच्। [illegible] १ छोटा वृष, नन्हा बैल। २ महावृष, बड़ा बैल।

उक्षतरी (सं० स्त्री०) उक्षतर-ङीप्। १ छोटी गाय, बछिया। २ उच्च गायी, बड़ी गाय।

उक्षन्, उक्षा देखो।

उक्षवश (वै० पु०) वृषभ, बछड़ा, बच्छा।

उक्षवेहत् (वै० पु०) नपुंसक षण्ड, बधिया बैल।

उक्षा (सं० पु०) उक्ष-कनिन्। [illegible] १ वृष, बैल, सांड़। २ ऋषभ, नामक औषधि। (त्रि०) ३ सेचक, सींचनेवाला। "[illegible]" (ऋक् [illegible])

उक्षाश (वै० त्रि०) वृषभक्षक, बैलका गोश्त-खानेवाला।

उक्षाल (सं० त्रि०) १ त्वरित, फुर्तीला। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ कराल, कड़ा। ४ उत्कट, डरावना। (पु०) ५ वानर, बन्दर।

उक्षित (सं० त्रि०) उक्ष्-क्त। १ सिक्त, सींचा या घुला हुआ। २ लिप्त, लगा हुआ। ३ शक्तिशाली, ताकतवर। ४ वृद्ध, पुराना।

उख्—भ्वादि० पर० सक० सेट् धातु। यह गमन अर्थमें आता है।

उख (सं० त्रि०) उख्-क। १ गमनकारी, चलनेवाला। उत्-खन्-ड निपातनात् तल्लोपः। २ ऊर्ध्व दिक् खनन करनेवाला। (वै० पु०) ३ पात्र, बरतन। ४ तित्तिरिके एक शिष्यका नाम।

उखच्छिद् (वै० त्रि०) पात्र तोड़नेवाला।

उखटना (हिं० क्रि०) १ इतस्ततः पद पड़ना, अच्छी तरह चल न सकना, ठोकर खाना, लड़खड़ा जाना। २ थिरकना, धीरे-धीरे चलना। ३ खटकना, तोड़ लेना।

उखड़ना (हिं० क्रि०) १ निर्मूल होना, उपटना, जड़से टूट जाना। २ निकल पड़ना, अलग होना। ३ टूटना, कटना। ४ छूटना। ५ स्थानच्युत होना, जगह छोड़ना। ६ उद्घाटित होना, खुलना। ७ पतित होना, गिरना। ८ बिगड़ना। ९ बन्द होना। १० बेताल गाना। ११ सम्मान खोना, इज्जत गंवाना। १२ बेपरवा होना, फिक्र न करना। १३ अप्रसन्न होना, बिगड़ पड़ना। १४ हताश होना, दिल टूटना। १५ बदलना। १६ बिखरना। १७ हटना। १८ मिटना। १९ डरना। २० बाहर होना। २१ राह पकड़ना। २२ भागना। २३ सरकना। २४ लोप हो जाना। २५ खुदना। २६ गमन करना। २७ फूट पड़ना। २८ लड़ खड़ाना। २९ हारना। ३० हांपना। ३१ रुकना। तीव्र भाषाको उखड़ी-उखड़ी बातें, मुंह फेर लेनेको उखेड़की लेना और दण्ड देनेको काम उखाड़ना कहते हैं।

उखड़वाना (हिं० क्रि०) उखाड़नेको आदेश देना, अन्यके द्वारा उखाड़नेका कार्य कराना।

उखड़ाई (हिं० स्त्री०) उखाड़नेका काम।

उखभोज (हिं० पु०) इक्षुवपनोत्सवका विशिष्टाशसम्भार, ऊख बोनेकी ज़ियाफ़त। कृषक इक्षु बोनेके प्रथम दिवस यह भोज देते हैं।

उखम (हिं० पु०) उष्म, ताप, गरमी, हरारत। (स्त्री०) उखमा।

उखमज (हिं० वि०) १ उष्मज, गर्मीसे पैदा। (पु०) २ उष्मज जीव, गरमीसे पैदा होनेवाला कीड़ा।

उखर (सं० क्ली०) १ क्षारभूमि, रेतीली ज़मीन्। २ क्षारमृत्तिका, शोरा। इसे ऊसर भी लिखते हैं। (हिं०) ३ लाङ्गलपूजन, हलकी पूजा। यह ऊख बोनेके बाद होता है।

उखरज (सं० क्ली०) १ पांशुलवण, शोरा। २ अयस्कान्त भेद, एक लोहा। ३ लवण, नमक।

उखरना, उखड़ना देखो।

उखराज, उखभोज देखो।

उखर्वल (सं० पु०) तृणविशेष, एक घास। यह अम्ल, रुचिजनक और पशुके लिये सदा हितकर होता है। (राजनिघण्टु)

उखल, उखर्वल देखो।

उखलना (हिं० क्रि०) खौलना, गर्म होना।

उखली (हिं० स्त्री०) उलूखल, हावन, कूंड़ी। मद्रासमें यह पात्र काष्ठमय होता है। मध्यस्थलमें एक हाथके प्रमाण गढ़ा रखते हैं। इसी गढ़ेमें अन्न डाल और मूसलसे मार तुष छुड़ाते हैं। किन्तु हिन्दुस्थानियोंके घरमें यह पत्थरकी होती, और ज़मीन्में गड़ी रहती है। "उखलीमें मूंह डाल चोटसे क्या डरना।" (लोकोक्ति)

उखवाई (हिं० स्त्री०) ऊखकी बुआई या जुताई।

उखा (सं० स्त्री०) १ रन्धनस्थाली, देग, बटलोई। २ चूल्हा। ३ शरीरका अवयव, जिस्मका एक हिस्सा। (हिं०) ऊषा देखो।

उखाड़ (हिं० पु०) १ उच्छेद, बेदखली, उखाड़नेका काम। २ मल्लयुद्धका हस्तलाघव, कुश्तीका एक दांव। अपने साथ लड़नेवालेकी कमर पकड़ कर ऊपर उठा भूमिपर पटक देनेका नाम उखाड़ है। विशमता और निन्दाको उखाड़-पछाड़ कहते हैं।

उखाड़ना (हिं० क्रि०) १ निर्मूल करना, उपाड़ना। २ छिन्नभिन्न करना, तोड़ना। ३ निकालना। ४ स्थानच्युत करना, हटाना। ५ अलग करना। ६ अस्तव्यस्त करना, चित धोना। ७ परिष्कार करना, छाँट देना। ८ झपटाना। १० भगाना, बिखेरना।

उखाड़ू (हिं० वि०) निर्मूल करनेवाला, जो उखाड़ डालता हो।

उखारना, उखाड़ना देखो।

उखारी (हिं० स्त्री०) इक्षुक्षेत्र, ऊखका खेत।

उखान (हिं० पु०) धर्मक्रिया, फूँ करनेका काम। विशुचिका अथवा धर्मक्रियाको उखान-पुखान कहते हैं।

उखालिया (हिं० पु०) उषःकालका खाद्य, नाश्ता, सवेरेका खाना।

उखी (सं० स्त्री०) देवीविशेष, किसी देवताका नाम।

उखेड़, उखाड़ देखो।

उखेड़ना, उखाड़ना देखो।

उखेरना, उखाड़ना देखो।

उखेलना (हिं० क्रि०) उल्लेखन करना, तसवीर उतारना।

उख्य (सं० त्रि०) उखायां संस्कृतम्, उखा-यत्। स्थालीपक्व, देगमें पका हुआ। यह शब्द मांसादिका विशेषण है। "उख्यान् उखेषु बिभ्रतः।" (ऋक् ३।१।१९)

उगझांगा (हिं० पु०) एक किस्मकी रंगाई।

उगटना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन करना, कह देना। २ उपहास करना, हँसी उड़ाना।

उगण (वै० पु०) प्रबल दलपुञ्ज, जिसमें बहुत सिपाही रहें।

उगदना (हिं० क्रि०) बताना, बोलना, कहना। यह क्रिया दक्षिणी बोलीमें चलती है।

उगना (हिं० क्रि०) उद्गमन करना, निकलना, देख पड़ना।

"ऊगो रवि ... [illegible]
[illegible]" (तुलसी)

उगमन (हिं० पु०) पूर्व, मशरिक।

उगलना (हिं० क्रि०) १ उद्गिलन करना, पेटके बाहर निकालना, थूक देना। २ निराकरण करना, निकालना, फेंकना। ३ प्रत्यर्पण करना, वापस देना, फेरना। इन्हीं प्रकार करनेको ऊपर उगलना कहते हैं।

उगलवाना, उगलाना देखो।

उगलाना (हिं० क्रि०) १ उद्गिलन कराना, पेटे या मुँहसे बाहर निकलवाना। २ प्रत्यर्पण कराना, वापस दिलाना।

उगवाना (हिं० क्रि०) उगाना, पैदा कराना, जमाना-बोवाना।

उगसाना, उकसाना देखो।

उगसारना (हिं० क्रि०) वर्णन करना, कहना, सुनाना।

उगहना, उगाहना देखो।

उगाना (हिं० क्रि०) १ उपजाना, पैदा करना, निकालना। २ उठाना, टँगाना। ३ प्रहारार्थ किसी द्रव्यको तानना, उठाना।

उगार (हिं० पु०) १ निष्ठीवन, थूक। २ जल, पानी। जो जल क्रमशः निचुड़कर एकत्र होता, वही उगार कहाता है। ३ निचुड़ा हुआ रस। ४ कूपसे जल निकाले जानेका काम। जब कूपमें जल कम हो, तब उसे बढ़ानेके लिये उगार किया जाता है।

उगाल (हिं० पु०) १ उद्गार, डकार। २ जीर्ण पत्र, पुराना कपड़ा। यह ठगोंकी बोली है।

उगालदान (हिं० पु०) निष्ठीवनपात्र, पीकदान, थूकनेका बरतन।

उगाला (हिं० पु०) १ कीटविशेष, एक कीड़ा। यह खड़ी फसलको मारता है। (स्त्री०) २ खाई भूमि, तर ज़मीन।

उगाहना (हिं० क्रि०) उद्ग्रहण करना, वसूल करना।

उगाही (हिं० क्रि०) १ उद्ग्रहण, वसूल, उगाई। २ उद्ग्रहीत धन, वसूल किया हुआ रुपया। ३ भूमि-कर, ज़मीनका लगान। ४ एक प्रकारका आदान-प्रदान, किसी किस्मका लेन-देन। इसमें महाजनको समय-समय पर अपना दिया हुआ रुपया वसूल करना पड़ता है।

उगिलना, उगलना देखो।

उगिलवाना, उगलवाना देखो।

उगिलाना, उगलाना देखो।

उग्गाहा (हिं० पु०) उद्गाथा, गीति, एक प्रकारका आर्या छन्द। इसके विषममें द्वादश और सम चरणमें अष्टादश मात्रा होती हैं। जगणका प्रयोग अग्राह्य है।

उग्र (सं० पु०) उच्यति क्रोधेन सम्बध्यते, उच्-रक् गश्चान्तादेशः। ऋज्रेन्द्राग्रवज्रविप्रकुब्रचुब्रक्षुरखुरभद्रोग्रभेरभेलशुक्लशुक्लगौरवत्रेरामालाः। उण् २।२८। १ शिव, महादेवकी वायुमूर्ति। २ क्षत्रियके वीर्य और शूद्राके गर्भसे उत्पन्न जातिविशेष। यथा—

"क्षत्रियात् शूद्रकन्यायां क्रूराचार-विहारवान्।
क्षत्रशूद्रवपुर्जन्तुरुग्रो नाम प्रजायते॥" (मनु १०।९)

इस जातिके लोगोंका कार्य गर्तस्थित गोहको मारना और पकड़ना है। ३ पूर्वफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वभाद्रपद, मघा और भरणी नक्षत्र। ४ शोभाञ्जन वृक्ष, सहजन। ५ केरलदेश, मलबार। ६ स्वनामख्यात दानवविशेष। 'वेगवान् केतुमानुग्रः सोमव्यग्रो महासुरः।' (हरिवंश आदि १६१ अ०) ७ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत आदि ११७ अ०) ८ नरेन्द्रादित्य नामक काश्मीरराजके गुरु। ९ विष्णु। (भारत अनु० १४९ अ०) (त्रि०) १० उत्कट, गर्म। ११ यष्टि प्रभृति धारण करनेवाला, जो लकड़ी रखता हो। १२ अतिशय दारुण कर्म करनेवाला, जो खूंखार काम करता हो।

"विक्रितसयस्य यवयो न्ग्रस्तोच्छिष्टभोजिनः।
उग्रान्नं सूतिकान्नञ्च पर्याचान्तमनिर्दशम्॥" (मनु ४।११२)

(क्ली०) १३ वत्सनाभ नामक विष, बच्छनाग। १४ शैवसम्प्रदाय विशेष। इस सम्प्रदायके लोग बाहु पर डमरु पहनते हैं। १५ तीर्थविशेष। "उग्रं कनखलञ्चैव केदारं भैरवं तथा।" (देवीभाग० ९ अ०) १६ क्रोध, गुस्सा।

उग्रक (सं० पु०) नागविशेष।

उग्रकर्मन् (सं० त्रि०) उग्रं कर्म यस्य बहुव्री०। १ हिंस्रस्वभाव, बेरहम, कड़ा काम करनेवाला। २ प्राणिहिंसाकारी, मार डालनेवाला। ३ खल, बदमाश।

उग्रकाण्ड (सं० पु०) उग्रं काण्डो यस्य, बहुव्री०। १ कारवेल्लक, करेला। २ काण्डवल्ली, करेलेकी बेल।

उग्रगन्ध (सं० क्ली०) उग्रो गन्धो यस्य, बहुव्री०। १ हिङ्गु, हींग। (पु०) २ शुक्लरसोन, लहसुन। ३ कट्फलवृक्ष, कायफल। ३ रक्तरसोन, प्याज। ४ अर्जक वृक्ष, बबई। ५ चम्पक, चम्पा। (त्रि०) ६ उत्कट गन्धयुक्त, कड़ी खुशबूवाला।

उग्रगन्धा (सं० स्त्री०) उग्रगन्ध स्त्रियां टाप्। १ वन यवानी, अजवायन। २ अजमोदा, अजमोद। ३ वचा, बच। ४ महाभरीवचा, कुलींजन। ५ छिक्किका, नकछिकनी।

उग्रगन्धिका, उग्रगन्धा देखो।

उग्रगन्धिन् (सं० त्रि०) उत्कट गन्धविशिष्ट, तीखी खुशबूवाला।

उग्रगन्धी, उग्रगन्धा देखो।

उग्रचण्डा (सं० स्त्री०) उग्रा चण्डा कोपना स्त्री, कर्मधा०। १ भगवतीकी एक मूर्ति। आश्विन मासकी कृष्ण-नवमीको कोटि योगिनीके साथ यह अष्टादशभुजा मूर्ति आविर्भूत होती है। यथा,—

"उग्रचण्डा तु या मूर्तिरष्टादशभुजाऽभवत्।
सा नवम्यां पुरा कृष्णपक्षे कन्यां गते रवौ।
प्रादुर्भूता महामाया योगिनी कोटिभिः सह॥" (कालिकापु० ५८ अ०)

इसी मूर्तिने दक्षका यज्ञ भङ्ग किया था। आषाढ़ मासकी पूर्णिमा तिथिको दक्ष द्वादश वर्षमें निष्पन्न होनेवाला यज्ञ करने लगे थे। इस यज्ञमें सकल ही देवता बुलाये गये। किन्तु दक्षने कपाल-मालाधारी समझ शिवको और कपालीकी पत्नी होनेसे निज कन्या सतीको भी निमन्त्रण दिया न था। इसीसे सतीने अतिशय क्रोधमें आकर प्राण छोड़ा। देहत्यागके अनन्तर सतीने अपना रूप बदल कोटि योगिनीके साथ उग्रचण्डा मूर्ति बनायी और शिव तथा उनके अनुचरको ले यज्ञमें धूलि उड़ायी थी। (कालिकापुराण)

२ दुर्गाका एक आवरण।

उग्रचय (सं० पु०) उत्कट अभिलाष, जोरकी ख्वाहिश, बड़ी चाह।

उग्रचारिणी (सं० स्त्री०) दुर्गा देवीका एक नाम।

उग्रजाति (सं० त्रि०) नीचवंशसम्भूत, कमीने खान्दानमें पैदा। [illegible]

उग्रजित् (हिं० स्त्री०) एक अप्सरा। (अथर्व [illegible])

उग्रता (सं० स्त्री०) उग्रस्य भावः कर्म वा तल्। १ उग्रभाव, सख्ती, तेज़ी। २ उग्रकर्म, कड़ा काम। ३ कटुता, कड़वापन। ४ अलङ्कार शास्त्रका कहा हुआ व्यभिचारी गुणविशेष। अपराधादिके कारण चित्तमें दयाहीन भावको उग्रता कहते हैं। यह उग्रता घर्म, शिरःकम्पन, तर्जन, ताड़ना प्रभृति द्वारा झलकती है। यथा,—

"[illegible]।
[illegible]॥"
([illegible])

उग्रतारा (सं० स्त्री०) उग्र-तृ-णिच्-अच्-टाप्। भगवतीकी एक मूर्ति। ये उग्र भयसे भक्तोंको त्राण देती हैं। उत्पत्तिकी कथा इस प्रकार है—

किसी समय शुम्भ और निशुम्भ देवके यज्ञका भाग चुरा स्वयं दिक्पाल बन गये थे। इस पर समस्त देवता इन्द्रके साथ इकट्ठे हो हिमालय पहुंचे। वहां सबने गङ्गावतारके निकट ठहर महामाया भगवतीका स्तव किया। भगवती देवोंके स्तवमें सन्तुष्ट हुईं और मतङ्गका रूप बना पूछने लगीं,—देव! तुम इस स्थान पर किस स्त्रीको स्तव सुनाते और इस मतङ्गके आश्रमपर क्यों आते हो? ऐसे कहते ही समय उनके शरीरकोषसे एक देवी निकल कर बोलीं,—'ये देव हमारा ही स्तव करते हैं। शुम्भ और निशुम्भ नामक दो दानव इन्हें बाधा देते हैं। इसीसे देव उनके वध निमित्त यहां आये हैं।' शरीरसे इस देवीके निकलने बाद ही हिमालयमें रहनेवाली वह गौरवर्णा मातङ्गी अतिशय लम्बवर्णा बन गयीं। ऋषि इन्हींको उग्रतारा कहते हैं। यह मूर्ति चतुर्भुजा, खर्ववर्णा और मुण्डमालाधारिणी है। दक्षिणके ऊपरी हाथमें खड्ग तथा नीचेके हाथमें नागर और बायेंके ऊपरी हाथमें कपालिका तथा नीचेके हाथमें खर्पर है। मस्तक पर आकाशभेदी एक जटा बनी और गलेमें मुण्डमाला पड़ी है। ललाटपर शोभन चार तिरछा है। यह राज ऐसी भ्रान्त है। उग्रतारा लम्बपर्ण पहने हैं। कटिदेशमें व्याघ्रचर्म भूषित है। बामपद शवकी छाती और दक्षिण पद सिंहकी पीठपर रखा है। ये देवी स्वयं शवके शरीरको चाटती हैं।

उग्रतेजस् (सं० त्रि०) १ उत्कट महिमावाले, ज़ुबर्दस्त ताकत रखनेवाला।

उग्रतेजा (सं० पु०) १ नागविशेष। २ किसी बुद्धका नाम। ३ एक देवता।

उग्रदंष्ट्र (सं० त्रि०) उत्कट दन्तायुक्त, मोटे दांतों-वाला।

उग्रदण्ड (सं० त्रि०) १ उत्कट दण्डधारी, मोटा सोंटा बांधनेवाला। २ निर्दय, बेरहम, कड़ी सज़ा देनेवाला।

उग्रदर्शन (सं० त्रि०) भयानक, खौफनाक, जिसे देखते डर लगे।

उग्रदुहितृ (सं० स्त्री०) उत्कट पुरुषकी कन्या, खूंखार आदमीकी बेटी।

उग्रधन्वन् (सं० पु०) उग्रं धनुर्यस्य, बहुव्रीहि समा०। १ शिव। २ इन्द्र। ३ मगधराज नन्दके कनिष्ठ पुत्र। शकटाल द्वारा ये मगधके राजा हुये। चन्द्रगुप्तने नेपाल-राज पर्वतेश्वरके साहाय्यसे उग्रधन्वाके राज्य छीनने की चेष्टा की थी। उसमें इन्होंने क्रुद्ध हो चन्द्रगुप्तके भ्रातृगणको मार डाला। पीछे पर्वतेश्वरकी भृत्यसे उग्र-धन्वाने प्राण खोये। (त्रि० त्रि०) ४ बलवत् धनु-र्विशिष्ट, कड़ी कमान् वाला, जिसके धनुषको मार दुश्मन सह न सके।

"[illegible]" ([illegible])

उग्रनासिक (सं० त्रि०) दीर्घनासिक, [illegible], बड़ी नाकवाला।

उग्रपत्रक (सं० पु०) महानीला, काला भौंरा।

उग्रपुत्र (सं० पु०) उग्रस्य शूरस्य पुत्रः। १ शूरका पुत्र, बहादुर का लड़का। "[illegible]" ([illegible]) २ शिवके पुत्र कार्त्तिकेय। ३ गभीर अमात्य, गहरा सलाह। "[illegible]" ([illegible]) '[illegible]' ([illegible])

(वि०) ४ उत्कट पुत्रविशिष्ट, जिसके ताकतवर लड़का रहे।

उग्रबाहु (सं० वि०) उत्कट बाहुविशिष्ट, जोरदार बाजू रखनेवाला।

उग्रभा (सं० स्त्री०) गोपसवल्ली, एक बेल।

उग्रम्पश्य (सं० वि०) उग्र-दृश्-खश् मुम्। उग्र-दृष्टि-युक्त, कड़ी नजरवाला, जो सख्तीसे देखता हो। वन्य जन्तु व्याघ्रादि उग्रम्पश्य होते हैं।

"उग्रम्पश्यावृत्तिरक्षो।" (भट्टि)

उग्रम्पश्या (सं० स्त्री०) अप्सरा विशेष, एक परी। (अथर्वसंहिता ४।३७।७)

उग्ररेताः (सं० पु०) रुद्र विशेष। (भागवत)

उग्रवीर (सं० त्रि०) शक्तिशाली वीरविशिष्ट, ताकतवर सिपाही रखनेवाला।

उग्रवीर्या (सं० स्त्री०) १ हिङ्गु, हींग। (त्रि०) २ उत्कट वीर्यविशिष्ट, सख्त ताकत रखनेवाला।

उग्रव्यग्र (सं० पु०) एक दानवका नाम।

उग्रशक्ति (सं० पु०) एक राजा। ये राजा अमर-शक्तिके पुत्र थे।

उग्रशासन (सं० वि०) आज्ञा देनेमें उत्कट, जो कड़ा हुकम निकालता हो।

उग्रशेखरा (सं० स्त्री०) उग्रशेखरः अच्-टाप्। अर्श आदिभ्यो-ऽच्। पा ५।२।१२७। महादेवके मस्तक पर रहनेवाली गङ्गा। वाग्वयामोधिनी गङ्गा हैमवत्युग्रशेखरा। (त्रिकाण्डशे० १।२।१८)

उग्रशोक (सं० वि०) उत्कट शोकयुक्त, बड़े अफसोसमें पड़ा हुआ।

उग्र-श्रवण-दर्शन (सं० त्रि०) उत्कट श्रवण एवं दर्शनविशिष्ट, जो देखने-सुननेमें खौफ़नाक हो।

उग्रश्रवस् (सं० पु०) १ सौति, कर्ण राजा। २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

उग्रसेन (सं० पु०) १ परीक्षितके एक पुत्र और जनमेजयके भ्राता। (शतपथब्राह्मण १३।५।४।३) २ मथुरा देशके एक राजा। ये आहुकके पुत्र और कंसके पिता थे। इनकी पत्नीका नाम कर्णी था। उग्रसेनको राज्यच्युत कर कंस स्वयं सिंहासन पर बैठा था। पीछे कृष्णने कंसको मारकर राज्य उग्रसेनके अधीन कर दिया। (भागवत)

उग्रसेनज (सं० पु०) उग्रसेनसे उत्पन्न कंस। कंस देखो।

उग्रसेना (सं० स्त्री०) अक्रूरकी स्त्री। (हरिवंश)

उग्रा (सं० स्त्री०) १ धन्याक, धनिया। २ यमानी, अजवायन। ३ संविदा मञ्जरी, गांजा। ४ वचा, बच। ५ छिक्किका, नक छिकनी। ६ तीव्रवीर्य वस्तु, कड़ी या सख्त चीज।

उग्रादित्य आचार्य (सं० पु०) जैनमतसे कल्याणकारक ग्रन्थके रचयिता।

उग्रादेव (वै० पु०) एक वैदिक ऋषि। (ऋक् १।३६।१८)

उग्रायुध (सं० वि०) १ उत्कट आयुधविशिष्ट, सख्त हथियार रखनेवाला। (पु०) २ एक प्राचीन पौरव राजा। इनके पिताका नाम क्षत और पुत्रका नाम क्षेम्य रहा। इन्होंने निज बाहुबलसे नीपवंश और अन्यान्य नृपतिको मार डाला था। कुरुवीर भीष्मके पितृवियोगसे कातर होनेपर उग्रायुधने दूत द्वारा कहला भेजा,—'भीष्म! तुम्हारी जननी गन्धकाली स्त्रीगणके मध्य रत्नस्वरूप हैं। उन्हें हमको दे डालो। हम तुम्हें अतुल ऐश्वर्यशाली बना देंगे।' किन्तु भीष्म उस समय कुछ न बोले। पिताका अशौच काल बीतने पर उन्होंने घोरतर युद्ध कर उग्रायुधको मार डाला था। (महाभारत)

उग्रेश (सं० पु०) उग्राणां ईशः। १ शिव। २ उग्रका बनवाया एक मन्दिर।

उघटना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन करना, खोलना। २ उत्क्रयन करना, कह देना। ३ ताल लगाना, सम दिखाना। ४ विगत विषय बताना, गड़े मुर्दे उखाड़ना। ५ उपहास्य करना, हंसी उड़ाना। ६ निन्दावाद करना, भली-बुरी सुनाना।

उघटवाना, उघटाना देखो।

उघटा (हिं० वि०) उद्घाटन करनेवाला, जो खोल देता हो।

उघटाई (हिं० स्त्री०) १ उद्घाटन, खोलाई। २ उत्क्रयन, कहाई।

उघटाना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन कराना, खोलाना। २ उद्घटन कराना, कहलाना।

उघड़ना (हिं० क्रि०) उद्घाटित होना, खुलना, नङ्गा हो जाना।

उघड़वाना उघराना देखो।

उघड़ाना, उघराना देखो।

उघरी (हिं० स्त्री०) कुब्जिका, खिसौंद, घाघी, कुब्जी।

उघरना, उघड़ना देखो।

उघारा (हिं० पु०) १ उद्घाटित स्थान, खुला मैदान। (वि०) २ उद्घाटित, खुला।

उघाड़ना (हिं० क्रि०) १ उद्घाटन करना, खोलना, कपड़ा उतार कर फेंक देना।

"अपनी हाड़ उघाड़ै और आप ही लाजों मरे।" (लोकोक्ति)

२ प्रकट करना, बता देना।

उघाड़ी (हिं० वि०) १ नग्न, बरहना, खुली।

"[illegible]" (लोकोक्ति)

२ प्रकट, जाहिर।

उघाना (हिं० क्रि०) १ संग्रह करना, इकट्ठा करना, जमा करना। २ कर लगाना, महसूल बांधना। ३ मांगना, वसूल करना।

उघाई (हिं० स्त्री०) १ संग्रह, महसूलका वसूल। २ संग्रह किया जानेवाला धन, पावना।

उघारना, उघाड़ना देखो।

उघेलना, उघाड़ना देखो।

उङ्कार (सं० पु०) शिवके एक पार्षदका नाम।

उङ्कुण (सं० पु०) उत्कुण, खटमल।

उङ्गोस (सं० पु०) गुनगुनाकर आलाप, प्रलाप, बकी बकी बात, बकबक।

उङ्गन (हिं०) औंगन देखो।

उच्—दिवा० पर० सक० सेट्। इक समवाय और विचार अर्थोंमें आता है।

उचकन (हिं० पु०) आधारक, उठकन, अटकनी, घाड़, ढेल। इसे नीचे रखनेसे बरतन उलटने नहीं पाता।

उचकना (हिं० क्रि०) १ आच्छेद करना, छीन लेना। २ दबाना, छीनी झपटना। ३ ले भागना। ४ पूर्णोन्मादन करना, पहले ही मजा लेना। ५ उद्ग्रहण करना, उठाना। ६ अधिक मूल्य देना, ज्यादा कीमत लगाना। ७ उल्लङ्घन करना, कूदना, उछलना, फांदना। ८ पदाग्रपर उठना, पञ्जोंके बल खड़ा होना। ९ पलायन करना, भाग जाना। १० उद्योग करना, मयस्सर लगाना, छीना झपटना। ११ विस्मित होना, चकराना। १२ लालायित होना, ललचाना।

उचकवाना (हिं० क्रि०) उचकनेको आदेश देना, दूसरेसे उचकनेका काम लेना।

उचकाना (हिं० क्रि०) पदाग्रपर उठाना, पञ्जोंके बल खड़ा करना, भगाना, खेल बनवाना, चकरवाना।

उचकैया, उचक्का देखो।

उचकौंहा (हिं० वि०) १ आच्छेदक, छीननेवाला। २ पदाग्रपर उठनेवाला, जो पञ्जोंके बल खड़ा रहता हो।

उचक्का (हिं० पु०) वञ्चक, धूर्त, ऐयार, बटमार।

उचक्कापन (हिं० पु०) दुष्टाचरण, छल, नमक-हरामी, दगाबाजी, नोचानोची।

उचक्कापना, उचक्कापन देखो।

उचटना (हिं० क्रि०) १ पृथक् पड़ना, गिरना। २ उत्पतन करना, उछटना, फिरना। ३ उल्लङ्घन करना, कूदना। ४ विपर्यय करना, भटकना। ५ उदास होना, ऊब जाना। ६ दुखना, नाखुश होना।

उचटवाना (हिं० क्रि०) उचाटनेकी आज्ञा देना, उचाटनेका काम दूसरेसे लेना।

उचटाई (हिं० स्त्री०) उचाटनेका कार्य या भाव।

उचटाना (हिं० क्रि०) १ विनष्ट करना, काटना, अलग करना। २ उत्पतन कराना, उछटाना। ३ विपर्यय करना, भटकाना। ४ दुखाना, ऊबाना। ५ उदास करना, दिल तोड़ना।

उचड़ना, उचटना देखो।

उचड़वाना, उचटवाना देखो।

उचड़ाई, उचटाई देखो।

उचड़ाना, उचटाना देखो।

उचत (दे० स्त्री०) प्रशंसा, तारीफ। (कथा, [illegible])

उच्चय (वै० वि०) १ प्रशंसनीय, तारीफके काबिल। (पु०) २ अङ्गिराका एक नाम। (ऋक् ४।१।१८)

उचना (हिं० क्रि०) १ उच्च पड़ना, ऊंचा जाना, ऊपरको उठना। २ उच्च करना, ऊपरको उठाना।

उचनि (हिं स्त्री०) उच्च होनेकी दशा, उठान, उभार, उचकाई।

उचरंग (हिं० पु०) पतङ्ग, परवाना, कपड़ेका कीड़ा।

उचरना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण करना, जुबानसे निकालना, बोलना। २ शब्द आना, आवाज़ देना, मुंहसे निकलना। ३ उखड़ना, छूटना।

उचरवाना, उचराना देखो।

उचराई (हिं० स्त्री०) १ उच्चारण करनेकी दशा, कहाई। २ उखड़ाई।

उचराना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण कराना, कहलाना। २ उखड़वाना।

उचलना, उचरना देखो।

उचाट (हिं० वि०) पृथक् किया हुआ, जो टूट गया हो। २ विरक्त, नाखुश, नाराज़। ३ श्रान्त, थकामांदा। ४ खिन्न, बेचैन। ५ हताश, दिलगीर। (स्त्री०) ६ घृणा, नफ़रत, अलग होनेकी खाहिश।

उचाटन (हिं०) उच्चाटन देखो।

उचाटना (हिं० क्रि०) उच्चाटन करना, उठा देना, भगाना।

उचाटी (हिं० स्त्री०) उच्चाटन, उचाट, हटाव।

उचाटू (हिं० वि०) उच्चाटन करनेवाला, जो हटा देता हो।

उचाड़, उचाट देखो।

उचाड़ना, उखाड़ना देखो।

उचाना (हिं० क्रि०) उच्च करना, उठा देना।

उचापत (हिं० स्त्री०) १ विश्वास, एतबार, साख। "बनियेको उचापत और चोरको दौड़ बराबर।" (लोकोक्ति) २ प्रतारणा, फरेब, धोखाधड़ी। ३ विश्वास पर आनेवाली चीज़।

उचापती (हिं० वि०) १ उचापतसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो उधार लाता हो। (पु०) २ ऋणी या उत्तमर्ण, कर्ज़दार या कर्ज़दिहन्दा, देनदार या लेनदार।

उचापती लेखा (हिं० पु०) २ आयव्ययपत्र, दुकानका परचा, चलता हिसाब।

उचायी, उचाई देखो।

उचार (हिं०) उच्चार देखो

उचारक (हिं०) उच्चारक देखो।

उचारन (हिं०) उच्चारण देखो।

उचारना (हिं० क्रि०) १ उच्चारण करना, कहना। २ उचाटन करना, उखाड़ देना।

उचाल, उचाट देखो।

उचालना, उचाटना देखो।

उचावा (हिं० पु०) स्वप्नप्रलाप, ख्वाबकी बकझक।

उचित (सं० त्रि०) १ योग्य, कर्तव्य, वाजिब, करनेके काबिल। २ परिचित, अभ्यस्त, जाना-बूझा, जो समझ में आ गया हो। ३ सुखमय, खुशगवार, अच्छा लगनेवाला। ४ साधारण, मामूली। ५ मान्य, मानने लायक़। ६ निक्षिप्त, न्यस्त, रखा हुआ। ७ व्यवस्थित, दुरुस्त, ठीक।

उचेड़ना, उचाटना देखो।

उचेलना, उचाटना देखो।

उचौंहा (हिं० वि०) उठा हुआ, उभरा हुआ, जो ऊंचा पड़ गया हो।

उच्च (सं० त्रि०) उच्चिनोतीति, उत्-चि-ड टिलोपः। १ उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। २ तुङ्ग, लम्बा। ३ गभीर, गहरा। ४ महास्वन, पुरशोर, ज़ोरसे बोला जानेवाला। ५ प्रचण्ड, शदीद, तुन्द। ६ अंश, भाग, हिस्सा। (पु०) ७ राशिभेद, सैयारेके दायरेकी नोक।

"मेषो वृषो मृगः कन्या कर्कमीन[illegible]: ।
भास्करादिग्रहस्य[illegible] राशयः क्रमशोऽस्थिताः ।
सोऽयाश्च [illegible] नीचं तत्सप्तमेऽभिनिर्दिशेत् ।
उच्चान्: [illegible] स्यात् नीचान्ते तु [illegible]: ।" (ज्योतिस्तत्त्व)

ज्योतिष शास्त्रके अनुसार मेषका सूर्य, वृषका चन्द्र, मृगका मङ्गल, कन्याका बुध, कर्कटका बृहस्पति, मीनका शुक्र और तुलाका शनि उच्च होता है। अपने उच्चस्थानसे सप्तम पहुंचनेपर प्रत्येक ग्रह नीचे निकलता

है। अर्थात् सूर्यका मेष, चन्द्रका वृष, कर्कटका मङ्गल, मीनका बुध, मकरका बृहस्पति, कन्याका शुक्र और मिथुनका शनि उच्च है। ८ नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़। ९ सरल देवदारु।

उच्चकैः (सं० अव्य०) उच्चैस्-अकच्। अतिशय उच्च, ऊंचा, निहायत बुलन्द। (ऋक् ११६)

उच्चक्षु (सं० त्रि०) ऊर्ध्वमुत्पाटिते चक्षुषी यस्य, बहुव्री०। ऊपरको आंखें उठाये रहनेवाला, जो आंख उठाये हो।

उच्चध्वज (सं० स्त्री०) छतमें रहने और मुंहपर न आनेवाला श्वान, अन्धेरेकी कुड़कड़ा, जो इसी पेड़में नहीं—दिनमें निकलती हो।

उच्चङ्गम (सं० पु०) ऊर्ध्वगामी पक्षी, विहङ्ग, जो चिड़िया ऊंचे उड़ सकती हो। (हिमालय)

उच्चट (सं० पु०) दर्प, गर्व।

उच्चटन (सं० स्त्री०) उन्मूलन, उखाड़ी, उखाड़। २ अभिचार, टोटका, मन्त्र द्वारा किसी व्यक्तिको उसकी प्रकृति भगा देनेका काम।

उच्चटनीय (सं० त्रि०) भगाया जानेवाला, जो निकाल देनेके लायक हो।

उच्चटा (सं० स्त्री०) उत्-चट्-अच्-टाप्। १ गुञ्जा, घुंघची। २ भूम्यामलकी, भुंइ आंवला। ३ एक प्रकार लहसुन, किसी किस्मका लहसुन। ४ नागरमुस्ता, नागरमोथा। ५ लाल गुञ्जा, लाल घुंघची। ६ तृण विशेष, एक घास (Cyperus Compressus)। इसे निर्विषी, चूड़ाला, अमृता, अम्बुधरा, जटिला, चक्रला और उच्चाटक भी कहते हैं। वैद्यकके मतसे उच्चटा स्निग्ध, शीतल, कषाय और मधुर होता है। इससे पित्त, अतिस, दाह, तृष्णा, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, उन्माद, अपस्मार, रक्तपित्त और वातरक्तकी बाधा मिट जाती है। उच्चटा कोटि नागपुर, आसाम, मद्रास और सिंहलके दोआबवाले स्थानोंमें उपजती है। ७ दम्भ, दर्प, घमण्ड। ८ अभी, तख्लिरा, बाबरोन। ९ आचार, आदत।

उच्चटाकन्द (सं० पु०) एक नागोदन्त, कोटि अभिवा आंवलेका दरा। (स्त्री०) ७ निर्विषीक दाह।

उच्चटाख्या (सं० स्त्री०) रक्तगुञ्जा, लाल घुंघची।

उच्चटामूल (सं० स्त्री०) निर्विषीक मूल, चपेंरेकी जड़।

उच्चण्ड (सं० त्रि०) उत्-चण्ड-अच्। १ त्वरान्वित, जल्दबाज, फुरतीला। २ तीव्र, तुन्द, भला।

उच्चतम (सं० त्रि०) सबसे उच्च, निहायत ऊंचा। (पु०) नाटक विशेष। गानेमें यह नाटक भी ऊंचा पड़ता और क्रिया बनानेमें लगता है।

उच्चतर (सं० त्रि०) अपेक्षाकृत उच्च, ज्यादा ऊंचा।

उच्चतरु (सं० पु०) उच्च उन्नतस्तरुः। १ नारिकेल वृक्ष, नारियलका पेड़। २ वट वृक्ष, बरगदका पेड़।

उच्चता (सं० स्त्री०) उच्चतावस्था, ऊंचाई।

उच्चताल (सं० स्त्री०) मोजके समयका नृत्य एवं गीत, व्याकुलमें होनेवाला नाच और गाना।

उच्चत्व (सं० स्त्री०) उच्चता देखो।

उच्चदेव (सं० पु०) उच्चः प्रधानो देवः। विष्णु, प्रधान देव श्रीकृष्ण।

उच्चदेवता (सं० स्त्री०) काल, यमराज।

उच्चध्वज (सं० स्त्री०) बुद्धिन नामक स्वर्गीय बुद्धका नाम।

उच्चनीच (सं० त्रि०) १ उत्कृष्ट निकृष्ट, उच्च-अवनत, भला-बुरा, ऊंचा नीचा। "उच्चनीचानि कर्माणि ..." (...) (पु०) २ ग्रहगणका उच्च और नीच स्थान। ३ स्वरके आरोहणका परिवर्तन, आवाजका उतार-चढ़ाव।

उच्चन्द्र (सं० पु०) उत् चन्द्रं यस्मिन् यत्र, प्रादि० बहुव्री०। निशाका चतुर्थ प्रहर, रात्रिशेष, रातका आखिरी वक्त। रात्रिको जब चन्द्र डूबने लगता, तब यह समय पड़ता है।

उच्चपद (सं० स्त्री०) सम्मानका पद, उच्चावस्था, ऊंचा दरजा।

उच्चप्राकार (सं० स्त्री०) उच्च प्राचीर, बुलन्द दीवार, ऊंचा कोट।

उच्चभाषिन् (सं० त्रि०) उच्चः स्वरसे बोलनेवाला, जो चीखकर बात करता हो।

उच्चय (सं०, पु०) उत्-चि-अच्। १ चयन, इकट्ठा करनेका काम। २ परिधान-बन्धग्रन्थि, कमरमें

कपड़े की गांठ, इजारबन्द। ३ रचना, बनावट। "वार्क्यं स्यादयोग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोच्चयः।" (साहित्यदर्पण) ४ संयोजना, मिलाव। ५ समूह, ढेर। ६ त्रिकोणका सम्मुखस्थ पार्श्व, मुसल्लसके सामनेका बाजू।

उच्चयापचय (सं॰ पु॰) वृद्धि और ह्रास, घटती बढ़ती, चढ़ा उतरी।

उच्चरण (सं॰ क्ली॰) १ ऊपर या बाहर जानेका काम। २ कथन, तलफ़्फ़ुज़। यह कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ और नासिकादिके प्रयत्नसे होता है।

उच्चरना (हिं॰ क्रि॰) उच्चरण करना, मुंहसे निकालना, बोलना।

उच्चरित (सं॰ त्रि॰) उत्-चर्-कर्मणि क्त। १ कीर्तित, कहा या निकाला हुआ। २ उत्थित, उठा या निकला हुआ। (क्ली॰) ३ विष्ठा, मलमूत्र, बराज़, मैला।

उच्चल (सं॰ क्ली॰) उत्-चल-अच्। मन, दिल।

उच्चलन (सं॰ क्ली॰) गमन, रवानगी, सरक जानेका काम।

उच्चललाटा, (सं॰ स्त्री॰) उच्चललाटविशिष्ट स्त्री, ऊंचे मस्तेकी औरत।

उच्चललाटिका, उच्चललाटा देखो।

उच्चलित (सं॰ त्रि॰) ऊपर या बाहर पहुंचा हुआ, जो फटकारा गया हो।

उच्चा (वै॰ अव्य॰) उपरि, ऊपर, ऊंचे।

उच्चाचक्र (वै॰ त्रि॰) उपरि चक्र युक्त, जिसके ऊपर घेरा रहे। यह शब्द कूपका विशेषण है।

उच्चाट, उच्चाटन देखो।

उच्चाटन (सं॰ क्ली॰) उत्-चट्-णिच्-ल्युट्। १ उत्पाटन, स्थापित या संयोजित वस्तुका पृथक् करण, उखाड़, नोच-खसोट। २ चञ्चल करण, डावांडोल बनानेका काम। ३ षट्कर्मान्तर्गत अभिचार विशेष, एक जादू। इस कार्यकी देवता दुर्गा और तिथि कृष्णाष्टमी वा चतुर्दशी है। शनिवारको साधुके बालोंमें पिरोयी हुई घोड़ेके दांतोंकी मालासे जप करते हैं। (तन्त्रसार) तन्त्रसार देखो। ४ उत्कण्ठा, फ़िक्र। ५ विवाद, झगड़ा। ६ उत्खातन, अफसुर्दा बनानेका काम।

उच्चाटनीय (सं॰ त्रि॰) उत्पाटनयोग्य, उखाड़ डालनेके क़ाबिल।

उच्चाटित (सं॰ त्रि॰) उत्पाटित, उखाड़ा हुआ, जो निकाला गया हो।

उच्चाबुध्न (वै॰ त्रि॰) उपरि तलयुक्त, जिसके पेंदा ऊपर रहे।

उच्चार (सं॰ पु॰) १ विष्ठा, बराज़, मैला। श्रुतिमें लिखा है,—उच्चार, मैथुन, प्रस्राव, दन्तधावन, स्नान और भोजन छः कार्य करते समय बोलना न चाहिये।

"उच्चारे मैथुने चैव प्रस्रावे दन्तधावने।
स्नाने भोजनकाले च षट्सु मौनं समाचरेत्॥" (श्रुति)

२ त्याग, बरखास्तगी। ३ उच्चारण, कथन, तलफ़्फ़ुज़।

उच्चारक (सं॰ त्रि॰) उच्चार कार्यं कन्। उच्चारणकारी, तलफ़्फ़ुज़ करनेवाला, जो उच्चारण करता हो।

उच्चारण (सं॰ क्ली॰) उत्-चर्-णिच्-ल्युट्। कथन, शब्दप्रयोग, तलफ़्फ़ुज़, बोलनेका काम। २ स्फुटमकार्य, मुमकिन्-उल्-समा बनानेका काम, जिससे समझमें आ जाये।

उच्चारणज्ञ (सं॰ पु॰) शब्दव्युत्पन्न, ज़बानदान, जो तलफ़्फ़ुज़ करनेमें होशियार हो।

उच्चारणस्थान (सं॰ क्ली॰) गलांगविशेष, गलेका एक हिस्सा। इसीसे शब्द निकलता है। कण्ठ, तालु, मूर्धा, दन्त, ओष्ठ, नासिका, जिह्वामूल और उपध्मा आठ उच्चारणके स्थान होते हैं।

उच्चारणार्थ (सं॰ त्रि॰) १ उच्चारणके लिये उपयोगी, तलफ़्फ़ुज़में लगनेवाला, जो बोलनेके लिये मुफ़ीद हो। २ उच्चारणके लिये आवश्यक, तलफ़्फ़ुज़ करनेमें जिसकी ज़रूरत पड़े। कभी-कभी अतिरिक्त अक्षर लगा लेनेसे उच्चारणमें सरलता आ जाती है।

उच्चारणीय (सं॰ त्रि॰) उच्चारण किया जानेवाला, जो तलफ़्फ़ुज़ किये जाने क़ाबिल हो।

उच्चारना (हिं॰ क्रि॰) उच्चारण करना, तलफ़्फ़ुज़ निकालना, बोलना।

उच्चारित (सं॰ त्रि॰) उच्चार-इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। १ उदित, शब्दायित, तलफ़्फ़ुज़

किया या कहा हुआ, जो बोला गया हो। २ मूत्रमूत्र-युक्त, बराज़से भरा हुआ।

उच्चार्य (सं० त्रि०) उत्-चर्-णिच्-ल्यप्। १ उच्चारण-योग्य, तलफ़्फ़ुज़के क़ाबिल। (अव्य०) २ उच्चारण करके, कहकर।

उच्चार्यमाण (सं० त्रि०) उच्चारण किया जानेवाला, जो कहा जा रहा हो।

उच्चावच (सं० त्रि०) उदक् उत्कृष्टञ्च अवाक् निकृष्टञ्च, निपातनात् साधुः। मयूरव्यंसकादयश्च। पा २।१।७२। १ विविध, नानाप्रकार, मुख़्तलिफ़। २ असमान, नाहमवार, जो बराबर न हो। ३ उच्चनीच, भलाबुरा।

उच्चिङ्गट (सं० पु०) १ व्यागढ़-मत्स्य, किसी क़िस्मका केकड़ा। २ कोपनस्वभाव, गुस्सावर आदमी। ३ पतङ्ग-विशेष, किसी क़िस्मका झुरझुरा, एक झींगर।

उच्चिटिङ्ग (सं० पु०) उच्चिटङ्ग, एक झींगर। यह कीड़ा तीन चार प्रकारका होता है। एक जातीय (Acheta domestica), नगर, विशेषतः पल्लि-ग्राममें ही अधिक रहता है। देखनेमें कोमल है। इसे उष्णस्थानमें रहना अच्छा लगता है। उच्चिटिङ्ग ग्रीष्मकालमें निकलता है। शीत पड़ते ही यह निज आवासका आश्रय लेता है। उष्णता न मिलनेसे उच्चिटिङ्ग मृतवत् पड़ा रहता है। यह निशाचर होनेसे सन्ध्याके बाद आहार ढूंढने निकलता है। किन्तु ग्राम्य उच्चिटिङ्गकी अपेक्षा वन्य अथवा क्षेत्रज (Acheta campestris) बहुत बड़ा और देखनेमें काली रोशनायी-जैसा होता है। यह सात-आठ हाथ नीचे मट्टीमें गर्त बनाता है। रात्रिकालको गर्तके मुखपर बैठ प्रथम अल्प अल्प और पश्चात् प्रणयिनीके आकर मिल जानेसे म[illegible] प्राण भर बोलता है। इसका स्वर दूर[illegible] सुनने पर अति मिष्ट लगता और [illegible] प्रकार ध्वनिका भाव जताता है। [illegible] दो सौ डिम्ब देती [illegible] डिम्ब फूटनेपर प्रायः अध्यमण्ड[illegible] [illegible] तरह पचती नहीं [illegible] [illegible] एक जातीय [illegible] । यह जातिसे बड़ा होता है। हिन्दुस्तानमें इसे झुरझुरा या झींगर कहते हैं। झींगर देखो।

महर्षि सुश्रुतके मतमें यह विषाक्त कीट है। इसके दंशनसे वायुजन्य रोग उपजता है। (सुश्रुत कल्पस्थान)

उच्चूड़ (सं० पु०) उन्नता चूड़ा यस्य, उच्च चलम्। १ ध्वजोर्ध्वस्थ कूर्च, ध्वजके उपरिभागका वस्त्रखण्ड, झण्डेके ऊपरी हिस्सेका फहरानेवाला कपड़ा। २ ध्वजके उपरि भागपर बांधा जानेवाला एक अलङ्कार, झण्डेके ऊपरी हिस्सेका एक गहना।

उच्चूल, उच्चूड़ देखो।

उच्चैः (सं० अव्य०) १ उन्नत-रूपसे, ऊंचे। २ अत्यन्त, निहायत, बहुत। ३ उच्च स्वरपूर्वक, बुलन्द आवाज़में।

उच्चैःकर (सं० त्रि०) तीक्ष्ण-स्वरित बनानेवाला, जो लहजेको ज़ोरसे अदा करता हो।

उच्चैःकुल (सं० क्ली०) १ उन्नत वंश, ऊंचा ख़ान्दान। (त्रि०) २ उन्नत वंश-सम्भूत, ऊंचे ख़ान्दान्‌वाला।

उच्चैःशिरस् (सं० त्रि०) उच्चैरुन्नतं शिरोऽस्य। उन्नत-मस्तक, महत्तर, ऊंचे दरजेवाला।

उच्चैःश्रवस् (सं० पु०) १ इन्द्रका घोटक या घोड़ा। समुद्रमन्थनसे इसकी उत्पत्ति है। इसका कान खड़ा और बोल बड़ा होता है। वर्ण श्वेत है। मुखकी संख्या सात बताते हैं। (त्रि०) २ बधिर, बहरा, जो कम सुनता हो।

उच्चैःश्रवस, उच्चैःश्रवस् देखो।

उच्चैश्रवा, उच्चैःश्रवस् देखो।

उच्चैःस्थान (सं० क्ली०) १ उन्नत स्थान, ऊंची जगह। (त्रि०) २ उन्नत पदाधिकारी, ऊंचे दरजे या स्थान-[illegible]

उच्[illegible] (सं० क्ली०) दृढ़ता, मज़बूती (वाक्[illegible]

[illegible] शब्द बुलन्द आवाज़। [illegible] जो बुलन्द [illegible] भाषि[illegible]। मझारव, [illegible] घोषवाला।

"यदुच्चैर्भुजतरवत्वशाडुच्चैरिव दहति।" (ऐतरेयब्राह्मण ३।१)

उच्चैर्भुजतरु (सं० वि०) तरुकी विस्तारित बाहुकी भांति रखनेवाला, जो फैले पेड़की बाजूकी तरह रखता हो।

उच्चैस्, उच्चैः देखो।

उच्चैस्तम (सं० वि०) १ अत्यन्त उन्नत, निहायत बुलन्द, बहुत ऊंचा। २ अत्यन्त उन्नत स्वरविशिष्ट, बहुत ऊंची आवाज़वाला।

उच्चैस्तमाम् (सं० अव्य) १ अत्यन्त उन्नत रूपसे, बहुत ऊंचे। २ उन्नत स्थानपर, बुलन्दीके ऊपर। ३ उन्नत स्वरसे, बुलन्द आवाज़के साथ।

उच्चैस्तर (सं० वि०) १ अपेक्षाकृत उन्नत, ज्यादा ऊंचा। २ अधिक स्वराघातयुक्त, जो ज्यादा ऊंची आवाज़से बोला जाता हो।

उच्चैस्तरत्व (सं० क्लो०) अधिक उन्नत होनेकी स्थिति, ज्यादा ऊंचा होनेकी हालत।

उच्चैस्त्व (सं० क्लो०) उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई।

उच्छ्—१ तुदा० इदित्० पर० सक० सेट्। यह धान्यकणा ग्रहणका अर्थ रखता है। २ तुदा० पर० सक० सेट्। इससे बन्ध, समागम, अतिक्रम और त्यागका अर्थ निकलता है।

उच्छन्न (सं० वि०) उत्-छद्-क्त। नष्ट, बरबाद, उजड़ा।

उच्छन्नसन्धि (सं० स्त्री०) सन्धि विशेष, एक सुलह। उत्तम राज्य लेनेके बाद किसी राजासे साथ होनेवाली सन्धिको उच्छन्नसन्धि कहते हैं।

उच्छय (सं० क्लो०) त्रिकोणका प्रधान पद, मुसल्लसके पीछेका क़दम।

उच्छरना, उछलना देखो।

उच्छल (सं० वि०) उत्-शल्-अच्। आधार अति-क्रमकर ऊर्ध्वको प्लावित होनेवाला, जो अपनी जगह छोड़ ऊपरको उड़ता हो।

उच्छलत् (सं० त्रि०) १ ऊपर या दूर उड़नेवाला। २ सामना करनेवाला।

उच्छलन (सं० क्लो०) ऊपरका उड़ना, उल्लास।

उच्छलना, उछलना देखो।

उच्छलित (सं० त्रि०) उत्-शल्-क्त। उत्थित, उत्थित, उछला हुआ, जो ऊपर उड़ गया हो।

उच्छव (हिं०) उत्सव देखो।

उच्छादन (सं० क्लो०) उच्छाद्यते मलोऽनेन, उत्-छद्-णिच्-ल्युट्। १ गन्धद्रव्य द्वारा शरीर मार्जन, खुशबूदार चीज़से जिस्मकी सफ़ाई। २ आच्छादन, छिपाव, ढंकाई।

उच्छाद्य (सं० अव्य०) उतारकर, कपड़े खोलकर।

उच्छाल—एक प्राचीन जनपद, गौड़के मध्य अवस्थित।

उच्छास (हिं०) उच्छ्वास देखो।

उच्छास्त्र (सं० वि०) उत् उत्क्रान्तं शास्त्रम्। शास्त्र-विरुद्ध, जो शास्त्रसे मिलता न हो।

उच्छास्त्रवर्तिन् (सं० त्रि०) शास्त्रोल्लङ्घनकारी, शास्त्रकी मर्यादाको उल्लङ्घन करनेवाला।

"न राजा: प्रतिरुद्धोवाऽप्यनेच्छास्त्रवर्तिनः॥" (याज्ञवल्क्य १।१०)

उच्छाह (हिं०) उत्साह देखो।

उच्छिख (सं० वि०) उन्नता शिखा यस्य, प्रादि० बहुव्री०। उन्नत-शिखा, चोटी ऊपरको उठाये हुआ। २ ज्वाला ऊपरको लगाये हुआ, जो लपटको नोक ऊपरको निकाले हो। ३ ज्वलन्त, भभकनेवाला। ३ द्युतिमान्, चमकीला। "माङ्गल्योर्पोच्छिखेति पुरः पाव-कलोच्छिखम्।" (रघु १०।१०) (पु०) ४ उन्नत शिखा-विशिष्ट एक नाग। (भारत आदि)

उच्छिङ्घन (सं० क्लो०) नस्यकी भांति नासिका द्वारा किसी वस्तुको श्वासके साथ खींचनेका कार्य, खर्राटे मारनेकी हालत। इसे उच्छिङ्गन भी लिखते हैं।

"तिध्नी वीःन पार्श्वङ्काल'कथा नासिकापुरम्।
उच्छिङ्घनेन हर्तव्यो हरिमन्थकः कफः॥" (सुश्रुत उत्तर १०४०)

उच्छित (सं० त्रि०) उत्-सि-क्त। बद्ध, रुका या घिरा हुआ।

उच्छित्ति (सं० स्त्री०) उत्-छिद् भावे क्तिन्। उच्छेद, विनाश, बरबादी।

उच्छिद्य (सं० अव्य०) विनाश करके, काट या मारकर।

उच्छिन्न (सं० त्रि०) उत्-छिद्-क्त। १ समूल उत्-पाटित, तोड़ा या उखाड़ा हुआ। २ नीच, कमीना।

(पु०) ३ बहुमूल्य भूमिके देनेसे प्राप्त हुई सन्धि, जो सुलह बेशकीमत जमीन् देनेसे मिली हो।

उच्छिरस् (सं० त्रि०) उन्नतं शिरोऽस्य। १ उन्नत शिरःविशिष्ट, महिमान्वित, जो मस्तको ऊपर उठाये हो। (पु०) २ कोहकाफ्के अन्तर्गत उत्तुङ्ग पर्वत।

उच्छिलीन्ध्र, उच्छिलीन्ध्र देखो।

उच्छिलीन्ध्र (सं० क्ली०) उद्गतं शिलीन्ध्रम्। गोमय-च्छत्राक, कुकुरमुत्ता-खाराक, कुकरमुत्ता, सांपकी टोपी। वर्षामें यह भूमिको विदारण कर प्रकट होता है।

उच्छिष्ट (सं० त्रि०) उत् शिष्यते यत्, उत्-शिष्-क्त। १ भुक्तावशिष्ट, जूठा, जो खाते-खाते बचा हो। शास्त्रमें उच्छिष्ट द्रव्य खानेको मना कहा है—

"नोच्छिष्टं कस्यचिद्दद्यान्नाद्याच्चैव तथान्तरा।
न चैवात्यशनं कुर्यान्न चोच्छिष्टः क्वचिद् व्रजेत्॥" (मनु २।५६)

उच्छिष्ट किसीको देना, सायं एवं प्रातर्भोजन कालके मध्य फिर खाना, अतिमय आहार करना और उच्छिष्ट मुखसे कहीं जाना न चाहिये।

भिन्न-भिन्न जातिका उच्छिष्ट छूने अथवा खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है—

"अज्ञानाद् यस्तु भुञ्जीत शूद्रोच्छिष्टं द्विजोत्तमः।
त्रिरात्रोपोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुध्यति॥" (आपस्तम्ब)

जो ब्राह्मण अज्ञानसे शूद्रका उच्छिष्ट खाता है, वह तीन रात्रि उपवास करने बाद पञ्चगव्यसे शुद्धि पाता है।

"अज्ञानात् भुक्तवेतत्तु भक्षितो वै द्विजातिभिः।
चान्द्रं कृच्छ्रं तदर्धं च क्रमात्तेषां विशोधनम्॥" (प्रायश्चित्तविवेक)

द्विजाति अन्यका उच्छिष्ट खानेसे क्रमान्वयमें चान्द्रायण और तप्तकृच्छ्र अथवा उसका अर्ध प्रायश्चित्त करनेपर शुद्ध होते हैं।

"[illegible]।
[illegible]॥" (अत्रि)

चण्डाल, पतित प्रभृतिका उच्छिष्ट अन्न खानेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य पराक तथा शूद्र कृच्छ्र द्वारा शुद्ध होता है। जान बूझकर उच्छिष्ट खानेसे दुना प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

"[illegible]।
[illegible]॥" (दक्ष [illegible])

शूद्रका एक मास, वैश्यका एक पक्ष, क्षत्रियका एक सप्ताह और ब्राह्मणका उच्छिष्ट खानेसे एक दिन व्रत करना पड़ता है।

"[illegible]।
[illegible]॥" (बाबर)

कुक्कुर, शूकर, शूद्र, चण्डाल, मद्यभाण्ड और रजस्वलाका उच्छिष्ट छूनेसे कृच्छ्र और सान्तपन द्वारा शुद्ध होना चाहिये।

चिकित्साशास्त्रमें भी उच्छिष्ट भोजन निषिद्ध कहा है। क्योंकि जो व्यक्ति प्रथम खाके उच्छिष्ट छोड़ता है, उसका संक्रामक रोग उच्छिष्ट खानेवालेको भी दबा सकता है। अतएव उच्छिष्ट भोजन न करना ही अच्छा है। २ त्यक्त, छूटा हुआ, जो छोड़ दिया गया हो। ३ अपवित्र, नापाक, जिसके मुंह या हाथ-पर जूठा खाना लगा रहे। (पु०) ४ मधु, शहद। (क्ली०) ५ दत्तावशिष्ट, बचत, जो देनेसे बचा हो।

"[illegible]।
उच्छिष्टं भाजने [illegible]॥" (मत्स्यपुराण)

उच्छिष्टकल्पना (सं० क्ली०) १ निःसार आविष्कार, बेमजा ईजाद, बासी बनावट।

उच्छिष्टगणपति (सं० पु०) १ उच्छिष्ट व्यक्ति द्वारा पूजित गणेश। जूठे मुंह रहनेवाले लोग इन्हें पूजते हैं। २ हैरम्ब सम्प्रदाय। इसके मतसे स्त्री और पुरुष उभय होते हैं। उनके संयोग वियोगमें पाप नहीं लगता। यह शब्द शुद्धगणपतिके विरोधमें आता है।

उच्छिष्टगणेश (सं० पु०) तन्त्रोक्त गणेशकी मूर्तिका एक भेद। गणेश देखो।

उच्छिष्टचाण्डालिनी (सं० स्त्री०) तन्त्रोक्त मातङ्गी देवीकी एक मूर्ति। मातङ्गी देखो।

उच्छिष्टता (सं० स्त्री०) १ शेष रहजानेकी दशा, जिस हालतमें कुछ छूट जाये। २ अपवित्रता, नापाकी, जूठन।

उच्छिष्टभोक्तृ, उच्छिष्टभोजिन् देखो।

उच्छिष्टभोजन (सं० पु०) १ देव-नैवेद्य-बलिभोजन-कर्ता, जो देवता पर चढ़ा प्रसाद खाता हो। २ अपरके

उच्छिष्टका खानेवाला, जो दूसरेका जूठा खाता हो। (क्ली) १ अपरके उच्छिष्टका अशन, दूसरेका जूठा खाना।

उच्छिष्टभोजिन् (सं० त्रि०) नीच व्यक्तिका भुक्तावशिष्ट खानेवाला, जो दूसरेका जूठा खाता हो।

उच्छिष्टमोदन (सं० क्ली०) उच्छिष्टं मधु तेन मोद्यते। सिक्थ, मोम। मोम देखो।

उच्छीर्षक (सं० त्रि०) उत् ऊर्ध्वस्तं शीर्षं येन, कन्, बहुव्री०। १ उन्नत शिर:युक्त, ऊंचा सर रखनेवाला। (क्ली०) २ उपाधान, तकिया। इससे शिर उठा रहता है। ३ मस्तक, शिर:स्थान, खोपड़ा।

"उच्छीर्षके श्रियै कुर्यात् भद्रकाल्यै च पादत:।
ब्रह्मवास्तोः पतिभ्यान्तु वास्तुमध्ये बलिं हरेत्॥" (मनु ३।८९)

(पु०) ४ शय्यादोष विशेष, बिस्तरका एक दोष।

"उच्छीर्षके समुद्गाशं बस्ति: कुर्यात् भिदनम्।" (सुश्रुत)

उच्छुष्क (सं० त्रि०) १ उपरिभागमें शुष्क, मुरझाया हुआ। "उच्छुष्कमांसरुधिरत्वचास्नायुभ्रष्ट:।" (ललितविस्तर) २ सन्तप्त, गर्मागर्म।

उच्छुष (सं० क्ली०) सम्भ्रम, मोह, घबराहट।

उच्छुषन्, उच्छुष देखो।

उच्छू (हिं० स्त्री०) उच्छ्वास विकार, एक खांसी, धांस। खाते-पीते समय किसी द्रव्यके मुंहमें उलट आने या पेटमें पहुंचनेसे रुक जानेपर इसका वेग बढ़ता है। उच्छू लगनेसे आंखोंमें आंसू भर आते हैं। प्राय: खाने-पीनेमें त्वरा करने और मनको एकाग्र न रखनेसे इसकी उत्पत्ति है।

उच्छूड़ा (सं० स्त्री०) उच्छूड देखो।

उच्छून (सं० त्रि०) उत्-श्वि-क्त। १ स्फीत, सूजा या फूला हुआ। २ उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। ३ उच्छ्वसित, सुखके आन्तरिक श्वाससे दबा हुआ। ४ स्थूल, जसीम, मोटा।

उच्छृङ्खल (सं० त्रि०) उद्गतं शृङ्खलं यस्य, बहुव्री०। १ अबाध, खुद-इख्तियार, जो किसीके फंदेमें न हो। २ नियमरहित, बेकायदा।

उच्छेतव्य (सं० त्रि०) उच्छेद-योग्य, उखड़ने लायक, जिसे कोई बरबाद कर सके।

उच्छेत्तृ (सं० त्रि०) उत्-छिद्-तृच्। उच्छेदकारक, नाशक, उखाड़ डालनेवाला, जो बरबाद कर देता हो।

उच्छेद (सं० पु०) उत्-छिद् भावे घञ्। १ उत्पाटन, उन्मूलन, उखाड़, नोचखसोट। २ विनाश, ध्वंस, बरबादी। "सर्व मनोच्छेदकर: शिवा मे।" (रघु)

उच्छेदन (सं० क्ली०) उच्छेद देखो।

उच्छेदनीय (सं० त्रि०) उत्पाटनयोग्य, उखाड़ने काबिल, जिसे कोई बरबाद कर सके।

उच्छेदिन् (सं० त्रि०) उन्मूलनकर, उखाड़ डालनेवाला, जो बरबाद कर देता हो।

उच्छेद्य, उच्छेदनीय देखो।

उच्छेष (सं० पु०) उत्-शिष्-घञ्। अवशेष, बचत।

उच्छेषण (सं० क्ली०) उत्-शिष्-कर्मणि ल्युट्। उच्छिष्ट, बची हुई चीज।

उच्छेष्य (सं० त्रि०) उत्-शिष् निपातनात् सिद्धम्। अवशेषणीय, बचा रखने काबिल, जो बच सकता हो।

"उच्छेषणं भूमिगतमजिह्मस्याशठस्य च।
दासवर्गस्य तत्पित्र्ये भागधेयं प्रचक्षते॥" (मनु ३।२४६)

उच्छोचन (सं० त्रि०) उत्-शुच्-ल्युट्। जलता, भभकता हुआ, जो जल रहा हो।

उच्छोषण (सं० त्रि०) उत्-शुष्-णिच्-ल्युट्। १ सन्तापक, हरारत पैदा करनेवाला। २ ऊर्ध्वशोषक, सुखा डालनेवाला। "न हि प्रपश्यामि ममापनुद्याद् यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्।" (गीता २।८)

(क्ली०) भावे ल्युट्। १ सम्यक् शोषण, पूरी खुश्की, खासी सुखावट।

"उच्छोषणं समुद्रस्य दर्पं कन्दर्पदर्पिणः।" (रामायण १।११।११)

उच्छोषुक (सं० त्रि०) उत्-शुष् बाहुलकात् उकञ्। ऊर्ध्वशोषयुक्त, मुरझाया हुआ। २ ऊर्ध्वशोषक, सुखा डालनेवाला।

उच्छ्रय (सं० पु०) उत्-श्रि-अच्। १ उच्चता, ऊंचाई। २ उन्नति, तरक्की, बढ़ती। ३ उच्च संख्या, ऊंची अदद। "उच्छ्रयेण द्विगुणं विस्तरं घनम्।" (लीलावती) ४ उद्गमन, उठान। ५ वृक्ष पर्वतादिका उत्सेध, दरख्त पहाड़ वगैरहका उठान। ६ दन्तादिका

उदय. सितारे वगैरहका नमूद । ७ त्रिकोणका उच्छ्रित पार्श्व, मुसल्लसका खड़ा बाजू ।

उच्छ्रयण (सं॰ क्ली॰) उत्-श्रि करणे ल्युट् । १ उन्नति, तरक्की, उठान । (त्रि॰) उत्-श्रि कर्तरि ल्यु । २ उत्कृष्ट, उम्दा, बढ़िया ।

"उच्छ्रयाणि वस्त्राणि ।" (भागवतमहापुराण ८।८)

उच्छ्रयोपेत (सं॰ त्रि॰) उच्च, बुलन्द, ऊंचा ।

उच्छ्राय (सं॰ पु॰) उत्-श्रि-घञ् । श्रिणीभुवोऽनुपसर्गे इति-दुरः पा ३।३।२४ १ उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई । २ उन्नति, तरक्की, बढ़ती ।

उच्छ्रायिन् (सं॰ त्रि॰) उन्नत, ऊंचा, उभरा हुआ ।

उच्छ्रायी (सं॰ स्त्री॰) फलक, तख़्ता, पटरा ।

उच्छ्रित (सं॰ त्रि॰) उत्-श्रि-क्त । १ उन्नत, उठा हुआ । २ सञ्जात, पैदा । ३ प्रवृद्ध, बढ़ा हुआ । ४ त्यक्त, छोड़ा हुआ । (पु॰) ५ सरल देवदारुका वृक्ष ।

उच्छ्रितपाणि (सं॰ त्रि॰) उत्थित हस्तयुक्त, हाथ उठाये हुआ ।

उच्छ्रिति (सं॰ स्त्री॰) उत्-श्रि बाहुलकात् करणे क्तिन् । १ उच्छ्राय, उठान । २ उत्कर्ष, बड़प्पन ।

"यमार्थं निधनं यान्ति प्राप्य उच्छ्रितीः पुनः ।" (मनु ५।४०)

३ उच्च संख्या, ऊंची अदद । (लीलावती) ४ त्रिकोणका दण्डमान् पार्श्व, मुसल्लसका खड़ा बाजू ।

उच्छ्रेय (सं॰ त्रि॰) उन्नत, बुलन्द, ऊंचा ।

उच्छ्रुष (वै॰ पु॰ द्वि॰) मानवके शरीरका एक अवयव । (अथर्व॰ १०।७।१)

उच्छ्वङ्क (वै॰ पु॰) जृम्भण, फाजा, जमदाई । (शतपथब्रा॰ ३।१।१।८)

उच्छ्वसत् (सं॰ त्रि॰) सूक्ष्म निश्वास-विशिष्ट, हांफता हुआ, जो मुशकिलसे सांस लेता हो ।

उच्छ्वसन (सं॰ त्रि॰) १ निश्वास लेता हुआ, जो आह भर रहा हो । २ स्थूल निश्वास-विशिष्ट, जो गहरी सांस खींचता हो ।

उच्छ्वसित (सं॰ त्रि॰) उत्-श्वस्-क्त । १ विकसित, शिगुफ़्ता, खिला हुआ । २ स्फीत, फूला या सूजा हुआ । ३ जीवित, ज़िन्दा । ४ उच्छ्वासयुक्त, हांफता हुआ । ५ कम्पित, कांपता हुआ । ६ आश्वासयुक्त, भरोसा रखनेवाला । (क्ली॰) ७ उच्छ्वास, दम । ८ कम्पन, कंपकंपी । ९ स्फुरण, शिगुफ़्ती ।

उच्छ्वास (सं॰ पु॰) उत्-श्वस्-घञ् । १ अन्तर्मुख-श्वास, अन्दरको खींची हुई दम । २ आश्वास, भरोसा । ३ विक्षेप, छुटकारा । ४ विकाश, शिगुफ़्तगी । ५ स्फीति, सूजन । ६ आकाङ्क्षा, ख़ाहिश । ७ छिद्र, सूराख । ८ मारण, ज़िन्दगी । ९ अध्याय, बाब ।

उच्छ्वासित (सं॰ त्रि॰) १ प्राणहीन, बेदम, जो सांस न लेता हो । २ अधिक, ज़्यादा । ३ मुक्त, छूटा हुआ । ४ विभक्त, बंटा हुआ । ५ असंयुक्त, जो मिला न हो ।

उच्छ्वासिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-श्वस्-णिनि । १ ऊर्ध्व-श्वासयुक्त, हांफनेवाला । २ उद्गत, उठा हुआ । ३ श्वास लेनेवाला, जो दम खींच रहा हो । ४ मरता हुआ, जो दम तोड़ रहा हो । ५ गम्यमान, जानेवाला ।

उछ्—तुदा॰ इदित् पर॰ सक॰ सेट् । २ तुदा॰ पर॰ सक॰ सेट् । यह बन्ध, समापन और विराम अर्थमें लगता है ।

उछ—पञ्जाबके भावलपुर राज्यका एक प्राचीन नगर । यह अक्षा॰ २९° १३′ उ॰ तथा द्राघि॰ ७१° ८′ पू॰पर पञ्चनदके पूर्व किनारे मूलतानसे ७० मील दूर अवस्थित है । कहते—उछ वही नगर ठहरा, जो सिकन्दर बादशाहके आदेशसे पञ्जाबमें नदीयोंके सङ्गमपर बना था । रशीद-उद्-दीन्ने इसे सिन्धके चार प्रधान प्रान्तमें एककी राजधानी बताया है । पीछे उछ मूलतानके अनन्य राज्यमें मिल गया । कितने ही आवर्तन-परिवर्तनके बाद अकबरने इसे अपने मुग़ल-साम्राज्यमें जोड़ दिया था । अबुलफ़ज़लने इसी मूलतान् सूबेका पृथक् ज़िला लिखा है । आजकल उछ ध्वंसावशेषका मध्य मात्र है । मुसलमानी इतिहासमें इसका विशेष वर्णन भरा है । मुसलमानोंके अधिक आदर देखानेसे इसकी प्राचीनता प्रकट होती है । पारसिकोंके अन्द-अवस्ता ग्रन्थमें लिखा—किसी समय शेख या सीस्तानसे दरवेश माहयार बग़दादको प्रति उछ ले गये थे ।

उछंग (हिं०) उत्सङ्ग देखो।

उछकना (हिं० क्रि०) विस्मित होना, उभकना, चौंकना, भौचक रह जाना।

उछटना, उचटना देखो।

उछड़ (उचाड़)—गुजरातमें दायमा राजपूतोंका एक राज्य। यह मैन नदीके वरपार गोरीसे देक्षिण अवस्थित और धीरपुर, रेगन, विक्रमपुर तथा उचाड़ चार प्रान्तमें विभक्त है। भूमिपरिमाण २६ वर्गमील है। १८वें ई०के शताब्दारम्भ पर स्थानीय नृपति आगर और राजपिपलीने धीरपुरके राजा बाजी दायमाको राज्यकी श्रीवृद्धिमें बड़ा साहाय्य दिया था। इसकी भूमि हलकी और नदी-नालेसे कटी फटी है। ज्वार बहुत उपजती, किन्तु कुछ-कुछ रूई, तेलहन और नदी किनारे तम्बाकू की उपज भी हाथ लग जाती है। राजपिपली ग्राम पार्वत्य और वृक्षादिसे व्याप्त हैं। उनमें अल्प तथा कठोर फसल होती है। महुवा बहुत आते हैं। क्षेत्रफल साढ़े १२ वर्गमील है। प्रति वर्ष कोई दश हजार रुपयेकी आमदनी आती है। ३५६) रु० गायकवाड़को कर की भांति दिया जाता है। रेगन उचाड़से पश्चिम अकेला ग्राम है। सामने नर्मदा बहती है। अंशभागी तीन हैं। भूमिका परिमाण प्रायः ४ वर्गमील है। वार्षिक आय ५००) रु० होता, जिससे ४६१) रु० गायकवाड़को करकी तरह दिया जाता है। प्रभु प्रायः रिक्तहस्त ही रहते हैं। स्थानीय भूमि, फसल और जाति उचाड़से मिलती है। जमींदार साधारण कृषकसे अधिक क्षमता नहीं रखते। भूमि कुछ-कुछ हलकी और काली है। ज्वार और चावलको बहुत बोते हैं। भीलोंका निवास अधिक है। उपरोक्त विभाग लग जानेसे उचाड़की भूमिका परिमाण साढ़े ८ वर्गमील है। बारह ग्राम बसते हैं। वार्षिक आय ८०००) रु० है। ८८३) रु० गायकवाड़को करस्वरूप देना पड़ता है। अधिवासी कोल हैं। मोटी फसल उपजती है।

उछड़ना, उखड़ना देखो।

उछरना, उछलना देखो।

उछलकूद (हिं० स्त्री०) १ द्रुतगति, क्रीड़ाकौतुक, दौड़धूप, नाच-तमाशा, हंसी दिल्लगी।

उछलना (हिं० क्रि०) १ चलित होना, फलांग मारना, कूदना, फांदना, एक बारगी हो ऊपरको उड़कर नीचे आ जाना। २ सवेग निःसरण करना, फूट निकलना, उबलना, जोरके साथ बाहर आना। ३ आनन्द करना, खुश होना, उमंग लेना। "आये बसन्त फूला कांस। आगत उछलैं सो सो बांस।" (लोकोक्ति)
४ क्रोधसे उत्तेजित होना, गुस्से में खूंखार बनना, तड़पना। ५ सम्भोग करना, चढ़ बैठना।

उछलवाना, उछलाना देखो।

उछलाना (हिं० क्रि०) उछालनेका कार्य कराना, उछलवाना।

उछलिया—बम्बई प्रान्तकी एक जाति। इस जातिके लोगोंको भामता या गांठचोर भी कहते हैं। पूनाके उछलियोंका बीज तैलङ्गप्रान्तसे आया समझ पड़ता है। यह टूटी फूटी तैलगु बोलते और अपने नाम दक्षिणी या पूर्वी ढङ्गके रखते हैं। दक्षिणसे बरार, गुजरात और पश्चिम भारतमें उछलिये फैल पड़े हैं। इन्हें मालूम नहीं अपना घर कब छोड़ा था। कुछ लोग कहते, कि वह चार पांच पीढ़ीसे पूनेके आसपास ग्राममें रहते हैं। भामते कहाते भी पूनेके उछलिये भामते नहीं। क्योंकि प्रकृत भामते पूर्व अथवा दक्षिण-पूर्वसे नहीं—उत्तरसे आये थे। यह राजपूतोंके समान हैं। रूप सुन्दर और प्रसन्नतायुक्त रहता है। वर्ण कोमल है। अङ्ग सुडौल और दृढ़ होते हैं। यह जितने ही रूप बना लेते हैं। अपने ही ग्राममें कोई मारवाड़ी बनिया, कोई गुजराती श्रावक या जैन, कोई ब्राह्मण और कोई राजपूतके वस्त्र पहनता है। यह किसी वेशमें वर्षों बने रहते और उस प्रकारके लोगोंको सैकड़ों कोस घूम ठगा करते हैं। कभी कभी यह अपना झूठा नाम धाम बता उसी जातिके व्यवसायीकी सेवामें लग जाते हैं। कुछ दिन विश्वासपूर्वक कार्य चला अवसर पाकर बहुत सा द्रव्य उठा भागते हैं। बड़े बड़े मेलोंमें दो-तीन भामते पहुंचते और स्नानके घाटपर जा बैठते हैं। उनमें कोई ब्राह्मण

कोई यात्रीका रूप बनाता है। फिर अमपाठ करते करते वह यात्रियोंके अलङ्कारादिपर दृष्टि रखते और अवसर पाकर भोगा वस्त्र सुखानेको फैला देते हैं। दृष्टि बचा भामते अलङ्कारादिको कपड़ेमें दबा रेतमें कुछ दूर पर गाड़ आते हैं। साथी इधर-उधर घूम टहल जाते हैं। यात्रीके रोनेधोने पर वह सहानुभूति दिखाते हैं। फिर कहने लगते—'हमने चोरोंको उधर घूमते देखा है। आप को अन्वेषण करना चाहिये।' लोगोंके उधर जाते ही भामता अलङ्कारादि उखाड़ कर चम्पत होता है। ऐसे मेलोंमें प्राय: स्त्रियां अपने अलङ्कार गठरीमें बांधकर रख देतीं और उसीके पास बैठ भोजन करती हैं। उस समय दो भामते उनके पास पहुंच जाते हैं। एक स्त्रियोंके निकट रहता और दूसरा थोड़ी दूरपर विश्राम लेनेको बैठता है। स्त्रियोंके दूसरी ओर घूमते ही वह गठरी चोरा रेतमें गाड़ देता है। पकड़े जानेपर भामतेके पास कुछ नहीं निकलता और अदालतसे साफ़ छूट जाता है।

पुना नगरमें उछलिये अथवा दक्षिणी भामते भरे पड़े हैं। *नगरकी चारो ओर प्रधानत: यादगांव,* भाटगांव, करला, फुगियावाड़ी, पावल, बोपुड़ी, कमेरसर, फोंडवे, सुनटव. तलेगांव और धमारीमें इनका अड्डा है। कुछ मर्यादा पर्यटनपर रहते हैं। इनके गायकवाड़ और जादव दो विभाग हैं। *केवल नीच जातिसे मांगी, मारों, चमारों, ढोडी,* बरुदी और तेलियोंको छोड़ उछलिये सब हिन्दू मुसलमान अङ्गीकार करते हैं। इसीमें जितने ही ब्राह्मण, मलिये और सोनार इनमें जा मिले हैं। अन्य जातिवालोंको उछलिया बननेके लिये २०।२५ रुपये देना पड़ता है। याचकके मुखमें हरिद्रा तथा शर्करा डालनेसे ही संस्कार बन जाता है। फिर दो एक बड़े बड़े उछलिये साधारण भोजमें बैठ उसके साथ *खाते-पीते हैं। खाना बनता और अमर-पान बंटता है।*

पुनाके उछलिये काले और तेलगु या द्राविड़ जैसे होते हैं। कितना ही मारते-पीटते भी इनके मुंहसे शब्द नहीं निकलता। पुरुष गिरा, लङ्ग, गण्डलोम और अमक रखते हैं। दाढ़ीमें मयको इच्छा है। *तेलगु और मरहठो मिली बोली चलती है।* यह सूअर पालते हैं, गोहत्या कभी नहीं करते। विवाहके समय मांसपूवा पकता है। उछलिये सेंध फोड़ने या डाका डालनेसे दूर रहते हैं। क्योंकि ऐसा काम करनेसे ये जातिसे निकाल दिये जाते हैं। प्रात:-*कालसे सन्ध्यातक चोकेघड़ीमें माल मारना ही इनका* प्रधान उद्देश्य है। उछलिये अपने सुविधे पटेलसे पूछ माल मारने जाते और लौटकर रुपयेमें दो आने उसको भेंट चढ़ाते हैं। चुगली करनेसे पञ्चायत कठोर दण्ड देती है।

'पुरुष और स्त्री दोनो अलग या मिल-जुलकर माल मारते; किन्तु किसीकी सब चीज नहीं चुराते, एक ही आधसे सन्तुष्ट हो जाते हैं।

सन्तान उत्पन्न होनेपर सटवाई देवीको पूजते हैं। चौल कर्ममें भोज देनेका विधान है। विवाहके समय वरका १०।२० और कन्याका वयस ६।० वत्सर रहता है। वरपक्षसे कन्यापक्षको २००।२५० रुपया दिया जाता है। विवाहके समय रातभर गोंधले नाचते गाते हैं। उछलिये विधवा विवाह और स्त्रीत्याग भी करते हैं।

इनमें मृतक जलानेकी प्रथा है। तीसरे दिन श्मशानमें भोज होता है। १३ वें दिन मुण्डन और पिण्ड तथा बलिदान करते हैं।

उछहरा (उचहरा) आगेह देखो।

उछाटना *(हिं॰ क्रि॰) उच्चाटन करना, हटाना,भगाना।*

उछाड़, उचाड़ देखो।

उछार, उचार देखो।

उछाल (हिं॰ स्त्री॰) १ प्लुति, फलांग, कूद-फांद। २ वमेग निःसरण, सीरका निकास, उछाल। ३ आनन्द, खुशी, उमंग। ४ उत्तेजना, क्षुधा, तड़प। ५ सम्पोग, आड़ी। ६ क, वमन, छांट। ७ फेंकफांक। ८ थप-माल, पिढ़ल्ली। ९ गुच, भड़ाई।

उछाल छक्का (हिं॰ स्त्री॰) विलासवती स्त्री, फाड़िगा, छिनाल। यह अपनी छातो दिखाती है।

उछालना (हिं॰ क्रि॰) १ उत्क्षेपण करना, फेंकना। "कौन उछाले बड़े भारी।" (लोकोक्ति) २ वमन या कै

करना, डालना, छांड़ना। ३ अपमान करना, आबरू उतारना, नामको बट्टा लगाना। ४ युद्ध करना, लड़ना।

उछाला (हिं॰ पु॰) उछाल देखो।

उछाव (हिं॰ पु॰) उत्साह।

उछास (हिं॰) उच्छ्वास देखो।

उछाह (हिं॰ पु॰) उत्साह।

उछाही (हिं॰ वि॰) उत्साही।

उछिन्न (हिं॰) उच्छिन्न देखो।

उछिष्ट (हिं॰) उच्छिष्ट देखो।

उछीड़ (हिं॰ स्त्री॰) अल्पता, कमी, ओछापन।

उछीनना (हिं॰ क्रि॰) उच्छिन्न करना, नोच डालना, उखाड़ना।

उछेद (हिं॰) उच्छेद देखो।

उछेल, उछाल देखो।

उछोर (हिं॰ क्रि॰ वि॰) उस ओर, उस तर्फ़।

उजक—प्राचीन स्वर्णमुद्रा विशेष। मुसलमानी समयमें इसका चलन था।

उजका (हिं॰ पु॰) सन्त्रासन, भुचकाग, चिड़ियोंके उड़ानेका पुतला, काली हण्डी, धोका, डड़ाया। यह तृणपत्रादिसे बनाया और शस्यक्षेत्रमें लगाया जाता है। भीषण आकार देखते ही पक्षी भागते हैं। इससे किसी की कुदृष्टि भी खेतपर नहीं पड़ती।

उजट (हिं॰ पु॰) उटज, साधु या मुनिका आश्रम, झोपड़ा। यह घासफूससे बनता है।

उजड़ (हिं॰ वि॰) उजड्ड।

उजड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ समूल नष्ट होना, जड़से उखड़ना, सूख जाना, नोच खसोटमें पड़ना। २ पतन होना, गिरना, बरबादीमें पड़ना, मट्टी हो जाना। ३ अपहृत होना, लुटना। ४ जनशून्य होना, खाली पड़ना। ५ अपव्यय होना, खर्चमें लगना, खो जाना। ६ तमोहत होना, अच्छा न लगना, उदास पड़ना। ७ अत्यन्त उत्सन्न होना, बह जाना, किसी कामका न रहना। ८ शून्य लगना, नाचीज़ होना, तुच्छ देख पड़ना। ९ भवन छूटना, घरसे बाहर होना, देख न पड़ना। १० विनष्ट होना, मरना। ११ अपमानित होना, इज़्ज़त खोना। १२ पति वा स्त्री छूटना, रांड़ या रंडुआ होना। १३ पतनको प्राप्त होना, गिर पड़ना।

उजड़वाना (हिं॰ क्रि॰) विनष्ट कराना, बरबादीमें डलवाना, उजड़ाना।

उजड़वायी (हिं॰ स्त्री॰) विनष्ट करानेकी क्रिया, बरबादीमें डलानेका काम।

उजड़ा (हिं॰ वि॰) १ विनष्ट, शून्य, बरबाद, खाली, जो ख़राब बन गया हो। "उजड़े घरका बनैला।" (लोकोक्ति) (पु॰) २ नाशक, बरबाद करनेवाला, बदमाश। ३ अधम व्यक्ति, कमीना शख़्स।

उजड़ा पुजड़ा (हिं॰ वि॰) भट भ्रष्ट, ख़राबख़स्ता, उखड़ा-पुखड़ा, गया गुज़रा, टूटा-फूटा, कटा फटा।

उजड़ाई, उजड़वायी देखो।

उजड़ाना, उजड़वाना देखो।

उजड्ड (हिं॰ वि॰) १ नितान्तमूर्ख, बिलकुल बेवक़ूफ़, जिसे ज़रा भी समझ न रहे। २ नीचवंशोद्भूत, कमीने ख़ान्दानमें पैदा, जो तौर तरीक़ा जानता न हो। ३ तुच्छ, कठोर, सख़्त, गंवार। (पु॰) ४ महा-मूर्ख व्यक्ति, जो शख़्स निहायत बेवक़ूफ़ हो। ५ निर्दय मनुष्य, बेरहम शख़्स।

उजड्डपन (हिं॰ पु॰) १ मूर्खता, बेवक़ूफ़ी। २ तुच्छता, कठोरता, सख़्ती।

उजबक (तु॰ वि॰) १ मूर्ख, बेवक़ूफ़, गंवार। (पु॰) २ तातारियोंकी एक जाति। उज़बेग देखो।

उज़बेग—अफ़ग़ान-तुर्किस्तानकी एक शासक जाति। तुर्किस्तान देखो।

उजमन (हिं॰ पु॰) भोजके समय अपनेसे छुट स्त्रियोंको दी जानेवाली भेंट।

उजरत (अ॰ पु॰) १ पारिश्रमिक, मज़दूरी, कामका दाम। २ शुल्क, किराया।

उजरन (हिं॰ स्त्री॰) ध्वंसावशेष, जो चीज़ उजड़नेसे बची हो।

उजरना, उजड़ना देखो।

उजरा, उजड़ा और उजला देखो।

उजराई (हिं॰ स्त्री॰) १ शुक्लता, सफ़ेदी, गोराई। २ निर्मलता, सफ़ाई।

उजराना (हिं० क्रि०) १ विनष्ट कराना, बरबादीमें डलाना। २ श्वेत कराना, सफेदी दिखाना।

उजलत (अ० स्त्री०) शीघ्रता, फुरती, जल्दी।

उजलवाना (हिं० क्रि०) उज्ज्वल कराना, चमकवाना।

उजला (हिं० वि०) १ उज्ज्वल, चमकीला। २ निर्मल, साफ़-साफ़, शीशे-जैसा। ३ श्वेत, सफेद। ४ पवित्र, पाक, अच्छा। ५ दीप्तिमान्, रौशन, होशियार।

उजला आदमी (हिं० पु०) १ श्वेत परिच्छद पहननेवाला मनुष्य, जो आदमी सफ़ेद कपड़े पहने हो। २ सम्मानित व्यक्ति, इज्जतदार शख्स। ३ साधारण मनुष्य, मामूली शख्स। इसी प्रकार श्वेतवस्त्रको 'उजला-कपड़ा' और स्वच्छ भवनको 'उजलाघर' कहते हैं।

उजला कद्दू (हिं० पु०) अलाबु, गोलकद्दू, लौकी।

उजला कनेर (हिं० पु०) श्वेतकरवीर, सफ़ेद कनेर।

उजला चन्दन (हिं० पु०) श्वेतचन्दन, सफ़ेद चन्दन।

उजला जामुन (हिं० पु०) सफ़ेद जामुन।

उजलाधतूरा (हिं० पु०) सफ़ेद धतूरा।

उजलाभंगरा (हिं० पु०) सफ़ेद भंगरा।

उजली (हिं० स्त्री०) रजकपत्नी, धोबन।

उजलीका आज़ार (हिं० पु०) श्वेतप्रदर, सफ़ेदा।

उजली मायफूरी (हिं० स्त्री०) सफ़ेद कौंच।

उजली तुलसी (हिं० स्त्री०) सफ़ेद तुलसी।

उजलीवरण्—गुजरातकी एक जाति। इस जातिके लोग कालीपरजवालोंसे पृथक् हैं। किन्तु कोलियोंके साथ विवाहादि सम्बन्ध कर लेते हैं। इनमें कुनबी आदि कृषक एवं ब्राह्मण, बनिये, राजपूत, कारीगर और भाट मिलते हैं, जो प्राय: नागरिक रहते हैं। ये स्मृतिशास्त्रके अनुसार प्राचीन वर्णविभागके पक्षपाती हैं। देवदेवियोंकी पूजा करते हैं। इनमें विधवा विवाह कोई नहीं करता।

उजले पानकी जड़ (हिं० स्त्री०) श्वेत ताम्बूलका मूल, सफ़ेद पानकी जड़।

उजवाना (हिं० क्रि०) टलाना, डलाना, छोड़ाना, खाली करवाना।

उजवास (हिं० पु०) युक्ति, तदबीर, चाल, कोशिश।

उजहानी—युक्तप्रदेशके बदायूं जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° १०´ २५´´ उ० और द्राघि० ७९° २´ २०´´ पू०पर अवस्थित है। यहां हिन्दू, जैन, मुसलमान् और ईसाई रहते हैं। नगरमें पक्की इमारत और सड़क बनी है। गुड़से चीनी बहुत तैयार की जाती है। नीलका काम भी चलता है। सप्ताहमें दो बार मङ्गल और शनिवारको बाज़ार लगता है। थाना, डाकघर, स्कूल और मुसाफिरखाना मौजूद है। कितनी ही सुन्दर मसजिदें खड़ी हैं।

उजागर (हिं० वि०) १ दीप्तिमान, चमकीला। २ प्रसिद्ध, मशहूर। ३ प्रकाशित, साफ़, ज़ाहिर।

उजाड़ (हिं० पु०) १ विनाश, बरबादी। २ शून्य स्थान, खाली जगह। (वि०) ३ विनष्ट, बरबाद, जो बिगड़ गया हो।

उजाड़मुंह (हिं० पु०) हतभाग्य मुख, कमबख्त चेहरा। 'हर भाड़ मुंह उजाड़' (लोकोक्ति) इसी प्रकार अलङ्कार-रहित स्त्रीको भी 'उजाड़ सूरत' कहते हैं।

उजाड़ना (हिं० क्रि०) १ उत्पाटन करना, उखाड़ना, खोल डालना। २ पृथक करना, तोड़ना, टुकड़े उड़ाना। ३ विनाश करना, खींच लेना, मट्टीमें मिलाना। ४ निष्कासन करना, निकालना। ५ लुण्ठन करना, लूटना, ले भागना। ६ दरिद्र बनाना, तबाह करना। ७ निर्मूल करना, बहा फेंकना। ८ आघात करना, चोट मारना।

उजाड़ू (हिं० वि०) १ मुक्तहस्त, शाहखर्च, खानेउड़ानेवाला। २ नाशक, बरबाद करनेवाला, जो लूट लेता या बिगाड़ देता हो।

उजान (हिं० क्रि० वि०) धाराके प्रतिकूल, दरयाकी ऊपरी ओरको।

उजार, उजाड़ देखो।

उजारा, उजला और उजाला देखो।

उजारी (हिं० स्त्री०) खेतका किञ्चित् शस्य, अनज खेतका कुछ अनाज। यह देवताके अर्थ प्रथम तोड़ कर अलग रख दी जाती है। उजाली देखो।

उजालना (हिं० क्रि०) १ प्रकाशित करना, जलाना।

२ प्रकाशित कराना, चमकाना। ३ परिष्कार करना, सफाई लाना, रगड़ना, मांजना।

उजाला (हिं॰ पु॰) १ दिन, धूप, चमक। २ दीप्ति, रोशनी। ३ महिमा, नाम, गहना। ४ एकमात्र पुत्र, एक लौता बेटा।

उजाली (हिं॰ स्त्री॰) चन्द्रज्योत्स्ना, चांदनी।

उजालेका तारा (हिं॰ पु॰) शुक्र, सबेरेका नक्षत्र।

उजास, उजाला देखो।

उजियर, उजला देखो।

उजियरिया, उजाला देखो।

उजियार, उजला और उजाला देखो।

उजियारना, उजालना देखो।

उजियारा, उजाला और उजला देखो।

उजियारी, उजाली देखो।

उजियाला, उजाला देखो।

उजीता, उजाला और उजला देखो।

उजीर (हिं॰ पु॰) वजीर, मन्त्री।

उजूवा (हिं॰) अजूबा देखो।

उजैनी (हिं॰ स्त्री॰) उज्जैन। उज्जयिनी देखो।

उजेर, उजाला देखो।

उजेरा (हिं॰ पु॰) १ नूतन वृषभ, नया बैल। जब तक बैल गाड़ी वगैरहमें जोता नहीं जाता, तब तक उजेरा कहलाता है। २ उजाला, प्रकाश। (वि॰) ३ उजला, साफ्।

उजेला, उजला और उजाला देखो।

उज्झन (सं॰ क्ली॰) स्थूल या बलिष्ठ पड़नेका भाव, जिस हालतमें मोटे या ताक्तवर रहें।

उज्जयनी (सं॰ स्त्री॰) अवन्ती। उज्जयिनी देखो।

उज्जयन्त—काठियावाड़के अन्तर्गत एक पवित्र पहाड़। इसका वर्तमान नाम गिरनार है। यह जूनागढ़से प्रायः ५ कोस पूर्व पड़ता और अक्षा॰ २१° ३१′ ३०″ तथा द्राघि॰ ७०° ४२′ पू॰पर अवस्थित है। अतिप्राचीन कालसे यह पर्वत हिन्दुवों और जैनोंका पुण्य तीर्थ माना जाता है। महाभारतमें लिखा है—

"प्रभासञ्चोदधौ तीर्थं त्रिदशानां युधिष्ठिर।
तत्र पिण्डारकं नाम तापसाचरितं शिवम्।
उज्जयन्तश्च शिखरी क्षिप्रं सिद्धिकरो महान्॥ २१
पुण्ये गिरौ सुराष्ट्रेषु मृगपक्षिनिषेविते।
उज्जयन्ते स्म वसतो नाकपृष्ठे महीयते॥" २२ (वन ८८ अ॰)

समुद्रतीर सुराष्ट्रके निकट देवगणका प्रभासतीर्थ है। यहां पिण्डारक तीर्थ और आशु सिद्धिदायक उज्जयन्त पर्वत परिलक्षित है। मृग और पक्षियोंसे समाकुल सुराष्ट्रदेशके पवित्र उज्जयन्त पर्वतपर तपस्या कर मनुष्य स्वर्गलोकमें पहुंचता है। स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें कहा है—

"सोमनाथस्य सान्निध्ये उज्जयन्तो गिरिर्महान्।
तस्य पश्चिमभागे तु रैवतश्च इति श्रुतः।
उज्जयन्ते पदं गत्वा ततः स्वर्गं निरामयः।
ऐरावतपदाक्रान्त उज्जयन्तो महागिरिः।
सुवाप तीर्थं बहुधा गजपादोद्भवं हरिं।
उज्जयन्तं गिरिवरं नैमाख्य सहोदरम्।
सुराष्ट्रदेशे विख्यातं पुराणे प्रथमं स्थितम्।"

उक्त वचनसे उज्जयन्त गिरिका माहात्म्य सूचित होता है। पर्वतके पास ही सुपवित्र वस्त्रापथक्षेत्र है। इस स्थानको भी आजकल गिरनार कहते हैं।

स्कन्दपुराणमें लिखा है—भारतवर्षके सकल तीर्थोंमें प्रभास श्रेष्ठ है। प्रभासतीर्थको अपेक्षा वस्त्रापथको समधिक पुण्यप्रद बताया है।

"अत्र देव त्वया पूर्वं प्रभासं कथितं मम।
तस्मादप्यधिकं प्रोक्तं क्षेत्रं वस्त्रापथं त्वया॥" (प्रभासखण्ड)

वस्त्रापथ-क्षेत्रको सीमा इस प्रकार निर्दिष्ट है—

"उत्तरे तु नदी भद्रा पूर्वस्यां योजनद्वयम्।
दक्षिणे च बलिस्थानमुज्जयन्ती नदीमनु।
अपरस्यां पर्वं नद्योः सङ्गमं वामनात् पुरात्।
एतद्वस्त्रापथं क्षेत्रं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम्।
न यस्य विस्तरो क्षेत्रो योजनानां चतुष्टयम्।" (प्रभासखण्ड)

उत्तर भद्रानदी, पूर्व एवं दक्षिण दो योजन अवधि विस्तृत बलिस्थान, उसीके पश्चात् उज्जयन्ती नदी और पश्चिम वामनपुरसे उभय नदीके सङ्गम पर्यन्त स्थानमें भुक्तिमुक्तिप्रद वस्त्रापथ-क्षेत्र है। इसका विस्तार चार योजन है। प्रभासखण्डमें वस्त्रापथको उत्पत्तिका इसप्रकार उपाख्यान है—

एक दिन कैलासमें शिव और पार्वती दोनों बैठे थे। पार्वतीने शिवसे पूछा,—प्रभो! मुझे दयापूर्वक

बतलाइये, किस प्रकारके कार्यसे मानव आपको पूजता और कैसे आचरण तथा कैसी उपासनासे सन्तुष्ट करता है। शिवने कहा,—जो जीव नहीं मारता, सर्वदा सत्य वचन बोलता, कभी कुकर्ममें नहीं जाता और युद्धक्षेत्रसे अकातर भावसे पद बढ़ाता, वही मुझे रिझाता है। इसी प्रकार कथावार्ता होते समय ब्रह्मादि देव कैलासमें आ पहुंचे। उनमें विष्णुने शिवको लक्ष्य कर कहा,—'आप सर्वदा ही दैत्यादिको वर देते हैं, जिसके प्रभावसे वे नियत मनुष्य पर अनिष्टाचरण करते और मेरे पालन कार्यमें व्याघात डालते हैं। पृथिवीको अब मैं पाल नहीं सकता। मेरा पद कौन लेगा?' शिवने उत्तर दिया,—'मैं आशुतोष हूं। अल्प सेवासे ही सन्तुष्ट हो जाता हूं। मेरा यह स्वभाव छूट नहीं सकता। आपको बुरा लगता है। इसीसे मैं चल देता हूं।' यह कहकर शिव कैलाससे अन्तर्धान हुये। उस समय पार्वती बोली—'मैं शिवके व्यतीत एक क्षण भी नहीं ठहर सकती।' पीछे देवता पार्वतीके साथ शिवको ढूंढने निकले। उधर शिव वस्त्रापथमें अपने वस्त्र छोड़ अदृश्य भावसे रहने लगे। पार्वती और देवता सब मिलकर ढूंढते ढूंढते वस्त्रापथमें आ पहुंचे थे। विष्णु गरुड़से उतर रैवतक पर्वतपर टिके। पार्वतीने उज्जयन्त गिरिकी चूड़ापर विश्राम लिया। इसी समय नागराज और गङ्गादि नदीसमूह पातालसे यहां आये। देवगण भी निज निज मनोनीत स्थानमें बैठ गये। पार्वती उज्जयन्त-गिरिके शृङ्गसे शिव-स्तोत्र गाने लगी थीं। आशुतोष फिर छिप न सके, पार्वतीके स्तवसे सन्तुष्ट हो सबके समक्ष देख पड़े। देवगणने उनसे कैलास चलनेका अनुरोध किया। शिवने कहा,—'मैं कैलास जा सकता हूं। आप और पार्वतीको इसी वस्त्रापथमें रहना पड़ेगा।' देवगणने वैसा ही किया था। शिव इतना अंग छोड़ कैलासको चल दिये। उसी समयसे विष्णु रैवतक और पार्वती अम्बा नामसे उज्जयन्त गिरिके शृङ्गपर अवस्थित हैं।

वस्त्रापथमाहात्म्यका उपाख्यान इस प्रकार है—

भोज नामक एक राजा रहे। वे वृद्ध वयसमें पुत्रपर राज्यभार डाल लोगोंके साथ गङ्गातीर पहुंचे। कुछ दिन पीछे भद्र नामक एक मुनि कतिपय ऋषि साथ ले उसी नदी तीर गये। गङ्गातीरा गङ्गामें नहा मुनिवरने ध्यान लगाया था। उसी समय राजा भोजने उन्हें देख लिया। दर्शन मात्रसे ही भोज राजाके हृदयमें भक्ति टपक पड़ी। उन्होंने निकट पहुंच निज आश्रम चलनेके लिये मुनिको मनाया था। वे भद्र राजाके वाक्यसे सम्मत हो उनके आश्रम गये। भोजने लोगोंके साथ मुनिवरकी परिचर्या कर पूछा—'मुनिवर! मानव संसारके प्रलोभनसे मुग्ध जन्म और मरणके चक्रमें घूमता फिरता है। भगवन्! आप क्या दयापूर्वक बता सकते हैं—कैसे मानव नित्य शान्तिका लाभ उठाता है?' मुनिने उत्तर दिया—'पृथिवीपर गङ्गा प्रभृति अनेक पुण्यतोया नदी और विष्णु एवं शिवके तीर्थ हैं। निर्दिष्ट समयपर नदीमें स्नान और तीर्थमें देवदर्शन तथा दान करनेसे अतीव पुण्य मिलता है। किन्तु वस्त्रापथतीर्थ यात्रीको नित्य अनन्त सुखमय स्वर्ग देता है। एकदा मैं वस्त्रापथके दर्शनको गया था। वहां विष्णु रहते हैं। उन्होंने मुझसे कहा था—सकल तीर्थ दर्शनके निमित्त वृथा परिश्रमसे क्या प्रयोजन है। वस्त्रापथमें दामोदर देवका दर्शन और दामोदरकुण्डमें स्नान करनेसे ही सब तीर्थोंका फल मिलजाता है। विष्णुके आदेशानुसार मैं उसी तीर्थका दर्शन करने जाता हूं।' अनन्तर राजाने पूछा—भगवन्! वस्त्रापथ क्षेत्र कहां है? वहां कौन कौन पर्वत, कौन कौन नदी और कौन कौन वन हैं। मुनिने बताया—उस क्षेत्रको चारो दिक् समुद्र है। अनेक नगर बसे हैं। मध्यभागके निकट उज्जयन्त पर्वत है। उसके पश्चिम रैवतक विद्यमान है। इसी पर्वतके शृङ्गसे सुवर्णरेखा नदी निकली है। पातालसे स्वर्णरेखाकी उत्पत्ति है। शाम्ब, प्रद्युम्न प्रभृति यादव अनेक इस क्षेत्रमें रहते हैं। दामोदरके निकट रैवतक-कुण्ड है; इसे रेवतीने बनवाया था। इसी स्थानपर ब्रह्मकुण्ड नामक दूसरा भी कुण्ड है। दामोदर इस कुण्डमें नहाने आते हैं। इस क्षेत्रमें भी

व्यक्ति पञ्च प्रस्तरका मन्दिर बनाता है, वह पञ्च सहस्र वर्ष निरामय स्वर्गका वास पाता है। रैवतकके सन्निकट दो कोश विस्तृत अस्त्राङ्ग क्षेत्र है।* यह क्षेत्र अधिकतर पुण्यप्रद है। इसके जलमें प्राणीका अस्थि गिरनेपर उसी क्षण विलीन होनेसे इसका नाम विलीयक पड़ा है। यहां अनेक संसारमुक्त संन्यासी रहते हैं।" भद्र ऐसा कह कर चलते बने। पीछे राजा और रानी वस्त्रापथको गये। वे कार्तिक मासकी पूर्णिमाको वहां पहुंचे थे। महाकर राजाने भवनाथ और दामोदरका दर्शन किया। उसी समय स्वर्गसे रथ आकर उनके लिये वहां लग गया। राजा और रानी दोनों स्वजनसह उसपर बैठ निरामय स्वर्गको चले गये।"

प्रभासखण्डमें वस्त्रापथके देखने योग्य स्थान भी वर्णित हैं—वस्त्रापथसे पश्चिम उज्ज्वल गिरि है। इस स्थानपर भीमने उत्कच नामक असुरको मारा था। अनेक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। तीर्थयात्रीको इस स्थानका कार्य चुका मङ्गलगिरिसे पश्चिम प्रवाहित गङ्गाके स्रोतमें नहाना चाहिये। फिर गङ्गेश्वरकी पूजा श्राद्धादि करना उचित है। उसके पीछे चारी चारी सिद्धेश्वरसे पश्चिम स्थित इन्द्रेश्वर, और मङ्गल गिरिसे पश्चिम यक्षवनस्थ यक्षेश्वरीको दर्शन कर पूजने का विधान है। पीछे रैवतक पहुंचना चाहिये। यहां रैवती और भीमकुण्डमें नहा दामोदरका दर्शन करना उचित है। दामोदरके दर्शनान्त भवनाथ आते हैं। वहां मृगी प्रभृतिमें नहा उज्जयन्त गिरिपर चढ़ना चाहिये। पीछे अम्बा देवी, हस्तिपद, रसकूपिका, तप्तकुण्ड, गोमुख, गङ्गा, प्रद्युम्न प्रभृतिके दर्शन बाद तीर्थयात्रीका कर्तव्य पुण्यकर्मादि होना उचित है।

जैन भी उज्जयन्तको अपना अतिपवित्र तीर्थ मानते हैं। प्रति वर्ष हजारों जैन यहां तीर्थ करने आते हैं। तीर्थङ्करोंके अनेक मन्दिर बने हैं। उनमें नेमिनाथका मन्दिर अति प्राचीन है। स्थानीय शिला-लिपिसे समझ पड़ता है—१२०८ ई०को इस मन्दिरका संस्कार हुआ था। दूसरा भी एक अति वृहत् प्राचीन मन्दिर है। उसे वस्तुपाल और तेजोपाल उभय भ्राताने बनवाया था। जैनशास्त्रके मतमें इस तीर्थका दर्शन करनेसे अक्षय स्वर्ग मिलता है। गिरनार देखो।

पूर्व समय इस उज्जयन्तमें बौद्ध भी तीर्थ करने आते थे। बौद्धराज अशोककी शिलालिपि इस गिरि-पर उत्कीर्ण थी। अनुशासनके पत्र पर ग्रीक और बाल्हिक राजगणका नाम मिलता है। ई० के ७ वें शताब्दमें चीन-परिव्राजक युएन-चुयङ्ग इस गिरिको देखने आये थे। उन्होंने इसके विषयमें लिखा है—'उज्जयन्त (जूह-चेन-तो) गिरिपर (बौद्धोंका) सङ्घाराम है। स्थानीय आश्रमादि पर्वतका पार्श्व खोदकर बनाये गये हैं। पर्वत वनसे परिपूर्ण है। कई नदी इसके शिखरसे निकली हैं। सिद्ध आते जाते हैं। आत्मज्ञानी ऋषि एकत्र रहते हैं।' किन्तु उक्त परिव्राजकका वर्णित सङ्घाराम अब देख नहीं पड़ता। कहते हैं—७२४ ई०में अरबोंने भारतके भीतर घुस उज्जैनको जीता था। यह सम्भवतः उज्जयन्त या गिरनारका जूनागढ़वाला पर्वत होगा। किन्तु अचनामेमें लिखा है—उमैयद अलवलीदके समय (७०५-७१५ ई०) कासिमके पुत्र मुहम्मदने जयपुर और उदयपुर विजय किया। इससे मालूम होता है—कदाचित् अरब मध्यभारतमें उज्जैनतक बढ़ आये थे। क्योंकि राजस्थानमें कर्नल टडने उज्जैनको चित्तौरका एक सूबा बताया है।

उज्जयिनी—मध्य भारतान्तर्गत मालवप्रान्तको प्राचीन राजधानी। यह शिप्रा नदीके दक्षिणकूल अक्षा० २३° ११′ १०″ उ० और द्राघि० ७५° ५०′ ४५″ पू० पर अवस्थित है। हिन्दीमें लोग उज्जैन कहते हैं। आजकल उज्जयिनी ग्वालियर राज्यके अधीन है। यहांसे बहुत अफीम बाहर भेजी जाती।

यह एक अति प्राचीन नगरी और अवन्तिराज्यको विख्यात राजधानी है। महाभारतके समय यह नगर

* अर्धाङ्ग योजन उज्जयन्तसे पूर्व स्वर्णरेखा नदीसे उज्ज्वल गिरि पर्यन्त विस्तृत है। यहां दामोदर, भवनाथ, शिव, स्वर्णरेखा, ब्रह्मकुण्ड, ब्रह्मेश्वर, सर्वेश्वर, कालमेघ, इन्द्रेश्वर, रैवतक, उज्जयन्त, रैवतीकुण्ड, कुम्भेश्वर, भीमकुण्ड और भीमेश्वर-तीर्थ है। (प्रभासखण्ड)

'अवन्ती' कहलाता था। (स्कन्दपु०) किन्तु पुराण-में उज्जयिनी नाम लिखा है। इसे विशाला और पुष्पकरण्डिनी भी लिखते हैं। अवन्ती देखो। पाश्चात्य प्राचीन ऐतिहासिक टलेमी और पेरिप्लस्ने इस शहरका ओजिनि (Ozene) नाम लिखा है। टले-मीका लेख है—उज्जैन तियास्तनकी राजधानी है। (Ptolemy, Geog. Bk. vii. c. 1. 53) 'तियास्तन' 'चष्टन' शब्दकी अपभ्रंश है। प्राचीन मुद्रा और शिलालिपिद्वारा समझ पड़ा है—पहले चष्टन नामक एक राजा मालव और धारके निकटस्थ प्रदेशपर राज्य करते थे। क्षत्रपवंश देखो।

पेरिप्लसमें भी लिखा है (भडोंच) बारिगजके पूर्व उज्जैन है। इस नगरमें राजा रहते थे। उज्जैनसे भाडारुचके व्यवहारको अकीक, बर्तन, तरह तरह मलमल, रूईका बढ़िया कपड़ा और नानाप्रकार उपादेय द्रव्य आता था।

प्राचीन कालमें अनेक राजचक्रवर्ती यहां सिंहासन पर बैठ राजत्व कर गये हैं। किन्तु दुःखका विषय है उनका प्राचीन इतिहास अतिअल्प ही मिलता है। सिंहलियोंके महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—चन्द्रगुप्तके पौत्र अशोकने अपने पिताके राजप्रतिनिधि-रूपसे कुछ कालतक उज्जैनमें राजत्व किया था। अशोकके पिता पाटलिपुत्रके राजा थे (ईसासे ३रा शताब्द पूर्व)। उनके प्रायः शताब्द पीछेपर (ई० से १५० वर्ष पूर्व) एक बौद्ध यति प्रायः ४०००० भिक्षुओंके समभिव्याहारमें उज्जयिनीस्थ दक्षिणगिरिमठसे सिंहल द्वीपको गये थे।

बहुकाल पीछे राजा विक्रमादित्यको इस नगरीका अधिकार मिला। उनके राजत्व कालमें कालिदास प्रभृति नवरत्नने उज्जयिनीको चमकाया था। पूर्व-कालीन इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर प्रभृति प्राचीन नगरोंकी भांति विक्रमादित्यके शासन चलाते समय इसकी भी समृद्धि रही। ई०के ७वें शताब्दमें चीना परिव्राजक हुएन्-सुयङ्ग उज्जयिनी (उ-शे-येन्-न) देखने आये थे। उस समय भी यह नगरी बहुतसे लोगोंकी वासभूमि रही। किन्तु नगरमें कहीं बौद्धधर्म और महायान उभय सम्प्रदायके बौद्ध रहते थे। हुएन्-सुयङ्गने उज्जयिनीके निकट ही अशोकराजनिर्मित एक स्तूप देखा था। किन्तु अब वह समृद्धि कहां! सबकी सब कालके गालमें चली गयी। प्राचीन उज्जयिनी अबतक भूगर्भमें गड़ी है। विशाला अपने समस्त रत्न को दुःखमें गंवाये अपना मुख देखा न सकी। इसीसे समझ पड़ता है—वसुन्धराकी गोदमें अन्तर्हित हो गई है। आजकल यह प्राचीन अवन्ती नगरी नहीं। उसीके ऊपर पासपर बसी एक नूतन नगरीको उज्जयिनी कहते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—प्राचीन अवन्तीको भूमिके मध्य निहित हुये कितना काल बीता। निहित भूमिसात् होनेका क्या कारण है? इसके सम्बन्धमें नाना मतभेद देख पड़ते हैं। वर्तमान उज्जयिनीसे दक्षिण समीप प्राचीन अवन्ती विलुप्त हुयी है। मट्टी खोदते खोदते प्रायः १०।१२ हाथ नीचे आज भी प्राचीन नगरका चिह्न मिलता है। भूगर्भमें पत्थरका बहुत भारी स्तम्भ गड़ा है।

इसका भी प्रमाण नहीं मिलता—वर्तमान नगर किसने बसाया था। अलाउद्दीन् खिलजीके समय उज्जयिनी मुसलमानोंके हाथ लगी। १२८५ से १३८८ ई० तक इसके शासनका भार एक राज-प्रतिनिधि पर रहा। पीछे वे स्वाधीन हो गये थे। १५३१ ई० तक स्वाधीन भावसे राजकार्य चला। उसके बाद गुजरातके नवाब बहादुर शाहने उज्जयिनीपर अधिकार किया था। १५०१ ई०को फिर अकबर बादशाहने इसे जीता। १६५८ ई०को उज्जयिनीके निकट ही औरंगजेब और दारा दोनों भाइयोंमें घोर-तर युद्ध हुआ था। १०८२ ई०को होलकरने इसके भी अनेक स्थान जला दिये। उसके बाद उज्जयिनी सिंधियाके हाथ गयी थी और उन्होंने परम सुखसे इसका राजत्व भोग किया।

उज्जयिनी एक पवित्र तीर्थस्थान है। इसे हिन्दू, बौद्ध, जैन प्रभृति भिन्न-भिन्न सम्प्रदायने अपना पुण्य-क्षेत्र माना है। स्कन्दपुराणके अवन्तिखण्डमें उज्ज-यिनी तीर्थका विस्तृत विवरण लिखा है।

यहां महाकाल नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है।

स्कन्द, मत्स्य, नारसिंह प्रभृति पुराणोंमें महाकाल-शिवलिङ्गका उल्लेख मिलता है। इसी शिवलिङ्गके कारण उज्जयिनीको पीठस्थान कहते हैं। महाकालके मन्दिरमें दिनरात घृतका प्रदीप जलता है। प्रति सोमवारको मन्दिरके सेवक पञ्चमुखी मुकुट उठा महा समारोहसे कुण्डाभिमुख जाते हैं। उस समय मन्त्र पाठ, वाद्यरव और साधारण कर्तृक जयजयकार हुआ करता है। दोनों पार्श्वसे पण्डे मयूरपुच्छका चमर ढालते चलते हैं। कुण्डपर पहुंचनेसे प्रधान पुरोहित मन्त्रपाठपूर्वक मुकुट धोते हैं। फिर महासमारोहसे मन्दिरमें उसे लाके महाकालको पहना देते हैं। उस समय महाकाल कौषेय वस्त्र और मणिमाणिक्यादिसे सज भक्तोंकी पूजा लेते हैं। महाकाल-मन्दिरके समस्त कार्यका भार तैलङ्गी ब्राह्मणों और वाहोरी नामके लोगोंपर न्यस्त है। इस लिङ्गका दूसरा नाम अनन्तकल्पेश्वर है।

महाकाल शिवका मन्दिर अतिवृहत् है। इस सुन्दर मन्दिरको देखनेसे प्राचीन हिन्दू शिल्पिगणके नैपुण्यका कितना ही परिचय मिलता है। देवालयकी रक्षा और महाकालकी सेवाकेलिये अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने वृत्ति बांध दी है। उसमें सेंधिया प्रायः ३००), देवासके राजा ५०) या ६०), गायकवाड़ १२०) और होलकर ६०) रु० मासिक देते हैं।

महाकालका मन्दिर बने तीन शत वत्सर हुये। फिरिस्ता नामक मुसलमानी इतिहासमें लिखा है—यह मन्दिर सोमनाथके समतुल्य है। इसके वृहत् स्वर्णस्तम्भ मणिमाणिक्यसे खचित थे। गर्भगृहके मध्य एक सामान्य आलोक जला देनेसे असामान्य हीरकमें प्रतिफलित होता है और समस्त मन्दिर मानो सूर्यालोककी भांति चमकने लगता है। असंख्य रत्नराजिपूर्ण मन्दिरकी अनुपम शोभा अब पूर्ववत देख नहीं पड़ती। अलतमास बादशाह समस्त मणिमाणिक्य रत्नादि लूट मन्दिरको विस्तर क्षति पहुंचा गये हैं। उस समय पण्डोंने अमेय यत्नसे लिङ्गमूर्तिको गुप्त भावमें दूसरी जगह हटाकर बचाया था। प्रायः शत वत्सर हुये रामचन्द्र बापू नामक एक व्यक्तिने मन्दिरको पुनः बनवाया था। आज भी इस मन्दिरका स्वर्णकलस दूरसे यात्रियोंके नयनोंको खींच लेता है।

उज्जयिनीमें केदारेश्वर नामक शिवका एक अपर क्षुद्र मन्दिर है। अवन्तिखण्डके मतमें इस शिवलिङ्गका दर्शन करनेसे महापुण्य मिलता है। लिङ्गकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें एक उपाख्यान भी है,—'किसी समय हिमशृङ्गवासी देवगणने महादेवसे जाकर कहा था—देवदेव! दारुण हिमने हमें बहुत घबरा दिया है। हम चिरदिन उसे सह नहीं सकते। आप वही उपाय करें, जिसमें हम इस दुःखसे दूर रहें।' उस पर महादेवने हिमालय पुछवा भेजा,—चिरकाल ऐसा दारुण हिम पड़नेका कारण क्या है?' हिमालयने प्रार्थनापूर्वक कहा—'हमारे ऊपर आप आकर रहिये। हम हमेशा आपकी पूजा करेंगे। आठ मास हिमका प्रभाव भी कम पड़ जायेगा।' महादेव गिरिशृङ्गपर एक उष्ण कुण्डके निकट जाकर टिके। वहां योगिऋषि केदारेश्वर नामसे उन्हें पूजने लगे। काल पाकर पृथिवी मानवके पापसे कलुषित हुई। इसलिये देवादिदेव महादेव भी अन्तर्हित हुये। एकदिन कतिपय ऋषि केदारेश्वर दर्शन करने गये थे। किन्तु केदारेश्वरको वहां न देख वे घबराये और रो रो कर आंसू बहाने लगे—'हाय! हमें वे हृदयेश्वर कहां देख पड़ेंगे! क्या दयापूर्वक वे हमें दर्शन न देंगे? परमदयालुके व्यतीत हमें कौन शान्ति प्रदान करेगा?' उसी समय देववाणी हुई—'महाकाल वनमें जावो। वहां शिप्रा नदीपर तुम्हें केदारेश्वरका दर्शन मिलेगा।' अनन्तर ऋषि उल्लासपूर्ण हृदयसे उज्जयिनीको आये थे। वे शिप्रा नदीके तीरपर पहुंच प्रेमभरसे देवादिदेवका स्तव करने लगे। उस समय स्रोतस्वतीके वक्षपर एक शिला उतरा उठी थी। ऋषिगणने उसीको केदारेश्वरका लिङ्ग समझ आदर से लिया। अनन्तर कुरुपाण्डवके युद्धमें उज्जयिनी पर भी पापने हाथ मारा। केदारेश्वर पुनः छिप गये। भीमने एक ऋषिसे परामर्श लिया था—अब केदारेश्वर किसप्रकार मिलेंगे? ऋषिने भीमसे पैर फैलाकर खड़े रहने और शम्भुके समक्ष हट उनके

'अवन्ती' कहलाता था। (स्कन्द पु॰) किन्तु पुराण-में उज्जयिनी नाम लिखा है। इसे विशाला और पुष्पकरण्डिनी भी लिखते हैं। अवन्ती देखिये। पाश्चात्य प्राचीन ऐतिहासिक टलेमी और पेरिप्लस्‌ने इस शहरका ओजिनि (Ozene) नाम लिखा है। टलेमीका मत है—उज्जेन तियास्तनकी राजधानी है। (Ptolemy, Geog. Bk. vii. c. 1. 53) 'तियास्तन' 'चष्टन' शब्दको अपभ्रंश है। प्राचीन मुद्रा और शिलालिपिद्वारा समझ पड़ा है—पहले चष्टन् नामक एक राजा मालव और भारतके निकटस्थ प्रदेशपर राज्य करते थे। क्षत्रपवंश देखो।

पेरिप्लस्‌में भी लिखा है (भड़ोच) बारिगजाके पूर्व उज्जेन है। इस नगरमें राजा रहते थे। उज्जेनसे भारतवर्षके व्यवहारको अकीक, संग, उत्कृष्ट मलमल, रूईका बढ़िया कपड़ा और नानाप्रकार उपादेय द्रव्य आता था।

प्राचीन कालमें अनेक राजचक्रवर्ती यहां सिंहासन पर बैठ राजत्व कर गये हैं। किन्तु दुःखका विषय है उनका प्राचीन इतिहास अतिअल्प ही मिलता है। सिंहलियोंके महावंश नामक बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—चन्द्रगुप्तके पौत्र अशोकने अपने पिताके राजप्रतिनिधि-रूपसे कुछ कालतक उज्जेनमें राजत्व किया था। अशोकके पिता पाटलिपुत्रके राजा थे (ईसाके ३रा शताब्द पूर्व)। उसके प्रायः शताब्द बीतनेपर (ई॰ से १५० वर्ष पूर्व) एक बौद्ध यति प्रायः ४०००० शिष्योंके समभिव्याहारमें उज्जयिनीस्थ दक्षिण गिरिमठसे सिंहल द्वीपको गये थे।

बहुकाल पीछे राजा विक्रमादित्यको इस नगरीका अधिकार मिला। उनके राजत्व कालमें कालिदास प्रभृति नवरत्नने उज्जयिनीको चमकाया था। पूर्व-कालीन इन्द्रप्रस्थ, हस्तिनापुर प्रभृति प्राचीन नगरीको भांति विक्रमादित्यके शासन चलाते समय इसकी भी समृद्धि रही। ई॰के ७वें शताब्दमें चीना परिव्राजक युयन्-चुयङ्ग उज्जयिनी (उ-शे-येन्-न) देखने आये थे। उस समय भी यह नगरी बहुतसे लोगोंकी वासभूमि रही। किन्तु हुएनके कथनसे बौद्धधर्म और महायान सम्प्रदायके बौद्ध घटते थे। युयन्-चुयङ्गने उज्जयिनीके निकट ही अशोकराजनिर्मित एक स्तूप देखा था। किन्तु अब वह समृद्धि कहां! नगरी अब कालके गालमें चली गयी। प्राचीन उज्जयिनी पर्यन्त भूगर्भमें गाड़ी है। विधाता अपने समस्त रत्न को दुःखमें छिपाये अपना मुख देखा न सकी। इसीसे समझ पड़ता है—वसुन्धराकी गोदमें अन्तर्हित हो गई है। आजकल यह प्राचीन अवन्ती नगरी नहीं। इसीके उत्तर पार्श्वपर बसी एक नूतन नगरीको उज्जयिनी कहते हैं। इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता—प्राचीन अवन्तीको भूमिके मध्य निहित हुये कितना काल बीता। निश्चित भूमिसात् होनेका क्या कारण है? इसके सम्बन्धमें नाना मतभेद देख पड़ते हैं। वर्तमान उज्जयिनीसे दक्षिण अर्ध प्राचीन अवन्ती विलुप्त हुयी है। यहां खोदने खोदते प्रायः १०।१२ हाथ नीचे आज भी प्राचीन नगरका चिह्न मिलता है। भूगर्भमें प्रस्तरका बहुत अभङ्ग स्तम्भ गाड़ा है।

इसका भी प्रमाण नहीं मिलता—वर्तमान नगर किसने बसाया था। अलाउद्दीन् खिलजीके समय उज्जयिनी मुसलमानोंके हाथ लगी। १२८५ से १३८८ ई॰ तक इसके शासनका भार एक राजप्रतिनिधि पर रहा। पीछे वे स्वाधीन हो गये थे। १५३१ ई॰ तक स्वाधीन भावसे राजकार्य चला। उसके बाद गुजरातके नवाब बहादुर शाहने उज्जयिनीपर अधिकार किया था। १५७१ ई॰को फिर अकबर बादशाहने इसे लिया। १६५८ ई॰को उज्जयिनीके निकट ही औरंगजेब और दारा दोनों भाइयोंमें घोरतर युद्ध हुआ था। १७८२ ई॰को होलकरने इसमें अनेक स्थान जला दिये। उसके बाद उज्जयिनी सिंधियाके हाथ लगी थी और उन्होंने परम सुखसे उसका राजत्व भोग किया।

उज्जयिनी एक पवित्र तीर्थस्थान है। इसे हिन्दू, बौद्ध, जैन प्रभृति भिन्न-भिन्न सम्प्रदायके बड़ा पुण्य-क्षेत्र मानते हैं। स्कन्दपुराणके अवन्तिखण्डमें उज्जयिनी तीर्थका विस्तृत विवरण लिखा है।

यहां महाकाल नामक शिवलिङ्ग विद्यमान है।

स्कन्द, मत्स्य, नारसिंह प्रभृति पुराणोंमें महाकाल-शिवलिङ्गका उल्लेख मिलता है। इसी शिवलिङ्गके कारण उज्जयिनीको पीठस्थान कहते हैं। महाकाल-के मन्दिरमें दिनरात घृतका प्रदीप जलता है। प्रति सोमवारको मन्दिरके सेवक पञ्चमुखी मुकुट उठा महा समारोहसे कुण्डाभिमुख जाते हैं। उस समय मन्त्र पाठ, वाद्यरव और साधारण कण्ठ के जयजयकार हुआ करता है। दोनों पार्श्वसे अच्छे मयूरपुच्छका चमर ढालते चलते हैं। कुण्डपर पहुंचनेसे प्रधान पुरोहित मन्त्रपाठपूर्वक मुकुट धोते हैं। फिर महासमारोहसे मन्दिरमें उसे लाके महाकालको पहना देते हैं। उस समय महाकाल कौषेय वस्त्र और मणिमाणिक्यादिसे सज भक्तोंकी पूजा लेते हैं। महाकाल-मन्दिरके समस्त कार्यका भार तैलङ्गी ब्राह्मणों और बाहोरी नामके लोगोंपर न्यस्त है। इस लिङ्गका दूसरा नाम अनन्त-कल्पेश्वर है।

महाकाल शिवका मन्दिर अतिबृहत् है। इस सुन्दर मन्दिरको देखनेसे प्राचीन हिन्दू शिल्पिगणके नैपुण्यका कितना ही परिचय मिलता है। देवालयकी रक्षा और महाकालकी सेवाकेलिये अनेक सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने वृत्ति बांध दी है। उसमें सेंधिया प्रायः २००), देवासके राजा ५०) या ६०), गायकवाड़ १२०) और होलकर ६०) रु॰ मासिक देते हैं।

महाकालका मन्दिर बने तीन शत वत्सर हुये। फिरिस्ता नामक मुसलमानी इतिहासमें लिखा है—यह मन्दिर सोमनाथके समतुल्य है। इसके बृहत् स्वर्णस्तम्भ मणिमाणिक्यसे खचित थे। गर्भगृहके मध्य एक सामान्य आलोक जला देनेसे असामान्य हीरकमें प्रतिफलित होता है और समस्त मन्दिर मानो सूर्यालोककी भांति चमकने लगता है। असंख्य रत्न-राजिपूर्ण मन्दिरकी अनुपम शोभा अब पूर्वमत देख नहीं पड़ती। अलतमास बादशाह समस्त मणिमाणिक्य रत्नादि लूट मन्दिरको विस्तर क्षति पहुंचा गये हैं। उस समय पण्डोंने अमेय यत्नसे लिङ्गमूर्तिको गुप्त भावमें दूसरी जगह हटाकर बचाया था। प्रायः शत वत्सर हुये रामचन्द्र बापू नामक एक व्यक्तिने मन्दिरको पुनः बनवाया था। आज भी इस मन्दिरका स्वर्णकलस दूरसे यात्रियोंके नयनोंको खींच लेता है।

उज्जयिनीमें केदारेश्वर नामक शिवका एक अपर क्षुद्र मन्दिर है। अवन्तिखण्डके मतमें इस शिवलिङ्गका दर्शन करनेसे महापुण्य मिलता है। लिङ्गकी उत्-पत्तिके सम्बन्धमें एक उपाख्यान भी है,—'किसी समय हिमश्रृङ्गवासी देवगणने महादेवसे जाकर कहा था—देवदेव! दारुण हिमने हमें बहुत घबरा दिया है। हम चिरदिन उसे सह नहीं सकते। आप वही उपाय करें, जिसमें हम इस दुःखसे दूर रहें।' उस पर महादेवने हिमालय पुछवा भेजा,—चिरकाल ऐसा दारुण हिम पड़नेका कारण क्या है?' हिमा-लयने प्रार्थनापूर्वक कहा—'हमारे ऊपर आप आकर रहिये। हम हमेशा आपकी पूजा करेंगे। आठ मास हिमका प्रभाव भी कम पड़ जायेगा।' महादेव गिरिश्रृङ्गपर एक उष्ण कुण्डके निकट जाकर टिके। वहां योगिऋषि केदारेश्वर नामसे उन्हें पूजने लगे। काल पाकर पृथिवी मानवके पापसे कलुषित हुई। इसलिये देवादिदेव महादेव भी अन्तर्हित हुये। एकदिन कतिपय ऋषि केदारेश्वर दर्शन करने गये थे। किन्तु केदारेश्वरको वहां न देख वे घबराये और रो रो कर आंसू बहाने लगे—'हाय! हमें वे हृदयेश्वर कहां देख पड़ेंगे! क्या दयापूर्वक वे हमें दर्शन न देंगे? परमदयालुके व्यतीत हमें कौन शान्ति प्रदान करे-गा?' उसी समय देववाणी हुई—'महाकाल वनमें जाओ। वहां शिप्रा नदीपर तुम्हें केदारेश्वरका दर्शन मिलेगा।' अनन्तर ऋषि उल्लासपूर्ण हृदयसे उज्ज-यिनीको आये थे। वे शिप्रा नदीके तीरपर पहुंच प्रेमभरसे देवादिदेवका स्तव करने लगे। उस समय स्रोतस्वतीके वक्षपर एक शिला उभरा उठी थी। ऋषिगणने उसीको केदारेश्वरका लिङ्ग समझ आदर ले लिया। अनन्तर कुरुपाण्डवके युद्धमें उज्जयिनी पर भी पापने हाथ मारा। केदारेश्वर पुनः छिप गये। भीमने एक ऋषिसे परामर्श लिया था—अब केदारेश्वर किसप्रकार मिलेंगे। ऋषिने भीमसे पैर फैलाकर खड़े रहने और राज्यके समस्त हल उनके

भीमसेनको निकालनेका आदेश दिया। भीमने वैसाही किया था। समस्त रूप आगे आगे निकल गये। अन्तमें एक रूप किसीप्रकार आगे न बढ़ा। भीम उसे ज्योंही पकड़नेको चले, त्योंही रूपधारी केदारेश्वर भूमें मग्न हो गये। कुछदिन पीछे वे हिमालय-पर आविर्भूत हुये। उनका मस्तक हिमालय पर पहुंचा, किन्तु देह उज्जयिनीमें ही रहा।

इस नगरमें असंख्य भैरवकी मूर्तियां और भैरवके मन्दिर विद्यमान हैं। शिप्रा नदीके दक्षिण कूलपर भैरवगढ़ है। आकार प्रकारसे दुर्ग-जैसा बना है। शिप्राके किनारे-किनारे अर्धक्रोश विस्तृत गढ़के प्राचीर और बड़े बड़े द्वार खड़े हैं। पश्चिम द्वारसे भैरवगढ़में घुसनेपर वामदिक् एक वृहत् देवालय देख पड़ता है। इसी देवालयमें कालभैरवकी मूर्ति प्रति-ष्ठित है। मूर्ति बहुत प्राचीन और पत्थरकी अपेक्षा श्रेष्ठ है। यहांके लोग कहते हैं—कालभैरव ही उज्ज-यिनीकी रक्षा करते हैं। माधवजी सेंधियाने काल-भैरवका मन्दिर बनवा दिया है।

उज्जयिनीमें दशाश्वमेध घाटके निकट 'अङ्कपात' नामक एक तीर्थ है। यह स्थान वैष्णवगणको अति प्रिय है। वैष्णव कहते हैं—यहां कृष्ण और बल-राम सान्दीपनी मुनिके पास पढ़ने आये थे। जिस स्थानपर उन्होंने प्रथम अङ्कपात लिखना आरम्भ किया, उसीका नाम लोगोंने 'अङ्कपात' रख लिया। अङ्क-पातमें विष्णुकी विराटरूप मूर्ति विद्यमान है। मल्हार राव—विठोबाके समयमें रङ्गराव आप्टेने अङ्कपातका वर्तमान मन्दिर बनवाया था। अहल्या बाईकी निर्दिष्ट वृत्तिसे यहां प्रत्यह १० ब्राह्मण भोजन करते हैं। यहांसे थोड़ी दूर दामोदर, गोमती, विष्णुसागर प्रभृति कुण्ड विद्यमान हैं।

उपरोक्त मन्दिरादि व्यतीत सङ्गमेश्वर, सहस्र-धनुकेश्वर, एकानेत्र, चामुण्डा, सरस्वती प्रभृति देवस्थान भी पवित्र हैं। अवन्तिखण्डमें २४ माता और ३० देवकी पूजाका उल्लेख है। आजकल केवल लक्ष्मी, सरस्वती और अन्नपूर्णा मूर्तिकी अर्चना होती है।
(अवन्तीखण्ड [illegible] देखो)

सरस्वती देवीका मन्दिर अति प्राचीन है। इसमें [illegible] नृसिंहकी मूर्तियें हैं। विक्रमादित्य यहां आकर देवीको पूजते थे।

उज्जयिनीकी कालियदही देखनेकी चीज है। वृन्दावनके कालियदहमें जैसे श्रीकृष्णका मन्दिर, इस कालियदहीमें भी वैसे ही देवस्थल दृष्टिगोचर होता है। कालियदहीके मध्यस्थलमें दीर्घाकार [illegible] जल-प्रासाद विद्यमान है। पहिले इस स्थानपर भी विष्णु-मन्दिर था। 'गियास सिकन्दरी' नामक मुसलमानी [illegible] समय इस जलप्रासादको मन्दिरोंसे बनवाया था। किन्तु देखनेसे गठनसे ही प्रतीत पड़ता है—यह प्रसाद अधिक प्राचीन है। कालिदासने 'जलयन्त्रमन्दिर'का उल्लेख किया है—

"निशा: शशाङ्कक्षतनीलराजय: क्वचिद्विचित्रं जलयन्त्रमन्दिरम्।"

(ऋतुसंहार १।२)

अनुमानसे कालिदासका जलयन्त्रमन्दिर यह जलप्रासाद ही है। ऐसा उत्तरसे मालूम पड़ेगा—विक्रमादित्यके समय भी यह जलप्रासाद था। सम्भ-वत: राजा विक्रमादित्य ग्रीष्मकालपर आकर जल-प्रासादमें निवास करते थे। यहीं कालिदासने ग्रीष्म ऋतुका ऋतुसंहारमें लिखा है। आजकल न होते भी जानते हैं, कि पश्चात् जलप्रासादके चारों ओर छिद्रमें ही फौवारे छूटते थे। निर्माणकी प्रणाली अति अद्भुत है। जिस द्रव्यादिसे प्रासाद बना है, वह सर्वांशमें उत्कृष्ट है। क्योंकि उसके आजतक एक ईंट भी नहीं बिगड़ता। प्राचीरमें सर्वोपरि श्रीकृष्णकी मूर्ति खुदी है। उसके चारों ओर गौओं छोटे छोटे दण्डाय-मान हैं। दूरसे दृश्य बहुत ही सुन्दर देख पड़ता है।

जलप्रासादमें यातायातके लिये पुल बंधा है। पूर्व इस स्थानपर (अवन्तिखण्डोक्त) ब्रह्मकुण्ड था। मालूम पड़ता है—ब्रह्मकुण्डका ही नाम कालियदही पड़ा है। क्योंकि यह नाम अवन्तिखण्डमें नहीं मिलता। किन्तु अबुलफज़ल प्रभृति मुसलमान ऐतिहासिकने कालियदहीको लिखा है। सर टोमस रो जहांगीर बादशाहके साथ यहां आये थे।

कालियदहीके निकटका घाट अति मनोहर स्थान

है। स्थानीय सरोवरमें अनेक आश्चर्य घटना लगी रहती है। सुनते—सरोवरपर नागकन्या मध्य मध्य पहुंचती और उपरिभाग नारी तथा निम्नभाग मत्स्यकी मूर्ति-जैसा रखती हैं।*

यहां जैनोंके भी अनेक मन्दिर देख पड़ते, जिनमें १० श्वेताम्बरी और ८ दिगम्बरी हैं। कितने ही जैनमठ आजकल हिन्दुओंके अधीन हैं। उनमें जयरेश्वर और जैनभञ्जनीश्वर ही प्रधान हैं।

यहां गुजराती ब्राह्मण अधिक रहते हैं। रामस-नेही, दादू, कबीरपन्थी, रामात्, रामानुज प्रभृति सम्प्रदायके लोग भी विद्यमान हैं। प्रायः प्रति हृदके तलपर सतीस्तम्भ खड़ा है। इस प्रस्तरखण्ड देखनेसे ही पहचानते—सतीको कितना मानते कितना जानते हैं। ब्राह्मणक्षत्रियादिके वर्णक्रमसे प्रस्तरपर स्त्री पुरुषकी मूर्ति बनती है। ब्राह्मणके गो और क्षत्रियके परिचयके लिये अश्व प्रभृति अङ्कित होता है। स्थानीय धार्मिक रमणियां सतीस्तम्भको पूजा करती हैं।

नगरसे दक्षिण पूर्व दिक् लोग-शहीद नामक एक पर्वत है। लोग कहते—इसीके नीचे राजा विक्रमादित्यके बत्तीस सिंहासन प्रोथित हैं। पर्वत पर चढ़नेसे नगरको प्राकृतिक शोभा देख पड़ती है। राजा विक्रमादित्यके समय उज्जयिनीमें मानयन्त्र रहा। भारतके प्राचीन भौगोलिक उक्त यन्त्र द्वारा उज्जयिनीसे ही प्रथम याम्योत्तरवृत्त खींचते थे। अकबरके पितामह बाबरने इस यन्त्रकी बात लिखी है। किन्तु आजकल इस यन्त्रका वृत्तान्त कोई बता नहीं सकता। समझ पड़ता—प्राचीन उज्जयिनीके साथ यह भी लुप्त हो गया। फिर आज भी यहां जयसिंहका मानमन्दिर विद्यमान है, किन्तु अवस्था अच्छी नहीं। कौन उसको उद्धार करेगा! जयसिंह देखो।

प्रत्नतत्त्वविद्के देखने योग्य भी अनेक वस्तु हैं। यहां ग्रीक, वाह्लिक, शक और देशीय नरपतिगणके समयकी प्रचलित प्राचीन मुद्रा मिलती हैं। आज भी प्राचीन उज्जयिनीको वनस्थली ढूंढते ढूंढते हीरा, अकीक, स्वर्ण तथा रौप्यमय मुद्रा और लोगयका अलङ्कार मध्य मध्य हाथ लग जाते हैं। हम समझते—इसीसे लोग उज्जयिनीको 'रोज़गारका सदाव्रत' कहते हैं।

नगरके पार्श्वपर राजा भर्तृहरिको गुहा है। उन्होंने संसारत्यागके पश्चात् इसीका आकर आश्रय पकड़ा था। कोई कोई कहता—इसी स्थानपर भर्तृहरिका प्रासाद था। किन्तु यह सम्भव नहीं। गुहामें सीधे खड़े होनेपर छतसे शिर टकराता है। तीन दिक् स्तम्भ लगे हैं। उनपर अस्पष्ट मूर्ति खुदी हैं। स्थान स्थान पर शिवलिङ्ग पड़े, जिनमें केदारेश्वर सबसे बड़े हैं। केवल उन्हींको पूजा होती है। वामदिक् अन्तर्गुहामें असितप्रस्तरकी दो मूर्तियां हैं। एक कुछ ऊपर और दूसरी उसीके नीचे लगी है। यहां लोग कहते ऊपर गोरखनाथ और नीचे उनके शिष्य भर्तृहरि हैं।

उज्जर (हिं०) उज्ज्वल देखो।

उज्जानक—काश्मीरके उत्तरस्थित एक जनपद। आजकल इसे ख्यात कहते हैं। महाभारतके मतमें उज्जानक एक पवित्र तीर्थ है।

"उज्जानक उपस्पृश्य आर्ष्टिषेणस्य चाश्रमे।
पिङ्गायाश्चाश्रमे स्नात्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते॥" (अनुशासन २।३०)

पूर्वकाल यह जनपद वितस्ता नदीके पश्चिम तटतक विस्तृत था। मार्कण्डेयपुराणमें इसका नाम उल्लिहान लिखा है—

"वैदमत्स्या किराताश्चाः साम्बलोपान्तका शकाः।
उल्लिहानलदा मन्युका पोन्हक्लाम्बया खशाः॥" (५८)

महाभारतमें कहा है—कार्तिकेय और वशिष्ठने इस स्थानपर शान्ति पायी थी। इसके पीछे कुशवान् नामक ह्रद है। उसमें प्रचुर कुशेशय उपजता है।

(वन १३० अ०)

पूर्व समय इस स्थानपर बौद्ध धर्म भी बहुत प्रबल रहा। फाहियान, सुङ्गयून्, युयन् चुयङ्ग प्रभृति चीना परिव्राजकोंने देखकर इस स्थानको बौद्धधर्म-सम्पर्कीय सकल कथा लिखी है। सुङ्गयून्ने कहा—यह देश उत्तरमें सुङ्लिं पर्वत और दक्षिणमें भारतसे मिलित है। जलवायु उष्ण और मनोरम है। राज्य प्रायः शत कोश विस्तृत है। अधिवासी और उत्पादित

* Journal As. Soc Bengal, Vol. vi. p. 820.

इक्षु बहुत है। भूमि अतिशय उर्वरा है। इसी जगह शिवी (शिवक) राजाने अपने पुत्रको भिक्षा-स्वरूप दे डाला था। फिर बोधिसत्त्वने निज देह व्याघ्रीको खानेके लिये सौंपा। राजा शाक्यवंशीय परम धार्मिक और प्रायः सब लोग: बुद्धदेवकी उपासना करनेवाले हैं। जुलाई मास शीतल रहती है। मध्याह्न कालमें ये सामान्य देखते हैं। स्थानीय लोग यथाकाल नदीमें बाँध बाँधकर नहीं रोकते। इससे भूमिकी उर्वरा शक्ति बढ़ती है। गन्धारराज्य सकल नदी बाँध बाँधने और उसम-यमें बुद्ध देवकी पूजा करने लगते हैं। उद्यानक पहुं-चने पर बुद्धदेव प्रथम नागराजके घर गये थे। किन्तु नागराज उनसे क्रुद्ध हो पानी बरसाने लगे। वृष्टिसे बुद्धकी संघाटी भींग गयी थी। पानी बन्द होनेसे वे एक पत्थर पर बैठे। इसी जगह उन्होंने अपना कषाय वसन सुखाया था। वह शुष्क कषाय आज भी उस पत्थरके निकट पड़ा और यह बात बौद्धोंमें भी वैसा ही चला है। बुद्धके उपवेशन-स्थानपर स्मरणार्थ एक मठ बना है। राजधानीसे प्रायः तीन कोस उत्तर पर्वतपर बुद्धकी पादुकाका चिह्न अङ्कित है। वहां भी मठ उठ गया है। नगरसे उत्तर ताराका मन्दिर है। यह मन्दिर अतिवृहत् और उच्च है। इसमें बौद्ध देवदेवी और उपासकगणकी मूर्तियां हैं। राजधानीसे दक्षिणपूर्वको चार दिन चलने पर एक पार्वतीय प्रदेश मिलता है। यहां बुद्ध तपस्या करते थे। इसी स्थानपर उन्होंने क्षुधार्त व्याघ्रीको अपने देहका मांस खिलाया था। इस स्थानमें [illegible] बचपना है। राजधानीसे प्रायः ८८ कोस दूर एक तीर्थ है। यहीं जगह बुद्धने मित्रोंके लिये अपने देहका चर्म उतार लिया। इस पवित्र स्थानको रक्षाके लिये राजा अशोकने एक बृहत् मन्दिर बनवा दिया था।

यूथन्-चुयङ्के समयमें हिन्दूकुशके दक्षिणस्थ समस्त पार्वतीय प्रदेश और चित्रालसे सिन्धु नदी पर्यन्त दरद राज्य उद्यानक देश कहाता था। उद्यान्य देशकी परिधि ५००० लि (प्रायः २१० कोस) परिमित और गिरिगुहा तथा उपत्यकादि शोभित है। यह समतल भूमिपर उपत्यका और जलाशय है। यहां नानाप्रकार शस्य पकता, किन्तु प्रचुर फल नहीं फलता। इक्षु और द्राक्षा विस्तार होता है। भूमिसे लोह और स्वर्ण निकलता है। शीत अपने कष्टके लिये अति प्रसिद्ध है। शीतोष्ण समान रहता है। वर्षा यथाकाल पड़ती है। अधिवासी मृदुस्वभाव, भावुक और चतुर हैं। ये विद्यानुरागी होते भी कार्यतः विद्याके अभ्यास रखते हैं। सकल ही प्रायः इन्द्रजाल सीखते हैं। अनेक व्यक्ति महायान सम्प्रदाय-युक्त हैं। हीनयान सम्प्रदाय पांच प्रकारका है—सर्वास्तिवादी, धर्मगुप्त, महीशासक, काश्यपीय और महासाङ्घिक। भाषा अधिकांश भारतवर्ष जैसी है। लिखन-प्रणाली भी वैसी ही है। यहां ४।५ प्रधान नगर हैं। राजा मङ्गली नगरीमें रहते हैं। यह राजा शाक्य-वंशीय हैं। स्थानीय शुभवस्तु (स्वात) नदीके उभय तीरपर प्रायः १४०० सङ्घाराम बने हैं। मङ्गली-नगरीकी चारों दिक् असंख्य बौद्ध कीर्तियां देख पड़ती हैं। हिन्दुओंके भी १० देवमन्दिर बने हैं।

इस प्रदेशमें मैत्रेयबुद्धकी अति प्रकाण्ड मूर्ति रही। फाहियानने लिखा है—यह मूर्ति बुद्धके निर्वाणसे ३०० वर्ष पीछे (अशोकराजके समय) बनी थी। यूथन् चुयङ्गने यही मूर्ति १०० फीट ऊंची पायी।

फाहियान तथा सुंयुन 'उचङ्ग' और यूथन् चुयङ्गने इस स्थानका नाम 'उचङ्-न' लिखा है। जु' ली, कनिंहाम् प्रभृति युरोपीयोंने चीना परिव्राजकोक्त शब्दका संस्कृत नाम 'उद्यान' ठहराया है। किन्तु यह मत भ्रमपूर्ण समझ पड़ता है। क्योंकि उस नामका संस्कृत 'उद्यान' नहीं—'उद्यानक' होना ही अधिक सम्भव है। विशेषतः महाभारत पुराणादि और चीना परिव्राजकके लिखित स्थानका अवस्थानमें सामञ्जस्य देख रखनेसे सहज ही समझ पड़ता—इसमें कोई भेद नहीं, सिर्फ देशमें उच्चारण तथा लिखन-प्रणालीके भेदसे भिन्न आकार बन गया है।

वर्तमान पञ्जकोरा, बिजावर, स्वात और बुनेर प्रदेश प्राचीन उद्यानक राज्यके अन्तर्गत रहा। अन्य देखो।

२ महर्षि अङ्गिराके आश्रमके निकटवर्ती एक पु-

विस्तीर्ण वालुकापूर्ण समतल मरुभूमि। (हरिवंश ११ अ०) इस मरुस्थलके मध्यसे नलिनी नदी बहती है। (मत्स्यपु० १२२ अ०)

उज्जालक, उद्दालक देखो।

उज्जासन (सं० क्ली०) उत्-जस्-णिच्-ल्युट्। मारण, वध, क़त्ल, जानका लेना।

उज्जिघ्र (सं० त्रि०) उत्-घ्रा-श। आघ्राणकर्ता, सूंघनेवाला।

उज्जिति (सं० स्त्री०) उत्-जि-क्तिन्। १ उत्कृष्ट जय, गहरी फतेह। २ वाजसनेयसंहिताका मन्त्रविशेष। 'उज्जितिमनुपहतविघ्ने न हवि: स्तोकरणरूपमुत्कृष्टजयम्।' (वेददीपे महीधर)

उज्जिहान, उद्दालक देखो।

उज्जिहाना (सं० स्त्री०) एक प्राचीन नगरी। भरत राजगृहसे अयोध्या जाते समय इस नगरीमें पहुंचे थे। उस समय उज्जिहाना प्रियक वृक्षके उपवनसे शोभित रही।

"तत्र रम्ये वने वासं कृत्वासौ प्राङ्मुखो ययौ।
उद्यानमुज्जिहानायाः प्रियका यत्र पादपाः॥" (रामायण २।७१।१२)

उज्जिहीर्षा (सं० स्त्री०) ग्रहण करनेकी इच्छा, पकड़ लेनेकी ख़ाहिश।

उज्जीविन् (सं० त्रि०) उत्-जीव-णिनि। १ पुनर्वार जी उठनेवाला, जो दो बारा ज़िन्दा हो गया हो। (पु०) २ काकराज मेघवर्णके सभासद।

उज्जृम्भ (सं० त्रि०) उत्-जृभि-घञ्। १ प्रफुल्ल, प्रस्फुटित, फूला या खिला हुआ। २ उद्घाटित, खुला।

उज्जृम्भण (सं० क्ली०) उत्-जृम्भ् भावे ल्युट्। मुखविकाश, जमहाई।

उज्जृम्भित (सं० त्रि०) उत्-जृभि-क्त। १ विकसित, शिगुफ़्ता, खिला हुआ। २ वेष्टित, घिरा हुआ। (क्ली०) ३ चेष्टा, कोशिश। ४ उज्जृम्भण, जमहाई।

उज्जेष (सं० पु०) उत्-जिष् भावे घञ्। १ उन्नति, तरक्की, बढ़ती। (त्रि०) भावे अच्। २ उत्कृष्ट जययुक्त, जो ख़ूब जीता हो।

उज्जेषिन् (सं० त्रि०) उत्-जिष्-णिनि। उत्कृष्ट जयशील, ख़ूब फतेह करनेवाला।

उज्जेन—उज्जयिनी देखो।

उज्ज्यार (सं० त्रि०) आरोपित-ज्या, कमान् टोनी कर देनेवाला। 'उज्ज्यधन्वा आरोपितज्यधनुष्काः।' (कात्यायनश्रौतसूत्रभाष्ये कर्काचार्य)

उज्ज्वल (सं० त्रि०) उत्-ज्वल्-अच्। १ दीप्तिमान, चमकीला। २ विमल, साफ़। ३ विकाशी, खिला हुआ। ४ ज्वलन्त, जलता हुआ। ५ सुन्दर, ख़ूबसूरत। (पु०) ६ शृङ्गाररस, मुहब्बत, प्यार। (क्ली०) ७ स्वर्ण, सोना। ८ धान्यभेद, एक अनाज।

उज्ज्वलता (सं० स्त्री०) १ दीप्ति, चमक। २ सुन्दरता, ख़ूबसूरती।

उज्ज्वलत्व (सं० क्ली०) उज्ज्वलता देखो।

उज्ज्वलदत्त (सं० पु०) एक विख्यात पण्डित। इन्होंने उणादिसूत्रकी वृत्ति बनायी थी। वृत्तिमें प्राचीन कोष और स्थान-स्थानपर प्रमाणरूप प्राचीन काव्य उद्धृत हैं। कह नहीं सकते—उज्ज्वलदत्त किस समय विद्यमान रहे। किन्तु ११११ ई०को महेश्वरने जो कोष रचा, उसे इन्होंने अपनी वृत्तिमें प्रमाणस्वरूप रखा है। फिर १४३१ ई०को रायमुकुटने अपनी अमरकोषकी टीकामें उज्ज्वलदत्तका नाम लिखा। ऐसा होनेसे समझ पड़ता—सम्भवतः वे ई०के १२वें या १३वें शताब्द विद्यमान रहे।

उज्ज्वलन (सं० क्ली०) उत्-ज्वल् भावे ल्युट्। १ उद्दीप्ति, चमक। २ निर्मलता, सफ़ाई।

उज्ज्वला (सं० क्ली०) १ दीप्ति, चमक। २ जगतीछन्दःका एक भेद। यह बारह अक्षरकी रहती, और दो नगण, एक भगण तथा एक रगण रखती है। ३ कुमरिच, लालमिर्च।

उज्ज्वलित (सं० त्रि०) दीप्तिमान्, रोशन, चमकनेवाला, जो झलकाया गया हो।

उज्झ्—तुदा० पर० सक० सेट्। यह त्याग और विराग अर्थमें लगता है।

उज्झ (सं० पु०) उज्झ्-भ-अच्। त्याग, विसर्जन, छूट, भूल। (मनु ११।१८)

उज्झक (सं० पु०) १ मेघ, बादल। २ तापस, फ़क़ीर।

उज्झटा (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुंई आंवला।

उजड्ड (हिं॰ वि॰) असभ्य अक्खड़, बेवक़ूफ़, जिसे कुछ भी ज्ञान न हो।

उज्झन (सं॰ क्ली॰) उज्झ-ल्युट्। परित्याग, छोड़ाई। (त्रिकाण्ड)

उज्झित (सं॰ त्रि॰) उज्झ-क्त। १ त्यक्त, वर्जित, छोड़ा हुआ। २ उपशमित, दबाया हुआ, जो रोक दिया गया हो।

उज्यारा, उजाला देखो।

उज्यारी, उजाली देखो।

उज्यान, उद्यान देखो।

उज़्र (अ॰ पु॰) १ आपत्ति, एतराज़। २ हीला, बहाना। "तुमको उज्र है, हमको उज्र नहीं।" ([illegible]) ३ विनय, प्रार्थना, मारूज़, निवेदन।

उज़्रक़वी (अ॰ स्त्री॰) प्रबल आपत्ति, ज़ोरदार वजह।

उज़्रक़ानूनी (अ॰ स्त्री॰) न्यायसङ्गत आपत्ति, क़ानूनका उज्र।

उज़्रख़्वाही (अ॰ स्त्री॰) १ कर्मादि क्रियामें उपस्थित हो न सकनेकी प्रार्थना। २ अनुमोदन, सम्यक्-निवेदन, मा'ज़रतख़्वाही।

उज़्रज़मीनी (अ॰ स्त्री॰) ज़मीनकी आपत्ति, भूमिकी वजह।

उज़्रज़ाती (अ॰ स्त्री॰) व्यक्तिगत आपत्ति, ज़ातकी वजह।

उज़्रजिस्मानी (अ॰ स्त्री॰) शारीरिक आपत्ति, शरीरकी वजह।

उज़्रदार (अ॰ पु॰) आपत्ति उठानेवाला, जो उज्र करता हो।

उज़्रदारी (अ॰ स्त्री॰) १ आपत्तिका उल्लेख, एतराज़का बयान। २ दावेदारी, [illegible], [illegible] [illegible] मुक़द्दमेका मुराफ़ा बयान।

उज़्रपेश (अ॰ स्त्री॰) पेशकी आपत्ति, पीछेकी वजह।

उज़्रमाक़ूल (अ॰ स्त्री॰) उचित आपत्ति, जो वजह माक़ूल हो।

उज़्रमा'ज़ूल (अ॰ स्त्री॰) विनय, प्रार्थना, निवेदन।

उज़्रहुक़ूमत (अ॰ स्त्री॰) प्रतिवादीकी आपत्ति, सरकारकी वजह।

उज़्रविरासत (अ॰ स्त्री॰) उत्तराधिकारकी आपत्ति, वरासतकी वजह।

उझकना (हिं॰ क्रि॰) १ देखनेके लिये उचककर ऊंचे होना, उचककर झांकना। २ चकपकाकर हट पड़ना, एकाएक डरकर पीछे जाना। ३ कूदना, फुदकना-फांदना। ४ उन्नत होना, ऊंचा पड़ना। ५ चकित होना, चौंक उठना।

उझकन, उझकना देखो।

उझलना (हिं॰ क्रि॰) १ एक पात्रसे दूसरेमें उंडेलना, बहाना, धार बांधके डालना, ढालना। २ उन्नत होना, बढ़ना, उमड़ उठना।

उझांकना (हिं॰ क्रि॰) झांकना, ऊपर उचकके देखना।

उझानी—युक्तप्रान्तके मुरादाबाद ज़िलेका एक गांव। यह अक्षा॰ २८° १८′ १०″ उ॰ और द्राघि॰ ७८° ५६′ २५″ पू॰पर अवस्थित है। उझानी [illegible] सड़कोंमें लगती, जो साढ़े ७ मील दक्षिणपूर्व पड़ती है।

पांच मसजिदोंमें मुसलमान-साधु शाह दाऊदका मक़बरा भी है। सप्ताहमें एक बार बाज़ार लगता है।

उझालना, उझलना देखो।

उझिलना, उझलना देखो।

उझिला (हिं॰ स्त्री॰) १ अन्नप्राशनार्थ एक पदार्थ, जो सबसे पहले खानेके लिये बनाया गया हो। २ [illegible] उस धानकी कोदों हुई पत्तियां, जो [illegible] भीतरकी [illegible] खींचकर निकाली गई हो। इसे [illegible] [illegible] हैं। ३ भोजन विशेष, एक खाद्य। गुड़ मैदा और घीका ढाला मिलाकर [illegible] उझिला बनता है।

उझीना (हिं॰ पु॰) चबूतरा, चौंतरा, अनाजके लिये सुधार कर रखा हुआ कड़ोंका ढेर।

उटंगन, [illegible] देखो।

उटज (सं॰ पु॰ क्ली॰) उट-जन्-ड। १ पर्ण, शिला, आश्रमवासस्थान, [illegible], ऋषियोंकी कुटी।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

कौशिका [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

वृत्तिसे निर्वाह करना चाहिये। क्योंकि असत् प्रतिग्रहसे शिल श्रेष्ठ होता और उसकी अपेक्षा भी उञ्छवृत्तिका पद अधिक प्रशस्त है।

"कुसूलकुम्भीधान्यो वा त्र्याहिकोऽश्वस्तनोऽपि वा ।
जीवेद्वापि शिलोञ्छेन श्रेयानेषां परः परः ॥" (याज्ञवल्क्य १।१२८)
'एकैकधान्यादि गुडकोच्चयनमुञ्छः ।' (कुल्लूक)

२ उञ्छशील, सीला बीननेवाला।

उञ्छन (सं० क्ली०) उछि-ल्युट्। संग्रहकरण, खेतमें सीले या बाज़ारमें दानेका बीनना।

उञ्छवृत्ति (सं० स्त्री०) धान्यकणाके संग्रहसे निर्वाह, सीला बीननेका रोजगार।

उञ्छशिल (सं० क्ली०) उञ्छश्च शिलश्चेत्येकवद्भावः। उञ्छवृत्ति, सिला बीननेका रोज़गार।

"ऋतमुञ्छशिलं ज्ञेयममृतं स्यादयाचितम्।" (मनु ४।५)

उञ्छशील (सं० वि०) धान्यकणाके संग्रहसे निर्वाह करनेवाला, जो सीला बीनकर काम चलाता हो।

उट (सं० पु०) शुष्क तृण, सूखी घास, फूस। यह झोपड़े और छप्पर बनानेमें लगता है।

उटकना (हिं० क्रि०) १ प्लव लगाना, कुदकना, उछलना, कूदना। २ अनुमान बांधना, अन्दाज़ लगाना।

उटकनाटक (हिं० वि०) अद्भुत, अनोखा।

उटकरलैस (हिं० वि०) इच्छानुसारी, मनमाना, ऐसा-वैसा।

उटङ्ग (हिं० वि०) १ सङ्कुचित, ऊंचा ही रहनेवाला, जो नीचे न पहुंचता हो। १ कुनिर्मित, जो अच्छी तरह कटा छटा न हो।

उटङ्गन (हिं पु०) तृणविशेष, एक घास। यह शीतल स्थान और नदीके कछारमें उपजती है। तीनका रूप रहते भी चार पत्तियां लगती हैं। लोग शाक बनाकर खाते हैं। हिन्दीमें प्रायः गुठ्या कहते हैं। उटङ्गन शीतल, लघु और कषाय होता है। इससे मल रुकता और सन्निपात, ज्वर, प्रमेह तथा श्वासविकार घटता है।

उटज (सं० पु०) उटाः तृणपर्णादयस्तेभ्यो जायते, जन-ड। १ पर्णशाला, घासफूससे बना झोपड़ा।

"वर्तितरोमन्थमुटजाङ्गनभूमिषु।" (रघु १।५२) २ स्वल्पमात्र, एक मकान्।

उटड़पा (हिं० पु०) उटहड़ा, उटडा, गाड़ी खड़ी करनेका डण्डा। यह गाड़ीके आगे लगता और अग्रभागको उठाये रहता है।

उटड़ा, उटड़पा देखो।

उटारी (हिं० स्त्री०) अहूंटा, चारा काटनेकी लकड़ी।

उटेव (हिं० पु०) काष्ठखण्ड विशेष, लकड़ीके दो टुकड़े। यह छाजनकी धरनमें लगते हैं। इनपर एक गड़ारी रखकर धरन जमाते हैं।

उट्टा (हिं० पु०) घोटनी।

उठ्—भ्वा० पर० सक० सेट्। इससे आघात उपघात करने या मारने-गिरानेका अर्थ निकलता है।

उठंगन (हिं० पु०) १ अवष्टम्भ, पाया, आड़, टेकनी, थूनी।

उठंगना (हिं० क्रि०) १ अवष्टम्भ पकड़ना, टेक लेना, तकिया लगाना। २ आश्रयमें पड़ जाना, भरोसे रहना।

उठंगल (हिं० वि०) मन्द, कुन्द, गावदी। मूर्ख व्यक्तिको 'उठंगल आदमी' और कुशासित राज्यको 'उठंगल मुल्क' कहते हैं।

उठंगवाना (हिं० क्रि०) उठंगनेको आज्ञा देना, उठंगानेका काम दूसरेसे लेना।

उठंगाना (हिं० क्रि०) अवष्टम्भ देना, टेक पहुंचाना। २ आश्रयमें डालना, भरोसे रखना। कपाट देनेको 'किवाड़ उठंगाना' कहते हैं।

उठक (हिं० स्त्री०) उत्थान, उठान। यह शब्द प्रायः यौगिक पदमें लगता है, जैसे—बैठक-उठक।

उठगन, उठंगन देखो।

उठलक (हिं० पु०) १ उड़लक, जीन् या काठीके बीचकी गद्दी। इसे रखनेपर पिठलगी घोड़ेकी सवारी देते या माल लादते कष्ट नहीं पड़ता। २ अवष्टम्भ, पाया, टेक।

उठत-बैठत, उठते बैठते देखो।

उठती (हिं० वि०) १ उद्गमनशील, चढ़ती, बढ़ती। २ परिणति-शील, झुकती, उतरती।

उठती कोंपल (हिं॰ स्त्री॰) १ नवीन पल्लव, नई शाख, ताज़ी किल्ली। २ यौवनावस्था, शबाब, जोबन।

उठती जवानी (हिं॰ स्त्री॰) नव यौवन, जवानीका आग़ाज़, छाती भर आनेकी हालत।

उठती पैंठ (हिं॰ स्त्री॰) परिवर्तनशील हट, गिरता बाज़ार। "[illegible]" ([illegible])

उठती मरदन (हिं॰ स्त्री॰) उदयशील इन्द्रिय-शक्ति, चढ़ती मस्ती।

उठते बैठते (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ हर दम, दौड़ा-दौड़ी, [illegible], नट-खट, सोते-जागते। २ चलते-फिरते, बैठे-बैठे, चल-फिर कर। ३ झटपट, आनन-फानन, काम करते। ४ सदा सर्वदा, बार बार।

उठना (हिं॰ क्रि॰) १ आरम्भ होना, अङ्कुर फूटना, निकलना। २ प्रस्थान करना, रवाना होना, चल पड़ना। ३ उद्भिद होना, उगना, उपजना, जमना। ४ वर्धित होना, ज्यादा पड़ना, बढ़ना। ५ ऊँचा होना, ऊँचाईतक पहुँचना, चढ़ना। ६ छिपकर निकलना, आँखोंसे छूटके जाना। ७ प्रादुर्भूत होना, फूटना, फट पड़ना। ८ निष्क्रमण करना, उभर आना। ९ उत्थित होना, बुलन्द पड़ना, चढ़ना। १० उत्थित होना, ऊपर जाना, बढ़ना। ११ प्रमुदित होना, ऊँचा दिखना। "[illegible]" ([illegible]) १२ गमन करना, जाना। १३ जागरण करना, जागना। १४ दण्डायमान होना, दण्डवत् अवस्थान करना, खड़ा होना। १५ [illegible] जाना, उभरना। १६ निर्मित होना, बनना। १७ उद्दीप्त होना, [illegible] जाना, फूल जाना। १८ उमड़ पड़ना, गरमाना। "[illegible]" ([illegible]) १९ यौवनावस्थाको प्राप्त होना, जवानीमें आना। २० [illegible] आना, उछलना, जोश आना, बढ़ना। २१ बन्द किया या टाँगा जाना। २२ दृष्टिगोचर होना, नज़रमें आना, देख पड़ना। २३ [illegible] करना, [illegible]। २४ उदित होना, आना। २५ खण्डित होना, अलग किया जाना। २६ विलुप्त होना, खोजना। २७ निर्दोष करना, हिसाब लगानेको बाहर जाना। २८ बहिष्कृत होना, निकलना, निकलना। २९ रद्द किया जाना, पहुँचमें आना। ३० बन्द किया जाना, रुकना। ३१ खर्च किया जाना, लग जाना। ३२ [illegible] किया जाना, अनुभूत होना, सूझना। ३३ निर्णीत किया जाना, किराये चलना। ३४ नाश होना, दाम लगना। ३५ निवृत्त होना, निपटाया जाना। ३६ स्थगित होना, [illegible] जाना। ३७ पारित किया जाना, पकना, सीढ़ीपर जाना। ३८ प्रस्तुत होना, कमर कसना। ३९ उद्दीपित किया जाना, मज़बूत होना। ४० संज्ञामें आना, हिलना। ४१ स्थिर न रहना, लड़खड़ाना, [illegible] पड़ना। ४२ स्थापित होना, जारी किया जाना, घूमना। ४३ खर्च किया जाना, ख़र्च होना। ४४ पूर्ण होना, ठीक बैठना। ४५ मारा जाना, मरा जाना। ४६ समाप्त होना, ख़ातिमेपर आना। ४७ नष्ट होना, मट्टीमें मिलना। ४८ त्याग करना, छोड़ना। ४९ सिद्ध होना, चरम पहुँचना, मिलना। ५० स्फुरित होना, भड़कना।

एकाएक उठनेको उठ खड़ा होना, बलपूर्वक उठनेको उठ जाना और धीरे-धीरे काम करने, मिलने जुलने, साथ रहने, पदको लगाव बार बार छोड़ने, तथा आगे [illegible] 'उत्तिष्ठोपवि' भावोंको उठना-बैठना कहते हैं। उठ बैठ, उठा बैठी और उठक-बैठकका अर्थ उठके न बैठना; बार बार पदको लगाव छोड़नेका, खड़े हो होकर बैठना, बैठकी [illegible], कान पकड़के उठना बैठना सजा समझा जाता है।

उठल्लू (हिं॰ वि॰) १ निर्धारित स्थान न रखने-वाला, जो आवारागर्द और बे घरबार हो। निम्न-श्रेणीके हिन्दुस्तानी [illegible] लोगोंके उठल्लूका चूल्हा या उठल्लू चूल्हा कहते हैं।

उठवाई (हिं॰ स्त्री॰) उठने या उठानेका काम।

उठवाना (हिं॰ क्रि॰) उठानेका काम दूसरेसे लेना, दूसरेको उठानेकी आज्ञा देना।

उठवैया (हिं॰ वि॰) १ भार उठानेमें सहायता करने-वाला, जो बोझ लादनेमें मदद देता हो। २ उठाने-वाला, [illegible], जो [illegible] देता हो। इसीके उठाऊ और उठानेवाला शब्द भी आता है।

उठाईगीरा (हिं॰ पु॰) चोर, मोषक, उचक्का, गिरी हुई चीज़को उठा लेनेवाला। परिहाससे भिक्षुकको भी उठाईगीरा कह सकते हैं।

उठाऊ, उठाव देखो।

उठान (हिं॰ पु॰-स्त्री॰) १ समुत्थान, उभार, चढ़ाव। २ उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई। ३ वृद्धि, बढ़ती। ४ रूप, आकार, सूरत, शक्ल, बनावट। ५ यौवनावस्था, जोबन। ६ कामानल, मुहब्बत, मस्ती। ७ अभिमान, फखर, घमण्ड। ८ व्यय, खर्च। आकस्मिक उन्नतिको नया उठान कहते हैं।

उठाना (हिं॰ क्रि॰) १ उच्च करना, बुलन्दी पर लाना, उचकाना। २ स्थापन करना, जमाना। ३ खड़ा कराना। ४ निर्माण करना, बनाना।

"कहत कुन कुन भवन उठाया कोन कहैं घर मेरा रे।
ना घर मेरा ना घर तेरा चिड़िया रैन बसेरा रे॥" (कबीर)

५ चयन करना, चुनना। ६ आकर्षण करना, खींचना। ७ वैकुण्ठ ले जाना, विहिश्त पहुंचाना। ८ उड़ाना, ढीलना, खोलना। १० उभाना, मारनेको तानना। ११ करना, भरना, किसी काममें लगा रहना। १२ दायी बनना, अपने ऊपर लेना। १३ आरम्भ करना, निकालना। १४ बांधना, कसना। १५ प्रबन्ध करना, देखना भालना। १६ प्रस्तुत करना, तैयारी पर लाना। १७ प्राप्त करना, पाना। १८ सहन करना, सहना। १९ लगाना, करना। २० व्यय करना, खर्चमें लाना। २१ काममें लाना, खर्च कर डालना। २२ कर लेना, पड़ जाना। २३ ऋण करना, कर्ज लेना। २४ धन देना, अन्दा मुहैया करना। २५ दाम करना, दे डालना। २६ मिटाना, रगड़ना। २७ अलग रखना, निकालना। २८ बन्द करना, छोड़ना। २९ फेंकना, हटाना। ३० रक्षित करना, मनसूखीमें लाना। ३१ रख देना, दूर करना। ३२ पृथक् करना, लगा देना। ३३ ले आना, ढोना। ३४ लुण्ठन करना, चोराना। ३५ स्थानान्तरित करना, एक जगहसे हटा कर दूसरी जगह रखना। ३६ दूर करना, निकाल डालना। ३७ निर्जन कराना, उजाड़ना। ३८ जागरित करना, जगाना। ३९ आविष्कार करना, ईजादमें लाना। ४० उत्तेजित करना, भड़काना। ४१ छेड़ना, सताना। ४२ तेज करना, बढ़ाना। ४३ उत्सवमें प्रदर्शित करना, जुलसेमें लाना। ४४ उपजाना, पैदा करना। ४५ मिश्र करना, मिलाना। ४६ भक्षण करना, खा लेना। ४७ शस्य संग्रह करना, फसल काटना। ४८ झाड़ना, पछोड़ना। ४९ हाथमें लेना, पकड़ना।

उठाव, उठान देखो।

उठावना (हिं॰ पु॰) उठावनी देखो।

उठौनी (हिं॰ स्त्री॰) १ उत्थानकर्म, उठानेका काम। २ पारिश्रमिक, उठानेकी मजदूरी। ३ अग्रिममूल्य, पेशगी दिया जानेवाला दाम। ४ रुपयेका आदान-प्रदान, कर्जका लेनदेन। ५ अग्रिम दक्षिणा, पुरहत। यह विवाहादिका मुहूर्त बताते ही पण्डितको मिलती है। ६ विवाहसे पूर्व दिया जानेवाला रुपया, बरिच्छा। ७ उठावना, देवतापर चढ़ानेको रखी हुई चीज। ८ संस्कारविशेष, एक चाल। वैश्यके घर किसीके मरनेसे दसवें दिन सजातीय पहुंचते और घरके पुरुषोंको कुछ रुपया पकड़ा पगड़ी बांध देते हैं। ९ अन्य संस्कारविशेष। मृत व्यक्तिके अस्थिसञ्चय करनेको यह तीसरे दिन होती है। १० काष्ठविशेष, एक लकड़ी। इसमें कोरी पाईको लगदी लगाते हैं। ११ सूक्ष्म कर्षण, हलकी जोत, गाहना। यह धान्यके क्षेत्रमें दूर-दूर दो प्रकारसे होती है। एक बिदहनी और दूसरीका नाम धुरदहनी है। भरेको बिदहनी और सूखे खेतकी धुरदहनी कहाती है। १२ प्रसूता स्त्रीकी सेवा, जच्चाकी टहल।

उठौनी, उठावनी देखो।

उठौवा, उठाऊ देखो।

उड्—अप॰ सक॰ सेट्। यह संहति अर्थमें लगता है।

उड़ (हिं॰ पु॰) उडु, नक्षत्र, सितारा।

उड़कू (हिं॰ वि॰) १ उड़ान भरनेवाला, जो खूब उड़ता हो। २ शीघ्र शीघ्र कार्यकारी, जो दौड़ दौड़-कर काम करता हो।

उड़चक (हिं॰ पु॰) चोर, उचक्का, माल उड़ाकर ले जानेवाला।

उड़ चलना (हिं॰ क्रि॰) अभिमान रखना, गुस्ताख़ होना।

उड़तक, उठतक देखो।

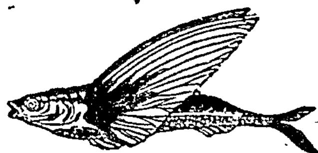
उड़त कांवरी (हिं॰ स्त्री॰) पादनेका शब्द, गोज़, फुसकी।

उड़ती चिड़िया पहचानना (हिं॰ स्त्री॰) चिह्न लगाना, निशान देना।

उड़ती-पुड़ती खबर (हिं॰ स्त्री॰) किंवदन्ती, अफ़वाह, बाज़ारू बात।

उड़ती बैठक (हिं॰ स्त्री॰) व्यायामविशेष, एक कसरत। इसमें दोनो पद समेट कर रखते और उठने बैठनेके साथ ही आगे बढ़ते या पीछे हटते हैं। यह साधारण बैठकका एक भेद है। इसे प्रायः उड़ानकी बैठक कहते हैं।

उड़ती मछली (हिं॰ स्त्री॰) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Exocetus) यह मछली समय समयपर जलको छोड़ २०।२५ हस्त ऊर्ध्व उड़ सकती है, इसीसे इसे उड़ती मछली कहते हैं। यह बट्टो-जैसी देख पड़ती है। देह दीर्घाकार है, किन्तु स्थूल नहीं। चक्षु अति वृहत् होते हैं। उभय पार्श्वके पक्ष अधिक विस्तृत हैं। कोई कोई कहता—उड़ती मछली अपने लम्बे चौड़े बाजुवोंके सहारे ही उड़ती है। किन्तु यह बात ठीक नहीं बैठती। प्राणितत्त्वविज्ञने अनेक अनुसन्धानके बाद ठहराया—यह मत्स्य दैहिक



चित्र

पेशीकी अधिकतर शक्ति लगानेसे ऊर्ध्व चल सकता, वस्तुतः पक्षीकी भांति ऊर्ध्व उड़ता नहीं। जब डलफिन नामक समुद्र मत्स्य मारता, तब यह प्राणके भय वश जलसे १५।२० हस्त उछल दूर भागता है; किन्तु एक मिनटसे अधिक कालतक शून्यमें अवस्थित अथवा जलसे पृथक् रह नहीं सकता। भूमध्यसागर, अतलान्तिक महासागर और अमेरिकाके अनेक स्थानमें इस जातीय विविध प्रकार मत्स्य मिलता है।

उड़द (हिं॰ पु॰) माष, एक दाल। (Phaseolus Radiatus) माष देखो।

उड़न (हिं॰ स्त्री॰) उड्डयन, उड़ान, उड़नेका काम।

उड़न अनार (हिं॰ पु॰) अग्निक्रीड़ाविशेष, एक आतशबाज़ी। यह छूटते ही वाणकी भांति आकाशको उड़ता है।

उड़न खटोला (हिं॰ पु॰) १ वायुयान, विमान, उड़नेवाला पलंग। यह परियोंके पास रहता था। २ शिशुके सोनेकी अलङ्कृत शय्या, बच्चोंके लेटनेकी ख़ूबसूरत पलंगड़ी। ३ शवयान, जनाज़ा। इसपर हिन्दू मृतकको जलाने ले जाते हैं।

उड़नगोला (हिं॰ पु॰) १ उड़नेवाला गोला, जो गोला छूटते ही आसमान्को उड़ जाता हो। २ बन्दूककी नुमायशी आवाज़। उत्सवादिके समय आकाशको ओर ताकके जो बन्दूक छोड़ी जाती, वही उड़नगोला कहाती है।

उड़नछू (हिं॰ वि॰) लुप्त, ग़ायब, देख न पड़नेवाला।

उड़नझाई (हिं॰ स्त्री॰) छल, धोका, चकमा।

उड़नफल (हिं॰ पु॰) फल विशेष, एक मेवा। कहते हैं—इसके खानेसे लोग उड़ने लगते थे।

उड़नफाख़्ता (हिं॰ स्त्री॰) उड्डीन-कपोतिका, उड़नेवाली मैना। यह शब्द मूर्खका उपाधि है।

उड़नबीमारी (हिं॰ स्त्री॰) महामारी, सुताही मर्ज़, छूवा छूतका रोग।

उड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ उड्डयन करना, परवाज़ लगाना, उड़ान भरना, आकाशमें पक्षके आश्रयसे चलना। "उड़ बीमारी शावन आया।" (लोकोक्ति) २ अति शीघ्र गमन करना, जल्द-जल्द दौड़ना। ३ पलायन करना, भागना, बचना। ४ उल्लङ्घन करना, फांदना। ५ अग्रगामी होना, आगे आगे चलना। ६ कार्यमें लग जाना, ख़ाली न रहना। ७ नष्ट होना, मिटना। ८ समाप्त होना, ख़र्चमें पड़ना, उठ जाना। ९ चोरा

जाना, लुटना, मारे पड़ना। १० मरना, जिन्दा न रहना, मट्टीमें मिलना। ११ बाष्पभाव धारण करना, भाप बनना, सूखना। १२ विकीर्ण होना, फैल पड़ना, चला जाना। १३ विदलित होना, भड़कना, फटना। १४ विवर्ण बनना, कुम्हलाना, धुंधला पड़ना। १५ विस्तृत होना, फैलना। १६ वशमें न रहना, हाथसे बेहाथ होना। १७ रूप बनाना, शान-शौकत देखाना। १८ प्राप्त होना, मिलना। १९ आरोहण करना, चढ़ बैठना। २० विकसित होना, खिलना। २१ छल करना, बहाना बताना। २२ गाल बजाना।

उड़नागन (हिं० स्त्री०) १ सपक्ष पन्नगी, उड़नेवाली सांपन। २ उत्तेजित स्त्री, जोशमें आई हुई औरत।

उड़प (हिं० पु०) १ नृत्यभेद, नाचकी एक चाल। २ उडुप, चांद। ३ तरण्ड, बेड़ा, चौघड़ा।

उड़पति (हिं० पु०) उडुपति, चांद।

उड़राज (हिं० पु०) उडुराज, चांद।

उड़री (हिं० स्त्री०) उड़दी, छोटा उड़द।

उड़व (हिं० पु०) १ रागभेद। जिस रागमें सात स्वरमें दो छूट जाते, उसे सङ्गीतज्ञ उड़व बताते हैं। जैसे—हिण्डोल, मालकोस, भूपाली इत्यादि। २ मृदङ्गका एक प्रबन्ध।

उड़वाना (हिं० क्रि०) उड़ानेका कार्य दूसरेसे कराना, किसीको उड़ानेमें लगाना।

उड़वाला (हिं० पु०) प्रस्तर, पत्थर। यह ठगोंकी बोली है।

उड़सना (हिं० क्रि०) १ खोंसना, रखना। २ घुसेड़ना, डाल देना। ३ ठूंसना, भरना। ४ तह करना, समेटना।

उड़ा (हिं० पु०) यन्त्र विशेष, एक औजार। इसमें कीटसूत्रको खोलते हैं। उड़ा एक प्रकारका कलावा होता, जो धार परे और छः तीली रखता है। तीली समान सदृश रहती है। तीलियोंके मध्यवर्ती छिद्रमें गजको चलाते हैं।

उड़ांक, उड़ाक देखो।

उड़ाऊ (हिं० वि०) १ उड्डयनशील, उड़नेवाला। २ अधिक व्यय करनेवाला, अपव्ययी, जो रुपया बरबाद करता हो।

उड़ाक (हिं० वि०) सपक्ष, परदार, उड़नेवाला।

उड़ाकू, उड़ाक देखो।

उड़ान (हिं० पु० स्त्री०) १ उड्डयन, परवाज़, उड़नेकी हालत। २ पलायन, फरार, भगोड़ी। ३ आरोहण, सऊद, चढ़ाव। ४ वल्गन, कूद, फांद। ५ मणिबन्ध, कलाई, पहुंचा। ६ मालखम्भकी एक कसरत।

उड़ान घाई (हिं० स्त्री०) १ कपट, धोका। २ उपाय, तदबीर। ३ सुघालन, टालमटोल।

उड़ानघाई बताना (हिं० क्रि०) १ सत्पथमें भ्रष्ट करना, बेराह ले जाना। २ छल करना, धोका देना।

उड़ाना (हिं० क्रि०) विद्राव देना, परवाज़ पर लाना, छोड़ना। २ कर्त्तन करना, काटना, गिराना। ३ गोपन करना, छिपाना। ४ ले भागना। ५ अपव्यय करना, खर्च डालना। ६ भोजन करना, खाना। ७ क्रीडा करना, खेलना। ८ मारना। ९ बहलाना। १० प्राप्त करना, पाना।

उड़ायक (हिं० वि०) उड़वैया, उड़ानेवाला।

उड़ाल (हिं० स्त्री०) काञ्चनकी त्वक्, कचनारका बकला। २ काञ्चनकी त्वक्से निर्मित रज्जु, कचनारके बकलेकी रस्सी।

उड़ास (हिं० स्त्री०) वासस्थान, रहनेकी जगह।

उड़ासना (हिं० क्रि०) लपेटना, उठाना, समेटना।

उड़िका, उटिका देखो।

उड़िया (हिं० वि०) उत्कल देशका अधिवासी, उड़ीसा मुल्कका रहनेवाला। उत्कल देखो।

उड़ियाना (हिं० पु०) छन्दोविशेष। इसमें २२ मात्रा रहती हैं। १० और १२ मात्रापर विश्राम पड़ता है। अन्तिम मात्रा गुरु लगती है।

उड़िल (हिं० पु०) केशयुक्त मेष, बालदार भेड़।

उड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायाम विशेष, मालखम्भकी एक कसरत। यह सपक्ष, अपक्ष और साधारण तीन प्रकारकी होती है।

उड़ीग (हिं० पु०) लता विशेष, एक बेल। यह गठरी बांधने और झूलेका सेतु तथा टोकरी बनानेमें लगता है।

उड़ीसा—उत्कल देश। उत्कल देखो।

यह नगर मन्द्राज प्रान्तका प्रधान स्वास्थ्यप्रद स्थान है। मित्तूपलायमका रेलवे ष्टेशन निकट पड़ता है।

१८१९ ई०में मन्द्राजके दो मुल्की हाकिमोंने तम्बाकूके महसूल चोरोंको खदेरते खदेरते उतकामन्द की उपत्यका ढूंढी थी। १८२१ ई०में पहले स्थानीय कलेक्टरने यहां एक घर बनाया, कुछ दिन पीछे नगर भी निकल आया। इसकी चारो ओर ऊंचे पर्वत है। पास ही डेढ़ मील लम्बी झील खुदी है। दोदाबेटाकी चोटी समुद्रतलसे ८७६० फीट ऊंची है। झीलकी चारो ओर पक्की सड़क खिंची है। समस्थलीपर रहनेसे इस नगरने ग्रिमले जैसे हिमालयके स्थान लोगोंकी दृष्टिसे गिरा दिये हैं। हरी हरी घास हृदयको लहरा देती है।

१८६६ ई०में यहां मुनिसिपलिटी पड़ी थी। किन्तु मकान् पर्वत पर दूर-दूर बने हैं। ज़िलेके कलक्टर, डेपुटी कलक्टर और सब जज यहां रहते हैं। गिर्जाघरों, होटलों, स्कूलों, अस्पतालों और दुकानोंकी कोई कमी नहीं। १८५८ में पुस्तकालय और १८५८ ई०में लारेन्स आश्रम खुला था।

उतङ्क—१ वैद नामक मुनिके शिष्य। ये जितेन्द्रिय, धर्मपरायण और बड़े गुरुभक्त थे। महाभारतमें कहा है—जनमेजय और पौष्य नामक राजद्वयने वेदको अपने उपाध्याय रूपसे वरण किया था। किसी समय वेद उतङ्कको गृहमें छोड़ और सकल भार सौंप प्रवासपर चल गये। एक दिन वेदपत्नीने उतङ्कको बोला कहा था—'उतङ्क! तुम्हारे गुरु घरमें नहीं। मैं ऋतुमती हूं। अब वह करो, जिसमें मेरी ऋतु निष्फल न हो।' गुरुपत्नीके समझाते भी इन्होंने वैसा कुकर्म न किया। गुरुने घरमें आकर उतङ्कके विशुद्ध चरित्रकी बात सुनी। उन्होंने इन्हें आशीर्वाद देकर कहा था—'तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा। चले जावो।' उतङ्कने गुरु दक्षिणा देना चाही। गुरु बोल उठे—'वत्स उपमन्यु! गुरुदक्षिणा देनेसे क्या है! फिर भी यदि नितान्त तुम्हारी इच्छा हो, तो अपनी गुरुपत्नीसे पूछो। वह जो मांगेगी, वही चीज़ लाना पड़ेगी।' गुरुपत्नीने उतङ्कसे कहा—पौष्यराजकी धर्मपत्नीके कुण्डल मैं पहनना चाहती हूं।

उतङ्कने पौष्यराजके निकट जाकर कहा—'महाराज! गुरुदक्षिणा देनेके लिये आपसे कुण्डलद्वय मांगने आया हूं। कृपाकर दे दीजिये।' राजा बोले—'कुण्डल मैं देता हूं। किन्तु आप अति सावधानतासे ले जाइयेगा। क्योंकि इस कुण्डलद्वयपर नागराज तक्षककी दृष्टि सर्वदा रहती है।'

उतङ्क कुण्डलद्वय लिये आते थे। राहमें एक उलङ्ग क्षपणक मिल गया। वह मध्य मध्य छिप जाता था। ये कुण्डलद्वयको भूतलपर रख स्नान तर्पणादिके लिये सरोवर पहुंचे। इसी बीच क्षपणकरूपी तक्षक उन्हें उठा नागलोकमें घुस गये। उतङ्कने स्नानके अन्तमें आकर कुण्डल न पाये थे। पौष्यराजकी बात स्मरण आयी। ये बड़े कष्टपूर्वक इन्द्रलोकसे वज्र और उसके सहारे नागलोकसे जा कुण्डल लाये। फिर कुण्डल गुरुपत्नीको उतङ्कने जाकर दिये थे। इन्होंने नागलोकमें जो देखा, गुरुसे कह सुनाया। गुरु बोले—'वत्स! तुमने वहां जो स्त्रीके दो रूप देखे, वे परमात्मा और जीवात्मा हैं। द्वादश अवयवयुक्त चक्र संवत्सर, शुक्ल एवं कृष्णवर्ण सकल वस्तु दिवा तथा रात्रि, छः कुमार छहो ऋतु, पुरुष पर्जन्य, अश्व अग्नि, पथिमध्य वृषभ नागराज, ऐरावत और अश्वोपरि नृपति इन्द्र हैं। तुमने इस स्थानसे जाते समय वृषभका जो पुरीष खाया, वह अमृत है। अमृतके प्रभावसे ही तुम नागलोक जा और यह कुण्डल ला सके। उतङ्क गुरुसे विदाय हो राजा जनमेजयके निकट गये थे। वहां तक्षक मारनेके लिये उनसे सर्पयज्ञ कराया। (भारत आदि १४०)

२ गौतम मुनिके एक शिष्य। ये महर्षि थे। इनकी जीवनी भी पूर्वोक्त उतङ्ककी तरह है। इन्होंने भी गुरुपत्नी अहल्याके कहनेसे सौदास राजपत्नीके कुण्डल लाकर गुरुदक्षिणा दी थी। ये घोरतर तपस्यामें आसक्त और गुरुभक्ति-परायण रहे। गौतम भी सकल शिष्यकी अपेक्षा उतङ्कको ही अधिक चाहते थे। यथा समय अपरापर शिष्यके पाठ पढ़ घर जाते

भी उन्होंने स्नेहयुक्त उतङ्कको न छोड़ा। ये भी गुरुभक्तिमें गृहकी कथा भूल गये थे। प्रायः शत वत्सर इसीतरह बीते। एकदिन उतङ्क दूर वनसे काष्ठ भार उठा लानेपर क्लान्त हो गये; इसलिये शीघ्र शीघ्र आश्रमके निकट पहुंच जैसे ही फेंकने लगे, वैसे ही उसके साथ साथ कुछ केश भी टूट पड़े। उतङ्क टूटे केश देख रोने लगे थे। गौतमने आकर रोनेका कारण पूछा। इन्होंने आंसू बहाते बहाते कहा—'मेरे बाल पक गये हैं। मैं यहीं वृद्ध बना हूं। तथापि आपने मुझे घर जाने न दिया।' गौतम बोले—'तुम्हें मैं बहुत चाहता और तुम्हारी शुश्रूषासे अत्यन्त सुख पाता हूं। इसीसे तुम्हें छोड़ नहीं सकता। अब मैं आह्लादसे गृह जानेकी आज्ञा देता हूं।' फिर गौतमने अपनी कन्याके साथ उतङ्कको व्याहा था। (भारत आश्वमेधिक)

(हिं० वि०) २ उन्नत, ऊंचा।

उतङ्कमेघ (सं० पु०) मेघ विशेष, किसी क़िस्मका बादल।

उतङ्ग (हिं० वि०) १ उत्तुङ्ग, बुलन्द, ऊंचा। २ उच्च, ऊंचे दरजावाला, बड़ा।

उतथ्य (सं० पु०) मुनि विशेष। महर्षि अङ्गिराके औरस और उनकी पत्नी श्रद्धाके गर्भसे इनका जन्म है। ये वृहस्पतिके ज्येष्ठभ्राता लगते हैं। इन्होंने ममतासे विवाह किया था। उनके गर्भसे दीर्घतमा नामक एक पुत्र हुआ। दीर्घतमा देखो।

उतथ्यतनय (सं० पु०) उतथ्यके पुत्र गौतम।

उतथ्यानुज (सं० पु०) उतथ्यके कनिष्ठ भ्राता वृहस्पति।

उतथ्यानुजन्मन्, उतथ्यानुज देखो।

उतन (हिं० क्रि० वि०) तब, वहां, उस तर्फ़, उधर।

उतना (हिं० वि०) १ तत्परिमाणविशिष्ट, उस मिक़दारवाला, उसकी बराबर। (क्रि० वि०) २ उस परिमाणपर, उस मिक़दारमें।

उतन्‍ना (हिं० पु०) कर्णिकाविशेष, कानमें पहनी जानेवाली एक बाली। यह कर्णके उपरि भागपर रहता है।

उतपन्न (हिं० वि०) उत्पन्न, पैदा।

उतपात (हिं० पु०) उत्पात, झगड़ा।

उतपानना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, उपजाना। २ उत्पन्न होना, उपजना।

उतमङ्ग (हिं० पु०) उत्तमाङ्ग, मस्तक, मुख, मत्था, मुंह।

उतरंग (हिं० पु०) उत्तरङ्ग, दरवाजेके ढांचेपर रखी जानेवाली लकड़ीकी मेहराब।

उतर (हिं० पु०) उत्तर, जवाब।

"उत्तर देत छाड़ेउं बिनु मारे।
केवल कौशिक सील तुम्हारे॥" (तुलसी)

उतरन (हिं० स्त्री०) १ जर्जरीभूत वस्त्र, जो कपड़ा पहनते-पहनते बिगड़ गया हो। २ उत्तरङ्ग, उतरंग। ३ गुल्म विशेष, एक झाड़। इसे बङ्गालमें अगुमपती और सिंहलमें कानकुम्बल कहते हैं। उतरनमें मूव बहुत रहता है। आकार दीर्घ है। दक्षिणापथके कोङ्कणसे दक्षिण त्रिवाङ्कोड़ और सिंहलमें उतरन उपजती तथा कहीं कहीं बङ्गालमें भी देख पड़ती है। सिंहलवासी इसके पत्रका शाक बनाकर खाते हैं। इसका दुग्धवत् रस सान्द्र होता है।

उतरन-पुतरन (हिं० स्त्री०) जर्जरीभूत वस्त्र, फटा-पुराना कपड़ा।

उतरन होना (हिं० क्रि०) ऋण अथवा उपकारसे मुक्तिपाना, फ़र्ज़ या एहसानसे छूटना।

उतरना (हिं० क्रि०) १ अवतरण करना, नाज़िल होना, नीचे आना। "आसमानसे उतरा खजूरमें अटका।" (लोकोक्ति) २ निर्गलित होना, निगलना जाना। "उतरा घाटी हुआ माटी।" (लोकोक्ति) ३ उत्पन्न होना, उपजना।

"जितनी चैहर उतरा था उतना ही लिया।" (लोकोक्ति)

४ प्रवेश करना, घुसना। ५ पार होना, लांघना। ६ निःसृत होना, निकलना, आना। ७ न्यून पड़ना, घटना। ८ घिस जाना, बिगड़ना। ९ छद्म होना, छद्दाना। १० मलिन पड़ना, कुम्हलाना। ११ समाप्त होना, खातिमे पर पहुंचना। १२ स्थानच्युत होना, जगह छोड़ना। १३ अपमानित होना, बेइज़्ज़त बनना।

"उतर गयी लोई तो क्या करेगा कोई।" (लोकोक्ति)

१४ न्हसुरको प्राप्त होना, मरना। १५ तुलना, वज़नमें बैठना। १६ परिपक्व होना, पकना।

उतरवाना (हिं॰ क्रि॰) उतारनेका कार्य अन्यसे लेना, उतारनेको हुकम देना।

उतरहा (हिं॰ वि॰) उत्तर दिक् सम्बन्धीय, हिमाली, उत्तरी।

उतरा (हिं॰ वि॰) अधोगत, अवनत, घटा हुआ, जो बेअगाह पड़ा हो।

उतराई (हिं॰ स्त्री॰) १ अधोगमन, नीचेको जानेका काम। २ नदीके वारपार पहुंचनेका शुल्क, दरया पार होनेका महसूल।

उतराना (हिं॰ क्रि॰) १ उत्तरण करना, नीचेसे ऊपर आना। २ उतरवाना, उतारनेका काम दूसरेसे कराना।

उतरायल, उतरा देखो।

उतरारी (हिं॰ स्त्री॰) उत्तरवायु, हिमालसे चलनेवाली हवा।

उतराव (हिं॰ पु॰) उतराई देखो।

उतरावना (हिं॰ क्रि॰) उतारना, ऊपरसे नीचे लाना।

उतरास (हिं॰ स्त्री॰) उतरनेकी इच्छा, नीचे आनेकी ख्वाहिश।

उतरिन, उऋण देखो।

उतरौला—१ युक्त-प्रदेशके गोंडा जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा॰ २६° २३´ एवं २७°२५´ उ॰ और द्राघि॰ ८२°८´ तथा ८२° ३८´ पू॰ के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १४४८ वर्गमील है। उसमें ८८७ वर्गमील पर कृषिकार्य चलता है। लोकसंख्यामें हिन्दू अधिक हैं। उतरौलेमें सात परगने लगते हैं—उतरौला, शाहदुल्ला नगर, बूढ़ापाड़ा, बहरीपुर, मानिकपुर, बलरामपुर और तुलसीपुर।

२ गोंडा जिलेका एक परगना। इससे उत्तर राप्ती नदी, पूर्व बसती जिला, दक्षिण कुवाना नदी और पश्चिम बलरामपुर परगना है। उतरौले परगनेके मध्य सुआवन नदी बहती है। सुआवन और कुवाना नदीके बीचका स्थान 'उपरहार' कहलाता है। रबी और खरीफ दोनो फसलें अच्छी तरह पैदा होती हैं। सुआवन नदीका तीर कंकरीला है। अधिवासियोंमें अहीर, कुर्मी, कोरी प्रभृति नीच जातीय हिन्दू अधिक मिलते हैं। यहां अनेक प्राचीन दुर्गोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। मुसलमानोंके आनेसे पहले हिन्दू राजगणने उक्त दुर्ग बनवाये थे। वर्तमान नवाबके आदिपुरुष अलीखान् नामक एक पठानने यह स्थान किसी रजपूतसे लीता। उस समय भारतमें मुगल बादशाह प्रबल हो गये थे। किन्तु स्थानीय पठान नवाबने उनकी अधीनता स्वीकार करना न चाहा। अवशेषको अलीखान्ने अकबरके वशीभूत हो अपने पितापर अस्त्र उठाये थे। पिता-पुत्रमें युद्ध ठना। अलीखान्ने अपने पिताका मस्तक छिन्न कर जयचिह्नस्वरूप दिल्ली भेजवाया और पितृमूर्तिके स्मरणार्थ एक सुन्दर समाधिस्तम्भ बनवाया। बीस वत्सर राजत्वके बाद उनके पुत्र दाऊदखान्को पितृपद मिला था। किन्तु उनके राजत्वकालपर उतरौलेमें बहरीपुरके राजगणका अधिकार जम गया। १६२८ ई॰ को पूर्वराजवंशीय सलीमखान् नामक एक व्यक्तिने फिर यह स्थान ले लिया था। किन्तु उनके राजत्व कालपर दारुण गृहविवाद उठा। सलीमने विवाद बन्द करनेके लिये राजत्वको पांच अंशमें बांटा था। उन्होंने फतेहखान्, पहाड़खान्, रहमतखान् और मुबारक चार पुत्रको एक-एक अंश दिया तथा एक अंश खास अपने लिये रख लिया। सलीमखान्के प्रपौत्र महावत (दिलावरखान)-ने गोंडेके राजा दत्तसिंहको मिल बानसीके राजासे अनेक बार युद्ध किया था। बानसीराज सम्पूर्ण रूपसे हारे। पहाड़खान्के वंशधर क्रमान्वयसे उतरौले पर राजत्व करते चले आते हैं।

३ गोंडा जिलेका एक नगर या शहर। उतरौला अपने परगनेमें प्रधान स्थान है। यह अक्षा॰ २७° १८´ उ॰ और द्राघि॰ ८२° २०´ २५´´ पू॰ के मध्य अवस्थित है। राजपूतोंने यह नगर बसाया था। निदर्शन मिला—उनके समय उतरौला परिखासे परिवेष्टित सुन्दर दुर्ग रहा। यह नगर आम्रके उपवनसे समाकीर्ण है। विद्यालय, न्यायालय और दातव्य-चिकित्सालय बने हैं।

उतलाना (हिं॰ क्रि॰) आतुर होना, जल्दी मचाना, हलचल डालना।

उतला (हिं॰ वि॰) आतुर, जल्दबाज़, जो जल्दी करता हो।

उतवंग (हिं॰ पु॰) उत्तमाङ्ग, मस्तक, खोपड़ा।

उतसव (हिं॰ पु॰) उत्सव, जलसा।

उतसाह (हिं॰) उत्साह देखो।

उतान (हिं॰ वि॰) १ व्युत्क्रान्त, मक़लूब, औंधा, उलटा, जो अपनी पीठ ज़मीनसे लगाये हो।

उतान—बम्बईप्रान्तके थाना जिलेका 'बन्दर'। यह अक्षा॰ १६° १८´ उ॰ तथा द्राघि॰ ७२° ४८´ पू॰ पर थाने नगरसे १७ मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। यहां एक पोर्तुगोज़ गिर्जा है। कितना ही माल आया-जाया करता है।

उतार (हिं॰ पु॰) १ अवतरण, ढलाव, ऊपरसे नीचे आनेका काम। २ निर्लज्ज स्त्री, बेशर्म औरत। ३ प्रतिलेख, अनुकरण, मुसन्ना, नक़ल। ४ घाट, नदी पार होनेका मुहमून। ५ दरीके करघेका एक बांसा यह जुलाहेसे अलग और पश्चात् दिक् चढ़ावके बराबर पड़ता है। ६ न्योछावर, सदक़ा। ७ विषको मारनेवाला पदार्थ, जिस चीज़से ज़हर उतरे। ८ अभिचार विशेष, एक टोटका। इसे लपक अपने सङ्कल्पको कामनाके लिये करते और एक दिन ग्रामसे बाहर बसते हैं। ९ भाटा, लहरका ढलाव। १० विनाश, बरबादी। ११ मूल्यका पतन, भावका गिराव। १२ शुल्कका अपचय, आमदनीकी कमी।

उतार-चढ़ाव (हिं॰ पु॰) आरोहण एवं अवतरण, चढ़ा-उतरी, ऊंच नीच, घटती-बढ़ती, भलाई-बुराई।

उतारन (हिं॰ पु॰) १ परित्यक्त वस्त्र, पुराना कपड़ा। २ न्योछावर, सदक़ा, किसीके ऊपर उतार कर दी जानेवाली चीज़। ३ निकृष्ट द्रव्य, खराब चीज़। ४ दुष्ट मनुष्य, बदमाश आदमी।

उतारना (हिं॰ क्रि॰) १ अवतारण करना, ऊपरसे नीचे लाना। २ लिखना, खींचना, घसीटना। ३ पृथक् करना, छोड़ाना, काटना। ४ अवस्थित करना, रखना, ठहराना। ५ चतुर्दिक् घुमाना, इस्तत: देखाना। ६ परिशोध करना, दे डालना। ७ उगाहना, ले आना। ८ उपजाना, पैदा करना। ९ निर्माण करना, बनाना। १० न्यून करना, घटाना। ११ तुलना करना, तौलना। १२ नदी पार ले जाना। १३ प्रवेश करना, घुसेड़ना। १४ निःसरण करना, निकालना। १५ पान करना, पीना। १६ निगल जाना। १७ त्याग करना, छोड़ना। "दारका गुस्सा बखारपर उतारती हैं।" (लोकोक्ति) १८ स्थानच्युत करना, हटाना। १९ खराब करना, बिगाड़ना। "जब अपनी उतार ली तो दूसरेकी उतारने का देर।" (लोकोक्ति) २० रगड़ना, घिसना। २१ लुण्ठन करना, लूटना। २२ एकत्र करना, चुनना बिनना। २३ ढालना, भरना। २४ विभाग करना, बांटना। २५ दान करना, देना। २६ प्रेरण करना, भेजना। २७ देशनिर्वासन एवं स्वास्थ्यविनाशन करनेको समुद्रपार और मार उतारना कहते हैं।

उतार-सुतार (हिं॰ पु॰) १ उपशम, आराम। २ शोधन, अदा, चुकती।

उतारा (हिं॰ पु॰) १ उत्सर्ग, तफ़रीक़, कमी। २ पात्रस्थित परिपक्व अन्नादि, किसी बरतनमें रखा भात वग़ैरह। इसे कई बार रोगीको चारो ओर आरतीकी तरह घुमाकर उतारते हैं। लोगोंको विश्वास है, रोगीको प्रेत बाधा उतारे पर उतर जाती है। ३ सामग्री विशेष, किसी क्रियाका सामान्। यह उतारेमें लगता है। ४ संस्थान, पड़ाव, उतरनेकी जगह। ५ तरणस्थान, घाट, नदी पार करनेकी जगह। ६ प्रतिलिपि, नक़ल। ७ उत्तर, जवाब। ८ घट्ट-शुल्क, घाटकी उतराई। ९ मन्दिरको प्रदत्त भूमि, जो ज़मीन् मन्दिरको मिली हो। १० निष्कर भूमि, माफ़ीकी ज़मीन्। इसे सरकार अपने कर्तव्य पालनेवाले सेवकको देती है। (वि॰) ११ उतारा हुआ, जो उतार डाला गया हो। पश्चात्पालक और भग्न मूल्य द्वारा क्रीत द्रव्यको उतारेका माल कहते हैं।

उतारू (हिं॰ वि॰) १ उद्युक्त, आमादा, राज़ी, उतर पड़नेवाला। (पु॰) २ यात्री, मुसाफ़िर।

उताल (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ सत्वर, जल्द, झट। (स्त्री॰) २ त्वरा, शिताबी, जल्दी।

उताल (विजापुर)—मध्यप्रान्तके सम्बलपुर जिलेकी एक जमींदारी। यह बड़गढ़ तहसीलमें लगती और सम्बलपुर नगरसे १८ मील दक्षिणपूर्व पड़ती है। भूमिका परिमाण ८० वर्गमील है। चावल, दाल, ऊख, रुई और तेलहनकी उपज अधिक है। उताल या विजापुरग्राममें एक सुन्दर तड़ाग और विद्यालय बना है। इसके प्रभु प्रकृत गोंड़ हैं। १८२० ई० पर अंगरेज सरकारसे पूछ सम्बलपुरको राजा महाराज साहीने स्थानीय नरेश गोपी कुलताको उताल उपाधि दिया था। उन्हींके वंशज आज भी जमींदारी अपने हाथ रखते हैं।

उताली, उताल देखो।

उतावल (हिं० स्त्री०) १ व्यग्रता, अस्वास्थ्य, बेचैनी। २ साहस, हिम्मत। ३ शीघ्रता, शिताबी। (क्रि० वि०) ४ सत्वर, फौरन्। (वि०) ५ आशुकारी, जल्दबाज़, तेज़ी देखानेवाला।

उतावला (हिं० पु०) धैर्यरहित पुरुष, बेसब्र आदमी।

"उतावला सो बावला धीरा सो गम्भीरा।" (लोकोक्ति)

उतावली (हिं० स्त्री०) १ त्वरा, जल्दी। २ चापल्य, बेचैनी।

उताहल (हिं क्रि० वि०) शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द, तेज़ीके साथ।

उताहिल, उताहल देखो।

उताहो (सं० अव्य०) १ विकल्प—अथवा, या इत्यादि। २ प्रश्न—क्या, क्यों बग़ैरह। ३ विचार—अवश्य, हां प्रभृति।

उताहोस्वित् (सं० अ०) अथवा, आया, या।

उतूल (सं० पु०) जातिविशेष, किसी क़ौमके लोग।

उत्थण, उल्वण देखो।

उते (हिं० क्रि० वि०) उस पार्श्व, उधर, वहां, उत।

उतेला (हिं० पु०) १ माष, उड़द। (क्रि० वि०) २ शीघ्र-शीघ्र, जल्द-जल्द।

उत्क (सं० त्रि०) उत्-क निपातनात्। १ उत्सुक, ख्वाहां। २ वस्तु विशेषकी प्राप्तिका अभिलाषी, जो किसी ख़ास चीज़के पानेका ख्वाहां हो। ३ पश्चात्तापकारी, अफ़सुर्दा, उदास। ४ अनुपस्थित, ग़ैरहाज़िर, जो दूसरी बात विचारता हो। (पु०) ५ अभिलाष, ख्वाहिश। ६ अवसर, मौका।

उत्कच (सं० त्रि०) उद्गत: उन्नतो कचोऽस्य। १ केशशून्य, बेबाल। २ उन्नतकेश, खड़े बालवाला। ३ पुराणवर्णित भारतके पूर्वप्रान्तवासी दुर्धर्ष जातिविशेष। घटोत्कच देखो।

उत्कच्छा (सं० स्त्री०) छन्दो विशेष। इसमें छः पाद रहते हैं। प्रत्येक पादमें ग्यारह एकाक्षरमात्रा लगती है।

उत्कञ्चुक (सं० त्रि०) कूर्पासकविहीन, जो चोली या मिर्ज़ई न पहने हो।

उत्कट (सं० त्रि०) उत्-कट्-अच्। तीव्र, तेज़, मामूली हिसाबसे ज्यादा। २ मत्त, मतवाला। ३ व्याप्त, भरा हुआ। ४ अधिक, ज्यादा। ५ श्रेष्ठ, बड़ा, घमण्डी। ६ विषम, नाहमवार, जो बराबर न हो। ७ कठिन, मुशकिल। (पु०) ८ मत्त गज, मतवाला हाथी। ९ मत्तगजके गण्डस्थलसे टपकनेवाला द्रवपदार्थ, हाथीके मत्थेसे झड़नेवाला मद। १० शरकाण्ड, रामशर। ११ क्षुद्र क्षुपविशेष, एक छोटा झाड़। १२ इक्षु, ऊख। १३ रक्तेक्षु, लाल ऊख। १४ मद, नशा। (क्ली०) १५ तृणभेद, एक पेड़। १६ लताविशेष, मालसा। १७ गुड़त्वक्, दालचीनी। १८ तेजपत्र, तेजपात।

उत्कटा (सं० स्त्री) सैंहलीलता, कटकटारा, सफ़ेद घुंघची। सैंहली (उत्कटा) कटु, उष्ण, क्रमिघ्न, दीपन एवं कोष्ठशोधन होती और कफ, श्वास तथा वायुजनित रोगको शमन करती है। (राजनिघण्ट)

उत्कटा उष्ण, तिक्त, हृद्य और रुचिकर है। यह मूत्रकृच्छ्र, पित्त, वात, मेह, तृष्णा, हृद्रोग और विस्फोटकको मारती है। इसका बीज शीतल, हृद्य, रुचिकर और मधुर प्रकीर्तित है। (वैद्यकनिघण्ट)

उत्कटासन, उत्कटुकासन देखो।

उत्कटुकासन (सं० क्ली०) कठिनासन, नशिस्तआसान, चौकुंट बैठक, पालती मारकर बैठनेकी हालत।

उत्कणिका (सं० स्त्री०) उच्छिन्न क्षुद्रांश, उठाया हुआ रेशा या टुकड़ा।

उत्कण्टक (सं॰ क्ली॰) क्षुपभेद, दवाद्रुव।

उत्कण्ठ (सं॰ पु॰) उद्गतः कण्ठो यस्य। १ आसन, नमित्सं, हेठक। यह शृङ्गारके षोड़श बन्धमें वयोदेश है।

"नारीपादौ च इस्ते न धारयेद्रमणे पुनः।
कण्ठार्पितकरः कामी बन्धोत्कण्ठसंज्ञकः॥" (रतिमञ्जरी)

२ प्रिय व्यक्ति या वस्तुके लिये अभिलाष, प्यारेके वास्ते लालच। ३ पश्चात्ताप, किसी आदमी या चीज़के लिये पछतावा। (वि॰) ४ उद्ग्रीव, गर्दन उठाये हुआ।

उत्कण्ठा (सं॰ स्त्री॰) उद्-कठि-अ-टाप्। औत्सुक्य, शौक़, ख़ाहिश। इष्टलाभमें कालक्षेपकी असहिष्णुताको उत्कण्ठा कहते हैं। यह एक सञ्चारी भाव है।

"कबौं अब करि सखी सयानी।
सिय हिय अति उत्कण्ठा जानी॥" (तुलसी)

उत्कण्ठित (सं॰ वि॰) उत्कण्ठा जाताऽस्य, उत्कण्ठा-इतच्। उद्विग्न, उत्सुक, बेचैन, अफ़सोसमें पड़ा हुआ।

उत्कण्ठिता (सं॰ स्त्री॰) नायिकाभेद, किसी क़िस्मकी औरत।

"सङ्केतसद्मनि प्रति भर्तुरागमनकारणं चिन्तयति या।" (रसमञ्जरी)

सङ्केत स्थानपर नायकागमनके लिये दुःखित होनेवाली स्त्रीको उत्कण्ठिता कहते हैं। इसके अरति, सन्ताप, तृष्णा, अङ्गाकर्षण एवं कम्पन, रोदन और शब्दयुक्त दीर्घ निश्वास प्रकृत लक्षण देख पड़ते हैं। दूसरे— "आगन्तुं कृतचित्तोऽपि दैवान्नायाति यत्प्रियः।

तदागमनदुःखार्ता विरहोत्कण्ठिता तु सा॥" (साहित्यदर्पण)

आगमनको निश्चय करते भी यदि प्रिय दैवात् नहीं आता, तो उस नायिकाका नाम विरहोत्कण्ठिता रखा जाता है। क्योंकि वह उसके न आनेपर दुःखित होती है।

उत्कता (सं॰ स्त्री॰) उत्क-तल्। १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल। २ उत्कण्ठा, चाव।

उत्कन्दक (सं॰ पु॰) रोगविशेष, एक बीमारी।

उत्कन्धर (सं॰ वि॰) उन्नतः कन्धरोऽस्य, प्रादि॰ बहुव्री॰। १ उन्नतग्रीव, गर्दनको पीछे उठाये हुआ। (क्ली॰) २ ग्रीवाका पश्चात् दिक् नमन, गर्दनका पीछेकी ओर झुकाव।

उत्कम्प (सं॰ पु॰) १ कामादिजनित कम्पन, थरथिरा, थरथराहट। "सोत्कम्पानिर्मिवदनानौपरमनवीनिकिन।" (माघ) (वि॰) उत्-कम्प-अच्। २ उत्कम्पान्वित, लरज़ां, थरथरानेवाला।

उत्कम्पन (सं॰ क्ली॰) विलोड़न, क्षुब्धिय, झकोर।

उत्कम्पिन् (सं॰ वि॰) कम्पान्वित, लरज़ां, जो हिलडुल या झकोर रहा हो।

उत्कर (सं॰ पु॰) उत्-कृ-अप्। १ राशि, ढेर। २ प्रसारण, फैलाव। ३ विक्षेप, फेंकफांक। कर्मणि अप्। ४ विक्षिप्त धूल्यादि, कूड़ाकर्कट। ५ रक्तोत्, लाल रङ्ग। ६ उत्कारिका, पुलटिस। (वि॰) ७ राशिमय, ढेर हो जानेवाला, जो जमा हो।

उत्करादि—पाणिनि-कथित एक गण। इसमें निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उत्कर, सम्फल, शफर, पिप्पल, पिप्पलीमूल, अश्मन्, सुवर्ण, खलाजिन, तिक, कितव, अणक, त्रैवण, पिचुक, अश्वत्थ, काश, क्षुद्र, भस्त्रा, शाल, जन्या, अजिर, चर्मन्, उत्क्रोश, शान्त, खदिर, शूर्पणाय, श्यावनाय, नैवाकव, तृण, वृक्ष, शाक, पलाश, विजिगीषा, अनेक, आतप, फल, सम्पर, अर्क, गर्त, अग्नि, वैराणक, इड़ा, अरण्य, निशान्त, पर्ण, नीचायक, शङ्कर, अवरोहित, क्षार, विशाल, वेत्र, अरीहण, खण्ड, वातागार, मन्त्रणार्ह, इन्द्रवृक्ष, नितान्तावृक्ष और आर्द्रवृक्ष।

उत्कारिका (सं॰ स्त्री॰) मोदक विशेष, एक मिठाई। यह दुग्ध, गुड़ और घृतसे बनती है।

उत्करीय (सं॰ वि॰) उत्कर-सम्बन्धीय, ढेरमें निकट रहनेवाला।

उत्कर्कर (सं॰ पु॰) वाद्ययन्त्र विशेष, एक बाजा।

उत्कर्ण (सं॰ वि॰) उन्नतः कर्णो यस्मिन् यस्य वा। १ उन्नतकर्णयुक्त, जो कान खड़े किये हो। (पु॰) २ उन्नतकर्ण, खड़ा कान। ३ वायुजन्य अश्वरोग, घोड़ेको वातसे पैदा होनेवाली एक बीमारी। इसमें घोड़ेका कर्ण, पुच्छ और भाव स्तब्ध हो जाता है। (जयदत्त)

उत्कर्तन (सं॰ क्ली॰) उत्-कृत-ल्युट्। १ छेदन, छेदाई। २ उत्पाटन, कांट-छांट। ३ मूलोच्छ

मूढ़गर्भकी चिकित्साका एक उपाय, हमलकी बीमारीका शुरुआ। मूढ़गर्भ देखो।

उत्कर्ष (सं॰ पु॰) उत्-कृष-घञ्। १ अतिसार, दस्तकी बीमारी। २ श्रेष्ठता, अज़मत, बड़ाई। "उत्कर्षं योषितः प्राप्ताः स्वैः स्वैर्भर्तृगुणैः शुभैः।" (मनु ९।२४) ३ वृद्धि, बढ़ती। ४ आकर्षण, कशिश, खैंचतान। ५ सौभाग्य, इक़बालमन्दी, लहर-बहर। ६ आधिक्य, ज़्यादती। ७ अहङ्कार, फ़ख़्र, घमण्ड। ८ अभिमान, शेख़ी। ९ आनन्द, ख़ुशी। (त्रि॰) १० उन्नत, बुलन्द, ऊंचा। ११ अधिक, ज़्यादा, बहुत। १२ अभिमानी, शेख़ीबाज़। १३ आकर्षक, खींच लेनेवाला।

उत्कर्षक (सं॰ त्रि॰) उत्-कृष-णिच्-ण्वुल्। १ उन्नतिकारक, बुलन्द बनानेवाला, जो ऊपरको खींच देता हो। २ उत्पाटनकारी, उखाड़ डालनेवाला। ३ कर्षणकारी, खींच लेनेवाला।

उत्कर्षण (सं॰ क्ली॰) उत्-कृष-ल्युट्। ऊर्ध्व आकर्षण, ऊपरकी ओरको खिंचाव। यह सुश्रुतोक्त मूढ़गर्भकी चिकित्साका एक उपाय है।

उत्कर्षता (सं॰ स्त्री॰) १ उन्नति, तरक़्क़ी, बढ़ती। २ आधिक्य, ज़्यादती। ३ अभिमान, शेख़ी। ४ आकर्षण, खिंचाव। ५ सौभाग्य, इक़बालमन्दी।

उत्कर्षित (सं॰ त्रि॰) आकर्षित, खिंचा हुआ।

उत्कर्षिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-कृष णिनि। १ ऊर्ध्वाकर, उठा देनेवाला। २ उत्कर्षान्वित, ऊपरको उठा हुआ।

उत्कल (उड़ीसा)—भारतका एक प्रान्त। यह अक्षा॰ १९° २८′ एवं २२° ३४′ १५″ और द्राघि॰ ८३° ३६′ ३०″ तथा ८७° ३१′ ३०″ पूर्वके बीच अवस्थित है। बिहार और उड़ीसाके गवर्नर इसका शासन करते हैं। उड़ीसामें कितने ही मित्र राज्य भी संमिलित हैं। इसके उत्तर तथा उत्तरपूर्व छोटा नागपुर एवं बङ्गालदेश, पूर्व तथा दक्षिणपूर्व बङ्गालकी खाड़ी, दक्षिण मन्द्राज प्रदेशका गञ्जाम ज़िला और पश्चिम मध्यप्रदेश पड़ता है। मुख्य उड़ीसा ९०५३ और मित्र राज्यका क्षेत्रफल १५१९८ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः पचास लाख होगी।

उड़ीसेकी भूमि दो प्रकारकी है। मोगलबन्दी या अंगरेज़ी—कटक, बालेश्वर और पुरी ज़िला समान एवं उर्वर तथा गड़जात वा करद राज्य पार्वत्य भूभाग हैं। समस्थली महानदी, ब्राह्मणी तथा वैतरणीकी मट्टीसे बनी है। महानदी तथा ब्राह्मणी मध्यभारत और वैतरणी मयूरभञ्ज एवं केंदुझर करद राज्यके पर्वतसे निकलती है। ये तीनों नदी समुद्रतटकी ओर धीरे धीरे मिलनेको बढ़ती और उड़ीसा समस्थली पर अपना संगृहीत जल ३० मीलके अन्तरसे छोड़ती हैं। किन्तु ग्रीष्ममें कहीं कहीं पानी सूख जाता है। सालनदी और सुवर्णरेखा छोटी नदी हैं। वर्षामें बड़ी बाढ़ आती और नदी फूली नहीं समाती। इसीलिये आधा जल नदीकी राह समुद्र पहुंचता और आधा किनारे तोड़ फोड़ देशको ही सींचता है। महानदीमें ४५००० हज़ार वर्ग मील भूमिका जल आता है। पहले यह पर्वतके नीचे नीचे बहती और दोनों किनारेसे आनेवाली अनेक शाखा प्रशाखाओंमें रहती है। किन्तु समस्थलीसे मिलते ही रूप बदल जाता है। यह अपने ही रेतेपर चढ़ने लगती है। दोनो किनारे ऊंचे पड़ जाते हैं। इससे शाखा प्रशाखा निकलती हैं। फिर अधिक वेग नहीं रहता और जल समुद्रतक जा पहुंचता है। इसी प्रकार चारो ओर रेतका ढेर लगनेसे उड़ीसा समस्थली तैयार होती है।

उड़ीसा प्रान्त धीरे धीरे नदी किनारेसे नीचेको ढलता है। इसीसे बाढ़ आनेपर पानी लौटकर नदी पहुंच नहीं सकता। पके खेत डूब जाते हैं। जबतक नदी अच्छी तरह नहीं उतरती, तबतक अधिकांश भूमि जलमें मग्न हो रहती है। गन्दे दलदलोंकी वायु बिगड़नेसे मलेरिया फूट पड़ता है।

उड़ीसामें हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, यहूदी तथा दूसरे मतावलम्बी भी रहते हैं। अलखी या महिमा-धर्मी वहांका एक प्रच्छन्न बौद्ध-सम्प्रदाय है। महिमाधर्मी देखो। किन्तु हिन्दू धर्मका चमत्कार अधिक है। वैतरणी पार होते ही पुण्यभूमि मिलती है। वैतरणीके दक्षिण तटपर अनेक शिवालय बने हैं। याजपुरमें पार्वतीका स्थान है। यह कौलमतानुयायी तान्त्रिकोंका पीठ है। यह कौलमत राज-कीय विभाग है, जहां आरम्भ पर आरम्भ नहीं

मना। प्रत्येक ग्राममें ग्रामणशासन विद्यमान है। नगर, ग्राम यहां तक कि घर घर मन्दिर बने हैं। अति पूर्व कालसे जगन्नाथकी पूजा होती है। जगन्नाथ देखो।

ब्राह्मणमें शैवका प्राधान्य रहते भी वैष्णवमार्गी लोगोंको अधिक प्याग है। उड़ीसेके ब्राह्मण वैदिक और लौकिक दो प्रकारके होते हैं। कहते हैं—प्राय ई०के १२ वें शताब्दसे कन्नौज और बङ्गालके ब्राह्मण पुरी ज़िलेमें आकर बसते हैं। उन्हींका नाम वैदिक है। इससे कोई सौ वर्ष पहले वे उड़ीसाको प्राचीन राजधानी याजपुरमें आ टिके थे। किन्तु ११७५ और १२०२ ई० के बीच जगन्नाथ मन्दिरको पुनः बनवानेवाले राजा अनङ्गभीमदेवने उनके लिये पुरी जिलेमें ४५० उपनिवेश स्थापित किये। वैदिक ब्राह्मण कुलीन और श्रोत्रिय दो श्रेणीमें विभक्त हैं। कुलीन ब्राह्मणके वाथ, नन्द और गौड़ीय तीन पद्धति होती हैं। जीविका राजाकी दी हुई माफ़ भूमि, बालकोंकी शिक्षा और पूजा अर्चनासे चलती है। श्रोत्रिय-कन्याका विवाह अपने पुत्रके साथ करनेपर वैदिक ब्राह्मण बड़ा दहेज लेते हैं। श्रोत्रिय ब्राह्मणके भट्ट, धर, उपाध्याय, मिश्र, रथ, पोत, तिवारी, दाम, पति और शतपथी नव पद्धति हैं। लौकिक ब्राह्मण सबसे छोटे और उड़ीसेके आदि अधिवासी हैं। इनमें छः पद्धति हैं—पण्डा, सेनापति, परछो, बसतिया, पानि और साहु। कृषि, वाणिज्य, शाकविक्रय, रुपयेका लेन-देन और तीर्थयात्रियोंको पथप्रदर्शन इनके धनोपार्जनका प्रधान द्वार है।

क्षत्रिय तीन प्रकारके हैं—देव, लाल और राय। राजा, जागीरदार और महाजन इनमें मिलित हैं। संख्या न्यून रहते भी आर्थिक दशा अच्छी है। द्वितीय श्रेणी सिंह और चन्द्र राजपूतोंकी है। यह छोटे मोटे जमीन्दार होते या फौज, पुलिस, दरबानी और चिट्ठी रसाईका काम करते हैं। लोगोंके शूद्र कहते भी खण्डायत अपनेको क्षत्रिय बताते हैं। पूर्व समय स्थानीय नृपति इनको निष्कर भूमि दे युद्धका काम लेते थे। आज कल इनकी संख्या बहुत अधिक है। कुछ जमीन्दार और माफीदार होते भी अधिकांश खण्डायत कृषि कार्य करते हैं।

करण अपनेको भारतके प्राचीन क्षत्रिय बताते हैं। कितने ही करण जमीन्दारी करते और ब्याज पर रुपया तथा चावल ऋण देते हैं। किन्तु अधिकांश मुनीम, हिसाबदार और छोटे अफसर हैं। इनकी आर्थिक दशा साधारणतः अच्छी है।

शूद्रोंमें चासा (प्रधान कृषक), ग्वाला, पान, तेली, बाउरी (मजदूर) तांती (जुलाहे), केवट, नापित, धोबी, कुम्हार, बढ़ई, कन्दू (हलवाई), सोनार, चमार, माली, हड्डी (मेहतर), मोदक (मोदी), डोम, जुगी (कोरी), सुनरी (कलवार) प्रभृति प्रधान हैं। पान पूर्व समयमें नरवलिके अर्थ मानवको पकड़ ले जाते थे।

यहां मुसलमान भी बहुत रहते हैं। किन्तु वे दरिद्र, अभिमानी और असन्तुष्ट हैं। कितने ही अफगानोंके वंश प्रतिष्ठित हैं। किन्तु वास्तविक ये मुसलमानी फौजके साथ आये सिपाहियोंके सन्तान हैं।

आदिम अधिवासियोंमें गोंड, सन्थाल, मुंडया, भूमिज, खरवार और कोल अधिक हैं। इनमें कुछ हिन्दू धर्मको मानते और कुछ अपने स्वतन्त्र मतपर चलते हैं।

ईसाइयोंमें युरोपीय, यूरेशीय, देशीय और एसियाके लोग मिलते हैं। देशी ईसाई बाप्तिस्त मिशनसे सम्बन्ध रखते हैं।

प्राचीन कालमें इस देशमें जैनों तथा बौद्धोंका प्राबल्य अधिक रहा। किन्तु सन् ई०के ४थे शताब्दमें बौद्धधर्मका प्रभाव घटा था। फिर शैवका प्राधान्य बढ़ा। भुवनेश्वर नगरमें सन् ई०के ७वें शताब्दमें सैकड़ों शिवमन्दिर बन गये हैं। वैष्णव महाभारत और रामायणको मानते हैं। किन्तु शिव और विष्णु दोनों सच्चिदानन्दस्वरूप परब्रह्मके एक अंश समझे जाते हैं। कपिल, भुवनेश्वर और जगन्नाथ देखो।

प्रति वर्ष उड़ीसेमें चौबीस धार्मिक महोत्सव होते हैं। उनमें विष्णुका ही पूजन अधिक रहता है। वैशाख मासमें चन्दनयात्रा तीन सप्ताह चलती है।

नौकापर विष्णु और शिव दोनों जलविहार करते हैं। स्नानयात्राके समय गर्मीमें भगवान् तड़ागमें नहाने जाते हैं। रामलीला, कालीयदमन और जगन्नाथके जन्मका उत्सव भी बड़ा है। रथयात्रा जैसी धूमधाम दूसरे समय नहीं होती।

कृषिमें चावल अधिक चलता है। सूखे टीलों और गहरे दलदलोंमें हर जगह उसे बो देते हैं। चावल कई प्रकारका होता है। दिसम्बर जनवरीका मार्च-अप्रेल, मईजूनका जुलाई-अगस्त और वर्षाके आरम्भका बोया दिसम्बरमें कटता है। सिवा चावलके गेहूं, अड़हर, उड़द, मूंग, मसूर, मटर, सरसों, सन, तम्बाकू, रुई, ऊख, पान, आलू और अनेक प्रकारके शाकादि भी उपजते हैं।

बालेश्वर, कटक, पुरी और चांदबाली बड़े बन्दर हैं। चावल और कपड़ेका व्यवसाय अधिक होता है। कलकत्तेसे घनिष्ट सम्बन्ध है। कितना ही माल आता और कितना ही जाता है। प्रधानतः विलायती एवं देशी सूत, कपड़ा, बोरा, लोहालक्कड़, तेल, मसाला, तम्बाकू और सोना-चांदी बाहरसे मंगाते हैं। चावल, चमड़ा, लकड़ी और लाह चालान करते हैं। बालेश्वरसे चावलका निकास अधिक होता है। जहाज बराबर कलकत्ते आया-जाया करते हैं। बङ्गाल नागपुर रेलवे उड़ीसाके प्रधान प्रधान नगरोंको पहुंचती है। पुरीमें नमक बहुत बनता है। कटकके सोनेका काम प्रसिद्ध है।

यहां रेल और सड़ककी कमी है। कलकत्तेसे मन्द्राज जानेवाली ग्राण्डट्रङ्क रोड (Grand Trunk Road) कछार-जैसे प्रान्तके बीचसे निकली है। इसीकी एक शाखा कटकसे पुरीको फूटी है। सम्बलपुरको भी कटक और मेदिनीपुरसे सड़क लगी है। बन्दर बड़े जहाजोंके लिये उपयुक्त नहीं। पहले माल जहाजसे पानीमें ही नावपर उतरता, फिर कहीं किनारे पहुंचता है। नावें भी बहुत कम मिलती हैं। बरसातमें माल चढ़ाते-उतारते बड़ा कष्ट पड़ता है। उड़ीसेकी नहर भद्रकसे आगे नहीं बढ़ती। जेंदरापाड़ाकी नहरमें कटकसे मारसाघाई तक ही नावें चल सकती हैं। तालदण्डेकी ५२ और मछगांवकी नहर ५३ मील लम्बी है। इनसे प्रायः सिंचाई होती है।

उड़ीसेमें प्रतिवर्ष प्रायः साढ़े बासठ इञ्च वृष्टि होती है। फिर भी जलके रुक न सकनेसे दुर्भिक्ष पड़ते देर नहीं लगती। १८३३-३४, ३६-३७, ३८-४० और ४०-४१ ई०को बड़ा सूखा पड़ा और ज्वर बढ़ा था। फिर १८६६,१८९५ई०को बाढ़ आनेसे करोड़ों रुपयोंकी हानि हुई। चौथाई लोग मर मिटे थे। समुद्र किनारे भी तूफानी पानी चढ़ आता है। उसके नदीकी बाढ़से मिलनेपर जङ्गल और बस्ती दोनों डूब जाते हैं। १८८५ ई०को ऐसी ही दशापर कटकमें कितने ही सरकारी अफसर और उनके बालबच्चे मर गये थे। पशु और सम्पत्तिकी अमित हानि हुई। तूफानी लहरने घण्टोंमें पचासों कोसों तक घर गिरा दिये थे।

किन्तु १८६६ ई०को जो दुर्भिक्ष पड़ा, उसका दृश्य इतिहासके पृष्ठपर सबसे ऊंचा है। चावल न मिलनेसे बाजार बन्द हो गये थे। रुपयेमें छाढ़े चारसेर चावल बिकनेसे गरीब आदमी भूखों मरे। लोगोंने घास पत्ता चबाके दिन काटे थे।

उड़ीसेका जलवायु दक्षिण-बङ्गालसे मिलता जुलता है। मार्चसे मध्य जूनतक ग्रीष्म, मध्य जूनसे अक्टोबर तक वर्षा और नवम्बरके आरम्भसे फरवरी मास तक शीत ऋतु रहती है। जून, जुलाई और अगस्त मास हैजा हुआ करता है। चेचक जनवरीसे मध्य अप्रेल तक चलती है। लोग उड़िये छुआछूतका विचार नहीं रखते और न टीका ही लगवाना चाहते हैं।

इतिहास

उत्कलका प्राचीन नाम कलिङ्ग है। महाभारतके समय वैतरणी नदी-प्रवाहित कलिङ्ग या उत्कलांश पवित्र देश समझा जाता था। उस समय यहां अनेक मुनि ऋषिके आश्रम रहनेका सम्मान लगा है। बुद्धदेवके समय भी यहां समृद्धि बहुत बढ़ी थी।

अशोकके पितामह चन्द्रगुप्तके समयसे कलिङ्ग मौर्यधमके अधीन रहा। सम्राट् अशोकने कलिङ्ग-

वासी दीर्घकालतक लड़ते रहे। युद्धमें असंख्य कलिङ्ग-वासी मारे गये थे। ऐसी उत्कट नरहिंसा देख अशोकका हृदय करुणासे पिघल उठा था।

अशोकप्रियदर्शी देखो।

मौर्यवंशका प्रभाव घटने पर जैनराजवंशने प्रबल हो कलिङ्ग जीता था। खण्डगिरिकी हाथीगुफासे उत्कीर्ण सुवृहत् शिलालिपिमें पराक्रान्त भीखुराज खारवेलका परिचय मिलता है। खारवेलने मगध पर्यन्त देश जीत शुङ्गवंशको मथुरा भगा दिया था।

जैनवंशके बाद कलिङ्गमें गुहवंशका अभ्युदय हुआ था। सिंहलके 'दाठावंश' नामक पालीग्रन्थमें कलिङ्गाधिप गुहशिव वा शिवगुहका नाम मिलता है। इस प्राचीन ग्रन्थको पढ़नेसे समझ सकते हैं—शाक्यबुद्धके निर्वाण पर क्षेम नामा उनके एक शिष्यने चितासे बुद्धदेवका पवित्र दन्त उठा कलिङ्गाधिप ब्रह्मदत्तको लाकर दिया था। उन्होंने अपनी राजधानी पर मणिमाणिक्यखचित एक सुवर्ण-मन्दिर बना उसमें पवित्र दन्तको रखा। इसी दन्तके कारण कलिङ्गकी राजधानीने दन्तपुर नाम पाया था। ३७० से ३८० ई०के बीच उत्तराधिकार-सूत्रसे शिवगुह दन्तपुरके सिंहासन पर बैठे। पहले वे ब्राह्मणके अत्यन्त भक्त रहे। उन्होंने ब्राह्मणवर्गके परामर्शसे अपने पूर्वतन राजाओंके समान दन्तका पूजना छोड़ दिया था। किन्तु किसी नैसर्गिक घटनासे डिग पीछे वे भी दन्तके कट्टर भक्त बने। ब्राह्मणवर्गने इससे बिगड़ पाटलिपुत्राधिपके निकट कलिङ्ग-नरेशपर अभियोग लगाया था। उन्होंने बुद्धदन्तके साथ गुहशिवको पकड़ लानेके लिये चित्तयान नामक एक सामन्तराज भेजे। गुहशिव उनकी गति रोक न सके और दन्तके साथ पाटलिपुत्र नगरको जानेपर बाध्य हुये थे। पाटलिपुत्रमें दन्त आनेसे बहु अभूतपूर्व काण्ड उठने लगे, जिससे पाटलिपुत्राधिप भी उसके भक्त बन गये। उनके मरने बाद गुहशिव फिर उक्त दन्तको अपनी राजधानी ले आये थे। किन्तु वे निश्चिन्त बैठ न सके। अल्प दिन पीछे ही क्षीरधार नामक किसी पार्श्ववर्ती नृपतिने उनके राज्य पर आक्रमण मारा था। क्षीरधारके हारते और मारे जाते भी उनके भ्रातुष्पुत्र बहुसैन्य सामन्त सङ्ग दन्तपुरीको दौड़ पड़े। गुहशिव कहीं निस्तार न देख अपने प्रिय जामाता उज्जयिनीके राजकुमार दन्तकुमारसे कह गये—हमारे न रहते पवित्र बुद्धदन्तको सिंहल पहुंचा दीजियेगा। गुहशिवके युद्धमें मारे जाने पर दन्तकुमार राजकन्याके साथ छद्मवेशमें पवित्र दन्त उठा सिंहलको चलते बने। उसी समयसे बुद्धका दन्त सिंहलमें रखा और पूजा गया। सम्भवतः उक्त शिवगुहके वंशने दन्तपुरीको छोड़ उत्कलके गड़जातका आश्रय लिया और क्रम क्रमसे उसमें अपना प्रभुत्व फैला दिया। गौड़कविने उनके वंशधरको 'नानारत्नकूट-कुट्टिमविकटकोटाटवीकण्ठी-रवो दक्षिणसिंहासनचक्रवर्ती' कहा है।

मगधमें गुप्तसाम्राज्यकी प्रतिष्ठाके साथ उत्कल भी उसीमें मिल गया। गुप्त-साम्राज्यके पतनपर यह प्रदेश सोमवंशीय राजगणके अधिकारभुक्त हुआ था।

गुप्तसाम्राज्य और सोमवंशी शब्द देखो।

सोमवंशीय राजगण मादलापञ्जीमें केशरिवंशीय भी कहाते थे। इसी केशरिवंशके समय उत्कलमें नाना स्थानोंपर बहु शिवमन्दिर बने। उनका भग्नावशेष आज भी विद्यमान है। गङ्ग या गाङ्गेय-वंशके अभ्युदयसे सोमवंशीय राजगणका प्रभाव घट गया था।

शक ८८८में गाङ्गेय वंशतिलक चोड़गङ्गका अभ्युदय हुआ। इस विषयके कितने ही शिलालेख और ताम्रफलक मिले हैं, जिन्हें देखनेसे हम निम्नलिखित वृत्तान्त समझ सके हैं—

शक ८८८के कई वर्षबाद महाराज चोड़गङ्ग उत्कलके सिंहासन पर बैठे। इनके पिता प्राच्य गङ्गवंशके २य राजराज रहे। माताका नाम राजसुन्दरी था। इनकी कई रानियोंका नाम—कस्तूरिकामोदिनी, इन्दिरा, चन्द्रलेखा, सोमला, महादेवी, लक्ष्मीदेवी और पृथिवी महादेवी रहा। कामार्णव, राघव, राजराज, अनियङ्कभीम और सुमावद्यम पुत्र थे। इन्हें लोग अनन्तवर्मा, वासुदगङ्ग, गाङ्गेयवर और विक्रमगङ्ग उपाधिसे सम्बोधन करते थे। ये प्रबल

प्रसिद्ध और प्रतिभाशाली थे। इन्होंने उत्कलका राज्य तथा बङ्गदेशको भी जीत लिया। मद्गुर्ग धनमया नगर छीन चोड़गङ्गने मन्दार-नरेशको मार भगाया था। सम्भवतः आईन-अकबरीमें जिस स्थानका नाम 'सरकार मन्दारन' लिखा है, वही मन्दार प्रान्त रहा। आज कल इसे भीतरगढ़ या भीटागढ़ कहते हैं। चोड़गङ्गने अपना राज्य गङ्गाके उत्तरसे गोदावरीके दक्षिण तक बढ़ा लिया था। किन्तु चेदी-शिलालेखके अनुसार रत्नदेव राजाने इन्हें नीचा दिखाया। ये बड़े धार्मिक थे। इन्हींकी आज्ञासे पुरीमें जगन्नाथ देवका मन्दिर बना। चोड़गङ्गके समय विज्ञान और साहित्यकी भी अच्छी उन्नति हुई। संस्कृत और तैलगु भाषाका प्रचार अधिक था। शक १०२१ में शतानन्दने भास्वती नामक ज्योतिष-सम्बन्धीय ग्रन्थ लिखा। कोई ८० वर्षके वयसमें इन्होंने ७२ वत्सर राज्यकर इहलोक छोड़ा था। आज भी चोड़गङ्गके नामका परिचय पुरीके चुड़ङ्गसाही महल्ले, कटक नगरसे दक्षिणपश्चिम तीन कोस चूड़ङ्गपुरवाले तालाब, सारङ्गगढ़ किले और कटक जिलेके याजपुर नगरमें मिल सकता है।

शक १०५८में कामार्णवने सिंहासन पर बैठ १०७८ तक राजत्व किया। ये चोड़गङ्गके औरस और कस्तूरिकामोदिनीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उपाधिरूपसे कामार्णवको लोग कामार्णव देव, अनन्त-मधु-कामार्णवदेव और अनन्तदेव भी कहते रहे।

शक १०७८ से १०८४ तक राघव राजा बने। उन्होंने चोडगङ्गके औरस और रविकुलकी इन्दिराके गर्भसे जन्म लिया था।

शक १०८२ को २य राजराज राजा हुये। ये चोड़गङ्गके औरस और चन्द्रलेखाके गर्भसे उपजे थे। इनका औपाधिक नाम अनन्तवर्मदेव रहा। शक ११११ में उनका शासन समाप्त हो गया।

शक ११११ से ११२० पर्यन्त २य अनियङ्क-भीम वा अनङ्गभीमदेवने राज्य किया था। ये चोड़गङ्गके पुत्र और २य राजराजके भ्राता रहे। गोविन्द नामक इनके एक प्रधान ब्राह्मण मन्त्री थे। २य राजराजके शासक स्वप्नेश्वरदेवने मेघेश्वरका मन्दिर बनवाया था।

शक ११२० में ३य राजराज उत्कलके नरेश हुये। ये अनियङ्कभीमदेवके औरस और रानी बाघला देवीके गर्भसे उपजे थे। इनका उपाधि नाम राजेन्द्र था। राजराजके सिंहासनारूढ़ होते ही मुहम्मद बख्तियारके दो सेनापति मुहम्मद शेरान् और अहमद शेरान् उड़ीसे पर चढ़े, किन्तु अपने प्रभुके वधका समाचार पा लौट पड़े। ३य राजराजने शक ११३३ तक राज्यका सुख उठाया था।

शक ११३३ से ११६० तक ३य अनङ्गभीमदेवने शासन चलाया। वे ३य राजराजके औरस और चालुक्यवंशीया सद्गुणा या महूणा देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। विश्वलिङ्गनाथ उपाधि रहा। उनके ब्राह्मण-मन्त्री विष्णु सुमन्त्राथो पृथिवीपति और यवनोंसे लड़े थे। शक ११६० को १म नृसिंहदेवने राज्य पाया। ये अनङ्गभीमदेवके औरस और कस्तूरादेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १म नृसिंह देवने राढ़ और वारेन्द्र पर आक्रमण कर यवनोंको हराया। कोणार्कका बड़ा मन्दिर उन्होंके आदेशसे बना था। फिर कोणाकोण या कोणार्कवाले सूर्य-मयके भी वही निर्माता रहे। १म नृसिंह देवकी सभामें रहनेवाले पण्डित विद्याधरने एकावली नामक अलङ्कारका एक ग्रन्थ लिखा था। शक ११८६में उनके शासनका अन्त हुआ।

११८६ से १२००-१ तक १म भानुदेवने राजत्व किया। ये १म नृसिंहदेवके औरस और मानचन्द्रकी कन्या सीतादेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १म भानुदेवने श्रोत्रिय ब्राह्मणोंको भूमि तथा ग्राम समर्पण कर सैकड़ों दानपत्र लिखे थे।

शक १२००-१ से १२२७-२८ तक २य नृसिंह देव उत्कलके सिंहासन पर सुशोभित हुये। वे १म भानुदेवके औरस और चाहमान-वंशीय चाकल्ला देवीके गर्भसे सम्भूत थे। उपाधि वीरनृसिंहदेव, वीरश्री अथवा श्रीवीरनृसिंह देव, प्रतापवीर श्रीनृसिंहदेव, वीरश्री वा श्रीवीरनरनारसिंहदेव और अनन्तवर्म

प्रतापवीर नरनारसिंह देव रहा। कलिङ्गके शासक नरहरितीर्थने कामेश्वरके सम्मुख योगानन्द-नृसिंहका मन्दिर बनवाया था।

१२२७-८से १२४९-५० तक २य भानुदेवका राज्य रहा। वे २य नृसिंहदेवके औरस और चोड़ा-देवीके गर्भसे उपजे थे। पूर्ण उपाधि श्रीवीरादिवीर-श्रीभानुदेव रहा। इनके साथ गयासुद्दीन तुगलकका तुमुल युद्ध चला था।

१२४९-५०से १२७४-५ तक ३य नृसिंहदेव राजाके पद पर बैठे। वे भानुदेवके औरस और रानी लक्ष्मीदेवीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। उनके महिषी कमला देवीके गर्भसे सीतादेवी नामक कन्या हुयी।

१२७४-५से १३००-१ तक ३य भानुदेवका अधिकार रहा। वह ३य नृसिंहदेवके औरस और कमला देवीके गर्भसे उत्पन्न हुये। उपाधि श्रीवीर अथवा वीरश्री भानुदेव और प्रतापवीर भानुदेव रहा। बङ्गालके शासक काजी इलयासने ३य भानुदेवके मरनेसे उत्कल पर आक्रमण किया था।

१३००-१से १३२४ तक ४थं नृसिंहदेव राज्य करते रहे। वे ३य भानुदेवके औरस और चालुक्य कुलकी रानी हीरादेवीके गर्भसे उपजे थे। औपाधिक नाम वीरनृसिंहदेव, वीर-श्रीनरसिंह देव और वीरश्रीनृसिंहदेव रहा। उनके समय जौनपुरके शरकी खानदानवाले ख्वाजा जहान्ने अच्छपावती और जाजनगरको कर देनेपर बाध्य किया था। फिर बहमानी वंशके सुलतान् फीरोज़ आजनगरमें पहुंच कितने ही हाथी लूट ले गये। मालवेके नवाब हुसेनुद्दीन् होशङ्गने भी जाजनगर पर आक्रमण मारा था।

इसके पीछेका वृत्तान्त किसी दानपत्र या शिलालेखमें नहीं मिलता। मादलापंजी अथवा जगन्नाथ मन्दिरके वृत्तविवरणसे समझते हैं, गाङ्गेयवंशके अन्तिम नृपति भानुदेव रहे। उनका शासन शक १३५६-से लगा था। उन्हें अकटा अबटा या मत्त भी कहते थे। उनके मरने पर कपिलेन्द्र या कपिलेश्वरदेव मन्त्रीने सिंहासन हड़प कर सूर्यवंशकी प्रतिष्ठा की थी।

१३७४ शक (१४५२ ई०)में इस गङ्गवंशका लोप होनेपर कपिल नामक एक सूर्यवंशी पुरुष कपिलेन्द्रदेव उपाधि धारण कर उड़ीसेके राजा बने। उन्होंने सेतुबन्ध रामेश्वर तक अधिकार फैलाया था। इसी वंशमें प्रतापरुद्रने जन्म लिया। प्रतापरुद्रके राजत्वकाल पर श्रीचैतन्यदेव श्रीक्षेत्रके दर्शनको गये थे। प्रतापरुद्रके पौत्र कखारुया देवके राजत्व बाद कपिलवंश मिटा। १५५२ ई०में मुकुन्ददेव राजा हुये थे। उनके राजत्वके अन्तिमकाल पर देवद्वेषी कालापहाड़ यहां आ पहुंचा था। मुकुन्दके पुत्र गोड़िया गोविन्द जब राजा रहे, तब कालापहाड़ पुरी लटने गये। गोविन्द जगन्नाथ देवकी मूर्ति उठा गढ़पारकूदकर भागे थे। फिर १८ वत्सर अराजकता चली। अनन्तर भूर्जा-वंशीय रामचन्द्रदेव नामक एक व्यक्ति राजा हुये। उन्होंने जगन्नाथ देवकी अवशिष्ट मूर्ति फिर पुरीमें स्थापन करायी थी।

१५१० ई० को मुसलमानोंमें इस्माइल गाजीने सर्वप्रथम उड़ीसेपर आक्रमण मारा था। किन्तु आधिपत्य जम न सका। उस समय भी हिन्दूराजगणका प्रबल प्रताप था। कालापहाड़के आनेसे स्थानीय राजा नानाप्रकार हीनबल हो गये और अवसर देख बङ्गालके नवाब सुलेमान कर्रानीने अनेक स्थान जीत लिये।

१५७४ ई०को अकबरके सेनापति मुनाइम् खान् और टोडरमल उड़ीसेपर झपट पड़े थे। बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके नवाब दाऊदसे जलेश्वर निकट मुगलमारीमें युद्ध चला, जिसमें दाऊदके हारते बङ्गाल एवं विहार अकबरके हाथ लगा। वे केवलमात्र उड़ीसेके नवाब रह गये। क्रमशः १५७५ में दाऊदकी मरीचमारी अफगानोंने फिर मुगलों पर अस्त्र उठाये थे। नाना स्थानपर मुगल और पठान लड़ मरे। १५७८ ई०के समय अकबरने माहमखान् काबुलीको उड़ीसेका शासनकर्ता बनाकर भेजा था। किन्तु कुछ दिन पीछे उन्होंने पठानोंसे मिल मुगलोंको उड़ीसेसे भगा दिया। फिर कुतलखान् नामक एक पठानने उड़ीसेका सिंहासन पाया था। अकबरने कुतलखान्के विरुद्ध मुगल सेना भेजी। अलीमाबादमें कुतल

खान्‌ने समयामके शासनकर्ता मजातको हराया था।

[illegible] देवी।

१५८० ई०में राजा मानसिंह बङ्गाल और विहारके शासनकर्ता बने। वे वर्षाकाल पर वर्धमानके दक्षिण-पश्चिमदिक्‌स्थ गढ़-मन्दारनमें ठहर उड़ीसा जीतने चले थे। धरपुरमें कतलुखान्‌से युद्ध छिड़ा। मुगल-सिपाही हारे और मानसिंहके पुत्र जगत्‌सिंह बन्दी बने। कतलुखानने विष्णुपुर जीत लिया था। अल्प दिन बाद ही कतलुखान् सहसा मर गये। उनके प्रधान वजीर ईसा खान्‌ने मानसिंहसे सन्धि कर ली। जगत्‌सिंहको मुक्ति मिली और पुरी अकबरके अधिकारमें आ गई।

१५८२ ई०में सुलेमान् और उसमान् नामक कतलु खान्‌के पुत्रोंने सन्धिको तोड़ पुरी पर आक्रमण मारा था। राजा मानसिंह द्वितीय बार उड़ीसे आये। बनापुरमें मुगल और पठान भिड़ गये थे। पठान हारे। सुलेमान् और उसमानने फिर अवशिष्ट पठान सेना जोड़ सारनेगढ़में लड़नेको अस्त्र उठाया। किन्तु वे मुगलोंका तेज सह न सके थे। शेष युद्ध हो गया। सुलेमान् और उसमान मानसिंहसे झुके थे। उड़ीसा राज्य अकबरको मिला। राजा मानसिंह बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके राजप्रतिनिधि बने थे। उसी समय स्थानीय देशी राजा रामचन्द्र देवको अकबरने बहुत माना। अकबरके अधिकारमें पहुंचने पर उड़ीसा (बङ्गाल और विहारके साथ) एक शासनकर्ताके अधीन रहा।

१६०० ई०को उड़ीसा स्वतन्त्र हुआ। हाशिम-खान् नामक एक व्यक्ति शासनकर्ता बने थे।

१६११ ई०में राजा कल्याणमल उड़ीसेके शासनकर्ता हुये। उसी समय उसमान फिर पुन स्वाधीनता बचानेको दौड़े। उन्होंने पठानोंसे मिल शेष चेष्टा लगायी। किन्तु समझार उन्हें सुमना न पड़ा, सुवर्णरेखाके तीर रणकी शय्या पर प्राण छूट गया।

खुरदा और राजमहेन्द्रीको छोड़ उड़ीसेके सकल स्थानोंपर अकबरका अधिकार जमा। १६१८ ई०में मुकरमखान् नामक तत्कालीन शासनकर्ताने राजाको हरा खुरदा भी दिल्ली-सम्राट्‌के अधीन कर दिया था। किन्तु राजमहेन्द्री स्वाधीन ही रही।

१६२१ ई० पर शाहजहान्‌ने विद्रोह मचाया था। उन्होंने अपने पिता जहांगीरके रखे तत्कालीन शासनकर्ता अहमद बेको हरा उड़ीसा जीत लिया था। युद्धमें पठान-सामन्त उनसे मिल गये थे।

१६२४ ई०में शाहजहान्‌ने अंगरेजोंको बङ्गदेशमें जहाजके सहारे वाणिज्य करनेका आदेश दिया। किन्तु बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके तत्कालीन शासनकर्ता शाजिम खान बोल उठे—अंगरेज बालेश्वरके निकटवर्ती केवल पिपली नामक स्थानमें ही जहाज लगा सकेंगे।

१७०६ ई० को बङ्गाल, विहार और उड़ीसेके नवाब मुर्शिदकुलीखान्‌ने उड़ीसेसे मेदिनीपुरका जिला स्वतन्त्र कर दिया था। पहले वह उड़ीसेके ही अन्तर्गत रहा।

१७०५ ई०में मुहम्मद तकीखान् उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बनकर आये थे। उसी समय खुरदाके देशी राजा रामचन्द्रदेवने मुसल्मानों पर अस्त्र उठाये। अनेक युद्धके बाद वे कटकमें कैद हुये थे। मुसलमानोंके भयसे पण्डे जगन्नाथ-देवकी मूर्ति दाबकर भाग गये।

१७३४ ई०में मुरशिद कुलीखान् उड़ीसेके सहकारी शासनकर्ता बने। उन्होंने आकर देखा—पूर्व समयकी भांति आमदनी वसूल न होती इसका प्रधान कारण जगन्नाथदेवकी मूर्तिका पुरीमें न रहना है। दूर देशान्तरसे यात्रियोंका आना बन्द हो गया। पहले यात्रियोंका गमनागमन लगा रहनेसे आमदनीका परिमाण क्रमशः बढ़ते ही जाता था। फिर उन्होंने पण्डाओंसे मूर्ति लाकर फिर मन्दिरमें रखनेको विशेष समझाया। जगन्नाथकी मूर्ति वापस आयी और आमदनी भी अधिक परिमाणसे बढ़ गयी।

१७३८ ई०में सरफराज खान् विहार और उड़ीसेके शासनकर्ता बने। किन्तु तत्पर ही अलीवर्दीखान्‌ने उन्हें हरा सिंहासन ले लिया।

१७४१-४२ ई०में मराठोंका उत्पात उठा।

सुजिउद्दौलाके दीवान् मीर-हबीबने चुपके मराठोंको उड़ीसे बुलाया था। अलीवर्दी उन्हें भगानेके लिये अनेक बार लड़े, किन्तु सफलमनोरथ न हो सके। १७४५ ई०में रघुजी भोंसले बङ्गालपर चढ़े थे। उन्होंने उड़ीसेको हस्तगत किया। मीर हबीबको प्रतिनिधि बना रघुजी स्वराज्यको चल दिये। १७४७ ई०में मीरजाफर मराठोंको कटकसे निकालनेके लिये भेजे गये थे। किन्तु उनसे भी कुछ न बन सका। मराठे अफ़गानोंसे मिल गये थे।

१७५१ ई०में अलीवर्दी मराठोंको उड़ीसेसे भगानेके लिये ससैन्य कटक पहुंचे। मराठे हार भी गये, किन्तु किसीप्रकार उन्होंने देश न छोड़ा। इसलिये अलीवर्दीने प्रति वर्ष १२ लाख रुपया कर ठहराकर उन्हें उड़ीसा फिर सौंप दिया।

मराठोंमें शिवभट शास्त्री प्रथम शासनकर्ता हुये थे। १७५६से १८०३ ई० तक उन्होंने उड़ीसे पर शासन चलाया। इसी समय मराठोंके पीड़नसे घबरा अनेक प्रजाने जन्मभूमि छोड़ी। उनमें किसी किसीने अंगरेजोंसे साहाय्य भी मांगा।

१८०३ ई० की १४ वीं अक्टोबरको अंगरेजोंने कटकका दुर्भेद्य दुर्ग जीता था। एक ही दिनके अत्-सामान्य युद्धमें उन्होंने मराठोंके हस्तसे उड़ीसेका शासन भार निकाल लिया। उनका प्रबल प्रताप उसी दिन उड़ीसे राज्यसे अन्तर्धान हुआ। किन्तु अधिकार मिलते भी राज्यकी शासनोंका अभाव था। आमदनी देनेवाले जमीन्दार और फ़सल तैयार करनेवाले किसान न रहे। अंगरेजोंने देखा—'सैकड़ों ग्राम मानवशून्य हैं। उनमें शृगाल वास करते हैं। कुक्कुर पहरो हैं।' उन्होंने घोषणा निकाली—'अब प्रजाको कोई भय नहीं। जो जहां रहें, आकर निज निज भूमि ले ले।' पहले लोग अधिक खुश न सके थे। किन्तु क्रम क्रमसे प्रजा आयी। पूर्वमें जैसी समृद्धि रही, फिर भी वैसी ही हट गयी।

अंगरेजोंके हाथ उड़ीसा आनेपर प्रधानतः तीन नियम चले थे। प्रथम—स्वच्छ शासक अदस्य जाति पर किसी प्रकारका कर या नियम न बंधना और अंग-रेज-कर्माध्यक्षोंका सर्वदा देखते रहना कि, वे परस्पर विवाद बढ़ा रक्त न बहायें। द्वितीय—करदराजगणपर सन्धिके अनुसार कर लगाना, किन्तु उसपर भी गवरन-मेण्टका कर न घटाना। तृतीय—कटक, पुरी और बालेश्वर तीन खास सरकारी स्थान रहना और उनका उत्स्वत्व गवरनमेण्टको ही मिलना।

उत्कल (सं० पु०) १ उड़ीसा प्रान्तके अधिवासी। २ ब्राह्मणश्रेणिविशेष। ३ सुद्युम्नके एक पुत्र, जिनामसे उत्कल प्रान्तका नाम पड़ा है। ४ शाकुनिक, बहेलिया, चिड़ीमार। (त्रि) ५ भारवाहक, बोझ ढोनेवाला।

उत्कलाप (सं० त्रि०) उन्नत एवं विस्तारित पुच्छ-युक्त, खड़ी और फैली पूंछवाला। "तोरणा कलापिन्-कलापैः।" (रघु १६।६४)

उत्कलि (सं० पु०) देशविशेष।

उत्कलिका (सं० स्त्री०) उत्-कल-वुन्-टाप्। १ उत्-कण्ठा, गहरी चाह। २ ऊर्मि, लहर। ३ पुष्प-कलिका, फूलकी कली। ४ क्रीड़ा, नखराबाजी।

उत्कलिकाप्राय (सं० क्ली०) समासयुक्त गद्यभेद, जिस इबारतमें मिले हुये अलफ़ाज़ ज़ियादा रहें। "भवेदुत्कलिकाप्रायं समासाढ्यदृढाक्षरम्।" (छन्दोमञ्जरी)

उत्कर्षण (सं० क्ली०) उत्-कृष-ल्युट्। कर्षण, जोताई।

उत्कलित (सं० त्रि०) उत्-कल-क्त। १ उत्कण्ठित, ख्वाहां, गहरी चाह रखनेवाला। २ बुद्धिमान्, अक्लमन्द।

उत्का (सं० स्त्री०) उत्-कन्-टाप्। उत्कण्ठिता नायिका।

उत्काका (सं० स्त्री०) उत्क्रान्त-काक-अच्-टाप्। प्रति-वर्षप्रसूता गवी, हरसाल ब्यानेवाली गाय।

उत्काकुत् (सं० त्रि०) उन्नतं काकुदमस्य। पाणिनि ५।४।१४८। उन्नत तालुयुक्त, ऊंचे तालूवाला, जिसके तालू उठा रहे।

उत्कार (सं० पु०) उत्-कृ-घञ्। पाणिनि ३।३।३०। १ धान्यादिक्षेपण, गल्लेकी भड़ाई, अनाजकी झाड़ पछाड़। २ धान्यका राशीकरण, गल्लेका इकट्ठा किया जाना।

उत्कारिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-कृ-ण्वुल्। १ उद्-भेदक शोफादि-निवारक पाचन, लुपड़ी, सुरता, पुल-टिस। यथा—

"निरस्ते च यः शोथो विरेकाभेदनकर्मभिः ।
तस्य संपाचनं कुर्यात् समस्तोष्णैरनिन्दितैः ।
दधितक्रसुराशुक्तधान्याम्लैर्मिश्रितैस्तु ॥
विम्बादि भावैश्च परेदुत्कारिकां शुभां ।
दैरण्डपत्रैः शोथं नामयेदुष्णतया तथा ॥" (सुश्रुत)

उपवासमे विरेचन पर्यन्त प्रक्रिया द्वारा यदि शोफ अच्छा न हो; तो दधि, तक्र, सुरा, शुक्त, धान्यिक, घृत एवं लवण मिला उत्कारिका पकावो और उष्ण रहते-रहते एरण्डपत्रके संयोगसे शोफपर बांध दो।

२ रोटिका, रोटी, बाटी। ३ गुटिका, बड़ी। ४ लपिका, लसता, लपसी।

उत्काशन (सं॰ क्लो॰) शासनकार्य, हुकूमत।

उत्कास (सं॰ पु॰) उत्कासयति, कस-अच्। कास-रोग विशेष, किसी किस्मकी खांसी, खखार। यह ऊर्ध्वगत श्लेष्माका उत्क्षेपक रोग है।

उत्कासन (सं॰ क्लो॰) उत्कास देखो।

उत्किर (सं॰ त्रि॰) उत् कृ कर्तरि क। उत्क्षेपक, फेंकनेवाला।

उत्कीर्ण (सं॰ त्रि॰) उत् कृ-क्त। १ उत्क्षिप्त, डाला या लगाया हुआ। २ उल्लिखित, लिखा हुआ। ३ क्षत, विद्ध, चुभोया हुआ। ४ खोदित, खोदा हुआ।

उत्कीर्तन (सं॰ क्लो॰) १ घोषण, प्रचार, पुकार, फैलाव। २ प्रशंसा, तारीफ।

उत्कीर्तित (सं॰ त्रि॰) १ विघोषित, मुश्तहर, ढंढोरा पीटा हुआ।

उत्कुञ्चिका (सं॰ स्त्री॰) १ स्थूल कृष्णजीरक, मोटा काला जीरा। कालाजीरा देखो। २ कुञ्चिकातरु, कुञ्ची-लताका पेड़।

उत्कुञ्चिता, उत्कुञ्चिका देखो।

उत्कुट (सं॰ क्लो॰) उन्नतं कुटो यत्र। उत्तानशयन, चित पड़नेको हालत।

उत्कुटक (सं॰ त्रि॰) उत्तान, चित, पीठको ज़मीनसे लगाये और पेटको ऊपर उठाये हुआ।

उत्कुटकशयन (सं॰ क्लो॰) उत्कुटस्थितिका शयन, चित पड़नेसे पाड़ना।

उत्कुटकासन, उत्कट देखो।

उत्कुण (सं॰ पु॰) उत्-कुण-हिंसने अच्॰ पुरा॰ कर्मणि अप्। १ केशकीट, जूं। २ मत्कुण, खटमल।

इसे संस्कृतमें मत्कुण, षट्पद और किटिम भी कहते हैं। (Anoplura) यह कीड़ा प्रायः ५०० प्रकारका होता, जिसमें मनुष्यके देहपर दो ही तरहका देख पड़ता है—एक (Pediculus capitis) मस्तक और दूसरा (Pediculus vestimenti) शरीरमें। किसी किसी स्थानपर पीड़ित व्यक्तिके चर्ममें तीसरा (P. tabescentium) भी उत्पन्न हो जाता है, जो बहुत भयानक होता है। उसके उपजनेसे प्रायः रोगीके जीवनमें संशय रहता है। साधारणतः उत्कुण पशुपक्षीके शरीरमें अधिक रहता है। इसके देहका आयतन चपटा है। ११।१२ खण्ड या दन्त बन सकते हैं। उनमें शुण्डके अंश तीन हैं। प्रत्येकमें दो पाद और स्पर्शेन्द्रियमें पांच ग्रन्थि रहते हैं। मस्तकके दोनों किनारे एक या दो के हिसाबसे क्षुद्र चक्षु देख पड़ते हैं। दंश दो होते हैं। एक दंशके द्वारा पशुपक्षीके केश या पालकमें उत्कुण घूमता फिरता है। समय समय पर इसी दंशको घुसेड़ अपने फन्देसे यह पक्षीका रक्त चूस लेता है। शिशुके मस्तक पर प्रायः उत्कुण उत्पन्न हो जाता है। यह केशपर बिन्दु-बिन्दु डिम्ब देता, जो आठ दिनके बाद फट पड़ता है। फिर एक मासके मध्य ही यह बढ़ जाता है। शरीरमें भी उत्कुण उत्पन्न होता, उसका स्त्रीकीट प्रति सप्ताह प्रायः ५० तक डिम्ब देकर बच्चे निकालता है।

पशुके चमड़ेपर भी एक जातीय उत्कुण उपजता है—जो कभी मनुष्यके देहमें देख नहीं पड़ता। यह भी बहुत अनिष्टकर होता है। बन्दरके लोममें जो उत्कुण रहता, वह स्वतन्त्र जातिका होता है। कभी-कभी यह बिन्दु-पोटकमें भी देख पड़ता है।

उत्कुल (सं॰ त्रि॰) परिभ्रष्ट, नापाक, कपूत, अपने खानदानको इज्जत बिगाड़नेवाला।

उत्कूज (सं० पु०) कोकिलका शब्द, कोयलका गाना।

उत्कूट (सं० पु०) छत्र, छाता, आफ़ताबी।

उत्कूर्दन (सं० क्ली०) उछाल, उछलकूद।

उत्कूल (सं० वि०) १ पर्वतपर चढ़नेवाला, जो ऊंचेपर हो। (अव्य०) २ पर्वतपर, पहाड़के ऊपर।

उत्कूलित (सं० वि०) सागर या नदीके तटपर आनीत, जो किनारे लगा हो।

उत्कृति (सं० स्त्री०) २६ अक्षरका छन्दोविशेष। इसमें चार पद होते हैं।

उत्कृत्त (सं० वि०) उत्-कृत्-क्त। १ छिन्न, काटा हुआ। २ उत्खात, खुदा हुआ।

उत्कृत्य (सं० अव्य०) छिन्न करके, काटकर।

उत्कृत्यमान (सं० वि०) छिन्न किया जानेवाला, जो कट रहा हो।

उत्कृष्ट (सं० वि०) उत्-कृष्-क्त। १ प्रशस्त, बढ़ा हुआ, जो खिंचकर ऊपर या बाहर निकल गया हो। २ उत्तम, श्रेष्ठ, उमदा; बढ़िया। ३ उत्कर्षान्वित, ऊंचे दरजेवाला। ४ कर्षणवत्, खिंचा हुआ। ५ सर्वोत्तम, सबसे अच्छा। ६ आकर्षित, खिंचा हुआ।

उत्कृष्टता (सं० स्त्री०) श्रेष्ठता, उमदगी, बड़ाई।

उत्कृष्टत्व (सं० क्ली०) उत्कृष्टता देखो।

उत्कृष्टभूम (सं० पु०) श्रेष्ठभूमि, बढ़िया ज़मीन्।

उत्कृष्टवेदन (सं० क्ली०) श्रेष्ठकुलके साथ विवाह-कार्यका समापन, ऊंचे ख़ान्दानवाले आदमीसे शादीका करना।

उत्कृष्टोपाधिता (सं० स्त्री०) प्रबल मायाकी स्थिति, बड़े धोकेकी हालत।

उत्केन्द्रकशक्ति (सं० स्त्री०) बलविशेष, एक ताकत। वेगसे आवर्तमान वस्तुमें इसका उद्भव होता है। यह उक्त वस्तुके अंश विशेष अथवा तदुपरिस्थित अन्य द्रव्यको केन्द्रसे पृथक् फेंक देती है। उत्केन्द्रकशक्ति ही चक्रका कर्दम निकाल इधर उधर छिटकाती रहती है।

उत्कोच (सं० पु०) उत्-कुच सङ्कोचे क। उपायन, रिशवत, घूंस।

उत्कोचक (सं० वि०) उत्कोच-कन्। १ उपायन दान करनेवाला, जो रिशवत देता हो। २ उपायन ग्रहण करनेवाला, रिशवतख़ोर। (पु०) ३ धौम्याश्रमके निकटस्थ तीर्थविशेष। (भारत आदि १८३ अ०)

उत्कोठ (सं० पु०) कोठरोगभेद, किसी क़िस्मका खुजाम, एक कोढ़। इस रोगमें उदीर्ण पित्त, श्लेष्म और अनिलके वहसे असम्यक् वमन होता और मकण्डू, रागवान् तथा मानुबन्ध बहु मण्डल पड़ता है। (माधवनिदान)

उत्क्रम (सं० पु०) उत्-क्रम-अच्। १ व्यतिक्रम, वैपरीत्य, इनहिराफ़, भड़काव। २ उपरि वा बहिर्गमन, ऊपरी या बाहरी चाल। ३ उन्नति, तरक़्क़ी।

उत्क्रमण (सं० क्ली०) उत्-क्रम-ल्युट्। १ अपसरण, उड़ान, निकास। २ वैपरीत्य, इनहिराफ़, भटकाव।

उत्क्रमणीय (सं० वि०) त्यागने योग्य, जो छोड़ देनेके क़ाबिल हो।

उत्क्रान्त (सं० वि०) उत्-क्रम-क्त। १ उद्गत, उभरा हुआ, जो आगे निकल गया हो। २ उल्लङ्घित, लांघा हुआ, जो पीछे रह गया हो।

उत्क्रान्ति (सं० स्त्री०) उत्-क्रम-क्तिन्। उद्गमन, उल्लङ्घन, मवक़्क़त, उतार, निकास, आगे बढ़ जानेकी हालत। "विरामश्चोत्क्रान्तिरवाप्तः।" (मधुसूदनसरस्वती)

उत्क्रान्तिन् (सं० वि०) उद्गमनकरनेवाला, जो आगे निकल गया हो।

उत्क्राम (सं० पु०) १ उद्गमन, उल्लङ्घन, सबक़त, आगे बढ़ जानेकी हालत। २ वैपरीत्य, इनहिराफ़, उलट-पुलट।

उत्क्रामत् (सं० वि०) उद्गमनकारी, सबक़त ले जानेवाला, जो आगे बढ़ रहा हो।

उत्क्रुट (सं० वि०) १ उच्चैः स्वरसे कथन करता हुआ, जो ज़ोरसे बोल रहा हो। (क्ली०) २ अशब्द कथन, पुरशोर गुफ़्तगू, चेंचें।

उत्क्रोद (सं० पु०) परमाह्लाद, उल्लास, ख़ुशी।

उत्क्रोश (सं० पु०) उत्-क्रुश-अच्। १ जलचर पक्षिविशेष, एक दरयायी परिन्द। यह मत्स्यभक्षी होता है। इसका मांस रक्तपित्तघ्न, शीतल, स्निग्ध,

द्रव्य, वातकर और रस एवं पाकमें मधुर है। (सुश्रुत) २ पीनक, ऊंघ। ३ कुररपक्षी, किसी चिड़ियाका नाम। ४ चोत्कार, शोर, ग़ुल।

उत्क्लिष्टवर्त्म (सं० क्ली०) क्लिष्टवर्त्म नामक रोगविशेष, आंख पैदा करनेवाले मवादकी बढ़ती। क्लिष्टवर्त्म देखो।

उत्क्लेद (सं० पु०) १ आर्द्रभाव, तरी, भीगनेकी हालत।

उत्क्लेदन (सं० क्ली०) उत्क्लेद देखो।

उत्क्लेदिन् (सं० त्रि०) आर्द्र, तर पड़नेवाला, जो भीग रहा हो।

उत्क्लेश (सं० पु०) १ उत्तेजना, अशान्ति, हलचल, झगड़ा। २ वमनेच्छा, पाकाशयका बिगाड़। ३ रोग, बीमारी।

उत्क्लेशक (सं० पु०) विषमय कीट विशेष, एक जहरीला कीड़ा। यह अग्निप्रकृति होता है। इसके काट खानेसे पित्तजन्य रोग लग जाते हैं।

उत्क्लेशन (सं० त्रि०) उत्तेजना देनेवाला, जो उभारता या बेकरारी पैदा करता हो।

उत्क्लेशिन्, उत्क्लेशन देखो।

उत्क्लेशन-बस्ति (सं० पु० स्त्री०) बस्तिभेद, पिचकारीकी एक दवा। यह पञ्चमें एरण्डबीजादि कल्कसे उत्क्लेशनके लिये लगायी जाती है। उक्त कल्कमें एरण्डबीज, मधुक, पिप्पली, सैन्धव, वचा और हवुषाफल डालते हैं। (चक्रदत्त)

उत्क्षिप्त (सं० त्रि०) उत्-क्षिप-क्त। १ ऊर्द्धक्षिप्त, उछाला या चढ़ाया हुआ, जो ऊपर चढ़ा दिया गया हो। २ निराकृत, हटाया हुआ, जो फेंका गया हो। ३ दूरीकृत, खारिज किया हुआ। (पु०) ४ धुस्तूरफल, धतूरेका समर।

उत्क्षिप्तकम्पन (सं० क्ली०) भूमिकम्पविशेष, किसी किस्मका भूचाल, एक भूडोल। इस प्रकारसे कम्पमानेपर भूमि मानो उछल पड़ती है।

उत्क्षिप्तिका (सं० स्त्री०) उत्-क्षिप-क्तिन्-कन् टाप्। कर्णालङ्कार विशेष, कानका एक गहना। यह अर्धचन्द्राकार रहती और कर्णके ऊपरि भागमें पहनी जाती है।

उत्क्षेप (सं० पु०) उत्-क्षिप-घञ्। १ ऊर्ध्वक्षेप, उछाल। २ दूरीकरण, फेंकफांक। ३ प्रेरण, चालान। ४ वमनकार्य, छांट, उलटी। ५ मस्तकके ऊपरका स्थान। (त्रि०) ६ उत्क्षेपकारक, फेंकनेवाला।

उत्क्षेपक (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्व निक्षेपकारी, उछालनेवाला। २ आज्ञा देनेवाला, जो हुक्म लगाता है। (पु०) ३ वस्त्रको अपहरण करनेवाला, जो कपड़ेको उछालकर चुरा लेता हो।

"उत्क्षेपग्रन्थिभेदौ करसंदंशहीनकौ।" (याज्ञवल्क्य २।२७४)

उत्क्षेपण (सं० क्ली०) उत्-क्षिप-ल्युट्। १ ऊर्ध्वक्षेपण, उछाल। २ प्रेरण, चालान। ३ वमनकार्य, छांट, उलटी। ४ उदखल, सूप। ५ व्यजन, पंखा। ६ षोड़शपण, सोलह, पणकी एक माप। ७ न्यायमतसे पञ्चकर्मान्तर्गत कर्मविशेष।

"उत्क्षेपणं ततोऽवक्षेपणमाकुञ्चनं तथा।
प्रसारणं च गमनं कर्माण्येतानि पञ्च च।" (भाषापरिच्छेद ६)

उत्खचित (सं० त्रि०) मिश्रित, मख़लूत, मिला हुआ।

उत्खुरिन् (सं० पु०) देव विशेष।

उत्खला (सं० स्त्री०) उत्-खल-अच्-टाप्। मुरा नामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़। मुरा देखो।

उत्खात (सं० त्रि०) उत्-खन-क्त। १ उन्मूलित, उखाड़ा हुआ। २ उत्पाटित, गिराया हुआ। ३ विनाशित, मारा हुआ। ४ खनित, खोदा हुआ। "[illegible]" ([illegible]) (क्ली०) ५ उत्खनन, गड्ढा।

उत्खातकेलि (सं० पु०) क्रीड़ा विशेष, एक खेल। इसमें शृङ्गादि द्वारा वृष एवं गजकी भांति मृत्तिका खोदते हैं।

उत्खाता, उत्खातिन् देखो।

उत्खातिन् (सं० त्रि०) १ नाशक, बरबाद करनेवाला, जो खोद डालता हो। २ उत्खननयुक्त, जिसमें गड्ढे रहें।

उत्खिद (सं० पु०) उत्-खिद भावे घञ्। छिदन, काटछांट।

उत्त (सं० त्रि०) उन्द क्लेदने क्त, नुदविदेति पक्षे नत्वाभावः। आर्द्र, तर, भीगा। (हिं०) [illegible]

उत्तंस (सं० पु०) उत्-तसि-घञ् [illegible]

१ कर्णभूषण, बाली, कानका गहना। २ शिरोभूषण, कलंगी।

उत्तंसिक (सं० पु०) नागविशेष।

उत्तंसित (सं० त्रि०) १ कर्णभूषणविशिष्ट, बाली पहने हुआ। २ शिरोभूषणयुक्त, कलंगी लगाये हुआ।

उत्तइराई—१ मन्द्राजप्रान्तके सलेम् जिलेका एक तालुक। यह अक्षा० ११° ४६´ तथा १२° २४´ उ० और द्राघि० ७८° १५´ एवं ७८° ४६´ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ८०८ वर्गमील है। इसमें कोई ४३६ ग्राम लगते और प्राय ११०००० मनुष्य बसते हैं। हिन्दुवोंकी ही संख्या सबसे अधिक है। कुछ मुसलमान और ईसाई भी हैं। दक्षिण, पूर्व और थोड़े बहुत पश्चिम भी पहाड़ खड़े हैं। उत्तरको ओर तिरुपातूर उपत्यका है। भूमि प्रधानतः लाल और रेतीली है।

२ अपने तालुकका प्रधान नगर। यह दक्षिण-पश्चिम मन्द्राजरेलवेके जोलारपेट जङ्कशन-ष्टेशनसे कोई २४ मील दूर है।

उत्तङ्ग (सं० पु०) महादेवके एक अनुचरका नाम। (हिं०) उत्तुङ्ग देखो।

उत्तट (सं० त्रि०) स्वीय तटको उत्सिक्त करनेवाला, जो अपने किनारेको सींचता हो।

उत्तप्त (सं० क्ली०) उत्-तप-क्त। १ शुष्कमांस, सूखा गोश्त। २ सन्ताप, उबाल, गर्मी। (त्रि०) ३ तप्त, तपा हुआ, गर्म। ४ सन्तप्त, जो जल गया हो। ५ परिप्लुत, तरबतर, नहाया-धोया। ६ चिन्तित, फिक्रमन्द।

उत्तभित (सं० त्रि०) उन्नमित, झुका हुआ।

उत्तम (सं० त्रि०) उत्-तमप्। १ उत्कृष्ट, श्रेष्ठ, उमदा, बढ़िया। "उत्तम मध्यम नीच लघु निज निज थल अनुसारि।" (तुलसी) २ अन्त्य, आखिरी। "उत्तमश्चोत्तमार्थः।" (सिद्धान्तकौमुदी) ३ प्रधान, खास, सबसे बड़ा। ४ प्रथम, अव्वल। (अव्य०) ५ अत्यन्त, निहायत, बहुत। (पु०) ६ विष्णु। ७ व्याकरणानुसार—अन्त्य पुरुष, आखिरी सीगा। युरोपीय इसे आदिपुरुष कहते हैं। ८ सुरुचिके गर्भजात उत्तानपादके एक पुत्र। यह ध्रुवके सौतेले भाई और प्रियव्रतके भतीजे रहे। कुवेरने इन्हें मार डाला था। ९ प्रियव्रतके पुत्र तृतीय मनु। १० छब्बीसवें व्यास। ११ जनपद विशेष। (भारत भीष्म ९ अ०) यह विन्ध्यप्रदेशमें अवस्थित था। पुराणान्तरमें उत्तमर्ण और उत्तमार्ण पाठ मिलता है। १२ अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा। यह बड़ा वीर होता है। युद्धमें उत्तम आघात खाते भी अपने मालिकको नहीं छोड़ता। (जयदत्त)

विशेषणके रूपमें समास लगनेपर उत्तम शब्द प्रायः संज्ञामें पीछे आता है, जैसे—द्विजोत्तम, सर्वोत्तम और नरोत्तम।

उत्तमगन्धा (सं० स्त्री०) मल्लिका, चमेली।

उत्तमगन्धाढ्य (सं० त्रि०) मधुर-सौरभ-विशिष्ट, मीठी खुशबूवाला।

उत्तमता (सं० स्त्री०) १ श्रेष्ठता, खूबी, बड़ाई। २ साधुशीलता, नेकचलनी, भलाई।

उत्तमताई (हिं०) उत्तमता।

उत्तमपद (सं० पु०) उच्चस्थान, ऊंचा ओहदा।

उत्तमपालैयम्—मन्द्राजप्रान्तीय मदुरा जिलेके पेरियाकुलम् तालुकका एक नगर। यह अक्षा० ९° ४८´ ३०´´ उ० और द्राघि० ७७° २२´ २०´´ पू०में विल्लामनूरसे ५ मील दक्षिण अवस्थित है। पहले उत्तमपालैयम् मदुराके एक प्राचीन पालैयम् राज्यका प्रधान स्थान था।

उत्तमपुरुष (सं० पु०) १ श्रेष्ठ मनुष्य, अच्छा आदमी। २ शाब्दिक गणका उत्तम व्यक्ति, फ़ेलके गरदानका अव्वल सीगा। (First person) हिन्दीमें 'मैं' शब्द उत्तमपुरुषका द्योतक है। कर्ता कारकमें सकर्मक क्रियाके साथ प्रयोग पड़नेपर 'ने' आगम होता है। जैसे—मैंने पत्र पढ़ा था। किन्तु अकर्मक और वर्तमान तथा भविष्यत् कालकी सकर्मक क्रियाके साथ 'ने'का आगमनका निषेध है। जैसे—मैं पत्र पढ़ता हूं, मैं पत्र पढ़ूंगा, मैं आता हूं, मैं आया था और मैं आऊंगा। 'मैं'का बहुवचन 'हम' है। 'मैं'के साथ वर्तमानकालकी क्रियापर 'हूं'का आगम पड़ता है, जैसे—मैं बोलता हूं। कर्मकारकमें 'मैं'का 'मुझे' आदेश हो जाता है, जो अव्यय लगनेसे अपने

मभाका प्रकार भी होता है, जैसे—मुझको, मुझसे, मुझपर और मुझमें। मेरा सम्बन्धकारक 'मेरा' और 'हम'का 'हमारा' है। कोई कोई समझते हैं कि—उत्तम पुरुषमें संस्कृत और अंगरेजी व्याकरण नहीं मिलता। किन्तु यह बात झूठ है। क्योंकि उत्तमका अर्थ प्रथम (First) ही है।

१ जैनशास्त्रानुसार संसारमें सबसे उत्कृष्ट ऐश्वर्यवाले पुरुष। परिवर्तनशील कालके एक अपेक्षासे जैनशास्त्रमें दो विभाग किये हैं—उत्सर्पिणी, और अवसर्पिणी। इन दोनों कालोंमेंसे हर एकमें तिरेसठ तिरेसठ उत्तमपुरुष हुआ करते हैं। वे इसप्रकार हैं—चक्रवर्ती १२, तीर्थंकर २४, नारायण ८, प्रतिनारायण ८, और बलभद्र ८। इनका और चक्रवर्ती आदि शब्द देखो।

उत्तमफलिनी (सं॰ स्त्री॰) उत्तम-फल-इनि-ङीप्। दुग्धिका, दूधी।

उत्तमभद्र—मध्यप्रान्तके एक क्षत्रिय राजा। नासिककी एक गुफामें जो शिलालिपि मिली, उसपर यह बात लिखी है—शकवंशके लोगोंने एक बार स्थानीय क्षत्रिय-नृपति उत्तमभद्रपर चढ़ाई की थी। महाराज नहपान नृपतिके जामाता और दीनीक उषवदातके पुत्र इनके साहाय्यको सैन्य लेकर आगे बढ़े, जिससे शत्रु पीछे हटे और उत्तमभद्रके अधीन हुये थे।

उत्तमर्ण (सं॰ पु॰) उत्तम-ऋणमस्य। ऋणदाता, क़र्ज़ दिहन्दा, महाजन, साहु।

उत्तमर्णिक (सं॰ पु॰) उत्तमर्ण देयत्वे नास्त्यस्य, ठन्। उत्तमर्ण, क़र्ज़ दिहिन्दा, मालिक।

"अधमर्णिको दाप्यः धनिनाऽऽहृतं ऋणम्।
एव दत्त्वा ऋणं दाप्यः धनार्थी उत्तमर्णिकः॥" (कात्यायन)

उत्तमर्णिन्, उत्तमर्ण देखो।

उत्तमलाभ (सं॰ पु॰) विपुल फलान्तर, बड़ा फ़ायदा।

उत्तमवारि (सं॰ स्त्री॰) १ तण्डुलोदक, चावलका पानी। २ उत्कृष्ट जल, उम्दा पानी।

उत्तमवेश (सं॰ पु॰) शिव, महादेव।

उत्तमवैद्य (सं॰ पु॰) समस्ताङ्ग-वेदाध्ययन वैद्य, उम्दा तबीब, बढ़िया डाक्टर।

उत्तमसंग्रह (सं॰ पु॰) १ सम्यक् संग्रहण, उम्दा गिरफ़्त। २ निर्जनमें पर पत्नीके साथ परस्पर आलिङ्गन उपवेशनादिरूप संभाषण, दूसरेकी औरतके साथ अकेले मिलना-जुलना और हंसना बोलना।

उत्तमसाहस (सं॰ पु॰) १ अत्युत्कृष्ट दण्ड विशेष। इसमें १०००, ८००० या १८०००० पण जुर्माना देना पड़ता है। "पणानां द्वे शते सार्धे प्रथमः साहसः स्मृतः" (मनु) २ उत्कृष्ट दण्ड, कड़ी सज़ा—जैसे सर्वस्व हरण, अङ्गकर्तन और व्यापादन।

उत्तमा (सं॰ स्त्री॰) उत्-तमप्-टाप्। १ उत्कृष्ट स्त्री, उम्दा औरत। २ स्वीयादि नायिकाभेद। यह मन्दकारिणी होने भी प्रियतमके प्रति हितकारिणी रहती है। ३ दुग्धिका, दूधी। ४ सनःशिला। ५ भूम्यामलकी, भुइं आंवला। ५ त्रिफला; आंवला, हर और बहेरा। ६ मुस्ता, मोथा। ७ क्षुद्ररोगविशेष, शकर बढ़ानेकी दवा लगानेसे पैदा हुई एक बीमारी। इसमें शूक और अजीर्णसे लिङ्गपर मुद्गमाषके समान रक्तपित्तकी रक्तपिड़का पड़ जाती है। (सुश्रुत)

उत्तमाङ्ग (सं॰ क्ली॰) उत्तमं अङ्गमङ्गम्, कर्मधा॰। १ मस्तक, सर। मस्तक देखो। २ मुख, दहन।

"उत्तमाङ्गोद्भवाज्ज्यैष्ठ्याद् ब्रह्मणश्चैव धारणात्।" (मनु १।८९)

उत्तमाधम (सं॰ त्रि॰) उच्च नीच, भला-बुरा, बढ़िया-घटिया, छोटा-बड़ा।

उत्तमाधममध्यम (सं॰ त्रि॰) उच्च, नीच और मध्य, ऊंचे, नीचे और औसत दरजेवाला।

उत्तमाम्भस (सं॰ क्ली॰) तुष्टि विशेष, एक आसूदगी। सांख्य मतानुसार यह विषय छोड़नेसे मिलती है। योगमें इसका नाम सार्वभौम-महाव्रत है।

उत्तमाय्य (सं॰ त्रि॰) उठाया या देखाया जाने-वाला, जो बताया जानेवाला हो।

उत्तमारणी (सं॰ स्त्री॰) १ इन्दीवरा। २ इन्द्र-वारुणी। ३ इन्द्रचिर्भिटी। ४ शोभाञ्जलिका, कूपी।

उत्तमार्ध (सं॰ पु॰) १ अन्तिम अर्ध या भाग, आख़िरी आधा हिस्सा। २ उत्कृष्ट अर्ध, निस्फ़ उम्दा आधा।

उत्तमार्ध्य (सं० त्रि०) अन्तिम वा उत्कृष्ट अर्ध सम्बन्धीय, आख़िरी या उमदा अद्धेसे तालुक रखनेवाला।

उत्तमाह (सं० पु०) अन्तिम दिवस, आख़िरी या उमदा दिन।

उत्तमीय (सं० त्रि०) प्रधान, उत्कृष्ट, उमदा, सबसे ऊंचा।

उत्तमोत्तम (सं० त्रि०) उत्कृष्टसे उत्कृष्ट, उमदासे उमदा, जो सबसे अच्छा हो।

उत्तमोपपद (सं० त्रि०) सर्वोत्तम, उत्कृष्ट, जिसके लिये सबसे अच्छी बात कही जा सके।

उत्तमौजस् (सं० पु०) १ दशम मनुपुत्रभेद। २ एकजन महावीर। इन्होंने कुरुक्षेत्रमें पाण्डवोंके पक्षमें रहकर युद्ध किया था। (भारत)

उत्तम्भ (सं० पु०) उत्-स्तन्भ-घञ्। १ स्तम्भी-भाव, रोक रखनेकी हालत। २ निवृत्ति, छुट्टी। ३ अवलम्ब, सहारा।

उत्तम्भन (सं० क्लो०) उत्-स्तन्भ-ल्युट्। १ अव-लम्बन, गिरफ्त, पकड़, टेक। २ मेख, खूंटा।

उत्तम्भित (सं० त्रि०) १ उठा या टिका हुआ। २ रोका या पकड़ा गया। ३ उत्तान, खड़ा, सीधा।

उत्तम्भितव्य (सं० त्रि०) पकड़ा या रोका जानेवाला।

उत्तर (सं० क्लो०) उत्-तॄ-अप्, उत्-तरप् वा। १ प्रतिवाक्य, जवाब। "यद्यदोषि वा पृच्छा तस्य उत्तरमुच्यते।" (याज्ञवल्क्य) २ दोषभञ्जन वाक्य, ऐब मिटानेवाली बात। ३ जिज्ञासित विषयमें अपने मतका प्रकाश, पूछी जानेवाली बातपर अपने ख़यालका इज़हार। ४ किसीके आह्वान करनेपर सत् प्रत्यय-सूचक वाक्य, किसीके पुकारने पर उसके सुन लेनेकी बात। ५ उपरि तलका आवरण, ऊपरी सतह या ढकन। ६ दिक् विशेष, दक्षिणके सामनेकी दिशा। ७ निम्न संख्या, पिछली हुई चीज़का आख़िरी हिस्सा। ८ व्यवस्थाके अनुसार प्रतिवचन, क़ानूनमें हद जवाब। ९ मीमांसानुसार अधिकरणका चतुर्थ अंग, हालतका चौथा टुकड़ा। १० उत्कृष्टता, अज़मत, बड़ाई। ११ फल, नतीजा, गणितमें शेष, बाक़ी फ़र्क़। १२ गीत विशेष, एक गाना। (पु०) १३ शिव। १४ विराटराजके पुत्र। कौरवगणने जब विराटराजके गो चुराये, तब ये अर्जुनको सारथी बना लड़नेको आये थे। १५ नागराज विशेष। १६ पर्वत-विशेष, एक पहाड़। (त्रि०) १७ ऊर्ध्व, ऊंचा, बड़ा। १८ उत्तरीय, शिमाली। १९ प्रधान, श्रेष्ठ, ख़ास, बढ़िया। २० वाम, बायां। २१ निम्नग, नीचे पड़नेवाला। २२ अधिक उत्तम, ज़्यादा अच्छा। २३ अनन्तर पिछला। (अव्य०) २४ फलतः, आख़ीरको।

उत्तरकाण्ड (सं० क्लो०) १ पुस्तकका शेषांश, आख़िरी किताब। २ रामायणका अन्तिम काण्ड या पुस्तक।

उत्तरकाय (सं० पु०) शरीरका ऊर्ध्व भाग, जिस्मका ऊपरी हिस्सा।

उत्तरकाल (सं० पु०) १ भविष्यत् काल, आनेवाला वक़्त। २ शेषकाल, छोटा ज़माना।

उत्तरकाशी (सं० स्त्री०) पुण्यस्थान विशेष, एक जगह। यह हरिद्वारसे उत्तर लगती और बदरीनारायणकी राहमें पड़ती है।

उत्तरकुरु (सं० पु०) जम्बूद्वीपका वर्षविशेष, कुरुवर्ष। उत्तरकुरुके सम्बन्धमें अनेक मतभेद है। अध्यापक लासेनके कथनानुसार यह जनपद तिब्बतमें ब्रह्मपुत्र नदके उभय तीर रहा। (Kart von Alt Indien) विलफोर्ड हिमालयके सानुदेशमें इसे तिब्बतका एक नगर समझते हैं। (Asiatic Researches, Vol. ix, p. 63. 67, xiv. 387) भौगोलिक सेण्टमार्टिन उत्तरकुरुका अस्तित्व नहीं मानते। उनके मतसे यह एक कल्पित स्वर्ग है। (Etude sur la Geographie Grecque et Latine de'l Inde, 413-414) किन्तु निम्नलिखित प्रमाण देखनेसे सहजमें यो समझ पड़ता है—उतथामक स्थान पूर्वकालमें रहा,—

"ते हैते परेण हिमवन्तं जनपदा उत्तरकुरव उत्तरमद्रा इति।"

(ऐतरेयब्राह्मण ८।१४)

"[illegible]।

[illegible]।" ([illegible])

महाभारतके अनुसार सुमेरुसे उत्तर नीलपर्वतके दक्षिण पार्श्व पर उत्तरकुरु अवस्थित है। (भीष्म १७०)

जैनोंके अरिष्टनेमिपुराणान्तर्गत वर्णनमें लिखा है—

"[illegible] उत्तराः कुरवः [illegible]।" (५।१९१)

नील और मन्दर पर्वतके बीच उत्तरकुरु है। ([illegible] ५।१९) अब देखना चाहिये—प्राचीन शास्त्रके अनुसार वर्तमानमें किस स्थानपर कितनी दूरतक उत्तरकुरु निरूपित है।

"[illegible] कुरवस्तत्र [illegible]।
[illegible]॥" (हरिवंश [illegible])

'समुद्रके बाद उत्तरकुरु उतर हमने अनुकालमें गन्धमादनको भी लांघा था।' इस श्लोकसे अनुमान होता है—समुद्रतीरसे गन्धमादन पर्वत पर्यन्त समुदाय भूखण्ड पूर्वकालमें उत्तरकुरु या कुरुवर्ष कहाता था।

राजतरङ्गिणीमें लिखा है—काश्मीरराज ललितादित्यके काम्बोज, भूखार*, दरद, स्त्रीराज्य प्रभृति जीत लेनेपर उत्तरकुरुवासियोंने भयसे पर्वतप्रदेशका आश्रय लिया।

"भुःखाराः [illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥
स्त्रीराज्ये [illegible]।
[illegible]॥" (४।१६०-६५)

इस श्लोकद्वारा स्त्रीराज्यके बाद ही उत्तरकुरु निर्दिष्ट है। स्त्रीराज्य गन्धमादनसे उत्तरपश्चिम लगता है, जिसका वर्तमान नाम तिब्बतका पश्चिमांश है।

टलेमिने उत्तरकोर्र (Ottarokorrha) नामक एक जनपदका भी नाम कहा है। यह संस्कृत उत्तरकुरु शब्दका रूपान्तरमात्र है। उनके मतसे उक्त स्थान सेरिका (चीन)का सिंयदंश है। (Ptolemy, Geog. vi. 16)

रामायणके किष्किन्धाकाण्डमें लिखा है—

"[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]॥" (४३ ३८-३९)

इस स्थानकी शाखामें शैलोदा नामकी नदी निकली है। उसके उभय तीरपर कीचक नामक वेणु है। सिद्ध उसी वेणु द्वारा नदीके पूर्व और पश्चिम आते-जाते हैं। उत्तरकुरु उसी नदीके निकट है। वहां पुण्यवान् व्यक्ति रहते हैं।

रामायणोक्त शैलोदा नदीका नाम महाभारतमें किसी किसी स्थानपर शिला लिखा है। प्राचीन ग्रीक और रोमकोंने सिलिस् (Silis) नामकी एक नदी लिखी है। उसके साथ महाभारतकी शिला नदीका विशेष सादृश्य आता है। आजकल सिलिस् नदीको जक्सर्तस या सरीकुल कहते हैं। (Ukert Geographie der Griechen und Romer, Vol. iii. 2, p. 238) सरीकुल नदी आरल हृदमें गिरी है। युरोपीय भूवेत्ता कहते हैं—पूर्वकालमें आरल और कास्पियसागर एकत्र मिले थे। पाश्चात्य पुरातत्त्वविद् हाथोके मतसे वर्तमान कास्पियसागर पूर्वकालमें उत्तरमहासागर तक विस्तृत रहा। रामायणमें लिखा है—उत्तरकुरुके बाद उत्तरसमुद्र है।

"[illegible] पयसां निधिः।" (किष्किन्धा [illegible])

ब्रह्माण्डपुराणके मतमें भी इस स्थानसे उत्तर ऊर्मिमालाकुल समुद्र है—

"उत्तरस्य [illegible]।
[illegible]॥" (५० अ०)

उक्त प्रमाणसमूह द्वारा स्पष्ट ही समझ पड़ता है—पूर्वकालमें उत्तरकुरु कास्पियसागरके दक्षिण तीरसे गन्धमादन पर्वतके उत्तरांश तक विस्तृत था।

रामायण और महाभारतके मतमें यह स्थान मणिमय और काञ्चनकी बालुकासे सम्पन्न है। स्थान स्थानमें हीरक, वैदूर्य और पद्मरागके तुल्य रमणीय भूमिखण्ड है। यहां कामफलप्रद वृक्ष मनुष्योंके मनोरथ पूर्ण करते हैं। नीली नामक वृक्षसे क्षीर टपकता और उसके गर्भसे वस्त्र तथा आभरण उपजता है। यहां पुष्करिणी सकल पङ्कसे शून्य और मनोरम है। इसीसे वह सर्वदा सुगन्ध रहती है। स्त्रीपुरुष प्रियदर्शन और गुणसंयुक्त हैं। सभी अप्सरा सदृश देख पड़ती हैं। सब लोग नीली वृक्षका अमृत-

* [illegible] है। [illegible] वर्णित है।

सदृश और पीते हैं। चक्रवाक और चक्रवाकीकी तरह दम्पती एक कालमें जन्म ले समभावसे बढ़ते हैं। ये एकादश सहस्र वत्सर जीते और एक दूसरेको कभी नहीं छोड़ते। मरनेपर भारुण्ड पक्षी उन्हें उठा गिरिदरीमें फेंक देते हैं।* (महाभारत भीष्म ७अ०, रामायण किष्किन्धा ४३ सर्ग)

उत्तरकोशल—प्राचीन जनपदविशेष, एक पुराना मुल्क। वर्तमान अयोध्याप्रदेशके उत्तरांशका पहले यही नाम था।

उत्तरकोशला (सं॰ स्त्री॰) उत्तरकोशलकी राजधानी अयोध्या नगरी।

उत्तरकेन्द्र (सं॰ पु॰) पृथिवीका उत्तर प्रान्त, ज़मीनका शिमाली मुल्क।

उत्तरक्रिया (सं॰ स्त्री॰) १ उत्तरकालका कर्तव्य कर्म, पिछले वक्तका काम। २ सांवत्सरिक श्राद्धादि।

उत्तरखण्ड (सं॰ क्ली॰) १ अन्तिम अध्याय, आखिरी बाब। २ पद्म, गरुड़ और शिवपुराणका अन्तिम भाग।

उत्तरखण्डन (सं॰ क्ली॰) प्रतिषेध, प्रत्याख्यान, तरदीद, काट, झुठलाव।

उत्तरगुण (सं॰ पु॰) जैनशास्त्रके अनुसार मुनिके मूल गुणको बचानेवाला गुण।

उत्तरङ्ग (सं॰ क्ली॰) उत्तरमङ्गम्, कर्म॰ शकन्धा॰। १ द्वारोर्ध्वस्थ दारु, दरवाजेके ठाठपर लगनेवाली लकड़ीकी मेहराब। (त्रि॰) २ उद्गत तरङ्ग, लहर लेनेवाला। "अपामिवाधारमनुत्तरङ्गम्।" (कुमार ३।४८)

उत्तरच्छद (सं॰ पु॰) शय्याके उपरि आस्तरणका वस्त्र, बिछौनेके ऊपरकी चादर।

उत्तरज (सं॰ त्रि॰) पश्चाज्जात, जो पीछे पैदा हो।

उत्तरज्या (सं॰ स्त्री॰) ०वृत्तखण्डका सुप्रतिष्ठित ज्यापिण्ड, कौसका माह्विर जैब आबिया। सुप्रतिष्ठित ज्यापिण्ड द्वारा अर्धीकृत गुणके द्वितीय अर्धांशकी भी यही संज्ञा है।

उत्तरज्योतिष (सं॰ पु॰) भारतका पश्चिमोत्तरप्रान्तीय जनपद विशेष। "ततः पञ्चनदं गत्वा नियतो नियताशनः।

उत्तरज्योतिषञ्चैव तथा दिव्यकटं पुरम्॥" (भारत, सभा, ३२ अ॰)

उत्तरण (सं॰ क्ली॰) उत्-तॄ-ल्युट्। १ नद्यादिके पारको जाना, उतराई। २ किसी स्थानमें उपस्थित होना, पहुंच।

उत्तरणस्थान (सं॰ क्ली॰) सराय, अड्डा, पड़ाव, मुकाम, उतरनेकी जगह।

उत्तरतन्त्र (सं॰ क्ली॰) सुश्रुतके वैद्यक ग्रन्थका अन्तिम भाग।

उत्तरतर (सं॰ त्रि॰) अधिक उच्च दूर वा व्यवच्छिन्न, ज़्यादा ऊंचा, जो बहुत हटा हो।

उत्तरतस् (सं॰ अव्य॰) १ उत्तरके प्रति, बाईं ओर ऊपर। २ पश्चात्, पीछे।

उत्तरतापनीय (सं॰ पु॰) नृसिंहतापनीयोपनिषद्का शेष भाग।

उत्तरत्र (सं॰ अव्य॰) पश्चात्, पीछे, अख़ीरको।

उत्तरदाता (सं॰ पु॰) उत्तर देनेकी क्षमता रखनेवाला, जवाबदिह, जिम्मेवार, जिसे अमलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदायक (सं॰ त्रि॰) उत्तरं ददाति, उत्तर-दा-ण्वुल्। १ प्रत्युत्तरदाता, सवालका जवाब लगानेवाला। २ प्रभुके समस्त उत्तर प्रदानसे निज दोषके गोपनकी चेष्टा करनेवाला, जो मालिकके सामने जवाब लगा अपना ऐब छिपानेकी कोशिश करता हो।

"पश्चाद्‌भवति सा भार्या भर्तारं चोत्तरदायकः।
नमर्दं च मड़ं भाशौ मृत्युरेव न संशयः॥" (हितोपदेश)

उत्तरदायित्व (सं॰ क्ली॰) उत्तर देनेका अधिकार, जवाबदिही, जिम्मेवारी।

उत्तरदायी (सं॰ त्रि॰) उत्तर देनेका अधिकार रखनेवाला, जवाबदिह, जिम्मेवार, जिसे भलेबुरेका जवाब देना पड़े।

उत्तरदिक् (सं॰ स्त्री॰) दिक् विशेष, उदीची, शिमाल।

उत्तरदिक्‌काल (सं॰ पु॰) रविवारका उत्तरदिग्वर्ती काल।

उत्तरदिक्‌पाश (सं॰ पु॰) ज्योतिषप्रसिद्ध रविवारके दिन उत्तरदिक्‌में यात्रा युद्धादिके निषेधका ज्ञापक पाशयोग।

* प्लिनिने उत्तरकोरस् नामक एक जनपद लिखा है। सम्भवतः वह संस्कृत उत्तरकुरुका बिगड़ा ही नाम मालूम पड़ता है।

उत्तरदिक्स्थ (सं० त्रि०) उत्तर दिक्पर अवस्थित, उत्तरीय, शिमाली, जो उत्तरकी ओर हो।

उत्तरदिगीश (सं० पु०) १ कुबेर। २ बुध। यह दोनों देवता उत्तरदिक्के अधिपति हैं।

उत्तरदिग्बली (सं० पु०) उत्तरस्यां दिशि बली। १ गुरु। २ चन्द्र। ये दोनों ग्रह उत्तरकी ओर बलवान् होते हैं।

उत्तरदिश्, उत्तरदिक् देखो।

उत्तरदेश (सं० पु०) उत्तरकी ओरका देश, मुल्क शिमाली, ऊंचा देश।

उत्तरदेय (सं० त्रि०) पश्चात् किया जानेवाला, जो पीछे बन पड़े।

उत्तरनाभि (सं० पु० स्त्री०) यज्ञके उत्तरका कुण्ड, जो कुण्ड यज्ञमें उत्तरकी ओर बना हो।

उत्तरपक्ष (सं० पु०) १ विचारपक्ष, प्रत्याख्यान, तरदीद, काट, झुठलाव। यह पूर्वपक्षके सिद्धान्तको काट डालता है। २ उत्तर विकल्प, पहली बहसका जवाब। ३ कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख। ४ उत्तरीय वा वाम पार्श्व, शिमाली या बाईं ओर।

उत्तरपक्षता (सं० स्त्री०) पक्ष, आशय, मतलब, मतलब।

उत्तरपक्षत्व (सं० क्ली०) उत्तरपक्षता देखो।

उत्तरपट (सं० पु०) उपरिस्थ वस्त्र, ऊपरका कपड़ा। उपरना, ओढ़नी, चादर वगैरहको उत्तरपट कहते हैं।

उत्तरपथ (सं० पु०) उत्तरीय मार्ग, देवयान, शिमाली राह, जो राह उत्तरको निकल गई हो।

उत्तरपथिक (सं० त्रि०) उत्तरः तद्देशमयः पन्थानम्, गच्छति। उत्तरदेशगामी, शिमा-लको जानेवाला।

उत्तरपद (सं० क्ली०) १ समासका शेष पद, किसी दूसरे लफ्ज़का आखिरी हिस्सा। २ समाप्तीय पद।

उत्तरपदिक (सं० त्रि०) समासके अन्तिम पदसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो किसी दूसरे लफ्ज़के आखिरी टुकड़ेसे ताल्लुक रखता हो।

उत्तरपदलोप, उत्तरलोप देखो।

उत्तरपर्वत (सं० पु०) उत्तरदिक्स्थ पर्वत, शिमाली पहाड़।

उत्तरपश्चार्ध (सं० पु०) उत्तर और पश्चिमका अर्ध, शिमाली और मगरबी हद।

उत्तरपश्चिम (सं० त्रि०) उत्तर एवं पश्चिम दिक्स्थ, शिमाली और मगरबी।

उत्तरपाड़ा—चब्बीस परगनेके हुगली जिलेका एक नगर। यह कलकत्तेसे उत्तर हुगली नदीपर अवस्थित है। म्युनिसपलिटी बड़ी है। यहां गवरमेण्ट स्कूल चलता है। जयकृष्ण मुखोपाध्याय नामक एक बड़े जमींदारने यहां सर्व साधारणके पढ़नेका एक विराट् पुस्तकालय स्थापित कराया है। उसमें प्राचीन न्यायदर्शनके अच्छे अच्छे ग्रन्थ रखे हैं। सरकारी चिकित्सालय भी विद्यमान है।

उत्तरपाद (सं० पु०) चतुष्पाद व्यवहारके अन्तर्गत द्वितीय पाद, अदालती कार्यवाईका एक हिस्सा। यह जवाब या बचावसे सम्बन्ध रखता है। प्रत्येक अभि-योगमें चार विभाग पड़ते हैं।

"पूर्वपक्षः स्मृतः पादो द्वितीयश्चोत्तरः स्मृतः।" (बृहस्पति)

उत्तरपुरस्तात् (सं० अव्य०) उत्तर-पश्चिमाभिमुख, शिमाल और मगरिबकी ओर।

उत्तरपूर्व (सं० त्रि०) उत्तर एवं पूर्व दिक्स्थ, शिमाली और शरकी। २ उत्तरको पूर्व गमन करनेवाला, जो शिमालको मशरिक प्रयाण करता हो। (पु०) ३ ईशान कोण।

उत्तरप्रच्छद (सं० पु०) तूलिकाच्छादन, रजाई, गुदड़ी।

उत्तरप्रत्युत्तर (सं० क्ली०) १ विवाद, झगड़ा, बहस। २ अभियोगका हेतु उपस्थित, कानूनी बहस, जवाबपर जवाब।

उत्तरप्रोष्ठपदाशुभ (सं० क्ली०) शुभ-नक्षत्रभेद। इसमें मङ्गल, विजय, अय, सम्पत् और दुर्भाग्य पड़ता है।

उत्तरप्रोष्ठपदा (सं० स्त्री०) उत्तरभाद्रपद देखो।

उत्तरफल्गुनी (सं० स्त्री) उत्तरा फल्गुनि, उत्त-रत्वम् गुरु, गौरादित्वात् ङीष् फल्गुन शब्दात् स्त्रियाम्

अप्। द्वादश नक्षत्र, बारहवां नक्षत्र् कमरी। (B. Leonis) इसका रूप दक्षिणोत्तर मिलित पर्यङ्काकृति तारकद्वय होता है। अर्यमा अधिष्ठात्री देवता है। उत्तरफल्गुनी नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दाता, दयालु, सुशील, कीर्तिमान्, सुमति, श्रेष्ठ, धीर और अत्यन्त मृदुस्वभाव होता है। इसके प्रथममें सिंह और उत्तर पादत्रयमें कन्या राशि पड़ता है।

उत्तरफाल्गुनी, उत्तरफल्गुनी देखो।

उत्तरभाद्रपद (सं॰ पु॰) षड्विंश नक्षत्र, छब्बीसवां नक्षत्र् कमरी (a Andromedæ)। इसका पर्याय प्रोष्ठपदा और देवता अहिर्बुध्न है। यह पर्यङ्करूप अष्टतारात्मक होता है। इस नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य धनी, कुलीन, कार्यकुशल, राजमान्य, बलवान्, महातेजस्वी, सत्कर्मकारी और बन्धुभक्त निकलता है। (स्त्री॰) टाप्। उत्तरभाद्रपदा।

उत्तरमन्द्र (सं॰ पु॰) उच्चःस्वरसे मन्द मन्द गानेकी रीति, ज़ोरसे धीरे-धीरे गानेका तरीका। यह षड्जग्रामकी मूर्छना है। इसमें म रि ग म प ध नि स्वर क्रमशः गानेको बढ़ते जाते हैं। (स्त्री॰) उत्तरमन्द्रा।

उत्तरमात्र (सं॰ क्ली॰) केवल उत्तर, सिर्फ जवाब।

उत्तरमानस (सं॰ क्ली॰) मानसके उत्तरस्थ तीर्थविशेष।

"काश्मीरकं नन्दिकुण्डं तथा चोत्तरमानसम्।
षष्टिंच योजनशतादप्यत्र विमुच्यते॥" (भारत अनु॰ २५ अ॰)

उत्तरमीमांसा (सं॰ स्त्री॰) उत्तरस्य वेदान्तभागस्य उपनिषद्रूपस्य मीमांसा। वेदान्त, वेदके द्वितीय भाग ज्ञानकाण्डका विचारमूलक ग्रन्थ, ब्रह्मसूत्र। वेदान्त देखो।

उत्तररहित (सं॰ वि॰) उत्तरसे शून्य, ला जवाब, जो जवाब न रखता हो।

उत्तरराढ़—राढ़देशका उत्तरांश। वर्तमान बङ्गालप्रान्तका वर्धमान, मुर्शिदाबाद और वीरभूम ज़िला पूर्वकालमें उत्तरराढ़ नामसे ख्यात था। राढ़ देखो।

उत्तरराढ़ी—उत्तरराढ़वासी। १ बङ्गदेशीय कायस्थोंकी एक श्रेणी। जो कायस्थ राढ़के उत्तर अंशमें रहे, वेही इस नामसे विख्यात हुये। २ चौबीस-परगनेके मोहाररोंकी एक श्रेणी। ३ खेती करनेवाले धोबियों और नाइयोंकी एक श्रेणी। ४ बङ्गदेशीय हालिक कैवर्तोंकी एक श्रेणी। ५ मोचियोंकी एक श्रेणी।

उत्तरलक्षण (सं॰ क्ली॰) प्रकृत उत्तरका प्रकाश, असली जवाबकी झलक। (वि॰) २ वाम दिक् चिह्नित, बाईं ओर निशान् रखनेवाला।

उत्तरलोमन् (सं॰ वि॰) ऊपरी या बाहरी ओर घुमावदार बाल रखनेवाला, जिसके बाल ऊपर या बाहरको घूमे रहें।

उत्तरवयस् (सं॰ क्ली) जीवनके पश्चाद् वर्ष, ज़िन्दगीके पिछले साल।

उत्तरवल्ली (सं॰ स्त्री॰) दो अध्यायमें विभक्त कठोपनिषद्का द्वितीय भाग।

उत्तरवस्ति (सं॰ पु॰) मूत्राशयमें स्नेह पहुंचानेका सुश्रुतोक्त एक यन्त्र। सुश्रुतने कहा है—यह यन्त्र रोगीकी चतुर्दश अङ्गुलि परिमित दीर्घ, और अग्र भागमें मालतीपुष्पके वृन्त समान तथा क्षुद्र छिद्रयुक्त होगा। इसमें स्नेहका परिमाण रहेगा। रोगीका वयस पचीस वत्सरसे कम ठहरने पर विचारसङ्गत स्नेहकी मात्रा रखना चाहिये। स्त्रीके अपत्य पथमें चार अङ्गुलि अन्तर पर मूत्रमार्ग लगी है। उसके मुद्र तुल्य छिद्रका परिमाण दश अङ्गुलि दीर्घ है। उत्तरवस्ति लगानेको अपत्यपथमें चार और मूत्रनालीमें दो अङ्गुल विधकारी देना चाहिये। अल्प वयस्का कन्याके एक ही अङ्गुल यथेष्ट है। ऐसे स्थलमें औरभ्र या शूकरका वस्ति व्यवहार्य है। अभावमें पक्षीके गलदेशका चर्म चलता है। वह भी न मिलनेपर हरिणके पट या अन्य किसी प्रकारका कोमल चर्म वस्ति बनानेमें लगता है। प्रथम रोगीको स्निग्ध और स्वेद प्रयोग कर घृतदुग्धमय यथाशक्ति यवागू पिलाना चाहिये। फिर जानु परिमित स्थानपर पृष्ठ टेक (उपविष्ट भावसे) और वस्ति तथा मूर्धि देशमें उष्ण तैल लेप मिट्टनको दृढ़ और ऋजु करे। उसके बाद मेढ्में शलाका द्वारा अन्वेषणकर ६ अङ्गुलि परिमाणसे अल्प अल्प बसाये। वस्ति लगा नल फिर धीरे धीरे निकालना चाहिये। फेर

इसके पहलेसे पदरोगको दुग्ध, दूध या मांसरसका परि-मित मात्रामें भोजन करावे। इसी नियमसे तीन या चार वस्ति लगावें। दूषित शुक्र या शोणित, मूत्राघात, मूत्रदोष, योनिदोष, शुक्रदोष, गर्भाशयरोग, वस्तिशूल, वङ्क्षणशूल, मेढ्रशूल, समस्त मेहरोग और अन्यान्य उत्कट वस्तिजात रोग उत्तरवस्तिसे आरोग्य हो जाते हैं।

उत्तरवदा (सं० स्त्री०) उत्तरीय, चादर।

उत्तरवादिन् (सं० त्रि०) उत्तर-वद-णिनि। १ प्रति-वादी, मुद्दालह।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible] ५।१०)

२ प्रतिवादी, जवाब देनेवाला। ३ अन्यसे पश्चात्‌स्वत्व रखनेवाला, जो दूसरेसे पीछे हक रखता हो।

उत्तरवायु (सं० पु०) उत्तरदिग्भव मारुत, शिमाली हवा, उतराहीं। यह शीत, स्निग्ध, दोषप्रकोपकर, क्लेदन, प्रकृतिस्थको बलद, मृदु और यक्ष्मा विपा-कके लिये अधिक गुणकर होता है। (सुश्रुत)

उत्तरवारुणी (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी, इन्द्रायन।

उत्तरवारेन्द्र (सं० पु०) १ बङ्गदेशका उत्तरांश अर्थात् दिनाजपुर और रङ्गपुर जिला। २ बङ्गदेशके वारेन्द्र ब्राह्मणोंकी एक शाखा।

उत्तरवेदि (सं० स्त्री०) १ वेदोक्त वेदीका एक भेद। "[illegible]" ([illegible])

२ कुरुक्षेत्रके समन्तपञ्चक तीर्थका अपर नाम।

"[illegible]
[illegible]"
([illegible])

शाल्मल, परशुराम, रामह्रद और मच[illegible] मध्यवर्ती स्थान कुरुक्षेत्र-समन्तपञ्चक कहा[illegible] जिसमें[illegible] उत्तरवेदि कहलाता जाता है।

उत्तरसण्ड (सं० स्त्री०) मङ्गुष्ठिका [illegible] आई घास।

उत्तरसाक्षिन् (सं० त्रि०) १ प्रतिवादी [illegible] मुद्दालहका गवाह।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

२ अन्यके कथन पर जवाब देनेवाला, जो दूसरेकी बात सुनकर जवाब देता हो।

उत्तरसाधक (सं० त्रि०) १ शेष भागको सम्पन्न करनेवाला, जो बचे हुये कामको पूरा करता हो। २ सहायक, मददगार। ३ उत्तरको प्रतिपन्न करने-वाला, जो जवाब बनाता हो।

उत्तरहनु (वै० पु०) हनुका उपरि भाग, जबड़ेका ऊपरी हिस्सा। ([illegible])

उत्तरा (सं० स्त्री०) १ विराटराजकी कन्या। अभिमन्युके साथ इसका विवाह हुआ था। (परिक्षित देखो।) (अव्य०) २ उत्तरकी ओर, शिमालकी तरफ।

उत्तरापथ (सं० स्त्री०) उत्तरीय विभाग, शिमाली हिस्सा। यह भारतमें हिमालयके समीप है।

उत्तरात् (सं० अव्य०) बाम ओरसे, बाईं तरफ पर।

उत्तरात्तात् (वै० अव्य०) उत्तरसे, शिमालकी तर्फ।

उत्तराधर (सं० त्रि०) १ उच्चनीच, ऊंचा-नीचा, बड़ा छोटा। "[illegible]" ([illegible]) (स्त्री०) २ ऊर्ध्व एवं निम्न ओष्ठ, ऊपर नीचेका ओठ।

उत्तराधिकार (सं० पु०) सम्पत्तिका क्रमिक स्वत्व, मालकी सिलसिलेवार वरासत, बपौती।

उत्तराधिकारिता (सं० स्त्री०) उत्तराधिकारीका भाव, सिलसिलेवार वरासत।

उत्तराधिकारित्व (सं० क्ली०) उत्तराधिकारिता देखो।

उत्तराधिकारिन् (सं० त्रि०) पूर्वस्वामीके अभावमें धनादिके [illegible] प्राप्ति, वारिस। इस देशमें स्मृतिके [illegible] प्रथम पुत्र, उसके [illegible] और पौत्र पुत्रको [illegible] पौत्र [illegible] पत्नी [illegible] दुहिता और [illegible]

(कन्या, पुत्रहीना और विधवा अधिकारिणी नहीं होती।) विवाहिता दुहिताके अभावमें दौहित्र अधिकारी होता अभावमें उसके पिताका स्वत्व है। पिताके न रहनेसे माता और उसके भी अभावमें भ्राता उत्तराधिकारी है। प्रथम सोदर, सोदर न होनेसे वैमात्रेयको अधिकार दिया जाता है। सोदरके मरनेसे उसका पुत्र, उसके अभावमें वैमात्रेय-भ्रातृ-पुत्र उत्तराधिकारी होता है। सोदरके मातृविषयमें प्रथम अपने सोदर, उसके अभावमें वैमात्रेयका ग्रहण है। इसीप्रकार विमाताके विषयमें प्रथम विमातृपुत्र, उसके अभावमें उसका असंसृष्ट पुत्र लिया जाता है। भ्राताके अभावमें भ्रातृपुत्र और उसके भी अभावमें वैमात्रेय-भ्रातृपुत्र अधिकार पा सकता है। भ्रातृपुत्रके अभावमें भ्रातृपौत्र है। उसके अभावमें पितृदौहित्र अर्थात् निज भगिनीपुत्र या वैमात्रेय भगिनीपुत्र, उसके अभावमें पितामह, उसके अभावमें पितामही, उसके अभावमें पिताका सहोदरभ्राता, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय-भ्राता, उसके अभावमें पिताका सहोदरपुत्र, उसके अभावमें पिताका सहोदर-पौत्र, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय-पुत्र, उसके अभावमें पिताका वैमात्रेय पौत्र इत्यादि अधिकारी होता है। पिताके कुलमें कोई न रहनेसे पितामहदौहित्र, उसके अभावमें प्रपितामह-दौहित्र, उसके अभावमें प्रपितामह और उसके भी अभावमें प्रपितामहीको उत्तराधिकार मिलता है। प्रपितामहीके अभावमें पितामहका सहोदर या वैमात्रेय-भ्राता पुत्रपौत्रादि क्रमसे अधिकारी हैं। इसीप्रकार पिण्डदगणके अभावमें मातामह, मातुल और मातुलपुत्र क्रमान्वयसे उत्तराधिकार पाता है। मातुल-पुत्रके अभावमें अधस्तन सगोत्रीय, आहारदाता प्रभृति एक दूसरेके अभावमें उत्तराधिकारी होते हैं। उनके अभावमें ऊर्ध्वतन सगोत्रीय धनी, दश अध-भुक, वृद्धप्रपितामहादि पुत्रपौत्रादि क्रमसे अधिकार पाते हैं। उनके अभावमें चतुर्दश पुरुषके भ्रातिसम्पर्कीय अधिकारी हैं। उभयकुलमें कोई न रहनेसे धनीका उत्तराधिकार गुरु, उसके अभावमें शिष्य, उसके अभावमें सतीर्थ और उसके भी अभावमें एकग्राम-भुक्त अधिवासीको मिलता है। ऐसा कोई न रहनेसे राजा उत्तराधिकारी है। (दायभाग)

उत्तरान्वित (सं० वि०) उत्तराको साथ लिये हुआ।

उत्तरापथ (सं० पु०) उत्तरा उत्तरस्यां पन्थाः, अच्। भारतवर्षका उत्तरस्थित देश, आर्यावर्त्तका उत्तरांश।

"उत्तरापथदेशस्य रथिदारो महीक्षितः।" (हरिवंश)

उत्तराफाल्गुनी, उत्तरफल्गुनी देखो।

उत्तराभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद देखो।

उत्तराभास (सं० पु०) दुष्ट उत्तर, खराब जवाब, जो उत्तर ठीक न हो। स्मृतिने इसे ग्यारह प्रकारका लिखा है। यथा—१ सन्दिग्ध, मश्किया; जैसे कोई अभियोग आनेपर कहे—मुझे स्मरण नहीं, मैंने सौ रुपये लिये या पैसे पैसे। २ प्रकृतसे अन्यत्, असलीसे दूसरा—जैसे मैंने सौ रुपये नहीं सौ पैसे लिये हैं। ३ अत्यल्प, निहायत कम—जैसे मैंने सौ नहीं, पांच रुपये लिये हैं। ४ अति भूरि, बहुत ज्यादा—जैसे मैंने सौ नहीं, दो सौ रुपये लिये हैं। ५ पक्षैकदेशव्यापी—जैसे मैंने सुवर्ण और वस्त्र दोनों नहीं, केवल सुवर्ण लिया है। ६ व्यस्तपद, जैसे मैंने सुवर्ण नहीं लिया, उलटा मारा गया हूं। ७ अव्यापी, बेसिर पैर। ८ निगूढ़, मैंने नहीं—किसी दूसरेने इनसे ऋण लिया होगा। ९ आकुल—जैसे मैंने रुपये लिये तो थे, किन्तु अब देने नहीं। १० व्याख्यागम्य, समझानेको जरूरत रखनेवाला। ११ असार, जैसे मैंने व्याज देते भी रुपया नहीं लिया।

उत्तराभासता (सं० स्त्री०) उत्तरकी अपर्याप्तता, जवाबकी कमी।

उत्तराभासत्व (सं० क्ली०) उत्तराभासता देखो।

उत्तरायण (सं० क्ली०) उत्तरा उत्तरस्यां अयनं सूर्यादेः अयन्। पूर्वपदात् संज्ञायामगः। पा ८।४।३। सूर्यका उत्तर दिग् गमनस्थान, मकरसंक्रान्तिसे छः मास।

"भानोर्मकरसंक्रान्तेः षण्मासा उत्तरायणम्।" (ज्योतिस्तत्त्व)

"स्थितिरेव वशिष्ठोऽपि दीक्षः कान्युत्तरायणे।" (रघुवंश १८ स०)

उत्तरायणमें शिशिर, वसन्त और ग्रीष्म ऋतु पड़ता है।

उत्तरायणान्तहत्त (सं० क्ली०) सूर्यके उत्तरवाली गतिकी

सीमानिर्णायक रेखा, जो मकर आदमावके दिशान जानेकी काम ठहराती हो। (Tropic of Cancer)

उत्तरायणी (सं० स्त्री०) सङ्गीतकी मूर्च्छनाका एक भेद।

उत्तरारणी (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व अरणि। इसीको काटनेसे यज्ञीय अग्नि बनता है।

उत्तरार्थ (सं० त्रि०) निम्नलिखित विषयके अर्थ, तत्पश्चात् जिनके लिये।

उत्तरार्ध (सं० क्ली०) उत्तरमर्धम्। १ देहका उपरिभाग, जिस्मका ऊपरी हिस्सा। २ शेषार्ध, आखिरी आधा। "अर्धे शेषार्धे मायथरीरे।" (कुमार १।५।११) ३ दूरतर अन्त, ज्यादा दूरका सिरा। ४ उत्तरका अर्ध, बायाँ आधा।

उत्तरार्ध्य (सं० त्रि०) उत्तरदिक्स्थ, शिमालकी ओर पड़नेवाला।

उत्तरावत् (वै० त्रि०) विजयी, फतेहमन्द, जीतनेवाला।

उत्तराशा (सं० स्त्री०) उत्तर दिक्, शिमाल।

उत्तराशाधिपति (सं० पु०) उत्तर दिक्‌के स्वामी, कुबेर।

उत्तराशापति, उत्तराशाधिपति देखो।

उत्तराश्मन् (सं० पु०) १ पार्वतीय देश विशेष, एक पहाड़ी मुल्क। २ पार्वतीय भट विशेष, एक पहाड़ी टुकड़ा। (वार्त्तिकी ४।११०)

उत्तराषाढ़ा (सं० स्त्री०) उत्तरा-आषाढ़ा। एकविंश नक्षत्र। इसका रूप शूर्पके समान होता है। यह दो तारा युक्त है। अधिदेवता विश्व हैं। किसीके मतमें यह आठ तारका रखता और गजके दन्तवत् लगता है। इस नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दाता, दयावान्, विजयी, विनीत, धर्मात्मा, धनशाली, स्त्री-पुत्रयुक्त और अत्यन्त सुखी निकलता है।

उत्तरासङ्ग (सं० पु०) ऊर्ध्वं आसज्यते, उत्तर-आ-सञ्ज-घञ्। उत्तरीयक, ओढ़नी, चादर, पिछौरी, ऊपरी या बाहरी कपड़ा।

उत्तराह (सं० पु०) उत्तर-अहन्-टच्। परदिन, आनेवाला रोज, कल।

उत्तराहि (सं० अव्य०) उत्तरमें, शिमालमें।

उत्तरिका (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया। भरतने राजगृहसे अयोध्या आते समय मार्गमें इस नदीको पार किया था। उत्तरगा पाठान्तर भी लिखित है। (रामायण अयोध्या ७१।१०)

उत्तरिणी (सं० स्त्री०) उत्तम पर्णी, बढ़िया पाकर। यह कटुक, शीत, वह्निदीपक, लघु, रूक्ष, स्निग्ध, ग्राहक, तुवर, व्रणरोपण एवं सुखप्रसवकर होती और कास, व्रण, कृमि, श्वास, ज्वर, पित्त, दाह, कफ, कुष्ठ, प्रमाद, शोथ, तन्द्रा, दद्रु, वमन, मूत्रकृच्छ्र, योनिरोग तथा शोषको खोती है। इसका शाक उष्णवीर्य एवं तिक्त रहता और कृमि, अर्श, कुष्ठ, कफ तथा वातको हरता है। फल रोचक, तिक्त, उष्ण, कटुक, लघु, अग्निप्रदीपक, पित्तकोपकर, कफापहर और विषनाशक है। (वैद्यनिघण्टु)

उत्तरिन् (सं० त्रि०) श्रेष्ठ, बड़ा।

उत्तरीय (सं० क्ली०) उत्तरस्मिन् देहभागे, छ। पाणिनि ४।२।११८। उत्तरीयकपड़ा, उपरना, ओढ़नेकी चद्दर। (त्रि०) २ ऊर्ध्वस्थित, ऊपरी। ३ उत्तरदिक्स्थ, शिमाली।

उत्तरीयक, उत्तरीय देखो।

उत्तरेतरा (सं० स्त्री०) दक्षिण विभाग, जनूबी तरफ।

उत्तरेद्युस् (सं० अव्य०) पर दिन, आगामी दिवस, कल।

उत्तरोत्तर (सं० त्रि०) उत्तरस्मादुत्तरः। १ अधिकाधिक, ज्यादा ज्यादा। (अव्य०) २ क्रम क्रम, धीरे-धीरे, बराबर। (क्ली०) ३ उत्तर पर उत्तर, जवाबका जवाब। ४ वार्तालाप, गुफ्तगू। ५ प्रतिवचन, रद्द जवाब। ६ आधिक्य, ज्यादती। ७ अनुक्रम, सिलसिला। ८ पश्चात्, उपरान्त।

उत्तरोत्तरिन् (सं० त्रि०) १ बढ़ता हुआ, ऊँचा बढ़नेवाला। २ पश्चात् पीछे आनेवाला, जो दूसरेके बाद पड़ता हो।

उत्तरोष्ठ (सं० पु०) ऊपरिस्थ ओष्ठ, ऊपरका ओठ।

उत्तरौष्ठ, उत्तरोष्ठ देखो।

उत्तम्भ (सं० क्ली०) उद्-स्तम्भनम्, बाहि० बला०। अधः करको अर्ध पता, जोरकी अकड़-पकड़।

उत्तालित (सं॰ त्रि॰) उत्-तल-क्त। उत्क्षिप्त, उछाला हुआ।

उत्ता, उतना देखो।

उत्तान (सं॰ त्रि॰) उद्गतस्तानो विस्तारो यस्मात्। १ ऊर्ध्वमुखशायित, मुंह ऊपरको उठाये पड़ा हुआ, चित। २ अगभीर, उथला। ३ उच्छ्रित, खड़ा, सीधा। ४ पुटाकार, खोकला। ५ ऊर्ध्वतल, सतह पर फैला हुआ। ६ उद्घाटित, खुला। (क्ली॰) ७ जल, पानी।

उत्तानक (सं॰ पु॰) उत्-तन-ण्वुल्। १ उच्चटावृक्ष, उटङ्गनका पेड़। २ मुस्ताभेद, नागरमोथा।

उत्तानकूर्मक (सं॰ क्ली॰) कूर्मासन विशेष। आसन देखो।

उत्तानपत्र, उत्तानपत्रक देखो।

उत्तानपत्रक (सं॰ पु॰) १ रक्तैरण्ड, लाल रेंड़ीका पेड़। २ श्वेतैरण्ड, सफ़ेद रेंड़ीका पेड़।

उत्तानपद् (वै॰ स्त्री॰) १ वृक्ष, पेड़। २ शक्ति, ताक़त। उत्तानपदसे दिक् और पृथिवी उपजती है। (ऋक् १०।७२।४)

उत्तानपर्ण (वै॰ त्रि॰) विस्तृत पत्रयुक्त, बढ़ी हुई पत्ती रखनेवाला।

उत्तानपाद (सं॰ पु॰) स्वायम्भुव मनुके पुत्र और ध्रुवके पिता। इन राजाके सुनीति और सुरुचि दो पत्नी रहीं। सुनीतिके गर्भसे ध्रुव, कीर्तिमान्, आयुष्मान् एवं वसु और सुरुचिके गर्भसे उत्तमने जन्म लिया था। (हरिवंश, विष्णुपुराण, भागवत)

उत्तानपादज (सं॰ पु॰) उत्तानपादके पुत्र ध्रुव। ध्रुव देखो।

उत्तानशय (सं॰ त्रि॰) उत्तानः ऊर्ध्वमुखः शेते, शी-अच्। १ ऊर्ध्वमुख शयन करनेवाला, जो चित लेटा हो। (पु॰) स्तन्यपायिशिशु, शीर दूधारा बच्चा, जो लड़का बहुत छोटा और माका दूध पीता हो।

उत्तानशीवन् (वै॰ त्रि॰) उत्तानस्थित, उम्दादा, खड़ा, थका हुआ। (अथर्व ५।२।१०)

उत्तानहस्त (वै॰ त्रि॰) विस्तारित हस्तयुक्त, हाथ फैलाये हुआ।

उत्ताप (सं॰ पु॰) उत्-तप-घञ्। १ उष्णता, गर्मी। २ ताप, धूप। ३ दुःख, तकलीफ़। ४ चिन्ता, फ़िक्र। ५ उत्तेजना, जोश। ६ चेष्टा, कोशिश।

उत्तापन (सं॰ क्ली॰) उष्णताकरण, गर्म करनेका काम।

उत्तापित (सं॰ त्रि॰) १ तापयुक्त, तपा हुआ, जो गर्म किया गया हो। २ दुःखित, तकलीफ़ उठाये हुआ।

उत्तार (सं॰ पु॰) उत्-तॄ-णिच्-घञ्। १ वमन, कै, उलटी। २ उल्लङ्घन, लंघाई। ३ पारगमन, उतारा। ४ रक्षा, बचाव। ५ दूरीकरण, अलगाव। (त्रि॰) ६ अत्यन्त उच्च, निहायत ऊंचा।

उत्तारक (सं॰ त्रि॰) उत्-तॄ-णिच्-ण्वुल्। १ पार हो जानेवाला, जो उतर गया हो। (पु॰) २ पार लगानेवाले महादेव।

उत्तारण (सं॰ क्ली॰) उत्-तॄ-णिच्-ल्युट्। १ पारको गमन, उतारा। (पु॰) कर्तरि ल्यु। २ विष्णु भगवान्। (त्रि॰) ३ पारको गमन करनेवाला, जो उतर रहा हो।

उत्तारलोचन (सं॰ त्रि॰) घूर्णित नेत्रयुक्त, घूमी हुई आंखोंवाला।

उत्तारिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-तॄ-णिनि। १ पार लगानेवाला, जो उतारता हो। २ चपल, चुलबुला।

उत्तार्य (सं॰ त्रि॰) पार किया जानेवाला, जो उतारनेके क़ाबिल हो।

उत्ताल (सं॰ त्रि॰) उत्-चुरादित्वात् तल-अच्। १ श्रेष्ठ, बड़ा। २ उत्कट, भारी। ३ कठिन, मुशकिल। ४ तीव्र, तेज़। ५ उच्च, ऊंचा। (पु॰) ६ मर्कट, बन्दर। (क्ली॰) ७ संख्या विशेष, कोई खास अदद।

उत्तिर (हिं॰ पु॰) पक्षोमें गलेके ऊपर और कण्ठके नीचे रहनेवाली पट्टी।

उत्तिरनमेरूर (उत्तामनोर)—मन्द्राज प्रान्तीय चेङ्गलपट ज़िलेके मधुरान्तकम् तालुकका एक नगर। यह अक्षा॰ १२° ३६´ ५५″ उ॰ और द्राघि॰ ७९° ४८´ पू॰ पर अवस्थित है। चेङ्गलपटसे उत्तरनमेरूर १६ मील पड़ता है। प्रायः साढ़े ७ हज़ार मनुष्य बसते हैं। हिन्दुओं और मुसलमानोंके शासन-समयमें [illegible] स्थान था।

सन् ई० के १८ वें शताब्दमें अनेक बार अंगरेजों और फरासीसी सैन्यने इसपर अधिकार किया। आजकल यह मजिष्ट्रेटकी अदालत बैठती है। यहां पांच शिव और दो विष्णुके भग्न मन्दिर विद्यमान हैं। शिव-मन्दिरका कारुकार्य सुन्दर और मनोमोहक है। यहोंके अनेक वैष्णव रोमन कातलिक रहते हैं।

उत्तिष्ठहोम (सं० पु०) होम विशेष। यह होम खड़े खड़े करना पड़ता है।

उत्तिष्ठमान (सं० त्रि०) उत्-स्था-शानच्। १ उत्थानशील, उठ खड़ा होनेवाला। २ उन्नतिशील, बढ़ चलनेवाला।

उत्तीर (सं० अव्य०) तट पर, किनारे, भूमिपर।

उत्तीर्ण (सं० त्रि०) उत्-तॄ कर्मणि क्त। १ पारगत, उतरा हुआ। २ जलसे उत्थित, पानीसे उठा हुआ। ३ निर्गत, निकला हुआ। ४ अतिक्रान्त, लांघा हुआ। ५ उपस्थित, पहुंचा हुआ। ६ कृतकार्य, कामयाब। ७ मुक्त, छूटा हुआ।

उत्तीर्य (सं० अव्य०) पार होकर, उतरके।

उत्तीर्षु (सं० त्रि०) पार होनेका अभिलाषी, जो उतरना चाहता हो।

उत्तुङ्ग (सं० त्रि०) उत् अतिशयेन तुङ्गः। उच्च, ऊंचा, जो खूब बढ़ा हो।

उत्तुङ्गता (सं० स्त्री०) उच्चता, बुलन्दी, ऊंचाई, बड़ाई।

उत्तुङ्गभद्र—बम्बई प्रान्तीय कनाड़ा जिलेके एक प्राचीन भूपति। कानाडीय उपाख्यानमें कहा है—वे हिन्दु-स्थानसे आकर गोदावरीके दक्षिण बसे थे। इनके पुत्र नन्दने चालुक्य गिरिपर नन्दगिरिदुर्ग नामक एक किला बनाया था।

उत्तुण्डकी (सं० स्त्री०) करवन्द, करौंदा।

उत्तुण्डित (सं० क्ली०) १ [illegible], कटिकी नोक। (त्रि०) २ निर्गत, निकला हुआ।

उत्तुद (सं० पु०) चाबुक लगानेवाला पुरुष, जो आदमी घोड़ेको चलाता हो।

उत्तूर (चोगूर)—बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका एक नगर। यह पूना नगरसे उत्तर-पश्चिम ३० मील अक्षा० १८° १० उ० और द्राघि० ७३° ९' ३०" पू० पर अवस्थित है। यहांका नामजादा अम्बा मन्दिर एक नगरके पास और शहरमें ज्ञानेश्वरके शिष्य ... मठ करते थे। इसीसे इस नगरको रक्षाके लिये एक छोटा दुर्ग बनाया गया। यहांपर दो मन्दिर बने हैं—एक सुप्रसिद्ध साधु तुकारामके गुरु केशवचैतन्य और दूसरा महादेवका। महादेवके मन्दिरमें प्रति वर्ष मेला लगता है।

उत्तुष (सं० पु०) उद्गतः तुषोऽस्मात्। लावा, लाई।

उत्तू (हिं० पु०) १ चिह्नीकरण, गढ़ाव, गुलट, चीन्ह, चोरस। २ कपड़ेका गढ़ाव, कपड़ेकी चुनट। ३ कपड़ा, चुनट डालने या बेलबूटा काढ़नेका औजार।

उत्तूकश, उत्तूगर देखो।

उत्तूगर (हिं० पु०) कपड़ेपर गढ़ाव डालनेवाला, जो कपड़ेपर चुनट चढ़ाता हो।

उत्तेजक (सं० त्रि०) प्रोत्साहक, प्रेरक, उकसाने, भड़काने, उभारने या उठानेवाला।

उत्तेजन (सं० क्ली०) उत्तेजना देखो।

उत्तेजना (सं० स्त्री०) उत्-तिज-णिच्-युच्। १ शस्त्रादि द्वारा तीक्ष्णीकरण, सान धरनेका काम, पैनाव। २ प्रेरणा, तरगीब, पहुंचाव। ३ प्रकाश, जगाव। ४ मत्तता, मस्ती, मदान्धता। ५ उद्दीपन, भड़काव। ६ उत्साहदान, बढ़ावा। ७ शीघ्रकरण, जल्दी करनेका काम। ८ उद्बोधन, नज-रोबदिही।

उत्तेजित (सं० त्रि०) उत्-तिज-णिच्-क्त। १ उद्दीपित, उकसाया हुआ, जो भड़का हो। २ प्रेरित, भेजा या पहुंचाया हुआ। ३ मार्जित, पैनाया हुआ। ४ निरत, जो लगा हो। ५ प्रवर्तित, चलाया हुआ। (क्ली०) ६ अश्वगति विशेष, घोड़ेकी मदरा चाल। ७ उद्दीपन, तरगीब, भड़काव।

उत्तेरित (सं० क्ली०) अश्वगति विशेष। उत्पुत-कारक गत्यादि, घोड़े दौड़ानेकी सरपट अंगरेज। (त्रि०) ३ उल्लम्बितपुच्छ, पूंछ निकालनेवाला।

उत्तोरित (सं० क्ली०) उत्-तृ भावे क्तप्। चारों प्रकार घोड़ेकी गति, दुलकी, घोड़ेकी मामूली दौड़-वाली चाल।

उत्तोलन (सं॰ क्ली॰) उत्-तुल भावे ल्युट्। उत्थापन, उत्क्षेपण, उठाव, चढ़ाव।

उत्तोलित (सं॰ वि॰) उत् चुरादित्वात् तुल-क्त। उत्क्षिप्त, उत्थापित, उठाया या चढ़ाया हुआ।

उत्त्यक्त (सं॰ वि॰) उत्-त्यज-क्त। १ परित्यक्त, छोड़ा हुआ। २ विरक्त, मुहब्बत या शौक न रखनेवाला। ३ ऊर्ध्वक्षिप्त, फेंका या उछाला हुआ।

उत्त्याग (सं॰ पु॰) १ उत्सर्ग, तर्क, छोड़ाव। २ उत्क्षेपण, फेंकफांक। ३ विरक्ति, दुनियाकी मुहब्बतकी जुदाई।

उत्त्रस्त (सं॰ वि॰) अतिशय भयभीत, बहुत डरा हुआ।

उत्त्रास (सं॰ पु॰) उत्-त्रस-घञ्। अतिभय, बड़ा खौफ़ या डर।

उत्त्रिपद (सं॰ क्ली॰) उन्नत त्रिपदी, ऊंची तिपाई।

उत्थ (सं॰ वि॰) उत्-स्था-क। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उन्नत, ऊंचा। ३ उद्गत, निकला हुआ। ४ उत्पन्न, पैदा। (पु॰) ५ उत्पत्ति, उपज, निकास।

उत्थवना (हिं॰ क्रि॰) उत्थापन करना, उठाना, लगाना।

उत्थाट (वै॰ पु॰) १ उत्थापन करनेवाला, जो उठ रहा हो। २ अध्यवसायी, पक्का इरादा रखनेवाला।

उत्थान (सं॰ क्ली॰) उत्-स्था-ल्युट्। १ ऊर्ध्वपतन, ऊंचा पड़नेकी हालत। २ उद्यम, कोशिश। ३ उदय, निकास। ४ उन्नति, तरक्की। ५ उठाव, उठान। ६ तन्त्र। ७ पौरुष, ज़ोर। ८ पुस्तक, किताब। ९ युद्ध, लड़ाई। १० पुनरुज्जीवन, हर्ष। ११ त्याग, तर्क, छोड़ बैठनेकी हालत। १२ मूल, जड़, निकास। १३ मलोत्सर्ग। १४ मलरोग, दस्तकी बीमारी। १५ हर्ष, खुशी। १६ सैन्य, फौज। १७ अहाता। १८ वलिदानकी शाला। १९ सीमा, हद। २० गृहकार्य, घरका काम। २१ विचार, ख़याल। २२ रोगका सन्निकट कारण, बीमारीका नज़दीकी सबब। (त्रि॰) २३ उठवाने या निकलवानेवाला।

उत्थानवत् (सं॰ त्रि॰) कार्यार्थ तत्पर, कामके लिये तैयार।

उत्थानैकादशी (सं॰ स्त्री॰) चान्द्र कार्तिक मासकी शुक्ल एकादशी, देव उठनी एकादशी। जबतक यह एकादशी नहीं पड़ती, तबतक धार्मिक हिन्दुवोंके भोजनमें ऊख, भंटा, सिंघाड़ा प्रभृति चीज़ नहीं चलती। लोग घरको अच्छी तरह लीप पोत विष्णुभगवान्की पूजा करते हैं। एकादशी देखो।

उत्थापक (सं॰ वि॰) १ उत्थापन करनेवाला, जो उठाता हो। २ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उत्थापन (सं॰ क्ली॰) उत्-स्था-णिच्-ल्युट्। १ उत्तोलन, उठाव। २ प्रेरण, पहुंचाव। ३ प्रबोधन, जगाव। ४ उपस्थितकरण, लगाव। ५ क्षोभन, भड़काव। ६ छोड़ाव। ७ गणितमें प्रश्नका उत्तर निकालना, सवालका जवाब।

उत्थापित (सं॰ वि॰) उत्-स्था-णिच्-क्त। १ उत्तोलित, उठाया हुआ। २ प्रेरित, भेजा हुआ। ३ प्रबोधित, जगाया हुआ। ४ क्षोभित, भड़काया हुआ।

उत्थाप्य (सं॰ अव्य॰) १ उत्तोलन करके, उठाके। २ क्षोभन करके, भड़का कर। (त्रि॰) ३ [illegible] जानेवाला, जो जगाने क़ाबिल हो। (वै॰) ४ [illegible] किया जानेवाला, जो भेजे जानेके क़ाबिल [illegible]

उत्थाय (सं॰ अव्य॰) १ उठकर। २ [illegible]

उत्थायिन् (सं॰ वि॰) [illegible] उठ या निकल रहा हो।

उत्थित (सं॰ वि॰) [illegible] उपजा हुआ। २ उद्गत, [illegible] मुस्तैद। ४ वर्धित, [illegible] पड़ गया हो। ६ [illegible] फैला हुआ। [illegible] ९ दश पादका [illegible]

उत्थितता (सं॰ स्त्री॰) [illegible] उद्यम, [illegible]

[illegible]

[illegible]

उत्पक्ष्मन्, उत्पक्ष्म देखो।
उत्पचिष्णु (सं॰ त्रि॰) पाक करनेके योग्य, जो पकानेके काबिल हो।
उत्पट (सं॰ पु॰) उत्-पट-अच्। १ वृक्षादिकी त्वक्‌को भेदकर उद्गत होनेवाला निर्यास, पेड़की छालको फोड़कर निकलने वाला गोंद।

"[illegible]"
[illegible] 'उत्पटः [illegible]' ([illegible])

२ उपरिच्छद, ऊपरला, टुकड़ा, ऊपरी कपड़ा।
उत्पतग (सं॰ पु॰) उत् पतति ऊर्ध्वं गच्छति, उत्-पत-अच्। १ पक्षी, चिड़िया। २ ऊर्ध्वगमन, ऊपरको उठाई, उड़ान।
उत्पतत् (सं॰ त्रि) ऊर्ध्व अथवा अधः उत्पतन करनेवाला, जो ऊपर या नीचे उड़ रहा हो।
उत्पतन (सं॰ क्ली॰) उत्-पत-ल्युट्। १ ऊर्ध्व-गमन, उड़ान, चढ़ाव। २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ उदय, निकास। ४ उत्थान, उठान। ५ उत्प्लवन, भगाई।
उत्पतननिपतना (सं॰ स्त्री॰) उत्पतननिपतन इत्यु-क्तिर्यस्यां क्रियायाम्। ऊर्ध्व एवं अधः उत्पतन, ऊपर और नीचेको उड़ान।
उत्पताक (सं॰ त्रि॰) उत्तोलिता पताका यस्मिन्। उत्तोलित पताकायुक्त, जिसमें झण्डे उड़ें।

"[illegible]" ([illegible])

उत्पताकध्वज (सं॰ त्रि॰) उत्तोलित पताका एवं ध्वजायुक्त, जिसमें झण्डे और निशान उड़ते रहें।
उत्पतित (सं॰ त्रि॰) उत्-पत-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उद्गत, निकला हुआ।
उत्पतितव्य (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्व उड़ाया जानेवाला, जो ऊपर उड़ाये जानेके काबिल हो।
उत्पतितृ (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वगमनकारी, ऊपर चढ़नेवाला, जो कूद पड़ता हो।
उत्पतिष्णु (सं॰ त्रि॰) उत्-पत-इष्णुच्। उत्पतन-शील, उड़ने या कूद पड़नेवाला।
उत्पत्ति (सं॰ स्त्री॰) उत्-पत-क्तिन्। १ उद्भव, जन्म, पैदायश, जनम। २ आविर्भाव, दिखाव। ३ ऊर्ध्व-गमन, उड़ान। ४ प्रभव, खुलासा। ५ लाभ, फायदा। यमकी भांति उद्गम, मशीनसे चीज़ोंकी पैदायश।
उत्पत्तिशालीन (सं॰ त्रि॰) गर्भसे उत्पन्न होने-वाला, जो पैदायशके लायक हो।
उत्पत्तिक्रम (सं॰ पु॰) जगत्‌की उत्पत्तिका पारि-पाट्य, दुनियाकी पैदायशका तरीका। श्रुतिमतसे परमात्मासे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधि, ओषधिसे अन्न, अन्नसे रेतः और रेतःसे पुरुषकी उत्पत्ति है।
उत्पत्तिप्रयोग (सं॰ पु॰) १ कारण और कार्यके संयुक्त रूपसे उद्भव, सबब और असरकी मिली हुई हालतमें पैदायश। २ अर्थ, मानी, मतलब।
उत्पत्तिमत् (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न, पैदा, जन्मा हुआ।
उत्पत्तिव्यञ्जक (सं॰ पु॰) १ उद्भवका चिह्न, पैदा-यशकी सूरत। २ दो बार उत्पन्न होनेका चिह्न, दुबारा जन्मनेका निशान।
उत्पत्तिव्युत्क्रम (सं॰ पु॰) विपरीत भावसे उत्पत्ति, उलटी चालकी पैदायश।
उत्पथ (सं॰ पु॰) १ अपमार्ग, बुरी राह। (अव्य॰) २ मार्गके विरुद्ध, [illegible]।
उत्पथप्रतिपथ, उत्पथ देखो।
उत्पथप्रवृत्त (सं॰ त्रि॰) अधम, मन्द, बुरा, खराब, बुरी राह या चाल पकड़नेवाला।
उत्पद्यमान (सं॰ त्रि॰) उत्-पद-यक्-शानच्। जायमान, पैदा हो जानेवाला।
उत्पन्न (सं॰ त्रि॰) उत्-पद-क्त। १ जात, पैदा, जन्मा। २ उत्थित, उठा। ३ अकस्मात् उद्भूत, एकाएक निकला। ४ प्राप्त, हासिल किया, पाया। ५ हुआ, गया। ६ आगत, आया। ७ परिचित, पहचाना-बूझा।
उत्पन्नतन्तु (सं॰ त्रि॰) सन्तानको पैदा करने-वाला, जिसके औलादका सिलसिला रहे।
उत्पन्नभक्षिन् (सं॰ त्रि॰) प्राप्त द्रव्यको खा डालने-वाला, जो हासिल किया हुआ माल उड़ा देता हो।

उत्पन्नविनाशिन् (सं॰ त्रि॰) उद्भूत होते ही मृत्यु पानेवाला, जिसे पैदा होते ही मौत पकड़े ।

उत्पन्ना (सं॰ स्त्री॰) मार्गशीर्षके कृष्णपक्षकी एकादशी ।

उत्पल (सं॰ क्ली॰) १ जलजात लताविशेष, पानीकी एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—पद्म, नल, नलिन, अम्भोज, अम्बुजन्म, अम्बुज, श्री, अम्बुरुह, अम्बुपद्म, सुजल, अम्भोरुह, सारस, पङ्कज, सरसीरुह, कुटप, पाथोरुह, पुष्कर, वार्ज, तामरस, कुशेशय, कञ्ज, कज, अरविन्द, शतपत्र, शतदल, विसकुसुम, सहस्रपत्र, महोत्पल, वारिरुह, सरसिज, सलिलज, पद्मेरुह, राजीव और कमल है। उत्पलको हिन्दीमें कंवल, मराठीमें कनवल और तामिलमें अम्बल् कहते हैं। (Nelumbium speciosum) बहु कालसे भारतवासी इसके पुष्पको अति पवित्र समझते आये हैं। वेदमें भी "कमलाय स्वाहा" (तैत्तिरीयसंहिता ७।३।१५।२) मन्त्र मिलता है।

महाभारतके अनुसार भगवान्की नाभिसे उत्पल और उत्पलसे ब्रह्माका उद्भव हुआ है।

"प्रधानमनक्षावत्तु प्रजाहेतोः सनातनः ।
ध्यानमार्गे तु भगवन्नाभ्यां पद्मः समुत्थितः ।
ततश्चतुर्मुखो ब्रह्मा नाभिपद्माद्विनिःसृतः ।"
(महाभारत वन २०१।११-१२)

पाश्चात्य-पण्डित थियोफ्रेष्टसने Kuamus Aigyptios (इजिप्तकी सेम) और नीलोफर नाम लिखा है। यह लता अमेरिका, कास्पीय-सागरके तटस्थ प्रदेश, भारतवर्ष, पारस्य, चीन और मिसरमें उपजती है। श्वेत और रक्त उत्पल भारतवर्षके अनेक स्थान, पारस्य, तिब्बत, चीन और जापानमें मिलता है। किन्तु नील उत्पल केवल काश्मीरके उत्तरांश, तिब्बतके अन्तर्गत गन्धमादन और चीनके किसी किसी स्थानमें देख पड़ता है।

पृथिवीके मध्य चीन देशमें ही यह अधिक होता है। चीना इसका मूल बड़े प्रेमसे खाते हैं।

उत्पल तीन प्रकारका है—श्वेत, रक्त और नील। श्वेत उत्पलको शतपत्र, महापद्म, पुण्डरीक, सिताम्बुज, भर्ती, सरोज, नलिन, अरविन्द और महोत्पल कहते हैं। वैद्यक शास्त्रके मतमें यह शीतल, मधुर और कफ तथा पित्तका नाशक है।

रक्त उत्पलका नाम कोकनद, हल्लक, रक्तसन्धिक, रक्तोत्पल, रक्तसरोरुह, रक्ताम्भ, अरुण, कमल, शोणपद्म, अरविन्द, रविप्रिय और रक्तवारिज है। वैद्यकके मतसे यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, सन्तर्पण एवं हृद्य और पित्त, कफ तथा रक्तके दोषका नाशक होता है। किन्तु श्वेतकी अपेक्षा रक्तमें गुण कम है।

नील उत्पल इन्दीवर, नीलोत्पल, मृदूत्पल, कुवलय, नीलाम्बुज, नीलमुत्पल और भद्र कहाता है। इसमें रक्तोत्पलसे भी गुण अल्प है।



उत्पलके बीजकोषका कर्णिकार, मधुका मकरन्द, केशरका किञ्जल्क और नालका नाम मृणाल है।

यूनानी वैद्योंके मतमें यह तिक्त और शैत्यकारक है।

पारस्य देशसे नानास्थानोंको उत्पलका बीज भेजा जाता है। उत्पल पुष्प भारतवर्षीय नाना स्थानोंके देवमन्दिर और भोटानमें पूजाके लिये व्यवहृत होता है। पूर्वकालमें मिसरके अधिवासी भी उत्पलको पवित्र पुष्प समझ पूजामें व्यवहार करते थे।

२ कुमुदादि, यथाना वर्ग २६। ३ कुष्ठौषधि, एक बूटी। ४ एक जन विख्यात ज्योतिर्वित्। भोत्पल देखो। ५ बौद्ध शास्त्रोक्त नरक। (दिव्यावदान ६७११)

उत्पलक (सं॰ पु॰) १ सीपशरीर, सीपका कूड़ा कर्कट। २ नीलोत्पल, नीला कमल। ३ नागराज विशेष।

उत्पलकन्द (सं॰ पु॰) शालूक, कसेद।

उत्पलकुष्ठ (सं॰ पु॰) कुष्ठौषध, एक बूटी।

उत्पलकेसर (सं॰ क्ली॰) पद्मकेशर, कमलकी धूलि।

उत्पलगन्धि (सं॰ क्ली॰) गोशीर्ष, एक प्रकारका चन्दन। यह पीतल जैसा और बहुत खुशबूदार होता है।

उत्पतङ्गम्, उत्पतङ्ग देखो।

उत्पतत्पतङ्ग (सं० त्रि०) पतङ्ग उड़नेके समय, जो पतङ्गोंसे व्याप्त हो।

उत्पट (सं० पु०) उत्-पट-अच्। १ वृक्षादिकी त्वक्को भेदकर बाहर निकलनेवाला निर्यास, पेड़की छालको फोड़कर निकलनेवाला गोंद।

"[illegible]"
([illegible])

२ वस्त्रादिका उपरना, दुपट्टा, ऊपरी कपड़ा।

उत्पतन (सं० पु०) उत् पतति ऊर्ध्वं गच्छति, उत्-पत-अच्। १ पक्षी, चिड़िया। २ ऊर्ध्वगमन, ऊपरको चढ़ाई, उड़ान।

उत्पतत् (सं० त्रि०) ऊर्ध्व अथवा अधः पतन करनेवाला, जो ऊपर या नीचे कूद रहा हो।

उत्पतन (सं० क्ली०) उत्-पत-ल्युट्। १ ऊर्ध्व-गमन, उड़ान, चढ़ाव। २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ उदय, निकास। ४ उत्थान, उठान। ५ उल्लङ्घन, भगाई।

उत्पतनिपतना (सं० स्त्री०) उत्पतनिपतत इत्यु-च्यते यस्यां क्रियायाम्। ऊर्ध्वं एवं अधः उत्पतन, ऊपर और नीचेको उड़ान।

उत्पताक (सं० त्रि०) उत्तोलिता पताका यस्मिन्। उत्तोलित पताकायुक्त, जिसमें झण्डे लगे हों।

"[illegible]" ([illegible])

उत्पताकध्वज (सं० त्रि०) उत्तोलित पताका एवं ध्वजायुक्त, जिसमें झण्डे और निशान चढ़े रहें।

उत्पतित (सं० त्रि०) उत्-पत-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उद्गत, निकला हुआ।

उत्पतितव्य (सं० त्रि०) ऊर्ध्व उड़ाया जानेवाला, जो ऊपर उड़ाये जानेके काबिल हो।

उत्पतितृ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वगमनकारी, ऊपर चढ़नेवाला, जो कूद पड़ता हो।

उत्पतिष्णु (सं० त्रि०) उत्-पत-इष्णुच्। उत्पतन-शील, उड़ने या कूद पड़नेवाला।

उत्पत्ति (सं० स्त्री०) उत्-पत-क्तिन्। १ उद्भव, जन्म, पैदायश, जनम। २ आविर्भाव, दिखाव। ३ ऊर्ध्व-गमन, उड़ान। ४ उदय, आगमन। ५ लाभ, फायदा। यज्ञकी आदि अवस्था, जन्मके पीछे पैदायश।

उत्पत्तिकाङ्क्षिन् (सं० त्रि०) उत्पत्ति चाहने-वाला, जो पैदायशके मन हो।

उत्पत्तिक्रम (सं० पु०) जगत्की उत्पत्तिका परि-पाटी, दुनियाकी पैदायशका तरीका। परब्रह्मसे आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, पृथिवीसे ओषधि, ओषधिसे अन्न, अन्नसे रेतः और रेतःसे पुरुषकी उत्पत्ति है।

उत्पत्तिदोष (सं० पु०) १ कारण और कार्यके संयुक्त रूपसे उद्भव, सबब और नतीजेकी मिली हुई हरकतसे पैदायश। २ वंश, जाति, खानदान।

उत्पत्तिमत् (सं० त्रि०) उत्पन्न, पैदा, बना हुआ।

उत्पत्तिव्यञ्जक (सं० पु०) १ जन्मका आदर्श, पैदा-यशकी सूरत। २ दो बार उत्पन्न होनेका चिह्न, दुबारा जन्मनेका निशान्।

उत्पत्तिशुद्धात्मता (सं० पु०) विशुद्ध भावसे उत्पत्ति, खालिस जन्मकी पैदायश।

उत्पथ (सं० पु०) १ अपमार्ग, बुरी राह। (अव्य०) २ मार्गके विरुद्ध, ऊबड़-खाबड़।

उत्पथगामिन्, उत्पथगामी देखो।

उत्पथगत (सं० त्रि०) कुपथ, मन्द, बुरा, खराब, बुरी राह या चाल पकड़नेवाला।

उत्पद्यमान (सं० त्रि०) उत्-पद्-यक्-शानच्। जायमान, पैदा हो जानेवाला।

उत्पन्न (सं० त्रि०) उत्-पद्-क्त। १ जात, पैदा, उपजा। २ उत्थित, उठा। ३ अकस्मात् उद्भूत, एकाएक निकला। ४ प्राप्त, हासिल किया, पाया। ५ युक्त, बना। ६ समागत, आया। ७ परिचित, मालूम हुआ।

उत्पन्नतन्तु (सं० त्रि०) सन्तानको जन्म देने-वाला, जिसके औलादका सिलसिला रहे।

उत्पन्नभक्षिन् (सं० त्रि०) जात द्रव्यको या फलके खानेवाला, जो हासिल किया हुआ माल खा डालता हो।

उत्पन्नविनाशिन् (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न होते ही मृत्यु पानेवाला, जिसे पैदा होते ही मौत पकड़े।

उत्पन्ना (सं॰ स्त्री॰) मार्गशीर्षके कृष्णपक्षकी एकादशी।

उत्पल (सं॰ क्ली॰) १ जलजात लताविशेष, पानीकी एक बेल। इसका संस्कृत पर्याय—पद्म, नल, नलिन, अम्भोज, अम्बुजन्म, अम्बुज, श्री, अम्बुरुह, अम्बुपद्म, सुजल, अम्भोरुह, सारस, पङ्कज, सरसीरुह, कुटप, पाथोरुह, पुष्कर, वार्ज, तामरस, कुशेशय, कञ्ज, कज, अरविन्द, शतपत्र, शतदल, विसकुसुम, सहस्रपत्र, महोत्पल, वारिरुह, सरसिज, सलिलज, पद्मेरुह, राजीव और कमल है। उत्पलको हिन्दीमें कंवल, मराठीमें कनवल और तामिलमें अम्बल् कहते हैं। (Nelumbium speciosum) बहु कालसे भारतवासी इसके पुष्पको अति पवित्र समझते आये हैं। वेदमें भी "कमलाय स्वाहा" (तैत्तिरीयसंहिता ७।३।१५।१) मन्त्र मिलता है।

महाभारतके अनुसार भगवान्की नाभिसे उत्पन्न और उत्पलसे ब्रह्माका उद्भव हुआ है।

"प्रधानसमकालञ्च प्रजाहेतोः सनातनः।
ध्यानमात्रे तु भगवन्नाभ्यां पद्मः समुत्थितः।
शतपत्रं ततो ब्रह्मा नाभिपद्माद्विनिःसृतः।"
(महाभारत वन २०१।११-१२)

पाश्चात्य-पण्डित थियोफ्रेष्टसने Kuamus Aigyptios (इजिप्तकी सेम) और नीलोफर नाम लिखा है। यह लता अमेरिका, कास्पीय-सागरके तटस्थ प्रदेश, भारतवर्ष, पारस्य, चीन और मिसरमें उपजती है। श्वेत और रक्त उत्पल भारतवर्षके अनेक स्थान, पारस्य, तिब्बत, चीन और जापानमें मिलता है। किन्तु नील उत्पल केवल काश्मीरके उत्तरांश, तिब्बतके अन्तर्गत गन्धमादन और चीनके किसी किसी स्थानमें देख पड़ता है।

पृथिवीके मध्य चीन देशमें ही यह अधिक होता है। चीना इसका मूल बड़े प्रेमसे खाते हैं।

उत्पल तीन प्रकारका है—श्वेत, रक्त और नील। श्वेत उत्पलको शतपत्र, महापद्म, पुण्डरीक, सिताम्बुज, मधि, सरोज, नलिन, अरविन्द और महोत्पल कहते हैं। वैद्यक शास्त्रके मतसे यह शीतल, मधुर और कफ तथा पित्तका नाशक है।

रक्त उत्पलका नाम कोकनद, हल्लक, रक्तसन्धिक, रक्तोत्पल, रक्तसरोरुह, रक्ताम्भ, अरुण, कमल, शोणपद्म, अरविन्द, रविप्रिय और रक्तवारिज है। वैद्यकके मतसे यह कटु, तिक्त, मधुर, शीतल, सन्तर्पक एवं हृद्य और पित्त, कफ तथा रक्तके दोषका नाशक होता है। किन्तु श्वेतकी अपेक्षा रक्तमें गुण कम है।

नील उत्पल इन्दीवर, नीलोत्पल, मृदूत्पल, कुवलय, नीलाम्बुज, नीलमुत्पल और भद्र कहाता है। इसमें रक्तोत्पलसे भी गुण अल्प हैं।



उत्पलके बीजकोषका कर्णिकार, मधुका मकरन्द, केशरका किञ्जल्क और नालका नाम मृणाल है।

यूनानी वैद्योंके मतमें यह स्निग्ध और शैत्यकारक है।

पारस्य देशसे नानास्थानोंको उत्पलका बीज भेजा जाता है। उत्पल पुष्प भारतवर्षीय नाना स्थानोंके देवमन्दिर और भोटानमें पूजाके लिये व्यवहृत होता है। पूर्वकालमें मिसरके अधिवासी भी उत्पलको पवित्र पुष्प समझ पूजामें व्यवहार करते थे।

२ कुमुदादि, पद्मानां वर्ग है। ३ कुष्ठौषधि, एक बूटी। ४ एक जन विद्वान् ज्योतिर्वित्। भांगवत टीका। ५ बौद्ध शास्त्रोक्त नरक। (दिव्यावदान ६७।११)

उत्पलक (सं॰ पु॰) १ विषसरीप, बीसका क्षुद्र कर्कट। २ नीलोत्पल, नीला कमल। ३ नागराज विशेष।

उत्पलकन्द (सं॰ पु॰) शालूक, भसींड।

उत्पलकुठक (सं॰ पु॰) कुष्ठौषध, एक बूटी।

उत्पलकेसर (सं॰ क्ली॰) पद्मकेसर, कमलकी धूलि।

उत्पलगन्धि (सं॰ क्ली॰) गोशीर्ष, एक प्रकारका चन्दन। यह पीतल जैसा और बहुत चमकदार होता है।

उत्पलगन्धिक, उत्पलगन्धि देखो।

उत्पलगोपा (सं० स्त्री०) श्वेत सारिवा, सफेद अनन्तमूल।

उत्पलचक्षुस् (सं० त्रि०) उत्पल सदृश नेत्रयुक्त, नीलोत्पल जैसी आंखोंवाला, जिसके [illegible] भाव रहे।

उत्पलदल (सं० क्ली०) स्वनामख्यात अस्त्र विशेष, इसी नामका एक अस्त्र। यह प्राचीनकालमें काम आता थे। (शब्दचन्द्रिका)

उत्पलपत्र (सं० क्ली०) १ कुवलयदल, कमलका पत्ता। २ नीले कमलका पत्ता। ३ तिलकभेद, एक प्रकारका टीका। इसे हिन्दू रमणी मस्तकपर लगाती है। ४ छेदन एवं भेदनका शस्त्रविशेष, चीर फाड़का एक नश्तर। यह ८ अङ्गुल रहता है। (सुश्रुत)

उत्पलपत्रक (सं० क्ली०) शिरोच्छेदनास्त्रविशेष, एक नश्तर। पूर्व समय यही शस्त्र चीरफाड़में चलता था। इसका अगला चौड़ा रहता है।

उत्पलपुर (सं० क्ली०) काश्मीरका एक प्राचीन नगर। उत्पल भूपतिने इसे बसाया था। (राजतरङ्गिणी)

उत्पलभेदक (सं० पु०) कर्णबन्धाकृतिविशेष, किसी किस्मकी लौ।

"[illegible]" (सुश्रुत)

उत्पलशारिवा (सं० स्त्री०) गोपकर्णिका, शारिवा।

उत्पलशाक (सं० पु०) शाक विशेष, एक तरकारी।

उत्पलसारिवा (सं० स्त्री०) १ श्यामालता, दूधी। २ अनन्तमूल।

उत्पलषट्क (सं० क्ली०) व्याधिविनाश [illegible] एक औषध, छः चीजोंका एक दवा। उत्पल, [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] बराबर लेकर [illegible] और [illegible] [illegible] रोगोंको मिटाते। यह औषध [illegible] और [illegible] मे बढ़ाता है। (चक्रदत्त)

उत्पलाक्ष (सं० पु०) काश्मीरके एक प्राचीन राजा। ये हिरण्यके पुत्र थे। इन्होंने ३१ वर्ष राज्य किया। इनके शासनका काल [illegible] अब्द था। (राजतरङ्गिणी १।१९४)

उत्पलादि (सं० पु०) वैद्यकोक्त औषध विशेष, एक दवा। उत्पल, रक्तचन्दन एवं काकोली मूल, [illegible], और रक्तचन्दन बराबर [illegible] आगमें पकाकर एक सिकोरे और चावलके पानीसे पिलाये। इससे पित्तका रक्तस्राव, तृष्णा, अति ज्वर आदि मिट जाते हैं।

उत्पलापीड (सं० पु०) काश्मीरके एक राजा। यह अजितापीडके पुत्र रहे और ३१ वर्ष राज्यके बाद सिंहासनसे च्युत हुये। इनके बाद अवन्तिवर्मा राजा बने थे। (राजतरङ्गिणी ४।७०७)

उत्पलाभ (सं० त्रि०) पद्मसदृश, नीलोत्पल जैसा, जो कमलसे मिलता जुलता हो।

उत्पलावन (सं० क्ली०) पञ्चालका एक अति प्राचीन तीर्थ। (भारत, वनपर्व ८४।१५)

"[illegible]" (भारत वन ८४।१५)

यहां वाल्मीकिकी [illegible] विद्यमान है।

"[illegible]" (रामायण [illegible])

उत्पलिन् (सं० त्रि०) उत्पलसे परिपूर्ण, नीलोत्पलसे भरा हुआ।

उत्पलिनी (सं० स्त्री०) १ कमल पुष्पविशिष्ट, छोटा कमल। संस्कृत पर्याय कैरविणी, कुमुद्वती, कुमुदिनी, नलिनी, कुवलयिनी, इन्दीवरिणी और नीलोत्पलिनी है। हिन्दीमें इसे कमोदिनी कहते हैं। वैद्यकके मतसे यह शीतल एवं पित्त, दाह और श्रम, भ्रम, [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], रक्तपित्त, [illegible] और [illegible] रोगोंको मिटाती है। इसका बीज स्वादु, रूक्ष, शीतल और गुरु है।

२ छन्दोविशेष, एक प्रकारका छन्द। ३ नदी विशेष, एक दरिया। ४ कोषग्रन्थविशेष, [illegible] एक किताब। ५ उत्पलयुक्तपुष्कर, नीलोत्पलसे भरा हुआ ताल।

उत्पली (सं॰ स्त्री॰) तुषचर्पटी, भूसीकी चपाती या रोटी।

उत्पलेश्वर (सं॰ पु॰) महानदीका तीरवर्त्ती एक प्राचीन तीर्थ। महानदी देखो।

उत्पवन (सं॰ क्ली॰) १ प्लावन, सैलाब, बूड़ा।
"प्लावनमुत्पवनमाहुः।" (मनुभाष्ये मेधातिथि ५।११५)

२ यज्ञीय पात्रादिके संस्कारभेद।
(आश्वलायनगृह्यसूत्र १।१।८।१)

३ कुशादि द्वारा जलका उत्क्षेपण।

उत्पवितृ (सं॰ त्रि॰) १ पावन, पाक। २ पावन करनेवाला, जो पाक साफ बनाता हो।

उत्पश्य (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वमुख, ऊपरकी ओर देखनेवाला।

उत्पाट (सं॰ पु॰) उत्-पट-घञ्। १ उत्पात, उखाड़। २ कर्णरोग विशेष, कानकी एक बीमारी।

उत्पाटक (सं॰ पु॰) कर्णपालीगत रोग, कानकी लौकमें होनेवाली एक बीमारी। गुरु आभरणके संयोग, ताड़न एवं अति घर्षणसे कर्णकी पालीमें जो शोथ, दाह और पाकका रोग लगता है उसे उत्पाटक कहते हैं। (माधव निदान) इसमें कान चटचटाया करता है। (सुश्रुत)

उत्पाटन (सं॰ क्ली॰) उत्-पट-णिच् भावे ल्युट्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ वायुजन्य व्रणकी एक वेदना, वातसे पैदा होनेवाला दर्द।

उत्पाटिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-पट-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्। १ वृक्षकी शुष्क छाल, पेड़का सूखा वकला। २ उत्पाटनकर्त्री, उखाड़ डालनेवाली।

उत्पाटित (सं॰ त्रि॰) उत्-पट-णिच्-क्त। उन्मूलित, उखाड़ा हुआ।

उत्पाटिन् (सं॰ त्रि॰) उन्मूलन करनेवाला, जो उखाड़ डालता हो।

उत्पाट्य (सं॰ अव्य॰) उन्मूलन करके, उखाड़कर। (त्रि॰) २ उखाड़ डालनेके योग्य।

उत्पात (सं॰ पु॰) उत्-पत भावे घञ्। १ ऊर्ध्व-पतन, उड़ान, उछाल। २ झटट, आफत। ३ अशुभ सूचक अकस्मात् देवघटना, आकाशी ग़ज़ब। यह दिव्य, आन्तरीक्ष और भौम भेदसे तीन प्रकारका होता है। सूर्यग्रहादि दिव्य, उल्कापातादि आन्तरीक्ष और भूमिकम्पादि भौम है।

उत्पातक (सं॰ पु॰) उत्-पत-णिच्-ण्वुल्। १ ऊर्ध्वपतनशील जन्तु विशेष, उछल उछल कर चलनेवाला एक जानवर। इसके षट पाद होते हैं।
"दंष्ट्रीमुत्पातकमहं चर्मधिक्षामकानलम्।" (भारत अनु॰ १ अ॰)
२ तीर्थविशेष। (भारत अनु॰) (त्रि॰) उत्-पत-अच्। ३ ऊर्ध्व-पतनशील, उड़ने या उछलने वाला।

उत्पातकेतु (सं॰ पु॰) अमङ्गल चिह्न, बुरा निशान्। उल्कापात, भूमिकम्प और उपद्रवके पातका निमित्तक उदित धूमकेतु प्रभृति उत्पातकेतु कहाते हैं।

उत्पाती (सं॰ त्रि॰) उपद्रव उठानेवाला, जो आफ़त डालता हो।

उत्पाद (सं॰ पु॰) उत्-पद भावे घञ्। उत्पत्ति, पैदायश, उपज।

उत्पादक (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वस्थिताः पादा यस्य, उत्-पद-णिच्-ण्वुल्। १ पशु विशेष, एक जानवर। अष्टपादयुक्त गजाराति शरभका नाम उत्पादक है। फारसीमें इसे हुमा कहते हैं। (क्ली॰) २ कारण, सबब। (त्रि॰) ३ उत्पत्तिकारक, पैदा करनेवाला।

उत्पादन (सं॰ क्ली॰) उत्-पद-णिच्-ल्युट्। १ उत्पत्तिकारण, पैदा करनेका काम। (त्रि॰) २ उत्पादक, पैदा करनेवाला।

उत्पादपूर्व (सं॰ क्ली॰) जैन-शास्त्रोक्त १४ पूर्वमें प्रथम पूर्व। पूर्वगत और जैनदर्शन देखो।

उत्पादशयन (सं॰ पु॰) टिट्टिभ पक्षी, टिटिहरी।

उत्पादिका (सं॰ स्त्री॰) उत्-पद-णिच्-ण्वुल्-टाप् अत इत्। १ देहिका नामक कीट, दीमक। २ हिलमोचिका, हरहुच। ३ पूतिका, पोय।

उत्पादित (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न किया हुआ, जो पैदा किया गया हो।

उत्पादिन् (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न करनेवाला, जो पैदा करता हो। समासान्तमें इस शब्दका अर्थ 'उत्पन्न किया हुआ' लगता है।

अनुपाद्य (सं० त्रि०) १ अनभीष्ट, जिसे लिये जानेकी इच्छा न हो। (व्यक्त०) २ अनुत्पन्न जो पैदा न हुआ हो। ३ परमेश्वर ईश्वर, परमात्मा।

अनुपाद्यमान (सं० त्रि०) उत्पन्न किये जानेवाला, जो निकाला ना गया हो।

अनुपान (सं० पु०) [illegible]

अनुपालन (सं० क्ली०) पालन, हुक्म बजा लानेका काम। [illegible]

अनुपाती (सं० स्त्री०) अनुपात-अच्-ङीप्। [illegible], [illegible]।

अनुपात (सं० पु०) [illegible] गुण, [illegible]।

अनुपविष्ट (सं० त्रि०) निकटमें बैठा हुआ, जो [illegible] न हो।

अनुपविष्ट (सं० त्रि०) १ [illegible], [illegible]। २ [illegible], [illegible]।

अनुपशय (सं० त्रि०) [illegible], [illegible] या [illegible], जो [illegible] या [illegible] न हो।

अनुपिष्ट (सं० त्रि०) अनु-पिष-क्त। १ [illegible] या पीसा हुआ। (स्त्री०) २ [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]। [illegible] अनुपिष्ट होनेसे [illegible] [illegible] और [illegible] है। [illegible] [illegible] है। [illegible]

अनुपिष्टाद्रि, [illegible]

अनुपीड़ (सं० पु०) १ [illegible], [illegible]। २ [illegible], [illegible]। ३ [illegible], [illegible]। ४ [illegible], [illegible]। ५ [illegible], [illegible]।

[illegible]

अनुपीड़न (सं० क्ली०) अनु-पीड़-ल्युट्। १ [illegible], [illegible]। २ [illegible]। ३ [illegible], [illegible]। ४ [illegible], [illegible], [illegible]। ५ [illegible], [illegible]।

अनुपुष्प (सं० पु०) अनु-पुष्प-अच्। [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]। [illegible]

अनुपूर्व (सं० त्रि०) [illegible], [illegible]।

अनुपूर्व (सं० त्रि०) १ [illegible], [illegible]। (पु०) २ [illegible], [illegible]।

अनुपूर्वक (सं० पु०) [illegible], [illegible]।

अनुपूर्व्य (सं० पु०) [illegible], [illegible]।

अनुप्रास (सं० पु०) अनु-प्र-अस [illegible] [illegible]। १ [illegible], [illegible]। २ [illegible], [illegible]। ३ [illegible] [illegible], [illegible]। ४ [illegible] [illegible], [illegible], [illegible]।

अनुप्रासन (सं० स्त्री०) [illegible]।

अनुप्रेक्षा (सं० स्त्री०) अनु-प्र-ईक्ष-अ टाप्। १ [illegible], [illegible]। २ [illegible], [illegible]। ३ [illegible], [illegible]।

अनुप्रेषा (सं० स्त्री०) अनु-प्र-ईष-अ टाप्। १ [illegible], [illegible], [illegible]। २ जिसमें [illegible] [illegible]। ३ काव्यालङ्कार विशेष। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] अनुप्रेषा कहाती है।

[illegible]

[illegible] [illegible] [illegible] दो प्रकारका होता है—[illegible] और [illegible]। जिसमें 'जैसे' 'जहां' और 'तहां' प्रभृति शब्द रहते हैं, वह [illegible] और जिसमें [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] है, वह [illegible] है। [illegible], [illegible], [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] हैं। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] होती है।

अनुप्रोषित (सं० त्रि०) [illegible], [illegible]।

अनुप्लवस्तना (सं० स्त्री०) [illegible] [illegible]। [illegible]

अनुप्लेषा (सं० त्रि०) [illegible] [illegible] [illegible], जो [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

अनुबन्ध (सं० पु०) [illegible], [illegible], [illegible]।

उत्प्लवन (सं० क्लो०) उत्-प्लु-ल्युट्। १ उल्लम्फन, उछलकूद। २ अभिमन्त्रित कुशादियुक्त वारि द्वारा द्रव्यकी शुद्धि।

उत्प्लवा (सं० स्त्री०) उत्-प्लु-अच्-टाप्। नौका, नाव।

उत्प्लुत (सं० त्रि०) वल्गित, उछला हुआ, जो एकाएक फांद पड़ा हो।

उत्प्लुत्य (सं० अव्य०) वल्गन करके, ऊपर उछलकर।

उत्फल (सं० क्लो०) उत्तम फल, उम्दा मेवा।

उत्फाल (सं० पु०) उत्-फल-घञ्। लम्फ, उछाल।

उत्फुल्ल (सं० त्रि०) उत्-फल-क्त, उत् फुल्लसंफुल्लयो-रुपसंख्यानमिति निष्ठा, तस्य लः। १ प्रफुल्ल, खिला, फला। २ स्फीत, सूजा या बढ़ा। ३ उत्तान-शय, चित लेटनेवाला। (क्लो०) ४ स्त्रीन्द्रिय।

उत्रौला—उतरौला देखो।

उत्स (वै० पु०) उनत्ति जलेन, उन्द्-स-कित्। उन्दिगुधिकुषिभ्यश्च। उण् ३।६८। १ प्रस्रवण, चश्मा, झरना २ खात, कुआं। (निघण्टु ३।२३) ३ उत्सरण, सरकाव। (निरुक्त १०।८)

उत्सक्थ (वै० त्रि०) ऊर्ध्वसक्थियुक्त।

'उत् ऊर्ध्वे सक्थिनी ऊरू यस्या सा उत्सक्थी'

(शुक्लयजुर्भाष्ये महीधर २३।२१)

उत्सङ्ग (सं० पु०) उत्-सञ्ज-घञ्। १ क्रोड़, गोद। २ पर्वतका शिखरदेश, पहाड़की चोटी। (रघु ६।१) ३ अट्टालिकाका उपरि भाग, छत। (मेघदूत ९८) ४ अभ्यन्तर भाग, बगल। (कुमार १।१०) ५ ऊर्ध्वतल, ऊपरी मञ्जिल। ६ बहिर्भाग, बाहरी हिस्सा। (रघु ८।७१) ७ सङ्गम, मिलाप। ८ आलिङ्गन, हमा-गोशी। ९ एकगत संख्या=विवाह। (कुमारसं १९५) १० व्रणका भीतरी भाग, जख्मका अन्दरूनी हिस्सा। (सुश्रुत, सू०) ११ गर्भ, हमल। (भाग० ४३ ८।१८)

उत्सङ्गपिड़का (सं० स्त्री०) नेत्रवर्त्मगत रोगविशेष, आंखके नीचे वर्त्मपोटीकी फुन्सी। यह स्थूल और कण्डुमत् होती है। सुश्रुतके अभ्यन्तर पड़ता है। वर्ण ताम्र-जैसा होता है। (माधव निदान)

उत्सङ्गित (सं० त्रि०) उत्सङ्गयुक्त, मिलनेवाला।

उत्सङ्गिनी, उत्सङ्गपिड़का देखो।

उत्सङ्गी (सं० पु०) नाड़ीव्रणविशेष, फोड़ा, गहरा जख्म।

उत्सञ्जन (सं० क्लो०) उत्-सनूज-णिच्-ल्युट्। ऊर्ध्व संयोजन, उत्क्षेपण, ऊपरको रहनुमाई।

उत्सत्ति (सं० स्त्री०) उत्-सद्-क्तिन्। उच्छेद, उखाड़, नोचखसोट।

उत्सधि (वै० पु०) उत्सो धीयते अत्र, उत्स-धा, कि। जलप्रवाहशील कूप, जिस कुवेंसे पानी बहा करे। (ऋक् १।८८।४)

उत्सन्न (सं० त्रि०) उत्-सद्-क्त। १ उच्छिन्न, उखड़ा हुआ। २ नष्ट, बरबाद। ३ अनायाससाध्य, आसानीसे बन जानेवाला। ४ अव्यवहृत, नाकाम। ५ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उत्सन्नधर्म, उत्पन्नधर्म देखो।

उत्सन्नयज्ञ (सं० पु०) अवसन्नित यज्ञ, जो यज्ञ रुक गया हो।

उत्सर (सं० पु०) छन्दोविशेष। इसमें अन्दर अन्दर अक्षरके चार पाद होते हैं। उत्सर अतिशक्वरीका एक भेद है।

उत्सर्ग (सं० पु०) उत्-सृज-घञ्। १ त्याग, तर्क। २ दान, बख्शिश। ३ सामान्यविधि, मामूली कायदा। ४ न्याय, कानून। ५ साग्निक कर्तव्य क्रियाविशेष। स्नान, सन्ध्या एवं आचमनादिके बाद प्रथम नारायण, नवग्रह तथा गुरुको पूजा प्रदान करनी पड़ती है। द्रव्यको वाम हस्तमें रखना चाहिये। दक्षिण हस्तमें तीन बार पूजा कर तत्तद्द्रव्याधिपति देवताको सम्प्र-दान करे, फिर कर कुश, तिल एवं जलन्यासपूर्वक दान दे। इसी क्रियाको वेधोत्सर्ग कहते हैं। ६ मल-मूत्रादिके त्यागकी क्रिया। (मनु ११।१२१)

उत्सर्गतः (सं० अव्य०) साधारणतः, मामूली तौरपर।

उत्सर्गिन् (सं० त्रि०) त्यागी, तर्क कर देनेवाला।

उत्सर्जन (सं० क्लो०) उत्-सृज-ल्युट्। १ दान, बख्शिश। २ वेदोत्सर्गादय छः मास कर्तव्य वैदिककी

नष्ट किया। दुर्गाकाण्डकर वैदिकमतमें यह लिखा जाता है—

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] ([illegible])

अतएव सबका साद साधकी पूर्णिमाके सत्य स्कूले अनुसार गणनाकर, पात्रकल्पात्मक आर्य साद माम देव उतना चाहिये। फिर चौथ माघके पूर्ण मनका माघके अधिमासमें पहुंच समुपस्थित (विवाह योगादि) करावे। जनता माघ माघमासमें शुक्लपक्षके तक दिनको पूर्णिमा तक रहनी करें, जो सकि साथ साधको पूर्णिमाको दण्डाई कहता है, वही माघको यह अधिनदको छाया मनाता है। माघके अधिमासमें यही प्रकार दक्षिणमें देवता पूजने पर यह पाव पञ्चांगमें वेदाङ्गदर्शमें लिख रहना चाहिये। इस अनुप्रास-क्रियाके वैदिक अधि अन्नगणके पंचाङ्गमें देख पड़ते हैं। फिर अन्यदेशमें अनुरूप वैदाङ्गका काम करना चाहिये।

अनुप्रासी (सं० स्त्री०) दूसरा विशेष वर्ण, सिद्ध एक चाहिको दूसरी तरह।

अनुबन्ध (सं० पु०) १ बन्धन या निबन्धन, पर-कार। २ सन्धि, सम्बन्ध, लगाव।

अनुबन्धन (सं० क्लो०) अनु-बन्ध भावे ल्युट्। १ सम्बन्ध, संसर्ग। २ आयोजन, लगाव। ३ ध्यान, गर्व।

अनुबन्धिनी (सं० स्त्री०) १ कोदोंके सम्बन्धा विधान। विष्णुपुराणके अध्यायसे सुनके कविता-ओंके प्रयोग भेद कहे गये हैं। अतएव इस कविताके दो भेद हैं—अनुबन्धिनी और अनवन्धिनी। जिस कविताके अन्त और दैवतनिर्देशके मोहेसे बाध करके कविता करना चाहिये हरि बोलें उसी कारण उसे अनुबन्धिनी कहते हैं और जिसमें कविता न करिये वहां वह अनवन्धिनी है। [illegible]

[illegible] जिसे एक समय कोई भी करने बस अधिक है। इसका दृष्टान्त, दृष्टान्त, तथा दृष्टान्त, दृष्टान्त दृष्टान्त, दृष्टान्त दृष्टान्त ये सब भेद जो अनवन्धिनीके हैं और दृष्टान्त दृष्टान्त, दृष्टान्त आदि प्रकार दिये सब भेद अनु-बन्धिनीके हैं। इनमें दृष्टान्त दृष्टान्त और कोई कोई प्रकारान्तर। [illegible] दृष्टान्त तीन कोड़कोड़ी दृष्टान्त दृष्टान्त भी कहलाते हैं, दृष्टान्त दृष्टान्त प्रयोग प्रकार एवं सब एक कोड़कोड़ी मानन, दृष्टान्त प्रयोग प्रकार कहते दृष्टान्त दृष्टान्त भी प्रयोग प्रकार गये हैं। अनवन्ध को इस प्रकृतिको काल, नव रहा है वह अनवन्धिनीका दृष्टान्त है। ([illegible])

२ अर्थगतभावीन, अनुबन्धी।

अनुभवित (सं० त्रि०) १ निश्चित, जाना हुआ। २ अर्थगतभावीन, भला हुआ।

अनुभविन् (सं० त्रि०) अनु-भव-इनि, णिनि। १ साक्षी, गवाही देनेवाला। २ तत्त्वज्ञानी, अनुभववाला।

अनुभवी (सं० स्त्री०) अनु-भू-णिच्-णीप्। साधु भी अथवा कविताविशेषणोंकी रची, नाटक वर्णित काव्य नाम। ([illegible])

अनुभाव (सं० पु०) अनु-भू-घञ्। १ प्रताप, प्रभाव, मर्यादा। ([illegible]) २ आत्मनिष्ठक व्यापार, प्रकाश, दृष्टिका काम। ३ प्रताप, मूर्ति। ४ निश्चय, सही। ५ दृढ़ाग्रह, धारणका उपाय। ६ भोग, दृश्य। ७ शक्ति, सामर्थ्य। ८ अधिकार, गौरव, बहुतो। ९ प्रभाव, भाव, जिसका वश किया।

अनुभावदर्शन (सं० पु०) १ दूसरोंके प्रभावकी शक्ति निश्चित, दूसरेके अनुभव, स्वभावके बोध। ([illegible]) २ मौखिक आदि विशेष। ये भेद भाव प्रकाशके होते हैं। मनुष्यके अपने भावका दर्शनमें उनका बाध था। इसके सम्बन्धमें भी अनुभावदर्शन कहते हैं। ([illegible])

अनुभाद (वै० पु०) इसके पढ़का निर्देशन।

अनुभावक (सं० त्रि०) मन आश्रितगत, जो सा-काट कर देता हो।

उत्सादन (सं॰ क्ली॰) उत्-सद-णिच्-ल्युट्। १ उत्सारण, सरकाव। २ स्थानान्तरकरण, दूसरी जगह हटा देनेका काम। (कात्यायन-श्रौतसूत्र १४।१।१०) ३ उद्वर्तन, उठाव। तैलादि द्वारा परिशोधनको उत्सादन कहते हैं। ४ विनाशन, बरबादी। ५ उन्मूलन, उखाड़। (भारत, वन १०२ अ॰) ६ महावीरादि परित्यक्त देश, बहादुरोंका छोड़ा हुआ मुल्क। ७ उत्सव, जलसा। ८ समुल्लेखन, खिंचाव। ९ निम्न व्रणका उन्नतीकरण, नीचे ज़ख्मको उभारनेका काम। १० क्षेत्रका सम्यक् कर्षण, खेतकी खासी जोताई। ११ तैलाभ्यङ्ग द्वारा शुद्धीकरण, तेल लगा सफाई करनेका काम।

उत्सादनीय (सं॰ वि॰) १ नष्ट किया जानेवाला, जो बरबाद किये जानेके काबिल हो। २ पूर्ण करने योग्य, अन्जाम देने लायक़। ३ चढ़ा जाने योग्य। (क्ली॰) ४ व्रणौषध विशेष, ज़ख्मपर लगानेकी एक दवा। इससे घाव भर जाता है।

उत्सादि (सं॰ पु॰) उत्स-आदि। उत्सादिभ्योऽञ्। (पा ४।१।८६) पाणिनिका कहा एक गण। इसमें निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उत्स, उदपान, विकर, विनद, महानद, महानस, महाप्राण, तरुण, तलुन, पृथिवी, धेनु, पंक्ति, जगती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, जनपद, भरत, उशीनर, ग्रीष्म, पीलुकुण, पृषदंश, भल्लकीय, रथन्तर, मध्यन्दिन, बृहत्, महत्, सत्वत्, कुरु, पञ्चाल, इन्द्रावसान, उष्णिह, ककुभ, सुवर्ण, देव।

उत्सादित (सं॰ वि॰) उत्-सद-णिच्-क्त। १ उन्मूलित, उखाड़ा हुआ। २ उद्वर्तित, ऊपरको उठाया हुआ। ३ परिष्कृत, साफ किया हुआ।

उत्सादितव्य (सं॰ वि॰) नष्ट किये जाने योग्य, जो बरबाद किये जानेके काबिल हो।

उत्सारक (सं॰ पु॰) उत्-सृ-णिच्-ण्वुल्। १ द्वारपाल, दरबान्। २ प्रहरी, चौकीदार। (त्रि॰) ३ अपसारक, हटानेवाला।

उत्सारण (सं॰ क्ली॰) उत्-सृ-णिच्-ल्युट्। १ दूरीकरण, हटा देनेका काम। २ अतिथिका स्वागत, मेहमान्की पेशवाई।

उत्सारित (सं॰ त्रि॰) उत्-सृ-णिच्-क्त। १ दूरीकृत, हटाया हुआ। २ चालित, सरकाया हुआ। ३ स्थानान्तरित, दूसरी जगह पहुंचाया हुआ।

उत्साह (सं॰ पु॰) उत्-सह-घञ्। १ उद्यम, कोशिश। २ अध्यवसाय, इस्तक़लाल। ३ स्थिरयत्न, पक्की तदबीर। ४ वीररसका स्थायी भाव, हिम्मत, हौसला। "कार्यारम्भेषु संरम्भः स्थेयानुत्साह उच्यते।" (साहित्यदर्पण) ५ राजाका गुणविशेष, बादशाहका एक वस्फ़। "कार्येष्वोत्साहयोगेन क्रियाँश्च कर्मणाम्।" (मनु ७।१९८) ६ कल्याण, भला। ७ सूत्र, धागा। ८ हर्ष, खुशी। ९ संरम्भ, ग़रूर। १० सङ्गीतशास्त्रोक्त ध्रुवक विशेष। इसका लक्षण हास्यरस, केन्दुकताल और वंगहरिकर वर्णोदयाक्षर पाद है।

उत्साहयुक्त (सं॰ पु॰) शरभ, दुम्बा।

उत्साहवत् (सं॰ त्रि॰) उद्यमी, दृढ़, हौसलेमन्द।

उत्साहवर्धन (सं॰ क्ली॰) उत्साह-वृध्-ल्युट्। १ उद्यमवृद्धि, हौसलेमन्दी। २ वीरत्व, बहादुरी।

उत्साहसम्पन्न (सं॰ त्रि॰) कार्यरत, हौसलेमन्द, काममें लगा रहनेवाला।

उत्साहन (सं॰ क्ली॰) चेष्टा, दृढ़ता, कोशिश, यत्न।

उत्साहिन् (सं॰ त्रि॰) उत्साह रखनेवाला, हौसलेमन्द।

उत्साही (सं॰ पु॰) भस्मरोगी, खानेका बीमार।

उत्सिंहन (सं॰ क्ली॰) नासा द्वारा ऊर्ध्व श्वासका धारण, नाकमें ऊपरी सांसकी रोक।

उत्सिक्त (सं॰ त्रि॰) उत्-सिच्-क्त। १ गर्वित, मग़रूर, घमण्डी। २ वर्धित, बढ़ा हुआ। ३ उद्रिक्त, फेंका या खाली किया हुआ। ४ उद्गत, चढ़ा या उठा हुआ। ५ प्लावित, डूबा हुआ।

उत्सिस्मयान (सं॰ त्रि॰) १ जलकी झड़ी लगानेवाला, जो पानी बरसाता हो। २ हरिद्रोल, बदनेवाला।

उत्सिषासु (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न करनेका अभिलाषी, जो बनाना चाहता हो।

उत्सुक (सं॰ त्रि॰) उत्-सु-क्षिप्-कन्। १ इच्छुक, ख्वाहिशमन्द, चाहनेवाला। २ उत्कण्ठित, जिसे

कातुरी करी। ३ पश्चात्तापकारी, पछतानेवाला। ४ व्याकुल, बेचैन। (पु०) ५ उत्कण्ठा, ख्वाहिश, चाह।

उत्सुकता (सं० स्त्री०) १ व्याकुलता, बेचैनी। २ प्रेम, प्यार। ३ पश्चात्ताप, पछतावा, तअस्सोफ्।

उत्सूत्र (सं० त्रि०) उत्क्रान्तः सूत्रम्, अत्या० समा०। १ सूत्रसे बहिर्भूत, धागेसे अलग, जो लड़ीमें न हो। २ अनियमित, बेकायदा, ढीला।

उत्सूर (सं० पु०) अतिक्रान्तं सूरं सूर्यम्। दिनावसान, विकाल, शाम, सूरज डूबनेका समय।

उत्सृजन (सं० क्ली०) उत्-सृज-ल्युट्। १ त्याग, तर्क। २ समर्पण, सौंप देनेका काम।

उत्सृज्य (सं० अव्य०) त्याग करके, छोड़के।

उत्सृष्ट (सं० त्रि०) उत्-सृज-क्त। १ त्यक्त, छोड़ा हुआ। २ दत्त, दिया हुआ। ३ क्षापित, ढकेला हुआ, जो फेंक दिया गया हो।

उत्सृष्टपशु (सं० पु०) त्यक्तपशु, छोड़ा हुआ सांड। यह किसीके मरनेपर छोड़ा जाता है।

उत्सृष्टवत् (सं० त्रि०) त्याग करनेवाला, जो छोड़ देता हो।

उत्सृष्टवृत्ति (सं० स्त्री०) त्यक्तवस्तु द्वारा निर्वाह।

उत्सृष्टि (सं० स्त्री०) त्याग, तर्क।

उत्सृष्टुकाम (सं० त्रि०) त्याग करनेका अभिलाषी, जो छोड़ना चाहता हो।

उत्सेक (सं० पु०) उत्-सिच्-घञ्। १ गर्व, अहङ्कार, घमण्ड। २ उद्रेक, उद्दीप्त। ३ उपरिसेक, उफान। ४ वृद्धि, बाढ़।

उत्सेकिन् (सं० त्रि०) १ वृद्धिशील, उमड़नेवाला। २ अहङ्कारी, घमण्डी।

उत्सेचन (सं० क्ली०) उत्-सिच्-ल्युट्। ऊर्ध्वसेचन, उबाल, उफान, चढ़ाव, बढ़ाव।

उत्सेध (सं० त्रि०) उत-सिध-घञ्। १ उच्च, ऊंचा। (पु०) २ पर्वत इत्यादिका दैर्घ्य, पहाड़ पेड़ वगैरहकी ऊंचाई। ३ उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा। ४ स्थूलता, मोटापन। ५ शोथ, सूजन। ६ आधिक्य, बहुती। ७ देह, जिस्म। (स्त्री०) ८ वध, कतल।

उत्सेधांगुल—एक परिमाण। जैनमतानुसार यह आठ यवके बराबर होता है और इससे जीवोंके शरीरकी ऊंचाई तथा छोटी वस्तुओंका परिमाण होता है। ([illegible])

उत्स्मय (सं० पु०) मन्दहास्य, मुसकुराहट।

उत्स्मयत (सं० त्रि०) मन्दहास्ययुक्त, मुसकुरानेवाला।

उत्स्य (वै० त्रि०) कूप या निर्झरसे आनेवाला, जो कुयें या झरनेसे निकलता हो।

उथलना (हिं० क्रि०) उत्थान करना, निकालना, हटाना।

उथला (हिं० वि०) १ अगभीर, जो गहरा न हो। २ तुच्छ, छिछोरा। ३ भेदको गुप्त रख न सकनेवाला, पेटका हलका।

उथलना (हिं० क्रि०) अचल बनना, पाबन्द न रहना।

उथलपुथल (हिं० वि०) १ परिवर्तित, औंधा, उलटा-पुलटा। (क्रि० वि०) २ परिवर्तित रूपसे, उलट-पुलटकर।

उथला, उथल देखो।

उथलाना (हिं० क्रि०) १ परिवर्तित करना, इधरका उधर लगाना। २ अव्यवस्थित बनाना, गड़बड़ डालना। ३ स्थानच्युत करना, असली जगहसे हटा देना।

उद् (सं० अव्य०) उ-क्विप्-तुक्। १ प्रकाशमें, देखते-देखते, खुल्लम-खुल्ला। २ विभागसे, बांटकर। ३ लाभपर, फायदेमें। ४ उत्कर्षमें, बढ़कर। ५ ऊर्ध्वपर, ऊपर-ऊपर। ६ प्राबल्यमें, जबरन्। ७ आश्चर्यमें, ताज्जुबके साथ। ८ शक्तिमें, ज़ोर देकर। ९ प्राधान्यपर, दबावसे। १० बन्धनमें, पकड़कर। ११ भावपर, हालतके मुताबिक्। १२ मोक्षमें, छोड़ते हुये। १३ प्रश्नपर, परमेश्वरके नाममें। १४ अत्यन्ताभावपर, नातनदुरुस्तीमें। यह शब्द संज्ञा और क्रियाके पहले आता है।

उद (सं० क्ली०) उन्द्-अच निपातनात्। १ जल, पानी। "[illegible]" ([illegible]) (पु०) २ कपिञ्जल, हाथीकी अंगीर।

उदक् (सं० अव्य०) १ उत्तरदिक्, शिमालकी तर्फ़। २ उपरि, ऊपर। ३ पश्चात्, आखिरको। (त्रि०)

४ ऊर्ध्वगमनशील, ऊपरको घूमा हुआ। ५ उपरिस्थ, ऊपरवाला। ६ उत्तरस्थ, पिछाडी। ७ अमत, पाविरी।

उदक (सं॰ क्ली॰) उन्दी क्लेदने उन्द क्कुन्। उदकश। उण् २।३९। १ जल, पानी। जल देखो। २ करि-शृङ्खल, हाथी बांधनेकी जञ्जीर।

उदककार्य (सं॰ क्ली॰) १ जल द्वारा किया जाने-वाला एक धार्मिक कार्य। २ देहशुद्धि, जिस्मकी सफाई। ३ मृतके अर्थ हवन।

उदककुम्भ (सं॰ पु॰) जलघट, पानीका घड़ा।

उदकक्रिया (सं॰ स्त्री॰) शास्त्रविहित जलादि द्वारा तर्पण। तर्पण देखो।

उदकक्रीड़न (सं॰ क्ली॰) जलविहार, पानीका खेल।

उदककृच्छ्र (सं॰ पु॰) व्रत विशेष। इसमें एक मास पर्यन्त केवल यवका सत्तू खाते और जल पीते हैं।

उदकगाह (सं॰ पु॰) जल प्रवेश, पानीमें दखल।

उदकगिरि (सं॰ पु॰) जलप्रवाहयुक्त पर्वत, नदी नालेसे भरा हुआ पहाड़।

उदकद (सं॰ वि॰) १ जल प्रदान करनेवाला, जो पानी देता हो। (पु॰) २ उत्तराधिकारी, वारिस, जो पितरको पानी दे सकता हो।

उदकदाय, उदकद देखो।

उदकदान (सं॰ क्ली॰) उदकक्रिया देखो।

उदकदानिक (सं॰ वि॰) तर्पण सम्बन्धीय।

उदकधर (सं॰ पु॰) जलधर, बादल।

उदकना (हिं॰ क्रि॰) ऊपर उठ आना, निकल जाना।

उदकपरीक्षा (सं॰ स्त्री॰) विवाहादिके समयपर लौकिक प्रमाण न मिलते जलमज्जनादि द्वारा शपथका कराना।

उदकपर्वत, उदकगिरि देखो।

उदकपूर्वक (सं॰ अव्य॰) सङ्कल्पपूर्वक, दान या वचन लेनेके लिये हाथपर पानीको डालकर।

उदकप्रसेचन (सं॰ क्ली॰) जलके शीतीकरणका उपाय, पानी ठण्डा करनेकी तदबीर।

उदकप्रतीकाश (सं॰ त्रि॰) जलप्रभ, पानी-जैसा।

उदकप्रमेह, उदकमेह देखो।

उदकमार (सं॰ पु॰) जलका युग, पानी से जानेकी कड़ी।

उदकभूम. (सं॰ पु॰) आर्द्रस्थली, तर जमीन्।

उदकमञ्चिका (सं॰ स्त्री॰) जलके प्रसाधनार्थ एक आधार, पानी रखनेका घड़ा।

उदकमञ्जरीरस (सं॰ पु॰) निरामज्वरका एक रस, पके हुये बुखारकी एक दवा। एक एक भाग पारा, गन्धक, सोहागेकी फूली और मरिच तथा चार भाग शर्कराको २४ प्रहर बार बार भावना देनेसे यह रस बनता है। फिर शर्कराके स्थानमें मनःशिला डालनेसे चन्द्रशेखररस निकलता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदकमण्डल, उदककुम्भ देखो।

उदकमत्स्य (सं॰ पु॰) निम्नत्वचीभूत गन्ध विशेष, एक अनाज। इसका छिलका उतरा रहता है।

उदकमेह (सं॰ क्ली॰) कफोत्थ मेह विशेष, बल-गमसे पैदा हुआ जिरियान्। इसमें अच्छ, बहुसित, शीत, निर्गन्ध, उदकोपम और किञ्चित् आविल पिच्छिल मेह बहता है। (माधवनिदान)

उदकमेहिन् (सं॰ वि॰) उदकमेहका रोगी, जिसके बलगमका जिरियान् रहे।

उदकवज्र (सं॰ पु॰) गर्जित वृष्टि, कड़कड़ाहटकी बारिश।

उदकल, उदकवत् देखो।

उदकवत् (सं॰ वि॰) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदकविन्दु (सं॰ पु॰) जलका लव, पानीका बूंद।

उदकवहस्रोत (सं॰ क्ली॰) जलवह नाड़ी, पानी चलनेकी नस। ये दो होते हैं। मूल तालु और क्लोममें हैं। (सुश्रुत शारीरस्थान)

उदकवहा (सं॰ स्त्री॰), उदकवहस्रोत देखो।

उदकवीवध, उदकभार देखो।

उदकशाक (सं॰ क्ली॰) जलशाक, पानीमें पैदा होनेवाली सब्ज़ी।

उदकशान्ति (सं॰ स्त्री॰) जलद्वारा ज्वरका निवारण, पानीसे बुखार छुड़ानेका काम। इसमें विनियोजित जल रोगीपर छिड़कते हैं।

उदकषट्पलघृत (सं० क्ली०) चर्मरोगका घृतविशेष, चमड़ेकी बीमारीका एक घी। यवक्षार, चित्रमूल, चव्य एवं पिप्पल एक एक पल ले कल्क बनाये और ४ शरावक तिलका तैल तथा १२ शरावक दूध डाल ४ सेर घृत पकाये। इस घृतसे ज्वर, चर्म, प्लीहा और कासका रोग नष्ट होता है। ([illegible])

उदकमन्थ (सं० पु०) आर्द्रीकृत पिष्टशालि, पानीसे तर किया हुआ सत्तू।

उदकस्पर्श (सं० त्रि०) १ जलसे शरीरके विभिन्न अङ्गस्पर्श करनेवाला। २ प्रतिज्ञाकी मूर्तिके लिये जलको छूनेवाला।

उदकहार (सं० पु०) जलवाहक, पानी ले जानेवाला।

उदकान्त (सं० क्ली०) जलका तट, पानी या दरयाका किनारा।

उदकार्थिन् (सं० त्रि०) तृषित, प्यासा, पानी मांगनेवाला।

उदकाहार (सं० पु०) जलका आकर्षण, पानी खींचनेका काम।

उदकिका (सं० स्त्री०) समानाम क्षुप, बरियारी, गुलशकरी।

उदकिल, उदकन् देखो।

उदकी (सं० स्त्री०) पाठा, पारी, हरज्योरी।

उदकीर्य (सं० पु०) महाकरञ्ज, बड़ा करौंदा। यह पानीमें होता है।

उदकीर्य, उदकोर्य देखो।

उदकीर्या (सं० स्त्री०) पूतीकरञ्ज, करञ्ज।

उदकुम्भ, उदकुम्भ देखो।

उदकेचर (सं० त्रि०) जलचर, पानीमें रहने या चलने-फिरनेवाला।

उदकेविशीर्ण (सं० त्रि०) जलमें शुष्कीभूत, पानीमें सूखा हुआ। यह शब्द उपमाकी भांति असम्भव विषयके लिये आता है।

उदकोदञ्जन, उदकुम्भ देखो।

उदकोदर (सं० पु०) जलोदरनाम रोग। उदर देखो।

उदकौदन (सं० पु०) जलके साथ पकाया, पानीमें उबाला हुआ चावल।

उदक्त (सं० त्रि०) उद-अन्च-क्त। १ कूपसे उत्तोलित, कुंएसे निकाला हुआ। २ उत्थित, उठा या चढ़ा हुआ। ३ प्रेरित, पहुंचाया हुआ। ४ कथित, कहा हुआ।

उदक्तात् (वै० अव्य०) उत्तरकी ओर, हिमालयकी तर्फ।

उदक्पथ (सं० पु०) उत्तरीय देश, हिमालयका मुल्क।

उदक्प्रवण (सं० त्रि०) १ क्रमशः दक्षिणसे उत्तरको निम्न, सिलसिलेवार जनूबसे शिमालको ढला हुआ। ([illegible]) २ उत्तरमार्गगामी, शिमालकी राहसे जानेवाला।

"[illegible]" ([illegible])

'[illegible]' ([illegible])

उदक्य (सं० त्रि०) उदकमर्हति, उदक-य। [illegible] १ जलमें होनेवाला। २ जलप्रक्षाल्य, पानीमें धोया जानेवाला। (पु०) ३ जलयोग्य ब्रीहि प्रभृति, पानीमें उपजनेवाला धान्य वगैरह।

उदक्या (सं० स्त्री०) उदक संज्ञाया यत्-टाप्। [illegible] रजस्वला, जो औरत कपड़ोंसे हो। "[illegible]" (मनु)

उदगद्रि (सं० पु०) १ उत्तरीय पर्वत, शिमाली पहाड़। २ हिमालय।

उदगयन (सं० क्ली०) उत्तरायण, सूर्यके दक्षिणसे उत्तरकी ओर झुकनेका समय।

उदगरना (हिं० क्रि०) १ उद्गारण होना, भीतरसे बाहर निकलना। २ प्रकाश पाना, खुल आना। ३ उत्तेजित होना, तेज पड़ना।

उदगर्गल (सं० पु०) पृथिवीके स्थानविशेषमें जलका अनुसन्धान, पानीका पता। यह एक ज्योतिषशास्त्रीय विद्या है। इससे समझ सकते हैं—किस स्थानपर कितना गहरा खोदनेसे पानी निकलेगा।

उदगारना (हिं० क्रि०) उद्गार करना, निकाल डालना।

उदगार (हिं०) उद्गार देखो।

उदगुदग (सं० क्ली०) उदञ्च उत्तरा दशा यस्य। १ उत्तरापथक, कपड़ेका जो किनारा शिमालको तर्फ झुका रहे।

उदग्भूम (सं॰ पु॰) उदक् उन्नता प्रशस्ता वा भूमिर्यत्र, उदक्-भूमि-अच्। "कृषोदक्षण्ड्वं त्वा पूर्वाया भूमिरिष्यते।" (पा ५।४।७५ सूत्रे सिद्धान्तकौमुदी) उत्कृष्ट भूमि, बढ़िया ज़मीन।

उदग्र (सं॰ त्रि॰) उत-अग्र। १ उच्च, ऊंचा। २ वृद्ध, बुड्ढा। ३ उद्धत, अक्खड़। ४ दीर्घ, बड़ा। ५ विशाल, आलीशान। ६ महत्, अज़ीम।

उदग्रदत् (सं॰ पु॰) उद-अग्र-दन्त। अग्रान्तशुद्धशुभ्रवराहेभ्यश्च। पा ५।४।१४५ १ उच्चदन्तहस्ती, बड़े दांतोंका हाथी। (त्रि॰) २ उच्चदन्तयुक्त, ऊंचे दांतोंवाला।

उदग्राभ (वै॰ पु॰) उदकग्राही मेघ, पानी रखनेवाला बादल। "महायोदग्राभस्य भवत्स्मयर्थः।" (ऋक् ४।४०।११)

'उदकग्राभमुदकग्राहिणं मेघम्।' (सायण)

(त्रि॰) २ जलग्राही, पानी रखनेवाला।

उदघटना (हिं॰ क्रि॰) निकलना, खुलना।

उदघाटना (हिं॰ क्रि॰) उद्घाटन करना, खोल देना।

उदङ्ग (सं॰ पु॰) उत्-अन्च-घञ्। १ चर्ममय घृतादि पात्र, कुप्पा, घी तेल वगैरह रखनेको चमड़ेका बरतन। २ सन्दंश, चिमटा या सनसी। "इङ्गोदङ्गसंस्थानं कृतामालाममद्विमम्।" (भट्टि) ३ एकजन ऋषि। (शतपथब्राह्मण १४।६।१०।१)

उदङ्मुख (सं॰ त्रि॰) उदक् उत्तरस्यां मुखमस्य। उत्तरमुख, जो मुंहको हिमालकी तरफ़ झुकाये हो।

उदङ्मृत्तिक, उदग्भूम देखो।

उदचमस (वै॰ पु॰) उदकस्थापनयोग्य चमसाकार एक पात्र।

उदच्या—एक देवी। बम्बई प्रान्तीय धारवाड़ जिलेके अदरङ्गी ताल्लुकमें हीरेहल्ली ग्रामसे चोहीग नृपतिकी जो शिलालिपि निकली, उसके पृष्ठपर इन देवीकी मूर्ति बनी है।

उदज (सं॰ पु॰) उत्-अज पशुविषयके धात्वर्थ अप्। समुदोरजः पशुषु। पा ३।३।६९। १ पशुप्रेरण, मवेशियोंको हंकाई। (त्रि॰) २ जलजात, पानीसे पैदा।

उदजन—Hydrogen उदजन देखो।

उदञ्च (सं॰ त्रि॰) १ ऊपरि गमनकारी, ऊपरको

घूमा हुआ। २ उपरिस्थ, ऊपरवाला। ३ उत्तरकी ओर घूमा हुआ, शिमाली। ४ पश्चात्, पिछला।

उदञ्चन (सं॰ क्ली॰) उत्-अञ्च भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्वक्षेपण, ऊपरको फेंकफांक। २ उद्गमन, चढ़ाई, उठान। ३ आच्छादन, ढकन। ४ घटीयन्त्र, डोल। (त्रि॰) कर्तरि ल्यु। ५ उत्क्षेपक, ऊपर फेंकनेवाला।

उदञ्चित (सं॰ त्रि॰) उत्-अञ्च-क्त। १ उत्क्षिप्त, फेंका या ऊपर उठाया हुआ। २ पूजित, पूजा हुआ। ३ ऊर्ध्वगत, चढ़ा हुआ।

उदञ्जलि (सं॰ त्रि॰) अंजलियोंको गहराकर हाथ उठानेवाला।

उदण्ड (हिं॰) उद्दण्ड देखो।

उदण्डपाल (सं॰ पु॰) १ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह अण्डेसे निकलते ही भागती है। २ सर्पविशेष, किसी क़िस्मका सांप।

उदण्डपुर (सं॰ क्ली॰) १ मगध। २ विहारनगर। यह नाम प्राचीन शिलालिपिमें मिला है।

उदत (हिं॰ पु॰) सूर्य, आफ़ताब।

उददान (सं॰ त्रि॰) जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदद्या (सं॰ स्त्री॰) उत्-अद बाहुलकात् यत्। तैलपायिका, तिलचट्टा।

उदधि (सं॰ पु॰) उदकानि धीयन्तेऽस्मिन्, उद-धा-कि। पेषं वासवाहनविषु च। पा ६।३।५८। १ समुद्र, बहर। २ तट, किनारा। ३ मेघ, बादल। ४ सूर्य, आफ़ताब। "सं गृहेव दिदुत्कृतिर्मिथिः।" (वाजसनेयसंहिता १७।११) ५ घट, घड़ा। ६ जलाशय, तालाब। ७ हृद, झील। (वै॰ त्रि॰) ८ जलसंयुक्त, पानीसे भरा हुआ।

उदधिकफ (सं॰ पु॰) समुद्रफेन, बहरका झकाग।

उदधिकुमार (सं॰ पु॰) जैन-शास्त्रानुसार देवोंके जो व्यंतर, ज्योतिषी, भवनवासी और वैमानिक ये चार भेद बतलाये हैं, उनमेंसे भवनवासियोंका एक भेद। उदधिकुमार देव अधोलोककी रत्नप्रभा नामक पृथ्वीके खर भागमें रहते हैं। वहां इनके भवनोंकी संख्या छहत्तर लाख है। उत्कृष्ट आयुष्काल डेढ़ पल्य है। पल्य देखो। ज्ञामाधिक शरीरकी ऊंचाई दस

इसके मानसिक भाव कुमारोंके जैसे होते हैं इसलिये कुमार नाम पड़ा है।

उदधिक्रम, उदधिक्र देखो।

उदधिक्र (सं० पु०) उदधि-क्रम-विट्। समुद्राक्रमणकारी, बहर पर सफर करनेवाला।

उदधिमेखला (सं० स्त्री०) चारो दिक् सागरसे वेष्टित पृथिवी, बहरसे घिरी हुई ज़मीन।

उदधिराज (सं० पु०) नदीका राजा समुद्र।

उदधिलवण (सं० क्ली०) सामुद्र लवण, बहरी नमक।

उदधिवस्त्रा, उदधिमेखला देखो।

उदधिशुक्ति (सं० स्त्री) शुक्तिस्फोट, बहरी सीप।

उदधिसम्भव, [illegible] देखो।

उदधिसुत (सं० पु०) उदधिके पुत्र। चन्द्र, अमृत, शङ्ख और अश्व उदधिके सुत हैं।

उदधिसुता (सं० स्त्री०) समुद्रकी कन्या। लक्ष्मी और द्वारकाको उदधिसुता कहते हैं।

उदधीय (सं० वि०) सामुद्र, समुद्रजात, बहरी।

उदन् (सं० क्ली०) "पद्दन्नोमास्हृन्निशसन्यूषन्दोषन्यकञ्छकन्नुदन्नासञ्छस्प्रभृतिषु। पा ६।१।६३। इति सूत्रे उदकस्य उदनादेशः। उदक, पानी।

उदन्वत् (वै० वि०) तरङ्गमय, जिसमें लहरें उठें।

उदना (सं० पु०) १ वार्ता, बात। २ समाचार, खबर। ३ साधु, पाकसाफ़ आदमी। ४ [illegible], रोज़गारसे काम चलानेवाला। (वि०) ५ किसी वस्तुके चला तक पहुंचनेवाला। (हिं० वि०) ६ दन्तहीन, बेदांत, जिसके दांत न निकले। यह शब्द पशुके लिये आता है।

उदमाक (सं० पु०) उदक स्वार्थे यत्। [illegible], खूसर।

उदन्तिका (सं० स्त्री०) उदन्त-लिप्-ण्वुल्-टाप्। तृप्ति, आसूदगी, छकाहट।

उदन्त (सं० वि०) सीमाके पार रहनेवाला, जो हदके अन्त तक रहता हो।

उदन्य (वै० वि०) जलमय, पानीसे भरा हुआ।

उदन्यज (वै० वि०) जलमें उपजने या रहनेवाला।

उदन्या (सं० स्त्री०) उदन्यति उदकमिच्छति, "अशनायोदन्यधनाया बुभुक्षापिपासागर्धेषु"। पा ७।४।३४। इति क्यच् प्रत्यये परे आर्षं निपात्यते। १ पिपासा, प्यास। मेहे बाहुलकात् यत्। २ जलागमन, पानीका आना। ३ जलजन्तुविशेष, पानीमें सरोकार रखनेवाली।

उदन्यु (वै० वि०) उदन्य-उन्। पिपासु, पियासा, पानी ढूंढनेवाला। "यदि मरुभ्य उदन्यवः।" (ऋक् ५।५७।१) 'उदन्यवः उदकेच्छावन्तः।' (सायण)

उदन्वत, उदन्वान् देखो।

उदन्वान् (सं० पु०) उदकानि सन्ति अत्र, उदक-मतुप्, मस्य वः। "उदन्वानुदधौ च। पा ८।२।१३। १ समुद्र, बहर। "[illegible]" (रघु) २ ऋषिविशेष। (वि०) ३ उदकयुक्त, पानी रखनेवाला। (ऋक् [illegible])

उदप (सं० वि०) पानीको पार करनेवाला।

उदपर्णी (सं० पु०) क्षुद्रधान्यविशेष, एक खराब अनाज।

उदपात्र (सं० क्ली०) जलपूर्ण पात्र, मांटा।

"[illegible]" (मनु ५।८८)

उदपान (सं० पु०-क्ली०) उदकं पीयतेऽस्मिन्, उदक-पा अधिकरणे ल्युट्। १ कूप, कुवां।

"यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥" (गीता २।४६)

२ [illegible]।

उदपानमण्डूक (सं० पु०) कूएका मण्डूक, कूएका मेंढक। यह शब्द उस व्यक्तिके लिये आता है, जो अनुभवशून्य होता और अपना भिन्न अन्य विषय नहीं समझता।

उदपू (वै० वि०) जलमें अपनी शुद्धि करनेवाला, जो पानीसे पाकसाफ बना हो।

उदपेष (सं० स्त्री०) १ जलपिष्ट, खमीर, मैदी, गारा। (अव्य०) २ जलमें पीस कर, पानीमें रगड़के।

उदप्लुत (वै० वि०) जलमें सन्तरण करनेवाला, जो पानीमें तैरता हो।

उदप्रुत, उदप्लुत देखो।

उदबस (हिं० वि०) १ शून्य, सूना। २ स्थानान्तरित, किसी जगहसे हटाया हुआ, जो मारा मारा फिरता हो।

उदबसना (हिं० क्रि०) १ स्थानान्तरित करना, किसी जगहसे निकाल देना। २ शून्य करना, सूना बनाना।

उदभर (हिं॰) उद्भर देखो।

उदभव (हिं॰) उद्भव देखो।

उदभार (सं॰ पु॰) मेघ, बादल।

उदभौत (हिं॰ पु॰) आश्चर्य, ताज्जुब, अनोखी बात।

उदमन्थ (सं॰ पु॰) १ उदकप्रधान मन्थ, पानीकी मथानी। २ जलालोड़ित सहृत सक्तु, घी और पानीका सत्तू। इसे ग्रीष्ममें सेवन करना चाहिये। (भावप्रकाश)

उदमदना (हिं॰ क्रि॰) उन्मत्त होना, पागल बनना।

उदमन्थ (सं॰ पु॰) यवका जल, जौका पानी।

उदमाद (हिं॰) उन्माद देखो।

उदमादी (हिं॰ वि॰) उन्मत्त, मतवाला।

उदमान (सं॰ पु॰) १ वारिके मानका आढ़क। यह ४०८६ माशेका होता है। (हिं॰ वि॰) २ उन्मत्त, मतवाला।

उदमानना (हिं॰ क्रि॰) उन्मत्त होना, पागल बनना।

उदमेघ (सं॰ पु॰) १ जलयुक्त मेघ, पानीसे भरा हुआ बादल। २ जलवृष्टि, पानीकी झड़।

उदम्बर (सं॰ पु॰) १ शरीरज कृमिका एक भेद, जिस्मसे पैदा होनेवाला एक कीड़ा। कृमि देखो। २ ताम्र, तांबा।

उदय (सं॰ पु॰) उदयन्ति चन्द्रसूर्यादयो यत्र यस्मात्, उत्-इ-अच्। १ पूर्वपर्वत, उदयाचल।

"उदित उदयगिरि मञ्चपर रघुवर बालपतङ्ग।
बिकसे सन्त सरोज सब हरषे लोचन भृङ्ग॥" (तुलसी)

२ समुन्नति, उन्नत, उठान।

"उदय तासु त्रिभुवनमय भासा।" (तुलसी)

३ मङ्गल, भलाई। ४ दीप्ति, चमक। ५ आविर्भाव, निकास। ६ वृद्धि, बढ़ती। ७ लाभ, फायदा। ८ फलसिद्धि, कामयाबी। ९ लग्न, ग्रहगणका प्रकाश। ज्योतिः शब्दमें ग्रहके उदयका विवरण देखो। १० भावी उत्सर्पिणीके सप्तम अर्हत्, उदयाङ्ग। यह याज्ञिकके पुत्र और शाक्यमुनिके शिष्य थे। (त्रि॰) ११ व्याकरणमें—पश्चाद्गामी, पीछे पड़नेवाला।

उदयगढ़ (हिं॰ पु॰) उदयाचल।

उदयगिर—दाक्षिणात्यका एक ग्राम। यह अहमदनगरसे १६० मील दूर है। १७६० ई॰को मराठोंने यहां निज़ामकी फौजपर आक्रमण मारा था। निज़ामके हारनेपर सन्धि हुई। दौलताबाद, शिवर, असीरगढ़, तथा विजापुरका क़िला, अहमदनगर और विजापुर विदर एवं औरङ्गाबाद प्रान्तका अधिक भाग मराठोंके हाथ लगा। वर्तमान अहमदनगरके समय प्रान्त और नासिकके कुछ भागपर भी उनका अधिकार हो गया था। पेशवाके सेनापति सदाशिव रावने वहीं वीरता दिखाई थी।

उदयगिरि—उड़ीसा प्रान्तके पुरी ज़िलेका एक पर्वत। यह सामान्य वनपथमें खण्डगिरिसे सलग्न है। अति पूर्वकालमें (प्रायः २०० ई॰के पहले) उदयगिरि अपनी पवित्र गुहावोंके लिये प्रसिद्ध है।

रानीहंसपुर, गणेश, स्वर्गपुरी, मञ्जन, जया, विजया, अनन्त, हस्ति, पवन और व्याघ्र-गुफा ही प्रधान हैं। सकल गुहावोंमें प्रस्तर तोड़ गृहादि बने हैं। आजकल यद्यपि इनकी अवस्था नितान्त मन्द हो गई, अनेकांशमें गृहादि बिगड़ गये और सकल स्थानोंमें व्याघ्र-भल्लूक रहते, तो भी बोध होता है—पूर्वकालपर इन सकल गुहावोंमें बौद्धधर्मावलम्बी यति तथा सन्यासी रहा करते थे। अनेक गुहा महाराम नामसे विख्यात थीं। इन्हें देखनेके लिये पहले कितने ही बौद्धयात्री यहां आते थे। ई॰के ७म शताब्दमें चीनपरिव्राजक युयन्‌चुयङ्ग यहां पहुंचे थे। उन्होंने पुष्पगिरि नामक महारामकी बात लिखी है। अनुमान है—यह महाराम उदयगिरिके ऊपर या पास ही रहा होगा।

२ अन्य एक पर्वत। यह भेलसानगरसे एक कोस दक्षिण-पश्चिम और सांचीसे ढाई कोस दूर अवस्थित है। उदयगिरि एक मील विस्तृत है। इसमें अनेक मूर्ति खुदी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी मूर्ति हृहत् हैं। एक स्थानमें सर्गसे गङ्गा और यमुनाके अवतरणका दृश्य है। इसका कारुकार्य अति अद्भुत है। जहां गङ्गायमुनाकी धार पृथिवीपर आकर पड़ी, वहां समय देवोंकी मतरवाहना और कूर्मवाहना मूर्ति बनी है। अधर्मनिष्ठ हिन्दू लोग दर्शनको आते हैं। इस पर्वतमें चन्द्रगुप्त (२य) राजाके १०१ गुप्ताब्दका

इनके मानसिक भाव कुमारोंकेसे होते हैं इसलिये कुमार नाम पड़ा है।

उदधिक्रम, उदधिक्रा देखो।

उदधिक्रा (वै॰ पु॰) उदधि-क्रम-विट्। समुद्राक्रमणकर्ता, बहर पर सफ़र करनेवाला।

उदधिमेखला (सं॰ स्त्री॰) चारो दिक् सागरसे वेष्टित पृथिवी, बहरसे घिरी हुई ज़मीन्।

उदधिराज (सं॰ पु॰) नदीका राजा समुद्र।

उदधिलवण (सं॰ क्ली॰) सामुद्र लवण, बहरी नमक।

उदधिवस्त्रा, उदधिमेखला देखो।

उदधिशुक्ति (सं॰ स्त्री) मुक्तास्फोट, बहरी सीप।

उदधिसम्भव, उदधिलवण देखो।

उदधिसुत (सं॰ पु॰) उदधिके पुत्र। चन्द्र, अमृत, शङ्ख और कमल उदधिके पुत्र हैं।

उदधिसुता (सं॰ स्त्री॰) समुद्रकी कन्या। लक्ष्मी और द्वारकाको उदधिसुता कहते हैं।

उदधीय (सं॰ त्रि॰) सामुद्र, समुद्रजात, बहरी।

उदन् (सं॰ क्ली॰) पद्दन्नोमास्हृन्निशसन्यूषन्दोषन्यकञ्छकन्नुदन्नासन्छस्प्रभृतिषु। पा ६।१।६३। इति सूत्रे उदकस्य उदनादेशः। उदक, पानी।

उदनिमत् (वै॰ त्रि॰) तरङ्गमय, जिसमें लहरें उठें।

उदन्त (सं॰ पु॰) १ वार्ता, बात। २ समाचार, खबर। ३ साधु, पाकसाफ आदमी। ४ वृत्तियाजन, रोजगारसे काम चलानेवाला। (त्रि॰) ५ किसी वस्तुके अन्त तक पहुंचनेवाला। (हिं॰ वि॰) ६ दन्तहीन, बेदांत, जिसके दांत न निकले। यह शब्द पशुके लिये आता है।

उदन्तक (सं॰पु॰) उदन्त स्वार्थे कन्। संवाद, खबर।

उदन्तिका (सं॰ स्त्री॰) उदन्त-णिच्-ण्वुल्-टाप्। तृप्ति, आसूदगी, छकाहट।

उदन्त्य (सं॰ त्रि॰) सीमाके परे रहनेवाला, जो हदके उस तर्फ रहता हो।

उदन्य (वै॰ त्रि॰) जलमय, पानीसे भरा हुआ।

उदन्यज (वै॰ त्रि॰) जलमें उपजने या रहनेवाला।

उदन्या (सं॰ स्त्री॰) उदन्यति उदकमिच्छति, अशनायोदन्यधनायाबुभुक्षापिपासागर्द्धेषु। पा ७।४।३४। इति क्यच् प्रत्यये परे आत्वं निपात्यते। १ पिपासा, प्यास। वेदे बाहुलकात् क्यच्। २ जलानयन, पानीका लाना। ३ जलसम्बन्धिनी, पानीसे सरोकार रखनेवाली।

उदन्यु (वै॰ त्रि॰) उदन्य-उण्। जलेच्छु, पिपासु, पानी ढूंढनेवाला। "हरि मथन्ते ऽवता उदन्यवः।" (ऋक् ४।५६।२०) 'उदन्यवः उदकेच्छावन्तः।' (सायण)

उदन्वत, उदन्वान् देखो।

उदन्वान् (वै॰ पु॰) उदकानि सन्त्यत्र, उदक-मतुप्, मस्य वः। उदन्वानुदधौ च। पा ८।२।१३। १ समुद्र, बहर। "ते च प्रापुरुदन्वन्तं बुबुधे चादिपूरुषः।" (रघु) २ ऋषिविशेष। (त्रि॰) ३ उदकयुक्त, पानी रखनेवाला। (ऋक् ५।८३।७)

उदप (सं॰ त्रि॰) पानीको पार करनेवाला।

उदपर्णी (सं॰ पु॰) कुधान्यविशेष, एक खराब अनाज।

उदपात्र (सं॰ क्ली॰) जलपूर्ण पात्र, लोटा।

"भिक्षामप्युदपात्रं वा सत्कृत्य विधिपूर्वकम्।" (मनु ३।९९)

उदपान (सं॰ पु॰-क्ली॰) उदकं पीयतेऽत्रेति, उदक-पा अधिकरणे ल्युट्। १ कूप, कूवां।

"यावानर्थ उदपाने सर्वतः संप्लुतोदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः॥" (गीता २।४६)

२ कमण्डलु।

उदपानमण्डूक (सं॰ पु॰) कूपका मण्डूक, कूवेंका मेंडक। यह शब्द उस व्यक्तिके लिये आता है, जो अनुभवशून्य होता और नैकट्य भिन्न अन्य विषय नहीं समझता।

उदप्य (वै॰ त्रि॰) जलसे अपनी शुद्धि करनेवाला, जो पानीसे पाकसाफ बना हो।

उदपेष (सं॰ क्ली॰) १ जलपेष, खमीर, लेही, गारा। (अव्य॰) २ जलमें पीस कर, पानीसे रगड़के।

उदप्लुत् (वै॰ त्रि॰) जलमें सन्तरण करनेवाला, जो पानीमें तैरता हो।

उदप्लुत, उदप्लुत् देखो।

उदबस (हिं॰ वि॰) १ शून्य, सूना। २ स्थानान्तरित, किसी जगहसे हटाया हुआ, जो मारा मारा फिरता हो।

उदबसना (हिं॰ क्रि॰) १ स्थानान्तरित करना, किसी जगहसे निकाल देना। २ शून्यकरना, सूना बनाना।

उदभर (हिं०) उभर देखो।
उदभय (हिं०) उभय देखो।
उदभार (सं० पु०) मेघ, बादल।
उदभीत (हिं० पु०) आश्चर्य, ताज्जुब, अनोखी बात।
उदमन्थ (सं० पु०) १ उदकप्रधान मन्थ, पानीकी मथानी। २ जलालोड़ित सक्तु मन्थ, घी और पानीका सत्तू। इसे ग्रीष्ममें सेवन करना चाहिये। (भावप्रकाश)
उदमदना (हिं० क्रि०) उन्मत्त होना, पागल बनना।
उदमन्थ (सं० पु०) यवका जल, जौका पानी।
उदमाद (हिं०) उन्माद देखो।
उदमादी (हिं० वि०) उन्मत्त, मतवाला।
उदमान (सं० पु०) १ वारिके मानका आढ़क। यह ४०८६ माशेका होता है। (हिं० वि०) २ उन्मत्त, मतवाला।
उदमानना (हिं० क्रि०) उन्मत्त होना, पागल बनना।
उदमेघ (सं० पु०) १ जलयुक्त मेघ, पानीसे भरा हुआ बादल। २ जलवृष्टि, पानीकी झड़।
उदम्बर (सं० पु०) १ शरीरज क्रमिका एक भेद, जिससे पैदा होनेवाला एक कीड़ा। कृमि देखो। २ ताम्र, तांबा।
उदय (सं० पु०) उदयन्ति चन्द्रसूर्यादयो यस्मात्, उत्-इ-अच्। १ पूर्वपर्वत, उदयाचल।

"उदित उदयगिरि मञ्चपर रघुवर बालपतङ्ग।
बिकसे सन्त सरोज सब हरषे लोचन भृङ्ग॥" (तुलसी)

२ समुन्नति, उत्थान, उठान।

"उदय तासु त्रिभुवनमय भासा।" (तुलसी)

३ मङ्गल, भलाई। ४ दीप्ति, चमक। ५ आविर्भाव, निकास। ६ वृद्धि, बढ़ती। ७ लाभ, फायदा। ८ फलसिद्धि, कामयाबी। ९ लग्न, ग्रहनक्षत्रका प्रकाश। सूर्यादि शब्दमें इसके उदयका विवरण देखो। १० भावी उत्सर्पिणीके सप्तम अर्हत्, उदयाङ्क। यह याज्ञिकके पुत्र और प्राच्यमुनिके शिष्य थे। (वि०) ११ व्याकरणमें—पश्चाद्गामी, पीछे पड़नेवाला।
उदयगढ़ (हिं० पु०) उदयाचल।
उदयगिर—दाक्षिणात्यका एक ग्राम। यह अहमदनगरसे १६० मील दूर है। १७६० ई०को मराठोंने यहां निज़ामकी फौजपर आक्रमण मारा था। निज़ामके हारनेपर सन्धि हुई। दौलताबाद, शिवर, असीरगढ़, तथा बिजापुरका क़िला, अहमदनगर और बिजापुर बिदर एवं औरङ्गाबाद प्रान्तका अधिक भाग मराठोंके हाथ लगा। वर्तमान अहमदनगरके समस्त प्रान्त और नासिकके कुछ भागपर भी उनका अधिकार हो गया था। पेशवाके सेनापति सदाशिव रावने बड़ी वीरता दिखाई थी।
उदयगिरि—उड़ीसा प्रान्तके पुरी जिलेका एक पर्वत। यह सामान्य बनपथमें खण्डगिरिसे स्वतन्त्र है। अति पूर्वकालसे (प्रायः ३०० ई०के पहले) उदयगिरि अपनी पवित्र गुहाओंके लिये प्रसिद्ध है।

रानीहंसपुर, गणेश, स्वर्गपुरी, मञ्चन, जया, विजया, अनन्त, हस्ति, सर्प और व्याघ्र-गुफा ही प्रधान हैं। सकल गुहाओंमें पत्थर तोड़ गृहादि बने हैं। आजकल यद्यपि इनकी अवस्था नितान्त मन्द हो गई, अनेकांशमें गृहादि बिगड़ गये और सकल स्थानोंमें व्याघ्र-भल्लूक रहते, तो भी बोध होता है—पूर्वकालपर इन सकल गुहाओंमें बौद्धधर्मावलम्बी यति तथा सन्यासी रहा करते थे। अनेक गुहा सङ्घाराम नामसे विख्यात थीं। इन्हें देखनेके लिये पहले कितने ही बौद्धयात्री यहां आते थे। ई०के ७म शताब्दमें चीनपरिव्राजक युएनचुयङ्ग यहां पहुंचे थे। उन्होंने पुष्पगिरि नामक सङ्घारामकी बात लिखी है। अनुमान है—यह सङ्घाराम उदयगिरिके ऊपर या पास ही रहा होगा।

२ अन्य एक पर्वत। यह भेलसानगरसे एक कोस दक्षिण-पश्चिम और सांचीसे ढाई कोस दूर अवस्थित है। उदयगिरि पाव मील विस्तृत है। इसमें अनेक मूर्ति खुदी हैं। ब्रह्मा, विष्णु और शिवकी मूर्ति वृहत् हैं। एक स्थानमें स्वर्गसे गङ्गा और यमुनाके अवतरणका दृश्य है। इसका कारुकार्य अति अद्भुत न्यारो है। जहां गङ्गायमुनाको धार पृथिवीपर स्वर्गसे पड़ी, वहां उभय देवीकी मकरवाहना और कूर्मवाहना मूर्ति बनी है। धर्मनिष्ठ हिन्दू तीर्थदर्शनको आते हैं। इस पर्वतमें चन्द्रगुप्त (२य) राजाके १०६ गुप्ताब्दका

एक अनुशासन मिला है। वेशनगर निकटस्थ स्तूहादिके प्राचीर इसी पर्वतके प्रस्तरसे बने हैं।

३ मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत गञ्जाम जिलेका एक तालुक। इसमें खन्द और शवर जातिके लोग अधिक रहते हैं।

४ मन्द्राज प्रान्तके अन्तर्गत नेल्लूर जिलेकी एक तहसील। भूमिका परिमाण ८५० वर्गमील है। लोकसंख्या प्राय: एक लक्षसे कम है।

उदयचन्द्र—१ बम्बईप्रान्तीय कनाड़ा जिलेवाले प्राचीन पल्लव-नृपति नन्दीवर्माके एक सेनापति। ये पुचानवंश-सम्भूत और वेगवती नदीतीरस्थ विल्वलनगरके अधिपति थे। मन्द्राजप्रान्तीय उत्तर-अरकाट जिलेके प्राचीन नरेश उदयेन्दिरमका जो ताम्रफलक निकला, उसमें लिखा है—२य परमेश्वरवर्मा-नृपतिके अनुयायी द्रामिल राजाओंने नन्दीपुरमें नन्दीवर्माको घेर लिया था। किन्तु उदयचन्द्रने वहां पहुंच अपने हाथसे पल्लवराज चित्रमयको मारा और स्वामीको कष्टसे उबारा। इन्होंने निम्बवन, चूतवन, शङ्करग्राम, नेल्लूर, नेलवेली, सुरावलन्तूर तथा अन्य स्थानोंके भी रणक्षेत्रमें कई बार शत्रुको हराया और नन्दीवर्माका राज्य बचाया था। नेलवेलीमें उदयचन्द्रने शबरराज उदयनको भी वधकर मोरपुच्छ लगा शोभिका छत्र छीन लिया। उत्तरीय प्रान्तमें इन्होंने अश्वमेधयज्ञ करनेवाले पृथिवीव्याघ्र नृपतिके सेनापति निषादको विष्णुराजके राज्यसे भगाया और नन्दीवर्माको उसका अधिपति बनाया था। मणाईकुड़ीमें उदयचन्द्रने कालीदुर्ग नामक किला तोड़ पाण्ड्योंका सैन्य हराया। नन्दीवर्माने अपने राज्यके २१ वें वर्षमें इनके कहनेसे १०८ ब्राह्मणोंको वेगातूरका कुमारमङ्गल नामक ग्राम उत्सर्ग किया और उसका नाम बदल कर उदयचन्द्रमङ्गल रख दिया। आज उसे उदयेन्दिरम् कहते हैं।

२ बम्बई प्रान्तस्थ गुजरातवाले प्राचीन चालुक्य नृपति (११४३ से ११७४) कुमारपालकी सभाके एक जैन पण्डित। पाटनमें भद्रकाली-मन्दिरके निकट जो शिलालिपि निकली, उसमें यह बात लिखी है।

उदयत् (सं० त्रि०) ऊर्ध्वगामी, ऊपर चढ़नेवाला, जो निकल रहा हो।

उदयन (सं० पु०) १ अगस्त्य। २ शतानीकके पुत्र। पत्नीका वासवदत्ता और पुत्रका नाम नरवाहन था। (भविष्यपुराण २२।१९) मतान्तरसे यह शतानीकके पौत्र रहे। अपर पत्नीका नाम रत्नावली था। कौशाम्बी नगरी इनकी राजधानी थी। कोई कोई बुद्धदेवका इनका धर्मशिक्षक बताते है। ३ तुपभराज। ४ वत्सराज। कथासरित्सागरमें इनका उपाख्यान आया है। ५ शुद्धोदनके एक पुरोहित। (क्ली०) भावे ल्युट्। ६ उत्थान, निकास, उठान। ७ फल, नतीजा। ८ अन्त, अखीर।

उदयनाथ त्रिवेदी कवीन्द्र—दुवाबके अन्तर्गत अमेठीके एक प्रधान कवि। प्रथम ये अमेठीके राजा हिम्मतसिंहकी सभामें रह कविता बनाते थे। इनका विरचित 'रसचन्द्रोदय' वा 'रतिविनोद' नामक हिन्दी ग्रन्थ पढ़ राजा अतिशय सन्तुष्ट हुये। उन्होंने उदयनाथको 'कवीन्द्र' उपाधि दिया था। उक्त पुस्तक १८०४ विक्रमाब्दमें लिखा गया। पीछे इन्होंने अमेठीके गुरुदत्तसिंह एवं भगवन्तराय खीची, अजमेरके गजसिंह और बूंदीके बुद्धराय प्रभृति राजाकी सभामें महा सम्मान पाया था। इनके पुत्रका नाम दूलह त्रिवेदी था। वे भी एक अच्छे कवि थे। उनका रचा 'कवि-कुल-कण्ठाभरण' नामक हिन्दीग्रन्थ युक्त-प्रदेशमें समादृत है।

उदयनाचार्य (सं० पु०) कुसुमाञ्जलि नामक संस्कृत दर्शनग्रन्थ प्रणेता। भक्ति-माहात्म्य ग्रन्थके मतसे—

"भगवानपि तत्रैव मिथिलायां जनार्दनः।
श्रीमदुयनाचार्यरूपेणावततारह॥" (२७।२१)
"बौद्धसिद्धान्तसुध्वान्तसुखाय हितकारिणीम्।
व्यतेने विदुषां भौल्य विमर्शां किरणावलीम्॥" (३१।३)
"अद्यापि मिथिलायान्तु तदन्वयभवा द्विजाः।
विद्वांसः शास्त्रसम्पन्नाः पाठयन्ति गृहे गृहे॥" (३१।८१)

अर्थात् भगवान् जनार्दन मिथिलापर उदयनाचार्यके रूपमें उतरे हैं। उन्होंने बौद्ध सिद्धान्तसुख लोगोंके सुखविधान और पण्डित-मण्डलीके प्रीति-

सम्पादनको मङ्गलमयी किरणावली बनायी। आज भी उनके वंशधर शास्त्रविद् विद्वान् द्विज मिथिलामें घर घर पढ़ाया करते हैं।

फिर 'भादुड़ी-वंशावली' नामक वारेन्द्रब्राह्मणोंके कुलग्रन्थमें लिखा है—

"वर्द्धमानिसुतः श्रीमान् भुवि विख्यातमानसः।
कर्मणा सात्वताचार्य बौद्धविध्वंसकारिणे॥
स्यात उदयनाचार्य कुसुम,गहरो कृपा।
मङ्गलसमयापन्न चकार कुसुमाञ्जलिम्॥
स एवोदयनाचार्यो बौद्धविध्वंसकोद्यमी।
कुल च मर्यादास्य महाचार्य मयूर तथा॥"

इससे समझ पड़ता है—उदयनाचार्य कुल्लूक और मयूरभट्टके समसामयिक रहे। उन्होंने बौद्धोंके विध्वंसको जन्म लिया था और कुसुमाञ्जलि-नामक ग्रन्थ लिखा था।

वारेन्द्र-समाजके पण्डितोंका विश्वास है—वारेन्द्र-कुलमें परिवर्त-मर्यादाके प्रतिष्ठाता और कुसुमाञ्जलि-कार उदयनाचार्य भादुड़ी अभिन्न व्यक्ति हैं। वारेन्द्र कुलाचार्यके ग्रन्थमें भी ऐसा ही कहा है। 'सम्बन्ध-निर्णय' नामक ग्रन्थको देखते राजशाहीके अन्तर्गत निसिन्दा ग्राममें पर उदयन रहते थे। किन्तु कुलोंके भट्टाचार्य बताते हैं—माणिकगञ्जके अन्तर्गत वालीयाटी ग्राममें उदयनार्य भादुड़ी बसते थे। आज भी इस ग्रामके एक उच्च स्थानको लोग 'भादुड़ी-भिटा' कहते हैं।

"तदैवोदयनाचार्यैर्विनाय कुसुमाञ्जलिम्।
तीर्थपर्यटने मध्ये तत्कारणे समर्पितम्॥" (लघुभारत)

लघुभारत-रचयिताके मतसे इन्होंने तीर्थपर्यटन कालमें कुसुमाञ्जलि ग्रन्थ पाया और गौड़ देशमें लाकर चलाया था।

इस स्थलपर कुछ गड़बड़ पड़ती है। भक्ति-माहात्म्य मिथिलामें इनका जन्मस्थान ठहराता है, उधर सम्बन्धनिर्णय निसिन्दा ग्राममें निवास बताता है। फिर कोई कोई उदयनाचार्यको वङ्गदेशवासी भी समझते हैं। (वङ्गदर्शन-३य भाग ३०५ पृ)

किन्तु अधिक विश्वासजनक मत है—उदयनाचार्यने मिथिलामें जन्म लिया और गौड़में आया था। कुसुमाञ्जलि कारिकाकार रामभट्ट सार्वभौमने भी इन्हे मिथिलादेशीय लिखा है।

ठीक ठीक बता नहीं सकते—उदयनाचार्य किस समय हुये थे। 'न्यायसारनिकष' नामक ग्रन्थके रचयिता भट्टराघवने इनके श्लोक उद्धृत किये हैं। यह ग्रन्थ १२५२ ई० में बना था। फिर देखते हैं—८९८ शक (८०६ ई०)में वाचस्पति मिश्रने "न्यायसूचीनिबन्ध" रचा था। उदयनाचार्यने इन्हीं वाचस्पतिमिश्र-विरचित न्यायवार्तिक-तात्पर्यकी 'तात्पर्यपरिशुद्धि' नामी एक टीका लिखी है। इससे मानना पड़ता है—यह ८०१ और १२५२ ई०के बीच वर्त्तमान थे। उधर वारेन्द्र उदयनाचार्य्य भादुड़ी ई०के १४ शतकमें गौड़पति गणेशके समय विद्यमान थे। सुतरां दोनो विभिन्न व्यक्ति ठहरते हैं।

भक्तिमाहात्म्यके मतसे उदयनाचार्य जगन्नाथ देवका दर्शन लेने श्रीक्षेत्र पहुंचे थे। वहां पुरीके पण्डोंने माध्यचन्द्रादि द्वारा इन्हें पूजा। वाराणसी में इनके जीवकी लीला साङ्ग हो गयी।

मैथिल उदयनाचार्य-विरचित कुसुमाञ्जलि न्यायका उत्कृष्ट ग्रन्थ है। इसमें वेदान्तिक, सांख्य, मीमांसक और बौद्धमत काट ईश्वरका तत्त्व निरूपित है। अपने बनाये किरणावली नामक ग्रन्थमें कणादसूत्रके प्रशस्त-पाद भाष्यटीकामें उदयनाचार्यने जैसा भाव विस्तृत मङ्गलाचरण लिखा, वैसा किसी टीकाके ग्रन्थमें देखनेको नहीं मिलता। मैथिल तथा वङ्गदेशके दार्शनिक पण्डित मात्र उभय ग्रन्थका विशेष आदर करते हैं। एतद्भिन्न बौद्धमतको सम्पूर्ण काट 'आत्म-तत्त्वविवेक' नामक एक उत्कृष्ट शास्त्रग्रन्थ भी इन्होंने बनाया है।

उदयनीय (सं० त्रि०) अन्त वा फलसे सम्बन्ध रखने-वाला, जो पूरा करता है।

उदयपर्वत (सं० पु०) उदयाचल।

उदयपुर वा मेवाड़—राजपूतानेके अन्तर्गत और देशीय राजाके अधिकार-भुक्त एक करद राज्य। इसके उत्तर वृटिशशासनाधीन अजमेर; दक्षिण बांसवाड़ा, डूंगरपुर, प्रतापगढ़; पूर्व बूंदी, कोटा, झालरा, टोंक; पश्चिम

अरावली पर्वत और दक्षिण-पश्चिम सह्योकांटा है। यह अक्षा० २४° ४८' एवं २५° ५४' ३० और द्राघि० ७३° ७' तथा ७५° ५१' पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १२६९७ वर्गमील है। लोकसंख्या लगभग डेढ़ लाख है। हिन्दू और जैन अधिक रहते हैं। स्थानीय पर्वतमें भईट, भील और मीना तीन प्रकारकी असभ्य जाति रहती है।

इतिहास—बहुकालसे यहां सूर्यवंशीय राजा शासन चलाते, जो महाराणा कहाते और अपनेको रामचन्द्रके अधस्तन पुरुष बताते हैं। किन्तु प्राचीन शिलालिपिसे प्रमाणित हुआ है कि पहले ब्राह्मण थे, पीछे क्षत्रिय हो गये हैं।

राजपूत राजगणमें उदयपुरके राणा ही श्रेष्ठ और सर्वापेक्षा माननीय हैं। मुसलमान् बादशाहोंके आधिपत्यकालमें राजपूतानेके प्रधान प्रधान प्रायः सकल ही राजा किसी न किसी दिल्लीसम्राट्से दब गये थे। अनेकोंने कन्यादान भी दिया था। किन्तु प्रबल प्रतापशाली उदयपुरके राणाने मुसलमानोंकी अधीनता न मान अथवा अपनी कन्या उन्हें न सौंप जातीय गौरव बचाया था। उदयपुरके राणा राजपूत जातीय गहलोत श्रेणीको शिशोदीय शाखाके हैं।

७२८ ई०में इस वंशके बप्प रावलने सर्वप्रथम मेवाड़में राज्य जमाया था। १२०१ ई०में चित्तौरराज समरसिंहके मरनेपर उनके ज्येष्ठपुत्रने राज्यसे भाग डुंगरपुरवाले जङ्गलमें जाकर राजधानी बसायी थी। पहले उदयपुरके राजाका रावल (राव) उपाधि रहा। किन्तु राहुपने राजा होकर रावलके परिवर्तमें राणा उपाधि लिखा था।

१२७५से १२९० ई० तक लक्ष्मणसिंहने राजत्व किया। उसी समयपर अलाउद्दीन चित्तौरपर चढ़े थे। १३०१ ई०में वीरकेसरी हमीर राजा बने। वे महमूदके विरुद्ध खड़े हुये थे। दिल्लीके सम्राट्को कैदकर उन्होंने यवन-कवलित मेवाड़का राज्य फिर छुड़ाया। जिससे कि जयपुर, बूंदी और ग्वालियरके राजगणने हमीरको यथाविहित सम्मानित किया था।

राजपूत-वीर संग्रामसिंह या साङ्गाजीके समय अकबरके पितामह बाबरने चित्तौर घेरा। उन्होंने फतेहपुर-सीकरीके निकट आगे बढ़ मुगल सैन्यकी गति रोकी थी। किन्तु युद्धमें असाधारण वीरत्व दिखाते भी अवशेषको वे हार गये। उसी दिनसे साङ्गाराणा फिर देशको न लौटे, पर्वत पर्वत घूम केवल युद्धका आयोजन करते रहे। उनके मनमें था—जबतक हम युद्धमें मुगल बादशाहको न हरायेंगे, तबतक अपने देशको भी वापस न जायेंगे। मनकी आशा मनमें ही रही, अल्प दिनमें ही मृत्यु उन्हें खा गयी। १५३० ई०को साङ्गाजीके पुत्र रत्नसिंह राणा बने थे। उन्होंनेभी बूंदीराजके साथ सम्मुख समरमें प्राण दे दिया। फिर रत्नके भ्राता विक्रमादित्यको राज्य मिला था। उस समय गुजरातके मुसलमान बहादुर चित्तौर पर चढ़े। युद्ध चलनेपर चित्तौरके दुर्भेद्य दुर्गमें यावतीय मान्यगण्य राजपूतनारीने आश्रय लिया था। जब देखा, कि दुर्ग बचाया न जा सकेगा और शीघ्र ही मुसलमानोंके मुखमें पड़ेगा, तब प्रायः दो सहस्र राजपूतबालाने अमूल्य सतीत्वरत्न रखनेके लिये चितानलमें जीवन छोड़ा। दुर्गस्थित राजपूत वीरोंने जब देखा—चिराराध्य जननी, प्राणप्रतिमा दयिता और स्नेह एवं आदरके रत्न कन्यागणने अकातर जीवन छोड़ राजपूत-कुलका गौरव बढ़ाया है। तो फिर वे तेजस्वी वीरगण भी दुर्गका द्वार खोल मुसलमानोंके सैन्यसागरमें कूद पड़े। एक-एक जन मुसलमानोंको मारते मारते रणकी शय्यापर सो गया। और चित्तौर मुसलमानोंके हाथ लगा।

हुमायूंके प्रतापसे बहादुर गुजरात लौट गये। चित्तौर फिर विक्रमादित्यको मिला था। किन्तु अल्प दिनके मध्य ही सरदारोंने उन्हें राज्यसे हटा मार डाला। रणवीर नामक एक व्यक्ति राणा बने थे। अल्प दिनके बाद साङ्गाराणाके कनिष्ठ पुत्र उदयसिंहने फिर मेवाड़का राजसिंहासन अधिकारमें किया।

उदयसिंहके राजत्वकालमें अकबर शाहने चित्तौर जीता था। उदयने चित्तौर को अरावली पर्वतपर गिर्वा उपत्यकामें उदयपुर नामक नगर बसाया। यही स्थान उस समयसे मेवाड़की राजधानी बना है।

१५७२ ई॰में उदयसिंहके मरनेपर प्रतापसिंहने पितृ-सिंहासन पाया था। उनके जैसे उच्चहृदय, स्वदेश-प्रेमिक और कष्टसहिष्णु वीरपुरुष अति अल्प ही भारतवर्षमें उपजे हैं। वे स्वदेश और स्वजातिके लिये बार बार अकबर बादशाहसे लड़े। सकल युद्धमें हारते भी उन्होंने मुगलोंकी अधीनता मानी न थी। प्रतापने स्वाधीनता बचानेको अपना राज्य-धन गंवाया, पर्वत-पर्वत एवं वन वन चक्कर लगाया और गुहादिमें डेरा जमाया। ऐसा भी सम्बल न था, जिससे खायको क्षेम मिलते ही दिन कटता। बहु कष्टके बाद विधाता उनपर प्रसन्न हुये। उसी समय भामशाह नामक एक मन्त्रीने धन द्वारा उनको साहाय्य पहुंचाया था। प्रताप फिर राजपूतोंको जोड़ देवार नामक रणक्षेत्रपर उतर पड़े। उनके साहाय्य और रणकौशलसे मुगल फ़ौज हार गयी। प्रतापने अल्प दिनके मध्य ही समस्त मेवाड़ छोड़ाया लिया। फिर उन्होंने समस्त मेवाड़का एकेश्वर बन स्वाधीन भावसे जीवनका अवशिष्ट काल बिताया। प्रतापके मरनेपर तत्पुत्र अमरसिंह राजा हुये थे। (अमरसिंह देखो।)

दिल्लीके सम्राट् बननेपर जहांगीरने मेवाड़का राज्य अपने वशमें लानेके लिये अनेक बार यत्न लगाया, किन्तु किसी प्रकार कुछ कर न पाया। वह अमर-सिंहसे दो बार सम्पूर्णरूपसे हारा था। अवशेषपर जहांगीरने प्रतापसिंहके भ्राता शक्तिसिंहको मिलाया और उन्हींके भ्रातुष्पुत्र अमरके विपक्ष लड़ाया। सात वर्ष बाद शक्तिसिंह जातीय विद्वेषके लिये मन ही मन शरमाये थे। फिर उन्होंने मेवाड़की प्राचीन राजधानी चित्तौर अमरको सौंप दी थी। इस संवादसे जहांगीरको असीम क्रोध आया था। उन्होंने अपने पुत्र परवीजको ससैन्य अमरके विपक्ष भेजा। परवीज भी हार गये थे। फिर मुगल-सेनानायक महब्बत खान्, बड़ी भारी सेना ले मेवाड़के अभिमुख चले। शाहजहान् प्रधान-अधिनायक बने थे। इतःपूर्व बहुबार लड़ राजपूतोंका सैन्य क्रमशः घट रहा था। फिर असंख्य मुगल सैन्यके सम्मुख अस्त्र चलानेको रही। राजपूत वीरगणने देखा—अब रक्षा नहीं। उसपर भी एक बार प्राण पर्यन्त लगा जातीय गौरव बचानेको महत्तने अस्त्र उठाया था। घोरतर युद्धके बाद राजपूत हारे। राणा अमरने लाचारीसे दिल्लीश्वरका आनुगत्य माना था। किन्तु जहांगीरने उन्हें यथेष्ट सम्मानित किया। फिर भी राणा प्रतापसिंहके पुत्र अमर मुसलमानकी अधीनता सह न सके थे। उन्हें समझ पड़ा—मुसलमानके अधीन रहनेसे राजपद छोड़नेमें ही सुख है। अमरने अपने पुत्र कर्णसिंहको मेवाड़का राज्य सौंप वानप्रस्थ पकड़ा था। १६२८ ई॰को कर्णसिंहके मरनेपर तत्पुत्र जगत्सिंह राणा बने। वे १६५४ ई॰को मेवाड़के सिंहासनपर बैठे थे। उन्होंके राजत्वकालपर औरङ्गजेबने जिज़िया कर लगाया। यह कर मेवाड़पर बांधनेके लिये मुगल सैन्य भेजा गया था। राजपूतोंमें किसीने जिज़िया कर देना न चाहा। इसीसे युद्ध हुआ था। राजसिंहने बार बार मुगल सैन्यको हराया। १६८१ ई॰में औरङ्गजेबने जज़िया कर उठा डाला। इसी वर्ष राजसिंह मरे थे। उनके पुत्र अमर (२य) राणा बने। इन्हीं राणाके समयपर मारवाड़, मेवाड़ और जयपुरके राजगणने मिलकर मुगल राज्य मेटनेकी चेष्टा लगायी थी। मुसलमानोंने जहां जहां देवदेवीके मन्दिर तोड़ मसजिद बनाये, १७१२ ई॰में एकत्र हो राजपूत राजगणने वहीं वहीं ध्वंसकी धारा बहायी। किन्तु यह सुखदायक जातीय मिलन बहु दिन टिका न था। भारतका अदृष्ट बहुत ही अप्रसन्न निकला। शुभ मिलनमें विच्छेद पड़ा था और मारवाड़के राजा अजितसिंहने सन्धि कर अपनी कन्याका विवाह सम्राट्से कर दिया। कुछदिन बाद राणा अमर भी दिल्लीश्वरके साथ सन्धिसूत्रमें बंध गये थे। १७११ ई॰को अमरके मरनेपर तत्पुत्र संग्रामसिंहको पितृराज्य मिला। इस समय मुगल सम्राट्की अवस्था क्रमशः बिगड़ रही थी। मराठे मुगल बादशाहोंसे चौथ लेने लगे। १७१६ ई॰में पेशवाने मालोरावसे सन्धि जमायी थी। इस सन्धिके पत्रानुसार राणा मराठोंको १६०००) रु॰ चौथमें देनेके लिये प्रस्तुत हुये।

जिन राजपूतोंने मुसलमानोंको कन्या दी, उनसे उदयपुरके राणावंशीयने विवाहसूत्रमें बंधनेकी इच्छा न की। इसीसे उदयपुरके राणावोंका गौरव बहुत बढ़ा था। किन्तु अपर राजपूत राजगणके चक्षुमें वह खटक गया। उन्होंने उदयपुरके राजगणसे वैवाहिक सूत्रमें बंधनेकी अनेक चेष्टा लगायी थी। अवशेषमें उदयपुरसे राणावोंने कन्या देनेपर सम्मत होने भी नियम रखा—राणा-वंशीय कन्यासे जो पुत्र जन्म लेगा, वही राज्यका उत्तराधिकारी बनेगा। अपरापर राजपूत राजा राजी हो आदान-प्रदान करने लगे थे।

१७४३ ई०में जयपुरके राजा सवायी जयसिंह मर गये। ज्येष्ठपुत्र ईश्वरीसिंह राजा बने थे। किन्तु राणाकी भगिनीके गर्भसे जयसिंहका मधुसिंह नामक एक कनिष्ठ पुत्र हुआ था। इन्हीं मधुसिंहको राजा बनानेके लिये अनेक लोगोंने यत्न लगाया। राणा ईश्वरीसिंहके विरुद्ध सैन्य चला था। किन्तु सेंधियाके साहाय्यसे ईश्वरीने राणाको हरा दिया। फिर राणाने ईश्वरीको राज्यसे निकालनेके लिये होलकरका साहाय्य लिया था। विषप्रयोगसे ईश्वरी मारे गये। मधुसिंहको राज्य मिला।

१७५२ ई०में राणा जगत्सिंहके मरनेपर तत्पुत्र प्रतापसिंह राणा हुये। इसी समयसे मेवाड़राज्यमें मराठोंका उपद्रव उठने लगा। प्रतापसिंहके बाद तत्पुत्र राजसिंहने कुछकाल राजत्व रखा था। फिर उनके पितृव्य अरिसिंह राणा बने। सरदार उनसे विगड़ राजसिंहके बालकपुत्र रत्नसिंहको मेवाड़का सिंहासन सौंपनेपर तत्पर हुये। मेवाड़में दो दल बंधे थे। एकने अरिसिंह और अपर दलने रत्नसिंहका पक्ष पकड़ा था। उभय दलने मराठोंसे साहाय्य मांगा। सेंधिया अरिसिंहके विपक्षमें लड़े थे। उज्जयिनीके निकट कई बार युद्ध हुआ। राणा हारे थे। सेंधिया उदयपुर घेरनेको बढ़े। किन्तु राणाके दीवान् अमरचन्द्रने अपने बुद्धिकौशलसे सब गड़बड़ मिटा दिया था। सेंधिया ६३५०००) रु० लेनेपर सोक्षत हुये। इसमें ३३५०००) रु० नकद और अवशिष्ट रुपयेके लिये जवदजिरम, नीमच और मरवून् जिला रेहन रहा।

राणा अरिसिंह आखेटखेलते समय बूंदीके युव-राजद्वारा मारे गये। उनके बालकपुत्र हमीर राजा हुये थे। १७७८ ई०में हमीरके मरनेपर तदीय भ्राता भीमसिंहने सिंहासन पाया। उनकी कन्या कृष्णकुमारी परम रूपवती रहीं। रूपकी प्रशंसा सुन जयपुरके राजाने उनसे विवाह करना चाहा था। भीमसिंह भी इस शुभकार्यपर सम्मत हो गये। किन्तु मारवाड़के राजा मानसिंहने कहला भेजा था—'उदयपुरके पूर्वतन राजगणने मारवाड़के राजाको कन्या देनेकी पहिलेसे ही प्रतिज्ञा कर रखी है। अतएव उसी अङ्गी-कारके अनुसार अब उन्होंको कन्या देना उचित है।' भीमसिंह विषम समस्यामें पड़ गये। किसको कन्या दी जाय? जयपुरके राजाको कन्या न देनेसे बात कटती है और मानसिंहसे मुंह मोड़नेपर पितृपुरुषकी ख्याति घटती थी। उस समय जयपुरके राजमन्त्रीने समझाया—'ऐसे स्थलपर कन्याको मार डालना श्रेय है। इससे सकल दिक् रक्षा रहती है।' भीमसिंहने मन्त्रीके कथनानुसार वैसाही कार्य किया था। विष-प्रयोगसे कृष्णकुमारीके जीवन गत कर दिया। इसी समयसे १८१७ ई०तक मराठे समय-समयपर पहुंच-कर मेवाड़का राज्य लूटते रहे। उसके बाद अंगरेजोंका शासन चलनेसे उत्पात मिटा था।

१८२८ ई०में भीमसिंहके मरनेपर तत्पुत्र जवान-सिंहने राज्य पाया था। जब वे भी मरे, तब पुत्रादि न रहनेसे ज्ञातिसम्पर्कीय सरदारसिंह महाराणा बने। १८४२ ई०में वे भी मर गये। फिर उनके कनिष्ठ भ्राता स्वरूपसिंहको मेवाड़का राज्य मिला। १८६१ ई०में स्वरूपसिंहके दत्तकपुत्र शम्भुसिंह महाराणा बने थे। १८७४ ई०में फिर उन्होंने अपने ज्येष्ठ भ्रातुष्पुत्र सज्जनसिंहपर राज्यका भार डाल इहलोक छोड़ दिया। १८८४ ई०को २३वीं दिसम्बरको सज्जनसिंह मरे थे। उनके बाद फतेहसिंह उदय-पुरके महाराणा हुये। १८८६ ई०में महाराणा साहब-को जि, सि, एस, आई, (G. C. S. I.) की पदवी मिली। कविराज श्यामलदासजी जो महाराणा सज्जनसिंहके समयमें प्रधान मन्त्री थे, अंगरेजी सर-

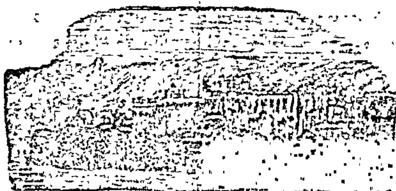
कारसे 'महामहोपाध्याय'का उपाधि मिला है। महाराणा सज्जनसिंहके आज्ञानुसार कविराजजीने "वीरविनोद" नामक राजस्थानका एक बहुत बड़ा इतिहास रचा है। दिल्ली-दरबारमें महाराणा फतेसिंहजीको भारतीय हिन्दू राजन्यवर्गमें सर्वप्रधान सम्मान मिला था। मेवाड़ देखो।

उदयपुरके महाराणा अंगरेज सरकारसे १९ तोपोंकी सलामी पाते हैं। महाराणाके अधीन १३३८ गोलन्दाज, ६२४० सवार और १३.१०० पैदल रहते हैं।

उत्पन्न द्रव्य—उदयपुर राज्यमें ज्वार, बाजरा, धान, यव, चना, गेहूं, उड़द, अफीम, कपास, तम्बाकू प्रभृति द्रव्य उपजते हैं।

२ उदयपुरके राज्यकी राजधानी। यह अक्षा॰ २४° ३५' १८" उ॰ और द्राघि॰ ७३° ४१' २१" पू॰पर अवस्थित है। अकबर बादशाहके चितौर-पर चढ़नेसे उदयसिंहने यहां आकर नूतन नगर बसाया था। उन्हींके नामानुसार लोग इसे उदयपुर कहने लगे।

यह नगर पर्वतपर प्रतिष्ठित और पर्वतों द्वारा परिवेष्टित है। सम्मुख एक विस्तीर्ण ह्रद बह रहा है। प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त सुन्दर और परम-मनोरम है। महाराणाका प्रासाद नानावर्णके प्रस्तरोंसे निर्मित, ह्रदतीरसे कुछ ऊर्ध्व भागपर अवस्थित और पर्वतके मध्य प्रतिष्ठित है। दूरसे इसकी शोभा दर्शकका मन मोह लेती है। भवन चारों दिक् ५० फीट उच्च प्राचीर द्वारा वेष्टित है। राजभवनके सिवा युवराजका गृह, सरदारका भवन और जगन्नाथ देवका मन्दिर भी दर्शनीय है। पिछोला ह्रदके बीचों बीच यज्ञमन्दिर और जलवास नामक दो जलप्रासाद हैं। ई॰के १७वें शताब्दमें जगत्सिंहजीने इन्हें बनवाया था।



उदयपुरके महाराणाका प्रासाद

नगरके निकट ही आहर नामक एक ग्राम है। उसमें स्थान-स्थानपर अट्टालिकादिका भग्नावशेष देखनेसे समझ पड़ता—यहां पहले कोई शहर था। आहरमें महासती-स्तम्भ खड़ा है। जिन प्रधान प्रधान सामन्तगणके मरनेसे उनकी पत्नीने भी चितापर चढ़ अपना प्राण कुछ न गिना, उन्हींके स्मरणार्थ महासती-स्तम्भ बना है। महाराणा अमरसिंहका स्तम्भ सर्वापेक्षा वृहत् है।

उदयपुरके दक्षिण प्रान्तपर एकलिङ्गगढ़ है। उसके दक्षिण गोवर्धनविलास विद्यमान है।

इस नगरसे छः कोस उत्तर गहरी पर्वतके मध्य एकलिङ्ग महादेवका मन्दिर बना है। एकलिङ्ग देखो।

१ मालव राज्यके अन्तर्गत धारसे ५ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित एक क्षुद्र नगर। वर्तमान उदयपुर प्राचीन नगरके भग्नावशेषपर बना है। स्थानीय अट्टालिकादि अति पुरातन है। नगरकी दक्षिण दिशामें अनेक मनोस्तम्भ खड़े हैं। मध्यस्थलमें तीन प्राचीन मन्दिर हैं। उनमें बड़ा मन्दिर अति प्राचीन बताया जाता है। संवत् १११६ में राजा उदयादित्यने इसे बनवाया था। लोग कहते—दिल्लीके बादशाह औरङ्गजेब दक्षिणापथको जाते इस स्थानपर आये थे। उन्होंने इस मन्दिरका चमत्कार और सौन्दर्य देख

खनित्र खोदनेके लिये आदेश दिया। किन्तु दूसरे ही दिन औरङ्गजेब अकस्मात् पीड़ित हुये थे। इसलिये उनको भय लगा—सम्भवतः मन्दिरस्थ महादेवके आक्रोशसे मेरी दशा इसप्रकार बिगड़ी है। फिर उन्होंने मन्दिर खोदनेको मनाई कर दी थी। उन्हींके आदेशसे पार्श्वपर एक मसजिद बनी। औरङ्गजेबकी आज्ञा थी—कोई मुसलमान् जबतक न पहले पैरों महादेवकी मूर्तिके दर्शन करने मन्दिरमें न जायेगा, तबतक इस मसजिदमें भी न घुसने पायेगा।

४ बङ्गालप्रदेशके अन्तर्गत पार्वतीय त्रिपुराराज्यका एक विभाग। ५ पार्वतीय त्रिपुरा राज्यके मध्यका एक ग्राम। यह गोमती नदीके तीर अक्षा० २३° ३१′ २५″ उ० और द्राघि० ९१° ३१′ १०″ पू० पर अवस्थित है। त्रिपुरेश्वरीका मन्दिर रहनेसे यह स्थान एक तीर्थ समझा जाता है। त्रिपुरेश्वरी देवीसे ही देशका नाम त्रिपुरा पड़ा है। प्रति वर्ष इस तीर्थके दर्शनको नाना स्थानसे सहस्र सहस्र यात्री आते हैं। कपास, तसूता और लठ बहुत बिकता है।

६ प्राचीन पार्वतीय त्रिपुराराजके मध्यस्थित एक प्राचीन नगर। आजकल यह ध्वंसप्राय है। ई० के १६ वें शताब्दमें उदयपुर राजा उदयमाणिक्यकी राजधानी रहा। एक शिवमन्दिर विद्यमान है। मन्दिरमें महादेवके दर्शनार्थ समय समय बहु यात्री आया करते हैं।

७ छोटे नागपुरमें देशीय राजाके शासनाधीनस्थ एक करद राज्य। यह अक्षा० २२° ३′ ३०″ तथा २२° ४७′ उ० और द्राघि० ८३° ४′ ३०″ एवं ८३° ४८′ ३०″ पू० के मध्य अवस्थित है। उत्तर सरगुजा, पूर्व रायपुर ज़िला तथा यशपुर राज्य, दक्षिण रायगढ़ और पश्चिम सीमापर बिलासपुर ज़िला विद्यमान है। भूमिका परिमाण १०५५ वर्गमील है।

१८१८ ई० में अप्पा साहबसे अंगरेजोंकी जो सन्धि हुयी, उसीके अनुसार उदयपुर पर उनके शासनकी अधीनता पड़ी। १८५७ ई० को सिपाही युद्धके समय स्थानीय सरदार और उनके भाईने अंगरेजों पर अस्त्र उठाया और इस स्थानको जीत कुछ दिन तक राजत्व चलाया था। १८५८ ई० में अंगरेजोंने फिर उदयपुर लिया और सरदार उत्तराधिकारीको आन्दामान द्वीप यावज्जीवन निकाल कर भेज दिया। अन्तमें सरगुजाके राजाने अंगरेजोंको साहाय्य पहुंचाया था। इसी महत्कार्यके लिये १८६० ई० में वृटिश गवरनमेण्टने यह राज्य उनको सौंपा।

राजधानी रावकोब मांद नदीके तीरपर अवस्थित है। उत्पन्न द्रव्यके मध्य लालमिर्च प्रचुर परिमाणसे होता है। एतद्भिन्न कार्पास, निर्यास, नानाप्रकार तैलबीज, धान्य, लोह और अल्प स्वर्ण भी मिल जाता है। कोयलेकी एक विस्तृत खानि खुदी है।

उदयप्रभसूरि—एक विख्यात श्वेताम्बर जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्रवचन-सारोद्धार-विषमपद-व्याख्या और धर्माभ्युदय काव्य वा सङ्घपतिचरित नामक दो संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। शेषोक्त ग्रन्थ आबू पर्वतवाले प्रसिद्ध जैन-मन्दिरनिर्माता राजमन्त्री वस्तुपालके सम्मानार्थ लिखा गया। उदयप्रभसूरि श्रीविजयसेन सूरिके शिष्य और नरचन्द्र सूरिके समसामयिक रहे।

उदयप्रस्थ (सं० पु०) उदयाचलकी समस्थली।

उदयभद्र—एक बौद्धराजा। इन्होंने छः वर्ष राजत्व किया था। बौद्धोंके प्रधान विनयाचार्य उपालि विद्यमान रहे। अशोकके अनुशासनमें लिखा है—बुद्धनिर्वाणके साठ वत्सर बाद उदयप्रभकी मृत्यु हुई थी।

उदयभास्करकर्पूर (सं० पु०) स्वनामख्यात कर्पूर, किसी क़िस्मका बनाया हुआ काफ़ूर। यह पत्र और सदल एवं निर्दल भेदसे दो प्रकारका है। उदयभास्कर पीत, सर, स्वच्छ, कठिन, कटु, समुदित, अग्निदीपक, लघु, शोद एवं पित्तकर होता और कफ, कृमि, विष तथा वातको खोता है। इससे नासा तथा मुखिका रोग, लालास्राव, गलग्रह और जिह्वाका जड़त्व भी छूट जाता है। (वैद्यक निघण्टु)

उदयभास्कररस (सं० पु०) १ कुष्ठाधिकारका एक रस, कोढ़की एक दवा। केवल गन्धकसे मृत ताम्र दश, ऊषण (त्र्यूषण) पांच और विष (सींगिया) दो भाग डाल जलमें पीसे, और रत्ती रत्तीकी वटिका बना कुष्ठीको खिलाये। (रसेन्द्रसारसंग्रह) मतान्तरसे

पिप्पलीमूल वा त्रिकटु पांच भाग पड़ता है। २ हिक्का और श्वासका एक रस, हिचकी और दमेकी एक दवा। भस्म एवं गन्धकको बराबर-बराबर श्वेत अपामार्गके द्रवसे पीस पातालयन्त्रमें पकाते ऊर्ध्व भागपर जो वस्तु उड़कर लग जाता, वही उदयभास्कररस कहलाता है। यह दो गुञ्जाके अनुमान रोगीको खिलानेसे पञ्चविध श्वास अच्छा होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदयमती—बम्बई प्रान्तस्थ गुजरातके चालुक्यराज (१०२२ से १०६० ई०) १म भीमकी एक पत्नी। इनके पुत्रका नाम कर्ण रहा। द्वाश्रयकाव्यमें लिखा है—एक दिन किसी चित्रकारने कर्णको चन्द्रपुरके कदम्बराज जयकेशीकी कन्याका चित्र देखाया, जिसने उनसे विवाह करनेका शपथ उठाया था। चित्रकारने कहा—राजकन्याने आपको भेंटके लिये एक हाथी भेजा है। कर्ण जब हाथी लेने गये, तब उसपर उक्त राजकन्याको देख विस्मित हुये। किन्तु उन्होंने उसे कुरूप पाकर विवाह करना अस्वीकार किया। उसपर राजकन्याने अपनी आठ सहेलियोंके साथ चितापर चढ़ भस्म हो जानेकी ठानी थी। उदयमतीने कर्णसे कहा—आपके विवाह न करनेसे मैं भी प्राण दे दूंगी। यह दशा देख कर्णने विवाह किया, किन्तु राजकन्या मियाणल्लदेवीको पत्नी रूपमें न लिया। उधर सुञ्जाल मन्त्रीको किसी लौंडीसे समाचार मिला—कर्ण एक बांदीको बहुत चाहते हैं। उन्होंने मियाणल्लदेवीको उक्त बांदी बना राजासे मिला दिया। कर्णकी वृद्धावस्थामें मियाणल्लदेवीके सुप्रसिद्ध सिद्धराज सिंह नामक पुत्र उत्पन्न हुये। कहते हैं—तीन वर्षकी अवस्थामें ही सिद्धराज सिंहासनपर एक दिन अटकर बैठ गये। यह देख कर्णने ज्योतिषियोंसे पूछ उन्हींको राजा बना दिया था।

उदयमाणिक्य—त्रिपुराके एकजन राजा। कोई सवा तीन सौ वर्ष पहले यह त्रिपुराके राजा रहे। इन्होंके राजत्वकालमें प्राचीन उदयपुर नगर बसा था। त्रिपुरा देखो।

उदयराज—सैयदाबादके एक जन राजा। युक्तप्रदेशमें किम्बदन्ती है—उदय शालिवाहनके पुत्र और रसालुके प्रबल शत्रु रहे। एक समय रसालु अपनी राजधानीमें उपस्थित न थे। अवसर पाकर उदय उनकी प्रधान पत्नी कोकिलकुमारी पर आसक्त हुये। रानीने भी उदयके प्रेमसे मुग्ध हो आत्मसमर्पण कर दिया था। किन्तु उनके पास एक पालतू मैना थी। वह पर-पुरुषके साथ रहनेपर कोकिलकुमारीको तिरस्कार भर्त्सना बताने लगी। अवशेषको रानीने उसके पिंजड़ेकी खिड़की खोल दी। वह उड़कर सुनमाकम्पन नामक स्थानपर पहुंची। रसालु निद्रित रहे। मैना उनके शयन-घरमें घुस 'चोर चोर' चिल्लाने लगी। रसालुकी निद्रा टूट गई। उसने राजासे एक एक बात कह दी। पीछे रसालु अपनी राजधानीको आये थे। उन्होंने सम्मुख युद्धमें उदयको मार डाला। उदयको कोई ठदी और कोई हूदी कहता है। पुरातत्त्वविद् समझते हैं—इन्हीं उदयसे तोचरी या यूची और रसालुसे शक या श जाति उपजी है। अति प्राचीन कालसे इन उभय जातियोंमें विवाद होता आया है।

उदयवत् (सं० त्रि०) उदित, उठा या निकला हुआ, जो चढ़ आया हो।

उदयवराह—बम्बई प्रान्तीय गुजरातके कर्णावती नगरका एक जैन-मन्दिर। चालुक्यराज कर्ण (१०६४-१०९४ ई०)के उदा मन्त्रीने इसे बनवाया था। इसमें ७२ तीर्थङ्करोंकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। जिनमें २४ भूत, २४ वर्तमान और २४ भविष्यत् तीर्थङ्कर हैं।

उदयसिंह—१ मेवाड़वासी राणा सांगाजीके कनिष्ठ पुत्र। अल्पकालस्थायी वनवीरके राजत्वके बाद ये मेवाड़के सिंहासनपर बैठे थे। इन्होंके समय चित्तोरकी राजलक्ष्मी चलती बनी। १५६८ ई०में वीरभोग्य चित्तोर नगर अकबरने ले लिया था। फिर राणा उदयसिंहने चित्तोर छोड़ राजपिप्पली वनमें गोहिलोंके निकट आश्रय ढूंढा। कुछदिन बाद ये अरावली गिरिमालाके मध्यस्थ गिरवा नामक स्थानपर पहुंचे थे। उदयसिंहने उपत्यकाके पुरोभागमें उदयसागर नामक एक विशाल सरोवर खोदाया। वही उदयसागर-पार्श्वस्थित कई गिरिशृङ्गके शिरोदेशमें

'नचौकी' नामक एक प्रकाण्ड प्रासाद भी बन गया। इसी राजप्रासादमें उदयसिंह रहने लगे। क्रमशः प्रासादकी चतुर्दिक् सौधवासगृह बननेपर उदयपुर नगर निकला था। ४२ वत्सरके वयःक्रम कालपर इन्होंने गोकुण्डा नामक स्थानमें प्राण छोड़ा। मृत्युकाल पर २४ पुत्र जीवित थे। किन्तु उनमें राणा प्रतापसिंहका नाम ही भारतमें विख्यात है। प्रतापसिंह देखो।

२ जोधपुरके एकजन राजा। ये अकबर बादशाहके एक प्रधान सभासद् थे। १५८६ ई०में इन्होंने सुलतान् सलीमसे अपनी कन्या बालमतीको विवाह दिया। इन्हीं बालमतीके गर्भसे शाहजहान् उत्पन्न हुये थे। अकबरने जोधपुरका राज्य उदयसिंहको जागीरमें दे डाला। १५९४ ई०में ये मरे थे। साथ ही इनकी चार पत्नी भी चितापर चढ़ीं। फिर उदयसिंहके पुत्र सूर्यसिंहको सिंहासन मिला था। इनके पौत्र गजसिंह और प्रपौत्र यशोवन्तसिंह रहे।

उदयसिंहदेव—बम्बईप्रान्तस्थ भिनमालके एक चौहान राजा। एक प्राचीन शिलालिपिसे विदित हुआ है—ये महारावल समरसिंह देवके पुत्र रहे। इन्होंने स्वयं भिनमाल पर अधिकार किया था। १२४९ ई०तक जीवित रह उदयसिंह देवने कमसे कम ४३ वर्षतक राजत्व चलाया। प्रजा सम्पत्तिशाली रही। बहादुर सिंह पुत्रका नाम था। किन्तु वह इन्हींके सम्मुख मर गये।

उदयाचल, उदयपर्वत देखो।

उदयातिथि (सं० स्त्री०) सूर्योदयकी तिथि, जिस तिथिमें सूर्य भगवान् निकलें। शास्त्रानुसार स्नानदानादि इसी तिथिमें होता है।

उदयादित्य—चालुक्यराज भुवनैकमल्लके सेनापति। कुछ दिन सेनाकी देखरेख रखने बाद ये वनवासी नामक स्थानके राजा बन गये। १०६९ और १०७६ ई०के मध्य उदयादित्य विद्यमान रहे। वनवासी देखो।

उदयाश्व—मगधराज अजातशत्रुके पौत्र। इन्होंने पाटलीपुत्र बसाया था। (विष्णु) बौद्ध ग्रन्थोंमें इनका नाम उदयभद्र लिखा है।

उदयिन् (सं० त्रि०) उदय होनेवाला, जो निकल रहा हो।

उदयिभद्र—अजातशत्रुके पुत्र। उदयभद्र देखो।

उदर (सं० क्ली०) उत्-दृ विदारणे अच्। उदिद-पातेरलघो पूर्वपदान्तलोपश्च। उण् ५।१९ १ जठर, कुक्षि, मेदा, शिकम, पेट। सुश्रुतादि प्राचीन वैद्यगणके मतसे उदर एक अङ्ग लगता है। इसमें पेशी, गुद, वस्ति एवं नाभि मर्म, चौबीस शिरा, तीस धमनी, सात आशय (वाताशय, पित्ताशय, श्लेष्माशय, रक्ताशय, आमाशय, पक्वाशय, और पक्वाशय) तथा स्त्रीके देहका एक अतिरिक्त गर्भाशय, वलय नामक अस्थि और अन्त्र है। नाभि, कोष्ठ और गर्भ शब्द देखो।

पाश्चात्य चिकित्सकोंके मतानुसार ऊर्ध्व वक्ष एवं उदर विच्छेदक स्नायु (Diaphragm) और अधोदेश पर वस्तिकोटरका अस्थिसमूह रहता, जिसके मध्य उदरगह्वर है। इस गह्वरमें पक्वाशय, अन्त्र, प्लीहा, यकृत्, वृक्क और पानक्रियस (Pancreas) हैं। उदरका समस्त स्थान पतला रहता, जिसपर घन एवं दृढ़ सूक्ष्म झिल्लीका आवरक चढ़ता है। इसे अन्त्रावरक (Peritoneum) कहते हैं। २ युद्ध, लड़ाई।

(पु०) उदरं आश्रयत्वात्, अर्श आदिभ्योऽच् इति अच्। ३ उदररोग विशेष, पेटकी एक बीमारी। भीतर ही भीतर जिनके उपजनेसे पेट बढ़ता, उनमें कितने ही बड़े बड़े रोगका उदर नाम पड़ता है। वैद्यशास्त्रमें इसे उदररोग भी लिखते हैं।

प्राचीन आयुर्वेदाचार्यके इस नामकरणमें बड़ा गड़बड़ है। उन्होंने आठ प्रकारके उदर रोगका जो लक्षण किया, उससे किसी विशेष पीड़ाका परिचय नहीं दिया है। वह अन्य अन्य नानाप्रकार पीड़ासे ही सम्बन्ध रखता है।

आलोपाथीका आसाइटिस (Ascites) अर्थात् जलोदर नाम भी ठीक नहीं बैठता। क्योंकि पेटमें जलका सञ्चय प्राय कोई विशेष पीड़ा नहीं, अन्य अन्य नानाप्रकार रोगकी चरमदशाका एक उत्कट उपसर्ग मात्र है।

चरकसंहिताके संग्रहकार कहते हैं—कोष्ठ-अग्नि

न होना ही सकल प्रकार उदररोगका प्रधान कारण है। लिखते हैं—

"अग्निदोषान्मनुष्याणां रोगसङ्घाः पृथग्विधाः।
मलवृद्ध्या प्रवर्तन्ते विशेषेणोदराणि तु॥" (चरक)

मनुष्यके अग्निदोषसे पृथक् पृथक् नाना प्रकारकी पीड़ा उपजती है। विशेषतः उसके कारण मल बढ़ने-पर अनेक उदर रोग फूट पड़ते हैं।

किन्तु यह मत माननेसे वर्तमान चिकित्साशास्त्रके साथ सामञ्जस्य पड़ना दुर्घट है। उदरके लक्षण विचारनेसे स्पष्ट ही समझ सकते, कि उसमें अनेक प्रकारके रोग लगते हैं। पाकस्थलीकी विवृद्धि (*Dilatation of the stomach*), पाकस्थली और अन्त्रके भीतरका उपपदार्थ (Foreign bodies in the stomach and intestines), पाकस्थली, अन्त्रावरक झिल्ली प्रभृति स्थानका कर्कटरोग (Cancer of the stomach, peritoneum etc.), पाकस्थली, अन्त्र प्रभृति यन्त्रका छिद्र (Perforation of the stomach and intestines), प्लीहाकी पुरातन विवृद्धि (Cronic enlargement of the spleen, ague-cake; leucocythœmia), प्लीहाका तरुणप्रदाह (Acute splenitis), यकृत्का प्रदाह (Suppurative pepatitis), यकृत्का स्फोटक (Abscess of the liver), यकृत्की विशुष्कता (*Cirrhosis*); यकृत्के हाइटेडिड नामक कीटाणुका कोषार्बुद (Hytadid cysts of the liver), अन्त्रके स्थानविशेषका स्फोटक, अन्त्रावरक झिल्लीका प्रदाह (Peritonitis), अन्त्रावरक झिल्ली तथा उदरके अन्य अन्य स्थानका टुबरकुलर नामक विषपिण्डिका-सञ्चय (Tubercular deposits in peritoneum, intestines etc.), अन्त्रावरोध (Obstruction of the bowels), स्त्रीके जरायुका प्रदाह (Metritis), अण्डाधारका जल-सञ्चय (Ovarian dropsy), वृक्ककी पीड़ा (Diseases of the kidneys) प्रभृति व्याधि उदर-रोगसे भिन्न नहीं।

आयुर्वेदके मतसे उदररोग आठ प्रकारका होता है—१ वातजनित, २ पित्तजनित, ३ कफजनित, ४ त्रिदोषजनित, ५ प्लीहोदर, ६ बद्धगुद, ७ आगन्तुक, और ८ दकोदर।

"पृथक् समस्तैरपि चेह दोषैः प्लीहोदरं बद्धगुदं तथैव।
आगन्तुकं सप्तममष्टमं तु दकोदरं चेति वदन्ति तानि॥" (सुश्रुत)

चरकमें लिखा है—अत्यन्त उष्ण, अत्यन्त लवण-मिश्रित, क्षार, दाहजनक, अम्ल एवं अत्यन्त रूक्ष द्रव्य खाने,—वमन विरेचनादिके संशोधन बाद अनियमित भोजन खाने,—रूक्ष, विरुद्ध तथा अविशुद्ध द्रव्य पेटमें पहुंचाने,—प्लीहा, अर्श, ग्रहणी प्रभृति व्याधिसे अतिमात्र कर्षित पड़ जाने,—वमनादि क्रियाके विभ्रममें आने,—किसी किसी पीड़ाका यथासमय प्रतीकार न लगाने,—रूक्षता, वेगरोध, स्रोत सकलको दोषजनक क्रिया छाने,—आमदोष, संक्षोभ लगाने,—अतिभोजन पचाने, अर्श, वायु और मलका रोध ऐंठाने, अन्त्रका स्फुटन एवं भेद पड़ जाने, दोषका अतिशय सञ्चय बढ़ जाने, पापकर्म उठाने और मन्दाग्निका दोष हो आनेसे उदर-रोग उपजता है। सुश्रुतमें भी संक्षेपसे ठीक ऐसे ही कारण कहे हैं—

"[illegible]
[illegible]
[illegible]"

जिसके अग्निका तेज अच्छा नहीं, उस व्यक्तिके कुत्सित या अतिभोजन खाने, किंवा सर्वदा खाने अथवा संशोधनादिको अधिक व्यवहारमें लानेसे दोषा-न्वित दोष बढ़ने और उससे गुल्म व्याधि-जैसे उदर रोग निकलते हैं। सामान्य लक्षण यह है—

"कुक्षेराध्मानमाटोपः शोथः पादकरस्य च।
मन्दोऽग्निः श्लक्ष्णगण्डत्वं कार्श्यं चोदरलक्षणम्॥" (चरक)

कुक्षिमें आध्मान या आटोप उठना, पाद और कर पर शोथ पड़ना, अग्निमान्द्य लगना, गण्डस्थल पड़ना और कृशता बढ़ना उदररोगका लक्षण है। शोथको सकल प्रकार उदररोगका सामान्य लक्षण मानने-पर पित्तोदर प्रभृतिके निदानमें विरोध पड़ता है।

उदररोग उपजनेसे पूर्व ये लक्षण झलकने लगते हैं—भली भांति क्षुधा न लगना, स्वादु, स्निग्ध एवं गुरु अन्न बड़ा विलम्ब करके अथवा कोई द्रव्य

खाने पर पेट गर्म पड़नेसे पचना, भुक्त द्रव्यका पचना न पचना रोगीको अच्छे प्रकार समझ न पड़ना, भोजनसे रुचि वा तृप्ति न मिलना, पाद कुछ कुछ फूल उठना, अल्प श्रमसे ही दुर्बलता रहना, शीघ्र शीघ्र श्वास प्रश्वास चलना, मल बंध जानेसे श्वास बढ़ना, उदावर्तजनित यन्त्रणा चढ़ना, वस्तिशूल तथा सन्धिके स्थानमें वेदना भरना, अल्प भोजनसे ही पेट उचकना और दुखना, पेटपर रेखा देख पड़ते भी फूलनेपर त्रिवली न बिगड़ना। (चरक)

सुश्रुतने भी प्रायः इसी प्रकार पूर्वरूप लिखा है—

"तत्पूर्वरूपं बलवर्णकाङ्क्षावलीविनाशो जठरे हि राजयः।
जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो बस्तौ रुजः पादगतस्य शोफः॥"

यह अनेक प्रकार पीड़ाका पूर्वरूप है। विशेषतः आलोपाथीमें जिसे डिसपेपसिया अर्थात् अग्निमान्द्य रोग कहते, उसीके इसमें लक्षण अधिक रहते हैं। चरक और सुश्रुतमें लिखा है—पैर पर अल्प शोथ आ जाता है। किन्तु वैसा होनेपर उक्त लक्षणको किसी व्याधिका पूर्वरूप मान नहीं सकते। कारण—यकृत्, वृक्कपिण्ड, हृत्क या अन्त्रावरक झिल्ली प्रभृति स्थानमें प्रथम कोई रोग कुछ कालतक सञ्चित रहता है। पीछे कदाचित् देहके स्थान विशेष वा सर्वाङ्गमें भले प्रकार रक्त चलफिर किंवा श्लैष्मिक झिल्ली तथा ग्रन्थि प्रभृतिसे निःसृत रस उपयुक्त भांति शुष्क पड़ अथवा स्वेद-मूत्र प्रयोजनानुरूप निकल न सकनेसे शरीर पर शोथ चढ़ता है।

ऊपर जो समस्त लक्षण लिखे, यकृत्की विशुष्कताका रोग कुछ काल तक रहनेपर हो जाते हैं।

चरकमें वातजनित उदररोगका लक्षण इस प्रकार लिखा है—कुक्षि, हस्त, पाद एवं अण्डकोषपर शोथ आता है। पेटमें सूचके चुभने-जैसी वेदना उठती है। कभी शरीर बढ़ और कभी घट जाता है। कुक्षि तथा पार्श्वमें शूल होता है। उदावर्त, अङ्गमर्द, पर्वभेद, शुष्ककास, कृशता, दौर्बल्य और अरुचिका वेग बढ़ता है। शरीरके अधोभागमें गुरुता रहती है। वायु तथा मलमूत्र बंध जाता है। नख, चक्षु, चर्म एवं मलमूत्र रूक्ष तथा पीतवर्णमिश्रित और रक्तवर्ण बन जाता है। पेटपर कृष्ण एवं रक्तवर्ण रेखा तथा शिरा देख पड़ती है। पेट पर आघात लगानेसे वायुपूर्ण मशकको तरह शब्द निकलता है। वायु ऊर्ध्व, अधः और पार्श्वदिक् वेदना बढ़ाते फिरता है।

माधवकरने भी कहा है—वातोदरमें हस्त, पाद, नाभि और कुक्षिपर शोथ आ जाता है। सुश्रुतमें वातोदरका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

"संरुक्ष पार्श्वोदरपृष्ठनाभीयंद्वर्धते कृष्णशिरावनद्धम्।
सशूलमानाहवदुग्रशब्दं वातोदरं तं पवनात्मकत्वम्॥"

इस जगहपर बड़ा गड़बड़ है। किसी पीड़ाके साथ उक्त लक्षणका सामञ्जस्य आ सकता है। नाभि और कुक्षिमें शोथ कहनेसे कभी नाभि तथा कुक्षिपर शोथका चढ़ना सम्भव नहीं। इससे पेटके भीतर अन्त्रावरकझिल्लीमें ही जलका सञ्चय प्रमाणित है। अन्त्रावरक झिल्लीमें जल भर जानेसे नाभि और कुक्षिपर पृथक् पृथक् शोथ नहीं चढ़ता। एक ही शोथ सकल स्थानमें पहुंच रहता है। केवल रोगीके भिन्न भिन्न प्रकार पार्श्व बदलने पर अपने ही गुरुत्वसे जल निम्न दिक् गिर पड़ता है। जल अधिक होनेसे समस्त उदर भर जाता है। फिर जल अल्प रहनेसे रोगीके उठकर खड़े होने पर नाभिकी निम्न दिक् ढलता है। रोगीके वाम पार्श्व लेटनेसे वाम कुक्षि, दक्षिण पार्श्व सोनेसे दक्षिण कुक्षि और दोनो हस्त तथा दोनों पादपर भर दे चतुष्पद जन्तुकी तरह खड़े होनेसे नाभिके मध्यस्थलमें जल लुढ़क आता है। फिर भूमिपर मस्तक टेक ऊर्ध्व दिक् पाद उठा देनेसे जल वक्षकी ओर सरकता है। इसीसे नाभि और कुक्षिपर पृथक् पृथक् शोथ चढ़ नहीं सकता।

दूसरी बात—यदि वातरोगसे भी पेटमें जल जमता, तो जलोदरसे उसका प्रभेद क्या पड़ता है। इस विषयकी मीमांसा मिलना कठिन है। कारण उक्त लक्षण जब सङ्कलित हुये, तब आयुर्वेदके आचार्य शोथको अन्यरूप पीड़ा समझते थे।

वातोदरका जो लक्षण लिखा, उससे विशेष किसी यान्त्रिक रोगका सामञ्जस्य लाना दुष्कर है। फिर भी उदर मध्यके कर्कटादि रोगपर कुछपार्वमें

शोथ, जलोदरी और उसके आध्मान हो सकता है। पाकस्थलीके विद्रधि रोगमें भी ऐसा लक्षण रहनेकी सम्भावना है। किन्तु इस रोगका प्रधान उपसर्ग वमन ही है।

किसी व्यक्तिको यकृत्‌की विशृङ्खलाका रोग लगा था। प्रथम अग्निमान्द्य हुआ, अपराह्णको अल्प-अल्प ज्वरका वेग बढ़ा, उसके बाद पादपर शोथ चढ़ा और सबसे पीछे उदर एवं हस्त फूला, तथा पेट जलसे भर गया। इसी अवस्थामें किसी प्रसिद्ध कविराजने उसे देख वातोदरका रोग बताया था। किन्तु रोगीके पेटसे अन्यून पन्द्रह सेर जल निकाला गया। किसी रोगीके प्लीहाकी पीड़ासे हस्त, पाद और मुख पर शोथ चढ़ा था। पीछे एक दिन वंशी बजाते बजाते उसके वायुशूल (Flatulent colic) होने लगा। किन्तु अनेक प्रवीणात्मा वैद्यने रोगको वातोदर ठहराया था। अतएव जो स्वदेशीय एवं विदेशीय उभय प्रकारकी चिकित्साके शास्त्रका अनुशीलन करते, ऐसे स्थलपर वे बड़े गड़बड़में पड़ते हैं।

पित्तोदरका लक्षण भी ठीक नहीं बैठता। चरकसंहितामें लिखा—पित्तोदर रोगमें रोगीको दाह, ज्वर, तृष्णा, मूर्च्छा, अतीसार और भ्रमका वेग बढ़ता है। मुखमें कटु आस्वाद आ जाता है। नख, चक्षु, मुख, त्वक् एवं मलमूत्रका वर्ण हरा और पीला देख पड़ता है। पेट पर नील, पीत, हरित एवं ताम्रवर्ण रेखा तथा शिरा झलकती है। फिर दाह एवं तापके प्रकारसे धूम निकलने पर पेट उष्ण रहता, घर्म तथा क्लेद छोड़ता, दबानेसे कोमल लगता और शीघ्र पकता है।

सुश्रुत नहीं कहता—पित्तोदरमें पेटका कौन स्थान पकता है। उसमें संक्षेपसे यह लक्षण मिलता—पित्तोदर होनेपर मुखशोष, तृष्णा, ज्वर एवं दाहका वेग बढ़ता है। शरीर पीत पड़ जाता है। समस्त शिरा, चक्षु, नख, मुख और मलमूत्रका वर्ण भी पीत ही रहता है। यह रोग अल्प अल्प बहुत दिनोंमें बढ़ता है।

"[illegible]।
[illegible]॥"

यकृत्‌की मन्थित पीड़ासे उदर एक प्रकारसे द्विप्रकार लक्षण झलक सकते हैं।

चरकमें श्लेष्मजनित उदररोगका यह लक्षण लिखा—रोगीको शरीर भारी मालूम पड़ता है। भोजनमें अरुचि रहती है। अपाक और अङ्गमर्द होता है। देहका अधिक ध्यान नहीं पड़ता। हस्त, पाद और मुख शूज जाता है। वमन करनेकी इच्छा बनी रहती है। सर्वदा निद्रालस्य, कास और श्वास चलता है। नख, चक्षु, मुख, मलमूत्र और त्वक्‌का वर्ण श्वेत पड़ जाता है। पेट पर शुक्लवर्ण रेखा और शिरा झलकती है। उदर गुरु, स्तिमित, स्थिर और कठिन हो जाता है।

सुश्रुतने भी कहा है—

"[illegible]।
[illegible]॥"

कफोदरमें पेट शीतल, शुक्लवर्ण शिरासे व्याप्त, चिक्कण और स्थिर हो जाता है। नख और मुख शुक्लवर्ण रहते हैं। पेट स्निग्ध और महाशोथयुक्त बनता है। देहमें अवसन्नता आ जाती है। यह उदररोग अनेक दिनोंमें बढ़ता है। किन्तु नाना प्रकारके मूत्ररोग और हृद्रोगमें भी इस लक्षण लग सकता है। त्रिदोष-जनित उदररोगमें वातोदर, पित्तोदर और कफोदर तीनों उदररोगका लक्षण रहता है।

प्लीहोदरके सम्बन्धमें कहा है—

"[illegible]।
[illegible]॥
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]।
[illegible]॥" (चरक)

भोजनके बाद अत्यादि अधिक चलने, यानपर जाने, यानपर शरीर अधिक हिलाने, अतिरिक्त स्त्रीसंसर्ग लगाने, क्षमतासे अधिक भार उठाने, अध्वपर अधिक श्रम पाने और वमन तथा व्याधि द्वारा शरीर अधिक क्षिप्तासे प्लीहाकी स्वस्थानच्युत होकर स्वस्थानको छोड़ बढ़ती किंवा रक्तादि द्वारा वह

जाने पर पेट गर्म पड़नेसे पचना, भुक्त द्रव्यका पचना न पचना रोगीको, अच्छे प्रकार समझ न पड़ना, भोजनसे रुचि वा तृप्ति न मिलना, पाद कुछ कुछ फूल उठना, अल्प श्रमसे ही दुर्बलता रहना, शीघ्र शीघ्र श्वास प्रश्वास चलना, मल बंध जानेसे श्वास बढ़ना, उदावर्तजनित यन्त्रणा चढ़ना, वस्तिमूल तथा सन्धिके स्थानमें वेदना भरना, अल्प भोजनसे ही पेट उचकना और दुखना, पेटपर रेखा देख पड़ते भी फूलनेपर त्रिवली न बिगड़ना। (चरक)

सुश्रुतने भी प्रायः इसी प्रकार पूर्वरूप लिखा है—

"तत्पूर्वरूपं बलवर्णकाङ्क्षावलीविनाशो जठरे हि राज्यः।
जीर्णापरिज्ञानविदाहवत्यो वस्तौ रुजः पादगतश्च शोफः॥"

यह अनेक प्रकार पीड़ाका पूर्वरूप है। विशेषतः आलोपाथीमें जिसे डिसपेपसिया अर्थात् अग्निमान्द्य रोग कहते, उसीके इसमें लक्षण अधिक रहते हैं। चरक और सुश्रुतमें लिखा है—पैर पर अल्प शोथ आ जाता है। किन्तु वैसा होनेपर उक्त लक्षणको किसी व्याधिका पूर्वरूप मान नहीं सकते। कारण—यकृत्, हृत्पिण्ड, वृक्क या अन्त्रावरक झिल्ली प्रभृति स्थानमें प्रथम कोई रोग कुछ कालतक सञ्चित रहता है। पीछे कदाचित् देहके स्थान विशेष वा सर्वाङ्गमें भले प्रकार रक्त चलफिर किंवा श्लैष्मिक झिल्ली तथा ग्रन्थि प्रभृतिसे निःसृत रस उपयुक्त भांति शुष्क पड़ अथवा स्वेद-मूत्र प्रयोजनानुरूप निकल न सकनेसे शरीर पर शोथ चढ़ता है।

ऊपर जो समस्त लक्षण लिखे, यकृत्की विशुष्कताका रोग कुछ काल तक रहनेपर हो जाते हैं।

चरकमें वातजनित उदररोगका लक्षण इस प्रकार लिखा है—कुक्षि, हस्त, पाद एवं अण्डकोषपर शोथ आता है। पेटमें सूचके चुभने-जैसी वेदना उठती है। कभी शरीर बढ़ और कभी घट जाता है। कुक्षि तथा पार्श्वमें शूल होता है। उदावर्त, अङ्गमर्द, पर्वभेद, शुष्ककास, कृशता, दौर्बल्य और अरुचिका वेग बढ़ता है। शरीरके अधोभागमें गुरुता रहती है। वायु तथा मलमूत्र बंध जाता है। नख, चक्षु, चर्म एवं मलमूत्र रूक्ष तथा पीतवर्णमिश्रित और रक्तवर्ण बन जाता है। पेटपर सूक्ष्म एवं रक्तवर्ण रेखा तथा सिरा देख पड़ती है। पेट पर आघात लगानेसे वायुपूर्ण मशककी तरह शब्द निकलता है। वायु ऊर्ध्व, अधः और पार्श्वदिक् वेदना बढ़ाते फिरता है।

माधवकरने भी कहा है—वातोदरमें हस्त, पाद, नाभि और कुक्षिपर शोथ आ जाता है। सुश्रुतमें वातोदरका लक्षण इस प्रकार लिखा है—

"संरुद्य पार्श्वोदरपृष्ठनाभीर्यद्वर्धते कृष्णसिरावनद्धम्।
सशूलमानाहवदुग्रशब्दं वातोदरं तं पवनात्मकत्वम्॥"

इस जगहपर बड़ा गड़बड़ है। किसी पीड़ाके साथ उक्त लक्षणका सामञ्जस्य आ सकता है। नाभि और कुक्षिमें शोथ कहनेसे कभी नाभि तथा कुक्षिपर शोथका चढ़ना सम्भव नहीं। इससे पेटके भीतर अन्त्रावरकझिल्लीमें ही जलका सञ्चय प्रमाणित है। अन्त्रावरक झिल्लीमें जल भर जानेसे नाभि और कुक्षिपर पृथक् पृथक् शोथ नहीं चढ़ता। एक ही शोथ सकल स्थानमें पहुंच रहता है। केवल रोगीके भिन्न भिन्न प्रकार पार्श्व बदलने पर अपने ही गुरुत्वसे जल निम्न दिक् गिर पड़ता है। जल अधिक होनेसे समस्त उदर भर जाता है। फिर जल अल्प रहनेसे रोगीके उठकर खड़े होने पर नाभिकी निम्न दिक् ढलता है। रोगीके वाम पार्श्व लेटनेसे वाम कुक्षि, दक्षिण पार्श्व सोनेसे दक्षिण कुक्षि और दोनो हस्त तथा दोनों पादपर भर दे चतुष्पद जन्तुकी तरह खड़े होनेसे नाभिके मध्यस्थलमें जल लुढ़क आता है। फिर भूमिपर मस्तक टेक ऊर्ध्व दिक् पाद उठा देनेसे जल वक्षकी ओर सरकता है। इसीसे नाभि और कुक्षिपर पृथक् पृथक् शोथ चढ़ नहीं सकता।

दूसरी बात—यदि वातरोगसे भी पेटमें जल जमता, तो उदकोदरसे उसका प्रभेद क्या पड़ता है। इस विषयकी मीमांसा मिलना कठिन है। कारण उक्त लक्षण जब सङ्कलित हुये, तब आयुर्वेदके आचार्य शोथको अन्यरूप पीड़ा समझते थे।

वातोदरका जो लक्षण लिखा, उससे विशेष किसी यान्त्रिक रोगका सामञ्जस्य लाना दुष्कर है। फिर भी उदर मध्यके कर्कटादि रोगपर कृष्णपार्श्वमें

शोथ, जलोदरी और उससे आधान हो सकता है। पाकस्थलीके विद्रधि रोगमें भी ऐसा लक्षण रहनेकी सम्भावना है। किन्तु इस रोगका प्रधान उपसर्ग वमन ही है।

किसी व्यक्तिको यकृत्की विशुष्कताका रोग लगा था। प्रथम अग्निमान्द्य हुआ, अपराह्नको अल्प-अल्प ज्वरका वेग बढ़ा, उसके बाद पादपर शोथ चढ़ा और सबसे पीछे वृषण एवं हस्त फूला, तथा पेट जलसे भर गया। इसी अवस्थामें किसी प्रसिद्ध कविराजने उसे देख वातोदरका रोग बताया था। किन्तु रोगीके पेटसे अन्यून पन्द्रह सेर जल निकाला गया। किसी रोगीके प्रस्रावकी पीड़ासे हस्त, पाद और मुख पर शोथ चढ़ा था। पीछे एक दिन वंशी बजाते बजाते उसके वायुशूल (Flatulent colic) होने लगा। किन्तु अनेक प्रथितनामा वैद्यने रोगको वातोदर ठहराया था। अतएव जो स्वदेशीय एवं विदेशीय उभय प्रकारकी चिकित्साके शास्त्रका अनुशीलन करते, ऐसे स्थलपर वे बड़े गड़बड़में पड़ते हैं।

पित्तोदरका लक्षण भी ठीक नहीं बैठता। चरकसंहितामें लिखा—पित्तोदर रोगमें रोगीको दाह, ज्वर, तृष्णा, मूर्छा, अतीसार और भ्रमका वेग देख पड़ता है। मुखमें कटु आस्वाद आ जाता है। नख, चक्षु, मुख, त्वक् एवं मलमूत्रका वर्ण हरा और पीला देख पड़ता है। पेट पर नील, पीत, हरित एवं ताम्रवर्ण रेखा तथा शिरा झलकती है। फिर दाह एवं तापके उद्गारसे धूम निकलने पर पेट उष्ण रहता, घर्म तथा क्लेद छोड़ता, दबानेसे कोमल लगता और शीघ्र पकता है।

सुश्रुत नहीं कहता—पित्तोदरमें पेटका कौन स्थान पकता है। उसमें संक्षेपसे यह लक्षण मिलता—पित्तोदर होनेपर मुखशोष, तृष्णा, ज्वर एवं दाहका वेग बढ़ता है। शरीर पीत पड़ जाता है। समस्त शिरा, चक्षु, नख, मुख और मलमूत्रका वर्ण भी पीत हो रहता है। यह रोग अल्प अल्प बहुत दिनोंमें बढ़ता है।

"मूर्च्छातृष्णाज्वरदाहयुक्तं शीघ्रं सिरा यत्र भवन्ति पीताः।
पीतादिविण्मूत्रनखाननस्य पित्तोदरं तच्च चिराभिवृद्धि॥"

यकृत्की सञ्चित पीड़ासे उदर पक जानेपर ये सकल लक्षण झलक सकते हैं।

चरकमें श्लेष्मजनित उदररोगका यह लक्षण लिखा—रोगीको शरीर भारी मालूम पड़ता है। भोजनसे अरुचि रहती है। अपाक और अङ्गमर्द होता है। देहका अधिक ध्यान नहीं पड़ता। हस्त, पाद और मुख सूज जाता है। वमन करनेकी इच्छा बनी रहती है। सर्वदा निद्रालस्य, कास और श्वास चलता है। नख, चक्षु, मुख, मलमूत्र और त्वक्का वर्ण श्वेत पड़ जाता है। पेट पर शुक्लवर्ण रेखा और शिरा झलकती है। उदर गुरु, स्तिमित, स्थिर और कठिन हो जाता है।

सुश्रुतने भी कहा है—

"अशीतलं शुक्लसिरावनद्धं गुर्वो स्थिरं शुक्लनखाननस्य।
स्निग्धं महच्चोन्नतं समन्तात् कफोदरं तच्च चिराभिवृद्धि॥"

कफोदरमें पेट शीतल, शुक्लवर्ण शिरासे व्याप्त, चिक्कण और स्थिर हो जाता है। नख और मुख शुक्ल वर्ण रहते हैं। पेट स्निग्ध और महाशोथयुक्त बनता है। देहमें अवसन्नता आ जाती है। यह उदररोग अनेक दिनोंमें बढ़ता है। किन्तु नाना प्रकारके मूत्ररोग और हृद्रोगमें भी उक्त लक्षण लग सकता है। त्रिदोष-जनित उदररोगमें वातोदर, पित्तोदर और कफोदर तीनो उदररोगका लक्षण रहता है।

प्लीहोदरके सम्बन्धमें कहा है—

"अतिसम्भाशितस्यैव चोभाद्यानवाहनाभिचेष्टितैः।
अतिव्यवायभाराध्ववमनव्याधिकर्शनैः॥
वामपार्श्वस्थितः प्लीहाच्युतिः स्थानात् प्रवर्धते।
शोणितं वा रसादिभ्यो विवृद्धं विवर्धयेत्।

इति तस्य प्लीहा कठिनोऽष्ठिलेवादौ वर्धमानः कच्छपसंस्थान उपलभ्यते। स चोपेक्षितः क्रमेण कुक्षिं जठरमग्न्यधिष्ठानञ्च परिक्षिपन् उदरमभिनिर्वर्तयति।" (चरक)

भोजनके बाद अङ्गादि अधिक चलाने, यानपर जाने, यानपर शरीर अधिक हिलाने, अतिरिक्त स्त्री संसर्ग लगाने, क्षमतासे अधिक भार उठाने, पथपर अधिक श्रम पाने और वमन तथा व्याधि द्वारा शरीर अधिक क्षिणानेसे पञ्जरकी वामपार्श्वस्थित प्लीहा स्वस्थानको छोड़ बढ़ती किंवा रसादि द्वारा रक्त

अतिशय उपजनेसे यही वर्धमान प्लीहा अधिक स्थूल पड़ती है। प्लीहोदरका लक्षण तथा प्लीहावर्धसे उठ सकनेवाली समस्त पीड़ाका विवरण प्लीहा और यकृत् उदरका लक्षण यकृत् शब्दमें देखो।

चरकमें बद्धोदरका लक्षण एवं निदान इसप्रकार लिखा है—खाद्य द्रव्यके साथ चत्तुका लोम पेटमें पहुंचने और उदावर्त, अर्श एवं अन्त्र सम्मूर्छन प्रभृति कोई रोग रहनेसे मलका द्वार रुक जाता है। फिर अपान वायु अपना पथ बन्द होनेपर बिगड़ कर धातु, अग्नि, मल, पित्त एवं वेगको रोक देता है। इसीसे बद्धोदर रोग होता है। इससे तृष्णा, दाह, ज्वर एवं मुख तथा तालुशोषका वेग बढ़ता और उरु अवसन्न पड़ता है। श्वास, कास, दौर्बल्य, अरुचि, अपाक, मलमूत्र बन्ध, आध्मान, वमि, कम्प, शिरःपीड़ा, हृदयवेदना, नाभिशूल और उदरवेदनाका आगमन लगता है। इस पीड़ामें उदर स्थिर रहता है। पेटपर रक्त एवं नील वर्ण रेखा तथा शिरा देख पड़ती हैं। किंवा रेखासमूह नाभि पर गोपुच्छ-जैसा आकार बना बढ़ा करता है। इसे बद्धोदर या बद्धगुदोदर कहते हैं।

डाक्टरोंके मतसे यह अन्त्रावरोधकी पीड़ा (obstruction of the bowels) है। पाकस्थली आदि स्थानोंमें कर्कटरोग, पुरातन रक्तामाशय प्रभृति अनेक कारणोंसे अन्त्रका पथ रुक सकता है।

अन्नादिके साथ कङ्कड़, तृण, काष्ठ, अस्थि, कण्टक प्रभृति खा लेनेसे हिचकी आने लगती है। फिर अति भोजन द्वारा ही अन्त्रमें छिद्र पड़ जाता है। उस समय अन्नव्यञ्जनादि भुक्त द्रव्य सकल छिद्रसे बाहर निकल मलद्वार और अन्त्रको पूर देता है। क्रमशः यही रस नाभिसे नीचे जम उदकोदर एवं वातादि जिस दोषका आधिक्य पाता, उसीका लक्षण सकल देखाता है। इस प्रकारके उदरशोथमें नील, पीत, पिच्छिल, दुर्गन्ध एवं अपक्व मल निकलता और हिक्का, श्वास, कास, तृष्णा, प्रमेह, अरुचि, अपरिपाक तथा दौर्बल्यादिका लक्षण झलकता है। (चरक) यही उदर-रोग डाक्टरोंके हिसाबसे (Perforation of the bowels and stomach) है।

अज्ञान शिशु अनेक प्रकार द्रव्य मुखमें डाल खा जाते हैं। पागल भी बाल, रस्सी और कङ्कड़ निगलते हैं। डाक्टर पोलकने एक उन्मत्त बालिकाकी बात लिखी है। उसका वयःक्रम १८ वत्सर रहा। उसके पेटपर आम-जैसा क्या न क्या उभर आया था। भोजनोपरान्त वमन करती थी। यही उसका उपसर्ग था। कुछ दिन बाद बालिका मर गयी। डाक्टरोंने पेट फाड़ कर देखा, कि पाकस्थलीका अधिकांश स्थान बाल और रस्सीके लच्छेसे भरा था। कितना ही पाकस्थलीके दक्षिण मुखमें फंसा, कुछ द्वादशाङ्गुल यन्त्रके मध्य धंसा और थोड़ा लच्छा शून्यान्त्रके ऊपर ठंसा था।

वर्फानिलने किसी अपस्मारके रोगिणीकी कथा कही है। २२ वत्सर वयःक्रमपर अन्त्रवेष्टझिल्लीके प्रदाहसे वह मर गयी। पाकस्थलीके स्वल्प चक्रांश (lesser curvature)में अठन्नी परिमित एक छेद हुआ था। छिद्रकी चारो दिक् क्षतवर्ण क्षत रहा। पाकस्थली चीरनेपर भीतरसे सात सेर आटा, सूत और नारियलका छिलका निकल पड़ा।

ईमानने लिखा है—एक शिशु मुख खोले सो रहा था। हठात् एक छुहिया दौड़कर उसके मुखमें घुस गयी। किन्तु परिशेषको पचते-पचते मलद्वारसे वह नीचे गिरी थी। उससे कोई उपसर्ग न उठा।

सोनि-ये-मोरेने एक स्त्रीका विवरण बतलाया है। वह ग्यारह कांटे और छोटे छोटे कांसेके टुकड़े निकल गयी थी। जान मार्शलने लिखा है—एक स्त्रीकी पाकस्थलीमें प्रायः पांच छटांक सूत रहा। एतद्भिन्न द्वादशाङ्गुल अन्त्रमें अनेक सूच भी मिले थे।

पोलक्हने किसी रोगीका हाल कहा है। उसके द्वादशाङ्गुल अन्त्रमें सम्मुख दिक् छिद्र पड़ा था। पाकस्थली एवं अन्त्रमें सवा सेर लोहा-लक्कड़ और कङ्कड़-पत्थर रहा।

इन सकल कारणोंके सिवा दूसरे भी अनेक कारणोंसे पाकस्थली और अन्त्रमें छिद्र पड़ सकता है। अपने अथवा यकृत् तथा प्लीहाके फोड़ेसे भी पाकस्थलीमें छिद्र हो जाता है। फिर कर्कट, पुरातन रक्तातिसार एवं अन्त्रज्वर प्रभृति रोगसे फोड़ा उभरता है।

यकृत्से बड़ी पथरी खिसक अन्त्रके किसी स्थानमें पड़ जानेसे भी क्षत और छिद्र हो सकता है।

अन्त्रमें छिद्र पड़ते समय हठात् रोगीकी अवस्था बदल जाती है। पेटमें दुःसह वेदना उठती है। किसीको अधिक और किसीको अल्प हिक्का आने लगती है। फिर किसी किसी रोगीको कुछ भी हिक्का नहीं आती। ज़ोर ज़ोरसे वमन होता है। कपालपर विन्दु विन्दु पसीना निकल आता और किसीका सर्वाङ्ग पसीनेसे भर जाता है। रोगी पैर समेट सुस्थिर भावमें पड़ा रहता, किन्तु हिलना डुलना या बात करना नहीं बनता। निश्वास छोड़नेमें भी कष्ट लगता है। नाड़ी चीण, चञ्चल और शब्दहीन हो जाती है। मुखकी श्री कुम्हलाती और जिह्वा सुखाती है। अतिशय तृष्णा लगती है। पेटको अल्प दबानेसे ही कष्ट मालूम पड़ता है। ऐसी अवस्थामें रोगी अवसन्न हो शीघ्र प्राण खो देता है। किसीकी अवस्था कुछ दिनको थोड़ी बहुत सुधर जाती परन्तु परिशेषमें उसे मृत्यु धर दबाती है। अन्त्रमें छिद्र पड़नेसे किसी किसी रोगीको अन्त्रवेष्ट झिल्लीपर प्रदाह उठता है।

उदकोदर, दकोदर वा जलोदरका लक्षण चरकमें इस प्रकार बतलाया है—जो व्यक्ति अधिक खाता किंवा अग्निका तेजः गंवाता तथा अपनेको चीण एवं कृश बनाता, वह अधिक परिमाणमें जल पीनेसे क्षुधामान्द्य रोग बढ़ाता है। उस समय वायु क्लोम स्थानमें ठहर जाता है। क्रमशः सकल स्रोतका पथ रुकता और पीत जलसे कफ बढ़ता है। परिशेषमें उभय स्वस्थानसे पीत जल बढ़ा उदर रोग उत्पन्न करते हैं। इस उदररोगमें भोजनकी इच्छा नहीं रहती। तृष्णा बहुत लगती है। गुदस्राव, शूल, श्वास, काश और दौर्बल्य हुआ करता है। पेटपर नाना वर्णकी रेखा तथा शिरा देख पड़ती और आघात लगानेसे जलपूर्ण मशककी तरह कंपकंपी उठती है।

किन्तु डाक्टरीके हिसाबसे यह आसाइटिस (Ascites) रोग है। दकोदर स्वयं कोई विशेष व्याधि नहीं—अन्य अन्य रोगकी शेष अवस्थाका एक लक्षण-मात्र है। यकृत्की विशुष्कता, पुरातन प्लीहा, पुरातन अन्त्रवेष्टप्रदाह, पुरातन रक्तातिसार प्रभृति नाना प्रकार रोगकी शेष दशामें दकोदर हो सकता है। फिर किसी व्यक्तिको शैत्य देकर भी यह रोग पकड़ लेता, परन्तु ऐसा दकोदर सुसाध्य है।

किसी सञ्चित पीड़ापर शिरासमूहमें रक्त न पहुंचने किंवा आण्डलालिक पदार्थ स्वल्प पड़नेसे प्रथम उदरमें नहीं—अन्त्रवेष्ट झिल्लीमें जल जमता है। पूर्व हस्तपाद पर शोथ चढ़ आता, पश्चात् उदरमें जल भर जाता है। किन्तु यकृत्की पीड़ामें हस्तपादपर शोथ न चढ़ते भी दकोदर हो सकता है।

किसी किसी रोगीके पेटमें अल्प परिमित जल रहता और दूसरोंके उदरमें आधे मनसे भी ज्यादा जल मिलता है। एक दकोदरवाले रोगीके पेटमें जलके साथ छः बड़े बड़े कीड़े भी थे। पुरातन सड़ेगले सर्वांजनके पेडमें ईषत् हरिद्रावर्ण बड़े मोटे मोटे कीड़ों-जैसे वे रहे। मस्तक, मुख तथा मलद्वार कृष्णवर्ण और पृष्ठ ग्रन्थियुक्त था। लम्बाई तीन और चौड़ाई डेढ़ अङ्गुल बैठी, मुखमें कतरनी-जैसी तीक्ष्ण दंष्ट्रा थी। सकल ही कीट जीवित थे। जल और खाद्य द्रव्यके साथ अनेक कीट उदरमें पहुंचते हैं। पेटमें उनके न मर मिटनेसे नानाप्रकार पीड़ा उठती है। फिर क्षुद्रावस्था पर अन्त्रको काट वह अन्त्रवेष्ट झिल्लीमें घुसते हैं। परिणामको उन्हींकी उग्रतासे दकोदर रोग लग जाता है। इस रोगमें रोगी प्रायः दश वत्सर जीता है।

दकोदरका जल अनेक स्थानोंपर अधिक परिष्कृत रहता और किसीके मैला और किसीके पेटमें पीला भी पड़ता है। इस जलका सन्ताप गात्रके सन्तापसे मिलता है। हां, इसमें लवणका अंश, आण्डलालिक पदार्थ और फेब्रिन होता है। पेटमें अधिक जल सञ्चित होनेसे यकृत्, प्लीहा और वृक्क तीनो छोटे पड़ जाते हैं। हृदय और उदरमध्यवेष्ट (Diaphragm) ऊपरको चढ़ने लगता है।

दकोदर होनेसे प्रथम पेटमें भार मालूम पड़ता है। क्षुधा कम लगती है। कोष्ठकी शुद्धि नहीं

होती। प्रस्राव भली भांति परिष्कृत नहीं पड़ता। क्रममें जलका परिमाण बढ़नेसे श्वासकृच्छ्र हो जाता है। फिर अधिक फूलनेसे उदर, अण्डकोष एवं पुरुषाङ्ग पर सूजन आ जाती एवं उदर पर शिरा देखाती है। आघात लगानेसे पेट ढलका करता है।

उदररोगकी चिकित्साका एक सामान्य विधि होता है। इसमें विशेष कुछ करने धरनेकी बात नहीं। कारण पहले ही कह चुके हैं,—उदररोग स्वयं कोई स्वतन्त्र पीड़ा नहीं। अतएव मूल पीड़ाकी ही निश्चित रूपसे चिकित्सा होना चाहिये।

चरकमें असाध्य उदररोगके लक्षण बहुत अच्छी तरह लिखे हैं। यथा—"तदातुरमुपद्रवाः स्पृशन्ति छर्द्यतीसारतमकः तृष्णा-श्वास-कास-हिक्कादौर्बल्यपार्श्वशूलारुचिस्वरभेदमूत्रसङ्गादयस्तथाविधमचिकित्स्यं विद्यादिति।"

वमन, अतिसार, तमक, पिपासा, श्वास, कास, हिक्का, दौर्बल्य, पार्श्वशूल, अरुचि, स्वरभेद, मूत्ररोध प्रभृति-जैसे उपसर्ग उठनेसे रोगीको अचिकित्स्य समझते हैं।

"पक्षाद्बद्धगुदं तूर्ध्वं सर्वं जातोदकं यथा।
प्रायो भवत्यभावाय छिद्रान्त्रं चोदरं नृणाम्॥"

बद्ध गुदोदर, सकल प्रकार जलोदर और छिद्रान्त्रोदर राग होनेसे प्रायः एक पक्षके बाद मनुष्य मर जाता है।

"शूनाक्षं कुटिलोपस्थमुपक्लिन्नतनुत्वचम्।
बलशोणितमांसाग्निपरिक्षीणञ्च सन्त्यजेत्॥
श्वयथुः सर्वमर्मोत्थः श्वासो हिक्कारुचिः सतृट्।
मूर्च्छाछर्द्यतिसारश्च निहन्त्युदरिणं नरम्॥"

चक्षु पर सूज न चढ़ने, पुरुषाङ्ग झुकने, चर्म क्लेदयुक्त तथा पतला पड़ने और बल, रक्त, मांस एवं क्षुधा घटनेसे उदररोगीको छोड़ देना चाहिये।

सकल मर्मस्थानपर शोथ बढ़ने और श्वास, हिक्का, अरुचि, तृष्णा, मूर्च्छा, वमन, अतिसार प्रभृति उपसर्ग उठनेसे दकोदरका रोगी मरता है।

उदररोगमें विरेचक औषध खिलाना, पिचकारी लगाना और स्वेद कराना ही वैद्यशास्त्रकी प्रधान चिकित्सा है। तद्भिन्न अन्य अन्य प्रकार भी औषधकी व्यवस्था बंध सकती है।

इस रोगपर जलोदरादिरस देनेका विधान है—

"पिप्पली मरिचं ताम्रं रजनीचूर्णसंयुतम्।
स्नुहीक्षीरैर्दिनं मर्द्यं तुल्यं जैपालबीजकम्॥
निष्कं खादेद्विरेकः स्यात् सद्योहन्ति जलोदरम्।
रेचनानाञ्च सर्वेषां दध्यन्नं स्तम्भने हितम्॥
दिनान्ते च प्रदातव्यमन्नं वा मुद्गयूषकम्।" (रसेन्द्रसारसंग्रह)

पिप्पली, मरिच, (मारित) ताम्र, धनिया और हरिद्रा सकल द्रव्यका एक-एक भाग रख एक दिवस सहींजनके दुग्धमें घोंटे, फिर जयपालबीजका चूर्ण एक भाग मिला दो रत्ती प्रमाण वटिका बांध डाले। इस औषधको खानेसे जलोदर रोग सद्य ही मिट जाता है। सकल प्रकार विरेचनको दधियुक्त अन्न ही रोकता है। अतएव इस औषधके सेवनपर दिनान्तको दधि अथवा मुद्गयूषयुक्त अन्नका पथ्य देना चाहिये। उदररोगके अधिकारका इच्छाभेदीरस यह है—

"शुण्ठी मरिचसंयुक्तं रसगन्धकटङ्कणम्।
जैपाली द्विगुणः प्रोक्तः सर्वमेकत्र चूर्णयेत्॥
इच्छाभेदी द्विगुञ्जः स्यात् सितया सह दापयेत्।
पिबेत् चुलुकान् यावत् तावद्वारान् विरेचयेत्॥"

शुण्ठी, मरिच, (शोधित) पारद, गन्धक और सोहागा समुदाय द्रव्य एक एक भाग और जयपालका बीज दो भाग ले पीस डाले। इस औषधको दो रत्ती प्रमाण चीनीके साथ खाना चाहिये। इसे इच्छाभेदी रस कहते हैं। यह औषध खाकर जितने गण्डूष जल पीते, उतने ही बार वमन करते हैं।

वर्तमान डाक्टरोंकी तरह पेटमें जल जमनेसे प्राचीन आयुर्वेदाचार्य भी उसे निकाल डालते थे। उन्होंने लिखा है—

"तथास्नाभिर्वामतोभागे वर्जयित्वाङ्गुलद्वयम्।
जलनाडीसंशुमन्य कुशपत्रेण वेष्टयेत्॥
एरण्डनलनालश्च तत्र सञ्चारयेद्बुधः।
अन्तर्गतजलं स्राव्यं ततः सन्धारयेद्द्रुतम्॥
यदा न स्रवते तच्च तदा दाहः प्रशस्यते।
कषायकल्कं परिस्राव्य घृतं देयं चतुर्गुणम्॥
शुद्धिविशा सर्वं पाच्यं पानमाचिपनं हितम्।
शस्त्रकर्म भिषक्कुर्वी द्वौ विस्रातिमेव कारयेत्॥
दुष्करं शस्त्रकर्मैव न कुर्यादयस तत्र तु।
॥

"अक्रियायां ध्रुवो मृत्युः क्रियायां संशयो भवेत्।
तस्मादवश्यकर्त्तव्यमीश्वरः साक्षिकारिणा॥"

इसी हेतु नाभिके वलिकी दिक् दो अङ्गुलि छोड़ जल नाड़ीको सुधार कुशपत्रसे लपेट दे और एरण्डके पत्रका नल उसमें चला अन्तर्गत जल निकाल ले। तदनन्तर मलर उसे बन्द करना चाहिये। यदि जलका निर्गम न हो सके,तो दाह लगानेको ही प्रशस्त समझे। जलको निकाल जीरकका कल्क चतुर्गुण घीमें मिला समभाग शुण्ठी एवं पियाके साथ पका पीने और सुघड़नेसे उपकार पहुंचता है। दूसरी बात यह है, कि अतिशय निपुण और अभिज्ञ व्यक्तिसे अस्त्रका कार्य ले। अस्त्रकर्म अत्यन्त दुष्कर है। यत्र तत्र उसे न करे। इस रोगमें अस्त्र न लगानेसे निश्चय मृत्यु आती है। किन्तु अस्त्रकर्म कर देनेसे उसमें संशय पड़ जाता है। अतएव ईश्वरको साक्षी ठहरा अवश्य जलोदरमें अस्त्रकर्म करना चाहिये। जल निकाल डालनेसे अनेक स्थलोंमें रोगी आरोग्य नहीं पाता, केवल यन्त्रणाका वेग घट जाता है। क्योंकि निकाल डालने भी अल्प दिन बाद पुनर्वार जल पेटमें भरता और शीघ्र रोगी मरता है। किन्तु भीतर कोई विशेष यान्त्रिक पीड़ा न रहने पर इस प्रक्रियासे आरोग्य लाभ होता है।

यह शब्दमें उदरसंस्थानका चित्र देखो।

उदरक (सं० त्रि०) उदरसम्बन्धीय, पेटके मुताल्लिक।

उदरग्रन्थि (सं० पु०) उदरस्य ग्रन्थिरिव। १ अश्मरीरोग, हबस्-उल्-बौल, चिनङ्ग। २ गुल्मरोग, तिल्ली, पिलही।

उदरज्वाला (सं० स्त्री०) १ जठराग्नि, खाना हज़म करनेवाली हरारत। २ बुभुक्षा, भूंक।

उदरत्राण (सं० क्ली०) उदरस्य त्राणो यस्मात्। १ कवच, बख्तर। २ वरवा, कमरबन्द।

उदरथि (सं० पु०) उत्-ऋट-अथिन्-चित्। उदर्थित्। उण् ४।८८। १ समुद्र। २ सूर्य।

उदरना (हिं० क्रि०) खण्ड खण्ड होना, टुकड़े उड़ना।

उदरनाड़ी (सं० स्त्री०) अन्त्रनाड़ी, आंत।

उदरपरता (सं० स्त्री०) रोगविशेष, एक बीमारी। इसमें बहुत खानेको मन चला करता है।

उदरपरायण (सं० त्रि०) उदरं उदरपूरणमेव परं अयनं प्रधानाश्रयो यस्य, यद्वा उदरे विषये परायण आसक्तः। पेटुक, पेटू, सिर्फ़ पेट भरनेकी फ़िक्र रखनेवाला।

उदरपरीक्षा (सं० स्त्री०) जठर-परीक्षा, मेदेकी जांच।

उदरपिशाच (सं० त्रि०) उदराय तत्पूरणाय पिशाच इव। १ यथेच्छाहारी, मनमानी चीज़ खानेवाला। (पु०) २ सर्वान्नभक्षक, बड़पेटा।

उदरपीड़ा (सं० स्त्री०) उदरामय, पेटका दर्द।

उदरपुर (सं० अव्य०) उदरपूर्तिपर्यन्त, पेट भर जाने तलक।

उदरपोषण (सं० क्ली०) कुक्षिपालन, पेटका भराव।

उदरभङ्ग (सं० पु०) उदरस्य भङ्गः। अतीसाररोग, दस्तकी बीमारी।

उदरभरणमात्रकेवलेच्छु (सं० त्रि०) केवल उदर पोषणका अभिलाषी, जो सिर्फ़ पेट भरनेकी ख़ाहिश रखता हो।

उदरम्भरि (सं० त्रि०) उदरं बिभर्ति, उदर-इन्-मुम् च। "आत्मनोदुमाच्च इत्यत्राच्च। भृञ्जेत्यादुमुदयार्थकार।" (सिद्धान्तकौमुदी) आत्मम्भरि, पेटू, बड़ा खानेवाला।

उदररस (सं० पु०) उदरका पाचक रस, जो अर्क़ पेटका खाना हज़म करता हो।

उदररेखा (सं० स्त्री०) उदरकी रेखा, पेटका बल।

उदररोग (सं० पु०) कुक्षिकी पीड़ा, पेटकी बीमारी। उदर देखो।

उदरवत् (सं० त्रि०) दीर्घ उदरयुक्त, बड़े पेटवाला।

उदरवृद्धि (सं० स्त्री०) उदरस्फीति; पेटकी बढ़ाई।

उदरव्याधि (सं० पु०) उदरामय, पेटकी एक बीमारी।

उदरशय (सं० त्रि०) उदरको भूमिसे लगा शयन करनेवाला, जो पेटके बल लेटता हो।

उदरशाण्डिल्य (सं० पु०) ऋषिविशेष। (भारत, सभा ४थ०)

उदरसर्वस्व (सं० पु०) भोजनपटु, शिकमपरस्त, पटोरा।

उदरस्फुटा (सं॰ स्त्री॰) नागवल्ली, पान।

उदराग्नि (सं॰ पु॰) जठराग्नि, सफरा, पेटमें खाना हजम करनेवाली हरारत।

उदराध्मान (सं॰ क्ली॰) उदरस्य आध्मानम्। उदरकी वायुफुल्लता, पेटका फूलना।

उदरानलपत्रक (सं॰ पु॰) लघुतालीशपत्र।

उदरामय (सं॰ पु॰) उदरस्य आमयः। अतीसार रोग, आंवके दस्त लगनेकी बीमारी। अतिसार देखो।

उदरामयकुम्भकेशरी (सं॰ पु॰) प्लीहाधिकारका एक रस, तिल्लीकी एक दवा। पारा, गन्धक, ताम्र, त्रिकटु, यवक्षार, टङ्कण, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, पञ्चलवण, यमानी एवं हिङ्गु प्रत्येक समभाग ले नीबूके रसमें घोटे। एक माषा परिमित वटिका खिलानेसे उदरामय रोग अच्छा हो जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदरामयिन् (सं॰ त्रि॰) उदरामययुक्त, जिसके आंवकी बीमारी रहे।

उदरारिरस (सं॰ पु॰) उदराधिकारका रस, पेटकी एक दवा। पारद, शुक्तितुल्य, जैपाल और पिप्पली बराबर बराबर डाल वज्रीक्षीरमें घोंटे। माषामात्र वटी खानेसे स्त्रीका जलोदर आरोग्य होता है। दधि और ओदनका पथ्य देना योग्य है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उदरावर्त (सं॰ पु॰) उदरस्य आवर्त इव। नाभि, नाफ़, सूंड़ी।

उदरावेष्ट (सं॰ पु॰) शारीर कृमिभेद, पेटका केंचुआ।

उदरिक, उदरिन् देखो।

उदरिणी (सं॰ स्त्री॰) उदर-इनि-ङीप्। गर्भवती, हामिला, जिसके पेटमें लड़का रहे।

उदरिन् (सं॰ त्रि॰) १ उदरिक, बड़े पेटवाला। २ कुक्षिसम्बन्धीय, शिकमी, जो पेटसे सरोकार रखता हो। ३ उदरसर्वस्व।

उदरिल (सं॰ त्रि॰) उदर-इलच्। तुन्दादिभ्य इलच्। पा ५।२।११७। उदरी, तोंदल, सुरसुरोंका थैला।

उदर्क (सं॰ पु॰) उत्-ऋच-घञ्। १ उत्तरकाल, आयिन्दा ज़माना। २ भाविफल, कामका आगे आनेवाला नतीजा। ३ मदनकण्टक, मैनफल। ४ धुस्तूर वृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ उत्कर्ष, सबक़त, आगे निकल जानेका काम। ६ अन्त, सिरा। ७ भवनकी उच्चता, इमारतकी बुलन्दी। ८ उपहार, इनाम।

उदर्चिस् (सं॰ पु॰) उद्गतमर्चिः शिखा यस्य। १ अग्नि, आग। २ शिव। ३ कामदेव। (त्रि॰) उद्गतं प्रभा यस्मात्। ४ प्रज्वलित, भभकता हुआ।

उदर्द (सं॰ पु॰) उत्-अर्द-अच्। दद्रु, हुमरा, ददोरा। वरटीके दष्टसंस्थान पर शोथ चढ़ने, कण्डू उठने, व्यथा बढ़ने, सड़न पड़ने और छर्दि, ज्वर एवं विदाह लगनेसे यह रोग उपजता है। (माधवनिदान)

उदर्दप्रशमनवर्ग (सं॰ पु॰) उदर्दके शमनका एक योग, ददोरा मिटानेवाली चीजोंका जखीरा। तिन्दुक, पियाल, बदर, खदिर, कदर, सप्तपर्ण, अश्वकर्ण, अर्जुन, पीतशाल और विट्खदिर मिलनेसे यह वर्ग बनता है। (चरक)

उदर्ध (सं॰ पु॰) शोथज्वर, सुर्ख बुखार।

उदर्य (सं॰ त्रि॰) १ उदरी, पेटवाला। (वै॰ क्ली॰) २ उदरपूरक, पेटका माद्दा।

उदलगुरी—आसाम प्रान्तके दरङ्ग जिलेका एक ग्राम। यह भूटानकी सीमाके समीप है। निकटवर्ती पहाड़ी लोगोंके साथ व्यापार करनेको प्रति वर्ष यहां मेला लगता, जो प्रायः एक मास चलता है। भूटानके राजा भेंटकी चीजें खरीदने आया करते हैं। भूटिये हजारों रुपये का टट्टू, कम्बल, नमक तथा मोम बेचते और चावल, रुई, कपड़ा एवं पीतलका बरतन खरीदते हैं।

उदलावणिक (सं॰ त्रि॰) उदलवण-ठक्। लवणोदकसिद्ध, नमक और पानीसे पकाया हुआ।

उदवग्रह (सं॰ पु॰) स्वरित आघात विशेष। यह उदात्तपर निर्भर रहता, जो अवग्रहमें उठता है।

उदवना (हिं॰ क्रि॰) उदय होना, निकलना, देख पड़ना।

उदवसानीय (वै॰ त्रि॰) अन्तिम, अखीर।

उदवसित (सं॰ क्ली॰) उदूर्ध्वमवसीयते स्म, उद-अव-षिञ् बहुवचने वा क्त। भवन, मकान, रहनेकी जगह।

उदवास (सं॰ पु॰) उदके प्रतार्थवासः, उदादेशः।

मेधं वाहवाहनयिनु ष। पा ६।३।५८। मृतके पालनार्थ जलमें वास।

उदवाह (वै० पु०) जलवाहक, पानी ढोनेवाला। (ऋक् ४।४८।२) (हिं०) उद्वाह देखो।

उदवेग (हिं०) उद्वेग देखो।

उदशराव (वै० पु०) जलपूर्ण शराव, पानीसे भरा प्याला। (छान्दोग्य उपनिषत् ५।८।१)

उदश्रु (सं० त्रि०) उद्गतमश्रु यस्य, प्रादि० बहुव्री०। निर्गताश्रु, आंसू बहानेवाला।

उदश्वित् (सं० क्ली०) उदके नाशयति श्वयते, उद-श्वि-क्विप्-तुक्। अर्धजल तक्र, आधा पानी और आधा मठा। यह लध्वा, दाह तथा सुखके शोष और श्रुपड़नेसे क्रुद्धको दूर करता है। (राजवल्लभ)

उदसन (सं० क्ली०) उत्क्षेपण, फेंक फांक, उठाव।

उदसना (हिं० क्रि०) उठ जाना, उखड़ना, बरबाद होना।

उदस्त (सं० त्रि०) उत्-अस-क्त। १ उत्क्षिप्त, फेंका हुआ। २ वहिष्कृत, निकाला हुआ।

उदस्य (सं० अव्य०) १ उदसन करके, फेंक कर। २ वहिष्कार करके, निकालेकर। ३ चेष्टा करके, कोशिश लगाकर।

उदहरण (सं० पु०) उदकं ह्रियते अनेन, उत्-हृ करणे ल्युट्। कुम्भ, घड़ा।

उदहार (सं० त्रि०) उदकं हरति, हृ-अण् उदादेशः। १ जलहारक, पानी लानेवाला। (पु०) भावे घञ्। २ जलहरण, पानी लानेका काम।

उदाज (सं० पु०) उद-अज-घञ्, कवर्गादेशो न स्यात्। अजिव्रज्योश्च। पा ७।३।६०। "उदाजः क्षत्रियाणाम् (प्रेरणम्)।" (सिद्धान्तकौमुदी) प्रेरण, पशु चाने या भेजनेका काम।

उदाजी चौहान—दाक्षिणात्यवासी रामचन्द्रपन्तके एक सैनिक। इन्होंने शाहुराजके समय पूनाकी वारना उपत्यकामें बत्तीस शिरालका किला जीत लिया था। किन्तु शाहुने इन्हें शिराल और कराड़का चौथ दे अपना मित्र बनाया था।

उदाजी पवार—दाक्षिणात्यवासी शाहु नृपतिके एक अश्वारोही सेनापति। पहले इनके पिताको रामचन्द्रपन्त अमात्यने गिञ्जीके घेरे जानेपर शासक बनाया था। ये शाहुके सैन्यमें भरती हो कितनेही अश्वारोहियोंके अधिनायक रहे। इन्होंने गुजरात और मालवेपर आक्रमण मारा था। लूनावाड़ तक गुजरात लूटा गया, किन्तु गिरधर बहादुर मालवेके रक्षक बनने पर इन्हें धारका किला छोड़ पीछे हटना पड़ा। १६९८ ई० को उदाजी पंवारने मांडूका किला छीना था। १७२१ ई० की १ ली अपरेलको बड़ोदेके निकट भीलापुरमें जो युद्ध हुआ, उसमें इन्होंने निज़ाम् उल्-मुल्कको फौजके साथ आत्मसमर्पण किया।

उदात्त (सं० पु०) उत्-आ-दा-क्त। उच्चैरुदात्तः। पा १।२।२९। "तालादिषु सभागेषु स्थानेषूर्ध्वभागे निष्पन्नोऽजुदात्तः।" (सिद्धांतकौमुदी) १ मुखमें तालु प्रभृति ऊर्ध्व भागसे उच्चारित होनेवाली स्वर, तेज़ लहज, तीखा सुर। अनुदात्त देखो। २ वाद्य विशेष, एक बाजा। ३ दान, बख्शिश। ४ काव्यालङ्कार विशेष। ५ सुदीर्घ भेरी, बड़ा ढोल। ६ कार्य, काम। (क्ली०) ७ आभूषणविशेष, एक गहना। (त्रि०) कर्तरि क्त। ८ महत्, बड़ा। ९ समर्थ, क़ाबिल। १० दाता, देनेवाला। ११ उच्च, ऊंचा। १२ उच्च स्वरयुक्त, तीखे स्वरवाला। १३ सुन्दर, खूबसूरत। १४ प्रिय, प्यारा।

उदात्तमय (सं० त्रि०) उदात्तसदृश, तीखे स्वरसे मिलता-जुलता।

उदात्तवत् (सं० त्रि०) उदात्तस्वरसे उच्चारण किया जानेवाला, जो तीखी आवाज़से बोला जाता हो।

उदात्तश्रुति, उदात्तवत् देखो।

उदात्तश्रुतिता (सं० स्त्री०) उदात्त स्वरसे उच्चारण करनेका भाव, जिस हालतमें तीखी आवाज़से बोलें।

उदातूह (सं० पु०) जलकाक, पानीकी एक चिड़िया।

उदाद्यन्त (सं० त्रि०) अन्तमें उदात्त स्वर रखनेवाला, जिसके पीछे तीखी आवाज़ लगे।

उदान (सं० पु०) उदूर्ध्वं आनिति अनेन, उत्-आ-अन्-घञ्। कण्ठवायुविशेष, गलेसे निकलने और सरमें चढ़नेवाली हवा। "उदानः ? कण्ठस्थानीयः ऊर्ध्वगमनवानुत्क्रमणवायुः।" (वेदान्तसार) वेदान्तके मतसे यह ऊर्ध्वगमनशील कण्ठस्थायी उत्क्रमण वायु है।

"उदानो नाम यस्तूर्ध्वमुपैति पवनोत्तमः।
ऊर्ध्वजत्रुगतान् रोगान् करोति च विशेषतः।" (सुश्रुत)

महर्षि सुश्रुतके कथनानुसार ऊर्ध्व दिक् सञ्चरण करनेवाले वायुका नाम उदान है। इसके कुपित होनेसे स्कन्धसन्धिसे उपरिस्थित सकल रोग उपजते हैं।

योगार्णवमें इसका क्रियास्थान आदि इसप्रकार निरूपित है—

"स्पन्दयत्यधरं वक्त्रं गात्रनेत्रप्रकोपनः।
उद्वेजयति मर्माणि उदानो नाम मारुतः॥
विद्युत्पावकवर्णः स्यादुत्थानासनकारकः।
पादयोर्हस्तयोश्चापि सर्वसन्धिषु वर्तते॥"

उदानवायु अधर और मुखको फड़काता है। यह चक्षु एवं शरीरको प्रकोपकारी और मर्मको उत्तेजक है। वर्ण विद्युत् एवं पावक जैसा होता है। इसीके सहारे लोग उठते बैठते हैं। हस्त एवं पाद सकल सन्धिमें यह विद्यमान है।

वैद्यकके मतानुसार उदानवायु ऊपरको चढ़ता है। इसीके सहारे गाना और बात करना होता है। विशेषतः यह ऊर्ध्व-जत्रु-गत रोग बढ़ाता है। (सुश्रुत)

२ उदरावर्त, ढोंढी। ३ सर्प, सांप। ४ पक्ष्म, पलक। ५ बौद्ध शास्त्रभेद। इस शास्त्रमें बुद्धदेवका चरित्र लिखा है।

उदापि (सं० पु०) सहदेवके पुत्र और मगधराज जरासन्धके पौत्र। (हरिवंश)

उदापेक्षी (सं० पु०) विश्वामित्रके एक पुत्र। (भारत)

उदाप्य (वै० अव्य०) धाराके ऊपर, दरयाके सामने।

उदाम (हिं०) उद्दाम देखो।

उदायन (हिं०) उद्यान देखो।

उदायुध (सं० त्रि०) उदूर्ध्वं आयुधो यस्य। उद्धृतास्त्र, हथियार उठाये हुआ। (रघु १२।४४)

उदार (सं० त्रि०) उत् उत्कृष्टं आ समन्तात् राति ददाति, उत्-आ-रा-आतश्चेति क। १ दाता, देनेवाला। २ महात्मा, साधु। (गीता ७।१८) ३ सरल, सीधा। ४ उत्कृष्ट, बढ़िया। ५ गभीर, गहरा। ६ महोच्च, बहुत ऊंचा। ७ वैदान्य, रहीम। ८ सारवान्, असली। ९ रम्य, उमदा। १० न्याय्य, वाजिब। ११ मिष्ट, मशीफ। १२ असाधारण, अनोखा। (पु०) १३ दीर्घशालि, लम्बा चावल। (अव्य०) १४ ऊंचे स्वरसे, बुलन्द आवाज़में। (वै० त्रि०) १५ उत्तेजक, उठाने या भड़कानेवाला। (पु०) १६ उत्थानशील बाष्प, उठनेवाली भाप। १७ काव्यालङ्कार विशेष। इससे निर्दोष पदार्थमें शिष्टता प्रदर्शित करते हैं।

उदारा—सङ्गीतशास्त्रका सप्तक विशेष। सा ऋ ग म प ध और नि सात स्वरको एकत्र करनेसे सप्तक संज्ञा होती है। मनुष्यके देहमें स्वाभाविक तीन सप्तकसे अधिक नहीं निकलते। इसीसे भारतीय सङ्गीतशास्त्रमें उदारा, मुदारा और तारा तीन सप्तकका उल्लेख है। नाभिसे जो सप्तक उठता, उसे सङ्गीतज्ञ उदारा कहता है। वेदान्तके मतसे यह अनुदात्त है।

उदाराशय (सं० त्रि०) उत्कृष्ट आशयविशिष्ट, ऊंचा मतलब रखनेवाला, बड़ा।

उदावत्सर (सं० पु०) वर्ष विशेष। इस वर्ष दौप्य देनेसे महाफल मिलता है। इदावत्सर देखो।

उदावर्त (सं० पु०) उत्-आ-वृत्-घञ्। रोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसके होनेसे न तो मल गिरता, न मूत्र उतरता और न वायु ही चलता है।

"वातविण्मूत्रजृम्भाश्रुक्षवोद्गारवमीन्द्रियैः।
व्याहन्यमानैरुदितैरुदावर्तो निरुच्यते॥" (सुश्रुत)

वायु, मल, मूत्र, जृम्भा, अश्रु, काश, हिक्का, उद्गार, वमि, शुक्र प्रभृतिका वेग रोकनेपर वायु ऊर्ध्वगामी होनेसे यह रोग उत्पन्न होता है। इसी कारण उदावर्त नाम पड़ा है।

"क्षुत्तृष्णाश्वासनिद्राणामुदावर्तो विधारणात्।
वायुःकोष्ठानुगो रूक्षैः कषायकटुतिक्तकैः।
भोजनैः कुपितः सद्य उदावर्तं करोति हि॥" (सुश्रुत)

क्षुधा, तृष्णा, निद्रा और श्वासका वेग रोकनेसे भी यह रोग हो जाता है। फिर रूक्ष, कषाय, कटु और तिक्त भोजन कोठमें पहुंचनेसे वायु भड़कना इसकी उत्पत्तिका दूसरा कारण है।

"तृष्णार्दितं परिक्लिष्टं क्षीणं शूलैरभिद्रुतम्।
शकृद्वमन्तं मतिमानुदावर्तिनमुत्सृजेत्॥"

सुश्रुतने कहा—उदावर्त रोगमें तृष्णार्त, अतिक्ल

क्लान्त, क्षीण, शूलार्त्त और शीघ्र शीघ्र पुरीष एवं वमि करनेवाले रोगीको छोड़ देना चाहिये।

वायुके विपथ गमनपर उत्पन्न होनेसे सकल ही अवस्थामें वायुको स्वाभाविक पथपर पहुंचाना ही इस रोग-प्रतीकारका प्रधान उपाय है।

वायुसे उत्पन्न होनेवाले उदावर्त्त रोगमें स्नेह और स्वेद डाल आस्थापन लगाना चाहिये। मलरोधसे होनेवालेकी चिकित्सा आनाह रोगकी तरह चलती है। मूत्रारोधके उदावर्त्तपर एला वा दुग्ध मिला कर मदिरा तीन दिन अथवा जल डालकर तीन दिन आमलकीका रस पिलाते हैं। अश्रुधारणसे होनेपर इस रोगमें स्नेह और स्वेद लगा अश्रुमोचण करायें। उद्गारसे जो उदावर्त्त उभरता, उसमें रोगी विजौरा नीबूका रस मिला सुरापान करता है। वमनसे उदावर्त्त उठनेपर क्षार वा लवणके साथ अभ्यङ्ग प्रयोग किया जाता है। शुक्ररोधवालेमें स्त्रीका सहवास आवश्यक है। अनिद्रासे उपजनेपर उदावर्त्त रोगमें सुरापान करना और निद्रा लानेका ध्यान रखना चाहिये। कोष्ठगत वायु बिगड़ने उदावर्त्त उपजनेपर हृदय एवं वस्तिदेशमें शूल उठता, देह पर गौरव चढ़ता, अरुचि, तृष्णा तथा हिक्काका वेग बढ़ता, कष्टसे वायु, मूत्र एवं मल टलता, श्वास लगता, कास बढ़ता, प्रतिश्याय पड़ता, दाह दहता, मोह मदता, वमन चलता, शिरोरोग चलता और मन एवं श्रवणेन्द्रियका विभ्रम रहता है। इसी प्रकार वायुके प्रकोपसे अनेक विकार उठ खड़े होते हैं। सुश्रुतके मतमें ऐसे स्थल पर तैल एवं लवण मलायें और स्वेद तथा निरूहका वस्ति लगायें। मदनफल, अलाबुबीज, पिप्पली और कण्टकारीका चूर्ण पिचकारीसे मलद्वारमें पहुंचाना चाहिये। इससे शीघ्र ही उदावर्त्त रोग अच्छा हो जाता है।

उदावर्त्ता (सं॰ स्त्री॰) वायुजन्य-स्त्रीयोनिरोगविशेष, औरतोंकी एक बीमारी। इसमें कष्टके साथ सफेनिल रज निकलता है। (भावप्रकाश)

उदावर्त्तिन् (सं॰ त्रि॰) उदावर्त्तरोगविशिष्ट, जिसके कांच निकल आनेकी बीमारी रहे।

उदावसु (सं॰ पु॰) निमिके पौत्र और जनकके पिता। यह राजर्षि जनकसे भिन्न रहे। जनक देखो।

उदास (सं॰ पु॰) १ विराग, मसला-जन्न। २ उपेक्षा, बेपरवाई। ३ उच्चता, ऊंचाई। ४ उत्क्षेपण, उछाल। (त्रि॰) ५ उदासीन, जरिया मज़हबका मोतकिद। ६ विरक्त, बेपरवा। ७ दुःखी, रञ्जीदा।

उदासना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्वासन करना, मट्टीमें मिलाना। २ उठाना, समेटना, लपेट डालना।

उदासित (सं॰ त्रि॰) विरक्त, बेपरवा, किसीसे सरोकार न रखनेवाला।

उदासिन् (सं॰ त्रि॰) विरक्त, बेपरवा। उदासी देखो।

उदासित, उदासित देखो।

उदासी (सं॰ पु॰) १ दर्शनज्ञ, मुहक्किक़। २ विरक्त पुरुष, बेपरवा आदमी। ३ सन्न्यासी, एक मज़हबी फिरक़ेका पाबन्द। यह नानकके धर्मपर चलते और मठमें बसते हैं। उदासी अपने हाथसे भोजन नहीं बनाते, दूसरेका ही बनाया खाते हैं। नानकका 'ग्रन्थ' नामक धर्मग्रन्थ ही उपास्य है। सकल जातिके लोग उदासी-सम्प्रदायभुक्त हो जाते हैं। इनके शिखा नहीं रहती। मस्तक मुंडवा डालते हैं। लंगोट सभी चढ़ाते हैं। (हिं॰ स्त्री॰) ३ दुःख, अफ़सोस।

४ बम्बई प्रान्तस्थ सूरत जिलेवाले बारडोलीके उदा कुनबियोंका एक सम्प्रदाय। कोई सवा तीन सौ वर्ष हुये, गोपालदास नामक एक व्यक्तिने यह सम्प्रदाय चलाया था। उन्होंने वैदिक मत अस्वीकार कर केवल एक परमेश्वरपर विश्वास करनेके लिये अपने अनुयायियोंको उपदेश दिया। यह सम्प्रदाय ईश्वरके ध्यानसे मुक्तिकी प्राप्ति और पुनर्जन्मको मानता है। पांच लोग मिलकर महन्तको निर्वाचन करते हैं। महन्तको शिष्यके गलेमें सेली पहनाने, विवाह एवं अन्त्येष्टिक्रियाका समय ठहराने और धाद्याभङ्ग करनेवालेको सम्प्रदायसे निकालनेका अधिकार है। उदा-कुनबी उदासी प्रातःकाल नहाते, काली तुलसीपर जल चढ़ाते और अपने पवित्र धर्मग्रन्थसे ध्यान लगाते हैं। सन्ध्या समय वह धर्मग्रन्थके पीठोपाधानको नमस्कार करते हैं। फिर उसकी आरती उतारते और स्तुति

सुनाई जाती है। विवाहके समय महन्त अगुवा रहते हैं। और्ध्वदैहिक कर्म कोई नहीं करता। किन्तु यह अखाड़ेमें रहनेवाले नानकपन्थी उदासियोंसे अलग हैं।

उदासीन (सं॰ त्रि॰) उत्-आस-शानच्-ईदास इति इत्वम्। १ वैरागी, बेपरवा। २ मध्यस्थ, बीचवाला। ३ स्वतन्त्र, आज़ाद, झगड़ेमें न पड़नेवाला। ४ सम्पर्क-रहित, निराला। ५ तटस्थ, नज़दीकी। ६ अपरिचित, जिससे जान-पहचान न रहे। (पु॰) ७ अपरिचित व्यक्ति, अजनबी, जो दोस्त या दुश्मन् न हो।

उदासीनता (सं॰ स्त्री॰) विराग, बेपरवाई।

उदासी बाजा (हिं॰ पु॰) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह भोंपे-जैसा रहता और फूंकनेसे बजता है।

उदास्थित (सं॰ पु॰) उत्-आ-स्था-क्त। १ अध्यक्ष, मालिक। २ द्वारपाल, दरबान्। ३ चर, एलची। ४ नष्टसन्न्यास। ५ प्रव्रज्यावसित।

उदाहट (हिं॰ स्त्री॰) ऊदे रङ्गकी झलक, नीले रङ्गमें सुर्खीकी चमक।

उदाहरण (सं॰ क्ली॰) उत्-आ-हृ भावे ल्युट्। दृष्टान्त, मिसाल। कोई विषय समझाने करनेको अन्य विषयका उल्लेख उदाहरण कहाता है—

"साध्यसाधर्म्यात्तद्धर्मभावी दृष्टान्त उदाहरणम्।"

साध्यसाधर्म्यसे उसके धर्मादि प्रकाशक दृष्टान्तको उदाहरण कहते हैं। न्यायमतसे अन्वयी और व्यतिरेकी दो प्रकारका उदाहरण होता है। साधन-की तरह अप्रयुक्त एवं साध्यवचाका अनुमापक अवयव अन्वयी और साध्यसाधनसे व्यतिरेक तथा व्याप्तिके प्रदर्शन द्वारा प्रकाशित दृष्टान्त व्यतिरेकी है।

२ निदर्शन, झलक। ३ उल्लेख, लिखाई। ४ वर्णन, बयान्। ५ सन्दर्भ, जोड़तोड़। ६ कथाप्रसङ्ग, बात-चीत। ७ नाट्यशास्त्रोक्त गर्भाङ्ग-विशेष।

उदाहार (सं॰ पु॰) उत्-आ-हृ-घञ्। १ उदा-हरण, मिसाल। युक्ति और व्याप्ति द्वारा दिया जाने-वाला दृष्टान्त उदाहार कहाता है। २ वक्तृताका आरम्भ, बातका शुरू।

उदाहार्य (सं॰ त्रि॰) उदाहरणमें दिये जाने योग्य, जो मिसालमें आने क़ाबिल हो।

उदाहृत (सं॰ त्रि॰) उत्-आ-हृ-क्त। १ उल्लिखित, लिखा हुआ। २ कथित, कहा हुआ। ३ उच्चारित, निकाला हुआ। ४ वर्णित, बताया हुआ। ५ उपन्यस्त, रखा हुआ।

उदाहृति (सं॰ स्त्री॰) उदाहरण देखो।

उदित (सं॰ त्रि॰) उत्-इन्-क्त। १ उद्गत, चढ़ा हुआ। २ उचित, वाजिब। ३ उन्नत, उठा हुआ। ४ उत्पन्न, निकला हुआ। ५ प्रादुर्भूत, चमका हुआ। ६ कथित, कहा हुआ। (क्ली॰) उत्-इन् भावे क्त। ७ राशिका उदय, लग्न। "उदित उदयगिरि मञ्चपर।" (तुलसी)

(पु॰) ८ नीवार, किसी क़िस्मका चावल।

उदितयौवना (सं॰ स्त्री॰) मुग्धा नायिकाका एक भेद। इसमें तीन भाग यौवन और एक भाग बाल्यकाल रहता है।

उदितहोमिन् (वै॰ त्रि॰) सूर्योदयके पश्चात् यज्ञ-करनेवाला।

उदिति (सं॰ स्त्री॰) उत्-इ-क्तिन्। १ उदय, उठान। २ वाक्य, बात। ३ अस्त, गुरूब।

उदितोदित (सं॰ त्रि॰) उदिते कथिते शास्त्रे अभ्यु-दितः। शास्त्रोक्त, जो शास्त्रमें कहा गया हो।

उदीक्षण (सं॰ क्ली॰) सन्दर्शन, देखभाल।

उदीक्ष्य (सं॰ अव्य॰) सन्दर्शन करके, देखभालकर।

उदीची (सं॰ स्त्री॰) उत्क्रान्तं दृष्टिपथं अञ्चति, उत्-अञ्च ऋत्विगादिना क्विन् उगितश्चेति ङीप्। उत्तर दिक्, शिमाल।

उदीचीन (सं॰ त्रि॰) उदीची-ख। उत्तरदिक्-सम्ब-न्धीय, शिमाली।

उदीच्य (सं॰ त्रि॰) उदीची भावार्थे यत्। १ उत्तर देशीय, शिमालमें होने या रहनेवाला। (पु॰) २ सर-स्वती नदीके उत्तरपश्चिमस्थ देश। ३ उदीच्य देशका अधिवासी। (क्ली॰) ४ ह्रीबेर, एक खुशबूदार चीज़।

उदीच्यकाष्ठ (सं॰ क्ली॰) चोपचीनी।

उदीच्यवृत्त (सं॰ क्ली॰) उदीच्यवृत्ति देखो।

उदीच्यवृत्ति (सं॰ स्त्री॰) वैतालीय छन्दका एक भेद।

"षड्विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समात्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥ १९॥
उदीच्यवृत्तिरिति तौ चेत्: सकोऽपि च मनेद्धुमध्यमोः।" १८ (छन्दमाकर)

उदीच्यवृत्तिके विषम चरणकी द्वितीय और तृतीय मात्रा संयुक्त होकर गुरुवर्ण बन जाती हैं।

उदीप (सं० त्रि०) उद्गता आपो यतः, अच् समा० ईत्वम्। १ उद्गतजल, पानीसे डूबा या भरा हुआ। (पु०) २ जलप्लावन, पानीकी बाढ़।

उदीपन, उदीपित (हिं०) उद्दीपन और उद्दीपित देखो।

उदीपी—१मन्द्राज प्रान्तके दक्षिण कनाड़ा ज़िलेका एक ताल्लुक़। भूमिका परिमाण ७८७ वर्गमील है। प्रायः ढाई लाख मनुष्य बसते हैं। हिन्दू और ईसाई अधिक हैं।

२ अपने ताल्लुक़का नगर और हेडक्वार्टर। यह अक्षा० १३° २०′ ३०″ उ० और द्राघि० ७४° ४७′ पू० पर अवस्थित है। कनाड़ा प्रान्तमें यह स्थान हिन्दुवोंका पवित्र तीर्थ है। मन्दिरमें प्रतिवर्ष यात्री आया करते हैं। मन्दिर बहुत पुराना है। हिन्दुवोंके आठ मठाधीश दो-दो वर्षके हिसाबसे उसका प्रबन्ध करते हैं। निकटवर्ती कल्याणपुर सम्भवतः कोसमस इनडिकोप्लुसटेस (५४५ ई०) का कालियेना है।

उदीरण (सं० क्ली०) उत्-ईर् ल्युट्। १ उच्चारण, बोलचाल। २ कथन, कहाई। ३ उद्दीपन, भड़काव। ४ प्रेरण, पहुंचाने या भेजनेका काम। ५ विजृम्भण, जमहाई। ६ उत्पत्ति, पैदायश। ७ उल्लेख, लिखाई। ८ उत्क्षेपण, उछाल।

उदीरित (सं० त्रि०) उत्-ईर्-क्त। १ कथित, कहा हुआ। २ उद्रिक्त, बढ़ाया या समझाया हुआ। ३ प्रेरित, भेजा हुआ।

उदीरितधी (सं० त्रि०) कुशाग्रबुद्धि, तेज़फ़हम, समझदार।

उदीर्ण (सं० क्ली०) उत्-ऋ-क्त। १ उदित, उठा या चढ़ा हुआ। २ प्रबल, ज़ोरदार। (पु०) ३ विष्णु।

उदीर्णदीधिति (सं० त्रि०) अतिशय प्रभान्वित, बहुत चमकीला।

उदीर्णवेग (सं० त्रि०) अतिशय वेगशील, निहायत ज़ोरदार।

उदीर्य (सं० त्रि०) १ उच्चारणके योग्य, जो कहे जाने क़ाबिल हो। (अव्य०) २ कहकर, बोलके।

उदीर्यमाण (सं० त्रि०) १ चलाया या हटाया जानेवाला, जो फेंका या अलग किया जा रहा हो।

उदीषित (सं० त्रि०) उन्नत, ऊंचा, जो बढ़ गया हो।

उदुआ (हिं० पु०) धान्य विशेष, एक चावल। यह वर्षाके अन्त समय कटता है।

उदुखल, उदूखल देखो।

उदुम्बर (सं० पु०) १ उडुम्बर, गूलर। (Ficus glomerata) पर्याय है—जन्तुफल, यज्ञाङ्ग, क्रिमिफल, शीतवल्कल, यज्ञाङ्ग, विषवृक्ष, हेमपुष्प, क्षीरवृक्ष, जन्तुवृक्ष, सदाफल, हेमदुग्धक, कालस्कन्द, यज्ञयज्ञ, सुप्रतिष्ठित, पुष्पशून्य, पवित्रक, सौम्य। वैद्यकके मतसे यह शीतल, रुक्ष, गुरु, मधुर, कषाय, वर्णकारी, व्रणशोधक एवं व्रणपूरक होता और प्रदर, पित्त, कफ तथा रुधिर रोगको खोता है। उदुम्बरका पक्व फल मधुर, शीतल एवं क्रिमिकर और रक्तपित्त, तृष्णा, मूर्च्छा, दाह, पित्त, श्रम, शोष, अपस्मार तथा उन्माद-रोगनाशक है। कच्चा गूलर कषाय, अग्निदीपक, रुच्य, मांसवर्धक और रक्तविकारनाशक ठहरता है। वल्कल शीतल, कषाय, गर्भरक्षक एवं स्तनदुग्धकर होता और व्रण, क्षत, कुष्ठ तथा चर्मरोगको खोता है।

२ कुष्ठ विशेष, किसी क़िस्मका कोढ़। ३ देहली, चौखट। ४ षण्डक, नामर्द। (क्ली०) ५ ताम्र, तांबा। ६ कर्ष, दो तोलेकी एक तौल। ७ मेढ़्।

उदुम्बरच्छदा, उदुम्बरदला देखो।

उदुम्बरदला (सं० स्त्री०) उदुम्बरस्य दलमिव दलमस्याः। ह्रस्वदन्तीवृक्ष, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरपर्णी (सं० स्त्री०) १ दन्तीवृक्ष, दांतीका पेड़। २ लघुदन्तीवृक्ष, छोटी दांतीका पेड़।

उदुम्बरमशक (सं० पु०) मूषिक, चूहा।

उदुम्बरावती (सं० स्त्री०) हरिवंशोक्त नदीविशेष।

उदुम्बरी (सं० स्त्री०) काकोदुम्बरिका, कठगूलर, गोबला।

उदुम्बल (वै० त्रि०) विस्तारित शक्तिसम्पन्न, बड़ी ताक़त रखनेवाला। (सायण) (सं० पु०) २ उदुम्बर, गूलर।

उदुम्बल, उदुम्बर देखो।
उदुष्टमुख (वै॰ त्रि॰) अग्रसदृश रक्तवर्ण मुखयुक्त, घोड़ेकी तरह लाल मुंह रखनेवाला।
उदूखल (सं॰ क्ली॰) १ तण्डुलादि कण्डनार्थ काष्ठ-पात्र, चावल वगैरह कूटनेको लकड़ीका बरतन, ओखली, इमामदस्ता। २ गुग्गुल, गूगल।
उदूखलसन्धि (सं॰ पु॰) उदूखलाकारग्रीवोर्ध्वगत-सन्धि, ओखली-जैसा गर्दनके ऊपरका जोड़।
उदूढ़ (सं॰ त्रि॰) उत्-वह-क्त। १ विवाहित, व्याहा। २ स्थूल, मोटा। ३ धृत, वाहित, असली। ४ उन्नत, ऊंचा।
उदूल (अ॰ पु॰) शासनभङ्ग, नाफ़रमानी, हुक्म न माननेकी बात।
उदूलहुक्म (अ॰ वि॰) आज्ञाभङ्गकारी, नाफरमान्, जो हुक्म् मानता न हो।
उदूलहुक्मी, उदूल देखो।
उदेग (हिं॰) उद्वेग देखो।
उदेजय (सं॰ त्रि॰) उत्-एज-णिच्-खश्। १ उद्वेग-कारक, घबरा देनेवाला। २ भयप्रद, खौफ़नाक। ३ उत्कम्पजनक, कंपा देनेवाला।
उदेपुर—बम्बईप्रान्तस्थ रेवाकांठे जिलेके छोटे-उदेपुर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ २२° २०´ उ॰ और द्राघि॰ ७४° १´ पू॰ पर, समतल भूमिमें अवस्थित है। इसके निकट ही ओड़सङ्ग नद उत्तरपश्चिम घूम पड़ा है। नगरको दक्षिण ओर उक्त नद और पूर्व ओर विचित्र ह्रद पड़ता, जिसके किनारे घना जङ्गल मिलता है। १८५८ ई॰के दिसम्बर मास ब्रिगेडियर पार्कने ह्रदकी ओर सुन्दर आम्रवन एवं नदीके मध्य तांतिया तोपीकी फौजको भगाया था। ह्रदके पार्श्वपर एक मनोरम देवमन्दिर बना है। राज-प्रासाद बहुत ऊंचा है। शहरपनाह पूरी नहीं, अधूरी खड़ी है। नगरमें कोई वाणिज्य-व्यवसाय नहीं होता। लोग राज्यपर ही अपने जीवनके निर्वाहार्थ निर्भर हैं। ई॰का १८ वां शताब्द लगते अलीमोहनसे राजधानी उठकर यहां आयी थी। पहले राजा गायकवाड़को कर देते रहे। किन्तु १८२२ ई॰में उनके १०५००) रु॰ अंगरेज सरकारको देनेपर राजी होनेसे गायकवाड़ने यह राज्य अंगरेजोंके अधीन बनाया। राजाको बदलेमें सम्मानार्थ सरोपा और गायकवाड़के ग्रामोंसे कुछ रुपया मिला करता है।
उदै (हिं॰) उदय देखो।
उदो (हिं॰) उदय देखो।
उदोजस् (वै॰ त्रि॰) अतिशय प्रचण्ड, निहायत ताक़तवर।
उदोत (हिं॰) उद्योत देखो।
उदोतकर (हिं॰ वि॰) प्रकाशक, रोशनी बख्शनेवाला।
उदोती, उद्योतकर देखो।
उदौ (हिं॰)
उदौदन (सं॰ पु॰) जलसे सिद्ध अन्न, पानीमें पकाया हुआ चावल।
उद्गत (सं॰ त्रि॰) उत्-गम-क्त। १ उत्थित, उठा हुआ। २ उत्पन्न, पैदा। ३ उदित, निकला हुआ। ४ विगत, गया हुआ। ४ त्यक्त, फेंका हुआ।
उद्गतशृङ्ग (सं॰ त्रि॰) नूतन शृङ्गयुक्त, निकलते सींगोंवाला।
उद्गता (सं॰ स्त्री॰), विषमवृत्तिछन्दका एक भेद। इसमें चार पाद पड़ते हैं। पहले तीनमें दश दश और पिछले चौथे पादमें तेरह अक्षर लगते हैं।

"सजसादिमे सलघुकौ च नसजगुरुकैरथोद्गता।
त्र्यङ्घ्रिगतभनजलगा गुरुः सजसा जगौ च चरणमेकतः पठेत्॥"
(वृत्तरत्नाकर)

उद्गतासु (सं॰ त्रि॰) मृत, मुर्दा, मरा हुआ।
उद्गति (सं॰ स्त्री॰) उत्-गम-क्तिन्। १ ऊर्ध्वगति, चढ़ाव। २ उदय, निकास। ३ उत्पत्ति, उपज।
उद्गन्धि (सं॰ त्रि॰) उत्कृष्ट गन्धयुक्त, खुशबूदार।
उद्गम (सं॰ पु॰) १ उत्थान, उठान। २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ उदय, निकास। ४ ऊर्ध्वगति, चढ़ाई। ५ वान्ति, क़ै, उलटी।
उद्गमन (सं॰ क्ली॰) उद्गम देखो।
उद्गमनीय (सं॰ क्ली॰) उत्-गम-अनीयर्। १ धौत-वस्त्रद्वय, धोया जोड़ा। (त्रि॰) २ ऊर्ध्वगमनके योग्य, चढ़ जाने क़ाबिल।

उद्गाढ़ (सं० त्रि०) अतिशय अधिक, बहुत ज्यादा।
उद्गाता, उद्गातृ देखो।
उद्गातुकाम (सं० त्रि०) गान करनेकी अभिलाषी, जो गाना चाहता हो।
उद्गातृ (सं० पु०) उत्-गै-तृच्। १ सामवेदगायक। २ ऋत्विग्भेद।
उद्गाथा (सं० स्त्री०) आर्याछन्दोभेद। यह गीति सदृश रहती और अपने चार पादमें क्रमशः बारह तथा अट्ठारह मात्रा रखती है।
उद्गार (सं० पु०) उत्-गॄ-घञ्। उदोग्रः। पा ३।३।२८। १ वमन, कै, उलटी। २ मुखसे वायुका निर्गम, डकार। ३ निःसरण, टपकाव, चुवाव। ४ उच्चारण, कहाई। ५ निष्ठीवन, थूक। ६ आधिक्य, बढ़ती। ७ गर्जन, फुफकार।
उद्गारकमणि (सं० पु०) प्रवाल, मूंगा।
उद्गारशुद्धि (सं० स्त्री०) उद्गारका अनवरोध, सधम अम्लोद्गारका भाव।
उद्गारशोधन (सं० पुं०) उद्गारं शोधयति, शुध-णिच्-ल्यु। श्वेतजीरक, कृष्णजीरक, काला या सफेद जीरा।
उद्गारशोधनी (सं० स्त्री०) जीरक, जीरा।
उद्गारिन् (सं० त्रि०) उत्-गॄ-णिनि। उद्गारयुक्त, उगलनेवाला।
उद्गिरण (सं० क्ली०) उत्-गॄ-ल्युट्। निपातनात् इत्वम्। १ उद्गार, डकार। २ वमन, कै, उलटी। ३ कण्ठस्वरभेद, गलेकी घरघराहट।
उद्गीत (सं० त्रि०) उत्-गै-क्त। उच्चैःस्वरमें गीत, बुलन्द आवाजसे गाया हुआ।
उद्गीति (सं० स्त्री०) उत्-गै भावे क्तिन्। १ उच्चैः स्वरसे गान, ऊंची आवाजका गाना। कर्मणि क्तिन्। २ मात्रावृत्त भेद। इसके प्रथम एवं तृतीयमें पन्द्रह, द्वितीयमें बारह और चतुर्थ पादमें अट्ठारह मात्रा लगती हैं।

"आर्याशकलद्वितये व्यत्ययरचितं भवेद्यस्याः।
सोद्गीतिः किल गदिता तद्वत्यच भवेदंशयुता॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्गीथ (सं० पु०) उत्-गै-थक्। गथोदि। उण् २।१०। १ सामगानका अवयवभेद। सामके पञ्च वा सप्त अवयव होते हैं—१ प्रस्ताव, २ उद्गीथ, ३ प्रतिहार, ४ उपद्रव, ५ निधन, ६ हिङ्कार और ७ प्रणव। उद्गाता जो साम गाता, वही उद्गीथ कहाता है। साम देखो। वर्षाकालको उद्गीथ गाया जाता है। उपनिषत्के मतसे पशुमें अश्व, पञ्चप्राणमें चक्षु और सप्तविध वाक्यमें उद्भूत शब्द ही उद्गीथ है। छान्दोग्यके कथनानुसार—"उद्गीथ ही साम है। जो उद्गीथ (ॐ) गाता, उसका निश्वास-प्रश्वास नहीं आता-जाता। 'उत्' प्राण है। क्योंकि इसी प्राणवायुसे लोग ऊपर चढ़ते हैं। 'गी' वाक् और 'थ' अन्न है। कारण अन्न द्वारा सकलकी स्थिति होती है। 'उत्' स्वर्ग, 'गी' आकाश और 'थ' पृथिवी है। 'उत्' सूर्य, 'गी' वायु और 'थ' अग्नि है। 'उत्' सामवेद 'गी' यजुर्वेद और 'थ' ऋग्वेद है। लोगोंको उद्गीथका ध्यान करना चाहिये।" (छान्दोग्यउ० १ प्र० ३ ख०) २ सामवेदका द्वितीय अंश। ३ ओंकार। ४ भवपुत्र। (विष्णुपुराण २।१।३८) ५ वेदके एक टीकाकार।
उद्गीरण, उद्गिरण देखो।
उद्गीर्ण (सं० त्रि०) उत्-गॄ-क्त। १ वमित, कै किया हुआ। २ उच्चारित, कहा हुआ। ३ उद्गत, उठा हुआ। ४ अनुरञ्जित, खुश किया हुआ। ५ निर्गत, निकला हुआ। ६ प्रतिबिम्बित, झलका हुआ।
उद्गूर्ण (सं० त्रि०) उत्-गूर्-क्त। उत्तोलित, उछाला हुआ। २ उद्यत, मुस्तैद, तैयार।
उद्ग्रथित (सं० त्रि०) उत्-ग्रन्थ-क्त। १ उपरि भागमें बद्ध, ऊपरी हिस्से पर बंधा हुआ। २ मुक्त, खुला हुआ।
उद्ग्रन्थ (सं० त्रि०) उन्मुक्त, खुला हुआ। (पु०) उत्-ग्रन्थ-घञ्। २ उन्मोचन, छोड़ाई। ३ अध्याय, भाग, बाब, हिस्सा।
उद्ग्रभण (वै० क्ली०) उत्-ग्रह-ल्युट् वेदे हस्य भः। १ ग्रहण, पकड़, ऊपर पकड़के दान। (कात्या०श्रौ०१।७।७।१२)
उद्ग्रह (सं० पु०) १ ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव। २ धर्म द्वारा किया जानेवाला कार्य।
उद्ग्रहण (सं० क्ली०) ऊर्ध्व ग्रहण, उठाव, चढ़ाव।
उद्ग्राभ (वै० पु०) उत्-ग्रह-घञ्। वेदे हस्य

भः। १ ग्रहण, पकड़। २ तन्निर्दिष्ट, पकड़की वन्दिश। ३ दान, बख्शिश।

"वाजस्य मायमव उद्ग्राभेणोदग्रभीत्।" (वाजसनेयस० १३।१८)

"उद्गृह्येव ऊर्ध्व वियद्य दीयते उद्ग्राभवं दानम्।" (महीधर)

उद्ग्राह (सं० पु०) उत्-ग्रह-घञ्। १ दान, बख्शिश। २ वाममेद, विद्या विचार। यह प्रातिशाख्यकी सन्धिका एक नियम है। इससे विसर्ग, इकार और ओकारके स्थानमें स्वर आगे रहनेपर अकार आदेश होता है। ३ तर्कका उत्तर, बहसका जवाब। ४ आपत्ति, उज्र। ५ उद्गार, डकार।

उद्ग्राहणिका (सं० स्त्री०) तर्कका उत्तर, बहसका जवाब।

उद्ग्राहिणी (सं० स्त्री०) उत्-ग्रह-णिनि-ङीप्। पाशरज्जु, जालकी रस्सी।

उद्ग्राहित (सं० त्रि०) उत्-ग्रह-णिच्-क्त। उपरि नीत, चढ़ाया हुआ। २ बद्ध, बांधा हुआ। ३ उदीर्ण, निकाला हुआ। ४ अन्तःकरणसे अर्पित, सौंपा हुआ। ५ आक्रान्त, सताया हुआ। ६ उन्नमित, उचकाया हुआ। ७ गृहित, पकड़ा हुआ। ८ स्मरण किया हुआ, जो सोचा गया हो।

उद्ग्रीव (सं० त्रि०) ग्रीवाको उठानेवाला, जो गर्दन ऊंची करता हो।

उद्ग्रीविन्, उद्ग्रीव देखो।

उद्घ (सं० पु०) उत्-हन-ड। १ अग्नि, आग। २ प्रशंसा, तारीफ। ३ देहवायु, जिस्मकी हवा। ४ करपुट, अंजुरी। ५ उत्कर्ष, उमदगी। ६ आदर्श, नमूना।

उद्घट (सं० क्ली०) वार्ताकुपुष्प, भांटेका फूल।

उद्घट्टक (सं० पु०) उद्घट्ट-कन्। ताल।

उद्घट्टन (सं० क्ली०) उत्-घट्ट-ल्युट्। १ आघात, रगड़। २ उन्मोचन, खोलाव।

उद्घट्टित (सं० त्रि०) उन्मुक्त, खुला हुआ।

उद्घन (सं० पु०) ऊर्ध्व स्थाप्य हन्यतेऽत्र, उत्-हन आधारे अप् निपातनात्। काष्ठमय आधार, लकड़ीका तख्ता। तक्षक इसी आधार पर काष्ठको रख परिष्कार करता है।

उद्घर्षण (सं० क्ली०) उत्-घृष-ल्युट्। १ उपरि घर्षण, रगड़। २ इष्टकादि द्वारा गात्रादि मार्जन, ईंट या पत्थरसे जिस्मकी रगड़ाई। ३ लगुड़, लठ।

"सिरामुखविविक्तत्वं त्वक्स्थस्याग्नेश्च तेजनम्।
उद्घर्षणोत्सादनाभ्यां जायेयातामसंशयम्॥" (सुश्रुत)

उद्घस (सं० क्ली०) उत्-अद-अप् घसादेशः। १ मांस, गोश्त। २ भक्ष्यवस्तु, खाने लायक चीज।

उद्घाट (सं० पु०) उत्-घट-घञ्। १ उद्घाटन, खोलाई। २ पण्यादि द्रव्य देखानेको खोलनेका स्थान, बेचनेकी चीज खोलकर देखानेकी जगह। ३ राजस्वके ग्रहणका स्थान, चुङ्गीघर। ४ हनन, मारकाट। ५ क्षत, ज़ख्म। ६ स्खलन, सरकाव। ७ उन्नति, उठान। ८ आरम्भ, शुरू। ९ प्राणायाम। १० गंदा, सोंटा। ११ अध्याय, बाब। १२ प्रहरी रहनेका स्थान, चौकी।

उद्घाटक (सं० पु० क्ली०) उत्-घट-णिच्-ण्वुल्। १ घटीयन्त्र, लोटाडोर। २ कुञ्चिका, चाबी। ३ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटन (सं० क्ली०) उत्-घट भावे ल्युट्। १ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटन (सं० क्ली०) उत्-घट भावे ल्युट्। १ उन्मोचन, खोलाई। २ उल्लेख, लिखाई। ३ प्रकाशकरण, ज़ाहिर करनेका काम। ४ घटीयन्त्र, लोटाडोर। ५ कुञ्चिका, चाबी। ६ उन्मोचनकारी, खोलनेवाला।

उद्घाटनीय (सं० त्रि०) उन्मोचनयोग्य, खोला जानेवाला।

उद्घाटित (सं० त्रि०) उत्-घट-णिच्-क्त। १ प्रकाशित, ज़ाहिर, खुला हुआ। २ कृतारम्भ, शुरू किया हुआ। ३ उत्तोलित, उठाया हुआ। ४ कृतोद्योग, कोशिशके साथ किया हुआ।

उद्घाटितज्ञ (सं० त्रि०) चतुर, होशियार।

उद्घाटिताङ्ग (सं० त्रि०) १ नग्न, नङ्गा। २ चतुर, होशियार।

उद्घाटिन् (सं० त्रि०) उन्मोचनकारी, खोलने या शुरू करनेवाला।

उद्घात (सं॰ पु॰) उत्-हन-घञ्। १ प्रतिघात, ठोकर। २ बाधा, आफ़त। ३ आरम्भ, शुरू। ४ पादस्खलन, पैरकी फिसलाहट। ५ कुम्भक। ६ सूचना, दीबाचा। ७ मुद्गर। ८ अरघट्ट, कुवेंसे पानी निकालनेकी कल। ९ निदर्शन, देखाव।

उद्घातक (सं॰ त्रि॰) १ प्रतिघात लगानेवाला, जो ठोकर मारता हो। (पु॰) २ नाटककी एक प्रस्तावना। इसमें कोई पात्र सूत्रधार वा नटीका कथन श्रवण कर अन्य अर्थ जोड़ता है।

उद्घाती (सं॰ त्रि॰) १ प्रतिघात करनेवाला, जो ठोकर लगाता हो। २ उच्चनीच, चढ़ा-उतार।

उद्घुष्ट (सं॰ त्रि॰) १ शब्दायमान, पुरशोर। २ विघोषित, कहा हुआ। (क्लो॰) ३ शब्द, आवाज़।

उद्घृष्ट (सं॰ क्लो॰) उच्चारणका दोषविशेष, तलफ़्फ़ुज़का एक ऐब।

उद्घोष (सं॰ पु॰) उत्-घुष-घञ्। १ उच्च शब्दकरण, बुलन्द आवाज़में कहनेकी बात। २ साधारण कथन, मामूली बात।

उद्दंश (सं॰ पु॰) उत्-दन्श-अच्। १ मशक, मच्छड़। २ मत्कुण, खटमल। ३ केशकीट, जूं।

उद्दण्ड (सं॰ त्रि॰) १ प्रचण्ड, बखेड़िया। २ उन्नतदण्डयुक्त, ऊंची डालवाला। ३ दण्डोपरि उत्तोलित; बांसपर चढ़ाया हुआ। (पु॰) ४ उन्नत दण्ड, ऊंचा सोंटा।

उद्दण्डपाल (सं॰ पु॰) १ उन्नत दण्डाकार सर्पविशेष, ऊंचे डण्डे-जैसा एक सांप। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। ३ दण्ड देनेवाला राजा वा शासनाधिकारी, जो हाकिम सज़ा देता हो।

उद्दन्तुर (सं॰ त्रि॰) अतिशयेन दन्तुरः। १ उत्तुङ्ग, ऊंचा। २ कराल, खौफ़नाक। ३ उत्कटदन्त, बड़े दांतोंवाला।

उद्दम (सं॰ पु॰) वशीकरण, दमन, मग़लूबी, दबाव।

उद्दान (सं॰ क्लो॰) उत्-दो भावे ल्युट्। १ बन्धन, बंधाई। २ उद्यम, कोशिश। ३ चुल्ली, चूल्हा। ४ वड़वाग्नि, दरयाके भीतरकी आग। ५ मध्य, दरमियान्। ६ लग्न। ७ पालन, पलाई।

उद्दानक (सं॰ पु॰) १ शिरीषवृक्ष, कलसीसका पेड़। २ चुल्ली, चूल्हा।

उद्दान्त (सं॰ त्रि॰) उत्-दम-क्त। अतिदमित, शान्त, ठण्डा, जो बहुत दबा हो।

उद्दाम (सं॰ त्रि॰) उद्गतं दाम्नः। १ उच्छृङ्खल, खुला हुआ। २ स्वतन्त्र, आज़ाद। ३ उत्कट, गुस्ताख़। ४ असीम, बेहद। ५ दीर्घ, बड़ा। (पु॰) ६ यम। ७ वरुण। (अव्य॰) ८ उच्छृङ्खल रूपसे, खुले मैदान।

उद्दामन् (सं॰ त्रि॰) उत्-दामन् बन्धनम्। १ बन्धनरहित, खुला। २ उत्कट, झगड़ालू। ३ अतिशय, बहुत, ज़्यादा।

उद्दारदा (सं॰ स्त्री॰) शाकतरु, साखूका पेड़।

उद्दारा (सं॰ स्त्री॰) गुडूची, गुर्च।

उद्दारी, उद्दारा देखो।

उद्दाल (सं॰ पु॰) उत्-दल-णिच्-अच्। १ बहुवारवृक्ष, लसोड़ेका पेड़। २ वनकोद्रव, कोदो। ३ कुष्ठ, कोढ़। ४ धान्यविशेष, एक अनाज।

उद्दालक (सं॰ पु॰) १ ऋषिविशेष। इनके पुत्रका नाम श्वेतकेतु था। उद्दालक याज्ञवल्क्यके गुरु रहे। आरुणि देखो। २ बहुवार वृक्ष, लसोड़ेका पेड़। ३ आरण्यकोद्रव, कोदो।

उद्दालकपुष्पभञ्जिका (सं॰ स्त्री॰) क्रीडाविशेष, एक खेल। यह 'आती मार छाती'की तरह खेला जाता है।

उद्दालकव्रत (सं॰ क्लो॰) व्रतविशेष। षोड़श वत्सरके वयस पर्यन्त गायत्रीकी दीक्षा न मिलनेसे द्विजातिको यह व्रत करना पड़ता है। दो मास यव, एकमास दधि, दुग्ध तथा शर्कराका शर्बत, अष्ट रात्रि घृत, षड़्रात्रि अयाचित रूपसे प्राप्त द्रव्य, त्रिरात्रि केवल जल और एक दिन उपवास पर निर्वाह करते हैं।

उद्दालकायन (सं॰ पु॰) उद्दालकस्य गोत्रापत्यम्, फक्। ऋषिभेद, श्वेतकेतु।

उद्दित (सं॰ त्रि॰) उत् दो-क्त। बद्ध, बंधा हुआ। (हिं॰) उदय, उदित और उद्यत देखो।

उद्दिधीर्षा (सं॰ स्त्री॰) स्थानान्तरित करनेकी इच्छा, हटा देनेकी ख़ाहिश।

उद्दिन (सं॰ क्लो॰) मध्याह्नकाल, दोपहर।

उद्दिम (हिं०) उद्यम देखो।

उद्दिश् (सं० स्त्री०) दिक्‌विशेष।

उद्दिश्य (सं० अव्य०) १ प्रकाश वा वर्णन करके, देखाकर। २ निर्देश करके, मांगकर। ३ प्रति, तर्फ।

उद्दिष्ट (सं० त्रि०) उत्-दिश-क्त। १ उपदिष्ट, समझाया हुआ। २ अभिप्रेत, देखाया हुआ। ३ ज्ञातानुसन्धान, ढूंढ़ा हुआ। (पु०) ४ बदरवृक्ष, बेरका पेड़। ५ उपायभेद, छन्दके मात्रा-प्रस्तारवाले भेदका वर्णन।

"उद्दिष्टं द्विगुणानाद्यादुपर्यङ्कान् समालिखेत्।
लघुस्था ये तु तत्राङ्कास्तैः सैकैर्मिश्रितैर्भवेत्॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्दीप (सं० पु०) १ प्रकाशन, चमकाहट। २ प्रकाशक, चमकानेवाला। ३ प्रोत्साहन, हौसला बढ़ानेका काम। (क्ली०) ४ गुग्गुलु, गूगुर।

उद्दीपक (सं० त्रि०) उत्-दीप-णिच्-ण्वुल्। १ उद्भासक, रोशनी देनेवाला। २ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उद्दीपन (सं० क्ली०) उत्-दीप-णिच्-ल्युट्। १ प्रकाश, रोशनी। २ उत्तेजन, भड़काव। ३ वर्धितकरण, बढ़ावा। ४ कामक्रोधादि-प्रबल करनेका काम, ख्वाहिश गुस्सा वगैरहका उभाड़ना। ५ अलङ्कारोक्त विभाव विशेष, शृङ्गार रसको बढ़ानेवाली चीज़।

"रत्याद्युद्‌बोधका लोके विभावाः काव्यनाट्ययोः।
आलम्बनोद्दीपनाख्यौ तस्य भेदावुभौ स्मृतौ॥
आलम्बनस्य चेष्टाद्या देशकालादयस्तथा।" (साहित्यदर्पण)

उद्दीपमान (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकनेवाला, जो रौशन हो।

उद्दीप्त (सं० त्रि०) उत्-दीप-क्त। १ प्रकाशान्वित, रोशन। २ प्रज्वलित, जलनेवाला। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उद्दीप्र (सं० पु०) उत्-दीप-रण्। १ गुग्गुलु, गूगुर। (त्रि०) २ उद्दीप्त, चमकता हुआ।

उद्दृप्त (सं० त्रि०) उत्-दृप-क्त। उद्धत, गुस्ताख, घमण्डी।

उद्देश (सं० पु०) उत्-दिश-घञ्। १ अनुसन्धान, खोज। २ लक्ष्य, इशारा। ३ अभिलाष, ख्वाहिश। ४ उपदेश, नसीहत। ५ वार्ता, बातचीत। ६ उल्लेख, लिखाई। ७ नामकथन, इस्म बतानेका काम। ८ प्रदेश, मुल्क। "उद्देशमनतिक्रम्य यदीदं स्यात्। - उद्देश उपदेशः। अधिकरणसाधनमेतम्। यत्र देशे उपदिश्यते उद्देशः।" (माघेन्द्र) ९ संक्षेप, मुख्तसर। १० तन्त्राधिकरणभेद। ११ उत्कृष्ट देश, बढ़िया मुल्क। १२ गिरिगण्डकूप, पहाड़की चोटी। १३ उदाहरण, मिसाल।

उद्देशक (सं० पु०) उत्-दिश-ण्वुल्। १ उपदेशक, नसीहत देनेवाला। २ उदाहरणवाक्य, मिसालका जुमला। ३ प्रच्छक, सवाल करनेवाला। "उद्देशकालापवदिष्टराशिः।" (लीलावती) ४ प्रश्न, सवाल। (त्रि०) ५ दार्ष्टान्तिक, मिसाल देनेवाला, जो समझाता हो।

उद्देशतः (सं० अव्य०) वर्णन करके, मिसाल देकर।

उद्देश्य (सं० त्रि०) उत्-दिश-ण्यत्। १ लक्ष्य, बताने काबिल। २ अभिप्रेत, मतलबवाला। ३ अनुवाद्य, कह देने लायक। (क्ली०) ३ तात्पर्य, मतलब। विशेषण और विशेष्यके सम्बन्धको 'उद्देश्य-विधेयभाव' कहते हैं।

उद्देश्यसिद्धि (सं० स्त्री०) अभिप्रेत सिद्धि, मतलबकी कामयाबी।

उद्देष्ट (सं० त्रि०) १ सङ्केत करनेवाला, जो इशारा देता हो। २ अभिप्रायसे कार्य करनेवाला, जो मतलबसे चलता हो।

उद्देहिक (सं० पु०) १ विदेह देश, एक मुल्क।

उद्देहिका (सं० स्त्री०) १ उत्पादिका, पैदा करनेवाली। २ कीट विशेष, दीमक।

उद्दोत (हिं०) उद्योत देखो।

उद्द्योत (सं० पु०) उत्-द्युत-घञ्, वा दलोपः। १ प्रकाश, रौशनी। २ उद्घाटन, खोलाई। (त्रि०) ३ प्रकाशमान, चमकीला।

उद्द्योतकर—मेघदूतकी टीकाके रचयिता। कल्याणमल्लने इनका वचन उद्धृत किया है।

उद्द्योतकराचार्य (सं० पु०) भरद्वाजगोत्रके एक जन प्रसिद्ध नैयायिक। इनके बनाये 'न्यायवार्तिक' और 'न्यायविसूत्रियार्तिक' नामक दो ग्रन्थ विद्यमान हैं। वाचस्पतिमिश्रने 'न्यायवार्तिक' की टीका बनायी है।

उद्द्योतकृत्—१ एक अलङ्कारग्रन्थ-रचयिता। रत्न-

कारने इनका वचन उद्धृत किया है। २ काव्य-प्रकाशके एक नवीन टीकाकार।

उद्द्योतित (सं० क्ली०) प्रकाशित, रौशन, जो जलाया या चमकाया गया हो।

उद्द्राव (सं० पु०) उत्-द्रु-घञ्। १ प्रस्थान, द्रुत पदसे पलायन, भागाभागी। (त्रि०) २ उत्कृष्ट गतियुक्त, भाग खड़ा होनेवाला, जो दौड़ते जा रहा हो।

उद्द्रुत (सं० त्रि०) १ पलायित, भागा हुआ, जो दौड़ पड़ा हो। २ उद्गत, चढ़ा हुआ।

उद्ध (हिं० क्रि० वि०) ऊर्ध्व, ऊपर।

उद्धत (सं० पु०) उत्-हन्-क्त। १ राजमल्ल, शाही पहलवान्। (त्रि०) २ अविनीत, अक्खड़। ३ उत्थित, उठा हुआ। ३ उत्क्षिप्त, उछला हुआ। ४ आहुत। ५ चालित, भड़काया हुआ। ६ घोर, बड़ा। ७ उत्कट, कड़ा।

उद्धतमन (सं० क्ली०) १ अभिमान, घमण्ड। (त्रि०) २ अभिमानी, घमण्डी।

उद्धतमनस्क (सं० त्रि०) अभिमानी, घमण्डी।

उद्धतार्णवनिस्वन (सं० त्रि०) समुद्रकी भांति कोलाहल करनेवाला, जो समुन्दरकी तरह गरजता हो।

उद्धति (सं० स्त्री०) उत्-हन गतौ क्तिन्। १ उद्गति, ऊंचाई, चढ़ाव। २ उन्नति, तरक्की। ३ उत्पतन, ठोकर, चपेट। ४ औद्धत्य, अक्खड़पन। ५ धृष्टता, शरारत। ६ गर्व, घमण्ड।

उद्धनपुर (उद्धरणपुर)—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेका एक ग्राम। यह भागीरथी किनारे अक्षा० २३° ४१′ १०″ उ० और द्राघि० ८८° ११′ पू० पर अवस्थित है। नदीपारकरनेको नाव चला करती है। यहां रोज बाजार और पौषसंक्रान्तिको प्रति वर्ष मेला लगता है।

उद्धना (हिं० क्रि०) उद्गमन करना, उड़ना, फैल पड़ना।

उद्धम (सं० त्रि०) उत्-ध्मा-श, धमादेशः। १ ज्ञात-शब्द, जो बोला हो। (पु०) २ कष्टश्वास, हंफी। ३ शब्दकरण, आवाज निकालनेका काम।

उद्धमान (सं० क्ली०) चुल्ली, चूल्हा।

उद्धमाय (सं० अव्य०) कष्टश्वास ग्रहणकर, हांफके।

उद्धय (सं० त्रि०) पान करनेवाला, जो पीता हो।

उद्धर (सं० त्रि०) उत्-धेट-श। १ उठाकर पान करनेवाला, जो उठाकर पीता हो। (पु०) २ राक्षस विशेष।

उद्धरण (सं० क्ली०) उत्-हृ-ल्युट्। १ उद्धार, छुटकारा। २ ऋणशोध, कर्जकी चुकती। ३ उन्मूलन, उखाड़। ४ उत्तोलन, उठाव। ५ वमन, कै, उलटी। ६ निराकरण, अलगाव। ७ व्यसनादिसे विमोचन, बुरी आदत वगैरहसे बरतर्फी। ८ परिवेषण, विराव। ९ उत्पाटन, नोचखसोट। १० पठित पाठका पुनः पठन, आमोख्ता। १२ गार्हपत्य अग्निका ग्रहण। (पु०) १३ शान्तनु नरेशके पिता। इन्होंने मार्कण्डेय पुराणके कुछ अंशकी टीका बनायी थी।

उद्धरणी (हिं० स्त्री०) पठित पाठका पुनः पठन, आमोख्ता।

उद्धरणीय (सं० त्रि०) ऊपर चढ़ानेके योग्य, जो निकाल लेनेके काबिल हो।

उद्धरना (हिं० क्रि०) १ उद्धार करना, बचाना। २ उद्धार पाना, उबरना।

उद्धर्तव्य, उद्धरणीय देखो।

उद्धर्ता (सं० त्रि०) उत्-हृ-तृच्। १ उद्धारकारक, उबारनेवाला। २ उन्मूलक, उखाड़नेवाला। ३ तारणकारक, पार लगानेवाला। "विरामभर्तुर्न्द्धदपि चौरोद्धर्तरवीतई।" (याज्ञवल्क्य) ४ अंश लेनेवाला, हिस्सेदार। सम्पत्तिको पुनः प्राप्त करनेवाला, जो जायदाद फिरसे लेता हो।

उद्धर्ष (सं० पु०) उद्गतो हर्षो यस्मिन्। १ उत्सव, जलसा। प्रधानतः धार्मिक उत्सवको उद्धर्ष कहते हैं। २ अतिशय हर्ष, बड़ी खुशी। ३ कार्य करनेका उत्साह, काम बनानेका हौसला। (त्रि०) ४ उत्कृष्ट, बढ़िया। ५ जातहर्ष, खुश।

उद्धर्षण (सं० क्ली०) उत्-हृष-ल्युट्। १ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। २ प्रोत्साहन, हौसलेका बढ़ाव। ३ हर्षयुक्त करना, खुश बनानेका काम। (त्रि०) ४ उत्तेजक, हौसला बढ़ानेवाला।

उद्धर्षिणी (सं० स्त्री०) वसन्ततिलक नामक वर्णवृत्तका भेद। इसमें चार पाद पड़ते और प्रत्येकमें चौदह-चौदह अक्षर लगते हैं—

"उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः। सिंहोन्नतेयमुदिता मुनिकाश्यपेन।
उद्धर्षिणीयमुदिता मुनिसैतवेन॥" (वृत्तरत्नाकर)

उद्धर्षिन् (सं० त्रि०) उत्-हृष-णिच्-णिनि। १ उद्धर्ष-कारक, खुश करनेवाला। २ पुलकित, खड़े रोंगटे रखनेवाला।

उद्धव (सं० पु०) उत्-धूङ्-अप्। १ यज्ञाग्नि। २ उत्सव, जलसा। ३ कृष्णमातुल एक यादव। ये सत्यकके पुत्र और बृहस्पतिके शिष्य रहे। दूसरा नाम देवश्रवाः था। उद्धव अन्तिमदशाको बदरिकाश्रममें रहते थे। श्रीकृष्णने इन्हें ज्ञानका उपदेश दिया। (भागवत ११ स्कन्ध)

उद्धवमिश्र—वैद्यप्रदीप नामक वैद्यकग्रन्थके रचयिता।

उद्धस्त (सं० त्रि०) उत्क्षिप्तौ हस्तौ येन, प्रादि० बहुव्री०। उत्क्षिप्त हस्त, हाथ उठाये हुआ।

उद्धान (सं० क्ली०) उद्धयतेऽस्मिन्नग्निः, उत्-धा-ल्युट्। १ चुल्ली, चूल्हा। २ वमन, कै। (त्रि०) ३ उद्गत, उठा या चढ़ा हुआ। ४ वमित, उगला हुआ। ५ स्थूल, मोटा, सूजा हुआ।

उद्धान्त (सं० पु०) उत्-धन-णिच्-क्त। १ मद-शून्य हस्ती, जिस हाथीके मस्तकसे मद न बहे। (त्रि०) २ वमित, उगला हुआ।

उद्धार (सं० पु०) उद्‌ध्रियते, उत्-हृ भावे घञ्। १ मुक्ति, नजात, छुटकारा। २ पतित या समाजच्युत व्यक्तिका ग्रहण, गिरे या जातसे खारिज शख़सको फिर मिला लेनेका काम। ३ ऋणशोध, अदाकर्ज़। ४ नष्टवस्तुका पुनरधिकार, खोयी हुयी चीज़पर फिरसे क़बज़ा करनेकी बात। ५ अंशभेद। मनुने उद्धारका नियम इसप्रकार रखा है—

"ज्येष्ठस्य विंश उद्धारः सर्वद्रव्याच्च यद्वरम्।
ततोऽर्धं मध्यमस्य स्यात् तुरीयन्तु यवीयसः॥
ज्येष्ठश्चैव कनिष्ठश्च संहरेतां यथोदितम्।
येऽन्ये ज्येष्ठकनिष्ठाभ्यां तेषां स्यान्मध्यमं धनम्॥
सर्वेषां धनजातानामाददीताग्र्यमग्रजः।
यच्च सातिशयं किञ्चिद्दशतश्चाप्नुयाद्वरम्॥
उद्धारो न दशस्वस्ति सम्पन्नानां स्वकर्मसु।
यत्किञ्चिदेव देयन्तु ज्यायसे मानवर्धनम्॥
एवं समुद्धृतोद्धारे समानंशान् प्रकल्पयेत्।
उद्धारेऽनुद्धृते त्वेषामियं स्यादंशकल्पना॥
एवं स्वमुद्धारं संहरेत स पूर्वजः।
ततोऽपरे ज्येष्ठवासादूनानां स्वमानतः॥" (९ अ० ११२-११६ श्लो०)

पैतृक धनके विभाग कालपर विंश ज्येष्ठ, चत्वारिंशद् मध्यम और अशीति भाग कनिष्ठको मिलना चाहिये। फिर अवशिष्टांश सकलको बराबर बराबर प्राप्य है। ज्येष्ठ और कनिष्ठके मध्यगत सकल भ्राता चत्वारिंशद् भागके अधिकारी होते हैं। ज्येष्ठ यदि गुणवान् रहे, तो द्रव्य सामग्रीके मध्य उत्कृष्ट वस्तु, सकल और १० गाभीमें श्रेष्ठ गाभी उसको मिले। सकल भ्राता समान गुणसम्पन्न होनेसे ज्येष्ठको दशम पदार्थ प्राप्य नहीं। फिर भी सम्मानकी रक्षाके लिये यत्किञ्चित् उसे अधिक देना उचित है। अवशिष्ट सकल धन भ्राता बराबर बांट लें। पैतृक धन बंटते समय ज्येष्ठको दूना, मध्यमको आधा और तद्भिन्न सकलको एक एक अंश मिलेगा। प्रथम विवाहितासे कनिष्ठ और पश्चात् परिणीता पत्नीसे ज्येष्ठ सन्तान रहनेपर प्रथम स्त्रीगर्भजात, कनिष्ठ पड़ते भी एक श्रेष्ठ वृष उद्धाररूप पाता है। फिर अपर पत्नीगर्भज सन्तानको माताके कनिष्ठानुसार अपकृष्ट वृष मिलेगा।

उद्धारक (सं० त्रि०) उद्धार करनेवाला, जो उठाता या निकालता हो।

उद्धारण (सं० क्ली०) उत्-धृ-णिच्-ल्युट्। १ उत्थापन, उठाव। उत्-हृ-णिच्-ल्युट्। २ उद्धारसाधन, उबार, बचाव। ३ भागकरण, बंटवारा।

उद्धारणदत्त (सं० पु०) महाप्रभु चैतन्यदेवके एक प्रसिद्ध भक्त। १४०३ शकको त्रिवेणीतीरवर्ती सप्तग्राममें इन्होंने जन्म लिया था। पिताका श्रीकरदत्त और माताका नाम भद्रावती रहा। गोत्र शाण्डिल्य था। ये घरमें अपने पुत्र श्रीनिवासको छोड़ और वाणिज्यका कार्य सौंप विवेकाचारी बने। नीलाचलमें उद्धारण-दत्त प्रभुसे मिलने प्रायः जाते और प्रसाद मांगकर खाते थे।

उद्धारना (हिं० क्रि०) उद्धार करना, छोड़ाना।

उद्धारपल्य—जैन-शास्त्रानुसार एक योजन लंबे एक योजन चौड़े और एक योजन गहरे खुदे हुये गड्ढेमें एक दिनसे लेकर सात दिनके भीतर २ पैदा हुये भेड़ोंके बच्चोंके बाल मुंह तक ऐसे काट २ कर भरे जिनके फिर टुकड़े न हो सकें तो ऐसे गड्ढेका नाम *व्यवहारपल्य* है। और उन अविभागी बालोंके टुकड़ोंमेंसे हर एक टुकड़ेके-जितने असंख्यात करोड़ वर्षोंके समय होते हैं उतने ही कल्पनासे टुकड़े किये जाय और उनसे पूर्वोक्त परिमाणवाला गढ़ा भरा जाय तो उस भरे हुये गढ़ेका नाम उद्धारपल्य है।

उद्धारपल्योपमकाल—जैनशास्त्रानुसार उद्धारपल्यमें भरे हुये कल्पित बालोंके टुकड़ोंमेंसे एक एक टुकड़ा यदि एक एक समयमें निकाला जाय तो जितने कालमें वह गढ़ा खाली हो जायगा उतने ही कालका नाम उद्धारपल्योपमकाल है।

उद्धारविभाग (सं० पु०) अंशका विभाग, तकसीम-हिस्सा।

उद्धारसागर—जैनशास्त्रानुसार दश कोड़ाकोड़ी उद्धार-पल्योंका यह होता है।

उद्धारसागरोपमकाल—जैनशास्त्रानुसार दश कोडाकोडी उद्धारपल्योपमकालोंका यह होता है।

उद्धारा (सं० स्त्री०) गुड़ूची, गुर्च।

उद्धारित (सं० त्रि०) कृतोद्धार, छोड़ाया हुआ, जो बचा लिया गया हो।

उद्धि (सं० पु०) ऊर्ध्वको-धारण, ऊपरको उठाव। २ अचाग्रस्थित शकटभाग, धुरीपर टिकनेवाला गाड़ीका हिस्सा। ३ उखास्थापनका मृण्मय उपष्टम्भ।

उद्धित (सं० त्रि०) स्थापित, दण्डायमान, रखा या खड़ा हुआ।

उद्धुर (सं० त्रि०) उत्-धुर्-क, प्रादि बहुव्री०। १ भारशून्य, बेबार, जिसपे बोझ या जुवा न रहे। २ दृढ़, मज़बूत। ३ उच्च, ऊंचा। ४ बन्द हो आनेवाला, जो निकल पड़ता हो। ५ प्रमत्त, खुश, जो रोकमें न हो।

उद्धूत (सं० त्रि०) उत्-धू-क्त। उत्कम्पित, हिला-हुला, जो छूट पड़ा हो। २ उत्पाटित, नोचा हुआ। ३ निरस्त, निकाला हुआ। ४ उत्क्षिप्त, उछाला हुआ। ५ प्रतीत, बढ़ाया हुआ। ६ उच्च, ऊंचा।

उद्धूतपाप (सं० त्रि०) पापको छोड़ाये हुआ, जो गुनाहको अलग कर चुका हो।

उद्धूनन (सं० क्ली०) उत्-धू-णिच्-णुक् भावे ल्युट्। १ कम्पन, कंपकंपी। २ उत्क्षेपण, उछाल।

उद्धूपन (सं० क्ली०) उत्-धूप्-भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्व सञ्चालन, ऊपरको उठाव। २ वासनकार्य, सोंधाव। करणे ल्युट्। ३ धूप। ४ धूना।

उद्धूलन (सं० क्ली०) १ घर्षकरण, घिसाई। २ सतैल-लवङ्ग-कर्पूर-कस्तूरी-मरिच-त्वक्चूर्ण, मसालेकी बुकनी। (पाकशास्त्र)

उद्धूषण (सं० क्ली०) उत्-धृष्-ल्युट्। १ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। (त्रि०) २ रोमाञ्चित, खड़े रोंगटे रखनेवाला।

उद्धृत (सं० त्रि०) रोमाञ्चित, जो खड़े रोंगटे रखता हो।

उद्धृत (सं० त्रि०) उत्-हृ-क्त। १ पृथक्कृत, अलग किया हुआ। २ मोचित, छोड़ाया हुआ। ३ उच्छेदित, तोड़ा हुआ। ४ समाजमें गृहीत, मह-फ़िलमें शामिल किया हुआ। ५ उद्धृत्त, बचाया हुआ। ६ उत्क्षिप्त, उठाया, चढ़ाया या बढ़ाया हुआ। ७ विभक्त, बांटा हुआ। ८ उद्घाटित, खोला हुआ। ९ वमित, उगला हुआ। १० अविकल गृहीत, नक़ल किया हुआ।

उद्धृतपाणि (सं० त्रि०) उन्मुक्त हस्त, हाथ समेटे हुआ।

उद्धृतस्नेह (सं० त्रि०) हृतफेन, झाग, फेन या मलाई उतारा हुआ।

उद्धृतारि (सं० त्रि०) रिपुसूदन, दुश्मनको हटा देनेवाला।

उद्धृति (सं० स्त्री०) उत्-हृ-क्तिन्। १ उत्क्षेपण, उछाल। २उत्तोलन, उठाव। ३ आकर्षण, खिंचाव। ४ रक्षा, बचाव।

उद्धृतोद्धार (सं० त्रि०) १ निज अंशप्राप्त, अपना हिस्सा

पाये हुआ। २ निज भागदाता, किसीका हिस्सा दे देनेवाला।

उद्धृत्य (सं० अव्य०) उत्तोलन वा आकर्षण करके, उठा या खींच कर।

उद्ध्मान (सं० क्ली०) उत्-ध्मा-ल्युट्। चुल्ही, चूल्हा।

उद्ध्माय (सं० अव्य०) निश्वास या सांस छोड़कर।

उद्ध्य (सं० पु०) उज्झत्युदमिति क्यप्, निपातनात् साधुः। भिद्योद्ध्योनदे। पा ३।१।११५। १ नद, दरया। (क्ली०) २ जलोत्क्षेपण, पानीका उछाल।

उद्ध्वंस (सं० पु०) भङ्ग, फटाव, खरखराहट।

उद्बद्ध (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्वबद्ध, ऊपर बंधा हुआ, जो टंगा हो। २ बन्धनभ्रष्ट, जो खुल गया हो।

उद्बन्ध (सं० पु०) उद्बन्धन देखो।

उद्बन्धक (सं० पु०) वर्णसङ्कर जातिविशेष।

उद्बन्धन (सं० क्ली०) उत्-बन्ध भावे ल्युट्। १ कण्ठमें रज्जु डाल ऊर्ध्व बन्धन, गलेमें फांसी लगाकर टंग जानेका काम। २ मृत्युके अर्थ कण्ठमें रज्जुवेष्टन, मरनेके लिये गलेमें रस्सीकी लपेट। ३ बन्धनच्युति, बंधाईका खोलाव। ४ बन्धन, बंधाई, टंगाई।

उद्बन्धुक (वै० त्रि०) उद्बन्धन करनेवाला, जो टांगता या लटकाता हो।

उद्बल (सं० त्रि०) शक्तिशाली, ज़ोरदार।

उद्बाड़—बम्बईके गुजरात प्रान्तका एक ग्राम। यह बलसारसे १५ मील दूर है। १७४२ ई० की २८ वीं अक्तोबरको सञ्जान-पारसियोंने यहां आ अपना अग्नि प्रतिष्ठित किया था। उस समयसे बराबर इस स्थान-पर सञ्जान अग्नि जल रहा है।

उद्बाहु (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्वबाहु, हाथ उठाये हुआ। २ प्रसारित बाहु, हाथ फैलाये हुआ। ३ शुण्ड उठाये हुआ, जो सूंड़ खड़ी किये हो।

उद्बिल (सं० त्रि०) बिलसे बहिर्गत, मांदको छोड़े हुआ।

उद्बुद्ध (सं० त्रि०) उत् बुध-क्त। १ प्रस्फुटित, खिला हुआ। २ उद्दीपित, रौशन किया हुआ। ३ प्रबुद्ध, जगाया हुआ। ४ उदित, उठा हुआ। ५ अनुस्मृत, जो याद आ गया हो।

उद्बुद्धसंस्कार (सं० पु०) वासनासंसर्ग, ख़ियाल-मनसूबा, किसी बातकी यादगारी।

उद्बुद्धा (सं० स्त्री०) परकीया नायिका भेद। यह निज इच्छानुरूप परपुरुषसे स्नेह बढ़ाती है।

उद्बोध (सं० पु०) उत्-बुध-घञ्। १ किञ्चित् ज्ञान, हलकी समझ। २ न्यायादि मतसे—पूर्वज्ञ संस्कारका उद्दीपन। ३ अनुस्मरण, यादगारी, भूली हुई बातका कोई सबब पड़नेसे फिर याद आ जाना।

उद्बोधक (सं० त्रि०) उत्-बुध-णिच्-ण्वुल्। १ प्रकाशक, देखाने या बतानेवाला। २ उद्दीपक, रौशन करनेवाला। ३ उद्बोध उत्पन्न करनेवाला, जो याद दिला देता हो। जैसे—किसी व्यक्तिने काशीमें विश्वेश्वरके निकट एक श्मश्रुल पुरुषको देखा था। फिर वह प्रदेशान्तरस्थित स्वीय ग्रामको आया। वहां अन्य श्मश्रुल पुरुषको देख उसे काशीके विश्वे-श्वरका स्मरण हुआ। इसमें श्मश्रुल पुरुष उसके विश्वे-श्वर स्मरणका उद्बोधक बन गया। ४ जाग्रत करने-वाला, जो जगाता हो। (पु०) ५ सूर्य।

उद्बोधन (सं० क्ली०) उत्-बुध-णिच्-ल्युट्। १ जागरण, जगाई। २ स्मरणोत्पादन, याद दिलानेका काम। (त्रि०) ३ ज्ञानोत्पादक, समझाने, देखाने या जगाने वाला।

उद्बोधिता (सं० स्त्री०) परकीया नायिकाका एक भेद। जब परपुरुष कौशलसे स्नेह देखाता, तब इसका हृदय उसपर मुग्ध हो जाता है।

उद्भट (सं० त्रि०) उत्-भट-अच्। १ महागर्व। २ उदार, सखी। ३ श्रेष्ठ, बड़ा। (पु०) ४ अन्य बहिर्भूत। ५ कच्छप, कछुवा। ६ पूर्ण, भरपूर। ७ शूर्प, सूप। ८ सूर्य, आफ़ताब। ९ जयापीड़के सभीमस्थ सभापति। इन्होंने एक अलङ्कारका ग्रन्थ बनाया था। इन्दुराजने उसकी टीका की। (राजतरङ्गिणी ४।४९५) आनन्दवर्धन और अभिनव गुप्तने इनका वचन उद्धृत किया है।

उद्भव (सं० पु०) उत्-भू भावे अप्। १ उत्पत्ति, पैदायश।

"स्थलजौदकशाकानि पुष्पमूलफलानि च।
मेध्यवृक्षोद्भवान्यद्यात् स्नेहांश्च फलसम्भवान्॥" (मनु ६।१३)

२ विष्णु। (त्रि०) कर्तरि अच्। ३ उत्पत्तिमान्, उपजनेवाला। ४ संसारातीत, दुनियासे निराला।

उद्भवकार (सं० त्रि०) उत्पन्न करनेवाला, जो उपजाता हो।

उद्भाव (सं० पु०) १ उत्पत्ति, पैदायश। २ चित्तौदार्य, सखावत। ३ उष्मा, उमस।

उद्भावन (सं० क्ली०) उत्-भू-णिच्-ल्युट्। १ कल्पन, अन्दाज़। २ उत्पादन, पैदा करनेका काम। ३ चिन्तन, ख़याल। ४ उत्क्षेपण, उछाल। ५ अज्ञात विषय प्रकाश, न समझी बातका खोलाव। (त्रि०) ६ प्रकाशक, ज़ाहिर या रौशन करनेवाला। ७ चिन्ताकारक, फ़िक्रमन्द।

उद्भावना (सं० स्त्री०) १ कल्पना, अन्दाज़। २ उत्पत्ति, पैदायश।

उद्भावयितृ (सं० त्रि०) उन्नतिकारक, ऊपर उठा देनेवाला।

उद्भावित (सं० त्रि०) १ उपेक्षाकृत, ख़यालमें न लाया हुआ। २ कथित, कहा हुआ।

उद्भास (सं० पु०) उत्-भास् भावे घञ्। प्रकाश, चमक। २ शोभा, ख़ूबसूरती।

उद्भासन (सं० क्ली०) उत्-भास्-ल्युट्। १ उद्दीपन, चमकाहट। २ उज्ज्वलकरण, उजलाहट। (त्रि०) ३ प्रकाशक, चमकानेवाला।

उद्भासयत् (सं० त्रि०) प्रकाशक, जो रौशन कर रहा हो।

उद्भासवत् (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकदार।

उद्भासित (सं० त्रि०) उत्-भास्-क्त। १ दीप्त, चमकाया हुआ। २ शोभित, सजाया हुआ।

उद्भासिन् (सं० त्रि०) देदीप्यमान, चमकदार।

उद्भिज, उद्भिज्ज देखो।

उद्भिज्ज (सं० त्रि०) उद्भिनत्ति क्विप्, उद्भित् तथा सन् जायते जन-ड। भूमिको भेदकर जन्म लेनेवाला, जो ज़मीनको फोड़कर निकलता हो।

उद्भिज्जविद्या, उद्भिद्विद्या देखो।

उद्भित् (सं० पु०) १ तरु गुल्मादि, पेड़ झाड़ वगैरह। २ निर्झर, झरना। ३ यागभेद। (त्रि०) उद्भिद देखो।

उद्भिद् (सं० त्रि०) उत्-भिद-क्विप्। १ उद्भिज्ज, उगने वाला। २ भेदक, तोड़ डालनेवाला।

उद्भिद (सं० पु०) उत्-भिद-क। १ वृक्षादि, पेड़ वगैरह। (क्ली०) २ पांशुलवण, मतवखो नमक। (त्रि०) ३ भूमिको भेदकर उत्पन्न होनेवाला, जो ज़मीन् फोड़ कर निकलता हो।

उद्भिदजल (सं० क्ली०) वृक्षजल विशेष, पेड़का पानी। मरुभूमिमें पान्थपादप नामक एक प्रकारका वृक्ष उपजता है। उसका कोई स्थान काटनेसे स्निग्ध और शीतल जल निकलता है। उत्तप्त वालुकामय मरुभूमिमें चलते समय पथिक उक्त जल पीकर ही जीते-जागते हैं। उसी जलका नाम उद्भिदजल है।

उद्भिद्विद्या (सं० स्त्री०) जिस शास्त्र द्वारा उद्भिद्के विषयका सकल तत्त्व समझते, उसे उद्भिद्विद्या (Botany) कहते हैं। यह विज्ञानशास्त्रकी एक शाखा है। उद्देश्य—उद्भिद् सकलकी रीति और प्रकृतिका अनुसन्धान लगाना है।

उद्भिद् सजीव एवं वर्धिष्णु होता और प्राणिगणकी भांति जन्म लेता, फिर समय पाकर मृत्युके मुखमें गिर पड़ता है। मस्तिष्क न रहते भी यह अनुभवकी शक्ति रखता है। सूर्यास्तके पीछे कोई कोई उद्भिद् पत्रको लपेट सो जाता है। वह समझ भी सकता, ऋतुप्रवाह कैसा गुज़रता है। हमारे देहमें जैसे रक्त, उसके देहमें वैसे ही रस कार्य किया करता है। फिर जाति-सम्पर्कीयता भी देख पड़ती है। उद्भिद् मामा माई लता प्रभृति एवं अनेक मित्र और शत्रु रखता है।

प्रथम वह बीज रूप पर रहता, जिसके भूमिमें पड़नेसे अङ्कुरित होता है। उस समय उत्ताप, जल और वायुके यथोचित साहाय्यका प्रयोजन है। क्योंकि ताप, जल और वायु न मिलनेसे बीजस्थ अङ्कुर (काण्डस्थ भ्रूण) फिर कैसे पनपेगा?

अङ्कुरोत्पत्तिको प्रथमावस्था पर भ्रूणके स्तम्भार्थ

साधनमें लगनेसे बीजान्तर्गत सञ्चित खाद्य द्वारा उद्भिद् पुष्ट हुआ करता है। भ्रूणके एक पार्श्वसे किसी प्रकारका कोमल पदार्थ बीजके अधिकांश अङ्गमें भर जाता, जो श्वेतसार या धातुविशेष (Albumen) कहाता है। अङ्कुरोत्पत्तिके समय स्वाभाविक नियमानुसार उक्त श्वेतसार शर्कराका आकार बनाता है। शर्कराको जलमें घुलनेसे बालोद्भिद् सहज ही चाट लेता है। फिर अङ्कुरको उत्पत्तिके कालपर उद्भिद्को भिन्न भिन्न श्रेणीमें बांट देते हैं। एक बीजपत्र निकालनेवालेका एकपर्णिक (Monocotyledon) और दो बीजपत्र निकालनेवालेका द्विपर्णिक (Dicotyledon) नाम है।

एकपर्णिक उद्भिद् जबतक जीता, तबतक मेरुदण्डके अन्तिम भागसे नहीं—मध्यभागसे कितनी ही पत्ती फूट पनपा करता है। किन्तु द्विपर्णिकका उक्त भाग दीर्घ होकर भूमिमें शाखा-प्रशाखा डालता है। अधिकांश एकपर्णिकमें शाखा नहीं—केवल मस्तककी दिक् कितनी ही पत्ती पड़ती है। ताल खर्जूरादि एकपर्णिक या एकपत्रोत्पत्तिक हैं। फिर आम्र जम्बु आदि द्विपर्णिक या द्विपत्रोत्पत्तिक होते हैं।

पत्र सकलको साधारणतः किसलय, वृन्त और वृन्तकोष तीन भागमें बांटते हैं। बीजपत्रका वृन्त और वृन्तकोष अधिक पनपनेसे मेरुदण्ड निकल आता है। बीजपर अङ्कुरोत्पादक शक्तिका प्रभाव पड़नेसे उद्भिदमें मूल लगता है।

बीजसे प्रथम जो इन्द्रिय निकलता, वही मूल ठहरता है। एकपर्णिकके अन्तिम भागमें फैल जो मूल चलता, वह गौण रहता है। फिर द्विपर्णिकमें अन्तिम भागके स्वयं बढ़नेसे उपजनेवाला मूल मुख्य है। मूल प्रधानतः मिश्र या शाखान्वित और तान्तविक या तन्तुवत् बहु शाखायुक्त, दो प्रकारका होता है। वह अधोगामी है। उसमें अन्त्यभागके रसाकर्षणकी शक्ति रहती है। फिर प्रत्येक ही मूलका अन्त्य भाग वर्धिष्णु और रसाकर्षी है।

मूल तीन प्रकारका होता है—भूगर्भमूल, जलीय मूल और वायव मूल। जो मूल मृत्तिकामें रहता, उसे सब कोई भूगर्भमूल कहता है। इस श्रेणीके उद्भिद् पृथिवीके मध्य अधिक हैं। केवल जलमें रहने और अङ्कुर उत्पन्न करनेवाले उद्भिद्का मूल भूमिको न भेद जलपर ही उतराता है। इसीका नाम जलीय मूल है। जैसे—काई प्रभृति। कोई कोई उद्भिद् न तो मृत्तिकामें घुसता और न जलमें बसता, आलोक एवं वायु लेनेके लिये वल्कल या पर्वत-विवरमें धंसता है। इसका मूल हरा और काण्ड-जैसा होता है। एतद्भिन्न दूसरे प्रकारका भी मूल है। उसे परभृत मूल कहते हैं। क्योंकि वह अन्य तरुकी त्वक् फाड़ जहां पुष्टिकर रस पाता, वहीं पहुंच जाता है। वट प्रभृति वृक्षके काण्डमें ईषत् पीतवर्ण मूल लटकते देख पड़ता है। वह साधारण नहीं। उद्भिद्के तत्त्वज्ञ उसे असाधारण या अनियत मूल कहते हैं।

प्रथमावस्थामें काण्डका नाम मुकुल (Plumule) है। उसके अन्त्य भागमें एक कलिका आती, जो अन्त्य कलिका या मांझ कहाती है। उसी कलिकापर काण्डकी वृद्धि निर्भर है। उससे बीजपत्र निकलते हैं। काण्ड कई प्रकारका होता है,—१ भूतलगामी, २ ऊर्ध्वग, ३ लतायुक्त, ४ लम्बमान और ५ आरोही। प्रत्येक शब्दमें तत्तत् विवरण देखो। मूलमें नहीं—पत्र, वल्कल या अन्य उपकरण काण्डमें रहता है। काण्डकी जिस जिस गांठसे पत्ते आती, वह पर्वसन्धि (Node) कहाती है। सन्धिद्वयके मध्यस्थित भागका नाम अन्तःपर्व (Inter-node) है। काण्डका एक अंश मट्टीमें रहता है। मूलको कलिका-विकाशकी क्षमता नहीं। भूगर्भस्थ काण्डसे किसी किसी पेड़को कोंपल निकल आती है। जैसे—केलेसे। अनेक व्यक्ति भ्रान्तिक्रमसे मट्टीके मध्यस्थ काण्डको मूल-जैसा समझते हैं। वस्तुतः जो कदलीकाण्ड कहाता, वह अत्यन्त विस्तृत पत्रवृन्तसमूहका कठिन काण्डाकार होनेके सिवा दूसरा कोई द्रव्य नहीं। उसका नाम मूलाकार काण्ड (Rhizoma) है। चक्षुःसंयुक्त भूगर्भस्थ काण्डको स्फीतकाण्ड (Tuber) कहते हैं। जैसे—आलू। कभी कभी काण्डके पत्र सम्पूर्ण खिल एक या शतोधिक कठिन वस्तु उत्पन्न करते हैं।

उसीका नाम कन्द (Balb) है। वह अधिकतर मूलाकार काण्ड सदृश होता है। जैसे सुइया। काण्ड दो प्रकारका है—दारुमय और रसाल। उद्भिद्के शरीरमें जो गोलाकार वस्तु पाते है, उसे बुद्बुद (Shell) कहते हैं। बुद्बुद् अति सूक्ष्म चर्मसे निर्मित क्षुद्र क्षुद्र दाने होते हैं। उनमें कोई न कोई कठिन वा द्रव पदार्थ रहता है। उद्भिद् और प्राणीका देहका एकत्र दृढ़बद्ध बुद्बुद्के स्तरद्वारा निर्मित है। वास्तविक किसी जीवित पदार्थकी पहिचान करनेके लिये प्रथम बुद्बुद्की चिन्ता रखना पड़ती है। नारङ्गीका गूदा देखनेसे बुद्बुद्का दृष्टान्त मिलता है। बुद्बुद्का परिमाण अङ्गुलके चार सौ भागमें एकसे तीनतक बैठता है। और किसी किसी उद्भिद्में स्क्रू जैसी पेचदार नली (Spiral vessel) रहती है। ऐसे आकारविशिष्ट एवं सञ्चित पदार्थयुक्त और गोल बुद्बुद्के संयोगसे (Anular vessel) मण्डलाकार नली निकलती है। बुद्बुद् अपने मध्यस्थ सञ्चित पदार्थके कठिन पड़नेसे नालाकार बन जातेहै, जिन्हें कोष्ठ कहते हैं। कोष्ठके बहिःस्थित व्यावर्तक स्तरकी त्वक्को और बुद्बुद्विशिष्ट मध्यस्तम्भका नाम मज्जा है। एकपर्णिक उद्भिद् दारुमय काष्ठविशिष्ट होनेसे नारियल और द्विपर्णिक आमके पेड़ जैसा देख पड़ता है।

मज्जा और वल्कलके अव्यवहित निम्नभागमें अणुवीक्षणयन्त्र लगानेसे काष्ठका स्तर दृष्टिगोचर होता है। वही त्वक् और काष्ठकी वृद्धिका प्रधान स्थान है। वहां बुद्बुद् अतिसूक्ष्म प्राचीरविशिष्ट और अपने उपरिस्थ सञ्चित पदार्थसे विहीन रहते हैं। नूतन काष्ठस्तरमें निर्मोता बुद्बुद् केवल दीर्घ एवं पदार्थके सञ्चयसे परिमाणमें कठिन तथा जलद्वारा अभेद्य हो सकते हैं। अन्तरस्थ कठिन काष्ठके स्तरको सार या आन्तरिक काष्ठ (Heart-wood) कहते हैं। वह नाना वर्णयुक्त हो सकता है। सर्वापेक्षा अन्तरस्थ स्तरका नाम तन्तूत्पादक प्रदेश (Liber) है। क्योंकि कागज बननेसे पहले वृक्षका उक्त भाग निकाल लोग लिखा-पढ़ी करते थे। तन्तूत्पादक प्रदेशसे बाहर एक स्वतन्त्र हरित् एवं अस्फुट बुद्बुद होता है। उसको हरित्स्तर कहते हैं। हरित्स्तरसे बाहर पोष पैदा करनेवाला स्तर (Cortical lair) है। सर्वबहिःस्थित स्तरका नाम चर्म (Epidermis) है। यह स्तर अधिकांश देख पड़ता है। नारियल या वैसे ही वृक्षके बीच जब पत्र फूटते, तब काण्डके नववर्धिष्णु अंशवाले अग्रभागसे निकटस्थ कितने ही बुद्बुद सञ्चित पदार्थ द्वारा कठिन पड़ नली-जैसे बन जाते हैं। फिर वही नली एक बुद्बुद्के स्तरसे रचित रहती है। उक्त नली और कठिन बुद्बुद सकल एकत्र स्तवक स्तवक पर मिल काण्डमें चक्षु या तन्तु उत्पादन करते हैं।

किसी काण्डकी समस्त कलिकायें एककालमें ही व्यक्त हो डाल नहीं बनतीं। उनमें अनेक गुप्त रहतीं और वर्धिष्णुके अनिष्ट होने पर देख पड़ती हैं। कितनी ही परिवर्तित कलिकाओंके कठिन और सूच्यग्रवत् बननेसे कण्टक निकलता है।

शरीफे और पीपलके पेड़में प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे एक-एक पत्र निकलता है। इसको एकोत्तरक्रम कहते हैं। मदार और सेंहुड़ प्रभृति कितने ही पेड़ोंमें प्रत्येक पर्वकी सन्धिसे दो पत्र फूटते हैं। इसका नाम प्रतीपस्थ है।

काण्ड आदिम अवस्था पर कलिकामें रहता है। तन्मध्यस्थित स्तरविशिष्ट और घन सन्निविष्ट पत्र यथाकाल प्रस्फुटित हो सौन्दर्य, वर्णोत्कर्ष एवं सद्गन्ध द्वारा प्रकृतिको मतवाला बना देते हैं।

इन पत्रोंका निगूढ़ तत्त्व ढूंढ़नेसे नहीं मिलता। जितना ही इनकी उत्पत्तिका विषय जांचते है, उतना ही प्राणोंमें अभूतपूर्व आनन्दका सञ्चार हो निकलता है। इसलिये कहना पड़ता है—सिवा उस विश्वविधाता जगदीश्वरके कौन इसप्रकार कार्यको सुसम्पन्न कर सकता है। हम जैसे रक्तके शोधनार्थ श्वास लेते है, वैसे ही पत्र भी वायुग्रहणसे जीवगणके श्वासयन्त्रका कार्य चलाते हैं। वे वायुके ग्रहण और रेचनके सिवा अधिक परिमाणसे जलका भी निषेक करते हैं। वृष्टिका जल प्रथम गिरकर मट्टीमें घुसता है, जिसे उद्भिद्का मूल चूसता है। प्रत्येक वृक्षमें सहस्र सहस्र

पत्र होते और प्रत्येक पत्र एक-एक विन्दु जल देता है। इसीप्रकार असंख्य वृक्षोंसे अधिक परिमाणमें जल गिरता है। जल यदि पत्रसे निकल वायुमण्डलमें पुनः न पहुंचता, तो अत्यन्त ग्रीष्मके समय वह सूखकर नितान्त ही उष्णभाव धारण करता।

पत्रदल अर्थात् अन्तकिसलयको भूमि अग्रविन्दु और द्वितल है। एक आकाश और अपर तल भूमिकी ओर रहता है। दलके प्रान्तभागको धार कहते हैं। क्योंकि वह वृन्त या दण्डपत्रके तलको धारण करता है। उक्त दण्ड काण्डके साथ संयोग-स्थलपर फैलकर वृन्तकोष निकालता है। सवृन्तक पत्रमें एक बहुत स्पष्ट रेखा दलके मध्य पड़ती है। उसका नाम मध्यरेखा है। वृन्तका दण्ड स्वयं दलके मध्य न फैल प्रायः प्रवेशकालमें दो या अधिक शिरामें बंट जाता है। इन रेखाओंका दैर्घ्य प्रायः समान और उत्पत्तिस्थानसे सर्वत्र प्रसारित अथवा दलके मध्य किञ्चित् सरल या वक्र रहता है। प्रधान रेखा या शिरासे बहु शाखा ये निकलती हैं और पीछे वृद्धिगत हो पत्रदलकी सकल दिशाओंमें केशाकार सूक्ष्म सूक्ष्म प्रशाखा छोड़ती हैं। उनके परस्पर संयोगसे एक जाल बनता है। जिन उद्भिद्के पत्र इस प्रकार जालविशिष्ट रहते, उनमें दो एकको छोड़ प्रायः सकल ही द्विपर्णिक होते हैं। फिर उक्त जालविहीन और पत्रदलके मध्य समानान्तर शिराविशिष्ट पत्र एकपर्णिक हैं। जटिल शिरायुक्तको जालाकृति (Reticulate) और अपर पत्रको अजालाकृति (Non-reticulate) कहते हैं। उनमें अश्वत्थ, कटहल जालाकृति और बांस, अदरक, सर्वजया प्रभृति अजालाकृति हैं। वृन्तका दण्ड स्वयं पत्रके दलमें फैलता है। वह दलको दो भागमें बांट दक्षिण और वाम पार्श्वपर्यन्त शाखा छोड़ता है। उसको मध्यरेखा परके मध्यांश जैसी और पक्षाकार (Pinate) नाम पानेवाली होती है। फिर वृन्तका दण्ड जलके पत्रमें घुसते ही घटकर दो या अधिक शिरा निकालता है। उनमें कोई करको कमानीकी तरह प्रसारिताकार (Radiate), कोई कराकार (Palmate), कोई वक्रशिरायुक्त (Curve-nerved) और कोई दलको मध्यरेखा समान्तर शिरायुक्त (Parallel-veined) होती है। पत्र दो प्रकारके होते हैं—सरल और यौगिक। जिस पत्रमें एकसे अधिक ग्रन्थि पड़े, वह यौगिक है। अवृन्तक पत्रकी कर्णाकार (Auriculate) आकृति लक्षित होती है। सवृन्तक पत्रकी भूमि नानाप्रकार है। कहीं पानके पत्ते जैसी (Corvate), कहीं तीक्ष्ण एवं अण्डाकृति, कहीं टालू किनारेदार, कहीं दन्तुर, कहीं फलकाकृति (Lorate) किंवा एक-एक बड़ी मेहराबके अन्तर्गत छोटी छोटी मेहराबके आकारमें खण्डित (Crenate) भूमि रहती है। पत्रकी पशुका या शिरा अपने छिन्न किनारासे जो सम्बन्ध रखती, उसकी बात सहज ही समझ नहीं पड़ती। छिद्रका परिमाण अधिक रहनेसे पत्र कई खण्डमें बंट जाता है। उससमय देखने में आता है—पत्रका आकार पशुका या शिरापर निर्भर है। खण्डके पत्रकी संख्या यदि हस्ताङ्गुलिसे न्यून होती है, तो द्विखण्डित त्रिखण्डित इत्यादि उसके नाम पड़ते हैं। जिसमें दल इस प्रकार कट जाता है, वह व्यवच्छिन्न (Dissected) पत्र कहलाता—जैसे जमींकन्दका पत्ता। यौगिक पत्रका दल सहजमें ही वृन्तदण्डसे पृथक् हो जाता है। किन्तु सूख जाने पर भी अखण्ड पत्रके दण्डका वृन्तदण्डसे छूटना कठिन है।

पत्र, मुकुल और पुष्पविशिष्ट काण्ड ग्रासके ग्रहण और पुनरुत्पादनका कार्य करता है। पुष्प ही पुनरुत्पादनका साधन है। पुष्पकी कलिका प्रधान प्रधान विषयोंमें पत्रकलिका ही जैसी रहती है। जिस पत्रके कक्षमें पुष्पकी कलिका निकलती है, उसकी संज्ञा पुष्पोत्पादक पत्र (Bract) है। पुष्पोत्पादक पत्र प्रायः हरा और अपर पत्र जैसा होता है। कभी कभी बाह्य सौन्दर्य देखनेसे उसीमें पुष्प होनेका भ्रम हो जाता है। पत्रकी कलिकाके बदले अन्य पत्र कलिका, फिर उसी स्थानमें अपरापर कलिका भी पर्यायक्रमसे निकल सकती हैं। किन्तु पुष्पकी कलिकासे केवल एक पुष्प किंवा पुष्पस्तवकयुक्त शिखाका उत्पादन होता है। प्रस्फुटित पत्रकी कलिकाके मेरुदण्डको शाखा कहते हैं। फिर पुष्पकी कलिकामें

शाखाका मुख्यहन्त (Pidancle) और गौण प्रशाखाका गौणहन्त (Pedicele) नाम है। कलिका तथा पुष्पका यथास्थान और यथा क्रमपर सन्निवेश पुष्प-विन्यास (Inflorescence) कहलाता है। हक्षादिका फलोत्पादक अंश ही पुष्प है। वह चार स्तवक और परिवर्तित पत्रों द्वारा बनता है। सबसे बाहिरके दो स्तवक अन्य दो स्तवकोंके चारो तरफ रक्षावरणकी तरह लगते हैं। मध्यस्थित दो स्तवक स्त्रीपुं-जातिका भेदकरानेवाले उद्भिद्‌के इन्द्रिय हैं। उद्भिद्‌का तत्त्व समझनेवाले इन्हीं दोनोंको प्रधान इन्द्रिय बताते हैं। पुष्पके उपरोक्त चार स्तवकमें बहिःस्थको बहिरावरण (Calyx) और अन्तःस्थको अन्तरावरण (Corolla) कहते हैं। अन्तरावरणके निकट पुंस्तवक वा पुंकेशर (Stamen) और उससे दूर हन्त-दण्डके अन्त्य भाग पर स्त्रीस्तवक वा गर्भकेशर (Pistil) रहता है। बहिरावरण कितने ही परिवर्तित पत्रोंसे बनता है, जिनका नाम बहिश्छद (Sepal) है। वह अन्तरावरणके खण्ड वा दलकी अपेक्षा अधिकतर हहत् और सुरक्षित होता है। अन्तरावरण भी कितने ही पत्र वा पत्रके खण्डोंसे बनता है। उन्हें पुष्पदल (Petal) कहते हैं। अन्तरावरण बहिरावरणसे मनोरम लगते भी स्थायी नहीं होता। पुंकेशर अन्तरावरणके मध्य एवं प्रायः सर्वदा पुष्पदलके साथ एकोत्तर क्रममें रहनेसे बहिश्छदके सम्मुख हो पड़ता है। पुष्पदल और बहिश्छदके साथ पत्रका जैसा सादृश्य है, पुंकेशरके साथ वैसा देख नहीं पड़ता। स्त्रीस्तवक वा गर्भकेशर पुष्पमें मेरुदण्डके अन्त्यभागपर रहता है। उसके खण्ड वा पत्रका नाम किञ्जल्क (Capel) है।

शिखामें विन्यस्त और हन्तहीन पुष्पको मञ्जरी कहते हैं। समस्त पुष्प केवल पुं वा स्त्री जातीय रहनेसे मञ्जरी एक जातीय (Catkin) कहलाती है—जैसे शहतूत। यदि वह एक बड़े, पुष्पोत्पादक पत्रके मध्यमें लिपट जाती है, तो उसे विजातीय (Spadix) कहते हैं जैसे घुइया। विजातीयके निम्नस्थ पुष्प स्त्री जाति, मध्यस्थ पुंजाति और उपरिस्थ क्लीब अर्थात् उत्पादक गुणसे रहित होते हैं। मुख्य हन्तका दैर्घ्य असमान रहनेसे शिखायुक्त रूपको समतालिक (Corymb) कहते हैं। पुष्पोत्पादक पत्रके कक्षमें रहनेवाली अनिर्दिष्ट कलिकासे किसी किसी स्थलपर पुष्प नहीं—गौण शिखाका मकल निकलता है। फिर इस सकल शिखामें जो पुष्पोत्पादक पत्र लगता है, उससे फल पैदा होता है। ऐसे स्थलपर शिखायुक्त मञ्जरी और समतालिक रूप दोनों सरल न हो यौगिक बन जाते हैं। फूलकोबी समतालिक रूपका उदाहरण है।

कहीं कहीं छत्राकार (Umbel), मस्तकाकार (Capitulum) प्रभृति शिखाके अपर रूप देख पड़ते हैं। किसी साधारण मस्तकाकार पर स्थित कितने ही पुष्प एक-जैसे लगने पर यौगिक कहलाते हैं। फिर उनमें एक-एकको पुष्पक कहते हैं। छत्राकार या मस्तकाकार प्रभृति व्यावर्तक पुष्पके उत्पादक पत्र स्तवकका नाम पत्राच्छादन (Involucre) है। जबतक फलकी कली अनिर्दिष्ट पत्रकलिकाके समान पुष्प प्रसव नहीं करती और अपने हन्तके अन्त्य भागमें केवल एक फूल रखती है, तबतक उसकी संज्ञा अनिर्दिष्ट-पुष्प-विन्यास है। किन्तु यदि पार्श्विक कुसुम लग और उसके भीतरी फूलके फूटने पर नीचे फिर पार्श्विक कुसुम निकले और पुनः पुनः अन्त्य भागकी हृद्धि रुककर पार्श्व भागको होती रहे, तो अनिर्दिष्ट पुष्पविन्यास सदृश उसकी भी संज्ञा बहु-शिखान्वित पुष्पविन्यास पड़ती है। मंदारके पेड़की पुष्पित शिखा बिलकुल पत्रके कक्षमें न रहकर—दो हन्तके मध्यमें रहती है। इस प्रकारके पुष्पविन्यासको अकाक्षिक कहते हैं। प्रधानतः आदर्श पुष्पपत्रकी कक्षासे निकलता है। यह पत्र पुष्पोत्पादक पत्र है। जब पुष्पके बाहर एकसे अधिक पुष्पोत्पादक पत्र स्तवकाकारमें वर्तमान रहते है, तब उसका एक अतिरिक्त बहिरावरण वा उपकरण (Epicalyx) देख पड़ता है। जैसे जवाकुसुममें पुष्पोत्पादक पत्रसे दक्षिण और वाम पार्श्वस्थ दलके सम्मुख दो दो बहिश्छद रहते हैं। आदर्शपुष्पमें सबसे नीचे बहिरावरण, उसके ऊपर अन्त-

रावरण, फिर पुंकेशर और सर्वोपरि गर्भकेशर होता है। गर्भकेशरके साथ पुंकेशरका जो सम्बन्ध रहता है उसके अनुसार पुष्पका समूह तीन श्रेणीमें बंटता है। १म को अधजात (Hypogynous) अर्थात् आदर्श-रूपविशिष्ट कहते हैं। यह पुंकेशर पुष्पाधारके ऊपर और गर्भकेशरके नीचे रहता है। अम्मेका फूल नोच डालनेपर इसका उदाहरण मिलेगा। द्वितीय परिजात (Perigynous) है। इसमें तीन बहिःस्तवकके जुड़कर पुष्पाधारपर पहुंचनेसे पूर्व एक नल निकलता है—जैसे गुलाब, इमली प्रभृतिमें। तृतीय का नाम उज्जात (Eypigynous) है। इसमें उक्त नल गर्भ-केशरसे लिपटता और पुंकेशर गर्भकेशर पर चढ़ा—जैसा देख पड़ता है—जैसे अमरूद और जामुनका फल। जो केशर युक्तदलान्वित अन्तरावरण पर रहते, उन्हें दलोज्जात (Epipetalous) कहते हैं। केशरके स्थानानुसार द्विपर्णिक उद्भिद् प्रधानतः तीन श्रेणीमें विभक्त हैं। १म का अधजात और पुष्पावरणसे वियुक्त होनेपर चतुर्विंमुक्तस्तवकी (Thalamiflorae); २य का बहिरावरण, अन्तरावरण तथा केशर एकत्र मिल नलाकार रहने एवं केशर उज्जात वा परिजात पड़नेसे वियुक्त बहिःस्तवकी (Caliciflorae) और ३य का दलोज्जात केशर गर्भकेशरके ऊपर या चार पार्श्व चढ़ने तथा अन्तरावरणयुक्त दल लगनेसे द्वियुक्तान्तःस्तवकी (Corolliflorae) नाम है।

पुष्पके चार स्तवक रहनेसे सम्पूर्ण समझा जाता है। प्रथम असम्पूर्ण पुष्पमें बहिरावरण एवं अन्तरावरण नहीं पड़ता. द्वितीय अन्तरावरणका अभाव रहता और तृतीय एक जाति केशरविशिष्ट अथवा उभय केशरका भी कहीं ठिकाना नहीं लगता। केवल पुंकेशरविशिष्टको केशरी और केवल गर्भकेशर विशिष्ट पुष्पको स्त्रीकेशरी कहते हैं। समस्त पुष्प पुंकेशरी किंवा स्त्रीकेशरी होनेसे वृक्षका नाम एकलिङ्गभाक् (Diœcious) है—जैसे ककड़ी और शहतूत।

बहिरावरणके अंश अर्थात् बहिश्छद प्रायः प्रहरात्मक होते हैं। स्वतन्त्र स्वतन्त्र रहनेसे बहुच्छद (Polysepalous) और सम्पूर्ण वा असम्पूर्ण रूप मिलकर बहिश्छद नलाकार बननेसे बहिरावरणको युक्तच्छदक (Gamo-sepalous) कहते हैं। नलके मुखाग्रसे वियुक्त अंश अङ्ग (Limb) कहलाते हैं। पुष्प विनाशके बाद बहिरावरण गिर पड़ता (जैसे अफीमके फूलमें) अथवा जितने दिन किसलय चलता, उतने दिन या कुछ अधिक भी बना रहता है। अन्तरावरण भी पुष्पकी रक्षा रखनेका अन्तःस्तवक है। उसके पत्राकार इन्द्रियको दल कहते हैं। अन्तरावरणके दल परस्पर मिलनेसे युक्तदलक (Mono-petalous) और वियुक्त रहनेसे बहुदलक (Poly-petalous) नाम पड़ता है। अन्तरावरणका नियत रूप पांच प्रकार है—१ नलाकार (Tabulary) २ सुराहाकार (Hypocrateriform) ३ चक्राकार (Rotate) ४ घण्टाकार (Campanulate) और ५ धुस्तूराकार (Infundibuliform) फिर अन्तरावरणका अनियत रूप तीन प्रकार है—१ ओष्ठाकार (Labiate), २ छद्माकार (Personate) और ३ जिह्वाकार (Lingulate)। यदि अन्तरावरण बहिरावरणकी अपेक्षा दीर्घकालस्थायी रहता, तो किसी स्थलपर सत्वर गिर पड़ता है। धुस्तूर पुष्पके पुंकेशरका कार्य शेष होनेपर अन्तरावरण और बहिरावरण तिरछा तिरछा पृथक् पड़ छूट जाता है। अन्तरावरण और बहिरावरण एक वर्णका रहनेसे समवेश (Perianth) कहाता है। एकपर्णिक उद्भिद् प्रायः ऐसा ही होता है।

स्तवक या प्रधान इन्द्रियविहीन पुष्पको लग्न कहते हैं। फिर समुदय केशरका पुंस्तवक (Androecum) और समस्त गर्भकेशरका स्त्रीस्तवक (Gynœcium) नाम है। केशर दल और गर्भमें रहनेपर दो अंशमें विशिष्ट हो जाते हैं। प्रथम अंश हलके दण्ड जैसा एक नाल है। उसे सूक्ष्म हल या तन्तु (Filament) कहते हैं। फिर अति अल्प विस्तृत उसीका अग्रभाग रेणुकोष या परागकोष (Anther) कहाता है। पत्रदलके हल दण्डकी भांति अनेक स्थलपर

तन्तु भी परागकोषमें फैल जाता है। पत्रके मध्य पिंजड़े-जैसे इस अंशको योजक (Connective) कहते हैं। पराग नामसे ख्यात रेणूत्पादक परिवर्तित पुष्पके पत्रका नाम केशर है। रेणु परागकोषके अभ्यन्तरसे निकलता है। जब परागके कोषमें गर्त पड़ता, तब मध्यगत पृथक् बुद्‌बुद् प्रन्थन बदल कर रेणु बनता है। पराग नामक रेणु निकालना ही केशरका कार्य है। कारण—गर्भकेशरका मध्यगत वीज या अण्ड भरनेके लिये पराग प्रयोजनीय है। अतएव पकने पर पराग कोषके फटनेसे रेणु निकलता है। परागकोषके फटनेको प्रस्फोटन (Dehiscence) कहते हैं। संख्यामें दो बड़े तथा दो छोटे चार रहनेसे द्विद्वन्द्वक (Didynamous) और चार बड़े एवं दो छोटे छः होनेसे केशर त्रिद्वन्द्वक (Tetra dynamous) कहलाते हैं। सिवा इसके एकत्र एक राशिमें मिल जानेसे केशरका नाम एकगुच्छ (Monodelphous) पड़ता—जैसे जवाकुसुम रहता है। इसीप्रकार अधिक राशिमें केशर युक्त रहते द्विगुच्छ (Di-adelphous), त्रिगुच्छ (Triadelphous), बहुगुच्छ (polyadelphous) इत्यादि नाम पाते हैं—जैसे एरण्डके पुष्प।

पूर्व ही बता चुके—गर्भकेशरके पृथक् पृथक् खण्डको किञ्जल्क कहते हैं। किञ्जल्कके नीचे एक गर्त रहता है। उसका नाम अण्डाधार वा डिम्बकोष अथवा वीजकोष (Ovary) है। उसमें नवडिम्ब (Ovule) वा आदिवीज छिपा रहता है। अण्डाधार पर आयसदण्ड (Style) नामक एक लम्बा सूक्ष्म नल लगा होता है। आयसदण्डके शेष भागपर स्थित चपटे गोलाकार अथवा दीर्घाकार वस्तुको आशय (Stigma) कहते हैं। किञ्जल्क कभी वियुक्त हो जाते हैं—जैसे चम्पेके फूलमें। फिर कभी गर्भकेशरके स्थानपर एक ही किञ्जल्क रहता है। वह निस्सत वा विविक्त (Solitary) कहलाता है—जैसे इमलीका फूल।

किञ्जल्कके समुदय दैर्घ्यसे मध्य पर्यन्ता तक विपरीत दिक्‌में विभक्त (टंटा हुआ) एवं संलग्न धारद्वारा गठित जो कुछ कठिन कांटे रहते, उन्हें उद्भिद्‌तत्त्ववेत्ता नाड़ी (Placenta) कहते हैं। वही नव कलिकाके समान छोटे बुद्‌बुद्‌विशिष्ट सकल वस्तुओंको पुष्ट और प्रकाशित करते हैं। अण्डाधारके मध्य नाड़ीपर डिम्ब नामक बुद्‌बुद्‌विशिष्ट उन्नत वस्तु उत्पन्न होता है। बुद्‌बुद् बढ़नेपर सामान्यतः गोल पड़ जाते हैं। फिर क्रमशः एक वृन्त उन्हें पकड़ लेता है। वृन्तका नाम कौशिकवृन्त (Funiculus) है। गोल एवं वृन्तयुक्त होते समय बुद्‌बुद् अन्तरावरण तथा बहिरावरण द्वारा वेष्टित रहते हैं। यह आवरणद्वय अल्पांशको छोड़ सर्वांश ढांक लेते हैं। अल्प स्थान ही कौशिकवृन्तसे डिम्बके विपरीत शेषभागमें नल स्वरूप लगता है। इस नल या द्वारको कौशिकनली (Micropyle) कहते हैं। वृद्धिकालपर डिम्बका एक मध्यस्थ बुद्‌बुद् बहुत बढ़ जाता है। फिर उसका मध्यगत पदार्थ विभक्त हो अनेक क्षुद्र क्षुद्र बुद्‌बुद् उत्पन्न करता है। अभ्यन्तरके इस बुद्‌बुद्‌विशिष्ट कठिन वस्तुका नाम भ्रूणस्थली है। इसमें परागरेणु आने और डिम्बसे मिल जानेपर उद्भिद् भ्रूण (Embryo) उपजता है। परागरेणुकी शक्तिसे भ्रूणस्थलीमें भ्रूण निकलनेको वीजोत्पादन (Fertilization) कहते हैं। भ्रूण निकल आनेपर डिम्ब फल (Fruit) और गर्भकेशर वीज (Seed) कहलाता है।

परागका रेणु पक जानेपर पूर्ववर्णित किसी एक रीतिके अनुसार परागकोष फटनेसे बाहर निकलता है। किसी फूलमें पुंकेशर द्वारा उसी पुष्पस्थ स्त्रीकेशरका संयोग प्रायः नहीं लगता; यदि लग जाता है, तो अच्छा वीज नहीं उपजता। उद्भिद्‌तत्त्वज्ञका यह स्थिर सिद्धान्त है—अधिकांश स्थानमें किसी फूलमें पुंकेशरद्वारा उसीके गर्भकेशरको ससत्त्वा करना उद्भिद्‌गणका अभिप्रेत वा स्वभावसिद्ध कार्य नहीं। एक पुष्पके परागका रेणु अन्य पुष्पके गर्भकेशरमें पहुंचनेसे गर्भाधानका कार्य हो जाता है। यहां प्रश्न उठता—एक पुष्पका रेणु अपर पुष्पमें कैसे पहुंच सकता है? इसका उत्तर यही है—वास्तविक पतङ्ग एवं वायु उभय दूतीका कार्य चलाते

हैं। वह एक पुष्पके पुंकेशरका परागरेणु अपरके गर्भकेशरमें पहुंचाते और रेणुसे गर्भकेशरको मिलाते हैं। यदि पतङ्ग प्रथम स्त्रीपुष्पपर बैठ-कर पीछे पुंपुष्पपर पहुंचता, तो कोई कार्य नहीं निकलता। प्रथम पुंपुष्पपर बैठ पराग आच्छादित होनेसे पीछे स्त्री-पुष्पपर जानेसे पतङ्ग आनीत पराग आशयमें डालता है। पराग आशयमें पड़नेसे ही बीज उत्पन्न होता है। अनेक स्त्रीपुष्प नहीं फलते अर्थात् पकते पकते बाल्यावस्थामें ही झड़ पड़ते हैं। इसका कारण उन्हें पुंकेशरसे पराग न मिलना है। एक एक पतङ्ग एक एक उद्भिद्‌का भक्त होता है। वह अपने प्रिय पुष्पके पास पहुंच या ऊपर बैठ स्वीय पुरस्कारस्वरूप एक बिन्दु मधु ले लेता है। इसी प्रकार प्रफुल्लचित्त पुष्पसे पुष्पान्तरपर घूमते घूमते पतङ्ग परागके रेणुको दूसरे स्थान पहुंचाता और बीज उपजाता है। पुनः पुनः मिलनेके लिये पुष्प सकल सुरञ्जित एवं सुगन्धित होकर अपने मधुके उपहारसे उसे बहलाते रहते हैं। प्राणी-तत्त्ववित् डारविनके मतसे पतङ्गके लिये ही पुष्पका विविध वर्ण बनता है। वस्तुतः पुष्प न मिलने पर भी वह अन्य किसी उपायसे जी सकता है। किन्तु पतङ्गका साहाय्य न पानेसे उद्भिद्‌का बीजोत्पादन करना असम्भव है। कहीं कहीं सङ्कर या मिश्रजातीय वृक्ष देख पड़ते हैं। उससे जान पड़ता—पतङ्ग कर्तृक सम्पर्कीय या समधर्मी उद्भिद्‌रेणु न आने और भिन्न जातीय परागरेणु गर्भकेशरमें लग जानेसे सङ्कर वृक्ष उपजता है। वह बीजके द्वारा अपना वंश स्थायी रखनेकी चेष्टा नहीं करता, क्योंकि उसका बीज बन्ध्या होता है। अथवा यदि बीज बन्ध्या नहीं निकलता, तो तदारा उद्भूत वृक्ष क्रमशः आदि उद्भिद्‌द्वयके एकका आकार पकड़ता है।

फलके आवरण तीन हैं—अन्तरावर्तक (Endocarp) वा आभ्यन्तरीण, मध्यावर्तक (Mesocarp) वा मध्य और बहिरावर्तक (Epidermis) स्तर। उद्भिद्‌के विचारसे इन तीनोंमें आद्य तथा अन्त्यको किञ्चित् पक्का चर्म (pericarp) और मध्य स्तरको बुद्बुद्-मन्थन कहते हैं।

सकल फलोंके श्रेणीबद्ध करनेका उपाय नहीं, क्योंकि पृथिवीपर नाना जातीय फल विद्यमान हैं। अभीतक लोग उसका तत्त्व अच्छीतरह ठहरा नहीं सके हैं। फिर भी साधारणतः फलकी श्रेणी पांच रखी भी गयी हैं—१ कठिन (Nut), २ नीरस (Capsule), ३ शिम्ब (Pod), ४ निरस्थिक (Berry) और ५ सास्थिक (Drupe) फल।

नाड़ीसे अलग बुद्बुद् व्यक्त होनेपर गूदा (Hesperidium) पड़ता है।

अनेक स्थलमें खूब पक जानेपर फलकी चतुर्दिक्‌में एक अतिरिक्त वा तृतीय स्तर लगता है। उसे उपस्तर (Aril) कहते हैं। वह बीजके नालसे आरम्भ हो कौशिकनली पर्यन्त फैलनेपर उपस्तर (Arilus) और कौशिकनलीसे ऊपरको दिक् बढ़नेपर उपस्तरनल (Arilode) कहलाता है।

अब देखना चाहिये—उद्भिद् भोजन, पान और श्वासग्रहण करते हैं या नहीं और यदि करते हैं, तो कैसे। मूल ही उद्भिद्‌का प्रधान आकर्षकेन्द्रिय है। वही मृत्तिकामें घुस उद्भिद्‌गणके खाद्यका अधिकांश संग्रह करता है। मूल रसको औंध काण्ड और पत्रमें पहुंचाता है। उद्भिद् श्वास लिया करते हैं। वे दिनको अम्लजन और रात्रिको कारबोनिक छोड़ते हैं। फिर भी एक प्रभेद है—सूर्यालोकमें हरित् उद्भिद् निज शक्ति द्वारा वायु मण्डलस्थ कारबोनिकका उपादान घटा कारबन रखते हुये अम्लजन निकालते हैं। दिनको जो कारबोनिक निकलता है, वह समझ नहीं पड़ता। इससे देख पाते—उद्भिद् वायुमण्डलको स्वास्थ्य कर अवस्थापर लाते और हमें विशेष उपकार पहुंचाते हैं। क्योंकि वायुमें अधिक परिमाण कारबोनिक रहनेसे हमारे जीवनमें संशय था। उद्भिद् श्वास द्वारा वायु लेते और किञ्चित् अम्लजन रोक कारबोनिक निकाल देते हैं। रात्रिमें यह क्रिया होती है। इसीसे शयनागारमें अनेक उद्भिद् रहनेपर स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। संस्कृत-शास्त्रमें भी उल्लिखित है—'रात्रौ वृक्ष-मूलानि दूरतः परिवर्जयेत्।' अर्थात् रात्रिको वृक्षमूलमें

दूर ही रहना चाहिये। उद्भिद्के मूल द्वारा पीतको आम और निम्नगको जीर्ण रस कहते हैं। पीत रसके द्वारा उद्भिद् पुष्ट होता है। अक्सिजन, नाइट्रोजन, कारबन और जल व्यतीत उद्भिद्गणको जिस जिस वस्तुका प्रयोजन पड़ता, उसका मृत्तिकामें रहना आवश्यक है। जब किसी उद्भिद्का विशेष प्रयोजनीय वस्तु खेतमें नहीं रहता, तब उसकी खेतीका करना अनुचित लगता है, क्योंकि कोई फल नहीं मिलता। सकल उद्भिद् मृत्तिकासे एक ही पदार्थ नहीं लेते। प्रत्येक उद्भिद्की स्व-स्व उपयोगी मृत्तिका होती है।

कोई कोई जातीय उद्भिद् केवल रससे नहीं तृप्त होते, कीटादि जीवको भी पकड़ और रगड़ खा डालते हैं। बिहार अञ्चलमें मैदान और पहाड़की ढालू जगह पर एक प्रकारका क्षुद्र पेड़ होता है। उसके पत्र क्षुद्र, गोल, ईषद्रक्त, सुन्दर और लम्बित वृन्त द्वारा धृत रहते हैं। जब इन पत्रोंपर कीटादि बैठते, तब एकघण्टे वा अल्पकालके मध्यमें ही सूक्ष्म वस्तु द्वारा स्पृष्ट होने बाद उनके केश केन्द्राभिमुख भीतरी दिक्को झुक पड़ते हैं। अमेरिका देशके भी पेड़ बड़े अनोखे हैं। उनमें कीड़े पकड़ कर खानेका अति सुन्दर कौशल होता है। प्रति पत्रका उपरिभाग एक ग्रन्थि द्वारा पृथक्कृत और किनारा तीक्ष्ण कण्टक द्वारा वेष्टित रहता है। तलपर कितने ही छोटे छोटे कांटे नानादिक् मुड़ जाते हैं। कीड़े पकड़नेके लिये मध्यकी रेखा रक्तवर्ण होती है। यह मनोहर पत्र कीड़ेको बठते ही बन्द होकर मार डालता है। हमारे देशकी पुष्करिणीमें जो झांझ पड़ती, वह भी एक जातीय मांसाशी वा पतङ्गघातक उद्भिद् ठहरती है। उपास नामक एक प्रकारका विषवृक्ष होता है। सुन पड़ता—वह पशुपक्षी और मानवको भी मार सकता है।

उपास देखो।

किसी किसी उद्भिद्में अनुभवकी शक्ति भी अधिक रहती,—जैसे लज्जावती लता, सोला, कमरख प्रभृति हैं।

उद्भिद्में जो नानाप्रकार वर्ण देख पड़ता, उसका उत्पादक सूर्य है। सूर्यांशु रक्त, पीत और नील तीन अंशसे विशिष्ट है। ये तीनों एकत्र ही इन्द्रधनुषकी तरह नानाप्रकार वर्ण बनाते हैं। उद्भिद्का भी रक्त एवं पीत पिच्छिल, पीत तथा नील हरित् और नील एवं रक्तके सहयोगसे बैंगनी वर्ण होता है। दो एक जातीय उद्भिद् आलोकाभावसे वर्ण विशिष्ट रहते भी संख्यामें अति अल्प हैं। प्रकृत रूपसे सूर्य ही उद्भिद् पर रङ्ग चढ़ाता है।

जगत्में नानाप्रकार उद्भिद् विद्यमान हैं। प्रत्येकसे किसी न किसी विषयमें हमें उपकार पहुंचता है। किन्तु इस स्थलपर उसका परिचय देना अनावश्यक है।

उक्त मत वर्तमान युरोपीय उद्भिद्वेत्तागणका है। अब देखना चाहिये—हमारे इस भारतवर्षमें उद्भिद् विद्याकी चर्चा रही या नहीं? पूर्वतन ऋषि उद्भिद् विद्याको किस प्रकार समझते थे?

प्राचीन कालसे मुनि उद्भिद्को स्थावर जीव जैसा मानते आये हैं।

छान्दोग्योपनिषद्में कहा है—"तेषां खल्वेषां भूतानां त्रीण्येव बीजानि भवन्त्याण्डजं जीवजमुद्भिज्जमिति।" (६।३।१)

सकल भूतके मध्य तीन प्रकारका बीज है—अण्डज, जीवज और उद्भिज्ज।* ८

महाभारतमें बताया है—

"भित्त्वा तु पृथिवीं यानि जायन्ते कालपर्ययात्।
उद्भिज्जानि च तान्याहुर्भूतानि द्विजसत्तमाः॥"

कालके पर्यायसे जो पृथिवी भेदकर निकलता, उसका नाम उद्भिज्ज भूत पड़ता है। स्मृतिशास्त्रने उद्भिद् जातिको ओषधि, वनस्पति, गुच्छ, गुल्म, तृण, प्रतान और वल्ली कई श्रेणीमें विभक्त किया है,—

"उद्भिज्जाः स्थावराः सर्वे बीजकाण्डप्ररोहिणः।
ओषध्यः फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः॥
अपुष्पाः फलवन्तो ये ते वनस्पतयः स्मृताः।
पुष्पिणः फलिनश्चैव वृक्षास्तूभयतः स्मृताः॥
गुच्छगुल्मन्तु विविधं तथैव तृणजातयः।
बीजकाण्डरुहाण्येव प्रताना वल्ल्य एव च॥"

---

* ऐतरेय उपनिषद्के मतसे बीज चार प्रकारका होता है—"बीजानीतराणि चेतराणि चाण्डजानि च जारुजानि च स्वेदजानि चोद्भिज्जानि।" (३।३)

तमसा बहुरूपेण वेष्टिता कर्महेतुना ।
अन्तःसंज्ञा भवन्त्येते सुखदुःखसमन्विताः ॥" (मनु १।४८-४९)

समुदय उद्‌भिद ही स्थावर (जीव) हैं। उनमें कितने ही बीज और कितने ही रोपित काण्डसे उपजते हैं। जो बहु पुष्पयुक्त रहते और फल पकनेमें मरते, उनका नाम ओषधि रखते हैं (जैसे धान यव प्रभृति)। जो फूल न देते ही फल लाते, वे वनस्पति कहलाते हैं। फूलने या फलनेवाले दोनोंका नाम वृक्ष है। गुच्छ (मल्लिकादि) और गुल्म (इक्ष्वादि) नानाप्रकारके होते हैं। तृणजाति भी विविध हैं। प्रतान (लौकी, कुम्हड़ा वगैरह) और वल्ली (गुडूच्यादि) नानाविध हैं। यह बहुरूप कर्मके फलपर तमोगुणसे आच्छन्न हैं। इनके अन्तर चैतन्य रहता है। इन्हें सुख और दुःख भी समझ पड़ता है।

शार्ङ्गधरने इसप्रकार उद्‌भिद्‌विद्याका परिचय दिया है—

"वनस्पतिद्रुमलतागुल्माः पादपजातयः ।
बीजात् काण्डात्तथा कन्दात् तज्जन्म त्रिविधं विदुः ॥
तृणान्योषधयश्च पृथक् जातिः प्रदिश्यते ।
कन्दादिभिदास्ते यां वै पादपत्वमनुमीयते ॥
* * * *
ते वनस्पतयः प्रोक्ता विना पुष्पैः फलन्ति ये ।
द्रुमास्त्वेते निगदिताः पुष्पैः सह फलन्ति ये ॥
प्रसरन्ति प्रतानैर्यास्ता लताः परिकीर्तिताः ।
बहुस्तम्बविटपिनो ये ते गुल्माः प्रकीर्तिताः ॥
जम्बूचम्पकपुन्नागनागकेशरचिञ्चिनी ।
कपित्थबदरीबिल्वकुलत्थी प्रियङ्गवः ॥
पनसाम्रमधूकाश्च करमर्दश्च बीजजाः ।
ताम्बूली सिन्धुवारश्च तगराद्याश्च काण्डजाः ॥
पाटला दाडिमी प्लक्षकरवीरवटादयः ।
मल्लिकोदुम्बरौ कुन्दो बीजकाण्डोद्भवा मताः ॥
कुङ्कुमार्द्रकरसोनालुकाद्याः कन्दसम्भवाः ।
एलावल्युत्पलादिश्च बीजकन्दोद्भवानि हि ॥"

(शार्ङ्गधर‌प्रोक्त पादपविद्या-प्रकरण)

पादपजाति* चार प्रकार है—१ वनस्पति, २ द्रुम, ३ लता और ४ गुल्म। कुछ बीज, कुछ काण्ड और कुछ कन्दसे जन्म लेते हैं। तृण और ओषधि नामक तृणाकार सकल पृथक् जाति जैसे देखाये गये हैं। क्योंकि पादप जातिके साथ उनका जन्म मरणादि नहीं मिलता। जिनमें पुष्प नहीं खिलता अथच फल लगता, उनका नाम वनस्पति है। पुष्प और फल उभय देनेवाले द्रुम हैं। प्रसारित और प्रतानित लता कहलाते हैं। जो स्तम्बयुक्त रहते अर्थात् बड़ीबड़ी शाखा नहीं रखते, उन्हें गुल्म कहते हैं। जम्बु, चम्पक, पुन्नाग, नागकेशर, चिञ्चिनी, कपित्थ, बदरी, बिल्व, कुलथी, प्रियङ्गु, पनस, आम्र, मधुक और करमर्द प्रभृति बीजज हैं। पान, सिन्धुवार और तगर प्रभृति काण्डज होते हैं। पाटला, दाड़िम, प्लक्ष, करवीर, वट, मल्लिका, उदुम्बर तथा कुन्द प्रभृति उभयज अर्थात् बीज और काण्ड दोनोंसे उत्पन्न हैं। कुङ्कुम, आद्र, रसोन और आलू प्रभृति कन्दज हैं। एलावल्ली और उत्पलादि बीज एवं कन्द उभयसे जन्म लेते हैं।

कृषिशास्त्रके अनुसार उद्भिद् छह कई श्रेणीमें बंटे हैं—१ अग्रबीज अर्थात् अग्रभाग कलमकर लगाये जानेवाले (अपर नाम काण्डज भी रख सकते हैं), २ मूलज अर्थात् मूल गाड़नेसे उपजनेवाले (कन्दज), ३ पूर्वयोनि अर्थात् ग्रन्थि गाड़नेसे जन्म लेनेवाले (यह काण्डज जातिके अन्तर्गत हैं), ४ स्कन्धज अर्थात् अन्य वृक्षके तनेसे निकलनेवाले, ५ बीजरुह अर्थात् बीज डालनेसे पनपनेवाले और ६ सम्मूर्छन अर्थात् क्षिति, जल, वायु एवं तेजःके परस्पर समवर्द्धित आने और मृत्तिका पकानेसे प्रकाशित होनेवाले।

भारतवर्षीय ऋषिगणने उद्भिद्‌की जाति, श्रेणी, संज्ञा और लक्षण उक्त संहिता शब्द द्वारा ही कही है। उन्हें बीज, अङ्कुर, मूलादिकी उत्पत्तिका विषय

* "तृणद्रुमा वनौषध्यो गुल्मवल्लीलतादयः ।
पादपोऽस्य स्थावराः स्युः कर्मजातविशेषतः ॥'

माकन्दाद्या बीजरुहाः काण्डजास्तु पाटलः ।
अङ्कुरस्तिलबीजस्य शुष्केण मूलजास्तथा ॥" (हेम ४.१८६-१८७)

अङ्कुर—'अभिनव उद्भिद। प्ररोह। इत्यादि भी [illegible] अङ्कुरः विकृतं। इत्यमरे।' (शब्दकल्पद्रुम)

वर्तमान वैज्ञानिकोंकी तरह अवगत था। आयुर्वेदोक्त द्रव्यगुण देखनेसे सविशेष जान सकते—किसी किसी विषयमें पाश्चात्य तत्त्वविदोंकी अपेक्षा वे समधिक समझते थे।

"तत्र सिक्ता कलेभूमिरन्तरूष्मविदाथिता।
वायुना व्यूह्यमाना तु बीजत्वं प्रतिपद्यते॥
तथा व्यक्तानि बीजानि संसिक्तान्यम्भसा पुनः।
उच्छूनत्वं मृदुत्वञ्च मूलभावं प्रयाति च॥
तन्मूलादङ्कुरोत्पत्तिरङ्कुरात् पर्णसम्भवः।
पर्णात्स्कन्धस्ततः काण्डं काण्डाच्च प्रसवं पुनः॥" (राघवभट्ट)

जलसिक्त भूमि अभ्यन्तरस्थ उष्मा द्वारा पच्यमान होती है। फिर परिपाकजनित विकारविशेष जब वायुद्वारा पकड़ा या रगड़ा, तब वह उद्भिद्‌के जन्मका बीज अर्थात्‌ उपादन-कारण समझा जाता है। इसी अव्यक्त बीजसे प्ररोह निकलता है। कभी कभी प्ररोहसे व्यक्त बीज फूट पड़ता है। व्यक्त बीज सकल जलसे आर्द्र होनेपर प्रथम फूलने और मृदु तथा कोमल होने लगता है। क्रमसे वही भविष्यद्‌ अङ्कुरका मूलस्वरूप बन जाता है। मूलसे अङ्कुर, अङ्कुरसे पत्रका अवयव, पत्रके अवयवसे शाखा वा देहभाग (काण्ड) और देहभागसे प्रसव (पुष्पफलादि) उत्पन्न होता है।

सिवा इसके प्राचीन शास्त्रमें त्वक्‌सार, अन्तःसार, निःसार प्रभृति शब्दोंका उल्लेख रहनेसे सहज ही मानना पड़ता—ऋषिगणको उद्भिद्‌का तत्त्व अवश्य अवगत था। कृषिपराशर, द्रव्यगुण प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें उद्भिद्‌विद्याका सूक्ष्मतत्त्व विद्यमान है।

निम्नलिखित वचनसे भी उद्भिद्‌विद्याका प्राचीन तत्त्व प्रदर्शित होता है—

"मूलत्वक्सारनिर्यासनालस्वरसपल्लवाः।
क्षाराः क्षीरं फलं पुष्पं भस्म तैलानि कण्टकाः॥
पत्राणि शुङ्गाः कन्दाश्च प्ररोहश्चौद्भिदो गणः॥" (चरक)

उद्भिन्न (सं॰ त्रि॰) उत्‌-भिद्‌-क्त। १ उत्पन्न, पैदा। २ दलित, तोड़ा हुआ। ३ उत्थित, निकला हुआ।

उद्भू (सं॰ त्रि॰) स्थायी, पायदार।

उद्भूत (सं॰ त्रि॰) १ उत्पन्न, पैदा। २ उच्च, ऊंचा। ३ दृश्य, देख पड़नेवाला।

उद्भूतरूप (सं॰ क्ली॰) दृश्य आकार, देख पड़नेवाली सूरत।

"उद्भूतरूपं नयनस्य गोचरं द्रव्याणि तद्वन्ति पृथक्त्वसंख्ये।
विभागसंयोगपरापरत्वे स्नेहद्रवत्वं परिमाणयुक्तम्॥
क्रियाजातीर्योग्यवृत्ती समवायञ्च तादृशम्।
गृह्णाति चक्षुःसम्बन्धादालोकोद्भूतरूपयोः॥" (भाषापरिच्छेद)

उद्भूति (सं॰ स्त्री॰) उत्‌-भू-क्तिन्‌। १ उत्पत्ति, पैदायश। २ उत्तम विभूति, अच्छी हैसियत। ३ उन्नति, तरक्की, ऊंचाई।

उद्भेद (सं॰ पु॰) उत्‌-भिद्‌-घञ्‌। १ भेदके साथ प्रकाश, फोड़कर निकास।

"पुष्पोद्भेदं सह किसलयैर्भूषयानां विशेषात्‌।" (मेघदूत)

२ उदय, उठान। ३ स्फूर्ति, शिगुफ़्तगी। ४ आविष्कार, ईजाद। ५ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। ६ मिलन, मिलाप।

"उद्भेदं दृष्ट्वा तु विराधोपेयितो नरः।" (भारत-वन ८१ अ॰)

७ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें चातुर्यके साथ गुप्त किये हुये विषयका किसी कारण वश प्रकाशित होना देखाते हैं। ८ अङ्कुर, किल्ला।

उद्भेदन (सं॰ क्ली॰) उत्‌-भिद्‌ भावे ल्युट्‌। १ प्रकाशन, खोलाई। २ निर्झर, झरना।

उद्भ्यस (वै॰ त्रि॰) जो ऊंचा कर रहा हो।

"चतुर्दंष्ट्रां श्यावदतः कुम्भमुष्कां असृङ्मुखान्‌। स्वभ्यसा ये चोद्भ्यसाः।" (अथर्व ११।९।१७)

उद्भ्रम (सं॰ पु॰) उत्‌-भ्रम करणे घञ्‌, नोदात्तोपदेशेति न वृद्धिः। १ उद्वेग, उभार। २ बुद्धिलोप, बेहोशी। ३ व्याकुलता, बेचैनी। ४ ऊर्ध्वभ्रमण, चक्कर। ५ शिवगण विशेष।

उद्भ्रमण (सं॰ क्ली॰) इतस्ततः गमन, घूमफिर।

उद्भ्रान्त (सं॰ त्रि॰) उत्‌-भ्रम-क्त। १ व्याकुल, बेचैन। २ भ्रान्तियुक्त, भूलाभटका। ३ हतबुद्धि, भौचक्का। ४ आघूर्णित, चक्कर लगाता हुआ। ५ व्यस्त, लगा हुआ। ६ उच्छृङ्खल, बेक़ायदा। (पु॰) ७ खड्गादिका सञ्चालन, पटेबाजी, तलवारकी फटकार। इसमें हस्त ऊपरको उठा खड्ग घुमाते और शत्रुके आघातको बचाते हैं।

उद्भ्रान्तक (सं॰ क्ली॰) वायुमें उछाल, हवामें उठान।

उद्मन् (सं॰ स्त्री॰) महोर्मि, बहाव।

उद्य (सं॰ त्रि॰) वद-यत्। १ कथनीय, कहे जाने काबिल। (पु॰) २ नद, दरया।

उद्यत् (सं॰ त्रि॰) उत्-इन्-शतृ। १ गमनशील, चलनेवाला। २ उदयशील, निकलने या उठनेवाला। (पु॰) ३ नक्षत्र। ४ किसी पर्वतका नाम।

उद्यत (सं॰ त्रि॰) उत्-यम-क्त। १ उद्धृत, उठाया हुआ। २ उत्तोलित, उछाला हुआ। ३ उद्यमित, काम करनेवाला। ४ तत्पर, मुस्तैद। ५ प्रवृत्त, लगा हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। ६ उद्यम, काम। ७ अध्याय, बाब। ८ तालभेद।

उद्यतकार्मुक (सं॰ त्रि॰) उत्तोलित धनुःयुक्त, कमान् खींचे हुआ।

उद्यतगद (सं॰ त्रि॰) उद्गत गदयुक्त, गुर्ज ताने हुआ।

उद्यतशूल (सं॰ त्रि॰) उत्थापित शूलयुक्त, भाला उठाये हुआ।

उद्यतस्रुक् (सं॰ त्रि॰) उदकदान करनेको दर्वी उठानेवाला।

उद्यतायुध (सं॰ त्रि॰) अस्त्र उठाये हुआ, जो हथियार ताने हो।

उद्यति (सं॰ स्त्री॰) उत्-यम भावे क्तिन्। १ उद्यम, कोशिश। २ उत्थापन, उठाव।

उद्यन्तृ (सं॰ त्रि॰) उन्नायक, उठाने या तरक्की पहुंचानेवाला।

उद्यम (सं॰ पु॰) उत्-यम-घञ्, न वृद्धिः। १ प्रयास, कोशिश। २ उद्योग, काम। ३ उत्तोलन, उठाव। ४ उत्साह, हौसला।

उद्यमन (सं॰ क्ली॰) उत्-यम-णिच्-ल्युट्। १ उत्क्षेपण, उछाल। २ उत्तोलन, चढ़ाव।

उद्यमभङ्ग (सं॰ पु॰) १ प्रयासका नाश, कोशिशका बिगाड़। २ विराम, ठहराव।

उद्यमभृत् (सं॰ त्रि॰) उद्यम करनेवाला, जो कोशिश लगा रहा हो।

उद्यमित (सं॰ त्रि॰) उत्-यम-णिच्-क्त। १ उत्तोलित, उठाया हुआ। २ यत्नसे प्रेरित, तदबीरसे लगाया हुआ।

उद्यमिन् (सं॰ त्रि॰) तत्पर, मुस्तैद, जो कोशिश कर रहा हो।

उद्यान (सं॰ पु॰ क्ली॰) उत्-या आधारे ल्युट्। अर्थवतः पुंसि च। पा ३।३।११८। १ आक्रीड़, बाग। २ निःसरण, निकास। ३ प्रयोजन, मतलब। ४ उद्यम, रोज़गार, कामकाज।

उद्यानक (सं॰ क्ली॰) आराम, बाग।

उद्यानपाल (सं॰ पु॰) १ उद्यानरक्षक, माली, बाग़का मुहाफ़िज़। २ उद्यानस्वामी, बाग़का मालिक।

उद्यानपालक, उद्यानपाल देखो।

उद्यानरक्षक, उद्यानपाल देखो।

उद्यापन (सं॰ पु॰ क्ली॰) उत्-या-णिच्-ल्युट्। १ आरम्भ, यज्ञ। २ व्रतसमापन, व्रत पूरा करनेका काम।

उद्यापित (सं॰ त्रि॰) पूर्णीकृत, पूरा किया हुआ।

उद्याम (सं॰ पु॰) उद्यम्यतेऽनेन, उत्-यम करणे घञ् वा वृद्धिः। १ उत्तोलन, सीधा खड़ा करनेका काम। २ रज्जु, रस्सी।

उद्याव (सं॰ पु॰) उत्-यु उपपदे घञ्। श्रियति-यौतिपूद्रुवः। पा ३।३।४९। ऊर्ध्व-मिश्रण, मिलावट, जोड़जाड़।

उद्यास (वै॰ पु॰) उत्-यम-घञ्। १ उद्यमकर्ता, कोशिश करनेवाला। संज्ञायां घञ्। २ देवता-भेद। (वाजसनेयसंहिता १८।११)

उद्युक्त (सं॰ त्रि॰) तत्पर, मुस्तैद, ज़ोरसे काम करनेवाला।

उद्योग (सं॰ पु॰-क्ली॰) उत्-युज-घञ्। १ चेष्टा, कोशिश। "आविष्कृतप्रौढिरविद्यादिभिरुद्गमः।
इत्यादि विपरीतोयं कर्त्तव्या ममता दिशा॥" (वासवदत्ता १।११)
२ आयोजन, तैयारी। ३ महाभारतका एक पर्व।

उद्योगसमर्थ (सं॰ त्रि॰) चेष्टा करने योग्य, जो कोशिश लगा सकता हो।

उद्योगिन् (सं॰ त्रि॰) उत्-युज्-णिनि। १ उद्योगयुक्त, कोशिश करनेवाला। २ उत्साही, हौसले-मन्द।

उद्योजक (सं॰ त्रि॰) उत्-युज्-ण्वुल्। प्रवर्तक, काममें लगा देनेवाला।

उद्योत, उद्द्योत देखो।

उद्र (सं० पु०) उन्द क्लेदने रक्। १ जलचर, पानीमें रहनेवाला जानवर। २ उद्बिडाल, ऊदबिलाव।

उद्रङ्क, उद्रङ्ग देखो।

उद्रङ्ग (सं० पु०) १ नगर प्रतिमार्ग, शहर जानेको राह। २ हरिश्चन्द्रपुर। (हिवाञ्जपेय १।१।२४)

उद्रथ (सं० पु०) उद्गतो रथो यस्मात्। १ रथकील, गाड़ीकी कील। २ ताम्रचूड़ पक्षी, मुर्गा। ३ वृक्ष-विशेष, कुक्कुरमुत्ता।

उद्रपारक (सं० पु०) नागविशेष। (भारत-आदि ५७ अ०)

उद्राव (सं० पु०) उत्-रु-घञ्। १ उच्चध्वनि, बुलन्द शोर। २ पलायन, भागाभागी।

उद्राक्ष (सं० पु०) रक्तचित्रक, लाल चीत।

उद्रिक्त (सं० त्रि०) उत्-रिच-क्त। १ स्फुट, फूटा हुआ। २ स्पष्ट, साफ़। ३ चिह्नित, निशानदार।

उद्रिक्तचित्तता (सं० स्त्री०) १ पानात्ययरोग, शराब-खोरीकी बीमारी। २ मत्तता, मदहोशी।

उद्रिन् (सं० त्रि०) जलयुक्त, पानीसे भरा।

उद्रुज (सं० त्रि०) भङ्ग, तोड़ ताड़। २ उन्मूलन, उखाड़।

उद्रेक (सं० पु०) उत्-रिच-घञ्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ अतिशय, ज़ियादती। ३ उपक्रम, शुरू। ४ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें कई वस्तु एकके सम्मुख तुच्छ देखाये जाते हैं। ५ रजोगुण। ६ महानिम्ब।

उद्रेकभङ्ग (सं० पु०) आदिमें हो किसी द्रव्यका विपक्षीकरण, शुरूसे ही किसी चीज़का रङ्ग मार देना।

उद्रेका (सं० स्त्री०) महानिम्ब।

उद्रेकिन् (सं० त्रि०) अधिक, ज्यादा, भरा हुआ।

उद्रोधन (सं० क्ली०) उदय, उत्पत्ति, निकास, पैदायश।

उद्वंशीय (सं० क्ली०) साममेद। (ताण्ड्यमहाब्राह्मण)

उद्वत् (सं० स्त्री०) उच्चता, पर्वत, ऊंचाई, पहाड़।

उद्वत्सर (सं० पु०) १ वत्सर, साल। २ उदा-वत्सर।

उद्वपन (सं० क्ली०) उत्-वप्-ल्युट्। १ दान, बख्शिश। २ उत्तोलन, उठाव। ३ उत्पाटन, उखाड़।

उद्वमत् (सं० त्रि०) वमन करते हुआ, जो उगल रहा हो।

उद्वमन (सं० क्ली०) उत्-वम्-ल्युट्। उद्गिरण, वान्ति, उलटी, कै।

उद्वयस् (वै० त्रि०) उद्गतं वयो यस्मात्, प्रादि बहुव्री०। अन्नोत्पादक, बलवर्धक, अनाज या ताक़त पैदा करनेवाला। 'उद्गतं वयोऽन्नं यस्मात् वायोः स उद्वयाः वायुः वायुनैव हि धान्यानि निष्पाद्यन्ते।' (वाजसनेयभाष्ये महीधर)

उद्वर्त (सं० पु०) उत्-वृत-घञ्। १ अतिरिक्त द्रव्य, बचो हुई चीज़। २ आधिक्य, बढ़ती। (त्रि०) ३ अधिक, ज्यादा। ४ उद्वृत्त, बचा हुआ।

उद्वर्तक (सं० त्रि०) १ उत्थान-कारक, बढ़ानेवाला। २ शरीर शुद्ध करनेवाला, जो जिस्मको मलता या धोता हो। (पु०) ३ गणिताङ्क विशेष, हिसाबको एक अदद। जो अङ्क क्रियाके अर्थ रखा, वही उद्वर्तक कहा जाता है।

उद्वर्तन (सं० क्ली०) उत्-वृत-णिच् करणे ल्युट्। १ उत्पतन, चढ़ाव। २ घर्षण, मलाई। ३ विलेपन, चुपड़ाई। उद्वर्तन वात, कफ, मेद एवं अनिलको हटाकर अङ्गको ठहराता और त्वक्को प्रसाद पहुंचाता है। हरिद्रादिसे उद्वर्तन करने पर कण्डू, वैवर्ण्य और रौक्ष्य दूर होता है। इसी प्रकार तिल द्वारा उद्वर्तन कण्डू, रौक्ष्य और त्वक्के दोषका नाशन है। (राजनिघण्टु) ५ शरीर निर्मलीकरण गन्ध द्रव्यादि, जिस्म साफ करनेवाली खुशबूदार चीज़, उबटन। ६ द्रव्य द्वारा स्नेहादि अपहारक कार्य, चीज़से तेल वगैरह छोड़ानेका काम।

"वताश्लेष्मप्रशमनं मेदसः प्रविलायनम्।
स्थिरीकरणमङ्गानां त्वक्प्रसादकरं परम्॥" (सुश्रुत)

७ उत्पतन, बातका बनाव। ८ सेवन, इस्तेमाल। ९ अङ्कुरोत्पत्ति, कलियोंका फूटना। १० धातुका आकर्षण, तारकशी। ११ पेषण, कुटाई-पिसाई। १२ असदृवृत्त, बुरा चालचलन।

उद्वर्तनीय (सं० त्रि०) उद्वर्तन-छ। मार्जनीय, लगाने लायक।

उद्वर्तित (सं० त्रि०) १ उन्नत, ऊंचा किया हुआ। २ उत्पन्न, आकर्षित, जो निकला या खिंचा हो। ३ सुगन्धीकृत, मुअत्तर किया हुआ, जो महकाया गया हो।

उद्वर्धन (सं॰ क्ली॰) उत्-वृध-ल्युट्। १ अन्तर्हास, भीतरी हंसी। (विक्रमोर्वशी ४।२८७) २ वृद्धतासाधन, बढ़तीका काम। (त्रि॰) ३ वृद्धतासाधक, बढ़ा देनेवाला।

उद्वर्हण (सं॰ क्ली॰) उत्-वर्ह-ल्युट्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ उत्पाटन, नोचखसोट। ३ उद्धरण, उठाव, बचाव।

उद्वर्हित (सं॰ पु॰) उत्-वर्ह-क्त। उद्धृत, उठाया हुआ।

उद्वह (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं वहति नयति, उत्-वह-अच्। १ पुत्र, बेटा। २ सप्तविध वायुके अन्तर्गत वायुविशेष। यह प्रवहवायु पर रहता है—

"आवहः प्रवहश्चैव विवहश्च समीरणः।
परावहः संवहश्च उद्वहश्च महाबलः॥
तथा परिवहः श्रीमानुत्पातभयशंसिनः।
इत्येते क्षुभिताः सप्त मारुता गगनेचराः॥" (हरिवंश २२६ अ॰)

आवह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उद्वह और परिवह सात उत्पातसूचक क्षुभितवायु हैं। ३ उद्दामवायु, गिला पहुंचानेवाली हवा। ४ विहार, खेलकूद। ५ वर, दूल्हा। ६ गायक, गानेवाला। (त्रि॰) ७ अंशकारक, हिस्सा करनेवाला। ८ प्रधान, खास। ९ वहन करनेवाला, जो ले जाता हो।

उद्वहत् (सं॰ त्रि॰) १ आश्रयदाता, जो सहारा लगा रहा हो। २ सम्बद्ध, रखनेवाला।

उद्वहन (सं॰ क्ली॰) उत्-वह-ल्युट्। १ स्कन्धके सहारे वहन, कन्धेपर बोझका ढोना। २ विवाह, शादी। ३ आनयन, लवाई। ४ आकर्षण, खिंचाव। ५ आरोहण, चढ़ाई। ६ अधिकार, कब्जेदारी।

उद्वहा (सं॰ स्त्री॰) उत्-वह-अच्-टाप्। कन्या, बेटी।

उद्वाचन (सं॰ क्ली॰) नाद, घोष, पुकार।

उद्वादन (वै॰ क्ली॰) उत्-वद-णिच्-ल्युट्। १ ऊंचे स्वरमें आवेदन, बुलन्द आवाज़में फरियाद। "[illegible]" (आपस्तम्बश्रौत ९।३।१८) २ उच्चवाद्यकरण, ज़ोरसे बाजेका बजाना।

उद्वाल् (वै॰ त्रि॰) १ उत्कर्षयुक्त, शानदार। २ उच्च, ऊंचा। "[illegible]" (ऋक् १।११।१) "[illegible]" (सायण)

उद्वान (सं॰ पु॰) उत्-वम संज्ञायां घञ्। १ वमन, रोज़गार। २ चुल्ली, चूल्हा। ३ उद्वमन, उगाल, छांट। (त्रि॰) ४ उद्वमित, उगला हुआ।

उद्वान्त (सं॰ त्रि॰) उत्-वम-क्त। १ उद्वमित, उगला हुआ। (पु॰) उद्वतं वान्तं मदो यस्मात्। २ निर्मद गज, जो हाथी मतवाला न हो।

उद्वाप (सं॰ पु॰) उत्-वप भावे घञ्। १ उन्मूलन, उखाड़। २ उद्धरण, निकास। ३ मुण्डन, मुड़ाई।

उद्वाय (सं॰ पु॰) उत्-वा-घञ्। १ उद्वासन, निकास। २ उपशम, दबाव।

"उद्वायति उद्वायनं भावेद् प्रयान्ति।" (छान्दोग्यभाष्ये [illegible])

उद्वाप्य (सं॰ त्रि॰) अग्नु बढ़ानेवाला, जो बो रहा हो।

उद्वास (सं॰ पु॰) उत्-वस-घञ्। १ स्थानको अतिक्रम कर अन्य होनेका काम, अपनी जगहको लांघ कर पृथक् होनेकी बात। (त्रि॰) २ वस्त्र उतारे हुआ, जो कपड़े खोल चुका हो।

उद्वासन (सं॰ क्ली॰) उत्-वस-णिच्-ल्युट्। १ संस्कारभेद। इसमें यज्ञाग्नि पूर्व आसन बिछाया, यज्ञपात्र सजाया और घृतादि भराया जाता है। २ मारण, क़तल। ३ विसर्जन, छोड़ाई। ४ निष्कासन, निकलाई।

उद्वास्य (सं॰ अव्य॰) १ विसर्जन करके, छोड़कर। (त्रि॰) उत्-वस-णिच्-ण्यत्। २ उद्धरणीय, उठाने क़ाबिल। ३ उत्तोलनयोग्य, चढ़ाने लायक़। ४ यज्ञीय पशुके वधसे सम्बन्ध रखनेवाला।

उद्वाह (सं॰ पु॰) उत्-वह-घञ्। विवाह, शादी। विवाह देखो।

उद्वाहकर्मन् (सं॰ क्ली॰) विवाहसंस्कार, शादीका काम।

उद्वाहन (सं॰ क्ली॰) उत्-वह-णिच्-ल्युट्। १ विवाह, शादी। २ द्विवारकर्षितक्षेत्र, दो मरतबा जोता हुआ खेत। ३ उद्वर्तन, उठाव। ४ उद्धारसाधन, छोड़ानेका काम। ५ चिन्ता, फ़िक्र।

उद्वाहनी (सं॰ स्त्री॰) उद्वाहन-ङीप्। १ वराटक, कौड़ी। २ रस्सी, रस्सी।

उद्वाहिक (सं० त्रि०) उद्वाहः प्रयोजनमस्य, ठक्। विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताल्लिक।

"नोद्वाहिकेषु मन्त्रेषु विधवावेदनं क्वचित्।" (मनु ९।६५)

उद्वाहित (सं० त्रि०) उत्-वह-णिच्-क्त। १ विवाहित, शादी किये हुआ। आगमके मतसे कलिकालमें आगमको छोड़ अपर शास्त्रके अनुसार उद्वाहित होनेवाली नारी गर्हित है। २ उत्तोलित, उखाड़ा हुआ।

उद्वाहिन् (सं० त्रि०) १ उत्तोलन करनेवाला, जो उठाता हो। २ विवाहसम्बन्धीय, शादीके मुताल्लिक।

उद्वाहिनी (सं० स्त्री०) उद्वाह-इनि-ङीप्। रज्जु, रस्सी।

उद्वाहु (सं० त्रि०) ऊर्ध्ववाहु, हाथ उठाये हुआ।

उद्वाहुलक, उद्वाह देखो।

उद्विग्न (सं० त्रि०) उत्-विज्-क्त, ओदित इति नेट्। १ चिन्तित, फ़िक्रमन्द।

"नोद्विग्नश्चरते धर्मं नोद्विग्नश्चरते क्रियाम्।" (भारत आदि)

२ व्याकुलित, बेचैन। ३ क्षुभित, भौचक्का।

उद्विग्नचित्त (सं० त्रि०) दुःखित, अफ़सुर्दा।

उद्विजमान (सं० त्रि०) भयभीत, घबराया हुआ।

उद्बिड़ाल (सं० पु०) भूचर और जलचर जन्तुविशेष, ज़मीन और पानीमें रहनेवाला एक जानवर। (Lutra) संस्कृत ग्रन्थकारोंने इसके जलविड़ाल, जलमार्जार, जलनकुल इत्यादि नाम लिखे हैं।

वैदिक कालमें इस जन्तुको 'उद्र' कहते थे। शुक्ल यजुर्वेदमें लिखा है—

"सुपर्णः पार्जन्यानामपामुद्रोमासाङ्कश्यपो।" (२४।३७)

भिन्न भिन्न देशके शब्दोंसे इस जन्तुवाचक 'उद्र' नामका समधिक ऐक्य लक्षित है। यथा—वैदिक 'उद्र', हिन्दी 'ऊद', डेन्स 'उद्दर' वा 'ओद्दर', ओलन्दाज एवं स्विस तथा जर्मन 'ओत्तर', अंगरेजी 'ओटर', फ़ान्सीसी 'लुटर', इटलीय 'लोद्र' और स्पेनीय, लाटिन प्रभृति भाषाओंमें 'लुट्रा' कहते हैं।*

उद्बिड़ाल पृथिवीके प्रायः अधिकांश देशोंमें रहता है। तन्मध्य भारतवर्षीय उत्तर हिमगिरिसे दक्षिण कुमारी अन्तरीप पर्यन्त सर्वस्थानके नद, उपनद और ह्रदमें इसको देखते हैं। इसकी देहका सङ्गठन सकल जन्तुओंसे भिन्न है। इसका अङ्ग चपटा और अलग अलग रहता है। प्रत्यङ्ग सुदृढ़ होते भी क्षुद्र होते हैं। पैरकी एड़ी अनाच्छादित और तलभाग जालाकारसे संयत है। गात्रकी लोमावली निविड़ और क्षुद्र होती है। तन्मध्य उपरिभागके लोम कोमल और निम्नभागके अति चिक्कण रहते हैं। चक्षुके पपोटे किञ्चित् सूक्ष्म त्वक्से निर्मित और अधिकतर पक्षीजातिजैसे देख पड़ते हैं। दन्त दृढ़ एवं तीक्ष्ण होते हैं।

भारतवर्षमें तीन-चार प्रकारका उद्बिड़ाल मिलता है। परन्तु उन सबमें 'ऊद' प्राय अधिक देख पड़ता है।

ऊदबिलावके बाल बादामी या धूसर होते हैं। फिर किसीके श्वेत और किसीके पीत वर्णका धब्बा भी पड़ा रहता है। नीचेकी ओर लोम पीताभ अथवा रक्ताभ श्वेत लगते हैं। मुख कितना ही साफ़ होता है। किसीके वार्धक्यमें नारङ्गीके रङ्गकी आभा झलकती है। फिर किसीका समस्त देह पांशुवर्ण रहता है। यह पुच्छ समेत प्रायः तीन साढ़े तीन हाथ तक लम्बा बैठता है। वासस्थान अत्युच्च पार्वत्य निर्झरके निकट प्रस्तर अथवा नदनदीतीर १०।१२ इञ्च मृत्तिकाके नीचे गर्तमें होता है। यह प्रधानतः मत्स्य खाकर जीता; मछली न मिलनेपर कीड़े, मकोड़े या छोटे चिड़ेके पकड़नेमें भी काम चला लेता है। ऊदबिलाव पालनेसे हिल जाता है। कितने ही धीवर इसे पालते हैं। जब वे जाल लगाते, तब ऊदबिलाव आगे पहुंचकर मछलियोंको उसके पास खदेर लाते हैं। इससे मछली पकड़नेमें सुभीता पड़ता है। सुननेमें आया—किसी आदमीने एक ऊदबिलाव पाला था। वह कुत्तेकी तरह प्रभुकी आज्ञा मानता और जलाशयके निकट इङ्गित करते ही मछली पकड़ लाता। वयस बढ़ने पर जब कुछ उसका पराक्रम बढ़ा, तब ग्रामके मध्य किसी घरमें बहुत मछली देखने पर निकालनेका अभ्यास पड़ा। काट खानेके भयसे गृहस्थ कुछ बोल न सकते थे। इस व्यवहारसे प्रभु क्रमशः अत्यन्त विरक्त हो एकदिन

* मराठे कुत्तमाहार, तैलङ्गी नीरकुक्क अर्थात् पानीका कुत्ता, कनाड़ी नीरनाइ और हिन्दुस्थानी ऊदबिलाव कहते हैं।

उसे झीलोंमें डाल पानसे प्रायः १०।१२ कोस दूर छोड़ आये। परन्तु अपने घर वापस पहुंचनेके कुछ काल बाद ही उन्होंने देखा—अनुमान उदबिड़ाल सामने खड़े पूंछ हिला रहा है।

भूटान और आसामके उत्तर पार्वतीय प्रदेशोंमें एक प्रकारका उदबिड़ाल रहता है। उसका देह मटमैला और मुख, मस्तक तथा कण्ठदेश सादा होता है। बीच बीच हरित् या हरिताभ पिङ्गल वर्णके विन्दु पड़े रहते हैं। शावकका ईषत् पिङ्गल और वयस्क स्त्री जातिका निम्न भाग प्रायः स्वच्छ रहता है। देहका पौने दो और लाङ्गूलका आयतन एक हाथसे अधिक बैठता है। इस जातिके दो-एक उदबिड़ाल कभी कभी बङ्गदेशमें भी देख पड़ते हैं।

हिमालयके हिमप्रधान स्थानोंमें अन्य जातीय उदबिड़ाल होता है। इसके लोम वृहत्, अपरिष्कार और पिङ्गलाभ लंघणवर्ण लगते हैं। निम्न भाग लाङ्गूलके अग्रप्रदेश पर्यन्त श्वेत रहता, जिसमें धूसर और पिङ्गलाभ-मिश्रित वर्ण झलकता है। देहका दो और लाङ्गूलका आयतन प्रायः डेढ़ हाथ पड़ता है।

युरोपमें लुट्रा वलगेरिस (Lutra vulgaris) जातीय उदबिड़ाल होता है। किन्तु अमेरिकाका उदबिड़ाल उपरोक्त सकलसे वृहत् और देखनेमें अनेकांश विवर सदृश होता है। लोम अधिक मूल्यवान् रहते और भिन्न भिन्न ऋतुमें रङ्ग बदलते हैं—ग्रीष्म कालमें रूद एवं लघु तथा शीतकालमें मनोहर रक्ताभ पिङ्गल वर्ण लगते हैं। फिर भी यह विवरके लोम सदृश वृहत् नहीं। प्रतिवर्ष हजारों इस जातिके उदबिड़ाल अमेरिकासे इङ्गलेण्डको भेजे जाते हैं।

प्रशान्त महासागरके उपकूल एवं उत्तर अमेरिकाके निकटस्थ सागरसमूहमें 'सामुद्रिक उदबिड़ाल' मिलता है। लोम अपर सकल जातिकी अपेक्षा समधिक चिक्कण और अधिक मूल्यवान् हैं। सागरके मत्स्यपर जीवन चलता है। प्रायः सवा दो सौ वर्ष पहले रूसी इसे पकड़ते और बहुमूल्य लोम बेचते थे। उससे उनको अधिक लाभ होता था। जब युरोपीयोंको इसका संवाद मिला, तब उन्होंने भी चारो दिक् सहास् छोड़ उदबिड़ाल पकड़नेको उद्योग किया। भिन्न भिन्न जातियोंका इसी व्यवसाय पर आपड़ आ जानेसे लोमका मूल्य अधिक घट गया। ईष्ट इण्डिया कम्पनीके लोग इस लोमको काण्टन नगर भेजते थे। पूर्वमें इस देशके असभ्य व्यक्ति उदबिड़ाल खाते थे। रोमन कायलिकोंके धर्मग्रन्थोंमें भिन्न भिन्नके सहस्रका निषेध पड़ते भी इसका मांस नहीं छूटा। वे आपहके साथ इसे खाते थे। इसका मांस उष्ण और मत्स्यवत् स्वादु होता है।

उद्विवर्हण (सं॰ क्ली॰) उत्-वि-वृह-ल्युट्। उद्धारकरण, छुड़ा देनेका काम।

उद्वीक्षण (सं॰ क्ली॰) उत्-वि-ईक्ष भावे ल्युट्। १ ऊर्ध्व दृष्टि, उठी हुई नज़र। करणे ल्युट्। २ दर्शन, नेत्र, नज़ारा, आंख।

उद्वीक्ष्य (सं॰ अव्य॰) १ ऊर्ध्व दृष्टि डालके, ऊपर देखकर। (त्रि॰) २ देखनेके योग्य।

उद्वीत (सं॰ त्रि॰) उत्-वि-इ-क्त। १ उद्गत, उठा हुआ। २ प्लावित, या हुआ। ३ उच्छलित, उछला हुआ।

उद्बृंहण (सं॰ क्ली॰) आधिक्य, बढ़ती।

उद्वृत्त (सं॰ त्रि॰) उत्-वृत्-क्त। १ उत्क्षिप्त, ऊपर फेंका हुआ। २ उत्तोलित, उठाया हुआ। ३ जात, पैदा। ४ क्षुभित, घबराया हुआ। ५ अतिरिक्त, छोड़ा हुआ। ६ उद्गत, उगला हुआ। ७ धृतशक्ति, खानेसे बचा हुआ। ८ दुर्हस, बदचलन।

उद्वेग (सं॰ पु॰) उत्-विज् भावे घञ्। १ चिन्ता, फ़िक्र, चाह। २ भय, डर। ३ उद्भ्रम, ताज्जुब। ४ चमत्कार, रोनक़। ५ विरहजन्य दुःख, जुदाईकी तकलीफ़। ६ उद्गमन, उभार। (क्ली॰) ७ गुवाकफल, सुपारी। (त्रि॰) ८ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। ९ स्थायी, क़ायम। १० उद्गमनशील, उभरनेवाला। ११ ऊर्ध्ववाहु, हाथ उठाये हुआ।

उद्वेगिन् (सं॰ त्रि॰) १ चिन्ताकारक, फ़िक्र बढ़ानेवाला। २ चिन्तित, फ़िक्रमन्द।

उद्वेजक (सं॰ त्रि॰) दुःखदायी, तकलीफ़ देनेवाला।

उद्वेजन (सं॰ क्ली॰) उत्-विज् भावे ल्युट्। १ उद्वेग, क्षोभ। (मनु ८।११९) २ भय, डर। ३ कम्पन, कंपकंपी।

४ कष्ट, तकलीफ। ५ पश्चात्ताप, पछताव। (वि०) ६ भयप्रदर्शक, डरावना।

"स्थानप्राप्तिविहीना हि गीतवत् कुलकन्यका।
उद्वेजनी परस्यापि त्र्युमायेव श्वर्ययोः॥" (कथासरित्सागर २३।१५)

उद्वेजनीय (सं० वि०) भयप्रदर्शक, कंपा देनेवाला।

उद्वेजित (सं० वि०) उत्-विज्-णिच्-क्त। १ क्षोभित, अफसुर्दा। २ भयाकुल, घबराया हुआ।

उद्वेदि (सं० वि०) उन्नता वेदि यत्र। उन्नत वेदियुक्त, ऊंची वेदीवाला।

उद्वेय (सं० त्रि०) वायुके साथ मिश्रणयोग, जो हवामें मिलाया जा सकता हो।

उद्वेल (सं० त्रि०) उत्क्रान्तो वेलायाम्, अत्या० समा०। १ अपने तीरको प्लावित करनेवाला, जो अपना किनारा डुबा रहा हो। २ सीमातिक्रान्त, हदको लांघ जानेवाला। ३ कुलातिक्रान्त, अपने खान्दानकी हद छोड़ देनेवाला। "उद्वमयोर्व लजलराशिरुद्वेलः।" (कथासरित्०)

उद्वेलित, उद्वेल देखो।

उद्वेष्ट (सं० पु०) १ चतुर्दिक् वेष्टन, घेराई। २ नगर-वेष्टन, शहरको घेर लेनेका काम।

उद्वेष्टन (सं० क्ली०) उत्-वेष्ट-ल्युट्। १ हस्तपादका आवेष्टन, हाथपैरकी बंधाई। २ उन्मोचन, खोलाई। ३ आलिङ्गन, हमागोशी, लिपटाई।

"हृदयोद्वेष्टनं तन्द्रा लालास्रुतिररोचकः।" (सुश्रुत)

उद्वेष्टनीय (सं० वि०) उन्मोचनयोग्य, खोल देनेके काबिल।

उद्वेष्टित (सं० वि०) चतुर्दिक् आवृत, चारो ओरसे घिरा हुआ।

उद्वोढ़ (सं० पु०) उत्-वह्-तृच्। वर, शौहर, दूल्हा।

"उद्वोढापि भवेत् पापी स संसर्गात् कुलनायिके।
तेऽग्यागमनजं पापं तस्य पुंसो दिने दिने॥" (महानिर्वाणतन्त्र)

ऊधः (सं० क्ली०) वह प्राणपौष्टक क्लेदने वा असुन्। आपीन, स्तन, वाख, आयन।

उधड़ना (हिं० क्रि०) १ अपावृत होना, उचड़ जाना। २ उद्घाटित होना, खुलना। ३ निस्त्वचीतभूत होना, खाल खिंचना। ४ ताड़ित होना, बेत पड़ना। ५ उन्मुक्त होना, छूट जाना। ६ नष्ट होना, बर-बादीमें पड़ना।

उधम, ऊधम देखो।

उधर (हिं० क्रि०-वि०) तत्र, वहां, उस ओर।

उधरना (हिं० क्रि०) १ उद्धार होना, छूटना। २ उद्धार करना, छोड़ाना। ३ उधड़ना, अलग-अलग हो जाना।

उधरसे (हिं० क्रि० वि०) १ उस ओर या तर्फ़से।

उधराना (हिं० क्रि०) १ वायुसे इतस्ततः होना, हवामें उड़कर बिखर जाना। २ मदोन्मत्त होना, झगड़ा लगाना।

उधलना (हिं० क्रि०) १ कामातुर होना, मस्त पड़ना। "धी न बेटो उधल गई समधे टो।" (लोकोक्ति)

२ अन्य पुरुषके साथ पलायमान होना, दूसरे मर्दको लेकर भागना। ३ नष्ट होना, बिगड़ना।

उधली (हिं० स्त्री०) कामासक्त, छिनाल, बिगड़ी औरत। "उधली बह बभेड़े साथ देखावे।" (लोकोक्ति)

उधाड़ (हिं० पु०) उखाड़, कुश्तीका एक पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरेको लंगोटा पकड़ कर उठाता और भूमिपर गिराता है।

उधार (हिं० पु०) १ ऋण, कर्ज। "नौ नकद न तेरह उधार।" (लोकोक्ति) २ देन, मंगनी। ३ उद्धार, नजात।

उधारक (हिं०) उद्धारक देखो।

उधारना (हिं० क्रि०) उद्धार करना, छोड़ाना।

उधारी (हिं० वि०) उद्धार करनेवाला, जो निजात देता हो।

उधुनाला—वङ्गाल प्रान्तके सन्तालपरगनेका एक पुराना नाला और गांव। यह राजमहलसे दक्षिण ६ मील अक्षा० २४° ४८´ ३०´´ उ० और द्राघि० ८७° ५२´ १५´´ पू०पर अवस्थित है। १७६३ ई०में मेजर अदमसने यहां नवाब मीरकासिमकी फौज हरायी थी। गड़-खाइयोंका ध्वंसावशेष आज भी विद्यमान है। मुगलोंने नालेपर जो बढ़िया पुल बनाया, उसे गङ्गाकी धारने आगे बढ़कर बहाया है।

उधेड़ना (हिं० क्रि०) १ पृथक् पृथक् करना, खोलना। २ अपावृत करना, उचाड़ना। ३ ग्रथित करना, उलझाना। ४ तोड़ना। ५ विजय करना, जीतना। ६ इतस्ततः फेंकना, बिखराना। ७ निर्धन करना,

ग़रीब बनाना। ८ ठगना। ९ अपमानित करना, गाली देना। १० बेंत लगाना। ११ लज्जित करना, शर्म देना। १२ काटना। १३ निर्वाह करना, चलाना।

उधेड़बुन (हिं॰ स्त्री॰) १ चिन्ता, फ़िक्र। २ उपाय, तदबीर। ३ व्याकुलता, बेचैनी। ४ दुःख, तकलीफ़।

उधेरना, उधेड़ना देखो।

उध्मान (सं॰ क्ली॰) चुल्ली, चूल्हा।

उध्यार, उध्मान देखो।

उन (हिं सर्व॰) १ 'उस'का बहुवचन।

उनइस, उन्नीस देखो।

उनका (अ॰ पु॰) १ पक्षिविशेष, एक अनदेखा परिन्द। (वि॰) २ विरल, गैरमामूली, अनोखा।

उनगुनत—बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि ज़िलेके पहाड़की एक श्रेणी। आजकल इस श्रेणीमें केवल जङ्गली सूअर ही देख पड़ता है। यह सह्याद्रि पर्वत और सागर तटके समीप रहता है। शीत ऋतुमें सूअर दल-दलोंके पास आते और घण्टों लेट लगाते हैं।

उनचकोटरा—बम्बईके काठियावाड़ प्रदेशका एक ग्राम। यह एक बड़ी चटान पर अरबसागरके किनारे बसा है। सोमनाथ-पाटन और उनासे निकाले जाने-पर उनचकोटरा वाजोंकी प्रसिद्ध राजधानी रही। यहांके भीमजी वाज एक प्रसिद्ध चोर थे। यह ग्राम भांभीरसे दक्षिण-पश्चिम सात और भावनगरसे प्राय छियालीस मील दूर है। उनच-कोटरेसे एक मील उत्तर भीचकोठरेमें एक कूप है। उसमें एक ही साथ ३२ पुर चल सकते हैं।

उनचया—काठियावाड़ प्रान्तके जूनागढ़की एक तह-सील। धांकरा उपजातिके वावरिये तालुक़दार हैं। पहले उनचया एक पृथक् करद राज्य था। यह जाफ़राबादसे उत्तर-पूर्व दश और धतारवाड़ी नदीसे पूर्व एक मील पड़ता है। मिठाईका बन्दर सिर्फ़ ३ मील उत्तर है।

उनचास (हिं॰ वि॰) एकोनपञ्चाशत्, चार दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ४९।

उनचल्ली—बम्बई प्रान्तके उत्तर कनाड़ा ज़िलेका एक ग्राम। यह सिद्धपुरसे उत्तर-पश्चिम १२ मील दूर और अपनी सुन्दर जलप्रपात (Lushington falls)के लिये मशहूर है।

उनजा—गुजरात प्रान्तके बड़ोदा राज्यका एक नगर। यह अक्षा॰ २३° ४८′ १०″ उ॰ तथा द्राघि॰ ७२° २०′ पू॰ पर अवस्थित है। यहां राजपूताना-मालवा-रेल-वेका स्टेशन बना है। उनजा अहमदाबादसे उत्तर ५६ और सिद्धपुरसे दक्षिण ८ मील पड़ता है। कड़वा कुरमियोंका यह प्रधान स्थान है।

उनतदिया—बड़ोदा राज्यका एक तीर्थस्थान। यह कड़ीके निकट अवस्थित है। हिन्दू यहां महादेवका दर्शन करने आते हैं।

उनतरी—काठियावाड़ प्रान्तके झालावाड़ विभागका एक देशीय राज्य। भूमिका परिमाण ६ वर्गमील है।

उनतीस (हिं॰ वि॰) एकोनत्रिंशत, दो दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, २९।

उनदा (हिं॰) उनींदा देखो।

उन देलवार—काठियावाड़का एक प्राचीन स्थान। इसका प्राचीन नाम उन्नत नगर है। उन्नतनगर देखो।

उनमायना (हिं क्रि॰) उन्मथन करना, मथ डालना।

उनमान (हिं॰ वि॰) १ सदृश, बराबर। २ अनु-मान, अन्दाज़।

उनमानना (हिं॰ क्रि॰) अनुमान करना, अन्दाज़ लगाना।

उनमूलना (हिं॰ क्रि॰) उन्मूलन करना, उखाड़ना।

उनमेख, उन्मेष देखो।

उनमेद (हिं॰ पु॰) फन विशेष, किसी किस्मका झाग। यह प्रथम वृष्टिसे उपजता है। इससे मत्स्य मृत्युको प्राप्त होते हैं।

उनरना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्गत होना, उठना, बढ़ना। २ प्लवके साथ गमन करना, कूद-कूद चलना।

उनवना (हिं॰ क्रि॰) १ उन्नमन करना, झुक या लटक पड़ना। २ आच्छादित होना, छा जाना। ३ अकस्मात् आ पड़ना, लग जाना।

उनहर (हिं॰ वि॰) अल्प, थोड़ा, जो ज़्यादा न हो।

उनहार (हिं॰) अनुहार देखो।

उनसठ (हिं॰ वि॰) एकोनषष्टि, पांच दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ५९।

उनसरी—बलखके एक अधिवासी और सुलतान् महमूद गजनवीकी सभाके पण्डित। इन्हें प्राय अबुल कासिम उनसरी कहते हैं। यह अबुलफ़रह सनजरीके शिष्य और असजदी तथा फरुखी कविके गुरु थे। ये अपने समयके एक श्रेष्ठ विद्वान् थे। उनसरी कवि, होनेके सिवा विज्ञान और अनेक भाषाओंके भी जाननेवाले थे। गज़नी विश्वविद्यालयके समय विद्यार्थी और चार सौ कवि तथा विद्वान् इन्हें अपना गुरु मानते थे। सुलतान् महमूदकी वीरता पर इन्होंने एक ग्रन्थ बनाया था। एकबार सुलतान् अपने सेवक अय्याज़की अलकावली कटा कर पश्चात्तापमें पड़े थे। किन्तु इन्होंने उस समय ऐसी कविता बनाकर सुनायी, कि सुलतान्ने प्रसन्न हो इनका मुख तीन बार अमूल्य रत्नोंसे भरनेकी सेवकोंको आज्ञा दी। १०४० या १०४८ ई॰में इनकी मृत्यु हुई।

उनसी—एक मुसलमान कवि। इनका मुख्य नाम मुहम्मद शाह था। १५६५ ई॰में इनकी मृत्यु हुई।

उनहत्तर (हिं॰ वि॰) एकोनसप्तति, छः दहाई और नौ एकाई रखनेवाला, ६८।

उनहार (हिं॰ वि॰) समान, बराबर, कम-ज्यादा न होनेवाला।

उनहारि (हिं॰ स्त्री॰) सादृश्य, बराबरी।

उना—पञ्जाबके होशियारपुर ज़िलेसे उत्तरपूर्व एक तहसील। इसका कितना ही अंश शिवालिक गिरिमाला और हिमालयके मध्य पड़ता है। उनाके चारो ओर प्रायः सोहन नदी बहती है। उपत्यकाके प्रदेशको यशवनदुन कहते हैं। गेहूं, धान, चना, कपास, नील, ज्वार, ऊख, तम्बाकू और मकईकी उपज यहां अधिक है। इसका क्षेत्रफल ८६७ वर्गमील है। २ अपनी तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा॰ ३१° ३२´ उ॰ और द्राघि॰ ७६° २८´ पू॰ पर अवस्थित है। सिखोंके गुरु नानकके वेदी नामक वंशधर उनामें ही रहते हैं। रणजित्सिंहके अधिकार-कालमें वेदी उपाधिधारी विक्रमसिंह नामक एक व्यक्तिको सिखराजसे इसकी और अनेक निकटस्थ स्थानोंकी जागीरी सनद मिली थी। उना पर्वतपर सोहन नदीके किनारे स्थित है। यहां बाज़ार लगा करता है। लोकसंख्या प्राय साढ़े चार हज़ार है।

उनाना (हिं॰ क्रि॰) १ उन्नमित करना, झुका देना। २ तत्पर करना, कमर बंधाना। ३ श्रवण करना, कान देना। ४ आज्ञापालन करना, कहेपर चलना।

उनाव—१ युक्त प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा॰ २६° ८´ एवं २७° २´ उ॰ और द्राघि॰ ८०° ६´ तथा ८१° ५´ पू॰के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण १७४७ वर्गमील है। इसके उत्तर हरदोई, पूर्व लखनऊ, दक्षिण रायबरेली और दक्षिण-पश्चिम फ़तेहपुर तथा कानपुर ज़िला पड़ता है। लोकसंख्या प्रायः नौ लाख है। उनाव लखनऊ विभागके अन्तर्गत और युक्तप्रदेशके छोटे लाटके शासनाधीन है।

यह कृषिप्रधान स्थान है। इसमें उनाव, पुरवा, मौरावां, सफीपुर, बांगरमऊ, मोहान, नवलगञ्ज, हसनगञ्ज, महाराजगञ्ज और हरहा ये प्रधान नगर हैं।

इतिहास—पूर्व कालमें यह जिला वनादिसे भरा था। स्थानीय मनुष्योंको विश्वास है—पहले मौरावें, पुरवे और हरहेमें भर जातिका वास था। अवशिष्ट स्थानमें लोध, अहीर, ठठेरे प्रभृति जातिके लोग रहते थे।

मुहम्मद गोरीके समयसे राजपूत निज जन्मभूमिका स्नेह छोड़ उनावमें आकर बसने लगे। १२०० से १४५० ई॰ के बीच चोहान, दीक्षित, बैकवार, जनवार और गौतम यहां आये थे। पीछे परिहार, गेहलोत, गौड़ और सेंगर भी पहुंच गये।

मुसलमानोंके आक्रमणसे पहले विष्णुराज राजत्व करते थे। सैयद अला-उद्दीन्के पुत्र बहाउद्दीन्ने उन्हें जीता। क्योंकि उस समय ईरानी और काबुली सिपाही ही उनके साथ थे। और राजपुत्रका विवाह था। इस लिये मुसलमानोंको सुयोग मिला। उन्होंने धार्मिक राजाको संवाद दिया कि—'इस शादीमें हम शुभ हैं। अतएव हम अपनी औरतोंको आपकी औरतोंसे मिलनेके लिये भेजना चाहते हैं।' राजा सम्मत हो गये। इसलिये कामिनियोंके बदले सशस्त्र वीर पालकी पर बैठ अबाध दुर्गमें घुसगये। राजपुरुष उत्सवसे मत्त हो

अधिक मारा गये थे। उधर मुसलमानोंने दुर्गमें पहुंचते ही आग लगा दी और अविलम्ब ही राजदुर्ग अपने हाथमें कर लिया। राजपरिवारके निरस्त्र लोग प्रायः सब मारे गये। दुर्घटनाके समय राजपुत्र शिकार खेलने गये थे। अकस्मात् यह दारुण संवाद पा वे मानिकपुरका अपने सम्पर्कीय चन्द्रवंशके आश्रयमें भगे। उस स्थानसे उन्होंने राजपुत्रके साहाय्यार्थ मुसलमानों पर अपना सैन्य भेजा। किन्तु दोबार पराजय हुआ। युद्धमें मुसलमानोंकी फौज भी बहुत मरी। उधर बैस-राज तिलकचन्द्र अयोध्या प्रदेशके दक्षिण भागमें स्वाधीन भावसे राजत्व चलाते थे। मुसलमानोंने उनाव ले उनके परितोषार्थ कितना ही उपढौकन पहुंचाया और साथ ही यह भी कहलाया—'हमारे बुजुर्ग अलाउद्दीन् बहादुरीनसे मिलकर कन्नौज लड़ने जाते थे। लेकिन विष्णुराजने उन्हें बेइन्साफीसे मार डाला। इसीसे हमने उनाव ले लिया है।' तिलकचन्द्रने सोचा—मुसलमानोंका चिढ़ाना अच्छा नहीं, क्योंकि उनसे हमपर भी विपद् पड़ सकती है। इसप्रकार अपराध देख उन्होंने उपहार ग्रहण किया और वचन दिया—'हम आपसे विवाद बढ़ाना नहीं चाहते। हमारे अधिकारका कोई राजपूत आप लोगोंपर अस्त्र न उठायेगा।' फिर दिल्लीके सम्राट्ने सम्राट हो सैयदोंको 'जमीन्दारी'की सनद अता की थी। सिपाही-विद्रोहके समय उनावके कितने ही लोग अंगरेजोंसे लड़े। जगवारके राजा यशोसिंह फतेहगढ़में ठहर पलातक अंगरेजोंको नाना साहबके पास पकड़ भेजते थे। अंगरेज-सेनापति हावलकने उनके विरुद्ध सेना भेजी। युद्धमें यशोसिंह आहत हुये, जिससे उनके प्राण निकल गये। बलवा मिटनेपर अंगरेजोंने स्वर्गीय राजपुत्रको फांसीपर चढ़ाया और राज्यको छीन जब्त कर लगाया। उस समयसे आजतक उनाव वृटिश शासनमें ही विद्यमान है।

अधिवासियोंमें राजपूतोंकी संख्या अधिक है। फिर ब्राह्मण, गोसाईं, कायस्थ, बनिया, अहीर, लोध, माली, काछी, कोरी, चमार, नाई, तेली, तंबोली, बढ़ई, कुरमी, धोबी, कहार, कुम्हार, लोहार, मुराओ, पासी, कलवार, धानुक, भड़ी, सोनार और मल्ल प्रभृति उच्च-नीच सभी हिन्दू रहते हैं। मुसलमानोंमें पठान, शेख और सैयद ज्यादा हैं। वे प्रायः सकल ही सुन्नी सम्प्रदायभुक्त हैं।

जमीन् दोरसा, मटियार, भसुई और ऊसर चार भागोंमें विभक्त है। कई वर्षके अन्तरसे गेहूं उपजता है। जिस वर्ष गेहूं नहीं होता, उस वर्ष लोग धान, जव, अरहर, मूंग, ज्वार प्रभृति बोते हैं। ऊख, नील, सन, कपास, अफीम, तम्बाकू, सरसों और तरह तरहकी तरकारीकी खेती भी होती है।

२ अपने जिलेकी तहसील। यह अक्षा० २६° १०´ तथा २६° ४० उ० और द्राघि० ८०° २१´ एवं ८०° ४४´ पू० के मध्य अवस्थित है। चार परगने लगते हैं—उनाव, परियर, सिकन्दरपुर और हड़हा। भूमिका परिमाण ४८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः दो लाख है।

३ अपने जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २६° ३२´ २५´´ उ० और द्राघि० ८०° २´ पू० पर कान-पुरसे साढ़े ४ कोस उत्तरपूर्व अवस्थित है। कोई १५ देवदेवीके मन्दिर तथा १० मसजिद हैं। इस नगरकी प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें एक प्रवाद सुनते हैं—पूर्वकालमें उनाव नगर वनसे भरा था। कोई सवा हजार वर्ष पहले कन्नौजके अधीनस्थ गजसिंह नामक चौहान सिपाहीने इस स्थानको परिष्कार कर। 'सवाय-गढ़ा' नामक एक नगर बसाया। किन्तु अल्प दिन बाद ही वे इसे छोड़ गये थे। फिर कान्यकुब्जराज अजयपालने उनाव नगर पर अपना अधिकार जमाया। उन्होंने खांडेसिंहको इस स्थानका शासन कर्ता बनाकर भेजा था। कुछ दिन बाद उनवन्त सिंह नामक कोई बिसेन क्षत्रिय खांडेसिंहको मार इस स्थानके स्वाधीन राजा बने। उन्होंने अपने नामानुसार 'सवायगढ़ा'के बदले उनाव नाम रखा था। १४५० ई०में [illegible] राजा अमरावत सिंहके समय सैयदोंने छलकर धोखेसे इस नगरको अपने हाथ लिया।

१८५७ ई० की २८ वीं जुलाईको उनावमें सिपा-

पति हावलकके साथ विद्रोहियोंका प्रधान युद्ध हुआ था। यहां चीनी बनानेका एक पुतलीघर खुला है। उनावके पेड़े अधिक प्रसिद्ध हैं।

उनाला (हिं० पु०) ग्रीष्मऋतु, गर्मीका मौसम।

उनासी, उन्नासी देखो।

उनींदा (हिं०) उन्निद्र देखो।

उनेवाल—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। इस श्रेणीके ब्राह्मण दुर्भिक्षसे पीड़ित हो अपना देश राजपूताना छोड़ गुजरातमें जा बसे थे। ये प्रायः बड़ोदे और काठियावाड़में रहते हैं। उना ग्रामके नामपर उनेवाल कहे जाते हैं। उक्त ग्राम वेजा और वाघल राजपूतोंके नेता वेजोने इनसे छीन लिया था। प्रायः कृषिकार्य और भिक्षा पर जीविका निर्वाह करते हैं।

उन्द—काठियावाड़ प्रान्तकी एक छोटी नदी। यह लोधिकासे निकल उत्तरकी ओर बहती हुयी जोदियाके पास कच्छकी खाड़ीमें जा गिरती है।

उन्दक (सं० पु०) धवल यावनाल, सफेद मकई।

उन्दन (सं० क्लो०) क्लेदन, सिंचाई।

उन्दर, इन्दुर देखो।

उन्दरम—बम्बई प्रान्तकी एक पर्वतश्रेणी। इसके आधारपर धोलका और झालावाड़ नगर बसा है।

उन्दसरवैया—काठियावाड़का एक प्राचीन उपविभाग। आज-काल यह गोहिलवाड़में मिल गया है। क्षेत्रफल १६० वर्गमील है। पूर्वको ओर खम्भातकी खाड़ी है। शतरुञ्जी नदीके दक्षिण तट तक उन्दसरवैया विस्तृत है।

उन्दिरखेड़ा—बम्बई प्रान्तके खानदेश जिलेका एक गांव। बोरी नदीके एक द्वीपमें श्रीनागेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। कहा जाता है—त्र्यम्बकराव मामा पेठेने उक्त मन्दिर निर्माण कराया था। यह गांव त्र्यम्बक रावको पेशवाने कोई १६३ वर्ष हुये उत्सर्ग किया था। चारो ओर ७५ फीट ऊंचा प्राचीर है। नदीमें जानेके लिये सोपान लगे हैं और सुन्दर आलोकस्तम्भ खड़ा है। मन्दिर ४५ फीट लम्बा और २५ फीट चौड़ा है। द्वारप्रकोष्ठमें नन्दीकी मूर्ति है। प्रस्तर सुन्दर कारुकार्यसे खचित है।

उन्दिरमारी (सं० स्त्री०) मूषिकारी, एक बूटी। मूषिकारी कटुक तथा नेत्रको लाभ पहुंचाने, आखुका विष मारने, और व्रणदोष एवं नेत्रके रोगको मिटानेवाली है। (राजनिघण्टु)

उन्दी—वृक्ष विशेष, एक पेड़। यह बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि जिलेमें समुद्र किनारे साधारणतः उपजता है। इसके बीजका कटु-तैल मूल्यवान् है। तनेसे, छोटी नौका बनती है।

उन्दीकवाटिका—बम्बई प्रान्तके कनाड़ा जिलेका एक ग्राम। मालखेडाधिप राष्ट्रकूट-नृपति भविष्यके पुत्र अभिमन्युने इसे एक ब्राह्मणको पेठपङ्गरकवाले दक्षिण-शिवको सेवाके लिये उत्सर्ग किया था। ताम्रफलकपर उक्त विवरण लिखा है।

उन्दीवनकोष्ठक—तोण्डकराष्ट्रका एक उपविभाग। आज काल इसे उरत्तकाड़ कहते हैं। यह काञ्चीपुरमके समीप अवस्थित है। जो प्राचीन ताम्रफलक मिला, उसमें लिखा है कि—अपने मुख्यमन्त्री ब्रह्मश्रीराज वा ब्रह्म-युवराजके कहनेसे नन्दीवरम् नृपतिने अपने राज्यके २२वें वर्षमें किसी ब्राह्मणको कोड़कोली नामक इस प्रान्तका एक ग्राम उत्सर्ग किया था।

उन्दुर, इन्दुर देखो।

उन्दुरकर्णी (सं० स्त्री०) उन्दुरस्य कर्णइव, गौरादित्वात् ङीष्। आखुपर्णी, मूसाकानी।

उन्दुरु, इन्दुर देखो।

उन्दुरुक इन्दुर देखो।

उन्दुरुकर्णा (सं० स्त्री०) १ आखुपर्णी लता, चूहाकानी। २ दन्तीभेद, किसी किस्मकी दांती।

उन्दुरुकर्णिका, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दुरुकर्णी, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दुरुपर्णी, उन्दुरुकर्णा देखो।

उन्दूरु (सं० पु०) उन्द-ऊरु। इन्दुर, चूहा। संस्कृत पर्याय—मुषिक, आखु, गिरिक, वासमूषिका, मूष, मूषक, मूषिक, खनक, वभ्रु, वृष, आपनिक, वृश, दोना, मूषीका, बिलेशय और शयिर है। क्षुद्र इन्दुरको चिक, वेश्मनकुल, चिक्का, हालाहला और अञ्जनिका कहते हैं। इन्दुर देखो।

उन्दुर (सं॰ स्त्री॰) ताम्र, माला।

उन्देरी—बम्बई प्रान्तके कोलाबा सागरतटका एक द्वीप। १६८० ई॰में सीदीने यहां आई बना अपनी रक्षा की थी। महाराष्ट्रोंने उन्हें भगानेकी निष्फल चेष्टा की। १७१२ ई॰में अंगरेजोंने अपनी सेना भेज इस द्वीपके दुर्गको महाराष्ट्रोंके हाथ पड़नेसे बचाया। किन्तु १७५८ ई॰में राघवजी आङ्गरियेने उन्देरीका दुर्ग मुसलमानोंसे छीन लिया था। फिर १८४० ई॰को यह द्वीप अंगरेजोंके हाथ लगा।

उन्न (सं॰ पु॰) क्लेदक पद्मभेद, छर्दविशाप।

उन्न (सं॰ त्रि॰) उन्द-क्त। १ क्लिन्न, भिन्न, पानीदार, भरा हुआ। २ आर्द्र, भीगा। ३ सदय, मेहरबान्।

उन्नद्रम, [illegible]।

उन्नत (सं॰ त्रि॰) उद् नम-क्त। १ उच्च, ऊंचा। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ वर्धित, बढ़ा हुआ। ४ गौरवान्वित, रुतबेदार। ५ उत्थापित, उठाया हुआ। ६ पूर्ण, भरा हुआ। (पु॰) ७ अजगर। ८ बुद्धविशेष। (स्त्री॰) ९ उन्नता, ऊंचाई। १० दिन परिमाण-ज्ञापक उपाय।

"[illegible]।"

"[illegible]।

[illegible]॥"

(सिद्धान्त-शिरोमणि)

उन्नतकाल (सं॰ पु॰) उन्नतकी छाया द्वारा काल-निरूपक प्रक्रिया विशेष।

"[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।" (सिद्धान्तशिरोमणि)

"[illegible]।" (लीलावती)

उन्नतचरण (सं॰ त्रि॰) उत्क्षिप्त पादयुक्त, पैर उठाये हुआ।

उन्नतता (सं॰ स्त्री॰) उच्चता, ऊंचाई।

उन्नतनगर (सं॰ क्ली॰) एक अति प्राचीन नगर।

"[illegible]।

[illegible]॥" (स्कन्दपुराण [illegible])

वर्तमान नाम वन दिमदर* है। काठियावाड़ प्रान्तमें जूनागढ़ राज्यका यह प्राचीन नगर अक्षा॰ २१° ३५' उ॰ और द्राघि॰ ७१° ५' पू॰ पर अवस्थित है। प्राचीन उन्नतनगर वर्तमान वननगरके पासमें ही था। इसी प्राचीन नगरको पीछे लोग दिमदर कहने लगे। दोनो स्थान पास ही पास रहनेसे वनदिमदर कहलाते हैं।

* [illegible] नाम 'वनस्थली' लिखा है।

[illegible] उन्नतनगर ही [illegible] है। इस प्राचीन नगरका विवरण [illegible] इस प्रकार कहा है—

"[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

देव्युवाच।

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

भैरव उवाच।

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

[illegible]।

[illegible]॥

पूर्वकालमें यह प्राचीन नगर अति पवित्र स्थान समझा जाता था। स्कन्दपुराणके प्रभासखण्डमें वर्णित है—देवादिदेव महादेवके आदेशसे विश्वकर्माने ऋषितोया नदीके तटपर यह नगर बनाया था। यह ब्राह्मणोंके वासके लियेही निर्मित हुआ था। उस समय यहां स्थलकेश्वर नामक एक जाग्रत शिवलिङ्ग था।

मुसलमानोंके आनेसे पूर्व उन्‌-दिल्लवरमें उनेवाल नामक ब्राह्मण-सम्प्रदाय रहता था। किसी समय ब्राह्मणोंने वेजलावाजी नामक किसी सामन्तको

लिङ्गमाछादयामास यत्रैवेव शतक्रतुः।
अष्टादशसहस्राणि मुनीनामूर्ध्वरेतसाम्॥
स्थित्वा तदनुपश्यन्ति लिङ्गमेतदनुत्तमम्।
शक्रस्तु सहसा दृष्टो यत्रैवेव समन्वितः॥
यावद्ददाति शापं ते तावन्नष्टः पुरन्दरः।
दृष्ट्वा चोत्‌कोपसंयुक्तान् भगवांस्त्रिपुरान्तकः॥
उवाच शान्त्या देवो वाचा मधुरया मुनीन्।
अयं क्षिप्रा विशन्त्येताः सदा शान्तिपरायणाः॥
प्रसन्नवदना भूत्वा शृणुतां वचनं मम।
भवद्भिर्मानसंयुक्तैः स्वर्गो विमुच्यते कथम्॥
यत्रैके वसवः प्रोक्ता आदित्याश्च तथापरे।
रुद्रश्चाकाशा एके अश्विनावपि चापरौ॥
एतेषामधिपः कश्चिद्वै इन्द्रः प्रकीर्तितः।
स्वपुण्यस्य क्षये प्राप्ते यत्राहं भ्रमामि नरैः॥
एवं दुःखसमायुक्तः स्वर्गो नवोऽन्यत्र बुधैः।
तस्मात् कारणाद्विप्राः कुरुध्वं वचनं मम॥
गृह्णीध्वं नगरं रम्यं निवासाय महाप्रभम्।
प्रयत्नाममिहैवापि देवताः सर्वदा द्विजाः॥
इज्यतां विविधैर्यागैः क्रियतां पितृपूजनम्।
आतिथ्यं क्रियतां नित्यं वेदाभ्यासस्तथैव च॥
एवं वै कुर्वतां नित्यं विद्यानस्य च सञ्चयैः।
प्रसादान्मम विप्रेन्द्राः यान्ते मुक्तिर्भविष्यति॥

ऋषय ऊचुः।
असमर्था दरिद्राश्च जिताः सर्वे तपोधनाः।
नगरेणेह किं कुर्मस्तव भक्तिमभीप्सिता॥

ईश्वर उवाच।
भविष्यति तदा भक्तिर्युष्माकं परमेश्वरि।
गृह्णीध्वं नगरं रम्यं कुरुध्वं वचनं मम॥
इत्युक्त्वा भगवान् देव ईषत्स्मितविलोचनः।
सस्मार विश्वकर्माणं सुरशिल्पिविदाम्बरम्॥
स्मृतमात्रो विश्वकर्मा प्राञ्जलिरग्रतः स्थितः।
आज्ञापयतु मां देवो वचनं करवाणि ते॥

ईश्वर उवाच।
नगरं क्रियतां स्वष्टः विप्रार्थे सुन्दरं शुभम्।
इत्युक्तो विश्वकर्मा तां भूमिं वीक्ष्य समन्ततः॥
उवाच प्रणतो भूत्वा शङ्करं लोकशङ्करम्।
परीक्षिता मया भूमिर्न युक्तं नगरं त्विह॥
अत्र देवकृतार्थे शक्तिश्च पतनं तथा।
यतिभिश्चात्र वस्तव्यं न युक्तं गृहमेधिनाम्॥
त्रिरात्रं पञ्चरात्रं वा सप्तरात्रं महेश्वर।
पक्षं मासमतुश्चापि अयनं गृहमेधिभिः॥
पुत्रदारयुतैस्तीर्थे वस्तव्यं गृहमेधिभिः।
वसतूर्ध्वं तु पक्षामासाद् यदा तीर्थे गृहाधिपः॥
अवज्ञा जायते तस्य मनयाप्यशकं भवेत्॥
तदा धर्मा विनश्यन्ति सकला गृहमेधिनः॥
इत्युक्तः स तदा देवस्तेन वै विश्वकर्मणा।
पुनः प्रोवाच वै तस्य निशम्य वचनं शिवः।
रोचते मे न वासोऽयं विप्राणां गृहमेधिनाम्॥
यत्र चोत्पादितं लिङ्गं ऋषितायास्तटे शुभे।
तत्र निर्मापय स्वष्टर्नगरं शिल्पिनां वर॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा विश्वकर्मा त्वरान्वितः।
गत्वा चकार नगरं शिल्पिकोटिभिरावृतम्॥
उन्नतं नाम यं लोके विख्यातं सुरसुन्दरि।
ततो हृष्टमना भूत्वा विलोक्य नगरं शिवः॥
आहूय ब्राह्मणान् सर्वानुवाच शशिशेखरः।
इदं स्थानं वरं रम्यं निर्मितं विश्वकर्मणा॥
धामाधाव सहस्रेषु प्रोक्तं सर्वाङ्गसुन्दरम्।
नगरात् सर्वतः पुण्यो देवो नगरः स्मृतः॥
अष्टयोजनविस्तीर्णं आयामव्यासतस्तथा।
नदी भूत्वा इतो यत्र देवी याता यदृच्छया॥
तं नगरमित्याहुर्देवं पुण्यतमं जनाः।
पूर्वे तु ब्रह्मशाला च पश्चिमे मातृमध्यपि॥
उत्तरे कनकादाच दक्षिणे सागरावधिः।
एतदन्तरमासाद्य देवो नगरः स्मृतः॥
अष्टयोजनमानेन आयामव्यासतस्तदा।
प्रोक्तोऽयं सकलो देवि उन्नतेन समं मया॥
युष्माकं च वरं ह्येतत् प्रयोदध्वं द्विजोत्तमाः।
अत्र भुक्तिश्च मुक्तिश्च भविष्यति न संशयः॥
इत्याकर्ण्य तदा सर्वे विप्रा वृषभध्वजम्।
ईश्वराज्ञा हृता कर्तुं न शक्ता परमात्मनः॥

अलाउद्दीन भाईको अमानुल्ला खाँ। उसने १४ ई॰को उन्नतनगर पर आक्रमण मारा था। उन्होंने बहु संख्यक अधिवासियोंका मस्तक छिन्नभिन्न कर अपना दारुण क्रोध मिटाया। उन्नतनगरकी शतशत्या हुयी घोर युद्धभूमि पापमयी समझी गयी। ब्राह्मण भाग यह स्थान छोड़ डिमवर नगरमें आकर रहे। इसी समयसे यह स्थान उस नामसे लगा। उन मुसलमानोंके हाथमें आनेसे उसके इद्रकोण दक्षिण डिमवर नामक नगर बसा। गुजरातवाले मुसलमानोंके राजत्वकालमें यह एक प्रसिद्ध स्थान हो गया था।

उन्नतनाभि (सं॰ त्रि॰) उन्नतो नाभिर्यस्य। उन्नतनाभियुक्त, निकली हुयी नाभवाला, मोटा।

उन्नतशिरः (सं॰ त्रि॰) शिर उठाये हुआ, जो सर ऊपरको खड़ा किये हो।

उन्नतांश (सं॰ पु॰) उच्च भाग, ऊंचा हिस्सा। ज्योतिषमें चन्द्रमाके दक्षिण या वाम उन्नत अंशको कहते हैं।

उन्नतानत (सं॰ त्रि॰) उन्नत आनत। ऊंचनीच, ऊंचा-नीचा।

उन्नति (सं॰ स्त्री॰) उत्-नम-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उदय, उठान। ३ समृद्धि, खुशहाली। ४ [illegible], उभार। ५ गरुड़पत्नी। ६ गौरव, इज्जत। ७ सौभाग्य, नेकबख्ती। ८ उच्चता, ऊंचाई। ९ यज्ञकी भार्या। ये दक्षकी एक कन्या थीं।

महतादिके उदयको गुह्योन्नति कहते हैं—

"[illegible]
[illegible]"

(विष्णुधर्मोत्तर)

उन्नतिमत् (सं॰ त्रि॰) १ उच्छ्रित, उठा या निकला हुआ। २ समृद्ध, ऊंचा।

उन्नतीश (सं॰ पु॰) उन्नतिके स्वामी, गरुड़।

उन्नतोदर (सं॰ पु॰) वृत्तखण्डका ऊर्ध्व पीठ, दायरेके कुलको ऊपरी सतह।

उन्नद्ध (सं॰ त्रि॰) उत्-नह-क्त। १ उद्बद्ध, टंगा या लटका हुआ। २ उत्कट, उभरा हुआ। ३ स्फीत, सूजा या फूला हुआ। ४ उन्मत्त, छुटा हुआ।

[illegible]

ईश्वर उवाच ।

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

उन्नमन (सं॰ क्लो॰) उत्-नम-ल्युट्। १ उन्नति, तरक्की। २ उत्तोलन, उठाव। ३ सुश्रुतोक्त यन्त्र द्वारा व्रणरुधिर स्रावसाधक चिकित्सा कर्मविशेष. नश्तरसे जख्मके लहू निकालनेका इलाज।

उन्नमित (सं॰ वि॰) उत्-नम-णिच्-क्त। १ उत्तोलित, उठाया या चढ़ाया हुआ। २ ऊर्ध्वीकृत, ऊंचा किया हुआ। "अथ प्रयत्नोन्नमितानमत्फणैः।" (माघ १।१२।)

उन्नम्र (सं॰ वि॰) उत्-नम्र-रन्। उन्नत, ऊंचा, खड़ा हुआ।

उन्नय (सं॰ पु॰) उत्-नी क्वचिदपवादविषये अच्। १ उत्तोलन, खिंचाव। २ उत्थान, उठान। ३ सादृश्य, बराबरी।

उन्नयन (सं॰ क्लो॰) उत्-नी-ल्युट्। करणाधिकरणयोश्च। पा ३।३।११३। १ उत्तोलन, खिंचाव। २ परामर्श, मशविरा। ३ अनुमान, अन्दाज। ४ उन्नति, तरक्की, उठान। ५ उद्भावन, ग़ुफ़्लत। ६ न्यायशास्त्र, इल्म-मन्तिक। ७ पूतभृत्पात्र, अर्क रखनेका बरतन। "उन्नयने च।" (कात्यायनश्रौतसू॰ १३।१३।१४) 'उन्नयन्त्यस्मिन्नुन्नयनं पूतभृदुच्यते।' (कर्क) (त्रि॰) उन्नमितं नयनं येन। ८ उन्नमितचक्षुः, आंख उठाये हुआ।

उन्नविष्क—काठियावाड़के गिरनार पर्वतके निकटस्थ एक प्राचीन ग्राम। भीमने इसी स्थानपर उन्नक नामक असुरको मारा था। आजकल इसे 'भोसम' कहते हैं।

"ततो गच्छेन्महादेवि उन्नविष्कमिति विश्रुतम्।
योजनस्यान्तरे देवि पश्चिमे मङ्गला स्थिता॥
उन्नको यत्र भीमेन हतो व्यक्तस्तथा प्रिये।" (प्रभासखण्ड ८८।१,४-५)

उन्नस (सं॰ वि॰) उन्नता नासिका यस्य, बहुव्रीहिः समासान्तोऽच् स्यात्। उपसर्गाच्च। पा ५।४।११९। १ उच्च नासायुक्त, ऊंची नाकवाला।

उन्नाद (सं॰ पु॰) उत्-नद-घञ्। उच्च शब्द, ऊंची आवाज़। (भारत वन १६८ अ॰)

उन्नाब (अ॰ पु॰) बदरीफल, बेर। यह अफ़ग़ानस्थानसे शुष्क आता और औषधमें डाला जाता है।

उन्नाबी (अ॰ वि॰) बदरी फलवत् रक्तवर्ण, बेर-जैसा लाल।

उन्नाभ (सं॰ पु॰) रघुवंशीय राजविशेष। (रघु १८।१९)

उन्नाय (सं॰ पु॰) उत्-नी उपपदे घञ्। अवोदैधौद्म-प्रश्रथहिमश्रथाः। पा ३।३।२६। १ उत्तोलन, उठाव, खिंचाव। २ परामर्श, मशविरा।

उन्नायक (सं॰ वि॰) १ उत्तोलन करनेवाला, जो उठाता हो। २ प्रमाण देनेवाला, जो हवाला देता हो।

उन्नायकत्व (सं॰ क्लो॰) १ ज्ञापकत्व, समझाने या बतलानेका काम। २ जनकज्ञानविषयत्व। (कारकौमुदी)

उन्नासी (हिं॰ वि॰) ऊनाशीति, सात दहाई और नौ एकाई रखनेवाला।

उन्नाह (सं॰ पु॰) उत्-नह-घञ्। काञ्जिक, कांजी। यह तण्डुलके माण्डसे बनता है।

उन्निद्र (सं॰ वि॰) उद्गता निद्रा स्वप्ना दुःखादिकं वा यस्मात्। १ प्रफुल्ल, फूला हुआ। २ विकसित, खिला हुआ। ३ निद्रारहित, जागता हुआ, जिसे नींद न लगे। ४ सतर्क, ख़बरदार। ५ उद्दीप्त, चमकीला। ६ निद्रा न लेनेवाला, जो सोता न हो।

उन्निद्रता (सं॰ स्त्री॰) निद्राराहित्य, बेदारी, नींद न लगनेकी हालत।

उन्नी (सं॰ वि॰) उत्तोलन करनेवाला, जो ऊपरको खींचता हो।

उन्नीत (सं॰ वि॰) उत्-नी-क्त। १ ऊर्ध्वनीत, ऊपर उठाया हुआ। २ विकसित, खिला हुआ।

उन्नीस (हिं॰ वि॰) १ एकोनविंशति, एक दहाई और नौ एकाई रखनेवाला। २ किञ्चित् न्यून, कुछ कम।

उन्नीसवां (हिं॰ वि॰) उन्नीस संख्या रखनेवाला।

उन्नेतृ (सं॰ वि॰) उत्-नी-तृच्। १ ऊर्ध्वनेता, ऊपर ले जानेवाला। २ उद्भावक, तरक्की देनेवाला। (पु॰) ३ षोलाह ऋत्विक्के अन्तर्गत एक ऋत्विक्। इसके द्वारा सोमरसको भाण्डमें पात्रमें छोड़ाते हैं।

उन्नेत्र (सं॰ क्लो॰) १ उन्नेता ऋत्विक्का कार्य। (कात्यायनश्रौतसू॰ ९।३।१९) (वि॰) २ ऊर्ध्वनेत्र, आंख ऊपरको उठाये हुआ।

उन्नेय (सं॰ वि॰) उत्-नी-यत्। १ ऊर्ध्व में जाने योग्य, जो ऊपर चढ़ाने क़ाबिल हो। २ उद्भावनीय, ख़यालमें न लाये जाने क़ाबिल।

उन्मेदा (सं० स्त्री०) १ मांसमेदोवृद्धि, मोटापन आदि व्याधि स्थापन। २ अन्य मांसविकल्प। (शब्दकोष)

उन्मज्जक (सं० पु०) उत्-मस्ज-ण्वुल्। १ तपस्वी-भेद। उन्मज्जक तपस्वी गले बराबर जलमें रहके ही तपस्या किया करते हैं।

"[illegible]।
[illegible]॥" (कौपकार)

(त्रि०) २ जलमें डूबनेवाला।

उन्मज्जन (सं० क्ली०) उत्-मस्ज-ल्युट्। १ प्रथम, तैरने या पानीमें कूदनेका काम। २ शिवके किसी गणका नाम।

उन्मण्डल (सं० क्ली०) ज्योतिषोक्त दिनरात्रिकी अव-धिका ज्ञापक मण्डल विशेष।

"[illegible]।
[illegible]॥"
(सिद्धान्तशिरोमणि)

उन्मण्डलशङ्कु (सं० पु०) ज्योतिषोक्त उन्मण्डलस्थ सूर्यकी छायाका शङ्कु।

"[illegible] (१० ११ १०) [illegible]।
[illegible]॥"
(सिद्धान्तशिरोमणि)

उन्मण्डलमन्त्र (सं० पु०) ज्योतिषोक्त चरपरिपके प्रदर्शनार्थ उन्मण्डलका मन्त्र।

उन्मत्त (सं० त्रि०) उत्-मद-क्त। १ उन्मादग्रस्त, पागल। २ बाह्यज्ञानशून्य, बेखबर। ३ मतवाला। (पु०) करणे क्त। ४ धुस्तूर, धतूरेका पेड़। ५ मेचकुन्दूर, मुचकुन्द धतूरा। ६ मुचकुन्दवृक्ष। ७ राक्षसविशेष।

उन्मत्तक (सं० त्रि०) उन्मत्त इव, कन्। १ मत-वाला, जो नशेमें हो। २ उन्मादग्रस्त, पागल।

"[illegible]" ([illegible])

उन्मत्तकीर्त्ति (सं० स्त्री०) दुर्गादेवी, दुर्गा।

उन्मत्तगङ्ग (सं० क्ली०) देशविशेष। (सिद्धान्तकौमुदी)

उन्मत्तगीत (सं० त्रि०) उन्मादसे कहा हुआ, जो पागलपनसे गाया गया हो।

उन्मत्तता (सं० स्त्री०) उन्मादग्रस्त होनेकी बात, पागलपन।

उन्मत्तदर्शन (सं० त्रि०) उन्मादरूप, जो पागल-जैसा दिख पड़ता हो।

उन्मत्तप्रलपित (सं० त्रि०) उन्मादकी अवस्थामें कहा हुआ, जो पागलपनसे कहा गया हो।

उन्मत्तभैरव (सं० पु०) शीताङ्ग सन्निपातपर दिया जानेवाला एक औषध। रस एवं गन्धककी तुल्यांश मे धुस्तूरकनकके रसमें एक दिन घोटे और फिर तीन बराबर त्रिकटुका चूर्ण छोड़े। इस औषधके सेवनसे शीताङ्ग सन्निपात दूर होता है। (भैषज्यरत्नाकर)

उन्मत्तरूप, उन्मत्तदर्शन देखो।

उन्मत्तलिङ्गिन् (सं० त्रि०) उन्मत्त बनता हुआ, जो झूठमूठ पागलपन देखाता हो।

उन्मत्तवत् (सं० अव्य०) उन्मत्त व्यक्तिकी भांति, पागलकी तरह।

उन्मत्तवेश (सं० पु०) शिव, महादेव।

उन्मत्ता, उन्मत्तकीर्त्ति देखो।

उन्मत्तावन्ति—काश्मीरके एक राजा। चन्द्रवर्माके मारे जानेपर शर्वट और अपरापर मन्त्रिगणने पार्थपुत्र उन्मत्तावन्तिको काश्मीरका राज्यभार सौंपा था। किन्तु इनके राजत्वकालमें अत्याचार और व्यभिचार प्रचलित होने लगा। राजा पिता मन्त्रिगणको साथ न मान दुष्ट लोगोंके आमोदप्रमोदमें भूले और अपना गर्हित आचरण करते थे। अपने पिता पार्थने राजधानी छोड़ जयेन्द्रविहारमें जा वासस्थान ग्रहण किया। वहांके भिक्षुक जा कुछ उन्हें आहारीय देते, वे उसीपर जीते थे। किन्तु इनसे यह भी सहा न गया। उन्मत्तावन्तिने दुष्ट लोग लगा अपने पूज्य पिता और भ्रातृ-गणको मरवा डाला था। राजा इतने निष्ठुर थे, कि गर्भवतीका पेट कटा गर्भस्थ भ्रूणको देखते और उससे आनन्द मानते। अन्तिममें राजयक्ष्मा रोगने आक्रान्त हो इन्होंने (८३८ ई०) प्राण छोड़े। काश्मीर देखो।

उन्मथ (सं० पु०) उत्-मथ-अच्। वध, कत्ल।

उन्मथन (सं० क्ली०) उत्-मथ भावे ल्युट्। १ उन्म-र्दन, धक्का-मुक्की। २ हिंसा, मारकाट। (रत्नमाला) ३ हनुमान् नामक नृत्यका एक भेद। (त्रि०) कर्तरि ल्यु। ४ मर्दन-कारक, मल डालनेवाला।

उन्माथित (सं० त्रि०) उत्-मथ-क्त। १ मर्दित, रगड़ा हुआ। २ विनष्ट, कुचला हुआ।

उन्मद (सं० त्रि०) उद्गतो मदो यस्य। १ उन्माद-युक्त, मतवाला। (माघ ६।९९) २ उन्मत्त, नशा पिये हुआ। (पु०) ३ उन्माद, पागलपन।

उन्मदन (सं० त्रि०) प्रीतिसे उत्पन्न, इश्क़से जला हुआ।

उन्मदिष्णु (सं० त्रि०) उत्-मद-इष्णुच्। अलंकृञ्‌निरा-कृञ्‌-प्रजनोत्पचोत्पतोन्मदरुच्यपत्रपवृतु-वृधु सहचर इष्णुच्। पा ३।२।१३६। उन्मत्त, मतवाला।

उन्मनस् (सं० त्रि०) उत्कण्ठितं मनो यस्य। १ उद्विग्न, बेचैन। २ विमना, दूसरी तर्फ़ दिल लगाये हुआ। "पयोधरेणोरसि काचिदुन्मनाः।" (भारवि ८।१९)

उन्मनस्क, उन्मनस् देखो।

उन्मनायित (सं० क्ली०) उन्माद, पागलपन।

उन्मनी (सं० स्त्री०) उन्मनस पृषोदरादित्वात् ङीष्। योगीकी एक अवस्था। यह हठयोगकी एक मुद्रा है। दृष्टिको नासाके अग्रभागपर लगाने और भ्रुकुटिको ऊपर चढ़ानेसे उन्मनी मुद्रा बनती है।

उन्मन्थ (सं० पु०) १ हिंसा, मारकाट। २ कर्णपालीगत रोगविशेष, कानकी लौमें होनेवाली एक बीमारी।

"बलात्प्रवर्धयतः कर्णं पाल्यां वायुः प्रकुप्यति।
कफं संगृह्य कुरुते शोफं सस्तम्भवेदनम्॥
उन्मन्थकः सकण्डूको विकारः कफवातजः।" (सुश्रुत)

बलसे कर्णपालि बढ़ानेपर कर्णके प्रान्तभागमें वायु बिगड़ जाता है। फिर कफयुक्त हो वातश्लेष्माका वर्ण और वेदनाविशिष्ट शोथ उठता है। यह रोग कफवातसे उपजता और कण्डुविशिष्ट रहता है।

उन्मन्थक (सं० पु०) १ कर्णपालीगत रोग विशेष, कानकी लवका एक आज़ार। उन्मन्थ देखो। (त्रि०) २ कम्पित करनेवाला, जो हिला डालता हो। ३ आघातकारी, मारनेवाला।

उन्मन्थन (सं० क्ली०) उत्-मन्थ-ल्युट्। १ मथन, मथाई। २ हनन, मारकाट।

उन्मथित (सं० त्रि०) मथा हुआ, जो हिलाया डुलाया या सताया गया हो।

उन्मयूख (सं० त्रि०) उद्दीप्त, चमकीला, जो चमक रहा हो। जिसकी किरणें फैल रही हों।

उन्मर्दन (सं० क्ली०) उत्-मृद-ल्युट्। १ उद्घर्षण, रगड़। २ वायु वा शूल प्रभृतिके निवारणार्थ क्रिया विशेष, मालिश। (भुवन) करणे ल्युट्। ३ मर्दनयोग्य द्रव्यादि, मालिशकी चीज़।

"उन्मर्दं ममभिषेकेऽवमोदेके।" (कात्यायनश्रौतसू० १८।४।१८)
'उन्मर्दं नचन्दनादि।' (कर्क)

उन्मा (वै० स्त्री०) ऊर्ध्वमान, एक नाप। (यजुर्वे० १५।६५)

उन्माथ (सं० पु०) उन्मथ्यतेऽनेन, उत्-मथ करणे घञ्। १ मृगवधयोग्य यन्त्र, फन्दा, जाल। भावे घञ्। २ मारण, मारकाट। (त्रि०) ३ घातक, चोट करनेवाला।

उन्माथिन् (सं० त्रि०) व्याकुल करनेवाला, जो घबरा देता हो।

उन्माद (सं० त्रि०) उत्-मद घञ्। १ उन्मत्त, पागल। (पु०) २ उत्-मद आधारे घञ्। मत्तता रोग विशेष, पागलपनकी बीमारी। नाना कारणोंसे मनोविकार होने पर यह रोग उपजता है। सुश्रुतके मतमें—

"मदयन्त्युद्धता दोषा यस्मादुन्मार्गमाश्रिताः।
मानसोऽयमतो व्याधिरुन्माद इति कीर्तितः॥"

जिस रोगमें उद्धत दोष सकल ऊर्ध्वगत शिराके पथका आश्रय ले मनको मत्तता उपजाते हैं, उसको उन्माद कहते हैं।*

महर्षि चरकके कथनानुसार—जो अति भय खाता, जो सत्त्वगुणसे दूर रहता, जो अखाद्य भोजन द्वारा एक प्रकारसे अधःपात लाता, जो मानसिक एवं शारीरिक स्वाभाविक क्रियाओंके विरुद्ध इन्द्रियादि चलाता, जो शरीरको नितान्त क्षीण बनाता, जो रोगकी असह्य यन्त्रणामें घबराता, जो काम क्रोध

* "रूक्षाल्पशीतान्नविरेकधातुक्षयोपवासैरनिलोऽतिवृद्धः।
चिन्तादिजुष्टं हृदयं प्रदूष्य बुद्धिं स्मृतिं चाप्युपहन्ति शीघ्रम्॥" (चरक)
रूखा या बासी भात, विरेक, धातुक्षय, उपवास आदि कारणोंसे बहुत बढ़ा हुआ वायु चिन्ता द्वारा हृदयको अत्यन्त बिगाड़ता है और शीघ्र ही बुद्धि एवं स्मृतिको नष्ट कर देता है।

भीम एवं भय शोक चिन्ता प्रभृतिके पतरसे जो चित्तको दोष लगाता और जो बुद्धिको चञ्चलताके दोषसमूहके प्रबल वेगसे भटकर हृदयस्थानको जाते तथा मनकी गति सकल पीछे आनेपर मन, बुद्धि, संज्ञा, ज्ञान, स्मृति, भक्ति, स्वभाव, चेष्टा तथा व्यवहार आदिका विभ्रम होता, इसीको उन्माद रोग कहलाता है।

उन्माद रोग लगनेके पूर्व यह लक्षण देख पड़ता है—मस्तकका शून्य भाव, चक्षुद्वयका व्याकुल, कर्णमें ध्वनि, निश्वास प्रश्वासका आधिक्य, मुखसे लारको टपक, भोजनमें अनिच्छा, अरुचि, हृदयमें वेदना, अकारण चिन्ता, अविश्वास, अन्यमनका बोध, मोह, मदका उद्वेग, लोमका हर्षण, ज्वर, मुख-भ्रूकुटि द्वारा चक्षु तथा मुखको चलना, सोते समय भ्रम एवं चित्र-विचित्र प्रदर्शन, वस्तुका आदर्शन और प्रबल नदीको धारामें कूद पड़नेकी इच्छा।

चरकके मतमें उन्माद रोग पांच प्रकारका होता है—१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ आगन्तुक।*

पित्तोन्मादका लक्षण यह है—क्रोध, गर्व, असहिष्णुता, जहां तहां दौड़, काष्ठ या पत्थरादि फेंकना, घूसा मारना, अपनी या दूसरेकी छाया देखना, ठण्ढा जल और ठण्ढा भात खानेकी इच्छा, सर्वदा सन्तापक बोध, चक्षु ताम्रवर्ण, हरा या पीला पड़ना, सर्वदा चक्षु घूमते जैसे रहना।†

कफोन्मादमें ये देखते हैं—वमन, अग्निमान्द्य, थोड़ी चलमलता, अरुचि, काम, स्त्रीसंसर्गका अभिलाष, अल्प निद्रा, कम बोलनेकी अभिरुचि, निर्जन एवं एकान्त रहनेकी आकांक्षा, वीभत्सभाव, शुचिद्वेष, थोड़े भक्ष्य, निद्रा तथा आंखका सफेद होना और [illegible] अपनी विपरीत दशा जाननेमें असमर्थताका बोध होता है।

वायुके प्रकोपसे जो उन्माद उठता है, उसमें देहकी रूक्षता, कृशता, भ्रम, दुर्बलता, अङ्गकी शिराका स्फुरण, आस्फालन, नृत्य, गीत, रोदन, अट्टहास प्रभृति लक्षण रहते हैं।

सन्निपातमें उन्माद आनेपर तीनों दोषोंका लक्षण मिलता है। किसीके मतमें सन्निपात-जन्य शब्द आरोप्य हो जाता है। किन्तु सम्पूर्ण लक्षण देख पड़नेसे रोग असाध्य ठहरता है।

चोर, राजपुरुष या शत्रु द्वारा अत्यन्त डर पाने या धनक्षय होने अथवा अभिलषित स्त्रीका संसर्ग छूटनेसे मनका उत्कट विकार बढ़ता है।

विषजन्य उन्मादमें रोगी मूढ़ भावसे नाना बकता या रोता है। चक्षु रक्तवर्ण पड़ जाते हैं। बल और इन्द्रियोंका तेज घट जाता है। दीनभाव बढ़ने लगता है। मुख श्यामवर्ण दिखाई देता है। चेतना जाती है।

महर्षि चरकने कहा है—वात, पित्त एवं कफज उन्मादमें जो कारण हैं, उन्हींसे अति भयङ्कर त्रिदोषका उन्माद उपजता है। इसमें तीनों दोषोंका आरम्भ लक्षण दिखाई देता है। सुश्रुतने त्रिदोषजनित सन्निपात-जन्य उन्माद लिखा है।

युरोपके प्रधान प्रधान चिकित्सक उन्माद रोगको (Insanity) छः भागमें बांटते हैं—१म मतिविभ्रम (Delirium), २य उग्रमत्तता (Mania or Hyper-phrenic), ३य चित्तविकाररोग वा विषण्णता (Melancholia), ४र्थ विषाद (Hypochondriasis), ५म बुद्धिविपर्यय (Dementia) और ६ष्ठ जड़ता वा निर्बुद्धिता (Idiocy)। इनमें किसका [illegible] अभिप्राय ठीक नहीं जंचता। कभी भी और

* "[illegible]
[illegible]
[illegible]" (चरक)

[illegible]

† [illegible]

"[illegible]"

[illegible]

कभी बुरी राह चलनेकी जी चाहता है। मेधाकी शक्ति घट जाती है। मन डावांडोल रहता अथवा वस्तुका अनुभव और मोह लगता है। उन्मत्तता होनेसे मस्तिष्क बिगड़ता अथवा मस्तिष्क की क्रियाका क्रमशः अवसान होने लगता है। मनकी गति, इच्छा एवं प्रकृति उलट पलट जाती है। इस उन्मादमें प्रधानतः दो प्रकार होते हैं। कभी रोगी स्थिरभाव पकड़ता है और कभी भीषण मूर्ति बना अनर्थ साधन करता है। उत्कण्ठा रोगमें शोक अथवा दुःख, मनका भाव एवं मस्तिष्कका कर्म बढ़ता है। कभी कभी एक विषयकी चिन्तामें मन अस्थिर होनेसे यह रोग लग जाता है। ऐसी अवस्थाको ऐकान्तिक उन्माद कहते हैं। बुद्धिके विपर्ययमें मानसिकक्रिया घट जाती है और मनपर अधिक दुर्बलता आ जानेसे मानसिकशक्ति अकार्मण्य हो जाती है। रोगका कोई अनुमान नहीं लगा सकता। निर्बुद्धिता वा जड़ताका रोग लगनेसे एककाल ही बुद्धिको शक्ति लुप्त हो जाती है। किसी किसी स्थलमें अति सामान्य बुद्धिका परिचय मिलता है। यह रोग प्रायः शैशव वा बालककालमें होता है। जन्मकालीन अथवा किसी विशेष कारणसे बुद्धिकी वृत्तिका पथ रुकनेसे जड़ता बढ़ती है।

महर्षि चरकका वाक्य है—"यस्तु दोषनिमित्तेभ्यो उन्मादेभ्यः समुत्थानपूर्वरूपलिङ्गविशेषसमन्वितो भवत्युन्मादस्तमागन्तुमाचक्षते।" अर्थात् जो उन्माद पूर्वोक्त दोषनिमित्तक उन्मादसे विशेष निदान, पूर्वरूप एवं रूपविशेष रखता है, उसका नाम आगन्तुक उन्माद है। किसीके मतमें पूर्व जन्मके अशुभ कामसे आगन्तुक उन्माद उठता है। इसमें देवताके समान बलवीर्यादि देख पड़ते हैं। प्राचीन वैद्योंके विचारसे देवतादिके डर करनेसे उपजनेवाला रोग ही आगन्तुक उन्माद है। चरकने स्पष्ट कहा है—देवतागणकी दृष्टि, गुरु वृद्ध सिद्ध या ऋषिगणके अभिशाप, पितृलोकको अवज्ञा, गन्धर्वगणके स्पर्श, शरीरमें यक्ष तथा राक्षस प्रभृतिके प्रवेश और पिशाचगणके आरोहणसे उन्माद उपजता है।

पूर्वोक्त देवतादिके द्वारा उन्मादकी उत्पत्ति पूर्वकृत पापके परिणाम, एकाकी शून्य गृहके वास, चतुष्पथपर, सन्ध्याकाल अथवा अशुचि अवस्थामें पर्वसन्धिके मथुन, रजस्वला स्त्रीके अभिगमन, अध्ययन बलि मङ्गलहोमादि कार्यके अवैध आचरण, तुमुल युद्ध, देश कुल वा नगरादिके विनाश, स्त्रीके सन्तानोत्पादन, नानाप्रकारके भूत और अशुचि स्पर्श, वमन तथा रक्तस्रावके अशौच, अशुचि रहते चैत्य एवं देवालय वा नगर एवं जनपदमें रात्रिकालको चतुष्पथ अथवा वायुमुख वा श्मशानके अभिमुख गमन, मांस मधु तिल गुड़ मद्य प्रभृतिके सेवनकी उच्छिष्टावस्था, द्विज गुरु देवता रागी आदिकी अवमानना, धर्मालापके व्यतिक्रम और पापकर्म अथवा अप्रशस्त कालमें किसी मङ्गलकर कार्यके आरम्भसे होती है।

भारतीय वैद्य कहते हैं—मोह लाने, मनमें उद्वेग, कर्णमें शब्द और हृदयमें अतिशय उत्साह समाने, देह दुबलाने, अन्नपर अरुचि आने, स्वप्नमें कलुषित द्रव्य खाने और वायु द्वारा उन्मथन एवं भ्रमपाने आदि लक्षण देखानेसे उन्मादरोग शीघ्र आरोग्य होता है।*

चिकित्सा—देवता अथवा ग्रहादि द्वारा उन्माद उठनेपर शान्ति और पौष्टिक आभिचारिक प्रभृति क्रियासे दब जाता है। साधारण औषधसे कोई फल नहीं निकलता। फिर भी यथार्थ शारीरिक और मानसिक कारण लगनेपर भिन्न भिन्न उपायसे चिकित्सा चलाना चाहिये।

"उन्मादे वातिके पूर्वं स्नेहपानं विरेचनम्।
पित्तजे कफजे वान्तिः परोवस्त्यादिकक्रमः॥" (चक्रपाणि)

वातिक उन्मादमें स्नेहपान एवं विरेचन और पित्तज एवं कफजमें वमन करानेके बाद स्नेहपान, वस्ति साधन तथा विरेचनके क्रमसे चिकित्सा होती है।

प्राचीन वैद्यगणके मतसे अपस्मार रोगको तरह उन्मादकी चिकित्सा करनेसे भी निर्वाह हो जाता

* "मोहोद्वेगौ स्वनः श्रोत्रे गात्राणामपकर्षणम्।
अत्युत्साहोऽरुचिश्चान्ने स्वप्ने कलुषभोजनम्।
वायुनोन्मथनञ्चापि भ्रमश्चक्रगतस्य च।
यस्य स्यादचिरेणैवमुन्मादं सोऽधिगच्छति॥" (सुश्रुत)

है। क्योंकि इन दोनोंमें दृष्ट एवं दोषकी तुल्यता विद्यमान है।

सुश्रुत कहते हैं—मदकारक द्रव्यसे उन्मादमें चित्तको आच्छादित करना प्रधान कर्तव्य है। मद रोग अर्थात् उन्मादको मदकारक द्रव्य द्वारा मिटा दिया करते हैं। विषजन्य रोग उतने भी विषक्रियाके साथ साथ मिट जाया करते हैं।*

अञ्जनयोग, पुरातन घृत, मद्यपुष्प एवं तुलसी पृथक् पृथक् पीसकर तथा मधु मिलाकर पिलानेसे उन्माद रोग मिट जाता है।

हिङ्गु, सैन्धव लवण, मरिच, पिप्पली और सोंठको इन्द्रजव ही सम भाग लें: फिर घृत और चतुर्गुण गोमूत्रमें पकाकर देनेसे उन्माद निश्चय आरोग्य होता है।

सर्वाङ्ग इस रोगमें महापैशाच-घृत, सारस्वत-घृत, कल्याणक, चैतस, महापैशाचिक, हिङ्ग्वाद्य तथा लशुनाद्य प्रभृति घृत दिलाते हैं।

सुश्रुतके मतमें जिसमें रोगी क्रोध और चालोचना करता, उठता, निरन्तर भागते चलते या देवके सामने दौड़ देता है, वहाँ उन्माद रोग असाध्य होता है। फिर जिस उन्मादमें आँखें पत्थर जैसी, मुँहमें झाग आना, जिह्वापर छाले पड़ना और नासिकासे कफ गिरना, वह भी असाध्य जैसा ही होता है। अथवा रोगीको मारने लगते, धमका दिखाते, चलने लगते अङ्गके ऊपर चोट लगाते, दूर तक दौड़ाते, उग्रतासे पकड़ते और दुर्गन्ध एवं हिंसक वस्तु खानेसे उन्माद अच्छा नहीं होता।†

प्रायः रोगीको साथ रखना चाहिये। किन्तु दिवानिश उन्मादमें विशेषतः ध्यान रखना होते हैं।

---

* [illegible]

(सुश्रुत उत्तरतन्त्र ६२ अ०)

† [illegible] (चरक)

समय एवं विशेषतादिसे क्रोध, भय, हर्षादि तथा सन्ताप प्रकृत कारण होनेपर रोगी घबराना, रूठना और सोचता जाता है। किन्तु इस भी लाभ भी यदि उसके आव-रण दर्शन देखाते हैं, तो ठण्डा झुलाने और धमका लगाते हैं। ऐसे प्रकार ताड़ना और मन: शुद्धि मयः देखके प्रति उद्वेग प्राप्त बढ़ता दिखता है। फिर अतिशय शक्तिसम्पन्न होनेपर भारी कष्टसे क्रोध और अधीर पनमें हाथ रोगी दबाया जाता है। उसमें लड़क पकड़ बिलकुल रखना न चाहिये। उन्मादके रोगीको सुधारनेका उपाय—

"[illegible]
[illegible]" (चरक)

सहज, तापन, दान, सान्त्वना, हर्ष, भय एवं विस्मय मनको भटका कर प्रकृति पर पहुँचा देता है।

डाक्टरोंके मतमें रोगीका परिधेय वस्त्र सर्वदा उष्ण रखा जाता, भीतमें या शीतमें पड़ने नहीं पाता। देहके मध्य भागपर फ्लानेल लिपटा रखना अच्छा है। रोगी रोटीको भर्ती या मुलायम फर्शपर मन लगानेके वास्ते लिटाया जाता है। शयन स्थानमें देहके ऊपर वस्त्र प्रायःको पहिना समान कुछ उष्ण और अनावृत रखना चाहिये। मृदां खाने अभी भूमिपर बिठाने और आहारादि अवस्थामें देख भालकर लिपाते हैं।

डाक्टरोंके मतमें उन्मादके रोगीको प्रथमावस्थामें ठण्डा रखनेको अतिशीघ्र चेष्टा करना चाहिये। इसपर नाइट्रेट अव पोटास, ब्रोमाइड अव पोटासियम, टिंक्चर अव एकोनाइट, हिंग, टिंचर अव डिजिटेलिस, टार्टरेट अव एन्टिमनी और कपूरका सुगन्ध देनेसे विशेष उपकार पहुँचता है। अफूर, हायोसियम और डिजिटेलिस प्रभृति भी विशेष लाभदायक हैं। फिर रोगीको अवस्थाके अनुसार शान्तिकर औषध दिया जाया करता है।

उन्मादन (सं० त्रि०) उत्-मद-णिच्-ल्यु। उन्मादजनक, जो मत्त या पागल बनानेवाला।

उन्मादन (सं० पु०) उत्-मद-णिच्-ल्यु। १ कामदेवके पञ्चवाणान्तर्गत बाण विशेष।

"सन्मोहनोन्मादनौ च शोषणस्तापनस्तथा।
स्तम्भनश्चेति कामस्य पञ्चबाणाः प्रकीर्तिताः।"

(त्रिकाण्डशेषः १।१।४०)

उन्मादगजाङ्कुश (सं॰ पु॰) उन्मादाधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। जितना हो पारा ले धतूरे, ब्रह्मयष्टि और कुचिलेके रससे ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसमें बराबर गन्धक मिला बन्धनार्थ ताम्रचक्रिकामें रख अल्प पुट देना चाहिये। फिर उसको समभाग धुस्तूरबीज, अभ्र, गन्धक एवं विषसे मिला तीन दिन घोटनेपर यह रस बनता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) (त्रि॰) २ चित्तमें विभ्रम उत्पन्न करनेवाला, जो पागल बना देता हो।

उन्मादपर्पटरस (सं॰ पु॰) उन्मादके अधिकारका एक रस, पागलपनकी एक दवा। कालेधतूरेके पांच बीज मिलाकर शिवपर्पटीरस खिलानेसे उन्माद रोग दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादभञ्जनरस (सं॰ पु॰) उन्मादके अधिकारका एक रस। त्रिकटु, त्रिफला, गजपिप्पली, विड़ङ्ग, देवदारु, किरात, कटुकी, कण्टकारी, यष्टि, इन्द्रयव, चित्रक, बला, पिप्पली एवं बीरणका मूल, शोभाञ्जनका बीज, त्रिवृता, इन्द्रवारुणी, वङ्ग, रूप्य, अभ्रक तथा प्रवालको समभाग मिलाने और सबके बराबर लौह डालकर जलमें घोटनेसे यह रस तैयार होता है।

(रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादभञ्जिनी (सं॰ स्त्री॰) उन्मादके अधिकारका एक रस। शुद्ध मनःशिलाका चूर्ण, सैन्धव, कटुकी, वचा, शिरीषबीज, हिङ्गु, श्वेतसर्षप, करञ्जबीज, त्रिकटु और पारावतका मल बराबर बराबर कूटपीस गोमूत्रमें कुटजबीज जैसी वटिका बना छायामें सुखा ले। इसे सवेरे, शाम और रातको रगड़कर आंखमें लगानेसे उन्मादरोग दूर होता है। इस रसको मधुरादिके रस और जलमें रगड़ना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

उन्मादवत् (सं॰ त्रि) उन्माद-मतुप्, मस्य वः। उन्मत्त, मतवाला, पागल।

उन्मादाङ्कुशरस (सं॰ पु॰) औषधविशेष। तीन दिन धुस्तूरबीजके द्राव, जलपिप्पलीके रस और कुचेलकके द्रावसे सूतका ऊर्ध्वपातन करे। फिर उसके बराबर कनकबीज, अभ्रक, गन्धक एवं विष डाल सबको तीन दिन घोटे। इस रसका वल्लमात्रा प्रयोग करना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

उन्मादिन् (सं॰ त्रि॰) उन्मत्त, मतवाला, मिज़ाज।

उन्मादिनी (सं॰ स्त्री॰) विजया, भांग।

उन्मादुक (वै॰ त्रि॰) मादक द्रव्यका प्रेमी, जिसे नशा पीनेका शौक़ हो।

उन्मान (सं॰ क्ली॰) उत्-मा भावे ल्युट्। १ परिमाण, वज़न।

"ऊर्ध्वमानं किलोन्मानं परिमाणन्तु सर्वतः।
आयामस्तु प्रमाणं स्यात् संख्या बाह्या तु सर्वतः॥" (कातिकारिका)

करणे ल्युट्। २ द्रोण परिमाण, ३२ सेरकी एक पुरानी तौल। ३ मूल्य, कीमत।

उन्मार्ग (सं॰ त्रि॰) उत्क्रान्तो मार्गात्। १ कुपथगामी, बुरी राह जानेवाला। २ बुरी राह। ३ गर्हित आचरण, ख़राब चलन।

उन्मार्गगमन (सं॰ क्ली॰) असत् पथावलम्बन, बुरी राहका जाना।

उन्मार्गगामिन् (सं॰ त्रि॰) उन्मार्ग-गम-णिनि। असदाचारी, बदचलन, जो बुरा काम करता हो।

उन्मार्गजलवाहिन् (सं॰ त्रि॰) अपना पानी बेराह ले जानेवाला।

उन्मार्गवर्तिन्, उन्मार्गगामिन् देखो।

उन्मार्गिन्, (सं॰ त्रि॰) कुपथ पकड़नेवाला, जो बेराह जाता हो।

उन्मार्गी (सं॰ पु॰) पञ्चविधमें अन्यतम भगन्दर रोग। यह बवासीरके साथ होता है।

उन्मार्जन (सं॰ क्ली॰) घर्षण, रगड़।

उन्मित (सं॰ त्रि॰) परिमित, नापा-जोखा।

उन्मिति (सं॰ स्त्री॰) उत्-मद-क्तिन्। परिमाण, माप-जोख।

उन्मिष (सं॰ पु॰) उत्-मिष-क। १ प्रकाश, ज़हूर, चमक। २ विकास, खुलना।

उन्मिषत् (सं॰ त्रि॰) चक्षु उद्घाटन करता हुआ, जो आंख खोल रहा हो।

उन्मिषित (सं० त्रि०) उद्-मिष-क्त। १ प्रफुल्ल, खिला हुआ। २ उन्मुक्त, खुला।

उन्मील (सं० पु०) चक्षुका उद्घाटन, आंखका खोलना।

उन्मीलन (सं० क्ली०) उद्-मील ल्युट्। १ विकास, खिलावट। २ उन्मेष, आंखका खुलना। ३ ग्रन्थ भाग, ईस पहलेको शासन।

उन्मीलना (हिं० क्रि०) चक्षु उद्घाटित करना, आंख खोलना।

उन्मीलित (सं० त्रि०) उद्-मील-क्त। १ विकसित, खिला हुआ। (कुमार ...) २ प्रकाशित, जाहिर। ३ उद्घाटित, खुला हुआ। ४ चक्षु उद्घाटित करनेवाला, जो आंख खोले हो।

"[illegible]
[illegible]"

(क्ली०) ५ काव्यालङ्कार विशेष, इसमें किसी वस्तुका प्रकाश रूपसे वर्णन किया जाता है।

उन्मुक्त (सं० त्रि०) उद्-मुच-क्त। बन्धनरहित, जो बंधा न हो।

उन्मुख (सं० त्रि०) उद्गतं मुखं यस्य। १ ऊर्ध्वमुख, मुंह उठाये हुआ। २ उद्यत, लगा हुआ। ३ उत्सुक, शौकीन। ४ शब्दवान्, शब्दकी। ५ उद्युक्त।

"[illegible]" (कुमार)

(पु०) ६ मृगविशेष। पुंसकमें यह व्याघ्र और मार्जार रहा। (वैद्यक)

उन्मुखता (सं० स्त्री०) १ ऊर्ध्वमुख-रहनेका भाव, जिस हालतमें मुंह उठा रहे। २ प्रतीक्षित दशा, जिस हालतमें राह देखें।

उन्मुखर (सं० त्रि०) उच्चशब्द करनेवाला, पुरशोर।

उन्मुद्र (सं० त्रि०) उद्गता मुद्रा यस्मात्। १ विकसित, खिला हुआ। २ मुद्रारहित, जिसपै मुहर न रहे।

उन्मूल (सं० त्रि०) उद्गतमूल, जो जड़ निकाल चुका हो। २ नष्टमूल, जड़से उखाड़ा हुआ। ३ निर्मूल, वेजड़।

उन्मूलक (सं० त्रि०) निर्मूल कर डालनेवाला, जो जड़से उखाड़ देता हो।

उन्मूलन (सं० क्ली०) उद्-मूल-णिच्-ल्युट्। १ उत्पाटन, उखाड़। २ निर्मूलकरण, जड़से खोद डालनेका काम। ३ विनाशन, बरबाद करनेका काम।

उन्मूलित (सं० त्रि०) उद्-मूलि-कर्मणि क्त। १ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ। २ विनष्ट, बरबाद किया हुआ।

उन्मूलयमूला (सं० स्त्री०) उन्मूलय कर्मण इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं० समा०। उखाड़न, खींचातानी, उखाड़ाई-समाई।

उन्मृष्ट (सं० त्रि०) उद्-मृज-क्त। स्वाद अच्छा करनेके योग्य, जो साफ कराकर धुला या पोंछा हो।

उन्मेदा (सं० स्त्री०) स्थूलता, मोटापन।

उन्मेय (सं० त्रि०) उद्-मा-यत्। परिमेय, नापने-जोखने काबिल।

उन्मेष (सं० पु०) उद्-मिष घञ्। १ प्रकाश, चमक। २ चक्षुका उन्मीलन, आंखकी खोलाई।

उन्मेषण (सं० क्ली०) आयमभाव, खुलाई, ईस पहलेको शासन।

उन्मोचन (सं० क्ली०) उद्-मुच-ल्युट्। मोचन, खोलाई।

उन्होनागम (हिं० पु०) उष्णकालका आगम, गर्मीकी आमद।

उन्हानि (हिं० स्त्री०) सादृश्य, बराबरी।

उप (सं० अव्य०) बीसमें एक उपसर्ग। यह शब्द और क्रियामें लगके निम्नलिखित अर्थोंको प्रकाशित करता है,—१ सान्निध्य, २ हीनता, ३ सामर्थ्य, ४ व्यापकता, ५ प्रवृत्ति, ६ उपकार, ७ अनुकम्पा, ८ आरम्भ, ९ आचार, १० माहात्म्य, ११ व्याप्ति, १२ शक्ति, १३ पूजा, १४ दान, १५ दोषाख्यान, १६ आचार्यकरण, १७ निर्देश, १८ मारण, १९ लिप्सा, २० सहायता, २१ अध्ययन और २२ भूषण।

उपकथ (सं० त्रि०) कथ्यमान वस्तु रखनेवाला, जो कथानक हो।

उपकण्ठ (सं० त्रि०) कण्ठस्य समीपम्। १ निकट, नजदीक। (क्ली०) २ ग्रामान्त, गांवका छोर। ३ अश्वकी गतिविशेष, घोड़ेकी चालविशेष। ४ सामीप्य, पड़ोस।

उपकथा (सं० स्त्री०) आख्यायिका, कहानी।

उपकनिष्ठिका (सं० स्त्री०) उपगता कनिष्ठिकाम्। अनामिका, सबसे छोटीके पासकी उंगली।

उपकन्या (सं० स्त्री०) उपगता कन्याम्। कन्याकी सखी, बेटीकी सहेली।

उपकन्यापुर (सं० अव्य०) स्त्रीभवनके समीप, औरतोंके घरके पास।

उपकरण (सं० क्ली०) उप-कृ-ल्युट्। १ सामग्री, सामान्। २ राजाका छत्रचामरादि चिह्न। ३ उपकार, भलाई।

उपकरणवत् (सं० त्रि०) सामग्रीयुक्त, सामान्से भरा हुआ।

उपकरना (हिं० क्रि०) उपकार करना, फायदा पहुंचना।

उपकर्ण (सं० अव्य०) कर्णे वा कर्णस्य समीपे, विभक्त्यर्थे सामीप्ये वा अव्ययीभावः। कर्णमें, कानके पास।

उपकर्णिका (सं० स्त्री०) १ मूषकर्णिका, चूहाकानी। २ किंवदन्ती, अफवाह, कानाफुसी।

उपकर्तृ (सं० त्रि०) उप-कृ-तृच्। उपकारक, फायदा पहुंचानेवाला।

उपकलाप (सं० अव्य०) कलापमें, कलापके निकट।

उपकल्प (सं० त्रि०) उपगतः कल्पम्। कल्पोपगत, कल्पसे मिला हुआ।

उपकल्पन (सं० क्ली०) उप-क्लृप-णिच्-ल्युट्। १ सम्पादन, बनवाई। २ आयोजन, तैयारी।

उपकल्पित (सं० त्रि०) १ आयोजित, तैयार किया हुआ। २ सम्पादित, बनाया हुआ।

उपकादि—पाणिनिका कहा हुआ एक गण। इसमें निम्नलिखित शब्द पड़ते हैं—उपक, लमक, भ्रष्टक, कपिष्ठल, कृष्णाजिन, कृष्णसुन्दर, चूड़ारक, आड़ारक, गड़क, उदङ्क, सुधायुक्त, अबन्धक, पिङ्गलक, पिष्ट, सुपिष्ट, मयूरकर्ण, खरीजङ्घ, शलाखल, पतञ्जल, पदञ्जल, कठेरणि, कुषोतक, काशकृत्स्न, निदाघ, कलशीकण्ठ, दामकण्ठ, कृष्णपिङ्गल, कर्णक, पर्णक, जटिलक, वधिरक, जन्तुक, अनुलोम, अनुपद, प्रतिलोम, अपजगध, प्रतान, अनभिहित, कमक, वटारक, लेखाभ्र, कमन्दक, पिञ्जूलक, वर्णक, मसूरकर्ण, मदाघ, कवन्तक, कमन्तक, कदामत्त, दामकण्ठ। उपकादिभ्योऽन्यतरस्यामद्वन्द्वे। पा २।४।६९।

उपकान्त (सं० अव्य०) कान्तके समीप, दासके पास।

उपकार (सं० पु०) उप-कृ भावे घञ्। १ साहाय्य, मदद। २ अनुग्रह, मेहरबानी। ३ उपकरण, सामान्। ४ विकीर्ण कुसुमादि, लटकाये हुये फूल वगैरह।

उपकारक (सं० त्रि०) उप-कृ-ण्वुल्। उपकारकर्ता, भलाई करनेवाला।

उपकारकत्व (सं० क्ली०) साहाय्य, मदद, भलाई।

उपकारपर (सं० त्रि०) उपकारक, भलाई करनेमें मेहनत उठानेवाला।

उपकारापकार (सं० पु०) साहाय्य तथा आपद्, भलाई-बुराई।

उपकारिका (सं० स्त्री०) उप-कृ-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। १ उपकारकर्त्री, भलाई करनेवाली। २ पिष्टकभेद, किसी किस्मकी रोटी या पूड़ी। ३ कुशूल, कोठला। ४ राजभवन, शाही महल।

उपकारिता (सं० स्त्री०) साहाय्य, मदद।

उपकारिन् (सं० त्रि०) उपकार करनेवाला, जो फायदा पहुंचाता हो।

उपकार्य (सं० त्रि०) उप-कृ-ण्यत्। १ उपकार किये जाने योग्य, जो भलाई किये जानेके काबिल हो।

उपकार्या (सं० स्त्री०) १ राजभवन, शाही महल। २ कुशूल, अन्न रखनेका घेरा।

उपकाल (सं० पु०) एक नागराज।

उपकालिका (सं० स्त्री०) १ जीरकभेद, किसी किस्मका जीरा। २ श्वेतजीरक, सफेद जीरा। ३ कृष्णजीरक, काला जीरा। ४ कलौञ्जीजीरक, कुलौंजन। ५ पिप्पली, पीपल।

उपकीचक (सं० पु०) विराट् राजाके श्यालक, कीचकके अनुज।

उपकीर्ण (सं० त्रि०) सिक्त, छिड़का हुआ, जो भरा हो।

उपकुञ्च (सं० पु०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

उपकुञ्चक, उपकुञ्चि देखो।

उपकुञ्चि (सं॰ स्त्री॰) उप-कुञ्च-कि। छोटी इलायची, कृमीघ्न। २ स्थूलजीरक, बड़ा जीरा। ३ सूक्ष्मैला, छोटी इलायची। ४ कृष्णजीरक, काला जीरा। ५ श्वेत जीरक, सफेद जीरा। यह कटु, उष्ण, दीपन, लघु, पक्वोर्ध्व-शमन, एवं सर्वांगद-विमोचक होता है और आध्मान, वातगुल्म, रक्तपित्त, कृमि, कफ, पित्त, आमदोष, वात तथा शूलको नाश करता है। (वैद्यनिघण्टु)

उपकुञ्चिका, उपकुञ्चि देखो।

उपकुञ्ची, उपकुञ्चि देखो।

उपकुण्ठ (सं॰ त्रि॰) १ समीप, निकट, नजदीकी। २ एकान्ती, अकेला। (अव्य॰) ३ कुण्ठके समीप, गलेके पास।

उपकुल्या (सं॰ स्त्री॰) दन्तोत्थ, दाँतोंका पीड़।

उपकुर्वाण (सं॰ पु॰) उपकुरुते, उप-कृ-शानच्। ब्रह्मचारी। जो द्विज ब्रह्मचर्यको समाप्त कर गृहस्था-श्रममें जाता वह उपकुर्वाण कहलाता है।

उपकुल्यका, उपकुल्या देखो।

उपकुल्या (सं॰ स्त्री॰) उप-कुल दक्षादि निपा-तनात्। पिप्पली, पीपल। २ नाली, नहर।

उपकुश (सं॰ पु॰) १ सुश्रुतोक्त दन्तमूलगत दिग-रक्त रोग विशेष, मसूड़ेका फोड़ा। दन्तमूल जलते, और पकनेसे दर्द किया करते हैं। दाँत हिलने लगते और उनसे रक्त गिरने लगता है। रक्तपित्तके बाद सूजन पकने और मुँहसे दुर्गन्ध उठनेसे उपकुश रोग समझा जाता है। इस रोगमें शोधन, विरेचन, और शिरो-विरेचनका प्रयोग कर काकोदुम्बरके पत्ते पर जोंकें लगवाना चाहिये। फिर नमक और त्रिकटु मधुके साथ लगाते हैं। त्रिफला, सोंठ, हल्दी और त्रिकटुके काढ़ेको मुँहमें रखकर धीरे धीरे कुल्ला करना चाहिये। यह उपकुश रोगपर बहुत हितकारी है। २ दन्तमूल-रोग, मोटेके मुँहकी एक बीमारी। इसमें दाँतोंके नीचे रुधिर निकलता और दन्तवेष्ट पकता है। (भाव)

उपकूजित (सं॰ त्रि॰) मन्दस्वर किया हुआ, जो गुंजता रहा हो।

उपकूप (सं॰ स्त्री॰) १ कूपसमीप, कुएँके नजदीक। (पु॰) २ कूपसमीपस्थ जलाशय, कुएँके पासका तालाब। (अव्य॰) ३ कूपके निकट, कुएँके पास।

उपकूपजलाशय (सं॰ पु॰) कूपके समीपकी हौदी, कुएँके पासका हौज। इसमें पशु पानी पीते हैं।

उपकूल (सं॰ क्ली॰) कूलस्य समीपम्। १ समुद्र और नदी आदिके कूलका निकटभाग, समुद्र और दरया वगैरहकी जमीनका अगला हिस्सा। (अव्य॰) २ तटपर, किनारे।

उपकृत (सं॰ त्रि॰) उप-कृ-क्त। १ उपकारप्राप्त, एहसान उठाये हुआ। २ उपकारको माननेवाला, एहसानमन्द। (क्ली॰) भावे क्त। ३ उपकार, एहसान।

उपकृति (सं॰ स्त्री॰) उप-कृ-क्तिन्। उपकार, एहसान, भला।

उपकृतिन् (सं॰ त्रि॰) उपकार करनेवाला, जो एहसान करता हो।

उपकृष्ण (सं॰ त्रि॰) उपगतः कृष्णम्। कृष्णके निकट रहनेवाला। (अव्य॰) २ कृष्णके समीप।

उपक्लृप्त (सं॰ त्रि॰) उप-क्लृप्-क्त। १ निर्मित, ठीक किया हुआ। २ निष्पन्न, तैयार किया हुआ। ३ उपभोगसमर्थ, जो काम उठा सकता हो।

उपकेश (सं॰ पुं॰) कल्पित केश, बनावटी बाल।

उपकेशगच्छ—जैनधर्मसम्प्रदायकी एक शाखा।

उपकोलिका (सं॰ स्त्री॰) कृष्णजीरक, काला जीरा।

उपकोशा (सं॰ स्त्री॰) उपवर्षकी कन्या और वररुचिकी भार्या। वररुचि देखो।

उपकोशल (सं॰ पु॰) सत्यकामके शिष्य एक ऋषि; अपर नाम कामलायन। (छान्दोग्य उप॰ ४।१०)

उपक्रमक (सं॰ त्रि॰) आरम्भ करनेवाला, शुरू-करनेवाला, जो कोई काम हाथमें लेता हो।

उपक्रम (सं॰ पु॰) उप-क्रम-घञ्, न वृद्धिः। १ आरम्भ, शुरू। २ उपाय, तदबीर। ३ चिकित्सा, कोई उपचार। ४ कार्य भार। ५ उपधा। ६ गमन, चाल। ७ उपायन, नजराना। ८ विक्रम, जोर। ९ निर्विकार, प्रभाव। १० उद्यम, हिम्मत।

११ उपस्थिति, पहुंच। १२ वेदारम्भ करनेका संस्कार विशेष। १३ मित्र या सभासद्के आनुकूल्यकी परीक्षा।

उपक्रमण (सं॰ क्लो॰) उप-क्रम भावे ल्युट्। १ आरम्भ करण, शुरू। २ चिकित्सा, इलाज।

उपक्रमणिका (सं॰ स्त्री॰) भूमिका, तमहीद। किसी बाहुल्य विषयके लिखनेसे पूर्व संक्षेपमें जो परिचय दिया जाता, वह उपक्रमणिका कहलाता है।

उपक्रमणीय (सं॰ क्लो॰) उप-क्रम-अनीयर्। शुरू किये जानेके काबिल। २ चिकित्सा-सम्बन्धीय, इलाजसे सरोकार रखनेवाला।

उपक्रमितव्य (सं॰ त्रि॰) आरम्भणीय, शुरू किये जाने काबिल।

उपक्रमितृ (सं॰ त्रि॰) आरम्भ करनेवाला, जो शुरू करता हो।

उपक्रान्त (सं॰ त्रि॰) उप-क्रम-क्त। १ आरब्ध, शुरू किया हुआ। २ विस्तृत, फैला हुआ।

उपक्राम्य (सं॰ त्रि॰) चिकित्सनीय, इलाज किये जाने काबिल।

उपक्रिया (सं॰ स्त्री॰) उप-कृ भावे श। १ उपकार, एहसान्, भलाई। २ कार्य, काम, नौकरी।

उपक्रीड़ा (सं॰ स्त्री॰) क्रीड़ाभूमि, खेलकी जगह।

उपक्रुश्य (सं॰ अव्य॰) निन्दावाद करके, झिड़ककर।

उपक्रोश (सं॰ पु॰) उप-क्रुश-घञ्। १ निन्दा, हिकारत, बदनामी। (त्रि॰) २ आसन्नक्रोश, कोसा हुआ।

उपक्रोशक (सं॰ त्रि॰) १ निन्दाकारक, हिकारत करनेवाला। (पु॰) २ गर्दभ, गधा।

उपक्रोशन (सं॰ क्लो॰) निन्दावाद, बदनामी करनेका काम।

उपक्रोष्टृ (सं॰ पु॰) उप-क्रुश-तृच्। १ गर्दभ, गधा। २ निन्दक, हिकारत करनेवाला।

उपक्लेश (सं॰ पु॰) उप-क्लिश-घञ्। मदादि, नशा वगैरह।

उपक्वण (सं॰ पु॰) उप-क्वण-अप्। क्वणो वीणायाः। पा ३।३।६५। वीणानिनाद, तम्बूर या बरबतकी आवाज।

उपक्षस (सं॰ पु॰) कीटविशेष, एक कीड़ा।

उपक्षय (सं॰ पु॰) उप-क्षि-अच्। १ अपचय, नुकसान्। २ निवाससमीपादि। (त्रि॰) क्षयमुपगतः। ३ क्षयप्राप्त, बिगड़ा हुआ।

उपक्षित् (सं॰ त्रि॰) उप-क्षि-क्विप्। १ अधिवासी, पड़ोसी, नजदीक रहनेवाला। २ संलग्न, चिपटा हुआ।

उपक्षीण (सं॰ त्रि॰) उप-क्षि-क्त, तस्य नः दीर्घश्च। हानिग्रस्त, सड़ा-गला।

उपक्षेत्र (सं॰ त्रि॰) अधिवासी, पड़ोसी, पास आनेवाला। (वायव)

उपक्षेप (सं॰ पु॰) उप क्षिप भावे घञ्। १ आक्षेप, उच्च। २ निकट-निक्षेप, पास फेंकनेका काम। ३ काव्यालङ्कार विशेष।

उपक्षेपण (सं॰ क्लो॰) उप-क्षिप-ल्युट्। १ निक्षेप, फेंकफांक। २ शूद्रस्वामिक अन्न विप्रके घर पाक करनेको समर्पण।

उपखात (सं॰ अव्य॰) खातके समीप, खाड़ीमें।

उपखान (हिं॰) उपाख्यान देखो।

उपग (सं॰ त्रि॰) उप-गम-ड। १ उपगत, पास आया हुआ।

"भीवण: फलपाकान्ता बहुपुष्पफलोपगाः।" (मनु १।४६)

२ उपगन्ता, पास जानेवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।

उपगत (सं॰ त्रि॰) उप-गम-क्त। १ स्वीकृत, मञ्जूर किया हुआ। २ उपस्थित, हाजिर। ३ ज्ञात, समझा हुआ। ४ प्राप्त, पहुंचा या मिला हुआ। ५ अपगत, गया हुआ। ६ कृतमैथुन, सहवत किये हुआ। ७ सन्निहित। ८ मृत, गुजरा हुआ। (क्लो॰) ९ प्राप्ति, पहुंच। १० प्राप्तिसूचक पत्र, रसीद।

उपगतवत् (सं॰ त्रि॰) १ गमन करनेवाला, जो पहुंच गया हो। २ अधिकारी, कबज़ा रखनेवाला। ३ भोक्ता, मालूम करनेवाला। ४ स्वीकार करनेवाला, होनहार।

उपगति (सं॰ स्त्री॰) उप-गम-क्तिन्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ ज्ञान, समझ। ३ स्वीकार, मञ्जूरी। ४ आसक्ति, लगाव।

उपगन्तृ (सं॰ त्रि॰) उप-गम-तृच्। १ स्वीकारकारी,

मञ्जूर करनेवाला। २ प्राप्त करनेवाला, जो पा गया हो। ३ ज्ञाता, समझ जानेवाला।

उपगम (सं॰ पु॰) उप-गम-अप्। १ अङ्गीकार, मञ्जूरी। २ निकटगमन, पहुँच। ३ ज्ञान, समझ। ४ आसक्ति, लगाव। ५ प्राप्ति, याफ्त।

उपगमन (सं॰ क्ली॰) उप-गम भावे ल्युट्। उपगम देखो।

उपगम्य (सं॰ त्रि॰) १ निकट जाने योग्य, मिलने काबिल। (अव्य॰) २ निकट जाकर, पहुँचके।

उपगहन (सं॰ पु॰) ऋषिभेद। (भारत आदि ३ अ॰)

उपगा (सं॰ पु॰) उप-गै-क्विप्। १ यज्ञमें गानेवाला एक ऋत्विग्। (स्त्री॰) भावे अङ्। २ उपगान।

उपगाथ (सं॰ पु॰) उप-गै-थक्। यज्ञस्थलमें उद्‌गाताके समीप गानेवाला एक ऋत्विग्।

"उद्गातिरस्माका विश्वे देवा उपगातारः।" (शुक्लयजुः ९।१।७१)

उपगामिन् (सं॰ त्रि॰) निकट उपस्थित होनेवाला, जो पास आ रहा हो।

उपगिर् (सं॰ अव्य॰) पर्वतपर, पहाड़के ऊपर।

उपगिरि (सं॰ अव्य॰) गिरेः समीपस्थ। १ पर्वत समीप, पहाड़के पास। (पु॰) २ देश विशेष, एक पहाड़ी मुल्क।

"तथैवोपगिरिंश्चैव विजिग्ये पुरुषर्षभः।" (भारत सभा २६ अ॰)

उपगीत (सं॰ त्रि॰) ऋषियों द्वारा गाया हुआ, जो गाया-बजाया गया हो।

उपगीति (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, एक प्रकारका आर्या छन्द। इसमें चार पाद होते हैं। समसें बारह और विषम पादमें पन्द्रह मात्रा लगती हैं।

"आर्या द्वितीयकेऽर्धे यद्गदितं लक्षणं तत् स्यात्।
यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते॥" (वृत्तरत्नाकर)

उपगीय (सं॰ अव्य॰) गान करके, गा-बजाकर।

उपगीयमान (सं॰ त्रि॰) गान किया जानेवाला, जो गाया-बजाया जाता हो।

उपगु (सं॰ पु॰) १ राजविशेष। ये सत्यरथिके पुत्र थे। (विष्णु॰ ४।५।१२) (अव्य॰) २ गौके समीप, गायके पास। (त्रि॰) ३ ग्रामकिरवादि।

उपगुप्त (सं॰ त्रि॰) १ गुप्त, पोशीदा, जो छिप गया हो। (पु॰) २ एक बौद्ध सिद्ध पुरुष। बौद्ध इन्हें 'अलक्षणक बुद्ध' कहते थे। ये जातिके शूद्र रहे। सत्रह वर्षके वयःक्रम कालपर इन्होंने सन्न्यास लिया और योगबलसे कामको विजय तथा समाधि-कालमें बुद्धदेवका दर्शन किया था। बुद्धनिर्वाणके एक शतवर्ष बाद कालाशोकके समय ये विद्यमान रहे। बौद्धोंका प्रथम महासाङ्घिक सम्प्रदाय उपगुप्तके ही समय चला। इन्होंने मथुरामें एक स्तूप बनवाया था। बोधिसत्त्वावदानकल्पलताके मतसे इन्होंने मथुराके प्राय १८ लक्ष लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया। (उपगुप्तावदान)

उपगुप्तवित्त (सं॰ त्रि॰) गुप्त विभवयुक्त, छिपी दौलत रखनेवाला।

उपगुरु (सं॰ पु॰) १ सहायक गुरु, मददगार उस्ताद। २ राजविशेष।

उपगूढ (सं॰ त्रि॰) उप-गुह-क्त। १ आलिङ्गित, लिपटाया हुआ। २ गुप्त, पोशीदा। ३ नियन्त्रित, दबाया हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। ४ आलिङ्गन, हमागोशी। "विमानार्थं सुपगूढमङ्गम्।" (माघ)

उपगूढवत् (सं॰ त्रि॰) आलिङ्गन करनेवाला, जो छातीसे लगा चुका हो।

उपगूहन (सं॰ क्ली॰) उप-गूह-ल्युट्। आलिङ्गन, हमागोशी।

उपगेय (सं॰ त्रि॰) गान करने योग्य, गाने-बजाने या सनानेके काबिल।

उपगोह्य (सं॰ त्रि॰) उप-गुह-ण्यत्। १ आलिङ्गन-योग्य, लिपटानेके काबिल। २ ग्राह्य, लेने लायक।

उपग्रन्थि (सं॰ पु॰) अङ्गके किसी ग्रन्थिपर निकलनेवाली गांठ।

उपग्रह (सं॰ पु॰) उप-ग्रह-अप्। १ बन्दी, कैदी। २ बन्धन, कैद। ३ उपयोग, इस्तेमाल। ४ अनुग्रह, मेहरबानी। ५ सन्धि विशेष, किसी किस्मकी सुलह। यह कुछ देकर की जाती है। ६ कुशसमूह। ७ ज्योतिषोक्त ग्रहके तुल्य भ्रमण करनेवाला ज्योतिः पदार्थ, राहु केतु प्रभृति।

"दुर्दर्शान् पश्यन् [illegible]।
[illegible]॥"

केतुरष्टादशं प्रोक्तमुल्का स्यादेकविंशतिः।
द्वाविंशतितमं कम्पस्त्रयोविंशश्च वज्रकम्॥
निर्घातश्च चतुर्विंशमुक्ता ह्यष्टावुपग्रहाः।" (ज्योतिःशास्त्र)

सूर्याक्रान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युन्मुख, अष्टम शूल्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंशति उल्का, द्वाविंशति कम्प, त्रयोविंश वज्र और चतुर्विंश निर्घात नामक नक्षत्र—सब आठ उपग्रह होते हैं।

कर्मणि घञ्। ८ कारारुद्ध, कैदमें पड़ा हुआ।

उपग्रहण (सं॰ क्ली॰) उप-ग्रह-ल्युट्। निकटसे ग्रहण, नज़दीकको लेवायी। २ स्वीकार, मञ्ज़ूरी। ३ संस्कारपूर्वक वेदका ग्रहण वा अध्ययन। ४ यज्ञादि साधक आधारकरण।

'न सद्येन पैठोपग्रहः।' (कर्काचार्य)
"दक्षिणहस्तस्य हागप्रयोर्कद्वयस्य उपकण्यादिना छन्दआसर वरवार्धं सव्यहस्तगृहीतवेदेनाधारकरणमुपग्रहणमुच्यते।"
(कातीय श्रौतसूत्रभाष्ये कर्काचार्य १।१०।९)

उपग्राह (सं॰ पु॰) उप-ग्रह-णिच्-अच्। १ उपढौकन, भेंट। कर्मणि घञ्। २ उपहारस्वरूप दिया जानेवाला वस्तु, जो चोज़ नज़र की जाती हो।

"उपायमानुपग्राहान् राजभिः प्रापितान् बहून्।" (भारत-सभा ५१ अ॰)
'उपग्राहान् उपहारान्।' (नीलकण्ठ)

उपग्राह्य (सं॰ त्रि॰) उप-ग्रह-णिच्-यत्। १ समीप लाकर रखने योग्य, जो नज़र किये जाने क़ाबिल हो। (पु॰) २ उपढौकन, भेंट।

उपघात (सं॰ पु॰) उपहन्यते अनेन, उप-हन करणे घञ्। १ रोग, बीमारी। २ विनाश, बरबादी। ३ कर्मकी अयोग्यताका सम्पादन।

"ऋत्विग्भ्यो रचयतामन्नमिति मात्रोऽपि दर्शितः।
उपघातप्रधानत्वात् न चादिभ्योऽपि रक्षति॥" (मीमांसाकारिका)

४ अपकार, बुराई। (मनु ११।७१) ५ इन्द्रियगणके निज कार्य उत्पादनकी अक्षमता, नाताक़ती, कमज़ोरी। ६ पापसमूह। ७ होमभेद।

"अरो तु महदेवासौ होमः स्यादुपघातवत्।" (छन्दोगपरिशिष्ट)

उपघातक (सं॰ त्रि॰) उप-हन-ण्वुल्। १ नाशक, बरबाद करनेवाला। २ पीड़क, तकलीफ़ देनेवाला। ३ अनिष्टकारक, बुराई करनेवाला।

"अयं मया न गृह्णीयामि मृत्वा धर्मोपघातकः।" (भारत-शान्ति ९ अ॰)

(पु॰) ४ आरग्वध वृक्ष, अमलतास।

उपघाती, उपघातक देखो।

उपघुष्ट (सं॰ त्रि॰) शब्दायमान, गूंजता हुआ।

उपघोषण (सं॰ क्ली॰) घोषणा, ढिंढोरा, ज़ाहिर करनेकी बात।

उपघ्न (सं॰ पु॰) उप-हन घञर्थे क। उपघ्न आश्रये। पा ३।३।८५। १ निकटाश्रय, पासका सहारा।

"छेदादिवोपघ्नतरोर्व्रतत्यौ।" (रघु)

२ समीपस्थ विश्रामागार, जो ठहरनेकी जगह पास हो हो। ३ आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़े हो।

उपघ्र (सं॰ त्रि॰) उप-घ्रा-ड। सम्बन्धीय, सरोकार रखनेवाला।

उपङ्ग (हिं॰) उपाङ्ग देखो।

उपच (सं॰ त्रि॰) उपचिनोति, उप-चि-ड। अल्पमाषपिष्टक मिश्रित, जिसमें उड़दका आटा थोड़ा मिला हो। (शतपथब्रा॰ १।१।१।१०)

उपचक्र (सं॰ पु॰) चक्रवाक पक्षिविशेष, चकोर। चक्रवाक देखो। इसका मांस लघु, हृद्य, उष्णवीर्य, पाकमें कटु और बल तथा अग्नि बढ़ानेवाला होता है। (राजनिघण्टु)

उपचक्षुः (सं॰ क्ली॰) १ दिव्यचक्षु, चश्मा। (अव्य॰) २ चक्षुके समीप, आंखके पास।

उपचतुर (सं॰ त्रि॰) प्रायः चार, क़रीब चार।

उपचय (सं॰ पु॰) उप-चि-अच्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उन्नति, तरक़्क़ी। (माघ २।५५) ३ आधिक्य, ज़्यादती। ४ पुष्टि, मज़बूती। ५ समूह, झुण्ड। ६ संग्रह, चुनाव। ७ ज्योतिषोक्त लग्नसे तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश स्थान।

उपचयभवन (सं॰ क्ली॰) दण्डकवृत्तभेद, एक छन्द।

उपचयापचय (सं॰ पु॰) वृद्धि और ह्रास, बढ़तीघटती, नफ़ा-नुक़सान।

उपचर (सं॰ पु॰) उप-चर-अच्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ उपचार, हाज़िरी। उपचार देखो। (क्ली॰) चरस्य समीपम्। ३ दूतका सामीप्य, एलचीका पड़ोस। (अव्य॰) ४ दूतके समीप, एलचीके पास।

मञ्जूर करनेवाला। २ प्राप्त करनेवाला, जो पा गया हो। ३ ज्ञाता, समझ जानेवाला।

उपगम (सं॰ पु॰) उप-गम-अप्। १ अङ्गीकार, मञ्जूरी। २ निकटगमन, पहुंच। ३ ज्ञान, समझ। ४ आसक्ति, लगाव। ५ प्राप्ति, याफ्त।

उपगमन (सं॰ क्ली॰) उप-गम भावे ल्युट्। उपगम देखो।

उपगम्य (सं॰ वि॰) १ निकट जाने योग्य, मिलने क़ाबिल। (अव्य॰) २ निकट जाकर, पहुंचके।

उपगहन (सं॰ पु॰) ऋषिभेद। (भारत आदि ४ अ॰)

उपगा (सं॰ पु॰) उप-गै-क्विप्। १ यज्ञमें गानेवाला एक ऋत्विग्। (स्त्री॰) भावे अच्। २ उपगान।

उपगातृ (सं॰ पु॰) उप-गै-तृच्। यज्ञस्थलमें उद्गाताके समीप गानेवाला एक ऋत्विग्।

"[illegible] विश्वे देवा उपगातारः।" (शुक्लयजुः [illegible])

उपगामिन् (सं॰ वि॰) निकट उपस्थित होनेवाला, जो पास आ रहा हो।

उपगिर् (सं॰ अव्य॰) पर्वतपर, पहाड़के ऊपर।

उपगिरि (सं॰ अव्य॰) गिरेः समीपम्। १ पर्वत समीप, पहाड़के पास। (पु॰) २ देश विशेष, एक पहाड़ी मुल्क।

"तदं योपगिरिश्च वि विजिग्ये पुरुषर्षभः।" (भारत सभा २९ अ॰)

उपगीत (सं॰ वि॰) कवियों द्वारा गाया हुआ, जो गाया-बजाया गया हो।

उपगीति (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष, एक प्रकारका आर्या छन्द। इसमें चार पाद होते हैं। समर्में बारह और विषम पादमें पन्द्रह मात्रा लगती हैं।

"आर्या द्वितीयकार्धे यद्गदितं लक्षणं तत् स्यात्।
यद्युभयोरपि दलयोरुपगीतिं तां मुनिर्ब्रूते।" (वृत्तरत्नाकर)

उपगीय (सं॰ अव्य॰) गान करके, गा-बजाकर।

उपगीयमान (सं॰ वि॰) गान किया जानेवाला, जो गाया-बजाया जाता हो।

उपगु (सं॰ पु॰) १ राजविशेष। ये सत्यरथिके पुत्र थे। (विष्णु॰ [illegible]) (अव्य॰) २ गौके समीप, गायके पास। (वि॰) ३ ग्रामनिकटवर्ति।

उपगुप्त (सं॰ वि॰) १ गुप्त, पोशीदा, जो छिप गया हो। (पु॰) २ एक बौद्ध सिद्ध पुरुष। बौद्ध इन्हें 'अलक्षणक बुद्ध' कहते थे। ये जातिके शूद्र रहे। सप्तदश वर्षके वयःक्रम कालपर इन्होंने संन्यास लिया और योगबलसे कामको विजय तथा समाधिकालमें बुद्धदेवका दर्शन किया था। बुद्धनिर्वाणके एक शतवर्ष बाद कालाशोकके समय ये विद्यमान रहे। बौद्धोंका प्रथम महासाङ्घिक सम्प्रदाय उपगुप्तके ही समय चला। इन्होंने मथुरामें एक स्तूप बनवाया था। बोधिसत्त्वावदानकल्पलताके मतसे इन्होंने मथुराके प्राय १८ लक्ष लोगोंको बौद्ध धर्ममें दीक्षित किया। (उपगुप्तावदान)

उपगुप्तवित्त (सं॰ वि॰) गुप्त विभवयुक्त, छिपी दौलत रखनेवाला।

उपगुरु (सं॰ पु॰) १ सहायक गुरु, मददगार उस्ताद। २ राजविशेष।

उपगूढ (सं॰ वि॰) उप-गुह-क्त। १ आलिङ्गित, लिपटाया हुआ। २ गुप्त, पोशीदा। ३ नियन्त्रित, दबाया हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। ४ आलिङ्गन, हमागोशी। "विलासमयमुपगूढमथवम्।" (माघ)

उपगूढवत् (सं॰ वि॰) आलिङ्गन करनेवाला, जो छातीमें लगा चुका हो।

उपगूहन (सं॰ क्ली॰) उप-गुह-ल्युट्। आलिङ्गन, हमागोशी।

उपगेय (सं॰ वि॰) गान करने योग्य, गाने-बजाने या मनानेके क़ाबिल।

उपगोह्य (सं॰ वि॰) उप-गुह-ण्यत्। १ आलिङ्गन-योग्य, लिपटानेके क़ाबिल। २ ग्राह्य, लेने लायक़।

उपग्रन्थि (सं॰ पु॰) अङ्गके किसी ग्रन्थिपर निकलनेवाली गांठ।

उपग्रह (सं॰ पु॰) उप-ग्रह-अप्। १ बन्दी, क़ैदी। २ बन्धन, क़ैद। ३ उपयोग, इस्तेमाल। ४ अनुग्रह, मेहरबानी। ५ सन्धि विशेष, किसी किस्मकी सुलह। यह कुछ देकर की जाती है। ६ कुशमुष्टि। ७ ज्योतिषोक्त ग्रहके तुल्य भ्रमण करनेवाला ज्योतिः पदार्थ, राहु केतु प्रभृति।

"[illegible]
[illegible]"

"अष्टादश मीनमुक्ता स्यादेकविंशतिः।
द्वाविंशतितमं कम्पस्त्रयोविंशं घ्यचकम्॥
निर्घातश्च चतुर्विंशमुक्ता चाष्टावधवाः।" (ज्योतिसार)

सूर्याक्रान्त नक्षत्रसे पञ्चम विद्युन्मुख, अष्टम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंशति उल्का, द्वाविंशति कम्प, त्रयोविंश वज्र और चतुर्विंश निर्घात नामक नक्षत्र—सब आठ उपग्रह होते हैं।

कर्मणि घञ्। ८ काराबद्ध, कैदमें पड़ा हुआ।

उपग्रहण (सं० क्ली०) उप-ग्रह-ल्युट्। निकटसे ग्रहण, नजदीकको लेजाना। २ स्वीकार, मञ्जूरी। ३ संस्कारपूर्वक वेदका ग्रहण वा अध्ययन। ४ यज्ञादि साधक आधारकरण।

'न सवेन वेदोपग्रहः।' (कर्काचार्य)

"दर्विपक्षलसस्य सामान्यकल्पनस्य पक्षजन्मादिना अन्यत्वार्थं तस्य तत्सम्बन्धितया उपग्रहणं कुर्वन्ति।"
(कातीय श्रौतसूत्रभाष्ये कर्काचार्य १।१०।६)

उपग्राह (सं० पु०) उप-ग्रह-णिच्-अच्। १ उपढौकन, भेंट। कर्मणि घञ्। २ उपहारस्वरूप दिया जानेवाला वस्तु, जो चीज़ नज़र की जाती हो।

"उपग्राह्यानुपग्राह्यान् राजभिः प्रापितान् बहून्।" (भारत-सभा ५१ अ०)
'उपग्राह्यान् उपहारान्।' (नीलकण्ठ)

उपग्राह्य (सं० त्रि०) उप-ग्रह-णिच्-यत्। १ समीप लाकर रखने योग्य, जो नज़र किये जाने क़ाबिल हो। (पु०) २ उपढौकन, भेंट।

उपघात (सं० पु०) उपहन्यते अनेन, उप-हन करणे घञ्। १ रोग, बीमारी। २ विनाश, बरबादी। ३ कर्मकी अयोग्यताका सम्पादन।

"यदि यो रक्षतामग्निमिति चालोऽपि दैविकः।
उपघातप्रधानत्वात् न अदिभ्योऽपि रक्षति॥" (मीमांसाकारिका)

४ अपकार, बुराई। (मनु ११।७८) ५ इन्द्रियगणके निज कार्य उत्पादनकी अक्षमता, नाताक़ती, कमज़ोरी। ६ पापस्पर्श। ७ होमभेद।

"अरौ तु बहुदेवत्यो होमः स्यादुपघातवत्।" (छन्दोगपरिशिष्ट)

उपघातक (सं० त्रि०) उप-हन-ण्वुल्। १ नाशक, बरबाद करनेवाला। २ पीड़क, तकलीफ़ देनेवाला। ३ अनिष्टकारक, बुराई करनेवाला।

"कथं यत्र न गृह्णीयामि भूत्वा धर्मोपघातकः।" (भारत-शान्ति ८ अ०)

(पु०) ४ आरग्वध वृक्ष, लटजीरा।

उपघाती, उपघातक देखो।

उपघुष्ट (सं० त्रि०) शब्दायमान, गूंजता हुआ।

उपघोषण (सं० क्ली०) घोषणा, ढिंढोरा, ज़ाहिर करनेकी बात।

उपघ्न (सं० पु०) उप-हन अशर्थे क। उपघ्न आश्रये। पा ३।३।८५। १ निकटाश्रय, पासका सहारा।

"देहादिहोपघ्नतरोरिव तस्थौ।" (रघु)

२ समीपस्थ विश्रामागार, जो ठहरनेकी जगह पास हो। ३ आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़े हो।

उपघ्र (सं० त्रि०) उप-घ्रा-ड। सम्यक्शीय, पशोकार रखनेवाला।

उपङ्ग (हिं०) उपाङ्ग देखो।

उपच (सं० त्रि०) उपचिनोति, उप-चि-ड। अल्पमाषपिष्टक मिश्रित, जिसमें उड़दका आटा थोड़ा मिला हो। (शतपथब्रा० ११।१।१०)

उपचक्र (सं० पु०) चक्रवाक पक्षिविशेष, चकोर। चक्रवाक देखो। इसका मांस लघु, हृद्य, उष्णवीर्य, पाकमें कटु और बल तथा अग्नि बढ़ानेवाला होता है। (राजनिघण्टु)

उपचक्षुः (सं० क्ली०) १ दिव्यचक्षु, चश्मा। (अव्य०) २ चक्षुके समीप, आंखके पास।

उपचतुर (सं० त्रि०) प्रायः चार, क़रीब चार।

उपचय (सं० पु०) उप-चि-अच्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उन्नति, तरक्की। (माघ २।५७) ३ आधिक्य, ज्यादती। ४ पुष्टि, मज़बूती। ५ समूह, झुण्ड। ६ संचय, चुनाव। ७ ज्योतिषोक्त लग्नसे तृतीय, षष्ठ, दशम और एकादश स्थान।

उपचयभवन (सं० क्ली०) इन्द्रकहत्तभेद, एक छन्द।

उपचयापचय (सं० पु०) वृद्धि और ह्रास, बढ़तीघटती, नफ़ा-नुक़सान।

उपचर (सं० पु०) उप-चर-अच्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ उपचार, हाज़िरी। उपचार देखो। (क्ली०) चरस्य समीपम्। ३ दूतका सामीप्य, एलचीका पड़ोस। (अव्य०) ४ दूतके समीप, एलचीके पास।

उपचरण (सं॰ क्ली॰) निकटमें गमन, नजदीकका जाना।

उपचरित (सं॰ त्रि॰) उप-चर-क्त। १ आराधित, मनाया या हाजिरी बजाया हुआ। २ लक्षण द्वारा बोधित, भाषासे समझा हुआ।

उपचर्म (सं॰ अव्य॰) उप-चर-मन् अव्ययीभावात् टच्। नपुंसकादन्यतरस्याम्। पा ५।४।१०९) १ चर्मके समीप, चमड़ेके पास। (त्रि॰) २ चर्मोपगत, चमड़ेमें लगा हुआ।

उपचर्य (सं॰ त्रि॰) उप-चर कर्मणि यत्। १ सेवनीय, खिदमत किये जाने क़ाबिल।

"उपचर्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत् पतिः।" (मनु ५।१५४)

(अव्य॰) २ उपस्थित हो या पहुंचकर। ३ घोड़ोंको दलमलके।

उपचर्या (सं॰ स्त्री॰) उप-चर-क्यप्-टाप्। १ चिकित्सा, इलाज। २ परिचर्या, खिदमत।

उपचायिन् (सं॰ त्रि॰) उपचिनोति, उप-चि-णिनि। वृद्धिकारक, बढ़ानेवाला, जो अच्छी हालतमें हो।

उपचाय्य (सं॰ पु॰) उप-चीयतेऽग्निरत्र, उप-चि-निपातने ण्यत्। कुण्डपाय्यसञ्चाय्यौ क्रतौ। (पा ३।१।१३१)। १ यज्ञाग्नि। २ वेदी।

उपचार (सं॰ पु॰) उप-चर-घञ्। १ चिकित्सा, इलाज। २ सेवा, खिदमत। ३ व्यवहार, चालचलन। ४ उत्कोच, रिशवत। ५ परकी तुष्टिके लिये मिथ्या कथन, दूसरेको राज़ी रखनेके लिये झूठ बोलना।

"उपचारपदं न चेदिदं त्वमनङ्गः कथमक्षता रतिः।" (कुमार ४।९)

६ धर्मानुष्ठान, मजहबी काम। ७ पूजाके उपयोगी द्रव्यका भेद। यह अट्ठारह प्रकारका होता है—१ आसन, २ स्वागतप्रश्न, ३ पाद्य, ४ अर्घ्य, ५ आचमनीय, ६ स्नान, ७ वस्त्र एवं उपवीत, ८ भूषणादि, ९ गन्ध, १० पुष्प, ११ धूप, १२ दीप, १३ अन्न, १४ तर्पण, १५ माला, १६ अनुलेपन, १७ नमस्कार और १८ विसर्जन। तन्त्रसारके मतसे ६४ प्रकारका उपचार ठहरता है।

८ न्याय मतमें—सहचरणादिके निमित्त उसी भावमें वैसा ही अभिधान। (न्यायसू॰ ११०।१) ९ प्रणाम, सलाम। (गौतमीय १।१४)

१० लक्षण द्वारा अर्थबोध, आकार देखकर मतलबका समझना। ११ छल, धोका। १२ सम्मान, इज्ज़त। १३ लज्जा, सजावट। १४ व्याकरणानुसार—विसर्गके स्थानमें सकार या षकारका आदेश। १५ सामवेदका परिशिष्ट विशेष।

उपचारक, उपचारपर देखो।

उपचारकरण (सं॰ क्ली॰) १ उपढौकनदान, भेंटका चढ़ाव। यह प्रधानतः गन्धपुष्पादि द्वारा किया जाता है। २ ध्यान, खयाल।

उपचारकर्मन्, उपचारकरण देखो।

उपचारक्रिया (सं॰ स्त्री॰) उपचारकरण देखो।

उपचारच्छल (सं॰ क्ली॰) न्यायमतमें—अयथार्थ प्रयोगसे अर्थका निराकरण, गलत इस्तेमालसे मानीका न मानना।

"धर्मविकल्पनिर्देशेऽर्थसद्भावप्रतिषेध: उपचारच्छलम्।" (गौतमसू॰ १।२।१४)

उपचारना (हिं॰ क्रि॰) उपचार करना, बरतना।

उपचारपर (सं॰ त्रि॰) दृढ़ सेवक, पूरी खिदमत करनेवाला।

उपचारपरिभ्रष्ट (सं॰ त्रि॰) कठोर, बेरहम, जो सभ्य या शायस्ता न हो।

उपचारिन् (सं॰ त्रि॰) सेवक, खिदमतगार।

उपचार्य (सं॰ पु॰) उप-चर भावे ण्यत्। १ चिकित्सा, इलाज। २ सेवा, खिदमत। (त्रि॰) १ सेवनीय, खिदमत किये जाने लायक। २ चिकित्सनीय, जो इलाज किये जाने क़ाबिल हो।

उपचिकीर्षा (सं॰ स्त्री॰) उप-कृ-सन्-अ। आशंसायां भूतवच्च। ३।३।१३२। चिकीर्षार्थ्यान्। पा ३।३।१०२। उपकार करनेकी इच्छा, दूसरेकी तकलीफ मिटानेकी ख्वाहिश।

उपचित् (वै॰ स्त्री॰) देहवर्धकरोग विशेष, सूजन।

'उपचितः सवितुर् मरुतामिवदायकः।' (वाजसनेयसंहिता अथर्व ६।११।७)

उपचित (सं॰ त्रि॰) उप-चि-क्त। १ समृद्ध, बढ़ा हुआ। २ लिप्त, लगा हुआ। ३ लेपनादि द्वारा वर्धित, जो लेपन वगैरहसे बढ़ गया हो। ४ समाहित, इकट्ठा किया हुआ। ५ गठित, जोड़ा हुआ। ६ रचित, बनाया हुआ। ७ दग्ध, जला हुआ।

उपचितरस (सं॰ त्रि॰) रागमें वृद्धिप्राप्त, जोशमें बढ़ा हुआ।

उपचिति (सं॰ स्त्री॰) उप-चि-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ उन्नति, तरक्की। ३ संग्रह, ढेर।

उपचित्तचित्त (सं॰ पु॰) पापीयःके एक पुत्रका नाम।

उपचित्र (सं॰ क्ली॰) १ समवृत्तवर्ण छन्दोवृत्तभेद। "उपचित्रमिदं सससाल्गगौ।" (वृत्तरत्ना॰) २ अर्ध-समवर्णवृत्तभेद। "विषमे यदि सौसलगा दले भौ युजि भाद्गुरुकावुपचित्रम्।" (वृत्तरत्ना॰) ३ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। ४ पृश्निपर्णीवृक्ष, चकौड़िया। ५ दन्तीवृक्ष, दांती। ६ आखुकर्णी, चूहाकानी। ७ वृहद्दन्ती, बड़ी दांती।

उपचित्रका (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रदन्ती, छोटी दांती।

उपचित्रा (सं॰ स्त्री॰) १ मूषिकपर्णी, चूहाकानी। २ स्वाति। ३ हस्तानक्षत्र। ४ दन्तिवृक्ष, दांती। ५ षोड़शमात्रात्मक मात्रावृत्तभेद। "द्विगुणितवसुलघुरचल-धृतिरिह मात्राष्टकयुग यदि खचिता।उपचित्रा नवमे परयुक्ते।" (वृत्तरत्नाकर)

उपचिल्ली (सं॰ स्त्री॰) श्वेत चिल्ली शाक।

उपचीयमान (सं॰ त्रि॰) संग्रह किया जानेवाला।

उपचूलन (सं॰ क्ली॰) तापन, गर्म करनेका काम।

उपचेय (सं॰ त्रि॰) उप-चि कर्मणि यत्। चयनीय, इकट्ठा किये जाने काबिल।

उपच्छन्दन (सं॰ क्ली॰) उप-छदि-णिच् भावे ल्युट्। १ प्रार्थना, अर्ज। २ उपमन्त्रण, फुसलाहट। ३ अनु-रोध, कहना।

उपच्छन्न (सं॰ त्रि॰) गुप्त, पोशीदा, ढंका हुआ।

उपच्यव (सं॰ पु॰) उप-च्युङ् भावे अच्। गृहसे निर्गत, घरसे निकला हुआ।

उपज (सं॰ त्रि॰) १ वर्धिष्णु, बढ़नेवाला। (पु॰) २ देवविशेष। (हिं॰ स्त्री॰) ३ उत्पत्ति, पैदायश। ४ हृदयमें दौड़ा हुआ विषय, जो बात दिलमें आयी हो। ५ मनमानी तान।

उपजगती (सं॰ त्रि॰) छन्दोविशेष। यह त्रिष्टुभ्का एक भेद है। इसमें तीन पादपर ग्यारहकी जगह बारह-बारह अक्षर पड़ते हैं।

उपजन (सं॰ क्ली॰) उपःजायते, जन-अच्। १ देह, जिस्म। 'स्त्रीपुंसयोरन्योन्योपयमने जायते इत्युपजनम्।' (छान्दोग्यभाष्ये शङ्कराचार्य) (पु॰) २ स्तोमादि वृद्धि। (आश्व॰ श्रौत॰ ८।११।१४) ३ उत्पत्ति, पैदायश। ४ अक्षर, हर्फ।

उपजना (हिं॰ क्रि॰) उत्पन्न होना, निकलना।

उपजप्य (सं॰ त्रि॰) उप-जप कर्मणि अर्हार्थे यत्। भेदार्ह, काना-फूसी करने लायक, जो चुपके कहनेसे अपनी ओर आ सकता हो।

"उपजप्यानुपजपेद्बुध्येतैव च तत्कृतम्।" (मनु ७।१९०)

उपजरस (सं॰ अव्य॰) वृद्धावस्थामें, बुढ़ापे के वक्त।

उपजला (सं॰ स्त्री॰) यमुनापार्श्वस्थ एक नदी। (भारत-वन १३ अ॰)

उपजल्पित (सं॰ क्ली॰) वार्ता, बातचीत।

उपजल्पिन् (सं॰ त्रि॰) उप-जल्प-णिनि। उपदेशक, समझानेवाला। (भारत-आदि॰)

उपजा (सं॰ स्त्री॰) दूरस्थ वंश, जो खान्दान् नज़-दीकी न हो।

उपजाऊ (हिं॰ वि॰) उर्वर, जरखेज, जिसमें ज़्यादा उपजे।

उपजात (सं॰ त्रि॰) उत्पन्न किया हुआ, जो उप-जाया गया हो।

उपजातकोप, उपजातक्रोध देखो।

उपजातक्रोध (सं॰ त्रि॰) क्रुद्ध किया हुआ, जो छेड़ा गया हो।

उपजातविश्वास (सं॰ त्रि॰) विश्वास करनेवाला, जिसे एतबार रहे।

उपजाति (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष। यह इन्द्रवज्रा तथा उपेन्द्रवज्रा और वंशस्थ एवं इन्द्रवंशके योगसे चौदह-चौदह प्रकारकी होती है। इ उ उ उ। उ इ उ उ। इ इ उ उ। उ उ इ उ। इ उ इ उ। उ इ इ उ। इ इ इ उ। उ उ उ इ। इ उ उ इ। उ इ उ इ। इ इ उ इ। उ उ इ इ। इ उ इ इ। उ इ इ इ। अन्यान्य मिश्रित जातिमें भी इसी प्रकार १४ भेद पड़ते हैं।

उपजाना (हिं॰ क्रि॰) उत्पन्न करना, निकालना।

उपजाप (सं॰ पु॰) उप-जप-घञ्। १ भेद, कानाफूसी। २ कुमन्त्र, साजिश। ३ विच्छेद, अलगाव। ४ उपांशु जप।

उपजापक (सं॰ त्रि॰) उप-जप-ण्वुल्। १ भेदक, लगाबुझो करनेवाला। २ प्रोत्साहक, उभारनेवाला।

"उपजापैर्भिन्द्यादेतैरेभ्योऽथवा पीडयेदरम्।" (मनु ७।१९७)

उपजाय (सं॰ अव्य॰) जायाके निकट, औरतके पास।

उपजिगमिषु (सं॰ त्रि॰) निकट उपस्थित होनेका अभिलाषी, जो नज़दीक पहुंचना चाहता हो।

उपजिघ्रास्य (सं॰ त्रि॰) निगूढ़, छिपा हुआ।

उपजिहीर्षा (सं॰ स्त्री॰) उप-हृ-सन्-अ। धातोः कर्मणः समानकर्तृकादिच्छायां वा। पा ३।१।७। अप्रत्ययात्। पा ३।३।१०२। अपरके द्रव्यादिको हरण करनेकी इच्छा, दूसरेकी चीज चोरानेकी ख़ाहिश।

उपजिह्वा (सं॰ स्त्री॰) १ कीटविशेष, किसी किस्मकी चींटी। २ मूल जिह्वा, हलक़का कव्वा। ३ अश्वके मुखका एक रोग, घोड़ेके मुंहमें होनेवाली एक बीमारी। इसमें जिह्वाके नीचे सूजन आ जाती है। (जयदत्त) ४ जिह्वागत मुखरोग, जीभमें होनेवाली मुंहकी बीमारी।

"जिह्वाग्ररूपः श्वयथुर्हि जिह्वामुन्नम्य जातः कफरक्तयोनिः।
प्रसेककण्डूपरिदाहयुक्ता प्रकथ्यतेऽसावुपजिह्विकेति।"

(सुश्रुत, निदान १६ अ॰)

दूषित कफ एवं रक्तसे अग्रभागकी तरह अधोभागमें जिह्वाप फूल उठता, जिससे लालास्राव, कण्डू और दाह उपजता है। इसी रोगको उपजिह्वा कहते हैं। वैद्यक मतसे इस रोगमें जिह्वाप कर्कश पत्र द्वारा रगड़ यवक्षारसे प्रतिसारण करना चाहिये। त्रिकटु, यवक्षार, हरीतकी और चिता सकल सम-भागमें मिला रगड़ने अथवा उक्त सकल द्रव्यके कल्क तथा चतुर्गुण जल द्वारा तैल पका कुल्ली करनेसे यह रोग सत्वर ही आरोग्य होता है।

उपजिह्विका, उपजिह्वा देखो

उपजीक (सं॰ पु॰) जल देवता।

उपजीव (सं॰ त्रि॰) उपगतो जीवम्। जीवनो-पगत, जीने-लायक़।

उपजीवक (सं॰ त्रि॰) उपजीव-ण्वुल्। १ जीविका चलानेवाला, जो जिन्दगी बसर करता हो। २ आश्रय या अवलम्बनकारक, सहारा या टेक लेनेवाला। (क्ली॰) ३ जीविकानिर्वाह, बसर-ज़िन्दगी।

उपजीवकत्व (सं॰ क्ली॰) न्यायके मतसे—१ कार्यत्व, कारगुज़ारी। २ प्रयोज्यत्व, इस्तेमाल।

उपजीवन (सं॰ क्ली॰) उप-जीव करणे ल्युट्। जीविका, रोज़ी।

उपजीवनीय (सं॰ त्रि॰) उपजीवन करने योग्य, जो रोज़ी चलाता हो।

उपजीविका (सं॰ स्त्री॰) उपजीव्यतेऽनया, उप-जीव संज्ञायां करणे ण्वुल् वा। उपजीवन, रोज़ी, रोज़गार।

उपजीविन् (सं॰ त्रि॰) उपजीव-णिनि। १ आश्रित, जो सहारा पकड़े हो। २ वेतनभोगी, तनख़ाहपर बसर करनेवाला।

उपजीव्य (सं॰ क्ली॰) उप-जीव-ण्यत्। १ आश्रय, सहारा। "उपजीव्यद्रुमाभाव विजितिविधुं वो द्रुमः।" (दायभाग)

उपजोष (सं॰ पु॰) उप-जुष-घञ्। १ प्रीति, मज़ा। (अव्य॰) उप-जुष-अम्। २ प्रीतिसे, मज़ेमें।

उपजोषण (सं॰ क्ली॰) आस्वादन, मज़ेदारी।

उपज्ञा (सं॰ स्त्री॰) उप-ज्ञा कर्मणि अङ्। १ आद्य-ज्ञान, असली समझ। जो ज्ञान बिना उपदेश आता, वही उपज्ञा कहाता है। भावे अङ्। २ आदि कथन, पहली बात।

उपज्ञात (सं॰ त्रि॰) उप-ज्ञा-क्त। बिना उपदेश-ज्ञात, बे सिखाये समझा हुआ।

उपज्मन् (सं॰ पु॰) पादार्पण करते हुआ, जो चढ़ रहा हो।

उपज्योतिष (सं॰ क्ली॰) १ ज्योतिष शास्त्रानुगत गणि-तादि, नजूमका हिसाब। २ देशविशेष। (वराहमिहिर)

उपज्वलित (सं॰ त्रि॰) प्रकाशमान, जो जल रहा हो।

उपटन (हिं॰ पु॰) १ चिह्न, दाग़, उभार। २ उबटन।

उपटना (हिं॰ क्रि॰) १ उमगना, उभर आना। २ स्थानान्तरित होना, हटना। ३ नष्ट होना, गिर जाना, किसी काममें न लगना।

"दूध पीना बन्द हुआ।" (लोकोक्ति)

उपटा (हिं॰ वि॰) १ नष्टभ्रष्ट, बरबाद। (पु॰) २ जलप्लावन, पानीका बूड़ा। ३ चपेट, ठोकर, धक्का।

उपटाना (हिं॰ क्रि॰) स्थानान्तरित करनेको आदेश देना, उखड़वाना, हटवाना।

उपटारना (हिं॰ क्रि॰) स्थानान्तरित करना, हटा देना।

उपड़ना, उपटना देखो।

उपढौकन (सं॰ क्लो॰) उप-ढौक भावे ल्युट। १ उपहार, नज़्र, भेंट। २ उत्कोच, रिशवत।

उपतक्ष (सं॰ पु॰) नाग या गन्धर्व विशेष।

उपतट (सं॰ अव्य॰) १ तटके निकट, किनारेपर। (पु॰) २ प्रान्त, बगल।

उपतन्त्र (सं॰ क्लो॰) उपगतं तन्त्रम्। शिवोक्त तन्त्र जैसा ऋषिकृत तन्त्र। वाराहीतन्त्रके मतसे— कपिल, जैमिनि, वशिष्ठ, नारद, गर्ग, पुलस्त्य, भार्गव, याज्ञवल्क्य, भृगु, शुक्र, बृहस्पति प्रभृति मुनिकृत तन्त्र उपतन्त्र है।

उपतपत् (सं॰ पु॰) आन्तरिक ताप, भीतरी गर्मी।

उपतप्त (सं॰ त्रि॰) उप-तप-क्त। १ सन्तप्त, गर्म, जलाभुना। २ पीड़ित, तकलीफ़में पड़ा हुआ। ३ कातर, डरपोक।

उपतप्तृ (सं॰ पु॰) उप-तप-तृच्। १ उपतापक, तपा डालनेवाला। २ उपताप, बिगड़ी गर्मी। ३ रोग, बीमारी।

उपतप्यमान (सं॰ त्रि॰) पीड़ित, जो तकलीफ़ उठा रहा हो।

उपताप (सं॰ पु॰) उप आधिक्ये तप आधारे घञ्। १ त्वरा, जल्दी। २ उत्ताप, सरगर्मी। ३ रोग, बीमारी। ४ अशुभ, खराबी। ५ पीड़न, तकलीफ़-दिही। ६ दुःख, रञ्ज।

उपतापक (सं॰ त्रि॰) उप-तप-णिच्-ण्वुल्। १ सन्तापजनक, गर्मी पैदा करनेवाला। २ कष्टदायक, तकलीफ़ देनेवाला।

उपतापन (सं॰ त्रि॰) उप-तप-णिच्-ल्यु। १ सन्तापक, जला डालनेवाला। (क्लो॰) २ सन्ताप, जलन।

उपतापिन् (सं॰ त्रि॰) उप-तप-णिनि। १ सन्तापी, आला डालनेवाला। २ रोगी, बीमार।

"गुर्वर्थं पितृमात्रर्थं, स्वाध्यायाद्युपतापिनः।" (मनु ११।१)

उपतारक (सं॰ त्रि॰) उप-तृ-णिच्-ण्वुल्। सन्तारक, उमड़ उठनेवाला, जो बह चला हो।

"यत्र तदुपतारका: स्रवन्ते।" (कौशिकसू॰)

उपतिष्य (सं॰ क्लो॰) उपगतं तिष्यम्, अत्या॰ समा॰। १ पुनर्वसु। २ अश्लेषा। ३ बौद्ध-शास्त्रोक्त सिद्धभेद। धर्मपति नामक किसी ब्राह्मणके औरस और सारीके गर्भसे इनका जन्म हुआ। बुद्धने इन्हें अपने धर्मकी दीक्षा दी। अपर नाम सारीपुत्र था। (महावस्दान)

उपतीर (सं॰ अव्य॰) सामीप्यादौ अव्ययीभावः। तीरसमीप, किनारे पर।

उपतुला (सं॰ स्त्री॰) स्तम्भके नव समान अंशमें तृतीय। यह वास्तुविद्यामें वर्णित है।

उपतूल (सं॰ अव्य॰) तूलोपरि, रुईके ऊपर।

उपतृण्य (सं॰ पु॰) सर्प, सांप। तृणमें छिपकर बैठनेसे सर्पका यह नाम पड़ा है।

उपतैल (सं॰ क्लो॰) अभ्यक्त तैल, लगाया हुआ तैल।

उपत्यका (सं॰ स्त्री॰) उपसमीपे आसन्ना भूमिः, उप-त्यकन्। (उपाधिभ्यां त्यकन्नासन्नारूढयोः। पा ५।२।३४) १ पर्वतकी निकटस्थ भूमि, पहाड़के नीचेकी ज़मीन्। २ पर्वतके आधारका वन, पहाड़की जड़का जङ्गल। ३ अधित्यका, घाटी।

"उपत्यका पर्वतस्यासन्नं स्थलम्।" (सिद्धान्तकौमुदी)

उपदंश (सं॰ पु॰) उप-दंश कर्मणि घञ्। मेढ्र-रोग विशेष, आतशक, आतश, गरमी, लिङ्गकी एक बीमारी। भावमिश्रने कहा—हस्त नख या दन्तका आघात पड़ने, प्रक्षालन न मिलनेसे अपरिष्कार बनने, अतिरिक्त स्त्रीसंसर्ग रखने, दूषित योनिमें चलने और अन्यान्य नाना कारण लगनेसे शिश्न देशमें उपदंश रोग उत्पन्न होता है। यह पांच प्रकार है—वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक और रक्तज।*

सुश्रुतने कहा—अतिमैथुन, संसर्गके अभाव,

* "दन्तविघातान्नखदन्तघातादधावनादप्युपसेवनाद्वा।
योनिप्रदोषाच्च भवन्ति शिश्ने पञ्चोपदंशा विविधोपचारैः॥"
(भावप्रकाश मध्य खण्ड)

अप्रक्षालितयोनि, संसर्गरहिता, रजःस्वला, दीर्घ कर्कश मलीन गूढ़ रोमयुक्ता, अतिक्षुद्र अथवा अति वृहत् द्वारविशिष्टा, दूषित जलके प्रक्षालन, प्रायः मूत्रके वेगधारण और मैथुनान्तके अप्रक्षालन इत्यादि किसी कारणसे पथमें दोष लगते और क्षत पड़ते या न पड़ते जननेन्द्रियका फट जाना ही उपदंश है।

युरोपीय चिकित्साके कोई तत्त्वज्ञ डाक्टर कहते—यह पीड़ा संसर्गके भिन्न नहीं उपजती। किन्तु संसर्गका प्रथम स्थान खोजनेसे मानना पड़ेगा—किसी विशेष कारणसे इसकी उत्पत्ति हुई। फिर तो ठहर ही जायेगा—ऐसा कारण लगनेसे, विना संसर्गके भी उपदंश रोग निकल सकता है। अब कारण देखना चाहिये। घोड़के ग्लाण्डस-जैसे रोग (Glandus) और कुक्कुरके एक प्रकार क्षतसे उपदंश उठता है। स्त्रीसंसर्गकालीन लसिका या पूय श्लैष्मिक चर्म घर्षणसे चिपटनेसे इसकी उत्पत्ति है। परस्पर संसर्गसे उपदंश स्त्री और पुरुष उभयको लग जाता है। परस्पर संसर्गपर स्त्रीसे होते पुरुष और पुरुषसे रहते स्त्रीको यह रोग पकड़ता अर्थात् एकजनसे उपजनेसे अन्यको निस्तार नहीं मिलता।

युरोपीयोंने उपदंश रोगको नाना श्रेणीमें बांटा है। प्रधान यह हैं—

१ प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis)।
२ द्वितीय अवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis)
३ तृतीय अवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis)
४ सार्वाङ्गिक उपदंश (Constitutional Syphilis)
५ कौलिक उपदंश (Hereditary Syphilis)।

सचराचर जननेन्द्रियकी बाह्य एवं आभ्यन्तरिक त्वक्, लिङ्गके मुण्ड अथवा त्वक् एवं ग्रन्थिके मध्यस्थान ग्रन्थिके अधोभागमें क्षुद्र वटिकाकार एक पूय निकलता है। फिर वही फटकर विशेष लक्षणाक्रान्त क्षत बन जाता है। मैथुनकालसे पांच-छः दिनके मध्य यह क्षत पैदा करता है। इसीका नाम उपदंश या क्षतरोग है। युरोपीयोंने इसे प्राथमिक उपदंश लिखा है। यह रोग नानाप्रकार होता है। तमध्य चार प्रकारका उपदंश सचराचर देख पड़ता है, यथा—सहज उपदंश (Simple chancre), कठिन उपदंश (Indurated or Hunteran chancre), क्षयकारी उपदंश (Phagedenic chancre) एवं गलित उपदंश (Sloughing chancre)।

वैद्यक ग्रन्थसे पांच प्रकारका जो उपदंश बताया, उसमें भी प्रत्येकका लक्षण स्वतन्त्र लगाया है।

पुरुषके वातिक उपदंशमें मेढ़्रदेशपर सुई चुभने जैसी व्यथा उठती, भेदनवत् वेदना बढ़ती और कम्पन सहित काली फुन्सी पड़ती है। स्त्रीको जननेन्द्रियका काठिन्य लगता, त्वक्‌का भेद पड़ता, सुप्तभाव रहता और वायुजन्य नानाप्रकार क्लेश बढ़ता है।*

पैत्तिक उपदंशमें पुरुषके मेढ़्रपर दाह उठता और बहुक्लेदयुक्त पीतवर्ण फोड़ा पड़ता है। फिर स्त्रीको ज्वर हो जाता, शोथ सताता, तीव्र दाह देखाता, शिघ्र पाक पाता, पित्तका दुःख भताता और पक्व डुम्बुर-जैसा वर्ण निकल आता है।†

श्लैष्मिक उपदंशमें पुरुषके मेढ़्रदेशपर खेतवर्ण कठिन अथच गाढ़ स्रावयुक्त और स्त्रीके कठिन, अल्प वेदनायुक्त, शोथ एवं कण्डू विशिष्ट विकृत वर्ण बृहत् स्फोटक उठता है।‡ पुरुषके मेढ़्रदेशपर रक्तज उपदंशमें ताम्र या कृष्णवर्ण स्फोटक उठता, अधिक रक्त पड़ता, पैत्तिककी भांति सकल लक्षण लगता, ज्वर चढ़ता, दाह रहता एवं शोथ बढ़ता है। स्त्रीके रक्तज उपदंशका लक्षण पुरुष ही जैसा रहता, फिर भी अनेक स्थलमें रोग नहीं मिटता और यावज्जीवन क्लेश उठाना पड़ता है।§

* "सतोदभेदस्फुरणैः सकृष्णैः स्फोटैर्व्यवस्येत् पवनोपदंशम्।" (भावप्रकाश)

वै वातजं [illegible] (सुश्रुत)

† "पीतैर्बहुक्लेदयुतैः सदाहैः पित्तेन [illegible]।" (भावप्रकाश)

"[illegible] ज्वरः [illegible] [illegible] विदाहः [illegible]।" (सुश्रुत)

‡ "सकण्डुरैः शोफयुतैर्महद्भिः शुक्लैर्घनैः स्रावयुतैः कफेन।" (भावप्र०)

§ "रक्तजे [illegible] [illegible] [illegible]।" (सुश्रुत)

पुरुषके सान्निपातिक उपदंशमें नाना प्रकारका स्राव और नानाप्रकारका क्लेश लगा रहता है। यह असाध्य है। स्त्रीको होते भी उक्त सकल प्रकारके लक्षण मिलते हैं, जननेन्द्रियपर उपजनेवाले शोथमेंसे फट कर क्रमि निकलते और प्रायः मरण हो जाता है।

इस रोगमें जिसके मेढ़्का मांस विशीर्ण और क्रमियों द्वारा भक्षित अथवा समस्त विशीर्ण रूपसे अण्डकोष मात्रमें अवशिष्ट रहता है, चिकित्सकको वह रोगी उसी समय छोड़देना पड़ता है।*

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे १म सहज उपदंश (Simple chancre)में गोल, अगभीर एवं सूक्ष्म रक्ताभ रेखावेष्टित धूसर वर्ण देख पड़ता है। मैथुनसे ४।५ दिन पीछे पुरुषको खांजमें एक या दो तीन फुन्सी निकल आती हैं। फिर उसके फूटनेसे उपरोक्त क्षत होता है। कभी इससे अतिप्रदाह उठ लिङ्ग फूलता और रक्तवर्ण बनता, और कभी पोपे जैसा हो अत्यन्त पूय छोड़ता है।

२य कठिन उपदंश (Indurated chancre) लिङ्गके मुण्ड और ऊपरी चर्मपर हुआ करता है। इसका प्रान्त कठिन, मध्य गभीर गोलाकार, निम्न भाग धूसराभ और पार्श्व उन्नत रहता है।

३य क्षयकारी उपदंश (Phagedonic chancre) शीघ्र ही बढ़ता और वेदनायुक्त होता है। इसका प्रान्त भिन्न भिन्न और आकार असमान होता है। क्षत रक्तवर्ण एवं दुर्गन्धमय रहता और तरल क्लेद बहता है। कभी कभी इसके गभीर पड़नेसे मेढ़ क्रमशः गल जाता है। इसमें वैद्यकोक्त वातिक, पैत्तिक और श्लैष्मिक तीनोंका लक्षण मिलता है।

४र्थ गलित उपदंश (Sloughing chancre) प्रायः लिङ्गके मुण्ड और परिवेष्ट चर्मपर उठता है, एवं प्रथमतः क्रष्णवर्ण पड़ता, पश्चात् गलने लगता है। कभी गलितांश गिरते समय लिङ्गकी प्रधान शिरा (Dorsal artery)से रक्त टपकता है। प्रान्त भाग कटा-जैसा देखाई देता है। इसमें ज्वरका प्रदाह बहुत बढ़ जाता है। उपदंशका क्षत निकलने या सूखनेके १५।२० दिन बीच गिलटी पड़नेसे अत्यन्त वेदना बढ़ती है। इसका नाम बद है। कठिन उपदंशके बाद बद होनेसे प्रायः बैठ, परन्तु साधारण बद सचराचर पक जाती है।

उपदंशका क्षत उठनेसे बद निकलने तक इस रोगको मुख्य या प्राथमिक उपदंश (Primary Syphilis) कहते हैं। यह विष एकबार देहमें पहुंचनेसे सहज ही दूर नहीं होता। क्योंकि कभी दो वर्ष, कभी दश वर्ष, कभी आजीवन इसका फल लगा रहता है। इसे गौण या द्वितीय अवस्थाका उपदंश (Secondary Syphilis) कहते हैं। उपदंशमें प्रथमतः रक्त बिगडनेसे यह अवस्था आया करती है कि गात्रमें ताम्रवर्णकी फुंसियां उठ खड़ी होती हैं, क्षत गल जाता है, चक्षु जलते हैं, एवं सन्धि और अस्थिमें वेदना बढ़ती है।

कभी कभी उक्त प्रकारका उपदंश अधिकतर दुरवस्थाको पहुंच जाता है, जिसे तृतीय अवस्थाका उपदंश (Tertiary Syphilis) कहना पड़ता है। इसमें मुख, कण्ठ और चर्म प्रसारित तथा क्षत एवं अस्थिवेष्ट हो जाता है। हृत्पिण्ड, यकृत्, चक्षु, अण्डकोष और अस्थिमें अर्बुदादि उठते हैं। स्त्रीको यह रोग लगनेसे गर्भ गिर पड़ता, यकृत् स्थान जलता और प्लीहाका आकार बढ़ने लग जाता है। कभी कभी मूत्रमें अधिक परिमाणसे श्वेतसार (Albumen) आता है। फिर कभी उपदंश-जनित फुसफुसकी पीड़ा चलती है। यही रोग सर्वाङ्गमें जानेसे सार्वाङ्गिक उपदंश (Constitutional Syphilis)का नाम पाता है। इस अवस्थामें यह प्रथमतः त्वक्, तालु तथा कण्ठके श्लैष्मिक सूक्ष्म अस्तर, पश्चात् अस्थि और अस्थिवेष्टनी पर देख पड़ता है। उस समय प्रदाहयुक्तके समान अल्प अल्प ज्वर चढ़ने लग जाता है। सकलप्रकारकी शक्ति घटकर शरीरपर दुर्बलता आ जाती है। गौणरूपसे यह हृत्पिण्ड, कण्ठकी नली, प्लीहा, यकृत्, हक्क् एवं अन्य प्रभृति स्थानोंपर भी आक्रमण करता है। फिर कभी मस्तिष्क, स्नायु, शिरा, धमनी और अस्थि आदि पर्यन्त भी इसका वेग

* "नानाविधस्रावरुजोपपन्नमसाध्यमाहुस्त्रिमलोपदंशम्।
प्रशीर्णमांसं क्रिमिभिः प्रजग्धं मुष्कावशेषं परिवर्जनीयम्॥" (भावप्रकाश)

पहुंचा करता है। इस अवस्थामें शरीरके सबल हो जानेपर समय समय नाना रोगोंका उपसर्ग हुआ करता है।

माता पिताके सन्तानादिको भी उपदंश लगता है, उसका नाम कौलिक उपदंश (Hereditary Syphilis) है। कौलिक उपदंश होनेके फल श्लेष्मा, स्वरभङ्ग, नाना स्थानमें व्रण, क्षय, गण्डमाला, बधिरता, चक्षुरोग प्रभृति हैं।

चिकित्सा—उपदंश रोग सांघातिक होता है। इसको आदिमें ही यथासाध्य चिकित्सा करनी चाहिये। कितने ही लोग लज्जाके भयसे सहजमें इसे नहीं खोलना चाहते, किसी अनाड़ी या अताईसे दवादारू करा अपनेको राह खोजते हैं। किन्तु उससे भलाई न निकल अनेक स्थलमें विषम फल मिला करता है। इस रोगमें प्रथम ही सुचिकित्सकसे परामर्श लेना चाहिये। वैद्यक मतसे इस रोगपर स्निग्ध स्वेद द्वारा लिङ्गमें शिराका वेध होना अच्छा है। जोंक लगा रक्तमोक्षण और ऊर्ध्व तथा अधःशोधन करते हैं। यही प्रक्रिया यत्नपूर्वक चलाना अत्यन्त आवश्यक है, जिससे उपदंश मर जाय। वातिक उपदंशमें यष्टिमधु, रास्ना, इन्द्रयव, पुण्डरीक, सरलकाठ, सुगन्धा, अगुरु एवं कुष्ठ इन सकल द्रव्यको पीस प्रलेप और इन्हींके क्वाथका सेचन लगाना चाहिये। पैत्तिक उपदंशमें गैरिक, रसाञ्जन, मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु, वेणाका मूल, पद्मकाठ, रक्तचन्दन और उत्पल सकल द्रव्य पीसकर घृतके साथ लिङ्गपर लगाया करते हैं। श्लैष्मिक उपदंशमें निम्ब, अर्जुन, अश्वत्थ, कदम्ब, जम्बु, वट, यज्ञडुम्बुर एवं वेतस इन सकल द्रव्योंके वल्कलका क्वाथ बनाकर लिङ्ग धोना चाहिये। फिर इन द्रव्य समुदायके चूर्णका लेप भी लगा लेना ठीक है।

बदरी, आकनादी एवं अपामार्गके मूलकी त्वक्, आम्रपर्पटी और त्रिवृत् प्रत्येक बराबर बराबर रख काढ़ लेना चाहिये। इस समुदायके द्वारा धुआं देनेपर उपदंशका व्रण सूखता है। वैद्य इस रोगपर भूनिम्बाद्य एवं करञ्जाद्य घृत, आगारधूमाद्यतैल प्रभृतिका प्रयोग करते हैं। शृगालकण्टककी जड़ तम्बाकूमें डाल पीने, या अमलतासकी जड़ पानके और छिपकलीकी पूंछ केलेके साथ खानेसे भी उपदंश अच्छा हो जाता है।

एलोपाथीक मतसे सहज उपदंशमें नाइट्रेट अव सिलवर एवं नाइट्रिकएसिड भी लगाते हैं। इस औषधके प्रयोगसे जो स्फोट आता, वह उष्ण जलसे परिष्कार किया जाता है। सहज उपदंशमें सुदाको साफ रखनेसे लेड लोशन अथवा स्पिरिट व्यवहार करें। हौवेको भी उक्त औषध लगता है। अधिक प्रदाह उठनेपर गोलार्ड लोशन और कभी कभी लिङ्ग-लोशन व्यवहार करते हैं। देशी डाक्टर यह मरहम भी देते हैं—मोम २ ड्राम, नारियलका तेल १ औन्स, बकरेकी चर्बी आध औन्स, कलमी १ ड्राम और कपूर १ ड्राम एक साथ थोड़ा तपा मरहम बनावे। यह उपदंशके लिये विशेष उपकारी है। अनन्तर पथ्य देना चाहिये।

कठिन उपदंश पर डिल-नाइट्रिक एसिड लगा ब्लाक वास या येलो वास (Wash) व्यवहार करते हैं। दाहमें अधिक पीड़ा उठनेसे स्पिरिट लोशन द्वारा ड्रेस चढ़ा दे। इस उपदंशपर अनेक लोग पारदसे कार्य लेते हैं। क्षयकारी उपदंश पर प्रथमतः पुलटिस और अफीम चढ़ाना अच्छा है। स्थानिक उत्तेजना घटनेसे डिल नाइट्रिक एसिड व्यवहार करें। रोगीको ३ ग्रेन कुनैन और १ ग्रेन अफीम खिलाते हैं। गलित उपदंश पर चारकोल पुलटिस और ओपियम लोशन ३ बार दिनमें चढ़ाते तथा नाइट्रिक एसिड लगाते हैं। प्रथम कापर लोशन प्रभृति द्वारा ड्रेस देना चाहिये। गलितांश निकलनेसे व्रण मिटानेके लिये कारबोलिक आयल लगाते हैं। ज्वर रहनेसे प्रथम कोष्ठ परिष्कार करा अन्तमें १ औन्स काष्टर आयल और पीछे ३ ग्रेन कुनैन दिनमें तीन बार खिलाना चाहिये। रोगीको दुर्बलतासे सबल बनानेके लिये पोर्ट वाइन, ब्राण्डी, आरारोट, मांसका शोरबा, रोटी और दूध दिया जाता है।

द्वितीय अवस्थाके उपदंशपर पारदका प्रभाव विशेष उपकारी है। इस रोगके सम्पूर्ण प्रकाशित होने पर अनेक इस औषधका प्रयोग करते हैं—

होइड्रजिराई परक्लोराइम्	…	१ ग्रेन
जलोदर	… …	५ „
पोटाम आयोडाइड	…	४० „
जल	… …	२ ड्राम
एकस्ट्राक्ट सार्जा लिक्विडियम	…	१ औन्स
डिकक्सन सालसा …	…	३२ „

सब औषध मिलाकर १ औन्स मात्रासे दिवसमें ३ बार सेव्य है। सार्वाङ्गिक उपदंश निकलते समय किञ्चित् ज्वर आ जाता है। इसीसे मृदुविरेचक फीवर मिक्सचर, सेलाइन मिक्सचर, और प्रदाह-नाशक औषध व्यवहार करें। लक्षणादि सम्पूर्ण रहनेसे किसी-किसी स्थलपर रोगी अत्यन्त दुर्बल हो जाता है। ऐसे स्थलपर बलकर आहार खिलाना चाहिये। बार्क कुनैन, सालसापरिला, लौहघटित औषध प्रभृति प्रयोग करते हैं। कौलिक उपदंशमें अनन्तमूलका क्वाथ (डिकक्शन) दिनमें ३ बार पिलाये। शरीरपर क्षत पड़नेसे केलोमेल आयण्टमेण्ट और मेटिन आयेण्टमेण्ट लगाते हैं।

होमियोपाथीके मतसे पारदके व्यवहारमें कोई क्षति आनेकी आशङ्का नहीं। उससे सत्वर और निर्विघ्न अनेक लोग अच्छे हो गये हैं। प्राथमिक अवस्थाके उपदंशमें मार्कसल, मार्क-कर और सिनावार द्वारा ही उपकार पहुंचता है। किसी प्रकार पहले पारद ले लेनेसे नाइट्रिक एसिड या हिपार सलफर व्यवहार करना चाहिये। क्षतपर क्लोरेट हाइड्रेड और क्लोरेट अव पोटासका चूर्ण लगाते हैं। द्वितीय अवस्थामें एसिड नाइट्रिक मार्क, कालो क्लोरिकम, कालो हाइड्रो आयोडिकम, हिपार और सार्जा चलता है। तृतीय अवस्थामें अरम म्यरोटिकम्, एसिड फसफरस, एसाफेटिडा, कालकेरिया, काली हाइड्रो, फस और थायना कार्बो उपयोगी है। कौलिक उपदंशपर उपरोक्त औषधमें लक्षणानुसार कोई एक खिलानेसे विशेष उपकार देख पड़ता है।

हकीमी मतसे आतशककी बीमारी होनेपर पहले यह दवा दी जाती है—गोपालफूल ३ मासे, मुनक्का सात, सौंफ ६ मासे, सोनामुखीका पत्ता २ मासे और सूखो बढ़न्ता ६ मासे एकत्र मिला भुनाये। एकबार फूट जानेसे नीचे उतार लेते और एक तोले गुलकन्द मिला देते हैं। यह औषध १ दिन खिलाना चाहिये। पथ्य मिसरी है। हींग, माजूफल, अकरकरहा, नागोड़ी, असगंध, सफेद और काली मूसल तथा छोटो गुखुरूकी बुकनी, जङ्गली बेरकी लकड़ीसे जलाकर हफ्तेभर जख्मोंपर धूआं देना चाहिये। इससे उपदंशका मूलतक नष्ट हो जाता है। उपदंश पुरातन होनेसे शिरीष, बबूल और नोमकी छाल सवा-सवा सेर पौने छः सेर जलमें पका चार सेर जल रहनेपर उतार ले। प्रत्यह आध पाव मात्रासे सेवन करनेपर पुरातन उपदंश निश्चय ही आरोग्य होता है।

उपदंशघ्नम (सं॰ पु॰) शिग्रुवृक्ष, एक पेड़।

उपदंशिन् (सं॰ त्रि॰) उपदंशका रोगी, आतशकका बीमार।

उपदग्ध (सं॰ त्रि॰) ईषद्दग्ध, थोड़ा जला हुआ।

उपदधि (सं॰ त्रि॰) ऊपर रखनेवाला, जो रख देता हो।

उपदत्त (सं॰ पु॰) कुस्तुम्बुरु, हरी धनिया।

उपदर्शक (सं॰ पु॰) उप-दृश्-णिच्-ण्वुल्। १ द्वारपाल, दरवान। (त्रि॰) २ दर्शक, देखनेवाले। ३ साक्षी, गवाह।

उपदल (सं॰ क्ली॰) पुष्पदल, फूलकी पत्ती।

उपदश (सं॰ त्रि॰) प्रायः दश, कोई दस।

उपदा (वै॰ स्त्री॰) उप-दा-अङ्। १ उत्कोच, रिशवत। २ उपढौकन, भेंट।

"प्रणयं पूजामुपदाच्छलेन।" (रघु॰)

(त्रि॰) ३ उपढौकन देनेवाला, जो भेंट देता हो।

'उपदो उपदानदातारम्।' (यजुर्वेदभाष्ये महीधर)

उपदान, उपदानक देखो।

उपदानक (सं॰ क्ली॰) उपदान स्वार्थे कन्। १ उत्कोच, रिशवत। २ उपढौकन, भेंट।

उपदानवी (सं॰ स्त्री॰) हयशर्वा और पुलोमाकी कन्या। इनके गर्भसे दुष्मन्त, सुमन्त, प्रवीर और अनघने जन्म लिया था। (हरिवं॰ ३ और ३२ अ॰)

उपदिक् (सं॰ स्त्री॰) १ उपदिशा, दो दिशाके बीचकी दिशा। (अव्य॰) २ उपदिशामें।

उपदिका (सं॰ स्त्री॰) उप-दो-[illegible] स्वार्थे कन्-

टाप्। उपजिह्वा, एक चींटी। इससे दुर्गन्ध निकलता है।

उपदिग्ध (सं॰ त्रि॰) १ लिप्त, आलूदा, भरा हुआ। २ विन्दुलाञ्छित, धब्बेदार।

उपदिश्, उपदिक् देखो।

उपदिश (सं॰ पु॰) वसुदेवके एक पुत्र।

उपदिशा, उपदिक् देखो।

उपदिश्य (सं॰ अव्य॰) उपदेश करके, नसीहत देकर।

उपदिश्यमान (सं॰ त्रि॰) उप-दिश कर्मणि शानच्। १ उपदेश-सम्बन्धीय, नसीहतसे सरोकार रखनेवाला। २ उपदेश पानेवाला, जिसको नसीहत दी जाती हो।

उपदिष्ट (सं॰ त्रि॰) उप-दिश कर्मणि क्त। १ उपदेशप्राप्त, नसीहत किया हुआ। २ कथित, कहा हुआ। ३ ज्ञापित, बताया हुआ। ४ आदिष्ट, हुक्म दिया हुआ। ५ प्रदर्शित, देखाया हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। ६ उपदेश, नसीहत।

उपदी (सं॰ स्त्री॰) उपेत्य दीयते अवाप्यते, उप-दी-क-ङीप्। वन्दाक, बांदा।

उपदीका, उपदिका देखो।

उपदीक्षिन् (सं॰ त्रि॰) उपगतो दीक्षितं सामीप्येन। १ यज्ञस्थलमें दीक्षितके निकटस्थ। २ दीक्षाप्राप्त।

उपद्रष्टृ (वै॰ त्रि॰) उप-दृश्-तृन्। १ ऊर्ध्वस्थित हो दर्शन करनेवाला, जो ऊंचे बैठकर देखता हो। (क्ली॰) २ दर्शन, नज़ारा।

"अग्ना पूर्व उपद्रष्टः।" (ऋक् ...) 'श्रोता मौनमेव दर्शनमिति च अनुपद्रष्टृता।' (सायण)

उपदृश्, उपदृक् देखो।

उपदृषद् (सं॰ अव्य॰) सोला-प्रस्तरके समीप, चक्कीके पत्थरके पास।

उपदृष्टि (सं॰ स्त्री॰) दर्शन, नज़ारा।

उपदेव (सं॰ पु॰) उपगतो देवं साहश्येन, अत्यादि समा॰। १ अक्रूरपुत्र। (विष्णु॰ ४।१४।१) २ देवक राजाके पुत्र। (हरिवंश ३८ अ॰) ३ भूत प्रेतादि।

उपदेवता (सं॰ स्त्री॰) यक्षभूतादि।

उपदेवी (सं॰ स्त्री॰) १ वसुदेवकी एक स्त्री। २ देवकराजकी कन्या। ३ विद्याधरी प्रभृति।

उपदेश (सं॰ पु॰) उप-दिश्-घञ्। १ परामर्श, नसीहत। २ शिक्षादान, तालीमका देना। ३ हितकथन, भली बात। ४ आदेश, हुक्म। ५ मन्त्रकथन। ६ दीक्षा।

"चन्द्रसूर्यग्रहे तीर्थे सिद्धक्षेत्रे शिवालये। मन्त्रमात्रप्रकथनमुपदेशः स उच्यते।" (तन्त्रसंहिता)

चन्द्र एवं सूर्यग्रहण, तीर्थस्थान, सिद्धपीठ और शिवमन्दिरमें मन्त्रकथनका नाम उपदेश है।

मनु प्रभृति प्राचीन संहिताकारोंने ब्राह्मणादि विप्र लोगोंको ही उपदेश देनेकी आज्ञा दी है। मनुने एक स्थानपर कहा है—

"धर्मोपदेशं दर्पेण विप्राणामस्य कुर्वतः। तप्तमासेचयेत् तैलं वक्त्रे श्रोत्रे च पार्थिवः॥" (मनु॰)

दर्पसे यदि शूद्र ब्राह्मणको धर्मोपदेश सुनावे, तो राजा उसके मुख और कानोंमें तप्त तैल डालनेकी आज्ञा दे। मन्त्र और दीक्षा देखो।

७ न्यायमतसे—शब्द, आवाज़। ८ सुश्राव, सोया।

उपदेशक (सं॰ त्रि॰) उप-दिश्-ण्वुल्। १ उपदेशकर्ता, नसीहत देनेवाला। २ सत्परामर्शदाता, भली सलाह देनेवाला। ३ शिक्षक, सिखानेवाला।

उपदेशता (सं॰ स्त्री॰) १ उपदेश होनेकी स्थिति, नसीहत रखनेकी हालत। २ शासन, हुक्म। ३ शिक्षा की रीति, तरीक-तालीम। ४ मत, अकीदा।

उपदेशन (सं॰ क्ली॰) परामर्शका देना, नसीहतका करना।

उपदेशना (सं॰ स्त्री॰) मत, अकीदा।

उपदेशनीय, उपदेश्य देखो।

उपदेशार्थवचन (सं॰ क्ली॰) दृष्टान्त, मिसाल।

उपदेशिन् (सं॰ त्रि॰) उपदिशति, उप-दिश्-णिनि। उपदेष्टा, नसीहत देनेवाला।

उपदेश्य (सं॰ त्रि॰) शिक्षा दिये जानेके योग्य, जो सिखानेके क़ाबिल हो।

उपदेष्टव्य (सं॰ त्रि॰) शिक्षा दिये जानेके योग्य, सीखनेक़ाबिल।

उपदेष्टृ (सं॰ त्रि॰) उप-दिश्-तृच्। उपदेशकर्ता, नसीहत देनेवाला।

उपदेस (हिं०) उपदेश देखो।

उपदेह (सं० पु०) उपदिह्यते अनेन, उप-दिह-घञ्। १ देहादिकी वृद्धि, जिस्म वगैरहकी तरक्की। गण्ड-माला, अर्बुद प्रभृतिको उपदेह कहते हैं। (सुश्रुत) २ उपलेप, मरहम।

उपदेहिका, उपदिका देखो।

उपदोह (सं० पु०) उप-दुह आधारे घञ्। १ दोहन-पात्र, दूध दूहनेका बरतन।

"गाः कांस्योपदोहाश्च कन्याय बहुलड्कृताः।" (हरिवंश)

२ गौके स्तनका मुख, गायके आयनको टिमनी।

उपद्रव (सं० पु०) उप-द्रु भावे घञ्। १ उत्पात, हलचल। २ अत्याचार, जुल्म। ३ आपद्, आफ़त। ४ उपसर्ग, अलामत। प्राचीन वैद्यक हारीतके मतसे—

"यो व्याधिकस्य यो हेतुर्दोषस्य प्रकोपतः।
योऽन्यो विकारो भवति स उपद्रव उच्यते॥
व्याधें कर्पर यो व्याधिः उपद्रव उदाहृतः।
सोपद्रवा न जीवन्ति जीवन्ति निरुपद्रवाः॥"

जो व्याधि उठकर शरीरमें पूर्वस्थित किसी रोगको बढ़ा फिर निकालता या कोई विकार डालता, वही उपद्रव है। उपद्रवयुक्त रोगी प्रायः नहीं जीता। निरुपद्रव बच जाता है।

उपद्रविन् (सं० त्रि०) १ आक्रामक, हमला मारने-वाला। २ अत्याचारी, ज़ालिम।

उपद्रष्टृ (सं० त्रि०) उप-दृश्-तृच् बाहुलकात्। साक्षी, देखनेवाला। "उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन् पुरुषः परः॥" (गीता १३।२२)
'अतिशयेन सामीप्येन द्रष्टत्वादुपद्रष्टा।' (शङ्कराचार्य)

उपद्रुत (सं० त्रि०) उप-द्रु-क्त। जातोपद्रव, आफ़त-ज़दा, जो सताया गया हो। २ व्याकुल, बेचैन। ३ उत्पातग्रस्त, बदकिस्मत। (क्ली०) ४ सन्धिविशेष, किसी क़िस्मकी सुलह।

उपद्वीप (सं० पु०) १ क्षुद्रद्वीप, छोटा टापू। २ प्रायो-द्वीप (Peninsula)की तरह तीन अथवा चारो ओर प्रायः जलसे घिरी हुई भूमि।

उपधरना (हिं० क्रि०) उपधारण करना, बचाना।

उपधर्म (सं० पु०) उप हीनो धर्मः, प्रादि० समा०। १ अप्रधान धर्म, छोटा फ़र्ज़। २ मनुके मतसे—

"त्रिष्वेतेष्विति कृत्यं हि पुरुषस्य समाप्यते।
एष धर्मः परः साक्षादुपधर्मोऽन्य उच्यते॥" (२।२३७)

पिता माता और गुरु तीनोके प्रिय कार्यका साधन तथा उनकी सेवा शुश्रूषा साक्षात् परम धर्म है। सिवा इसके अग्निहोत्रादि सकल पुण्यकार्य उपधर्म कह-लाते हैं। "वेदमेवाभ्यसेन्नित्यं यथा कालमतन्द्रितः।
तं ह्यस्याहुः परं धर्ममुपधर्मोऽन्य उच्यते॥" (४।१४७)

समय पाते ही आलस्यको छोड़ नित्य वेदाभ्यास करना चाहिये। द्विजगणके लिये यही परम धर्म है। दूसरे सभी धर्मोंको उपधर्म कहते हैं।

उपधा (सं० स्त्री०) उप-धा-घञ्। आतश्चोपसर्गे। पा ३।३।१०६। १ धर्मका भय दिखा राजा द्वारा अमात्य सचिवगणकी परीक्षा।

"धर्मोपधाभिर्विमांश्च सर्वाभिः सचिवान् पुनः।"
(कालिकापु० ८५ अ०)

२ छल, धोका। ३ उपधानपर स्थापन। ४ व्याकर-णानुसार अन्त्यवर्णसे पूर्वका वर्ण। ५ उपाय, तदबीर।

उपधातु (सं० पु०) १ आठ प्रधान धातुओंके समान अन्य धातु। उपधातु सात प्रकारका है—स्वर्णमाक्षिक, तारामाक्षिक, तूतिया, कांसा, पित्तल, सिन्दूर और शिलाजतु। यह यथाक्रम स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, रांगा, जस्ता, सीसा और लौहके उपधातु हैं। धातुमें जो गुण रहता, उपधातुमें भी वह मिलता; किन्तु अपेक्षाकृत कितना ही अल्प पड़ता है। कारण—उपधातुमें मूल धातुका अंश अतिअल्प ही होता है। माक्षिक प्रभृति शब्दोंमें सकल उपधातु बनानेकी प्रणाली देखो।

युरोपीयोंके मतसे जर्मन सिलवर, जर्मन गोल्ड प्रभृति नानाप्रकारके उपधातु होते हैं। नीचे उनकी संज्ञा और बनानेकी प्रणाली लिखी जाती है—

जर्मन रौप्य—ताम्र २ भाग, जस्ता १ भाग और निकल १ भाग सकल मिलानेसे उत्तम जर्मन सिलवर (रौप्य) बनता है। इससे घड़ी, कटोरी, चमची प्रभृति नानाविध द्रव्य निर्माण किये जाते हैं।

जर्मन स्वर्ण—प्लाटिनम् २६ भाग, ताम्र ७ भाग और जस्ता १ भाग एकत्र मृत्तिकाकी घरियामें रख अग्निका उत्ताप देनेसे बिलकुल स्वर्ण-जैसा उज्ज्वल और भारी एक प्रकारका उपधातु प्रस्तुत हो जाता

है। प्रकृत स्वर्णमें इसको सहज ही पहचान नहीं पाते। इससे विविध अलङ्कारादि बनाये जा सकते हैं।

सोहागा या नामहिम स्वर्ण—ताम्र ढाई भाग और जस्ता आधा भाग एकत्र मृत्तिकाकी घरियामें गलानेसे यह प्रस्तुत होता है। इस रहते रहते यह जैसे सांचेमें ढलेगा, वैसा ही द्रव्य बनकर निकलेगा।

मोज़िक स्वर्ण—किसी पात्रमें विशुद्ध रांगा १२ भाग अग्निके उत्तापमें गला पारद ३ भाग मिला दीजिये। फिर शीतल पड़नेपर निशादल ६ भाग और गन्धक ७ भाग डालकर अग्निके उत्तापमें गलानेसे यह बनता है। पारद एवं निशादल वाष्प बनकर उड़ जाता और उज्ज्वल मोज़िक स्वर्ण निकल आता है।

प्यूटर—टीन डेढ़ सेर, सीसा एक पाव, तांबा डेढ़ छटांक और जस्ता आध छटांक एकत्र अग्निके उत्तापमें मृत्तिकाकी घरियामें गला डालनेपर बिलकुल चांदी-जैसा एक प्रकारका उपधातु प्रस्तुत होता है। इसके नानाप्रकार द्रव्य बननेपर चांदी ही जैसे चमका करते हैं।

विउधैक—यह सोहागा नामक उपधातुकी तरह ही प्रस्तुत होता है। केवल तांबे और जस्तेके भाग-पर ही मतान्तर है।

२ शरीरस्थ धातुसदृश द्रव्य। वैद्यक-मतसे यही सात शरीरके उपधातु हैं—

"स्तन्यं रजश्च नारीणां काले भवति गच्छति।
शुद्धमांसभवः स्नेहः सा वसा परिकीर्तिता।
स्वेदो दन्तास्तथा केशास्तथैवौजश्च सप्तमम्।
इति धातुभवा ज्ञेया एते सप्तोपधातवः॥" (शार्ङ्गधर)

(रससे) स्तनदुग्ध और (रक्तसे) स्त्रीरजः काल पाकर बनता-बिगड़ता है। शुद्ध मांससे निकले स्नेहका नाम वसा है। मेदसे घर्म, अस्थिसे दन्त, मज्जासे केश और शुक्रसे ओजः निकलता है। अत—स्तनदुग्ध, स्त्रीरजः, वसा, घर्म, दन्त, केश और ओजः को धातुभव उपधातु समझना चाहिये।

उपधान (सं॰ क्ली॰) उप-धा अधिकरणे ल्युट्। १ शिरोधान, तकिया। २ विशेषत्व, खुसूसियत। ३ प्रणय, मुहब्बत। ४ व्रत। ५ विष, ज़हर। ६ समीपस्थापन। ७ उत्कर्ष, बड़ाई। (त्रि॰) ८ रख लेनेमें लगाया हुआ, जो रखनेके काम आता हो।

उपधानीय (सं॰ क्ली॰) उपधीयते अस्मिन्, उप-धा कर्मणि अनीयर्। १ उपधान, तकिया। (त्रि॰) समीपस्थापनके योग्य, जो पास रखे जानेके काबिल हो।

उपधाभृत (सं॰ पु॰) करविशेष, एक महसूल। २ अधर्मसे अभियुक्त सेवक, जो नौकर बेईमानीका मुजरिम हो।

उपधाय (सं॰ अव्य॰) रखकर, थामके।

उपधायिन् (सं॰ त्रि॰) नीचे रखनेवाला, जो लगा देता हो।

उपधारण (सं॰ क्ली॰) उप-धृ-णिच्-ल्युट्। १ अङ्कुश द्वारा आकर्षण, अङ्कुशसे खिंचाव। २ सम्यक् विज्ञान, सोचविचार।

उपधार्य (सं॰ अव्य॰) ले या पकड़के।

उपधावन (सं॰ क्ली॰) उप-धाव-ल्युट्। १ अनुधावन, दौड़ाव। २ अनुचिन्तन, फ़िक्रमन्दी। (पु॰) ३ पीछे पीछे चलनेवाला, जो पीछा करता हो।

उपधावित (सं॰ त्रि॰) परीक्षित, जांचा हुआ।

उपधि (सं॰ पु॰) उपधीयते आरोप्यतेऽनेन, उप-धा-कि। १ कपट, चालाकी। २ भय, डर। आधारे कि। ३ रथचक्र, गाड़ीका पहिया।

उपधिक (सं॰ पु॰) १ छली, धोखेबाज़।

उपधीयमान (सं॰ त्रि॰) पुरःसर युक्त, जिसके पहले कुछ रहे।

उपधूपित (सं॰ त्रि॰) उप-धूप-क्त। १ आसन्न-मरण, मर जानेवाला। २ सुगन्धीकृत, महकाया हुआ। ३ [illegible], [illegible] नक्षत्रोंमें पड़ा हुआ।

उपधूमित (सं॰ त्रि॰) उप-धूम-इतच्। आसन्नधूम, धुआं दिया हुआ।

उपधूमिता (सं॰ स्त्री॰) ज्योतिषोक्त यात्रादि वर्ज-नीय सूर्यगन्तव्य दिक्।

"[illegible]
[illegible]" (वसन्तराज)

उपधृति (सं॰ स्त्री॰) उप-धृ-क्तिन्। १ ज्योतिः, किरण। २ सन्धारण, संभाल।

उपधेय (सं॰ त्रि॰) उप-धा-यत्। मन्त्र द्वारा स्थापनीय, रखा जानेवाला।

उपध्मा (सं॰ स्त्री॰) १ श्वास ग्रहण, सांस लेनेकी बात। २ उपध्मानीय शब्द उत्पन्न करनेवाली वाक्‌की चेष्टा।

उपध्मान (सं॰ क्ली॰) उप-ध्मा-करणे ल्युट्। १ ओष्ठ, होंठ। २ श्वासग्रहण, सांस खींचनेका काम।

उपध्मानिन् (सं॰ त्रि॰) श्वास ग्रहण करनेवाला, जो सांस लेता हो।

उपध्मानीय (सं॰ पु॰) प और फ के बाद विसर्ग स्थानमें लेखनीय गजकुम्भाकृति वर्ण विशेष।

"उपूपध्मानीयानामोष्ठौ।" (सिद्धान्तकौमुदी)

उपध्वस्त (सं॰ त्रि॰) उप-ध्वन्स-क्त। १ नष्ट, बरबाद। २ अधःपतित, गिरा हुआ। ३ मिश्रित, मिला हुआ।

"सौम्या: उपध्वस्ता: सावित्रा वत्सतर्यः" (यजुः २४।१४) 'उपध्व' सनमधःपतनम्।' (महीधर)

उपनक्षत्र (सं॰ क्ली॰) राशिचक्रस्थ तारकाभेद, छोटा सितारा। अश्विनी प्रभृति २७ नक्षत्रमें प्रत्येकके अनुगत सत्ताईस-सत्ताईस तारका हैं। इन्हींका नाम उपनक्षत्र है। ज्योतिषशास्त्रके मतसे ७२९ उपनक्षत्र होते हैं। तारा देखो।

उपनख (सं॰ क्ली॰) सुश्रुतोक्त चिप्प नामक क्षुद्र-रोग विशेष, उङ्गल-बड़ा।

"नखमांसमधिष्ठाय पित्तं वातश्च वेदनाम्।
करोति दाहपाकौ च तं व्याधिं चिप्पमादिशेत्॥
तदेव क्षतरोगाख्यं तथोपनखमित्यपि॥" (निदान १३ अ॰)

पित्त एवं वायु नखके मांसको पकड़ जो रोग बढ़ाता, वही चिप्प या उपनख कहाता है। यह पककर वेदना तथा दाह उत्पन्न करता है। इसे क्षत रोग भी कहते हैं। चक्रदत्तके मतसे—

"चिप्पमुष्णाम्बुना सिक्तमुत्सृज्य तं क्षतम्।" (५४।१८)

चिप्परोगमें उष्ण जलसे स्वेद लगा छेदनेसे तैलाभ्यङ्ग करनेपर व्रणको प्रतीकार पहुंचता है। वैद्यकके मतसे—इसमें धूनेका चूर्ण बांध व्रणरोगके समकी चिकित्सा करना चाहिये। इस रोगमें सोहागा और आस्फोतका मूल एकत्र पीस प्रलेप चढ़ानेसे नख निकल आता है।

उपनगर (सं॰ क्ली॰) शाखानगर, शहरके आस पासका गांव।

उपनत (सं॰ त्रि॰) उप-नम-क्त। १ नम्र, झुका हुआ। "शौरेः प्रतापोपनतैरितस्ततः।" (माघ १।११)
२ शरणागत, पनाहमें पड़ा हुआ। ३ उपस्थित, हाज़िर। ४ उपगत, पहुंचा हुआ। ५ प्राप्त, पाया हुआ।

उपनति (सं॰ स्त्री॰) उप-नम भावे क्तिन्। १ नमन, झुकाव। २ उपगम, पहुंच। ३ उपस्थिति, हाज़िरी।

उपनद (सं॰ अव्य॰) नदीके समीप, दरयाके पास।

उपनद्ध (सं॰ त्रि॰) १ बद्ध, बंधा। २ सबद्ध, लगा।

उपनना, उपजना देखो।

उपनन्द (सं॰ पु॰) १ वसुदेवके पुत्र। यह मदिराके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। (विष्णु॰ ४।१५।११)
२ गोपपति नन्दके कनिष्ठ भ्राता। ३ बौद्धशास्त्रोक्त नागराज विशेष। (स्वयम्भुपुराण ५ अ॰) ४ काश्मीरराज प्रह्लादत्तके पुत्र। इन्होंने राजपुरोहितके कनिष्ठ भ्राता कुहनकी सहकारितासे युवराज नन्दको मार डालनेका यत्न किया था। (बोधिसत्त्वावदानकल्पलता ८५)

उपनन्दक (सं॰ पु॰) उप-नन्द-णिच्-ण्वुल्। १ धृतराष्ट्रके एक पुत्र। (भारत-आदि ६७ अ॰) (त्रि॰) २ आनन्दजनक, खुशी पैदा करनेवाला।

उपनय (सं॰ पु॰) उप-नी-करणे अच्। १ उपनयन, नज़दीक पहुंचानेका काम। २ संस्कार कर्म विशेष, जनेऊ। ३ न्यायावयवभेद, मन्तिक्‌की एक बात। इसमें उदाहरणापेक्ष साध्यका उपसंहार रहता है। जैसे—धूमवान् वस्तु ही वह्निमान् होती है।

गौतमसूत्रमें लिखा—"उदाहरणापेक्षस्तथेत्युपसंहारो न तथेति वा साध्यस्योपनयः॥" (१।१।३८)

उपनय दो प्रकारका होता है—अन्वयी उपनय और व्यतिरेकी उपनय। (गौतमवृत्ति) ४ न्यायके मतसे सिद्ध और ज्ञानका लक्षण—जैसे अलौकिक प्रत्यक्ष साधनके सन्निकर्षका भेद। इसमें सन्निकर्ष रूपके द्वारा

पुर्वज्ञान इत्यु अलौकिक शोभा देख पड़ती है। ५ ज्ञान, समझ। (शब्दरत्ना०)

उपनयन (सं० क्लो०) उप-नी-ल्युट्। १ ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यके यज्ञसूत्रादि पहननेका प्रधान संस्कार।

"गृह्योक्तकर्मणा येन समीपं नीयते गुरोः।
बालो वेदाय तद्योगाद्बालस्योपनयनं विदुः॥"

यह संस्कार तीन प्रकारका है—नित्य, काम्य और नैमित्तिक। अष्टम वर्ष पर्यन्त नित्य, पञ्चम वर्ष पर्यन्त काम्य और पापादिसे उपमोचनार्थ पुनः संस्कार नैमित्तिक कहाता है।

"गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥
ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पञ्चमे।
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे॥"

गर्भके समयसे अष्टम वर्षमें ब्राह्मण, एकादश वर्षमें क्षत्रिय और द्वादश वर्षमें वैश्यका नित्य उपनयन संस्कार करना चाहिये। ब्रह्मतेजःकामी ब्राह्मणका पञ्चम, बलार्थी क्षत्रियका षष्ठ और धनकामी वैश्यका अष्टम वर्षमें काम्य उपनयन होता है।

उक्त समय उपनयनका मुख्य और उससे अतिरिक्त समय उपनयनका गौण काल कहलाता है। गौणकाल दो प्रकार है—मध्यम और अधम। ब्राह्मणका द्वादश, क्षत्रियका षोड़श और वैश्यका विंशति वर्ष पर्यन्त मध्यम काल होता है। इससे अतीत समयको अधम काल कहते हैं।

पैठिनसीने लिखा है—

"[illegible] गौणा [illegible]।"

मनुका वचन है—"आषोडशाद्ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः॥
अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः॥" (मनु २।३८)

ब्राह्मणका गर्भसे षोड़श, क्षत्रियका बीस और वैश्यका चौबीस वर्ष तक उपनयन काल अतीत नहीं होता। उक्त काल पर्यन्त संस्कृत न होनेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यका बालक उपनयनसे भ्रष्ट हो साधु समाजमें निन्दनीय समझा और व्रात्य कहा जाता है।

"[illegible]॥ १० ॥
[illegible]।
[illegible]॥ ११ ॥
[illegible]।
[illegible]॥ १२ ॥"

([illegible] १४०)

जो ब्राह्मण गर्भसे १५ वर्ष २ मास, क्षत्रिय २१ वर्ष २ मास और वैश्य २० वर्ष २ मास बीतने पर वेदपाठ एवं उपनयन संस्काररहित रहता, उसे व्रात्य कहते हैं। ऐसा व्यक्ति व्रात्यस्तोमके योग्य अर्थात् व्रात्यस्तोम करनेसे फिर गायत्रीका अधिकारी होता है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीन जातिके दो जन्म हैं। प्रथम जन्म माताके गर्भ और द्वितीय जन्म गुरुसे यथाविधि गायत्रीके ग्रहण द्वारा होता है। इसीप्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य द्विजत्व पाते और अन्य दोषसे छूट जाते हैं। फिर वे श्रुति, स्मृति, पुराणादि अध्ययनके उपयुक्त होते हैं।

महर्षि नारदके मतसे—

"[illegible]।
[illegible]॥"

द्विजातिके मध्य ब्राह्मणका वसन्त, क्षत्रियका ग्रीष्म, और वैश्यका शरद् ऋतुमें उपनयनकाल प्रशस्त है।

सुश्रुतके कथनानुसार—माघमें गुणवान् एवं धनशाली, फाल्गुनमें बुद्धिमान् तथा मेधावी, चैत्रमें वेदवित्, वैशाखमें सौभाग्यशाली एवं विचक्षण, ज्येष्ठमें श्रेष्ठ तथा विज्ञ, और आषाढ़ मासमें उपनयन करनेसे द्विजातिका बालक ख्यातनामा एवं महापण्डित होता है। यह नियत ब्राह्मण और क्षत्रियके लिये रखा है। वैश्यके पक्षमें शरत्काल ही प्रशस्त है।

कश्यपाचार्य कन्याके मत्स्य, मकर, मेष और वृषमें होनेवाले उपनयनको भी प्रशस्त बताते हैं। किन्तु गर्गमुनिने इस विषयमें कुछ विशेष कहा है—

"[illegible]।
[illegible]॥"

विवाह और कर्णवेध, उपनयन मास, [illegible]

वशिष्ठादिके मतसे जन्मका पक्ष अवश्य छोड़ देना चाहिये।

इस स्थानपर लक्षवाक्यसे गर्गका विरोध देख स्मार्त लोगोंने स्थिर किया है—गर्गका वचन क्षत्रिय और वैश्यके लिये है, ब्राह्मणके लिये नहीं।

वृद्ध गर्गके मतसे अनध्यायका दिन, सप्तमी, त्रयोदशी और माघ मासकी दोनों द्वितीया छोड़ उपनयन करना चाहिये। ऋग्वेदीका वृहस्पति, यजुर्वेदीका शुक्र, सामवेदीका मङ्गल और अथर्ववेदीका सोमवारको उपनयन विधेय है।

गृह्यसूत्रादि और मनुके मतसे—ब्राह्मणको कृष्णसारका, क्षत्रियको रुरु नामक मृगका और वैश्य ब्रह्मचारीको छागके चर्मका उत्तरीय लेना चाहिये। ब्राह्मणको शण, क्षत्रियको क्षौम और वैश्यको मेषके लोमका अधोवसन परिधेय है। ब्राह्मणको मृदुस्पर्श तीन पूले मुञ्जातृणसे, क्षत्रियको धनुस्की तांत-जैसी मूर्वा वृक्षसे और वैश्यको त्रिगुणित शणके तन्तुसे मेखला बनाना पड़ती है। मुञ्जादि न मिलने पर यथाक्रम कुश, अश्मान्तक और बल्वज तृणसे मेखला प्रस्तुत करना उचित है। उसे एक, तीन अथवा पांच ग्रन्थिसे बांध रखना चाहिये। ब्राह्मणका कार्पास, क्षत्रियका शण और वैश्यका मेषके सूत्रसे उपवीत प्रस्तुत होता है। नीचे-ऊपर तीन ग्रन्थियुत हो जनेऊ है। ब्राह्मणको विल्व अथवा पलाशका, क्षत्रियको वट या खदिरका और वैश्य ब्रह्मचारीको पीलु अथवा यज्ञडुमुरका दण्ड लेना चाहिये। ब्राह्मणके केश, क्षत्रियके ललाट और वैश्यके दण्डका परिमाण नासाग्र पर्यन्त है। उपनयनका दण्ड सरल, परिष्कार, छिद्रहीन, अदग्ध त्वक्युक्त, देखनेमें सुश्री और मनोमत होना चाहिये। इस मनोमत दण्डको ले सूर्यकी उपासना और तीन बार अग्निकी प्रदक्षिणा दे यथाविधि भिक्षा करना उचित है। प्रथम ब्रह्मचारीकी माता, भगिनी, माताकी सहोदरा भगिनी और दयाशील स्त्रीके आगे भिक्षा मांगना कहा है। उपनीत ब्राह्मण 'भवति भिक्षां देहि', क्षत्रिय 'भिक्षां भवति देहि' और वैश्य ब्रह्मचारी 'भिक्षां देहि भवति' कह कर भिक्षा मांगे। भिक्षा संगृहीत होनेपर ब्रह्मचारी अकपट मनसे गुरुको निवेदन कर, हाथ-पैर धो और पूर्वमुख शुचि हो आहार करे। मनुने कहा है—

"आयुष्यं प्राङ्मुखो भुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः।
श्रियं प्रत्यङ्मुखो भुङ्क्ते ऋतं भुङ्क्ते ह्युदङ्मुखः॥"

आयुष्कामीको पूर्व, यशस्कामीको दक्षिण, धनार्थीको पश्चिम और सत्यकामीको उत्तरमुख बैठकर खाना चाहिये। यज्ञोपवीत शब्दमें विस्तारित विवरण देखिये।

२ आयुर्वेदके शिक्षार्थीका एक संस्कार। आयुर्वेद सीखनेसे पहले यह उपनयन करना पड़ता है। महर्षि सुश्रुतने ऐसी व्यवस्था दी है—

ब्राह्मण, क्षत्रिय, और वैश्य तीन जातिमें जो व्यक्ति शुद्ध वंशजात, षोड़शवर्ष वयस्क, वीरभावापन्न, शुद्धाचार, विनीत, बलवान्, शक्तिसम्पन्न, मेधावी, धृतिमान्, यशःअभिलाषी, सर्वदा प्रसन्न रहनेवाला, कभी अनिष्ट न करनेवाला, क्लेशसहिष्णु हो, जिसके ओष्ठ एवं जिह्वा दोनों पतले, दन्तका अग्रभाग सूक्ष्म तथा चक्षु एवं मुख सुन्दर हो, उसे गुरु आयुर्वेदका उपदेश देनेके लिये शिष्य भावसे उपनयन करे। शुभ क्षणको प्रशस्त दिशामें पवित्र एवं समतल भूमिपर चार कोणयुक्त और चार हस्त-परिमित एक वेदी बनाना चाहिये। वेदीपर गोमूत्र द्वारा लेपन कर कुश बिछाते हैं। फिर उपनयनकर्ताको पुष्प, लाजा, अन्न एवं रत्न द्वारा देवतागणकी पूजा और भिषक्को अभिषेक देना उचित है। उस समय कुशनिर्मित ब्राह्मणको अपने दक्षिण और अग्निको सम्मुख स्थापन करे। अनन्तर खदिर, पलाश, देवदारु, विल्व अथवा वट, यज्ञडुम्बुर, अश्वत्थ तथा मधुक चार प्रकारके काठने दधि, मधु और घृत लगा कर अग्नि जलाना चाहिये। उसी अग्निसे आचार्य प्रणव एवं व्याहृति मन्त्र द्वारा देवता तथा ऋषिका आह्वान करे और शिष्यको भी वैसे ही करनेकी आज्ञा दे। फिर आचार्य तीन बार शिष्यको अग्निस्पर्श करावे और अग्निसाक्ष्य कर सुनावे—काम, क्रोध, लोभ, मोह, अभिमान, अहङ्कार, ईर्ष्या, कर्कशता, खलस्वभाव, असत्य, आलस्य एवं निन्दनीय कार्य छोड़ दो। यह समस्त परित्याग कर अन्य नख एवं

अवश्यही भारतवर्षका गमनागमन लङ्का प्रभृति समुद्रस्थित सुदूर द्वीपसमूहसे होने लगा। किन्तु सुदूर द्वीपसमूहमें उनके उपनिवेश स्थापनका प्रमाण क्या है? हिन्दी भाषित लिटारेचर [illegible] प्रसङ्गके अधिकारमें न पड़ने भी प्रसङ्गक्रमसे दो-एक बात कहते हैं।

रामायणके निर्देशानुसार अतिदयावान रामचन्द्र और लक्ष्मण सीताको ढूंढ़ने बहुदूरवर्ती दुर्गम लङ्का गये थे। किन्तु लङ्का कहां है? वर्तमान देशीय और विदेशीय भौगोलिक एक वाक्यसे सिंहल या सीलोन कहलाने वाले द्वीपका ही प्राचीन नाम लङ्का बताते हैं। किन्तु यह सिद्धान्त सङ्गत समझ नहीं पड़ता। अति पूर्व कालसे ही हमारे शास्त्रकार लङ्का और सिंहलको स्वतन्त्र द्वीप मानते आये हैं। निम्नलिखित श्लोक देखने से सबका सन्देह मिट जायेगा।

"सिंहलान् बर्बरान् म्लेच्छान् ये च लङ्कानिवासिनः।"

(महाभारत, सभा ३१।१२)

"लङ्का [illegible] । १०॥
[illegible] सिंहलाश्चैव [illegible], ॥ १७॥"

(मार्कण्डेयपु० ५८ अ०)

सिवा इसके भागवत (५।१९।३०) एवं बृहत्संहिता प्रभृति प्राचीन ग्रन्थमें लङ्का और सिंहल दोनों स्वतन्त्र द्वीप जैसे उल्लिखित हैं।

ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है, कि लङ्कापुरी मलयद्वीपके अन्तर्गत है।* आजकल पूर्व उपद्वीपके अन्तर्गत श्याम देश दक्षिणस्थित विस्तीर्ण भूमिखण्डको मलय-प्रायोद्वीप कहते हैं। यह यवद्वीपसे पश्चिम अवस्थित है। वर्तमान मलय जातिका प्राचीन इतिहास पढ़नेसे समझते, कि मलयवासी पहले सुमात्रा द्वीपके मिनङ्काबू नामक स्थानमें रहते थे। यहां इनके आदिपुरुषका राज था। उन्होंने मलय भी कहते थे।* इस मलय जातिकी भाषा आज भी सुमात्रा प्रभृति द्वीपसे अष्ट्रेलिया और पश्चिम मादागास्कर-पर्यन्त प्रचलित है।† भारतमहासागरके इन द्वीपसमूहमें प्राय एक भाषा चलनेसे स्पष्ट ही समझ पड़ते—ये मलयभाषी भिन्न देशीय विभिन्न जातियां पहले एक जातिके थे। कोई अलग अवस्थामें रहते भी कालके क्रमसे सम्बन्ध छूटे और कोई सभ्य होते भी फिर अवस्थाके भेदसे नितान्त असभ्य बन गये।

मलयवासी जातिके लोग रक्षः या राक्षस नामसे रामायणमें कहे गये हैं। आजकल यवद्वीपके निकटवर्ती फ्लोरिस द्वीपमें एकप्रकार खर्वाकार श्यामवर्ण असभ्य जातिके लोग रहते हैं। यहांके सभीको रक्ष‡ कहते हैं। इनका आचार भी राक्षसकी तरह ही है। इसी द्वीपमें मराम्बाक नामक एक नगर है। यह नाम भी [illegible]§ अपभ्रंश-जैसा समझ पड़ता है। इस द्वीपके निकट ही आज भी राम, लक्ष्मण, सीता और सम प्रभृति रामायणोक्त वीरगणके नामानुसार क्रमसे चार छोट छोट द्वीप विद्यमान हैं।

उक्त प्रमाणसे समझ पड़ा, कि रावणके राजत्वकालमें लङ्काका राज्य वर्तमान सुमात्रा प्रभृति द्वीपपुञ्जसे लेकर मादागास्कर पर्यन्त विस्तृत था।**

* "[illegible]
[illegible] ॥ १९
[illegible]
[illegible] ॥ २०
[illegible]
[illegible] ॥ २१
[illegible]
[illegible] ॥ २२
[illegible]
[illegible] ॥ २३
[illegible]" (ब्रह्माण्ड [illegible])

* Crawfurd's Indian Archipelago, Vol. II, p. 371-2. [illegible] (Crawfurd's [illegible]) [illegible] है।

† Eng. Cyclopaedia, Vol. [illegible], p. [illegible].

‡ English Cyclopaedia (Geography), Vol. II, p. 1015, Vol. III, p. 101, [illegible] है।

§ [illegible] है।

** [illegible] है।

अथवा प्राचीन मलयजाति सुदूरवर्ती मादागास्कार प्रभृति सकल द्वीपोंमें उपनिवेश करती रही होगी। मलयशब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

अन्ततः ब्रह्माण्डपुराणके मतानुसार यह बात मानना पड़ी—मलयमें ही लङ्कापुरी रही। रामायणके अनुसार इसी मलयका नाम सुवर्णद्वीप था। आजकल इसे सुमात्रा कहते हैं।

वर्तमान मानचित्रमें सुमात्रा द्वीपके उत्तर पूर्वांशसे पर्वतके सानुदेशपर समुद्रके निकट 'सोनी लङ्कया' नामक एक नगर है। यह "स्वर्णलङ्का" शब्दका अपभ्रंश-जैसा ही समझ पड़ता है। फिर इसी द्वीपके अन्तवर्ती हीरक अन्तरीप (Diamond Pt.)के निकटस्थ एक बन्दरको आज भी 'लङ्कात' कहते हैं। इस समय भी इस द्वीपके उत्तर पश्चिमांशमें काञ्चनगिरि (Golden Mt.) विद्यमान है। *

उक्त प्रमाणसे रामायणोक्त 'लङ्कापुरी' अथवा 'सुवर्णद्वीप'से वर्तमान सुमात्रा द्वीपकी प्राचीन लङ्काका बोध होता है। सुमात्राद्वीप, यवद्वीप और फ्लोरिस द्वीपसे दक्षिण-पश्चिम प्रवाहित समुद्रको आज भी स्थानीय बुगी जातिवाले 'लङ्काई' सागर कहा करते हैं। इसके द्वारा भी लङ्काके स्थानका निर्णय हो सकता है।

सुमात्रा द्वीपमें हिन्दूजातिका लेश मात्र न रहते, हिन्दू-निर्मित मन्दिरादिका ध्वंसावशेष तक देख न पड़ते और इतिहासमें कुछ न लिखते भी ऐसे अनेक प्रमाण मिलते, जिनके द्वारा हम मुक्तकण्ठसे मान सकते, कि श्रीरामचन्द्रके आगमन बाद भारतवासी स्वर्णके लाभकी आशासे उस स्थानपर जा पहुंचते थे।† इस द्वीपमें आज भी मङ्गल, इन्द्रगिरि, इन्द्रपुर आदि हिन्दू-प्रदत्त संस्कृत नामके नगर तथा नदी नद विद्यमान हैं। मलयजातिवाले जिस स्थानको अपनी आदि जन्मभूमि समझ गौरव बढ़ाते और पृथिवीके अपर सकल स्थानकी अपेक्षा जहां समधिक सुवर्ण पाते हैं, उसी स्वर्णमय भूमिके निकट आज भी इन्द्रगिरि नामक नद प्रवाहित है। उक्त नामसे स्पष्ट ही हृदयङ्गम हुआ, कि एक समय हिन्दुवोंने सुमात्रा द्वीपमें जा उपनिवेश किया था। सुमात्रा देखो।

उसके बाद ही यवद्वीप है। इसका बहुतसा प्रमाण मिला, कि उक्त स्थानमें किसी समय भारतवासियोंने उपनिवेश किया और अपने धर्मको विशेष प्रबल बना दिया था। अद्यापि यवद्वीपके प्रम्बनन नामक स्थानमें बहुसंख्यक देवमन्दिर देख पड़ते हैं। उक्त मन्दिरसमूहमें इस समय भी शिव, दुर्गा, गणेश, विष्णु,सूर्य प्रभृति देवताओंकी पाषाणमयी और पित्तलमयी मूर्तियां विराजमान हैं। हिन्दूधर्मावलम्बी राजगणने बहुकाल पर्यन्त इस स्थानमें राज्य किया। बौद्धधर्म बढ़ने पर यहांके धर्मनिष्ठ भारतवासी बालिद्वीपमें जाकर रहे थे। यवद्वीप देखो।

बालिद्वीपमें आज भी हिन्दू धर्म प्रबल है। अद्यापि वहांके राजा शैवमतावलम्बी देख पड़ते हैं। वहां पूर्वकालीन भारतीय राजनीतिके अनुसार ब्राह्मण विचारकका कार्य किया करते हैं। पतिके मरनेपर सती उसकी सहगामिनी बनती है। बालि देखो। फिर भी इसके समझनेका कोई उपाय नहीं—कितने दिनसे वहां भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ है।

बालि द्वीपके बाद ही लम्बक द्वीप है। यह भी इस समय हिन्दू राजाके अधीन है। यहां हमारी प्राचीन स्मृतिके अनुसार राजकार्य और विवाहादि निर्वाह हुआ करते हैं। किसी किसीने कहा, कि बालि द्वीपके हिन्दुवोंने वहां पहुंच उपनिवेश किया था। लम्बक देखो।

ब्रह्माण्डपुराणके मतसे मलयद्वीपके पूर्व यवद्वीप

* ब्रह्माण्डपुराण इसीको 'काञ्चनपाद' नामसे मलयद्वीपके मध्य बताता है। "तथा काञ्चनपादस्य मलयस्यापरस्य हि।" (ब्रह्माण्डपु० ५२अ०)

† स्कन्दपुराणके निम्नलिखित वचनसे इसका कितना ही प्रमाण पाते, कि रामके बाद इस लङ्काद्वीपमें बहुतसे लोग स्वर्ण लाभको आशासे जाते आते थे।—

"सविद्यन्ति जनो कामी दरिद्रा गुणवानपि।
तेऽपि स्वर्णस्य लोभेन देवता-दर्शनाय च ॥ ४०
नित्यं वैशाखियन्ति सुखला रचःपुरं भयम् ॥४१॥" (नागरखण्ड ८४ अ०)

स्कन्दपुराणमें यह भी लिखा, कि रामके सर्वातोत्व बाणेपर उनके पुत्र कुश्का सभा लङ्कामें हुआ था। (नागरखण्ड १८८ अ० ९०-९१ श्लो०)

इस सुमात्राके पास का 'इगन' नामक द्वीप रामायणोक्त ... ही समझ पड़ता है।

है। इसमें गोकर्ण नामक महादेवकी मूर्ति प्रतिष्ठित है। विष्णुपुराणमें इसी द्वीपका नाम सौम्य लिखा है। इसको आजकल कुमार द्वीपपुञ्ज कहते हैं। गोकर्ण नामक देवताके नामसे ही मालूम पड़ता, कि पूर्वकालमें यहां भी हिन्दुओंका गमन रहता था। इसी द्वीपके बाद वारुणीय द्वीप है। विष्णुपुराणमें इसका नाम वारुण कहा है। पूर्वकालमें यह द्वीप चम्पाके (आनाम) राज्यके अधिकारमें था। इस समय अनामको अङ्गद्वीप कहते हैं। पुराणमें अङ्गद्वीपका विवरण लिखा है—

"अङ्गद्वीपं विशेषं च नानाम्लेच्छगणाश्रयम्।
नानाचन्दनवृक्षैश्च नदीभिः शैलसंकुलम्॥
देवदानवगन्धर्वैः नानासत्त्वं विभूषितम्।
...... ॥" (ब्रह्माण्डपु० ५१ अ०)

इससे जितना भी प्रमाण मिला, कि पूर्वकालको इन द्वीपोंमें हिन्दुओंने उपनिवेश स्थापित किया था।

यहांके प्राचीन राजा दक्षिणांगको चम्पा कहते थे। इस समय भी इस स्थानमें शिव, पार्वती, हरिहर प्रभृति देवदेवीकी मूर्ति पूजी जाती है। यहां अनेक अनुशासन और शिलालिपि मिले हैं। उनके पाठसे जाना गया, किसी समय इस स्थानपर अनेक हिन्दू राजाओंने राजत्व और अपने-अपने नामके अनुसार 'भद्रवर्मेश्वर', 'श्रीजयहरिवर्मलिङ्गेश्वर', 'श्रीइन्द्रवर्मलिङ्गेश्वर' प्रभृति शिवलिङ्ग स्थापन किये। यहां जो समस्त शिलालेख मिले, वे अधिकांश संस्कृत और चम (चम्पा) भाषामें लिखे हैं। उनमें जो संस्कृत भाषामें लिखे, वही अति प्राचीन हैं। (Journal Asiatique, Paris, 1888, 91-94)

इससे यह मालूम पड़ा, कि रामचन्द्रके तिरोधान बाद और महाभारतीय युद्धसे आर्य जातिका उपनिवेश बसा था।

चीनके पुरातत्त्वकी आलोचनासे निकला कि, ई० के पहले इसी १म शताब्दी पर्यन्त भारतीय आर्य वणिकोंने चीन देशके बहुतसे स्थानोंमें प्रभाव फैला दिया था। इनका उपनिवेश भी बहुत-से स्थानोंमें प्रतिष्ठित रहा। यहां तक, कि ६८० ई० पूर्वाब्दमें कियाचाउ उपसागरके आसपास समुद्रगामी भारतीय आर्य वणिकोंने व्यवसायके उपलक्षमें बड़ा आधिपत्य फैलाया था। एक शताब्दीके उपरान्त इन चीनोंके या चीनी नामक स्थानमें उनके वाणिज्य बन्दर और टकसालकी स्थापना रही। इन्होंने ही ६७५ से ६७० ई० पूर्वाब्दके मध्य वहां वाणिज्यकी सुविधाके लिये चीन देशमें सबसे पहले धातुकी मुद्रा चलायी थी। ६८० से ५५० ई० पूर्वाब्दको शिनिच प्रदेशके चीना राजत्व और वहां वणिक् सम्प्रदायने सिक्का एक मुद्रायन्त्र बनाया। उसकी चलायी एक तरहपर चीन और अपर तरहपर भारतीय वणिक्गणके निशानयुक्त अर्द्धसंस्कृत मुद्रा आविष्कृत हुई है। चीना और भारतीय मिश्रित मुद्रा देखनेसे सन्देह नहीं रहता, कि, उसी सुदूर अतीत कालमें भारतीय वणिकोंने चीनके भीतर-बाहर नाना स्थानोंमें उपनिवेश स्थापन किये थे। चीनाओंपर भारतीय लोगोंका यथेष्ट प्रभाव फैल गया। नहीं तो, चीनवाले सहज ही भारतीय वणिक्मुद्राका अनुकरण कैसे करने लगते? चीनके पुरावृत्तसे इस विषय समझ सकते, कि ४७२ ई० पूर्वाब्दमें उक्त भारतीय उपनिवेश चीनपतिके अधिकारभुक्त होते भी परवर्ती बहुकाल पर्यन्त उपनिवेशी हिन्दू वणिक् चीनपतिके वाणिज्यशुल्क देनेकी सुविधाके लिये कितने ही स्वर्णरौप्य और मोती आदि उनका साहाय्य करते थे। इधरसे भी हिन्दू वणिक् सदाही चीनके उपकूलमें चीनपतिके राज्यमें वाणिज्यादिका आदानप्रदान करते थे। इन्होंके हाथमें चीनका वाणिज्य संन्यस्त था। यहां तक कि ई० पूर्व ३य शताब्दीके पहले तक चीन-साम्राज्यके प्रायः सकल बन्दरोंमें उनका स्थान रहा। मलय और कामोडिया बन्दरोंसे भोजन, मदद और प्रवालादि बहुविध द्रव्य इन बन्दरोंमें आते थे। उसी समय उन्होंने चीन उपकूलसे शाटनाम द्वीपमें सिंहलको तरह सुवर्ण पहुंचनेका उपाय ढूंढा। ई० पूर्व ३य शताब्दीमें परम सम्पन्न उनका एक प्रतिद्वन्द्वी दल उत्पन्न हुआ, उसने और चीना वणिक्दलको प्रतियोगितामें भारतीयोंका प्रभाव

धीरे-धीरे लुप्त होने लगा। प्रायः ५३ ई० पूर्वाब्दमें वणिक्पति कुन्तिएन (कुण्डिन?) सदल चीनबन्दरसे जा उतरे। इन्हीं महात्माने चीन-समुद्रके कूलपर कम्बोज या वर्तमान कम्बोडिया नामक स्थानमें हिन्दू राजवंश प्रतिष्ठित किया था। कम्बोज देखो।

कम्बोजमें हिन्दू राजवंशकी प्रतिष्ठाके साथ चीनवासियों द्वारा उक्तरूप आर्य वणिक् दलदलमें कम्बोज आये। इसीसे अतःपर चीना इतिहासमें भारतीय वणिक्गणका कोई सन्धान नहीं मिलता। कम्बोज जातिवाले कहते—'रोम देशके अन्तर्गत तक्षशिला नामक स्थानसे अतिनिकट एक धार्मिक राजा राजत्व करते थे। उनके पुत्र युवराज 'फथोङ्ग' किसी दुष्कर्म पर राज्यसे निर्वासित हुये। उन्होंने नाना स्थान घूमफिर इस स्थानमें पहुंच नूतन राज्य स्थापन किया।' *

अतएव उक्त प्रवादसे समझ पड़ा, प्राचीन हिन्दूवोंका तक्षशिलाके निकटवर्ती जिस स्थानसे उक्त स्थानका गमन हुआ, उसका नाम भी कम्बोज रहा। वे इस दूरदेशमें आकर भी जन्मभूमिको भूल न सके थे। इसीसे स्वदेश और स्वजातिके नामपर ही उन्होंने इस स्थानका नाम कम्बोज रखा। इस स्थानसे निकली शिलालिपिमें ५१६ ई० तक कालका उल्लेख मिला है। इससे अनुमान हुआ, कि कम्बोजनिवासी हिन्दुवोंने ई० पहले पञ्चम शताब्दीके बहु पूर्व उस स्थानपर उपनिवेश-स्थापन किया था।† इस समय यहां हिन्दुवोंके न रहते अथवा उनके भिन्न धर्मको अवलम्बन करते भी आज असंख्य शिव, विष्णु, हरिहर, पार्वती, ब्रह्मा और शेषनागके प्राचीन मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें ओङ्करथोमके चतुर्मुख ब्रह्माका मन्दिर अति चमत्कृत है।

कम्बोजके निकट ही श्यामदेश है। यहांके सभी लोग बौद्ध धर्मावलम्बी हैं। किन्तु मन्दिर और चैत्यमें इसका बहुतसा निदर्शन मिला, कि एक-काल यहां भी हिन्दुवोंने जा वास किया था। आज भी बौद्ध मन्दिरोंमें रामलीला अङ्कित है। श्यामदेशकी राजधानीके बीच प्रसिद्ध गौतमबुद्धवाले मन्दिरके पार्श्वमें तीन हिन्दुवोंके देवालय देख पड़ते हैं। इन तीनों मन्दिरोंमें हरपार्वती, लक्ष्मी, विष्णु, ब्रह्मा प्रभृति देवगणकी मूर्तियां प्रतिष्ठित हैं। एक मन्दिरमें प्रकाण्ड शिवमूर्ति है। वह छः हाथसे भी ज्यादा ऊंची है। * एक मन्दिरमें केवल गणेशकी ही पूजा होती है। यहांका बटनाक नागमन्दिर भी अतिप्रसिद्ध है। इस मन्दिरमें कभी-कभी दो-एक हिन्दू पण्डे देख पड़ते, जो मकान ही शैव ब्राह्मण हैं। वे किसी निकटस्थ ग्राममें रहते हैं। वे बताते—हमारे पूर्वपुरुष रामेश्वरसे यहां आये थे। श्याम देशकी राजसभामें दो-एक दैवज्ञ हिन्दू अवस्थान करते हैं। उनके पूर्वपुरुष १४०६ ई०में भारतवर्षसे श्याम गये थे।

इसका कितना ही प्रमाण मिला, कि पूर्व-उपद्वीपको छोड़ भारतमहासागरीय द्वीपपुञ्ज—यहांतक, कि सेलिविस द्वीपमें भी हिन्दुवोंका उपनिवेश हो गया था।†

इस स्थलपर सिंहल द्वीपमें हिन्दुवोंके उपनिवेश सम्बन्धकी दो-एक बात कहना आवश्यक है।

महाभारतके समय यहां सिंहल नामक असभ्य जातिके लोग रहते थे। उसी प्राचीन कालमें इस द्वीपसे मणिमुक्ता भारतवर्षको भेजे गये। (महाभारत सभा ५१ अ०) उसके परवर्तिकालमें इस स्थानपर भारतवासियोंके आने-जाने भी कोई सविशेष प्रमाण नहीं मिला, कि उन्होंने वहां उपनिवेश स्थापन किया। महावंश नामक पालिग्रन्थमें लिखते—बङ्गदेशके लाड़ (राढ़) राज्यमें सिंहबाहु नामक एक प्रजावत्सल राजा रहते थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र विजय किसी गुरुतर अपराधपर स्वदेशसे चिरदिनके लिये निर्वासित हुये। बङ्गराजकुमारने कतिपय बन्धु

* Die Volker der Oestrichen Asien, Von Dr. A. Bastian, p. 393.

† Journ. Anthropological Society of Bombay, Vol. I, p. 516

* Crawford's Embassy to the Courts of Siam and Cochin China, p. 119.

† Crawford's History of Celebes, Vol. II. p. 882.

साथ ले समुद्रके पथसे यात्रा की। जलमें घूमते-घूमते वे सागरतीरवर्ती शूर्पारक नामक बन्दरमें जा पहुंचे थे। किन्तु इस भयसे वे फिर अकूल समुद्रमें चलने लगे,—यहां रहनेसे कोई दूसरा अनिष्ट न पड़े। अकस्मात् प्रबल तूफानसे विजयका जलयान टूट गया था। विजय और उनके सहचरोंने समुद्रतरङ्गमें डूबते-उछलते एक स्थानपर किनारेकी भूमि पायी। इस स्थानका नाम ताम्रपर्ण (वा सिंहल) था। उस समय उक्त स्थानमें यक्षोंका वास रहा। विजयने कुवेणी नाम्नी एक यक्षिणीके साहाय्यसे इस स्थानको जीता था। उस समय जो जो व्यक्ति राजकुमारके साथ आये, उनमें कितनों ही ने स्व-स्व नामके अनुसार उक्त द्वीपमें नगर बसाये—जैसे अनुराधपुर, विजितनगर प्रभृति। इसीप्रकार ई० से ५४३ वर्ष पहले सिंहल द्वीपमें सबसे आगे बङ्गाली उपनिवेश संस्थापित हुआ था। (महावंश ६ष्ठ और ७म परिच्छेद) समागत बङ्गवासी सकल ही सनातन हिन्दू धर्मावलम्बी थे। किन्तु राजा अशोकके समय कितनों होने बौद्धधर्म ग्रहण किया। सिंहल देखो।

अब देखना चाहिये—प्राचीन कालमें हिन्दू भारतवर्ष छोड़ उत्तर और पश्चिम कितनी दूर तक गये थे।

इधर सुदूर एशिया-माइनर प्रदेशके बोघस्कुई नामक स्थानमें विङ्कर नामक जर्मन पुराविद्के प्रयत्नपर भूगर्भसे जो सकल प्राचीन निदर्शन निकले, उनके पढ़नेसे हम मालूम कर सके—ईसा जन्मसे १६०० वर्ष पहले इस प्रदेशमें वैदिक आर्य सभ्यता फैल गयी थी। काश्य (Kassite) नामक आर्योंने उस सुदूर प्रदेशमें आधिपत्य जमाया। वे भारतीय वैदिकोंकी तरह इन्द्र, वरुण, नासत्य आदि देवताओंके उपासक रहे। बाबिलनके सुप्राचीन इतिहाससे हमें समझ पड़ा—ईसाके १८५० वर्ष पहले काश्य नामक जातिसे बाबेरूकी सभामें प्रथम आत्म परिचित हुआ ... पुराविदोंके मतानुसार ... ही अधिक सुदूर परि... हो ... में आर्य सभ्यता ... चेष्टासे युरोप खण्डमें

चीना परिव्राजकोंकी वर्णनासे समझ पड़ा, कि ई० तृतीयसे पञ्चम शताब्दी पर्यन्त कास्पीय सागरके तीरपर हिन्दू धर्मका कुछ कुछ निदर्शन रहा, उस समय कश्यप प्रभृति मुनियोंका आश्रम विद्यमान था। कह नहीं सकते—इस समय वहां हिन्दू रहते हैं या नहीं। यह भी हो सकता, कि विधर्मियोंके प्रभावसे उन्होंने भिन्न भिन्न धर्मको अवलम्बन किया हो। पुराणपुरी नामक एक ऊर्ध्वबाहु हिन्दू सन्यासीकी वर्णनासे समझते, कि वे कास्पीय सागरके तीरपर ज्वालामुखी नामक तीर्थको गये थे। उस समय अष्ट्राकान और पारस्यके दक्षिणस्थ खरिक नामक द्वीपमें भी हिन्दू रहे। यहांतक, कि तुरस्क राज्यके बसरा नामक नगरमें अनेक हिन्दू वास करते थे। वहां कल्याणराय और गोविन्दराय नामक देवताओंकी मूर्तियां विद्यमान थीं। (Asiatic Researches, Vol. V, p. 41—52.)

उक्त पुराणपुरीकी वर्णनासे फिर समझ पड़ा, कि उस समय युरोपीय रूसराज्यके मस्को नगरमें इन्होंने हिन्दुवोंसे साक्षात् किया था। इस वर्णनाके अमूलक न ठहरते मानना पड़ेगा, कि एक समय हिन्दुवोंने युरोपीय रूसराज्यमें पहुंच उपनिवेश लगाया। निम्नलिखित इतिहास पढ़नेसे सचमुच ऐसा समझ पड़ता है, कि अतिप्राचीन कालमें हिन्दुवोंने युरोपमें जा उपनिवेश किया था—

जेनोबिया नामक एक सैरीय ईसाईने ई० तृतीय शताब्दीको आरमनी भाषामें एक इतिहास लिखा था। इस ग्रन्थमें वर्णित है—"देमेतर और किसानी दो हिन्दू राजकुमारोंने राजाके विपक्षमें साजिश की थी। राजाने उन्हें पकड़नेके लिये सैन्य भेजा। उभयने राजदण्डके भयसे स्वदेश छोड़ वलर्शकेश नामक राजाका आश्रय लिया था। उस राजाने दोनोंका ओरोन नामक राज्य दे दिया। वहां हिन्दू राजकुमारद्वयने विशप (विशाप) नामक एक नगर बसाया था। उसके बाद आष्टिषट् नामक स्थानमें पहुंच वे भारत-... मूर्ति सकल स्थापन करने लगे। इसी ... मध्य हिन्दू उपनिवेश स्थायी ... परलोकको गमन किया।

फिर उस देशके राजाने अ्यादहयके तीन पुत्रोंको वह राज्य बांट दिया था। तीनो पुत्रोंका नाम कुमार, मेघती और हरिय था। उन्होंने स्व-स्व नामके अनुसार ग्राम पत्तन बसाये। कुछ दिन बाद तीनो भाई स्व-स्व वासस्थान छोड़ एक सुखसेव्य पर्वतपर पहुंचे। उसी जगह उन्होंने अपने पितृदेवके स्मरणार्थ देमेतर और केशानी नामक दो वृहत् देवालय प्रतिष्ठित किये थे। उन दोनोकी मूर्ति मुकुट और पीताम्बर पहने हैं।* इस समय अरमेनियाके अनेक राजपुत्र उसी देवोपासक सम्प्रदायमें मिल गये। किन्तु यह धर्म वहां अधिक दिन न टिका। कुछ काल बाद ईसाई धर्म चलानेके लिये सेण्ट ग्रेगरी इस प्रदेशमें पहुंचे थे। इसी समय अरमेनिया-वासी हिन्दुवोंके साथ ईसाइयोंका घोरतर युद्ध हुआ। अनेक बार युद्ध होनेकेबाद प्रायः चार-पांच सहस्र देवोपासक निहत और हिन्दुवोंके नाना स्थानीय देवमन्दिर विध्वस्त एवं चूर्णीकृत हुये। फिर प्राणके भयसे किसी-किसीने ईसाई धर्म अवलम्बन किया था।"

प्रकाशानन्द नामक एक प्रसिद्ध ब्रह्मचारी काशीमें रहते थे। उन्हींके मुंहसे किसी-किसीने सुना, कि समुद्रपथसे अरबके मस्कट नामक नगर पर्यन्त उन्होंने गमन किया था। वे कहते कि सहृट नगरमें स्थान-स्थानपर दो-एक हिन्दू रहते थे। किसी-किसीके कथनानुसार अफरीकाके पूर्वांशपर जोञ्जार (सुखतर द्वीप) नामक द्वीपमें काश्वाज हिन्दूवोंका वास था।

इधर इसका भी प्रमाण मिला, कि सुदूरवर्ती अमेरिका खण्डमें किसी समय हिन्दुवोंने जा उपनिवेश किया। जिस समय कोलम्बस्का जन्म नहीं हुआ, जिस समय प्राचीन अरबवासियोंको अमेरिकाका सन्धान पर्यन्त न लगा, उस समयसे भी बहुत पहले हिन्दुवोंका अमेरिकामें आना जाना रहा। मध्य अमेरिकामें जिन प्राचीन मन्दिरादिका भग्नावशेष पड़ा है, उनके गठनकी प्रणाली सर्वांशमें दक्षिण-भारत एवं भारत सागरीय द्वीपस्थित हिन्दू मन्दिरकी तरह है। भारतकी तरह मेक्सिकोके मितल नामक स्थानमें पर्वत खोदकर बने मन्दिरादि देखनेसे सहज ही माना कि हिन्दुवोंने वहां जा उस सकल शिल्प-कार्यको सुसम्पन्न किया था। वहां प्रस्तर-खोदित अनेक देवमूर्ति भी देख पड़ती हैं। वे अनेकांशमें इस देशकी हिन्दू देवदेवीके सदृश हैं। दक्षिण-अमेरिकाके टिटिकाका ह्रदके तीरपर भी भारतवर्षीय शिल्प-चातुर्य प्रकटित है। मेक्सिकोवासी गणेशका चित्र खींचते हैं। जिस देशमें पहले हस्ती मिलता न था, उस देशमें इस मूर्तिका कल्पित होना भी सम्भव नहीं। आनामसे आविष्कृत बहुतर शिला-फलकमें सूर्यवंशीय 'इन्द्र' उपाधिधारी राजगणका नाम लिखा है। सम्भवतः अङ्गके सूर्यवंशकी कोई-कोई राजकीय शाखा अमेरिका जा 'इङ्क' नामसे परिचित हुई। वह अमेरिकामें 'रामसीतोआ' नामक महोत्सव करती थी। यह भारतीय प्रसिद्ध उत्सव रामलीलाका अनुकरण जैसा समझ पड़ता है।

फिर इसके प्रमाणका कोई अभाव नहीं, कि उत्तमाशा अन्तरीप लांघ तुषारावृत उत्तर महासागरसे भारतीय वणिक् दो सहस्र वत्सरसे भी बहुपूर्व ग्रेट ब्रटेन और जर्मनीमें जाकर वाणिज्य चलाते थे। सुप्रसिद्ध रोमक ऐतिहासिक तासीतासके वर्णित उत्तर देशका इतिहास उद्धार कर—उनके अनुचर प्लिनीने लिखा है—ई० पूर्व ६० अब्दको कितने ही भारतवासी वाणिज्यके उपलक्ष्यमें समुद्रपथसे तूफान द्वारा विताड़ित हो जर्मन उपकूलपर जा पड़े थे। सुयेवियराजने उन्हें उपहारस्वरूप गलके प्रधान शासनकर्ता मेटेलासके पास भेज दिया।

अब देखना चाहिये—प्राचीन युरोपीयोंने किस तरह और किस लिये अपनी जन्मभूमि छोड़ भिन्न भिन्न देशमें आ उपनिवेश स्थापन किया।

जो जाति पूर्व कालको युरोपमें फनिक या फिनिसीय नामसे प्रसिद्ध रहीं, वही जाति भारतवर्षमें वैदिक युगपर पणि कही गयी। भारतमें आर्य-वैदिक प्रतिष्ठासे पहले पणि जातिने बहु स्थानपर अधिकार जमा लिया था। प्राच्य भारतसे उक्त जातिने

* यह सहज ही कृष्ण बलराम की सी समझ पड़ती है।

सुदूर एशिया माइनरमें जा उपनिवेश स्थापन किया। उसीके नामानुसार उपनिवेश भी फिनिसिया कहलाया है। अधिक इसमें विस्तारित विवरण देखो।

जितनी ही फिनिसियामें उसकी संख्या बढ़ने लगी, उतनी ही अपना देश छोड़ जलके पथसे नूतन आवास-भूमि ढूंढनेकी धूम पड़ी। क्रमसे उन्हें नूतन-नूतन जनपद देखनेको मिले थे। अपने वाणिज्यमें सुविधा लानेके लिये जो जो स्थान अच्छा लगा, उसी उसी स्थानमें लोगोंका एक-एक दल रह गया। इसी प्रकार उन्होंने समुद्रपथसे टायर, हिपो, अद्रुमत, टटिका, तूनिस और अफरीकामें बहुत दूरतक अपना उपनिवेश जमाया था। जिस जिस स्थानमें उन्होंने अधिकार वा उपनिवेश जमाया, वही वही स्थान उनके स्वदेशीय राजगणके शासनाधीन कहाया। फिर काल पाकर अनेक स्वाधीन बन बैठे। जो व्यक्ति जिस देशमें वाणिज्यके बलसे विलक्षण प्रभावशाली निकला, वही व्यक्ति उस देशमें अपनेको एक स्वाधीन राजा बताने लगा। क्रमसे फिनिसीय वाणिज्यके दर्पमें चूर हो बड़े अत्याचारी बन गये थे। क्रीटके राजा माइनसने उन्हें अपने देशसे एककाल ही भगा दिया। युरोपीय ऐतिहासिकोंके कथनानुसार फिनिसीय जातिने सर्वप्रथम सरदिनियामें उपनिवेश किया था।

उसी समय कार्थेजके निवासी भिन्न प्रणालीसे उपनिवेश स्थापन करनेको अग्रसर हुये। वे वाणिज्य फैलाना चाहते न थे। नानादेश जीत जन्मभूमिके पदानत बनाना ही उनका मुख्य उद्देश्य रहा। इसी अभिप्रायसे उन्होंने अफरीका, सिसिली, स्पेन प्रभृति स्थानोंमें पहुंच उपनिवेश लगाया। यूनानियोंके उपनिवेशकी प्रणाली फिनिसियोंसे मिलती है। उन्होंने अन्तरके विवाद, कृषिके कर्मकी सुविधा, वाणिज्य व्यवसायके अनुरोध या राज्यके उद्देश्यसे भिन्न भिन्न स्थानोंमें पहुंच उपनिवेश किया था। यूनानियोंका उपनिवेश ट्रय युद्धके पीछे आरम्भ हुआ। उन्होंने अति प्राचीन कालसे ही इटली, सिसिली प्रभृति स्थानोंमें उपनिवेशकी नींव डाल दी थी।

आथेन्सके राजा कद्रुके मरनेपर योन (Ionian = यवन) जातिवालोंने आटिकासे जा एसिया-माइनरके पश्चिमकूलपर उपनिवेश किया। उस समय वही स्थान योन जातिवालोंके नामानुसार 'योनिया' (Ionia) कहलाने लगा। वहां उपनिवेश करनेके पीछे योन जातिवाले सम्पत्ति और समृद्धिसे फूल गये। अति पूर्वकालकी रोममें साधारणतन्त्र प्रबल रहा। उस समय रोमक जो स्थान जीत लेते, उन्हीं स्थानोंमें स्वदेशीयोंको उपनिवेश करने भेज देते थे। फिर जहां विजित जातिको बहुत ही दुर्दस्य एवं देशकी अवस्था भी अधिक रम्य न देखते अथवा जहां नगरादि कुछ न रहते, वहां औपनिवेशिक अच्छी जगह ढूंढ नगरादि बसाते और सर्वदा देशकी रक्षाके लिये यत्न उठाते थे। इसी प्रणालीसे उन्होंने गल (फ्रान्स), जर्मनी, इस प्रभृति स्थानोंमें उपनिवेश किया। रोमक, औपनिवेशिकोंके मध्ये स्थान-स्थानके शासनादिका भार डाल राजकार्य चलाते थे।

अमेरिका आविष्कृत होनेपर युरोपकी सब प्रधान प्रधान जातियोंके लोग एक प्रकार पागल जैसे बन गये। उनमें अंगरेजोंकी उपनिवेश अधिक फलप्रद हुआ। अमेरिका देखो।

ई० पञ्चदश शताब्दको पोर्तुगीजोंने अफरीका और भारतमें पहुंच उपनिवेश जमाया था।

पोर्तुगीजोंके पीछे ही हालेण्डवासियोंने वाणिज्य फैलानेके लिये नाना स्थानोंमें जा उपनिवेश किया। उनमें उत्तमाशा अन्तरीप, मलक्का और यवद्वीप प्रधान है। फ्रान्सीसियोंने कनाडा जा उपनिवेश लगाया। किन्तु यह उपनिवेश अधिक सुविधाजनक न निकला। क्यों कि पूर्व अधिवासियोंसे उनकी बिलकुल न बनी। सुतरां सुदृढ़ दुर्ग, परिखा और सेनादिको सर्वत्र सर्वदा सज्जित रखना पड़ता था।

नीचे तालिका लगाते, कि भिन्न भिन्न देशके युरोपीय किस किस स्थानमें उपनिवेशसे बाद रह-ठहकर आ जाते थे—

इङ्गलैण्डका उपनिवेश—हटिश उत्तर अमेरिका, हटिश वेष्ट इण्डिया-द्वीपपुञ्ज, दक्षिण अमेरिकाका हटिश गुयेना, साइरा-लियोन, उत्तमाशा अन्तरीप, सेण्टहेलना,

मरिचद्वीप, सिंहल, प्रिन्स अव वेल्स द्वीप, सिङ्गापुर, मलका, अष्ट्रेलिया और तासमानियाका कोई कोई स्थान, वानडाइमनसलेण्ड, जिब्राल्टर, माल्टा और हेलिगोलेण्ड। भारतवर्ष अधिकांश अधिकारभुक्त होते भी अंगरेजोंका उपनिवेश समझा नहीं जाता।

फ्रान्सका उपनिवेश—सेण्टपायर, मिगुलन और फ्रान्सीसी गुयाडेलोप द्वीपपुञ्ज, अमेरिकाका फ्रान्सीसी गिनी राज्य, अफरीकाके उपकूलका सेनिगाल तथा गोरी, बुर्वन द्वीप, भारतवर्षका पण्डिचेरी, कारिकाल एवं चन्दननगर, मार्केससद्वीप, नव कालिडोनिया और आलजिरीया।

स्पेनका उपनिवेश—अमेरिकाका कूवा, पोर्टोरिको तथा भार्जिन द्वीप, एशियाका फिलिपाइन द्वीपपुञ्ज और अफरीकाका फ्रेसिडिओ एवं गिनी द्वीपपुञ्ज। मेक्सिको तथा दक्षिण-अमेरिकामें भी पहले स्पेन-वासियोंका उपनिवेश रहा, किन्तु पीछे उठ गया।

हालेण्डका उपनिवेश—कुराअग्रो द्वीप, अमेरिकाके गुये-नाका मध्यवर्ती गुटेक एवं सुरिनम नामक स्थान और एशियाके मध्य यवद्वीपकी राजधानी बटेविया, बरनिओ द्वीपका कितना ही स्थान, सुमात्रा, शिलि-बिस, तिमर और मलक्का द्वीपपुञ्ज।

डेनमार्कका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके बीचका सेण्ट क्रुज, सेण्ट जोहन एवं सेण्ट टमास और गिनीके उपकूलका खृष्टानवर्ग।

स्विजरलेण्डका उपनिवेश—वेष्ट इण्डियाके मध्यका सेण्ट बार्थलम्यु द्वीप।

उपनिवेशित (सं॰ त्रि॰) उप-नि-विश-णिच्-क्त। लोगोंको उपनिवेशमें बसानेके लिये ले जानेवाला।

उपनिवेशिन् (सं॰ त्रि॰) लग्न, पैदायशी, लगा हुआ।

उपनिषत् (सं॰ स्त्री॰) उपनिषीदति, उप-नि-सद्-क्विप् अथवा सद्-णिच्-क्विप्। १ समीपसदन, पासका मकान्। २ रहस्य, रमूज। ३ निर्जन स्थान, सूनी जगह। ४ धर्म। ५ द्विजाति-कर्तव्य व्रत विशेष। ६ वेदका शिरोभाग। उपनिषद्को ऋषिमुनियोंने वेदका शिरोभाग या वेदान्त बताया है। क्योंकि वेदके इस अंशमें ब्रह्मविद्या कीर्तित है। वेदके अन्य अंशमें कर्मकाण्ड द्वारा पुण्यलाभका उपदेश है। किन्तु उपनिषद्में ज्ञानकाण्डके द्वारा उसीका उपदेश सुनाते, जिससे नित्य आत्मतत्त्व पाते हैं। शास्त्रकारोंने उपनिषद्के अर्थको इसप्रकार व्युत्पत्ति लगायी है—"वेदान्तो नाम उपनिषत्प्रमाणम्।" (वेदान्तसार)

'उपनिषच्छब्दो ब्रह्मात्मैकत्वसाक्षात्कारविषयः। उपनिपूर्वस्य क्विप्-प्रत्ययान्तस्य तद्नु विशरणगत्यवसादनेष्वित्यस्य धातोरुपनिषदिति रूपं। तत्रोपशब्दः सामीप्यमाचष्टे तच्च सङ्कोचकाभावात् सर्वान्तरे प्रत्यगात्मनि पर्यवस्यति। निशब्दो निश्चयवचनः सोऽपि तस्यैव निश्चिनोति तत्त्वं-तत्त्वाप्युपशब्दसामानाधिकरण्यात्। तथात् ब्रह्मविद्यात्मसंशीलिनां संसार-सारतामतिं सादयति विशादयति शिथिलयतीति वा परमश्रेयोरूपं प्रत्यगा-त्मानं सादयति गमयतीति वा दुःखजन्मप्रवृत्त्यादिमूलाज्ञानं सादयत्युन्मू-लयतीति सोपनिषत्पदवाच्या ईश्वरसिद्धौ तस्याः प्रमाणरूपायाः कारणभूतः सर्वशाखास्वन्तरभागेषूत्पद्यमानो ग्रन्थराशिरप्युपचारात् प्रमाणमित्युच्यते।'

(विद्वन्मनोरञ्जिनीटीका)

उपनिषद् शब्द ब्रह्मात्मके ऐक्यसाक्षात्कारका विषय है। उप और नि-पूर्वक वध, गति और अवसाद-नार्थक सद धातुके उत्तर क्विप् प्रत्यय लगानेसे यह निष्पन्न हुआ है। उपशब्द सामीप्यका बोधक है। सङ्कोचकके अभावसे इसका अर्थ सर्वान्तर पदब्रह्मरूप प्रत्यगात्मामें वर्तित हो जाता है। नि शब्दसे निश्चय निकलता है। उप शब्दके समानाधिकरण्यसे तत्त्व-निश्चयरूप अर्थ प्रकाशित होता है। अतएव ब्रह्मविद्यामें संयुक्तचित्त न रहनेवालोंको 'संसार-सार' बुद्धिको नष्ट वा शिथिल कर देनेसे इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। अथवा इसके द्वारा परम श्रेयःस्वरूप प्रत्यगात्मा अर्थात् परमात्मा परमेश्वर मिल और दुःखजन्मप्रवृत्ति प्रभृति मूल अज्ञान मिट जानेसे इसको उपनिषद् कहते हैं। यही ईश्वरकी सिद्धिके विषयमें प्रमाण और प्रमाण-स्वरूप है। इसका कारणभूत समस्त शाखारूप उत्तर-भागमें उत्पद्यमान ग्रन्थराशि उपचारसे प्रमाण बताया जाता है।

"अत उपनिषच्छब्दो ब्रह्मविद्यैकगोचरः।
तच्छब्दावयवार्थस्य विद्यायामेव सम्भवात्॥
उपोपसर्गः सामीप्ये तत्प्रतीचि समाप्यते।
सामीप्यतारतम्यस्य विश्रान्तेः स्वात्मनीरणात्॥

निचाय्य तद्दयं स निमग्नोऽपि विमुच्यते।
उपनीय तमात्मानं ब्रह्मापास्तद्वयं यतः॥
निहन्त्यविद्यां तज्जञ्च तस्मादुपनिषद्भवेत्।
प्रवृत्तिहेतून्निःशेषांस्तन्मूलोच्छेदकत्वतः॥
यतोऽवसादयेद्विद्या तस्मादुपनिषद्भवेत्।
यथोक्तविद्याहेतुत्वाद्ग्रन्थोऽपि तदभेदतः॥
भवेदुपनिषन्नामा लिङ्गं जीवनं यथा।"

उपनिषद् शब्द एकमात्र ब्रह्मविद्यारूप अर्थ प्रकाश करता है। इसके अवयव अर्थकी विद्यामें ही संगति होती है। उप उपसर्गका अर्थ सामीप्य है। तारतम्यकी विश्रान्तिके स्त्रीय आत्मापर ईक्षण हेतु यह प्रत्यगात्मामें पर्यवसित है। फिर यह नि-शब्द एवं सद धातुके नाश, गमन और अवसादन त्रिविध अर्थका विशेषण है। जीवात्मरूप चैतन्यको परमात्म-चैतन्यके निकट पहुंचा ब्रह्मके साथ उसका एकत्व भावनिष्पादन एवं अविद्या तथा अविद्याका कार्य नाश करनेसे इसे उपनिषद् कहते हैं। अथवा उपनिषद् विद्याको प्रवृत्तिके हेतु समस्त निःशेषको विनाश करनेसे इसका नाम उपनिषद् पड़ा है। समस्त अभेद विद्याका हेतु होनेसे जलादि जैसे जीवन कहाता, वैसे ही उपचार वश यह ग्रन्थ भी उपनिषद् नाम पाता है।

तैत्तिरीय उपनिषद्के भाष्यमें शङ्कराचार्यने भी लिखा है—'परं श्रेयोऽस्यां निषण्णम्।' उपनिषद्में मोक्षके लाभका परम मङ्गल निहित है।

वस्तुतः उपनिषद्को सनातन भारतीय धर्मका मूलस्वरूप कहनेसे भी अत्युक्ति नहीं होती। सनातन धर्मके आजतक अक्षुण्ण रहनेका मूल कारण उपनिषद् ही है। उपनिषद्में हमारे धर्मका मूलतत्त्व रक्षित है। उपनिषद्के पाठसे ही हमने जान लिया, कि वर्तमान कालकी अपेक्षा पूर्वतन ऋषिगणने ज्ञानके बल कितना निगूढ़ उच्च तत्त्व आविष्कार किया था।

हमारा सनातन धर्म प्रधानतः दो भागोंमें विभक्त है—प्रवृत्ति धर्म और निवृत्ति धर्म। जो धर्मानुयायी पुण्यकर्मादि करनेसे हम इहलोक एवं परलोकमें परम स्वर्गसुख तथा अमेय पुण्य पा सकते हैं, उसे प्रवृत्ति-धर्म कहते हैं। यह धर्म वेदके 'संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक एवं सूत्र भागमें वर्णित है। ऐसे धर्माचरणको कर्मकाण्ड कहते हैं।

दूसरे जिस धर्मके अनुसार हम नित्य शान्ति, अक्षय मोक्षपद पाते, जिस धर्मोपदेशके गुणसे अपार संसारके मायामोहादि सहज ही छूट जाते, जिस धर्मके अनुसरणसे परमात्मामें जीवात्माका लय करते और जिस धर्मके उपासनसे जन्म-जरा-मरण रूप संसारमें फिर नहीं आते, उसका नाम निवृत्ति-धर्म बताते हैं। उपनिषद् नामक वेदके शिरोभागमें यही निवृत्ति-धर्म वर्णित है। उपनिषद्के अनुयायी आचरणको ज्ञानकाण्ड कहते हैं। इसका अपर नाम ज्ञानयोग भी है।

"यदेव विद्यया करोति श्रद्धयोपनिषदा तदेव वीर्यवत्तरम्।"
(छान्दोग्योपनिषत्)

'उपनिषदा योगेन गुह्यये अर्थः।' (शाङ्करभाष्य)

विद्यारण्य स्वामीने बनाये 'सर्वोपनिषदर्थानुभूतिप्रकाश' नामक ग्रन्थमें इन्हें प्रधान उपनिषद् माना है—

१।	ऐतरेय उपनिषत्	(ऋग्वेदीय)।
२।	तैत्तिरीय उपनिषत्	(कृष्णयजुर्वेदीय)।
३।	छान्दोग्य उपनिषत्	(सामवेदीय)।
४।	मुण्डक उपनिषत्।	(अथर्ववेदीय)।
५।	प्रश्न उपनिषत्।	(अथर्ववेदीय)।
	कौषितकी उपनिषत्।	(ऋग्वेदीय)।
७।	मैत्रायणीय उपनिषत्।	(कृष्णयजुर्वेदीय)।
८।	कठवल्ली उपनिषत्।	(कृष्णयजुर्वेदीय)।
९।	श्वेताश्वतर उपनिषत्।	(कृष्णयजुर्वेदीय)।
१०।	बृहदारण्यक उपनिषत्।	(शुक्लयजुर्वेदीय)।
११।	तलवकार उपनिषत्।	(सामवेदीय)।
१२।	नृसिंहोत्तरतापनीय उपनिषत्।	(अथर्ववेदीय)।

मुक्तिकोपनिषद्में १०८ उपनिषद्का नाम लिखा है। यथा—

१ ईश, २ केन, ३ कठ, ४ प्रश्न, ५ मुण्ड, ६ माण्डूक्य, ७ तैत्तिरीय, ८ ऐतरेय, ९ छान्दोग्य, १० बृहदारण्यक, ११ ब्रह्म, १२ कैवल्य, १३ जाबाल, १४ श्वेताश्वतर, १५ हंस, १६ आरुणि, १७ गर्भ, १८ नारायण, १९ परमहंस, २० अमृतबिन्दु, २१ अमृतनाद, २२ अथर्वशिरः, २३ अथर्वशिख, २४ मैत्रायणी, २५ कौषितकी, २६ बृहज्जाबाल, २७ तापनी, २८ कालाग्निरुद्र, २९ मैत्रेयी, ३० सुबाल, ३१ क्षुरिक, ३२ मन्त्रिक, ३३ सर्वसार, ३४ निरालम्ब, ३५ रहस्य, ३६ वज्रसूचि, ३७ तेजोबिन्दु-

३८ नादबिन्दु, ३९ ध्यानबिन्दु, ४० विद्या, ४१ योगतत्त्व, ४२ आत्मबोध, ४३ परिव्राज, ४४ त्रिशिखा, ४५ सीता, ४६ चूड़ा, ४७ निर्वाण, ४८ मण्डल, ४९ दक्षिणामूर्ति, ५० शरभ, ५१ स्कन्द, ५२ महानारायण, ५३ अद्वय, ५४ रामरहस्य, ५५ रामतापन, ५६ वासुदेव, ५७ मुद्गल, ५८ शाण्डिल्य, ५९ पैङ्गल, ६० भिक्षु, ६१ महत्, ६२ शारीर, ६३ योगशिखा, ६४ तुरीयातीत, ६५ संन्यास, ६६ परमहंसपरिव्राजक, ६७ अक्षमालिका, ६८ अव्यक्त, ६९ एकाक्षर, ७० अन्नपूर्णा, ७१ सूर्य, ७२ अक्षि, ७३ अध्यात्म, ७४ कुण्डिका, ७५ सावित्री, ७६ आत्मा, ७७ पाशुपत, ७८ परब्रह्म, ७९ अवधूत, ८० त्रिपुरातापन, ८१ देवी, ८२ त्रिपुरा, ८३ कठरुद्र, ८४ भावना, ८५ हृदय, ८६ योगकुण्डली, ८७ भस्मजाबाल, ८८ रुद्राक्ष, ८९ गणपति, ९० जालदर्शन, ९१ तारसार, ९२ महावाक्य, ९३ पञ्चब्रह्म, ९४ प्राणाग्निहोत्र, ९५ गोपालतापिनी, ९६ कृष्ण, ९७ याज्ञवल्क्य, ९८ वराह, ९९ शाट्यायनी, १०० हयग्रीव, १०१ दत्तात्रेय, १०२ गारुड, १०३ कलिसन्तरण, १०४ जाबालि, १०५ सौभाग्य, १०६ सरस्वतीरहस्य, १०७ बह्वृच, १०८ मुक्तिका।

आजकल प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंके अनुसन्धानसे प्रायः २३५ उपनिषद् निकले हैं। इन नवाविष्कृत उपनिषदोंमें अनेक अप्राचीन हैं। उनमें अल्ल नामक उपनिषद् नितान्त आधुनिक है। शब्दकल्पद्रुममें 'अल्ल' शब्दमें अल्लोपनिषद् आथर्वणसूक्तके नामसे उद्धृत है। किन्तु वह सम्पूर्ण भ्रम है। अथर्व देखो।

अल्लोपनिषद् नामक ग्रन्थ उपनिषद् अथवा आथर्वण सूक्त वाच्य हो नहीं सकता। मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे अनायास ही समझ पड़ता है, कि आधुनिक समयमें ही उस ग्रन्थको किसी इसलामधर्मावलम्बीने लिखा है। इस अपूर्व नव्य ग्रन्थको देखकर ही सम्भवतः अनेक लोग अथर्ववेदसे अश्रद्धा करते हैं। कोई कोई कहते हैं कि अथर्ववेदमें कुरान्के अल्लाका हाल मिलता है। इस अल्लोपनिषद्के पढ़नेसे ही कदाचित् यह संस्कार उत्पन्न हुआ है। इस संस्कारको दूर करना भी अवश्य कर्तव्य है क्योंकि—

अल्लोपनिषद्के अन्तभागमें लिखा है—

"इल्लाकबर इल्लाकबर इल्लेति इल्लाल्लाः इल्ला इल्लाल्ला अनादिस्वरूपा अथर्वणी शाखा ह्रां ह्रीं जनान् पशून् सिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट्।"

ये जो ऊपर कई एक शब्द लिखे गये हैं, वे संस्कृत-भाषामें बिलकुल देख नहीं पड़ते। इल्ला और अकबर दोनों प्राकृत अरबी शब्द हैं। अथर्ववेदको छोड़ दीजिये, किसी वैदिक या लौकिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें भी इनका कहीं प्रयोग नहीं मिलता। विशेषतः इसके बाद ही 'रसुर महमद' इत्यादि लिखा है। उसे भी लोग मुसलमानी कुरान्के कहे 'रसूल मुहम्मद' शब्दका उल्लेख मानते हैं। फिर भी न जाने क्यों देशीय पण्डितोंने आथर्वण-सूक्त जैसा इसे समझ लिया है? इसी ग्रन्थमें किसी जगह लिखा है—

"आदल्लाबुकमेककं। अल्लाबुकम्। निखातकम्।"

उक्त छवके साथ अथर्वसंहिताके दो मन्त्रोंका कितना ही आभास मिलता है—

"आदलाबुकमेककम्। १।
अलाबुकं निखातकम्। २।" (अथर्वसंहिता २०।१३७)

मालूम होता है, इन दोनों मन्त्रोंमें कितना ही सौसादृश्य रहनेसे ही किसी-किसीने अल्लोपनिषद्को आथर्वण-सूक्त जैसा मान लिया है। किन्तु इसे भी उन लोगोंका भ्रम ही कहना पड़ेगा। अल्लोपनिषदोक्त अल्लाबुक शब्द अथर्ववेद अथवा अपर किसी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें नहीं आया। अथर्वप्रातिशाख्यके मतानुसार अथर्वसंहितोक्त अलाबुक शब्द 'अल्लाबुक' हो नहीं सकता। फिर अलाबुक शब्दका अर्थ भी संस्कृत भाषाके अनुसार निश्चय करना कठिन है। अतएव इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी संस्कृतज्ञ मुसलमानने ही यह दारुण कार्य सम्पादन किया है। उक्त ग्रन्थके पाठसे इतना तो अनुमान लगता है कि वह अकबर बादशाहके समयमें ही सङ्कलित हुआ था। किन्तु किस व्यक्तिने ऐसा कार्य किया अब यह अनुसन्धान करना है।

मुन्तखबुत् तवारीख नामक ईरानी ग्रन्थमें बदाउनीने लिखा है—"इसी वत्सर (९८३ हिजरी या १५७५ ई०) दक्षिण देशसे शेख भावन नामक एक शिक्षित ब्राह्मण आ गया था। वह इसलामधर्ममें दीक्षित हुआ। उसी समय सम्राट्ने उसे अथर्वण अनुवाद करनेका आदेश दिया। इसलामके धर्मशास्त्रसे इस ग्रन्थके कितने ही धर्मोपदेशका ऐक्य है। अनुवादके समय अनेक कठिन स्थल देख पड़े; जिनका भाव शेख भावन तक प्रकाश न कर सके। हमने यह विषय सम्राट्को

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible]

[illegible] उपनिषद् [illegible]

१ [illegible] [illegible]
२ [illegible] [illegible]
३ [illegible] [illegible]
४ [illegible] [illegible]
५ [illegible] [illegible]
[illegible] [illegible]
६ [illegible] [illegible]
७ [illegible] [illegible]
८ [illegible] [illegible]
१० [illegible] [illegible]
११ [illegible] [illegible]
१२ [illegible] [illegible]

[illegible]

[illegible]

३८ नादबिन्दु, ३९ ध्यानबिन्दु, ४० विद्या, ४१ योगतत्त्व, ४२ आत्मबोध, ४३ परिव्राज, ४४ त्रिशिखा, ४५ सीता, ४६ चूड़ा, ४७ निर्वाण, ४८ मण्डल, ४९ दक्षिणामूर्त्ति, ५० शरभ, ५१ स्कन्द, ५२ महानारायण, ५३ अद्वय, ५४ रामरहस्य, ५५ रामतापन, ५६ वासुदेव, ५७ मुद्गल, ५८ शाण्डिल्य, ५९ पैङ्गल, ६० भिक्षु, ६१ महत्, ६२ शारीर, ६३ योगशिखा, ६४ तुरीयातीत, ६५ सन्न्यास, ६६ परमहंसपरिव्राजक, ६७ अक्षमालिका, ६८ अव्यक्त, ६९ एकाक्षर, ७० अन्नपूर्णा, ७१ सूर्य, ७२ अक्षि, ७३ अध्यात्म, ७४ कुण्डिका, ७५ सावित्री, ७६ आत्मा, ७७ पाशुपत, ७८ परब्रह्म, ७९ अवधूत, ८० त्रिपुरातापन, ८१ देवी, ८२ त्रिपुरा, ८३ कठरुद्र, ८४ भावना, ८५ हृदय, ८६ योगकुण्डली, ८७ भस्मजाबाल, ८८ रुद्राक्ष, ८९ गणपति, ९० जाबालदर्शन, ९१ तारसार, ९२ महावाक्य, ९३ पञ्चब्रह्म, ९४ प्राणाग्निहोत्र, ९५ गोपालतापनी, ९६ कृष्ण, ९७ याज्ञवल्क्य, ९८ वराह, ९९ शाट्यायनी, १०० हयग्रीव, १०१ दत्तात्रेय, १०२ गारुड़, १०३ कलिसन्तरण, १०४ जाबालि, १०५ सौभाग्य, १०६ सरस्वतीरहस्य, १०७ बह्वृच, १०८ मुक्तिका।

आजकल प्राचीन संस्कृत ग्रन्थोंके अनुसन्धानसे प्रायः २३५ उपनिषद् निकले हैं। इन नवाविष्कृत उपनिषदोंमें अनेक अप्राचीन हैं। उनमें अल्ल नामक उपनिषद् नितान्त आधुनिक है। शब्दकल्पद्रुममें 'अल्ल' शब्दमें अल्लोपनिषद् आथर्वणसूक्तके नामसे उद्धृत है। किन्तु वह सम्पूर्ण भ्रम है। अथर्व देखो।

अल्लोपनिषद् नामक ग्रन्थ उपनिषद् अथवा आथर्वण सूक्त वाच्य हो नहीं सकता। मनोयोगपूर्वक पढ़नेसे अनायास ही समझ पड़ता है, कि आधुनिक समयमें ही उस ग्रन्थको किसी इसलामधर्मावलम्बीने लिखा है। इस अपूर्व नव्य ग्रन्थको देखकर ही सम्भवतः अनेक लोग अथर्ववेदसे अश्रद्धा करते हैं। कोई कोई कहते हैं कि अथर्ववेदमें क़ुरान्के अल्लाका हाल मिलता है। इस अल्लोपनिषद्के पढ़नेसे ही कदाचित् यह संस्कार उत्पन्न हुआ है। इस संस्कारको दूर करना भी अवश्य कर्तव्य है क्योंकि—

अल्लोपनिषद्के अन्तभागमें लिखा है—

"अल्लाकबर अल्लाकबर अल्लेति अल्लाल्लाः अल्ला इल्लल्ला अनादिस्वरूपा अथर्वणी शाखा ह्रां ह्रीं जनान् पशून् सिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट्।"

ये जो ऊपर कई एक शब्द लिखे गये हैं, वे संस्कृत-भाषामें बिलकुल देख नहीं पड़ते। इल्ला और अकबर दोनो प्रकृत अरबी शब्द हैं। अथर्ववेदको छोड़ दीजिये, किसी वैदिक या लौकिक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें भी इनका कहीं प्रयोग नहीं मिलता। विशेषतः इसके बाद ही 'रसुर महमद' इत्यादि लिखा है। उसे भी लोग मुसलमानी क़ुरान्के कहे 'रसूल मुहम्मद' शब्दका उल्लेख मानते हैं। फिर भी न जाने क्यों देशीय पण्डितोंने आथर्वण-सूक्त जैसा इसे समझ लिया है? इसी ग्रन्थमें किसी जगह लिखा है—

"आदल्लाबुकमेककं। अल्लाबुकम्। निखातकम्।"

उक्त छत्रके साथ अथर्वसंहिताके दो मन्त्रोंका कितना ही आभास मिलता है—

"आदलाबुकमेककम्। १।

अलाबुकं निखातकम्। २।" (अथर्वसंहिता २०।१३२)

मालूम होता है, इन दोनो मन्त्रोंमें कितना ही सौसा दृश्य रहनेसे ही किसी-किसीने अल्लोपनिषद्को आथर्वण-सूक्त जैसा मान लिया है। किन्तु इसे भी उन लोगोंका भ्रम ही कहना पड़ेगा। अल्लोपनिषदोक्त अल्लाबुक शब्द अथर्ववेद अथवा अपर किसी प्राचीन संस्कृत ग्रन्थमें नहीं आया। अथर्वप्रातिशाख्यके मतानुसार अथर्वसंहितोक्त अलाबुक शब्द 'अल्लाबुक' हो नहीं सकता। फिर अल्लाबुक शब्दका अर्थ भी संस्कृत भाषाके अनुसार निश्चय करना कठिन है। अतएव इसमें कोई सन्देह नहीं कि किसी संस्कृतज्ञ मुसलमानने ही यह दारुण कार्य सम्पादन किया है। उक्त ग्रन्थके पाठसे इतना तो अनुमान लगता है कि यह अकबर बादशाहके समयमें ही सङ्कलित हुआ था। किन्तु किस व्यक्तिने वैसा कार्य किया अब यह अनुसन्धान करना है।

मुन्तखबुत् तवारीख् नामक ईरानी ग्रन्थमें बदाउनीने लिखा है—"इसी वत्सर (९८३ हिजरी या १५७५ ई०) दक्षिण देशसे शेख भावन नामक एक शिक्षित ब्राह्मण आ गया था। वह इसलामधर्ममें दीक्षित हुआ। उसीसमय सम्राट्ने उसे अथर्वण अनुवाद करनेका आदेश दिया। इसलामके धर्मशास्त्रसे इस ग्रन्थके कितने ही धर्मोपदेशका ऐक्य है। अनुवादके समय अनेक कठिन स्थल देख पड़े; जिनका भाव शेख भावन तक प्रकाश न कर सके। इसने यह विषय सम्राट्को

बताया था। उन्होंने फ़ैज़ी और हाजी इब्राहीमको* अनुवाद करनेके लिये अनुमति दी। इस ग्रन्थका एक स्थान हमारा (कुरानके कहे) 'ला इलाह इल्लालाह' (वचन-जैसा) है। अथर्वके इस अंशमें शेख भावनने ब्राह्मणोंको तर्कमें परास्त किया था। और इसी मन्त्रके बलसे कितने ही लोगोंने इसलाम धर्मको पकड़ लिया।" (मुन्तखबुत तवारीख २ भा० २१२ पृ०)

बदाउनीके उक्त विवरणमें कुछ गूढ़ रहस्य भरा जैसा मालूम पड़ता है। वे जातिके मुसलमान रहे, फिर ऐसे विशेष संस्कृतज्ञ न थे, कि अथर्ववेद-जैसा वैदिक ग्रन्थ पारस्य भाषामें अनुवाद कर सकते। कदाचित् अनुवादके समय दक्षिण देशवासी शेख भावन ही उनका दाहना हाथ बने होंगे। वे जो कह देते, बदाउनी उसीको पारस्य भाषामें लिख लेते थे। सम्भवतः भावनने ही उनसे कहा होगा—अथर्ववेदके किसी अंशमें कुरानका वाक्य पड़ा है।

पीछे अपनी बात रखनेके लिये भावनने ही अल्लोपनिषत् या अल्लशब्द परिचायक अथर्वणसूक्तको बना अथर्वसंहितामें डाल दिया होगा। कैसा भयङ्कर कार्य है! विधर्मी द्वारा दलित हो अथर्ववेदकी क्या दुर्दशा हुई! उसी दिनसे सरल भारतवासी अथर्वसंहिताको कुरानका अंश समझ बुरा कहने लगे। भावनके चातुर्यमें पड़ कितने ही ने इसलामधर्म ग्रहण किया था। उसी समय उपनिषद् ग्रन्थमें अकबरका नाम घोषित हुआ। हा! कालविपर्ययसे सनातन आर्यशास्त्रका ऐसा परिणाम हो गया। वेद शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उपनिषादिन् (वै० त्रि०) उप-नि-सद-णिनि। निकटस्थायी, नजदीक रहनेवाला। (शतपथब्रा० ८।७।१।२)

उपनिष्कर (सं० क्ली०) उप-निस्-कृ-घ, विसर्जनीयस्य सः। रदुपधस्य चाप्रत्ययस्य। पा ८।३।४१। पुरपथ, शाही राह।

उपनिष्क्रमण (सं० क्ली०) उप-निस्-क्रम करणे ल्युट्, विसर्जनीयस्य सः। १ राजपथ, शाही राह।

२ निष्क्रमण नामक संस्कार। निष्क्रमण देखो। ३ बाहर देनेका काम।

उपनिहित (सं० त्रि०) उप-नि-धा-क्त (धा=हि) १ गच्छित, अमानत रखा हुआ। २ स्थापित, रखा हुआ। ३ समर्पित, नज़र किया हुआ।

उपनीत (सं० त्रि०) उप-नी-क्त। कृतोपनयन, जनेऊ पाये हुआ। (रघु ३।२८) २ ज्ञानको लक्षणाके सन्निकर्ष द्वारा ज्ञात, अक्लके ज़ोरसे समझा हुआ। ३ निकट प्रापित, नज़दीक लाया हुआ। ४ आगत, पहुंचा हुआ। ५ उपस्थापित, जो रख दिया गया हो। ६ आनीत, लाया हुआ। ७ प्राप्त, मिला हुआ। (पु०) ८ कृतोपनयन बालक, जिस लड़केको जनेऊ दिया जा चुका हो।

उपनीतमान (सं० क्ली०) न्यायके मतसे—१ उपनीत तत्त्वादिका विषयकत्व। २ लौकिक और अलौकिक उभयके सन्निकर्षसे उपजा ज्ञान। (न्याय० को०)

उपनीता (सं० स्त्री०) पत्नी, अपनी औरत।

उपनीय (सं० अव्य०) १ समीप ले आ कर। २ जनेऊ देके।

उपनीयमान (सं० त्रि०) निकट उपस्थित किया जानेवाला, जिसको जनेऊ दिलाने गुरुके पास ले जाते हों।

उपनुन्न (सं० त्रि०) १ प्रेरित, भेजा हुआ। २ ताड़ित, हटाया हुआ।

उपनृत्य (सं० क्ली०) नृत्यशाला, नाचघर।

उपनेतव्य (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित किये जानेके योग्य, जो नज़दीक पहुंचानेके क़ाबिल हो। २ नियुक्त करने योग्य, लगानेके क़ाबिल।

उपनेतृ (सं० पु०) १ उपनयनकर्ता गुरु, जनेऊ देनेवाला। (त्रि०) २ उपढौकनकारी, भेंट चढ़ानेवाला। ३ प्रापक, ले जानेवाला।

उपनेत्र (सं० क्ली०) उपगतं नेत्रम्, अत्या० समा०। आंखमें लगनेवाला चश्मा।

उपन्था, उपत्यका देखो।

उपन्यस्त (सं० त्रि०) उप-नि-अस्-क्त। १ विन्यस्त, ऊपर या पास रखा हुआ। २ गच्छित, सौंपा हुआ। ३ आरब्ध, शुरू किया हुआ। ४ दत्त, दिया हुआ। ५ उल्लिखित, लिखा हुआ।

* अरविन्दकी हाजी इब्राहीमने अकबरके आज्ञानुसार अथर्ववेदको अनुवाद किया था।

"एकस्मात् आपतितं किमिदमुपन्यस्तम्।" (शकुन्तला)

उपन्यस्य (सं॰ अव्य॰) देकर, सौंपके।

उपन्यास (सं॰ पु॰) उप-नि-अस्-घञ्। १ वाक्योपक्रम, बातका शुरू होना। २ वाक्यका प्रयोग। ३ विचार। "विवदमानिमं पुण्यमुपन्यासं निबोधत।" (मनु ८।२१) ४ उपनिधि, धरोहर। ५ प्रस्ताव। ६ दान, वस्तुमिथ। ७ उपकथा, सुनने और पढ़नेवालेका दिल खुश करनेकेलिये बनाकर लिखा हुआ किस्सा।

उपन्यास्य (सं॰ त्रि॰) वर्णन किया जानेवाला, जो बताये जानेके काबिल हो।

उपपक्ष (सं॰ पु॰) १ स्कन्ध, कन्धा। (त्रि॰) २ निकटस्थ, कन्धेके पास पड़नेवाला।

उपपति (सं॰ पु॰) उपमितः पत्या अवादयः कुष्टार्थं इति समासः। भिन्न पति, यार। अपना पति रहते भी जिस पुरुषसे कोई नारी आसक्त होती, उसको उपपति संज्ञा पड़ती है।

"सन्धये जारं गेहायोपपतिम्।" (शुक्लयजुः ३०।८)

उपपत्ति (सं॰ स्त्री॰) उप-पद-क्तिन्। १ युक्ति, तदबीर। २ सङ्गति, साथ। ३ निर्वृति, खातिमा। ४ हेतु, सबब। ५ उत्पत्ति, पैदायश। ६ उपाय, ढङ्ग। "दर्पैर्वितायोऽन्वयोपपत्तिभिः।" (माघ) ७ प्राप्ति, हासिल। ८ सिद्धि, करामात। "वसं यथं प्राक् तनयोपपत्तेः।" (रघु) ९ न्यायके मतसे—ज्ञान, समझ। (गौतमसूत्र ११।११) १० गणित शास्त्रके मतसे—प्रमाण कारण, सबूत देनेकी बात।

उपपत्तिमत् (सं॰ त्रि॰) १ उचित, वाजिब, ठीक। २ मिलित, ... लगा हुआ।

उपपत्तियुक्त, उपपत्तिमत् देखो।

उपपत्नी (सं॰ स्त्री॰) उपस्त्री, किसीसे फंसी हुई दूसरेकी औरत।

उपपथ (सं॰ अव्य॰) मार्गके निकट, सड़कपर।

उपपद (सं॰ क्ली॰) उपोच्चारितं पदम्। १ लेप, लगाव। २ समीपोच्चारणीय पद, पास बोला जानेवाला जुमला। "वसन्ति कर्मोपपदाधदेव।" (माघ) ३ उपाधि, खिताब। ४ व्याकरणके प्रत्ययादि विधायक सूत्र। ५ समस्यमान पदके साथ निर्दिष्टसमास पद। ६ समभिव्यवहृत स्वार्थपोषक पद।

उपपन्न (सं॰ त्रि॰) उप-पद्-क्त। १ युक्तियुक्त, वाजिब। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ उत्पन्न, पैदा। ४ उचित, मुनासिब। ५ सम्पन्न, रखनेवाला। ६ आगत, आया हुआ। ७ मिलित, लगा हुआ। ८ सिद्धान्त, जांचा हुआ। ९ सम्भावित, होनहार। १० सद्गुणान्तर आधानरूप संस्कारयुक्त। (वाचस्पति)

उपपरीक्षण (सं॰ क्ली॰) उपपरीक्षा देखो।

उपपरीक्षा (सं॰ स्त्री॰) उपपरीक्षण, इमतिहान, जांच, पूछताछ।

उपपर्चन (वै॰ त्रि॰) १ संयुक्त कर देनेवाला, जो मिला देता हो। २ संलग्न, लगा हुआ। (क्ली॰) ३ गर्भाधान। (सायण)

उपपर्शुका (सं॰ स्त्री॰) कृत्रिम पञ्जर, झूठी पसलियां।

उपपात (सं॰ पु॰) उप-पत-घञ्। १ हठात् आगमन, एकाएक आनेका काम। २ फलोन्मुख, आफ़ियत। ३ नाश, बरबादी।

"कर्मोपपाते प्रायश्चित्तं सम्भाव्यम्।" (कात्यायनश्रौ॰)

'उपपातो विनाशः।' (कर्काचार्य)

उपपातक (सं॰ क्ली॰) उपपातयति नरके, उप-पत-णिच्-ण्वुल्। पाप विशेष, छोटा गुनाह। शास्त्रमें इन सकल कार्योंको उपपातक बताया गया है—

"गोवधोऽयाज्यसंयाज्यं पारदार्यात्मविक्रयाः।
गुरुमातृपितृत्यागः स्वाध्यायाग्न्योः सुतस्य च॥
परिवित्तितानुजेऽनूढे परिवेदनमेव च।
तयोर्दानञ्च कन्यायास्तयोरेव च याजनम्॥
कन्याया दूषणञ्चैव वार्धुष्यं व्रतलोपनम्।
तडागारामदाराणामपत्यस्य च विक्रयः॥
व्रात्यता बान्धवत्यागो भृत्याध्यापनमेव च।
भृताच्चाध्ययनादानमपण्यानाञ्च विक्रयः॥
सर्वाकरेष्वधीकारो महायन्त्रप्रवर्तनम्।
हिंसौषधीनां स्त्र्याजीवोऽभिचारो मूलकर्म च॥
इन्धनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामवपातनम्।
आत्मार्थञ्च क्रियारम्भो निन्दितान्नादनं तथा॥
अनाहिताग्निता स्तेयमृणानामनपक्रिया।
असच्छास्त्राधिगमनं कौशीलव्यस्य च क्रिया॥
धान्यकुप्यपशुस्तेयं मद्यपस्त्रीनिषेवणम्।
स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधो नास्तिक्यञ्चोपपातकम्॥" (मनु ११।६०-६७)

गोवध, अयाज्यका याजन, परस्त्रीगमन, आत्मविक्रय,

पिता, माता, गुरु, स्वाध्याय, अग्नि एवं पुत्रका आलस्य द्वारा त्याग अर्थात् पुत्रका जातकर्म संस्कार न करना, ज्येष्ठ अविवाहित रहते कनिष्ठका विवाह, जेठ या कनिष्ठको कन्यादान, अथवा ऐसे ही विवाहमें पौरोहित्य मानना, अङ्गुलसे कुमारी कन्याकी योनिका विदारण, वृद्धिकी जीविका, स्त्रीसम्भोगादि द्वारा ब्रह्मचर्य व्रतकी च्युति, तड़ाग उद्यान और स्त्रीपुत्रादिका विक्रय, १६ वर्ष बीतनेपर भी उपनयन न होना, पितृव्य प्रभृति बान्धवोंका त्याग, वेतनसे वेदका अध्यापन, वेतनग्राही अध्यापकसे वेदका अध्ययन, अविक्रेय वस्तुका विक्रय, राजाज्ञासे सुवर्णादिकी खनि तथा सेतु प्रभृतिका कार्य, ओषधिका विनाश, भार्यादिका उपपति द्वारा जीविकानिर्वाह, श्येनादि आभिचारिक योग या मन्त्र द्वारा निरपराधीका अनिष्टकरण, जलानेके लिये अशुष्क वृक्षच्छेदन, देवपित्रादिके उद्देशसे व्यतिरेक अपने लिये पाकयज्ञादिका अनुष्ठान, लशुनादि निन्दित खाद्यका भोजन, अग्न्याधान न करना, असत् शास्त्रकी आलोचना, गान एवं वाद्यकी आसक्ति, धान्य ताम्र लौहादि धातु तथा पशुकी चोरी, मद्यपायिनी स्त्रीके पास जाना, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा स्त्रीहत्या और नास्तिकता. इन सकलमें प्रत्येकको उपपातक कहते हैं।

प्रायश्चित्त देखो।

उपपातकिन् (सं॰ त्रि॰) १ उपपातक करनेवाला, जो छोटा गुनाह करता हो। २ सिवा प्रथम श्रेणीके अन्य किसी श्रेणीका पाप करनेवाला।

उपपातिन् (सं॰ त्रि॰) उप-पत-णिनि स्त्रियां ङीप्। १ हठात् आगत, एकाएक आनेवाला। २ अतर्कित भावसे उपस्थित, पहुंचा हुआ।

"रन्ध्रोपनिपातिनोऽनर्थाः।" (शकुन्तला)

उपपाद (सं॰ पु॰) उप-पद-घञ्। १ उपपत्ति, ठहराव। (त्रि॰) २ पादोपगत, पैरमें पड़ा हुआ।

उपपादक (सं॰ त्रि॰) उपपादयति, उप-पद-णिच्-ण्वुल्। १ उपपत्तिकारक, ठहरानेवाला। २ सम्पादक, करनेवाला। ३ उपपत्ति-युक्त, ठहरा हुआ।

उपपादन (सं॰ क्ली॰) उप-पद-णिच्-ल्युट्। १ सम्पादन, बनाव। २ सम्यक् प्रतिपादन, खासा सबूत। ३ युक्ति द्वारा समर्थन। ४ मीमांसाकरण, तजवीज़सामी।

उपपादनीय, उपपाद्य देखो।

उपपादित (सं॰ त्रि॰) उप-पद-णिच्-क्त। १ युक्ति द्वारा समर्थित, तरकीबके साथ ठहराया हुआ। २ सम्पादित, बनाया हुआ।

उपपादुक (सं॰ त्रि॰) १ निज द्वारा उत्पन्न किया हुआ, जो अपने करनेसे निकला हो। २ खुद पैदा हुआ, आप बंधा। (पु॰) ३ देवता, फरिश्ता। ४ नरक, दोज़ख।

उपपाद्य (सं॰ त्रि॰) उप-पद-णिच्-यत्। १ युक्ति द्वारा समर्थनके योग्य, तरकीबके साथ ठहराया जा सकने वाला। २ उद्देश्य, जो पैदा किया जा रहा हो।

उपपाप, उपपातक देखो।

उपपार्श्व (सं॰ पु॰ क्ली॰) १ स्कन्ध, कन्धा। २ कक्ष, कोख। ३ क्षुद्रतर अस्थि, छोटी पसलियां। ४ सम्मुखस्थ पार्श्व, सामनेकी तर्फ।

उपपालित (सं॰ त्रि॰) रक्षित, पाला हुआ।

उपपीड़न (सं॰ क्ली॰) १ भार, दबाव। २ पीड़नकार्य, तकलीफ़दिही। ३ पीड़ा, दर्द, सतानेका काम।

उपपीड़ित (सं॰ त्रि॰) १ विनष्ट, बरबाद किया हुआ। २ पीड़ित, सताया हुआ।

उपपुर (सं॰ क्ली॰) उपसमीपे पुरम्, प्रादि समा॰। नगरका निकटवर्ती शाखा नगर, शहरके पासका छोटा कसबा।

उपपुराण (सं॰ क्ली॰) व्यासके सिवा अन्य ऋषियों द्वारा कृत क्षुद्रपुराण। यथा—

१ सनत्कुमारोक्त आदि, २ नारसिंह, ३ कुमारभाषित वायवीय, ४ नन्दीशोक्त शिवधर्म, ५ दुर्वासोक्त दुर्वासाः, ६ नारदीय, ७ नन्दिकेश्वर, ८ उशनाः, ९ कापिल, १० वारुण, ११ साम्ब, १२ कालिका, १३ माहेश्वर, १४ पाद्म, १५ दैवी, १६ पराशर, १७ मारीच और १८ भास्कर।

कूर्मपुराणके मतसे इन्हें उपपुराण कहते हैं—

"आद्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतः परम्।
तृतीयं स्कान्दमुद्दिष्टं कुमारेण तु भाषितम्॥"

चतुर्थं शिवधर्माख्यं साक्षान्नन्दीशभाषितम्।
दुर्वाससोक्तमाश्चर्यं नारदीयमतः परम्॥
कापिलं वामनञ्चैव तथैवोशनसेरितम्।
ब्रह्माण्डं वारुणञ्चैव कालिकाह्वयमेव च॥
माहेश्वरं तथा साम्बं सौरं सर्वार्थसञ्चयम्।
पराशरोक्तं मारीचं तथैव भार्गवाह्वयम्॥"(कूर्म १अ० १७-२०श्लो०)

१ सनत्कुमारोक्त आद्य, २ नारसिंह, ३ कुमारोक्त स्कान्द, ४ नन्दीशप्रोक्त शिवधर्म, ५ दुर्वासाः, ६ नारदीय, ७ कापिल, ८ वामन, ९ उशनाः, १० ब्रह्माण्ड, ११ वारुण, १२ कालिका, १३ माहेश्वर, १४ साम्ब, १५ सर्वार्थसञ्चायक सौर, १६ पराशरोक्त, १७ मारीच और १८ भार्गव।

सचराचर भागवत दो प्रकारका मिलता है—एक विष्णु-भागवत और एक देवी-भागवत। हेमाद्रि प्रभृति शास्त्रविद्गणके मतसे प्रकाशित है—

"इदं यत् कालिकाख्यन्तु मूलं भागवतन्तु तत्।"

कालिका उपपुराणका मूल पुराण भागवत है। प्रधानतः कालिकापुराणमें देवीका माहात्म्य ही वर्णित है। इसलिये देवी-भागवतको ही मूलपुराण वा महापुराण बताते हैं।

(देवीभागवतपर नीलकण्ठ-कृत टीकोपक्रमणिका)

कोई कोई विष्णु-भागवतको ही महापुराण कहते हैं। असलमें इस विषयपर बहुत कुछ सन्देह उठता है—कौन उपपुराण और कौन महापुराण है। सन्देहकी बात भी है। क्योंकि दोनों ही भागवत द्वादश स्कन्धमें विभक्त और अष्टादश सहस्र श्लोकात्मक हैं। पुराणशब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उपरोक्त पुराणोंको छोड़ धर्मपुराण, वृहद्धर्मपुराण, वृहन्नन्दिकेश्वर-पुराण प्रभृति दूसरे भी कई उपपुराण हैं।

पुराण और उपपुराणका लक्षण श्रीमद्भागवतमें इस प्रकार लिखा है—

"सर्गोऽस्याथ विसर्गश्च वृत्तिरक्षान्तराणि च।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः॥
दशभिर्लक्षणैर्युक्तं पुराणं तद्विदो विदुः।
केचित् पञ्चविधं ब्रह्मन् महदल्पव्यवस्थया॥
अव्याकृतगुणक्षोभान्महतस्त्रिवृतोऽहमः।
भूतसूक्ष्मेन्द्रियार्थानां सम्भवः सर्ग उच्यते॥
पुरुषानुगृहीतानामेतेषां वासनामयः।
विसर्गोऽयं समाहारो बीजाद्बीजं चराचरम्॥
वृत्तिर्भूतानि भूतानां चराणामचराणि च।
कृता स्वेन नृणां तत्र कामाच्चोदनयापि वा॥
रक्षाच्युतावतारेहा विश्वस्यानु युगे युगे।
तिर्यङ्मर्त्यर्षिदेवेषु हन्यन्ते यैस्त्रयीद्विषः॥
मन्वन्तरं मनुर्देवा मनुपुत्राः सुरेश्वराः।
ऋषयोंऽशावताराश्च हरेः षड्विधमुच्यते॥
राज्ञां ब्रह्मप्रसूतानां वंशस्त्रैकालिकोऽन्वयः।
वंशानुचरितं तेषां वृत्तं वंशधराश्च ये॥
नैमित्तिकः प्राकृतिको नित्य आत्यन्तिको लयः।
संस्थेति कविभिः प्रोक्तश्चतुर्धास्य स्वभावतः॥
हेतुर्जीवोऽस्य सर्गादेरविद्याकर्मकारकः।
यं चानुशायिनं प्राहुरव्याकृतमुतापरे॥
व्यतिरेकान्वयो यस्य जाग्रत्स्वप्नसुषुप्तिषु।
मायामयेषु तद्ब्रह्म जीववृत्तिष्वपाश्रयः॥
पदार्थेषु यथा द्रव्यं सन्मात्रं रूपनामसु।
बीजादिपञ्चतान्तासु ह्यवस्थासु युतायुतम्॥"

(१२ स्क० ७ अ० ९—१० श्लो०)

१ सर्ग, २ विसर्ग, ३ वृत्ति, ४ रक्षा, ५ अन्तर, ६ वंश, ७ वंशानुचरित, ८ संस्था, ९ हेतु और १० अपाश्रय लक्षणाक्रान्त पुराण होता है। अधिक और अल्प व्यवस्थाके अनुसार कोई कोई पुराणविद् पञ्च लक्षणयुक्त ग्रन्थको भी पुराण कहते हैं।

१म सर्ग—प्रकृतिके गुणत्रयसे महान्, उससे त्रिगुणात्मक अहङ्कार और अहङ्कारसे सूक्ष्म इन्द्रियसमूह, स्थूल पदार्थसकल एवं तत्तत् अधिष्ठात्री देवताकी उत्पत्ति होनेका नाम सर्ग है।

२य विसर्ग—जीवके पूर्व कर्म-सम्बन्धीय वासनाजात तथा ईश्वरानुगृहीत महत्तत्त्व वीजसे बीजोत्पत्तिकी तरह समाहार-रूप चराचरकी उत्पत्ति होनेको विसर्ग वा अवान्तर सृष्टि कहते हैं।

३य वृत्ति—इस संसारमें चराचर प्राणिसमूहकी वासनाके हेतु एवं मनुष्यादिके स्वभाव, काम वा विधिके अर्थ क्रिया जानेवाला जीवनोपाय वृत्ति वा स्थिति है।

४र्थ रक्षा—युग-युगमें वेदके विद्वेषी दैत्योंसे देव,

तिर्यक्, मनुष्य और ऋषिगणके कार्यनामका उपक्रम लगने पर नारायणके विशेष विशेष अवतारका होना रक्षा कहलाता है।

६म अन्तर—मनु, देवतासकल, मनुपुत्रगण, सुरेश्वरगण, ऋषिगण और नारायणके अंशावतार जिसमें अपने अधिकारपर वर्तमान रहते हैं, उसीको छः प्रकारका अन्तर या मन्वन्तर कहते हैं।

७म वंश—ब्रह्मासे उत्पन्न शुद्धवंशीय राजाओंके भूत, भविष्यत् और वर्तमान तीनो कालोंकी पुरुषपरम्पराके वर्णनका नाम वंश है।

८म वंशानुचरित—उक्त सकल राजाओं और उनके वंशधरोंके चरित्रका वर्णन वंशानुचरित कहलाता है।

९म संस्था—स्वभावसे या ईश्वरकी मायासे विश्वमें पड़नेवाला नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित्य और आत्यन्तिक चार प्रकारका विकार ही संस्था या लय है।

१०म हेतु—अज्ञानवशतः कर्मकारी जीव इस विश्वकी सृष्टि आदिका हेतु है। वही अनुशयी रहता है, इसे कोई कोई अव्याकृत भी कहते हैं।

११ अपाश्रय—जाग्रत्, स्वप्न, सुषुप्ति तीनो अवस्था और जीव-रूपसे वर्तमान रहनेवाले, मायामय एवं सकलके साक्षिस्वरूप और समाधि प्रभृतिसे सम्बन्ध भाव रखनेवाले ब्रह्मका नाम अपाश्रय है। घटादि पदार्थ-समूहमें मृत्तिकादि द्रव्य एवं रूप और सामान्यादिमें सत्तामात्रकी तरह जो गर्भाधानसे मृत्युपर्यन्त सकल अवस्थापर युक्त तथा अयुक्त रहता है, उसे ही पुराणविद् अपाश्रय कहते हैं।

उक्त लक्षण पुराणका ही लक्षण बताया गया है। किन्तु परवर्ती श्लोकमें 'प्राहुः क्षुल्लकानि महान्ति च' वचनसे वह उपपुराणका भी लक्षण जैसा समझ पड़ता है। विशेषतः पुराण पञ्चलक्षणात्मक ही सकल पुराणोंमें प्रसिद्ध है। पुराण देखो।

उपपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) उपगता पुष्पिकाम्, संज्ञायां कन्-टाप् अत इत्वम्। जृम्भा, जमहाई।

उपपौर्णमास (सं॰ अव्य॰) पूर्णिमाको, पूरनमासीके दिन।

उपपौर्णमासी, उपपौर्णमास देखो।

उपप्रदर्शन (सं॰ क्ली॰) सूचना, निर्देश, इशारा, दिखाव।

उपप्रदान (सं॰ क्ली॰) उप-प्र-दा-ल्युट्। १ उत्कोच, रिशवत। २ सन्धिके निमित्त भूमि आदिका दान, सुलहके लिये ज़मीन् वग़ैरहकी बख़शिश।

"दाम चोपप्रदानञ्च भेदो दण्डश्च तत्तथा।" (रामायण)

३ द्रव्यदान, दौलतकी बख़शिश। ४ दानकार्य, देनेकी बात।

उपप्रलोभन (सं॰ क्ली॰) उप-प्र-लुभ-णिच्-ल्युट्। १ सम्यक् प्रलोभन, खासा लालच। कर्मणि ल्युट्। २ सम्यक् प्रलोभन-योग्य द्रव्य, जो चीज़ देखनेसे ख़ूब लालच लगता हो।

"उपायश्चानुपप्रलोभनानि।" (दशकुमार॰)

उपप्लव (सं॰ पु॰) उप-प्लु-अप्। १ आकाशसे उल्कापातादिका उपद्रव, आसमान्से तारे वग़ैरह टूटनेकी बात। २ राहु ग्रह। ३ विप्लव, हङ्गामा। ४ भय, ख़ौफ। ५ अशुभ, बुराई। ६ विपत्ति, आफ़त। ७ राजविप्लव, शाही झगड़ा। ८ चन्द्रादि ग्रहण। ९ उपरिवेष्टन, लटकाव। १० औपसर्गिक नरक-पीड़न। ११ विकल्प। १२ प्रतिबन्ध। १३ शिव।

उपप्लविन् (सं॰ त्रि॰) उप-प्लु-णिनि। १ भययुक्त, ख़ौफ़ज़दा, डरा हुआ।

"भूया स्वोपप्लविनः परेभ्यः।" (रघु १।३०)

'उपप्लविनो भयवन्तः।' (मल्लिनाथ)

उपप्लव्य (सं॰ क्ली॰) उप-प्र आधारे बाहुलकात् यत्। विराटके देशकी राजधानी। (महाभारत, आदि, २।२१९, उद्योग १।१, भीष्म १।१४, मत्स्य ६२।२४)

उपप्लुत (सं॰ त्रि॰) उप-प्लु-क्त। १ उपद्रवयुक्त, गड़बड़में पड़ा हुआ।

"उपप्लुतं पातुमदो मदोद्धतैः।" (माघ)

२ राहुग्रस्त, राहुसे घिरा हुआ। ३ भीत, ख़ौफ़ज़दा। ४ पीड़ित, तकलीफ़ज़दा। ५ विपद्ग्रस्त, मुसीबत झेलनेवाला।

उपप्लुता (सं॰ स्त्री॰) योनिरोग, रेहमका फ़ासिद ख़ुराक। गर्भिणीके श्लेष्मप्रकृतिके अभ्याससे और छर्दि एवं श्वास विनिग्रहसे वायु क्रुद्ध होकर कफको योनिमें

ला बिगाड़ देता है। फिर पाण्डु, तीव्रवेदना, या श्वेत कफ टपकता है। योनिकी उपप्लुता कफ, वात और आमयसे व्याप्त रहती है। (चरक)

उपवद्ध (सं० त्रि०) संलग्न, लगा हुआ।

उपबन्ध (सं० पु०) उप-बन्ध-घञ्। १ वस्त्वन्तर बन्धन, दूसरी चीज़की गिरफ्त। २ पद्मासन। ३ सांख्य विशेषके द्वारा सम्बन्धका प्रतिपादन।

उपबर्ह (सं० पु०) उपवर्ह्यते आस्तीर्यते, उप-वर्ह कर्मणि घञ् न वृद्धिः। १ उपधान, तकिया। वर्ह हिंसायां भावे घञ् न वृद्धिः। २ उपपीड़न, छेड़छाड़।

उपबर्हण (सं० क्ली०) उपवर्ह्यते कर्मणि ल्युट्। उपबर्ह देखो।

उपबहु (सं० त्रि०) कुछ, थोड़े।

उपबाधा (सं० स्त्री०) उप-बाध-अ-टाप्। सम्पीड़न, खूब तकलीफ़ देनेकी बात।

उपबाहु (सं० पु०) उपगतो बाहुम्। १ बाहु समीपवर्ती अङ्गका भेद। पञ्जेसे कोहनीतक हाथका हिस्सा उपबाहु कहलाता है। (अव्य०) २ बाहुके निकट, बाज़ूके पास।

उपबृंहिन् (सं० त्रि०) अतिरिक्त, ज़ायद।

उपब्द (वै० पु०) उपगतः शब्दः, प्रादि समा०। अभिषव शब्द। "पाषाणो मन्यु रथस्य उपब्दैः।" (ऋक् ७।१०४।१७) 'उपब्दैः अभिषवशब्दैः' (सायण)

उपब्दि (वै० पु०) १ वाक्, शब्द। (निघण्टु) २ गवयाई। "मरुतां मन्न आयतामुपब्दिः।" (ऋक् १।१६९।७) 'उपब्दिः शब्दाः।' (सायण)

उपब्दिमत् (सं० त्रि०) शब्दयुक्त, पुरशोर।

उपभङ्ग (सं० पु०) उप-भन्ज-घञ् कुत्वम्। पृष्ठप्रदर्शन, लड़ाईसे भागाभागी।

उपभाषा (सं० स्त्री०) गौण भाषा, दूसरे दरजेकी ज़बान्।

उपभुक्त (सं० त्रि०) उप-भुज-क्त। १ व्यवहृत, इस्तेमाल किया हुआ। २ भक्षित, खाया हुआ।

उपभुक्तधन (सं० त्रि०) अपने धनका उपभोग करनेवाला, जो अपनी दौलतसे काम लेता हो।

उपभुक्ति (सं० स्त्री०) उप-भुज-क्तिन्। उपभोग, इस्तेमाल।

उपभुञ्जान (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो मज़ा ले रहा हो।

उपभृती (सं० स्त्री०) महानीली।

उपभूषण (सं० क्ली०) उपमितं भूषणेन। घण्टा चामरादि उपकरण, बाजे गाजे और चमर वग़ैरह साज़सामान्।

"घण्टाचामरकुम्भादिपात्रोपकरणादिकम्।
तदभूषणाख्यं दद्यात् यथाशक्त्युपभूषणम्॥" (कालिकापु० ६८ अ०)

उपभृत् (वै० स्त्री०) उप-भृ-क्विप्। १ काष्ठनिर्मित यज्ञपात्र। २ चक्राकार पात्र। यह वटकाष्ठसे निर्मित और यज्ञमें व्यवहृत होता है।

उपभोक्तव्य, उपभोग्य देखो।

उपभोक्तृ (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो मज़ा लेता हो।

उपभोग (सं० पु०) उप-भुज-घञ्। १ निर्वेश, मज़ेदारी। "विषयोपभोगविषयेषु येषां भाग्यमित्याचरम्।" (रघु १९।११) २ व्यवहार, इस्तेमाल। ३ भक्षण, खवाई।

उपभोगिन् (सं० त्रि०) उपभोग करता हुआ, जो मज़ा ले रहा हो।

उपभोग्य (सं० त्रि०) उप-भुज्-ण्यत् भग्नार्थत्वे कुत्वम्। १ उपभोगयोग्य, मज़ा लिये जाने लायक़। (क्ली०) २ उपभोगका द्रव्य, मज़ेकी चीज़।

उपभोजनीय, उपभोज्य देखो।

उपभोजिन् (सं० त्रि०) उपभोग करनेवाला, जो मज़ा लेता हो।

उपभोज्य (सं० त्रि०) भोजनमें व्यवहार किया जानेवाला, जो खानेमें लगता हो।

उपम (वै० त्रि०) उपमीयते, उप-मा-क। १ उपमेय, मिसाल दिये जानेके क़ाबिल। (ऋक् १।३१।१५) उप-मीयते समीपे क्षिप्यते, नि बाहुलकात् ड। २ अन्तिक, नज़दीक। (निघण्टु) "कतीदमासा इदमो निषीदति।" (ऋक् ८।१०।१) ३ अन्तिकस्थित, पास पड़नेवाला।

"उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम्।" (सर्वशिक्षा १।१)

(पु०) ४ आमलूका पेड़।

उपमद्गु (सं॰ पु॰) श्वफल्कके पुत्र और अक्रूरके कनिष्ठ भ्राता।

उपमन्त्रण (सं॰ क्ली॰) उप-मन्त्र-ल्युट्। भासनोपसम्भाषा-ज्ञानयत्नविमत्युपमन्त्रणेषु वदः। पा १।३।४७) 'उपमन्त्रणं रहस्युपच्छन्दनम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) १ आमन्त्रण, तरगीबदिही, न्योता। २ प्रार्थनापूर्वक प्रवर्तनारूप व्यापार, खुशामद।

उपमन्त्रिन् (सं॰ त्रि॰) उप-मन्त्र-णिनि। १ आमन्त्रण देनेवाला, ओतरगीब देता हो। "त्वमग्नेह्युपमन्त्रिणः।" (ऋक् ५।११।४) 'उपमन्त्रिणः उपमन्त्रयतारो मनोहविषो हृदयानुपच्छन्दयमानाः समर्थितवन्ति।' (सायण) २ सहायक-मन्त्री, छोटा वजीर।

उपमन्थनी (सं॰ स्त्री॰) उपमथ्यतेऽनया, उप-मन्थ करणे ल्युट् ङीप्। अग्निमन्थनके साधनका द्रव्य। (शतपथब्रा॰ १४।२।१।११)

उपमन्थित (सं॰ त्रि॰) अग्निमन्थन करनेवाला।

उपमन्यु (सं॰ पु॰) आयोदधौम्य मुनिके एक जन शिष्य। ये अति गुरुभक्त रहे। गुरुके आदेशसे उपमन्यु गोचारण करते थे। भिक्षाके अन्नसे जीविकाका निर्वाह होता था। प्रतिदिन सायाह्नको गोष्ठसे लौट गुरुके निकट यह खड़े रहते थे। किसी दिन आयोद-धौम्यने इन्हें स्थूलकाय होनेसे पूछा—'उपमन्यु! तुम बहुत हृष्टपुष्ट देख पड़ते हो। तुम्हारी खुराक क्या है?' उपमन्युने गुरुसे अपनी भिक्षावृत्तिकी बात बता दी। तब आयोदधौम्यने कहा—देखो! हमसे न बता भिक्षायोग्य द्रव्यादि उपभोग करना तुम्हें उचित नहीं। तदवधि यह जो भिक्षा मांग लाते, उसे ही गुरुपर चढ़ा जाते। फिर भी शरीर कुछ घटते न देख आयोदधौम्यने इन्हें बिलकुल आहार न देनेका उपाय किया था। एक दिन गोचारणके समय उपमन्यु क्षुधासे अत्यन्त कातर हुये। अपर कुछ न मिलनेसे इन्होंने अर्कपत्र खाया था। उस पत्रके गुणसे उपमन्यु अन्ध हो गये और इतस्ततः घूमते-घूमते एक कूपमें जा पड़े। इधर आयोदधौम्य इनको न देख नानास्थानोंमें ढूंढते-ढूंढते उसी कूपके निकट पहुंच पुकारने लगे। कूपके मध्यसे उपमन्युने अपनी अवस्था गुरुदेवको बता दी। आयोदधौम्यने इनसे अश्विनीकुमार-द्वयका स्तव करनेको कहा। उपमन्युने वही किया था। अश्विनी-कुमार-युगल इनके स्तवसे तुष्ट हो निकल पड़े। उन्होंने उपमन्युको एक पिष्टक दे खा जानेके लिये कहा। किन्तु गुरुभक्त उपमन्यु गुरुको निवेदन न कर कुछ भी खानेपर सम्मत न हुये। गुरुभक्तिसे सन्तुष्ट हो अश्विनीकुमारने इन्हें चक्षुरत्न और वर दिया था—सकल वेद और सकल धर्मशास्त्र सकल समय तुम्हारी स्मृतिके पथपर चढ़ रहेंगे। (महाभारत, आदि ३ अ॰)

उपमर्द (सं॰ पु॰) उप-मृद-घञ्। १ आलोड़न, दलामली। २ हिंसन, मारकाट। ३ निर्मोड़न, निचोड़ानिचोड़ी। ४ धान्यादिकार निष्फलीकरण, अनाजकी मंड़ाई।

उपमर्दक (सं॰ त्रि॰) उप-मृद कर्तरि ण्वुल्। उपमर्दकारी, मांड़नेवाला।

उपमश्रवस् (वै॰ त्रि॰) १ अत्युच्च प्रशंसायुक्त, निहायत ऊंची शोहरतवाला। (पु॰) २ मित्रातिथिके एक पौत्र और कुरुश्रवणके पुत्र। (ऋक् १०।३३।७)

उपमा (सं॰ स्त्री॰) उपमीयते, उप-मा-अङ्-टाप्। १ तुल्यता, बराबरी। २ अर्थालङ्कारका एक भेद, मिसाल। इसमें साधारण धर्म विशिष्ट भिन्न-जातीय दो वस्तुकी तुलना देखायी जाती है। यथा—

"उपमा यत्र सादृश्यलक्ष्मीरुल्लसति द्वयोः।
हंसीव कृष्ण ते कीर्तिः स्वर्गङ्गामवगाहते॥" (साहित्यद॰)

राजाकी कीर्ति हंसीकी तरह स्वर्गनदीका अव-गाहन करती है। इस स्थलपर हंसीकी उपमासे राजकीर्ति वर्णित है।

उपमाके चार अङ्ग होते हैं,—उपमान, उपमेय, सामान्य धर्म और उपमासूचक शब्द। जिसमें चारों अङ्ग रहते हैं, उसे पूर्ण और एक, दो या तीनके अभावमें लुप्त उपमा कहते हैं।

उपमाक—मन्द्राज प्रान्तके विशाखपत्तन जिलेकी सर्व-सिद्धि तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा॰ १७° २६' उ॰ और द्राघि॰ ८२° ४८' पू॰ पर अवस्थित है। यहां एक अति प्राचीन देवमन्दिर बना है। उसमें वेङ्क-टेशकी आकाशमूर्ति है। इसीसे किसीको उसका दर्शन नहीं मिलता। फाल्गुन मासमें देवताके विवाहोप-

लक्षमें महोत्सव होता है। कितने ही लोग यहां विवाह करने आते हैं। प्रवाद है—उपमाकमें विवाह करनेसे स्त्री पतिव्रता और सौभाग्यशालिनी होती है।

उपमाता, उपमाढ़ देखो।

उपमाति (सं० स्त्री०) १ आमन्त्रण, पुकार। २ उपमा, मुशाबहत। (सायण) (पु०) ३ मित्रवत् आगमन, दोस्तकी तरह आनेकी बात। ४ अनुग्रहीतावस्था, एहसानमन्दी। ५ अग्नि। ६ धन प्रदान, दौलत देनेका काम। (सायण)

उपमातिवनि (सं० त्रि०) १ मित्रवत् प्रार्थना सुननेवाला, जो दोस्तकी तरह पुकार पर कान लगाता हो। २ शत्रुनाशक, दुश्मनको बरबाद करनेवाला। (सायण)

उपमाढ़ (सं० स्त्री०) उपमिता माता। १ धात्री, दाई। २ माढ़तुल्या स्त्री, माकी बराबर दूसरी औरत, जैसे—मौसी, चाची इत्यादि। (पु०) ३ चित्रकार, मुसव्वर, तस्वीर बनानेवाला शख्स। (त्रि०) उप-मा-तृच्। उपमा देनेवाला, जो मुशाबहत लगाता हो।

उपमाद (वै० त्रि०) उपमादयति, उप-मा भावे ल्युट्। उपमादक, हर्षजनक।

"उपमादमुपमादकं वचनम्।" (ऋग्भाष्ये सायण ३।५।५)

उपमाद्रव्य (सं० क्ली०) उपमामें व्यवहृत होनेवाला वस्तु, जो चीज मुशाबहतमें काम आती हो।

उपमान (सं० क्ली०) उप-मीयतेऽनेन, उप-मा भावे ल्युट्। १ प्रमाणविशेष, एक सबूत। २ साढृश्य, बराबरी। उप-मा करणे लुाट्। यह तीन प्रकारका होता है—साढृश्यविशिष्ट, असाधारण धर्मविशिष्ट और वैधर्मविशिष्ट पिण्डज्ञान। (सिद्धान्तचन्द्रोदय) ३ साढृश्यके ज्ञानका साधन, बराबरीको समझनेका सामान्। जिसके साथ उपमा देते हैं, उसे उपमान कहते हैं।

उपमानोपमेयभाव (सं० पु०) उपमान और उपमेयका सम्बन्ध, जो ताल्लुक मुशाबहतकी छोटी और बड़ी चीजमें हो।

उपमारण (वै० क्ली०) उप-मृ-णिच्-लुाट्। यज्ञमें अवभृथोदक, निकटसे जलमें मज्जनका निषेध।

(शतपथब्रा० २।३।५।४८)

उपमारूपक (सं० क्ली०) उपमा अलङ्कारका उपचार, मुशाबहतकी सूरत।

उपमालिनी (सं० स्त्री०) अति-शक्करी छन्दका एक भेद।

उपमास्य (वै० क्ली०) उपमासं प्रतिमासभवं यत्। पितृवर्गकी तृप्तिके लिये प्रतिमास करणीय श्राद्ध। (अथर्ववेद ८।१०।१८)

उपमित् (वै० त्रि०) उप समीपं मीयते क्षिप्यते, उप-मि-क्विप्। १ उपनिखात। २ उपस्थापयिता। ३ उपमाकारी। (स्त्री०) ४ स्थूणा।

'उपमित् स्थूणा।' (ऋग्भाष्ये सायण ३।५।१)

उपमित (सं० त्रि०) उप-मा-क्त। सदृश, बराबर, जो मिलाया गया हो।

उपमिति (सं० स्त्री०) उप-मा-क्तिन्। १ उपमालङ्कार, मुशाबहत। २ नैयायिकके मतसे—अनुभवसिद्ध जातिविशेष। (नीलकण्ठी) संज्ञा एवं संज्ञीके सम्बन्धका ज्ञान। (तर्कसंग्रह) साढृश्यके ज्ञानकरणका ज्ञान। (भाषापरी)

उपमीमांसा (सं० स्त्री०) अन्वेषण, खोज।

उपमूल (सं० अव्य०) मूलपर, जड़में।

उपमेत (सं० पु०) उपमां इतः। शालवृक्ष, साखूका पेड़।

उपमेय (सं० त्रि०) १ उपमीयतेऽसौ, उप-मा-यत्। साढृश्य-योग्य, मुशाबहतके काबिल, जो किसीसे मिलाया जा सकता हो। "नरेन्दुना तदमयोपमेयम्।" (रघु०) (क्ली०) २ उपमाका विषय, मुशाबहतकी चीज़। जब दो वस्तुमें उपमा लगाते हैं, तब बड़ेको उपमान और छोटेको उपमेय कहते हैं। जैसे—'भूपतिकी कीर्ति हंसीकी तरह स्वर्गनदीका अवगाहन करती है' इस वाक्यमें हंसी उपमान और कीर्ति उपमेय है।

उपमेयोपमा (सं० स्त्री०) अर्थालङ्कार विशेष। इसमें उपमानको उपमेय और उपमेयको उपमानसे उपमा दी जाती है।

उपयज् (वै० स्त्री०) उप-यज् उपपदे छन्दसि विच्। विभुपे च्छन्दसि। पा ३।२।७१। अनुयागाङ्ग यज्ञविशेष।

(शतपथब्रा० १।८।२।४)

उपयन्ता, उपयन्तृ देखो।

उपयन्तृ (सं॰ पु॰) उप-यम-तृच्। १ पति, खाविन्द। (त्रि॰) २ संयमनकर्ता, अपनेपर काबू रखनेवाला।

उपयन्त्र (सं॰ क्ली॰) उपगतं यन्त्रम्। शल्योद्धरणार्थ यन्त्रविशेष, जिससे चुभे कांटे वगैरहके निकालनेका एक औज़ार। यह २५ प्रकार होता है—१ रज्जु, २ वेणिका, ३ पट्ट, ४ चर्म, ५ अन्तर्वल्कल, ६ लता, ७ वस्त्र, ८ अष्ठीला, ९ अश्म, १० मुद्गर, ११ पाणि, १२ पादतल, १३ अङ्गुलि, १४ जिह्वा, १५ दन्त, १६ नख, १७ मुख, १८ केश, १९ अश्वकण्टक, २० शाखा, २१ ष्ठीवन, २२ प्रवाहणहर्ष, २३ अयस्कान्त, २४ क्षार और २५ अग्नि। देह, देहके प्रत्यङ्ग, सन्धिस्थान, कोष्ठ और धमनीमें जहां जिसका प्रयोजन पड़े, वहां उसीको व्यवहार करे। (सुश्रुत सूत्रस्थान ७ अ॰)

उपयम (सं॰ पु॰) उप-यम-अप्। यमः समुपनिविषु च। पा ३।३।६३। विवाह, शादी, मंगनी। विवाह देखो।

उपयमन (सं॰ क्ली॰) उप-यम-ल्युट्। निपं हनो पाण्युपयमने। पा ३।३।७७। १ विवाह, शादी। २ संयमन, रोक। ३ अग्निका अधःस्थापन। करणे ल्युट्। ४ बन्धनसाधक कुशादि।

उपयमनी (सं॰ स्त्री॰) उपयम्यते, कर्मणि ल्युट्-ङीप्। १ अग्न्याधानाङ्ग सिकतादि, जलानेकी लकड़ी रखनेका पत्थर, मट्टी, कङ्कड़ वगैरहको टेक। "उपयमनी रुपनिवपति। (ऐतरेयब्रा॰ १।२२) २ संयमनी, अपनेपर काबू रखनेवाली औरत।

उपयष्टृ (वै॰ पु॰) उप-यज-तृच्। षोडश प्रकारके मध्य प्रतिप्रस्थाता नामक ऋत्विग् विशेष।

(शतपथब्रा॰ १।५।१।१)

उपयाचक (सं॰ त्रि॰) उप-याच्-ण्वुल्। स्वयं याचक, नज़दीक जाकर मांगनेवाला।

उपयाचन (सं॰ क्ली॰) उप-याच्-ल्युट्। देवतादिके निकट अभीष्टादिकी प्रार्थना, किसीके पास पहुंचकर अपनी मुरादकी दरख्वास्त।

उपयाचिका (सं॰ स्त्री॰) परपुरुषके निकट पहुंच सम्भोगकी प्रार्थना करनेवाली स्त्री, जो औरत दूसरे मर्दसे सहवासके लिये दरख्वास्त करती हो।

उपयाचित (सं॰ त्रि॰) उपयाच्यतेऽनेन, उप-याच्-क्त। १ प्रार्थित, मांगा हुआ। २ समर्पित, दिया हुआ। (क्ली॰) ३ प्रार्थना, अर्ज़।

उपयाचितक (सं॰ त्रि॰) उप-याचित-कन्। १ अभीष्टकी सिद्धिके लिये देवतादिको देय। २ प्रार्थित, मांगा हुआ। (क्ली॰) ३ देवदेय वस्तु, देवता पर चढ़ायी जानेवाली चीज़।

उपयाज (सं॰ पु॰) उप-यज-घञ्, यज्ञाङ्गत्वात् न कुत्वम्। १ यज्ञाङ्ग यागविशेष। यह ११ प्रकारका होता है। "एकादश प्रयाजा एकादशानुयाजा, एकादशोपयाजाः पृषैद सोमपाः पशुभाजनाः।" (ऐतरेयब्रा॰ २।१८) २ काश्यपगोत्रके ऋषिविशेष। इनके ज्येष्ठभ्राताका नाम याज था। (भारत आदि १६६ अ॰)

उपयात (सं॰ त्रि॰) उप-या कर्तरि क्त। १ आचार्यके समीप आगत, आया हुआ।

"उपयातामाप्यं सिति सौहमोवा।" (कौमिम)

२ प्राप्त, पहुंचा हुआ।

उपयान (सं॰ क्ली॰) उप-या-ल्युट्। निकटमें गमन, पास जवाई। "उपयानान्तरे च स्यात् दक्षपद्यदम्।" (रामायण)

उपयाम (वै॰ पु॰) उप-यम विवाहे घञ्। यमः समुपनिविषु च। पा ३।३।६३। १ विवाह, शादी। उप-यम-णिच्-अच्। २ यज्ञाङ्गपात्रविशेष, आश्रय, डोई। (यजुः ७।४) ३ यज्ञाङ्गके पात्रविशेष द्वारा ग्रहण। ४ वेदमन्त्रविशेष। यह यज्ञाङ्गके पात्र विशेष द्वारा सोमरस निकालते समय पढ़ा जाता है।

उपयिचारिक (सं॰ पु॰) विहारके रक्षणार्थ नियुक्त पुरुष।

उपयुक्त (सं॰ त्रि॰) उप-युज-क्त। १ योग्य, वाजिब। २ भुक्त, लिया हुआ, जो खाया गया हो। ३ रचित, बनाया हुआ।

उपयुक्तता (सं॰ स्त्री॰) योग्यता, मुनासिबत।

उपयुञ्जान (सं॰ त्रि॰) उपयुक्त करता हुआ, जो ठीक-ठाक लगा रहा हो।

उपयुयुत्सु (सं॰ त्रि॰) नियुक्त करनेवाला, जो लगानेके करीब हो।

उपयोक्तव्य (सं॰ त्रि॰) नियुक्त किये जानेके योग्य, जो लगाया जा सकता हो।

उपयोग (सं॰ पु॰) उप युज्यते, युज्-घञ्। १ आव-

रण, चालचलन। २ भोजन, खवाई। "पयोगते मरमकन-मल्लवदुपयोगः।" (सुश्रुत) ३ साहाय्य, मददका काम। "धनाङ्गबीजक्रियशोपयोगम्।" (कुमार) ४ इष्टसिद्धिके लिये धर्मकार्य। ५ आवश्यकता, जरूरत। ६ भोग, इस्तेमाल। ७ औषधक्रिया, दवाका काम। ८ औषध-सेवन, दवाका इस्तेमाल।

उपयोगवाद (सं० पु०) सिद्धान्त विशेष, एक मकूला। उपयोगवादियोंके कथनानुसार मनुष्य ऐसा कोई कार्य न करे, जिससे किसी जीवको दुःख हो।

उपयोगिता (सं० स्त्री०) उपयोगिन्-तल्। १ आवश्यकता, जरूरत। २ कार्यकारिता, काबिलियत। ३ साहाय्य, मदद। ४ उपयुक्तता, मुनासबत।

उपयोगिन् (सं० त्रि०) उप-युज-घिणुन्। युजभोजेति-षत्यजरजभजातिचरापचरामुषाभ्योऽजय। पा ३।२।१४२। १ उपयुक्त, मुवाफिक। २ उपकारी, फायदेमन्द। ३ अनुकूल, मिला हुआ। ४ योग्य, ठीक। ५ कार्यकारक, कारामद।

उपयोजन (सं० क्ली०) १ अश्वसज्जीकरण, घोड़ा जोतनेका काम। २ जोत, जोड़ी।

उपयोज्य (सं० त्रि०) उपयोगमें लाने योग्य, जो काम आ सकता हो।

उपयोष (सं० अव्य०) आनन्द। खुशो खुशी।

उपर (वै० त्रि०) अप-अरण। १ स्थापित; रखा हुआ। "उपहरे यदुपरा अपिन्वन्।" (ऋक् १।६२।५) 'उपरा उपताः स्थापिताः।' (सायण) २ उपरत, बन्द। 'उपरा उपरताः।' (ऋग्भाष्ये सायण ३।२८।५) ३ उपरि कालोत्पन्न, पिछले वक्त पैदा हुआ। 'उपरासः यजमान जन्मन उपयुक्ताः।' (सायण) (पु०) ४ निम्नप्रस्तर, नीचेका पत्थर। इसपर सोमको रख कर दूसरे पत्थरसे पीसते हैं। ५ यज्ञके स्थानका निम्न भाग। ६ मेघ, बादल।

उपरक्त (सं० पु०) उप-रन्ज-क्त। १ राहु, पुच्छल तारा। २ राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य, पुच्छल तारेसे दबा हुआ चांद या आफताब। (त्रि०) ३ व्यसनासक्त, बुरी आदतमें पड़ा हुआ। ४ रञ्जित, रंगा हुआ। ५ पीड़ा-युक्त, तकलीफ़जदा।

उपरक्षक (सं० त्रि०) उप-रक्ष-ण्वुल्। सैन्यके समोपका रक्षक, फौजके पास पहरा देनेवाला।

उपरक्षण (सं० क्ली०) उप-रक्ष-ल्युट्। १ रक्षार्थ सैन्य स्थापन, रखवालीके लिये फौजका कयाम। २ रक्षाकरण, रखवाली। ३ चौकी, पहरा देनेवाले सिपाहियोंके रहनेकी जगह।

उपरचित (सं० त्रि०) निर्मित, बनाया हुआ, जो तैयार कर लिया गया हो।

उपरञ्जक (सं० त्रि०) उप-रञ्ज-ण्वुल्। उपराग कारक, रंग चढ़ा देनेवाला।

उपरञ्जन (सं० क्ली०) उपरागकरण, रंगसाजी।

उपरञ्जनीय, उपरज्य देखो।

उपरञ्ज्य (सं० त्रि०) उपराग योग्य, रंग चढ़ाने लायक।

उपरत (त्रि) उप-रम-क्त। १ हटा हुआ, निकला हुआ। २ निवृत्त, छुटकारा पाये हुआ। ३ मृत, गया-गुजरा।

"पितर्युपरते पुत्रा विभजेयुर्धनं पितुः।" (दायभाग)

४ उपरतियुक्त, मुहब्बतसे अलग रहनेवाला।

उपरतरास (सं० त्रि०) नृत्य तथा क्रीडासे निवृत्त, जो नाचकूद बन्द कर रहा हो।

उपरतविषयाभिलाष (सं० त्रि०) सांसारिक सुखोंकी इच्छासे निवृत्त, जो दुनियावी आराम चाहता न हो।

उपरतस्पृह (सं० त्रि०) इच्छाशून्य, लालच छोड़े हुआ।

उपरतात् (सं० अव्य०) मण्डलके मध्य, घेरेमें।

उपरताति (वै० स्त्री०) उपरततायै कर्मणि क्तिन्, वेदे तस्य रः। १ युद्ध। 'उपरैश्मभिः पाषाणैः, अश्वेण्टते विस्तीर्यते उपरताति युद्धम्।' (सायण) २ मेघकरत्व द्वारा आच्छाद्य अन्तरीक्ष। "वर्तनि सा उपरताति।" (ऋक् १०।११।४)

उपरतारि (सं० त्रि०) शत्रुशून्य, सबसे दोस्ती रखनेवाला।

उपरति (सं० स्त्री०) उप-रम-क्तिन्। १ विरति, बन्दी। २ वासनात्याग, आराम छोड़नेका काम। ३ वैराग्य, दुनियासे मुहब्बत न रखनेकी बात। ४ मवराम।

"[illegible]" (सिद्धान्तमणि)

जो वृत्ति किसी प्रकार बहिर्विषयका अवलम्बन

नहीं रखती, वही उपरति है। ५ निवारण, हटा देनेका काम। ६ मुक्ति, मोक्ष। ७ मृत्यु, मौत।

उपरत्न (सं० क्ली०) उपमितं रत्नेन। गौणरत्न, दूसरे दरजेका जवाहिर।

"उपरत्नानि काचश्च कर्पूराश्मा तथैव च।
मुक्ता शुक्तिस्तथा शङ्ख इत्यादीनि बहून्यपि॥
गुणा यथैव रत्नानामुपरत्नेषु ते तथा।
किन्तु किञ्चित्ततो हीना विशेषोऽयमुदाहृतः॥" (भावप्रकाश)

काच, कपूर, प्रस्तर, मुक्ता, शुक्ति, शङ्ख इत्यादि उपरत्न हैं। उपरत्नमें रत्नकी तरह गुण होते भी वे कुछ कम रहते हैं। रत्न शब्द देखो।

उपरना (हिं० पु०) १ ऊपरी वस्त्र, दुपट्टा चद्दर। (क्रि०) २ उत्पाटित होना, उखड़ पड़ना।

उपरन्ध्र (सं० क्ली०) अश्वके उदरगह्वरका उपरि भाग, घोड़ेके पेटवाले गढ़ेका ऊपरी हिस्सा।

उपरफट (हिं० वि०) अनावश्यक, बेमतलब, जो कारामद न हो।

उपरफट्, उपरफट देखो।

उपरम (सं० पु०) उप-रम-घञ् निपातनात् न वृद्धिः। १ निवृत्ति, बन्दी। २ निवारण, परहेज़-गारी। ३ मृत्यु, मौत।

उपरमण (सं० क्ली०) १ वैराग्य, दुनयावी चीज़ोंसे तबीयत हट जानेकी बात। २ निवृत्ति। ३ बन्दी।

उपरव (सं० पु०) उप-रु आधारे अप्। गर्ता-कार प्रदेश, पाषाणका गढ़ा। यह सोमके अभिष-वका एक अङ्ग है। (कात्यायन० ८।४।१—११)

उपरवार (हिं० स्त्री०) उच्चभूमि, बांगर ज़मीन्।

उपरस (सं० पु०) उपमितो रसेन। गौणरस, उप-धातु, दूसरे दरजेकी कानी शै। राजनिघण्टुके मतमें पारद, अभ्रक, कङ्कुष्ठ, सिन्दूर, गैरिक, चिविल्ल और गन्धकको उपरस कहते हैं। भावप्रकाश कङ्कुष्ठ, गैरिक, शङ्ख, कासीस, सोहागा, नीलाञ्जन, शुक्ति और वराटकको उपरस बताता है। प्रत्येक शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उपरहित (हिं०) पुरोहित देखो।

उपरहिती (हिं० स्त्री०) पौरोहित्य देखो।

उपरांठा (हिं० पु०) परांठा, घी लगा, तवाऊपर सिर्फ सेंकनेपर सिकी हुई रोटी।

उपरा (हिं० पु०) हस्ताकार उत्पल, गोल गोल कण्डा।

उपराग (सं० पु०) उप-रञ्ज-घञ्। १ राहुग्रस्त चन्द्र। २ राहुग्रस्त सूर्य। ३ राहु। ४ विराग, छोटा राग। ५ दुर्णय, बदचलनी। ६ परीवाद, बद-नामी। ७ पंखलोम, सितारोंकी नज़र। ८ व्यसन, आदत। ९ सम्बन्ध, ताल्लुक्। १० निन्दा, हिक़ा-रत। ११ प्रवृत्ति, तरगीब। १२ गौणवर्ण, झाईं।

उपराचढ़ी (हिं० स्त्री०) अहमहमिका, चढ़ा-चढ़ी, ले-दे। जब कुछ मनुष्य कोई काम करने लगते और उनमें सबके सब उत्कर्ष पानेके लिये चाह रखते हैं, तब उस अवस्थाको उपराचढ़ी कहते हैं।

उपराज (सं० पु०) १ राजाके अधीनस्थ राजतुल्य माननीय व्यक्ति, राजप्रतिनिधि, नायब-उल्-सल्तनत, वायसराय। (अव्य०) २ राजाके निकट, बादशाहके पास। (वि०) ३ राजतुल्य, बादशाह जैसा।

उपराजना (हिं० क्रि०) १ उत्पन्न करना, जन-माना। २ निर्माण करना, बनाना। ३ उपार्जन करना, कमाना।

उपराना (हिं० क्रि०) १ उद्गमन करना, ऊपर चढ़ना। २ प्रकट होना, देख पड़ना। ३ मन्तरण करना, उतराना।

उपरान्त (सं० अव्य०) अनन्तर, बाद, पीछे।

उपराम (सं० पु०) उप-रम-घञ् वा वृद्धिः। १ उप-रति, परहेज़। २ मृत्यु, मौत। ३ विरति, छुट-कारा। ४ आराम। (अव्य०) ५ रामसमीप, रामके पास।

उपरामा (हिं० पु०) साहाय्य, मदद।

उपरापटा (हिं० वि०) अभिमानी, अकड़बाज़, घमण्डसे सर उठाये हुआ।

उपराहो (हिं० वि०) १ उपरिस्थ, ऊपरवाला। (क्रि० वि०) २ ऊपर।

उपरि (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-रिल् उपादेशश्च।
"ऊर्ध्वस्य उपरि रिल्रिष्टातिलौ च।" (पा ५।३।३१ सूत्रे वार्तिक)
१ ऊर्ध्व, ऊपर। २ अनन्तर, बाद।

उपरिचर (सं॰ पु॰) पुरुवंशके एक राजा। दूसरा नाम वसु भी है। ये सर्वदा मृगयासक्त रहते थे। इन्द्रके उपदेश-क्रमसे इन्होंने चेदि राज्यपर अधिकार किया। इन्द्रने इन्हें स्फटिकके बने विमान और वैजयन्तीकी मालाका उपहार दिया था।

उपरिचर इन्द्रध्वज पूजाके प्रवर्तक हैं। विमानपर चढ़ आकाशपथमें चलने और ऊपर घूमनेसे उपरिचर नाम पड़ा है। इनके महाबलपराक्रान्त १म बृहद्रथ अथवा महारथ, २य प्रत्यग्रह, ३य कुशाम्ब वा मणिवाहन, ४र्थ मावेल्ल और ५म यदु पांच पुत्र हुये थे। इनमें जो जिस देशमें अभिषिक्त हुआ, वह देश उसीके नामसे पुकारा गया।

उपरिचरकी राजधानीके निकट शुक्तिमती नदी बहती थी। इन्होंने कोलाहल नामक एक पर्वत तोड़ डाला। शुक्तिमती नदी पर्वतके उसी विदीर्ण पथसे निकली थी। उसी पर्वतमें एक पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। शुक्तिमतीने पुत्रकन्याको उठा राजाके हाथपर रखा था। पुत्र सेनानीके कार्यमें लगा। यथाकालपर गिरिकाला गिरिकाने ऋतुस्नाता और शुचि हो अपनी अवस्था राजासे कही। उसी दिन राजाको पितृलोकगणने मृगया करनेके लिये आदेश दिया। राजा उनकी आज्ञाके क्रमसे मृगयार्थ निकले, किन्तु अलोकसामान्या रूपलावण्यवती गिरिकाको भूल न सके और उसी रमणीय वसन्त कालपर वनमें घुसे। मृगयाकी बात मनसे उतर गयी थी। गिरिकाके विरहसे नितान्त अधीर हो राजा इतस्ततः घूमते-घूमते किसी तरुमूल पर जा बैठे। उसी स्थानमें इनका रेतस्खलन हुआ। राजाने यत्नपूर्वक अपना रेतः शोधनकर एक श्येनपक्षीको देते कहा—तुम इसे लेकर हमारी महिषीको सौंप आवो। श्येनपक्षी रेतः ले आकाशके पथसे उड़ा और उसी समय किसी अपर श्येनने चञ्चुस्थित रेतःको मांस समझ आक्रमण किया। उभयके विवादमें रेतः चञ्चुसे छूट यमुनाके जलमें गिर गया। मत्स्यरूपा अद्रिकाने वह रेतः खा लिया। दशमास बाद किसी धीवरने उसी मत्स्यीको पकड़ा था। मत्स्यीके उदरसे एक कन्या और एक पुत्र दो बच्चे निकले। मत्स्यजीवी यह अद्भुत व्यापार देख चमत्कृत हुये। उन्होंने कन्या और पुत्र दोनोंको उठा उपरिचरके सम्मुख ला रखा। राजाने उक्त कन्या और पुत्र दोनोंको ग्रहण किया था। पुत्रका मत्स्यराज और कन्याका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा। यह मत्स्यगन्धा व्यासदेवकी जननी थीं। (भारत आदि ६३ अ॰)

उपरिचित (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वपर संगृहीत, ऊपर जमा किया हुआ।

उपरिज (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वपर उत्पन्न होनेवाला, ऊंचा, जो ऊपर निकल गया हो।

उपरितन (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वस्थित, ऊपरवाला।

उपरिनिहित (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वः-स्थापित, ऊपर रखा हुआ।

उपरिपुरुष (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वपर पुरुषयुक्त, जिसके ऊपर मर्द रहे।

उपरिभृत् (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वसे आगमन करनेवाला, जो ऊपरसे आ रहा हो।

उपरिबुध्न (सं॰ त्रि॰) भूमिपर उठाया हुआ, जो जमीन् पर खड़ा किया गया हो।

उपरिभाग (सं॰ पु॰) ऊर्ध्व पार्श्व, ऊपरी हिस्सा।

उपरिभाव (सं॰ पु॰) ऊर्ध्व अवस्थान, ऊपर रहनेकी हालत।

उपरिभूमि (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ध्व भूमि, ऊपरी जमीन्।

उपरिमर्त्य (सं॰ पु॰) मानवके ऊर्ध्वपर स्थित, जो आदमीके ऊपर हो।

उपरिमेखला (सं॰ पु॰) गोत्रके प्रवर्तक एक ऋषि।

उपरिबृहती (सं॰ स्त्री॰) वैदिक बृहतीच्छन्दोविशेष। बृहती देखो।

उपरिशयन (सं॰ क्ली॰) विश्रामस्थान, आरामगाह।

उपरिश्रेणिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहनेवाला, जो ऊपरी कतारमें हो।

उपरिष्ट (सं॰ क्ली॰) पराठा, घी लगा लगाकर तवेपर सेंकी हुई रोटी।

उपरिष्टाज्ज्योतिष्मती (सं॰ स्त्री॰) वैदिक छन्दोवृत्तिका एक भेद। ज्योतिष्मती देखो।

नहीं रहती, वही उपरति है। ५ निवारण, छुटा देनेका काम। ६ तुष्टि, पक्ष। ७ मृत्यु, मौत।

उपरत्न (सं॰ क्ली॰) उपमितं रत्नेन। गौणरत्न, दूसरे दरजेका जवाहिर।

"उपरत्नानि काचश्च कर्पूराश्मा तथैव च।
मुक्ता शुक्तिस्तथा शङ्ख इत्यादीनि बहूनि च॥
गुणा यथैव रत्नानामुपरत्नेषु ते तथा।
किन्तु किञ्चित्ततो हीना विशेषोऽयमुदाहृतः॥" (भावप्रकाश)

काच, कपूर, प्रस्तर, मुक्ता, शुक्ति, शङ्ख इत्यादि उपरत्न हैं। उपरत्नमें रत्नकी तरह गुण होते भी वे कुछ कम रहते हैं। *काच शब्द देखो।*

उपरना (हिं॰ पु॰) १ ऊपरी वस्त्र, दुपट्टा चद्दर। (क्रि॰) २ उत्पाटित होना, उखड़ पड़ना।

उपरन्ध्र (सं॰ क्ली॰) अश्वके उदरगह्वरका उपरि भाग, घोड़ेके पेटवाले गड्ढेका ऊपरी हिस्सा।

उपरफट (हिं॰ वि॰) अनावश्यक, बेमतलब, जो कारामद न हो।

उपरफट्टू, *उपरफट देखो।*

उपरम (सं॰ पु॰) उप-रम-घञ्, निपातनात् न वृद्धिः। १ निवृत्ति, बन्दी। २ निवारण, परहेज़-गारी। ३ मृत्यु, मौत।

उपरमण (सं॰ क्ली॰) १ वैराग्य, दुनयावी चीज़ोंसे तबीयत हट जानेकी बात। २ निवृत्ति। ३ बन्दी।

उपरव (सं॰ पु॰) उप-रु आधारे घञ्। गर्ता-कार प्रदेश, पावाणका गड्ढा। यह सोमके अभिषवका एक अङ्ग है। (तन्त्रवार्त्ति॰ ३।१।११—१२)

उपरवार (हिं॰ स्त्री॰) उच्चभूमि, बांगर ज़मीन्।

उपरस (सं॰ पु॰) उपमितो रसेन। गौणरस, उप-धातु, दूसरे दरजेकी खानी चीज़। राजनिघण्टुके मतसे पारद, अभ्रक, गन्धक, सिन्दूर, गैरिक, शिलाजित और हिङ्गुलको उपरस कहते हैं। भावप्रकाश गन्धक, गैरिक, शङ्ख, कासीस, सोहागा, नीलाञ्जन, शुक्ति और वराटकको उपरस बताता है। *प्रत्येक शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।*

उपरहित (हिं॰) *पुरोहित देखो।*

उपरहिती (हिं॰ स्त्री॰) *पौरोहित्य देखो।*

उपरांठा (हिं॰ पु॰) पराठा, घी लगा लगाकर सिर्फ़ तवेपर सिकी हुई रोटी।

उपरा (हिं॰ पु॰) वृत्ताकार उत्पल, गोल गोल कण्डा।

उपराग (सं॰ पु॰) उप-रञ्ज-घञ्। १ राहुग्रस्त चन्द्र। २ राहुग्रस्त सूर्य। ३ राहु। ४ विराग, छोटा राग। ५ दुर्णय, बदचलनी। ६ परीवाद, बद-नामी। ७ ग्रहकल्लोल, सितारोंकी लहर। ८ व्यसन, आदत। ९ कल्मष, तावुत्। १० निन्दा, शिकाय-त। ११ प्रकृति, तबीयत। १२ गौणरूप, झाईं।

उपराचढ़ी (हिं॰ स्त्री॰) अहमहमिका, चढ़ाबढ़ी, लै-दे। जब कुछ मनुष्य कोई काम करने लगते और उनमें सबके सब उत्कर्ष पानेके लिये चाव रखते हैं, तब उस अवस्थाको उपराचढ़ी कहते हैं।

उपराज (सं॰ पु॰) १ राजाके अधीनस्थ राजतुल्य माननीय व्यक्ति, राजप्रतिनिधि, नायब-उस्-सलतनत, वायसराय। (अव्य॰) २ राजाके निकट, बादशाहके पास। (वि॰) ३ राजतुल्य, बादशाह जैसा।

उपराजना (हिं॰ क्रि॰) १ उत्पन्न करना, उप-जाना। २ निर्माण करना, बनाना। ३ उपार्जन करना, कमाना।

उपराना (हिं॰ क्रि॰) १ उद्गमन करना, ऊपर चढ़ना। २ प्रकट होना, देख पड़ना। ३ उत्पाटन करना, उखाड़ना।

उपरान्त (सं॰ अव्य॰) अनन्तर, बाद, पीछे।

उपराम (सं॰ पु॰) उप-रम-घञ् वा वृद्धिः। १ उप-रति, परहेज़। २ मृत्यु, मौत। ३ निवृत्ति, छुट-कारा। ४ भवराम। (अव्य॰) ५ रामसमीप, रामके पास।

उपराला (हिं॰ पु॰) साहाय्य, मदद।

उपरावटा (हिं॰ वि॰) अभिमानी, अकड़बाज़, घमण्डसे सर उठाये हुआ।

उपराहो (हिं॰ वि॰) १ उपरिस्थ, ऊपरवाला। (क्रि॰ वि॰) २ ऊपर।

उपरि (सं॰ अव्य॰) ऊर्ध्व-रिल् उपादेशश्च। "ऊर्ध्वस्य उपादेशो रिल्रिष्टातिलौ च" (पा ५।३।३१ सूत्रे वार्त्तिक) १ ऊर्ध्व, ऊपर। २ अनन्तर, बाद।

उपरिचर (सं० पु०) पुरुवंशके एक राजा। दूसरा नाम वसु भी है। वे सर्वदा मृगयासक्त रहते थे। इन्द्रके उपदेश-क्रमसे इन्होंने चेदि राज्यपर अधिकार किया। इन्द्रने इन्हें स्फटिकके बने विमान और वैजयन्तीको मालाका उपहार दिया था।

उपरिचर इन्द्रध्वज पूजाके प्रवर्तक हैं। विमानपर चढ़ आकाशपथमें चलने और ऊपर घूमनेसे उपरिचर नाम पड़ा है। इनके महाबलपराक्रान्त १म बृहद्रथ अथवा महारथ, २य प्रत्यग्रह, ३य कुशाम्ब वा मणिवाहन, ४र्थ मावेल्ल और ५म यदु पांच पुत्र हुये थे। इनमें जो जिस देशमें अभिषिक्त हुआ, वह देश उसीके नामसे पुकारा गया।

उपरिचरकी राजधानीके निकट शुक्तिमती नदी बहती थी। इन्होंने कोलाहल नामक एक पर्वत तोड़ डाला। शुक्तिमती नदी पर्वतके उसी विदीर्ण पथसे निकली थी। उसी पर्वतमें एक पुत्र और एक कन्याने जन्म लिया। शुक्तिमतीने पुत्रकन्याको उठा राजाके हाथपर रखा था। पुत्र सेनानीके कार्यमें लगा। यथाकालपर गिरिबाला गिरिकाने ऋतुस्नाता और शुचि हो अपनी अवस्था राजासे कही। उसी दिन राजाको पितृलोकगणने मृगया करनेके लिये आदेश दिया। राजा उनकी आज्ञाके क्रमसे मृगयार्थ निकले, किन्तु अलोकसामान्या रूपलावण्यवती गिरिकाको भूल न सके और उसी रमणीय वसन्त कालपर वनमें घुसे। मृगयाकी बात मनसे उतर गयी थी। गिरिकाके विरहसे नितान्त अधीर हो राजा इतस्ततः घूमते-घूमते किसी तरुमूल पर जा बैठे। उसी स्थानमें इनका रेतस्खलन हुआ। राजाने यत्नपूर्वक अपना रेतः शोधनकर एक श्येनपक्षीको देते कहा—तुम इसे लेकर हमारी महिषीको सौंप आवो। श्येनपक्षी रेतः ले आकाशके पथसे उड़ा और उसी समय किसी अपर श्येनने चञ्चुस्थित रेतःको मांस समझ आक्रमण किया। उभयके विवादमें रेतः चञ्चुसे छूट यमुनाके जलमें गिर गया। मत्स्यरूपा अद्रिकाने वह रेतः खा लिया। दशमास बाद किसी धीवरने उसी मत्स्योको पकड़ा था। मत्स्योके उदरसे एक कन्या और एक पुत्र दो बच्चे निकले। मत्स्यजीवी यह अद्भुत व्यापार देख चमत्कृत हुये। उन्होंने कन्या और पुत्र दोनोंको उठा उपरिचरके सम्मुख ला रखा। राजाने उस कन्या और पुत्र दोनोंको ग्रहण किया था। पुत्रका मत्स्यराज और कन्याका नाम मत्स्यगन्धा पड़ा। यह मत्स्यगन्धा व्यासदेवकी जननी थीं। (भारत आदि ६२ अ०)

उपरिचित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर संगृहीत, ऊपर जमा किया हुआ।

उपरिज (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर उत्पन्न होनेवाला, ऊंचा, जो ऊपर निकल गया हो।

उपरितन (सं० त्रि०) ऊर्ध्वस्थित, ऊपरवाला।

उपरिनिहित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वःस्थापित, ऊपर रखा हुआ।

उपरिपुरुष (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर पुरुषयुक्त, जिसके ऊपर मर्द रहे।

उपरिबुध्न (सं० त्रि०) ऊर्ध्वसे आगमन करनेवाला, जो ऊपरसे आ रहा हो।

उपरिबुध्न (सं० त्रि०) भूमिपर उठाया हुआ, जो जमीन् पर खड़ा किया गया हो।

उपरिभाग (सं० पु०) ऊर्ध्व पार्श्व, ऊपरी हिस्सा।

उपरिभाव (सं० पु०) ऊर्ध्व अवस्थान, ऊपर रहनेकी हालत।

उपरिभूमि (सं० स्त्री०) ऊर्ध्व भूमि, ऊपरी जमीन्।

उपरिमर्त्य (सं० पु०) मानवके ऊर्ध्वपर स्थित, जो आदमीके ऊपर हो।

उपरिमेखला (सं० पु०) गोत्रके प्रवर्तक एक ऋषि।

उपरिष्टाद्बृहती (सं० स्त्री०) वैदिक बृहतीछन्दोविशेष। बृहती देखो।

उपरिशयन (सं० क्ली०) विश्रामस्थान, आरामगाह।

उपरिश्रेणिक (सं० त्रि०) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहनेवाला, जो ऊपरी कतारमें हो।

उपरिष्ट (सं० क्ली०) परांठा, घी लगा लगाकर तवेपर सेंकी हुई रोटी।

उपरिष्टाज्ज्योतिष्मती (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोवृत्तिका एक भेद। ज्योतिष्मती देखो।

उपरिष्टाज्ज्योतिस् (सं० स्त्री०) त्रिष्टुभ् छन्दका एक भेद। इसके अन्तिम पादमें आठ अक्षर रहते हैं।

उपरिष्टात् (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-नि० रिष्टातिल्। "उपर्युपरिष्टात्।" पा ५।३।३१। १ उपरि, ऊपर। २ पश्चात्, पीछे।

उपरिष्टाद्बृहती (सं० स्त्री०) वैदिक छन्दोविशेष। इसमें चार पाद पड़ते, जिनमें प्रथममें बारह और अवशिष्ट तीनोंमें केवल आठ आठ अक्षर रहते हैं।

उपरिसद् (सं० त्रि०) उपरि सीदति, सद-क्विप्। १ ऊर्ध्वपर उपवेशन करनेवाला, जो ऊपर रहता हो। (पु०) २ राजसूययज्ञके एक सोमनेत्रक हुतयज्ञ नामक देवता। "ये देवा सोमनेत्रा उपरिसदो दुवस्वन्तस्तेभ्यः स्वाहा" (यजुः ९।३५)

उपरिसद्य (सं० क्ली०) उपरि-सद भावे बाहुलकात् यत्। ऊर्ध्वपर उपवेशन करनेका भाव, ऊंची बैठक। 'उपरिसद्य अन्तरिक्षसदनाख्यं उपवेशनम्।' (शतपथब्राह्मणभाष्ये हरिस्वामी ३।५।११)

उपरिस्थ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर रहनेवाला, ऊपरी, जो ऊपर ठहरता हो।

उपरिस्थापन (सं० क्ली०) ऊर्ध्वपर स्थापित किये जानेका भाव, ऊपर रखे जानेकी हालत।

उपरिस्थित (सं० त्रि०) ऊर्ध्वपर दण्डायमान, जो ऊपर हो।

उपरिस्पृश् (सं० त्रि०) उन्नत किया हुआ, जो चढ़ाया गया हो।

उपरी (हिं० स्त्री०) १ छोटी गोल कण्डी। (वि०) २ ऊपरी।

उपरी-उपरा, ऊपराचढ़ी देखो।

उपरीतक (सं० पु०) शृङ्गारबन्धन विशेष, मद-नदारी एक बैठक।

"[illegible]
[illegible]" (रतिमञ्जरी)

उपरुद्ध (सं० त्रि०) उप-रुध-क्त। १ आवृत, घिरा हुआ। २ प्रतिरुद्ध, रुका हुआ। ३ उत्पीड़ित, सताया हुआ। ४ अनुरुद्ध, समझाया हुआ। ५ रक्षित, छिपाकर किया हुआ।

उपरुध्य (सं० अव्य०) प्रतिरुद्ध करके, रोककर।

उपरुध्यमान (सं० त्रि०) आवृत, जो घेरा जा रहा हो।

उपरुह्य (सं० अव्य०) उपरोहण करके, चढ़कर।

उपरूपक (सं० क्ली०) उपमितं रूपकेण। नाटक विशेष। यह अष्टादश प्रकारका होता है, यथा— १ नाटिका, २ त्रोटक, ३ गोष्ठी, ४ सट्टक, ५ नाट्यरासक, ६ प्रस्थान, ७ उल्लाप्य, ८ काव्य, ९ प्रेङ्खण, १० रासक, ११ संलापक, १२ श्रीगदित, १३ शिल्पक, १४ विलासिका, १५ दुर्मल्लिका, १६ प्रकरणी, १७ हल्लीश, १८ भाणी।

उपरैना (हिं० पु०) उपरना, चद्दर।

उपरैनी (हिं० स्त्री०) ओढ़नी, पिछौरी।

उपरोक्त (हिं० त्रि०) उपर्युक्त, जो पहले कहा जा चुका हो।

उपरोध (सं० पु०) उप-रुध-घञ्। १ आवरण, ढकन। २ प्रतिबन्ध, रोक। ३ अनुरोध, समझानेकी बात। ४ पीड़न, तकलीफदिही।

"[illegible]
[illegible]" (मनु ११।१८)

'उपरोधो [illegible]' (मिताक्षरा)

उपरोधक (सं० क्ली०) उप-रुध-ण्वुल्। १ गर्भागार, तहखाना। २ वासगृह, रहनेका भीतरी कमरा। ३ रथ। (त्रि०) ४ उपरोधकर्ता, घेरनेवाला। ५ आवरक, ढांकनेवाला। ६ प्रतिबन्धक, रोकनेवाला। ७ अनुरोधकारी, तरगीब देनेवाला।

उपरोधन (सं० क्ली०) प्रतिबन्धन, रोक।

उपरोधिन् (सं० त्रि०) १ प्रतिबन्धन करनेवाला, जो रोकता हो। २ प्रतिबद्ध, रुका हुआ।

उपरोहित (हिं०) पुरोहित देखो।

उपरोहिनी (हिं० स्त्री०) पुरोहिती देखो।

उपरौंछा (हिं० क्रि-वि०) उपरिष्टात्, ऊपरकी ओर।

उपरौटा (हिं० पु०) उपरितन भाग, ऊपरी पन्ना।

उपरौठा (हिं० वि०) उपरितन, ऊपरी।

उपरौना, उपरना देखो।

उपर्यासन (सं० क्ली०) बहुतोंकी समस्थिति, चारोंओर मंडलीकी बैठक।

उपयुक्त (सं० त्रि०) उपरिकथित, ऊपर कहा हुआ।
उपल (सं० पु०) उपलाति, उप ला-क अथवा उ-पल-अच्। १ पाषाण, पत्थर।
"रेवां द्रक्ष्यस्युपलविषमे विन्ध्यपादे विशीर्णाम्।" (मेघदूत)
२ रत्न, जवाहिर।
उपलक (सं० पु०) पाषाण, पत्थर।
उपलक्ष (सं० पु०) उपलक्ष्य देखो।
उपलक्षक (सं० त्रि०) उप-लक्ष-ण्वुल्। १ उद्भावक, अन्दाज़ लगानेवाला। २ उपादानके लक्षणसे इतर-बोधक, जाती आसारसे दूसरेको बतानेवाला। ३ दर्शक, देखनेवाला।
उपलक्षण (सं० क्ली०) उप-लक्ष करणे ल्युट्। १ अजहत्स्वार्थालक्षणा, शाब्दिक शक्तिविशेष। अपने जैसे दूसरे वस्तुको भी बता देना उपलक्षण कहलाता है। अजहत्स्वार्था देखो। २ अन्यका उद्बोधक लक्षण, निशान्। ३ विशेषण, सिफ़त। ४ दर्शन, देख-भाल। ५ ध्यान, ख़याल।
उपलक्षणत्व (सं० क्ली०) चिह्न रहनेका भाव, निशान् पड़ जानेकी हालत।
उपलक्षयितव्य (सं० त्रि०) चिह्नसे समझा जानेवाला, जो आसारसे देख पड़ता हो।
उपलक्षित (सं० त्रि०) चिह्नसे प्रकाशित, निशान्से समझा हुआ।
उपलक्ष्य (सं० पु०) १ अवलम्बन, टेक। २ प्रयोजन, मतलब। ३ उद्देश्य, असली बात। ४ प्रमाण, सबूत, हवाला। (त्रि०) ५ प्रमाण दिये जाने योग्य, जो हवाला दिये जानेके लायक़ हो।
उपलधिप्रिय (सं० पु०) उपलधिः प्रियो यस्य। चमर नामक जन्तु। चमर देखो।
उपलब्ध (सं० त्रि०) उप-लभ-क्त। १ प्राप्त, मिला हुआ। २ ज्ञात, समझा हुआ। ३ विचारा हुआ, जो ख़याल करनेके क़ाबिल हो।
उपलब्धसुख (सं० त्रि०) सुख उठाये हुआ, जो आराम उठाये हो।
उपलब्धार्थ (सं० त्रि०) अर्थ समझा हुआ, जो मतलब पा चुका हो।
उपलब्धार्था (सं० स्त्री०) उपलब्धः अर्थो यस्याः। आख्यायिका, सच्ची कहानी।
उपलब्धि (सं० स्त्री०) उप-लभ-क्तिन्। १ ज्ञान, समझ। २ मति, अक़्ल। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ अनुमान, अन्दाज़।
उपलब्धिमत् (सं० त्रि०) समझ पड़ने योग्य, जो ख़यालमें आ सकता हो।
उपलभित् (सं० पु०) पाषाणभेदक, पथरचटा।
उपलभेद, उपलभेदिन् देखो।
उपलभेदिन् (सं० पु०) पाषाणभेदी वृक्ष, पथरचटा। (Plectranthus aromaticus) वैद्यकशास्त्रके मतमे इसका पर्यायशब्द—श्वेता, पलभित्, शिलगर्भज, अश्म-भेदी, शिलाभेद, नगभिद्यक, भेदक, अश्मघ्न, गिरिभित्, भिन्नयोजिनी और पाषाणभेद है। यह शीतल, तिक्त, तीक्ष्ण, कषाय, वस्तिशोधक एवं भेदक होता और अर्श, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, हृद्रोग, पथरी, योनिरोग, प्रमेह, प्लीहा, शूल, व्रण तथा वातादिको नाश करता है। उपलभेदी वृक्ष भारतके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है।
उपलभ्य (सं० त्रि०) उप-लभ कर्मणि यत्। १ प्राप्य, मिलनेवाला। (रघु ७.१८) २ ज्ञेय, समझा जाने लायक़। (अव्य०) ३ ज्ञानके साथ, समझकर।
उपलभ्यमान (सं० त्रि०) समझा जानेवाला, जो मालूम किया जा रहा हो।
उपलम्भ (सं० पु०) उप-लभ-घञ्-नुम्। लभेश्च। पा ७।१।६४। १ अनुभव, समझ। "नौऽकर्तविशक्विवोपलम्भाय बसोर्रेष्वलिदमायात:।" (शकुन्तला) २ लाभ, फ़ायदा।
उपलम्भक (सं० त्रि०) उप-लभ-घञ्-नुम्-कन्। अनुभावक, ख़याल करनेवाला।
उपलम्भन (सं० स्त्री०) अनुभव, ख़याल।
उपलम्भ्य (सं० त्रि०) उप-लभ-ण्यत्-नुम्। उपात् प्रशंसायाम्। पा ७।१।६६। १ श्लाघ्य, तारीफ़के क़ाबिल। २ प्राप्य, मिल सकनेवाला।
उपलवोदत् (सं० स्त्री०) गुल्मिनी, खूब फैलने-वाली बेल।
उपला (सं० स्त्री०) उप-ला-क-टाप्। १ शर्करा,

चीनी। २ बालुका, बालू। ३ प्रस्तरमय भूमि, पथरीली ज़मीन।

उपलाम्लज (सं॰ पु॰) दद्रुघ्नक्ष, पथरीलिका।

उपलालिका (सं॰ स्त्री॰) तृष्णा, प्यास।

उपलासिता (सं॰ स्त्री॰) रातीमचंरा, लड़ियामट्टी।

उपलिङ्ग (सं॰ क्ली॰) उप-लिङ्ग-घञ्। उपसर्ग, बदशगुनी।

उपलिप्त (सं॰ त्रि॰) लेपनयुक्त, लिपा हुआ।

उपली (हिं॰ स्त्री॰) छोटी गोल कण्डी।

उपलेप (सं॰ पु॰) उप-लिप-घञ्। १ गोमयादि द्वारा लेपन, लिपाई। २ प्रतिबन्धन, रोक। ३ मनकी इन्द्रियोंका अवसादन, हवास बन्द हो जानेकी हालत।

उपलेपन (सं॰ क्ली॰) १ गोमयादि लेपन, लीपने-पोतनेकी चीज़। २ लेपनकार्य, लिपाई।

उपलेपिन् (सं॰ त्रि॰) १ लेपनका कार्य देनेवाला, जो पुताईके काम आता हो। २ लेपन करनेवाला, जो लीपता हो।

उपलोह (सं॰ क्ली॰) स्वर्णादि धातु विशेष, सोना वगैरह कानी गो। स्वर्ण, रौप्य, ताम्र, नाग, वङ्ग, कान्त, तीक्ष्णक, मुण्डायस, अष्टधा लोह, कांस्यार और घोषकको उपलोह कहते हैं। (वैद्यक)

उपवक्तृ (वै॰ पु॰) उपवक्ति उपदिशति, उप-वच-तृच्। १ यज्ञका पर्यायवाचक ऋत्विग् विशेष। यह यज्ञके तत्त्वका अवधान करता है। २ सदस्य।

'[illegible]' (वैदिक [illegible])

उपवङ्ग (सं॰ पु॰) उपगतो वङ्गम्। वङ्गदेशके समीपवर्ती एक जनपद। (बृहत्संहिता १४)

उपवट (सं॰ पु॰) १ प्रियालवृक्ष, प्यालका पेड़। २ पारवृक्ष, [illegible] पेड़।

उपवन (सं॰ क्ली॰) उपमितं वनेन। १ कृत्रिम वन, छोटा जङ्गल। २ उद्यान, बाग। आराम देखो। (अव्य॰) ३ वन समीप, जङ्गलके पास।

उपवनक (सं॰ पु॰) १ गृहवन। (त्रि) २ उद्यान-स्थित।

उपवना (हिं॰ क्रि॰) ऊपर होना, ऊपर चढ़ना, चढ़ चलना।

उपवस्ति (सं॰ पु॰) मूत्रस्थान, केड़िपन।

उपवर्णन (सं॰ क्ली॰) उप-वर्ण-ल्युट्। सम्यक् कीर्तन, खासा बयान।

उपवर्णित (सं॰ त्रि॰) सम्यक् कथित, खूब बयान किया हुआ।

उपवर्त्य (सं॰ त्रि॰) १ वर्णनके योग्य, बयान किये जाने लायक़। (क्ली॰) २ उपमान।

उपवर्त (सं॰ पु॰) कालसंख्या विशेष, एक बहुत बड़ी मुद्दत।

उपवर्तन (सं॰ क्ली॰) उपागत्य वर्तते अत्र, उप-वृत-ल्युट्। १ जनपद, आबादीकी जगह। २ ज़िला या परगना। ३ राज्य, सल्तनत।

उपवर्ष (सं॰ पु॰) एकजन प्राचीन आचार्य। ये शङ्करस्वामीके पुत्र और वर्षके कनिष्ठ भ्राता थे। मीमांसाशास्त्रपर इन्होंने कई ग्रन्थ लिखे हैं। प्राचीन प्रवादके अनुसार पाणिनि, कात्यायन और व्याडि प्रभृति वैयाकरणोंके उपवर्ष ही अध्यापक थे।

उपवर्ह (सं॰ पु॰) उप-वृह करणे घञ्। उपधान, तकिया।

उपवर्हण (सं॰ क्ली॰) उपवर्ह देखो।

उपवलितनयन (सं॰ त्रि॰) अश्रु द्वारा अभिषिक्त, जो फूट-फूट कर रोता हो।

उपवल्लिका (सं॰ स्त्री॰) अग्निसंज्ञक लता, अमरबेल।

उपवल्क (सं॰ पु॰) ईर्ष्या, हसद, डाह।

उपवसथ (वै॰ पु॰) उपगत्य वसन्ति अत्र, उप-वस-अथ। [illegible] १ ग्राम, गांव। "[illegible]" ([illegible]) २ सोमयागका पूर्वदिवस। इसमें लोग उपवास करते हैं।

उपवसथीय, उपवसथ देखो।

उपवसथ्य (वै॰ त्रि॰) उपवसथके अर्थ आहुत, जो सोमयागके लिये तैयार किया गया हो।

उपवस्त (सं॰ क्ली॰) उप-वस क्त भावे [illegible]। उपवास, फ़ाक़ा।

उपवस्ति (सं॰ स्त्री) उप-वस्त स्तम्भे भावे क्तिन्। स्तम्भ, खम्भा।

उपवस्तृ (सं॰ त्रि॰) उपवास करनेवाला, जो फ़ाकेसे हो।

उपवा (सं॰ स्त्री॰) आध्मान, फूंकफांक।

उपवाक (वै॰ पु॰) उप-वच-घञ् कुत्वम्। १ परस्पर आलाप, बात चीत। "नमस्तन इदमुपवाकमीड्:।" (ऋक् ११६४।१) 'उपवाकमुपेत्य वचनं परस्परवचनम्।' (सायण) उप-वा भावे क्विप् तस्मै कं जलं यत्र। २ यव। 'उपवाकाः यवाः।' (वेददीपे महीधर १८।८०)

उपवाकी (वै॰ स्त्री॰) उपवाक स्त्रियां ङीप्। इन्द्रयव। "बदरैरुपवाकीभिर्भेषजं तोकमभिः।" (शक्लयजुः २१।३०)

उपवाच्य (वै॰ त्रि॰) उप-वच कर्मणि यत् कुत्वम्। १ सम्भाषणीय, बात किये जानेके काबिल। (ऋक् १।१६८।१२) २ प्रशंस्य, बन्दगी किये जानेके लायक।

उपवाच्य, उपवाक्य देखो।

उपवाजन (सं॰ क्ली॰) वीजन, पङ्खा।

उपवाद (वै॰ पु॰) उप-वद-घञ्। निन्दा, बदनामी।

उपवादिन् (वै॰ त्रि॰) उप-वद-णिनि। निन्दुक, बदनाम करनेवाला। "शैल्नाः कवदिनः पियना उपवादिनः।" (छान्दोग्य उ॰)

उपवास (सं॰ पु॰) उप-वस-घञ्। भोजनाभाव, फ़ाका, उपास। "उपावृत्तस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह। उपवासः स विज्ञेयः सर्वभोगविवर्जितः॥" (भविष्यपु॰)

सर्वभोग छोड़ पापकी निवृत्तिके लिये दया, क्षान्ति, धैर्यादि नियमसे रहना उपवास कहलाता है।

उपवास दो प्रकारका होता है, वैध और अवैध। व्रतादिके लिये विधिपूर्वक किया जानेवाला उपवास वैध है। वह चार प्रकारका कहा है—

"सायमाद्यन्तयोरह्नोः सायं प्रातश्च मध्यमे।
उपवासफलं प्रेप्सोर्जह्याद्भक्तचतुष्टयम्॥"

उपवासके दिन अञ्जन, गोरोचना, गन्ध, पुष्प, माला, अलङ्कार, दण्डधारण, गात्र वा मस्तकमें तैल मोक्षण, ताम्बूल, दिवानिद्रा, अक्षक्रीड़ा, मैथुन और स्त्रीसङ्गको परित्याग करना चाहिये। पुत्रके अभावमें पुत्रोत्पत्ति पर्यन्त ऋतुकालको स्त्रीगमनसे दोष नहीं लगता। उपवासके पूर्व और पर दिन कांसेके पात्रमें भोजन, मांसभक्षण, सुरापान, मधुसेवन, लोभ, मिथ्याकथा, व्यायाम, स्त्रीसङ्ग, दिवानिद्रा, अञ्जन, मांस, शिलापिष्ट एवं मसूरका भक्षण, पुनरशन, पथभ्रमण, यान, परिश्रम, द्यूतक्रीड़ा, तैलमर्दन, पराश, तैल, चणक, कोद्रव-धान्य, शाक, अधिक घृत और अधिक जलपान निषिद्ध है।

उपवासमें असमर्थ होनेसे प्रतिनिधि देना पड़ता है। पुत्र, भगिनी, भ्राता और भार्याके अभावमें ब्राह्मण प्रतिनिधि बनता है। ब्रह्मवैवर्तके मतसे उपवासमें अत्यन्त असमर्थ पड़ने पर एक ब्राह्मणको भोजन करा देना चाहिये।

उपवासक (सं॰ त्रि॰) उप-वास-ण्वुल्। अनाहारी, फ़ाकाकश।

उपवासन (वै॰ क्ली॰) उपवास उपसेवायां भावे ल्युट्। १ उपसेवन, इस्तेमाल। "यदा मधामुपवासने यशोपवासने क्षतम्।" (अथर्व १।१।२१) २ परिच्छद, पोशाक।

उपवासिन् (सं॰ त्रि॰) उप-वस-णिनि। अनाहारी, फ़ाका करनेवाला।

उपवाहन (सं॰ क्ली॰) उप-वह-णिच् भावे ल्युट्। १ समीपगमन, पासकी रवाई। २ ले जाने या वापस लानेका काम।

उपवाहिन् (सं॰ त्रि॰) किसीकी ओर जानेवाला, जो बहते चला जाता हो।

उपवाह्य (सं॰ पु॰) उप-वह-ण्यत्। १ राजवाहक हस्ती, बादशाहकी सवारी। (स्त्री॰) २ राजपथ, सरकारी सड़क। (त्रि॰) ३ निकट पहुंचाया जानेवाला।

उपविद् (वै॰ स्त्री॰) उपविन्दति, विद-क्विप्। १ प्राप्ति, पहुंच। २ ज्ञान, समझ। "कर्णविदा इदरेकमेते हस्तेरि देवाई न प्रवृत्तलोभे तव ज्ञानेन" (सायण) ३ अन्वेषण, तलाश। (त्रि॰) ४ प्राप्त होनेवाला, जो पहुंच जाता हो। ५ ज्ञाता, समझदार।

उपविद्या (सं॰ स्त्री॰) गौण विद्या, दूसरे दरजेका इल्म।

उपविपाश (सं॰ अव्य॰) विपाशा नदीके समीप।

उपविश्य (सं० अव्य०) उपवेशन करके, बैठकर।

उपविष (सं० क्ली०) उपमितं विषेण। १ कृत्रिम विष, बनावटी ज़हर। २ गर, नशीला ज़हर।

"[illegible]
[illegible]" (शार्ङ्गधर)

अर्क, सेहुण्ड, धतूरा, लाङ्गली, करवीरक, गुञ्जा और अहिफेन सातो उपविष हैं।

उपविषपञ्चक (सं० क्ली०) पांच उपविष, पांच तरहका नशीला ज़हर। थूहर, अर्क, करवीर, लाङ्गली और कुचिलकको उपविषपञ्चक कहते हैं।

उपविषा (सं० स्त्री०) १ शतातिविषा, काला अतीस। २ अतिविषा, अतीस।

उपविष्ट (सं० त्रि०) उप-विश कर्तरि क्त। आसीन, बैठा हुआ।

उपवीत (सं० क्ली०) उप-वि-इ-क्त। वाम स्कन्धपर स्थापित यज्ञसूत्र, जनेऊ।

"[illegible]
[illegible]" (कादम्बरी)

होम और स्मार्त कार्यमें यज्ञोपवीतका प्रयोजन पड़ता है। उसके अभावमें यज्ञोपवीतसे उत्तरीयका कार्य चलता है। वर्णके भेदसे उपवीतमें भी भेद रहता है।

"[illegible]
[illegible]" (मनु २।४४)

ब्राह्मणका ऊर्ध्वभावमें त्रिगुणित कार्पासके, क्षत्रियका सनके सूत और वैश्यका यज्ञोपवीत भेड़के रोममें बनता है। यज्ञोपवीत शब्दमें विस्तृत विवरण देखिये।

उपवीर (सं० पु०) दानवविशेष।

उपवृंहण (सं० क्ली०) वृद्धि, बढ़ती।

उपवृंहित (सं० त्रि०) उप वृन्ह-वृद्धि कर्मणि क्त। १ समुल्लसित, उठता हुआ। २ वर्धित, बढ़ा हुआ।

उपवृत्ति (सं० स्त्री०) उपवर्तन, हरकत, चालचलन।

उपवेणा (सं० स्त्री०) नदीविशेष। यह दक्षिणापथमें कृष्णा नदीकी एक शाखा समझ पड़ती है।

"[illegible]" (भारत, भी [illegible] अ०)

उपवेद (सं० पु०) उपमितः वेदेन। वेदसदृश आयुर्वेदादि, छोटा वेद। "[illegible]" ([illegible])

सकल ही वेदके उपवेद होते हैं। ऋग्वेदका आयुर्वेद, यजुर्वेदका धनुर्वेद, सामवेदका गान्धर्ववेद और अथर्ववेदका उपवेद शस्त्रशास्त्र है।

"[illegible]
[illegible]" (देवीपुराण)

धन्वन्तरिने आयुर्वेद, विश्वामित्रने धनुर्वेद, भरत-मुनिने गान्धर्ववेद और विश्वकर्माने शस्त्रशास्त्र निकाला है। किन्तु सुश्रुतके मतमें आयुर्वेद अथर्ववेदका उपाङ्ग या उपवेद है। आयुर्वेद देखो।

उपवेश (सं० पु०) उप-विश भावे घञ्। १ स्थिति, बैठक। उपमितो वेशेन। २ वेश, सुरूप। ३ लाग, लगाव। ४ पुरीषोत्सर्ग द्वारा शून्यीकरण, झाड़े बैठनेकी बात।

उपवेशन (सं० क्ली०) उप-विश भावे ल्युट्। १ आसन, बैठक। यह मेदको बढ़ाता और थकान, सौकुमार्य तथा सुखको बढ़ाता है। (राजनिघण्टु)

"[illegible]" ([illegible])

२ स्थापन, बैठानेकी बात। ३ लाग, लगाव। ४ पुरीषोत्सर्ग द्वारा शून्यीकरण, झाड़े बैठनेकी हाजत।

उपवेशि (सं० पु०) उप-विश-इन्। यजुर्वेद-सम्प्रदायके प्रवर्तक एक ऋषि।

"[illegible]" ([illegible])

उपवेशित (सं० त्रि०) १ स्थित, बैठा हुआ। २ स्थापित, जो बैठा दिया गया हो।

उपवेशिन् (सं० त्रि०) उप-विश-णिनि। उपवेशनकारी, बैठनेवाला।

उपवेष (सं० पु०) उप-विष कर्मणि घञ्। अग्नि या अङ्गारसमान आकार भाग लौकिका काठ।

"[illegible]" (हरिवंश)

उपवेष्टन (सं० क्ली०) उपवेष्ट-ल्युट्। लिपटन—भाग, शाखा और आवेष्टन।

उपव्याख्यान (सं० क्ली०) उप-वि-आ-ख्या-ल्युट्। माहात्म्य और उपासनादि कथन, तारीफकी बात।
"ओमित्येतदक्षरं सर्वं तस्योपव्याख्यानम्।" (माण्डुक्य उ० १)

उपव्याघ्र (सं० पु०) उपमितो व्याघ्रेन। १ चित्रक, चीता। (अव्य०) २ व्याघ्रके समीप, शेरके पास।

उपव्युषम् (सं० अव्य०) उषःकाल बीतनेपर, तड़केके बाद। 'उषसि विगच्छन्त्याम्।' (सर्वार्थ)

उपशम (सं० पु०) उप-शम-अच्। १ इन्द्रियनिग्रह, इन्द्रियोंकी रोक। २ तृष्णानाश, लालच न रहनेकी बात। ३ रोगोपद्रवशान्ति, बीमारीके बखेड़ेका दबाव। ४ निवृत्ति, छुटकारा।
"जगाम प्रथमं जाते गष्ट यशोनुपवाङ्गुनी।" (भारत, वन २०४०)

उपशमक (सं० त्रि०) शान्ति देनेवाला, जो ठण्डा कर देता हो।

उपशमक्रम (सं० पु०) साधारणौषध, मामूली दवा।

उपशमन (सं० क्ली०) उप-शम भावे ल्युट्। १ उपशम, दबाव। णिच्-ल्युट् न वृद्धिः। २ निवारण, हटाव।

उपशमनीय (सं० त्रि०) शान्त किया जानेवाला, जो दबनेके काबिल हो।

उपशमशील (सं० त्रि०) शान्त, ठण्डा, जो भड़कता न हो।

उपशय (सं० पु०) उप शीङ् अधर्याये अच्। १ समीपशयन, पासका सोना। 'उपशयः समीपशयनम्।' (सिद्धान्तकौ०)
२ व्याधि-ज्ञान-हेतु, बीमारीकी पहचानका सबब। यह खाद्य या औषध विशेषके उपयोगसे देखा जाता है।
"हेतुव्याधिविपर्यस्तविपर्यस्तार्थकारिणाम्।
औषधान्नविहाराणामुपयोगं सुखावहम्॥
विद्यादुपशयं व्याधेः स हि सात्म्यमिति स्मृतिः।" (माधवनिदान)
३ खाद्यादिके द्वारा व्याधिका दूरीकरण, खाना वग़ैरहके ज़रिये बीमारीका छोड़ाव।

उपशरद् (सं० अव्य०) शरद् ऋतुके समय।

उपशल्य (सं० क्ली०) उपगतं शल्यम्। ग्रामके प्रान्तका भाग, गांवके किनारेकी ज़मीन्। (रघु १।५२)

उपशाखा (सं० स्त्री) गौणशाखा, छोटी डाल।

उपशान्त (सं० त्रि०) १ शान्त किया हुआ, जो दब गया हो। २ शान्त, ठण्डा। ३ आसूदाम, घटा हुआ।

उपशान्तात्मन् (सं० त्रि०) शान्तहृदय, ठण्डे दिलवाला।

उपशान्ति (सं० स्त्री०) उप-शम-क्तिन्। १ निवृत्ति, छुटकारा। "श्रमातंभयोपशान्तये।" (रघु ८।११) २ आरोग्य, सेहत। ३ निवारण, हटाव। ४ ह्रास, कमी।

उपशान्तिन् (सं० त्रि०) १ शान्ति रखनेवाला, जो भड़क न उठता हो। (पु०) २ शिक्षित हस्ती, पालू हाथी।

उपशान्त्वन (सं० क्ली०) शान्त करनेका भाव, जिस हालतमें ठण्डा रखें।

उपशाय (सं० पु०) उप शी-घञ्। व्यवाय: क्रमे पर्याये। पा ३।३।३९। विशाय, सो रहनेकी बारी।

उपशायिता (सं० स्त्री०) १ रोगकी मुक्तिके साधनका पथ्य, जो चीज़ खानेसे बीमारी छूट जाती हो। २ शान्त करनेका भाव, ठण्डे पड़नेकी हालत।

उपशायिन् (सं० त्रि०) समीप शयन करनेवाला, जो पास ही लेटता हो। २ शयनशील, सोनेवाला। ३ शयनके लिये प्रस्थान करनेवाला, जो सोने जा रहा हो। ४ शान्त कर देनेवाला, जो दबाता हो। ५ निद्राजनन, नींद लानेवाला।

उपशाल (सं० क्ली०) १ गृहके समीपकी भूमि, मकान्का अहाता। (अव्य०) २ गृहके समीप, घरके पास।

उपशास्त्र (सं० क्ली०) गौणशास्त्र, मामूली इल्म।

उपशिक्षमाण (सं० त्रि०) शिक्षा पानेवाला, जो सिखाया जाता हो।

उपशिक्षा (सं० स्त्री०) शिक्षाभिलाष, सीखनेकी ख़ाहिश।

उपशिक्षित (सं० त्रि०) शिक्षाप्राप्त, सीखा हुआ।

उपशिङ्घन (सं० क्ली०) उप-शिघि-आघ्राणे ल्युट्। १ आघ्राण, सूंघाई। २ आघ्राणौषध, सूंघनेकी दवा।

उपशिष्य (सं० पु०) शिष्यका शिष्य, जो चेलेका चेला हो।

उपशीर्षक (सं० पु०) १ बालरोग, बच्चोंकी बीमारी। २ कपालरोग, मत्थेकी बीमारी, बाई फुंई।

उपशुन (सं० अव्य०) कुक्कुरके समीप, कुत्तेके पास।

उपशोभ (सं० क्ली०) उपगता शोभा साहश्येन,

उपगो॰ समा॰। १ आरोपित शोभा, बनावटी खूबसूरती। मकड़े-बकरे और चोट्टे-दरमनको उपगोम कहते हैं। "[illegible]" ([illegible])
उपगोमम, [illegible]।
उपगोमिन् (सं॰ त्रि॰) उप-गुम-क्त। १ शोभा-युक्त, खूबसूरत। २ बनाठन, बना ठना, जो गहना-कपड़ा खूब पहने चाहे हो।
उपगोपन (सं॰ त्रि॰) गुप्त कर देनेवाला, जो छुपा डालता हो।
उपघ्नी (सं॰ स्त्री॰) आच्छादन, ढकन। जो वस्तु किसी वस्तुपर शोभा बढ़ानेके लिये टांक दिया जाता हो।
उपच्छुत् (वै॰ पु॰) स्तुति, उप-स्तु-क्विप्; उपगता स्तुद यस्मिन्। यज्ञ। '[illegible]' ([illegible])
उपच्छुत (सं॰ त्रि॰) १ श्रवण कर लिया हुआ, जो सुननेमें आ गया हो। २ आह्वान, बुलाया हुआ।
उपश्रुति (सं॰ स्त्री॰) उप-श्रु-क्तिन्। १ समीप श्रवण, पासमें सुननेकी बात। "[illegible]" ([illegible]) २ दैवप्रश्न, आवाज़ ग़ैब।

'[illegible]
[illegible]' ([illegible])

रातिको बहिर्गमनके समय जो शुभाशुभ वाक्य सुन पड़ता है, वही दैवप्रश्न उपश्रुति है। ३ भविष्यत् कथन, पेशीनगोई। ४ अङ्गीकार, मञ्जूरी।
उपश्रुत्य (सं॰ अव्य॰) श्रवण करके, सुन पाकर।
उपश्रोतृ (सं॰ त्रि॰) श्रवण कर लेनेवाला, जो कान लगा कर सुनता हो।
उपश्लिष्ट (सं॰ त्रि॰) निकट स्थापित, लगा हुआ।
उपश्लेष (सं॰ पु॰) उप-श्लिष-घञ्। आधार, आधे-यके एक देशका सम्बन्ध, नज़दीकी, चासका-गासना।
उपश्लेषण (सं॰ क्ली॰) उप-श्लिष-ल्युट्। आधान, आधार और आधेयका एकदेश, लगाव, बनाव।
उपष्टम्भ (सं॰ त्रि॰) शब्दयुक्त, पुरशोर, जो आवाज़ दे रहा हो।
उपष्टम्भ (सं॰ पु॰) उप-स्तम्भ-घञ्। १ पतनका प्रतिरोध, गिर पड़नेसे रोक, थूनी। २ उत्तेजन, आग्रह। ३ आश्रय, टेक। ४ अवलम्ब, टेक। ५ आडम्बर, ढकोसला। ६ उपसत्त्व, सहारा।
उपष्टम्भक (सं॰ त्रि॰) उपष्टम्भकारि, सहारा देनेवाला। पतन-निरोधक, गिरने न देनेवाला।

'[illegible]' ([illegible])

उपष्टात् (सं॰ अव्य॰) पासपास, नज़दीक।
उपसंयम (सं॰ पु॰) उप-सम्-यम-अप्। १ प्रलय, संहार, खातमा। २ समस्त् नियम, कड़ा कायदा। ३ बन्धन, फांस।
उपसंयोग (सं॰ पु॰) सामीप्येन संयोगः। निकट सम्बन्ध, नज़दीकी रिश्ता।
उपसंरोह (सं॰ पु॰) उपगतः संरोहः, प्रादि-समा॰। निकट प्ररोह, मिलो-जुली बढ़ती।
उपसंवाद (सं॰ पु॰) उपेत्य अङ्गीकृत्य संवादः। परस्पर द्वारा अङ्गीकारपूर्वक कथन, कौलक़रार। '[illegible]' ([illegible])
उपसंव्यान (सं॰ क्ली॰) उप-सम्-व्येञ् करणे ल्युट्। '[illegible]' पा [illegible]। परिधानवस्त्र, नीचे पहननेका कपड़ा।
उपसंस्कृत (सं॰ त्रि॰) पाक किया हुआ, जो पका लिया गया हो।
उपसंहरण (सं॰ क्ली॰) १ निवर्तन, निकास। २ परित्याग, छोड़ाई। ३ अङ्गीकारवचन, प्रहार, इन-कार। ४ आक्रमण, हमला।
उपसंहर्तृ (सं॰ त्रि॰) १ निवर्तनकारी, अलग कर देनेवाला। २ अङ्गीकार न करनेवाला, जो मञ्जूर करता न हो। ३ आक्रमणशील, हमला मारता हुआ।
उपसंहार (सं॰ पु॰) उप-सम्-हृ-घञ्। १ समाप्ति, खातमा। २ संग्रह, ढेर, भण्डार। ३ संक्षेप, खुलासा, थोड़ी बोली। ४ नाश, मौत। ५ आरम्भ या प्रस्तावित विषयका शेष, कथाके या प्रबन्धके खातमाका बात। ६ आक्रमण, हमला। ७ निवर्तन, निकास। ८ परीक्षा, जांच, विशुद्ध जानेकी चाहना।
उपसंहारिन् (सं॰ त्रि॰) १ परित्याग करनेवाला, जो छोड़ देता हो।

उपसंहित (सं॰ त्रि॰) १ सम्बद्ध, मिला-जुला। २ संलग्न, लगा हुआ।

उपसंहृत (सं॰ त्रि॰) उप-सम्-हृ-क्त। १ समापित, खतम। २ अङ्गीकार न किया हुआ, जो माना गया न हो। ३ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ४ मृत, मरा हुआ।

उपसंहृति (सं॰ स्त्री॰) उप-सम्-हृ-क्तिन्। २ विनाश, बरबादी। २ सङ्कोच, सिकोड़।

उपस (हिं॰ स्त्री॰) दुर्गन्ध, बदबू, गन्दी हवा।

उपसंक्लृप्त (सं॰ त्रि॰) उपरिस्थापित, ऊपर बनाया हुआ।

उपसंक्रमण (सं॰ क्ली॰) उप-सम्-क्रम भावे ल्युट्। १ सन्निवेश, जमाव। २ उपगमन, पहुंच।

उपसङ्क्षेप (सं॰ पु॰) १ सार, निचोड़। २ सङ्ग्रह, जुमाव।

उपसङ्ख्यान (सं॰ क्ली॰) उप-सम्-ख्या करणे ल्युट्। १ गणना, शुमार। २ सङ्ग्रह, चुनाव। ३ विशेषण, सिफत। ४ व्याकरणसूत्रके अनुक्त वाक्यार्थका वार्तिकादि द्वारा कथन।

"विभाषाकरणे तीयस्य ङित्सूपसङ्ख्यानम्।" (पा १।१।३६। वार्तिक)

उपसङ्गृह्य (सं॰ अव्य॰) ग्रहण करके, पकड़कर।

उपसङ्ग्रह (सं॰ पु॰) उपसङ्गृह्यते, उप-सम्-ग्रह-अप्। १ पादग्रहण, इज्जतके साथ पैरोंकी पकड़। २ उपकरण, फरमाबरदारी। ३ सम्यक्ग्रहण, जोड़ जाड़।

"यदुच्यते द्विजातीनां शूद्राद्दारोपसङ्ग्रहः।" (याज्ञवल्क्य १।५६)

उपसङ्ग्रहण (सं॰ क्ली॰) उप-सम्-ग्रह आधारे ल्युट्। १ पादग्रहणपूर्वक प्रणाम, पैर पकड़ बन्दगी करनेकी बात। २ सम्यक्सङ्ग्रह, जोड़-जाड़।

उपसङ्ग्राह्य (सं॰ त्रि॰) पादग्रहणपूर्वक अभिवादन किये जानेके योग्य, जिसे पैर छूकर बंदगी बजाना पड़े।

उपसधार (सं॰ पु॰) कपटोपाय, चालाकी।

उपसत् (सं॰ स्त्री॰) आक्रमण, चढ़ाई। २ सङ्ग्रह, जोड़ जाड़। ३ सेवा, खिदमत। ४ संस्कारविशेष। यह कितने ही दिन चलती और ज्योतिष्टोम यज्ञका अंग लगती है।

उपसत्ता, उपसत् देखो।

उपसत्ति (सं॰ स्त्री॰) उप-सद्-क्तिन्। १ सङ्ग, साथ, मेल-जोल। २ सेवा, खिदमत। ३ निकटगमन, पहुंच। ४ प्रतिपादन, साबित करनेकी बात। ५ अनुरक्ति, ख्वाहिश।

उपसत्तृ (सं॰ त्रि॰) उप-सद्-तृच्। १ आसन्न, या पहुंचा हुआ। २ अनुगत, रहनेवाला। ३ सेवक, नौकरी करनेवाला। 'उपसत्ता सेवकः।' (वेददीपे महीधर २।४२)

उपसद् (सं॰ पु॰) उप-सद्-क्विप्। १ अग्नि विशेष। यह गार्हपत्यादि मुख्य तीन अग्निके सिवा अपर है। (त्रि॰) २ समीपस्थ, नजदीकी।

उपसद (वै॰ पु॰) उपसीदन्त्यस्मिन् उप-सद वेदे घञर्थे क। १ उपसद् यागका दिन। इस दिन यज्ञकारीको अल्पाहार मिलता है। (छान्दोग्य॰ उप॰ ३।१७।२)

'अल्पभोजनीयानि अहानि आसन्नमीति प्रथामोऽनशनादीनामुपसदाव सामान्यम्।' (शाङ्करभाष्य)

२ दान, बखशिश। ३ समीपगमन, पहुंच। (त्रि॰) ४ समीप गमन करनेवाला, जो पास जा रहा हो।

उपसदन (सं॰ क्ली॰) उप-सद-ल्युट्। १ उपस्थिति, हाजिरी, पहुंच। २ उपसेवन, खिदमत। ३ गृहसमीप, पड़ोस। (अव्य॰) ४ गृहके समीप, मकानके पास।

उपसदी (वै॰ स्त्री॰) उप-सद् घञर्थे क-ङीप्। सन्तति, धारा, हाजिरबाश। उपसदी दो प्रकारकी होती है—कालिक और दैशिक। समान एककालिक कार्यमात्रके धर्मोंको कालिक और विभिन्न कालीन घटपटादि कार्यमात्रके वृत्तिधर्मोंको दैशिक कहते हैं।

'दशमासस्य उपसदो सन्तती।' (शतपथब्रा॰ भाष्य १०।८।१०)

उपसद्य (सं॰ त्रि॰) उप-सद् कर्मणि यत्। पूजाके योग्य, जो परस्तिश किये जानेके काबिल हो। निकटगमन किये जाने योग्य, जिसके पास पहुंचा जाय।

उपसद्वन् (सं॰ त्रि॰) उप-सद्-वनिप् वयान्तादेशः। १ पूजित, जो पूजा जाता हो। २ सेवक, खिदमतगार। (ऋक् ७।१।१)

उपसद्व्रत (सं॰ क्ली॰) उपसद्विहित व्रत। केवल स्तनके पानसे यह व्रत करना पड़ता है।

उपसद्व्रतिन् (सं॰ त्रि॰) उपसद्का व्रत करनेवाला। इसमें यजमानको परिमित दुग्ध पान, धराशय्या, भूमिपर शयन और ब्रह्मचर्य तथा मौनावलम्बन करना पड़ता है।

उपसना (हिं॰ क्रि॰) १ दुर्गन्धि होना, बदबू देना। २ सड़ित होना, सड़ जाना। (पु॰) ३ उपवास, फाका।

उपसन्तान (सं॰ पु॰) १ निकट सम्बन्ध, नज़दीकी रिश्ता। २ सन्तति, औलाद।

उपसन्ध्या (सं॰ अव्य॰) सन्ध्याके समय, शामके वक्त।

उपसन्न (सं॰ त्रि॰) उप-सद-क्त। १ उपस्थित, पहुंचा हुआ। २ निकटागत, पास आया हुआ। ३ उपसेवक, नौकर-चाकर। ४ पूजित, पूजा हुआ।

उपसभा (सं॰ स्त्री॰) नैकट्य, पहुंच, पड़ोस।

उपसमवसन (सं॰ क्ली॰) दुष्ट ग्रहविशेष, खराब असूल।

उपसमाज (सं॰ पु॰) समाज, बरहैत्, बरतरफी।

उपसमाधान (सं॰ क्ली॰) उप-सम-आ-धा-ल्युट्। १ राशीकरण, ढेर लगानेका काम। 'उपसमाधान' राशीकरणम्।' (सिद्धान्तकौ॰) २ अग्निप्रणिधानपूर्वक जलानेका काम। '[illegible]'

([illegible])

उपसमाधार्य (सं॰ त्रि॰) एकत्र किये जाने योग्य, जो तरतीब दिये जानेके काबिल हो।

उपसमिध् (सं॰ अव्य॰) अग्निकाष्ठके समीप, जलानेकी लकड़ीके पास।

उपसम्पत्ति (सं॰ स्त्री॰) उप-सम्-पद-क्तिन्। अभिनव सम्पत्ति, पहुंच, किसी हालतपर आ जानेकी बात।

'[illegible]' (सिद्धान्तकौ॰)

उपसम्पन्न (सं॰ त्रि॰) उप-सम्-पद-क्त। १ प्राप्त, पाया हुआ। २ मृत, मरा हुआ। ३ यज्ञार्थ मृत (पशु), यज्ञके लिये मरा हुआ।

"[illegible]" ([illegible])

उपसम्भाष्य (सं॰ अव्य॰) प्राप्त होकर, पहुंचके।

उपसम्भाषा (सं॰ स्त्री॰) उप-सम्-भाष भावे अ-टाप्। सान्त्वना, बातचीत, होसला बढ़ाना।

'[illegible]' ([illegible])

उपसर (सं॰ पु॰) उप-सृ-अप्। १ निर्गमन, पहुंच। २ गौ प्रभृतिके गर्भधारणार्थ वृषादिका प्रेमाभियोग, गाय वगैरहका गाभिन होना। (त्रि॰) ३ प्राप्त होनेवाला, जो आ पहुंचा हो।

उपसरण (सं॰ क्ली॰) उप-सृ-ल्युट्। १ निर्गमन, बहाव। २ प्राणके बाहर निकलनेका स्थान, दवाइ लेनेको आ पहुंचनेकी जगह।

उपसर्ग (सं॰ पु॰) उप-सृज-घञ्। [illegible] १ भूकम्पादि उत्पात, बदशुगन जलजला। २ अनिष्ट, बुराई। ३ रोगविकार, बीमारीका फेर। ४ व्याकरणोक्त प्रादि षष्ठ शब्द। यथा—प्र, परा, अप, सम, अनु, अव, निस्, निर्, दुस्, दुर्, वि, आङ्, नि, अधि, अपि, अति, सु, उत्, अभि, प्रति, परि और उप। ५ योग, जोड़। ६ दुःख, तकलीफ। ७ अपशकुन। ८ पिशाचादिकी बाधा। ९ मृत्युका चिह्न, मौतका निशान।

उपसर्गवृत्ति (सं॰ त्रि॰) उपसर्गका आचरण करनेवाला, जो उपसर्गकी तरह चलता हो।

उपसर्जन (सं॰ त्रि॰) उप-सृज-ल्युट्। १ देवादि उत्पात, मदद्विभूतोंकी बात। २ अप्रधान, मातहत शख्स।

"[illegible]
[illegible]" ([illegible])

३ व्याकरणानुसार—समासका प्रथमानिर्दिष्ट वा एक विभक्तियुक्त पद। ४ पाणिनिसूत्रोक्त शब्दभेद। (त्रि॰) ५ सम्यगर्पितक, अच्छी तरह देनेवाला।

उपसर्तव्य (सं॰ त्रि॰) भाग्यार्थ समीपगन्तव्य, मददको पास पहुंचा जानेके काबिल।

उपसर्प (सं॰ पु॰) प्राप्ति, पहुंच।

उपसर्पण (सं॰ क्ली॰) उप-सृप भावे ल्युट्। समीप गमन, पास पहुंचनेकी बात।

"[illegible]" ([illegible])

उपसर्पिन् (सं॰ त्रि॰) उप-सृप णिनि। समीपगन्ता, पास पहुंचनेवाला।

उपसर्प्य (सं॰ अव्य॰) समीप जाकर, पास पहुंचके।

उपसर्या (सं० स्त्री०) उपस्रियतेऽसौ सृ कर्मणि यत्-टाप्। गर्भयोग्य ऋतुमती गाय, जो गाय उठी हो।

उपसागर (सं० पु०) सागरांश विशेष, बहरका एक हिस्सा। इसके प्रायः चारो ओर स्थल वेष्टित रहता है।

उपसाना (हिं० क्रि०) वासी बनाना, सड़ा डालना।

उपसार्य (सं० त्रि०) उप-सृ अग्रगमनार्थे ण्यत्। प्रापणीय, पहुंचा जाने काबिल।

उपसि (सं० अव्य०) क्रोड़में, गोदपर।

उपसुन्द (सं० पु०) निकुम्भ नामक दैत्यका पुत्र। यह सुन्दका कनिष्ठ भ्राता था। तिलोत्तमाके रूपपर मुग्ध हो उसे पानेके लिये दोनों भ्राता परस्पर लड़े और मृत्युके मुखमें जा पड़े। तिलोत्तमा देखो। २ नरकासुरका सेनापति। इसे कृष्णने मारा था।

उपसूर्यक (सं० क्ली०) सूर्यसुपगतम्, स्वार्थे कन्। सूर्यके समीप मण्डलाकार परिधि, आफ़ताबका कुर्स।

उपसृष्ट (सं० क्ली०) उप-सृज-क्त। १ मैथुन, डौला। (त्रिकाण्ड० ३।४।१२) (त्रि०) २ उपसर्गग्रस्त, झगड़ेमें पड़ा हुआ। ३ विसृष्ट, बना हुआ। ४ कामुक, चाहनेवाला। ५ व्याप्त, मामूर। ७ युक्त, लगा हुआ।

उपसेक (सं० पु०) उप-सिच भावे घञ्। १ जलादि सेचनद्वारा मृदुकरण, पानी वगैरह डालकर मुलायम बनानेका काम। २ व्यञ्जन।

उपसेक्तृ (सं० पु०) एक द्रव्यपर दूसरा द्रव्य डालनेवाला पुरुष, जो आदमी कोई चीज़ किसी चीज़ पर उंडेलता हो।

उपसेचन (सं० क्ली०) उप-सिच्-ल्युट्। १ जलसेक, सिंचाई। २ रस, अर्क। (त्रि०) ३ उपसेककर्ता, सींचनेवाला।

"तथः कीलाल उपसेचनासः।" (ऋक् ७।१०।१।८)

उपसेन (सं० पु०) बुद्धदेवके एक शिष्य। बुद्धने इन्हें अपने धर्मकी दीक्षा दी थी। (भद्रकल्पावदान ९ अ०)

उपसेवक (सं० त्रि०) उप-सेव-ण्वुल्। १ उपभोगकारी, मजा उड़ानेवाला। २ परस्त्रीपर आसक्त, जो दूसरेकी औरतसे फंसा हो।

"परदारादानविरतः परदारोपसेवकः।" (याज्ञवल्क्य ३।१३१)

उपसेवन (सं० क्ली०) उप-सेव भावे ल्युट्। १ परस्त्रीपर आसक्ति, दूसरेकी औरतसे फंस जानेकी बात। २ निकट रह सेवा करनेकी बात, जो खिदमत नज़दीकसे की जाती हो।

उपसेवा (सं० स्त्री०) मान, पूजा, परस्तिश, इज़्ज़त।

उपसेविन् (सं० त्रि०) उप-सेव-णिनि। १ सेवा करनेवाला, खिदमतगार।

"इदानीं पुनिभयनानरोपसेवी।" (सुश्रुत)

उपस्कर (सं० पु०) उप-कृ-अप् समवाये चेति सुट्। १ उपकरण, महारेकी चीज़। "पचनं ना गृहस्थस्य चुल्ली पेषण्युपस्करः।" (मनु ३।६८) 'उपस्करा गृहोपयोगिमार्जनी कुण्डकटाहादि।' (मेधातिथि) २ वेसवार, मसाला। ३ असम्पूर्ण वाक्यबोधक शब्दका अध्याहार। ४ गृहसंस्कार, घरकी मरम्मत। ५ गुणान्तराधान, दूसरे वस्फ़का लगाव। ६ यत्न, तदबीर।

उपस्करण (सं० क्ली०) उप-कृ भावे ल्युट्-सुट्। १ भूषण, साज। २ उपकरण, सामान। ३ मड़धात, मारकाट। ४ गुणान्तराधानरूप संस्कार, दूसरा वस्फ़ लानेका काम। ५ विकार, ऐब। ६ वाक्याधार, जुमलेका टेका। ७ हिंसन, क़तल।

उपस्कार (सं० पु०) उप-कृ भावे घञ् भूषणादौ सुट्। १ भूषण, साज। २ सहात, मार। ३ प्रतियत्नरूप संस्कार, तदबीरका काम। ४ विकार, फ़र्क़। ५ अध्याहार; छिपाव।

उपस्कीर्ण (सं० त्रि०) उप-कृ-क्त हिंसने सुट्। हिंसित, जो मारा गया हो।

उपस्कृत (सं० त्रि०) उप-कृ-क्त भूषणादौ सुट्। १ भूषित, सजा हुआ। २ संहृत, दबा हुआ। ३ संहृत, बना हुआ। ४ विकृत, बिगड़ा हुआ। ५ अध्याहृत, छिपा हुआ।

उपस्कृति (सं० त्रि०) भूषण, साज।

उपस्तम्भ (सं० पु०) उप-स्तम्भ-घञ्। अवलम्ब, पकड़, टेक।

उपस्तम्भक (सं० त्रि०) अवलम्ब लगानेवाला, जो सहारा देता हो।

उपस्तम्भन (हिं० स्त्री०) उप-स्तम्भ-ल्युट्। अवलम्बन, सहारेकी लकड़ी।
'[illegible]' ([illegible])

उपस्तरण (सं० क्ली०) उप-स्तृ-ल्युट्। १ आस्तरण, विस्तार। २ जुटिघर समीकरण। '[illegible]' ([illegible])

उपस्ति (वै० पु०) उप-स्त्यै-क्तिन् निपातनात् साधुः १ दास, सेवक। ([illegible]) २ अनुचर, आश्रितजन।

उपस्तीर्ण (सं० त्रि०) विस्तीर्ण, फैला हुआ।

उपस्तुत (सं० त्रि०) १ प्रशंसित, तारीफ किया हुआ। (पु०) २ एक ऋषि।

उपस्तुति (वै० स्त्री०) उप-स्तु-क्तिन्। समीपस्तव, सामने आवाहन, तारीफकी बात। (ऋक् [illegible])

उपस्तुत्य (सं० त्रि०) उपस्तुतिके योग्य, जो तारीफ किये जानेके काबिल हो।

उपस्त्री (सं० स्त्री०) उपमिता स्त्रियाम्। उपपत्नी, रखेली।

उपस्थ (सं० पु०) उप-स्था-क। १ लिङ्ग, पुंश्चिह्न। "[illegible]" ([illegible]) २ योनि, स्त्रीचिह्न। "[illegible]" ([illegible]) लिङ्ग और योनि उभय इन्द्रियका नाम उपस्थ है। स्मृतिके मतसे आनन्दव्यापारकारक कर्मेन्द्रियको उपस्थ कहते हैं। ३ पायु, मलद्वार। ४ क्रोड, गोद। ५ अभ्यन्तर, पेट। "[illegible]" ([illegible]) ६ स्थिति, बैठक। (त्रि०) ७ समीपस्थित, पास बैठा हुआ।

उपस्थदघ्न (सं० त्रि०) कटिपर्यन्त प्राप्त होनेवाला, जो गोदतक पहुंचता हो।

उपस्थनिग्रह (सं० पु०) १ विषयके अभिलाषका अवरोध, इन्द्रियको [illegible] दबाव।

उपस्थपत्र (सं० पु०) उपस्थवत् योनिवत् पत्राकृतिपत्र। अश्वत्थ वृक्ष, पीपलका पेड़।

उपस्थल (सं० क्ली०) १ नितम्ब, चूतड़। २ कूल्हा। ३ अभ्यन्तर, पेट।

उपस्थली (स्त्री०) उपस्थल देखो।

उपस्थकृत् (सं० त्रि०) गोदमें उपविष्ट, जो गोदमें बैठा हो।

उपस्था (सं० त्रि०) उपस्थायमान, खड़ा हुआ।

उपस्थाय (सं० त्रि०) समीपे तिष्ठति, उप-स्था-क्विप्। १ भृत्य, नौकर। २ उपासक, उपस्थित होनेवाला। ३ उन्नत, ऊंचा हुआ। ४ समीप आया हुआ, समीप पहुंचा हुआ। (पु०) ५ ऋत्विक्-विशेष। ([illegible])

उपस्थान (सं० क्ली०) उप-स्था-ल्युट्। १ उपस्थिति, हाजिरी। २ आगमन, आमद। ३ अभ्युत्थान, समाज। ([illegible]) ४ उपासना, परस्तिश। ([illegible]) ५ उपदेश, शरकार। '[illegible]' ([illegible]) ६ पवित्रस्थान, गुरुकी स्थान। ६ सभा, मजलिस। ७ तीर्थस्थान, मठ। ८ प्राप्ति, हासिल।

उपस्थानशाला (सं० स्त्री०) बौद्ध मठकी सभाका भवन।

उपस्थानीय (सं० त्रि०) उप-स्था-अनीयर्। [illegible] १ उपासक, परस्तिश करनेवाला। '[illegible]' ([illegible]) कर्मणि अनीयर्। २ उपास्य, जो परस्तिश किये जानेके काबिल हो।

उपस्थापक (सं० त्रि०) उप-स्था-णिच्-ण्वुल्। १ प्रकाशक, बयान करनेवाला। २ स्मारक, किसी दिलमें चीज जमानेवाला। ३ समीप लानेवाला, जो पास लाता हो।

उपस्थापन (सं० क्ली०) उप-स्था-णिच् भावे ल्युट्। १ उपस्थितकरण, पहुंचानेका काम। २ प्रकाश, बयान। ३ आनयन, लाई।

उपस्थापनीय (सं० त्रि०) समीप उपस्थित किये जानेके योग्य, जो नजदीक लाये जानेके काबिल हो।

उपस्थापयितव्य, [illegible] देखो।

उपस्थापित (सं० त्रि०) निकटानीत, नजदीक रखा हुआ।

उपस्थाप्य (सं० त्रि०) निकट आनयन किये जाने योग्य, जो लिवाया या दिखाया जाता हो।

उपस्थाय (सं० अव्य०) निकट उपस्थित होकर, पास पहुंचके।

उपस्थायक (सं० पु०) १ भृत्य, नौकर। २ बौद्ध मतके अनुसार बुद्धका अनुचर, जो बुद्धका साथी हो।

उपस्थायिन् (सं० वि०) उपस्थित होनेवाला, जो पास खड़ा हो।

उपस्थावर (सं० पु०) उप-स्था बाहुलकात् वरच्। १ पुरुषमेध यज्ञके एक उपास्य देवता। (शुक्लयजुः ३०।१६) (वि०) २ स्थित रहनेवाला, जो सरकता न हो।

उपस्थित (सं० वि०) उप-स्था-क्त। अनुनयवदुपस्थिते। पा ८।२।१२८। १ समीपस्थित, जो नज़दीक हो। २ समीपागत, पास पहुंचा हुआ। "ऐयङ्गवीनमादाय घोषवृद्धानुपस्थितान्।" (रघु १।४५) ३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ वर्तमान, हाज़िर। ५ प्रकाश्य, खड़ा हुआ। ६ वेदार्थयुक्त, अनार्ष। 'उपस्थितोऽनार्षः।' (सिद्धान्तकौमुदी) ७ स्मृत, याद किया हुआ। ८ सेवित, खिदमत किया हुआ। (क्लो०) भावे क्त। ९ सेवन, खिदमत।

उपस्थितप्रचुपित (सं० क्लो०) छन्दोविशेष। इसमें चार पाद और इक्यावन अक्षर होते हैं।

उपस्थितवक्तृ (सं० पु०) निपुणवाग्मी, खुशगुफ्तार आदमी, बड़ा बोलनेवाला।

उपस्थितसमहार (सं० वि०) युद्धमें प्रवृत्त होनेके लिये सवद्ध, जो लड़ाईमें पड़नेके करीब हो।

उपस्थिता (सं० स्त्री०) १ दशाक्षर-पादक छन्दोविशेष, दश दश अक्षरके चार पादका छन्द। २ एकादशाक्षर पादक छन्दोविशेष, ग्यारह ग्यारह अक्षरके चार पादका एक छन्द।

"तौ जौ गुरुणेयमुपस्थिता।" (छन्दोमञ्जरी)

उपस्थिति (सं० स्त्री०) उप-स्था-क्तिन्। १ उपस्थान, पहुंच। २ वर्तमानता, मौजूदगी। ३ उपासना, परस्तिश। ४ स्मृति, याददाश्त। ५ उद्धरण, बक़ाया।

उपस्थेय (सं० वि०) उप-स्था सेवार्थत्वात् कर्मणि यत्। उपसेव्य, पूजने लायक।

"यशोहरैस्त्वं त्रिदशैरुपस्थिता।" (रामायण १।१।१८)

उपस्नुत (सं० वि०) उप-स्नु-क्त। क्षरित, सड़ागला।

उपस्नेह (सं० पु०) उप-स्निह-घञ्। १ क्लेद, तरी। २ उपलेप, लीप-पोत। ३ स्नेहयुक्तामरस, चिकनाई मिला हुआ अनाजका अर्क।

"मूत्रयुक्त उपस्नेहान् प्रविश्य कुरुतेऽश्मरीम्।" (सुश्रुत)

उपस्पर्श (सं० पु०) उप-स्पृश-घञ्। १ स्पर्श, लम्स। २ स्नान, नहान। ३ आचमन।

उपस्पर्शन (सं० क्लो०) उपस्पर्श भावे ल्युट्। उपस्पर्श देखो।

उपस्पर्शिन् (सं० वि०) स्पर्श कर लेनेवाला, जो छू लेता हो।

उपस्पृश्, उपस्पर्शिन् देखो।

उपस्पृश्य (सं० अव्य०) आचमन करके।

उपस्पृष्ट (सं० वि०) स्पर्श कर लिया गया।

उपस्मृति (सं० स्त्री०) व्यवस्थासम्बन्धीय गौण पुस्तक, क़ानूनकी छोटी किताब। उपस्मृति अष्टादश कही गयी हैं। स्मृति देखो।

उपस्रवण (सं० क्लो०) उप-स्रु भावे ल्युट्। सम्यक्-स्रवण, बहाव, औरतका मुक़र्ररी इदरार।

उपस्वत्व (सं० क्लो०) उपगतं स्वत्वम्। आय, फ़ायदा, ज़मीन् वग़ैरहकी जायदादसे हासिल होनेवाली आमदनी।

उपस्वावत् (सं० पु०) सभाजित्के तृतीय पुत्र। (हरिवंश ३८ अ०)

उपस्वेद (सं० पु०) उप-स्विद् करणे घञ्। १ अन्न्यादिके निकटका ताप, औसन। भावे घञ्। २ उपताप, गर्मी। ३ क्लेद, तरी।

उपहत (सं० वि०) उप-हन-क्त। १ आहत, चोट खाये हुआ। २ उत्पातग्रस्त, तकलीफ़में पड़ा हुआ। ३ तिरस्कृत, झिड़का हुआ। "अतोऽबलोपहतं ..." (किरात) ४ अशुद्ध, नापाक। ५ अभिभूत, दबा हुआ। ६ दूषित, बिगड़ा हुआ। ७ विनाशित, बरबाद किया हुआ। ८ प्रतिबद्ध, रुका हुआ। ९ विघटित, पड़ा हुआ।

उपहतक (सं० वि०) हतभाग्य, बदबख़्त।

उपहतदृक् (सं० वि०) अन्धीकृत, चकाचौंधमें पड़ा हुआ।

उपहतधी (सं० वि०) नष्टज्ञान, दीवाना, बेवकूफ़।

उपहतात्मा (सं॰ त्रि॰) विघ्नित-हृदय, जो दिलमें धक्का खाता हो।

उपहति (सं॰ स्त्री॰) उप-हन-क्तिन्। १ अपघात, मारकाट। २ कार्यमें असामर्थ्य, काम कर न सकनेकी हालत। ३ प्रतिहनन, धक्काधुक्की।

उपहत्नु (वै॰ त्रि॰) आघातक, हनन करनेवाला। ([illegible])

उपहत्या (सं॰ स्त्री॰) नेत्रप्रतिघात, चकाचौंध।

उपहन्तव्य (सं॰ त्रि॰) वधके योग्य, जानसे मारे जानेके काबिल।

उपहन्तृ (सं॰ त्रि॰) उप-हन्-तृच्। विघ्नित कर देनेवाला, जो धक्का देता हो।

उपहरण (सं॰ क्ली॰) उप-हृ-ल्युट्। १ परिवेषण, खानेकी भेंट। २ पशुओंमें आनयन, बलिदान करनेको लाना।

उपहरणीय (सं॰ त्रि॰) परिवेषणीय, भेंट किये जाने लायक।

उपहर्तव्य, उपहरणीय देखो।

उपहर्तृ (सं॰ त्रि॰) उप-हृ-तृच्। परिवेषक, भेंट चढ़ानेवाला।

"[illegible]" ([illegible])

'[illegible]' ([illegible])

उपहव (सं॰ पु॰) उप-ह्वे-अप्। [illegible] १ आह्वान, पुकार। "[illegible]" ([illegible]) २ समीप [illegible]। [illegible] ([illegible])

उपहव्य (सं॰ पु॰) एकाहयज्ञविशेष। उप-हु आधार-[illegible]। [illegible]।

उपहसित (सं॰ क्ली॰) उप-हस भावे क्त। १ उपहास, हंसी-ठट्ठा। निन्दापूर्वक हासको उपहसित कहते हैं। इसमें नाक फुलाते, आंख चढ़ाते और गर्दन हिलाते जाते हैं। (त्रि॰) कर्मणि क्त। २ उपहास किया हुआ, जो हंसी उड़ाया गया हो।

उपहस्त (सं॰ पु॰) प्रतिग्रह, हाथसे दान ग्रहण, हाथमें ले लेनेका काम।

उपहस्तिका (सं॰ स्त्री॰) [illegible] मंजूषा। [illegible]। [illegible], [illegible] छोटी डब्बी या थैली।

उपहार (सं॰ पु॰) उप-हृ-घञ्। १ उपढौकन, भेंट। २ उपढौकनका द्रव्य, नज़रानेकी चीज़। ३ हव्य, आहुति। ४ सम्मान, इज्जत। ५ बलि, कुल-देवकी भेंट। ६ अतिथिको दिया जानेवाला भोजन, जो खाना मेहमानोंको बंटता हो। ७ उपकार, बड़ी खुशी। इसे शैव अपनी उपासनामें देखाते हैं। अट्टहास, नृत्य, गीत, हुडुक्कार, नमस्कार और जप उपहारका अङ्ग है। (त्रि॰) उपगत: हारम्। ८ हारो-पयोगिक, गलेकी खूबसूरती बढ़ानेवाला। (पु॰) ९ हारकीय, गलेके पास।

उपहारक (सं॰ पु॰) हव्य, आहुति।

उपहारी (सं॰ त्रि॰) १ उपढौकन समर्पण करने-वाला, जो नज़राना देता हो। २ आहुति देनेवाला, जो यज्ञ करता हो।

उपहालक (सं॰ पु॰) कुन्तल देश, दाक्षिणात्यके कर्णाटकका एक हिस्सा।

उपहास (सं॰ पु॰) उप-हस भावे घञ्। निन्दा-पूर्वक हास, हंसी ठट्ठा। ([illegible])

उपहासक (सं॰ त्रि॰) १ परिहासशील, दूसरोंकी हंसी उड़ानेवाला। (पु॰) २ चाटुपटु भाड़।

उपहासास्पद (सं॰ क्ली॰) हास्यपात्र, मसखरा।

उपहासी (हिं॰) उपहास देखो।

"[illegible]

[illegible]" ([illegible])

उपहास्य (सं॰ त्रि॰) उप-हस कर्मणि ण्यत्। उपहासके योग्य, जो हंसी उड़ानेके काबिल हो।

उपहित (सं॰ त्रि॰) उप-धा-क्त। १ निहित, रखा हुआ। २ अर्पित, दिया हुआ। ३ वस्तीव स्थापित, नज़दीक रखा हुआ। ४ आरोपित, ऊपर चढ़ाया हुआ। "[illegible]" ([illegible]) ५ उपाधियुक्त, उपमहित। ६ दत्त, दिया हुआ। ७ गृहीत, लिया हुआ।

उपहितभर (सं॰ त्रि॰) भारका परिमाण ले जाने-वाला, जो बोझ ढो रहा हो।

उपही (हिं॰ पु॰) अन्यदेशीय पुरुष, गैर मुल्कका आदमी।

उपहूत (सं॰ त्रि॰) उप-ह्वे-क्त सम्प्रसारणे दीर्घः। समाहूत, बुलाया हुआ।

समाहूति (सं॰ स्त्री॰) उप-ह्वे सम्प्रसारणे क्तिन्। आह्वान, पुकार।

उपहृत (सं॰ त्रि॰) उप-हृ-क्त। १ उपहारस्वरूप-दत्त, नज़रानेके तौरपर दिया हुआ। २ आनीत, लाया हुआ। ३ आहृत, इकट्ठा किया हुआ। ४ उत्सृष्ट, चढ़ाया हुआ।

उपहोम (सं॰ पु॰) प्रधान यज्ञके समीप अग्नि-सोमादि दश देवताओंमें प्रत्येकके उद्देशसे देय दशाहुति और दश दक्षिणायुक्त होमविशेष। (शतपथब्रा॰ ११।४।१।८-१०)

उपह्वर (वै॰ क्ली॰) उप-ह्वृ आधारे घ। १ निर्जन स्थान, पोशीदा जगह।

"अरत्नमुपह्वरे नद्यः।" (ऋक् ८।९६।१५)

'उपह्वरे रहस्यगूढस्थाने।' (सायण)

२ सामीप्य, पड़ोस। (पु॰) ३ रथ, गाड़ी। ४ वक्रता, टेढ़ापन। ५ अवसर्पिणी भूमि, उतार। ६ सोमपात्रकी वक्राकृति।

उपह्वान (सं॰ क्ली॰) उप-ह्वे-ल्युट्। १ आह्वान-कार्य, पुकार। २ मन्त्रोच्चारणपूर्वक आह्वान। (कात्यायन-श्रौ॰ ६।७।१८)

उपांशु (सं॰ पु॰) उपगता अंशवो यत्र। १ जप विशेष।

"शनैरुच्चारयेन्मन्त्रमीषदोष्ठौ प्रचालयेत्।
किञ्चिच्छब्दस्वरं विद्यादुपांशुः स जपः स्मृतः॥" (नारसिंहपुराण)

ईषत् ओष्ठ हिला धीरे-धीरे मन्त्रोच्चारणपूर्वक जो जप किया जाता, वह उपांशु कहलाता है। जप देखो। २ सोमाहुति विशेष। (अव्य॰) ३ निर्जन, चुपके-चुपके। ४ अप्रकाश, छिपकर। ५ अनुच्चारण, बे-बोले। ६ मौन, मन ही मन। (वि॰) ७ निगूढ़, छिपा हुआ।

उपांशुक्रीड़ित (सं॰ त्रि॰) निर्जनमें क्रीड़ा किया हुआ, जो लड़कियोंमें खेला गया हो।

उपांशुयाज (वै॰ पु॰) उपांशु अनुष्ठेयो याज्ञः। यज्ञविशेष। (शतपथब्रा॰ १।६।३।२२)

उपांशुवध (सं॰ पु॰) निर्जनवध, पोशीदगीमें किया हुआ कत्ल

उपाइ, उपाउ (हिं॰) उपाय देखो।

उपाक (वै॰ त्रि॰) १ परस्पर सन्निहित, जुड़ा हुआ। 'उपाके परस्पर समीपगते।' (ऋग्वेदभाष्ये महीधर १२।११) २ निकट, पासवाला। (निघण्टु ३।१८)

उपाकचक्षस् (वै॰ त्रि॰) चक्षुके सम्मुख वर्तमान रूपसे दण्डायमान, जो आंखके सामने हाज़िर खड़ा हो।

उपाकरण (सं॰ क्ली॰) उप-आ-कृ-ल्युट्। १ संस्कार पूर्वक श्रुतिग्रहण। २ संस्कारपूर्वक पशुवध। ३ आरम्भ, शुरू। ४ समीपानयन, नज़दीक लानेका काम।

उपाकर्म (सं॰ क्ली॰ उप-आ-कृ-मनिन्। १ उपाकरण, संस्कारपूर्वक वेदग्रहण। (मनु ४।११९) उपाकर्म देखो। २ आरम्भ, शुरू।

उपाकृत (सं॰ त्रि॰) उप-आ-कृ-क्त। १ यज्ञमें हननके अर्थ ज्ञात संस्कार, देवोद्देशसे वध्य। २ आरब्ध, शुरू किया हुआ। ३ स्तवस्तुति द्वारा प्रेरित। ४ उपद्रुत, आफ़त ढानेवाला। (क्ली॰) भावे क्त। ५ उपाकरण। ६ यज्ञीय पशुका संस्कार। ७ आरम्भ, शुरू। (पु॰) ८ देवोद्देशसे वध्य पशु। ९ दुर्भाग्य, बदकिस्मती। १० अशुभसूचक, व्यापार, बदशिगूनी।

उपाक्ष (सं॰ क्ली॰) १ उपनेत्र, चश्मा। (अव्य॰) चक्षुःसमीप, आंखके सामने।

उपाख्य (सं॰ त्रि॰) चक्षुके द्वारा प्रेक्षणीय, जो आंखसे देखा जा सकता हो।

उपाख्या (सं॰ स्त्री॰) उप-आ-ख्या भावे अ-टाप्। १ प्रत्यक्ष, देख पड़नेवाला। २ शब्दादि द्वारा निर्वाचन।

उपाख्यान (सं॰ क्ली॰) उप-आ-ख्या-ल्युट्। १ पूर्व वृत्तान्त कथन, गुज़रे हालका बयान। २ विशेष कथन, बड़ा बयान।

'चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
उपाख्यानैर्विना तावत् भारतं प्रोच्यते बुधैः॥" (भारत आदि १।१०१)

३ उपन्यास, झूठा क़िस्सा।

उपाख्यानक (सं॰ क्ली॰) क्षुद्र उपाख्यान, छोटी कहानी।

उपागत (सं॰ त्रि॰) उप-आ-गम-क्त। १ स्वयं उपस्थित, खुद आकर पहुंचा हुआ। २ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ३ स्वीकृत, मंजूर किया हुआ। ४ घटित, बना हुआ।

उपागम (सं॰ पु॰) उप-आ-गम-अप्। [illegible] १ स्वीकार, मंजूरी। २ निकट गमन, नजदीक पहुंचनेका काम। ३ विपद्, आफत। ४ अनुभव, तजरबा।

उपाग्नि (सं॰ अव्य॰) अग्निसमीप, आगके पास।

उपाग्र (सं॰ क्ली॰) १ सिरेके समीप भाग, जो हिस्सा सिरेसे लगा हो। २ द्वितीय वेदीका अवयव, दूसरे दरजेका हिस्सा।

उपाकरण (सं॰ क्ली॰) उप-आ-कृ-ल्युट्। संस्कार पूर्वक वेदारम्भ, उपाकर्म।

उपाश्रावण (सं॰ अव्य॰) श्रावण मासकी पूर्णिमाके दिन।

उपाङ्ग (सं॰ क्ली॰) उपमितं अङ्गेन। १ तिलक, टीका। २ अवयव, अङ्गका अङ्ग। सुश्रुतके मतसे मस्तक, उदर, पृष्ठ, नाभि, ललाट, नासिका, चिबुक, बस्ति एवं ग्रीवा एक-एक, कर्ण, आंखें, भ्रू, शङ्ख, स्कन्ध, गण्ड, कक्ष, स्तन, वृषण, पार्श्व नितम्ब, जानु, बाहु तथा ऊरु दो-दो, अङ्गुलि बीस, स्रोत [illegible], अन्य भाग, नख दो, ओष्ठ दो, हृदय, क्लोमा, फुसफुस, यकृत्, प्लीहा, उण्डुक नाल, वस्ति, हार भी, [illegible] [illegible], [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] [illegible], [illegible] भाग, [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] [illegible] [illegible], [illegible] भी, [illegible] दो भी [illegible], [illegible] भी भी, [illegible] [illegible] भी, [illegible] [illegible] भी भाग, [illegible] भाग भी, [illegible] [illegible], और [illegible] [illegible] उपाङ्ग है। ३ [illegible] गौण भाग, [illegible] हिस्सा। [illegible] [illegible] अनुसार [illegible] चार हैं—[illegible], [illegible], [illegible] और [illegible]।

४ [illegible] जैन धर्मशास्त्र विशेष। [illegible] जैन १२ उपाङ्ग मानते हैं—उववाई सूत्र, रायपसेणी सूत्र, जीवाभिगम सूत्र, पन्नवणा सूत्र, जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति सूत्र, चन्द्रप्रज्ञप्ति सूत्र, सूर्यप्रज्ञप्ति सूत्र, निरियावली सूत्र, कप्पिया सूत्र, कप्पवडिंसिया सूत्र, पुप्फिया सूत्र और पुप्फचूलिया सूत्र। ५ गौण विभाग, छोटा हिस्सा। ६ गौण ग्रन्थ, छोटा ग्रन्थ। (पु॰) ७ तिलक, टीका।

उपाङ्गविशिष्टा (सं॰ स्त्री॰) [illegible] [illegible], [illegible] [illegible]। शिव, विष्णु, ब्रह्म, [illegible] और [illegible] [illegible] उपाङ्ग-विशिष्टा कहते हैं। ([illegible])

उपाचरित (सं॰ त्रि॰) १ किसीके [illegible] [illegible] हुआ, [illegible]। (स्त्री॰) २ व्याकरणानुसार सन्धिका एक नियम। इसी प्रकार और इसके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाचार (सं॰ पु॰) १ व्यवहार, बरताव। २ [illegible], कायदा। ३ सन्धिविशेष। इसी प्रकार और इसके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाजार्थ (सं॰ पु॰) [illegible] [illegible]।

उपाज्ञान (सं॰ क्ली॰) उप-अञ्ज-ल्युट्। १ [illegible], लिपाई। "[illegible]" ([illegible])
२ गोमयादि द्वारा अनुलेपन, गोबर वगैरह [illegible] [illegible] काम। ३ [illegible] [illegible]।

उपाटना, उपाड़ना, [illegible] देखो।

उपात्त (सं॰ त्रि॰) उप-आ-दा-क्त। १ गृहीत, लिया हुआ। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ स्वीकृत, पसन्द किया हुआ। ४ [illegible], [illegible] किया हुआ। ५ निर्मित, बनाया हुआ। ६ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ७ [illegible], [illegible] किया हुआ। ८ [illegible], कामसे लाया हुआ। ९ [illegible] किया हुआ, जो [illegible] हो। १० [illegible]-निर्दिष्ट, [illegible] किया हुआ। ११ अनुमोदित, [illegible] हुआ। (पु॰) १२ [illegible], जो [illegible] [illegible] [illegible] न हो।

(सं॰ त्रि॰) [illegible], [illegible] [illegible]।

उपात्तशस्त्र (सं॰ त्रि॰) शस्त्र ग्रहण करता हुआ, हथियार बन्द।

उपात्यय (सं॰ पु॰) उप-अति-इन्-अच्। १ लोकाचार अतिक्रम, राह-रस्मसे बेपरवाई। २ व्यतिक्रम, बेहद्दा काम। ३ नाश, बरबादी।

उपादान (सं॰ क्ली॰) उप-आ-दा-ल्युट्। १ ग्रहण, इस्तेमाल। २ न्यायके मतसे समवायि-कारण, नज़दीकी सबब। जो पदार्थ अवस्थान्तरको प्राप्त हो अपर वस्तु उपजाता अथवा जिससे कुछ बनाया जाता, वही उपादान कारण कहलाता है। जैसे—घटका उपादान मृत्तिका और अलङ्कारका उपादान स्वर्ण है। ३ सांख्यके मतमें कार्यसे अभिन्न कारण, कामसे मिला हुआ सबब। ४ सांख्यके मतसे सिद्ध आध्यात्मिक तत्त्वविशेष।

"आध्यात्मिकाश्च प्रकृत्युपादानकालभाग्याख्याः। बाह्याविषयो परमात् पञ्च नव तुष्टयोऽभिमताः।"

५ वर्णन, शुमार। ६ कथन, गुफ्तार। ७ सम्मिलन, शामिल होनेकी बात। ८ इन्द्रियनिग्रह। ९ अभिप्राय, मतलब। १० दूना अर्थ, दुचन्दमानी। ११ बौद्ध मतानुसार शरीर वा वाणीकी चेष्टा, जिस्म या ज़ुबान्की कोशिश।

उपादान कारण (सं॰ क्ली॰) समवायी कारण, नज़दीकी सबब।

उपादानलक्षण (सं॰ स्त्री॰) अजहत्स्वार्थारूप लक्षणाविशेष।

"मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये।
स्यादात्मनोऽप्युपादानादेषोपादानलक्षणा।" (साहित्यदर्पण)

उपादिक (सं॰ पु॰) उप-अद-इन् संज्ञायां कन्। कीट भेद, किसी किस्मका कीड़ा।

उपादेय (सं॰ त्रि॰) उप-आ-दा कर्मणि यत्। १ ग्राह्य, लेने लायक। २ उत्तम, अच्छा। ३ उत्कृष्ट, बढ़िया। (शाकुन्तल १।१९) ४ विधेय, किये जानेके काबिल।

उपाधान (सं॰ क्ली॰) उपधान, तकिया।

उपाधि (सं॰ पु॰) उपाधीयते गुणादयोऽनेनेति, उप-आ-धा-कि। उपसर्गे घोः किः पा ३।३।९२। १ धर्मचिन्ता, फलकी फिक्र। २ विशेषण, सिफ्त। ३ कुटुम्बव्यापृत, लोगोंका असली चलन। ४ जाति धर्म प्रभृति परिचायक शब्द। ५ छल, धोका। ६ आधार, टेक। ७ कारण, मामूली नतीजेके लिये कोई खास सबब। ८ सम्वृद्धि, बढ़ती। ९ न्यायके मतमें जातिसे भिन्न धर्म, जो सिफ्त कौमसे अलग हो। यह दो प्रकारका होता है—सखण्ड और अखण्ड। आकाशत्वादि सखण्ड और प्रतियोगित्वादि अखण्ड है। (सिद्धान्तचन्द्रोदय) १० व्यभिचारज्ञानद्वारा व्याप्तिज्ञानका प्रतिबन्धक। जैसे—

"धूमवान् वह्नेरित्यादावार्द्रेन्धनमुपाधिः।" (न्यायसिद्धान्तमञ्जरी)

धूमवान् वह्नि कहनेसे आर्द्र काठ उसका उपाधि हो जाता है। यह चार प्रकारका होता है—केवल साध्यव्यापक, पक्षधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक, साधनावच्छिन्नसाध्यव्यापक और उदासीनधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक। (तर्कदीपिका) ११ अलङ्कार मतसे जाति गुण क्रियाका यदृच्छास्वरूप। १२ सम्मानसूचक शब्द, खिताब।

उपाधिक (सं॰ त्रि॰) अधिक, ज्यादा, ऊपरी।

उपाधेय (सं॰ त्रि॰) उप-आ-धा कर्मणि यत्। १ अभिनिवेशनीय, लगाने लायक। २ आरोपयोग्य, लगानेकाबिल। ३ उपाधिके योग्य, खिताबके लायक।

उपाधी (सं॰ त्रि॰) उत्पाती, ऊधम उठानेवाला।

उपाध्या (हिं॰) उपाध्याय देखो।

उपाध्याय (सं॰ पु॰) उपेत्य अधीयतेऽस्मात्, उप-अधि-इ-घञ्। १ अध्यापक, उस्ताद। २ वेदके एक देशका अध्यापक।

"एकदेशन्तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः।
योऽध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते॥" (मनु २।१४१)

जो व्यक्ति अपनी जीविकाके निर्वाहके लिये वेदका कोई अंश या वेदाङ्ग पढ़ाता, वह उपाध्याय कहलाता है। उपाध्याय आचार्यसे छोटा होता है। क्योंकि कल्प एवं उपनिषद्के साथ सम्पूर्ण वेद पढ़ाना आचार्यका काम है।

३ कान्यकुब्ज प्रभृति ब्राह्मण जातिका एक उपाधि। ४ भुकसा नामक पंवार राजपूतोंका एक उपाधि।

उपास्थानक (सं॰ क्ली॰), क्षुद्र उपन्यास, छोटी कहानी।

उपागत (सं॰ त्रि॰) उप-आ-गम-क्त। १ स्वयं उपस्थित, खुद आकर पहुंचा हुआ। २ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ३ स्वीकृत, मञ्जूर किया हुआ। ४ घटित, पड़ा हुआ।

उपागम (सं॰ पु॰) उप-आ-गम-अप्। ग्रहवृदृनिश्चिगमश्च। पा ३।३।५८। १ स्वीकार, मञ्जूरी। २ निकट गमन, नजदीक पहुंचनेका काम। ३ विघटन, वाकिया। ४ अनुभव, तजरबा।

उपाग्नि (सं॰ अव्य॰) अग्निसमीप, आगके पास।

उपाग्र (सं॰ क्ली॰) १ सिराके समीप भाग, जो हिस्सा सिरेसे लगा हो। २ द्वितीय श्रेणीका अवयव, दूसरे दरजेका हिस्सा।

उपाग्रहण (सं॰ क्ली॰) उप-आ-ग्रह-ल्युट्। संस्कार पूर्वक वेदारम्भ, उपाकर्म।

उपाग्रहायण (सं॰ अव्य॰) अग्रहायण मासमें पूर्णिमासीके दिन।

उपाङ्ग (सं॰ क्ली॰) उपमितं अङ्गेन। १ तिलक, टीका। २ प्रत्यङ्ग, अङ्गका अङ्ग। महर्षि सुश्रुतके मतसे मस्तक, उदर, पृष्ठ, नाभि, ललाट, नासिका, चिबुक, बस्ति एवं ग्रीवा एक-एक, कर्ण, नासा, भ्रू, शङ्ख, स्कन्ध, गण्ड, कक्ष, स्तन, मुष्क, पार्श्व नितम्ब, जानु, बाहु तथा ऊरु दो-दो, अङ्गुलि बीस, त्वक् सात, कला सात, वक्ष दो, कोष दो, हृदय, प्लीहा, फुसफुस, यकृत्, क्लोम, आशय सात, अन्त्र, द्वार नौ, प्रधान शिरा सोलह, जाल बारह, कूर्च छह, रज्जु चार, सेवनी सात, अस्थिमिलनके स्थान पन्द्रह, सीमान्त अठारह, अस्थि तीन सौ, अस्थिसन्धि दो सौ दस, स्नायु नौ सौ, पेशी पांच सौ, मर्मस्थान एक सौ सात, सिरा सात सौ, धमनी चौबीस, और योगवहा नाड़ी समस्त उपाङ्ग हैं। ३ विद्याका गौण भाग, इल्मका मामूली हिस्सा। हमारे शास्त्रके अनुसार उपाङ्ग चार हैं—पुराण, न्याय, मीमांसा और धर्मशास्त्र।

"पुराण-न्याय-मीमांसा-धर्मशास्त्राणि चेति चत्वारि उपाङ्गानि।" (शब्दरत्ना॰)

४ श्वेताम्बर जैन धर्मशास्त्र विशेष। श्वेताम्बर जैन १२ उपाङ्ग मानते हैं—उववाई सूत्र, रायपसेनी सूत्र, जीवाभिगम सूत्र, पन्नवणासूत्र, जम्बूद्वीपपन्नत्ति सूत्र, चन्द्रपन्नत्ति सूत्र, सूर्यपन्नत्ति सूत्र, निरियावली-सूत्र, कप्पियासूत्र, कप्पवडिंसियासूत्र, पुप्फियासूत्र और पुप्फचूलियासूत्र। ५ गौण विभाग, छोटा हिस्सा। ६ गौण कर्म, छोटा काम। (पु॰) ७ चित्रक, चीते।

उपाङ्गचिकित्सा (सं॰ स्त्री॰) छिन्नादि प्रतीकार, जखमका इलाज। छिन्न, भिन्न, भग्न, क्षत और दग्धाङ्गके दग्धप्रतीकारको उपाङ्ग-चिकित्सा कहते हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

उपाचरित (सं॰ त्रि॰) १ किसीकी सेवामें लगा हुआ, फरमानबरदार। (स्त्री॰) २ व्याकरणानुसारसन्धिका एक नियम। इसमें ककार और पकारके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाचार (सं॰ पु॰) १ स्थान, जगह। २ क्रम, कायदा। ३ सन्धिविशेष। इसमें ककार और पकारके पूर्व विसर्गका सकार हो जाता है।

उपाचार्य (सं॰ पु॰), आचार्यका सहकारी।

उपाञ्जन (सं॰ क्ली॰) उप-अञ्ज-ल्युट्। १ लेपन, लिपाई। "मार्गशोधनमेवं तत्र पुनः पाकेन मद्यमदम्।" (मनु ३।२११) २ गोमयादि द्वारा अनुलेपन, गोबर वगैरहसे लीपनेका काम। ३ अञ्जनाधार वस्त्रादि।

उपाटना, उपाड़ना, उखाड़ना देखो।

उपात्त (सं॰ त्रि॰) उप-आ-दा-क्त। १ गृहीत, लिया हुआ। २ प्राप्त, मिला हुआ। ३ गुणागुण-विवेचित, पसंद किया हुआ। ४ संगृहीत, इकट्ठा किया हुआ। ५ निर्मित, बनाया हुआ। ६ अनुभूत, मालूम किया हुआ। ७ अन्तर्भूत, शामिल किया हुआ। ८ व्यवहृत, काममें लाया हुआ। ९ आरब्ध किया हुआ, जो शुरू हो। १० यथाक्रम-निर्दिष्ट, सिलसिलेवार गिना हुआ। ११ अनुमोदित, माना हुआ। (पु॰) १२ मददगार, जो हाथी मतवाला न हो।

उपात्तरंहस (सं॰ त्रि॰) शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

उपात्तशस्त्र (सं॰ वि॰) शस्त्र ग्रहण करता हुआ, हथियार बन्द।

उपात्यय (सं॰ पु॰) उप-अति-इन्-अच्। १ लोकाचार अतिक्रम, राह-रस्मसे बेपरवाई। २ व्यतिक्रम, बेहूदा काम। ३ नाश, बरबादी।

उपादान (सं॰ क्ली॰) उप-आ-दा-ल्युट्। १ ग्रहण, इस्तेमाल। २ न्यायके मतसे समवायि-कारण, नज़दीकी सबब। जो पदार्थ अवस्थान्तरको प्राप्त हो अपर वस्तु उपजाता अथवा जिससे कुछ बनाया जाता, वही उपादान कारण कहलाता है। जैसे—घटका उपादान मृत्तिका और अलङ्कारका उपादान स्वर्ण है। ३ सांख्यके मतमें कार्यसे अभिन्न कारण, कामसे मिला हुआ सबब। ४ सांख्यके मतसे सिद्ध आध्यात्मिक तत्त्वविशेष।

"आध्यात्मिकाश्च प्रकृत्युपादानकालभाग्याख्याः। बाह्यविषयो परमात् पञ्च नव तुष्टयोऽभिमताः॥"

५ वर्णन, शुमार। ६ कथन, गुफ्तार। ७ सम्मिलन, शामिल होनेकी बात। ८ इन्द्रियनिग्रह। ९ अभिप्राय, मतलब। १० दूना अर्थ, दुचन्दमानी। ११ बौद्ध मतानुसार शरीर या वाणीकी चेष्टा, जिस्म या ज़बानकी कोशिश।

उपादान कारण (सं॰ क्ली॰) समवायी कारण, नज़दीकी सबब।

उपादानलक्षण (सं॰ स्त्री॰) अजहत्स्वार्थारूप लक्षणाविशेष।

"मुख्यार्थस्येतराक्षेपो वाक्यार्थेऽन्वयसिद्धये।
स्यादात्मनोऽप्युपादानादेषोपादानलक्षणा।" (साहित्यदर्पण)

उपादिक (सं॰ पु॰) उप-अद-इन् संज्ञायां कन्। कीट भेद, किसी किस्मका कीड़ा।

उपादेय (सं॰ त्रि॰) उप-आ-दा कर्मणि यत्। १ ग्राह्य, लेने लायक। २ उत्तम, अच्छा। ३ उत्कृष्ट, बढ़िया। (मालतीमाधव १।१९) ४ विधेय, किये जानेके काबिल।

उपाधान (सं॰ क्ली॰) उपधान, तकिया।

उपाधि (सं॰ पु॰) उपाधीयन्ते गुणादयोऽनेनेति, उप-आ-धा-कि। उपसर्गे घोः किः पा ३।३।९२। १ धर्मचिन्ता, फ़र्ज़की फ़िक्र। २ विशेषण, सिफ़त। ३ कुटुम्बव्यापृत, लोगोंका असली चलन। ४ जाति वंश प्रभृति परिचायक शब्द। ५ छल, धोका। ६ आधार, टेक। ७ कारण, मामूली नतीजेके लिये कोई खास सबब। ८ समृद्धि, बढ़ती। ९ न्यायके मतमें जातिसे भिन्न धर्म, जो सिफ़त क़ौमसे अलग हो। यह दो प्रकारका होता है—सखण्ड और अखण्ड। आकाशत्वादि सखण्ड और प्रतियोगित्वादि अखण्ड है। (सिद्धान्तचन्द्रोदय) १० व्यभिचारज्ञानद्वारा व्याप्तिज्ञानका प्रतिबन्धक। जैसे—

"धूमवान् वह्नेरित्यादावार्द्रेन्धनमुपाधिः।" (न्यायसिद्धान्तमञ्जरी)

धूमवान् वह्नि कहनेसे आर्द्र काठ उसका उपाधि हो जाता है। यह चार प्रकारका होता है—केवल साध्यव्यापक, पक्षधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक, साधनावच्छिन्नसाध्यव्यापक और उदासीनधर्मावच्छिन्न साध्यव्यापक। (तर्कदीपिका) ११ अलङ्कार मतसे जाति गुण क्रियाका यदृच्छास्वरूप। १२ सम्मानसूचक शब्द, खिताब।

उपाधिक (सं॰ त्रि॰) अधिक, ज़्यादा, ऊपरी।

उपाधेय (सं॰ वि॰) उप-आ-धा कर्मणि यत्। १ अभिनिवेशनीय, जमाने लायक। २ आरोपयोग्य लगानेकाबिल। ३ उपाधिके योग्य, खिताबके लायक।

उपाधी (सं॰ त्रि॰) उत्पाती, ऊधम उठानेवाला।

उपाध्या (हिं॰) उपाध्याय देखो।

उपाध्याय (सं॰ पु॰) उपेत्य अधीयतेऽस्मात्, उप-अधि-इ-घञ्। १ अध्यापक, उस्ताद। २ वेदके एक देशका अध्यापक।

"एकदेशन्तु वेदस्य वेदाङ्गान्यपि वा पुनः।
योऽध्यापयति वृत्त्यर्थमुपाध्यायः स उच्यते॥" (मनु २।१४१)

जो व्यक्ति अपनी जीविकाके निर्वाहके लिये वेदका कोई अंश या वेदाङ्ग पढ़ाता, वह उपाध्याय कहलाता है। उपाध्याय आचार्यसे छोटा होता है। क्योंकि कल्प एवं उपनिषद्के साथ सम्पूर्ण वेद पढ़ाना आचार्यका काम है।

३ कान्यकुब्ज प्रभृति ब्राह्मण जातिका एक उपाधि। ४ शुकसा नामक पंवार राजपूतोंका एक उपाधि।

उपाध्याया (सं॰ स्त्री॰) उपाध्याय-स्त्रियां टाप्। अध्यापिका, पढ़ानेवाली औरत।

उपाध्यायानी (सं॰ स्त्री॰) उपाध्याय-ङीष्-आनुक्। [illegible] । पा [illegible]। उपाध्यायपत्नी, उस्तादकी औरत।

उपाध्यायी, उपाध्यायानी देखो।

उपान (हिं॰ स्त्री॰) १ भवनका संस्थान, मकानकी कुरसी। २ स्तम्भाधार, खम्भेकी चौकी।

उपानः (वै॰ त्रि॰) १ शकटसदृश, गाड़ी-जैसा। २ विषसदृश, बाप-जैसा।

उपानत् (सं॰ स्त्री॰) उपनह्यते पादो अनया, उप-नह्-क्विप् पूर्वपदस्य दीर्घः। नहिवृतिवृषिव्यधिरुचिसहितनिषु क्वौ। पा ६।३।११६ चर्मपादुका, चमड़ेकी जूती। "कार्ष्णी उपानहा उपमुञ्चते।" (तैत्तिरीयब्रा॰ १।७।९।४)

उपानद—हिण्डोल रागका एक भेद।

उपानद्धारण (सं॰ क्ली॰) चर्मादिकी पादुका धारण, चमड़े वगैरहकी जूतीका पहनाव। यह नेत्रको सुख देनेवाला, आयुष्य बढ़ानेवाला, पादका रोग मिटानेवाला, सुख देखानेवाला, ओज बढ़ानेवाला, और बलवीर्य लानेवाला होता है। क्योंकि नङ्गे पांव सदा घूमनेसे मनुष्य रोगी, आयुष्यसे हीन, हतइन्द्रिय और अन्ध हो जाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

उपाना (हिं॰ क्रि॰) उत्पन्न करना, बनाना।

उपानुवाक्य (सं॰ त्रि॰) उप-अनु-वच्-ण्यत्। १ पश्चात् कथनयोग्य, पीछे कहे जानेके काबिल। यह शब्द अग्निका विशेषण है। (क्ली॰) २ वेदोक्त वाक्य भेद, तैत्तिरीय-संहिताका एक अंश।

उपान्त (सं॰ त्रि॰) उपगतमन्तं न। १ निकट, समीप, नजदीक। (क्ली॰) २ प्रान्तभाग, लगा हुआ हिस्सा। "उपान्तभागेषु च रोचनाङ्कः।" (कुमार) ३ तीर, किनारा। ४ चक्षुका कोण, आंखका कोना। ५ एक व्यतिरेक अन्तिम अक्षर, सिवा एकके आखिरी हर्फ।

उपान्तवर्ण (सं॰ पु॰) अन्त्यवर्णका पूर्व-वर्ण, आखिरी हर्फके पहलेका हर्फ। जैसे वयस् शब्दमें हस्व सकारके पहले तालव्य यकारका परवर्ती वर्ण अकार उपान्तवर्ण है।

उपान्तसर्पी (सं॰ त्रि॰) समीप आगमन करने-वाला, जो पास आ रहा हो।

उपान्तिक (सं॰ क्ली॰) उप अन्तिकं अन्तिकम्, प्रादिसमा॰। १ निकट, नजदीक। (त्रि॰) २ समीपस्थ, पड़ोसी, पास पहुंचनेवाला।

उपान्त्य (सं॰ त्रि॰) उप-अन्त-यत्। निकटवर्ती, पास पहुंचनेवाला। (पु॰) २ चक्षुका कोण, आंखका कोना। (क्ली॰) ३ नैकट्य, पड़ोस।

उपाप्ति (सं॰ स्त्री॰) उप-आप-क्तिन्। प्राप्ति, हासिल, पहुंच।

उपावृति (वै॰ स्त्री॰) उप-आ-वृ-क्तिप्-तुक्। [illegible] पा ६।१।७१ उपाहरण, नजदीक लानेका काम। (ऋक् १।१६८।१) 'उपावृति उपाहरणे।' (सायण)

उपाय (सं॰ पु॰) उप-अय-भावे घञ्। १ उपगम, नजदीक पहुंचनेकी बात। २ शत्रादिके शत्रु वशी-भूत करनेका हेतु, दुश्मनपर फतेह पानेका जरिया। यह चार प्रकारका होता है—साम, दाम, भेद और दण्ड। किसीके मतसे उपाय सात प्रकारका है—साम, दाम, भेद, दण्ड, माया, उपेक्षा और इन्द्रजाल। शेषोक्त तीन उपाय सामान्य समझे जाते हैं। एतद्भिन्न व्यावहारिक दो प्रकारके दूसरे भी उपाय बताते हैं।

३ साधन, सबब। यह दो प्रकारका है—लौकिक और अलौकिक। घटादि निर्माणके लिये चक्रादि लौकिक और स्वर्गगमनके पक्षमें याग-यज्ञादि अलौकिक उपाय है। ४ उपार्जन, दौलत हासिल करनेका जरिया। ५ छल, धोखा। ६ प्रति-कारका पथ, रोकको राह। ७ उपक्रम, सिलसिला।

उपायचतुष्टय (सं॰ क्ली॰) शत्रुको पराभूत कर-नेके लिये साम, दाम, दण्ड और भेदरूप चार प्रका-रका उपाय।

उपायचिन्ता (सं॰ स्त्री॰) साधनका विचार, तद-बीरकी फिक्र।

उपायज्ञ (सं॰ त्रि॰) उपायको समझनेवाला, जो तदबीर निकाल लेता हो।

उपायतुरीय (सं॰ पु॰) दण्डरूप चतुर्थ उपाय, चौथी तदबीर सजा।

उपायत्व (सं० स्त्री०) साधन प्राप्त होनेकी स्थिति, तदबीर निकल आनेकी हालत।
उपायन (सं० क्ली०) उप-इन् वा अय-ल्युट्। १ उपढौकन, भेंट। २. निकट गमन, पहुंच। ३ उपगमन, पास जानेकी हालत। (ऋक् ३।२८।३) 'उपायने उपगमने।' (सायण) कर्मणि ल्युट्। ४ उपढौकनीय द्रव्यादि, भेंटकी चीज़। ५ व्रतादि प्रतिष्ठा।
उपाययोग (सं० पु०) साधनका नियोग, तदबीरके काममें लगाये जानेकी बात।
उपायान्तर (सं० क्ली०) प्रतीकार, इलाज।
उपायिक (सं० त्रि०) आवश्यकर, मायल, रुजू।
उपायिन् (सं० त्रि०) उप-अय-इनि। १ साधन युक्त, तदबीरी। २ उपगन्ता, डौला लगा लेनेवाला। (कात्यायनश्रौतसू० ३।३।१६)
उपायु (वैं० त्रि०) उप-आ-इन उन्। उपगन्ता, पास पहुंच जानेवाला। (यजुस् १।१)
उपार (वै० पु०) उप-ऋ-घञ्। समीप, पड़ोस। (ऋक् ७।८६।६) २ प्रमाद, गलती।
उपार—बम्बईप्रान्तीय कोल्हापुर राज्यके सङ्गतराश। यह दश बारह हज़ारसे कुछ अधिक ग्रामों तथा नगरोंमें बसते हैं। देखनेमें उपार कुनबियों या मालियोंसे मिलते-जुलते हैं। यह देवताको अपने वशमें रखनेका दावा करते हैं। कभी-कभी उपार नदीके किनारे बैठ माल फेरते और अवसर पा स्नान करनेवालोंका माल-असबाब ले भागते हैं। ये यहांसे नमक भी बनाते हैं। इनमें विधवा-विवाह होता है। किसीके मरनेपर दश दिन अशौच रहता है। पञ्चायतसे जातिका झगड़ा मिटाया जाता है। इनमें पढ़े-लिखे और अमीर आदमी कम हैं।
उपारण (सं० क्ली०) उप-आ-ऋ-ल्युट्। अनुपयुक्त स्थान, खराब जगह।
उपारत (सं० त्रि०) उप-आ-रम-क्त। १ प्रत्याहृत, आने-जानेवाला। २ प्रसन्न, खुश। ३ संलग्न, मशगूल।
उपारमा, उपारम्भ देखो।
उपारम (सं० पु०) नियोग, लगाव।
उपारम्भ (सं० पु०) उप-आ-रम्भ-घञ्-नुम्। रभेरश लिटोः। पा ७।१।६३। आरम्भ, शुरू।
उपारूढ़ (सं० त्रि०) वर्धित, बढ़ा हुआ।
उपारूढ़स्नेह (सं० त्रि०) वर्धित प्रीति रखनेवाला, जो अपनी मुहब्बत बढ़ा चुका हो।
उपार्जक (सं० त्रि०) अर्जन कर लेनेवाला, जो कमा खाता हो।
उपार्जन (सं० क्ली०) उप-अर्ज-ल्युट्। १ अर्जनकर लेनेका कार्य, कमाई। २ सेवा, खिदमत। ३ कृषि, खेती। ४ वाणिज्यादिका धनलाभ, रोज़गार वगैरहका फायदा।
उपार्जनीय (सं० त्रि०) अर्जन किये जाने योग्य, जो कमालेनेके काबिल हो।
उपार्जित (सं० त्रि०) प्राप्त, कमाया हुआ।
उपार्थ (सं० त्रि०) अल्प अर्थवाला, नाकाम, जिससे कोई काम न निकले।
उपालब्ध (सं० त्रि०) उप-आ-लभ-क्त। तिरस्कारपूर्वक निन्दित, जो झिड़का और बुरा कहा गया हो।
उपालभ्य (सं० त्रि०) निन्दनीय, जो झिड़काने जानेके काबिल हो।
उपालम्भ (सं० पु०) उप-आ-लभ-घञ्-नुम्। उपसर्गात् खल् घञोः। पा ७।१।६७। १ निन्दापूर्वक तिरस्कार, गाली-गलौज, आड़फटकार। २ विलम्ब, देर।
उपालम्भन (सं० क्ली०) उपालम्भ देखो।
उपालभ्य (सं० त्रि०) अतिरिक्तरूपसे ग्रहण किया जानेवाला, जो ज्यादतीमें लिया जाता हो।
उपालि—बुद्धदेवके एक प्रिय शिष्य। जातिके नापित होते भी ये बुद्धकी कृपासे शाक्यभिक्षुओंमें प्रधान बन गये थे। बौद्ध विनयको इन्होंने नियमित किया। (महावंश)
उपाव (हिं०) उपाय देखो।
उपावर्तन (सं० क्ली०) उप-आ-वृत-ल्युट्। १ पुनर्वार आगमन, वापसी। २ भूमिपर लुण्ठन, ज़मीनपर लोटने-पोटनेका काम। ३ प्राप्ति, पहुंच। ४ समाप्ति, बन्दी।
उपावसायिन् (सं० त्रि०) अधीनस्थ, मातहत।

फल, अर्थवाद और उपपत्ति—इन प्रकारके लिङ्ग द्वारा समस्त वेदान्तका तात्पर्य ब्रह्ममें अवधारण करना श्रवण कहलाता है।

"[illegible]"

उपक्रम और उपसंहार—जिस प्रकरणमें जो विषय प्रति-पादन करते, उस प्रकरणके आदि और अन्तमें उसी विषयके श्रुतियोंको यथाक्रम उपसंहार कहते हैं। जैसे छान्दोग्य उपनिषद्के छठे प्रपाठकमें प्रथमतः "एकमेवा द्वितीयं ब्रह्म" और पश्चात् "ऐतदात्म्यमिदं सर्वं" कहा है। अर्थात् आदिमें ब्रह्मको एक एवं अद्वितीय और अन्तमें जिसको ब्रह्मात्मक बता उपक्रमके साथ उप-संहार लगाया है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यस्य वस्तुनः तन्मध्ये पौनःपुन्येन प्रतिपादनं अभ्यासः। यथा तत्रैवाद्वितीयवस्तुनो मध्ये 'तत्त्वमसि' इति नवकृत्वः प्रतिपादनम्।"

अभ्यास—प्रकरणके मध्य प्रतिपाद्य वस्तुका पुनः पुनः कीर्तन अभ्यास है। यथा उक्त प्रपाठकमें 'तत्त्व-मसि' अर्थात् 'वह परमात्मा तुम्ही हो' नौ बार प्रति-पादित है।

"[illegible]"

अपूर्वता—प्रकरण-प्रतिपाद्य वस्तुके मानान्तरका अविषयीकरण अपूर्वता कहलाता है। जैसे उक्त प्रपा-ठकमें अर्थात् 'उसी उप-निषद्के प्रतिपाद्य पुरुषका विषय पूछता हूं' कहकर प्रकरण-प्रतिपाद्य परब्रह्मको वेदान्तसिद्ध प्रमाण द्वारा अप्राप्ति दिखाना ही अपूर्वता है।

"फलन्तु प्रकरणप्रतिपाद्यार्थस्य तत्र तत्र श्रूयमाणं प्रयोजनम्। यथा तत्रैव 'आचार्यवान् पुरुषो वेद तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ सम्पत्स्य' इत्यद्वितीयवस्तुज्ञानस्य तत्प्राप्तिः श्रूयते।"

फल—प्रकरण-प्रतिपाद्य अनुष्ठानके फलकी श्रुति अथवा श्रूयमाण प्रयोजनका नाम फल है। जैसे उसी प्रपाठकमें "आचार्यवान् पुरुषः" अर्थात् 'पुरुष आचार्यवान् है' इत्यादि सन्दर्भ द्वारा परब्रह्ममें ज्ञाना-नुष्ठानको ब्रह्मप्राप्ति-रूप फलश्रुति सुनायी है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यस्य तत्र तत्र प्रशंसनमर्थवादः। यथा तत्रैव 'उत तमादेशमप्राक्ष्यो येनाश्रुतं श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातम्' इत्यद्वितीयवस्तु-प्रशंसनम्।"

अर्थवाद—प्रकरणप्रतिपाद्य वस्तुको स्थान-स्थानपर होनेवाली प्रशंसा अर्थवाद कहलाती है। जैसे उसी प्रपाठकमें "उतत्मादेशमप्राक्ष्यः" अर्थात् 'तुमने क्या पूछा जिसके श्रुत होनेसे कुछ अश्रुत नहीं रहता' इत्यादि और "अविज्ञातं विज्ञातम्" अर्थात् 'जिसके जाननेसे अज्ञात वस्तु भी विज्ञात हो जाता है' इस सन्दर्भ द्वारा प्रतिपाद्य परब्रह्मकी प्रशंसा की गयी है।

"प्रकरणप्रतिपाद्यार्थसाधने तत्र तत्र श्रूयमाणा युक्तिरुपपत्तिः। यथा तत्रैव यथा सोम्यैकेन मृत्पिण्डेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्याद् वाचारम्भणं विकारो नामधेयं मृत्तिकेत्येव सत्यम् इत्यादावद्वितीयवस्तुसाधने विकारस्य वाचारम्भणमात्रत्वे युक्तिः श्रूयते।"

उपपत्ति—प्रकरण-प्रतिपाद्य अर्थकी सत्यता ठह-रानेके लिये जो युक्ति दी जाती है, वही उपपत्ति है। जैसे उसी प्रपाठकमें "यथा सोम्यकेन" अर्थात् 'एक मृत्पिण्डसे' इत्यादि और "मृत्तिके त्येव सत्यम्" अर्थात् 'मृण्मय पात्रादि भी समझ पड़ते हैं। विकार और नाम केवल वाक्य मात्र है। मृत्तिका ही यथार्थ है' इस सन्दर्भ द्वारा अद्वितीय वस्तुके प्रतिपादनमें विकार अर्थात् जड़ जगत्को वाक्यमात्रताका युक्ति प्रदर्शित है।

"मननन्तु श्रुतस्याद्वितीयवस्तुनो वेदान्तानुगुणयुक्तिभिरनवरतमनु-चिन्तनम्।"

मनन—वेदान्तकी अविरोधिनी युक्तिसे श्रुत अद्वि-तीय परब्रह्म वस्तुकी निरन्तर चिन्ताका नाम मनन है।

"विजातीयदेहादिप्रत्ययरहिताद्वितीयवस्तुसजातीयप्रत्ययप्रवाहो निदिध्यासनम्।"

निदिध्यासन—जड़ पदार्थके विरोधी ज्ञानकी और अद्वितीय ब्रह्मवस्तुका-जो अविरोध विज्ञान बहता है, उसीको शास्त्रमें निदिध्यासन कहा है। इस—श्रवण, मनन और निदिध्यासनकी उपासनासे योगसिद्धि होने-पर परम पदार्थ परब्रह्म मिल सकता है।

योगसे उक्त श्रवण, मनन और निदिध्यासन सिद्ध होता है। जीवात्मा और परमात्माके संयोगको योग कहते हैं। योगके आठ अङ्ग हैं। अब अष्टाङ्ग योग और उसका विशेष विवरण बतलाते हैं।

"ज्ञानं योगात्मकं विद्धि योगश्चाष्टाङ्गसंयुतम्।
संयोगो योग इत्युक्तो जीवात्मपरमात्मनोः॥" (योगियाज्ञवल्क्य)

ज्ञान योगात्मक है अर्थात् योग ही ज्ञान बनता है। और परमात्माके साथ जीवात्माका संयोग योग कहलाता है। योगके आठ अंग हैं।

"यमश्च नियमश्चैव आसनञ्च तथैव च।
प्राणायामस्तथा गार्गि प्रत्याहारश्च धारणा॥
ध्यानं समाधिरेतानि योगाङ्गानि वरानने॥"

हे वरानने गार्गि! यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि आठ योगके अङ्ग होते हैं।

सकल अष्टाङ्गके प्रकारका भेद यह है—

"यमश्च नियमश्चैव दशधा सम्प्रकीर्त्तितः।
आसनान्युत्तमान्यष्टौ त्रयं तेषूत्तमोत्तमम्॥
प्राणायामस्त्रिधा प्रोक्तः प्रत्याहारश्च दशधा।
धारणं दशधा प्रोक्तं ध्यानं षोढा प्रकीर्त्तितम्॥
त्रयमेषु समाः प्रोक्ता समाधेरेककल्पना।
बहुधा केचिदिच्छन्ति विस्तरेण पृथक् पृथु॥"

यम—अहिंसा, सत्य, अस्तेय (अचौर्य), ब्रह्मचर्य, दया, आर्जव (सारल्य), क्षमा, धृति, परिमिताहार और शौच इन दश प्रकारका यम होता है। इसमें भी

"सत्यं भूतहितं प्रोक्तं न यथार्थाभिभाषणम्।"

सत्य—प्राणियोंका हितकर वाक्य ही सत्य है। केवलमात्र यथार्थ भाषणको सत्य नहीं कहते।

—काया, मन और वाक्यसे परद्रव्यके प्रति जो निस्पृहा रहती है, उसीको विद्वन्मण्डलीने अस्तेय कहा है।

ब्रह्मचर्य—सर्वत्र, सर्वथा तथा सर्वावस्थामें काया, मन और वाक्यसे मैथुन छोड़नेका नाम ब्रह्मचर्य है।

—काया, मन और वाक्यसे समस्त प्राणियों पर अनुग्रह रखनेकी इच्छाका नाम दया है।

आर्जव—प्रवृत्ति और निवृत्तिमें जो समभाव रहता है, उसीको योगी आर्जव कहते हैं।

क्षमा—प्राणियोंके प्रिय और अप्रिय सकल विषयोंमें रहनेवाले समभावको क्षमा कहते हैं।

धृति—अर्थकी हानि, बन्धुका वियोग प्रभृति सकल शोचनीय विषय पुनः पुनः पड़ते भी चित्तमें जो स्थिरता रहती, उसे विद्वन्मण्डली धृति कहती है।

मिताहार—मुनियोंको आठ, अरण्यवासियोंको सोलह गृहस्थोंको बत्तीस और ब्रह्मचारियोंको मनमाने ग्रास ग्रहण करनेका विधान है। इसी विहित ग्रासके भोजनको मिताहार कहते हैं।

शौच—शौच दो प्रकारका होता है—बाह्य और आभ्यन्तर। मृत्तिका तथा जलादि द्वारा गात्रादिके शौचको बाह्य शौच और धर्मानुशीलन एवं अध्यात्म-विद्या द्वारा मनः-शौचको आभ्यन्तर शौच कहते हैं।

नियम—तपस्या, सन्तोष, आस्तिक्य, दान, ईश्वर-पूजा, सिद्धान्तश्रवण, लज्जा, मति, जप और व्रत दश प्रकारका नियम होता है।

आसन—स्वस्तिक, गोमुख, पद्म, वीर, सिंह, भद्र, मुक्त, मयूर प्रभृति कई आसन कहे हैं। आसनसे देह और मनका स्थैर्य सम्पादित होता है।

प्राणायाम—प्राण और वायुके संयोगका नाम प्राणायाम है। प्राणायामके समय रेचक, पूरक और कुम्भक तीन प्रक्रिया करना पड़ती हैं। प्राणायामके द्वारा प्राणवायुको जीत सकते हैं।

प्रत्याहार—सकल इन्द्रिय स्वभावसे ही विषय-सम्भोगके लिये धावमान हैं। उन्हें बलपूर्वक अपने-अपने विषयसे हटाकर रखना प्रत्याहार कहलाता है।

धारणा—यम-नियमादि गुणयुक्त हो मनका आत्मामें अवस्थान धारणा है।

ध्यान—मनोमध्य परमात्माके स्वरूप-चिन्तनको ध्यान कहते हैं।

समाधि—जीवात्मा और परमात्माकी समतावस्थाका नाम समाधि है। कोई कोई कहते हैं, कि समाधिमें सविकल्पक और निर्विकल्पक दो भेद रहते हैं।

ऐसे समस्त उपायों द्वारा परमात्मा परमेश्वरकी उपासना करनेसे अवश्य मोक्ष मिल सकता है।

अन्यान्य उपासनाओंका विवरण पूजा शब्दमें देखो।

उपासनार्थ (सं॰ त्रि॰) उपस्थितिके योग्य, जो हाजिरीके काबिल हो।

उपासनीय (सं॰ त्रि॰) उपासना किये जाने योग्य, जो परस्तिशके काबिल हो।

उपासा (सं॰ स्त्री॰) उप-आस भावे अ-टाप्। १ उपासना, मअबूदकी मुयाम। २ सेवा, खिदमत। (हिं॰ पु॰) १ अन्न-जल ग्रहण न करनेवाला, जो फाके में हो।

उपासादित (सं॰ त्रि॰) उप-आ-सद-णिच्-क्त। १ प्राप्त, हासिल किया हुआ। (क्ली॰) भावे क्त। २ प्राप्ति, हासिल।

उपासित (सं॰ त्रि॰) उप-आस-क्त। १ पूजित, परस्तिश किया हुआ। २ उपासना करनेवाला, जो परस्तिश करता हो।

उपासितव्य (सं॰ त्रि॰) उपासना किया जानेवाला, जो परस्तिश किये जानेके काबिल हो। २ पूर्ण किया जानेवाला, जिसे पूरा करना पड़े। ३ चिन्तनीय, ख़याल किया जानेवाला।

उपासिता (सं॰ त्रि॰) उपासना करनेवाला, जो पूजता हो।

उपासी, उपासित देखो।

उपासीन (सं॰ त्रि॰) निकट बैठा हुआ, जो दखल जमाये हो।

उपास्तमन (सं॰ क्ली॰) सूर्यास्त, गुरूब-आफताब, शाम होना।

उपास्तमय (सं॰ अव्य॰) सूर्यास्तके समय, आफताब गुरूब होनेके वक्त।

उपास्ति (सं॰ स्त्री॰) उप-आस-क्तिन्। १ उपासना, परस्तिश। [illegible] (बृहदारण्यक॰ २) २ सेवा, खिदमत।

उपास्त्र (सं॰ क्ली॰) उपगतमस्त्रम्। अस्त्रोपकरण, दूसरे दरजेका या छोटा हथियार। शूलादिको उपास्त्र कहते हैं।

उपास्थि (सं॰ स्त्री॰) शरीरके कमजोर अस्थि जैसा एक पदार्थ, कुरी, चपनी या मुरमुरी हड्डी। (Cartilage) उपास्थि या कोमलास्थि प्रायः तीन प्रकारका होता है—अस्थिर, स्थायी और आकस्मिक। जीवके देहको प्रथम अवस्थामें जो अस्थिके बदले देख पड़ता, वही अस्थिर है। अस्थि बनना अस्थिके संयोग-स्थानमें उत्पन्न होनेवाला उपास्थि स्थायी कहलाता है। समूहरूपसे मिलनेवाले उपास्थिक मसालेका नाम आकस्मिक है।

उपास्थिक (सं॰ पु॰) मानुषकी एक श्रेणी, किसी फिरकेको मखलूक। जिस मनुष्यके कद्दामें संस्कार नहीं रहते, उसे उपास्थिक कहते हैं।

उपास्य (सं॰ त्रि॰) उप-आस कर्मणि ण्यत्। १ सेव्य, खिदमत किये जानेके काबिल। २ चिन्तनीय, ख़याल किये जानेके काबिल। [illegible] ३ माननीय, इज्जत किये जानेके लायक। (अव्य॰) ४ सेवा करके, खिदमत बजाकर।

उपास्यमान (सं॰ त्रि॰) उपासना किया जाने-वाला, जो परस्तिश पा रहा हो।

उपाहार (सं॰ पु॰) लघ्वाहार, हलका खाना। इसमें केवल फल और मिष्टान्नादि खाते हैं।

उपाहित (सं॰ त्रि॰) उप-आ-धा-क्त। १ आरो-पित, लगाया हुआ। (क्ली॰) २ अग्न्युत्पात, आगका झगड़ा।

उपाहृत (सं॰ त्रि॰) उप-आ-हृ-क्त। १ गृहीत, पकड़ा हुआ। २ समर्पित, नजर किया हुआ, जो दे डाला गया हो।

उपेन्द्र (सं॰ पु॰) वासुदेवके पुत्र और अक्रूरके भ्राता। (हरिवंश [illegible])

उपेक्षक (सं॰ त्रि॰) उप-ईक्ष-ण्वुल्। १ उपेक्षा-कारक, लापरवा। २ धैर्ययुक्त, सब्र करनेवाला।

"[illegible]" (मनु [illegible])

'[illegible]' ([illegible])

उपेक्षण (सं॰ क्ली॰) उप-ईक्ष भावे ल्युट्। १ अना-दर, औदासीन्य, लापरवाई। २ त्याग, तर्क, छोड़ बैठनेका काम। ३ राजाओंका एक उपाय। [illegible]

उपेक्षणीय (सं॰ त्रि॰) उप-ईक्ष-अनीयर्। १ त्याज्य, छोड़ दिये जाने काबिल। २ दर्शकोंकी चेष्टाके अयोग्य, जिसपर लोगकी कोशिश चल न सके।

"[illegible]" ([illegible])

उपेक्षा (सं॰ स्त्री॰) उप-ईक्ष-अ-टाप्। १ त्याग,

तर्क, छोड़ बैठनेकी बात। २ औदासीन्य, लापरवाही। ३ अङ्गीकार, मञ्जूरी। ४ सामान्य उपाय, मामूली तदबीर। ५ अनादर, बेइज्ज़ती।

"कुर्य्यामुपेक्षां हतजीवितेऽस्मिन्।" (रघु १४।४४)

उपेचित (सं० त्रि०) उप-ईक्ष-क्त। १ अनादृत, खयाल न किया हुआ। २ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ३ अवज्ञात, न सुना हुआ। ४ अस्वीकृत, जो मञ्जूर किया न गया हो।

उपेचितव्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेच्य, उपेक्षणीय देखो।

उपेत (सं० त्रि०) उप-इन-क्त। १ उपागत, नज़दीक आया हुआ। २ समीप गत, पास पहुंचा हुआ। ३ प्राप्त, पहुंचा या मिला हुआ। ४ उपनीत, जनेऊ किया हुआ। ५ गर्भाधानके लिये स्त्रीके पास गया हुआ।

"गर्भाधानमुपेतो ब्रह्मगर्भं दन्दधाति।" (हारीत)

उपेति (सं० स्त्री०) प्राप्ति, पहुंच।

उपेतृ (सं० त्रि०) १ समीपगन्ता, पास पहुंचनेवाला। २ आक्रामक, हमला मारनेकी गरज़से चढ़ा हुआ।

उपेनित (सं० त्रि०) अन्तर्गत किया हुआ, जो भीतर लाया गया हो।

उपेन्द्र (सं० पु०) इन्द्रमुपगतः। १ विष्णु, छोटे इन्द्र। वामनावतारमें कश्यपके औरस और अदितिके गर्भसे इन्द्रके पीछे जन्म लेनेके कारण विष्णुका एक नाम उपेन्द्र भी है।

"ममोपरि यथेन्द्रस्त्वं स्थापितो गोभिरीश्वरः।
उपेन्द्र इति कृष्ण त्वां गास्यन्ति दिवि देवताः॥" (हरिवंश ७४।४६)

वामन देखो।

२ नागराज विशेष।

उपेन्द्रभञ्ज—उत्कल देशस्थ गुमसरके एक राजा। उत्कल देशीय कवियोंमें यही सर्वप्रधान रहे। प्रायः सवा तीन सौ वर्ष पहले उपेन्द्रभञ्ज विद्यमान थे।

उपेन्द्रवज्रा (सं० स्त्री०) ग्यारह ग्यारह अक्षरोंके चार एक पादका एक छन्द।

"उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।" (छन्दरत्नाकर)

उपेप्सा (सं० स्त्री०) प्राप्तिकी इच्छा, पानेकी ख़्वाहिश।

उपेय (सं० त्रि०) उप इन् यत्। १ उपायसाध्य, तदबीरसे हो सकनेवाला। २ प्राप्य, मिल सकनेवाला। (मनु ७।२१२) ३ गम्य, जाने लायक़।

उपेयस (सं० त्रि०) उपगत, पास पहुंचा हुआ।

उपैना (हिं० त्रि०) नग्न, उघाड़ा, जो ढका न हो।

उपोढ (सं० त्रि०) उप-वह-क्त। १ निकटस्थ, पासवाला। २ विवाहित, व्याहा हुआ। ३ उपगत, नज़दीक लाया हुआ। ४ सुसज्जित, ठीक किया हुआ। (क्ली०) भावे क्त। ५ व्यूह, बंटाव।

उपोती (सं० स्त्री०) उप-वे-क्त-ङीप्। पूतिका, पोय। (Basella rubra or lucida) यह गुरु, सार और मदघ्न होती है (वाग्भट)। उपोती कषाय, उष्ण, कटुवा, मधुर, रुच्य और निद्रा, आलस्य, विष्टम्भ एवं श्लेष्मकर है। उपोती तीन प्रकारकी होती है,—सामान्य, क्षुद्रपत्र और वनज। रस और वीर्यके विपाकमें दूसरी पहली ही जैसी रहती है। तीसरी तिक्त, कटु और रोचन है। (राजनिघण्टु) यह स्वादु, पाकरस, हृष्य, सर, स्निग्ध, बल्य, श्लेष्मकर, हिम और वात, पित्त तथा मदको दूर करनेवाली है। (सुश्रुत)

उपोत्तम (सं० पु०) १ अन्तिमसे मिला हुआ, जो आख़िरीके पास हो। (क्ली०) २ अन्तिम स्वरसे संलग्न स्वर, जो हर्फ़-इल्लत आख़िरी हर्फ़-इल्लतसे मिला हो।

उपोत्थित (सं० त्रि०) ऊपरको उठा हुआ, जो उठ बैठा हो।

उपोदक (सं० त्रि०) उपगतमुदकम्। १ उदकसमीपस्थ, पानीके पास पड़नेवाला। (याज्ञवल्क्य १।१९) (अव्य०) २ उदकके समीप, पानीके पास।

उपोदका, उपोदकी देखो।

उपोदकी (सं० स्त्री०) उपगतमुदकम्, ङीप्। विदौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। पूतिका, पोय।

उपोदय (सं० अव्य०) सूर्योदयके समय, आफ़्ताब निकलते वक्त, तड़के।

उपोदिका (सं० स्त्री०) उपाधिकमुदकमस्याम्, उत्तरपदस्य चेत्युत्तरपदस्योदादेशः, कप् ततः टाप्। उपोदकी, पुदीना। पूतिका देखो।

उपोदिकातैल (सं० क्लो०) क्षुद्ररोगका एक तैल। पोय, सरसों, नीमकी छाल, मोथ, कुम्हड़ेकी बेल और कुटकी बेल इन सबको जला कर जो हुई भस्म पानीके साथ तेलमें पकाने और मन्थन समय तिलाकेसे यह औषध बनता और पाददाहरोगपर लगता है।

उपोदीका, उपोदिका देखो।

उपोद्ग्रह (सं० पु०) उप-उद् ग्रह-अप्। ग्रास, समझ।

उपोद्घात (सं० पु०) उप समीपे उद्धननम्, उप-उद्-हन्-घञ्। १ उदाहरण, मिसाल। २ प्रारम्भ, शुरू। ३ उपक्रम, दीबाचा।

उपोद्वलक (सं० त्रि०) दृढ़ करनेवाला, जो मजबूत बनाता हो।

उपोद्वलन (सं० क्लो०) उप-उद्-बल-ल्युट्। उत्तेजन, उद्दीपन, इस्तेहकाम, उभार।

उपोष (सं० पु०) उप-उष-घञ्। उपवास, फाका, दिन-रात कुछ न खानेकी हालत। उपवास देखो।

उपोषण (सं० क्लो०) उप-उष-ल्युट्। उपोष देखो।

"[illegible]" (तिथितत्त्व)

उपोषथ (सं० पु०) बौद्ध शास्त्रोक्त उपवास व्रत। इसका अपर नाम पोषध है। शाक्यसिंहने यह व्रत चलाया था। प्रकृत बौद्ध धर्मावलम्बी मात्र इस व्रतको पालन करते थे। यह उपवासकारीकी इच्छाके अनुसार होता है।

उपोषित (सं० त्रि०) उप-उष कर्तरि क्त। १ कृतोपवास, फाका किये हुआ। (क्लो०) २ उपवास, फाका। (मनु ५।१५५)

उपोष्य (सं० त्रि०) उप-वस अकर्मक धातुयोगे कर्मसंज्ञा विधानात् कर्मणि बाहुलकात् यत्। १ उपास करके रहने योग्य, जो फाका करके रहने लायक हो।

"[illegible]" ([illegible])

(अव्य०) २ उपवास करके, फाकेके साथ।

उपोसाथ (हिं०) उपवसथ देखो।

उपोह (सं० पु०) प्रवृद्ध काठ, ढोढाई, जमा कराई।

उपोह्यमान (सं० त्रि०) आरम्भ किया जानेवाला, जो शुरू किया जा रहा हो।

उप्त (सं० त्रि०) वप्यते स्म बीजादिम्, वप-क्त। १ क्षेत्रवपन, बोया हुआ। २ मुण्डित, मूंड़ा हुआ। ३ परिष्कृत, साफ़ किया हुआ। ४ निक्षिप्त, डाला हुआ।

उप्तकृष्ट (सं० त्रि०) बीजके वपन बाद कर्षित, बोकर जोता हुआ।

उप्ति (सं० स्त्री०) वप-क्तिन्। वपन, बोवाई।

उप्तिविद् (सं० पु०) उप्ति-विद्-क्विप्। वपन विधिज्ञ, बोनेका फायदा समझनेवाला।

"बीजानामुप्तिविच्च स्यात् क्षेत्रदोषगुणस्य च।
मानयोगञ्च जानीयात् तुलायोगांश्च सर्वशः॥" (मनु ९।३३०)

उप्खित (सं० त्रि०) वप-क्षि-क्त। [illegible]। वपनजात, बोनेसे निकला हुआ।

उप्पम (हिं० पु०) कार्पास विशेष, किसी किस्मकी कपास। यह मन्द्राज प्रान्तके तिन्नेवेली और कोयम्बातूर जिलेमें होता है।

उप्य (सं० त्रि०) वप् बाहुलकात् क्यप्। वपनीय, बोया जानेके काबिल।

उप्यमान (सं० त्रि०) वपन किया जानेवाला, जो बोया जा रहा हो।

उमाय—बरार प्रान्तस्थ एलिचपुर जिलेकी दर्यापुर तहसीलका एक ग्राम। यह अक्षा० २१° उ० तथा द्राघि० ७७° ३८ १०″ पू० पर अवस्थित और साहधवन मन्दिरके लिये प्रसिद्ध है। हिन्दू और मुसलमान दोनो उक्त मन्दिरमें अर्चना करने आते हैं।

उप्लेटा—काठियावाड़के गोंडाल राज्यका एक बन्दर। यह अक्षा० २१° ४४′ उ० तथा द्राघि० ७०° २० पू० पर जूनागढ़से ८ कोस उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। यहां अनेक धनवान् रहते हैं।

उफ़ (अ० अव्य०) १ हा! हैफ़! आह! २ छिः! छिः! छी! छी!!

"[illegible]" ([illegible])

उफ़क़ (अ० पु०) क्षितिज, देखनेमें आसमानसे मिला मालूम पड़नेवाला जमीनका किनारा।

उफ़तां-ख़ेजां (फ़ा० क्रि० वि०) गिरते-पड़ते।

उफड़ना, उफनना देखो।

उफतादा (फा॰ वि॰) खिल, गैरमज़रूआ, पड़ी।

उफनना (हिं॰ क्रि॰) १ फेन देना, झगयाना, फेनाना। २ विवाद करनेपर उद्यत होना, झगड़ा करनेके लिये कमर कसना।

उफनाना, उफनना देखो।

उफान (हिं॰ पु॰) फेन, झाग, उबाल।

उबकना (हिं॰ क्रि॰) १ वमन करना, ओकना। २ उद्गार छोड़ना, उगल देना।

उबका (हिं॰ पु॰) चल ग्रन्थि, सरकनेवाली गांठ का फन्दा। यह डोरीके किनारे लगता है। उसके को सरकाके लोटा फांसते और फिर कसकर कूएँमें पानी भरनेको डालते हैं।

उबकाई (हिं॰ स्त्री॰) वमनका उद्गार, कैका उभार।

उबछना (हिं॰ क्रि॰) ऊपरको जल फेंकना, उलीचना।

उबट (हिं॰ पु॰) कुमार्ग, बुरी राह।

उबटन (हिं॰ पु॰) अङ्गराग, सौंधा। यह चने या गेहूंके आटेमें हलदी, तेल आदि मसाला डालनेसे बनता है। इससे चमड़ा साफ और मुलायम पड़ जाता है। विवाह होनेसे पहले कई दिन दूल्हा और दूल्हनको उबटन लगता है। चिरौंजीका उबटन बहुत अच्छा होता है।

उबटना (हिं॰ क्रि॰) अङ्गराग लगाना, उबटन मलना।

उबडुब करना (हिं॰ क्रि॰) १ पानीमें डूबना उछलना, गोते खाना। २ आसन्न-मरण होना, मरने लगना।

उबना (हिं॰ क्रि॰) अङ्कुरित होना, जमना।

उबरना (हिं॰ क्रि॰) मुक्ति पाना, बच जाना।

उबराक (हिं॰ पु॰) तल, सतह।

उबरा-सुबरा (हिं॰ वि॰) उच्छिष्ट, बचा-बचाया।

उबलना (हिं॰ क्रि॰) उफनना, ऊपरको उठना।

"गैरको हण्डीमें खुदा सीर पका और उबला।" (लोकोक्ति)

उबसन (हिं॰ पु॰) उबसन, जूना, बरतन मांजनेका खर।

उबसना (हिं॰ क्रि॰) १ पिच्छल पड़ना, चिपचिपाने लगना। २ मलिन होना, बुसा जाना। ३ शिथिल पड़ना, थकना। ४ पात्र परिष्कार करना, बरतन मलना।

उबहन (हिं॰ स्त्री॰) मोटी डोरी, पानी खींचनेका रस्सा।

उबहना (हिं॰ क्रि॰) १ शस्त्र निकालना, हथियार उठाना। २ जल निक्षेप करना, उलीचना। ३ कर्षण करना, जोतना। (वि॰) ४ अनाहत, जूतेसे खाली, नङ्गा।

उबांत (हिं॰ स्त्री॰) वमन, कै।

उबाई (हिं॰ स्त्री॰) उब जानेका भाव, जिस हालतमें ऊबने लगें।

उबाना (हिं॰ क्रि॰) १ वपन करना, बोना। २ उगाना, बढ़ाना। (पु॰) ३ सूत्रविशेष, किसी किस्मका धागा। यह वस्त्र बुनते समय राछके बाहर रह जाता है। (वि॰) ४ अनाहत, नङ्गा।

उबार (हिं॰ पु॰) १ मोक्ष, उद्धार, बचाव। २ झूल, ओहार।

उबारना (हिं॰ क्रि॰) मुक्तिदान करना, छोड़ाना।

उबारा (हिं॰ पु॰) पशुके पानी पीनेका कुण्ड।

उबाल (हिं॰ पु॰) १ उफान, फेनके साथ ऊपरको उठाव। २ उद्वेग, जोश।

उबालना (हिं॰ क्रि॰) उष्ण करना, तपाना, खौलाना।

उबासी (हिं॰ स्त्री॰) जृम्भा, जमहाई।

उबाहना, उबहना देखो

उबिठना (हिं॰ क्रि॰) १ सुखकर बोध न होना, बुरा लगना। अधिक व्यवहारसे प्रायः वस्तु उबिठ जाती है। २ विरक्त होना, घबरा जाना।

उबीठना, उबिठना देखो।

उबीधना (हिं॰ क्रि॰) १ फंस जाना, उलझ पड़ना। २ गड़ना, छिदना।

उबीधा (हिं॰ वि॰) १ संलग्न, फंसा हुआ, जो गड़ गया हो। २ कण्टकाकीर्ण, कंटीला।

उबेना (हिं॰ वि॰) अनाहत, नङ्गा, जूते न पहने हुआ।

उबेरना, उबारना देखो।

उबौना (हिं॰ वि॰) उबा डालनेवाला।

उबौवा (हिं॰ वि॰) ऊब उठनेवाला।

उभ्—तुदा॰ पर॰ सक॰ सेट्। यह धातु पूरा करने और पर्याप्त करनेके अर्थमें व्यवहृत होता है। (कवि॰ १।१।१)

उब्जक (सं॰ वि॰) उब्ज्-अच्। ऋजुतायुक्त, सीधा।

उब्जित (सं॰ वि॰) ऋजु किया हुआ, सीधा बनाया हुआ, जो दबा दिया गया हो।

उभड़ (हिं॰) उभार देखो।

उभड़ना, उभरना देखो।

उभय (सं॰ वि॰) उभ-अयट्। उभाद्दात्तो नित्यम्। पा॰ ५।२।४४। द्वित्वविशिष्ट, हर दो, दोनों। यह शब्द द्वित्वबोधक होते भी नित्य एकवचन और बहुवचनमें आता है, द्विवचनमें कभी रखा नहीं जाता।

उभयकण्टका (सं॰ स्त्री॰) बदरहरा, बेरी।

उभयगुण (सं॰ वि॰) दोनों गुण रखनेवाला, जिसमें हर दो मिलते रहें।

उभयङ्कर (सं॰ वि॰) दोनों कार्य सम्पादन करनेवाला, जो हर दो कामोंको करता हो।

उभयचर (सं॰ वि॰) स्थलजलचर, दो-तरफी, अर्थात् जमीन और पानी दोनों जगह रहनेवाला।

उभयतः (सं॰ अव्य॰) उभय-तसिल्। १ दोनों दिक्‌में, हर दो तर्फ। २ दोनों अवस्थामें, हरदो हालत।

उभयतःक्ष्णुत् (सं॰ वि॰) उभय-कोटिमत्, हर दो किनारे रखने वाला, दुधारा।

उभयतोदत् (सं॰ वि॰) उभयदन्तावलीविशिष्ट, जिसके दांतोंकी दो कतार रहे।

उभयतोमुख (सं॰ वि॰) उभयतो मुखं यस्य। द्विमुख, दो मुंह रखनेवाला।

उभयतीक्ष्ण (सं॰ वि॰) दोनों ओर तेज धारयुक्त, जिसके पहले दो छोटा धार रहे।

उभयत्र (सं॰ अव्य॰) उभय सप्तम्यर्थे त्र। दोनों दिक्, हर दो तर्फ।

उभयतोदात्त (सं॰ वि॰) १ दोनों दिक् उदात्त स्वरयुक्त। २ दो उदात्त स्वरके मिलनेसे निकला हुआ।

उभयथा (सं॰ अव्य॰) उभय-थाल्। १ दोनों ... हरदो तरह। २ दोनों अवस्थामें, हरदो ...

उभयद्युः (सं॰ अव्य॰) १ दोनों दिनों, हरदो मुकर्रर रोज। २ अतीत एवं भविष्यत् दिवस, गये-आगे दिन।

उभयभागहर (सं॰ वि॰) १ दो भागमें मल लानेके योग्य, जो दो हिस्से लेता हो। (स्त्री॰) २ वमन एवं अधोभागहर औषध, जो दवा वमन और मल दोनों लाती हो।

उभयलिङ्गिनी (सं॰ स्त्री॰) लिङ्गिनी, एक पौदा।

उभयवत् (सं॰ वि॰) उभयविशिष्ट, जिसमें दोनों रहें।

उभयवादी (सं॰ वि॰) वाद तथा साम उभय प्रकाशित करनेवाला। यह शब्द वादित्र व्यक्तिका विशेषण है।

उभयविद्या (सं॰ स्त्री॰) द्विगुण विद्या, दुचन्द इल्म, धार्मिक और पार्थिव विज्ञान।

उभयविध (सं॰ वि॰) दो आकारमें प्रकाशित होनेवाला, जो दो सूरतें रखता हो।

उभयविपुला (सं॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष।

उभयवेतन (सं॰ पु॰) दूतविशेष। जो पूर्वस्वामी कर्तृक नियोजित हो उसके शत्रुके निकट अध्याय भावसे दासकार्य चलाता और दोनोंके निकट वेतन पाता, वही उभयवेतन कहलाता है।

"[illegible]।
[illegible]॥" (माघ)

उभयव्यञ्जन (सं॰ वि॰) दोनों लिङ्गके चिह्न रखनेवाला, जो हरदो जिन्सकी अलामत रखता हो।

उभयसम्भव (सं॰ पु॰) विकल्प, वहम।

उभयसुगन्धगण (सं॰ स्त्री॰) सुगन्धि द्रव्य विशेष, खास खुशबूदार चीजें। यह द्रव्य जलानेसे भी सौरभ छोड़ते हैं। चन्दन, कपूर, कस्तूरी प्रभृति इसी वर्गमें सन्निविष्ट हैं।

उभया (सं॰ अव्य॰) दोनों प्रकारसे, हरदो तरह।

... ॰) ... दोनोंके कुमारि...

उभयार्थ (सं० अव्य०) दोनों प्रयोजनोंके लिये, दुहरो मतलबके वास्ते।

उभयाविन् (सं० त्रि०) उभय और वर्तमान रहनेवाला, जो दोनोंका हिस्सा लेता हो।

उभयाहस्ति (सं० त्रि०) उभय हस्तसे ग्रहण किया जा सकनेवाला, जो दोनों हाथसे लिया जा सकता हो।

उभयाहस्त्य (सं० त्रि०) उभय हस्त पूर्ण करनेवाला, जो दोनों हाथ भर देता हो।

उभयीय, उभयात्मक देखो।

उभयेद्युः, उभयद्युः देखो।

उभरना (हिं० क्रि०) १ उत्थित होना, उठना। २ उन्नत होना, बढ़ना। ३ युवावस्थापर आना, जवानी पर चढ़ना। "मर्दका हाथ फिरा और औरत उभरी" (लोकोक्ति) ४ उद्गमन करना, उछलना। ५ उत्तेजित होना, जोश पर आना। ६ पुनर्वार उठना, फिर निकलना। ७ उद्धार पाना, किसी आफ़तसे छूट जाना। ८ फूलना, फबकना। ९ पलायन करना, भागना। १० धुएका हुआ और उभरा।" (लोकोक्ति) ११ गमन करना, चला देना। १२ प्रकाशित होना, खुलना। "पाप उभरे पर उभरे।" (लोकोक्ति) १३ उतरना, ख़ाली किया जाना।

उभाड़, उभार देखो।

उभाड़ना, उभारना देखो।

उभाड़दार, उभारदार देखो।

उभाना (हिं० क्रि०) मस्तक हस्तपादादि अङ्ग वेगसे चलाना, सर हिलाते हुये हाथ-पा-फटकारना।

उभार (हिं० पु०) १ उत्कर्ष, सूजन। २ प्रस्फुटन, शिगुफ़्तगी, खिलाई। ३ स्त्रियोंकी छातीका भराव। (त्रि०) ४ कूर्मपृष्ठाकार, माहीपुश्त, उभरा।

उभारना (हिं० क्रि०) १ उठाना, उचकाना। २ खोलना, उधेड़ना। ३ निकालना, उतारना। ४ उड़ाना, चोराना। ५ भगा ले जाना। ६ बचाना, छोड़ाना। ७ मिला लेना, गांठना। ८ आग्रह करना, पीछे पड़ना। ९ पुनर्वार कर्षण करना, दो बारा जोतना।

उभारदार (हिं० वि०) उन्नत, ऊंचा, जो उठा या निकला हो।

उभिटना (हिं० क्रि०) ठहरना, रुकना, ठोकर लगना।

उभै (हिं) उभय देखो।

उम् (सं० अव्य०) उम-उम्। १ रोष। गुस्सा! २ अङ्गीकार। मञ्जूर! ३ प्रश्न! सवाल!

उमंग (हिं० स्त्री०) १ आह्लाद, मज़ा। २ इच्छा, ख़ाहिश। ३ लहर, मौज।

उमंगना (हिं० क्रि०) १ वर्धित होना, बढ़ना, भरना। २ आह्लादित होना, फूले न समाना।

उमंगा (हिं० वि०) १ आह्लादित, बाग बाग। २ इच्छुक, ख़ाहिशमन्द।

उमड़ (हिं० स्त्री०) उत्थान, उठान, चढ़ाव।

उमड़ना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, चढ़ना, उमंगना, बह चलना। २ आच्छादित होना, दबा लेना। ३ एकत्र होना, गोल बांधना। ४ स्फुट होना, छू जाना, भरना।

उम (सं० पु०) १ नगर, शहर, क़सबा। २ बन्दरगाह, जहाजसे माल उतरनेकी जगह।

उमकना (हिं० क्रि०) १ ऊपरको आना, जड़ छोड़ देना, उखड़ना। २ उमंगना, उमड़ना।

उमग, उमंग देखो।

उमगन, उमंग देखो।

उमगना, उमंगना देखो।

उमगा, उमंगा देखो।

उमचना (हिं० क्रि०) १ पादतलसे उठ-उठके भार डालना, दबाना, झूमचना। २ चकित होना, चौंकना।

उमड, उमंड देखो।

उमडना, उमंडना देखो।

उमदगी (फ़ा० स्त्री०) १ उत्कर्ष, बड़ाई। २ गुण, भलाई।

उमदना (हिं० क्रि०) १ उन्मादमें आना, मस्त बन जाना। २ उत्तेजित पड़ना, उठ खड़ा होना।

उमदा (अ० वि०) १ उत्कृष्ट, बढ़िया। २ उत्तम, अच्छा। (पु०) ३ अमीर आदमी।

उमदाई (हिं० स्त्री०) १ उन्मत्तावस्था, पागलपन। २ मनोवेग, दिलका उबाल। ३ उत्तमता, अच्छाई।

उमदाना, अमदान देखो।

उमर, अमर देखो।

उमर-अल्-मकतूफ—तूमर्तका २य मुवाहिदोंके आर्य गुरु। उन्होंने अपने शिष्यके मरनेपर इनसे पूछा था—हम खिलाफत लें या नहीं। इन्होंने कहा—यदि आप मुसलमानों पर न्यायपूर्वक शासन कर सकें, तो खिलाफत ले लें और यदि न कर सकें, तो छोड़ दें। अब तूमर्तके ३: मास राज्य चलाने बाद अपनेको अयोग्य पाया और राज्यभार छोड़नेका विचार कर लिया। उन्होंने राज्य परित्याग करनेको एकान्त कोठरीमें आसन लगाया और प्रेमके आक्रमण या विपद्के भयसे द्वार लगाया था। उमय्य वंशके लोग इससे उमर-अल्-मकतूफपर बहुत चिढ़े। ये जीवित ही भूमिमें गाड़े गये थे। लोगोंने समझा—इन्होंके कहनेसे मुवाहिदोंने राज्य छोड़ा है। ५४२ ई० को यह घटना हुई थी।

उमरखान् खिलजी—सुलतान् अला-उद्दीन् खिलजीके कनिष्ठ पुत्र। १३१६ ई० के दिसम्बर मासमें अला-उद्दीन्के मरनेसे मालिक काफूर ख्वाजाने इन्हें दिल्लीके सिंहासनपर बैठाया था। किन्तु ३५ दिन बाद ही मालिक काफूर मारे और उमरखान् सिंहासनसे उतारे गये। १३१७ ई० के जनवरी मासमें इनके भाई मुबारक खान् बादशाह बने।

उमर खय्याम—एक ईरानी कवि। वस्तुतः यह खीमा बनाते, इसीसे इनकी खय्याम उपाधि पड़ गई थी। इनकी कविता अपने धार्मिक मतके लिये अद्वितीय समझी जाती है। उमर खय्यामको बाल्यकालसे पढ़नेकी धुन थी। इसीसे कट्टर मुल्ला इनसे बहुत बिगड़े। उमर खय्यामने नैशापुरमें जन्म लिया और ज्योतिष पढ़नेमें बहुत नाम किया था। इनका पढ़ने-लिखनेमें भी अच्छा यश मालूम हो गया। उमरखय्यामकी कविताका भाव नीचे दोहोंमें दिखाते हैं—

> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]
> [illegible]

उमर ऐयम—एक ईरानी ज्योतिषी। ईरान् सुलतान् जलालुद्दीनने (१०७४-१०९२ ई०) इनसे एक पंचांग बनवाया था।

उमरथो (हिं० स्त्री०) माधविसिंह, एक बाजा।

उमराद—बम्बईके काठियावाड़ प्रान्तका एक ग्राम। यह जिनमढ़ा नदीके दक्षिण किनारे अवस्थित तथा धारवाड़से दक्षिण १८ कोस और गूलोंसे दक्षिण-पश्चिम साढ़े ३ कोस दूर है। इसके इतिहासका पता नहीं लगता। किन्तु उमरादको अभी और ३०० वत्सर होते हैं। यही उदुम्बरके पुत्र पद्म थे। इसीसे लोगोंने ग्रामका नाम उमराद रख लिया था। राजा साहिब यशवन्तसिंहजीके समय सरदार काठी इस ग्रामके पशु छुड़ा ले गये थे। किन्तु पहलेसे राजा साहिबने जब इनकी भूमिपर आक्रमण किया, तब काठियोंने उपद्रव उठाना छोड़ दिया। यहाँ अधिकांश कृषक कडवा कुनबी हैं।

उमर-बिन्-अब्दुल अजीज—प्रथम मरवानके पौत्र। उमय्य वंशके ये ८म खलीफ थे, ७१७ ई०के सितम्बर या अक्टोबर मासमें सुलेमान्के उत्तराधिकारी बन दमस्कसमें सिंहासनपर बैठे और ७२० ई०के फरवरी मासमें मर गये थे। इनके स्वार्थत्याग और मिताचारकी लोग बड़ी प्रशंसा करते हैं।

उमर-बिन्-खत्ताब—मुहम्मदके एक प्रिय सहचर और श्वशुर। ६३४ ई०के अगस्त मासमें ये अबू-बकर सादिक्का उत्तराधिकार पा मुहम्मदके पीछे २य खलीफ बने थे। इन्होंने सीरिया और फिनिसियापर अपना विजयका डंका बजाया और ६३७ ई० में जेरुसलमको दबाया था। इनके सेनापतियोंने ईरान और मिसरमें जाकर इसलाम धर्मकी घोषणा दी थी। अलेकजन्द्रियाके पतनमें सुविख्यात पुस्तकालय विध्वस्त हुआ था। किन्तु इन्होंने सादगी और मान-मानके बीच अपूर्व स्थिर लोकप्रियता की। इनके समय मुसलमानोंने ३६००० नगर जीते, ४००० देवालय गिरा डाले और १४०० मसजिदें बनवाई थीं। सर्वप्रथम इन्हींको 'अमीरुल मोमिनीन' उपाधि मिला। इनका ६४४ ई०में वध हुआ था। इनमें चालोंको [illegible] एक [illegible]

थीं। ६४४ ई०को ३री नवम्बरको बुधवारके दिन सवेरे किसी मसजिदमें नमाज़ पढ़ते समय एक ईरानी गुलामने इनके तलवार भोंक दी। तीन दिन पीछे ६३ वर्षकी अवस्थामें मृत्यु हुई। इन्होंने १० वर्ष ६ मास और ८ दिन राज्य किया था। अफ़्फ़ान्के पुत्र उसमानको इनकी खिलाफ़तका उत्तराधिकार मिला था। किसी अंगरेज़ने लिखा है—'१८०२ को मैं शीराज़में था। उसी समय शीया ईरानियोंने उमर खलीफ़की मृत्युका उत्सव मनाया। उन्होंने एक लम्बा-चौड़ा चबूतरा बनाया और उसपर यथासम्भव अङ्ग-भङ्ग कुरूप एक प्रतिमाको जमाया और फिर उसके सम्मुखस्थ हो लोग कहने लगे—मुहम्मदके समान उत्तराधिकारी अलीको तूने खलीफ़ न बनने दिया, तुझे कोटि कोटि धिक्कार है। अन्तको जब गाली-गलौजकी थैली खाली हो गयी, तब एकायक प्रतिमापर पत्थर और लाठीकी मार पड़ने लगी, अन्तको वह चूर चूर हो गयी। प्रतिमाके भीतर शून्य स्थानमें मिष्टान्न भरा था। समवेत दर्शकोंने उसे लूट लूट खा डाला।'

उमर महरामी—एक मुसलमान ग्रन्थकार। १६४५ ई०में इन्होंने 'हुज्जतुल हिन्द' नामक पुस्तक लिखी थी।

उमरमिर्ज़ा—अमीर तैमूरके पौत्र और मीरान्शाहके पुत्र। शाहरुख़ मिर्ज़ासे लड़कर ये हार गये और ज़ख्मी हुये थे। कुछ दिन बाद १४०७ ई०के मई मासमें इन्होंने इस दुनियासे कूच किया था।

उमर शेख मिरज़ा—१ अमीर तैमूरके २य पुत्र। अपने पिताके जीते समय यह ईरानके शासक रहे और १३९४ ई० को ४० वत्सरके वयस पर लड़ाईमें मारे गये। उत्तराधिकारी बाकरमिर्ज़ा इनके एक पुत्र हुए। २ सुलतान् अबूसईद मिरज़ाके ग्यारहमें एक पुत्र, सुलतान् मुहम्मदके पौत्र और अमीर तैमूरके लड़के मीरान्शाहके प्रपौत्र। दिल्लीके बादशाह बाबर शाह इनके पुत्र रहे। इनका जन्म १४५६ ई०को समरकन्दमें हुआ था। इन्होंने अपने पिताके जीते अन्दि-जान् और फरग़ान संयुक्त राज्यका शासन किया था। १४५९ ई०में पिताके मरनेपर भी यह उक्त राज्यका प्रबन्ध करते रहे। १४९४ ई० को ९वीं जूनके सोम-वारको ३९ वत्सरके वयसमें २६ वर्ष २ मास राज्य करनेके बाद ये चल बसे। ये मञ्च पर खड़े होकर अपने कबूतर उड़ते देखते थे। उसीसमय मञ्च टूटा और इनका प्राण छूटा। इनके पुत्र बाबर ग्यारह वर्षके वयसमें सिंहासन पर बैठाये गये। 'उन्होंने ज़हीरुद्दीन' अपना उपनाम रखा था।"

उमर महम्मद माव्रजी—एक मुसलमान ग्रन्थकार। इन्होंने 'मसाविर नसोरी' नामक एक न्याय और तत्त्व-ज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थ लिख सुलतान् अकबरके वज़ीर नसीरुद्दीनमहम्मूदके नाम उत्सर्ग किया था।

उमरा (अ० पु०) बहुतसे अमीर, कितने ही धनवान्।

उमराई अमीरी, बड़प्पन।

उमरा (अमर)—उदयपुरवाले राणा प्रतापसिंहके पुत्र। अपने पिताके स्वर्ग जानेपर ये मेवाड़के राणा बने। अकबरके जीते कोई झगड़ा लगा न था। किन्तु उनके उत्तराधिकारी जहांगीरने मेवाड़को पूर्ण रीतिसे अधीन करना चाहा। इसलिये युद्ध होनेपर उमरा राणाने उन्हें दो बार हराया था। फिर जहांगीरने प्रतापके भाई सुगराको उमरासे लड़ानेको ठहराया। सात वर्ष बाद वह स्वयं दूसरेके धर्मका आश्रय लेनेपर शरमाये और उमराको राजधानीका स्वामी बना बाजी बजवाये। इससे चिढ़ जहांगीरने राणापर बहुत बड़ी फौज भेजी। किन्तु वह खासमीरकी घाटीमें फंस हार गयी। फिर जहांगीरने अपने प्रधान सेनापति महाबत खान्को भेजा। जब वह भी सफलमनोरथ न हुये, तब सैनिक पीछे अजमेरको हटे। १६११ ई०में लड़ते लड़ते राणा उमराने जहांगीरकी अधीनता स्वीकार कर ली। जहांगीरने बड़ा सम्मान किया और युवराज कर्णसिंहके साथ इन्हें उपाधि तथा उपहार दिया। किन्तु इन्हें अधीनता अच्छी न लगी। इन्होंने अपने पुत्र कर्णसिंहको राज्य सौंप मेवाड़की गद्दी छोड़ी थी। इनके पुत्रका नाम जगत्सिंह रहा। १६२८ ई०में अपने पिता कर्णके स्वर्ग जानेपर इन्हें राज्यका उत्तराधिकार मिला था। जगत्सिंहके पुत्र राजसिंह १६५४ ई०में गद्दीपर बैठे।

२ राणा राजसिंहके पौत्र और जयसिंहके पुत्र। १६९८ ई० को राणा जयसिंहके स्वर्ग जानेपर अमरसिंह राणा बने थे। उन्होंने २० वर्ष शान्तिपूर्वक राज्य किया। फिर गद्दाधिकार अजितसिंहके पुत्र उदयको मिला था। औरङ्गजेबके मृत्युबाद ज्यों ज्यों साम्राज्य घटता, उससे इनका स्वाद बढ़ता था। १७०८ ई० को मारवाड़, मेवाड़ और जयपुरके राजपूतोंने मिलकर मुसलमानी राज्य मिटाना चाहा। हुक्म चलाना छोड़ने लगे थे। मन्दिरोंके स्थानोंमें बनी मसजिदें लोगोंने तोड़-डालीं। किन्तु यह शान्ति थोड़े ही दिन रही। मारवाड़के राजा अजितने पहले अपना काम बादशाहसे बनाकर सन्धि की थी। राणा अमर बादशाहकी अधीनता स्वीकार करते भी दूसरी जातिमें न रहे। १७१६ ई० को इनके स्वर्ग जानेपर सङ्ग्रामसिंह गद्दीपर बैठे थे।

उमराव (हिं० पु०) उमरा, अमीर लोग।

उमराय, उमराव देखो।

उमराव पाटक—बम्बई प्रान्तकी काठी जातिके एक पुरुष। कहते हैं, १४०० ई०के समय यह कुछ काठियोंके साथ धोलके गये थे। उमरावकी कन्या उमरा बाई बहुत सुन्दर थी। धोलकेके राजा उसे चाहने लगे। जब उन्होंने विवाह होनेका प्रस्ताव किया, तब उमरावने कह दिया—यदि आप साथ भोजन करेंगे, तो हम उमरा बाईको व्याह देंगे। धोल राजा सम्मत राजी हुये। किन्तु बन्धुबान्धवोंने उन्हें पतित समझ निकाल दिया। फिर धोल राजा उमरावके साथ काठियोंके नेता बने रहे।

उमरावसिंह—१ युक्तप्रान्तके फरुखाबाद जिलेके चरौंदाके एक राजा। यह विद्याके बड़े रसिक थे। उनके [illegible] विद्यापुरवाले दुर्गाप्रसाद पण्डितने इनकी आज्ञासे 'अमरकोष,' 'हितोपदेश' और 'रसमञ्जरी'का हिन्दीमें अनुवाद किया, जिसका अन्त १८०७ ई० को हुआ।

२ सीतापुर जिलेके पैदपुरवासी एक पंवार कवि। यह १८८० ई० में जीवित थे।

उमरेठ थाकर—गुजरातमें रहनेवाले ब्राह्मणोंके एक-भेद प्रसिद्ध। इनके वंशज [illegible] रहते हैं।

उमरौ—१ मध्य-भारतके ग्वालियरके दक्षिण एक राज्य। यह अक्षा० २४° ४५´ उ० तथा द्राघि० ७७° २२´ पू० पर है। स्थानीय राजा अपना वंश पाण्डवसे बताते हैं, ग्वालियरके महाराज सिंधिया भी इनको [illegible] नहीं करते। १८०३ ई० को उमरौके राजाने कुछ [illegible] दौलतरावने [illegible] दिया था। इसीसे उनका राज्य सिंधियाको अधीनतामें न रहा। उमरौ ही राज्यका प्रधान नगर भी है।

२ मध्यप्रदेशके भण्डारा जिलेकी एक जमींदारी। यह अक्षा० २०° ४६´ उ० तथा द्राघि० ७९° ४६´ पू० पर अवस्थित और भण्डारेके बड़े शहरसे २ कोस पश्चिम दूर है। क्षेत्रफल १० वर्गमील है। यह जमींदारी पवार वंशके पूर्वजोंको राजसिंहके समयमें मिली थी।

३ युक्त प्रान्तके मुरादाबाद जिलेकी अमरोहा तहसीलका एक गांव। यह अक्षा० २८° २´ १५´´ उ० तथा द्राघि० ७८° १६´ १०´´ पू० में मुरादाबादसे बिजनौर जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। प्रति सप्ताह बाजार लगता है। कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें एक तिवारी 'उमरी' के होते हैं।

(हिं० स्त्री०) ४ तृणविशेष, एक पौदा, मचोल। इसको जलाकर सज्जीखार तैयार करते हैं। मन्द्राज, बम्बई और बङ्गाल तीनों प्रान्तोंमें इसे पाते हैं। ५ ग्रामविशेष। कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंमें एक तिवारी उमरीके होते हैं।

उमरेर—१ मध्यप्रदेशके नागपुर जिलेकी दक्षिण-पूर्व तहसील। क्षेत्रफल १०२५ वर्गमील है। उसमें ११४ वर्गमील भूमि निष्कर है।

२ उक्त तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० २०° ५८´ उ० तथा द्राघि० ७८° २१´ पू० पर नागपुरसे १४ कोस दक्षिण-पूर्व अवस्थित है। उमरेर नगर अम्बनदीके उत्तर और इसको पश्चिम तथा पूर्वको ओर [illegible] बना है। ई० १७ वीं शताब्दीके अन्तमें बिन्दुरके सूबाने [illegible] कर उसे प्रतिष्ठित किया था। [illegible]

स्थान दे डाला था। उस समय यहां सिवा जङ्गल दूसरा कुछ भी न रहा। वर्तमान ज़मीन्दार उन्हीं पण्डितके सन्तान हैं। उन्हें आज भी लोग 'देश-पाण्डे' कहते हैं। १७७५ ई० को माधोजी भोंसले उमरेरमें रहे थे। उन्होंने किला बनवाया। पहले किला ३०० गज़ लम्बा और ८० गज चौड़ा था। ईंटकी दीवारें १२ फीट मोटी और ३५ फीट उठी रहीं। पीछे बुर्ज बने थे। अब केवल दो पार्श्व अवशेष हैं। किलेमें कितने ही कूयें बने हैं। एक प्राचीन मन्दिरका भी ध्वंसावशेष पड़ा है। उमरेर वस्त्रव्यवसायके लिये प्रसिद्ध है। माधोजीके समयसे यहां वस्त्र बनते आते हैं। उमरेरकी धोतियां बहुत बढ़िया होती हैं। उन रेशमका छोटा और बड़ा दोनों तरहका किनारा चढ़ता है। पूना, नासिक, पण्ढरपुर और बम्बई तक धोतियां बिकने जाती हैं। यहां कितने ही महाजन और व्यवसायी वणिक् बसते हैं। नगरको दोनों ओर तालाब है। स्कूल और अस्पताल अच्छा बना है।

उमस (हिं० स्त्री०) आन्तरिक उत्ताप, अन्दरूनी गरमी। प्रायः वृष्टि होनेसे पहले उमस पड़ती है।

उमसना (हिं० क्रि०) आन्तरिक उत्ताप उठना, अन्दरूनी गरमी लगना।

उमदना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, बह चलना। २ उत्तेजित पड़ना, जोश खाना। ३ आच्छादन करना, छा जाना।

उमा (सं०स्त्री०) ओर्हरस्य मा लक्ष्मीरिव उं शिवं माति मिमीते वा, उ-मा-क अजादित्वात् टाप्। १ शिवपत्नी, पार्वती। इन्होंने हिमवान्के औरस और मेनकाके गर्भसे जन्म लिया था।

"उमेति मात्रा तपसो निषिद्धा पश्चादुमाख्यां सुमुखी जगाम।" (कुमार)

माता मेनकाके 'उः मा अधिक तपस्या न करो' कहनेसे उमा नाम पड़ा है। इन्हें दुर्गा भी कहते हैं। २ हरिद्रा, हलदी। ३ अतसी, अलसी। ४ कीर्ति, नामवरी। ५ कान्ति, चमक। ६ शान्ति, अमन। ७ रात्रि, रात। ८ ब्रह्मविद्या।

केन उपनिषद्में उमाका नाम मिलता है। एकबार ब्रह्माने देवताओंपर विजय पाया था। किन्तु देवता उनसे परिचित न थे। उन्होंने अग्नि और वायुको ब्रह्माका भेद लेनेके लिये भेजा। ब्रह्माने कहा—तुम कौन हो। एकने अपनेको जलाने और दूसरेने उड़ानेवाला देव बतलाया। ब्रह्माने दोनोंमें घासका एक तिनका जलाने और उड़ानेका आदेश दिया। किन्तु वायु और अग्नि वह काम न कर सके। इसलिये वह ब्रह्माका भेद बेपाये ही लौट आये। फिर देवोंने इन्द्रसे कहा—ब्रह्माका भेद पूछो। ब्रह्मा इन्द्रको देखते ही अन्तर्हित हुये।* उसी समय आकाशमें उमा हैमवती चमक उठीं। इन्द्रने पूछा—यह आत्मा किसका है। उमाने उसे ब्रह्मा बतलाया था।†

ब्रह्मा और देवताओंकी मध्यस्थ उमाको शङ्कराचार्यने विद्या माना है। भाष्यकारने कहा है‡—हिमवान्की सुता गौरी देवी विद्याकी प्रतिमूर्ति हैं। फिर उमाका अर्थ गौरी ही है। इसीसे उमा समस्त विधानकी बोधक हैं। परमेश्वरकी शोभ अर्थात् उमा वा विद्याका साथी कहते हैं। उमा परमा विद्या हैं। ईश्वर उन्हींके साथ रहता है। तैत्तिरीय-आरण्यक जगन्माता अम्बिकाको उमा अर्थात् देवी विद्याका रूप बतलाता है।

उमाकट (सं० पु०) उमाया रजः, उमा-कटच्। अलाबूतिलोमाभङ्गाभ्यो रजस्युपसंख्यानम्। (काशिका ५।२।२९) अतसीकी धूलि, अलसीका चूरा।

उमाकना (हिं० क्रि०) उत्पाटन करना, जड़ फोड़ाना, उखाड़ना।

---

* "स तस्मिन्नेवाकाशे स्त्रियमाजगाम बहुशोभमानामुमां हैमवतीं। तां होवाच किमेतद् यक्षमिति।" (केन ३।१२)

† "सा ब्रह्मेति होवाच ब्रह्मणो वै एतद्विजये महीयध्वमिति। ततो हैव विदाञ्चकार ब्रह्मेति।" (केन ४।१)

‡ 'तस्य इन्द्रस्य यक्षे भक्तिं बुद्ध्वा विद्या उमारूपिणी प्रादुरभूत् स्त्रीरूपा। स इन्द्रस्तामुमां बहुशोभमानां सर्वेषां हि शोभमानानां शोभनतमां विद्यां तदा बहुशोभमानेति विशेषणं उपपन्नं भवति। हैमवतीं हेमकृताभरणवतीमिव बहुशोभमानामित्यर्थः। अथवा उमैव हिमवतो दुहिता हैमवती नित्यमेव सर्वज्ञेन ईश्वरेण सह वर्तत इति ज्ञातुं समर्था इति कृत्वा तामुपजगाम इन्द्रस्तां ह उमां किल पप्रच्छ किमेतद् दर्शयित्वा तिरोभूतं यक्षम्।' (शं.भा)

उमाकिनी (हिं॰ वि॰) उत्पाटन करनेवाली, जो उखाड़ देती हो।

उमागुरु (सं॰ पु॰) उमाका गुरु पिता। हिमालय, पार्वतीके गुरुस्वरूप पिता।

उमाग्रहणी (सं॰ स्त्री॰) महौषधि, एक दवा।

उमाचतुर्थी (सं॰ स्त्री॰) ज्येष्ठ मासकी शुक्लचतुर्थी, शिव सह उमाके अर्चनाई पाताकी योग।

[illegible]

[illegible] (भविष्यो॰)

ज्येष्ठ मासकी शुक्ल चतुर्थीको उमा भगवतीने जन्म लिया था। इसलिये उस दिनपर स्त्रियोंको सौभाग्यकी वृद्धिके लिये पार्वतीका पूजन भलीभांति करना चाहिये।

उमाकना (हिं॰ क्रि॰) उत्पाटन करना, निकाल डालना, उखाड़ना।

उमाजी नायक—बम्बईप्रान्तके पूने जिलेके एक डाकू। १८२७ ई॰में पूनेके पुरन्दर पर्वतमें इन्होंने ६०० आदमी और घोड़े ले सह्याद्रि पार किया और अगरेजोंसे पूर्व ६ कोस दरबन्द पर्वतके नीचे डेरा डाल दिया। यहांसे इन्होंने घोषणा की—अंगरेजोंके बदले हमको अब कोई भूमिकर दें। उमाजीने कोंकण, घाट और मैदानोंके कई लोग भर्ती किया था—इसी कारण निम्नदेश लोगोंका अत्याचार पहुंचा। १० वीं दिसम्बरको २०० डाकुओंने सूरतके सरकारी खजानेसे १२॥१२ हजार रुपया लूटा और रसवन्तको मार डाला। १८२८ और १८२९ को अधिकतर उपद्रव बढ़ा था। किन्तु कप्तान मार्किण्टाशने अति परिश्रमकर १८३४ ई॰में यह अशान्ति मिटा दी थी।

उमापुर—मणिपुर राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २४° ४' १०" उ॰ और द्राघि॰ ९३° ४६' ४०" पू॰पर अवस्थित है। पहले यहां विष्णुपुरके राजाओंकी राजधानी थी। १६११ ई॰में मणिपुरके अधिपतिने इसे जय करके अपने अधिकारमें कर लिया। इस स्थानका ध्वंस प्राचीन प्रासादके देवमन्दिरकी नीवमें मिलता है।

उमाद (हिं॰) उन्माद देखो।

उमाद—गुजरातमें बनियोंकी एक जाति।

उमादि—गुजरातप्रान्तके महीकांठेका एक क्षुद्र राज्य। आय प्रायः ६००० रु॰ वार्षिक है। कोटाके कोली ठाकुर लोग राज्य करते हैं। अंगरेजोंसे इन्हें विचार के बड़े अधिकार पाते हैं, परन्तु किसीको नहीं मिलते।

उमाधव (सं॰ पु॰) उमापति, शङ्कर।

उमान—अरबके समुद्रोंका एक राज्य। अलकिन्दाडने लिखा है, कि ख्वाजाके पुत्र अय अमोरा अरबसे यह आनेके बाद अमनाने (६३६ ई॰में) इस राज्यका शासक बनाया था। उमानने इसके पहले अरबके पास अपने अधिकार लिया। अमीरके ओहदेपर उनके शासक अधिकारमें रहे जो उमानके शासनमें लिया था—पहले अहमद्के भाई ने राज्यको छोड़ दिया है। यदि कुछ भी आदमी मारे जायेंगे, तो उस देशे जातिके भी उपजीवी आदमी कटा जावेंगे। फिर भी पोर्तुगीजोंका शासनाधिकार मिलनेपर उमानके भाई शाहके बाद (सहीन) को चौथ देते थे। किन्तु यह देश पर बड़े दिनमें पड़े थे। अपने भावी राज्यके मरनेपर सिन्धुके विजेता मुहम्मदने इमाद या बादशाह के अधिवासियोंमें सन्धि कर ली।

उमानन्द (सं॰ पु॰) १ शिव, पार्वतीपति।

२ एक ब्रह्मपुत्र क्षुद्र द्वीप। यह आसामके कामरूप जिलेके गौहाटी नगरके पासमें ब्रह्मपुत्र नदपर अवस्थित है। इसी नामका एक सुन्दर एक प्रस्तरमय शिवमन्दिर भी बना है। यह एक पवित्र तीर्थस्थान है। जिसमें बहुत यात्री आया-जाया करते हैं। सुननेमें आता है—महादेवने यहां भस्म अपने मस्तकमें लगाया था, इसीसे यह द्वीप बनता गया है। उमानन्दके मन्दिरकी सेवाके लिये १११६ एकर निष्कर और १८५० एकर आधे करकी भूमि लगी है।

उमापति (सं॰ पु॰) १ शिव, पार्वतीके पति।

२ मिथिलाके एक प्रसिद्ध कवि। यह विद्यापतिके समसामयिक और राजा शिवसिंहके सभासद् थे। ई॰ चतुर्दश शताब्दीमें उमापति विद्यमान थे।

उमापति—१ पाकयज्ञनिर्णयग्रन्थके रचयिता। यह धर्मदेवके पुत्र और चन्द्रचूड़के पिता थे। २ दीपप्रकाशटिप्पन नामक ग्रन्थ-रचयिता। पिताका नाम प्रेमनिधि था। ३ पथ्यापथ्यविनिश्चय ग्रन्थके रचयिता। यह तपनके पिता, नरसिंहसेनके पितामह और विश्वनाथ सेनके प्रपितामह रहे। ४ करुणाकल्पलता भक्तिग्रन्थके रचयिता। ५ प्रतिष्ठाविवेक और शुद्धिनिर्णयग्रन्थके रचयिता। ६ रत्नमालाटीकाके रचयिता। ७ वृत्तवार्तिक नामक ग्रन्थके रचयिता। ८ हठप्रदीपिकाटिप्पण ग्रन्थके रचयिता।

उमापति उपाध्याय—पदार्थीयदिव्यचक्षुः ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका रत्नपति और माताका नाम रत्नावती था।

उमापति त्रिपाठी—एक विख्यात पश्चिमभारतीय पण्डित। इन्होंने बाल्यकालमें काशीमें रह विद्या पढ़ी थी। पीछे अयोध्यामें जाकर त्रिपाठी वास करने लगे थे। संस्कृत और हिन्दी भाषाके इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये थे। दोहावली और रत्नावली प्रभृति पुस्तक प्रसिद्ध हैं। १८७४ ई॰में इनका स्वर्गवास हुआ।

उमापति दत्त—एक संस्कृत वैयाकरण। यह जुमरनन्दीके समसामयिक थे। गोयीचन्द्र और सुषेणने इनका वचन उद्धृत किया है।

उमापति दलपति—कैशवपण्डितके आश्रयदाता। उक्त पण्डितने प्रह्लादचम्पू लिखा था और उसे दलपतिके नामपर उत्सर्ग किया।

उमापतिधर उपाध्याय—संस्कृत और मैथिल भाषामें 'पारिजातहरण' नामक नाटक ग्रन्थके रचयिता। यह दरभङ्गा-जिलेवाले और परगनेके कोइलख ग्राममें रहते थे। हिन्दूपति हरिदेव वा हरिहरदेवकी राजसभामें इनका बड़ा सम्मान था। उमापतिधरने लिखा है—हिन्दूपतिकी तलवार यवनोंके जङ्गलको काट कर भयानक अग्निकी तरह जला डालती है।*

उमापतिधर मिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह गौड़ाधिप विजयसेनकी सभाके एक रत्न रहे और विजयसेनके प्रशस्ति रचा था। विजयसेनके पुत्र बल्लालसेनने ही बङ्गालके ब्राह्मणों और कायस्थोंमें कुलमर्य्यादा डाली थी। बल्लालसेनके पुत्रका नाम लक्ष्मणसेन था। उनके प्रासादके फाटकपर लिखा था—

"गोवर्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च" (कविराजरचित)

जयदेवने गीतगोविन्दके चौथे श्लोकमें इनका उल्लेख किया है।

उमा बाई—गायकवाड़के खाण्डेराव सेनापतिकी विधवा पत्नी। पीलाजी गायकवाड़के वधका समाचार सुन इन्होंने बदला लेनेकी ठहरायी थी। कुछ फौज जोड़ और पीलाजीके पुत्र दामाजी कदम तथा दामाजी गायकवाड़को साथ ले यह अहमदाबाद पर चढ़ीं। किन्तु सिवा जीवराज नामक राजपूत नेताको मारनेके मराठे कुछ न कर सके और राजी हो गये। ८० हजार रुपया अहमदाबादके खजानेसे न मिलने पर जीवन मट खान्का बन्दी रखनेकी बात ठहरी। मराठोंने रसूलाबाद लूट एक अच्छा पुस्तकालय बिगाड़ डाला था। फिर उमा-बाई बड़ौदेको चढ़ीं। किन्तु शासक शेरखान् बाबी लड़नेको तैयार हुये। उस पर इन्होंने उन्हें लिखा—हमने अभी महाराजसे सन्धि की है, हमें बेरोक टोक निकलनेका अधिकार है।

बाजीरावने स्वर्गीय त्र्यम्बकरावके नाबालिग लड़के यशोवन्तरावको सेनापतिका उपाधि प्रदान किया था। उस समय उमाबाई उनकी रक्षक बनीं। पीलाजी गायकवाड़ गुजरातके शासक हुये थे। उन्हें सेनापतिकी ओरसे मालवे तथा गुजरातमें पेशवाके स्वत्वोंकी रक्षा रखना और अपने शासनाधीन राज्यका आधा

---

* इनकी कविताका उदाहरण नीचे देखिये—
"दहदु पूर्बदिश रचह गगन भवि निसि बाहर देवी मन्दा।
नहि बरिसह विह बाइ दिशा मलय समीरन मन्दा॥
आजन चाप दिसनविय वाने।
बहु भौरि दिन बद अरजन जन मद मदवन दलित भारी॥ (प,च)
कोकिल अमिदुल बनरत बाहुल करह रस्य दृढ़ बाने।
निरिद सुरभि कन दैर दसह मदंस्वर मदन देवताने॥
इनहि उमापति हरि देव परवन मान जौवन बनावें।
"हवन सुरतिपति हिन्दूपति निज बड़ौहरि देव विरचलें॥ ११॥"

उमाकिनी (हिं॰ वि॰) उत्पाटन करनेवाली, जो उखाड़ देती हो।
उमागुरु (सं॰ पु॰) उमाया गुरुः पिता। हिमालय, पार्वतीके गुरुस्वरूप पिता।
उमागुरुनदी (सं॰ स्त्री॰) नदीविशेष, एक दरया।
उमाचतुर्थी (सं॰ स्त्री॰) ज्येष्ठ मासकी शुक्लचतुर्थी, जेठ महीनेके उजियारे पाखकी चौथ।

"ज्येष्ठस्य चतुर्थ्यां तु जाता पूर्वमुमा सती।
तस्मात् सा तत्र सम्पूज्या स्त्रीभिः सौभाग्यवृद्धये॥" (भविष्योत्तर॰)

ज्येष्ठ मासकी शुक्ल चतुर्थीको पहले उमा सतीने जन्म लिया था। इसलिये उक्त दिवसपर स्त्रियोंको सौभाग्यकी वृद्धिके लिये पार्वतीका पूजन भलीभांति करना चाहिये।
उमाचना (हिं॰ क्रि॰) उत्पाटन करना, निकाल डालना, उखाड़ना।
उमाजी नायक—बम्बईप्रान्तस्थ थाने जिलेके एक डाकू। १८२७ ई॰में पूनेके पुरन्दर पर्वतसे इन्होंने ३०० आदमी और घोड़े लेकर सह्याद्रि पार किया और पनवेलसे पूर्व ६ कोस परवल पर्वतके नीचे डेरा डाल दिया। वहांसे इन्होंने घोषणा की—गवरनमेण्टके बदले हमको सब कोई भूमिकर दे। उमाजीने कोयले, घास और लकड़ीके गट्ठे बांध सङ्केत किया था—हमें कर न मिलनेसे लोगोंका घरबार फुंकेगा। १०वीं दिसम्बरको २०० डाकुवोंने सुरबाड़के सरकारी खजानेका १२।१३ हजार रुपया लूटा और रक्षकसैन्यको मारापीटा। १८२८ और १८२८ को अधिकतर उपद्रव उठा था। किन्तु कप्तान माकिनटशने अति परिश्रमकर १८३४ ई॰में यह अशान्ति मिटा दी थी।
उमापुर—महिसुर राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा॰ १२° ४′ १०″ और द्राघि॰ ७६° ५६′ ४०″ पू॰पर अवस्थित है। पहले यहां विजयनगरके राजावोंकी राजधानी थी। १६१२ ई॰में महिसुरके अधिपतिने उन्हें हरा इसे अपने अधिकारमें कर लिया। इस स्थानका आय चामराजनगरके देवमन्दिरकी सेवामें लगता है।
उमाद (हिं॰) उन्माद देखो।
उमाद—गुजराती बनियोंकी एक श्रेणी।
उमादि—गुजरातप्रान्तके महीकांठेका एक क्षुद्र राज्य। आय प्रायः १०००) रु॰ वार्षिक है। चौहान कोली वंशके लोग राज्य करते हैं। ज्येष्ठ पुत्र उसके हिसाबसे राजा अधिकार पाते हैं, गोद किसीको नहीं बैठाते।
उमाधव (सं॰ पु॰) उमापति, शङ्कर।
उमान—ईरान्‌की खाड़ीका एक प्रान्त। अलबिलादुरीने लिखा है, कि खत्ताबके पुत्र २य खलीफा उमरने अम्-आमीके लड़के उसमान्‌को (६३६ ई॰में) इस प्रान्तका शासक बनाया था। उसमान्‌ने पहले पहल बम्बईप्रान्तके थाने जिले इसलामियाको अभियान भेजा। अभियानके लौटनेपर अपने शासकके पत्रोत्तरमें खलीफा उमरने लिखा था—अहे थकीफ्‌के भाई! तूने कीड़ेको जङ्गलमें छोड़ दिया है। यदि कुछ भी आदमी मारे जायगे, तो हम तेरी जातिके भी उतनेही आदमी काटा डालेंगे। फिर भी बेहरीनका शासनाधिकार मिलनेपर उसमान्‌के भाई हाकमने बारूज (भड़ोंच) को फौज भेजी। किन्तु वह देवल पर बड़े वेगसे चढ़े थे। अपने चाचा अल हजाजके मरनेपर सिन्धुके विजेता मुहम्मदने सुराट या काठियावाड़के अधिवासियोंसे सन्धि कर ली।
उमानन्द (सं॰ पु॰) १ शिव, पार्वतीपति।
२ एक प्रस्तरमय क्षुद्र द्वीप। यह आसामके कामरूप जिलेमें गौहाटी नगरके सामने ब्रह्मपुत्र तटपर अवस्थित है। इसी नामका इस जगह एक प्रस्तरमय शिवमन्दिर भी बना है। यह एक पवित्र तीर्थस्थान है। कितने ही यात्री आया-जाया करते हैं। सुननेमें आता है—महादेवने जो भस्म अपने मस्तकमें लगाया था, उसीसे यह द्वीप बनाया गया है। उमानन्दके मन्दिरकी सेवाके लिये १११६ एकर निष्कर और १८५० एकर आधे करकी भूमि लगी है।
उमापति (सं॰ पु॰) १ शिव, पार्वतीके पति। २ मिथिलाके एक प्रसिद्ध कवि। यह विद्यापतिके समसामयिक और राजा शिवसिंहके सभासद् थे। ई॰ चतुर्दश शताब्दीमें उमापति विद्यमान थे।

उमापति—१ पाकयज्ञनिर्णयग्रन्थके रचयिता। यह धर्मदेवके पुत्र और चन्द्रचूड़के पिता थे। २ दीप-प्रकाशटिप्पन नामक ग्रन्थ-रचयिता। पिताका नाम प्रेमनिधि था। ३ पथ्यापथ्यविनिश्चय ग्रन्थके रच-यिता। यह तपनके पिता, नरसिंहसेनके पितामह और विश्वनाथ सेनके प्रपितामह रहे। ४ करुणा-कल्पलता भक्तिग्रन्थके रचयिता। ५ प्रतिष्ठाविवेक और शुद्धिनिर्णयग्रन्थके रचयिता। ६ रत्नमालाटीकाके रचयिता। ७ वृत्तवार्तिक नामक ग्रन्थके रचयिता। ८ स्फुटप्रदीपिकाटिप्पण ग्रन्थके रचयिता।

उमापति उपाध्याय—पदार्थादिद्युचक्षुः ग्रन्थके रच-यिता। इनके पिताका रत्नपति और माताका नाम रत्नावती था।

उमापति त्रिपाठी—एक विख्यात पश्चिमभारतीय पण्डित। इन्होंने बाल्यकालमें काशीमें रह विद्या पढ़ी थी। पीछे अयोध्यामें जाकर त्रिपाठी वास करने लगे थे। संस्कृत और हिन्दी भाषाके इन्होंने अनेक ग्रन्थ बनाये थे। दोहावली और रत्नावली प्रभृति पुस्तक प्रसिद्ध हैं। १८७४ ई॰में इनका स्वर्गवास हुआ।

उमापति दत्त—एक संस्कृत वैयाकरण। यह जुमर-नन्दीके समसामयिक थे। गोयीचन्द्र और सुषेणने इनका वचन उद्धृत किया है।

उमापति दलपति—केशवपण्डितके आश्रयदाता। उस पण्डितने मत्स्यदपम् लिखा था और उसे दलपतिके नामपर उत्सर्ग किया।

उमापतिधर उपाध्याय—संस्कृत और मैथिल भाषामें 'पारिजातहरण' नामक नाटक ग्रन्थके रचयिता। यह दरभङ्गा-जिलेवाले और परगनेके कोइलख ग्राममें रहते थे। हिन्दूपति हरिदेव वा हरिहरदेवको राज-सभामें इनका बड़ा सम्मान था। उमापतिधरने लिखा है—हिन्दूपतिकी तलवार यवनोंके जङ्गलको काट कर भयानक अग्निकी तरह जला डालती है।*

उमापतिधर मिश्र—संस्कृतके एक प्राचीन ग्रन्थकार। यह गौड़ाधिप विजयसेनकी सभाके एक रत्न रहे और विजयसेनकी प्रशस्ति रचा था। विजयसेनके पुत्र वल्लालसेनने ही बङ्गालके ब्राह्मणों और कायस्थोंमें कुलमर्य्यादा डाली थी। वल्लालसेनके पुत्रका नाम लक्ष्मणसेन था। उनके प्रासादके फाटकपर लिखा था—

> "गोवर्द्धनश्च शरणो जयदेव उमापतिः।
> कविराजश्च रत्नानि समितौ लक्ष्मणस्य च॥" (कविराजचरित)

जयदेवने गीतगोविन्दके चौथे श्लोकमें इनका उल्लेख किया है।

उमा बाई—गायकवाड़के खाण्डेराव सेनापतिकी विधवा पत्नी। पीलाजी गायकवाड़के वधका समाचार सुन इन्होंने बदला लेनेको ठहराये थे। कुछ फौज जोड़ और पीलाजीके पुत्र दामाजी कदम तथा दामाजी गायकवाड़को साथ ले यह अहमदाबाद पर चढ़ीं। किन्तु सिवा जीवराज नामक राजपूत नेताको मारनेके मराठे कुछ न कर सके और राजी हो गये। ८० हजार रुपया अहमदाबादके खजानेसे न मिलने पर जीवन मर्दखान्‌का बन्दी रखनेकी बात ठहरी। मरा-ठोंने रसूलाबाद लूट एक अच्छा पुस्तकालय बिगाड़ डाला था। फिर उमा-बाई बड़ौदेको बढ़ीं। किन्तु शासक शेरखान् बाबी लड़नेको तैयार हुये। उस पर इन्होंने उन्हें लिखा—हमने अभी महाराजसे सन्धि की है, उसे बेरोक टोक निकलनेका अधिकार है।

बाजीरावने स्वर्गीय त्र्यम्बकरावके नाबालिग लड़के यशोवन्तरावको सेनापतिका उपाधि प्रदान किया था। उस समय उमाबाई उनकी रक्षक बनीं। पीलाजी गायकवाड़ गुजरातके शासक हुये थे। उन्हें सेना-पतिकी ओरसे मानने तथा गुजरातमें पेशवाके स्वत्वोंको रक्षा रखना और अपने शासनाधीन राज्यका आधा

---

* इनकी कविताका उदाहरण नीचे देखिये—

"हरषु पूर्व्वदिशि रचहु सवन बलि निधि वाहर दैवो सन्दा।
मदि वरिषइ विष रहइ दिशा अमय कमीरव मन्दा॥
पाहन चारु तिरपति पाबे।
पहु सौहि दिन कर अनहत जम मह मदवह दुरित जाबे॥ (धु॰)
कोकिल अविरुत मधुरे बाजुय बाजु बजा हुहु आबे।
दिशिर सुरभि जन दैव दहु मदवहु मदन दैवन्मे।
कुहरि उजारनि हरि दहि परवश लाल गौरव बनबाबे।
यवन वदहिदलि हिन्दूपति निज भोहबरि दैह निरमाबे॥ ११॥"

कर मन्त्रीके हाथों राजकीय कोषमें जमा कराना पड़ता था। १७१६ ई० पर उमा-बाईने पीलाजीके स्थानमें दामाजीको गुजरातमें अपना प्रतिनिधि माना। किन्तु यह रंगोजीको अपनी जगह छोड़ दक्षिण गये थे। फिर रंगोजी और कांताजी कदममें विवाद होनेपर उन्हें वापस आना पड़ा। किन्तु दामाजी कांताजीके लिये चौथका प्रबन्ध बांध दक्षिणको लौट गये। यहां उमा-बाई पेशवाके विरुद्ध साजिश करती थीं। इन्होंने खाण्डेराव गायकवाड़को अपनी सहायताके लिये बुलाया। रंगोजीको उमाबाईने अपना सहकारी बना लिया था। १७४७ ई०में उमा बाई स्वर्ग गयीं।

उमा-महेश्वर—बम्बई प्रान्तके नासिक नगरका एक मन्दिर। यह सुन्दर-नारायणके मन्दिरसे दक्षिण-पूर्व ७० गज दूर बना है। यह पत्थरकी एक दीवारसे घिरा छिपा है। सामने दो मकान् खड़े हैं। मन्दिरके सामने काठका एक बड़ा कमरा बना है जिसकी छतपर बहुत अच्छा काम खुदा है। भीतर कृष्ण-प्रस्तरकी तीन मूर्तियां कोई दो फीट ऊंची प्रतिष्ठित हैं। बीचमें महेश्वर,या शिव, दाहने गङ्गा और बायें उमा या पार्वती हैं। हम सुन पाते हैं, कि कर्णाटकसे मराठे यह मूर्तियां लूट लाये थे। १७५८ ई०को ४थे पेशवा माधवरावके चाचा त्र्यम्बकराव अमृतेश्वरने २लाख रुपये लगा मन्दिर बनवाया था। गवरनमेण्ट वार्षिक प्रायः २००) रुपये मन्दिरको देती है। मन्दिरका प्रबन्ध आचार्य कार्णीकरके वंशज करते हैं। बाढ़के समय मन्दिरकी चटान पानीमें घिर जाती है। मन्दिरके सामने नदीमें उतरनेकी सिढ़ियां बनी हैं।

उमावन (सं० क्ली०) शोणितपुर, देवीकोट, एक शहर।

उमावल्लभ (सं० पु०) शङ्कर, पार्वतीके साथी महादेव।

उमासुत (सं० पु०) उमाया सुतः। कार्तिक।

उमास्वातिवाचक (सं० पु०) एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। इन्होंने प्रशमरतिप्रकरण और तत्त्वार्थसूत्र नामक दो ग्रन्थ बनाये हैं। किसी किसी हस्तलिपिमें उमास्वामी भट्टारक नाम लिखा है। बहुतोंका मत है कि ये ईसवीय सन्‌से पहिले जीवित थे।

उमाह (हिं० पु०) औत्सुक्य, दिलका उभार, उमंग।

उमाहना (हिं० क्रि०) १ प्रवाहित होना, बह चलना। २ उत्सुक होना, छटपटाना।

उमाहल, उमंग देखो।

उमीचन्द (अमीरचन्द)—एक प्रसिद्ध वणिक्। ई० १८ शताब्दीके शेषभागमें अमीरचन्द और गोपालचन्द नामक दो सिख वणिक् बङ्गालमें आकर बसे। लोग समझ न पाये, वही बङ्गालके प्रथम अधिवासी कहाये या उनके पूर्वपुरुष भी किसी समय यहां आये थे।

उस समय वैष्णवदास और मानिकचन्द सेठ नामक दो वणिकोंने बङ्गालमें बहुविस्तृत व्यवसायसे प्रचुर धनसम्पत्ति कमा विशेष प्रतिपत्ति पायी थी। अमीरचन्द आते ही उनके पास वाणिज्य-विषयक कर्ममें लग गये और कार्यकी कुशलता तथा दक्षताके गुणसे क्रमशः यावतीय व्यवसायके अध्यक्ष बन गये।

काम करते करते इन्होंने भी अपनी सम्पत्ति बढ़ायी और अलगसे अपनी दुकान खोल दी। थोड़े ही दिनोंमें बङ्गाल और विहार दोनों जगह इनके वाणिज्य व्यवसायकी धूम पड़ गयी थी।

उधर बङ्गालमें अंगरेजोंका भी वाणिज्य चलता था। कलकत्तेमें उस समय अंगरेजी कौंसिलका अधिकार रहा, अंगरेजोंके साथ कामकर अमीरचन्दने कलकत्तेमें बहुत बड़ा मकान् बनवाया। अस्त्रधारी पुरुषोंका एकदल सर्वदा उपस्थित रहता था।

अंगरेजोंको पण्यद्रव्य अधिकांश अमीरचन्द ही पहुंचाते और मुर्शिदाबादके नवाबसे भी अपना काम बनाते थे। नवाब साहबके निकट इनका बड़ा मान रहा।

कम्पनीको रसद देनेमें अमीरचन्द बहुत धनी होते हुए भी लोभवश अन्यान्य उपायोंसे लाभकी चेष्टा करने लगे। अंगरेजोंने अच्छा माल न पा और मराठोंके उत्पातसे घबरा इनसे रसद लेना रोक दिया। इससे विशेष क्षति पड़ते भी, अमीरचन्दने नवाबके साथ अपना कारबार बढ़ाया।

उसी समय अलीवर्दी पीड़ासे शय्यागत हुये। उनके जीनेकी आशा न रही। लोगोंने समझा—नवाबके

दौलिय सिराजुद्दौला बङ्गालकी गद्दीपर बैठेंगे। किन्तु ढाकेके नवाब नवाजिस मुहम्मदने सिराजके कनिष्ठ भ्राता मुरादुद्दौलाके पुत्रको गोद ले लिया था। इसलिये उनकी विधवापत्नीने अपने पोष्यपुत्रको बङ्गालके सिंहासन पर बिठानेके लिये प्रधान मन्त्री राजा राजवल्लभके साथ मुर्शिदाबादके निकट शिविर लगाया। उस समय अमीरचन्द भी मुरशिदाबादमें ही रहे। राजा राजवल्लभने इनसे और क़ासिमबाज़ारके प्रधान वाटस् साहबसे बन्धुता बढ़ायी। पीछे स्थिर हुआ—कुमारकृष्णदास सपरिवार धनरत्न लेकर कलकत्ते जायेंगे और अंगरेज तथा अमीरचन्द दोनो वहां उन्हें टिकायेंगे। कलकत्ते पहुंचते ही उनको अमीरचन्दने उपयुक्त वासस्थान दिया था।

१७५६ ई०को ९वीं अप्रेलको अलीवर्दीके मरते ही सिराजुद्दौला सिंहासनपर बैठे। दो-चार दिन बाद ही उन्होंने कलकत्तेके अंगरेज अध्यक्षको लिखा कि—आप शीघ्र कृष्णदासको समस्त धनरत्नके साथ मुर्शिदाबाद भेज दीजिये। चर-विभागाध्यक्ष रामरामसिंहके भ्राता स्वयं आदेशका पत्र ले कलकत्ते आये। अमीरचन्द उन्हें जानते थे। कौंसिलमें बात जानेपर स्थिर हुआ—'क़ासिमबाज़ारसे जो पत्र मिला है, उसके अनुसार नवाजिश मुहम्मदके पोष्यपुत्र और सिराजुद्दौलाके सिंहासन पानेका झगड़ा अभी नहीं मिटपाया है। इसलिये आजकल ऐसा आदेश कैसे चल सकता है! यह समस्त अमीरचन्दकी कल्पना है। उन्होंने हमें डराने और अपना प्रभाव जमानेके लिये मिथ्या आदेशपत्र तथा दूत भिजवाया है।' दूतसे खाली हाथ जानेकेलिये कहा गया।

नवाबने जब इस व्यवहारसे अप्रसन्न हो कलकत्ते पर आक्रमण मारनेका उद्योग किया, तब रामरामसिंहने अपनी सम्पत्तिकी रक्षा रखनेकेलिये अमीरचन्दको पत्र लिख दिया था। ये उक्त पत्र १९वीं जूनको पाते ही उस काममें लग गये। अंगरेजोंको सन्देह हुआ। उन्होंने अमीरचन्दको अपना शत्रु समझ क़िलेमें कैद कर लिया था। मकान पर फौजका डेरा पड़ा। अमीरचन्दके शाले हजूरीमल समस्त विषयका तत्त्वावधान रखते थे। वह भयसे अन्तःपुरमें छिप बैठे। दूसरे दिन उन्हें निकालनेके लिये जब अंगरेजी फौज मकानमें घुसी, तब अमीरचन्दके ३०० शस्त्रधारी सिपाहियोंने तलवार उठायी। युद्धमें दोनो ओरके आदमी हताहत हुये। जमादारोंके सरदारने सोचा—अंगरेज मेरे प्रभुके परिवारका अपमान करेंगे। इसीसे उसने अन्तःपुरमें आग लगादी, १३ स्त्रियोंकी गर्दन उड़ादी और अपनी छातीमें भी तलवार भोंक ली। इसी बीचमें अंगरेजोंके कुछ सिपाही कृष्णदासको क़िलेसे पकड़ ले गये। चार लाखकी लूट हुई थी।

नवाबकी फौज कलकत्तेके उत्तर आ पहुंची थी। अमीरचन्दके जमादारने सेनापतिसे जाकर कहा—'उत्तरांशकी अपेक्षा पूर्वदिक्से आक्रमण करनेमें सुविधा है। क्योंकि उधर कोई रक्षक नहीं है।' जमादारके कहने पर पूर्वदिक्से नगर आक्रान्त हुआ। फोर्टविलियमसे आध कोस उत्तर-पूर्व बड़ेबाज़ारमें नवाबकी फौजने आग लगा दी। दुर्गसे बाहर जो अंगरेजी-सिपाही रहे, वह चार दिनतक किसी प्रकार लड़े-भिड़े; शेषको सब भाग खड़े हुये।

२० वीं जूनको सवेरे नवाबकी फौजने दूने उत्साहसे दुर्गपर आक्रमण किया था। जो अंगरेज दुर्गके मध्य रहे, वह हालवेलको सेनापति बना और बाहर आ दृढ़तर बाधा डालने लगे। फिर उन्होंने हालवेल साहबसे अमीरचन्दको अनुरोध कर राजा मानिकचन्दके नाम एक पत्र लिखवाया और सूर्योदय होते ही दुर्गके प्राकारसे शत्रुके मध्य फेंकाया। राजा मानिकचन्द हुगलीके शासनकर्ता और नवाबकी एक बड़ी फौजके अधिनायक रहे। अमीरचन्दने अंगरेजोंके प्राण और दुर्गकी रक्षाकेलिये उनसे अनुरोध किया था। पत्र उठा तो लिया गया, किन्तु युद्ध न रुक सका। दो बजेके समय फिर नवाबकी फौज आगे बढ़ी। हालवेल साहबने अमीरचन्दसे दूसरा पत्र लिखाकर फेंका। इसमें भी वही अनुरोध था।

अपराह्णके समय नवाबने दुर्गमें प्रवेश कर अमीरचन्द और कृष्णदासको बुलाया। उस समय अंगे-

पर नवाबने दोनोंसे भद्र व्यवहार किया था। फौज नगर लूटने लगी। अमीरचन्दके मकानसे ४ लाख रुपया, कितना ही हीरा-मोती और सौदागरीका सामान निकल गया था।

२री जुलाईको नवाबने अमीरचन्दके साथ मुर्शिदाबादको प्रत्यागमन किया। एक दिन पहले उन्होंने बन्दी अंगरेजोंको कैदसे छोड़ अपने-अपने आवास जाने कहा था। अमीरचन्द होने मध्यस्थ बन और नवाबसे कह सुन यह काम कराया था। उधर अंगरेजोंका भी सर्वस्व लुटा और खानेको कच्चा पैसा तक न बचा था। अमीरचन्दने दयाके परवश हो अपनी क्षति पर दृक्पात न किया और अंगरेजोंको अन्न-विस्तार साहाय्य दिया।

इस घटनाके बाद अंगरेज सेनापतिने शराबके नशेमें किसी मुसलमानको मार डाला था। नवाबने संवाद पाते ही आदेश निकाला—जिस अंगरेजको देखो, उसीको पकड़ कर, कैद करो। अंगरेज फ्रान्स और डेनमार्ककी कोठियोंको भागे और वहां भी सुभीता न देख फलतेको चलते बने। किसीके पास कौड़ी न थी, सुतरां महा विपद् पड़ी। अन्तको जब नवाबकी फौज अंगरेजोंका माल असबाब लूट और नवाब अलीवर्दी खांकी स्त्रीके अनुरोधसे कासिमबाजारकी कोठीसे वाटस साहबको छोड़ लौट आयी, तब इस देशके लोगोंने साहस पा सकल पलातक अंगरेजोंको आहारादि देनेको ठहरायी थी।

इस समस्त विपद्का मूलकारण अमीरचन्द मान प्रेसिडेन्सीके अंगरेजोंने उनको ही शास्तिका विधान किया।

इधर जिन्होंने फलतेमें आकर आश्रय लिया था, उन्होंने महा विपदमें पड़ मिष्टर मानिकरामको सेनाध्यक्षके समभिव्याहारसे मन्द्राज भेज दिया। इन्होंने मन्द्राजकी कौंसिलमें पहुंच अंगरेजोंकी दुरवस्था बतलायी। वहांसे आडमिरल पोकक, वाटसन और करनल क्लाइव बङ्गालकी तरफ चले। १५ वीं अक्तोबरको क्लाइवका जहाज फलते पहुंच गया। मन्द्राजसे जो सकल पत्र आये, क्लाइवने वह कलकत्ते भेजवाये थे। उन्होंने फिर वाटसन साहबसे मिल अमीरचन्दको एक स्वतन्त्र पत्र भी लिखा। क्लाइवके ऊपर आदेश था—यदि नवाब इन सकल विषयोंका कोई प्रतीकार न करें, तो आप मुरशिदाबाद और चन्दननगरपर आक्रमण करनेको बढ़ें। अमीरचन्द वह सकल पत्र नवाबके पास भेजनेमें डरे। अवशेष पर २री जनवरीको कप्तान कूटने मानिकचन्दकी फौज भगा कलकत्तेका दुर्ग अपने अधिकारमें कर लिया था। दूसरे दिन वाटसन साहब भी कलकत्ते आये और मिष्टर ड्रेक गवरनर बनाये गये।

१०वीं जनवरीको (१८५७ ई०) अमीरचन्द मुरशिदाबादसे कलकत्ते लौट मिष्टर ड्रेकसे मिले। यह साथमें अपने दत्तक पुत्र दयालचन्दको भी ले गये थे। मिष्टर ड्रेक, करनल क्लाइव, आड मिरल वाटसन प्रभृति सकल ही कौन्सिलके रूममें बैठे। अमीरचन्द सबसे मिल भेंट बात चीत करने लगे।

उस समय युरोपमें फ्रान्सीसियों और अंगरेजोंसे युद्ध हो जानेकी सम्भावना थी। क्लाइवने सोचा—इस समय नवाबसे लड़ना अच्छा नहीं किन्तु नवाब कलकत्तेके जयका संवाद सुन बहुत बिगड़े थे। सुतरां अंगरेजोंने सेठोंको मध्यस्थ बनाया। उन्होंने अपने विश्वस्त कर्मचारी रणजित् रायको नवाब और क्लाइवके बीच बात चीत चलानेके लिये नियुक्त कर दिया।

नवाब जब कलकत्ता जीत मुरशिदाबाद वापस गये, तब साथमें अमीरचन्द भी रहे। वहां इन्होंने नवाबके निकट सिपहसालार मोहनलालसे मिल अपना विशेष विश्वास जमा लिया था। इधर कलकत्तेमें भी अमीरचन्दकी बहुत कोठियां रहीं। इसलिये यह अंगरेजोंके साथ नवाबका सद्भाव बढ़ानेके लिये मुरशिदाबादको गये थे।

उधर १० वीं जनवरीको नवाबकी फौज गङ्गापार हो हुगलीकी ओर बढ़ी और ग्रामोंसे अंगरेजोंकी रसद रोकनेका प्रबन्ध करने लगी। लोगोंको आदेश हुआ—कोई ग्रामवासी किसी प्रकारका खाद्यादि शहरमें बेच न सकेगा, अंगरेजी फौजका काम कोई कर

न सकेगा और बोझ ढोनेके लिये कोई घोड़ा या बैल दे न सकेगा।

क्लाइवने यह हाल देख रणजित् रायसे परामर्श किया। उन्होंने नवाबको पत्र लिखनेके लिये कहा। सुहृद्भावसे पत्रका उत्तर देते भी उनकी फौज कलकत्ते पर झपटनेसे न रुकी। फिर २री फरवरीको सन्ध्याकाल नवाब अंगरेजोंके प्रतिनिधिसे बात चीत करनेपर स्वीकृत हुये। किन्तु उक्त समय पर आदेशका कोई पत्र पहुंचा न था। दूसरे दिन सवेरे देखा गया—नवाब नगरके उत्तरांशमें लोगोंका द्रव्यादि लूट रहे हैं।

मराठा-खाईको उत्तर सीमापर अमीरचन्दके बागमें नवाबकी फौजने आश्रय लिया था। मिष्टर वाटसन और स्क्राफटन अंगरेजोंकी ओरसे नवाबके साथ मिलने गये। पहले उन्होंने राय-दुर्लभसे मुलाकात की। उन्होंने अंगरेजोंसे अस्त्र रख देनेको कहा। किन्तु अंगरेजोंके राजी न होनेपर वह भरे दरबारमें नवाबके पास ले गये। अल्प-विस्तर कथा वार्ताके बाद अंगरेज लौटने लगे कि अमीरचन्दने इङ्गितसे बताया—तुम्हारे पकड़ लेनेका परामर्श आया है। इससे उन्होंने नवाबको अनुमति न ली और चुपके चुपके छावनीको राह पकड़ी।

परिशेषमें अमीरचन्द और रणजित्रायका मध्यस्थतासे ९वीं फरवरीको एक सन्धि हुई। नवाबने सन्तोषके चिह्नको तरह आडमिरल वाटसन और करनल क्लाइवको वस्त्रादिका उपहार पहुंचाया। उसी दिन अमीरचन्दने अंगरेजोंका सही किया हुआ पत्र नवाबको सौंपा, किन्तु क्लाइवने इनसे कहा था,—नवाबसे अनुरोध कर हमें चन्दननगर पर चढ़नेकी अनुमति दिला दीजिये। फिर नवाबका कोई निषेध पत्र न मिलनेसे १९वीं फरवरीको क्लाइव फ्रान्सीसियोंके विपक्षमें चले गये। किन्तु फ्रान्सीसियोंने ठीक उसी समय पर तारतम्य लगा नवाबका निषेधपत्र पहुंचाया।

अमीरचन्दके शेष व्यवहारसे सन्तुष्ट हो अंगरेजोंने उन्हें वाटसन साहबको सहकारितामें लगाया। नवाबने ससैन्य आते समय पथद्दीपमें सुना—अंगरेज चन्दननगरपर चढ़नेका उद्योग कर रहे हैं। उन्होंने फ्रान्सीसियोंके साहाय्यार्थ रुपया और एक दल सैन्य भेजा। फिर अमीरचन्दसे नवाबने पुछवाया—अंगरेज सन्धिके नियमादि माननेको प्रस्तुत हैं या नहीं। अमीरचन्दने उत्तर दिया—अंगरेज किसी प्रकार सन्धि न तोड़ेंगे।

शिराजने इनकी बातपर आश्वस्त हो कहला भेजा हमने पहले जो फौज भेजी वह फ्रान्सीसियोंके साहाय्यार्थ नहीं। अंगरेजोंने भी उत्तर दिया—हम नवाबकी सम्मति भिन्न फ्रान्सीसियोंसे न लड़ेंगे।

किन्तु क्लाइवने सोचा—चन्दननगर पर आक्रमण मारना एकान्त आवश्यक है। इसलिये नवाबका निषेध रहते भी उन्होंने फ्रान्सीसियोंके विरुद्ध फौज बढ़ायी। उस समय अमीरचन्दने अंगरेजोंका विशेष स्वार्थ साधन किया था। इन्होंने नवाबके हिन्दू सेनापतियोंसे कह दिया था—आप अंगरेजोंसे न लड़ियेगा। २४वीं मार्चको अंगरेजोंने चन्दननगर पर आक्रमण किया। फिर नवाबने उसी समय सुना—हमें राज्यच्युत करनेके लिये पठानोंकी फौज आती है। उनके भयकी परिसीमा न रही। उन्होंने क्लाइव और वाटसनको समाचार दिया—चिर दिन आपसे मैत्री रखनेकी हमारी एकान्त इच्छा है।

अल्प दिनके मध्य ही अंगरेजोंने सुना—प्रधान सेनापति मीरजाफर नवाबके आचरणसे बहुत विरक्त हो गये हैं। क्लाइवने वाटसन साहबको कहला भेजा, कि इस सुयोगमें मीरजाफरके साथ उन्हें बन्धुत्व बढ़ाना आवश्यक है।

इधर कितने ही हिन्दू सभासद नवाबको राज्यच्युत करनेके लिये चुपके चुपके मन्त्रिणा चलाते थे। अमीरचन्द भी उन्होंमें रहे और वाटसन साहबको कच्चा-पक्का समाचार देते गये।

२१वीं अप्रेलको इन्होंने नवाबके किसी नामक एक सेनापतिको अपने दलमें मिलते देखा था। उसने बतलाया—'नवाबने बङ्गालसे अंगरेजोंको निकालनेके लिये कल्पना की है। किन्तु अनेक प्रधान-प्रधान

कर्मचारी उनसे लड़नेको तैयार हैं। इसलिये नवाबके पटने जाने पर अंगरेज मुर्शिदाबाद ले सकेंगे। हम भी अंगरेजोंको यथोचित साहाय्य देनेपर प्रस्तुत हैं। किन्तु मुर्शिदाबाद जीतनेपर उन्हें, हमीको नवाब बनाना पड़ेगा।' अमीरचन्दने सेनापतिकी यह बात कलकत्तेके अंगरेज हाकिमोंसे कही। क्लाइव इस प्रस्तावपर सम्मत हुये। उधर वाटस साहबने मीरजाफरको भी मिला लिया। अन्तको स्थिर हुआ—मुर्शिदाबाद जीतने पर मीरजाफर ही नवाब बनेंगे। फिर मीरजाफरने वाटस साहबको कहला भेजा—'इस साज़िशकी बात अमीरचन्दके कानमें न पड़े। क्योंकि सुननेसे वह बिभ्राट खड़ा कर सकते हैं।' वाटस साहब मीरजाफरकी बात मानते भी अमीरचन्दसे उक्त विषय बताने पर बाध्य हुये। इन्होंने सोचा—'हमारा अदृष्ट अच्छा नहीं। मीरजाफरके नवाब बननेसे वाटस साहबका ही भाग्य जगेगा। अमीरचन्दने अंगरेजोंसे कहला भेजा,—'नवाबके खजानेमें जितना रुपया हो, उसमें सैकड़े पीछे पांच रुपया और जितना जवाहरात हो, उसका चतुर्थांश हमें देना पड़ेगा। यदि आप यह बात न मानेंगे, तो हम साज़िशको नवाबके सामने खोल देंगे।'

अमीरचन्दकी अभिसन्धि व्यक्त होते ही वाटस साहब बड़े ही अतिशय चिन्तामें पड़े। इन्होंने कलकत्तेकी कौन्सिलको लिख भेजा—'अमीरचन्द बड़े खराब आदमी हैं। उनकी दो चालाकियां मालूम हुई हैं। एकबार उन्होंने रायदुर्लभके साहाय्यसे नवाबके खजानेका कितना ही रुपया मीरजाफरको सौंपनेकी चेष्टा की थी। फिर नवाबने जब अंगरेज सेनाध्यक्षोंको पारितोषिक देनेके लिये विस्तर अर्थ दिया, तब इन्होंने रणजित् रायसे मिल उसे आत्मसात् कर लिया। दोनोंके हेलमेलसे यह काम होते भी अमीरचन्दने रणजित्रायको कौड़ी न दिखायी। उन्हें आशङ्का हुयी—कहीं अंगरेजोंको खबर न लग जाये। इसीसे रणजित् रायका हृदय तोड़नेके लिये उन्होंने नवाबसे आदेश भी निकलवाया था।'

फिर अपरापर कार्योंसे वाटस साहब और मीरजाफरने एक सन्धिपत्र बनाया। उसमें लिखा था—अंगरेज एक करोड़, हिन्दू ३० लाख, आरमेनियन १० लाख और अमीरचन्द ३० लाख रुपया पायेंगे। किन्तु अंगरेज हाकिमोंने इस पत्रमें काट छांट लगा उनके लिये ३० लाख रुपया घटा दिया। हिन्दुओंको तीसकी जगह २० लाख आरमनियोंको दसकी जगह ७ लाख, सिपाहियोंको साढ़े २२ लाख और दूसरे लोगोंको भी इसी हिसाबसे रुपया मिलना ठहरा। केवल अमीरचन्दके नाम ही शून्य पड़ा। क्लाइव प्रभृति सबने परामर्श किया—'अमीरचन्द बड़े धूर्त हैं। उनके साथ भी वैसी ही चालाकी न करनेसे काम न बनेगा। वह हमें डरा रुपया लेना चाहते हैं। इस दोषकेलिये उन्हें होशियारीसे धोका देना चाहिये।'

फिर दो पत्र लिखे गये—एक सफेद और एक लाल। सफेदमें मीरजाफरकी सन्धिका हाल था। उसपर एडमिरल वाटसन और कमिटीके सभ्यगणने हस्ताक्षर किये। लाल कागज़ अमीरचन्दको दिखानेके लिये रहा। किन्तु इसपर वाटसन साहब और कमिटीके सभ्यगणने अपनी सही न दी थी। केवल क्लाइवने ही हस्ताक्षर किये। फिर क्लाइवने सोचा—शायद अमीरचन्द वाटसन साहबकी सही न देख यह पत्र लेनेसे हिचकेंगे। इसीसे उन्होंने लुशिङ्गटन नामक किसी कर्मचारीसे वाटसन साहबके हस्ताक्षर बनवा दिये। हतभाग्य अमीरचन्दने वाटसन साहब और क्लाइवकी सही देख लाल पत्र ले लिया।

इधर घोरतर साज़िश होने लगी। नवाबको भी उसका आभास मिल गया। अंगरेजोंने नवाबको सन्तुष्ट रखनेके लिये स्क्राफटन नामक एक व्यक्तिको नियुक्त किया। उससे नवाबको मालूम हुआ था—अंगरेज चिरकाल हमारे मित्र बने रहेंगे और कोई अनिष्ट न करेंगे।

ऐसे सङ्कटके समय अमीरचन्द भी घबरा गये। इन्होंने अच्छीतरह समझ लिया था—'अंगरेजोंको हमारा विश्वास नहीं, यह अनायास ही धोका दे देंगे।' अमीरचन्दने कौशलके साथ नवाबको सुझाया—फ्रांसीसी और अंगरेज मिलकर मेल ही चाहते

सकेंगे। यह भय देख इन्होंने अपना प्राप्य ४ लाख (जो रुपया कलकत्तेसे उनका घर लूट नवाबकी फौज ले गयी थी) और वर्धमानके महाराजको ऋण दिया हुआ साढ़े ४ लाख रुपया पानेके लिये नवाबसे आदेश निकलवाया।

इसीसमय वाट्‌स् साहब अमीरचन्दके लिये बहुत चिन्तित हुये—यह कब क्या उपद्रव खड़ा कर दें। वाट्‌स् और स्क्राफटन दोनोंने परामर्शसे ठहराया—अमीरचन्दको मुरशिदाबादसे इस समय हटा देना ही आवश्यक है।' स्क्राफटनने इनसे आकर कहा—'इस समय आपको मुरशिदाबाद छोड़ देना चाहिये। क्योंकि यहां गड़बड़ पड़नेसे वाट्‌स् साहब तो घोड़ेपर चढ़ अनायास ही भाग जायेंगे, किन्तु आप वह होनेसे जल्द जल्द निकल न पायेंगे। इसलिये अविलम्ब आपको कलकत्ते जाना पड़ेगा। किन्तु उससमय भी यह नवाबके खज़ानेसे अपना रुपया पा न सके थे। इन्होंने स्क्राफटनसे भी यह बात बता दी। स्क्राफटनने अमीरचन्दसे कहा—'यह रुपया न मिलनेसे आपका कोई नुकसान न होगा। नया बन्दोबस्त होते ही आप प्रधान कोषाध्यक्ष बनाये जायेंगे।' इसीप्रकार नाना प्रलोभन देख यह कलकत्ते पहुंचाये गये।

यथासमय पलाशीके समरक्षेत्रमें सिराजके सौभाग्य-का सूर्य चिरदिनके लिये अस्तमित हुआ। अंगरेज बङ्गालके सर्वमय कर्ता बने। अमीरचन्दने भी समझा, उनका भाग्य खुल गया। शीघ्र ही ३० लाख रुपया मिलना बड़ा कम खुशीकी बात थी! अमीरचन्द क्लाइवके साथ मुरशिदाबाद गये। मीरजाफर बङ्गाल-के नवाब बने। उस समय क्लाइवने 'प्रकृत' सन्धि-पत्रके अनुसार सकल विषय निष्पत्ति करनेकी बात उठायी। मीरजाफरके भवनमें सभा भरी। क्लाइव, वाट्‌स्, स्क्राफटन, मीरन, रायदुर्लभ और अमीर-चन्द उपस्थित हुए। सब लोग यथास्थान बैठे, किन्तु अमीरचन्द कुछ दूर रहे गये।

सफेद काग़ज़की सन्धिके अनुसार एक-एक कर सकल विषय पूरे किये गये। अब अमीरचन्दकी बारी आयी। ये कितने ही उत्सुक ̃ह रहे थे। सब लोग सोचने लगे कि इस समय कैसे अमीरचन्दको अंगरेज धोका देंगे। इतनेमें ही चतुर-प्रकृति स्क्राफ-टन साहब झटपट हंसते हंसते हिन्दीभाषामें बोल उठे—'अमीरचन्द! लालकाग़ज़ जाली है। आपको कुछ न मिलेगा।' इस बातसे अमीरचन्दपर मानो वज्र टूट पड़ा। लालकाग़ज़को जाली सुनते ही और अपने लाभकी आशा न रहते ही यह निस्पन्द हो गये। समस्त शरीर कांपने और मत्था घूमने लगा था। यदि उस समय कर्मचारी पकड़ न लेते, तो अमीरचन्द निश्चय भूमिपर गिर संज्ञा खो देते। नौकरोंने बड़े कष्टके साथ इन्हें पालकी पर बैठा कर घर पहुंचाया। फिर कोई एक घण्टे निस्पन्द रहनेके बाद उन्मादका लक्षण देख पड़ा। उस समयसे अमीरचन्दका मन बहुत बिगड़ गया था। आजीवन यह आक्षेप न मिटा—'जिसके लिये धन, जन, सहाय, सम्पत्ति सब कुछ गंवाया, उसीने हमारी ओर दृष्टिको न उठाया और धोकेसे भी फंसाया।' फिर जब यह क्लाइवसे मिले, तब साहब अम्लानवदन हो कहने लगे—'अमीरचन्द! तुम्हारा मन बिगड़ गया है। अब तुम तीर्थयात्रामें भ्रमण करो।' अमीरचन्द क्लाइवके कहनेपर तीर्थयात्रा करने निकले। राहमें कभी यह रोते और कभी गाते थे। इस घटनाके डेढ़ वर्ष बाद १७५८ ई०को ५वीं दिसम्बरको इन्होंने इहलोक छोड़ दिया।

उमीदी मौलाना—अपने समयके एक बहुत अच्छे कवि। रेई प्रान्तके तहरान् नगरमें इन्होंने जन्म लिया था। शाह इसमाइल सुफीके कितने ही सभ्योंसे इनकी घनिष्ठ मित्रता थी। किन्तु इनसे शाह कवाम्‌हीन नूरबख़्शी जलते थे। १५१८ ई०को किसी रातके समय उन्होंने इन्हें मार डाला था।

उमेठन (हिं० स्त्री०) उद्वेष्टन, ऐंठ।

उमेठना (हिं० क्रि०) उद्वेष्टन करना, ऐंठना।

उमेठवां (हिं० वि०) उमेठा-जैसा, ऐंठा, मरोड़दार।

उमेड़ना, उमेठना देखो।

उमेत—गुजरात प्रान्तके रेवाकांठा जिलेका एक छोटा राज्य। क्षेत्रफल साढ़े २५ वर्ग मील है। प्रतिवर्ष

अंगरेज़ सरकार और गायकवाड़को कर देना पड़ता है। इसके दो भागोंमें विभक्त है। इसमें ५ ग्रामोंका एक भाग अंगरेजी राज्यके खेड़ा और दूसरा ग्रामोंका भाग रेवाकांठे ज़िलेमें पड़ता है।

उमेद कवि—एक पश्चिमभारतके कवि। इनके 'नखशिख' को लोग बड़ी प्रशंसा करते हैं। यह शाहजहांपुरके पास किसी गांवमें रहते थे।

उमेलना (हिं॰ क्रि॰) उन्मोचन करना, खोलना, बताना।

उमेश (सं॰ पु॰) उमाके पति, शिव।

उम्दतुल उमरा—कर्णाटकके नवाब मुहम्मद अली खान्‌के ज्येष्ठ पुत्र। १७८५ ई॰में इन्होंने अपने पिताका राज्य मिला था। किन्तु १८०१ ई॰की १५वीं जुलाई-को यह चल बसे। इनकी मृत्युके बाद कर्णाटकका शासनभार लेनेको अंगरेजोंने चेष्टा लगायी थी। किन्तु इनके उत्तराधिकारी अलीहुसेन अंगरेजोंके प्रस्तावपर सम्मत न हुये। उम्दतुके भ्रातुष्पुत्र अज़ीमुद्दौलाको राज़ी होनेपर अंगरेजोंने नवाब बना दिया।

उम्दतुल मुल्क—नवाब अमीर खान्‌का एक खिताब।

उम्पा, उम्बिका देखो।

उम्बिका (सं॰ स्त्री॰) शालिधान्य विशेष, किसी किस्मका चावल। यह मधुर, स्निग्ध, सुगन्ध, कषाय, रूक्ष और वात, पित्त तथा कफको नाश करनेवाली है। (राजनिघण्ट)

उम्बर (सं॰ पु॰) उम्-ब-अच्। १ देहली, चौखट। २ एक गन्धर्व। ३ उदुम्बर वृक्ष, गूलरका पेड़।

उम्बर गांव—बम्बई प्रदेशके थाने ज़िलेका एक बन्दर। यह अक्षा॰ २०°११´५५″ उ॰ और द्राघि॰ ७२° ४१´४०″ पू॰ पर अवस्थित है। बम्बई प्रदेशके नाना स्थानोंसे यहां माल आया-जाया करता है।

उम्बर गांव—बम्बई प्रान्तके थाने ज़िलेका एक ग्राम। यह दहाणु तहसीलमें लगता और पैदली रेलवेस्टेशनसे २ कोस पड़ता है। उम्बरगांवसे पैदली तक पक्की सड़क बनी है। यहां कचहरी, पुलिस, डाक और समुन्दरी चुङ्गीका दफ्तर है। यात्रियोंके टिकनेका बंगला और लड़कोंके पढ़नेका स्कूल भी वर्तमान है। दक्षिण किनारे पोर्तगीज़ दुर्ग खड़ा है। १८१८ ई॰में यह बहुत अच्छी इमारत रही। जो लोगोंके रहनेका ऊपर स्थान था। एक कोस दक्षिण पेरो नाग है। यहां १८५६ ई॰में नवाजबाई नामी एक पारसी रमणीने अग्निमन्दिर बनवाया था। फिर १८६८ ई॰को पारसी लोगोंने चन्दा करके एक शान्तिभवन भी खोला था। पारसियोंकी पञ्चायत एक स्कूल चलाती है, जिसमें अल्प अवस्थाको शिक्षा दी जाती है।

उम्बरा—बम्बई प्रान्तका एक ग्राम। आजकल इसे उमरा कहते हैं। ९१४ ई॰में राष्ट्रकूट-नृपति इन्द्र नित्यवर्षने इसे उत्सर्ग किया है। यह विवरण नवसारीके ताम्रफलकोंमें लिखा है।

उम्बिका, उम्बी देखो।

उम्बी (सं॰ स्त्री॰) उम्-बा-क गौरादित्वात् ङीष्। १ यवानी, अजवायन। २ अर्धपक्व एवं दग्ध यवके समान संभृष्ट यव तथा गोधूमकी मञ्जरी, गादा।

उम्म जमील—हर्बकी सुता, अबू सुफियांकी भगिनी और अबूलहबकी पत्नी। इनके पति मुहम्मदसे घृणा रखते थे। इन्होंने उसी घृणाको उत्तेजित किया। इसीसे कुरान्‌में पति और पत्नी दोनोंके विरुद्ध एक आयत्ति आयी है।

उम्म मकरी—एक प्रधान मुसलमान साधु। इन्होंने गृह्नोमें जन्म लिया था। यह अपने तपोबलसे बहुत प्रसिद्ध हुये। सुलतान् मुहम्मद प्रायः इनसे परामर्श लेने जाते और सम्मानार्थ कभी सामने पावड़ न लगाते थे। १००० ई॰के समय यह विद्यमान रहे।

उम्म सलमा—अबू उमय्यकी कन्या और मुहम्मदकी पत्नी। यह मुहम्मदकी सब पत्नियोंसे पीछे ६७८ ई॰में मरी थीं।

उम्मट (हिं॰ पु॰) देशविशेष, एक मुल्क। यह मालवेमें पड़ता है।

उम्मत (अ॰ स्त्री॰) धार्मिक सम्प्रदाय विशेष, एक मज़हबी फ़िरक़ा।

उम्मती (अ॰ वि॰) धार्मिक सम्प्रदाययुक्त, किसी मज़हबी फ़िरक़ेसे मिला हुआ। कश्मिरवासी या नास्तिकको 'साउम्मती' कहते हैं।

उम्मर (हिं॰) उम्र देखो।

उम्मी (हिं०) उम्बी देखो।
उम्मेद (फा० स्त्री०) आशा, विश्वास, समझा, भरोसा। "एक दम हजार उम्मेद।" (लोकोक्ति)
उम्मेद खान्—बङ्गालवाले शासक शायस्ता खान्‌के पुत्र। १६६०-६५ ई०को शायस्ता खान्‌ने इन्हें पैदल फौजका नायक बना चट्टग्राम जीतने भेजा था। इन्होंने आराकानियोंका कितने ही स्थानोंपर हरा चट्टग्रामपर एकाएक अधिकार कर लिया।
उम्मेदवार (फा० पु०) १ आकाङ्क्षी, मुतवक्का, आस तकनेवाला। २ अप्रलम्बी, मातहत। (वि०) ३ आशा-विष्ट, जिसे उम्मेद रहे।
उम्मेदवारी (फा० स्त्री०) स्वहालुता, आरजुमन्दी, चाहना।
उम्मेद सिंह—१ राजपूतानाप्रान्तस्थ कोटा राज्यके महाराव। यह १८८६ ई०में गद्दीपर बैठे थे। अज-मेरके 'मेयो कालेज'में इनकी शिक्षाका कार्य सम्पादित हुआ।

२ राजपूताना प्रान्तस्थ कोटा राज्यके एक राजा। इनके पिताका नाम गुमानसिंह था। उन्होंने देव-लोक चलते समय इन्हें प्रधान मन्त्री जालिमसिंह झालाको सौंपा। उस समय इनका वयस केवल दश वत्सर ही रहा। १८२७ ई०में राज्याधिकार मिला था। जालिमसिंहने मराठोंका उत्पात अपनी प्रजापर पड़ने न दिया। १८६० ई०में करनल मानसन होलकरसे हार कोटे पीछे फिरे थे। किन्तु नानाप्रकार साहाय्य पाते भी वह नगरसे दूर ही रखे गये। कारण उनके वहां पहुंचनेसे होलकर चिढ़ सकते थे। १८०४ ई०में अंगरेज गवरनमेण्टने होलकरके चार परगने जालिमसिंहको दिये, जो पहले उनके ठेकेमें थे। कारण उन्होंने अंगरेजोंको पूर्ण साहाय्य दिया और सङ्कटके समय मित्रवत् व्यवहार किया था। किन्तु प्रभुभक्त जालिमसिंहने उनकी सनद गवरनर जनरल लार्ड हेटिङ्गससे बाद महाराज उम्मेदसिंहके ही नाम लिखायी। १८०५ ई०को अन्यान्य राज्योंके साथ कोटा भी अंगरेज गवरनमेण्टके अधीन हुआ था। सन्धिपत्रमें अन्यान्य विषयोंके साथ यह भी लिखा गया—कोटाके प्रधान मन्त्रीका पद जालिमसिंहके सन्तानको छोड़ दूसरा पा न सकेगा।

३ राजपूताना प्रान्तस्थ बूंदी राज्यके एक महाराज। १८०० ई०में अपने पिता महाराज बुधसिंहके परलोक पहुंचनेसे इन्होंने बन्धुबान्धव जोड़ बूंदीपर अधिकार जमाया था। बुधसिंह देखो। किन्तु आंबेरके महाराज ईश्वरी सिंहने आक्रमण कर इन्हें मार भगाया। उम्मेद सिंहने होलकरके साहाय्यसे १८०६ ई०में ईश्वरी सिंहको हराया और बूंदी घर दबाया था। इसके उपलक्षमें पाटनका परगना होलकरको भेंट मिला। फिर जयपुरके महाराज सवायी माधवसिंह बूंदीपर चढ़े थे। किन्तु उन्होंने जो वार्षिक कर ठहराया, वह अधिक दिन न चल पाया। १८१३ ई०में यह अपने पुत्र अजितसिंहको राज्य सौंप तीर्थसेवनार्थ चलते बने।
उम्य (सं० क्ली०) उमाया अतस्या, उमा-यत्। विभाषातिलमाषोमाभङ्गाणुभ्यः। पा ५।२।४। अोमीन, अतसी या हरिद्राका खेत, अलसी या हलदीका खेत।
उम्र (अ० स्त्री०) वयस्, सिन। युवकका 'कम उम्र' या 'नौ उम्र', आजीवन क्षेमको 'उम्र भरका पैमाना', वृद्धकी 'उम्ररसीदा', दीर्घजीवनको 'उम्रदराज़', जीवनयात्राको 'उम्रका प्याला', आजीवन बन्दीको उम्रकैदी और आजीवन बन्धनको उम्रकैद कहते हैं।
उम्रचन्द्र बरवार—उदयपुरके एक दीवान। १७५८ ई०में उज्जैनके पास राजपूतों और मराठोंका युद्ध होनेपर राणा उरसी हारे थे। उदयपुरको मेंधियाके घेरनेपर इन्होंने बड़े बुद्धिबल और पराक्रमसे बचाया।
उर्—उर० सक० सेट्, मोत्रधातु। यह गमन करने या चलने-फिरनेके अर्थमें व्यवहृत होता है।
उर (सं० पु०) उर्-क। १ मेष, भेड़ा, भेड़। २ एक ऋषि। इन्हें लोग वातवंशीय कहते हैं।
उरः (सं० क्ली०) ऋ-असुन्-किच। १ वक्षः, हृदय, दिल, छाती। "सर्वं दाम मनो वं धारयेत्।" (मनु, ८।८।९४) (त्रि०) २ उत्तम, बढ़िया, अच्छा।
उरःक्षत (सं० क्ली०) १ उरोग्रह, सीनेका जख्म, छातीका घाव। २ क्षयरोग, तपेदिक।

उरःक्षतकास (सं० पु०) क्षयकासरोग, तपेदिककी खांसी।

"अतिव्यवायभाराध्वयुद्धाश्वगजनिग्रहैः।
रूक्षस्योरःक्षतं वायुर्गृहीत्वा कासमावहेत्॥" (निदान)

उरःसूत्रिका (सं० स्त्री०) उरसः सूत्रमिव, कन्, टाप् अत इत्वम्। मुक्ताहार, छातीपर लटकनेवाले मोतियोंकी माला।

उरःस्थल (सं० क्ली०) वक्षः, हृदय, दिल, छाती।

उरई (हिं० स्त्री०) १ उशीर, खस। २ युक्तप्रान्तके जालौन ज़िलेकी एक तहसील और नगरी। यह अक्षा० २५° ५८′ ५″ उ० तथा द्राघि० ७९° २८′ २५″ पू०में कालपीसे झांसी जानेवाली सड़कपर अवस्थित है। पहले उरई छोटीसी बस्ती थी। किन्तु १८३८ ई०में जालौन ज़िलेका हेडक्वार्टर बननेपर यह बहुत शीघ्र बढ़ गयी। यहां एक प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष पड़ा है। कपड़ेकी बुनाई अधिक होती है। पृथ्वीराजके समय माहिल राजा थे। उरईका मैदान मशहूर है।

उरक (सं० पु०) शिवका एक परिचर।

उरकना (हिं० क्रि०) ठिठकना, ठहरना, रुक रहना।

उरग (सं० पु०) उरसा गच्छतीति, उरस-गम-ड सलोपः। "उरगो भोगिनः।" (पा ३।२।४८ वार्त्तिक) १ सर्प, सांप। २ सीसक, सीसा। ३ अश्लेषानक्षत्र। "उरग तिथिषु नागाः..." (ज्योतिष) ४ नागकेशरवृक्ष।

उरगगृह (सं० क्ली०) सर्पगृह, सांपका बिल।

उरगड़ी (हिं० स्त्री०) मारयष्टिविशेष, एक खूंटी। इसके द्वारा लुनाई भूमिमें ताना लगानेके लिये छिद्र बनाते हैं।

उरगप्रतिसर (सं० त्रि०) वैवाहिक अङ्गुरीयकके स्थानमें सर्प रखनेवाला, जो शादीकी अंगूठीके बदले सांप लपेटे हो।

उरगभूषण (सं० पु०) उरगको आभूषणकी भांति धारण करनेवाले महादेव।

उरगराज (सं० पु०) उरगोंके राजा शेष वा वासुकि।

उरगलता (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पानकी बेल।

उरगसारचन्दन (सं० पु०-क्ली०) चन्दनविशेष, किसी क़िस्मका सन्दल।

उरगस्थान (सं० क्ली०) उरगाणां सर्पाणां स्थानम्। पाताल।

उरगादि, उरगाशन देखो।

उरगाय (हिं०) उरुगाय देखो।

उरगारि, उरगाशन देखो।

उरगाशन (सं० पु०) उरगान् सर्पान् अश्नाति, उरग-अश-ल्यु। १ सर्पभक्षक गरुड़। २ मयूर।

उरगाख्य (सं० क्ली०) अवदारणविशेष, किसी क़िस्मका फावड़ा।

उरगिनी (हिं०) उरगी देखो।

उरगी (सं० स्त्री०) नागिनी, सांपन।

उरगेन्द्र, उरगराज देखो।

उरगेन्द्रसुमन (सं० क्ली०) नागकेशर।

उरङ्ग (सं० पु०) उरसा गच्छति, उरस्-गम-ड निपातनात् साधुः। सर्प, सांप।

उरङ्गम (सं० पु०) उरस्-गम-खच्। सर्प, सांप।

उरच्छद (सं० पु०) कुन्द, राजगर।

उरज (हिं०) उरोज देखो।

उरजात (हिं०) उरोज देखो।

उरझना (हिं० क्रि०) फंसना, गांठ डालना।

उरण (सं० पु०) ऋ-क्यप् धातोः-उत्व रपरः। (उणा ५।१७) १ मेष, भेड़ा, मेढ़ा। (ऋक् १।१२१) २ मेघ, बादल। ३ एक दैत्य असुर। इसे इन्द्रने मारा था। (हरिवंश २६।४८) ४ दद्रुघ्नवृक्ष, चकौड़िया। (क्ली०) ५ रौप्य, चांदी। ६ बम्बईप्रदेशके थाने ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १८° ५२′ ४″ उ० तथा द्राघि० ७२° ५८′ पू०-पर बम्बई नगरसे प्रायः ४ कोस दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। यहां अनेक धनवान् रहते हैं। चिकित्सालय, पाठशाला, डाकघर, मन्दिर, गिरजा और मसजिद विद्यमान हैं।

उरणक (सं० पु०) १ मेष, भेड़ा। २ मेघ, बादल।

उरणी (सं० स्त्री०) उरणी, मेषी, भेड़ी।

उरणाक्ष (सं० पु०) उरणस्य मेषस्याक्षीव पुष्पं यस्य। १ दद्रुघ्नवृक्ष, चकौड़िया। २ धाराकदम्ब, कदम्ब।

उरणाख्यक, उरणाख देखो।

उरणाख्य, उरणाख देखो।

उरणाख्यक, उरणाख देखो।

उरद (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक अनाज। माष देखो।

उरदी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्र माषविशेष, छोटा उड़द। इसे आषाढ़ मासमें बोते हैं। आश्विन या कार्तिकमें यह तैयार हो जाता है। बीज कृष्णवर्ण रहता है। एक तरहकी उरदी तीन पखमें ही कटती है। २ पादचिह्नविशेष, चालीके बीचका निशान्। ३ यन्त्रविशेष, एक ठप्पा। ४ पुलिस, पलटन या दूसरे महकमेके सिपाहियोंकी पोशाक। ५ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह पशुवोंके प्राय: चिपट जाता है।

उरध (हिं०) ऊर्ध्व देखो।

उरधारना (हिं० वि०) छिटकाना, लटकाना, छोड़ देना।

उरना (हिं०) उरण देखो।

उर-तरप (हिं०) उड़प देखो।

उरप्यजी—गुजरातके सैयद मुसलमानोंकी एक शाखा। यह लोग सैयदबुध याकूबके वंशधर हैं। सैयद बुध उन सुप्रसिद्ध अश्वारोही वीरके भतीजे थे, जिनके कारण अजमेरके तारागढ़ दुर्गपर सबसे पहले (११९५ ई०) इसलामका झण्डा उड़ा। सैयद बुध गुजरातके सुलतान अहमदके समय (१४११—१४४२ ई०) जीवित थे।

उरफ, उर्फ देखो।

उरबसी, उर्वशी देखो।

उरबी, उर्वी देखो।

उरभ्र (सं० पु०) उरु उत्कटं भ्रमति, भ्रम-ड। १ मेष, मेढ़ा। २ विषधर कीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा। (सुश्रुत)

उरभ्रसारिका (सं० स्त्री०) वातप्रकृति कीटविशेष, एक जहरीला कीड़ा। इसके काटनेसे वातज रोग उठ खड़े होते हैं। (सुश्रुत)

उरमना (हिं० क्रि०) झूलना, लटकना।

उरमाना (हिं० क्रि०) डालना, लटकाना।

उरमाल (हिं० पु०) रूमाल, अंगोछा।

उररी (सं० अव्य०) उरु बाहुलकात् अरीक्। १ अङ्गीकार। स्वीकार। मञ्जूर! अच्छा! हां। २ विस्तार। बढ़ावा। चलने दो। बढ़ो।

उररीकार (सं० पु०) उररी-कृ-घञ्। १ अङ्गीकार, मञ्जूरी, वादा। २ प्रवेश, दख्ल, पैठ।

उररीकृत (सं० वि०) अङ्गीकृत, मञ्जूरशुदा। २ विस्तारित, बढ़ाया हुआ।

उरल (सं० वि०) उर बाहुलकात् कलच्। १ गतियुक्त, चलनेवाला। (हिं० पु०) २ मेषविशेष, एक भेड़। इसके दाढ़ी लटकती है।

उरला (हिं० वि०) १ पिछला, जो आगे न हो। २ अद्भुत, निराला।

उरल्य (सं० वि०) उरल-यः। गवादिभ्यो यः। १ उरलसन्निहित, उरलोंसे भरा हुआ (देशादि)। (पु०) २ एक असभ्य जाति। मन्द्राज प्रदेशके मध्यवर्ती घोघरल्य गिरिमें इस जातिके लोग रहते हैं। यह एक स्थानमें ठहर नहीं सकते। पहाड़ोंमें घूम-घूम कर इन्हें शिकार मारना बहुत अच्छा लगता है। साथमें कुक्कुर और हाथमें धनुर्बाण रहता है। यह महिषसे बड़ी घृणा रखते और देखते ही दूर भागते हैं। यदि कोई उसे छू लेता है, तो अपनी जातिसे उसे हाथ धोना पड़ता है और नियमित दण्डके अनुसार अपने किये को रोता है। महिष छूनेवाली दूसरी जातिको यह अत्यन्त हेय समझते हैं। पिता और माताके हाथमें सब काम करनेका भार रहता है। उनका आदेश सन्तानको प्राण खोते भी पालन करना पड़ता है। यह स्वभावत: लाजुक और नम्रप्रकृति होते हैं। दूसरी जातिसे यह किसी प्रकार मिलना नहीं चाहते।

उरविज (हिं० पु०) मङ्गल, मिरीख़।

उरश (सं० पु०) एक अति प्राचीन जनपद। पाणिनिने तिकादि, भर्गादि और तक्षशिलादि गणमें इस स्थानका उल्लेख किया है। मत्स्य (११०।४६) और ब्रह्माण्ड (११०।१) पुराणमें इस जनपद और इसके निवासियोंका नाम 'औरस' कहा है। वामनपुराणमें उर्वश (११०।१) और मार्कण्डेय तथा वायुपुराणमें औरध, औरस, या और्शंग आदि नाम मिलता है।

यह स्थान अनुमानसे महाभारतोक्त 'उरग' देश

उत्तर पड़ता है। अभिसार देश सामेयर अभिसारदेश उरगके राजाने अर्जुनसे आकर युद्ध किया था।

(भारत, सभा २८ अ०)

पाश्चात्य प्राचीन भूवित्ता टलेमिने इस स्थानको वर्सा (Warsa Regio) बताया है। (Ptolemy, Geog. VII I, 45) चीना इसे उ-ल-शी कहते थे। चीना परिव्राजक युयन् चुयङ्ग यहां आये थे। उनके समय यह राज्य २०० लि (प्रायः साढ़े तीन सौ मील) विस्तृत था। प्रधान नगर एक मीलसे अधिक था। उरश उस समयपर काश्मीर राज्यके अधीन रहा। युयन् चुयङ्गने राजधानीसे प्रायः आध कोस दूर अशोकनिर्मित एक बौद्ध स्तूप देखा था। उसके निकट महायान मतावलम्बी कई बौद्ध रहते थे। इस जनपदका नाम आजकल 'रश' चलता, जो मुजफ्फराबादसे पश्चिम पड़ता है। इस प्रदेशका प्रधान नगर मानसर, नौशहर और जम्बुगम्ब या हरिपुर है।

इसके अधिवासी अतिशय बलशाली और दुर्दान्त होते हैं। जलवायु मनोरम है।

उरश्छद (सं॰ पु॰) उरो छाद्यते अनेन, उरस्-छद-णिच्-घ। कवच, बख्तर।

उरस्, उरः देखो।

उरस (सं॰ त्रि॰) १ दृढ़ एवं प्रशस्त वक्षःयुक्त, मजबूत और चौड़े सीनेवाला। (हिं॰ वि॰) २ नीरस, फीका, जो स्वादु न हो। ३ वक्षस्थल, सीना।

४ मरनेके दिनका मेला। यह अजमेरमें प्रति वर्ष रज्जबकी मुईनुद्दीन् चिश्तीके मरणदिवस पर लगता है। यहां गुजरात और बम्बईके मोमिन अधिक आते हैं। जितनी भी भेंट चढ़ती है, रातको दरगाहमें बहुमूल्य वस्त्र बिछा रोशनी की जाती है। नाना होता और चङ्ग बजता है। लोग शीश बांधकर अपने शरीरको तलवारों तथा कटारोंसे पीटते और दरगाहको चारो ओर नाचते घूमते हैं। किन्तु मृत साधुके प्रतापसे उनको चोट नहीं लगती। बम्बई प्रान्तके नाना नगरोंमें भी इमाम शाह आदिकों दरगाहका उरस प्रसिद्ध है। बैशाख मासमें कोई एक हजार मोमिन यह मेला देखने आते हैं।

उरसना (हिं॰ क्रि) अचल होना, हिलना-डुलना।

उरसाना (हिं॰ क्रि॰) उद्वेग बढ़ाना, अधम मचाना।

उरसिज (सं॰ पु॰) उरसि वक्षःस्थले जायते, उरस्-जन-ड। स्तन, औरतोंकी छाती।

उरसिरुह, उरसिज देखो।

उरसिल (सं॰ त्रि॰) उरस्-इलच्। लोमादिपामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। प्रशस्त वक्षः अस्यास्ति, जिसके भरी या चौड़ी छाती हो।

उरसिलोमा (सं॰ त्रि॰) वक्षःस्थलपर रोम रखनेवाला, जिसके छातीपर बाल रहें।

उरसो (अरिसिंह)—उदयपुरके एक राजा। १७६१ ई॰में यह अपने पिता राजा राजसिंहके स्वर्गलाभ होनेसे गद्दीपर बैठे थे। किन्तु सरदार लोग इनसे चिढ़ गये। उन्होंने इन्हें राजच्युत कर स्वर्गीय राजाके मृत्युपर-जात रत्नसिंह नामक पुत्रको गद्दीपर बैठाना चाहा। फिर गृहयुद्ध होने लगा। दोनो दलोंने मराठोंसे साहाय्य मांगा। उज्जैनके निकट युद्धमें राजा हार गये। उदयपुर शब्द देखो।

उरस्कट (सं॰ पु॰) उरः कट्यते आच्छाद्यते अनेन, उरस्-कट-क। बालकका यज्ञोपवीत विशेष, जो अनेक लड़कोंको किसी त्योहार पर मालाकी तरह पहनाया जाता हो।

उरस्तः (सं॰ अव्य॰) उरसोऽकादिभ्यः-तसि। अपादाने। पा ५।४।४५। वक्षःस्थलसे, छातीकी तर्फ।

उरस्त्राण (सं॰ क्ली॰) उरस्त्रायते, त्रै कर्त्तरि ल्युट्। वक्षःस्थलको बचानेवाला कवच, छातीका तवा, बख्तर।

उरस्य (सं॰ त्रि॰) उरसा निर्मितः, उरस्-यत्। १ हृदयजात, सिदरिया, छातीसे निकला हुआ। उरस्-यत्। २ वक्षःस्थलमें सन्निहित, सीनेमें लगा हुआ। उरस्-य। शरीरावयवाच्च। पा ४।३।५५। ३ हृदयोत्थ, छातीका और चाहनेवाला। ४ औरस, सगोत्र। ५ उत्तम, बढ़िया।

उरस्वत् (सं॰ त्रि॰) उरस्-मतुप्, मस्य वः। उरसिल, भरी-पूरी छातीवाला।

उरहना (हिं॰ पु॰) उपालम्भ, शिकवा, किसी खराब कामकी शिकायत।

उरा (सं॰ स्त्री॰) उरणी, भेड़ी।

उराउ, उराव देखो।

उराट (हिं॰) उर देखो।

उरान (उरन्)—१ बम्बई प्रान्तके थाने ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा॰ १८° ५२´ ४´´ उ॰ तथा द्राघि॰ ७२° ५८´ पू॰ पर थाना नगरसे दक्षिण-पश्चिम ११ कोस दूर करञ्ज द्वीपमें अवस्थित है। इससे उत्तर डेढ़ कोस मोरे बन्दरमें एक बड़ी चुङ्गी और शराबका गुदाम है। वहांसे कितनी ही शराब थाने तथा कुलावे ज़िले और बम्बई शहरको भेजी जाती है। नगरमें डाकघर, औषधालय, स्कूल, गिरजा, मन्दिर और मसजिद आदि हैं। २ बम्बई प्रान्तके थाने ज़िलेकी चुङ्गीका विभाग। इसमें मोरा, करञ्ज और मवा लगता है। समुद्रकी राह लाखों रुपयेका व्यापार होता है। ३ बम्बई प्रान्तके थाने ज़िलेकी पनवेल तहसीलका एक द्वीप।

उराप—बम्बई प्रान्तस्थ सालसीट और बेसीन ज़िलेके किसान। इन्हें कोई उराप और कोई वराप कहते हैं। यह पहले ईसाई थे। १८२० और १८२८ ई॰ को पालसे ब्राह्मण रामचन्द्र बाबा लोमी तथा विट्ठल हरिनायक वैद्यने इन्हें फिर हिन्दू बनाया। कोई 'उराप' शब्द फारसीके 'उर्फ' और कोई अंगरेजीके 'युरोप' शब्दका अपभ्रंश बतलाते हैं। किन्तु दो में एक बात भी ठीक नहीं। सम्भवतः यह शब्द मराठीके 'ओरपने' या 'वरपने' से निकला है। अर्थ तप्त लोहसे दागना है। क्योंकि जब यह हिन्दू बने, तब गर्म लोहेसे दगे थे। उरापोंको नये मराठा कहते हैं। यह शूद्र वा दास आगरियोंसे भी नीच हैं। उरापोंके पुरोहित और नेता स्वतन्त्र रहते हैं। यह दूसरे आगरियोंकी तरह हिन्दू देवदेवी पूजते हैं। इनके गोमस, सोज, फरनम, फुतादि, मिनेज प्रभृति उपाधिमें ईसाईपन झलकता है। हिन्दू होते समय इन्हें कितना ही रुपया दण्डस्वरूप देना पड़ा था।

उराभ्रि (सं॰ त्रि॰) उरणी मारनेवाला, जो भेड़ी कतल करता हो।

उराय, उराव देखो।

उराव (हिं॰ पु॰) हृदयोद्गार, अभिलाष, हिम्मत, चाहना।

उरावन—छोटे नागपुर और पश्चिम बङ्गालके सन्थाल धांगड़। यह गांगपुर राज्यमें अधिक मिलते हैं। करनल डाल्टनके कथनानुसार यह गुजरात या कोंकणसे आकर यहां बसे हैं। ओरांओन् देखो।

उराम (हिं॰ वि॰) दीर्घ, बड़ा।

उराह (सं॰ पु॰) ईषत् पाण्डुवर्ण कृष्णजङ्घाविशिष्ट अश्व, जो हलके पीले रङ्गका घोड़ा काले पैर रखता हो।

उराहना, उलहना देखो।

उरिण, उऋण देखो।

उरिन उऋण देखो।

उरिष्ट (हिं॰ पु॰) अरिष्ट, रीठा।

उरी (सं॰ अव्य॰) उर गतौ बाहुलकात् ईक्। १ अङ्गीकार। मञ्जूर। अच्छा। २ विस्तार, फैलाव। बढ़ावढ़ी।

उरीकार, उररीकार देखो।

उरीकृत, उररीकृत देखो।

उरीशा (सं॰ स्त्री॰) कारवेल्लक, करेली।

उरु (सं॰ त्रि॰) ऊर्णुञ्, नुलोपश्च-ह्रस्वः। ऊर्णोतेर्नुंलोपश्च। उण् १।३१। महति इमच। पा ५।१।१२२।। १ महान्, बड़ा। २ विस्तीर्ण, फैला हुआ। ३ अधिक, ज़्यादा। ४ मूल्यवान्, कीमती, बढ़िया। (हिं॰) उर देखो।

उरुकाल (सं॰ पु॰) उरुर्महान् कालः कृष्णवर्णः परिणामोऽस्य। महाकालतता, लाल इन्द्रायण।

उरुकालक, उरुकाल देखो।

उरुकृत् (सं॰ त्रि॰) स्थान प्रदान करनेवाला, जो जगह देता हो।

उरुक्रम (वै॰ त्रि॰) १ पादविक्षेपयुक्त, लम्बे पैरों चलनेवाला। २ उच्च पदान्वित, ऊंचे दरजेवाला।

"[illegible]" (ऋक् १।९०।९)

'यस्य विष्णोरुरुषु त्रिषु विक्रमणेषु [illegible] [illegible] ।' (१।१५४।२ ऋग्भाष्ये सायण)

३ वामनदेव।

"[illegible] उरुक्रमः।" (भागवत १।१।१९)

उरुक्षय (सं॰ पु॰) १ भरद्वाज वंशीय महावीर्य राजपुत्र। (विष्णु पु॰ ४।१९।१०) २ प्रशस्त भवन, अच्छा·

चौड़ा मकान्। (त्रि०) १ प्रशस्त स्थानमें रहनेवाला, जो लम्बी चौड़ी जगहमें रहता हो।

उरुक्षिति (सं० स्त्री०) प्रशस्त या सुखद भवन, कुशादा या आराम देनेवाला मकान्।

उरुक्षेप (सं० पु०) इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा। यह उरुक्षयके पुत्र थे।

उरुगव्यूति (सं० त्रि०) प्रशस्त राज्य रखनेवाला, जिसके पास लम्बी चौड़ी सल्तनत रहे।

उरुगाय (वै० त्रि०) उरु-गी कर्मणि घञ्। १ सर्वत्र गेय, सब जगह तारीफ पानेवाला। "सोमेव उरुगाये विष्णु।" (ऋक् ८।१८।७) 'उरुभिर्बहुभिः बहु दिक्षु गायमानः'। (सायण) २ दूरगामी, दूर पहुंचनेवाला। ३ गमनादिके अर्थ विस्तृत स्थान प्रदान करनेवाला। (पु०) ४ विष्णु। (भागवत ३।१।२०) (स्त्री०) ५ प्रशस्त स्थान, कुशादा जगह।

उरुगायवान् (सं० त्रि०) विस्तृत स्थान प्रदान करनेवाला, जो खूब लम्बी चौड़ी जगह देता हो।

उरुगूला (सं० स्त्री) सर्प विशेष, एक सांप। (अथर्व ५।१३।८)

उरुचक्र (सं० त्रि०) प्रशस्त चक्रविशिष्ट, लम्बा चौड़ा पहिया रखनेवाला।

उरुचक्रि (वै० त्रि०) अप्रतिहत गति प्रदान करनेवाला, जो लम्बी-चौड़ी चलफिर करने देता हो। २ अधिक साहाय्य देनेवाला, जो बड़ी मदद करता हो। (सायण)

उरुचक्षुस् (वै० त्रि०) १ महादर्शन, बड़ी सूरतवाला। (ऋक् ७।६३।४) (पु०) २ सूर्य। ३ मित्र। ४ वरुण।

उरुज्मा, [illegible]

उरुज्मन (वै० त्रि०) बहु भूमियुक्त, बहुत जमीन रखनेवाला। (अथर्व ६)

उरुज्रय (वै० त्रि०) उरु-ज्रि करणे अच्। बहु वेगयुक्त, बहुत झपटनेवाला।

"उरुज्रय उरुज्रिः।" (ऋक् ८।४।१७)

उरुज्रि (वै० त्रि०) बहु वेगवान्, ज्यादा ज़ोर मारनेवाला।

"उरुज्रय उरुज्रिः।" (सायण)

उरुञ्जिरा (सं० स्त्री०) विपाशा नदीका प्राचीन नाम। (वृहन्निघ ९।२१)

उरुण्ड (वै० पु०) १ वेदोक्त उपद्रवकारी एक असुर। (अथर्व ८।६।१५) २ गोसवयज्ञके एक ऋषि। ([illegible])

उरुतम (सं० त्रि०) अत्यन्त प्रशस्त, निहायत चौड़ा।

उरुतर (सं० त्रि०) अपेक्षाकृत अधिक प्रशस्त, ज्यादा लम्बा-चौड़ा।

उरुता (सं० स्त्री०) १ बहुता, ज्यादती, बहुतायत। २ विस्तार, फैलाव।

उरुताप (सं० पु०) अधिक उष्णता, बड़ी गर्मी।

उरुधार (वै० त्रि०) बहुवेगसे निःसृत, बड़े ज़ोरसे बहनेवाला। (शतपथब्रा० ४।१।११)

उरुप्रथ (सं० त्रि०) अधिक विस्तृत, खूब फैला हुआ।

उरुबिल (वै० त्रि०) उरु महत् बिलमस्य। बहुछिद्रयुक्त, बड़े छेदवाला।

उरुब्ज (वै० त्रि०) १ बहुजलजनक, खूब पानी उपजानेवाला। २ उत्तम, बढ़िया। (सायण)

उरुमार्ग (सं० पु०) दूर पथ, लम्बी राह।

उरुमाण (सं० पु०) फलशाक विशेष, एकको तरकारी। यह फल रुचिकर, गुरु, शीतल, स्वादु, मधुरस, स्निग्ध, विष्टम्भि और कफ तथा शुक्र बढ़ानेवाला है। (वैद्यक)

उरुमुण्ड (सं० पु०) मथुरा प्रदेशका एक पर्वत। (बोधिसत्त्वावदानकल्पलता)

उरुयुग (सं० त्रि०) लम्बाचौड़ा जुआ रखनेवाला।

उरुलोक (वै० स्त्री०) १ अन्तरिक्ष, आसमान। "उरु-लोकमकृणोत्।" (ऋक् १०।१२४२) २ श्रेष्ठ लोक, अच्छी दुनिया।

उरुवा (हिं० पु०) उल्लूक, उल्लू।

उरुविक्रम (सं० त्रि०) शक्तिशाली, बहादुर।

उरुविल्वा (सं० स्त्री०) नैरञ्जन नदीके तीरका एक अतिप्राचीन ग्राम। बुद्धदेव संसार छोड़नेबाद इसी स्थानपर प्रथम आध्यात्मिक ध्यान लगाकर बैठे थे। वर्तमान नाम बोध-गया है।

उरुबु (सं० पु०) एरण्ड वृक्ष, रेंड़ीका पेड़।

उरुबुक (सं० पु०) उरु वायति, वा-क। [illegible] १ एरण्ड वृक्ष, रेंड़का पेड़। २ श्वेत एरण्ड, सफेद रेंड़। ३ रक्त एरण्ड, लाल रेंड़। ४ वदाबृक्ष, पेटका बढ़ाव।

उरुबूक, उरुवुक देखो।

उरुव्यचाः (वै० पु०) उरु-व्यच-असुन्। १ राक्षस। (त्रि०) २ अतिव्यापक, खूब भरा या फैला हुआ। (ऋक् ३।५०।१) 'व्यचे कुटादित्वमनसि। अमसीति त्विम्। उरुव्यचः।' (काशिका १।२।१)

उरुव्यच्, (वै० त्रि०) १ अतिदूर पर्यन्त गमनशील, बहुत दूरतक पहुंचनेवाला। २ विस्तृत स्थानयुक्त, लम्बी चौड़ी जगह रखनेवाला।

उरुव्रज (सं० त्रि०) विस्तृत राज्ययुक्त, जिसके लम्बी चौड़ी सलतनत रहे।

उरुशंस (वै० त्रि०) १ उच्चैः स्वरसे प्रशंसा करनेवाला। २ अनेक व्यक्तियों द्वारा प्रशंसित। (सायण)

उरुशर्मा (वै० त्रि०) संसारमें प्रत्येक स्थानपर शरण पानेवाला।

उरुषा (वै० त्रि०) उरु-सन्-विट्-ङा वेटे अत्वम्। महादाता, बहुदानकारी। (ऋक् ५।७०।८)

उरुष्या (वै० स्त्री०) रक्षणेच्छा, पनाह देनेकी ख्वाहिश। (ऋग्भाष्ये सायण ६।४४।७)

उरुष्यु (वै० त्रि०) दूर स्थानको गमन करनेवाला, जो बचानेकी ख्वाहिश रखता हो। (सायण)

उरुसत्त्व (सं० त्रि०) उदारात्मा, सखी, उमदा।

उरुस्तम्भा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

उरुस्तन (सं० त्रि०) अत्युच्च, बहुत ऊंचा।

उरुहार (सं० पु०) बहु मूल्य माला, बेशकीमती सेहरा।

उरूक (सं० पु०) उलूक, उल्लू।

उरूची (वै० स्त्री०) अतिव्यापिका स्त्री, दूरतक फैली हुई चीज़। (ऋग्वेद)

उरूज (अ० पु०) १ उन्नति, उठान। २ शिरोबिन्दु, शिमतुर्रास।

उरूज़ (अ० पु०) पिङ्गल, क़ाफ़ियाबन्दी, कविता बनानेका ढंग।

उरूणस (वै० त्रि०) दीर्घनासायुक्त, लम्बी नाकवाला। (ऋक् १०।१४।१२)

उरूल (सं० त्रि०) १ स्थानसे प्रीति रखनेवाला, जो जगहको पसन्द करता हो। २ इच्छुक, ख्वाहिशमन्द, जो बढ़ना चाहता हो। ३ स्वतन्त्र, आज़ाद।

उरूसी (हिं० स्त्री०), वृक्षविशेष, एक पेड़। यह जापानमें उत्पन्न होता है। इससे जो गोंद निकालते, उसे रंग और वारनिशमें डालते हैं।

उरे (हिं० क्रि० वि०) १ उस ओर, आगे। २ दूर, फ़ासले पर।

उरेखना, अवरेखना देखो।

उरेह (हिं० पुं०) उल्लेख, चित्रण, नक्काशी।

उरेहना (हिं० क्रि०) १ उल्लेखन करना, कलमसे खींचना। २ रञ्जित करना, रंग भरना।

उरोग्रह (सं० पु०) १ हृदयरोगविशेष, दिलकी एक बीमारी। अति अभिष्यन्दि, गुरु तथा अम्लयुक्त आमिष खानेसे अन्नके साथ यकृत् एवं प्लीहाका मांस मध्य ही बढ़ जाता है। फिर यह रोग कफ और मारुतको कुक्षिमें पहुंचाता है। उरोग्रह वाम पार्श्व और दक्षिणांगमें नहीं, कुक्षि मध्य बढ़ता है; जिसका शिरातुल्य वृक्क आगे रहता, उस रोगको ही अष्ठीव उरोग्रह कहता है। इसमें दौर्बल्य बढ़ता, अग्नि मन्द पड़ता, कार्श्य लगता, मांसका अभिकाङ्क्षित अल्पता और लघ्ववर्णत्व एवं पीतक भी उपजता है। कोई द्विजिह्व-सदृश और कोई कच्छपसन्निभ रहता है। फिर ज्वर, अरुचि, पिपासा और शोषका वेग भी बहुत बढ़ जाता है। (निघण्टु) २ हृदय वेदना, सीनेका दर्द।

उरोघात, उरोग्रह देखो।

उरोज (सं० पु०) उरस्-जन-ड। स्तन, पयोधर, औरतकी छाती। स्तन देखो।

उरोभूषण (सं० क्ली०) उरो भूष्यते अनेन, भूष-ल्युट्। हार, छातीका गहना।

उरोबृहती (वै० स्त्री०) वैदिक छन्दोविशेष। यास्कके मतसे यह द्वितीय चरणमें जागतात्मक होता है।

उरोहस्त (सं० क्ली०) बाहुयुद्ध विशेष, हाथकी एक लड़ाई। बाहुयुद्ध देखो।

"उरोहस्तं ततश्चक्रे पूर्णकुम्भौ प्रस्पृशौ।" (भारत, सभा २३ अ०)

उर्जित (सं० त्रि०) त्यक्त, छोड़ा हुआ।

उर्णनाभ (सं० पु०) ऊर्णेव सूत्र नाभौ गर्भे यस्य, समासे ह्रस्वः। ऊर्णनाभ, मकड़ा। ऊर्णनाभ देखो।

उर्णा (सं० स्त्री०) ऊर्णु-ड, ततः टाप् पृषो०। १ मेषादिका लोम, भेड़ बकरीका ऊन। २ ललाटका लोमसमूहात्मक चिह्न विशेष। ऊर्णा देखो।

उर्णायु, ऊर्णायु देखो।

उर्द—१ सकर्मक धातु। यह दान और आस्वाद करनेके अर्थमें आता है। २ चक० आदि० आत्म० सेट्। यह क्रीड़ा करनेके अर्थमें व्यवहृत होता है।

उर्द, उड़द देखो।

उर्दपर्णी (हिं० स्त्री०) माषपर्णी, जङ्गली उड़द।

उर्दू (हिं० स्त्री०) १ सेना, फौजी बाज़ार। २ भाषा विशेष, फारसी और अरबी मिली हुई हिन्दुस्तानी ज़बान। तुर्की भाषामें इस शब्दका प्रकृत अर्थ शिविर है। किन्तु शाहजहांके राजत्वकालमें उर्दू एक भाषाका नाम पड़ा। कारण बादशाही फौजके सिपाही फारसी, अरबी, तुर्की और हिन्दुस्तानी थे। वह हिन्दीमें अपनी अपनी भाषाके शब्द प्रयोग करते थे। यह भाषा मुसलमानोंके राजत्व कालमें दिल्लीसे निकली। युक्त-प्रदेश और पञ्जाबमें इसका व्यवहार अधिक है। यह पहले दिल्लीके बादशाहों और लखनऊके नवाबोंकी सभामें चलती थी। आज भी युक्तप्रदेशादिकी अदालतोंमें उर्दूका ही प्रभाव देख पड़ता है। भारतवर्षके मुसलमान इसीका अधिक व्यवहार करते हैं।

बहुत संस्कृत शब्दोंके अपभ्रंशसे ही उर्दू निकली है। समस्त क्रियावाचक शब्द संस्कृतके धातु बिगाड़ कर बनाये गये हैं। जैसे—करना, चरना, डरना, भरना, मरना, लिखना, पढ़ना, उठना, बैठना, चलना, फिरना, हिलना, खुलना, जाना, आना, गाना, बजाना, चलाना, सुलाना इत्यादि। इसीप्रकार उपसर्ग भी संस्कृत शब्दोंसे निकले हैं। जैसे—से, को, ने, में, पर प्रभृति।

विचारनेसे हिन्दी और उर्दूमें विशेष भेद नहीं पड़ता। केवल उर्दू फारसी और हिन्दी संस्कृतके अक्षरोंमें लिखी जाती है। हां, मुसलमान अपना भाव प्रकट करनेको विशेष्य एवं विशेषण फारसीके रखते हैं और हिन्दू संस्कृतके शब्दोंकी भरमार करते हैं। किन्तु क्रिया दोनों भाषाओंकी एक ही है। 'करना' लिखनेके लिये दूसरा कोई शब्द नहीं।

जिस समय यह भाषा निकली, उस समय मुसलमानोंका राज्य था। सब लोग इसी भाषाको फारस-वर्णके दक्ष ओरसे वाम ओरतक लिखते थे। हिन्दी बहुत कम लिखी जाती थी। इसीसे उर्दूकी प्रधानता बढ़ी और इसने बड़ी उन्नति कर ली।

लखनऊकी उर्दू प्रसिद्ध है। ऐसा माधुर्य अन्य प्रदेशकी उर्दूमें देख नहीं पड़ता। इसका मुख्य कारण लखनऊकी उर्दूमें संस्कृतके बिगड़े शब्दोंका अधिक परिमाणसे समावेश है।

अब थोड़े दिनोंसे भारतवासी हिन्दी लिखने पढ़ने लगे हैं। इसीसे उर्दूका दबदबा घट गया है। हिन्दीने अपनी अपूर्व मोहिनी मूर्ति सबको दिखा दी है। लोगोंने समझ लिया है,—उर्दू कभी हिन्दीको पा नहीं सकती। कारण हिन्दी और उर्दू दोनोंकी क्रिया एक ही है। फिर वह क्रिया संस्कृतके धातु बिगड़नेसे बनी है। इसलिये उसके साथ संस्कृतके विशेष्य विशेषणादि शब्द बहुत अच्छे लगते हैं, फारसी और अरबीके शब्द ठीक नहीं पड़ते।

उर्दूबाज़ार (हिं० पु०) १ सैन्य-हट्ट, फौजी हाट, जो बाज़ार छावनीमें लगता हो। २ प्रधान हाट, बड़ा बाज़ार।

उर्दूमुअल्ला (तु० स्त्री०) १ राजभाषा, बादशाही ज़बान। २ दिल्लीका वाग्व्यवहार, जो शाहजहांके दिनोंमें चलता हो।

उद्र (सं० पु०) उर्द-रक्। जलबिड़ाल, ऊद-बिलाव। ऊदबिलाव देखो।

उर्ध (हिं०) ऊर्ध्व देखो।

उर्फ़ (अ० पु०) उपनाम, प्यारका नाम।

उर्मि (हिं०) ऊर्मि देखो।

उर्मिला (हिं०) ऊर्मिला देखो।

उर्मीकफ (सं० पु०) समुद्रफेन, समुद्रका झाग।

उर्व—भ्वादि० पर० सक० सेट्। यह धातु हिंसा करनेके अर्थमें आता है।

उर्वङ्ग (सं० पु०) १ पर्वत, पहाड़। २ समुद्र, सागर।

उर्वन्द (सं० पु०) विस्तृत खेत, बड़ा खेत।

उर्वट (सं० पु०) उरु-अट्-अच्। वत्सर, साल।

उर्वरा (सं०स्त्री०) ऋ-अच्-टाप् वा उर्व-रा-क्विप्। १ सस्यशालिभूमि, उपजाऊ जमीन्। २ भूमिमात्र, कोई जमीन्। ३ तन्तु, रूपा प्रभृतिका संयुक्त समुदाय, रेशे और ऊन वर्गरहकी मिली हुई लच्छी। ४ एक अप्सरा या परी। ५ कुटिल केश, घुंघरवाले बाल। (त्रि०) ६ अधिक, ज्यादा।

उर्वराजित् (सं० त्रि०) क्षेत्र अधिकार करनेवाला, जो खेत लेता हो।

उर्वरापति (सं० पु०) बीज वपन किये हुये क्षेत्रोंका स्वामी, बोये खेतोंका मालिक।

उर्वरासा (वै० त्रि०) उर्वरां भूमिं सनोति, सन्-विट् डा। भूमिविभागकारी (पुत्रादि), जमीन् बांटने वाले (लड़के वग़ैरह)।

उर्वरी (सं० स्त्री०) शणसूत्र, पटसन।

उर्वर्य (वै० त्रि०) उर्वरायां भवः यत्। सस्यशालि भूमि-जात, बोये खेतसे पैदा।

उर्वशी (सं० स्त्री०) उरून् महतोऽपि अश्नुते व्याप्नोति वशीकरोति, उरु-अश्-क, स्त्रियां ङीप्। स्वनामख्यात स्वर्वेश्या, इसी नामसे मशहूर बिहश्तकी एक परी। नारायणका ऊरु भेदकर निकलनेसे इस अप्सराका नाम उर्वशी पड़ा है।

"उर्वशी तु वरः: सम्भूतं सिला विनिर्गता।" (आदि)

श्रीमद्भागवतमें लिखा है—नरनारायण बदरिकाश्रममें तपोनिरत रहे। इससे इन्द्र समझे कि उन्होंका पद लेनेके लिये नर और नारायण वैसी घोरतर तपस्यामें लगे हैं। फिर उन्होंने तपोविघ्नके लिये कामदेव और अप्सरोगणको भेजा। बदरिकाश्रममें पहुंचते ही कार्यकलापपर दृष्टि न डाल नरनारायणने आदरके साथ उन्हें अतिथिरूपसे ग्रहण किया। काम प्रभृति समागत देव अलौकिक गुणसे मोहित हो उनका स्तव करने लगे। नरनारायणने उन्हें अद्भुतदर्शन समलङ्कृत रमणी मूर्ति देखायी थी। उसके रूपसौन्दर्यसे देव श्रीहीन हो गये। नरनारायणने तब उन रमणियोंमेंसे एक लेनेको कहा। आदेशानुसार देवोंने उर्वशीको लिया और उन्हें प्रणामपूर्वक स्वर्गको गमन किया।

वेदके मतमें उर्वशीसे वशिष्ठका जन्म हुआ था।

बृहद्देवताके मतानुसार यज्ञस्थलमें उर्वशीको देखते ही वासतीवर पर मित्रावरुणका रेतः गिरा, जिससे अगस्त्य और वशिष्ठने जन्म लिया।

पद्मपुराणमें पढ़ते हैं—किसी समय विष्णुने धर्मके पुत्र बन गन्धमादन पर्वत पर घोरतर तपस्या की थी। इन्द्रने घबराकर तपस्यामें विघ्न डालनेके लिये अप्सरोगणके साथ काम और वसन्तको भेजा। किन्तु अप्सरायें विष्णुका ध्यान तोड़ न सकीं। तब कामदेवने अपने ऊरुसे उर्वशीको निकाला। उर्वशी ही केवल उनका ध्यान तोड़ सकी थीं। इससे इन्द्र उर्वशी पर अत्यन्त सन्तुष्ट हुये और ग्रहण करनेको चाहने लगे। फिर मित्र और वरुण उर्वशी पर ललचाये। किन्तु उर्वशीने उन्हें प्रत्याख्यान किया। मित्र और वरुणने इससे असन्तुष्ट हो उर्वशीको अभिशाप दिया था। उसी शापसे वह मनुष्यभोग्य बन गयीं।

हरिवंशका वचन है—उर्वशी ब्रह्माके शापसे मनुष्य जन्मको प्राप्त हुईं। उन्होंने महाराज पुरूरवाके निकट जा पतीत्व स्वीकार किया और कह दिया था, 'जितने दिन नग्न देख न पड़ेंगे, जितने दिन अकामा पत्नीसे रत न रहेंगे, जितने दिन आप एक सन्ध्या घृतमात्र भोजन करेंगे और जितने दिन दो मेष हमारी शय्याके समीप बंधेंगे, उतने दिन भार्या भावसे हमारे दिन इस घरमें कटेंगे; इससे अन्यथा होनेपर शाप छूट जायेगा और फिर हमारा कोई पता न पायेगा। राजा वही स्वीकार कर उर्वशीके साथ परम सुखसे रहने लगे। इसीप्रकार ८५ वत्सर बीते। इधर गन्धर्व उर्वशीके लिये चिन्तान्वित थे। वह शाप छोड़ाने और उर्वशीको स्वर्गमें फिर लानेका उपाय लड़ाने लगे। उर्वशी अपने दोनों मेष पुत्रवत् पालती थीं। एकदिन विश्वावसु नामक गन्धर्व प्रयाग जा रात्रिकालमें उर्वशीके पालित दोनों मेष ले भागे। उर्वशीने अपने दोनो मेष जाते देख राजासे कहा। उस समय राजा नग्न पड़े थे। उर्वशीके बार बार मेषोंको हाल कहनेसे वह नग्न ही मत्थरपर भपटे। उर्वशी

राजाको नग्न देखते ही अन्तर्हित हो गईं। फिर गन्धर्व मेषोंको छोड़ चलते बने। राजा दोनों मेषोंको ले घर वापस आये, किन्तु उर्वशीके दर्शन न पाये। पीछे समझे, कि अब अपने ही दोषसे उर्वशीको खो बैठे हैं। पुरूरवाके औरस और उर्वशीके गर्भसे आयु, अमावसु, विश्वायु, श्रुतायु, दृढ़ायु, एवं शतायु नाम पुत्र हुये।

ऋग्वेदमें (१०।९५) उर्वशी और पुरूरवाका परिचय मिलता है। कालिदासने उर्वशी और पुरूरवाके उपाख्यानपर 'विक्रमोर्वशी' नामक एक नाटक लिखा है।

उर्वशीतीर्थ (सं० क्ली०) सोमाश्रम तीर्थ। (भारत, वन ८४ अ०)

उर्वशीरमण (सं० पु०) उर्वशीं रमयति, रम-ल्यु, ६-तत्। चन्द्रवंश-सम्भूत बुधपुत्र पुरूरवा। ऐल देखो।

उर्वशीवल्लभ, उर्वशीरमण देखो।

उर्वशीसहाय, उर्वशीरमण देखो।

उर्वा (सं० स्त्री०) औषध, सोता।

उर्वारु (सं० पु०) उरु-ऋ-उण्। ककरि, ककड़ी।

उर्वारुक (सं० क्ली०) उर्वारुफल, पानीकी ककड़ी।

उर्वारू (सं० स्त्री०) उर्वारु देखो।

उर्विजा, उर्वीजा देखो।

उर्विदा (सं० अव्य०) दूर, फासले पर।

उर्वी (सं० स्त्री०) ऊर्णु-उ-कु नलोपो ह्रस्वश्च गुणश्च-मादिति ङीष्। [illegible] १ पृथिवी, जमीन्। "[illegible]" ([illegible]) २ स्थान, जगह। इसमें आकाशके बीचे विभाग और नीचे पातालका स्थान सन्निविष्ट है। ३ एक नदी। ४ शुद्धके मध्यका देश, दानोंके बीचको जगह। ५ ये कारक नामोंके अन्यतम-दो नाम।

उर्वीजा (सं० स्त्री०) सीता। पृथिवीसे उत्पन्न होनेके कारण सीताका यह नाम पड़ा है।

उर्वीधर (सं० पु०) उर्वीं धरति, धृ-अच्। १ पर्वत, पहाड़। २ शेषनाग।

उर्वीभृत् (सं० पु०) उर्वी-भृ-क्विप्-तुक्। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा, बादशाह।

उर्वीरुह (सं० पु०) उर्व्यां रोहति, रुह-क, ७-तत्। वृक्ष, पेड़।

उर्वीश (सं० पु०) राजा, बादशाह।

उर्वूति (वै० त्रि०) प्रकाण्ड शरीर देनेवाला, जो बड़ी विस्तृत रचना हो। (ऋक्)

उर्स (अ० पु०) १ मुसलमानों पीरोंके मृत्यु दिवसका उत्सव। २ मुसलमानी पीरोंके मरनेका दिन।

उल् (सौत्र धातु). पर० सक० सेट्। इसका अर्थ दाह करना है।

उल (वै० पु०) उल् कर्मणि घञर्थे क। १ मृगविशेष, कोई जङ्गली जानवर। २ एक ऋषिका नाम।

उलंग (हिं० वि०) १ नग्न, नङ्गा। २ आवरणहीन, जो ढका न हो।

उलंगना, उलंघना देखो।

उलंघन (हिं०) उल्लङ्घन देखो।

उलंघना (हिं० क्रि०) १ उल्लङ्घन करना, लांघना, पार जाना। २ स्वीकार न करना, टाल देना।

उलक्का (हिं०) उल्का देखो।

उलगट (हिं० स्त्री०) उल्लङ्घन, फंदाई।

उलगना (हिं० क्रि०) उछलना, कूदना।

उलगाना (हिं० क्रि०) कुदाना, पार कराना।

उलचना, उलीचना देखो।

उलछना (हिं० क्रि०) १ परस्पर लिपट जाना, आपसमें फंसा होना।

उलझाँ (हिं० पु०) ईख दाबा पेरनेमें चौथ झालनेका निकास।

उलझाना, उलझना देखो।

उलझन (हिं० स्त्री०) उलझाव देखो।

उलझना (हिं० क्रि०) १ पतित होना, फंसना। २ कठिनतामें पड़ना, अटक जाना। ३ विवाद करना, झगड़ना। ४ प्रेमपाश: लिप्त होना, नेह लगाना।
"[illegible]" ([illegible])

५ फन्दी बनना, फंदेमें फंसना। ६ विवाह होना, शादी लगना। ७ झगड़ेमें पड़ना, आविष्ट होना। ८ अतीव ममत्व बढ़ना, नायकसे नाता पड़ना। ९ मोहित होना, मोहमें पड़ जाना। १० विलम्ब

करना, पीछे रहना। ११ थमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, नुक्‌ताचीनी करना।

उलझाना (हिं॰ क्रि॰) १ ग्रन्थि डालना, फंसाना। २ विशृङ्खला लगाना, गड़बड़ मचाना। ३ कठिनतामें लाना, मुश्किल करना। ४ भ्रमित करना, घुमाना। ५ विवाद लगाना, लड़ाना। ६ बन्धनमें डालना, बांधना। ७ सीना, टांके मारना। ८ फंदेमें फंसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, क़ैद करना। १० विवाह या शादी करा देना। ११ लाभ दिखाना, लालच देना। १२ मोहित करना, फ़रेफ़्ता बनाना। १३ विलम्ब डालना, देर लगाना। १४ थोड़ी देरके लिये पहनना। १५ रखना, जमा करना। १६ चित्त हटाना, दिल घुमाना। १७ विपथ पहुंचाना, गुमराह करना। १८ कुभाव लाना, ठीक न बताना। १९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलझाव (हिं॰ पु॰) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ जटिलत्व, फसाव। ३ चिन्ता, फ़िक्र। ४ उत्पात, गड़बड़। ५ असम्भावन, नाफ़हमी, बेसमझ। ६ कलह, झगड़ा। ७ कठिनता, मुश्किल।

उलझेड़ा, उलझाव देखो।

उलझौंहां (हिं॰ वि॰) उलझा लेनेवाला, जो फंसा रखता हो।

उलट (हिं॰ पु॰) १ विपरीतता, इनक़िलाब, पुलट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबल (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षकी आर्द्र भूमिमें उत्पन्न होता है। वल्कल रेशेदार और तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानीमें भिगा या बेंत हो उतार लेते हैं। वल्कलके लिये प्रति वर्ष दो-तीन बार ६ या ७ फीट की शाखा काटते हैं। उससे रज्जु तैयार होती है। मूलकी त्वक् प्रदर रोग पर सेवन कराते हैं।

उलटकटेरी (हिं॰ स्त्री॰) ऊंटकटेरा।

उलटना (हिं॰ क्रि॰) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ नीचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, चित करना। ४ वमन करना, फेंकना। ५ कर्षण करना, जोतना। ६ पथ बदलना, दूसरा मार्ग लगाना। ७ उंडेलना, डाल देना। ८ पान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदोन्मत्त करना, मतवाला बनाना। ११ निर्बल बनाना, कमज़ोर करना। १२ विनाश करना, बरबादीमें डालना। १३ निर्धन करना, ग़रीब बना देना। १४ उद्धरण करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका बखान करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परिवर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, झूठा खयाल करना। २१ अस्वीकार करना, न मानना। २२ आग्रामक करना, बात टालना। २३ काटना, मनसूख़ करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ नीचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ कूदना, छुलना। २९ लोट आना। ३० बदल जाना। ३१ उन्मत्त होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन आना, बख़्त बिगड़ना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ लौटाना। ३६ उमंडना।

उलट-पुलट (हिं॰ पु॰) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा (हिं॰ वि॰) विपरीत, ख़िलाफ़, नीचे ऊपर। "उलटा चोर कोतवालको डांटे।" (लोकोक्ति) जहाजमें पालोंको 'उलटानवा' कहते हैं।

उलंटाना (हिं॰ क्रि॰) नीचे ऊपर करना।

उलटा सांस (हिं॰ पु॰) नौकाका पश्चाद्गमन, जहाज़की पीछेको हटाई।

उलटाव, उलट देखो।

उलटी (स्त्री॰) उलटा देखो।

"उलटी चीरकी चीं बाज़ार?" (लोकोक्ति)

उलटी-कांगसी (हिं॰ स्त्री॰) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मलखम्भमें पंजा उलट, उंगलियां फंसानेका यह नाम है।

उलटी घड़ी (हिं॰ स्त्री॰) व्यायामविशेष, एक कसरत। मालखम्भमें दोनों पैर आगेसे उठा पीठपर पहुंचानेको उलटी घड़ी कहते हैं।

उलटी-चीन (हिं॰ स्त्री॰) ईंटका रंग।

उलटी बगली (हिं॰ स्त्री॰) मुगदर भांजनेका एक

राजाको भ्रम हुआ कि वे: उन्मादित हो गये। फिर समस्त मित्रोंको छोड़ वनमें घूमे। राजा दोनों मित्रोंको ले घर वापस आये, किन्तु उर्वशीके दर्शन न पाये थे। पीछे समझे, कि वह वनमें ही छोड़के उर्वशीको भी बैठे हैं। पुरूरवाके औरस और उर्वशीके गर्भसे आयु, अमावसु, विश्वायु, श्रुतायु, दृढ़ायु, एवं शतायु नाम पुत्र हुए।

ऋग्वेदमें (१०।९५) उर्वशी और पुरूरवाका चरित्र मिलता है। कालिदासने उर्वशी और पुरूरवाके उपाख्यानमानपर 'विक्रमोर्वशी' नामक एक नाटक लिखा है।

उर्वशीतीर्थ (सं० क्ली०) सोमाश्रम तीर्थ। (काशी०, ख० ६५ अ०)

उर्वशीरमण (सं० पु०) उर्वशी रमयति, रम-ल्यु, १-तत्। चन्द्रवंश-सम्भूत बुधपुत्र पुरूरवा। उर्वशी देखो।

उर्वशीवल्लभ, उर्वशीरमण देखो।

उर्वशीसहाय, उर्वशीरमण देखो।

उर्वा (सं० स्त्री०) सीपत्र, सीमा।

उर्वारु (सं० पु०) उर्व-आ-रुण्। कर्कटी, ककड़ी।

उर्वारुक (सं० क्ली०) उर्वारुफल, पानीकी ककड़ी।

उर्वारू (सं० स्त्री०) उर्वारु देखो।

उर्विजा, उर्वीजा देखो।

उर्विदा (सं० अव्य०) दूर, फासले पर।

उर्वी (सं० स्त्री०) उर्णु-कु अस्योदो ह्रस्वश्च गुणाभावश्चादितोः ङीष्। [illegible] १ पृथिवी, भूमि। [illegible] २ स्थान, जगह। इसमें आकाशके नीचे विशाल और कोई स्थानका नाम सन्निविष्ट है। ३ एक नदी। ४ छायदेश भाग्यका देश, दोनोंके बीचकी जगह। ५ वै कालकाल मनोंके अन्तर्गत दो भाग।

उर्वीजा (सं० स्त्री०) सीता। पृथिवीसे उत्पन्न होनेके कारण सीताका यह नाम पड़ा है।

उर्वीधर (सं० पु०) उर्वी धरति, धृ-अच्। १ पर्वत, पहाड़। २ शेषनाग।

उर्वीभृत् (सं० पु०) उर्वी भ-बिभ-क्विप्-तुक्। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा, बादशाह।

उर्वीरुह (सं० पु०) उर्व्यां रोहति, रुह-क, ७-तत्। वृक्ष, पेड़।

उर्वीश (सं० पु०) राजा, बादशाह।

उर्व्यूति (वै० त्रि०) प्रकाश मार्ग देनेवाला, जो बड़ी विस्तृत रखता हो। (ऋक्)

उर्स (अ० पु०) १ मुसलमानों पीरोंके मृत्यु दिनका उत्सव। २ मुसलमानों पीरोंके मरनेका दिन।

उष् (धातु), पर० सक० सेट्। इसका अर्थ दाह करना है।

उल (वै० पु०) उल् बाहुल्य धातुसे अ। १ मृगविशेष, कोई जङ्गली जानवर। २ एक ऋषिका नाम।

उलंग (हिं० वि०) १ नग्न, नङ्गा। २ आवरणहीन, जो ढका न हो।

उलंगना, उल्लंघना देखो।

उलंघन (हिं०) उल्लङ्घन देखो।

उलंघना (हिं० क्रि०) १ उल्लङ्घन करना, लांघना, पार जाना। २ स्वीकार न करना, टाल देना।

उलका (हिं०) उल्का देखो।

उलगाट (हिं० स्त्री०) उलझन, चढ़ाई।

उलगना (हिं० क्रि०) उछलना, कूदना।

उलगाना (हिं० क्रि०) कुदाना, पार कराना।

उलचना, उलीचना देखो।

उलछना (हिं० क्रि०) १ हस्ततः निक्षेप करना, हाथसे फेंक देना।

उलछा (हिं० पु०) हाथ द्वारा खेतमें बीज डालनेका नियम।

उलझारना, उलझाना देखो।

उलझाव (हिं० स्त्री०) उलझन देखो।

उलझना (हिं० क्रि०) १ पतित होना, फंसना। २ कठिनतामें पड़ना, बखेड़ा करना। ३ विवाद करना, झगड़ना। ४ अनुरागतः लिप्त होना, मन लगाना। [illegible]

५ फन्दे बनना, फंदेमें फंसना। ६ विवाद होना, झगड़ा करना। ७ टेढ़ा पड़ना, प्रतिकूल होना। ८ कठिन काममें पड़ना, आसानी न होना, दुरूह पड़ना। ९ मोहित होना, प्रेमजालमें फंस जाना। १० विलम्ब

करना, पीछे रहना। ११ जमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, नुक़ताचीनी करना।

उलझाना (हिं० क्रि०) १ ग्रन्थि डालना, फंसाना। २ विशृङ्खला लगाना, गड़बड़ मचाना। ३ कठिनतामें लाना, मुश्किल करना। ४ भ्रमित करना, घुमाना। ५ विवाद लगाना, लड़ाना। ६ बन्धनमें डालना, बांधना। ७ सीना, टांके मारना। ८ फंदेमें फंसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, क़ैद करना। १० विवाह या शादी करा देना। ११ लोभ देखाना, लालच देना। १२ मोहित करना, फ़रेफ़्ता बनाना। १३ विलम्ब डालना, देर लगाना। १४ थाड़ी देरके लिये पहनना। १५ रखना, जमा करना। १६ चित्त हटाना, दिल घुमाना। १७ विपथ पहुंचाना, गुमराह करना। १८ कुभाव लाना, ठीक न बताना। १९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलझाव (हिं० पु०) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ जटिलत्व, फसाव। ३ चिन्ता, फ़िक्र। ४ उत्पात, गड़बड़। ५ मिथ्यासम्भावन, नाफ़हमी, बेसमझ। ६ कलह, झगड़ा। ७ कठिनता, मुश्किल।

उलझेड़ा, उलझाव देखो।

उलझौंहा (हिं० वि०) उलझा लेनेवाला, जो फंसा रखता हो।

उलट (हिं० पु०) १ विपरीतता, बरख़िलाफ़, पुलट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षकी आर्द्र भूमिमें उत्पन्न होता है। वल्कल श्वेतवर्ण और तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानीमें भिगा या वैसे ही उतार लेते हैं। वल्कलके लिये प्रति वर्ष दो-तीन बार ६ या ७ फ़ीट की शाखा काटते हैं। उससे रस्सी तैयार होती है। मूलकी त्वक् प्रदर रोग पर सेवन कराते हैं।

उलटकटेरी (हिं० स्त्री०) ऊंटकटेरा।

उलटना (हिं० क्रि०) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ नीचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, चित करना। ४ वमन करना, ओकना। ५ कर्षण करना, जोतना। ६ पद बदलना, दूसरा मार्ग लगाना। ७ उंडेलना, डाल देना। ८ पान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदोन्मत्त करना, मतवाला बनाना। ११ निर्बल बनाना, कमज़ोर करना। १२ विनाश करना, बरबादीमें डालना। १३ निर्धन करना, ग़रीब बना देना। १४ उच्चारण करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका बहाना करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परिवर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, झूठा ख़याल करना। २१ अस्वीकार करना, न मानना। २२ वाग्जाल करना, बात टालना। २३ काटना, मग़लूब करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ नीचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ खुदना, खुलना। २९ लौट आना। ३० बदल जाना। ३१ उन्मत्त होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन आना, बख़्त बिगड़ना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ लौटाना। ३६ उमंडना।

उलट-पुलट (हिं० पु०) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा (हिं० वि०) विपरीत, ख़िलाफ़, नीचे ऊपर। "उलटा चोर कोतवालको डांटे।" (लोकोक्ति) कामसे आदमीको 'उलटामथा' कहते हैं।

उलटाना (हिं० क्रि०) नीचे ऊपर करना।

उलटा मांज (हिं० पु०) नौकाका पश्चाद्गमन, अग्राङ्गकी पीछेको हटाई।

उलटाव, उलट देखो।

उलटी (स्त्री०) उलटा देखो।

"उलटी खोपड़ी बेईमान।" (लोकोक्ति)

उलटी-कालमी (हिं० स्त्री०) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मलखम्भमें पंजा उलट, उंगलियां फंसानेका यह नाम है।

उलटी खड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। मालखम्भमें दोनों पैर आगेसे उठा पीठपर पहुंचानेको उलटी खड़ी कहते हैं।

उलटी-तान (हिं० स्त्री०) ढुंढ़का रंग।

उलटी बगली (हिं० स्त्री०) मुगदर भांजनेकी एक

राजाको नग्न देखते ही अन्तर्हित हो गईं। फिर गन्धर्व मेषोंको छोड़ चलते बने। राजा दोनों मेषोंको ले घर वापस आये, किन्तु उर्वशीके दर्शन न पाये थे। पीछे समझे, कि वह अपने ही दोषसे उर्वशीको खो बैठे हैं। पुरूरवाके औरस और उर्वशीके गर्भसे आयु, अमावसु, विश्वायु, श्रुतायु, दृढ़ायु, एवं शतायु सात पुत्र हुये।

ऋग्वेदमें (१०।९५) उर्वशी और पुरूरवाका परिचय मिलता है। कालिदासने उर्वशी और पुरूरवाके उपाख्यानमालापर 'विक्रमोर्वशी' नामक एक नाटक लिखा है।

उर्वशीतीर्थ (सं॰ क्लो॰) सोमाश्रम तीर्थ। (भारत,वन ८४ अ॰)

उर्वशीरमण (सं॰ पु॰) उर्वशीं रमयते, रम-ल्यु, ६-तत्। चन्द्रवंश-सम्भूत बुधपुत्र पुरूरवा। उर्वशी देखो।

उर्वशीवल्लभ, उर्वशीरमण देखो।

उर्वशीसहाय, उर्वशीरमण देखो।

उर्वा (सं॰ स्त्री॰) शीशक, सीसा।

उर्वारु (सं॰ पु॰) उरु-ऋ-उण्। इर्वारु, ककड़ी।

उर्वारुक (सं॰ क्लो॰) इर्वारुफल, खानेकी ककड़ी।

उर्वारू (सं॰ स्त्री॰) उर्वारु देखो।

उर्विशा, उर्वशी देखो।

उर्विया (सं॰ अव्य॰) दूर, फ़ासले पर।

उर्वी (सं॰ स्त्री॰) ऊर्णु-कु नलोपो ह्रस्वश्च गुणवचनादिति ङीप्। स्त्रियां ङीप्। उण् १।२२। १ पृथिवी, ज़मीन। "ध्वनयन्नुर्वीं गन्धैर्वृक्षानिव।" (रघु १।१०) २ स्थान, जगह। इसमें आकाशके चारो विभाग और नीचे ऊपरका स्थान सम्मिलित है। ३ एक नदी। ४ दरवके मध्यका देश, रानोंके बीचकी जगह। ५ वैकल्यकार मर्मोंके अन्यतम दो मर्म।

उर्वीजा (सं॰ स्त्री॰) सीता। पृथिवीसे उत्पन्न होनेके कारण सीताका यह नाम पड़ा है।

उर्वीधर (सं॰ पु॰) उर्वीं धरति, धृ-अच्। १ पर्वत, पहाड़। २ शेषनाग।

उर्वीभृत् (सं॰ पु॰) उर्वी-भृ-क्विप्-तुक्। १ पर्वत, पहाड़। २ राजा, बादशाह।

उर्वीरुह (सं॰ पु॰) उर्व्यां रोहति, रुह-क, ७-तत्। वृक्ष, पेड़।

उर्वीश (सं॰ पु॰) राजा, बादशाह।

उर्व्यूति (वै॰ त्रि॰) प्रकाण्ड शरण देनेवाला, जो बड़ी हिफ़ाज़त रखता हो। (ऋग्वेद)

उर्स (अ॰ पु॰) १ मुसलमानी पीरोंके मृत्यु दिवसका उत्सव। २ मुसलमानी पीरोंके मरनेका दिन।

उल् (सौत्र धातु). पर॰ सक॰ सेट्। इसका अर्थ दाह करना है।

उल (वै॰ पु॰) उल् कर्मणि घञर्थे क। १ मृगविशेष, कोई जङ्गली जानवर। २ एक व्यक्तिका नाम।

उलंग (हिं॰ वि॰) १ नग्न, नङ्गा। २ आवरणहीन, जो ढका न हो।

उलंगना, उल्लङ्घना देखो।

उलंघन (हिं॰) उल्लङ्घन देखो।

उलंघना (हिं॰ क्रि॰) १ उल्लङ्घन करना, लांघना, पार जाना। २ स्वीकार न करना, टाल देना।

उलका (हिं॰) उल्का देखो।

उलगट (हिं॰ स्त्री॰) उल्लङ्घन, फंदाई।

उलगना (हिं॰ क्रि॰) उछलना, कूदना।

उलगाना (हिं॰ क्रि॰) कुदाना, पार कराना।

उलचना, उलीचना देखो।

उलछना (हिं॰ क्रि॰) १ इतस्ततः निक्षेप करना, हाथसे फेला देना।

उलछा (हिं॰ पु॰) हस्त द्वारा क्षेत्रमें बीज डालनेका नियम।

उलछारना, उछालना देखो।

उलझन (हिं॰ स्त्री॰) उलझाव देखो।

उलझना (हिं॰ क्रि॰) १ ग्रथित होना, फंसना। २ कठिनतामें पड़ना, घबरा उठना। ३ विवाद करना, झगड़ना। ४ इतस्ततः मिश्रित होना, गड़बड़ पड़ना। "उलझना चाहता उलझना हुकिम।" (कंकोति)

५ बन्दी बनना, क़ैदमें फंसना। ६ विवाह होना, शादी लगना। ७ प्रेममें पड़ना, आशिक़ होना। ८ परोक्ष सम्बन्ध बढ़ना, वास्ता ताल्लुक़ पड़ना। ९ मोहित होना, मोहक रह जाना। १० विलम्ब

करना, पीछे रहना। ११ जमा होना। १२ काममें लगना। १३ दोष देखना, नुक्ताचीनी करना।

उलझाना (हिं० क्रि०) १ ग्रन्थि डालना, फंसाना। २ विशृङ्खला लगाना, गड़बड़ मचाना। ३ कठिनतामें लाना, मुश्किल करना। ४ भ्रमित करना, घुमाना। ५ विवाद लगाना, लड़ाना। ६ बन्धनमें डालना, बांधना। ७ सीना, टांके मारना। ८ फंदेमें फंसाना, जालमें पकड़ना। ९ बन्दी बनाना, कैद करना। १० विवाह या शादी करा देना। ११ लोभ दिखाना, लालच देना। १२ मोहित करना, फरेफ्ता बनाना। १३ विलम्ब डालना, देर लगाना। १४ थोड़ी देरके लिये पहनना। १५ रखना, जमा करना। १६ चित्त हटाना, दिल घुमाना। १७ विपथ पहुंचाना, गुमराह करना। १८ कुभाव लाना, ठीक न बताना। १९ कार्यमें नियुक्त करना, काममें लगा देना।

उलझाव (हिं० पु०) १ व्यावर्तन, फेरफार। २ जटिलत्व, फसाव। ३ चिन्ता, फिक्र। ४ उत्पात, गड़बड़। ५ मिथ्यासम्भावन, नाफहमी, बेसमझ। ६ कलह, झगड़ा। ७ कठिनता, मुश्किल।

उलझेड़ा, उलझाव देखो।

उलझौंहा (हिं० वि०) उलझा लेनेवाला, जो फंसा रखता हो।

उलट (हिं० पु०) १ विपरीतता, बरखिलाफ, पुलट। २ परिवर्तन, तबदीली, बदलाव।

उलटकंबल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पौदा। यह भारतवर्षकी आर्द्र भूमिमें उत्पन्न होता है। वल्कल श्वेतवर्ण और तन्तुयुक्त रहता है। उसे पानीमें भिगा या वैसे ही उतार लेते हैं। वल्कलके लिये प्रति वर्ष दो-तीन बार ६ या ७ फीट की शाखा काटते हैं। उससे रज्जु तयार होती है। मूलकी त्वक् प्रदर रोग पर सेवन कराते हैं।

उलटकटेरी (हिं० स्त्री०) ऊंटकटेरा।

उलटना (हिं० क्रि०) १ व्युत्क्रम लगाना, फेर देना। २ नीचे-ऊपर करना। ३ पटक देना, चित करना। ४ वमन करना, औकना। ५ कर्षण करना, जोतना। ६ पक्ष बदलना, दूसरा मार्ग लगाना। ७ उंडेलना, डाल देना। ८ पान करना, पीना। ९ वापस करना, लौटाना। १० मदोन्मत्त करना, मतवाला बनाना। ११ निर्बल बनाना, कमज़ोर करना। १२ दिमाग करना, बरबादीमें डालना। १३ निर्धन करना, ग़रीब बना देना। १४ उच्चारण करना, दोहराना। १५ पठन समापन करना, पढ़ जाना। १६ पढ़नेका अभ्यास करना। १७ विचारना, सोचना-समझना। १८ परिवर्तन करना, बदलना। १९ अनुवाद करना, तर्जुमा बनाना। २० असत्य समझना, झूठा ख्याल करना। २१ अस्वीकार करना, न मानना। २२ आज्ञाभङ्ग करना, बात टालना। २३ काटना, खण्डन करना। २४ व्युत्क्रम पड़ना, फिरना। २५ नीचे ऊपर होना। २६ घूमना। २७ धोका पड़ना। २८ खुदना, खुलना। २९ लौट आना। ३० बदल जाना। ३१ उन्मत्त होना, मतवाला बनना। ३२ दुर्दिन आना, बख्त बिगड़ना। ३३ बिगड़ना। ३४ मरना। ३५ लौटाना। ३६ उमंडना।

उलट-पुलट (हिं० पु०) व्युत्क्रम, फेरफार।

उलटा (हिं० वि०) विपरीत, खिलाफ, नीचे ऊपर। "उलटा चोर कोतवालको डांटे।" (लोकोक्ति) कानसे आदमीको 'उलटातवा' कहते हैं।

उलटाना (हिं० क्रि०) नीचे ऊपर करना।

उलटा मांझ (हिं० पु०) नौकाका पश्चाद्गमन, जहाज़को पीछेको हटाई।

उलटाव, उलट देखो।

उलटी (स्त्री०) उलटा देखो।

"उलटी गोदड़ी भी बहार है" (लोकोक्ति)

उलटी-कांगनी (हिं० स्त्री०) व्यायाम विशेष, एक कसरत। मल्लखंभमें पंजा उलट, उंगलियां फंसानेका यह नाम है।

उलटी खड़ी (हिं० स्त्री०) व्यायामविशेष, एक कसरत। मालखंभमें दोनों पैर बांधके उठा पीठपर पहुंचानेको उलटी खड़ी कहते हैं।

उलटी-चौन (हिं० स्त्री०) कुश्तीका पेंच।

उलटी बगली (हिं० स्त्री०) मुगदर भांजनेकी एक

कसरत। इसमें वक्षःपर सुन्दर भाती भी इसमें मुट्ठी नीचे नहीं पड़ती।

उलटी-कमाली (हिं० स्त्री०) मुगदलकी एक कसरत। इसमें मुगदल आगे को झोंक मारते हैं।

उलटी सरसों (हिं० स्त्री०) टेरी, नीचेकी मुंहवाली फलियोंकी सरसों। इसे अभिचारमें व्यवहार करते हैं।

उलटी-सवाई (हिं० स्त्री०) नौ-शृङ्खलाविशेष, जहाज़की एक ज़ंजीर। धनीके नीचे सबदरा इससे बंधता है।

उलटे (हिं० क्रि० वि०) व्युत्क्रमसे, खिलाफ तौरपर।

उलड़ना, उलटना देखो।

उलथना, उलटना देखो।

उलथा (हिं० पु०) १ अनुवाद, तर्जुमा। २ नृत्यविशेष, किसी किस्मका नाच। इसमें तालपर उछलते जाते हैं।

उलथाना, उलटना देखो।

उलद (हिं० स्त्री०) उंडेल, गिराव।

उलदना (हिं० क्रि०) डालना, गिराना।

उलप (सं० पु०) वलते, वल-कपः सम्प्रसारणत्। १ विस्तीर्ण लता, फैलनेवाली बेल। २ कोमल तृण, मुलायम घास। ३ गुल्म, झाड़। ४ बत्ती। ५ शर। ६ बालायीके एक शिष्य।

उलप्य (वै० पु०) रुद्र विशेष। (यज यजुः १६।४५) (वि०) २ उलप-सम्बन्धीय,झाड़से सरोकार रखनेवाला।

उलफ़त (अ० स्त्री०) १ मैत्री, दोस्ती। २ प्रेम, प्यार।

उलमना (हिं० क्रि०) अवलम्बन लेना, झुक पड़ना, लटक जाना।

उलरना (हिं० क्रि०) कूदना, फांदना, झपटना।

उलरुया (हिं० पु०) गाड़ीको उलरने न देनेवाली एक लकड़ी। यह पीछेकी ओर लगता है।

उललना (हिं० क्रि०) १ गिरना, पड़ना, ढलना। २ उलट पड़ना, पलटा खाना।

उलवी (हिं० स्त्री०) १ मत्स्यविशेष, एक मछली। इसके पक्षसे सरेस निकलता, जिसका व्यापार चलता है। (अ० वि०) २ स्वर्गीय, विहिश्ती।

उलसना (हिं० क्रि०) सुशोभित होना, चमकना।

उलहना (हिं० क्रि०) १ अङ्कुरित होना, फूटना, निकलना। २ प्रफुल्लित होना फूल जाना। (पु०) १ निन्दावाद, शिकायत।

उला—बङ्गालके नदिया जिलेका एक गण्डग्राम वा नगर। कहते हैं—उलू वनसे आकीर्ण विस्तृत भूमि आबाद होनेसे ही उला नाम पड़ा है। यहां पहले अनेक कुलीन ब्राह्मण और कायस्थ रहते थे। जलवायु बहुत अच्छा था, परन्तु पीछे बिगड़ गया। कोई पचहत्तर वर्ष बीते मलेरियाने पदार्पण कर इस नगरको श्मशानतुल्य कर दिया था। यह एक प्राचीन स्थान है। उलाकी चण्डी देवी प्रसिद्ध हैं। प्रतिवर्ष वैशाखी पूर्णिमाको बड़े समारोहसे उनकी पूजा होती है। कितने ही बंगला पुस्तकोंमें इस नगरका उल्लेख है। चण्डीमण्डपका सूक्ष्म शिल्पकार्य देखनेसे बङ्गालके प्राचीन शिल्पनैपुण्यका परिचय मिलता है। इसे वीरनगर भी कहते हैं। कारण—प्रायः सत्तर वर्ष हुए एक बार रातको कितने ही अस्त्रधारी दस्यु किसी धनीके घर घुसे थे। किन्तु यहांके लोगोंने वीरत्वप्रकाशपूर्वक उनमें कितनों-होको हताहत किया। इसीसे तत्कालीन जिला-मजिष्ट्रेट एलियट साहबने 'वीरनगर' नाम रखा था। आजकल यहांके मुख्योपाध्याय बाबू बड़े सात्त्विक क्रियावान् हैं। प्रतिवर्ष रथयात्रा, स्नानयात्रा, जगद्धात्रिपूजा प्रभृति उत्सव होते हैं।

(हिं० स्त्री०) २ मेमना, भेड़का बच्चा।

उलाकांदी—बङ्गाल प्रान्तके मैमनसिंह जिलेका एक नगर। यह मेवना नदीके तीरपर अवस्थित है। लवण और शस्यका व्यवसाय अधिक होता है।

उलाटना, उलटना देखो।

उलार (हिं० वि०) पश्चात् दिक्में भारयुक्त, पीछेको ओर दबी हुई। यह शब्द गाड़ीका विशेषण है।

उलारना (हिं० क्रि०) उत्क्षेपण करना, ऊपरको फेंकना।

उलारा (हिं० पु०) पदविशेष। इसे चौतालके अन्तमें गाते हैं।

ना (हिं॰ पु॰) उपालम्भन, शिकवा, शिकायत।
ना, उलीचना देखो।

(सं॰ पु॰) वल-किन्द: सम्प्रसारणम्।
मिन्द देश। २ शिव।

ा (हिं॰ क्रि॰) जलनिक्षेप करना, हाथ या
दूसरी चीज़से पानी फेंकना।

(सं॰ पु॰) १ आशापत्रयुक्त लता, डाल और
वाली बेल। २ कोमलतृण, मुलायम घास।

(सं॰ पु॰) शिशुक, सुस।

ड़िया—१ बङ्गाल प्रान्तके हवड़ा जिलेकी एक
ील। इसमें उलुबेड़िया, आमता, बाघनान और
ुर चार थाने लगते हैं।

हवड़ा जिलेका एक नगर। यह हुगली नदीके
रे अक्षा॰ २२° २८′ उ॰ तथा द्राघि॰ ८८° ८′
पू॰पर अवस्थित है। उलूबेड़िया मेदिनीपुरको
पड़ता है। १६८६ ई॰ पर्यन्त यह स्थान
ामें मिला था।

(सं॰ स्त्री॰) यमानी, अजवायन।

(सं॰ पु॰) उल-उलि। हृडिसूचक शब्द
), गुरराहट।

(सं॰ पु॰) वल-उक् सम्प्रसारणञ्च। उणा॰ ४।४१। १ इन्द्र। २ पेचक, उल्लू। ३ उलूखल,
ली। ४ दुर्योधनका एक दूत। ५ विश्वामित्रके
ुत्र। ६ एक जनपद। (मार्क॰पु॰ ५८।४०) यह
भारतके उत्तरांशमें अवस्थित है। अर्जुन
जयके समय यहां आये थे। उस समय वृहन्त
देशके राजा रहे। (महा॰ सभा २६ अ॰) कहीं इसे
(महा॰ भीष्म ७।१३) और कहीं कुलूत (वामनपु॰ १३।४२)
हा है। आजकल इसे कुल कहते हैं। ज्वाला-
तीर्थके उत्तर विपाशा तटसे यह जनपद लगता
इसकी प्राचीन राजधानी नगरकोट थी। वर्त-
राजधानी सुलतानपुर है। ७ अष्टग्रामका एक
न नगर। (भविष्य, ब्रह्मखण्ड १३।२०)

जन्तुविशेष। यह लाङ्गूलहीन पक्षजातीय
है। इसका सर्व शरीर काला रहता, केवल
का भ्रू सफेद पड़ता है। वर्ष अधिकांश मनुष्यकी
तरह होते हैं। उलूक सीधा चलता और उठा करता
है। यह 'उलक, उलक' बोलनेसे श्रीहट्ट, आसाम
प्रभृति अञ्चलोंमें उलूक कहलाता है। बैठनेसे यह एक
फीट ऊंचा देख पड़ता है। चींटी और मकड़ी वगै-
रह इसके खानेकी चीजें हैं। फिर वृक्षका पत्र और
उपादेय फल भी इसे अच्छा लगता है। यह शीघ्र
फंदेमें नहीं पड़ता। ग्रीष्मकालमें ही यह पकड़ा
जाता, क्योंकि उस समय वृक्ष छोड़ भूमिपर सोनेको
उतर आता है। वृक्षपर पकड़ा जानेसे आहार-जल
छोड़ता और इहसंसारसे मुंह मोड़ता है। किन्तु
बच्चे शीघ्र ही हिल जाते हैं।

उलूकपाद (सं॰ पु॰) अश्वपादरोग विशेष, घोड़ेके
पैरकी एक बीमारी। कूर्चको आवर्तन कर जङ्घामें
उत्पन्न होनेवाला शोथ उलूकपाद कहलाता है।

उलूकयातु (वै॰ पु॰) वेदोक्त असुर विशेष। यह
असुर उल्लूकी सूरतमें रहता है। (ऋक् ७।१०४।२२)

उलकाश्रम (सं॰ पु॰) इन्द्रका भवन, इन्द्रके रह-
नेकी जगह।

उलूखल (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं खमुनर्वं पृषोदरादित्वात्
ला-क। १ धान कूटनेका काठ वा पाषाणमय पात्र,
खल। २ गुग्गुलु, गूगुल।

उलूखलक, उलूखल देखो।

उलूखलसन्धि (सं॰ पु॰) कक्षावङ्क्षण दशनसन्धि।

उलूखलसुत (वै॰ पु॰) उलूखल द्वारा अभिषुत
सोमरस। (ऋक् १।२८।१)

उलूखलिक (सं॰ त्रि॰) उलूखलमें कूटा हुआ, जो
खलमें साफ़ किया गया हो।

उलूट (सं॰ पु॰) जातिविशेष।

उलूत (सं॰ पु॰) उलति हिनस्ति यः, उल् बाहुल-
कात् ऊतच्। १ अजगर सर्प, बहुत मोटा और बड़ा
सांप। २ जनपद विशेष, एक बसती।

उलूप उलप देखो।

उलूपी (सं॰ पु॰) १ शिशुकमत्स्य, सुस। (स्त्री॰)
२ ऐरावत कुलके कौरव्य नामक नागराजकी
कन्या। पाण्डुनन्दन अर्जुन वनवासके समय गङ्गा-
द्वारके निकट इस नागकन्या द्वारा आकर्षित

हो नागलोक पहुंचे थे। वहां उलूपीकी प्रार्थनाके अनुसार उन्होंने विवाह किया। उलूपीने अपनी मनस्कामना सिद्ध होने पर अर्जुनको वर दिया था—तुम समस्त जलचरोंको जीत सकोगे। (भारत, आदि २१४ अ०) उसी समय मणिपुरपति अर्जुनपुत्र बभ्रुवाहन पिताके आगमनकी वार्ता सुन अभ्यर्थना देने गये। अर्जुनने अपने पुत्रको विना युद्धकी सज्जा आते देख अत्यन्त विरक्त हो विस्तर भर्त्सना बतायी थी। बभ्रुवाहन उससे दुःखित न हुये। किन्तु उलूपीने पास जा उन्हें पितासे लड़नेको भड़काया था। उलूपीकी मायासे बभ्रुवाहनने अर्जुनको मार डाला। फिर उलूपीके दिये दिव्य मणिके प्रभावसे ही वह जिये थे। (आश्वमेधिक ७९ अ०) कुमिल्ला और त्रिपुराके राजा अपनेको उलूपी और अर्जुनके वंशीय बताते हैं।

उलेटना. उलटना देखो।

उलेटा उलटा देखो।

उलेड़ना (हिं० क्रि०) उंडेलना, ढालना।

उलेल (हिं० स्त्री०) १ आल्हाद, खुशी। २ उन्नति, वृद्धि, बाढ़। (वि०) ३ अविज्ञ, बेसमझ।

उलेंड़ना, उलेड़ना देखो।

उल्का (सं० स्त्री०) ओषति, उष षकारस्य लत्वं वा ततः टाप्। ग्रहवक्ष्योल्काः। उणादि ३।४२। १ तेजःपुञ्ज, ज्वाला, झाला, लपट। "उल्का ज्वालाविभावसोः।" (सुभूति) २ आकाशसे पतित अग्नि, आसमानसे गिरी आग।

कितने ही लोग समझते, आकाशसे जो उल्कापिण्ड पड़ते, उन्हें टूटा तारा कहते हैं। गणनातीत कालसे इस आकाशमें उत्पात होते आये हैं। फिर अति प्राचीन कालसे इस अभावनीय नैसर्गिक घटनाको देख लोग नानाप्रकार कल्पना भी लगाते रहे हैं।

वैदिक ऋषि उल्काको अग्निका अंश जानते (ऋक् १०।६८।४) और उल्काकी उत्पत्ति भी सूर्यसे मानते थे। "अवर्षिष्ट' अश्मानिव द्यौः।" (ऋक् १०।६८।४)

देशके प्राचीन ज्योतिर्विदोंने इसे घट उपग्रहके मध्य गिना है। उपग्रह देखो। उनका मत इस प्रस्तावके उपसंहारकालमें विवृत होगा।

युरोपीय वैज्ञानिक ज्योतिर्विद् बहुत दिनसे उल्का का निगूढ़ तत्त्व समझनेके लिये विस्तर यत्न लगा रहे हैं। किन्तु वस्तुतः वह आज भी उल्काका निगूढ़ तत्त्व विशेष रूपसे ढूंढ नहीं सके। जो नाना मत चलते, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे लिखते हैं—

किसीकी समझमें टूटनेवाले नक्षत्र (Shooting stars), अग्निके गोलक (Fire-bello) उपनक्षत्र (Astervids) प्रभृति दीप्तिमान् वस्तु ही उल्का हैं। पृथिवीके निकट आनेसे वह हमें देख पड़ते हैं। युरोपके प्राचीन ज्योतिर्विद् कहते, कि वायुमण्डलके ऊर्ध्वभागमें नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान् वस्तु समय समय पर देख पड़ते और गगनमार्गमें द्रुत वेगसे चलते; फिर शीघ्र अन्धकारमें छिपते हैं। कभी कभी कतिपय हृदाकार वस्तु भी दृष्टिगोचर हो जाते हैं। वायुकी गतिसे उनमें विपर्यय पड़ता है। कोई अल्प-परिसर पथमें फिरते फिरते उज्ज्वल आलोक एवं धूम छोड़ता, कोई दो-तीन खण्डमें टूटता और कोई गभीर गर्जनके साथ फट कर भूमितलपर गिरता है।

उल्का पृथिवीपर नानाप्रकारके आकारमें गिरते देख पड़ी है। कभी बिलकुल मेघ न रहते गभीर

आकाशमें उल्का।

गर्जनसे उल्कापात हुआ है। कभी निर्मल आकाश पर अल्प समयके मध्य मेघका अन्धकार चढ़ा और भीषण शब्दके साथ प्रस्तर पड़ा है। कभी आकाशमें सहस्र सहस्र सर्पाकारसे झलक गभीर गर्जनके साथ उल्का गिरी है। उल्कामें जो प्रस्तर वा लौह रहता है, वह पार्थिव प्रस्तर वा लौहसे नहीं मिलता। किसी उल्काके लौहमें सैकड़े पीछे ८६ भाग द्रवणीय लौह होता है। कहीं कहीं धातव लौहका अभाव भी रहता है। लौह देखो।

उल्काका प्रस्तर कभी क्षुद्राकार कभी वृहदाकार होता है। मङ्गोलीयोंके विश्वासानुसार चीन देशके पश्चिमांशमें पीत नदी किनारे, जो ४० फीट उच्च पर्वत खड़ा, वह आकाशसे ही टूटकर पड़ा है।

उक्त नाना आकारोंमें गिरनेसे युरोपीयोंने प्रथम उल्का सम्बन्धपर चार प्रकारका अनुमान बांधा था।

१म—तरल पदार्थसे जैसे धूम उठता, वैसे ही उल्का-सम्बन्धीय द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकारमें पृथिवीसे वायुमण्डलके उच्चस्थ मेघपर जा जुटता और रासायनिक क्रियासे मिलकर अपने गुरुत्वके अनुसार नीचे गिरता है।

२य—उल्काके सकल प्रस्तर पहले आग्नेय गिरिसे निकल अपनी गतिके अनुसार आकाशमण्डल पर बहु दूर पर्यन्त चढ़ते और अवशेषमें फिर प्रबल वेगसे पृथिवीपर गिर पड़ते हैं।

३य—किसी किसी समय पर चन्द्रमण्डलके आग्नेय गिरिसे इतने वेगमें धातु निकलता, कि पृथिवीके निकट आ लगता और पृथिवीकी शक्तिसे खिंचकर नीचे गिर पड़ता है।

४र्थ—सकल उल्का उपग्रह हैं। यह सूर्यके चारो ओर अपने अपने कक्षमें घूमती हैं। सकल कक्ष पृथिवीके वार्षिक गतिके पथमें वक्र भावसे उत्तीर्ण होते हैं। कभी पृथिवी इन कक्षोंके समान पड़ जाती है। उस समय कक्षके उल्का नामक उपग्रह पृथिवी पर गिरते अथवा पृथिवीके वायुमण्डलमें घुस आकर्षणकी शक्तिके प्रभावसे अवशेषमें भूमिपर आ पहुंचते हैं।

उक्त चारो मतोंपर बहुत दिन तक वादविवाद चला था। अन्तको प्रसिद्ध युरोपीय ज्योतिर्विद् हरमेन साहबने स्थिर किया—सकल तारकावोंके चारो ओर दृष्टिबहिर्भूत अति क्षुद्र क्षुद्र नीहारिका तारा (Nebulæ)की तरह सूर्यके इधर-उधर भी नीहारिकावत् पदार्थ (Nebulous matter) की राशि घिरी है। उल्काप्रस्तर (Nebuloric stone) और तारापात (Shooting stars) नामसे होनेवाला नैसर्गिक काण्ड नीहारिकावत् पदार्थका विकाश मात्र है।

जब घटनाके क्रमसे भूमण्डल उक्त पदार्थ-राशिके पास पहुंचता, तब वह पृथिवीके चारो ओर घूर्णनशील चन्द्रवत् (Sattelite) समझ पड़ता और पृथिवीके साथ चन्द्रवत् सूर्यके चारो ओर घूम सकता है। वह सुवृहत् होते भी चन्द्रवत् सूर्यके आलोकसे झलक देखनेमें आ जाता है। अनेक उल्का अतिशय क्षुद्र, कतिपय वृहदाकार हैं। पृथिवी ऐसे अनेक सहचरों या चन्द्रोंसे घिरी है। इनमें एक एक इतना वृहत् और कठिन रहता, कि सुस्पष्ट सूर्यका आलोक झलकता है। यह जब पृथिवीके अतिनिकट आता, तब अल्प समयके लिये चर्मचक्षुसे देखा जाता, फिर पृथिवीकी छाया पड़नेसे सम्पूर्ण ग्रहण हो अपना मुंह छिपाता है।

उसके बाद पेटिट साहबने गणनासे ठहराया—उल्कावोंमें एक वृहदाकार प्रस्तर है। वह द्वितीय चन्द्रवत् पृथिवीके साथ घूमता है। उसका कक्ष भूमध्यसे ५००० मील और भूके मध्यभागसे ८००० मील दूर अथवा चन्द्रसे २४ मील समीप है। वह पृथिवीकी चारो ओर १० घण्टे २० मिनटमें एकबार घूमता, अतः प्रतिदिन सात बार पृथिवीकी परिक्रमा देता है।

अपने देशके प्राचीन ज्योतिर्विद् श्रीपतिने कहा है।

"यासां कृतिर्दिवि सदैव [illegible] दृष्टा तारास्ता [illegible] इति दूरे।
तिष्ठन्ति या अनियतोद्गमनाय ताराश्चाग्दर्शो हि [illegible]॥
सौम्याम्बुमयास्तपनात् स्फुरन्ति [illegible]।
दूर्णानिलैः [illegible] पतन्ति भुवि [illegible]॥"

जिनकी आकाशगति गणितशास्त्रसे समझ पड़ती और जिनकी अवस्थिति समस्त गगनचारी ज्योतिष्कोंसे अति दूर लगती, उन्हें विद्वन्मण्डली तारका कहती है। फिर जिनकी गतिका नियम नहीं रहता, उन्हें ज्योतिर्विद् तारा कहता है। यह थोड़े थोड़े अब चन्द्रके अधोभागमें ठहरती हैं। उनमें चन्द्रकी तरह जल भरा है। वह सूर्यके किरणसे चमक स्फुरित होती हैं। उनका संस्थान आवह और प्रवह दो मारुतोंके अभिघातसे है। फिर क्षीणित भाव प्राप्त होते ही वह गुरुत्वके कारण पूर्वपतनसे भूमिके किसी स्थलपर गिर पड़ती हैं।

वराहमिहिरके मतानुसार—स्वर्गसे शुभफल भोग जो गिर पड़ते, उन्हींकि रूपका नाम उल्का रखते हैं। धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा पांच भेद हैं। उल्का तथा धिष्ण्याका पन्द्रह, अशनिका पैंतालीस और विद्युत् एवं ताराका फल छह दिनमें मिलता है। ताराका चतुर्थांश, धिष्ण्याका अर्धांश और विद्युत्, उल्का एवं अशनिका सम्पूर्ण फल है। अशनिकी आकृति चक्राकार है। वह गभीर शब्दके साथ मनुष्य, हस्ती, अश्व, मृग, वृक्ष और जन्तु प्रभृति पर गिरती है। विद्युत् कुटिलाकार एवं विस्तृत रहती और सहसा कड़कड़ाहटके साथ गिर जीवोंका विनाश करती है। धिष्ण्या कृश, अल्पपुच्छविशिष्ट, प्रज्वलित अङ्गार-तुल्य और हस्तद्वय परिमित है। तारा एक हस्त प्रमाण, दीर्घाकृति, एवं शुक्ल अथवा ताम्रवर्ण लगती और आकाशमें ऊर्ध्व-अधः या वक्र-भावसे चलती है। उल्काका शिरोभाग अधिक विस्तृत रहता और गिरनेसे बढ़ चलता है। पुच्छ कृश एवं आकार दीर्घ है। यह उल्का नानाप्रकारकी होती है। (बृहत्संहिता ३३ अ०)

कलकत्तेके अजायब घर (Museum)-में अनेक उल्काप्रस्तर रखे हैं। उनके मध्य एक १८६१ ई०की १२ वीं मईको गोरखपुरमें मिला था। उसका वजन दो मनसे अधिक है। सिवा इसके यशोहर, बांकुड़ा, प्रभृति ज़िलोंसे भी वृहत् वृहत् उल्काके प्रस्तर संग्रह किये गये हैं।

उल्काके लोहमें अपर धातु मिलानेसे नानाप्रकारके यन्त्रादि बन सकते हैं। सुनते—ईरान्के बादशाह और तिब्बतके लामा उल्काके लोहेसे बनो तलवार रखते हैं।

उल्काग्नि (सं० पु०) उल्केवाग्निः। उल्का, आसमानसे टूटनेवाला तारा।

उल्काचक्र (सं० क्लो०) १ ग्रामस्थका शुभाशुभज्ञापक चक्रविशेष। "उल्काचक्रं प्रवक्ष्यामि ग्रामदोषादिनिर्णयम्।" (रुद्रयामल) २ विप्लव, गड़बड़। ३ उपद्रव, ऊधम।

उल्काजिह्व (सं० पु०) उल्केव जिह्वा यस्य। रामायणोक्त प्रसिद्ध राक्षसविशेष।

उल्काधारी (सं० त्रि०) मशालची, फलीतेवाला।

उल्कापात (सं० पु०) उल्कानां पातः। १ आसमान उत्पात विशेष, आसमान्से तारोंका टूटना। २ विघ्न, बुराई।

उल्कामत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, सूस।

उल्कामाली (सं० पु०) शिवके एक भृत्य।

उल्कामुख (सं० पु०) उल्केव मुखं यस्य। १ प्रेतविशेष। "वान्ताश्युल्कामुखः प्रेतो विप्रो धर्मात् स्वकाच्च्युतः।" (मनु १२।७१) २ इक्ष्वाकुके एक वंशज।

उल्कामुखी (सं० स्त्री०) शृगाली विशेष, लोमड़ी। इसका पर्याय शृगालिका, लोमालिका, दीप्तजिह्वा और किखि है।

उल्कुषी (सं० स्त्री०) उल्का दाहेन कुष्णाति, कुष-क-ङीप्। १ उल्का, तारेका टूटना। "अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व सेनानीर्नः सहुरे हूत एधि। हत्वाय शत्रून् वि भजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व॥" "कामुलिविं तीव उल्कुषी वत्सीयः।" (शतपथब्रा० ११।२।७।२१) 'उल्कुषी उल्का।' (मायण) २ मशाल, फलीता।

उल्कुषीमान् (वै० पु०) उल्काविशिष्ट, तारेके टूटनेसे सरोकार रखनेवाला। "यत्र प्रजाहि मम उल्कुषीमान्।" (अथर्ववेद ३।१।७।४)

उलटा, उलटा देखो।

उलथा, उलथा देखो।

उल्ब (सं० क्लो०) उत्-लोड् क्षेपणे इति साधुः। उणादयः। उण् ४।९५। १ जरायु। २ गर्भवेष्टनचर्म। ३ गर्भ, हमल।

"मातमातं विशोध्यान्तरामं दैवरक्षिता।" (वाग्भट, उत्तरस्थान १अ०)

"गर्भो जरायुणावृतः उल्वं जहाति जन्मनः।" (यजुर्वेदः १९।७६)

उल्वण (सं० त्रि०) उत्-वण्-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ प्रबल, जोरावर। २ उद्भट, अकड़ू। ३ व्याप्त, भरा हुआ। ४ स्फुट, खिला हुआ। "हेतुर्लक्षणसंसर्गादुल्वणानि च।" (माधवनिदान) ५ तीक्ष्ण, तेज। ६ प्रकाशित, ज़ाहिर। ७ निर्बाध, बेखटका। "तस्यावोदुर्व्वणो मार्गः पादपैरिव दन्तिनः।" (रघु ४।४९) (क्लो०) ८ शरीरस्थित वात अथवा पित्तके प्रकोपका रोग। (पु०) ९ वशिष्ठके एक पुत्र।

उल्व्य (सं० क्लो०) १ शरीरस्थित वातपित्त या कफका आधिक्य। २ विपद्, आफत।

उल्मुक (सं॰ क्ली॰) ओषतीति, उपदाहे उल्मु कदर्वीति निपातनात् यस्य लः मुक् प्रत्ययश्च। १ ज्वलदङ्गार, जलती हुई लकड़ी या कोयला। "अन्वाहार्य पचनादुल्मु-कमादाय।" (शतपथब्रा॰ ६।३।७) २ वृष्णिवंशीय एक राजा। भारत, सभा ३८।१६) ३ बलरामके एक पुत्र।

उल्मुक्य (सं॰ पु॰) उल्मुके भवं यत्। १ अग्नि, आग। "अथ हैक उल्मुकेन दहन्ति।" (शतपथब्रा॰ १२।५।१।१६) (त्रि॰) २ अङ्गार-सम्बन्धीय, जलती लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

उल्लकसन (सं॰ क्ली॰) रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना।

उल्लग्न (सं॰ पु॰) किसी स्थानविशेषका लग्न।

उल्लङ्घन (सं॰ क्ली॰) उत्-लघि-ल्युट्। अतिक्रमण, लंघाई, पार जवाई।

उल्लङ्घना, उल्लंघन देखो।

उल्लङ्घनीय (सं॰ त्रि॰) अतिक्रमणयोग्य, जो लांघा जानेके काबिल हो।

उल्लङ्घित (सं॰ त्रि॰) अतिक्रमण किया हुआ, जो लांघा गया हो।

उल्लङ्घितशासन (सं॰ त्रि॰) आज्ञा न माननेवाला, नाफ़रमांबरदार, बलवाई।

उल्लङ्घिताध्वन् (सं॰ त्रि॰) मार्गके ऊपरसे गुज़रा हुआ, जो राह पार कर चुका हो।

उल्लङ्घ्य (सं॰ त्रि॰) उत्-लघि-यत्। उल्लङ्घनके योग्य, लांघने लायक।

उल्लम्फन (सं॰ क्ली॰) उत्-रम्फ-ल्युट्। कूद-फांद, उछाल।

उल्लम्बित (सं॰ त्रि॰) दण्डायमान, सीधा, खड़ा।

उल्लल (सं॰ त्रि॰) उत्-लल्-अच्। १ बहुलोमयुक्त, मोटे बालोंसे ढका हुआ। २ कम्पायमान, हिलता हुआ, जो कंप रहा हो।

उल्ललत् (सं॰ त्रि॰) १ कम्पायमान, हिलता हुआ। २ अनियमित रूपसे चलायमान, जो बेक़ायदे सरक रहा हो।

उल्ललित (सं॰ त्रि॰) उत्-लल-क्त। १ उच्चलित, जो चल चुका हो। २ तरलित, बहता हुआ। ३ कम्पित, कांपनेवाला।

उल्लस (सं॰ त्रि॰) १ प्रकाशमान, चमकीला। २ सानन्द, खुश। २ बहिर्गमन करनेवाला, जो निकल रहा हो।

उल्लसत् (सं॰ त्रि॰) १ क्रीड़ा-वा नृत्य करनेवाला, जो नाचकूद रहा हो। २ दीप्त, चमकीला। ३ स्वेच्छाचारी, मनमौजी।

उल्लसता (सं॰ स्त्री॰) १ दीप्ति, चमक। २ प्रसन्नता, खुशी।

उल्लसन (सं॰ क्ली॰) उत्-लस-ल्युट्। १ हर्षजनक व्यापार, खुशी पैदा करनेवाला काम। २ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना।

उल्लसनक, उल्लसन देखो।

उल्लसित (सं॰ त्रि॰) उत्-लस्-क्त। १ स्फुरित, फड़कने वाला। २ उद्गत, उठा हुआ। ३ आनन्दित, खुश।

उल्लसित-हरिण-केतन (सं॰ त्रि॰) जिसके हरिणका झण्डा फहराये।

उल्लाघ (सं॰ त्रि॰) उत्-लाघ-क्त निपातनात्। १ नीरोग, जिसके कोई बीमारी न रहे। २ दक्ष, होशियार। ३ शुचि, पाक-साफ़। ४ हृष्ट, मज़बूत। (पु॰) ५ मरिच, मिर्च।

उल्लाप (सं॰ पु॰) उत्-लप्-घञ्। १ शोक, अफ़सोस। "स्त्रीभोल्लापाः शोकः कथमपि तदाराधनपरैः।" (भर्तृहरि ५१)

२ ऊंचे स्वरके साथ आह्वान, ज़ोरकी पुकार।

उल्लापक, उल्लापिक देखो।

उल्लापन (सं॰ क्ली॰) उत्-लप्-णिच्-ल्युट्। १ हस्ति प्रभृति द्वारा शास्त्रकी प्रकृत व्याख्याका करना, समझा समझा कर कहना। २ खुशामदी बातें, ठकुरसोहातीं।

उल्लापिक (सं॰ त्रि॰) वर्णन करनेवाला, जो खुशामदकी बातें कहता हो।

उल्लापिन् (सं॰ त्रि॰) आह्वान करनेवाला, जो ज़ोरसे पुकार रहा हो।

उल्लाप्य (सं॰ क्ली॰) उत्-लप्-णिच्-यत्। प्रेम एवं हास्यविषयक नाटकविशेष। यह स्वर्गीय घटनापर बनता है। सङ्ग्रामका ही वर्णन अधिकांश होता है। हास्य, करुणा प्रभृति रस और सङ्गीतसे उल्लाप्य भरा रहता है। नायक उदात्त गुणविशिष्ट होता है।

किन्तु यह एक ही लगता है। किसी-किसीके कथनानुसार उल्लाप्यमें तीन अङ्क और इक्कीस शिल्पकाङ्ग पड़ते हैं। उल्लाप्यके मध्य 'देवीमहादेव' नामक संस्कृत ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

उल्लाल (सं॰ पु॰) छन्दोविशेष। इसके प्रथम एवं तृतीयमें पन्द्रह और द्वितीय तथा चतुर्थ पादमें तेरह मात्रा लगती हैं।

उल्लाला (हिं॰ पु॰) छन्दोविशेष। इसके प्रत्येक चरणमें केवल तेरह मात्रा लगती हैं।

उल्लास (सं॰ पु॰) उत्-लस्-घञ्। १ ग्रन्थ विशेषका परिच्छेद, किसी किताबका बाब। २ आह्लाद, खुशी। ३ प्रकाश, रौशनी।

"श्रीहित्यबन्धोल्लासगताधप्रतिभादिकम्।" (साहित्यदर्पण)

४ उद्गमन, उठान।

"नभोविक्षिप्तभिः सितात्पत्रादिभिरुल्लसैः।
मधमधुभ्रदुल्लासमदां कुर्वन् सतलकीः॥" (कथासरित् १३।१८)

५ उज्ज्वलता, सफेदी। ६ वृद्धि, बढ़ती। ७ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें उपमा वा उपरोधसे किसी विषयको प्रधान बनाते हैं।

उल्लासक (सं॰ त्रि॰) आह्लादकारी, जो मज़ा करता हो।

उल्लासन (सं॰ क्ली॰) १ नचाने या कुदानेका काम। २ दीप्ति, चमक।

उल्लासित (सं॰ त्रि॰) आह्लादित, खुश, जो फूला न समाया हो।

उल्लासी (सं॰ त्रि॰) उत्-लस्-णिनि। १ उल्लासयुक्त, खुशी मनानेवाला। २ प्रभाविशिष्ट, चमकदार। ३ आह्लादित, खुश।

उल्लिखत् (सं॰ त्रि॰) १ उत्कीर्ण करनेवाला, जो खोद या घसीट रहा हो। २ रेखा खींचनेवाला, जो लकीर निकाल रहा हो। ३ चित्रकारी करनेवाला, जो मुसव्वरी कर रहा हो। ४ वहन करनेवाला, जो उठा रहा हो।

उल्लिखित (सं॰ त्रि॰) उत्-लिख-क्त। १ उत्कीर्ण, खुदा हुआ। २ तनूकृत, बारीक किया हुआ।

"मध्ये च दर्भोल्लिखितेव विभाति।" (रघु १३।११)

३ चित्रित, रंगा हुआ। ४ उत्क्षिप्त, उठाया हुआ। ५ पूर्व कहा हुआ, जो पहले बताया जा चुका हो।

उल्लिङ्गित (सं॰ त्रि॰) परिचित, पहचाना हुआ, जो समझा जा चुका हो।

उल्ली (सं॰ स्त्री॰) पलाण्डु, प्याज।

उल्लु (सं॰ त्रि॰) उत्-लु-क्विप्। उत्पाटनकारी, उखाड़ डालनेवाला।

उल्लुञ्चन (सं॰ क्ली॰) उत्-लुञ्चि-ल्युट्। १ केशोत्पाटन, बालोंकी नोच खसोट। २ उन्मूलन, उखाड़।

"दारकैश्चापदक्षरोल्लुञ्चने च पश्यत् दश।" (रामायण ६।११०)

३ केशकर्तन, बालकी कटाई।

उल्लुण्ठन (सं॰ क्ली॰) उत्-लुठि-ल्युट्। निज अभिप्राय छिपा अन्य प्रकारसे मनोभावका प्रकाश, अपना मतलब छिपा दूसरी तरहसे दिलकी हालतका इजहार।

उल्लुण्ठा (सं॰ स्त्री॰) व्याजस्तुति, बोली-ठोली।

उल्लू (सं॰ त्रि॰) १ कर्तन करनेवाला, जो काट डालता हो। (हिं॰ पु॰) २ उलूक, घुग्घू। यह पक्षी दिनमें अंधा रहता है। वर्ण धूसर है। शिर वर्तुल तथा चक्षु प्रदीप्त रहता है। उल्लू कई तरहका होता है। किसीके शिर पर शिखा उठी रहती है। फिर किसीके पक्ष पदकी अङ्गुलितक पहुंचते हैं। उच्चता ५ इञ्चसे २ फीट पर्यन्त है। चञ्चु कुटिल रहती है। किसीके पक्ष कर्णके समीप ऊपर चढ़ जाते हैं। पक्ष मृदु, किन्तु पद कठोर होते हैं। उल्लू दिनको गुप्त रहता और रात्रिको देख पड़ता है। यह मांसाशी पक्षी है। कीटपतङ्गादिसे अपना जीवन निर्वाह करता है। शब्द बड़ा भयानक है। उल्लू प्रायः निर्जन स्थानमें निवास करता है। भारतमें इसका शब्द तथा ग्राममें वास अशुभ माना गया है। मांससे उच्चाटनादि प्रयोग किया करते हैं। पृथिवी पर किसी जातिके लोग इसे भक्ष्य नहीं बनाते। इसका मांस विरस, भ्रान्तिकारक और वातप्रकोपन होता है। ३ मूर्ख, बेसमझ।

उल्लेख (सं॰ पु॰) उत्-लिख-घञ्। १ कथन, कहाई। २ खनन, खोदाई। ३ अलङ्कारविशेष।

"क्वचित् भेदाद्ग्रहीतॄणां विषयाणां तथा क्वचित्।
एकस्यानेकधोल्लेखो यः स उल्लेख उच्यते॥" (साहित्यदर्पण १०म परि॰)

अनुभावक और विषयके भेदानुसार एक वस्तुका बहुप्रकार वर्णन आनेसे उल्लेखालङ्कार होता है। ४ वर्णन, बयान्।

उल्लेखन (सं॰ क्ली॰) १ वमन, कै। २ खनन, खोदाई।

"सम्मार्जनोपाञ्जनेन सेकेनोल्लेखनेन च।
गवाञ्च परिवासेन भूमिः शुध्यति पञ्चभिः॥" (मनु ५।१२४)

३ उच्चारण, तलफ़्फ़ुज़।

"मासपक्षतिथीनाञ्च निमित्तानाञ्च सर्वशः।
उल्लेखनमकुर्वाणो न तस्य फलभाग् भवेत्॥" (तिथ्यादितत्त्व)

४ कीर्तन, गवाई। ५ निर्देश, दिखाई। ६ चित्रकारी, मुसव्वरी।

उल्लेखनीय, (सं॰ त्रि॰) उल्लेख्य देखो।

उल्लेख्य (सं॰ त्रि॰) उत्-लिख-यत्। उल्लेखके योग्य, लिखने लायक़।

"तदेतत् छिद्रमे मन्त्रं शारीरे ह्युल्लेख्यं ददामि ते।" (कथासरित्)

उल्लोच (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं लोच्यते, अथवा ऊर्ध्वं लोचति, उत्-लोच-घञ्। चन्द्रातप, तम्बू, चंदोवा।

उल्लोप्य (सं॰ क्ली॰) उत्-लुप-यत्। गीतविशेष, एक गाना।

उल्लोल (सं॰ पु॰) उल्लोडति, उत्-लोड-णिच्-अच्। बृहत्तरङ्ग, बड़ी लहर।

उल्व, उल्ब देखो।

उल्वण, उल्बण देखो।

उवट—प्रसिद्ध वेदभाष्यकार। इन्होंने शुक्लयजुर्वेदकी काण्वशाखाका भाष्य और ऋग्वेदीय 'शौनकप्रातिशाख्यभाष्य' नामक ग्रन्थ बनाया है। यजुर्वेदमन्त्रभाष्य पढ़नेसे समझते हैं कि उवट वज्रटके पुत्र और आनन्दपुरके अधिवासी थे। यथा—

"आनन्दपुरवास्तव्यवज्रटाख्यस्य सूनुना।
मन्त्रभाष्यमिदं कृत्स्नं पदवाक्यैः सुनिश्चितैः॥"

किसीके मतानुसार ई॰ एकादश शताब्दीमें भोजराजके समय यह अवन्तिनगरमें विद्यमान रहे। भविष्यभक्तिमाहात्म्य नामक संस्कृत ग्रन्थमें लिखते हैं कि उवट काश्मीर देशमें रहते और मम्मट तथा कैयटके समसामयिक थे।

"उवटो मम्मटश्चैव कैयटश्चेति ते त्रयः।
कैयटो भाष्यटीकाकृदुवटो वेदभाष्यकृत्॥" (भक्तिमा॰ ११८ प॰)

सुननेमें आया है कि ऋग्वेदीय शौनकप्रातिशाख्यभाष्य लिखने बाद उवटने ऋग्भाष्य बनाया था।

उवना (हिं॰ क्रि॰) उदित होना, निकल आना।

उवनि (हिं॰ स्त्री॰) उदय, उठान, निकास।

उशङ्गव (सं॰ पु॰) नृपतिविशेष, एक राजा।

उशत् (सं॰ त्रि॰) वश-शतृ। आकाङ्क्षाकारी, ख़ाहिशमन्द, चाहनेवाला।

उशती (सं॰ स्त्री॰) वश-शतृ-ङीप् सम्प्रसारणम्। १ आकाङ्क्षिणी, चाहनेवाली। २ अमङ्गलवाक्य, बुरी बात।

उशधक (वै॰ त्रि॰) अभिलाष रखने और दहन करने वाला। (सायण)

उशना (वै॰ अव्य॰) अभिलाषसे, ख़ुशीसे, शब्द।

उशनाः (सं॰ पु॰) वश कान्तौ कनसि ग्रहादित्वात् सम्प्रसारणम्। वशेः कनसिः। उण् ४।११०। दैत्यगुरु शुक्राचार्य।

"तत्रातीवोशनसः पुत्राश्चत्वारोऽसुरयाजकाः।" (भारत, आदि) शुक्र देखो।

उशवा (अ॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका मूल रक्तशोधक है। ख़ून बिगड़नेसे प्रायः लोग उशवा पीते हैं।

उशाना (वै॰ स्त्री॰) वश-चानश्। ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषु चानश्। पा ३।२।१२९। पर्वतजात यज्ञीय ओषधिविशेष, सोममें लगनेवाली एक पहाड़ी बूटी। "तद्देवानामुशानाः अधिजज्ञिरे।" (शतपथब्रा॰ ३।४।३।१३)

उशिक् (सं॰ त्रि॰) उश्यते, वश-इजिः-किन्। वशः कित्। उण् २।७१। १ कमनीय, चाहा जाने क़ाबिल, उमदा। २ मेधावी, होशियार। (निघण्टु ३।१५) (पु॰) ३ अग्नि, आग। ४ घृत, घी। (स्त्री॰) ५ कक्षिवान्की माता।

उशित (सं॰ त्रि॰) अभिलषित, चाहा हुआ।

उशी (सं॰ स्त्री॰) वश-ई सम्प्रसारणम्। अभिलाष, ख़्वाहिश।

उशीक्, उशिक् देखो।

उशीनर (सं॰ पु॰) उशीमदो वाञ्छामदो नरो यत्र। १ गन्धार देश। २ गन्धार जनपदवासी क्षत्रिय।

"द्राविडाश्च कलिङ्गाश्च पुलिन्दाश्चाप्युशीनराः।
कौलिसर्पा माहिषकास्ताः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं परिगता ब्राह्मणानामदर्शनात्।" (भारत, अनु ३३।२१)

३ चन्द्रवंशीय एक राजा। यह शिवि राजाके पिता और महामनाके पुत्र थे। इनके चरित सम्बन्ध में कहा है—

'एक समय इन्द्र और अग्निने उशीनरका धर्मबल देखनेके लिये श्येन एवं कपोतकी मूर्ति बनाई। और श्येनके भयसे कपोतने राजाके जङ्घ देशमें जाकर आश्रय लिया। तब श्येन कहने लगा—अपने भक्ष्य कपोतके आपका आश्रय पकड़नेसे मैं भोजनाभावसे अत्यन्त कातर हो रहा हूं; अतएव उसे देकर अपना धर्म बचाइये। राजाने उत्तर दिया—इस कपोतने तुम्हारे भयसे घबड़ाकर ही हमारा आश्रय लिया है, इसको छोड़ना हमारा धर्म नहीं, क्योंकि शरणागतका त्याग विप्र, गो और मातृहत्याके तुल्य पातक है। श्येन बोला—आहारके लिये ही सब प्राणी बने और आहारसे ही सब जीव पले हैं; अन्यान्य सकल विषय छोड़ चिरकाल जी सकते हैं, किन्तु आहार न मिलनेसे ही लोग मरते हैं—आहार न पानेसे मेरा प्राण कैसे बचेगा और मेरे मरनेसे स्त्रीपुत्रोंका ठिकाना कहां लगेगा। इसलिये एक कपोतकी रक्षार्थ बहु प्राणी नष्ट होते हैं। अपर धर्मसे विरोध रखनेवाला धर्म कुधर्म है। इन दोनोंके मध्य गुरु लघु देख उचित कर्तव्य निर्धारण कीजिये। राजाने कहा—पक्षिन्! अपनी बातसे धर्मज्ञ समझ पड़ते भी तुम क्यों अधार्मिककी तरह ऐसा अनुरोध करते हो? क्षुधा मिटानेके लिये कपोतको छोड़ अपर जो चाहो, कहते ही पावोगे। इसपर श्येनने कपोतको बराबर राजाका मांस मांगा था। राजाने अविचलित चित्तसे वही मान कपोत परिमित मांस देने देते क्रमसे सब शरीर काट डाला। (भारत वन १३१ अ॰)

उशीर (सं॰ पु॰ क्ली॰) वश-ईरन्-कित्। ४ष्ट: किन्। उण् ४।३१। सुगन्धिमूलक, खस।

संस्कृत पर्याय—अभय, नलद, सेव्य, अमृणाल, जलाशय, लामज्जक, लघु, लय, अवदाह, इष्टकापथ, उशीर, मृणाल, लघु, लय, अवदाह, इष्टकापथ, इन्द्रगुप्त, जलवास, हरिप्रिय, वीर, वीरण, समगन्धिक, रणप्रिय, वीरतरु, शिशिर, शीतमूलक, वितानमूलक, जलमेद, सुगन्धिक, सुगन्धिमूलक और कम्बु है।

खसका क्षुप ५।६ फीट पर्यन्त बढ़ता है। मूल पीताभ पांशुवर्ण, गन्ध तीव्र और आस्वाद कटु है। यह भारत और ब्रह्मदेशमें उत्पन्न होता है। इसको जड़को बढ़े और टट्टीमें लगाते हैं। आजकल इसे युरोपमें कितनेही लोग सुगन्धि द्रव्यको तरह व्यवहार करते हैं। खसको जलके साथ बांटकर मत्थेपर लगानेसे तरावट आती है। वैद्यकके मतसे उशीर घर्म, दौर्गन्ध्य, दाह, रक्तपित्तका रोग, मोह, भ्रम, ज्वर तथा पित्तको दबाता और सुगन्ध बढ़ाता है। यह शीतल, लघु, तिक्त एवं पाचक है।

उशीरक (सं॰ क्ली॰) उशीर स्वार्थे कन्। उशीर देखो।

उशीरगिरि (सं॰ पु॰) पर्वत विशेष, मैनाक पहाड़।

उशीरबीज (सं॰ पु॰) १ उशीरका बीज, खसका तुख्म। २ मैनाक पर्वत, हिमालयके उत्तर एक पहाड़।

उशीरस्तम्ब (सं॰ पु॰) खसका गट्ठा।

उशीरादिचूर्ण (सं॰ क्ली॰) चूर्ण विशेष, एक बुकनी। उशीर, नगरपादुका, शुण्ठी, काकला, श्वेतचन्दन, रक्तचन्दन, लवङ्ग, पिप्पलीमूल, पिप्पली, एला, नागेश्वर, मुस्तक, यष्टिमधु, कर्पूर, वंशलोचन और तेजःपत्र सबको बराबर ले कूटे-पीसे। फिर समुदाय चूर्णके समान कृष्ण अगुरुका चूर्ण डाल अष्ट गुण शर्करा मिलानेसे यह प्रस्तुत होता है। उशीरादि चूर्ण आधा तोला लेनेसे रक्त वमन, पिपासा और गात्रदाहका वेग मिट जाता है। इस औषधके सेवन बाद दो तोले गूलरका रस डेढ़ तोला चीनी मिलाकर पीना चाहिये।

उशीरादि पाचन (सं॰ क्ली॰) पाचन विशेष, एक काढ़ा। उशीर, बाला, मुस्तक, धान्यक, शुण्ठी, वराक्रान्ता, लोध्र एवं बेलसुण्ठी चार-चार आनेभर ले आध सेर जलमें पकाये। आध पाव जल लगते-जलते बचने पर उतार कर पाचनको छान लेना चाहिये। इसे

पीनेसे अरुचि, अतिशय वेदनायुक्त विवद्ध धर्म, ज्वरातिसार और रक्तातिसार प्रभृति रोग प्रशमित होते हैं।

उशीरासव (सं० क्ली०) आसव विशेष, एक दवा। उशीर, वाला, पद्ममूल, गाम्भारीत्वक्, नीलोत्पल, प्रियङ्गु, पद्मकाठ, लोध्र, कुड़, मञ्जिष्ठा, दुरालभा, अर्क, चिरायता, उदुम्बरत्वक्, राठी, चेत-पापड़ा, पटोलपत्र, काञ्चनत्वक्, अमरूदकी छाल, तथा मोचरस आठ-आठ तोले, द्राक्षा १६० तोले, धायके फूल १२८ तोले, चीनी ढाई सेर, मधु सवा छह सेर और जल आठ सेर किसी नूतन पात्रमें डाल मुंह बांध कर एक महीने रख छोड़े। फिर इस आसवको उपयुक्त मात्रामें सेवन करनेसे रक्तपित्त प्रमेह प्रभृति अनेक रोग विनष्ट होते हैं। इस आसवको रखनेका पात्र प्रथमतः जटामांसी और मरिच चूर्ण द्वारा धूपित कर लेना चाहिये।

उशीरिक (सं पु०) उशीर-ठन्। किसरादिभ्यः ष्ठन्। पा ४।४।५३। १ उशीरका व्यवसायी, खसका रोजगार करनेवाला। (त्रि०) २ उशीर सम्बन्धीय, खसका बना हुआ।

उशीरी (सं० स्त्री०) उशीर स्वल्पार्थे ङीष्। छोटे खेशे। इसका संस्कृत पर्याय मिषि, शुण्डा, अश्वाल, नीरज और शर है। यह मधुर एवं शीतल और पित्त, दाह तथा क्षयरोगनाशक है। (राजनिघण्टु)

उशेन्य (सं० त्रि०) वश-केन्य। कृत्यार्थे तवैकेन केन्यत्वनः। पा ३।४।१४। कमनीय, खूब सूरत, चाहाजाने काबिल। "आ वे सातोरुशेन्यो जनिष्ट।" (ऋक् ८।४।१८)

उष् (धातु) सक० भ्वा० पर० सेट्। इसका अर्थ दहन और वध करना है।

उष (सं० पु०) उष-क। १ क्षारमृत्तिका, खारी मट्टी। २ प्रभात, सवेरा। ३ रात्रिका शेष समय रातका आखिरी वक्त। ४ कामी, मदनतपरवश। ५ गुग्गुल, गूगुर। (स्त्री०) ६ पांशुज लवण।

उषङ्गु (सं० पु०) संहारकर्ता महेश्वर।

उषण (सं० क्ली०) उष बाहुलकात् क्युन् वा। १ मरिच, मिर्च। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ चविका। ४ पिप्पलीमूल, पिपलामूल।

उषणा (सं० स्त्री०) उषण-टाप्। १ पिप्पली, पीपर। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ चविका।

उषणादिचूर्ण (सं० क्ली०) चूर्णादिविशेष, एक बुकनी। मरिच, पिप्पलीमूल, मुस्तक, अतिविषा, वासकत्वक्, गोक्षुर, बृहती, कण्टकारी, यष्टिमधु, मूर्वामूल, ब्राह्मणयष्टिका, सोवा, वंशलोचन और यवक्षार बराबर एक साथ कूट-पीस कपड़ छान करनेसे यह चूर्ण बनता है। उषणादिचूर्ण एक मासा जलके साथ खानेसे लोहितज्वर, विस्फोटक, रोमान्तिका, जीर्णज्वर, और मसूरिका रोग अच्छा हो जाता है।

उषत् (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। इनके पिताका नाम सुयज्ञ और पुत्रका शिनेयु था।

उषती (सं० स्त्री०) उष-शतृ-ङीप्, आगमविधेरनित्यत्वात् नुमभावः। अमङ्गलवाक्य, नागवार जवान्, जिस बातसे दूसरेका दिल दुखे। "यस्य वाचा परं हरिशेन तां वदेदुषतीं पापलोक्याम्।" (भारत, आदि ८७।८)

उषद्गु (सं० पु०) यदुवंशीय एक राजा। यह स्वाहि राजाके पुत्र थे।

उषद्रथ (सं० पु०) पुरुवंशीय एक राजा। यह तितिक्षुके पुत्र और उशीनरके भ्राता थे। (हरिवंश ३१ अ०)

उषप (सं० पु०) ओषतीति, उष दाहे कपन्। खरिकुरिदनिकत्पविषशिभ्यः कपन्। उण् ३।१४२। १ अग्नि, आग। २ सूर्य। ३ चित्रावृक्ष, चीतका पेड़।

उषर्बुध (सं० त्रि०) प्रत्यूषमें उठनेवाला, जो तड़के जागता हो।

उषर्बुध (सं० पु०) उषसि बुध्यते, उषस्-बुध-क। १ अग्नि, आग। "सूर्येव शोचमानितिवान् देवा उषर्बुधः। (ऋक् १।१४।९) २ रक्तचिता, लालचीत। ३ बालक, बच्चा।

उषस् (सं० स्त्री०) ओषति छिनत्ति अन्धकारमिति, उष-असिप्रत्ययः स च कित्। उषःकित्। उण् ४।२३३। प्रत्यूषकाल, सवेरा, तड़का। "अभीदमग्निरिन्धिः उषसोरिंतिरिच्यते।" (ऋक् १।८।१)

उषसी (सं स्त्री०) उषं दिवसं स्यति विनाशयति, उष-सो-क-ङीप्। सन्ध्याकाल, शाम।

उषसुत (सं० पु०) पांशुज लवण, लोनी मट्टीका नमक।

उपस्त (सं० पु०) शाकायन ऋषि। "ततो देवस्ताकायन उपस्तात्।" (सामब्रा० १०।१।१)

उपस्ति, उपस्त देखो।

उषस्य (सं० त्रि०) उषस्-यत्। पाक्षुत्रिक्षको दध। पा ४।३।११। प्राभातिक, सवेरेवाला।

उषा (सं० स्त्री०) उष स्त्रियां टाप्। १ वेदोक्त देवता, वेदकी एक देवी। ऋक् और सामसंहिताके अनेक मन्त्रोंमें इन देवीकी स्तुति की गयी है।

ऋक्संहिताके मतसे—यह आकाशकी कन्या (ऋक् १।४८।१८) भग एवं वरुणकी भगिनी (ऋक् १।१२३।५) और रात्रिकी बड़ी सहोदर (ऋक् १।१२३।८) हैं। रात्रि और उषा दोनों कई जगह साथ साथ भगिनी कही गयीहैं—"नक्तोषसा, उषसानक्ता"। यह सूर्यकी प्रणयिनी हैं। उषा मनुष्योंका आयु दिन-दिन घटा प्रकाशित होती हैं।

वेदसंहितामें जिस भावसे इनको बताया है, उसका उदाहरण नीचे दिया जाता है—

"उषा उच्छन्ती समिधाने अग्ना उद्यन् सूर्य उर्विया ज्योतिरश्रेत्।
अमिनती दैव्यानि व्रतानि प्रमिनती मनुष्या युगानि।
ईयुषीणामुपमा शश्वतीनामायतीनां प्रथमोषा व्यद्यौत्॥२
एषा दिवो दुहिता प्रत्यदर्शि ज्योतिर्वसाना समना पुरस्तात्।
ऋतस्य पन्थामन्वेति साधु प्रजानतीव न दिशो मिनाति॥३
उपो अदर्शि शुन्ध्युवो न वक्षो नोधा इवाविरकृत प्रियाणि।
अद्मसन्न ससतो बोधयन्ती शश्वत्तमागात् पुनरेयुषीणाम्॥४
पूर्वे अर्धे रजसो अप्त्यस्य गवां जनित्र्यकृत प्र केतुम्।
व्यु प्रथते वितरं वरीय ओभा पृणन्ती पित्रोरुपस्था॥५"

(ऋक् १म०, १२४ सू०)

अग्निके समिध् द्वारा जल उठनेसे उषा अन्धकारको आड़में सूर्योदयको तरह बहुत ज्योति प्रकाश करती हैं। वह देवव्रतकी अविघ्नकारिणी और मनुष्यकी आयुःक्षयकारिणी हैं। अतीत तथा नित्य उषा सकलके समान और आगामी उषा सकलके प्रथम रहती हैं। उपाने ऋतुसाम किया है। उषा स्वर्गकी दुहिता हैं। ज्योतिःद्वारा घिर पूर्व दिक्में क्रमसे वह देख पड़ती हैं। मानो सूर्यका अभिप्राय समझ कर ही वह उनके पथमें घूमती हैं। वह कभी दिशाओंको हिंसा नहीं करतीं। सूर्यकी तरह वह अपना वक्षः दिखाती रहती हैं। नोधा ऋषिके समान अपना प्रियवस्तु ढूंढ़नेके लिये उपाने भी अपनेको आविष्कार किया है। ऋद्धियों की तरह उठकर उषा जगत्में सबको जगाती हैं। वह अभिसारिकाओंमें सबसे आगे आती हैं। वह आकाशके पूर्व भागसे निकल दिशाओंको चैतन्य करती हैं। वह जनकस्थानीय स्वर्ग और पृथिवीके अङ्कमें बैठ दोनोंको भरपूर फैलाती हैं।

"सदृशीरद्य सदृशीरिदु श्वो दीर्घं सचन्ते वरुणस्य धाम।
अनवद्यास्त्रिंशतं योजनान्येकैका क्रतुं परियन्ति सद्यः॥" (ऋक् १।१२३।८)

जैसी ही आज वैसी ही कल भी वह अनवद्य हैं। प्रतिदिन उषा वरुण एवं सूर्यकी अवस्थितिके स्थानसे ३० योजन आगे रहती हैं। एक एक उषा उदयकाल पर ही गमनागमनरूप कर्म निर्वाह किया करती हैं।*

इन्द्रने ही उषाको उत्पन्न किया है—"यः सूर्यं य उषसं जजान।" (ऋक् २।१२।७) फिर इन्द्रही उषाको विनष्ट भी करते हैं (ऋक् ४।३०।८-११)।

निघण्टुमें उषाके यह नाम लिखे हैं—विभावरी, सूनरी, भास्वती, ओदती, चित्रामघा, अर्जुनी, वाजिनी, वाजिनीवती, सुम्नावरी, अहना, द्योतना, श्वेत्या, अरुषी, सूनृता, सूनृतावती, सूनृतावरी। (नि० १।८)

पूर्वकालमें ग्रीक और रोमक उषा देवीको पूजा करते थे। ग्रीक उषादेवीको एओस (Eos) और रोमक अरोरा (Aurora) कहते थे। यह हाइपेरियन एवं थियाकी कन्या, हिलियस तथा सिलिनकी भगिनी और टिटान आस्त्रियसकी पत्नी थीं। होमरने उषाको दिवादेवी लिखा है।

२ प्रत्यूष, सवेरा। ३ बाण राजाकी कन्या और अनिरुद्धकी पत्नी। अनिरुद्ध शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

उषाकल (सं० पु०) उषायां कलः शब्दो यस्य, बहुव्री०। कुक्कुट, मुर्गा।

* सायणाचार्यके मतसे सूर्य प्रत्यह ५०१८ योजन अर्थात् एक दण्डमें ७८ योजन चलते हैं। ३० योजन आगे चलते सूर्यके आगे काल इस कारण उषाका उदय होता है।

उषापति (सं॰ पु॰) उषाया: पति: स्वामी, ६-तत्। अनिरुद्ध। यह कृष्णके पौत्र और प्रद्युम्नके पुत्र थे। उषा और अनिरुद्ध शब्द देखो।

उषासानक्ता (सं॰ स्त्री॰) प्रत्यूष एवं रात्रि, सवेरा और अंधेरा।

उषित (सं॰ त्रि॰) वस वा उष-क्त। १ पर्युषित, रात बिताये हुआ। २ दग्ध, जला हुआ। ३ निविष्ट, पहुंचा हुआ। ४ त्वरित, जल्द।

उषितङ्गवीन (सं॰ त्रि॰) उषिता अवस्थिता गावो यत्र। गोगणसे खाया हुआ, जहां गावोंने खाया हो।

उषीर (सं॰ पु॰ क्लो॰) उष-कीरच्। उशीर देखो।

उषेश (सं॰ पु॰) उषाया ईश: पति:, ६-तत्। उषाके ईश अनिरुद्ध।

उषोदेवत्य (सं॰ त्रि॰) प्रत्यूषकालको देवता मानने वाला।

उष्ट्र (सं॰ पु॰) उष-ष्ट्रन्-कित्। उषिखनिभ्यां कित्। उण् ४।१६१। पशुविशेष, ऊंट। संस्कृत पर्याय—क्रमेल, क्रमेलक, मय, महाङ्ग, दीर्घगति, वली, करभ, दासेरक, धूसर, लम्बोष्ठ, उष्ण, महाजङ्घ, जवी, जाङ्घिक, दीर्घ, शृङ्खलक, महान्, महाग्रीव, महानाद, महाध्वग, महापृष्ठ, बलिष्ठ, दीर्घलङ्घ, ग्रीवी, धूम्रक, शरभ, कण्टकाशन, भोलि, बहुकर, अध्वग, मरुद्वीप, वक्रग्रीव, वासन्त, कुलनाश, कुशनामा, मरुप्रिय, द्विककुत्, दुर्गलङ्घन, भूतघ्न, दासेर, दीर्घग्रीव और केलिकीर्ण हैं। संस्कृत क्रमेल भिन्न भिन्न भाषावोंके शब्दोंसे मिलता है—जैसे संस्कृत 'क्रमेल', हिब्रू 'गमेल,' ग्रीक 'कामिलस्', रोमक 'कमेलस्,' इटलीय 'कम्मेलो,' स्पेनीय 'कमेलो,' जर्मन 'कमील,' फ्रान्सीसी 'कमु,' (Chameau) अंगरेजी 'कैमेल (Camel) अरबी 'जमेल'। इसके सिवा फारसीका शुतर शब्द धूसर जैसा मालूम पड़ता है।

यह अरब, ईरान, दक्षिण तुर्कस्थान, उत्तर-पश्चिम भारत, इजिप्तसे सरितानियातक अफरीका, भूमध्य सागर तथा सिनिगल नदी तीरके मध्यवर्ती प्रदेश और कनारी द्वीपमें वास करता है।

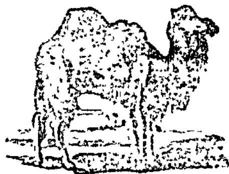
उष्ट्र तीन जातिके होते हैं—हिगुइन, बैकेरी और इलहैरी। हिगुइन सबसे बड़ा होता और १५ मन तक भार ढोता है। बैकेरी हिगुइनसे छोटा पड़ता है। पृष्ठमें ककुदाकृति दो कुब रहते हैं। उनके बीच द्रव्यादि रखनेसे किसी दिक् गिर नहीं सकते। ८।९ मन भार लादता है।

इलहैरी अपर जातीय उष्ट्रसे खर्व पड़ते भी भारके वहनमें सबकी अपेक्षा पटु है। ऐसा बहुकालव्यापी द्रुतगामी पशु कहीं नहीं। हम जिस प्रकार घोड़ेका गल्प सुनते, उसे द्रुतगति अनुध्यान करनेसे इलहैरी हो समझते हैं। अरबी कवियोंने इसकी जीभर प्रशंसा की है। इलहैरी आठ दिनमें प्राय: ४५० कोस अफरीकाका दुर्गम मरुपथ तय करता है।

उष्ट्र—रोमन्थक कहलाता अर्थात् भुक्त वस्तु उद्गीरणपूर्वक फिर चबाता है। किन्तु दन्तकी संख्याके अनुसार अपर रोमन्थक पशुवोंसे इसका लक्षण भिन्न है। अपर रोमन्थक पशुके केवल नीचेकी दंष्ट्रमें छेदन-दन्त जमते, उसके ऊपरी अग्रभागमें नहीं निकलते। परन्तु उष्ट्रके नीचे ऊपर दोनों तरह वह रहा करते हैं। सोलह ऊपर और अट्ठारह नीचे कुल ३४ दांत होते हैं। ऊपरी दंष्ट्रमें २ छेदक, २ तीक्ष्ण एवं १२ पेषण-दन्त और नीचे ६ छेदक, ८ तीक्ष्ण तथा १० पेषणदन्त होते हैं। ऊपरके छेदक अधिकांश तीक्ष्ण दन्त-जैसे हो रहते हैं।

अपर रोमन्थक पशुवोंसे उष्ट्रका दूसरा लक्षण भी भिन्न है। घन और नौकाकार गुल्फके अस्थि (Tarsus) अलग अलग रहते हैं। फिर अपर रोमन्थकोंकी तरह खुर द्विखण्डित नहीं जुड़े होते हैं। आठ शशककी तरह छिदे होते हैं। चक्षुके गोलक अति वृहत् पड़ते और कोटरके उपयुक्त नहीं धंसते। नासिका वक्र और सङ्कोचनके योग्य लगती है। मस्तक वृहत् होता है। ग्रीवा क्षीण और दीर्घ रहती है। पृष्ठ देश कुब्ज होता है। ऊरु तथा जङ्घाका दैर्घ्य अपरिमित रहता है। पद स्थूल और दो मात्र अङ्ग-विशिष्ट होते हैं। पदका तल प्रशस्त रहनेसे मरुके मध्य चलते समय बालुकामें नहीं धंसता। ऊपरका ओठ शशककी तरह होनेसे उष्ट्र बालुकायुक्त अरण्यस्थित कण्टकमय गुल्मादि खा सकता है। नासिका वक्र और सङ्कोचन योग्य रहनेसे यह मरुभूमिमें 'सिमुम'

नामक साक्षात् अग्न्यात्मक वायुका प्रवाह बहा करता है। आकाशके कालपर जब 'सिमुम' नामक वायु चलने लगता, तब उष्ट्रसे नीचे उतर मट्टीमें मुंह घुसेड़ रखने पर अति कष्टसे आरोहियोंका प्राण बचता है किन्तु इसका काम सामान्य मौंसिका सिकोड़नेसे ही बन जाता है।



उष्ट्र।

उष्ट्रकी पाकस्थलीमें बड़ा चमत्कार है। वह अपर सकल जन्तुकी पाकस्थलीसे भिन्न होती है। पहले वह एक थोथली जैसी समझ पड़ती है। पश्चात् दिक् दो घर रहते हैं। वह मध्यमें एक कठिन पंक्ति द्वारा विभक्त है। यह अंग अन्ननालीवाले छिद्रपथके दक्षिण पार्श्वसे उठते गया है। इस कोषस्थलीमें जलका पोखरा रहता और आवश्यकता पड़नेसे उष्ट्र फिर जल पी सकता है। किसी किसी अरबी ऐतिहासिकने यहांतक कह दिया है कि जब मुहम्मदने टाबुक नगरको यूनानियोंके विरुद्धमें गमन किया, तब सैन्यके सामन्तोंने आहार एवं पानीयके अभावसे अत्यन्त विपद्में पड़ अपने अपने ऊंटको मार पाकस्थलीका जल पिया था। (Salis Koran, p. 161.) किन्तु युरोपके वर्तमान प्राच्यतत्त्वविद् उक्त घटना नहीं मानते।

इसे वनका कण्टकवृक्ष खाना अच्छा लगता है। यथाधिक आहार न मिलनेसे भी उष्ट्र कातर अथवा भार वहनमें अक्षम नहीं पड़ता। अधिक दिन उपयुक्त आहार न मिलने पर पृष्ठस्थित ककुदके रक्त मांससे प्रतिपालन कार्य सम्पादित होता है।

अति पूर्वकालसे उष्ट्र मानवके व्यवहारमें लगता है। अनेक प्रमाण मिलते हैं कि वैदिक समयके आर्य ऊंटपर चढ़ते थे। (ऋक् ८।४६।२२) वह अश्वकी तरह युद्धमें भी इसका व्यवहार करते थे—

"यदा रथ उष्ट्रो न पीपरो मृधः।" (ऋक् १।१३८।२)

वैदिक समयसे ही (ऋक् ८।५।३७, ८।४६।३१) राजा अश्व गो एवं अन्नादिकी तरह उष्ट्रदान ([illegible]) करते आये हैं।

अश्वयान और गोयानकी तरह पूर्वकालमें उष्ट्रयानका भी व्यवहार रहा (मनु ११।२०२)। उस समय ब्राह्मण उष्ट्रयानपर चढ़ न सकते थे। कारण—उष्ट्रयानपर चढ़नेसे ब्राह्मणको पाप लगता है—

"उष्ट्रयानं समारुह्य खरयानन्तु कामतः।
स्नात्वा तु विप्रो दिग्वासाः प्राणायामेन शुध्यति॥" (मनु ११।२०२)

ब्राह्मण यदि अपनी इच्छासे उष्ट्रयान अथवा गर्दभयानपर चढ़ता, तो विवस्त्र सद्य प्राणायाम करनेसे शुद्ध होता है।

शास्त्रमें उष्ट्रके मांसका भक्षण निषिद्ध है—

"गोधेरकखड्गकेभ्य सर्वं पञ्चनखं तथा।
क्रव्यादं कुक्कुटं ग्राम्यं कुर्यात् संवत्सरं व्रतम्॥" (याज्ञसंहिता १।१७१)

गोह, हाथी, ऊंट, पांचनखका पशु और मांसाशी गांवका मुर्गा खानेसे संवत्सर व्रत करना चाहिये।

बाइबिलमें भी उष्ट्रका मांस अभक्ष्य-जैसा निर्दिष्ट है—"Because he cheweth the cud, but divideth not the boop; he is unclean unto you." (Leviticus, xi. 4.)

उष्ट्र तुम्हारे पक्षमें अशुचि है। क्योंकि जुगाली चलते भी इसके खुर फटे नहीं होते।

अरब देशके कवियोंने इस पशुको 'मरुपोत' जैसा वर्णन किया है। उष्ट्र उन्हें प्राणसे अधिक प्रिय है। वह इसके मांस और दुग्धसे जीवन धारण करते हैं। लोमसे वस्त्र बनता और शिविरके प्रस्तुतकरणका उपादान मिलता है। यह पशु उत्तरपश्चिम अञ्चलमें किसी किसी स्थानपर बिकता है। हिमालयमें उष्ट्रके लोमसे कम्बल तैयार होता है। उष्ट्रका मल अरब देशमें जलानेके काम आता और धूमसे निशादल बन जाता है।

वैद्यक मतसे उष्ट्रीका दुग्ध लघु, स्वादु, मधुरस्वाद

एवं दीपन होता और कृमि, कुष्ठ, आनाह, शोथ तथा उदररोगको दूर करता है।

उष्ट्रीका घृत दीपन और वातश्लेष्मनाशक है। यह पुराना हो जानेसे कटु हो जाता है। इसको पीनेसे शोथ, विष, कुष्ठ, कृमि, गुल्म और उदररोग नष्ट होता है।

उष्ट्रका मूत्र श्वास, कास और अर्शोरोगको मिटानेवाला है।

उष्ट्रकण्टकभोजनन्याय (सं० पु०) उष्ट्रके कण्टक भोजनका न्याय, ऊंटके कांटा खानेकी चाल। अतसे बहु दुःख सहते भी उष्ट्र जैसे सामान्य भोजनको तृप्तिके सुखको शमी कण्टक खा जाता, वैसेही मनुष्य भी यत्सामान्य सुखके आशयसे बहुतसा सांसारिक दुःख उठाता है। क्षणभङ्गुर सुखके लिये भावी अनन्त दुःखका ध्यान न रखना उष्ट्रकण्टकभोजनन्याय कहलाता है।

उष्ट्रकर्ण (सं० पु०) जनपदविशेष। यह सिन्धुनदसे उत्तरस्थित एक म्लेच्छ देश है। यूनानी ऐतिहासिकोंने इसे अष्टकर्ण (Astaceni) कहा है।

उष्ट्रकर्णिक (सं० पु०) १ दक्षिणदिक्स्थ यवन देश। २ उक्त देशके लोग। सहदेवके दिग्विजयवर्णनपर कहा है—

"अन्ध्रांस्तालवनांश्चैव कलिङ्गानुष्ट्रकर्णिकान्।" (भारत, सभा)

उष्ट्रकाण्डी (सं० स्त्री०) उष्ट्र इव काण्डोऽस्य, जातित्वात् ङीष्। पुष्पविशेष, ऊंटकटारी। इसका संस्कृत पर्याय—रक्तपुष्पी, करभकाण्डिका, रक्ता, लोहितपुष्पी, और कर्णपुष्पी है। उष्ट्रकाण्डी तिक्तरस, उष्णवीर्य, रुचिकारक एवं हृद्रोगनाशक होती है। बीज मधुर है। शीतल रस उष्ण करनेसे गुणकारी, वीर्यवर्धक और सन्तर्पणजनक ठहरता है। (राजनिघण्ट)

उष्ट्रक्रोशी (सं० वि०) उष्ट्रकी भांति शब्द निकालनेवाला, जो ऊंटकी तरह बोलता हो।

उष्ट्रग्रीयुग (सं० स्त्री०) उष्ट्रद्वय, ऊंटका जोड़ा।

उष्ट्रग्रीव (सं० पु०) भगन्दररोग विशेष। प्रकोपित पित्त द्वारा वायु अधःप्रेरित होता है। वहां उसके ठहरनेसे रक्तवर्ण, सूक्ष्म, उन्नत उष्ट्रग्रीवाकार पिड़का पड़ जाती है। उसमें तपकनेकी तरह वेदना उठती है। फिर प्रतिक्रियासे वह पक जाती है। (सुश्रुत) माधवनिदानमें इसका नाम 'उष्ट्रशिरोधर' लिखा है। भगन्दर देखो।

उष्ट्रधूसरपुच्छिका (सं० स्त्री०) उष्ट्रस्य धूसरः पुच्छ इव पुच्छः मञ्जरी यस्याः। वृश्चिकाली, विषुघा।

उष्ट्रपक्षी (सं० पु०) द्रुतगामी एक भूचर पक्षी, शुतुरमुर्ग। (Struthio camelus) इसकी चोंच मंझोली, फली और भीतरको गोल होती है। मत्था छोटा और गला लम्बा पड़ता है। दोनो पैर अधिक दृढ़ और बलिष्ठ रहते हैं। पैरमें दो-दो तलवे होते हैं। उनमें एक भीतर और एक बाहर लगता है। भीतरी ज्यादा बड़ा और खपड़े जैसा होता है। बाजूसे यह उड़ नहीं सकता। किन्तु दौड़नेमें बड़ी सुविधा होती है। बाजू और पूंछमें मुलायम पर रहते हैं।

शुतुरमुर्ग अपर सकल पक्षियोंकी अपेक्षा बड़ा ठहरता है। इसलिये 'पक्षिराज' कह सकते हैं। यह चारसे छह हाथतक ऊंचा निकलता है। स्त्रीजाति एककाल प्रायः १० अण्डे देती है। फिर एक एक अण्डा मुरगीके २४ अण्डोंके बराबर बैठता है।

अधेड़ नरका काला और चिकना तथा मादे या बच्चेका पालक काला अथच कबरा—बीच-बीच सफेद रहता है। बाजू और पूंछके बड़े-बड़े पर सफेद होते हैं। बीच बीचमें काले धब्बे देख पड़ते हैं। चक्षु अतिशय तीक्ष्ण और उज्ज्वल रहते हैं। इसे अधिक दूरके द्रव्यादि सहजमें ही देखायी देते हैं। यह बहुत बलवान् होता है। घटनाक्रमसे आक्रमण पड़नेपर यह पदके आघातसे व्याघ्रादि शत्रुओंको हरा सकता है। प्रति घण्टे शुतुरमुर्ग २० कोससे अधिक जानेकी शक्ति रखता है। अतिशय झपटनेमें यह सहज ही हाथ नहीं लगता। दक्षिण अफ्रीकाके लोग शुतुरमुर्गका ही चमड़ा पहन शुतुरमुर्गके पास पहुंचते हैं। यह उन्हें भी शुतुरमुर्ग समझ नज़दीक आनेसे नहीं रोकता। इसी उपायसे वह निकट जा और विवाह तोड़ इसे मार डालते हैं।

शुतुरमुर्ग अरब और अफ्रीकाकी मरुभूमिमें रहता है। इसे शीघ्र क्षुधा नहीं लगती। दो-चार दिन

बाद जब यथार्थ दिखायी देता, तब मरुभूमिके मध्यमें निवास यह करनेसे या बालूतीका जल पी लेता है। भूखा लगने पर कभी छोटा पक्षी या अन्नका दाना तोड़ तोड़ चुगता, वैसेही शुतुरमुर्ग बड़े बड़े पत्थर, लोहेके टुकड़े, कङ्कड़, कांचके बरतन, तांबेके सिक्के और टूटे जूते निगलने लगता है। अफरीकाके लोग इसके अण्डे खाते हैं। प्राचीन कालसे विलायतमें इसके परका बड़ा आदर है। पालनेसे शुतुरमुर्ग हिल जाता है। किन्तु अपरिचित व्यक्तिको निकट आते देख यह प्रायः आक्रमण करता है। बाइबिलमें शुतुरमुर्गका मांस निषिद्ध ठहरा है। (Leviticus, xi. 16.)

उष्ट्रपादिका (सं० स्त्री०) मदनमालिनी, चमेली।

उष्ट्रयान (सं० क्ली०) उष्ट्र द्वारा वहन किया जानेवाला यान, ऊंटगाड़ी।

उष्ट्रशिरोधर (सं० क्ली०) भगन्दर रोगविशेष।

उष्ट्रस्थान (सं० क्ली०) उष्ट्रस्य स्थानम्, ६-तत्। उष्ट्रके आवासका स्थान, ऊंटके रहनेकी जगह।

उष्ट्रासिका (सं० स्त्री०) उष्ट्रस्येव आसिका आसनम्। उष्ट्रासन, ऊंटकी तरह बैठनेकी हालत।

उष्ट्रिका (सं० स्त्री०) उष्ट्रस्य आकृतिरिव आकृतिर्यस्याः। १ मृण्मय सुरापात्र विशेष, शराब रखनेको एक मट्टीका बरतन। उष्ट्रस्य स्त्री, उष्ट्र-कन्-टाप् अत इत्वम्। २ उष्ट्री, ऊंटनी।

"[illegible]" (माघ १२।१६)

उष्ट्री (सं० स्त्री०) उष-ष्ट्रन्-ङीप्। उष्ट्रिका देखो।

उष्ण (सं० पु० क्ली०) उष्-नक्। [illegible] १ ग्रीष्म, गरमीका मौसम। २ आतप, धूप। ३ पलाण्डु, प्याज। ४ ऊष्मा, जलन। ५ अग्नि, आग। ६ सूर्य, आफताब। ७ नरकविशेष। ८ चित्त, मफरा। ९ कोषदोषस्य वर्षविशेष। (त्रि०) १० अशीतल, गर्म। ११ तीव्र तेज। १२ चञ्चल, फुरतीला।

वैद्यक मतसे उष्ण वीर्य द्रव्य पित्तप्रकोपकारी, लघु एवं वातश्लेष्मनाशक होता है।

उष्णक (सं० त्रि०) उष्णं कार्यं यस्य, उष्ण-कन्। १ शिघ्रकारी, फुरतीला।

उष्णकटिबन्ध (सं० पु०) कर्कट क्रान्ति और मकरक्रान्तिके मध्यका स्थान, निरक्षवृत्त, गर्म पट्ट। यह ४७° प्रशस्त है। उष्णकटिबन्धमें सूर्यकी किरणें सीधी पड़नेसे उष्णता अधिक रहती है।

उष्णकर (सं० पु०) उष्णाः कराः किरणो यस्य, अथवा उष्णं करोति, उष्ण-कृ-अच्। १ सूर्य, आफताब। (त्रि०) २ उष्णकारी, गर्म करनेवाला, जो गरमी लाता हो।

उष्णकाल (सं० पु०) उष्णप्रधान काल, कर्मधा०। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

"[illegible]" (सुश्रुत)

उष्णग (सं० पु०) ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

"[illegible]" (रामायण [illegible])

उष्णगु (सं० पु०) उष्णः गौः किरणो यस्य, ओकारस्य ह्रस्वत्वम्। सूर्य, आफताब।

उष्णङ्करण (सं० त्रि०) उष्ण करनेवाला, जो गर्म करता हो।

उष्णता (सं० स्त्री०) आतप, गरमी।

उष्णत्व (सं० क्ली०) उष्णता, गरमी।

उष्णदीधिति (सं० पु०) उष्णा दीधितयः किरणा यस्य। सूर्य, आफताब।

उष्णनदी (सं० स्त्री०) उष्णा चासौ नदी चेति, नित्यकर्मधारयः। वैतरणी नदी।

उष्णप्रस्रवण (सं० क्ली०) तप्तकुण्ड, गर्म पानीका झरना। जिस प्रस्रवणसे उष्ण जल निकलता अथवा जिस स्थानका जल सर्वदा उष्ण रह जाता, उसका नाम उष्णप्रस्रवण पड़ता है।

पृथिवीके नाना स्थानोंमें उष्णप्रस्रवण विद्यमान हैं। भारतवर्षमें जो स्थान उष्णप्रस्रवण रहनेसे तीर्थ समझे जाते, उनके नाम नीचे दिये जाते हैं—

वीरभूममें बक्रेश्वर नामक पवित्र तीर्थस्थान है। इस पुण्य भूमिमें न्यूनाधिक ८ प्रस्रवण बहते हैं। उनमें सूर्यकुण्ड नामक प्रस्रवण प्रधान है। उष्ण होते भी सूर्यकुण्डके जलमें लतायें उपजा करती हैं। जलके ऊर्ध्व भागमें उपजनेवाली प्रायः हरी और अधोभागमें होनेवाली अधिक तापके कारण पीली पड़

जाती है। उसमयको तापमानयन्त्रसे देखने पर १६४° से ८०° पर्यन्त ताप मिलता है।

थाना जिलेके भिवन्डी तालुकमें प्रायः १५० उष्ण कुण्ड हैं। उनमें कितने ही थाना जिलेकी वैतरणी नदीके निकट पड़ते हैं। उक्त कुण्ड अतिप्राचीन कालसे तीर्थकी तरह प्रसिद्ध हैं। पिण्डी पर्वतके पास अर्जुनकुण्ड है। उसमें १३° ताप रहता है। कितने ही क्षुद्र क्षुद्र भी उष्णप्रस्रवण हैं। उनके कर्दमसे धूम उठता है। सिन्धु प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्रवण हैं। उनमें मघ ह्रदके निकट भीलगिरिके शिखर देशपर एक अतिशय उत्तम प्रस्रवण है। उसके जलमें हाथ डाल नहीं सकते। सिन्धु प्रदेशके लक्की नामक ग्राममें तप्त गन्धकके कई प्रस्रवण हैं।

पञ्जाबके उत्तरांशमें हिमालय पर्वतके पास पार्वती नदी किनारे मणिकर्ण नामक तीर्थ है। इस पर्वतमय प्रदेशमें अनेक उष्ण प्रस्रवण देख पड़ते हैं। हम समझते हैं, कि वे सकल पवित्र प्रस्रवण ही पूर्व-कालमें उष्णोगङ्ग नामसे प्रसिद्ध थे।

"अत्रो ऽङ्ग'च पुण्याद्या' भृगुतुङ्ग'च पर्वतम्।
उष्णीगङ्ग' च कौन्तेय सामात्यः समुपस्पृश॥" (भारत,वन ११२ अ०)

मणिकर्णके लोग उष्ण प्रस्रवणके तापसे रन्धनकार्य चलाते हैं। उन्हें जलानेके लिये काठका प्रयोजन नहीं पड़ता।

काश्मीरके उत्तर लाधक प्रदेशमें अनेक क्षुद्र उष्ण-प्रस्रवण हैं। चट्टग्राममें चन्द्रनाथ गिरिपर सीताकुण्ड नामक एक पवित्र प्रस्रवण है। पूर्वकालसे यह कुण्ड हिन्दुवों और बौद्धोंके पवित्र तीर्थस्थानकी तरह प्रसिद्ध है। इस कुण्डसे धूम निकलता है।

उष्णरश्मि (सं० पु०) उष्णा रश्मयोऽस्य, बहुव्री०। १ सूर्य, आफताब। २ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़।

उष्णरुचि, उष्णरश्मि देखो।

उष्णवारण (सं० पु०-क्ली०) उष्णं आतपं वारयति, उष्ण-वृ-णिच्-ल्यु। छत्र, छाता।

"दर्दरुष्णवारणम्।" (कुमार ३।३२)

उष्णवाष्प (सं० पु०) १ तप्तवाष्प, गर्म भाप। २ अश्रु, आंसू।

उष्णवीर्य (सं० पु०) उष्णं वीर्यं यस्य, १ शिशुमार, सूंसमाही, सूस। (त्रि०) २ तीक्ष्णवीर्य, गर्म तासीर रखनेवाला। ३ बलवान्, ताकतवर।

उष्णवेताली (सं० स्त्री०) एक देवी।

उष्णा (सं० स्त्री०) उष्यते दह्यते यया, उष दाहे नक्-टाप्। १ क्षयरोग, तपेदिक। २ सन्ताप, गरमी। ३ पित्त, सफरा।

उष्णांशु (सं० पु०) उष्णा अंशवो यस्य, बहुव्री०। सूर्य, आफताब।

उष्णागम (सं० पु०) उष्णः आगमो यत्र। ग्रीष्म-काल, गरमीका मौसम।

उष्णाभिगम, उष्णागम देखो।

उष्णालु (सं० त्रि०) उष्ण-आलुच्।

१ उत्ताप सह्य करनेके लिये असमर्थ,जो गरमी बरदाश्त कर न सकता हो। २ आतपक्लान्त, गरमीसे घबराया हुआ। ३ शीतलप्रिय, जिसे ठण्डक अच्छी लगे।

"उष्णालुः शिशिरे निषीदति तरोर्मूलालवाले शिखी।" (विक्रमोर्वशी)

उष्णासह (सं० पु०) उष्ण आतप आसह्यते यत्र, उष्ण-आ-सह-अच्। १ हेमन्तकाल, जाड़ेका मौसम। (त्रि०) २ उत्ताप सह न सकनेवाला, जो गरमी बर-दाश्त कर न सकता हो।

उष्णिक् (सं० स्त्री०) उत्-स्निह-क्विप्। सप्ताक्षर छन्दो-विशेष, सात अक्षरका एक छन्द। "सप्ताक्षरोष्णिक्" (छन्दोमञ्जरी) यह छन्द तीन प्रकारका होता है— मधुमती, कुमारललिता और मदलेखा।

उष्णिका (सं० स्त्री०) अल्पमुष्णमस्याम्, अत अल्पार्थे निपातनात् कन्प्रत्यय उष्णादेशः, टाप् अत-इत्। यवागु, महेरी।

उष्णिमा (सं० पु०) उत्ताप, गरमी।

उष्णीगङ्ग (सं० क्ली०) उष्णीभूता गङ्गा यत्र। भृगु-पर्वतस्थ तीर्थविशेष। (भारत, वन ११२ अ०) उष्णप्रस्रवण देखो।

उष्णीष (सं० पु०-क्ली०) उष्णं ईषते हिनस्ति, उष्ण-ईष-क। १ शिरोवेष्टन, पगड़ी, साफा। वैद्यकके मतसे उष्णीषका धारण कान्तिजनक, केशवर्धक, वायुवर्धक, धूलि-शीत-उष्ण-निवारक, प्रतिश्याय तथा शिरःशूलप्रशमक और वर्ण-तेज-बल-वर्धक है। २ मुकुट, ताज। ३ चिह्नविशेष।

उष्णीषधारी (सं॰ पु॰) उष्णीषं धरति, उष्णीष-धृ-णिनि। उष्णीष धारण करनेवाला, जो पगड़ी या साफा बांधता हो।

उष्णीषी (सं॰ त्रि॰) उष्णीषं अस्त्यस्य, उष्णीष-इनि। १ उष्णीषधारी, पगड़ी या साफा बांधनेवाला। (पु॰) २ महादेव।

"उष्णीषी सुवक्त्रश्च उदग्रो विनतस्तथा।" (भारत, अनु १७ अ॰)

उष्णोदक (सं॰ क्ली॰) उष्णञ्च तत् उदकञ्चेति, कर्मधा॰। उष्णजल, गर्मपानी। यह अर्धावशेष, त्रिपादावशेष, चतुर्थांशावशेष भेदसे अनेक प्रकारका होता है। साधारणतः कुछ काल तपा कर भी उदक व्यवहार किया जाता है। वैद्यकोक्त साधारण उष्णोदक श्लेष्म-हितकर, काश, ज्वर, विरुद्ध कफ, वात एवं आमका प्रशमक, मेदविनाशी, अग्निदीपक और वस्तिपरिशोधक है। ग्रीष्ममें अर्धावशेष, शरत्कालमें पादांशावशेष, हेमन्त, शीत एवं वसन्तकालमें अर्धावशेष और वर्षा-कालमें अष्टमांशावशेष उष्णोदक पीना चाहिये। पादावशेष पित्तविनाशक, अर्धावशेष वातप्रशमक और त्रिपादावशेष उष्णोदक कफनाशक है। (भावप्रकाश)

दिनको जो तपाया जाता, वह जल रातको गुरु हो जाता है। इसलिये दिनका उष्ण जल रातको व्यवहार नहीं करते। रातको तपा जल उष्ण कर काममें लाना चाहिये। उष्ण जलका स्नान भी विशेष उपकार साधक है। किन्तु मस्तकपर उष्णोदक छोड़ना न चाहिये। इससे केश और चक्षुको अपकार पहुंचता है।

उष्णोपगम (सं॰ पु॰) उष्ण उपगम्यते अत्र, उष्ण-उप-गम-अप्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्म (सं॰ पु॰) उष-मक्। १ ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम। २ उत्ताप, धूप। ३ तीव्रता, तेज़ी। ४ क्रोध, गुस्सा। ५ श, ष, स और ह चार वर्ण।

उष्मक (सं॰ पु॰) उष्म-कन्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मज (सं॰ त्रि॰) उष्मज, गरमीसे पैदा होनेवाला। (पु॰) २ क्षुद्रकीटादि, गरमीसे पैदा होनेवाला कीड़ा। जैसे—मच्छर, खटमल वगैरह।

उष्मता (सं॰ स्त्री॰) उष्मस्य भावः, उष्म-तल्। उष्णता, गरमी।

उष्मप (सं॰ पु॰) उष्माणं पिबति, उष्म-पा-क्विप्। १ पितृलोक विशेष। २ उष्मपानकारी तपस्विविशेष।

"[illegible]" (श्रुति)

उष्मभास् (सं॰ पु॰) सूर्य, आफताब।

उष्मवत् (सं॰ त्रि॰) उष्म-मतुप्, मस्य वः। उष्मविशिष्ट, गर्म। "[illegible]" (सुश्रुत)

उष्मस्वेद (सं॰ पु॰) उष्मणा स्वेदयेति, कर्मधा॰। उष्मस्वेद, गर्म पसीना। स्वेद देखो।

उष्मा (सं॰ पु॰) उष-मनिन्। १ ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम। २ उत्ताप, गरमी। उष्म देखो।

उष्मागम (सं॰ पु॰) उष्मा आगच्छति यत्र, आ-गम-अप्। ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मान्वित (सं॰ त्रि॰) उत्तेजित, भड़का हुआ।

उष्माय (नामधातु) उष्माणमुद्वमति, उष्मन्-क्यङ्। इसका अर्थ उष्मा उद्वमन करना या आग उगलना है।

उष्मायण (सं॰ पु॰) ग्रीष्मकाल, गरमीका मौसम।

उष्मोपगम, उष्मायण देखो।

उष्यल (सं॰ स्त्री॰) चारपाईका ढांचा।

उस (हिं॰ सर्व॰) तत्, वह। यह शब्द 'वह' का रूपान्तर है। विभक्ति लगनेसे 'वह' के स्थानमें 'उस' आदेश होता है। जैसे—उसने, उसको, उससे, उसका, उसमें, उसपर। 'उस' अन्य पुरुषके एकवचनका रूप है। बहुवचन 'उन' है।

उसकन (हिं॰ पु॰) १ अवटन, जूना, बरतन मांजनेका घास या पयाल वगैरहका गुड़ा। २ उभार, उठाव।

उसकना, उकसना देखो।

उसकाना, उसकारना, उकसाना देखो।

उसगन (हिं॰) असगुन देखो।

उसनना (हिं॰ क्रि॰) १ उबालना। २ सांधना, पानी डालकर गूंधना।

उसना (हिं॰ वि॰) उबाला हुआ, गर्म किया हुआ। जिस चावलको पानीमें डाल उबालते और सूखे निकालते, उसे उसना नामसे पुकारते हैं।

उसनाना (हिं॰ क्रि॰) १ उसलवाना, गर्म करवाना। २ मंडवाना, पानी डलाकर गुंधवाना।

उसनीस (हिं॰) उष्णीष देखो।

उसया (हिं॰) उसना देखो।

उसवुपली—बम्बई प्रान्तके प्राचीन पुस्तराष्ट्र प्रदेशका एक ग्राम। महाराज सिंहवर्माके राज्य पानेसे ११ वत्सर बाद इस ग्रामके अधिवासियोंको एक शासन-पत्र सुनाया गया था। उक्त महाराज सम्भवतः विष्णु-गोप वर्माके बड़े भाई रहे। विष्णुगोप वर्माने ही उक्त संस्कृत शासनपत्र निकाल यह ग्राम विष्णुहार मन्दिर पर उत्सर्ग किया। वह परमभागवत थे। सेनापति विष्णुवर्माने कण्डुकूट ग्राममें विष्णुहारका मन्दिर बनवाया था।

उसमा (हिं॰ पु॰) वसमा, उबटन।

उसमान (अ॰ पु॰) मुहम्मदके एक सखा या साथी।

उसरना (हिं॰ क्रि॰) सरकना, अलग होना।

उसरू—युक्तप्रदेशस्थ राज्यविशेष।

उसरौड़ी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षि विशेष, एक चिड़िया

उसलना, उसरना और उकलना देखो।

उसवदात—बम्बई प्रान्तके एक प्राचीन शक नृपति। यह अपने श्वशुर नहपानके (१०० ई॰) कोंकन और दाक्षिणात्यमें प्रतिनिधि रहे। इनके कारले और नासिकवाले ताम्रफलकोंमें सोमनाथ पत्तन, भडोच, सोपारे और गोवर्धनके उत्सर्गकी बात लिखी है। दाहनुकपर इन्होंने एक घाट बनवाया था। सुर्पर-कमें उसवदात द्वारा निर्माण कराये विश्रामालय और भोजनालय थे। नासिकके १० म, १२ श और १४ श शिलालिपिमें लिखा है, कि उसवदातका विवाह क्षह-रात अवप नहपानकी दक्षमित्रा नाम्नी कन्यासे हुआ था। इनके पिताका नाम दिनीक रहा। यह जातिके शक थे। संस्कृत ऋषभदत्तका अपभ्रंश उसवदात है। इन्होंने तीन सहस्र गोदान किये थे। उत्तर गुजरातमें आबू स्थानके निकट बनासमें सोनेका सोपान उसवदातने दिया। १६ ग्राम ब्राह्मणोंको भेंट चढ़ाये थे। यह प्रति वर्ष लाखों ब्राह्मण खिलानेवाले थे। दक्षिण काठियावाड़के प्रभासक्षेत्रमें इन्होंने आठ स्त्रियां ब्राह्म-णोंको ब्याही थीं। ३२ सहस्र नारियलके पेड़ उसव-दातने पुरोहितोंको बहुरूपमें दिये। पुष्कर तीर्थमें जाकर इन्होंने तीन सहस्र गो और एक ग्राम दान किया था। थानेके पास चीखलमें उसवदातने ब्राह्म-णोंको कितना ही दान दिया था। थानेके दहानु ग्राममें इन्होंने ७० सहस्र कार्षापण या २ सहस्र सुवर्ण ब्राह्म-णोंको बांटे थे। उसवदात निर्मित अम्बिका, पार, दमनगङ्गा, तापी, कावेरी, दाहानु नदियोंके घाटोंपर यात्रियोंको उतराई देना पड़ती न थी। नदियोंके दोनों किनारे विश्राम स्थान और सोपान भी इन्होंने बनवाये। उसवदातने बौद्धोंको भी दान दिया था। उस भारतमें सम्भवतः इन्होंने बौद्ध धर्मका अवलम्बन किया। उसवदत्तके कितने ही शिलाफलक निकले हैं। यह अपने समयके एक कर्ण रहे।

उससना (हिं॰ क्रि॰) १ उसरना, सरकना। २ श्वास ग्रहण करना, सांस निकालना।

उसांस, उसास देखो।

उसाना (हिं॰ क्रि॰) पछोरना, फटकारके साथ भूसी अलग करना।

उसारना (हिं॰ क्रि॰) १ विनाश करना, मिटाना। २ समापन करना, पूरे उतारना।

उसारा (हिं॰ पु॰) छप्पराच्छादित द्वारप्रकोष्ठ, बरा-मदा, कसा। "नौबतको बाहर बाहर सांसोको उसारा।" (भीखचन्द्र)

उसालना, उसारना देखो।

उसास (हिं॰ स्त्री॰) १ उच्छ्वास, आह। २ श्वास, सांस।

उसासना (हिं॰ क्रि॰) १ श्वास ग्रहण करना, सांस लेना। २ उच्छ्वास छोड़ना, आह भरना।

उसासी (हिं॰ स्त्री॰) श्वास ग्रहण करनेका समय, दम लेनेका वक्त।

उसिलना, उसलना देखो।

उसीजना (हिं॰ क्रि॰) मन्द-मन्द गम होना, धीरे-धीरे घुरना।

उसीला (हिं॰) वसीला देखो।

उसीसा (हिं॰ पु॰) १ शीर्षस्थान, सिरहाना। २ उपधान, तकिया।

उसुवाना (हिं॰ क्रि॰) सूखना, फूलना।

उसूल (अ॰ पु॰) १ मूलतत्त्व, जड़। २ मत, नकीदा। यह शब्द 'असल'का बहुवचन है।

उसेना (हिं॰ क्रि॰) पानीमें डाल और आगपर चढ़ा किसी चीज़को सिझने लानेतक पकाना, उबालना।

उसेप (हिं॰ पु॰) वेणु विशेष, किसी किस्मका बांस। यह अमेरिका तथा अर्जेण्टिनाके पर्वत पर उपजता है। इसका ५०-६० फीट रहती है। इसके कोठे हलके, जो अनेक वस्तु रखनेके काममें लगते हैं।

उसेर करना (हिं॰ क्रि॰) १ धारण रखना, याद न भूलना। २ प्रतीक्षा करना, राह देखना। ३ अप-लच होना, नाराज, पड़ना।

उस्तरा (फ़ा॰ पु॰) छुर, छुरा। बाले बाल बनानेका उस्तरा लेना और किसीका माल मारनेको चोर या ठगके उस्तरेसे मूंड़ना कहते हैं।

उस्ता (हिं॰ पु॰) आलीपा, होशियार नाई।

उस्ताद (फ़ा॰ पु॰) १ अध्यापक, मास्टर। २ प्राम-हद, बड़ी अक्लका आदमी। "आप उस्ताद आदमी हैं।" (बोलोल) ३ धूर्त, चालाक, बदमाश। ४ गायक, वेश्याका गुरु। (वि॰) ५ जानदिल, जानकार।

उस्तादी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ कला कौशल, होशियारी, हुनर। २ चातुर्य, चालाकी। ३ अध्यापकका कार्य, मास्टरी।

उस्तानी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ गुरुपत्नी, उस्तादकी औरत। २ अध्यापिका, पढ़ानेवाली औरत। ३ धूर्त स्त्री, चालाक औरत।

उस्र (सं॰ पु॰) वस-रक् सम्प्रसारणम्। "स्फायि-तञ्चि-वञ्चि-शकि-क्षिपि-क्षुदि-सृपि-तृपि-दृपि-वन्द्युन्दि-श्वितिवृत्यजिनीपदिमदिमुदिखिदिच्छिदिभिदिमन्दिचन्दि-दहिदसिदम्भिवसिवाशिशीङ्हसिसिधिशुभिभ्यो रक्।" उण् २।१३। १ रूप, बैल। २ रश्मि, किरण। ३ सूर्य, आफ़ताब। ४ अश्विनीकुमारद्वय। ५ देव।" (त्रि॰) ६ प्रातःकालीय, सबेरे देख पड़नेवाला। ७ दीप्त, चमकदार। ८ स्वच्छ, साफ़। ९ उद्गमन-कारी, ऊंचा चढ़नेवाला।

उस्रधन्वन् (सं॰ त्रि॰) दीप्त धनुर्युक्त, चमकीला कमान् वाला।

उस्रयामन् (सं॰ त्रि॰) प्रातः कालके समय बाहर निकलने वाला।

उस्रा (सं॰ स्त्री॰) उस्र-टाप्। १ गाभी, गाय। २ दन्तुरच्छदी लता, एक बेल। ३ पृथिवी, ज़मीन्।

उस्रि (सं॰ स्त्री॰) वस-क्रि। अंसपदकारिणी, चमकनेवाली।

उस्रिक (वै॰ पु॰) उस्र-ठन्। जीर्ण वृष, बुड्ढा बैल।

"ई काईबोथिकं मममानः सता मदनृहयो नघर।" (ऋक् ३।१०।१३)

उस्रिका (सं॰ स्त्री॰) उस्रिक-टाप्। अल्पदुग्ध-वती गाभी, थोड़ा दूध देनेवाली गाय।

उस्रिय (वै॰ पु॰) उस्र स्वार्थे घ। जीर्णवृष, बुड्ढा बैल।

"इन्द्रादिकधिवा वृषभुः कनिकदरासहती हराहम्।" (ऋक् ५।३०।१४)

उस्रिया (वै॰ स्त्री॰) उस्रिय-टाप्। गयी, गाय।

"चाचाजुनिव अनुमिः बलमानः पेदिरदम् हवि हुनिवदमिः।"

(ऋक् १।७१।१)

उह् (धातु) भ्वादि पर॰ सक॰ सेट्। इसका अर्थ पीड़ित करना है।

उह (सं॰ अव्य॰) १ सम्बोधन वाचक य। अरे। ओ। २ निरथार्थवाची—ठीक। दुरुस्त। खूब।

उहदा, ओहदा देखो।

उहदेदार, ओहदेदार देखो।

उहवां, उहां, वहां देखो।

उहाग (सं॰ पु॰) देशविशेष, एक मुल्क।

उहार, ओहार देखो।

उहि, वह देखो।

उहीं, वहीं देखो।

उहु (वै॰ अव्य॰) उह-कु। १ वेदप्रयुक्त शब्द विशेष, ओह, अरे, हाय। (त्रि॰) २ वाहक, ले जानेवाला। 'विश्व एवं श्रयुं च।' (ऋक् ३।३।१०)

उहुमान (सं॰ त्रि॰) वह-शानच् कर्मणि। वहन किया जानेवाला, जो उठाया जाता हो।

"स्तोतृतन्तं यत्रु भरमोनिन।" (वेद)

उह्र (सं॰ पु॰) वह-रक् पृषोदरादित्वात्। वृष, बैल।

ऊ

ऊ (दीर्घ) संस्कृत तथा हिन्दी स्वरवर्णका षष्ठ अक्षर। इसका उच्चारणस्थान ओष्ठ है। वर्णोद्धार तन्त्रमें लिखा है—ऊकारका रूप ह्रस्व उकारसे प्रायः मिला है। और विशेषता यह है, कि ऊकारके नीचे एक दूसरी वक्र रेखा नीचेकी तरफ अधिक जाती है। समस्त रेखामें यम, अग्नि और वरुण अवस्थित हैं। ऊर्ध्वगत मात्राको लक्ष्मी वा सरस्वती कहते हैं। इसका तन्त्रोक्त नाम—ऊ, कण्टक, रति, शान्ति, क्षोधन, मधुसूदन, कामराज, कुञ्चेश, महेश, वामकर्णक, अर्घीश, भैरव, सूक्ष्म, दीर्घघोणा, सरस्वती, विलासिनी, विघ्नकर्ता, लक्ष्मण, रूपकर्षिणी, महाविद्येश्वरी, षष्ठा, षण्डोभू, और कान्यकुब्ज है। २ धातुका अनुबन्ध विशेष। "ऊदितो वा।" (अवि० द) (अव्य०) वेञ्-क्विप्। १ सम्बोधन—ए! ओ! अरे! २ वाक्यारम्भ—हां! कहिये! ३ दया—रहम—राम राम! ४ रक्षा हिफाज़त—त्राहि त्राहि! (पु०) अवति रक्षति, अव-क्विप्-ऊठ्। ज्वरत्वरश्रिव्यविमवामुपधायाश्च। पा ६।४।२०। ५ महादेव। ६ चन्द्र। ७ रक्षक, मुहाफ़िज़।

ऊगना (हिं० क्रि०) उदय होना। निकलना।

ऊघायाई (हिं० वि०) निरर्थक, बेफायदा।

ऊख, इक्षु और ईख देखो।

ऊंग ऊंघ देखो।

ऊंगना (हिं० पु०) पशुरोग विशेष, चौपायोंकी एक बीमारी। इस रोगमें पशु कुछ नहीं खाता-पीता। शरीर शीतल लगता और कान बद्द चलता है।

ऊंगा (हिं० पु०) अपामार्ग, लटजीरा।

ऊंगी (स्त्री०) ऊंगा देखो।

ऊंघ (हिं० स्त्री०) १ निद्रावेश, नींदका दौरा, झपकी। २ अश्व बदकी बनी एक गिडुरी। यह पहियेकी धुरीमें लगती है। इससे पहिया सटा रहता और धुरकी कीलकी रगड़से कटा नहीं करता।

ऊंघन (हिं० स्त्री०) निद्रागम, झपकी।

ऊंघना (हिं० क्रि०) निद्रागम होना, आंख झपकाना।

ऊंच, ऊंचा, (हिं०) उच्च देखो।

ऊंचाई, उच्चता देखो।

ऊंचे (हिं०) उच्चैः देखो।

ऊंछ (हिं० पु०) राग विशेष।

ऊंछना (हिं० क्रि०) बाल झाड़ना, कंघी करना।

ऊंट (हिं०) उष्ट्र देखो।

ऊंट कटारा (हिं० पु०) उष्ट्रकण्टक क्षुप, एक पौदा। इस झाड़ीमें कांटे होते हैं। पत्र भी दीर्घ एवं कण्टकाकार हैं। शाखा चुभनेवाले तन्तुवोंसे युक्त रहती हैं। यह प्रस्तरमय तथा अनुर्वरा भूमिमें उपजता है। उष्ट्रका यह प्रिय खाद्य है। इसका मूल जलमें रगड़ कर देनेसे गर्भिणीको सुखप्रसव होता है। किसी-किसीके मतानुसार ऊंटकटारा बलवर्धक भी ठहरता है।

ऊंटकटीरा, ऊंटकटारा देखो।

ऊंटगाड़ी (हिं० स्त्री०) ऊंटके सहारे चलनेवाली गाड़ी। इसमें प्रायः दो चक्र होते हैं। रात दिनमें ऊंट गाड़ी ३० कोससे कम नहीं चलती।

ऊंटवान् (हिं० पु०) उष्ट्रचालक, ऊंटको हांकनेवाला।

ऊंड़ा (हिं० पु०) १ पात्र विशेष, एक बरतन। इसमें रुपया पैसा और गहना-गांठ भर भूमिके मध्य गाड़ते हैं। २ तहखाना, तहखाना। (वि०) ३ गम्भीर, गहरा।

ऊंदर, उन्दुर देखो।

ऊंधा, औंधा देखो।

ऊंहं (हिं० अव्य०) नैव, नहीं, कभी नहीं, हो नहीं सकता।

ऊक (हिं० पु०) १ उल्का, शहाब-साक़िब, टूटता तारा। २ अग्नि, आग। (स्त्री०) ३ चूक, किसी बात या कामका भूल जाना।

ऊकना (हिं० क्रि०) १ चूकना, भूलना, भ्रममें पड़ना। २ ताप देना, जलाना।

ऊख (हिं० स्त्री०) इक्षु, ईख। ईख देखो।

ऊखम (हिं०) ऊष्म देखो।

ऊखल (हिं० पु०) उदूखल, कांड़ी, हावन। यह काष्ठ वा प्रस्तरनिर्मित एक गभीर पात्र है। इसमें डाल-कर धान आदिकी भूसी मूसलके सहारे निकालते हैं।

ऊगना (हिं० क्रि०) जमना, जड़ पकड़ना, अंकुरा फूटना।

ऊगरा (हिं० पु०) उष्ण खाद्य, उबला हुआ खाना।

ऊगू—युक्तप्रदेशके उनाव जिलेका एक नगर। यह समान भूमिपर उनावसे ग्यारह और फतेहपुर-चौरासी-से ढाई कोस दूर अवस्थित है। कनौजके पंवार राजपूत उग्रसेनने इसे बसाया था। ई० १५ वीं शताब्दी तक उनके वंशज ऊगूमें राज्य करते रहे। पीछे जौनपुरके इब्राहीम शरकीने उन्हें एक युद्धमें पछाड़ा था। राजपूतोंका प्रभाव घटने पर कुमवियोंने इसे अपने हाथ किया। ऊगूमें कई मन्दिर बने हैं। राजप्रासाद और न्यायालयका ध्वंसावशेष भी देख पड़ता है। वर्षमें एक बार मेला और सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है।

कहते हैं—राजपूतोंके समय एक कवि ऊगू गये थे। किन्तु उनका उचित सत्कार न हुआ। उन्होंने उससे अप्रसन्न हो शाप दिया था—

"ऊगू आसपास दारिद्रो डोलै फिरै टोरन अम्हौरी फिरै गौंड़ो मरवाओ।"

ऊज (हिं० पु०) उत्पात, बखेड़ा।

ऊजड़ (हिं० वि०) जनशून्य, खाली, जो बसा न हो।

ऊजर (हिं० वि०) १ उजला, साफ, जो मैला न हो। २ उजाड़, वीरान।

ऊजरा, ऊजर देखो।

ऊटना (हिं० क्रि०) १ अभिमान करना, मन बढ़ना। २ विचारना, सोचना, ख़यालमें लाना।

ऊटपटांग (हिं० वि०) अंडबंड, वाहियात, खराब।

ऊड़ा (हिं० पु०) १ न्यूनता, घटी। २ विनाश, बरबादी।

ऊड़ी (हिं० स्त्री०) यन्त्र विशेष, टुतकना। यह जुलाहोंके सेठेमें लगी रहती है। इसपर वह लिपटे सूतको पट्टीमें फिर-फिर लगाते जाते हैं। २ यन्त्र विशेष, एक चरखी। इसपर रेशमके लच्छे डाले और एक तरहकी परेतीमें निकाले जाते हैं। ३ डुबकी, गोता। ४ पनडुब्बी।

ऊढ़ (सं० त्रि०) वह-क्त। १ विवाहित, ब्याहा। २ वहन किया हुआ, जो उठाया गया हो। ३ धृत, पकड़ा हुआ। ४ अङ्गीकृत, माना हुआ।

"भार्योढं तमवज्ञाय मस्तं सौमित्रिरेऽसकौ।" (भट्टि)

ऊढ़कङ्कट (सं० त्रि०) ऊढ़ो धृतः कङ्कटो येन। वर्मयुक्त, सूजा या फूला हुआ।

ऊढ़ना (हिं० क्रि०) चिन्तन करना, सोचना, अनु-मान लगाना।

ऊढ़भार्य (सं० पु०) ऊढ़ा भार्या येन, बहुव्री०। विवाहित, ब्याहा।

ऊढ़वयस् (सं० पु०) युवापुरुष, नौजवान् मर्द।

ऊढ़ा (सं० स्त्री०) ऊढ़-टाप्। १ भार्या, जोरू। २ विवाहिता कन्या, ब्याही लड़की। ३ नायिका-भेद। जो ब्याही स्त्री निज पतिको छोड़ अन्य पुरुषसे आसक्त रहती, उसे जनता ऊढ़ा नायिका कहती है।

ऊढ़ि (सं० स्त्री०) वह-क्तिन्। १ वहन, ढोवाई। २ विवाह, शादी।

ऊर्णीतिक्रम् (सं० पु०) पर्क वृक्ष।

ऊत (सं० त्रि०) वे-क्त अथवा अवी तन्तुसन्ताने, ऊ-क्त। १ ज्ञातवयन, बुना हुआ। २ ग्रथित, गूंथा हुआ। ३ स्यूत, सीया हुआ। ४ रक्षित, हिफ़ाज़त किया हुआ। ५ विख्यात, मशहूर। (हिं० वि०) ६ पुत्रहीन, जिसके लड़का न रहे। ७ मूर्ख, गंवार। (पु०) ८ भूत प्रेतात्मा।

ऊतर (हिं०) उत्तर देखो।

ऊतला (हिं० वि०) उतावला, जल्दबाज़।

ऊतताई (हिं॰ वि॰) बेसमझ, उजड्ड, ऊटपटाँग काम करनेवाला।

ऊति (सं॰ स्त्री॰) अव-क्तिन् ऊट, वे-क्तिन्। १ रक्षा, हिफ़ाज़त। २ वयन, बुनावट। ३ सिलाई, सीनेका काम। ४ लीला, तमाशा। ५ तरपण, सुखाई। कर्त्तरि क्तिच्। ६ रक्षाकर्त्री, रखवाली करनेवाली। ७ पुराणोंके दशविध लक्षण में कर्मकी वासना।

"मन्वन्तराणि सद्धर्म ऊतयः कर्मवासनाः।" (भागवत ४।१०।१४)

ऊतिम (हिं॰) उत्तम देखो।

ऊद (अ॰ पु॰) १ अगुरु वृक्ष, अगरका दरख़्त। २ अगुरुकाष्ठ, अगरकी लकड़ी। ३ वादित्र विशेष, बरबत बाजा। (हिं॰) ४ उद्बिडाल, ऊद बिलाव।

ऊदन, ऊदल देखो।

ऊदबत्ती (हिं॰ स्त्री॰) धूपबत्ती। यह अगुरुकाष्ठसे दाक्षिणात्यमें प्रस्तुत की जाती है। पूजापाठके समय धूप देने और सुगन्ध लेनेको इसे सुलगाते हैं।

ऊदबिलाव (हिं॰) उद्बिडाल देखो।

ऊदल (हिं॰ पु॰) १ वृक्ष-विशेष, गुलबादल। यह ब्रह्म, दाक्षिणात्य और हिमालयके नीचे वनमें अधिक उपजता है। इसका तन्तु बहुत दृढ़ होता है। उससे बहुत मोटी रज्जु बनती है। २ उदयसिंह। यह आल्हाके छोटे भाई थे। ऊदल महोबेवाले नृपति परमालके मुख्य सामन्तोंमें एक थे। बाल्य कालमें ही इन्होंने माड़व पर चढ़ अपने बापका दांव लिया। पृथ्वीराजसे भी इन्होंने कई बार युद्ध किया था। अन्तको बेलाके गौनेमें पृथ्वीराजके अन्यतम वीर चौंड़ाने इन्हें मार डाला। ऊदलकी वीरता भारतप्रसिद्ध है।

ऊदा (हिं॰ वि॰) १ रक्तवर्ण मिश्रित कृष्णवर्ण, सुरखी-आमेज़ काला बैंगनी। (पु॰) अश्वविशेष, एक घोड़ा। यह रक्तवर्ण मिश्रित कृष्णवर्णका होता है।

ऊदी-सेम (हिं॰ स्त्री॰) केवांच।

ऊधन् (सं॰ क्ली॰) ऊधस् पृषोदरत्वात् सस्य नः। पशुका स्तन, चौपायेका थन।

"उताश्व ऋतुपसीम ते दिवा सलाव वम जवनि।" (ऋक् ८।१०।१०)

ऊधन्य (सं॰ क्ली॰) ऊधनि भवम्, ऊधन्-यत्। दुग्ध, दूध।

ऊधम (हिं॰ पु॰) उत्पात, बखेड़ा, झगड़ा।

ऊधमी (हिं॰ वि॰) उपद्रवी, झगड़ालू, बखेड़िया।

ऊधर् (वै॰ क्ली॰) ऊधस् पृषोदरादित्वात् सस्य रः। पशुस्तन, चौपायोंका थन। "ऊधर्नग्ना मार्ग।" (ऋक् ८।१।१२)

ऊधव (हिं॰) उद्धव देखो।

ऊधस् (वै॰ क्ली॰) उन्द-असुन्, उन्दस्य ऊधादेशः। पशुस्तन, चौपायेका थन। (शतपथ॰ ३।३।१।१४)

ऊधस्य (सं॰ क्ली॰) ऊधसि भवम्, ऊधस्-यत्। १ दुग्ध, दूध। (त्रि॰) २ दुग्धकर, दूध पैदा करनेवाला।

ऊधस्वती (सं॰ स्त्री॰) ऊधस्-मतुप्, मस्य वः स्त्रियां ङीप्। अपने स्तनमें अधिक दुग्ध रखनेवाली गौ, जो गाय अपने थनमें ज़्यादा दूध रखती हो।

"विविदुःकं ब्रजान् गावः पयोधस्वतीर्मुदा।" (भागवत १।१०।१४)

ऊधो (हिं॰) उद्धव देखो।

ऊन् (धातु) अदा॰ चुरा॰ पर॰ सक॰ सेट्। "ऊनय परिहाणे।" (कवि॰ द्रु) न्यून बनाना, कम करना, घटाना।

ऊन (सं॰ त्रि॰) ऊनन्-अच् अथवा अव-नक्-ऊट्। स्वविधिविहेतु प्रत्ययो नक्। उण् ३।२। ज्वरत्वरिश्रिव्यविमवामिति। पा ६।४।२०। १ हीन, छोटा। २ न्यून, कम। ३ असंपूर्ण, नातमाम। "ऊनं न सत्वेष्वधिको बबाधे।" (रघु ५।१०) (हिं॰) ४ ऊर्णा, चौपायोंका गर्म रोयां। भारतमें हिमालयके भेड़का रोयां उत्तम होता है। काश्मीर तथा तिब्बत ऊर्णाके लिये विख्यात है। अफ़गानिस्तानकी भेड़ भी अच्छा ऊन देती है। ऊर्णाका तन्तु बहुत सूक्ष्म, दीर्घ, दृढ़, कोमल और दोष निकलता है।

ऊनक (सं॰ त्रि॰) ऊन स्वार्थे कन्। हीन, छोटा।

ऊनचत्वारिंश (सं॰ त्रि॰) ऊनचत्वारिंशतः पूरणः, डट्। चत्वारिंशसे एक संख्या न्यून, उंतालीस, एक कम चालीस, ३९।

ऊनता (हिं॰ स्त्री॰) न्यूनता, कमी।

ऊनत्रिंशत् (सं॰ त्रि॰) उनतीस, २९।

ऊनविंशति (सं॰ त्रि॰) उन्नीस, १९।

ऊना (हिं॰ वि॰) न्यून, कम, छोटा।

ऊनित (सं॰ त्रि॰) घटाया या कम किया हुआ।

ऊनी (हिं॰ वि॰) १ ऊर्णनिर्मित, ऊनका बना

दुर्घा। (स्त्री०) २ न्यून, थोड़ी। ३ न्यूनता, घटी, कमी। ४ थोड़ी, छोटी।

ऊनोदरतातप (सं० पु०) जैनव्रतविशेष। इसमें प्रत्यह एक-एक ग्रास भोजन कम करते हैं।

ऊप (हिं० पु०) अनब्याज, अनाजका सूद। लपक बोनेके लिये महाजनसे अन्न उधार लेते और खेत कटनेपर मन पीछे ३।४ सेर अधिक दे देते हैं। डेवढ़ा या सवाया ऊप भी उठता है।

ऊपना (हिं० क्रि०) ब्याजपर अन्न ऋण देना, सूदपर अनाज उठाना।

ऊपर (हिं० अव्य०) १ उपरि, बर, पर। (क्रि० वि०) २ ऊर्ध्व, आगे। ३ अधिक, ज्यादा। "जितना ऊपर उतना ही नीचे।" (लोकोक्ति) ४ पश्चात्, पीछे। ५ प्रतिकूल, खिलाफ।

ऊपरसे (हिं० क्रि० वि०) ऊर्ध्वसे, सरपर।

"तेलीके तीनों मरें ऊपरसे टूटे लाठ।" (लोकोक्ति)

ऊपरी (हिं० वि०) १ बहिरङ्ग, बाहरी। २ अगभीर, उथला। ३ कृत्रिम, बनावटी। ४ अन्यसम्बन्धीय, पराया। ५ अपरिचित, अजनबी। ६ विदेशीय, जो अपने मुल्कका न हो। ७ शिथिल, ढीला। ८ अयोग्य, नाक़ाबिल।

ऊब (सं० स्त्री०) १ उद्वेग, घबराहट। २ अरुचि, नफ़रत। ३ उत्साह, हौसला।

ऊबट (हिं० पु०) गौणमार्ग, बड़ी राहके पासकी गली।

ऊबड़खाबड़ (हिं० वि०) उच्च-नीच, नाहमवार, ऊंचा-नीचा।

ऊबना (हिं० क्रि०) १ उद्विग्न होना, घबरा जाना, उकताना। २ घृणा या नफ़रत करना।

ऊबरना, उबरना देखो।

ऊभ (हिं० वि०) १ उच्च, ऊंचा। (स्त्री०) २ व्याकुलता, घबराहट। ३ घृणा, नफ़रत। ४ उष्मा, गरमी। ५ उत्साह, हौसला। ६ श्वासरोग, दमेकी बीमारी।

ऊभना (हिं० क्रि०) १ दण्डायमान होना, उठना। २ उद्विग्न होना, घबराना। ३ शीघ्र शीघ्र निश्वास छोड़ना, हांफना।

ऊभा (हिं० पु०) गत, गड्ढा।

ऊभासांसी (हिं० स्त्री०) उद्वेग, घबराहट।

ऊम् (सं० अव्य०) ऊय-मुक्। १ क्रोधोक्ति, मारो! २ जिज्ञासा, क्या! क्यों! कैसे! ३ निन्दा, छी! छी! ४ स्पर्धा, इतना! ऐसा!

ऊम (सं० क्ली०) अवतीति, अव-क्विप्-मन्। १ नगर, शहर। २ देशविशेष, एक मुल्क। (सिद्धान्तकौमुदी) ३ रक्षक, रखवाला।

ऊमक (हिं० स्त्री०) उत्साह, बाढ़, उभार, झपट।

ऊमट (हिं० वि०) क्षत्रियोंकी एक जाति, मालवेके ठाकुर।

ऊमना (हिं० क्रि०) उठना, बढ़ना, उभरना।

ऊमर (हिं० पु०) १ उदुम्बर, गूलर। २ वणिक् जातिका एक भेद।

ऊमरकोट—१ सिन्धु प्रदेशके थर और पारकर जिलेकी एक तहसील। चाचर तहसीलकी लेते भूमिका परिमाण ११०५ वर्गमील है। लोकसंख्या प्रायः ८० हज़ार होगी। २ उक्त तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° २१′ उ० तथा द्राघि० ६९° ४६′ पू०पर अवस्थित है। पूर्व मरुभूमिके टीले इधर उधर खड़े हैं। नहर नगरमें आयी है। ऊमरकोटसे हैदराबादकी सड़क लगी है। नगरमें कचहरी, अदालत, थाना, डाकखाना, अस्पताल, स्कूल, तारघर, धर्मशाला और पिंजरापोल सभी हैं। ५०० वर्गफीटका एक किला बना है। तालपुरवाले मीरोंके समय उसमें ४०० सिपाही रहते थे। आजकल सरकारी इमारतें किलेमें ही हैं। घी, ऊंट, गाय, बैल, तम्बाकू, रूई, धातु, रंग, सूखेफल, तेल, कपड़े और ऊनका व्यवसाय चलता है। जुलाहे ऊंटको झूलें और मोटे कपड़े बुनते हैं। १५४२ ई०को ऊमरकोटमें ही अकबर बादशाहने जन्म लिया था। पहले यहां राजपूतोंका राज्य रहा। किन्तु १८१३ ई०में तलपुरके मीरोंने इसपर अधिकार किया था। फिर १८४३ ई०में ऊमरकोट अंगरेजोंके हाथ लगा।

ऊमरखेड़—बरार प्रान्तके बासिम जिलेकी पुसद तहसीलका प्रधान नगर। यह अक्षा० १९° ३६′ उ०

एवं द्राघि० ७७° ४५´ पू०पर अवस्थित है। १८१८ ई०को यहां हातकर सरदार और निज़ामकी सेनामें युद्ध हुआ। १७८५ ई०में निज़ामने ऊमरखेड़ परगना १७६४ ई०का युद्ध समाप्त होनेपर पेशवाको दे डाला था। पूनामें हारनेपर पेशवा १८१८ ई०को पूर्वकी ओर भागते यहां ठहर गये। ब्राह्मण साधु महाराजकी चिताके स्थानपर एक अच्छासा मन्दिर बना है। सुप्रसिद्ध गोमुख स्वामीका भी यहां मठ था। वह प्रतिवर्ष एक चेलेके साथ इधर-उधर दौरेपर जाते और प्रायः २ लाख रुपया मांग लाते, जिसे पुण्यकार्यमें लगाते थे। उन्होंने अनेक मन्दिर तथा कूप बनवाये। दूर-दूरसे लोग यहां मानता करने आते हैं। १८८१ ई०में गोदावरी किनारे महात्माने इहलोक छोड़ा था। मठमें स्वामीका समाधि प्रतिष्ठित है।

ऊमरगढ़—युक्तप्रान्तके एटा ज़िलेकी जलेसर तहसीलका एक नगर। यह जलेसर नगरसे साढ़े चार कोस दक्षिण-पूर्व सेंगरनदीके वामतटपर अवस्थित है। पहले यहां यदुवंशियोंकी राजधानी रही। एक पुराना क़िला खड़ा है। उसमें उक्त वंशके प्रतिनिधि रहते हैं। क़िलेके चारो ओर एक गहरी खाई खुदी थी। आजकल वह पुर गयी है। मकान् भी टूटे फूटे हैं। ठाकुर बहादुरसिंहके समय मराठोंने सेंधियाके अधीन ऊमरगढ़ लूटा था। नीलकी दो कोठियां चलती हैं। उनमें एक यदुवंशियों और एक युरोपीयोंके अधीन है। क़िलेकी दीवारोंके आसपास आमके उम्दा बाग़ लगे हैं।

ऊमरपुर—बिहार प्रान्तके भागलपुर ज़िलेकी बंका तहसीलका एक नगर। यह अक्षा० २५° २´ २१´´ उ० तथा द्राघि० ८६° ५७´ पू०पर अवस्थित है। यहां ज़िलेके दक्षिणांशमें उत्पन्न शालि प्रभृति धान्य एकत्र किये और मुंगेर एवं सुलतानगंजको राह पूर्वको भेज दिये जाते हैं। एक बड़े तालाबपर शाह-शुजाकी मसजिद बनी है। डुमरांव कोई आध कोस उत्तर पड़ता है।

ऊमस, उमस देखो।

ऊमहना, उमहना देखो।

ऊमा (हिं० स्त्री०) यव वा गोधूमकी हरित् मञ्जरी, गेहूं वा जौकी ताज़ी बाल।

ऊय् (धातु) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "ऊयीङ् तन्तुसन्ताने।" (कविकल्पद्रुम) सीना, टांकना।

ऊर (सं० पु०) धान्यवपन नियमविशेष, धान बोनेकी एक चाल। जड़हन लगानेका नाम ऊर है। बैंगन एक महीने बाद उखाड़ कर जब जलसे भरे खेतमें बोया जाता, तब ऊर कहलाता है।

ऊरज (हिं०) ऊर्ज देखो।

ऊरध (हिं०) ऊर्ध्व देखो।

ऊररी (सं० अव्य०) ऊय् बाहुलकात् ररीक्। १ विस्तारसे, बढ़कर। २ अङ्गीकार, हां, ठीक है।

ऊररीकृत (सं० त्रि०) स्वीकृत, माना हुआ।

ऊरव्य (सं० पु०) ऊरोर्जातः ऊरु-यत्। ब्रह्माका ऊरुजात, वैश्य, बनिया।

ऊरी (सं० अव्य०) ऊरु बाहुलकात् रीक्। १ विस्तारसे, फैलाकर। २ स्वीकार, मञ्जूर, हां। (हिं स्त्री०) ३ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। जुलाहे इसे दुलकना या सलाका भी कहते हैं।

ऊरीकृत (सं० त्रि०) ऊरी-कृ क्त। १ अङ्गीकृत, माना हुआ। २ विस्तृत, फैला हुआ।

ऊरु (सं० पु०) ऊर्णूयते आच्छाद्यते, कुः नुमलोपश्च। उण्‌ १।३१। जानुका उपरिभाग, टांगका ऊपरी हिस्सा, रान।

ऊरुग्राह (सं० पु०) ऊरुं गृह्णाति स्तम्भाति, ऊरु-ग्रह-अण्। ऊरुस्तम्भरोग। ऊरुस्तम्भ देखो।

ऊरुग्लानि (सं० स्त्री०) ऊरुकी निर्बलता, रानकी कमज़ोरी।

ऊरुज (सं० पु०) ऊरोर्जातः, ऊरु-जन-डः। १ वैश्य, बनिया। २ भृगुवंशीय और्व नामक मुनि।

"ऊरुजा हसता चैव गृहस्यास्यावलीकराः।" (विष्णु० ११।०८)

ऊरुजन्मा, ऊरुज देखो।

ऊरुदघ्न (वै० त्रि०) ऊरु-दघ्नच्। ऊरुपरिमित, रानके बराबर।

"ऊरुदघ्नं विमोदेरो बाहुदघ्नं तरेत्।" (वाजसन० १७।५१।)

ऊरुद्वयस, ऊरुदघ्न देखो।

ऊरुपर्वा (सं॰ पु॰) ऊर्वोः पर्व्व, ६-तत्। जानु,घुटना।

ऊरुफलक (सं॰ क्ली॰) ऊर्वोः फलकमिव, ६-तत्। नितम्बदेश, सुरीन्, पुट्ठा।

ऊरुभिन्न (सं॰ त्रि॰) ऊरुमें छिद्र रखनेवाला, जिसके फटी रान् रहे।

ऊरुरी (सं॰ अव्य॰) ऊरर-उरीक। ऊररी देखो।

ऊरुसम्भव (सं॰ पु॰) ऊरोः सम्भव उत्पत्तिर्यस्य, बहुव्री॰। १ वैश्य, बनिया। (त्रि॰) २ ऊरुसे उत्पन्न होनेवाला, जो रान्से निकलता हो।

ऊरुस्तम्भ (सं॰ पु॰) ऊरू स्तभ्नाति, ऊरु-स्तम्भ, अण्। ऊरुरोगविशेष, रान्की एक बीमारी। वैद्यकके मतमें शीतल, उष्ण, द्रव, शुष्क, गुरु तथा स्निग्धकर वस्तु अतिरिक्त बरतने, अधिक परिश्रम करने, विशेष चलने फिरने, दिनको सो रहने और रातको जगने प्रभृति कारणोंसे सञ्चित वात, श्लेष्मा, मेद एवं पित्त भड़क उठता है। उस समय अस्थि दोषपूर्ण रहनेसे दोनो ऊरु स्तब्ध, शीतल, अचेतन, स्थानान्तर गमन वा पदस्थापनके लिये अशक्त और अतिशय व्यथित हो जाते हैं। उसीसे मोह, अङ्गमर्द, आर्द्रवस्त्रके अवलुण्ठन जैसे अनुभव, तन्द्रा, वमन, अरुचि और ज्वरका वेग बढ़ता है। अतिनिद्रा, अतिमुग्धता, अलसता, ज्वर, लोमहर्ष, अरुचि, वमन और जङ्घा एवं ऊरुद्वयकी अवसन्नता इस रोगका पूर्वरूप है। जिसके ऊरुस्तम्भमें दाह उठता, वेदना एवं सूचिवेधवत् पीड़ाका वेग बढ़ता और सब शरीर कांपता, उसका मृत्यु आ पहुंचता है। उक्त उपद्रवशून्य और स्वल्पदिनोत्पन्न ऊरुस्तम्भकी चिकित्सा करना चाहिये। कोई कोई इसे आढ्यवात भी कहते हैं। (माधवनिदान)

ऊरुस्तम्भमें स्नेहक्रिया, रक्तस्राव, वमन, विरेचन और वस्तिकर्म सम्पूर्ण निषिद्ध हैं। इस रोगमें वही चिकित्सा चलाये, जो श्लेष्माको हटाये और वायु न भड़काये। पहले रुक्ष क्रियासे कफको शान्त कर देते, पीछे वायुके प्रशमका कार्य हाथमें लेते हैं। व्यायाम, उच्च स्थानको लम्फ प्रदान, स्रोतके प्रतिकूल सन्तरण प्रभृति कार्य बन सकनेसे कफक्षयके लिये उपकारी हैं।

चिकित्सा—सर्षप और दीमककी मट्टी मधुके साथ पीस प्रलेप लगाना चाहिये। त्रिफला, चव्य, सोंठ एवं पिपरामूल अथवा आंवला, हर, बहेड़ा, सोंठ, पीपल और मिर्चका चूर्ण बराबर मधुके साथ चाटनेसे ऊरुस्तम्भ रोग दबता है। इस रोगपर 'अष्टकट्वरतैल' विशेष उपकारी है। उसको इसप्रकार तैयार करते हैं—मूर्छित सर्षपतैल ४ सेर, तक्र पौने ३ सेर, दधि ४ सेर, पिपरामूल २ पल और सोंठ २ पल एक साथ पका तेल अवशेष रहते छान लेते हैं। यह अष्टकट्वर तैल ऊरुस्तम्भको जड़से उखाड़ डालता है।

ऊरुस्तम्भा (सं॰ स्त्री॰) ऊरोरिव स्तम्भाकृतिर्यस्याः। कदलीवृक्ष, केलेका पेड़।

ऊरुद्भव (सं॰ त्रि॰) ऊरुसे उत्पन्न, जो रान्से निकला हो।

ऊर्ज (धातु) चुरा॰ पर॰ अक॰ सेट्॰। १ जीवित होना, जिन्दगी पाना, जी उठना। २ बलिष्ठ होना, ताकत हासिल करना। "यो वा आयमति स आविति तमूर्जयति।" (शतपथब्रा॰ ७।३।१।१८) (स्त्री॰) ऊर्ज्-क्विप्। ३ बल, ताकत। ४ अन्नरस नामक अन्नका सारभूत रस। (क्ली॰) ५ अन्न।

"नमः समुद्रावृतिमध्यमीनादूर्जां श्रयन्तं प्रथितप्रभावाम्।" (भट्टि)

ऊर्ज (सं॰ पु॰) ऊर्जयति उत्साहयति जनान्, ऊर्ज-णिच्-अच्। १ कार्तिक मास, कातिकका महीना। २ उत्साह, हौसला। ३ बल, जोर। ४ द्वितीय मन्वन्तरके सप्तर्षियोंमें एक ऋषि। ५ निश्वास, दम। ६ जीवन, जिन्दगी। ७ वीर्य।

"पूजितं ह्यशनं नित्यं बलमूर्जं च यच्छति।" (मनु २।५५)

(क्ली॰) ऊर्ज्यते अनेन, ऊर्ज-घञ्। ८ अन्न, खाद्य।

"नमः ऊर्जे इषे त्रय्याः पतये यज्ञरेतसे।
तृप्तिदाय च जीवानां नमः सर्वरसात्मने॥" (भागवत ५।१८।१८)

९ काव्यालङ्कार विशेष।

ऊर्जयत् (सं॰ त्रि॰) १ बली, ताकतवर। २ बलदायक, ताकत देनेवाला।

ऊर्जयोनि (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष। (भारत,अनु॰ ४ अ॰)

ऊर्जवाह (सं॰ पु॰) भृगुके एक पुत्र।

ऊर्जव्य (सं॰ पु॰) ऋग्वेदोक्त एक राजा। (ऋक् ५।४१।२०)

ऊर्जस् (सं॰ क्ली॰) ऊर्ज-असुन्। १ बल, जोर। २ अन्नरस विशेष। (भारत, अनु॰ ११२ अ॰)

ऊर्जदानि (सं॰ पु॰) बलदायक, ताक़त देनेवाला।

ऊर्जस्तम्भ (सं॰ पु॰) द्वितीय मन्वन्तरके सप्तर्षिमें एक ऋषि।

ऊर्जस्वत् (सं॰ त्रि॰) शक्तिशाली, ताक़तवर।

ऊर्जस्वती (सं॰ स्त्री॰) १ दक्षकन्या तथा धर्मपत्नी। २ प्रियव्रतकी कन्या और उशनाकी पत्नी। ३ प्राणकी पत्नी।

ऊर्जस्वी (सं॰ क्ली॰) ऊर्जस्-विन्। १ अलङ्कार-विशेष। जिससे अतिशय अहङ्कार झलकता, उसे कवि ऊर्जस्वी अलङ्कार कहते हैं। (त्रि॰) अति-शयितं ऊर्जो बलमस्यास्ति। २ अतिशय बलवान्, बड़ा जोरावर। ३ तेजस्वी।

ऊर्जा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ज भावे अ-टाप्। १ बल, जोरावरी। २ उत्साह, मौज। ३ वृद्धि, उठान। ४ अन्नरसकी विकृति विशेष।

ऊर्जानी, ऊर्जा देखो।

ऊर्जावान् (सं॰ त्रि॰) ऊर्जा अस्यास्ति, ऊर्जा-मतुप् मस्य वः। १ बलवान्, ताक़तवर। २ वृद्धियुक्त, बढ़ा हुआ। स्त्रियां ङीप्। ऊर्जावती।

"ऊर्जावती' महापुण्यां मधुमतीं विवर्धनाम्।" (भारत,अनु॰ ४६अ॰)

ऊर्जित (सं॰ त्रि॰) ऊर्ज-क्त। १ बलशाली, ताक़त-वर। २ वृद्धियुक्त, उभरा हुआ। ३ विख्यात, मशहूर। ४ तेजस्वी। ५ उत्साहित, हौसलेमन्द।

"उपपत्तिमदूर्जिताशयम्।" (किरात)

ऊर्जिताशय (सं॰ पु॰) श्रेष्ठ, बड़ा, दिलदार।

ऊर्जी (सं॰ त्रि॰) खाद्यविशिष्ट, जिसके पास खूब खाना रहे।

ऊर्ण (सं॰ त्रि॰) ऊर्णा अस्यास्ति, ऊर्णा अर्श आदित्वात् अच्। मेषलोमनिर्मित, ऊनी, ऊनका बना हुआ।

ऊर्णदेश—एक प्राचीन जनपद। (भारत, सभा २११८) यह जनपद कैलास और हिमालयके मध्य अवस्थित है। इससे पूर्व रावण-ह्रद और उत्तरपश्चिम लाधक प्रदेश है। नीतिघाट नामक एक पथ द्वारा यह स्थान तिब्बतसे संलग्न हुआ है। यह प्रायः प्राय: अर्ध मील विस्तृत है। उद्भिदादि अधिक नहीं उग-जते। स्थान-स्थान पर केवल स्तूपाकार प्रस्तर पड़े हैं।

शतद्रु नदी पार करनेपर देव नामक स्थानमें कुछ उत्तर पहुंचने पर कई क्षुद्र ग्राम लक्षित होते हैं। वह नाना वर्ण और नाना भावसे स्थापित हैं। पहले देव नामक राजा ग्रीष्मकालमें यहीं आकर रहते थे। ऊर्णदेशमें यही स्थान अति मनोरम है। थोड़ी दूर आगे गिरिमालासे सुवर्ण निकलता है। क्षुद्र क्षुद्र पर्वत ग्रेनाइट प्रस्तरके बने हैं। उसके बीच-बीच अकीक-जैसे पत्थरके टुकड़े भी देखनेमें आते हैं। यहां के लोग स्रोतके जलसे धो स्वर्णकणाको आहरण करते हैं।

ऊर्णदेशमें श्रमक बहुत हैं। उनके पिछले पैर और लोम बड़े होते हैं। गो, अश्व और गर्दभ प्रायः देख पड़ते हैं। शशक-जैसा एक जन्तु होता है। वह इन्दुर जैसा लगता है। दोनों कान बहुत बड़े होते हैं। किन्तु पूछका पता नहीं चलता। जिस छागके लोमसे शाल बनता, वह यहां देखनेको मिलता है।

पहले यह जनपद सूर्यवंशीय क्षत्रियोंके अधिकारमें था। एक बार लाधकके उग्र प्रकृति तातारोंने यहांके राजाको मार डाला था। राजवंशीयोंने चीन-सम्राट्से साहाय्य मांगा। कुछ काल यह चीन-सम्राट्को रक्षणावेक्षणमें पड़ा था, पीछे तिब्बतवासी दलाई लामाके हाथ लगा।

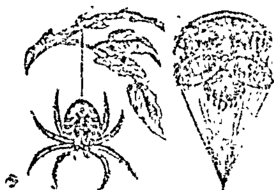
यहांके अधिवासियोंको ऊनिया कहते हैं।

ऊर्णनाभ (सं॰ पु॰) ऊर्णेव तन्तुर्नाभौ यस्य, नाभे-रूपसङ्ख्यानमित्यच् समा:। (पाणि: संज्ञायामन्वोर्णेभ्य: । ५।४।७४।) कीटविशेष, मकड़ा। अपर नाम लूता, तन्तुवाय और मर्कटक है। यह नाना जातीय रहता और नाना श्रेणीमें विभक्त पड़ता है। पृथिवीके प्रायः सकल देशोंमें ऊर्णनाभ मिलता है। किन्तु क्रान्तिमण्डल-पर ही इसका रहना अधिक है। विशेषतः कर्कट क्रान्तिका ऊर्णनाभ वृहदाकार होता है। वह केवल क्षुद्र क्षुद्र कीट खाकर ही सन्तुष्ट नहीं रहता, समय पाकर छोटे छोटे पक्षियों पर भी आक्रमण करता है।

मस्तक और उदरवाले उपरिभागके व्यवधानमें बादाम-जैसा एक कठिन फलक निकलता है। उदर उसमें मिला रहता है। फिर उदर गोला और ज़्यादा नर्म भी होता है। पैर आठ रहते हैं। हरएक पैरमें सात गांठें पड़ती हैं। आखिरी पैरमें कंघीकी तरहके दो कांटे निकले होते हैं। मनुष्यका जबड़ा पतङ्ग-जैसा नहीं होता। वह सकल दिक्‌को झुक सकता है। जबड़ेके अन्तमें तीक्ष्ण कांटा लगता है। निकट ही एक अति क्षुद्र छिद्र पड़ता है। उसी छिद्रसे विषाक्त तरल पदार्थ निकलता है। दोनों जबड़ोंके मध्य जिह्वा होती है। वह मुखके बहिरिन्द्रिय-जैसी देखायी देती है।

सचराचर इसके ८ चक्षु होते हैं। किसी किसीके छह और अति अल्प संख्यकके दो चक्षु रहते हैं। उदरके उपरिभाग पर इधर उधर दाग पड़ जाते हैं। फिर किसीके उसी स्थानपर अति परिच्छन्न अनाहत चर्म चढ़ा होता है।

ऊर्णनाभके फेफड़ेमें दो अथवा चार छिद्र रहते, जो उदरके तल भागपर पड़ते हैं। मलद्वारके निकट तन्तूत्पादक यन्त्र रहता है। उसपर भी सूक्ष्म सूक्ष्म छिद्र होते हैं। उनकेबीचसे अति सूक्ष्माकार तन्तु निकलते हैं वही सूक्ष्मतन्तु एकत्र हो जालमें सूतके लच्छे-जैसे देख पड़ते हैं। तन्तूत्पादक यन्त्रसे प्रथम एक प्रकारका चिपचिपा पदार्थ छूटता है। वही पदार्थ वायुके स्पर्शसे तन्तुके आकारमें परिणत हो जाता है।



ऊर्णनाभ

तन्तुमें निकलनेपर यह नाना प्रकारोंसे जाल बनाता है। कोई जालमें रहता, कोई जालसे कीट पतङ्ग पकड़ जीविका निर्वाह और कोई जाल बना अपर कीटादिके आखेटकी सुविधा करता है। किसी-किसी ऊर्णनाभको लोगोंने गर्तमें रहते देखा है।

प्रायः सभी मकड़े गेंद-जैसे कोयेके बीच अपना अण्डा रखते और अण्डा परिपुष्ट पड़नेपर कोयेको काटा करते हैं। जबतक फूटनेका समय नहीं आता, तबतक कोई उस डिम्बाधारको अपने पृष्ठपर डाल चक्कर लगाता, कोई छातीपर चढ़ाता और कोई उदरपर अति यत्नसे रख विपद्‌से बचाता है। एक-एक गोलेमें प्रायः २००० अंडे होते हैं। गोलेसे बाहर निकलने पर बच्चे पहले अपनी माताके समस्त शरीरमें क्षुद्राकार लिपट जाते हैं।

मकड़ियां (ऊर्णनाभकी स्त्रियां) नाना प्रकारकी होती हैं और प्रायः सभी पुरुषकी अपेक्षा बड़ी निकलती हैं। स्त्री-पुरुषका सहवास बड़ा भयानक होता है। यदि पुरुष स्त्रीका मन नहीं रिझाता, तो वह उसके हाथों मारा जाता है।

सकल ही देशोंमें मकड़े नाना आकार और नाना प्रकारके देख पड़ते हैं। फिर सभी मकड़े पतङ्ग अथवा क्षुद्र जीवको पकड़ मार डालते हैं। गङ्गातीरस्थ मुङ्गेर नगरके निकट कभी कभी एक बड़ा, काला और लाल मकड़ा मिलता है। उसका जाल देखनेमें उज्ज्वल हरित्सुवर्ण रहता और छहसे बारह हाथतक लम्बा होता है।

हिमालयके निकट सफेद-लाल रङ्गके बड़े-बड़े मकड़े होते हैं। कहते हैं, उनके जालमें पक्षी तक फंस रहते हैं। जालमें आ जानेसे बहुसंख्यक ऊर्णनाभ मिल जुल उसे खा डालते हैं।

सिंहल द्वीपमें एक जातिका मकड़ा देख पड़ता, जिसका पैर अति कठिन होता है। छिपकली पर्यन्त उसी पदमें फंस जाती है।

किसी स्थानपर घाव पड़नेसे मकड़ेको लगाने पर रक्तस्राव रुकता है। विलायतमें मकड़ेका जाल ज्योतिष-शास्त्रीय दूरवीक्षणयन्त्रके तारकी तरह व्यवहृत होता है।

ऊर्णनाभि, ऊर्णनाभ देखो।

ऊर्णपट (सं॰ पु॰) लूता, मकड़ा।

ऊर्णम्रद (सं॰ त्रि॰) ऊर्णमिव म्रदीयः, ऊर्णम्रदीयस् निपातनात्। कम्बलादिके समान कोमल, कम्बलकी तरह मुलायम।

"ऊर्णम्रदं प्रथस्व।" (कौशिकसू॰ २३।११०)

ऊर्णनाभि, ऊर्णनाभ देखो।

ऊर्णा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्णु-ड-टाप्। ऊर्णोतेर्डः। उण् ५।४७। १ मेषादिका लोम, पशम, ऊन। पशम देखो। २ भ्रूद्वयके मध्यवर्ती मृणालसूत्रके समान सूक्ष्म रोमराजीका चिह्न विशेष। यह चिह्न होनेसे मनुष्य चक्रवर्ती राजा या महायोगी होता है। ३ चित्ररथ गन्धर्वकी पत्नी।

ऊर्णापिण्ड (सं॰ पु॰) ऊनका गोला।

ऊर्णामय (सं॰ त्रि॰) ऊर्णा विकारार्थे मयट्। मेषलोमनिर्मित सूत्रादि, ऊनी धागा वगैरह।

"ऊर्णामयं कौतुकहस्तसूत्रम्।" (कुमार)

ऊर्णायु (सं॰ पु॰) ऊर्णा अस्त्यस्य, ऊर्णा-युस् सित्वात् भत्वात् न लोपः। १ मेषलोम-निर्मित कम्बलादि, ऊनी कम्बल वगैरह। २ मेष, भेड़। ३ ऊर्णनाभ, मकड़ा। ४ अपभ्रंश। ५ किसी गन्धर्वका नाम।

ऊर्णावत् (सं॰ त्रि॰) ऊर्णानिर्मित, ऊनी।

ऊर्णावन (वै॰ त्रि॰) ऊर्णा अस्यास्ति, ऊर्णा-वनच्। १ ऊर्णायुक्त, ऊनसे भराहुआ। २ मेषादिलोमनिर्मित, ऊनी। "ऊर्णावलभिर्न्यतान् वरवत्र सान्निम्।" (शतपथब्रा॰ ५।४।२।११)

ऊर्णावल (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायुक्त, ऊनी।

ऊर्णासूत्र (वै॰ क्ली॰) ऊर्णा एव सूत्रम्। मेषादि लोम, ऊन। "ऊर्णासूत्रेण कवयो वयन्ति।" (शुक्लयजुः १९।८०)

ऊर्णास्तुक (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायुक्त, ऊनी, भेड़ वगैरहके बालका बना हुआ।

ऊर्णास्तुका (सं॰ स्त्री॰) ऊर्णास्तवक, ऊनकी लच्छी।

ऊर्णु (धातु) अदा॰ उभ॰ सक॰ सेट्। "ऊर्णुञ् आच्छादने" (कविकल्पद्रुम) आच्छादन करना, ढांकना। "ऊर्णोनाव न यशो-च महाबाहुर्भीजिहीम्।" (भट्टि १४।१०५)

ऊर्णुत (सं॰ त्रि॰) आच्छादित, ढका हुआ।

ऊर्णुवान् (सं॰ त्रि॰) आच्छादन करनेवाला, जो ढांकता हो।

ऊर्द (सं॰ त्रि॰) ऊर्द-अच्। क्रीड़ायुक्त, खेलाड़ी।

ऊर्दर (सं॰ पु॰) ऊर्जेन दृणाति विदारयति, ऊर्ज-अप् अच् वा। ऊर्जि दृणातेरलची पूर्वपदान्त्यलोपश्च। उण् ५।४०। १ वीर, बहादुर। २ राक्षस। ३ धान्यादि रखनेका एक पात्र, कुशूल।

ऊर्ध्व (सं॰ त्रि॰) उत्-हाङ्-ड: पृषोदरादित्वादूरादेशः। १ उच्च, ऊंचा। २ उत्कट, उमदा। ३ उपरिस्थ, ऊपरी। ४ अनन्तर, पिछला। ५ परित्यक्त, छूटा। ६ उत्पाटित, उखड़ा। (क्ली॰) ७ उच्चता, ऊंचापन। ८ ऊर्ध्वदेश, ऊपरी मुल्क। ९ मृदङ्ग विशेष, किसी किस्मका ढोल या तबला।

ऊर्ध्वक (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वः सन् कायति शब्दायते, ऊर्ध्व-कै-क। मृदङ्गविशेष, किसी किस्मका ढोल या तबला।

ऊर्ध्वकच (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वा उत्पाटिताः कचा यस्य, बहुव्री॰। ऊर्ध्वगत केश रखनेवाला, जो बाल नोचा या उखाड़ा जा चुका हो।

ऊर्ध्वकण्टा (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ध्वकण्टः कण्टको यस्याः, बहुव्री॰। महाशतावरी, बड़ी सतावर।

ऊर्ध्वकण्ठ (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वः कण्ठो यस्य, बहुव्री॰। ग्रीवादेश उन्नत किये हुआ, जो गर्दन उठाये हो।

ऊर्ध्वकर्ण (सं॰ त्रि॰) कान खड़े किये हुआ।

ऊर्ध्वकर्म (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वदेशप्राप्त्यर्थं कर्म। मृतव्यक्तिके उद्देशसे किया जानेवाला सकल श्राद्धादि।

ऊर्ध्वकाय (सं॰ पु॰-क्ली॰) कायस्य ऊर्ध्वम्। १ कटिदेशसे उपरिस्थ अवयव, कमरसे ऊपरका जिस्म। ऊर्ध्व उन्नतः कायो यस्य; बहुव्री॰। उन्नत देहवाला, जो ऊंचा पूरा जिस्म रखता हो।

ऊर्ध्वक्षमन (सं॰ त्रि॰) फेनाता हुआ, जो झाग छोड़ रहा हो। यह सोमका विशेषण है।

ऊर्ध्वकेतु (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वं उन्नत केतुर्यस्य यत्र वा। १ उच्छ्रित ध्वजावाला, जिसके झण्डा खड़ा रहे। २ उड़ती ध्वजावाला, जिसमें झण्डा फहराता रहे। (पु॰) ३ जनकवंशीय एक राजा।

"ऊर्ध्वकेतुरजस्तस्मात् पुरजित् सुतः।" (भागवत ९।१३।२१)

ऊर्ध्वकेश (सं॰ पु॰) ऊर्ध्व उन्नतः केशो यस्य, बहुव्री॰।

१ भ्रूतिग्राफ्तोल कुगमय मालग्र। (त्रि०) २ उन्नत केश रखनेवाला, जिसके खड़ा बाल रहे।

ऊर्ध्वक्रिया (सं० स्त्री०) ऊर्ध्वकर्म देखो।

ऊर्ध्वग (सं० त्रि०) ऊर्ध्व गच्छति, ऊर्ध्व-गम-ड। १ ऊर्ध्वगामी, ऊंचा जानेवाला। २ स्वर्गगामी। ३ मतृपयावलम्बी, ऊंची चाल पकड़नेवाला। (पु०) ४ शिरोरोग, सरकी बीमारी।

ऊर्ध्वगत (सं० त्रि०) ऊपर गया हुआ।

ऊर्ध्वगति (सं० स्त्री०) १ उच्चगति, ऊंची चाल। २ उन्नत स्थानपर आरोहण, ऊंची जगहकी चढ़ाई। ३ स्वर्गारोहण। (त्रि०) ४ उच्चगतिप्राप्त, ऊपर पहुंचा हुआ। ५ मुक्त।

ऊर्ध्वगपुर (सं० क्ली०) १ आकाशस्थ गृह, आसमानी मकान्। २ पुर नामक असुरका घर। ३ हरिश्चन्द्र राजाकी पुरी।

ऊर्ध्वगम (सं० पु०) ऊर्ध्वगति देखो।

ऊर्ध्वगमन (सं० क्ली०) ऊर्ध्वगति देखो।

ऊर्ध्वगामी (सं० त्रि०) ऊर्ध्व-गम-णिनि। ऊर्ध्वगमन करनेवाला, जो ऊंचा जाता हो।

ऊर्ध्वचरण (वै० पु०) सोमलताको दबानेके लिये प्रस्तर उठानेवाला।

ऊर्ध्वचरण (सं० त्रि०) ऊर्ध्वचरणो यस्य। १ ऊर्ध्वगत चरणवाला, पैर उठाये हुआ। (पु०) २ अष्टचरण शरभ। इस सिंहके चार चरण उठे होते हैं। ३ उन्नत पदसे तपस्या करनेवाले साधु।* यह भूमिपर मस्तक लगा हाथोंसे सहारे उठते हैं।

ऊर्ध्वचित् (सं० त्रि०) संग्रह करता हुआ, जो ढेर लगा रहा हो।

ऊर्ध्वजानु (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, बहुव्री०। उन्नतजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

ऊर्ध्वज्ञ (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, निपातनात् साधुः। ऊर्ध्वजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

ऊर्ध्वज्ञु (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे जानुनी यस्य, वधे जानुनोर्ज्ञुः। ऊर्ध्वाभिमान। पा ५।४।१२०) ऊर्ध्वजानु, ऊंचे घुटनोंवाला।

"ऊर्ध्वज्ञुमुपमासीनम् ऊर्ध्वज्ञुर्दशः।" (भट्ट)

ऊर्ध्वतन (सं० त्रि०) ऊर्ध्वं भवः, ऊर्ध्व-तन। उपरिस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वता (सं० स्त्री०) उच्चता, ऊंचाई।

ऊर्ध्वताल (सं० स्त्री०) तालविशेष, ऊंचा ताल।

ऊर्ध्वतिक्त (सं० पु०) चिरायता।

ऊर्ध्वतिलकी (सं० त्रि०) ऊर्ध्वमुन्नतं तिलकं यस्यास्ति, ऊर्ध्व-तिलक-इनि। उन्नततिलकविशिष्ट, खड़ा टीका लगाये हुआ।

ऊर्ध्वथा (सं० अव्य०) ऊर्ध्व-थाल्। १ ऊर्ध्व प्रकारसे, ऊंचे तौरपर। २ ऊर्ध्वमें, ऊपर-ऊपर।

ऊर्ध्वदंष्ट्रकेश (सं० पु०) ऊर्ध्वदंष्ट्रकाणां ईशः पतिः, ६-तत्। महादेव।

"नमोऽर्ध्वदंष्ट्रकेशाय शुक्लायावतताय च।" (भारत, शान्ति)

ऊर्ध्वदृष्टि (सं० त्रि०) ऊर्ध्वे दृष्टिरस्य, बहुव्री०। १ ऊर्ध्वदेशपर दृष्टि निक्षेपकारी, जो ऊंची जगहपर नज़र डालता हो। २ ऊर्ध्वनेत्र, ऊंची आंखवाला। (स्त्री०) ३ भ्रूद्वयकी मध्यवर्ती दृष्टि, भौहोंके बीचकी नज़र। ४ उत्क्षिप्त दृष्टि, उठी या चढ़ी निगाह। ५ मृत्युकालीन दृष्टि, मरते वक्तकी नज़र। ६ योग-विशेष।

ऊर्ध्वदेव (सं० पु०) ऊर्ध्व उत्कृष्टश्चासौ देवश्चेति, कर्मधा०। १ परमेश्वर। २ विष्णु।

ऊर्ध्वदेश (सं० पु०) ऊर्ध्वश्चासौ देशश्चेति, कर्मधा०। उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा।

ऊर्ध्वदेह (सं० पु०) ऊर्ध्व उत्तरकालीनश्चासौ देहश्चेति, कर्मधा०। मरणान्तर प्राप्त होनेवाला शरीर, जो जिस्म मरनेके बाद मिलता हो।

ऊर्ध्वद्वार (सं० पु०) १ उन्नत द्वार, ऊंचा दरवाज़ा। २ ब्रह्मरन्ध्र।

ऊर्ध्वनभा (सं० पु०) ऊर्ध्वं नभो यस्य, बहुव्री०। आकाशका मध्यदेशस्थ वायु, आसमानके बीचकी हवा।

ऊर्ध्वनयन (सं० पु०) शरभ।

ऊर्ध्वन्दम (सं० त्रि०) ऊर्ध्वन्-दम्-खच्। ऊर्ध्वस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वपथ (सं० पु०) आकाश, आसमान, ऊपरी राह।

ऊर्ध्वपातन (सं० क्ली०) चढ़वाई।

ऊर्ध्वपात्र (सं० क्लो०) ऊर्ध्वं नेतव्यं पात्रम्, मध्यपदलोपी समा०। उदूखल प्रभृति यज्ञपात्र।

ऊर्ध्वपाद (सं० पु०) ऊर्ध्वाः पादा यस्य, बहुव्री०। १ शरभ नामक मृगविशेष। शरभ देखो। (त्रि०) २ ऊर्ध्वदेशमें पाद रखनेवाला, जिसके ऊपरी हिस्सेमें पैर रहे।

ऊर्ध्वपुण्ड्र (सं० पु०) ऊर्ध्वं उन्नतः पुण्ड्र इक्षुयष्टिरिव। चन्दन आदिसे ललाटपर लगाया हुआ लम्बा तिलक। ब्रह्माण्डपुराणमें लिखा है—ब्राह्मणको ऊर्ध्वपुण्ड्र, क्षत्रियको त्रिपुण्ड्र, वैश्यको अर्धचन्द्राकार एवं शूद्रको वर्तुलाकार तिलक लगाना और जल, मृत्तिका, भस्म तथा चन्दनसे ऊर्ध्वपुण्ड्र बनाना चाहिये। देवीभागवतमें नारायणने कहा है कि वैदिक अर्थात् वेदनिष्ठ ब्राह्मणको ऊर्ध्वपुण्ड्र, त्रिशूल, वर्तुल, चतुष्कोण वा अर्धचन्द्राकार प्रभृति कोई तिलक लगाना मना है। फिर ब्रह्माण्डपुराणके मतसे अशुचि, अनाचारी एवं पापचिन्ताकारी व्यक्ति भी ऊर्ध्वपुण्ड्र लगानेसे शुद्धता पाता और चण्डालतुल्य अनाचारी ब्राह्मण ऊर्ध्वपुण्ड्राङ्कित अवस्थामें मरनेसे स्वर्ग चला जाता है। अनेक पुराणोंको देखते जप, होम, दान, वेदाध्ययन और पितृकार्यमें ऊर्ध्वपुण्ड्र धारण विहित है। किन्तु कुलाचारमें ऐसा नहीं होता। इसलिये व्यासोक्त वचनके अवलम्बनसे निश्चित होता है कि—श्राद्धादिके समय गन्ध वस्तुद्वारा ऊर्ध्वपुण्ड्र लगाना मना है, अपरापर वस्तुसे लगानेमें कोई बाधा नहीं।

ऊर्ध्वपुण्ड्रक, ऊर्ध्वपुण्ड्र देखो।

ऊर्ध्वपुर (सं० अव्य०) किनारे तक भरकर।

ऊर्ध्वपृश्नि (सं० पु०) ऊर्ध्वाः पृश्नयो बिन्दवो यस्य, बहुव्री०। पशुविशेष, एक चौपाया।

ऊर्ध्वबर्हि (सं० त्रि०) ऊर्ध्वं प्रागग्रं बर्हिर्येषाम्, बहुव्री०। पितृलोक।

ऊर्ध्ववाल (सं० त्रि०) खड़े बालोंवाला।

ऊर्ध्ववाहु (सं० पु०) ऊर्ध्वः ऊर्ध्वगतवाहो बाहुर्यस्येति कर्मधा०। १ उत्तोलित हस्त, उठा हुआ हाथ। २ पञ्चम मन्वन्तरके सात ऋषियोंमें एक ऋषि। ४ संन्यासी सम्प्रदाय विशेष। जो साधु एक वा उभय बाहु ऊर्ध्वदिक् उठाये रहते, उन्हें ऊर्ध्ववाहु कहते हैं। भिक्षाके द्वारा जीविकानिर्वाह करते हैं। कोई दिगम्बर वेश रखता और कोई केवलमात्र गैरिक वस्त्र पहनता है। ५ वसिष्ठके एक पुत्र। (लिङ्ग० १।१०।११) (त्रि०) ६ बाहु उत्तोलन किये हुआ, जो हाथ उठाये हो।

ऊर्ध्वबुध्न (वै० त्रि०) ऊर्ध्व-बन्धन, ऊर्ध्वबोधन।

ऊर्ध्वबृहती (वै० स्त्री०) छन्दोविशेष।

ऊर्ध्वभाक् (सं० त्रि०) १ ऊर्ध्वभाग लेनेवाला, जो ऊपरी हिस्सा पाता हो। (पु०) २ वड़वानल।

ऊर्ध्वभाग (सं० पु०) ऊर्ध्व उपरिस्थो भागः, एकदेशः कर्मधा०। उपरिभाग, ऊपरी हिस्सा।

ऊर्ध्वम् (सं० अव्य०) उत्-हा-डम्, ऊरादेशः। उपरि, ऊपर। "ऊर्ध्वं प्राणा ह्युत्क्रामन्ति यूनः स्थविर आयति।" (मनु)

ऊर्ध्वमनु (सं० पु०) पुराणोक्त जनपदविशेष। (ब्रह्माण्डपु० ४०।१७, मत्स्यपु० ११४।४८)

ऊर्ध्वमन्थी (सं० पु०) ऊर्ध्वं उत्तराश्रमं मथ्नाति, मन्थ-णिनि। नैष्ठिक ब्रह्मचारी, स्त्रीप्रसङ्गसे बिलकुल अलग रहनेवाला।

ऊर्ध्वमान (सं० क्लो०) ऊर्ध्वमारोप्य मीयते अनेन, ऊर्ध्व-मा-ल्युट्। १ प्रस्तर वा लोहनिर्मित तौलनेका बाट। २ ऊपरी परिमाण।

ऊर्ध्वमायु (सं० त्रि०) उच्चशब्दकारी, जो ऊंची आवाज देता हो।

ऊर्ध्वमारुत (सं० क्लो०) देहस्थ वायुका ऊपरी दबाव।

ऊर्ध्वमुख (सं० त्रि०) ऊर्ध्वं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ ऊपरको मुख रखनेवाला।

"ग्रीवायतूर्ध्वं मुखैर्मयूखैः।" (कुमार)

(पु०) २ अग्नि। (क्लो०) ३ मुखका ऊर्ध्वभाग, मुंहका ऊपरी हिस्सा। ४ उन्नतमुख, ऊंचा मुंह।

ऊर्ध्वमुखी (सं० पु०) संन्यासियोंका एक सम्प्रदाय। यह अपना मुख ऊपरको ही रखते हैं।

ऊर्ध्वमूल (सं० क्लो०) जगत्, दुनिया।

ऊर्ध्वमौहूर्तिक (सं० त्रि०) कुछ कालके बाद होनेवाला, जो थोड़ी देरके बाद आ पड़ता हो।

ऊर्ध्वरेखा (सं० स्त्री०) चरणचिह्नविशेष। यह हस्त

चिह्नोंमें एक है। अङ्गुष्ठ तथा उसके निकटको अङ्गुलिके मध्यमें यह रेखा एडीतक पहुंचती है। इसके होनेसे मनुष्य अंशावतारी समझा जाता है। राम, कृष्ण प्रभृति विष्णुके अवतार इस रेखासे युक्त थे।

ऊर्ध्वरेता (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वगं रेतो यस्य, बहुव्री॰। १ महादेव। २ सनकादि मुनि। ३ तपस्वी विशेष। ४ भीष्म। ५ हनुमान्। (त्रि॰) ६ रेतःस्खलन-रहित, जो कभी वीर्य गिराता न हो।

ऊर्ध्वरोमा (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वानि रोमाणि यस्य, बहुव्री॰। १ यमदूत प्रभृति। २ कुशद्वीपस्थ पर्वतविशेष। (त्रि॰) ३ उन्नत रोमवाला, जिसके खड़ा रोंगटा रहे।

ऊर्ध्वलिङ्ग (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं लिङ्गं यस्य, बहुव्री॰। महादेव।

ऊर्ध्वलिङ्गी, ऊर्ध्वलिङ्ग देखो।

ऊर्ध्वलोक (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वश्चासौ लोकश्चेति, कर्मधा॰। १ स्वर्ग, बिहिश्त। २ आकाश, आसमान्।

ऊर्ध्ववात (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वो वातः, कर्मधा॰। ऊर्ध्वगत वायु, ऊपर चढ़ी हुई हवा।

ऊर्ध्ववायु, ऊर्ध्ववात देखो।

ऊर्ध्ववृत (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वं वेष्टनेन वृतः, ३-तत्। ऊर्ध्व दिक् आवर्तित यज्ञोपवीत, ऊपरको घूमा हुआ जनेऊ। "कार्पासमुपवीतं स्याद्विप्रस्योर्ध्ववृतं त्रिवृत्।" (मनु २।४४)

ऊर्ध्वबृहती (वै॰ स्त्री॰) छन्दोविशेष।

ऊर्ध्वशान (सं॰ त्रि॰) ऊपर उठनेवाला।

ऊर्ध्वशायी (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्व-शी-णिनि। १ उत्तान-शायी, चित लेटनेवाला। (पु॰) २ महादेव।

ऊर्ध्वशोधन (सं॰ क्ली॰) वमन, कै।

ऊर्ध्वशोष (सं॰ अव्य॰) ऊर्ध्वः सन् शुष्यति, ऊर्ध्व-णमुल्। उपरिस्थ शोषण द्वारा, ऊपर ही सूख जानेसे।

ऊर्ध्वश्वास (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वश्चासौ श्वासश्चेति, कर्मधा॰। १ दीर्घश्वास, लम्बी सांस। २ मृत्युकालीन श्वास, मरते वक्तकी सांस।

ऊर्ध्वसानु (सं॰ पु॰-क्ली॰) ऊर्ध्वश्च तत् सानु चेति, कर्मधा॰। पर्वतादिका उपरिस्थ समतल प्रदेश, पहाड़ वगैरहके ऊपरका हमवार हिस्सा।

ऊर्ध्वस्थ (सं॰ त्रि॰) श्रेष्ठ, ऊपरवाला।

ऊर्ध्वस्थित (सं॰ त्रि॰) ऊपर रहनेवाला।

ऊर्ध्वस्थिति (सं॰ स्त्री॰) ऊर्ध्वा स्थितिर्यस्य, बहुव्रीहि। १ अश्वका पृष्ठदेश, घोड़ेकी पीठ। (त्रि॰) २ ऊर्ध्वस्थ, ऊपरी।

ऊर्ध्वस्रोता (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं ऊर्ध्वगतं स्रोतो यस्य, बहुव्री॰। १ ऊर्ध्वरेता मुनि। २ वृक्षादि, पेड़ वगैरह।

ऊर्ध्वाङ्ग (सं॰ पु॰) मस्तक, सर।

ऊर्ध्वाङ्गुलि (सं॰ अव्य॰) उंगली उठाकर।

ऊर्ध्वाकर्षण (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वको आकर्षण, ऊपरी खिंचाव।

ऊर्ध्वाम्नाय (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं आम्नायते, ऊर्ध्व-आ-म्ना कर्मणि घञ्। वेदमार्गसे अतिरिक्त बोधक एक तन्त्र। इसमें गुरुभक्ति, विष्णुके दशावतार, गौराङ्ग-माहात्म्य-कीर्तन, श्रीकृष्ण-पूजाविधि, नारायणस्तव एवं गया माहात्म्य प्रभृतिका वर्णन है। नारद ऊर्ध्वाम्नायके वक्ता तथा व्यासदेव श्रोता हैं।

ऊर्ध्वायन (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वं अयनं गमनं यस्य, बहुव्री॰। १ ऊर्ध्वगत, ऊपर जानेवाला। (पु॰) २ प्लक्षद्वीपस्थ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (क्ली॰) ३ ऊर्ध्वगति, ऊपरी चाल।

ऊर्ध्वावर्त (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं आवर्तते जल, ऊर्ध्व-आ-वृत-घञ्। १ अश्वपृष्ठ, घोड़ेकी पीठ। २ आवर्त-विशेष, एक घेरा।

ऊर्ध्वासित (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वं उपरिभागे असितं यस्य, बहुव्री॰। १ कारवेल्ल, करेला। (त्रि॰) ऊर्ध्वं आसितं येन। २ ऊर्ध्वपविष्ट, ऊपर बैठा हुआ।

ऊह (सं॰ पु॰) ऊर्ध्वगति, ऊपरी हरकत।

ऊर्मि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) ऋच्छतीति, ऋ-मि अरादेशश्च। अर्तेरूच। उण् ४।४४। १ तरङ्ग, लहर, उभार। २ प्रकाश, रोशनी। ३ वेग, झपट। ४ भङ्ग, टूट। ५ पीड़ा, तकलीफ। ६ वेदना, दर्द। ७ उत्कण्ठा, ख्वाहिश। ८ शोक, मोह, जरा, मृत्यु, क्षुत् और पिपासा। ९ अश्वकी एक गति, घोड़ेकी मरहिया चाल। १० भ्रान्ति, भूल। मङ्ग, माथ। ११ समूह, अंगोरा। १२ शीघ्रता, जल्दी। १३ पङ्क्तीय, पंगुमतर। १४ कपड़ेका शुनाव। १५ शिकन, बल।

ऊर्मिका (सं॰ स्त्री॰) ऊर्मि स्वार्थे कन्-टाप्, ऊर्मिरिव कायति, ऊर्मि-कै-टाप्। १ अङ्गुरीयक, अंगूठी। २ भ्रमर गुञ्जन, भौंरेकी गूंजन।

ऊर्मिन् (सं॰ त्रि॰) ऊर्मिरस्त्यस्य, ऊर्मि-इनि। ऊर्मियुक्त, लहरदार, लहरी।

ऊर्मिमत्ता (सं॰ स्त्री॰) १ भङ्गुरता, टूटापन। २ वक्रता, टेढ़ापन।

ऊर्मिमान् (सं॰ त्रि॰) ऊर्मिरस्त्यस्मिन्, ऊर्मि-मतुप्। १ तरङ्गयुक्त, लहरदार। २ वक्र, मेहरावदार।

ऊर्मिमाली (सं॰ पु॰) ऊर्मीणां माला विद्यते यस्य, ऊर्मि-माला-इनि। समुद्र, बहर-आज़म।

"चन्द्रं प्रवृद्धोर्मिरिवोर्मिमाली।" (रघु ५।६१)

ऊर्मिला (सं॰ स्त्री॰) लक्ष्मणकी पत्नी। यह जनककी औरस कन्या थीं।

ऊर्म्य (सं॰ त्रि॰) ऊर्मौ भवः, ऊर्मि-यत्। १ तरङ्गोत्पन्न, लहरसे निकला हुआ। (पु॰) २ रुद्र विशेष।

ऊर्म्या (वै॰ स्त्री॰) रात्रि, रात।

"तिरस्तमो ददृश ऊर्म्यास्वा।" (ऋक् ६।४८।६।)

'ऊर्म्यासु रात्रिषु।' (सायण)

ऊर्व (सं॰ पु॰) १ जलपात्र, हौज। २ मेघ, बादल। ३ आवृत स्थान, घिरी जगह। ४ कारागृह, कैदखाना। ५ और्वके पिता। ६ वड़वानल।

ऊर्वरा, उर्वरा देखो।

ऊर्वशर (सं॰ पु॰) भरतवंशीय महावीर्यके पुत्र।

ऊर्वशी, उर्वशी देखो।

ऊर्वष्ठीव (सं॰ क्ली॰) ऊरू च अष्ठीवन्तौ च, समाहार-द्वन्द्व। ऊरु एवं जानु, रान और घुटना।

ऊर्वसी (सं॰ स्त्री॰) ऊरौ वसिता, पृषोदरादित्वात् साधुः। उर्वशी देखो।

ऊर्वस्थि (सं॰ क्ली॰) ऊरोरस्थि, ६-तत्। ऊरु-देशका हाड़, रानकी हड्डी।

ऊर्वी (सं॰ स्त्री॰) ऊरुदेशका मध्यस्थल।

"ऊरुमध्ये ऊर्वी नाम तत्र लोहितक्षयात् सक्थिशोषः।" (सुश्रुत शारीर)

ऊर्व्य (सं॰ पु॰) ऊर्वे भवः, ऊर्व-यत्। वड़वानला-धिष्ठात्री देवता, इन्द्र।

ऊर्व्यङ्ग (सं॰ क्ली॰) ऊर्व्याः पृथिव्या अङ्गमिव। गोमयछत्रिका। इसका संस्कृत पर्याय—दिलीर, शिलीन्ध्रक, वर्षारोह और गोलास है। (राजनि॰)

ऊर्षा (सं॰ स्त्री॰) देवताड़क तृण।

ऊल—युक्तप्रदेशकी एक नदी। यह शाहजहांपुर ज़िलेमें अक्षा॰ २८° २१´ उ॰ तथा द्राघि॰ ८०° २७´ पू॰से निकलती और दक्षिणमें पूर्व ७ मील बह कर अक्षा॰ २८° २२´ उ॰ एवं द्राघि॰ ८०° २८´ पू॰पर खेरी ज़िलेमें जा पहुंचती है। फिर सीतापुर ज़िलेमें ऊल अक्षा॰ २७° ४२´ उ॰ तथा द्राघि॰ ८१° १३´ पू॰पर चौकामें मिलती है। पूरी लम्बाई ५५ कोस है। इसमें बाढ़ आनेका बड़ा डर रहता है। कहीं कहीं ऊल बिलकुल सूख जाती है। अलीगंज एवं गोले और लखीमपुर तथा सिधौलीके बीच इसपर पुल बंधा है। यह नाव चलाने या खेतमें पानी पहुंचानेके काम नहीं आती।

ऊलंग (हिं॰ स्त्री॰) एक घास।

ऊलजलूल (हिं॰ वि॰) १ ऊटपटांग, वाहियात। २ मूर्ख, गड़बड़िया। ३ असभ्य, गंवार।

ऊलर (हिं॰ स्त्री॰) काश्मीरस्थ ह्रद विशेष, काश्मीरकी एक झील। यह खूब लम्बी चौड़ी है।

ऊलुपी (सं॰ पु॰) १ जलजन्तु विशेष। एक पानीका जानवर। २ मत्स्य विशेष, एक मछली। उलूपी देखो।

ऊलूक (सं॰ पु॰) उलूक, उल्लू।

ऊवट, उवट देखो।

ऊवध्य (सं॰ क्ली॰) पशुके उदरका अपचा हुआ तृण।

ऊष् (धातु) भ्वादि॰ पर॰ सक॰ सेट्। "ऊष रुजि।" (कविकल्पद्रुम) पीड़ा देना, तकलीफ पहुंचाना।

ऊष (सं॰ पु॰) ऊष-क। १ क्षारमृत्तिका, खारी मट्टी। २ कर्णरन्ध्र, कानका छेद। ३ मलय पर्वत, चन्द्रमाद्रि। (स्त्री॰) ४ प्रत्यूषकाल, तड़का। ५ बल, वीर्य।

ऊषक (सं॰ क्ली॰) ऊष स्वार्थे कन्। प्रत्यूष समय, सवेरा।

ऊषण (सं॰ क्ली॰) ऊष-ल्युट्। १ मरिच, मिर्च। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ पिप्पलीमूल। ४ पील।

ऊषणा (सं॰ स्त्री॰) ऊषण-टाप्। १ पिप्पली, पीपल। २ चविक।

ऊषपुट (सं० क्ली०) कागज़में लिपटा नमकका दाना।

ऊषर (सं० त्रि०) ऊषं क्षारमृत्तिकां राति ददाति, ऊष-र अथवा ऊष-रा-क। नोना स्थान, रेहकी जगह।

"उष रिता न सक्ता वर्षं बीजमिवोषरे।" (मनु ९।१११)

ऊषरज (सं० क्ली०) ऊषरात् जायते, ऊषर-जन-ड। १ पांशुलवण। २ रोमक नामक अयस्कान्त विशेष।

ऊषवान् (सं० त्रि०) ऊषो विद्यतेऽस्य, ऊष-मतुप् मस्य वः। नोना स्थान, रेहकी जगह।

ऊषा, उषा देखो।

ऊष्म, उष्म देखो।

ऊष्मण (सं० त्रि०) ऊष्मोऽस्त्यस्य, ऊष्म-न। ऊष्म-युक्त, गर्म।

ऊष्मघ्न (सं० त्रि०) ऊष्म निवारणीयत्वेन अस्त्यस्मिन्, ऊष्मन्-यत्। ऊष्मनिवारक, गर्मी दूर करनेवाला, ठण्डा।

ऊष्मन् (सं० पु०) ऊष-मनिन्। १ ग्रीष्म, गरमी। २ ताप, धूप

ऊष्मप (सं० त्रि०) गर्म, भोजनका वाष्प खींच लेनेवाला।

ऊष्मपूर्व (सं० त्रि०) ऊष्मन्के पहले पड़नेवाला।

ऊष्मप्रकृति (सं० त्रि०) ऊष्मन्से निकला हुआ।

ऊष्मवत् (सं० त्रि०) तप्त, गर्म।

ऊष्मान्त (सं० त्रि०) ऊष्मन्में समाप्त होनेवाला।

ऊष्मान्तःस्थ (सं० पु०) अर्धस्वर, जो पूरा स्वर न हो।

ऊष्मोपगम (सं० पु०) उत्तापका आगम, गर्मीकी आमद।

ऊसन (हिं० पु०) तृणविशेष, तरमिरा, जैवा। इसे सर्षपकी भांति यव तथा गोधूमके साथ बोते हैं। ऊसनका तेल जलाते और खली गायों तथा भैंसोंको खिलाते हैं।

ऊसर (हिं०) ऊषर देखो।

ऊह् (धातु) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "ऊह वितर्के।" (कविकल्पद्रुम) सन्देहसे तर्क करना, दलीलसे बहस छेड़ना।

ऊह (सं० पु०) ऊह-घञ्। १ वितर्क, बहस। २ अध्याहार, छिपाव। ३ परीक्षा, जांच। ४ अनन्वित विभक्ति लिङ्गको छोड़ अन्वययोग्य विभक्त्यादिकी कल्पना। ५ आरोप, लगाव। ६ सिद्धिविशेष। ७ अनुमान, फ़र्ज़।

ऊहगान (सं० क्ली०) सामगानका एक ग्रन्थ। साम देखो।

ऊहन (सं० क्ली०) वितर्क, बहस।

ऊहनी (सं० स्त्री०) ऊह-ल्युट्-ङीप्। सम्मार्जनी।

ऊहनीय (सं० त्रि०) तर्क्य, बहसके काबिल।

ऊहा (सं० स्त्री०) ऊह-टाप्। ऊह देखो।

ऊहापोह (सं० त्रि०) ऊहस्तर्कः अपोहः अपगतो यत्र, बहुव्री०। १ तर्कशून्य, बेबहस। २ तर्क द्वारा संशय मिटाये हुआ, जो बहससे शक मिटा चुका हो। ३ अध्ययनादिमें संशयहीन, सबक़में शक न रखनेवाला। ४ सुहृदादि प्राप्तिविषयमें कृतनिश्चय, दोस्त वग़ैरहको मुलाक़ात ठहराये हुआ। ५ दानादिमें क्रिया मतशून्य, बेधड़क देनेवाला।

ऊहित (सं० त्रि०) ऊह-क्त। १ तर्कित, बहस किया हुआ। २ अध्याहृत, छिपा हुआ। ३ अनुमित, फ़र्ज़ किया हुआ। ४ सम्भावित, मुमकिन।

ऊह्य (सं० त्रि०) ऊह-ण्यत्। १ तर्कनीय, बहसके काबिल। २ व्यवहार्य, लगनेवाला। (क्ली०) ३ मीमांसा-शास्त्रोक्त ऊह विशेष।

ऊह्यगान, ऊहगान देखो।

ऋ

ऋ (सं० पु०) १ स्वरवर्णका सप्तम अक्षर। ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत भेदसे यह तीन प्रकारका होता है। उच्चारणस्थान मूर्धा है। लिखनेकी प्रणालीमें ऊर्ध्व देशपर एक वक्र रेखा दक्षिण जायेगी और वामदिक्से आरम्भ कर एक त्रिकोणाकृति बनानेमें आयेगी। फिर दक्षिण दिक्को अधोगामी रेखा पड़ेगी। मात्रा पराशक्ति-जैसी विख्यात है। उसमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं। ऋकारका तन्त्रोक्त नाम पूर्, दीर्घमुखी, रुद्र, देवमाता, त्रिविक्रम, भारभूति, क्रिया, क्रूरा, रोचिका, नासिका, छत्र, एकपादशिरः, माला, मण्डला, शाल्मली, क्षम, वार्ण, कामलता, मेधः, निवृत्ति, गणनायक, रोहिणी, शिवदूती, पूर्णगिरि और सप्तमी है। (वर्णोद्धारतन्त्र) २ धातुका अनुबन्ध-विशेष। "ऋदनुबन्धः।" (कविकल्पद्रुम) ३ स्वर्ग, विहिश्त। ४ तपन। (स्त्री०) ५ देवमाता अदिति। (अव्य०) ६ हास्य परिहास, बोली ठोली। ७ निन्दा, छी-छी। ८ वाक्य, बात। ९ प्राप्ति, हासिल। १० वाक्यविकृति। (धातु) भ्वा० पर० सक० अनिट्। ११ गमन करना, जाना। १२ प्राप्त होना, पहुंचना। "ऋ गतौ प्रापणे च।" (कविकल्पद्रुम) अदा० पर० सक० अनिट्। १३ गमन करना, चलना। "ऋ इयर्त्ति गत्याम्।" (कविकल्पद्रुम) जुहो० पर० सक० अनिट्। १४ गमन करना, चल पड़ना। "ऋ इयर्त्ति गत्याम्।" (कविकल्पद्रुम) स्वा० पर० सक० अनिट्। १५ हिंसा करना, मारना। "ऋ रण हिंसने।" (कविकल्पद्रुम)

ऋक् (सं० स्त्री०) ऋचन्ते स्तूयन्ते अनया देवाः, ऋच्-क्विप्। १ ऋग्वेद। इसकी शाखा एकविंशति है। २ ऋग्वेदोक्त मन्त्र। ३ स्तुति, तारीफ। ४ पूजा, परस्तिश। (त्रि०) ५ तप्त, गर्म।

ऋकक्षस् (सं० अव्य०) ऋक्षराम्। अक्।

ऋक्ण (सं० त्रि०) व्रश्च-क्त, पृषोदरादित्वात् वलोपः। छिन्न, कटा हुआ।

ऋक्थ (सं० क्ली०) ऋच् स्तुतौ थक्। पातॄतुदिवचिरिचिसिचिभ्यस्थक्। उण् २।७। १ धन, दौलत। २ स्वर्ण, ज़र। ३ उत्तराधिकारसूत्रसे मिलनेवाली भूमि प्रभृतिकी सम्पत्ति, जो जायदाद वरासतसे हासिल हो।

ऋक्थहर (सं० त्रि०) ऋक्थं हरति, ऋक्थ-हृ-अच्। अंशभागी, हिस्सेदार, वरासतसे माल पानेवाला।

ऋक्ष (सं० पु० स्त्री०) ऋष्-स-कित्। स्नुव्रश्चिकृत्यृषिभ्यः कित्। उण् ३।६६। १ नक्षत्र, सितारा।

"जीवा गतेि नीरेहा रोहिणिम् ऋक्ष. भुजाहाम:।
देवयानाशोभनः कृशनीहा इत्यादीनि हि:।" (ज्योतिष वेदाङ्ग १८)

२ राशि। (रघु १२।११)

युरोपके ज्योतिष शास्त्रमें ऋक्ष नामक स्वतन्त्र राशि है। नाम उर्सा मेजर (Ursa major) रखते हैं। यह उत्तर राशियोंमें एक समझा जाता है। इस राशिमें सात तारा रहती हैं। विशेषता यह पड़ती—इसमें कितनी ही सितारा और नीहारिका लगती है।

ऋक्ष-पर्वत। १ पर्वत विशेष, एक पहाड़। यह सात कुलाचलके मध्य पड़ता है। कुलाचल देखो। इस पर्वतके मध्य नर्मदा नदी प्रवाहित है।

"ऋक्षवन्तं गिरिं गत्वा नर्मदां शिवम्।
सर्वतीर्थाभिषेकं त्वा स्नात्वा नृपः।" (रामायण ४।४१।९)

इसी ऋक्षवान् पर्वतको प्राचीन पाश्चात्य ऐतिहासिक टलेमिने 'ओक्षेटन' (Ouxenton) लिखा है। वर्तमान विन्ध्य पर्वतका दक्षिण-पूर्वांश पहले 'ऋक्ष', 'ऋक्षवान्' इत्यादि नामसे पुकारा जाता था।

"नर्मदाकूलमेकाकी नगरी माहिष्मतीम्।
ऋक्षवन्तं गिरिं विन्ध्य दक्षिणेन...।" (हरिवंश ९९।१२)

इन्होंने नर्मदाके कूलपर पहुंच शुक्तिमती नगरीपर अधिकार किया और ऋक्षवान् पर्वतको जीत दक्षिणमें डेरा डाल दिया।

शुक्तिमती और दक्षिणी देखो।

२ भल्लूक, भालू, रीछ। ३ शोणक वृक्ष, एक पेड़। ४ पुरुवंशीय अजमीढ़ राजाके पुत्र। ५ पौरव विदूरथके पुत्र। ६ पुरुवंशीय अरिष्ट राजाके पुत्र। ७ मेरुके निकटस्थ एक पर्वत। (त्रि०) ८ क्षतवेधन, मारा हुआ।

ऋक्षगन्धा (सं० स्त्री०) ऋक्षस्येव गन्धो यस्याः, बहुव्री०। वृद्धदारक वृक्ष, एक पेड़। दूसरा नाम छागलान्त्री, आवेगी, वृद्धदारक, जुङ्ग, युगाधिगन्धा, छगला, महाश्यामा, जाङ्गली, जीर्णवल्कल, कोटरपुष्पी, ऋक्षगन्धा, छागलाघ्नी, अन्त्री, जुङ्गा, छगली, जुङ्गक, श्यामा, छागलान्त्रिका, दीर्घवालुका, वृद्धा, और अजान्त्री (Argyreia speciosa, sweet) है।

वैद्यक मतसे यह रसायन, वायुनाशक, बलकर तथा पिच्छिल रहता और शोथ, आमवात, कास, श्वास एवं ज्वररोगपर चलता है। बीजादि ग्रहण करना चाहिये। मात्रा दो माशा है। यह वृक्ष भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें बहुत होता है। २ अर्कविशाखवृक्ष। ३ क्षीरविदारी वृक्ष।

ऋक्षगन्धिका (सं० स्त्री०) ऋक्षगन्धा स्वार्थे कन्-टाप्, अत इत्वम्। क्षुद्रभूमिकुष्माण्ड, काला विलारी कन्द। संस्कृत पर्याय क्षीरविदारी, महाश्वेता और क्षीरिका है।

ऋक्षगिरि (सं० पु०) ऋक्षप्रायं गिरिर्येति, कर्मधा०। मालुक्यावलके मध्यका एक पर्वत। यह पहाड़ गण्डोयाना देशमें पड़ता और रैवतक पर्वतसे निकलता है। ऋक्ष देखो।

ऋक्षग्रीव (सं० पु०) एक दिग्गज।

ऋक्षचक्र (सं० क्ली०) ऋक्षाणां चक्रम्, ६-तत्। राशिचक्र।

ऋक्षजिह्व (सं० पु०) कुष्ठरोग विशेष, किसी किस्मका कोढ़। इसमें वेदना बहुत बढ़ती है। इधर-उधर रक्त और मध्यमें पीत मिश्रित कृष्ण वर्ण रहता है। इसे छूनेसे यह कठोर लगता है। आकृति ऋक्षकी जिह्वा-जैसी होती है।

ऋक्षनाथ (सं० पु०) ऋक्षाणां नाथः, ६-तत्। १ नक्षत्रेश्वर चन्द्र, चांद। २ जाम्बवान्। यह कृष्णपत्नी जाम्बवतीके पिता थे।

ऋक्षनेमि (सं० पु०) विष्णु।

ऋक्षपति, ऋक्षनाथ देखो।

ऋक्षर (सं० पु०) ऋष्-क्सरन्। ऋत्विक् ब्राह्मण।

ऋक्षराज (सं० पु०) ऋक्षाणां राजा, ऋक्ष-राजन्-टच्। राजाहः सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। १ चन्द्र, चांद। २ जाम्बवान्। (हरिवंश ३३।८)

ऋक्षला (सं० स्त्री०) ऋक्ष्-कलच् गुणाभावः। गुल्फाधःस्थित नाड़ी।

ऋक्षवन्त (सं० क्ली०) शम्बरासुरकी राजधानी।

"ऋक्षवन्तं ययौ निकुम्भासुरसत्तमम्।" (हरिवंश १६ अ०)

ऋक्षवान् (सं० पु०) ऋक्ष मतुप् मस्य वः। ऋक्षगिरि देखो।

ऋक्षविभावन (सं० क्ली०) नक्षत्रोंकी गणना।

ऋक्षबिल (सं० पु०) दक्षिणी महेन्द्र पर्वतका एक वृहत् गह्वर। हनुमानादि वानर सीताको ढूंढते ढूंढते यहीं आकर पथ भूले थे। (रामायण) आज कल सिंहलद्वीपमें आदमशृङ्ग पर्वतके निकट इसके रहनेका अनुमान लगाते हैं।

ऋक्षहरीश्वर (सं० त्रि०) ऋक्षों और कपियोंके प्रभु।

ऋक्षीक (सं० त्रि०) ऋक्ष इव, ऋक्ष इवार्थे। भल्लूकके समान हिंस्र जन्तु,जो जानवर रीछ-जैसा खूंखार हो।

ऋक्षेश (सं० पु०) ऋक्षाणां ईशः, ६-तत्। चन्द्र, चांद।

ऋक्षेष्टि (सं० स्त्री०) ऋक्षविशेषमाश्रित्य इष्टिः, मध्यपदलोपी। नक्षत्रविशेषके उद्देश्यसे किया जानेवाला एक यज्ञ।

ऋक्षोद (सं० पु०) पर्वत विशेष, एक पहाड़।

ऋक्संशित (सं० त्रि०) ऋक् द्वारा उत्तेजित किया हुआ।

ऋक्संहिता (सं० स्त्री०) ऋचां संहिता, ६-तत्। ऋग्वेद।

ऋक्सम (सं० क्ली०) ऋचा समम्, ३-तत्। सामविशेष।

ऋक्साम (सं° क्ली°) ऋक् च साम च द्वयोः समाहारः, समाहारद्वन्द्व। ऋक् और सामका मिलन।

ऋक्सामश्रुङ्ग (सं° पु°) विष्णु।

ऋगयन (सं° क्ली°) ऋचामयनं यत्र, बहुव्री°। ऋक्-पारायण ग्रन्थ विशेष।

ऋगयनादि (सं° पु°) पाणिनि कथित एक गण। इसके अन्तर्गत व्याख्यान, छन्दोगान, छन्दोभाषा, छन्दोविचिति, न्याय, पुनरुक्त, निरुक्त, व्याकरण, निगम, वास्तुविद्या, क्षत्रविद्या, अङ्गविद्या, विद्या, उत्पात, उत्पाद, उद्याव, सम्वत्सर, मुहूर्त, उपनिषद्, निमित्त, शिक्षा और भिक्षा हैं।

ऋगयान (सं° क्ली°) ऋचां आयानं अयनम्, ६-तत्। वेद पढ़ते समय अर्ध ऋच् प्रभृति पूर्व पदके साथ सम्मिलन।

ऋग्गाथा (सं° स्त्री°) ऋचामिव गाथा, उप°। लौकिक गीतिवेद।

ऋग्भाक् (सं° त्रि°) ऋक्का भाग लेनेवाला।

ऋग्मत् (सं° त्रि°) ऋक् अस्त्यस्य, ऋक्-मतुप्। १ स्तावक, तारीफ़ करनेवाला। २ पूज्य, परस्तिशके क़ाबिल।

ऋग्मिन् (सं° त्रि°) ऋचा अस्यास्ति, ऋक्-मिनि। स्तोता, तारीफ़ करनेवाला।

"निर्विंशत्युग्मिणो यदुः।" (ऋक् ८।८६।१४)

'ऋग्मिणः स्तोतारः।' (सायण)

ऋग्यजुःसामवेदी (सं° त्रि°) ऋक्, यजुः और सामवेद जाननेवाला।

ऋग्विधान (सं° क्ली°) ऋग्वेदोक्त मन्त्र द्वारा व्रतविशेषका विधान। इसमें यही वर्णन चलता, ऋग्वेदका कौन मन्त्र जपनेसे क्या फल मिलता है। फिर ऋग्विधान पढ़नेसे जानते, जगत्के आदिग्रन्थ और महाधर्मग्रन्थ ऋग्वेदवाले मन्त्रादि प्राचीन ऋषि किस प्रकार सम्मान एवं पुण्यफलप्रद मानते थे।

अग्निपुराणमें इसतरह ऋग्विधान लिखा है—

जलके मध्य अथवा होमके समय प्राणायामपूर्वक गायत्री जपनेसे अभीष्टसिद्धि होती है। जो निराशी हो दशसहस्र गायत्री जप करता, उसका सकल पाप छूट पड़ता है। हविष्याश हो लक्ष गायत्री मन्त्र जपनेवाला मोक्ष लाभका अधिकारी है।

ओंकार परब्रह्म है। प्रणवके जपनेसे सर्व पाप छूटता है। जो नाभिमात्र जलमें ठहर शतवार ओंकार जपता, उसको देखते ही पाप कांपता है।

तीन मात्रा, तीन वेद, सात महाव्याहृति और सप्तलोक उल्लेखपूर्वक होम करनेसे सकल जन्मका पाप छूटता है। जलके मध्य महाव्याहृति और परमा गायत्री जपनेको अघमर्षण कहते हैं। जो वह्निदैवत "अग्निमीळे पुरोहितम्" (१।१।१) सूक्त यथाविहित एक वत्सर जपता, उसे सकल इष्ट मिलता है। मेधाकामी 'सदसस्पतिम्', मृत्युनिवारणेच्छु 'अम्बितमे नदीतमे', मद एव विघ्न दमनाभिलाषी 'त्र्यम्बकम्', आरोग्यकामी अथवा रोगी 'मुञ्चामि त्वा', शासनको शिक्षिका इच्छुक मध्याह्नकालको 'उदुत्तमम्', अर्ध ऋक् तथा 'उदुत्तमं वरुण पाशमस्मत्' पूर्ण ऋक्, सूर्यादि होमपर शत्रुसे परित्राणेच्छु 'नमस्ते', मोक्षकामी 'शाकम्भरीं तु', धनकामी 'तं सोम' और पुत्रकामी मध्यमेनामें 'आपनः सोऽभवन्' इत्यादि कामनानुयायी ऋक् यथाविहित जपनेसे सर्वप्रकार सिद्धिलाभ करता है। प्रसवके समय 'प्रमन्दिने' सूक्त जपनेपर गर्भवेदना अनुभव न कर गर्भिणी सुखसे प्रसव कर सकती है। कर्षणकाल, वपनकाल एवं छेदनकालपर सूक्त द्वारा इन्द्रादि देवगणकी उपासना करनेसे सकल कर्म अमोघ पड़ता और कृषिके कार्यमें उत्कर्ष बढ़ता है। 'विजिहीष्व वनस्पते' सूक्त जपनेसे मूढ़गर्भा स्त्रीका गर्भ अनायास निकल आता है। (अग्नि° २६८ अ°)

ऋग्वेद (सं° पु°) ऋगेव वेदः। प्रथम वेद। यह संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और सूत्रभेदसे चार प्रकारका है।

ऋक्संहिताकी नाना शाखा हैं। महापुराणादिमें उल्लेख किया—कृष्णद्वैपायन वेदव्यासने वेद मानकर पैलको ऋग्वेद दिया था।

"ऋचिवेदः स्वर्ग विद लिं सप्ते इत्यरम्।"

इत्युत्तमादि शाखाएं सामानाथ च संहिते ॥ १६

चतुर्धा तु विभेदाय व्यासवित् विंश संहिताद्।

बौधायनो यही अन्यद् शिष्येभ्यः च अष्टर्षि ॥ १७

बोध्याग्निमाठरौ तद्वद्याज्ञवल्क्यपराशरौ ।
प्रतिशाखास्तु शाखायास्तस्यास्ते जगृहुर्मुने ॥ १८
इन्द्रप्रमितिरेकां तु संहितां स्वसुतं ततः ।
माण्डुकेयं महात्मानं मैत्रेयाध्यापयत्तदा ॥ १९
तस्य शिष्यप्रशिष्येभ्यः पुत्रशिष्यक्रमाद्ययौ ।
वेदमित्रस्तु शाकल्यः संहितां तामधीतवान् ॥ २०
चकार संहिताः पञ्च शिष्येभ्यः प्रददौ च ताः ।
तस्य शिष्यास्तु ये पञ्च तेषां नामानि मे शृणु ॥ २१
मुद्गलो गालवश्चैव वात्स्यः शालीय एव च ।
शिशिरः पञ्चमश्चासीन्मैत्रेय सुमहामतिः ॥ २२
संहितात्रितयं चक्रे शाकपूर्णिरथेतरम् ।" (विष्णुपुराण ३।४ अ:)

प्रथम पैलने ऋग्वेदरूप वृक्ष दो भागमें बांट इन्द्रप्रमति और वाष्कलि नामक शिष्यद्वयको दो संहिता कर दिया था। फिर वाष्कलिने उसे चार भागमें बांट बोध आदि शिष्योंको सौंपा। बोध, अग्निमाठर, याज्ञवल्क्य और पराशर चारोंने उक्त शाखाकी प्रतिशाखा पढ़ी। हे मैत्रेय! इन्द्रप्रमतिने अपनी पढ़ी संहिताका एकांश माण्डुकेयको पढ़ाया। उनके शिष्यप्रशिष्यकी परम्परासे क्रमशः यह शाखा फैल पुत्र और शिष्यसमूहमें चल पड़ी। वेदमित्र और शाकल्यने उक्त संहिता अध्ययन की थी। उन्होंने फिर इस शाखासे पांच संहिता बना पांच शिष्योंको पढ़ाईं। इन पांचों शिष्योंके नाम मुद्गल, गालव, वात्स्य, शालीय और शिशिर थे।

इन्द्रप्रमतिके द्वितीय शिष्यने अपनी अधीत ऋक्‌को बांट तीन संहिता बनायीं। वाष्कलिने भी अपर तीन संहिता की थीं। उन्होंने कालायनि, गार्ग्य और कथाजव नामक तीन शिष्योंको तीनों संहिता पढ़ा दीं।

ऋग्वेदमें १० मण्डल हैं। प्रथममें २४ अनुवाक, १९१ सूक्त; द्वितीयमें ४ अनुवाक, ४३ सूक्त; तृतीयमें ५ अनुवाक, ६२ सूक्त; चतुर्थमें ५ अनुवाक, ५८ सूक्त; पञ्चममें ६ अनुवाक, ८७ सूक्त; षष्ठमें ६ अनुवाक, ७५ सूक्त; सप्तममें ६ अनुवाक, १०४ सूक्त; अष्टममें १० अनुवाक, १०३ सूक्त; नवममें ७ अनुवाक, ११४ सूक्त और दशम मण्डलमें १२ अनुवाक, १९१ सूक्त विद्यमान हैं। इस प्रकार सूक्तसमष्टि १०२८ है। किन्तु चरण-व्यूहमें लिखा है—

"तत्र ऋग्वेदस्याष्टौ भेदा भवन्ति चर्चा श्रावकश्चर्चकः श्रवणीयपारः क्रमपारः क्रमजटः क्रमरथः क्रमशकटः क्रमदण्डश्चेति चतुःपारायणमेषाम्। शाखाः पञ्च भवन्ति, आश्वलायनी, सांख्यायनी, शाकला, बाष्कला, माण्डूकाश्चेति नियमाध्ययनम्। अध्यायानां चतुःषष्टिर्मण्डलानि दशैव तु। वर्गाणां द्विसहस्रं वै षडधिकं॥ सहस्रमेकं सूक्तानां निश्चितं खिलवर्जितम्। दशसहस्राणि पदानां संख्यातानि वै पदक्रमात्। पञ्चाशत्सहस्रं वा द्विरुक्तानि। चतुर्दशसहस्राणि द्विरुक्तानि। ऋचां दशसहस्राणि ऋचां पञ्चशतानि च। ऋचामशीतिपादश्च पारायणं प्रकीर्तितम्। एकमेव तथा ऋचः। द्वे वर्गे द्विऋचे प्रोक्ते ऋक्‌शतं तु तृतीयकम्। चतुर्थं पञ्चाधिकं शतं तथा। पञ्चमं तु द्विचत्वारिंशत् सहस्रं द्विशतं तथा। षष्ठं त्रिशतम्। सप्तमं विंशत्यधिकाः शताः। अष्टमं तु पञ्चपञ्चाशदृचः। दशाधिकद्विसहस्राः परशाखासु निश्चिताः। वर्गसंख्या च सूक्तस्य नास्तीति कीर्तिताः।"

ऋग्वेदके आठ भेद या स्थान हैं—चर्चा, श्रावकचर्चक, श्रवणीयपार, क्रमपार, क्रमजटा, क्रमरथ, क्रमशकट और क्रमदण्ड। इनके चार पारायण होते हैं। आश्वलायन, सांख्यायन, शाकल, वाष्कल और माण्डूक भेदसे पांच शाखा हैं। अध्याय ६४, मण्डल १०, वर्ग २००६, सूक्त १०१७ वाशिठके पदक्रम १५२५१४ और दूसरेके पदक्रम ८५ पढ़ते हैं। ऋक्‌के १०५८० पादको पारायण कहते हैं। प्रथममें एक वर्ग, १ ऋक्, द्वितीयमें दो वर्ग, २ ऋक्, तृतीयमें १०० ऋक्, चतुर्थमें १०५ ऋक्, पञ्चममें १२४४ ऋक्, षष्ठमें ३०० ऋक्, सप्तममें १२० ऋक् और अष्टम ऋक्‌में ५५ ऋक् हैं। परशाखामें २०१० ऋक् विद्यमान हैं। पूर्व कथित चार वर्ग सूक्तकी नहीं।

वाष्कल शाखाके अनुसार ऋक् संहिताके संख्यादि इस प्रकार निर्दिष्ट है—

"अंशुषं च समाख्यातं षट्पदश्च परं स्मृतम्।
एकर्चं द्वादशसहस्राणि संख्यातानि च॥
ऋचां षट्पञ्चाशत्सहस्रम्।
सहस्रैकोनविंशत्युत्तरं सप्तषष्टिकम्॥
अष्टौ पञ्चशताश्चैव सूक्तानि चोत्तराः।"

शाकलकी १५३०८२ तथा वालखिल्यकी पदसंख्या १२०७ एवं वर्गसंख्या १८, फिर आश्वलायन शाखाकी पदसंख्या इसी प्रकार है। सांख्यायन शाखाकी

२५३०२४ तथा वालखिल्यकी पदसंख्या १८८६ एवं वर्णसंख्या १० है।—

"ऋग्वेदस्य तु शाखाः स्युरेकविंशतिसंख्यकाः।"

कोई कोई ऋग्वेदकी शाखा २१ बताता है, किन्तु वास्तविक यह नहीं। प्रधानतः पांच ही शाखा हैं। जो लोग २१ बताते, वह प्रशाखा भी मिलाते हैं।

ऋक्संहिताका पारायण दो प्रकार होता है—प्रकृतिरूप और विकृतिरूप। फिर प्रकृति रूप भी रूढ़ और योगभेदसे दो प्रकारका पड़ता है। जैसे 'अग्निमीळे पुरोहितम्' इत्यादि रूढ़ और 'अग्नि'ईळे पुरोहितम्' इत्यादि योग है।

विकृतिरूप आठ प्रकारका है। यथा—

"जटा माला शिखा लेखा ध्वजो दण्डो रथो घनः।
अष्टौ विकृतयः प्रोक्ताः क्रमपूर्वा महर्षिभिः॥"

जटा, माला, शिखा, लेखा, ध्वज, दण्ड, रथ और घन आठ प्रकारका विकृतिक्रम महर्षिगणने कहा है।

जटा प्रभृति प्रत्येक शब्द देखो।

ऋक्संहितामें जिस-जिस देवताका नाम लिया अथवा जिस जिस देवता और ऋषिका देवता रूपसे स्तव किया, उसका नाम नीचे दिया है—

अक्षकितव। अघा। अग्नायी। अग्नि, (आङ्गिरस, जातवेदा, निमथ्य, रक्षोहा, वैश्वानर और सौचिक)। अङ्गिरस अत्रि। अदिति। अधिषवण चर्म वा हरिश्चन्द्र। अध्येता। अन्तरिक्ष। अन्न। अपांनपात्। अप्रा। अन्ना अहि। अभिशाप। अरण्यानी। अर्यमा। अलक्ष्मीनाश। अश्व। अश्विद्वय। असमाति। अहिर्बुध्न। असुनीति। अहोरात्र। आत्मा। आदित्यगण। आप, (अपांनपात्, गाव, सोम)। आप्र। आप्रिय। आर्षी। आशीः। आसङ्ग। इध्म। इन्दु। इन्द्र (कपोतक-रूपी, वैकुण्ठ)। इन्द्राणी। इन्द्राश्व। इला। इषुगण। इषुधि। इष्या। उपमश्रवा। मित्रातिथि पुत्र। उपाध्याय। उर्वशी। उलूखल। उषमा। उषा (वा सूर्यप्रभा)। ऋच। ऋतु। ऋत्विक्। ऋभुगण। ओषधि। क। कवष। कश्यपेय। काल अग्न्युत्सराक्षा। कुत्स। कुरङ्ग। कुरुश्रवण त्रासदस्यु। क्षवि। केशी। कोषाध्यक्ष। क्षेत्रपति। गङ्गा। गन्धर्वाप्सरो। गौ। गृत्सु। ग्रावन। चन्द्रमाः। चित्र। ज्ञान। त्वष्टा। तनूनपात्। तार्क्ष्य। तिरिन्दिर। पारशव्य। त्रसदस्यु। त्वष्टा। दक्षिणा। दधिक्रा। दम्पती। दानस्तुति। दिक्। दुःस्वप्ननाशन। दुन्दुभि। द्यावापृथिवी। द्यावाभूमि। द्यौः। द्रविणोद द्रविण। द्वारदेवी। धाता। नद्या। नदीगण। नराशंस। निर्ऋति। पथि। पथ्यास्वस्ति। परमात्मा। पर्जन्य। पर्वत। पवमान। पितृगण। पितृमेधः। पुरीष्य। पुरुमीढ़ वैददश्वि। पुरुष। पुरूरवाः ऐल। पूषा। पृथिवी। पृश्नि। प्रजापति। प्रतोद। प्रस्तोक। बर्हिः। बृबुस्तक्षा। बृहस्पति। ब्रह्मा। ब्रह्मणस्पति। भग। भारती। भावयव्य। भावहृत्त। भूमि। मण्डूक। मन्यु। मरुद्गण। मित्र। मृत्यु। मृत्युविमोचनी। यक्ष्मनाशन। यथानिपात। यम। यमी। यूप। रति। रथ। रथगोपा। रश्मि। राका। रात्रि। रुद्र। रादसी। रामगया। लिङ्गोक्त-देवता। वनस्पति। वरुण। वसिष्ठ। वसिष्ठपुत्रगण। वसुक्र। वाक्। वागाम्भृणी। वामदेव। वायु। वास्तोष्पति। विश्वकर्मा। विश्वामित्र। विश्वावसु। विश्वदेव। विष्णु। वृषाकपि। वेन। व्रष्टिनी। शची पौलोमी। शाकधूम। शुक्र। श्वन। शुनासिर। श्येन। श्रद्धा। श्यानु। सदसस्पति। सवितृ। सरण्यु। सरमा। सरस्वती। साध्यगण। सार्वदेश्य साम्य। सिनीवाली। सिन्धु। सुबन्धु। सूर्य। सूर्या। सोम (पवमान वा पूषा)। स्वाहाकृति। हरि। हरिश्चन्द्र प्रजापति। हविर्धान। हस्त। होता।

ऋक्संहितामें कहीं ३३ देवता और कहीं ३३३९ देवका उल्लेख है।

ऋक्संहिताके ऋषिगणका नाम—अंहोमुच् वामदेव्य, अकृष्टा माषा, अगस्त्य, अगस्त्यका स्वसा, अग्नि, अग्निचाक्षुष। अग्नितापस, अग्नि-पावक, अग्निवषिष्ठहके पुत्र, अग्निवैश्वानर, अग्निसौचीक, अग्निपुत्र और, अघमर्षण मधुच्छन्दः ऋजु पौरव, अजमीढ सौहोत्र, अत्रि भौम, अत्रि भौम, अत्रि सांख्य, अदिति, अदिति दाक्षायणी, अनानत-पारुच्छेपि, अनिभ वातायन, अभितपा आत्रेयी, अपाला आत्रेयी, अप्रतिरथ ऐन्द्र, अभितपा और,

अभीवर्त आङ्गिरस, अमहीयु आङ्गिरस, अम्बरीष वार्षागिर, अयास्य आङ्गिरस, अरिष्टनेमि तार्क्ष्य, अरुण वैतहव्य, अर्चन् हैरण्यस्तूप, अर्चनाना आत्रेय, अर्बुद काद्रवेय, अवत्सार काश्यप, अवस्यु आत्रेय, अश्वमेध भारत, अश्वसूक्ति काण्वायन, अष्टक वैश्वामित्र, अष्टादंष्ट्र वैरूप, असित काश्यप, आत्मा, आयुः काण्व, आसङ्ग प्लायोगि, इट भार्गव, इध्मवाह दार्ढच्युत, इन्द्र, इन्द्र मुष्कवान्, इन्द्र वैकुण्ठ, इन्द्रप्रमति वासिष्ठ, इन्द्रमातृ देवजामि, इन्द्रस्नुषा, इन्द्राणी, इरिम्बिठि, काण्व, इष आत्रेय, उचथ्य आङ्गिरस, उत्कील कात्य, उपमन्यु वासिष्ठ, उपस्तुत वार्ष्टिहव्य, उरुक्षय आमहीयव, उरुचक्रि आत्रेय, उर्वशी, उल वातायन, उशना काव्य, ऊरु आङ्गिरस, ऊर्ध्वकृशन यामायन, ऊर्ध्वग्रावा आर्बुदि, ऊर्ध्वनाभा ब्राह्म, ऊर्ध्वसद्मा आङ्गिरस, ऋजिश्वा भारद्वाज, ऋज्राश्व वार्षागिर, ऋणञ्चय ऋषभ, वैराज वा शाक्वर, ऋषभ वैश्वामित्र, ऋषि हिटिमिश्र, ऋष्यशृङ्ग वातरशन, एकद्यू नौधस, एतश वातरशन, एवयामरुत् आत्रेय, कक्षीवान् दैर्घतमसः (औशिज), कण्व घौर, कत वैश्वामित्र, कपोत नैर्ऋत, करिक्रत वातरशन, कर्णश्रुद्वासिष्ठ, कलिप्रागाथ, कवष ऐलूष, कवि भार्गव, कश्यप मारीच, कुत्स आङ्गिरस, कुमार आग्नेय, कुमार आत्रेय, कुमार यामायन, कुरुसुति काण्व, कुल्मलबर्हिष शैलूषि, कुशिक ऐषीरथि, कुशिक सौभर, कुसीदी काण्व, कूर्म गार्त्समद, कृतयशा आङ्गिरस, कृत्नु भार्गव, कृश काण्व, कृष्ण आङ्गिरस, केतु आग्नेय, गय आत्रेय, गय प्लात, गर्ग भारद्वाज, गविष्ठिर आत्रेय, गातु आत्रेय, गाथी कौशिक, गृत्समद आङ्गिरस शौनहोत्र, गौतम राहूगण, गोधा, गोपवन आत्रेय, गोषूक्ति काण्वायन, गौरिवीति शाक्त्य, घर्म सौर, घर्म तापस, घोर आङ्गिरस, घोषा काक्षीवती, चक्षु मानव, चक्षुः सौर, चित्रमहा वासिष्ठ, च्यवन भार्गव, जमदग्नि भार्गव, जय ऐन्द्र, जरत्कर्ण सर्प ऐरावत, जरिता शार्ङ्ग, जामदग्न्य, जुहू ब्रह्मजाया, जूति वातरशन, जेता माधुच्छन्दसः, तपुर्मूर्धा बार्हस्पत्य, तान्व पार्थ्य, तिरश्ची आङ्गिरस, त्रसदस्यु पौरुकुत्स्य, त्रित आप्त्य, त्रिशिरा त्वाष्ट्र, त्रिशोक काण्व, त्र्यरुण त्रैवृष्ण, त्वष्टा गर्भकर्ता, दक्षिणा प्राजापत्या, दमन यामायन, दिव्य आङ्गिरस, दीर्घतमा औचथ्य, दुर्मित्र कौत्स, दुवस्यु वान्दन, दृढच्युत आगस्त्य, देवमुनि ऐरम्मद, देवरात वैश्वामित्र, देवल काश्यप, देववात भारत, देवश्रवा भारत, देवश्रवा यामायन, देवातिथि काण्व, देवापि आर्ष्टिषेण, द्युतान मारुति, द्युम्नविश्वचर्षणि आत्रेय, द्युम्नीक वासिष्ठ, द्रोण शार्ङ्ग, द्वित आप्त्य, धरुण आङ्गिरस, ध्रुव आङ्गिरस, नभःप्रभेदन वैरूप, नर भारद्वाज, नहुष मानव, नाभाक काण्व, नाभानेदिष्ठ मानव, नारद काण्व, नारायण, निध्रुवि काश्यप, नीपातिथि काण्व, नृमेध आङ्गिरस, नेम भार्गव, नोधा गौतम, पणि नामक असुरगण, पतङ्ग प्राजापत्य पराशर शाक्त्य, परुच्छेप दैवोदासि, पर्वत काण्व, पवित्र आङ्गिरस, पायु भारद्वाज, पुनर्वत्स काण्व, पुरुमीढ आङ्गिरस, पुरुमीढ सौहोत्र, पुरुमेध आङ्गिरस, पुरुहन्मा आङ्गिरस, पुरूरवा ऐल, पुष्टिगु काण्व, पूतदक्ष आङ्गिरस, पूरण वैश्वामित्र, पुरु आत्रेय, पृथु वैन्य, पृश्नि अजगण, पृषध्र काण्व, पौर आत्रेय, प्रगाथ काण्व, प्रचेता आङ्गिरस, प्रजापति, प्रजापति परमेष्ठी, प्रजापति वाच्य, प्रजापति वैश्वामित्र, प्रजावान् प्राजापत्य, प्रतर्दन काशिराज दैवोदासि, प्रतिक्षत्र आत्रेय, प्रतिप्रभ आत्रेय, प्रतिभानु आत्रेय, प्रतिरथ आत्रेय, प्रथ वासिष्ठ, प्रभूवसु आङ्गिरस, प्रयस्वन्त आत्रेय, प्रयोग भार्गव, प्रस्कण्व काण्व, प्रियमेध आङ्गिरस, बन्धु गौपायन वा लौपायन, बभ्रु आत्रेय, बाहुवृक्त आत्रेय, बुध आत्रेय, बुध सौम्य, बृहदुक्थ वामदेव्य, बृहद्दिव आथर्वण, बृहस्पति आङ्गिरस, बृहस्पति आङ्गिरस, बृहस्पति लौक्य, ब्रह्मातिथि काण्व, भयमान वार्षागिर, भरद्वाज बार्हस्पत्य, भर्ग प्रागाथ, भावयव्य, भिक्षु आङ्गिरस, भिषगाथर्वण, भुवन आप्त्य, भूतांश काश्यप, भृगु वारुणि, मत्स्य साम्मद, मथित यामायन, मधुच्छन्दा वैश्वामित्र, मनु आप्सव, मनु वैवस्वत, मनु सांवरण, मन्यु तापस, मन्यु वासिष्ठ, मातरिश्वा काण्व, मान्धाता यौवनाश्व, मान्य मैत्रावरुणि, मुद्गल भार्म्यश्व, मूर्धन्वान् आङ्गिरस, मृक्तवाहा द्वित आत्रेय, मृळीक वासिष्ठ, मेधातिथि काण्व, मेध्य काण्व, मेध्या-

तिथि काण्व, यक्ष्मनाशन प्राजापत्य, यजत आत्रेय, यक्ष्म प्राजापत्य, यम वैवस्वत, यमी, यमी वैवस्वती, ययाति नाहुष, रक्षोहा ब्राह्म, राहूगण आङ्गिरस, रातहव्य आत्रेय, रात्रि भारद्वाजी, राम जामदग्न्य, रेणु वैश्वामित्र, रेभ काश्यप, रोमशा:, लव ऐन्द्र, लुश धानाक, लोपामुद्रा, वत्स आग्नेय, वत्स काण्व, वत्सप्रि भालन्दन, वम्र वैखानस, वरु आङ्गिरस, वरुण, वव्रि आत्रेय, वश अश्व्य, वसिष्ठ मैत्रावरुणि, वसिष्ठपुत्रगण, वसु भारद्वाज, वसुकर्ण वासुक्र, वसुक्रिद् वासुक्र, वसुक्र ऐन्द्र, वसुक्र वासिष्ठ, वसुक्रपत्नी, वसुमना रौहिदश्व, वसुश्रुत आत्रेय, वसुयव आत्रेय, वाग् आम्भृणी, वातजूति वातरशन, वामदेव गौतम, विन्दु आङ्गिरस, विप्रजूति वातरशन, विप्रबन्धु गौपायन वा लौपायन, विभ्राट् सौर्य, विमद ऐन्द्र, विरूप आङ्गिरस, विवस्वान् आदित्य, विवृहा काश्यप, विश्वक कार्ष्णि, विश्वकर्मा भौवन, विश्वमना वैयश्व, विश्ववारा आत्रेयी, विश्वसामा आत्रेयी, विश्वामित्र गाथिन, विश्वावसु देवगन्धर्व, विष्णु प्राजापत्य, विहव्य आङ्गिरस, वीतहव्य आङ्गिरस, वृशजार, वृषगण वासिष्ठ, वृषाकपि ऐन्द्र, वृषाणक वातरशन, वेण भार्गव, वैखानस (शत), व्यश्व आङ्गिरस, व्याघ्रपाद वासिष्ठ, शंयु बार्हस्पत्य, शकपूत नार्मेध, शक्ति-वासिष्ठ, शङ्ख यामायन, शची पौलोमी, शतप्रभेदन वैरूप, शबर काक्षीवत, शशकर्ण काण्व, शश्वत्याङ्गिरस, शार्यात मानव, शास भारद्वाज, शिखण्डिनी, शिवि औशीनर, शिरिम्बिठ भारद्वाज, शिशु आङ्गिरस, शुनःशेप आजीगर्ति, शुनहोत्र भारद्वाज, श्यावाश्व आत्रेय, श्येन आग्नेय, श्रद्धा कामायनी, श्रुतकक्ष आङ्गिरस, श्रुतबन्धु गौपायन वा लौपायन, श्रुतविद् आत्रेय, श्रुष्टिगु काण्व, संवनन आङ्गिरस, संवरण प्राजापत्य, सम्बर्त आङ्गिरस, सङ्कुसुक यामायन, सत्यधृति वारुणि, सत्यश्रवा आत्रेय, सदापृण आत्रेय, सध्रि वैरूप, सध्वंस काण्व, सप्तर्षि, सप्तगु आङ्गिरस, सप्तवध्रि आत्रेय, सप्ति वाजम्भर, सप्रथ भारद्वाज, सरमा देवशुनी, सर्वहरि ऐन्द्र, सव्य आङ्गिरस, सस आत्रेय, सहदेव वार्षागिर, साधन भौवन, सारिसृक्व शार्ङ्ग, सार्पराज्ञी, सिकता निवावरी, सिन्धुक्षित् प्रैयमेध, सिन्धुद्वीप आम्बरीष, सुकक्ष आङ्गिरस, सुकीर्त्ति काक्षीवत, सुतम्भर आत्रेय, सुदास् पैजवन, सुदीति आङ्गिरस, सुपर्ण काण्व, सुपर्ण तार्क्ष्यपुत्र, सुबन्धु गौपायन, सुमित्र कौत्स, सुमित्र वाध्र्यश्व, सुराधा वार्षागिर, सुवेदा शैरीषि, सुहस्त्य घौषेय, सुहोत्र भारद्वाज, सूनु आर्भव, सूर्या सावित्री, सोभरि काण्व, सोम, सोमाहुति भार्गव, स्तम्भमित्र शार्ङ्ग, स्यूमरश्मि भार्गव, स्वस्त्यात्रेय, हरिमन्त आङ्गिरस, हर्यत प्रागाथ, हविर्धान आङ्गिरस, हिरण्यगर्भ प्राजापत्य, हिरण्यस्तूप आङ्गिरस।

ऋक्संहिता पढ़नेसे आर्यजातिका आदिम इतिहास, प्राचीन आचार-व्यवहार, धर्म मत एवं विज्ञान प्रभृति सकल अवश्य ज्ञातव्य विषय समझ पड़ता है।

आर्य शब्द देखो।

निर्णय करनेका कोई उपाय नहीं, ऋक्संहिता किस समय संगृहीत हुई थी। सम्भवतः जिस समय आर्य सभ्यता चारो ओर फैलने और सुसभ्य आर्यमण्डली अग्निपूजा प्रचार करनेके लिये नाना देश घूमने लगी, उसी प्राचीन काल द्वापरके शेषभागपर कृष्णद्वैपायनके हाथ प्रथम वेदकी संहिताके संग्रहकी नींव पड़ी। मोक्षमूलर प्रभृति युरोपीय पण्डितोंके कथनानुसार ऋग्वेदका छन्दस् भाग ईसाकी उत्पत्तिके १००० वत्सरसे पूर्व बना था। उन्होंने भी मुक्त कण्ठसे ऋक्संहिताको समग्र सभ्य-जगत्का आदि ग्रन्थ माना है। वेद शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

"One thing is certain : there is nothing more ancient and primitive, not only in India, but in the whole Aryan world, than the hymns of the Rig-veda." (Max Müller's Origin and growth of Religion, p. 152)

किसी समय ऋग्वेदकी प्रतिशाखाके ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्रादि प्रचलित थे। किन्तु अब केवल ऐतरेय ब्राह्मण, शाङ्खायन ब्राह्मण एवं श्रौतसूत्र, आश्वलायन श्रौत और गृह्य सूत्र ही मिलते हैं।

ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र प्रभृति शब्द देखो।

ऋघा (सं॰ क्ली॰) ऋघ-घञ्, गुणाभावः। हिंसा, मारने-काटनेकी तदबीर।

ऋघावान् (वै० त्रि०) ऋघा अस्त्यस्य, ऋघा-मतुप्, मस्य वः। हिंसक, खूंखार। "ऋघीवद् ऋघावान्" (ऋक् १।११८१) 'ऋघावान् हिंसकः' (सायण)

ऋच् (धातु०) तुदा० पर० सक० सेट्। "ऋच स्तुतम्।" (कविकल्पद्रुम) स्तुति करना, तारीफ़ बताना।

ऋच (सं० पु०) एक राजा। यह सुनीथके पुत्र थे।

ऋचस (सं० त्रि०) ऋच्-असुन्। स्तोता, तारीफ़ करनेवाला।

ऋचसे (सं० अव्य०) ऋच्-असेन्। स्तुति करनेके लिये, तारीफ़ बतानेके वास्ते।

ऋचा, ऋक् देखो।

ऋचीक (सं० पु०) ऋच्-ईकन्। १ भृगुवंशीय मुनिविशेष। यह दिवके पुत्र थे। २ जमदग्निके पिता भृगु-मुनि। ३ देशविशेष, एक मुल्क।

ऋचीष (सं० क्ली०) १ भ्राष्ट, तवा। (पु०) २ नरक विशेष।

ऋचीषम (सं० पु०) ऋचा स्तुत्या समः, निपातनात् ईत्वं मत्वञ्च। १ इन्द्र। (त्रि०) २ ऋग्विशेषके समान गुणविशिष्ट।

ऋचेयु (सं० पु०) पुरुवंशीय राजा रौद्राश्वके पुत्र।

ऋच्छ् (धातु) तुदा० पर० सक० अकर्त्तृ सेट्। १ गमन करना, चलना। २ मुग्ध होना, फरेफ़्ता बनना। ३ कठिन होना, मुश्किल पड़ना। कोई कोई मोहित होनेके स्थानमें विलीन पड़नेका अर्थ लगाते हैं।

ऋच्छ (हिं०) ऋक्ष देखो।

ऋच्छका (सं० स्त्री०) अभिलाष, ख़्वाहिश।

ऋच्छरा (सं० स्त्री०) ऋच्छति प्राप्नोति परपुरुषम्, ऋच्छ-अर स्त्रियां टाप्। उणादि अर। उण् ३।१३१। १ वेश्या, रण्डी। २ बन्धन, बेड़ी।

ऋज् (धातु) भ्वादि० आत्म० सक० अकर्त्तृ सेट्। १ स्थिर रहना, ठहरना। २ होना। ३ बलवान् होना। ४ कमाना। भ्वादि० आत्म० सक० सेट्। "ऋजि भर्जने।" (कविकल्पद्रुम) ५ भूंजना।

ऋजिप्य (सं० त्रि०) ऋजु आप्नोति गच्छति, आप्-यत् पृषोदरादित्वात् साधुः। सरलगामी, सीधा चलनेवाला।

ऋजिश्वा (वै० पु०) ऋग्वेदोक्त एक राजा।

ऋजीक (सं० त्रि०) ऋज्-ईकन्-किन्। उणादि उण् ४।११। १ रञ्जित, रंगा हुआ। २ मिश्रित, मिला हुआ। ३ उपहत, बिगड़ा हुआ। (पु०) ४ इन्द्र। ५ धूम, धूवां। ६ साधन, तदबीर। ७ पर्वतविशेष, एक पहाड़।

ऋजीति (सं० पु०) ऋजु गच्छति, ऋजु-इ-क्विप्, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ ऋजुगामी बाण, सीधा जानेवाला तीर। (त्रि०) २ प्रवर्तित, चलता हुआ।

ऋजीष (सं० पु०) अर्ज्यते रसोऽस्मात्, अर्ज्-ईषन् ऋजादेशश्च। अर्जेः ऋज। उण् ४।२८। १ भ्राष्ट, तवा। २ नरकविशेष। ३ नीरस सोमलताका चूर्ण। ४ धन। ५ सोमलता-निःसृत रस।

ऋजीषिन् (सं० त्रि०) १ झपटने या पकड़नेवाला। २ नीरस सोमलताके चूर्णसे बना हुआ।

ऋजु (सं० त्रि०) अर्जयति गुणान्, साधुः। अर्जिदृशि कम्यमि। उण् १।२८। १ अवक्र, सीधा। संस्कृत पर्याय प्रगुण, अजिह्म, प्राञ्जल और सरल है। २ अनुकूल, मुवाफ़िक़। ३ सुन्दर, खूबसूरत। (पु०) ४ वसुदेवके एक पुत्र। "ऋजुं वसुदेव सह..." (भागवत ९।२४।५४)

ऋजुकाय (सं० त्रि०) ऋजुः कायो यस्य, बहुव्री०। १ अवक्रदेह, सीधे जिस्मवाला। (पु०) २ काश्यपमुनि।

ऋजुक्रतु (वै० त्रि०) उचित कार्य करनेवाला, जो ईमानदारीसे चलता हो। (सायण)

ऋजुग (सं० त्रि०) ऋजु यथा स्यात् तथा गच्छति, ऋजु-गम-ड। १ सरल व्यवहारी, सीधा बरताव करनेवाला। २ सरलगामी, सीधा चलनेवाला। (पु०) ३ बाण, तीर।

ऋजुगाथ (सं० त्रि०) ठीक गान करनेवाला, जो ठीक गाता हो।

ऋजुता (सं० स्त्री०) ऋजोर्भावः। १ सरलता, सीधापन। २ अवक्रता, नाराखड़ी। ३ सत्यता, ईमानदारी।

ऋजुदास (सं० पु०) वसुदेवके एक पुत्र।

ऋजुधा (सं० अव्य०) ऋजक साथमें, सीधे, ठीक तौरपर।

ऋजुनीति (सं० स्त्री०) सरल व्यवहार, सीधी चाल।

ऋजुमुष्क (सं० वि०) सुदृढ़ एवं बलवान्, मज़बूत और ताक़तवर, हट्टाकट्टा। (सायण)

ऋजुरश्मि (सं० वि०) सरल रश्मिचिह्नयुक्त, जो रस्सीके सीधे निशान् रखता हो।

ऋजुरेखा (सं० स्त्री०) ऋजुश्चासौ रेखा चेति। सरल रेखा, सीधा ख़त।

ऋजुरोहित (सं० क्ली०) सरल इन्द्रधनु।

ऋजुवनि (सं० वि०) अनुकूलहस्त, जो अच्छी चीज़ देता हो। (ऋक् ४।४१।१४)

ऋजुशंस (सं० वि०) ऋजु यथा तथा शंसति कथयति, ऋजु-शंस-अच्। सरलभाषी, सीधा बोलनेवाला।

ऋजुश्रेणी (सं० स्त्री०) मूर्वा, किसी क़िस्मका पटसन।

ऋजुसर्प (सं० पु०) ऋजुश्चासौ सर्पश्चेति, निपातनात् कर्मधा०। १ सर्प विशेष, किसी क़िस्मका सांप। २ दर्वीकर सर्प, बड़े फनका सांप।

ऋजुसूत्र, (सं० क्ली०) जैन दृष्टिविशेष। यह अप्रमाण तथा निर्धारित अर्थको लेता है। भूत एवं भविष्यत् इसके भावमें कुछ भी नहीं। ऋजुसूत्र केवल प्रत्यक्ष विषयपर विश्वास रखता है।

ऋजुहस्त (सं० वि०) विस्तारितपाणि, हाथ फैलाये हुआ।

ऋजूक (सं० पु०) ऋज-ऊकङ्। १ देशविशेष, एक मुल्क। २ पर्वत विशेष, एक पहाड़। इसी देश या पर्वतसे पिपाशा नदी निकली है।

ऋजूकरण (सं० क्ली०) अनृजु ऋजु क्रियते, ऋजु-अभूत तद्भावे च्वि-कृ-ल्युट्, पूर्वदीर्घः। १ सरल बनानेका कार्य, सीधा करनेकी हालत। २ सुश्रुतोक्त यन्त्रकर्म विशेष।

ऋजूकृत (सं० वि०) सरल किया हुआ, जो सीधा बनाया गया हो।

ऋजूयत् (सं० वि०) ऋजु गच्छति, अथवा ऋजुं गच्छति, ऋजु-क्यच्, ऋजुय-शतृ। ऋजुगामी, सीधा जानेवाला।

ऋजूया, ऋजुरेखा देखो।

ऋजूयु (सं० वि०) १ धार्मिक, ईमान्दार। २ सरल, सीधा।

ऋभ्व (सं० पु०) ऋभ-वन्। [illegible] १ नायक, रहनुमान्। (वि०) २ सरलगामी, सीधा चलनेवाला। ३ रक्ताभ, स्याहीमायल सुर्ख, लालभूरा।

ऋज्वी (सं० स्त्री०) ऋजु-ङीप्। १ सरलतामयी स्त्री, सीधी औरत। २ ग्रहगणकी एक गति।

ऋञ्जसान (सं० पु०) ऋञ्ज असानच्-कित्। ऋञ्जिवृधिमन्दिसहिभ्यः कित्। उण् २।८०। १ मेघ, बादल। (वि०) २ धावमान, दौड़ता हुआ।

ऋण (धातु) तना० उभ० सक० सेट्। "ऋणु गतौ।" (कविकल्पद्रुम) गमन करना, जाना।

ऋण (सं० क्ली०) ऋ-क्त नत्वञ्च। "ऋणमाधमर्ण्ये।" पा ८।२।६०। १ उधार, क़र्ज़, देना।

"जायमानो वै ब्राह्मणस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणवा भवति ब्रह्मचर्येण ऋषिभ्यो यज्ञेन देवेभ्यः प्रजया पितृभ्यः।" (मिताक्षरा)

ब्राह्मण ऋषिऋण, देव ऋण और पितृ ऋण विविध ऋण लेकर जन्म लेता है। ब्रह्मचर्यसे ऋषिऋण, यज्ञकर्मसे देवऋण और पुत्रोत्पादनसे पितृऋण छूटता है। २ दुर्गम भूमि, बीहड़ ज़मीन्। ३ पाप, गुनाह। ४ दुर्ग, क़िला। ५ जल, पानी। ६ अवराशि, बाक़ी। (पु०) ७ व्यास मुनि। (वि०) ८ अङ्गगणोक्त संख्याविशिष्ट, जो किसी घटायी हुयी अदतसे मिला हो। ९ पापी, बुरा काम करनेवाला। १० गमनकारी, जानेवाला।

ऋणकर्ता (सं० वि०) ऋण लेनेवाला, क़र्ज़दार, जो उधार लेता हो। "ऋणकर्ता पिता शत्रुः।" (चाणक्य)

ऋणकान्ति (सं० वि०) ऋणवत् फलप्रदा कान्तिः स्तुतिर्यस्य, बहुव्री०। अवश्यफलदायक स्तुतिभाषी, जो तारीफ़की क़र्ज़की तरह अदा कर फ़ायदा बढ़ाता हो।

ऋणग्रस्त (सं० वि०) ऋणेन ग्रस्तः, ३-तत्। बहुऋणयुक्त, क़र्ज़में लदा हुआ।

ऋणग्रह (सं० पु०) १ ऋण लेनेका काम, क़र्ज़दारी। २ ऋण लेनेवाला, जो क़र्ज़ करता हो।

ऋणग्राहक (सं० वि०) ऋणं गृह्णाति, ऋण-ग्रह-ण्वुल्। अधमर्ण, ऋणकारक, क़र्ज़ लेनेवाला।

ऋणग्राही, ऋणग्राहक देखो।

अनुलेपन, तैलादिमर्दन, नखच्छेदन, धावन, अतिशय हास्य वा उच्चैःस्वरकथन, उच्चशब्द-श्रवण, अवलेखन, वायुसेवन और परिश्रम छोड़ देना चाहिये। क्योंकि गर्भका सन्तान दिवानिद्रासे निद्राशील, अञ्जनके व्यवहारसे अन्ध, अश्रुपातसे विकृतदृष्टि, स्नान एवं अनुलेपनसे दुःखित, तैलादिके मर्दनसे कुष्ठयुक्त, नखच्छेदनसे कुनखी, धावनसे चञ्चल, अतिशय कथनसे प्रलापी, उच्चशब्दके श्रवणसे बधिर, अवलेखनसे खलत, वायुसेवन तथा परिश्रमसे उन्मत्त और अतिशय हास्यसे दन्त, ओष्ठ, तालु एवं जिह्वामें कपिशवर्ण बन जाता है।

महर्षि सुश्रुतके मतसे स्त्रीको ऋतुमती होनेपर तीन दिनतक कुशासनपर शयन, शराव वा पत्रपर हविष्यान्नका भोजन और स्वामीका दर्शन न करना चाहिये। चतुर्थ दिवस स्नान करके वस्त्रालङ्कार परिधान एवं आशीर्वाचनपूर्वक पहले पतिको देखना विधेय है। क्योंकि ऋतुस्नानके बाद पहले जैसा पुरुष पड़ता, वैसा ही सन्तान उपजता है। गर्भाधान देखो।

पतिको एक मास ब्रह्मचर्य रख भार्याके ऋतुस्नानके चतुर्थ दिवस घृत और दुग्धके योगसे शालितण्डुलका चरु खाना चाहिये। स्त्री भी एक मास ब्रह्मचर्य पालन और प्रतिदिन तैलमर्दन एवं अधिक परिमाणसे माषसंयुक्त अन्न भोजन करती है। फिर पति वेदादि धर्मशास्त्रपर विश्वास रखता और पुत्रकामना लगा, चौथी छठी, आठवीं, दशवीं वा बारहवीं रातको स्त्रीपर पहुंचता है। चतुर्थसे द्वादश दिवसके मध्य जितना ही सहवास बढ़ता, सन्तान उतना ही हृष्टपुष्ट, बलिष्ठ और दीर्घजीवी निकलता है। त्रयोदश दिवससे फिर समागम करना न चाहिये।

ऋतुके प्रथम दिवस आयुर्हीन, द्वितीय दिवस सूतिकागृहमें ही नष्ट और तृतीय दिवसको गमन करनेसे सन्तान असम्पूर्णाङ्ग वा अल्पायु होता है। अतएव ऋतुके तीन दिन गमन करना न चाहिये। द्वादश दिवस बीतनेपर फिर पक्षमास पर्यन्त ब्रह्मचर्य रखते हैं। गर्भ देखो।

आज ऋतुमें मङ्गलाचार किया जाता है—

"ऋतुमतीं तु पूर्वेद्युः पतिपुत्रवती स्त्रियः ।
[illegible]
[illegible]
[illegible] पतिपुत्रवती भव ।
[illegible]
[illegible]
[illegible]" ([illegible])

ऋतुमती स्त्रीको प्रथम ऋतुमें ही पड़ोसकी पतिपुत्रवती नारी अक्षतका आसन बनाकर बैठाती है। फिर हरिद्रा, गन्धपुष्प, ताम्बूल एवं माल्यादि दे और 'तुम पुत्रवती हो पतिके साथ सुखसे समय बिताओ' कह वह उसको आशीर्वाद करती है। पीछे प्रदीपविशिष्ट गृहमें ले जाकर उसकी आरती उतारी जाती है। अनन्तर ऋतुमतीके घरकी जो मङ्गलाचार करनेवाली नारियोंको गन्ध, पुष्प और अक्षतादि द्वारा पूज अपनी शक्तिके अनुसार लवण, पिष्टक एवं मुद्गादि देती है।

ऋतुमय (सं॰ त्रि॰) ऋतुविशिष्ट, मौसमी।

ऋतुमुख (सं॰ क्ली॰) ऋतूनां मुखम्, ६-तत्। चौथे चान्द्रमासका प्रथम दिन, मौसमका मुंह।

ऋतुयाज (सं॰ पु॰) १ ऋतुका यज्ञ। २ प्रातःसवनका एक यज्ञ। यह आज्य शस्त्रसे पहले होता है।

ऋतुराज (सं॰ पु॰) ऋतूनां राजा, ऋतु-राजन्-टच्, ६-तत्। (ऋतूनां कुसुमाकरः। गीता १०।३५) वसन्त काल, मौसम-बहार।

ऋतुलिङ्ग (सं॰ क्ली॰) ऋतूनां लिङ्गं चिह्नम्, ६-तत्। १ ऋतुपर्यायका पुष्पादि चिह्न, मौसमके आसार। २ ऋतुमती होनेका लक्षण, औरतको महीना होनेके आसार।

ऋतुवती, ऋतुमती देखो।

ऋतुविपर्यय (सं॰ पु॰) ऋतुके क्रमका भङ्ग, मौसमका बिगाड़। वसन्तादिके स्थानमें शरदादिकी प्रवृत्ति ऋतुविपर्यय कहलाती है।

ऋतुवृत्ति (सं॰ पुं॰) ऋतूनां वृत्तिर्यस्य, बहुव्री॰। वत्सर, वर्ष, साल।

ऋतुवेला (सं॰ स्त्री॰) ऋतूनां वेला कालः, ६-तत्। ऋतुकाल, महीनेका वक्त।

ऋतुवैषम्य (सं० क्ली०) ऋतुचर्याका विपरीताचरण, मौसमके खिलाफ़ काम।

ऋतुगः, ऋतुगा देखो।

ऋतुशूल (सं० क्ली०) ऋतुकाल पर रजोरोधमें उत्पन्न शूलरोग, महीने पर हैज़ बन्द होनेसे पैदा हुआ दर्द। पुष्पके वातादिसे मारे जाने पर यह शूल उठता है। शोणित पिच्छल, घन एवं स्निग्ध रहता और बहुत गिरता है। योनि और नाभिमें परम दारुण वेदना होने लगती है। (रसरत्नाकर)

ऋतुषट्क (सं० क्ली०) हिम-शिशिर-वसन्त-ग्रीष्म-शरत्, छहो मौसम।

ऋतुष्ठा, ऋतुस्था देखो।

ऋतुसन्धि (सं० पु०) ऋतोः सन्धिः, ६-तत्। ऋतुद्वयका मिलनकाल, दो मौसमोंके मिलनेका वक्त। वर्तमान ऋतुके सात अन्तिम और आगामी ऋतुके सात प्राथमिक दिवस ऋतुसन्धि कहलाते हैं।

"ऋत्वोरन्त्यादि सप्ताहावृतुसन्धिरिति स्मृतः।" (वाग्भट)

ऋतुसमय, ऋतुकाल देखो।

ऋतुसम्भिता (सं० स्त्री०) मुनिखर्जुरिका, बढ़िया पिण्ड खजूर।

ऋतुसात्म्य (सं० क्ली०) ऋतुके अनुकूल भोजनादि, मौसमके मुवाफ़िक़ खाना वग़ैरह।

ऋतुसेव्य (सं० त्रि०) ऋतुषु सेव्यः। ऋतुके भेदानुसार व्यवहार करने योग्य, जो मौसमके मुवाफ़िक़ काममें लाने लायक़ हो। सुश्रुतके मतानुसार वर्षाकालको प्राणीका शरीर क्लिन्न एवं अग्नि मन्द पड़ जाने और वातादि सकल दोष उठ खड़े होनेसे क्लेदविशोधक तथा दोष-संहारक कषाय, तिक्त एवं कटुविशिष्ट, घन, अधिक स्निग्ध वा अधिक रुक्ष न होनेवाला पदार्थ और उष्ण एवं अग्नि-उद्दीपक भोज्य आहार करना चाहिये। ऐसे समय हृदका ही जल पीना सर्वोत्कृष्ट रहता, अतुवा उष्णजल मधु मिलाकर लेना पड़ता है। भूमध्यस्थ वाष्प बचानेके लिये खाट या तख़्त पर लेटना उचित है। अतिरिक्त जलपान, हिमसेवा, मैथुन, आतप, व्यायाम, दिवानिद्रा और अजीर्णकर भोजन छोड़ देते हैं। शरत्कालको कषाय, मधुर एवं तिक्तरस, दुग्ध, मिष्टान्न, मधु, सर्वप्रकार तण्डुलादि, जाङ्गलमांस और नदी-तड़ाग-पुष्करिणी प्रभृतिका जल हितकारी है। एतद्भिन्न पित्तप्रशमनकारक सकल ही द्रव्य व्यवहार करना चाहिये। तीक्ष्णवीर्य-अम्ल-उष्ण-क्षार द्रव्य, दिवानिद्रा, रौद्र, रात्रिजागरण और मैथुनसे हानि होती है। हेमन्त एवं शिशिरकालको लवण, क्षार-तिक्त-अम्ल, तथा कटु रस, तैल, घृत, उष्ण पय, तीव्रपान, माष, शाक, दधि, मिष्टान्न, नूतन तण्डुल, सकल-प्रकार मांस, मद्य और मैथुन प्रभृतिके व्यवहारसे कोई अनिष्ट नहीं आता। नहानेके लिये उष्ण जल ही कहा है।

ऋतुस्तोम (सं० पु०) एक दिवस साध्य यज्ञविशेष।

ऋतुस्थला (सं० स्त्री०) अप्सरोविशेष, एक परी।

ऋतुस्था (वै० त्रि०) उचित ऋतुपर नियत, जो मुनासिब मौसम पर बँधा हो।

ऋतुस्नाता (सं० स्त्री०) ऋतौ ऋतुकाल-विहित-चतुर्थदिवसे स्नाता, ७-तत्। ऋतुके चतुर्थ दिवस शुद्धिके लिये स्नान करनेवाली स्त्री।

"पूर्वं पश्येदृतुस्नाता यादृशं नरमङ्गना।" (सुश्रुत)

ऋतुस्नाता स्त्री पहले जैसा पुरुष देखती, वैसा ही पुत्र उत्पन्न करती है।

ऋतुस्नान (सं० क्ली०) ऋतौ ऋतुकालविहितदिने स्नानम्, ७-तत्। ऋतुकालीन चतुर्थ दिवसका स्नान, महीनेके बाद चौथे दिनका नहान।

ऋतुहरीतकी (सं० स्त्री०) ऋतुके भेदसे द्रव्यविशेषके साथ मिश्रित हरीतकी, मौसमी हर। भावप्रकाशमें लिखा—वर्षामें सैन्धव, शरत्‌में शर्करा, हेमन्तमें शुण्ठीचूर्ण, शिशिरमें जीरकचूर्ण, वसन्तमें मधु और ग्रीष्मकालमें गुड़के साथ हरीतकी खानेसे उत्कृष्ट रसायन होता है।

ऋते (सं० अव्य०) १ पृथक्-पृथक्, अलग-अलग। २ बिना, वग़ैरह।

"ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे।" (गीता ११।३२)

ऋतेकर्म (वै० अव्य०) १ त्यागकर, छोड़ के। २ बिना, बग़ैर।

ऋतेजा (वै० त्रि०) ऋते जायते, ऋत-जन्-विट्। यज्ञके लिये उत्पन्न, जो यज्ञके लिये बना हो।

ऋतेयु (सं॰ पु॰) १ ऋषिविशेष। यह वरुणके पुरोहित थे। २ एक राजा। (भागवत)

ऋतोक्ति (सं॰ त्रि॰) सत्यभाषण, सच्चाई।

ऋतोद्य (सं॰ क्ली॰) ऋत-वद-क्यप्। सत्यवाक्य, सच बात।

ऋत्वन्त (सं॰ पु॰) ऋतुकालकी समाप्ति, महीनेका अखीर।

ऋत्विज् (सं॰ पु॰) ऋतौ यजति, ऋतु-यज्-क्विन्, निपातनात् साधुः। १ पुरोहित, पैटके बदले यज्ञमें कर्मकाण्ड करनेवाला। संस्कृत पर्याय याजक, भरत, कुरु, वाग्यत, वृक्तबर्हि, यतस्रुक, मरुत्, मयाध और देवयु हैं। चार ऋत्विक् प्रधान होते हैं, होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा। फिर बड़े यज्ञोंमें यही आठ और बड़े सोलहतक ऋत्विक् रहते हैं। यथा—ब्राह्मणाच्छंसी, प्रस्तोता, मैत्रावरुण, प्रतिप्रस्थाता, पोता, प्रतिहर्ता, अच्छावाक, नेष्टा, अग्नीध, सुब्रह्मण्य, ग्रावस्तुत् और उन्नेता। २ वाद्योंके नायकका धर्मसहायविशेष। "ऋत्विक् पुरोहित: धर्मसहायास्तत्र ..." (साहित्य॰ ३।४१)

ऋत्विय (वै॰ त्रि॰) ऋतु-घस्। (ऋग्वेद ...) १ ऋतुकालोपस्थित, मौसमपर पहुंचा हुआ। २ ऋतुकालोत्पन्न, मौसममें पैदा हुआ। ३ ऋतुकालका कर्तव्य, जो मौसममें किये जानेके काबिल हो। ४ नियमित, पाबन्द। (स्त्री॰) ५ ऋतुकाल, औरतके महीनेका वक्त।

ऋत्वियावत् (वै॰ त्रि॰) ऋत्वियमस्यास्तीति, ऋत्विय-मतुप्, मस्य वः दीर्घश्च। १ पुत्रोत्पादनकर्मयुक्त, जो लड़का पैदा करनेमें लगा हो। २ ऋतुस्नानयुक्त, कामिनी (?)।

ऋत्व्य (वै॰ त्रि॰) ऋतुरस्य प्राप्तः तत्र भवः वा, ऋतु-यत्, ... ऋत्विय देखो।

ऋदूदर (वै॰ पु॰) मृदु उदरं यस्य, पृषोदरादित्वात् मस्य लोपः। १ सोम। (त्रि॰) २ मृदु-उदरविशिष्ट, मुलायम पेटवाला, भला।

ऋदूपा (वै॰ पु॰) १ अर्दनशाली। २ गमनशाली। ३ दूरगामी। ४ मर्मवेधी, भीतर भेदनेवाला। ५ गगनवेधी। ६ दूरभेदी। (निरुक्त ६।३३)

ऋदूवृध, ऋदूपा देखो।

ऋद्ध (सं॰ क्ली॰) ऋध-क्त। १ मंडा धान्य, जो अनाज भूसीसे अलग कर दिया गया हो। २ सिद्धान्त, कौल (?)। ३ वृद्ध, बुड्ढा (?)। ४ समृद्ध, दौलतमन्द। ५ सम्पन्न, पूरा।

ऋद्धि (सं॰ स्त्री॰) ऋध-क्तिन्। १ वृद्धि, बढ़ती। २ सम्पत्ति, दौलत। ३ सिद्धि, करामात। ४ पार्वती। ५ लक्ष्मी। ६ देवताविशेष। ७ वैद्यकोक्त अष्टवर्गके अन्तर्गत ओषधि विशेष। इसे लोग प्रायः ऋद्धि-वृद्धि कहते हैं। यह लताजात, सलोमक और श्वेत लोमान्वित होती है। ऋद्धि देशमें तुम्बकन्दके समान लगती और वामावर्तमें फलती है। (भावप्रकाश) गुणमें यह वृद्धिके तुल्य है। ऋद्धि बल्य, त्रिदोषघ्न, शुक्रल, मधुर, गुरु एवं प्राणवर्धक रहती और मूर्छा तथा रक्तपित्तको दूर करती है। (राजनिघण्टु) ८ महाश्रावणी, गोरखमुण्डी। ९ कुबेरपत्नी।

ऋद्धिकाम (सं॰ त्रि॰) सम्पत्ति या अभ्युदयका अभिलाषी, जो अपनी बढ़ती चाहता हो।

ऋद्धिका (सं॰ स्त्री॰) १ सर्पगन्धा, नागदौना। २ गजराजा, नागपुदार गिलोय (?)।

ऋद्धिमत् (सं॰ त्रि॰) ऋद्धिरस्यास्तीति, ऋद्धि-मतुप्। १ वृद्धियुक्त, बढ़ा हुआ। २ सम्पत्तिशाली, दौलतमन्द। ३ सिद्धियुक्त, करामाती।

ऋद्धिप्रातिहार्यक्रिया (सं॰ स्त्री॰) अलौकिक शक्तिका प्रदर्शन, अनोखी ताकतका काम।

ऋद्धिसिद्धि (सं॰ स्त्री॰) सुखसम्पत्ति, ठाटबाट, धूम-धाम, अमन-चैन।

ऋध (धातु) दिवा॰ स्वादि॰ पर॰ सक॰ सेट् अदित्। "ऋधु वृद्धौ" (कविकल्पद्रुम) वृद्धि पाना, बढ़ना।

ऋधक् (सं॰ अव्य॰) १ सत्य, सच, ठीक। २ विशेषसे, अलग-अलग। ३ शीघ्र, जल्द, फौरन। ४ निकट, पास, करीब। ५ मात्रवश (?), घटकर।

ऋधत् (सं॰ त्रि॰) ऋध-शतृ। वर्धित होनेवाला, जो बढ़ रहा हो।

ऋधवार (वै० वि०) १ अपना ऐश्वर्य बढ़ानेवाला, जो अपना माल बढ़ा रहा हो। २ यथाभिलषित सम्पत्तिशाली, मनमानी दौलत रखनेवाला। (सायण)

ऋधुक् (सं० वि०) न्यून, कम, छोटा।

ऋनिया, ऋनी (हिं०) ऋणी देखो।

ऋफ् (धातु) तुदा० पर० सक० सेट्। "ऋफ श दाने प्राप हिंसानिन्दाजौ।" (कविकल्पद्रुम) १ दान करना, देना। २ प्रशंसा करना, तारीफ़ बताना। ३ हिंसा करना, मारना। ४ निन्दा करना, बुराई बताना। ५ युद्ध करना, लड़ना।

ऋबीस (सं० क्ली०) ऋ-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ पृथिवी, ज़मीन्। २ पृथिवीस्थ अग्नि, ज़मीन् की आग। ३ सन्धि, दराज़।

ऋभु (सं० पु०) अरि देवमातरि अदितौ भवति, ऋ-भू-डु। १ देवता। २ मेधावी, आक़िल। ३ यज्ञ-देवता। ४ देवगण विशेष। यह वैवस्वत मन्वन्तरके देवता हैं। ५ सुधन्वाके पुत्र। ऋक् संहितामें ऋभु शब्द इन्द्र, अग्नि और आदित्यके नामान्तर रूपसे व्यवहृत हुआ है। पुराणमतसे ऋभु ब्रह्माके पुत्र हैं। इन्होंने तपोबलसे विशुद्ध ज्ञान लाभ किया था। पुल-स्त्यपुत्र निदाघ इनके शिष्य रहे। पौराणिक मतसे यह चार कुमारोंमें एक थे। आङ्गिरसगोत्रीय सुध-न्वाके तीन पुत्र रहे। यह तीनों वेदमें 'ऋभवः' अर्थात् ऋभुगण कहे गये हैं। प्रत्येकका पृथक् नाम १म ऋभुक्षा (ऋभु), २य विभु और ३य वाज था। भाष्यकार सायणाचार्यके मतसे ऋभुगण सूर्यमण्डलमें रहते और सूर्यके रश्मिरूपसे चमकते हैं। ऋक्-संहिताको देखते ऋभुगण अतिशय कार्य कुशल रहे। इन्होंने इन्द्रके रथ और अश्वगणको शोभान्वित किया था। इससे सन्तुष्ट हो इन्द्रने इनके पितामाताको पुनर्यौवन दिया। मोक्षमूलर साहबने वैदिक ऋभु और प्राचीन यूनानी देवता अर्फियस (Orpheus) में सादृश्य स्थापन करनेकी चेष्टा लगायी है। ६ एक मुनि। ७ एक निकृष्ट जाति। ८ सैन्यभेद।

ऋभुक्ष (सं० पु०) ऋभवः क्षियन्ति वसन्ति यत्र, ऋभु-क्षि-ड। १ स्वर्ग, बिहिश्त। २ वज्र। ३ इन्द्र।

ऋभुक्षा (सं० पु०) ऋभुक्षः स्वर्गः वज्रं वा अस्त्यस्य, ऋभुक्ष-इनि-'आ' आदेशः। पथिमथ्यृभुक्षामात्। पा ७।१।८५। १ इन्द्र। २ मरुत्। ३ ऋभु। ४ तीन ऋभुओंमें बड़े ऋभु।

ऋभुक्षी (सं० पु०) ऋभुक्षः स्वर्गः वज्रं वा अस्यास्ति, ऋभुक्ष-इनि। इन्द्र।

ऋभुक्षीन् (सं० त्रि०) ऋभुक्षीव आचरति, ऋभुक्षिन्-क्विप्-दीर्घः। अनुनासिकस्य क्विझलोः क्ङिति। पा ६।४।१५। इन्द्रके न्याय आचारविशिष्ट, जो इन्द्रकी तरह काम-काज करता हो।

ऋभुमत् (वै० वि०) १ चतुर, होशियार। २ ऋभु-सम्बन्धीय। ३ अतिशय दीप्त, दूर दूर तक चमकने-वाला। (सायण)

ऋभ्व (वै० वि०) उरु भूरस्य, पृषोदरादित्वात् साधुः। १ ज़मीसे उत्पन्न, ज़मीनसे निकला हुआ। २ आक्रामक, हमलावर। ३ व्याप्त, भरा या दूरतक फैला हुआ। ४ चतुर, होशियार।

ऋभ्वन् (वै० वि०) १ आक्रामक, हमलावर। २ अतिशय प्रदीप्त, दूरदूर तक चमकनेवाला। (सायण)

ऋभ्वस्, ऋभ्वन् देखो।

ऋम्फ् (धातु) तुदा० पर० सक० सेट् मुचादि। वध करना, मार डालना।

ऋल्लक (सं० पु०) वादित्र विशेष बजानेवाला, एक बाजेवाला।

ऋल्लरी (सं० स्त्री०) वादित्र विशेष, एक बाजा।

ऋश् (धातु) सौत्र० पर० स० सेट्। १ गमन करना, जाना। २ स्तुति करना, सोहना।

ऋश्य (सं० पु०) ऋश्-क्यप्। १ मृगविशेष, एक हिरन। यह चित्रित या नीलवर्ण पदविशिष्ट होता है। मांस कषाय, मधुर, वातघ्न, विशद, रुक्ष, तीक्ष्ण और वस्तिशोधन है। (सुश्रुत)

ऋश्यक (सं० स्त्री०) ऋश्य-क:। वृक्षक्षर्कि। पा ४।२।८०। मृगप्रविष्ट देशादि, जिस देशमें चित्रित मृग रहे। २ हिंसा, शिकार।

ऋश्यकेतु (सं० पु०) विश्वकेतु, अनिरुद्ध।

ऋश्यद (सं० पु०) ऋश्यं हिंसां ददाति, ऋश्य-दा-क। कूप, गड्ढा। इसमें हिरनको फांसकर पकड़ते हैं।

ऋष्यपद् (सं॰ त्रि॰) ऋष्यपादविशिष्ट, जिसके हिरनका पैर रहे।

ऋश्यादि (सं॰ पु॰) पाणिनिका कथित एक गण। इसमें ऋश्य, न्यग्रोध, शर, निलीन, निवास, निवात, निधान, निबन्ध, विबद्ध, परिगूढ़, उपगूढ़, असनि, सित, मत, वेश्मन्, उत्तराश्मन्, अश्मन्, स्थूल, बाहु, खदिर, शर्करा, अनडुह, अरडु, परिवंश, वेणु, वीरण, खण्ड, दण्ड, परिवृत, कर्दम और अंशु शब्द पड़ता है।

ऋष् (धातु) तुदा॰ पर॰ सक॰ सेट्। "ऋषी गतौ।" (कविकल्पद्रुम) १ गमन करना, जाना। २ वध करना, मारना।

ऋषद्गु (सं॰ पु॰) यदुवंशीय एक राजा। यह रुक्मिणीपतिके पुत्र और चित्ररथके पिता थे।

(भाग॰, ९म॰ २३ अ॰)

ऋषभ (सं॰ पु॰) ऋष्-अभक्-कित्। "ऋषिवृषिभ्यां कित्" उण् ३।१२३। यह शब्द शब्दके पीछे रहनेसे श्रेष्ठार्थवाचक होता है। १ वृष, बैल। २ कर्णरन्ध्र, कानका छेद। ३ कुम्भीरपुच्छ, मगरकी पूँछ। ४ औषधि विशेष, एक जड़ी। यह वृषके शृङ्ग जैसा होता है। ऋषभ बलकारक, शीतल, गुरु एवं शुक्रजनक, मधुर और पित्त, दाह, क्षय, वायु तथा रक्तदोषनाशक है। हिमालय-शिखर इसकी उत्पत्तिका स्थान है। संस्कृत पर्याय—वृष, धीराङ्क, वीर, गोपति, धीर, विषाणी, दुर्धर, ककुद्मान्, पुङ्गव, वोढ़ा, शृङ्गी, धुर्य, भूपति, कामी, बन्धुर, उक्षा, मातृकी, गो, बन्धुर, रोहक और ककुद्मी है। (भावप्रकाश)

५ सप्तस्वरके अन्तर्गत द्वितीय स्वर। यह बैलके स्वर-जैसा होता है। फिर कोई इसे चातकके स्वर-जैसा भी बताता है। नाभि मूलसे उठ यह वायु कण्ठ और शिरको छू ऋषभके नादकी तरह निकला करता है। इसीसे इसे ऋषभ स्वरकी उत्पत्ति है। दयावती, रञ्जनी और रतिका तीन इसकी श्रुति हैं। श्रुति जाति भी आयत, मध्य और मृदु भेदसे तीन प्रकार है। अंश ऋषि, जाति क्षत्रिय, वर्ण पिञ्जर, उत्पत्ति-स्थान शाकद्वीप, ऋषि, एवं देवता ब्रह्मा और छन्द गायत्री है। (संगीतदर्पण)

७ पर्वत विशेष, एक पहाड़। ८ वराहपुच्छ, सूअरकी पूँछ। ९ कोई मुनि। १० भगवान्के एक अवतार। भागवतोक्त २२ अवतारोंमें ऋषभ अष्टम हैं। इन्होंने भारतवर्षाधिपति नाभिराजाके औरस और मेरुदेवीके गर्भसे जन्मग्रहण किया था।

भागवतमें लिखा है, कि जन्म लेते ही ऋषभदेवके अङ्गमें सकल भगवत् लक्षण झलकते थे। सर्वत्र समता, उपशम, वैराग्य, ऐश्वर्य और महैश्वर्यके साथ उनका प्रभाव दिन दिन बढ़ने लगा। वह स्वयं तेजः प्रभाव, शक्ति, उत्साह, कान्ति और यशः प्रभृति गुणसे सर्वप्रधान बन गये। कुछ दिन पीछे नाभि राजाने अपने पुत्र ऋषभको राज्य सौंप मेरुदेवीके साथ बदरिकाश्रमका पन्था पकड़ा था। (कलि ९६९)। ऋषभदेवको राज्यपर अभिषिक्त होनेसे इन्द्रने जयन्ती नाम्नी कन्या दी। उस पत्नीके गर्भसे एकशत पुत्र उत्पन्न हुये। भरत ज्येष्ठ थे। कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इन्द्रस्पृक्, विदर्भ और कीकट उनके अनुगत रहे। दूसरे नौ पुत्र कवि, हविः, अन्तरीक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस और करभाजन भागवत धर्मप्रदर्शक थे। अवशिष्ट ८१ पुत्र विनीत पितृभक्त और घोर यज्ञशील ब्राह्मण बन गये।

ऋषभदेवने अपने ज्येष्ठ पुत्र भरतको राज्य सौंप परमहंस धर्म लोगोंके सिखानेको संसार त्याग किया था। उसी समय उन्होंने उन्मत्तके न्याय दिगम्बर वेशमें आलुलायित केश हो ब्रह्मावर्तसे पैर बढ़ाया। ऋषभदेवने मौनव्रत पकड़ा था। पुकारो गूँगे देख कितने ही लोग उनसे आलाप करने पहुँचे। किन्तु वह जड़, मूक, अन्ध, बधिर, पिशाच या उन्मत्तके न्याय उदासीनभाव रह कोई बात बोलते न थे। उस अवस्था पर दुष्ट लोगोंने गाल पर थप्पड़, मूत्र, धूलि एवं प्रस्तर फेंक, ताड़ना दे, अधो वायु छोड़ नाना प्रकारसे उन्हें विभिन्न प्रकारका पीड़ा पहुँचायी। किन्तु वह किसीसे विचलित न हुये। क्योंकि उनका मनोविकार निकल गया था। संसारके लोगोंसे अपने मलिनता देख उन्होंने अवधूतवेश पकड़ा था। ऋषभदेव एक ही स्थानपर रह खाने-पीने, सोने-बैठने और चलने-फिरने

लगे। उनका सुन्दर देह मलमूत्रसे आच्छन्न हुआ था। किन्तु आश्चर्यका विषय यह ठहरा, कि विष्ठामें दुर्गन्धका नाम भी न रहा। इसीप्रकार वह नाना स्थान घूमने लगे। कुछ काल घूम-फिर ऋषभदेवने देह छोड़ना चाहा था। उस समय वह कोङ्क, वेङ्कट, कुटक और दक्षिण कर्णाटक देश जा पहुंचे। वहां कुटकाचल उपवनके निकट कितनी ही क्षुद्र शिला उठा उन्होंने मुखमें डाली थीं। फिर ऋषभदेव उन्मत्तके न्याय घूमने लगे। दैवात् वनमें दावानल भड़का था। उसी अनलमें वह जल गये।

भागवतमें ऋषभदेवका धर्ममत इसप्रकार कहा है।

मानव देह पा मनुष्यको समुचित आचरण करना चाहिये। जो सकलका सुहृद्, प्रशान्त, क्रोधहीन एवं सदाचार रहता और सब पर समान दृष्टि रखता, वही महत् ठहरता है। जो धनपर स्पृहा तथा पुत्र कलत्रादि पर प्रीति नहीं रखता और ईश्वरपर निर्भर कर चलता, वही मनुष्योंमें बड़ा निकलता है। इन्द्रियकी तृप्ति ही पाप है। कर्मस्वभाव मन ही शरीरके बन्धका कारण बन जाता है। स्त्री-पुरुष मिलनेसे परस्परके प्रति एक प्रकार प्रेमाकर्षण होता है। उसी आकर्षणसे महामोहका जन्म है। किन्तु उस आकर्षणके टलने और मनके निवृत्ति-पथपर चलनेसे संसारका अहङ्कार जाता तथा मानव परमपद पाता है।

भागवतमें लिखते, कि ऋषभदेव स्वयं भगवान् और कैवल्यपति ठहरते हैं। योगचर्या उनका आचरण और आनन्द उनका स्वरूप है। (भागवत ५।४,५,६ अ०)

जैनोंने इन्हीं ऋषभदेवको अपना तीर्थङ्कर या आदिनाथ माना है। जैनधर्मशास्त्रके मतानुसार—ऋषभदेवने सर्वार्थसिद्धि नामक विमानसे उत्तराषाढ़ा नक्षत्रमें धनुराशिपर चैत्रमासकी कृष्णाष्टमी तिथिको इक्ष्वाकुवंशीय नाभिके औरस और मरुदेवीके गर्भसे विनीता नगरीमें जन्म लिया था। यह नौ मास चार दिन गर्भमें रहे। शरीरका परिमाण ५०० धनुः रहा। अङ्गकी कान्ति सुवर्णप्राय थी। ऋषभदेव इक्षुरस पीकर श्रेयांसके निकट ४००० साधुओंके साथ चैत्राष्टमीको दीक्षित हुये थे। फिर एक वर्षतक नाना स्थान घूम पुरिमतल नामक स्थानपर यह पहुंचे। वहां फाल्गुन मासके कृष्णपक्षको तीन दिन उपवासके पीछे इन्होंने ज्ञानलाभ किया था। इनके ८० गणधर, ८४००० साधु, ३००००० साध्वी, ९००० अवधिज्ञानी, २०००० केवली, ३५०००० श्रावक, ५५४००० श्राविका, ४०५० चतुर्दशपूर्वी और १२०५० मनपर्याय थे। प्रथम गणधरका पुण्डरीक और प्रथम आर्याका नाम ब्राह्मी था। आयुःका परिमाण ८४ लक्ष पूर्व कहते हैं। ऋषभदेवको अष्टपद नामक स्थानपर चैत्रमासको कृष्णत्रयोदशीके दिन पद्मासनसे मोक्षपद मिला था।

(जैनहरिवंश ८ सर्ग, आदिनाथपुराण एवं जैनतत्त्वादर्श १८-२० पृ०)

ऋषभक (सं० पु०) वैद्योक्त अष्टवर्गान्तर्गत औषध-विशेष, एक जड़ी। ऋषभ देखो।

ऋषभकूट (सं० पु०) हेमकूट पर्वत, एक पहाड़।

ऋषभगजविलसित (सं० क्ली०) षोड़शाक्षर छन्दो-विशेष, सोलह सोलह अक्षरोंके चार पादोंका एक छन्द।

"भनिनगैः स्वरात् ऋषभगजविलसितम्। (वृत्तरत्नाकर)

ऋषभतर ((सं० पु०) भारवहनासमर्थ वृष, जो बैल बोझ ढो न सकता हो।

ऋषभदायी (सं० त्रि०) वृषप्रदान करनेवाला, जो बैल देता हो।

ऋषभदेव (सं० पु०) भगवान्‌के एक अवतार। ऋषभ देखो।

ऋषभद्वीप (सं० पु०-क्ली०) ऋषभस्य श्वेतः द्वीपः, मध्यपदलोपी कर्मधा०। श्वेतद्वीप, किसी मुल्कका नाम।

ऋषभध्वज (सं० पु०) ऋषभो ध्वजचिह्नमस्य ध्वजे अस्य वा, बहुव्री०। १ महादेव, अपने झण्डेमें बैलका निशान् रखनेवाले शङ्कर। २ एक बौद्धसंन्यासी।

ऋषभी (सं० स्त्री०) ऋषभ जातौ ङीष्। १ नराकृति स्त्री, मर्दकी सूरत-शकल रखनेवाली औरत। २ कपिकच्छू लता, केंवाच। ३ विधवा, बेवा। ४ गिरामा।

ऋषि (सं० पु०) ऋषति गच्छति संसारपारम्, ऋष्-इन्-कित्। इगुपधात् कित्। उण् ४।११९। १ ज्ञानके द्वारा संसारपारगत वशिष्ठादि। २ मन्त्रद्रष्टा। संस्कृत पर्याय सत्यवत और शापाख है। ऋषि मानवजातिके

होते हैं—महर्षि, परमर्षि, देवर्षि, ब्रह्मर्षि, श्रुतर्षि, राजर्षि और काण्डर्षि। प्रत्येक मन्वन्तरके सप्तर्षि-गणका नाम इसप्रकार है—स्वायम्भुव मन्वन्तरमें मरीचि, अत्रि, अङ्गिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु और वशिष्ठ; स्वारोचिष मन्वन्तरमें ऊर्ज, स्तम्भ, प्राण, दत्तोलि, ऋषभ, निश्चर तथा चार्वरीर; उत्तम मन्वन्तरमें वशिष्ठके प्रमदादि सप्तपुत्र; तामस मन्वन्तरमें ज्योतिर्धामा, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, वनक एवं पीवर; रैवत मन्वन्तरमें हिरण्यरोमा, वेदश्री, ऊर्ध्ववाहु, वेदवाहु, सुधामा, पर्जन्य तथा वशिष्ठ; चाक्षुष मन्वन्तरमें सुमेधा, विरजा, हविष्मान्, उन्नत, मधु, अतिनामा और सहिष्णु; वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तरमें अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज एवं कश्यप; सावर्णिक मन्वन्तरमें गालव, दीप्तिमान्, परशुराम, अश्वत्थामा, कृप, ऋष्यशृङ्ग तथा व्यास; दक्षसावर्णिक मन्वन्तरमें मेधातिथि, वसु, सत्य, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, सवल एवं हव्यवाहन; ब्रह्मसावर्णिक मन्वन्तरमें आप, भूति, हविष्मान्, सुकृती, सत्य, नाभाग और वशिष्ठके पुत्र अप्रतिम; धर्मसावर्णिक मन्वन्तरमें हविष्मान्, वरिष्ठ, ऋष्टि, आरुणि, निश्चर, अनघ एवं विष्टि; रुद्रसावर्णिक मन्वन्तरमें द्युति, तपस्वी, सुतपा, तपोमूर्ति, तपोरति तथा तपोधृति; देवसावर्णिक मन्वन्तरमें धृतिमान्, अव्यय, तत्त्वदर्शी, निरुत्सुक, निर्मोह, सुतपा एवं निष्प्रकम्प; इन्द्रसावर्णिक मन्वन्तरमें अग्नीध्र, अग्निवाहु, शुचि, मुक्त, माधव, शुक्र और अजित।

मार्कण्डेयपुराणके मतसे इन्द्रसावर्णिक मन्वन्तरका नाम 'भौत्य' है। पुराणान्तरमें उक्त सप्तर्षियोंके नाम-पर भी मतभेद पड़ता है।

ज्योतिषशास्त्रको देखते वशिष्ठकी पत्नी अरुन्धतीके साथ वर्तमान मन्वन्तरके सप्तर्षि मघा नक्षत्रपर अवस्थान किया और मघाके उदयमें उदित हुआ करते हैं। काशीखण्ड शनिलोकके ऊर्ध्व और ध्रुवलोकके अधोदेशमें इनकी अवस्थिति बताता है।

३ वेद। ४ किरण। ५ भृगु प्रभृति महर्षि सन्तान।

ऋषिक (सं० पु०) ऋषेः पुत्रः, ऋषि संज्ञायां कन्, पृषोदरादित्वात् दीर्घः। १ ऋषिपुत्र, ऋषिके लड़के। २ ऋषियोंके राजा। (स्त्री०) ३ लताविशेष, एक बेल।

ऋषिका (सं० स्त्री०) नदी विशेष, एक दरया।

ऋषिकुल्या (सं० स्त्री०) ऋषीणां कुल्या कृत्रिमाल्प-सरित् इव। १ गङ्गा। २ ऋषियोंका कृत्रिम जलाशय। ३ तीर्थविशेष। ४ सरस्वती। ५ भारतवर्षकी एक नदी। "स एष देशवर उत्कलाख्यो विजीगमाः।

ऋषिकुल्यां समासाद्य दक्षिणोदधिगामिनीम्॥" (उत्कलखण्ड ६५०)

यह नदी उत्कलके गुमसर और गञ्जामप्रदेशमें प्रवाहित है। आजकल इसे ऋषिकुलिया कहते हैं। ६ भूमाकी पत्नी और उद्गीथकी जननी।

ऋषिकृत् (सं० वि०) १ उत्तेजना देनेवाला, जो भड़काता हो। २ उपस्थित होनेवाला, जो अपनी शकल देखाता हो। (सायण)

ऋषिगण (सं० पु०) ऋषिसमूह, ऋषियोंका झुण्ड।

ऋषिगिरि (सं० पु०) मगधदेशीय पर्वतविशेष, विहारका एक पहाड़। यह पर्वत क्षुद्र और राजगृहके निकट अवस्थित है।

"एष पार्थ महान् भाति पशुमान्नित्यमम्बुमान्।
निरामयः सुवेश्माढ्यो निवेशो मागधः शुभः॥
वैभारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा।
तथा ऋषिगिरिस्तात शुभाश्चैत्यकपञ्चमाः॥" (भारत, सभा २०अ०)

ऋषिगुप्त (सं० पु०) बौद्धविशेष।

ऋषिग्राम (सं० क्ली०) वीरभूमके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। यह मानसेपी नदीके तटपर अवस्थित है।

"मानसेपी नदीपार्श्वे महाप्राचीनरीतिषु च।
ऋषिग्रामं नाम च स्थापयिष्यति यवनः॥" (भ० ब्रह्मखण्ड ५०।१०२)

ऋषिचोदन (वै० वि०) ऋषिको उत्तेजित करनेवाला, जो गानेवालेका हौसला बढ़ाता हो।

ऋषिजाङ्गल (सं० पु०) ऋषभक देखो।

ऋषिजाङ्गलक (सं० पु०) ऋषभक देखो।

ऋषिजाङ्गलकी, ऋषभक देखो।

ऋषिजाङ्गला, ऋषभक देखो।

ऋषिजाङ्गलिका, ऋषभक देखो।

ऋषितर्पण (सं० क्ली०) ऋषीणां तर्पणम्, ६-तत्। ऋषियोंके उद्देश्यसे दी जानेवाली जलाञ्जलि।

ऋषितीर्थ (सं॰ पु॰) काठियावाड़का एक तीर्थ। (प्रभासखण्ड ११८।११)

ऋषितोया (सं॰ स्त्री॰) जूनागढ़के निकट बहनेवाली एक क्षुद्र नदी। इसी नदीके उपकूलपर प्रभासखण्डोक्त वस्त्रनगर है। वस्त्रनगर देखो।

ऋषित्व (सं॰ क्लो॰) ऋषिकी अवस्था या नियमावली।

ऋषिदेव (सं॰ त्रि॰) किसी बुद्धका नाम।

ऋषिद्विष् (वै॰ त्रि॰) उत्तेजित कविसे द्वेष रखनेवाला।

ऋषिपञ्चमी (सं॰ स्त्री॰) ऋषीणां सप्तर्षीणां पञ्चमी, ६-तत्। व्रतविशेष। यह व्रत भाद्र शुक्लपञ्चमीको होता है। सप्तर्षियोंकी प्रतिमा बनाकर पूजी जाती है। पूजाके बाद अकृष्टभूमिजात शाकमात्र खानेका विधान है। इसी प्रकार सात वत्सर पर्यन्त यह व्रत किया जाता है। फिर अष्टम वर्ष सप्त कलसस्थित प्रतिमामें सप्तर्षियोंकी पूजा यथाविधि मन्त्रद्वारा १०८ तिलोंका होम करना पड़ता है। अन्तको ब्राह्मण भोजन देना चाहिये।

ऋषिपट्टन (सं॰ क्लो॰) वाराणसीस्थित बौद्धोंका एक पवित्र स्थान। (अवदानशतक ७६) सारनाथ देखो।

ऋषिपुत्रक (सं॰ पु॰) दमनवृक्ष, दौनेका पेड़।

ऋषिप्रशिष्ट (सं॰ त्रि॰) ऋषियोंकी शिक्षा पाये हुआ।

ऋषिप्रोक्ता (सं॰ स्त्री॰) ऋषिभिः प्रोक्ता भैषज्याय इति शेषः, ३-तत्। माषपर्णी वृक्ष। माषपर्णी देखो।

ऋषिबन्धु (सं॰ पु॰) ऋषिः बन्धुरस्य, बहुव्री॰। १ शरभ नामक ऋषि। २ ऋषिमित्र। (त्रि॰) ३ ऋषिवंशीय।

ऋषिमना (वै॰ पु॰) ऋषेर्मन इव मनोऽस्य, मध्यपदलोपी॰। ऋषिके न्याय सर्वार्थदर्शी, जो ऋषिकी तरह सब मतलब समझता हो।

ऋषिमुख (सं॰ क्लो॰) किसी ऋषिके बनाये मण्डलका आरम्भ।

ऋषियज्ञ (सं॰ पु॰) ऋष्युद्देशको यज्ञः, मध्यपदलो॰। गृहस्थके कर्तव्य पञ्चयज्ञके मध्य एक यज्ञ। वेदके अध्ययन मात्र ही इस यज्ञमें करना चाहिये। मनुके मतसे यह पञ्चयज्ञ गृहस्थगणको अवश्य पालनीय है—

"ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञञ्च सर्वदा।
नृयज्ञं पितृयज्ञञ्च यथाशक्ति न हापयेत्॥" (मनु ४।२१)

ऋषिलोक (सं॰ पु॰) ऋषीणां लोकः, ६-तत्। सप्तर्षिगणकी अवस्थितिका स्थान, ऋषियोंकी दुनिया। काशीखण्डके मतमें यह स्थान शनिलोकसे ऊर्ध्व और ध्रुवलोकसे अधः अवस्थित है।

ऋषिवदन, ऋषिपत्तन देखो।

ऋषिवह (सं॰ त्रि॰) ऋषिको वहन करने या ले जानेवाला।

ऋषिशानर—एक संस्कृतज्ञ पण्डित। इन्होंने 'बन्धहेतूदयविभङ्गटीका' बनायी थी।

ऋषिश्राद्ध (सं॰ क्लो॰) ऋषिभिः कर्तव्यं श्राद्धम्, मध्यपदलो॰। ऋषियोंका कर्तव्य श्राद्ध। इसमें कार्यकी अपेक्षा आडम्बर अधिक रहता है।

"अजायुद्धे ऋषिश्राद्धे प्रभाते मेघडम्बरे।
दम्पत्योः कलहे चैव बह्वारम्भे लघुक्रिया॥" (चाट)

ऋषिश्रेष्ठ (सं॰ पु॰) १ पुण्डरीक वृक्ष, कमलका पेड़। २ ऋद्धि।

ऋषिश्रेष्ठा (सं॰ स्त्री॰) १ ऋद्धि। २ वृद्धि। यह एक ओषधि है।

ऋषिषह् (वै॰ त्रि॰) ऋषिको उत्तेजित करनेवाला। यह शब्द सोमका विशेषण है।

ऋषिषाण (वै॰ त्रि॰) १ ऋषिद्वारा आकर्षित। २ ऋषिद्वारा पूजित। (सायण)

ऋषिषाह्, ऋषिषह् देखो।

ऋषिषेण (सं॰ पु॰) पुराणोक्त एक राजा।

ऋषिष्टुत (सं॰ त्रि॰) ऋषिभिः स्तुतः, आर्षत्वात् षत्वम्। १ ऋषिगण द्वारा स्तव किया हुआ। (पु॰) २ अग्नि, आग।

ऋषिसत्तम (सं॰ पु॰) सबसे उत्तम ऋषि, जो सबसे अच्छा ऋषि हो।

ऋषिसर्ग (सं॰ पु॰) ऋषीणां सर्गः, ६-तत्। ब्रह्माके आदेशानुसार ऋषियोंकी सृष्टि।

ऋषिसृष्टा (सं॰ स्त्री॰) ऋद्धि, एक जड़ी।

ऋषिस्तोम (सं॰ पु॰) एक दिवस-साध्य यज्ञ विशेष। इसमें ऋषियोंका स्तव होता है।

ऋषिस्वर (वै॰ पु॰) ऋषिभिः स्वर्यते स्तूयते, ऋषि-

सू-षण्। ऋषिगणका स्तुतिपात्र, जो ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया गया हो।

ऋषी (सं० स्त्री०) ऋषि-ङीष्। ऋषिपत्नी।

ऋषीक (सं० पु०) १ ऋषिपुत्र। २ काशतृण, कास।

ऋषीकृत (सं० त्रि०) ऋषियों द्वारा प्रसिद्ध किया हुआ, जिसको ऋषियोंने मशहूर किया हो।

ऋषीवत् (सं० त्रि०) ऋषिः स्तोतृत्वेन अस्यास्ति, ऋषि-मतुप्, मस्य वः दीर्घश्च। छन्दसीरः। पा ८।२।१५। १ ऋषिस्तुत, ऋषियों द्वारा प्रशंसा किया हुआ। २ ऋषिस्तोता, ऋषियोंकी प्रशंसा करनेवाला।

ऋषीवन् (वै० त्रि०) १ ऋषितुल्य, जो ऋषियोंके बराबर हो। २ जिसके साथ ऋषि रहे।

ऋषीवह (सं० त्रि०) ऋषीन् वहति, ऋषि-वह, पचाद्यच् दीर्घश्च। ऋषिवाहक, ऋषियोंको ले जानेवाला।

ऋषु (वै० पु०) ऋष्-उ। १ अनवरत गति, कभी बन्द न होनेवाली चाल। २ सूर्यरश्मि, आफ़ताबकी रोशनी। ३ अङ्गार, अंगारा।

ऋष्टि (सं० स्त्री०) ऋष् हिंसायां क्तिन्। १ खड्ग, तलवार। २ साधारण अस्त्रमात्र, कोई मामूली हथियार। ३ दीप्ति, चमक। (त्रि०) ४ गमनागमनशील, आने-जानेवाला। (पु०) ५ धर्मसावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि। ६ ग्रहदोष। ७ अशुभ, बुराई।

ऋष्टिक (सं० पु०) देशविशेष, एक मुल्क। यह दाक्षिणात्यमें अवस्थित है। (वाल्मीकीय रामायण)

ऋष्टिमत् (वै० त्रि०) खड्गयुक्त, तलवार या भाला बांधे हुआ।

ऋष्टिविद्युत् (वै० त्रि०) १ विद्युत्के न्याय खड्ग चलानेवाला, जो बिजलीकी तरह बरछी मारता हो। २ अस्त्र द्वारा प्रकाशमान्, जो हथियारोंसे चमकता हो। (सायण)

ऋष्य (सं० पु०) ऋष्-यत् निपातनात् सिद्धम्। मृगविशेष, एक हिरन। इसका वर्ण नील और मांस मधुर, बलकारक, स्निग्ध, उष्ण एवं कफपित्तजनक होता है। (भावप्रकाश)

२ कुरुवंशीय देवातिथिके एक पुत्र। (स्त्री०) ३ श्वेत कुष्ठ, सफ़ेद कोढ़।

ऋष्यक (सं० पु०) मृगविशेष। ऋष्य देखो।

ऋष्यकेतन, ऋष्यकेतु देखो।

ऋष्यकेतु (सं० पु०) ऋष्यः केतौ यस्य, बहुव्री०। अनिरुद्ध।

ऋष्यगता (सं० स्त्री०) ऋष्य वा ऋषिसमूहेन गता ज्ञाता, ३-तत्। १ शतमूली, सतावर। २ माषपर्णी। ३ अतिबला।

ऋष्यगन्धा (सं० स्त्री०) ऋष्यस्य मृगस्य गन्ध इव गन्धो यस्याः, बहुव्री०। १ ऋषिजाङ्गला। २ अतिबला। ३ क्षीरविदारी। ४ श्वेतशर्करकन्द, सफ़ेद शकरकन्द। ५ रक्तशर्करकन्द, लाल शकरकन्द।

ऋष्यगन्धिका, ऋष्यगन्धा देखो।

ऋष्यजिह्व (सं० क्ली०) महाकुष्ठ रोग, बड़ा कोढ़। यह पैत्तिक, मृगकी जिह्वाके न्याय खरस्पर्श और आभ्यन्तरिक उष्माविशिष्ट होता है। अल्पदिनके मध्य ही ऋष्यजिह्व पककर फट जाता है। फिर इसमें क्रिमि पड़ते भी देर नहीं लगती। (सुश्रुत)

ऋष्यजिह्वक, ऋष्यजिह्व देखो।

ऋष्यपुष्पी (सं० स्त्री०) अतिबला, बरियारी।

ऋष्यप्रोक्ता (सं० स्त्री०) १ श्वेतवाट्यालक, सफ़ेद बरियारी। २ शतमूली, सतावर। ३ महाशतावरी, बड़ी सतावर। ४ महाबला, बड़ी बरियारी। ५ कपिकच्छुलता, केवांच। ६ पीतवाट्यालक, पीली बरियारी। ७ माषपर्णी।

ऋष्यमूक (सं० पु०) एक पर्वत। रामायणमें लिखा, कि रावणके सीताहरण करने पर नाना स्थान घूम-फिर रामचन्द्रका एक पर्वतपर जाना हुआ था। वहीं कबन्ध नामक दानवने उनसे कहा—'पम्पा नदीके तीर ऋष्यमूक पर्वत पर सुग्रीव रहते हैं। वह आपको सीताका संवाद बता सकेंगे।' (अरण्य ७१ सर्ग) तुलसीदासने भी रामचन्द्रके ऋष्यमूक पर्वतको जानेका उल्लेख किया है—

"आगे चले बहुरि रघुराई। ऋष्यमूक पर्वत नियराई॥"

प्रथमतः समझना चाहिये—पम्पानदी कहां है। पम्पा नदीकी वर्तमान अवस्थिति ठहरा सकनेपर ऋष्यमूक पर्वतका पता अनायास ही लग जायेगा।

अध्यापक विलसन साहबके मतानुसार पम्पा नदी ऋष्यमूक पर्वतसे निकल अनागुण्डीके निकट तुङ्गभद्रामें जा मिली है। (Wilson's Mackenzie-Collection, p. 138.)

बेगलर साहब पम्पाकी अवस्थिति मध्यप्रदेशमें बताते हैं। उसका वर्तमान नाम पाम्प है। (Archæological Survey of India, Reports, Vol. XIII. p. 57)

उक्त दोनों ही मत अयौक्तिक समझ पड़ते हैं। रामायणमें कहा है—

"एष राम गिरिः पम्पा यत्रैते पुष्पिता द्रुमाः।
प्रतीचीं दिशमास्थाय प्रकाशन्ते मनोरमाः॥२
जम्बुप्रियालपनसन्यग्रोधप्लक्षतिन्दुकाः।
अश्वत्थाः कर्णिकाराश्च चूताश्चान्ये च पादपाः॥३
धन्वना नागवृक्षाश्च तिलका नक्तमालकाः।
नीलाशोकाः कदम्बाश्च करवीराश्च पुष्पिताः॥४
अग्निमुख्या अशोकाश्च सुरक्ताः पारिभद्रकाः।
• • • •
चंक्रमन्तौ वरान् शैलान् शैलाच्छैलं वनाद्वनम्॥१०
ततः पुष्करिणीं वीरौ पम्पां नाम गमिष्यथः।
अशर्करामविभ्रंशां समतीर्थामशैवलाम्॥११
राम सञ्जातवालुकां कमलोत्पलशोभिताम्।
तत्र हंसाः प्लवाः क्रौञ्चाः कुररांश्चैव राघव॥१२
वल्गुस्वरानि कूजन्ति पम्पासलिलगोचराः।" (अरण्य ७३ सर्ग)

हे राम! (पम्पाके) पश्चिम दिग्वर्ती प्रदेश जानेको यही पथ मङ्गलकर है। इसको चारो ओर पुष्पयुक्त मनोहर जम्बु, पियाल, पनस, वट, प्लक्ष, तिन्दुक अश्वत्थ, कर्णिकार, आम्र, धव, नागकेशर, करञ्ज, तिलक, नील, अशोक, कदम्ब, करवीर, रक्तचन्दन, रक्त अशोक, पारिजात और अन्यान्य वृक्ष प्रकाशित हो रहे हैं। हे वीरद्वय! आप एक पर्वतसे दूसरा पर्वत और एक वनसे दूसरा वन—अनेक पर्वत एवं अनेक वन लांघ पद्मसमूहसे समाकीर्ण पम्पा नदी पर पहुंचेंगे। उसमें कंकड़ और सेवारका कहीं नाम नहीं, वालुका भरी तथा श्वेत एवं नील पद्मिनी खिली है। हंस, मण्डूक, क्रौञ्च और कुरर पक्षी मनोहर स्वरसे बोला करते हैं।

अपरस्थानमें लिखते हैं—

"ऋष्यमूकस्तु पम्पायाः पुरस्तात् पुष्पितद्रुमः।
सुदुःखारोहणश्चैव शिशुनागाभिरक्षितः॥३१

• • • •
उदारो ब्रह्मणा चैव पूर्वकाले विनिर्मितः॥" ३२

दुरारोहण, नागशिशु-समाकुल, पूर्वकालपर ब्रह्मा द्वारा निर्मित और पुष्पित-वृक्ष-शोभित ऋष्यमूक पर्वत उसी पम्पा नदीके सम्मुख है।

"पम्पातीरे तु पूर्वोक्तः पर्वतो धातुमण्डितः॥१५
ऋष्यमूक इति ख्यातश्चित्रपुष्पितपादपः।" (अरण्यकाण्ड ७५ सर्ग)

इसी नदीके तीरपर विविध धातुमण्डित एवं पुष्पित वृक्षसमूहसे समाकीर्ण पूर्वोक्त ऋष्यमूक पर्वत है।

रामचन्द्रके समय ऋष्यमूक पर्वत पर यह उद्भिद् उपजते थे—

"शोभितं पश्य पम्पाया दक्षिणे गिरिसानुषु।
पुष्पितां कर्णिकारस्य यष्टिं परमशोभिताम्॥ ७२॥
अचिरं शैलराजोऽयं धातुभिस्तु विभूषितः।
विचित्रं सृजते रेणुं वायुवेगविघट्टितम्॥ ७३॥
गिरिप्रस्थास्तु सौमित्रे सर्वतः सम्प्रपुष्पितैः।
निष्पत्रैः सर्वतो रक्तैः प्रदीप्ता इव किंशुकैः॥ ७४॥
मुचुकुन्दार्जुनाश्चैव दृश्यन्ते गिरिसानुषु।
केतक्युद्दालकाश्चैव शिरीषाः शिंशपा धवाः॥ ८१॥
शाल्मल्यः किंशुकाश्चैव रक्ताः कुरवकास्तथा।
तिनिशा नक्तमालाश्च चन्दनाः स्यन्दनास्तथा॥ ८२॥
हिन्तालास्तिलकाश्चैव नागवृक्षाश्च पुष्पिताः।
पुष्पितान् पुष्पिताग्राभिर्लताभिः परिवेष्टितान्॥ ८३॥"

(किष्किन्धा १ सर्ग)

हे सुमित्रानन्दन! पम्पाके दक्षिण भागपर गिरिसानुमें परम शोभित सुपुष्पित कर्णिकाके वृक्ष देखिये। यह शैलराज गैरिकादि धातुसमूहसे विभूषित हो वायुवेगसे विघूर्णित रेणु उत्पन्न करते हैं। गिरिसानुकी चारो ओर पुष्पित पत्रहीन किंशुक चमक रहे हैं। मुचकुन्द, अर्जुन, केतक, उद्दालक, शिरीष, शिंशपा, धव, शाल्मली, किंशुक, रक्तकुरवक, तिनिश, करञ्ज, चन्दन, स्यन्दन, हिन्ताल, पुन्नाग और तिलक प्रभृति पुष्पित वृक्ष कैसे सुहावने लगते हैं।

फिर रामायणको देखते ऋष्यमूक और मलय उभय पर्वत निकटस्थ हैं। ऋष्यमूक मलयका एकदेशवर्ती पर्वत है।

"ऋष्यमूकात् हनुमान् गत्वा तं मलयं गिरिम्।
आचचक्षे तदा वीरौ कपिराजाय राघवौ॥ १॥"
(किष्किन्धा ५ सर्ग)

हनुमान्‌ने ऋष्यमूकसे मलयगिरिपर पहुंच कपिराज सुग्रीवसे रघुवीरद्वयका वृत्तान्त बताया था।

वर्त्तमान मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत त्रिवाङ्कोड़ नामक राज्यमें एक 'पम्बे' नदी पड़ती है। जिस पर्वतसे यह नदी निकलती, उसकी संज्ञा पश्चिमघाट या अनमलय है। यही नदी रामायणोक्त 'पम्पा' मानी जाती है। इसीकी उत्पत्तिका स्थान ऋष्यमूक है। आजकल अनमलय वा हस्तिगिरि कहते हैं।

रामायणमें ऋष्यमूक पर्वतके उद्भिदादिका जो विषय पड़ता, उसका अधिकांश अद्यापि इस अनमलय गिरिपर मिलता है। वास्तविक ऐसी उर्वरा स्थली दक्षिणापथ पर प्रायः देखनेमें नहीं आती।

हण्टर साहबने इस गिरिके सम्बन्धमें लिखा है—
"The soil supports a flora of extraordinary variety and beauty; while the climate equals in salubrity that of any sanitarium, and……any plantation of Southern India." (Hunter's Imp. Gaz. India, 2nd Ed. Vol. I, p. 269.)

अतएव हमारे मतमें अनमलय पर्वत ही ऋष्यमूक ठहरता है।

ऋष्यशृङ्ग (सं॰ पु॰) ऋष्यस्य मृगस्य शृङ्गमिव शृङ्गमस्य, बहुव्री॰। १ कोई मुनि। रामायण और महाभारतमें इनका वृत्तान्त इसप्रकार कहा है—विभाण्डक नामक एक महातेजा काश्यपवंशीय ऋषि रहे। किसी समय अप्सरा उर्वशीको देखनेसे जलके मध्य उनका रेतः गिर गया था। एक मृगी वह जलमिश्र रेतः पीकर गर्भिणी हुई। यह मृगी भी शापभ्रष्टा कोई देवकन्या थी। यथाकाल मृगीने एक पुत्र प्रसव किया। मृगीके गर्भसे उत्पन्न होनेपर उसके एक शृङ्ग निकला था। इसीसे लोग उसे ऋष्यशृङ्ग कहने लगे। पिता भिन्न अपर व्यक्ति कभी देख न पड़नेसे उनका मन सिवा ब्रह्मचर्यके अन्य विषय पर चलता न था।

इसी समय दशरथके बन्धु अङ्गेश्वर लोमपादको किसी अपराध वश ब्राह्मणोंने छोड़ रखा था। उनका यज्ञकार्यादि बिगड़ा और इन्द्रके असन्तुष्ट रहनेसे राज्यपर जल भी न पड़ा। फिर लोमपादने विनत हो किसी प्रकार ब्राह्मणोंको परितुष्ट कर इस विपद्से बचनेका उपाय पूछा था। उन्होंने ऋष्यशृङ्गको लानेकी बात कही। उसीके अनुसार राजाने इस दुष्कर कार्यपर कितनी ही वेश्याओंको लगा दिया। जलपथसे लानेका परामर्श कर नौकायोगमें तपोवनके समीप वह पहुंची और दूर ही नौका खड़ी रख ऋष्यशृङ्गके निकट गयी थीं। नानारूप भावभङ्गी देखा, विचित्र माल्य एवं विविध वस्त्रादि पहना और नानाप्रकार सुस्वादु पेयादि पिला उन्होंने ऋष्यशृङ्गको क्रमशः कामोन्मत्त किया, फिर नौकाका पथ लिया। पीछे विभाण्डकने वहां पहुंच और ऐसी अवस्था देख पुत्रको नाना प्रकार सान्त्वना दी थी। किन्तु तपस्यार्थ उनके पुनर्वार गमन करते ही वेश्यायें आ और ऋष्यशृङ्गको नौकापर बैठा अतिसत्वर लोमपादके पास उपस्थित हुईं। लोमपादने सन्तुष्टचित्तसे उन्हें अन्तःपुरमें रखा था। उनके आते ही समस्त राज्यमें प्रभूत वर्षण पड़ा। फिर लोमपादने कृतकृतार्थ हो विभाण्डकके अभिशापसे बचनके लिये मित्र दशरथकी शान्ता नाम्नी कन्या ऋष्यशृङ्गको सौंप दी। इधर विभाण्डकने आश्रममें पहुंच और पुत्रके अदर्शनमें ध्यानस्थ हो समुदाय देख लिया था। वह क्रोधसे प्रज्वलित हो लोमपादके राज्यमें आये। उनके आगमनसे सब लोग भय खा ऋष्यशृङ्गका राज्य बताने लगे। फिर विभाण्डकने कोपको छोड़ दिया और पुत्र तथा पुत्रवधूको आदर प्रदर्शनपूर्वक आश्रमके प्रति प्रत्यागमन किया था। ऋष्यशृङ्ग पत्नीके साथ उसी राज्यमें रहने लगे।

इन्हीं ऋष्यशृङ्गने दशरथ राजाका पुत्रेष्टियज्ञ किया, जिसके फलसे रामादि भ्रातृचतुष्टयने जन्म लिया था। यह अतिशय प्रतापशाली एवं यज्ञनिष्ठ रहे। २ सावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि।

ऋष्याङ्क (सं॰ पु॰) प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्ध। अनिरुद्ध देखो।

ऋष्यादि (सं॰ पु॰) ऋषिरादिरस्य, बहुव्री॰। वैदिक मन्त्रके अवश्य ज्ञातव्य ऋषि प्रभृति पांच विषय। पांचो

विषयोंके नाम यह है—आर्ष, छन्द, देवत्व, विनियोग और ब्राह्मण। (योगिया०)

ऋष्यादिन्यास (सं० पु०) ऋष्यादीनां न्यासः, ६-तत्। तन्त्रोक्त न्याससमूह। मस्तकमें ऋषिन्यास, मुखमें छन्दोन्यास, हृदयमें देवतान्यास, गुह्यदेशमें बीजन्यास, पादद्वयमें शक्तिन्यास और सर्वाङ्गमें कीलकन्यास करना चाहिये। (तन्त्र)

ऋष्व (सं० त्रि०) ऋष-व निपातनात् साधुः। १ वृहत्, बड़ा। २ महत्‌नाम, मनोहर।

ऋष्ववीर (सं० त्रि०) वृहत् वीरों द्वारा बसा हुआ।

ऋष्वौजस् (वै० त्रि०) महद्‌बलविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऋहत् (सं० त्रि०) रह-शत पृषोदरादित्वात् साधुः। खर्वाकृति, छोटा, कमजोर।

ॠ

ॠ—१ हिन्दी और संस्कृतके स्वरवर्णका अष्टम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान मूर्धा है। उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे ॠ वर्ण तीन और अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो प्रकारका होता है। इसकी लिखनकी प्रणाली प्रायः ह्रस्व ऋकारके न्याय रहती है। केवल ह्रस्व ऋकारके नीचे एक रेखा दक्षिण दिक्‌से आरम्भ हो वक्रभावमें वाम दिक् पर्यन्त कुञ्चित पड़ती, फिर दक्षिण दिक्‌को चलती है। (वर्णोद्धारतन्त्र) इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम क्रोध, अतिथीश, वाणी, वामनी, गो, श्री, द्युति, ऊर्ध्वमुखी, निशानाथ, पद्ममाला, विनष्टधी, शशिनी, मोचिका, श्रेष्ठा, दैत्यमाता, प्रतिष्ठाता, एकदण्डाश्रय, माता, हरिता, मिथुनोदया, कोमला, श्यामला, मेधी, प्रतिष्ठा, पति, अट्टसी, पावक और गन्धकर्षिणी है।

२ नासिका, नाक। ३ धातुका एक अनुबन्ध। "अयनकृताऽनुबन्धौ।" (कविकल्पद्रुम)

(धातु) भ्वादि० क्र्यादि० पर० सक० सेट्। ४ वाक्यारम्भ करना, बोलने लगना। ५ रक्षा करना, बचाना। ६ निन्दा करना, बुरा बताना। ७ भय देखना, खौफ दिलाना। ८ गमन करना, जाना। (स्त्री०) ॠ-क्विप्। ८ वक्षः, छाती। (स्त्री०) १० दानवमाता। ११ देवमाता। १२ स्मृति, याद। १३ गमन, चाल। (पु०) १४ दनुज। १५ भैरव, महादेव।

"ॠकारदानवे: स्मर्यंगमने" (शब्द)

ऌ

ऌ—१ स्वरवर्णका नवम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान दन्त है। यह वर्ण ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत भेदसे तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो और उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे फिर तीन प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें लिखा, कि ऌकार कुण्डलाकृति और श्रेष्ठ देवता है। यह पञ्चगुण और चतुर्वर्गमय रहता है। ऌकारमें ब्रह्मादि देव सर्वदा वास करते हैं। इसका प्राण पांच, गुण तीन, विन्दु तीन और वर्ण पीत विद्युल्लता जैसा होता है। लिखनप्रणाली पर अधोदेशको कुण्डलाकृति रेखा वक्रभावमें दक्षिणसे वामदिक् जाती है। ऌकारमें अग्नि, महादेव और वायु रहा करते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रोक्त नाम स्थाणु, श्रीधर, शुद्ध, मेधा, धूम्रावक, वियत्, देवयोनि, दक्षगण्ड, महेश, कौम, रुद्रक, चित्रेश्वर, दीर्घजिह्वा, महेन्द्र, मातृग्नि, धरा, चन्द्रिका, पार्थिव, धूम्रा, द्विदन्त, कामवर्धन, शुचिस्मिता, नवमी, कान्ति, आत्मातकेश्वर, विश्वाकर्षिणी, काम और द्वितीयकुलसुन्दरी है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। यह अनुबन्ध पड़नेसे धातुके उत्तर लुङ् विभक्ति पर अङ् लगता है।

"ऌदङ्‌लुङि।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ देवमाता। ४ भूमि। ५ पर्वत।

ॡ—१ स्वरवर्णका दशम अक्षर। इसका उच्चारणस्थान दन्त है। यह वर्ण दीर्घ एवं प्लुत तथा अनु-

"ऋष्यमूकात् हनुमान् गत्वा तं मलयं गिरिम्।
आचचक्षे तदा वीरौ कपिराजाय राघवौ ॥ १ ॥"
(किष्किन्धा ५ सर्ग)

हनूमान्‌ने ऋष्यमूकसे मलयगिरिपर पहुंच कपिराज सुग्रीवसे रघुवीरद्वयका वृत्तान्त बताया था।

वर्तमान मन्द्राज प्रदेशके अन्तर्गत त्रिवाङ्कोड़ नामक राज्यमें एक 'पम्बे' नदी पड़ती है। जिस पर्वतसे यह नदी निकलती, उसकी संज्ञा पश्चिमघाट या अनमलय है। यही नदी रामायणोक्त 'पम्पा' मानी जाती है। इसीकी उत्पत्तिका स्थान ऋष्यमूक है। आजकल अनमलय या हस्तिगिरि कहते हैं।

रामायणमें ऋष्यमूक पर्वतके उद्भिदादिका जो विषय पड़ता, उसका अधिकांश अद्यापि इस अनमलय गिरिपर मिलता है। वास्तविक ऐसी उर्वरा स्थली दक्षिणापथ पर प्राय: देखनेमें नहीं आती।

हण्टर साहबने इस गिरिके सम्बन्धमें लिखा है—
"The soil supports a flora of extraordinary variety and beauty; while the climate equals in salubrity that of any sanitarium, and......any plantation of Southern India."
(Hunter's Imp. Gaz. India, 2nd Ed. Vol. I, p. 269.)

अतएव हमारे मतमें अनमलय पर्वत ही ऋष्यमूक ठहरता है।

ऋष्यशृङ्ग (सं॰ पु॰) ऋष्यस्य मृगस्य शृङ्गमिव शृङ्गमस्य, बहुव्री॰। १ कोई मुनि। रामायण और महाभारतमें इनका वृत्तान्त इसप्रकार कहा है—विभाण्डक नामक एक महातेजा काश्यपवंशीय ऋषि रहे। किसी समय अप्सरा उर्वशीको देखनेसे जलके मध्य उनका रेत: गिर गया था। एक मृगी वह जलमिश्र रेत: पीकर गर्भिणी हुई। यह मृगी भी शापभ्रष्टा कोई देवकन्या थी। यथाकाल मृगीने एक पुत्र प्रसव किया। मृगीके गर्भसे उत्पन्न होनेपर उसके एक शृङ्ग निकला था। इसीसे लोग उसे ऋष्यशृङ्ग कहने लगे। पिता भिन्न अपर व्यक्ति कभी देख न पड़नेसे उसका मन सिवा ब्रह्मचर्यके अन्य विषय पर चलता न था।

इसी समय दशरथके बन्धु अङ्गेश्वर लोमपादको किसी अपराध वश ब्राह्मणोंने छोड़ रखा था। उनका यज्ञकार्यादि बिगड़ा और इन्द्रके असन्तुष्ट रहनेसे राज्यपर जल भी न पड़ा। फिर लोमपादने विव्रत हो किसी प्रकार ब्राह्मणोंको परितुष्ट कर इस विपद्‌से बचनेका उपाय पूछा था। उन्होंने ऋष्यशृङ्गको लानेकी बात कही। उसीके अनुसार राजाने इस दुष्कर कार्यपर कितनी ही वेश्याओंको लगा दिया। जलपथसे लानेका परामर्श कर नौकायोगमें तपोवनके समीप वह पहुंची और दूर ही नौका खड़ी रख ऋष्यशृङ्गके निकट गयी थीं। नानारूप भावभङ्गी देखा, विचित्र माल्य एवं विविध वस्त्रादि पहना और नानाप्रकार सुस्वादु पेयादि पिला उन्होंने ऋष्यशृङ्गको क्रमश: कामोन्मत्त किया, फिर नौकाका पथ लिया। पीछे विभाण्डकने वहां पहुंच और ऐसी अवस्था देख पुत्रको नाना प्रकार सान्त्वना दी थी। किन्तु तपस्यार्थ उनके पुनर्वार गमन करते ही वेश्यायें आ और ऋष्यशृङ्गको नौकापर बैठा अतिसत्वर लोमपादके पास उपस्थित हुईं। लोमपादने सन्तुष्टचित्तसे उन्हें अन्त:पुरमें रखा था। उनके आते ही समस्त राज्यमें प्रभूत वर्षण पड़ा। फिर लोमपादने कृतकृतार्थ हो विभाण्डकके अभिशापसे बचनेके लिये मित्र दशरथकी शान्ता नाम्नी कन्या ऋष्यशृङ्गको सौंप दी। इधर विभाण्डकने आश्रममें पहुंच और पुत्रके अदर्शनमें ध्यानस्थ हो समुदाय देख लिया था। वह क्रोधसे प्रज्वलित हो लोमपादके राज्यमें आये। उनके आगमनसे सब लोग भय खा ऋष्यशृङ्गका राज्य बताने लगे। फिर विभाण्डकने कोपको छोड़ दिया और पुत्र तथा पुत्रवधूको आदर प्रदर्शनपूर्वक आश्रमके प्रति प्रत्यागमन किया था। ऋष्यशृङ्ग पत्नीके साथ उसी राज्यमें रहने लगे।

इन्हीं ऋष्यशृङ्गने दशरथ राजाका पुत्रेष्टियज्ञ किया, जिसके फलसे रामादि भ्रातृचतुष्टयने जन्म लिया था। यह अतिशय प्रतापशाली एवं यशस्वी रहे। २ सावर्णिक मन्वन्तरके एक ऋषि।

ऋष्याद (सं॰ पु॰) प्रद्युम्नके पुत्र अनिरुद्ध। अनिरुद्ध देखो।

ऋष्यादि (सं॰ पु॰) ऋषिरादिरस्य, बहुव्री॰। वैदिक मन्त्रके अवश्य ज्ञातव्य ऋषि प्रभृति पांच विषय। पांचो

विषयोंके नाम यह है—पार्ष, छन्द, देवता, विनियोग और ब्राह्मण। (योगिनी०)

ऋष्यादिन्यास (सं० पु०) ऋष्यादीनां न्यासः, ६-तत्। तन्त्रोक्त न्याससमूह। मस्तकमें ऋषिन्यास, मुखमें छन्दोन्यास, हृदयमें देवतान्यास, गुह्यदेशमें वीजन्यास, पादद्वयमें शक्तिन्यास और सर्वाङ्गमें कीलकन्यास करना चाहिये। (तन्त्र)

ऋष्व (सं० त्रि०) ऋष्-व निपातनात् साधुः। १ बृहत्, बड़ा। २ महत्‌नाम, सराहर।

ऋष्ववीर (सं० त्रि०) बृहत् जीवों द्वारा वश हुआ।

ऋष्वौजस् (वै० त्रि०) महद्बलविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऋहत् (सं० त्रि०) रह-अत् पृषोदरादित्वात् साधुः। ह्रस्वाकृति, छोटा, कमजोर।

ॠ

ॠ—१ हिन्दी और संस्कृतके स्वरवर्णका अष्टम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान मूर्धा है। उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे ॠ वर्ण तीन और अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो प्रकारका होता है। इसके लिखनकी प्रणाली प्रायः ह्रस्व ऋकारके न्याय रहती है। केवल ह्रस्व ऋकारके नीचे एक रेखा दक्षिण दिक्‌से आरम्भ हो वक्रभावमें वाम दिक् पहुंच कुञ्चित पड़ती, फिर दक्षिण दिक्‌को चलती है। (वर्णोद्धारतन्त्र) इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम क्रोध, अतियोग, वाणी, वामनी, गो, श्री, धृति, ऊर्ध्वमुखी, निशानाथ, पद्ममाला, विरजाक्षी, शशिनी, मोचिका, श्रेष्ठा, दैत्यमाता, प्रतिष्ठाता, एकादशाह्वय, माता, हरिता, मिथुनोदया, कोमला, श्यामला, मेधी, प्रतिष्ठा, पति, अष्टमी, पावक और गन्धकर्षिणी है।

२ नासिका, नाक। ३ धातुका एक अनुबन्ध। "ऋदनुबन्धपरणो।" (कविकल्पद्रुम)

(धातु) भ्वादि० क्र्यादि० पर० सक० सेट्। ४ वाक्यारम्भ करना, बोलने लगना। ५ रक्षा करना, बचाना। ६ निन्दा करना,बुरा बताना। ७ भय देखाना, खौफ दिलाना। ८ गमन करना, जाना। (स्त्री०) ॠ-क्विप्। ९ वक्षः, छाती। (स्त्री०) १० दानवमाता। ११ देवमाता। १२ स्मृति, याद। १३ गमन, चाल। (पु०) १४ दनुज। १५ भैरव, महादेव। "ऋमन्दराविः प्रमदेशराः" (शब्द)

ऌ

ऌ—१ स्वरवर्णका नवम अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान दन्त है। यह वर्ण ह्रस्व, दीर्घ एवं प्लुत भेदसे तीन, अनुनासिक तथा निरनुनासिक भेदसे दो और उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित भेदसे फिर तीन प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें लिखा, कि ऌकार कुण्डलाकृति और श्रेष्ठ देवता है। यह पञ्चगुण और चतुर्ज्ञानमय रहता है। ऌकारमें ब्रह्मादि देव सर्वदा वास करते हैं। इसका प्राण पांच, गुण तीन, विन्दु तीन और वर्ण पीत विद्युल्लता जैसा होता है। लिखनप्रणाली यह अधोदेशको कुण्डलाकृति रेखा वक्रभावमें दक्षिणसे वामदिक् जाती है। ऌकारमें अग्नि, महादेव और वायु रहा करते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रोक्त नाम स्थाणु, श्रीधर, शुद्ध, मेधा, धूम्रायक, वियत्, देवयोनि, दक्षगण्ड, महेश, कौल, रुद्रक, विश्वेश्वर, दीर्घजिह्वा, महेन्द्र, लाङ्गलि, परा, चन्द्रिका, पार्थिव, धूम्रा, द्विदन्त, कामवर्धन, शुचिस्मिता, नवमी, कान्ति, आम्रातकेश्वर, विश्वाकर्षिणी, काम और तृतीयकुलसुन्दरी है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। यह अनुबन्ध परस्मै धातुके उत्तर लुङ् विभक्ति पर अङ् लगता है। "लृदङ्‌ग्वान्।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ देवमाता। ४ भूमि। ५ पर्वत।

ॡ—१ स्वरवर्णका दशम अक्षर। इसका उच्चारण स्थान दन्त है। यह वर्ण दीर्घ एवं प्लुत तथा अनु-

नासिक-और निरनुनासिक भेदसे द्विविध, फिर उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। कामधेनुतन्त्रके मतसे लृकार पूर्णचन्द्रतुल्य, पञ्चदेव एवं प्राणात्मक, तीन गुण तथा तीन विन्दु विशिष्ट, चतुर्वर्गप्रद और परम कुण्डली है। इसकी लिखनप्रणालीमें रेखा छस लृकारके क्रोड़ तुल्य लगती है। इस रेखा को वैष्णवी कहते हैं। फिर इस रेखामें दुर्गा, वाणी और सरस्वती रहती हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र) तन्त्रमास्तोक्त नाम कमला, हर्षा, हृषीकेश, मधुव्रत, सूक्ष्मा, कान्ति, वामगण्ड, रुद्र, कामोदरी, सुरा, शान्तिकृत्, स्वस्तिका, शक्र, मायावी, लोलुप, वियत्, कुशमी, सुस्थिर, माता, नीलपीत, गजानन, कामिनी, विश्वपा, काल, निया, शुद्ध, शुचि, क्षती, सूर्य, धैर्याकर्षिणी, एकाकी और दनुजप्रभु है।

पाणिनि लृकारका दीर्घत्व नहीं मानते। किन्तु वार्तिक सूत्रके अनुसार आवश्यक स्थलपर लृकारके स्थानमें लृकार लगा लेना पड़ता है। "लृ ति लृ वा।" (वार्तिक) इसलिये तन्त्र और मुग्धबोध-व्याकरणमें स्वीकृत लृकार विरुद्ध नहीं ठहरता।

(अव्य०) २ देवनारी। ३ नार्यांक्ता। ४ माता। (स्त्री०) ५ दैत्यस्त्री। ६ दनुजमाता। ७ कामधेनुमाता। (पु०) ८ सर्प। ९ महादेव।

ए

ए—१ स्वरवर्णका एकादश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान कण्ठ और तालु है। एकार दीर्घ एवं प्लुत तथा अनुनासिक एवं निरनुनासिक भेदसे द्विविध और उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध होता है। कामधेनुतन्त्रके मतसे यह परम, दिव्य, ब्रह्मविष्णु-शिवात्मक, रक्तिनी-कुसुमतुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणात्मक, विन्दुत्रयविशिष्ट, चतुर्वर्गप्रद और परम कुण्डली है। लिखनकी प्रणालीमें वामदिक्से एक कुञ्चित रेखा दक्षिण दिक्को जा अधोगत पहुंती, फिर वहांसे वाम दिक्को चलती है। इस रेखामें अग्नि, महादेव और वायु रहते हैं। (वर्णोद्धारतन्त्र) एकारका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम वास्तव, शक्ति, झिण्टा, सोष्ठ, भग, मरुत्, सूक्ष्मा, भूत, अर्धकेशी, ज्योत्स्ना, श्रद्धा, प्रमर्दन, भय, ज्ञान, क्षपा, धीरा, जङ्घा, सर्वसमुद्भव, वह्नि, विष्णु, भगवती, कुण्डली, मोहिनी, वस, योषित्, आधारशक्ति, त्रिकोणा, ईश, सन्धि, एकादशी, भट्टा, पद्मनाभ और कुलाचल है। बीजवर्णाभिधानमें वामगण्डान्त, मोक्षबीज, विजया और ओष्ठ कई नाम अधिक लिखे हैं। शिक्षाके अनुसार यह सन्धिका अक्षर लगता और अकार तथा इकार मिलनेसे बनता है।

२ धातुका अनुबन्ध विशेष। "ए: शिचि चड़ः।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ स्मृति, याद। ४ असूया, नाख़ुशी। ५ अनुग्रह, मेहरबानी। ६ आमन्त्रण, न्योता, बुलावा। ५ आह्वान, पुकार।

(पु०) एति प्राप्नोति सर्वं विश्वम्, इण्-अच्। ६ विष्णु।

(हिं० सर्व०) ७ यह।

एंच (हिं० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ विलम्ब, देर। ३ जमींदारोंके आमदनी देनेका महाजनी नियम।

एंचना (हिं० क्रि०) १ रेखा निर्माण करना, सतर खींचना। २ लिखना, खींच देना। ३ निकालना। ४ फांसी देना। ५ शुष्क करना, सुखाना। ६ लेना। ७ रखना। ८ लगाना।

एंचपेंच (हिं० पु०) १ आवर्त, हेरफेर। २ वक्रगति, टेढ़ी चाल।

एंचाताना (हिं० वि०) वक्रदृष्टि, तिरछा देखनेवाला। "सौपर सुआ हजार पर काना भला न आधपर एंचाताना।" (लोकोक्ति)

एंचातानी (हिं० स्त्री०) १ युद्ध, लड़ाई। २ कठिनता, मुश्किल। ३ खींचखांच, धर-पकड़।

एंड, एड देखो।

एंडाबेंड़ा (हिं० वि०) उच्चनीच, उलटपुलट।

एंडी (हिं० स्त्री०) कीट विशेष, एक कीड़ा। यह रेशमका कीड़ा एरण्डके पत्र भक्षण करता है। पूर्ववङ्ग तथा आसाम इसका निवासस्थान है। नव-

स्थ,फरवरी और मई में एंडी अच्छा रेशम देती है। किन्तु एंडीकी अपेक्षा मूंगीका रेशम बढ़िया होता है। २ अंडी, एंडीका रेशम। इस रेशमकी बनी चद्दरको भी अंडी ही कहते हैं।

एंडुवा (हिं० पु०) बोझके नीचे रखनेकी तकिया, गेंडुरी। मजदूर बोझ सिरपर लादते समय इसे नीचे रख लेते हैं। एंडुवा सिरकी रक्षा करता है। इससे बोझ हलका मालूम पड़ता और सिर कम दुखता है।

एक (सं० त्रि०-सर्व०) एतीति, इण-कन्। इण्भीका-पाशल्यतिमर्चिभ्यः कन्। उण् ३।४३। १ प्रधान, खास, बड़ा। २ अन्य, दूसरा। ३ केवल, अकेला। ४ आदि, अव्वल। ५ अद्वितीय, निराला। ६ सत्य, सच्चा। ७ समान, बराबर। ८ अल्प, थोड़ा। ९ प्रथम, पहला। १० कोई। ११ एकसंख्याविशिष्ट, जो एक ही अदद-का हो।

"एक अकेला दस भी नहा।"
एक अन्य ही काम।"
"एक ही थैलीके चट्टे बट्टे।" (लोकोक्ति)

(पु०) १२ परमेश्वर। १३ विष्णु। १४ ऐल-वंशीय एक राजा। (भागवत ९।१७।१९) १५ अग्नि। १६ सूर्य। १७ देवराज। १८ यम।

परमात्मा, विधु, क्षिति, गणेशदन्त और शुक्लपक्ष एकसंख्यार्थबोधक शब्द है।

एकंग (हिं० वि०) एकाकी, अकेला।

एकंगा (हिं० वि०) एक टिकुस, जो एक ही ओर हो।

एकंगी (हिं० स्त्री०) यष्टिका विशेष, एक लाठी। यह लंठदार होती है। लम्बाई ४।५ हाथ रहती है। पकड़नेके लिये मुठिया लगा दी जाती है। एकंगीसे लकड़ी खेलते हैं। यह मार और बचाव दोनों काम आती है। एकंगी एक प्रकारका बड़ा लट्ठा है।

एकंड़िया (हिं० वि०) १ एक खण्डयुक्त, जो एक ही गांठका हो। (पु०) २ एक अण्डकोषयुक्त अश्व या वृषभ, जिस बैल या घोड़ेके एक ही फोता रहे। ३ एक गांठका लहसुन।

एकंत (हिं०) एकान्त देखो।

एकक (सं० त्रि०) एक-कन्। असहाय, अकेला, जिसके साथी न रहे।

"विधिविकलकमहन्यादिवम्।" (नैषध ३।१६)

एककन्द (सं० पु०) पानीयालुक, कन्दशाक।

एककपाल (सं० त्रि०) एक ही पात्रमें रखनेवाला, जो एक ही बरतनमें हो।

एककर (सं० त्रि०) एकं करोतीति, एक-कृ-ट। दिवाविभानिशेति। पा ३।२।२१। एकमात्रकारक, अकेला करनेवाला।

एककर्ण—भारतवर्षके अन्तर्गत जनपदविशेष। उत्तर-पश्चिम सीमान्तमें अवस्थित है। (मत्स्य ११०।४१,मार्क० ५७।३७)

एककर्मकारक, एककर्मकारी देखो।

एककर्मकारी (सं० त्रि०) एकं कर्म करोतीति, एक कर्म-कृ-णिनि। एक कार्यकारक, हमपेशा, एक ही काम करनेवाला।

एककार्य (सं० त्रि०) एकं समानं कार्यं यस्य, बहुव्री०। १ समानकार्यकारक, वही काम करनेवाला। (क्ली०) २ प्रधान कर्म, बड़ो काम।

एककाल (सं० पु०) एकश्चासौ कालश्च, कर्मधा०। १ एक समय, समकाल, वही वक्त। (अव्य०) २ एक ही समय पर, एकबारगी।

एककालभोजन (सं० क्ली०) किसी नियत समय एक ही बारका भोजन, जो खाना किसी मुकर्रर वक्तपर एक ही मरतबा खाया जाता हो।

एककालीक (सं० त्रि०) १ केवल एक बार होने-वाला, जो सिर्फ एक ही मरतबा पड़ता हो। २ दिनमें एक बार होनेवाला, जो रोज एक मरतबा गुजर जाता हो।

एककालीन (सं० त्रि०) एककाल-ख। १ सम-कालीन, हम-असर। २ एक ही समय उत्पन्न होने-वाला, जो उसी वक्त पैदा हो।

एककालीनता (सं० स्त्री०) एककालीन-तल्। सम-कालीन भाव या धर्म, हम-असरी।

एककुण्डल (सं० पु०) एकं कुण्डलं यस्य, बहुव्री०। १ बलराम। २ कुबेर। ३ शेषनाग।

एककुष्ठ (सं० क्ली०) क्षुद्रकुष्ठभेद, एक मामूली कोढ़।

इससे शरीर छश और अवश पड़ जाता है। एककुष्ठ असाध्य होता है। (सुश्रुत)

एककोष्ठि (सं० त्रि०) एककोष्ठ चूर्णमय आधार पर अवस्थान करनेवाला, जो एक ही कोठेमें रहता हो। शिरःपदी, कटल मत्स्य, अर्गोनट, बेलेम, नाइट, अक्टोपस प्रभृति प्राणी एककोष्ठि हैं।

एकक्षीर (सं० क्ली०) एक ही धात्रीका दुग्ध, उसी अथवा एक रङ्गका दूध।

एकगम्य (सं० त्रि०) एकत्वेन गम्यः, एक-गम-यत्। एकमात्र लभ्य, अकेला मिलनेवाला। २ एकमात्र निर्विकल्पक ज्ञान द्वारा प्राप्त होनेवाला।

एकगाछी (हिं० स्त्री०) केवल एक वृक्षद्वारा निर्मित नौका, जो नाव एक ही पेड़से बनी हो।

एकगुरु (सं० पु०) एको गुरुर्यस्य, बहुव्री०। सतीर्थ, एक ही उस्तादका शागिर्द।

एकगुरुक, एकगुरु देखो।

एकग्राम (सं० पु०) एकश्चासौ ग्रामश्चेति, कर्मधा०। अभिन्न ग्राम, वही गांव।

एकग्रामीण (सं० त्रि०) एकस्मिन् ग्रामे भवन्, एक-ग्राम-खञ्। एक ही ग्रामका अधिवासी, जो उसी गांवमें रहता हो।

एकग्रामीय (सं० त्रि०) एक-ग्राम-छ। गहादिभ्यश्च। पा ४।२।१३८। एकग्रामवासी, उसी गांवका बाशिन्दा।

एकचक्र (सं० क्ली०) एकं चक्रं यस्य, बहुव्री०। १ हरिगृह वा शुम्भपुरी नामक एक पुरी।

"एकचक्रं हरिगृहं शुम्भपुर्यपि वर्णिता।" (त्रिकाण्डशेष २।१।११)

यहां हरिगृह और शुम्भ एकचक्रका पर्याय-जैसा गृहीत हुआ है।

अध्यापक विलसन प्रभृति कुछ पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे शुम्भ (एकचक्रा)-का वर्तमान नाम सम्बलपुर है। किन्तु यह बात ठीक नहीं। वर्तमान सम्बलपुर महाभारतकी एकचक्रा नगरी कैसे हो सकता है। एकचक्रा देखो।

(त्रि०) २ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेले घूमता हो। ३ एकमात्र राजाधिराट्, जो उसी सल्तनतमें हो। (पु०) ४ सूर्य देवका रथ। ५ एक असुर। महाभारतमें इस असुरका नाम प्रतिविन्ध्य लिखा है। (भारत, सभा ६।१४)

एकचक्रवर्तिता (सं० स्त्री०) एक चक्रवर्तिनो भावः, एक-चक्रवर्तिन्-तल्। समग्र पृथिवीका शासनकर्तृत्व, कुल जमीन् की सल्तनत। भूमण्डलके एकच्छत्रकी तरह राजत्व करनेका भाव या धर्म एकचक्रवर्तिता कहाता है।

एकचक्रवर्ती (सं० पु०) समग्र पृथिवीका शासनकर्ता, तमाम मुल्कका बादशाह।

एकचक्रा (सं० स्त्री०) महाभारतोक्त एक प्राचीन नगर। जतुगृहदाहके बाद पञ्च पाण्डव कुन्तीको ले गुप्त भावसे गङ्गा तीर गये थे। वहांसे नौकापर बैठ वह गङ्गा पार हुये और क्रमागत दक्षिणाभिमुख चलने लगे। फिर वह एक गभीर अरण्यमें पहुंचे थे। इसी वनमें भीमने हिडिम्ब नामक राक्षसको मारा। उसके बाद नाना स्थान अतिक्रम कर पञ्चपाण्डव व्यासदेवकी आज्ञासे एकचक्रा नगरीमें राक्षसके घर जा बसे। (भारत, आदि १४८—१५० अ०)

अब देखना चाहिये—एकचक्रा कहां है। एकचक्रा नगरी पर बहुत दिनसे गड़बड़ उठ रहा है। कुछ बङ्गाली कहते—एकचक्रा मेदिनीपुर जिलेमें गढ़बेता ग्रामके निकट रही, जहां आज भी बक राक्षसकी हड्डी पड़ी है। फिर पश्चिमाञ्चलके लोग इस नगरीकी अवस्थिति शाहाबाद जिलेमें बताते हैं। मीमांसा करना आवश्यक आता, किसका मत प्रकृत देखाता है।

चीना परिव्राजक युएन् चुयङ्गने अपने भ्रमण-वृत्तान्तमें लिखा, कि गाज़ीपुर (चेन चु) से महासार (मो-हो-स लो) नामक ग्रामको उनका जाना हुआ था। इस ग्रामके आगे पहुंच कर उन्होंने सुना—यहां पहले एक नरभोजी राक्षस रहा, जिसके उत्पातसे सबको विपद्ग्रस्त होना पड़ा; बुद्धदेवने फिर उसे शासन किया।

उक्त महासार ग्रामका वर्तमान नाम मसार है। वह शाहाबाद जिलेमें आरा नगरके निकट अवस्थित है। अतएव सहज ही अनुमान करते, कि चीना परिव्राजक महासार ग्रामसे आरा नगर पहुंचे थे।

आजकल आरामें लोग कहते, कि पञ्चपाण्डव जननी कुन्तीके साथ उसी स्थानमें जा कर रहे। वहां बक राक्षसका वास था, जिसे भीमने मार डाला। सुतरां इस स्थानको महाभारतोक्त एकचक्रा नगरी-जैसा समझ सकते हैं। यह प्रवाद बहुकालसे सुनते—विशेषतः पहले यहां नरमांसभक्षक राक्षस रहते थे। चीना परिव्राजककी वर्णना पढ़नेसे यह बात समझ पड़ती है।

वर्तमान आराका दूसरा प्राचीन नाम चक्रपुर है। इसके पार्श्वपर ही बकरी नामक एक क्षुद्र ग्राम पड़ता है। यहांके लोगोंको विश्वास है—इसी बकरी ग्राममें बक राक्षस रहता था। महाभारतमें भी लिखा—एकचक्राके निकट बक राक्षसका वास रहा।

"अदूरे नगरस्यास्य बको वसति राक्षसः।" (आदिपर्व १६०।१)

यहां ब्राह्मण कहा करते—भीम मङ्गलवारके दिन बक राक्षसको मार चक्रपुर आये थे। इसीसे चक्रपुरका नाम आरा* पड़ गया।

महाभारतके पाठसे समझा गया, कि एकचक्रा नगरीसे अनतिदूर वेत्रकीयगृह नामक एक नगर रहा—

"वेत्रकीयगृहे राजा नायं नयमिहास्थितः।
उपायं तं न कुरुते यत्नादपि स मन्दधीः॥
अनामयं जनस्यास्य येन स्यादद्य शाश्वतम्।
एतदर्हा वयं नूनं वसामो दुर्बलस्य ये॥
विषये नित्यमुद्विग्नाः कुराजानमुपाश्रिताः।
ब्राह्मणाः कस्य वक्तव्याः कस्य वा छन्दचारिणः॥"

(आदि १६१।८-११)

इस नगरसे अनतिदूर वेत्रकीयगृहमें एक राजा रहते हैं। वह नहीं समझते—न्याय किसको कहते हैं। वह नितान्त अबोध हैं। इस नगरपर उनका कुछ भी यत्न नहीं। वह ऐसी कोई चेष्टा भी नहीं करते, जिससे हमारा भला हो। हम अनामयके पात्र हैं। किन्तु अकर्मण्य दुर्बल राजाके राजत्वमें पड़ हम सर्वदा ही उद्विग्न रहते हैं। नतुवा ब्राह्मणोंको यहां किसीकी बात सुनना और किसीके इच्छाधीन भ्रमण करना पड़ता है?

* आर शब्द चक्रका एक नाम है।

उक्त वर्णना पढ़नेसे समझते—महाभारतके समय एकचक्रा नगरी वेत्रकीयगृहवासी राजाके अधिकारमें रही, पीछे बक राक्षस उसे दबा बैठा।

वर्तमान आरा नगरसे दक्षिण-पूर्व ५।७ कोस दूर 'बिता' या 'बेता' नामक एक अतिप्राचीन क्षुद्र ग्राम है। यह ग्राम भगवानगञ्जके ठीक उत्तर पार्श्वपर पुनपुन नदी किनारे अवस्थित है। यहां प्राचीन बौद्ध स्तूपका निदर्शन मिलता है। (Archaeological Survey of India, Rept. Vol. VIII p. 19.) बोध होता—बौद्धोंके अभ्युत्थानसे पहले यहां हिन्दू राजाओंका राजत्व रहा। यह 'बिता' या 'बेता' ग्राम ही महाभारतोक्त वेत्रकीयगृह-जैसा समझ पड़ता है। इससे थोड़ी दूर पुनपुन नदी है। अपर पारपर आराके निकट दूसरा बिता ग्राम है। इससे अनुमान लगता—प्राचीन वेत्रकीय राज्य पुनपुन नदीके पूर्व-पारसे वर्तमान आरा नगर तक विस्तृत था।

एकचत्वारिंश (सं॰ वि॰) इकतालीसवां, जो इक-तालीस की जगह पड़ता हो।

एकचत्वारिंशत् (सं॰ वि॰) इकतालीस, चार दहाई और एक इकाई रखनेवाला, ४१।

एकचर (सं॰ पु॰) एकः सन् चरति, एक-चर पचाद्यच्। १ गण्डक, गैंड़ा। २ सर्पादि हिंस्रक जन्तु, सांप वगैरह खूंख्वार जानवर। (त्रि॰) ३ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला घूमता हो। ४ एक ही अनुचर रखनेवाला, जिसके दूसरा साथी न रहे। ५ साथ-साथ चलनेवाला। ६ दूधचारी, गोलमें रहनेवाला।

एकचरण (सं॰ पु॰) एकश्चरणो यस्य, बहुव्री॰। १ एकपदविशिष्ट मनुष्य, एक पैरका आदमी। २ जन-पदविशेष, एक बस्ती। (वि॰) ३ एकपदविशिष्ट, एक पैरवाला।

एकचर्या (सं॰ स्त्री॰) एकस्य चर्या, चर भावे क्यप्-टाप्। एकाकी गमनको अवस्था, अकेले चलनेकी हालत।

एकचारी (सं॰ त्रि॰) एकः सन् चरति, एक-चर-णिनि। १ एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला

घूमता हो। (पु॰) २ बुद्धदेवके एक सहचर। ३ प्रत्येकबुद्ध।

एकचारिणी (सं॰ स्त्री॰) सती, साध्वी, पतिव्रता, नेकचलन बीवी।

एकचित (हिं॰) एकचित्त देखो।

एकचित्त (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्विषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री॰। १ अनन्यचित्त, दूसरी तरफ ख्याल न रखनेवाला। २ अभिन्नचेता, एक ही बात सोचनेवाला। (क्ली॰) ३ किसी विषयके ध्यानकी दृढ़ता, ख्यालकी पाबन्दी।

एकचित्तता (सं॰ स्त्री॰) ध्यानकी दृढ़ता, ख्यालकी जमावट।

एकचिन्तन (सं॰ त्रि॰) एक ही विषयकी चिन्ता रखनेवाला, जिसे दूसरी बातका ख्याल न रहे।

एकचूर्णि (सं॰ पु॰) एक मुनि। यह तैत्तिरीय यजुर्वेदके भाष्यकर्ता थे। सायणाचार्यने अपने बनाये वेदके भाष्यमें एकचूर्णिका नाम लिखा है।

एकचेतः (सं॰ त्रि॰) अभिन्नहृदय, एकदिल।

एकचोदन (सं॰ क्ली॰) एक वचनका वर्णन, अकेलेकी बात। (त्रि॰) २ एक नियमपर आश्रित, जो एक ही क़ायदे पर टिका हो।

एकचोबा (हिं॰ पु॰) एक ही चोबका ख़ीमा, जो सिर्फ एक ही खंभेके सहारे खड़ा हो।

एकच्छाय (सं॰ त्रि॰) एका अविच्छिन्ना छाया आच्छादनं यत्र, बहुव्री॰। एक आच्छादनविशिष्ट, सिर्फ साया रखनेवाला, जो बिलकुल धुंधला हो।

एकच्छाया (सं॰ स्त्री॰) अधमर्णका सादृश्य, कर्ज़दारकी बराबरी।

"एकच्छाया प्रविष्टानां दाप्यो यस्तत्र दृश्यते।" (कात्यायन)

एकछत्र (सं॰ त्रि॰) १ एक ही छत्र रखनेवाला, जिसके दूसरा मालिक न रहे। (अव्य॰) २ अभिन्न शासनमें, अकेली हुकूमत पर। (पु॰) ३ अनन्य शासन, पूरी हुकूमत।

एकज (सं॰ त्रि॰) एकस्मात् जायते, एक-जन-ड। १ एक हीसे उत्पन्न, जो एक हीसे पैदा हो। २ अकेला उत्पन्न होनेवाला, जो दूसरेके साथ पैदा न हो। ३ एकाकी बढ़नेवाला, जो अकेला ही उगता हो। ४ अपने प्रकारका अकेला, जो अपनी क़िस्ममें निराला हो। ५ एकप्रकार, जो दूसरी क़िस्मका न हो। (पु॰) ६ शूद्र। ७ राजा।

एकजटा (सं॰ स्त्री॰) एका एकसंख्यका मुख्या वा जटा यस्याः, बहुव्री॰। १ उग्रतारा। ध्यानमें इनकी मूर्ति चतुर्भुज और कृष्णवर्ण वर्णित है। मुण्डमाला ही आभूषण है। दक्षिण हस्तद्वयके मध्य ऊर्ध्वहस्तमें खड्ग और अधोहस्तमें इन्दीवर विद्यमान है। वामहस्तद्वयमें कर्त्री एवं खर्पर है। मस्तक पर गगनस्पर्शी एक जटा खड़ी है। मस्तक एवं गलदेशमें मुण्डकी माला पड़ी है। वक्षःदेशपर सर्पका हार है। नयन आरक्त हैं। कटिदेशपर व्याघ्रचर्म और कृष्णवस्त्र पहने हैं। वामपद शवके हृदय और दक्षिण पद सिंहके पृष्ठपर विन्यस्त है। यह अट्टहास किया करती हैं। गर्जन भीषण और मूर्ति भयङ्कर है। इनकी अष्ट योगिनियोंके नाम यह हैं—महाकाली, रुद्राणी, उग्रा, भीमा, घोरा, भ्रामरी, महारात्रि और भैरवी।

(कालिकापु॰ ६१ अ॰)

नेपालके बौद्ध इन्हीं देवीको एकजटा-आर्यतारादेवीके नामसे पूजते हैं। बौद्ध ग्रन्थमें यह बात लिखी, कि अवलोकितेश्वरने वज्रपाणि बोधिसत्वसे एकजटा देवीकी पूजा कही थी। (तारादेवीतत्त्वमहाकाशपत्त्र)

२ रावण द्वारा नियुक्त एक विकटाकार राक्षसी।

(रामायण ५।२३।६)

एकजटा कामदेव (सं॰ पु॰) उत्कल देशके गङ्गवंशीय एक राजा। यह गङ्गेश्वरके पुत्र और गङ्गवंशीय प्रथम राजा चोड़गङ्गके पौत्र रहे। गङ्गेश्वर किसी कार्यसे महापापमें लिप्त हुये थे। इसीसे उनको पहोंने उन्हें मार एकजटा कामदेवको सिंहासन पर बैठाया। इन्होंने राज्य मिलने पर अनेक सत्कार्य किये थे। एकजटा कामदेव पुरीका प्राचीन मन्दिर तोड़ा उसी स्थानपर नूतन मन्दिर बनवाने लगे, किन्तु निर्माणकार्य अधूरा रहते ही अकाल कालके कवलमें जा पड़े। उत्कल और गङ्गवंश देखो। इनके पुत्रका नाम मदनमहादेव था। यहींसे किसी प्राचीन

इतिहासमें एकजटा कामदेवका एकजटा महादेव और किसी ग्रन्थमें कामदेव नाम लिखा है।

एकजन्मा (सं॰ पु॰) एकं मुख्यमद्वितीयं वा जन्म यस्य, बहुव्री॰। १ राजा, बादशाह। २ शूद्र। उपनयन संस्कार न होनेसे शूद्र द्विजोंकी श्रेणीमें विभिन्न रहता है।

एकजात (सं॰ वि॰) एकस्मात् जातः, ५-तत्। १ सहोदर, एक ही मा बापसे पैदा। २ एक वस्तुसे उत्पन्न, जो दूसरी चीज़से पैदा न हो।

एकजाति (सं॰ पु॰) एका जातिर्जन्म यस्य, बहुव्री॰। १ शूद्र।

"ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः।
चतुर्थ एकजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पञ्चमः॥" (मनु १०।४)

(वि॰) २ समान जाति, एक ही क़ौमवाला। ३ एक बार उत्पन्न होनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातिप्रतिबद्ध (सं॰ त्रि॰) केवल एक जन्मसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दोबारा पैदा न हो।

एकजातीय (सं॰ त्रि॰) एकः प्रकारः, एक-जातीयर्। प्रकारवचने जातीयर्। पा ५।३।६९। १ एकप्रकार, एक-जैसा। २ एक ही जातिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी क़ौमसे सरोकार रखता न हो।

एकज़ीक्यूटिव (अं॰ वि॰=Executive) कार्य-निर्वाहक, कारगुज़ार। कार्यक्षम शासनको एकज़ीक्यूटिव अथारिटी, विधायक अधिकारीको एकज़ीक्यूटिव आफ़िसर, निष्पादक समितिको एकज़ीक्यूटिव कमिटी और अनुष्ठान-नियुक्त सभाको एकज़ीक्यूटिव काउंसिल कहते हैं।

एकजीववाद (सं॰ पु॰) वेदान्त दर्शनका एक वाद। इसमें जीव एक-जैसा माना गया है।

एकज्या (सं॰स्त्री॰) १ चापकी ज्या, कमानकी डोर। २ व्यासार्धका चिह्न, निस्फ़ क़ुतरका निशान्।

एकज्योतिः (सं॰ पु॰) एकं प्रधानं सर्वाभिभवकरं ज्योतिरस्य, बहुव्री॰। शिव।

एकज्वर (सं॰ पु॰) ज्वररोग विशेष, किसी क़िस्मका बुख़ार। ज्वर देखो।

एकट (अं॰ पु॰=Act) व्यवस्था, विधि, क़ानून।

एकटंगा (हिं॰ वि॰) एकपदविशिष्ट, लंगड़ा, जिसके एक ही पैर रहे।

एकटकी (हिं॰ स्त्री॰) नियत दृष्टि, टकटकी, जमी हुई निगाह।

एकट्ठा (हिं॰ वि॰) एकत्र, जमा हुआ।

एकठा (हिं॰ स्त्री॰) नौका विशेष, किसी क़िस्मकी नाव। यह एक ही काठ या लकड़ी खोदकर बनायी जाती है।

एकड़ (अं॰ पु॰=Acre) भूमि नापनेकी एक परिमाण। यह १ बीघे १२ बिस्से पड़ता है।

एकडाल (हिं॰ वि॰) १ अभिन्न, एक जैसा। (पु॰) २ अस्त्र विशेष, किसी क़िस्मका छुरा। जिस छुरेमें फल और बेंट एक ही लोहेके टुकड़ेका रहता, उसे सब कोई एकडाल कहता है।

एकत (सं॰ पु॰) १ देवविशेष। २ मुनिविशेष। (हिं॰ वि॰) ३ एकत्र, जो अलग न हो।

एकतः (सं॰ अव्य॰) एक-तसिल्। १ प्रथमतः, पहले। २ एक पार्श्वपर, एक तरफ़। ३ एकसे। ४ एक पक्षमें, एक ओरसे। ५ एक दिक्, एक सिम्त। ६ अकेले, एक-एक।

"प्राचै कमोऽर्धदिवसं दशितप्रचोरा-
मासिष्ठ साहचयूतवर एकतोऽर्थ॥" (कद्रुखण्ड)

एकतत्त्वी (सं॰ वि॰) एकतत्त्वमन्वाप्नोति, एक-तत्त्व-इनि। समानकर्मा, बराबरका काम करनेवाला।

एकतम (सं॰ वि॰) एक-डतमच्। वा बहूनां जातिपरिप्रश्ने डतमच्। पा ५।३।९३। १ बहुके मध्य एक, बहुतोंमें अकेला। २ दोमें एक। ३ एक।

"कतमदेव वा कतरे वा यदाङ्‌वर्तमं ...।" (ऋक्)

एकतर (सं॰ वि॰) एक-डतरच्। १ दोमें एक। २ बहुतोंमें एक।

एकतरफ़ा (फ़ा॰ वि॰) १ एकपक्षमें सम्बन्ध रखनेवाला, जो दूसरी ओरका न हो। २ पक्षपातयुक्त, तरफ़दारीवाला। ३ पार्श्वस्थ, बग़ली।

एकतरा (हिं॰ पु॰) एक दिनके अन्तरसे चढ़नेवाला ज्वर, जो बुख़ार एक दिन ठहर कर आता हो।

एकता (सं॰ स्त्री॰) एकस्य भावः, एक-तल् टाप्। १ ऐक्य, यहदत, मिलजोल। २ समिलता, बराबरी। ३ मुक्तिविशेष। (फ़ा॰ वि॰) ४ अद्वितीय, अनोखा।

एकतान (सं॰ वि॰) एकेन भावरमेन तन्यते, तन-अप्। १ एकाग्र, एक ही काममें लगा हुआ। २ एक स्वर तथा एक तालविशिष्ट, जो दूसरा स्वर या ताल रखता न हो। (पु॰) ३ एक ही विषयपर नियोजित ध्यान, जो ख़याल एक ही बातपर लगा हो। ४ स्वर एवं ताल की एकता, गाने-बजानेका मेल।

एकतार (सं॰ वि॰) एका तारा यत्र, बहुव्री॰ छन्दः। केवल एक ताराविशिष्ट, सिर्फ़ एक ही सितारा रखनेवाला। नभको एकतार देखनेपर नारद मुनिका स्मरण करना चाहिये।

एकतारा (हिं॰ पु॰) एक तारवाला सितार-जैसा लम्बा बाजा। कद्दूकी तोंबीका मुंह चमड़ेसे मढ़ा बांसका एक डण्डा लगा देते हैं। डण्डेके ऊपरी हिस्सेपर एक खूंटी रहती है। खूंटीसे मढ़े चमड़े पर लगी घोड़ियाके नीचे तक एक लोहे या पीतलका तार चढ़ता है। अनेक भिक्षुक एकतारा बजा बजा भीख मांगते घूमते हैं।

एकताल (सं॰ पु॰) एकः समानस्तालो यत्र, बहुव्री॰। १ तालविशिष्ट, तालसे मिला हुआ। (पु॰) २ ताल-विशिष्ट गीतवाद्यादि, सुरीला गाना। ३ एकमात्र तालद्रुमका पर्वत।

"एकताल इवोत्पातपवनप्रेरितो गिरिः।" (रघु १२।११)

एकताला (हिं॰ पु॰) एकतालका गीतवाद्यादि, दूसरे तालकी ज़रूरत न रखनेवाला गाना-बजाना। इसमें १२ मात्रा और ४ आघात हैं। ख़ाली ताल नहीं पड़ता। तबले या ढोलकसे निकलता है—

धिन् धिन् धा, धा तिरकिट, ताहेन् धाहे तेरे कटे धिन्ता धा।

हिन्दुस्तानी गाने-बजानेवाले प्रायः अन्तको दादरे एकतालेमें गाया करते हैं।

एकतालिका (सं॰ स्त्री॰) एक रागिणी।

एकताली (सं॰ स्त्री॰) एक तालका बाजा।

एकतालीस (हिं॰ वि॰) एकचत्वारिंशत्, चालीस और एक, चार दहाई और एक एकाईसे बना हुआ, ४१।

एकतीर्थी (सं॰ वि॰) एकं समं तीर्थं आश्रमोऽस्यास्ति, इनि। १ सतीर्थ, उसी ठिकानेवाला। (पु॰) २ एक ही गुरुका शिष्य, उसी उस्तादका शागिर्द।

एकतीस (हिं॰ वि॰) एकत्रिंशत्, तीस और एक, तीन दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ३१।

एकतेजन (सं॰ वि॰) एकमात्र काण्डविशिष्ट, एक ही डण्डा रखनेवाला।

एकतेश्वर—बंगाल प्रान्तके बांकुड़ा ज़िलेका एक प्राचीन ग्राम। यह बांकुड़ा नगरसे दक्षिण-पूर्व १ कोस दारिकेश्वर नदीके तीर अवस्थित है। एकतेश्वर नामक शिवमन्दिर देखने योग्य है। मन्दिरमें महा-देवके लिङ्गकी एक मूर्ति है। लिङ्गको एकतेश्वर कहते हैं। मन्दिरकी बनावट बहुत अच्छी है। ऐसी दृढ़ भित्ति इस अञ्चलमें कहीं देख नहीं पड़ती। मन्दिर अतिप्राचीन है। लाल बिल्लौरी पत्थर गढ़ा है। बीचमें दो तीन बार संस्कार हुआ है।

एकतोदत् (सं॰ वि॰) एकतो दन्ता यस्य, बहुव्री॰ दत् आदेशः। एकपाटी दन्तयुक्त, जो एक ही ओर दांत रखता हो।

एकत्र (सं॰ अव्य॰) एक-त्रल्। सप्तम्यास्त्रल्। पा ५।३।१०। १ एक ही स्थानमें, उसी जगहपर। २ एकसङ्ग, एक साथ, मिल-जुलकर।

एकत्रा (हिं॰ पु॰) मिरज़ईविशेष, अंगा, ओढ़।

एकत्रिंश (सं॰ वि॰) एकत्रिंशत् संख्याविशिष्ट, एकतीसवां।

एकत्रिंशत् (सं॰ वि॰) एकतीस, तीन दहाई और एक एकाई रखनेवाला, ३१।

एकत्रिक (सं॰ पु॰) यज्ञविशेष।

एकत्रित (सं॰ वि॰) एकत्रप्राप्त, इकट्ठा, जमाया हुआ।

एकत्व (सं॰ क्ली॰) एकस्य भावः, एक-त्व। १ एकता, तौहीद, एकाई। २ अभेद, मेल। ३ साम्य, बराबरी। ४ गुणविशेष। व्याकरणमें एकवचनको एकत्व कहते हैं।

एकत्वभावना (सं॰ स्त्री॰) एक की चिन्ता, एक का ध्यान। जैन आत्माके एकत्वपर ध्यान लगानेको

यह नाम रखते हैं। उनके मतानुसार एकाकी जीवका साथी केवल कर्म है।

एकदंडा (हिं॰ पु॰) कुश्तीका एक पेच।

एकदंता (हिं॰ पु॰) १ एकदन्तविशिष्ट हस्ति, एक दांतका हाथी। २ एक दांतवाला।

एकदंष्ट्र (सं॰ पु॰) एका दंष्ट्रा यस्य, बहुव्री॰ कप्तः। गणेश।

एकदण्डी (सं॰ पु॰) एकः केवलो दण्डोऽस्यास्तीति, एक-दण्ड-इनि। सन्यासविशेष। जब हृदयमें सनातन अद्वैतभावका निश्चय जमता, तब सन्यासी यथामात्र दण्ड पकड़ता है। चतुर्विध सन्यासियोंमें हंसश्रेणीवालोंके ही दण्डधारणकी व्यवस्था है। सन्यासी देखो।

एकदन्त (सं॰ पु॰) गणेश। किसी समय गणेशको द्वारपाल बना शिवसे दुर्गा कथोपकथन करती थीं। उसी समय परशुरामने शिवके दर्शनको आ गणेशसे द्वार छोड़नेको कहा। इनके अस्वीकार करनेपर दोनोंमें तुमुल युद्ध होने लगा। परशुरामके कुठाराघातसे गणेशका एक दन्त टूटा था। उसी समयसे इनका नाम एकदन्त पड़ गया। (ब्रह्मवैवर्तपुराण)

एकदरा (हिं॰ पु॰) एक दरवाला, जो दालान एक ही दरवाज़ा रखता हो।

एकदस्ती (फ़ा॰ स्त्री॰) कुश्तीका एक पेच। इसमें लड़नेवालेका बायां हाथ अपने बायें हाथसे घुमा कर पकड़ते और दाहनेसे खींच पीछे निकल जाते हैं। यह पेच कुश्ती लड़नेमें सबसे पहले सिखाया जाता है।

एकदा (सं॰ अव्य॰) एकस्मिन् काले, एक-दा। सर्वैकान्यकिंयत्तदः काले दा। पा ५।३।१५। १ एक ही समयपर, फौरन्। २ एकबार, एक मरतबा, कभी-कभी। ३ किसी दिनको। ४ एक समय पर।

एकदिक् (सं॰ स्त्री॰) १ एक स्थान, वही जगह। २ एकपार्श्व, एक बग़ल। जैन शास्त्रमें दिक्सम्बन्धीय निर्धारित नियम लांघनेको एकदिशा—परिमाणातिक्रमण कहते हैं। श्रावकको प्रतिदिन चारो दिशाकी दूरी ठहरा चलना पड़ता है। उक्त नियम तोड़नेपर यह अतिचार लगता है।

एकदुःखसुख (सं॰ त्रि॰) सहानुभूति रखनेवाला, हमदर्द, जो दूसरेके दुःखमें दुःखी और सुखमें सुखी रहता हो।

एकदृक् (सं॰ पु॰) एकमभिन्नं पश्यतीति, एक-दृश्-क्विप्। १ महादेव। २ तत्त्वज्ञानी। ३ ब्रह्मज्ञानी। ४ काक, कौवा। राम बाणसे कौवेकी एक आंख फूट गयी थी। (त्रि॰) ५ काना। ६ एकपक्षाश्रयी, तरफ़दार।

एकदृश्य (सं॰ त्रि॰) अकेला देखने योग्य, जो तनहा देखे जानेके क़ाबिल हो।

एकदृष्टि (सं॰ स्त्री॰) एका एकविषयिणी दृष्टिः, कर्मधा॰। एकमात्र विषयपर दृष्टि, जो नज़र सिर्फ़ एक ही बातपर लगी हो। (पु॰) एका दृष्टिर्यस्य, बहुव्री॰। २ काक, कौवा। (त्रि॰) ३ काना।

एकदेव (सं॰ पु॰) एकः प्रधानो देवः, कर्मधा॰। परमेश्वर।

एकदेवत (सं॰ त्रि॰) एका देवता यस्य, बहुव्री॰। एक ही देवताको दिया हुआ, जो एक ही देवताको चढ़ाया गया हो।

एकदेवत्य (सं॰ त्रि॰) एकां श्रेष्ठां देवतामर्हतीति, एकदेवता-यत्। श्रेष्ठ देवतापूजक, जो एक ही देवताको मानता हो।

एकदेश (सं॰ पु॰) एकश्चासौ देशश्चेति, कर्मधा॰। १ एक स्थान, वही जगह। २ अंश, हिस्सा। (त्रि॰) ३ एक स्थानका अधिकारी, जो एक ही जगह रखता हो। (अव्य॰) ४ कुछ कुछ।

एकदेशविभावितन्याय (सं॰ पु॰) एकदेशः साध्यस्य विभावितो येन स चासौ न्यायश्चेति, कर्मधा॰। तर्कविशेष, किसी क्रियाको दलील। इसमें प्रमाणादिसे साध्यका एकदेश अनुमित होता है।

एकदेशस्थ (सं॰ त्रि॰) एक ही स्थानपर अवस्थित, जो उसी जगह पर हो।

एकदेशी (सं॰ त्रि॰) एकोऽभिन्नो देशो वासस्थानत्वेनास्त्यस्येति, इनि। १ एक देशवासी, उसी मुल्कका रहनेवाला। २ अंशोंमें विभक्त, जो हिस्सोंमें बंटा हो।

एकदेशीय, एकदेशी देखो।

एकदेह (सं॰ पु॰) एको तुल्यो देहो यस्य, बहुव्री॰। १ बुधग्रह, दबीर-फलक। एकः तुल्यो देहो यस्य। २ वंश, खान्दान्। ३ दम्पती, स्त्रीपुरुष। (त्रि॰) ४ एकशरीर, सिर्फ एक जिस्म रखनेवाला।

एकद्युः (सं॰ पु॰) एकेन परमात्मना दिव्यति, दिव-क्विप्-उट्। केवल परमात्मचिन्तक आत्माराम नामक एक ऋषि। यह नोधःके पुत्र थे।

एकद्वार (सं॰ पु॰) गुजरात प्रदेशके मध्यस्थित वट-तीर्थके निकटस्थ एक प्राचीन तीर्थ। (स्कन्दपु॰)

एकधन (सं॰ क्ली॰) एकमेव धनम्, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। १ एक मात्र धन, अकेली दौलत। एक-मयुग्मं धनं धीरमानमुदकं यत्र, बहुव्री॰। २ अयुग्म संख्यक कलस, अकेला घड़ा। ३ श्रेष्ठधन, बड़ी दौलत। (त्रि॰) ४ एकमात्र धनशाली, अकेला दौलतमन्द।

एकधनवित् (सं॰ त्रि॰) १ एकधन नामक कलस प्राप्त करनेवाला। २ उत्तम बलि पानेवाला।

एकधर्मी (सं॰ त्रि॰) एकस्तुल्यो धर्मोऽस्यास्तीति, एक-धर्म-इनि। समान धर्म विशिष्ट, हम मज़हब।

एकधा (सं॰ अव्य॰) एक-धा। संख्याया विधार्थे धा। पा ५।३।४२। १ एक प्रकार, साथ-साथ। २ साधारणतः, अकेले। ३ एक बार, फौरन्।

एकधुर् (सं॰ स्त्री॰) यानविशेष, एक गाड़ी।

एकधुर (सं॰ त्रि॰) एका धुर्यस्य, एक-धुर्-अ। ऋक्पूरब्धूःपथामानक्षे। पा ५।४।७४। १ केवल एक प्रकार भार या धुरके योग्य, जो सिर्फ एक किस्मके बोझ या जुयेके काबिल हो। २ भारविशेषवाही, कोई बोझ ढोनेवाला।

एकधुरा (सं॰ स्त्री॰) एका न द्वितीया धूः, कर्मधा॰। एक भार, वही बोझ।

एकधुरावह (सं॰ त्रि॰) एक धुरायाः वहः, ६-तत्। एक भारवाहक, वही बोझ ढोनेवाला।

एकधुरीण (सं॰ त्रि॰) एकधुरां वहति यः, एक-धुर-ख। एकधुराल्लुक् च। पा ४।४।७९। एक भारवाहक, सिर्फ एक बोझ ढोनेवाला।

एकनक्षत्र (सं॰ क्ली॰) एकं नक्षत्रं यत्र, बहुव्री॰। १ एक ताराविशिष्ट नक्षत्र। आर्द्रा, चित्रा और स्वाति नक्षत्र एकतारामय है। २ समानभ्रता। ३ एक नक्षत्र, अकेला सितारा।

एकनट (सं॰ पु॰) एको मुख्यो नटः, कर्मधा॰। प्रधान नाट्यप्रवर्तक, कथानायक, खास खेलाड़ी। यह प्रस्तावना सुनाता है।

एकनयन (सं॰ त्रि॰) एकं नयनं यस्य, बहुव्री॰। १ काना। (पु॰) २ काक, कौवा। ३ कुबेर।

एकनवत (सं॰ त्रि॰) इक्यानवेवां।

एकनवति (सं॰ स्त्री॰) एकेन अधिका नवतिः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। इक्यानवे, नौ दहाई और एक एकाईकी संख्या, ९१।

एकनवतितम, एकनवत देखो।

एकनाथ (सं॰ पु॰) एकः प्रधानं नाथः, कर्मधा॰। १ प्रधान राजा, खास मालिक। (त्रि॰) २ एक प्रभु युक्त, जिसके एक ही मालिक रहे।

एकनाथ भट्ट (सं॰ पु॰) एक प्रसिद्ध ग्रन्थकार। दाक्षिणात्यके प्रतिष्ठान (पैठान) नगरमें इनका जन्म हुआ था। इन्होंने अन्वयार्थप्रकाशिका नाम्नी एक चण्डीकी टीका बनायी है।

एकनायक (सं॰ पु॰) एकः प्रधानं नायकः, कर्मधा॰। महादेव।

एकनायकराज्यतन्त्र (सं॰ क्ली॰) एक ही राजाके मतानुसार निर्वाहित राज्यशासनका कार्य, जो हुक्म सलतनतमें एक ही बादशाहके कहने पर चलता हो।

एकनिश्चय (सं॰ पु॰) १ साधारण स्वीकृति या फल, मामूली मञ्जूरी या नतीजा। (त्रि॰) २ एक ही प्रस्ताव को मान, जो वही मतलब रखता हो।

एकनिष्ठ (सं॰ त्रि॰) एका एकविषयिणी निष्ठा यस्य, बहुव्री॰। एकासक्त, एक ही में लगा हुआ।

एकनीड़ (सं॰ त्रि॰) १ केवल एक स्थान रखने-वाला, जिसके एक ही बैठक रहे। २ साधारण घर रखनेवाला, जो मामूली मकान रखता हो।

एकनीत (सं॰ स्त्री॰) रथ, गाड़ी। (अथर्व ...)

एकनेत्र, एकनयन देखो।

एकनेमि (सं॰ त्रि॰) एक मण्डलविशिष्ट, एक ही दायरा रखनेवाला।

एकपक्ष (सं० त्रि०) एकः पक्षो यस्य, बहुव्री०। १ उसी पक्षवाला, जो उसी ओरका हो। २ पक्षपाती, तरफदार। (पु०) ३ एक पक्ष, वही ओर।

एकपक्षीय (सं० त्रि०) एक ही पक्षवाला, एकतरफा।

एकपञ्चाश (सं० त्रि०) एकपञ्चाशत् पूरणार्थे डट्। इक्यावनवाँ।

एकपञ्चाशत् (सं० त्रि०) एकेन अधिका पञ्चाशत्। इक्यावन, पांच दहाई और एक इकाईसे बना, ५१।

एकपञ्चाशत्तम, एकपञ्चाश देखो।

एकपटा (हिं० वि०) एक ही पाट रखनेवाला, जो चौड़ाईमें जुड़ा न हो।

एकपट्टा (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेंच। लड़ने वालेकी एक जांघ हाथसे उठा दूसरे पैरमें अपने पैरसे अपरास मारते और ज़मीन् पर चित फटकारते हैं।

एकपतिका (सं० स्त्री०) एकः समानः पतिर्यस्याः, क-टाप्, बहुव्री०। सपत्नी, एक ही पतिकी स्त्री।

"सर्वासामेकपत्नीनामेका चेत् पुत्रिणी भवेत्।
सर्वास्तास्तेन पुत्रेण प्राह पुत्रवतीर्मनुः॥" (मनु ९।१८३)

एकपत्नी (सं० स्त्री०) एको अद्वितीयः पतिर्यस्याः, बहुव्री०। १ पतिव्रता।

"तांचावश्यं दिवसगणना तत्परामेकपत्नीम्।" (मेघ ११०)

२ सपत्नी।

एकपत्र (सं० पु०) १ चण्डाल कन्द। २ श्वेत तुलसी।

एकपत्रक, एकपत्र देखो

एकपत्रा, एकपतिका देखो।

एकपत्रिका (सं० स्त्री०) एकं गन्धवत्त्वात् श्रेष्ठं पत्रं यस्याः, बहुव्री० क-टाप् अत इः। १ गन्धपत्र-वृक्ष। २ पाण्डुर-तुलसी वृक्ष।

एकपत्री (सं० स्त्री०) नागवल्ली लता, पान।

एकपत्रोत्पत्तिक (सं० त्रि०) अङ्कुरके समय एक-मात्र पत्र निकालनेवाला, जो कोपल फूटते वक्त सिर्फ एक ही पत्ती देता हो।

एकपद् (सं० त्रि०) एकपाद विशिष्ट, एक ही पैर रखनेवाला।

एकपद (सं० क्ली०) एकं पदं पदमात्रोच्चारण-कालो यत्र, बहुव्री०। १ एकमात्र पाद, सिर्फ एक कदम। २ साधारण शब्द, मामूली लफ़्ज़। ३ वर्तमान समय, हालका वक्त। ४ वैकुण्ठ। ५ विभक्तान्त पद। ६ एकस्थान, वही जगह। ७ वास्तुमण्डलस्थ एककोष्ठरूप स्थान। (पु०) ८ शृङ्गारबन्ध विशेष। ९ वास्तुयागाराध्य देवता। १० एकपदविशिष्ट मृग-विशेष। (त्रि०) ११ एक पदवाच्य। १२ एकपद-विशिष्ट, एक पैरवाला।

एकपदवान् (सं० त्रि०) एकपद-मतुप्, मस्य वः। एकपदविशिष्ट, एक पैरवाला।

एकपदस्थ (सं० त्रि०) एकस्मिन् तुल्ये पदे अधि-कारे तिष्ठति, एक पद-स्था-क। १ समानकार्यकारी, बराबरीका काम करनेवाला। २ तुल्यसम्बन्धशाली, बराबरीवाला।

एकपदा (सं० स्त्री०) एक पादात्मक छन्दोविशेष।

एकपदि (सं० अव्य०) एकपद-इच्, निपातनात् साधुः। (तिष्ठद्गुप्रभृतीनि च। पा २।१।१७।) एकपादपर, एक पैरसे

एकपदी (सं० स्त्री०) एकः पादो यस्याः, एकपाद-ङीप्, ङीप् वा, पादस्य पदादेशः। १ पथ, पगडंडी। २ एकपदविशिष्टा, एक पैरवाली। ३ छन्दके चतुर्थांशमें विशिष्ट पाठक्।

एकपदे (सं० अव्य०) १ अकस्मात्, एकाएक। २ एकबारगी, फ़ौरन्। ३ एक ही चेष्टामें, अकेली कोशिशसे।

एकपर (सं० त्रि०) एक पिछसे निर्णय करनेवाला। यह शब्द पाशेका विशेषण है।

एकपरि (सं० अव्य०) एक ऊपर-नीचे, एक घट बढ़ कर।

एकपर्णा (सं० स्त्री०) एकमेव पर्णं आहारो यस्याः। १ मेनकाके गर्भसे सम्भूत हिमालयकी तीन कन्याओंमें एक कन्या। यह असित देवलकी पत्नी थीं। (हरि १८ अ०) २ दुर्गा।

एकपर्णिका (सं० स्त्री०) एकपर्ण-कन्-टाप्, अत इत्वम्। पार्वती। इन्होंने तपस्याके समय केवल एक पत्र खा जीवन धारण किया था।

एकपर्णी, एकपर्णिका देखो।

एकपर्वतक (सं॰ पु॰) पर्वत विशेष, वर्तमान बोहेलखण्डकी दक्षिणस्थित गिरिमाला। (भारत, सभा २९ अ॰)

एकपलाश (सं॰ पु॰) एकः पलाशो यस्य, बहुव्रो॰। एकमात्रपत्रविशिष्टवृक्ष, एक ही पत्तेका पेड़।

एकपलिया (हिं॰ पु॰) गृह विशेष, किसी किस्मका घर। इसमें बंड़ेर नहीं पड़ती। दीवारों पर लम्बाई के आमने-सामने कड़ी रख छप्पर डाल देते हैं। छप्पर ढाल रखनेको एक ओर दीवार ज़रा ऊंची कर लेते हैं।

एकपाटला (सं॰ स्त्री॰) एकं पाटलं पुष्पं आहारो यस्याः। १ हिमालयकी एक कन्या। यह पार्वतीकी भगिनी रहीं। इन्होंने एकमात्र पुष्प खा तपस्या की थी। २ दुर्गा।

एकपाण (सं॰ पु॰) एकमात्रपण, अकेली बाजी।

एकपात् (सं॰ पु॰) एकः पादो यस्य, पाद शब्दस्यान्तलोपः। संख्यासु पूर्वस्य। पा ५।४।१४०। १ शिव। २ विष्णु। (त्रि॰) ३ एक पाद रखनेवाला, लंगड़ा।

एकपात (सं॰ त्रि॰) अकस्मात् आ पड़ने वाला, जो एकाएक गुज़र जाता हो।

एकपातिन् (सं॰ त्रि॰) एकः सन् पतति, एकपत-णिनि। एकाकी खड़ा रहने वाला, आज़ाद।

एकपातिनी (सं॰ स्त्री॰) ऋकान्त छन्दो विशेष।

एकपाद (सं॰ पु॰) एकश्चासौ पादश्च, कर्मधा॰। १ एक पद, अकेला पैर। २ परमेश्वर। ३ एक असुर। ४ जनपदविशेष, एक बसती। ५ एकपादवासी, एकपाद मुल्कका बाशिन्दा। महाभारतमें लिखा, कि एकपाद जनपद दाक्षिणात्यके मध्य अवस्थित है। (सभा ३० अ॰) यूनानी ऐतिहासिक मेगेस्थिनिसने एकपाद जातिको ओक्पेदिस् (Okupedes) एवं टिसियास् मनोपोदिस (Monopodes) कहा है। यह लोग किरातजाति समझ पड़ते हैं। किरात देखो।

एकपादिका (सं॰ स्त्री॰) १ एकपदके अवलम्बनसे पक्षियोंका एक अवस्थान। "बकस्यैकपदिकावस्थानम्।" (नैषध १७ स॰) २ शतपथ ब्राह्मणका द्वितीय पुस्तक।

एकपादुक (सं॰ त्रि॰) एका पादुका यस्य, बहुव्रो॰। १ एकपाद, एक पैरवाला। २ जातिविशेष, एक कौम। वाहते, एकपादुक एक ही पैरमें जूता पहनते हैं।

एकपिङ्ग (सं॰ पु॰) एकं पिङ्गं नेत्रं यस्य बहुव्रो॰। कुबेर। कुबेरके एकनेत्र पर काशीखण्डमें लिखा—कुबेरने अति कठोर तपस्यासे महादेवको रिझा लिया था। उन्होंने शङ्करके समीपस्थ हो देखा—गौरी महादेवके वामपार्श्वपर बैठी थीं। कुबेरने सोचा, यह सर्वाङ्गसुन्दरी रमणी कौन रहीं। जैसी इनकी सौभाग्यश्री थी, उससे अपनी अपेक्षा भी तपस्याकी शक्ति अधिक समझ पड़ी। इसीप्रकार सोचते-सोचते इन्होंने क्रूरभावसे दृष्टि डाली थी। बस, उनका वाम चक्षु फूट गया। फिर देवीने महादेवसे कुबेरका परिचय पूछा था। उन्होंने कहा—यह अतिभक्त और तुम्हारे पुत्रके तुल्य हैं। इसीप्रकार नानारूप परिचय दे महादेवने कुबेरसे गौरीके पदतलपर गिरनेको कहा। कुबेरको देवीने वैसा ही करनेपर आशीर्वाद दिया था—तुम स्फुटित वामनेत्र द्वारा 'एकपिङ्ग' विख्यात होगे।

एकपिङ्गल (सं॰ पु॰) एकं पिङ्गलं नेत्रं यस्य, बहुव्रो॰। कुबेर। एकपिङ्ग देखो।

एकपिण्ड (सं॰ त्रि॰) एकः समानः पिण्डः श्राद्धादेः पिण्डः देहो वा यस्य, बहुव्रो॰। सपिण्ड, रिश्तेदार।

एकपिण्डता (सं॰ स्त्री॰) सपिण्डी-भाव, रिश्तेदारी।

एकपितृक (सं॰ त्रि॰) एकः समानः पिता यस्य, बहुव्रो॰ कः। एक पिताके औरससे उत्पन्न, एक ही बापसे पैदा।

एकपुत्र (सं॰ पु॰) एक ही पुत्र रखनेवाला, जिस आदमीके एक ही बेटा रहे।

एकपुत्रता (सं॰ स्त्री॰) एकमात्र पुत्रकी अवस्थिति, एक ही लड़का रखनेकी हालत।

एकपुरुष (सं॰ पु॰) एकः श्रेष्ठः पुरुषः, कर्मधा॰। १ परमेश्वर। २ प्रधान पुरुष, बड़ा आदमी। (त्रि॰) एकः पुरुषो यस्मिन्, बहुव्रो॰। १ एकमात्र पुरुषयुक्त,

सिर्फ एक मर्द रखनेवाला। एकः पुरुषो भोक्ता यत्र। ४ एकपुरुषभोग्य, एक मर्दके काममें आने लायक।

एकपुष्कल (सं॰ पु॰) एकं पुष्कलं मुखं यस्य, बहुव्री॰। काहल नामक वाद्यविशेष, एक बाजा।

एकपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) एकं पुष्पं यस्याः, बहुव्री॰। वृक्षविशेष, एक पेड़। इसमें एकमात्र पुष्प आता है।

एकपृथक्त्व (सं॰ क्ली॰) भेदाभेद, लगाव और अलगाव।

एकपेचा (फ़ा॰ वि॰) १ एक ही पेच रखनेवाला, जो एक ही बलका हो। (पु॰) २ किसी क़िस्मकी पतली पगड़ी।

एकप्रकार (सं॰ त्रि॰) अभिन्नरूप, वैसा ही।

एकप्रख्य (सं॰ त्रि॰) अत्यन्त तुल्य, बिलकुल बराबर।

एकप्रभुत्व (सं॰ क्ली॰) साम्राज्य, सलतनत।

एकप्रयत्न (सं॰ पु॰) शब्दकी एकमात्र चेष्टा, आवाज़की अकेली कोशिश।

एकप्रस्थ (सं॰ पु॰) परिमाणविशेष, एक तौल। यह ३२ पल या २ सेरका होता है।

एकप्राणयोग (सं॰ पु॰) एक श्वासका संयोग, एक ही सांसका मेल।

एकफ़र्दा (फ़ा॰ वि॰) एक ही फ़सलवाला, जो एक ही बार फलता या फल देता हो।

एकफल (सं॰ त्रि॰) केवल एक अभिप्राय रखनेवाला जिसके एक ही नतीजा या मतलब रहे।

एकफला (सं॰ स्त्री॰) एकं फलमस्याः, बहुव्री॰ टाप्। ओषधि विशेष, एक बूटी।

एकफली (सं॰ स्त्री॰) एकं फलमस्याः, ङीप्। ओषधिविशेष, एक बूटी।

एकफ़सला, एकफ़र्दा देखो।

एकबद्दी (हिं॰ स्त्री॰) दो आंकड़ेवाला लंगर। इससे नाव रोकी जाती है। (वि॰) २ एक रज्जु विशिष्ट, जो एक ही रस्सीका हो।

एकबारगी (फ़ा॰ क्रि॰ वि॰) १ एक ही बारमें, साथ-साथ। २ अकस्मात् एकाएक। ३ सम्पूर्ण रूपसे, बिलकुल।

एकबाल (अ॰ पु॰) १ भाग्य, क़िस्मत। २ अङ्गीकार, मंज़ूरी। राज़ीनामेको एकबाल-दावा कहते हैं।

एकबुद्धि (सं॰ त्रि॰) १ एक ही ध्यान रखनेवाला, जो उसी ख़यालका हो। (पु॰) २ मण्डूक विशेष, एक मेंढक। पञ्चतन्त्रमें इसकी कथा लिखी है।

एकभक्त (सं॰ क्ली॰) एकं भक्तं भोजनं यत्र, बहुव्री॰। १ व्रतविशेष। इस व्रतमें रात्रिका आहार छोड़ दिवसको दोपहरके समय केवल एकबार भोजन करते हैं। जो व्यक्ति विष्णुका भक्त रहता, सर्व जीवोंपर अहिंसा रखता, एकबार भोजन करता और प्रत्यह 'वासुदेवाय नमः' मन्त्र ८ सौ बार जपता, उसे अतिरात्र यज्ञका फल मिलता है। ऐसे ही नियमसे जो संवत्सर काल अतिवाहित करता, वह पौण्डरीक यज्ञके फलका अधिकारी बनता और दश सहस्र वर्ष स्वर्ग भोग पुण्यक्षय होनेपर फिर मर्त्यका आते भी सदा-काल सुखी रहता है। (विष्णुधर्मोत्तर) (त्रि॰) एकमेव भजते। २ एकमात्र व्यक्तिका अनुरक्त, जो एक ही आदमीकी खिदमत करता हो। ३ एकमात्र परमेश्वरका भक्त। ४ प्रधान भक्त।

एकभक्तव्रत (सं॰ क्ली॰) एकभक्त देखो।

एकभक्ति (सं॰ स्त्री॰) एका अनन्यविषया भक्तिः, कर्मधा॰। १ एकमात्र विषयमें भक्ति, एक ही बातकी मुहब्बत। २ केवल एक बारका भोजन। (त्रि॰) एका अनन्यविषया भक्तिर्यस्य, बहुव्री॰। २ नितान्त भक्त, निहायत ताबेदार।

एकभङ्गीनय (सं॰ पु॰) एकामेकरूपो भङ्गीमधिकृत्य नयः, मध्यपदलोपी कर्मधा॰। न्याय विशेष, एक दलील। एकरूप बहु विषयोंके मध्य किसी स्थलमें एक की प्रवृत्ति पड़ने पर इस न्यायबलसे वैसे ही अन्य विषयोंकी भी प्रवृत्ति लग सकती है।

एकभार्य (सं॰ पु॰) एका भार्या यस्य, बहुव्री॰ ह्रस्वः। १ एक पत्नीवाला पुरुष, जिस मर्दके दूसरी औरत न रहे। (त्रि॰) एकेन भार्यः। २ एक जन द्वारा प्रतिपाल्य, जो एक ही शख्सकी परवरिश पानेके क़ाबिल हो।

एकभार्या (सं॰ स्त्री॰) एकैव भार्या, ६-तत्। साध्वी, पतिव्रता, नेकचलन बीबी।

एकभाव (सं॰ पु॰) एकयामी भावयेति, कर्मधा॰। १ एक स्वभाव। २ एक अभिप्राय। ३ अभेद, मेलजोल। ४ समभाव, बराबरी। ५ एक विषयमें अनुराग, एक ही बातकी चाह। ६ एकका अभिप्राय। ७ एक रूप। (वि॰) ८ एक प्रकृतिवाला, जिसके दूसरी बात न रहे।

एकभुक्त (सं॰ त्रि॰) १ एक बार भोजन करनेवाला, जो एक ही मरतबा खाता हो। २ एक साथ भोजन करनेवाला, जो अलग खाता न हो।

एकभूत (सं॰ त्रि॰) १ अविभक्त, मिला हुआ, जो टूटा न हो। २ एक विषयासक्त, एक ही काममें लगा हुआ।

एकभूम (सं॰ पु॰) एकाभूमिर्यस्य, बहुव्री॰। एकतला गृह, एक मंजिला मकान्।

एकभोजन (सं॰ क्ली॰) १ केवल एक बारका आहार, सिर्फ एक मरतबा खाना। २ एक साथका भोजन।

एकमत (सं॰ त्रि॰) एक मात्र मत विशिष्ट, हमराय।

एकमति (सं॰ स्त्री॰) एका अनन्यविषया मतिः, कर्मधा॰। १ एकविषयासक्त मन, एक ही बातमें लगा हुआ दिल। (त्रि॰) एकस्मिन् विषये मतिर्यस्य, बहुव्री॰। २ एक विषयमें चिन्ताशील, एक ही बात सोचनेवाला।

एकमनाः (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन् विषये मनोऽस्य, बहुव्री॰। एकाग्रचित्तसे चिन्ताकारी, दिल लगाकर सोचनेवाला।

एकमय (सं॰ त्रि॰) एकसे युक्त, जो एक रखता हो।

एकमात्र (सं॰ त्रि॰) एका मात्रा यस्य, बहुव्री॰। एक मात्राविशिष्ट, जो दूसरी मात्रा रखता न हो।

एकमात्रिक, एकमात्र देखो।

एकमुंहा (हिं॰ वि॰) एकमात्र मुखविशिष्ट, सिर्फ एक मुंह रखनेवाला। एकमुंहा दहरिया एक गहना होता है। यह पूल या कामिनि बनता और नीच जातिकी स्त्रियोंके पहननेमें लगता है।

एकमुख (सं॰ त्रि॰) एकं मुखं यस्य, बहुव्री॰। १ एक द्वारविशिष्ट, एक दरवाजेवाला। २ एक ही स्थानको ओर मुख झुकाये हुआ, जो किसी एक जगहको मुंह फेरे हो। ३ एकमात्र प्रधान रखनेवाला; जिसके एक ही अफसर रहे।

एकमुखी, एकमुख देखो। एकमुखी रुद्राक्षमें फांकको रेखा एक ही रहती है।

एकमूर्धा, एकमुख देखो।

एकमूल (सं॰ पु॰) पुण्डरीकवृक्ष, सफेद कमलका पेड़।

एकमूला (सं॰ स्त्री॰) एकं मूलं यस्याः, बहुव्री॰। १ शालपर्णी। २ अतसी, अलसी।

एकम्बा—मद्रास प्रान्तके पुरनिया जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २५° ५८' उ॰ और द्राघि॰ ८०° ११' ३०" पू॰ पर अवस्थित है। एकम्बा अपने जिलेके व्यवसायका एक प्रधान स्थान है। अन्न, गन्धद्रव्य, वस्त्र, चर्म प्रभृतिका काम होता है। बाजार बराबर लगा रहता है।

एकयष्टि (सं॰ स्त्री॰) मुक्ताकी एकमात्र यष्टि, मोतियोंकी अकेली लड़ी।

एकयष्टिका (सं॰ स्त्री॰) एका यष्टिरिव, उपमि॰। फूलों या मोतियोंकी अकेली लड़ी।

एकयोनि (सं॰ त्रि॰) एका समा योनिर्जातिर्यस्य, बहुव्री॰। १ एकजाति, हमकौम। २ एक स्थानमें उत्पन्न, जो एक ही जगहमें पैदा हो।

एकरंग (हिं॰ वि॰) १ तुल्य, बराबर। २ निश्चल, दूसरी बात न रखनेवाला।

एकराज (सं॰ पु॰) एको मुख्यो राजः राजसत्त्वम्, कर्मधा॰। सम्राज। सम्राज देखो।

एकरादश, एकादश देखो।

एकरन्ध्र (सं॰ पु॰) मदोत्कट।

एकरस (सं॰ पु॰) एकोऽन्यविषयको रसः, कर्मधा॰। १ एकाभिप्राय, अकेला मतलब। २ एक विषयमें अनुराग, एक बातकी चाह। (त्रि॰) एको रसो यत्र। ३ अमिश्र स्वभाव, एक ही मिजाजवाला। एकरस नाटकादिमें शृङ्गारादिके अन्तर्भूत कोई एकमात्र रस रहता और अन्यान्य रस अङ्गीभूत रहता है।

एकरसिक (सं॰ त्रि॰) एकमात्रविषयमें अनुरक्त, जो एक ही बातसे खुश रहता हो।

एकराज (सं॰ पु॰) १ प्रधान राजा। २ एकोजी। एकोजी देखो।

एकराट् (सं॰ पु॰) एक-राजन्-टच्। राजाह: सखिभ्यष्टच्। पा ५।४।९१। १ प्रधान राजा, बड़ा बादशाह। (त्रि॰) २ एकाकी प्रकाशमान, जो अकेले ही रौशन हो।

एकरात्र (सं॰ क्ली॰) १ एकमात्र रात्रि, एक रात। २ उत्सव विशेष। यह एक ही रात रहता है।

एकरात्रिक (सं॰ त्रि॰) एकरात्रिके अर्थ पर्याप्त, जो एक रातके लिये काफ़ी हो।

एकरार (अ॰ पु॰) १ अङ्गीकार, मंजूरी। २ वचन, क़ौल। प्रतिज्ञापत्रको एकरारनामा कहते हैं।

एकराशि (सं॰ पु॰) एकश्चासौ राशिश्च, कर्मधा॰। १ मेषादिके मध्य एकराशि। २ किसी वस्तुका एक स्तूप, ढेर। ३ आधिक्य, बढ़ती।

एकराशिभूत (सं॰त्रि॰) एकत्र, इकट्ठा।

एकरिक्थी (सं॰ पु॰) एकस्य पितुः रिक्थमस्यस्य, एकरिक्थ-इनि। १ पिताकी सम्पत्तिका एक अंश पानेवाला, जो अपने बापकी जायदादका वारिस हो। २ तुल्यधनी, बराबरका दौलतमन्द।

एकरूप (सं॰ त्रि॰) एकं समानं रूपं यस्य, बहुव्री॰। १ समानरूप, हमशक्ल। "एकरूप तुम भ्राता दोऊ।" (तुलसी) (पु॰) २ एकमात्र रूप, एक सूरत, एक विध।

एकरूपतः (सं॰ अव्य॰) एकमात्र रूपमें, बग़ैर तब-दीली।

एकरूपता (सं॰ स्त्री॰) १ तुल्यता, बराबरी। २ सायुज्यमुक्ति।

एकरूपी (सं॰ त्रि॰) समान रूप रखनेवाला, हमशक्ल।

एकरूप्य (सं॰ त्रि॰) एकस्मात् आगतः, एक-रूप्य। हेतुमनुष्येभ्योऽन्यतरस्यां रूप्यः। पा ४।३।८१। १ एक स्थानसे आगत, उसी जगहसे आया हुआ। २ एकमात्र रौप्यविशिष्ट।

एक्रोन (Ekron)—फ़िलिष्टाइनका एक राजनगर। यह रामलेहसे ५ मील दूर फ़िलिस्तिया और शारोंके मैदानको पृथक् करनेवाली उच्च भूमिके दक्षिण ढालू भागपर अवस्थित है। आजकल इसे अक्रोन कहते हैं। सम्भवतः यह स्वतन्त्र रहा। असीरियाके शिलालेखोंसे विदित हुआ, एक्रोनके राजा पादी पहले हेज़कियाहके जुदाके अधीन रहे। किन्तु सेना चेरिबका जुदापर दबाव पड़नेसे उन्होंने स्वाधीनता पायी थी। सन् ७० ई॰को इसमें यहूदी आकर बसे। मकान मट्टीके बने हैं। प्राचीनताका कोई लक्षण नहीं मिलता। आसपासकी भूमि उर्वरा है।

एकर्च (सं॰ पु॰) एका ऋक्, कर्मधा॰। १ एक-ऋक्। (क्ली॰) २ एक ऋक्युक्त सूक्त। (त्रि॰) ३ एक ऋक् आराध्य।

एकल (सं॰ त्रि॰) एक-ला-क। एकाकी, अकेला।

एकलंगा (हिं॰ पु॰) कुश्तीका एक पेंच। एकलंगा-डंड, एक प्रकारकी कसरतका नाम है।

एकलत्तीछपाई (हिं॰ स्त्री॰) कुश्तीमें ऊपरसे चित करनेका एक पेंच।

एकलव्य (सं॰ पु॰) एका अङ्गुलिर्लव्या गुरुदक्षिणात्वेन छिन्ना यस्य। निषादराज हिरण्यधनुके पुत्र। हरिवंशके मतसे इनके पिताका नाम श्रुतदेव था। किन्तु निषाद द्वारा प्रतिपालित होनेसे यह निषादके पुत्र-रूपसे परिचित रहे। असाधारण गुरुभक्ति देखा एकलव्य अपनी कीर्ति स्थापनकर गये हैं। महाभारतमें लिखते, कि एकलव्य अस्त्रशिक्षाको द्रोणाचार्यके पास पहुंचे थे। किन्तु द्रोणाचार्यने उन्हें निषादका पुत्र समझ शिष्य न बनाया। फिर एकलव्यने किसी अरण्यमें जा द्रोणाचार्यकी एक काष्ठमय प्रतिमूर्ति प्रस्तुत की थी। वह अनन्यमनसे उसकी आराधना कर योगके बल अस्त्रशिक्षा करने लगे। योगबल अथवा गुरुभक्तिसे बाणप्रयोगमें एकलव्यको अद्भुत्क्षमता उत्पन्न हुई। कौरव और पाण्डव अपने गुरु द्रोणके साथ उसी वनमें मृगया मारने गये थे। उनका एक कुत्ता हठात् एकलव्यका मलिन देह, कृष्णाजिन और जटा-पाश देख भूंकने लगा। एकलव्यने अति लघुहस्तसे उस कुत्तेके मुखमें सात शब्दभेदी बाण मारे थे। वह शरपूर्ण वदन लिये पाण्डवोंके निकट जा पहुंचा। और बाणक्षेपकारीकी भूयसी प्रशंसा करने लगे और

इसमें अर्पण करो उसको शिक्षाका सत्कार्य देख चकित हुये। फिर ढूंढते-ढूंढते निकट पहुंच उन्होंने एक-लव्यसे परिचय पूछा था। उन्होंने कहा—मैं हिरण्य-धनुका पुत्र और द्रोणाचार्यका शिष्य हूं। कौरवों और पाण्डवोंने यथासमय लौट आचार्यसे सब बता दिया। फिर निर्जनमें मिल अर्जुनने द्रोणाचार्यसे कहा—आपने मुझे अपना सबसे अच्छा शिष्य बताया था; किन्तु निषादकुमार ऐसे कैसे निकले? द्रोण यह प्रश्न सुनकर सोच अर्जुनको ले एकलव्यके निकट गये। एकलव्य भी निरतिशय भक्ति-सत्कारसे उनका अर्चनादि सम्पादन कर बोले—मैं आपका शिष्य हूं। गुरुने उत्तर दिया—यदि तुम सत्य रूपसे हमारे शिष्य हो, तो हमारी दक्षिणा दे जाओ। एकलव्यने कहा—गुरो! बतलाइये क्या दक्षिणा दूं, कोई भी वस्तु अदेय नहीं। एकलव्यकी यह बात सुन द्रोणा-चार्यने कहा—यदि तुम दक्षिणा देना आवश्यक समझो, तो अपने दक्षिण हस्तका अङ्गुष्ठ उतार दो। एकलव्यने गुरुकी ऐसी आज्ञा पर भी अविचलित चित्तसे हंसी-खुशी अपना अङ्गुष्ठ काट दिया था। उससे उनका बाणप्रयोग एकबारगी ही न रुका सही, किन्तु वह लघुहस्तता जाती रही। (भारत, आदि १३१ अ॰)

एकला (हिं॰ वि॰) एकाकी, अकेला।

एकलिङ्ग (सं॰ क्ली॰) एकं लिङ्गं यत्र, बहुव्री॰। १ सिद्धिके साधनका स्थान। पांच कोसके बीच जहां अन्य लिङ्ग नहीं रहता, उसे ही सब कोई एकलिङ्ग कहता है। ऐसा स्थान अतिशय सिद्धिप्रद है। (पु॰) एकं लिङ्गं पुंस्त्वादि यस्य। २ एकलिङ्गक शब्द, अजहल्लिङ्ग। अन्यलिङ्गक शब्दका विशेषण बननेसे भी इसका लिङ्ग नहीं बदलता। एकं पिङ्गल-नेत्ररूपं लिङ्गं यस्य। ३ कुबेर। एकपिङ्ग देखो।

४ मेवाड़वाले राजपूतोंके प्रधान उपास्य देव। उदय-पुर राजधानीसे ४ कोस उत्तर गिरिपथमें एकलिङ्ग देवका मन्दिर बना है। चारो पार्श्वपर गगनस्पर्शी गिरिशृङ्ग हैं। उनसे अनेक सुनिर्मल निर्झर अविराम गतिसे प्रवाहित हैं। इस गिरिमालाके सकल शृङ्ग एकलिङ्ग देवके नामपर उत्सर्गीकृत हैं। इसका मन्दिर साधारण शिवके मन्दिर-जैसा है। शिखरतक श्वेत मरमर पत्थरसे अलङ्कृत है। मन्दिरका अभ्यन्तर भाग स्तम्भके समूहसे शोभमान है। मध्यमें संहार-रूपी महादेवकी मूर्ति है। वही एकलिङ्ग नामपर बहु कालसे विख्यात है। लिङ्गके सम्मुख सुवृहत् नन्दीकी मूर्ति है। एकलिङ्ग देववाले मन्दिरके प्राङ्गणको चारो ओर अन्यान्य देवताओंके भी मन्दिर बने हैं।

एकलिङ्गभाक् (सं॰ त्रि॰) एक शालीय केशर विशिष्ट पुष्पयुक्त, जो एक ही जैसे फूल रखता हो।

एकलू (सं॰ पु॰) एकं लुनाति, लू-क्विप्। पक्षि-विशेष।

एकलौ (हिं॰ पु॰) ताशका एका।

एकलौता (हिं॰ वि॰) एकाकी, अकेला। यह शब्द 'पुत्र' का विशेषण है।

एकवक्त्र (सं॰ पु॰) एकं मीनपत्वेन मुख्यतमं वक्त्रं यस्य, बहुव्रो॰। १ असुर विशेष। (स्त्री॰) २ एक मुखी रुद्राक्ष।

एकवचन (सं॰ क्ली॰) एकमेकत्वं उच्यते अनेन, वच् करणे ल्युट्। व्याकरणोक्त एकत्ववाचक विभक्ति, वाहिद। सु, अम्, टा, ङे, ङसि, ङस् और ङि सात विभक्ति एकवचन वाचक हैं। हिन्दीमें भी जिससे एक पदार्थका बोध होता, वही एक वचन है। किन्तु अनेक स्थलोंपर एकवचन और बहुवचनके रूपमें भेद नहीं पड़ता, जैसे—एक मनुष्य आया, पांच मनुष्य आये। प्रायः हिन्दीके विद्वान संस्कृत शब्द न बिगाड़ एकवचन और बहुवचन दोनोंमें समान रूपसे रखते हैं।

एकवत् (सं॰ त्रि॰) एकोऽस्त्यस्मिन्, एक-मतुप्, मस्य वः। १ एकसंख्याविशिष्ट, अकेलो अदद रखनेवाला। (अव्य॰) एकमेव, एक-वति। २ एकके न्याय, एककी तरह।

एकवद्भाव (सं॰ पु॰) एकेन तुल्यो भावः भवनम्, भू-भावे अप्। शब्दनिष्ठ एकवचनादिरूप कार्य, बहुतोंका समभूता।

एकवर्ण (सं॰ त्रि॰) एको वर्णो यस्य, बहुव्रो॰।

१ एकमात्रवर्णविशिष्ट, सिर्फ एक हर्फ रखनेवाला। २ ब्राह्मणादि जातिभेद शून्य, जो ब्राह्मणादि जातिका भेद रखता न हो। यह कलिकालकी शेष अवस्थाका बोधक है। ३ एकस्वरूप, हमशक्ल। (पु॰) एक एव वर्णः। ४ शुक्लादिके मध्य एक वर्ण, एक रंग। ५ श्रेष्ठवर्ण, बढ़िया रंग। ६ ब्राह्मणादिके मध्य एक जाति। ७ एक अक्षर। ८ श्रेष्ठ जाति। ९ बीज-गणितोक्त तुल्य वर्णविशिष्ट सजातीय द्रव्य विशेष।

एकवर्णवत् (सं॰ अव्य॰) एक वर्णके न्याय, एक हर्फके मुताबिक।

एकवर्णसमीकरण (सं॰ क्ली॰) एको वर्णः तुल्य-रूपो समो क्रियते अनेन, कृ-ल्युट्। बीजगणितोक्त बीज चतुष्टयके मध्यका एक बीज।

एकवर्णिक (सं॰ वि॰) एकः वर्णं अर्हति, एकवर्ण-ठक्। असाधारण, एक ही रंग या कौमवाला।

एकवर्णी (सं॰ स्त्री॰) एकमेव शब्दं वर्णयतीति, एकवर्ण-अच्, गौरादित्वात् ङीष्। वाद्यविशेष, करताल।

एकवर्षिका (सं॰ स्त्री॰) एको वर्षो यस्याः, एक वर्ष-कन्-टाप्, अत इत्वम्। एक वत्सर वयसकी बछिया।

एकवसन (सं॰ त्रि॰) एकं वसनं यस्य, बहुव्री॰। १ उत्तरीय-वस्त्र शून्य, सिर्फ एक धोती रखनेवाला। (क्ली॰) एकञ्च तत् वसनञ्चेति, कर्मधा॰। २ केवल मात्र परिधेय वस्त्र, सिर्फ पहननेका कपड़ा। ३ एक वस्त्र, कोई कपड़ा। ४ एक जातीय वस्त्र, किसी क़िस्मका कपड़ा।

एकवस्त्र, एकवसन देखो।

एकवस्त्रता (सं॰ स्त्री॰) एक मात्र वस्त्र रखनेकी स्थिति, जिस हालत पे एक ही कपड़ा रहे।

एकवस्त्रसंवीत (सं॰ त्रि॰) एक वस्त्र धारण किये हुआ, जो सिर्फ एक ही कपड़ा पहने हो।

एकवस्त्रार्धसंवीत (सं॰ त्रि॰) आधा वस्त्र पहने हुआ, जो निस्फ पोशाक पहने हो।

एकवांज (हिं॰ स्त्री॰) काकवन्ध्या, एक ही बच्चा देनेवाली औरत।

एकवाक्य (सं॰ क्ली॰) एकं एकार्थं वाक्यम्, कर्मधा॰। १ एक अर्थबोधक वाक्य, जिस बातसे दूसरा मानी न निकले। २ अविसम्वादी वाक्य, रायकी बात। (त्रि॰) एकं अविसम्वादि वाक्यं यस्य, बहुव्री॰। ३ एकमतानुसारी वाक्ययुक्त, एक-जैसी बात कहने-वाला।

एकवाक्यता (सं॰ स्त्री॰) एकवाक्य-तल्-टाप्। वाक्यका ऐक्य, बातका मेल।

एकवाद (सं॰ पु॰) एकोऽभिन्नस्वरो वादः वाद्यम्, कर्मधा॰। डिण्डिम नामक वाद्य विशेष, किसी क़िस्मका ढोल।

एकवाद्य (सं॰ क्ली॰) एकमभिन्नस्वरं वाद्यम्। डिण्डिम, किसी क़िस्मका ढोल।

एकवाया (सं॰ स्त्री॰) जुड़ैन, टाइन।

एकवार (सं॰ अव्य॰) एकवारगी ही, एकाएक, फ़ौरन्।

एकवास (सं॰ त्रि॰) एकमात्र गृहयुक्त, जिसके एक ही मकान् रहे।

एकवासस् (सं॰ पु॰) एकं वासोऽस्य, बहुव्री॰। एकमात्र वसनयुक्त, जिसके एक ही पोशाक रहे।

एकविंश (सं॰ त्रि॰) एकविंशतेः पूरणम्, एक विंशत्-डट्। तस्य पूरणे डट्। पा ५।२।४८। १ एक विंशतिका पूरण, इक्कीसको भरनेवाला। २ इक्कीसवां। ३ एकविंश-स्तोम सम्बन्धीय। (पु॰) ४ एकविंशस्तोम। ५ छह पृष्ठ स्तोममें एक स्तोम।

एकविंशक (सं॰ त्रि॰) इक्कीसवां, जो इक्कीस रखता हो।

एकविंशत्, एकविंशति देखो।

एकविंशति (सं॰ स्त्री॰) एकेन अधिका विंशतिः, मध्यपदलो॰। इक्कीस, बीस और एककी संख्या, २१।

एकविंशतिगुग्गुल (सं॰ पु॰) कुष्ठरोग नाशक गुग्गुल विशेष। चित्रक, त्रिफला, त्रिकुट, जीरा, काला जीरा, वच, सैन्धव, अतीस, कुष्ठ, चव्य, इला यची, यवक्षार, विडङ्ग, अजमोद, अजमोद, मोथा तथा देवदारु बराबर बराबर ले सबके सम भाग गुग्गुल डाले और घीमें घोट गोली बनाये। यह औषध प्रातः काल भोजनके समय खाना चाहिये।

एकविंशतितम (सं॰ त्रि॰) एक-विंशति तमट्। विंशतिपूरणम्। पा ५।२।५६। इक्कीसवाँ।

एकविंशतिधा (सं॰ अव्य॰) एक विंशति प्रकारार्थे धा। संख्याया विधार्थे धा। पा ५।३।४२। एक विंशति प्रकार, इक्कीस गुना।

एकविंशवत् (सं॰ त्रि॰) एक विंशस्तोम-सम्बन्धीय।

एकविंशस्तोम (सं॰ पु॰) एकविंशयासौ स्तोमश्च, कर्मधा॰। एकविंशति मन्त्र परिमित सामवेदोक्त युग्मादि नामक एक स्तव।

एकविध (सं॰ त्रि॰) एक विधा प्रकारोऽस्य, बहुव्री॰ समास:। एकप्रकार, साधारण, मामूली।

एकविलोचन (सं॰ त्रि॰) एकं विलोचनं चक्षुर्यस्य, बहुव्री॰। १ काना। (पु॰) २ जनपद विशेष, एक बस्ती। ३ कुबेर। एकपिङ्ग देखो। ४ काक। (स्त्री॰) ५ एक योगिनी।

एकविषयी (सं॰ त्रि॰) एको विषयोऽस्यास्तीति, इनि। १ एकमात्र विषयमें आसक्त, जो सिर्फ एक ही बात पकड़े हो। २ एकमात्र विषयविशिष्ट, जो सिर्फ एक ही बातका हो।

एकवीजपत्रिक (सं॰ त्रि॰) वृक्षोत्पत्तिके समय केवल एक पत्र देनेवाला, जो कोपल फूटते वक्त सिर्फ एक ही पत्ती देता हो। अंगरेजीमें इसे 'मनोकटिलिडन' (Mono-cotyledon) कहते हैं।

एकवीर (सं॰ पु॰) १ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय महावीर, सज्जवीर और सुवीरक है। यह मदकारक, अतिशय उष्ण एवं कटु होता और वेदना, वात, कटिग्रहान्वित वातव्याधि तथा पक्षाघातको नाश करता है। (राजनिघण्टु)

एकवीरा (सं॰ स्त्री॰) वन्ध्याककर्कोटी, ककड़ी ककड़ी। यह तिक्त, अति उष्ण एवं मालूम होती और पक्षाघात तथा दुष्कोटी शूलको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु)

एकवीराकल्प (सं॰ पु॰) तन्त्रविशेष। इसमें योराचारको आराधना देवताका रहस्य उक्त है।

एकवृक्ष (सं॰ पु॰) एको वृक्षोऽत्र बहुव्री॰। १ स्थानविशेष, एक जगह। चार कोसके बीच जहां दूसरा वृक्ष नहीं रहता, उस स्थानको सब कोई एकवृक्ष कहता है। २ एकमात्र वृक्ष, अकेला पेड़।

एकवृत् (सं॰ स्त्री॰) एकधैव वर्तते, वृत कर्तरि क्विप् तुगागम:। १ एकरूप वर्तमान, एकसा हाल। एकधा वर्तते यत्र, आधारे क्विप्। २ स्वर्गलोक। एक भेव वर्तते, भावे क्विप्। ३ एकरूप आवर्तन, एकसा घुमाव।

एकवृन्द (सं॰ पु॰) सुश्रुतोक्त कण्ठगत मुखरोग विशेष, गलेकी एक बीमारी। कण्ठके मध्य गोलाकार, उन्नत एवं दाह तथा कण्डु विशिष्ट जो शोथ उठता, उसका नाम एकवृन्द पड़ता है। यह कठिन-स्पर्श, गुरु और अपाको होता है। इस रोगमें प्रथमत: किसी उपायसे रक्त मोक्षण कराना चाहिये। फिर दारु हरिद्रा, नीम तथा मालकंगुनकी छाल और इन्द्रयव आध आध तोला आध सेर जलमें पका आधपाव रहनेसे क्वाथको सेवन कराते हैं। अथवा कुटकी, अतीस, देवदारु, निर्विषी, मोथा तथा इन्द्रयव चार-चार माशे आधसेर गोमूत्रमें पका आध पाव रहनेसे पिलाते हैं। (स्त्री॰) २ एकराशि।

एकवृष (सं॰ पु॰) एकोऽद्वितीयो वृष:, कर्मधा॰। एक वृष, अनोखा बैल। (त्रि॰) एको वृषो यस्य, बहुव्री॰। २ एकमात्र वृष रखनेवाला, जिसके एक ही बैल रहे।

एकवेदि, एकवेदी देखो।

एकवेणी (सं॰ स्त्री॰) एकीभूता संस्काराभावेन जटावत् संहतिप्राप्ता वेणी:, कर्मधा॰। १ प्रोषितभर्तृकाकी वेणी, वियोगिनीकी लट। २ प्रोषितभर्तृका, अपना कान्ति गेंहमुखमें रखनेवाली औरत।

एकवेश्म (सं॰ क्ली॰) एकेनैवाधिष्ठितं वेश्म गृहम्, कर्मधा॰। एकमात्र प्राणीके रहनेका गृह, जिस घरमें एकसे ज्यादा आदमी न रहें।

एकव्यवसायी (सं॰ पु॰) एकमात्र व्यवसाय करनेवाला पुरुष, जो सब कुछ नहीं रोजगार करता हो।

एकशाल्य (सं॰ पु॰) प्रधान या मुख्य शाल्य।

एकशः (सं॰ अव्य॰) एक-एक, अकेले।

एकशत (सं॰ क्लो॰) १ एक सौ एक, १०१। (वि॰) २ एकशत संख्यायुक्त, एक सौ एकवां।

एकशतक (सं॰ वि॰) एकशतं परिमाणमस्य, एकशत कन्। १ एकशत परिमाणविशिष्ट, सौ रखनेवाला। (क्लो॰) स्वार्थे कन्। २ एकशत, सौ, १००।

एकशततम (सं॰ वि॰) एकाधिकशत संख्याविशिष्ट, एक सौ एक रखनेवाला।

एकशतधा (सं॰ अव्य॰) एकशत-धा। १ एकशत-प्रकार, एक सौ एक तरहसे। २ एक सौ एक गुना।

एकशफ (सं॰ पु॰-क्लो॰) एकः शफः खुरो यस्य, बहुव्री॰। १ अश्व, घोड़ा। २ एक खुर जन्तुमात्र, फटे खुर न रखनेवाला कोई जानवर। खर, अश्व, अश्वतर, गौर, शरभ और चमरीको एकशफ कहते हैं। (भावप्रकाश)

एकशफक्षीर (सं॰ क्लो॰) अद्विभागखुर पशुका दुग्ध, फटे खुर न रखनेवाले जानवरका दूध। यह उष्ण, लघु, वातहर, साम्ल, ईषत् लवण और जड़ताकर होता है। (वाभटटीका हेमाद्रि)

एकशरण (सं॰ क्लो॰) एकमात्र आशा, अकेली पनाह। यह शब्द प्रधानतः देवताके लिये प्रयुक्त होता है।

एकशरीर (सं॰ वि॰) एकमात्र शरीर वा रक्तसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो उसी खूनका हो।

एकशरीरान्वय (सं॰ पु॰) सगोत्रता, सपिण्डता, क़रावत, बिरादरी।

एकशरीरारम्भ (सं॰ पु॰) पिता और माताके संयोगसे सगोत्रताका प्रारम्भ, मा बापके मेलसे क़राबतका शुरू।

एकशरीरावयव (सं॰ पु॰) सगोत्र, सम्बन्धी, क़राबती, रिश्तेदार।

एकशरीरावयवत्व (सं॰ क्लो॰) सगोत्र सम्बन्ध, क़राबती रिश्ता।

एकशाख (सं॰ पु॰) एका शाखा यस्य, बहुव्री॰ कप्तः। १ वेदकी तुल्य शाखावाले ब्राह्मण। २ एक शाखाविशिष्ट वृक्षादि, एक डालका पेड़ वग़ैरह।

एकशाल (सं॰ पु॰) ग्रामविशेष, एक गांव। भरत राजकुमारके अयोध्या आते समय इस ग्राममें पहुंचे थे। यह स्थान स्थाणुमती नदी किनारे अवस्थित है।

"एकसाले स्थाणुमतीं विनते गोमतीं नदीम्।" (रामायण २।७११६)

एकशिखा (सं॰ क्लो॰) पाठा, निरविसी।

एकशितिपाद् (सं॰ पु॰) एकः शितिः कृष्णः पादोऽस्य, बहुव्री॰। अश्वविशेष, एक घोड़ा। इसका एक पैर सफेद रहता है। इसे अश्वमेध यज्ञमें वरुण देवताके उद्देश्यसे चढ़ाते हैं।

एकशीर्ष (सं॰ वि॰) एक ही स्थानको ओर मुख घुमाये हुआ, जो उसी जगहको तर्फ मुंह फेरे हो।

एकशीलसमाचार (सं॰ त्रि॰) एक ही प्रकारसे जीवन अतिवाहित करनेवाला, जो वही चाल-चलन रखता हो।

एकशृङ्ग (सं॰ वि॰) एकमात्र कोणयुक्त, सिर्फ एक खोंम रखनेवाला।

एकशृङ्ग (सं॰ पु॰) एकं शृङ्गं यस्य, बहुव्री॰। १ विष्णु। स्वायम्भुव मन्वन्तरमें अकालप्रलय आनेसे विष्णुने एकशृङ्गविशिष्ट मत्स्यका रूप धारण किया था। (कालिकापुराण ३१ अ॰) २ गण्डक, गैंडा। ३ एक शृङ्गका पशु, जिस जानवरके एक ही सींग रहे। ४ पितृगण विशेष।

एकशृङ्गा (सं॰ स्त्री॰) पितृगणकी एक कन्या। यह मस्तिष्कसे उत्पन्न हुई थीं।

एकशृङ्गो—बौद्धशास्त्रोक्त एक ऋषिकुमार। काश्यपके वीर्य और हरिणीके गर्भसे ऋष्यशृङ्गकी तरह इनका भी जन्म हुआ था। मस्तकपर एक शृङ्ग रहनेसे यह नाम पड़ा। काशीपराजकी कन्यासे एकशृङ्गका विवाह हुआ। बोधिसत्त्वावदान कल्पलताके मतसे यही बुद्ध थे। (बोधिसत्त्वावदान)

एकशेष (सं॰ पु॰) एकः शेषोऽवशिष्टो यस्य, बहुव्री॰। १ द्वन्द्वसमास विशेष। इस समासमें दो या दोसे अधिक शब्दोंमें केवल एक रहता और द्विवचन वा बहुवचन लगता है, जैसे—माता च पिता च पितरौ। एकः शेषः मूलमस्य। २ एक मूलयुक्त वृक्षविशेष, जिस पेड़के एक ही जड़ रहे।

एकशैल (सं॰ क्लो॰) बरद्वनका प्राचीन नाम।

एकश्रुत (सं० त्रि०) एकबार श्रवण किया हुआ, जो एक ही मरतबा सुना गया हो।

एकश्रुतधर (सं० त्रि०) एकबार श्रवण किया हुआ विषय धारण रखनेवाला, जो एक मरतबा सुनी बात भूलता न हो।

एकश्रुतधारत्व (सं० क्लो०) एकबार श्रवण किया हुआ विषय धारण रखनेकी स्थिति, जिस हालतमें एक ही मरतबा सुनी बात याद रहे।

एकश्रुति (सं० त्रि०) एका श्रुतिर्यस्य, बहुव्री०। १ उदात्त, अनुदात्त और स्वरित—त्रिविध स्वर मिश्रित, जो ऊंची, नीची और बराबरकी आवाज़में हो। (स्त्री०) २ एकमात्र स्वरकी श्रुति। ३ एक वेद। ४ एककर्णविशिष्ट, जिसके एक ही कान रहे।

एकश्रुटि एकमात्र आज्ञा पालन करनेवाला, जो एक ही हुक्म मानता हो।

एकषष्ट (सं० त्रि०) एकषष्ट्याः पूरणम्, एकषष्टि-डट्। एकषष्टि संख्या पूरण करनेवाला, इकसठवां।

एकषष्टि (सं० स्त्री०) एकेन अधिका षष्टिः, मध्यपदलो०। साठकी अपेक्षा एक संख्या अधिक, इकसठ, ६१।

एकषष्टितम, एकषष्ट देखो।

एकसठ (हिं० पु०) एकषष्टि, छः दहाई और एक इकाई, ६१।

एकसत्तावाद (सं० पु०) वादविशेष, एक दर्शन। इसमें सत्ता ही मुख्य मानी गयी है। असत् कुछ भी नहीं। युरोपमें पारमेनिडीज़ने यह मत फैलाया था।

एकसप्तत (सं० त्रि०) एकसप्ततियुक्त, एकहत्तरवां।

एकसप्तति (सं० स्त्री०) एकाधिका सप्ततिः। सत्तर और एक, एकहत्तर, ७१।

एकसप्ततितम, एकसप्तत देखो।

एकसभ (सं० पु०) एका सभा यस्य। १ जगदीश्वर। (त्रि०) २ एकसभाविशिष्ट, एक मजलिसवाला।

एकसर (हिं० त्रि०) १ एकाकी, साथमें दूसरा न रखनेवाला। २ एकहरा, जो दोहरा न हो। (फा० वि०) ३ सम्पूर्ण, पूरा।

एकसर्ग (सं० त्रि०) एकस्मिन् विषये सर्गो निश्चयो यस्य। एकाग्रचित्त, एक ही बातपर झुका हुआ।

एकसहस्र (सं० त्रि०) एकसहस्रं एकाधिकं सहस्रं वा परिमाणमस्य। १ एक सहस्र परिमाणविशिष्ट, हज़ारवां। (क्लो०) २ एक हज़ार, १०००। ३ एक हज़ार एक, १००१।

एकसा (फा० वि०) १ तुल्य, बराबर। २ सम, हमवार, जो नीचा-ऊंचा न हो।

एकसाक्षिक (सं० त्रि०) एकमात्र साक्षी रखनेवाला, अकेलेका देखा हुआ, जो दूसरा गवाह रखता न हो।

एकसार्थं (सं० अव्य०) साथ-साथ, मिल-जुलकर।

एकसूत्र (सं० पु०) एकं सूत्रं यस्य, बहुव्री०। डमरु-वाद्य, डमरू। यह एक सूतसे बजाया जाता है।

एकसूनु (सं० त्रि०) एकोऽद्वितीयः सूनुर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र पुत्र रखनेवाला, जिसके एक ही लड़का रहे। (पु०) कर्मधा०। २ एकमात्र पुत्र, एकलौता बेटा।

एकस्तोम (सं० पु०) सोमयज्ञविशेष। इसमें एक ही स्तोम होता है।

एकस्थ (सं० त्रि०) एकस्मिन् तिष्ठति, स्था-क। एकस्थानमें स्थित, इकट्ठा, साथ ही खड़ा हुआ।

एकस्थान (सं० क्लो०) एकमात्र स्थान, वही जगह।

एकहंस (सं० क्लो०) एकः श्रेष्ठो हंसो यत्र, बहुव्री०। १ तीर्थविशेष, एक सरोवर।

"एकहंसे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्।" (भारत, वन ८३ अ०)

(पु०) २ योगात्मा, दक्ष। ३ एक हंस।

एकहत्तर (हिं० वि०) एकसप्तति, सत्तर और एक, ७१।

एकहत्थी (हिं० स्त्री०) मालखम्भकी एक कसरत। एक हाथको उलटा कमरपर रखने और दूसरे हाथसे पकड़ मालखम्भपर चढ़ते हैं।

एकहत्थी कूट (हिं० स्त्री०) मालखम्भकी एक कसरत। इसमें एक ही हाथकी बांधके उड़ान भरते हैं।

एकहत्था पीठकी उड़ान (हिं० स्त्री०) मालखम्भकी एक कसरत। इसमें पीठके सहारे चढ़ते हैं।

एकहत्थी कुलक (हिं० पु०) कुश्तीका एक पेंच।

एक पहलवान् दूसरेको गर्दन हाथसे लपेट दूसरे हाथसे तान लेता और टांग लगा चित फेंक देता है।

एकहरा (हिं॰ वि॰) एकमात्र स्तरयुक्त, एकपरता, जो दोहरा न हो।

एकहरी (हिं॰ स्त्री॰) कुश्तीका एक पेच। इसमें एक पहलवान् दूसरेको हाथ पकड़ अपनी दक्षिण ओर झटकारता, फिर दोनों हाथोंसे रानको खींच पटक मारता है।

एकहस्ती (सं॰ स्त्री॰) अश्वकी शोभन वल्गाका एक भेद, घोड़ेकी एक लगाम।

एकहाम्र (सं॰ पु॰) नृत्यविशेष, किसी किस्मका नाच।

एकहायन (सं॰ पु॰) एको हायनो वयोमानं यस्य, बहुव्री॰। एक वैत्सरका वत्स, एक सालका बछड़ा। (स्त्री॰) २ एक वत्सरका समय, एक सालका अरसा। (त्रि॰) एक वत्सरवाला, एक-साला।

एकहायनी (सं॰ स्त्री॰) एकहायन-ङीप्। दामहाय-नान्ताच। पा ४।१।२७। १ एकवर्षीय गाभी, एक सालकी बछिया। २ उद्भिद्विशेष, एक पेड़। जो पेड़ एक ही वर्षमें उपज और फल-फूल झड़ या मर जाता, वह एकहायनी कहाता है।

एकहृदय (सं॰ त्रि॰) एकमभिन्नं हृदयं यस्य, बहुव्री॰। १ अभिन्नहृदय, एकदिल। २ एकाग्रचित्त, दिलको एक ही जगहपर लगाये हुआ।

एका (सं॰ स्त्री॰) एक-टाप्। १ दुर्गा। जैसे स्फटिक विविध वर्णकी प्रभा प्राप्त होनेसे विविध समझ पड़ता, वैसे ही एकमात्र देवीका रूप भी गुणके वश अनेक प्रकार झलकता है। (देवीपुराण ४१ अ॰) २ अद्वितीया, अनोखी। ३ एकाकिनी, अकेली। (हिं॰ पु॰) ४ ऐक्य, मेल।

एकाई (हिं॰ स्त्री॰) एकत्व, वहदत, एकको जगह या हालत। २ नियमित मान विशेष, कोई माप-जोख—जैसे रुपया, पैसा, सेर, छटांक, गज़, फुट इत्यादि। गणनाके प्रथम स्थान या अङ्कको भी एकाई कहते हैं।

एकाएक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) अकस्मात्, इत्तिफ़ाक़से।

एकाएकी, एकाएक देखो।

एकांश (सं॰ पु॰) एक एव अंशः, कर्मधा॰। एक भाग, एक हिस्सा।

एकाकार (सं॰ त्रि॰) एकस्तुल्य आकारो यस्य, बहुव्री॰। १ समान आकारविशिष्ट, हमसूरत, एकही शक्ल रखनेवाला। २ मिश्रित, मिला हुआ।

एकाकी (सं॰ त्रि॰) एक-आकिनच्। एकादाकिनिचासहाये। पा ५।३।५२। असहाय, तनहा, अकेला।

एकाक्ष (सं॰ पु॰) एकमक्षि यस्य, एक-अक्षि-षच्। बहुव्रीहौ सक्थ्यक्ष्णोः स्वाङ्गात् षच्। पा ५।४।११३। १ काक, कौवा। वनगमनके बाद चित्रकूट पर्वतपर रहते समय एकदा राम सीताके क्रोड़में लेटे थे। उसी समय किसी कामुक काकने सीताके कुचदेशमें तीक्ष्ण नख मार दिया। रामने दुष्ट काकपर ऐषे अस्त्रसे क्रुद्ध हो ब्रह्मास्त्र फेंका था। काकने प्राणके भयसे नाना स्थानोंपर अनेक देवताओंसे आश्रय मांगा। किन्तु अपने प्राणनाशको आशङ्कासे कोई उसे आश्रय दे न सका। फिर काकने विधाताका आश्रय ढूंढा था। विधाताने स्वयं आश्रय देनेमें असमर्थ हो उसे रामके शरणमें ही जानेको सिखाया। उसी उपदेशके अनुसार काक प्राणके भयसे विपद अवस्थामें रामके निकट जा पड़ा। सीताने दुरवस्थाके दर्शनसे अवश रामसे उसका जीवन बचानेको अनुरोध किया। रामने भी करुणासे आर्द्र हो एक चक्षु मात्र अस्त्र-भोग्य बना उसे छोड़ दिया। २ शिव। ३ एक दानव। (त्रि॰) ४ एकनेत्रविशिष्ट, काना। ५ सुन्दर नेत्रविशिष्ट, उमदा आंख रखनेवाला। ६ एकमात्र अक्षविशिष्ट, जो एक ही धुरा या गोलडंडा रखता हो।

एकाक्षपिङ्गल (सं॰ त्रि॰) कुबेर।

एकाक्षर (सं॰ क्ली॰) एकमद्वितीयमक्षरम्, कर्मधा॰। १ एक अक्षरवर्ण। २ ओंकार। (त्रि॰) एकमक्षरं यस्य, बहुव्री॰। ३ एक अक्षरविशिष्ट, जो एक ही हर्फ़ रखता हो।

एकाक्षरकोष (सं॰ पु॰) अभिधानविशेष, कोषका एक ग्रन्थ। इसके रचयिता पुरुषोत्तम देव थे। अकारादि क्रमसे एक-एक अक्षरको पकड़ यह अभिधान लिखा गया है।

एकाक्षरी (सं० त्रि०) एक अक्षरवाला, जो एक ही अक्षर रखता हो।

एकाक्षरीभाव (सं० पु०) एकमात्र अक्षरका अनुवादन, संक्षेप, हरूफ, सहीह।

एकाग्र (सं० त्रि०) एकं अग्रं पुरोगतं यस्य, बहुव्री०। १ अनन्यचित्त, एक ही बातपर लगा हुआ। २ अनाकुल, जो घबराया न हो। ३ प्रसिद्ध, मशहूर। ४ एकमात्र विन्दुमुख, जो एक ही नोक रखता हो। (पु०) ५ विभक्त प्रतिकृतिके विस्तृत बाहुका सम्पूर्ण भाग।

एकाग्रचित्त (सं० त्रि०) एकाग्रं एकविषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री०। एकमना:, एक ही बातपर दिल लगाये हुआ।

एकाग्रत: (सं० अव्य०) अविभक्त चित्तसे, पूरे तौरपर दिल लगाकर।

एकाग्रता (सं० स्त्री०) एकाग्रस्य भाव:, एकाग्र-तल्-टाप्। १ एक विषयमें आसक्ति, एक ही बातपर झुकाव। २ त्रिगुणात्मक चित्तमें सत्त्वगुणका उद्रेक और रज: एवं तमोगुणका विक्षेप। तन्मात्रादिका अभाव पड़नेपर विषयाकारके अवलम्बनरूप संसर्गसे शून्य चित्तका धर्मविशेष एकाग्रता कहाता है।

एकाग्रत्व (सं० क्ली०) एकाग्र-त्व। भा भारतको। म ३।११।१८। एकाग्रता, दिलदिही।

एकाग्रदृष्टि (सं० त्रि०) एकस्मिन्नेव अग्रे पुरोगते दृष्टिर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र विषयपर दृष्टि डालनेवाला, जो एक ही ओर नज़र लड़ाये हो। (स्त्री०) कर्मधा०। २ एक विषयमें दृष्टि, एक ही चीज़पर पड़नेवाली नज़र।

एकाग्रमना: (सं० त्रि०) एकाग्रं एकविषयासक्तं मनो यस्य, बहुव्री०। १ एकाग्रचित्त, जिसका दिल एक ही ओर लगा हुआ। (क्ली०) २ स्थिरचित्त, बंधा हुआ ध्यान।

एकाग्र्य (सं० त्रि०) एकं अग्रं यस्य, बहुव्री०। एकाग्र, एक ही ओर लगा हुआ। इसका संस्कृत पर्याय एकतान, अनन्यवृत्ति, एकायन, एकसर्ग, एकाग्र और एकायनगत है।

एकाग्री (सं० स्त्री०) बाणविशेष, एक तीर। इससे एक ही वीर मरता है। महाभारतमें लिखा—इन्द्रने कर्णको अपने कवचके साथ अर्जुनके मारनेको यह बाण सौंपा था। किन्तु भीमके समरमें कर्णने इसे घटोत्कच पर ही छोड़ दिया।

एकाङ्ग (सं० पु०) एकं मुख्यत्वेन मुख्यं अङ्गमस्य, बहुव्री०। १ बुधग्रह। (क्ली०) २ चन्दन, संदल। ३ एक अङ्ग, अकेला अवयव। ४ मस्तक, दमाग।

एकाङ्गवात (सं० पु०) १ पक्षवध रोग, आधे जिस्ममें होनेवाला लकवा। २ घोड़ेका एक वातव्याधि रोग। इसमें एक पार्श्व सड़ता, अर्ध शरीर शुष्क पड़ता और अग्र शून्य रहता है। (जयदत्त)

एकाङ्गिका (सं० स्त्री०) चन्दनसे बननेवाली एक सामग्री।

एकाङ्गी (सं० स्त्री०) १ सुरामांसी, एक खुशबूदार चीज़। यह कटु एवं कषाय लगती और भ्रम, मूर्छा, तृष्णा, विष तथा दाहको दूर करती है। (राजनिघण्टु) (त्रि०) २ एक अङ्ग-सम्बन्धीय, एकतरफा।

एकाण्ड (सं० पु०) एकमण्डमस्य, बहुव्री०। एक अण्डविशिष्ट अश्व, एक फोतेका घोड़ा। जिस घोड़ेका एक मुष्क चढ़ जाता, वह एकाण्ड कहाता है।

एकातपत्र (सं० त्रि०) एकच्छत्र, चक्रवर्ती।

एकात्मता (सं० स्त्री०) एकात्माका भाव, दुनियामें एक रूह रहनेका मक़ूला।

एकात्मवादी (सं० त्रि०) एक एव आत्मा इति वक्तुं शीलमस्य, बहुव्री०। वेदान्तके मतका अवलम्बी। वेदान्तमें ब्रह्म अद्वितीय माना गया है।

एकात्मा (सं० पु०) एकोऽभिन्न आत्मा, कर्मधा०। १ अद्वितीय आत्मा, एक रूह। (त्रि०) २ अभिन्न-हृदय, एकदिल। ३ एकरूप, हमशक्ल। ४ सहाय-शून्य, तनहा।

एकादश (सं० त्रि०) दशेन अधिका दश, मध्यपद-लो०। १ दशसे एक संख्या अधिक, ग्यारह, ११। २ एकादशको पूर्ण करनेवाला, ग्यारहवां।

एकादशक (सं॰ वि॰) एकादश परिमाणमस्य। १ एकादश परिमाणविशिष्ट, ग्यारहवां। २ एकादश, ग्यारह, ११।

एकादशकृत्वः (सं॰ अव्य॰) एकादशन्-कृत्वसुच्। संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्। पा ५।४।१७। एकादशवार, ग्यारह मरतबा।

एकादशतनु (सं॰ पु॰) एकादश तनवो यस्य, बहुव्री॰। महादेव। एकादश वार भिन्न भिन्न मूर्तिके परिग्रहसे शिवको एकादशतनु वा एकादश रुद्र कहते हैं। एकादश नाम यह हैं—अज, एकपात् अहिब्रध्न, पिनाकी, अपराजित, त्र्यम्बक, महेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हरण और ईश्वर।

एकादशतम (सं॰ वि॰) एकादशक, ग्यारहवां।

एकादशद्वार (सं॰ क्ली॰) एकादश द्वाराणि रन्ध्राण्यस्य, बहुव्री॰। शरीर, जिस्म। शरीरके मध्य दो चक्षु, दो कर्ण, दो नासारन्ध्र, मुख, ब्रह्मरन्ध्र, नाभि, गुह्य और मेढ़्र सब मिलाकर एकादश छिद्र होते हैं। साधारणतः ब्रह्मरन्ध्र और नाभिको छोड़ लोग नवद्वार ही मानते हैं।

एकादशशतिक महाप्रसारिणी तैल (सं॰ क्ली॰) वात व्याधिका एक तैल। क्वाथार्थ समूलपत्रमाष गन्धभद्रा साढ़े १२ शरावक; भिण्टी, गुडूची एवं एरण्डमूल प्रत्येक २५ शरावक; रास्ना, शिरोपत्रज, देवदारु तथा केतकीका मूल प्रत्येक ४।० शरावक ले ६४००शरावक जलमें पकाये और ६४ शरावक शेष रहनेसे उतारे। कांजी ६४ शरावक, दधिमण्ड १६ शरावक, शुक्त १६ शरावक, छागमांस ८ शरावक एवं जल ६४ शरावक डाल पकाये और १६ शरावक शेष रहनेपर उतारे। इक्षुरस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और पिच्छिलफल, कर्कटशृङ्गी, जीवनीय दशक वा अष्टवर्ग, काकोली, मञ्जिष्ठा, क्षीरकाकोली, कौंचकी जड़, छोटी इलायची, कर्पूर, सुवान, सरलकाष्ठ, कुङ्कुम, जटामांसी, नखी, कृष्णागुरु, नीलोत्पल, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा, कक्कोल, नागेश्वर, चमककी जड़, गुड़त्वक्, सुपारी, जायफल, लताकस्तूरी, शतमूली, श्रीवासा, देवदारु, श्वेतचन्दन, वच, शैलज, सैन्धव, शिलारस, सुरुक, गन्धभद्राका मूल, पुनर्नवा, वालुका, गन्धशटी, मृगनाभि, दशमूल, मैनफल, प्रियङ्गु, शाल, केतकी, तगरमूल, अश्वगन्धा, लाक्षा, रेणुका, रसाञ्जन, मैनफल, मुसरा, कटफल, अगुरु, श्यामालता वा अनन्तमूल, कुष्ठभल्लातककी मुष्टि, त्रिफला, शतपुष्पा, गजमालीन्दर, लवङ्ग और त्रिकटु प्रत्येक २ पल छोड़नेसे यह औषध बनता है। (भैषज्यर॰)

एकादशायस (सं॰ पु॰) अम्लपित्तके अधिकारका एक औषध, सदको एक दवा। जारित लौह, पारद, गन्धक, ताम्र, स्वर्णमाक्षिक, अभ्र, हिङ्गुल, कुङ्कुम, पोखराजमणि, शोप, पित्तल, विडङ्ग, त्रिफला, हिङ्गु, यमानी, जीरक, कृष्णजीरक, पियालफल, वचा, कर्कटशृङ्गी, मरिच, पिप्पली, राजपिप्पली, अवी, दुरालभा और चित्रकमूल बराबर-बराबर बांटकर रसमें भावना देनेसे यह औषध बनता है।

एकादशाह (सं॰ पु॰) एकादशानां अह्नां समाहारः, एकादश-अहन्-टच्। एकादश दिनका समाहार, ग्यारह रोजका अरसा। २ एकादश दिवस साध्य यज्ञ। ३ ब्राह्मणोंका एकादश दिवसमें कर्तव्य श्राद्ध। इस दिन मृतकके अर्थ वृषोत्सर्ग, महाब्राह्मणभोजन और शय्यादानादि होता है।

एकादशिन् (सं॰ वि॰) एकादश संख्या परिमाणमस्यास्तीति, एकादश-इनि। एकादश संख्या परिमित, ग्यारह अददवाला।

एकादशी (सं॰ स्त्री॰) एकादशानां पूरणी, एकादशन्-डट्-ङीप्। १ तिथि विशेष। इस तिथिको शुक्लपक्षपर सूर्यमण्डलसे चन्द्रमण्डलकी एकादश निर्गत और कृष्णपक्षपर सूर्यमण्डलमें चन्द्रमण्डलकी एकादश कला प्रविष्ट होती है। इसका प्रसिद्धदोष नामान्तर हरिदिन और हरिवासर है।

तत्वको व्यवस्थासे वैष्णव, अपुत्रक, गृही, विशेषतः ब्राह्मणको कृष्णा एकादशी पर उपवासका नित्य अधिकार है। वैष्णव और उनके हैसे अन्यान्य व्यक्ति हरिशयनके मध्यवर्ती समयमें कृष्णा एकादशीका व्रत बराबर कर सकते हैं। अपुत्रक गृहीको सकल एकादशीके समय उपवास कर्तव्य है। काम्य व्रतशास्त्रमें

एकाक्षरी (सं॰ त्रि॰) एक अक्षरवाला, जो एक ही वर्ण रखता हो।

एकाक्षरीभाव (सं॰ पु॰) एकमात्र अक्षरका उत्पादन, संक्षेपण, इख्तिसार, समेट।

एकाग्र (सं॰ त्रि॰) एकं अग्रं पुरोगतं ध्येयमस्य, बहुव्री॰। १ अनन्यचित्त, एक ही बातपर लगा हुआ। २ अनाकुल, जो घबराया न हो। ३ प्रसिद्ध, मशहूर। ३ एकमात्र विन्दुयुक्त, जो एक ही नोक रखता हो। (पु॰) ४ विभक्त प्रतिकृतिके विस्तृत बाहुका सम्पूर्ण भाग।

एकाग्रचित्त (सं॰ त्रि॰) एकाग्रं एकविषयासक्तं चित्तं यस्य, बहुव्री॰। एकमनाः, एक ही बातपर दिल लगाये हुआ।

एकाग्रतः (सं॰ अव्य॰) अविभक्त चित्तसे, पूरे तौरपर दिल लगाकर।

एकाग्रता (सं॰ स्त्री॰) एकाग्रस्य भावः, एकाग्र-तल-टाप्। १ एक विषयमें आसक्ति, एक ही बातपर झुकाव। २ त्रिगुणात्मक चित्तमें सत्वगुणका उद्रेक और रजः एवं तमोगुणका विक्षेप। तन्त्रादिका अभाव पड़नेपर विषयान्तरके अवलम्बनरूप संसर्गसे शून्य चित्तका धर्मविशेष एकाग्रता कहाता है।

एकाग्रत्व (सं॰ क्ली॰) एकाग्र-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। एकाग्रता, दिलदिही।

एकाग्रदृष्टि (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्नेव अग्रे पुरोगते दृष्टिरस्य, बहुव्री॰। १ एकमात्र विषयपर दृष्टि डालनेवाला, जो एक ही ओर नजर लड़ाये हो। (स्त्री॰) कर्मधा॰। २ एक विषयमें दृष्टि, एक ही चीजपर पड़नेवाली नजर।

एकाग्रमनाः (सं॰ त्रि॰) एकाग्रं एकविषयासक्तं मनो यस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्रचित्त, दिलको एक ही ओर लगाये हुआ। (क्ली॰) २ स्थिरचित्त, बंधा हुआ ध्यान।

एकाग्र्य (सं॰ त्रि॰) एकं अग्रं यस्य, बहुव्री॰। एकाग्र, एक ही ओर लगा हुआ। इसका संस्कृत पर्याय एकतान, अनन्यवृत्ति, एकायन, एकसर्ग, एकाग्र और एकायनगत है।

एकाग्नी (सं॰ स्त्री॰) वाणविशेष, एक तीर। इससे एक ही वीर मरता है। महाभारतमें लिखा—इन्द्रने कर्णको अपने कवचके साथ अर्जुनके मारनेको यह वाण सौंपा था। किन्तु भीषण समरमें कर्णने इसे घटोत्कच पर ही छोड़ दिया।

एकाङ्ग (सं॰ पु॰) एकं सुन्दरत्वेन मुख्यं अङ्गमस्य, बहुव्री॰। १ बुधग्रह। (क्ली॰) २ चन्दन, संदल। ३ एक अङ्ग, अकेला अजो। ४ मस्तक, दमाग।

एकाङ्गवात (सं॰ पु॰) १ पक्षवध रोग, आधे जिस्ममें होनेवाला लकवा। २ अङ्गका एक वातव्याधि रोग। इसमें एक कर्ण बढ़ता, अर्ध शरीर शुष्क पड़ता और अङ्ग शून रहता है। (भावप्र॰)

एकाङ्गिका (सं॰ स्त्री॰) चन्दनसे बननेवाली एक सामग्री।

एकाङ्गी (सं॰ स्त्री॰) १ मुरामांसी, एक खुशबूदार चीज। यह कटु एवं कषाय लगती और भ्रम, मूर्छा, तृष्णा, विष तथा दाहको दूर करती है। (राजनिघण्टु) (त्रि॰) २ एक अङ्ग-सम्बन्धीय, एकतरफ़ा।

एकाण्ड (सं॰ पु॰) एकमण्डमस्य, बहुव्री॰। एक वृषणविशिष्ट अश्व, एक फोतेका घोड़ा। जिस घोड़ेका एक मुष्क बढ़ जाता, वह एकाण्ड कहाता है।

एकातपत्र (सं॰ त्रि॰) एकच्छत्र, चक्रवर्ती।

एकात्मता (सं॰ स्त्री॰) एकात्माका भाव, दुनियामें एक रूह रहनेका मसला।

एकात्मवादी (सं॰ त्रि॰) एक एव आत्मेति वक्तुं शीलमस्य, बहुव्री॰। वेदान्तके मतका अवलम्बी। वेदान्तमें ब्रह्म अद्वितीय माना गया है।

एकात्मा (सं॰ पु॰) एकोऽभिन्न आत्मा, कर्मधा॰। १ अद्वितीय आत्मा, एक रूह। (त्रि॰) २ अभिन्नहृदय, एकदिल। ३ एकरूप, हमशक्ल। ४ सहायशून्य, तनहा।

एकादश (सं॰ त्रि॰) एकेन अधिका दश, मध्यपदलो॰। १ दशसे एक संख्या अधिक, ग्यारह, ११। २ एकादशको पूर्ण करनेवाला, ग्यारहवां।

एकादशक (सं॰ त्रि॰) एकादश परिमाणमस्य। १ एकादश परिमाणविशिष्ट, ग्यारहवां। २ एकादश, ग्यारह, ११।

एकादशकृत्वः (सं॰ अव्य॰) एकादशन्-कृत्वसुच्। संख्यायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृत्वसुच्। पा ५।४।१७। एकादशवार, ग्यारह मरतबा।

एकादशतनु (सं॰ पु॰) एकादश तनवो यस्य, बहुव्री॰। महादेव। एकादश वार भिन्न भिन्न मूर्तिके परिग्रहसे शिवको एकादशतनु या एकादश रुद्र कहते हैं। एकादश नाम यह हैं—अज, एकपाद् अहिर्बुध्न, पिनाकी, अपराजित, त्र्यम्बक, महेश्वर, वृषाकपि, शम्भु, हरण और ईश्वर।

एकादशतम (सं॰ त्रि॰) एकादशक, ग्यारहवां।

एकादशद्वार (सं॰ क्लो॰) एकादश द्वाराणि रन्ध्राण्यस्य, बहुव्री॰। शरीर, जिस्म। शरीरके मध्य दो चक्षु, दो कर्ण, दो नासारन्ध्र, मुख, ब्रह्मरन्ध्र, नाभि, गुह्य और मेढ्र सब मिलाकर एकादश छिद्र होते हैं। साधारणतः ब्रह्मरन्ध्र और नाभिको छोड़ लोग नवद्वार ही मानते हैं।

एकादशशतिक महाप्रसारिणी तैल (सं॰ क्लो॰) वात व्याधिका एक तैल। क्वाथार्थ समूलपत्रशाख गन्धभद्रा साढ़े १२ शरावक; झिण्टी, गुडूची एवं एरण्डमूल प्रत्येक २५ शरावक; रास्ना, शिरीषत्वक्, देवदारु तथा केतकीका मूल प्रत्येक ६।० शरावक ले ६४००शरावक जलमें पकावे और ६४ शरावक शेष रहनेसे उतारे। कांजी ६४ शरावक, दधिमण्ड १६ शरावक, शुक्त १६ शरावक, छागमांस ८ शरावक एवं तैल ६४ शरावक डाल पकावे और १६ शरावक शेष रहनेपर उतारे। इक्षुरस १६ शरावक, दुग्ध १६ शरावक और पिच्छिलफल, कर्कटशृङ्गी, जीवनीय दशक वा अष्टवर्ग, काकोली, मञ्जिष्ठा, क्षीरकाकोली, बांसकी जड़, छोटी इलायची, कर्पूर, सुगन्ध, सरलकाष्ठ, कुङ्कुम, जटामांसी, शटी, कृष्णागुरु, नीलोत्पल, पद्मकाष्ठ, हरिद्रा, कङ्कोल, नागेश्वर, खसकी जड़, गुड़त्वक्, सुपारी, जायफल, लताकस्तूरी, शतमूली, श्रीवास, देवदारु, श्वेतचन्दन, वच, शैलज, श्रेयस, शिलारस, मुस्तक, गन्धभद्राका मूल, पुनर्णवा, शालुका, गन्धशटी, मृगनाभि, दशमूल, मैनफल, प्रियङ्गु, आम्र, केतकी, तगरमूल, अश्वगन्धा, वाला, रेणुका, रसाञ्जन, सिंहरका सुवरा, कटफल, अगुरु, श्यामालता वा अनन्तमूल, कुष्ठभल्लातककी शुष्टि, त्रिफला, शुन्यका, पद्मनागेश्वर, लवङ्ग और त्रिकटु प्रत्येक २ पल छोड़नेसे यह औषध बनता है। (भावप्रकाश)

एकादशायस (सं॰ पु॰) भषज्यके अधिकारका एक औषध, अदकी एक दवा। जारित लौह, पारद, गन्धक, ताम्र, स्वर्णमाक्षिक, अभ्र, हिङ्गुल, गुग्गुल, गोधुराम्लमणि, शीश, पित्तल, विडङ्ग, त्रिफला, हिङ्गु, यमानी, जीरक, कृष्णजीरक, पियालफल, वचा, कर्कटशृङ्गी, मरिच, पिप्पली, राजपिप्पली, चवी, दुरालभा और चित्रकमूल बराबर-बराबर आर्द्रकके रसमें भावना देनेसे यह औषध बनता है।

एकादशाह (सं॰ पु॰) एकादशानां अह्नां समाहारः, एकादश-अहन्-टच्। एकादश दिनका समाहार, ग्यारह रोज़का अरसा। २ एकादश दिवस साध्य यज्ञ। ३ ब्राह्मणोंका एकादश दिवसमें कर्तव्य श्राद्ध। इस दिन मृतकके अर्थ वृषोत्सर्ग, महाब्राह्मणभोजन और शय्यादानादि होता है।

एकादशिन् (सं॰ त्रि॰) एकादश संख्या परिमाणमस्यास्तीति, एकादश-इनि। एकादश संख्या परिमित, ग्यारह अददवाला।

एकादशी (सं॰ स्त्री॰) एकादशानां पूरणी, एकादशन्-डट्-ङीप्। १ तिथि विशेष। इस तिथिको शुक्लपक्षपर सूर्यमण्डलसे चन्द्रमण्डलकी एकादश निगत और कृष्णपक्षपर सूर्यमण्डलमें चन्द्रमण्डलकी एकादश कला प्रविष्ट होती हैं। इसका स्मृतिशास्त्रोक्त नामान्तर हरिदिन और हरिवासर है।

तन्त्रकी व्यवस्थासे वैष्णव, मधुपर्क, यती, विशेषतः ब्राह्मणको कृष्णा एकादशीपर उपवासका नित्य अधिकार है। वैष्णव और उनके अंशके पश्चात् व्यक्ति हरिशयनके मध्यवर्ती समयमें कृष्णा एकादशीका व्रत बराबर कर सकते हैं। अपुत्रक गृहीको सकल एकादशीके समय उपवास कर्तव्य है। काम्य उपवासमें

सभी समान अधिकार रखते हैं। नित्य उपवासमें रवि शुक्रादिका दोष मानना आवश्यक नहीं। अष्टम वर्षसे अशीति वत्सर पर्यन्त मानव इस उपवासका अधिकारी है। विधवा समुदय एकादशी पर नित्य अधिकार रखती हैं। उनके लिये मलमासादि कोई दोष बाधा नहीं देता।

एकादशीके उपवासका विधि—पारणके दिन द्वादशी मिलनेसे पूर्णा छोड़ खण्डा एकादशीमें स्त्रीको उपवास करना चाहिये। किन्तु वैसा न होनेसे गृही पूर्णाके एवं दूसरे और विधवा आनेवाले दिन उपवास करें। जो एकादशी उदयके दो दण्ड पहले लगती, उसीकी पूर्णा संज्ञा पड़ती है। पूर्व दिन दशमी और पर दिन द्वादशी युक्त रहनेसे परदिनको ही उपवास कर्तव्य है। अरुणोदय कालपर दशमी होनेसे विद्धा एकादशी कहाती है। विद्धा एकादशीको उपवास करना न चाहिये। ऐसी अवस्थामें द्वादशीको उपवास रख त्रयोदशीको पारण करना उचित है।

हरिभक्तिविलासके मतसे उपवासकी व्यवस्था—वैष्णवको उपवासके पूर्वदिन प्रातःस्नान कर धौतवस्त्र परिधान प्रभृति सुवेश करना चाहिये। उसके बाद—

"दशमीदिनमारभ्य करिष्येऽहं व्रतं तव।
त्रिदिनं देवदेवेश निर्विघ्नं कुरु केशव॥"

हे देवदेवेश केशव! मैं दशमीसे तुम्हारा व्रत करूंगा। इन तीन दिनों मुझे निर्विघ्न रखो।

उक्त मन्त्रको पढ़ महोत्सवके सहकारसे सङ्कल्प करना चाहिये। हरिदिनको धारलवण छोड़ एकवार मात्र हविष्यान्न खाते, भूमिकाशयनपर सो जाते और स्त्रीसङ्गसे दूर रह पुरुषोत्तमका स्मरण करते अवस्थान लगाते हैं।

स्कन्दपुराणमें दशमीको कांस्यपात्र, मांस, मसूर, मधु, मिथ्यावाक्य, दो बार भोजन, परिश्रम और पारणके दिन न किया जानेवाला सकल कार्य निषिद्ध कहा है।

एकादशीके उपवासके दिनका कर्तव्य—उत्तरास्य होने पर जलपूर्ण उडुम्बरपात्र ग्रहणपूर्वक निम्नोक्त मन्त्रपाठ सहकारसे तीन अञ्जलि पुष्पदान एवं मन्त्रपूत जलपान कर उपवास रखना चाहिये। मन्त्र—

"एकादश्यां निराहारो स्थित्वाऽहमपरेऽहनि।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्ष शरणं मे भवाच्युत॥"

हे पुण्डरीकाक्ष अच्युत! मैं एकादशीको निराहार रह परदिन भोजन करूंगा। तुम मेरे आश्रय बनो।

दोनों पक्षकी एकादशीको निराहार रह, समाहितचित्त बन, सम्यक् विधानके अनुसार स्नान कर, स्नानके अन्तमें धौत वस्त्र पहन, जितेन्द्रियता पकड़ और पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, बहुविध उपहार, जप, होम, प्रदक्षिण, स्तोत्र, मनोरम नृत्यगीत एवं वाद्यादि सहकारसे यथाविधि विष्णुको पूज रात्रिके समय जागरण रखना चाहिये। स्कन्दपुराणमें भी रात्रिके जागरणकी व्यवस्था इसी प्रकार लिखी है। विशेषतः रात्रिके प्रत्येक प्रहर हरिको आरति करनेका विधान है।

पारणके दिन कर्तव्य-सम्बन्धमें कात्यायनके मतानुसार प्रातःकाल स्नान और श्रीहरिकी पूजा समापन कर निम्नलिखित मन्त्र पढ़ना चाहिये।

"अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव।
प्रसीद सुमुखो नाथ ज्ञानदृष्टिप्रदो भव॥"

हे नाथ केशव! इस व्रतके द्वारा प्रसन्न हो तुम अज्ञानतिमिरान्धको ज्ञानदृष्टि दो।

यही मन्त्र पढ़ उपवास समर्पण करते हैं। उसके पीछे हरिको स्मरण कर व्रतकी सिद्धिके लिये पारण कर्तव्य है। जो व्यक्ति पारणके दिन द्वादशी अतिक्रम कर त्रयोदशीको खाता, वह शतजन्म पर्यन्त नरकवास पाता है। द्वादशी अल्पक्षण स्थायी रहनेसे अरुणोदयको और अत्यल्प होनेसे निशीथ कालके बाद पारण करना चाहिये। स्कन्दपुराणमें यह सकल द्रव्य द्वादशीको निषिद्ध कहे हैं—मधु, मांस, सुरा, तैल, व्यायाम, क्रोध, मैथुन, पराच, कांस्यपात्र, ताम्बूल, लोभ, निर्माल्यलङ्घन, मिथ्यावाक्य, प्रवास, दिवास्वप्न, अञ्जन, शिलापिष्ट द्रव्य, मसूर, द्यूतक्रीड़ा, हिंसा, चना, कोरदूषक और औषध।

एकादशीको उपवासमें असमर्थ होनेपर पुत्र अथवा

अपर ब्राह्मणसे उपवास कराना चाहिये। यथाशक्ति ब्राह्मणोंको दान देनेसे भी एकादशी छूटनेका दोष मिट जाता है। (वायुपुराण)

मार्कण्डेयके मतानुसार बालक, वृद्ध और आतुर एकबार आहार अथवा फलमूल खा कर एकादशी रह सकते हैं। किन्तु गरुड़पुराण शयन, उत्थान, पार्श्वपरिवर्तन और फलमूलाहारको एकादशीके व्रतमें कर्तव्य नहीं ठहराता। तत्त्वसागर एकादशीको तरह अपर कोई पुण्यकार्य अलभ्य मानता है। यह स्वर्ग, मोक्ष, राज्य और पुत्र देनेवाली है।

गरुड़पुराणके लेखानुसार भक्तिसहकारसे एकादशी व्रत करनेपर मनुष्यको विष्णुलोक और विष्णुस्वरूप प्राप्त होता है।

नाना पुराणोंमें एकादशीके षड्विंश नाम कहे हैं, यथा—अग्रहायणकी कृष्णा १ उत्पन्ना, शुक्ला २ मोक्षा, पौषकी कृष्णा ३ सफला, शुक्ला ४ पुत्रदा; माघकी कृष्णा ५ षट्तिला, शुक्ला ६ जया; फाल्गुनकी कृष्णा ७ विजया, शुक्ला ८ आमर्दकी; चैत्रकी कृष्णा ९ पापमोचनी, शुक्ला १० कामदा; वैशाखकी कृष्णा ११ वरूथिनी, शुक्ला १२ मोहिनी; ज्येष्ठकी कृष्णा १३ अपरा, शुक्ला १४ निर्जला; आषाढ़की कृष्णा १५ योगिनी, शुक्ला १६ पद्मा; श्रावणकी कृष्णा १७ कामिका, शुक्ला १८ पुत्रदा; भाद्रकी कृष्णा १९ अजा, शुक्ला २० वामना; आश्विनकी कृष्णा २१ इन्दिरा, शुक्ला २२ पापाङ्कुशा, कार्तिककी कृष्णा २३ रमा, शुक्ला २४ प्रबोधिनी और मलमासकी शुक्ला २५ सुभद्रा तथा कृष्णा एकादशी २६ कमला कहाती है।

स्मृतिशास्त्रमें कृष्णा एकादशीको मातापिताके श्राद्धकी व्यवस्था है। किन्तु हरिभक्तिविलासके मतमें वैष्णवको यह करना न चाहिये। उनकी व्यवस्थामें एकादशी तिथिको श्राद्धका दिन आनेसे उस दिन नहीं—द्वादशीको श्राद्ध किया जाता है। ब्रह्मवैवर्तके मतानुसार एकादशीको श्राद्ध करनेसे दाता, भोक्ता और प्रेतलोक नरकस्थ होता है।

एकादशीको जन्म लेनेसे मनुष्य अत्यन्त क्रोधी, क्लेशसह, सुभाषी, धर्मकारी, स्वजनप्रतिपालक, महामति, देवता तथा गुरुजनका प्रिय और हृष्टचेता निकलता है। (कोष्ठीप्रदीप) (त्रि०) २ एकादश संख्याविशिष्ट, ग्यारह अददवाला।

"एकादशो भात्यसौ कौतव्यो महायशः।" (भारत, भीष्म ६।२१)

एकादशीतत्त्व (सं० क्ली०) स्मृतिशास्त्रका एक ग्रंथ। इस ग्रंथमें एकादशीका विषय वर्णित है।

एकादशीन (सं० त्रि०) एकादश सम्बन्धीय, ग्यारहसे सरोकार रखनेवाला।

एकादशीव्रत (सं० क्ली०) एकादशीमधिकृत्य व्रतम्, मध्यपदलो०। एकादशी तिथिका उपवासादि धर्मकार्य। एकादशी देखो।

एकादशेन्द्रिय (सं० त्रि०) ग्यारह इन्द्रिय। श्रोत्र, त्वक्, चक्षु, रसना, घ्राण, वाक्, पाणि, पायु, उपस्थ, पाद और मन ग्यारहको एकादशेन्द्रिय कहते हैं। इनमें पहले पांच ज्ञानेन्द्रिय और पीछे कर्मेन्द्रिय हैं।

एकादशोत्तम (सं० पु०) शिव। ग्यारह रुद्रमें प्रधान रहनेसे शिवको एकादशोत्तम कहते हैं।

एकादि (सं० त्रि०) एक आदिर्यस्य, बहुव्री०। एकसे परार्ध पर्यन्त संख्या-विशिष्ट।

कविकल्पलतामें एकादि संख्यावाचक कितने ही शब्द संगृहीत हैं। यथा—१ एक, ब्रह्म, इन्द्रहस्ती, इन्द्राश्व, गणेशदन्त, शुक्रचक्षु। २ द्वय, पक्ष, नदीकूल, असिधारा, रामनन्दन। ३ त्रय, काल, अग्नि, भुवन, गङ्गामार्ग, ईशदृक्, गुण। ४ चतुर, वेद, ब्रह्मास्य, जाति, समुद्र, हरिबाहु, ऐरावतदन्त, सेनाङ्ग, उपाय, याम, युग, आश्रम। ५ पञ्च, पाण्डव, रुद्रास्य, इन्द्रिय, स्वर्गतरु, शर, अग्नि। ६ षट्, वज्रकोण, त्रिशिरोनेत्र, तर्काङ्ग, दर्शन, चक्रवर्ती, कार्तिकेयास्य, गुण, रस। ७ सप्त, पाताल, भुवन, मुनि, द्वीप, सूर्याश्व, वार, समुद्र, छन्द, राज्याङ्ग, ब्रीहि, वह्नि, शिखादि। ८ अष्ट, योगाङ्ग, वसु, ईशमूर्ति, दिग्गज, सिद्धि। ९ नव, अङ्क, द्वार, भूखण्ड, क्रियारत्न मस्तक, ब्राह्मणस्नान, सुराकुण्ड, निधि, ग्रह, रस, ग्रह। १० दश, हस्ताङ्गुलि, शम्भुबाहु, रावणमौलि, कृष्णावतार, दिक्, विश्वेदेवा, अवस्था, चन्द्राश्व। ११ एकादश, रुद्र, कुरुराजसैन्य। १२ द्वादश, सूर्य, राशि, संक्रान्ति,

कार्तिकेयबाहु, शरीरकोष्ठ, कार्तिकेयनेत्र, राजमण्डल। १३ त्रयोदश, ताम्बूल, गुण। १४ चतुर्दश, विद्या, मनु, त्रिदिव, राजा, भुवन, ध्रुवतारका। १५ पञ्चदश, तिथि। १६ षोड़श, चन्द्रकला। १८ अष्टादश, द्वीप, विद्या, पुराण, स्मृति, धान्य। २० विंशति, रावणहस्त, अङ्गुलि। १०० शत, धृतराष्ट्रपुत्र, शतभिषक्तारका, पुरुषायुः, रावणाङ्गुलि, पद्मदल, इन्द्रयज्ञ, समुद्रयोजन। १००० सहस्र, आङ्गीरस, अनन्तशीर्ष, पद्मदल, रविकिरण, अर्जुनहस्त, वेदशाखा, इन्द्रचक्षु।

एकादिक्रम (सं० त्रि०) एकादिरेकप्रभृतिः क्रमो यस्य, बहुव्री०। आनुपूर्विक, सिलसिलेवार।

एकादिवीर (सं० पु०) एकवीर वृक्ष।

एकादेश (सं० पु०) एकश्चासौ आदेशश्च कर्मधा०। १ व्याकरणोक्त उभय शब्द वा स्थान ग्रहणकर एकमात्र आदेश। २ एक आज्ञा, अकेला हुक्म।

एकोद्नविंशति (सं० त्रि०) एकेन नविंशतिः, एक-अदुक् अनुनासिको विकल्पः। एकोनविंशति, उन्नीस, १९।

एकाधिपति (सं० पु०) एकः प्रधानोऽधिपतिः। सम्राट्, बादशाह, बड़ा मालिक।

एकाधिपत्य (सं० क्ली०) प्रधान आधिपत्य, बड़ा इख्तियार।

एकानंशा (सं० स्त्री०) एकोनः अंशो यस्याः, बहुव्री०। पार्वती। हरिवंशमें लिखा, कि यशोदाके गर्भसे योगमायाने यही नाम ग्रहणकर जन्म लिया था।

एकानुदिष्ट (सं० त्रि०) एकमनुदिष्टम्। १ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजको छोड़ा हुआ। २ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजका भाग लेनेवाला। (क्ली०) ३ एकके उद्देशसे प्रदत्त श्राद्ध।

एकान्त (सं० क्ली०) एकस्मिन्नेव अन्तः समाप्तिर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र समाप्ति, अकेला निशाना। २ निगूढ़ स्थान, छिपी जगह। ३ एककी भक्ति, सिर्फ एककी परस्तिश। (त्रि०) ४ एक विषयकी ओर चालित, जो एक ही बातपर लगाया गया हो। ५ एक ही सेवा करनेवाला, जो सिर्फ एक ही को मानता हो। ६ अतिशय, बहुत ज्यादा। ७ निर्जन, निराला। (अव्य०) ८ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर। ९ अवश्य, बेशक। १० गुप्तरीतिसे, छिपकर। ११ अत्यन्त, बेहद।

एकान्तकरुण (सं० त्रि०) अतिशय कृपालु, निहायत रहीम।

एकान्तकैवल्य (सं० क्ली०) मुक्तिविशेष।

एकान्तचारी (सं० त्रि०) एकान्त-चर-णिनि। निर्जनमें भ्रमणकारी, निरालेमें घूमनेवाला।

एकान्ततः (सं० अव्य०) १ पूर्णरूपसे, बिलकुल। २ पृथक् रूपसे, अलग।

एकान्तता (सं० स्त्री०) १ आतिशय्य, बहुतायत। २ निर्जनता, तनहाई।

एकान्तत्यागवाद (सं० पु०) बौद्धोंका एक वाद। वस्तुकी एकस्वरूपताके सम्बन्धमें त्याग-प्रतिपादक वादको एकान्तत्यागवाद कहते हैं।

एकान्तदुःषमा (सं० स्त्री०) दुष्टा समा वर्षः दुःषमा, एकान्तं दुःषमा, २-तत्। बौद्धकल्पित कालविशेष। यह अवसर्पिणीके छठें और उत्सर्पिणीके पहले अरका नाम है।

एकान्तभूत (सं० त्रि०) एकाकी रहनेवाला, जो अकेले पड़ गया हो।

एकान्तमति (सं० त्रि०) एक ही विषयमें लगा हुआ, जो एक ही बात सोचता हो।

एकान्तर (सं० त्रि०) एकमन्तरं व्यवधानं यस्य, बहुव्री०। १ एकान्तरवर्ती, एकके फर्कवाला। २ एक दिन व्यवधानके भोजनसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ एक दिनके व्यवधानसे आनेवाला।

एकान्तराद् (सं० पु०) किसी बोधिसत्त्वका नाम।

एकान्तवास (सं० पु०) निर्जन स्थानका अवस्थान, निरालेकी रहायश।

एकान्तवासी (सं० त्रि०) निर्जनमें निवास करनेवाला, जो अकेला रहता हो।

एकान्तविहारी (सं० त्रि०) एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला घूमता हो।

एकान्तसुषमा (सं० स्त्री०) शुष्ठु समा वर्षः सुषमा

एकान्त सुषमा, २-तत्। जैन मतानुयायी कालविशेष। अवसर्पिणीके प्रथम और उत्सर्पिणीके कालचक्रके षष्ठ युगको एकान्तसुषमा कहते हैं।

एकान्तस्थित (सं॰ त्रि॰) पृथक् पड़ा हुआ, जो अकेले ठहरा हो।

एकान्तस्वरूप (सं॰ त्रि॰) एकान्तस्थित, अलग रहनेवाला।

एकान्तिक (सं॰ त्रि॰) अन्तिम, फलस्वरूप, आख़िरी, नतीजेवाला।

एकान्तित्व (सं॰ क्ली॰) एकाश्रय, निरालापन।

एकान्ती (सं॰ त्रि॰) एकान्तमस्यास्ति, एकान्त-इनि। १ अतिशययुक्त, बहुत बड़ा। (पु॰) २ विष्णुभक्त विशेष। यह एकान्तमें बैठ विष्णुको भजते हैं।

एकान्न (सं॰ त्रि॰) एकं एककालपक्वं अन्नं यस्य, बहुव्री॰। १ एकवार भोजन करनेवाला, जो दूसरे मरतबा खाता न हो। (क्ली॰) २ एकमात्र भोजन, वही एक खाना। (पु॰) ३ सहभोजी, साथ-साथ खानेवाला।

एकान्नभुक् (सं॰ पु॰) सहभोजी, जो वही चीज़ खाता हो।

एकान्नविंशति (सं॰ त्रि॰) एकेन नविंशतिः आदुक् अनुनासिकश्च।' एकोनविंशति, उन्नीस, १८।

एकान्नादी (सं॰ त्रि॰) केवल एक व्यक्तिका दिया अन्न खानेवाला, जो एक ही आदमीके साथे खाने-पर बसर करता हो।

एकाब्दा (सं॰ स्त्री॰) एकवर्षकी गाभी, एक सालकी बछिया।

एकाम्बरनाथ सोमयाजी—एक संस्कृत ग्रन्थकार। साम्यवती-परिणय, वीरभद्रविजय और सत्यपरिणय नामक काव्य इन्होंने लिखा है।

एकाम्र (सं॰ क्ली॰) एक पवित्र तीर्थस्थान। आम्रका एकमात्र वृक्ष रहनेसे यह नाम पड़ा है। वह वृक्ष अतिशय उच्च, सुन्दर शाखाविशिष्ट, और नव नव किसलय तथा पल्लवसे भरा रहा। उसका फल—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष था। उस गोपनीय वृक्षको स्वयं मुरारिने लगाया था। यहां भगवान् भुवनेश्वरकी लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। भुवनेश्वर देखो।

एकायन (सं॰ त्रि॰) एकमयनमाश्रयो यस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एकही ओर झुका हुआ। २ एक होके गमन करने योग्य, जिसपे दूसरा चल न सके। (क्ली॰) एकमयनं स्थानम्, कर्मधा॰। ३ एकस्थान, निराला जगह। ४ मिलनस्थान, इकट्ठा होनेका मुकाम। ५ विचारयोग, ख़यालोंका मेल। ६ एकपरायणता, उसीका सहारा। ७ वेदकी एक शाखा।

एकायनगत (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्नयने गतं मानसम्, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एक ही बातपर झुका हुआ। २ एकस्थानगत, उसी जगह पहुंचा हुआ।

एकायु (वै॰ त्रि॰) १ सम्पूर्ण जीवोंको एकत्र करनेवाला, जो सब जानवरोंको इकट्ठा करता हो। २ प्रथम जीवधारी, पहले जिन्दा होनेवाला। ३ अत्युत्तम भोजन प्रदान करनेवाला, जो निहायत उमदा खाना देता हो।

एकार (सं॰ पु॰) स्वरवर्णका एकादश अक्षर। ए देखो।

एकार्णव (सं॰ पु॰) जलप्लावनविशेष, एक बूड़ा। इसमें घर-बाहर सब जगह पानी भर जाता है।

एकार्थ (सं॰ पु॰) एकः अद्वितीयः अर्थः, कर्मधा॰। १ एकप्रयोजन, वही मतलब। २ एक अभिधेय शब्द, वही लफ़्ज़। ३ एकपदार्थ, वही चीज़। (त्रि॰) एकोर्थो यस्य, बहुव्री॰। ४ एकप्रयोजनयुक्त, वही मतलब रखनेवाला। ५ एक अभिधेय, वही मानी रखनेवाला।

एकार्थक, एकार्थ देखो।

एकार्थता (सं॰ स्त्री॰) एकार्थस्य भावः, एकार्थ-तल्-टाप्। अर्थ वा उद्देशकी अभिन्नता, मानी या मतलबका मेल।

एकार्थसमुपेत (सं॰ त्रि॰) एकार्थेन अभिधार्थेन समुपेतं युक्तम्, ३-तत्। १ एक अर्थविशिष्ट, वही मानी रखनेवाला। २ एक उद्देश्ययुक्त, वही मतलब रखनेवाला।

एकार्थीभाव (सं॰ पु॰) एक अर्थका आरम्भ, वही मानी रखनेकी बात।

कार्तिकेयबाहु, शरीरकोष, कार्तिकेयनेत्र, राज-मण्डल। १३ त्रयोदश, ताम्बूल, गुण। १४ चतुर्दश, विद्या, मनु, विदिव, राजा, भुवन, ध्रुवतारका। १५ पञ्चदश, तिथि। १६ षोड्श,चन्द्रकला। १८ अष्टादश, दीप, विद्या, पुराण, स्मृति, धान्य। २० विंशति, रावणहस्त, अङ्गुलि। १०० शत, धृतराष्ट्रपुत्र, शतभिषक्तारका, पुरुषायुः, रावणाङ्गुलि, पद्मदल, इन्द्रयज्ञ, समुद्रयोजन। १००० सहस्र, जाह्नवीपथ, अनन्तशीर्ष, पद्मदल, रविपाद, अर्जुनहस्त, वेदशाखा, इन्द्रचक्षु।

एकादिक्रम (सं० त्रि०) एकादिरेकप्रभृतिः क्रमो यस्य, बहुव्री०। आनुपूर्विक, सिलसिलेवार।

एकादिवीर (सं० पु०) एकवीर वृक्ष।

एकादेश (सं० पु०) एकश्चासौ आदेशश्च कर्मधा०। १ व्याकरणोक्त उभय शब्द वा स्थान ग्रहणकर एकमात्र आदेश। २ एक आज्ञा, अकेला हुक्म।

एकोदनविंशति (सं० त्रि०) एकेन नविंशतिः, एक-अदुक् अनुनासिको विकल्पः। एकोनविंशति, उन्नीस, १९।

एकाधिपति (सं० पु०) एकः प्रधानोऽधिपतिः। सम्राट्, बादशाह, बड़ा मालिक।

एकाधिपत्य (सं० क्ली०) प्रधान आधिपत्य, बड़ा इख्तियार।

एकानंशा (सं० स्त्री०) एकोनः अंशो यस्याः, बहुव्री०। पार्वती। हरिवंशमें लिखा, कि यशोदाके गर्भसे योगमायाने यही नाम ग्रहणकर जन्म लिया था।

एकानुदिष्ट (सं० त्रि०) एकमनुदिष्टम्। १ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजको छोड़ा हुआ। २ अन्त्येष्टिक्रियाके भोजका भाग लेनेवाला। (क्ली०) ३ एकके उद्देशसे प्रदत्त श्राद्ध।

एकान्त (सं० क्ली०) एकस्मिन्नेव अन्तः समाप्तिर्यस्य, बहुव्री०। १ एकमात्र समाप्ति, अकेला निशाना। २ निगूढ़ स्थान, छिपी जगह। ३ एककी भक्ति, सिर्फ एकको परस्तिश। (त्रि०) ४ एक विषयकी ओर चालित, जो एक ही बातपर लगाया गया हो। ५ एक ही ईश्वर माननेवाला, जो सिर्फ एक ही को मानता हो। ६ अतिशय, बहुत ज़ियादा। ७ निर्जन, निराला। (अव्य०) ८ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर। ९ अवश्य, बेशक। १० गुप्तरीतिसे, छिपकर। ११ अत्यन्त, बेहद।

एकान्तकरुण (सं० त्रि०) अतिशय कृपालु, निहायत रहीम।

एकान्तकैवल्य (सं० क्ली०) मुक्तिविशेष।

एकान्तचारी (सं० त्रि०) एकान्त-चर-णिनि। निर्जनमें भ्रमणकारी, निरालेमें घूमनेवाला।

एकान्ततः (सं० अव्य०) १ पूर्णरूपसे, बिलकुल। २ पृथक् रूपसे, अलग।

एकान्तता (सं० स्त्री०) १ आतिशय्य, बहुतायत। २ निर्जनता, तनहाई।

एकान्तत्यागवाद (सं० पु०) बौद्धोंका एक वाद। वस्तुको एकान्तरूपताके सम्बन्धमें त्याग-प्रतिपादक वादको एकान्तत्यागवाद कहते हैं।

एकान्तदुःषमा (सं० स्त्री०) दुष्टा समा वर्षः दुःषमा, एकान्तं दुःषमा, २-तत्। जैनकल्पित कालविशेष। यह अवसर्पिणीके छठें और उत्सर्पिणीके पहले अरका नाम है।

एकान्तभूत (सं० त्रि०) एकाकी रहनेवाला, जो अकेले पड़ गया हो।

एकान्तमति (सं० त्रि०) एक ही विषयमें लगा हुआ, जो एक ही बात सोचता हो।

एकान्तर (सं० त्रि०) एकमन्तरं व्यवधानं यस्य, बहुव्री०। १ एकान्तरवर्ती, एकके फ़ासिलेवाला। २ एक दिन व्यवधानके भोजनसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ एक दिनके व्यवधानसे आनेवाला।

एकान्तराट् (सं० पु०) किसी योगिपरत्वका नाम।

एकान्तवास (सं० पु०) निर्जन स्थानका अवस्थान, निरालेकी रहायश।

एकान्तवासी (सं० त्रि०) निर्जनमें निवास करनेवाला, जो अकेला रहता हो।

एकान्तविहारी (सं० त्रि०) एकाकी विचरण करनेवाला, जो अकेला घूमता हो।

एकान्तसुषमा (सं० स्त्री०) सुष्ठु समा वर्षः सुषमा

एकान्तं सुषमा, २-तत्। बौद्ध मतानुयायी कालविशेष। अवसर्पिणीके प्रथम और उत्सर्पिणीके कालचक्रके षष्ठ युगको एकान्तसुषमा कहते हैं।

एकान्तस्थित (सं॰ त्रि॰) पृथक् पड़ा हुआ, जो अकेले ठहरा हो।

एकान्तस्वरूप (सं॰ त्रि॰) एकान्तस्थित, अलग रहनेवाला।

एकान्तिक (सं॰ त्रि॰) अन्तिम, फलस्वरूप, आखिरी, नतीजेवाला।

एकान्तित्व (सं॰ क्ली॰) एकाश्रय, निरालापन।

एकान्ती (सं॰ त्रि॰) एकान्तमस्यास्ति, एकान्त-इनि। १ अतिशययुक्त, बहुत बड़ा। (पु॰) २ विष्णुभक्त विशेष। यह एकान्तमें बैठ विष्णुको भजते हैं।

एकान्न (सं॰ त्रि॰) एकं एककालपक्वं अन्नं यत्र, बहुव्री॰। १ एकवार भोजन करनेवाला, जो दूसरे मरतबा खाता न हो। (क्ली॰) २ एकमात्र भोजन, वही एक खाना। (पु॰) ३ सहभोजी, साथ-साथ खानेवाला।

एकान्नभुज् (सं॰ पु॰) सहभोजी, जो वही चीज़ खाता हो।

एकान्नविंशति (सं॰ त्रि॰) एकेन नविंशतिः आदुक् अलुगादिकत्व। एकोनविंशति, उन्नीस, १८।

एकान्नादी (सं॰ त्रि॰) केवल एक व्यक्तिका दिया अन्न खानेवाला, जो एक ही आदमीके साथे खाने-पर बसर करता हो।

एकाब्दा (सं॰ स्त्री॰) एकवर्षकी गाभी, एक सालकी बछिया।

एकाम्बरनाथ सोमयाजी—एक संस्कृत ग्रन्थकार। काम्यवती-परिणय, वीरभद्रविजय और मत्स्यपरिणय नामक काव्य इन्होंने लिखा है।

एकाम्र (सं॰ क्ली॰) एक पवित्र तीर्थस्थान। आम्रका एकमात्र वृक्ष रहनेसे यह नाम पड़ा है। वह वृक्ष अतिशय उच्च, सुन्दर शाखाविशिष्ट, और नव नव किशलय तथा पल्लवसे भरा रहा। उसका फल—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष था। उक्त गोपनीय वृक्षको स्वयं मुरारिने लगाया था। यहां भगवान् भुवनेश्वरको लिङ्गमूर्ति प्रतिष्ठित है। भुवनेश्वर देखो।

एकायन (सं॰ त्रि॰) एकमयनमाश्रयो यस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एकही की ओर झुका हुआ। २ एक ही गमन करने योग्य, जिसपे दूसरा चल न सके। (क्ली॰) एकमयनं स्थानम्, कर्मधा॰। ३ एकस्थान, निराली जगह। ४ मिलनस्थान, इकट्ठा होनेका मुकाम। ५ विचारयोग, ख्यालोंका मेल। ६ एकपरायणता, उसीका सहारा। ७ वेदको एक शाखा।

एकायनगत (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन्नयने गतं ज्ञानमस्य, बहुव्री॰। १ एकाग्र, एक ही बातपर झुका हुआ। २ एकस्थानगत, उसी जगह पहुंचा हुआ।

एकायु (वै॰ त्रि॰) १ सम्पूर्ण जीवोंको एकत्र करने-वाला, जो सब जानवरोंको इकट्ठा करता हो। २ प्रथम जीवधारी, पहले जिन्दा होनेवाला। ३ अत्युत्तम भोजन प्रदान करनेवाला, जो निहायत उमदा खाना देता हो।

एकार (सं॰ पु॰) स्वरवर्णका एकादश अक्षर। ए देखो।

एकार्णव (सं॰ पु॰) जलप्लावनविशेष, एक बूड़ा। इसमें घर-बाहर सब जगह पानी भर जाता है।

एकार्थ (सं॰ पु॰) एकः अद्वितीयः अर्थः, कर्मधा॰। १ एकप्रयोजन, वही मतलब। २ एक अभिधेय शब्द, वही लफ़्ज़। ३ एकपदार्थ, वही चीज़। (त्रि॰) एकोऽर्थो यस्य, बहुव्री॰। ४ एकप्रयोजनयुक्त, वही मतलब रखनेवाला। ५ एक अभिधेय, वही मानी रखनेवाला।

एकार्थक, एकार्थ देखो।

एकार्थता (सं॰ स्त्री॰) एकार्थस्य भावः, एकार्थ-तल्-टाप्। अर्थ या उद्देश्यको अभिन्नता, मानी या मतलबका मेल।

एकार्थसमुदित (सं॰ त्रि॰) एकार्थेन अभिधार्थेन समुदितं युक्तम्, ३-तत्। १ एक अर्थविशिष्ट, वही मानी रखनेवाला। २ एक उद्देश्ययुक्त, वही मतलब रखनेवाला।

एकार्थीभाव (सं॰ पु॰) एक अर्थका कारण, वही मानी रखनेकी बात।

एकायन (सं० त्रि०) एक-अयन।

एकावयव (सं० त्रि०) एकमभिन्नमवयवं यस्य, बहुव्री०। १ एकशरीरविशिष्ट, एकही जिस्म रखनेवाला। २ तुल्य-शरीर-विशिष्ट, बराबर जिस्म रखनेवाला। (क्ली०) कर्मधा०। ३ एकमात्र अङ्ग, अकेला अङ्ग।

एकावली (सं० स्त्री०) एका केवला आवली माला, कर्मधा०। १ एक सरमाला, एकलड़ा हार। २ अलङ्कारविशेष।

"पूर्वं पूर्वं प्रति विशेषणत्वेन परं परम्।
स्थाप्यतेऽपोह्यते वा चेत् स्यात्तदैकावली द्विधा।" (साहित्यदर्पण)

पूर्व पूर्व पदके प्रति पर पर पदका विशेषणरूपसे स्थापित वा परित्यक्त होना एकावली अलङ्कार कहाता है। ३ सप्तदश अक्षरकी एक छन्दोवृत्ति।

एकाशीत (सं० त्रि०) इक्यासीवां, जो इक्यासीके स्थानपर हो।

एकाशीति (सं० स्त्री०) एकेनाधिका अशीतिः, मध्य-पदलो०। इक्यासी, अस्सी और एक, ८१।

एकाशीतितम, एकाशीत देखो।

एकाशीतिपद (सं० क्ली०) एकाशीतिः पदान्यत्र, बहुव्री०। भवन वा गृहारम्भ वा गृहप्रवेशके समय वास्तुकी पूजाको बनाया जानेवाला मण्डल। इसमें तिर्यक् एवं ऊर्ध्व प्रदेशपर दश रेखायें बनाकर कोठ खींचे जाते हैं। वास्तुमण्डल देखो।

एकाश्रम (सं० पु०) निर्दोष स्थान, निरापद जगह।

एकाश्रय (सं० त्रि०) एक आश्रय आधारो अवलम्बनं वा यस्य, बहुव्री०। १ अनन्यगति, एक ही सहारा पकड़नेवाला। २ एक कार्यावलम्बी, एक ही काम करने-वाला। (पु०) कर्मधा०। ३ एक आधार, अकेला सहारा।

एकाश्रित (सं० त्रि०) एकमाश्रितम्, २-तत्। १ एककी शरणागत, किसीकी शरणमें पहुंचा हुआ। २ अनन्य-गति, जो दूसरी चाल चलता न हो।

एकाश्रितगुण (सं० पु०) एकस्मिन् पदार्थे आश्रितो गुणः। एकवृत्तिधर्म। सिद्धान्तमुक्तावलीमें रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, एकत्व, एकपृथक्त्व, परिमाण, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, यत्न, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, अदृष्ट और शब्दको एकवृत्ति-धर्म कहा है।

एकाष्टका (सं० स्त्री०) १ माघ मासकी कृष्णाष्टमी, माघ बदी अष्टमी। २ माघ मासकी कृष्णाष्टमीको किया जानेवाला श्राद्ध। ३ गवी। (अथर्व) ४ प्रजा-पतिकी एक कन्या।

एकाष्ठी (सं० स्त्री०) १ कार्पासी, कपास। २ कार्पास-बीजकोष, कपासकी बोंड़ी।

एकाष्ठीला (सं० स्त्री०) पाठा, निरबिसी, हर-ज्योरी।

एकाष्ठील (सं० पु०) एकमस्थि लाति, ला-क। बकवृक्ष, मौलसिरीका पेड़।

एकाष्ठीला (सं० स्त्री०) १ बकवृक्ष, मौलसिरी। २ पाठा, पाढ़ी, हरज्योरी।

एकासनिक (सं० त्रि०) एकासनमावसत्, एकासन-ठक्। एकासनके उपयुक्त, एक ही बैठक रखनेवाला।

एकाह (सं० पु०) एकमहः, एक अहन्-टच्। अहोऽह्नादेतेभ्यः। पा ५।४।८८। १ एक दिन। २ एक दिन साध्य अग्निष्टोमादि यज्ञ। (त्रि०) ३ एक दिनवाला, जो एक ही दिनमें हो। (अव्य०) ४ एक दिनमें।

एकाहगम (सं० पु०) एकाहेन गम्यते, गम कर्मणि खच्। एक-दिवस-गम्य स्थान, एक रोजका सफर।

एकाहार (सं० पु०) एकः अद्वितीय आहारः, कर्मधा०। दिनमें एकवारका भोजन, दिनमें एक मरतबाका खाना। (त्रि०) २ एकाहारी, दिनमें एक ही मरतबा खानेवाला।

एकाहारी (सं० त्रि०) एकाहारोऽस्यास्ति, एका-हार-इनि। एकबार ही भोजन करनेवाला, जो एक ही मरतबा खाता हो।

एकाहिक (सं० त्रि०) एकाह-ठन्। एकदिन-साध्य, एक रोजमें हो जानेवाला।

एकाहा (सं० स्त्री०) एकवर्षीय गाभी, एक सालकी बछिया।

एकीकरण (सं० क्ली०) एक-अभूत-तद्भावे च्वि-कृ-ल्युट्। एकत्रीकरण, इकट्ठा करनेका काम।

एकीकृत (सं० त्रि०) मिश्रित, एक किया हुआ।

एकीभवत् (सं॰ त्रि॰) मिश्रित, जो एक बन गया हो।

एकीभाव (सं॰ पु॰) एक-अभूततद्भावे च्वि-भू-घञ्। १ संयोग, मिलाप। २ साधारण प्रकृति या सम्पत्ति, मामूली क़ुदरत या जायदाद।

एकीभावी (सं॰ त्रि॰) सबोंके मेलसे सम्बन्ध रखनेवाला।

एकीभूत (सं॰ त्रि॰) एकत्र, इकट्ठा, जो मिल गया हो।

एकीय (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन् तिष्ठतीति, एक-छ। १ एकपक्ष, एकतर्फ़ा। २ एक सम्बन्धीय, एकसे मुताल्लिक़। ३ सहाय, साथी।

एकेक्षण (सं॰ पु॰) एकमीक्षणं यस्य, बहुव्री॰। १ काक, कौवा। २ काना। ३ शुक्राचार्य। पुराणमें शुक्राचार्यके एक-नेत्रपर लिखा, बलिराजने जब शुक्राचार्यका निषेध न मान वामनदेवको त्रिपाद भूमि देनेका सङ्कल्प किया, तब उन्होंने उस अति-रिक्त दान करनेके अभिप्रायसे सूक्ष्मरूपसे जलपात्रका मुख रोक लिया था। किन्तु वामनदेव यह चातुरी समझ गये। उन्होंने जलपात्रका छिद्र ढूंढनेके छलसे कुशसे शुक्राचार्यका एक नेत्र फोड़ डाला।

एकेन्द्रिय (सं॰ पु॰) १ इन्द्रियका मनको और विषय। इस अवस्थामें इन्द्रियां मनसे और मन उन दोनों बातोंसे अलग रहते हैं। २ एकमात्र इन्द्रिय-युक्त जीव। जैन वनौषधादि जीवोंको एकेन्द्रिय मानते हैं। कारण, उनके सिवा त्वचाके दूसरा इन्द्रिय नहीं रहता।

एकेश्वर (सं॰ त्रि॰) एकोऽद्वितीय ईश्वरः। १ प्रधान अधिपति, बड़ा मालिक। २ एकाकी, तनहा, अकेला।

एकैक (सं॰ त्रि॰) १ एकाकी, अकेला। (अव्य॰) २ अकेले, एक-एक।

एकैकतर (सं॰ त्रि॰) एकाकी, अकेला।

एकैकवृत्ति (सं॰ त्रि॰) प्रत्येक एकाकीमें अवस्थान करनेवाला, जो एक-एकमें रहता हो।

एकैकशः (सं॰ अव्य॰) एकैक-शस्। पृथक्-पृथक्, अलग-अलग, एक-एक।

एकैकश्य (सं॰ क्ली॰) १ एकाकी स्थिति, तनहा रहना। (अव्य॰) २ पृथक्-पृथक्, एक-एक।

एकैषिकतैल (सं॰ क्ली॰) तयामक तैल, एकैषिक तैल। यह स्निग्ध, पित्तघ्न और वात एवं कफनाशने-वाला होता है। (सुश्रुत)

एकैषिका (सं॰ स्त्री॰) १ वकपुष्पवृक्ष, मोल-सिरीका पेड़। २ पाठा, हरज्योरी। ३ त्रिवृता। इसका तैल मधुर, अति शीत, पिच्छिल, वातकोपन और श्लेष्मवर्धन होता है। (सुश्रुत)

एकैषी (सं॰ स्त्री॰) पाठा, हरज्योरी।

एकोक्ति (सं॰ स्त्री॰) एकमात्र कथन, अकेला लफ़्ज़।

एकोजी—तञ्जाउरके प्रथम महाराष्ट्र राजा। यह शाहजीके पुत्र थे। तुकाबाईके गर्भसे इनका जन्म हुआ। एकोजी पहिले महाराष्ट्रीय सिपाहीके सेनापति रहे। १६३८ ई॰को शाहजी बिजापुर सुलतानके द्वितीय सेनापति बन कर्णाटक भेजे गये थे। वहीं व्यंकोजी नाम और 'एकोजी' उसी शुक्राचार्यके साथ रहा। १६५२ ई॰को शाहजीके कर्णाटक शासनका भार आपको मिला। इन्होंने जागीरका शासन सम्हाला। कर्णाटक लौटने पर शाहजीको बंगलूरकी जागीर मिली थी। फिर वहीं इनकी मनसबदार जागीर तञ्जाउरके पास भी दिलवाई गयी। १६७४ ई॰को तञ्जाउरके मदुराके राजाका भय दिखा आक्रमण कर उन्होंने तञ्जाउर अपने हाथमें लिया और समस्त देशको अधिकार किया। तञ्जोर अपने सिंहासन बैठे। इनके १म शाहजी, २य शरभोजी और ३य पुत्र तुकाजी रहे। १६८७ ई॰को एकोजीका मृत्यु, उनके ज्येष्ठ पुत्र शाहजी राजा बने थे।

एकोतरसौ (हिं॰ वि॰) एकशतोत्तर, एकसौ एक।

एकोतरा (हिं॰ पु॰) १ सबके मिलनेका स्थान। (वि॰) २ एक दिनके अन्तरसे आनेवाला, जो एक रोज़के बाद आता हो।

एकोत्तर (सं॰ त्रि॰) एक संख्या अधिक रखने-वाला, जो एकसे बढ़ता हो।

एकोत्तरिका (सं० स्त्री०) बौद्धोंका चतुर्थ आगम।
एकोदक (सं० पु०) एकं तुल्यमुदकं यस्य, बहुव्री०। एकगोत्रका अर्ध्वतन सप्तम पुरुष।
एकोदर (सं० पु०) एकं अभिन्नं उदरं जन्मस्थानं यस्य, बहुव्री०। १ सहोदर, एक ही पेटसे पैदा होनेवाला। (स्त्री०) २ तुल्य उदर, बराबर पेट।
एकोदात्त (सं० त्रि०) एकमात्र उदात्त स्वरयुक्त।
एकोद्दिष्ट (सं० क्ली०) एकः प्रेत एव उद्दिष्टो यत्र, बहुव्री०। प्रेतोद्देशसे किया जानेवाला एक श्राद्ध। यह श्राद्ध मृत व्यक्तिके उद्देशसे प्रति वर्ष किया जाता है। इसे मध्याह्नकालपर करना चाहिये। क्योंकि पूर्वाह्नको दैविक, अपराह्नको पार्वण और मध्याह्नको एकोद्दिष्ट श्राद्ध करनेकी व्यवस्था है। यथा—

"पूर्वाह्णे दैविकं श्राद्धमपराह्णे तु पार्वणम्।
एकोद्दिष्टं तु मध्याह्ने प्रातर्वृद्धिनिमित्तकम्॥" (मनु)

कुतपके प्रथम भाग और आवर्तनके निकटवर्ती कालपर एकोद्दिष्ट आरम्भ करना चाहिये। पश्चिमदिगवस्थित छाया पूर्वदिक् जाते समय आवर्तनकाल होता है। एकोद्दिष्टके समय कोई विघ्न पड़नेसे अन्य मासमें कृष्ण एकादशी तिथिको श्राद्ध किया जा सकता है। पिता और माताके श्राद्धका पुत्रको ही अधिकार है। पुत्रके अभावमें पत्नी और पत्नीके अभावमें सहोदरपर पिण्डजलदान करनेका भार पड़ता है। पुत्र शब्दके द्वारा द्वादश प्रकार पुत्रोंके श्राद्धाधिकारी होनेकी सम्भावना रहते भी कलिमें अन्य पुत्रका निषेध लगनेसे औरस और दत्तक पुत्र ही समझा जायेगा। याज्ञवल्क्यके कथनानुसार पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, दौहित्र, पत्नी, भ्राता, भ्रातुष्पुत्र, पिता, माता, पुत्रवधू, भगिनी, भागिनेय, सपिण्ड तथा सोदकमें पूर्वपूर्वका अभाव आनेसे उत्तरोत्तर व्यक्ति श्राद्धका अधिकारी होगा। किन्तु जहां पिताके बाद पितामह मरता, उस स्थलमें पितामहके दत्तकादि पुत्र न रहनेसे पौत्रको अधिकार मिलता है। दाक्षिणात्य ग्रन्थमें लिखा, कि पत्नी तथा दौहित्र उभय विद्यमान रहते पत्नी, दौहित्र एवं भ्रातुष्पुत्र उभय विद्यमान रहते विभक्तावस्थामें दौहित्र तथा अविभक्तावस्थामें भ्रातुष्पुत्र और भ्राता एवं भ्रातुष्पुत्र उभय विद्यमान रहते कनिष्ठ होनेसे भ्राता तथा ज्येष्ठ होनेसे भ्रातुष्पुत्रको श्राद्ध करना चाहिये।
एकोद्देश (सं० पु०) एकस्य उद्देशः, ६-तत्। एकका उद्देश, एक ही बातकी हिदायत।
एकोन (सं० त्रि०) एककम, जिसमें एक कम पड़े। यह शब्द विंशति, त्रिंशत् प्रभृति दशकके आदिमें आता है, जैसे—एकोनविंशति, एकोनत्रिंशत् प्रभृति।
एकोशिका (सं० स्त्री०) एका मुख्या उशिका कर्मधा०। पाठा, हरज्योरी।
एकोघ (सं० पु०) अविच्छिन्नप्रवाह, बन्द न होनेवाला बहाव।
एकोषिका, एकोशिका देखो।
एकीभूत (सं० त्रि०) एकमात्र समूहमें इकट्ठा हुआ, जो मिलकर ढेर बन गया हो।
एकौभा (हिं० वि०) एकाकी, तनहा, दूसरेको साथ न रखनेवाला।
एकौतना (हिं० क्रि०) बालका फूटना, दाना पड़ना।
एक्का (हिं० पु०) १ यानविशेष, एक गाड़ी। इसमें एक ही अश्व या वृषभ जोता जाता है। २ अद्वितीय वीर, अनोखा बहादुर। ३ बड़ा मुदगर। यह दोनों हाथसे उठता है। ४ आभूषणविशेष, एक जेवर। इसमें एक ही नग लगता है। एक्केको लोग बांहपर बांधते हैं। ५ किसी किस्मका शमादान। इसमें एक ही बत्ती जलती है। ६ एक ताश। इसमें एक ही बूटी रहती है। ७ पशुविशेष, अपने झुण्डको छोड़ अलग रहनेवाला जानवर। (त्रि०) ८ एकान्तप्रिय, जो दूसरेसे सरोकार रखता न हो। ९ एकाकी, अकेला।
एक्कावान (हिं० पु०) एक्का हांकनेवाला पुरुष, जो शख्स एक्का चलाता हो।
एक्कावानी (हिं० स्त्री०) १ एक्का चलानेका काम। २ एक्केकी मजदूरी।
एक्की (हिं० स्त्री०) १ ताशका एक पत्ता। यह अपने रंगमें सबसे बड़ी पड़ती और हरेकको काट सकती है। २ एकमात्र वृषभविशिष्ट शकट, एक बैलकी गाड़ी।

एक्यानवे (हिं० वि०) १ एकनवति, नब्बे और एक, ९१। (पु०) २ एकनवति संख्या, एक्यानवे अदद।

एक्यावन (हिं० वि०) १ एकपञ्चाशत्, पचास और एक, ५१। (पु०) एकपञ्चाशत् संख्या, पचास और एक मिलकर बननेवाली अदद।

एक्यासी (हिं० वि०) १ एकाशीति, अस्सी और एक, ८१। २ एकाशीति संख्या, अस्सी और एक मिलकर बननेवाली अदद।

एक्सचेंज (अं० पु०=Exchange) व्यापारस्थान-विशेष, सौदागरीकी एक जगह। यहां व्यापारी और वणिक् आदान-प्रदान तथा क्रय-विक्रयके लिये जुटते हैं।

एक्सपोज़् (अं० पु०=Expose) १ सम्मुख वा निकट स्थापन, सामने या पास रखनेका काम। जब किसी वस्तुका प्रभाव अन्य द्रव्यपर पहुंचाना चाहते, तब उसे उसके पास एक्सपोज़् करते हैं। फोटो उतारते समय लेंसका मुख उद्घाटित करना भी एक्सपोज़् ही कहाता है।

एख़्नी (फ़ा० स्त्री०) यूष, शोरबा। एख़्नी मांसमें ही होती है।

एगानगी (फ़ा० स्त्री०) १ ऐक्य, हेलमेल। २ सुहृद्भाव, दोस्ती।

एगाना (फ़ा० वि०) सुहृद्, मैत्री।

एज् (सं० धा०) भ्वा० आत्म० अक० सेट्। "एजृ दीप्तौ।" (कविकल्पद्रुम) १ दीप्ति पाना, चमकना। भ्वा० पर० सक० सेट्। "एजृ कम्पे।" (कविकल्पद्रुम) २ कम्पन देना, कंपाना।

एजक (सं० वि०) कम्पित कर देनेवाला, जो कंपा देता हो।

एजत् (सं० क्ली०) चैतन्य वा सजीव वस्तु, चलती-फिरती या जीती-जागती चीज़।

एजत्क (सं० वि०) १ कम्पनशील, जो कंप रहा हो। (पु०) २ कीटविशेष, एक कीड़ा।

एजथु (सं० पु०) एज अथु। कम्प, कंपाई।

एजन (सं० क्ली०) एज् भावे ल्युट्। कम्पन, कंपाई।

एजि (सं० त्रि०) एज-इन्। वातरोगग्रस्त, जिसके गठियेकी बीमारी रहे।

एजित (सं० त्रि०) कम्पित, हिलता हुआ, जो डोल गया हो।

एजितव्य (सं० त्रि०) कम्पित किया जानेवाला, जो हिलाये जानेके क़ाबिल हो।

एजिता (सं० त्रि०) कम्पित करनेवाला, जो हिलाता हो।

एजेंट (अं० पु०-स्त्री०=Agent) प्रतिहस्त, प्रतिनिधि, गुमाश्ता, कारिन्दा—जैसे पोलिटिकल एजेंट, कमिशन एजेंट।

एजेन्सी (अं० स्त्री०=Agency) १ प्रतिनिधित्व, मुनीबी, आढ़त, पेशकारी।

एज्य (सं० त्रि०) आ-यज-ण्यत्। सम्यक्रूप यजनीय, अच्छी तरह चढ़ाया जानेवाला।

एटा—१ युक्तप्रान्तका एक ज़िला। यह अक्षा० २७° १८′ ४२″ तथा २८° १′ ४८″ उ० और द्राघि० ७८° २७′ २६″ एवं ७९° १८′ २१″ पू० पर अवस्थित है। दक्षिण सीमापर गङ्गा बहती है। क्षेत्रफल १७१८ वर्गमील है। कासगंज नगर व्यवसायका केन्द्र है। काली नदी गङ्गामें गिरती है। इस ज़िलेमें ह्रद बहुत कम हैं।

कहते—प्राचीन समयको कालीकी उपत्यकामें बड़े बड़े नगर बसते थे। ५वीं और ७वीं ई० शताब्दीके चीना परिव्राजक भी उक्त विषयका वर्णन लिख गये हैं। एटा जिलेमें उस समय अनेक मन्दिर और मठ बने थे, जिन्हें देखने स्वयं बुद्ध गये। पतरौलीके नष्टभ्रष्ट मृत्तिकाचयमें उनके जीवनका घनिष्ठ सम्बन्ध रहा। सम्भवतः ६ष्ठ शताब्दसे १०म शताब्द पर्यन्त अहीरों और भारोंका राज्य चला, फिर राजपूतोंको अधिकार मिला। १०१७ ई०को कन्नौज पर चढ़ते समय महमूद गज़नवीने एटेपर ज़रूर हाथ फेरा होगा। फिर दो शताब्द बाद यमुनाके दोआबमें राठौर जयचन्द्रसे लड़ने जाते मुहम्मद गोरीकी फौज इसी ज़िलेसे निकली होगी। उसी समयसे एटा मुसलमानोंके अधीन चला आता है। पहले पटियाली प्रधान नगर और डाकुओंका घर था। १२७० ई०को

सुलतान बहलूलने उनके अत्याचारकी बात सुनी। उन्होंने स्वयं पटियाली जा और जङ्गलमें बड़ी फौज जमा व्यवसायकी राह खोली थी। १५ वीं शताब्दीको बार बार मुसलमानोंका आक्रमण पड़ते समय एटेकी बड़ी दुर्दशा हुयी और दोनों औरकी मार सहना पड़ी। अकबरने इसे अपने कन्नौज, कोयल और बदायूंके सरकारोंमें मिलाया तथा मैनपुरीके कट्टर हिन्दुओंसे लड़नेको अड्डा बनाया था। फिर अन्तको ईटा पर लखनऊके नवाबका अधिकार रहा। १८०१-२ ई०को उन्होंने अन्य देशके साथ इसे भी अंगरेजोंके हाथ सौंपा। १८४५ ई०को एटेके इधर उधर परगनोंकी अराजकता पर सरकारकी दृष्टि पड़ी थी। इसीसे पटियालीमें एक डिपुटी कलेक्टर और जाइण्ट मजिष्ट्रेट रख गया। फिर १८५६ ई०को हेड क्वार्टर एटा गांवमें उठ आया। इसी एटा गांवके नामपर जिला भी एटा कहाया है। १८५७ ई०को अलीगढ़से बलवेका समाचार आते ही यहांकी मारी फौज बुपके चल दुई थी। कासगंजको रक्षाके लिये बड़ी चेष्टा की गयी, किन्तु सफलता न मिली। उस समय एटाके राजा धामड़ सिंह जिलेके दक्षिणांशमें स्वतन्त्र शासक बन बैठे। किन्तु फरक्खाबादके नवाबने उन्हें मार भगाया और कुछ मासके लिये अपना अधिकार जमाया था। १५वीं दिसम्बरको जनरल ग्रीथेडकी फौजने विद्रोहियोंपर आक्रमण मार कासगंजको उद्धार किया। १८७७-७८ ई०को रोग और दुर्भिक्षका प्राबल्य रहा। इस जिलेमें कितने ही कान्यकुब्ज ब्राह्मण जमींदार हैं। सैकड़े पीछे ७० आदमी खेतीके सहारे रहते हैं। मन्दिर और मसजिद बहुत कम हैं। टिड्डी अधिक निकलती है। वर्षामें बाढ़से भी बड़ी हानि होती है। १८६०-६१ ई०को दुर्भिक्षके समय लोगोंने घासपात खाकर प्राण बचाया था। कस्बोंमें चीनी तैयार होती है। समकी रस्सी और बोरी बनती है। सोरोंमें प्रतिवर्ष गङ्गा स्नानका मेला लगता है। एटामें शिकोहाबादको पक्की सड़क गई है। कासगंज और हं ढवारगंजसे [illegible] गाड़ी पर लाद कर माल बाहर भेजा जाता है। जलवायु शुष्क और स्वास्थ्यकर है। किन्तु ग्रीष्म ऋतुमें प्रायः प्रचण्ड वायु और धूलिका तूफान आया करता है। ज्वर और शीतलाका प्रकोप रहता और कभी-कभी हैजा भी जोर पकड़ता है।

२ युक्तप्रान्तके एटा जिलेकी तहसील। यह काली नदीसे पश्चिम पड़ती है। निम्नगङ्गा नहरकी तीन शाखा सींचनेका काम देती हैं। भूमिका परिमाण ४८१ वर्गमील है।

३ युक्तप्रान्तके एटा जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २७° ३३´ ५०´´ उ० तथा द्राघि० ७८° ४२´ २५´´ पू० पर काली नदीसे ८ मील पश्चिम अवस्थित है। पहले यह छोटासा गांव था, किन्तु १८५६ ई०को पटियालीसे कचहरी वगैरह उठ आनेपर शहर बन गया। दिलसुख रायका मन्दिर बहुत ऊंचा है। तालाबकी शोभा देखकर जी प्रसन्न हो जाता है। नगरसे उत्तर संग्रामसिंह चौहानका किला है। इसे बने कोई ५०० वर्ष बीते। संग्रामसिंहके वंशज पहले राजा कहाते और किलेके आस-पास हुकूमत चलाते थे। किन्तु सिपाही विद्रोहके समय राजा धामड़सिंहके अस्त्र उठाने पर सरकारने उनका माल असबाब सब छीन लिया और उन्हें राज्यसे निकाल बाहर किया। नगरमें मट्टीके मकान् बहुत हैं।

एठ (सं० धा०) भ्वा० आत्म० सक० सेट्। "एठङ् बाधने।" (कविकल्पद्रुम) बाधा डालना, रोकना, छेड़ना।

एड (सं० पु०) इल स्वप्ने अच्, डलयोरैक्यम्, अथवा आ-इड-अच्। १ मेषविशेष, किसी किस्मका भेड़ा। (त्रि०) २ बधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। (हिं० स्त्री०) ३ पार्ष्णि, एड़ी।

एड़क (सं० पु०) एड़ स्वार्थे कन्, इल् स्तुन् वा। १ पृथु-शृङ्ग मेष, भेड़ा। २ वनच्छागम, जंगली बकरा। ३ वृक्षविशेष, पतेर। ४ मञ्जिष्ठा, मजीठ।

एड़कघृत (सं० क्ली०) एड़कके नवनीतसे उत्थित घृत, भेड़के मक्खनका घी। यह बुद्धि पाटव और श्रमको बढ़ाता है। अति गुरु होनेसे सुकुमारोंको एड़कघृत खाना न चाहिये। (राजनिघण्टु)

एड़का (सं० स्त्री०) एड़कस्य स्त्री, टाप्। भेड़ी, भेड़।

एड़काख्य, एड़क देखो।

एड़गज (सं० पु०) एड़ो मेष एव गजो यस्य भक्ष्यकत्वात्। १ चक्रमर्दक, चकवँड़, चकौंड़िया। इसका संस्कृत पर्याय चक्रमर्द, प्रपुन्नाट, दद्रुघ्न, मेषलोचन, पद्माट, चक्र और पुन्नाट है। (Cassia Tora) यह कटु पड़ता और वायु, कफ, कुष्ठ, त्वग्दोष, गुल्म, उदररोग एवं अर्शको नाश करता है। चक्रमर्द देखो। २ वन्य एला, जंगली इलायची।

एड़गजा (सं० स्त्री०) एड़गज देखो।

एडमूक (सं० त्रि०) एड़वत् मूकश्च, कर्मधा०। १ बधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। २ वाक्श्रुतिवर्जित, बहरा और गूंगा, जो कहसुन न सकता हो। ३ शठ, प्रतारक, बदमाश, पाजी।

एडहस्ती (सं० पु०) चक्रमर्द, चकौंड़िया।

एडिटर (अं० पु०—Editor) लेखक, मोहतमिम, तर्मीम करके छापनेवाला।

एडिटरी (हिं० स्त्री०) लेखकका कार्य, मोहतमिमका ओहदा या काम।

एड़ी (हिं० स्त्री०) पार्ष्णि, एड़।

एडीकांग (अं० पु०—Aid-de-camp) सेनापतिका सहायक, फौजके अफसरका मुसाहिब। यह सेनापतिके आदेशका प्रचार करता है। समय लगनेपर सेनापतिकी ओरसे पत्र व्यवहार और शरीर रक्षकका कार्य भी एडीकांगको ही करना पड़ता है।

एड़ूक (सं० स्त्री०) ईड़-ऊक पृषोदरादित्वात् साधुः। उण् ४।४१। १ अन्तर्गत अस्थि, भीतरी हड्डी। २ अन्तर्गत कठिन द्रव्य, भीतरकी कड़ी चीज। ३ अस्थि-जैसे कठिन द्रव्यसे निर्मित भवन, जो मकान् हड्डी जैसी कड़ी चीज़से बना हो। (त्रि०) ४ बधिर, बहरा।

एड़ूक, एड़ूक देखो।

"एड़ूकान् पूजयिष्यन्ति वर्जयिष्यन्ति देवताः।" (भारत, वन १९०।६२)

एड़ोक, एड़ूक देखो।

एड्रेस (अं० पु०—Address) १ अभिभाषण, सम्बोधन, गुजारिश, तकरीर। २ सिपुर्द, सुपुर्दगी। ३ नामधाम, सरनामा, ठिकाना।

एढ़ा (हिं० वि०) आढ्य, भलो, ताकतवर।

एण (सं० पु०) एति द्रुतं गच्छतीति, इ बाहुलकात् ण। १ हिरण, हिरना। २ कृष्णमृगविशेष, करसायल। इसका मांस कषाय, मधुर, हृद्य, बल्य, धारक, हर्षकर और रक्त, पित्त, कफ तथा वातको दूर करनेवाला है। (सुश्रुत, भावप्रकाश) विशेषतः ज्वरमें एणका मांस प्रशस्त रहता है। (चरकादि) यह मृग कृष्णवर्ण होता है। आंख सुन्दर और पद खर्व रहते हैं। ज्योतिषमें मकरको एण कहते हैं।

एणक (सं० पु०) एण स्वार्थे कन्। १ हरिण, हिरना। २ कृष्णसार, करसायल।

एणतिलक (सं० पु०) एणो मृगस्तिलकमिव यस्य, बहुव्री०। मृगाङ्क, चांद।

एणदृक् (सं० त्रि०) एणस्य दृगिव दृक् चक्षुर्यस्य, बहुव्री०। १ मृगनेत्र, आहू चश्म। (पु०) २ मकर लग्न।

एणभृत् (सं० पु०) एणं बिभर्ति, एण-भृ-क्विप् तुगागमः। चन्द्र, चांद।

एणाजिन (सं० क्ली०) एणस्य अजिनं चर्म, ६-तत्। मृगचर्म, मृगछाला।

एणीदाह (सं० पु०) एक प्रकारका सन्निपातज्वर।

एणीपचन (सं० क्ली०) एणी पच्यते यत्र, पचल्युट्। १ देशविशेष, एक मुल्क। २ जातिविशेष, कोई लोग। जो लोग अवध्य मृगी-प्रभृतिको हत्या कर खाते, वह एणीपचन कहाते हैं।

एणीपद (सं० त्रि०) एण्याः पादाविव पादौ यस्य, बहुव्री०। मृगीकी भांति पद रखनेवाला, जो हिरनोकी तरह पैर रखता हो। (पु०) सर्पजाति गर्द, कौड़ियाला सांप।

एणीपदी (सं० स्त्री०) असाध्य लूताभेद, किसी किस्मका जहरीला कीड़ा।

एत (सं० त्रि०) आ-इण्-क्त। १ आगत, आया हुआ। २ नानाविध वर्णयुक्त, रंगदार, जिसमें कई तरहके रंग रहें। (पु०) आ गम्यते, एतीति,

भा-ड कर्तरि क्त। ३ मृग, हिरन। ४ मिश्रित वर्ण, मिला हुआ रंग। ५ घोटक, घोड़ा।
एतकाट (अ० पु०) दृढ़ निश्चय, विश्वास, दिलजमई।
एताश्व (सं० पु०) १ विचित्र अश्व, अनोखा घोड़ा। २ साधारण अश्वजाति, कोई घोड़ा। (वि०) ३ विचित्र, अनोखा।
एतज्ज (सं० वि०) इससे उत्पन्न, जो इससे निकला हो।
एतत् (सं० त्रि०) इण्. अतोऽदिः तुड़ागमश्च। उणादि ५। अद् १।११२। यह। एतत् शब्द अव्यवहित-बोधक सर्वनाम है।
एतत्काल (सं० पु०) वर्तमान समय, ज़माना हाल।
एतत्कालीन (सं० त्रि०) वर्तमान काल-सम्बन्धीय, ज़माना-हालसे सरोकार रखनेवाला।
एतत्क्षणात् (सं० अव्य०) इस क्षणसे, अबसे।
एतत्तुल्य (सं० त्रि०) एतेन तुल्यः, ३-तत्। इसके तुल्य, ऐसा ही।
एतत्प्रथम (सं० त्रि०) प्रथमतः कार्यकारी, पहले पहल काम करनेवाला।
एतत्सम (सं० त्रि०) एतेन समः तुल्यः, ३-तत्। इसके समान, ऐसा।
एतद्, एतत् देखो।
एतदतिरिक्त (सं० त्रि०) एतस्मादतिरिक्तोऽधिकः, ५-तत्। इसकी अपेक्षा अधिक, जो इससे अलग हो।
एतदनन्तर (सं० अव्य०) एतस्मादनन्तरम्, ५-तत्। इसके अनन्तर, इसके पीछे।
एतदन्त (सं० त्रि०) एषो अन्तः अवसानं यस्य, बहुव्री०। इसमें समाप्त होनेवाला, जो इसतरह ख़तम हो।

"एतदन्तास्तु गतयो ब्रह्माद्याः समुदाहृताः।" (मनु १।५०)

एतदपेक्षा (सं० अव्य०) इसकी अपेक्षा, इसकी बनिसबत।
एतदर्थ (सं० पु०) १ यह विषय, यह बात। (अव्य०) २ इसके निमित्त, इसलिये।
एतदवधि (सं० अव्य०) एषः अवधिः सीमा यस्य, बहुव्री०। इस पर्यन्त, यहां तक।
एतदवस्थ (सं० त्रि०) एषा अवस्था यस्य, बहुव्री०। ऐसी अवस्थाको प्राप्त, इस हालतवाला।
एतदात्म्य (सं० त्रि०) एष आत्मा स्वभावो यस्य तस्य भावः, भावार्थे ष्यञ्। एतद्रूपता, ऐसी हालत।
एतदादि (सं० त्रि०) एष आदिर्यस्य, बहुव्री०। इससे आरम्भ होनेवाला, जो इसतरह शुरू हो।
एतदाल (अ० पु०) १ एतदाल्य, बराबरी। २ राग-विशेष।
एतदितर (सं० त्रि०) एतस्मादितरः, ५-तत्। इससे भिन्न, दूसरा।
एतदीय (सं० त्रि०) एतस्य इदम्, एतद्-छः। एतत्-सम्बन्धीय, इससे सरोकार रखनेवाला।
एतदुत्तम (सं० त्रि०) एतस्मादुत्तमः, ५-तत्। इसकी अपेक्षा श्रेष्ठ, इससे अच्छा।
एतदेव (सं० अव्य०) एतद् एव। यही, दूसरा नहीं।
एतद्गत (सं० त्रि०) एतस्मिन् गतः प्रविष्टः, ७-तत्। इसका मध्यवर्ती, इसमें पड़नेवाला।
एतद्देशीय (सं० त्रि०) इसी देशवाला, जो दूसरे मुल्कसे सरोकार रखता न हो।
एतद्द्वितीय (सं० त्रि०) इससे भिन्न अन्यवार कार्यकारी, जो इसे छोड़ दूसरे मरतबा कोई काम करता हो।
एतद्धेतुक (सं० त्रि०) एष हेतुर्यस्य, बहुव्री० कप्। इस कारणसे विशिष्ट, जो इस सबबसे लगा हो।
एतद्भिन्न (सं० त्रि०) एतस्मात् भिन्नम्, ५-तत्। पृथक्, दूसरा।
एतद्योनी (सं० त्रि०) इसमें स्थित, इससे निकलनेवाला।
एतद्रूप (सं० त्रि०) एतदेव रूपं स्वरूपं यस्य। इस रूपवाला, ऐसा।
एतद्वत् (सं० त्रि०) एतद्-वतुप्। एतद्विशिष्ट, ऐसा। (अव्य०) २ इस प्रकारसे, ऐसे।
एतन (सं० पु०) आङ्-इ-तन। १ निश्वास, सांसका छोड़ना। २ मत्स्यविशेष, एक मछली।
एतन्मध्य (सं० अव्य०) इसके मध्य, इसके बीच।
एतन्मय (सं० त्रि०) एतद्विशिष्ट, ऐसा, इससे बना हुआ।

एतन्मात्र (सं॰ वि॰) एतद्-मात्रच्। प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच्। पा ५।२।३७। इस परिमाणवाला, इतना।

एतबार (अ॰ पु॰) विश्वास, भरोसा, ठिकाना।

एतराज़ (अ॰ पु॰) आपत्ति, झगड़ा, कहा-सुनी।

एतर्हि (सं॰ अव्य॰) इदम्-र्हिल्। एतादेशश। इदमोर्हिल्। पा ५।३।१६। एत इत् रथोः। पा ५।३।४। सम्प्रति, अब, इस समय पर।

एतवार, इतवार देखो।

एतवारी (हिं॰ वि॰) एतवारवाला, जो इतवारको हो।

एतश (सं॰ पु॰) इण्-तशन्। इणस्तशन्तशसुनौ। उण् ३।१४८। ब्राह्मण।

एतशः, एतश देखो।

एतस (सं॰ पु॰) इण् बाहुलकात् तसन्। ब्राह्मण।

एता (सं॰ स्त्री॰) १ हरिणी, हिरनी। (हिं॰ वि॰) २ इस परिमाणवाला, इतना।

एतादृक् (सं॰ वि॰) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृश-क्विन्। इस प्रकारवाला, ऐसा।

एतादृश (सं॰ वि॰) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृश-कञ्। इस प्रकारवाला, ऐसा।

एतादृश (सं॰ वि॰) एतदिव दृश्यते, एतद्-दृश-टक्। १ एतत्सदृश, ऐसा। २ इस प्रकार निर्मित, ऐसा ही बना हुआ।

एतावत् (सं॰ वि॰) एतद्-वतुप्। यत्तदेतेभ्यः परिमाणे वतुप्। पा ५।२।३९। १ इस परिमाणवाला, इतना ज़्यादा। (अव्य॰) २ इस प्रकारसे, ऐसे।

एतावन्मात्र (सं॰ वि॰) केवल इसी परिमाणवाला, इतना ही।

एतिक (हिं॰ वि॰) इस परिमाणवाली, इतनी। यह शब्द सदा स्त्रीलिङ्गमें ही व्यवहृत होता है।

एदर (ईडर)—गुजरातके माहीकांठे प्रान्तका एक राजपूत-राज्य। इस राज्यमें उत्तर सिरोही तथा उदयपुर, दक्षिण एवं पश्चिम बम्बई प्रान्त और पूर्व डुंगरपुर है। लोकसंख्या ढाई लाखसे अधिक निकलती है। उसमें कोई ११ हज़ार भील हैं।

कोल जातिकी संख्या ही विशेष है। किन्तु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और कुनबी प्रभृतिकी भी कोई कमी नहीं। कहीं कहीं मुसलमान और जैन रहते हैं। दो एक घर पारसियोंके भी हैं।

पूर्वकाल पर यहां कोल जातिका राजत्व रहा। राजाका उपाधि भनवर कोल पड़ता था। इस वंशके शेष राजाका नाम शम्बला रहा। वह अतिशय लम्पट और पापाचारी थे। उनके मन्त्रीने इनसे सोनग रावको बुलाया। उन्होंने यहां आ शम्बलाको विनाश और ईडर राज्य अधिकार किया था। सोनगरावसे १२ पुरुष बाद जगन्नाथ राव ईडरके राजा बने। उस समय मुराद बख़्श गुजरातके सूबेदार थे। १६५६ ई॰ को मुरादके दौरात्म्यसे जगन्नाथ राज्य छोड़ भागे। पीछे मुरादने यहां एक देसाई (सहकारी) नियुक्त किया था।

१७२८ ई॰ को योधपुर राज्यके दोनों भाइयों आनन्दसिंह और रायसिंहने कितने ही अश्वारोही सैन्यके साथ सहायतासे ईडर जय किया था। उसी समयसे ईडरमें राजपूतोंका अधिकार जमा।

ईडर राज्यमें प्रधानतः सात ज़िले हैं—१ ईडर, २ अहमदनगर, ३ मोरासा, ४ बायाड़, ५ हरसोल, ६ परान्तिज और ७ बीजापुर। सिवा इनके दूसरे पांच ज़िले ईडरके करद राज्य माने जाते हैं।

राजपूतोंका अधिकार होनेके कई वर्ष पीछे पूर्वोक्त देसाईने अपना हृतराज्य फिर पानेकी आशासे पेशवाको भड़काया था। उन्होंने बाबाजी दूबाजी नामक एक व्यक्ति ईडर जय करनेको भेजा। उस समय बाबाजी ईडर राज्यमें आ पहुंचे थे। सुयोग देख जगन्नाथ रावके कितने ही राजपूत-कर्मचारी उनके साथ होलिये। युद्धमें आनन्दसिंह मारे गये थे। बाबाजीकी जीत हुई। वह कितने ही सैन्य सामन्त छोड़ अहमदाबादको चल दिये। पीछे रायसिंहने सैन्यसंग्रह कर ईडर राज्य जीता। आनन्दसिंहके पुत्र शिवसिंह राजा और रायसिंह अभिभावक बने थे। १७६६ ई॰ को रायसिंह मरे। इसके कुछ दिन पीछे पेशवाने ईडर राज्यके परान्तिज, बीजापुर, मोरासा, बायाड़ और हरसोलका आधा भाग दबा लिया था। इसलिए आधा चौथ गायकवाड़के

हाथ लगा। किन्तु उन्होंने एकवार अधिकार न खमा शिवसिंहके साथ करका प्रबन्ध लगा था। प्रति वर्ष ईडरके निमित्त २४०००) और अहमदनगरके निमित्त ८८५०) रु० धार्य हुआ। १७८१ ई० को शिवसिंह मर गये। उनके पांच पुत्र रहे। ज्येष्ठ भवानसिंह राजा बने थे। किन्तु अल्पदिनके मध्य ही परलोक जानेपर उनके दशवर्षवाले बालक पुत्र गम्भीर राव सिंहासन पर बैठे। उस समय राज्य विश्टङ्खल हो गया था। शिवसिंहके दूसरे पुत्रोंमें कोई अहमदनगर ले स्वाधीन बना और कोई मोरासा प्रभृति अधिकार कर कुछ काल तक भोगविलासमें पड़ा। शिवसिंहके द्वितीय पुत्र संग्रामसिंहके मरने पर उनके पुत्र करणसिंहको उत्तराधिकारसूत्रसे अहमदनगर मिला था। १८३५ ई०को इहलोक छोड़नेपर करणसिंहके पुत्र मल्लसिंह उत्तराधिकारी हुये। १८४३ ई०को उन्हें फिर योधपुरका राज्य मिल गया। उस समयसे मल्लसिंह योधपुरमें रहने लगे। किन्तु उन्होंने अहमदनगरका स्वत्व छोड़ा न था। १८४८ ई०को वृटिश गवरनमेण्टके प्रयत्नसे अहमदनगर, मोरासा और बायाड़ फिर ईडर राज्यमें सम्मिलित हुआ। इस समय अंगरेज-भक्त महाराज मुवानसिंह (K. C. S. I.) ईडरके राजा रहे। १८६८ ई०को वह मर गये। १८८२ ई०को उनके पुत्र केशरीसिंह ईडरके महाराज हुये। यही दण्डमुण्डके कर्ता थे। इनके सम्मानार्थ १५ तोपकी सलामी बंधी। आज भी ईडरके महाराज गायकवाड़को ३०३४०) रु० कर देते हैं।

२ ईडर राज्यका प्रधान नगर। यह अक्षा० २३°५०´ उ० और द्राघि० ७३°४´ पू०के मध्य अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः ८ हजारसे अधिक निकलेगी। ईडरमें डाकघर और औषधालय विद्यमान है।

एदिधिषुःपति (सं० पु०) अविवाहित ज्येष्ठ भगिनीके कनिष्ठ भगिनीका स्वामी, विवाहो बड़ी बहनको छोटी बहनका खाविन्द।

एध् (सं० धा०) भ्वा० आत्म० अक० सेट्। "एधइ वृद्धौ।" (कविकल्पद्रुम) वृद्धि पाना, बढ़ना।

एध (सं० पु०) इन्ध्यते अनेनाग्निः, इन्ध-घञ् निपातनात् साधुः। पा ३।३।१२१। इन्धन, जलानेकी लकड़ी।

एधतु (सं० पु०) एध-चतुः। उणादि। १ पुरुष, मर्द। २ अग्नि, आग। (त्रि०) ३ वृद्धियुक्त, बढ़ा हुआ।

एधनीय (सं० त्रि०) वृद्धियोग्य, बढ़ाया जानेके काबिल।

एधमान (सं० त्रि०) एध-शानच्। वर्धमान, बढ़नेवाला।

एधमानद्विष (वै० त्रि०) वर्धमान अयोग्य व्यक्तियोंसे द्वेष रखनेवाला, जो बढ़नेवाले बुरे लोगोंसे नफ़रत रखता हो। (सायण)

एधा (सं० स्त्री०) एध-अ-टाप्। समृद्धि, बढ़ती।

एधाहार (सं० पु०) इन्धन एकत्र करनेवाला, जो जलानेकी लकड़ी एकत्र करता हो।

एधित (सं० त्रि०) एध-क्त। वृद्धिप्राप्त, बढ़ा हुआ।

एधितव्य, एधनीय देखो।

एधिता (सं० त्रि०) वर्धमान, बढ़नेवाला।

एनः (सं० क्ली०) एति गच्छति प्रायश्चित्तादिना, इण-असुन् नुडागमश्च। १ पाप, गुनाह। २ अपराध, जुर्म। ३ निन्दा, बदनामी, बुराई। ४ शाप, बद-दुआ।

एनस, एनस् देखो।

एनी (सं० स्त्री०) १ नदी, दरया। (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह दाक्षिणात्यके पश्चिमघाटमें उपजती है। काठ दृढ़ तथा पीत मिश्रित धूसर वर्णका रहता और गृह एवं वस्तुके निर्माणमें लगता है।

एबा, अबा देखो।

एम (सं० त्रि०) इण कर्मणि म। १ प्राप्य विषय, मिलने लायक चीज़। (पु०) २ मार्ग, राह।

एमन् (सं० क्ली०) इण-मनिन्। १ पथ, राह। २ अवस्थितिस्थान, मुकाम। ३ गमन, रवानगी।

एमन (हिं० पु०) रागविशेष। यह श्रीरागका पुत्र समझा और रात्रिके प्रथम प्रहर गाया जाता है। स्वर तीव्र मध्यम रहता है। एमन कल्याण और केदारेके योगसे बना है।

एमनकल्याण (हिं॰ पु॰) रागविशेष। यह एमन और कल्याणके योगसे बना है।

एमनी (सं॰ स्त्री॰) श्रीरागकी स्त्री।

एरंड खरबूजा (हिं॰ पु॰) पपीता, रेंड खरबूजा।

एरंडसफेद (हिं॰ पु॰) बागबरेंडा, मोगली।

एरंडी (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, तुंगा, थामी। यह हिमालय तथा सुलेमान् पर्वतपर उपजती है। वल्कल, पत्र एवं काष्ठ चमड़ा सिझानेमें लगता है।

एरक (सं॰ स्त्री॰) १ तृणविशेष, पतवार। २ किसी नागका नाम।

एरका (सं॰ स्त्री॰) तृणविशेष, एक घास। इसका संस्कृत पर्याय—गुन्द्रमूला, शिम्बी, गुन्द्रा और शरी है। एरका शीतल, शुक्रवर्धक, चक्षुके लिये हितकारी, वायुकोपक और मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी, दाह तथा रक्तपित्तनाशक है। (राजनिघण्टु) चक्रदत्तके टीकाकारने एरका-का अर्थ पतवार लिखा है।

एरङ्ग (सं॰ पु॰) एरति सम्यक् भ्रमतीति, आ-ईर्-अङ्गच्। मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर, स्निग्ध, विष्टम्भी, खानेमें पेट फुलानेवाला, शीतल और गुरुपाक होता है। (भावप्रकाश)

एरङ्गी (सं॰ स्त्री॰) एक देवी।

एरण (एरन)—मध्यप्रान्तके सागर ज़िलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २४° ५′ ३०″ उ॰ और द्राघि॰ ७८° १५′ पू॰पर, सागर नगरसे ४८ मील पश्चिम अवस्थित है। एरन राजा भरतके चैत्यसम्बन्धी कीर्तिस्तम्भके लिये प्रसिद्ध है। एरनमें विष्णु भगवान्‌की एक वराहमूर्ति है। उच्चता १० फीट है, शरीरपर अनेक क्षुद्राकृति बनी हैं। इन मूर्तियोंके कुरते छोटे और टोपियां लंबी हैं। कण्ठके चारो ओर वाशिन्दोंकी मूर्तियां खुदी हैं। जिह्वाके अग्रभागपर एक मनुष्य खड़ा है। वक्षःपर शिलालिपि है। दाहने दांतसे वाहुके पास एक स्त्री लटक रही है। वराहकी एक ओर चतुर्भुज देव खड़े हैं। यह १२ फीट लंबे हैं। कटिमें मेखला पड़ी है। शिर पर ऊंची टोपी लगी है। कोपीन पादद्वय तक समस्कन्द माला लटक रही है। इस मूर्तिके अङ्गुष्ठीन स्कन्धपर यज्ञोपवीत बनाते मनुष्य, कुटिलाकार सर्पों, हस्तियों, विपक्ष जिरो, बैठे हुए, वनदेवताओंके मुखों और अन्य कल्पना-वस्तुओंके चित्र हैं। दबकर बैठे तीन सिंहोंके चित्र भी देखने योग्य हैं। उनके सम्मुख एक स्तम्भ और एक मन्दिर खड़ा, जो आधा भूमिमें गड़ा है। खंटेकी चोटी, २ फीट ऊंची कुरसीको माथे है। कुरसीपर दो मत्योंवाली चतुर्भुज मूर्ति खड़ी है। इस स्तम्भपर जो शिलालेख मिला, उससे मगधके गुप्तवंशीय राजा बुधगुप्तका पता चला है।

एरण्ड (सं॰ पु॰) एरति वायुम्, आ-ईर-अण्डच्। वृक्षविशेष, रेंडका पेड़। (Ricinus communis) इसका संस्कृत पर्याय—व्याघ्रपुच्छ, गन्धर्वहस्त, उरुबुक, रुबुक, चित्रक, चञ्चु, पञ्चाङ्गुल, मण्ड, वर्धमान, व्यड़म्बक, रुबुक, बुक, अमण्डा, आमण्ड, व्यड़म्ब, काण्ड, तरुण, शुक्र, वातारि और दीर्घदतक है। (राजनिघण्टु)

एरण्ड श्वेत और लोहित भेदसे द्विविध होता है। आमण्ड, चित्र, गन्धर्वहस्त, पञ्चाङ्गुल, वर्धमान, दीर्घदण्ड, अदण्ड, वातारि, तरुण और रुबुक श्वेत एरण्डके बोधक हैं। उरुबू, रुबू, व्याघ्रपुच्छ, चञ्चु और उत्तानपत्रक शब्द रक्त एरण्डके वाचक हैं।

भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही एरण्डवृक्ष उत्पन्न होता है। बाज़ारमें दो प्रकारका एरण्डबीज मिलता है—छोटा और बड़ा। छोटे बीजसे उत्तम तेल निकलता और औषधके व्यवहारमें लगता है। बड़े बीजका तेल भारतवासी प्रदीपमें जलाते हैं।

एरण्डका पत्र वातघ्न, कृमि एवं मूत्रकृच्छ्रनाशक और पित्तरक्त-प्रकोपक है। कर्ण पत्रसे गुल्म, वस्तिशूल, कफ, वात, कृमि, और सप्तविध वृद्धिरोग दूर होता है। एरण्डका फल अतिशय उष्ण, कटु, अग्निदीपक और गुल्म, शूल, वायु, यकृत्, प्लीहा, उदर तथा अर्शरोगनाशक है। एरण्डकी मज्जामें भी उक्त सकल गुण मिलते हैं। यह भेदक और वातश्लेष्म तथा उदररोगनाशक होती है।

एरण्डको अरबीमें 'खिरवा' और फारसीमें 'बेद-अञ्जीर' कहते हैं। श्वेत और रक्त एरण्डके मध्य रक्त एरण्ड ही अधिक फलदायक है। १० बीजों

चालमय होनेसे नगर बिलकुल बिगड़ और उजड़ गया था। शान्ति स्थापित होनेसे ही फिर व्यव-हार बढ़ने लगा। १८०३ ई०को किलेसे सेना हटी थी। १८०० ई०को किला गिराया गया। यहांसे रुई, मिर्च, शोरा और चावल बाहर भेजा जाता है। आर्कट, पेण्टूराय और मन्दिपुरको पक्की सड़क लगी है। नगरसे डेढ़ मील पूर्व कावेरी नदीपर १५११ फीट लंबा शहतीरोंका पुल बंधा है।

एर्वारु (सं० पु०) आ-ईर-क्विप्, एरं रुणोति वारयति वा, रुङ्-उण्। १ कर्कटीमता, फुट। इसका संस्कृत पर्याय—व्यालपत्री, सोमगा, स्थूला, तोयफला, हस्तिदन्तफला और कर्कटी है। यह स्वादु, शीतल, ईषत् क्षार, कफ एवं वायुकारक, ईषत् पित्तकर, रुचिकारक, अग्न्युद्दीपक, दाहनाशक, गुरुपाक और विष्टम्भी होता है। पक्व एर्वारु दाह, तृष्णा और क्लान्तिको नाश करता है। (हारीत और चरक)

एल (सं० पु०) १ एला, इलायची। २ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज। ३ संख्याविशेष, एक अदद। (अं०) ४ अंगरेजी गज। यह ४५ इञ्चका होता और रेशमी कपड़े मापनेका काम देता है।

एलक (सं पु०) एलति क्षिपति वस्तिरूपेण आत्मानम्, एल-क्वुन्। १ मेष, भेड़ा। (हिं०) २ भेड़ा पालनेको चलनी।

एलकेशी (हिं० स्त्री०) बंगालका एक बैंगन।

एलगिन—भारतवर्षके एक गवरनर जनरल और राजप्रतिनिधि। (James Bruce, Earl of Elgin and Kincardine) इन्होंने १८११ ई०को लण्डन नगरमें जन्मग्रहण किया था। १८३२ ई०को विद्याके बलसे एलगिन एम० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। इन्होंने १८४१ ई०को राजकीय कार्यमें प्रवेश किया था। १८४२ ई०के मार्च मासको यह जमैकाके शासनकर्ता बने। वहां इनकी कार्यदक्षताके गुणसे सब लोग मुग्ध हो गये। अल्प दिन बाद ही सिक्रेटरी आफ दी स्टेटने लार्ड एलगिनको कनाडाका गवरनर-जनरल बनाया था। कनाडामें इन्होंने राजनीति और शासनका जो कौशल दिखाया, वह किसी गवरनरके हाथ होते बननेमें न आया। शासनसे मुग्ध हो बहुत बड़े बड़े लोग इनके वशीभूत हुये। इन्होंने प्रथम कनाडामें स्वायत्तशासनकी प्रथाको लिपिबद्ध की थी। इन्होंके समयमें ब्रिटिश अमेरिकाके साथ यूनाइटेड स्टेटसका वाणिज्य-व्यवहार प्रचलित हुआ। १८५५ ई०को एलगिन कनाडासे वापस गये। उसी समय यह फाइफशायरके लार्ड लेफ्टिनेण्ट नियुक्त हुये। १८५७ ई०को चीन राज्यके कान्टन नगरमें अंगरेजों और चीनावोंमें युद्ध छिड़ा था। लार्ड एलगिन सम्पूर्ण क्षमतापन्न दूत (Plenipotentiary Extraordinary) हो ससैन्य कान्टनके अंगरेजोंकी साहाय्य करने चले। पथमें इन्हें भारतवर्षके सिपाही विद्रोहका समाचार मिला था। इन्होंने उसी समय लार्ड कानिङ्गके साहाय्यको अपना सैन्यदल भेज दिया। फिर १८५८ ई०को सिपाही विद्रोह मिटनेपर लार्ड एलगिन चीनमें जा पहुंचे। तिनसिन नामक स्थानमें फ्रान्सीसी दूत बेरन-ग्रसके सहयोगसे सन्धि हुई। सन्धिपत्रके अनुसार अंगरेज निर्विवाद और बिना व्यय वाणिज्य करने लगे। चीनसे वापस आनेके पहले इन्होंने जापानसे सन्धि की—अंगरेज थोड़े महसूलपर जापानमें वाणिज्य चला सकेंगे। उक्त घटनाके कुछ दिन पीछे लार्ड एलगिनको टकु दुर्गके अंगरेजोंने संवाद दिया—यहांके चीना विश्वासघातकता कर हमारे ऊपर गोला-गोली फेंकने लगे हैं। यह सैन्यके साथ वहां जा पहुंचे। फिर चीनकी राजधानी पेकिनमें सन्धिपत्र स्वाक्षरित हुआ और सब गड़बड़ मिट गया।

इधर लार्ड कानिङ्गका शासनकाल पूरा चला। १८६२ ई०को १२ वीं मार्चको लार्ड एलगिन राजप्रतिनिधि और गवरनर-जनरल बन भारतवर्ष आये। १८६३ ई०की ५वीं फरवरीको इन्होंने कलकत्तेसे युक्तप्रदेशकी ओर यात्रा की। आगरेमें दरबार लगा था। युक्तप्रदेशके राजाओंने इनका यथेष्ट सम्मान किया। वहांसे वापस चलते समय यह पीड़ित हुये थे। १८६३ ई०की २०वीं नवम्बरको हिमालयकी एक धर्मशालामें इनका प्राणवायु निकल गया।

एलङ्ग (सं॰ पु॰) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मधुर, हृद्य, ग्राही, कफ-वातघ्न, मेधाग्निपुष्टिकर, शीतल और गुरु होता है। (राजनिघण्टु)

एलची (तु॰ पु॰) राजदूत, सरकारी संदेशा ले जानेवाला।

एलचीगरी (फ़ा॰ स्त्री॰) दूतका काम।

एलड (सं॰ क्ली॰) संख्याविशेष, एक अदद।

एलवाल, एलवालुक देखो।

एलवालु (सं॰ क्ली॰) एलेव वलते, एला-वल-उण्। गन्धद्रव्य विशेष, एक खुशबूदार चीज़।

"एलवालुपरिपेलव मोचाः।" (वाग्भट)

एलवालुक (सं॰ क्ली॰) एलवालु स्वार्थे कन्। गन्धद्रव्यविशेष, एक खुशबूदार चीज़। इसका संस्कृत पर्याय—ऐलेय, सुगन्धि, हरिवालुक, वालुक, एरिवालुक, आलुक, एलवालुक, कपिलत्वक्, गन्धत्वक् और कुष्ठगन्धि है। यह अतिशय उष्ण, कषाय, अतिशय रुचिकारक और कफ, वायु, मूर्छा, ज्वर, दाह, कफ, व्रण, छर्दि, पिपासा, कास, अरुचि, हृद्रोग, विष, पित्त, रक्त, कुष्ठ, मूत्ररोग एवं कृमिनाशक होता है। (वैद्यक)

एलविल (सं॰ पु॰) कुबेर।

एला (सं॰ स्त्री॰) इल्-अच्-टाप्। इलायची देखो।

एलाक (सं॰ पु॰) एक मुनि।

एलागन्धिक (सं॰ क्ली॰) एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़।

एलादिगण (सं॰ पु॰) गणविशेष, इलायची वगैरह कुछ सुगन्धि चीज़ें। इसमें एला, तगर, पादुका, कुष्ठ, जटामांसी, गन्धतृण, दालचीनी, तेजपत्र, नागेश्वर, प्रियङ्गु, रेणुक, व्याघ्रनखी, शङ्खिनी, शुंठुवा, सरलकाष्ठ, गुड़त्वक्, चोरपुष्पी, वाला, गुग्गुलु, धूना, शिलारस, कन्दुरुपोटी, अगुरु, गन्धफला, खसकी जड़, देवदारु, कुङ्कुम और पुन्नागपुष्प द्रव्य रहते हैं। यह गण वायु, कफ एवं विषको हटाता, शरीरका वर्ण बढ़ाता और कण्डु, पिड़का तथा कोठरोगको दूर भगाता है।

[illegible] एक औषध। [illegible] एक एक तोले, [illegible] तथा द्राक्षा एक-एक पल चूर्ण कर मधुके साथ रगड़ दो दो तोलेकी गोली बनाये। इसके सेवनसे रक्तपित्तादि बहु रोग दूर होते हैं। (भावप्रकाश)

एलादिचूर्ण (सं॰ क्ली॰) छर्दिका एक औषध। इलायचीकी त्वक्, मरिच, यष्टी, पिप्पली और नागकेसरका चूर्ण यथोत्तर भागवृद्धिसे चीनी बराबर डालनेपर यह औषध तैयार होता है। (रसरत्नाकर)

एलादितैल (सं॰ क्ली॰) एक तैल। एला, मुरामांसी, सरलकाष्ठ, शैलज, देवदारु, रेणुक, चोरपुष्पी, शठी, जटामांसी, अश्वगन्धी, नागकेसर, ग्रन्थिपर्ण, गन्धरस, मृद्दाक्षी, तेजपत्र, उशीरमूल, चन्दन, कुन्दुरुखोटी, नखी, बालक, गुड़त्वक्, कुष्ठ, कालागुरु, मुस्तक, सामुद्रकर्कट, श्वेतचन्दन, मञ्जिष्ठा, जातीफल, कुङ्कुम, पिङ्गिपुष्प, शिलारस एवं अगुरु दो-दो तोले दुग्ध १६ शरावक, दधि १६ शरावक, काञ्जिक क्वाथ १६ शरावक, काञ्जिक साढ़े १२ शरावक, जल ६४ शरावक तथा तिलका तैल ४ शरावक डाल एक हांडीमें तपाये और १६ शरावक शेष रहनेपर आगसे नीचे उतारे। यह तैल लगानेसे वातव्याधि दूर होता है।

एलादिमन्थ (सं॰ पु॰) यक्ष्मा रोगका एक औषध। एला, यमानी, आमलक, हरीतकी, विभीतक, खदिरसार, निम्ब, पीतशाल, शाल, विडङ्ग, भल्लातकास्थि, चित्रकमूल, त्रिकटुक, मुस्तक एवं पर्पटी चार पल १५ शरावक जलमें मिलाकर पीसे ४ शरावक शेष रहने पर वस्त्रसे छान ले। फिर इसको १२ पल घृतमें पका शर्करा १० पल, वंशलोचन ६ पल और मधु १२ पल मिला ठण्डा होनेपर यह औषध बनता है। (चक्रदत्त)

एलान (सं॰ क्ली॰) फलविशेष, नारंगी। कच्चा एलान अम्ल, सर, उष्ण, गुरु एवं वातघ्न और पक्का शीतल, बलकृत् तथा वातपित्तघ्न होता है। (राजनिघण्टु)

एलापत्र (सं॰ पु॰) एलापत्रमिव आकारो यस्य, बहुव्री॰। सर्पविशेष, एक सांप। महाभारत एवं पुराणादिमें लिखा, कि कश्यपके औरस और कद्रूके गर्भसे एलापत्रका जन्म हुआ था। बौद्धग्रन्थमें भी एलापत्र नागराज करके वर्णित हुये हैं।

भोटदेशीय बौद्ध ग्रन्थमें लिखा है—बुद्धदेव जब तुषित नामक लोकमें रहे, तब उन्होंने दो श्लोक कहे थे। बुद्ध लोगोंसे इसके सिवा कोई वह श्लोक पढ़ न सकता था। उत्तरप्रसाम नामक एक नागराज वही श्लोक स्वर्णशिलाखण्डमें एलापत्रको दिखाकर बोले—तुम सर्वत्र गमन करो; जो इसका अर्थ बता सकेगा, उसको एक लाख रुपया मिलेगा। एलापत्र उसको लेकर नाना स्थान घूम वाराणसीके ऋषिपत्तन नामक एक मनोरम स्थानमें उपस्थित हुये। वहीं नलद नामक किसी व्यक्तिने बुद्धसे उस श्लोकका उन्हींके मुखसे अर्थ श्रवण किया था। पीछे एलापत्रने उनका अर्थ नलदके मुखसे सुना। अर्थ सुनते ही इनके ज्ञानचक्षु उन्मीलित हुये। बुद्धके निर्वाण पीछे बौद्धोंके कई दल अत्याचारसे पीड़ित हो गान्धार राज्यको जाते थे। उसी समय भोट-सैन्यका एक दल भिक्षुओंके पीछे लग गया। बौद्ध भिक्षुक किसी ह्रदके किनारे पहुंचे थे। उसी जगह नागराज एलापत्र वृद्ध मनुष्यका वेश बना उनके सामने देख पड़े। वह अपना अपना दुःख बता बोले—हम अपनी जीवन रक्षा और जीवन निर्वाहके लिये गान्धार राज्यको जाते हैं। एलापत्रने कहा—इस स्थानसे गान्धार ४५ दिनका पथ है; तुम्हारे पास १५ दिनका पथ्य देख पड़ता, अवशिष्ट दिन कैसे अतिवाहित करोगे। भिक्षुओंने समझा सम्मुख विपद है। फिर सब ही आर्तनाद करने लगे। एलापत्र सबको ढाढ़स देकर बोले—तुम मत रोओ, धर्मके लिये हम जीवन दे सकते हैं; इस ह्रदपर हम सेतु बन कर रहेंगे, तुम अनायास अल्प दिनमें ही गान्धार पहुंच जावोगे। फिर एलापत्र वृहदाकार सर्पका वेश बना उसी ह्रदपर सो गये। भिक्षुक अनायास उनकी पीठके सहारे उत्तीर्ण हुये। उसी अवस्थामें एलापत्रने प्राण छोड़ा था। ह्रदके सूख जाने पर उनका देह पर्वतप्राय बन गया।

चीन-परिव्राजक फा-हियान और युअन-चुअङ्गने तक्षशिलामें एलापत्रह्रद देखा था। (Fo Kwo Ki, Ch. XXXV; Si-Yu Ki, Bk. III.) कनिङ्घम साहबने वर्तमान हसन-अब्दालके 'बाबावली' नामक प्रस्रवणको बौद्धोंके प्राचीन एलापत्र नागका ह्रद स्थिर किया है। (Archaeological Survey of India, Vol. II. p. 135.)

एलापर्णी (सं०, स्त्री०) १ वृक्षविशेष, एक पेड़। २ रास्ना।

एलापुर—एक प्राचीन गिरि या गिरिदुर्ग। प्राचीन शिलालिपिके अनुसार इस दुर्ग या गिरिमें पल्लवराज राज्य करते थे। इसीके निकट स्वयम्भूमन्दिर भी रहा। कनिंहम साहबके मतसे वर्तमान सोमनाथ पत्तनका अपर नाम एलापुर है। (Ancient Geography of India, p. 319) किन्तु पुरातत्त्ववित् फ्लिटके मतसे यह स्थान उत्तर कनाड़ेके अन्तर्गत है। आजकल इसे यल्लापुर कहते हैं। यह अक्षा० १४° ५८′ उ० और द्राघि० ७४° ४०′ पू० पर अवस्थित है। (Indian Antiquary, Vol. XI. p. 824)

एलाफल (सं० क्ली०) १ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज। २ राधूकदम्ब, मौलसरीका पेड़।

एलाबालुक, एलवालुक देखो।

एलाबू (सं० स्त्री०) अलाबु, लौकी।

एलायुग्म (सं० क्ली०) सूक्ष्म तथा स्थूल एला, छोटी और बड़ी दोनों इलायची।

एलालु (सं० क्ली०) एलवालुक, एक खुशबूदार चीज।

एलावती (सं० स्त्री०) एला प्रशस्त्येन अस्त्यस्याः एला-मतुप् मस्य वः। एलाम्लता, इलायचीकी बेल।

एलाह्व (सं० क्ली०) एलवालुक, एक खुशबूदार चीज।

एलिचपुर—१ बरार प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० २०° ५०′ ३०″ तथा २१° ४६′ ३०″ उ० और द्राघि० ७६° ४०′ एवं ७८° ५४′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल २६२३ वर्गमील है। उत्तरार्ध पहाड़ियों और घाटियोंसे भरा है। बैराटका पर्वतशृङ्ग समुद्रतलसे १२८० फीट ऊंचा है। दक्षिणांश समतल है। अनेक क्षुद्र नदी वारधा और पूर्णामें जाकर गिरी हैं। एलिचपुर नगरसे अमरावतीको पक्की सड़क गयी है। कोई राहें और पगडंडियां बरसातमें बन्द रहती हैं। पहाड़ोंपर कोदो, ज्वार और मूंग,टकी राह गाड़ी चलती है। इस जिलेमें आमके बाग बहुत हैं। लोकसंख्या प्रायः सवा तीन लाख है। हिन्दुओंमें मैदोंका

प्राधान्य देख पड़ता है। गेहूं बहुत अच्छा होता है। रूईकी उपज अधिक है। मेलघाटमें चाय भी बोई जाती है। प्रधान नगर एलिचपुर, अंजनगांव, परतवाड़ा और करजगांव है। सितम्बर और अक्तोबर मास रोगका घर होता है।

२ बरार प्रान्तके एलिचपुर ज़िलेकी तहसील। भूमिका परिमाण ४६८ वर्ग मील है। ३ बरार प्रान्तके एलिचपुर ज़िलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २१° १५′ ३०″ उ० और द्राघि० ७७° २८′ ३०″ पू०पर अवस्थित है। किसी समय यह अतिसमृद्ध नगर रहा। ४०००० मकान बने थे। निज़ामके दिल्लीसे अपना सम्बन्ध तोड़ स्वतन्त्र शासक बननेसे पहले एलिचपुर स्थानीय सरकारकी राजधानी रहा। फिर सूबेदारके हाथ पड़नेसे अवनति होने लगी। नगरमें कितने ही सुन्दर भवन हैं। बीचन नदीके किनारे डूल्हा रहमानकी दरगाह है। प्रायः ४०० वर्ष हुये किसी बाह्मनी राजाने उसे बनवाया था। सलाबत खान् और इस्माइल खान्का बनवाया बड़ा राजप्रासाद धीरे-धीरे गिर रहा है। कुछ नवाबोंकी क़बरें बहुत अच्छी हैं। सुलतानगढ़ी नामक दुर्ग और समदेसशाह नामक कूप भी देखने योग्य है। नगरसे २ मील बीचन नदीपर परतवाड़ा छावनी है।

एलिचपुर इतिहासप्रसिद्ध नगर है। सुननेमें आया—किसी जैन राजाने खड़गांवके निकटस्थ खामखाम नगरसे आ १०५८ ई०को एलिचपुर बसाया था। दाक्षिणात्यकी राजधानी रहते समय यहां मुसलमानोंकी बड़ी धूम पड़ी। दिल्लीसे अलग होनेपर निज़ामने एवज़खान्को पहला शासक नियुक्त किया था। उन्होंने १७२४से १७२८ तक राजत्व चलाया, फिर शुजायत खान्का समय (१७२८-१७४० ई०) आया। उन्होंने मराठे राघवजी भोंसलेसे बैर बढ़ाया और भूगांवके समरमें अपना प्राण गंवाया था। राघवजीने एलिचपुरका खज़ाना लूट लिया। १७४१से १७५२ ई० तक शरीफखान्ने शासन चलाया था। किन्तु अपनी बराबरी करते देख निज़ामने उनका पद छीना। पीछे निज़ामके लड़के अलीजाह बहादुर शासक बने थे। किन्तु उन्होंने अपना काम प्रतिनिधिके द्वारा किया। सलाबत खान्ने शासकका पद पानेपर इस नगरकी बड़ी उन्नति की थी। उन्होंने राजप्रासादको बढ़ाया, सर्वसाधारणके लिये एक बाग़ लगाया और प्राचीन जलमार्गको ठीक कराया। वह बड़े वीर रहे। निज़ाम और टीपू सुलतानके मध्य युद्ध आरम्भ होते ही उन्हें सेनामें उपस्थित होनेका आदेश मिला था। सलाबत खान्ने इस युद्धमें बड़ा नाम पाया। सलाबत खान्का उत्तराधिकार उनके लड़के नामदार खान्के हाथ लगा था। पीछे नामदार खान्के भतीजे इब्राहीम खान् १८४६ ई० तक शासक रहे। १८५३ ई०को बरार-प्रान्तके साथ एलिचपुर ज़िला भी अंगरेज़ी राज्यमें मिलाया गया।

एलिफण्टा—बम्बई बन्दरका एक द्वीप। यह अक्षा० १८° ५७′ उ० और द्राघि० ७३° पू०पर बम्बई नगरसे ३ कोस दूर अवस्थित है। ज़िला थाना और तहसील पानवेल है। परिधि चार साढ़े चार मील पड़ता है। दो पर्वतश्रेणीके मध्य सङ्कीर्ण उपत्यका आ गई है। भूमिका परिमाण ज्वार-भाटेके हिसाबसे आधसे एक मील तक लगता है। पोर्तुगोज़ोंने पहले जहाज़से उतरते समय पत्थरका एक हाथी देख 'एलिफण्टा' नाम रखा था। हाथी १३ फीट २ इञ्च लम्बा और ७ फीट ४ इञ्च ऊंचा रहा। किन्तु १८१४ ई०को सिर और कण्ठ टूटा था। १८६४ ई०को यह उठाकर बम्बईके विक्टोरिया गार्डनमें रखा गया। दोनों पर्वतके मध्यपर प्रधान गुहासे दक्षिणपूर्व थोड़ी दूर एक घोड़ेकी भी मूर्ति थी। दूरसे देखनेपर कोई कह न सका, कि वह सजीव न रहा। उस मूर्ति अब देखनेमें नहीं आती। नहीं मालूम—उसे कौन उठा ले गया। पर्वत झाड़ीसे ढके और आम, अमिला तथा कारवेञ्च लगे हैं। किनारा बालू और कीचड़से भरा है। सम्भवतः ३यसे १०म शताब्दीके मध्य यह द्वीप एक तीर्थस्थान रहा। गुहा देखने योग्य है। प्राचीन नगरके ध्वंसावशेषमें कितनी ही टूटी-फूटी चीज़ें हाथ आई हैं। अनेक दर्शक गुहा देखने आया करते हैं। १८८०-८१के समय यहां १३०० गुहा थी। [illegible]

गुहा पश्चिम दक्षिणसे समुद्रतलसे २५० फीट ऊँचे अवस्थित है। यहांसे उत्तरमें एक पौन मील टेढ़ा-मेढ़ा चलना पड़ता है। गुहाका द्वार उत्तरको है। उत्तरसे दक्षिण और पूर्वसे पश्चिम दोनों ओरकी लम्बाई १३० फीट है। पहले २६ स्तम्भ और ६ उपस्तम्भ लगे थे, जिनमें आठ टूट गये। त्रिमूर्तिका कारुकार्य प्रशंसनीय है। शङ्करको ब्रह्मा, विष्णु और शिवके रूपमें दिखाया है। उच्चता १८ फीट १० इञ्च है। १८६५ ई॰को किसी दुष्टने त्रिमूर्तिके दो मुखकी नाक तोड़ डाली थी। पीछे भी दूसरी मूर्तियोंपर अत्याचार होनेसे सरकारने कड़ा पहरा बैठा दिया है। त्रिमूर्तिके रक्षक दो द्वारपाल हैं। एक १२ फीट ८ इंच और दूसरा १३ फीट ६ इंच ऊंचा है। किन्तु दोनों प्रतिमाके मुख बिगड़ गये हैं। कितने ही कमरे बहुत उम्दा बने हैं। अनेक प्रतिमा अनोखी देख पड़ती हैं। दूसरी गुहाका द्वार उत्तर-पूर्व है। लम्बाई कोई ११० फीट पड़ती है। उत्तर किनारे मन्दिर बना है। किन्तु यह गुहा बिलकुल टूट फूट गयी है। 'सीता बाईको दीवान' दूसरी पहाड़ीपर है। पहले फाटकपर पत्थरका बहुत उम्दा सिंह-राज बना थी। गुहाके निर्माणका समय ठहराना कठिन है। कोई पाण्डवों, कोई बाणासुर और कोई सिकन्दरका नाम लेता है। शिलालेख कहीं नहीं। शिवरात्रिको यहां बड़ा मेला लगता है। देशी नाम घाड़ापुरी है। घाड़ापुरी देखो।

एलीका (सं॰ स्त्री॰) एला-ईक-इकन्-टाप्। सूक्ष्म ला, छोटी इलायची।

एलीय (सं॰ पु॰) एल-बालुक, एक खुशबूदार चीज।

एलु (सं॰ स्त्री॰) संख्याविशेष, एक अदद।

एलुक (सं॰ स्त्री॰) इल-उक। एलबालुक, एक खुशबूदार चीज।

एलुकाख्या (सं॰ स्त्री॰) एलुक देखो।

एलुवा (सं॰ पु॰—Aloes.) कुमारीरसोद्भव औषध, एलवा, सिब्र, मुसब्बर।

एलूक, एलुक देखो।

एलेनबरा (Edward Law Ellenborough)—भारत-वर्षके एक गवर्नर-जनरल। यह प्रथम लार्ड एलेन-बराके ज्येष्ठ पुत्र रहे। १७९० ई॰को इन्होंने जन्म-ग्रहण किया था। १८१८ ई॰को इन्हें लार्ड उपाधि मिला। फिर ड्यूक अव वेलिङ्गटनके शासनकाल एलेनबरा बोर्ड-अव-कन्ट्रोलके सभापति हो गये। १८४२ ई॰को शासनका भार उठा यह भारत आये थे। जो सुख्याति लार्ड आकलैण्डके भाग्यमें न रही, इन्होंने वही सुख्याति पानेके लिये चेष्टा की। एलेनबरा चाहते थे—निर्विवाद एवं सुशृङ्खलरूपसे कार्य चल जाये, किन्तु इनके भाग्यमें वैसा न हुआ। १५वीं मार्चके दिन एलेनबराने प्रधान सेनापतिको लिखा था—"अंगरेजोंके गौरवकी रक्षा करना होगा। अपनी सामरिक मर्यादा फिर जमाना पड़ेगा। जिसके लिये अंगरेजी सैन्य अफगानस्थानके कवलमें चला और जिसके हाथों अंगरेजी नरनारियोंको बन्दी बन अपमान सहा दुःख उठाना पड़ा, उन दुर्दान्त अफगानोंको शासन करना है। जलालाबाद, गजनी, खिलतघिलजी और कन्दाहारसे अंगरेजी सैन्य अपना अपना कार्य कर वापस आये। फिर अफगानस्थानमें उनके रहनेका कोई प्रयोजन नहीं। जिन शाह (शाहशुजा) को हमने अफगानस्थानके सिंहासनपर बैठाया था, वही अब अपने स्वजातियोंके निकट उपयुक्त देख नहीं पड़ते।"

उस समय अफगानस्थानमें रक्तका स्राव बहता था। उत्तरभागमें अंगरेजोंके अवसादसे भूमि थरथर कांप उठी। फिर दक्षिणभागमें अंगरेजोंकी हाहाकार ध्वनिसे समस्त राज्य प्रगाढ़ गमकता था। एलेन-बराने प्रधान सेनापतिको लिखने पीछे भी सुना, कि सिन्ध और बोलनके गिरिकोणपथमें जलालाबादमें अंगरेजी सैन्यने जय पा लिया। किन्तु दक्षिणमें बड़ी विपद् रही। सेनापति इङ्गलैण्ड पिशीन उपत्यकामें हैकलजई प्रदेशकी राह जाते थे। उसी अज्ञानपूर्व स्थानमें वह विपक्षके हाथ हार गये। युद्धमें इनके ५०० सिपाही मरे। वह क्वेटामें वापस आ और कोईसा अपने इसकी आत्मरक्षा करते थे।

एलेनबराका मन बदला। इन्होंने कहला भेजा था—'२१वीं मार्चको इङ्गलैण्डका सैन्यदल [illegible]

रूपसे क्षतिग्रस्त हुआ। अब सेनापति नट ससैन्य वापस हो उनके सेनादलको यथाशीघ्र भारतके संलिप्त निरापद स्थानमें पहुंचायें।'

सेनापति पोलक और नट साहब असम साहससे अफ़ग़ानोंको मार रहे थे, गवर्नरका आदेशपत्र देख उभय मर्माहत हुये। किन्तु उक्त दोनों वीर भग्नोत्साह होनेवाले लोग न थे। इङ्गलैण्ड प्रभृति अन्य सेनाध्यक्षोंको भी यह समाचार मिला था, किन्तु सिपाहियोंसे किसीने न कहा। कारण सेनापतियोंको विश्वास रहा—सिपाही यदि यह संवाद पायेंगे, तो भाग जानेकी ही चलायेंगे और विशृङ्खल हो जायेंगे। विशेषतः यथासमय रसद वग़ैरह न मिलनेसे सम्भवतः राहपर सबको विपद्में पड़ना होगा। वह जिस लिये अफ़ग़ानस्थानमें रहे, वही कार्य सोच-समझ करते गये। एलेनबराने अपना मत फिर बदला न सही, किन्तु बात समझमें आ गई—यदि अंगरेज़ अफ़ग़ानस्थान छोड़ वापस आयें, बन्दी अंगरेज़ मुक्ति न पायें और अफ़ग़ान रीतिके अनुसार शासित किये न जायें, तो भारतवर्षके राजनीतिक एवं सामरिक सकल ही व्यक्ति इन्हें तथा अंगरेज़ गवर्नमेण्टको घृणाका पात्र बनायें। फिर भी वह उस समय कहने लगे थे—'भारतवर्ष छोड़ दूर देशमें सैन्यसामन्त बहुत दिन रखनेसे काम न चलेगा। इससे भारतका अनिष्ट होगा और हमारे राज्यकार्यमें भी व्याघात लगेगा। सकल प्रकार अनिष्ट होनेसे पहले भारतवर्षकी रक्षा करना ही हमारा प्रधान कार्य है।'

उधर जिनके लिये अफ़ग़ानस्थानमें युद्ध होता था, उन्हीं शाह शुजाको कई लोगोंने मिलकर मार डाला। पोलक और नट साहब नाना स्थानोंमें जीतने लगे। ४ठी जनवरीके दिन एलेनबराने नट साहबको लिखा था—"अफ़ग़ानस्थानकी सामरिक और राजनीतिक अवस्था देख हमने आपसे वापस आनेको कहा था। किन्तु आपके सैन्यसामन्तोंकी स्थिति अच्छी समझ पड़ती है। अब हमारा मत स्वतन्त्र है। आप जो अच्छा समझें, वही करें। यदि आप ग़ज़नी, काबुल और जलालाबाद जाना चाहेंगे, तो यथेष्ट परिमाणसे रसद, शकट और अर्थ पायेंगे। हमारी यह आशा है—हम यह महाव्रत उद्यापन कर सकें। इससे स्वदेश एवं इस सुदूर एशियाखण्डमें क्या मित्र क्या शत्रु, सभीके निकट हम अपना मुख दिखा सकेंगे। किन्तु चेष्टा निष्फल जानेसे निःसन्देह सर्वनाश होगा। इस समय विशेष सावधानतासे कार्य करना पड़ेगा। इसमें लाभसे हानि अधिक है।"

सुविज्ञ एलेनबरा इसीप्रकार दोनों ओर झुके रहे। विफल होनेसे सेनापतियोंका ही दोष ठहरेगा। फिर सफल होनेपर एलेनबराकी मनस्कामना सिद्ध होगी और सुख्याति मिलेगी।

उसी दिनसे सब लोग समझ गये—एलेनबराका मनोभाव बदला है। इन्होंने आदेश प्रचार किया—"यदि आप लोग वापसमें ग़ज़नी और काबुल होते तथा हिन्दूविद्वेषी सुलतान् मुहम्मदका क़ब्रसे उनकी यष्टि और सोमनाथ-मन्दिरका सुवर्णद्वार उठा ला सकेंगे, तो समस्त ही भारतवासी समझेंगे—आप लोगोंका वीरत्व असीम और आप लोगोंकी कीर्ति चिरस्मरणीय है।"

शुभ दिनको लार्ड एलेनबरा भारत आये थे। यथार्थ ही उनका भाग्य सुप्रसन्न रहा। जिस रङ्गभूमिमें लार्ड अकलेण्ड निष्फल हो हताश अपमानसे स्वस्थानको प्रस्थान करनेपर उद्यत हुये, लार्ड एलेनबराने उसी स्थानपर बैठे-बैठे सुना—अफ़ग़ान राज्य जय हुआ, अंगरेज़ी सैन्य छूट गया और उनका अभिलाष पूरा पड़ा है। चारो ओर जयध्वनि होने लगी। अंगरेज़ी सैन्य बड़ा समारोहसे लौटा था। लार्ड एलेनबराने सैनिकोंकी अभ्यर्थना कर यथोचित सम्मान प्रदान किया। उन्होंने महमूदकी क़ब्रसे सिंहद्वार ला बड़े ठाटसे भेजा था। लोगोंने घोषणा की—सोमनाथका सिंहद्वार फिर भारत लौट आया। साधारणको भी इस बातपर विश्वास हो गया। किन्तु इस विषयपर सन्देह होता—वह द्वार सोमनाथका सिंहद्वार है या नहीं। ऐतिहासिक विलसन साहबने स्पष्ट लिखा, कि वह द्वार सोमनाथका नहीं।*

---

* Beveridge's History of India, Vol. III. p. 452.

इधर अफगानिस्तानका झगड़ा मिटते भी लार्ड एलेनबरा स्थिर रह न सके, सिन्धुप्रदेशके ऊपर उनके चक्षु पड़े। पहलेसे ही सिन्धुदेशके अमीर अंगरेजोंके विरुद्धाचरण करते आते थे। मध्यमें लार्ड सिन्धोंके साथ सन्धि तोड़कर सिन्धुप्रदेशमें एक रेसीडेण्ट रखा गया। फिर अमीरोंने बिगड़ हो रेसीडेण्टके मकान पर आक्रमण मारा था। उनको दबानेके लिये सर चार्लस नेपियर प्रधान सेनापति हो सिन्धुप्रदेश भेजे गये। १८४३ ई०को २४वीं मार्चको अमीर सम्पूर्ण पराजित हुये। सिन्धुप्रदेश अंगरेजोंके अधिकारमें आया।

ठीक उसी समय ग्वालियर राज्यमें गृहविवादका सूत्रपात हुआ था। १८४३ ई०को जनकजी स्वर्गको गये। उनको त्रयोदश वर्षकी विधवा पत्नीने निकट-सम्पर्कीय भगीरथ राव नामक एक बालकको गोद लिया था। फिर मामा साहब नामक उनकोंके एक प्रिय रहे। अंगरेज रेसीडेण्टके साथ उनकी कुछ घनिष्ठता थी। रेसीडेण्टके साहाय्यसे वह भगीरथ रावके अभिभावक बन ग्वालियरमें राज्यशासन करते रहे। इधर महारानीने किसी और कर्तृत्व कर न सकनेसे उनोंको पीछा लगाई, जिससे राज्यमें विशृङ्खला आई। दो पक्ष हो गये। एक महारानीकी ओर दूसरा मामा साहबकी ओर रहा। विवाद थोड़ेमें ही मिटा न था। सिपाही राज्यके मन्त्रियोंके पक्षमें हो युद्धघोषणा की। गृहविवादके साथ ही साथ ग्वालियरके चतुर्दिक्स्थ दूसरे राज्योंकी भी शान्ति भङ्ग होने लगी। लार्ड एलेनबराने सोचा—इस अवस्थामें मनोयोगी होना उचित है, नहीं तो भविष्यत्में घोर अनिष्ट आनेकी सम्भावना है।

उस समय वह स्वयं सैन्य ग्वालियरके अभिमुख अग्रसर हुये थे। २९वीं दिसम्बरको ग्वालियरके निकट महाराजपुर नामक स्थानमें विपक्षियोंसे सामना पड़ा। अंगरेजों और ग्वालियरके सैन्यमें घोरतर युद्ध हुआ। प्रधान सेनापति गफ, सर जिटआर और डिलिवाण्ट तथा ग्रेनिघ प्रभृति दूसरे अंगरेजी सेनापति उपस्थित थे। पर विस्तर सैन्यनाशके पीछे अंगरेज जीते। उधर अंगरेज सेनापति ग्रे साहब ग्वालियरको दक्षिण-पश्चिम सीमा लांघ रहे थे। उसी समय १२००० महाराष्ट्र-सैन्य १४ तोपोंके साथ पुनियार नामक स्थानमें आ पहुंचा। किन्तु ग्रे साहबके सामने उसे भी परास्त होना पड़ा।

पहले अंगरेज ग्वालियरको एक स्वाधीन राज्य समझते थे। किन्तु एलेनबराने उस दिन उसे अपने करतलगत माना। ग्वालियरको महारानी वृत्तिभोगी बनी थीं। लार्ड एलेनबराके आदेशसे ग्वालियरको राजकीय क्षमता अंगरेजोंके हाथ आ गई। नाम मात्रको एक बालक सिंहासनपर बैठे थे। इधर एलेनबराका हृदय ग्वालियर राज्यके सम्बन्धपर आवृत रहा, उधर विलायतमें कोर्ट-अव-डाइरेक्टरने लाट पदके अनुपयुक्त समझ एलेनबराको भारतवर्षसे हटानेका प्रबन्ध किया। इनके असङ्गत सोमनाथद्वारको बात विलायतमें राष्ट्र हुई। उससे सब लोगोंने समझ लिया—एलेनबराकी अभिज्ञता विश्वासयोग्य नहीं। विशेषतः डाइरेक्टरोंने उसे भी अन्याय ही माना, जो इन्होंने सिन्धुप्रदेशके अमीरोंको दोषारोपसे सताया था। सिवा इसके सकल ही विषयोंमें डाइरेक्टरोंसे इनका मतभेद पड़ने लगा।

१८४४ ई०की २१वीं अप्रैलको इङ्गलैण्डके प्रधान मन्त्री सर राबर्ट पीलने लिखा था—"गत बुधवारको महारानीने कोर्ट अव डाइरेक्टरका पत्र पाया, कि पार्लमेण्टके अनुसार उन्हें जो क्षमता मिली, उसी क्षमताके बल उन्होंने स्वइच्छासे भारतवर्षके गवर्नर जनरलको वापस आनेका आदेश लगाया है।"

एलेनबराके मस्तकपर वज्राघात जैसा लगा था। इनकी आशा, राजनीति, विज्ञान और कौशल सब व्यर्थ गया। समय न बीतते ही इन्होंने असन्तुष्ट विलायतको यात्रा की। वहां १८४६ ई०को यह जलयुद्ध विभागके प्रधान सचिव (*First Lord of the Admiralty*) हुये थे। किन्तु १८४६ ई०को एलेनबराने यह पद स्वेच्छासे छोड़ दिया। उसके पीछे कितने दिन यह जीये, उतने दिन पार्लियामेण्टकी बातें सभामें कभी कभी भारतवर्षकी बात कहा

आलोचना करते रहे। १८०१ ई०के दिसम्बर मास लार्ड एलेनबरा मर गये।

एलेनाबाद—पञ्जाबके सिरसा ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° २६´ उ० और द्राघि० ७५° ५४´ पू०पर घाघरा नदी किनारे सिरसा नगरसे २१ मील पश्चिम अवस्थित है। १८६५ ई०को डिपुटी कमिश्नर मिष्टर ओलिवरने एलेनाबाद बसाया। कारण ४० वर्ष पहले बीकानेरके उपनिवेशकोंका प्रतिष्ठित खरियाल नामक ग्राम जलप्लावनसे नष्ट हो गया था। साधारण लोग इसे आज भी खरियाल ही कहते हैं। लोक-संख्या बढ़ती है। बीकानेरके साथ देशज द्रव्य और लवणका व्यवसाय चलता है। मोटा रूईका कपड़ा बुना जाता है। म्युनिसपलिटी है। थाना और दवाखाना बना है। प्राचीन खरियालका ध्वंसावशेष घाघराके उस पार पड़ा है।

एलोर—१ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी ज़िलेकी एक तह-सील। क्षेत्रफल ७२८ वर्गमील है। इस तहसीलमें मुसलमानोंकी संख्या अधिक है। चारो ओर जंगल खड़ा है। एलोर नगरसे राजमहेन्द्री तक नहरें लगी हैं। २ मन्द्राज प्रान्तके गोदावरी ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १६° ४२´ ३५´´ उ० और द्राघि० ८१° ८´ ५´´ पू०पर तम्मलेर नदी किनारे अवस्थित है। विजयेश्वरम्से निकली नहर एलोरमें बेजवारा नहरसे मिलती और गोदावरी तथा कृष्णाकी धारा एक होकर चलती है। एलोरसे चित्तापेटको गयी नहर ४० मील लंबी है। रूईसे कालीन और शोरा तैयार किया जाता है। पहले यहां उत्तर-सरकारकी राजधानी रही। असलमें एलोर वेंगी राज्यका अंश है। १४८० ई०को मुसलमानोंने इसे अधिकार किया था। विजय-नगर राज्यके उन्नतिकाल एलोर फिर हिन्दुओंके हाथ पड़ा, किन्तु १६ वें शताब्दके आरम्भमें ही गोल-कुण्डके कुतुबशाहने इसे फिर जीत लिया था। राज-महेन्द्रीके राजपूतों और समीपस्थ देशके रेड्डियों तथा कोदयोंके सकल आक्रमण निष्फल हुये। पीछे देशी राजाओं और फ्रान्सीसियोंका यहां राज्य रहा। अन्तको एलोर अंगरेजोंके हाथ आया। नगरके समीप प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष आज भी देख पड़ता है। यह दुर्ग चालुक्य राजधानी वेंगीके सामानसे बना था। इस नगरमें गरमी बहुत होती है।

एल्क (अं० पु०=Elk) हरिणविशेष, बारह सिंहा। यह युरोप और एशियामें रहता है। ग्रीवा छोटी होनेसे इसे भूमिका घास चरनेमें कष्ट पड़ता है। इसके पत्रादि खा यह जीवन धारण करता है। गमन करते समय इसका पद ठीक नहीं आता। दौड़ने और कूदनेमें बड़ी असुविधा लगती है। शरीर विशाल होता है। यह सूंघकर दूरस्थ पदार्थ समझ लेता है।

एल्व, एलवालुक देखो।

एल्ववालुक, एलवालुक देखो।

एल्ववाल्साल्, एलवालुक देखो।

एव (सं० अव्य०) इण-वन्। इवेत्रिप्नां वन्। उण् १।१५२। १ साम्य, इसीप्रकार, ऐसे। २ सादृश्य, बरा-बर। ३ अङ्गीकार, निश्चय, हां। ४ नियोग, लगा-तार। ५ वाक्यपूरण। ६ वृत्तप्रयोग। ७ विनिग्रह। ८ अनियोग। ९ परिभव। १० ईषदर्थ। ११ अन्य-योग-व्यवच्छेद। १२ अयोगव्यवच्छेद। १३ अत्यन्ता-योग व्यवच्छेद। इसका संस्कृत पर्याय एवं, तु, पुन: और वा है। (त्रि०) १४ गमनकारी, चलनेवाला। (स्त्री०) १५ गमन, चाल।

एवं (सं० अव्य०) १ साम्य, बराबर। २ सादृश्य, ऐसे ही। ३ अङ्गीकार, हां। ४ प्रश्न। ५ प्र-कृति। ६ जिज्ञासा। ७ इसी प्रकार, ऐसे ही। ८ अनुप्रश्न। ९ निश्चय, बेशक। १० निर्देश।

एवंरूप (सं० त्रि०) एवं रूपमस्य, बहुव्री०। १ इस प्रकारवाला, जो इसी किस्मका हो। (स्त्री०) २ ऐसा रूप, ऐसी ही सूरत।

एवंवाद (सं० पु०) इस प्रकारका कथन, ऐसी बात।

एवंवीर्य (सं० त्रि०) ऐसे बलवाला, ऐसी ताकत रखनेवाला।

एवंवृत्त (सं० त्रि०) ऐसा कार्य करनेवाला, जो ऐसे पेश आता हो।

एवंवृत्ति (सं० त्रि०) ऐसी वृत्तिवाला, ऐसा व्यव-हार करनेवाला, जो ऐसे चलता हो।

एवङ्कार (सं॰ अव्य॰) इस प्रकार, ऐसे ही।

एवङ्काम (सं॰ त्रि॰) ऐसी वस्तुओंके चाहनेवाला, जो ऐसे पदार्थोंका शौक रखता हो।

एवङ्गत (सं॰ त्रि॰) ऐसी दशामें पड़ा हुआ।

एवङ्गुण (सं॰ त्रि॰) एवं गुणो यस्य, बहुव्री॰। ऐसे ही गुणसे युक्त, जो ऐसा ही वस्फ रखता हो।

एवज़ (अ॰ पु॰) १ परिवर्तन, बदला। २ प्रतिफल। ३ बदली। अन्यके स्थानपर जो किञ्चित्काल कार्य चलाता, वह एवज़ कहलाता है।

एवज़ी (फा॰ पु॰) स्थानापन्न, किसीकी जगहपर कुछ वक्ततक काम करनेवाला।

एवन्दुःशद (सं॰ त्रि॰) नशा करनेको ऐसा बुरा, जो नशेमें इसतरह खराब हो।

एवमवस्थ (सं॰ त्रि॰) इसप्रकार अवस्थित, जो ऐसे टिका या जमा हो।

एवमादि (सं॰ त्रि॰) ऐसे आरम्भवाला, जो इस-तरह शुरू हो।

एवमाद्य, एवमादि देखो।

एवम्प्रकार (सं॰ त्रि॰) ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्प्राय, एवम्प्रकार देखो।

एवम्प्रभाव (सं॰ त्रि॰) ऐसी शक्ति रखनेवाला, जो ऐसा जोरावर हो।

एवम्विध (सं॰ त्रि॰) एवं विधा प्रकारो यस्य, बहुव्री॰। ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्भूत (सं॰ त्रि॰) एवं भवतीति, भू कर्तरि क्त। ऐसा, जो इस तरहका हो।

एवम्भूतवत् (सं॰ त्रि॰) ऐसे ही पदार्थोंसे युक्त, जो इसी तरहकी चीज़ रखता हो।

एवम्भूमि (सं॰ स्त्री॰) इस प्रकारका स्थान, ऐसी जगह।

एवया (सं॰ त्रि॰) एव एवं अवनं वा याति, या-क्विप् पृषोदरादित्वात् साधुः। रक्षक, रखवाला।

एवयामरुत् (सं॰ पु॰) एवया रक्षको मरुद् यस्य, बहुव्री॰। एक ऋषि।

एवयावन् (सं॰ पु॰) या-वनिप्, एवस्य एवम्प्रकारस्य याता। १ रक्षक, रखवाला। २ विष्णु। ३ इसी-प्रकार गमनशील, ऐसे ही चलनेवाला।

एवार (सं॰ पु॰) एवं एवस्कृणोति, कृ-अच्। सोम-विशेष।

एवावद (सं॰ पु॰) एवमेवमावदति, एव-आ-वद-अच्। ऋषिविशेष।

एशिया, एसिया देखो।

एशियाई (हिं॰ वि॰) एशियासे सम्बन्ध रखनेवाला, जो एशियाका हो।

एष् (धातु) भ्वादि आत्म॰ सक॰ सेट्। "एषते।" (कविकल्पद्रुम) गमन करना, चल देना।

एष (सं॰ पु॰) एष् भावे क्विप्। १ गति, चाल। २ इच्छा, मरज़ी। ३ अग्रवर्ती पुरुष, आगे रहनेवाला मनुष्य।

एषण (सं॰ पु॰) इष-ल्युट्। १ लोहनिर्मित बाण, लोहेका तीर। २ गमन, चाल। ३ अन्वेषण, खोज। ४ इच्छा, ख्वाहिश। ५ गलकी हथ।

एषणा (सं॰ स्त्री॰) इष-णिच्-भावे युच्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ प्रेरणा, तरग़ीब।

एषणासमिति (सं॰ स्त्री॰) शुद्ध भोजनका अङ्गी-कार, अच्छे खानेका लेना। जैन ४२ पदार्थ दोषरहित मानते और खाते हैं।

एषणिका (सं॰ स्त्री॰) इष्यतेऽनयेति, इष्-ल्युट् स्वार्थे कन् टाप्, अत इत्वञ्च। १ काँटा। २ शस्त्रविशेष। एषणी देखो।

एषयिन् (सं॰ त्रि॰) अन्वेषण या चेष्टा करनेवाला, जो तलाश या कोशिश करता हो।

एषणी (सं॰ स्त्री॰) इष्-ल्युट्-ङीप्। १ स्वर्णादिके परिमाणकी तुला, सोना वगैरह तौलनेकी तराज़ू। २ शस्त्रविशेष, एक नश्तर। इस शस्त्रको व्रणके मध्य लगा पूयादि स्राव कराते हैं। मुखदेश केंचुएके मुख-जैसा रहता है। साधारण लोगोंमें इसे सलाका कहते हैं।

एषणीय (सं॰ त्रि॰) इष वा एष-अनीयर्। १ गम्य, पहुंचने लायक। २ प्रार्थ्य, मांगने लायक। ३ अन्वेषणीय, खोजने लायक।

एषवीर, ऐषवीर देखो।

एषा (सं॰ स्त्री॰) इष-अ-टाप्। १ इच्छा, ख्वाहिश। २ अपरदर्शिनी स्त्री, ताकनेवाली औरत।

एषावीर (सं॰ पु॰) एषायां प्रतिपाद्येच्छायां वीरः, ७-तत्। स्थानास्थान विवेचनाशून्य प्रतिपादक निन्दित ब्राह्मण।

एषिता (सं॰ त्रि॰) इष-तृच्। अभिलाषयुक्त, चाहनेवाला।

एषिन् (सं॰ त्रि॰) इष-णिनि। इच्छुक, ख्वाहिशमन्द।

एष्टव्य (सं॰ त्रि॰) इषु-तव्य। वाञ्छनीय, चाहने लायक।

एष्टा (सं॰ त्रि॰) अभिलाषयुक्त, ख्वाहिशमन्द।

एष्टि (सं॰ स्त्री॰) आ-यज-इष वा क्तिन्। १ अभि-यजन। २ अभिकामना, ख्वाहिश।

एष्य (सं॰ त्रि॰) इष कर्मणि ण्यत्। १ वाञ्छनीय, चाहके क़ाबिल। २ गम्य, पहुंचने क़ाबिल। (स्त्री॰) भावे ण्यत्। ३ सुश्रुतोक्त अष्टविध शस्त्र कर्ममें एक कर्म। अभ्यन्तरस्थ शल्यादिके अन्वेषण करनेको ही एष्य कर्म कहते हैं। यह कर्म घुने काठ, वंश, नल, नाड़ी और सूखी तोंबी प्रभृतिमें खोजना पड़ता है। ४ एषणाकार्यसाध्य एक रोग।

एष्यत् (सं॰ त्रि॰) भविष्यत्, आयिन्दा, आनेवाला।

एष्यत्कालीय (सं॰ त्रि॰) भविष्यत् काल सम्बन्धीय, आयिन्दा ज़मानेसे सरोकार रखनेवाला।

एष्या (सं॰ स्त्री॰) आमलकी वृक्ष, आंवलेका पेड़।

एसिड (अं॰ पु॰ = Acid.) अम्ल, तेज़ाब।

एसिया—पृथिवीके चार महाद्वीपोंमें एक महाद्वीप। यह युरोप और उत्तर अफ्रीकाके पूर्वसे प्रशान्त महासागरके उपकूल पर्यन्त विस्तृत है।

अति पूर्वकालको इस महाद्वीपका नाम एसिया न रहा। उस समय इस विस्तीर्ण भूमिखण्डको आर्य ऋषि सुदर्शन अथवा जम्बुद्वीप कहते थे। एसिया नाम यवन-प्रदत्त है। युरोपीय भूगोलवित्ता बताया करते, कि वर्तमान एसिया-माइनरके एक छोटे ज़िलेको पूर्वकाल 'एसिया' कहते थे। ग्रीस देशके यवन इसी स्थानसे पूर्वको और विजयको अग्रसर हुये। एसिया-माइनरको पूर्व और उन्होंने जो देश या स्थान खोज और जान पाया, उस समस्त भूभागका नाम 'एसिया' बताया था। काल पाकर यह विस्तीर्ण महाद्वीप एसिया नामसे प्रसिद्ध हो गया। एसिया नाम नितान्त आधुनिक नहीं। ग्रीसके आदिकवि होमरने इस नामका उल्लेख किया है।

किसी-किसी ग्रीक-भाषावित् पण्डितके कथनानुसार होमरने जिस 'एसियाम्' शब्दका उल्लेख किया, उसके पाठसे बोध न हुआ—एसिया नामक कोई भूभाग उनका समझा था। उन्होंने 'एसियाम्' (Asias) नामसे लिदीय देशके राजाका उल्लेख किया है। इस सम्बन्ध पर हम वादानुवाद करना नहीं चाहते। सत्य असत्यका विचार युरोपीय पण्डित ही करेंगे। फिर ग्रीसके प्राचीन कवि हिसियदके पुस्तकमें भी एसिया नाम मिलता है। उनके मतसे एसिया किसी अप्सराका नाम है। यह आसियनस् (Oceanus) एवं टेथिस (Tethys) की कन्या और प्रमिथियस् (प्रमन्थ) की भार्या रहीं। हिरोदोतासने लिखा—ग्रीक नागरिक मतसे प्रमिथियस्‌की पत्नीके नामानुसार एसिया खण्डका नाम पड़ा है। किन्तु लिदीयन यह मत नहीं मानते। उनके कथनानुसार कोटिस (Cotys) पुत्र एसियास् (Asias)-से एसिया नाम बना है। अपना मत प्रमाण करनेको वह सार्दिसकी एसियास जातिका उल्लेख किया करते हैं। (Herodotus Melpomene, XLV.) ऐतिहासिक ह्वेकोके मतमें लिदीयाका प्राचीन नाम एसिया है। अनेक अनुसन्धान पीछे भाषाके तत्त्वविदोंने निश्चय किया,—एसिया शब्दका अर्थ सूर्य एवं एसियास शब्दका अर्थ सूर्यलोक-वासी अर्थात् पूर्वदिक्‌वासी है।

देखना चाहिये—प्राचीन ग्रीक और रोमक एसिया का विषय कैसा समझते थे। होमरको पढ़नेसे समझ पड़ता—ट्रय युद्धमें बहुत पहले एसिया और युरोपमें संस्रव था। किन्तु उस सम्बन्ध बन्धुभाव नहीं, बारम्बार प्रतिद्वन्द्विता और विषम शत्रुभावका आदर्श रहा। प्राचीन ग्रीक एसिया-माइनर सब जानते थे। उसी स्थानमें जा आयोनीय ग्रीक उप-निवेश करते थे। वही प्राचीन हिन्दुओंके निकट यवन लोग परिचित रहे।

ईसा-मसीहके जन्मसे ५५० वर्ष पहले पारस्य-

[illegible] उस समय पश्चिम [illegible] नगर काश्मीय [illegible] मध्यवर्ती समुदय [illegible] हुये हैं। लिदीया राज्य [illegible] हुआ। निरुपाय एवं असहाय [illegible] अधीनता स्वीकार की थी। [illegible] इस अद्भुत प्रथाकी भांति था एसिया [illegible] अनुसन्धान लेने लगे। ग्रीक यवनोंने ही [illegible] विषय समझा था। किसी किसी स्थानका मानचित्र प्रथम अङ्कित हुआ। ग्रीक ऐतिहासिक हिरोदोतसका पुस्तक पाठ करनेसे पारस्य साम्राज्य-सम्बन्धीय भूवृत्तान्त समझ पड़ता है। हिरोदोतसने साम्राज्यके अधिभूत सकल देशोंका विषय बहुत नहीं लिखा; फिर भी जो कुछ लिखा, वह अमूल्य है।

समसामयिक जेनोफनने सम्राट् कायरसके साथ रह पारस्य साम्राज्यका अनेक विवरण संग्रह किया था। उनके बनाये ग्रन्थमें उसका विलक्षण परिचय मिलता है। महावीर सिकन्दरने एसिया खण्डके अनेक देश जीते थे। उन्होंने जिस विस्तीर्ण भूभागके मध्यसे युद्धयात्रा की, डिगियार्कस नामक उन्हींके समर-सहचरने एक मानचित्र खींच उसके देश, प्रदेश, नगर, ग्राम, नद प्रभृतिकी वर्णना दी है। उसी समय सिकन्दरने अपने नौ-सेनापति नियार्कसको नदके मोहानेसे इउफ्रेतिस नदीको भेज दिया। नौ-सेनापतिकी सहायतासे ग्रीक लोग अनेक [illegible] भूवृत्तान्त जान सके।

फिनिसीय अतिपूर्वकालसे ही एसिया-[illegible] समुद्रतीरस्थ अनेक स्थानोंको वाणिज्यके उद्देश [illegible] यातायात करते थे। युरोपकी प्राचीन जातियां [illegible] फिनिसीयोंको अधि[illegible] एसियाखण्डके नाना देशोंका विषय अव[illegible] यह जिस जिस देश जाते [illegible] भाषामें लिपिबद्ध कर बना[illegible] नगरमें फिनिसीय वणिकोंका [illegible] मकदूनिया-वीरके टायर नगर ध्व[illegible] अलेकसन्द्रिया नगरमें जा बसने लगे। उससे एसिया खण्डके प्रधान बंदरोंका संवाद सुन अनेक ग्रीक वणिक जलपथसे गमनागमन किया करते थे। क्रमशः इजिप्टके लोग भी जलपथसे मलवार, सिंहल प्रभृति जनपदोंमें पहुंच वाणिज्य चलाने लगे। किन्तु वह सिंहल लांघ महोपसागरमें घुसनेको साहसी न हुये। सिंहलवासियोंसे उन्हें कलिङ्ग प्रभृति भारतके पूर्व उपकूलस्थ जनपदोंका सन्धान मिला था। उन्हीं वणिकोंने इजिप्टके ग्रीक लोगोंको स्वल्पशः भारतवर्ष और सिंहल द्वीपका परिचय दिया।

सिकन्दरके पीछे सिरीय अधिपति सलूकस् निकेतर गङ्गा नदीके तीरस्थ सकल जनपद अधिकार करनेको प्रयासी हुये। उन्होंने मेगास्थिनिस नामक एक व्यक्तिको मगधराज चन्द्रगुप्तकी सभामें दूतकी भांति भेजा था। उस समय भारतवर्षके अधिकांश स्थान चन्द्रगुप्तके अधिकारमें रहे। मेगास्थिनिसने बहुत दिन मगधकी राजसभामें रह भारतवर्षके जनपदादिका विवरण संग्रह कर एक भूवृत्तान्त बनाया। ग्रीक लोग वही पुस्तक पढ़ भारतवर्षका विवरण कुछ-कुछ समझ सके।

ग्रीकोंने एसियामें जा अनेक नगर और जनपदादिका नाम अपनी भाषामें रखा था। फिर रोमक प्रबल हो ग्रीकोंका प्रतिष्ठित सकल राज्य ध्वंस करने लगे। उस [illegible] इउफ्रेतिस और ताइग्रीस नदीके उपकूल-प्र[illegible] पर्वतमाला तक रोमक [illegible] मिथ्रिदतीससे बहुत समय [illegible] पहुंचा। पहले [illegible] था। उन्होंने [illegible] सुना—यहां [illegible] साथ [illegible] भी अनु[illegible] नयाका [illegible]

एकत्र कर भूगोल प्रचार किया। उनमें अनेकोंके पुस्तक लोप हो गये हैं। केवल ट्रेबो, प्लिनि एवं टलमि प्रभृति लोगोंके ग्रन्थ हमें देखनेको मिलते हैं। टलेमिसे पहले पाश्चात्य प्राचीन भौगोलिकगण भारत-महासागरके पूर्वांशस्थित द्वीपसमूह एवं पाश्चात्य महासागरके निकटवर्ती किसी द्वीपका विषय जानते न थे। टलेमिके ग्रन्थमें उनमें कई द्वीप उक्त हैं।

उसके परवर्ती कालपर मुसलमान एशियाका भू-वृत्तान्त संग्रह करनेको यत्नवान् हुये। जब मुहम्मद और उनके शिष्यगणके प्रभावसे एशियावाले अनेक स्थानोंके लोगोंने इसलाम धर्म पकड़ा, तब नूतन धर्मसे दीक्षित व्यक्ति मात्रने मक्काके दर्शनको अति पुण्यकर्म समझा था। इसीसे कितने ही लोग दूर देशान्तरसे पथ पर्यटन कर मक्के जाते रहे। गमनकालको अनेक नूतन स्थान उनको दृष्टिमें पड़ते थे। विचक्षण व्यक्ति उन स्थानोंका विवरण संग्रह कर लेते। आजकल उनके ग्रन्थ भी लुप्तप्राय हैं। फिर जो हैं भी, उनका संग्रह करना दुष्कर देखते हैं। इन सकल ग्रन्थोंमें इब्नु हैकल, एद्रिसी, इब्नु बतूता प्रभृति कई लोगोंके ग्रन्थ ही हमें पढ़नेको मिलते हैं। विशेषतः इब्नु बतूताके भ्रमण-वृत्तान्तमें रूस राज्यके यूराल पर्वतसे दक्षिणको सिंहल द्वीप पर्यन्त अनेक स्थानोंका भूवृत्तान्त लिखा है। भिनिस-देशीय प्रसिद्ध भ्रमणकारी मार्को-पोलो ई० १३श शताब्दको मुगल-सम्राट् कुबलाई खानको राजसभामें बहुत दिन रहे। वह उक्त सम्राट् द्वारा दूतरूपसे एशियाके नाना स्थानोंको भेजे गये थे। उन्होंने तातार, मङ्गोलिया, चीन, जापान, तिब्बत, पेगू, बङ्गाल, महाचीन, सण्डाद्वीपपुञ्ज, सिंहल, मलयवर, अर्मेन, अदन प्रभृति नाना स्थानोंका विवरण लिखा है। वर्तमान युरोपीय भौगोलिक उन्हींको समग्र एशिया महाद्वीपका आविष्कारकर्ता बताया करते हैं। उनके पीछे पोर्तुगीज, दिनेमार, ओलन्दाज, फ्रान्सीसी और अंगरेज क्रमान्वयसे एशियामें आने लगे। उन्होंने नाना स्थान अधिकार किये, नाना स्थानोंमें उपनिवेश बसाये और अनेक स्थानोंके भू-वृत्तान्त लिखे।

सीमा—एशियाके उत्तर उत्तर-महासागर, पूर्व प्रशान्त-महासागर, दक्षिण भारत-महासागर और पश्चिम युरोप, कृष्णसागर, आर्किपेलेगो, भूमध्यसागर एवं लोहितसागर है। उत्तर-पूर्वके प्रान्त-सागरपर बेरिङ्ग प्रणाली द्वारा कामस्कटका और उत्तर-अमेरिका स्वतन्त्र हुआ है। इसी प्रकार दक्षिण-पश्चिम सुएज नहर द्वारा एशिया और अफरीकामें प्रभेद पड़ा है। भारत-महासागरीय द्वीप एकत्र कर लेनेसे समस्त एशिया खण्ड प्रायः चतुष्कोण देख पड़ता है। भूमिका परिमाण कोई १६८१८००० वर्गमील और लोकसंख्या ७०२००००००० है।

यह महादेश अपर सकल महाद्वीपोंसे आयतनमें जैसे वृहत्, वैसे ही जलवायु, स्वास्थ्य और उर्वरता प्रभृतिमें भी श्रेष्ठ है। एशियाका प्राकृतिक दृश्य अन्यसे भिन्न लगता है। इसकी आकृति अफ्रीका, युरोप और अमेरिकासे नहीं मिलती।

मध्यभागकी समतलभूमि समुद्रतलसे अधिक उच्च है। फिर समतल भूमिको चारों ओर निम्न भूमि और बीच-बीच पर्वतमाला विद्यमान है। पर्वत अति उच्च एवं वृहत् होते भी समतलभूमिके आयतनानुसार छोटे ही समझ पड़ते हैं। एशियाकी अन्तर्निविष्ट समतलभूमि कहीं निम्न और कहीं उच्च है। पूर्वभागमें तिब्बतकी उर्वरा भूमि और गोबीकी मरुभूमि ४०००से १०००० फीट तक ऊंची पड़ती है। पश्चिमांशमें ईरानकी उर्वरा भूमि ४००० फीटसे अधिक उच्च नहीं। उक्त समतलभूमिके उत्तर-पश्चिम टरन, काकेसस् एवं एलबर्ज पर्वत और कास्पीय-सागरकी ढालू भूमि है। उत्तर साइबेरियाका अलटाई पर्वत और उत्तर-पश्चिम दौरिया नामक पार्वत्य प्रदेश है। पूर्व चीनराज्य-मध्यवर्ती तुषार गिरिमाला तथा दक्षिण हिमालय पड़ा है। पश्चिम बलूचिस्तानकी गिरिमाला और पारस्योपसागरका निकटस्थ जग्रस पर्वत है। अर्मन पर्वत क्रमशः उत्तर-पश्चिम सुच का टरस और आर्मिनस गिरिशृङ्गसे मिला है। इसी स्थानसे टाइग्रीस और यूफ्रेतिस नदी निकली है। समतलभूमिसे दक्षिणस्थ हिमालय गिरि एशियाके

सकल पर्वतोंसे उच्च है। यथा—धवलगिरि २०६००, काञ्चनजङ्घ २८१०८, गोसाईंस्थान २८०००, यमुनोत्तरी २५११८, नन्दादेवी २५६८१, धमलागिरि २१८२८, हेमगिरि २१६०० और पृथिवीके मध्य उच्चतम शृङ्ग एवरेष्ट २८००२ फीट ऊंचा है।

एसियाके उत्तरांशमें साइबेरिया नामक विस्तीर्ण समतल भूमि है। यह स्थान समस्त युरोपखण्डकी अपेक्षा बड़ा है।

ईरानकी उर्वरा भूमि तीन भागोंमें विभक्त है—ईरान, आरमेनियाका पार्वत्यप्रदेश और एनाटोलियाकी समभूमि। प्रथम भाग अर्थात् ईरान ३०० फीट उच्च है। अधिकांश भूमि कांकड़ और बालूसे भरा लवणक्षेत्र है। चारो ओर गिरिमाला प्राचीर रूपसे वेष्टित है। द्वितीय भागमें आरमेनियाका गिरिराज्य, कुर्दिस्थान और आजरबिजान है। इसी भूभागमें प्रसिद्ध आराराट पर्वत पड़ा है। तृतीय भागमें एनाटोलिया है। यह भूभाग कृष्णसागरको तटस्थ पर्वतमालासे दक्षिण-पश्चिम टरस पर्वततक गिरिशृङ्ग द्वारा सीमाबद्ध है। कृष्णसागरके निकटस्थ कोई कोई स्थान वनादिसे परिवृत देख पड़ता है।

भारतवर्षके दक्षिणापथकी उर्वराभूमि १५००से २००० फीट तक उच्च है। यह पश्चिम मलयवर उपकूलसे पश्चिमघाट पर्वत द्वारा विभक्त है। इसके अतिरिक्त भारतमहासागरीय द्वीपपुञ्जमें भी उर्वराभूमि मिलती है।

एसियामें छह निम्नभूमि प्रधान हैं। १म उत्तरको साइबेरियाकी निम्नभूमि है। यह अलटाई और यूराल पर्वतके उत्तरांशमें आरम्भ हो उत्तर-महासागरके उपकूल पर्यन्त विस्तृत है। अनेक स्थान शीतप्रधान, अन्धकारमय और ऊसर हैं। २य बुखारकी निम्नभूमि कास्पीय सागर और आराल ह्रदके मध्य है। इस भूभागमें केवल कंकड़ भरा है। ३य सिरीय और अरबी निम्नभूमि है। दक्षिण अंश शुष्क मरुभूमि देख पड़ता, किन्तु उत्तरांशमें युफ्रेतिस और टाइग्रीस नदीका जल मिलता है। ४र्थ भारतवर्षकी निम्नभूमि है। इसके मध्य ३०० मील विस्तृत मरुस्थली एवं बङ्गदेशका विस्तृत उर्वर क्षेत्र है। ५म काम्बोज, श्याम और ब्रह्मराज्यका इरावती-प्रवाहित भूभाग है। ६ष्ठ चीनकी निम्नभूमि प्रायः २१०००० वर्गमील है। यह पेकिन नगरके पूर्वसे आरम्भ हो दक्षिणको कर्कटक्रान्ति पर्यन्त विस्तृत और अतिशय उर्वरा है। चीना इस स्थानको जगत्‌का उद्यान कहा करते हैं।

एसियाखण्डमें निम्नलिखित देश और तदन्तर्गत प्रधान नगरादि विद्यमान हैं।

तुरुष्क या तुर्की—स्मिरना, आलेपो, दामास्कस, जेरूसलम, बग़दाद, मोसल, बसरा, ट्रेबिजण्ड।

अरब—(तुरुष्क अधिकृत) मक्का, मदीना, जिद्दा।

,, (स्वाधीन) मस्कट, अदन, मोखा, रियाध, दराया।

अफगानिस्थान—काबुल, कन्दहार, हिरात, बदख्शान्।

बलूचस्थान—खिलात।

भारतवर्ष—कलकत्ता, बम्बई, मन्द्राज, मुरशिदाबाद, ढाका, पटना, काशी, अलाहाबाद, कानपुर, लाहोर, सूरत।

ब्रह्म—मन्दालय, आवा, अमरपुर, रङ्गून, मर्तबान, मोलमीन, मारगूई, मलय, सिङ्गापुर।

श्याम—बङ्काक।

कम्बोज—सैगान।

आनाम—हिउ, केशो।

लेयम—कछम।

चीन—पेकिन, नानकिन, सङ्घाई, सिङ्गपो, आमय, काण्टन।

तिब्बत—लासा।

स्वाधीन तातार—बोखारा, खीवा, कुगघर, इर-कन्द, खुतन।

रूस (साइबेरिया)—तोबलस्क, इर्कुटस्क, समरकन्द, खोकन्द, बटम, कारस, आर्दाहान।

जापान—जेडो, योकोहामा, टोकियो।

फिलिपाइन द्वीपपुञ्ज—मानिला।

यवद्वीप—बटविया।

सुमात्रा—आचीन।

प्रत्येक देशका विस्तृत विवरण अपने अपने शब्दमें देखो।

अन्तरीप—वेरिङ्ग प्रणालीके निकट पूर्व अन्तरीप, साइवेरियाके उत्तर सेवेरो, कामस्काट्काके दक्षिण लोपटका, चीनके पूर्व निङ्गपो, आनामके दक्षिण कम्बोडिया, मलयके दक्षिण रोमानिया, भारतवर्षके दक्षिण कुमारी, अमर्ज प्रणालीके मध्य ममिन्दम और अरबके पूर्व रसूलहद अन्तरीप है।

द्वीप—साइप्रस, रोडस; बोरनियोसे पूर्व सेलिविस, सेलिविससे पूर्व मलक्काद या स्पाइस द्वीप, बोरनियोसे उत्तरपूर्व मानिला द्वीपपुञ्ज, भारतमहासागरमें बोरनियो, यव एवं सुमात्रा, भारतवर्षसे दक्षिण सिंहल, बङ्गोपसागरमें आन्दामान तथा निकोबार, भारतवर्षसे दक्षिण-पश्चिम लाक्षा एवं मालद्वीप, चीनसे दक्षिण हैनान तथा हङ्गकङ्ग, चीनसे पूर्व फरमोसा, चुसान, एवं लुचुद्वीप, चीन तातारसे पूर्व जापान तथा कामस्काटकाके मध्य क्यूराइल और नव-साइबेरिया।

उपद्वीप—एसिया माइनर, अरब, भारतवर्ष, पूर्व-उपद्वीप, मलय मायोद्वीप, कोरिया और कमस्काटका।

पर्वत—यूराल, काकेसस, आरमेनियान, टरस, लेबेनन, एल्बुर्ज, सिनाई, एलवर्ज, हिन्दूकुश, कोहबाबा, हिमालय, काराकोरम, पामीर, चीन-गिरिमाला, तियानसन, अलटाई और यबलोनई।

ह्रद—कास्पीय, आरल, लवनर, बलकस, बैकाल, मृत, वान, उरमिया और अलटो।

नदी—जर्डन (साइहुन), आक्सस (आमू), सेना, ओबी, एनिसी, युफ्रेतिस, टाइग्रिस, गङ्गा, सिन्धु एवं ब्रह्मपुत्र नद, इरावती, सितुयन (थेलुयन), मिनाम, कम्बोडिया, होयाङ्गहो, इयङ्गसिकियङ्ग किहो, सुकियाङ्ग (कण्टन) और आमूर (सेघेलियन)।

विदेशीय अधिकार—आजकल एसियाके नाना स्थान विदेशियोंने अधिकार किये हैं। भारतवर्ष, ब्रह्म, सिंगापुर, मलय, सिङ्गापुर, आन्दामान, निकोबर, सिंहल, लेबुआन द्वीप, अरबका अदन बन्दर, पेरिम द्वीप, हङ्गकङ्ग और साइप्रस द्वीप अंगरेजोंके अधिकारमें हैं। फ्रान्सीसी दक्षिण कम्बोज और भारतवर्षके पण्डिचेरी, माहे, तथा चन्दननगरको दबाये हैं। सुमात्राके दक्षिणांश, यव, सेलिविस और मालाक्कास द्वीपपर ओलन्दाजोंका अधिकार है। भारतवर्षके गोवा और डमनपर पोर्तुगीज अधिकार रखते हैं। फिलिपाइन द्वीपपुञ्जको अमेरिकाने स्पेनसे लड़के छीन लिया है।

एसियाखण्डमें नानाप्रकार उद्भिद् और जीवजन्तु देख पड़ते हैं। साइबेरिया, चीन, भारतवर्ष, पारस, अरब प्रभृति शब्दोंमें अपने-अपने देशके उद्भिद और जीवजन्तुका विवरण देखो।

जाति—एसिया खण्डमें नाना जाति यों बसती हैं। युरोपीयोंने इन जातियोंको तीन प्रधान श्रेणियोंमें बांटा है—मोंगलीय, आर्य और सेमेतिक।

आर्य, मोंगलीय और सेमेटिक शब्द देखो।

फिर इन जातियोंको भाषाके उच्चारणानुसार दूसरे भी कई विभाग हो गये हैं।

१म तिब्बत, चीन, जापान, कोरिया और पूर्व-उपद्वीपके उत्तरांशमें जो जातियां रहतीं, वह एकाक्षर भाषा व्यवहार करती हैं। २य मध्य एसिया तथा उत्तरांशमें कुछ दूरतक तुरुष्क, मुगल और तुङ्गस जातिका वास है। इनकी भाषामें अरबी इबर और अनेक अरबी शब्द चलते हैं। ३य कमस्काटकाकी रहनेवाली मोमाइद जाति एक प्रकारकी स्वतन्त्र भाषा व्यवहार करती है। ४र्थ भारत-महासागरीय मलय एवं पलिनेसीय जातिमें मलय अथवा मलयमिश्रित भाषा चलती है। ५म आर्य जातिकी मूल भाषा संस्कृत है। कोई-कोई पारस्य अथवा अरबकी मिश्रित भाषा बोलती है। ६ष्ठ काकेसस जातिकी भाषाका तत्त्व आज भी भली भांति समझमें नहीं आया। ७म दाक्षिणात्य जाति तामिल, कर्णाटी, तेलङ्ग और सिंहली भाषासे अपना काम निकालती है। ८म सेमेतिक जातिमें अशुरी और अरबी भाषाका व्यवहार है।

धर्म—एसियाखण्डमें जैसे नाना जातिका वास, वैसे ही नाना धर्मका प्रचार भी है। भारतवर्षवासी ब्राह्मणधर्मावलम्बी हैं। चीनके लोग बुद्ध, कनफुसी और लाओजीकी उपासना करते हैं। तिब्बतके बौद्ध दलाई लामाके पूजक हैं। अरब, ईरान और भारतवर्षके मुसलमान इसलाम धर्मको मानते हैं। आरमेनिया, सिरीया, कुर्दिस्तान और भारतवर्षके ईसाई

खृष्टीय धर्मावलम्बी हैं। साइबेरियावाले बौद्ध मतको मानते हैं। एसियाके उत्तरप्रान्तवासी भूतोपासक हैं।

• हिन्दू, बौद्ध, लामा, कुनफुच प्रभृति शब्द देखो।

पृथिवीके मध्य एसियाके लोग प्रथम सुसभ्य हुये थे। इनमें आर्योंने ही गणनातीत कालसे समधिक उन्नति और समृद्धि लाभ की है। आर्य देखो।

इतिहास—चीनने एसियाके पूर्वांश और जापानकी सभ्यता बनाई है। किन्तु मङ्गोलिया, तिब्बत, श्याम, कम्बोडिया और ब्रह्मदेशपर भारतीय सभ्यताका प्रभाव अधिक पड़ा है। फिर भारतके बौद्ध धर्मने चीनको भी अपने अनुगत कर लिया है। इसलामका प्रभाव चीनपर अधिक नहीं पड़ा। पहले बाबिलोनिया और सिरीयामें अधिक उन्नति हुई थी। किन्तु ई०से ३०० वर्ष पहले उसका ह्रास हुआ और पारस्य साम्राज्य बन चला। ई० ७म शताब्द तक उक्त साम्राज्य समृद्ध रहा, पीछे मुसलमानोंने अपना उदय किया। एसियामाइनरके हिताइत और अमोरीटियोंका हाल मालूम नहीं।

ई०से ४००० वर्ष पहले सेमाइट बाबिलोनियाको आक्रमणकर राजा बने थे। प्राय: ई०से २२८५ वर्ष पहले बाबिलन नगर हम्मूरबीकी राजधानी रहा। ई०से ८०० या ९०० वर्ष पहले असूरीयोंने बाबिलनके अधीन अपनी बड़ी उन्नति की। किन्तु ई०से ६०६ वर्ष पहले ईरानियोंके सम्मुख उन्हें नीचा देखना पड़ा था।

सम्भवत: ई०से ३००० वर्ष पहले चीना पश्चिमसे आ होआङ्गहो नदी किनारे चीनमें पहुंचे थे। ई०से २२० वर्ष पहले वर्तमान चीन-साम्राज्य सङ्गठित हुआ। फिर तातारोंसे विवाद चलते रहा। बीच-बीच यह साम्राज्य टूट-फूट जाता था। किन्तु हान और तुङ्गवंशने इसे दो बार जोड़-जाड़ ठीक किया। ई०के १३वें शताब्द मुगल कुबलाई खानने चीनको जीता था। १०० वर्षसे कम राज्यकर मुगल वंश मिङ्गोंके अधीन हुआ। फिर १६४४ ई०को मञ्चुवोंने मिङ्गोंको दबा अपना अधिकार जमाया था।

जापानमें पहले ऐन्नू रहते थे। ई०के ६ष्ठ शताब्द यहां चीन-सभ्यता और बौद्ध धर्मका प्रभाव पड़ा। ई०के ८म शताब्द जापानियोंका वैभव बढ़ा था। प्रथमत: फुजीवारा वंश उन्नत हुआ, फिर तैरा और मिनामोतो लोगोंमें विवाद होते रहा। ११९२ ई०को मिकाडो नाममात्रको राजा बने, किन्तु मुख्य अधिकारी वीरवर शोगुन थे। जापानपर कभी किसी विदेशीयने आक्रमण नहीं किया। कुबलाई खानका आक्रमण व्यर्थ गया था। २०० वर्ष तक शोगुनके वंशजोंने राज्य किया। उन्होंने कलाकौशलको बड़ी उत्तेजना दी थी। ई०के १६ वें शताब्द पचास वर्ष तक अराजकता की धूम रही। पोर्तुगीज जापानमें जा पहुंचे थे। फिर हिदेयोशी नामक एक जापानी साहसिकने कोरिया विजय किया और चीनके आक्रमण पर भी ध्यान दिया। १६०३से १८६८ ई०तक ईयसूने जापान की धार्मिक और सामाजिक स्थिति सुधारी थी। इसीके अतिरिक्त सकल विदेशियोंको जापान जानेका निषेध रहा। १८५४ से १८५८ ई० तक यूनाइटेड स्टेटस और युरोपीय शक्तियोंने जापानमें व्यवसाय करनेको अपना स्वत्व देखाया था। गृह-विवाद बढ़ने पर मिकाडोको पुनरधिकार मिला। १८९५ ई०को जापानने चीनको परास्त किया और दश वर्ष पीछे रूसको भी हरा दिया। जापानमें रहनेवाले विदेशियोंको जापानी कानूनके अनुसार ही चलना पड़ता है। जापान मुसलमानोंके आक्रमणसे अलग रहा है।

कोरियामें भारतीय और चीना दोनों धर्मशाखायें चलती हैं। चीन और कोरियाकी भाषा तथा रीति-नीतिमें प्रभेद है। ई०के १६वें शताब्द जापानियोंने कोरिया को अधिकार किया था, किन्तु १८९५ ई०को कोरिया स्वतन्त्र हुआ।

भारतमें असभ्य आदिम अधिवासी कोल एवं सन्थाल, द्राविड़ तमील-कनाड़ी और आर्य तीन प्रकारके लोग रहते हैं। गौतम बुद्धके अभ्युदयसे ब्राह्मणोंका प्रभाव घट गया था, किन्तु शङ्कराचार्यने बौद्ध धर्मको बाहर निकाल इसे फिर अक्षुण्ण किया। ई०से ३२६ वर्ष पहले सिकन्दरने पञ्जाबपर आक्रमण मारा, किन्तु

कोई फल न पाया। अशोकके समय मौर्य साम्राज्य अफगानस्थानसे मन्द्राज तक विस्तृत था। ५० ई० कनिष्कने भारत आक्रमण कर उत्तर भारत और कश्मीरमें राज्य जमाया। गुप्त साम्राज्य ई०के ५म शताब्द उत्तरीय पतिवासियोंके आक्रमणसे भङ्ग हुआ था। ६०६ से ६४६ ई०तक उत्तरभारतमें हर्षका राज्य रहा। कन्नौज नगर उसकी राजधानी था। ७१२ ई०के समय अरबियोंने सिन्धु विजय किया। फिर ई०का ११श शताब्द समाप्त होते समय उत्तर-भारत मुसलमानोंके अधीन हुआ था। मुसलमानी राजधानियोंके निकट इसलाम धर्म खूब चला, किन्तु राजपूताने और मन्द्राजमें हिन्दू धर्म लेनेका देना बना रहा। १५२६ ई०को मुगलोंने दिल्लीका सिंहासन छीन लिया। अकबर और शाहजहां बादशाह बड़े नामी हो गये हैं। १७०७ ई०को मुगल साम्राज्यकी अवनति हुई। मध्य भारतमें मराठोंका प्रभाव बढ़ा था। फिर धीरे-धीरे अंगरेजी राज्य स्थापित हुआ। भारतका प्राचीन इतिहास बहुत कम मिलते भी इसमें कोई सन्देह नहीं, कि भारतीय धर्म, साहित्य और शिल्पने ईरानसे जापान तक समस्त एसिया खण्डपर अपना प्रभाव डाला है। भारतवर्ष देखो।

ईरानियोंकी भाषा और धर्मप्रवृत्ति वैदिक आर्योंसे मिलती जुलती है। ई०से षष्ठ शताब्द पहले जरथुस्त्रने ईरानी धर्मको सुधारा था। उसी समय ईरान (पारस्य) असिरीयाकी अधीनतासे भी छूट गया। ई० ६ष्ठ शताब्दमें ईरानी अपने आसपासके राज्य छीन एक साम्राज्य बनाने लगे। बाबिलोनीयोंसे मिलकर उन्होंने निनेवेहका विनाश किया था। ५० वर्ष पीछे काइरसने बाबिलन ले लिया। उसके वंशज २०० वर्ष तक राज्य करते रहे। उक्त साम्राज्य पूर्व पोवस एवं सिन्धुसे पश्चिम ग्रीस और दक्षिण मिसरतक विस्तृत था। ई०से ३३८ वर्ष पूर्व सिकन्दरने इस दारयुसको जीता। सल्यूकी नामक ग्रीक राजवंशने पारस्य शासन किया। बाक्ट्रिया स्वतन्त्र हुआ था। ई०से २५० वर्ष पूर्व खुरासानमें अर्सकियोंके अधीन पारथीय साम्राज्य बन पड़ा। पारथीयोंने रोमकोंका सामना सफलतापूर्वक किया और भारतसे सिरीयातक अपना प्रभाव फैला दिया। किन्तु ससानीयोंने उन्हें नीचा देखाया और ४ शताब्दतक राज्य चलाया था। उन्होंने जरथुस्त्रीय धर्म प्रतिपालन और पूर्व रोमक साम्राज्यसे युद्ध सम्पादन किया। ई०के ७वें शताब्द हेरेक्लियसने उन्हें हराया था। फिर कुछ दिन पीछे ही मुसलमानोंने उनका विनाश किया और ईरानमें इसलाम धर्म चला दिया। अब्बास शाहके समय (१५८५-१६२८ ई०) ईरानमें एकता और समृद्धि बढ़ी थी। किन्तु अफगानोंका आक्रमण होनेसे फिर विशृङ्खला पड़ी। १७८८ ई०से तुर्कोमन वंशका राज्य हुआ।

यहूदी अरबियोंसे मिलते जुलते हैं। वह एक जगह न बस इधर-उधर घूमते फिरते थे। फिर मिसरके किनारे यहूदी जा कर कुछ दिन ठहरे। ई०से १३०० वर्ष पूर्व वह मिसरसे उत्तरको भागे थे। सुलेमानके अधीन उन्होंने एक छोटा राज्य स्थापित किया, किन्तु असिरीया और बाबिलनके आक्रमणोंने उसे टिकने न दिया। ई०से ७२० वर्ष पूर्व शालमनेसरने उत्तर राज्य मिटाया और यहूदियोंको वहांसे मार भगाया। फिर यहूदियोंका कहीं पता लगा न था। ई०से ५८८ वर्ष पूर्व नेबूकदनेजर यहूदियोंको बन्दी बना ले गये। किन्तु ई०से ५३८ वर्ष पूर्व ईरानके बाबिलोनिया जीतनेपर उन्हें पलेस्टाइन लौटनेकी आज्ञा मिली। बाबिलोनिया बहुत दिनतक यहूदियोंका केन्द्रस्थल रहा। ७० ई०को टीटसने जेरूसलमका मन्दिर तोड़ा था। धीरे धीरे यहूदी सिरीया, एसिया-माइनर, ग्रीस और इटलीमें बस गये। फिर उनका प्रसार समस्त युरोपमें हुआ। ई०के १५वें शताब्द स्पेनसे निकाले जानेपर यहूदी पूर्वकी ओर बढ़े। आजकल पूर्व युरोपमें सबसे अधिक यहूदी देख पड़ते हैं। एसियावासियोंके साथ अधिक मिलजोल होते भी यहूदी युरोपीयोंके साथ रहना पसन्द करते हैं।

इसलामके अभ्युदयसे पहले अरबियोंका कोई इतिहास नहीं मिलता। उनमें ईरानी, ईसाई और यहूदी सभ्यता आ गई है। मुसलमानोंका अभ्युदय होनेसे अरबी भी बढ़े चढ़े। उन्होंने पूर्वमें भारत एवं

मध्य-एशिया और पश्चिममें स्पेन तथा मोरोक्को पर सफलतापूर्वक आक्रमण मारा था। आज भी पूर्वमें शामाफ्दमके समरकन्द और बगदादके अब्बासी अमीरोंके बड़े बने रहे। किन्तु कोई प्रधान साम्राज्य न था। कुछ लोग स्वाधीन बन बैठे और कुछ तुर्कोंके अधीन हुये। टौर्सके समीप चार्लस मार्टेलने स्पेनसे अरबियोंको निकाला था। अरबियोंका धर्म और साहित्य आज भी पश्चिम एशियाके अधांश, उत्तर अफरीका और कुछ कुछ पूर्व युरोपमें अपना प्रभाव जमाये है। ई॰से पूर्व ६ठ शताब्दको आर्योंने सिंहल-में बौद्धधर्म फैलाया। १४०८ ई॰को चीनावोंने उस-पर आक्रमण मारा। फिर १५०५ ई॰से युरोपीयोंका धावा होने लगा। पहले पोर्तुगोज और पीछे डच राजा बने। १०८६ ई॰को अंगरेजोंने उन्होंको सिंहलसे निकाल दिया था।

बर्मा, स्याम, कम्बोडिया और अनाम आदिको इन्दो-चीन कहते हैं। कम्बोडिया पर्यन्त भारतीय सभ्यता प्रबल है। लोग भारतीय वर्णमाला लिखते और बौद्ध धर्मपर चलते हैं। अनाम और पेगूमें मन-अनामकी भाषा चलती है। अनामवासी फ्रान्सीसियोंका अधिकार होनेसे पहले चीनावोंसे लड़ते भिड़ते रहे। कोचिन-चीनमें पहले चम्पाका राज्य रहा। ब्रह्म-वासियों और तलेङ्गोंमें भी पूर्व घोर युद्ध हुआ था। १७५० ई॰को अलोम्पराने तलेङ्गोंका अधिकार भङ्ग कर जो राज्य बनाया, वह १८८५ ई॰को अंगरेजोंके हाथ आया। कम्बोडियावासी मन-अनाम भाषा बोलते हैं। उनका राज्य फ्रान्सीसियोंके अधीन है। स्याम-वासी एकाक्षर चीना भाषा व्यवहार करते हैं। किन्तु वर्णमाला भारतीय है।

मलयवासी मलय-प्रायोद्वीप, यव, सुमात्रा, बोर्-नियो, फिलिपाइन, मलय-द्वीपपुञ्जके अन्य द्वीप और माडागास्करमें रहते हैं। फिर न्यूजीलैण्ड, हवाई और दक्षिणसागरके अन्य द्वीपवासी भी मलय-मिश्रित भाषा व्यवहार करते हैं। पहले मलयवासी असभ्य रहे। फिर हिन्दू सभ्यताका विकाश हुआ। ई॰ १६वें शताब्दसे पहले मुसलमानी प्रभाव पड़ा। आजकल मलयमें अरबी और यव, सुमात्रा प्रभृति द्वीपोंमें भारतीय अक्षर चलते हैं।

तिब्बत पार्वत्य देश है। मुसलमान यहां कभी नहीं पहुंचे। दलाई लामा बौद्ध धर्मके गुरु हैं। तिब्बत चीनके अधीन होते भी स्वतन्त्र है। सभ्यताका ढंग निराला है।

मङ्गोलियावासियोंकी सभ्यता चीना और भारतीय सभ्यतासे मिलकर बनी है। यह लोग नेष्टोरीय धर्मप्रचारकोंकी प्राचीन लेखनप्रणालीका अनुसरण करते हैं।

साहित्य—इन्दो-चीन, तिब्बत, मङ्गोलिया, कोरिया और मञ्चूरियाका साहित्य भारत तथा चीनके साहित्य-से बना है। चीना, संस्कृत, पाली, अरबी और फार-सीका मौखिक एवं मौलिक साहित्य मिलता है। पालीमें बुद्धकी वार्ता बहुत अच्छी लिखी गयी है। मुसलमानोंका साहित्य अरबी और फारसी है। किन्तु अंगरेजोंके भारत और जर्मनों तथा फ्रान्सीसियों आदिके एशियास्थ अन्य देश अधिकार करनेसे युरो-पीय साहित्यका चमत्कार यहां बढ़ गया है। वर्तमान युरोपीय महासमर समाप्त न होनेसे एशियामें कैसे कहा जा सकता—कहां किसका राज्य रहेगा। कारण जर्मनोंका कियाचाऊ बन्दर जापानियों और अंगरेजों-ने छीन लिया है। इधर मेसोपोटेमियामें भी अंगरेज आगे बढ़ रहे हैं। फिर रूसकी हार होनेसे तुर्कोंको कुछ पूर्व युरोपमें नया अधिकार प्राप्त हुआ है।

एसिया-माइनर—तुर्क साम्राज्यका एक प्रायोद्वीप। इसके उत्तर कृष्णसागर, पश्चिम ईजियन, दक्षिण भूमध्य सागर और उत्तर-पश्चिम बास्फोरस तथा डारडेनेलिस है। एसिया-माइनरमें पूर्व ऐसा कोई स्थान नहीं, जो सीमा माना जा सकता हो। यह उत्तर-दक्षिण ७२० मील लंबा और पूर्व-पश्चिम ४२० मील चौड़ा है। युफ्रेटिस नदीके पूर्व आरमनी तथा कुर्दिस्थानी उच्च भूमिसे निकल टरस पर्वतश्रेणी ईजियन सागरतक चली गई है। लिसियामें शिखर-की उच्चता १०५०० फीट है। बोयस, ईरिस, येके-रेख इरमक, ईलिस, सङ्गारियस एवं लिण्डकस प्रभृ-

सागर और रिनदेकस तथा माधिसतस नदी मारमोरा समुद्रमें गिरती है। आनिकस और स्कामान्दर ओदकी प्रधान नदी हैं। दूसरी नदियोंके नाम हैं—कैकस, हरमुस, कैद्रस, मैनदेर, इन्दस, स्कान्द्रस, सेङ्गस, युरिमेदन, मेलस, केलिकेनस, सिडनस, सारस और पिरेमस।

एसिया-माइनरके प्रधान ह्रद यह हैं—तुजगुल, बुलदुरगुल, अजीतुजगुल, बांगेहरगुल, इगिरदिर-गुल, इसनिकगुल, अबुल्लिओण्टगुल और मनियसगुल। इनमें पहले तीन खारी हैं।

यह प्रायोद्वीप अपने उष्ण और आकरज प्रस्रवणों-के लिये प्रसिद्ध है। उनमें प्रधान यह हैं—यमोबो ब्रूसा, चितली, तरजे, एसकीशहर, तुज्ला, अस्मा, इलिजा, हीरापोलिस, अलाशहर, तेरजिली हम्माम, इस्कालिब, सोमी और खवसा।

कारादाग़से अरगाइस् तक आग्नेयगिरिमाला पड़ी है। किन्तु आजकल उससे अग्नि नहीं निकलता। ऊंचे मैदानमें जाड़ा बहुत दिनतक रहता है। उत्तर प्रान्तपर बरफ अधिक गिरता है। उत्तर तटपर मुसलधार पानी बरसता है। पश्चिम-तटपर जलवायु सम रहता है। ग्रीष्म ऋतुमें उत्तर वायु मध्याह्नसे सायंकाल पर्यन्त चला करता है। एसिया-माइनरमें फिटकरी, सुरमे, मंजिये, कोयिले, तांबे, महाम्, सोने, लोहे, सीसे, मिकनातीसी लोहे, पारे, नमक, चांदी, गन्धक, जस्ते वग़ैरहकी खानि है। वृक्षादि जलवायु, भूमि और उच्चताके अनुसार विभिन्न हो गये हैं। उत्तरके पर्वत वृक्षोंसे भरे भरे हैं। अंगूर बहुत उपजता है। सेब, नासपाती, बेर, नीबू, नारंगी, गेहूं, रुई, अफीम, चावल, केसर और तम्बाकूकी कोई कमी नहीं। सिवास विलायतका गेहूं बहुत अच्छा होता है। ब्रूसा और अमासियाके निकट रेशम ढेरका ढेर उपजता है। पहाड़ोंमें अजर अघड़ अघड़ देख पड़ते हैं।

एसिया-माइनरमें कालीन, नादे, रुई, तम्बाकू, ऊन, रेशम, साबुन, शराब और चमड़ेका काम बनता है। अनाज, रुई, बिनौला, सूखा फल, औषध द्रव्य, सुपारी, अफीम, चावल, कालीन, गलियन, कच्चा पक्का चमड़ा, ऊन, रेशम, रेशमी कपड़ा, नब्दा, मोम, पशु और खनिज पदार्थ बाहर भेजते हैं। कहवा, रुईका कपड़ा, कांचकी चीज़, लोहालंगड़, दीयासलाई, मट्टीका तेल, नमक, चीनी वग़ैरह बाहरसे मंगाते हैं।

एसिया-माइनरमें पक्की सड़कें बहुत कम हैं। किन्तु मैदानमें प्रत्येक जगह इनकी गाड़ी चल सकती है। हैदरपाशासे इसमिद, एसकी शहर एवं अंगोर, मुदनियेसे ब्रूसे और एसकी शहरसे अफ्यूमकरहिसार, कोनिये तथा बुलगुरलोको रेलगाड़ी जाती है। उस रेलसे जर्मनोंके प्रबन्धसे चलती है। फिर स्मिरनासे एदोम एवं डिनोर, मरसिनासे तारसस तथा आदाने को जो अंगरेजी रेलवे लगी, वह फ्रान्सीसियोंके अधिकारमें पड़ी है। कोई जाति एसिया-माइनरके अधिवासियोंको आक्रमणकर निकाल भगा नहीं सकी। प्रधानतः यहां मुसलमान, ईसाई और यहूदी रहते हैं।

एसिया-माइनर यूराप और एसियाके बीच पुल-जैसा बना है। पूर्व और पश्चिमके लोग यहां प्राचीन समयसे लड़ते आये हैं। पहले आदिम अधिवासी एसिया-माइनरके अधिकारी रहे। उनके धर्म, भाषा-व्यवहार और सामाजिक कार्यमें कोई भेद न था। फिर हिटाइटोंका राज्य हुआ। बोगज़-किउई उनके वैभवका केन्द्रस्थल था। उनके बहुत चिह्न और शिलालिपि स्मिरना और यूफ्रेतसके मध्य कई स्थानोंमें मिले हैं। ई॰से पूर्व ११म एवं १०म शताब्दके मध्य यूरोपसे आर्योंका दूसरा दलमें आकर बसना बन्द हो रहा था। फ्राइजियामें आर्योंने एक राज्य संस्थापित किया। उसके चिह्न अनेक शिला-समाधियों, दुर्गों, नगरों और पौर पुराणोंमें मिलते हैं। ई॰से पूर्व ८म वा ७म शताब्द सिमरोंने फ्राइजीय शक्तिका भङ्ग किया था। फिर सिम्मेरीय बल पटमेवर लीडिया राज्य बना, जिसका केन्द्र सरदिसमें रहा। लिडियोंने हिलोयवार आक्रमण मार भगा लीडिया राज्य विस्तार किया, किन्तु ई॰से ५५० वर्ष पूर्व फारसियोंने उन्हें एसिया-माइनरसे निकाल दिया। कलिसर सूर्यने

क्रोइसस्‌ने लीडियाकी सीमा हेलिस्‌ तक पहुंचाई थी। सागरतटके यीक उपनिवेश उनके अधीन रहे। फिर ई०से ५४६ वर्ष पूर्व साइरसके सरदिस अधिकार करनेपर उक्त यीक उपनिवेश ईरानके हाथ लगे। ईरानियोंके शासनकाल यीक अपने नगर शासन करते थे। भीतरी प्रान्तकी कितनी ही जातियोंके भी अपने अपने राजा रहे। ई०से ५००-४९४ वर्ष पूर्व यीकोंने अपनी स्वाधीनता पानेकी चेष्टा की थी, किन्तु सफलता न मिली। ई०से ३३४ वर्ष पूर्व सिकन्दरने एसिया-माइनर आक्रमण किया। सिकन्दरके मरनेपर यह प्रायोद्वीप सल्युकस्‌ राजाओंके हाथ लगा था, किन्तु उनमें कोई सम्पूर्ण देश पा न सका। रोड्‌स्‌में प्रजातन्त्र पड़ा और दक्षिण एवं उत्तर सागरतट तक अधिकांश इजिप्तके टलेमियोंको मिल गया। ई०से २८३ वर्ष पूर्व परगाममें एक स्वाधीन राज्य प्रतिष्ठित हुआ, जो ई०से १३३ वर्ष पूर्व अत्तालसके रोमकोंको अपना उत्तराधिकारी बनानेतक चला। बिथिनिया स्वाधीन-साम्राज्य हो गया और कप्पादोसिया तथा पाफ्लागोनिया देशी राजाओंके अधीन शासित हुआ। दक्षिण एसिया-माइनरमें सल्युकियोंने अन्तियोक, अपामिया, अत्तालिया, लाओदीसियस और सन्द्‌सियस्‌ नगर प्रतिष्ठित किया था। ई०से २७८-२७९ वर्ष पूर्व गालिक लोगोंने बोसफोरस्‌ तथा हेलेस्पण्टको पार कर मध्य एसिया-माइनरमें केल्टिक शक्ति जमा दी। ई०से १८९ वर्ष पूर्व मानलियसने उक्त शक्तिको क्षीण देखाया। गालिक परगामस्‌के अधीन हो गये। ई०से १९० वर्ष पूर्व मेगनेसियामें अन्तियोकस्‌के हारनेपर एसिया-माइनर रोमकोंके अधीन हुआ। फिर मिथ्रडेतसोंके सहारे पोम्पयस्‌की शक्ति बढ़ी थी। किन्तु पाम्पे द्वारा निकाल बाहर किये जानेपर ई०से ६३ वर्ष पूर्व वह मर गये। फिर धीरे धीरे ईसाई धर्म फैला था। ई० ६ठें शताब्दान्त एसियामाइनरमें धन और वैभव घटा। ६११से ६२६ ई० तक ईरानी खोसरूने बिना रोकटोक इस प्रायोद्वीपपर धावा मारा और ७४ खलीफने बोसफोरस्‌ किनारे अपना डेरा डाला। किन्तु हेराक्लियसके जीतनेपर खुसरूको भागना पड़ा था। फिर ६६८ ई०को अरबियोंने कनस्तान्तिनोपल घेर लिया। किन्तु प्रतिमा भङ्ग करनेवाले सम्राटोंने अरबी आक्रमण व्यर्थ किया था। ई०के १०वें शताब्द अरबी एसिया-माइनरसे निकाल बाहर किये गये। १०६७ ई०को सेलजुक तुर्कोंने कप्पादोसिया और सिलिसियाको उजाड़ा था। १०७१ ई०को उन्होंने रोमानस डायोगेनस सम्राट्‌को बन्दी बनाया और १०८० ई०को निकियापर अपना अधिकार जमाया। उनकी एक शाखाने रुमसाम्राज्य प्रतिष्ठित किया और पहले निकिया तथा पीछे इकोनियममें राजधानीको बसा दिया। १२४३ ई०को मुगलोंने रुमके सुलतानको हरा उक्त साम्राज्य छीन लिया था। सुलतान बड़े खानके अधीन हुये। सिलजुक सुलतान बड़े विद्याप्रेमी रहे। उनके बनाये भवन बहुत सुन्दर देख पड़ते हैं। लेटिन राजाओंके सिलिसियामें आरमेनियोंको साहाय्य देनेसे छोटा आरमनी राज्य बन गया था। किन्तु १३७५ ई०को इजिप्तके सुलतान मामेलूकने ४र्थ लियोको बन्दी बना उक्त राज्यको दबा दिया। १४०० ई०को १म सुलतान बेजीदका अधिकार युफ्रेतिससे पश्चिम समग्र एसियामाइनर पर फैल गया, किन्तु १४०२ ई०को तैमूरने उन्हें हरा ईजियन सागरतट तक सम्पूर्ण देश छीन लिया। तैमूरके मरनेपर बहुत लड़ाई झगड़ेके पीछे उसमान अलीका प्रभुत्व फिर प्रतिष्ठित हुआ। २य मुहम्मदने १४५१से १४८१ ई०तक करमनिया ट्रेबिजण्डको अपने राज्यमें मिला लिया था। (तुर्की देखो।) १८३२-१८३३ ई०को इजिप्तकी फौजने इब्राहीम पाशाके अधीन सिलिसियाकी राह कोनिया और कुतायया तक धावा मारा।

एसीयादो (हिं० पु०) देशविशेष। जैन मतानुसार यह पाच्यमार नामक द्वीपोंके अन्तर्गत है।

एस्कांटो (अं० शा०) भाषाविशेष, एक जुबान। यह नूतन कल्पित भाषा युरोपमें चलती है।

एह (सं० त्रि०) आ-ईह-इन्। १ सम्यक् चेष्टायुक्त, खासी कोशिश करनेवाला। (पु०) २ क्रोध, गुस्सा। (हिं० सर्व०) ३ यह, यह।

एहतमाम (अ॰ पु॰) निरीक्षण, इन्तिजाम, देखभाल।

एहतियात (अ॰ स्त्री॰) १ दक्षता, चौकसी। २ पथ्य, परहेज।

एहसान (अ॰ पु॰) कृतज्ञता, कियेका मानना।

एहसानमन्द (अ॰ वि॰) कृतज्ञ, एहसान माननेवाला।

एहि (सं॰ स्त्री॰) आ-ईह-इन्। १ सम्यक् चेष्टा-शील स्त्री, खूब कोशिश करनेवाली औरत। (सर्व॰) २ एष, यह।

एहीड़ (सं॰ स्त्री॰) 'एहि ईड़े' शब्दोच्चारणके साथ आरम्भ होनेवाला कर्म।

एहो (हिं॰ अव्य॰) हे, ए, अरे, ओ।

ऐ

ऐ—१ संस्कृत और हिन्दीकी वर्णमालाका द्वादश अक्षर। इसका उच्चारणस्थान कण्ठ और तालु है। यह दीर्घ और प्लुत भेदसे द्विविध एवं उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध रहता है। फिर अनुनासिक और निरनुनासिक दो उच्चारण अधिक होते हैं। ऐकार परम, दिव्य, महाकुण्डलिनी, कोटिचन्द्रतुल्य, बिन्दु-त्रययुक्त और पञ्चप्राण, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र एवं सदा-शिवमय वर्ण है। (कामधेनुतन्त्र) एकारके दक्षिण भागमें मध्यदेशसे एक ऊर्ध्वगत वक्ररेखा लगाना पड़ती है। इस समस्त रेखामें चन्द्र, इन्द्र और सूर्य रहते हैं। इसकी माया दुर्गा, वाणी और सरस्वती त्रिविध शक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र) तन्त्रमें ऐकारको लज्जा, भौतिक, कान्त, वायवी, मोहिनी, विभु, दक्षा, दामो-दरप्रज्ञ, अधर, विकृतमुखी, क्षरात्मक, जगद्योनि, पर, परनिबोधकारी, ज्ञान, अनृता, कपर्दिनी, पीठेश, अग्नि, समायक, त्रिपुरा, लोहिता, राज्ञी, वाग्भव, भौतिकासन, महेश्वर, द्वादशी, विमल, सरस्वती, काम-कोट, वामजानु, अंशुमान, विजय और जटा कहते हैं। बीजवर्णाभिधानोक्त नाम दन्ताग्र और योनि है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। ऐकार अनुबन्धयुक्त यजादिगणके मध्य पठित है। उसमें ऐ सकल धातुको लिट् प्रभृति विभक्तिपर सम्प्रसारण आती है। (अव्य॰) अतीति, आ-इण्-विच्। ३ आह्वान, पुकार, ए, ओ, अरे। ४ आमन्त्रण, बुलावा, आइये। ५ स्मरण, याद। ६ सम्बोधन। ७ दूरस्थ अनुबोधक। (पु॰) एति प्राप्नोति सर्वम्। ८ महेश्वर।

ऐं (हिं॰ अव्य॰) १ क्या, सुन न पड़ा, फिर कहो। २ आश्चर्य, ताज्जुब।

ऐंचना (हिं॰ क्रि॰) १ आकर्षण करना, खींचना।

ऐंचाताना (हिं॰ वि॰) फिरी हुई आंखवाला।

ऐंचातानी (हिं॰ स्त्री॰) आकर्षण, खिंचाव, नोचखसोट।

ऐंछना (हिं॰ क्रि॰) केश परिष्कार करना, कंघी देना, झाड़ना।

ऐंठ (हिं॰ स्त्री॰) १ बल, लपेट, मरोड़। २ अभि-मान, घमण्ड। ३ अकड़, जोर। ४ हिंसा, डाह।

ऐंठन, ऐंठ देखो।

ऐंठना (हिं॰ क्रि॰) १ घुमाना, फेरना। २ बल-पूर्वक ग्रहण करना, छीन लेना। ३ छलसे लेना, ठगना। ४ घूमना, फिर जाना, बल खाना। ५ अभि-मान करना, अकड़ना।

ऐंठवाना (हिं॰ क्रि॰) ऐंठनेका काम दूसरेसे लेना, घुमवाना।

ऐंठा (हिं॰ पु॰) १ यन्त्रविशेष, एक औजार। इससे रज्जुको आवेष्टन करते हैं। वह एक काठका बनता, जिसके मध्य छिद्र रहता है। छिद्रमें एक धारदार दूसरी लकड़ी डालते, जिसके छोरसे डोरतक एक शिथिल रज्जु बांधते हैं। फिर इसके मध्य आवेष्टन-को झूलनेवाली रस्सी लगाते हैं। लकड़ीके किसी किनारे भंवर पड़ता है। छिद्रको लकड़ी फेरनेसे आवेष्टनको खानेवाली रज्जु ऐंठ जाती है। २ मद्य-चोषा।

ऐंठाम्यैंठा, ऐंठमेंठ देखो।

ऐंठान, ऐंठन देखो।

ऐंठी (हिं॰ स्त्री॰) घूमी या फिरी हुई।

ऐंडू (हिं॰ पु॰) अभिमानी पुरुष, अकड़नेवाला मनुष्य।

ऐंड़ (हिं॰ स्त्री॰) १ अभिमान, तनाव, अकड़। २ जलका आवर्त, पानीका भंवर। (वि॰) ३ आवर्त्तमान, घूमा हुआ, जो खराब पड़ गया हो।

ऐंड़दार (हिं॰ वि॰) १ अभिमानी, कुटिल, मगरूर। २ बना हुआ, बांका, नोक-झोंकवाला।

ऐंड़ना (हिं॰ क्रि॰) १ आवेष्टनको प्राप्त होना, घूम जाना, बल खाना। २ देह टूटना, अंगड़ाई आना। ३ अभिमान करना, तिरछे पड़ना। ४ आवेष्टन करना, घुमाना, ऐंठना।

ऐंड़बेंड़ (हिं॰ वि॰) बांका-तिरछा, बल खाये हुआ।

ऐंड़ा (हिं॰ वि॰) १ ऐंठा, घुमावदार। (पु॰) २ परिमाण, मान, बांट। ३ सेंध, नकब।

ऐंड़ाना (हिं॰ क्रि॰) १ अङ्गमर्द करना, अंगड़ाई भरना। २ कुटिल पड़ना, बांका-तिरछापन दिखाना, नाक-भौं चढ़ाना।

ऐंदा (हिं॰ पु॰) किसी किस्मका गंड़ासा।

ऐंधड़ा (हिं॰ पु॰) सेंध, नकब।

ऐक (सं॰ त्रि॰) एक स्वार्थे अण्। १ एकार्थबोधक, एकका सम्बन्ध रखनेवाला। २ एक सम्बन्धीय, एकही सरोकार रखनेवाला।

ऐकतान (सं॰ क्लो॰) एकतान-अण्। वाद्यविशेष। कितने ही भिन्न भिन्न जातीय वाद्ययन्त्रोंके एक स्वरमें बजाये जानेको ऐकतान कहते हैं।

ऐकतानवादन (सं॰ क्लो॰) कुछ विभिन्न जातीय यन्त्रोंका विभिन्न बाजोंके संयोगमें एककाल वादित होना, युगपत्-मिश्र, किस्मके बाजोंका एक साथ अपनी अपनी स्वरमें बजाया जाना।

शास्त्रमें लिखा पाते, कि महादेव आदि बादको कटु-तौमा, डमरू प्रभृति कई यन्त्र युगपत् बजाते थे। सुतरां इसे एक प्रकारका ऐकतानवादन कहना सङ्गत है। रामायणके राम-रावण-युद्ध, महाभारतके कुरुपाण्डव संग्राम और अपरापर पुराण तथा उपपुराणके देवासुर समरमें विविध जातीय युद्धयन्त्रोंका एककाल वादित होना वर्णित है। हम इसे भी एक प्रकारका ऐकतानवादन कह सकते हैं। किन्तु भेरिक, शंखध्वनि, वगैरह अनेक प्रकारका जो बाजा बजता, उसे विविध बाजोंका युगपत् संयोग न रहनेसे कोई ऐकतानवादन कहा नहीं सकता।

ऐकतानवादन बहिर्द्वारिक और आभ्यन्तरिक दो प्रकारका होता है। अनावृत स्थानमें बजानेको तद्-द्वारति कहते हैं। किन्तु अनावृत स्थानमें सुगन्ध रहते हैं। किन्तु गृहके अभ्यन्तरमें छुट छुद्र यन्त्र अर्थात् वंशी, वीणा, सारंगी, इसरार प्रभृति बजाना ही सुमिष्ट लगता है। विराटपर्वमें विराटराजदुहिता उत्तराको सङ्गीतशाला आभ्यन्तरिक ऐकतानवादनका उत्कृष्ट दृष्टान्तस्थल है।

हिन्दू राजा अतिप्राचीन कालसे ही ऐकतानवादनका आदर करते आये हैं। प्राचीन संस्कृतशास्त्रके व्यतीत भारतवर्षीय नाना स्थानोंके मन्दिरों और गुहा-चैत्योंपर खुदी अनेक मूर्तियां देखनेसे इसका भूरि भूरि निदर्शन मिलता है। नाना प्रकारके सङ्गीतयन्त्र उन मूर्तियोंमें अङ्कित हैं। यन्त्र, वाद्य, सङ्गीत प्रभृति शब्द देखो।

मुसलमान बादशाहोंके समय अधिकांश हिन्दुओं और अन्यान्य यवन ईरानियों, अरबियों प्रभृतिसे भी उत्तमरूप ऐकतानवादनकी वृद्धि हुयी। सम्राट् अकबरके नक़ारख़ानेमें ऐकतानवादनके लिये निम्नलिखित यन्त्र व्यवहृत होते थे—

(१) कमसे कम १८ जोड़े दमामे।

(२) बीसेक नक़ारे।

(३) चार ढोल।

(४) कमसे कम चार करनाय। यह यन्त्र स्वर्ण, रौप्य, पित्तल या अन्य किसी धातव पदार्थसे बनता है।

(५) भारतवर्षीय और पारस्यदेशीय सरनाई। ये सरनाई एक साथ बजायी जाती थीं।

(६) भारतवर्षीय, पारस्यदेशीय एवं युरोपीय नफ़ीरी।

(७) सीङ्ग्राकृति पित्तलका शृङ्गयन्त्र।

(८) बड़ी करनाय।

अकबर बादशाहने ऐकतान-वादनकी उन्नतिके लिये अपने जमाने खरमें दो सौसे अधिक गतें तैयार की थीं। उनके सामने अनेक सुविज्ञ सङ्गीतज्ञ व्यक्ति पराजय मान लेते थे। विशेषतः लोग कहते—अकबर नक़ारा बजानेमें सातिशय विचक्षण प्रसिद्ध थे।

आसिरीय और बाबिलोनीय लोगोंके देवपूजन और मङ्गलकार्यमें सङ्गीत विशेष रूपसे व्यवहृत होता था। उन देशोंकी खोदित प्रतिमूर्ति और नेबुकाडनेजारकी प्रतिष्ठित सुवर्ण-निर्मित बल देवताके निकट ससङ्गीत उपासनादिका प्रचुर प्रमाण मिलता है। यथा—

"उस समय किसी राजदूतने उच्चैःस्वरसे कहा—हे मानव! जब तुम वंशी प्रभृति शुषिर, वीणा प्रभृति तत, ढक्का प्रभृति आनद्ध और घण्टा प्रभृति घन यन्त्रका वाद्य सुनोगे, तब महाराज नेबुकाडनेजारद्वारा प्रतिष्ठित स्वर्णमूर्ति बल देवताके निकट सकल प्रणत होगे।"

(Daniel, III, 4, 5)

उक्त दोनों देशोंके राजा राजसभामें भी सङ्गीत चर्चा करते थे। कारण सुननेमें आया है—जब मिद-वंशीय राजा दरायुसने भविष्यद्वक्ता दानियालको सिंह-गह्वरमें डाल प्रासादको प्रत्यागमन किया, तब अनाहार रह और ऐकतानवादनादि न सुन रात्रिका समय बिता दिया था। (Dan, VI, 18) इससे स्पष्ट प्रतीयमान होता, कि सन्ध्याको उनके सामने ऐकतानिक सकल यन्त्र बजते थे।

आसिरीयों और बाबिलोनीयोंकी भांति जेरूसलमकी राजसभामें भी ऐकतानिक सङ्गीत होता था। दाऊद और सुलेमान दोनों राजाओंके समय यह सविशेष प्रचलित रहा। उनमें दोनोंके मन्दिरस्थ धर्मसम्बन्धीय बहुसंख्यक वादकों तथा गायकोंको छोड़ राजकीय ऐकतान भी था। दाऊदके पुत्र सुलेमान्ने पार्थिव भोगविलासकी असारता और अल्पायितापर अपने ऐकतानका उल्लेख किया,—"हमने नाना प्रकारके सङ्गीतयन्त्रोंकी भांति पुं-गायकों, स्त्री-गायिकाओं एवं उत्कृष्ट मनुष्यसन्ततियों द्वारा नानाप्रकार आनन्द उठा लिया है।" (Eccles, II, 8)

आजकल पारस्य (ईरान) देशमें हार्प (Harp) यन्त्र देख न पड़ता नहीं, किन्तु प्राचीनकाल यह ऐकतानिक यन्त्रोंमें उच्च श्रेणीका समझा जाता था। सर रबर्ट कर-पोर्टर (Sir Robert Ker-Porter)को कुरमानशाह नगरके निकटस्थ टाकिबोस्तान् पर्वतपर ऐकतान-सम्बन्धीय कितनी ही प्राचीन खोदित मूर्तियां मिली थीं। कहते—यह ई० ६ठ शताब्दके शेषको पारस्य देशीय राजा खुसरु परवेजकी स्थापित हैं। उनमें कई मूर्तियां दो सर्वः मेहराबों पर बनी हैं। आसिरीयोंकी खोदित प्रतिमूर्तियोंकी भांति दूसरी कई स्त्रियां भी नावपर चढ़ हाथ यन्त्र बजा रही हैं। बण्टिङ्ग साहबने भी पारस्यदेशीय वीणाके ऐकतान-वादन (Harp concert) पर बहुत कुछ लिखा है। (Bunting's Historical and Critical Dissertation on the Harps in his "General collection of the Ancient music of Ireland.")

ऊपर ही कहा, कि ई० के ६ठ शताब्द पारस्य देशमें ऐकतानवादन प्रचलित रहा। एतद्व्यतीत उन मूर्तियोंमें एक व्याग-पाइप बजाते देख पड़ती है। इस यन्त्रका नाम भारतवर्षीय प्राचीन सङ्गीतमें 'नागबद्ध' लिखा है। आसिरीयों, यहूदियों, रोमकों और यूनानियोंको भी उक्त यन्त्र अवगत था।

हिरोदोतस् (ई० से ४८४ वर्ष पूर्व) लिखते—मिसरीयोंके देशदेशसे वात्सरिक पर्वाह समूहके मध्य बुबस्तिस नगरमें दायाना देवीकी पूजाके लिये मेला लगता था। मेलामें स्त्रीपुरुष नौकापर चढ़ अनवरत घूमते रहे। फिर उसी समय कुछ पुरुष वंशी और कुछ स्त्री क्षुद्र ढक्का युगपत् बजाती थीं। अवशिष्ट स्त्रीपुरुष करतालिसे आनन्दसूचक भावभङ्गी प्रकाश करते रहे।

प्राचीन मिसरमें वीणा (Harp), तंबूरे और वंशी प्रभृति यन्त्रके सहयोगसे ऐकतानवादनकी प्रथा प्रचलित थी। बानिस और थिबेस नगरकी शिलालेखोंमें इसका एक खोदित दृश्य विद्यमान है। लेप्सियस् बताते, कि प्राचीन मिसरीय केवल कुछ यन्त्रियोंके द्वारा ही ऐकतानवादन कराते थे। (Lepsius's Egyptian Antiquities) सबसे ऐकतानका एक खोदित दृश्य

निज-निजासिद्धके सम्बन्धमें समाधिमें मिला है। ऐतिहासिकोंके मतसे उस ढङ्ग ई॰से २००० वत्सर पूर्वका होगा।

ऐकध्य (सं॰ अव्य॰) १ एक ही काल, साथ-साथ। (क्ली॰) २ समयका संयोग, वक्तका मेल।

ऐकपत्य (सं॰ क्ली॰) एकपतेर्भावः, ष्यञ्। १ एकपतित्व, पूरी बादशाही। २ एकाधिपत्य, अकेला इख्तियार।

ऐकपदिक (सं॰ त्रि॰) एकस्मिन् पदे भवः, एकपद-ठञ्। १ एकपदस्थ, किसी मामूली लफ्ज़से निकलनेवाला। २ एकस्थानोत्पन्न, उसी जगहसे पैदा। (क्ली॰) ३ वाक्यविशेष।

ऐकपद्य (सं॰ क्ली॰) एकपदस्य भावः, एकपद-ष्यञ्। शब्दोंका संयोग, लफ्ज़ोंका मिलाप।

ऐकभाव्य (सं॰ क्ली॰) एको भावो यस्य तस्य भावः, एकभाव-ष्यञ्। एकस्वभावता, फ़ितरतका एकपन।

ऐकमत्य (सं॰ क्ली॰) एकं मतं येषां तेषां भावः, एकमत-ष्यञ्। १ एकरूप अभिप्राय, मक़सदका मेल। २ समान सम्मति, मिलती-जुलती राय। (त्रि॰) एकमत्यसम्बन्धि, अण्। ३ एकमतयुक्त, वही राय देनेवाला।

ऐकराज्य (सं॰ क्ली॰) एकराजस्य भावः, एकराज-ष्यञ्। एकाधिपत्य, बादशाही।

ऐकसव्य (सं॰ पु॰) एकसोः अपत्यम्, एकसु-ण्य। एकसु नामक ऋषिके पुत्र।

ऐकवाक्य (सं॰ क्ली॰) एकवाक्यस्य भावः, एकवाक्य-ष्यञ्। १ एकवाक्यता, वही बोली। २ एक विषयमें बहुजनके मतकी एकता, किसी बातपर बहुतसे लोगोंकी रायका मिलना।

ऐकशतिक (सं॰ त्रि॰) एकशतमस्त्यस्मिन्, एकशत-ठञ्। एकशतसंख्यक वस्तु रखनेवाला, जिसके पास १०१ चीज़ रहें।

ऐकात्म (सं॰ त्रि॰) एकात्मन इदम्, एकात्म-अण्। १ जुड़े जुड़े पदार्थ सम्बन्ध रखनेवाला, जो सबको एकत्वकी शक्लमें स्वीकार करता हो। (क्ली॰) २ सर्वात्म-भूत, सबका जी।

ऐकश्रुत्य (सं॰ क्ली॰) एका श्रुतिर्यत्र तस्य भावः, ऐकश्रुत-ष्यञ्। उदात्त, अनुदात्त एवं स्वरित त्रिविध स्वरके अविकल्पका शब्द, एक ही जैसी सुन पड़नेवाली आवाज़।

ऐकसहस्रिक (सं॰ त्रि॰) एकसहस्रमस्त्यस्मिन्, एकसहस्र-ठञ्। एकसहस्र संख्यक वस्तुयुक्त, १००१ चीज़ें रखनेवाला।

ऐकस्वर्य (सं॰ क्ली॰) स्वरकी एकता, आवाज़का एकपना।

ऐकागारिक (सं॰ त्रि॰) एकमसहायमगारं प्रयोजनमस्य, एकागार-ठक् निपातनात् साधुः। ऐकागारिकट् चौरे। पा ५।१।११३। १ एक मकानवाला, उसी घरमें रहनेवाला। (पु॰) २ चोर, डाकू।

ऐकाग्र (सं॰ त्रि॰) एकाग्र स्वार्थे अण्। एकाग्रचित्त, जो अपना दिल एक ही बातमें लगाये हो।

ऐकाग्र्य (सं॰ क्ली॰) एकाग्रस्य भावः, एकाग्र-ष्यञ्। एकाग्रचित्तता, दिलका एक ही ओरको झुकाव।

ऐकाङ्ग्य (सं॰ क्ली॰) एकाङ्गस्य भावः, एकाङ्ग-ष्यञ्। १ एकाङ्गता। २ शरीरका साम्य, जिस्मकी बराबरी। (पु॰) ३ शरीररक्षक सिपाही।

ऐकात्म्य (सं॰ क्ली॰) एक आत्मा स्वरूपं यस्य तस्य भावः, एकात्म-ष्यञ्। १ ऐक्य, मेल। २ एकस्वरूपता, हमशक्ली।

ऐकादशिन् (सं॰ त्रि॰) एकादशानां सङ्घम्, एकादश-इनि। एकादशपश-सम्बन्धीय, ग्यारहके ढेरसे ताल्लुक़ रखनेवाला।

ऐकाधिकरण्य (सं॰ क्ली॰) एकाधिकरणस्य भावः, एकाधिकरण-ष्यञ्। १ समानाधिकरणता, रिश्तेकी जोड़। २ तुल्य विभक्तियुक्त पदद्वयके अर्थका अभेद-बोधकत्व।

ऐकान्तिक (सं॰ त्रि॰) एकान्तमवश्यम्भावी, एकान्त-ठञ्। १ निश्चित, बेफ़िक्र। २ अगाध, मोटा, बड़ा। ३ दृढ़, मज़बूत। ४ अत्यन्त, बहुत, ज़्यादा। ५ पूर्ण, पूरा।

ऐकान्यिक (सं॰ त्रि॰) एकमन्यत् दुष्टं अध्ययने अस्य, ठक्। ऐकान्यिकं तत्र। पा ४।४।६३। अध्ययनमें

समय विपरीत उच्चारण करनेवाला, जो पढ़ते वक्त उलटा बोलता हो।

ऐकार्थ्य (सं० स्त्री०) एकार्थस्य भावः, एकार्थ-ष्यञ्। अर्थका ऐक्य, मानेकी तौहीद।

ऐकाह्निक (सं० त्रि०) एकाह्ने भवम्, एकाह्न-ठक्। १ एक दिन साध्य, एक रोज़में होनेवाला। २ एक दिनके अन्तरसे उत्पन्न, जो एक रोज़के फ़र्क़से पैदा हो।

ऐकाह्निक ज्वर (सं० पु०) एकाह्नभवो ठक्, ऐकाह्निको ज्वरः, कर्मधा०। एक दिन छोड़के आनेवाला ज्वर, जो बुख़ार एक रोज़ रहकर चढ़ता हो। काकजङ्घा, बला, श्यामा, ब्रह्मदण्डी, कृताञ्जलि, पृश्निपर्णी, अपामार्ग या भृङ्गराजका मूल पुष्यानक्षत्रमें यत्नपूर्वक उखाड़ लाल सूतसे रोगीके गले या हाथमें बांध देनेपर ऐकाह्निक ज्वर छूट जाता है।

ऐक्ट, एक्ट देखो।

ऐक्टर (अं० पु० = Actor) नाटकका पात्र, स्वांगका खेलाड़ी।

ऐक्य (सं० स्त्री०) एकस्य भावः, एक-ष्यञ्। १ एकता, तौहीद। २ सादृश्य, बराबरी। ३ मेल। ४ परमात्मा और जीवात्माका संयोग। ५ संयुक्त राशि। ६ राशियोंके दैर्घ्य और गाम्भीर्यका गुणनफल।

ऐक्षव (सं० त्रि०) इक्षोर्विकारः, इक्षु अण्। १ इक्षुसे उत्पन्न, ऊखसे सरोकार रखनेवाला। (स्त्री०) २ इक्षुविकार, गुड़ादि, चीनी वगैरह।

ऐक्षव्य (सं० त्रि०) इक्षु-सम्बन्धीय, ऊखसे पैदा।

ऐक्षुक (सं० त्रि०) इक्षौ साधु, इक्षु-ठक्, निपातनात् साधुः। १ इक्षुवर्धक, ऊखके लिये अच्छा। २ इक्षु उत्पन्न करनेवाला, जो ऊख उपजाता हो। (पु०) ३ इक्षु वहनकारी, ऊख ले जानेवाला।

ऐक्षुभारिक (सं० त्रि०) इक्षुभारं वहति, इक्षुभार-ठक्। इक्षुवाहक, ऊखका बोझ ढोनेवाला।

ऐक्ष्वाक (सं० पु०) इक्ष्वाकोरपत्यम्, इक्ष्वाकु-अण्। १ इक्ष्वाकुका सन्तान। पुरुकुत्स और दशरथको ऐक्ष्वाक कहते हैं। (त्रि०) २ इक्ष्वाकु-वंशीय, इक्ष्वाकुसे तअल्लुक़ रखनेवाला।

ऐक्ष्वाकु (सं० पु०) इक्ष्वाकुका सन्तान। त्रिशङ्कु और रामको ऐक्ष्वाकु कहते हैं।

ऐगन (हिं०) अगुन देखो।

ऐगन—चीन साम्राज्यस्थ उत्तर मंचूरियाके हीलङ्ग-कियङ्ग प्रान्तका एक नगर। यह अमूर नदीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। निकटस्थ भूमि उर्वरा है। अनाज, तेल और तम्बाकूका व्यवसाय होता है। १८०० ई०को बाक्सर-युद्धके समय ऐगन सामरिक कार्योंका केन्द्रस्थल था। लोकसंख्या प्रायः २०००० है। सौ दो सौ मुसलमान भी रहते हैं। पहले यह अमूर नदीके वाम तटपर अवस्थित रहा, किन्तु १६८४ ई०को वहांसे हटा दक्षिण तटपर बसाया गया। १८५७ ई०को इस नगरमें चीनावों और रूसियोंमें एक सन्धि हुई थी। उसीसे अमूर नदीका वाम तट रूसियोंके अधीन हुआ।

ऐगाल—बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ा ज़िलेके मन्दिर-परिचारक। यह अकोला तहसीलमें पाये जाते और अपनी उत्पत्ति कश्यप तथा वशिष्ठसे बताते हैं। सम्भवतः ऐगल कोङ्कणसे आ कर बसे हैं। कारवारके कोङ्कणोंमें विवाहादि होता है। तिरुपतीके वेङ्कटरमण इनके कुलदेवता हैं। यह कोङ्कणी और कनाड़ी दोनों भाषायें बोलते हैं। जंगलसे फूल तोड़ मन्दिरोंमें पहुंचाना इनका काम है। गोविन्दराजपट्टनस्थ तैलङ्ग रामानुज ब्राह्मण तातयाचारी इनके दीक्षागुरु हैं। इनमें विधवा-विवाहकी प्रथा नहीं। शव जलाया जाता है। सामाजिक विवाद मन्दिरके मुखिया निबटाते हैं। कुछ लोग अपने लड़के स्कूल भेजते, जहां वह कनाड़ी पढ़ते हैं। झाड़ फूंक और जादू टोनेपर इन्हें विश्वास है। गोकर्ण भिन्न दूसरे स्थानीय तीर्थको यह यात्रा नहीं करते। ऐगाल बड़ी मक्कारीसे रहते हैं।

ऐङ्गुद (सं० क्ली०) इङ्गुद्याः इदम्, इङ्गुदी-अण्। १ इङ्गुदी वृक्षका फल। इस फलसे जो तेल निकलता, वह ऋषियोंके व्यवहारमें आता था। (पु०) २ इङ्गुदी वृक्ष। (त्रि०) ३ इङ्गुदी वृक्षसे उत्पन्न।

ऐच्छिक (सं० त्रि०) इच्छया निर्वृत्तम्, इच्छा-ठक्। इच्छाधीन, मर्जीसे होनेवाला।

ऐजन (अ॰ अव्य॰) तथा, वैसा ही। बहुधा व्यापारी किसी चिट्ठीकी बात-बात न लिख उसकी बात लिखाने और उसके नीचे ऐजन लगाते हैं। इससे एक चिह्न बार बार लिखा समझा जाता है।

ऐड (सं॰ पु॰) एडा अपत्यम्, एडा-अण्। १ एडा गन्धयुक्त अध्याय या अनुवाक। २ एडाके पुत्र पुरूरवा। (त्रि॰) ३ इलकारक पदार्थयुक्त। ४ एडा सम्बन्धीय।

ऐडूक (सं॰ पु॰) एडूक स्वार्थे अण्। १ मेढाकार धातुविशेष, किसी किस्मका मेढ़ा। (त्रि॰) २ मेढ़-सम्बन्धीय, एडूक सदृश धातुयुक्त।

ऐडमिरल (अं॰ पु॰—Admiral) बेड़ेका अध्यक्ष, जहाजी फौजका बड़ा अफसर।

ऐडविड (सं॰ पु॰) १ कुबेर। २ दशरथ राजाके एक पुत्र।

ऐडवोकेट (अं॰ पु॰—Advocate) न्यायालयमें वादार्थ-वक्ता, मुख्तार, वकील।

ऐडवोकेट-जनरल (अं॰ पु॰—Advocate-general) हाइकोर्टका बड़ा सरकारी वकील।

ऐडूक (सं॰ क्ली॰) एडूक एव, स्वार्थे अण्। अस्थि और तुच्छ द्रव्यकी भित्ति, हड्डी और कूड़ेकी दीवार।

ऐण (सं॰ त्रि॰) एणस्य इदम्, एण-अण्। १ मृग-सम्बन्धीय, काले हिरनसे पैदा।

ऐणिक (सं॰ त्रि॰) एणं मृगं हन्ति, एण-ठञ्। मृगहन्ता, काले हिरनका शिकार करनेवाला।

ऐणीपचन (सं॰ त्रि॰) एणीपचनदेशभवः, एणीपचन-अण्। एणीपचन देशीय। एणीपचन देखो।

ऐणेय (सं॰ त्रि॰) एण्या इदम्, एणी-ढक्। १ कृष्णसार मृगीसे उत्पन्न, काली हिरनीसे पैदा। (पु॰) २ कृष्ण-सारमृग, काला हिरन। (क्ली॰) ३ रतिबन्धविशेष।

ऐणेयक (सं॰ क्ली॰) अनवालुक।

ऐतिशायन (सं॰ पु॰) वेदकी एक शाखा।

ऐतदात्म्य (सं॰ क्ली॰) एक पदार्थसे तादात्म्यता रखनेका भाव।

ऐतरेय (वै॰ पु॰) ऋग्वेदकी एक शाखा। भाष्य-कारोंके मतसे महिदास ऐतरेय नामक एक ऋषि इस शाखाके प्रवर्तक हैं। छान्दोग्योपनिषद्में लिखा है, कि महिदास ऐतरेयने पूर्णज्ञान लाभ किया था।

भाष्यकार शङ्कराचार्यके मतसे 'इतराया अपत्यं ऐतरेयः' अर्थात् इतराके अपत्यको ऐतरेय कहते हैं।

सायणाचार्यने ऐतरेय-ब्राह्मणके भाष्यकी उपक्रम-णिकामें महिदास ऐतरेयका परिचय इस प्रकार दिया है—

"किसी महर्षिके अनेक पत्नियां रहीं। उनमें एकका नाम इतरा था। उनके महिदास नामक एक पुत्र हुआ। 'अन्त्यकाण्डमें' इन्हींको 'महिदास ऐतरेय' कहा है। महर्षि अपर पत्नियोंको बहुत चाहते, किन्तु महिदाससे दूर रहते थे। किसी यज्ञसभामें उन्होंने महिदासकी उपेक्षा कर अपर पुत्र गोद पर बैठा लिये। इतराने अपने पुत्रका म्लानमुख देख कुलदेवता भूमिसे प्रार्थना की थी। उसी समय भूमि-देवता दिव्यमूर्ति धारण कर यज्ञसभामें आविर्भूत हुईं। उन्होंने महिदासको दिव्य सिंहासनपर बैठा कर दिया था—तुम सकल पुत्रोंकी अपेक्षा अधिक पण्डित होगे और ऐतरेय-ब्राह्मण प्रतिभासन कर होगे।" आजकल ऐतरेय-शाखाका ऐतरेय-ब्राह्मण, ऐतरेय-आरण्यक और ऐतरेय उपनिषत् पुस्तक मिलता है।

ऐतरेयक, ऐतरेय देखो।

ऐतरेयब्राह्मण (सं॰ क्ली॰) ऋग्वेदका एक ब्राह्मण। इसमें होताका कार्य निर्दिष्ट है। ऐतरेय ब्राह्मण ४० अध्याय ८ पञ्चिकामें विभक्त है। वेद और ब्राह्मण देखो।

ऐतरेयी (सं॰ पु॰) ऐतरेय-ब्राह्मण पढ़नेवाला।

ऐतरेयोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) ऐतरेय आरण्यककी एक उपनिषत्।

ऐतश (सं॰ पु॰) भृगुवंशीय एक मुनि। इन्होंने ही 'ऐतश प्रलाप' नामक वैदिक ग्रन्थ बनाया था।

ऐतशायन (सं॰ पु॰) ऐतशके सन्तान।

ऐतावाड खुर्द—बम्बई प्रान्तके सतारा ज़िलेका एक ग्राम। यह ग्राम वलवाके प्रधान नगर इससे दक्षिण ७ मील पड़ता है। मालखेडके राष्ट्रकूट कृष्णराजने ताम्रपत्रोंसे ९०१ शकको ब्राह्मणोंको भूमिदान किया, उसमें इसका नाम भी दिया है।

इस विषयका शिलालेख कोल्हापुर राज्यके सामानगढ़में मिला है। उसमें ऐताबाड़-खुर्द ग्राम, जो दी हुई भूमि की उत्तर सीमा बताया गया है।

ऐतिकायन (सं० पु०) इतिकस्य ऋषेरपत्यम्, इतिक-फक्। इतिक ऋषिके सन्तान।

ऐतिशायन (सं० पु०) इतिशस्य ऋषेरपत्यम्, इतिश-फक्। इतिश ऋषिके सन्तान। यह एक संस्कृतके प्राचीन विद्वान् थे। मीमांसासूत्रमें इनका नाम आया है।

ऐतिहासिक (सं० वि०) इतिहासादागतः, इतिहास-ठक्। १ इतिहास ग्रन्थसे समझ पड़नेवाला, जो तारीखसे मालूम हो। २ इतिहासवेत्ता, तारीखको जाननेवाला। ३ इतिहासपाठक, तारीख पढ़नेवाला।

ऐतिह्य (सं० क्ली०) इतिह स्वार्थे ष्यञ्। अनन्तावसथेतिह-भेषजाञ्ञ्यः। पा ५।४।२३। पारम्पर्य उपदेश, पुरानी नसीहत। जो बात बहुत दिनसे सुननेमें आती, वह ऐतिह्य कहाती है।

"ऐतिह्यं नाम आप्तोपदेशो वेदादिः।" (चरक)

पौराणिकोंके मतमें ऐतिह्य एक प्रमाण है। वटके वृक्षमें यक्षिणी रहनेका परम्परागत उक्त वाक्य ही ऐतिह्य प्रमाण है।

ऐदंयुगीन (सं० वि०) अस्मिन् युगे साधुः, इदंयुग-खञ्। इस युगके उपयोगी।

ऐध् (सं० स्त्री०) अग्निशिखा, लपट।

ऐध (सं० पु०) ऐध् देखो।

ऐन (अ० वि०) १ उपयुक्त, दुरुस्त, ठीक। २ पूर्ण, पूरा। (हिं०) अयन और एन देखो।

ऐन-उद्-दीन—बीजापुरके एक शेख। इन्होंने 'सुलहकात' और 'किताब-उल्-अनवार' नामक दो ग्रन्थ लिखे हैं। उक्त दोनों ग्रन्थोंमें भारतके समस्त मुसलमान-साधुओंका इतिहास है। सुलतान् अला-उद्-दीन हसन बाह्मनीके समय यह विद्यमान रहे।

ऐन-उल्-मुल्क—१ मीरातुके एक अधिवासी। इनका उपाधि हकीम रहा। बादशाह अकबरके समय यह एक उच्च पदपर प्रतिष्ठित थे। इनकी कविता बहुत रसीली होती थी। उपनाम 'वफा' रहा। १५८४ ई०को हकीम साहब इस दुनियासे चलते बने।

२ दिल्लीवाले बादशाह सुलतान् मुहम्मद शाह तुग़लक् और सुलतान फीरोज़ शाहके एक दरबारी। इनका उपाधि एयाला रहा। इनके बनाये 'तरसील ऐन-उल्-मुल्की' और 'फतेहनामा' नामक दो पुस्तक विद्यमान हैं। फतेहनामेमें इन्होंने सुलतान अला-उद्-दीन्के विजयका वर्णन किया है।

३ बीजापुर-नवाब आदिल शाहके भाई इस्माइलके एक रिसालदार। १५८२ ई०को बुरहान निज़ाम शाहको उरा आदिलशाहने दक्षिणकी ओर कर्णाटक और समथार पर आक्रमण मारा था। किन्तु अपने भाई इस्माइलके बलवा करने पर उन्हें पीछे लौटना पड़ा। युद्ध होनेपर मीराजकी फौज इस्माइलसे मिल गई। बैलगांवको भेजी फौज बिना आसाके बीजापुर लौट आयी थी। ऐन्-उल्-मुल्क भी अपनी १० हजार फौजके साथ उनसे मिले और राजधानी पर आक्रमण मारने को आगे बढ़े। किन्तु यह युद्धमें मारे गये। १५४२ ई०को भी इन्होंने बीजापुर घेर लिया था, किन्तु विजयनगर-नरेशके भाई वेङ्कटाद्रिने इन्हें युद्धमें परास्त किया। यह रातको रण छोड़ अहमदनगर भाग आये थे। बीजापुरमें पूर्व बादशा-पुर-फाटकसे १५०० गज दूर ऐन-उल्-मुल्ककी कब्र बनी है।

४ गुजरातके एक सूबेदार। इनका उपाधि मुलतानी रहा। अलफ खांके जानेसे गुजरातमें मुसलमानी हुकूमत छिन गई थी। बलवा दबानेको कमाल्-उद्-दीनके भेजे मुबारक खिलजी लड़ाईमें काम आये। किन्तु १३१८ ई०को ऐन-उल्-मुल्क मुलतानीने बड़ी फौजके साथ पहुंच शान्ति स्थापित की थी। १३०६ ई०के समय यह मालवेके मालिक रहे। उसी समय बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ी ज़िलेवाले देवगिरिके रामचन्द्रने उपद्रव उठाया था। अला-उद्-दीन्ने इनको मलिक काफूर की एक भारी फौजके साथ दाक्षिणात्य दबाने भेजा। राहमें इन्होंने भी अपनी फौज उसकी सहायताके लिये साथ कर दी।

ऐनक (हिं० स्त्री०) उपनेत्र, चश्मा।

ऐनस (सं० क्ली०) एन एव स्वार्थे अण्। पाप, गुनाह।

ऐना (हिं०) आईना देखो।

ऐनापुर—बम्बई प्रान्तके बेलगांव जिलेका एक ग्राम। यह अथनी-कागवाड़ सड़कपर अथनीसे कोई १२ मील दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है। ग्राममें बाहर स्थापित और एक तालाबके पास मुसलमान-साधु और कामोंकी कब्र है। १६३८ ई०को फरांसीसी पर्यटक मान्देसलो (Mandelslo) यहां आये थे। उन्होंने एनापौर (Eynapour) नाम लिखा है। १७९१ ई०को कप्तान मूर (Captain Moor) महाराष्ट्रोंके सहायक बन टीपूसे लड़ने पहुंचे। उनकी वर्णनाके अनुसार ऐनापुरमें मुसलमान अधिक रहते और अच्छे-अच्छे मकान् बने थे। १८४२ ई०को यह ग्राम दूसरे ८ ग्रामोंके साथ अंगरेजोंके हाथ लगा। कारण मौजा दूसरोंके ग्रामोंके प्रतिनिधि गोपालराव किसी उत्तराधिकारीके स्वीकार न करने पर नीलाम किया था।

ऐनि—सूर्यके पुत्र। सूर्यवंशको ऐनिवंश भी कहते हैं।

ऐनीता (हिं० पु०) मर्कटको दर्पण दिखानेका काम। यह कलन्दरोंकी भाषा है।

ऐनू—जापानके उत्तर द्वीपवासी एक जाति। पहले यह और कुराइलमें भी पाये थे। फिर जापानके प्रधान होने पर इन लोगोंमें रहनेवाले कोरोपोक गुरुओंको इन्होंने मार भगाया। किन्तु जापानियोंके दक्षिण तथा पश्चिमसे आ पहुंचनेपर इन्हें येजूमें जाकर रहना पड़ा था। यह प्रायः बहुत पोले और मोटे-मुटेले रहते हैं। जापानियोंसे ऐनू लम्बे होते हैं। जापान सबसे इनकी दाढ़ी-मूंछ खूब बड़ी रहती है। स्त्रियां मुंह, हाथ और माथेपर गोदना गोदाती हैं। वल्कलका वस्त्र पहना जाता है। जाड़ेमें चमड़ेमें धारकर शरीरपर डालते हैं। स्त्री और पुरुष दोनो कानमें पहनते हैं। लिखना-पढ़ना कोई नहीं जानता। इनके विश्वासानुसार पृथिवी एक मत्स्यके पृष्ठपर स्थित है। भालूके शिकारको मुख्य माना है। यह भालूको पूजते हैं। ऐनू भोजन करनेमें पहले देवताओंको धन्यवाद देते और तोनोंसे बदलेमें पवित्रता लाभ करते हैं। इसमें एक और किसी व्यवसायोंका मानदण्ड काटते नहीं। मारना-पीटना भी बड़ी मना रही। कोई स्त्रियोंका वध करनेसे नाक कान काटे जानेका दण्ड पाता था। यह अपरिचित व्यक्तिका बड़ा आदर-सत्कार करते हैं।

ऐनूर मारियम्मी—मद्रास राज्यका सरकारी जंगल। क्षेत्रफल १० वर्ग मील है।

ऐन्दव (सं० क्ली०) इन्दु-देवता अस्य, इन्दु-अण्। १ मृगशिरा नक्षत्र। २ चान्द्रायण नामक व्रतविशेष। ३ चान्द्रमास। (त्रि०) ४ चन्द्र-सम्बन्धीय।

ऐन्दवी (सं० स्त्री०) ऐन्दव-ङीप्। सोमराजी, बाकुची, काकोली।

ऐन्द्र (सं० क्ली०) इन्द्रो देवता अस्य, इन्द्र-अण्। १ ज्येष्ठा नक्षत्र। २ शूकविशेष, एक शाक। इसे साधारणतः जङ्गली अदरक कहते हैं। संस्कृत पर्याय वनार्द्रका, वनजा और अरण्यार्द्रका है। यह कटु, उष्ण और रुचि, बल एवं अग्निकारक है। (राजनिघण्टु) (त्रि०) ३ इन्द्र-सम्बन्धीय। ४ इन्द्रके यहं आह्वान। (पु०) ५ इन्द्रके पुत्र जयन्त, अर्जुन एवं वालि वानर प्रभृति। ६ इन्द्रकृत व्याकरण। ७ हुदिका नाम। ८ देववर्ष तम।

ऐन्द्रजालिक (सं० पु०) इन्द्रजालेन क्रीड़तीति, इन्द्रजाल-ठक्। १ इन्द्रजालकारक, बाजीगर। इसका संस्कृत पर्याय—प्रतिहारक, मायाकारक, कौतुकिक, मायावी, व्यंसक, मायी और मायिक है। (त्रि) २ इन्द्रजाल-सम्बन्धीय, बाजीगरीसे सरोकार रखनेवाला।

ऐन्द्रतुरीय (सं० क्ली०) यज्ञदानविशेष। इसका चतुर्थांश इन्द्रको दिया जाता है।

ऐन्द्रद्युम्न (सं० क्ली०) इन्द्रद्युम्नमधिकृत्य कृतमाख्यानम्, इन्द्रद्युम्न-अण्। इन्द्रद्युम्न राजाके वृत्तान्तसे घटित महाभारतका एक आख्यान।

ऐन्द्रयव (सं० पु०) इन्द्रयव, इंदरजव।

ऐन्द्रलुप्तिक (सं० त्रि०) इन्द्रलुप्त-ठक्। इन्द्रलुप्त रोगविशिष्ट, गंजा।

ऐन्द्रवायव (सं० त्रि०) इन्द्रवायू देवते अस्य, इन्द्र-वायु-अण्। इन्द्र-वायुसम्बन्धीय।

ऐन्द्रवारुणी (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी लता, कड़वी खीरा।

ऐन्द्रशर्मि (सं० पु०) इन्द्रशर्मणो ऽपत्यं पुमान्, इञ्। इन्द्रशर्मा राजाके पुत्र।

ऐन्द्रशिर (सं० पु०) हस्तिविशेष, एक हाथी। (रामायण २।७०।२२)

ऐन्द्रसेनि (सं० पु०) इन्द्रसेनस्य अपत्यं पुमान्, इञ्। इन्द्रसेन नामक नरपतिके पुत्र।

ऐन्द्राग्न (सं० त्रि०) इन्द्राग्नी देवते अस्य, अण्। १ इन्द्राग्नि-सम्बन्धीय। २ इन्द्र एवं अग्निके उद्देश्यसे आहुत।

ऐन्द्रानैर्ऋत (सं० त्रि०) इन्द्र एवं निर्ऋतसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रापौष्ण (सं० त्रि०) इन्द्रापूषणौ देवते अस्य, अण् उपधा अतो लोपश्च। १ इन्द्र एवं सूर्य-सम्बन्धीय। २ इन्द्र और सूर्यके उद्देश्यसे आहुत हविः प्रभृति।

ऐन्द्राबार्हस्पत्य (सं० त्रि०) इन्द्र और बृहस्पतिसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रामारुत (सं० त्रि०) इन्द्र और मरुतसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रायुध (सं० त्रि०) इन्द्रप्रदत्तं आयुधं यस्य, बहुव्री०। १ इन्द्रप्रदत्त अस्त्रविशिष्ट। २ इन्द्रके धनुर्बाणसे सम्बन्ध रखनेवाला।

ऐन्द्रावरुण (सं० त्रि०) इन्द्र एवं वरुणके निमित्त पवित्र।

ऐन्द्राविष्णव (सं० त्रि०) इन्द्रविष्णू देवते अस्य, अण्। इन्द्र एवं विष्णु सम्बन्धीय।

ऐन्द्रासौम्य (सं० त्रि०) इन्द्रसोमौ देवते अस्य, ण्यञ्। इन्द्र एवं सोम-सम्बन्धीय।

ऐन्द्रि (सं० पु०) इन्द्रस्यापत्यं पुमान्, इन्द्र-इञ्। १ इन्द्रपुत्र जयन्त। २ अर्जुन। ३ वालि वानर। ४ काक, कौवा।

ऐन्द्रिय (सं० त्रि०) इन्द्रियेण प्रकाश्यते, इन्द्रिय-अण्। १ इन्द्रिय-सम्बन्धीय। २ इन्द्रिय द्वारा ज्ञातव्य, मालूम पड़नेवाला। (क्लो०) ३ इन्द्रियग्राम। ४ आयुर्वेदका अंशविशेष। इसमें इन्द्रियोंका ही विषय वर्णित है।

ऐन्द्रियक (सं० त्रि०) इन्द्रियेण अनुभूयते, इन्द्रिय-वुञ्। १ प्रत्यक्ष, समझ पड़नेवाला। २ इन्द्रियग्राह्य। (पु०) ३ इन्द्रियाश्रित व्याधिविशेष। शब्दादि विषयके मिथ्यायोग, अतियोग वा अयोगसे जो रोग हो जाता, वह ऐन्द्रियक कहलाता है। (चरक)

ऐन्द्रियेधी (सं० त्रि०) केवल इन्द्रियसुखकी चिन्ता रखनेवाला।

ऐन्द्री (सं० स्त्री०) इन्द्रस्य इयम्, इन्द्र-अण्-ङीप्। १ शची, इन्द्रकी पत्नी। २ दुर्गा। ३ इन्द्रवारुणी, ककड़ी। ४ पूर्वदिक्। ५ एला, इलायची। ६ गोरक्ष-कर्कटी।

ऐन्द्रीफल (सं० क्ली०) इन्द्रवारुणीफल, ककड़ी।

ऐन्द्रीरसायन (सं० क्ली०) रसायनविशेष। यह ऐन्द्री, मत्स्याक्षी, ब्रह्मसुवर्चला तथा शङ्खपुष्पी तीन-तीन यव, स्वर्ण दो यव और विष एक तिल एवं घृत एक पल डालनेसे बनता है। (चरक)

ऐन्धन (सं० त्रि०) इन्धनस्य इदम्, इन्धन-अण्। इन्धन-सम्बन्धीय, जलानेकी लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

ऐभायन (सं० पु०) इभस्य ऋषेरपत्यं पुमान्, फक्। इभ नामक ऋषिके सन्तान।

ऐम्य (सं० त्रि०) इने सूर्ये स्वामिनि वा भवः, इन-ण्य। १ सूर्यभव। २ स्वामिभव।

३ निम्नश्रेणीकी एक जाति। यह लोग दाक्षिणात्यके कुर्गप्रदेशमें रहते हैं। बढ़ई और लोहारका काम इनके जीविका-निर्वाहका द्वार है। आचार-व्यवहार कोड़गों-जैसा रहता है।

ऐपन (हिं० पु०) चावल और हलदीको एकसाथ पीसकर बनाया हुआ लेपन। यह माङ्गलिक द्रव्य समझा और देवार्चनमें रखा जाता है। इससे कलश आदिपर थापें लगाते हैं।

ऐब (अ० पु०) १ दोष, बुराई, खराबी। २ अवगुण, बुरी आदत। छिद्रान्वेषण करनेवालेको 'ऐबजो' और छिद्रान्वेषणको 'ऐबजोई' कहते हैं।

ऐवारा (हिं० पु०) १ मवेशी रखनेका स्थान, जिस बाड़ेमें भेड़ बकरे रहें। २ गोठाड़, पशुओंके बांधने रखनेकी जगह।

चन्द्रवंशीय राजा थे। (हिं० पु०) २ जलप्लावन, बाढ़। ३ आधिक्य, बढ़ती। ४ कोलाहल, हल्ला।

ऐलक, एलक देखो।

ऐलव (सं० पु०) कोलाहल, शोर, हल्ला।

ऐलवकार (सं० त्रि०) १ कोलाहलकारी, शोर मचानेवाला। (पु०) २ बदरका कुत्ता।

ऐलवृद (सं० त्रि०) खाद्य लानेवाला, जो खाना लाता हो।

ऐलवालुक (सं० क्ली०) एलवालुक स्वार्थे अण्। एलवालुका, एक अतर। एलवालुक देखो।

ऐलविल (सं० पु०) इलविलाया अपत्यं पुमान्, इलविल-अण्। इलविला-पुत्र, कुबेर।

ऐला (सं० स्त्री०) नदीविशेष। (महाभारत० बदरीमा० २२८०)

ऐलाक (सं० त्रि०) ऐलाक्यस्य छात्रः अण्, यञ्, लोपः। ऐलाक्यसे विद्या-पढ़नेवाला।

ऐलिक (सं० पु०) इलिन्दां भवः, ठक्। तंसु नामक राजा। यह इलिनीके पुत्र और दुष्मन्तादिके पितामह थे।

ऐलूष (सं० पु०) कवषके अपत्य।

ऐलेय (सं० क्ली०) १ एलवालुक, एक अतर। २ नलुका, नाड़ीका शाक। (पु०) इलाया अपत्यं पुमान्। ३ पुरूरवा। ४ मङ्गल।

ऐल्वालु, एलवालुक देखो।

ऐश (सं० त्रि०) ईशस्य इदम्, अण्। १ ईश-सम्बन्धीय। (अ० पु०) २ सुख, आराम।

ऐश—एक मुसलमान् कवि। यह बादशाह शाह आलमके समय विद्यमान रहे। असल नाम मुहम्मद असकरी था।

ऐशमूल (सं० क्ली०) लाङ्गलीमूल, एक जड़ी।

ऐशान (सं० त्रि०) १ शिवसम्बन्धीय। (पु०) २ ईशान कोणका वायु। यह कटु और शीतल होता है। (भावप्रकाश)

ऐशानी (सं० स्त्री०) ईशानस्येयम्, ईशान-अण्-ङीप। १ ईशानकोण। २ शक्तिविशेष। ३ दुर्गा।

ऐशिक (सं० त्रि०) ईशस्य अयम्, ईश-ठक्। १ ईश्वर-सम्बन्धीय। २ शिवसम्बन्धीय। ३ राजसम्बन्धीय, बादशाहसे सरोकार रखनेवाला।

ऐशी (सं० स्त्री०) ईशस्य इयम्, अण्-ङीप्। १ ईश्वर-सम्बन्धिनी। २ दुर्गा।

ऐशी—एक मुसलमान कवि। १६७५ ई०को इन्होंने 'इफत-अख्तर' नामक एक मसनवी लिखी थी।

ऐशू (हिं० पु०) पशुरोगविशेष, जानवरोंकी एक बीमारी। इसमें पशु मुख रुक जानेसे जुगाली नहीं करते।

ऐश्वर (सं० त्रि०) १ प्रभु वा ईश्वरसे उत्पन्न। २ शक्तिशाली, आलीशान्। ३ ईश्वर-सम्बन्धीय। ४ सबसे बड़ा। ५ शिव-सम्बन्धीय।

ऐश्वरिक (सं० पु०) आस्तिक, ईश्वरवादी।

ऐश्वरी (सं० स्त्री०) ईश्वरस्य इयम्, अण्-ङीप्। ईश्वरसम्बन्धिनी।

ऐश्वर्य (सं० क्ली०) ईश्वरस्य भावः, ईश्वर-ष्यञ्। १ ईश्वरका धर्म। इसका पर्याय—विभूति और भूति है। ऐश्वर्य अष्टविध होता है—१ अणिमा, २ लघिमा, ३ प्राप्ति, ४ प्राकाम्य, ५ महिमा, ६ ईशित्व, ७ वशित्व और ८ कामावसायिता। २ सम्पत्ति,दौलत। ३ प्रभुत्व, मिलकियत। ४ शासनकर्तृत्व, हुकूमरानी।

ऐश्वर्यकर्मा (सं० पु०) ऐश्वर्यं कर्म यस्य, बहुव्री०। ईश्वर-कर्मयुक्त, बड़े-बड़े काम करनेवाला।

ऐश्वर्यवत् (सं० त्रि०) ऐश्वर्यमस्त्यस्य, ऐश्वर्य-मतुप्, मस्य वः। ऐश्वर्यविशिष्ट, बड़ी ताकत रखनेवाला।

ऐषमः (सं० अव्य०) अस्मिन् वत्सरे इति निपातनात् साधुः। सद्यः परुत्परार्यैषम इत्यादि। पा ५।३।२२। वर्तमान वत्सरमें, इमसाल।

ऐषमस्तन (सं० त्रि०) ऐषमो भवः, ऐषमस्-तन। ऐषमोह्यःश्वसो ऽन्यतरस्याम्। पा ४।२।१०५। ऐषमसम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषमस्त्य (सं० त्रि०) एषमो भवः, ऐषमस्-त्यप्। वर्तमान वत्सर-सम्बन्धीय, इस सालसे सरोकार रखनेवाला।

ऐषावीर (सं० त्रि०) दुर्बल, शक्तिहीन, कमजोर।

ऐषिका (सं० स्त्री०) १ पाठा। २ विह्वता।

ऐषीक (सं० क्ली०) इषीकमेव, स्वार्थे अण्। १ महा-भारतोक्त एक पर्वत। २ अस्त्रविशेष। इषीक देखो।

ऐषुकारि (सं॰ पु॰) इषुकारस्य अपत्यम्, इषुकार-इञ्। बाणनिर्माताका पुत्र, तीर बनानेवालेका बेटा।

ऐषुकारिभक्त (सं॰ क्लो॰) ऐषुकारीणां विषयो देशः, ऐषुकारि-भक्तल्। भौरिक्याद्यैषु कार्यादिभ्यो विधलूभक्तलौ। पा ४।२।५४। १ ऐषुकारिविषय। २ ऐषुकारि देश, जिस मुल्कमें तीर बनानेवाले रहें।

ऐषुकार्यादि (सं॰ पु॰) पाणिन्युक्त गणविशेष। इसमें ऐषुकारि, सारस्यायन, चान्द्रायण, द्राक्षायण, त्र्याक्षायण, औड़ायन, जौलायन, खाड़ायन, दासमित्रि, दासमित्रायण, शौद्रायण, दाक्षायण, शायण्डायन, तार्क्ष्यायण, शौभ्रायण, सौवीर, सौवीरायण, शयण्ड, शौण्ड, शयाण्ड, वैश्वमानव, वैश्वधेनव, नड़, तुण्डदेव, विश्वदेव और सापिण्डि शब्द पड़ता है।

ऐष्टक (सं॰ क्लो॰) याज्ञिक ईंटोंका ढेर।

ऐष्टिक (सं॰ पु॰) इष्टि-ठक्। १ इष्टिके व्याख्यानका ग्रन्थ। २ यज्ञके हितका विषय। ३ अन्तर्वेदिक कर्म-विशेष। (वि॰) ४ यज्ञके साधनमें समर्थ। ५ यज्ञ-सम्बन्धीय।

ऐष्टिकपौर्तिक (सं॰ वि॰) इष्टापूर्त-सम्बन्धीय।

ऐसा (हिं॰ क्रि॰-वि॰) इस प्रकारसे, इस तौरपर।

ऐहलौकिक (सं॰ वि॰) इहलोके भवः, इहलोक-ठक्। १ वर्तमान जन्मसम्बन्धीय। २ मर्त्यलोक सम्बन्धीय, इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिक (सं॰ वि॰) इह भवम्, इह-ठक्। १ इह-लोक-जात, इस दुनियासे पैदा। २ इहलोक-सम्बन्धीय, इस दुनियासे सरोकार रखनेवाला।

ऐहिकदर्शी (सं॰ वि॰) इहलोकके कार्य निरीक्षण-करनेवाला, जो इस दुनियाके काम देखता हो।

ऐहोल—बम्बईप्रान्तके बीजापुर जिलेका एक ग्राम। यहां जो शिलालेख मिला, उसमें २य पुलकेशीका परिचय पड़ा है।

ओ

ओ—स्वरवर्णका त्रयोदश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान कण्ठ और ओष्ठ है। यह वर्ण दीर्घ एवं प्लुत भेदसे दो प्रकारका होता है। कामधेनुतन्त्रमें कहा, कि ओकार पञ्चदेवमय, रक्तविद्युताकार, त्रिगुणात्मक, ईश्वर, पञ्चप्राणमय, देवमाता और परमकुण्डली है। लिखनेमें यह वाम दिक्से कुण्डली बन दक्षिण दिक् मध्यस्थलमें सिकुड़ेगा, उसके पीछे अधोदेशमें पुनर्वार वामदिक्को चलेगा। इसकी सकल रेखाओंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर अवस्थान करते हैं। इसकी मात्रा ब्रह्मरूपिणी महाशक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र)

तन्त्रशास्त्रोक्त ओकारका नाम—सत्य, पीयूष, पश्चि-मास्य, श्रुति, स्थिरा, सद्योजात, वासुदेव, गायत्री, दीर्घ-जङ्घक, आप्यायनी, ऊर्ध्वदन्त, लक्ष्मी, वाणी, मुनी, द्विज, षड्मुखदर्शक, तीव्र, कैलास, वसुधाधर, प्रणवांश, ब्रह्मसूत्र, अजेश, सर्वमङ्गला, त्रयोदशी, दीर्घमाला, रतिनाथ, दिगम्बरा, त्रैलोक्यविजया, प्रज्ञा और प्रीति-बीजादिकर्षिणी है। मातृकान्यासके अनुसार ऊर्ध्व दन्तकी पंक्तिपर न्यास किये जानेसे अभिधानमें ओकारका एक नाम 'ऊर्ध्वदन्तपंक्ति' भी है।

२ धातुका एक अनुबन्ध। "ओदितश्च।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य॰) ३ सम्बोधन। ४ आह्वान। ५ स्मरण। ६ अनुकम्पा। (पु॰) ७ ब्रह्मा।

ओं (सं॰ अव्य॰) १ ओङ्कार, प्रणव। ओम् देखो। २ तथास्तु, आमीन्, बहुत अच्छा।

ओंदना (हिं॰ क्रि॰) मारना, झटके, या श्रोताघर मारना।

ओंकना, ओकना देखो।

ओंगना (हिं॰ क्रि॰) शकटके अक्षमें तैल देना, गाड़ीके धुरेमें तेल लगाना। ओंगनेसे शकटका चक्र वेगसे चलता है।

ओंगा (हिं॰ पु॰) अपामार्ग, लटजीरा।

ओंटना, औटना देखो।

ओंठ (हिं॰) ओष्ठ देखो।

ओंड़ा (हिं॰ वि॰) १ गम्भीर, गहरा। (पुं॰) २ गर्त, गड्ढा। ३ सेंध।

ओंध (हिं॰ पु॰) रज्जुविशेष, एक रस्सी। इससे ज्ञाजन पूरी करनेको लकड़ियां बांधी जाती हैं।

ओंधा (हिं॰ पु॰) इस्सी पक्कड़नेका गर्त, चांदी आदिका गड्ढा।

ओघाक (सं॰ अव्य॰) १ समनके वेगका शब्द, जैसे

जोरकी आवाज़। २ वकविशेष, किसी क़िस्मका बगला। ३ वकविशेषका अव्यक्त शब्द, किसी बगलेकी बोली।

ओई (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक दरख़्त।

ओक (सं० स्त्री०) उच-क निपातनात् साधुः। १ गृह, घर। २ आश्रय, ठिकाना। (पु०) ३ पक्षी, चिड़िया। ४ शूद्र, वृषल।

ओकः (सं० क्ली०) उच्यते समवैति अस्मिन्, उच-असुन्। १ आश्रय, ठिकाना। २ गृह, घर। ३ स्थान, मुक़ाम।

ओक्‌क्षान—१ निम्नब्रह्मदेशस्थ पेगू प्रान्तके हन्तावाड़ी ज़िलेकी एक नदी। यह पेगू-योमा पर्वतसे निकल मागोनके समीप हलैंगमें जा गिरती है। ओक्‌क्षान नदी बहुत छोटी है। किन्तु वर्षाके समय ओक्‌क्षान ग्रामतक इसमें बड़ी-बड़ी नावें चल सकती हैं। साखू और दूसरी लकड़ीके हट्ठे इसमें बहाकर हलैंग पहुंचाये जाते हैं। २ निम्न ब्रह्मके हन्तावाड़ी ज़िलेका एक ग्राम। यह हलैंग नदीसे ५ मील पश्चिम अवस्थित है। इसमें दो सराय और दो वर्गाकार निर्मित बौद्ध मन्दिर हैं। सुननेमें आया, प्रायः ३०० वर्ष हुये किसी तैलङ्गने इसे बसाया था।

ओककेतु—बम्बई प्रान्तस्थ मालखेड़वाले राष्ट्रकूट राजावोंके ध्वजका चिह्न। सिरूरके शिलालेखमें लिखते, कि अमोघवर्षके तीन राजच्छत्र रहे—शङ्ख, पालिध्वज और ओककेतु।

ओकण (सं० पु०) केशकीट, जूं।

ओकणि (सं० पु०) मत्कुण, खटमल।

ओक्‌ताई ख़ान्—चङ्गीज़ खान्‌के बड़े लड़के। १२२० ई०को इन्हें अपने पिताके राज्य तातार और उत्तर-चीनका उत्तराधिकार मिला था। १२४२ ई०को यह अधिक शराब पीनेसे मर गये। ओकताई ख़ान् बड़े सहृदय रहे। यह अपनी प्रजाको निरपेक्ष भाव और न्यायसे शासन करते थे। इनकी वीरता और बुद्धिमत्ता प्रसिद्ध है। ओकताई ख़ान् बड़े दानी थे। राज्यका उत्तराधिकार इनके पुत्र याक़ूब ख़ान्‌को मिला।

ओकना (हिं० क्रि०) १ वमन करना, कै निकालना। २ महिषवत् शब्द करना, भैंसकी तरह बोलना।

ओकनी (सं० स्त्री०) ओकणि देखो।

ओकपति (सं० पु०) सूर्य वा चन्द्र, आफ़ताब या माहताब।

ओकरी (सं० स्त्री०) राजगृहके अन्तर्गत एक प्राचीन ग्राम। भविष्यब्रह्मखण्डमें लिखा है—

कलियुगके मध्य यहां शस्यजीवी कृषक वास करेंगे। कलिकालमें ओकरीका नारीगण वेश्या और द्विजगण वेश्यावृत्तिपरायण होगा। यहांके लोग पापके कारण सर्पाघातसे विनष्ट होंगे। (भ० ब्रह्मखण्ड ११।१०-११)

ओकाई (हिं० स्त्री०) १ वमन, कै। २ वमनेच्छा, कै करनेकी ख़ाहिश।

ओकार (सं० पु०) 'ओ', ओ अक्षर। ओ देखो।

ओकारान्त (सं० वि०) अन्तमें ओकार रखनेवाला, जिसके अख़ीरमें 'ओ' रहे।

ओकिवस् (सं० वि०) उच-क्वसु। समवेत, एकत्र, मिला हुआ।

ओकी, ओकाई देखो।

ओकुल (सं० पु०) उच-उलच् निपातनात् साधुः। अर्धगन्ध, अपक्व गोधूम। वैद्यक मतसे यह गुरु, शुक्रवर्धक, मधुर, बलकारक, स्निग्ध, रुचिकारक, मत्ततावर्धक और रक्त एवं वायुनाशक होता है।

ओकोदनी (सं० स्त्री०) ओकः आश्रयस्थानमदनं यस्याः, बहुव्री०। मत्कुण, खटमल।

ओकोदयानी (सं० स्त्री०) प्राचीर, दीवार।

ओक्कणी (सं० स्त्री०) ओच-कण-अच्-ङीप्। मत्कुण, खटमल।

ओक्य (सं० वि०) १ गृहवासीके निमित्त उत्तम, जो घरमें रहनेवालेके मुवाफ़िक़ हो। (क्ली०) २ प्रसन्नता, ख़ुशी। ३ सुविधाजनक स्थान, आराम देनेवाली जगह। ४ विश्रामागार, मकान्।

ओखद (हिं० स्त्री०) औषध, दवा।

ओखरी, ओखली देखो।

ओखल (हिं० पु०) १ ऊसर, पड़ती ज़मीन्। २ उद्खल, ओखली।

खोखलडांगा—युक्तप्रदेशके कुमायूं जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा० २९° १४´ २०´´ उ०, तथा देशा० ७९° ३९´ पू०पर मुरादाबाद और रामनगरके मध्यवर्ती पथमें कोशीला नदी किनारे अवस्थित है। इस स्थानमें अति उत्कृष्ट चावल होता है।

खोखली (हिं० स्त्री०) उदूखल, कांड़ी। यह काठ या प्रस्तरकी होती है। इसमें धान्यको छोड़ और मूसलसे कूट भूसी निकालते हैं। हिन्दुस्थानमें प्राय: भूमिको खोद और पत्थर जोड़ खोखली बना लेते हैं।

खोखा (हिं० पु०) १ व्याज, बहाना। (वि०) २ शुष्क, सूखा। ३ कुटिल, टेढ़ा, खराब। ४ दूषित, खोटा। ५ विरल, जो गाढ़ा न हो।

खोखामण्डल—काठियावाड़ प्रान्तका एक छोटा जिला। यह अक्षा० २२° एवं २२° २८´ उ० और देशा० ६८° ५८´ तथा ६९° १२´ पू०के मध्य अवस्थित है। ओखामण्डलसे उत्तर कच्छकी खाड़ी, पश्चिम अरब-समुद्र और पूर्व तथा दक्षिण रान या नाना दलदल पड़ता, जो इसे नवानगर जिलेसे पृथक् करता है। असलमें यह एक द्वीप है। क्षेत्रफल २५० वर्गमील है। कहीं कहीं पहाड़ी देख पड़ती है। थूहरका जंगल बहुत है। यहां गोमती नदी छोटी है। भीमगज झीलसे एक पहाड़ी नाला भी निकला है। वरवाला, वरदिया और पोसितरामें रेतीला पत्थर बहुत होता, जो मकान् बनानेमें काम देता है। मूलवासर, मूलवेल और सामलासरमें बड़े-बड़े तालाब हैं। घर-घर और खेत-खेत कूएं बने हैं। पानी प्राय: खारी है। समुद्रके किनारे कुछ नहीं उपजता। किन्तु भीतरी भूमि उर्वरा है। दक्षिणांशकी अपेक्षा उत्तरांशमें दूनी चीज होती है। जंगलका अभाव है। कहीं कहीं बबूल और इमलीके वृक्ष लगे हैं। बम्बई, सूरत, कराची और जंजीबारके साथ व्यवसाय होता है। बाजरी, तिल, घी, घास, चूना और नमक बाहर भेज जाता है। चावल, चना, गेहूं, ज्वार, कपासका बीज, चीनी, मसाला, आलू और कपड़ा बाहरसे आता है। रूपन और बेयत बंदर हैं। रूपन द्वारकासे १ मील उत्तर पड़ता है। खाड़ीमें पानीके भीतर छिपे पहाड़ हैं। जहाजोंको खूब सचेत रहना पड़ता है। यहां ब्राह्मण और लोहाने महाजन हैं। पहले यहांके लोग काब, मोद और काल तीन श्रेणीमें विभक्त थे। किन्तु काब और मोद अब देख नहीं पड़ते। काब जातिसे वर्तमान वाघेरोंकी उत्पत्ति है। पहले [illegible] यहां अपना राज्य स्थापित किया था। किन्तु ओखामण्डलके भाट वर्णन करते हैं—ई० २य शताब्दके मध्य काब लोगोंने इसे फिर जीत लिया। सिरोयाके वीर सुङ्कर धिलिमने भी ओखामण्डल अधिकार किया था। किन्तु द्वारकाके समुद्रमें डूब जानेसे वह अपनी राजधानी गोरिंजाको उठा ले गये। पीछे सिरोयाके दूसरे वीर सेहेम-गुदुकने सुङ्कर धिलिमको मार अपना राज्य जमाया। अन्तको काब लोगोंने फिर ओखामण्डल लेता था। ई० १४ शताब्दके समय काठियावाड़के चावड़ राजपूतोंने आक्रमण किया और काबों या वाघेरोंको यहांसे निकाल दिया। अणयराज राजा बने थे। फिर उनके पुत्र भूवड़राय और भूवड़रायके पुत्र जयसेन सिंहासनारूढ़ हुये। जयसेनने ही आपदा-पादर नगर बसाया और एक बड़ा तालाब बनाया था। मूलवासर झीलमें उनके समयका एक पत्थर मिला है। जयसेनका उत्तराधिकार उनके भाई जगदेवने पाया। जगदेवके पुत्र मङ्गलजी अपने पिताके मृत्यु होने बाद कुछ वर्ष जी कर मर गये। उनके लड़के देवसदेव फिर राजा बने। देवसदेवके बाद उनके लड़के जगदेव सिंहासनपर बैठे, जिनके कनकसेन और अनन्तदेव दो पुत्र रहे। कनकसेनने ही 'कनकपुरी' बसाई, जो पीछे 'बसाई' कहाई। प्राचीन कालपर यह पुरी ओखामण्डलके व्यवसायका केन्द्र-स्थल थी। वर्तमान समय केवल एक ग्राम रह गया है। कनकसेनके बनाये बड़े-बड़े जैन-मन्दिर टूटे-फूटे पड़े हैं। अनन्तदेव द्वारकामें राज्य करते थे। उनके अयोग्य होनेसे परमार या हेरोल राजपूतोंने अपना अधिकार जमा लिया। किन्तु चावड़ों और उनमें युद्ध होने लगा। इधर हेरावलों और वाजकों दो राठौर राजपूत जोधपुरसे निकाल दिये गये थे। वह कितने ही लोगोंके साथ द्वारका आये।

फिर चावड़ोंसे मिल उन्होंने एकबार हेरोलोंको भोज दिया। सब लोगोंके भोजनपर बैठ जानेसे राठोरोंकी मन्त्रणाके अनुसार चावड़ोंने धोकेसे आ उनमें कितनों होको मार डाला था। फिर राठोरोंने चावड़ोंको भी नीचा देखाया। अपने भीषण कार्यके उपलक्षमें दोनों भाइयोंने 'वाघेल' उपाधि ग्रहण किया था। राठोरोंका राज्य धीरे धीरे बढ़ा। वेरावलजीने कुछ सेना ले काठियावाड़ आक्रमण और सोमनाथपाटन अधिकार किया था। उन्होंने अरामदमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। राज्यका उत्तराधिकार पुत्र विक्रमसीको मिला था। कच्छके राव जियाजीने अपनी कन्या उन्हें व्याह दी। विक्रमसीके बाद नौ राने १२० वर्षतक राज्य करते रहे। १०वें राना सानगनजी अरामदेके राजावोंमें बड़े शक्तिशाली निकले। उन्होंने अपना राज्य खभालिया नगरतक बढ़ा लिया था। किन्तु उनके पुत्र भीमजीने राज्य बमने पर मक्का जानेवाले कितने ही जहाज लूटे। इससे अमसद हो अहमदाबादके सुलतान महमूदने उन्हें दवाना चाहा। उसी समय भीमजीने सैयद मुहम्मदका जहाज लूटा और उन्हें दो दुधमुंहे लड़कोंके साथ जहाजमें छोड़ा। उनकी स्त्री कैद कर अरामदे भेजी गयी थीं। इसपर सुलतान की फौज बदला लेने आयी। मुसलमानोंने द्वारका लूटी थी। भीमजी भाग गये। किन्तु उन्होंने थोड़े ही दिनों बाद आ मुसलमानोंको मार भगाया था। भीमजी और हमीरजीके वंशज मानकोंमें द्वारकाके अधिकार पर झगड़ा हुआ। मानकोंने वाघेरोंके साहाय्यसे द्वारकाको अधिकार किया। भीमजीने भी अपना पक्ष सबल न देख सन्धि कर ली। १५८२ ई०को अरामदे के वाघल राजा शिव रामाने गुजरातके सुलतान मुजफ्फरको शरण दिया। कारण अहमदाबादके सूबेदार खान्-आजमसे काठियावाड़में हार वह ओखामण्डल भाग आये थे। किन्तु खान्-आजमकी फौज उनके पीछे रही। वाघेलोंसे युद्ध होनेपर शिवराना मारे गये। शिवरानाके पुत्र सांगनजी काठियावाड़को भागे थे। इधर द्वारकाके सामल मानकने अपने भाई मल्ल मानकसे कहा—किसी न किसी प्रकार मुसलमानोंको यहांसे निकाल बाहर करना चाहिये। मैं सांगनजीको ढूंढ़ने जाता हूं। तुम मुसलमानोंसे लड़ो और उन्हें शान्तिसे बैठने मत दो। सात वर्ष बाद वह सांगनजीको ले लौटे थे। फिर घोर युद्ध होने लगा। अन्तको मुसलमान हारे और ओखामण्डल छोड़ भागे। सांगनजी अरामदेमें सिंहासनारूढ़ हुये थे। सांगनजीके बाद उनके पुत्र संग्रामजीने राज्यका उत्तराधिकार पाया और कुछ वर्ष राज्यका सुख उठाया। फिर अखेरजी राजा बने थे। उनकी बहनका विवाह नवानगरके जामसे हुआ। १६६४ ई०को अखेरजीके मरनेपर भोजराजजीने उत्तराधिकार पाया था। उनके एक लड़की और सात लड़के थे। लड़कीका विवाह कच्छके रावसे हो गया। ज्येष्ठपुत्र वाजेराजजी अपने भाइयोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। इसीसे उन्हें पोसितरा नगर अलग दे दिया गया। १७१५ और १७१८ ई०को अरामदेके वाघेल राजा द्वारकावाले वाघेरोंके साथ काठियावाड़में कितनी ही बार घुसे। किन्तु नवानगर, गोंडल और पोरबंदरकी फौज उनपर चढ़ी थी। इससे उन्हें बड़ी हानि उठाना पड़ी। एक राजा द्वारका और वसाईमें राज्य करने लगे। १८०४ ई०को डाकुवोंने एक बम्बईका जहाज लूट लिया। मल्लाह और मुसाफिर पानीमें फेंके गये। अंगरेज सरकारने जो लड़ाईका जहाज शास्ति देनेको भेजा, वह खाली हाथ लौटा था। क्षतिपूरण मांगा जानेपर वाघेर अस्वीकार कर गये। किन्तु १८०७ ई०को करनल वाकर उनसे क्षतिपूरण लेने फौजके साथ द्वारका पहुंचे थे। वाघेल और वाघेर राजा एक लाख दश हजार रुपया देनेको सम्मत हुये। किन्तु १८१० ई०को उन्होंने फिर लूट मार मचायी थी। बड़ोदेके रेसीडण्ट कप्तान कारनकने द्वारका कुछ सवार भेज झगड़ा मिटाया। किन्तु डाका पड़ता ही रहा। १८१७ ई०को १८वीं नवम्बरको अंगरेज सरकारने द्वारका और बेयत तीर्थस्थान समझ गायकवाड़के अधीन किये थे। गायकवाड़ने इसके बदले ओखामण्डलके राजावोंका, जुर्माना और

अंगरेजी फौजके चढ़नेका खर्च डाल दिया। १८१८ ई०को जयमल मानकके अधीन कुछ राजा बिगड़े थे। किन्तु स्थानीय सेनाने उन्हें शीघ्र ही दबा दिया। १८१८ ई०को वाघेरोंने विद्रोह उठा मिस्टर हेण्डलीको पोरबन्दर भगाया था। १८२० ई०को बम्बई सरकारने करनल ष्टानहोपको लड़ने भेजा। उन्होंने अकस्मात् द्वारका अधिकार कर राजाओंको नीचा दिखाया था। इस युद्धमें कप्तान मोरियट मारे गये। द्वारका-नरेश मूलूमानक और उनके छोटे भाई वरसी मानक भी धराशायी हुये। राना अंधाम-जी पकड़ कर सूरत भेजे गये। किन्तु कच्छके रावने ज़मानत दे उन्हें छोड़ा लिया था। फिर शान्ति स्थापित हुई। १८५७ ई०को वाघेरोंने काठियावाड़ पर आक्रमण मारा था। लेफटिनण्ट बरटनने द्वारका जा इस उपद्रवका कारण पूछा। वह वाघेरोंसे अच्छा चाल-चलन रखनेकी ज़मानत ले बड़ोदे लौट आये। दूसरे वर्ष वसाईके वाघेर राजाओंने खुले मैदान बलवा कर बेयत द्वीप और उसके साथी सिबन्दियोंने दुर्गको अधिकार किया था। माडवोंसे कप्तान बेले कुछ सेना ले बेयतमें जा उतरे और दुर्गपर झपट पड़े, किन्तु दुर्ग सुदृढ़ रहनेसे कुछ कर न सके। रातको वाघेर स्वयं दुर्ग छोड़ वसाई भाग गये। फिर बड़ोदेके मन्त्रियोंने सरकार अंगरेजसे अलग रहनेको कह वसाई आक्रमण किया था। वसाईकी क़िलेबन्दी मज़बूत रहनेसे कई बार युद्ध हुआ। अन्तको बड़ोदेके गायकवाड़ने वाघेरोंसे सन्धि-कर झगड़ा मिटाया। दूसरे वर्ष फिर उपद्रव उठा था। गायकवाड़ने लड़ने-भिड़नेका सब काम अंगरेजोंको सौंप दिया। वाघेरोंने आक्रमण मार द्वारका और बेयत द्वीप अधिकार किया था। जोधा मानक ओखा-मण्डलके राजा बने। फिर करनल डोनोवन कुछ सेना ले बेयत पहुंचे थे। युद्धमें न हारते भी वाघेर क़िला छोड़ द्वारका भाग गये। कप्तान डोनोवनने शीघ्र ही द्वारकाको जा आक्रमण किया और वाघेरोंको जंगलमें खदेर दिया। अन्तको उन्होंने ओखामण्डल छोड़ अभयपुर-पहाड़में खाई ओट डेरा डाला था। १८५८ ई०के दिसम्बर मास करनल डानरने कितनी ही फौजके साथ आक्रमण मार उन्हें वहांसे भी निकाल बाहर किया। कुछ वाघेर राजाओंने गिर पहाड़की राह ली थी। बाकी अपने हथियार रख ओखामण्डल लौटनेको सम्मत हुये। उधर जोधा मानकके मर जानेसे गिर पहाड़के वाघेर भी पकड़े गये। १८६२ ई०को कैद किये वाघेर निकल भगे और ओखामण्डल पहुंच उपद्रव उठाने लगे। काठिया-वाड़में कई वर्ष लूट मार होती रही। १८६७ ई०को मेजर रेनोल्डसने उन्हें परास्त किया था। युद्धमें मेजर रेनोल्डस् आहत और पोलिटिकल एजण्टके सहकारी कप्तान हेबर्ट एवं लाटूश हत हुये। इसपर वाघेर शान्त पड़े और फिर कभी ज़ोरसे न लड़े।

ओग (हिं० पु०) कर, महसूल, लगान।

ओगण (सं० त्रि०) अवगण्यते, अव-गण कर्मणि क्त सम्प्रसारणश्च। अवगण्य, नफ़रत किया हुआ।

ओगर—एकप्रकार संन्यासी। यह अपनेको अउघड़ योगी भी कहते हैं। हाथमें रस्सीसे लिपटी हुई छड़ी रहती है। ओगर यज्ञोपवीत नहीं पहनते। मरनेपर देह जलाना मना है। शवका देह समाधिस्थ किया जाता है। सिन्धुप्रदेशमें दो-एक ओगर योगी देख पड़ते हैं।

ओगरना (हिं० क्रि०) अवगरण होना, चूना, पसीजना, पनियाना।

ओगल (हिं० पु०) १ ऊसर, पड़ती ज़मीन्। २ कूपविशेष, एक कुआं।

ओगीयस् (सं० त्रि०) उग्र, अत्यन्त तेजस्वी।

ओघ (सं० पु०) उच-घञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ समूह, ढेर। २ नदीवेग, पानीका बहाव, बाढ़। ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ उपदेश, नसीहत। ५ द्रुतनृत्य, फुर्तीला नाच। ६ नदी, दरया।

ओघदेव (सं० पु०) प्राचीन शिलालिपि-वर्णित अम्बुखण्डके एक महाराज। इनकी स्त्री कुमारदेवी थीं। (Inscriptionum Indicarum, Vol III. p. 119.)

ओघरथ (सं० पु०) एक राजा। यह ओघवान् नृपतिके पुत्र और ओघवतीके भ्राता थे।

फिर चावड़ोंसे मिल उन्होंने एकबार हेरोलोंको भोज दिया। सब लोगोंके भोजनपर बैठ जानेसे राठोरोंको मन्त्रणाके अनुसार चावड़ोंने धोकेसे या उनमें कितनों होको मार डाला था। फिर राठोरोंने चावड़ोंको भी नीचा देखाया। अपने भीषण कार्यके उपलक्षमें दोनों भाइयोंने 'वाघेल' उपाधि ग्रहण किया था। राठोरोंका राज्य धीरे धीरे बढ़ा। वेरावलजीने कुछ सेना ले काठियावाड़ आक्रमण और सोमनाथपाटन अधिकार किया था। उन्होंने अरामदमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की। राज्यका उत्तराधिकार पुत्र विक्रमसीको मिला था। कच्छके राव जियाजीने अपनी कन्या उन्हें व्याह दी। विक्रमसीके बाद नौ राने १२० वर्षतक राज्य करते रहे। १०वें राना सामगनजी अरामदेके राजावोंमें बड़े शक्तिशाली निकले। उन्होंने अपना राज्य खम्भालिया नगरतक बढ़ा लिया था। किन्तु उनके पुत्र भीमजीने राज्य बनने पर मक्का जानेवाले कितने ही जहाज़ लूटे। इससे अप्रसन्न हो अहमदाबादके सुलतान महमूदने उन्हें दबाना चाहा। उसी समय भीमजीने सैयद मुहम्मदका जहाज़ लूटा और उन्हें दो दुधमुंहे लड़कोंके साथ जहाज़में छोड़ा। उनकी स्त्री क़ैद कर अरामदे भेजी गयी थीं। इसपर सुलतान की फ़ौज बदला लेने आयी। मुसलमानोंने द्वारका लूटी थी। भीमजी भाग गये। किन्तु उन्होंने थोड़े ही दिनों बाद आ मुसलमानोंको मार भगाया था। भीमजी और हमीरजीके वंशज मानकोंमें द्वारकाके अधिकार पर झगड़ा हुआ। मानकोंने वाघेरोंके साहाय्यसे द्वारकाको अधिकार किया। भीमजीने भी अपना पक्ष सबल न देख सन्धि कर ली। १५८२ ई०को अरामदे के वाघल राजा शिव रानाने गुजरातके सुलतान मुज़फ़्फ़रको शरण दिया। कारण अहमदाबादके सूबेदार खान्-आज़मसे काठियावाड़में हार वह ओखामण्डल भाग आये थे। किन्तु खान् आज़मकी फ़ौज उनके पीछे रही। वाघेलोंसे युद्ध होनेपर शिवराना मारे गये। शिवरानाके पुत्र सांगनजी काठियावाड़को भागे थे। इधर द्वारकाके सामल मानकने अपने भाई मल मानकसे कहा—किसी न किसी प्रकार मुसलमानोंको यहांसे निकाल बाहर करना चाहिये। मैं सांगनजीको ढूंढ़ने जाता हूं। तुम मुसलमानोंसे लड़ो और उन्हें शान्तिसे बैठने मत दो। सात वर्ष बाद वह सांगनजीको ले लौटे थे। फिर घोर युद्ध होने लगा। अन्तको मुसलमान हारे और ओखामण्डल छोड़ भागे। सांगनजी अरामदेमें सिंहासनारूढ़ हुये थे। सांगनजीके बाद उनके पुत्र संग्रामजीने राज्यका उत्तराधिकार पाया और कुछ वर्ष राज्यका सुख उठाया। फिर अखेरजी राजा बने थे। उनकी बहनका विवाह नवानगरके जामसे हुआ। १६६४ ई०को अखेरजीके मरनेपर भोजराजजीने उत्तराधिकार पाया था। उनके एक लड़की और सात लडके थे। लड़कीका विवाह कच्छके रावसे हो गया। ज्येष्ठपुत्र वाजेराजजी अपने भाइयोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। इसीसे उन्हें पोसितरा नगर अलग दे दिया गया। १७१५ और १७१८ ई०को अरामदेके वाघेल राजा द्वारकावासी वाघेरोंके साथ काठियावाड़में कितनी ही बार घुसे। किन्तु नवानगर, गोंडल और पोरबंदरकी फ़ौज उनपर चढ़ी थी। इससे उन्हें बड़ी हानि उठाना पड़ी। एक राजा द्वारका और बसाईमें राज्य करने लगे। १८०४ ई०को डाकुओंने एक बम्बईका जहाज़ लूट लिया। मल्लाह और मुसाफिर पानीमें फेंके गये। अंगरेज सरकारने जो लड़ाईका जहाज़ शास्ति देनेको भेजा, वह खाली हाथ लौटा था। क्षतिपूरण मांगा जानेपर वाघेर अस्वीकार कर गये। किन्तु १८०७ ई०को करनल वाकर उनसे क्षतिपूरण लेने फ़ौजके साथ द्वारका पहुंचे थे। वाघेल और वाघेर राजा एक लाख दश हज़ार रुपया देनेको सम्मत हुये। किन्तु १८१० ई०को उन्होंने फिर लूट मार मचायी थी। बड़ोदेके रेसीडण्ट कप्तान कारनकने द्वारका कुछ सवार भेज झगड़ा मिटाया। किन्तु डाका पड़ता ही रहा। १८१७ ई०की १८वीं नवम्बरको अंगरेज सरकारने द्वारका और बेयत तीर्थस्थान समझ गायकवाड़के अधीन किये थे। गायकवाड़ने इसके बदले ओखामण्डलके राजावोंका जुर्माना और

अंगरेजी फौजके चढ़नेका खर्च डाल दिया। १८१८ ई०का पदमल मानकके अधीन कुछ राजा बिगड़े थे। किन्तु स्थानीय सेनाने उन्हें शीघ्र ही दबा दिया। १८१८ ई०को वाघेरोंने विद्रोह उठा मिष्टर हिण्डलीको पोरबन्दर भगाया था। १८२० ई०को बम्बई सरकारने करनल ष्टानहोपको लड़ने भेजा। उन्होंने अकस्मात् द्वारका अधिकार कर राजावोंको नीचा देखाया था। इस युद्धमें कपतान मोरियट मारे गये। द्वारका-नरेश मूलूमानक और उनके छोटे भाई वरसी मानक भी धराशायी हुये। राणा संग्रामजी पकड़ कर सूरत भेजे गये। किन्तु कच्छके रावने जमानत दे उन्हें छोड़ा लिया था। फिर शान्ति स्थापित हुई। १८५७ ई०को वाघेरोंने काठियावाड़ पर आक्रमण मारा था। लेफटिनण्ट वरटनने द्वारका जा इस उपद्रवका कारण पूछा। वह वाघेरोंसे अच्छा चाल-चलन रखनेकी जमानत ले बड़ोदे लौट आये। दूसरे वर्ष वसाईके वाघेर राजावोंने खुले मैदान बलवा कर वेयत द्वीप और उनके साथी सिवन्दियोंने दुर्गको अधिकार किया था। मांडवीसे कपतान वेर्लें कुछ सेना ले वेयतमें जा उतरे और दुर्गपर झपट पड़े, किन्तु दुर्ग सुदृढ़ रहनेसे कुछ कर न सके। रातको वाघेर स्वयं दुर्ग छोड़ वसाई भाग गये। फिर बड़ोदेके मन्त्रियोंने सरकार अंगरेजसे अलग रहनेको कह वसाई आक्रमण किया था। वसाईकी किलेबन्दी मजबूत रहनेसे कई बार युद्ध हुआ। अन्तको बड़ोदेके गायकवाड़ने वाघेरोंसे सन्धि-कर झगड़ा मिटाया। दूसरे वर्ष फिर उपद्रव उठा था। गायकवाड़ने लड़ने-भिड़नेका सब काम अंगरेजोंको सौंप दिया। वाघेरोंने आक्रमण मार द्वारका और वेयत द्वीप अधिकार किया था। जोधा मानक ओखामण्डलके राजा बने। फिर करनल डोनोवन कुछ सेना ले बेयत पहुंचे थे। युद्धमें न हारते भी वाघेर किला छोड़ द्वारका भाग गये। कपतान डोनोवनने शीघ्र ही द्वारकाको जा आक्रमण किया और वाघेरोंको जंगलमें खदेर दिया। अन्तको उन्होंने ओखामण्डल छोड़ अभयपुर-पहाड़में खाई खोद डेरा डाला था।

१८५८ ई०के दिसम्बर मास करनल हानरने कितने ही फौजके साथ आक्रमण मार उन्हें वहांसे भी निकाल बाहर किया। कुछ वाघेर राजावोंने गिर पहाड़की राह ली थी। बाकी अपने हथियार रख ओखामण्डल लौटनेको सम्मत हुये। उधर जोधा मानकके मर जानेसे गिर पहाड़के वाघेर भी पकड़े गये। १८६२ ई०को कैद किये वाघेर निकल भगे और ओखामण्डल पहुंच उपद्रव उठाने लगे। काठियावाड़में कई वर्ष लूट मार होते रहो। १८६७ ई०को मेजर रैनोल्डसने उन्हें परास्त किया था। युद्धमें मेजर रैनोल्डस् आहत और पोलिटिकल एजण्टके सहकारी कपतान हेबर्ट एवं लाटूश हत हुये। इसपर वाघेर शान्त पड़े और फिर कभी जोरसे न लड़े।

ओग (हिं० पु०) कर, महसूल, लगान।

ओगण (सं० त्रि०) अवगण्यते, अव-गण कर्मणि क सम्प्रसारणञ्च। अवगण्य, नफ़रत किया हुआ।

ओगर—एकप्रकार सन्न्यासी। यह अपनेको अउघड़ योगी भी कहते हैं। हाथमें रस्सीसे लिपटी हुई छड़ी रहती है। ओगर यज्ञोपवीत नहीं पहनते। मरनेपर देह जलाना मना है। शवका देह समाधिस्थ किया जाता है। सिन्धुप्रदेशमें दो-एक ओगर योगी देख पड़ते हैं।

ओगरना (हिं० क्रि०) अवगरण होना, चूना, पसीजना, पनियाना।

ओगल (हिं० पु०) १ ऊसर, पड़ती जमीन्। २ कूपविशेष, एक कुवां।

ओगीयस् (सं० त्रि०) उग्र, अत्यन्त तेजस्वी।

ओघ (सं० पु०) उच-घञ् पृषोदरादित्वात् साधुः। १ समूह, ढेर। २ नदीवेग, पानीका बहाव, बाढ़। ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ उपदेश, नसीहत। ५ द्रुतनृत्य, फुर्तीला नाच। ६ नदी, दरया।

ओघदेव (सं० पु०) प्राचीन शिलालिपि-वर्णित उच्छ्कल्पके एक महाराज। इनकी पत्नी कुमारदेवी थीं। (Inscriptionum Indicarum, Vol III. p. 119.)

ओघरथ (सं० पु०) एक राजा। यह ओघवान् नृपतिके पुत्र और ओघवतीके भ्राता थे।

ओघवत् (सं॰ वि॰) ओघः जलवेगादिरस्त्यस्य, ओघ-मतुप् मस्य वः। १ जलवेगादियुक्त, जोरसे बहनेवाला। (पु॰) २ एक राजा। यह ओघरथके पिता थे। (भारत, अनु॰ २अ॰)

ओघवती (सं॰ स्त्री॰) १ महाभारतोक्त ओघवान् राजाकी कन्या। इन्होंने स्वामीके आज्ञानुसार द्विज-रूपधारी अतिथि-धर्मको अपना शरीरतक दे डाला था। धर्मने परितुष्ट हो उन्हें वर प्रदान किया। उसीसे यह लोकोपकारार्थ अर्ध देहसे नदी बन गयीं। (भारत, अनु॰ २अ॰) २ कुरुक्षेत्रकी एक नदी। (भारत, भीष्म॰)

ओङ्कार (सं॰ पु॰) ओम्-कार। १ प्रणव। पहले ओङ्कार उच्चारण कर, पीछे वेद पढ़ते हैं। ब्रह्माके कण्ठको फोड़ प्रथम ओङ्कार और अथ शब्द निकला था। इसीसे यह दोनों शब्द माङ्गलिक समझे जाते हैं। ओम् देखो। २ आरम्भ, शुरू। ३ सत्र समावयवका प्रथम अवयव। ४ एक लिङ्ग। "ओङ्कारं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयन्तु त्रिलोचनम्।" (काशीखण्ड)

ओङ्कारभट्ट—एक प्राचीन संस्कृतग्रन्थकार। भूगोलसार नामक पुस्तक इन्होंने लिखा था।

ओङ्कारमान्धाता (सं॰ पु॰) मध्यप्रदेशमें नीमाड़ ज़िलेके अन्तर्गत नर्मदा नदीका मध्यवर्ती एक द्वीप। यह अक्षा॰ २२° १४´ उ॰ और देशा॰ ७६° १७´ पू॰पर अवस्थित है। चलित नाम मान्धाता है। ओङ्कार-मूर्तिधारी महादेवका मन्दिर रहनेसे इस स्थानको ओङ्कारमान्धाता भी कहते हैं। मान्धाताका प्राचीन नाम 'वैदूर्यशैल' था। स्कन्दपुराणके रेवाखण्डमें लिखा है—राजा मान्धाताने ओङ्कारके निकट प्रार्थना की, जिससे सन्तुष्ट हो उन्होंने वैदूर्यशैलके बदले मान्धाता संज्ञा रख दी।*

इस द्वीपका अवस्थान अति सुन्दर है। इससे थोड़ी दूरपर नर्मदाकी कावेरी नाम्नी एक शाखा बहती है। फिर इसी नामकी एक छोटी नदी नर्मदासे अलग रह मान्धाताके निकट कावेरीमें जा मिली है। एक ही स्थानमें दो सङ्गम हैं। ऐसा पवित्र तीर्थ भारतवर्षमें अति विरल है। पुराणादिका तीर्थ-माहात्म्य देखते ऐसे तीर्थमें वास वा स्नान करनेसे अशेष पुण्यलाभ होता है।

यहां नर्मदाके उभय पार्श्वपर हरे रङ्गका पहाड़ देख पड़ेगा। पहाड़के मध्य जहां नदीका प्रवाह चलता, वहां जल गभीर, स्वच्छ और शान्त रहता है। जलमें असंख्य कच्छप और मत्स्य खेलते फिरते हैं। वह इतने निर्भीक और विश्वासी रहते, कि घाट किनारे लाई छोड़ देनेसे निर्भय आ खाया करते हैं। द्वीपका परिमाण प्रायः एक वर्गमील है।

ओङ्कार लिङ्ग आधुनिक नहीं। स्कन्द, शिव, पद्म प्रभृति पुराणोंमें ओङ्कारका नाम उक्त हुआ है। शिवपुराणमें लिखा है,—"किसी समय महर्षि नारद गोकर्ण तीर्थसे विन्ध्यपर्वतको आये थे। यहां विन्ध्यने बड़े सम्मानसे उनकी पूजा की। पहले नारदको विश्वास रहा—विन्ध्यपर्वतके पास सब कुछ है, किसी वस्तुका अभाव नहीं; इसीसे विन्ध्य अहङ्कार करते—हमारे सब है। अतएव नारदने निश्वास छोड़ा था। विन्ध्यने समझ सकनेपर पूछा,—'भगवन्! मैंने क्या दोष किया, जो आपने निश्वास छोड़ दिया है।' नारदने कहा,—'विन्ध्य तुम्हारे पास सब कुछ है। किन्तु तुम्हारे ऊपर देवता

---

* मान्धातोवाच।
यदि तुष्टोऽसि देवेश वरं दातुं त्वमिच्छसि।
वैदूर्य्यो नाम शैलेन्द्रो मान्धाता ख्यातुमर्हतु॥
देवस्थानसमं चैव तत् त्वत्प्रसादाद्भविष्यति।
अन्नदानं ततः पूजा तथा प्राणविसर्जनम्॥
ये कुर्व्वन्ति नरास्ते वा शिवलोकनिवासिनः॥
तस्य तद्वचनं श्रुत्वा मान्धातुः परमेश्वरः।
उवाच वचनं देवो मान्धातारं महीपतिम्॥
सर्व्वमेतन्नृपश्रेष्ठ मत्प्रसादाद्भविष्यति।
यस्मै चोर्द्ध महीपाल ह्युपाहयत्त्वयाऽनघ॥
तदा प्रभृति मान्धाता वैदूर्य्यो गीयते गिरिः।
अस्य तीर्थस्य माहात्म्यान्मान्धातृप्रमुखा नृपाः।
सर्व्वकामसमापन्ना लोके क्रीडन्ति वैष्णवे।
श्रवणात् कीर्त्तनाच्चापि ह्यश्वमेधफलं लभेत्॥"
(स्कन्दपुराण, रेवाखण्ड ११अ॰)

नहीं रहते। मेरा तुम्हारी अपेक्षा उच्च है। उसमें देवता वास करते हैं।' यह कहकर नारद जहांसे आये, वहीं चले गये। पीछे विन्ध्य अपनेको धिक्कार दे परिताप करने लगे और शिवको पूजनेकी इच्छासे आजकल जहां ओङ्कार विद्यमान है, वहीं आकर पहुंच गये। यहां उन्होंने मृत्तिकाके एक शिव बनाये और एक स्थानमें रह अचल भावसे छह मास शिवके ध्यानमें बिताये थे। आशुतोष प्रसन्न हुये और विन्ध्यको सम्बोधन कर कहने लगे,—'अपनी इच्छाके अनुसार वर मांगो।' तब विन्ध्य कातरकण्ठसे बोल उठे,—'हे देवादिदेव। यदि आप प्रसन्न हुये हैं, तो मेरी इच्छाके अनुसार शरीर बढ़ाइये। प्रभो! आपका जो ज्योतिर्मय रूप (ओङ्कार) सकल वेदोंमें वर्णित है, उसी मनोवाञ्छित रूपसे मुझे दर्शन दीजिये। महादेवने भक्तकी वाञ्छा पूरी की और मनोभाव प्रकाशकर यह बात कह दी,—'क्या करें, अशुभ वरदान अन्यको दुःखजनक होगा सही, तथापि तुम्हारी इच्छा हमने पूर्ण की।' इसी समय देवों और ऋषियोंने शिवका पूजन किया और उनसे वहीं उसी रूपमें रहनेको कहा। महादेव मानवके सुखको वहीं ठहर गये। इसी प्रकार एकमूर्ति ओङ्कार और पार्थिव लिङ्ग दो भागमें विभक्त हुआ। ओङ्कारमूर्तिका सदाशिव और पार्थिव लिङ्गका नाम अमरेश्वर है।"†

आजकल द्वीपके मध्यभागमें ओङ्कारलिङ्गका और नदीके दक्षिण-भागमें अमरेश्वरका मन्दिर है। स्थानीय पुजक ओङ्कारको आदिलिङ्ग कहा करते हैं। रेवाखण्डमें भी ओङ्कारको आदिदेव बताया है।

"ओङ्कारमादिदेवञ्च ये वै ध्यायन्ति नित्यशः।" (२१५०)

तीर्थयात्री द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग दर्शन करनेकी इच्छासे या पहले ओङ्कारमान्धाता और पीछे शिवके पार्थिवलिङ्ग अमरेश्वरका दर्शन लेते हैं। पश्चिमके शास्त्रज्ञ पण्डित इसी ओङ्कारमूर्तिको ईश्वरका प्रकृत लिङ्ग मानते हैं।

जिस समय देवद्वेषी सुलतान् महमूदने सोमनाथका मन्दिर तोड़ा, उस समय भी ओङ्कार और अमरेश्वरका भाव भोंड़ा न या। उक्त दोनों मन्दिरोंके अतिरिक्त अनेक लिङ्ग और मन्दिर विद्यमान रहे। उन सकल प्राचीन मन्दिरोंमें विधर्मी मुसलमानोंके उत्पातसे कई एककाल ही नष्ट हुये, कई ध्वंसावशेषमें पड़े और कई अङ्गहीन अवस्थामें खड़े हैं। किसी

---

† "ओङ्कारञ्च यदा ह्यासीत् तथा च श्रूयतां पुनः।
कश्चिंश्चित् समये चात्र नारदो भगवान्मुदा ॥ ४२
गोकर्णाख्यं शिवं गत्वा चागतो विन्ध्यकेश्वरम्।
तत्रैव पूजितस्तेन बहुमानपुरःसरम् ॥ ४३
मयि सर्वञ्च विद्येत न न्यूनं हि कदाचन।
इति मानं तदा श्रुत्वा नारदो मानहा तदा ॥ ४४
निश्वस्य संस्थितस्तत्र श्रुत्वा विन्ध्योऽब्रवीदिदम्।
किं न्यूनञ्च त्वया दृष्टं मयि निश्वासकारणम् ॥ ४५
तच्छ्रुत्वा नारदो वाक्यमुवाच श्रूयतां पुनः।
त्वयि तु विद्यते सर्वं मेरुरुच्चतरं पुनः ॥ ४६
देवेष्वपि विभागोऽस्य न तवास्ति कदाचन।
इत्युक्त्वा नारदस्तत्र जगाम च यथागतम् ॥ ४७
विन्ध्यश्च परितप्तो वै धिग्धिग्वै जीवितादिकम्।
विश्वेश्वरं तदा शम्भुं समाराध्य करोम्यहम् ॥ ४८
इति निश्चित्य तत्रैव ओङ्कारं यन्त्रकं स्वयम्।
कृत्वा चैव पुनस्तत्र पार्थिवीं शिवमूर्त्तिकाम् ॥ ४९
आराध्य तदा शम्भुं षण्मासञ्च निरन्तरम्।
न चचाल तदा स्थानाच्छिवध्यानपरायणः ॥ ५०
प्रसन्नश्च तदा शम्भुः स्वं ममैक्षितम्।
तस्मै च दर्शयामास दुर्लभं योगिनामपि ॥ ५१
रूपं यदोक्तं वेदेषु भक्तानामीप्सितश्च यत्।
यदि प्रसन्नो देवेश बुद्धिं धेहि यथेप्सितम् ॥ ५२
किं करोमि यदा तेन क्रियते दीयते मया।
न सुखं परदुःखाय वरदानं ममाशुभम् ॥ ५३
तथापि दत्तवांस्तत्र यदीप्सितं तदा पुनः।
एवं च समये देवा ऋषयश्च तदाऽगमन् ॥ ५४
सम्पूज्य शङ्करं तत्र स्थातव्यमिति चाब्रुवन्।
तत्रैव भगवान् देवो लोकानां सुखहेतवे ॥ ५५
ओङ्कारे चैव यन्त्रे वै लिङ्गमेकं तदा पुनः।
पार्थिवे च तथारूपे लिङ्गमेकं तदा पुनः ॥ ५६
एवं द्वयं समुत्पन्नं लिङ्गमेकं द्विधा कृतम्।
प्रणवे चोङ्कारस्य नामासीत् स सदाशिवः ॥ ५७
पार्थिवे चैव यज्जातं तदासीदमरेश्वरः।"

(शिवपुराण, ज्ञानसंहिता ४५अ०)

स्थानपर गगनस्पर्शी मन्दिरको चूड़ा टूट गई है। कहीं अत्युच्च मन्दिरभवन विध्वस्त हो जानेसे कुक्कुर-शृगालको वासभूमि बना है। कहीं भग्न देवदेवकी मूर्ति भूमिमें गड़ी पड़ी है। उक्त दृश्य धर्मनिष्ठ हिन्दुवोंके प्राण व्यथित कर डालता है। पर्वतके ऊपर सिद्धेश्वर महादेवके सुरम्य मन्दिरका भग्नावशेष देखनेमें आता है। इस मन्दिरको चारो ओर चार द्वार हैं। प्रत्येक द्वारके सम्मुख १४ फीट उच्च एवं १४ स्तम्भविशिष्ट द्वारप्रकोष्ट खड़ा है। मन्दिरकी भित्तिके प्रस्तरमें पंक्ति-पंक्तिपर हाथी अङ्कित है। आजकल केवल दो हाथी प्रकृत आकारमें देख पड़ते, अपर विक्षत हो गये हैं। इस मन्दिरसे थोड़ी दूर गौरी-सोमनाथका मन्दिर है। इसी मन्दिरकी अवस्था अति शोचनीय है। किन्तु मन्दिरमें दर्शन करने कितने ही लोग आते है। रेवाखण्डमें लिखा है,—

"सोमनाथं ततो विद्धि कल्पगा तीरमाश्रितम्।
सोमेनाराधितं तीर्थं मुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥" (८५०)

सोमनाथ नर्मदा नदीके तीर विद्यमान है। चन्द्रने इस तीर्थकी आराधना की थी। यह तीर्थ भोग और मोक्षफलदायक है।

स्थानीय पूजक कहते, पहले सोमनाथ श्वेतवर्ण थे। मुसलमानोंके ध्वंस करने आने पर यह मूर्ति प्रतिविम्बित हुई। उसी प्रतिविम्बमें शूकरका बच्चा देख पड़ा था। फिर वही विधर्मी मुसलमान क्रोधसे अधीर हो और सोमनाथको अग्निमें फेंक चल दिये। उसी समयसे सोमनाथ कृष्णवर्ण बन गये हैं।

सोमनाथ मन्दिरके सम्मुख हरे पत्थरकी एक वृहत् नन्दीमूर्ति है। मुसलमानोंने उसका मत्था तोड़ डाला है।

मान्धाता द्वीपमें प्रायः समस्त ही शिवमन्दिर हैं। किन्तु इससे थोड़ी दूर उत्तर नर्मदा किनारे शिवमन्दिर व्यतीत अनेक विष्णु और जैन देवदेवीके मन्दिर बने हैं। नर्मदा द्विधारा होनेकी जगह मुखपर अनेक बड़े-बड़े मन्दिर विद्यमान हैं। उनमें २४ चतुर्भुज विष्णुमूर्ति हैं। इसके अतिरिक्त विष्णुके दशावतारकी मूर्ति भी देख पड़ती है। एक मन्दिरमें विष्णुकी वृहदाकार महावराहमूर्ति है। उसी मन्दिरमें १३४६ ई०को एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित हुआ था। उससे थोड़ी दूर रावण-नाला है। इस नालेके मध्य साढ़े अट्ठारह फीट उच्च काले पत्थरकी एक मूर्ति है। इस मूर्तिके दश हाथ और एक मुण्ड है। कोई-कोई इसे रावणकी मूर्ति बताया करते है। किन्तु वह बात ठीक नहीं। क्योंकि रावणकी मूर्ति रहनेसे सम्भवतः दश मुण्ड और बीस हाथ होते। यह शिवशक्तिनो महाकालीकी मूर्ति है। वक्षःस्थलपर वृश्चिक, वाम पार्श्वपर इन्दुर और पाददेशपर नग्न शिव पड़े हैं।

नदीसे थोड़ी दूर दूसरे भी कई जैन-मन्दिर विद्यमान हैं। इन सकल मन्दिरोंमें जैन देवदेवीकी कितनी ही मूर्ति देख पड़ती हैं। मन्दिरोंपर जैन धर्मके चक्रादिकी प्रतिकृति खुदी है।

पहले यह स्थान भील राजावोंके अधिकारमें रहा। मान्धाताके एक राजा भारतसिंह नामक चौहान राजपूतको अपना आदिपुरुष बताते हैं। ११६५ ई०को उन्होंने नाथू भीलको हरा मान्धाता अधिकार किया था। उन्होंने नाथू भीलकी कन्यासे फिर विवाह कर लिया। आज भी ओङ्कारसे थोड़ी दूर पहाड़के उत्तर कई प्राचीन मन्दिर नाथूके वंशधरोंके अधीन हैं। नाथू भीलके समय दुर्जयनाथ नामक एक गोसाईं ओङ्कारकी पूजा करते रहे। यहां प्रवाद है—उस समय कालभैरव और महाकाली दोनों नरमांस खाते, उसी भयसे तीर्थ-यात्री यहां आते न थे। यात्रियोंके हितार्थ दुर्जयनाथने तपोबलसे कालीदेवीको रिक्षा गुहाके मध्य स्थापित किया। किन्तु कालस्वरूप कालभैरव सहजमें ध्वस हुये न थे। दुर्जयनाथने उनके सन्तोषार्थ नरबलिका प्रबन्ध कर दिया। फिर कालभैरव नरबलि लेने आते रहे। अवशेष १८२४ ई०को अंगरेज़ कर्मचारियोंके यत्नसे यह प्रथा बन्द हुई। दुर्जयनाथके शिष्य परम्परासे ओङ्कारकी पूजा करते चले आते हैं। प्रति वर्ष कार्तिक मासमें ओङ्कारजीका महोत्सव होता है।

ओङ्कारा (सं० स्त्री०) बुद्धशक्तिविशेष।

ओङ्कारेश्वर—बम्बई प्रान्तके पूना नगरका एक शिव-

मन्दिर। यह मुथा नदी किनारे सोमवार-मण्डलमें अवस्थित है। १७४० और १७६० ई०के बीच श्यामली-पन्त चितरावने इसको लोगोंसे चन्दा करके बनाया। भाऊ साहब या सदाशिवराव चिमनाजीने मन्दिर बनते समय छह वर्षतक एक हजार रुपया मासिक दिया था। द्वार पूर्वाभिमुख है। फाटककी दीवार बहुत मज़बूत बनी है। प्राङ्गणकी चारो ओर साधु-सन्तके विश्रामार्थ कमरे हैं। मन्दिरसे नदीतक सिढ़ियां लगी हैं। प्रतिवर्ष होम होता है। मन्दिरके पास ही श्मशान रहनेसे पूनाके लोग भय खाते हैं। सरकार हज़ार रुपये साल होमके लिये देती है। यहां नन्दीकी मूर्ति अति विशाल है।

ओङ्गोल—१ मन्द्राजप्रान्तके नेल्लूर ज़िलेकी एक तहसील। क्षेत्रफल ९८७ वर्गमील है। इसके लम्बे-चौड़े मैदानकी भूमि बहुत अच्छी है। फ़सल खूब उपजती है। नदीके रास्तेमें कूप बने हैं। तालाब बहुत कम हैं। जङ्गल भी कहीं देख नहीं पड़ता।

२ मन्द्राज-प्रान्तके नेल्लूर ज़िलेका एक नगर। यह अक्षा० १५° ३०′ २०″ उ० तथा देशा० ८०° ५′ ३०″ पू०में मूसी नदी किनारे अवस्थित है। १८७६-७७ ई०को यहां म्युनिसपलिटी पड़ी थी। वस्तुतः यह नगर मण्डपति-वंशके राजावोंकी राजधानी रहा। वह सदा वेङ्कटगिरिके नरेशोंसे लड़ा-भिड़ा करते थे। मण्डपति नरेशोंने विद्याको बड़ा उत्साह दिया। इसीसे ओङ्गोल अपने पण्डितोंके लिये आसपास प्रसिद्ध है। अन्ततः वेङ्कटगिरिके राजाने मण्डपति नरेशोंको दबा दिया था।

ओछना, उंछना देखो।

ओछा (हिं० वि०) १ तुच्छ, हकीर, छोटा। २ उथला, छिछला, हलका। ३ शक्तिहीन, कमज़ोर। ४ कम पड़नेवाला, जो लंबा न हो। "जहां बड़ो देवा तहां ओछा पड़।" (लोकोक्ति)

ओछाई (हिं० स्त्री०) तुच्छता, हलकापन, कम पड़नेकी हालत।

ओछापन (हिं० पु०) ओछाई देखो।

ओज (सं० पु०) ओज-अच्। १ मेषादि द्वादश राशिके मध्य अयुग्म राशि। २ अयुग्मभाव, ताक, जमा। (हिं०) ओजः देखो।

ओजः (सं० क्ली०) उब्ज आर्जवे असुन्, बलोपश्च। "उब्जेर्बले बलोपश्च। उण् ४।१९१। १ बल, ज़ोर। २ दीप्ति, चमक। ३ अवलम्बन, सहारा। ४ प्रकाश, रोशनी। ५ मेषादि द्वादश राशिके मध्य १म, ३य, ५म, ७म, ९म एवं ११श राशि। ६ समासबाहुल्य एवं पदाडम्बरताका काव्यगुण। इस गुणयुक्त रीतिका नाम गौड़ी है। ७ शस्त्रादिका कौशल, हथियार वगैरहका इल्म। ८ ज्ञानेन्द्रियगणकी पटुता। रसादि सप्त-धातुके सारभागसे पैदा एक धातु। वैद्यकके मतसे यह सर्वशरीरस्थ, स्निग्ध, शीतल, स्थिर, शुक्लवर्ण, कफात्मक और बलपुष्टिकारक है। भ्रमरके फल-पुष्पसे मधु सञ्चय करनेकी तरह नाना धातुसे ओजः इकट्ठा होता है। अभिघात, क्षय, कोप, शोक, चिन्ता, परिश्रम और क्षुधासे ओजः घट जाता है। ओजः व्यापन्न पड़नेसे स्तब्धगात्रत्व, गात्रका गुरुत्व, वर्णभेद और ग्लानि, तन्द्रा तथा निद्राका वेग बढ़ता है।

ओजत—काठियावाड़की एक छोटी नदी। यह गिर पहाड़के उत्तर प्रान्तसे निकलती और दक्षिणकी ओर बह चलती है। वनथालीमें नगरके समीप ओजत उबेन नदीसे मिल गयी है।

ओजना (हिं० क्रि०) अवरोध करना, रोकना।

ओजसीन, ओजस्वत् देखो।

ओजस्कर (सं० वि०) ओजोधातुवर्धक, हैवानी कुव्वत बढ़ानेवाला।

ओजस्तर (सं० वि०) अधिक ओजोधातुयुक्त, जिसके हैवानी कुव्वत ज्यादा रहे।

ओजस्य, ओजस्वत् देखो।

ओजस्वत् (सं० वि०) ओजोऽस्यास्ति, ओजः-वतच्। १ तेजस्वी, शानदार। २ बलवान्, ज़ोरावर।

ओजस्विता (सं० स्त्री०) ओजस्विनो भावः, ओजस्-तल्-टाप्। १ बलवत्ता, ज़ोरावरी। २ तेजस्विता, शान-शौकत।

ओजस्वी, ओजस्वत् देखो।

ओजित, ओजस्वत् देखो।

ओजिष्ठ (सं॰ त्रि॰) ओज-इष्ठन्। अतिशयेनैतमस्विनो। पा ५।३।५५। बलवान्, तेजस्वी, दीप्तिशाली, ज़ोरावर, शाम्दार, रौशन।

ओजीयस् (सं॰ त्रि॰) ओज-ईयसुन्। द्विवचने विभज्योपपदेतरवीयसुनौ। पा ५।३।५७। तेजस्वी, बलवान्, दीप्त, ताक़तवर, रौशन।

ओजोदा (सं॰ त्रि॰) ओजोधातु प्रदान करनेवाला, जो ज़ोर देता हो।

ओज़ोन (अं॰ पु॰=Ozone) वायुविशेष, एक लतीफ़ हवा। इसमें कोई रङ्ग नहीं रहता। गन्ध अपने ढङ्गका निराला होता है। १७८५ ई॰को वान-मारम (Van marum)ने इस पदार्थको जांचा था। अधिक शीतल करनेसे यह नीलके पानीकी तरह बहने लगता और बड़े ज़ोरसे भड़क उठता है। आक्सिजनमें इसका अंश पाया जाता है। यह पानीमें बहुत कम मिल सकता है। जलको निष्फल बनानेमें इसे अधिक व्यवहार करते हैं। ग्रामोंके वायुमें इसका जितना अंश रहता, उतना नगरोंके वायुमें नहीं मिलता। ओज़ोनका घनत्व आक्सिजनसे थोड़ा बैठता है। उष्ण होनेसे यह आक्सिजन बन जाता है। इसमें गन्ध मिटानेका गुण विद्यमान है।

ओज़ोन-पेपर (अं॰ पु॰=Ozone-paper) वायुकी परीक्षा लेनेका एक पत्र, हवाकी जांचका काग़ज़। इससे वायुमें ओज़ोन नामक वायुका रहना न रहना मालूम होता है।

ओज़ोनबकस (अं॰ पु॰=Ozone-box) सम्पुटविशेष, एक सन्दूक़। इसमें ओज़ोन-पेपरको रख वायुपर ओज़ोनका रहना न रहना देखते हैं। इस सम्पुटकी बनावट अनोखी होती है। वायु भिन्न प्रकाशादि द्रव्य इसमें प्रवेश कर नहीं सकते।

ओजोवशा (सं॰ स्त्री॰) बौद्ध मतानुसार बोधिद्रुमकी एक शक्ति।

ओज्मा (सं॰ पु॰) वज-ङ-मनिप्। १ प्रेरक, भेजने या पहुंचानेवाला। (पु॰) २ शक्ति, ताक़त। ३ वेग, तेज़ चाल।

ओझ (हिं॰ पु॰) १ उदर, शिकम, पेट। २ अन्त्र, आंत।

ओझड़त (हिं॰ पु॰) मन्त्रसे प्रेतादि बाधा हटानेवाला, जो झाड़-फूंक करता हो।

ओझर (हिं॰ पु॰) १ उदर, पेट। पेटकी थैली, मेदा। इसमें भोजन करनेसे खाद्य द्रव्य आ कर एकत्र होता है।

ओझरतामबत—बम्बई प्रान्तके नासिक ज़िलेकी एक नहर। यह एक पुरानी नहर रही, जो १८७१ ई॰को बढ़ा और सुधारकर खोली गयी। इसमें गोदावरीकी शाखा बाणगङ्गा और पालखेड़ नहरसे पानी आता है। लंबाई दो मील है। इसमें होलकर महाराजका प्रायः ५८३६) और अंगरेज़ सरकार १८२०) रु॰ लगा था। सीमाके परिवर्तनमें होलकरने इसे अंगरेज़ सरकारको सौंप दिया।

ओझरी (हिं॰ स्त्री॰) ओझर देखो।

ओझल (हिं॰ स्त्री॰) १ छाया, परछाईं। २ आड़, परदा, ओट। "आंख ओझल पहाड़ ओझल।" (लोकोक्ति) (वि॰) ३ गुप्त, छिपा।

ओझला (हिं॰ पु॰) बच्चेका दूधको पीकर उगलना।

ओझा (हिं॰ पु॰) १ मन्त्रादि द्वारा सर्पदष्ट भूतग्रस्त प्रभृति रोगियोंको आरोग्य करनेवाला, जो झाड़फूंकसे सांपके काटे या भूतके मारे बीमारको अच्छा कर देता हो। २ भूतप्रेत उतारनेवाला। "बाप ओझा मां डायन।" (लोकोक्ति) ३ ऐन्द्रजालिक, बाज़ीगर। ४ मैथिल ब्राह्मणोंका एक उपाधि। यह लोग मध्यप्रदेशके चांदे, रायपुर, हुशङ्गाबाद प्रभृति स्थानोंमें रहते और भाट, गायक अथवा भिक्षुकके वेशमें देख पड़ते हैं।

ओझाई (हिं॰ स्त्री॰) ओझाका कार्य, अभिचार, झाड़फूंक, बाज़ीगरी।

ओझायन (हिं॰ स्त्री॰) ओझाकी पत्नी।

ओझार—१ बम्बई प्रान्तके पूना ज़िलेका एक ग्राम। यह जुन्नारसे ६ मील दक्षिणपूर्व कुकड़ी नदीके वाम तटपर अवस्थित है। यहां गणपतिका एक अवतार हुआ था। ग्रामसे पश्चिम गणपतिका मन्दिर बना है। फाटककी राह बहुत अच्छी है। दोनों ओर द्वारपालकी सुन्दर मूर्ति हैं। द्वारामकाष्ठको शोभा

चार गायकको मूर्ति बढ़ाती हैं। सब मूर्तिपर चमकोला रंग चढ़ा है। प्राङ्गणमें दो दीपकस्तम्भ हैं। सात तोरणको परिक्रमा बनी है। ग्रामका आय मन्दिरमें लगा है। इनामदार प्रबन्ध करते हैं।

२ बम्बई प्रान्तके अहमदनगर ज़िलेकी एक नहरी। इस नहरका मुंह सङ्गमनेर नगरसे १० मील नीचे ओझर ग्राममें प्रवरके वाम तटपर अवस्थित है। लंबाई १८ मील है। २७०८८ एकर भूमि इससे सींची जाती है। १८७८ ई०को यह पूरे तौरपर बनकर तैयार हुयी थी। ओझारपर पुल बंधे और पेड़ लगे हैं।

ओझियाल गोंड—मध्यप्रदेशके गोंडोंकी एक शाखा। राजपूतानेके चारणोंकी तरह यह लोग भी वीणा बजा-बजा स्वजातीय वीरपुरुषोंका यश गाते फिरते हैं। हाथमें मोरका पंख रहता है। ओझियाल चकोर और धनेशका चमड़ा बेचते हैं। लोगोंके विश्वासानुसार धनेशका चमड़ा घरमें रहनेसे धन और सौभाग्य बढ़ता है। इसीसे वह बड़े आदरके साथ क्रय किया जाता है। इनकी स्त्रियां दूसरी हिन्दू-रमणियोंके हाथमें गोदना गोद देती हैं। यहांकी हिन्दू स्त्रियोंके विचारानुसार इनसे हाथमें गोदना गोदानेपर वैधव्यकी दशा भोगना नहीं पड़ती।

दूसरी श्रेणीके ओझियालोंको माना कहते हैं। यह दूसरे गोंडोंके साथ बैठकर नहीं खाते, कारण अपनेको बहुत बड़ा लगाते हैं।

ओझैती, ओझाई देखो।

ओट (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक, आड़। "तिनकेकी ओट पहाड़।" (लोकोक्ति) २ छाया, परछाहीं। ३ गुप्तस्थान, छिप कर बैठनेकी जगह। ४ घूंघट। ५ विरोध, बचाव। ६ अवष्टम्भ, सहारा।

ओटन (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेषका दण्ड, चरखीका डंडा। यह दो रहतीं और कपाससे बिनौलेको अलग करती हैं। पहले हिन्दुस्थानमें घर घर ओटनसे काम लिया जाता था। किन्तु अब मिल या पुतलीघर चलनेसे इसका व्यवहार अधिक देख नहीं पड़ता।

ओटना (हिं० क्रि०) १ कार्पासको चरखीपर लगा बीज छोड़ाना, कपासका बिनौला निकालना। २ बीचमें ही रोक लेना, पकड़ना। ३ दायी बनना, लवांग्रदोह होना। ४ पुनः पुनः कथन करना, अपनी ही बात नाधना।

ओटनी (हिं० स्त्री०) कार्पास परिष्कार करनेका एक यन्त्र, कपास साफ़ करनेकी चरखी। इससे कपासका बिनौला निकाल रुई तैयार करते हैं।

ओटल (हिं० स्त्री०) व्यवधान, परदा, आड़।

ओटा (हिं० पु०) १ पार्श्व-भित्ति, बगली दीवार, आड़। "चौपूं ओटा भरे मोटा।" (लोकोक्ति) २ घरके सामनेका चबूतरा। ३ कपास ओटनेकी चरखीपर रखा जानेवाला मट्टीका लोंदा। इससे चरखी अपनी जगह नहीं छोड़ती। ४ चरखी चलानेवाला।

ओटी, ओटनी देखो।

ओठ (हिं०) ओष्ठ देखो।

ओठंगना (हिं० क्रि०) आश्रय पकड़ना, किसीके सहारे बैठना या लेटना।

ओड़ (हिं० स्त्री०) ओट, आड़।

ओड़क, ओड़व देखो।

ओड़चा (हिं० पु०) १ काष्ठपात्रविशेष, काठका एक बरतन। इससे खेतका जल उलीचते हैं। २ बेड़ी, दौरी। इससे निम्नस्थलका जल खेतमें पहुंचाया जाता है। यह गहरी टोकरी जैसा रहता है। दोनों ओर डोरी लगा दो आदमी इसे चलाते हैं।

ओड़छा, ओर्छा देखो।

ओड़न (हिं० स्त्री०) १ अवरोध, रोक। २ ढाल, बचावकी चीज़।

ओड़ना (हिं० क्रि०) १ अवरोध लगाना, बीचमें ही रोक रखना। २ विस्तारित करना, फैला देना।

ओड़व (सं० पु०) रागविशेष। इसमें स, ग, म, ध और नि—पांच ही स्वर लगते हैं।

ओड़ा (हिं० पु०) १ टोकरा, खांचा। २ गर्त, गड्ढा। ३ सेंध। (वि०) ४ गभीर, गहरा।

ओडाशङ्कर—एक संस्कृत ग्रन्थकार। यह सुधाकरके पुत्र और शशिकरके पौत्र थे। ग्रन्थविधानधर्मकुसुम और स्मृतिसुधाकर नामक पुस्तक इनके लिखे हैं।

ओड़िका (सं॰ स्त्री॰) धान्यविशेष, नीवार। यह शीतल, रुक्ष, कफ-वायु-वृद्धिकर और पित्तनाशक होती है। (राजवल्लभ)

ओड़ी, ओड़िका देखो।

ओड्र (सं॰ पु॰) आ-उन्दी-रक्, दस्य डत्वम्। १ जवाकुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़। यह संग्राही और केशहित होता है। (भावप्रकाश) इसके सेवनसे मल और मूत्र रुकता है। (राजवल्लभ) ओड्र कटु, उष्ण, इन्द्रलुप्तहर, विच्छर्दिजन्तुजनक और सूर्याराधन है। (राजनिघण्टु) २ उड़ीसा मुल्क। उत्कल देखो। प्रायः उत्कलके उत्तरांशको ओड् कहते हैं। (त्रि॰) ३ उत्कल देशका अधिवासी, उड़िया।

ओड्काख्या, ओड्राख्या देखो।

ओड्रदेश (सं॰ पु॰) उत्कल, उड़ीसा।

ओड्रपर्याय (सं॰ पु॰) सूर्यकान्तपुष्पक्षुप, गोड़हरका पेड़।

ओड्रपुष्प (सं॰ क्ली॰) ओड्रश्च तत् पुष्पञ्चेति, कर्मधा॰। १ जवाकुसुम, गुड़हरका फूल। २ जवा-कुसुमवृक्ष, गुड़हरका पेड़।

ओड्रपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) जवावृक्ष, गुड़हरका पेड़।

ओड्राख्या (सं॰ स्त्री॰) ओड्रमाख्या यस्य, बहुव्री॰। जवापुष्प वृक्ष, गोड़हरका पेड़।

ओढ़ (सं॰ त्रि॰) आ-वह-क्त। सम्यक् रूपसे वहन किया हुआ, जो अच्छी तरह ढोया गया हो।

ओढ़न (हिं॰ स्त्री॰) ओढ़ाई, जिस्मको वस्त्रसे ढांकनेका काम। २ वस्त्र विशेष, ओढ़नेका कपड़ा।

ओढना (हिं॰ क्रि॰) १ लपेटना, वस्त्रसे देह ढांकना। २ ओड़ना, रोक रखना। (पु॰) ३ देहाच्छादन-वस्त्र, जिस्म ढांकनेका कपड़ा। ४ विस्तरकी चद्दर।

"सासका ओढ़ना पतोहका बिछौना" (लोकोक्ति)

ओढ़नी (हिं॰ स्त्री॰) छोटी चद्दर या पिछौरी। यह स्त्रियोंके ही काम आती है।

"ओढ़नी को बताय नगी।" (लोकोक्ति)

ओढ़र (हिं॰ पु॰) छल, बहाना, धोका।

ओढ़वाना (हिं॰ क्रि॰) आच्छादित करवाना, ओढ़ानेके कामपर किसी दूसरेको लगाना।

ओढ़ाना (हिं॰ क्रि॰) अन्यको आच्छादित करना, दूसरेको ढांक देना।

ओढ़ापलक्षया (सं॰ स्त्री॰) गोरखमुण्डी, गोरखमुंडी।

ओणि (सं॰ त्रि॰) ओण-इन्। १ अपनयनकारी, बचा देनेवाला। (पु॰-स्त्री॰) २ सोमरस प्रस्तुत करनेका एक पात्र। इसके दो भाग होते हैं। ३ स्वर्गमर्त्य, जमीन् आस्मान्। ४ रक्षा करनेवाली शक्ति, जो ताक़त बरक़रार रखती हो। ५ रक्षा, हिफ़ाज़त।

ओणी (सं॰ स्त्री॰) ओणि देखो।

ओत (सं॰ त्रि॰) आ-वेञ्-क्त। १ अन्तर्व्याप्त, भीतर भरा हुआ। २ बुना हुआ। ३ कपड़ेके तानेका सूत। (हिं॰ स्त्री॰) ४ सुख, विश्राम, फ़ुरसत, आराम। ५ आलस्य, सुस्ती। ६ लाभ, फ़ायदा। ७ स्वल्पव्यय, किफ़ायत। ८ अवशिष्टांश, बचत।

ओतपोदरम्—मन्द्राज प्रान्तके तेनिवल्ली जिलेकी एक तहसील। इसका परिमाण १०८५ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः तीन लाख निकलेगी। तूतकूंडी नामक प्रसिद्ध बन्दर इसी तहसीलमें लगता है। ओत-पोदरम् ही प्रधान नगरका भी नाम है।

इसीमें इत्तियापुरम् की जमीन्दारी भी पड़ती है। भूमि काली और बराबर है। कहीं कहीं इमलीके बाग़ लगे हैं। रुई अधिक होती है। समुद्र किनारे श्वेतबालुका भरी है। उसमें ताड़ और बबूल होता है। साउथ इण्डियन रेलवे मदुरा-से इस तहसीलमें आती है। मनियाची जङ्क्शन और तूतीकोरिन-टरमिनस है। ओतपोदरम् नगरी-में तहसीलदारी है।

ओतप्रोत (सं॰ त्रि॰) १ परस्पर सङ्गठित, एक-दूसरेसे लगा हुआ। (पु॰) २ ताना-बाना। ३ विवाह विशेष, किसी किस्मकी शादी। इसमें एक-दूसरेको लड़की लड़का दोनों देते हैं।

ओता (हिं॰ वि॰) उस परिमाणवाला, उतना।

ओतु (सं॰ पु॰ स्त्री॰) अवति रक्षति गृहमाखुभ्यः, अव-तुन्-ऊट्। सितनिगमिमसिसच्यविधाञ्क्रुशिभ्यस्तुन्। उण् १।७०। ज्वरत्वरेत्यादि। पा ६।४।२०। १ विड़ाल,

बिलाव। २ वनविडाल, जङ्गली बिल्ली। ३ प्रति सन्ध, बाना, भरनी।

ओतूर—बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १९° १३´ उ०, तथा देशा० १४° ३´ पू०में कुसुमावतीके वामतटपर अवस्थित है। जुवरसे ओतूर १० मील उत्तरपूर्व है। बाजार बड़ा और भारी है। नगरसे २ मील पश्चिम पर्वत है। रोहीकड, नागपुर और जुवर तोन फाटक हैं। यहां एक दुर्ग और नदी किनारे दो मन्दिर है। भीलोंके आक्रमणमें नगर बचानेको जुवर दरवाजेके पास उक्त दुर्ग बनाया गया था। मन्दिरोंमें एक सुप्रसिद्ध तुकारामके गुरु केशवचैतन्यका और दूसरा कपर्दिकेश्वर महादेवका है। श्रावणके अन्तिम सोमवार को मेला लगता है। सरकार मन्दिर को कुछ साहाय्य देती है।

ओतो (हिं० वि०) उतना।

ओत्ता (हिं० पु०) १ दरी बुननेकी पटरीका पाया। (वि०) २ उतना।

ओद (सं० पु०) १ अन्न, अनाज। (हिं० पु०) २ आर्द्रभाव, तरी, गीलापन। (वि०) ३ आर्द्र, नम, गीला, जो सूखा न हो।

ओद(ओड)—१ बम्बई प्रान्तके खेड़ा जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २२° २७´ उ० और देशा० ७३° १०´ पू०पर अवस्थित है। लोकसंख्या प्रायः साढ़े नौ हजार है। २ बम्बई प्रान्तके कच्छ जिलेकी नोनिया जाति। ओदोंका काम भूमि खोदना है। यह काठियावाड़में भी मिलते हैं। ओद अपनेको सगरसुत भगीरथके वंशसे उत्पन्न होनेवाले क्षत्रिय बताते हैं। रासमालाके वर्णनानुसार सिद्धराजने मालवेसे कुछ ओदोंको सहस्रलिङ्गह्रद खोदने पाटन बोलाया था। किन्तु जस्मानाम्नी एक ओदस्त्रीसे उनका प्रेम बढ़ा और उसको उन्होंने रानी बनाने कहा। उसने इस बातसे असम्मत हो भागनेकी चेष्टा लगायी थी। सिद्धराजने उसका पीछा किया और उसे पकड़ लेनेपर कितने ही ओदोंको जानसे मार दिया। जस्माने आत्महत्या कर शाप दिया था—तुम्हारे ह्रदमें कभी जल न रहेगा। किन्तु मायो नामक एक ढेडको बलि देनेसे शाप छूट गया। ओद इधर-उधर काम ढूंढते घूमा करते हैं।

ओदती (सं० स्त्री०) उषा, सवेरा।

ओदन (सं० पु०-क्ली०) उन्द-युच् नलोपश्च। उन्दे र्नलोपश्च। उण् २।७६। १ भक्त, भात। २ भक्ष्य, अनाज।

ओदनपाकी (सं० स्त्री०) ओदनस्य पाकइव पाको यस्याः, बहुव्री०। १ नीलझिण्टी। २ ओषधिविशेष।

ओदना, ओदनिका देखो।

ओदनाह्वया (सं० स्त्री०) ओदनस्य आह्वा इव आह्वा यस्याः, बहुव्री०। १ महासमङ्गा, ककई। २ वाट्यालक, बरियारी।

ओदनाह्वा, ओदनिका देखो।

ओदनिका (सं० स्त्री०) १ महासमङ्गा, ककई। २ वाट्यालक, बरियारी।

ओदनी (सं० स्त्री०) ओदन इव आचरति, ओदन-क्विप् ङीप्। ओदनिका देखो।

ओदनीय (सं० वि०) ओदन-यत्। विभाषाहविरपूपादिभ्यः। पा ५।१।४ भक्ष्य वस्तु, खाने लायक चीज़।

ओदम्बरी (औदम्बर) उत्तर गुजरातके ब्राह्मणोंकी एक शाखा। ७०ई०को प्लिनिने ओदम्बरियोंको कच्छके लोग बताया था। १५० ई०को टलेमिने इनके प्रधान नगरका नाम ओरबादरी (Orbadari) लिखा, जो सिन्धुसे पूर्व रहा। लोग वर्तमान राधनपुरको उक्त नगर समझते हैं।

ओदर (हिं०) उदर देखो।

ओदरना (हिं० क्रि०) चटखना, फटना, बरबाद होना।

ओदा (हिं० वि०) आर्द्र, तर, जो सूखा न हो।

ओदारना (हिं० क्रि०) तोड़ना-फोड़ना, फाड़ डालना, मट्टीमें मिलाना।

ओहर—दाक्षिणात्यकी एक असभ्य जाति। ओहरोंका दूसरा नाम बुढव है। यह अतिशय बलिष्ठ और मांसप्रिय होते हैं। वराह एवं इन्दुरका मांस इन्हें बहुत अच्छा लगता है। शारीरिक परिश्रममें ओहर अतिशय पटु होते और जो काम पाते, उसीको कर डालते हैं। किन्तु दूसरी जातिवाले लोगोंके साथ इन्हें कोई काम करना अच्छा नहीं लगता। यह स्वजातिवालोंमें मिलजुल

कृषिकार्य चलाते और पथ-कूप प्रभृतिके निर्माणमें हाथ लगाते हैं। पहले ओहर भूतप्रेत पूजते थे, पीछे वैष्णव बन गये। फिर भी पैशाच देवताका भय और प्रेम आज भी कुछ कम नहीं। बहुविवाहकी प्रथा प्रचलित है। क्योंकि अधिक स्त्री रहनेसे आय भी बढ़ जाता है। स्त्रियां शारीरिक परिश्रम द्वारा अर्थोपार्जन करती हैं।

ओद्म (सं० पु०) उन्द भावे मन् नलोपः गुणश्च। अवोदैधौद्मप्रश्रथहिमश्रथाः। पा ६।४।२९। क्लेद, तरी, गीलापन। २ प्रवाह, बहाव।

ओद्मन् (सं० क्ली०) उन्द-मनिन् नलोपश्च। ओद्म देखो।

ओधना (हिं० क्रि०) बन्धनमें पड़ना, लग जाना, अटकना।

ओधस् (सं० क्ली०) पशुस्तन, जानवरका बाख या थायन।

ओधे (हिं० पु०) स्वामी, मालिक।

ओनचन (हिं० स्त्री०) अदवायन, खाटके पायंताने लगनेवाली रस्सी। इसको कसनेसे चारपाई कड़ी पड़ जाती है।

ओनचना (हिं० क्रि०) अदवायन कसना, खाटके पायतानेकी रस्सी कड़ी करना।

ओनवना, उनवना देखो।

ओना (हिं० पु०) जलके उद्गमका पथ, पानी निकलनेकी राह।

ओनाह (हिं० वि०) शक्तिशाली, ताकतवर।

ओनामा (हिं० क्रि०) सुनना, कान लगाना।

ओनामासी (हिं० स्त्री०) ओं नमः सिद्धम्, विद्यारम्भके समयका एक मङ्गल वाक्य।

ओन्दन (सं० पु०) १ मङ्गल। २ कनिष्ठ।

ओप (हिं० स्त्री०) १ शोभा, खूबसूरती, चमक। २ रंग, कलई।

ओपची (हिं० पु०) कवच धारण किये हुआ वीर, जो सिपाही बखतर पहने हो।

ओपना (हिं० क्रि०) परिष्कार करना, रंगना, मलना।

ओपनी (हिं० स्त्री०) परिष्कार करनेका वस्तु, सफाईकी चीज। खड्गादि परिष्कार करनेवाले इष्टका-खण्डको ओपनी कहते हैं।

ओपश (सं० पु०) १ शिरोभूषण, जुल्फ। २ शृङ्ग, सींग। (सायण)

ओपशी (सं० स्त्री०) सुन्दर केशयुक्त, जुल्फोंवाला, जो बालोंको बनाये-चुनाये हो।

ओपोस्सम (अं० पु० = Opossum) पशुविशेष, एक चौपाया। यह उत्तर अमेरिकाके संयुक्तराज्य, कालिफोरनिया, टेकसास और दक्षिण अमेरिकामें मिलता है। इसमें अन्य पशुके अपक्व पोतकपर टूट पड़नेका विशेषत्व विद्यमान है। यह कई प्रकारका होता है। दांत और अंगूठे अनोखे देख पड़ते हैं। कोई चूहे जैसा छोटा और कोई बिल्ली जैसा बड़ा रहता है। स्त्री जाति वसन्त ऋतुमें छहसे सोलह बच्चेतक उत्पन्न करती है। चौदह या सत्रह दिनमें बच्चे होशियार हो जाते हैं। दक्षिण अमेरिकामें बच्चे मांकी पीठपर चढ़े और उसकी पूंछसे अपनी पूंछ कसे रहते हैं।

ओफ (अ० अव्य०) अरे, हाय, बाप रे बाप।

ओबरी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र गृह, छोटा मकान, झोपड़ी।

ओम् (सं० अव्य०) अवति रक्षतीति, अव-मन् टिलोपः ऊठ्च। अवतेष्टिलोपश्च। उण् १।१४१। ज्वरत्वरेत्यादि। पा ६।४।२०। प्रणव। योगसूत्रकारने लिखा है—

"तस्य वाचकः प्रणवः।" (१।२७)

ईश्वरका वाचक प्रणव ठहरता अर्थात् ॐ कहनेसे ईश्वर समझ पड़ता है।

अब देखना चाहिये—जिस शब्दके उच्चारणसे ही ईश्वरका सम्बोधन और ईश्वरकी महिमाका प्रकाशन होता, श्रुति तथा स्मृतिमें उसी ॐ शब्दका किस प्रकार भाव पाया जाता है।

शुक्लयजुर्वेदकी माध्यन्दिन-शाखामें सर्वप्रथम 'प्रणव' शब्दका उल्लेख मिलता है—

"प्रणवैः शस्त्राणां रूपमयसा सोमः आप्यते।" (१९।२५)

"ओम्प्रतिष्ठ।" (२।१३)

फिर काण्वयजुः प्रभृति शाखाके संहिता-भागमें ॐ

अथर्वा प्रणव शब्दका उल्लेख है। इससे समझ पड़ता— वेदको संहिता अर्थात् प्राचीनतम भागके साथ साथ ओम्‌का आविर्भाव हुआ है। उसी गणनातीत कालसे ऋषियोंने ओङ्कारतत्त्व प्रचार करनेको उद्योग लगाया। ऋग्वेदके ऐतरेय-ब्राह्मणमें लिखा है—"ओमित्यृचः प्रतिगर एवं तथेति गाथाया ओमिति वै दैवं तथेति मानुषम्।" (७।१८)

सकल वेदोंको प्रायः सकल ही उपनिषदोंमें ओम् पर कुछ न कुछ लिखा और उसके पाठसे कई प्रकार ओम्‌का गूढ़ार्थ प्रतिपादित हुआ है। यथा—

१म—सेतु। अथर्ववेदको संहितामें ओम् 'सेतु' जैसा निर्दिष्ट है। (१।१०,५।४) २य—मन। (छान्दोग्य) ३य—काय। (छान्दोग्य) ४र्थ—रथ। (मैत्री उप० २।१०) ५म—धनुर्ग। (श्वेताश्वतर १।८) ६ष्ठ—उद्गीथ। (छान्दोग्य १।१) ७म—प्राण। (छान्दोग्य ७।१) ८म—अग्नि ९म—तेजः। "तेजो प्रथममोङ्कारात्मकमासीत्। ततोऽमेनैवोमित्येव तपन्नुभाति।" (मैत्री उप०) १०—ज्योति:। "दीप्तवानीम्. ज्योतिः प्रकाशमनाऽसीतिः। अथवाऽस्यपर्योमारमरूपी ओतमिद्री विजरी विमृत्यु विशोको भवतीत्येवं ह्याह।" (मैत्र्युप० ६।२५) ११—वाक्य। १२—शब्द। (छान्दोग्य २।२३) १३—रस। (तैत्तिरीय उप० १।७) १४—जल। "आपो ज्योतिरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्।" (मैत्री उप० ६।३५) १५—मिथुन। (छान्दोग्य १।१।६) १६—श्रेय। (योगशास्त्र) १७—यूप। "ओङ्कारो यूपः।" (प्राणाग्निहोत्र उप०) १८—सर्व। "ओमिति ब्रह्म। ओमितीदं सर्वम्।" (तैत्तिरीय उप० १।८)

ऊपरी अर्थोंसे स्पष्ट समझ पड़ता, कि वही विश्वात्मा है।

१९—आरम्भ। २०—स्वीकारवाक्य। २१—अनुमति। २२—अपाकृति। २३—अस्वीकार।

ब्रह्मकी महिमा प्रकाश करनेको 'ओम्' शब्द नाना अर्थोंमें व्यवहृत हुआ है। भिन्न भिन्न उपनिषदोंमें इस विषयका विस्तर प्रमाण मिलता है।

"ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत।
ओमिति ह्युद्गायति तस्योपव्याख्यानम्।" (छान्दोग्य १।१।१)

"ओमित्येतदक्षरमुद्गीथः तद्वा एतन्मिथुनं यद्वाक्‌ च प्राणश्च ऋक्‌ च साम च।" (छान्दोग्य १।१।५)

अक्षरस्वरूप उद्गीथ 'ॐ'की उपासना करना चाहिये। क्योंकि 'ॐ' अक्षरसे ही आरम्भ कर साम प्रभृति गाये जाते हैं। इसलिये ओङ्कार ही उद्गीथ है। ओङ्कारकी व्याख्या करना कर्तव्य है। (१।१।१)

वाक्य ही ऋक्, प्राण ही साम और 'ॐ' अक्षर ही उद्गीथ है। वाक्य एवं प्राण ऋक् तथा सामका कारण होनेसे ऋक् और साम शब्द वाच्य मिथुन है। (१।१।५)

"तद्वा एतन्मिथुनमोमित्येतस्मिन्नक्षरे संसृज्यते यदा वै मिथुनौ समागच्छत आपयतो वै तावन्योन्यस्य कामम्।" "आपयिता ह वै कामानां भवति य एतदेवं विद्वानक्षरमुद्गीथमुपास्ते।" (छान्दोग्यउप० १।१।६-७)

जैसे स्त्रीपुरुषके परस्पर मिलनेसे कामवृत्ति कृतार्थ होती, वैसे ही जब वाक्यरूप स्त्री और प्राणरूप पुरुषका मिथुन अर्थात् मिलन गठता, तब उनको परस्पर काम मिलता है। (१।१।६) जो विद्वान् व्यक्ति इस मतको देख उद्गीथ ओङ्कारकी उपासना करता, वह जब जो चाहता, वही फल पा जाता है। (१।१।७)

तैत्तिरीय उपनिषद्‌में लिखा है—

"ओमिति ब्रह्म। ओमितीदं सर्वम्। ओमित्येतदनुकृतिर्ह स्म वा अप्यो श्रावयेत्याश्रावयन्ति। ओमिति सामानि गायन्ति ओं शोमिति शस्त्राणि शंसन्ति। ओमित्यध्वर्युः प्रतिगरं प्रतिगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यग्निहोत्रमनुजानाति। ओमिति ब्राह्मणः प्रवक्ष्यन्नाह। ब्रह्मोपाप्नवानीति ब्रह्मैवोपाप्नोति।" (८।१)

ओङ्कार ही ब्रह्म है। इस संसारमें सकल ही ओङ्कार है। सकल कार्योंके आदिमें ओङ्कार प्रयोग करना चाहिये। कोई वैदिक विषय सुनानेमें प्रथम ही ओङ्कार उच्चारण करना पड़ता। ओङ्कार प्रयोग पूर्वक सामगान किया जाता है। शस्त्र पढ़नेमें प्रथम 'ॐ शों' वाक्य बोलते हैं। अध्वर्युको मन्त्र पढ़ते समय पहले 'ॐ' उच्चारण कर लेना चाहिये। ब्रह्म कर्मारम्भसे पूर्व 'ॐ' शब्द बोलना पड़ता है। 'ॐ' शब्द उच्चारण कर अग्निहोत्र याग करते हैं। ओङ्कार उच्चारणपूर्वक वेदाध्ययन करनेसे वेदविद्या और ब्रह्मविद्या दोनों मिलती हैं।

"एतद्वै सत्यकाम परं चापरं च ब्रह्म यदोङ्कारस्तस्माद्विद्वानेतेनैवायतनेनैकतरमन्वेति ॥१॥ स यद्येकमात्रमभिध्यायीत स तेनैव संवेदितस्तूर्णमेव जगत्यामभिसम्पद्यते। तमृचो मनुष्यलोकमुपनयन्ते स तत्र तपसा ब्रह्मचर्येण श्रद्धया सम्पन्नो महिमानमनुभवति ॥२॥ अथ यदि द्विमात्रेण मनसि सम्पद्यते सोऽन्तरिक्षं यजुर्भिरुन्नीयते। सोम लोकं स सोमलोके विभूतिमनुभूय पुनरावर्तते ॥३॥

यः पुनरेतं त्रिमात्रेणोमित्येतेनैवाक्षरेण परं पुरुषमभिध्यायीत स तेजसि सूर्ये सम्पन्नः। यथा पादोदरस्त्वचा विनिर्मुच्यत एवं ह वै स पाप्मना विनिर्मुक्तः स सामभिरुन्नीयते ब्रह्मलोकं स एतस्माज्जीवघनात् परात्परं पुरिशयं पुरुषमीक्षते तदेतौ श्लोकौ भवतः। ५। तिस्रो मात्रा मूर्तिमत्यः प्रयुक्ता अन्योन्यसक्ता अनविप्रयुक्ताः। क्रियासु बाह्याभ्यन्तरमध्यमासु सम्यक् प्रयुक्तासु न कम्पते ज्ञः। ६। ऋग्भिरेतं यजुर्भिरन्तरिक्षं स सामभिर्यत्तत् कवयो वेदयन्ते। तमोङ्कारेणैवायतनेनान्वेति विद्वान् यत्तच्छान्तमजरममृतमभयं परञ्चेति ॥ ७ ॥ (प्रश्नोपनिषत् ५ प्रश्न)

ओङ्कार ही पर और अपर ब्रह्म है। विद्वान् इस ओङ्कार (ओङ्कारकी उपासना) द्वारा पर और अपर ब्रह्मको प्राप्त होते हैं। २। जो व्यक्ति एकमात्रा-विशिष्ट ॐकारकी उपासना उठाता, वह अति सत्वर ही पृथिवी पर जन्म पाता है। ओङ्कारकी प्रथम मात्रा ऋग्वेदस्वरूप है। प्रथम मात्रा ही उपासककी मनुष्य-लोक पहुंचाती है। (प्रथम मात्राकी उपासना करनेसे मनुष्यलोक मिलता है।) इस मनुष्यलोकमें वह उपासक ब्रह्मचर्य एवं श्रद्धासम्पन्न हो नाना-विध महिमा अनुभव करता है। ३। जो व्यक्ति द्विमात्रा विशिष्ट ओङ्कारकी उपासना करेगा, वह यजुर्वेदस्वरूप द्विमात्रा द्वारा अन्तरिक्ष लोक पहुं-चेगा; फिर सोमलोकमें नानाविध विभूति अनु-भव कर इहलोकको चलेगा। ४। जो व्यक्ति त्रिमात्राविशिष्ट ओङ्कार द्वारा उस परमपुरुषको ध्यान करता, वह सूर्यरूप तेजःसम्पन्न बनता है। जैसे सर्प प्राचीन चर्म छोड़ झटसे छूटता, वैसे ही उक्त उपासक भी सामरूप ओङ्कारसे ब्रह्मलोक पहुंचता और जीवसमष्टिरूप हिरण्यगर्भसे उत्-कृष्ट सर्व शरीरानुप्रविष्ट परब्रह्मको देख सकता है। उसी ओङ्कारकी मूर्तिमती तीन मात्रा—अकार, उकार और मकार हैं। वह तीनों आत्माके ध्यानकी क्रियामें लगा करती हैं। उक्त तीनों मात्राका परस्पर सम्बन्ध विद्यमान है। उनका प्रयोग एकही विषयमें होता है। किसी क्रियामें उनका अप्रयोग नहीं पड़ता, किन्तु समुदाय बाह्य, आभ्यन्तर और मध्यविध क्रियामें प्रयोग चलता है। जो व्यक्ति ओङ्कारका विभाग विशेषरूपसे जानता, वह कभी विचलित नहीं होता। ६। ज्ञानी ऋक्स्वरूप प्रथम मात्राद्वारा इहलोक, यजुःस्वरूप द्वितीय मात्रा द्वारा अन्तरीक्ष एवं सामरूप तृतीय मात्रा द्वारा ब्रह्मलोक और ओङ्काररूप साधन द्वारा जरा-मृत्यु विहीन शान्त परब्रह्मपद पाते हैं। ७।

"ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्याख्यानं भूतं भवद्भविष्यदिति सर्वमोङ्कार एव। यच्चान्यत्त्रिकालातीतं तदप्योङ्कार एव।" "सर्वं ह्येतद् ब्रह्मायमात्मा ब्रह्म सोऽयमात्मा चतुष्पात्।" (माण्डूक्योपनिषत्)

यह समुदय ही ब्रह्म है। हमारा जो जीव आत्मा है, वह भी ब्रह्म है। उसी आत्माका अभिन्न ब्रह्म चार अंशमें विभक्त है।

जैसे रज्जु प्रभृति सर्पके विवर्त और अद्वितीय ब्रह्म विश्वप्रपञ्चका अधिष्ठान ठहरता, वैसे ही ओङ्कार समु-दय वाक्प्रपञ्चका एकमात्र आधार पड़ता है। (अर्थात् इस ओङ्कारमें ही समुदय वाक्य परिकल्पित है) वह ओङ्कार ब्रह्मस्वरूप है, क्योंकि ओङ्कार ब्रह्मका अभि-धायक है। (अभिधायक शब्द अभिधेयसे भिन्न नहीं) ओङ्कार विवर्त शब्दाभिधेय प्राण और घटादि सकल ही आत्माका धर्म है। किन्तु उक्त प्राणादि अभिधायक वाक्यसे भिन्न नहीं। इसीसे लिखा है—

"वाचारम्भणं विकारो नामधेयम्।"

अर्थात् वाक्य द्वारा आरब्ध वस्तुमात्र नाममात्र है। सुतरां अक्षरात्मक ओङ्कार परिदृश्यमान समुदयसे अभिन्न है। 'ओङ्कारको समुदय' मान उपासना करनेसे ब्रह्मप्राप्ति होती है। अर्थात् ओङ्कारकी उपासनासे जब चित्त निर्मल रहेगा, तभी ब्रह्म स्पष्टरूपसे समझ पड़ेगा। फिर ब्रह्मपद मिलनेमें विलम्ब नहीं होता। यह ओङ्कार ब्रह्मज्ञानकी प्राप्तिका उपाय होनेसे ब्रह्मका निकटवर्ती है। अतीत, भविष्यत् और वर्तमान—हमारा सब ज्ञानगम्य ओङ्कार ही है।

"सोऽयमात्माऽध्यक्षरमोङ्कारोऽधिमात्रं पादा मात्रा मात्राश्च पादा अकार उकारो मकार इति। ८। जागरितस्थानो वैश्वानरोऽकारः। प्रथमा मात्राऽऽप्तेरादिमत्त्वाद्वाप्नोति ह वै सर्वान् कामानादिश्च भवति य एवं वेद। ९। स्वप्नस्थानस्तैजस उकारो द्वितीया मात्रोत्कर्षादुभयत्वाद्वोत्कर्षति ह वै ज्ञानसन्ततिं समानश्च भवति नास्याब्रह्मवित्कुले भवति य एवं वेद। १०। सुषुप्तस्थानः प्राज्ञो मकारस्तृतीया मात्रा मितेरपीतेर्वा मिनोति ह वा इदं सर्वमपीतिश्च भवति य एवं वेद। ११। अमात्रश्चतुर्थोऽव्यवहार्यः प्रपञ्चोपशमः शिवोऽद्वैत एवमोङ्कार आत्मैव संविशत्यात्मनाऽऽत्मानं य एवं वेद। १२।"

वह आत्मा अक्षरको अधिकार कर अवस्थित है।

फिर आत्माके पादस्वरूप अकार, उकार और मकारको अधिकारकर अक्षर (ओङ्कार) सर्वदा अवस्थित है। आत्माका पाद ही ओङ्कारकी मात्रा है।८। जिस स्थानसे प्राणी जागरित होते, उसी स्थानको वैश्वानर पदवाच्य अकार बोलते हैं। यह अकार ही ओङ्कारकी प्रथम मात्रा है। जो व्यक्ति व्याप्तित्व एवं आदिमत्व द्वारा अकार तथा वैश्वानरकी साम्य उपासना उठाता, वह समस्त अभीष्ट फल पाता और समुदायका आदि बन जाता है।९। स्वप्नस्थान तैजस ही ओङ्कारकी द्वितीय मात्रा उकार है। जो व्यक्ति इसको उत्कर्ष एवं प्राज्ञ विश्वका मध्यस्थ समझ तैजस दृष्टि द्वारा उपासना करता, उसका ज्ञान बढ़ने लगता, शत्रु मित्र उभय उसके पक्षमें समान पड़ता और उसके वंशमें कोई ब्रह्मज्ञानविहीन नहीं रहता।१०। प्राज्ञ नामक सुषुप्त स्थान ही तृतीय मात्रा मकार है। मिति एवं अपीति द्वारा मकार तथा प्राज्ञको साम्य उपासना करनेसे अधिकारी जगत्‌की प्रकृत अवस्था देख पाता और ब्रह्मस्वरूपमें लीन हो जाता है।११। जो तुरीय ब्रह्म है, वह किसी व्यवहारका विषय नहीं। वह प्रपञ्चविहीन और मङ्गलमय है। वही 'एकमेवाद्वितीयं' महावाक्यका लक्ष्य और ओङ्कारस्वरूप है। वह समुदायमें जीवात्माके भावसे विराज रहा है। जो उसका प्रकृत तत्त्व समझ सकता, वही स्वीय जीवात्मा द्वारा परमात्माके साथ मिलता है।१२।

अथर्वशिराके मतमें—

"हृदि त्वमसि यो नित्यं तिस्रो मात्राः परस्तु सः।"

जो हृदयमें नित्य रहते, उन्हीं आपकी प्रणव अ-उ-म् तीन मात्रा कहते हैं। उन्हीं हृदिस्थित पुरुषका उत्तरभाग ओङ्कार है। ओङ्कार ही सर्वव्यापी, अनन्त, तारक, शुक्ल, सूक्ष्म, विद्युत् और ब्रह्म है। जो ब्रह्म है, वह एक है। वही रुद्र, वही ईशान और वही महेश्वर है।

अनन्तर अथर्वशिरा निर्देश करती है—

"अथ कस्मादुच्यते ओङ्कारः यस्मादुच्चार्यमाण एव प्राणान् ऊर्ध्वमुत्क्रामयति तस्मादुच्यते ओङ्कारः। अथ कस्मादुच्यते प्रणवः यस्मादुच्चार्यमाण एव ऋग्यजुःसामाथर्वाङ्गिरसः ब्रह्म ब्राह्मणेभ्यः प्रणामयति नामयति च तस्मादुच्यते प्रणवः।"

अथर्वशिखोपनिषद्‌में ओङ्कारका स्वरूप विशेष वर्णित है।—

"ओमित्येतदक्षरमादौ प्रयुक्तं ध्यानं ध्यायितव्यम्। ओमित्येतदक्षरस्य पादश्चत्वारो देवाश्चत्वारो वेदाश्चत्वारः। चतुष्पादेतदक्षरं परं ब्रह्म पूर्वास्य मात्रा पृथिव्यकारः स ऋग्भिर्ऋग्वेदो ब्रह्मा वसवो गायत्री गार्हपत्यः। द्वितीयान्तरिक्षमुकारः स यजुर्भिर्यजुर्वेदो विष्णुरुद्रास्त्रिष्टुप् दक्षिणाग्निः। तृतीया द्यौर्मकारः स सामभिः सामवेदो विष्णुरादित्याश्च जगत्याहवनीयः। यावसानेऽस्य चतुर्थ्यर्धमात्रा सा लुप्तमकारः सोऽथर्वणैर्मन्त्रैरथर्ववेदः संवर्तकोऽग्निर्मरुतो विराडेक ऋषि।" इत्यादि।

प्रथमतः 'ओं' अक्षर लगा ध्यान करना चाहिये। ओं अक्षरके पाद चार हैं। चतुष्पादविशिष्ट यह अक्षर ही परब्रह्म है। इसकी अकारस्वरूप प्रथम मात्रा पृथिवी है। ऋक् मन्त्रद्वारा उपलक्षित होनेसे इसे ऋग्वेद कहते हैं। इसके देवता ब्रह्मा, वसु, गायत्री और गार्हपत्य हैं। द्वितीय पाद उकार अन्तरिक्ष है। वह यजुर्मन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे यजुर्वेद कहाता है। उसके देवता विष्णु, रुद्र, त्रिष्टुप् और दक्षिणाग्नि हैं। तृतीय पाद—द्यो मकार हैं। साममन्त्र द्वारा उपलक्षित होनेसे सामवेद नाम पड़ता है। देवता विष्णु एवं आदित्य हैं। जगती आवहनीय है। ओङ्कारके अन्तमें जो अर्धमात्रा रहती, वही लुप्त अकार है। इसका विराम लोप हो जानेसे स्पष्ट समझ नहीं पड़ता। आथर्वण मन्त्र द्वारा संयोजित होनेसे इसको अथर्ववेद कहते हैं। इसके देवता संवर्तक अग्नि, वायु विराट् और एक ऋषि नामक अग्नि हैं।

ओङ्कारके शिरोभागकी मात्रा अतिरमणीय, दीप्तिमान् और स्वप्रकाश है। ओङ्कारकी प्रथम मात्रा (अकार) रक्तवर्ण है। इसमें सर्वदा ब्रह्मा अवस्थान करते हैं। ब्रह्मा ही इसके अधिष्ठातृ-देवता भी हैं। द्वितीय मात्रा (उकार) शुक्लवर्ण है। इसमें रुद्र रहते हैं। रुद्र ही इसके अधिष्ठातृ-देवता भी हैं। तृतीय मात्रा (मकार) कृष्णवर्ण है। इसमें विष्णु अवस्थान करते हैं। इसके अधिष्ठाता भी विष्णु ही हैं। चतुर्थ मात्रा (लुप्त,

मय है। इसमें विद्युत् विराजमान है। ईश्वर इसका अधिष्ठातृ-देवता है। इस ओङ्कारके चार पद और चार मुख हैं। नादसंज्ञक लुप्त मकाररूप अर्ध मात्रा इस ओङ्कारकी चतुर्थ मात्रा है। इसको सूक्ष्म मात्रा कहते हैं। स्थूलमात्रा ह्रस्व, दीर्घ तथा प्लुत भेदसे तीन प्रकारकी होती है। 'ॐ' एकमात्रा विशिष्ट होनेसे ह्रस्व, द्विमात्राविशिष्ट (ओं ओं) होनेसे दीर्घ और त्रिमात्रा (ओं ओं ओं) विशिष्ट होनेसे प्लुत कहाता है। अनुपमरूप शान्तभावापन्न स्वप्रकाश चतुर्थमात्रा प्लुत प्रयोगमें अभिव्यक्त पड़ती, वह किसी शब्द द्वारा समझमें नहीं चढ़ती। ओङ्कार एकवार मात्र उच्चारित होनेसे मनके साथ सकल प्राणवायुको षट्चक्रभेदपूर्वक सुषुम्ना नाड़ी द्वारा ऊर्ध्व देश (शिरोदेश)में उत्क्रामित करता है। इसीसे इसको ओङ्कार कहते हैं।

सकल प्राणवायुको नम्रता और कुम्भकादि द्वारा गतिरोध करनेसे ओङ्कारको 'प्रणव' कहते हैं। ओङ्कार चार भागमें अवस्थित होनेसे चार देवता (ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु और ईश्वर) रखता और चार वेद (ऋक्, यजुः, साम और अथर्व)का उत्पत्तिस्थान ठहरता है। अकार, उकार प्रभृति ओङ्कारके जो चार पाद होते, ध्यानके समय उन्हें छोड़ना न चाहिये। किन्तु अकारादि विशिष्ट ओङ्कारको ही ध्यान करना उचित है। वैसा होनेपर अकारादिके (अधिष्ठाता) देवता समुदाय दुःख और भयसे उपासकको अवश्य ही त्राण करेंगे। त्राणकारी होनेसे ही स्वयं विष्णुने ओङ्कार और उसकी मात्राको ध्यान किया था। इसीसे वह असुरोंको जीत सके। इन्द्रिय संयत रख ओङ्कारको ध्यान करनेसे ही पितामह ब्रह्मा (बृहत्) बने अर्थात् ब्रह्मा जगत्सृष्टि करनेमें समर्थ हुये थे।

क्योंकि ईश्वर ही समुदाय सृष्टिका कर्त्ता है। इसीसे विष्णुने ओङ्कारात्मक नादोन्त शान्त ब्रह्ममें मन लगा उसी ओङ्कारात्मक जगदीश्वरको ध्यान किया। ओङ्कारात्मक परमेश्वरने ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र एवं पञ्चभूतके साथ समुदाय इन्द्रियको बनाया था। वह सकल कारणका सृष्टिकर्त्ता और एकमात्र मङ्गलमय एवं प्रभुशक्तिसम्पन्न है। वही सकल जीवोंके मध्य एक भावसे अवस्थान करता है। फिर उसीने इस अपरिच्छिन्न आकाशको बनाया है। उक्त नादात्म प्रणवके ध्यान कालपर समझना पड़ेगा—इसमें ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईश्वर और शिव पांचो देवता विद्यमान हैं। अधिक यज्ञ करनेसे अधिक फलप्राप्तिको भांति पञ्चावयव ओङ्कारको स्थिर चित्तसे अल्पकाल भी ध्यान करनेसे शत शत यज्ञका पुण्य मिलता है। समुदाय ज्ञान, योग और ध्यानमें यह मङ्गलमय ओङ्कार ही एकमात्र अवलम्बन है।

"जितने वैदिक याग-यज्ञ कहाते, उन सबको छोड़ ओङ्कार अध्ययन करने पर द्विज निश्चय ही गर्भवाससे छूट जाते हैं, फिर गर्भवास-जनित कष्ट नहीं उठाते।"

> "आत्मानमरणिं कृत्वा प्रणवञ्चोत्तरारणिम्।
> ध्याननिर्मथनाभ्यासाद्देवं पश्यन्निगूढवत्॥" (ब्रह्मोपनिषद्)

आत्माको अरणि (निर्मन्थ काष्ठ) और प्रणवको उत्तरारणि* बना पुनः पुनः ध्यानरूप निर्मन्थन द्वारा गूढ़वस्तुकी भांति परमात्माको देखना चाहिये।

पहले ही कहा जा चुका—ओङ्कार ही ब्रह्म दर्शनका एक मात्र उपाय है। इसीसे उपनिषद्में ओङ्कारका स्वरूप विशेष वर्णित है—

> "ओमित्येतदक्षरं ब्रह्म यदुक्तं ब्रह्मवादिभिः।
> शरीरं तस्य वक्ष्यामि स्थानं कालं लयं तथा॥
> तत्र देवास्त्रयः प्रोक्ता लोका वेदास्त्रयोऽग्नयः।
> तिस्रो मात्रार्धमात्रा च त्र्यक्षरस्य शिवस्य च॥
> ऋग्वेदो गार्हपत्यश्च पृथिवी ब्रह्म एव च।
> अकारस्य शरीरन्तु व्याख्यातं ब्रह्मवादिभिः॥
> यजुर्वेदोऽन्तरिक्षञ्च दक्षिणाग्निस्तथैव च।
> विष्णुश्च भगवान् देव उकारः परिकीर्तितः॥
> सामवेदस्तथा द्यौश्चाहवनीयस्तथैव च।
> ईश्वरः परमो देवो मकारः परिकीर्तितः॥
> सूर्यमण्डलनिभाभाश्चाकारः शङ्खमध्यगः।
> उकारश्चन्द्रसङ्काशस्तस्य मध्ये व्यवस्थितः॥
> मकारस्त्वग्निसङ्काशो विधूमो विद्युतोपमः।
> तिस्रो मात्रास्तथा ज्ञेयाः सोमसूर्याग्नितेजसः॥

---

* जिन दो काठोंको परस्पर मथन करनेसे अग्नि उपजता, उनमें नीचेवालेको अरणि और ऊपरवालेको उत्तरारणि नाम पड़ता है।

शिखाभा दीपसङ्काशा यस्मिन् परिवर्तते।
अर्धमात्रा तु सा ज्ञेया प्रणवस्योपरिस्थिता॥
कांस्यघण्टानिनादस्तु यथा लीयति शान्तये।
ओङ्कारस्तु तथा योज्यः शान्तये सर्वमिच्छता॥" (ब्रह्मविद्योपनिषत्)

ब्रह्मवादी जिस 'ॐ' अक्षरको ब्रह्म बताते, उसका शरीर, स्थान, काल और लय सुनाते हैं। इस मङ्गलमय ओङ्कारके तीन देवता, तीन लोक, तीन वेद, तीन अग्नि और साढ़े तीन मात्रा हैं। ऋग्वेद, गार्हपत्याग्नि, पृथिवी और ब्रह्माको ब्रह्मवादियोंने अकारका शरीर कहा है। यजुर्वेद, अन्तरिक्ष, दक्षिणाग्नि और भगवान् विष्णु उकारका शरीर हैं। सामवेद, स्वर्ग, आहवनीय, और ईश्वर मकारका शरीर है। सूर्यमण्डल-सदृश दीप्तिमान् अकार शङ्खके मध्य और चन्द्रसदृश दीप्तिमान उकार उक्त अकारके मध्य विराजता है। धूमरहित अर्थात् अतिशय दीप्तिशाली, अग्निसदृश एवं विद्युद्दाम जैसा, शोभमान मकार है। उक्त ओङ्कारकी तीनों मात्रा क्रमसे चन्द्र, सूर्य और अग्निके तुल्य तेजःसम्पन्न हैं। इससे दीपसदृश शिखा और दीप्ति कभी विमुक्त नहीं होती। ओङ्कारके उपरि भागमें रहनेवालीको अर्धमात्रा कहते हैं। कांस्य और घण्टाके शब्दकी तरह ओङ्कारके उच्चारणसे भी चित्तमें शान्ति आती है। इसलिये समुदाय इष्टफल पानेकी इच्छा रखनेवालेको सर्वदा ओङ्कार उच्चारण करना चाहिये।"

लिङ्गपुराणमें ओङ्कारकी उत्पत्ति इस प्रकार वर्णित है—

'किसी समय भगवान् विष्णु प्रलयपयोधिके मध्य शेषकी शय्यापर सोये थे। ब्रह्माने उन्हें निकट जाकर जगा दिया। विष्णुने उठकर हंसते हंसते कहा—'वत्स ब्रह्मन्! तुम्हारा कुशल तो है? वत्स! तुम्हारा मङ्गल तो है?' ब्रह्माने ऐसा सम्बोधन मन ही मन कुछ बुरा समझ विष्णुसे भर्त्सनापूर्वक पूछा था—'बड़ा आश्चर्य है! मैं सृष्टि, स्थिति और प्रलयका कर्ता हूं। आप किस कारण मुझे, वत्स-वत्स कह कर पुकारते हो?' इसी प्रकार अनेक वाक्‌वितण्डा होते होते अन्तको हाथाबाहीं की नौबत आ गयी। घोरतर युद्ध चल हो रहा था, कि दोनोंके सम्मुख एक अद्भुत ज्योतिर्मय लिङ्ग आविर्भूत हुआ। उस समय दोनों युद्ध छोड़ अनुसन्धान करने लगे—यह ज्योतिर्मय लिङ्ग कहांसे आया है। विष्णु वराहमूर्ति धारण कर अधोगामी होते भी उस ज्योतिर्लिङ्गका मूल देख न सके थे। इधर ब्रह्मा हंसका रूप बना महावेगसे ऊपरको उड़, किन्तु लिङ्गके अन्ततक न पहुंचे। पीछे दोनों श्रान्त और क्लान्त हो ज्योतिर्लिङ्गको प्रणाम करते खड़े रह गये। दोनों ही सोचने लगे—यह क्या है, यह क्या है! दूसरे क्षण ही लिङ्गके मध्यसे शब्द निकला था। दोनोंने ओं ओं ओं उच्चारित प्लुत स्वर सुना। ब्रह्मा और विष्णु सोचते सोचते खड़े हो गये थे—यह महाशब्द क्या है, यह महाशब्द क्या है! फिर दोनोंने देखा—लिङ्गके दक्षिण आद्यवर्ण अकार, उत्तर उकार, मध्य मकार और ऊपर नादविन्दु है। उसके ऊपर समुदायका समवायरूप ओङ्कार शोभित है। दक्षिण दिशाका अकार सूर्यमण्डल, उत्तरस्थित उकार अग्नि और मध्यवर्ती मकार चन्द्रमण्डल जैसा तेजोमय है। ऊपर देख पड़नेवाला शङ्ख स्फटिककी भांति तेजःसम्पन्न है। यह तुरीय होनेसे त्रिगुणातीत, अमृतस्वरूप, निष्कल, निरुपद्रव, द्वन्द्वहीन, केवल, शून्य, वाह्याभ्यन्तररहित, भीतर और बाहरका स्वरूप, आदि, मध्य एवं अन्तरहित तथा आनन्दकारण है। अकार, उकार एवं मकार तीन मात्राके तथा नाद अर्धमात्राके रूपसे अवस्थान करता है। यही शब्द ब्रह्म है। ऋक्, यजुः एवं साम तीनों वेद अकार, उकार तथा मकार तीनों मात्राके रूपसे अवस्थान करते हैं। यही शब्दब्रह्म विश्वात्मा है। इसी समयसे अतीन्द्रिय प्रकाशक वेद आविर्भूत हुये। इसी वेदसे निखिल जगत्‌का मङ्गल बनता है। विष्णु इसी वेदवाक्य द्वारा परमेश्वरको समझ सके थे। फिर यजुर्वेदने कहा—भगवान् रुद्र अचिन्त्य हैं। एकाक्षर प्रणव उन्हींका वाचक है। वह एकाक्षरवाच्य रुद्र ही परमकारण, अमृतस्वरूप, ऋतस्वरूप, सत्यस्वरूप, आनन्दस्वरूप, और परात्पर परम ब्रह्मस्वरूप हैं। शब्द-ब्रह्मरूप एकाक्षरसे अकार-स्वरूप

ब्रह्मा उत्पन्न हुये हैं। इसी प्रकारसे उकार-स्वरूप विष्णु और मकारस्वरूप रुद्र निकले हैं। इसके मध्य अकारस्वरूप ब्रह्मा सृष्टिकर्त्ता, उकाररूप विष्णु पालनकर्त्ता और मकाररूप इन दोनोंके प्रति अनुग्रहकारी हैं। इनमें अकाररूप ब्रह्मा बीजस्वरूप, उकार-रूप विष्णु योनिस्वरूप और मकाररूप रुद्र निषेककर्त्ता हैं। बीज, योनि, निषेक और शब्द-ब्रह्मरूप चारों प्रणवात्मक हैं। शब्द ब्रह्मरूप निषेककर्ता महेश्वरकी इच्छानुसार अपनेको पृथक् कर अवस्थान करते हैं। इसी शब्द ब्रह्मस्वरूप ईश्वरके लिङ्गसे अकारस्वरूप बीजकी उत्पत्ति हुयी थी। यह बीज फिर उकाररूप योनिमें पड़ बढ़ने लगा। पीछे उससे सोनेका एक अण्डा निकला था। सहस्र वर्ष बीतने पर महेश्वरकी इच्छाके अनुसार द्विखण्ड होते उससे हिरण्यगर्भ उत्पन्न हुये। उसके ऊर्ध्व-भागसे स्वर्ग और अधोभागसे पाताल निकला। अकार रूप जो ब्रह्मा उपजे, वही सर्वलोकके सृष्टि-कर्ता हैं। उन्होंने सत्व, रज: और तम: गुणत्रयके भेदसे तीन मूर्ति धारण की हैं। (लिङ्गपु० ७अ०)

भगवान् मनुके मतसे—

"अकारञ्चाप्युकारञ्च मकारञ्च प्रजापतिः।
वेदत्रयात् निरदुहत् भूर्भुवःस्वरितीति च॥" (२।७६)

अकार, उकार एवं मकार और भू:, भुव:, स्व: व्याहृतित्रयको प्रजापति ब्रह्माने यथाक्रम तीनों वेदसे उद्धार किया था।

अपर निघण्टुमें लिखा है—

"ओङ्कारो वर्तुलस्तारो बिन्दुः शक्तिस्त्रिदैवतः।
प्रणवो मन्त्रगर्भश्च पञ्चदेवो ध्रुवः शिवः॥
मन्त्रादं परमं बीजं मूलमाद्यश्च तारकः।
शिवादि व्यापको व्यक्तः परं ज्योतिश्च संविदः॥"

ओङ्कार वर्तुल, तारक, बिन्दु, शक्ति, त्रिदैवत, प्रणव, मन्त्रगर्भ, पञ्चदेव, ध्रुव, शिव, आदिमन्त्र, परमबीज, मूल, आद्यतारक, शिवादिव्यापक, व्यक्त, श्रेष्ठ, ज्योति: और संविद है।

यह ॐ शब्द मन्त्रविशेष है। यह मन्त्र भगवान्‌को अति प्रिय है।

"ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥
तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपःक्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्ताः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥
तदित्यनभिसन्धाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते मोक्षकाङ्क्षिभिः॥
सद्भावे साधुभावे च सदित्येतत् प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥"

(गीता १७अ० २३-२६ श्लो०)

परमात्मा ब्रह्मके तीन नाम हैं—ॐ, तत् और सत्। इसीसे ब्रह्मवादी ओङ्कारके उच्चारणसे यज्ञ, दान और तपस्यादि क्रिया सर्वदा अनुष्ठान करते हैं। मोक्षाकाङ्क्षी 'तत्' शब्दके उच्चारणसे फलाकाङ्क्षारहित तप, यज्ञ और दानादि कार्यका अनुष्ठान किया करते हैं। हे पा॰! 'सत्' शब्द साधुभाव बतानेको बोला जाता है। इसके अतिरिक्त यज्ञ, तपस्या और दानादि प्रशस्त कार्यमें भी सत् शब्दका प्रयोग होता है। (ॐ-तत्-सत् त्रिविध ब्रह्मका नाम उच्चारण करनेसे ही सकल कार्य सिद्ध हो सकता है)।

योगशास्त्रके मतसे ॐ मन्त्र जप न करनेसे किस प्रकार योगी सिद्ध हो सकता है! यह मन्त्र जप करनेसे परम कारुणिक भगवान् भक्तोंके चित्तको एकाग्रतासाधक शक्ति देते हैं। योगसूत्रकारने कहा है—"तज्जपस्तदर्थभावनम्। ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च॥"

इस प्रणवका जप तथा अर्थ भावना करनेसे ईश्वरतत्त्व देख पड़ता और व्याधि, अकर्मण्यता, संशय, अनवधानता, आलस्य, इन्द्रियके विषयकी प्रबलता प्रभृति अन्तराय भगता है।

भगवान् मनुने कहा है—

"प्राक्कूलान् पर्युपासीनः पवित्रैश्चैव पावितः।
प्राणायामैस्त्रिभिः पूतस्तत ओङ्कारमर्हति॥" (२।७५)

कुछ कुश पूर्वाभिमुख रख, उनके ऊपर बैठ और दोनों हाथमें कुश ले पवित्र होना चाहिये। फिर पञ्चदश अक्षर उच्चारणके उपयुक्त समयमें तीन बार प्राणायाम द्वारा शुद्ध होनेपर अधिकारी प्रणवोच्चारणके योग्य बनता है।

किन्तु योगी जिस भावसे ओङ्कार जप करते, वह

अधिक सहज नहीं। योगी प्रथम केवल अकार जपते हैं। रीतिके अनुसार अभ्यास हो जानेसे पीछे दूसरा अक्षर उच्चारण करना पड़ता है। ओङ्कारके उच्चारणकी प्रणाली ५२ पृष्ठमें देखो।

ॐ योगियोंका प्रधान अवलम्बन है—

"ओं योगशिखां प्रवक्ष्यामि सर्वमावेषु चोत्तमाम्।
यदा तु ध्यायते मन्त्रं गात्रकम्पोऽभिजायते ॥१
आसनं पद्मकं बध्वा यच्चान्यदपि रोचते।
कुर्यान्नासाग्रदृष्टिञ्च हस्तौ पादौ च संयतौ ॥२
मनः सर्वत्र संयम्य ओङ्कारं तत्र चिन्तयेत्।
ध्यायते सततं प्राज्ञो हृत्कृत्वा परमेष्ठिनम् ॥३" (योगशिखोपनिषत्)

सर्वश्रेष्ठ योगशिखा कहती—मन्त्रके ध्यानकाल गात्रकम्प उपस्थित होता है। पद्मासन अथवा अन्य कोई अभिलषित आसन लगा और हस्त, पद, एवं मनःसंयमपूर्वक हृदयमें परमेष्ठीको बैठा प्राज्ञ ओङ्कार चिन्ता किया करते हैं।

फिर योगशिखामें देखते हैं—

"त्रयो लोकास्त्रयो वेदास्त्रयः सन्ध्यास्त्रयः सुराः।
त्रयोऽग्नयो गुणास्त्रीणि स्थिताः सर्वे त्रयाक्षरे ॥६
त्रयाणामक्षरे प्राज्ञे योऽधीतेऽप्यर्धमक्षरम्।
तेन सर्वमिदं प्रोतं लभ्यं तत् परमं पदम् ॥७
पुष्पमध्ये यथा गन्धः पयोमध्येऽस्ति सर्पिवत्।
तिलमध्ये यथा तैलं पाषाणेष्विव काञ्चनम् ॥८
हृदिस्थाने स्थितं पद्मं तच्च पद्ममधोमुखम्।
ऊर्ध्वनालमधोबिन्दुस्तस्य मध्ये स्थितं मनः ॥९
अकारे शोचितं पद्ममुकारेणैव भिद्यते।
मकारे लभते नादमर्धमात्रा तु निश्चला ॥१०
शुद्धस्फटिकसङ्काशं किञ्चित् सूर्यमरीचिवत्।
लभते योगयुक्तात्मा पुरुषोऽन्मतत्परः ॥११"

तीन लोक, तीन वेद, तीन सन्ध्या, तीन देवता, तीन अग्नि और तीन गुण—समस्त ही 'ओं'के तीन अक्षरमें सन्निवेशित है। जो व्यक्ति यह तीनों अक्षर पाठकर पीछे अर्ध अक्षर पढ़ता, उसे परम पद मिलता है। पुष्पके मध्य गन्ध, दुग्धके मध्य घृत, तिलके मध्य तैल और पाषाणके मध्य काञ्चनकी भांति हृदयमें अधोमुख ऊर्ध्वनाल पद्म रहता, जिसमें मन बसता है। अकारके द्वारा शोचित और उकारके द्वारा भिन्न हो पद्म मकारमें शब्द लाभ करता है। अर्धमात्रा निश्चल है। ईश्वरतत्पर योगी सूर्यकिरणकी भांति शुद्ध स्फटिक तुल्य कोई पदार्थ पा जाते हैं।

"ओं अकारो दक्षिणः पक्ष उकारस्तूत्तरः स्मृतः।
मकारस्तस्य पुच्छं वा अर्धमात्रा शिरस्तथा ॥१
आग्नेयी प्रथमा मात्रा वायव्येषा तथापरा ॥६
भानुमण्डलसङ्काशा भवेन्मात्रा तथोत्तरा।
परमा चार्धमात्रा च वारुणीं तां विदुर्बुधाः ॥७
कलात्रयानना वापि तासां मात्रा प्रतिष्ठिता।
एष ओङ्कार आख्यातो धारणाभिर्निबोधत ॥" (नादबिन्दु उपनिषत्)

अकार दक्षिण एवं उकार उत्तर पक्ष, मकार पुच्छ और अर्धमात्रा उसका मस्तक है। प्रथमाको आग्नेयी, द्वितीयाको वायवी, तृतीयाको भानुमण्डल-सभा और अर्धमात्राको पण्डित वारुणी कहते हैं। उक्त मात्राओंके मध्य कलत्रयानना मात्रा प्रतिष्ठित है। इसी समुदायका नाम ओङ्कार है। ओङ्कारका बोध धारणासे होता है।

"भूमिभागे समे रम्ये सर्वदोषविवर्जिते।
कृत्वा मनोमयीं रक्षां जप्त्वा चैवाथ मण्डलम् ॥१७
पद्मकं स्वस्तिकं वापि भद्रासनमथापि वा।
बध्वा योगासनं सम्यगुत्तराभिमुखः स्थितः ॥१८
नासिकापुटमङ्गुल्या पिधायैकेन मारुतम्।
आकृष्य धारयेदग्निं शब्दमेवाभिचिन्तयेत् ॥१९
ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म ओमित्येकेन रेचयेत्।
दिव्यमन्त्रेण बहुशः कुर्यादात्ममलच्युतिम् ॥" २० (अमृतबिन्दु-उ०)

सर्वदोषशून्य समतल भूमिभागमें मनोमयी रक्षा विधान कर मण्डल रूप बनाये। अनन्तर पद्मक, स्वस्तिक अथवा भद्रासन नामक योगासन लगा उत्तर-मुख उपवेशनपूर्वक एक अङ्गुलि द्वारा नासापुटको आच्छादन कर अपर नासापुटसे वायु आकर्षणपूर्वक अग्नि शब्द चिन्ता करना चाहिये। (उसके पीछे) एकाक्षर ब्रह्मस्वरूप ओम् शब्दसे रेचक निकाल दिव्य-मन्त्रके द्वारा आत्मशुद्धि करे।

"वर्णत्रयात्मिका ह्येते रेचकपूरककुम्भकाः।
स एव प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामस्तु तन्मयः ॥" (योगी याज्ञवल्क्य)

रेचक, पूरक और कुम्भक तीन वर्णात्मक होते हैं। फिर उक्त तीनों वर्ण प्रणवात्मक हैं। इसीसे प्राणायाम प्रणवमय रहता है।

ओरना (हिं॰ पु॰) फाली, फाड़।

ओरमना (हिं॰ क्रि॰) अवलम्बन पकड़ना, लटक पड़ना।

ओरमा (हिं॰ स्त्री॰) स्यूतिभेद, किसी किस्मकी सिलाई। इससे कोरोंकी जोड़ाई होती है। पहले दो परलोंको टांक पीछे गोट लगानेको ओरमा कहते हैं।

ओरवना (हिं॰ क्रि॰) स्तनमें दुग्ध उतरना, पेट बढ़ना, ब्यानेका वक्त आ पहुंचना। यह शब्द प्रायः पशुके लिये ही व्यवहृत होता है।

ओरहना, उरहना देखो।

ओराना (हिं॰ क्रि॰) चुकना, निबटना।

ओराहना, उरहना देखो।

ओरिया (हिं॰ स्त्री॰) १ ओलती। २ खूंटोके पासकी लकड़ी।

ओरी (हिं॰ स्त्री॰) १ ओलता। २ माता। (अव्य॰) ३ सम्बोधन शब्द। इसे प्रायः माताको बोलानेमें व्यवहार करते हैं।

ओरीता (हिं॰ पु॰) अन्त, चुकती।

ओरौती (हिं॰ स्त्री॰) ओलती, छप्परसे बरसातका पानी निकलनेकी जगह।

ओरौ (हिं॰ पु॰) एक प्रकारका बांस। यह बहुत बड़ा होता है। उत्पत्तिका स्थान ब्रह्मदेश तथा आसाम है। लम्बाई ४० और चौड़ाई पौन गजतक बैठती है। इसे गृह तथा शकटके निर्माणकार्यमें लगाते हैं।

ओल (सं॰ त्रि॰) आड-उन्द-कः पृषोदरादित्वात्। १ आर्द्र, आला, गीला। (पु॰) २ मूलविशेष, जमींकंद। इसका संस्कृत-पर्याय शूरण, कन्द, कान्दल और अर्शोघ्न है। ओल अग्निदीपक, रुक्ष, कषाय, कण्डुकारी, कटु, विष्टम्भी, विशद, रुचिकारक, अर्शोनाशक, लघु और प्लीहगुल्मनाशक होता है। यह अर्शोरोगपर विशेष हितकर और समग्र कन्द्शाकके मध्य श्रेष्ठ समझा जाता है। (भावप्रकाश) दद्रु, रक्तपित्त और कुष्ठरोग रहनेसे ओलभक्षण निषिद्ध है। इसे हिन्दीमें जमीनकन्द, तामिलमें करुण और तेलगु भाषामें सुन्नाकन्द कहते हैं। ओलका पेड़ दोसे चार हाथ तक बढ़ता है। अच्छे खेतमें बोनेसे दश-पन्द्रह सेर तक यह वजनमें निकलता है। जंगली जमींकंद स्वभावतः किनकिना रहता, किन्तु बोया हुआ वैसा नहीं ठहरता। भारतवर्षमें सर्वत्र ही यह उपजता और भोजनके व्यवहारमें लगता है। सिंहल, मद्य, मालाकास प्रभृति स्थानमें भी ओल होता है। (हिं॰ स्त्री॰) ३ क्रोड, गोद। ४ व्यवधान, आड़। ५ रक्षा, हिफाजत। ६ जमानत।

ओलन्दाज—युरोप देशान्तर्गत हालेण्ड या नेदरलेण्डके अधिवासी। यह हालेण्डस् शब्दका अपभ्रंश है। अंगरेजीमें डच कहते हैं। डच शब्द जर्मन शब्दके तुल्य अर्थका वाचक है। ओलन्दाज इन्दो-जर्मन वंशसे उत्पन्न हैं। अंगरेजीसे इनकी भाषा बहुत कुछ मिलती है। इन्होंने इस बातकी सार्थकता सम्पादन की है, कि अध्यवसायके आगे कुछ असाध्य नहीं। हालेण्डके अनेक स्थान समुद्र-जलमें निमग्न रहते थे। इन्होंने बांध बना उस उपद्रवसे देशको बचाया और समुद्रको बहुत दूरतक हटाया है। इसी प्रकार वालुकापूर्ण वेलाभूमिको भी क्रम-क्रम ओलन्दाजोंने शस्यशालिनी बना डाला है। इन्होंने अश्वगवादिके लिये उपयुक्त गोष्ठ निर्दिष्टकर गार्हस्थ पशु जातिकी जैसी उन्नति साधन की, वैसी कहीं देख न पड़ी। कृषि एवं शिल्पविद्यामें यह विशेष पारदर्शी और वस्त्रवयन तथा नौ-निर्माण प्रभृति कार्यके लिये सर्वत्र प्रसिद्ध हैं।

ओलन्दाज सत्स्वभावापन्न होते हैं। यह वृद्ध पितामाताका विशेष सम्मान करते और इसीसे सारस पक्षीपर भी बड़ा प्रेम रखते हैं। यह मितव्ययी और साहसके लिये अधिक विख्यात न होते भी स्वावलम्बी हैं। विद्याकी चर्चाके लिये यह सुविख्यात हैं। इनके विश्वविद्यालयोंमें धर्मयाजकोंका कोई उपद्रव नहीं। सब लोग इच्छानुरूप शास्त्रको अनुशीलन कर सकते हैं। धर्मयाजक इन निर्दिष्ट स्थानोंके लोगोंको ही धर्ममतकी शिक्षा देते हैं। ओलन्दाज साधारणतः प्रोटेष्टाण्ट हैं। हालेण्ड देखो।

ई०के १६वें शताब्द युरोपमें धर्ममतपर तुमुल आन्दोलन उठा था। उसी समय मार्टिन लूथरने धर्मसम्बन्धमें सर्वतोभावसे रोमके पोपोंकी प्रभुताको अस्वीकार किया। ओलन्दाज भी उनके मतमें मिल गये। इसीसे इनपर राजाके कोपकी दृष्टि पड़ी थी। स्पेनराज २य फिलिप हालेण्डके अधीश्वर रहे। वह कट्टर काथलिक थे। इसीसे फिलिप प्रजावर्गको अपने मतका विरुद्धवादी या लूथरके शिष्योंको सताने और "दोषानुसन्धान" नामक विचारालयकी प्रतिष्ठाकर प्रोटेष्टाण्टोंको जीवन्त अवस्थामें ही जलाने लगे। इस कार्यसे सकल ही प्रजा उनपर विरक्त हो गयी। क्रमसे प्रजाविद्रोह भलक उठा। एक ओर युरोपीय तात्कालिक प्रबलपराक्रान्त नरपति, युद्धविद्या-विशारद सेनापति एवं सेनानी और दूसरी ओर दीन, दरिद्र तथा सहायहीन प्रजामण्डली थी। बहुकालतक यह युद्ध चला। एक समय अंगरेजोंने ओलन्दाजोंको कुछ सहाय भेजा था। उससे जुटफ्रेंसका युद्ध और सर फिलिप सिडनीका मृत्यु हुआ। इस तरह कभी कभी कुछ सहाय मिलते भी ओलन्दाज अध्यवसायके बल ही फिलिपसे प्रतियोगिता कर सके थे। यह शतवार परास्त और पर्युदस्त हुये, किन्तु पीछे न हटे। अन्तको यही जीते थे। फिलिप शत चेष्टा करते भी हालेण्डको वशमें ला न सके। हालेण्डमें साधारणतन्त्रको शासनप्रणाली प्रतिष्ठित हुयी। फिलिप १६वें शताब्दके शेष भाग पोर्तुगालके अधीश्वर बने थे। उस समय केवल पोर्तुगीज ही भारतवर्षमें वाणिज्य करते रहे। ओलन्दाज उनसे द्रव्य ले युरोपके सकल स्थानोंमें बेचते थे। इससे भी इन्हें प्रभूत लाभ होता था। ओलन्दाजोंको दबानेके लिये फिलिपने पोर्तुगीजोंके साथ वाणिज्यका होना रोक दिया। किन्तु यह भग्नोत्साह न हुये। इन्होंने एकादिक्रमसे भारतवर्षके साथ वाणिज्य चलाना मनःस्थ किया। एक वणिक्-समितिने कारनेलियस हुटमानको ४ जहाजोंका अध्यक्ष बना भारतवर्ष भेजा था। कारनेलियसने मिर्च वगैरह मसाला लाद स्वदेशको प्रत्यावर्तन किया और आकर कह दिया—पोर्तुगीज सर्वत्र घृणित और अनाहृत हुये हैं। यह बात सुन १५९८ ई०को भान-नेक आट जहाजोंके साथ भारतवर्ष भेजे गये। आमष्टरडमके वणिकोंने उन्हें यवद्वीपमें एक कोठी खोलनेकी भी अनुमति दी थी। भाननेकके कृतकार्य हो स्वदेश लौटने पर कितने ही लोगोंने ईर्ष्यापरवश भारतवर्षमें वाणिज्य करनेको उद्योग लगाया। उस समय सकल ओलन्दाज वणिकोंके वाणिज्य लोपकी आशङ्का हुयी थी। किन्तु गवरनमेण्टने इस विषयमें हस्तक्षेप कर सकल विवाद मिटा दिया। सकल दलका एकत्र ईष्ट-इण्डिया-कम्पनी नाम रखा था। वणिकोंको पूर्व देशके वाणिज्य स्थानोंमें सब विषयोंकी क्षमता मिली अर्थात् स्वाधिकृत देशके मध्य वह आवश्यकतानुसार कानून बना और जित देश अधिकारमें रखनेको पूर्व देशके राजाओंसे युद्ध वा सन्धि चला सकते थे। इसी प्रकार ओलन्दाजोंकी ईष्ट-इण्डिया-कम्पनीका सूत्रपात हुआ। इसमें नूतनत्व यह था—उस समय पोर्तुगीज केवल स्वदेशकी गवरनमेण्टके आदेशानुसार चलते, किन्तु ओलन्दाज इस देशमें एक साधारणतन्त्रप्रणाली द्वारा स्वत्व-रक्षाके लिये हालेण्ड गवरनमेण्टके अधीन होते भी अपने कार्यक्षेत्रमें एक प्रकार स्वाधीन रहते थे।

यत्न और परिश्रमसे ही फललाभ होता है। ओलन्दाजोंने भी शीघ्र शीघ्र यव और मलक्काम प्रभृति द्वीपोंमें यथेष्ट प्रतिपत्ति स्थापन की थी। पोर्तुगीज सर्वत्र ही इनसे परास्त होने लगे। एडमिरल ओयारिकने १४ जहाजोंके साथ यवद्वीप पहुंच बटेविया नगरको पत्तन किया। मसालेके कारबारसे १८२२ ई०को पोर्तुगीज एकबारगी ही विदूरित हुये थे। ओयारिकने जापान, फिलिपाइन प्रभृति द्वीपोंके साथ वाणिज्य-सम्बन्ध स्थापन किया, बटेविया नगर शीघ्र ही ओलन्दाजोंके यावतीय वाणिज्य-स्थानोंका केन्द्र बन गया। १६७६ ई०से पूर्व ओलन्दाजोंने बंगालके साथ वाणिज्यकार्यमें लिप्त होनेकी चेष्टा की न थी। १६७६ ई०को इन्होंने प्रथम चुंचुड़ेमें महाजनी कोठी खोली। इससे पहले ही ओलन्दाजोंने सिंहल प्रभृति स्थान पोर्तुगीजोंके हाथसे निकाले और मलयवर उप-

कूलमें कोचिन प्रभृति स्थान भी अधिकारको संभाले थे। उस समय लोग ओलन्दाजोंका सम्मान करते रहे। यह सम्मान केवल इनके साहस वा युद्धकी निपुणताके लिये होता था। यह सत्य और न्यायको इतना देखकर काम करते, कि किसी स्थानके लोगोंमें असन्तुष्ट होने पर वहांसे अपनी कोठी उठा चलते बनते। उधर पोर्तुगीज़ पहलेसे ही भारतवासियोंके प्रति निठुर व्यवहार करते रहे। सुतरां भारतवासी शीघ्र ही ओलन्दाजोंकी भद्रतासे मुग्ध हो गये। किन्तु समयके परिवर्तनने सत्यप्रिय ओलन्दाजोंको भी प्रबल असत्यप्रिय और अत्याचारी बना डाला। अंगरेजोंके अभ्युदयसे शीघ्र ही इनका पात हुआ।

१६१८ ई०को अंगरेजोंके साथ ओलन्दाजोंका संघर्ष लगा। तत्पूर्व ही अंगरेजोंने भारतवर्षमें वाणिज्य चलाया, किन्तु इनके साथ प्रतियोगितासे मसालेके काममें विशेष कुछ कर न पाया था। ऐसे ही समय इङ्गलेण्ड और हालेण्डको गवरनमेण्टने मध्यस्थ बन दोनों कम्पनियोंके लोगोंकी एक सत्वरक्षिणी सभा स्थापित कर दी। उससे शीघ्र ही सब गडबड़ मिट गया। किन्तु सभामें ओलन्दाज सभ्योंकी संख्या अधिक रही। सुतरां उसके द्वारा यह इच्छामत समस्त कार्य करने लगे। १६२१ ई०को उक्त सभाने इनके विरुद्ध साज़िश करनेके अपराध पर दश अंगरेजों और दश अपर व्यक्तियोंको पकड़ा था। विचारसे सबने प्राणदण्ड पाया। इस घटनासे अंगरेज़ अत्यन्त विरक्त हुये। दोनों जातियोंके मध्य भयानक विद्वेषानल जल उठा। अनेक दिन पर्यन्त मनोमालिन्य रहने पीछे १६५४ ई०को अंगरेजोंने इनसे ८५००००) रु० क्षतिपूरण पाया था। किन्तु विवाद न मिटा। १६६७ ई०को अंगरेजोंके साथ ओलन्दाजोंका युद्ध उपस्थित हुआ। इन्होंने अंगरेजोंके वाणिज्यमें विशेष क्षति डाली थी।

अवशेषको फ्रान्सीसी विप्लव आरम्भ होनेसे इनका प्रताप घटा। अंगरेजोंने सिंहल प्रभृति अधिकार कर अन्यान्य स्थानोंमें भी इनकी प्रतिपत्ति बिगाड़ी थी। उस समयतक ओलन्दाज कियत्परिमाणमें हतश्री हुये।

१६८० ई०को इन्होंने अंगरेजोंको बण्टामसे निकाला और भारतमहासागरीय द्वीपोंमें मसालेका काम अक्षुण्ण बना डाला था। १६८७ ई०को हालेण्डके विलियम इङ्गलेण्डके राजा हुये। इससे उभय जातिके मध्य सौहार्द्य स्थापित हुआ। किन्तु वाणिज्य विषयमें इन्होंका प्राधान्य बना रहा। ई० १८श शताब्दके शेष भागसे ही ओलन्दाजोंकी क्षमता घटने लगी। १७५० ई० तक युरोपमें जो विद्वेषवह्नि भभका, उससे इनका वाणिज्य विशेष बिगड़ा न था। फिर इन्होंने बंगालसे अंगरेजोंको निकालनेके लिये मीरजाफरके अनुरोधपर बटेवियासे सात जंगी जहाज़ भेजे। किन्तु उन्होंने हार कर यह काम छोड़ दिया। अवशेष १७८८ ई०को फ्रान्सीसी राष्ट्र-विप्लव उपस्थित हुआ। फ्रान्सीसी सेनापति पिचेग्रुने हालेण्ड अधिकार किया था। फिर यह फ्रान्सीसियोंके शासनाधीन बने। इधर अंगरेज इनके वाणिज्यस्थान अधिकार करनेको सचेष्ट हुये। सिंहल प्रभृति स्थान उनके हाथ लगे थे। १८०२ ई०को आमिन्स-सन्धि द्वारा अनेक विदेशीय अधिकार पुनः पाते भी इन्हें सिंहल और केप-कोलोनी अंगरेजोंके लिये छोड़ना पड़ा। नेपोलियनके फ्रान्सका सम्राट् बननेपर हालेण्ड प्रथमतः उनके भ्राता लुईके अधीन और पीछे फ्रान्सीसी साम्राज्यके अन्तर्भुक्त हुआ। ऐसे ही समय इन्होंने इङ्गलेण्ड आक्रमणके लिये भी विशेष चेष्टा लगायी और भारत-महासागरमें अंगरेजोंके वाणिज्यको विशेष क्षति पहुंचायी थी।

१८११ ई०को अंगरेजोंने यह उपद्रव निवारण करनेके लिये बटेवियाको आक्रमण मार हस्तगत किया। उसी समयसे यह हतश्री हो गये। १८१५ ई०को पारिसकी सन्धि द्वारा उक्त स्थान पुनः पाते भी यह पूर्ववत् प्रबल बन न सके।

आजकल ओलन्दाजोंकी अवस्था उन्नत नहीं, स्थितिशील पड़ी है। भारत-महासागरके द्वीपपुञ्जमें आज भी यह मसालेका काम करते हैं। बटेविया

प्रधान स्थान है। वहां एक गवरनरजनरल और मन्त्रिसमाजके कई सदस्य रहते हैं। किन्तु गवरनरजनरल अपनी इच्छापर मन्त्रिसमाजके मतसे विरुद्ध कोई कार्य कर नहीं सकते। द्वीपवासी ओलन्दाज जातीय भावसे कुछ दीन हो गये हैं। विद्याकी चर्चाका अभाव-जैसा है।

ओलंदेजी (हिं॰ वि॰) हालेंड देशीय, हालेंड मुल्कसे सरोकार रखनेवाला।

ओलंबा (हिं॰ पु॰) उपालम्भ, शिकवा, उरहना।

ओलंभा, ओलंबा देखो।

ओलकन्द (सं॰ पु॰) १ शूरण, ज़मींकंद। २ वनोल, जंगली जमींकंद।

ओलचा, ओड़चा देखो।

ओलची (हिं॰ स्त्री॰) फलविशेष, आलू बालू, गिलास।

ओलज (सं॰ धातु॰) भ्वादि पर॰ सक॰ सेट्। क्षेपण करना, फेंकना। "ओलजि क्षेपणे।" (कविकल्पद्रुम)

ओलड (सं॰ धा॰) चुरा॰ उभ॰ सक॰ सेट्। "ओलडिकि उत्क्षेपे।" (कविकल्पद्रुम) उत्क्षेप करना, उठाकर फेंक देना।

ओलती (हिं॰ स्त्री॰) १ छप्परसे पानी बहनेकी जगह। २ जिस जगहपे छप्परसे पानी बहे।

ओलना (हिं॰ क्रि॰) १ गोपन करना, छिपाना। २ व्यवधान डालना, आड़ लगाना। ३ सहन करना, सह लेना। ४ भोंक देना।

ओलमना (हिं॰ क्रि॰) लटकना, झुकना, सहारा लेना।

ओलहना, उरहना देखो।

ओलपाद—बम्बई प्रान्तके सूरत ज़िलेकी एक तहसील। इससे उत्तर कीम नदी, पूर्व बड़ोदेका नवसारी विभाग, दक्षिण ताप्ती और पश्चिम खम्भातकी खाड़ी अवस्थित है। क्षेत्रफल ३२६ वर्गमील है। समुद्र किनारे बालूकी पहाड़ी है। बीचमें मैदान पड़ा है। चरागाहोंमें बबूलके पेड़ पाये जाते हैं। यहां ग्रीष्म ऋतुमें भी शीतल वायु चलता है। कहते—लङ्कासे रावणको जीत रामचन्द्र नासिकके पास पञ्चवटीमें पहुंचे थे। वहांसे वह गुजरातके दक्षिणपैठ गये। सरस ग्रामके समीप सूरतसे १५ मील उत्तर-पश्चिम उन्होंने एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित किया था। उसीको आजकल सिद्धनाथ कहते हैं। फिर होम हुआ। रामने भूमिमें तीर मार जल निकाला था। जिस स्थानसे जल निकला उसका नाम रामकुण्ड है। उसी समय उन्होंने वहां एक राक्षस मारा। राक्षसके शिर गिरनेका स्थान शिरस और उर गिरनेका स्थान उरपातन या ओलपाट कहाया।

ओला (हिं॰ पु॰) १ करका, वर्षोपल, झाला, पत्थर, आसमानसे गिरनेवाला बरफ़का टुकड़ा। २ मिष्ट खाद्यविशेष, एक मिठाई। यह चीनीका गोल-गोल बनाया और गर्मीमें खाया जाता है। ओला पानीमें पड़ते ही घुलने लगता है। ३ व्यवधान, परदा, आड़। ४ भेद, छिपी बात। ५ वृक्षविशेष, एक क़िस्मका बबूल। (वि॰) ६ शीतल, ठण्डा। ७ श्वेत, सफ़ेद।

ओलाना (हिं॰ क्रि॰) भूनना, सेकना, अकोरना।

ओलिक (हिं॰ स्त्री॰) व्यवधान, परदा, आड़।

ओली (हिं॰ स्त्री॰) १ क्रोड़, गोद। २ अञ्चल, दामन, पल्ला। ३ झोली।

ओलौना (हिं॰ पु॰) १ उदाहरण, मिसाल। (क्रि॰) २ दृष्टान्त देना, मिसाल मिलाना।

ओश (सं॰ पु॰) शूरण, जमींकंद।

ओशकन्द, ओलकन्द देखो।

ओवर (अं॰=Over) बीता, चढ़ता। क्रिकेटमें पांच बार गेंद फेंकनेपर खेलकी बारी ओवर होती है। फिर इस ओरके खेलाड़ी उस ओर चले जाते हैं।

ओवरकोट (अं॰=*Overcoat*) लबादा, अंगेपर पहना जानेवाला चोगा।

ओवरसियर (अं॰=Overseer) अधिकारी, अध्यक्ष, नाज़िर, ऊपरी काम देखनेवाला।

ओषा, ओखा देखो।

ओशाम—काठियावाड़ प्रान्तका एक पर्वत। उंचाई १००० फीट है। इस पर्वतमें चटानें, बहुत देख

पड़ती है। शिखरपर श्रीमाठमाताका मन्दिर एवं प्राचीन दुर्ग दण्डायमान है। ओग्राममें कामा और धुंधला काम होता है। लोग उसे कौरव और पाण्डव युद्धके रक्तका चिह्न बताते हैं।

ओगिष्टहन् (सं० पु०) अति शीघ्र प्रहार करनेवाला, जो बहुत जल्द मारता हो।

ओष (सं० पु०) उष दाहे घञ्। १ दाह, जलन। २ पाक, पकनेकी हालत। ३ शीघ्रता, तेज़ी।

ओषण (सं० पु०) उष-ल्युट्। कटुरस, झाल, चरपराहट।

ओषधि, ओषध देखो।

ओषणी (सं० स्त्री०) ओषण-ङीप्। पुरातिशाक, एक सब्ज़ी या तरकारी। यह कफ और वायुको नाश करती है। (राजवल्लभ)

ओषध (सं० क्ली०) औषध, दवा।

ओषधि (सं० स्त्री०) ओषो धीयतेऽत्र, ओष-धा-कि। उद्भिद्विशेष, एक पौदा। फल पकते ही जो उद्भिद् सूख जाते, वही ओषधि कहाते हैं। औषधोपयोगी कतिपय ओषधिका लक्षण लगा सुश्रुतने नामभेद किया है, यथा—

जो ओषधि कपिल वर्ण, विचित्र मण्डलविशिष्ट, सर्पतुल्य, पञ्च पत्रयुक्त और परिमाणमें पञ्च अरत्नि परिमित रहती, उसे विद्वन्मण्डली अजगरी कहती है।१। निष्पत्र, स्वर्णवर्ण, दो अङ्गुल परिमित मूलविशिष्ट, सर्पाकार और प्रान्तदेशमें रक्तिमायुक्त ओषधिका नाम श्वेतकापोती है।२। दो पत्रमात्र विशिष्ट, मूलमें अरुणवर्ण एवं मण्डलमें कृष्णवर्ण, दो अरत्निपरिमित और गोनासिकाकृति ओषधिको गोनसी कहते हैं।३। अधिक सारयुक्त, रोमश, मृदु, इक्षुरस-सदृश रसविशिष्ट और इक्षुकी भांति आकृतियुक्त ओषधि कृष्णकापोती कही जाती है।४। कृष्ण-सर्पाकृति और कन्दसम्भव ओषधिकी संज्ञा वाराही है।५। एक पत्रयुक्त, महावीर्य और अञ्जनतुल्य कृष्णवर्ण ओषधिका नाम छत्रा पड़ता है।६। कन्द-सम्भव और रक्षोभयविनाशक ओषधिकी संज्ञा अतिछत्रा रहती है।७। छत्रा एवं अतिछत्रा उभय ओषधि जरामृत्यु निवारक और श्वेतकापोतीकी भांति आकृतिविशिष्ट होती है। मनोरम-आकृति, मयूरके पक्षकी भांति पत्रविशिष्ट, कन्दोत्पन्न और स्वर्णवर्ण सारयुक्त ओषधिका नाम कन्या है।८। अतिशय क्षीरयुक्त, गवाकृति मूलदेशविशिष्ट, हस्तिकर्ण और पलाशके पत्रकी भांति केवल दो पत्रयुक्त ओषधिको करेणु कहते हैं।९। छागीके स्तनकी भांति मूलभागयुक्त, अधिक सारविशिष्ट, गुल्मकी भांति आकृतियुक्त और शङ्ख कुन्द प्रभृतिकी तरह पाण्डुवर्ण ओषधिकी संज्ञा अजा है।१०। श्वेतवर्ण, विचित्रपुष्पयुक्त और काकमाचीकी तरह ओषधिकी संज्ञा चक्रका पड़ती, जो जरामृत्यु दूर करती है।११। पञ्च मूलयुक्त, केवल पञ्च रक्तवर्ण सुकोमल पत्रविशिष्ट और सूर्यके भ्रमणानुसार परिवर्तनशील ओषधि आदित्यपर्णिनी कही जाती है।१२। स्वर्णवर्ण, सक्षीर और पद्मिनी-तुल्य ओषधि ब्रह्मसुवर्चला कहाती, जो चारो ओर चक्कर लगाती है।१३। अरत्निपरिमित, गुल्माकार, दो अङ्गुल परिमित पत्रयुक्त, नीलोत्पलसमपुष्प एवं अञ्जनवर्ण फलविशिष्ट, स्वर्णवर्ण और क्षीरयुक्त ओषधिका नाम श्रावणी पड़ता है।१४। श्रावणीकी भांति अन्यान्य गुणयुक्त और पाण्डुवर्ण ओषधिको महाश्रावणी कहते हैं।१५। लोमयुक्त द्विविध ओषधियोंके नाम गोलोमी और अजलोमी हैं।१६,१७। मूलसमुद्भव और विच्छिन्नपत्रयुक्त ओषधि हंसपादी कहाती है।१८। अपरापर ओषधिकी तरह दल-युक्त और गरुड़सदृश पुष्पविशिष्ट ओषधिकी संज्ञा गरुड़पुष्पी है।१९। अतिशय वेगयुक्त सर्पनिर्मोककी तरह आकृतिविशिष्ट ओषधि वेगवती कहाती है।२०। सोमसम ओषधिका नाम सोम है।२१। अश्रद्धा-शाली, अलस, कृतघ्न और पापकर्मा व्यक्ति इन ओषधियोंको उखाड़ नहीं सकता। प्रथमोक्त नाम प्रकारकी ओषधि उखाड़नेमें निम्नोक्त मन्त्र पढ़ना पड़ता है—

"महेन्द्ररामकृष्णानां ब्राह्मणानां गवामपि।
तपसा तेजसा वापि प्रशाम्यध्वं शिवाय वै॥"

वसन्तकालकी आदित्यपर्णी, वर्षाकालकी अजगरी

एवं गोनसी, काश्मीरदेशीय क्षुद्रक मानस नामक दिव्य सरोवरमें करेणु, कन्या, छत्रा, अतिछत्रा, गोलोमी, अजलोमी, तथा महती श्रावणी, कौशिकी नदीके पूर्वपार वल्मीकव्याप्त योजनत्रय भूमिमें श्वेतकापोती और वल्मीकके शिखरदेश, मलयपर्वत तथा नलसेतुमें वेगवती मिलती है।

ओषधिगण (सं० पु०) रासायनिक ओषधिका गण, कुछ जड़ी-बूटियोंका ज़खीरा।

ओषधिगर्भ (सं० पु०) ओषधीनां गर्भं उत्पत्तिर्यस्मात् बहुव्री०। १ चन्द्र, चांद। २ सूर्य, आफ़ताब।

ओषधिज (सं० त्रि०) ओषधिभ्यो जायते, ओषधि-जन-ड। १ ओषधिगणके मध्य निवास करनेवाला, जो जड़ी-बूटियोंमें रहता हो। २ ओषधिसे उत्पन्न, जो जड़ी-बूटियोंसे निकला हो। (पु०) ३ ओषधिसे उत्पन्न अग्नि।

ओषधिपति (सं० पु०) ओषधीनां पतिः, ६-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर। ३ सोमलता। ४ वैद्य, हकीम।

ओषधिप्रस्थ (सं० पु०) ओषधिबहुलं प्रस्थं सानुर्यत्र बहुव्री०। १ हिमालय। अधिकांश ओषधि उत्पन्न होनेसे हिमालयका यह नाम पड़ा है। २ हिमालयस्थ नगरविशेष, हिमालयका एक शहर।

"यत्र गङ्गानिपातिता पुरा ब्रह्मपुरात् सता।
ओषधिप्रस्थनगरस्यादूरे सानुरुत्तमः॥" (कालिकापुराण ४१अः)

ओषधी (सं० स्त्री०) ओषधि ङीप्। १ ओषधि, जड़ीबूटी। २ लघुवृक्ष, छोटा पेड़।

ओषधीपति (सं० पु०) १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर।

ओषधीमान् (सं० त्रि०) ओषधि-सम्बन्धीय, जड़ी-बूटियोंसे सरोकार रखनेवाला।

ओषधीश (सं० पु०) ओषधीनां ईशः, ६-तत्। १ चन्द्र, चांद। २ कर्पूर, काफ़ूर।

ओषधीसंशित (सं० त्रि०) ओषधि द्वारा आयत्त, जड़ी बूटियोंसे तहरीक किया हुआ।

ओषधीसूक्त (सं० क्ली०) सूक्तविशेष, वेदका एक मन्त्र।

ओषम् (सं० अव्य०) उष-अमुल्। शीघ्र-शीघ्र, बारम्बार, जल्द-जल्द, फ़ौरन।

ओषिष्ठ (सं० त्रि०) अयमेषां अतिशयेन, ओषी, ओषीन् इष्ठन्। अतिशायने तमबिष्ठनौ। पा ५।३।५५। अतिशय दाहकारक, बहुत जलन पैदा करनेवाला।

ओषिष्ठदावा (सं० त्रि०) अति शीघ्र प्रदान करनेवाला, जो बहुत जल्द देता हो।

ओष्ठाविन् (सं० त्रि०) उष-इन् तदस्यास्तीति विनि। दाहकारी, जलन पैदा करनेवाला।

ओष्ठ (सं० पु०) उष्यते दह्यते, उष्ण अर्थने उष-थन्। उषिकुषिगर्तिभ्यस्थन्। उण् २।४। दन्तच्छद, होंठ। इसका संस्कृत पर्याय—रदनच्छद, दशनवास, दन्तवास, दन्त-वस्त्र और रदच्छद है। दोनोंका अर्थ निकल सकते भी ओष्ठ शब्द ऊपरी होंठके लिये व्यवहृत होता है।

ओष्ठक (सं० त्रि०) ओष्ठे प्रसितम्, ओष्ठ-कन्। उदराश्वः इषिते। पा ५।२।६६। ओष्ठमें व्याप्त, होंठकी ख़बर रखनेवाला। यह शब्द समासके अन्तमें आता है।

ओष्ठकर्णक (सं० पु०) जनपद विशेष, कोई जगह। कहते—ओष्ठकर्णकमें निवास करनेवालोंके होंठ और कान पास ही पास रहते हैं।

ओष्ठकोप (सं० पु०) ओष्ठस्य कोपो यत्र, बहुव्री०। ओष्ठरोग देखो।

ओष्ठज (सं० त्रि०) ओष्ठसे उत्पन्न, शफ़तो, होंठसे निकलनेवाला।

ओष्ठजाह (सं० क्ली०) ओष्ठ-जाहच्। तस्य पाकमूले पीलादि-कर्णादिभ्यः कुणबजाहचौ। पा ५।२।२४। ओष्ठमूल, होंठकी जड़।

ओष्ठधर (सं० पु०) ओष्ठ, होंठ।

ओष्ठपल्लव (सं० क्ली०) ओष्ठ, होंठ।

ओष्ठपाक (सं० पु०) ओष्ठव्रण, होंठका ज़ख्म।

ओष्ठपुट (सं० क्ली०) ओष्ठोद्घाटनजात विवर, जो गड्ढा होंठ खोलनेसे पड़ा हो।

ओष्ठपुष्प (सं० पु०) ओष्ठ इव रक्तिमं पुष्पं यस्य, बहुव्री०। १ बन्धुजीवपुष्पवृक्ष, दुपहरियेके फूलका पेड़। (क्ली०) ओष्ठ इव पुष्पम्। बन्धुकपुष्प, दुपहरियेका फूल।

ओष्ठप्रकोप (सं॰ पु॰) ओष्ठस्य प्रकोपो यत्र, बहुव्री॰। ओष्ठरोग देखो।

ओष्ठभाग (सं॰ पु॰) मुखभाग, मुंहका कोना।

ओष्ठफला (सं॰ स्त्री॰) बिम्बीलता, कुंदरू।

ओष्ठमा, ओष्ठवना देखो।

ओष्ठरोग (सं॰ पु॰) ओष्ठगतो रोगः, मध्यपदलोपी॰। ओष्ठगत रोग, होंठकी बीमारी। वैद्यक मतसे यह रोग आठ प्रकारका होता है—वायुजन्य, पित्तजन्य, कफजन्य, सान्निपातज, रक्तज, मांसज, मेदोज और अभिघातज अर्थात् आगन्तु। वातज ओष्ठरोगमें ओष्ठ कर्कश, कम्पयुक्त, स्तब्ध और वातज वेदनाविशिष्ट रहता है। इस रोगमें ओष्ठ फट जानेसे उत्पाटित होनेकी तरह यातना मालूम पड़ती है। पित्तज ओष्ठ रोगमें ओष्ठ पीतवर्ण, वेदनायुक्त और क्षुद्र क्षुद्र पिड़कासे व्याप्त रहता है। फिर उक्त पिड़का पक जानेसे अत्यन्त दाह उठने लगता है। श्लेष्मज ओष्ठ रोगमें ओष्ठ-समवर्ण और वेदनाहीन पिड़का पड़ती है। दोनों ओंठ पिच्छिल, शीतलस्पर्श और गुरु लगते हैं। सन्निपातजन्य ओष्ठरोगमें बहुविध पिड़का उठतीं और ओष्ठद्वयके किसी स्थानपर कृष्णवर्ण, किसी स्थानपर पीतवर्ण एवं किसी स्थानपर श्वेतवर्ण देख पड़ती हैं। रक्तज ओष्ठरोगमें खर्जूर-फलवर्ण पिड़का निकलती हैं। उनको दबानेसे रक्त टपकता है। ओष्ठद्वय रक्तवर्ण पड़ जाते हैं। मांसज ओष्ठरोगमें ओष्ठद्वय गुरु, स्थूल और मांसपिण्डकी भांति उन्नत लगते हैं। ओष्ठदेशमें कीट उत्पन्न होते हैं। मेदोज ओष्ठरोगमें ओष्ठद्वय घृतमण्ड तुल्य, कण्डुविशिष्ट और गुरु हो जाते हैं। फिर उनसे निर्मल स्फटिक-तुल्य स्राव निरन्तर निकला करता है। अभिघातजन्य ओष्ठरोगमें ओष्ठ विदीर्ण अथवा उत्पाटित हो जाता है। यह व्रण आरोग्य लाभ नहीं करता। वायुजन्य ओष्ठरोगमें सालपीनके तैल, श्रीवास, गुग्गुल, यष्टि-मधु और देवदारुका प्रलेप चढ़ाना चाहिये। पैत्तिकमें सर्वप्रथम विरेचक औषधका प्रयोग आवश्यक है। फिर तिक्त रसपान एवं तिक्त रस उपकरणके साथ भोजनकी व्यवस्था करना चाहिये। इसपर प्रथमतः जलौका द्वारा रक्तमोक्षण कर शर्करा, लोध, मधु एवं अनन्तमूल समभाग अथवा खसकी जड़, रक्तचन्दन और क्षीरकाकोली दुग्धमें रगड़ प्रलेप चढ़ाते हैं। रक्त एवं अभिघात जन्य ओष्ठरोगमें भी पित्तजन्य रोगकी चिकित्सा कर्तव्य है। कफजन्य होनेसे रक्तमोक्षणकर त्रिकटु, सर्जिक्षार तथा यवक्षार सम-भाग मधुमें मिला प्रलेप लगाना चाहिये। मेदोजन्य ओष्ठरोगमें प्रियङ्गु एवं त्रिफला लोध मधुके साथ प्रलेप देते हैं। केवल त्रिफलाचूर्ण और मधुके साथ प्रलेप करनेपर भी उपकार पहुंचता है। सर्वप्रकार ओष्ठ-व्रण स्फुटित होनेसे लोबान, धतूरेके फल और गेहूंके साथ तैल किंवा घृत पका व्यवहार करना चाहिये।

ओष्ठा, ओष्ठी देखो।

ओष्ठागतप्राण (सं॰ त्रि॰) ओष्ठयोरागताः प्राणा यस्य, बहुव्री॰। मृतप्राय, जो मर रहा हो।

ओष्ठाधर (सं॰ पु॰) ओष्ठश्च अधरश्च तौ, द्वन्द्व। ओष्ठद्वय, दोनों होंठ।

ओष्ठी (सं॰ स्त्री॰) ओष्ठ इव आचरति, ओष्ठ-क्विप् अच्-ङीप्। बिम्बफल, कुंदरू।

ओष्ठोपमफला (सं॰ स्त्री॰) ओष्ठोपमानि फलानि यस्याः, बहुव्री॰। बिम्बिका, कुंदरू।

ओष्ठोपमफलिका, ओष्ठोपमफला देखो।

ओष्ठ्य (सं॰ त्रि॰) ओष्ठे भवः, ओष्ठ-यत्। ओष्ठसे उत्पन्न होनेवाला, जो होंठसे निकलता हो।

ओष्ठ्ययोनि (सं॰ त्रि॰) ओष्ठ्य शब्दसे उत्पन्न, जो शफ़ती आवाज़से पैदा हो।

ओष्ठ्यवर्ण (सं॰ पु॰ क्ली॰) ओष्ठाभ्यां वर्ण्यते इति, कर्मधा॰। ओष्ठसे उत्पन्न होनेवाला वर्ण, हर्फ़-शफ़ती, जो हर्फ़ लबसे निकलता हो। उ, ऊ, ओ, औ, प, फ, ब, भ और म अक्षर उच्चारण-स्थान ओष्ठ रहनेसे ओष्ठ्य-वर्ण कहाता है।

ओष्ठ्यस्थान (सं॰ त्रि॰) ओष्ठ द्वारा उच्चरित, जो होंठसे बोला जाता हो।

ओष्ण (सं॰ त्रि॰) आ-उष्णः। ईषत् उष्ण, थोड़ा गर्म।

ओस (हिं॰ स्त्री॰) अवश्याय, शबनम, नीहार, रातको

आसमानसे जमीनपर धीरे-धीरे गिरनेवाली तरी। यह एक प्रकारका वाष्पीय जल है। रात्रिके समय शीतलतासे भारी पड़ ओस पृथिवीपर गिरती और बिन्दु-बिन्दु इधर उधर जमी देख पड़ती है। आकाश मेघाच्छन्न रहने और प्रबल वायु चलनेसे ओसका बल घट जाता है। गहरी ओसका ही पाला कहते हैं। इसका प्रभाव घास-फूस पर अधिक पड़ता है।

"ओसके चाटे प्यास नहीं बुझती।" (लोकोक्ति)

जो द्रव्य देखनेमें बहुत अच्छा लगता—किन्तु स्थायी नहीं रहता, उसका नाम 'ओसका मोती' पड़ता है।

ओसनना (हिं० क्रि०) मांड़ना, गूंधना, पानी डालके कचरना। यह शब्द आटेके लिये आता है।

ओसर (हिं० स्त्री०) गर्भधारण करने योग्य गाय या भैंस, जवानीपर आई हुई पड़िया या बछिया। जो गाय या भैंस गाभिन होने लायक बन जाती, वह ओसर कहलाती है।

ओसरा (हिं० पु०) १ अवसर, समय, वक्त।

ओसरिया, ओसर देखो।

ओसरी (हिं० स्त्री०) अवसर, बारी, बदली, दांव।

ओसवाल (हिं० पु०) जैनोंकी एक शाखा। प्रधानत: जैन व्यवसायियों और महाजनोंको ओसवाल कहते हैं।

ओसाई (हिं० स्त्री०) १ ओसानेका काम, मांड़े हुये अनाजकी उड़वाई। मांड़े हुये गल्लेको टोकरीमें भर हवा चलते समय धीरे धीरे अपनी बराबर उठा नीचे गिराते हैं। इससे पैरोंके पास दाना जमा हो जाता है। हवासे भूसा उड़ अलग जा लगता है। २ ओसानेका पारिश्रमिक, गल्ला उड़ानेकी मजदूरी।

ओसान (हिं०) ओसाई और ओसाना देखो।

ओसाना (हिं० क्रि०) उड़ाना, हवामें फेंकना। यह शब्द मांड़े हुये अनाजको उड़ानेके लिये आता है।

ओसार (हिं० पु०) १ प्रघाण, बरामदा, दालान। २ छप्पर, सायबान।

ओसीसा (हिं०) असीसा देखो।

ओसीसा (हिं० पु०) १ सराहना, बिस्तर या आरामकी जगहका ऊपरी हिस्सा। २ उपधान, तकिया।

ओसूल (हिं०) वसूल देखो।

ओसेका (हिं०) वसीका देखो।

ओसोरा, ओसरा देखो।

ओसौनी, ओसाई देखो।

ओह (सं० पु०) आ-वह-क सम्प्रसारणश्च। १ सम्यक् वहन, अच्छी तरह ले जानेका काम। (त्रि०) २ वाहक, ले जानेवाला। ३ प्रापक, पहुंचानेवाला। (हिं० अव्य०) ४ अरे, यह क्या हुआ! ५ दु:ख, अफसोस, हाय! ६ जाने दो, कोई परवा नहीं!

ओहका (हिं० सर्व०) उसको, उसे।

ओहट (हिं० स्त्री०) व्यवधान, आड़।

ओहते (हिं० सर्व०) उससे।

ओहदा (अ० पु०) आस्पद, स्थान, दरजा, बड़ी जगह।

ओहदेदार (अ० वि०) स्थानाधिकारी, बड़ी जगहवाला।

ओहदेदारी (अ० स्त्री०) कार्यकर्तृत्व, ओहदेदारीका काम।

ओहब्रह्म (सं० पु०) ऊह ब्रह्मयुक्त, पूर्ण ब्राह्मण, ज्ञानी ब्राह्मण। (निरुक्त १।११)

ओहमा (हिं० सर्व०) उसमें।

ओहर (हिं० अव्य०) उस ओर, उस तर्फ।

ओहरना (हिं० क्रि०) ऊपरसे नीचे आना, घट जाना।

ओहरी (हिं० स्त्री०) क्लान्तभाव, सुस्ती, थकावट।

ओहरुवा (हिं० पु०) ओहार, झालर, परदा।

ओहस् (सं० क्ली०) आ-ऊह-असुन्। वहनसाधन स्तोत्रादि, सच्चा खयाल।

ओहा (हिं० पु०) ऊधस्, गोस्तन, गायका थन।

ओहान (सं० वि०) विचारशील, सोचने-समझनेवाला, जो खयाल कर रहा हो।

ओहाबी (वहहाबी)—मुसलमानोंका एक धर्मसम्प्रदाय। मुहम्मद इबन अबदुल वहहाब इस सम्प्रदायके प्रवर्तक रहे। उन्होंने ११६८१ ई०को अरबी नेजद प्रदेशके एन आयना नामक ग्राममें जन्मग्रहण किया था। उन्हींके शिष्य वहहाबी कहाते हैं।

वह्हाबी कट्टर इसलाम धर्मावलम्बी हैं। यह एक ईश्वर भिन्न किसी दूसरेको नहीं पूजते। इनके मतमें मुहम्मद ईश्वर-प्रेरित मनुष्य थे। वह धर्म-प्रचारके लिये पृथिवीपर आये। अतएव वह साधारण मनुष्य ही ठहरते हैं। उनका मत ग्रहण करना उचित है। किन्तु उन्हें पूज नहीं सकते।

वह्हाबके प्रधान शिष्य साया दामने अपनी तल-वारके जोरसे समस्त यमन प्रदेशमें यह मत फैलाया था। वह्हाबके मरनेपर उनके पुत्र अब्दुल अजीजने फिर पितृमतको प्रायः समस्त अरब देशमें प्रचार किया। १८०३ और १८०४ ई०को वह्हाबियोंने मक्का और मदीना नगर लोग समस्त धनसम्पत्ति लूट ली थी। ऐसेही समय नवसंस्कारकोंने उत्तेजित हो सकल प्राचीन गोरस्तान ध्वंस कर डाले। १८११ ई० पर्यन्त इनका प्रभाव अक्षुण्ण रहा। फिर मुहम्मद अली पाशाने वह्हाबियोंके कवलसे मक्के और मदीनेका उद्धार किया। किन्तु वह इनपर शासन जमा न सके। १८१४-१८१५ ई०को उन्होंने इन्हें दबानेके लिये आयोजन किया और काहिरासे अपने पुत्र इब्राहीम पाशाको ससैन्य भेज दिया था। इब्रा-हीमके आक्रमणसे यह हीनवीर्य हो गये। इनके प्रधान नायक अब्दुल्ला इब्न साउद हारे थे। फिर कितने ही वह्हाबी भारतवर्ष जा अपना मत प्रचार करने लगे। अनेक शिक्ष मुसलमानोंने यह मत ग्रहण किया था।

ई० १८श शताब्दके शेष भाग बहुतसे लोग वह्हाबी सम्प्रदाय-भुक्त हुये। १८ वें शताब्दके मध्य-भाग यह पटनेमें जुटे थे। इन्होंने नाना स्थानोंसे अपने लोगोंको संग्रह कर अंगरेजोंके विपक्ष युद्धका डंका बजाया। धर्मरक्षाके लिये युद्ध होते सुन कितने ही मुसलमानोंने इनका साथ दिया था। कोई अर्थ द्वारा और कोई बाहु द्वारा साहाय्य करने लगा। सब लोग पटनेसे सिताना शिविरको अग्रसर हुये। १८६३ ई०को इसी जगह घोर युद्ध चला था। उस युद्धमें अनेक उच्चपदस्थ अंगरेज कर्मचारी और विस्तर अंगरेज सैनिक मारे गये। युद्धके समय पटनेके वह्हाबी मौलवियोंने मुसलमानोंके साहाय्यार्थ कितनी ही अशरफियां और हुंडियां भेजी थीं। कहीं भी धर्मयुद्ध उपस्थित होनेपर यह आस-पास और पड़ो-सी खूब गुप्त भावसे इसलाम धर्मावलम्बी लोगोंसे यथेष्ट साहाय्य ले सकते हैं। इनका परिचय वह्हाबी, फराजी, हिदायती, मेहदी और नये मुसलमान शब्दोंसे मिलता है।

ओहार (हिं० पु०) झूल, परदा, ढांकनेका कपड़ा।

ओहे (सं० अव्य०) सम्बोधनसूचक शब्द, अरे, ए। समवयस्क या लघुगुरुभेद न रखनेवाले व्यक्तिको ही इस शब्दसे सम्बोधन कर सकते हैं।

ओहैना (हिं०) अवहेना देखो।

ओहो (हिं० अव्य०) हंहो, अहो, भो भो, हे हे, आहा। इस शब्दसे विस्मय और आनन्द प्रकट होता है।

औ

औ—स्वरवर्णका चतुर्दश अक्षर। इसके उच्चारणका स्थान ओष्ठ और कण्ठ है। 'औ' दीर्घ एवं प्लुत भेदसे द्विविध और उदात्त, अनुदात्त तथा स्वरित भेदसे त्रिविध होता है। फिर अनुनासिक और अननुनासिक दो भेद और पड़ते हैं। कामधेनु तन्त्रके मतसे औकार रक्तविद्युल्लताकार, कुण्डली, पञ्चप्राण एवं सदाशिव मय, ईश्वर संयुक्त और चतुर्वर्गफलप्रद है। इस वर्णमें ब्रह्मादि देव सदा अवस्थान करते हैं। इसके लिखनेकी प्रणाली—औकारके मध्यस्थलमें दक्षिण-दिक्से एक रेखा ऊर्ध्वगत हो किञ्चित् वामदिक्को झुक जाती है। इन सकल रेखाओंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर रहते हैं। मध्यगत रेखा शक्ति है।

(वर्णोद्धारतन्त्र)

औकारका शब्दोक्त नाम शक्तिक, नाद, तैजस, वाम-जङ्घक, मनु, ऊर्ध्वदंश, शङ्कुकर्ण, सदाशिव, अधोदन्त, कण्ठोष्ठ, उदर्पक, सरस्वती, आज्ञा, ऊर्ध्वमुखी, शान्त, व्यापिनी, प्रज्ञा, अंश, अनन्ता, [illegible] चतुर्दशी, रतिप्रिय, शैव, [illegible] लिका और अणु हैं।

और सत्यान्त दो नाम अधिक लिखे हैं। मातृका-न्यासमें अधोदन्तन्यास करनेको विधान रहनेसे 'अधोदन्त' भी कहते हैं। २ धातुका एक अनुबन्ध। "औरचिर्।" (कविकल्पद्रुम)

(अव्य०) ३ आह्वान, पुकार, अरे, ए। ४ सम्बोधन। ५ विरोध। ६ निर्णय। ७ मुद्रोंका प्रणव।

"चतुर्दशस्वरो योऽसौ सेतुरौकारसंज्ञितः।
स चानुस्वारनादाभ्यां मुद्राणां सेतुरुच्यते॥" (कालिकापुराण)

औकार नामक चतुर्दश स्वर अनुस्वार स्वर-विशिष्ट मुद्रोंका सेतु कहाता है।

(पु०) ८ अनन्त। ९ निस्वन। (स्त्री०) १० पृथिवी।

औंकात (हिं०). औकात देखो।

औंगकी (हिं० पु०) वानरविशेष, किसी किस्मका लंगूर। इसका निवासस्थान सुमात्रा द्वीप है। पीत वर्णमें नील वर्णकी कुछ आभा झलकती है। औंगकी अपनी मादाको कभी नहीं छोड़ता। पदकी अङ्गुलि संयुक्त रहती हैं। स्वभाव कोमल और भीरु है। किन्तु इसकी पटुता जगत्प्रसिद्ध है। यह गिब्बन जातिके अन्तर्गत पड़ता है।

औंगना (हिं० क्रि०) औंगना, तेल देना।

औंगी (हिं० स्त्री०) मौन, ख़ामोशी, चुप।

औंघ (हिं० स्त्री०) औंघाई, नींद आनेकी हालत।

औंघना (हिं० क्रि०) औंघाना, निद्राके वशीभूत होना, नींदसे आंखें खोलना-मूंदना।

औंघाना, औंघना देखो।

औंघाई, औंघ देखो।

औंजना (हिं० क्रि०) घबराना, उकताना।

औंटन (हिं० पु०) १ पहुंटा, चारा काटनेको लकड़ीका एक टुकड़ा। २ औंटाई, आगपर चढ़ा दूध वगैरह गाढ़ा करनेका काम।

औंटना (हिं० क्रि०) १ उबलना, आगके जोरसे खौलना। २ जलना, क्रोधसे भस्मीभूत होना। ३ उबालना, जलाना, आगपर चढ़ा किसी पतली चीज़को गाढ़ा बनाना।

औंठ (हिं० स्त्री०) मुंडा या चढ़ा हुआ कोर, उठी हुई किनारी।

औंड़ (हिं० पु०) बेलदार, ज़मीन खोदनेका पेशा करनेवाला।

औंडा (हिं० वि०) गभीर, गहरा, खुदा हुआ।

औंडाई (हिं० स्त्री०) गाम्भीर्य, गहराई।

औंदना (हिं० क्रि०) १ उमदाना, मस्त बन जाना। २ घबराना, होश न आना। ३ खाना, उड़ाना।

औंदाना (हिं० क्रि०) उकताना, घबराना।

औंध—१ बम्बई प्रान्तके सतारा ज़िलेका एक छोटा राज्य। यह अक्षा० १८° ६´ १५´´ एवं १८° ६४´ १५´´ उ० और देशा० ७४° १६´ १५´´ तथा ७४° ५२´ ३०´´ पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ४४८ वर्ग मील है। लोकसंख्या प्रायः ५८ हज़ार है। गेहूं, ज्वार, दाल, रूई, गुड़, घी और तेलकी उपज है। राजा ब्राह्मण हैं। लोग उन्हें पन्त-प्रतिनिधि कहते हैं। उक्त उपाधि शिवाजीके समयसे चला आता है। बम्बई-सरकार औंधके राजाको दक्षिणवाले १म श्रेणीके सरदारोंमें समझती है। २८० पैदल और सवार रहते हैं। राजाको गोद लेनेका अधिकार है।

२ उक्त राज्यका प्रधान नगर।

औंधना (हिं० क्रि०) १ औंधा होना, मुंहके बल पड़ना। २ औंधा कर देना, मुंहके बल डालना।

औंधा (हिं० वि०) १ विपरीत, उलटा, मुंहके बल पड़ा हुआ। "औंधा मशीन बूटे करन।" (लोकोक्ति) २ अशुद्ध, टेढ़ा। (क्रि० वि०) ३ विपरीत भावसे, उलटकर। (पु०) ४ मूर्ख, बेवकूफ़। ५ चीला, दूसनी, दसेसिया।

औंधाना (हिं० क्रि०) १ उलटाना, मुंहके बल गिराना। २ खाली करना, उंडेलना।

औंधी—मध्य-प्रदेशके बांदा ज़िलेकी महापुरी तहसीलका एक राज्य। क्षेत्रफल २१ वर्ग मील है। इसमें कोई २५ गांव बसते हैं। लोकसंख्या १० हज़ारसे अधिक है।

औंपा-पौपा (हिं० वि०) १ चतुर्थांशरहित, चार आने कम।

औंरा, औंला (हिं०) आमलकी देखो।

औस, आलस्य देखो।

औसर (हिं॰ स्त्री॰) अकृपन, बखेड़ा, उलझाव।

औसम, औसान देखो।

औक़ात (अ॰ पु॰) १ समय, वक्त, मौसम। २ शक्ति, हैसियत।

औकान (हिं॰ पु॰) लांक, खेतके कटे हुये अनाजका ढेर।

औकास (हिं॰) अवकाश देखो।

औक्थिक (सं॰ त्रि॰) उक्थं सामावयवमेदं वेत्ति अधीते वा, औक्थ-ठक्। उक्थ नामक सामवेदके अङ्गका अध्येता। २ उक्थ विज्ञाता।

औक्थिक्य (सं॰ क्ली॰) उक्थ पाठ। सामवेदमें उक्थ नामक अङ्गके पढ़नेका नियम।

औक्ष (सं॰ क्ली॰) उक्ष्णां वृषाणां समूहः, अण् टिलोपश्च। वृष-समूह, बैलोंका झुण्ड।

औक्षक (सं॰ क्ली॰) उक्ष्णां समूहः, उक्षन्-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रराजेति। पा ४।२।३९। वृषवृन्द, बैलोंका लश्कर।

औक्षगन्धि (सं॰ स्त्री॰) एक अप्सरा।

औक्ष्ण (सं॰ त्रि॰) १ वृषसम्बन्धीय, बैलसे सरोकार रखनेवाला। (पु॰) २ उक्षाके गोत्रापत्य।

औखद (हिं॰) औषध देखो।

औखल (हिं॰ पु॰) नवाकृष्ट भूमि, जो जमीन् नये सरसे जोती गयी हो।

औखा (हिं॰ पु॰) गोचर्म, गायका चरसा या चमड़ा।

औखो (हिं॰ स्त्री॰) असभ्य भाषा, टेढ़ी बात।

औख्वीय (सं॰ त्रि॰) उख्येन प्रोक्तमधीते, अण्। उखलिखित ब्राह्मणाध्यायी, उख ऋषिका बनाया ब्राह्मण पढ़नेवाला।

औख्य (सं॰ वि॰) उखायां निष्पन्नम्, उखा-यत् स्वार्थे अण्। १ स्थालीमें पाक किया हुआ, जो बरतनमें बनाया गया हो। यह शब्द पश्वादिका विशेषण है। (क्ली॰) २ नगरी विशेष, एक शहर।

औख्ययक (सं॰ त्रि॰) उख्यायां जातम्, उख्या-ठकञ्। कत्त्र्यादिभ्यो ढकञ्। पा ४।२।९५। स्थालीपक्व, बरतनमें पकाया हुआ।

औगढ़ (हिं॰ वि॰) अनोखी रीतिसे गढ़ा हुआ, निराली बनावटवाला।

औगत (हिं॰ स्त्री॰) १ दुर्गति, बुरी हालत। (वि॰) २ अवगत, जानकार।

औगल (हिं॰ स्त्री॰) आर्द्रता, नमी, ज़मीन्के नीचेकी तरी।

औगाह (हिं॰ वि॰) गभीर, गहरा।

औगाहना (हिं॰ क्रि॰) मंझाना, घुसना।

औगी (हिं॰ स्त्री॰) १ हात हांकनेका चाबुक। २ दिल्लीके जूतेकी कारचोबी। ३ हाथी फंसानेका गड्ढा। ४ अपटी। ५ बैलगाड़ी हांकनेकी छड़।

औगुन (हिं॰) अवगुण देखो।

"गुन छोड़के औगुन सीखो।" (लोकोक्ति)

औगुनी (हिं॰ वि॰) १ गुणरहित, जो कोई वस्तु रखता न हो।

औग्रसेनि (सं॰ पु॰) उग्रसेनस्यापत्यं पुमान्, उग्रसेन-इञ्। उग्रसेनका पुत्र कंस।

औग्रसैन्य, औग्रसेनि देखो।

औग्रसैन्य (सं॰ पु॰) युधांश्रौष्टिका एक उपाधि।

औग्र्य (सं॰ क्ली॰) उग्रभाव, खूंखारी।

औघ (सं॰ पु॰) ओघ स्वार्थे अण्। जलसमूह, बाढ़।

औघट (हिं॰ वि॰) दुस्तर, मुश्किल, ढालू, सुनसान।

"औघट चले न औघट गिरे।" (लोकोक्ति)

औघड़ (हिं॰ वि॰) १ अदक्ष, अनाड़ी। (पु॰) २ अपशकुन, बदशिगूनी। ३ अघवड़ देखो।

औघर (हिं॰ वि॰) १ विपरीत, उलटा। २ आश्चर्यजनक, अजीब।

औचक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) अचानक, धोकेसे।

औचट (हिं॰ क्रि॰ वि॰) १ अचानक, झटपट। २ धोकेसे। (स्त्री॰) ३ सङ्कुचित स्थान, तङ्ग जगह, फंसाव।

औतथ्य (सं॰ पु॰) उतथ्यस्यापत्यं पुमान्, अण्, पृषोदरादित्वात् साधुः। उतथ्य ऋषिके पुत्र औतथ्य। इनका नाम दीर्घतमा था।

औचिंत (हिं॰ वि॰) चिन्तारहित, खबर न रखनेवाला।
औचिती (सं॰ स्त्री॰) उचितस्य भावः, उचित-ष्यञ्-ङीष् यलोपः। हलस्तद्धितस्य। पा ६।४।१५०।
१ औचित्य, उपयुक्तता, मुनासिबत। २ सत्य, रास्ती, सचाई।
औचित्य (सं॰ क्ली॰) उचितस्य भावः, उचित-ष्यञ्। १ उपयुक्तता, मुनासिबत। २ सत्य, सचाई।
औच्च (सं॰ पु॰) उच्चस्य भावः, उच्च-अण्। उच्चता, बुलंदी, ऊंचाई।
औच्च्य (सं॰ क्ली॰) उच्च-ष्यञ्। उच्चता, ऊंचापन।
औच्चैःश्रवस (सं॰ पु॰) उच्चैःश्रवस् स्वार्थे अण्। इन्द्रका अश्व। उच्चैःश्रवा देखो।
औछ (हिं॰ पु॰) दारुहरिद्राका मूल, दारुहल्दीकी जड़। इससे नारङ्गी रंग निकलता है।
औज (अ॰ पु॰) १ शीर्षविन्दु, सबसे ऊंची जगह। २ पद, स्थान, दरजा।
औजकमाल (अ॰ पु॰) रागभेद, किसी क़िस्मका गाना।
औजड़ (हिं॰ वि॰) अदक्ष, गंवार।
औजस (सं॰ क्ली॰) ओजस स्वार्थे अण्। स्वर्ण, सोना। ओजः देखो।
औजसिक (सं॰ वि॰) ओजसा वर्तते, ओजस्-ठक्। १ तेजस्वी, शानदार। २ बलवान्, ज़ोरावर। (पु॰) ३ शूरवीर, बहादुर।
औजस्य (सं॰ क्ली॰) ओजसो भावः, ओजस्-ष्यञ्। १ तेजस्विता, शानदारी। २ उग्रता, ज़ोरावरी। (त्रि॰) ३ बलकारी, ताक़त देनेवाला।
औज़ार (अ॰ पु॰) यन्त्र, हथियार।
औज्जयनक (सं॰ त्रि॰) उज्जयिन्या इदम्, उज्जयिनी-वुञ्। उज्जयिनी सम्बन्धीय, उज्जैनसे सरोकार रखनेवाला।
औज्झागरि—सुन्दरमिश्रके गोत्रापत्य। अभिराममणि नाटकमें इनका वचन उद्धृत है।
औज्जिहानि (सं॰ पु॰) उज्जिहानस्य अपत्यम्, उज्जिहान-इञ्। उज्जिहानके पुत्रादि।
औज्जिहायनक (सं॰ पु॰) व्याकरणका एक पाठशाला।
औज्ज्वल्य (सं॰ क्ली॰) उज्ज्वलस्य भावः, उज्ज्वल-ष्यञ्। १ उज्ज्वलता, सफ़ाई। २ दीप्ति, चमक।
औझक (हिं॰ क्रि॰ वि॰) एकाएक, एकबारगी, झपसे।
औझड़ (हिं॰ स्त्री॰) १ आघात, प्रहार, झिड़की, धक्का। २ पंजा, लात। (क्रि॰ वि॰) ३ झटकेके साथ, धड़से, उछालकर।
औटन (हिं॰ स्त्री॰) १ गर्म करनेकी हालत, उबाल देनेकी बात। २ तमालपत्र कर्तनकी छुरिका, तम्बाकू काटनेका चाकू।
औटना (हिं॰ क्रि॰) १ उबालना, आगपर चढ़ा गाढ़ा करना। २ उबलना, खौलना, जलना। ३ क्रोधसे भस्मीभूत होना, गुस्सेसे जलने लगना। ४ भ्रमण करना, घूमना-फिरना।
औटनी (हिं॰ स्त्री॰) औटी जानेवाली चीज़के चलानेका औज़ार।
औटा (हिं॰ वि॰) खौला, उबला, जो आगपर रखनेसे जलकर गाढ़ा पड़ गया हो।
औटाई (हिं॰ स्त्री॰) औटनेका काम।
औटाना (हिं॰ क्री॰) औटनेका काम दूसरेसे लेना।
औटावनी (हिं॰ स्त्री॰) दूध उबालनेको मट्टीका बरतन, दुदहंडी।
औटी (हिं॰ स्त्री॰) १ दुग्धवर्धक औषधविशेष, दूध बढ़ानेवाली एक दवा। यह औटकर बनायी और व्याने पर गायको खिलायी जाती है। २ उत्कृष्ट इक्षुरस विशेष, उबाला हुआ गन्नेका अर्क। इसमें औटते समय पानी मिला देते हैं।
औड़ (सं॰ त्रि॰) उन्द्-क, नलोपः यस्य डः स्वार्थे अण्। आर्द्र, तर, गीला।
औड़म्बर, औदुम्बर देखो।
औड़व (सं॰ पु॰) ओड़व स्वार्थे अण्। पञ्चम स्वरान्वित राग। ओड़व देखो।
औड़वि (सं॰ वि॰) १ ओड़वमनुयोजयति, ओड़व इञ्। ओड़व रागका अनुयोजनकारी, जो ओड़वको

गातामजाता हो। (पु०) २ क्षत्रियजाति विशेष, एक लड़ाका कौम।

औड़वीय (सं० पु०) औड़वि क्षत्रिय जातिके एक राजा।

औडुपिक (सं० त्रि०) उडुपेन प्रवेन तरति, उडुप-ठक्। १ उडुप द्वारा पार गया हुआ, जो नावसे पार पहुंचा हो। उडुपस्य इदम्। २ उडुप-सम्बन्धीय, नावसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ३ उडुपका यात्री, नावका मुसाफिर।

औडुम्बर (सं० क्ली०) १ कुष्ठरोग विशेष, किसी क़िस्मका कोढ़। यह कुष्ठ औडुम्बर जैसा रक्तवर्ण, दाहयुक्त एवं कण्डुविशिष्ट होता है। कुष्ठ शब्दमें इसकी चिकित्सा देखो। २ ताम्र, तांबा। ३ ताम्रपात्र, तांबेका बरतन। (पु०) ४ चतुर्दश यमान्तर्गत यम विशेष। ५ एक तपस्वी। ६ पञ्चावपार्श्ववर्ती एक जनपद। (त्रि०) ७ उडुम्बर काष्ठ-सम्बन्धीय, गूलरकी लकड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

औडुलोमि (सं० पु० स्त्री०) उडुलोम्नो ऽपत्यम्। उडुलोमाके पुत्रादि।

औड्र (सं० पु०) ओड्रदेशानां राजा, ओड्र-अण्। १ ओड्रदेशके राजा। २ ओड्रदेशवासी।

औड्रपुष्प (सं० क्ली०) जवापुष्प, गुड़हरका फूल।

औड्रलोमी—एक संस्कृत दर्शनज्ञ। ब्रह्मसूत्रमें इनका वचन उद्धृत है।

औढ़व (हिं० वि०) उच्छृङ्खल, बेढब, अटपटांग।

औथक (सं० क्ली०) वैदिक गीतविशेष, वेदका एक गाना।

औतंस (हिं०) अवतंस देखो।

औतङ्क (सं० त्रि०) उतङ्कसम्बन्धीय। उतङ्क देखो।

औतथ्य (सं० पु०) दीर्घतमाका एक उपाधि या नाम।

औतरना (हिं० क्रि०) अवतार लेना, परमेश्वरका पृथिवीपर किसी जीवके आकारमें प्रकट होना।

औतार (हिं० पु०) अवतार, परमेश्वरका जीवरूप धारण। यह शब्द प्रधानतः विष्णु भगवान्‌के चौबीस अवतारोंका द्योतक है।

औत्कण्ठ्य (सं० क्ली०) उत्कण्ठा स्वार्थे ष्यञ्। उत्कण्ठा, ख़्वाहिश, चाह।

औत्कण्ठ्यवान (सं० त्रि०) उत्कण्ठित, ख़्वाहिशमन्द।

औत्कर्ष्य (सं० क्ली०) उत्-कर्षस्य भावः, उत्कर्ष-ष्यञ्। उत्कर्षता, सबक़त, बड़ाई।

औत्कल—१ एक संस्कृतज्ञ कवि। इनका बनाया पद्यावली नामक ग्रन्थ विद्यमान है। २ उत्कलदेशभव।

औत्तमि (सं० पु०) उत्तमस्यापत्यम्, उत्तम-इञ्। १ उत्तमके पुत्र एक मनु। यह तीसरे मनु थे। (त्रि०) २ उत्तमसम्बन्धीय, उत्तमसे सरोकार रखनेवाला।

औत्तमिक (सं० त्रि०) आकाशके प्रधान देवतावोंसे सम्बन्ध रखनेवाला।

औत्तमेय (सं० पु०) उत्तम-ढक्। औत्तमि देखो।

औत्तर (सं० त्रि०) उत्तरति अस्मात् उत्-तृ-अप् स्वार्थे अण्। १ उत्तीर्णकारी, पार लगानेवाला। २ उत्तरवासी, जो हिमालयमें रहता हो।

औत्तरपथिक (सं० त्रि०) उत्तरपथेन गच्छति, उत्तर-पथ-ठक्। उत्तर-पथसे गमनकारी, हिमालयकी राहसे जानेवाला। उत्तरपथेन आहृतम्। २ उत्तरपथ-द्वारा आहृत, जो हिमालयी राहसे लाया गया हो। (पु०) ३ उपासक विशेष।

औत्तरपदिक (सं० त्रि०) उत्तर पदं गृह्णाति, उत्तर-पद-ठक्। उत्तरपद-ग्रहण करनेवाला, जो आख़िरी लफ़्ज़ पकड़ता हो।

औत्तरवेदिक (सं० त्रि०) उत्तर वेद्यां भवः, उत्तरवेदी-ठक्। उत्तरवेदीसे उत्पन्न, उत्तरकी वेदीसे सम्बन्ध रखनेवाला।

औत्तराधर्य (सं० क्ली०) उत्तराधराणां भावः, उत्तरा-धर-ष्यञ्। ऊर्ध्वनिम्नता, ऊंचा-नीचापन, ऊंचा-खालो।

औत्तराह (सं० त्रि०) उत्तरस्मिन् भवः, उत्तर-आहञ्। उत्तरादाहञ्। पा ४।२।१०४। (वार्तिक) उत्तर कालादिसे उत्पन्न, जो आगे आनेवाले दिनसे सरोकार रखता हो।

औत्तरेय (सं० पु०) उत्तराया अपत्यं पुमान्, उत्तरा-ढक्। अभिमन्युकी पत्नी उत्तराके पुत्र, परीक्षित्।

औत्तानपाद (सं० पु०) उत्तानपादस्य अपत्यं पुमान्, उत्तानपाद-अण्। १ उत्तानपाद राजाके पुत्र, ध्रुव। ध्रुव देखो।

औत्तानपादि (सं॰ पु॰) उत्तानपाद-इञ्। औत्तानपाद देखो।

औत्पत्तिक (सं॰ त्रि॰) उत्पत्त्या अवियुक्तः, उत्पत्ति-ठक्। १ नित्य, असली। २ स्वाभाविक, ज़ाती, पैदायशी।

औत्पात (सं॰ त्रि॰) उत्पातस्य-इदम्, उत्पात-अण्। १ उत्पात-सम्बन्धीय, नहूसतसे सरोकार रखनेवाला। २ उत्पातज्ञापक, बदफ़ाली ज़ाहिर करनेवाला।

औत्पातिक (सं॰ त्रि॰) उत्पाते भवः, उत्पात-ठक्। १ दैवविपत्ति-जन्य, बदफ़ालीसे पैदा। २ उत्पात-सम्पादक, बदफ़ाल, मनहूस। (क्ली॰) ३ दैवविपत्ति, बदफ़ाली।

औत्पाद (सं॰ त्रि॰) उत्पादं तदावेदकग्रन्थं वा वेत्ति अधीते वा, अण्। १ उत्पादवेत्ता, पैदायशको जाननेवाला। २ उत्पादकज्ञापक ग्रन्थाध्यायी, पैदायश बतानेवाली किताब पढ़नेवाला। ३ उत्पादजन्य, पैदायशी।

औत्पुट (सं॰ त्रि॰) उत्पुटेन निर्वृत्तम्, उत्पुट-अण्। सङ्कलादिभ्यश्च। पा ४।२।७५। प्रफुल्ल, प्रस्फुटित, शिगुफ़्ता, फूला, खिला हुआ।

औत्पुटिक (सं॰ त्रि॰) उत्पुटेन हरति, उत्पुट-ठक्। हरत्युत्सङ्गादिभ्यः। पा ४।४।१५। चञ्चु वा मुख द्वारा हरणकर्ता, चोंच या मुंहसे खींचनेवाला।

औत्व (सं॰ त्रि॰) स्थूल, भद्दा, मोटा।

औत्स (सं॰ त्रि॰) उत्से भवः, उत्स-अण्। १ प्रस्रवणसे उत्पन्न, झरनेसे निकला हुआ। उत्सस्य इदम्। २ उत्स-सम्बन्धीय, झरने या कुवेंसे सरोकार रखनेवाला।

औत्सङ्गिक (सं॰ त्रि॰) उत्सङ्गेन हरति, उत्सङ्ग-ठक्। क्रोड़ द्वारा हरण किया जानेवाला, जो पुट्ठेपर रखा हो।

औत्सर्गिक (सं॰ त्रि॰) उत्सर्गस्य भावः, उत्सर्ग-ठञ्। १ सामान्य विधियोग्य, मामूली क़ायदेमें आनेवाला। २ देवपूजादिके शेषमें उत्सर्ग-सम्बन्धीय। ३ प्राकृतिक, कुदरती।

औत्सर्गिकत्व (सं॰ क्ली॰) विधिकी सामान्यता, क़ायदेकी कुल्लियत या उमूमियत।

औत्सायन (सं॰ पु॰) उत्सस्यापत्यं पुमान्, उत्स-फञ्। अश्वादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। उत्स ऋषि-संबीय, उत्सके बेटे वग़ैरह।

औत्सुक्य (सं॰ क्ली॰) उत्सुकस्य भावः, उत्सुक-ष्यञ्। १ उत्कण्ठा, ख़्वाहिश, गहरी चाह। २ चिन्ता, अफ़सोस। ३ अलङ्कार शास्त्रोक्त एक व्यभिचारी भाव।

"इष्टानवाप्तेरौत्सुक्यं कालक्षेपासहिष्णुता।
चित्ततापत्वरास्वेददीर्घनिश्वसितादिकृत॥" (साहित्यद॰ ३।१५६)

प्रियजनकी अप्राप्तिसे औत्सुक्य उठता है। इसमें कालक्षेप, अधैर्य, मनस्ताप, व्यस्तत्व, स्वेदोद्गम और दीर्घनिश्वास प्रभृति प्रकाशित होता है।

औथरा (हिं॰ वि॰) अगभीर, उथला।

औदक (सं॰ त्रि॰) उदकेन पूर्णं तदस्यास्ति उद-कस्य इदं वा, अण्। १ जलपूर्ण कुम्भयुक्त, पानीसे भरा घड़ा रखनेवाला। २ जलीय, आबी, पानीसे सरोकार रखनेवाला।

औदकज (सं॰ त्रि॰) जलीय द्रव्योंसे उत्पन्न, जो पानी पौदोंसे पैदा हो।

औदकि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) उदकस्यापत्यम्, उदक-इञ्। उदक नामक ऋषिके पुत्रादि, उदककी औलाद।

औदङ्कि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) उदङ्कस्यापत्यम्, उदङ्क-इञ्। १ उदङ्क ऋषिके पुत्रादि, उदङ्ककी औलाद। २ क्षत्रियजाति विशेष।

औदङ्कीय (सं॰ पु॰) औदङ्कि जातिके एक राजा।

औदमायनि (सं॰ पु॰) उदमस्यापत्यम्, उदम-फिञ्। तिकादिभ्यः फिञ्। पा ४।१।१५४। उदम ऋषिके पुत्रादि।

औदञ्चन (सं॰ त्रि॰) उदच्यते उत्क्षिप्य ध्रियतेऽस्मिन् इति उदञ्चनो जलाधारस्तस्येदम्, अण्। जलाधार-स्थित, घड़ेमें भरा हुआ।

औदञ्चनक (सं॰ त्रि॰) उदञ्चन-वुञ्। कृञ्चचक्र-बिदेति। पा ४।२।८०। जलाधारके निकटस्थ, घड़ेके पास पड़नेवाला।

औदस्वि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) उदस्वोरपत्यम्, इञ्। उदस्वु ऋषिके पुत्रादि, उदस्वकी औलाद।

औदश्वि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) उदश्वस्यापत्यम्, इञ्। उदश्व ऋषिके पुत्रादि, उदश्वकी औलाद।

औदनिक (सं॰ त्रि॰) ओदनं शिल्पमस्य, ओदन-ठञ्। सूपकार, पाचक, नानबाई, दाल-रोटी बनानेवाला। २ नियत समयपर ओदन प्राप्त करनेवाला, जिसे बंधे वक्त पर दलिया मिले।

औदन्य (सं॰ पु॰) मुण्डिभ ऋषि।

औदन्यि (सं॰ पु॰) औदन्यस्यापत्यं पुमान्, औदन्य-इञ्। औदन्य ऋषिके पुत्र।

औदपान (सं॰ त्रि॰) उदपानादागतः, उदपान-अण्। शण्डिकादिभ्योऽण्। पा ४।३।७६। १ राजग्राह्य, बादशाहको दिया जानेवाला। २ उदपान ग्रामसम्बन्धीय। ३ जलधरसम्बन्धीय, जो कुवें या झरनेसे निकाला गया हो।

औदमेघीय (सं॰ त्रि॰) उदमेघेरिदम्, उदमेघि-छ। रैवतिकादिभ्यश्छः। पा ४।३।१३१। उदमेघि सम्बन्धीय।

औदयक, औदयिक देख।

औदयिक (सं॰ त्रि॰) उदये लग्नकाले भवः, उदय-ठञ्। १ लग्नकालोत्पन्न, ग्रहके उदयसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु॰) २ हृदयकी एक भावना। पहले किये हुये कर्मों से हृदयमें उपजनेवाले सङ्कल्प-विकल्पको जैन 'औदयिक' कहते हैं।

औदरिक (सं॰ त्रि॰) उदरे प्रसितः, उदर-ठक्। १ क्षुधित, भूखा। २ उदरमात्र पोषक, सिर्फ पेटको भरनेवाला, पेटू।

औदर्य (सं॰ त्रि॰) उदरे भवः, यत् ततः स्वार्थे अण्। १ उदरस्थित, जो पेटमें हो। २ अभ्यन्तरप्रविष्ट, भीतर घुसा हुआ। (क्ली॰) ३ ताम्र, तांबा। ४ मदनफल, मैनफल। ५ उदुम्बर फल, गूलर।

औदल (सं॰ पु॰) १ ऋषिविशेष। यह चिकित्सादि छह प्रकारके ऋषियोंमें एक रहे। २ सामविशेष।

औदवापि (सं॰ पु॰ स्त्री॰) उदवापस्यापत्यम्, उदवाप-इञ्। उदवापके पुत्रादि, उदवापकी औलाद।

औदवापीय (सं॰ त्रि॰) औदवापेरिदम्, छ। औदवापि-सम्बन्धीय।

औदवाहि (सं॰ पु॰) उदवाहस्यापत्यम्, उदवाह-इञ्। १ ऋग्वेदियोंके तर्पणीय एक ऋषि। २ उदवाहके पुत्रादि।

औदश्वित (सं॰ क्ली॰) उद-श्वित्-अण्। उदश्वितोऽन्यतरस्याम्। पा ४।२।१९। १ अर्ध जलयुक्त घोल, आधा पानी मिला मट्ठा। (त्रि॰) २ घोल-निर्मित, जो मट्ठेमें बनाया गया हो।

औदश्वित्क (सं॰ क्ली॰) उदश्वित्-ठक्, ठस्य कः। इसुसुक्तान्तात् कः। पा ७।३।५१। अर्ध जलमिश्रित घोल, आधा पानी मिला मेठा-या छाछ।

औदस (हिं॰ पु॰) अपयश, बदनामी।

औदसा (हिं॰ स्त्री॰) दुर्भाग्य, आफत, तकलीफ।

औदस्थान (सं॰ त्रि॰) उदस्थाने शीलमस्य, ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। जलवासशील, पानीमें रहनेवाला।

औदात (हिं॰) अवदात देखो।

औदान (हिं॰) अवदान देखो।

औदार्य (सं॰ क्ली॰) उदारस्य भावः, उदार-ष्यञ्। १ उदारता, सखावत, वाजिब खर्चमें हाथ न रुकनेकी हालत। २ वाक्यका एक गुण, बातकी बड़ाई। वाक्यके अर्थ गौरवको औदार्य कहते हैं। ३ सात्त्विक नायकका एक गुण। शोभा, क्रान्ति, दीप्ति, माधुर्य, और धैर्य सात गुण नायकके स्वाभाविक हैं। निरन्तर विनीत भावका ही नाम औदार्य है। ४ वेदान्तोक्त एक मनोवृत्ति। मनोवृत्ति शान्त, घोर और मूढ़ त्रिविध होती है। फिर वैराग्य, क्षान्ति और औदार्यको घोर मनोवृत्ति कहते हैं। (पञ्चदशी)

औदासीन्य (सं॰ क्ली॰) उदासीनस्य भावः, उदासीन-ष्यञ्। १ उदासीनता, लापरवाई। विपद् और सम्पद्से उपेक्षा रखनेका नाम औदासीन्य है। २ अनुरागकी निवृत्ति, शौककी अदममौजूदगी।

औदास्य (सं॰ क्ली॰) उदासस्य भावः, उदास-ष्यञ्। १ वैराग्य, जगका मसला। २ अनुरागादि शून्यता, खुशी वगैरहकी अदम-मौजूदगी। ३ असमयोग, लापरवाई। ४ उपेक्षा, अदम-तवज्जुही।

औदीच्य—गुजराती ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। औदीच्य ११ प्रकारके होते हैं—१ सिद्धपुरी, २ सिहोरी, ३ तोलकी, ४ कुनबिया, ५ मोचिया, ६ दरजिया, ७ गन्धर्वी,

८ कोलिया, ९ माड़वारी, १० कच्छी और ११ राग-दिया। इनमें अनेक पौरोहित्य करते हैं। जो औदीच्य नीच जातिके पुरोहित होते, उनके हाथका जल पर्यन्त मध्यास्त लोग नहीं पीते। यह कच्छ, गुजरात और खम्बात उपसागरके उपकूलमें रहते हैं। औदीच्य आवश्यकता पड़नेपर सकल प्रकारका कार्य करने लगते हैं। इनमें पहली तीन शाखा ही जातिके अंशमें श्रेष्ठ हैं। क्योंकि यह नीच जातिका यजन नहीं करतीं। औदीच्योंमें शाखाके भेदसे परस्पर विवाहादि अप्रचलित है।

औदुम्बर (सं॰ त्रि॰) उदुम्बर-अण्। प्राग्दिशोऽण्। पा ४।३।१३४। यज्ञडुम्बुर-सम्बन्धीय, गूलरका बना हुआ। २ ताम्रसम्बन्धीय, जो तांबेका हो। (पु॰) उदुम्बरस्य विकारः, उदुम्बर-अण्। ३ उदुम्बर-पात्र, गूलरका बरतन। ४ उलूखल, ओखली। उदुम्बराः सन्त्यस्मिन् देशे। तदस्मिन्नस्तीति देशे तन्नाम्नि। पा ४।२।६७। ५ उदुम्बरयुक्त देश, गूलरका मुल्क। (भारत, सभा ५१।१२) वराहमिहिरकी वर्णनासे अनुमान होता, कि औदुम्बर देश पञ्जाबमें था। फिर किसीके मतमें पञ्जाबके कांगड़ा ज़िलेकी नूरपुर तहसीलका प्राचीन नाम दहम्बरी वा औदुम्बर रहा। (Cunningham's Archaeological Survey of India, Vol. XIV. p. 116)

पूर्वकालपर भारतवर्षमें औदुम्बर नामका दूसरा भी जनपद था। पाश्चात्य भौगोलिक पेरिप्लास् इस स्थानका नाम मोम्बरस् (Mombaros) लिख गये हैं। इस जनपदका रहना वर्तमान कच्छ देशमें अनुमान किया जाता है। ६ यमकी एक मूर्ति। ७ उदुम्बरऋषिकी शाखा। (क्लो॰) ८ यज्ञडुम्बुरकाष्ठ, गूलरकी लकड़ी। ९ यज्ञडुम्बुरफल, खानेका गूलर। १० एक महाकुष्ठ। कुष्ठ देखो। ११ ताम्र, तांबा।

औदुम्बरक (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्य विषयो देशः, उदुम्बर-वुञ्। १ उदुम्बरविषय देश, उदुम्बरोंके रहनेका मुल्क। (क्लो॰) उदुम्बराणां समूहः। उदुम्बरसमूह।

औदुम्बरच्छद (सं॰ पु॰) दन्तोत्पल, दांतोंका पेड़।

औदुम्बरार्य—व्रतनिर्णय नामक संस्कृत ग्रन्थके रचयिता।

औदुम्बरायण (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्य अपत्यं पुमान्, उदुम्बर-फक्। १ उदुम्बरवंशीय। २ किसी वैयाकरणका नाम।

औदुम्बरि (सं॰ पु॰) उदुम्बरस्यापत्यं पुमान्, उदुम्बर-इञ्। १ उदुम्बरवंशीय। २ उदुम्बरोंके एक राजा।

औदुम्बरी (सं॰ स्त्री॰) उदुम्बर-अण्-ङीप्। १ उदुम्बर-शाखा, गूलरकी डाल। २ कृमिभेद, एक कीड़ा।

औद्गात्र (सं॰ क्लो॰) उद्गातुर्धर्म्यम्, उद्गातृ-अञ्। १ उद्गाता नामक ऋत्विक्का कर्म। (त्रि॰) २ उद्गातासम्बन्धीय।

औद्गाहमानि (सं॰ पु॰) उद्गाहमानस्य अपत्यं पुमान्, उद्गाहमान-इञ्। उद्गाहमान-वंशीय।

औद्ग्रभण (सं॰ त्रि॰) उद्ग्रहणाय साधुः, उद्ग्रहण-अण् छान्दसत्वात् हस्य भः। १ ऊर्ध्वग्रहणके उपयुक्त, दीक्षामें ज़ोरसे पढ़नेके योग्य। (क्लो॰) २ दीक्षामें उच्चःस्वरसे पढ़ा जानेवाला मन्त्र वा वाक्य।

औद्दण्डक (सं॰ त्रि॰) उद्दण्ड-वुञ्। उद्दण्डका निकटवर्ती (देशादि)।

औद्दान, औद्दालक देखो।

औद्दालक (सं॰ क्लो॰) उद्दालेन सञ्चितम्, उद्दाल-अण् संज्ञायां कन्। १ वल्मीककीटसञ्चित मधु, दीमकका इकट्ठा किया हुआ शहद। वल्मीकमध्यस्थ कपिलवर्ण कीट अल्प कपिलवर्ण जो मधु सञ्चय करते, उसे औद्दालक मधु कहते हैं। यह कषाय, उष्ण, कटु और कुष्ठरोग-विनाशक होता है। (भावप्रकाश) २ तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेपर सर्वपापसे मुक्तिलाभ होता है।

औद्दालकशर्करा (सं॰ स्त्री॰) औद्दालक-मधुकृत शर्करा, दीमकके शहदकी चीनी। यह कुष्ठादि दोषोंको दूर करती और सर्वसिद्धि देती है। (राजनिघण्टु)

औद्दालकायन (सं॰ पु॰) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्, उद्दालक-फक्। उद्दालक ऋषि-वंशीय।

औद्दालकि (सं॰ पु॰) उद्दालकस्यापत्यं पुमान्, उद्दालक-फक्। उद्दालकपुत्र, गौतम ऋषि।

औद्देशिक (सं॰ त्रि॰) उद्देशस्य इदम्, उद्देश-ठण्। १ उद्देश-सम्बन्धीय, ज़ाहिर करनेवाला। २ निर्देश करनेवाला, जो हिसाब बताता हो।

औद्धत्य (सं० क्ली०) उद्धतस्य भावः, उद्धत-ष्यञ्। अविनीत भाव, उद्धता, गुस्ताखी, अक्खड़पन।

औद्धारिक (सं० त्रि०) उद्धाराय प्रभवति, उद्धार-ठञ्। १ उद्धारके लिये दिया जानेवाला, मौरूस होनेके काबिल, जो हिस्से से सरोकार रखता हो।

"विभक्तौद्धारिकं दैयमैकांशय प्रधानतः।" (मनु ९।११०)

औद्धर्ष्य (सं० क्ली०) हर्षयुक्त उत्तेजना, खुशीसे भरा हुआ जोश।

औद्धारि (सं० पु०) उद्धारस्य ऋषेरपत्यम्, इञ्। उद्धार ऋषिके पुत्र, खण्डिक।

औद्भिज्ज (सं० क्ली०) उद्-भिद्-जन-ड स्वार्थे अण्। १पांशु-लवण, शोरा। २शाकम्भरि लवण, सांभर नोन। औद्भिद देखो।

औद्भिद (सं० क्ली०) उद्भिद स्वार्थे अण्। १ पांशु-लवण, शोरा। २ शाकम्भरिलवण, सांभर नमक। यह लवण स्वयं ही भूमिसे उत्पन्न अर्थात् खनिज होता है। औद्भिदलवण लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, वमनकारक, वायुका अनुलोमक, तिक्त, कटु एवं कोष्ठबद्धता, आनाह और शूलनाशक है। ३ जलविशेष, झरनेका पानी। निम्नभूमिसे ऊपरको उत्थित अर्थात् जलाशयस्थ जलको औद्भिद कहते हैं। यह मधुर, पित्तनाशक और अविदाही होता है। सुश्रुतने वर्षाकालमें वृष्टिके जलका अभाव पड़नेसे इसका व्यवहार विहित बताया है। ४ वृक्षादिजात द्रव्य, पेड़ वगैरहसे पैदा होने-वाली चीज। वृक्षादिसे उत्पन्न होनेवाले मूल, वल्कल, काष्ठ, निर्यास, डंठल, रस, पल्लव, क्षार, क्षीर, फल, पुष्प, भस्म, तैल, कण्टक, पत्र, कन्द और अङ्कुरका नाम औद्भिद है। वैद्यकमें उक्त सकल द्रव्यके ग्रहणका विधि विद्यमान है। (चरक)

(त्रि०) ५ निर्गमशील, निकलनेवाला। ६ विजयी, राह निकालनेवाला।

औद्भिदजल (सं० क्ली०) १ उद्भिदजात जल, पेड़से निकलनेवाला पानी। २ प्रस्रवसलिल, पहाड़से झरनेवाला पानी। निम्नभूमिकी फोड़ धारावाहिक रूपसे बहनेवाला जल औद्भिद कहलाता है। यह पित्तघ्न, अविदाही, अतिशीतल, प्रीणन, मधुर, बल्य, ईषत्वातकर और लघु होता है। (भावप्रकाश)

औद्भिदद्रव्य (सं० क्ली०) पृथिवीको फोड़ उत्पन्न होनेवाला पदार्थ, जो चीज जमीनको फोड़ कर पैदा हो। वनस्पति, लता आदिको औद्भिदद्रव्य कहते हैं।

औद्भिद्य (सं० क्ली०) उद्भिदो भावः, उद्भिद-ष्यञ्। १ वृक्षादिकी उत्पत्ति, पेड़ वगैरहकी पैदायश। २ जिष्णुता, फतेहमन्दी, जीतकी राह निकालनेका काम।

औद्याव (सं० त्रि०) उद्यावस्य व्याख्यानो ग्रन्थः उद्यावे भवो वा, उद्याव-अण्। १ उद्यावकी व्याख्या करनेवाला, जो मेलका बयान करता हो। २ उद्याव-जात, जोड़से पैदा।

औद्योगिक (सं० त्रि०) चेष्टा सम्बन्धीय, कोशिशके मुताबिक, जो उद्योगसे सम्बन्ध रखता हो।

औद्वाहिक (सं० क्ली०) उद्वाहकाले लब्धम्, उद्वाह-ठञ्। १ विवाहमें प्राप्त धन, शादीमें औरतको मिलनेवाली दौलत। इस धनमें ज्ञातिगणका अंश नहीं रहता। पितृधनकी क्षति न पहुंचा जो स्वयं कमाया अथवा मित्रसे या उद्वाहकालमें पाया जाता, उसमें ज्ञातिगणका अंश नहीं आता।

"पितृद्रव्याविनाशेन यदन्यत् स्वयमर्जयेत्।
मैत्रमौद्वाहिकञ्चैव दायादानां न तद्भवेत्॥" (याज्ञवल्क्य)

औध (हिं० पु०) १ अवध, अयोध्याके इधर-उधर या मुल्क। अवध देखो। (स्त्री०) २ अवधि, बंधा हुआ वक्त।

औधमोहरा (हिं० पु०) मस्तक उन्नतकर गमनशील हस्ती, जो हाथी सर उठा कर चलता हो।

औधस (सं० त्रि०) ऊधस-इदम्, ऊधस्-अण्। १ ऊधस्-सम्बन्धीय, चौपायेके बाखसे सरोकार रखनेवाला। (क्ली०) २ पशुदुग्ध, चौपायेका दूध।

औधस्य (सं० क्ली०) ऊधसि भवम्, ऊधस-ष्यञ्। पशुदुग्ध, चौपायेका दूध।

औधि (हिं०) अवधि देखो।

औधिया (हिं० पु०) तस्कर, चोर।

औनत (हिं०) अवनत और अवनति देखो।

औनापौना (हिं० वि०) १ प्रायः तीन अंशयुक्त, कोई तीन हिस्से रखनेवाला। (क्रि० वि०) २ तीन अंश-पर, तीन हिस्सेमें, कुछ कम, नुकसान उठाकर।

औनीत (सं० क्ली०) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। गुरुभोजन, अभिष्यन्दि ग्रासग्रहण और अश्वीसेवा-वर्जनसे स्वस्थान-च्युत शुक्र मेहनमें मारा जाता है। इससे मूत्रकृच्छ्र उपजता है। फिर कुपित शोणित मेहनमें शून उठाता है। मेहन क्लिन्न, पक्व, कण्डूवत् पिड़कायुक्त तथा मक्षिकावृत रहता और अपने स्थानमें प्रवेश नहीं करता। (जयदत्त)

औन्दूबर (सं० क्ली०) ताम्र, तांबा।

औन्नत्य (सं० क्ली०) उन्नतस्य भावः, उन्नत-ष्यञ्। १ उन्नति, तरक्की। २ उच्चता, ऊंचाई।

औन्नेत्र (सं० क्ली०) उन्नेतुः कर्म भावो वा, उन्नेतृ-अण्। १ उन्नयन, उत्तोलन, उन्नेताका कार्य, उठाव, चढ़ाव। २ उन्नेतृत्व।

औपकर्णिक (सं० त्रि०) उपकर्णे भवः, उपकर्ण-ठक्। कर्णके समीप उत्पन्न, कानके पास रहनेवाला।

औपकलाप्य (सं० त्रि०) उपकलापे भवम्, उपकलाप-ञ्य। कलाप-समीपवर्ती, कमरके करीब रहनेवाला, जो घेरेके पास हो।

औपकायन (सं० पु०) उपकस्यापत्यं पुमान्, उपक-फक्। उपकवंशीय, उपकका लड़का वगैरह।

औपकार्य (सं० क्ली०) १ गृह, मकान्। २ पटमण्डप, डेरा, रावटी।

औपकुर्वाणक (सं० त्रि०) उपकुर्वाण-सम्बन्धीय, ब्रह्मचर्याश्रमसे गृहस्थाश्रममें जानेवाले ब्राह्मणके मुताल्लिक।

औपकूलिक (सं० त्रि०) उपकूलस्य इदम्, उपकूल-ठक्। उपकूल-सम्बन्धीय, साहिलके मुताल्लिक, किनारेसे सरोकार रखनेवाला।

औपक्रमिकनिर्जरा (सं० स्त्री०) जैनशास्त्रानुसार निर्जरा-भेद। जैन दो निर्जरा या कर्मक्षय मानते हैं। औपक्रमिक निर्जरामें तपस्याके प्रभावसे कर्मको उठा क्षय कराते हैं।

औपगव (सं० पु०) उपगोरपत्यं पुमान् उपगोरिदं वा, उपगु-अण्। १ उपगुका पुत्र, उपगुवंशीय। २ उपगु-सम्बन्धीय, उपगुसे सरोकार रखनेवाला।

उपगु गोप जातिका नामान्तर है। लक्षणाशक्ति द्वारा उसके पुरोहितका भी अर्थ निकलता है। क्योंकि जो जिस वर्णका याजक होता, उसमें उसीका वर्णत्व आ जाता है।

"यं वर्णं याजयेद्यस्तु स तद्वर्णत्वमाप्नुयात्।" (स्मृति)

औपगवक (सं० पु०) उपगवानां समूहः, उपगव-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रेति। पा ४।२।३९। १ औपगव समूह, औपगवोंका मजमा। (त्रि०) २ औपगव-सम्बन्धीय। ३ औपगव-पूजक।

औपगवि (सं० पु०) उपगवस्य गोप्यतेरपत्यं पुमान्, उपगव-इञ्। १ गोप्यतिपुत्र। २ बृहस्पतिकाल उद्धव।

औपग्रस्तिक (सं० पु०) उपग्रस्तं ग्रासकाले भूतः, ठञ्। ग्रहण, राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य, कुसूफ।

औपग्रहिक (सं० पु०) उपग्रह-ठञ्। राहुग्रस्त चन्द्र वा सूर्य।

औपचारिक (सं० पु०) १ उपचार, रसाई, पहुंच। (त्रि०) उपचारस्य इदम्, ठञ्। २ उपचार-सम्बन्धीय, रसाईके मुताल्लिक। ३ साजदार, रंगीन, नकली।

औपच्छन्दसिक (सं० त्रि०) उपच्छन्दस्यामिर्हसम्, उपच्छन्दस्-ठक्। १ प्रियवाक्य द्वारा निष्पन्न, मीठी बातसे निकला हुआ। (क्ली०) २ मात्रावृत्तविशेष।

"षड् विषमेऽष्टौ समे कलास्ताश्च समे स्युर्नो निरन्तराः।
न समात्र पराश्रिता कला वैतालीयेऽन्ते रलौ गुरुः॥
पर्यन्ते यौ तथैव शेषमौपच्छन्दसिकं सुधीभिरुक्तम्॥" (वृत्तरत्ना०)

विषम अर्थात् प्रथम एवं तृतीय पादमें ६ मात्रा और सम अर्थात् द्वितीय तथा चतुर्थ पादमें ८ मात्रा रहने और समस्त मात्रा केवल लघु वा केवल दीर्घ न लगने, अपच सम अर्थात् द्वितीय, चतुर्थ एवं षष्ठ मात्रा तृतीयादि मात्राके आश्रित न पड़ने और परिशेषको रगण (मध्यवर्ण लघु और उसके उभय पार्श्वस्थ दो गुरुवर्णविशिष्ट अक्षरत्रयका नाम रगण है), एक लघु और एक गुरु वर्ण जुड़नेसे वैतालीय छन्द होता है। फिर इस वैतालीयवाले प्रतिपादके शेष भागपर यगण (आद्यक्षर लघु और परवर्ती अक्षरद्वय गुरु होनेसे यगण कहाता है) और रगण रहनेसे

औपच्छन्दसिक छन्द बनता है। ३ पुष्पिताग्रा नामक छन्द। पुष्पिताग्रा देखो।

"पुष्पिताग्राभिधं केचिदौपच्छन्दसिकं विदुः।" (वृत्तरत्नाकर)

औपजानुक (सं० त्रि०) उपजानु जानुसमीपे भवः, उपजानु-ठक्। जानुका समीपवर्ती, घुटनेके पास या ऊपर रहनेवाला।

औपतस्विनि (सं० पु०) उपतस्विनस्यापत्यं पुमान्, उपतस्विन-इञ्। उपतस्विनके पुत्र, राम नामक एक ऋषि।

औपदेशिक (सं० त्रि०) उपदेशेन जीवति, उपदेश-ठञ्। वेतनादिभ्यो जीवति। पा ४।४।१२। १ उपदेशोपजीवी, नसीहतसे ज़िन्दगी बसर करनेवाला। २ उपदेशानुसार प्राप्त, नसीहतसे मिला हुआ।

औपद्रविक (सं० त्रि०) उपद्रवमधिकृत्य कृतः, उपद्रव-ठक्। उपद्रव-सम्बन्धीय,आघातसे सरोकार रखनेवाला।

"अथात औपद्रविकमध्यायं व्याख्यास्यामः।" (सुश्रुत)

औपद्रष्ट्य (सं० पु०) उपद्रष्ट स्वार्थे ष्यञ्। १ पुरुषमेध यज्ञीय देवविशेष। (क्ली०) २ साक्षी रहनेकी स्थिति, जिस हालतमें गवाह रहें। ३ निरीक्षण, देख-भाल।

औपधर्म्य (सं० त्रि०) उपधर्मस्य इदम्, उपधर्म-ष्यञ्। १ उपधर्म-सम्बन्धीय, दलबाद या कुफ्रके मुतालिक। (क्ली०) स्वार्थे ष्यञ्। २ उपधर्म, दलबाद, कुफ्र। ३ गौण धर्म, हलकी नेकी।

औपधिक (सं० त्रि०) छली, धोकाबाज़।

औपधेनव (सं० पु०) उपधेनोरपत्यं पुमान्, उपधेनु-अण्। धन्वन्तरिके शिष्य एक ऋषि।

औपधेय (सं० त्रि) उपधि स्वार्थे ढञ्। पदिरपधि-भ्यश्च।' पा ४।१।११। १ रथका एक अवयव, गाड़ीका पहिया। (त्रि०) २ रथके अवयव विशेषका कार्य देनेवाला, जो गाड़ीके पहियेमें किसी हिस्से पर लगता हो।

औपनायनिक (सं० त्रि०) उपनयनं प्रयोजनमस्य, उपनयन-ठञ् द्विपदवृधिश्च अथवा उपनयन-ठक्। १ उपनयनके प्रयोजनीय, जनेऊमें लगनेवाला। उपनयनाय हितम्। २ उपनयनसाधक, जनेऊसे सरोकार रखनेवाला।

औपनासिक (सं० त्रि०) उपनासे भवः, उपनास-ठञ्। नासिकाके समीप उत्पन्न, नाकके पास निकलनेवाला।

औपनिधिक (सं० क्ली०) उपनिधि स्वार्थे ठञ्। १ अपरके निकट अप्रकाशित भावसे रखा जानेवाला द्रव्य, धरोहर। २ भोग करनेको प्रीतिपूर्वक दिया जानेवाला द्रव्य, काममें लानेके लिये प्यारसे दी जानेवाली चीज़। (त्रि०) ३ उपनिधि-सम्बन्धीय, धरोहरसे सरोकार रखनेवाला।

औपनिषत्क (सं० त्रि०) उपनिषदा जीवति, उपनिषद्-ठक्। उपनिषदुक्त उपदेशके अनुसार जीविका निर्वाह करनेवाला।

औपनिषद (सं० पु०) उपनिषद्-अण्। १ उपनिषद् मात्रका वेद्य परमात्मा। २ उपनिषद्के उपदेशानुसार आचरण करनेवाला। (त्रि०) ३ ब्रह्म-प्रतिपादक। ४ उपनिषद् द्वारा प्रतिपादित। ५ उपनिषद्की व्याख्या करनेवाला।

औपनिषदिक, औपनिषद देखो।

औपनीविक (सं० त्रि०) उपनीवि नीविसमीपे भवः, उपनीवि-ठक्। नीविका समीपवर्ती, नारेके पास रहनेवाला, जो कमरके नज़दीक पड़ता हो।

औपन्यासिक (सं० त्रि०) १ उपन्यास-सम्बन्धीय, बनावटी क़िस्सेसे सरोकार रखनेवाला। २ उपन्यासके योग्य, जो बनावटी क़िस्सेमें लिखनेके लायक़ हो। ३ विलक्षण, अनोखा।

औपपक्ष्य (सं० त्रि०) उपपक्षस्य इदम्, उपपक्ष-ष्यञ्। बाहुमूल सम्बन्धीय, बग़ली, जो कांखमें रहता हो।

औपपत्तिक (सं० त्रि०) उपपत्त्या कृतम्, उपपत्ति-ठक्। युक्तियुक्त, हाज़िर, मतलब निकाल देनेवाला। लिङ्गशरीरको औपपत्तिक कहते हैं।

औपपातिक (सं० त्रि०) उपपातेन संसृष्टः उपपात-ठक्। गोवधादि उपपातकमें लिप्त, जो काई हलका गुनाह कर चुका हो। (क्ली०) २ किसी जैन उपाङ्गका नाम। जैन देखो।

औपपादुक (सं० त्रि०) उपपादुकस्य इदम्, उपपादुक-ठक्। १ देवदेह-सम्बन्धीय। २ नारकिदेह-सम्बन्धीय। ३ अपने आप उत्पन्न किया हुआ, जो खुद-बखुद निकाला गया हो।

औपबाहवि (सं० पु०) उपबाहोरपत्यं पुमान्, उपबाहु-इञ्। उपबाहु वंशीय, उपबाहुके खान्दानमें पैदा होनेवाला।

औपभृत (सं० त्रि०) उपभृता पात्रेण सञ्चितः, उपभृत्-अण्। १ अश्वत्थ काष्ठके यज्ञपात्रमें सञ्चित, पीपलकी लकड़ीके चमचमें इकट्ठा किया हुआ। २ उपभृत्-सम्बन्धीय।

औपमन्यव (सं० पु०) उपमन्योरपत्यं पुमान्, उपमन्यु-अञ्। १ उपमन्युके पुत्र। २ महाशाल जाबालका एक नाम। ३ प्राचीन-शाल। ४ एक प्राचीन वैयाकरण। यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है।

औपमिक (सं० त्रि० उपमया निर्दिष्टः, उपमा-ठक्। उपमा द्वारा निर्दिष्ट, मिसालका काम देनेवाला।

औपम्य (सं० क्ली०) उपमा एव. स्वार्थे ष्यञ्। सादृश्य, बराबरी। इसका संस्कृत पर्याय अनुकार, अनुहार, साम्य, तुला, उपमा, कक्ष और उपमान है। एकसे दूसरेके सादृश्यका प्रकाशन औपम्य कहाता है। (चरक)

औपयज्ञ (सं० त्रि०) उपयज्ञ इदम्, उपयज्ञ-अण्। यज्ञयज्ञ-सम्बन्धीय।

औपयिक (सं० त्रि०) उपायेन लब्धः, उपाय-ठक् ह्रस्वश्च। १ न्याय्य, वाजिब। २ उपयुक्त, दुरुस्त, ठीक। (क्ली०) स्वार्थे-ठक्। ३ उपाय, तदबीर। "प्रियमौपयिकं गरीयसीम्।" (भारवि ११४)

औपयोगिक (सं० त्रि०) उपयोगः प्रयोजनमस्य, उपयोग-ठञ्। उपयोग-सम्बन्धीय, लगानेसे सरोकार रखनेवाला।

औपर (सं० त्रि०) दण्डवंशीय, दण्डके घरानेमें पैदा होनेवाला।

औपराजिक (सं० त्रि०) उपराज-ठञ्। काश्यादिभ्यष्ठञ्ञिठौ। पा ४।२।११६। उपराज-सम्बन्धीय, बादशाहको जगह काम करनेवालेके मुताल्लिक।

औपराधय्य (सं० क्ली०) उपराधस्य कर्म भावो वा, उपराधय्-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।१२४। उपसेवकता, नौकरी-चाकरी।

औपरिष्ट (सं० त्रि०) उपरिष्टात् भवः उपरिष्ट-अण्। ऊपरसे उत्पन्न, जो ऊपर हो।

औपरिष्टक (सं० क्ली०) कामसूत्रका एक अंश। इस शृङ्गारप्रिय ग्रन्थको वात्स्यायनने लिखा था।

औपरेधिक (सं० पु०) उपरेधः प्रयोजनमस्य, उपरेध-ठक्। पीलुदण्ड, पीलूका डंडा।

औपरोधिक (सं० पु०) उपरोधः प्रयोजनमस्य, उपरोध-ठक्। १ पीलुदण्ड, पीलूकी लकड़ीका सोंटा। (त्रि०) २ उपरोध-सम्बन्धीय, रोक टोकसे सरोकार रखनेवाला। ३ कृपासे होनेवाला, मेहरबानीके मुताल्लिक।

औपल (सं० त्रि०) उपलादागतः, उपल-अण्। शण्डिकादिभ्योऽण्। पा ४।३।९२। १ उपलसे आगत, पत्थरसे उगाला या बटोरा हुआ। २ प्रस्तर-सम्बन्धीय, पथरीला।

औपवसथिक (सं० त्रि०) उपवसथे भवः, उपवसथ-ठञ्। १ उपवसथ-सम्बन्धीय, उपवसथमें किया जानेवाला। उपवसथ देखो। (क्ली०) २ सामवेदका परिशिष्टविशेष।

औपवसथ्य (सं० त्रि०) उपवसथे भवः, उपवसथ-ष्यञ्। १ उपवसथमें कर्तव्य। २ उपवसथ-सम्बन्धीय।

औपवस्त (सं० क्ली०) उपवास, लङ्घन, फाका, न खानेकी हालत।

औपवस्त्र (सं० क्ली०) उपवस्त्र-अण्। १ उपवास, फाका। २ उपवासके उपयुक्त खाद्य, फाकेमें खाने लायक चीज।

औपवस्त्रक (सं० क्ली०) उपवासके उपयुक्त आहार, फाकेमें खाने लायक चीज।

औपवास (सं० त्रि०) उपवासे दीयते, उपवास-अण्। व्युष्टादिभ्योऽण्। पा ५।१।९७। १ उपवासके व्रतमें देय, जो फाकेमें देने लायक हो। उपवासस्य इदम्। २ उपवास-सम्बन्धीय, फाकेके मुताल्लिक।

औपवासिक (सं० त्रि०) उपवासे साधुः, उपवास-ठञ्। गुडादिभ्यष्ठञ्। पा ४।४।१०३। उपवासके उपयोगी,

फाकेके लायक। उपवासाय प्रभवति। २ उपवास-समर्थ, फाका कर सकनेवाला।

औपवास्य (सं० क्ली०) उपवास स्वार्थे ष्यञ्। उपवास, फाका। (रामायण २।८७ प:)

औपवाह्य (सं० पु०) उपवाह्य स्वार्थे अण्। १ उपवाहन, रथादि, सवारी, गाड़ी वग़ैरह। (त्रि०) २ सवारीके लिये खींचा हुआ। ३ सवारीके लिये चलाया हुआ।

औपविन्दवि (सं० पु०) उपविन्दोरपत्यं पुमान्, उपविन्दु-इञ्। उपविन्दुपुत्र, उपविन्दु नामक ऋषिके लड़के।

औपवेशि (सं० त्रि०) उपवेशके गोत्रापत्य।

औपवेशिक (सं० त्रि०) उपवेशेन जीवति, उपवेश-ठञ्। वेशके द्वारा जीविका निर्वाह करनेवाला, बहुरुपिया।

औपशमिक (सं० त्रि०) उपशमक, ठण्डा कर देनेवाला।

औपशिवि (सं० पु०) १ उपशिवके गोत्रापत्य।

औपश्लेषिक (सं० त्रि०) उपश्लेषेण निवृत्तः, उपश्लेष-ठक्। उपश्लेष-सम्बन्धीय, लगावके मुताल्लिक, मैत्री। सिद्धान्तकौमुदीमें त्रिविध आधार लिखा है,—औपश्लेषिक, वैषयिक और अभिव्यापक।

औपसंक्रमण (सं० त्रि०) उपसंक्रमणे दीयते, उपसंक्रमण-अण्। उपसंक्रमणमें देने या कर लेने योग्य। उपसंक्रमण देखो।

उपसंख्यानिक (सं० त्रि०) उपसंख्यानस्य इदम्, उपसंख्यान-ठञ्। १ उपसंख्यान-सम्बन्धीय, एक ढंगमें कहा हुआ। २ परिशिष्ट, तरमीमी।

औपसद (सं० पु०) उपसत् शब्दोऽस्त्यस्मिन् उपसद-अण्। विमुक्तादिभ्योऽण्। पा ५।२।६१। १ उपसद् शब्द-युक्त अध्याय या अनुवाक। उपसद् समीप स्थानं तत् अस्यास्ति। २ द्वन्द्व, जोड़ा। ३ एकाह यज्ञविशेष।

औपसर्गिक (सं० पु०) उपसर्ग-ठक्। १ सन्निपातज रोग, सरसाम की बीमारी। वैद्यक मतमें कफ अनुलोम वायु और पित्तसे मिल रोगोत्पादन करता है। उस समय रोगीके स्वेद चलता और शीतलताका वेग बढ़ता है। फिर वायु प्रतिलोम पड़नेसे कुछ स्वास्थ्य भी बोध होता है। इसीका नाम औपसर्गिक या सन्निपातज रोग है। सुश्रुतके कथनानुसार पूर्वोत्पन्न व्याधिके निदानादि द्वारा जो अपर रोग साथमें लग जाता, वही औपसर्गिक कहाता है। यह रोग उपद्रवसे उठता है।

"औपसर्गिकरोगश्च संक्रामन्ति नरान्नरम्।" (माधवनिदान टीका)

२ पापरोगादि। ३ भूतादिके आवेशसे उत्पन्न रोग। (त्रि०) ४ उपसर्ग-सम्बन्धीय, मुकद्दम। ५ विपद्का सामना कर सकनेवाला, जो आफत झेल सकता हो। ६ परिवर्तन-सम्बन्धीय, तबद्दुलके मुताल्लिक। ७ साथ लगा हुआ। ८ अद्भुत, अजीब।

औपसीर्य (सं० त्रि०) उपसीराद्भवः, उपसीर-ञ्य। गम्भीराञ्ञ्यः। पा ४।३।५८। १ लाङ्गलोत्पन्न, हलसे निकला हुआ। २ लाङ्गलके निकटस्थ, हलके पास रहनेवाला।

औपस्थान (सं० त्रि०) उपस्थानं शीलमस्य, उपस्थान-ण। छत्रादिभ्यो णः। पा ४।४।६२। उपस्थानशील, उपासक, हाज़िरबाश, खिदमतगार।

औपस्थानिक (सं० त्रि०) उपस्थानेन जीवति, उपस्थान-ठक्। सेवाव्यवसायी, खिदमतगारीसे ज़िन्दगी बसर करनेवाला।

औपस्थिक (सं० त्रि०) उपस्थेन जीवति, उपस्थ-ठञ्। जारकर्मजीवी, ज़िनासे ज़िन्दगी बसर करनेवाला।

औपस्थिका (सं० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

औपस्नुह्य (सं० त्रि०) स्नुहाका समीपवर्ती, सिहूण्डके नज़दीक रहनेवाला।

औपस्थ्य (सं० क्ली०) उपस्थादिदम्, उपस्थ-ष्यञ्। जननेन्द्रियजन्य सुखादि, ज़िनाकारीका मज़ा।

औपहारिक (सं० त्रि०) उपहाराय साधुः, उपहार-ठक्। १ उपहारके उपयोगी, नज़रके क़ाबिल, जो भेंट करने लायक़ हो। (क्ली०) २ उपहार, भेंट।

औपाधिक (सं० त्रि०) उपाधि-ठञ्। १ उपाधिकृत, शरती। २ उपाधि-सम्बन्धीय, निसबती।

औपाध्यायक (सं० त्रि०) उपाध्यायादागतः, उपाध्याय-वुञ्। विद्यायोनिसम्बन्धेभ्यो वुञ्। पा ४।३।७७। उपाध्यायसे लाभ किया जानेवाला, जो उस्तादसे हासिल हो।

औपानह्य (सं० पु०) उपानाह-अञ्। १ मुञ्ज, मूंज। २ चर्म, चमड़ा। (वि०) ३ जूता बनानेके काममें लगनेवाला। ४ बांधा जानेवाला।

औपायिक (सं० त्रि०) उपायेन जातः, उपाय-ठक्। १ न्याय्य, वाजिब। २ उपयुक्त, ठीक।

औपावि (सं० पु०) उपावस्यापत्यं पुमान्। १ उपाव ऋषिके पुत्र। २ जानश्रुतेयके वंशज।

औपासन (सं० त्रि०) उपासना विवाहाग्निः तत्र भवः, उपासन-अण्। १ विवाहाग्नि-सम्बन्धीय। २ उपासना-सम्बन्धीय, परस्तिशके मुताल्लिक। ३ विवाहाग्नि। ४ विवाहाग्निमें नैत्यिक कर्तव्य होमादि। यह होम प्रत्यह प्रातः एवं सन्ध्याकालको करना पड़ता है। प्रथम सायंकालको ही आरम्भ करना उचित है। आरम्भ-रात्रिको ८ घटिका अतीत हो जानेसे उस रात्रि को आरम्भ न कर दूसरी रात्रिको आरम्भ करते हैं। होमारम्भसे पहले ही विवाहाग्नि बुझ जानेपर विधानानुसार स्थालीपाक कर आरम्भ करना पड़ता है। प्रातःकालको सूर्योदयसे पूर्व एवं चन्द्र उदित रहते रहते होम कर्तव्य है। श्रुतिके वचनानुसार होमका मुख्य काल सवेरे सूर्यमूर्ति भूमिसे एक हाथ उत्थित न मालूम पड़ने और रात्रिको प्रदोषकाल चलने तक रहता है। इस होमके अकरण-सम्बन्धमें गर्गने कहा है—दारपरिग्रह करने बाद क्षणकाल मात्र भी अग्निको छोड़ना न चाहिये। क्योंकि अग्नि विना अवस्थान करनेसे पतित होना पड़ता है। स्नान, सन्ध्या, वेदाध्ययन प्रभृतिकी भांति उपासना भी अवश्य कर्तव्य है। जो व्यक्ति विवाहाग्नि छोड अपनेको गृहस्थ समझता, उसका अन्न खानेसे प्रायश्चित्त करना पड़ता है।

औपीन (सं० क्ली०) उप्यहित, बोने लायक खेत।

औपोदिति (सं० पु०) उपोदितस्यापत्यं पुमान्, उपोदित-इञ्। उपोदित ऋषिके पुत्र।

औम् (सं० अव्य०) ओम् देखो।

औम (सं० त्रि०) औमक देखो। (हिं०) अवम देखो।

औमक (सं० क्ली०) उमाया विकारः, उमा-वुञ्। उमोर्णयोर्वा। पा ४।३।१५८। १ शणका विकार, सन की चीज़। (त्रि०) २ क्षौम, सनीला।

औमायन (सं० क्ली०) उमाया निमित्तं संयोगः उत्पातो वा, उमा-फञ्। १ शणका संयोग। २ शणसे उठनेवाला उत्पात।

औमिक, औमक देखो।

औमीन (सं० क्ली०) उमानां भवनं क्षेत्रं वा, उमा-खञ्। विभाषातिलमाषोमेति। पा ५।२।४। १ अतसीपूर्ण गृह, सनसे भरा हुआ घर। २ अतसीक्षेत्र, सनका खेत।

और (हिं० वि०) १ अन्य, दूसरा। २ केवल, सिर्फ। "दुनया है और मतलब।" (लोकोक्ति) ३ अधिक, ज्यादा। "सौतपर सौत और जलाया।" (लोकोक्ति) (पु०) ४ अन्य व्यक्ति, दूसरा शख्स। "तुमे और न तुमे ठौर।" (लोकोक्ति) (अव्य०) ५ वा, औ, अरु, औ। ६ किन्तु, लेकिन, इसपर भी।

औरग (सं० क्ली०) उरगस्य इदम्,उरग-अण्। १ अश्लेषा-नक्षत्र। (त्रि०) सर्पसम्बन्धीय, सांपके मुताल्लिक।

औरंग—बम्बईप्रान्तके सूरत ज़िलेकी एक नदी। यह धर्मपुर पर्वतसे निकल अम्बिकासे ८ मील दक्षिण समुद्रमें जा गिरती है। समुद्रसे ६ मील तक इस नदीमें ५० टनकी नावें चल सकती हैं। बलसारके पास पुल बंधा है।

औरङ्गजेब—दिल्लीके एक मुसलमान बादशाह। ये शाहजहांके तीसरे पुत्र और जहांगीरके पौत्र थे। इनकी माताका नाम सुलताना कुदसिया था। मुसलमानी १०२८ हिजरीके ११ ज़ेल्कद महीनेमें (१६१८ ई०के अक्तूबर महीनेमें) औरङ्गजेबका जन्म हुआ। पहले इनका नाम मुहम्मद था। लड़कपनमें ही असाधारण वीरत्व प्रकाश करनेके कारण प्रसन्न होकर शाहजहांने इनका नाम औरङ्गजेब अर्थात् सिंहासनका आभरण रख दिया। इसके सिवा इन्होंने स्वयं 'आलम-आकान्' उपाधि ग्रहण किया। इनके और भी दो नाम जनसमाजमें प्रसिद्ध हैं। एक नाम महीउद्दीन् अर्थात् धर्मका उद्धारकर्ता और दूसरा आलमगीर अर्थात् विश्वविजयी है। ये १६५८ ई०को बादशाह हुए।

छियालीस वर्ष राजत्व करनेके बाद ८८ वर्षकी उम्रमें १७०७ ई०की फरवरी मास इन्होंने इहलोक परित्याग किया।

आज भी जिन औरङ्गजेबका नाम सुनकर मुसलमानोंका कलेजा कांप उठता और हिन्दुओंके नेत्रोंमें अश्रु चलने लगता, सैकड़ों वर्ष बीते उनका निस्पन्द प्रेतशरीर इल्लोराकी अधित्यकामें सो रहा है। शाहजहांके दुश्चरित्रके कारण सात वर्षकी उमरसे ही ये, इनके बड़े भाई दारा और शुजा और छोटे भाई मुराद अपने पितामह जहांगीरके पास कैद थे। यदि शाहजहां पुनर्वार अपने पिताके साथ असद्व्यवहार करते, तो इन लोगोंके प्राण कभी न बचते। जहांगीरके मृत्यु अनन्तर दश वर्षकी उम्रमें औरङ्गजेब पिताके निकट आगरे लौट आये।

१६११ ई०को बुंदेलोंके राजा जगत्सिंह और शाहजहांके साथ विरोध उठ खड़ा हुआ। उस समय औरङ्गजेबकी उम्र चौदह वर्षसे अधिक न थी। जिस खूनकी प्याससे भूखे सिंहकी तरह यह सर्वदा घूमते फिरते रहे, यहां तक, कि अपने भाइयोंको भी नहीं छोड़ा, उस दारुण पशुवृत्तिका सूत्रपात यहीं हुआ। औरङ्गजेब मालवेके सूबेदार नसरतके साथ बुंदेलखण्ड गये। एकादिक्रमसे दो वर्ष युद्ध हुआ। जगत्सिंहने देखा,—अब रक्षा नहीं,दिन दिन सैन्यक्षय हुआ जाता है। अन्तमें घोड़ेपर सवार हो कई अनुचरोंके साथ वे भागकर नर्मदाके उस पार किसी जङ्गलमें जा छिपे।

घोड़ेकी पीठपर वे लोग बहुत दूर निकल आये, न तो कुछ खाने और न सोने पाये थे; इसलिये घोड़ोंको पेड़ोंमें बांध सबके सब धूलमें लेट गये। नींद आ गई. उस वनमें चारो ओर असभ्य आदमी थे। ये झोपड़ेमें रहते, वनमें आखेट करते, पशुचर्म पहनते, वनके फलमूल और मद्य मांस खाते, राजभोग, राजैश्वर्य्य जानते न थे। वनमें घोड़ोंकी हिनहिनाहट सुनकर वे लोग देखने आये। आकर देखा,—पेड़ोंमें कई घोड़े बंधे हैं, उनकी पीठपर बेशकीमती जड़ाऊ जीन पड़े हैं और कई सुपुरुष भूमिपर सो रहे हैं। उनके सर्वाङ्ग भी मणिमाणिक्यसे लदे थे। नीच लोगोंके नीच प्रवृत्ति होती है। मनमें लोभ आया। लोभ ही पाप है। इन लोगोंने निद्रावस्थामें ही जगत्सिंह और उनके अनुचरोंको मार डाला, परन्तु पापका धन भोग न कर सके। औरङ्गजेब और नसरतने जाकर उन डाकुओंको वध किया। जगत्सिंहके खजानेमें सोना, चांदी, हीरा, मोती सब मिलाकर तीस लाख रुपयेकी सम्पत्ति थी। उस सम्पत्तिको ले जाकर औरङ्गजेबने पिताके पादपद्मपर रख दिया।

संसारमें विजयका डङ्का बजा। औरङ्गजेबके युद्धमें पदार्पण करते ही सौभाग्यलक्ष्मी पताका लेकर आगे आगे चलती थीं। उस समय उजबक और ईरानी प्रसिद्ध रण पण्डित थे। संग्राममें औरङ्गजेबने उन लोगोंको भी परास्त किया। पुत्रका असाधारण साहस और रणनैपुण्य देखकर शाहजहांके आह्लादकी सीमा न रही। परन्तु दारा ज्येष्ठपुत्र थे। ज्येष्ठपुत्र ही राज्यका अधिकारी होता है। अतएव औरङ्गजेब यह बात मनही मन समझते थे—सम्राट् दाराको अतिक्रम कर और किसीको राजपदपर अभिषिक्त न कर सकेंगे। इसके सिवा दारापर भी उनका आन्तरिक प्रेम था। इसलिये औरङ्गजेबने यही स्थिर किया, बिना विशेष कौशल किये राजसिंहासन मिलना कठिन है। इसीसे लड़कपनसे ही ये कपट धार्मिक बनते रहे। परन्तु दारासे इनका विद्वेष दिन दिन बढ़ने लगा। निकटका रहना अनुकूल होता है, इसलिये सामान्य बहाना पाकर ये पिताकी आज्ञासे दाक्षिणात्यके शासनकर्त्ता होकर चले गये। यहां गोलकुण्डा राज्यके सेनानायक मीरजुमला अपने स्वामीको परित्याग कर औरङ्गजेबसे आ मिले। उस समय हैदराबाद गोलकुण्डाके राजाके अधिकारमें था। मीरजुमलाको साथ लेकर औरङ्गजेबने हैदराबाद लूट लिया। शीघ्र ही गोलकुण्डा अधिकार करनेकी भी इच्छा थी, परन्तु इसबार इनकी चिरकालकी दुरभिसन्धिके पूर्ण होनेका अवसर न आया।

शाहजहां बीमार हुए। जीवन संकटापन्न हो गया। पीछे कहीं राज्यमें अनिष्ट न हो, इसलिये दारा सम्राट्का कार्य्य निर्वाह करने लगे।

शुजा बंगालमें थे। उस समय वे बंगालके शासन-कर्त्ता थे। बड़े भाईके सम्राट् होनेका समाचार पाते ही क्रोधसे उनका शरीर जल उठा। शीघ्र ही लड़ाईकी तय्यारी करके उन्होंने दिल्लीकी यात्रा कर दी।

औरङ्गजेब अत्यन्त क्रूर थे। लड़कपनसे ही वे कपटधार्मिक बने हुए थे। इस गोलमालके समय इन्होंने अपनी शान्ति प्रकृतिसे धीरे धीरे अपनी दुरभि-सन्धिके सिद्ध करनेका उपाय स्थिर कर लिया। छोटे भाई मुराद उस समय गुजरातके शासनकर्त्ता थे। औरङ्गजेबने उनके पास लिख भेजा,—"भाई! पिताका तो मृत्युकाल निकट है। हमारे दोनों बड़े भाई अलस, इन्द्रियपरायण और विलासी हैं। इस विशाल राज्यको शासनमें रखनेके योग्य वे नहीं हैं। मेरी बात तुमसे कुछ छिपी नहीं है। क्या करूं, परमगुरु पिताका अनुरोध है, इसीसे कामकाज देखता हूं, नहीं तो संसारमें तिलाई भी स्पृहा नहीं है। जो हो, इस समय सदुक्ति यही है, कि तुम्हारे हाथमें राज्यका भार सौंप मैं मक्के चला जाऊं; अतएव आइये,हम दोनों आदमी सेना लेकर आगरे चलें"।

खलोंके कुचक्रमें देवता पड़ जाते हैं, मनुष्योंकी कौन गिनती है। औरङ्गजेबके मायाजालमें मुराद फंस गये। वे आकर नर्मदाके किनारे औरङ्गजेबसे मिले। शाहजहांका जीवन संकटापन्न था, परन्तु इतने दिनोंमें रोगका प्रकोप बहुत कुछ कम पड़ गया। निर्विवाद दाराने पिताका सिंहासन छोड़ दिया। परन्तु शुजा प्रभृतिको इस बातका विश्वास न हुआ। उन लोगोंने समझा—रोग जो आरोग्य होनेका समाचार फैला रहे हैं, वह केवल जनरव है; इसमें भी दाराकी कोई चातुरी है। इसलिये युद्ध करना ही उन लोगोंका दृढ़ संकल्प हुआ।

दोपहरके पहले ही दाराको शुजाकी दुरभि-सन्धिका समाचार मिल गया था, इसलिये उन्होंने अपने पुत्र सुलेमान और राजा जयसिंहको प्रयागकी ओर भेज दिया। परन्तु सम्राट्की इच्छा न थी, कि घरमें फूट फैलती। इसलिये शाहजहांने चुपचाप जयसिंहको कहला भेजा,—शुजाको समझा बुझाकर फिर बंगाल भेज दें, विरोधका कोई प्रयोजन नहीं। सुलेमान और जयसिंह काशी पहुंचे। उस पार शाहशुजा थे। सम्राट्की आज्ञानुसार उन्होंने शुजाको बहुत समझाया बुझाया—भाई भाईमें विरोध होनेसे राज्यका अनिष्ट होगा। शुजाने भी इस बातको समझा। वे निर्विवाद बंगाल लौट जाते, परन्तु सुलेमान सहज ही छोड़नेवाले आदमी न थे। बड़े सवेरे ही सेना लेकर वे गङ्गापार गये। शुजा उस समय सो रहे थे। उसी निद्रितावस्थामें सुलेमानने उनकी सेनापर आक्रमण किया। जागकर शाह-शुजाने बड़ी देर तक युद्ध किया, परन्तु अन्तमें परास्त होकर मुङ्गेर भाग गये।

उधर उज्जैनमें महाराज यशवन्तसिंह छावनी डाले पड़े थे। वे सम्राट्के पक्षके सेनानायक थे, औरङ्गजेब और मुरादको गति रोकनेके लिये भेजे गये थे। नर्मदाके उस पार युवराज औरङ्गजेब बैठे हुए मुरादके आनेकी प्रतीक्षा कर रहे थे। दोनों सेना मिल गईं, घोर युद्ध होने लगा। यशवन्त परास्त हुए। उसके बाद स्वयं दारा छोटे भाइयोंको दण्ड देनेके लिये आये; परन्तु हार मानकर वे भी भाग गये।

ग्लानिसे यशवन्त अपनी राजधानीको चले गये, लौटकर बादशाहके पास जानेका साहस न हुआ। परन्तु इधर घरमें स्त्रियोंका तिरस्कार सहनेसे तो मृत्यु हजार गुना श्रेय था। निकट पहुंचते ही महारानी दरवाजा रोककर धमकीके साथ कहने लगीं,—"हमलोग वीरकन्या हैं, वीरपुरुषको वरण करती हैं; वीरपुरुषको जयमाल पहनाती हैं। कापुरुषके साथ विवाह करना राणाकुल-कन्याओंका अभ्यास नहीं है। राजपूत प्राणकी अपेक्षा मानका गौरव अधिक करते हैं। युद्धमें परास्त होना नई बात नहीं है,परन्तु रणक्षेत्रसे भाग आना राजपूत-धंशमें आज नया देख पड़ता है। मालूम होता है—तुम मेरे वह पति नहीं हो; कोई ठग हो, बहाना करके दरवाजेपर पुकार रहे हो। मेरे जो पति हैं, वे आज समरक्षेत्रमें वीरशय्यापर सोये हैं। दुर्मति! दरवाजा छोड़ दे। मैं चिता जलाकर पतिका अनुगमन करूं।"

राजपूत-वीरमहिलाओंकी इतनी स्पर्द्धा, वीरत्वका इतना आदर! उनकी रग रगमें गर्म खून दौड़ा करता था। रणोन्मत्त माता-पुत्रकी युद्धका नाम सुनते ही नाच उठती थी। आज कालकी गतिसे सब निर्व्वाण हुआ जाता है।

जो हो, औरङ्गजेबके बड़े भाई एक प्रकार शान्त हुए। जयसिंह प्रभृति जो लोग महावीर दाराके प्रधान सेनापति थे, बारबार चिट्ठी और खत भेज भेज कर औरङ्गजेबने उनका भय तोड़ दिया। सेनापतियोंने भी सोचा, दाराका अब कल्याण नहीं है। शाहजहांके भी दिन पूरे आये हैं। यह विशाल साम्राज्य औरङ्गजेबके ही हाथमें जायगा, इससे सेनापति और सिपाही सब दारासे असाध्य हो गये।

सम्प्रति सिंहासनके प्रधान कण्टक स्वयं सम्राट् ही हैं। मुराद और एक प्रतियोगी है। इन दोनोंको शान्त कर देनेसे ही मनोरथ सिद्ध हो सकता है। शठके लिये असाध्य कुछ भी नहीं है। औरङ्गजेबने विचार कर देखा, अभी बलप्रयोग करनेका समय नहीं आया। अभीष्ट सिद्ध करनेके लिये कौशल ही एकमात्र उपाय है। इसलिये मुरादको साथ लाकर उन्होंने आगरेके पास छावनी डाल दी। किलेमें सम्राट् थे। औरङ्गजेबने एक विश्वासी दूत द्वारा सम्राट्को यह कहला भेजा,—मैं जमीन छूकर मांगता हूं, मैंने जो काम किया है, वह सन्तानके अयोग्य है, किन्तु उसमें मेरा दोष नहीं है, दोष दाराका है। जो हो, आपने कठिन रोगसे छुटकारा पाया है, यही मङ्गल है। अब यदि पुत्र जानकर इस दासको क्षमा करते, तो हृदय शीतल होता।

दूतने जाकर सम्राट्से औरङ्गजेबका संदेशा कहा। वृद्धावस्थामें बुद्धि मारी जाती है, जो हो तो भी पिता रहे। शाहजहां अपने लड़केको अच्छी तरह पहचानते थे। औरङ्गजेबके मनमें यह लालसा लड़कपनसे लगी थी, अवसर पाकर मोगलराज्यका सम्राट् होना होगा। दूसरे लोग चाहे न समझते, परन्तु शाहजहां इस दुरभिसन्धिको बहुत दिनोंसे समझ गये थे। भीतरी बात क्या है, यह खबर लेनेके लिये उन्होंने अपनी कन्या जहांनाराको लड़कोंके खेमेमें भेज दिया।

जहांनारा पहले मुरादके खेमेमें गई। गत युद्धमें उनका शरीर घावोंसे भर गया था। वे कातर होकर सो रहे थे। उसी समय जहांनारा वहां पहुंचीं। मुराद जानते थे, कि वह मनसे दाराकी ओर रहीं। इसलिये उन्होंने उनका कुछ भी समादर न किया, वरं अनेक कड़ी कड़ी बातें कहकर अपमान किया। दूतने जाकर औरङ्गजेबसे इन बातोंको चुपचाप कह दिया।

औरङ्गजेबके सब कामोंका बीजमन्त्र कुचक्र था। क्रोध करके जब जहांनारा चल खड़ी हुईं, तो दौड़कर औरङ्गजेब उनके पास गये। खलके हृदयमें विष और मुंहमें मधुरता भरी रहती है। इन्होंने जहांनाराका हाथ पकड़कर कहा,—"बहिन! यह क्या! मैं क्या तुम्हारा कोई नहीं हूं? जब आ गई हो, तो भाई समझकर एकबार समाचार तो लेना चाहिये। क्या इतने दिन विदेशमें रहनेसे भूल गई हो? पिता इतने बीमार हो गये थे, आदमी भेजकर खबर तो ले लेना था।" इस तरह खुशामद करके औरङ्गजेबने जहांनाराको अपने तम्बूमें ले जाकर कहा,—"बहिन! क्या कहूं, लोगोंका रङ्ग ढङ्ग देखकर मेरे मनमें उदासीनता छा गई है, तुम पितासे मेरा यह सानुनय निवेदन करना—मैं एकबार उनके पद-सरोजका दर्शन कर इस संसारसे सम्बन्ध तोड़ देना चाहता हूं। अतएव और विलम्बका काम नहीं, परसों उनके दर्शन करनेकी इच्छा है।"

जहांनाराके जाने बाद औरङ्गजेब पिताको कारारुद्ध करनेकी चेष्टा करने लगे। शाहजहां भी समझ गये, कि शठकी इतनी भक्तिमें सुलक्षण नहीं है। उन्होंने दाराके पास लिख भेजा,—"दो दिनके बाद औरङ्गजेब आकर मेरी शरण लेगा। मुरादसे यह विरक्त हो गया है। जो हो, इसका विश्वास नहीं। तुम सैन्यसामग्री लेकर शीघ्र आगरे आओ। औरङ्गजेबको गिरफ़ार करना होगा।"

दारा उस समय दिल्लीमें थे। आधीरातके समय

सम्राट्ने नसीरुद्दीन नामक किसी विश्वासी नौकरको पत्र सौंप विदा किया। किन्तु उस जगह शायस्ता खांका गुप्तचर उपस्थित था। उसने शायस्ताखांसे जाकर पत्रकी बात कह दी, परन्तु उसमें जो लिखा था, सो बता न सका। इसके पहले बादशाहने शायस्ताखांके प्राणदण्डकी आज्ञा दी थी। उसी क्रोधमें उन्होंने कई घुड़सवार भेज चुपचाप नसीरुद्दीनको पकड़ मंगाया। पत्र पढ़कर देखा गया, तो उसमें औरङ्गजे़बकी बात निकली। शीघ्रही इनके डेरेमें आकर उन्होंने इन्हें ख़त दे दिया। औरङ्गजे़ब स्थिर चित्तके साथ उस पत्रको आदिसे अन्ततक पढ़ गये, परन्तु बोले कुछ भी नहीं; केवल नसीरुद्दीनको एक गुप्त स्थानमें छिपा रखा।

भेंट करनेका दिन आया। ससैन्य दारा आ पहुंचसे—क्यों वे नहीं आये! औरङ्गजे़ब भी मुलाक़ात करने न गये। इन्होंने सम्राट्को यह पत्र लिखा,—"आप जानते हैं, कि मैं अपराधी हूं। अपराधीके मनमें सदा भय और सन्देह रहता है। इसीसे सहसा आपसे मिलनेमें आशङ्का होती है। अतएव पहले कुछ शरीररक्षकोंके साथ अपने लड़के मुहम्मदको आपके पास भेजूंगा। वहां जाकर जब मुहम्मद मेरे पास यह समाचार भेजेगा, कि किलेमें एक भी हथियारबन्द सिपाही नहीं है, तब मैं आपके पास आनेका साहस कर सकूंगा।"

पत्र पाकर शाहजहां बड़ी देरतक सोचते रहे। सोच विचारकर अन्तमें औरङ्गजे़बके प्रस्तावपर ही सम्मत हुए। परन्तु दुष्ट सन्तानको गिरफ़ार करना उचित था। इसलिये किलेमें स्थान स्थानपर कुछ अस्त्रधारी सिपाहियोंको बादशाहने छिपा रखा। इसके सिवा उनके अन्तःपुरमें कई तातारी बांदियां थीं। वे सब वीरमहिला थीं। सम्राट्ने उन्हें भी अस्त्र-शस्त्र दे तय्यार कर रखा।

इधर औरङ्गजे़बने लड़केको सब बात सिखा पढ़ाकर शाहजहांके पास भेज दिया। किलेमें जाकर मुहम्मद एकबार चारों ओर देख आये, परन्तु कहीं कोई न देख पड़ा। हरमके पास जाकर देखा, तो वहां बहुतसे अस्त्रधारी सिपाहियोंको छिपा पाया। उन्होंने बादशाहसे साफ़ ही कह दिया,—"इन आदमियोंको देखकर मुझे सन्देह होता है। ये लोग किलेमें रहेंगे, तो बाबा न आ सकेंगे।" शाहजहांके शिरपर दुर्मति सवार हुई। उन्होंने उन लोगोंको भी किलेसे बाहर कर दिया। मुहम्मदने देखा—चारो ओर साफ़ हो गया है, अब किलेमें बादशाहसे हमारे ही आदमी अधिक हैं।

औरङ्गजे़बके पास समाचार गया। शीघ्र ही आदमीने वापस आकर कहा—शाहज़ादा तय्यार हैं, अभी आकर मुलाक़ात करेंगे। सम्राट् उनकी प्रतीक्षामें बैठे रहे। घोड़ेपर सवार होकर औरङ्गजे़ब अपने शरीररक्षकों और पारिषदोंको साथ लिये एकबार किलेकी तरफ़ आये; कुछ दूर अकबरकी क़ब्रकी ओर चले गये। यह सुन शाहजहांने क्रोधके साथ मुहम्मदसे कहा,—"जब तुम्हारे पिता ही यहां न आवेंगे, तो तुम यहां क्या करने आये हो?" इसपर मुहम्मदने विनीतभावसे उत्तर दिया,—"महाशय! मैं किलेका भार आपसे लेने आया हूं। मुझे भाण्डारकी चाबी दीजिये।" सम्राट्ने देखा—अपने फन्देमें मैं आप ही फंस गया हूं, अब और कोई उपाय नहीं। लाचार मुहम्मदके हाथमें चाबियोंका गुच्छा फेंक दिया।

पिताको क़ैदकर औरङ्गजे़बने मुरादसे कहा,—"भाई! इतने दिनोंमें मेरा अभिलाष पूर्ण हुआ। आजसे तुम दिल्लीके सम्राट् हुए। अब मेरी यही भिक्षा है, तुम मुझे कुछ धन दो। मक्के जाकर मैं सुखचैनसे दिन बिताऊं।" मुराद इस बातपर राज़ी हो गये।

औरङ्गजे़बके बाहरसे तो ऐसी धर्मनिष्ठा, परन्तु अन्तःकरणमें छलछल भरा था। यह मन ही मन मुरादके विनाश करनेकी चेष्टा करने लगे। इसी बीचमें समाचार आया—दाराने दिल्लीमें बहुत सी सेना इकट्ठी की है, शीघ्र ही आगरे आकर शाहजहांको मुक्त करेंगे। मुरादको साथ ले औरङ्गजे़ब उसी वक़्त दिल्लीकी ओर चले। दोनों आदमी

मथुरा पहुंचे। वहां मुरादके पारिषदोंने कहा,—"आप अब औरङ्गजेबके साथ न रहिये। शठ बड़े कठिन होते हैं। वह आपके प्राणनाश करनेकी चेष्टामें है। हम लोगोंका परामर्श यही है, कि आप पहले ही उसे विनष्ट कर डालिये, नहीं तो और निष्कृति नहीं।"

आखिर यही ठहरा, औरङ्गज़ेबको मार डालना चाहिये। मुरादने अपने बड़े भाईको निमन्त्रण किया। पासके तम्बूमें कुछ आदमी छिपा रखे गये, इशारा पाते ही वे औरङ्गजेबका शिर उतार लेते। स्वभावतः, मुराद अकपट उदार पुरुष रहे। शत्रु मित्र सबके साथ वह समान व्यवहार करते थे। इसीसे औरङ्गज़ेब निःशङ्क निमन्त्रण पूर्ण करने गये। दोनों भाई भोजन करने बैठे थे। उसी समय माज़िरने आकर मुरादके कानमें कुछ कहा। अमंविद्यामें औरङ्गज़ेब दक्षगुरु थे। दोनोंका रङ्गढङ्ग देखकर इनके मनमें सन्देह उठ खड़ा हुआ। इन्होंने कातरताके साथ मुरादसे कहा,—"भाई! आज आमोद न होगा। मेरे पेटमें बहुत दर्द हो रहा है। तुम सब तय्यारी कर रखना, मैं कल फिर आऊंगा।" इतना कह ये झटपट तम्बूसे बाहर निकल अपने शरीर रक्षकोंके पास चले आये।

बहाना करके औरङ्गज़ेब तीन चार दिनतक चारपाईपर पड़े रहे। पेटपीड़ाकी चिकित्सा होने लगी। मुरादका मन सरल था; उन्होंने समझा—सचमुच ही दर्द हुआ है, इसमें कोई चातुरी नहीं है। तीन चार दिनमें दर्द दूर हो गया। औरङ्गज़ेबने मुरादको कहला भेजा,—"भाई! उस दिन मैंने उद्योगमें मैंने व्याघात लगा दिया था। इसलिये मेरे मनमें अत्यन्त कष्ट हुआ है। जो हो, आज मेरे यहां तुम्हारा निमन्त्रण है। कई सुन्दर सुन्दर नाचने और गानेवाली आई हैं। उनका रूपयौवन स्वर्गकी विद्याधरीसे भी अधिक है।"

मुरादके पारिषदोंने बहुत समझाया—निमन्त्रणमें जानेसे विपद् हाथोंहाथ है। परन्तु मुरादने किसीकी भी न सुनी। शरीररक्षक बाहर रहे, मुराद चार प्रधान प्रधान सरदारोंको साथ ले औरङ्गज़ेबके खेमेमें गये। नाच गान होने लगा। परन्तु इन सब आमोदोंका एक प्रधान अङ्ग सुरा है। औरङ्गज़ेबने इस आयोजनमें त्रुटि न की थी। तम्बूमें आनन्दकी घटा उमड़ उठी। मुराद हतचेतन्य, उनके पारिषद हतचैतन्य और शरीररक्षक नशेमें मतवाले हो गये। यह सुयोग पा औरङ्गज़ेबने अपने भाईको बांधकर आगरे भेज दिया। कहते हैं, आगरा पहुंचनेपर मुरादका शिर काट लिया गया था।

औरङ्गज़ेबने देखा—यदि अभी सिंहासन अधिकार नहीं करता, तो फिर लोग पूरे तौरसे मुझे न मानेंगे, अनेक आदमी अनेक प्रकारकी बात कहेंगे। पारिषद भी समझ गये—औरङ्गज़ेब जो रात दिन धर्मकी दुहाई दिया करते हैं, यह केवल पाखण्ड है; पिता और भ्राताओंको राज्यसे वंचित करना ही उनका अभिप्राय है, अतएव मनमानी करनेसे ही वे सन्तुष्ट होंगे। यह सोच सब कोई इनसे यथाविधान राज्यमें अभिषिक्त होनेको अनुरोध करने लगे। पहले



औरङ्गज़ेब बादशाह।

उदासीन भांतिकी बहुत कुछ आपत्ति करके पीछे इन्होंने कहा—"देखता हूं, तुम लोग अपने सुख-चैनके लिये मुझे संसार त्याग करने न दोगे। अच्छा, न दो; संन्यासी लोग निर्जन गिरिगुहामें बैठकर जो शान्ति-सुख लाभ करते हैं, ईश्वर करे, इस राजसिंहासन पर बैठ मैं भी वही सुखभोग करूं। यह बात सच है, कि राजकाज देखनेमें ईश्वरको चिन्ता करनेका अवसर न मिलेगा, परन्तु कामसे काम है।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं, कि दिल्लीका अधीश्वर हो मैं बहुत सत्कर्म कर सकूंगा। लोगोंको इस तरह समझा बुझा १६५८ ई॰को दूसरी अगस्तको दिल्लीके निकटवर्ती एक सुन्दर उद्यानमें औरङ्गजे़ब यथाविधान राजसिंहासनपर अभिषिक्त हुये।

औरङ्गजेब.के बादशाह होनेकी खबर बङ्गदेशमें पहुंची। शाहशुजा पुनर्वार समरसज्जाकर प्रयागके पास पहुंच गये। औरङ्गजे़ब ससैन्य उनकी गति रोकने आये। एक ग्राममें घोर युद्ध हुआ। उस दिनके युद्धमें यदि शाहशुजा थोड़ा और सुस्थिर रह जाते, तो सौभाग्यलक्ष्मी उन्हींपर प्रसन्न होतीं। औरङ्गजे़ब जिस हाथीपर चढ़कर युद्ध कर रहे थे, अस्त्राघातसे उसका पैर टूट गया। शुजाका हाथी भी घायल हुआ। दोनों आदमी अपने अपने हाथीसे उतरकर दूसरेपर चढ़नेका उपक्रम करने लगे। उसी वक्त मीरजुमलाने औरङ्गजे़बसे कहा,—"प्रभो! इस समय हाथीसे उतरनेमें राज्य गया ही समझिये।" औरङ्गजे़ब न उतरे; परन्तु शुजा हाथीसे उतर घोड़ेपर सवार हुए। सिपाही लोग मालिकको न देख इधर उधर भाग गये।

शुजा बङ्गदेश लौट आये। किन्तु औरङ्गजे़बके बड़े लड़के मुहम्मद और वज़ीर मीरजुमलाने उनके पीछे पड़ बङ्गदेशसे भी उन्हें खदेड़ दिया। भारतमें भागनेका दूसरा कोई स्थान नहीं था। जहां जाते, वहीं औरङ्गजेबकी पताका फहराती हुई पाते। अन्तमें बहुत कुछ सोच विचार कर शुजा अराकान गये। उनके साथ बहुमूल्य रत्न और प्रायः डेढ़ हजार आदमी थे। किन्तु अराकानकी आबहवा बहुत ही खराब होनेसे डेढ़ हजार आदमियोंमें धीरे धीरे प्रायः सभी मर गये। केवल शाहशुजा, उनकी दूसरी स्त्री, दो लड़के, तीन लड़कियां और चालीस नौकर जीते बचे। विधाताके विमुख होनेपर चारो ओरसे विपद् उमड़ आती है। अराकानके राजा, एक तो औरङ्गजे़बके डरसे सदा शङ्कित रहते थे, दूसरे शुजाकी रूपवती कन्यापर उनकी दृष्टि पड़ी; तीसरे साथमें बहुमूल्य जो हीरा मोती थे, उन्हें भी छीन लेनेका लोभ पैदा हुआ। इसीसे अनेक प्रकारका बहाना बता आश्रित राजकुमारको उन्होंने अपने राज्यसे निकाल दिया। शुजाने अपने परिवार और अनुचरवर्गके साथ पर्वतके एक खड्डमें जाकर आश्रय लिया। वह स्थान अत्यन्त दुर्गम था। दोनों ओर पहाड और बगलमें खड्ड था। नीचे वेगवती नदी कल कल करती हुई बह रही थी। उसी दुर्गम स्थानमें अराकानके राजाकी सेना आकर शुजा और उनके साथियोंपर बाणवृष्टि करने लगी। किसी किसीने पहाड़परसे बड़े बड़े पत्थर लुढ़का दिये। शाहशुजाने बहुत देरतक प्राणपणसे युद्ध किया, अन्तमें एक बड़े भारी पत्थरके टुकड़ेकी चोटसे अभिभूत हो गये। राजाके सिपाहियोंने उन्हें और उनके दो अनुचरोंको एक डोंगीपर चढ़ाकर बीच नदीमें छोड़ दिया। प्रबल स्रोतमें वे लोग तैर कर बाहर न जा सके, दो एक बार अङ्ग आस्फालन कर अन्तमें डूब गये।

उसके बाद सिपाही लोग शुजाके अन्यान्य अनुचरोंको विनष्ट कर उनकी स्त्री, तीनों कन्याओं और दोनों पुत्रोंको पकड राजाके पास पहुंचाया। राजाने स्त्रियोंको अन्तःपुरमें रखा था। किन्तु हतभाग्य दोनों बालक मारे गये। शुजाकी पत्नी सुलताना प्यारी-बानो परम सुन्दरी थीं। वे उस समयके रमणीकुलकी अलङ्कार-स्वरूप थीं। तैमूर-कुलवधू और तैमूर-कुलकन्याके चरित्रमें कलङ्क लगनेसे मृत्यु ही अच्छा था। किन्तु शत्रुको विना मारे मर जानेमें मरनेकी मर्यादा ही क्या! इसलिये प्यारी बानोने अपने कपड़ेमें एक छुरी छिपा रखी। पिशाचवृत्ति राजाके आनेपर उसीसे वह उनका प्राण विनष्ट करना चाहती थीं। परन्तु दासियोंको किसी तरह यह भेद मालूम हो गया। उन्होंने छुरी छीन ली। फिर और कोई उपाय न रहा। इसलिये उन्होंने अपना मुंह नोच डाला। मुखचन्द्रका सौन्दर्य्य काम पड़ गया। उसके बाद एक पत्थरपर शिर पटक पटक कर प्यारी बानोने प्राणत्याग कर दिया। शुजाकी दो लड़कियां विष खाकर मर गईं। बाकी एक लड़की भी अधिक दिन जी न सकी।

शुजाकी दुर्दशाका समाचार पा औरङ्गज़ेब पुलकित हो गये। परन्तु इनके मनमें एक दिनके लिये भी सुख उत्पन्न न हुआ। शाहजहां वृद्धावस्थामें आठ वर्ष क़ैद रहे। इस शङ्कासे यह सर्वदा उद्विग्न रहते थे—पीछे कहीं उनके अनुगत सिपाही उपद्रव न मचायें। फिर दारा भी जीते थे। उनके पुत्र सुलेमानने श्रीनगरमें जाकर आश्रय लिया। अवसर पानेपर वे लोग भी उपद्रव मचा सकते थे। सिवा इसके पिताको कारारुद्ध कर राज्यलाभका जो सहज कौशल इन्होंने दिखाया, इनके पुत्रोंके भी वही कौशल सीखनेमें विचित्र ही क्या था। राजाओंका मन सर्वदा सन्दिग्ध रहता है। शक्तिमान् मनुष्य उनके प्रतिकूल होते हैं। अपनी ही छाया देखकर राजाओंका मन ईर्ष्यासे जल उठता है। इसलिये सब आशङ्काओंसे निरुद्वेग होनेके लिये इन्होंने अपने बड़े लड़के मुहम्मदको ग्वालियरके क़िलेमें यावज्जीवन आबद्ध कर दिया। मुहम्मदसे एक अपराध भी हो गया था। बङ्ग-युद्धके समय शाहशुजाकी कन्याके रूपलावण्यपर मुग्ध हो उन्होंने उसके साथ विवाह कर लिया। इसलिये पिताका पक्ष छोड़ उन्होंने कुछ शत्रुका पक्ष पकड़ा था। औरङ्गज़ेबने विशेष कौशल कर उन लोगोंमें विच्छेद डाल दिया।

दाराने लाहोर और अजमेरमें कई बार युद्धका आयोजन किया था, परन्तु औरङ्गज़ेबसे परास्त हो गये। अन्तमें और कोई उपाय न देख उन्होंने सोचा, कि इस दुःसमयमें ईरान जाकर आश्रय लेना ही अच्छा था। इसीसे अनुचरोंको साथ ले उन्होंने ईरानकी राह पकड़ी। सिन्धुपार तातारके निकट पहुंचने पर उनकी स्त्री नादिरा बानो बहुत बीमार हो गईं। तातारके सरदारका नाम जहान-खां था। पहले दो बार ये खूनी मुक़द्दमेमें फंसे थे। प्रधान विचारपतिके यहां उनका अपराध प्रमाणित हुआ। सम्राट् शाहजहांने उनकी सारी सम्पत्ति कुर्क करके प्राणदण्डकी आज्ञा दी। किन्तु केवल दाराके अनुरोधसे जहान खां दोनों बार छुटकारा पा गये थे। इसीसे दाराने सोचा—ऐसी विपद्के समयमें मेरे उपकृत सुहृद् अवश्य ही दोचार दिनके लिये मुझे आश्रय देंगे। जहानने आश्रय दिया। यहीं सुलताना नादिरा बानोका मृत्यु हुआ।

दारा स्त्रीवियोगसे कातर हो रहे थे। उसी समय उन्होंने सुना, कि औरङ्गज़ेबके सेनानायक [illegible] मुलतानसे उन्हें पकड़ने आ रहे थे। घबराकर दारा जहानसे विदा हुए। वे तातार नगरसे आध ही कोस दूर गये थे, कि देखा—पीछेसे जहान प्रायः एक हज़ार घुड़सवार सेना लिये चले आते हैं। दाराने स्थिर किया—मेरे साथ अधिक आदमी नहीं; जो हैं वे भी रोग और पथश्रमसे कातर हो रहे हैं, इसलिये मुझे ईरानतक पहुंचा देनेके लिये जहान साथ आते हैं।

किन्तु जहानको ऐसा अभ्यास न था। गुरुसे यह पाठ लेना जहान भूल गये—उपकार करनेसे कृतज्ञ होना चाहिये। वे अर्थका ही माहात्म्य अधिक समझते थे। लोभमें पड़कर उन्होंने दारा और उनके मंझले लड़केको पकड़कर ख़ोजहांके हवाले किया—इनको गिरफ़्तार कर लेनेपर औरङ्गज़ेबसे पुरस्कार मिलेगा।

दाराकी उस समय बड़ी दुर्दशा थी। शरीर पर फटे हुए कपड़े और सिरपर मैली पगड़ी। उनके पुत्रकी भी अवस्था वैसी ही रही। ख़ोजहां उन लोगोंको हाथीपर चढ़ाकर दिल्ली ले गये। दाराकी दुरवस्था देखकर नगरके पशु पक्षी भी रोने लगे। परन्तु औरङ्गज़ेबका मन न पसीजा। बड़े भाई और भतीजेकी दुर्दशा प्रजावर्गको दिखलानेके लिये इन्होंने एकबार उन लोगोंको नगरका प्रदक्षिण करा एक निर्जन स्थानमें क़ैद कर दिया। दारा जानते थे—मृत्यु निश्चित है। उन्होंने पहले ही से एक छुरी, एक क़लम, एक दावात और कुछ काग़ज़ अपने कपड़ेमें छिपा रखा। कारागारमें बैठकर क़लम बनाते और दुःखकी कविता लिखते थे। जब शोकका वेग उमड़ उठता, तो लड़केका गला पकड़ कर रोने लगते।

औरङ्गजे़बका दरबार लगा। दारा बड़े थे, वे चटपट राजा होने चले थे, उन्हें क्या दण्ड देना उचित था? अनेक आदमियोंने कहा—इन्हें यावज्जीवन ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद रखना मुनासिब है। परन्तु औरङ्गजेबकी वैसी इच्छा न थी। यही समझकर दो एक सभासद बोले,—"दारा नास्तिक है। नास्तिकका प्राणवध न करना मुहम्मदके प्रतिष्ठित धर्मका विरुद्धाचरण है।" अब बात मनके लायक़ हुई। औरङ्गजे़बने कहा,—"यह बात ठीक है। दाराको जो मेरी हानि करनी हो करें। मैं उसे सह सकता हूं, परन्तु नास्तिकता असह्य है।" अतएव उसी रातको दाराके प्राणविनष्ट करनेका भार नाज़िर और सफ़ी नामक दो अफ़गान सरदारोंको सौंपा गया।

आधीरातका समय था। दाराके कमरेके पास हठात् अस्त्रोंकी झनझनाहट सुनाई दी। बदनसीब शाहज़ादेके दुःखकी कुछ रात जागनेमें बीत गई, कुछ काकनिद्रामें बीतनेवाली रही। आंख लगती जाती थी। उसी समय कानमें अस्त्रोंकी झनझनाहट पड़ी। वे चौंक उठे और समझ गये—आज अन्तिम काल उपस्थित है। लड़का सो रहा था, उसे उन्होंने जगाया। घातकोंने दरवाज़ा खोला। दारा क़लमतराश छुरीको ले एक कोनेमें जा खड़े हुए। दुष्टोंने दाराके लड़केको बगल-वाले एक कमरेमें बांध दिया। पहले उन लोगोंने ख़याल किया—गला घोटकर दाराको मार डालेंगे। किन्तु इसप्रकार प्राणदण्ड पाना राजपुत्रके लिये घृणाकर था। इसलिये असीम विक्रमके साथ दाराने एक घातकके कलेजेमें अपनी छुरी घुसेड़ दी। लाचार अन्तमें उन लोगोंने तलवारसे दाराका सिर काटा। दाराका पुत्र अपने पिताकी लहूसे लथपथ लाशको गोदमें लिये रातभर रोता रहा। नाज़िर कटे हुए सिरको लेकर चले गये।

उस दिन सारी रात औरङ्गजे़बको नींद न आई। बड़े भाईका मृतमुख देखनेसे उन्हें शान्ति होती। प्रातःकाल होनेके पहले ही नाज़िर दाराका लहूसे भरा, विश्री और विवर्ण सिर लेकर आ पहुंचे। सम्राट् देखकर उसे पहचान न सके। कुछ देरतक जल में भिगाकर अपने हाथके रूमालसे ख़ून पोछ डाला, फिर अच्छी तरह उसे पहचाना। औरङ्गजे़बने कहा,—"हां, यही मेरा दुष्ट भाई दारा है।" इस तरह कहते कहते पत्थर फटकर दो बूंद आंसू निकल गये। इसके बाद सुलेमान और दाराका मंझला लड़का ग्वालियरके क़िलेमें क़ैद किया गया। औरङ्गजे़बके मंझले लड़के मुहम्मद मअ़ज्ज़म दक्षि-णाञ्चलमें थे। औरङ्गजे़बने इसलिये उन्हें अपने पास बुला लिया—क्या मालूम पीछे कहीं वह कोई उपद्रव न मचावें।

औरङ्गजे़बके राज्यलाभका कौशल यही था। किन्तु इसमें निठुरता भिन्न बुद्धिमत्ताका परिचय कुछ भी नहीं है। पितासे पुत्र, भाईसे भाई और प्रभुसे भृत्यको काम पड़ता है। अभी अविश्वास रहता, फिर कुछ होनेपर तुरत ही स्नेह, ममता और विश्वास आ जाता है। ऐसे स्थलमें जो अधिक पाषण्ड होता, उसीको जय मिलता है।

कुकर्मी लोग अपना अपना कलङ्क छिपानेके लिये एक एक सत्कर्म करते हैं। औरङ्गजे़ब भी इस कौशलको अच्छी तरह समझते थे। एकबार सारे भारतवर्षमें अकाल पड़ गया। राजकोषसे धन देकर इन्होंने प्रजाकी भलाई की। यत्नपूर्वक विद्या सीखना हमारे देशके राजपुत्रोंके भाग्यमें प्रायः नहीं रहता। उन लोगोंका लड़कपन प्रायः आनन्द सुखमें ही कट जाता है। परन्तु औरङ्गजे़बने विद्याभ्यासमें कभी आलस न किया था। अरबी और फ़ारसी भाषाके यह अच्छे पण्डित रहे। इसके अतिरिक्त भारत-वर्षके अनेक स्थानोंकी भाषाओंमें यह चिट्ठी लिख सकते और उन्हें बोल भी सकते थे। सर्वत्र विद्यालोचनाका उत्कर्ष साधन करनेके निमित्त इन्होंने अनेक पाठ-शालायें स्थापन कीं। किन्तु केवल विद्यालय रहनेसे ही काम नहीं बनता। तत्त्वावधान न होनेसे विद्या-लय स्थापन करना निष्फल है। इसलिये इन्होंने कई चतुर और कृतविद्य तत्त्वावधायक नियुक्त कर दिये।

मुसलमान सम्राटोंमें प्रायः सभी विलासी और

अपव्ययी रहे। परन्तु औरङ्गज़ेबमें ऐसे दोष न थे। बराबर यह सामान्य वस्त्र पहनकर रहते। विवाह आदि उत्सवोंके सिवा अनर्थक नाच तमाशेमें इनका अर्थ नष्ट न होता था। इन्होंने भारतवर्षके नाना स्थानों में पथिकोंके लिये आश्रम बनवा दिये। उन आश्रमोंमें भोजनकी सामग्री भी सञ्चित रहती थी। प्रजामात्र सम्राट्के पास जा सकती थी। विचारालयमें यदि किसीपर अन्याय होता, तो वह स्वयं सम्राट्से जाकर बात देता। इसलिये विचारपति घूस न ले सकते थे।

देखनेमें सम्राट् सुपुरुष न थे, परन्तु अतिशय मिष्ट-भाषी रहे। नित्य प्रातःकाल उठ यह स्नान आह्निक करते थे। उसके बाद एक प्रहरतक राजकाज संभालते। एक प्रहरके बाद भोजनका समय निर्दिष्ट था। भोजनके बाद औरङ्गज़ेब हाथी, घोड़ा और बाघ आदिकी लड़ाई देखते। यही इनका आह्लाद-प्रमोद था।

आह्लाद-प्रमोदके बाद दीवान-खासमें बैठ यह सभा करते थे। इसी समय अमीर उमरा और विदेशके राजदूत आदि आकर इनसे मिल जाते। शुक्रवारको दरबार बन्द रहता था। ईसाइयोंके लिये जैसे रविवार, मुसलमानोंके लिये वैसे ही शुक्रवार है। इसीसे सम्राट् शुक्रवारके दिन काम काज न देखते थे। प्रायः सम्राटोंका अन्तःपुर असंख्य रूपवती रमणियोंसे परिपूर्ण रहता है। औरङ्गज़ेबके अन्तःपुरमें भी अनेक दासियां थीं। परन्तु वे सब केवल राजप्रासादकी शोभाके लिये ही रहीं। फलतः विवाहिता स्त्री भिन्न यह कभी दूसरी स्त्रीका मुंह न देखते थे।

अतएव औरङ्गज़ेबका गुणराशि दोषके ठीक विपरीत था। एक ओर पूर्णचन्द्रकी हिमधारामयी ज्योत्स्नाके सौन्दर्यसे हृदय शीतल रहता, दूसरी ओर अमावस्याका निविड़ अन्धकार—निठुरताका कठिन दृश्य देखनेसे प्राण कांप उठता था। जो हो, इनका दुश्चरित्र ही मोगल साम्राज्यके पतनका प्रधान कारण है। प्रजा असन्तुष्ट होनेसे राजा नहीं रहता, इन्द्रका इन्द्रत्व भी छीन उठता—कुटिल राजनीति एवं आत्मश्लाघा मिथ्या है। औरङ्गज़ेब अपनी शठता छिपानेके लिये सबको प्यार करते थे। पहले जो लोग इनके विरोधी रहे, उनके साथ भी यह स्नेह रखते थे। परन्तु लोग समझ गये—यह कौशल भिन्न और कुछ नहीं है। इसलिये हिन्दुओंकी कौन कहे, मुसलमान भी सब ही मन इनके शत्रु थे। इनके प्रेममें पड़ना कालसे सांपके साथ रहनेके समान है, विपद् आ जानेमें देर नहीं लगती।

यह तो हुई साधारण लोगोंकी बात। हिन्दू इनके अत्यन्त विरक्त हो गये थे। यह हिन्दुओंको मुसलमान बनानेके लिये उत्पीड़न करते थे। इसीसे जिन राजपूत वीरोंके बाहुबलसे तैमूरवंशकी इतनी प्रतिपत्ति हुई थी, अन्तमें उन लोगोंने भी सम्राट्को छोड़ दिया। औरङ्गज़ेबकी वृद्धावस्थामें जब चारो ओर विप्लव उपस्थित हुआ, तो उस दुःसमयमें किसीने इनको और न देखा। उधर महाराष्ट्र देशमें शिवाजी भस्मके भीतर अग्निस्फुलिङ्गकी भांति छिपे थे। क्रमसे प्रधूमित होकर उन्होंने अकाण्डका कुण्ड जला दिया, मोगल साम्राज्यका मर्मान्तक कांप उठा। औरङ्गज़ेबका इतना तेज, इतना उद्यम,—फिर कुछ भी न रहा। वह ज्वलन्त दीपशिखा बुझने लगी। इन्होंने पहले जो दुष्कर्म किये थे, उन्हीं पापोंके कारण हृदयमें सहस्रों वृश्चिकोंके काटनेकी ज्वाला उठ खड़ी हुई। यह लोगोंके सामने अपना मुंहतक दिखा न सके। क्रमसे अनु-तापसे जीर्ण, क्लिष्ट और जर्जर हो पापी प्राण पञ्चभूत शरीरसे निकल गये।

अन्तिम अवस्थामें औरङ्गज़ेब प्रायः दाक्षिणात्य प्रदेशमें ही रहते थे। अहमदनगरमें इनका मृत्यु हुआ यहां अनेक प्रकारके उत्सवोंमें इनका मृतदेह रक्षित किया गया। पीछे इलोरा और गोदावरीके सन्निकट रोज़ा नामक स्थानमें यह समाहित हुये। कहते हैं, इन्होंने एक प्रकारकी टोपी बनाई थी। उसीकी बिक्रीसे इनके समाधिका व्यय निर्वाह किया गया।

औरङ्गाबाद—१ दक्षिणात्यके हैदराबाद राज्यका एक नगर। यह अक्षा० १९° ५४´ उ० तथा देशा० ८५° २२´ पू० पर कौम नदी किनारे अवस्थित है। नांदगांव रेलवे ष्टेशन ५६ मील पड़ता है। १६१० ई० को अबीसीनियाके मलिक अम्बर या सीदी अम्बरने इसे बसाया था। अनेक भवनोंका ध्वंसावशेष पड़ा है। औरंगजे़बका बनाया प्रासाद बिलकुल टूटफूट गया है। नगरको चारो ओर दीवार उठी है। पहले इसका नाम 'किरकी' रहा। औरंगजे़बकी प्यारी बीबीका स्मृति-मन्दिर आगरेके ताजमहलसे मिलता जुलता है। नगरसे २ मील पश्चिम 'हरसूल' ग्रामका ध्वंसावशेष है। राहमें औरंगजेब द्वारा यात्रियोंके लिये बनाया पत्थरका एक मकान् खड़ा है। औरंगाबादसे पूर्व कुछ दूर अरमेनियाके लोगों की ५० कबरें बनी हैं। शिलालेख यहूदी भाषामें हैं। नगरसे १४ मील दूर रोजा़में मलिक अम्बरकी कब्र और १ मील पश्चिम छावनी है। फिर २ मील उत्तर ३ गुफा हैं। उनमें दो बौद्ध गुफा समझ पड़ती हैं। पहले यह नगर व्यवसायका केन्द्र रहा, किन्तु हैदराबाद राजधानी होनेसे वह महत्व घट गया। फिर भी गेहूं, रूई, कपड़े और लाहेलंगडका काम खूब होता है।

२ युक्तप्रदेशके खेरी जि़लेका एक परगना। क्षेत्रफल ११६ वर्ग मील है। सीतापुरसे शाहजहांपुर जानेवाली पक्की सड़क इसी परगनेमें पड़ी है। पूर्व सीमापर कथना और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है।

३ युक्त प्रदेशके खेरी जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° ४८´ उ० तथा देशा० ८१° २८´ पू० पर सीतापुरसे २८ मील दूर अवस्थित है। औरंगजे़बके ही नामपर इसका नामकरण हुआ। नवाब सैयद खु़रमने औरंगाबाद बसाया था। टूटे फूटे महलमें आज भी सैयद खु़रमके वंशज रहते हैं। किला बिलकुल बिगड़ गया है। कहीं कहीं दीवारें खड़ी हैं। पहले पिहानीसे गोमती तक सैयद राज्य करते थे। किन्तु गौर क्षत्रियोंने उन्हें परास्त कर नीचा दिखाया। मुसलमान ही यहां बड़े जमींदार हैं।

४ युक्तप्रदेशके सीतापुर जि़लेका एक परगना। क्षेत्रफल ६० वर्ग मील है। दक्षिण और पश्चिम सीमापर गोमती नदी बहती है। मुसलमानोंकी जमींन्दारी बहुत है। औरंगजे़बसे पहले पंवार राजपूतोंका अधिकार रहते भी अब कोई बड़ा राजपूत-जमींन्दार देख नहीं पड़ता।

५ युक्तप्रदेशके सीतापुर जि़लेका एक नगर। बहादुर बेगको औरंगजे़बने यहां जागीर दी थी। इसीसे नगरका नाम औरंगाबाद पड़ा। उनके वंशज ताल्लु़कदार कहाते हैं। सप्ताह में दो बार बड़ा बाजा़र लगता है। रूई और नमकका काम होता है। जलवायु स्वास्थ्यकर और भूमि उर्वरा है।

६ विहार प्रान्तके गया जि़लेकी एक तहसील। यह अक्षा० २४° २९´ एवं २५° ८´ ३०´´ उ० और देशा० ८४° २´ ३०´´ तथा ८४° ४६´ ३०´´ पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल १२४६ वर्ग मील है। इसमें औरंगाबाद, दाऊदनगर और नबीनगरकी पुलिसका थाना लगता है।

७ विहार प्रान्तके गया जि़लेका एक ग्राम। यह अक्षा० २४° ४५´ ६´´ उ० और देशा० ८४° २५´ २´´ पू० पर अवस्थित है। यहां सरकारी मकान्, स्कू़ल, औषधालय और कैदखाना बना है। अनाज, तेलहन, चमड़े, गोंद, बत्ती, कपडे, मसाले, महुवेके तेल और नमकका काम होता है।

औरङ्गाबाद सैयद—युक्त प्रदेशके बुलन्दशहर जि़लेका एक नगर। यह बुलन्दशहर नगरसे १० मील उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। डाकखाना, स्कूल और बाजार मौजूद है। औरंगजे़बकी आज्ञासे सैयद अबदुल अजीज़ने उदण्ड जमींदारोंको दबा यह नगर बसाया था। इसीसे औरङ्गजे़बके नामपर औरङ्गाबाद कहाया। सैयद अबदुल अजीज़के वंशज आज भी यह नगर और १५ दूसरे ग्राम अपने अधिकारमें रखते हैं। सैयद अबदुल का कब्रपर हर साल मेला लगता है। नगरको चारो ओर तालाब भरे हैं।

औरत (अ० स्त्री०) १ स्त्री, लुगाई। "औरतका उठाना अच्छा नहीं।" (लोकोक्ति) २ पत्नी, बीबी, जो

औरभ्र (सं॰ पु॰) उरभ्रस्य मेषस्य इदम्, उरभ्र-अण्। १ कम्बल, मोटे ऊनकी लोई। संस्कृत पर्याय ऊर्णायु, आविक और राङ्कव है। २ धन्वन्तरिके अन्यतम शिष्य। ३ मेष, भेड़। (क्ली॰) ४ मेष-मांस, भेड़का गोश्त। यह बृंहण, पित्त एवं श्लेष-वर्धक और गुरु होता है। ५ मेषदुग्ध, भेड़का दूध। यह मधुर, स्निग्ध, गुरु, पित्त-कफवर्धक और कासके लिये हितजनक है। ६ ऊर्णावस्त्र, ऊनी कपड़ा। ७ मेषसमूह, भेड़का झुण्ड। (त्रि॰) ८ मेषसम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक।

औरभ्र—एक प्राचीन वैद्यकग्रन्थ रचयिता। सुश्रुत और चक्रदत्तने इनका वचन उद्धृत किया है।

औरभ्रक, औरभ्र देखो।

औरभ्रिक (सं॰ त्रि॰) औरभ्राः पण्यमस्य, उरभ्र ठञ्। १ मेषविक्रयोपजीवी, भेड़ बेचकर अपना काम चलानेवाला। २ मेष-सम्बन्धीय, भेड़के मुताल्लिक। (पु॰) ३ मेषपालक, गड़रिया।

औरग (सं॰ पु॰) उरगजनपदवासी, उरगका बाशिन्दा। उरग देखो।

औरस (सं॰ पु॰) उरसा उत्पादितः, उरस-अण्। १ समान जातीय विवाहित भार्याके गर्भसे उत्पादित पुत्र, असील लड़का। द्वादश प्रकार पुत्रके मध्य यही पुत्र श्रेष्ठ होता है। (मनु ९।१६६) २ असवर्ण भार्याके गर्भसे उत्पादित पुत्र।

"धनञ्जयस्य यथापि निहतं पुत्रमौरसम्।" (भारत, भीष्म ९१अ॰)

(त्रि॰) ३ हृदयोत्पन्न, असील।

औरसक (सं॰ त्रि॰) उत्तम, अच्छा।

औरस-चौरस (हिं॰ वि॰) १ समतल, हमवार, बराबर। (क्रि॰ वि॰) २ चारो ओर, चौतरफ।

औरसना (हिं॰ क्रि॰) रस न रहना, बेमजे पड़ना, बिगड़ना।

औरसिक (सं॰ स्त्री॰) उरस स्वार्थे ठक्। वक्ष, छाती।

औरस्य (सं॰ पु॰) उरसो भवः, उरस्-यत् स्वार्थे अण्। १ औरसपुत्र, असील लड़का। (त्रि॰) २ धर्मज, असील। ३ वक्षःस्थलजात, दिली।

औरास—युक्तप्रान्तके उनाव जिलेका एक ग्राम। यह अक्षा॰ २६° २४' उ॰ तथा देशा॰ ८०° ३१' पू॰में उनावसे संडीला जानेवाली सड़क पर अवस्थित है। सप्ताहमें दो बार बाजार लगता है। अनाज, तम्बाकू, शाक, और देशी तथा विलायती कपड़ेका काम होता है। यहांके बरतन और सोने-चांदीके गहने बनते हैं।

औरिण (सं॰ स्त्री॰) १ मृत्तिकालवण, मट्टीका नमक। २ यवक्षार, जवाखार।

औलीबौली (हिं॰ स्त्री॰) आवली-बावली, पगली, बेवकूफ औरत।

औरुक्षयस (सं॰ पु॰) उरुक्षयःके पुत्र।

औरुबुक (सं॰ क्ली॰) एरण्डतैल, रेंडीका तेल।

औरेब (हिं॰ पु॰) १ कुटिल गमन, टेढ़ी चाल। २ वक्र कर्तन, तिरछा तराश। ३ जटिलत्व, फंसाव। ४ जटिल विषय, पेचीदा बात।

औरैया—१ युक्तप्रान्तके इटावा जिलेकी एक तहसील। यह यमुना, चम्बल और क्वारी नदीके दोनों किनारे विस्तृत है। कितने ही नाले बहा करते हैं। क्षेत्रफल ४०८ वर्गमील है।

२ युक्तप्रदेशके इटावा जिलेका एक नगर। यह अक्षा॰ २६° २८' उ॰ तथा देशा॰ ७९° ३१' १५" पू॰में इटावे और कालपीकी सड़क पर अवस्थित है। ग्वालियर और झांसीके साथ बड़ा व्यवसाय होता है। तहसीली बहुत अच्छी बनी है। १ सराय, २ बड़े तालाब, २ उमदा मसजिद और कितने ही मन्दिर विद्यमान हैं। सुननेमें आया, कि सिपाही विद्रोहके समय कुछ महाजनोंने विद्रोहियोंको उत्कोच-स्वरूप कितना ही धन दे लूट जानेसे अपना प्राण बचाया था।

और्ण (सं॰ त्रि॰) ऊर्णायाः विकारः, ऊर्णा-अञ्। मेषलोम-जात, ऊनी।

और्णनाभ (सं॰ त्रि॰) ऊर्णनाभस्य इदम्, ऊर्णनाभ-अण्। ऊर्णनाभ वंशीय, ऊर्णनाभके खान्दानमें पैदा हुआ।

और्णनाभक (सं॰ त्रि॰) ऊर्णनाभोंसे बना हुआ।

और्णवाध (सं॰ पु॰) १ ऊर्णवाधिके गोत्रापत्य। २ वैयाकरणविशेष।

और्णवाभ—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। यास्कने इनका वचन उद्धृत किया है।

और्णावत (सं॰ त्रि॰) ऊर्णावतोऽयम्, अण्। ऊर्णावतसंबंधीय।

और्णिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्णाया निमित्तं संयोग उत्पातो वा, ऊर्णा-ठञ्। मेषलोम-जात, ऊनी।

और्ध्वकालिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वकाले भवः, ऊर्ध्वकाल-ठञ्। १ ऊर्ध्वकालोत्पन्न, पिछले वक्त पैदा हुआ। २ ऊर्ध्वकाल-सम्बन्धीय, पिछले वक्तके मुताल्लिक।

और्ध्वदेह (सं॰ क्ली॰) ऊर्ध्वदेहस्य इदम्, ऊर्ध्वदेह-अण्। अन्त्येष्टिक्रिया, अरथीका काम-काज।

और्ध्वदेहिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वदेहाय साधुः, ऊर्ध्वदेह-ठञ्। १ मरणान्तर-शास्त्रोक्त कार्यादिसे सम्बन्ध रखनेवाला। मृत्युके दिनसे सपिण्डीकरण पर्यन्त पिण्डदानादि प्रभृति जो कार्य किया जाता, वह और्ध्वदेहिक कहाता है। (क्ली॰) २ अन्त्येष्टिक्रिया, अरथीका काम-काज।

और्ध्वदैहिक (सं॰ त्रि॰) मृत्युके बाद प्रेतोद्देशसे किया जानेवाला।

और्ध्वन्दमिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वन्दमे भवः, ऊर्ध्वन्दम-ठक्। ऊर्ध्वन्दमोत्पन्न, जो ऊपरसे पैदा हो।

और्ध्वसद्मन (सं॰ क्ली॰) सामविशेष।

और्ध्वस्रोतसिक, और्ध्वस्रोतसिक देखो।

और्ध्वस्रोतसिक (सं॰ त्रि॰) ऊर्ध्वस्रोतसि आसक्तः, ऊर्ध्वस्रोतस्-ठञ्। शैव, शिवका भक्त।

और्व (सं॰ क्ली॰) उर्व्यां भवम्, उर्वी-अण्। १ उद्भिद्-लवण, नयासाती नमक। २ मृत्तिका लवण, मट्टीका नमक। ३ यवक्षार, जवाखार। (त्रि॰) ४ भूमिजात, कानी, ज़मीनसे खोदकर निकाला हुआ। (पु॰) उर्व-ऋषेरपत्यम्। ५ उर्व ऋषिके पुत्र। ६ वशिष्ठके एक पुत्र। ७ भृगुवंशीय एक ऋषि। ८ वाड़वानल। भारतमें वाड़वानलकी उत्पत्ति-कथा इसप्रकार लिखी है—क्षत्रियोंके हाथों भृगुका अपमान होने बाद उर्व ऋषि गर्भमें रहे। उसी समय क्षत्रिय भृगुकी पत्नीका गर्भ नाश करनेको उद्यत हुये। किन्तु उर्व ऊरुभेद पूर्वक जन्म ले उसी प्रतिहिंसा-साधनके लिये तपस्या करने लगे। उस उग्र तपस्यामें सर्व प्राणियोंका विनष्ट होना समझ पितृलोकसे पितृपुरुषोंने उनके निकट जा क्रोध छोड़नेको अनुरोध किया था। किन्तु क्षत्रियगणकी उस हिंसाको स्मरण कर उर्व किसी प्रकार क्रोध छोड़नेपर सम्मत न हुये। तब पितृगणने कहा था—'जल सर्वलोकमय है। जलमें ही सर्वलोक रहते हैं। सर्वलोकविनाशके लिये उत्पन्न अपना अग्नि जलमें ही छोड़ दो। उससे तुम्हारी प्रतिज्ञा पूर्ण हो जायेगी।' इसप्रकार अनुरुद्ध होनेपर उर्वने समुद्रके ही मध्य वह क्रोधाग्नि डाल दिया। वहां वृहत् अश्वमुण्डरूपी बन और मुखद्वारा अनल उगल अग्नि जल पीने लगी।

और्व—संस्कृतके एक प्राचीन कवि।

और्वश (सं॰ त्रि॰) उर्वश्या इदम्, उर्वशी-अण्। १ उर्वशी-सम्बन्धीय। (पु॰) उर्वश्या अपत्यं पुमान्। २ उर्वशीके पुत्र, पञ्चप्रवरान्तर्गत एक मुनि।

और्वशेय (सं॰ पु॰) उर्वश्या अपत्यम्, उर्वशी-ढक्। अगस्त्य मुनि। अगस्त्य देखो।

और्वानल (सं॰ पु॰) वड़वानल। और्व देखो।

औल (सं॰ क्ली॰) १ श्वेत शूरण, सफ़ेद ज़मींकन्द। (हिं॰) २ वन्य ज्वर, जंगली बुखार।

औलपि (सं॰ पु॰) उलपस्य अपत्यम्, उलप-इञ्। उलप-पुत्र, उलपके लड़के।

औलपी (सं॰ पु॰) उलपेन प्रोक्तं छन्दोऽधीते, उलप-णिनि। उलप-लिखित छन्दोग्रन्थका पाठक, उलपकी बनायी किताब पढ़नेवाला।

औलपीय (सं॰ पु॰) औलपि-नरेश, औलपियोंके राजा।

औल-फौल (हिं॰ पु॰) १ निन्दागर्भ भाषा, गाली-गुफ्ता। २ अनर्थवाद, बकझक।

औलाद (अ॰ स्त्री॰) सन्तति, नसल, बेल। यह शब्द 'वल्द' का बहुवचन है।

औलान (सं॰ क्ली॰) अवलम्बन, सहारा, टेक।

औलिया (अ॰ पु॰) सिद्धजन, दरवेश।

औली (हिं॰ स्त्री॰) प्रत्यग्राव, टटकी बाल। सर्व प्रथम खेतसे आनीत हरित् एवं अभिनव अन्नको औली कहते हैं।

औलू (हिं॰ वि॰) १ नवीन, नया, अनोखा। २ असाधारण, गैरमामूली। ३ कठिन, नागवार, भारी। ४ विलम्बित, पेचीन। (पु॰) ५ नवीनता, नयापन। ६ काठिन्य, भारीपन। ७ झकझक, बखेड़ा।

औलूक (सं॰ क्ली॰) उलूकानां समूहः, उलूक-अण्। उलूक-समूह, उल्लुओंका झुंड।

औलूक्य (सं॰ पु॰) उलूकस्य अपत्यं पुमान्, उलूक-यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। १ उलूक ऋषिके पुत्र कणाद। यही वैशेषिक दर्शनके प्रणेता थे। २ वैशेषिक दर्शनज्ञ।

औलूक्यदर्शन (सं॰ क्ली॰) वैशेषिक दर्शन।

औलूखल (सं॰ त्रि॰) उलूखले क्षुण्णम्, उलूखल-अण्। १ उलूखलमें कुट्टित, ओखलीमें कूटा हुआ। २ उलूखलोत्पन्न, ओखलीसे निकला हुआ।

औले (हिं॰ त्रि॰) ठगोंका एक शब्द। ठग किसी अपरिचित व्यक्तिसे मिलनेपर इस शब्दको व्यवहार करते और हिन्दूसे 'औले भाई राम राम' तथा मुसल-मानसे 'औले खान् सलाम' कहते हैं। इसका तात्पर्य उसके ठग होने या न होनेका पूछताछ है। यदि वह ठग होता, तो अपनी बोलीमें उन्हें बता देता है। फिर इस शब्दका प्रकृत अर्थ न समझ सकने पर ठग उसे अपने फंदेमें लानेकी चेष्टा लगाते हैं।

औलोकना (हिं॰ क्रि॰) अवलोकन करना, देखना-भालना।

औल्बण्य (सं॰ क्ली॰) आधिक्य, उभरन, अनु-तापन।

औवल (अ॰ वि॰) १ प्रथम, पहला। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ अतिशय उत्तम, सबसे उमदा। ४ प्रधानस्थाना-रूप, सरचोटी। (क्रि॰ वि॰) ५ प्रथमतः, पहले, शुरूमें। (पु॰) ६ आरम्भ, शुरू।

औवेणक (सं॰ क्ली॰) गानविशेष, एक गाना। शास्त्रकारोंने सात प्रकारके गीत कहे हैं—१ अप-रान्तक, २ उल्लोप्य, ३ मद्रक, ४ प्रकरी, ५ औवेणक, ६ सरोबिन्दु और ७ उत्तर।

औशन, औशनस देखो।

औशनस (सं॰ क्ली॰) उशनसा प्रोक्तम्, उशनस्-अण्। १ शुक्राचार्य-प्रणीत ग्रन्थ, शुक्राचार्यकी बनाई किताब। २ उपपुराण विशेष। ३ तीर्थविशेष। (त्रि॰) उशनस इदम्। ४ शुक्राचार्य-सम्बन्धीय।

औशनसी (सं॰ स्त्री॰) उशनसा उत्पन्ना स्त्री। शुक्रा-चार्यकी कन्या, देवयानी। राजा ययातिसे इनका परिणय हुआ था।

औशि (हिं॰) अवश्य देखो।

औशिज (सं॰ पु॰) उशिज् स्वार्थे अण्। स्वार्थेऽण्। पा ४।४।१८। १ दर्पाकुल, स्वाभिमानी। (पु॰) २ पञ्च प्रवरान्तर्गत ऋषिविशेष।

औशीनर (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यं पुमान्, उशीनर-अण्। उशीनरके पुत्र शिवि प्रभृति। उशीनरकी पांच भार्याओंके गर्भसे पांच ही पुत्र हुये थे—मृगाके गर्भसे मृग, कृमीके गर्भसे कृमि, नवाके गर्भसे नव, दर्शाके गर्भसे सुव्रत और दृषद्वतीके गर्भसे शिवि।

औशीनरि (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यम्, उशीनर-इञ्। उशीनरपुत्र, उशीनरके लड़के।

"औशीनरिः पुण्डरीकः समोदितः सत्यः इति।" (भारत, सभा ४४०)

औशीर (सं॰ पु॰-क्ली॰) उशीर-अण् स्वार्थे अण्। १ शय्या, बिस्तर। २ आसन, बैठनेकी चीज। ३ चामर, मुरछल। ४ चामरदण्ड, मुरछलका डंडा। (त्रि॰) ५ उशीरज, खसका बना हुआ।

औशीरिका (सं॰ स्त्री॰) १ अङ्कुर, कोपल। २ आधार, पात्र, बरतन।

औषण (सं॰ क्ली॰) उषणस्य भावः, उषण-अण्। १ कटुरस, कड़ुवाहट, चरपरापन। २ मरिच, काली मिर्च।

औषणशौण्डी (सं॰ स्त्री॰) औषणे कटुरसे शौण्डी विख्याता, ७ तत्। सुगठी, सोंठ।

औषदश्वि (सं॰ पु॰) उषदश्वस्यापत्यम्, औषदश्व-इञ्। औषदश्व राजाके वसुमान् नामक पुत्र। यह ययातिके दौहित्र थे। (भारत, आदि ९१ अ॰)

औषध (सं॰ क्ली॰) ओषधेरिदं ओषधिरेव वा, ओषधि-अण्। ओषधेरजातौ। पा ५।४।३७। रोगनाशक द्रव्य, दवा। इसका वैद्यकोक्त पर्याय भेषज, भैषज्य, अगद, जायु, जैत्र, आयुर्योग, गदाराति, अमृत और आयुर्द्रव्य है।

वैद्यकमतसे औषध तीन भागमें विभक्त है। कितने ही औषध कुपित दोष दुष्यके प्रशमक, कितने ही उसके शोधक और कितने ही स्वस्थ अवस्थामें उपयोगी होते हैं। पित्तकारोगमें देय, विरेचक एवं वमनकारक द्रव्य और दैहिक रोगमें साधारणत: तैल, घृत तथा मधु औषध उपयोगी है। मानस रोगमें बुद्धि, धैर्य और आत्मज्ञान ही औषध है।

जिस स्थानपर हल नहीं चलता एवं वृहत् वृक्षादि नहीं रहता, और जो स्थान स्निग्ध, मृदु, स्थिर, समतल, कृष्ण, गौर अथवा लोहितवर्ण लगता, उसी स्थानका औषध लेना पड़ता है। वल्मीक, श्मशान, देवमन्दिर और वालुकामय, गर्त वा प्रस्तर विशिष्ट तथा निम्नोन्नत स्थानमें उत्पन्न होनेवाला औषध उपयोगी नहीं। पूर्वोक्त स्थानजात होते भी यदि औषध कीटजुष्ट अथवा वर्षा, आतप, वायु, अग्नि, जल प्रभृतिके आघातसे मर जाये, तो उसको कभी हाथ न लगाये। फिर सरस, परिपुष्ट और मृत्तिकाको बहुदूर पर्यन्त भेद करनेवाला मूल ही ग्राह्य है।

कोई कोई कहता—प्रावृट्, वर्षा, शरत्, हेमन्त, वसन्त एवं ग्रीष्मकालको यथाक्रम मूल, पत्र, त्वक्, क्षीर, सार तथा फल लेना पड़ता है। किन्तु सुश्रुतने उसमें दोष लगा कहा—सौम्य ऋतुमें सौम्य और आग्नेय ऋतुमें आग्नेय औषध संग्रह करना उचित है। वीर्यवान् और एक वत्सर अतिक्रम न करनेवाला औषध ही रोगनाशक होता है। केवलमात्र मधु, घृत, गुड़, पिप्पली और विडङ्ग द्रव्य पुरातन पड़नेसे उपकारप्रद है। पृथिवी एवं जलगुणाधिक्य स्थानका विरेचक, अग्नि, आकाश तथा वायुगुण-भूयिष्ठ स्थानका वमनविरेचन-कारक और आकाशगुणबहुल स्थानका प्रशामक औषध अधिक गुणशाली होता है।

स्थूल मूलका काठ छोड़ वल्कल और सूक्ष्म मूलका काष्ठ और वल्कल समस्त ही ग्रहण करना चाहिये। वटादिका वल्कल, वीजकादिका सार, तालिशादिका पत्र, त्रिफला प्रभृतिका फल, चित्रकका मूल, श्वेतका कन्द, धातकीका पुष्प, खदिरादिका सार, और कण्टकारीका समस्त अंश लेना पड़ता है। बेलका कच्चा और सोनालूका पक्का फल ग्राह्य है। औषधके स्थान विशेषका उल्लेख न रहनेसे मूल ही लेना पड़ता है। योगविशेषमें औषधका परिमाण जो लिखा जाता, कच्चा या गीला औषध डालनेमें उससे द्विगुण देना उचित आता है।

विषय समझ व्यवहार कर सकनेसे अमृत तुल्य फल मिलता—किस प्रकार कौन अवस्थामें क्या औषध चलता है। नहीं तो विष वज्र प्रभृतिकी भांति औषध अपकार साधन करता है। नाम, रूप और गुण—साधारणत: तीन ज्ञानस्थ विषय समझ लेनेसे ही औषधका पूरा ज्ञान नहीं होता। उक्त समस्त ज्ञानस्थके साथ औषधके योगकी प्रणाली समझना भी विशेष आवश्यक है। क्योंकि योगविशेषसे विष भी अमृत बन जाता है।

उपवासके पीछे जलपान करने, क्षीण रहने, अजीर्ण मालूम पड़ने, आहार ले चुकने और पिपासा लगने पर संशोधन प्रभृति कोई औषध सेवन करना न चाहिये। साधारणत: अन्नहीन औषध सेवनकी ही व्यवस्था है। उससे औषधका अधिक वीर्य प्रकाश पाता और नि:सन्देह रोग नष्ट हो जाता है। किन्तु बालक, वृद्ध, युवती और मृदु व्यक्तिके लिये ऐसी व्यवस्था करना न चाहिये। इससे उन्हें अत्यन्त ग्लानि लगती और बलकी हानि पड़ती है।

आहारसे कुछ पहले उन्हें औषध सेवन करना चाहिये। इससे औषध अनाहत होनेपर बारम्बार मुखमें चढ़ नहीं सकता, परिपाक भी शीघ्र पड़ता और बलक्षय नहीं लगता। औषध परिपाक होनेपर वायुका अनुलोम, स्वास्थ्य, क्षुधातृष्णाका प्रकाश, मनमें आनन्द, शरीरका हलकापन, सकल इन्द्रियका शौच और शुद्ध उद्गार होता है। औषध संपूर्ण जीर्ण न पड़ते अथवा आहार सम्यक् परिपाक न होते औषध सेवन करनेसे पीड़ाकी शान्ति न आनेपर अन्यान्य रोगकी भी उत्पत्ति होती है। सम्पूर्ण रूप औषध परिपाक न होते क्लान्ति, दाह, अवसन्नता, भ्रम, मूर्च्छा, शिर:पीड़ा, अस्वस्थबोध और बलहानिका वेग बढ़ता है।

औलू (हिं॰ वि॰) १ नवीन, नया, अनोखा। २ असाधारण, ग़ैरमामूली। ३ कठिन, नागवार, भारी। ४ विचलित, बेचैन। (पु॰) ५ नवीनता, नयापन। ६ काठिन्य, भारीपन। ७ वकलय, बेचैनी।

औलूक (सं॰ क्लो॰) उलूकानां समूहः, उलूक-अञ्। उलूक-समूह, उल्लुओंका झुंड।

औलूक्य (सं॰ पु॰) उलूकस्य अपत्यं पुमान्, उलूक-यञ्। गर्गादिभ्यो यञ्। पा ४।१।१०५। १ उलूक ऋषिके पुत्र कणाद। यही वैशेषिक दर्शनके प्रणेता थे। २ वैशेषिक दर्शनज्ञ।

औलूक्यदर्शन (सं॰ क्लो॰) वैशेषिक दर्शन।

औलूखल (सं॰ त्रि॰) उलूखले क्षुणम्, उलूखल-अण्। १ उलूखलमें कुट्टित, ओखली में कूटा हुआ। २ उलूखलोत्पन्न, ओखलीसे निकला हुआ।

औले (हिं॰ वि॰) ठगोंका एक शब्द। ठग किसी अपरिचित व्यक्तिसे मिलनेपर इस शब्दको व्यवहार करते और हिन्दूसे 'औले भाई राम राम' तथा मुसलमानसे 'औले खान् सलाम' कहते हैं। इसका तात्पर्य्य उसके ठग होने या न होने को पूछताछ है। यदि वह ठग होता, तो अपनी बोलीमें उन्हें बता देता है। फिर इस शब्दका प्रकृत अर्थ न समझ सकने पर ठग उसे अपने फंदेमें लाने की चेष्टा लगाते हैं।

औलोकना (हिं॰ क्लो॰) अवलोकन करना, देखना-भालना।

औल्वण्य (सं॰ क्लो॰) आधिक्य, कसरत, बहुतायत।

औवल (अ॰ वि॰) १ प्रथम, पहला। २ श्रेष्ठ, बड़ा। ३ अतिशय उच्च, सबसे उमदा। ४ प्रस्तावनारूप, तमहीदी। (क्रि॰ वि॰) ५ प्रथमतः, पहले, शुरूमें। (पु॰) ६ आरम्भ, शुरू।

औवेणक (सं॰ क्लो॰) गीतविशेष, एक गाना। याज्ञवल्क्यने सात प्रकारके गीत कहे हैं—१ अपरान्तक, २ उल्लोप्य, ३ मद्रक, ४ प्रकरी, ५ औवेणक, ६ सरोविन्दु और ७ उत्तर।

औशन, औशनस देखो।

औशनस (सं॰ क्लो॰) उशनसा शुक्रेण प्रोक्तम्, उशनस्-अण्। १ शुक्राचार्य-प्रणीत ग्रन्थ, शुक्राचार्यकी बनाई किताब। २ उपपुराण विशेष। ३ तीर्थविशेष। (त्रि॰) उशनस इदम्। ४ शुक्राचार्य-सम्बन्धीय।

औशनसी (सं॰ स्त्री॰) उशनसा उपत्यं स्त्री। शुक्राचार्यकी कन्या, देवयानी। राजा ययातिसे इनका परिणय हुआ था।

औशि (हिं॰) अवश्य देखो।

औशिज (सं॰ पु॰) उशिज् स्वार्थे अण्। प्रज्ञादिभ्यश्च। पा ५।४।३८। १ इच्छायुक्त, ख़ाहिशमन्द। (पु॰) २ पञ्च प्रवरान्तर्गत ऋषिविशेष।

औशीनर (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यं पुमान्, उशीनर-अण्। उशीनरके पुत्र शिवि प्रभृति। उशीनरकी पांच भार्याओंके गर्भसे पांच ही पुत्र हुये थे—मृगाके गर्भसे मृग, कृमीके गर्भसे कृमि, नवाके गर्भसे नव, दर्वाके गर्भसे सुव्रत और दृषद्वतीके गर्भसे शिवि।

औशीनरि (सं॰ पु॰) उशीनरस्यापत्यम्, उशीनर-इञ्। उशीनरपुत्र, उशीनरके लड़के।

"औशीनरिः पुण्डरीकः ययातिः शरभः शुचिः।" (भारत, सभा ८ अ॰)

औशीर (सं॰ पु॰-क्लो॰) वश-ईरन् स्वार्थे अण्। १ शय्या, बिस्तर। २ आसन, बैठनेकी चीज़। ३ चामर, मुरछल। ४ चामरदण्ड, मुरछलको डंडा। (त्रि॰) ५ उशीरज, खसका बना हुआ।

औशीरिका (सं॰ स्त्री॰) १ अङ्कुर, कोपल। २ आधार, पात्र, बरतन।

औषण (सं॰ क्लो॰) उषणस्य भावः, उषण-अण्। १ कटुरस, कड़ुवाहट, चरपरापन। २ मरिच, काली मिर्च।

औषणशौण्डी (सं॰ स्त्री॰) औषणे कटुरसे शौण्डी विख्याता, ७ तत्। सुण्ठी, सोंठ।

औषदश्वि (सं॰ पु॰) औषदश्वस्यापत्यम्, औषदश्व-इञ्। औषदश्व राजाके वसुमान् नामक पुत्र। यह ययातिके दौहित्र थे। (भारत, आदि ८९ अ॰)

औषध (सं॰ क्लो॰) ओषधेरिदं ओषधिरेव वा, ओषधि-अण्। ओषधेरजातौ। पा ५।४।३७। रोगनाशक द्रव्य, दवा। इसका वैद्यकोक्त पर्याय भेषज, भैषज्य, अगद, जायु, जैत्र, आयुर्योग, गदाराति, अमृत और आयुर्द्रव्य है।

वैद्यकमतसे औषध तीन भागमें विभक्त है। कितने ही औषध कुपित दोष दुष्यके प्रशमक, कितने ही उसके शोधक और कितने ही स्वस्थ अवस्थामें उपयोगी होते हैं। पिचकारीमें देय, विरेचक एवं वमनकारक द्रव्य और दैहिक रोगमें साधारणतः तैल, घृत तथा मधु औषध उपयोगी है। मानस रोगमें बुद्धि, धैर्य और आत्मज्ञान ही औषध है।

जिस स्थानपर हल नहीं चलता एवं वृहत् वृक्षादि नहीं रहता, और जो स्थान स्निग्ध, मृदु, स्थिर, समतल, कृष्ण, गौर अथवा लोहितवर्ण लगता, उसी स्थानका औषध लेना पड़ता है। वल्मीक, श्मशान, देवमन्दिर और वालुकामय, गर्त वा प्रस्तर विशिष्ट तथा निम्नोन्नत स्थानमें उत्पन्न होनेवाला औषध उपयोगी नहीं। पूर्वोक्त स्थानजात होते भी यदि औषध कीटजुष्ट अथवा अस्त्र, आतप, वायु, अग्नि, जल प्रभृतिके आघातसे मर जावे, तो उसको कभी हाथ न लगावे। फिर सरस, परिपुष्ट और मृत्तिकाको बहुदूर पर्यन्त भेद करनेवाला मूल ही ग्राह्य है।

कोई-कोई कहता—प्रावृट्, वर्षा, शरत्, हेमन्त, वसन्त एवं ग्रीष्मकालको यथाक्रम मूल, पत्र, त्वक्, क्षीर, सार तथा फल लेना पड़ता है। किन्तु सुश्रुतने उसमें दोष लगा कहा—सौम्य ऋतुमें सौम्य और आग्नेय ऋतुमें आग्नेय औषध संग्रह करना उचित है। वीर्यवान् और एक वत्सर अतिक्रम न करनेवाला औषध ही रोगनाशक होता है। केवलमात्र मधु, घृत, गुड, पिप्पली और विडङ्ग द्रव्य पुरातन पड़नेसे उपकारप्रद है। पृथिवी एवं जलगुणाधिक्य स्थानका विरेचक, अग्नि, आकाश तथा वायुगुण-भूयिष्ठ स्थानका वमनविरेचन-कारक और आकाशगुणबहुल स्थानका शमक औषध अधिक गुणशाली होता है।

स्थूल मूलका काष्ठ छोड़ वल्कल और सूक्ष्म मूलका काष्ठ और वल्कल समस्त ही ग्रहण करना चाहिये। वटादिका वल्कल, बीजादिका सार, तालिशादिका पत्र, त्रिफला प्रभृतिका फल, चित्रकका मूल, ओलका कन्द, धातकीका पुष्प, खदिरादिका सार, और कण्टकारीका समस्त अंश लेना पड़ता है। बेलका कच्चा और मीनालूका पक्का फल ग्राह्य है। औषधके स्थान विशेषका उल्लेख न रहनेसे मूल ही लेना पड़ता है। योगविशेषमें औषधका परिमाण जो लिखा जाता, कच्चा या गीला औषध डालनेमें उससे द्विगुण देना उचित आता है।

विषय समझ व्यवहार कर सकनेसे अमृत तुल्य फल मिलता—किस प्रकार कौन अवस्थामें क्या औषध चलता है। नहीं तो विष वज्र प्रभृतिकी भांति औषध अपकार साधन करता है। नाम, रूप और गुण—साधारणतः तीन ज्ञानका विषय समझ लेनेसे ही औषधका पूरा ज्ञान नहीं होता। उक्त समस्त ज्ञानत्रयके साथ औषधके योगकी प्रणाली समझना भी विशेष आवश्यक है। क्योंकि योगविशेषसे विष भी अमृत बन जाता है।

उपवासके पीछे जलपान करने, क्षीण रहने, अजीर्ण मालूम पड़ने, आहार ले चुकने और पिपासा लगने पर संशोधन प्रभृति कोई औषध सेवन करना न चाहिये। साधारणतः अन्नहीन औषध सेवनकी ही व्यवस्था है। उससे औषधका अधिक वीर्य प्रकाश पाता और निःसन्देह रोग नष्ट हो जाता है। किन्तु बालक, वृद्ध, युवती और मृदु व्यक्तिके लिये ऐसी व्यवस्था करना न चाहिये। इससे उन्हें अत्यन्त ग्लानि लगती और बलकी हानि पड़ती है।

आहारसे कुछ पहले उन्हें औषध सेवन करना चाहिये। उससे औषध अन्नावृत होनेपर बारम्बार मुखमें चढ़ नहीं सकता, परिपाक भी शीघ्र पड़ता और बलक्षय नहीं लगता। औषध परिपाक होनेपर वायुका अनुलोम, स्वास्थ्य, क्षुधातृष्णाका प्रकाश, मनमें आनन्द, शरीरका हलकापन, सकल इन्द्रियका शौच और शुद्ध उद्गार आता है। औषध संपूर्ण जीर्ण न पड़ते अथवा आहार सम्यक् परिपाक न होते औषध सेवन करनेसे पीड़ाकी शान्ति न आने पर अन्यान्य रोगकी भी उत्पत्ति होती है। सम्पूर्ण रूप औषध परिपाक न होते क्लान्ति, दाह, अवसन्नता, भ्रम, मूर्च्छा, शिरःपीड़ा, अप्रबोध और बलहानिका वेग बढ़ता है।

औषधके सेवनमें मात्राका कोई नियम निर्दिष्ट नहीं। दोष, अग्नि, बल, वयस, व्याधि, द्रव्य और कोष्ठको देख मात्रा ठहराना पड़ती है। औषध-परीक्षा प्रभृति अन्यान्य विषयको परिभाषा देखो।

२ विष्णुका नामान्तर। (त्रि०) ३ औषधिजात, जड़ीबूटीसे बना हुआ।

औषधकाल (सं० पु०) औषधसेवनका समय, दवा खानेका वक्त। यह दश प्रकारका होता है, निर्भक्त, प्राग्भक्त, अधोभक्त, मध्येभक्त, अन्तराभक्त, सभक्त, सामुद्र, मुहुर्मुहुग्रसि और ग्रासान्तर। बे खाये निर्भक्त, खानेसे पहले प्राग्भक्त, खानेके बाद अधोभक्त, खानेके बीच मध्येभक्त, दोनो समय खानेके बीच अन्तराभक्त, खानेमें मिलाकर सभक्त, खानेके पहले और पीछे सामुद्र, बेखाये या खाये बारबार मुहु-र्मुहुग्रसि और, कौरकौर पर लिया जानेवाला औषध ग्रासान्तर कहाता है। निर्भक्त वीर्य बढ़ाता, प्राग्भक्त शीघ्र अन्न पचाता, अधोभक्त बहुविध रोग मिटाता, मध्येभक्त मध्य देहके रोग दबाता, अन्तराभक्त हृद्यता लाता और सभक्त सब रोगियोंके लिये पथ्य समझा जाता है।

औषधाजीव (सं० त्रि०) औषधेन आजीवति, औषध-आ-जीव-अच्। औषधविक्रेता, दवाफ़रोश, जो दवा बेचकर अपना काम चलाता हो।

औषधालय (सं० पु०) औषधानां आलयः, ६-तत्। औषधभाण्डार, दवाख़ाना। जिस स्थानमें नानाविध औषध विक्रयके लिये सर्वदा प्रस्तुत रखते, उसे औषधा-लय कहते हैं।

औषधि (सं० स्त्री०) आ-ओषधिः। १ सम्यक् ओषधि, अच्छी जड़ी-बूटी। २ गुडूची, गुर्च। ३ रास्ना। ४ दूर्वा, दूब। ५ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। ६ हरीतकी, हर। ७ मद्य, शराब। ८ औषध, दवा। ९ फल-पाकान्त वृक्षादि, फल पकते ही मर जानेवाला पौदा।

औषधिगन्ध (सं० पु०) आघ्राणसे ज्वरादिकर औषधिका गन्ध, जिस जड़ी-बूटीकी खुशबूसे बुखार वगैरह बीमारी लगे।

औषधिप्रतिनिधि (सं० पु०) न मिलनेवाली औषधिके स्थानमें समगुण द्रव्यान्तरका ग्रहण, हासिल न होने-वाली जड़ी-बूटी की जगह दूसरी चीज़का लिया जाना। मेदाके अभावमें अश्वगन्धा, महामेदाके अभावमें शारिवा, जीवकर्षभकाके अभावमें गुडूची, चित्रकके अभावमें दन्ती या अपामार्गका क्षार, धन्वयासाके अभावमें दुरालभा, तगरके अभावमें कुष्ठ, मुर्वाके अभावमें जिङ्गिनीत्वक्, अहिंसा-लक्षणाके अभावमें मानकमयूरपुच्छ, वकुलके अभावमें कल्हा-रोत्पलपद्म, नीलोत्पलके अभावमें कुमुद, जातीपुष्पके अभावमें लवङ्ग, अर्कादिक्षीरके अभावमें उनके पत्रका रस और पुष्करमूल एवं लाङ्गलकी ग्रन्थिके अभावमें कुष्ठ डालते हैं। (भावप्रकाश) फिर चविका न मिलनेसे गजपिप्पली, सोमराजी न मिलनेसे चक्रमर्दफल, दार्वी न मिलनेसे हरिद्रा, रसाञ्जन न मिलनेसे दार्वीक्वाथ, सौराष्ट्रमृत् न मिलनेसे फटिकारी, तालीश न मिलनेसे स्वर्णताली, भार्गी न मिलनेसे तालीश वा कण्टकारी-मूल, रुचक न मिलनेसे पांशुलवण, यष्टीमधु न मिलनेसे धातकीपुष्प, अम्लवेतस न मिलनेसे चुक्र, द्राक्षा न मिलनेसे गाम्भारीपुष्प, गाम्भारीपुष्प न मिलनेसे पीतशालपुष्प, नख न मिलनेसे लवङ्ग, कस्तूरी न मिलनेसे काकोली, काकोली न मिलनेसे जातीपुष्प, कर्पूर न मिलनेसे ग्रन्थिपर्णी वा सुगन्धि-मुस्तक, कुङ्कुम न मिलनेसे कुसुम्भ, श्रीखण्डचन्दन न मिलनेसे कर्पूर, श्रीखण्डचन्दन एवं कर्पूर दोनों न मिलनेसे रक्तचन्दन, मधु न मिलनेसे जीर्णगुड़, पुरातन गुड़ न मिलनेसे यामचतुष्टयशुष्क गुड़, क्षीर न मिलनेसे मौद्ग मासुर रस, शर्करा न मिलनेसे खण्ड, शालि न मिलनेसे षष्टिक, दाड़िम न मिलनेसे वृक्षाम्ल, सौराष्ट्रमृत् न मिलनेसे पङ्कपर्पटी, लौह न मिलनेसे लौहका मल, चव्यगजपिप्पली न मिलनेसे पिप्पली-मूल और मुञ्जातिका न मिलनेसे तालमुस्त वा माजूफल ग्राह्य है। (परिभाषाप्रदीप)

औषधिवीर्य (सं० क्ली०) शीतोष्णादिरूप औषधिका वीर्य, जड़ीबूटीकी ताक़त। यह शीत, उष्ण, रूक्ष, स्निग्ध, तीक्ष्ण, मृदु, पिच्छिल, तीव्र और विशद होता

है। औषधि वीर्य बल एवं गुणके उत्कर्षसे रसको दबा अपना काम करता है। (सुश्रुत)

औषधी, औषधि देखो।

औषधीपञ्चामृत (सं० क्लो०) अमृत जैसी पांच औषधी, बहुत उम्दा पांच जड़ी-बूटी। गुड़ूची, गोक्षुर, मुषली, मुण्डी और शतावरी पांचोंको औषधीपञ्चामृत कहते हैं।

औषधीपति (सं० पु०) औषधीका राजा सोम।

औषधीय (सं० त्रि०) शाकलता-सम्बन्धीय, नबातातो, जड़ीबूटीसे सरोकार रखनेवाला।

औषधेनव—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। सुश्रुतने इनका वचन उद्धृत किया है।

औषर (सं० क्लो०) ऊषरे भवम्, ऊषर-अण्। १ पांशु-लवण, शोरा। २ नैत्तिकालवण, रेहका नमक। ३ सैन्धवलवण। यह क्षार, तिक्त, वातकफघ्न, विदाही, पित्तकृत्, ग्राही और मूत्रशोधक होता है। (राजनिघण्टु)

औषरक औषर देखो।

औषस (सं० त्रि०) उषसि भवः, उषस्-अण्। १ उषा-कालोत्पन्न, जो सवेरे पैदा हो। २ उषासम्बन्धीय, सहरी, सिदौसी।

औषसिक (सं० त्रि०) उषसि भवः, उषस्-ठञ्। उषा सम्बन्धीय, सहरी, सदौसी।

औषस्त (सं० त्रि०) उषस्तेरिदम्, उषस्ति-अण्। १ उषस्ति ऋषि-सम्बन्धीय। (क्लो०) २ छान्दोग्य उपनिषत्का उषस्ति-चरित नामक ब्राह्मणकाण्ड।

औषस्त्य, औषस्त देखो।

औषिक (सं० त्रि०) उषसि भवः, ठञ्। १ उषा-कालोत्पन्न, सवेरे पैदा होनेवाला। २ उषाकालको भ्रमण करनेवाला, जो सवेरे बाहर निकलकर टहलता हो।

औषिज (सं० त्रि०) इच्छुक, ख्वाहिशमन्द।

औषीन, औषिज देखो।

औष्ट्र (सं० त्रि०) उष्ट्रस्य इदम्, उष्ट्र-अण्। उष्ट्र-सम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला। २ उष्ट्रयुक्त, ऊंटोंसे भरा हुआ। (क्लो०) ३ उष्ट्रप्रकृति, ऊंटकी कुदरत या जात।

औष्ट्रक (सं० क्लो०) उष्ट्राणां समूहः, उष्ट्र-वुञ्। गोत्रोक्षोष्ट्रोरभ्रराजराजन्येति। पा ४।२।३९। १ उष्ट्र-समूह, ऊंटका झुंड। (त्रि०) उष्ट्रस्येदम्। २ उष्ट्रसम्बन्धीय, ऊंटसे सरोकार रखनेवाला।

औष्ट्रक्षीर (सं० क्लो०) उष्ट्रीदुग्ध, ऊंटनीका दूध। यह रूक्ष, उष्ण, किञ्चित् लवणरस, स्वादु, लघु और शोथ, गुल्म, उदर, अर्शः, क्रिमि, कुष्ठ एवं विषविनाशक है।

औष्ट्रतक्र (सं० क्लो०) उष्ट्री-दुग्ध-जात घोल, ऊंटनीके दूधका मट्ठा। यह विरस, गुरु, रूक्ष, दीपन और पीनस, श्वास तथा कासके लिये हितकारक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

औष्ट्रनवनीत (सं० क्लो०) उष्ट्रीदुग्धजात नवनीत, ऊंटनीके दूधका मक्खन। यह लघुपाक, शीतल और व्रण, क्रिमि, कफ, रक्तदोष, वात एवं पित्तघ्न है। (राजनिघण्टु)

औष्ट्रमूत्र (सं० क्लो०) उष्ट्रमूत्र, शुतरका पेशाब। यह उन्माद, शोफ, अर्शः, क्रिमि, शूल और उदर व्याधि दूर करनेवाला है। (मदनपाल)

औष्ट्ररथ (सं० त्रि०) उष्ट्ररथस्येदम्, उष्ट्ररथ-अञ्। पत्रपूर्वादञ्। पा ४।३।१२२। उष्ट्ररथ सम्बन्धीय, ऊंटगाड़ीसे सरोकार रखनेवाला।

औष्ट्राक्षि (सं० पु०) गुरु, उस्ताद, सिखाने-पढ़ानेवाला।

औष्ट्रायण (सं० पु०) उष्ट्रस्यापत्यम्, उष्ट्र-फक्। उष्ट्रवंशीय।

औष्ट्रिक (सं० त्रि०) उष्ट्रे भवः, उष्ट्र-ठक्। उष्ट्रजात, ऊंटसे पैदा।

औष्ठ (सं० त्रि०) ओष्ठवदाकारोऽस्त्यस्य, ओष्ठ-अण्। ओष्ठके आकारसदृश, होंठ-जैसा बना हुआ।

औष्ठ्य (सं० त्रि०) ओष्ठे भवः, ओष्ठ-यत् स्वार्थे अण्। १ ओष्ठजात, होंठसे निकलनेवाला। (क्लो०) २ ओष्ठके द्वारा उच्चार्य वर्ण, होंठसे निकलनेवाला हर्फ। उ, ऊ, ओ, औ, प, फ, ब, भ और म वर्ण औष्ठ्य है।

औष्ण्य (सं० क्लो०) उष्णस्य भावः, उष्ण-अण्। १ उष्णता, गरमी। २ उत्ताप, धूप। ३ सन्ताप-बुखार।

औष्णिज (सं० क्लो०) उष्णिज स्वार्थे अण्। १ पगड़ी,

साफा। (त्रि०) २ पगड़ी या साफेसे सरोकार रखनेवाला।

औष्णिह (सं० त्रि०) उष्णिहि भवः, उष्णिह-अण्। उत्सादिभ्यो ऽञ्। पा ४।१।८६। १ उष्णिक् छन्दोजात। २ उष्णिक् छन्दः सम्बन्धीय। ३ उष्णिक् छन्दोद्वारा स्तव किया जानेवाला।

औष्णीक (सं० त्रि०) उष्णीषे शोभते, उष्णीष-अण्। १ उष्णीषधारी, पगड़ी बांधनेवाला। २ उष्णीषधारी नृपति, पगड़ी बांधनेवाला राजा। ३ उष्णीष-धारी देश, जिस मुल्कमें पगड़ी बांधनेवाले लोग रहें।

औष्ण्य (सं० क्ली०) उष्णस्य भावः, उष्ण-ष्यञ्। गुणवचनब्राह्मणादिभ्यः कर्मणि च। पा ५।१।२८। उष्णता, गर्मी। यह तेज और पित्तका स्वाभाविक गुण है।

औष्म (सं० क्ली०) उष्मणो भावः, उष्मन्-अण्। १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णस्पर्श, लमस-गर्म। तेजोगुण-बहुल पदार्थ मात्रमें औष्मकी उपलब्धि होती है। पार्थिव शरीरके स्पर्शसे जो औष्म मालूम पड़ता, वह शरीरका नहीं ठहरता। क्योंकि मृतशरीरमें रूपादि समस्त गुण रहते भी औष्मका होना असम्भव है। इसलिये शारीरिक औष्मको शास्त्रने जीवात्माका गुण निर्दिष्ट किया है।

औसक (हिं० स्त्री०) रोग, बीमारी।

औसत (अ० पु०) १ मध्यमावस्था, सरासरी, पड़ता, सबसे बड़े और सबसे छोटेके बीचकी अंदत। कई स्थानोंकी संख्याका औसत लगानेमें पहले सबको जोड़ डालते हैं। फिर उस जोड़में जितने स्थान होते, उतनेसे भाग देते हैं। इस क्रियासे जो उपलब्धि आती, वही औसत कहाती है। (वि०) २ गम्य, जाने लायक, बीचवाला।

औसन (हिं० स्त्री०) १ उष्णता, गरमी। २ सड़न। ३ व्याकुलता, घबराहट। ४ पकाव।

औसना (हिं० क्रि०) १ उष्णता आना, गर्मी बढ़ जाना। २ सड़ना। ३ व्याकुल होना, घबराना। ४ पकना।

औसर (हिं०) अवसर देखो।

औसाम (हिं० पु०) १ धैर्य, होश, बंधा खयाल। २ अवसान, अखीर।

औसाना (हिं० क्रि०) पाक करना, पकाना, पाल डालना।

औसेर (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, देर। २ चिन्ता, खोज। ३ दुःख, तकलीफ।

औहत (हिं० स्त्री०) अकाल-मृत्यु, दुर्दशा, बुरा हाल।

औहाती (हिं० स्त्री०) सधवा, सौभाग्यवती, जिस औरतके खाविन्द रहे।

औहास (हिं०) अवहास देखो।

अं

अं—१ तन्त्रके मतसे पञ्चदश स्वरवर्ण। इसका नाम अनुस्वार है। इस वर्णका अक्षर समाम्नाय सूत्रमें नहीं लगता। किन्तु अलपत्वका कार्य निर्वाह करनेसे पाणिनिके मतमें इसे अयोगवाह कहते हैं। मुग्धबोधके मतसे इसका नाम 'श' है। आकृति विन्दुमात्र रहती है। इसे अनुना... वर्ण कहते हैं। 'न' और 'म'के स्थानमें इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतमें—अंकार विन्दुयुक्त, पीतवर्ण विद्युत्तुल्य, पञ्चप्राणात्मक, ब्रह्मादि देवमय, सर्व-ज्ञानमय और विन्दुत्रययुक्त है। 'अं'के लिखनेकी प्रणाली—अकारके ऊपर दक्षिण दिक्को एक विन्दु-मात्र है। रेखाके समूहमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र रहते हैं। विन्दुमयी रेखाका नाम आद्याशक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रोक्त नाम अंकार, अक्रुप, दन्त, घटिका, समगुह्यक, प्रद्युम्न, श्रीमुख, प्रीति, वीजयोनि, वृषध्वज, पर, शशी, प्रमाणोश, सोमविन्दु, कलानिधि, अक्रूर, चेतना, नादपूर्ण, दुःखहर, शिव, मङ्गलमय, शम्भु, नरेश, सुखदुःखप्रवर्तक, पूर्णिमा, रेवती, शङ्ख, कन्याधर, वियद्रवि, अमृतकर्षिणी, शून्य, विचित्रा, व्योमरूपिणी, केदार, रात्रिनाश, कुब्जिका और बुद्बुद है।

(क्ली०) २ परब्रह्म। ३ महेश्वर।

"विन्दुविसर्गःसुसुखः परः सर्वाङ्गः परः।" (भारत, अनु० १७।१२८)

अः

अः (ः)—१ विसर्ग, दो विन्दुमात्र। तन्त्रके मतसे यह षोड़श स्वरवर्ण है। अकारके उच्चारणमें इसका उच्चारणस्थान भी कण्ठ है। पाणिनिके मतमें यह वर्ण अयोगवाह है। मुग्धबोध इसका नाम 'विः' लिखता है। स् और र् के स्थानसे इसकी उत्पत्ति होती है। कामधेनुतन्त्रके मतसे—अःकार परमेश, रक्तवर्ण, विद्युत्तुल्य, पञ्चदेवमय, पञ्चप्राणमय, सर्वज्ञानमय, आत्मादितत्त्वसंयुक्त, मूर्तिमान् कुण्डली, विन्दुत्रय-विशिष्ट एवं शक्तित्रययुक्त है। यह अक्षर शक्ति किशोरवयस्का शिवपत्नी समझा पड़ता है। इसके लिखनकी प्रणाली—अकारको दिक् ऊर्ध्व और अधः दो विन्दु लगाना है। इसकी सकल रेखावोंमें ब्रह्मा, विष्णु और महेश अवस्थान करते हैं। मात्रा शक्ति और विन्दुद्वय-युक्त रेखा आद्याशक्ति है। (वर्णोद्धारतन्त्र)

इसका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम—अः, कण्टक, महासेन, कलापूर्णा, अमृता, हरि, इच्छा, भद्रा, गणेश, रति, विद्यामुखी, सुख, द्विविन्दु, रसना, सोम, अनिरुद्ध, दुःखसूचक, द्विजिह्व, कुण्डल, वक्त्र, सर्ग, शक्ति, निशाकर, सुन्दर, सुयशा, अनन्ता, गणनाथ और महेश्वर है। (पु०) २ महेश्वर।

क

क—व्यञ्जन वर्णोंका प्रथम अक्षर। इसकी वाम रेखा ब्रह्मा, दक्षिण रेखा विष्णु, अधो रेखा रुद्र, मात्रा सरस्वती अङ्कुशाकार रेखा कुण्डली और मध्यस्थ शून्य स्थान सदाशिव है। (वर्णोद्धारतन्त्र) ककारका तन्त्रशास्त्रोक्त नाम क्रोधी, ऐश, महाकाली, कामदेव, प्रकाशक, कपाली, तैजस, शान्ति, वासुदेव, जय, अनल, चक्री, प्रजापति, सृष्टि, दक्षिणस्कन्ध, विशाम्पति, अनन्त, पार्थिव, विन्दु, तापिनी, परमात्मक, वर्गाद्य, सुखी, ब्रह्मा, सत्याद्य, अम्भः, शिव, जल, माहेश्वरी, तुला, पुष्पा, मङ्गल, चरण, ख़ार, नित्या, कामेश्वरी, मुख्य, कामरूप, गजेन्द्रक, क्षोपुर, रमण और रक्तकुसुमा है।

कामधेनुतन्त्रमें इस प्रकार ककारतत्त्व कहा है,—'ककारकी वामरेखा जवापुष्प एवं अलक्तक वर्ण, दक्षिण रेखा शरचन्द्र तुल्य, अधोरेखा मरकत-प्रभ, मात्रा शङ्खकुन्दसदृश एवं साक्षात् सरस्वती, अङ्कुशाकृति कुण्डली कोटिविद्युल्लताकी भांति आकारविशिष्ट और मध्यदेशका शून्यस्थान सदाशिव कोटिचन्द्र समवर्ण है। शून्यके गर्भमें कैवल्यप्रदायिनी काली अवस्थान करती हैं। ककारसे ही समग्र काम, कैवल्य, अर्थ और धर्म उत्पन्न होता है। ककार ही सर्व वर्णकी मूल प्रकृति, कामदा, कामरूपिणी, अव्यया, कामलीया प्रभृति सुन्दरी और सर्व देवगणकी माता है। ककारके ऊर्ध्व कोणमें कामा नाम्नी ब्रह्मशक्ति, वाम कोणमें ज्येष्ठा नाम्नी विष्णुशक्ति और दक्षिण कोणमें विन्दुनाम्नी संहाररूपिणी रौद्रशक्ति रहती है। ककारस्थ देवोंमें ब्रह्मा इच्छाशक्तिमान्, विष्णु ज्ञानशक्तिमान् और रुद्र क्रिया-शक्तिमान् हैं। आत्मविद्या, मङ्गल और मन्त्रका अवस्थान सर्वदा ककारमें देख पड़ता है। जवा, अलक्तक, एवं सिन्दुरसम रक्तवर्णा, चतुर्भुजा, त्रिनेत्रा, कदम्बकोरकाकृति-स्तनद्वयविशिष्टा और रत्न, कङ्कण, केयूर, अङ्गद, रत्नहार तथा पुष्पहारादिशोभिता कामिनीको ध्यानकर दशवार ककार जपनेसे इष्टसिद्धि होती है।

२ धातुका अनुबन्धविशेष। 'क' अनुबन्ध रहनेसे धातु चुरादि गणीय समझा जाता है। कदन्त्वः।

(कविकल्पद्रुम) चुरादिगणीय धातुके उत्तर स्वार्थमें णिच् आता है।

३ पाणिनिके व्याकरणका प्रत्ययविशेष। कक्, कन्, कप् प्रभृति प्रत्ययोंका 'क'ही अवशिष्ट रहता है। (क्लो०) कायति शब्दं करोति, जीवो यस्मिन् सतीति शेषः, कै-ड। अन्येष्वपि दृश्यते। पा ३।२।१०१। ४ मस्तक, मत्था। ५ जल, पानी। ६ सुख, आराम। ७ केश, बाल। (पु०) कपति दीप्यते स्वेन ज्योतिषा, कच्-ड। ८ ब्रह्मा। ९ विष्णु। १० प्रजापति। ११ दक्ष। १२ कन्दर्प। १३ अग्नि। १४ वायु। १५ यम। १६ सूर्य। १७ आत्मा, रूह। १८ राजा, बादशाह। १९ ग्रन्थ, किताब। २० मयूर, मोर। २१ मन, दिल। २२ शरीर, जिस्म। २३ काल, वक्त। २४ धन, दौलत। २५ शब्द, आवाज़। २६ प्रकाश, रौशनी। २७ पक्षी, चिड़िया। २८ रुद्र। २९ परलोक। ३० किरण। (त्रि०) ३१ कौन, क्या।

कहुत (हिं० स्त्री०) पार्श्व, किनारा, तरफ़।

कहुयां, कहत देखो।

कई (हिं० वि०) अनेक, कितने ही।

कउआ, कौवा देखो।

कउर, कौर देखो।

कएक (हिं० वि०) कई एक, कुछ, थोड़े। यह शब्द बहुवचनमें ही आता है।

कं (हिं०) कम् देखो।

कंउधा (हिं० पु०) १ दूरस्थ विद्युत्का प्रकाश, दूरकी बिजलीका-उजाला। कंउधा होना वर्षाका पूर्वलक्षण है।

कंकई—नदी विशेष, एक दरया। यह नेपालके पूर्वांशमें अवस्थित है। शिकिम और नेपालने इसीको दोनों राज्योंके बीचकी सीमा माना है।

कंकड़ (हिं० पु०) कर्कर, चूर्णखण्ड, सङ्गरेज़ा, बजरी। यह माटि चूनेका पत्थर है। भारतमें कई स्थानपर भूमि खोदनेसे कंकड़ निकलता है। युक्तप्रदेश ही इसकी उत्पत्तिका प्रधान स्थान है। यह श्याम, श्वेत, आदि कई रंगका होता है। कोई छोटा-छोटा रहता है। इससे चूना बनाते हैं। सड़क पर भी कंकड़ खूब कूटा जाता है। कितने ही लोग इसका सालन बनाते हैं। पहले अच्छे और मंझोले कंकड़ धो डालते हैं। फिर उन्हें बेसनसे लपेट घी या तेलमें तलते हैं। अच्छी तरह पक जानेसे उन्हें गर्म मसाला छोड़ धीमी आंचमें कुछ देर रख छोड़ते हैं। यह सालन खानेमें बहुत सोंधा लगता है। २ क्षुद्रप्रस्तरखण्ड, रोड़ा। ३ कठोरांश विशेष, एक कड़ा हिस्सा। ४ पीनेकी एक तंबाकू। यह वे तवेके चढ़ती है। ५ रत्न, जवाहिरात। यह क्षुद्र, निर्माणरहित और ऊंचनीच रहता है। अठारह कंकड़से होनेवाला लड़कोंका एक खेल 'अठारा कंकड़ा' कहाता है।

कंकड़ी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकर्कर, छोटा कंकड़। २ क्षुद्रांश विशेष, छोटा टुकड़ा।

कंकड़ीला (हिं० वि०) कर्करयुक्त, जिसमें कंकड़ रहें।

कंकन (हिं०) कङ्कण देखो।

कंकर, कंकड़ देखो।

कंकरीट (अं० पु० = Concrete) गृहनिर्माण द्रव्यविशेष, घर बनानेका एक मसाला। इसमें टूटा पत्थर, बालू और चूना रहता है। पानीमें उक्त द्रव्य रासायनिक प्रक्रिया द्वारा मिलानेसे यह तैयार होता है। कंकरीट एक प्रकारका बनावटी पत्थर है। इसमें लोहा भी मिला देते हैं। इसकी धुर्वाकश, लट्टे और डोम बनते हैं। दीवारों और गर्चोंमें यह बहुत लगता है। लोग इसे कंकड़-पत्थर, ईंट और लकड़ीसे अच्छा समझते हैं।

कंकरीला, कंकड़ीला देखो।

कंकरैत (हिं० वि०) १ कंकरीला, जिसमें कंकड़ रहें। (पु०) २ कंकरीट, नकली या बनावटी कंकड़-पत्थर।

कंकल (हिं०) कङ्कल देखो।

कंकाली (हिं० पु०) जाति विशेष, एक कौम। कंकाली लोग एक प्रकारके नट हैं। यह किंगरी बजाकर भीख मांगते हैं।

कंकीर (हिं० पु०) ताम्बूल-विशेष, किसी किस्मका पान। यह कटु लगता है।

कांखवारा (हिं॰ स्त्री॰) कांखका कड़ा फोड़ा। यह बड़ी तकलीफ देती है।
कंखौरी (हिं स्त्री॰) १ कांख। २ कांखवारी।
कंग (हिं॰ पु॰) कवच, बख्तर।
कंगण (हिं॰ पु॰) १ लौहचक्रविशेष, लोहेका एक चक्कर। इसे अकाली सिख अपने शिरपर रखते हैं। २ कङ्कण। कङ्कण देखो।
कंगन (हिं॰) कङ्कण देखो।
कंगना (हिं॰ स्त्री॰) १ तृणविशेष, किसी किस्मकी घास। यह पर्वतके समतलपर अधिक उत्पन्न होती है। वृषभ कंगनाको बड़ी प्रीतिसे आहार करते हैं। (हिं॰ पु॰) २ कङ्कण। ३ गीतविशेष, एक गाना। इसे विवाहादि उत्सवपर कङ्कण बांधने या खोलनेमें स्त्रियां गाती हैं।
कंगनी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्र कङ्कण, छोटा कंगना। २ कगर। यह छतके नीचे दीवारमें रहती है। ३ कपड़ेका छल्ला। यह नैचेमें मुंहनालके पास लगायी जाती है। ४ दानेदार घेरा। यह वाह्य सीमापर दन्तयुक्त वा तीक्ष्णाग्र शिखरविशिष्ट होती है। ५ कङ्गु, एक अनाज। भारत, ब्रह्म, चीन, मध्य एशिया और युरोप इसकी उत्पत्तिका स्थान है। हलकी एवं शुष्क भूमिमें कंगनी बहुत पनपती है। यह दो प्रकारकी होती है—रक्त एवं पीत। चीना कंगनीको चैत्र-वैशाखमें बोते और ज्येष्ठ मासमें काट लेते हैं। किन्तु साधारणतः आषाढ़-श्रावण बोने और भाद्र-आश्विन काटनेका समय है। सींचनेकी बार-बार आवश्यकता पड़ती है। कंगनी सांवासे क्षुद्र और वर्तुल रहती है। मञ्जरी क्षुद्र, पीतवर्ण एवं सघन रामयुक्त होती है। यह पाखियोंको बहुत दी जाती है। लोग इसका भात खाते हैं। कंगनीका पुराना चावल रोगीके लिये पथ्य है।
कंगनी-दुमा (हिं॰ वि॰) १ ग्रन्थियुक्त पुच्छ-विशिष्ट, गांठदार पूंछ रखनेवाला। (पु॰) २ हस्तिविशेष, किसी किस्मका हाथी। इसकी पूंछमें गांठ रहती है। लोग कंगनी-दुमेको अशुभ समझते हैं।
कंगल, कंग देखो।
कंगला, कंगाल देखो।
कंगलापन (हिं॰ पु॰) दैन्यभाव, गरीबी, जिस हालतमें कौड़ी कौड़ीको मुहताज रहें।
कंगसी (हिं॰ स्त्री॰) फांस, गंठाव, फंदा। उभय हस्त द्वारा पंजा फांस मालखंभपर उड़नेको 'कंगसी की उड़ान' कहते हैं।
कंगही, कंघी देखो।
कंगारू (अं॰ पु॰=Kangaroo) पशु विशेष, एक जानवर। यह पशु कोई चूहे जैसा छोटा और कोई भेड़ जैसा बड़ा होता है। शरीरकी अपेक्षा शिर क्षुद्र पड़ता है। देहका पश्चाद् भाग बृहत् रहनेसे चारो पैरसे चलते समय कंगारू अच्छा नहीं लगता। यह कूदते चला करता है। पुच्छ दीर्घ एवं दृढ रहता है। दर्शन, श्रवण एवं घ्राणशक्ति तीव्र होती है। अगले पंजोंमें पांच उंगलियां निकलती हैं। नख कुटिल एवं दृढ़ लगते हैं। पिछला पैर अति दीर्घ, सङ्कीर्ण एवं अङ्गुष्ठहीन होता है। दन्त चौंतीस रहते हैं। पाकस्थली विस्तृत होती है। कंगारू घास-पात खाता है। किन्तु क्षुद्र जातिवाले मूल भी व्यवहारमें ला जाते हैं। यह भीरु एवं आक्रमण न करनेवाला होता है। अधिक सताये जानेपर कंगारू अपनी रक्षा करेगा। कभी-कभी यह अगले पंजे पकड़ कुत्तेको मार डालता है। कांगारू अष्ट्रे-लिया और तसमानियामें रहता है। यह पशुओंका रक्षित तृण चर जाता है। लोग इसको मांस खाने और तृण बचानेके लिये मारा करते हैं। न्यूगी-निया और निकटस्थ द्वीपोंमें भी कुछ कंगारू होते हैं।
कंगाल (हिं॰ वि॰) दरिद्र, निर्धन, गरीब, मुहताज।
कंगाल-बांका (हिं॰ पु॰) कंगालगुंडा, जिस बद-माशके पास पैसा न रहे।
कंगाली (हिं॰ स्त्री॰) दरिद्रता, गरीबी, मुहताजी।
कंगुरिया (हिं॰ स्त्री॰) कनिष्ठिका, सबसे छोटी उंगली।
कंगूरा (हिं॰ पु॰) १ दुर्गकी भित्तिमें ऊपर बना हुआ छोटा द्वार, बुर्ज। २ प्रासादाग्र, महलकी

चोटी। ३ शिखा, चोटी। ४ मुकुटमणि, ताजका जवाहिर।

कंगूरेदार (हिं० वि०) शिखायुक्त, चोटीदार।

कंघा (हिं० पु०) १ कङ्कत, शाना, ककवा। इसमें एक ही ओर दांत रहते हैं। २ यन्त्रविशेष, बौला, एक औजार। इससे जुलाहे करघेमें भरनीके तागे कसते हैं।

कंघी (हिं० स्त्री०) १ कङ्कतिका, छोटा शाना, ककई। इसमें दोनो ओर दांत होते हैं। २ यन्त्र-विशेष, एक औजार। यह बांसकी खपाचोंसे तैयार होती है। दो पतली और गज़-डेढ़-गज़ लंबी खपाचें चारसे आठ अङ्गुलके अन्तरपर आमने-सामने रखते हैं। फिर उनके ऊपर बहुत छोटी, पतली और चिकनी खपाचें मिला मिलाकर बांधते हैं। बीचमें केवल एक तागेके निकलनेकी जगह रहती है। पहले तानेका एक तार इनके बीचसे निकालते हैं। बाना बुननेमें यह राछके पहले रखा जाता है। तानेमें बाना पड़ जानेसे कंघीको जुलाहे अपनी ओर खींच लेते हैं। इससे बाना सीधा तथा बराबर हो और गंस जाता है।

३ क्षुपविशेष, अतिबला, एक पौदा। यह पांच-छह हाथ बढ़ता है। पत्र पान-जैसे और नुकीले होते हैं। किनारे पर दाना रहता है। वर्ण किञ्चित् हरित् एवं धूसर होता है। पुष्प पीतवर्ण लगते हैं। पुष्प पतित होनेपर मुकुटाकार ढंढ निकलते हैं। उनपर कंगनी चढ़ी होती है। पत्र तथा फल दानों क्षुद्र, घन एवं मृदु रोमसे आच्छादित रहते हैं। फल जब पक जाता, तब एक एक कंगनीमें कितना ही काला दाना निकल आता है। वल्कलका सूत्र दृढ़ होता है। मूल, पत्र और बीज औषधमें पड़ता है। यह बलवर्धक और शीतल है।

कंघी-चोटी (हिं० स्त्री०) केशमण्डन, बालोंका संवार।

कंघेरा (हिं० पु०) कङ्कतनिर्माता, कंघा तयार करनेवाला।

कंचनिया (हिं० पु०) छोटा कचनार। इसके पत्र एवं पुष्प क्षुद्र होते हैं।

कंचनी (हिं० स्त्री०) वेश्या, रंडी।

"नचे कंचनी तबला ठनके बहरा छेड़े सारंगि प्यार।" (आल्हा)

कंचुरि (हिं०)

कंचुवा (हिं० पु०) कुरता, चोलना।

कंचेरा (हिं० पु०) काचपरिष्कारक, कांचका काम करनेवाला। यह एक जाति है। कंचेरे साधारणतः मुसलमान होते हैं। फिर कहीं-कहीं हिन्दू कंचेरे भी देख पड़ते हैं।

कंचेली (हिं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौदा। यह पंजाबकी ओर उत्पन्न होता है। उसका मध्य श्रेणीको रहती है। काष्ठ श्वेतवर्ण और सुदृढ़ निकलता है। इसे गृहनिर्माणमें लगाते और कृषियन्त्रके व्यवहारमें भी लाते हैं। पशु कंचेलीके पत्र खूब खाते हैं। वर्षा ऋतुमें इसका बीज पड़ता है।

कंछा (हिं० पु०) कोमल शाखा, डलकी डाल, कल्ला।

कंजई (हिं० वि०) १ धूम्रवर्ण, धूयें-जैसा, खाकी। (पु०) २ वर्णविशेष, खाकी रंग। ३ अश्वविशेष, किसी किस्मका घोड़ा। इसके चक्षु धूम्रवर्ण रहते हैं।

कंजड़ (हिं० पु०) १ जातिविशेष, एक कौम। इस जातिके लोग बुंदेलखण्डमें बहुत देख पड़ते हैं। कंजर सन, रुई और चमड़ेको रस्सी बनाते, जिससे अपना काम चलाते हैं। यह लोग सिरकी भी तैयार करते हैं। सांप पकड़ पकड़ के खाना इनका काम है। कंजड़ोंके साथ कुत्ते प्रायः रहते हैं। यह गांवोंमें भीख भी मांगा करते हैं। २ मैला और डरपोक आदमी। ३ भड़वा। कंजड़की स्त्रीको कंजड़ी या कंजरिन कहते हैं।

कंजा (हिं० वि०) १ धूम्रवर्ण, कंजई, खाकी। (पु०) २ कंजी आंख रखनेवाला। ३ क्षुपविशेष, एक पौदा।

कंजास (हिं० पु०) मल, कूड़ा।

कंजियाना (हिं० क्रि०) मन्द पड़ने लगना, मुरझाना, झंवा जाना।

कंजुवा (हिं० पु०) शस्यरोगविशेष, अनाजकी बालमें होनेवाली एक बीमारी। इससे दाना सूख जाता है।

कंजूस (हिं॰ वि॰) कृपण, बख़ील, कम ख़र्च करनेवाला।

कंजूसी (हिं॰ स्त्री॰) कृपणता, बख़ीली, कम ख़र्च करनेकी आदत।

कंटवांस (हिं॰ पु॰) वंशविशेष, किसी क़िस्मका बांस। यह कण्टकाच्छन्न रहता है। भीतर ठोस होनेसे लोग इसका लठ बहुत पसन्द करते हैं।

कंटर (हिं॰ पु॰) काचपात्र, क़राबा, मीना। यह शब्द अंगरेज़ी डिकाण्टर (Decanter) का अपभ्रंश है।

कंटा (हिं॰ पु॰) काष्ठविशेष, एक लकड़ी। यह पौन हाथ लंबा रहता है। इसमें एक ओर चमरेका टुकड़ा लगा देते हैं। कंटेसे चूड़ी बनानेवाले चूड़ियां रंगा करते हैं।

कंटाइन (हिं॰ स्त्री॰) १ चुड़ैल, डाइन। २ दुष्टा स्त्री, बदमाश औरत।

कंटाप (हिं॰ पु॰) भारयुक्त अग्रभाग, भारी सिरा।

कंटाल (हिं॰) कण्टालु देखो।

कंटिया (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्र कीलक, छोटी कील। २ लोहेकी पतली और टेढ़ी अंगुसी। इससे मछली मारते हैं। ३ लोहेकी टेढ़ी और पतली अंगुसियोंका एक गुच्छा। इससे कूवेंमें गिरी चीज़को फंसाकर निकालते हैं। ४ अलङ्कारविशेष, एक गहना। यह शिरपर धारण की जाती है।

कंटीला (हिं॰ वि॰) कण्टकयुक्त, कांटेदार, जिसमें कांटे रहें।

कंटूनमेंट (अं॰ पु॰=Cantonment) सैन्यावास, छावनी, फौजके रहनेकी जगह। सैन्यावासके शासकको कंटूनमेंट मजिष्टर (Cantonment-magistrate) कहते हैं।

कंटेला (हिं॰ पु॰) कदलीविशेष, किसी क़िस्मका केला। इसके फल बृहत् और रस रहते हैं। कंटेला भारतमें प्रायः सब जगह होता है। इसे काच-केला या काठकेला भी कहते हैं। कदली देखो।

कंटोप (हिं॰ पु॰) किसी क़िस्मकी टोपी। इससे शिर और कर्ण आच्छादित रहते हैं। कंटोप जाड़ेमें पहना जाता है।

कंट्रेक्ट (अं॰ पु॰=Contract) नियम, पण, ठेका।

कंट्रेक्टर (अं॰ पु॰=Contractor) पणकर्ता, ठेकेदार।

कंठदवाव (हिं॰ पु॰) गलेको दाबसे किया जानेवाला कुश्तीका एक पेच। इसमें पहलवान दूसरेके गलेपर थपकी देता और उसी ओरका पैर अपने दूसरे हाथसे उठा लेता है। फिर भीतरी अडानी टांग लगा वह उसे चित मारता है।

कंठला (हिं॰ पु॰) आभूषणविशेष, एक गहना। यह बच्चोंको पहनाया जाता है। इसमें नजर-बट्टू, बाघके नख और तावीज़ सूतमें गुंथे रहते हैं।

कंठहरिया (हिं॰ स्त्री॰) कण्ठी, छोटा कण्ठहार।

कंठा (हिं॰ पु॰) १ कण्ठगत चिह्नविशेष, गलेका एक निशान्। यह शुकादि पक्षियोंके कण्ठको चारो ओर पड़ जाता है। २ कण्ठभूषणविशेष, गलेका एक गहना। इसमें सोने, मोती या रुद्राक्षके बड़े बड़े दाने रहते हैं। ३ पुष्पमाला, फूलोंका हार। ४ कुरते या अंगरखेके गलेपर लगनेवाला ज़री या सादी बेलका घुमावदार काम। ५ पत्थर या ईंटका एक हिस्सा। यह उपान और कारनिसके बीच पड़ता है।

कंठी (हिं॰ स्त्री॰) १ छोटे छोटे दानोंका कण्ठा। २ तुलसी आदिकी माला। इसकी गुरियां छोटी-छोटी होती हैं।

कंडरा (हिं॰ पु॰) कन्दल, मूली और सरसों वग़ैरहका मोटा डंठल। इसीमें पुष्प लगता है। यह साग और अचारमें व्यवहृत होता है। कितने ही लोग कंडरा कच्चा ही खा जाते हैं।

कंडा (हिं॰ पु॰) १ गोबरका थापा हुआ लंबा टुकड़ा। यह आग जलानेमें काम आता है। छोटे और गोल कंडेको उपरी कहते हैं। जो गोबर जंगलमें पड़े-पड़े सूख जाता, वह 'बिनुवा कंडा' कहाता है। कंडेकी आग बहुत अच्छी होती है। पहले हलवाई भट्टीमें कंडा ही सुलगाते थे। कण्डेकी आंचसे बना हुआ खाद्य अत्यन्त सुस्वादु होता है। २ शुष्कमल, गोटा। ३ काण्ड, सरकंडा। यह चिक, क़लम और मोढ़ा बनानेमें लगता है।

कंडारी (हिं॰ पु॰) १ कर्णधारी, मांझी, नाव चलानेवाला।

कंडाल (हिं॰ पु॰) १ नरसिंहा, तुरही, करनाय। यह बाजा पीतलकी नलीसे बनाया और मुंहसे फूंककर बजाया जाता है। २ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह कैंची जैसा बनता है। इसमें दो सरकंडे बराबर बराबर एक साथ बांधे जाते हैं। इसके बाद सरकंडेको तिरछा लगा आमने-सामनेके सिरोंको पतली डोरीसे तानते हैं। ऊपरी सिरोंपर तागा बांधते और नीचेके सिरोंको भूमिमें गाड़ते हैं। इसीप्रकार कई कंडाल दूर-दूर रहते हैं। जुलाहे इसपर ताना लगा पाई चलाते हैं।

कंडी (हिं॰ स्त्री॰) १ छोटा कंडा, लंबी उपरी। २ शुष्कमल, गोटा। ३ कंठी, छोटा हार। ४ एक टोकरी। यह लंबी और गहरी होती है। पहाड़ी लोग इसे प्राय: व्यवहार करते हैं।

कंडील (हिं॰ स्त्री॰) कन्दील, लालटेन। यह मट्टी, कागज़ या अबरककी बनती है। कंडीलका मुंह ऊपर खुला रहता है। देवतावोंको प्रकाश पहुंचानेके लिये इसमें दीपक जलाकर रखते हैं। फिर कंडील एक बड़े बांसपर रस्सीके सहारे चढ़ा दी जाती है। कारीगर इसमें कागज़की घूमती तसवीरें लगा देते हैं। इससे कंडीलकी शोभा दूनी देख पड़ती है।

कंडीलिया (हिं॰ स्त्री॰) प्रकाशगृह, रोशनी करनेका ऊंचा घरहरा। समुद्रमें जहां शिलाखण्ड स्थित रहते, वहां इसे प्रतिष्ठित करते हैं। इसका प्रकाश पाकर जहाज़ उन शिलाखण्डोंको बचा देते और अपना निष्कण्टक मार्ग पकड़ लेते हैं। कंडीलिया न रहनेसे जहाजोंके शिलाखण्डोंपर टकरा चूर-चूर हो जानेका भय रहता है।

कंडुवा, कंगुवा देखो।

कंडेरा (हिं॰ पु॰) कर्णामार्जक, धुनिया, बेहना। पहले इस जातिके लोग धनुर्बाण निर्माण करते थे।

कंडौर (हिं॰ पु॰) १ कंडुवा, बालवाले अनाजकी एक बीमारी। २ कंडा पाथनेकी जगह। ३ कंडोंका ढेर। ४ गया-गुज़रा आदमी, जो शख्स किसी कामका न हो।

कंडौरा (हिं॰ पु॰) १ गोइठौर, कंडा पाथनेकी जगह। २ गोठौला, कंडा रखनेका घर। ३ बठिया, कंडोंका ढेर। इसके ऊपर गोबर लपेट देते हैं।

कंत (हिं॰ पु॰) १ पति, शौहर। २ प्रभु, मालिक। यह शब्द संस्कृत 'कान्त'का अपभ्रंश है।

कंतित (हिं॰ पु॰) एक प्राचीन राजधानी। इसका ध्वंसावशेष मिर्ज़ापुरमें पश्चिमकी ओर गङ्गा किनारे पड़ा है। वहां इसी नामका एक ग्राम भी विद्यमान है। कंतितमें मिथ्यावासुदेवकी राजधानी रही।

कंथ, कंत देखो।

कंदला (सं॰ पु॰) १ सोने या चांदीका तार। २ सोने या चांदीकी सलाख। ३ कन्दल, किसी किस्मका कचनार। सोने-चांदीके तारका कारखाना कांदला-कचहरी और तार खींचनेवाला 'कंदलेकश' कहता है।

कंदा (हिं॰ पु॰) १ गूदेदार और बेरेशा जड़। २ ओल, ज़मींकन्द। ३ शकरकंद। ४ घुइयां, अरुई।

कंदीत (हिं॰ पु॰) देवगणविशेष। यह जैन शास्त्रानुसार वाणव्यन्तरके अन्तर्गत हैं।

कंदील (अ॰ स्त्री॰) १ कंडील, बांसके ऊपर आकाश चढ़ाई जानेवाली लालटेन। २ जहाज़में उगने-मूतने और नहाने-धोनेकी जगह।

कंदुवा, कंडुवा देखो।

कंदूरी (फ़ा॰ पु॰) एक खाना। इससे मुसलमानोंमें बीबी फातमा या किसी दूसरे पीरका फातिहा होता है।

कंदेव (हिं॰ पु॰) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह पुन्नाग-जातीय वृक्ष है। उत्तर एवं पूर्व बङ्गमें कंदेव उपजता है। काठ सुदृढ़ रहता और नौकाके काममें लगता है।

कंदेला (हिं॰ वि॰) अपरिष्कार, गंदा, मैला।

कंदोरा (हिं॰ पु॰) कटिबन्धनविशेष, एक करधनी।

कंध (हिं॰ पु॰) १ शाखा, डाल। २ स्कन्ध, कंधा।

कांधनी (हिं० स्त्री०) किङ्किणी, कमरका एक गहना। कांधनी बच्चोंको अधिक पहनायी जाती है। इसमें घुंघरू लगे रहते हैं।

कांधा (हिं० पु०) स्कन्ध, शाना, मोढ़ा।

कांधार (हिं० पु०) १ अफगानस्थानका एक प्रदेश। २ अफगानस्थानका एक नगर। कन्दाहार देखो। ३ कर्णधार, मलाह।

कांधारी (हिं० वि०) १ गान्धार देशसम्बन्धीय, कांधारसे ताल्लुक रखनेवाला। २ गान्धार देशका अधिवासी, कांधारका रहनेवाला। (पु०) ३ कन्धारका घोड़ा। ४ कर्णधारी, मांझी।

कांधावर (हिं० स्त्री०) १ वृषभके स्कन्धपर पड़नेवाला जूयेका भाग। २ चद्दर, कांधेका दुपट्टा। यह विवाहमें पहनी जाती है। वरको भली भांति वस्त्र पहना ऊपरसे एक दुपट्टा डाल देते हैं। इसका एक किनारा बायें कांधेपर रहता और दूसरा किनारा भी पीछेसे घूम और दाहनी बग़लके नीचे जाकर बायें ही कांधेपर पहुंचता है। यही दुपट्टा कांधावर कहाता है। ३ ताशेकी रस्सी। इसीको गलेमें डाल ताशा छातीपर लटकाया और बजाया जाता है।

कांधियाना (हिं० क्रि०) कांधा देना, कांधेपर रखना।

कांधेला (हिं० पु०) स्त्रियोंके कांधेपर रहनेवाला साड़ीका हिस्सा।

कांधेली (हिं० स्त्री०) पर्याण विशेष, किसी क़िस्मका पालान या खोगीर। गाड़ीमें जोतनेके समय यह घोड़ेके गलेमें डाली जाती है। कांधेली अण्डाकार मेखला-जैसी होती है। नीचे एक मुलायम और गुलगुली गद्दी रहती है। इससे घोड़ेका कांधा नहीं लगता।

कांधैया, कन्हैया देखो।

कांपकांपी (हिं० स्त्री०) कम्प, थरथराहट, डोलाव।

कांपना (हिं० क्रि०) कम्पित होना, थरथराना, हिलना-डलना।

कांपनी (अं० स्त्री० = Company) १ व्यापारियोंका दल, सौदागरोंका गिरोह। २ ईष्ट इण्डिया कंपनी, १६०० ई०को इङ्गलेण्डमें बना हुआ व्यापारियोंका एक वृन्द। रानी एलिजबेथने इसे भारतवर्षमें जा व्यापार करनेकी आज्ञा दी थी। कंपनीने प्रथम भारतवर्षमें विशाल भवन बनाये। फिर इसने कितनी ही भूमि क्रय की। अन्तको कंपनीने कई प्रान्तोंपर अधिकार किया था। भारतमें इसीने अंगरेजी राज्यकी जड़ जमायी है। प्रामिसरी नोटको 'कंपनी कागज़' कहते हैं। ३ सैन्यविशेष, एक फौज। इसमें कप्तानके नीचे ६०से १०० तक सिपाही रहते हैं।

कांपा (हिं० पु०) लासेदार बांसकी पतली खपाच या नीमका सींका। इससे पक्षी पकड़ते हैं। किसी पेड़पर पक्षियोंके खानेकी कोई चीज़ रख चारो ओर कांपे लगाते हैं। जैसे ही पक्षी खानेको आता, वैसे ही उसके परमें यह चिपट जाता है। फिर पक्षी नीचे गिर पड़ता और उड़ नहीं सकता। २ बांसकी एक लंबी छड़। इसके भी सिरेपर लासा लगा रहता है। बहेलिये पक्षीको बैठा देख धोकेसे परमें इसे छुवा देते हैं। फिर पक्षी या तो छड़में ही चिपटा रहता या परमें लासा लग जानेसे नीचे गिर पड़ता है।

कांपाई, कंपकंपी देखो।

कांपाना (हिं० क्रि०) १ हिलाना, डोलना, इधर उधर चलाना। २ भयभीत करना, डर देखाना।

कांपास (अं० स्त्री० = Compass) १ दिङ्निर्णययन्त्र, कुतुबनुमा। एक छोटी डब्बेमें चुंबककी सूई लगी रहती है। समतलपर रखनेसे सूईका मुंह उत्तरको पड़ता है। इससे लोग उत्तर दिक् पहचान लेते हैं। फिर दूसरी दिशाओंका पता लगनेमें कोई कठिनता नहीं आती। कांपाससे समुद्रके नाविकों और स्थलके मापकों तथा देशालेख्योंको बड़ा लाभ पहुंचता है। २ परकार। ३ राइटेंगल। इससे पैमायश करनेमें रेखा लगाते समय समकोण ठहराया जाता है।

कांपिल (हिं० पु०) नगरविशेष, एक शहर। द्रौपदीका स्वयम्वर इसी नगरमें हुआ था।

कम्पिल्ल और काम्पिल्य देखो।

कांपू (हिं० पु०) १ सेनावास, छावनी। २ शिविर, डेरा। 'कंपू बनायत बदन कप्तान घरे।' (पद्माकर) ३ युद्ध-

चीजके नाममें पहले 'क' अक्षर रहे। रक्तपित्तमें कटुक, कालशाक, कुष्माण्ड, कर्कटी, कर्कन्धु, कर्कोटक, कलिङ्ग, करमर्द, करीर, कतक, कशेरु और काञ्चिक वर्ज्य है। (भावप्रकाश)

ककुद्मिनी (सं० स्त्री०) ज्योतिष्मतीलता, रतनजोत।

ककुभक (सं० पु०) कं जलं कूजयति याचते, क-कूज-अनच् पृषोदरादित्वात् मम्, ह्रस्वश्च। चातक-पक्षी, पपीहा।

ककुभका (सं० स्त्री०) ककुभक देखो।

ककुणक (सं० पु०-क्ली०) बालरोग विशेष, बच्चोंकी एक बीमारी।

ककुत् (सं० स्त्री०) कं सुखं कारयति प्रापयति, गृहस्थाश्चिति शेषः, क-कु-णिच्-क्विप् तुगागमः ह्रस्वश्च पृषोदरादित्वात्। १ वृषके पृष्ठदेशका अवयव विशेष, बैलके कंधेका कुब्बड़। २ ध्वज, निशान्। ३ छत्र-चामरादि राजचिह्न, बादशाही ठाटबाट। ४ पर्वत-शृङ्ग, पहाड़की चोटी। ५ दर्वीकार सर्पभेद, किसी किस्मका सांप।

ककुत्स्थल (वै० क्ली०) ककुद् नामकं स्थलं अवयव-विशेषः पृषोदरादित्वात् साधुः। १ ककुद् नामक वृषावयव, बैलका कुब्बड़।

ककुत्स्थ (सं० पु०) ककुदि तिष्ठतीति, ककुद-स्थ-क। सूर्यवंशीय पुरञ्जय नामक एक राजा। इनके पिताका नाम शशाद रहा। पुरञ्जयके राज्यशासनकाल स्वर्गमें देवोंने दैत्योंसे हार विष्णुका आश्रय पकड़ा था। विष्णुने उन्हें पुरञ्जयसे साहाय्य लेनेको सिखाया। उसीके अनुसार देवताओंने इनसे प्रार्थना की थी। यह भी सम्मत हुये और वृषरूपी इन्द्रके ककुद् स्थलपर चढ़ युद्धको चले। इन्होंने उस युद्धमें समस्त दैत्योंको हराया था। इसीसे देवताओंने प्रीत हो इनका नाम ककुत्स्थ रख दिया। (भागवत ९।६।११)

ककुद्, ककुत् देखो।

ककुद (सं० पु०-क्ली०) कं सुखं कौति सूचयतीति, क-कु-क्विप्-तुक्। १ वृषका अवयवविशेष, बैलका कुब्बड़। २ प्रधान, मुखिया। ३ राजचिह्न, शाही ठाट-बाट। ४ पर्वताग्रभाग, पहाड़की चोटी। ५ दर्वीकार सर्पभेद, किसी किस्मका सांप।

ककुदकात्यायन (सं० पु०) ब्राह्मणविशेष, किसी ब्राह्मणका नाम। यह शाक्यमुनिके घोर प्रतिद्वन्द्वी थे।

ककुदाच (सं० वि०) ककुदं राजचिह्नं अश्नोति। राजचिह्नधारक, शाही निशान् रखनेवाला।

ककुदावर्त (सं० पु०) ककुदि आवर्तः, कर्मधा०। वृषके ककुद-स्थलका रोमावर्तविशेष, बैलके कुब्बड़की भौंरी।

ककुद्मत् (सं० पु०) ककुदस्त्यस्य, ककुद-मतुप्। १ वृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ ऋषभक नामक वैद्योक्त द्रव्यविशेष, एक जड़ी-बूटी। ४ ऊर्मी, लहर। (वि०) ५ उत्तुङ्ग, ऊंचा, चढ़ता हुआ। ६ ककुद-युक्त, कुब्बड़ रखनेवाला।

ककुद्मती (सं० स्त्री०) ककुदिव अभिशयितो मांस-पिण्डोऽस्त्यस्याम्, ककुद-मतुप्-ङीप्। १ नितम्ब, चूतड़। २ छन्दोविशेष।

ककुद्मान्, ककुद्मत् देखो।

ककुद्मिन् (सं० पु०) ककुदस्त्यास्ति, ककुद-इनि। १ वृष, बैल। २ पर्वत, पहाड़। ३ विष्णु। ४ रैवत राजा। इनके पिताका नाम रेवत रहा। बलदेव ककुद्मीके जामाता थे।

ककुद्मिसुता (सं० स्त्री०) ककुद्मिनः रैवतस्य सुता, ६-तत्। रेवती, कृष्णाग्रज बलदेवकी भार्या।

ककुदत् (सं० पु०) वृषभ, कुब्बड़वाला बैल या भैंसा।

ककुदती (सं० स्त्री०) प्रद्युम्नकी भार्याका नाम।

ककुद्वान्, ककुदत् देखो।

ककुन्दर (सं० क्ली०) कस्य शरीरस्य कुं अवयव-विशेषं दृणाति, क-कु-दृ-खच्-मुम्। १ नितम्बस्थलके उभयपार्श्वस्थ गर्तद्वय, कूल्हेके गढ़े। २ वृक्षविशेष, पेड़। यह कटु, तिक्त, ज्वरघ्न, उष्णकृत् और रक्त एवं कफदाहक दोष मिटानेवाला होता है। ककुन्दरका आर्द्र मूल मुखमें रखनेसे मुखके सब रोग नाश हो जाते हैं। (वैद्यकनिघण्टु)

ककुम्मत्, ककुद्मत् देखो।

ककुप् (सं० स्त्री०) क-स्कुम-क्विप्। १ दिक्, ओर,

-तरफ़। २ कोई रागिणी। इसका अपर नाम 'कुहु' है। दामोदर मिश्रने कहा है—

ककुभाका अङ्ग सुन्दर, वर्धित और रतिके रससे मण्डित है। मुख चन्द्रके तुल्य झलकता है। चम्पकमाला परिशोभित है। यह रागिणी देखनेमें परम रमणीय, मनोहर, दानशील और कटाक्षयुक्त है।

"सुपीविताङ्गी रतिमण्डिताङ्गी चन्द्रानना चम्पकदामयुक्ता।
कटाक्षिणी स्यात् परमाभिशिष्टा दानेन युक्ता ककुभा मनोज्ञा॥"
(सङ्गीतदर्पण)

"धैवतांशग्रहन्यासा सम्पूर्णा ककुभा मता।
वतीये मूर्च्छनीनुपवा महाररसमन्विता॥"

सम्पूर्ण ककुभा रागिणी धवतके अंश तथा तृतीय मूर्च्छनासे उत्पन्न है। इसे शृङ्गार रसमें गाना चाहिये। यथा—ध नि स रि ग म प ध।

३ दक्षकी एक कन्या। यह धर्मकी पत्नी रहीं। ४ शोभा, खूबसूरती। ५ चम्पकमाला, चंपेका हार। ६ शाखा। ७ प्रवेणी, बालोंकी बांकड़ी।

ककुभ्, ककुप् देखो।

ककुभ (सं॰ पु॰) कस्य वायोः कुः स्थानं भाति अस्मात्, क-कु-भा-क पृषोदरादित्वात्; कं वातं स्कभ्नाति विस्तारयतीति वा, क-स्कभ-क। १ अर्जुन नामक वृक्ष विशेष, अर्जुनका पेड़। वैद्यकके मतसे यह वृक्ष शीतल होता और भग्न, क्षत, क्षय, विष, रक्तदोष, मेह, मेद, व्रण एवं हृद्रोगको खोता है। अर्जुन देखो। २ वीणाके प्रान्तदेशका वक्र काष्ठ, धरन। इसका अपर संस्कृत नाम प्रसेवक है। ३ वीणाके उपरि देशका अंशविशेष। ४ वीणेकी अलावु या तांबी। ५ रागविशेष। ६ शिव। ७ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। ८ तीर्थविशेष। यहां कश्यपादि वास करते हैं। (भिलपु॰ ४४।८॰) ९ प्रेत, शैतान्। १॰ पर्वतविशेष, एक पहाड़। (त्रि॰) ११ उत्कृष्ट, बढ़िया।

ककुभत्वक् (सं॰ स्त्री॰) अर्जुनवृक्षका वल्कल, अर्जुनकी छाल।

ककुभशाखा (सं॰ स्त्री॰) भार्गी, एक जड़ी-बूटी।

ककुभा (सं॰ स्त्री॰) १ दिक्, ओर, तरफ़। २ एक रागिणी। यह मालकोषकी पांचवीं रागिणी है। ककुभा सम्पूर्ण जातिकी होती है। दिनके दूसरे पहर यह गायी जाती है। ककुप् देखो।

ककुभादनी (सं॰ स्त्री॰) नलीनामक गन्धद्रव्य, एक खुशबूदार चीज़।

ककुभादिचूर्ण (सं॰ क्ली॰) हृद्रोगाधिकारोक्त वैद्यक औषध, छातीकी बीमारीमें दी जानेवाली एक दवा। अर्जुनकी छाल, वच, रास्ना, बला (खरेंटी), गोरक्षचक्रकुल्या, हरीतकी, शठी (कचूर), कुष्ठ, पिप्पली और शुण्ठी—प्रत्येकका चूर्ण सम भागमें मिला आध तोले उपयुक्त परिमाणसे घृतके साथ सेवन करनेपर हृद्रोग प्रशमित होता है।

ककुभती (वै॰ स्त्री॰) वैदिक छन्दोविशेष।

"एकस्मिन् पञ्चके छन्दः शङ्कुमती षट्के ककुभती।" (कात्यायन)

ककुह (सं॰ त्रि॰) कस्य सूर्यस्य कुं स्थानं जिहीते अतिक्रामतीव, क-कु-हा-क। १ अतिशय उन्नत, निहायत ऊंचा। २ महत्, बड़ा। (पु॰) ३ रथका एक अङ्ग, गाड़ीका कोई हिस्सा। सम्भवतः गाड़ीवान्की बैठकको ककुह कहते हैं।

ककूक, ककूण देखो।

ककूणक (सं॰ पु॰ क्ली॰) शिशुके नेत्रवर्त्मका एक रोग, बच्चोंके पपोटेकी एक बीमारी। ककूणक क्षीरदोषसे शिशुके नेत्रवर्त्ममें उपजता है। इसमें अश्रु स्रवण होता है। फिर शिशु ललाट, अक्षिकूट और नासा घर्षण किया करता है। वह न तो सूर्यको प्रभा देख और न वर्त्म खोल सकता है। (माधवनिदान)

ककूल (सं॰ पु॰-क्ली॰) १ गोमलादि चूर्णसन्ताप, गोबर वगैरहके चूरकी आंच। २ अपूपपाकनार्थ मृण्मय पात्र, पूरी पकानेको मट्टीका बरतन।

ककेड़ा (हिं॰ पु॰) कर्कटक, चिचड़ा। इसका फल सांप जैसा होता है। ककेड़ेका शाक बनाते हैं।

ककेरुक (सं॰ पु॰) एकप्रकार कीट, किसी किस्मका कीड़ा। यह कीट पाकस्थलीमें उत्पन्न होता है।

ककैया (हिं॰ स्त्री॰) लखावरी ईंट, लखौरी। यह कंघी-जैसी होती है। कोई भी वर्ष पहले इस ईंटकी भारतमें बड़ी चाल थी। इसीको चित्र-विचित्र अच्छे

मकान् बनते रहे। किन्तु आजकल मोटी ईंटके सामने इसका व्यवहार बिलकुल उठ गया है।

ककोरा—युक्तप्रदेशके बदाऊं जिलेका एक ग्राम। यह बदाऊं नगरसे छह कोस दूर गङ्गानदीके तटपर अवस्थित है। प्रति वर्ष कार्तिक मासकी पूर्णिमाको महोत्सव होता है। कानपुर, दिल्ली, फरुखाबाद और रोहिलखण्डके नाना स्थानोंसे प्रायः लाखों लोग आते हैं। यात्री पुण्यसलिला गङ्गामें तर्पण और अवगाहनादि कार्य सम्पन्न कर व्यवसायमें लगते हैं। उसी समय बाजार भी लगता है। भारतवर्षके नाना स्थानोंसे चीजें बिकने आया करती हैं। गृहस्थकी आवश्यकताके अनुसार सकल ही द्रव्य मिल जाते हैं

कक्क (धातु) भ्वा० पर० अक० सेट्। "कक्क हासे।" (कविकल्पद्रुम) हास्य करना, हंसना।

कक्कट (सं० पु०) कक्क-अटन्। मृगविशेष, अश्वमेध यज्ञमें यह मृग आवश्यक आता था।

कक्कड़ (हिं० पु०) किसी किस्मकी बनी हुई तम्बाकू। तम्बाकूके पत्तेको सेंक चूर करते और उसमें पीनेकी तम्बाकू मिला छोटा चिलममें भरते हैं। इसीका नाम कक्कड है। कई लोगोंके बैठकर तम्बाकू पीनेकी जगहको 'कक्कड़खाना', वस्तुत तम्बाकू पीनेवालेको 'कक्कड़बाज़' और पैसा ले कर हुक्का पिलानेवालेको 'कक्कड़वाला' कहते हैं।

कक्का (हिं० पु०) १ केकय देश, एक मुल्क। यह कश्मीरके अन्तर्गत है। कक्काके अधिवासियोंको 'कक्करवासे' या 'गक्कर' कहते हैं। २ दुन्दुभि, नक्कारा। ३ एक प्रकारके सिख। इन लोगोंमें काच्छ, कङ्घा, कड़ा, कर्द और केश—पांच ककार व्यवहृत हैं। ४ काका, चाचा। प्रायः पिताके लघु भ्राताको 'कक्का' कहते हैं।

कक्कुभ (सं० पु०) कक्क-उभच्। वकुलवृक्ष, मौलसिरीका पेड़।

कक्कोल (सं० पु०) ककते प्रकाशते, कक्-क्विप्; कोलति संस्त्यायति, कुलत्वलादित्वात् च; कक् चासौ कोलश्चेति, कर्मधा०। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलचीनी। इसका संस्कृत पर्याय कोलक, कोषफल, कतफल, कटुकफल, हेय, स्थूलमरिच, कक्कोलक, माधवोचित, काल, काट फल और मरिच है। यह लघु, तीक्ष्ण, उष्ण, तिक्त, हृद्य, रुचिकारक और मुखदुर्गन्ध, हृद्रोग, कफ, वायुजन्य रोग तथा नेत्ररोगनाशक है। (भावप्रकाश) २ गन्धशटी, एक जड़ी-बूटी।

कक्कोलक (सं० क्ली०) कक्कोलस्य इदम्, कक्कोल स्वार्थे कन्। १ गन्धद्रव्यविशेष, शीतलचीनी। २ कक्कोल या शीतलचीनीका अतर। ३ शाल्मलीद्वीपके अन्तर्गत सप्तम वर्ष पर्वत। (विष्णु० २।४ अ०)

कक्खाक्ष (सं० पु०) गुणचन्द्रके गोत्रापत्य।

कक्ख् (धातु) भ्वा० पर० अक० सेट्। "कक्ख हासे।" (कविकल्पद्रुम) हास्य करना, हंसना।

कक्खट (सं० त्रि०) कक्खतीति, कक्ख-अटन्। १ हास्ययुक्त, हंसोड़, हंसनेवाला। २ कठिन, कड़ा। (पु०) ३ खटिका, खड़िया मट्टी। ४ वृक्षविशेष, पाटका पेड़।

कक्खटपत्र (सं० पु०) कक्खटानि प्रकाशान्वितानि पत्राणि यस्य, बहुव्री०। वृक्षविशेष, पाटका पेड़। (Corchorus olitorius) इससे पाट या सन उपजता है। संस्कृत पर्याय पट्ट, वाजगल, शाणि और चिम है।

कक्खटपत्रक, कक्खटपत्र देखो।

कक्खटी (सं० स्त्री०) कक्खति प्रकाशयति घर्षेण वर्णान्, कक्ख-अटन्-ङीप्। खटिका, खड़िया मट्टी। इसका संस्कृत पर्याय खटिका, वर्णलेख्या, कठिनी और खटी है। खड़िया देखो।

कक्ष (सं० पु०) कषतीति, कष-स। वृतॄवदिवचिवसि-मिक्षिभ्यः सः। उण् ३।६२। १ बाहुमूल, बगल, कांख। २ तृण, घास। ३ लता, बेल। ४ शुष्क तृण, सूखी घास। ५ काच्छ, कछार। ६ शुष्क वन, सूखा जंगल। ७ पाप, गुनाह। ८ वन, जंगल। ९ रुद्र। १० भित्ति, दीवार। ११ पार्श्व, ओर। १२ प्रकोष्ठ, कमरा, घर। १३ कक्षारोग, कखरवार। १४ कांछ, लांग। १५ अञ्चल, पीठपर पड़नेवाला दुपट्टेका

पक्ष। १६ ग्रहगणके भ्रमणका पथ, सितारोंके घूमनेकी राह। १७ प्रतियोगिता, विरोध, हसद। १८ नौकाका एक अवयव, नावका एक हिस्सा। १९ कमरबन्द, फेंटा। २० राजान्तःपुर, शाही जनानखाना। २१ महिष, भैंसा। २२ बहेड़ा। २३ जन्तुगणका शब्द, जानवरोंकी बोली। २४ समता, बराबरी। २५ परिमाणविशेष, रत्ती। २६ भारतोक्त जातिविशेष। २७ वृहद् द्वार, फाटक। २८ तुला, तराजूका पक्ष। २९ गोट, किनारी। ३० ग्रह, नक्षत्र।

कक्षक (सं० पु०) सर्पविशेष, एक सांप। यह राजा जनमेजयके सर्पयज्ञकालपर दग्ध हुआ था।

कक्षतरु (सं० पु०) कक्ष इव तन्यते, कक्ष-तन्-उ। वृक्षविशेष, एक पेड़।

कक्षधर (सं० क्ली०) कक्षां धारयति, कक्षा-धृ-अच् पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। सुश्रुतोक्त वक्ष और कक्षदेशके मध्यका मर्मस्थान, कंधेका जोड़। यह मर्म विद्ध होनेसे पक्षाघात लगता है।

कक्षप (सं० पु०) कक्षे जलप्रायदेशे पिबति, कक्ष-पा-क। कच्छप, कछुवा।

कक्षरुहा (सं० स्त्री०) कक्षे जलप्राये रोहति, कक्ष-रुह-क। नागरमोथा। यह जलप्राय देशमें ही अधिकांश उत्पन्न होती है।

कक्षशाय (सं० पु०) कक्षे शुष्कतृणे शेते, कक्ष-शी-अ। कुक्कुर, कुत्ता।

कक्षशायिनी (सं० स्त्री०) कक्ष-शी-णिनि-ङीप्। कुतिया।

कक्षशायु (सं० पु०) कक्षे शेते, कक्ष-शी-उण्। कुक्कुर, कुत्ता।

कक्षसेन (सं० पु०) १ कोई राजा। यह परीक्षितके पुत्र और अविक्षितके पौत्र थे। २ कोई ऋषि। इनके पुत्रका नाम अभिप्रतारी था।

कक्षस्थ (सं० त्रि०) पार्श्वपर अवस्थित, पुट्ठेपर बैठा हुआ।

कक्षा (सं० स्त्री०) कक्ष-टाप्। १ हस्तीके बन्धनकी रज्जु, हाथी बांधनेकी रस्सी। २ चन्द्रहार। ३ प्रकोष्ठ, कोठरी। ४ भित्ति, दीवार। ५ साम्य, बराबरी। ६ रथका एक अङ्ग, गाड़ीका कोई हिस्सा। ७ काछ, लांग। ८ विरोध, झगड़ा। ९ मध्यदेश, दरमियानी जगह। १० राजाका अन्तःपुर, शाही जनानखाना। ११ अञ्चल, दुपट्टेका पल्ला। १२ रोगविशेष, कांखमें निकलनेवाली गिलटी। सुश्रुतके वचनानुसार बामपार्श्व और बगलमें वेदनायुक्त जो कृष्णवर्ण स्फोटक निकल आता, वही कक्षा कहलाता है। यह पित्तज रोग है। इसमें पित्तसे उत्पन्न विसर्पकी भांति चिकित्सा करनेका उपदेश दिया गया है। कक्षापर पद्मके मृणालसे संलग्न कर्दम, गुलञ्च और शक्तिको पीस अथवा पहाड़ी मट्टीमें घी डाल प्रलेप चढ़ाना चाहिये। वटके मूल, मुस्तक, कदलीके मूल और पद्मके मृणालकी ग्रन्थि पीस तथा शतधौत घृतके साथ मिला प्रलेप लगानेसे भी उपकार होता है। (चक्रदत्त)

कक्षान्तर (सं० क्ली०) अन्तःपुर, जनानखाना, भीतरी या घराऊ कमरा।

कक्षापट (सं० पु०) कक्षाकारः पटः वस्त्रम्। कौपीन, कांछा।

कक्षावान् (सं० पु०) कक्षा साम्यमस्यास्तीति, कक्षा-मतुप् मस्य वः। मुनिविशेष।

कक्षावेक्षक (सं० पु०) कक्षाया अवेक्षकः, ६-तत्। १ अन्तःपुरपालक, कञ्चुकी, जनानखानेका मुहाफ़िज़। २ उद्यानपालक, बाग़बान। ३ नाट्यकारक, तमाशा करनेवाला। ४ कवि, शायर। ५ लम्पट, ज़िनाकार। ६ द्वाररक्षक, दरबान।

कक्षी (सं० त्रि०) कक्षं पापमस्त्यस्य, कक्ष-इनि। पापी, गुनहगार।

कक्षीकृत (सं० त्रि०) कक्ष-च्वि-कृ-क्त। स्वायत्तीकृत, अधीन, मातहत, दबाया हुआ।

कक्षीवान् (सं० पु०) ऋषिविशेष। इनके पिताका दीर्घतमा और माताका नाम उशिज् था। इन्हें पज्रिय भी कहते हैं।

कक्षेयु (सं० पु०) रौद्राश्वके पुत्र। दश अप्सराओंके गर्भसे रौद्राश्वके दश पुत्र उत्पन्न हुये थे। उनमें घृताचीके गर्भसे जो पुत्र उपजा, उसका नाम कक्षेयु पड़ा।

कक्षोत्था (सं० स्त्री०) कक्षात् कच्छभूमितः उत्तिष्ठति, कक्ष-उत्-स्था-क-टाप्। भद्रमुस्ता, नागरमोथा

कक्ष्य (सं० क्ली०) कक्षायै साम्याय भवम्, कक्षा-यत्। १ पात्र, प्याला। २ रथाङ्गविशेष, गाड़ीका एक हिस्सा। (पु०) ३ रुद्र। ४ उत्तरीय वस्त्र, चद्दर। ५ प्रकोष्ठ, कोठा। ६ साहश्य, बराबरी। ७ राजान्तःपुर, शाही जनानखाना। ८ पार्श्वभाग, बगलका हिस्सा। (त्रि०) ९ कक्षपूर्णकारक, बगल भर देनेवाला। १० कक्षोत्पन्न, बगलमें निकला हुआ। ११ शुष्क तृणादियुक्त, झाड़ी या सूखी घाससे भरा हुआ। १२ गुप्त, पोशीदा। १३ वध्रीपूर्णकारक, कमरको पूरा करनेवाला।

कक्ष्यप्र (सं० वि०) वध्रीपूर्णकारक, तंगको पूरा करनेवाला। यह शब्द अश्वादिका विशेषण है।

कक्ष्या (सं० स्त्री०) कक्षे भवा, कक्ष यत्-टाप्। १ चर्मरज्जु, चमड़ेकी रस्सी, माड़ी। २ हस्तीबन्धनकी चर्मरज्जु, हाथी बांधनेकी चमड़ेकी बद्धी। इसका संस्कृत पर्याय दुष्या, वरत्रा, दुषा, दूष्या और कक्षा है। ३ प्रकोष्ठ, आंगन। ४ महल, इमारत। ५ चन्द्रहार। ६ साहश्य, बराबरी। ७ उद्योग, कोशिश। ८ गुहती। ९ उत्तरीय वस्त्र, ओढ़नी, झूल। १० चन्द्रहार बांधनेका धागा। ११ गुञ्जा, रत्ती। १२ अङ्गुलि, उंगली। १३ कमरबन्द। १४ हौदा, अमारी। १५ घोड़ी। १६ तंग, घोड़ा कसनेको चमड़ेकी बद्धी।

कक्ष्यावान् (सं० पु०) कक्ष्या अस्त्यस्य, कक्ष्या-मतुप् मस्य वः। १ हस्ती, हाथी। (त्रि०) २ वध्रीयुक्त, तंग रखनेवाला।

कक्ष्यावेक्षक, कक्षावेक्षक देखो।

कखवाली (हिं० स्त्री०) कक्षारोग, काकराली, बगलमें निकलनेवाला फड़ा फोड़ा। कक्षा देखो।

कखौरी (हिं० स्त्री०) १ कक्षा, कांख। २ कखवाली।

कख्या (सं० स्त्री०) कक्ष-यत्-टाप्। कक्षा देखो।

कगदही (हिं० स्त्री०) कागज़ वगैरह बांधनेका बस्ता।

कगर (हिं० पु०) १ उच्च तट, ऊंचा किनारा। २ घोंठ, बाट। ३ सीमा, डांड़। ४ कारनिस, छतके नीचे दीवार को उभरी हुई मेंड। (क्रि० वि०) ५ तट-पर, किनारे। ६ पृथक्, अलग।

कगार (हिं० पु०) १ उच्चतट, ऊंचा किनारा। २ नदीका करारा। ३ भूमिका उन्नत भाग, टीला।

कगित्थ (सं० पु०) कपित्थक, कैथा।

कगोड़ी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र उत्पन्न होती है। इसका काठ गृहनिर्माणकार्यमें नहीं लगता।

कङ्क (सं० पु०) कङ्कते उद्गच्छति, कक्-अच् नुमच्। १ क्रौञ्चपक्षी, बगला, बूटीमार। इसका संस्कृतपर्याय लोहपृष्ठ, सदंशवदन, खर, रणालङ्करण, क्रूर, आमिषप्रिय, अरिष्ट, कालपुष्ट, क्रिंशारु, लोह-पृष्ठक, दीर्घपाद और दीर्घपात् है। कङ्कका मांस हृष्य, वीर्यविवर्धन और कफहर है। (चरकसंहिता) २ यमराज। ३ क्षत्रवेशी ब्राह्मण, बना हुआ ब्राह्मण। ४ युधिष्ठिर। अज्ञातवासके समय युधिष्ठिर 'कङ्क' नामसे विराटराजके सदस्य बने थे। ५ कंसासुरके भ्राता। ६ क्षत्रिय। ७ शाल्मलीद्वीपके अन्तर्गत पञ्चम वर्ष पर्वत। ८ चूत नामक राजा। ९ सुदेवके कनिष्ठ। १० जनपदविशेष, एक बस्ती। (मार्कण्डेयपु० ५८) महाभारतमें लिखा, कि राजसूययज्ञके समय कङ्कके लोगोंने राजा युधिष्ठिरको उपहार ले आ कर दिया था। अनुमान होता, कि यह जनपद नेपाल अथवा तिब्बतके पूर्वांशमें अवस्थित है। ११ उड़ीसेकी एक छोटी जमीन्दारी। १२ महाराजचूत, किसी किस्मका आम। १३ चन्दन।

कङ्कचित् (सं० त्रि०) संमूहमें एकत्र किया हुआ, जो ढेरमें समेटकर लगा दिया गया हो।

कङ्कट (सं० पु०) कं देहं घटति आह्णोति, क-कट-भाव, कक्-अटन् वा। मृगादिभ्योऽटन्। उण् ४।८१। १ कवच, बख़्तर। २ अङ्कुश, आंकुस। ३ खदिर, खैरका पेड़।

कङ्कटक (सं० पु०) कङ्कट स्वार्थे कन्। कङ्कट देखो।

कङ्कटेरी (सं० स्त्री०) हरिद्रा, हलदी।

कङ्कण (सं० क्ली०) कं इति कणति, कम्-कण्-अच्। १ हस्ताभरणविशेष, हाथमें पहननेकी एक चूड़ी। संस्कृत पर्याय करभूषण और कौतुक है। २ हस्तसूत्र, हाथमें बांधा जानेवाला धागा। यह प्रायः हरिद्रादि

रंगा जाता है। विवाहमें वर और कन्या दोनों एक दूसरेका कङ्कण छोरते हैं। कङ्कण छोर न सकनेसे मूर्खता प्रमाणित होती है। ३ भूषणमात्र, कोई गहना। ४ शेखर, चोटी। ५ हस्तीके पदका एक भूषण, हाथीके पैरका कड़ा।

कङ्कणपुर (सं० क्ली०) नगरविशेष, एक शहर। कङ्कणवर्षसे कङ्कणपुर नाम पड़ा है।

कङ्कणप्रिय (सं० पु०) शिवके एक अनुचर।

कङ्कणभूषण (सं० वि०) अलङ्कारादिसे विभूषित, चमकदार गहने पहने हुआ।

कङ्कणमणि (सं० स्त्री०) करभूषणका रत्न, चूड़ीका नगीना।

कङ्कणवर्ष (सं० पु०) १ रत्नविशेष, एक कीमयागर। २ राजा क्षेमगुप्त।

कङ्कणिन् (सं० वि०) कङ्कणसे विभूषित, जो चूड़ी पहने हो।

कङ्कणी (सं स्त्री०) कङ्के गमने अणति शब्दायते, कङ्क-अण-अच्-ङीप्; कं इति कणति, कम्-कण् पचाद्यच् ङीप् इति वा। क्षुद्रघण्टा, घुंघुरु।

कङ्कणीका (सं० स्त्री०) पुनः पुनः कणति, कण यङ् (लुक्)-ईकन् धातोः कङ्कणादेशश्च। १ क्षुद्रघण्टा, घुंघुरु। २ कटिभूषणविशेष, करधनी। इसमें चांदीके छोटे-छोटे घुंघुरु लगे रहते हैं।

कङ्कत (सं० क्ली०) कङ्कते शिरोमलं प्राप्नोति, कङ्कि-अतच्। १ केशमार्जन, कंघा, ककवा। यह धूलि, जन्तु, मल, कण्डू और शिरोरोगको दूर करता है। कंघी कान्ति चढ़ाती, कण्डू मिटाती, मूं रोग हटाती, केश बढ़ाती और रजोजन्य मल छोड़ाती है। (राजवल्लभ) २ हृक्षविशेष, एक पेड़। ३ अल्पविष प्राणिविशेष, एक जहरीला जानवर।

कङ्कतदेही (सं० पु-स्त्री०) प्राणिविशेष, एक जानवर। अंगरेजी भाषामें इसका नाम सिडिप (Cydippe) है। आकृति ढेलविण्ड-जैसी होती है। फिर उसपर कङ्कतकी भांति रेखायें रहती हैं।

कङ्कतिका (सं० स्त्री०) कङ्कत-ङीप् स्वार्थे कन् ह्रस्वश्च। १ केशमार्जनी, कंघो। संस्कृत पर्याय प्रसाधनी, कङ्कती, कङ्कत, प्रसाधन, केशमार्जन, फणी, फणिका और फणि है। कङ्कत देखो। २ अतिबला, बरियारी। ३ नागबला।

कङ्कती (सं० स्त्री०) कङ्कत-ङीप्। प्रसाधिनी, कंघी।

कङ्कतीका कङ्कतिका देखो।

कङ्कत्रोट (सं० पु०) कङ्कवत् त्रोटयति, कङ्क-त्रुट-णिच्-अच्, कङ्कात् पक्षिविशेषात् आत्मानं त्रायतेति वा, कङ्क-त्रा-अटन् पृषोदरादित्वात्। १ खल्वाथ मत्स्य, एक मछली। २ खड्गिन मत्स्य।

कङ्कत्रोटि (सं० पु०) कङ्कस्य त्रोटिरिव त्रोटियस्य, मध्यपदलो०। कङ्कत्रोट देखो।

कङ्कट (सं० क्ली०) सुवर्ण, सोना।

कङ्कपत्र (सं० क्ली०) कङ्कस्य पत्रम्, ६-तत्। कङ्क-पक्षीका पालक, बूटीमारका पर।

कङ्कपत्र (सं० पु०) कङ्कस्य पक्षिविशेषस्य पत्रमिव पत्रं यस्य। १ वाण, तीर। २ कङ्कपक्षीका पक्ष, बूटीमारका पर।

कङ्कपत्री (सं० पु०) कङ्कस्य पत्रमस्यास्तीति. कङ्क-पत्र इनि। वाण, तीर।

कङ्कपर्वा (सं० पु०) कङ्कवत् पर्व यस्य। सर्पविशेष, एक सांप।

कङ्कपुरी (सं० स्त्री०) कं सुखं कायति सूचयति, कर्मधा०। काशीपुरी, वाराणसी।

कङ्कपुरीष (सं० क्ली०) कङ्क विष्ठा, बूटीमारकी मैंगनी। यह व्रणदारण होता है। (सुश्रुत)

कङ्कभोजन (सं० पु०) अर्जुन वृक्ष।

कङ्कमाला (सं० स्त्री०) कङ्कं करवापत्यं मलते धारयति, कङ्क-मल-अच्-टाप्। करताली।

कङ्कमुख (सं० पु०) कङ्कस्य मुखमिव मुखं यस्य। १ सन्दंश, सनसी। २ अस्थिमें प्रविष्ट शल्यके उद्धारका एक यन्त्र, हड्डीमें लगा तीर वगैरह निकालनेका एक औजार। इस यन्त्रका अग्रभाग कङ्कपक्षीके मुख-जैसा होता है। मसूराकृति कीलक द्वारा कङ्क-मुख आवद्ध रहता है। सुश्रुतमें अन्यान्य यन्त्रोंको अपेक्षा इस यन्त्रका उत्कर्ष वर्णित है—कङ्कमुखयन्त्र सहजमें ही भीतर घुस शल्यग्रहण-पूर्वक निकल आता

और संग्रामपर उपयोगी होनेसे सकल यन्त्रोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ समझा जाता है। २ बाणविशेष, एक तीर।

"कार्मुकैः कङ्कपत्रान् बाणान् काञ्चनकङ्कपत्रानपि।" (रामायण ६।७८ अ०)

कङ्कर (सं० त्रि०) कं सुखं किरति क्षिपति, क-कॄ-अच्। १ कुत्सित, खराब। (क्ली०) कं जलं कीर्यते अत्र, क-कॄ आधारे अप्। २ घोल, मट्ठा। ३ शत नियुत संख्या, दश करोड़। (हिं० पु०) ४ कंकड़, एक खनिज पदार्थ। (Nodular limestone) भारतवर्षमें इन स्थानोंपर कङ्कर मिलता है—अलीगढ़, इलाहाबाद, अमृतसर, खम्भात, चम्पारन, भंटोली, गिरोया, गुजरात, हैदराबाद, हरोक, खान्देश, कोयाम्बातूर, ढाका, धौलपुर, इटावा, जयपुर, जालन्धर, जौनपुर, झालावाड़, खेरी, लुधियाना, मुंगेर, मुलतान, मुर्शिदाबाद, मथुरा, मुजफ्फरपुर, हिस्सर, नरसिंहपुर, अयोध्या, प्रतापगढ़, पटना, पेशावर, पुरनिया, सहारनपुर, सारन, शाहाबाद, शाहजहांपुर, सियालकोट, सिंहभूम, सीतापुर, सुलतानपुर, तिन्नेवल्ली, उसरौला, बरधा, बलिया, बांदा, बांकुड़ा, बस्ती, बिजनौर, बीकानेर, बदाऊं और बुलन्दशहर।

कङ्कराल (सं० पु०) पिस्तेका पेड़।

कङ्करोल (सं० पु०) कङ्क इव लोलयत्यम्लः, स्थल र:। १ निकोचक वृक्ष, अकोल, ढेर। २ लताविशेष, एक बेल।

कङ्कलोड्य (सं० स्त्री०) कङ्क इव लोड्यते, आलोड्यते, कङ्क-लोड-ण्यत्। विस्फोटकमूल, एक जड़ी। यह गुरु, अजीर्णकारी और शीतल होता है।

कङ्कपत्र (सं० पु०) कङ्कस्य पत्र इव पत्रः यस्य, मध्यपदलो०। १ कङ्क-पत्र लगा बाणविशेष, एक तीर। २ कङ्कका पर, बगलेका पांख।

कङ्कपत्रिन् (सं० पु०) कङ्कस्य पत्रो जातोऽस्य, कङ्कपत्र-इनच्। 'तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्।' पा ५।२।३६। कङ्कपत्रयुक्त बाण, एक तीर।

कङ्कशत्रु (सं० पु०) कङ्कस्य शत्रुः, ६-तत्। पृश्निपर्णी, चकवन। प्रयोगानुसार इस उद्भिद् द्वारा कङ्कपक्षी विनष्ट होता है।

कङ्कशाय (सं० पु०) कङ्क इव शेते, कङ्क-शी-अच्। कुक्कुर, कुत्ता।

कङ्का (सं० स्त्री०) १ उग्रसेनकी कन्या और कंसकी भगिनी। २ शीर्षचन्दन, किसी किस्मका चन्दन। ३ उत्पलगन्धिका।

कङ्काल (सं० पु०) कं शिरं कालयति क्षिपति, कम्-कल-णिच्-अच्। शरीरास्थि, ठठरी। इसका संस्कृत पर्याय करङ्क और अस्थिपञ्जर है। कङ्काल या अस्थिपञ्जर देहका सार होता है। त्वक्‌मांस विनष्ट होते भी अस्थि नष्ट नहीं होता। इसीसे कहा गया है—

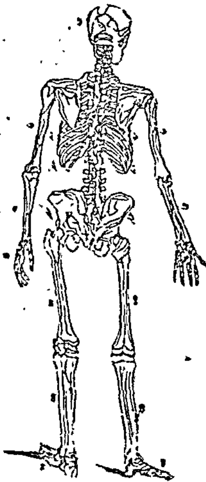
"अभ्यन्तरगतैः सारैर्यथा तिष्ठन्ति भूरुहाः।
अस्थिसारैस्तथा देहा ध्रियन्ते देहिनां ध्रुवम्॥
तस्माच्चिरविनष्टेषु त्वङ्‌मांसेषु शरीरिणाम्।
अस्थीनि न विनश्यन्ति साराण्येतानि देहिनाम्॥
मांसान्यत्र निबद्धानि सिराभिः स्नायुभिस्तथा।
अस्थीन्यालम्बनं कृत्वा न शीर्यन्ते पतन्ति वा॥" (सुश्रुत)

वृक्ष जैसे अभ्यन्तरस्थ सारके सहारे डटा रहता, वैसे ही अस्थिसारके सहारे मनुष्य देह धारण करता है। शरीरस्थ त्वक्, मांस प्रभृति नष्ट होते भी अस्थिका विनाश नहीं होता। अस्थि समस्त देहका सार है। उसमें शिरा और स्नायु द्वारा मांस बद्ध रहता है। अस्थिके अवलम्बनसे ही मांस शीर्ण वा पतित नहीं होता। (सुश्रुत)

चरकके मतसे—"त्वङ्‌मांसादिरहितः स्नायुमसितः शरीरास्थिचयः कङ्कालसंज्ञो भवति। स च कङ्कालः षड्‌गो भवति यथा-शाखाचतुष्टयं मध्यं पञ्चमं षष्ठं शिर इति।" (चरक)

त्वक् एवं मांसादि रहित तथा स्वस्थान पर अवस्थित देहका अस्थि समुदय कङ्काल कहाता है। यह छह अंशमें विभक्त है—चार शाखा, पञ्चम मध्याङ्ग और षष्ठ मस्तक। ऊर्ध्व शाखाद्वयको बाहु और अधःशाखा द्वयको सक्थि कहते हैं।

युरोपीय शारीरतत्त्वविदोंने भी कङ्कालको प्रधानतः तीन अङ्गोंमें विभक्त किया है—१ उत्तमाङ्ग वा मस्तक (Head), मध्याङ्ग वा स्कन्ध (Trunk) और शाखा (Extremities)।



नरकङ्काल।

१ चिह्नित अंश मस्तक, २ मध्य, ३ ऊर्ध्व और ४ अधःशाखा है।

महर्षि सुश्रुतके मतसे अस्थि पांच प्रकारका होता है—कपाल, रुचक, तरुण, वलय और नलकास्थि। जानु, नितम्ब, अंस, गण्ड, तालु, शङ्ख एवं मस्तकका अस्थिखण्ड कपाल कहाता है। दन्तके अस्थिखण्डका नाम रुचक है। नासिका, कर्ण, ग्रीवा तथा चक्षुकोषके अस्थिको तरुण कहते हैं। हस्त, पाद, पार्श्व, पृष्ठ, उदर और वक्षःस्थानका अस्थि वलय है। फिर अवशिष्ट सकल अस्थिको संज्ञा नलकास्थि है।(१)

महर्षि सुश्रुतके लेखानुसार वैदग्ध अस्थिको संख्या ३०६ बताते हैं। किन्तु शल्यतन्त्रके मतमें ३०२ ही अस्थि होते हैं। यथा—

प्रत्येक पादाङ्गुलिमें तीन-तीन	...	...	१५
पदतल और गुल्फमें	...	...	१०
एड़ीमें	...	...	१
जङ्घामें	...	...	२
जानुमें	...	...	१
ऊरुदेशमें	...	...	१
इसी प्रकार अपर पादमें		...	३०
दोनों हाथोंमें तीस-तीस		...	६०
कटिदेशमें	...	...	१
मलद्वारमें	...	...	१
योनिदेशमें	...	...	१
दोनों नितम्बोंमें	...	...	२
दोनों पार्श्वमें छत्तीस-छत्तीस		...	७२
पृष्ठमें	...	...	३०
वक्षमें	...	...	८
हस्ताकार अक्षक नामक	...	...	२
ग्रीवादेशमें	...	...	९
कण्ठदेशमें	...	...	४
दोनों हनुमें	...	...	२
दन्तमें	...	...	३२
नासिकामें	...	...	३
तालुमें	...	...	२
गण्ड, कर्ण और स्नायु प्रत्येकमें दो-दो ...			६
मस्तकमें	...	...	६
		सब मिलाके	३०२

चरकने अस्थिको संख्या ३६० लिखी है—दन्तूखल अर्थात् दन्तमूलमें ३२, दन्तमें ३२, नखमें २०, शलाकामें २०, अङ्गुलिमें ६०, पार्ष्णिमें २, कूर्चके नीचे २, हस्तकी मणिमें ४, पदके गुल्फमें ४, अरत्निमें ४, जङ्घामें ४, जानुमें २, कुर्परमें २, ऊरुमें २, बाहुमें २, कण्ठके नीचे २, तालुमें २, नितम्बदेशमें २, योनि वा लिङ्गमें १, त्रिकदेशमें १, गुह्यदेशमें १, पृष्ठमें ३५, ग्रीवामें १५, जत्रुमें २, हनुमें १, हनुके मूलबन्धनमें २, ललाटमें २, चक्षुमें २, गण्डद्वयमें २, नासिकामें १, उभय पार्श्वके पञ्जरमें चौबीसके हिसाबसे ४८, पञ्जरको गोलाकार करनि-

(१) "कपालरुचकतरुणवलयनलकसंज्ञानि। तेषां जानुनितम्बांसगण्डतालुशङ्खशिरःसु कपालानि, दशनास्तु रुचकानि, घ्राणकर्णग्रीवाक्षिकोषेषु तरुणानि। पाणिपादपार्श्वपृष्ठोदरोरःसु वलयानि, शेषाणि नलकसंज्ञानि।" (सुश्रुत)

कामें २४, ललाटमें २, मस्तकमें ४ और पदद्वयमें १० अस्थि होते हैं। इसी प्रकार शरीरके सब अस्थि १६० हैं।

युरोपीय चिकित्सकोंके मतसे नरकङ्कालमें सब मिला कर २२३ अस्थि रहते हैं। यथा—कपालमें ८, मुखमण्डलमें १४, कर्णाभ्यन्तरमें ८, कशेरुकामें २१, वक्षमें २५, वस्तिदेशमें ११, ऊर्ध्वशाखा वा बाहुमें ६८ और अधोशाखा वा सक्थिमें ६४ अस्थि हैं।

कशेरु मेरुदण्डस्वरूप है। इसमें २४ अस्थि होते हैं। ऊपर जिसमें ७ अस्थि रहते, उसे ग्रीवा-कशेरुका (Cervical vertibrae) कहते हैं। मध्यमें १२ अस्थि रखनेवालीका नाम पृष्ठकशेरुका (Dorsal vertibrae) है। अधोभागमें ५ अस्थियुक्त देश कटिकशेरुका (Lumbar vertibrae) कहाता है। कशेरु वा मेरुदण्डके तलभागका त्रिकास्थि (Sacrum) ऊपर पड़ता है। त्रिकास्थि वस्तिके अस्थिका अंग कहाते भी प्रकृत रूपसे मेरुदण्डका ही अविच्छिन्न अस्थि माना जाता है। यह अस्थि त्रिकोणाकार देख पड़नेसे त्रिक (Sacrum) कहाता है। यह ५।६ क्षुद्र कशेरुकामें गठित रहता है। नाम त्रिक कशेरुका (Sacral vertibrae) है। मेरुदण्डमें सबसे नीचे अधःकशेरुका (Coccyx) होती है। यह पशु आदिके लाङ्गूलमें अस्थिरूपसे मिलती है। मानवके पक्षमें वैसा नहीं। मानव जातिकी अधःकशेरुकाके अस्थि क्षुद्र, स्वल्पायतन और चार-पांचसे अधिक नहीं होते। वस्त्यस्थिके उभय पार्श्व और सम्मुख श्रोणिफलकास्थि (Os Innominato) रहता है। फिर यह अस्थि तीन भागमें विभक्त है—कटिका अस्थि (Ilium), कक्षंका अस्थि (Ischium) और उपस्थका अस्थि (Pubis)।

मेरुदण्डका प्रधान अंग वक्षःस्थल (Chest or Thorax) है। इसके पश्चाद्भागमें पृष्ठकशेरुका, सम्मुखभागमें बुकास्थि और उभय पार्श्वमें बारह-बारह पर्शुका तथा उनके उपास्थि हैं। पर्शुका मेरुदण्डसे कुछ पृथक् पृथक् रहती है। यह केवल ऊपरी उभय पार्श्वपर सात बुकास्थिसे एक-एक कर स्वतन्त्रभावसे मिलित हैं। यह सातो स्वाभाविक पर्शुका और नीचे उभय पार्श्वके ५ अस्थि कृत्रिम पर्शुका हैं। वयोवृद्धका बुकास्थि १, युवकका २ और शिशुका अस्थि उससे भी अधिक अंशोंसे गठित है। यौवनकालको जब बुकास्थि दो खण्ड रहता, तब उसके ऊपरी खण्डका विद्वान् मुष्टि (Manubrium) कहता है। वयोवृद्धिके समय बुकास्थि एक हो जाता है। इसके अधोभागसे उपरिभाग पहले सीधा और फिर मोटा देख पड़ता है। मध्यमें एक-एक कोमलास्थि रहता है। उसे खड्गाकार कोमलास्थि (Ensiform or xiphoid cartilage) कहते हैं। नरकपालकी करोटीमें १ ललाटास्थि (Frontal bone), २ पार्श्व-कपालास्थि (Parietal bone), १ पश्चात् कपालास्थि (Occipital bone), १ कीलकास्थि (Sphenoid), २ शङ्खास्थि (Temporal bone), और १ झर्झरास्थि (Ethmoid) रहता है। मुखमण्डलमें २ नासास्थि (Nasal bone), २ माण्ड्यस्थि (Superior maxillary), २ तात्वस्थि (Palate), २ गण्डास्थि (Malar), २ अश्रुग्रन्थ्यस्थि (Lachrymal), २ अधोवेष्टनास्थि (Inferior Turbinated), १ फालास्थि (Vomar) और हन्वस्थि (Inferior Maxillary) आते हैं।

कपाल और मुख देखो।

कङ्कालकी ऊर्ध्व शाखामें अंसफलकास्थि (Scapula), अक्षकास्थि (Clavicle), प्रकोष्ठास्थि (Radius), प्रकोष्ठास्थि (Ulna), मणिबन्ध (Carpus), करभ वा हस्ततल (Metacarpus) और सकल अङ्गुल्यस्थि होते हैं। इनमें अंसफलकास्थि और अक्षकास्थि श्रोणिफलकास्थिसे मिलते हैं। हस्तमें मणिबन्ध, करभ और अङ्गुल्यस्थि रहते हैं। इनके मध्य मणिबन्धमें सब मिलाके ८ अस्थि दो तहपर पड़ते हैं। पहले तहमें चारोंके नाम नावास्थि (Scaphoid), अर्धचन्द्रास्थि (Semi-lunar), कीलास्थि (Cuneiform), और वर्तुलास्थि (Pisiform) हैं। दूसरे तहके चारों समद्विपार्श्वास्थि (Trabezium), चतु-

कोणास्थि (Trapezoid), स्थूलास्थि (Osmagnum) और वड़िशास्थि (Unciform) कहाते हैं।

अङ्गुलिके सकल अस्थिको अङ्गुल्यस्थि (Phalanges) कहते हैं। प्रत्येक अङ्गुष्ठमें दो और अपर अङ्गुलिमें तीन अस्थि रहती हैं। इनमें प्रत्येक अपर पर्व एवं करतलके अस्थिसे पृथक् पड़ने पर स्वाधीन भावसे बढ़ सकता है।

अधःशाखामें ऊर्वस्थि (Femur), जानुफलकास्थि (Patella), जङ्घास्थि (Tibia), नलकास्थि (Fibula), गुल्फ (Tarsus), प्रपद (Metatarsus) और पद-तल (Toes) होता है।

अङ्गके अस्थियोंमें ऊर्वस्थि सबसे बड़ा है। इसका शिरोभाग श्रोणिफलकास्थिसे पृथक् पड़ जाता है। जङ्घास्थि पदके सम्मुख और अन्तर्भागमें रहता है। इसका शिरोभाग अन्य भागसे बड़ा होता है। ऊपर बादामी रंग झलकता है। दो बादामी तहोंपर ऊर्वस्थिकी गांठ (Condylus) पड़ती है। नलकास्थि जङ्घास्थिके ठीक पार्श्व और पदके वहिर्भागपर स्थापित है। यह देखनेमें दीर्घ, क्षीण, अधिकांश तीन पार्श्वयुक्त और शेष दिक्को वर्धित रहता है। जानुफलकास्थि (Patella Knee-pan) प्रायः त्रिकोणाकार देख पड़ता है। इसका अधोभाग बहुत ढालू, अग्रभाग कुछ टेढ़ा तथा देखनेमें तन्तु-जैसा और पश्चाद्भाग अधिक कोमल एवं मध्यपर एक आलि द्वारा दो भागमें विभक्त है। गुल्फ ७ अस्थिसे निर्मित है। यथा—१ गुल्फास्थि (Astragalus), २ पार्ष्ण्यस्थि (Os calcis), ३ नावास्थि (Navicular), ४ घनास्थि (Cuboid), ५ अभ्यन्तर-कोणास्थि (Internal Cuneiform), ६ मध्यकोणास्थि (Middle Cuneiform) और ७ वाह्यकोणास्थि (External cuneiform)।

प्रपद एवं पदाङ्गुलिके अस्थिकी गठनप्रणाली प्रायः करभ तथा अङ्गुलिके अस्थि-जैसी ही रहती है। पदाङ्गुलिके अस्थि दीर्घ, ह्रस्व, लघु और कराङ्गुलिके अस्थिसे सघन होते हैं। पादके दोनों वृद्धाङ्गुष्ठोंको छोड़ दूसरे छोटे पड़ते हैं।

एतद्भिन्न शरीरमें दूसरे भी अति कोमल उपास्थि या तरुणास्थि विद्यमान हैं। शरीरके दृढ़ एवं सबल अङ्ग अपरस्थि द्वारा निर्मित हैं। मणिबन्ध और गुल्फ प्रभृति स्थानोंमें अपरस्थि या क्षुद्रास्थि होते हैं। समस्त अस्थि अन्तर्भाग और वहिर्भागमें झिल्लीसे वेष्टित हैं। किन्तु इनके सन्धिस्थानोंपर झिल्लीका परदा देख नहीं पड़ता। सन्धिस्थान सूक्ष्म उपास्थिसे वेष्टित रहता है। अस्थिका गर्भ पीतवर्ण स्नेहविशेषसे पूर्ण है। उसीको मज्जा कहते हैं। अस्थि-समूहमें कहीं गर्तवत् खात और कहीं उच्चभाव रहता है।

देहके अस्थिमय गर्त (Acalabulum) कपालास्थि द्वारा निर्मित हैं।

कङ्कालकेतु (सं॰ पु॰) एक दानव।

कङ्कालभैरवतन्त्र (सं॰ क्ली॰) तन्त्रशास्त्रविशेष।

कङ्कालमालिनी (सं॰ स्त्री॰) कङ्कालमालिन्-ङीप्। काली।

कङ्कालमाली (सं॰ पु॰) कङ्कालानां माला अस्यास्ति, कङ्काल माला इनि। [illegible]। पा ५।२।११५। महादेव।

कङ्कालय (सं॰ पु॰) कङ्कालं याति, कङ्काल-या-क। देह, शरीर, जिस्म।

कङ्कालशर (सं॰ पु॰) वाणविशेष, हड्डीका तीर।

कङ्कालास्त्र (सं॰ क्ली॰) अस्त्रविशेष, एक हथियार। यह हड्डीका बनता था।

कङ्कालिनी (सं॰ स्त्री॰) १ महाकालीमूर्ति। कङ्काली देखो। २ कर्कशा, झगड़ा करनेवाली।

कङ्काली (सं॰ स्त्री॰) कङ्काल-ङीप्। १ महाकालीमूर्ति। कमटी राज्यके अन्तर्गत वारिया ग्रामसे ७ मील उत्तरपश्चिम एक अति प्राचीन दुर्ग अवस्थित है। दुर्गकी अवस्था अति शोचनीय है। चारो दिक् भूमिसात् है। यत्सामान्य अंश अवशिष्ट देख पड़ता है। इसी दुर्गमें कङ्काली देवीकी प्रस्तरमूर्ति प्रतिष्ठित है। देवीके १८ हाथ हैं। उनमें नरकपाल धनुर्वाणादि अस्त्र-शस्त्र विराज रहे हैं। देवीके निकट त्रिशूलधारी शिवकी मूर्ति खड़ी है। उन्हींके निकट गणेशमूर्ति है। यह दुर्ग और कङ्काली देवीकी मूर्ति बहु प्राचीन है। दोनों प्रायः ८८ सौ वर्षके होंगे।

दुर्गमें मकरध्वज (चेदि संवत् ७००), गोपालदेव (चेदि संवत् ८४०) और यशोराज (चेदि संवत् ९१०) प्रभृति कई लोगोंका शिलानुशासन मिलता है। (हिं०) २ कर्कशा, लड़ने-झगड़नेवाली। ३ नीचजातिविशेष, एक कमीना कौम। कङ्काली किंगरी बजा-बजा भीख मांगा करते हैं।

कङ्कावोल (सं० क्ली०) गोशीर्ष-चन्दनका बीज।

कङ्किरात (सं० क्ली०) कुरुण्टक, लाल झाड़।

कङ्कु (सं० पु०) कङ्कते सख्यं प्राप्नोति, कङ्क-उन्। १ उग्रसेनके पुत्र और कंसके भ्राता। कंसके आठ भ्राता थे—सुनामा, न्यग्रोध, कङ्कु, शङ्कु, सुहू, राष्ट्रपाल, सृष्ट और तुष्टिमान। २ तृणविशेष, एक घास।

कङ्कुष्ठ (सं० क्ली०) कङ्कोः समीपे तिष्ठति, कङ्कु-स्था-क षत्वञ्च। १ पार्वतीय मृत्तिकाविशेष, किसी किस्मकी पहाड़ी मट्टी। इसका संस्कृत पर्याय कालकुष्ठ, विरङ्ग, रङ्गदायक, रेचक, पुलक, शोधक और कालपालक है। भावप्रकाशके मतमें हिमालयके शिखरमें यह मृत्तिका उपजती है। यह कुष्ठ द्विविध होता है—नालिक रौप्यवर्ण और रेणुक स्वर्णवर्ण। दोनोंमें रेणुक ही अधिक गुणशाली है। कङ्कुष्ठ गुरु, स्निग्ध, विरेचक, तिक्त, कटु, उष्ण एवं वर्णकारक और कृमि, शोथ, उदराध्मान, गुल्म, आनाह तथा कफ नाशक होता है। २ हिमालयके पादाग्रदेशमें उत्पन्न होनेवाला एक प्रकार-जैसा एक पत्थर।

कङ्कुष (सं० पु०) कङ्क-उषन्। आभ्यन्तर देह, शरीरका आभ्यन्तर प्रदेश, जिस्मका भीतरी हिस्सा।

कङ्केरु (सं० पु०) कङ्कते लौल्यं प्राप्नोति भक्षणार्थमिति शेषः, कङ्क-एरु। १ काकविशेष, एक कौवा। २ बक पक्षी, बगला।

कङ्केल, कङ्केलि देखो।

कङ्केलि (सं० पु०) कं सुखं तदर्थं केलिरस्य, बहुव्री०। अशोक वृक्ष।

कङ्केल (सं० पु०) कक-एल। वास्तूक शाक, बथुवा।

कङ्केलि (सं० पु०) कङ्क बाहुलकात् एलि, पृषोदरादित्वात् साधुः। अशोक वृक्ष। अमरमें यह शब्द स्त्रीलिङ्ग माना है।

कङ्कोल (सं० पु०) १ नागराजविशेष। २ 'गन्धपत्यागाधन' नामक ग्रन्थप्रणेता। ३ शीतलचीनी एक सुगन्ध पण्यद्रव्य, शीतल-चीनी। इसका फल वृहत् और कठिन होता है। कङ्कोल औषध और तैलादिमें पड़ता है। यह कटु, तिक्त, उष्ण, मुखजाड्यहर, दीपन, पाचन, रुच्य और कफवातघ्न है। (राजनिघण्टु)

कङ्कोलक, कङ्कोल देखो।

कङ्कोलकी (सं० स्त्री०) कङ्कोलवृक्ष, शीतलचीनीका पेड़। यह तिक्त, ग्राही, उष्ण, रुचिकर, मलावष्टम्भकर, विशद एवं अग्निदीपन होती और कफ, प्रमेह, कुष्ठ तथा जन्तुको विनाश कर देती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कङ्कोलतिका, कङ्कोलकी देखो।

कङ्ग (सं० क्ली०) कं सुखं गच्छति अनेन, कं-गम बाहुलकात् ड। पापभोग, सजा।

कङ्ग (सं० पु०) क्लोम, फेफड़ा।

कङ्गु (सं० स्त्री०) कं सुखं गङ्गयति, कं-गगि-णिच्-कु। तृणधान्यविशेष, एक अनाज। इसका संस्कृत पर्याय प्रियङ्गु और प्रियङ्ग है। भावप्रकाशके मतसे यह धान्य चार प्रकारका होता है—कृष्ण, रक्त, श्वेत और पीत। पीत कङ्गु सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। यह भग्नसन्धानकारक, वातवर्धक, बृंहण, गुरु, रूक्षश्लेष्मनाशक और घोड़ेके लिये विशेष उपकारक है।

कङ्गुका (सं० स्त्री०) कङ्गु स्वार्थे कन् टाप्। धान्यविशेष। कङ्गु देखो।

कङ्गुनिका (सं० स्त्री०) १ महाज्योतिष्मती लता, रतनजोत। २ तृणधान्यविशेष, एक जंगली अनाज।

कङ्गुनी, कङ्गुनिका देखो।

कङ्गुनीपत्र (सं० पु०) कङ्गुनीपत्रा देखो।

कङ्गुनीपत्रा (सं० स्त्री०) पण्यन्धा नाम तृणविशेष, एक घास।

कङ्गुनी (सं० स्त्री०) कङ्गुनीयते कङ्गुशब्देन ज्ञायते, कङ्गुनी बाहुलकात् ड-ङीप्। १ तृणधान्यविशेष, एक अनाजी घास। युक्तप्रदेशमें इसे मालकांगनी कहते हैं। संस्कृत पर्याय ज्योतिष्मती, कटभी, वह्नि, रुचि,

विषक, ज्योतिका, पारावतपदो, पत्रलता, पीत-तण्डुला, सुकुमारी और कुकुन्दनी है। कङ्गुनी धातुशोषक, पित्तश्लेष्मनाशक, रुच, वायुवर्धक, पुष्टि-कारक, गुरु और भग्नसन्धानकारी होती है। (राजवल्लभ)

कङ्गुनीका (सं० स्त्री०) कङ्गुधान्य, एक धनाजी घास।

कङ्गुनीपत्रा (सं० स्त्री०) कङ्गुन्याः पत्रमिव पत्रमस्याः, मध्यपदलो०। पत्राम्बा नामक तृणविशेष, एक घास।

कङ्गुल (सं० पु०) कङ्गु लाति गृह्णाति अनेन, कङ्गु-ला-क। हस्त, हाथ।

कङ्गू, कङ्गु देखो।

कङ्गूर (सं० पु०) कङ्गू लाति अनेन, कङ्गु-ला-क लस्य रः। हस्त, हाथ।

कच (सं० पु०) कचते शोभते शिरसि, कच पदाद्यच्। १ केश, बाल। २ शुष्क व्रण, सूखा जखम। ३ मेघ, बादल। ४ बन्ध, पट्टी, लपेट। ५ शोभा, खूबसूरती। ६ बालक, बच्चा। ७ वत्स, बछड़ा। ८ परिच्छदका छोर, पोशाकका किनारा। ९ वृहस्पतिपुत्र। महाभारतमें कचका चरित्र इस प्रकार वर्णित है—

देवासुरयुद्धके समय देवनिहत असुरको दैत्यगुरु शुक्राचार्य सञ्जीवनी विद्याके बलसे फिर जिला देते थे। देवगुरु वृहस्पतिमें यह विद्या न रहनेसे देवगणने अत्यन्त भीत हो गुरुपुत्र कचको शुक्राचार्यसे यह विद्या सीखनेके लिये अनुरोध किया। कच भी देवकार्य साधनके लिये शुक्राचार्यका शिष्यत्व ग्रहण कर निरतिशय भक्तिसे सेवामें लगे थे। क्रूरमति असुरोंने कचको अभिप्राय समझ क्रमशः दो बार मार डाला। शुक्रकन्या देवयानीने स्नेहवश पितासे अनुरोध कर उन्हें दोनों बार जिलाया था। तीसरे बार दैत्योंने कचका देह खण्ड-खण्ड कर मद्यके साथ शुक्राचार्यको खिला दिया। उस समय भी देवयानी उनके जीवनके लिये पितासे अत्यन्त अनुरोध करने लगीं। शुक्राचार्यने कन्याके अनुरोधसे उन्हें जिलानेकी इच्छा कर पूछा था—कच कहां हो। कचने उदरके भीतरसे अपना वृत्तान्त बताया। फिर शुक्राचार्यने निरुपाय हो कहा था—कचको बचानेमें हमें मरना पड़ेगा, नतुवा उदरसे वह कैसे बाहर निकलेगा। देवयानीने उत्तर दिया—दोनोंका विच्छेद मेरे लिये कष्टदायक है; इस लिये वही विधान कीजिये, जिसमें दोनोंका प्राण बचे। फिर शुक्राचार्य बोल उठे—कच! तुम देवयानीका स्नेहलाभ कर सिद्ध बन गये हो; हम तुम्हें सञ्जीवनी विद्या देते हैं, तुम निकलकर हमें जिला देना। इसी प्रकार कचने सञ्जीवनी विद्या लाभ कर उदरसे निर्गमनपूर्वक शुक्रको जिलाया था। अनन्तर देवयानीने उनसे विवाह करना चाहा, किन्तु उन्होंने सम्बन्ध-दोषसे उनका कहा न माना। देवयानीने उससे व्यथित हो अभिशाप दिया था—तुम्हारी विद्या निष्फल जायेगी। कचने भी देवयानीको 'तुम क्षत्रियपत्नी होगी' अभिशाप दे कहा—तुमने अन्याय अभिशाप दिया है; इसलिये हमारी विद्या निष्फल जाते भी जिसे सिखायेंगे, उसे इस विद्यामें सिद्ध पायेंगे। यही कहकर वह देवपुरीको चल दिये। (भारत, आदि० ७६ अ०)

(हिं० वि०) १० कच्चा। यह शब्द समासमें आता है। (पु०) ११ शब्दविशेष, एक आवाज़। जब कोई चीज़ किसी चीज़में घुसती, तब 'कच' की आवाज़ निकलती है। कुचलनेका शब्द भी 'कच' ही कहाता है।

कचक (हिं० स्त्री०) आघातविशेष, एक चोट। दबने या कुचलनेमें 'कचक' होती है।

कचकच (हिं० पु०) वितण्डावाद, बकझक, किचकिच, बातोंका झगड़ा।

कचकचाना (हिं० क्रि०) १ वाक्युद्ध करना, बातोंका झगड़ा मचाना, कचकच मचाना। २ क्रुद्ध होना, दांत पीसना।

कचकड़ (हिं० पु०) १ कच्छपकपाल, कछुवेकी खोपड़ी। २ कच्छप वा ह्वेल मत्स्यका अस्थि, कछुवे या ह्वेल मछलीकी हड्डी। चीना और जापानी कचकड़के खिलौने बनाते हैं।

कचकड़ा, कचकड़ देखो।

कचकना (हिं० क्रि०) १ किसी भारी चीज़के नीचे पड़ना, दबना, कुचलना। २ आघात लगना, ठोकर बैठना।

कचकाना (हिं० क्रि०) १ झुकाना, दबाना। २ भङ्ग करना, तोड़ देना।

कचकेला (हिं० पु०) कदलीफलविशेष, किसी किस्मका केला। इसका फल हरित् और नीरस रहता है। खानेमें स्वादु न लगनेसे भी इसे कचकेला कहते हैं।

कचकोल (हिं० पु०) १ कशकोल, कपाल, खोपड़ा। २ खप्पर, भीख मांगनेका एक पात्र। यह नारियलका बनता और साधुओंके हाथमें रहता है।

कचखुआ (हिं० पु०) कांछ न लगानेवाला, जिसकी ढीली धोती रहे।

कचखुली (हिं० स्त्री०) क्रीड़ाविशेष, एक खेल। इसमें जिस लड़केकी कांछ खुल जाती, उसके दांव देनेकी बारी आती है।

कचङ्ग (सं० पु०) कचं मेघं कनति उत्पादयति, धातूनामनेकार्थत्वात् कच-कन्-अच् पृषोदरादित्वात् साधुः। समुद्र, बहर।

कचङ्गन (सं० क्ली०) कचस्य बन्धनस्य अङ्गनम्, शकन्ध्वादित्वात् सन्धिः। कररहित विक्रयस्थान, जिस बाजारमें चुंगी न लें। इसका संस्कृत पर्याय निसुंट और पल्लाजिर हैं।

कचङ्गल (सं० पु०) कच्यते दृश्यते वेलया, कच बाहुल-कात् अङ्ग-अच्, कचस्य मेघस्य-अङ्गं लाति गृह्णाति वा, ला-क। समुद्र, बहर।

कचट (सं० क्ली०) १ कचट शाक, एक भाजी। २ तृण, घास। ३ पत्र, पत्ता।

कचड़-पचड़ (हिं० पु०) १ कचपच, भराभरी। २ कचकच, बकझक।

कचड़ा (हिं० पु०) १ करकट, कूड़ा, झाड़न। २ अपक्व खुटिफल, कच्चा खरबूजा। ३ ककंटी, ककड़ी। ४ शीलकीटविशेष, सेमलका ढोंढ। ५ कार्पासबीज, बिनौला। ६ माष या चणककी पीठी, उड़द या चनेकी पीसी हुयी दाल। ७ शैवाल, सेवार।

कचदन्धिका (सं० स्त्री०) अलाबु, लौकी।

कचदिला (हिं० वि०) दुर्बल-हृदय, डरपोक, मजबूत दिल न रखनेवाला।

कचद्रावी (सं० पु०) अम्लवेतस, चूक।

कचनार (हिं० पु०) काञ्चनार, एक पेड़। यह मध्यप्रमाण और पतनशील है। हिमालयके निम्न-प्रदेश पर सिन्धुसे पूर्व भारत और ब्रह्मदेशके समस्त वनमें कचनार मिलता है। ग्रीष्म ऋतुके आरम्भकाल बड़े-बड़े सफेद और बैंजनी फूल खिलते हैं। कचनारसे 'सेम'की गोंद या 'सेमला गोंद' निकलती है। गोंदका रंग भूरा रहता है। उसे पानीमें घुला नहीं सकते। छाल रंगनेके काम आती है। बीजसे एकप्रकार तैल निकलता है। अजीर्ण और अग्न्याध्मानपर मूलका क्वाथ पिलाते हैं। शर्कराके साथ पुष्प धारक होते हैं। फिर त्वक्, पुष्प वा मूलको मांड़में बांट कर प्रलेप चढ़ानेसे फोड़ा पक जाता है। कचनारकी छाल परिवर्तनकारक, पुष्टिसाधक, सङ्कोचनशील और गण्डमाला, त्वक्के रोग तथा व्रणके लिये लाभदायक है। सूखी कली अर्शोरोग और अतिसार पर चलती है। फरवरी या मार्चमें फूल आते, दो मास पीछे बीज पक जाते हैं। लोग कलीका शाक बनाते हैं। काठ अधिक कठोर नहीं होता। केन्द्रस्थलकी लकड़ी अधिक काली और कड़ी पड़ती है। काठ कृषियन्त्रोंके बनानेमें लगता है। बौद्ध प्रतिमाओंमें कचनार प्रायः देख पड़ता है। इसकी शाखा पतली रहती है। कचनार कई जातिका होता है। पत्र वर्तुल और सिरेपर दो खण्डोंमें विभक्त रहता है। कलीका अचार भी डालते हैं। पुष्प सुगन्धि होते हैं।

कचप (सं० क्ली०) कचते शोभते, कच-कपन्। कचि-कुटि-दलि-कपिभ्यः कपन्। उण् ३।१४२। १ तृण, घास। २ शाकपत्र, सब्जी।

कचपच (सं० पु०) कचानां केशानां पचसमूहः, ६-तत्। केशसमूह, घने या बने बाल।

कचपच (हिं० पु०) १ भीड़भाड़, भराभरी। २ कच-कच, बातका बतंगड़।

कचपचिया, कचपची देखो।

कचपची (हिं० स्त्री०) कृत्तिका नक्षत्र। इसमें अनेक छुद्र-छुद्र नक्षत्र रहते, जो नभोमण्डलमें गुच्छे-से चमकते हैं।

कचपाश, कचपच देखो।

कचपेंदिया (हिं० वि०) १ अप्रौढ़तल, जिसके कच्चा पेंदा रहे। २ हीनमति, ऊटपटांग बकनेवाला, जो बातका पक्का न हो।

कचबची (हिं० स्त्री०) सितारा, बुंदी। स्त्रियां इसे अपने मस्तक और कपोलपर देखानेके लिये लगा लेती हैं। कचबची खूब चमकती है।

कचमाल (सं० पु०) कचं काचवत् कान्तिं मलते धारयति, कच-मल-अण्। धूम, धुवां। कोई कोई 'खतमाल' भी कहता है।

कचरई अमौवा (हिं० पु०) अमौवेका एक रंग। इसमें हरेरी रहती है। कचरई अमौवेको लोग अधिकांश सुगन्धके लिये पसन्द करते हैं। धनी व्यक्ति इसी रंगका भितल्ला रजाईमें लगाया करते हैं। प्रथमतः वस्त्र हरिद्रासे रंगा जाता है। फिर उसे हरके जोशांदेमें डाल देते हैं। अन्तको उसे कसीसमें डुबो अनारके छिलकेके जोशांदेमें रंगनेसे कचरई अमौवा होता है। इसके तीन भेद हैं—संदली, सूफियानी और मलयगिरी।

कचरकचर (हिं० पु०) १ वाक्युद्ध, कचकच। २ अपक्व फल खानेका शब्द, जो आवाज, कच्चा फल खानेसे निकलती हो।

कचरकूट (हिं० स्त्री०) मारपीट, लात-जूता।

कचरघान (सं० पु०) १ धमधखेड़ा, बेजा जमाव। २ सन्तानसन्ततिकी वृद्धि, औलादकी बढ़ती। ३ प्रबलता, जोर। ४ मारकूट, पीटपाट।

कचरना (हिं० क्रि०) १ पददलित करना, दबाना, रौंदना। २ भली भांति भोजन करना, अच्छीतरह खाना, खूब पेट भरना।

कचरपचर (हिं० पु०) १ गिचपिच, भरा और बिगड़ा हुआ। २ कचपच, बतबक्कर। ३ कीचड़, कांदा।

कचरा, कचड़ा देखो।

कचराई (हिं० स्त्री०) दबाई, रौंदाई।

कचरिपुफला (सं० स्त्री०) कचस्य रिपुः फलमस्याः, बहुव्री०। शमीवृक्ष, छिकुर।

कचरी (हिं० स्त्री०) १ सेंधिया, पेहंटा। यह एक बेल है। ककड़ीकी भांति कचरी खेतोंमें फैल जाती है। फल अण्डाकार एवं पीतवर्ण रहता और खानेमें खटमिट्ठा लगता है। कच्ची कचरीको सुखा कर घीमें भूननेसे अच्छी तरकारी बनती है। इसको सोंठ डालनेसे चटनी भी बहुत अच्छी होती है। इसे युक्तप्रदेशमें कचेलिया कहते हैं। लोग प्रायः इसे सुगन्धके लिये हाथमें रखते और बहुत कम चखते हैं। २ शुष्क कचरीका शाक। ३ रुईका बिनौला। ४ छिलकेदार दाल।

कचलम्पट (हिं० वि०) व्यभिचारी, जिनाकार, जो लंगोटेका सच्चा न हो।

कचला (हिं० स्त्री०) १ काली और चिकनी मट्टी। इससे युक्तप्रदेशमें मकानको कच्ची दीवार उठायी जाती है। यह मट्टी बहुत मजबूत होती और पानी पड़ते भी अपना गुण नहीं खोती। २ कीचड़, कांदा।

कचलू (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह पार्वत्य वृक्ष अनेक प्रकारका होता है। भारतवर्षमें इसके चादह भेद पाये जाते हैं। काठ समान रहते भी पत्रमें भेद पड़ता है। काठ श्वेत, कठोर तथा आवर्तयुक्त निकलता है। यमुनासे पूर्व हिमालयपर ५०००से ८००० फीट ऊंचे तक कचलू मिलता है। यह अति सुन्दर वृक्ष है। शिशिरमें पतझार होता है। नवीन पत्र वसन्तसे पहले ही फूट आते हैं। इसके तख्ते मकान् और सन्दूक तैयार करनेमें लगते हैं।

कचलोंदा (हिं० पु०) कच्चा लोंदा, कच्चे आटेका पेड़ा।

कचलोन (हिं० पु०) लवणविशेष, किसी किस्मकी नमक। यह कांचकी भट्टोमें जमे हुये खारसे तैयार किया जाता है। कचलोन जलमें जल्द नहीं घुलता।

कचलोहा (हिं० पु०) १ कच्चा लोहा। २ ढीला प्रहार, अधूरा वार, न लगनेवाला घाव। (स्त्री०) कचलोही।

कचलोह (हिं० पु०) व्रणसे छूटनेवाला पानी, जो घमका अपक्व सब पड़ता हो।

कचबांसी (हिं० स्त्री०) खेतकी एक नाप। २० कचबांसीकी एक बिस्वांसी होती है।

कचवाट (हिं० स्त्री०) १ विराग, उचाट। २ घृणा, नफ़रत, चिढ़।

कचहरी (हिं० स्त्री०) १ न्यायालय, अदालत। २ कार्यालय, कारखाना। ३ दफ़्तर, आफ़िस। ४ राजसभा, दरबार। ५ गोष्ठी, यारोंकी महफ़िल, जमघट।

कचहस्त (सं० पु०) कचानां हस्तः समूहः, ६-तत्। केशसमूह, बालोंका गुच्छा।

कचा (सं० स्त्री०) कच्यते दीप्यते शृङ्गारादिभिरिति शेषः, कच-अच्-टाप्। १ हस्तिनी, हथिनी। २ शोभा, खूबसूरती। ३ सन्धिच्युति, जोड़की छूट। ४ दण्ड, सज़ा। ५ यष्टि, छड़ी। ६ तृणविशेष, एक घास।

कचाई (हिं० स्त्री०) १ कच्चापन, न पकनेकी हालत। २ अनुभव-राहित्य, नातजरुबेकारी।

कचाकचि (सं० अव्य०) कचेषु कचेषु गृहीत्वा प्रवृत्तं युद्धम्, कचोग्रारे इच् पूर्वदीर्घश्च। परस्पर केशाकर्षणपूर्वक युद्ध, झटाझोटी। २ विवाद, झगड़ा।

कचाकु (सं० त्रि०) कच इव अकति वक्रं गच्छति, कच-अक्-उन्। १ दुःशील, बदमिज़ाज। २ असह्य, नाक़ाबिल-बरदाश्त। (पु०) ३ सर्प, सांप।

कचाचित (सं० त्रि०) कचैः आकुलायितकेशैराचित्य व्याप्तः, ३-तत्। १ असंस्कृत केश द्वारा व्याप्त, जिसके उलझे बाल रहें।

कचाटुर (सं० पु०) कचवत् मेघ इव अटति शून्ये भ्रमति, कच-अट्-उरच्। पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका संस्कृत पर्याय शितिकण्ठ, दात्यूह और कालकण्ठ है।

कचाना (हिं० क्रि०) पीछे पड़ना, हार बैठना, हिम्मत खोना।

कचामोद (सं० क्ली०) [illegible] ...

कचार (हिं० पु०) तटस्थ जल, किनारेका पानी। कचारमें कीचड़ बहुत रहता और बालू पड़ता है। इसपर नौका चल नहीं सकती।

कचालू (हिं० पु०) १ गुइयां, घुइयां। २ खाद्यविशेष, एक चाट। उबाले हुवे आलू काट नमक मिर्च मिलाकर खानेसे कचालू कहलाते हैं। अमरूद, ककड़ी, खीरा वगैरहके छोटे छोटे टुकड़े नमक-मिर्च और मसालेके साथ बनाकर खानेसे भी कचालू ही कहे जाते हैं।

कचावट (सं० स्त्री०) आमकी एक खटाई। कच्चे आमको कूटपीस अमावटकी भांति जमानेसे यह तैयार होती है।

कचास, कचाई देखो।

कचिया (हिं० स्त्री०) हंसिया, काटनेका एक औज़ार।

कचियाना (हिं० क्रि०) १ हताश होना, हिम्मत छोड़ना, हार मान जाना। २ भयभीत होना, खौफ़ खाना। ३ लज्जा मानना, शर्मिन्दा होना, सकुचना।

कचिरी (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Arum fornicatum) यह कचुजातीय वृक्ष है। पुष्करिणीके तीर कचिरी देख पड़ती है।



मध्यभागमें हन्तसे मिल जाते हैं। पत्रांश चारो ओर कोणविशिष्ट होता है। कचु फूलकी भांति यह भी विजातीय है। फूलका डंठल ऊपरी भागपर क्रमशः मोटा पड़ते जाता है। फूलका वहिरावरण डंठलकी तरह समान रहता है। इसमें दो-तीन बीज उत्पन्न होते हैं।

कचौ (सं० स्त्री०) कुचाग्रिबीज, एक गुल्म।

कचौची (हिं० स्त्री०) १ कृत्तिका नक्षत्र, कचपचिया। २ दंष्ट्रा, दाढ़। किचकिचानेको 'कचौची बटना' और दांत बैठ जानेको 'कचौची बंधना' कहते हैं।

कचु (सं० स्त्री०) कन्दविशेष, घुइयां, अरवी। (Colocasia antiquorum) यह भेदक, गुरु, कटु, पिच्छिल और श्वास, वायु एवं पित्तकारक होती है। स्मृतिशास्त्रके मतसे दुर्गोत्सवकी नवपत्रिकामें कचु परिगणित है।

कचुमें फूल लगता, किन्तु फल नहीं पड़ता; इसीसे बीजमें अङ्कुरका अभाव रहता है। पुरातन वृक्ष निकाल डालनेपर मट्टीमें जो रेशेदार जड़ बचती, उसीसे अङ्कुरोत्पत्ति चलती है। वृक्ष न निकालते भी अङ्कुर आता, किन्तु अल्प पड़ जाता है। वही अङ्कुर खोदकर लगा देते हैं। वृष्टि होनेसे ही अङ्कुर फूटता है। पुरातन कचुका मुख चार या छह इञ्च परिमाण काट छांट कर लगा सकते हैं। गृहस्थ अपने घरमें इसीप्रकार दो-चार वृक्ष बनाया करते हैं। छटे-छंटे अङ्कुरकी कचु बहुत बड़ी होती है। कचुकी कृषि करनेवालोंके लिये मूलका बीज लगाना ही युक्ति-सङ्गत है। खेत गहरा जोतना पड़ता है। क्योंकि मट्टी जितनी ही दूरतक बनी-चुनी रहेगी, कचु उतनी ही बड़ी निकलेगी। हलकी जगह कुदालसे मट्टी खोद लेना अच्छा है। मट्टीको बारीक बना लेना और घास-फूस फेंका देना चाहिये। फिर खेत-पर मई चलायी और दो फीट या डेढ़ हाथके अन्तर अङ्कुरकी कतार लगायी जाती है। प्रत्येक अङ्कुरके मध्य भी दो फीट या डेढ़ हाथका अन्तर रहना आवश्यक है। अङ्कुर अति क्षुद्र होते भी लगाया जा सकता है। खेतको नियत परिष्कार और वृक्षका आधार बीच बीच पृथक् कर देना उचित है। खाककी खाद अच्छी रहती, क्योंकि उससे कचु खूब बढ़ती है। किन्तु पत्थरके कोयलेकी खाक वृक्षको जला देती है। इससे उसको कचुके खेतमें नहीं डालते। काठ, तृण, लता, पत्र, आवर्जना और गोमय जला खाक बना लेना चाहिये। कच्चा गोबर या दूसरी खाद देनेसे यह अधिक नहीं बढ़ती और खानेमें किन-किनी पड़ती है। इस लिये ऐसी खाद डालनेसे कोई फल नहीं मिलता। नदी किनारे कचु लगानेसे बहुत लंबी होती है। इसीसे पल्लीग्राममें पुष्करिणी या नाले किनारे गृहस्थ इसे लगा देते हैं। घरमें लगानेके लिये एक हाथ गहरा और एक हाथ चौड़ा गड्ढा खोदे। फिर उसमें मट्टी और खाक भर एक अङ्कुर लगा दे। इसी प्रकार कई वृक्ष लगा सकते हैं।

इसे दो वत्सर बाद खोदते हैं। चार पांच वर्ष पीछे खोदनेसे बड़ी कचु नहीं निकलती।

इससे कितने ही व्यञ्जन अति सुन्दर बनते हैं। कचुको उबाल और छाल निकालकर खाते हैं। यह भारत, सिंहल, सुमात्रा और मलयके कितने ही द्वीपमें स्वभावतः उत्पन्न होती है। कचुका रस रक्तस्तम्भन है। उबाली और छीली कचुकी तरकारी बहुत अच्छी बनती है। पत्तियोंको भी उबाल कर खा सकते हैं। किन्तु किनकिनाहट निकालनेके लिये अच्छी तरह उबाल लेना चाहिये। कचु भूनकर भी खायी जाती है।

कचुला (हिं० पु०) चौड़े पेंदेका कटोरा।

कचूमर (हिं० पु०) १ जंगली गूलर। २ कुचला, एक अचार। यह कुचलकर बनाया जाता है। ३ कुचली हुयी चीज़।

कचूर (हिं० पु०) १ कचूर। यह हलदीके पौदे-जैसा देख पड़ता, किन्तु मूलमें भेद रहता, जो श्वेत लगता और कपूरकी भांति महकता है। कचूर समग्र भारतवर्षमें लगाया और हिमालयकी तराईमें स्वयं पाया जाता है। २ कटोरा।

कचूरक (सं० क्ली०) कचूर, हरयां।

कचेरा (हिं० पु०) कांचका काम बनानेवाला।
कचेरक (सं० पु०) कशेरु, एक पौदा।
कचेल (सं० क्लो०) कच्यते बध्यते अनेन, कच-एलच्। लेख्यपत्र बांधनेका सूत्र, जिस डोरेसे हाथकी लिखी किताब बांधी जाये।
कचेहरी, कचहरी देखो।
कचोना (हिं० क्रि०) कचसे चुभाना, धंसा देना।
कचोर (सं० पु०) कर्चूर, कचूर।
कचोरा (सं० स्त्री०) १ शालिधान्यविशेष, किसी किस्मका चावल। यह पित्तको नाश करती है। (चरिष'हिता) (हिं० पु०) २ कटोरा, प्याला।
कचोरी (हिं० स्त्री०) कटोरी, प्याली।
कचोड़ी, कचौरी देखो।
कचौरी (हिं० स्त्री०) पिष्टकविशेष, दाल-पूड़ी। संस्कृतमें इसे पूरिका कहते हैं। भावप्रकाशके मतसे उड़दको भिगोकर पीसी हुई दालमें लवण, आर्द्रक एवं हिङ्गु मिला और उसे आटेके पेड़े बीच लगा पूड़ीकी तरह बेल लेते हैं। फिर उपरोक्त द्रव्य घृत वा तैलमें अच्छीतरह तलनेसे कचौरी बनती है। छोटी कचौरी दाल भरा आटेका पेड़ा ही घी या तेलमें पकानेसे तैयार हो जाती है। तेलकी कचौरी मुख-रोचक, मधुरस, गुरु, स्निग्ध, बलकारक, रक्तपित्त-जनक, पाकमें उष्ण और वायु तथा चक्षुके तेजको नाश करनेवाली है। किन्तु अनेक मनुष्य इसे खाकर बीमार पड़ जाते हैं। घृतपक्व कचौरी चक्षुके लिये हितकारक, रक्तपित्तनाशक और तैलपक्वकी भांति अन्यान्य गुणविशिष्ट है।
कचट (सं० क्लो०) कु कुत्सितं चटति, कु-टच्-अच् बाहुलकात् कोः कदादेशः। जलपिप्पली, पानीकी पीपल।
कच्चर (सं० त्रि०) कु कुत्सितं चरति, कु-चर-अच् कोः कदादेशः। १ मलिन, मैला। २ कुत्सित, खराब। (क्लो०) केन जलेन चर्यते व्यवह्रियते। ३ तक्र, मठा। ४ दुर्वृत्त, बदमाश।
कच्चा (हिं० वि०) १ अपक्व, जो पका न हो। गर्भ-पात होनेको 'कच्चा जाना' और मार बैठनेको 'कच्चा खाना' कहते हैं। २ अग्निमें न पका हुआ, जिसको अच्छी आंच लगी न हो। ३ अपरिपुष्ट, जो मजबूत न पड़ा हो। ४ अप्रस्तुत, जो तैयार न हो। ५ अ-संस्कृत, साफ न किया हुआ। ६ अस्थायी, कमजोर। ७ अयुक्त, सबूत न रखनेवाला। ८ न्यून, कम। ९ अपूर्ण, जो काट-छाटकी जगह रखता हो। १० नियम-रहित, बेकायदा। ११ आर्द्र मृत्तिका-निर्मित, गीली मट्टीका बना हुआ। १२ अपटु, जो होशियार न हो। १३ अनभ्यस्त, मुहावरा न रखनेवाला। (पु०) १४ धागा, डोभ, दूर-दूरकी सीवन। १५ खाका, ढांचा। १६ मसविदा। १७ लकड़ोंका जोड़, चौं। १८ दंष्ट्रा, दाढ़। १९ तांबेका एक छोटा सिक्का। २० पैसा, आधा पैसा। २१ एक दिनके लिये एक रुपयेका सूद। न घोंटे हुये कागज तथा रजिष्टरी न की हुयी दस्तावेजको 'कच्चा कागज' झूठे सलमे-सितारेके कामको 'कच्चा काम', खाज एवं गरमीको 'कच्चा कोढ़', झूठे गोटेको 'कच्चा गोटा', आवेमें न पके हुये तथा बेवर पड़ेको 'कच्चा घड़ा', सच्चे वृत्तान्त को 'कच्चा चिट्ठा', पानीमें न बुझी कलीको 'कच्चा चूना', मूर्ख, हठी या पीछे पड़नेवाले आदमीको 'कच्चा जिन', रांगेके जोड़को 'कच्चा जोड़', या 'कच्चा टांका', कते और न बटे तागेको, 'कच्चा तागा' या 'कच्चा धागा', नीलवरीको 'कच्चा नील' (कोठीमें मथने पीछे गोंद मिला हौजमें नील छाड़ते हैं। नील नीचे बैठ जानेपर पानीको होजके छेदसे निकाल देते हैं। फिर नीलका जमा हुआ माठ या कीचड़ कपड़ेमें बांध नीचेके गड्ढेमें रातभर लटकाया जाता है। सवेरे उसे राखपर फैला धूपमें सुखानेसे कच्चा-नील बनता है।) न चलनेवाले पैसेको 'कच्चा पैसा', रेशमके न बटे डोरे या कलप न किये हुये रेशमी कपड़ेको 'कच्चा बाना', झूठे गोटे-पट्ठेको 'कच्चा माल', धुंधला देख पड़नेको 'कच्चा मोतियाबिंद', उबाली बोनी मट्टीके खारे पानीमें जमनेवालेको 'कच्चा शोरा' और काममें अच्छी तरह न चलनेवालेको 'कच्चा हाथ' कहते हैं।
कच्चित् (सं० अव्य०) काम्यते, काम्-विच्, चीयते

निर्धीयते, चि-क्किप् पृषोदरादित्वात् मस्य दत्वम्; कञ्च चिञ्च द्वयोः समाहार इति वा। १ प्रश्न, क्या, कौन, क्यों। २ हर्ष, खुशी। ३ मङ्गल, भलाई। ४ स्वीय अभिलाष प्रकाश, अपनी ख्वाहिशका इजहार।

कश्चिदध्याय (सं० पु०) महाभारतका एक अध्याय। इसमें प्रश्नक्रमसे नारदने राजनीतिका उपदेश दिया है। (भारत, स० ५ अ०)

कच्ची (हिं० स्त्री०) १ न पकी हुयी, जो पक्की न हो। २ सखरी, दाल-भात या रोटी दाल। जो रसोई घी या दूधमें पकायी नहीं जाती, वह 'कच्ची' कहलाती है। पूरी-तरकारीका नाम 'पक्की' है। कान्यकुब्जादि ब्राह्मण अपने सम्बन्धियोंके अतिरिक्त दूसरेके हाथकी कच्ची नहीं खाते। अधिक दिन न चलनेवाले आसामीको 'कच्ची असामी', न खुली कली या अप्राप्तयौवना एवं पुरुषसे समागम न करनेवाली स्त्रीको 'कच्ची कली', न पकनेवाली या आधी राह चल चुकनेवाली चौसरकी गोटीको 'कच्ची गोटी', न पक्की हुयी मट्टीकी गोलीको 'कच्ची गोली', दिनके ६०वें भाग या २४ मिनटको 'कच्ची घड़ी', खरी चांदीको 'कच्ची चांदी', गलाकर खूब साफ़ न की हुई शकरको 'कच्ची चीनी', ठीक तौरसे न बिके हुये मालके लेन-देनकी बहीको 'कच्ची जाकड़', सरकारी कानूनके विरुद्ध घरास रीतिसे सादे कागज़पर उतारी हुयी नकलको 'कच्ची नकल', पहली पेशीको 'कच्ची पेशी', किसी दुकान या कारखानेका नादुरुस्त हिसाब रखनेवाली बहीको 'कच्ची बही', पक्की मितीसे पहले पड़ने या रुपये मिलने तथा चुकनेवाले दिनको 'कच्ची मिती', केवल जलसे बने भोजनको 'कच्ची रसोयी', प्रतिदिनके आयव्यय लिखे जानेकी बहीको 'कच्ची रोकड़', रावसे शूसी निकालकर बनायी हुयी चीनीको 'कच्ची शकर', कंकड़-पत्थरसे न पिटी हुयी सड़कको 'कच्ची सड़क' और दूर दूर डोभ रखनेवाली सिलाईको 'कच्ची सिलाई' कहते हैं। किताबके सब फरमे एकही साथ सीये जानेका नाम भी कच्ची सलाई ही है।

कचू (हिं० स्त्री०) कचु; अरवी, घुइया।

कच्चूर (सं० पु०) कचु नामक कन्दशाक, घुइया, बंडा।

कच्चे-पक्के दिन (हिं० पु०) ऋतुके सन्धिका समय, मौसम तबदील होनेका वक्त। इन दिनों स्वल्प आहार करने और ब्रह्मचारी रहनेसे मनुष्य सुख पाता है।

कच्चे-बच्चे (हिं० पु०) छोटे-छोटे लड़के, बहुतसे बच्चे।

कच्छोर (सं० स्त्री०) शठी, कचूर।

कच्छ (सं० पु०) केन जलेन छ्यति दीप्यते छाद्यते वा, क-छो-क। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ जलका निकटवर्ती स्थान, कछार, पानीके पासकी जगह। २ नदी या सरोवरका प्रान्तभाग, दरया या तालाबके सामनेका मैदान। ३ नदी पर्वतादिका समीपस्थान, दरया पहाड़ वगैरहका पड़ोस। ४ नौकाका अवयवविशेष, नावका एक हिस्सा। ५ परिधानवस्त्रका अञ्चल, धोतीकी कांछ। ६ तुन्नकद्रुम, तुनका पेड़। ७ नन्दीवृक्ष। ८ जलमय देश या स्थान, पानीसे भरी हुई जगह। ९ प्राचीन राजधानीविशेष, एक पुराना शहर। १० कच्छपका अवयवविशेष, कछुवेका एक हिस्सा। (वि०) केन जलेन छ्यति दीप्यते वा, छद-ड। ११ जलप्रान्तीय, पानीकी जगहसे सरोकार रखनेवाला।

"नदी कच्छोद्भवं कान्तमुच्छ्रितं ध्वजसन्निभम्।" (भारत, सभाप० ७०अ०)

(हिं०) १२ छन्दोविशेष, एक छप्पय। इसमें ५२ गुरु, ४६ लघु, ९८ वर्ण और १५२ मात्रा रहती हैं। १३ कच्छप, कछुवा।

१४ भारतवर्षके पश्चिम प्रान्तका समुद्रतीरवर्ती एक प्रदेश। यह अक्षा० २२°४६' से २४° उ० और देशा० ६८° २२' से ७१°३' पू०के मध्य अवस्थित है। इसके उत्तरपूर्व एवं दक्षिणपूर्व रण, दक्षिण कच्छका उपसागर, पश्चिम अरब-सागर और उत्तरपश्चिम कोरी या लखपत नदी है।

रण या जली हुयी ऊपरभूमिमें छड़ियेका द्वीप, पच्छम और बन्नी नामक भूभाग विद्यमान है।

कच्छके प्रधान विभाग यह हैं—१ पावर, २ गरद, पधक; ३ अबडासा, ४ कुप, ५ कांठा वा कांठी, ६ मियानी एवं ७ वागड़।

पावर विभागमें ही पहले काठी जातिकी राजधानी रही। यह स्थान दैर्घ्यमें ५० एवं प्रस्थमें २० मील विस्तृत और रणके दक्षिण किनारे अवस्थित है। इसकी दक्षिण सीमापर चावड गिरिमाला है। पावरका प्रधान नगर भुज है। १६०५ संवत्‌को खङ्गारने उसे स्थापित किया था।

जाम अवड़ाके नामानुसार अबड़ासा विभागका नाम पड़ा है। यह विभाग चावड़ गिरिमाला और अरबसागरके मध्य अवस्थित है। मियानी विभाग पावरसे पूर्व लगता है। मीना जातिसे इस स्थानका यह नाम पड़ा है।

आजकल जिसे लोग कच्छ उपसागर उसीको पहले कांठी कहते थे, पाश्चात्य भौगोलिक टलेमिने उक्त उपसागरका नाम रखा। (Ptolemy's Geog. Bk. VII. Ch. I.)

पेरिप्लास्‌ने वारक नामसे इस उपसागरका उल्लेख किया है। उनकी वर्णनासे समझ पड़ता, कि कच्छमें बारक नामक एक द्वीप रहा। कोई कोई स्थानीय जलामण्डलको पेरिप्लास्-वर्णित वारक द्वीप मानते हैं। किन्तु हमारी विवेचनामें वारक द्वारका शब्दका अपभ्रंश मात्र है। मागधी भाषामें द्वारकाके स्थानपर बारवया या वरवया शब्द चलता है। आजकल भी जैन वणिक् कहीं कहीं मागधी भाषा बोलते हैं। अतएव बोध होता—पेरिप्लास्‌ने किसी वणिक्‌से सन्धान ले वारक नामसे द्वारका उल्लेख किया है।

टलेमि-वर्णित उक्त कांथी या कांठी उपसागरके नामसे ही कच्छ प्रदेशके कांठी विभागका नाम चला है।

इतिहास—कच्छ प्रदेशका प्राचीन विवरण नहीं मिलता। महाभारतमें इस जनपदका नाममात्र लिखा है। (भारत भीष्म ९।५६, जैन हरिवंश ११।६८)

लोगोंमें प्रवाद है—पहले कच्छ प्रदेशका तेज नामक प्राचीन नगर सुराष्ट्र राज्यकी राजधानी रहा। तेजकर्ण नामक एक राजाने उसे बसाया था। (Asiatic Researches, Vol. IX. 231.) विलसन साहबके मतमें द्वायो वर्णित सिगर्तिस (त्रीगर्त) नामक जनपदका वर्तमान नाम कच्छ है। (Ariana Antique, 2-2) ई०से ११४ वर्ष पहले मिनान्दरने यह स्थान जीता था।

६४० ई०में चीना परिव्राजक युअन-चुयङ्ग यहां आकर दशावतारके अनेक मन्दिर देख गये थे। उन्होंने लिखा—यह जनपद मालवराज्यके अन्तर्गत आता और यहां अनेक धनवानोंका वास पाया जाता है।

पूर्वकालको कच्छ देशमें काठी और अहीर जातिका प्राधान्य रहा। उसी समय काठियोंने पावरगढ़में दुर्भेद्य दुर्ग बनाया था। कच्छके दक्षिण भाग पर्यन्त उनका अधिकार रहा। प्रत्नतत्त्वविदोंने काठियोंको शक या जित् जातिकी एक शाखा ठहराया है। सम्मारोंके बढ़नेपर काठियोंका प्रताप घटा। फिर ई०के १५श शताब्द जाम अवड़ेने काठियोंको एककालही कच्छ प्रदेशसे भगा दिया।

तारीख-उस्-सिन्द नामक मुसलमानी इतिहासमें लिखा है—

खाफीरके मरनेसे देशके सब मान्यगण्य सम्भ्रान्त व्यक्ति अमरके पुत्र एवं पृथुके पौत्र दूदाको सिंहासन देनेपर एकमत बने। अभिषेकका कार्य सम्पन्न हुआ था। किसी दिन सिंहार नामक एक जमींदार कर देने आये। दूदासे उनका आलाप परिचय हुआ। सिंहारने दूदाको भय देखा कहा था—कच्छ प्रदेशकी शम्मा जाति स्थान स्थान पर आक्रमण करनेको आगे बढ़ रही है, अब आपको तैयार हो जाना चाहिये। संवाद मिलते ही दूदा ससैन्य कच्छ प्रदेश पहुंचे। यहांके सब लोगोंने उनकी वश्यता मानी थी। फिर शम्मा जातीय लाखा नामक एक व्यक्ति राजदूतके रूपमें कच्छके घोटकादि उपहार ले दूदाकी राजसभामें उपस्थित हुये। दूदाने धन, रत्न और वस्त्रादि द्वारा राजदूतका सम्मान रखा (ई० १२श शताब्द)।

शम्मा या जाड़ेजा राजा अपनेको श्रीकृष्ण और यादवगणके वंशधर बताते हैं। उनकी वंशावली पढ़नेसे समझते—श्रीकृष्णपुत्र नरकासुरके पुत्र बाणासुर और उनके वंशधर शोणितपुर तथा मिसरमें

राजत्व करते थे। इसी वंशके जाम नरपति नामक एक राजकुमार तीन भाइयोंको साथ ले मिसरसे भाग आये। उन्होंने उमीर नामक बन्दरमें लंगर गिराया और सुराष्ट्रके श्रोशम् नामक गिरिपर अवस्थान लगाया था। इसी जगह उनके ज्येष्ठभ्राता पशुपति मुसलमान हो गये। कनिष्ठ भ्राता गजपति बहुत दिन सुराष्ट्रमें रहे। आज भी सुराष्ट्रके चूड़ासमा-वंशीय अपनेको गजपतिका वंशधर बताते हैं।

नरपति एक वीरपुरुष रहे। उन्होंने फीरोजशाहको मार खम्यात अधिकार किया था। उन्होंके पुत्र सम्मारहे। यही सम्मायोंके आदिपुरुष हैं। सम्माने मकवानी जातिकी कूलुवा नाम्नी एक सुन्दरीसे विवाह किया था। उन्हींके गर्भसे तेजकरनने जन्म लिया। तेजकरनने प्रमार-रमणीका पाणिग्रहण किया था। इन्हीं रमणीसे उनके जामनेत नामक एक पुत्र उत्पन्न हुये। जामनेत बड़े वीरपुरुष रहे। किसी राठौर कन्यासे उन्होंने अपना विवाह किया, जिनके गर्भसे नौतियारने जन्म लिया। नौतियारके पुत्रका नाम जाम उधरावद था। उधरावदके प्रपौत्र जाम अवडा रहे। इन्होंने कच्छका अवडासा विभाग स्थापन किया। इनके पुत्र जामलाखियार रहे। वह सिन्धु प्रदेशके नगरसामई नामक स्थानमें राजत्व करते थे। लाखियारने एक शोधी-रमणीको रूपसे मुग्ध हो अपनी अद्धलक्ष्मी बनाया। उनके पुत्र लाखा-धुरारा (घोडार) रहे। लाखाके पुत्रका नाम उनड था। उनडके दो कनिष्ठ भ्राता रहे—मोड़ और मनाई। सम्मा जातीय उक्त कई व्यक्ति सिन्धुप्रदेशमें एक-एक नायक थे। उनडको पिताका राज्य मिला, जो उनके दोनों भाइयोंको अच्छा न लगा। दोनोंने मिलकर उन्हें मार डाला था। किन्तु देशके सब लोग उनसे विरक्त हुये, इसीसे मोड़ और मनाई कच्छ प्रदेशको भगे। उस समय दोनों भाइयोंके कुटुम्बीय चावड़ा कच्छप्रदेशमें राजत्व करते थे। दोनोंने चावड़ोंको भी यथासमय पछाड़ा और सात प्रकारके वघेलोंको अपने वशमें ला कच्छप्रदेश दबा लिया। पांच पुरुषोंके राजत्व बाद इस वंशका लोप हुआ।

उक्त पांच राजाओंमें ४र्थ लाखा फुलानीका नाम ही कच्छ-प्रदेशमें प्रसिद्ध है। वह ई०के १४श शताब्दको विद्यमान रहे। काठियावाड़के आटकोट नामक स्थानमें लाखा फुलानीकी पालिया पड़ी है।

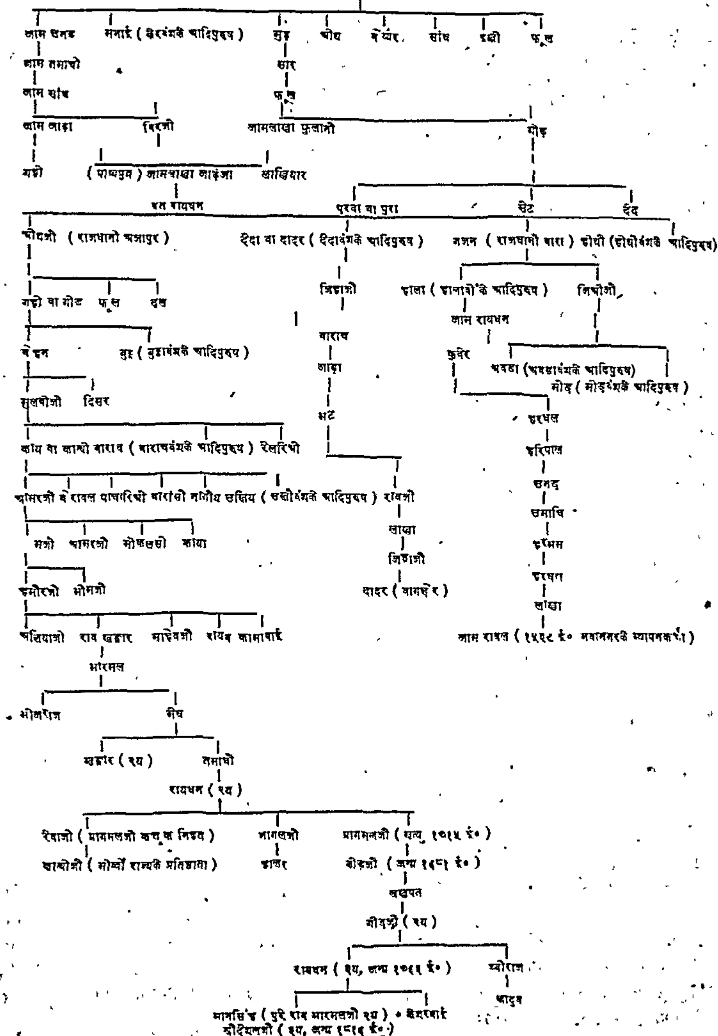
१३०६ विक्रमाब्दको लाखा फुलानी खेड़कोटमें राजत्व करते थे। उन्होंने काठीजातिको हरा काठियावाड़का कियदंश जीत लिया। कोई कहता—आदिकोटमें लाखा फुलानीका मृत्यु हुआ। फिर दूसरोंके कथनानुसार उनके जामाताने ही उन्हें मार डाला था। १४०१ संवत्‌को फुलानीके भ्रातुष्पुत्र पुवरहानी राजा बने। किन्तु अल्प दिनके राजत्व बाद यवनके हाथसे वह मारे गये। उनकी पत्नी रानी विधवा हुईं। रानीने लाखा जामको कच्छदेश बोला भेजा। लाखा जाम विरजीके पुत्र और जाम लाड़ाके पोष्यपुत्र थे। १४०६ संवत्‌को उन्हें सिंहासन मिला। फिर मांधके पुत्र लाड़ा राजा हुये। उन्हींसे जाड़ेजा वंशको उत्पत्ति है। प्रायः १४२१ संवत्‌को लाखाके पुत्र रतरायधन राजा बने। उनके चार पुत्र रहे, जिनमें तृतीय पुत्र गजन कच्छका पश्चिमांशस्थित वारा नामक भूखण्ड शासन करते थे।

१५२५ ई०को भीमजीके पुत्र जाम हमीरजीने शासनका भार उठाया। किन्तु १५३० ई०को वह जाम बारल खालके हाथों मारे गये। बारन खालको भी देश छोड़ भागना पड़ा था। उन्होंने काठियावाड़का नवानगरको पत्तन बनाया।

उक्त घटनासे पूर्व ही हमीरजीके पुत्र खंगार जन्मभूमि छोड़ अहमदाबाद भाग गये थे। वहां महमूद शाहके साहाय्यसे १५४८ ई० (१६०५ संवत्)को उन्होंने पितृराज्य उद्धार किया। भुज नगरमें उनको राजधानी स्थापित हुई थी। फिर पांच राजाओंके राजत्व बाद महाराव श्रीप्रागमलजी राजा बने। उन्होंने राज्यलाभसे अपने भ्राता वैरजीको मार डाला था। प्रागमलजीके दूसरे भ्राता मागलजीने कोतारा, कोटरो, मंसार, मोदरा प्रभृति नगर बसाये। अवड़ासेकी जाड़ेजा जातिके इलाको हमीर नामसजीके वंशधर हैं। लाड़जावंशीय नाना शाखाओंमें विभक्त हैं।

कच्छकी जाड़ेजा-राजवंशावली।

शाखा गोड़ारा।



बहुतोंने इसलामधर्म ग्रहण किया है। किन्तु पुरुषानुक्रमसे जो उपाधि चला आया, उसे किसीने नहीं गंवाया। ६१४ पृष्ठमें जाड़ेजा-राजवंशावली देखो।

कच्छप्रदेशमें काठी, अहीर और जाड़ेजा वंशको छोड़ निम्नलिखित जातियां भी रहती हैं—कोली, मीना, चावड़ा, बघेला राजपूत, भंशाली, लोहना या लवाना, संहार, भाटिया, बारड़, भ'वरिया, छगर, दल, झाला, खांडागरा, मायड़ा,कनडे, पगाया, पेढा, मोकलसी, मोका, रैलडिया, वरंगसी और बरारी राजपूत। ब्राह्मणोंमें औदीच, सारस्वत, पुकरना, नागर, सचोरा, श्रीमाली, गिरनाड़ा, मोड़ और राजगुरु अधिक हैं। मिश्री, कंदोई, मोनी, सुराठिया, मूढ़ और वाड्डा नामक वैष्णवसम्प्रदाय मिलते हैं। चारण तीन प्रकारके हैं—कच्छेला, मरुनो और तुंबेल।

कच्छके अनेक ब्राह्मण और राजपूत मुसलमान हो गये हैं। उनमें नाना श्रेणियां बसती हैं। यथा—मैहमन, बोहरा, आगरिया, आगा, आफ्रादी, भट्टि, दराड़, मंगरिया, वटार,पड़ियार, फूल, राजड़ा,रायमा सेड़ात, सेहन, हालीपुत्रा, नारंगपुत्रा, मोड़, हिंगोरा और हिंगोराजा।

आजकल कच्छप्रदेश अंगरेजोंके अधिकारमें है।

भूतत्त्व—यह प्रदेश गिरि एवं शैलमय है। केवल दक्षिण भागपर सागरप्रान्तमें उर्वरा भूमि पड़ी है। यहांका एक-एक गिरि स्वतन्त्र है। उनमें कोई पूर्वाभिमुख और कोई पश्चिमाभिमुख चला है। रण किनारे कितनी ही दुर्गम गिरिमाला खड़ी हैं। इन पर्वतोंमें विल्लोरी पत्थर, कोयलेका स्तर, खटकी मट्टी, स्लेट और चूना आदि द्रव्य मिलते हैं।

कच्छके दक्षिण-भागमें भी पर्वत हैं। यह पर्वत आग्नेयगिरिके उपादानसे गठित हैं।

इस प्रदेशमें नदी बिलकुल नहीं। नदीके बदले नाले बहते हैं। वर्षाकालको चारो ओर जलमय होनेपर नालोंसे जल निकल समुद्रमें जा गिरता है।

कच्छक (सं॰ पु॰) कच्छ संज्ञायां कन्। तुषकद्रुम, तुनका पेड़।

कच्छकाञ्चन (सं॰ पु॰) पञ्चतत्त्व वृक्षभेद, पीवल-का एक पेड़।

कच्छटिका (सं॰ स्त्री॰) कच्छं कच्छस्थानं अटति प्राप्नोति, कच्छ-अट्-अच्, संज्ञायां कन् अत इत्वञ्च। कच्छ, लांग, कांछा। इसका संस्कृत पर्याय कच्छ, कचा, कच्छा, कच्छाटिका और कच्छाटिका है।

कच्छदेश (सं॰ पु॰) देशविशेष। कच्छ देखो।

कच्छनाग—एक नागा जाति। यह लोग नागा पर्वतमें रहते हैं। नागा देखो।

कच्छप (सं॰ पु॰) कच्छे अनूपदेशे आत्मानं पाति रक्षति, कच्छं आत्मानो मुखसम्पुटं पातीति वा, कच्छ-पा ड। कूर्म, संगपुश्त, कछुआ। इसका संस्कृत पर्याय कूर्म, कमठ, गूढाङ्ग, धरणीधर, कच्छेष्ट, वल्कलावासः, कठिनपृष्ठक, पञ्चगुप्त, क्रोड़ाङ्ग, पञ्चनख, गुह्य, पीवर और जलगुल्म है। वेदमें कच्छपको अकूपार कहते हैं। निरुक्तकार यास्कने लिखा है—

"कच्छपो ऽकूपार उच्यते ऽकूपारो न कूपमृच्छतीति। कच्छपः कच्छं पाति कच्छेन पातीति वा कच्छेन पिबतीति वा। कच्छः खच्छः खच्छदः। अयमपीतरो नदीकच्छ एतस्मादेव कमुदकं तेन छाद्यते।" (निरुक्त ४।१८)

अंगरेजीमें स्थलकच्छपको टोर्टाइस (Tortoise) और समुद्रकच्छपको टर्टल (Turtle) कहते हैं। इसका युरोपीय वैज्ञानिक नाम चिलोनिया (Chelonia) है।

पृथिवीके नाना देशोंमें अनेक प्रकारके कच्छप होते हैं। अरिष्टटलने ग्रीक भाषामें तीन प्रकारके कच्छप कहे हैं। यथा—स्थलकच्छप, जलकच्छप और समुद्र-कच्छप। फिर युरोपीय प्राणितत्त्वविदोंने कच्छप-जातिको पांच श्रेणियोंमें बांटा है। यथा—स्थल-कच्छप (Testudo), जलकच्छप (Emys), कठिन आवरणयुक्त कच्छप (Chelydos), समुद्रकच्छप (Chelonia) और कोमल कच्छप (Trionyx)।

फ्रान्सीसी प्राणितत्त्ववित् दुमेरोने कच्छपको इन कई भागोंमें विभक्त किया है; यथा—चारसिआन (Chersites) वा स्थलकच्छप, इलोडियान (Elodites) वा बिलकच्छप, पोटेमियान (Potamites)

वा नदीकच्छप और थालसियास (Thalassites) वा समुद्रकच्छप।

सकल कच्छपोंके मुण्ड सर्पादि सरीसृपकी भांति एक अस्थिसे निर्मित होते हैं। किन्तु करोटि सब जातिकी समान नहीं पड़ती।

स्थलकच्छपका मस्तक चतुष्काकार, अग्रभाग विषम और दोनों चक्षुवोंका व्यवधान कुछ अधिक रहता है। नासिकाका छिद्र बड़ा और पश्चात् भागपर चपटा रहेगा। अक्षकोटर गोलाकार और वृहत् होता है। पार्श्वके कपालका अस्थि पश्चात् कशेरुके मध्य झुक जाता है। उभय पार्श्वको दो वृहत् गण्डास्थि पड़ते हैं। इन्हीं दोनोंके मध्य मस्तकके बड़े स्वरास्थिका गर्त रहता है।

कच्छपके उत्तमाङ्गमें नासाका अस्थि नहीं होता। सजीव अवस्थापर नासिकाके छिद्रमें सूक्ष्म पत्रोंकी भांति सकल अस्थि झलकते हैं। नासिकाका अस्थिमय छिद्र एक ओर दीर्घ रहता और फलास्थि माध्यस्थि, ऊर्ध्वास्थि तथा दो ललाटास्थिसे बनता है।

जलकच्छपका मस्तक चपटा पड़ जाता है। इसका ललाट सम्मुख विस्तृत होते भी अक्षके कोटर पर्यन्त नहीं पहुंचता।

कोमल कच्छपका मुण्ड सामने बैठा और पीछे झुका रहता है। इसके पार्श्वकपालका सूक्ष्मास्थि, ललाटका पश्चाद्भाग है। गण्डास्थि और गण्डास्थि परस्पर संलग्न है। कोमल कच्छपका मुख अपर कच्छपकी अपेक्षा छोटा, अक्षकोटर कितना ही लंबा और नासिकाका छिद्र अतिसूक्ष्म होता है।

कच्छपके नीचेका मुखकोष कुम्भीरके मुखकोष जैसा लगता है। किसी किसी प्राणितत्त्ववित्‌के मतमें वह पक्षीके मुखकोषसे बिलकुल मिलता है। सकल अस्थि पक्षीके अस्थिकी भांति अविच्छिन्न रहते हैं।

जलकच्छप मानवके विशेष कार्यमें नहीं आता। बहुदेशके कुछ नीच लोग इस कच्छपको खाते हैं। किन्तु समुद्रकच्छपसे मानवजातिका अनेक उपकार होता है। कोई उसे खाता और कोई अस्थिसे कड़ा बनाता है।

स्थलकच्छप भी जलमें बहुत प्रसन्न रहते हैं। यह एककालसे अधिक जल पी लेते और कीचड़में शरीर डुबोड़ देते हैं। सागरवेष्टित द्वीपसमूहमें स्थलकच्छप अधिक होते हैं। यह बहुसंख्यक एकत्र दल बांध घूमा करते हैं। जहां प्रस्रवण चलता, वही स्थान कच्छपको अच्छा लगता है। यह नाना स्थानोंमें गर्त बना लेते हैं। पथिक पथमें जल न पानेपर उसी गर्तसे जलका सन्धान लगा सकते हैं।

हम महाभारतमें गजकच्छपका युद्ध पढ़ विस्मित हो जाते हैं। किन्तु वर्तमान चाथाम द्वीपके कच्छपका विवरण सुननेसे वह घटना असम्भव समझ नहीं पड़ती। डारउन साहबने चाथाम द्वीपमें अति वृहदाकार कच्छप देखा था। आर्किपेलेगो द्वीपपुञ्जमें बहुत बड़े-बड़े कच्छप विद्यमान हैं। उनमें एक-एक कच्छपका केवलमात्र मांस वजनमें प्रायः ढाई मन बैठता है। सन्देह करते—एक कच्छपको सात-आठ आदमी उठा सकते हैं या नहीं। स्त्रीकी अपेक्षा पुरुषका लाङ्गल भी लंबा पड़ता है। यह कच्छप जब जलशून्य स्थानमें रहते या जल पानकर नहीं सकते, तब वृक्षके पत्रोंका रस पिया करते हैं।

जो स्थलकच्छप उच्च अथवा शीतल स्थानमें रहते, वह तिक्त और कटुरसविशिष्ट वृक्षके पत्र चरते हैं। चाथाम द्वीपवासी कहते—स्थानीय कच्छप तीन-चार दिनतक जलके पास रहते, फिर निम्न भूमिको चल पड़ते हैं। किसी किसी स्थानपर स्थलकच्छपोंको वृष्टिके जल भिन्न अपर समय जल रहनेके लिये नहीं मिलता। फिर भी यह जीते जागते हैं। पथमें पिपासा लगनेपर उक्त द्वीपवासी कच्छप मार खोलसे जल निकाल पी लेते हैं। यह जल अतिपरिष्कार रहता और खानेमें कटु लगता है। वहांका स्थलकच्छप प्रत्यह दो कोस चल सकता है। शरत्कालको कच्छपके मिलनका समय है। इसी समय स्त्री-पुरुष एकत्र होते हैं। पुरुष सुखके आवेशमें मत्त हो प्राण छोड़ चिल्लाया करता है। वह कर्कशध्वनि २०० हाथ दूरसे सुन पड़ती है। फिर द्वीपवासी समझ जाते—अब कच्छपके डिम्ब प्रसवका समय आया है। बालूसे

रे हुये स्थानमें कच्छपी अण्डे देती, फिर अण्डेपर वालू चढ़ा लेती है। पर्वतपर इधर उधर गर्तमें भी कच्छपी अण्डे दे देती है। अण्डा देखनेमें साफ़ और ८ इञ्चतक बड़ा होता है। एक स्थानमें १८ अण्डे रहते हैं। यह बधिर होते, इसीसे किसीको अकस्मात्‌दिक्‌से पकड़ने आते देख-सुन नहीं सकते। यह कच्छप प्रायः शताधिक वर्ष जीवित रहता है।

बिलकच्छपका स्वभाव अपर कच्छपजातिसे स्वतन्त्र होता है। यह स्थलकच्छपकी भांति धीरे-धीरे नहीं चलता, किन्तु जल और स्थल दोनोंमें अति शीघ्र याता-यात करता है। बिलकच्छप केवल शाकपत्रसे सन्तुष्ट नहीं रहता, सुविधा लगनेसे जीवजन्तु मत्स्यादि पकड़ भी उदर भरता है। इसका अण्डा प्रायः गोलाकार, शम्बुकादिकी भांति चूर्णोत्पादक आवरणसे आच्छादित और वर्णमें स्वच्छ रहता है। बिलकच्छपी नदी खोद गर्तमें अण्डा देती है। सचराचर वह बिलके पास ही गर्त करती और विशेष सतर्क रहती—शत्रुकी चोट तो अण्डेपर नहीं पड़ती। यह नाना प्रकार होता है। एशियामें १६, अमेरिकामें १८, युरोपमें २ और अफरीकामें १ प्रकारका बिलकच्छप मिलता है।

नदीकच्छप सर्वदा ही जलमें रहता, कभी-कभी स्थलपर आ चढ़ता है। यह बहुत बड़ा होता और एक एक वज़नमें पैंतीस साढ़े पैंतीस सेर बैठता है। इसकी खोलका परिमाण साढ़े तेरह इञ्च है। यह जलमें और जलके ऊपर तैरा करता है। देहका निम्नभाग अल्प श्वेतवर्ण, गुलाबी अथवा नीला जैसा देख पड़ता है। किन्तु उपरिभाग नानाविध रहता है। वह सचराचर पिङ्गल वा पाण्डुवर्ण लगता, जिस पर छोटा-छोटा धब्बा पड़ता है। रात्रि आनेसे यह अपनेको निरापद समझता और नदीतट, नदीके निकट पतित वृक्षकी शाखा अथवा नदीमें तैरते किसी काष्ठपर चढ़ विश्राम करता है। मानवका स्वर अथवा अपर किसी प्रकारका स्वर सुननेपर नदीकच्छप तत्क्षणात्‌ नदीके गर्भमें डूब जाता है। यह बहुत मांसप्रिय रहता और कुम्भीरका छोटा बच्चा भी पाते ही उदरसात्‌ करता है। आखेट अथवा आक्रमण करते समय नदीकच्छप तीरवत्‌ मस्तक और ग्रीवा चलाता है। यह किसीको काटनेपर शीघ्र नहीं छोड़ता, दंष्ट्रास्थान उखाड़ डालनेसे अलग होता है। इसीसे सब कोई इस जातिके कच्छपसे भय खाता है। भारतवासी कहते हैं—एकबार कच्छप किसीको काटनेके लिये पकड़नेपर विना मेघ गरजे नहीं छोड़ता। इस जातिमें स्त्रियां अधिक होती हैं। पुरुषोंकी संख्या अति अल्प है। स्त्री एकबार ५०।६० अण्डे देती है। फिर स्त्रीके वयसानुर अण्डे भी कम-ज्यादा निकलते हैं।

सम्भरणके लिये समुद्र-कच्छपके मत्स्यकी भांति पर होते हैं। ऐसे पर अपर किसी जातीय कच्छपके देख नहीं पड़ते। इसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग भी सन्तरणोपयोगी हैं। अण्ड देनेका समय छोड़ यह प्रायः तटपर नहीं चढ़ता। कोई कोई कहता—यह रात्रिकालको निर्जन स्थानमें चरते फिरता है।

समुद्रकच्छप कभी कभी अपनी प्यारी घास-पत्ती खानेको उपकूलपर चढ़ अनेक दूर पर्यन्त चला जाता है। यह समुद्रके जलमें निष्पन्दभावसे तैरा करता और देखनेमें मुर्दा मालूम पड़ता है। सन्तरणमें समुद्रकच्छप विशेष पटु होता है। सामुद्रिक उद्भिद्‌ ही इसका प्रधान खाद्य है। फिर भी जिस सामुद्रिक कच्छपके गात्रसे कस्तुरिकाकी भांति गन्ध आता, वह घोंघे पकड़ पकड़ खाता है।

अण्डे देते समय इस जातिकी स्त्री रात्रिकालपर पुरुषके साथ समुद्र छोड़ बहुत दूर किसी द्वीप मध्य बालुकामय स्थानमें उपस्थित होती है। बालूमें वह दो फीट गहरा एक गर्त कर लेती और उसी गर्तमें एककाल १०० अण्डे देती है। इसी प्रकार दो-तीन सप्ताहमें फिर दो बार वह अण्डे दिया करती है। अंडेका आयतन छोटा और गोलाकार रहता है। वह सूर्यके उत्तापमें १५से २८ दिनके मध्य फूट जाता है। अंडा फटनेसे प्रथम कच्छप-शिशुके पृष्ठका आवरण नहीं होता। उस समय यह श्वेतवर्ण देख पड़ता और दारुण विपद्‌का वेग रहता है। स्थलपर इसे पक्षी मारता और जलमें आ गिरनेसे कुम्भीर एवं सामुद्रिक

मतस्य खा डालता है। अति अल्पसंख्यक मात्र शिशु जीते जागते हैं। जो बचते, वह समुद्रके गर्भमें बढ़ कालक्रमसे हृहदाकार बनते हैं। उस समय एक-एक समुद्रकच्छप वजनमें २० मनतक तुलता है। इस जातिका कच्छप मानवजातिकी अनेक उपकार करता है। नाना स्थानोंके लोग इसका मांस खाते हैं। विशेषतः जहां कच्छपका बड़ा कोष पाते, वहां लोग उससे नौका, कुटीरके आच्छादन, गवादिको सानी देनेके पात्र और व्यवहारयोग्य कई प्रकारके अपर वस्तु बनाते हैं।

यह जाति प्रधानतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त है। फिर ८।१० भेद पड़ते हैं। इस कच्छपके कोषसे उत्कृष्ट कड़े बनते हैं।

भगवान् मनुके मतसे कच्छप भक्ष्य पञ्चनखोंमें गिना जाता है—

"श्वाविधं शल्यकं गोधां खड्गकूर्मशशांस्तथा
भक्ष्यान् पञ्चनखेष्वाहुरनुष्ट्रांश्चैकतोदतः॥" (मनु ५।१८)

वराहमिहिरने कच्छपजातिका लक्षण इसप्रकार लगाया है—

"स्फटिकरजतवर्णो नीलराजीविचित्रः कलशसदृशमूर्त्तिश्चारुवंशश्च कूर्मः।
अरुणसमवपुर्वा सर्षपाकारचित्रः सकलनृपमहत्त्वं मन्दिरस्थः करोति॥
अञ्जनभृङ्गश्यामवपुर्वा बिन्दुविचित्रोऽव्यङ्गशरीरः।
सर्पशिरा वा स्थूलगलो यः सोऽपि नृपाणां राष्ट्रविवृद्ध्यै॥
वैदूर्यत्विट् स्थूलकण्ठस्त्रिकोणो गूढच्छिद्रश्चारुवंशश्च यश्च।
क्रीडावाप्यां तोयपूर्णे मणौ वा कार्यः कूर्मो मङ्गलार्थं नरेन्द्रैः॥"
(वृहत्संहिता ६४ अ०)

जिस कच्छपका वर्ण स्फटिक एवं रजत-जैसा तथा ऊपर नीलपद्मकी भांति चित्रित, आकार कलससदृश, पृष्ठ मनोहर अथवा देह अरुणवर्ण और सरसों-जैसा चित्रित रहता, वह घरमें रखनेसे राजाका महत्त्व प्रकाश करता है। जिस कच्छपका शरीर अञ्जन एवं भृङ्गकी भांति श्यामवर्ण, सर्वाङ्ग विन्दु-विन्दु चित्रविचित्र अथवा मस्तक सर्प-जैसा या गला स्थूल दिखाता, वह राजाका राष्ट्र बढ़ाता है। जो कच्छप वैदूर्यवर्ण, स्थूलकण्ठ, त्रिकोण, गूढ़छिद्र और मनोहर पृष्ठदण्ड-विशिष्ट रहता, वह कूप वापी प्रभृति अथवा जलपूर्ण कलसमें मङ्गलार्थ रखनेपर राजाका कल्याण करता है।

वैद्यकमतमें कच्छपका मांस वायुनाशक, शुक्रवर्धक, चक्षुको हितकर, बलवर्धक, मेधा तथा स्मृतिकारक, स्रोतःसंशोधक और शोथ-दोषनाशक है। इसका चर्म पित्तनाशक, पद कफहारक और डिम्ब शुक्रवर्धक एवं मधुर है।

२ अवतारविशेष। कूर्म देखो। ३ नन्दीवृक्ष, तुनका पेड़। ४ कुवेरका एक निधि। ५ मल्लोंके युद्धका एक कौशल, कुश्तीका कोई पेंच। ६ विश्वामित्रके एक पुत्र। हरिवंशमें विश्वामित्रके पुत्रोंका नाम लिखा है—देवराज, बभ्रवा, कति, हिरण्याक्ष, रेणुमान्, साङ्कृति, गालव, मुद्गल, विश्रुत, मधुच्छन्दा, प्रभृति, देवल, अष्टक, कच्छप और पूरित। ७ सर्पविशेष। ८ श्लेष्मजन्य तालुरोगविशेष, तालूकी एक बीमारी। ९ मदिरायन्त्र, शराब उतारनेका एक आला। १० देशविशेष, एक मुल्क। ११ एक प्रकारका दोहा। इसमें ८ गुरु और ३२ लघु लगते हैं।

कच्छपयन्त्र (सं॰ क्लो॰) औषधके पाकका एक यन्त्र, दवा बनानेका एक औज़ार।

कच्छपि (सं॰ पु॰) १ क्षुद्ररोग, छोटी बीमारी। २ तालुरोग, तालूकी बीमारी।

कच्छपिका (सं॰ स्त्री॰) कच्छप स्वार्थे कन् अत इत्वं टाप् च। १ क्षुद्र पिड़काविशेष, छोटी छोटी फुनसियोंकी बीमारी। यह वात और कफसे प्रमेह रोगमें उत्पन्न होती है। सुश्रुतके मतसे कच्छपिका दाहयुक्त एवं कच्छपाकृति रहती और कफ तथा वायुसे उपजती है। भावप्रकाशके लेखानुसार इस रोगमें प्रथमतः स्वेदक्रिया करना हरिद्रा, कुष्ठ, शर्करा, हरिताल और दारुहरिद्रा पीसकर प्रलेप देना चाहिये। पकनेपर व्रणकी भांति चिकित्सा करते हैं। २ विषमुष्टि। ३ महानिम्ब। ४ कण्यानिर्गुण्डी।

कच्छपी (सं॰ स्त्री॰) कच्छप-ङीप्। जातेरस्त्रीविषयादयोपधात्। पा ४।१।६३। १ कच्छपस्त्री, कछुई। २ पीड़काविशेष, किसी क्षुद्रकी फुनसी। कच्छपिका देखो।

३ वीणाविशेष। कच्छपके पृष्ठकी भांति तोंबी चपटी रहनेसे ही इसका नाम कच्छपी या कूर्मी वीणा पड़ा है। स्मिथ साहबके मतमें लायार, टेसटिडो और कच्छपी—तीनों एकजातीय यन्त्र हैं। फिर युरोपीय गीटर यन्त्रके साथ भी इसका अनेक सौसादृश्य देख पड़ता है। युरोपीय गीटर यन्त्रकी आकृति देखने-भालने पर कच्छपीसे ही उसकी सृष्टि मानना होती है। जर्मन गीटरको 'जितार' कहते हैं। वह कच्छपीके अवयवका भेदमात्र है। सितार देखो। ४ सरस्वतीकी वीणा।

कच्छपोलि, कच्छपोलिका देखो।

कच्छपोलिका (सं० स्त्री०) जलवेतस, एक प्रकारका बेंत।

कच्छभू (सं० स्त्री०) जलयुक्त भूमि, दलदल।

कच्छरुहा (सं० स्त्री०) कच्छे रोहति, कच्छ-रुह-क-टाप्। इगुपधज्ञाप्रीकिरः कः। पा ३।१।१३५। १ दूर्वा, दूब। २ नागरमुस्ता, नागरमोथा।

कच्छा (सं० स्त्री०) कचं पश्चात् प्रदेशं छादयति, कच-छद-णिच्-ड-टाप्। १ परिधेय वस्त्रका अञ्चल, लांग। २ चीरिका, झींगुर। ३ वाराहीकन्द। ४ भद्रमुस्ता। ५ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छा (हिं० स्त्री०) नौकाविशेष, एक नाव। यह बड़ी होती है। इसके सिरे चपटे और चौड़े रहते हैं।

कच्छाट—एक प्राचीन ग्राम। यह वङ्गदेशके अन्तर्गत वरदके मध्य अवस्थित है। (ब्रह्मख० १।११३)

कच्छाटिका (सं० स्त्री०) कच्छ-इव वाहुलकात् अटन् स्वार्थे कन् टाप् च। कच्छ, लांग।

कच्छान्त (सं० पु०) ह्रद या नदीका तीर, झील या दरयाका किनारा।

कच्छान्तरुहा (सं० स्त्री०) श्वेतदूर्वा, सफेद दूब।

कच्छार (सं० पु०) कच्छ, एक देश। यह शतभिषा, पूर्वभाद्रपद और उत्तरभाद्रपदके अधिकृत देशोंके अन्तर्गत है। (बृहत्संहिता)

कच्छारुहा (सं० स्त्री०) स्वर्णकेतकी, सुनहला केवड़ा।

कच्छालङ्कारक (सं० पु०) कामवृक्ष, कांस।

कच्छी (हिं० वि०) १ कच्छदेशीय, कच्छसे सरोकार रखनेवाला। २ कच्छदेशजात, कच्छमें पैदा होनेवाला। (पु०) ३ अश्वविशेष, किसी क़िस्मका घोड़ा। यह कच्छमें उत्पन्न होता है। इसकी पीठ गहरी रहती है।

कच्छु (सं० स्त्री०) कषति देहम्, कष-उ छान्तादेशश्च पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। कषेश्छश्च। उण् १।८६। क्षुद्र कुष्ठके अन्तर्गत एक रोग, खाज, खुजली। कण्डु, दाह और स्रावयुक्त सूक्ष्म सूक्ष्म जो बहुसंख्यक पीड़का पड़ती, उसे विद्वज्जन पामा कहते हैं। फिर दोनों हाथ और हथेली की पीठपर तीव्रदाहयुक्त होनेवाली पामा ही कच्छु कहाती है। (माधवनिदान)

चिकित्सा—१ सोमराजी, कासमर्द, चनवड़, हरिद्रा तथा गणिकारिका प्रत्येक सममाग दधिके मस्तु और कांजीके साथ पीस प्रलेप लगाना चाहिये। २ वासकके कच्चे पत्ते और हरिद्रा गोमूत्रमें रगड़ प्रलेप चढ़ाने पर तीन दिवसमें कच्छु रोग विनष्ट होता है। ३ हरिद्राको पीस दो पल गोमूत्रके साथ पीना चाहिये। ४ हरीतकीको गोमूत्रमें पका भक्षण करना उचित है। ५ मदारके पत्तेका रस हरिद्राकल्कके साथ सर्षपतैलमें पका मर्दन करते हैं। ६ चतुर्गुण दूर्वाके रसमें तैल पका सेवन करना चाहिये। (चक्रदत्त)

कच्छुघ्ना, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छुघ्नी (सं० स्त्री०) कच्छुं हन्ति, कच्छु-हन्-टक्-ङीप्। अमनुष्यकर्तृके च। पा ३।२।५३। १ पटोल, परवल। २ हबुषाफलक्षुप, एक झाड़ी।

कच्छुमती (सं० स्त्री०) कच्छुः साधनत्वेन अस्त्यस्याम्, कच्छु-मतुप्-टाप्। शूकशिम्बी, कपिकच्छु।

कच्छुर (सं० त्रि०) कच्छुरस्यास्ति, कच्छु-र प्रत्यय। कच्छ्वा ह्रस्वश्च। पा ५।२।१०७। १ कच्छुरोगयुक्त, खारिश्ती, खुजलीवाला। २ परस्त्रीगामी, रंडीबाज़। ३ पामर, नापाक, कमीना।

कच्छुरा (सं० स्त्री०) कच्छुं कण्डुं राति ददाति, कच्छु-रा-क-टाप्। आतोऽनुपसर्गे कः। पा ३।२।३। १ शूकशिम्बी, कपिकच्छु। २ दुरालभा। ३ शठी। ४ यवास। ५ पाठिका, खिरनी। ६ वेश्या स्त्री।

कच्छुराक्षसतैल (सं० क्ली०) भावप्रकाशोक्त कच्छुरोग-नाशक तैलविशेष, खुजलीका तेल। सर्षपका तेल ८ सेर, कल्कार्थ मनःशिला, हरिताल, हीराकस, गन्धक, सैन्धव, स्वर्णक्षीरी, पाषाणभेदी, मण्डी, कुष्ठ, पिप्पली, विषलाङ्गला, करवीर, चक्रमर्द, विड़ङ्ग, चित्रक, दन्ती एवं निम्बपत्र तोले-तोले, अर्कदुग्ध एवं सिजका सार पल-पल और गोमूत्र १६ सेर मृदु अग्निके उत्तापसे पका गात्रपर मलनेसे दुःसाध्य कच्छ, पामा, कण्डु, अन्यान्य चर्मरोग तथा रक्तदोष आदि व्याधि दूर होते हैं।

कच्छुराल (सं० पु०) शैलुवृक्ष, लसोढ़ेका पेड़।

कच्छुरी (सं० स्त्री०) धातकी, धायका फूल।

कच्छू (सं० स्त्री०) कषति हिनस्ति देहम्, कष-ऊ छान्तादेशश्च। कषेश्छश्च। उण् १।८६। १ कच्छुरोग, खारिश्त। कच्छु देखो। (हिं० पु०) २ कच्छप, कछुवा।

कच्छूघ्ना, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छूघ्नी, कच्छुघ्नी देखो।

कच्छूमती, कच्छुमती देखो।

कच्छूर, कच्छुर देखो।

कच्छूरा, कच्छुरा देखो।

कच्छेष्ट (सं० पु०) कच्छप, कछुवा।

कच्छेष्टा (सं० स्त्री०) भद्रमुस्ता।

कच्छोटिका (सं० स्त्री०) कच्छो-घटन् बाहुलकात् वन् अत इत्वं टाप् च ओकारादेशः। कच्छो, धांग।

कच्छोत्था (सं० स्त्री०) मुस्ता, मोथा।

कच्छोर (सं० क्ली०) केन शिरसा च्छोर्यते लिप्यते, कछुर-घञ्। शठी।

कच्वी (सं० स्त्री०) कचु-ङीप्। कचु-नामक कन्द-विशेष, अरवी, घुइयां।

कछना (हिं० पु०) परिधानवस्त्रविशेष, किसी किस्मकी धोती। यह घुटनेपर चढ़ा पहना जाता है।

कछनी (हिं० स्त्री०) १ परिधानवस्त्र विशेष, किसी किस्मकी धोती। इसे घुटनेपर चढ़ाकर पहनते हैं। २ छोटी धोती। ३ वस्त्रविशेष, एक पहननेका कपड़ा। यह घाघरे-जैसा होता, और रामलीला आदि उत्सवमें काम देता है। ४ पात्रविशेष, एक बरतन। इसमें डालकर कपड़ेको काछते हैं।

कछरा (हिं० पु०) घटविशेष, एक घड़ा। यह मट्टीका बनता और मुंह चौड़ा रहता है। इसमें जल, दुग्ध या अन्न रखते हैं। कछरेको पांठ ऊंची और मजबूत होती है। बालकोंको कछरा-मछरा कहते हैं।

कछराली, कखराली देखो।

कछरी (हिं० स्त्री०) छोटा कछरा, गगरी।

कछवारा (हिं० पु०) क्षेत्रविशेष, काछीका खेत। इसमें शाकादि बोते हैं।

कछवाहा (हिं० पु०) क्षत्रियविशेष, राजपूतोंकी एक जाति। कोई कोई कछवाह भी कहता है। राजपुत देखो।

कछवोकेयस (हिं० स्त्री०) मृत्तिकाविशेष, एक मट्टी, भटकी। यह बिखरनेसे सफेद पड़ जाती है।

कछान (हिं० पु०) घुटनेपर चढ़ा धोतीका पहनावा।

कछार (हिं० पु०) १ कच्छ, दरयाके किनारेकी जमीन। यह आर्द्र और निम्न रहता है। कछार नदीकी मृत्तिकासे पटकर बनता और खूब हरा-भरा देख पड़ता है।

२ आसामप्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० २४° १२′ एवं २५° ५०′ उ० और देशा० ९२° २८′ तथा ९३° २८′ पू०के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल ३७५० वर्गमील लगता है। जिलेके प्रबन्धका हेड-क्वार्टर सिलचर नगरमें है।

कछारसे उत्तर कोपिली एवं दियङ्ग नदी, पूर्व मणिपुर राज्य तथा नागापर्वत जिला, दक्षिण लुशाई या कुकी जातिके रहनेका पार्वत्यप्रदेश और पश्चिम सिलहट और जयन्ता पर्वत है। १८७५ ई०को दक्षिण सीमाकी ओर एक आभ्यन्तर रेखा खींची गयी थी। गवरमेण्टकी अनुमतिके अतिरिक्त कोई उसको पार कर नहीं सकता।

इतिहास—कितने ही कछारी राजा आसामके अधि-कांशपर आधिपत्य कर गये हैं। १८३० ई०को जब अन्तिम कछारी राजा मारे गये, और उनके उत्तराधि-कारी न रहे, तब अंगरेज इस प्रान्तके अधिपति बने।

प्रथमत: ई० १८श शताब्दके आरम्भ काछारी जातिने अपनेको इस प्रान्तमें प्रतिष्ठित किया था। पारम्पर्य-से प्रमाणित होता, किसी समय आसाममें काछारियों-का बड़ा प्रावल्य रहा। किन्तु इसका कोई विश्वस्त लेख नहीं मिलता। काछारियोंका उक्त वैभव लोगोंके कथनानुसार कोचोंसे पहले था। सम्भवत: उस समय काछारी राज्यमें पूर्ववङ्गका कुछ अंश भी सम्मिलित रहा। वस्तुत: काछारी राजा पहले वरेनीसे उत्तर पार्वत्य प्रदेशमें आधिपत्य करते थे। दीमापुर राज-धानी रहा। वहां गहन वनमें पक्के मकानों और तालावोंका ध्वंसावशेष हाथ आया है। अन्तको काछारी राजा माइबोङ्गको हटे थे। माइबोङ्गमें ही किसी काछारी राजाने टिपराके राजाकी कन्यासे विवाह किया, जिसने वराककी उपत्यकाको दहेजमें दिया।

ब्राह्मण बङ्गालसे माइबोङ्ग धर्मप्रचार करने गये थे। ई० १८श शताब्दके आरम्भकाल माइबोङ्गपर जयन्तियाके राजा धावा मारने लगे और काछारी राजा वहांसे हट कासपुरमें आ कर बसे। वराक उपत्यका-में पहुंचनेसे ही काछारियोंने शीघ्र शीघ्र हिन्दूधर्म ग्रहण किया। पहले वह भूतप्रेत पूज नरवलि चढ़ाते थे। १७९० ई०को काछारी राजा अपने भ्राता और उत्तराधिकारीके साथ राजवंशी क्षत्रिय बने। ब्राह्मणोंने उन्हें एक ताम्रनिर्मित गौके भीतर रख शुद्ध किया। कितने ही लोगोंके हिन्दू हो जाते भी पहाड़ियोंने अपना धर्म न छोड़ा। अन्तिम राजा गोविन्दचन्द्र मणिपुर और ब्रह्मके युद्धमें फंसे थे। ब्रह्म-वासियोंके जीतने पर गोविन्दचन्द्रने अंगरेजी जिले सिलहटमें आ आश्रय लिया।

१८२४ ई०को ब्रह्मयुद्धके समय अंगरेजी फौजने उन्हें फिर सिंहासनपर बैठाया था। किन्तु काछारी सैन्यके सेनापति तुलारामने विद्रोह उठाया और उत्तर काछारमें अपनेको स्वतन्त्र राजा बनाया। १८३० ई०को गोविन्दचन्द्र मारे गये थे। उनका कोई उत्तराधिकारी न रहा। १८३२ ई०को सन्धिके अनुसार फिर अंग-रेजोंने काछार अधिकार किया। १८५४ ई०को उत्त-राधिकारी भिन्न तुलाराम सेनापतिके मरनेपर उत्तर-काछार भी अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया।

१८५५ ई०को देखनेमें आया—चाय स्वभावत: काछारमें उत्पन्न होती है। १८५७ ई०को चट्टग्रामसे भाग कर आये विद्रोही सिपाही काछार छोड़ गये। १८७१-७२ ई०को लुशाई अभियान चढ़ा, जिससे दक्षिण सीमापर पहाड़ियोंका आक्रमण करना रुका। किन्तु १८८० ई०को कोनोमाके अङ्गामा नागावोंने उत्तर और उत्तर-काछारके चाय-बागपर आक्रमण कर २२ नौकरोंके साथ युरोपीय रोपक (प्लाण्टर)को मार डाला। इसीसे १८८०-८१ ई०को नागावोंके विरुद्ध सामरिक अभियान बढ़ाया और उनका कुछ स्वतन्त्र देश भी अंगरेजी राज्यमें मिलाया गया। १८८१ ई०के अन्त किसी पागल काछारीने घोषणा की थी—युद्धमें दैवी शक्ति भरी और मुझे काछारी राज्यके पुन: संस्थापनकी आज्ञा मिली है। उसने कितने ही मूर्ख अपने साथी बनाये। विद्रोहियोंने उत्तर-काछारका राज्य मांगा और गुनजोंग आक्रमण कर तीन आदमियोंको मारा था। गुनजोंग आग लगने-से भस्मीभूत हुआ। फिर विद्रोहियोंने माइबोङ्गमें डिपटी-कमिश्नर और सब-डिविजनल अफसरको आक्रमण किया। ९ आक्रामक गोलीसे मारे गये, बाकी जंगलमें जा छिपे। डिपटी-कमिश्नरने हाथमें तलवारकी गहरी चोट आनेसे इहलोक छोड़ दिया था।

काछार जिला वराक उपत्यकाके उपरि-भागमें अव-स्थित है। तीन ओर लंबी लंबी पहाड़ियां खड़ी हैं। केवल पश्चिमको सिलहटकी राह खुली है। तंग मैदानमें हरेभरे वृक्ष लगे हैं। नाले और झरने अधिक नहीं। केन्द्रस्थलमें पूर्वसे पश्चिम एक बड़ी नदी बहती है। उत्तर और दक्षिण नदीकी दोनों ओर छोटी छोटी पहाड़ियां जलके तट तक लटक आई हैं। इन्हीं पहाड़ियोंपर चायके बाग लगे हैं। निम्न भूमिमें चावल बोया जाता है। बांस और फूसके पेड़ लोगोंके झोपड़े छिपाये हैं। पर्वतोंमें प्रधान उत्तर एवं दक्षिण काछारके बीचका बारल और

दक्षिणका बराक, भुवंग, रेंगती, तिलाइन तथा सिद्देश्वर है। भुवंगकी घाटी बहुत ढालू है। चारो ओर जंगल लगा है। बराक नदी ११० मील बड़ी है। पहट १००से २०० गज तक चौड़ा है। साल भर बराबर नाव चल सकती है। धलेश्वरी, काटाखाल, घाघरा, सोनाई, जीरी, जातिंगा, मदुरा, बदरी और चीरी नदी बराकको सहायक है। वर्षा ऋतुमें रेंगती तथा तिलाइन पर्वतके बीच चातला प्रायः १२ मील लम्बा और २ मील चौड़ा ह्रद बन जाता है।

बराक नदीके उत्तर सारे मैदानमें कृषिकार्य होता है। चारो ओर सघन वन और सरोवर रहनेसे कछारका प्राकृतिक दृश्य अनुपम है। मृत्तिकामें स्निग्धता अधिक देख पड़ती है।

इस जिलेमें धातुकी कोई खानि नहीं। किन्तु वनमें धन भरा है। जारुल और नागकेसरके वृक्ष अधिक मूल्यवान् होते हैं। बङ्गालको कछारसे माल, लट्ठा, बांस, बेंत और फूस भेजते हैं। जंगल काटनेवालोंको लैसन्स लेना और बराक पार करनेवालोंको सियालतेख घाटपर महसूल देना पड़ता है। चायके सन्दूक बनानेको कई कारखाने हैं। गवरनमेंटके व्यतिरेक दूसरा हाथी पकड़ नहीं सकता। कृषिकार्यमें भैंसे चलते हैं।

लोकसंख्या तीन लाखसे ऊपर है। यहां कछारी, कूकी, लुसाई, नागा और मिकीर रहते हैं। स्त्रियां मणिपुरी खेस नामक वस्त्र और मसहरी खूब बनाती हैं। पुरुष पीतलके बरतन तैयार करते हैं। प्रधानतः लोग चावल या चायके काममें लगे रहते हैं। सिलचरमें देशी फौजका हेडक्वार्टर है। जनवरी मास यहां एक बड़ा मेला लगता है। सोनाई, सियालतेख, बरकल, उधरबन, लक्ष्मीपुर और हैलाकांदी भी व्यवसायका स्थान है।

सब लोग चावल खाते हैं। वर्षमें तीनबार चावल उत्पन्न होता है—आउस, साइल और आमन। जून मास साइलको बागमें लगाते, दूसरे मास बागसे उखाड़ मैदानमें लगाते और दिसम्बर या जनवरी मास काट लाते हैं। कुछ कुछ सरसों, तिल, दाल, ऊख, मिर्च और तरकारी भी बो देते हैं। ऊखको छोड़ दूसरी चीजमें खाद नहीं डालते। सिलहटसे प्रत्येक वर्ष ३ लाख मन चावल मंगाया जाता है। चाय बाहर भेजते हैं। किन्तु इस जिलेमें व्यवसायका कोई केन्द्रस्थल नहीं। बराक नदीसे चायके बागोंतक सड़कें लगी हैं। कछारमें तीन तहसीलें हैं—सिलचर, हैलाकांदी और गुनजोंग। जलवायु शीतल और आर्द्र है। कछारमें भूकम्प अधिक आता है। १८६९ ई०को जो भूकम्प आया, उसने सिलचर नगरको ठिकाने लगाया और नदियोंको उलटा बहाया था। रोगोंमें प्रधान ज्वर, अजीर्ण, संग्रहणी, विसूचिका और शीतला है।

कछियाना (हिं० पु०) लपकोंके निवासका स्थान, काछियोंका महल्ला।

कछु, कुछ देखो।

कछुआ (हिं०) कच्छप देखो।

कछुई (हिं०) कच्छपी देखो।

कछुक (हिं० वि०) कुछ, थोड़े। 'कछुक दिवारोंकि भाइ।' (तुलसी)

कछुवा (हिं०) कच्छप देखो।

कछू, कुछ देखो।

कछोटा (हिं० पु०) काछ, कछनी, लांग।

कज (सं० क्ली०) के जले जायते, क-जन-ड। १ कमल, पद्म। २ अमृत। (फा० स्त्री०) ३ वक्रता, टेढ़ापन। ४ दोष, ऐब।

कजक (फा० पु०) हस्तीका अङ्कुश, हाथी हांकनेका आंकुस।

कजकोल (हिं० पु०) कसकोल, भीख मांगनेका खप्पर।

कजनी (हिं० स्त्री०) खुरदनी, बरतन साफ करनेका एक औजार। इससे तांबे या पीतलके बरतन खुरच खुरच साफ किये जाते हैं।

कजपूती, कर्पूती देखो।

कजरा (हिं० पु०) १ कज्जल, काजल। काजल देखो। २ वृषभविशेष, एक बैल। इसकी आंखें काली रहती

हैं। (वि०) २ श्यामवर्ण नेत्रविशिष्ट, जिसकी आंखें काजल या काजल-लगी जैसी रहें।

कजराई (हिं० स्त्री०) श्यामता, कालापन।

कजरारा (हिं० वि०) १ कज्जलयुक्त, काजल लगा हुआ। २ श्यामवर्ण, काला।

कजरी (हिं० स्त्री०) १ रागविशेष, बरसातमें गानेकी एक रागिणी। २ पर्वविशेष, एक त्योहार। कजली देखो। (पु०) ३ धान्यविशेष, काले रंगका एक धान।

कजरौटा (हिं० पु०) १ कज्जलपात्रविशेष, काजल रखनेकी एक डब्बी। यह छिछला रहता और लोहेसे बनता है। कजरौटेकी डंडी पतली होती है। २ पात्रविशेष, एक डब्बी। इसमें गोदना गोदनेकी स्याही रखते हैं।

कजरौटी (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कज्जलपात्रविशेष, छोटा कजरौटा।

कजलबाश (तु० पु०) मुगलजातिविशेष, मुगलोंकी एक कौम। यह बड़े लड़ाके होते हैं।

कजला (हिं० पु०) १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। यह काला होता है। २ कज्जल, काजल। ३ काली आंखका बैल। (वि०) ४ काली आंखवाला।

कजलाना (हिं० क्रि०) १ श्यामता आना, काला पड़ जाना। २ बुझना, कम पड़ना। ३ कज्जल लगाना, आंजना।

कजली (हिं० स्त्री०) १ श्यामता, कालिख। २ चूर्णविशेष, एक बुकनी। पारा और गन्धक एक साथ पीसनेसे कजली बनती है। ३ इक्षुविशेष, किसी किस्मकी ऊख। यह वर्धमानमें होती है। ४ एक गाय। इसकी आंख काली रहती है। ५ किसी किस्मकी सफेद भेड़। इसकी आंखके पास काले बाल होते हैं। ६ पोस्तेकी एक बीमारी। इसमें फूलोंपर काली-काली धूल बैठ जाती, जो फसलको हानि पहुंचाती है। ७ पर्वविशेष, एक त्योहार। यह बुंदेलखंडमें श्रावणी और युक्तप्रदेशमें भाद्रकृष्ण-तृतीयाको होती है। कभी मट्टीपर लगी यवके अङ्कुर किसी सरोवरमें फेंके जाते हैं। इसी दिनसे कजली फिर नहीं गाते। ८ यवके नवीन अङ्कुर। यह तालाबमें डाली और सम्बन्धियोंको बांटी जाती है। ९ गीतविशेष, एक बरसाती गाना। इसे हरियाली तीजतक गाते हैं।

कजली-तीज (हिं० स्त्री०) भाद्रकृष्णतृतीया, भादों बदी तीज।

कजलीबन (हिं० पु०) १ कदलीवन, केलेका जंगल। २ आसाम प्रान्तका एक वन। इसमें हाथी बहुत रहते हैं।

कजलौटा, कजरौटा देखो।

कजलौटी, कजरौटी देखो।

कजही (हिं० स्त्री०) कायथा देखो।

कजा (हिं० स्त्री०) १ कांजी, मांड। २ मृत्यु, मौत।

कज़ा (अ० स्त्री०) मृत्यु, मौत।

कजाक (हिं०) कज़ाक देखो।

कजाकी (हिं०) कज़ाकी देखो।

कजावा (फा० पु०) ऊंटकी एक काठी। इसकी दोनों ओर एक-एक मनुष्यके बैठनेकी जगह और असबाब रखनेकी जाली रहती है।

कजिङ्ग (सं० पु०) महाभारतोक्त भारतका एक प्राचीन जनपद। (भौमपर्व) सिंहलियोंके धर्मग्रन्थमें इस स्थानका नाम 'कजङ्गेले नियङ्गमें' लिखा है। चीना परिव्राजक युएन चुयङ्गने "कि-च-हो-खि-लो" (कजुघोर या कयङ्गल) नामसे इस जनपदका उल्लेख किया है। उन्होंने कहा,—"यह जनपद प्रायः २००० लि (डेढ़ सौ कोस) विस्तृत है। यहांकी भूमि समतल एवं उर्वरा देख पड़ती और यथारीति जुतती है। शस्य यथेष्ट उपजता है। जल-वायु उष्ण है। अधिवासी सरल हैं। वह विद्या और विद्वान्‌का आदर करते हैं। यहां ६।७ बौद्ध सङ्घाराम और दश (हिन्दुवोंके) देवमन्दिर बने हैं। बहुतसे लोग देवताके दर्शनको आते हैं। कई सौ वर्ष हुये यहांके राजा मर गये थे। उसके बाद यह जनपद निकटस्थ राजाके अधीन शासित होने लगा। सकल नगर उच्छन्न हो गये हैं। अनेक अधिवासी इधर उधर ग्रामोंमें आ रहे हैं। इस जनपदके दक्षिण

प्रान्तमें अनेक वन्य हस्ती रहते हैं। उत्तर सीमापर गङ्गाके निकट इष्टक और प्रस्तरनिर्मित एक अत्युच्च वृहत् मन्दिर है। यह असामान्य शिल्पके नैपुण्यसे विभूषित है। "इसकी चारो ओर सिद्धगण, देवगण और बुद्धगणकी मूर्ति बनी है।"

चम्पासे ८२ मील दूर आज भी कजेरी नामक एक ग्राम अवस्थित है। कितने ही लोग इसी स्थलमें कङ्गिङ्के अवस्थान सम्बन्ध पर मत दिया करते हैं।

कज़िया (अ॰ पु॰) विवाद, झगड़ा, टंटा।

कजी (फ़ा॰ स्त्री॰) १ वक्रता, टेढ़ाई। २ ऐब, दोष, कसर।

कज्जल (सं॰ क्ली॰) कु कुत्सितं जलं यस्मात्, कुत्सितं चक्षुःस्थदूषितं जलं दूरीभूतं भवत्यस्मात्, बहुव्री॰ कोः कदादेशः। १ अञ्जन, काजल। इसका अपर संस्कृत नाम लोचन है। आयुर्वेदके मतसे नेत्ररोग पर उपकारप्रद कतिपय कज्जल चलते हैं। यथा—त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, शुण्ठीका क्वाथ, मधु, घृत, छागमूत्र और गोमूत्र सकल द्रव्यमें ७ बार शीशेको निक्षिप्त कर अञ्जन लगानेसे चक्षुका ज्योति बढ़ता है।

त्रिफलाका जल, भीमराजका रस, घृत, विष-कल्क, छागदुग्ध और मधु—समुदायमें प्रत्यह एक खण्ड शीशा उत्तप्त करना चाहिये। इसी प्रकार सात बार करने बाद शीशेकी सलाका बना लेते हैं। प्रातःकाल अञ्जनके साथ उक्त सलाका प्रयोग करनेसे विविध नेत्ररोग प्रशमित होते हैं।

उडुम्बर काष्ठके पात्रमें इमलीकी पत्तीका रस डाल घुंघचीके मूल और सैन्धवको घोटना चाहिये। फिर इस चूर्णके साथ सुरमेकी बुकनी मिला अञ्जन लगानेसे काच, अर्म और अर्जुन प्रभृति नेत्ररोग विनष्ट होते हैं।

मञ्जिष्ठा, यष्टिमधु और सैन्धवको एकत्र चूर्ण कर चक्षुमें अञ्जन लगानेसे तिमिररोग मिट जाता है।

खसकी जड़का क्वाथ सैन्धव मिला छान कर फिर पकाना चाहिये। घनीभूत होनेपर उतार कर घृत और मधु मिला देते हैं। इसका अञ्जन लगानेसे सर्वप्रकार तिमिररोग नष्ट होता है। अञ्जन देखो।

२ नीलकमल। (पु॰) कुत्सितमपि द्रव्यजातं लतागुल्मादिकं जलयति जीवयति वर्षणेन इति शेषः, कु-जल-णिच्-अच् कस्य: कदादेशश्च। ३ मेघ, बादल। ४ कामरूपके अन्तर्गत एक पर्वत। (कालिकापु॰) ५ कज्जली, एक मछली। ७ छन्दोविशेष, एक बहर। इसके प्रत्येक पादमें १४ मात्रा रहती हैं। अन्तमें एक गुरु और एक लघु लगता है।

कज्जलध्वज (सं॰ पु॰) कज्जलं ध्वज इव यस्य, बहुव्री॰। प्रदीपशिखा, चिराग़।

कज्जलरोचक (सं॰ पु॰-क्ली॰) कज्जलं रोचयति, कज्जल-रुच-णिच्-अच् स्वार्थे कन्। दीपाधार, दीवट। इसका संस्कृत पर्याय कौमुदीवृक्ष, दीपवृक्ष, शिखातरु, दीपध्वज और ज्योत्स्नावृक्ष है।

कज्जलतीर्थ (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष, किसी पवित्र स्थानका नाम।

कज्जला (सं॰ स्त्री॰) मत्स्यविशेष, एक मछली। (Cyprinus atratus) इसका संस्कृत पर्याय कज्जली और अनपड़ा है।

कज्जलि, कज्जली देखो।

कज्जलिका, कज्जली देखो।

कज्जलित (सं॰ त्रि॰) कज्जलं जातमस्य, कज्जल-इतच्। तदस्य संजातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६। कज्जल लगा हुआ, जो आंजा गया हो।

कज्जली (सं॰ स्त्री॰) कज्जलमिवाचरति, कज्जल-क्विप्-अच्-ङीप् च। १ मिश्रित पारद और गन्धक, मिला हुआ पारा और गन्धक। साधारणतः यह समपरिमाण पारद और गन्धक खरलमें डाल घोटनेसे बनती है। पारद और गन्धक मिलते ही काला पड़ जाता है। फिर सुचिक्कण होते ही व्यवहारोपयोगी कज्जली तैयार होती है। औषधविशेषमें द्विभाग गन्धक द्वारा भी इसके प्रस्तुत करनेका उपदेश है। कज्जली वृंहण, वीर्यवर्धन, और नाना अनुपानसे सर्वरोग विनाशन होती है। (वैद्यकनिघण्टु) २ मत्स्य-विशेष, एक मछली। ३ स्याही।

कज़्ज़ाक (तु० पु०) १ डाकू, लुटेरा। २ धोकेबाज़, चालाक।

कज़्ज़ाकी (अ० स्त्री०) १ लुटेरापन, डाकुवोंका काम। २ धोकेबाज़ी, चालाकी।

कज्जल (सं० क्लो०) कज्जल, अञ्जन, सुरमा।

कञ्चट (सं० क्लो०) कञ्चते दीप्यते, कचि-चट। १ जलज शाकविशेष, चौराई। इसका संस्कृत पर्याय जलभू, लाङ्गली, शारदी, तोयपिप्पली, शकुलादनी और जलतण्डुलीय है। भावप्रकाशके मतसे कञ्चट श्लेषकारक, धारक, शीतल, पित्त एवं रक्तनाशक, लघु, तिक्त और वायुप्रशमक होता है। २ गजपिप्पली, बड़ी पीपर।

कञ्चटपत्रक (सं० क्लो०) कञ्चटच्छद, चौराईकी पत्ती।

कञ्चटपल्लव (सं० पु०) कञ्चट, चौराई।

कञ्चटादि (सं० पु०) अतिसार-कषायविशेष, दस्तकी बीमारीका एक काढ़ा। कञ्चटपत्र, दाड़िमपत्र, जम्बूपत्र, शृङ्गाटकपत्र, ह्रीवेर, मुस्तक और शुण्ठी दो-दो तोले आधसेर जलमें उबाल आध पाव रहने-से उतार लेते हैं। फिर यह कञ्चटादि पाचन पीनेसे अतिवेगवान् अतिसार भी रुक जाता है। (चक्रदत्त)

कञ्चटावलेह (सं० पु०) ग्रहणी रोगका एक अवलेह। कञ्चट और तालमूली एक-एक सेर १६ सेर जलमें उबाल १ पाव रहनेसे उतारकर छान लेना चाहिये। फिर इस क्राथको १ सेर चीनी डाल पकाते हैं। चतुर्थांश अवशिष्ट रहते वराहक्रान्ता, धातकीपुष्प, पाठा, बिल्वपेशी, पिप्पली, भांगकी पत्ती, अतिविषा, यवक्षार, सौवर्चलरस, रसाञ्जन और मोचरसका चूर्ण दो-दो तोले छोड़ना चाहिये। शेषको शीतल पड़ने पर इसमें १ पाव मधु मिलाते हैं। दोष, बल एवं काल विवेचनापूर्वक मात्राके अनुसार प्रयोग करनेपर यह अवलेह अतीसार, ग्रहणी, अम्लपित्त, उदररोग, कोष्ठज विकार, शूल और अरुचिको निवारण करता है।

कञ्चड़ (सं० पु०) कञ्चते शोभते, कचि-अड़न् इदित्वा-न्नुम्। कञ्चट विशेष, किसी क़िस्मकी चौराई। इसका संस्कृत पर्याय—कञ्चट, काच, चक्रमर्द और अम्बुप है।

कञ्चन (सं० पु०) काञ्चनवृक्ष, कचनारका पेड़।

कञ्चार (सं० पु०) कं जलं चारयति रश्मिभिरिति शेषः, क-चर-णिच्-अच्। सूर्य, आफ़ताब।

कञ्चिका (सं० स्त्री०) कञ्चते वेणौ प्रकाशते, कचि-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। १ वेणुशाखा, बांसकी डाल। इसका संस्कृतपर्याय कुञ्चिका, ष्टणु और क्षुद्रस्फोट है। २ क्षुद्रस्फोट, छोटा फोड़ा, फुंसिया।

कञ्ची (सं० स्त्री०) कञ्चते वेणौ प्रकाशते, कचि-अच् इदित्वान्नुम्-ङीप्। वंशशाखा, बांसकी डाल।

कञ्चु, कञ्चुक देखो।

कञ्चुक (सं० पु०) काञ्चते सर्वशरीरे दीप्यते, कचि बाहुलकात् उकन् इदित्वान्नुम्। १ सर्पत्वक्, सांपकी केंचुल। २ वक्षका आवरण, सीनेपर पहना जानेवाला कपड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—चोल, कञ्चुलिका, कूर्पासक और अङ्गिका है। ३ युद्धादिके जयोत्सव उपलक्षमें प्रभुके अङ्गसे बलपूर्वक भृत्य द्वारा ग्रहण किया जानेवाला वस्त्र, जो कपड़ा मालिकके जिस्मसे किसी शादीके वक्त नौकर चाकर ज़बरन उतार लेता हो। ४ वस्त्रमात्र, कोई कपड़ा। "देवाय वस्त्राभरणा-दयपभाग्। धृतावरकञ्चुकालाम्।" (भागवत ८।१०।१५) ५ परिच्छद, पोशाक। ६ कवच, ज़िरह। ७ चोली, अंगिया। ८ औषधविशेष, एक दवा। ९ यरमा।

कञ्चुकशाक (सं० पु०) शाकविशेष, एक सब्ज़ी। यह वातल, ग्राही, सूत्रकर और कफपित्तनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कञ्चुका (सं० स्त्री०) १ अश्वगन्धा, असगंध। २ कञ्चुक-शाक, एक सब्ज़ी।

कञ्चुकालु (सं० पु०) कञ्चुकोऽस्यास्ति, कञ्चुक-आलुच्। सर्प, सांप।

कञ्चुकि (सं० पु०) यव, जौ।

कञ्चुकित (सं० त्रि) कवचयुक्त, बख़्तर पहने हुवा।

कञ्चुकी (सं० पु०) कञ्चुकोऽस्त्यस्य, कञ्चुक-इनि। १ राजाके अन्तःपुरका रक्षक, बादशाहके ज़नान-ख़ानेका मुहाफ़िज़। भरतके मतसे यह विविध गुणशाली होता है—

"अन्तःपुरचरो वृद्धो विप्रो गुणगणान्वितः।
सर्वकार्यार्थकुशलः कञ्चुकीत्यभिधीयते॥"

सर्वकार्यके कुशल और गुणवान् अन्तःपुरचारी वृद्ध विप्रको कञ्चुकी कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय सौविदल, स्थापत्य और सौविद है। २ यव, जौ। ३ चणकवृक्ष, चनेका पेड़। ४ सर्प, सांप। ५ लम्पट, छिनाकार। ६ चोड़क वृक्ष। ७ दोषान्वित घोटकविशेष, एक ऐबी घोड़ा। स्कन्ध, वक्ष, बाहु और अंस देशमें जो बाली अन्यवर्ण रहता, उसे विद्वान् कञ्चुकी कहता है। (जयदत्त)

(स्त्री०) कञ्चयति रोगादिकमुपशमयति, कञ्च-णिच् बाहुलकात् उकन्-ङीप्। ८ औषधविशेष, एक दवा। ९ क्षीरीवृक्ष। १० शरपुङ्खा। ११ कञ्चुक शाक। १२ चोली, अंगिया। (त्रि०) १३ आवद्ध-कवच, बखतर पहने हुआ।

कञ्चुलिका (सं० स्त्री०) कञ्चते अङ्गानि आप्नोति, कचि-उलच्-ङीप् स्वार्थे कन् ह्रस्वः टाप् च। अङ्गरक्षिणी, चोली।

"त्वं मुग्धाक्षि विनैव कञ्चुलिकया धत्से मनोहारिणीम्।" (अमरुशतक)

कञ्चुल (सं० क्ली०) कचि-उलच्। स्त्रियोंका एक अलङ्कार।

कञ्ज (सं० पु०) के जले शिरसि च जायते, कम्-जन्-ड। १ ब्रह्मा। २ केश, बाल। (क्ली०) ३ पद्म, कमल। ४ अमृत।

कञ्जक (सं० पु०) कञ्जते वाक्यमुच्चारयितुं शक्नोति, कजि-ण्वुल्। पक्षिविशेष, मैना।

कञ्जगिरि (सं० पु०) कामरूपकी सीमाके अन्तका एक पर्वत।

"उत्तरस्यां कञ्जगिरिः करतोयात् पश्चिमे।
तीर्थश्रेष्ठा दिक्करवासी पूर्वस्यां गिरिकन्यके॥" (योगिनीतन्त्र ११ पटल)

कञ्जज (सं० पु०) कञ्जात् विष्णोर्नाभिपद्मात् जातम्, कञ्ज-जन-ड। ब्रह्मा। भागवतमें नाभिपद्मसे ब्रह्माकी उत्पत्तिपर इस प्रकार वर्णित है—महाप्रलयके समय ब्रह्माण्ड जलमग्न होनेपर विष्णु समुदाय अपनेमें लीन कर जलशायी हो गये। सोते-सोते सहस्र चतुर्युग अतीत होनेपर उन्होंने अपनी इच्छाके अनुसार नाभिसे एक पद्मकोष उत्पादन किया था। उसीसे स्वयम्भू ब्रह्मा आविर्भूत हुये। (भागवत ३।८।१८)

कञ्जन (सं० पु०) कं सुखं जनयति, कम्-जनि-अण्। १ कन्दर्प, कामदेव। २ पक्षिविशेष, मैना।

कञ्जनाभ (सं० पु०) कञ्जं पद्मं नाभौ अस्य, कञ्ज-नाभि संज्ञायां अच्। विष्णु।

"स्वशरीरे स न ददर्श कञ्जनाभमिहोदधौ।" (भागवत ३।८।१४)

कञ्जमूल (सं० क्ली०) कमलकन्द, कमलकी जड़।

कञ्जयोनि (सं० पु०) शालूक, कसेरु।

कञ्जर (सं० पु०) कं जलं जृणाति आकर्षति जारयति वा, कम्-कजि-अरन्। १ सूर्य, आफताब। २ ब्रह्मा। ३ उदर, पेट। ४ हस्ती, हाथी। ५ मयूर, मोर। ६ अगस्त्य मुनि। ७ धातकी, धाय। ८ पाटला, बरसातका धान।

कञ्जल (सं० पु०) कञ्जते पठितुं शक्नोति, कजि-कलच्। मदनपक्षी, मैना।

कञ्जलता (सं० स्त्री०) लताविशेष, एक बेल। (Asclepius odoratissima)

कञ्जलिका (सं० स्त्री०) अङ्गरक्षिणी, चोली।

कञ्जार (सं० पु०) कं जलं जारयति, कम्-जृ-णिच्-अण् आरण् वा। कञ्जिगमिभ्यां चित्। उण् ३।१३७। १ सूर्य, आफताब। २ ब्रह्मा। ३ अगस्त्य मुनि। ४ हस्ती, हाथी। ५ मयूर, मोर। ६ व्यञ्जन, खानेकी उम्दा चीज। ७ जठर, पेटकी आग।

कञ्जिक (सं० क्ली०) काञ्जिक, कांजी।

कञ्जिका (सं० स्त्री०) कञ्जते भूमिं भित्वा उत्पद्यते, कजि ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। ब्राह्मणयष्टिवृक्ष।

कञ्जिया—मध्यप्रदेशवाले सागर जिलेके उत्तरप्रान्तका एक प्राचीन नगर। पहले यह स्थान बुंदेलोंके अधिकारमें रहा। उस समय कञ्जियावाले शासनकर्ताके करपीड़नसे प्रजा विपद्ग्रस्त हुयी थी। आजकल इस स्थानकी अवस्था क्रमशः सुधर रही है।

कञ्जियाके प्रथम बुंदेला शासनकर्ता देवीसिंह रहे। उनके पुत्र शाहजीने नगरके निकट पहाड़पर एक दुर्ग बनवाया था। यह दुर्ग चतुष्कोणाकार है। चारो पार्श्वके चार बुर्ज आजकल भग्नप्राय हो गये हैं।

१०२६ ई०को कुरवाईके नवाब हसन उल्ला खान्ने शाहजीके वंशधर विक्रमादित्यको कञ्जियासे निकाल

दिया था। विक्रमादित्यने पिपरासी ग्राममें आश्रय लिया। इस ग्राममें उनके वंशधर अमृतसिंह १८७० ई०तक निष्कर पञ्चग्रामके आयसे जीविका चलाते रहे।

१७५८ ई०को पेशवाके प्रतापसे इसन उल्ला विताड़ित हुये। उन्होंने अपने प्रिय कर्मचारी खांडेरावको कञ्जिया नगर सौंपा था। १८१८ ई०को खांडेरावके उत्तराधिकारी रामचन्द्र बल्लालने पेशवाको कञ्जिया और मल्हारगढ़ के बदलेमें इटावा ले लिया। उसी वर्ष वृटिश गवरनमेण्टने यह नगर सेंधियाको प्रदान किया। १८७५ ई०को विद्रोहके समय कञ्जियाके बुंदेलोंने भी अमृतसिंहको अपना प्रकृत शासनकर्ता बताया था। किन्तु अमृतसिंह अल्प दिनके मध्य ही अपमानित हो यह स्थान छोड़ गये। बुंदेले नगर लूटने लगे थे। उसी समय सर ह्यूग-रोज ससैन्य बुंदेलोंके विपक्षपर अग्रसर हुये। अंगरेज सेनापतिके आगमनकी वार्ता सुन बुंदेले भगे थे।

१८६०. ई०को यह नगर वृटिश गवरनमेण्टके अधीन सागर जिलेमें मिलाया गया। कञ्जिया अक्षा० २४° २३′ ३०″ उ० और देशा० ७८° १५′ पू० पर अवस्थित है।

कट (सं० पु०) कटति मदवारि वर्षति, कट-अच्। १ करिगण्डस्थल, हाथीकी कनपटी।

"ददृशिरे: कटकटाहतट' मिमङ्क्षोः।" (शिशुपालवध)

२ कटिदेश, कमर। ३ कटिके पार्श्वका स्थान, कमरकी बगलका हिस्सा। ४ किलिञ्जक, चटाई, दरमा। ५ तृणविशेष द्वारा निर्मित रज्जु, किसी घासकी रस्सी। ६ तृणादि निर्मित पट, घास वगैरहका परदा। ७ शव, मुर्दा। ८ समय, वक्त। ९ तख़्ता। १० तृण, घासफूस। ११ शर, एक लंबी घास। १२ शवरथ, जनाज़ा। १३ ओषधिविशेष, एक जड़ीबूटी। १४ श्मशान, मुर्दा जलानेकी जगह। १५ एक राक्षस। १६ आधिक्य, ज़्यादती। १७ पासे खेलनेका एक उपकरण।

"प्रे ताङ्गनस्य: पावयतमाक्ष शोणितमरीर:।
नर्तितदर्शि तघाती: कटेन विनिपातितो यामि॥" (मृच्छकटिक)

(क्लो०) १८ घड़की चालनाके लिये रचित भूमि, घुड़दौड़का मैदान। १९ पराग, फूलकी धूल। इस अर्थमें यह शब्द समासान्तको आता है। (त्रि०) कटयति प्रकाशयति क्रियाम्, कट-णिच्-अच्। २० क्रियाकारक, काम करनेवाला।

कट (हिं० पु०) १ किसी किस्मका रंग। यह काला रहता और टीन, लोहचून, हर, बहेड़े, आंवले तथा कसीससे बनता है। २ काट, कटन।

कट (अं० पु० = Cut) काट-छांट, तराश, ब्योंत।

कटक (सं० पु०-क्लो०) कट्यते निर्गम्यते अस्मात् निर्झरिण्यादिभिः, कट्-वुन्। क्रमादिभ्यः संज्ञायां वुन्। उण् ५।३५। १ पर्वतका मध्यदेश, पहाड़के बीचकी जगह। इसका संस्कृत पर्याय नितम्ब और मेखला है। २ वलय, कड़ा, चूड़ी। ३ चक्र। ४ हस्तिदन्तमण्डन, हाथीके दांतका गहना। ५ सैन्धवलवण, समुद्रका नमक। ६ राजधानी, बादशाहके रहनेका शहर। ७ सैन्य, फौज। "तुम्हरे कटक मारि सब चहरा।" (तुलसी) ८ नगरी, शहर। ९ शिबिर, डेरा। १० पर्वतकी समतलभूमि, पहाड़की हमवार ज़मीन्। ११ रज्जु, रस्सी, डोरी।

कटक—१ उड़ीसा प्रान्तके बीचका एक जिला। यह अक्षा० २०° १५′ १″ एवं २१° १०′ १०″ उ० और देशा० ८५° ३५′ ४५″ तथा ८७° ३′ ३०″ पू०के मध्य अवस्थित है। भूमिका परिमाण ३८५८ वर्गमील पड़ता है। कटक जिलेसे उत्तर वैतरणी नदी एवं धामरा नदीका मुहाना, दक्षिण पुरी जिला, पूर्व बङ्गोपसागर और पश्चिम उड़ीसेका अधीनस्थ करद राज्य है। यह जिला तीन प्रधान भूभागोंमें विभक्त है—

१म भाग—समुद्रके किनारेसे ३० मील तक विस्तृत है। स्थानीय वन सुन्दरवनसे मिलता-जुलता है। किन्तु गङ्गातटके वनकी शोभा यहां अधिक नयन-प्रीतिकर है।

२य भागमें शस्यश्यामल धान्यभूमि है। इसको एक ओर समुद्रका तट और दूसरी ओर गिरिसमूह लगा है। प्रायः यह २० कोस विस्तृत है। इस भूमिखण्डमें यथेष्ट धान्य उत्पन्न होता है। देशके

मध्य मध्य ताल, तमाल, ग्राम, खर्जुर प्रभृति वृक्ष भी लग जाते हैं।

३य भाग पार्वतीय है। यह जिलेके पश्चिम प्रान्तमें अवस्थित है। पश्चिम प्रान्तमें अनेक क्षुद्र क्षुद्र पर्वत हैं। इस भूभागमें माखूका तख्ता, लाख, गोंद, रेशमका कीड़ा, शहद और सन वगैरह मिलता है।

कटकके पर्वत छोटे छोटे हैं। सर्वोच्च शिखर २५०० फीटसे अधिक ऊंचा नहीं। किन्तु सभी पर्वत अति प्राचीन कालसे हिन्दुवोंके पवित्र तीर्थस्थान-जैसे प्रसिद्ध हैं। प्रधान प्रधान पर्वत यह हैं—

१ अखिया पहाड़ (आलमगीर) अनेक स्थानों-पर जुड़ा है। इसका प्राचीन नाम चतुष्पीठ है। यहां नाना स्थानोंसे हिन्दू तीर्थ करने आते हैं। इसके चार शृङ्ग बड़े हैं। इनमें एक विरूपा नदीकी ओर है। आजकल इसे 'आलमगीर' कहते हैं। इस शृङ्गपर एक ऊंची मसजिद खड़ी है। १७१८-२० ई०को उड़ीसेके शासनकर्ता शुजा-उद्-दीनने उसे बनवाया था। मसजिदके सम्बन्धपर निम्नलिखित उपाख्यान प्रचलित है—

एक रोज़ मुहम्मद व्योममार्गसे जाते थे। साथमें उनका दलबल भी रहा। नमाज़के समय सब नलती गिरिशृङ्गपर उतर पड़े। गिरिका शृङ्ग हिलने लगा और उन्हें धारण कर न सका था। उस समय मुहम्मद नलती गिरिको अभिशाप दे मसजिदके पास ही आकर ठहर गये। मुहम्मदने जहां नमाज़ पढ़ी, वहां आज भी एक पत्थर पर उनके पदकी रेखा बनी है। पहले यहां जल मिलता न था। मुहम्मदके अपनी यष्टि द्वारा आघात लगाते ही स्वच्छ सलिलका प्रस्रवण बह चला। मुसलमान् यात्री मुहम्मदके पदका चिह्न और उक्त प्रस्रवण देखने बराबर आया करते हैं। शुजा-उद्-दीनने कटक जाते समय इराकपुरमें शिविर लगाया था। वहींसे उन्हें गिरिशृङ्गोत्थित नमाज़की ध्वनि सुन पड़ा। उसके अनुसार नमाज़को सुन अधीर हुये और सबके सब गिरिशृङ्गाभिमुख जाने लगे थे। किन्तु इमामने निषेध कर कहा—यदि हम उपस्थित युद्धमें जीत सकेंगे, तो लौटते समय सब लोग इसी गिरिशृङ्ग पर जा नमाज़ पढ़ेंगे। शुजा-उद्-दीनका जय हुआ था। उन्होंने फिर ससैन्य शृङ्गके ऊपर जा नमाज़ पढ़ी। उन्होंने वहां सुन्दर मसजिद बनवा दी।

हिन्दू उक्त शृङ्गको मण्डप कहते हैं। शृङ्गके नीचे ही मण्डपग्राम है। अतिप्राचीन कालको यहां हिन्दू मण्डपयज्ञ करते थे।

२ उदयगिरि भी अखिया गिरिमालाके चार शृङ्गोंमें एक शृङ्ग है। यह अखिया गिरिमालाके पूर्वभागमें अवस्थित है। यहां हिन्दुवों और बौद्धोंके देखनेकी बहुतसी चीजें मौजूद हैं। शृङ्गके उच्च भागसे पाददेश पर्यन्त परिदर्शन करनेपर असंख्य देवमूर्त्ति देख पड़ती हैं। बौद्धोंके आधिपत्यकाल यहां अनेक सङ्घाराम और बौद्ध चैत्य विद्यमान रहे। वर्तमान समय उनका ध्वंसावशेष पड़ा है।

उदयगिरिके पाददेश पर एक प्रकाण्ड पद्मपाणि बुद्धमूर्ति है। यहां आनेसे दर्शकको पहले मूर्ति देख पड़ती है। मूर्ति प्रायः ८ फीट ऊंची है। एक पत्थर खोदकर यह मूर्ति गढ़ी गयी है। इसका अर्धांश बनसे आच्छन्न और कुछ अंश भूगर्भमें प्रोथित है। पद्मपाणिके वाम हस्तमें पद्म है। नासिका, बाहु और वक्षःस्थलमें अलङ्कार शोभा देता है। दक्षिण हस्त और नासिका दोनों अङ्ग टूट गये हैं।

पद्मपाणिकी मूर्तिके आगे थोड़ी दूर चलनेपर ध्वंसावशेष मिलता है। इसीके निकट पर्वतपर एक कूप बना है। विस्तारमें कूप २३ फीट है। जल निकालनेको २८ फीट लंबी डोरी लगती है। चारो ओर पत्थरका घेरा है। वह साढ़े ८४ फीट लंबा और १८ फीट ११ इञ्च चौड़ा है। प्रवेशके पथमें दो बड़े बड़े खाम्भ खड़े, आजकल जिनके मस्तक टूट पड़े हैं।

शृङ्गसे ५० फीट ऊपर वनमें एक चैत्य है। बौद्ध राजावोंके समय यहां बौद्ध यतियोंका समावेश रहता था। बौद्धोंका अवसान होनेपर हिन्दुवोंने यहां अनेक देवदेवी-मूर्ति निर्माण कीं। देवदेवी मुसलमानोंने

अनेक मूर्तियोंके मस्तक और बाहु तोड़ डाले हैं। स्थानीय हिन्दू सकल मूर्तियोंकी पूजा करते हैं। इसी वनमें एक बड़े तोरणका भग्नावशेष विद्यमान है। तोरणके सम्मुख एक बृहत् बुद्धमूर्ति ध्याननिमीलित नेत्रसे बैठी है। तोरणका गठन अति चमत्कृत और तीन सुबृहत् प्रस्तरोंसे गठित है। मनोयोगपूर्वक देखनेसे प्राचीन शिल्पके नैपुण्यका बहुतसा परिचय मिलता है। तोरणके सीधे प्रस्तर पांच स्तवकोंमें विभक्त हैं। स्तवक देखनेसे समझते, मानो तोरण बने एक ही दो दिन हुये और उनके भीतर सहस्रों नीलपद्म खिले हैं। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते—कितने यत्नसे पद्म काटे गये हैं। द्वितीय स्तवकमें समस्त नरनारीकी कितनी ही मूर्ति हैं। मध्य-स्तवकमें कुसुमकी माला विभूषित है। चतुर्थ स्तवकमें एक दूसरेका हाथ पकड़े पुरुष और रमणीकी मूर्ति दण्डायमान है। सभी मूर्तियां फूलकी मालासे आवद्ध हैं। शेष स्तवक देखनेसे नयन और मन दोनों प्रसन्न हो जाते हैं। कुसुमका चित्र कैसा सुन्दर है! सोचनेसे हृदय फूल उठता—इस निर्जन वनमें किसने अभिलाषपूर्वक प्रस्तरको पुष्पकी माला पहनायी है।

तोरणके आगे ११ हाथ चलनेपर एक क्षुद्र गृह देख पड़ता है। गृहकी चारो ओर कंटीले पेड़ खड़े हैं। गृहमें ध्यानी बुद्धकी एक प्रकाण्ड मूर्ति है। यह मूर्ति साढ़े ५ फीट ऊंची है। देवद्वेषी यवनोंने नासिका और दक्षिण हस्तको काट डाला है।

चचल-वसन्त भी असिया गिरिका एक शृङ्ग है। इस शृङ्गके नीचे माझीपुर नगरका ध्वंसावशेष पड़ा है। पहले इस नगरमें स्थानीय राजा रहते थे। आज भी तोरण, प्रस्तरके उन्नत प्राङ्गण और सुदृढ़ प्राचीरका भग्नावशेष दृष्टिगोचर होता है।

बड़देही असिया पर्वतका सर्वोच्च शृङ्ग है। इसके पाददेशमें स्थानीय दुर्गाधिपतिका आवास रहा। मुसलमानों और मरहठोंके समय यहां चिरस्थायी बन्दोबस्त चलता था।

नलती गिरि भी असियाका एक अंश है। केवल मध्यमें विरूपा नदी द्वारा दो स्वतन्त्र पर्वत हो गये हैं। मोतकदनगर परगनेके उत्तर-पश्चिम कोणमें इसकी अवस्थिति है। यहां चन्दन वृक्षके भिन्न दूसरा कोई बड़ा पेड़ नहीं होता। इसके निम्न शृङ्गपर अति प्राचीन गृहादिका ध्वंसावशेष पड़ा है। पूर्वकालको यही बौद्धोंके मन्दिर-रूपसे सुशोभित था। मण्डप बिलकुल नष्ट हो गया है। प्रस्तरके सकल स्तम्भ ७।८ फीट उच्च हैं। उन्हींके निकट देवदेवीकी मूर्ति है। इसी ध्वंसावशेषके पास मुसलमानोंका एक टूटा कब्रस्तान लक्षित होता है। सम्भवतः बौद्धोंके मन्दिर तोड़ यह कब्रस्तान बनाया गया होगा। मन्दिरका मण्डप नहीं, गृह आज भी विद्यमान है। उसकी चारो ओर प्राचीर है। मध्यमें अनेक अलङ्कृत बुद्धमूर्ति देख पड़ती हैं। स्थानीय लोग इन सकल मूर्तियोंको अनन्त पुरुषोत्तम कहते हैं।

नलती गिरिका उच्चतर शृङ्ग ऊंचाईमें सहस्र फीट है। इस शृङ्गपर प्रस्तर निर्मित एक बृहत् मन्दिर रहा। आजकल उसका चिह्नमात्र देख पड़ता है। इसीके नीचे ५०० फीट पर हाथीखाल नामक एक गुहा है। गुहाकी छत टूट गयी है। यहां छह बुद्धमूर्ति विद्यमान हैं। इन्हींके निकट प्राचीन कुटिल अक्षरोंमें खुदी बौद्ध धर्मप्रचारकोंकी शिलालिपि मिली है। पास ही दो सिंहोंपर शतदल-आसना सिंहवाहिनी देवीकी मूर्ति है।

अमरावती पर्वतको आजकल सब लोग चटिया पहाड़ कहते हैं। पर्वतके पूर्व पाददेशपर प्राचीन दुर्गका भग्नावशेष देख पड़ता है। यह दुर्ग प्रस्तरसे ऐसा दुर्भेद्य किया गया, कि सातिशय प्रशंसनीय हुवा है। पहले इसकी अवस्था अच्छी रही। मध्यमें सरकारी पूर्तविभागके लोगोंने इस दुर्गके पत्थर खोद राहमें लगा दिये। इस भग्न दुर्गकी एक ओर सुसज्जित इन्द्राणीकी दो प्रस्तरमूर्ति हैं। अमरावतीपर आधमील लम्बा नीलपुष्कर (नीलपोखर) नामक एक बृहत् जलाशय भरा है।

महाविनायक बारचौखण्डा गिरिमालाका एक

शृङ्ग है। यह शृङ्ग अति पूर्वकालसे शैवोंका एक पुण्यप्रद तीर्थस्थान समझा जाता है। आजकल वसंत आरम्भ होनेपर पूर्वमोत्सव पड़ता जाते भी इसके दस गांव-यात्री यहां आते हैं। इस शृङ्गमें एक स्थान पर शुण्डाकार कला देख पड़ता है। इसे लोग महाविनायक वा गणेशमूर्ति कहते हैं। इसके ऊपर विनायकका मन्दिर है। पर्वतका दक्षिण मुख शिव और वामसुख गौरीकी भांति पूजा जाता है। इस स्थानसे ३० फाट ऊंचे एक जलप्रपात है। उसीके जलसे देवार्चना होती है। प्रपातके निकट शिवके आठ लिङ्ग विद्यमान हैं।

कटक जिलेमें तीन प्रधान नदियां विद्यमान हैं। उत्तरमें कलुषनाशिनी वैतरणी, मध्यस्थलमें ब्राह्मणी और दक्षिणमें महानदी बहती है। वैतरणी नदी महाभारतके समयसे पुण्यसलिला गङ्गाकी भांति पूजनीय है। पञ्चपाण्डवने इसी नदीमें आ तर्पण और अवगाहन किया। वैतरणी-प्रवाहित भूमिखण्डको पूर्वकाल यज्ञीय देश कहते थे। उत्कल, कलिङ्ग और दिवाली शब्द देखो। इन्हीं तीन नदियोंके गुणसे कटक जिला शस्यगामी है। नदियां उच्च स्थानसे निम्न भूमिको लातीं अथवा अपर नदीको अर्पणमें नहीं मिलातीं। यह समतल भूमिपर बहतीं और शाखा प्रशाखा फला कटक जिलेको सुजल एवं सुफल करती हैं। इस जिलेमें लम्ब, वाकुद प्रभृति नाले भी हैं।

कटक जिलेमें कई नगर हैं—१ कटक, २ याजपुर, ३ केन्द्रापाड़ा, ४ जगत्‌सिंहपुर।

१ कटक नगर अक्षा० २०° २८′ ४″ उ० और देशा० ८५° ५४′ २८″ पू० पर अवस्थित है। यहां महानदी द्विधा हो द्रोणाकार बन गयी है। महानदी और काटजुड़ी नदीके मुखपर ही कटक नगर बसा है।

कटक आधुनिक नगर नहीं। मादलापञ्जीके मतमें यह नगर कोई भी सो वर्ष पूर्व केशरीवंशीय किसी नृपतिने प्रतिष्ठित किया, जिससे भी बहुत पहले दूसरा कटक स्थापित हुआ। भवगुप्तके अनुशासनपत्रमें कटकका उल्लेख मिलता है। भवगुप्तने ई०के ८म शताब्द राजत्व किया था। अतएव उस समय वही कटक विद्यमान रहा। (Indian Antiquary, Vol. V. 60.) कटक नगरसे डेढ़ कोस पूर्व चौद्वार नामक एक ग्राम है। सब लोग इसे कटक-चौद्वार कहते हैं। किसी समय इस स्थानपर उत्कल राज्यकी राजधानी रही। उत्कलकी पञ्जीके मतमें इस नगरको सर्वप्रथमके समय राजा जनमेजयने स्थापन किया था। कटक-चौद्वार ही भवगुप्तके अनुशासनका कटक समझ पड़ता है। पूर्वश्री आजकल न रहते भी परिदर्शन करनेसे बोध होता—किसी समय कटक-चौद्वार अधिक समृद्धिशाली रहा। इसी प्राचीन नगरके पार्श्वपर कपालेश्वर नामक एक दुर्ग है। उत्कलराज चोड़गङ्गके समय इस दुर्गमें एक सुविस्तीर्ण जलाशय खोदा गया था। आजकल भी स्थानीय लोग उस जलाशयको चोड़गङ्गका पोखरा कहते हैं।

वर्तमान कटक नगरमें बड़बाटी नामक एक दुर्ग खड़ा है। ई०के १२श शताब्द राजा अनङ्गभीमने यह दुर्ग बनवाया था। १७५० ई०को महमदशाहके शासनकाल इस दुर्गका उत्तर-पश्चिम प्राकार लगा और पूर्व तोरण बना। दुर्ग प्रस्तरके दोहरे प्राचीरसे घिरा है। चारो ओर गहरी खाई है। मध्यमें प्रस्तरका एक उच्च स्तम्भ खड़ा है। उसी पर जयपताका फहराती थी। आईन-अकबरीके मतसे इस दुर्गमें राजा मुकुन्ददेवका नौ-मञ्जिला मकान रहा। किन्तु आजकल उसका चिह्न भी देख नहीं पड़ता। कटक नगरमें दीवानी आदालत और कमिशनरका प्रधान कार्यालय मौजूद है।

२ याजपुर अति प्राचीन कालसे हिन्दुओंका पुण्यस्थान-जैसा प्रसिद्ध है। इसी स्थानपर पुरातत्त्व-विरलावशेष विद्यमान है। इस नगरमें कितनी ही चीजें देखने लायक हैं। आजकल याजपुर याजपुर सबडिविजनका प्रधान स्थान है। याजपुर और विरजा शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

३ केन्द्रापाड़ा नगर महानदीकी चित्रोत्पला नाम्नी शाखासे उत्तर कुछ दूर पर अवस्थित है। मरहठोंके

समय यहां एक फौजदार रहे। कुजङ्गके राजा तत्काल नाना स्थानोंमें लूटमार मचाते थे। उक्त राजाको शासन देनेके लिये ही यहां फौजदारने अवस्थान किया।

कटक जिलेमें धान्य अधिक उत्पन्न होता है। बियाली, दीफसली और साखिया धान्य ही प्रधान है। वङ्गदेशके आमनकी भांति यहां 'शारद' धान्य लगता है। फिर आमनकी तरह शारद भी नाना प्रकार रहता है। चने, मूंग, उड़द, अरहर वगैरह दालकी उपज अच्छी है। सरसों, तम्बाकू, हलदी, मेथी, सौंफ, प्याज, लहसुन, अलसी, पान प्रभृति द्रव्य भी उत्पन्न होते हैं।

औषधके द्रव्योंमें आमलकी, आक्रान्ता, अर्जुन, अर्क, अश्वगन्धा, आम्र, विल्व, भृङ्गराज, ब्राह्मयष्टिका, बकुल, वच्चमूला, बहेड़ा, बेणा, वासक, भूतारि, भूमिवारुणी, अनन्तमूल, बाकची, चिरायता, चित्रकमूल, रक्तचित्रकमूल, दाड़िम, धतूरा, दारुहरिद्रा, दन्ती, दूधी, गजपिप्पली, घृतकुमारी, गुर्च, गोक्षुर, हस्तीकर्ण, हरीतकी, इन्द्रयव, इन्द्रवारुणी, इसबगोल, जाम, जयन्ती, जायफल, कृष्णापर्णी, कण्टककुसुम, कुचिला, कमरख, मोथा, मुद्रया, महानिम्ब, निम्ब, नागेश्वर, पील, फूट, परवल, पलाश, रक्तचन्दन, इमली, तालमूली, सोमराज, शालपर्णी, सोनामुखी प्रभृति देख पड़ते हैं।

इस जिलेमें हिन्दू, मुसलमान वगैरह नाना श्रेणियोंके लोग रहते हैं। अंगरेजी राज्यसे पूर्व पुनः पुनः विदेशीय आक्रमण पड़नेसे कटक जिला अत्यन्त दरिद्र और हीन अवस्थाको पहुंचा था। आजकल फिर क्रमशः अवस्था सुधर रही है। किन्तु पहले लोग जैसे परिश्रमी थे, आजकल वैसे नहीं। छषक भी विलासी हुये जाते हैं। यहां क्रमशः विलायती द्रव्योंका आदर बढ़ रहा है। देशी द्रव्यादिसे लोगोंकी श्रद्धा घटते जाती है। कालेश्वर, पुरी प्रभृति शब्द देखो।

कटकई (हिं॰ स्त्री॰) १ सेना, फौज। २ सैन्यसमावेश, फौजका जमाव।

कटकट (सं॰ त्रि॰) कटप्रकारः हितम्। १ अत्यन्त, बहुत ज्यादा। २ सर्वोत्कृष्ट, सबसे अच्छा। (पु॰) ३ महादेव। ४ अव्यक्त शब्दविशेष, एक आवाज। दांत बजनेका शब्द कटकट कहाता है।

कटकटना, कटकटाना देखो।

कटकटा (सं॰ अव्य॰) कटकट-डाच्। अव्यक्तानुकरणाद् द्व्यजवरार्धादनितौ डाच्। पा ५।४।५७। अनुकरण शब्दविशेष, एक आवाज।

"सुविभिय महाघोरैरन्योऽन्यमभिजघ्नतुः।
ततः कटकटाशब्दो बभूव सुमहास्वनः॥" (भारत, वन ११० अ॰)

कटकटाना (हिं॰ क्रि॰) दन्तपेषण करना, दांत पीसना।

कटकटिका (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक बुलबुल। शीतकालको यह पर्वतसे नीचे समतल भूमिपर उतर आती और द्रुम वा भित्तिके खोखलेमें घोंसला लगाती है।

कटकबाला (हिं॰ पु॰) मियादी वे, जिस थेमें सुहत रहे।

कटकाई, कटकई देखो।

कटकार (सं॰ त्रि॰) कटं करोति, कट-कृ-अण्। १ चटाई बनानेवाला। (पु॰) २ मिश्रकार जातिविशेष, एक कौम। शूद्राके गर्भसे गायनमें वैश्यने इस जातिको उत्पन्न किया है। कटकारका व्यवसाय चटाई वगैरह बनाना है।

कटकी (सं॰ पु॰) कटकोऽस्यास्ति, कटक-इनि। १ पर्वत, पहाड़। २ गज, हाथी। (त्रि॰) ३ कटकयुक्त, फौजदार। ४ कटकका रहनेवाला। (स्त्री॰) ५ लाल मिर्च।

कटकीय (सं॰ त्रि॰) कटकाय हितः, कटक-छ। वलयादि प्रस्तुत करनेमें लगनेवाला, जो कड़े बनानेके काम आता हो। यह शब्द स्वर्णादिका विशेषण है।

कटकुटी (हिं॰ स्त्री॰) पर्णशाला, घास-फूसकी झोपड़ी।

कटकोल (सं॰ पु॰) कटति स्रवति, कट-अच्, कटस्य कोलो धनीभावो यत्र, बहुव्री॰। निष्ठीवनपात्र, पीकदान, थूकनेका बरतन।

कटखदिर (सं॰ पु॰) १ काक, कौवा। २ शृगाल, गीदड़।

कटखना (हिं॰ वि॰) १ दन्ताघात मारनेवाला, जो दांतसे काट खाता हो। (पु॰) २ ढंग, काट-छांट, कतर-ब्योंत, हथकंडा, मक्कारी, चालाकी। कटखने देखनेको कटखनेवाली कहते हैं।

कटखादक (सं॰ वि॰) कट' उपादिकं सर्वमेव खादति, कट-खाद-ण्वुल्। १ सर्वभक्षक, सब खा जानेवाला, जो खानेमें कोई चीज़ छोड़ता न हो। २ शवभक्षक, मुर्दा-खोर। (पु॰) ३ काचकलस, शीशेकी सुराही। ४ काक, कौवा। ५ शृगाल, गीदड़। ६ काच-लवण।

कटग्लास (अं॰ पु॰=Cut-glass) सुदृढ़ एवं कारु-कार्य-खचित काच, मज़बूत नक़्क़ाशीदार शीशा।

कटघरा (हिं॰ पु॰) १ काष्ठभवन, लकड़ीका बाड़ा। इसमें जंगला या लोहे, लकड़ी वगैरहका डंडा लगा रहता है। २ हहरा पिञ्जर, बड़ा पिंजड़ा।

कटघोष (सं॰ पु॰) कटप्रधानो घोषः, मध्यपदलो॰। १ पूर्वदेशीय ग्रामविशेष, भारतके पूर्व प्रान्तका एक ग्राम। २ ग्वालपाड़ा।

कटङ्कट (सं॰ पु॰) कट' शव' कटति ज्वालया आवृणोति, कट् बाहुलकात् खच्। १ अग्नि, आग।

"कटङ्कटाय भाराय नमः पवनाय च।" (अग्निपुराण)

२ स्वर्ण, सोना। ३ दारुहरिद्रा, दारुहलदी। ४ गणेश। ५ रुद्र।

कटङ्कटा (सं॰ स्त्री॰) आम्लुक वृक्ष, आमलका पेड़।

कटङ्कटी (सं॰ स्त्री॰) दारुहरिद्रा, दारुहलदी।

कटङ्कटेरी (सं॰ स्त्री॰) कटङ्कट' वह्निर्न सुवर्णतुल्य' वा कान्ति' ईरयति प्रापयति, कटङ्कट-ईट-अण्-ङीप्। १ हरिद्रा, हलदी। २ दारुहरिद्रा, दारुहलदी।

कटचुरि (सं॰ पु॰) जाति एवं गोत्रविशेष। नागर-खण्डमें यही शब्द कटच्छुरी नामसे उक्त है। पूर्वकाल-पर कटच्छुरि नामक एक प्रबल जाति भारतके नाना स्थानोंमें राजत्व करती थी। शिलालिपिमें इस जातिका नाम कलचुरि लिखा है। कलचुरि देखो।

कटजीरा (हिं॰ पु॰) कृष्णजीरक, काला जीरा।

कटड़ा (हिं॰ पु॰) भैंसका पंडवा या नर बच्चा।

कटताल (हिं॰ स्त्री॰) वाद्यविशेष, एक बाजा। यह काठसे बनती है। अपर नाम करताल है।

कटताला, करताल देखो।

कटती (हिं॰ स्त्री॰) विक्रय, फरोख्त, मांग।

कटदान (सं॰ क्ली॰) कटो देहवर्तने दीयतेऽत्र, कट-दा-ल्युट्। श्रीकृष्णके पार्श्वपरिवर्तनका एक उत्सव। यह उत्सव भाद्र मासकी शुक्ला एकादशीको श्रवणा नक्षत्रके मध्यपाद-योगमें सन्ध्याकाल कर्तव्य है।

कटन (सं॰ क्ली॰) कटेन तृणादिना आच्छाद्यते, सम्पद्यते, कट-अन-अच्। गृहाच्छादन, घरका छप्पर।

कटनगर (सं॰ क्ली॰) पूर्वदेशीय नगरविशेष, मश-रक़ी मुल्कका एक शहर।

कटना (हिं॰ क्रि॰) १ द्विधा होना, दो टुकड़े बनना। अस्त्रशस्त्रको धार लगनेसे जब कोई चीज़ दो टुकड़े हो जाती, तब उसकी क्रिया कटना कहाती है। २ पिस जाना, बंटना, बारीक पड़ना। ३ प्रवेश करना, घुसना, धंसना। ४ अंगकी हानि होना, हिस्सा अलग पड़ना। ५ युद्धमें आहत हो मर मरना, ज़ख़्म खाना। ६ काटा, कतरा या ब्योंता जाना। ७ पृथक् होना, छूटना, कम पड़ना, जाते रहना। ८ व्यतीत होना, गुज़रना, बीतना, चला जाना। ९ समाप्त होना, बाक़ी न रहना। १० छलपूर्वक पृथक् होना, धोकेसे साथ छोड़कर अलग चल देना। ११ लज्जित होना, शरमाना, झेंपना, मुंह लटकाना। १२ ईर्ष्या करना, डाह मानना, जल जाना। १३ मोहित वा आसक्त होना, भोपक रह जाना, मुंहमें पानी आना। १४ व्यर्थ व्यय पड़ना, फ़ज़ूल ख़र्च लगना, बिगड़ना। १५ विक्रय होना, बिक जाना। १६ मिलना, हाथ लगना, पल्ले पड़ना। १७ नष्ट होना, मिट जाना। १८ बनना, तैयार होना। १९ तराश पड़ना। २० पूरा भाग लगना।

कटनास (हिं॰ पु॰) नीलकण्ठपक्षी, नीलागबांस।

कटनि (हिं॰ स्त्री॰) १ कटाई, तराश, काटछांट। २ प्रीति, मुहब्बत, लगी।

कटनी (हिं॰ स्त्री॰) अस्त्रविशेष, एक औज़ार।

काटनेमें काम आनेवाला औज़ार कटनी कहाता है। २ कटाई, काटफांस। ३ तिरछी दौड़।

कटपञ्चक (सं० क्ली०) अश्वचालनाकी पञ्चविध भूमि, घोड़ा फेरनेकी पांच तरहकी ज़मीन्। इसमें पहली मण्डलाकार, दूसरी चतुरस्र, तीसरी गोमूत्राकार, चौथी अर्धचन्द्राकार और पांचवीं नागपाशाकार रहती है। (जयदत्त)

कटपल्लिकुञ्चिका (सं० स्त्री०) तृणशाला, घासकी झोपड़ी।

कटपल्लल (सं० क्ली०) प्राग्देशीय ग्रामविशेष, एक गांवकी जगह।

कटपीस (अं० पु०=Cutpiece) वस्त्रका कटा हुआ टुकड़ा। थान ज़्यादा बड़ा होनेसे जो फ़ुज़ूल कपड़ा फाड़ लिया जाता, वही कटपीस कहाता है।

कटपूतन (सं० पु०) कटस्य शवस्य पूतां तनोति, कटपू-तन-अच्। प्रेतविशेष। क्षत्रिय अपना धर्म छोड़नेपर कटपूतन हो शव भक्षण करता है।

"धर्मेभ्य कुणपाशी च क्षत्रियः कटपूतनः।" (मनु १२।७१)

कटप्रू (सं० पु०) कटे श्मशाने प्रवते विचरति, कट-प्रु-क्विप् दीर्घश्च। क्विब्वचि-प्रच्छि-श्रिस्रु-द्रु-प्रुज्वां दीर्घोऽसम्प्रसारणञ्च। उण् २।५७। १ महादेव। २ राक्षस। ३ विद्याधर। ४ पाशाक्रीड़क, क़िमारबाज़। ५ कीट, कीड़ा।

कटप्रोथ (सं० पु०-क्ली०) कटस्य कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः, ६-तत्। १ नितम्ब, चूतड़। २ कटि, कमर।

कटफरेश (अं० पु०=Cutfresh) कटा-फटा माल, बिगड़ी हुयी चीज़। समुद्रमें गिर जानेसे दाग़ पड़ा और सन्दूक़ खोलनेसे कटा हुआ नया माल कटफरेश कहलाता है।

कटभङ्ग (सं० पु०) कटानां शस्यानां हस्तेन भङ्गः। १ हस्तसे शस्यका छेद, हाथसे अनाज तोड़नेका काम। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ राजविनाश, सलतनतकी मिसमारी।

कटभि, कटभी देखो।

कटभी (सं० स्त्री०) कटवद् भाति, कट-भा-ड-ङीष्। १ लघु ज्योतिष्मती लता, छोटी रतनजोत। भावप्रकाशके मतसे यह कटु एवं तिक्तरस, सारक, कफ तथा वायुनाशक, अत्यन्त उष्ण, वमनकारक, तीक्ष्ण, अग्निवर्धक, बुद्धिजनक और स्मृति-शक्तिप्रद है। इसका संस्कृत पर्याय—कटभि, ज्योतिष्क, कङ्गनी, पारावतपदी, पण्यलता और ककुन्दनी है। २ अपराजिता। इसका संस्कृत पर्याय—नाभिक, शौण्डी, पाटली, किणिही, मधुरेणु, क्षुद्रश्यामा, कैडर्य और श्यामला है। राजनिघण्टके मतमें यह कटु, उष्ण और वायु, कफ एवं अजीर्ण रोगनाशक है। कटभी श्वेत और नील दो प्रकारकी होती है। दोनों हो समगुणविशिष्ट हैं। इसके फलमें भी उक्त सकल गुण रहते हैं। किन्तु वह कफवृद्धकारी होता है। अपराजिता देखो। ३ कण्टक-शिरीष, कंटीला सरसों। ४ मुषली, मूसर।

कटभीवल्क (सं० स्त्री०) कटभी-वल्कल, रतनजोतकी छाल।

कटमालिनी (सं० स्त्री०) कटानां किण्वाद्योषधीनां माला साधनत्वेन अस्याः अस्ति, कटमाला-इनि-ङीप्। मदिरा, शराब। किण्वादि औषधसमूहसे यह बनती है।

कटम्ब (सं० पु०) कटति, कट-अम्बच्। कदम्बिकटिकटिभ्योऽम्बच्। उण् ४।८२। १ वाद्यविशेष, एक बाजा। कथ्यते आश्रियते शब्दनेन। २ वाण, तीर।

कटम्भरा (सं० स्त्री०) कटं गुणातिशयं हरोति धारयति, कट-हृ-अच्-टाप्। १ कटुकी, कुटकी। २ गन्धप्रसारणी। ३ दन्तीवृक्ष, दांती। ४ गोधा, गोह। ५ मधु। ६ श्योणाकवृक्ष। ७ करिणी, हथिनी। ८ कलम्बिका। ९ मूर्वा, सौंफ। १० पुनर्णवा। ११ राजबला। १२ महाबला।

कटम्भर (सं० पु०) कटं गुणातिशयं बिभर्ति, कट-भृ-अच्-मुम्। संज्ञायां भृतृवृजिधारिसहितपिदमः। पा ३।२।४६। १ श्योणाकवृक्ष। २ कटभी वृक्ष।

कटम्भरा (सं० स्त्री०) कटम्भर-टाप्। कटम्भरा देखो।

कटर (हिं० स्त्री०) १ तृणविशेष, घसयाम, एक घास। (अं० पु०=Cutter) २ एक मस्तूलका जहाज़। ३ सरोता। ४ काटनेवाला। ५ नौका-

विशेष, एक साग। इसमें डांठ नहीं लगता। कटर तथा सीढ़ार वनस्पतियोंके सहारे छाया-जाया करता है।

कटरकटर (हिं० क्रि० वि०) १ उच्चैःस्वरमें, बुलन्द आवाज़के साथ। २ बलपूर्वक, ज़ोरसे।

कटरना (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली।

कटरपटर (हिं० क्रि० वि०) जूतेके ज़ोरसे।

कटरा (हिं० पु०) १ क्षुद्र वर्गाकार पण्यशाला, छोटा चौकोर बाज़ार। २ पंड़वा, भैंसका नर बच्चा।

कटरिया (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी क़िस्मका धान। यह आसाममें अधिक उपजता है।

कटरी (हिं० स्त्री०) १ धान्यरोगविशेष, धानकी एक बीमारी। २ नदीके तटकी निम्नभूमि, दरयाके किनारेकी नीची जगह। इसमें दलदल रहता और नरकट लगता है।

कटरैतो (हिं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे लकड़ी रेतते हैं।

कटल (हिं० पु०) १ बूचड़, कसाई। यह शब्द मुसलमानोंको घृणाके साथ सम्बोधन करनेमें भी आता है।

कटवा (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। इसके गलफड़ोंके निकट कण्टक रहते हैं।

कटवां (हिं० वि०) १ कटा हुआ, जो बीचमें रुका न हो।

कटवांसो (हिं० पु०) किसी क़िस्मका बांस। यह पोला नहीं होता। कण्टक भरे रहते हैं। गांठ पास-पास पड़ती है। कटवांसी बांस सीधा नहीं बढ़ता और घना जमता है। इसे बागकी चारो ओर लगा देते हैं।

कटव्रण (सं० पु०) कटः उत्कटः व्रणः युद्धकण्डूरस्य, बहुव्री०। भीमसेन। भीमसेन देखो।

कटशर्करा (सं० स्त्री०) कटः मलः शर्करेव मिष्टरसत्वात् यस्याः, बहुव्री०। १ गाड़ेंटी लता, एक बेल। २ टूटी चटाईका एक टुकड़ा।

कटसरैया (हिं० स्त्री०) वृक्षविशेष, एक पेड़। इसमें श्वेत, पीत, रक्त और नील कई प्रकारके पुष्प आते हैं। कार्तिक मास इसके फूलनेका समय है। कटसरैया अड़सेकी भांति कंटीली होती है।

कटस्थल (सं० स्त्री०) १ नितम्ब एवं कटि, चूतड़ और कमर। २ हस्तिकपोल, हाथीकी कनपटी।

कटहर, कटहल देखो।

कटहरा (हिं० पु०) १ कटघरा, काठका घर। २ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह उत्तर-भारत और आसामकी नदियोंमें मिलता है।

कटसारिका (सं० स्त्री०) कटसरैया, एक झाड़ी।

कटहल (हिं० पु०) पनस, चक्की। (Artocarpus integrifolia) यह एक बृहत् वृक्ष है। उत्तर व्यतिरेक कटहल भारतवर्ष और ब्रह्मदेशमें सब स्थानों पर लगाया जाता है। पश्चिमघाट पर्वतके वनमें इसके स्वभावतः उत्पन्न होनेका अनुमान बांधते हैं। कटहलका अर्धगोलाकृति शिखर श्यामवर्ण पत्रोंसे मण्डित रहता है। शाखा विकटाकार फलोंके भारसे झुक पड़ती है। सह्याद्रि पर्वतके सदा हरिद्वर्ण वनमें कटहल लगाया और प्रकृत अवस्थामें भी पाया जाता है। पूर्व पर्वतपर यह आपसे आप होता है।

एक गर्त खोदकर गोबरसे भर देते हैं। फिर उसमें जून या जुलाई मास कटहलका बीज डाला जाता है। १७८२ ई०को ऐडमिरल रोडनी इसे जमैका ले गये। ब्राज़िल मारिशास आदि स्थानोंमें भी यह लगाया गया है।

नव पल्लवोंपर क्षुद्र एवं रूक्ष कुन्तल रहते हैं। शाखावोंपर मण्डलाकार चिह्नित रेखायें देख पड़ती हैं। पत्र चर्म-सदृश, चिक्कण, ऊपर प्रकाशमान, नीचे रूक्ष और अण्डाकार होते हैं। मध्यशिरा नीचे प्रधान रहती है। उसकी दोनों ओर चारसे सात इञ्चतक ७-८ पार्श्वीय शिरायें निकलती हैं। पत्रोंके नीचेका अनुबन्ध बड़ा होता है। उसका थोड़ा आधार पत्रोंसे मिला रहता और गिर पड़ता है। फल बृहत् लगता, क्षुद्र शाखावोंपर लटकता और दीर्घाकार एवं मांसल दिखाता है। उसका आधार सान्द्र और गोलाकार होता है। वल्कलपर नोरव अवियां उभर आती हैं। बीज वृक्क-सदृश और तैलमय रहता है।

वल्कलसे अत्यन्त श्यामवर्ण निर्यास निकलता, जिसका भेद तिन्दुलिप्त रहता और जलमें घुल सकता है। इस मूल्यवान् लेप और लासेकी भांति व्यवहृत होता है। उससे लचीला, चमड़े-जैसा पानी रोकनेवाला और पेंसिलके चिह्न मिटाने योग्य रबड़ बन सकता है। किन्तु अधिक रबड़ नहीं निकलता।

कटहलका काष्ठ या चूर्ण उबालनेसे पीला रंग तैयार होता है। उससे ब्रह्मदेशवासी साधुवोंके वस्त्र रंगे जाते हैं। कटहलके रंगको मांग मन्द्राज, भारतके अन्य प्रान्त और जावामें भी आया करती है। वह फिटकरी डालनेसे पक्का और हलदी छोड़नेसे गहरा पड़ जाता है। नील मिलानेसे कटहलका रंग हरा निकलता है। उसे रेशम रंगनेमें प्रायः व्यवहार करते हैं। बङ्गालमें फल और काष्ठ दोनोंसे रंग बनता है। अवधमें वल्कल और कुमायूंमें कटहलके मूलसे रंग निकालते हैं। वल्कलमें तन्तु होता है। कुमायूं-में तन्तुसे रज्जु बनती है।

वृक्षका रस मांसके शोथ और स्फोटपर सपूयत्वको वृद्धिके लिये लगाया जाता है। नवीन पत्र, चर्मरोग और मूल अजीर्णपर चलता है। बीजमें जो मण्डवत् द्रव्य रहता, वह उसको सुखाने और कुटाने-पिटानेसे पृथक् हो सकता है। अपक्व फल स्तम्भक और पक्व फल सारक पड़ता, किन्तु अत्यन्त पौष्टिक होते भी कुछ कठिनतासे पचता है।

कटहलके वृहत् फलको फलका सार समझना चाहिये। क्योंकि अनन्नासकी भांति पुष्पसमूहसे उत्पन्न होनेवाले फलोंका वह राशीकरण है। विभिन्न फल प्रायः संमृत कहलाते हैं। प्रत्येक फलमें एक बीज पड़ता, जो कर्कश गन्धवाले सुस्वादु लालके मांसल पिण्डसे आवृत रहता है। ऊपरका कठोर वल्कल फेंक दिया जाता है। बीजको चारो ओर जो मांसल पिण्ड जमता, वह भारतवासियोंके भोजनमें चलता है। युरोपीय कटहलको बहुधा नहीं खाते। फल साधारणतः १२से १८ इञ्चतक लंबा और ६से ८ इञ्च तक चौड़ा होता है। प्रत्येक फलमें ५०से ८०तक कोये निकलते, जो मृदु, सरस एवं सुमिष्ट द्रव्यसे बनते हैं। उक्त द्रव्य उबालने और टपकानेसे कर्कश गन्ध एवं अद्भुत स्वादविशिष्ट मद्यसारका पेय प्राप्त होता है। बीजको भूनकर खाते हैं। वह पीसनेसे सिंघाड़ेके आटे-जैसा निकलता है। कच्चे फलकी तरकारी बनती है।

भीतरी काष्ठ पीत अथवा पीतप्रभ धूसरवर्ण, निबिड़, समकणविशिष्ट एवं ईषत् कठोर रहता, प्रदर्शनसे तिमिरावृत लगता, सम्यक् परिणत पड़ता और सूक्ष्म परिष्कारको पहुंचता है। दारुकर्ममें वह अधिक व्यवहृत होता है। कटहलके काष्ठकी मञ्जूषा और सज्जा बनती है। कक्षान्तर-कार्य और मार्जनी-पृष्ठके लिये उसे युरोप भेजते हैं। बौद्धोंकी मूर्तियोंपर प्रायः कटहल देखनेमें आता है। कारण वह इस वृक्षको पवित्र समझते हैं।

कटहा (हिं॰ वि॰) काट खानेवाला, जो दांतसे घाव डालता हो। (स्त्री॰) कटही।

कटा (सं॰ स्त्री॰) १ कटकी, कुटकी। (हिं॰ स्त्री॰) २ वध, क़त्ल, मारकाट। (वि॰) ३ विच्छिन्न, टूटाफूटा, जो कट गया हो।

कटाई (हिं॰ स्त्री॰) १ छेद, प्रहार, काटनेका काम। २ अवच्छेद, अनाजका काटा जाना। ३ छेदका पारिश्रमिक, काटनेकी उजरत या मज़दूरी। ४ भटकटैया।

कटाऊ (हिं॰ वि॰) काट-छांट किया हुआ, जो काटा गया हो।

कटाकट (हिं॰ पु॰) कटकटका शब्द, एक तरहकी आवाज़।

कटाकटी (हिं॰ स्त्री॰) वध, क़त्ल, मारकाट।

कटाकु (सं॰ पु॰) कटति लघ्वेन जीविकां निर्वाहयति, कट-काकु। कडिकडिभ्यां काकुः। उण् ३।७७। पक्षी, चिड़िया।

कटाक्ष (सं॰ पु॰) कटौ अतिशयितौ अक्षिणी यत्र, कटि-अक्षि-षच्। शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम्। पा ६।१।९४। १ अपाङ्ग दर्शन, नज़ारा। २ अपरके दोषका दर्शन, दूसरेके ऐबका इज़हार।

"इत्यर्धं धरणीशानां कामनां कामिनेषु कटाक्षविक्षेपैः।"(दशकुमार॰)

नाटक आदिमें पात्रोंकी आंखोंपर बाहरी ओर भी छोटी और पतली काली काली रेखायें लगायी जातीं, वह भी कटाक्ष कहलाती है। कटाक्ष हथियों-की आंखोंपर भी बनते हैं।

कटाक्षमुट (सं० त्रि०) अपाङ्ग दर्शन द्वारा गृहीत, जो नज़ारेसे ही पकड़ा गया हो।

कटाक्षविशिख (सं० पु०) प्रीतिका बाण-जैसा अपाङ्ग दर्शन, मुहब्बतकी तीर-जैसी तिरछी नज़र।

कटाक्षविक्षेप (सं० स्त्री०) कामुक दृष्टिका निक्षेप, प्यारकी निगाहका इशारा।

कटाग्नि (सं० पु०) कटेन तृणादि वेष्टनेन जातो-ऽग्निः, ३-तत्। तृणादिके वेष्टनसे उत्पन्न किया हुआ अग्नि, जो आग घास फूस डालकर जलायी गयी हो।

"उभावपि तु तावेव ब्राह्मण्या गुप्तया सह।
विप्लुतौ शूद्रवद्दण्ड्यौ दग्धव्यौ वा कटाग्निना॥" (मनु ८।३७७)

कटाछनी (हिं० स्त्री०) १ वध, क़त्ल, मारकाट। २ युद्ध, लड़ाई। ३ तर्क, बहस।

कटाटङ्क (सं० पु०) शिव, महादेव।

कटाना (हिं० क्रि०) १ छिन्न कराना, काटनेमें लगाना। २ डसाना, दांतोंसे फड़ाना। ३ घूमकर जाना, घुमाना, बचाना।

कटायन (सं० स्त्री०) कटस्य आसन-विशेषस्य अयनं उत्पत्तिस्थानम्, ६-तत्। वीरण, खस।

कटार (सं० पु०) कटं कन्दर्पमदं ऋच्छति, कट-ऋ-अण्। १ कामी, शहवतपरस्त। २ लम्पट, छिनाला करनेवाला। (हिं० स्त्री०) ३ अस्त्रविशेष, एक हथियार। यह छोटी और तिकोनी रहती और दोनों ओर धार पड़ती है। कटारको मारते समय पेटमें घुसेड़ देते हैं। ४ वनबिलाव, जंगली बिल्ली।

कटारा (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, बड़ी कटार। २ इमलीका फल। यह कटार-जैसा बना होता है। ३ ऊंटकटारा।

कटारिया (हिं० पु०) वस्त्रविशेष, एक रेशमी कपड़ा। इसमें कटार-जैसी रेखायें डाली जाती हैं।

कटारी (हिं० स्त्री०) १ अस्त्रविशेष, कटार। २ एक औज़ार। इससे दूध बनानेवाले नारियलको खुरच-खुरच निकालते हैं। ३ मार्गमें पड़ा हुआ नोकदार काठ, गाड़की नोकदार लकड़ी। पालकी ढोनेवाले कहार राहमें पड़ी नोकदार लकड़ीको कटारी कहते हैं। कारण पैर पड़ जानेसे वह कटारीकी भांति घुस जाती है।

कटाल (सं० त्रि०) कटोऽस्यास्ति, कट-लच्-आलच्। सिध्मादिभ्यश्च। पा ५।२।९७। मन्द गण्डभुज, जिसके अपनी कनपटी न रहे।

कटाली (हिं० स्त्री०) भटकटैया।

कटाव (हिं पु०) १ छेदप्रच्छेद, काट-छांट, कतर-ब्योंत। २ कृत्रिम पत्रपुष्पादि, बनावटी बेलबूटे। यह काटकर बनाये जाते हैं।

कटावदार (हिं० वि०) कृत्रिम पत्रपुष्पविशिष्ट, बनावटी बेलबूटेवाला। जिस पत्थर या लकड़ीपर बेलबूटे कटते, उसे कटावदार कहते हैं।

कटावन (हिं० पु०) १ कटाव, काटका काम। २ विच्छिन्न खण्ड, कटा हुआ टुकड़ा।

कटास (हिं० पु०) १ कटार, खीखर, किसी क़िस्मकी जंगली बिल्ली। २ पञ्जाबप्रदेशकी वितस्ता नदीके तीरका एक तीर्थस्थान। यहां पत्थरका मन्दिर बना है। इस तीर्थका दर्शन लेने बहुतसे लोग आया करते हैं। कटासमें ही चीन-परिव्राजक युएन चुयङ्ग वर्णित 'पुष्पप्रसवण' था।

कटासी (हिं० स्त्री०) शवके गाड़नेका स्थान, क़ब्रि-स्तान, जिस जगहमें मुर्दा गड़े।

कटाह (सं० पु०) कटं उत्तापादिकं आहन्ति निवा-रयति, कट-आ-हन्-ड। १ कच्छपका कर्पर, कछुवेका खपड़ा। २ द्वीपविशेष, शङ्ख मुल्कका एक हिस्सा। ३ तैलपाकपात्र, घी या तेल गर्म करनेका छिछला बर्तन। ४ पिपासायमानविशिष्ट जायमान महिष-शिशु, सींग निकलता पंड़वा। ५ नरकविशेष, जहन्नम। ६ कर्पूर, कपूर। ७ कूप, कूवां। ८ सूर्य, आफताब। ९ कड़ाह, कड़ाही। १० यूप। ११ टब, टीला।

कटाहक (सं॰ क्ली॰) कटाह स्वार्थे कन्। भाजन, पात्र, वर्तन, कड़ाह।

कटाह्य (सं॰ क्ली॰) पद्मकन्द, कमलगट्टा।

कटि (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कट्यते वस्त्रादिना वृध्रियतेऽसौ, कट-इन्। १ शरीरका मध्यदेश, कमर। इसका संस्कृत पर्याय—कट, श्रोणिफलक, श्रोणी, ककुद्मती, श्रोणिफल, कटी, श्रोणि, कलत्र, कटीर, काञ्चीपद, और करभ है। सुश्रुतके मतसे कटिदेशमें पांच अस्थि रहते हैं। उनमें गुह्य, योनि एवं नितम्बदेशमें चार और त्रिक स्थानमें एक अस्थि आता है। अस्थि-सङ्घातक एक है। अस्थिकी सन्धियां तीन बैठती हैं। उनका नाम तुन्नसेवनी है। स्नायु आठ होती हैं। दोनों नितम्बोंमें पांच-पांचके हिसाबसे दश पेशी हैं। कटिदेशस्थ मर्म अस्थिमर्म कहाता है। उसका नाम कटीक है। तरुण अस्थिके पृष्ठवंश अर्थात् मेरुदण्डके उभय पार्श्वपर अनतिनिम्न कुकुन्दर नामक दो मर्म पड़ते हैं। उनमें किसी प्रकार शोणित बहनेपर स्पर्श-ज्ञान और शरीरकी चेष्टा दोनोंका नाश होता है। नितम्बके ऊपरिभागपर पार्श्वान्तरसे प्रतिबद्ध नितम्ब नामक मर्मद्वय हैं। उनसे शोणित गिरनेपर अधः-काय शुष्क एवं दुर्बल पड़ता और मृत्यु पर्यन्त आ पहुंचता है। कटिदेशके अभ्यन्तरस्थ मांस और रक्तविशिष्ट आशयका नाम मूत्राशय या वस्ति है। अश्मरी रोग व्यतीत अन्य कारणसे उसको दोनों ओर विद्ध होनेपर सद्यःमृत्यु आता है। एक पार्श्वभेद करनेसे मूत्रस्रावी व्रण उत्पन्न होता है। वह भी कष्टसाध्य है। कटिदेशमें आठ शिरायें हैं। उनसे दिटपस्थल और कटिकतरुणमें चार-चार रहती हैं।

२ हस्तीका गण्डस्थल, हाथीकी कनपटी। ३ देवालयका द्वार, मन्दिरका दरवाज़ा। ४ कमल, श्रोवो। ५ काञ्ची, घुंघची। ६ कटीर, कूला।

कटिका (सं॰ स्त्री॰) प्रशस्ता कटिरस्याः, कटि-कन्-टाप्। १ अतिसुन्दर कटिदेशयुक्ता स्त्री, जिस औरतके पतली कमर रहे। २ कैटीर, कूला।

कटिकुष्ठ (सं॰ क्ली॰) प्राणीका कुष्ठरोग, कमरका कोढ़।

कटिकूप (सं॰ क्ली॰) कटिदेशस्थं कूपम्, मध्यपद-लो॰। ककुन्दर, कुब्ज, चूतड़का गड्ढा।

कटिजेब (हिं॰ स्त्री॰) करधनी, कमरकी खूबसूरती बढ़ानेवाला ज़ेवर।

कटितट (सं॰ क्ली॰) कटिरेव तटं स्थानम्। १ कटि-देश, कमर। २ नितम्ब, चूतड़।

कटित्र (सं॰ क्ली॰) कटिं त्रायते, कटि-त्रै-क। १ परिधेय वस्त्र, धोती। २ चन्द्रहार। ३ कटिवर्म, कमरका बखतर। ४ चक्राङ्ग। ५ कमरबंद। ६ करधनी।

"अधात्मजीरं लितिकाममं स्र.रत।
किरीटकेयूरकटित्रकङ्कणम्॥" (भागवत ६।११।१०)

कटिदेश (सं॰ क्ली॰) कटिनामकं देशं अवयवम्, मध्यपदलो॰। श्रोणी, कमर।

कटिन् (सं॰ त्रि॰) कटोऽस्त्यस्य, कट-इनि। ब्रह्मव-ठञिन इत्यादि। पा ५।२।१०। कटियुक्त, जिसके कमर रहे।

कटिप्रोथ (सं॰ पु॰) कट्याः प्रोथः मांसपिण्डः। नितम्ब, चूतड़। इसका संस्कृत पर्याय—स्फिक्, पूलक, कटीप्रोथ, कटि, प्रोथ और पूत है।

कटिबद्ध (सं॰ त्रि॰) तत्पर, तैयार, कमर बांधे हुआ।

कटिबन्ध (सं॰ पु॰) १ कमरबंद। २ पृथ्वीका भाग-विशेष, मिनतका, ज़मीनका एक हिस्सा। यह शीत-लता और उष्णताके अनुसार निर्धारित होता है। विद्वानोंने पृथिवीको पांच कटिबन्धोंमें बांटा है।

कटिभूषण (सं॰ क्ली॰) कटेर्भूषणम्, ६-तत्। कटि-देशका अलङ्कार, कमरका गहना।

कटिमालिका (सं॰ स्त्री॰) कटौ मालेव, कटिमाल-कन् इत्वम्। चन्द्रहार, औरतका कमरबंद।

कटिया (हिं॰ स्त्री॰) १ हक्काक, नग बनानेवाला। यह नग काट छांट कर सुधारता है। २ पदखाद्य-विशेष, चौपायोंका एक चारा। यह ज्वार मक्का आदिके हल गड़ांसमें टुकड़े-टुकड़े कर बनायी जाती है। कटिया बढ़ेटर काटती है। ३ अलङ्कारविशेष, एक ज़ेवर। इसे स्त्रियां मस्तकपर धारण करती हैं। ४ कंटिया, मछली पकड़नेका एक छोटा कांटा।

कटियाना (हिं॰ क्रि॰) १ पुलकित होना, रोमाञ्च आना। २ (देश) टूटना, अंगड़ाई आना, सुस्ती लगना।

कटियाली (हिं॰ स्त्री॰) भटकटया।

कटिरोहक (सं॰ पु॰) कटिं हस्ति-पश्चाद्भागं रोहति, कटि-रुह-ण्वुल्। हस्तीके पश्चाद् भाग पर आरोहण करनेवाला, जो हाथीके पीछे बैठता हो।

कटिल (सं॰ पु॰) कटति लतायां उत्पद्यते, कटि बाहुलकात् इल। कारवेल्ल फल, करेला।

कटिल्लक (सं॰ पु॰) कटिल्ल स्वार्थे कन्। १ कारवेल्लक, करेला। २ रक्तपुनर्णवा, लाल पुनरनवा।

कटिबन्ध (सं॰ पु॰) कटिर्बध्यते येन, कटि-बन्ध-घञ्। कमरबंद, जिससे कमर बंधे।

कटिशीर्षक (सं॰ पु॰) कटिः शीर्षमिव, कटिशीर्ष संज्ञायां कन्। कटिदेश, कूला, पुट्ठा।

कटिशूल (सं॰ पु॰) कटिस्थः शूलः शूलरोगः, कर्मधा॰। कटिदेशस्थ शूलरोग, कमरका दर्द। कफ और वायुसे कटिदेशमें शूलरोग उत्पन्न होता है। एक भाग कुछ और दो भाग हरीतकीका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन करनेसे कटिशूल मिट जाता है। दन्त देखो।

कटिशृङ्खला (सं॰ स्त्री॰) कट्याः शृङ्खला, ६-तत्। करधनी, कमरमें पहननेका एक जेवर। इसमें छोटे छोटे घुंघरू लगे रहते हैं।

कटिसूत्र (सं॰ क्ली॰) कट्यां धार्यं सूत्रम्, मध्यपदलो॰। १ नारा, औरतोंका कमरबंद। स्मृतिशास्त्रके मतसे केवल कार्पासका सूत्र बांधना निषिद्ध है। २ चन्द्रहार, करधनी।

कटी (सं॰ पु॰) कटः गण्डस्थलं प्रागल्भ्येनाप्नोति, कट अस्त्यर्थे इनि। [illegible] १ हस्ती, हाथी। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। (स्त्री॰) कटि-ङीप्। [illegible] ३ पिप्पली, पीपर। ४ श्रोणिदेश, कमर। ५ स्फिक्प्रदेश, चूतड़।

कटीतरुण (सं॰ क्ली॰) नितम्बके मर्मकी सन्धिका मर्म, चूतड़में गड्ढेके जोड़की नाजुक जगह।

कटीकपाल (सं॰ क्ली॰) कटीफलक, कूला, पुट्ठा।

कटीग्रह (सं॰ क्ली॰) कटीगत वातरोग, कमरकी बाई।

कटीतल (सं॰ पु॰) कट्यां तलमाच्छादकमस्य। १ वक्र खड्ग, तिरछी तलवार। २ खड्ग, तलवार।

कटीप्रोथ, कटिप्रोथ देखो।

कटीर (सं॰ पु॰) कट्यते आश्रियते इसौ कट्यते गम्यते ऽनेन वा, कट-ईरन्। [illegible] १ कन्दर, गुफा। २ जघनदेश, पेड़ू। ३ नितम्ब, चूतड़। ४ कटि, कमर। (स्त्री॰) ५ कटिफलक, कूला।

कटीरक (सं॰ पु॰) कटीर स्वार्थे संज्ञायां वा कन्। १ जघन, पेड़ू। २ कन्दर, पहाड़की खोह। ३ नितम्बस्थल, चूतड़। (स्त्री॰) ४ कटि, कमर।

कटीरा (हिं॰ पु॰) कतीरा।

कटील (हिं॰ स्त्री॰) कार्पास विशेष, बंगई, किसी किस्मकी कपास।

कटीला (हिं॰ वि॰) १ तीक्ष्ण, तेज, पैना, जो काट देता हो। २ प्रभावशाली, पुर-असर, जो उम्दा समझा जाता हो। ३ हृदयग्राही, दिलकश। ४ कण्टकयुक्त, खारदार। ५ तीक्ष्णाग्र, नोकदार। (पु॰) ६ तीक्ष्णाग्र काष्ठविशेष, एक नोकदार लकड़ी। यह दुग्ध प्रदान करनेवाले पशुके बच्चेकी नाक पर बांधा जाता है। इससे वह दूध पी नहीं सकते। कारण मुख लगाते ही कटीला पशुके स्तनमें चुभता, जिससे वह छटक पड़ता है। ७ कतीरा।

कटु (सं॰ क्ली॰) कटति सदाचारमाच्छादयतीति, कट-उण्। १ असत्कार्य, बुरा काम। २ दूषण, गहना। (स्त्री॰) ३ लता, बेल। ४ राजिका, राई। ५ कटुकी, कुटकी। ६ कटभी, एक बेल। ७ प्रियङ्गु वृक्ष। (पु॰) कटति तीक्ष्णतया रसनां मुखं वा आवृणोति यद्वा कटति वर्षति अश्रुम् [illegible] ८ षड्रसान्तर्गत रस, कड़वाहट, चरपराहट। वाग्भटके मतमें कटुरस [illegible] चरपरा [illegible] मुखसे लार टपकता और [illegible] एवं मुखके मध्य बड़ी जलन पड़ती है। चरक इसका मुखशोधक, अग्नि उद्दीपक, भुक्त वस्तुका परिशोधक, नासिका एवं चक्षुका स्रावकारक, सकल इन्द्रियका उद्बोधक, अलसक, शोथ, उदय, [illegible]

-खेद, स्वेद; क्लेद तथा मलका नाशक, अन्नकी रुचिका मारक, कण्डु, व्रण एवं क्रमिका विनाशक और घनीभूत रसका भिन्नकारक बताते हैं। कटुरस सकल स्रोतको आवरण और श्लेष्माको निवारण करता है।

कटुरस अधिक परिमाणमें व्यवहार करनेसे शुक्र घटता, ग्लानि, तृष्णा, मूर्च्छा, वेदना एवं सूचीवेधवत् पीड़ाका वेग बढ़ता, अवसाद लगता, दौर्बल्य दौड़ता, कण्ठ जलता, शरीरपर ताप चढ़ता, बल क्षीण पड़ता, वायु तथा अग्निके बाहुल्यसे भ्रम, मद, कम्प एवं भेद चलता और बाहुके पार्श्वमें अन्यान्य वायुजन्य विकार उठता है।

९ कटुपटोल, कड़वा परवल। १० चम्पकवृक्ष, चम्पेका पेड़। ११ चीनकपूर, चीना कपूर। १२ कटीलता। १३ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। १४ जलतृणविशेष, एक पनिहा घास। १५ छत्रकविष, छातेका ज़हर। १६ कुटजतरु, कुटकीका पेड़। १७ राजसर्षप, बड़ा सरसों।

(त्रि०) १८ तिक्त, तीता। १९ कषाय, कसैला। २० विरस, बदज़ायका। २१ परश्रीकातर, हासिद, दूसरेको शानशौकत देख न सकनेवाला। २२ अप्रिय, नागवार। २३ तीक्ष्ण, तेज़। २४ उष्ण, गर्म। २५ सुरभि, खुशबूदार। २६ दुर्गन्ध, बदबू देनेवाला। २७ कुत्सित, खराब। २८ कटुरसविशिष्ट, कड़वा।

कटुआ (हिं० पु०) कीटविशेष, बांका, एक कीड़ा। यह धानके पेड़को काटता है। २ एक सिंचाई। इससे नहरका पानी सीधे खेतमें पहुंचता है। ३ मुसलमान। छिका या साढ़ी उतारे दूधके दहीको 'कटुआ दही' कहते हैं।

कटुक (सं० क्लो०) कटूनां कटुरसानां त्रयम्, कटु संज्ञायां कन्। १ त्रिकटु। सोंठ, मिर्च और पीपल तीनोंका नाम कटुक है। २ मरिच, मिर्च। ३ कटुकी, कुटकी। (पु०) ४ कटुरस, कड़वापन। ५ पटोल, परवल। ६ सुगन्धितृण, खुशबूदार घास। ७ कुटजवृक्ष; कुटकीका पेड़। ८ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। ९ राजसर्षप, बड़ा सरसों। १० आर्द्रक, अदरक। ११ लशुन, लहसुन। (त्रि०) १२ अप्रिय, नागवार।

"दुर्योधनस्य कर्णस्य कटुकान्यभाषताम्।" (भारत, अनुशा ७०।१)

१३ तीक्ष्ण, कटु, उष्ण, तेज़, कड़वा, गर्म।

कटुकण्टक (सं० पु०) शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़।

कटुकत्रय (सं० क्ली०) कटुकानां कटुरसानां त्रयम्, ६-तत्। त्रिकटु, तीनों कड़ुयी चीजें—अर्थात् सोंठ, मिर्च और पीपल।

कटुकत्व (सं० क्ली०) कटुकस्य भावः, कटुक-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। कटुता, चरपराहट, कड़ुवापन।

कटुकन्द (सं० क्लो०) कटुः कन्दो मूलमस्य। १ मूलक, मूली। (पु०) २ शिग्रुवृक्ष, सहींजनका पेड़। ३ आर्द्रक, अदरक। ४ लशुन, लहसुन।

कटुकन्दरी (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, एक जड़ी-बूटी। काश्मीरमें इसे गोविन्दी कहते हैं। कटुकन्दरिका उष्ण, तिक्त और वात एवं कफ तथा विसूची आदि मिटानेवाली है। (वैद्यकनिघण्टु)

कटुकफल (सं० क्लो०) कटुकं फलमस्य, बहुव्री०। कक्कोलक, शीतलचीनी।

कटुकभद्दी (सं० पु०) एक गोत्रप्रवर ऋषि।

कटुकरञ्ज (सं० पु०) करञ्ज।

कटुकरस (सं० पु०) षड्रसोंमें एक, अन्यतम रस, चरपराहट, कड़वापन।

कटुकरोहिणी (सं० स्त्री०) कटुका सती रोहति, कटुक-रुह-णिनि। कटुकी, कुटकी।

कटुकवर्ग (सं० पु०) कटुक द्रव्यसमूह, कड़ुयी चीज़ोंका ढेर। शिग्रु, मधुशिग्रु, मूलक, लशुन, सुमुख, (सफेद तुलसी), शिग्र (सौंफ), कुष्ठ, देवदारु, सोमराजीके बीज, गन्धपुष्पी, गुग्गुल, मुस्तक, लाङ्गलिका, शुकनासा एवं पीलु, प्रभृति पिप्पल्यादि (पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रकमूल, शुण्ठी, मरिच, गजपिप्पली, रेणुक, एला, यमानी, इन्द्रयव, पर्कदुम, जीरक, सर्षप, महानिम्ब, मदनफल, हिङ्गु, भार्ङ्गी, पाठा, मूर्वामूल, अतीस, वचा, विड़ङ्ग तथा कटुकी), सुरसादि (तुलसी, श्वेततुलसी, गन्धपलाश,

मर्द, गन्धतृण, महागन्धतृण, राजिका, अगमी वर्द, श्याममर्द, वनतुम्बी, विडङ्ग, कटुफल, श्वेत निम्बु, नील निम्बु, कुकुरमुत्ता, इन्दुरकर्णी, पामा, माक्षिक-शर्करा, काकजङ्घा, काकाङ्गी, महानिम्ब) और कामसाराद्रिगण (शाल, पियाशाल, खदिर, श्वेतखदिर, विट्खदिर, सुपारी, भूर्जपत्र, मेषशृङ्गी, तिन्दुक, चन्दन, रक्तचन्दन, शिशु, शिरीष, वक, धव, अर्जुन, ताल, करञ्ज, छोटे करञ्ज, कृष्णागुरु, अगुरु, अमलतास)को कटुकवर्ग कहते हैं।

कटुकवल्ली (सं• स्त्री•) कटुका चासौ वल्ली चेति, कर्मधा•। कड़ी नाम लताविशेष, कड़वी लौकीकी बेल। यह कटु, शीत एवं वमन कारी और कफ, श्वास, तथा राजयक्ष्माको मिटाती है। (राजनिघ•)

कटुकशर्करा (सं• स्त्री•) पित्तश्लेष ज्वर पर एक योग। इसमें एक-एक तोले कटुरोहिणी और शर्करा पड़ती है।

कटुकस्नेह (सं• पु•) सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़।

कटुका (सं• स्त्री•) कटु संज्ञायां कन्-टाप्। १ कटुकी, कुटकी। इसका संस्कृत पर्याय—जननी, तिक्ता, रोहिणी, तिक्तरोहिणी, चक्राङ्गी, मत्स्यपित्ता, शकुला, शकुलादनी, शतमी, शतपर्वा, द्विजाङ्गी, मत्स्यभेदिनी, मर्माभरोहिणी, कृष्णा, कृष्णभेदी, महौषधी, कटी, अरिष्टा, काण्डरुहा, कटु, कटुरोहिणी, कटुक-रोहिणी, केदारकटुका, अरिष्टा, वामघ्नी, कटम्भरा, कटुम्भरा और अशोका है। राजवल्लभके मतमें कटुका अति-कटु, तिक्त एवं शीतल और पित्त, रक्त, दाह, कफ, अरुचि, श्वास तथा ज्वरनाशक है। २ ताम्बूली, पान। ३ कुलिकवृक्ष। ४ राजसर्षप, राई। ५ कटु-तुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुकाख्या (सं• स्त्री•) कटुकी, कुटकी।

कटुकाद्यलौह (सं• क्ली•) शोथके अधिकारका एक वैद्यकोक्त औषध, सुश्रुतकी एक दवा। यह कटुकी, त्रिकटु, दन्ती, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, त्रिवृत् और गजपिप्पली बराबर द्विगुण लोहमें मिलानेसे बनता है। दूधके साथ इसे सेवन करनेपर शोथरोग विनष्ट होता है। (रसरत्नाकर)

कटुकाट्य (सं• क्ली•) कटु च तत् काट्यञ्चेति, कर्मधा•। १ अत्यन्त कर्कश वाक्य, निष्ठुर कड़ी बात। २ गालीगलौज।

कटुकापाली (सं• स्त्री•) कपटकापाली वृक्ष, एक पेड़।

कटुकारोहिणी (सं• स्त्री•) कटुकी, कुटकी।

कटुकालाबु (सं• स्त्री•) कटुका चासौ अलाबुश्चेति, कर्मधा•। तिक्ततुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुकी (सं• स्त्री•) कटु स्वार्थे कन् ङीप्। कटुका, कुटकी।

कटुकीग्राम—बिहारप्रान्तके चम्पारन जिलेका एक प्राचीन ग्राम। (भविष्य ब्रह्मखण्ड ४१।८८)

कटुकीट (सं• पु•) कटुस्तीक्ष्णः दंशनेन दुःखप्रदः कीटः, कर्मधा•। मशक, मच्छड़, डांस।

कटुकीटक (सं• पु•) कटुकीट स्वार्थे कन्। मशक, मसा।

कटुक्वाण (सं• पु•) कटुः कर्कशः क्वाणः शब्दो यस्य, बहुव्री•। टिटिभ पक्षी, टिटिहरी।

कटुग्रन्थि (सं• क्ली•) कटुस्तीक्ष्णो ग्रन्थिमूलं यस्य, बहुव्री•। १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ लशुन, लहसुन।

कटुघृता (सं• स्त्री•) कटु दूषितं करोति, कटु-कृ-ड-मुम् पृषोदरादित्वात् तस्य टाप्। नित्यकर्म एवं आचारकी निठुरता, खराब चाल।

कटुचातुर्जातक (सं• क्ली•) चतुर्णां जातकं स्वार्थे कन्, कटु च तत् चातुर्जातकञ्चेति, कर्मधा•। इला-यची, तज, तेजपात और मिर्चका इकट्ठा।

कटुच्छद (सं• पु•) कटुश्छदं पत्रमस्य, बहुव्री•। १ तगरवृक्ष, तगरका पेड़। २ सुगन्धार्जक, सुगन्ध-दार तुलसी।

कटुज (सं• त्रि•) पेय पदार्थको भांति कड़ुवे द्रव्योंसे प्रस्तुत किया हुआ, जो अर्कको तरह कड़ुवी चीजोंसे बना हो।

कटुजीरक (सं• पु•) जीरक, जीरा।

कटुता (सं• स्त्री•) कटु-तल्-टाप्। १ कटुता, भड़क। २ तीक्ष्णता, तेजी। ३ अप्रियता, नाराजी। ४ कर्कशता, कड़ापन। ५ कड़वाहट।

कटुतिक्त, कटुतिक्तक देखो।

कटुतिक्तक (सं० पु०) कटुश्चासौ तिक्तश्चेति, कटु-तिक्त स्वार्थे कन्। १ किराततिक्तक, चिरायता। २ महाशणवृक्ष, पटसन। ३ शणक्षुप, सनका पेड़।

कटुतिक्तका, कटुतिक्तिका देखो।

कटुतिक्ता (सं० स्त्री०) विपाके कटुः स्वादे तिक्ता। १ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी। २ कटुतुण्डी, कड़वी तरोई।

कटुतिक्तिका (सं० स्त्री०) कटुतिक्त स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। महाशण, पटसन। २ कटुतुम्बी, कड़वी लौकी।

कटुतिन्दुक (सं० पु०) कुचेलक, कुचिला।

कटुतुण्डिका (सं० स्त्री०) कटुतुण्ड स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। तिक्त-तुण्डी, कड़वी तरोई। यह कटु, तिक्त तथा कफ, वान्ति, विष, अरोचक एवं रक्तपित्तनाशक और रोचन होती है। (राजनिघण्टु)

कटुतुण्डी (सं० स्त्री०) कटु तीव्रं तुण्डमस्याः। तिक्ततुण्डी, कड़वी तरोई। इसका संस्कृत पर्याय—तिक्ततुण्डी, तिक्ताख्या और कटुका है। कटुतुण्डिका देखो।

कटुतुम्बिका, कटुतुम्बी देखो।

कटुतुम्बिनी (सं० स्त्री०) तिक्तालाबु, कड़वी लौकी।

कटुतुम्बी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ तुम्बी चेति, कर्मधा०। तिक्तालाबु, कड़वी लौकी। इसका संस्कृत पर्याय—इक्ष्वाकु, कटुकालाबु, नृपात्मजा, कटुतिक्तिका, कटु-फला, तुम्बिनी, कटुतुम्बिनी, बृहत्फला, राजपुत्री, तिक्तबीजा और तुम्बिका है। राजवल्लभके मतसे कटुतुम्बी कटु, तीक्ष्ण, वमनकारक, शोधक, लघुपाक और श्वास, वायु, कास, शोथ, व्रण, शूकविष, पाण्डु, कृमि एवं कफनाशक होती है। अलाबु देखो।

कटुतैल (सं० क्ली०) कटु तीक्ष्णं तैलम्, कर्मधा०। सार्षप तैल, कड़ुवा तेल। भावप्रकाशके मतसे यह अग्निदीपक, कटुरस, कटुपाक, लघु, शरीर-क्षयता-कारक, लेखन, उष्णस्पर्श, उष्णवीर्य, तीक्ष्ण, रक्तपित्त-दूषितकर और कफ, मेद, वायु, अर्शोरोग, शिरोरोग, कर्णरोग, कण्डु, कुष्ठ, कृमि, धवल और दुष्टव्रणनाशक है। राई और सफेद सरसोंका तैल भी इसी प्रकार गुणविशिष्ट होता है। विशेषतः उससे मूत्रकृच्छ्र रोग लग जाता है।

सर्षपतैलके द्वारा आयुर्वेद मतमें अनेक रोगनाशक तैल बनते हैं। इनके बननेसे पहले तैलपर मूर्छापाक लगाना पड़ता है। कटुतैलमूर्छा देखो।

कटुतैलमूर्छा (सं० स्त्री०) कड़वे तेलको सुम कराई। अच्छे कड़ाहमें डाल कड़वे तेलको पहले धीमी आंचसे पकाते हैं। फेन मर जानेपर चूल्हेसे उतार उसमें मञ्जिष्ठा, आमलकी, हरिद्रा, मुस्ता, विल्वत्वक्, दाड़िम-त्वक्, नागकेशर, कृष्णजीरक, वालक, नलुका एवं विभीतकको क्रम-क्रम पत्थरपर पीस और पानीसे घोल तैलमें छोड़ देना चाहिये। चार सेर तैल बनाने-में २ पल मञ्जिष्ठा ६ सेर जल और दूसरा द्रव्य दो-दो तोले पड़ता है। मूर्छित कटुतैल आमके दोषको दूर करता है।

कटुत्रय (सं० क्ली०) कटूनां कटुरसानां त्रयम्, ६-तत्। त्रिकटु, तीन कड़वी चीजोंका इकट्ठा। सोंठ, मिर्च और पीपल एकमें मिलानेसे कटुत्रय प्रस्तुत होता है। वाभटमें लिखा—कटुत्रयके सेवनसे स्थूलता, अग्नि-मान्द्य, श्वास, कास, श्लीपद और पीनस रोग नष्ट होता है।

कटुत्रिक, कटुत्रय देखो।

कटुत्व (सं० क्ली०) कड़वाहट, चरपराहट, झाल।

कटुदला (सं० स्त्री०) कटु दलं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। कर्कटी, ककड़ी।

कटुदुग्धिका (सं० स्त्री०) तिक्तालाबु, कड़वी लौकी।

कटुनिष्पाव (सं० पु०) कटुश्चासौ निष्पावश्चेति, कर्मधा०। नदीतीर उत्पन्न एक निष्पाव धान्य, दरया किनारे होने और पानीमें न डूबनेवाला एक अनाज।

कटुनिष्प्राव, कटुनिष्पाव देखो।

कटुपत्र (सं० पु०) कटुः तीव्रं पत्रं यस्य, बहुव्री०। १ पर्पट, पित्तपापड़ा। २ सितार्जक, सफेद छोटी तुलसी।

कटुपत्रक, कटुपत्र देखो।

कटुपत्रिका (सं० स्त्री०) कटु पत्रं यस्याः, कटुपत्र-

कप-टाट्-घञ् इत्थम्। १ कण्टकारी वृक्ष, भटकटैया। कण्टकारी देखो। २ लघु-क्षुपक्षुप, छोटा बिछुआ।

कटुपर्णी, कटुपर्णिका देखो।

कटुपर्णिका (सं० स्त्री०) चोकिनी, चिरनी। इसका संस्कृतपर्याय—हैमवती, हेमक्षीरी, हिमावती, हेमाह्वा और पीतदुग्धा है। कटुपर्णिकाके मूलको चोक कहते हैं। यह रेचन, तिक्त, भेदन एवं उत्क्लेशकारी होती और क्रिमि, कण्डू, विष, आनाह, कफ, पित्त, अस्र तथा कुष्ठरोगको नाश देती है।

कटुपर्वी, कटुपर्णिका देखो।

कटुपाक (सं० त्रि०) कटुः पाकोऽस्य। १ पाकके समय कटु पड़नेवाला, जो पकाने पर कड़वा पड़ जाता हो। २ परिपाक होनेसे कटु लगनेवाला, जो पकनेसे कड़वा लगता हो। तेज, वायु और आकाशका अधिक गुण रखनेवाला द्रव्य कटुपाक होता है। कटुपाक द्रव्य वायुवर्धक है। (भावप्रकाश)

कटुपाकी (सं० त्रि०) कटुः पाकोऽस्त्यस्य, कटुपाक-इनि। कटुपाकयुक्त, हाज़मेमें तरतु अमराम पैदा करनेवाला। कटुपाक देखो।

कटुफल (सं० पु०) कटुफलमस्य, बहुव्री०। १ पटोल, परवल। पटोल देखो। २ कक्कोलवृक्ष, कायफल। ३ तिक्तकर्कटिका, कड़वी ककड़ी। ४ कारवेल्लक, करेला। (स्त्री०) ५ इन्द्रयव।

कटुफला (सं० स्त्री०) कटु फलमस्याः, बहुव्री०। १ श्रीवल्लीकण्टकक्षुप, एक कंटीली झाड़ी। २ तिक्तालाबु, कड़वी लौकी। ३ वृहती, बरियारी। ४ कण्टकारी, भटकटैया। ५ चिर्भटिका, बिछुआ।

कटुबदरी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, खट्टे बेरका पेड़। २ ग्रामविशेष, एक गांव।

कटुभङ्ग (सं० पु०) कटुः एकदेशेन भङ्गः यस्य। सुण्ठी, सोंठ।

कटुभद्र (सं० क्ली०) कटु अपि भद्रं हितजनकम्। १ आर्द्रक, अदरख। २ सुण्ठी, सोंठ।

कटुभाषी (सं० त्रि०) कटुः कर्कशं भाषते, कटु-भाष-णिनि। कटु वाक्य कहनेवाला, जो नागवार बात बोलता हो।

कटुमञ्जरिक (सं० पु०) कटुमञ्जरिका देखो।

कटुमञ्जरिका (सं० स्त्री०) कटु तीक्ष्णा मञ्जरी अस्ति अस्याः, कटु मञ्जरी-अच्-ङीप् संज्ञायां कन् पूर्व-ह्रस्वत्व। अपामार्ग, लटजीरा। अपामार्ग देखो।

कटुमूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कटुमोद (सं० क्ली०) कटुरेव मोदः परिमलो, बहुव्री०। ज्वरादिनाशक एक सुगन्धि द्रव्य, बोखार वगैरह दूर करनेवाली एक खुशबूदार चीज़ या अतर।

कटुम्भरा (सं० स्त्री०) कटु विभर्ति, कटु-भृ-खच्-मुम्-टाप्। १ कर्कटी, ककड़ी। २ प्रसारणी, गन्धाली।

कटुर (सं० क्ली०) कटति वर्षति अन्येन गुणान्तरं रूपान्तरं वा, कट-उरन्। तक्र, मट्ठा। तक्र देखो।

कटुरव (सं० पु०) कटुः कर्कशो रवो ध्वनिर्यस्य, बहुव्री०। भेक, मेंढक।

कटुरा (सं० स्त्री०) दारु हरिद्रा, काली हलदी।

कटुरुणा (सं० स्त्री०) त्रिवृता, निसोत।

कटुरोहिणी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ रोहिणी चेति कर्मधा०, कटुः सती रोहति, कटु-रुह-णिनि-ङीप् वा। कटुकी, कुटकी।

कटुलता (सं० स्त्री०) कटुकी, कुटकी।

कटुलिङ्ग—गोंड़ जातिकी एक शाखा। इस शाखाके लोग हिन्दुओंकी भांति आचार-व्यवहार करते हैं।

कटुवर्ग, कटुवर्ग देखो।

कटुवा (हिं० पु०) १ प्रति दिन किसी विक्रेताके पाससे आनेवाला कोई द्रव्य। जो चीज़ किसी दुकानसे रोज़ रोज़ आती और कीमत पीछे इकट्ठा दी जाती, वह कटुवा कहाती है। २ सुमलपान।

कटुवार्ताकी (सं० स्त्री०) कटुश्चासौ वार्ताकी चेति, कर्मधा०। १ श्वेतकण्टकारी, सफ़ेद कटैया। २ तिक्त-वार्ताकी, कड़वा बैंगन। ३ क्षुद्रवृहती, छोटा बैंगन।

कटुवाल्लिका (सं० स्त्री०) महाराष्ट्री, पानीपीपर।

कटुविपाक (सं० त्रि०) कटुः कटुरसो विपाके यस्य, बहुव्री०। कटुपाक, हाज़मेमें अमराम लानेवाला। कटु-विपाक द्रव्य लघु, नातल, शुक्रघ्न और मलविनाशक होता है। (सुश्रुत)

कटवीजा (सं॰ स्त्री॰) पिप्पली, पीपल।

कटुवीरा (सं॰ स्त्री॰) कुमरिच, लाल मिर्च। यह अग्निजनक, दाहक और वलास, अजीर्ण, विशूची, व्रण, क्लेद, तन्द्रा, मोह, प्रलाप, स्वरभङ्ग एवं अरोचक नाशक है। कटवीरा सन्निपात-जड़ीभूत और क्षीणेन्द्रिय मनुष्यको मरने नहीं देती। (चरिकसंहिता)

कटशृङ्गाट, कटुशृङ्गाल देखो।

कटशृङ्गाल (सं॰ क्ली॰) कटनां शृङ्गाय प्राधान्याय अलति पर्याप्नोति, कटु-शृङ्ग-अल्-अच्। गौरसुवर्ण शाक, एक सब्जी।

कटुस्नेह (सं॰ पु॰) कटुस्तीक्ष्णः स्नेहो यस्य,बहुव्री॰। १ सर्षप, सरसों। २ श्वेतसर्षप, राई। ३ कटु तैल, कड़वा तेल।

कटुतुम्बी (सं॰ स्त्री॰) १ कारवेल्ल, करेलो। २ कर्कटी, ककड़ी।

कटूक्ति (सं॰ स्त्री॰) अप्रियवार्ता, बुरी लगनेवाली बात।

कटूत्कट (सं॰ क्ली॰) कटुषु उत्कटम्, ७-तत्। १ आर्द्रक, अदरक। २ शुण्ठी, सोंठ।

कटूत्कटक (सं॰ क्ली॰) कटूत्कट संज्ञायां कन्। कटूत्कट देखो।

कटूदरी (सं॰ स्त्री॰) ओषधिविशेष। कोंकणमें इसे गोविन्दी कहते हैं।

कटूमर (हिं॰ पु॰) वन्योदुम्बर, जंगली गूलर, कठ-गूलर।

कटूषण (सं॰ क्ली॰) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ शुण्ठी, सोंठ। ३ पिप्पली, पीपल।

कटूषणा (सं॰ स्त्री॰) कटूषण देखो।

कटेरी (हिं॰ स्त्री॰) कण्टकारी, भटकटैया।

कटेली (हिं॰ स्त्री॰) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। यह बङ्गालमें अधिक उत्पन्न होती है।

कटैया (हिं॰ स्त्री॰) १ कण्टकारी, भटकटैया। (पु॰) २ छेदन करनेवाला, जो काटता हो।

कटैला (हिं॰ पु॰) मूल्यवान् प्रस्तरविशेष, एक बेशक़ीमत पत्थर।

कटोदक (सं॰ क्ली॰) कटाय प्रेताय देयमुदकम्। प्रेतके उद्देश्यसे होनेवाला तर्पण, जो पानी मुर्देके लिये दिया जाता हो।

कटोर (सं॰ क्ली॰) कट्यते ह्रियते निषिच्यते वा भक्ष्य-द्रव्यं यत्र, कट-ओलच् रस्य लत्वम्। पात्रविशेष, बेला, एक बर्तन।

कटोरक, कटोर देखो।

कटोरा (सं॰ स्त्री॰) कटोर-टाप्। पात्र विशेष, बेला, एक बर्तन। इसका मुंह खुला रहता है। दीवार नीची और पेंदी चौड़ी पड़ती है। हिन्दीमें यह शब्द पुंलिङ्ग माना गया है।

कटोरिया (हिं॰ स्त्री॰) छोटी कटोरी।

कटोरी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्रकटोरक, बेलिया। २ चोली। ३ तलवारकी मूठका ऊपरी हिस्सा। यह गोल होता है।

कटोल (सं॰ पु॰) कटति आप्नोति सदाचारं अम्बरसं वा, कट-ओलच्। कपिगडिमण्डिकटिपटिभ्य ओलच्। उण् ११६०। १ कटुरस, कड़वाहट, चरपराहट, तल्खी, तुर्शी। २ चण्डाल, कमीना। (त्रि॰) ३ कटु, कड़वा।

कटोलवीणा (सं॰ स्त्री॰) कटोलस्य चण्डालस्य वीणा वाद्यविशेषः। चण्डालोंकी एक वीणा।

कटौआ (हिं॰ वि॰) काटनेवाला, जिसके काट खानेका डर रहे।

कटौती (हिं॰ स्त्री॰) काटकर निकाली जानेवाली चीज़। जैसे—धनाज बेचते या खेतसे घर उठा ले जाते समय उससे जो कुछ काटकर ब्राह्मण, मज़दूर या किसी दूसरेको दिया जाता,वह कटौती कहाता है।

कटौनी (हिं॰ स्त्री॰) कटाई, फसल काटनेका काम।

कटौसी (हिं॰ पु॰) वेणुविशेष, एक कटीला बांस।

कट्टर (हिं॰ वि॰) १ काट खानेवाला, कटहा। २ अपना विश्वास न छोड़नेवाला, जो दूसरेकी बात मानता न हो। ३ हठ करनेवाला, ज़िद्दी, जो दूसरेकी सुनता न हो।

कट्टरतैल (सं॰ क्ली॰) तैलविशेष, एक तेल। ४ शरावक मूर्छित तिलतैलमें २४ शरावक तक्र और १ शरावक लवण, शुण्ठी, कुष्ठ, मूर्वामूल, वचा, हरिद्रा

तथा मञ्जिष्ठाका कल्क डाल यथाविधि पकानेसे यह तैयार होता है। इसको लगानेसे ज्वर और विदाह छूट जाता है। (वैद्यनिघण्टु)

कटहा (हिं० पु०) महाब्राह्मण, महापात्र।

कट्ठा (हिं० वि०) १ स्थूल, मोटा। २ कठोर, कड़ा। (पु०) ३ कीटविशेष, जूं। ४ जबड़ा।

कट्ठार (सं० पु०) अस्त्रविशेष, कटार।

कट्ठा (हिं० पु०) १ मानविशेष, जमीनकी एक माप। यह पांच हाथ चार अङ्गुल बैठती है। एक बीघेमें बीस कट्ठे लगते हैं। कोई कोई बिस्वांसीको भी कट्ठा कहते हैं। २ दयका, भट्ठी। इसमें धातु गलाते हैं। ३ पात्रविशेष, एक बर्तन। इससे अन्न नापते हैं। एक कट्ठेमें प्रायः पांच सेर अन्न समा जाता है। ४ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका काठ अधिक कठोर होता है।

कट्तृण (सं० क्ली०) १ गन्धतृण, रूसा घास, मिरचिया गन्ध। २ सुगन्धरोहिषतृण, एक खुशबूदार घास।

कट्फल (सं० पु०) कटति कटुतया अन्यरसं आवृणोति, कट्-क्विप्, बहुव्री०। १ वृक्षविशेष, कायफल। यह कटु, उष्ण, कास-श्वास-ज्वरघ्न, उष्ण दाहकर, रुच्य और मुखरोग-नाशिकर होता है। (राजनिघण्टु) २ वार्ताकिवृक्ष, बैंगनका पेड़। ३ कङ्कोल।

कट्फला (सं० स्त्री०) कट्फलमस्याः, बहुव्री०। १ गाम्भारी वृक्ष, गम्भारी। २ हवनी, कटैया। ३ काकमाची, हिवैया। ४ वार्ताकी, बैंगन। ५ देवदाली, घघैया। ६ गोमोबीर, सफेद ककड़ी।

कट्फलादि (सं० पु०) कषायविशेष, कासरोगका एक काढ़ा। कायफल, वचा, भार्गी, मुस्तक, धनिया, भय, हर, गुर्ची, पित्तपापड़ा, सोंठ और सुराह्वाको पानीमें रख्खो तरह गर्मकर योग तथा मधु मिला पीना चाहिये। इसमें हिङ्गु और मधु एक एक मासे डालते हैं। (चरक)

कट्फलादिपाचन (सं० क्ली०) पाचनविशेष, एक दवा। यह दीर्घ कालानुबन्धी ज्वरपर चलता है। इसके लेनेसे त्रिदोष, दाह और तृष्णाका वेग घटता है। इसमें कायफल, त्रिफला, देवदारु, रक्तचन्दन, पद्मक-फल (कायफल), कटुकी, पद्मकाष्ठ एवं कठोर १६।१६ रत्तिक मता धारि २ तोलक पड़ता है। १ तोलक शेष रहनेपर इसे चूल्हेसे उतार व्यवहार करते हैं। (भावप्रकाश)

कट्वङ्ग (सं० पु०) कटु अङ्गमस्य, बहुव्री०। १ तिन्दुक वृक्ष, गाब, तेंदू। २ श्योनाक वृक्ष, अरलु, सोना। ३ टुण्टुक फल, अरलुका फल। ४ दिलीप नामक एक सूर्यवंशीय राजा। खट्वा देखो।

कट्वरा (सं० स्त्री०) प्रसारणी, गन्धाली।

कट्वर (सं० क्ली०) कटति वर्षति रसान्तरम्, कट्-ष्वरच्। [illegible] १ दधिघोल, दहीकी चिकनाई। २ दधिसर, दहीकी मलाई। ३ तक्र, मट्ठा। ४ व्यञ्जन, मसाला।

कट्वरतैल (सं० क्ली०) ज्वररोगका वैद्यकोक्त एक तैल, बुखारका एक तेल। यह स्वल्प और वृहत् भेदसे द्विविध बनता है। स्वल्पकट्वर तैल तैयार करनेको ४ सेर तिलतैल, कट्वर (मठा) ४। सेर और सैन्धवलवण, शुण्ठी, कुठ, मूर्वामूल, लाक्षा, हरिद्रा तथा मञ्जिष्ठा सबका कल्क १ सेर कड़ाहमें डाल पकाया जाता है। इस तैलको लगानेसे शीत और दाहयुक्त ज्वर निवारित होता है। वृहत्कट्वरतैल—तिलतैल ४ सेर, घृत ४ सेर, काञ्जिक ४ सेर, दधिसर ४ सेर, बिजौरे नीबूका रस ४ सेर और पिप्पली, पिप्पली-मूल, वचा, वायविडङ्ग, मञ्जिष्ठा, मुस्ता, विल्वमूल, एला, पटोल, रेणुक, शुण्ठी, मरिच, यमानी, द्राक्षा, कण्टकारी, चिरायता, त्रिफला, रक्तचन्दन, ब्राह्मण-यष्टिका, अनन्तमूल, हरीतकी, आमलकी, शालपर्णी, मूर्वामूल, जीरक, सर्षप, हिङ्गु, कटुकी एवं विडङ्ग समुदायका १ सेर कल्क मिला बरतनमें यथारीति पकानेसे बनता है। यह तैल लगानेसे विविध विषम ज्वर छूट जाता है।

कट्वार (सं० पु०) शस्त्रविशेष, कटारी।

कट्वी (सं० स्त्री०) कटति कटुरसतया आवृणोति अनुभूयते वा, कट-अच् ङीप्। १ कटुकी, कुटकी। २ कटुतुम्बी, एक बेल।

कठ (सं॰ पु॰) कठेन प्रोक्तमधीते कठशाखामभिजानाति वा, कठ. निर्दे लुक्। कठचरकाह्लुक्। पा ४।३।१०७। १ मुनिविशेष। यह वेदकी कठ-शाखाके प्रवर्तक थे। महाभाष्यके मतसे कठ वैशम्पायनके शिष्य रहे। इनको प्रवर्तित शाखा 'काठक' नामसे प्रसिद्ध है। आजकल इस शाखाकी वेदसंहिता नहीं मिलती। काठक शाखाध्यायी भी 'कठ' ही कहाते हैं। इनसे सामके कालाप और कौथुमशाखीका संस्रव रहा। रामायणमें कठकालाप एकत्र उक्त हुये हैं।

"पदकामिव सर्वाभिर्वा दशमतेन च।

ये देमे कठकालापा बहवो दण्डमाणवाः॥" (अयोध्या ३२।१८)

हरदत्तके मतसे कठशाखाका भी यह्वादि विद्यमान है।

२ कठशाखाध्यायी। ३ ऋक्‌विशेष, एक वैदिक मन्त्र। ४ स्वरविशेष, एक आवाज़। ५ ब्राह्मण। ६ देवता। ७ उपनिषद् विशेष।

"ईशकेनकठप्रश्नमुण्डमाण्डूक्यतित्तिरि। (मुक्तिकोपनिषत्)

८ दुःख, तकलीफ़। ९ कष्ट, मुसीबत।

(हिं॰ पु॰) १० पुरातन वाद्यविशेष। कोई पुराना बाजा। यह काठसे बनाया और चर्मसे मंढाया जाता है।

कठ शब्द समासादिमें आनेसे काठनिर्मित और निकृष्ट अर्थ रखता है—जैसे कठपुतली, कठकेला।

कटंगर (हिं॰ वि॰) स्थूल, कठोर, मोटा, कड़ा। कठोर और अव्यवहार्य द्रव्यको 'काठकठंगर' कहते हैं।

कठकालापाः (सं॰ पु॰) कठ और कलापोंका सम्प्रदाय।

कठकीली (हिं॰ स्त्री॰) काठकी कील, पचड़।

कठकेला (हिं॰ पु॰) कदलीविशेष, जंगली केला।

कठकोपनिषद् (सं॰ स्त्री॰) तर्कादिसे पूर्ण एक उपनिषद्।

कठकोला (हिं॰ पु॰) काष्ठकूट, कठफोड़वा।

कठकौथुमाः (सं॰ पु॰) कठ और कुथुमोंका सम्प्रदाय।

कठगुलाब (हिं॰ पु॰) पुष्पवृक्षविशेष, जंगली गुलाब। इसमें क्षुद्र क्षुद्र पुष्प लगते हैं।

कठड़ा (हिं॰ पु॰) १ काष्ठगृह, कठघरा। २ पात्रविशेष, कठौता। ३ मञ्जूषा विशेष, लकड़ीका सन्दूक।

कठताल (हिं॰ स्त्री॰) काष्ठवाद्यविशेष, लकड़ीका एक बाजा। इसे दोनों हाथसे बजाते हैं। हरेक हाथमें एक-एक जोड़ा कठताल रहती है।

कठधूर्त (सं॰ पु॰) यजुर्वेदको कठशाखाका परिज्ञाता ब्राह्मण।

कठनेरा (हिं॰ पु॰) वैश्यजातिविशेष, किसी क़िस्मका बनिया।

कठपुतली (हिं॰ स्त्री॰) काष्ठमूर्तिविशेष, लकड़ीकी गुड़िया। मुसलमान दो कठपुतलियां ले भीख मांगने निकलते हैं। वह इनको दोनों हाथों नचाते और गाना सुनाते हैं। कुछ लोग तारसे पुतली नचाते और गांव-गांव चक्कर लगाते हैं। दूसरेके कहनेपर चलनेवाला भी उसके हाथकी कठपुतली कहाता है।

कठफुला (हिं॰ पु॰) छत्रक नामक उद्भिद्, कुकुरमुत्ता, छाता। यह लकड़ी पर छाते-जैसा फूलता है।

कठफोड़वा (हिं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (Woodpecker) यह काठको फोड़ फोड़ छेद बनाता, इसीसे कठफोड़वा कहाता है। कठफोड़वा सैकड़ों प्रकारका होता है। परोंका रंग काला, सफ़ेद, भूरा, जैतूनी, हरा, पीला, गुलेनारी और नारंगी मिला रहता है। रंग-रंगकी धारियां, बुंदियां और मोचें इसके शरीरपर होती हैं। यह पृथिवी पर सिवा मादागास्कर, अष्ट्रेलिया, सिलेबेस और फ़ोरेसके सब स्थानोंमें मिलता है। इङ्गलिसमें कठफोड़वा कभी देख नहीं पड़ा। यह बड़ी लम्बा खाता और इसके स्वभावका पता मनुष्य कठिनतासे पाता है। कठफोड़वा अपना शिकार ढूंढ़नेमें खूब ध्यान लगाता है। यह वृक्षकी सीधी शाखामें अपनी कड़ी और लंबी चोंचसे छेद कर घोंसला बनाता है। घोंसलेका द्वार वृत्ताकार रहता और एक फुट गहरा चलता है। यह कोई छह सफ़ेद चमकीले अंडे देता है। आरम्भके परोंका रंग भद्दा होता है। उनके नीचे कितनी ही धारियां और बुंदियां पड़ी रहती हैं। पेड़के कीड़ोंको चोंचसे छाल छेद छेद

खाना ही इनका सबसे बड़ा काम है। पंखोंके सहारे कठफोड़वा शाखाओंपर घूम-घूम चढ़ता है।

कठफोड़ा, कठफोड़वा देखो।

कठबन्धन (हिं॰ पु॰) काष्ठबन्धन, लकड़ीकी बेड़ी, अँदुआ। यह हाथीके पैरमें पड़ता है।

कठबाप (हिं॰ पु॰) सौतेला पिता, झूठा बाप। किसी विधवासे विवाह करनेवाला पुरुष उसके पहले लड़कोंका कठबाप कहाता है।

कठबेल (हिं॰ पु॰) कपित्थ, कैथा।

कठमर्द (सं॰ पु॰) कठं कष्टजीवनं मृद्नाति, कठ-मृद-अण्। शिव।

कठमलिया (हिं॰ पु॰) १ काष्ठमालाधारी वैष्णव। २ मिथ्या साधु, झूठा फकीर।

कठमस्त (हिं॰ वि॰) १ हृष्टपुष्ट, तगड़ा, हट्टाकट्टा। २ व्यभिचारी, छिनाला।

कठमस्ता, कठमस्त देखो।

कठमस्ती (हिं॰ स्त्री॰) गुंडई, तगड़ापन।

कठमाटी (हिं॰ स्त्री॰) मृत्तिका विशेष, कीचड़की मट्टी। यह अति शीघ्र शुष्क हो कठोर पड़ने लगती है।

कठर (सं॰ त्रि॰) कठ-अरन्। कठिन, कड़ा।

कठरा, कठड़ा देखो।

कठरी (हिं॰ स्त्री॰) छोटा कठरा।

कठला (हिं॰ पु॰) कण्ठाभरण विशेष, बच्चोंके पहननेकी एक माला। कठलेमें चांदी-सोनेके चतुष्कोण पत्र, व्याघ्रनख, यन्त्र आदि अनेक प्रकारके द्रव्य रहते, जो अविद्याविधिसे बच्चोंकी रक्षा करते हैं। कठला धारण करनेसे बच्चोंको दृष्टि नहीं लगती।

कठलाव, कठला देखो।

कठल्ल (सं॰ पु॰-क्ली॰) शिला-खण्ड, कंकड़-पत्थर।

कठवल्ली (सं॰ स्त्री॰) यजुर्वेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष। इसमें तीन-तीन वल्लीके दो अध्याय हैं। प्रथम अध्यायमें कथा है—'नचिकेताके पिता विश्वजित्‌ने यज्ञ किया और अपना सर्वस्व ब्राह्मणोंको दिया था। उनको बड़ी बूढ़ी गाय देते देख उनके पुत्र नचिकेताने यह देख बाप तीन बार प्रश्न उठाया—पिता! मुझे किसके हाथ समर्पण करोगे? विश्वजित्‌के मुखसे क्रोध वश निकल पड़ा—तुम्हें यमराजके हाथ सौंपेंगे। बस, नचिकेताको यमलोक जाना पड़ा। वहां यमराजने उन्हें ब्रह्मविद्या पढ़ायी थी।' इस अध्यायमें ब्रह्मविद्याका ही विशेष वर्णन है। द्वितीय अध्यायमें ब्रह्मका लक्षण दिखाया है।

कठवल्ल्युपनिषद्, कठवल्ली देखो।

कठशाखा (सं॰ स्त्री॰) कठेन प्रोक्ता शाखा, शाक-पार्थि॰। यजुर्वेदान्तर्गत एक कठप्रोक्त शाखा।

कठशाठ (सं॰ पु॰) ऋषिविशेष।

कठश्रुति, कठवल्ली देखो।

कठश्रोत्रिय (सं॰ पु॰) कठश्रुतिं वेत्ति अधीते वा, कठश्रुति-घञ्। १ कठश्रुतिज्ञ। २ कठश्रुति अध्ययन करनेवाला।

कठसरैया, कटसरैया देखो।

कठा (सं॰ स्त्री॰) करिणी, हथिनी।

कठाकु (सं॰ पु॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया।

कठाध्यापक (सं॰ पु॰) यजुर्वेदकी कठशाखा पढ़ानेवाला गुरु।

कठारा (हिं॰ पु॰) सरिता वा सरोवरका तट, दरिया या तालावका किनारा।

कठारी (हिं॰ स्त्री॰) १ काठपात्र, लकड़ीका बरतन। २ कमण्डलु।

कठाहक (सं॰ पु॰) कठं कठिनं आहन्ति, कठ-आ-हन्-ड कठाहः तादृशः कं शिरो यस्य। दात्यूह पक्षी, पनडुब्बा।

कठिका (सं॰ स्त्री॰) कठ बाहुलकात् इन्। १ तृणवो-तृण। २ खटिका, खड़िया, खड़ी।

कठिञ्जर (सं॰ पु॰) कठिं कठिनं जरयति, कठ-इन्-जॄ-णिच्-अच् कठ-जॄ-अण् पृषोदरादित्वात् वा। १ वर्वर, काली तुलसीका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—वर्वर, कुठेरक, मालिका, मालुका, पर्विका, वज्र, सौरभ, सुमनक, कुरवक, कृष्णलिका, खरपुष्पा, तुलसी, सुरसा, ग्राम्या, सुलभा, बहुमञ्जरी, अपेतराक्षसी, गौरी, भूतघ्नी और देवदुन्दुभि है। आयुर्वेदके मतमें कठिञ्जर कटु एवं तिक्तरस,

उष्णवीर्य, दाहकारी, पित्तकारक, अग्निदीपक और कुष्ठ, मूत्रकृच्छ्र, रक्तदोष, पार्श्वशूल, कफ तथा वायु-नाशक है। तुलसी शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

२ अर्जकवृक्ष, छोटी तुलसी।

कठिन (सं॰ त्रि॰) कठ-इनच्। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।४८। १ दृढ़, सख्त, कड़ा। इसका संस्कृत पर्याय—कठर, कक्खट, क्रूर, कठोर, कठोल, जरठ, कर्कर, काठर और कमठायित है। २ निठुर, बेरहम। ३ दुर्बोध, मुश्किलसे समझ पड़नेवाला। ४ तीक्ष्ण, तेज़, पैना। ५ दुःसह, जो मुश्किलसे बरदाश्त हो।

"नितान्तकठिनां रुजं मम न वेद सा मानसीम्।" (विक्रमोर्वशी)

६ शुद्ध, सही, जो ग़लत न हो। (पु॰) ७ निविड़ारण्य, झाड़ी। (स्त्री॰) ८ यवान्यजाजीत्रिकटुभूनिम्बादि द्रव्य, अजवायन, जीरा, सोंठ, मिर्च, पीपल, चिरायता वग़ैरह चीजें। ९ स्थाली, मट्टीकी हंडी।

हिंदीके कवियोंने कठिनताके स्थानमें भी इस शब्दको व्यवहार किया है।

कठिनचित्त (सं॰ त्रि॰) कठिनं चित्तं यस्य, बहुव्री॰। निर्दय, बेरहम।

कठिनता (सं॰ स्त्री॰) कठिनस्य भावः, कठिन-तल-टाप्। १ दृढ़ता, सख्ती, कड़ापन। २ निठुरता, बेरहमी। ३ तीक्ष्णता, तेज़ी, पैनापन। ४ दुःसहता, बरदाश्त कर न सकनेकी हालत। ५ दुर्बोधता, समझमें आ न सकनेकी हालत। ६ भयानकता, खौफनाकी।

कठिनताई (हिं॰) कठिनता देखो।

कठिनत्व (सं॰ क्ली॰) कठिनता देखो।

कठिनपृष्ठ (सं॰ पु॰) कठिनं पृष्ठमस्य, बहुव्री॰। कच्छप, बाखा, कछुवा।

कठिनपृष्ठक (सं॰ पु॰) कठिन-पृष्ठ स्वार्थे संज्ञायां कन्। कच्छप, संगपुश्त, कछुवा।

कठिनफल (सं॰ पु॰) कपित्थवृक्ष, कैथेका पेड़।

कठिनहृदय, कठिनचित्त देखो।

कठिना (सं॰ स्त्री॰) कठिन-टाप्। १ शर्करा, शकर, चीनी। २ गुड़शर्करा, गुड़के नीचे पड़नेवाला दाना। ३ काकोदुम्बरिका, गोबला, कठगूलर।

कठिनाई (हिं॰) कठिनता देखो।

कठिनान्तःकरण (सं॰ त्रि॰) निठुर, बेरहम, कड़े दिलवाला।

कठिनिका (सं॰ स्त्री॰) कठिन-ङीप् स्वार्थे कन्-टाप् प्रत्यय। १ कठिनी, खड़िया, छूही। २ स्थाली, हंडी।

कठिनी (सं॰ स्त्री॰) कठिन-ङीप्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। खटिका, खड़िया, छूही। इसका संस्कृत पर्याय—पाकशुक्ला, अमिला धातु, कक्खटी, खटी, खड़ी, वर्णलेखिका, धातुपल और कठिनिका है। खड़ी देखो।

"शुचिवदनगवाक्षे न पतति कठिनी सन्धुनासहा।
तेनास्या यदि सुतिनी यद वन्ध्या कोऽप्यो भवति॥" (विनोदरस)

कठिनीक (सं॰ पु॰) खटिका, खड़िया।

कठिनीभूत (सं॰ त्रि॰) अकठिनं कठिनं भूतम्, च्वि। दृढ़ पड़ जानेवाला, जो सख्ती पकड़ लेता हो। जो वस्तु द्रव होते कठिन पड़ जाता, वही कठिनीभूत कहाता है।

कठिनोपल (सं॰ पु॰) कोसुम्भी शालि, किसी क़िस्मका अनाज।

कठिन्यादिपेया (सं॰ स्त्री॰) वैद्यकोक्त पेयविशेष, एक अर्क। खड़िया ८ तोला, मिसरी ४ तोला, गोंद ४ तोला, सौंफ २ तोला और दालचीनी २ तोला एकत्र कुचल किसी मट्टीके बरतनमें १ सेर जलके साथ रातको भिगो देना चाहिये। फिर छानकर कुछ देर स्थिर भावसे रखने पर ऊपरी अंश निर्मल पड़ जाता है। इसी स्वच्छ जलको पीनेसे ग्रहणी, अमाशय और रक्तपित्त दबता है। पूर्वोक्त द्रव्य-समूहके साथ २ तोला लौंग और २ तोला धनिया भी मिला देनेसे अम्लपित्तके लिये यह पेय उपकारी होता है। फिर कच्चे बेलका चूर्ण २ तोला पूर्वोक्त सकल द्रव्योंके साथ डाल देनेसे रक्तातिसारको लाभ पहुंचता है।

कठिया (हिं॰ वि॰) १ कठिन, सख्त छिलकेवाला। (पु॰) २ गोधूमभेद, किसी क़िस्मका गेहूं। इसका शस्य रक्तवर्ण एवं स्थूल रहता और तुषका आधिक्य

देख पड़ता है। कठिया गेहूंकी रोटी या पूरी बहुत अच्छी लगती है। (स्त्री०) ३ चिड़ियाभेद, किसी चिड़ियाका नाम। यह किस्म नदीके तटपर अधिक उत्पन्न होती है।

कठियाना (हिं० क्रि० कठोर पड़ना, कड़ा होना, सूखना, काठ बन जाना।

कठिल (सं० पु०) कठति भोजने दुःखं वहेन वा ज्ञापयति, कठ बाहुलकात् इल। १ कारवेल्ल, करेला। २ ककोंट, ककरोला। ३ पुनर्नवा। ४ रक्तपुनर्नवा, लाल पुनर्नवा। ५ तुलसीतरु।

कठिलक (सं० पु०) कठिल स्वार्थे कन्। कठिल देखो।

कठिल्ला (सं० स्त्री०) १ कारवेल्लक, करेलेकी बेल। २ तुलसी। ३ रक्तपुनर्नवा।

कठिलिका, कठिल्ला देखो।

कठी (सं० स्त्री०) कठ-ङीप्। १ कठशाखाध्यायीकी पत्नी। २ ब्राह्मणी।

कठीर (हिं० पु०) सिंह, शेर।

कठुला (सं० स्त्री०) १ कठला, बच्चोंके गलेमें पहननेकी माला। २ माला, हार।

कठुयाना (हिं० क्रि०) १ कड़ा पड़ना, सूखना, तरी निकलना। २ स्तब्ध हो जाना, अकड़ना, ठिठरना।

कठेठ (हिं० वि०) १ कठिन, कड़ा, मजबूत। २ बलवान्, जिसके कड़ा हाथ-पैर रहें।

कठैठा, कठेठ देखो।

कठैठी (हिं० स्त्री०) दृढ़, मजबूत, कड़ी।

कठेर (सं० पु०) कठति कृच्छ्रेण जीवति, कठ-एरक्। [illegible] उण् १।५८। दरिद्र, गरीब, तकलीफसे काम चलानेवाला।

कठेरणि (सं० पु०) ऋषिविशेष।

कठेड़ (सं० पु०) कठ-एड। कुबेर।

कठेल (हिं० पु०) १ [illegible], मुनियोंके समान। इसमें घुनको बांध और लटका कर मुनियां दाई या कलको भूनता है। २ अस्त्रविशेष, एक औज़ार। यह काठका बना और बीचमें एक गड्ढा रखता है। कहींके कठेलमें गड्ढेमें रख धातुके पातको मोल कर देते हैं।

कठैला (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, कठौता, लकड़ीका एक बरतन।

कठैली (हिं० स्त्री०) छोटा कठैला, लकड़ीका एक छोटा बरतन।

कठोदर (हिं० पु०) उदररोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसमें पेट फूलकर काठकी भांति कड़ा पड़ जाता है।

कठोर (सं० त्रि०) कठति पादपमाचरति, कठ-ओरन्। कठिचकिभ्यामोरन्। उण् १।६५। १ कठिन, मजबूत, कड़ा। २ पूर्ण, पूरा, भरा "[illegible] अभिः।" (माघ) ३ जरठ, पुराना, गया-बीता। ४ क्रूरकर्मा, बुरा काम करनेवाला। ५ भयानककर्मा, खौफनाक काम करनेवाला। ६ दुष्प्रबोध, मुश्किलसे समझमें आनेवाला। ७ दारुण, बेरहम। ८ तीक्ष्ण, तेज, पैना। ९ अपरोधकारी, रोक लगानेवाला।

कठोरगिरि—शैलविशेष, एक पहाड़। यह पद्माचल और विषमाचलोंके मध्य अवस्थित है। कठोरगिरिपर शिवमन्दिर बना है। यहां नाना स्थानोंसे योगी देवदर्शनके लिये यात्रा करते हैं। ब्रह्माण्डपुराणके एक अंशका नाम 'कठोरगिरिमाहात्म्य' है।

कठोरता (सं० स्त्री०) १ कठिनता, सख्ती, कड़ापन। २ भयानकता, खौफनाकी, निर्दय, बरसार।

कठोरताई (हिं०) कठोरता देखो।

कठोरपन (हिं० पु०) कठोरता देखो।

कठोल (सं० त्रि०) कठ-ओलच्। कठोर देखो।

कठौली, कठौती देखो।

कठौता (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह बहुत बड़ा होता है। कठौतेकी बाट ऊंची रहती है।

कठौती (हिं० स्त्री०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह कठौतेसे छोटी होती है।

कड़ (सं० त्रि०) कड़ति माद्यति, कड़ पचाद्यच्। १ मूर्ख, बेवकूफ। २ विक्षिप्त, पागल। ३ कर्कश, कड़ा। ४ मत्त, गुमसुम, अनबोला।

(हिं० पु०) ५ कटि, कमर। ६ कुसुम। ७ कुसुमका बीज।

कड़क (सं० स्त्री०) कथ्यते भयते, कड़-भच् संज्ञायां कन्। १ कड़कच लवण, समुन्दरी नमक। इसका संस्कृत पर्याय—सामुद्र, त्रिकूट, अक्षीव, वशिर, सामुद्रज,सागरज और उदधिसम्भव है। भावप्रकाशके मतसे कड़क मधुर, विपाक, ईषत् तिक्त एवं मधुररसयुक्त, गुरु, न अतिशय शीतल तथा न अतिशय उष्ण, अग्निदीपक, भेदक, चारयुक्त, अविदाही, कफकारक, वायुनाशक, तीक्ष्ण और अरुच होता है।

(हिं० स्त्री०) २ कठोर शब्द, कड़ी आवाज़। ३ झपट, तड़प। ४ वज्र, बिजली। ५ अश्वगतिभेद, घोड़ेकी एक चाल। ६ रोगविशेष, एक बीमारी। इसमें मूत्र रुक-रुक उतरता और इन्द्रियमें दाह उठने लगता है। ७ पटेबाजीका एक हाथ। इसे खेलाड़ीके दक्षिण पदपर थाम और फटकारते हैं। ८ कठोरता, कड़ापन। ९ पीड़ाविशेष, कसक, दर्द। यह रुक-रुक कर हुआ करती है।

कड़कच (सं० स्त्री०) सामुद्रलवण, समुन्दरी नमक। यह लवण सफेद और काला दोप्रकार होता है। बङ्गालके वीरभूम जिलेमें सिवा सफेदके काला नहीं मिलता। कालेकी अपेक्षा सफेद कुछ कड़ा-जैसा लगता है। कड़कच सैन्धव लवणकी भांति विशुद्ध रहता है। इसीसे स्मृतिशास्त्रमें विधवावोंके भोजनको सैन्धव और सामुद्र दोनों लवणका विधान है।

कड़कड़ (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। दो वस्तुवोंके एक दूसरेसे टक्कर खाने या परस्परके आघातसे टूट-फूट जानेके शब्दका नाम 'कड़-कड़' है।

कड़कड़ाता (हिं० वि०) १ चटखता हुआ, जो कड़कड़ा रहा हो। २ प्रचण्ड, घोर, तेज़, कड़ा।

कड़कड़ाना (हिं० क्रि०) १ कठोर शब्द निकालना, बोलना, ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाना। २ भङ्ग करना, तोड़ डालना। ३ गर्म करना, ताना।

कड़कड़ाहट (हिं० स्त्री०) कठोर शब्द, कड़ी आवाज़।

कड़कना (हिं० क्रि०) १ तड़पना, कड़कड़ाना, कड़ी आवाज़ निकालना। २ चटखना टूटना-फूटना। ३ घोर शब्दके साथ डांट बताना, ज़ोर-ज़ोर बोलना।

कड़कनाल (हिं० स्त्री०) एक तोप। इसका मुंह चौड़ा होता है। यह शत्रुको भयभीत करनेके लिये दागी जाती है। कारण इसका शब्द अत्यन्त कठोर और घोर होता है।

कड़कबांका (हिं० पु०) बलवान् नवयुवक, ताकतवर नौजवान्। जिसका शब्द सुनकर लोग कांपने लगते, उसी युवकको 'कड़कबांका' कहते हैं।

कड़कबिजली (हिं० स्त्री०) १ स्त्रियोंका एक अलङ्कार, औरतोंका एक गहना। यह कानोंमें पहनी जाती है। इसका दूसरा नाम 'चांदबाला' है। कारण यह चन्द्राकार बनती है।

कड़का (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। कड़ाकेका शब्द 'कड़का' कहाता है।

कड़खा (हिं० पु०) गीतविशेष, एक नगमा। यह एक प्रकारका युद्धसङ्गीत है। इसमें वीरोंकी प्रशंसा भरी रहती है। कड़खा सुन योद्धा उत्तेजित होते हैं।

कड़खैत (हिं० पु०) १ कड़खा सुनानेवाला, जो कड़खा गाता हो। २ चारण, बन्दी, भाट।

कड़ङ्गर, कडङ्गर देखो।

कड़ङ्ग (सं० पु०) कड़ं मादकताशक्तिं गमयति जनयति, कड़-गम-ड। १ सुराविशेष, एक शराब। २ देशविशेष, एक मुल्क।

कड़ङ्गर (सं० पु०) कड़ात् भक्षणीयशस्यादेः अकाशात् पियते स्प्रियते, कड़-गृ-खच्, कड़ं भक्षणीयशस्यादिकं गिरति आत्मनः सकाशात्, कड़-गृ-अच् वा। तुष, भूसी, पैरा।

कड़ङ्गरीय (सं० वि०) कड़ङ्गरं तुषं अर्हति, कड़ङ्गर-घन्। तुषभक्षक, भूसी खानेवाला।

"गोवारपाकादिकड़ङ्गरीयैरासन्नमेतं ज्ञाप्यन्तेषु वदित्।" (रघु ४।८)

कड़त (सं० स्त्री०) गच्यते मिच्यते जलादिकम्, गड़-अतच् गकारस्य ककारः। [illegible] पात्रविशेष, एक बरतन।

कड़न्दिका (सं० स्त्री०) विज्ञान, विद्या, इल्म, वाक्-फियत, हिकमत।

कड़वड़ा (हिं० वि०) १ कर्बुरित, कबरा। (पु०)

देख पड़ता है। कठिया गेहूंकी रोटी या पूरी बहुत अच्छी लगती है। (स्त्री०) ३ विजयाभेद, किसी किस्मकी भांग। यह झेलम नदीके तटपर अधिक उत्पन्न होती है।

कठियाना (हिं० क्रि० कठोर पड़ना, कड़ा होना, सूखना, काठ बन जाना।

कठिल्ल (सं० पु०) कठति भोजने दुःखं उद्वेगं वा जनयति, कठ बाहुलकात् इल्ल। १ कारवेल्ल, करेला। २ कर्कट, वनकरेला। ३ पुनर्नवा। ४ रक्तपुनर्नवा, लाल पुनर्नवा। ५ तुलसीवृक्ष।

कठिल्लक (सं० पु०) कठिल्ल स्वार्थे कन्। कठिल्ल देखो।

कठिल्लका (सं० स्त्री०) १ कारवेल्लवृक्ष, करेलेकी बेल। २ तुलसी। ३ रक्तपुनर्नवा।

कठिल्लिका, कठिल्लका देखो।

कठी (सं० स्त्री०) कठ-ङीष्। १ कठशाखाध्यायीकी पत्नी। २ ब्राह्मणी।

कठीर (हिं० पु०) सिंह, शेर।

कठुला (सं० स्त्री०) १ कठला, बच्चोंके गलेमें पहननेकी माला। २ माला, हार।

कठुवाना (हिं० क्रि०) १ कड़ा पड़ना, सूखना, तरी निकलना। २ स्तब्ध हो जाना, जकड़ना, ठिठरना।

कठेठ (हिं० वि०) १ कठिन, कड़ा, मजबूत। २ वयस्क, जिसके कड़ा हाथ-पैर रहे।

कठेठा, कठेठ देखो।

कठेठी (हिं० स्त्री०) दृढ़, मज़बूत, कड़ी।

कठेर (सं० पु०) कठति शब्दं च जीवति, कठ-एरक। पतिकठिकुठिगडिगुडिदंशिभ्य एरक्। उण् ११८८। दरिद्र, गरीब, तकलीफ़से काम चलानेवाला।

कठेरणि (सं० पु०) ऋषिविशेष।

कठेरु (सं० पु०) कठ-एरु। कुबेर।

कठेला (हिं० पु०) १ लर्णमार्जकका कार्मुक, धुनियेकी कमान। इसीमें धुनकी बांध और लटका कर धुनिया रूई या ऊनको धुनता है। २ यन्त्रविशेष, एक औजार। यह काठका बनता और बीचमें एक गड्ढा रहता है। कसेरे कठेलके गड्ढेमें रख धातुके पात्रको गोल कर देते हैं।

कठैला (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, कठौता, लकड़ीका एक बरतन।

कठैली (हिं० स्त्री०) छोटा कठैला, लकड़ीका एक छोटा बरतन।

कठोदर (हिं० पु०) उदररोगविशेष, पेटकी एक बीमारी। इसमें पेट फूलकर काठकी भांति कड़ा पड़ जाता है।

कठोर (सं० वि०) कठति पारुष्यमाचरति, कठ्-ओरन्। कठिचकिभ्यामोरन्। उण् ११६५। १ कठिन, सख्त, कड़ा। २ पूर्ण, पूरा, भरा "कठोरताराधिपलाञ्छनच्छविः।" (माघ) ३ जरठ, पुराना, गया-बीता। ४ क्रूरकर्मा, बुरा काम करनेवाला। ५ भयानककर्मा, खौफनाक काम करनेवाला। ६ सूक्ष्मबोध्य, मुश्किलसे समझमें आनेवाला। ७ दारुण, बेरहम। ८ तीक्ष्ण, तेज, पैना। ९ अवरोधकारी, रोक लगानेवाला।

कठोरगिरि—शैलविशेष, एक पहाड़। यह चक्राचल और विचनापल्लीके मध्य अवस्थित है। कठोरगिरिपर शिवमन्दिर बना है। यहां नाना स्थानोंसे योगी देवदर्शनके लिये आया करते हैं। ब्रह्माण्डपुराणके एक अंशका नाम 'कठोरगिरिमाहात्म्य' है।

कठोरता (सं० स्त्री०) १ कठिनता, सख्ती, कड़ापन। २ भयानकता, खौफनाकी, शिद्दत, भरमार।

कठोरताई (हिं०) कठोरता देखो।

कठोरपन (हिं० पु०) कठोरता देखो।

कठोल (सं० वि०) कठ-ओलच्। कठोर देखो।

कठौती, कठौती देखो।

कठौता (हिं० पु०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह बहुत बड़ा होता है। कठौतेकी बाट ऊंची रहती है।

कठौती (हिं० स्त्री०) काष्ठपात्रविशेष, लकड़ीका एक बरतन। यह कठौतेसे छोटी होती है।

कड़ (सं० वि०) कड़ति माद्यति, कड़ पचाद्यच्। १ मूर्ख, बेवकूफ। २ विक्षिप्त, पागल। ३ कर्कश, कड़ा। ४ मग्न, गुमसुम, अनबोला।

(हिं० पु०) ४ कटि, कमर। ५ कुसुम। ६ कुसुमका बीज।

कड़क (सं० स्त्री०) कड्यते भयते, कड़-भच् संज्ञायां कन्। १ कड़कच लवण, समुन्द्री नमक। इसका संस्कृत पर्याय—सामुद्र, विकूट, अक्षीव, वशिर, सामुद्रक, सागरज और उदधिसम्भव है। भावप्रकाशके मतसे कड़क मधुर, विपाक, ईषत् तिक्त एवं मधुररसयुक्त, गुरु, न अतिशय शीतल तथा न अतिशय उष्ण, अग्निदीपक, भेदक, क्षारयुक्त, अविदाही, कफकारक, वायुनाशक, तीक्ष्ण और अरुच होता है।

(हिं० स्त्री०) २ कठोर शब्द, कड़ी आवाज़। ३ झपट, तड़प। ४ वज्र, बिजली। ५ अश्वगतिभेद, घोड़ेकी एक चाल। ६ रोगविशेष, एक बीमारी। इसमें मूत्र रुक-रुक उतरता और इन्द्रियमें दाह उठने लगता है। ७ पटेबाज़ीका एक हाथ। इसे खेलाड़ीके दक्षिण पदपर थाम और फटकारते हैं। ८ कठोरता, कड़ापन। ९ पोड़ाविशेष, कसक, दर्द। यह रुक-रुक कर हुआ करती है।

कड़कच (सं० स्त्री०) सामुद्रलवण, समुन्दरी नमक। यह लवण सफेद और काला दोप्रकार होता है। वङ्गालके वीरभूम ज़िलेमें सिवा सफेदके काला नहीं मिलता। कालेकी अपेक्षा सफेद कुछ कड़ा-जैसा लगता है। कड़कच सैन्धव लवणकी भांति विशुद्ध रहता है। इसीसे स्मृतिशास्त्रमें विधवावोंके भोजनको सैन्धव और सामुद्र दोनों लवणका विधान है।

कड़कड़ (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। दो वस्तुवोंके एक दूसरेसे टक्कर खाने या परस्परके आघातसे टूट-फूट जानेके शब्दका नाम 'कड़-कड़' है।

कड़कड़ाता (हिं० वि०) १ चटखता हुआ, जो कड़कड़ा रहा हो। २ प्रचण्ड, घोर, तेज़, कड़ा।

कड़कड़ाना (हिं० क्रि०) १ कठोर शब्द निकालना, बोलना, ज़ोर ज़ोरसे चिल्लाना। २ भङ्ग करना, तोड़ डालना। ३ गर्म करना, ताना।

कड़कड़ाहट (हिं० स्त्री०) कठोर शब्द, कड़ी आवाज़।

कड़कना (हिं० क्रि०) १ तड़पना, कड़कड़ाना, कड़ी आवाज़ निकालना। २ चटखना टूटना-फूटना। ३ घोर शब्दके साथ डांट बताना, ज़ोर-ज़ोर बोलना।

कड़कनाल (हिं० स्त्री०) एक तोप। इसका मुंह चौड़ा होता है। यह शत्रुको भयभीत करनेके लिये दागो जाती है। कारण इसका शब्द अत्यन्त कठोर और घोर होता है।

कड़कबांका (हिं० पु०) बलवान् नवयुवक, ताक़तवर नौजवान्। जिसका शब्द सुनकर लोग कांपने लगते, उसी युवकको 'कड़कबांका' कहते हैं।

कड़कबिजली (हिं० स्त्री०) १ स्त्रियोंका एक अलङ्कार, औरतोंका एक गहना। यह कानोंमें पहनी जाती है। इसका दूसरा नाम 'चांदबाला' है। कारण यह चन्द्राकार बनती है।

कड़का (हिं० पु०) कठोर शब्दविशेष, एक कड़ी आवाज़। कड़ाकेका शब्द 'कड़का' कहाता है।

कड़खा (हिं० पु०) गीतविशेष, एक नग़मा। यह एक प्रकारका युद्धसङ्गीत है। इसमें वीरोंकी प्रशंसा भरी रहती है। कड़खा सुन योद्धा उत्तेजित होते हैं।

कड़खैत (हिं० पु०) १ कड़खा सुनानेवाला, जो कड़खा गाता हो। २ चारण, बन्दी, भाट।

कड़ङ्गर, कड़ङ्गर देखो।

कड़ङ्ग (सं० पु०) कड़ं मादकताशक्तिं गमयति जनयति, कड़-गम-ड। १ सुराविशेष, एक शराब। २ देशविशेष, एक मुल्क।

कड़ङ्गर (सं० पु०) कड़ात् भक्षणीयशस्यादेः सकाशात् ग्रियते चिप्यते, कड़-गृ-खच्, कड़ं भक्षणीयशस्यादिकं गिरति आत्मनः सकाशात्, कड़-गृ-अच् वा। तुष, भूसी, पैरा।

कड़ङ्गरीय (सं० वि०) कड़ङ्गरं तुषं अर्हति, कड़ङ्गर-घन्। तुषभक्षक, भूसी खानेवाला।

"नीवारपाकादिकड़ङ्गरीयैरामृश्यते जानपदैर्न कश्चित्।" (रघु ५।९)

कड़त्र (सं० क्लो०) गद्यते सिच्यते जलादिकम्, गड़-अत्रन् गकारस्य ककारः। बैदादेश क:। उण् ४।१०६। पात्रविशेष, एक बरतन।

कड़न्दिका (सं० स्त्री०) विज्ञान, विद्या, इल्म, वाक़फ़ियत, हिकमत।

कड़वड़ा (हिं० वि०) १ कर्बुरित, कबरा। (पु०)

२ कर्बु रित श्मश्रुविशिष्ट पुरुष, कबरी दाढ़ीवाला आदमी।

कड़वा (हिं० पु०) गोलाकार द्रव्यविशेष, एक गोल चीज़। हलके फालपर बांधा जानेवाला बम्ब-बीच कड़वा कहाता है। इससे हल भूमिमें अधिक नहीं धंसता।

कड़वी (हिं० स्त्री०) मकई और ज्वारके हरे या सूखे डण्ठ। यह काट काट कर पशुवोंको खिलायी जाती है।

कड़म्ब (सं० पु०) कड़्-अम्बच्। कदम्बिकठिनीअम्बच्। उण् ४।८२। १शाकनाड़िका,मचलीका डण्ठल। २कलम्बी शाक, नारी। ३ अग्रभाग, अगौरा। ४ कोण, कोना। ५ अङ्कुर, कोपल। ६ कदम्ब। ७ वाण, तीर।

कड़म्बक (सं० पु०) कड़म्ब स्वार्थे कन्। १ शाक-नाड़िका, सब्ज़ीका डण्ठल। २ कलम्बिशाक, नाड़ी।

कड़म्बी (सं० स्त्री०) कड़म्बो भूयसा विद्यते ऽस्याः, कड़म्ब-अच्-ङीप्। अर्श आदिभ्योऽच्। पा ५।२।१२७। कलम्बी-शाक, नाड़ी, कलमीशाक।

कड़वक (सं० पु०) अपभ्रंशके निबन्धका अध्याय, विरामसूचक सर्ग।

"अपभ्रंशनिबन्धेऽस्मिन् सर्गाः कड़वकाभिधाः॥" (साहित्यदर्पण)

कड़वा (हिं) कटु देखो।

कड़वी (हिं) कटु शब्द देखो।

कड़हन (हिं० पु०) धान्यधान्यभेद, कठधान, जङ्गली चावल। यह मोटा होता है।

कड़ा (हिं० पु०) १ चूड़ाभेद, खड़वा। इसे हाथ या पैरमें पहनते हैं। २ मुला, कुण्डा। यह लोहे या दूसरे धातुका बनता है। ३ कपोतभेद, किसी किस्मका कबूतर। (वि०) ४ कठिन, सख्त, न दबनेवाला। ५ रुख, रूखा। ६ उग्र, तेज़। ७ गाढ़, सुर्ती, जो ढीला न हो। ८ नातिसिक्त, जो ज्यादा तर न हो। ९ सबल, मज़बूत। १० तीक्ष्ण, खरा। ११ सहनशील, बरदाश्त करनेवाला। १२ दुःसाध्य, मुश्किल। १३ तीव्र, तीखा। १४ असह्य, बरदाश्त न होनेवाला।

कड़ाई (हिं० स्त्री०) कठोरता, सख्ती, कड़ापन।

कड़ाका (हिं० पु०) १ कठोर द्रव्यके भङ्गका शब्द, कड़ी चीज़के टूटनेकी आवाज़। २ उपवास, फाका।

कड़ाबीन (हिं० स्त्री०) १ करावीन, चौड़े मुंहकी बन्दूक। इसमें कितनी ही गोलियां भरकर दागी जाती हैं। २ तमचा, झोंका, छोटी बन्दूक। यह कमरमें बांधी जाती है।

कड़ार (सं० पु०) गड़ सेचने आरन् कड़ादेशश्च। गड़ः कश्च। उण् ३।१३५। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा रङ्ग। २ दास, नौकर। ३ दानमानविधि। (त्रि०) ४ पिङ्गलवर्णयुक्त, मन्दुमी, भूरा।

कड़ालिङ्गी—एक श्रेणीके संन्यासी। यह उपासक सम्प्रदायके अन्तर्गत हैं। कड़ालिङ्गी सर्वदा नग्न रहते और अपनी जितेन्द्रियताकी रक्षाके लिये लिङ्गपर लोहेका एक कड़ा चढ़ा रखते हैं। यह प्रथा नागक-पन्थियोंमें भी चलती है।

कड़ाह (हिं० पु०) १ कटाह, लोहेकी बड़ी कड़ाही। इसमें दोनों ओर पकड़कर उतारने-चढ़ानेके लिये कुण्डे लगाये जाते हैं। बहुत आदमियोंके लिये पूरी, हलवा वगैरह बनानेको इसे व्यवहार करते हैं।

कड़ाहा, कड़ाह देखो।

कड़ाही (हिं० स्त्री०) क्षुद्र कटाह, छोटा कड़ाह।

कड़िका (सं० स्त्री०) कलिका, कूंड़ी।

कड़ितुल (सं० पु०) कटौ तुला तोलनं यस्य यस्य, पृषोदरादित्वात् टस्य डः। खड्ग, तलवार।

कड़ियल (हिं० पु०) मृण्मय पात्रका भग्न खण्ड, मटके या घड़ेका टूटा-फूटा टुकड़ा। इसमें अग्निको स्थापनकर दबा देते हैं।

कड़िया (हिं० स्त्री०) दीर्घकाष्ठ, कांड़ा। दामा झाड़ लेनेसे अरहरका जो सूखा पेड़ बच जाता, वही 'कड़िया' कहलाता है।

कड़ियाली (सं० स्त्री०) अश्वके मुखका रज्जु, लगाम।

कड़ी (हिं० स्त्री०) १ शृङ्खलाके सूत्रका वलय, ज़ञ्जीरकी लड़ीका छल्ला। २ क्षुद्र मण्डल, छोटा छल्ला। ३ अन्तरा, गीतमें मुखड़ेके बाद आनेवाला

हिस्सा। ४ पसी। ५ अस्थिविशेष, एक हड्डी। पशुओंके वक्षःस्थलके अस्थिको 'काड़ी' कहते हैं। ६ कठिनता, मुश्किल, अड़चन। ७ कठोर, सख्त।

काड़ीदार (हिं० वि०) १ मण्डलविशिष्ट, छल्लेदार, जिसके काड़ी रहे। (पु०) २ किसी क़िस्मका कसीदा। यह शृङ्खलाके सूत्र-जैसा होता है।

काड़ुआ (हिं) कड़ुआ देखो।

काड़ुआ तेल (हिं०) कड़ुआ तेल देखो।

काड़ुआना (हिं० क्रि०) १ कटु बोध होना, कड़ुआ लगना। २ क्रुद्ध होना, गुस्सा आना, नाक-भौं चढ़ाना। ३ पीड़ा करना, दर्द होना, किरकिराना।

काड़ुआहट (हिं०) कड़ुआहट देखो।

काड़ुई (हिं० स्त्री०) कटु, चरपरी। मृतकके घरवालोंको सम्बन्धियों द्वारा भेजा जानेवाला भोजन 'कडुई-रोटी' या 'कड़ुई-खिचड़ी' कहाता है।

काडली (सं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक हथियार।

काड़ुची (सं० स्त्री०) क्षुद्र कारवेल्ल, छोटा करेला, करेली।

काड़ू (हिं०) कड़ू देखो।

काड़ेरा (हिं० पु०) खरादकार कोई चीज़ बनानेवाला।

काड़ेलोट (हिं० पु०) व्यायामभेद, मालखम्भकी एक कसरत।

काड़ेलोटन, कड़ेलोट देखो।

काड़ोड़ा (हिं० पु०) उच्च पदाधिकारी, करोड़ोंका अफसर।

काढ़ा (हिं० वि०) ऋण ले लेकर अपना काम चलानेवाला, जो क़र्ज़के भरोसे रहता हो।

काढ़, कढ़ा देखो।

काढ़ना (हिं० क्रि०) १ बहिर्गत होना, निकलना। २ उदय होना, चढ़ना, देख पड़ना। ३ अग्रसर होना, बढ़ना। ४ घनीभूत होना, गढ़ियाना।

काढ़नी (हिं० स्त्री०) मन्थनरज्जु, नेती, मथानीकी रस्सी।

काढ़लाना (हिं० क्रि०) हाथ या पैर पकड़ कर घसीटना, खदेड़ना।

काढ़वाना, कढ़ाना देखो।

काढ़ाई (हिं० स्त्री०) १ बहिष्करण, काढ़नेका काम, निकलाई। २ बहिष्करणका पारिश्रमिक, निकास देनेकी उजरत। ३ सूचिकर्म, सूईका काम, कसीदा। ४ सूचिकर्मका पारिश्रमिक, कसीदा काढ़नेकी उजरत। ५ कड़ाही।

काढ़ाना (हिं० क्रि०) बहिर्गत कराना, बाहर निकलाना।

काढ़ाव (हिं० पु०) १ सूचिकर्म, शिल्प, कसीदा, नक्श। २ कड़ाह।

काढ़ावना, कढ़ाना देखो।

काढ़ी (हिं० स्त्री०) व्यञ्जन विशेष, एक सालन। कड़ाहीमें घी या तेल खूब कड़कड़ा हींग, राई और हलदीका चूर्ण छोड़ देते हैं। जब यह चूर्ण खूब पकता और सोंधा सुगन्ध आने लगता, तब मट्ठे या पतले दहीसे घुला हुआ बेसन कड़ाहीमें पड़ता है। पीछे नमक-मिर्च छोड़ इसे धीमी आंचमें पकानेसे कढ़ी बन जाती है। प्रायः कढ़ीमें बेसनकी छोटी छोटी पकौड़ियां भी डाल देते हैं। कढ़ी अत्यन्त स्वादु व्यञ्जन है। जिन त्योहारों पर पूरी नहीं बनती, उनमें कढ़ी अवश्य छनती है। यह भातके साथ खानेसे बहुत अच्छी लगती है। कढ़ी पाचन, दीपन, लघुपाक, रुचिजनक और कफ, वायु तथा बद्धकोष्ठ रोगनाशक है। कढ़ीमें पड़नेवाली पकोड़ी फुलौड़ी कहाती है।

काढ़ुआ, कढ़ुआ देखो।

काढ़ुआ (हिं० पु०) १ उद्धृत, लिया हुआ, जो निकाला गया हो। २ रातका रखा भोजन। यह बच्चोंके लिये बचाकर रख लिया जाता है। ३ ऋण, देना। ४ पात्रविशेष, पुरवा, सोरका।

काढ़ेरना (हिं० क्रि०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इससे धातुके पात्रोंपर शिल्पकार गोलाकार रेखायें खींचते हैं।

काढ़ैया (हिं० पु०) १ निकाल लेनेवाला, जो अलग कर लेता हो। २ उद्धारकर्ता, उधार लेनेवाला, जो बचाता हो। (स्त्री०) ३ कड़ाही।

काढ़ोरना (हिं० क्रि०) घसीटना, खदेड़ना, काढ़लाना।

कण (सं० पु०) कणति अतिसूक्ष्मत्वं गच्छति, कण-अचाद्यच्। १ लेश, दाना। २ धूलिका क्षुद्रांश, खाकका ज़र्रा। ३ हिमलव, बरफ़का तबक़। ४ जल-विन्दु, पानीका क़तरा। ५ अग्निस्फुलिङ्ग, आगकी चिनगारी। ६ रत्नसूक्ष्म, जवाहरका रेज़ा। ७ शस्य-मञ्जरी, गल्लेकी बाल। ८ परमाणु, ज़र्रा। ९ अतिसूक्ष्म, निहायत बारीक। १० तण्डुल प्रभृतिका क्षुद्र अंश।

"कणान् वा भक्षयेदब्दं पिण्याकं वा सकृन्निशि।" (मनु ११।९२)

१० पिप्पली, पीपल। ११ वनजीरक, जंगली जीरा।

कणकच (हिं० पु०) १ कपिकच्छु, केवांच। २ करञ्ज, करौंदा।

कणगच, कणकच देखो।

कणगज, कणकच देखो।

कणगुग्गुलु (सं० पु०) कणश्चासौ गुग्गुलुश्चेति, कर्मधा०। १ गुग्गुलुविशेष, एक गूगुल। इसका संस्कृत पर्याय—गन्धराज, स्वर्णकण, सुवर्ण, कनक, वंशपति, सुरभि और पलङ्कष है। राजनिघण्टुके मतसे कणगुग्गुलु कटु, उष्ण, सुगन्धि, रसायन और वायु, शूल, गुल्म, उदराध्मान तथा कफनाशक है।

कणजिह्विका (सं० स्त्री०) १ महासमङ्गा, कगहिया। २ सारिवा, अनन्तमूल। ३ बहुपत्रिका, भुइं आंवला।

कणजीर (सं० पु०) कणश्चासौ जीरश्चेति, नित्य कर्मधा०। श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणजीरक (सं० क्ली०) कणं क्षुद्रं जीरकम्, कणजीर स्वार्थे कन्। क्षुद्रजीरा, छोटा जीरा। इसका संस्कृत पर्याय—ह्रस्वगन्धि और सुगन्धि है। भावप्रकाशके मतसे कणजीरक रूक्ष, कटु, उष्णवीर्य, अग्निदीपक, लघु, धारक, पित्तवर्धक, मेधाजनक, गर्भाशयशोधक, पाचक, बलकारक, शुक्रवर्धक, रुचिकारक, कफनाशक, चक्षुका हितजनक और ज्वर, वायु, उदराध्मान, गुल्म, वमि तथा अतिसार रोगनाशक है। जीरक देखो।

कणजीरा (हिं०) कणजीरक देखो।

कणजीर्ण (सं० क्ली०) श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणनिर्यास (सं० पु०) गुग्गुलु, गूगुल।

कणप (सं० पु०) कण-पा-क। अस्त्रविशेष, बरछा, भाला।

कणप्रिय (सं० पु०) सूक्ष्मचटक, गौरैया, चिरैया।

कणभ (सं० पु०) कण इव भाति, कण-भा-क। १ अग्निप्रकृति कीटविशेष, एक नेशदार मक्खी। इसके काटनेसे विसर्प, शोथ, शूल, ज्वर, वमि और शरीरकी अवसन्नताका वेग बढ़ता है। (भावप्रकाश) २ पुष्पवृक्ष-विशेष, एक फूलदार पेड़। ३ कीटभेद, एक कीड़ा। इसके काटनेसे पित्तज रोग लगते हैं। ४ अन्यजातीय कीट, किसी किस्मका कीड़ा। यह चार प्रकारका होता है—त्रिकण्टक, कुणी, हस्तिकक्ष और अप-राजित। इसके काटनेसे शरीरमें श्वयथु, अङ्गमर्द तथा गुरुताका बोध आता और दष्ट स्थान काला पड़ जाता है। (सुश्रुत)

कणभक्ष (सं० पु०) कणान् भक्षयति, कण-भक्ष-ण्वुल्। १ ग्रामचटक, एक चिड़िया। २ कणाद। कणाद देखो।

कणभक्षण (सं० क्ली०) अल्पलेश भोजन, नाजके छिनकोंका खाना।

कणभुक् (सं० पु०) कणान् भुङ्क्ते, कण-भुज-क्विप्। कणाद-ऋषि।

कणमूल (सं० क्ली०) १ पिप्पलीमूल, पिपरामूल। २ पञ्चतिक्त घृत, पांचकड़वी चीज़ोंका घी।

कणलाभ (सं० पु०) कणानां लाभो यस्मात्, बहुव्री०। पेषण करनेका एक यन्त्र, चक्की। २ आवर्त, गिर्दाब, भंवर।

कणशः (सं० अव्य०) कण वीप्सार्थे शस्। अल्प अल्प, थोड़ी-थोड़ी, थोड़ा-थोड़ा।

कणहा (सं० स्त्री०) लताशिरीष, वक्रशिरीष।

कणा (सं० स्त्री०) कण-टाप्। १ जीरक, जीरा। २ पिप्पली, पीपल। ३ कुम्भीरमक्षिका, एक मक्खी। ४ श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा। ५ कृष्णजीरक, काला जीरा। ६ अल्प, थोड़ा।

"कदलीफलमध्यस्थं कणामात्रमपष्टकम्।" (चिकित्सित)

कणाच (हिं० पु०) केवांच।

कणाजटा (सं० स्त्री०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कणाटीन (सं० पु०) कणाय अटति, कण-अट्-इनन् पृषोदरादित्वात् दीर्घत्वञ्च। खञ्जनपक्षी, खड़रैचा।

कणाटीर (सं० पु०) कण-अट्-ईरन्। कणाटीन देखो।

कणाटीरक (सं० पु०) कणाटीर स्वार्थे कन्।
कणाटीर देखो।

कणाद (सं० पु०) कणं अत्ति भक्षयति, कण-अद्-अण्। १ मुनिविशेष। ये ही वैशेषिक दर्शनके प्रणेता रहे। इनका दूसरा नाम औलूक्य, कणभक्ष, कणभुज् और काश्यप है।

महर्षि कणादने 'विशेष' नामक एक अतिरिक्त पदार्थ स्वीकार किया, इसीसे उनके बनाये दर्शनसूत्रका नाम लोगोंने वैशेषिक रख लिया है।

कणादके मतसे छह भाव पदार्थ और एक अभाव पदार्थ अर्थात् सब सात पदार्थ हैं। छह भाव-पदार्थोंके नाम यह हैं—१ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष और ६ समवाय।

द्रव्य प्रथम पदार्थ है। यह नौ प्रकारका होता है। यथा—

"पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशं कालोदिगात्मा मन इति द्रव्याणि।"
(वैशे० सू० १।१।५)

क्षिति, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिक्, आत्मा और मनका नाम द्रव्य है।

जिसमें गन्ध रहता, उसको विद्वान् क्षिति कहता है। हम जलमें भी गन्ध अनुभव करते हैं। किन्तु वह गन्ध जलका नहीं ठहरता, पृथिवीसे जलपर उतरता है—जैसे किसी नूतन मृत्पात्रमें रख थोड़ी देर बाद पीनेपर जलसे सोंधा गन्ध आने लगता है। सुतरां मानना पड़ेगा—आश्रयका गन्ध ही जलमें अनुभूत होता है।

केवलमात्र शुक्लरूप किंवा स्वाभाविक द्रवत्व रखनेवाले द्रव्यका नाम जल है। शुक्ल पीत प्रभृति नानाविध रूप देख पड़ने और स्वभावसिद्ध द्रवत्व न रहनेसे पृथिवीको जल कैसे कह सकते हैं!

स्वाभाविक उष्णता-युक्त द्रव्य तेज कहाता है।

अनुष्ण, अशीतल और किसी प्रकारके पाकसे उत्पन्न न हुये स्पर्शविशिष्ट द्रव्यको वायु कहते हैं।

जिसके शब्द उठता, उसका नाम आकाश पड़ता है। कोई-कोई कहता—वायुसे ही शब्द निकलता, सुतरां आकाशको स्वीकार करना अब नहीं सकता। यह सन्देह दूर करनेके लिये विश्वनाथ न्यायपञ्चाननने लिखा है—

"न च वाय्ववयवेषु सूक्ष्मशब्दक्रमेण वायौ कारणगुणपूर्वकः शब्द उत्पद्यतामिति वाच्यं अयावत् द्रव्यभावित्वेन वायोर्विशेषगुणत्वाभावात्।"
(सिद्धान्तमुक्तावली)

कोई नहीं कहता—प्रथमतः वायुके अवयवमें सूक्ष्म शब्द उठता, फिर उसी शब्दसे स्थूल वायुमें स्थूल शब्द खुलता है। क्योंकि आश्रय नाश जिसके नाशका कारण नहीं, वह वायुका विशेष गुण कैसे हो सकता है! आश्रय विद्यमान रहते भी जब शब्दका विनाश हो जाता, तब आश्रयनाशको शब्दके नाशका कारण कहना किसी मतसे सङ्गत नहीं आता। एकमात्र शब्द ही आकाशकी सिद्धिका हेतु है। इस सम्बन्धपर लिखते हैं—

"परिशेषाल्लिङ्गमाकाशस्य।" (२ अ० १ आ० २७ सू०)

अन्य अष्टविध द्रव्योंमें शब्द रहना असम्भव होनेसे शब्द ही आकाशका एकमात्र लिङ्ग (अनुमापक हेतु) है।

ज्येष्ठत्व और कनिष्ठत्व आदि ज्ञानके कारण-पदार्थको दिक् कहते हैं।

जिसमें ज्ञानिज्ञान प्रभृति रहता, उसका नाम आत्मा पड़ता है।

जिस पदार्थके रहनेसे हम सुख, दुःख प्रभृति उठाते और विजातीय ज्ञानको झलक देख नहीं पाते, उसको संज्ञा मन बताते हैं।

गुण पदार्थ २४ प्रकारका है। यथा—रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, संख्या, परिमाण, पृथक्त्व, संयोग, वियोग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, शब्द, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, पाप और धर्म।
(वैशे० सू० १।१।६)

कर्म पांच प्रकारका होता है—उत्क्षेपण, अपक्षेपण, आकुञ्चन, प्रसारण और गमन। (वैशे० सू० १।१।७)

सामान्य दो प्रकारका है—साधारण धर्म वा जाति विशेष। जिस पदार्थके रहनेसे परमाणुओंका भेद समझा जाता, वही विशेष कहाता है। (वैशे० सू० १।२।५)

समवाय नित्य सम्बन्धको कहते हैं। (वैशे० सू० ७।२।२६)

द्रव्यके साथ उसके परमाणुका सम्बन्ध रहता है—जैसे घटके साथ मृत्तिकाका सम्बन्ध इत्यादि।

अभाव चार प्रकारका है—प्रागभाव, ध्वंसाभाव, अन्योन्याभाव और अत्यन्ताभाव। अभाव देखो।

कणादके मतमें अन्धकार कोई स्वतन्त्र पदार्थ नहीं। तेजके अभावको ही अन्धकार कहते हैं।

प्रमाण इन्होंने दो ही प्रकारका माना है—प्रत्यक्ष और अनुमान। उपमान अनुमानके अन्तर्भूत है।

महर्षि कणादने ही सर्वप्रथम परमाणुवाद चलाया था। इनके कथनानुसार एकमात्र परमाणु सत्स्वरूप नित्य पदार्थ है। उसका दूसरा कोई कारण नहीं होता।

"सदकारणवन्नित्यम्।" (वैशे॰ सू॰ ४।१।१)

हम जो यावतीय जड़पदार्थ प्रत्यक्ष करते, वह समुदाय परमाणुके संयोगसे बनते हैं। विशेष विशेष प्रकारके परमाणुओंमें विशेष नामक एक पदार्थ रहता है। उसीको शक्तिसे भिन्न-भिन्न रूप परमाणु भिन्न-जैसे देख पड़ते हैं।

कणादके मतमें अदृष्ट कारण विशेष द्वारा परमाणुओंका संयोग गठनेसे इस विश्वसंसारकी उत्पत्ति हुयी है।

इन्होंने जड़पदार्थका मूलतत्त्व अपने सूत्रके मध्य क्यों सन्निवेश किया है? वैशेषिक-उपस्कारमें स्पष्ट ही लिख दिया है—

"दृष्टे कारणे अदृष्टकल्पनानवकाशात्।"

क्योंकि दृष्ट कारण रहते अदृष्ट कारणकी कल्पना आवश्यक नहीं।

वास्तविक महर्षि कणाद अपनी चारो ओर जो देख पाते, उसीके ज्ञानानुशीलनमें प्रवृत्त हो जाते थे।

जो परमाणु या जड़तत्त्व कणादने अपने सूत्रमें प्रचार किया, आजकल भारतवर्षमें विशेष आदर न मिलते भी युरोपीय दार्शनिकोंने उसको यथेष्ट सम्मान दिया है। ई॰से ४४० वर्ष पूर्व ग्रीक देशमें डेमक्रिटसने परमाणुवाद चलाया था। उसके पीछे एपिक्युरसने इस मतको सविशेष प्रचार किया। उनका सिद्धान्त बिलकुल कणादसे मिलता है। लुक्रेशियाने इनका मत प्रकाश किया। उन्होंने अपने बनाये काव्यदर्शनमें कहा है—

"Nunc age, quo motu genitalia materiai
Corpora res varias gignant, genitasque resolvant
Et qua vi facere id cogantur, quaeve sit ollis
Reddita mobilitas magnum per inane meandi Expediam."

(II. 61-64.*)

लुक्रेशियाने स्पष्ट ही स्वीकार किया, कि परमाणुने इस जगत्को जन्म दिया है। वास्तविक लुक्रेशियाका द्वितीय अध्याय पढ़नेसे कणादका मत बहुत कुछ मिलता है।

अब देखना चाहिये—किसने सर्वप्रथम परमाणुवाद चलाया था, महर्षि कणाद या ग्रीसके डेमक्रिटसने।

इस बातके समझनेका कोई उपाय नहीं—कणाद किस समयके व्यक्ति रहे। अपना देशीय प्रवाद माननेसे वह ५।६ हजार वर्षके लोग हो सकते हैं। फिर भी भगवद्गीतामें वैशेषिकका मत गृहीत हुआ है। सुतरां गीता बननेसे पहले महर्षि कणाद विद्यमान थे। इससे मानना पड़ेगा—डेमक्रिटसुसे बहुत पहले कणादका जन्म हुआ। अतएव समझ सकते—महर्षि कणादने ही सर्वाग्र परमाणुवाद चलाया था। डेमक्रिटसकी जीवनी पढ़नेसे बोध होता—वह संन्यासियोंके साथ भारतवर्ष आये थे। सम्भवतः संन्यासियोंके मुखसे कणादका मत सुन अपने ग्रन्थमें उन्होंने वैशेषिककी बात लिखी है।

---

* Thus the Great World's eternally renewed;
Thus endless atoms are with power endued,
Successive generations to supply:
Some creatures flourishing, while others die.
Like racers, each revolving age, we find,
Retires, and leaves the lamp of life behind.
If you suppose that seeds at rest convey,
Motion to bodies, wide from truth you stay.
Through the Vast Void as those primordials rove,
By foreign force or gravity they move.

कणादने जो चक्कर लगाया, उसका सुफल भारतने न पाया। सुदूर युरोपखण्डमें डेलटन साहबने उसका पुनरुद्धार किया। आजकल युरोपमें परमाणुवाद कौन नहीं मानता। परमाणु शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

बहुतसे लोग कहते—कणाद ईश्वरका अस्तित्व मानते न थे। कारण कणादसूत्रमें किसी स्थानपर ईश्वरका नाम नहीं मिलता। जगत्‌के कारणको निर्धारण करना ही दर्शनशास्त्रका मुख्य उद्देश्य है। यदि कणाद ईश्वरको विश्वका कारण समझते, तो अवश्य ही इस विषयको स्पष्ट स्पष्ट उल्लेख करते।

फिर क्या कणाद नास्तिक रहे अथवा ईश्वरके सम्बन्धपर कोई सन्देह रखते थे? नहीं, यह बात हो नहीं सकती। इन्होंने वेदको प्रामाण्य माना है—

"तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्।" (वैशे० सू० १।१।३)

इन्होंने आत्मकर्म सम्पन्नको ही मोक्ष बताया और स्वर्ग एवं अपवर्गप्रद धर्मतत्त्वको प्रचार करनेके लिये ही अपना सूत्र बनाया है।* परमतत्त्ववित् माधवाचार्यने कणादके किसी अंशका प्राधान्य मान लिखा है—

"द्वित्वे च पाकजोत्पत्तौ विभागेच विभागजे।
यस्य न स्खलिता बुद्धिस्तं वै वैशेषिकं विदुः॥" (सर्वदर्शनसंग्रह)

द्वित्वोत्पत्ति, पाक द्वारा रूपादिकी उत्पत्ति और विभागज विभागको उत्पत्तिमें जिसको बुद्धि नहीं बिगड़ती, उसे विद्वन्मण्डली वैशेषिक समझती है। यह बात भी युक्तिसङ्गत नहीं, कि कणाद ऋषि निरीश्वरवादी रहे। शङ्करमिश्रने कणाद-सूत्रकी व्याख्या करते स्पष्ट ही लिख दिया है—

"तदित्यनुक्तमपि प्रसिद्धिसिद्धतया ईश्वरं परामृशति।"

तत् शब्दका अर्थ 'ईश्वर' प्रसिद्ध है। अतएव पूर्व सूचना न रहते भी यहां यह ईश्वरवाचक निश्चित होता है। ईश्वर शब्दका उल्लेख न उठाते भी कणादने गौणभावमें ईश्वरको स्वीकार किया है। ईश्वर शब्द देखो।

२ स्वर्णकार, सोनार।

* "यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः।" (वैशे० सू० १।१।२)
जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस अर्थात् स्वर्ग एवं अपवर्ग मिलता, उसीका नाम धर्म पड़ता है।

कणादिगण (सं० पु०) पिप्पल्यादिगण, पीपल वगैरह चीजें। पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, नागर, मरिच, एला, अजमोदा, इन्द्रपाठा, रेणुक, जीरक, भार्गी, महानिम्बफल, हिङ्गु, रोहिणी, सर्षप, विड़ङ्ग, अतिविषा और मूर्वा सबके समवायको कणादिगण कहते हैं। (चक्रपाणिदत्तकृतसंग्रह)

कणादिवटी (सं० स्त्री०) श्लीपदका एक औषध, पीलपाकी एक दवा। पिप्पली, वचा, देवदारु, पुनर्नवा, बेलकी छाल और वृद्धदारकका बीज बराबर बराबर कूटपीस ३ रत्ती कांजीके साथ खानेसे श्लीपदका उपवेग दूर होता है। (चक्रदत्तसंग्रह)

कणादीय (सं० पु०) श्वेतजीरक, सफेद जीरा।

कणाद्यलौह (सं० क्ली०) अतिसारका एक औषध, दस्तकी कोई दवा। पिप्पली, शुण्ठी, पाठा, आमलकी, बहेड़ा, हरीतकी, मुस्तक, चित्रक, विड़ङ्ग, रक्तचन्दन, बिल्व एवं ह्रीबेर समभाग और सबके समान लौह डाल जलमें रगड़नेसे यह औषध बनता है।
(रसरत्नाकर)

कणाद्य (सं० त्रि०) अन्नके कणसे जीविका चलानेवाला, जो दाना बीन बीन गुजर करता हो।

कणामता (सं० स्त्री०) अन्नके कणसे जीविका निर्वाह करनेकी स्थिति, जिस हालतमें दाने बीन बीन गुजर करें।

कणामूल (सं० क्ली०) पिप्पलीमूल, पिपरामूल।

कणारक—उड़ीसेका एक तीर्थ। इसका असल नाम कोणार्क या कोणारक है। किन्तु कुछ लोग अपभ्रंश बना कणारक उच्चारण करते हैं। कोणार्क देखो।

कणासुफल (सं० क्ली०) पटोल, टेढ़।

कणाह्वा (सं० स्त्री०) श्वेतजीरक, सफ़ेद जीरा।

कणिक (सं० पु०) कणैव स्वार्थे कन् अत इत्वम्। १ कणा, पीसन। २ शुष्क गोधूमचूर्ण, सूखे गेहूंका आटा। ३ शत्रु, दुश्मन। ४ भारतिका एक नियम। ५ धृतराष्ट्रके एक मन्त्री।

"कणिकं मन्त्रिणां श्रेष्ठं धृतराष्ट्रोऽब्रवीदिदम्।" (भारत, आदि १४१ अ०)

६ अन्नका कण, चावलका दाना।

कणिका (सं० स्त्री०) कणाः सन्त्यस्याः, कण-ठन्।

कण इति ठनी। पा ५।४।१११। १ अत्यन्त सूक्ष्मवस्तु, निहायत बारीक चोज़। २ अग्निमन्थ वृक्ष, गनियारी। ३ कणा, ज़र्रा, किनका। ४ तण्डुलविशेष, एक चावल। ५ जलादिका सूक्ष्मांश, पानी वगैरहका बारीक हिस्सा।

"तान्तुत्याम घनश्यकणिका मौतहि नामिषेन।" (मेघदूत)

कणित (सं० क्ली०) कण आर्तनादे भावे-क्त। पीड़ित-का यातनासूचक नाद, गमसे भरी आवाज़।

कणिश (सं० क्ली०) कणो विद्यतेऽस्य, कण-इनि, कणिन: शेवते अच्छिन्, कणिन्-शी-ड। शस्यमञ्जरी, अनाजकी बाल।

कणिष्ठ (सं० त्रि०) कण-इष्ठन्। १ अन्य अपेक्षा क्षुद्र, दूसरेकी बनिस्बत छोटा। २ अन्य अपेक्षा क्षीण, दूसरेसे कम।

कणी (सं० स्त्री०) कण-ईकन्। १ अल्प, थोड़ी। २ श्वयकण्ठलता, एक बेल। ३ कणिका, कनी, टुकड़ा। ४ तण्डुलविशेष, किसी किस्मका चावल।

कणीक (सं० त्रि०) अल्प, सूक्ष्म, छोटा, बारीक।

कणीका (सं० स्त्री०) कण-टाप्। १ कणिका, कनी, छोटा टुकड़ा।

कणीचि (सं० पु०) कण-ईचि। गकचिमाकीचि:। उण् ४।७०। १ पल्लवी, छोटी डाली। २ निनाद, आवाज़। (स्त्री०) ३ पुष्पितालता, फूलदार बेल। ४ गुञ्जा, घुंघची। ५ शकट, गाड़ी।

कणीची (सं० स्त्री०) कणीचि देखो।

कणीय: (सं० त्रि०) कण-ईयसुन्। दिवचनविभज्योपपदेतरवीयसुनी। पा ५।३।५७। १ अत्यन्त सूक्ष्म, निहायत बारीक। २ अन्य अपेक्षा क्षुद्र, दूसरेकी बनिस्बत छोटा।

कणीयान् (सं० पु०) कण-ईयसुन्। १ कनिष्ठ, छोटा। २ क्षुद्र, कमज़ोर। ३ क्षीण, कम।

कणीमक (हिं०) कणिक देखो।

कणे (सं० अव्य०) कण्-ए। १ इच्छानुरूप, जीभर। (हिं०) २ निकट, समीप, पास।

कणेर (सं० पु०) कण-एर। कर्णिकारवृक्ष, अमल-तासका पेड़।

कणेरा (सं० स्त्री०) कणेर-टाप्। १ वेश्या, रण्डी। २ हस्तिनी, हथिनी।

कणेरु (सं० पु०) कण-एरु। १ कर्णिकार वृक्ष, अमलतासका पेड़। (स्त्री०) २ वेश्या, रण्डी। ३ हस्तिनी, हथिनी।

कण्ट (सं० पु०) कटि-अच्। १ कण्टक, कांटा। २ वकुल वृक्ष, मौलसरीका पेड़।

कण्टक (सं० पु०-क्ली०) कटि-ण्वुल्। १ सूचीका अग्रभाग, सूईकी नोक। २ कांटा, खार। ३ मत्स्या-दिका कीकस, मछलीकी नोकदार हड्डी। ४ नख, नाखून। ५ रोमाञ्च, रोंगटोंका खड़ा होना। ६ क्षुद्रशत्रु, छोटा दुश्मन। ७ तीव्र वेदना, तेज़ दर्द। ८ हानिकारक भाषण, नुकसान पहुंचानेवाली बात। ९ दुःखका कारण, तकलीफ़का सबब। १० वाद-विवादका खण्डन, बहसकी तरदीद। ११ विघ्नबाधा, अड़चन। १२ प्रथम, चतुर्थ, सप्तम और दशम नक्षत्र। १३ शाक्य मुनिका अश्व। १४ किसी अग्रहारका नाम। १५ वेणु, बांस। १६ कर्मस्थान, कारखाना। १७ दोष, ऐब। १८ मकर, मगर। यह कामदेवका चिह्न है। १९ केन्द्र, दायरेका मरकज़।

"लग्नान् पुन कर्माणि केन्द्रमुक्त कण्टकम्।" (ज्योतिष)

२० गोक्षुरक्षुप, गोखरू। २१ मदनवृक्ष, मैनफल। २२ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। २३ इङ्गुदीवृक्ष, देशी बादाम। २४ वनमुद्ग, जङ्गली मूंग। २५ बर्बूरकवृक्ष, बबूल। २६ पद्मबीज, कमलगट्टा।

कण्टककरञ्ज (सं० पु०) करञ्जभेद, जङ्गली करौंदा।

कण्टककिंशुक (सं० पु०) कण्टकी पारिजात, कांटेदार मदार।

कण्टकच्छद (सं० पु०) श्वेतकेतकवृक्ष, सफ़ेद केवड़ेका पेड़।

कण्टकत्रय (सं० क्ली०) कण्टकारीत्रय, तीनों कटैया। बृहती, कण्टकारी और गोक्षुर तीनोंका समूह कण्टकत्रय कहाता है। कण्टकत्रय त्रिदोष, श्रम, ज्वर, पित्त, हिक्का और तन्द्रालापको नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकदला (सं० स्त्री०) केतकी वृक्ष, केवड़ेका पेड़।

कण्टकदेही (सं॰ वि॰) कण्टकप्रधानो देहोऽस्यास्ति, कण्टकदेह-इनि। १ कण्टकावृत शरीरविशिष्ट, कांटेदार जिस्म रखनेवाला। (पु॰) २ शल्यक, खारपुश्त, स्याही। ३ मत्स्यविशेष, कंटवा।

कण्टकद्रुम (सं॰ पु॰) कण्टकप्रधानो द्रुमः कण्टकेन चाचितो वा द्रुमः, मध्यपदलो॰। १ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ३ कण्टकयुक्त वृक्ष, कांटेदार पेड़। बबूल वगैरह कंटीले पेड़ोंको कण्टकद्रुम कहते हैं।

कण्टकपत्रक (सं॰ वि॰) कण्टकं पत्रे यस्य ततः स्वार्थे कन्। पत्रमें कण्टक रखनेवाला, जिसके पात में कांटा रहे।

कण्टकपञ्चमूल (सं॰ क्लो॰) स्वल्पमहत्पञ्चकी कण्टकसंज्ञक पञ्च मूल, पांच कंटीली जड़ें। करमर्द, गोक्षुर, झिण्टी, शतमूली और हिंस्रा पांचोंका मूल मिलानेसे यह औषध बनता है। वैद्यक मतसे कण्टकपञ्चमूल रक्तपित्त, सर्वप्रकार मेह, शुक्रदोष, तीनप्रकारके शोथ और श्लेष्माको नाश करता है।

कण्टकपाली (सं॰ स्त्री॰) स्वनामख्यात वृक्ष, हिंगनगरना।

कण्टकप्रावृता (सं॰ स्त्री॰) कण्टकैः प्रावृता व्याप्ता, ३-तत्। घृतकुमारी, घीकुवार।

कण्टकफल (सं॰ पु॰) कण्टकैराचितं फलं यस्य, मध्यपदलो॰। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ गोक्षुर, गोखरू। ३ कण्टकारी, भटकटैया। ४ एरण्डवृक्ष, रेंड़का पेड़। ५ धुस्तुरवृक्ष, धतूरेका पौदा। ६ देवदाली, मोखल, तरस्खारा। ७ कुसुम्भवृक्ष, कुसुमका पेड़। ८ ब्रह्मदण्डीवृक्ष। ९ करमर्दवृक्ष, करौंदेका पेड़। जिस वृक्षका फल कांटेदार रहता, उसको संस्कृतमें 'कण्टकफल' कहता है।

कण्टकफला (सं॰ स्त्री॰) कण्टकफल देखो।

कण्टकभुक् (सं॰ पु॰) कण्टकान् भुङ्क्ते, कण्टकभुज्-क्विप्। उष्ट्र, ऊंट। ऊंटको कंटीला पौदा ही खानेमें सबसे अच्छा लगता है।

कण्टकमर्दन (सं॰ त्रि॰) १ कण्टकोंको कुचलनेवाला, जो कांटोंको रौंदता हो। २ अशान्ति मिटानेवाला, जो झगड़ा-झञ्झट दूर कर देता हो। (क्लो॰) ३ कण्टकोंको कुचलनेका काम, कांटोंकी रौंदाई। ४ अशान्तिनिवारण, झगड़ा झञ्झट मिटानेका काम।

कण्टकयुक्त (सं॰ वि॰) कण्टकविशिष्ट, कांटेदार, कंटीला।

कण्टकलता (सं॰ स्त्री॰) १ त्रपुषा, खीरा। २ कर्कटिका, ककड़ी।

कण्टकवृन्ताकी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकैराचिता वृन्ताकी मध्यपदलो॰। वार्ताकु, बैंगन, भंटा।

कण्टकशृङ्ग (सं॰ पु॰) पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह महाभद्रके उत्तर अवस्थित है। (लिङ्ग॰ ४७।११)

कण्टकश्रेणी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकानां श्रेणी यस्याम्, बहुव्री॰। १ कण्टकारी, भटकटैया। २ शल्यकीमृग, खारपुश्त, स्याही।

कण्टकस्थल (सं॰ पु॰) भारतका अग्निकोणस्थ जनपदविशेष, एक मुल्क। (मार्कण्डेयपुराण)

कण्टकस्थली (सं॰ स्त्री॰) कण्टकस्थल देखो।

कण्टका (सं॰ स्त्री॰) १ कण्टकारिका, भटकटैया। २ दुरालभा, जवासा। ३ वनमुद्ग, मोट। ४ कर्कटिका, ककड़ी।

कण्टकाख्य (सं॰ पु॰) शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टकागार (सं॰ पु॰) कण्टका आगारो यस्य अथवा कण्टकं आगिरति, कण्टक-आ-गॄ-अच्। १ शरट, गिरगिट। २ शल्यकी, खारपुश्त, स्याही।

कण्टकाढ्य (सं॰ पु॰) कण्टकैराढ्यः, ३-तत्। १ कुब्जकवृक्ष, बेला। २ बिल्ववृक्ष, बेलका पेड़। ३ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़।

कण्टकार (सं॰ पु॰) कण्टकमृच्छति, कण्टक-ऋ-अण्। १ शाल्मलिवृक्ष, सेमरका पेड़। २ किसी किस्मका बबूल।

कण्टकारिका (सं॰ स्त्री॰) कण्टकान् ऋयति गच्छति वा, कण्टक-ऋ-ण्वुल्-टाप् इत्वञ्च। कण्टकारी नामक वृक्षविशेष। कण्टकारी देखो।

कण्टकारी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकार-ङीप्। क्षुद्रक्षुप विशेष, भटकटैया। इसका संस्कृत पर्याय—निदिग्धिका, स्पृशी, व्याघ्री, बृहती, प्रचोदनी, कुली, क्षुद्रा, दुःस्पर्शा,

राष्ट्रिका, अनाक्रान्ता, भण्टाकी, सिंही, धावनिका, कण्टकारिका, कण्टकिनी, दुष्प्रधर्षिणी, निदिग्धा, धावनी, क्षुद्रकण्टिका, बहुकण्टा, क्षुद्रफला, कण्टालिका और चित्रफला है। युक्तप्रदेशमें इसे भटकटैया, रिंगनी, कटेरी या छोटी कटाई कहते हैं। श्वेत-कण्टकारीका बङ्गाली नाम क्षुद्रा, हिन्दुस्तानी कटीला, दक्षिणी दोरसिङ्गाफल, तमीली कन्दनपद्री और तैलङ्गी वकुडुकाया या नेलमुलकू है। पाश्चात्य वैज्ञानिक नाम Solanum xanthocarpum है।

भावप्रकाशके मतमें यह सारक, तिक्त एवं कटुरस, लघु, रूक्ष, उष्णवीर्य, पाचक और कास, श्वास, ज्वर, श्लेष्मा, वायु, पीनस, पार्श्वशूल, कृमि तथा हृद्रोग-नाशक है।

कण्टकारी और बृहती दोनों शब्द पर्यायमें आया करते हैं। सुश्रुतके मतमें जो जाति क्षुद्र और क्षुद्र भण्टाकी नामसे प्रसिद्ध रहती, उसीको विदग्धकसी बृहती कहती है। बृहती धारक, हृदयग्राही, पाचक, कटुतिक्तरस, उष्णवीर्य और कफ, वायु, मुख-विरसता,



कण्टकारी क्षुप।

मल, अरुचि, कुष्ठ, ज्वर, श्वास, शूल, कास एवं अग्निमान्द्यनाशक है।

यह ओषधि अधिक सकण्टक और विस्तृत होती है। भारतवर्षमें पञ्जाब एवं आसामसे सिंहल और मलक्का द्वीप तक कण्टकारी मिलती है। दक्षिण-पूर्व एशिया, मलय, पयनहुतमें आमेवासी अष्ट्रेलिया और पोलिनेशियामें भी यह पाई जाती है। शीतकालमें कण्टकारी फलती है। पुष्प नीलवर्ण लगते हैं।

कण्टकारी श्वेत और नील भेदसे द्विविध होती है। श्वेतकण्टकारीको श्वेता, क्षुद्रा, चन्द्रहासा, लक्ष्मणा, क्षेत्रदूतिका, गर्भदा, चन्द्रमा, चन्द्री, चन्द्रपुष्पी, और प्रियङ्करी कहते हैं। यह विशेषतः गर्भप्रद है। इसका मूल व्यवहार्य है। उसके अभावमें समस्त अंश ले सकते हैं। मात्रा १ माशा रहती है।

कण्टकारीका फल तिक्त, रस एवं पाकमें कषाय, वीर्यनिःसारक, भेदक, तीक्ष्ण, पित्त तथा अग्निवर्धक, लघु और कफ, वात, कण्डू, कास, मेद, कृमि एवं ज्वररोगनाशक होता है। मतान्तरमें उक्त फल, तीक्ष्ण, लघु, कटु, दीपन, रूक्ष और श्वास, कास, ज्वर तथा कफनाशक है।

क्षुद्र कण्टकारीका फल कटु, तिक्त, रेचक, पित्त-कर, मूत्रकारक और हिक्का, अरुचि, यकृत्, श्वास, कास, कफ, कण्डू, वात, कृमि एवं ज्वरनाशक होता है।

डाक्टर विलसनने कण्टकारीको कटु और वात-

रेचक कहा है। पदतलमें मदाह पड़ने और जलयुक्त पिड़का उठनेसे यह व्यवहार की जाती है। दन्त-मूलमें व्यथा बढ़नेसे कण्टकारीका धूम और उत्ताप विशेष उपकारी है। डाक्टर मोरहेडके कथनानुसार यह विशेषतः कफनिःसारक होती है।

कहीं कहीं लोग कण्टकारीका बीज खाते हैं।

कण्टकारीघृत (सं० क्ली०) कासरोगका एक वैद्योक्त औषध, खांसीकी एक दवा। यह अल्प, अपर और वृहत् भेदसे त्रिविध रहता है।

अल्प—कण्टकारी और गुलञ्च तीस-तीस पल ६० सेर जलमें क्वाथ करें। सवा पांच सेर जल अव-शिष्ट रहनेसे उक्त क्वाथको छान लेते हैं। फिर इसी क्वाथमें ४ सेर घृत पकाना चाहिये। यह घृत पीनेसे वाताधिक्य तथा कासरोग छूटता और अग्निका वेग फूटता है।

अपर—कण्टकारीका क्वाथ सवा छह सेर, घृत ४ सेर और रास्ना, बाट्यालक, त्रिकटु तथा गोक्षुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर यथा-विधि पका सेवन करनेसे पञ्चविध कासरोग विनष्ट होता है।

वृहत्—मूल, पत्र एवं शाखायुक्त कण्टकारीका क्वाथ सवा छह सेर, घृत ४ सेर और बाट्यालक, त्रिकटु, विड़ङ्ग, शटी, चित्रक, सचल लवण, यवक्षार, सूखा कच्चा बेल, आमलकी, कुठ, श्वेतपुनर्नवा, अतीस, दुरालभा, आम्ललोनिका, वृहती, हरीतकी, यमानी, दाड़िम, ऋद्धि, द्राक्षा, रक्तपुनर्नवा, कर्कटशृङ्गी, भूम्यामलकी, शीघ्रपयष्टिका, रास्ना तथा गोक्षुर समुदायका बराबर-बराबर कल्क १ सेर अच्छीतरह पका सेवन करनेसे सर्वप्रकार कासरोग एवं कफरोग छूट जाता है।

स्वरभेदरोगके अधिकारपर निम्नलिखित कण्ट-कारीघृत कहा है—

कण्टकारीको कण्टकारीके ही रससे क्वाथ कर चतुर्थांश बचनेपर बाट्यालक, गोक्षुर एवं त्रिकटुके कल्क और घृत सबको फिर भली भांति पकाते हैं। यह घृत पीनेसे स्वरभङ्ग और पञ्चविध कास विनष्ट होता है। रोगीका बलाबल देख आध तोलेसे घृतकी मात्रा बढ़ाना चाहिये। अनुपान भी रोगीकी अवस्थाके अनुसार उष्णदुग्ध प्रभृति व्यवस्थेय है। कण्टकारीका रस यथेष्ट न मिलनेसे अष्टगुण जल डाल देते हैं।

कण्टकारीत्रय (सं० क्ली०) वृहती, गविकारो और दुरालभा तीनों द्रव्यका समुदाय। किसीयोगमें गवि-कारीके स्थानमें गोक्षुर लेते हैं। कण्टकारीत्रय तन्द्रा, प्रलाप, भ्रम, पित्त, ज्वर, और त्रिदोषको नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकारीद्रु (सं० पुं०) विकङ्कत वृक्ष, बैंची।

कण्टकारीद्रुम, कण्टकारीद्रु देखो।

कण्टकारीद्वय (सं० क्ली०) वृहती और कण्टकारी उभय द्रव्य, छोटी और बड़ी दोनों कटेरी।

कण्टकारीफल (सं० क्ली०) कण्टकारीका फल, भटकटैयेकी गोली। यह तिक्त, कटुक, दीपन, लघु, रूक्ष, उष्ण और श्वास, कास, ज्वर, अग्नि तथा कफरोगनाशक है। (भावप्रकाश)

कण्टकार्य (सं० पुं०) कुटजवृक्ष, मकोय।

कण्टकार्या, कण्टकारी देखो।

कण्टकार्यादि (सं० पु०) पित्तश्लेष्मज ज्वरका एक कषाय, सफ़रे और बलग़मके बोखारका एक काढ़ा या जोशांदा। कण्टकारी, अमृता, ब्राह्मयष्टि, शुण्ठी, इन्द्रयव, दूरालभा, चिरायता, रक्तचन्दन, मुस्त, पटोल और कटुकी सब २ तोले आधसेर जलमें उबाल आध पाव रहनेसे उतार ले। फिर यह काढ़ा पित्तश्लेष्मज्वरके रोगीको छानकर पिलाना चाहिये। कण्टकार्यादि पाचन पीनेसे पित्त, श्लेष्मा, ज्वर, दाह, तृष्णा, अरुचि, वमि, कास और हृदय एवं पार्श्वकी वेदनाका निवारण होता है। (चक्रदत्तसंग्रह)

कण्टकाल (सं० पुं०) कण्टं कण्टकप्रधानं कर्म कालयति उत्पादयति, कण्ट काल-णिच्-अच्, कण्टकैः कण्टकाकीर्णफलैरलयति शोभते, कण्टक-अल-अच्वा। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ मन्दार, मदार।

कण्टकालिका (सं० स्त्री०) कण्टकारी, कटाई।

कण्टकालुक (सं० पु०) कण्टकैरलयति कण्टं काल-

यति वा, कण्टक अन्, कण्ट-कल् वा उनन्। १ दुरालभा, जवासा। २ वासक्षुप, आमजवासेका पौदा।

कण्टकाशन (सं॰ पु॰) कण्टकं अश्नाति, कण्टक-अश-ल्यु। उष्ट्र, ऊंट।

कण्टकाष्ठील (सं॰ पु॰) कण्टकः अष्ठीलेव यस्य, बहुव्री॰। मत्स्यविशेष, एक मछली। अपर नाम कुलिश है। इसके हड्डियां बहुत होती हैं।

कण्टकिज (सं॰ त्रि॰) १ मत्स्यसे उत्पन्न, मछलीसे पैदा। २ मदनवृक्षसे उत्पन्न, मैनफलके पेड़से निकला हुआ।

कण्टकित (सं॰ त्रि॰) कण्टको रोमाञ्चो जातोऽस्य, कण्टक-इतच्। तदस्य सञ्जातं तारकादिभ्य इतच्। पा ५।२।३६।
१ रोमाञ्चित, रोंगटे खड़े किये हुआ। २ कण्टकयुक्त, कांटेदार, कंटीला।

कण्टकिन्, कण्टकी देखो।

कण्टकिनी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकाः सन्त्यस्याः, कण्टक-इनि ङीप्। १ वार्ताकी क्षुप, बैंगनका पौदा। २ कण्टकारिका, कटेरी। ३ रक्तझिण्टी, लाल कटसरैया। ४ मधुखर्जूरीवृक्ष, मीठी खजूरका पेड़।

कण्टकिफल (सं॰ पु॰) कण्टकि कण्टकयुक्तं फलं यस्य, बहुव्री॰। १ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। २ गोक्षुरक्षुप, कड़वे गोखरूका पौदा। ३ त्रपुषाफल, खीरा।

कण्टकिफला (सं॰ स्त्री॰) ककंटी, ककड़ी।

कण्टकिल (सं॰ पु॰) कण्टकोऽस्त्यस्य, कण्टक अस्त्यर्थे इलच्। वंशविशेष, कंटीला बांस।

कण्टकिलता (सं॰ स्त्री॰) कण्टकिनी चासौ लता चेति, कर्मधा॰। १ ककंटी, ककड़ीकी बेल। २ त्रपुषीलता, खीरेकी बेल।

कण्टकिला (सं॰ स्त्री॰) कण्टकिल देखो।

कण्टकी (सं॰ पु॰) कण्टकोऽस्यास्ति, कण्टक-इनि। १ मत्स्य, मछली। २ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। ३ मदनवृक्ष, मैनफलका पेड़। ४ गोक्षुरक्षुप, गोखरूका झाड़। ५ बदरीवृक्ष, बेरका पेड़। ६ वंशविशेष, एक कंटीला बांस। ७ विकङ्कतवृक्ष, बैंची। ८ विट्-खदिर। ९ विल्ववृक्ष, बेलका पेड़। १० पारिभद्र वृक्ष। (स्त्री॰) कण्टक अस्त्यर्थे आदित्वात् अच्-ङीप्। ११ वार्ताकीविशेष, एक कंटीला भांटा। राजवल्लभके मतसे यह कटु, तिक्त, उष्णवीर्य, दीपनकर, रुक्ष एवं पित्तप्रकोपकर और कफ तथा कण्डूनाशक है। १२ गर्भीवृक्ष, गेसका पौदा। १३ बृहती, कटाई। (त्रि॰) १४ कण्टकयुक्त, कंटीला।

कण्टकीकारी (सं॰ स्त्री॰) कण्टकोंमें कार्य करनेवाली, जो कांटोंमें काम करती हो।

कण्टकीद्रुम (सं॰ पु॰) कण्टकी चासौ द्रुमश्चेति पृषोदरादित्वात् दीर्घः, कर्मधा॰। १ खदिरवृक्ष, खैरका पेड़। २ वार्ताकीवृक्ष, बैंगनका पौदा।

कण्टकीपारिजात (सं॰ पु॰) पारिभद्रवृक्ष, पांगरा।

कण्टकीफल, कण्टकिफल देखो।

कण्टकीफला, कण्टकिफला देखो।

कण्टकीलता, कण्टकिलता देखो।

कण्टकीसरपुङ्खा (सं॰ स्त्री॰) शरपुङ्खाभेद, किसी क़िस्मकी सरफोंका। यह कटु, उष्ण, और कृमि एवं शूलघ्न होती है। (वैद्यकनिघण्टु)

कण्टकीवृक्ष (सं॰ पु॰) पारिभद्रवृक्ष, पांगरा।

कण्टकुरण्ट (सं॰ पु॰) कण्टः कण्टकप्रधानः कुरण्टः, मध्यपदलो॰। १ पीतझिण्टी, पीली कटसरैया। २ झिण्टीक्षुप, कटसरैयेका पौदा।

कण्टकोद्धरण (सं॰ क्ली॰) १ कण्टकादिका निवारण, निराई। २ क्लेशनिवारण, तकलीफ़ दूर करनेका काम। ३ चोर डाकुवोंका निकाला जाना।

कण्टतनु (सं॰ स्त्री॰) कण्टा कण्टकान्विता तनुर्यस्याः, मध्यपदलो॰। १ केतकीपुष्प, केवड़ेका फूल। २ बृहती, कटेरी।

कण्टदला (सं॰ स्त्री॰) कण्टं कण्टकान्वितं दलं यस्याः, मध्यपदलो॰। १ केतकीवृक्ष, केवड़ेका पेड़। २ श्वेतकेतकी, सफेद केवड़ा।

कण्टपत्र (सं॰ पु॰) १ विकङ्कत वृक्ष, बैंची। २ शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टपत्रक (सं॰ पु॰) कण्टपत्र स्वार्थे कन्। शृङ्गाटक, सिंघाड़ा।

कण्टपत्रफला (सं॰ स्त्री॰) ब्रह्मदण्डी क्षुप।

कण्टपत्रा, कण्टपत्रफला देखो।

कण्टपत्रिका (सं॰ स्त्री॰) वार्ताकी वृक्ष, भंटैका पौदा।

कण्टपाद (सं॰ पु॰) विकङ्कत वृक्ष, बैंची।

कण्टपुङ्खा (सं॰ स्त्री॰) कण्टकशरपुङ्खा, कंटीली शरफोंका।

कण्टपुङ्खिका, कण्टपुङ्खा देखो।

कण्टफल (सं॰ पु॰) कण्टं कण्टकान्वितं फलम्, मध्यपदलो॰। १ देवताड़, घुंघरवेल, सनैया। २ क्षुद्र गोक्षुरक, छोटी गोखरू। ३ पनस, कटहल। ४ धुस्तूरक, धतूरा। ५ लताकरञ्ज, किसी किस्मका करौंदा। ६ एरण्ड, रेंड़। ७ नद्याम्र। ८ कुसुम्भ, कुसुम। ९ ब्रह्मदण्डी। बहुव्रीहि समास करनेसे उक्त फलोंके पेड़का भी बोध होता है।

कण्टफला (सं॰ स्त्री॰) कण्टं कण्टकाचितं फलं यस्याः। १ देवदाली लता। २ लघुकारवेल्ली, छोटा करेला। ३ ब्रह्मदण्डी वृक्ष। ४ कर्कोटी, काकरोल, गुलककरा। ५ वृहती, कटाई।

कण्टल (सं॰ पु॰) कण्टः अस्त्यस्य, कण्ट-अलच्; कण्टेन कण्टकेन अलति पर्याप्नोति, कण्ट-अल-अच् इति वा। बावल वृक्ष, बबूलका पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—बावल, स्वर्णपुष्प और सूक्ष्मपुष्प है।

कण्टवल्लरी (सं॰ स्त्री॰) श्रीवल्ली वृक्ष। इसे कोङ्कणमें बाघेंटी कहते हैं।

कण्टवल्ली (सं॰ स्त्री॰) कण्टा कण्टकान्विता वल्ली, मध्यपदलो॰। श्रीवल्लीवृक्ष, बाघेंटी।

कण्टवृक्ष (सं॰ पु॰) तेजःफलवृक्ष, कायफलका पेड़।

कण्टसारिका (सं॰ स्त्री॰) श्वेतझिण्टीवृक्ष, सफेद कटसरैयेका पेड़।

कण्टाकारी (सं॰ पु॰) १ विकङ्कत वृक्ष, बैंचीका पौदा। (स्त्री॰) २ पनसवृक्ष, कटहल।

कण्टाकुष्माण्ड (सं॰ पु॰) कण्टकलताविशेष, एक कंटीली बेल।

कण्टाफल (सं॰ पु॰) कटि भावे अप् कण्टा कण्टकोपलक्षितं फलं यस्य। १ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड। २ पनसवृक्ष, कटहलका पौदा। ३ पनसफल, कटहल।

कण्टारवी (सं॰ स्त्री॰) वासा, मोली नरगन्दी।

कण्टारिका (सं॰ स्त्री॰) १ अग्निदीपनी वृक्ष। २ कण्टकारी, कटेरी।

कण्टार्गल (सं॰ पु॰) कण्टार्गला देखो।

कण्टार्तगला (सं॰ स्त्री॰) नीलझिण्टी, काली कटसरैया।

कण्टार्द्धलता, कण्टार्गला देखो।

कण्टाल (सं॰ पु॰) १ मदनवृक्ष, मैनफलका पौदा। २ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़।

कण्टालिका, कण्टकारी देखो।

कण्टाली, कण्टकारी देखो।

कण्टालु (सं॰ पु॰) कण्टाय कण्टकाय अलति पर्याप्नोति, कण्ट-अल-उण्। १ बर्बूरक वृक्ष, बबूलका पेड़। २ वृहती, कटाई। ३ वंश, बांस। ४ वार्ताकी वृक्ष, बैंगनका पौदा। ५ कर्कटीभेद, किसी किस्मकी ककड़ी।

कण्टाह्वय (सं॰ पु॰) कण्टं कण्टकं आह्वयते स्पर्धते, कण्ट-आ-ह्वे-क। पद्मकन्द, कमलगट्टा।

कण्टिका (सं॰ स्त्री॰) अतिबला, ककैया, ककई।

कण्टी (सं॰ पु॰) कण्टः कण्टकः अस्यास्ति, कण्ट-इनि। १ श्वेतापामार्ग, सफेद लटजीरा। २ गोक्षुर, गोखरू। ३ क्षुद्रगोक्षुर, छोटी गोखरू। ४ खदिर, खैर।

कण्ठ (सं॰ पु॰) कण्-ठ। उणा॰। १।१०५। १ गलदेश, ग्रीवाके सम्मुखका भाग, हलक, नरेटा, टेंटवा। सुश्रुतके मतानुसार कण्ठमें चार तक्ष्यादि और मण्डला नामक तीन अस्थिसन्धि हैं। इनकी नाड़ीमें उभय पार्श्वपर चार धमनी रहती हैं। उनमें दोको नीला और दोको मन्या कहते हैं। किसी प्रकारसे उक्त धमनी विद्ध होनेपर मूकता एवं स्वरविकृति आती और रस-ग्रहणकी शक्ति चली जाती है। २ ग्रीवाका समुदाय अंश, गर्दनका सारा हिस्सा। अनेक स्थलमें कण्ठशब्द ग्रीवाके समस्त अंशका भी द्योतक है। कण्ठव्यतीत ग्रीवाके अन्यान्य अंशमें ४ कण्डरा, १ कूर्च, ८ अस्थि, ८ अस्थिसन्धि और १६ स्नायु हैं। ग्रीवाके उभय पार्श्वमें पड़नेवाली ४ शिराओंका नाम मातृका है। इन शिराओंके विद्ध होनेसे सद्यः मृत्यु आता है। (सुश्रु॰)

कण्ठदेशमें विशुद्ध नामक षोडश स्वरयुक्त, धूम्रवर्ण और महाप्रभाविशिष्ट षोडशदल पद्मका अवस्थान है।

"कण्ठेऽस्तु विशुद्धाख्यं दलषोडशपङ्कजम्।
स्वैः षोडशभिर्युक्तं धूम्रवर्णं महाप्रभम्।
विशुद्धंतनुमाख्यातमाकाशाख्यमहाद्भुतम्।" (तोडलतन्त्र)

३ ध्वनि, आवाज़। ४ सन्निधान, कुर्ब। ५ मदन-वृक्ष, मैनफलका पेड़। ६ गर्भस्फुटन, रेहमकी शिगुफ्तगी। यह शब्द उपमारूपसे शाखाविशिष्ट कलिकाका द्योतक है। ७ होमकुण्डके बाहर अङ्गुलि-परिमित स्थान। ८ मुनि। ९ फेन। १० संस्कृतके एक प्राचीन वैयाकरण। क्षीरस्वामीने अपनी 'क्षीर-तरङ्गिणी'में इनका वचन उद्धृत किया है।

कण्ठक (सं॰ पु॰) कण्ठ-स्वार्थे कन्। १ कण्ठ, टेटुआ। २ शाक्यमुनिका अश्व।

कण्ठकुब्ज (सं॰ पु॰) सन्निपातज्वरविशेष, एक बोखार। इसमें शिरोर्त्ति, कण्ठग्रह, दाह, मोह, कम्प, ज्वर, रक्तसमीरणार्त्ति, हनुग्रह, ताप, विलाप और मूर्छाका वेग बढ़ता है। कण्ठकुब्ज कष्टसाध्य है। (भावप्रकाश)

कण्ठकुब्जक, कण्ठकुब्ज देखो।

कण्ठकुब्जप्रतीकार (सं॰ पु॰) कण्ठकुब्ज नामक सन्निपातज्वरकी चिकित्सा, तीनों मादाके बिगाड़से पैदा हुये बुखारको एक इलाज।

कण्ठकूजन (सं॰ क्ली॰) गलकूजन, गलेकी गुटरगूं।

कण्ठकूणिका (सं॰ स्त्री॰) कण्ठइव कण्ठध्वनिरिव कूणयति, कण्ठ-कुण-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। वीणा, बीन। कण्ठके स्वरकी भांति इसका स्वर भी अति सुस्पष्ट होता है।

कण्ठग (सं॰ त्रि॰) कण्ठदेश पर्यन्त व्याप्त, गलेतक फैला हुआ।

कण्ठगत (सं॰ त्रि॰) कण्ठे गतः, ७-तत्। १ कण्ठस्थ, गलेमें लगा हुआ। २ कण्ठागत, गलेतक पहुंचा हुआ।

कण्ठग्रह, कण्ठग्रह देखो।

कण्ठतः (सं॰ अव्य॰) कण्ठसे, गलाखिदा साफ़ बोलके साथ, साफ़-साफ़।

कण्ठतलासिका (सं॰ स्त्री॰) कण्ठतले आस्ते कण्ठ-तल-आस-ण्वुल्-टाप् अत इत्वम्। अश्वभूषण, घोड़ा बांधनेकी रस्सी या कड़ी।

कण्ठदघ्न (सं॰ त्रि॰) कण्ठः परिमाणमस्य, कण्ठ-दघ्नच्। प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रचः। पा ५।२।३७। गलपरिमाण, गलेतक पहुंचनेवाला।

कण्ठधान (सं॰ पु॰) १ जनपदविशेष, कोई मुल्क। २ तज्जनपदवासीय जातिविशेष, एक कौम। (बृहत्संहिता १४।२८)

कण्ठनाली (सं॰ स्त्री॰) कण्ठगता नाड़ी कस्य नालम्, मध्यपदलो॰। कण्ठास्थि स्थूल धमनी, गलेकी मोटी नली। भुक्त द्रव्य इसी नाड़ीकी राह नीचे चलता और शब्दादि भी इसी नाड़ीसे निकलता है।

कण्ठनीड़क (सं॰ पु॰) कण्ठे प्रासादशृङ्गादीनां शिरो-भागे नीडं यस्य, कण्ठनीड़-कप्। चिल्लपक्षी, चील।

कण्ठनीलक (सं॰ पु॰) कण्ठं धारकस्य कण्ठादिक-मूर्ध्वदेशं नीलयति स्वशिखाकज्जलेन नीलवर्णं करोति, कण्ठ-नील-णिच्-ण्वुल्। १ उल्का, मशाल। २ चिल्ल पक्षी, चील।

कण्ठपाशक (सं॰ पु॰) कण्ठे पाश इव कायति प्रकाशते, कण्ठ-पाश-कै-क। १ करिगलवेष्टनरज्जु, हाथीके गलेमें बंधनेवाली रस्सी। २ कण्ठपाश, अगाड़ी, गरदन-फांसी।

कण्ठबन्ध (सं॰ पु॰) कण्ठे बन्धः, ७-तत्। १ करि-कण्ठ-बन्धनरज्जु, हाथीके गलेमें बांधी जानेवाली रस्सी। २ गलबन्धन, गलेकी डोर।

कण्ठभूषा (सं॰ स्त्री॰) कण्ठस्य भूषा अलङ्कारः, ६-तत्। गलदेशका अलङ्कार, गलेका जेवर। पदक, हंसले, तौक, गण्डे, कण्ठी और हंसलीको कण्ठभूषा कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय ग्रैवेय, ग्रैव, रुचक और निष्क है।

कण्ठमणि (सं॰ पु॰) कण्ठे धार्यो मणिः, मध्य-पदलो॰। गलदेशमें धारणोपयोगी मणि, गलेमें पहना जानेवाला जवाहर। संस्कृत पर्याय—काकल है।

कण्ठमाला (सं॰ स्त्री॰) कण्ठे धार्या माला हारविशेषः, मध्यपदलो॰। कण्ठदेशमें धारणीय रत्न, गलेमें पहना जानेवाला जवाहर।

कण्ठरोग (सं० पु०) कण्ठगतो रोगः, मध्यपदलो०। कण्ठनालीके अभ्यन्तरमें उत्पन्न सकल रोग, गलेकी नलीमें होनेवाली सब बीमारी। महर्षि सुश्रुतके मतसे कण्ठनालीमें अष्टादश प्रकारका रोग उत्पन्न होता है—पांच प्रकारकी रोहिणी, शालुकण्ठक, अधिजिह्व, वलय, वलास, एकवृन्द, शतघ्नी, गिलाय, गलविद्रधि, गलौघ, स्वरघ्न, मांसतान और विदारी।

रोहिणी—दूषित वायु, पित्त, कफ और रक्त गलदेशस्थ मांसको बिगाड़ मांसाङ्कुर उत्पादन करता है। इससे कण्ठ खुलने नहीं पाता और शीघ्र प्राण छूट जाता है। इसी रोगको रोहिणी कहते हैं। वायुजन्य रोहिणीरोगमें जिह्वाकी चारो ओर अत्यन्त वेदनायुक्त कण्ठरोधक मांसाङ्कुर उत्पन्न हो जाता और रोगी स्तम्भत्व प्रभृति वातजनित उपद्रवसमूहसे दुःख पाता है। पित्तजन्य रोहिणी रोगमें अतिशय दाह एवं पाकयुक्त मांसाङ्कुर शीघ्र ही निकलता है। विशेषतः रोगीको अत्यन्त वेगवान् ज्वर धर दबाता है। कफजन्य रोहिणी रोगमें मांसाङ्कुर गुरु एवं स्थिर रहता और विलम्बसे पकता है। कण्ठका स्रोत रुक जाता है। सान्निपातिक रोहिणी रोगमें उक्त तीनों दोषोंका लक्षण झलकता और मांसका अङ्कुर गम्भीर भावसे पकता है। यह रोग चिकित्सासाध्य नहीं होता। रक्तजन्य रोहिणी रोगमें जिह्वामूल स्फोटक द्वारा व्याप्त हो जाता और पित्तका सकल लक्षण देखनेमें आता है। भावमिश्रके मतानुसार त्रैदोषिक रोहिणी रोगमें रोगीका जीवन सद्य नष्ट होता है। कफज रोहिणी तीन रात्रि, पैत्तिक रोहिणी पांच रात्रि और वातज रोहिणी सात रात्रिके मध्य रोगीका जीवन हरण कर लेती है। साध्य रोहिणी रोगमें रक्तमोचण, वमन, धूमपान, गण्डूषधारण और नस्य हितकारक है। वातज रोहिणी रोगमें रक्त निकलवा सैन्धव द्वारा प्रतिसारण और ईषत् उष्ण स्नेह द्वारा पुनः पुनः गण्डूषधारण कराना चाहिये। पित्तज एवं रक्तज रोहिणीमें रक्तमोचण कर प्रियङ्गु चूर्ण, शर्करा तथा मधु एकमें मिला रगड़ते और द्राक्षा एवं फालसेके क्वाथसे कुल्ला कराते हैं। कफज रोहिणीरोगमें बदरीफल, शुण्ठी, पिप्पली और मरिचके चूर्णसे प्रतिसारण करना चाहिये।

कण्ठशालूक—कुपित कफ द्वारा बेरकी गुठलीकी भांति काठवत् वा शूकवत् वेदनाजनक खर एवं स्थिर ग्रन्थि पड़नेसे कण्ठशालूक समझा जाता है। यह रोग अस्त्रसाध्य है। कण्ठशालूकमें रक्तमोचण कर तुण्डिकेरी रोगकी भांति चिकित्सा चलाना चाहिये। स्निग्ध यवान्न अल्प परिमाण एकबार खिलाया जाता है।

अधिजिह्व—रक्तमिश्रित कफसे जिह्वापर जिह्वाग्र-जैसा जो शोथ उठता, उसीका नाम अधिजिह्व पड़ता है। शोथ पकनेसे यह रोग असाध्य हो जाता है।

वलय—श्लेष्मासे गलनालीपर जो दीर्घ एवं उन्नत शोथ उठता और जिससे भुक्त द्रव्यका पथ रुकता, उसीका नाम वलय पड़ता है। यह रोग असाध्य है।

वलास—श्लेष्मा और वायु द्वारा गलदेशमें शोथ उठने और मर्मच्छेदी दारुण वेदना पड़नेसे वलास रोग समझा जाता है। यह रोग भी साध्य नहीं।

एकवृन्द—गलदेशका गोल, उन्नत, दाह एवं कण्डू-विशिष्ट और भार तथा कोमल बोध होनेवाला शोथ एकवृन्द कहाता है। इस रोगमें रक्त निकाल विरेचनादि द्वारा शोधन करना चाहिये।

रक्तपित्तजन्य, गोल एवं अतिशय उन्नत शोथ उठनेसे रोगीको अत्यन्त ज्वर आता और दाह सताता है। इसी रोगको वृन्द कहते हैं। फिर यही अत्यन्त वेदनायुक्त रहनेसे वातज समझा जाता है।

शतघ्नी—गलनालीमें मोटी बत्ती-जैसा, कठिन, कण्ठरोधकारी, वातजादि भेदसे नानाप्रकार वेदनायुक्त अथच मांसाङ्कुर द्वारा अधिक व्याप्त जो शोथ उठता और जिसमें नानाप्रकार यातनाका वेग बढ़ता, उसीका नाम त्रिदोषज शतघ्नी पड़ता है। इस रोगमें रोगी प्रायः मर जाता है।

गिलाय—जिस रोगमें दूषित कफ एवं रक्तसे कण्ठके भीतर आंवलेकी गुठली-जैसा स्थिर तथा अल्प वेदनायुक्त ग्रन्थि उठता और भुक्तद्रव्य संलग्न मालूम पड़ता,

इसीको कण्ठलग्न गिलायु कहता है। यह रोग असाध्य है। सुश्रुतने इस रोगका नाम 'गिलायु' लिखा है।

गलविद्रधि—समस्त गलदेशका फूलना और उसमें नानाप्रकार यातना होना गलविद्रधि कहाता है। यह रोग यदि मर्मस्थानमें न रहे और अच्छीतरह पक उठे, तो छेदन कर देना चाहिये।

गलौघ—कफ एवं रक्तसे गलदेश अत्यन्त फूल उठनेपर अन्नपानी या जलप्रवेशका पथ रुकना, वायुकी गतिका बिगड़ना और तीव्र ज्वरका चढ़ना ही गलौघ रोग है।

स्वरघ्न—रोगीको मूर्छा आने, सर्वदा श्वास लगने, स्वरभङ्ग आने और कण्ठ सूखनेसे स्वरघ्न रोग समझा जाता है। रोगी कुछ पहचान नहीं सकता और श्वासका पथ रुकता है।

मांसतान—गलदेशका शोथ क्रमशः बढ़ते बढ़ते कण्ठनालीको रुंध लेनेसे मांसतान रोग होता है। इस रोगमें शोथ विस्तृत, अति क्लेशदायक और लम्बमान रहता है। इसमें रोगी बच नहीं सकता।

विदारी—पित्तके प्रकोपसे गलदेश एवं मुखमें ताम्रवर्ण तथा दाह और वेदनायुक्त जो शोथ उठता, उसीका नाम विदारी पड़ता है। विदारीसे सड़ागला मांस गिर जाया करता है। रोगी जिस पार्श्वपर अधिक सोता, उसीमें पार्श्वमें यह रोग होता है।

साधारणतः कण्ठरोगमात्रमें दारुहरिद्रा, निम्बत्वक्, रास्ना एवं इन्द्रयव सकल द्रव्योंका क्वाथ अथवा मधु मिला हरीतकीका कषाय पीना चाहिये। १—कटुकी, अतिविषा, देवदारु, आकनादि, मुस्तक और इन्द्रयव सकल द्रव्यका क्वाथ गोमूत्रके साथ पान करते हैं। २—पिप्पली, पिप्पलीमूल, चव्य, चित्रक, शुण्ठी, सर्जिक्षार और यवक्षार सकल द्रव्य समभागसे चूर्ण कर व्यवहारमें लाना योग्य है। ३—मनःशिला, यवक्षार, हरिताल, सैन्धव और दारुहरिद्रा सकलका चूर्ण मधु तथा घृतके साथ मुखमें धारण करनेसे मुखरोग एवं गलरोग विनष्ट होता है। ४—यवक्षार, गजपिप्पली, आकनादि, रसाञ्जन, देवदारु, हरिद्रा और पिप्पली सकल द्रव्य कूटपीस मधुके साथ गुटिका बना डाले। यह गुटिका मुखमें धारण करनेसे गलरोग छूट जाता है। (चरक)

युरोपीय चिकित्सकोंके मतमें कण्ठरोग नाना-प्रकार होता है। उसमें सामान्य कण्ठशोथ (Simplo sore throat), क्षतयुक्त कण्ठशोथ (Ulcerated sore-throat), गलग्रन्थिप्रदाह (Quinsy or Tonsilitis), साङ्घातिक कण्ठशोथ (Malignant sore-throat), और सान्निपातिक कण्ठरोग (Diphtheria) प्रधान है।

कण्ठशोथ उठनेसे कण्ठमें प्रदाह, निगलनेमें कष्टबोध, श्वास छोड़नेमें दुःख, कण्ठके स्वरका परिवर्तन और ज्वर होता है। प्रथम बाधा न देनेसे यह रोग क्रमशः बढ़ जाता है। जिह्वा फूलती और बिगड़ती है। गलका ग्रन्थि रक्तवर्ण रहता और गलदेशके पीछे छोटा-छोटा पीला फोड़ा पड़ता है। यन्त्रणा और नाड़ीकी गति बढ़ती है। कभी कभी गाल फूल कर लाल हो जाता है। चक्षु जलने लगते हैं। रोग बढ़नेपर चित्तविभ्रम होता है। रोगवृद्धिके साथ ही साथ गलग्रन्थि भी बढ़ता और उसमें पूय पड़ता है। स्फोटक फूट जानेसे स्वास्थ्यबोध होता है। कभी कभी फूटने पीछे ग्रन्थि फिर पूर्ववत् फूल उठता है। इसकी चिकित्सा साथ ही साथ होना चाहिये। कारण चिकित्सा न करनेसे यह रोग साङ्घातिक पड़ जाता है। ऐसे स्थलमें कठिन ज्वर आता है।

सामान्य कण्ठशोथमें होमियोपाथिक चिकित्सा विशेष उपकारी है। भीगने पीछे शीत लगनेसे जो सामान्य कण्ठशोथ हो जाता, उसका औषध डलकामरा है। वायुके परिवर्तनसे होनेवाले कण्ठशोथपर जेलसेमिनम् चलता है। ज्वरके साथ शीत लगने और कण्ठशोथ उठनेसे एकोनाइट दिया जाता है। कण्ठवेदना, कण्ठशुष्कता एवं शिरःपीड़ा बढ़ने और मुख लाल पड़नेसे बेलोडोना दिलाते हैं। कण्ठ छिलने, निगलनेमें कष्ट मालूम पड़ने और कफ निकलने रहनेसे मार्क्युरियास उपकारी है। क्षतयुक्त कण्ठशोथमें प्रथम बेलोडोना चलाते हैं। मृदु, पांशुवर्ण अथवा अनिष्टदायक क्षत होनेसे एसिड नाइट्रिक चलता है। दुर्गन्ध और धातुदौर्बल्य

बढ़नेपर बापटेसिया तथा कार्बो-वेजिटेबिलिस दिया जाता है।

गलग्रन्थिप्रदाह (Tonsilitis)—गलदेशमें किसी स्थान-पर प्रदाह उठनेसे यह रोग होता है। यह रोग भी नाना प्रकारका है। किन्तु स्तन्यपायी शिशुसन्तानको गलग्रन्थिप्रदाह अधिक नहीं सताता। पांचसे दश वर्ष तक इस रोगका प्राबल्य रहता है। फिर पचास वर्षकी अवस्थामें भी गलग्रन्थि-प्रदाह उठ खड़ा होता है। यह रोग सकल ऋतुमें लगता और शीतकालमें विशेष प्रबल पड़ता है। शीतल वा हिम एवं आर्द्र या दूषित वायुके सेवन और शीत पैत्तिक प्रभृति दोषके कारण गलग्रन्थिप्रदाह उत्पन्न होता है। यह रोग उसी मनुष्यको प्रायः आक्रमण करता, जो देखनेमें अच्छा लगता है। गण्डमाला रोग अच्छा होने पीछे भी गलग्रन्थिप्रदाह उठा करता है। यह रोग लगनेसे पहले रोगी विशेष स्वस्थ अवस्थामें रहता, कभी कभी उदरमें गड़बड़ पड़ता है। गलग्रन्थिप्रदाहका लक्षण शीतबोध, कम्पन, चर्ममें उत्ताप, उत्तेजित नाड़ी, तृष्णा, शिरःपीड़ा अथवा क्षुधामान्द्य, असुखबोध और प्रत्यङ्गमें व्यथा या शोथ है। घूंट उतारनेमें कष्ट मालूम देता, मानो गलदेशको कोई दबा लेता है। घण्टे दो घण्टेमें सामान्यसे अति दारुण यन्त्रणा, प्रदाह और *निगलनेकी इच्छाका उद्गम होता है।* घूंट उतारनेमें कभी कभी इतना कष्ट पड़ता, कि आक्षेप पर्यन्त आ लगता है। इस रोगमें खांसीका वेग बढ़ता और कफ निकलता है। कण्ठमें दोषका सञ्चार होता है। श्वासप्रश्वास कष्टसे चलता है। कण्ठ घरघराने लगता है। कभी कभी रोग कठिन होनेसे बिलकुल स्वर रुक जाता है। किसी किसी स्थानपर गलेका शोथ अत्यन्त वृद्धिको प्राप्त होता है। निश्वास छोड़ते समय वेदना मालूम पड़ती, कभी कभी सांसतक रुकती है। यह रोग अति पीड़ादायक है। सचराचर गलग्रन्थिप्रदाह सातसे चौदह दिनतक रहता है।

शोथ काट न डालनेसे बात कहते, वमि करते या खांसते समय फट जाता है। सोते समय भी वह फटा करता, किन्तु उस अवस्थामें रोगीको अधिक कष्ट मालूम नहीं पड़ता। नींद टूटनेसे आराम बोध होता है। यह रोग पांच सात दिनमें मिटता है। श्वास रुकनेसे मृत्युका भय रहता, नहीं तो केवल कष्ट पड़ता है।

चिकित्सा—प्रथम अवस्थापर किसी पात्रमें उष्ण जल डाल थोड़ा कपूर और आध छटांक विनिगार छोड़ देते हैं। फिर मांसको पकाएक ऊपर चढ़ा इसका उत्ताप ग्रहण किया जाता है। धूम लगनेसे किसी कारण यदि अधिक खांसी आये, तो शयनकाल मृदु विरेचक और प्रातःकाल भेदक औषध व्यवहारमें लाये। उष्ण जलमें लवण और राजसर्षप मिला रोगीके हाथ-पैर डुबाकर रखना चाहिये। पहले यह रोग होनेसे चिकित्सक फूली काट डालते थे। फिर कोई तेजाबसे उसे उड़ा ही देता था। किन्तु उसमें भी अनिष्ट समझ कोई कोई अस्त्रचिकित्सा द्वारा रक्त निःसारण किया करते हैं। दुर्बल, मन्दतेजो एवं अस्वस्थ व्यक्ति यह रोग लगनेसे बहुत दुबला हो जाता है। ऐसी अवस्थामें रक्त निकालना न चाहिये। सहज उपायसे चिकित्सा करना उचित है। २ ड्राम नमकका तेजाब २ ड्राम फूके जलमें मिला रुईसे सावधानतापर प्रलेप लगाते हैं। टिमको डिकाक्शन अव सिनकोना, टिंक्चर सिनकोना और एसेटेट अव अमोनिया प्रयोग करना चाहिये। इस औषधको *किय-त्‌क्षण* कण्ठमें दबा पीछे निगलना पड़ता है। कोई कोई इस रोगमें पदतल छेद रक्त निकाला करता है।

होमियोपाथिक मतसे इस रोगपर बेलेडोना, मार्कुरियास, हेपार, आर्सेनिक, मारक्युरिया प्रभृति प्रयोग करते हैं।

दुग्धपोष्य शिशुवोंके एकप्रकारका जो कण्ठशोथ होता, उसे अंगरेजीमें थ्रश (Thrush) और हिन्दीमें मुंहाना या मुंहाबा कहते हैं। इस रोगमें मुंहमें एक प्रकार कुकुरमुत्ता उत्पन्न हो जाता है। मुखमें पहले छोटे-छोटे सफेद दाग उठते, जो दांतको गांठ जैसे देख पड़ते हैं। रोगीको ज्वरबोध होता है। तन्द्रा, उदराध्मान, शूलव्यथा, चक्षुरोग प्रभृति लक्षण झलकने लगते हैं। शिशु स्तन्यपान करनेमें

अत्यन्त कष्ट पाता है। इस रोगमें मधु पिलाना चाहिये। २ भाग कार्बनेट अव सोडा और १ भाग ग्रे-पाउडर मिला दो ग्रेनसे पांच ग्रेनतक प्रत्यह तीन-चार दिलाते हैं। आइसवाटर, बिलाप, बर्फ इत्यादि भी उपकारक है।

होमियोपाथिक मतमें गुनगुने दहीसे बोरायसको बाहर लगाना चाहिये। अधिक परिमाणमें कफ निकलने या घाव पड़ने पर मारकुरियास्, पीछे गन्धकर दिन और रातको पिलाते हैं। अधिक दूध गिरने या कफ लगनेसे बलसाटिला या मल्ल देना चाहिये। रोग कठिन हो जानेपर छह या बारह घण्टेके अन्तर प्रथम आर्सेनिक, पीछे एसिड नाइट्रिक प्रयोग करना चाहिये।

स्कार्लेट कण्ठरोग (सिरादी)—यह रोग अधिकतर शरत्कालके आरम्भमें देख पड़ता और बहुव्यापी एवं संक्रामक ठहरता है। इसका लक्षण शीत, कम्पन, ताप, दौर्बल्य, हृदयमें वेदना, वमन और भेद है। चक्षु अश्रमय और ज्वालायुक्त हो जाते हैं। ओठ अधिक रक्तवर्ण देख पड़ते हैं। नाड़ी दुर्बल लगती है। जिह्वा श्वेत पड़ जाती है। निगलनेमें अति कष्ट बोध होता है। कण्ठ फूलकर लाल पड़ जाता है। कण्ठपर नाना आकारमें नालीके घाव उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी यह नाली ऊपर नासिका और नीचे नली पर्यन्त फैल जाती है। पहलेसे शरीर अवसन्न लगता है। रोगी मध्य मध्य अण्डबण्ड बक देता है। निश्वासमें दुष्ट गन्ध आता और रोगीके हृदयमें भी दुर्गन्ध आ जाता है। सन्निपातावस्था उपस्थित होनेपर कम्पन बढ़ता, नाड़ीका वेग दुर्बल पड़ता, मुख नीचेको झुकता, कठिन नींद लगता और नासिका तथा मुखसे रक्त गिरता है। उक्त लक्षण झलकनेसे रोग सांघातिक समझा जाता है।

चिकित्सा—इस रोगमें पहले ही अधिक ज्वर चढ़ने पर दो घण्टेके अन्तरसे एकोनाइट देना चाहिये। उसके बाद बेलेडोना चलता है। मुखमें विस्वाद एवं दुर्गन्ध रहने, नाद् कफ गिरने, शीत लगने, कम्पन बढ़ने, बीच बीच शरीर उष्ण पड़ने और रात्रिको स्वेद निकलनेसे दो घण्टेके अन्तरसे मार्कुरियास् पिलाते हैं। रोग अत्यन्त कठिन होनेपर इसका व्यवहार करते हैं। सिवा इसके सलफर, लाइकोपोडियम, आर्सेनिक, एसिड नाइट्रिक प्रभृतिको भी प्रयोगमें ला सकते हैं।

मण्डूकास्य (Diphtheria)—कण्ठके मध्य देखाकी झिल्लीपर प्रदाह-जनित कृत्रिम झिल्ली (False membrane) पड़ जाती है। इस कण्ठरोगको डाक्टर डिफ्थिरिया कहते हैं। (अपर नाम Cynanche Maligna वा Angina Maligna है) यह रोग १ वर्षसे ८ वर्ष वयस पर्यन्त प्रायः शिशुओंको अधिक लग जाता है। वाह्य वायु और शरीरस्थ रसके दोषसे यह रोग उत्पन्न होता है। कृत्रिम झिल्ली प्रथम गलग्रन्थि या तालुमें पड़ती, फिर कभी तालुमूल और कभी श्वासनाली (Larynx and Trachea) पर्यन्त बढ़ सकती है। श्वासनालीमें यह रोग उत्पन्न होनेसे मृत्यु रोके नहीं रुकता।

लक्षण—कण्ठके भीतर श्लैष्मिक झिल्ली लाल और फूली देखाती है। सहज थोड़ासा ज्वर आता, गलेका दुःख बढ़ जाता, ग्रीवाकी ग्रन्थि कुछ फूली देखाती और घूंट निगलनेमें रोगी कष्ट पाता है। फिर स्वर टूट जाता, श्वासके रन्ध्रमें शब्द समाता और अल्प अल्प श्वास भी आता है। हृत्पिण्ड अपना रहनेसे सहज ही मृत्यु टोह सकता है। कण्ठके स्थानविशेष पर आक्रमण होनेसे रोगका लक्षण भी बदल जाता है।

१ नासामण्डूकास्य (Nasal Diphtheria)—किसी किसी चिकित्सकके मतमें यह रोग नासासे निकल गलदेश पर्यन्त फैलता, किन्तु अधिकतर गलदेशसे चल नासिकातक पहुंचता है। इस रोगमें श्वासरोधकी सम्भावना रहती और प्रायः मृत्युकी टोह लगा करती है।

२ डिफ्थेरिक क्रूप (Diphtheric Croup)—इस रोगमें घड़घड़ कासका लक्षण झलकता, जो नाइट्रिक निकलता है।

३ चर्ममण्डूकास्य (Cutaneous Diphtheria)—अधिकतर कण्ठरोग होनेपर त्वक्के छिन्न स्थानमें घाव

रहता, उसपर कृत्रिम झिल्लीका परदा चढ़ते देख पड़ता है। यह रोग सहज होनेपर आठ दिनसे अधिक नहीं चलता, कठिन होनेसे एक पक्ष रहता है। श्वास-प्रश्वासका पथ रुक जानेसे दो दिनमें ही मृत्यु आ पड़ता है।

चिकित्सा—२ ड्राम कार्टिक ६ ड्राम चरित जलमें घोल प्रातः और सायंकाल रुईसे गलेके भीतर लगाना चाहिये। कोई कोई दृङ्ग हाइड्रोक्लोरिक एसिड १० गुण जलमें मिला प्रलेप चढ़ानेको कहता है। शिशुको कुल्ला करनेका ज्ञान होनेसे १ ड्राम टिंचर फेरिमिउरियस ४ औंस जलमें मिला व्यवहार करना चाहिये। ज्वरके समय १ बूंद टिंचर एकोनाइट १ औंस जलमें डाल आध-आध ड्राम दो-दो घण्टे बाद पिलाते हैं।

होमिओपाथी—अधिक ज्वर, अवसन्नता, अङ्गप्रत्यङ्गमें व्यथा और शिरःपीड़ा होनेसे घण्टे या आध घण्टेके अन्तर एकोनाइट दिया जाता है। कण्ठ एवं गलग्रन्थि घोर रक्तवर्ण लगने, शोथको चारो ओर फुनसी पड़ने, गलेमें स्वेद निकलने और गन्धयुक्त कफ बढ़नेसे मार्कुरियास घण्टे-घण्टे पर चलता है। सिवा इसके आर्सेनिक हाइड्रेटिस प्रयोग करते हैं।

कण्ठलग्न (सं० त्रि०) १ कण्ठसे बद्ध, गलेमें बंधा हुआ। २ कण्ठसे लगा हुआ, जो गलेसे चिपटा हो।

कण्ठलता (सं० स्त्री०) १ कण्ठभूषण, गलेका गहना। २ अश्वबन्धन, अगाड़ी, घोड़ा बांधनेकी रस्सी।

कण्ठवर्ती (सं० त्रि०) कण्ठगत, गलेको घेरे हुआ।

कण्ठशालुक (सं० पु०) कण्ठगत मुखरोगविशेष, गलेको एक बीमारी। इस रोगमें कफके कोपसे कण्ठमध्य शालुक-कन्दवत् बदरास्थिकी आकृति खरस्पर्श एवं कठिन ग्रन्थि पड़ जाता है। इससे कण्टकशूकवत् वेदना बढ़ती है। कण्ठशालुक रोग शस्त्रसाध्य है। (राजनिघण्टु)

कण्ठशुण्डी (सं० स्त्री०) तालुगत मुखरोगविशेष, मुंहके तालूको एक बीमारी। दूषित कफ और रक्त तालुमूलमें दीर्घाकृति अथच वायुपूर्ण भिस्ति-जैसा जो शोथ उठाता, वही रोग कण्ठशुण्डी कहाता है। इस रोगमें पिपासा, कास और श्वासका वेग बढ़ता है। इसका नामान्तर गलशुण्डी और तालुशुण्डी है।

चिकित्सा—१ कण्ठशुण्डी रोगमें शोथको छेदन कर त्रिकटु, वच, मधु एवं सैन्धव अथवा कुष्ठ, मरिच, सैन्धवलवण, पिप्पली, पाकनादि तथा गुग्गुलु सकल द्रव्य द्वारा घिस देना चाहिये। उक्त औषध घृतके साथ घर्षण और नासिकाके समीपवर्ती स्थानसे रक्त मोक्षण करते हैं। २ हरसिंगार वृक्षका मूल चबानेसे कण्ठशुण्डी रोग विनष्ट होता है। अतिविषा, पाकनादि, रास्ना, कटुकी और निम्बत्वक् सकल द्रव्यका क्वाथ बना कुल्ला करनेसे कण्ठशुण्डी कट जाती है। (चक्रदत्त)

कण्ठशुद्धि (सं० स्त्री०) गलका कफादिसे अलिप्तत्व, गलेकी सफाई।

कण्ठशूक, कण्ठशालुक देखो।

कण्ठशोष (सं० पु०) १ पित्तजन्य रोगविशेष, सफरेसे पैदा होनेवाली एक बीमारी। २ गलेकी शुष्कता, गलेकी खुश्की। ३ निरर्थक प्रत्यादेश, बेफायदा रोक-टोक।

कण्ठसज्जन (सं० क्ली०) कण्ठे सज्जनम्, ७-तत्। कण्ठसे लग्न होकर आलिङ्गन, गलेसे मिलकर चिपटाचिपटी।

कण्ठसूत्र (सं० क्ली०) कण्ठे सूत्र इव, उपमि०। १ माला, हार। २ आलिङ्गन विशेष, किसी किस्मको हमागोशी। "यः कुरुते वक्षसि वल्लभस्य स्तनाभिघातं निबिडोपगूहात्। परिश्रमार्तः शनकैर्विदग्धास्तत्कण्ठसूत्रं प्रवदन्ति तज्ज्ञाः॥" (रतिरहस्य)

कण्ठस्थ: (सं० त्रि०) कण्ठे तिष्ठति, कण्ठ-स्था-क। १ मुखस्थ, जुबानी, जो अच्छीतरह याद किया गया हो। २ कण्ठलग्न, गलेसे लगा हुआ। ३ गलदेश पर रखा हुआ, जो गलेपर हो। ४ कण्ठस्थानीय, गलेसे निकलनेवाला।

कण्ठस्थाली (सं० स्त्री०) चन्द्रद्वीपके अन्तर्गत एक प्राचीन महाग्राम। (भविष्य० ब्रह्मखण्ड १९।१८)

कण्ठा, कंठा देखो।

कण्ठागत (सं० त्रि०) कण्ठे आगतः, ७-तत्।

बहिर्निर्गमोन्मुख, कण्ठमें उपस्थित, बाहर निकल आनेवाला, जो गलेमें आकर लग गया हो।

कण्ठाग्नि (सं० पु०) कण्ठे कण्ठाभ्यन्तरे अग्निः पाचकाग्निः यस्य, बहुव्री०। पक्षी, चिड़िया। पक्षीका आहार गलाधःकरणसे ही परिपाक हो जाता है।

कण्ठाभरण (सं० क्ली०) कण्ठे धार्यं आभरणम्, मध्यपदलो०। १ गलदेशका अलङ्कार, गलेका जेवर, हार, माला। २ सरस्वतीकण्ठाभरणका संक्षिप्त नाम।

कण्ठार—वर्द्धभूमिके उत्तरका एक महाग्राम। दुर्गाने दुर्गासुरका मस्तक काट करके क्रुद्ध हो उसका कण्ठ इसी स्थानपर डाल दिया था। दुर्गासुरका कण्ठ यहां गिरनेसे ही इस स्थानका नाम कण्ठार पड़ा। कलिकालमें यहां भूमिहार और राजपूत जाति रहती है। राजपूतोंसे यवनोंका युद्ध होगा। कण्ठारवासी अपने वासमें आग लगा पलायन करेंगे।

(भविष्य० ब्रह्मख० ११।१८-२१)

कण्ठाल (सं० पु०) कठि-आलच्। १ सूरण, जमीकन्द। २ युद्ध, लड़ाई। ३ नौका, नाव। ४ खन्ता, खुरपी। ५ उष्ट्र, ऊंट। ६ गुण, रस्सी। ७ वृक्षविशेष, एक पेड़।

कण्ठालसार (सं० पु०) काश, एक घास।

कण्ठाला (सं० स्त्री०) कण्ठाल-टाप्। १ जाल-गोलिका, फांदकी रस्सी। २ मन्थनपट्टिका। ३ द्रोणिविशेष, मटकी।

कण्ठाशु (सं० स्त्री०) कण्ठ-शुष्क, गलशोषका। २ विषर्च नामक कन्दशाक।

कण्ठावसक्त (सं० त्रि०) कण्ठमें चिपटा हुआ, जो गलेमें लगा रहा हो।

कण्ठिका (सं० स्त्री०) कण्ठो भूषणतया अस्त्यस्याः, कण्ठ-ठन्-टाप्। कण्ठाभरणविशेष, कण्ठी, गलेमें पहननेकी एकलड़ी छोटी माला।

कण्ठी (सं० स्त्री०) कण्ठ अस्त्यर्थे ङीप्। १ गलदेश, गुलू। २ अश्वकण्ठ-वेष्टनरज्जु, अगाड़ी, घोड़ेके गलेमें बंधनेवाली रस्सी। (त्रि०) ३ कण्ठस्थानीय, गलेसे सरोकार रखनेवाला। (पु०) ४ कलाय, मटर।

कण्ठीरव (सं० पु०) कण्ठे रवो यस्य, बहुव्री०। १ सिंह, शेर। २ मत्तहस्ती, मतवाला हाथी। ३ कपोत, कबूतर।

कण्ठीरवी (सं० स्त्री०) कण्ठीरव-ङीष्। वासक वृक्ष, अडूसेका पेड़।

कण्ठील (सं० पु०) क्रमेलक, ऊंट।

कण्ठीला (सं० स्त्री०) पात्रविशेष, मटका, मथनेका बरतन।

कण्ठेकाल (सं० पु०) कण्ठे कालः विषपानसे नीलिमा यस्य, अलुक् समा०। महादेव।

कण्ठेमारतीर्थ (सं० क्ली०) तीर्थविशेष, एक पवित्र स्थान।

कण्ठोष्ठ (सं० क्ली०) अपनी साखी, जानी शहादत।

कण्ठ्य (सं० त्रि०) कण्ठे भवः, कण्ठ शरीरावयवत्वात् यत्। शरीरावयवात् यत्। पा ४।३।५५। १ गलदेशजात, हलकसे निकलनेवाला। २ कण्ठोच्चारित, हलकसे बोला जानेवाला। अ, आ, क, ख, ग, घ और ह अक्षर कण्ठसे उच्चारण किया जाता है। ३ कण्ठस्वरके उपकारी, गलेकी आवाजको फायदा पहुंचानेवाला।

“[illegible]” (सुश्रुत)

कण्ठ्यवर्ग (सं० पु०) कण्ठके लिये उपकारी कुछ औषध, हलकको फायदा पहुंचानेवाली जड़ी-बूटियोंका झुण्ड। अमलामूल, इक्षुमूल, मधूक, पिप्पली, द्राक्षा, विदारी, कैटर्य, हंसपादी, गुडूची और कण्टकारिकाके समुदायको कण्ठ्यवर्ग कहते हैं।

कण्ठ्यवर्ण (सं० पु०) कण्ठ्यश्चासौ वर्णश्चेति, कर्मधा०। कण्ठसे उच्चारण किया जानेवाला वर्ण, जो हर्फ हलकसे निकलता हो। कण्ठ देखो।

कण्ठ्यस्वर (सं० पु०) कण्ठका स्वर, जो हर्फ-इल्लत हलकसे निकलता हो। हिन्दी अकार और आकार ही कण्ठ्यस्वर होता है।

कण्डक (सं० पु०) काचामयविशेष, आंखोंकी एक बीमारी।

कण्डन (सं० क्ली०) कडि भावे ल्युट् इदित्वात् नुम्। १ निस्तुषीकरण, छराई, कुटाई। २ तुष, भूसी, धानका उतरा हुआ छिलका।

"क्रियां कुर्यात् भिषक् पश्चात् शालीनकुष्ठकण्डरैः।" (सुश्रुत)

कण्डनी (सं० स्त्री०) कण्ड्यते तुषादिरपनीयते अनया, कडि करणे ल्युट् इदित्वात् नुम्। उदूखल, ओखली।

कण्डरव्रण (सं० पु०) व्रणरोग, खुजली, खाज।

कण्डरा (सं० स्त्री०) कडि-अरन् इदित्वात् नुम् टाप् च। १ महानाडी, बड़ी नस। २ महास्नायु, मोटी रग। सर्वाङ्गमें १६ कण्डरा होती हैं। उनमें हस्त, पद, ग्रीवा और पृष्ठदेशमें चार-चार रहती हैं। हस्त एवं पदगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नख, ग्रीवा तथा हृदय सम्बन्धीको अधोगत कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा मेढ्र और पृष्ठनिबद्ध कण्डरावोंकी प्रान्तसीमा नितम्ब, मस्तक, ऊरु, वक्ष, अंस एवं स्तनपिण्ड है। (सुश्रुत) कण्डरावों द्वारा शरीर आकुञ्चन और प्रसारण किया जाता है। (भावप्रकाश) बाहुपृष्ठसे अङ्गुलिपर्यन्त जानेवाली कण्डरावोंके वातसे पीड़ित होनेपर बाहुद्वयका कार्य बिगड़ जाता है। इस रोगका नाम विश्वाची है।

कण्डरीक (सं० पु०) सप्तजातिस्मरके मध्य विप्रविशेष। (हरिवंश)

कण्डवल्ली (सं० स्त्री०) काण्डवल्ली, करेला।

कण्डाग्नि (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया।

कण्डानक (सं० पु०) महादेवके एक अनुचर।

कण्डिका (सं० स्त्री०) कडि-ण्वुल्-टाप्। काण्ड, कण्डिका, वेदका एकदेश। अध्याय प्रपाठक प्रभृतिके अन्तर्गत ब्राह्मणवाक्यसमूहको कण्डिका कहते हैं।

कण्डीर (सं० पु०) १ लघुकारवेल्ल, छोटा करेला। २ पीतमुद्ग, पीली मोट।

कण्डु (सं० पु०) १ ऋषिविशेष। इनके पिताका नाम कण्ड रहा। विष्णुपुराणमें लिखा है,—'किसी समय कण्डु मुनिने गोमती किनारे उत्कट तपस्या आरम्भ की थी। इन्द्रने उससे भयभीत हो प्रम्लोचा नाम्नी अप्सराको उनका तपोभङ्ग करने भेजा। मुनि भी उसका रूपलावण्य और हावभाव देख मोहित हो गये थे। इन्होंने अपनी तपस्या छोड़ बहुकाल उसके साथ एकत्र अतिवाहित किया। बहुकाल बाद एक दिन सन्ध्याकालको कण्डुने सन्ध्यावन्दना करना चाहा। किन्तु प्रम्लोचाने इनको बात सुन उपहास किया था। उसीसे इनका मोह छूट गया। इन्होंने फिर पुरुषोत्तममें ऊर्ध्वबाहु हो तपस्या द्वारा मुक्ति पायी'। (स्त्री०) कण्डूयति शरीरम्, कण्डू-कु। मद्गुरादयश्च २ वायुजन्य कण्डूयादि, खुजली, खाज। ३ कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। ४ शूकशिम्बी, केवांच।

कण्डुक (सं० पु०) कण्डु-कन्। १ कण्टक, कांटा। २ कण्डू, खुजली। ३ किसी नापितका नाम।

कण्डुघ्न, कण्डूघ्न देखो।

कण्डुर (सं० पु०) कण्डुं राति ददाति, कण्डु-रा-क पृषोदरादित्वात् ह्रस्वः। आतोऽनुपसर्गे। पा ३।२।३। १ कारवेल्ललता, करेलेकी बेल। २ कुन्दरुष्प, कुंदरूकी बेल।

कण्डुरा (सं० स्त्री०) कण्डुर-टाप्। १ शूकशिम्बी, केवांच। २ कर्पूरक, शोरकन्द। ३ अत्यम्लपर्णी, एक बेल। इसकी पत्ती बहुत खट्टी होती है।

कण्डुला (सं० स्त्री०) अत्यम्लपर्णी, बहुत खट्टी पत्तियोंकी एक बेल।

कण्डुली, कण्डूला देखो।

कण्डू (सं० स्त्री०) कण्डूय सम्पदादित्वात् क्विप् अल्लोपो यलोपश्च। १ कण्डु, खुजली। २ क्षुद्र-क्षुद्र पिड़काविशेष, छोटी-छोटी फुनसी। इसका संस्कृत पर्याय—खर्जू, कण्डूया, कण्डूति और कण्डूयन है।

चिकित्सा—दूर्वा एवं हरिद्रा एकत्र पीसकर प्रलेप लगानेसे कण्डू, पामा, दद्रु, शीतपित्त प्रभृति रोग विनष्ट होते हैं। गुञ्जाफल और भृङ्गराजके रसमें तैलको पका मलनेसे कण्डू, दारुण, कुष्ठ और कामाप रोग मिट जाता है। हरिद्राखण्ड प्रभृति औषध भी इस रोगपर विशेष उपकारी है। हरिद्राखण्ड देखो।

कण्डूक (सं० स्त्री०) कण्डू स्वार्थे कन्। कण्डु, खुजली, खाज।

कण्डूकरी (सं० स्त्री०) कण्डूं करोति, कण्डू-कृ-ट-ङीप्। शूकशिम्बी, खजोहरा।

कण्डूका (सं० स्त्री०) काकतुण्डा, घुंघची, रत्ती, चिरमिटी।

कण्डूघ्न (सं० पु०) कण्डूं हन्ति, कण्डू-हन्-टक्। १ आरग्वध, अमलतास। २ गौरसर्षप, सफेद सरसों।

कण्डूघ्नवर्ग (सं॰ पु॰) कण्डूघ्नानां वर्गः समूहः, ६-तत्। कण्डू नाशकारी औषधियोंका समूह, खाज मिटानेवाली जड़ीबूटियोंका झुण्ड। चन्दन, वेणामूल, आरग्वध, करञ्ज, निम्ब, कुटज, सर्षप, मोम, दारुहरिद्रा और मुस्तकके समूहको कण्डूघ्नवर्ग कहते हैं। (भाव)

कण्डूति (सं॰ स्त्री॰) कण्डूय भावे क्तिन् अलोपो यलोपश्च। कण्डूयन, खुजली, खाज।

कण्डूमका (सं॰ स्त्री॰) कीटविशेष, एक कीड़ा। यह लम्बा, सार, कृष्ण, हरित, रक्त, यवतर्णाभ और भृकुटी आठ प्रकारकी होती है। इसके काटनेसे रोगीका अङ्ग पीतवर्ण पड़ और वमन, अतिसार, ज्वर प्रभृतिसे वह मर जाता है। (सुश्रुत)

कण्डूमत् (सं॰ त्रि॰) खुजलाते हुआ, जो खरोंच रहा हो।

कण्डूयत् (सं॰ त्रि॰) खुजलाते हुआ, जो रगड़ रहा हो।

कण्डूयन (सं॰ क्ली॰) कण्डूय भावे ल्युट्। १ कण्डू, खुजली खाज। "[illegible]

[illegible]।" ([illegible])

२ [illegible], खुजलानेका औज़ार। गायकों कण्डू उत्पन्न होनेपर दीक्षित इसीसे खुजलाया करते हैं।

कण्डूयनक (सं॰ त्रि॰) कण्डूयन-स्वार्थे कन्। १ खुजलाते हुआ, जो रगड़ रहा हो। (पु॰) २ खुजलानेवाला।

कण्डूयना (सं॰ स्त्री॰) कण्डूति, खुजली।

कण्डूयनी (सं॰ स्त्री॰) खर्जनद्रव्य, खुजलानेकी कूंची।

कण्डूयमान (सं॰ त्रि॰) खुजलानेवाला, जो खरोंच रहा हो।

कण्डूया (सं॰ स्त्री॰) कण्डू-यक्-अ-टाप्। कण्डू, खुजली।

कण्डूतिन (सं॰ क्ली॰) कण्डूयन, खुजली।

कण्डूविष (सं॰ त्रि॰) खुजलानेवाला।

कण्डूर (सं॰ पु॰) शूकज, मानकच्चू।

कण्डूरा (सं॰ स्त्री॰) कण्डूं राति, कण्डू-रा-क-टाप्। मर्कटिकोशिता, केवाँछ।

कण्डून (सं॰ पु॰) कण्डू अस्त्यर्थे न। १ कण्डू-कारक ओल प्रभृति, शूरणकन्द। (त्रि॰) २ कण्डू-युक्त, खाजसे भरा हुआ।

कण्डूला (सं॰ स्त्री॰) शूरणपर्णिलता, वनका शूरणकन्द।

कण्डोल (सं॰ पु॰) कडि बाहुलकात् ओलच्। १ वंशादि निर्मित धान्यरक्षक भाण्डार, बांस वगैरहसे बना धान्य रखनेका पात्र। इसका संस्कृत पर्याय—पिट, पिटक और पेटक है। २ उष्ट्र, ऊंट। ३ गोली-भेद, किसी किस्मका बोरा। ४ गुजरातके पास मिलनेवाला एक पर्वत। यहां अतिप्राचीन देवमन्दिर बना है।

कण्डोलक (सं॰ पु॰) कण्डोल-स्वार्थे कन्। कण्डोल, बांसका बना डोल।

कण्डोलवीणा (सं॰ स्त्री॰) कण्डोलवत् वीणा कण्डोलस्य वीणा वा। चण्डालोंकी वीणा, छोटा बीन। इसका संस्कृत पर्याय—चाण्डालिका, चण्डालवल्लकी, चण्डालिका और कटोलवीणा है।

कण्डोली (सं॰ स्त्री॰) कण्डोलस्याकारोऽस्त्यस्याः, कण्डोल अर्श आदित्वात् अच्-ङीप्। कण्डोलवीणा, छोटा बीन।

कण्डोष (सं॰ पु॰) कोषकार, झांझा, पूटका कीड़ा।

कण्ड्वाघ (सं॰ पु॰) कण्ड्वा अघः समूहो यस्मात्। शूककीट, झांझा।

कण्व (सं॰ क्ली॰) कणति अणीयान्, कण्-वन्। १ पाप, दुराव। (पु॰) २ भूतयोनिविशेष, किसी किस्मका शैतान। ३ मुनिविशेष। यह गोरके पुत्र और आङ्गिरसगोत्रोत्पन्न रहे। ऋक्संहिताका अष्टक इनके नामसे प्रसिद्ध है। यह यजुर्वेदीय कण्व शाखाके प्रवर्तक थे।

वेदमें दूसरे भी अनेक कण्वोंका नाम मिलता है— कण्वनार्षद, कण्वश्रौयस और कण्वकाश्यप। यह सभी कण्ववंशीय रहे। मेनका-परित्यक्त शकुन्तलाको सम्भवतः कण्वकाश्यपने प्रतिपालित किया था।

महाभारतके टीकाकार नीलकण्ठने कण्व नामका अर्थ इस प्रकार लगाया है—

'कण्वः सुखमयः तत्त्वविद्याप्रभावात् अतएव संसारस्य सुखमयः नहि तत्त्वज्ञानिनां क्वचित् संसारासक्तिः अविद्याधर्माभावात्।'

कण्वका अर्थ तत्त्वविद्याके प्रभावसे सुखमय रहनेवाला है। तत्त्वज्ञानियोंको अविद्याके अभावसे संसारमें किसी प्रकारकी आसक्ति नहीं रहती। सुतरां वह संसारके सुखसे भी अलग रहते हैं।

४ पुरुवंशीय एक राजा। तपस्याके बलसे यह भी मुनि हो गये थे। ५ एक राजा। यह प्रतिरथके पुत्र और मेधातिथिके पिता रहे। कोई कोई इन्हें अजमीढ़का पुत्र कहता है। ६ धर्मशास्त्रकार मुनिविशेष। ७ तीर्थविशेष। (त्रि०) ८ बधिर, बहरा, जिसे सुन न पड़े। ९ विद्याक्रियाकुशल, आलिम। १० मेधावी, अक्लमन्द। ११ स्तुतिकारक, तारीफ करनेवाला। १२ स्तवनीय, तारीफके काबिल।

कण्वजम्भन (सं० त्रि०) कण्व नामक पिशाचोंको नाश करनेवाला।

कण्वतम (सं० त्रि०) अत्यन्त बुद्धिमान्, निहायत अक्लमन्द।

कण्वमान् (सं० त्रि०) १ कण्वोंके विधिसे तैयार किया हुआ। २ स्तुतिकारकों द्वारा सङ्गठित।

कण्वरथन्तर (सं० क्लो०) कण्वेन गीतं रथन्तरम्, मध्यपदलो०। सामगानविशेष, सामवेदका एक गाना।

कण्ववत् (सं० अव्य०) कण्वकी भांति।

कण्वसखा (सं० पु०) कण्वोंका मित्र, जो कण्वोंसे दोस्ताना बर्ताव रखता हो।

कण्वसुता (सं० स्त्री०) कण्वस्य प्रतिपालिता सुता। शकुन्तला। एकदा विश्वामित्रको उग्र तपस्यासे डर देवराज इन्द्रने तपोविघ्नके लिये मेनका नाम्नी अप्सराको भेजा था। विश्वामित्र उसका रूपलावण्यादि देख विमोहित हुये। फिर उन्होंने उसके गर्भसे एक कन्या उत्पादन की थी। मेनका उस सद्यप्रसूत कन्याको वनमें फेंक यथास्थानको चली गयी। दैववश कण्व मुनिने उस कन्याको देख लिया था। वह दयार्द्र चित्तसे उसे अपने आश्रममें ला तनयाकी तरह लालन-पालन करने लगी। शकुन्तला देखो।

कण्वहोता (सं० पु०) कण्वको होताके स्थानमें रखनेवाला यजमान, जिसके कण्व होता रहे।

कण्वाश्रम (सं० पु०) कण्वस्य आश्रमः, ६-तत्। कण्व मुनिका आश्रम, कण्वके रहनेकी जगह। यह आश्रम मालिनी नदी किनारे अवस्थित है। कण्वाश्रम आदि धर्मारण्यके नामसे विख्यात है। इस स्थानके प्रवेशमात्रसे समस्त पाप विदूरित होता है। (भारत) कोटा राज्यसे दक्षिण चम्बल नदीके निकट भी एक कण्वाश्रम विद्यमान है। इसी स्थानके समीप मौर्यवंशीय शिवराजोंकी शिलालिपि मिली है।

कण्वश्रुति (सं० स्त्री०) कण्वेन प्रणीता श्रुतिः, कर्मधा०। शुक्लयजुर्वेदसे कण्वमुनि द्वारा संगृहीत एक धर्मशास्त्र।

कत् (सं० अव्य०) १ ईषत्, अल्प, थोड़ा। २ कुत्सिता। ३ काय।

कत (सं० पु०) कं जलं शुद्धं तनोति, क-तन्-ड। १ निर्मलीवृक्ष, निर्मलीका पेड़। कतक देखो। २ मुनिविशेष। यह विश्वामित्रके एकतम पुत्र थे। (हिं० अव्य०) किस कारण, क्यों, किस लिये।

कत (अ० पु०) लेखनीके अग्रभागका तिर्यक् छेदन, क़लमकी नोककी तिरछी तराश।

कतक (सं० पु०) तक् हासे बाहुलकात् अ, कस्य जलस्य तकः हासः प्रकाशोऽस्मात्। १ वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—अम्बुप्रसाद, कत, तिक्तफल, रुच्य, छेदनीय, गुच्छफल, कतफल और तिक्तमरिच है। कतकको बंगला और हिन्दीमें निर्मली, उड़ियामें कतोक, तेलङ्गमें कतकलु, इन्दुपुचेटु अथवा चिल्ल, तामिलमें तेत्तमरम् या तेत्तकोत्तै, दक्षिणीमें चिल्लबिञ्ज, सिंहलीमें इङ्गिनि और वैज्ञानिक अंगरेजोमें ष्ट्रिकनोस पोटेटोरम् (Strychnos potatorum) कहते हैं।

अति पूर्वकालसे यह वृक्ष भारतवर्षमें प्रसिद्ध है। हमारे पूर्वतन ऋषि इसके फलसे जलसंशोधन करते थे। (सुश्रुत) भगवान् मनुने कहा है—

"फलं कतकवृक्षस्य यद्यप्यम्बुप्रसादकम्।
न नामग्रहणादेव तस्य वारि प्रसीदति॥" (६।६७)

यद्यपि कतक इसका जल अच्छा परिष्कार करता, तथापि इसका नाम पेटमें भी जल स्वच्छ नहीं रहता।

यह वृक्ष भारतवर्षके पार्वत्य प्रदेश, बङ्गाल, दाक्षिणात्य और सिंहलके किसी किसी स्थानमें उत्पन्न होता है। प्रत्येक वृक्षकी ऊंचाई ३०से ४० फीट तक रहती है। इसकी लकड़ीमें भी मजबूत होती, वह इमारतके अनेक आवश्यक कामोंमें लगती है।

कतकका फल बादामी और प्रायः इसी मोटा होता, किन्तु पकनेसे काला पड़ जाता है। कस्तक हरिताभ धूसरवर्ण लगता और रेशमकी भांति परिष्कार रहने आच्छन्न रहता है। कतकका स्वाद आस्वादनहीन होता है।

कतक कटु, तिक्त, उष्ण, चक्षुर्हितकर, रुचिकर और अग्निदीपक एवं शूलनाशक है।' बीज जलको निर्मल बना देता है। (राजनिघण्टु)

भावप्रकाशके मतसे कतकका फल नेत्रपरिष्कारक, चक्षुर्हितकर, वायु एवं तृष्णाका नाश करनेवाला, शीतल, मधुर, गुरु और कषाय है। डाक्टर बताते, कि चक्षुसे जलका गिरना दबाने और इन्द्रियों प्रति पदार्थको निर्मली मधु तथा कर्पूरके साथ रगड़ कर लगाते हैं। मुसलमान चिकित्सक कतकको शीतल और शुष्क समझते हैं। पेटपर इसे लगानेसे उदरव्यथा दूर होती है। यह चक्षुकी ज्योति बढ़ाता और सर्पके विषको घट दबाता है। किसी प्रान्त मल्ली किला—मेह और मूत्राशय-सम्बन्धीय किसी प्रकारकी पीड़ापर निर्मली विशेष उपकारी है। तामिल वैद्योंके मतसे पक्व फलको पुकवा वमनकारक होता है। कार्णाटिक माधव कहते—निर्मलीके मूलत्वक् सोनेके औषधकी भांति व्यवहार करते हैं।

कूपकी दावांके नाम यह फल विद्यार्थियोंके पास रहना पड़ता है। क्योंकि पथमें किसी प्रकारका गन्दा जल मिलनेसे इसीके द्वारा परिष्कार किया जा सकता है। जल परिष्कार करनेका गुण रहनेसे ही अंगरेज लोग इसे क्लियरिङ्ग नट (Clearing nut) कहते हैं।

२ कामनट, कमीठी। ३ कुचेलक, कुचला। ४ कपोतक, सौंगरो गेंदु।

५ रामायणकी एक प्राचीन टीका। रामानुज प्रभृति रामायणके टीकाकारोंने अपनी-अपनी टीकामें कतकका उल्लेख किया है। डा० बुर्नेलके मतसे कतक सम्भवतः ई०के १४वें अथवा १५वें शताब्द विद्यमान रहे। किन्तु अपर टीकाकारोंकी उक्तिके अनुसार कतक-टीकाकार ११श या १२श शताब्दके लोग थे। कतक-टीकाकारने ग्रन्थके आरम्भमें रामकृष्णका स्तव किया है। इससे अनुमान होता, कि वह दक्षिण देशमें रहते थे।

कतकफल (सं० पु०) १ कतकवृक्ष, रीठेका पेड़। २ तमाल-वृक्ष, दमचिन। (क्ली०) ३ वारिप्रसादनफल, रीठा।

कतखेम (सं० पु०) किसी मुनिका नाम।

कतगुन (फा० पु०) कतवाका कुल काटनेकी किसी एक दस्ता। यह लकड़ी या हाथीदांतका बनता है।

कतद्वीप (सं० पु०) सिन्धु राज्यके अन्तर्गत एक नगर।

कतना (हिं० क्रि०) १ काता जाना, बनना, तैयार होना। (क्रि० वि०) २ कितना, किस कदर।

कतनी (हिं० स्त्री०) १ टेरिया, सूत कातनेकी टेकुरी। २ सूत कातनेका सामान रखनेकी टोकरी।

कतन्ना (हिं० पु०) बड़ी कैंची, कतरना।

कतन्नी (हिं० स्त्री०) कैंची, कतरनी।

कतफल (सं० पु०) कतं जलप्रसादकं फलमस्य, बहुव्री०। १ निर्मलीवृक्ष, रीठेका पेड़। २ निर्मली-फल, रीठा।

कतम (सं० त्रि०) किम्-डतमच्। बहु पदार्थोंके मध्य कोई एक, कौन, कोई एक।

कतमाल (सं० पु०) कं जलं तमयति ग्लपयति शोषयति वा, क-तम-णिच्-अच्। अग्नि, आग। इसका पाठान्तर कपमाल और खगमाल है।

कतर (सं० त्रि०) किम्-डतरच्। दोमें एक, दोमें कौन। "[illegible]" (कैय)

कतरछांट (हिं० स्त्री०) काटछांट, कतरब्योंत, कतराई और छंटाई।

कतरतः (सं० अव्य०) दोमें किस ओर, कौन तर्फ़।

कतरन (हिं० स्त्री०) काटछांटका टुकड़ा, कटा हुआ रही हिस्सा। कागज़, कपड़े, धातु आदिका कटा हुआ रही टुकड़ा कतरन कहाता है।

कतरना (हिं० क्रि०) १ कैंचीसे काटना, छांटना। २ किसी औज़ारसे काटना, टुकड़े करना। (पु०) ३ बड़ी कैंची। ४ बतकटा, बातको काट डालनेवाला।

कतरनाल (हिं० स्त्री०) किसी क़िस्मकी विम्री। इसपर दोहरी गडारी रहती है।

कतरनी (हिं० स्त्री०) १ कैंची, मेकराज़, बाल कपड़े वगैरह काटनेका एक औज़ार। २ कर्मकारों और स्वर्णकारोंका एक यन्त्र। इससे धातुकी चद्दर, तार वगैरह चीजें काटी जाती हैं। यह संड़सी-जैसी होती है। ३ तंबोलियोंका एक औज़ार। इससे तंबोली पान कतरते हैं। ४ जुलाहोंका एक औज़ार। इससे कपड़ा कटता है। ५ किसी क़िस्मकी सुतारी। इससे मोची और ज़ीनगर कड़ी जगह पर छोटी सुतारी घुसेड़नेके लिये छेद बनाते हैं। यह चौड़ी और नुकीली रहती है। ६ चम्पी, पत्ती। यह सादे कागज़ या मोमजामेका एक टुकड़ा है। छीपी बेल छापनेमें इसे व्यवहार करते हैं। जिस कोणपर वह पूरी छाप मारना नहीं चाहते, उसपर इसे जमा देते हैं। ७ मत्स्यविशेष, एक मछली। यह मल-वारकी नदीयोंमें रहती है।

कतरब्योंत (हिं० पु०) १ काट-छांट, कतराई। २ हेरफेर, उलट-पुलट। ३ सोचविचार। ४ निकास, चोरी। ५ हिसाब-किताब, जोड़तोड़।

कतरवां (हिं० वि०) कटावदार, चौरेसो, टेढ़ा, तिरछा।

कतरवाई (हिं० स्त्री०) १ कतरानेका काम। २ कत-रानेका पारिश्रमिक, कटाईकी मज़दूरी।

कतरा (हिं० पु०) १ खण्ड, विच्छिन्न अंश, कटा-हुआ टुकड़ा। २ प्रस्तरखण्ड, पत्थरका छोटा टुकड़ा। यह गढ़ाईसे निकलता है। ३ नौकाविशेष, एक बड़ी नाव। इसपर खड़े होकर मांझी नावको खेनेमें डांड चलाते हैं। वह पटेलेसे बराबर लम्बी रहती भी कम चौड़ी होती है। कतरेपर पत्थर वगैरह लदता है।

क़तरा (अ० पु०) विन्दु, बूंद।

कतराई (हिं० स्त्री०) १ कतरनेका काम, कतरब्योंत। २ कतरनेका पारिश्रमिक, कटाईकी मज़दूरी।

कतराना (हिं० क्रि०) १ बचाना, बचकर निकल जाना। २ कटाना, कतरवाना।

कतरी (हिं० स्त्री०) १ कातर, कोल्हूका पाट। इसीपर बैठ मनुष्य बैल हांकता है। २ अलङ्कार-विशेष, एक ज़ेवर। यह पीतलकी बनती और टखनों रहती है। नीच जातिकी स्त्रियां कतरीको हाथोंपर धारण करती हैं। ३ यन्त्रविशेष, एक औज़ार। यह लकड़ीकी बनती और कारनिस जमानेमें लगती है। इसकी लम्बाई १ फुट, चौड़ाई ३ इञ्च और मोटाई पाव इञ्च होती है। ४ जमी हुई मिठाईका एक टुकड़ा। ५ कैंची, कतरनी।

क़तल (अ० पु०) वध, हत्या, जानसे मारनेका काम।

क़तलबाज़ (अ० पु०) वधिक, जल्लाद, मार डालनेवाला।

कतला (हिं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली। यह बड़ी नदियोंमें मिलता है। कतला छह फोट तक लम्बा होता है। इसमें बल अधिक रहता है। कभी कभी पकड़ते समय कतला मछुवोंको झपटकर गिरा देता और काट लेता है।

क़तलाम (अ० पु०) सर्वसंहार, अन्धाधुन्ध, मार-काट। क़तलाममें अपराधी और निरपराधी नहीं देखते, एक ओरसे सबको मार देते हैं।

कतवाना (हिं० क्रि०) कताना, कातनेका काम दूसरेसे कराना।

कतवार (हिं० पु०) १ अप्रयोजनीय द्रव्यादि, बेकाम घासफूस। २ कातनेवाला, जो व्यक्ति कातता हो।

कतहुं (हिं० अव्य०) किसी ओर, कहीं।

कतहूं, कतहुं देखो।

क़ता (अ० स्त्री०) १ रूप, शक्ल, सूरत, बनावट। २ प्रकार, तर्ज़, ढङ्ग। ३ काटछांट, उधाई।

कताई (हिं० स्त्री०) १ कातनेका काम। २ कातनेका पारिश्रमिक, कतौनी।

कताना (हिं० क्रि०) कतवाना, कातनेका किसी दूसरेसे निकलवाना।

कतार (अ० स्त्री०) १ पंक्ति, पांति, श्रेण। २ समूह, ढेर।

कतारा (हिं० पु०) १ इक्षुभेद, किसी किस्मकी ऊख। कतारा लाल और लम्बा होता है। इसका वक्कल सख्त और सार मृदु रहता है। कतारेसे रसको गाढ़ा कर गुड़ बनाते हैं। २ इमलीका फल।

कतारी (हिं० स्त्री०) १ कतार, पंक्ति। २ छोटा कतारा।

कति (सं० त्रि०) का संख्या परिमाणं येषाम्, किम्-डति। (किमः संख्यापरिमाणे डति च। पा ५।२।४१) १ कौन संख्या रखनेवाला, कितना। २ कौन। ३ कितना। ४ अष्टकवर्ग (पु०) ५ विश्वामित्रके एकतम पुत्र। यह एक ऋषि और कात्यायनके पूर्वपुरुष रहे।

कतिक (हिं० वि०) १ कितना, किस परिमाणवाला। २ अल्प, थोड़ा। ३ अधिक, ज्यादा।

कतिचित् (सं० अव्य०) कितना, किस कदर।

कतिथ (सं० त्रि०) कति पूरणे डट् थुक् च। (बहुपूगगणसंघस्य तिथुक्। पा ५।२।५२) कतिपय, जिस दर्जेतक पहुंचा हुआ।

कतिधा (सं० अव्य०) कति विधार्थे धा। १ कहां कहां, कितनी जगह। २ कितने पर्यायों। ३ कई बार।

कतिपय (सं० त्रि०) कति-अयच् पुक् च। १ कुछ, कितना ही, थोड़ासा। २ इतना।

कतिविध (सं० त्रि०) कतिः विधा प्रकारोऽस्य, बहुव्री०। कितने प्रकारका, कैसा कैसा।

कतिशः (सं० अव्य०) कति वीप्सायां शस्। (संख्यैकवचनाच्च वीप्सायाम्। पा ५।४।४३) कितना कितना।

कतीमुख (सं० स्त्री०) किसी अप्सराका नाम।

कतीरा (हिं० पु०) निर्यासविशेष, एक प्रकारका गोंद। यह पीत निर्यास कुल्लूमें उत्पन्न होता है। सहजमें पानीमें नहीं घुलता। यह औषध रूपसे रक्त और शुक्रविकार तथा धातुविकार पर चलता है। अरबीमें इसको कतीरा कहते हैं। इसमें कतीरा मिलाकर लोग कपड़ेमें चमक लाते हैं। कपटी, कतीरा अधिक मिश्रित करनेसे पुष्ट गाढ़ा बन जाता है।

कतीक, कतिक देखो।

कतीहार—पश्चिमबंगालके पूर्णियाका प्राचीन नाम।

कतार (हिं० पु०) शुकभेद, किसी किस्मका तोता। इसके सिरपर काली धारी होती है।

कतरा (हिं० पु०) १ कतरा, टुकड़ा। २ प्रस्तरखण्ड-विशेष, पत्थरका एक टुकड़ा। यह नदीसे निकल पड़ता है।

कत्ता (हिं० पु०) १ अस्त्रविशेष, बांका। इससे बांस वगैरह काटा या चीरा जाता है। २ असिभेद, किसी किस्मकी तलवार। यह छोटा और टेढ़ा होता है। ३ पासा।

कत्तानन्द (सं० पु०) पासोंकी खड़खड़ाहट।

कत्ती (हिं० स्त्री०) १ छुरिका, चाकू, छुरी। २ छोटा कत्ता, किसी किस्मकी तलवार। ३ कटारी। ४ किसी किस्मकी कैंची। इसे सोनार व्यवहार करते हैं। ५ किसी प्रकारकी पगड़ी। इसे पगीकी तरह लपेटकर बांधते हैं।

कत्तृण (सं० क्ली०) कु कुत्सितं तृणम्, कोः कत् आदेशः। (तृणे च जातौ। पा ६।३।१०३) १ सुगन्धि तृणविशेष, रोहिषा, एक खुशबूदार घास। इसका संस्कृत पर्याय—पौर, सौगन्धिक, ध्याम, देवजग्धक, रौहिष, सुगन्ध, शष्प-गोल, सुगोलक, रौहिषतृण, कातृण, भूति, भूतिक, श्यामक, भूतीक, पूति, गुच्छल और देवगन्ध है। भावप्रकाशके मतसे कत्तृण कटुपाक, तिक्त एवं कषाय-रस और हृद्रोग, कण्ठरोग, विष, रक्त, शूल कास तथा ज्वरनाशक है। राजनिघण्टु देखो। २ यह पित्त और कफदोष, तृषा या रक्तदोष तथा वातकफके उपद्रवको निवारण करता है। ३ पौण्ड्रकी, कसकुन्दी।

कत्त्रि (सं० स्त्री०) कु कुत्सितं त्रायते, कु-त्रै-ड। १ कथा, सराय। २ कैश, पानकी दुकान, सराय और लोगोंके ठहरनेका स्थान, जिसमें लोगोंकी ठहरावट।

कत्य (सं० पु०) कुत्सितमायतनं। कोई व्यक्ति

पदार्थ, तीन ख़राब चीज़ें। यह शब्द नित्य ही बहुवचनान्त है।

कत्र्यादि (सं० पु०) पाणिनि उक्त जातादि अर्थमें ढकञ् प्रत्ययसे बना हुआ शब्दसमूह। कत्र्यादिगणके अन्तर्भूत कत्त्रि, उम्भि, पुष्कल, मोदन, कुम्भी, कुण्डिन, नगरी, माहिष्मती, वमती, उख्या और ग्राम शब्द है।

कत्थ (हिं० पु०) लोहेकी स्याही, एक रंग। किसी घटमें १५ सेर जल और आध सेर गुड़ या चीनी मिला थोड़ासा लोहचुन डालते हैं। फिर यह घट आतपमें रखा जाता है। कुछ दिन बाद घड़ेका पानी उठता और मुखपर गाज आ जमता है। जलका रूप काला-भूरा होनेपर कत्थ पक्का पड़ता और रंगाईमें लगता है।

कत्थई (हिं० पु०) १ किसी किस्मका रंग। आल-कालेरंगको कत्थई कहते हैं। इसके बनानेमें हर्रा, बाबूल, गेरू, कत्था और चूना पड़ता है। कत्थई रंगमें खटाई या फिटकरीका बोर नहीं लगाते। (वि०) २ खैरा, खैरका रंग रखनेवाला।

कत्थक (हिं० पु०) जातिविशेष, एक क़ौम। कत्थक नाचते और गाते-बजाते हैं। भारतवर्षमें जयपुरके कत्थक प्रसिद्ध हैं। कथक्का देखो।

कत्थन (सं० क्ली०) १ अहङ्कारोक्ति, लन्तरानी, डींग। (वि०) २ आत्मश्लाघापर, डींगिया। ३ शूरमन्य, शेख़ीखोर, लबाड़िया।

कत्था (हिं० पु०) १ खैर, खैरकी लकड़ियोंको उबाल कर निकाला हुआ सत। इसे इकट्ठा कर चौकोर टुकड़े या छोटे छोटे गोले बना लेते हैं। कत्था पानमें खाया और लख्लौमपर लगाया जाता है। कत्था और चूना बराबर पड़नेमें ही पानका मज़ा है। खदिर और खैर शब्द देखो।

कत्पय (सं० क्ली०) कत् सुखकरं पयः अस्य, बहुव्री०। १ सुखकर जलाशय, फरहतबख़्श तालाब। २ सुखकर जल, आराम देनेवाला पानी। (त्रि०) ३ तरङ्गित, उमड़ा हुआ, जो चढ़ रहा हो।

कत्लूखान्—एक लोहानी अफ़ग़ान। इन्होंके समय बङ्गालमें विद्रोह उठा था। उसी सुयोगमें (१५८०ई०) कत्लू खानने पठान सिपाही संग्रह कर उड़ीसे पर धावा मारा। क्रमशः इनके तत्त्वावधानमें चारो ओरसे पठान सिपाही आ आकर जमा हुये। कत्लूखानने उनके साहाय्यसे सलीमाबादमें सातगांवोंके शासनकर्ता मिर्ज़ा नजातको हराया और मेदनीपुर, वर्धमानपुर एवं दामोदर नदीके दक्षिण तीरका अधिकार पाया। उसी समय सम्राट् अकबरने मिर्ज़ा अज़ीज़को बङ्गाल, बिहार और उड़ीसेका शासनकर्ता नियुक्त कर भेजा था। किन्तु वह भी इनसे हार गये। १५८३ ई०को सुगन्धमारीके निकट दामोदर नदी किनारे मुग़लों और पठानोंमें युद्ध हुआ था। उसमें सादिक़ खान् और शाहकुली महरमने इन्हें परास्त किया। फिर अकबरके कर्मचारी और कत्लूखान्के बीच सन्धि हुई। उसके अनुसार उड़ीसा इन्हींके अधिकारमें रहा। किन्तु सम्राट् अकबरसे उस सन्धिका माना न था। कत्लूखान्को शास्ति देने मानसिंह बङ्गाल और बिहारके शासनकर्ता बनकर आये। धरपुरके निकट युद्ध चला था। इन्होंने सम्राट्के सिपाहियोंको हरा विष्णुपुर अधिकार किया और मानसिंहके पुत्र जगत्सिंहको बांध लिया। कुछ दिन पीछे ही कत्लूखान् मर गये। इनके प्रधान वज़ीर ईसाखानने मानसिंहसे सन्धि कर जगत्सिंहको छोड़ दिया।

कत्त्वर (सं० क्ली०) कत्-तृ-अप्। स्कन्ध, कन्धा।

कथं (सं० अव्य०) केन प्रकारेण, किम् थमु। किमश्च। पा ५।३।२५। १ किस विधानसे, कौन तरीके पर। २ कुतः, कस्मात्, क्यों, काहेसे।

"कथं यज्ञाः प्रभवति वेदशास्त्रविदां मते।" (मनु १।१)

कथंरूप (सं० त्रि०) किस आकारका, कौनसी सूरत-शक्ल रखनेवाला।

कथंवीर्य (सं० त्रि०) किस शक्तिका, कौनसी ताक़त रखनेवाला।

कथ, कथा देखो।

कथक (सं० पु०) कथयतीति, कथ कर्तरि ण्वुल्। १ पौराणिक कथा बांचकर जीविका निर्वाह करनेवाला। २ नाटककी रचना करनेवाला, यथा भरत।

रहता। संस्कृत पर्याय—प्रवक्ता और कथानायक है। २ वक्ता, वदन् अर्थात् कहनेवाला। ३ एक वैदालिक सम्प्रदाय।

कथकता (सं॰ स्त्री॰) कथक-तल्-टाप्। १ वाक्पाटव, वाक्कौशल। २ धर्मविषयक आलोचना, कथकका व्यवसाय।

कथकता पाठ (पारायण) से भिन्न होती है। [illegible] पाठकार्य प्रायःकाम-वर्जित है। किन्तु कथकता श्रोताओंको तृप्त करती है। कथकता शब्दसे भारतमें रामायण-महाभारत पुराणादि धर्मशास्त्रीय उपाख्यानोंकी वर्णनाका बोध होता है।

कथकताकी सृष्टि भक्तिका कारण क्या है? इस देशके लोग प्रायः धर्मके नाना कार्योंमें व्यस्त रहते हैं। विशेषतः संस्कृतभाषामें लिखित पाठ साधारण व्यक्ति समझ नहीं सकते। किन्तु कथकता अच्छी लगती है। इसमें आडम्बर, विलक्षण सङ्गीतविद्या और मधुर स्वर लोगोंके मन रिझानेकी क्षमताका होना आवश्यक है। कथकता देखनेसे सरल भावसे लोगोंके मनको अच्छी लगती है। मीठी बातोंसे लोगोंको धर्मोपदेश देनेके लिये यह एक उत्कृष्ट उपाय है। कितने लोगोंकी रुचि भले न रहे, कथकता सभीको प्रिय है। बड़े गुणवान् होनेसे लोग कथकों-को लेने जाते हैं। बङ्गालमें प्रायः सौ वर्षसे कथकताका प्रचार बढ़ गया है।

बङ्गालमें गदाधर और रामधन शिरोमणिने नये ढङ्गसे कथकताको प्रचार किया था। गदाधर शिरोमणि वर्द्धमान जिलेके सोनामुखी ग्राममें रहते थे। इनके छात्र सब कथक उनके शिष्य या प्रशिष्य थे। उनमें प्रायः सभी इन शिरोमणिकी प्रणालीके अनुसार कथकता करते हैं।

रामधन शिरोमणिके शिष्य बहुत हुए। उनके अनेक उपाख्यान लिखे थे। उनके रचित रामायणके भी बहुतसे अंश बहुदेशोंमें प्रचलित हैं। [illegible] मधुर ऐसा जो सङ्गीतविद्यामें ज्ञान भी प्रकट था। क्योंकि जिसने एकबार उनकी कथाको सुना, वह कभी उनको फिर भूल न सका। कथकके और इस प्रकार लिखनेवाले लोग रामधनकी प्रणालीके अनुसार कथकता किया करते हैं।

कथकताकी पुस्तकको 'पाट' कहते हैं। पुस्तकमें प्रथम शब्द कथकके कुछ आवश्यकीय मङ्गल रहते, जैसे—श्री॰ उ॰ अर्थात् श्रीरामाय या श्रीउ कहते हैं। पुस्तकके अतिरिक्त कथकको रात्रिवर्णना, सन्ध्यावर्णना, गोष्ठवर्णना, वसन्तवर्णना, देशवर्णना, विरहवर्णना प्रभृति सुन्दर रचना पड़ता है। वर्णनाका ज्ञान सूक्ष्म भी रहता है। इस वर्णनामें अनुप्रासका आडम्बर अधिक होता है। कथकताके समय आवश्यक वर्णना प्रयोग की जाती है।

कथकता आरम्भ करते [illegible] रस कथक देखते हैं। पहले मङ्गलाचरणपूर्वक कथाको सूचना होती है। फिर प्रथम कथकताका विषय बताते हैं। कथकका वक्तव्य सर्वत्र श्रोताके मनको रिझानेपर विशेष लक्ष्य रहता है। इस देशमें महाभारत, रामायण और भागवतकी कथकता होती है। जिस ग्रन्थकी वर्णना चलती, प्रति दिन उसमें एक-एक विषयकी कथकता निकलती है। यहाँ कथनीय विषयको कोई कोई 'पाला' भी कहता है, जैसे—दानलीला, ध्रुवचरित, प्रह्लादचरित इत्यादि।

७०।८० वर्ष पहले बङ्गालमें कथकताका बड़ा आदर रहा। उस समय अनेक अच्छे अच्छे कथक विद्यमान थे। प्रवीण लोग कथकताके पक्षमें रहे; क्या राजा, क्या मध्यवित्त और क्या दरिद्र—सभीको कथकता सुनना अच्छा लगता था। आजकल कथकताका वैसा समादर देख नहीं पड़ता। दो-एकके अतिरिक्त अच्छे कथक भी अब दुर्लभ हैं।

कथक्कड़ (हिं॰ पु॰) निज कथक, खुद किस्से कहनेवाला।

कथङ्कथिक (सं॰ त्रि॰) कथं कथमिति पृच्छति कथंकथा, कथम् कथम् शब्दमस्त्यस्य ठन्। प्रश्न, पूछनेवाला, जो हमेशा सवाल किया करता हो।

कथङ्कथिकता (सं॰ स्त्री॰) कथङ्कथिकस्य भावः, कथङ्कथिक-तल्-टाप्। प्रश्न, जिज्ञासा, पूछताछ, सवाल करते रहनेकी आदत।

कथङ्कर्मा (सं० त्रि०) किस प्रकार कार्य करनेवाला, कैसे काम चलानेवाला।

कथङ्कार (सं० अव्य०) कथम्-कृ-णमुल्। किसप्रकार, किस तौरसे, कैसे करके।

कथञ्चन (सं० अव्य०) कथम्-चन। किसी प्रकार नहीं, किसी तौरसे नहीं।

कथञ्चित् (सं० अव्य०) १ किञ्चित्, कुछ। २ कौसी प्रकार, किसी तौरसे, बमुश्किल।

कथन (सं० क्ली०) कथ भावे ल्युट्। १ कथा, वाक्य, बयान्। (त्रि०) २ कहनेवाला, बड़बड़िया, जो बहुत बात करता हो।

कथना (हिं० क्रि०) १ कथन करना, कहना। २ काव्यरचना करना, शेर बनाना। ३ निन्दा निकालना, हिक़ारत करना।

कथनी (हिं० स्त्री०) १ कथन, बातचीत। २ बकवाद, बड़बड़ाहट।

कथनीय (सं० त्रि०) कथ-अनीयर्। तव्यत्तव्यानीयरः। पा ३।१।९६। वक्तव्य, बयान् करने या कहने लायक्। २ सम्बन्धके योग्य, जो नाम रखने क़ाबिल हो। ३ निन्दनीय, ख़राब्।

कथन्ता (सं० स्त्री०) जिज्ञासा, पूछताछ।

कथम्, कथं देखो।

कथमपि (सं० अव्य०) कथम् अपिच, द्वन्द्व०। १ किसी प्रकार, किसी भी तौरसे। २ अति यत्नसे, बड़ी मुश्किलमें। ३ अति कष्टसे, बड़ी तकलीफ़में। ४ अति गौरवसे, बड़े बारमें। ५ दृढ़रूपसे, पक्के तौरपर।

कथम्प्रमाण (सं० त्रि०) किस प्रमाणवाला, कौनसी नापका।

कथम्भाव (सं० पु०) कथम्-भू-घञ्। कैसी स्थिति, कौनसी हालत।

कथम्भूत (सं० त्रि०) कथम्-भू-क्त। १ किस रूपवाला, कौनसी सूरत रखनेवाला। २ किसप्रकार उत्पन्न हुआ, किस तौरपर पैदा।

कथयान (सं० त्रि०) कथन करनेवाला, कहते हुआ, जो बोल रहा हो।

कथयितव्य (सं० त्रि०) कथ-णिच्-तव्य। वक्तव्य, कहने लायक, जो कहा जा सकता हो।

कथरी (सं० स्त्री०) १ कन्यारो, नागफनी। (हिं०) २ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। कथरी पुराने चिथड़ोंको जोड़ जोड़ बनायी और ओढ़ी या बिछायी जाती है। प्रायः दरिद्र इसे व्यवहार करते हैं। किन्तु कुछ वर्ष पहले भारतमें कथरीकी बड़ी चाल रही। कथरी बिछाने में मुलायम और ठण्डी रहती है। गरमीके दिनों कथरीपर सोना बहुत अच्छा लगता है।

कथा (सं० स्त्री०) कथ-अङ्-टाप्। चिन्तिपूजिकथिकुम्बि-चर्चश्च। पा ३।३।१०५। १ प्रबन्धकी बहु मिथ्या एवं अल्पसत्यपूर्ण कल्पना, क़िस्सा, कहानी। २ तर्क, बहस। "तत्त्वनिर्णयविजयान्यतरप्रयोजनकन्यायानुगतवचनसन्दर्भः कथा।" (गौतमवृत्ति १।४१) पदार्थके यथार्थ निश्चय किंवा प्रतिपक्षके पराजय प्रयोजक वाक्यका ही नाम कथा है। न्यायदर्शनके मतमें कथा त्रिविध होती है—वाद, जल्प और वितण्डा। नैयायिक उन्हीं व्यक्तियोंको कथाका अधिकारी समझते—जो श्रवणेन्द्रिय प्रभृतिमें कोई कोई दोष नहीं रखते, साधारण लोगोंका स्वीकृत वाक्य माननेमें तर्क उठानेसे डरते, अकलहकारी रहते, स्वीय वार्तामें साधारणका विश्वास बढ़ानेको युक्ति आदि कहते और यथार्थ निर्णयमें समर्थ पड़ते अथवा विपक्षके पराजयकी कामना करते हैं। "कथाधिकारिणश्च तत्त्वनिर्णयविजयान्यतराभिलाषिणः सर्वजनसिद्धानुभवापलापिनः श्रवणादि-पटवः अकलहकारिणः कथोपयिकव्यापारसमर्थाः।" (गौतमवृत्ति १।४१)

किसी किसी मतमें वादिप्रतिवादीके पक्ष और प्रतिपक्षका परिग्रह कथा कहाता है।

"वादिप्रतिवादिनोः पक्षप्रतिपक्षपरिग्रहः कथा।"

(सर्वदर्शनसंग्रह—अक्षपाद द०)

३ वार्ता, बात। ४ वाक्य, जुमला। ५ विवरण, बयान्, तफ़सील। ६ धर्मालोचना, मज़हबी बयान्। ७ उपन्यास विशेष, किसी क़िस्मका दास्तान्। इसमें पूर्वपीठिका और उत्तरपीठिका रहती है। पूर्वपीठिका एक कथक कहता है। अनेक श्रोता उसे उत्साह प्रदान करते हैं। कथक या वक्ता सब कथा कहता है। कथा समाप्त होनेसे उत्तरपीठिका पड़ती

है। इसमें वक्ता और श्रोता दोनों अपनी-अपनी बात कहते हैं। (अव्य०) ८ कथं, कैसे, क्योंकर, क्यों।

कथाक्रम (सं० पु०) कथायाः क्रमः प्रसङ्गः, ६-तत्। कथाप्रसङ्ग, गुफ्तगूका सिलसिला।

कथाचन (सं० क्ली०) प्रबन्धकल्पनाका प्राचुर्य, किस्सेकी बात।

कथादि (सं० पु०) ठक् प्रत्ययके लिये पाणिनिका कहा एक शब्दगण। इसमें कथा, विकथा, विश्वकथा, संकथा, वितण्डा, कुष्टविद्, जनवाद, जनेवाद, वृत्ति संग्रह, गुण, गण और आयुर्वेद शब्द पड़ता है।

कथानक (सं० क्ली०) कथयति कथ, कथ बाहुलकात् आनक्। १ गल्प, कहानी। २ कथाविशेष, कोई छोटा किस्सा। बैतालपचीसी और सिंहासनबत्तीसी आदिकी छोटी छोटी कथाओंका नाम कथानक है।

कथानिका (सं० स्त्री०) गद्यकाव्यभेद, किसी किस्सेकी कहानी। यह कथासे बिलकुल मिलती-जुलती है। केवल प्रधान विषयको कवि प्राय कहा करते हैं।

कथानुराग (सं० पु०) ध्यान, तवज्जो, बातचीतमें मन लगनेकी हालत।

कथान्त (सं० पु०) बातोंकी समाप्ति, बातचीतका आखीर।

कथान्तर (सं० क्ली०) कथाया अन्तरं अवकाशः। १ कथावसर, बातचीतका मौका। २ अन्य कथा, दूसरी बात। ३ कलह, झगड़ा।

कथापीठ (सं० पु०) कथायाः पीठमिव, उपमि०। कथाका आधार, किस्सेकी जड़। कथासरित्सागरके प्रथम लम्बकको 'कथापीठ' कहते हैं।

कथाप्रबन्ध (सं० पु०) कथायाः प्रबन्धः, ६-तत्। कथाका सन्दर्भ, किस्सेकी बन्दिश, बनी हुई कहानी।

कथाप्रसङ्ग (सं० पु०) कथायाः प्रसङ्गः, ६-तत्। १ नानाविध कथोपकथन, तरह-तरहकी बातचीत। २ बातें, बात। ३ गोष्ठीवचन, गप।

"[illegible]" ([illegible])

४ विषवैद्य, जहरकी दवा करनेवाला, जो जहर-मोहरा देखता हो। (त्रि०) कथायां प्रसङ्गो यस्य, बहुव्री०। ५ वर्णनकर्ता, कथाकार, किस्सा कहनेवाला, दिलचस्प। ६ वातुल, पागल, सनकाहा।

कथाप्राण (सं० पु०) कथया प्राणिति जीवति, कथा-प्र अन्-अच्; कथायां प्राणः जीवनोपायो यस्य इति वा। १ कथक, किस्सागो, कहानी कहकर काम चलानेवाला। २ नाटकरचयिता, नाटककी किताब बनानेवाला।

कथाभास (सं० पु०) असत् तर्कमूलक वाक्यविशेष, झूठी बहसकी एक बात। न्यायशास्त्रमें इसे वादी और प्रतिवादी उठाते हैं।

कथामय (सं० त्रि०) कथा-मयट्। कथापूर्ण, किस्सेसे भरा हुआ, जिसमें कहानियां रहें।

कथामृत (सं० क्ली०) कथाया अमृतम्, ६-तत्। कथारसकी प्रधानता, किस्सेकी दिलचस्पी। कथासरित्सागरके दूसरे लम्बकका नाम 'कथामृत' है।

कथायोग (सं० पु०) कथायाः योगः, ६-तत्। कथाप्रसङ्ग, गुफ्तगू, बातचीत।

"[illegible]" ([illegible])

कथारम्भ (सं० पु०) कथायाः आरम्भः, ६-तत्। कथाका आरम्भ, किस्सेका आगाज, कहानीकी कहाई।

कथारम्भकाल (सं० पु०) कथाके आरम्भ होनेका समय, जिस वक्त किस्सा कहना शुरू करें।

कथालाप (सं० पु०) कथायाः आलापः, ६-तत्। कथनोपकथन, बातचीत।

कथावशेष, कथाशेष देखो।

कथावार्ता (सं० स्त्री०) कथा च वार्ता च, द्वन्द्व०। विविध कथा, तरह तरहकी बात-चीत, किस्सा-कहानी।

कथाविनोद (सं० त्रि०) बातोंसे आनन्द लेनेवाला, जो बातचीत पसन्द करता हो।

कथाशेष (सं० त्रि०) कथा मात्रं शेषो यस्य, बहुव्री०। १ मृत, मुर्दा, जिसकी सिर्फ बात बाकी रहे। (पु०) २ कथासमाप्ति, किस्सेकी खातिमा।

कथासंग्रह (सं० पु०) आख्यानोंका समूह, कहानियोंकी गड्डी।

कथासरित्सागर (सं० पु०) १ कथाओं नदियोंका समुद्र, कहानियोंके दरियावोंका बहर। २ संस्कृत कथाग्रन्थविशेष, कहानियोंकी किसी किताबका नाम। सोमदेव भट्ट भारत अनेक कहिने बतलो-

राधिपति श्रीहर्षदेवकी महिषीके चित्तविनोदार्थ पैशाची भाषासे संस्कृतमें इसे अनुवाद किया था। इसमें कौशाम्बीराज वत्सराजके पुत्र नरवाहन दत्तका चरित्र वर्णित है। गुणाढ्य, सोमदेव और क्षेमेन्द्र देखो।

कथिक (सं॰ त्रि॰) कथ-ठन्। १ कथक, पुराण-वक्ता, किस्से कहनेका पेशा करनेवाला। (हिं॰) २ कत्थक, नाचने-गानेवाला।

कथिका (सं॰ स्त्री॰) तक्रादि-साधित खाद्यद्रव्य-विशेष, कढ़ी, महेरी। कढ़ी देखो। यह पाचन, रुच्य, लघु, वह्निदीपन, कफानिलविबन्धघ्न और किञ्चित् पित्तप्रकोपन है। (वैद्यकनिघण्टु)

कथित (सं॰ त्रि॰) कथ-क्त। १ उक्त, कहा हुआ। २ वर्णित, बयान् किया हुआ। ३ उच्चारित, मुंहसे निकाला हुआ। ४ व्याख्यात, समझाया हुआ। ५ प्रतिपादित, साबित किया हुआ। (क्ली॰) ६ कथन, बातचीत। ७ प्रबन्ध विशेष, मृदङ्गका कोई बोल। (पु॰) ८ परमेश्वर, विष्णु।

कथितपद (सं॰ क्ली॰) कही हुई बात, दोहराव।

कथितपदता (सं॰ स्त्री॰) पुनरुक्ति, दोबारा कहाई। यह अलङ्कारशास्त्रोक्त एक दोष है। एकार्थवाचक दो शब्द किसी स्थानमें पड़नेसे कथितपदता आती है।

"रतिलीलाश्रमं भिन्ते सलीलमनिलो वहन्।" (साहित्यदर्पण)

उक्त पदमें लीला शब्द निरर्थक है। क्योंकि रति-श्रम कहनेसे ही अर्थ निकल सकता था। फिर अनेक स्थलमें यह दोष गुणकी भांति काम देता है—

"कथितञ्च पदं पुनः।
विहितस्यानुवाद्यत्वे विषादे विस्मये क्रुधि॥
दैन्येऽथ लाटानुप्रासे ह्यनुकम्पायां प्रसादने।
अर्थान्तरसंक्रमितवाच्ये हर्षेऽवधारणे॥" (साहित्यदर्पण)

विहितानुवाद, विषाद, विस्मय, क्रोध, दीनता, लाटानुप्रास, अनुकम्पा, प्रसादन, अर्थान्तरवाच्य, हर्ष और अवधारणमें कथितपदता—दोष नहीं—गुण है।

कथीकृत (सं॰ त्रि॰) अकथा कथा सम्पद्यमाना क्रियतेऽस्म, कथा-च्वि-कृ-क्त। कथामात्रमें अवशिष्टकृत, मृत, मुर्दा। "कथावशेषं कथीकृतं वपुः।" (कुमार ४।१३)

कथीर (हिं॰ पुं॰) कस्तीर, रांगा।

कथील, कथीर देखो।

कथीला, कथीर देखो।

कथोदय (सं॰ त्रि॰) कथायां उदयः प्रकाशो यस्य, बहुव्री॰। १ कथासे उत्पन्न, कहानीसे निकाला हुआ। (पु॰) २ कथाका उत्थापन, किस्सेका उठान।

कथोद्घात (सं॰ पु॰) नाटककी एक प्रस्तावना, स्वांगका शुरू।

"सूत्रधारस्य वाक्यं वा समादायार्थमस्य वा।
भवेत् पात्रप्रवेशश्चेत् कथोद्घातः स उच्यते॥" (साहित्यदर्पण)

प्रथम अभिनेता जब सूत्रधारके वाक्य या वाक्यके किसी अर्थको पकड़ प्रवेश करता, तब कथोद्घात पड़ता है। रत्नावलीमें सूत्रधारके वाक्यको अवलम्बन और वेणीसंहारमें सूत्रधारके वाक्यार्थको अवलम्बकर पात्रका प्रवेश देखाया है।

कथोपकथन (सं॰ क्ली॰) कथायां उपकथनम्, ७-तत्। कथापर कथा, विविध वार्ता, दो चार लोगोंका एकत्र हो किसी विषयपर परामर्श या आन्दोलन, बातचीत।

कथ्य (सं॰ त्रि॰) कथ-य। कहनेके उपयुक्त, बता देने लायक। "भरतस्य समीपे तेनाई कथ्यः कदाचन।" (रामायण ५।९६)

कथ्यमान (सं॰ त्रि॰) कथ कर्मणि शानच्। कहा जानेवाला, जिसे कोई कह रहा हो।

कद् (सं॰ अव्य॰) कहां, किस जगह।

कद (सं॰ पु॰) कं जलं ददाति, क-दा-क। १ मेघ, बादल। (त्रि॰) २ जलदाता, पानी देनेवाला। ३ सुखदायक, आराम पहुंचानेवाला।

कद (हिं॰ स्त्री॰) १ ईर्षा, नाराजी, अनबन। २ हठ, जिद। (अव्य॰) ३ कदा, कब, किस वक्त।

क़द (अ॰ पु॰) डीलडौल, लम्बाई-चौड़ाई।

कदक (सं॰ पु॰) कदः मेघइव कायति प्रकाशते, कद-कै-क। अन्द्रातप, चंदोवा।

कदक्षर (सं॰ क्ली॰) कु कुत्सितं अक्षरम्, कोः कदा-देशः। १ कुत्सित अक्षर, खराब हर्फ, बुरी लिखा-वट। (त्रि॰) २ कुत्सित अक्षर लिखनेवाला, बदखत, जो बुरे हर्फ बनाता हो।

कदग्नि (सं॰ पु॰) कुत्सिता अग्निः, कोः कदादेशः।

१ मन्दाग्नि, थोड़ी आग। (त्रि०) २ मन्दाग्नियुक्त, थोड़ी आग रखनेवाला।

कदधव (हिं०) कदध्वा देखो।

कदध्वा (सं० पु०) कुत्सितो ऽध्वा, कोः कदादेशः। निन्दित पथ, बुरी राह। इसका संस्कृत पर्याय—व्यध्व, दुरध्व, विपथ और कापथ है।

कदन (सं० क्ली०) कदयति, दुःखं प्राप्यते ऽनेन, कद-णिच्-ल्युट् घटादित्वात् नह्रस्वः। १ पाप, गुनाह। २ मर्द, मलाई, रौंदाई, कुचलाई। ३ युद्ध, लड़ाई। ४ मारण, विनाश, बरबादी।

कदनप्रिय (सं० त्रि०) विनाशका अनुराग रखनेवाला, जिसे मारकाट अच्छी लगे।

कदत्तनाद—मद्राजके मलवार जिलेके मध्यका एक प्राचीन राज्य। यह अक्षा० ११° २६′ से ११° ४८′ उ० और देशा० ७५° २६′ से ७५° ५२′ पू०के मध्य अवस्थित है। कदत्तनाद राज्य समुद्रोपकूलसे पश्चिमघाटके पश्चिमपार्श्व पर्यन्त फैल रहा है। इसके समुद्रतीरवर्ती स्थान बहुत उपजाऊ हैं। पूर्व और पार्वत्यप्रदेशमें वन यथेष्ट है। इसमें इलायची अधिक होती है। १५६० ई०को किसी नायक सरदारने यह राज्य स्थापित किया। उक्त व्यक्ति कोलात्री राज्यके राजा तेल्लालद्दुरके निकटसे आये थे। अन्तमें टीपू सुलतान्ने इस वंशको राज्यसे दूरीभूत किया। फिर १७५२ ई०में अंगरेज सरकारने प्राचीन वंशधरको राज्यका अधिकार सौंपा। इसकी राजधानी कत्तिपुरम् है।

कदन्न (सं० क्ली०) कुत्सितं अन्नम्, कोः कदादेशः। १ कुत्सितान्न, खराब खाना। २ कदर्यान्न, मोटा अनाज। शास्त्रनिषिद्ध और अपथ्य अन्नको कदन्न कहते हैं। "हविर्विना हरिर्याति विना पीठेन माधवः।

कदन्नैः पुण्डरीकाक्षः प्रहारैश्च धनञ्जयः॥" (उद्भट)

कदन्नभोजी (सं० त्रि०) कुत्सितं अन्नं भुङ्क्ते, कदन्न-भुज-णिनि कोः कदादेशः। जघन्य अन्न भोजन करनेवाला, जो खराब अनाज खाता हो।

कदपत्य (सं० क्ली०) कुत्सितं अपत्यम्, कोः कदादेशः। १ कुपुत्र, खराब बैटा, बुरी औलाद। (त्रि०) २ अतिशय मन्द पुत्रवाला, जिसके बहुत खराब बैटा रहे।

कदपा—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। इसके उत्तर करनूल-जिला, पूर्व नेल्लूर, दक्षिण उत्तर अर्कट् तथा कोलार जिला और पश्चिम बेलारी जिला है। भूमिपरिमाण ८७४५ वर्ग मील पड़ता है।

इस जिलेका पूर्व एवं दक्षिण अंश पार्वतीय है। दक्षिण-पश्चिम भाग समतल लगता है। दक्षिण-पूर्वभागमें हिन्दुवोंका पुण्य शैल तिरुपती विद्यमान है। पालकोंडा और शेषाचल नामक पहाड़ इस जिलेको दो भागोंमें विभक्त करते हैं—निम्न भाग और उच्च भाग। उक्त दोनों पर्वत पेन्नार (पिनाकिनी) नदी पर्यन्त विस्तृत हैं। पालकोंडेका अर्थ 'दुग्धशैल' है। बोध होता—यहां सुन्दर गोचारणक्षेत्र रहनेसे उक्त नाम पड़ा होगा। इस जिलेमें पेन्नार नदी ही प्रधान है। इस नदीकी दो शाखा हैं—कुण्डेर और सगलेर। सिवा इनके पापघ्नी, चैरेर और चित्रवती नाम्नी दूसरी भी कई नदी पड़ती हैं। यहां वनकी कोई कमी नहीं। वनमें अच्छी अच्छी लकड़ी मिलती है।

खनिज पदार्थोंमें लोहा, तांबा, चूनेका कङ्कड़, स्लेट और बिल्लौरी पत्थर निकलता है। कदपा नगरसे तीन-चार कोस उत्तर पिनाकिनी नदी किनारे चेण्णूरके पास हीरा मिला है। उद्भिज्जमें चना, कम्बु, धान, गेहूं, तम्बाकू, मिर्चा, नानाप्रकार तेलवीज, इक्षु, नील, केसर, कपास और पाट प्रभृति उपजता है।

इतिहास—पूर्वकालको यह जिला चोलराज्यके अन्तर्गत था। यहां श्रीरामचन्द्रके आगमनकी नानाप्रकार किंवदन्ती प्रचलित है।

कदपामें बहुत दिन हिन्दुवोंका राज्य रहा। स्थानीय पहाड़ोंपर अनेक दुर्भेद्य दुर्ग रहनेसे मुसलमान सहज ही इसे जीत न सके थे। अन्तको अनेक कष्ट उठा उन्होंने कदपा जय किया। १५६५ ई०को तालिकोटकी दुर्घटनाके पीछे कर्णाटक जीत मुसलमान कदपाके बीचसे आते जाते रहे। उसी समय गोलकुण्डेके अधीनस्थ प्रधान प्रधान मुसलमान सामन्त नाना स्थान अपने भागयोग बनाने लगे। उनमें

गुरुम्-कुण्डके किसी नवावने कदपा अधिकार किया। यह नवाव अत्यन्त पराक्रान्त हो गये थे। अन्तको इन्होंने अपने नामसे मुद्रादि भी चला दिये।

चिरदिन कोई विषय समान नहीं रहता। यहांके मुसलमानोंकी क्षमता क्रमशः घटने लगी। १६४२ ई०को महाराष्ट्र-वीरोंने यह स्थान जीत लिया था। महावीर शिवजीने ब्राह्मणोंको यहांके दुर्गकी रक्षाका भार सौंपा। कुछ दिन बाद मुसलमानोंने इसे फिर जीता था। नबी खान् नामक एक पठान कदपाके स्वाधीन नवाब बने। इसके पीछे क्रमान्वयमें तीन नवाबोंने प्रबल प्रतापसे राज्य शासन किया था। १७३२ ई०को अन्तिम नवाबसे महाराष्ट्रोंका विवाद बढ़ा। उसी समयसे यहांके नवाबोंकी क्षमता घट चली। १७५० ई०को कदपाके नवाब कर्णाटकके युद्धकाण्डमें लिप्त थे। दूसरे वर्ष उन्होंने निज़ाम मुज़फ्फ़र जङ्गके विरुद्ध षड़यन्त्र किया। उसीसे लुकरेड्डीपल्ली नामक गिरिपथपर निज़ाम मारे गये। १७५७ ई०को महाराष्ट्रोंने कदपा नगर जीत लिया था। किन्तु उसी समय निज़ामकी फौज कदपाभिमुख अग्रसर होनेसे महाराष्ट्र कुछ कर न सके।

महिसुरमें हैदर अली प्रबल पड़ गये थे। १७६८ ई०को उन्होंने अंगरेजोंके साथ युद्ध रोक कदपा जीतनेका प्रबन्ध बांधा। किन्तु हैदर अलीने समझा, कि कदपा जीतना बहुत सहज न था। इसीसे उन्होंने गुप्त भावमें निज़ामके साथ सन्धि की। उक्त सन्धिके अनुसार ठहर गया—दोनों मिलकर कर-मण्डल उपकूल जीतें और अवलब्ध जनपदादिके मध्य हैदर अली कदपा ले लें। अनेकबार युद्ध हुआ था। १७८२ ई०को हैदर अली मर गये। कदपा-वाले अन्तिम नवाबके किसी वंशधरने सिंहासन पानेका दावा किया था। कितनी ही अंगरेजी फ़ौज उसकी साहाय्य देने पर राज़ी हुई। किन्तु उभय दलके सामने आते ही मुसलमानोंने अंगरेजी सिपाहियोंकी अन्यायरूपसे मार डाला। इसके बाद कदपामें कुछ दिन तक कोई झगड़ा न उठा। १७८० ई०को निज़ामने यह स्थान उद्धार करनेको सविशेष चेष्टा लगायी थी।

१७९२ ई०के सन्धिपत्रानुसार टीपू सुलतानने समस्त कदपा ज़िला निज़ामको सौंप दिया। फिर निज़ामने रेमण्ड साहबको जायगिर प्रदान किया। उसके बाद कई वर्षतक पलिगारोंने कदपा दुर्ग अधिकार करनेको अनेक चेष्टा लगायी थी। १७९८ ई०में निज़ामने अपना देय धन परिशोधके लिये अंगरेजोंको कदपा दे डाला। १८०० ई०से यह ज़िला अंगरेजोंके हाथ आया। इसी समय कदपाका पार्वतीय स्थान पलिगारोंके अधिकारमें रहा। वह मध्य मध्य बड़ा उत्पात उठाते थे। दस्युवृत्ति द्वारा उनको एक प्रकार जीविका चलती रही। प्रथम अंगरेज़ उन्हें दबा न सके थे। किन्तु क्रमशः नाना प्रकार उपाय अवलम्बन करने पर पलिगारोंने वश्यता मानी। उनके वंशधर आज भी कदपाके नाना स्थानोंमें मौरूसी ज़मीन् पाये हैं। १८३२ ई०को किसी मसजिदपर यहांके पठानों और अंगरेजोंसे झगड़ा लग गया था। उससे यहांके समस्त मुसल-मानोंने विद्रोही हो सब-कलक्टर मेकडोनल्डको मार डाला। इस घटनाके चार वर्ष पीछे यहांके किसी पलिगारने गवरनमेण्टसे मनोमत वृत्ति न पानेपर कोई दो हज़ार लोग संग्रह कर अंगरेजोंके साथ युद्ध छेड़ा था। कईबार युद्ध होनेपर विद्रोहियोंमें कोई हत तथा कोई आहत हुआ और कोई भाग गया। उस समयसे कदपामें शान्ति स्थापित हुई।

यहां हिन्दू और मुसलमान रहते हैं। हिन्दुओंमें ब्राह्मणोंकी संख्या अधिक है। प्रायः सकल ब्राह्मण शैव और वशिष्ठ वैष्णव हैं। सिवा इनके बलदी, येरुकल, चेञ्चुवर और सुगला प्रभृति कई प्रकारकी दूसरी जातियां भी बसती हैं।

कदपा ज़िलेके प्रधान नगर यह हैं—कदपा, बदवेल, प्रोद्दतुर, जम्मलमदगु, कदिरी, दमलचेरो, पुलिवेन्दल, रायचोट, वेम्पल्ली और बयलपद।

२ कदपा नगर। यह नगर अक्षा० १४° २८′ ४६″ उ० और देशा० ७८° ५१′ ४७″ पू०पर अवस्थित है।

कदपा शब्द संस्कृत कृपा शब्दका अपभ्रंश है। कोई कहता—गदप शब्दसे 'कदपा' बना है। तेलङ्ग गदप शब्दका अर्थ 'द्वार' है। तिरुपती जानेका पथ रहनेसे ही गड़प (कड़पा) नाम पड़ा है।

विजयनगरवाले राजाओंके समय कदपाकी अच्छी सुखसमृद्धि रही। उस समयका प्राचीन नगर अब देखनेमें नहीं आता। उसीके पार्श्वपर कदपा नगर स्थापित हुआ है। ई० १८वें शताब्दके प्रारम्भमें कुदपाके नवावने यहां स्वतन्त्र राजधानी डाली थी।

कादव—महिसुर-राज्यके तुमकुर जिलेकी एक तहसील। इसकी भूमिका परिमाण ४८६ वर्गमील है। प्रधान नदी शिमशा उत्तरपूर्वसे दक्षिणमुख बहती है। कादव और गन्धि नामक दोनों स्थलोंपर इसी नदीके गर्भमें दो ह्रद विद्यमान हैं। इस जिलेका सदर मुकाम गब्बी है। उसमें अदालत और थाना मौजूद है।

इस जिलेमें दवोघाटेके निकट एक प्रकारका खनिज पदार्थ मिलता है। अंगरेजीमें उसे हारन-ब्लेण्ड (Horn-blend) कहते हैं। यह धातु कांचकी शलाका-जैसा लम्बा और ढालू रहता है। इसके तीन रङ्ग हैं—कृष्ण, हरित् और श्वेत। अंगरेजीमें कृष्णवर्णको हारनब्लेण्ड (*Horn-blend*), हरिद्वर्णको आक्टिनोलाइट (Actinolite) और श्वेतवर्णको ट्रिमोलाइट (Tremolite) कहते हैं। इस पदार्थमें मेगनेशिये, चूने और लोहेका अंश विद्यमान है।

इस जिलेके कादव ग्राममें श्रीवैष्णव ब्राह्मणोंका एक उपनिवेश है। इसे लोग अनेक दिनोंका प्राचीन ग्राम कहते हैं। ग्राममें एक वृहत् सरोवर विद्यमान है। शिमशा नदीमें बांध डालनेसे ही उक्त सरोवर निकला है। प्रवाद है—रामचन्द्र लङ्का जीतने पीछे प्रत्यावर्तनके समय यह बांध बना गये थे।

कदभ्यास (सं० पु०) कुत्सितोऽभ्यासः, कर्मधा०। मन्द अभ्यास, बुरी आदत।

कदम (हिं० पु०) १ कदम्बवृक्ष, एक पेड़। कदम्ब देखो। २ तृणविशेष, एक घास।

क़दम (अ० पु०) १ पद, पैर। २ फलांग, डग, पैरका फासला। ३ धूलि या पङ्कपर अङ्कित पदचिह्न, पैरका निशान्। ४ अश्वगतिविशेष, घोड़ेकी एक चाल। इसमें घोड़ा खूब जमकर पैर उठाता और सवार बहुत आराम पाता है। न तो उसका शरीर हिलता और न कोई धक्का ही लगता है। पहले पहल घोड़ेको क़दम ही सिखाते हैं। लगाम कड़ी न रखनेसे यह चाल बिगड़ जाती है।

क़दमचा (फ़ा० पु०) १ पदार्पण करनेका स्थान, पैर रखनेकी जगह। २ खुड्डी।

क़दमबाज़ (अ० पु०) क़दम चलनेवाला घोड़ा।

कदमा (हिं० पु०) मिष्ट खाद्यद्रव्यविशेष, एक मिठाई। यह कदम्बके पुष्प-जैसा बनता है। बङ्ग-देशके राढ़ अञ्चलमें कदमाका प्रचुर व्यवहार है।

कदम्ब (सं० पु०) कदि-अम्बच्। कक्षिकडिकटिभ्यो ऽम्बच्। उण् ४।८२। १ वृक्षविशेष, कदमका पेड़। (Anthocephalus Cadamba) इसका संस्कृत पर्याय—नीप, प्रियक, हरिप्रिय, कादम्ब, षट्पदेष्ट, प्रावृषेण्य, हलिप्रिय, वृत्तपुष्प, सुरभि, ललनाप्रिय, कादम्बर्य, सीधुपुष्प, महाढ्य और कर्णपूरक है। इसका हिन्दी एवं बंगलामें कदम, कर्णाटीमें कदवेदु, तामिलमें *वेल्लकदम्ब, तेलङ्गमें कोदम्ब, कद्द्या, कदिमोमा या* कदपचेतु कहते हैं।

यह सुन्दर वृक्ष भारतवर्ष, ब्रह्म और सिंहलमें उत्पन्न होता है। ऊंचाई ७०से ८० फीट तक रहती है। कदम्ब बहुत शीघ्र बढ़ता है। पहले दो-तीन वर्षतक सालमें यह कोई १० फीट ऊंचा पड़ता है। किन्तु १०।१२ वर्ष बाद बाढ़ घटने लगती है। कदम्ब सदाबहार पेड़ है। पत्र महुवेके पत्रोंसे मिलते, किन्तु कुछ क्षुद्र और भासुर लगते हैं। कदम्ब वर्षा ऋतुमें फूलता है। पुष्प गोल और पीतवर्ण होते हैं। किन्तु पीत किरण झड़ जानेसे यही पुष्प गोल एवं हरित्वर्ण फल बन जाते हैं। फल पकनेपर लाल निकलते हैं। लोग उन्हें अचार या चटनीमें व्यवहार करते हैं। फलोंका स्वाद खटमिट्ठा लगता है। कभी-कभी कदम्बकी पत्ती मवेशियोंको खिलायी जाती है। काठ मृदु एवं श्वेतवर्ण रहता, किन्तु

उसमें कुछ कुछ पीतत्व झलकता है। उससे कछार और दारजिलिङ्गमें चायके सन्दूक बनते हैं। कदम्बसे कड़ियों और बरंगोंका भी काम निकलता है। कारण इसका काठ सुलभ और लघु रहता है। फिर कदम्बके काठसे नौका और नानाविध उपयोगी वस्तु बनाते हैं।

भावप्रकाशके मतसे यह मधुर, कषाय एवं लवणरस, गुरु, विरेचक, विष्टम्भकारी, रुच और कफ, स्तन्य तथा वायुवर्धक है।

नीप, महाकदम्ब, धाराकदम्ब, धूलिकदम्ब, कदम्बक प्रभृति कदम्बके विविध भेद हैं।

कदम्ब फल श्रीकृष्णको बहुत प्रिय है। इसीसे झूलनेमें कदम्बके पुष्प व्यवहृत होते हैं। कदम्बके वृक्षसे एक प्रकारका मद्य निकलता, जिसका नाम कादम्बरी पड़ता है।

विष्णुपुराणमें लिखा है—बलरामको गोपगोपियोंके साथ घूमते देख वरुणने वारुणी (शराब)से कहा था—हे मदिरे! तुम जिनके अभिलाषका पात्र हो, उन्हीं अनन्तदेवके उपभोगार्थ गमन करो। वरुणको बात सुन वारुणी वृन्दावनोत्पन्न कदम्ब वृक्षके कोटरमें जा पहुंची। बलरामको घूमते-घूमते उत्तम मदिराका गन्ध मिला था। इससे उनका पूर्वानुराग जाग उठा। कदम्ब वृक्षसे विगलित मद्य देख वह परम आनन्दित हुये थे। फिर गोपगोपियोंने गान करना आरम्भ किया। बलरामने उनके साथ साथ मदिरा पी।

कादम्बरी मद्यकी उत्पत्तिके सम्बन्धपर हरिवंशमें इसप्रकार लिखा है—किसी दिन बलराम एकाकी शैलशिखरपर घूमते-घूमते एक प्रफुल्ल कदम्बतरुको छायामें बैठ गये। फिर अकस्मात् मदगन्धयुक्त वायु चलने लगा। वायुवश मदगन्ध उनके नासाविवरमें प्रविष्ट होते ही रातको मद्यपान करनेसे प्रभातके समय सुख छूटनेकी भांति मदपिपासाका वेग बढ़ा। वह कदम्ब वृक्षकी ओर देखने लगे। वर्षाका जल उस प्रफुल्ल कदम्बके कोटरमें पड़ मद्य बन गया था। बलराम अत्यन्त तृष्णाकुल हो वह मदवारि पुनः पुनः पान करने लगे। उस वारिपानसे बलराम मत्त हो गये। शरीर विचलित पड़ा था। उनका शारदीय सुधांशुसे ईषत् चञ्चल लोचनसे घूमने लगा। उस अन्नयत् देवानन्द-विधायिनी वारुणीका नाम कदम्बके कोटरमें उत्पन्न होनेसे ही कादम्बरी पड़ा है।

"कदम्बकोटरे जाता नाम्ना कादम्बरीति सा।" (हरिवंश ९९ अ०)

२ सर्षपवृक्ष, सरसोंका पेड़। ३ देवताड़वृक्ष। ४ माक्षिक, शहद। ५ जगत्, दुनिया।

"स एव नीप नित्यं रामसे भूरि विजकदम्बल रम्यः वे पुरः पातु।" (छवि)

(क्लो०) ६ समूह, झुण्ड।

कादम्ब (कादम्ब)—दाक्षिणात्यकी एक प्राचीन पराक्रान्त जाति। किसी समय इस जातिके लोग दक्षिणभारतमें अतिशय प्रबल हो गये थे। उस समय तापी नदीके दक्षिणसे गोपराष्ट्र (गोवा) पर्यन्त सकल देश कदम्ब राजाओंके अधिकारमें रहा।

दाक्षिणात्यका इतिहास और शिलालिपि पढ़नेसे कदम्बोंका कितना ही वृत्तान्त प्राप्त होता है। किन्तु इस बातका आज भी कोई ठिकाना नहीं—कदम्ब दक्षिण भारतके आदिम निवासी हैं या नहीं, आर्य हैं अथवा अनार्य और किस सम्प्रदायको मानते हैं। किसी-किसी जातितत्त्वविद्‌के मतसे यह दाक्षिणात्यके आदिमनिवासी हैं। वर्तमान कुडम्बोंके नाममें इनका बड़ा संस्रव लगा है। किन्तु विवेचना करनेसे कुडम्ब सन्तान अनार्य जातिके लोग समझ पड़ते हैं। इसका कुछ भी निदर्शन या प्रमाणादि नहीं मिलता— पराक्रान्त कदम्बोंके साथ उनका कोई संस्रव लगता है। फिर कदम्बोंको उत्तर भारतके प्राचीन आर्योंकी शाखा भी कह नहीं सकते। किन्तु किसी समय सत्यताके बल इन लोगोंका आर्योंसे समान आसन अधिकार करना सच है।

कदम्ब जातिके सकल पूर्वपुरुष शैव रहे, वह अपर देवताका प्राधान्य मानते न थे। इसीसे पुराणकारोंने कदम्बोंको असुर कहा है।

स्कन्दपुराणके नागोपाख्यानमें किसी कदम्ब राजाका असुर नामसे उल्लेख है। इन असुर-राजका विवरण

मकल ही पवस्थामें उसका गोलमाव रहता है। ऐसे ही किसी वस्तु या विषयका एक भाव बना रहनेसे 'कदम्बगोलकन्याय' समझा जाता है।

कदम्बट (सं॰ पु॰) कदम्बकी घलयें व। सर्षप, सरसों।

कदम्बनिर्याम (सं॰ पु॰) कदम्बका वेष्टक, कदम्बका मल।

कदम्बपुष्प (सं॰ पु॰) १ हरिद्रु वृक्ष, दारुहलदीका पेड़। (क्लो॰) २ कदम्बकुसुम, कदमका फूल।

कदम्बपुष्पगन्ध (सं॰ पु॰) कलमशालि, एकप्रकारका धान।

कदम्बपुष्पा (सं॰ स्त्री॰) कदम्बस्येव पुष्पमस्याः, कदम्बपुष्प अर्श आदित्वात् अच्-टाप्। मुण्डितिका वृक्ष, मुण्डीका पेड़।

कदम्बपुष्पिका, कदम्बपुष्पी देखो।

कदम्बपुष्पी (सं॰ स्त्री॰) कदम्बपुष्पमिव पुष्पमस्याः, कदम्बपुष्प-ङीप्। महाश्रावणिका, गोरखमुण्डी।

कदम्बवादी (सं॰ पु॰) कदम्ब इति वादः संज्ञा यस्त्यस्य, कदम्बवाद-इनि। नीप जातीय एक कदम्ब।

"कदम्बवादिनो नीपान् दृष्ट्वा कण्टकितैरिव।
समगतो भाजनमं कदम्बककदम्बकैः।" (काशीखण्ड)

कदम्बवायु (सं॰ पु॰) सुगन्धवायु, खुशबूदार हवा।

कदम्बा, कदम्बी देखो।

कदम्बानल, कदम्बवायु देखो।

कदम्बिका (सं॰ स्त्री॰) कदम्बवृक्ष, कदमका पेड़।

कदम्बी (सं॰ स्त्री॰) कदम्ब-ङीप्। देवदाली लता। देवदाली देखो।

कदर (सं॰ क्लो॰) कं जलं दृणाति दारयति नाशयति इत्यर्थः, क दृ अच्। १ पायसविशेष, जमा हुआ दूध। २ क्षुद्ररोगविशेष, टांकी, गोखरू। कङ्कर एवं कण्टक प्रभृति द्वारा पदतलमें क्षत पड़नेपर कुपित वायु पित्त, कफ, मेद तथा रक्तको दूषित बना वेदना और स्रावयुक्त वेरकी गुठली-जैसी जो गांठ उठाता, वही रोग कदर कहाता है।

चिकित्सा—अस्त्र द्वारा कदरको निकाल तप्त तैल तथा अग्निसे उक्त स्थान जला देना चाहिये।

(पु॰) ३ श्वेतखदिर, सफेद खैर। इसका संस्कृत पर्याय—सोमवल्क, शक्रगन्ध, खदिरोपम, श्वेतसार, खदिर और सोमवल्कल है। भावप्रकाशके मतसे यह विशद, वर्णके लिये हितकर और मुख-रोग, कफ तथा रक्तदोषविनाशक है। ४ बर्बुरक वृक्ष, बबूलका पेड़। ५ क्रकच, आरा। ६ अङ्कुश, आंकुस।

क़दर (अ॰ स्त्री॰) १ परिमाण, मेक़दार। २ सत्कार, इज्ज़त, बड़ाई। ३ हिन्दीके एक मुसलमान कवि। इन्होंने अच्छी अच्छी ठुमरियां बनायी हैं।

कदरई, कदराई देखो।

कदरज (हिं॰ पु॰) १ पापीविशेष, एक गुनहगार। (वि॰) २ कदर्य, कञ्जूस।

क़दरदान (फ़ा॰ वि॰) गुणग्राहक, इज्ज़त करनेवाला, जो बड़ाईको समझता हो।

क़दरदानी (फ़ा॰ स्त्री॰) गुणग्राहकता, क़दर करनेका काम।

कदरमस (हिं॰ स्त्री॰) ताड़नादि, मारपीट, लड़ाई झगड़ा।

कदरा (सं॰ स्त्री॰) कदर देखो।

कदराई (हिं॰ स्त्री॰) भीरुता, कायरी, भाग जानेकी आदत।

कदराना (हिं॰ क्रि॰) भयभीत होना, खौफ़ खाना, डर जाना।

कदरी (हिं॰ स्त्री॰) पक्षिविशेष, एक चिड़िया। इसका आकार-प्रकार सेनासे मिलता है।

कदर्थ (सं॰ पु॰) कुत्सितोऽर्थः, कोः कदादेशः। १ कुत्सित अर्थ, खराब चाल। २ पदार्थ, चीज़। (त्रि॰) ३ कुत्सित अर्थकारी, बमानी, बेफ़ायदा।

कदर्थन (सं॰ क्लो॰) कु-अर्थ-ल्युट्। वेदना, व्यथा, तकलीफ़।

कदर्थना (सं॰ स्त्री॰) कदर्थन-टाप्। विडम्बना, बुराई।

कदर्थित (सं॰ त्रि॰) कु-अर्थ-णिच्-क्त। १ दूषित, बिगड़ा हुआ। २ विडम्बित, बुरा बनाया हुआ। ३ घृणित, नफ़रत किया हुआ।

कदर्थीकृत (सं॰ त्रि॰) अकदर्थं कदर्थं करोति,

कदर्थित (त्रि) कदर्थ-णिच्-क्त। १ मन्दीकृत, बिगाड़ा हुआ। २ विकल्पीकृत, बेचैन किया हुआ।

कदर्य (सं॰ त्रि॰) कुत्सितो ऽर्यः स्वामी, कुगतीति समासः। १ क्षुद्र, कमीना, छोटा। २ कृपण, कञ्जूस। स्मृतिशास्त्रके मतसे जो लोभी व्यक्ति आत्मा, धर्मकार्य और स्त्रीपुत्र प्रभृतिको कष्ट दे धनका ढेर लगाता, वही कदर्य कहाता है। ३ अग्राह्य, नागवार, बुरा।

कदर्यता (सं॰ स्त्री॰) १ लोभ, कञ्जूसी। २ क्षुद्रता, कमीनापन। ३ बुराई।

कदर्यभाव (सं॰ पु॰) कदर्यस्य भावः, ६-तत्। १ कुत्सित भाव, बुरी हालत। २ अश्लील भाव, फोहश बातचीत।

कदल (सं॰ पु॰) कद इत्यादित्वात् कलच्। १ कदली वृक्ष, केलेका पेड़। २ पृश्निपर्णी। ३ शाल्मलीवृक्ष, सेमरका पेड़। ४ डिम्बिका।

कदलक (सं॰ पु॰) कदल स्वार्थे कन्। कदली वृक्ष, केलेका पेड़।

कदला (सं॰ स्त्री॰) कदल-टाप्। १ कदलीवृक्ष, केलेका पेड़। २ पृश्निपर्णी।

कदलिका, कदली देखो।

कदली (सं॰ स्त्री॰) कदल गौरादित्वात् ङीष्। षिद्गौरादिभ्यश्च। पा ४।१।४१। ओषधिविशेष, केला। (Musa sapientum) यह उष्णकटिबन्ध प्रदेशमें होनेवाला एकप्रकारका मिष्ट फल है। युक्तप्रदेशकी चलित भाषामें इसे केला कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय— वारण-बुसा, रम्भा, मोचा, अंशुमत्फला, कदल, काष्ठील, वारणबुषा, वारबुषा, सुफला, सुकुमार, गुच्छफला, गुच्छफला, हस्तिविषाणी, गुच्छदन्तिका, निःसारा, राजेष्टा, बालकप्रिया, ऊरुस्तम्भा, भानुफला, वनलक्ष्मी, कदलक, मोचक, रोचक, लोचक, वारण-वल्लभा और चर्मण्वती है। उक्त सकल नामोंकी सार्थकता यथास्थान विवृत होगी।

भारतवर्ष ही कदलीका आदि वासस्थान है। इसलिये यह इस देशके नाना कार्योंमें व्यवहृत होती है। इसकी बराबर आवश्यकीय फल दूसरा नहीं। कदली उत्पन्न भी बहुत होती है। वत्सरके सकल ही काल इसमें फल लगता है। फिर भी कदली ग्रीष्म कालको ही अधिक उपजती और फलमें विशेष कोमलता एवं मधुरता रहती है।

कदलीका उद्भिद्तत्त्व—इसको उद्भिद्तत्त्ववेत्ता कोमल-काण्ड वृक्षोंको श्रेणीमें गिनते हैं। जिसके काण्ड अर्थात् तनेमें काठका भाग अल्प आता, वही वृक्ष कोमलकाण्ड कहाता है। किन्तु वास्तविक कदलीमें कोई काण्ड नहीं रहता। जो काण्ड मान लिया जाता, वह पत्रका शेष भाग अर्थात् काण्ड-कोष देखाता है। हिन्दीमें केलेका बकला कहाने-वाला अंश उसका समष्टिमात्र है। कदलीवृक्षमें पिण्डमूल (roots, stalks) होता है। इसी पिण्ड-मूलसे पत्र निकलते हैं। पिण्डमूलके मध्यस्थलसे एक सरल गोलाकार श्वेतवर्ण मज्जा (Pith) उत्-पन्न होती है। इसीको चारो ओर स्तर-स्तरमें कोष छिप काण्डकी भांति आकार धारण करते हैं। कदलीके कोमलकाण्ड कहानेका यही कारण है। काल आनेसे उक्त मज्जा पुष्पदण्डमें परिणत हो जाती है। जब नूतन पत्र निकलता, तब यह मूलसे उपज और मज्जाके पार्श्वपर सटक ढालू घुंड-जैसा बढ़ने लगता और अन्तको काण्डसे बाहर हो पत्र दिया करता है। कदलीके पत्रका अंश अत्यन्त विस्तृत होता है। एक-एक पत्र ६।८ फीट दीर्घ और २ फीट विस्तृत लगता है। पत्रको मध्य यष्टिकासे किनारे तक एक लम्बी-लम्बी सरल शिरा पड़ती है। इन सरल शिराओंके मध्य अन्यत्र-वृक्षके जालकी भांति सूक्ष्म विन्यास नहीं लगता। सुतरां थोड़ा प्रबल वायु लगते ही यह शिरा फट जाती है। कदली वृक्षका पत्र-भाग, वृन्तभाग और काण्डकोष समस्त ही अंशुविशिष्ट रहता है। मज्जा बहुत कोमल होता है। यह केवल पक्की-पक्की कुछ रसाधार शिराओंका समष्टिमात्र है। मज्जाका दण्ड ही बढ़ कर पुष्पदण्ड बन जाता है। केलेके फूलको मोचा कहते हैं। मोचा आनेसे पहले कदलीके स्कन्धदेशसे एक 'अग्रिकलक' निकलता, जिसका नाम अलेड़ा मोचा पड़ता है। अलेड़ामें मोचेके भीतर भी मोचा रहता है। मोचा पुष्ट

होनेपर पत्तेके मोचेका तन फटता और मोचा मोचेकी ओर लटकने लगता है। नारिकेल, ताल, सुपारी, खर्जूर प्रभृति वृक्षोंमें भी पत्तेका मोचा रहता है। मोचा कदली वृक्षके स्कन्धसे ऊर्ध्वमुख निकल नीचेको कुछ बढ़नेपर निम्नमुख झुक पड़ता है। यह देखनेमें कोणाकार होता है। लम्बाई प्रायः १ फुट और मध्यस्थलकी चौड़ाई कोई ६ इञ्च रहती है। एक मोचेमें अनेक विभाग होते हैं। प्रति विभागमें दो सार मुकुलपुष्प अर्धवृत् पौष्पिक पत्रावर्तमें आवृत रहते हैं। प्रत्येक सारमें ८ या १० पुष्प आते हैं। प्रत्येक पुष्पमें फल लगता है। पुष्पोंके मध्य पुंपुष्प (Male-flowers) निम्नश्रेणी और स्त्रीपुष्प वा उभलिङ्ग पुष्प (Female-flowers or Hermaphrodite flowers) ऊर्ध्व श्रेणीमें रहते हैं। प्रत्येक भागके पुष्प ज्यों-ज्यों बढ़ते, त्यों त्यों उनके आवरकके पौष्पिक पत्रावर्त खसक पड़ते हैं। जड़की ओरसे पुष्प फलमें परिणत होते हैं। प्रत्येक पौष्पिक पत्रावर्तमें ८से १० तक फल लगते हैं। एक एक फलसमूहको हिन्दीमें 'गहर' कहते हैं। पौष्पिक पत्रावर्तमें जितने पुष्प लगते, उतने फल हो नहीं सकते। एक वृक्षमें एक ही समय एकसे अधिक गहर नहीं आती। गहर काट लेनेसे कुछ दिन पीछे कदली वृक्ष सूख जाता है। अत्यन्त पुरातन पड़ने या गहर छोड़ मर मिटनेपर वृक्षके पिण्डमूलमें ६से ८ तक किल्ले फूटते हैं।

कदली अनेक प्रकारकी होती है। सबमें बीज नहीं रहता। जङ्गली और चट्टग्राम प्रदेशकी एक जातीय कदलीमें बीज होता है। इसी बीजसे वृक्ष उपजता है। किसी किसी अन्य जातीय कदलीमें रहते भी बीजसे कोपल नहीं फूटती। पार्वत्य प्रदेशमें कदली वृक्ष अतिअल्प होता है। वहां यह बढ़ नहीं सकती। क्योंकि अन्यान्य वृक्षोंकी प्रतियोगितामें कदली वृक्षको पार्वत्यप्रदेशकी कठिन मृत्तिकासे रस खींच अपनी पुष्टिका साधन करना असम्भव देख पड़ता है। इसीसे इसमें किल्ले नहीं फूटते। किल्ले न फूटनेसे ही पार्वत्य कदलीमें बीज रहता है। फिर बीज भी इतना आता, कि कांसपर बिलकुल शस्य नहीं देखाता। बीजोंपर पतली मलाई-की भांति कुछ कोमल चिपचिपा शस्य रहता है। परमेश्वरकी आश्चर्य महिमा है। पक्षी उक्त शस्य खानेके लिये बड़ी दूरसे आ पकाफल ले जाते हैं। फिर सकल स्थानोंसे इसी उपाय द्वारा बीज लाये जानेपर कदलीका वृक्ष उत्पन्न होता है।

अन्यान्य स्थलोंमें कदली लगायी जाती है। लगी हुई कदलीके फलमें बीज पड़ने नहीं पाता। फलकी उत्तरोत्तर उन्नति होती रहती है। वृक्षमें किल्ला फटने लगता और उसका उत्पादक बल बढ़ता है। यत्नपूर्वक लगाये जानेसे कदलीके अच्छे अच्छे फलोंमें आजकल बिलकुल बीज नहीं आता। इनकी बीजोत्पादिनी शक्ति सम्पूर्ण रूपसे बिगड़ गयी है। किन्तु किसी किसी स्थानमें जलवायुके प्रभावसे लगाये जाते भी सहज यह शक्तिरहित नहीं होती। दो-एक बार लगाये जानेपर फलमें बीज नहीं आ सकता, किन्तु तीसरी बार निकल पड़ता है। यवद्वीपका जलवायु ऐसा ही है। बङ्गालमें 'कांठाली' केला बहुत दिनसे होता है। किन्तु आज भी उसकी बीजोत्पादिनी शक्ति बिलकुल नहीं बिगड़ी। अति अल्प दिनकी ही उसमें बीज पड़ जाता है। इसलिये बङ्गालमें कांठाली केलेका झाड़ अधिक पुरातन होने न देना चाहिये। किल्ले निकाल अन्य स्थानमें लगाना और केलेकी उन्नति पर ध्यान लोगोंका कर्तव्य है। लगाये जाने और अच्छी भूमि पानेसे कांठाली केलेकी उन्नति मात्र होती है। किन्तु उसकी कुछ भी शक्ति नहीं बिगड़ती। चीन देशमें एक प्रकारकी कदली है। वह अति क्षुद्राकार और फल-विहीन रहती है।

कदली अति शीघ्र शीघ्र बढ़ती है। अच्छी भूमिमें इसे लगाने पर यह वृद्धि सहज ही देख पड़ती है। कदलीके कच्चे पत्रको मध्यपत्र कहते हैं। जब वह पककर बढ़ता, तब वृन्तसे पत्राग्र पर्यन्त एक धागा लगा कोई एक घण्टे अपेक्षा करने पर देख पड़ता मापके धागेसे वह प्रायः १ इञ्च दीर्घ है।

प्रबल वायु कदली वृक्षको बड़ी हानि पहुंचाता, विफल रहने पर अति अल्प वायुसे ही यह गिर जाता है। उस समय बांसकी तिकोनी खपाचें लगा वृक्षको बचाते हैं। बङ्गाल देशके केलेमें एकप्रकारका कीड़ा लगा करता है। इस कीड़ेसे भी अनिष्ट ही होता है। कीड़ा लगनेसे वृक्ष मर मिटता है।

कहां कहां कदली मिलती और कैसे विभागकी श्रेणी चलती है? भारतवर्ष इसका आदि वासस्थान है। किन्तु यहां भी यह पाश्चात्य प्रदेशकी अपेक्षा पूर्वप्रदेश और दाक्षिणात्यमें ही अधिक होती है। पूर्वबङ्ग और दाक्षिणात्यके मलवर उपकूलमें कदली बहुत लगायी जाती है।

बङ्गालमें रामरम्भा, अनुपान, मालभोग, अपरिमर्त्य, मर्त्यमान, चम्पक, चीनीचम्पा, कन्हाईबांसी, घीया, कालीबज, कांठाली प्रभृति कई जातिके केले सर्वापेक्षा उत्कृष्ट रहते हैं। इनमें पहले चार पहली श्रेणी, दूसरे चार दूसरी श्रेणी और तीसरे तीन तीसरी श्रेणीके केले हैं। मर्त्यमानको आटिम केला भी कहते हैं। इन सबमें बिलकुल बीज नहीं होता। कांठाली जातिके अन्यान्य फलोंमें भी बीज न रहते जिसका नाम शुद्ध कांठाली चलता, उसमें बहु-दिन एक स्थानपर रहनेसे बीज पड़ने लगता है। सिवा इसके मदनी, मदना, तुलसी, मनुवां रङ्गबीर, पोड़ा रङ्गबीर प्रभृति कई जातिके केलोंसे किसी किसीमें अल्प बीज रहता, फिर किसी किसीमें बिलकुल देख नहीं पड़ता। बङ्गालमें बीजू केला नानाविध होते हैं। इनमें यथेष्ट बीज रहते भी मिष्टता बढ़ जाती है। यशोहरमें 'दये' नामक एकप्रकारका बीजू केला होता है। इसका शर्बत बहुत उमदा बनता है। कलकत्तेके निकटवर्ती स्थानोंमें 'डोगरे' नामवा जो बीजू केला उपजता, उसका फल खाया जा नहीं सकता, किन्तु मोचा बहुत सुस्वादु लगता है। मोचेके लिये ही उसे लगाया करते हैं। 'मोया' नामक बीजू केलाके रससे नानारूप चक्षुरोग आरोग्य होता है। 'कांच' केला, 'कच्चा' केला, 'भनाजी' केला प्रभृति केला 'कांच' केलाकी जातिके हैं। इस श्रेणीमें नाना आकारके केले देख पड़ते हैं। यह पकनेपर सुमिष्ट लगता, किन्तु तरकारीमें ही अधिक चलता है। 'कांच' केलाको अंगरेजीमें 'मुसा-पाराडिसिका' (Musa-Paradisica) कहते हैं। 'कांठाली' केलेको कच्चा भी खाते हैं। इसका नाम 'ठूंठा' केला है। फिर 'कांठाली' जातिके केलेको 'ठूंठा' केला कह देते हैं। यह 'कांठाली' जातीय केला एक स्वतन्त्र श्रेणीका भी होता है।

संस्कृतमें भी कदलीके नाना भेद कहे हैं,—

"माणिक्यमर्त्यामृतचम्पकाद्या भेदाः कदल्या बहवोऽपि सन्ति।"

संस्कृतका मर्त्य एवं चम्पक केला ही बंगलामें मर्त्यमान वा आटिम और चम्पा नामसे विख्यात है। कांठालीजाति कन्हाईबांसी केला कोई १ फुटसे भी ज्यादा लम्बा होता है। फिर 'कालीबज' बहुत मोटा रहता है। घीया कांठालीसे घृतकी भांति सुगन्ध निकलता है। यह उष्ण दुग्धमें डाल देनेसे मक्खनकी तरह घुलता है।

कांठाली केला पकनेपर रङ्ग कुछ पीला पड़ जाता और आटिम पीताभ आता है। किन्तु आटिमके ऊपर फुटकी-जैसे दाग उभरते हैं। चम्पा केला पकनेसे घोर पीतवर्ण होता है। कांठाली परिपुष्ट पड़ने पर कुछ चौपहला तथा टेढ़ा, आटिम गोला एवं सीधा और चम्पा केला गोला तथा मोटा लगता है। लाल केलेको सिंदूरिया या चीना केला कहते हैं। मर्त्यमान और कांठाली केलेका उद्भिज्जशास्त्रीय नाम 'मुसा सापीएण्टम' (Musa sapientum) है।

बङ्गालमें कांठाली जातिके केलेका शस्य कुछ कड़ा रहता है। फिर 'मर्त्यमान' जातिवालेका शस्य अधिक शीत एवं नवनीतवत् कोमल और 'चम्पक' जातिवालेका ईषत् अम्लरसयुक्त, सुगन्धि तथा फलके मध्य पीताभ वर्ण होता है। 'कांठाली'के फलका छिलका मोटा और चम्पाका पतला पड़ता है। बङ्गाली मर्त्यमान केलेका ही अधिक आदर करते हैं। किन्तु इस देशके युरोपीय प्रवासी 'चम्पा' केलेको अच्छा समझते हैं। कांठाली और कांच केलेका व्यवहार अधिक है।

दाक्षिणात्यवाले हिन्दोगुल प्रदेशके पर्यंत और वनमें साधारणतः जो कदली मिलती, उसको संज्ञा अंगरेजोमें मूसा सुपर्बा (Musa Superba) चलती है। श्रीहट्ट प्रदेशका केला सुगन्धविशिष्ट होता है। फिर महीचरमें यह प्रचुर परिमाणमें उपजती है।

नेपालमें होनेवाले केलेको 'नेपाली केला' (Musa nepalensis) कहते हैं।

मन्द्राजमें जितने प्रकारकी कदली उपजती, उसमें 'रमकली' सर्वापेक्षा उत्तम रहती है। 'गरुडी' जातीय केलेका शस्य बहुत कड़ा होता है। किन्तु मन्द्राजके लोग इसीको अच्छा समझते और पाल डाल पकने पर बेचा करते हैं। 'वाछा' बहुत लम्बा रहता, किन्तु पुष्ट होते ही झुक पड़ता है। इसका हरित् वर्ण पकने पर भी नहीं बदलता। 'पेवेली' केला मीठा होता, किन्तु रंग खाकी देता है। 'संपेली' केला बहुत बड़ा लगता और लोहित वर्ण देख पड़ता है। सिवा इसके बन्या, बंगला चमेई, पे, सेरवा, जीवेपाखियान, पिदीमोथा प्रभृति कई दूसरी श्रेणीके भी केले मिलते हैं।

मर्त्यमान केला चट्टग्राम और तेनासरिम प्रदेशमें प्रचुर परिमाणसे उत्पन्न होता है। उक्त दोनों प्रदेशके दक्षिण मर्तावान उपसागर है। कितने ही लोगोंके कथनानुसार इसी उपसागरसे प्रथम भारतमें उक्त कदली आनेपर 'मर्त्यमान' नाम पड़ा है। किन्तु हम वैसा नहीं मानते। 'मर्त्य' नामक कदली ही 'मर्त्यमान' केला कहाती है।

बम्बईमें नौ प्रकारकी कदली होती है—बसरई, मुटेली, तांबड़ी, रजेली, सोनसडी, सोनकेली, वेलकेली, करम्भेली और नरसिंही। इनमें तांबड़ी केला खास रहता है।

ब्रह्मदेशमें पीत एवं स्वर्णवर्ण नानाप्रकार-कदली देख पड़ती है।

सिंगापुर, मलय और भारतसागरीय द्वीपपुञ्जमें प्रायः ८० प्रकारका भोजनोपयोगी केला उपजता है। इसमें बहुतसे वृहदाकार और सुगन्धविशिष्ट होते हैं। 'पिसांटिम्बागा' केला खास रहता है। इसे यहांके लोग 'तामाटे' या 'कांकड़ा' केला कहते हैं। 'पिस्यां सुसुत बैवेक' जातीय केलेके तलमें कुछ छिलका वक्रभावसे थंभको चोंप-जैसा निकल पड़ता है। 'पिस्यां राजा' को राजा केला कहते हैं। 'पिस्यां सुसु' दूधिया केला कहाता है। इस प्रकारके दूसरे केलेका नाम सोनाकेला है। शेषोक्त तीनों प्रकारके केले अतिसुन्दर, सुमिष्ट और सुगन्धविशिष्ट होते हैं।

यवद्वीपमें 'पिस्यां टण्डक' नामक एक केला उपजता है। इसकी लम्बाई प्रायः २ फ़ीट होती है। हम समझते—बङ्गालमें इसीको कन्दाईबांसी कहते हैं।

यवद्वीपमें दूसरा भी एक केला होता है। उसके एक वृन्तमें एक ही फल लगता है। अन्यान्य वृक्षोंकी भांति उक्त फल मोचेके साथ काण्डसे नहीं निकलता। वह काण्डके भीतर ही पका करता है। सम्यक् पक जानेसे काण्ड फट पड़ता है। वह इतना बड़ा रहता, कि एक फलसे ४ लोगोंका पेट भली भांति भर सकता है। उक्त सकल केलाओंको छोड़ यवद्वीपमें जो कांठाली या मर्त्यमान केले उपजते, उनमें बीज पड़ते हैं। इस श्रेणीके केलोंको उस देशमें 'पिस्यां बुह' कहते हैं।

फिलिपाइन द्वीपके पार्वत्य प्रदेशमें उपजनेवाला केला इतना बड़ा रहता, कि एक मनुष्यको उसे उठाकर ले चलनेमें बोझ मालूम पड़ता है।

मलय द्वीपकी साधारण कदलीका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम 'मुसा ग्लौका' (Musa glauca) है।

मारिशस द्वीपमें गुलाबी रंगका मिलनेवाला केला 'मुसा रोसेसिया' (Musa rosacea) कहाता है।

अफ्रीका और पश्चिम भारतीय द्वीपपुञ्जमें कांठाली और मर्त्यमान केला ही लगाया जाता है।

पश्चिम भारतीय द्वीपमें एकप्रकार क्षुद्राकार बैंगनी केला होता है। इसका गन्ध अति मनोहर रहता है। उस देशके बड़े आदमी इसी केलेका समधिक आदर करते हैं। इस जातिके केलेको अंगरेज 'फ़िग बनाना' (Fig banana) कहते हैं। फिर इसी जातिका एकप्रकार क्षुद्राकार केला भी होता है। भिन्न-

श्रेणीके लोग उसका भी अति आदर किया करते हैं। अंगरेजोंमें उसे 'फ़िग सकरीयर' या 'लेडी फ़िङ्गर' (Fig sucrier or Lady finger) कहते हैं। लेडी फ़िङ्गरका अंगरेजी वैज्ञानिक नाम 'सुसा ओरियेण्टम' (Musa orientum) और फ़िग यनामाका 'सुसा मस-कुलाटा' (Musa musculata) है।

अमेरिकाके फ़्लोरिडा प्रान्तका 'ओरङ्को' केला अति उत्तम होता है। यह उक्त प्रान्तके सकल ही स्थानोंमें मिलता है। डालका पका होनेपर इसके सहन्धसे मनुष्य, पशु और पक्षी पर्यन्त उन्मत्त बन जाता है।

चीनदेशमें उपजनेवाली एक कदली खर्वाकार रहती है। अंगरेज इसे ड्वार्फ प्लानटेन (Dwarf plantain) अर्थात् बौना केला कहते हैं। यह दो प्रकारका होता है—सुसा कोकसिनिया (Musa occinea) और सुसा नाना (Musa nana)। चीनका एक केला सुसा काविण्डिशी (Musa cavendishi) कहाता है। वहां खर्वाकार दूसरा भी केला लगता है।

आबिसीनियाके अति सुन्दर केलेका नाम सुसा इनसीट (Musa ensete) है।

एतद्भिन्न अन्यान्य स्थानोंमें भी केला मिलता है। प्रधानतः उष्ण-प्रधान स्थानमें ही यह होता है। एशियाके पूर्व चीन एवं भारतीय द्वीपपुञ्ज और पश्चिम तुर्कीके अन्तर्गत यूफ्रेतिस नदीतीर पर्यन्त समस्त देशमें केला मिलता है। अन्यान्य अंशमें जो भूभाग पृथिवीके मध्यभागपर आता, वहां भी यह पाया जाता है। भारतमें हिमालयके शीतल प्रदेश पर केला देख पड़ता है। उक्त पर्वतके पाददेश पर ३०° उत्तर अक्षान्तर पर्यन्त यह अधिक उपजता है। फिर मसूरी, कुमायूं और गढ़वाल प्रदेश भी इसकी उत्पत्तिसे वञ्चित नहीं। किन्तु उक्त प्रदेशके केलेमें बीज-व्यतीत शस्य बहुत कम रहता है। समुद्रसे ७००० फीट ऊर्ध्व स्थान तक यह उपज सकता है। दक्षिण-अमेरिकामें आजकल यथेष्ट केला लगाया जाता है। काराकास, गोयेना, डेमेरेरा, जामैका, त्रिनिदाद प्रभृति स्थानोंमें बराबर जितनी ही भूमि-पर इसकी कृषि होती है। आसाम प्रदेशके वन मध्य केलेका वृक्ष इतना अधिक उपजता, कि उसे देख विस्मित होना पड़ता है। वहां हस्ती और गयाल नामक महिष-जातीय पशु एकप्रकार केलेका वृक्ष खा जीवन धारण कर सकते हैं। साधारणतः पार्वत्यप्रदेशका केला सुसा ओरनाटा (Musa ornata) अर्थात् पहाड़ी और वनका सुसा सुपर्बा (Musa superba) यानी जङ्गली केला कहाता है। आसाम प्रदेशमें भी यह घासकी तरह अपर्याप्त होता है। अन्यान्य स्थानोंमें खाली मैदान पड़ा रहनेसे जैसे दूर्वा, सुस्तक प्रभृति तृण उपजता, वैसेही आसामके खाली मैदानमें पहले घासके साथ केला भी निकल पड़ता था। लगानेमें जितने केले उखाड़ कर फेंक दिये जाते थे, उनकी संख्या करना असम्भव है। आज-कल भी नये लगाये जानेवाले केलोंका ऐसा ही हाल होता है।

युरोपके दक्षिण अंशमें केला हुआ करता है। किन्तु उसके उत्तर काथके मकान् या उष्णगृहके व्यतीत खुले क्षेत्रमें यह नहीं उपजता। कनारा द्वीपमें कहीं कहीं केला होता है।

भिन्न भाषामें केलेका भिन्न नाम आता है। संस्कृत नाम पहले ही कहे जा चुके हैं। अतिपूर्वकाल इसको भारतमें मोचक कहते थे। मोचकका अर्थ 'मुक्त हुआ' है। अर्थात् प्रथमतः वृक्षके गर्भसे इसका जो फूल निकलता, वह एक आवरणोंके मध्य रहता है। उसी आवरणोंके फट जानेसे फूल आता है। फिर प्रत्येक फूल गुच्छ्गात्रमें दूसरे आवरणमें आहत रहता है। वह आवरण मुक्त होनेपर फल निकलता है। इसीसे फलको मोचक कहते हैं। शिवपूजाके मन्त्रमें हम केलेका मोचा नाम देखते हैं—

"एतत् मोचाफलं नमः शिवाय नमः"।

कोई भी इस स्थानपर कदली, रम्भा या अन्य नाम व्यवहार नहीं करता। कदलीका अर्थ जलमें ही पुष्टि पाना है। केलेका वृक्ष कुछ जलप्रधान होता है। यह नरम भूमिमें भी अच्छी तरह उपजता है। अंशुमत्फलासे अंश या तन्तु रखनेवाले वृक्षका अर्थ निकलता है। केलेके वृक्षका तन्तु विशेष विख्यात

है। वारणवुषा और वारणवल्लभाका अर्थ हस्तिप्रिया है। सकृत्फला शब्दसे वनस्पतिका एक वृक्षके एक ही बार फल देनेका अर्थ निकलता है। भानुफलाका अर्थ सूर्यातापप्रिया है। वनलक्ष्मी वनकी शोभा बढ़ानेवाले फलकी द्योतक है। इससे वनमें भी छायाश्रय या प्राणधारण होता है। हस्तिविषाणी यह फल कहाता, जो हस्तिदन्तकी भांति सुगोल, दीर्घ अथच ईषत् वक्र आता है। चर्मण्वतीका अर्थ चर्मकी भांति आवरणयुक्त है। अन्यान्य अर्थ नाम पढ़नेसे समझ पड़ते हैं।

केलेको अरबी भाषामें 'मौज़' कहते हैं। यह संस्कृतके मोचा शब्दसे निकला है। लाटिन भाषाका मिउसा या मुसा शब्द अरबी मौज़से बना है। अंगरेज़ीमें बनाना या प्लानटेन कहते हैं। अंगरेज़ीका बनाना शब्द ग्रीक अरियाना (Ariana)से उत्पन्न है। ग्रीक अरियानाका अपर पर्याय औराना (Ourana) रहा। ग्रीक अरियाना सम्भवतः तेलङ्गी भाषाके अदिति शब्दसे निकला है।

कितने ही लोग ग्रीक औराना शब्दको संस्कृतके वारणवुषा शब्दसे उत्पन्न समझते हैं। किन्तु यह बात ठीक नहीं। क्योंकि ग्रीकभाषामें भारतवर्षीय जिन औषधोंका उल्लेख लगा, उनका देशीय नाम अधिकांश दक्षिणदेशीय भाषासे ही संगृहीत हुआ है। आम्र प्रभृति शब्द देखो।

प्लानटेन शब्द ग्रीक ग्रन्थकार थियोफ्राटस वा प्लिनिके लिखे पल नामक शब्दसे उत्पन्न है। पल वृक्ष और उसके फलकी वर्णना बिलकुल कदलीवृक्ष और कदलीफलसे मिलती है। फिर उन्होंने उसे हमारे ऋषियोंका खाद्य भी बताया है। इसमें कोई सन्देह नहीं—'पल' संस्कृत फल या तामिल 'पल' शब्दसे निकला है। कदलीको हिन्दीमें केला, बंगला-में कला, महाराष्ट्रीय भाषामें केलि, तामिलमें वल या वेला, तेलङ्गीमें अरिति, सिंहलीमें कहिकाइ, ब्राह्मीमें नेपियाव या अङ्गहेट्, यवद्वीपीय भाषामें पिसु, जापा-नीमें गड्डा और मलयभाषामें पिसां कहते हैं।

कदलीका व्यवहार—भारतवर्षमें कच्चे केले, मोचे और डालकी तरकारी बनती है। पका केला सीधा खानेमें आता है। भारतीयोंकी दृष्टिमें यह अति पवित्र द्रव्य है। पूजा, श्राद्ध, विवाह प्रभृति सकल ही कार्योंमें केला व्यवहृत होता है। हविष्यान्नमें दूसरा शाक खाना मना है। किन्तु कच्चा केला पकाकर उसमें भी खा सकते हैं। कदलीका पत्र भारतवर्षके सकल ही स्थलोंमें भोजनपात्रका कार्य देता है। अधिक संख्यक लोगोंको खिलानेमें पत्र व्यवहृत होता है। ब्राह्मणादि उच्च वर्णके लोग जिन निम्नश्रेणीवालोंके छूये जलको हाथ नहीं लगाते, उन्हें कदलीके पत्ते ही खिलाते हैं। मन्द्राज, कनाड़े और मलबार प्रदेशमें इसे पत्रके लिये ही अधिकतर लगाते और सकल श्रेणीके लोग उसीमें खाते हैं। ग्राम्य पाठ-शालामें तालपत्र पर लिखना सीख लेनेपर छात्र कदलीके पत्रपर लिखनेका अभ्यास डालते हैं। कद-लीके पत्रपर हाथ बैठ जानेसे कागज़पर लिखना आरम्भ किया जाता है। इसका कच्चा पत्र (बीचका पत्ता) वेलेस्तारके जख्मपर ढांक देनेसे ज्वाला मिटती है। बीचका पत्ता काट सीधी ओर माखन लगा जख्मपर ४।५ दिन बंधा रखनेसे वेलेस्तार अच्छा हो जाता है। पश्चिम भारतमें बीड़ी और चुरट केलेके सूखे पत्तेमें लपेट प्रस्तुत करते हैं। फिर कोई भी द्रव्य लपेटनेके लिये वहां केलेका सूखा पत्ता व्यवहारमें आता है। चक्षुरोगपर केलेका कच्चा पत्ता बड़ा उपकार करता है। अफ़रीकामें कच्चे पत्तेसे घर छाते हैं। कलकत्तेके तंबोली केलेके कच्चे पत्तेमें लपेट लगे-लगाये पान बेचते हैं। बङ्गालमें गरीब लोग केलेका पत्ता फूंक खारसे कपड़े धोते हैं। बहुमूत्ररोगपर कविराज महाशय कदल्यादि-घृतमें इसकी डालका रस डालते हैं। यह घृत वायु और पित्तके दोषको मिटाता है। कोल्हापुर जिलेमें इस वृक्षके रससे रक्तपात निवारण करते हैं। जमैका-में भी इसका रस इसी प्रकार व्यवहृत होता है। वहां वृक्षमें एक छौंदा लगा रस निकाला जाता है। यवद्वीपमें एकप्रकार कदलीवृक्षके पत्रकी डण्टी और मोम-जैसा जो पदार्थ जमता, यह बत्ती बनानेमें लगता

है। कदलीके वृक्षसे भी अनेक कार्य निकलते हैं। जहां एकाएक बाढ़ आती, वहां बड़े बड़े वृक्ष काट और पास-पास बांध घड़नाई बनाई जाती है। इसे केलेका बेड़ा कहते हैं। अफ्रीकाके असभ्य और भारतवर्षीय दाक्षिणात्यके लोग कदलीवृक्षपर लक्ष्य लगा तीर और तलवार चलाना सीखते हैं। बङ्गालमें षष्ठीपूजा, विवाह और अधिवासादि मङ्गल-कार्यपर एक डालका समूचा केला लगता है। युक्त-प्रदेशमें सत्यनारायणकी कथा, जन्माष्टमी और रामनवमीपर केलेके स्तम्भ खड़े किये जाते हैं। बीचके कोमल पत्तेकी झांकी बनती है। मुसलमान भी पीरोंको शीरीनी चढ़ाते समय केलेसे काम लेते हैं। वासन्ती और दुर्गापूजाके समय नवपत्रिकामें केलेके किसे व्यवहृत होते हैं। फिर भारतीयोंके शुभकर्ममें केलेका किसा मङ्गलचिह्नकी भांति लगा करता है। उत्सव, पूजा और विवाहादिके समय हिन्दू द्वार तथा पथमें केलेके वृक्ष सजा देते हैं। हिन्दुओंके विवाहादि संस्कारपर केलेकी भूमि बनती है। इसी स्थानपर संस्कारार्ह व्यक्तिका स्नानकार्य, क्षौरकर्म, चूड़ाकरण, कर्णवेध, वरण इत्यादि होता है। बम्बईकी पतिव्रता कामिनियां कदलीवृक्षको धन एवं आयुप्रद समझ पूजती हैं। श्राद्धमें इसका काण्डकोष अत्यन्त आवश्यक आता है। इसके द्वारा श्राद्धीय नैवेद्य, जल एवं फलप्रदानके लिये एकप्रकार नौका बनती है। पौष-संक्रान्तिको बङ्गालकी सन्तानवंती रमणियां कदलीके काण्डकोषकी नौका बनाती और गेंदेके फूलसे सजाती हैं। फिर उसमें प्रदीप जला पुत्र द्वारा नदी वा पुष्करणीके जलपर बहा देती हैं। यह व्रत भगवती भवानीके उद्देशसे सन्तानकी मङ्गलकामनाको किया जाता है।

कदलीवृक्षका समस्त अंश गवादिका खाद्य है। दुर्भिक्षके समय कदलीवृक्ष नीचेसे ऊपरतक छोटा-छोटा काट पशुओंको खिलाया जाता है। यह पशुओंके लिये विशेष उपकारक है। जामैकाद्वीपमें गेहूं उत्पन्न होता है। सुतरां कदली ही वहांके निम्नश्रेणीवाले अधिवासियोंका एकमात्र सुलभ खाद्य है। अमेरिकाके आदिम अधिवासी भी इसे प्रधान खाद्य समझ व्यवहार करते हैं। बम्बई प्रदेशमें आम, कटहल आदि फलोंका कलम लगा पार्श्वपर एक-एक कदलीवृक्ष रोपण कर दिया जाता है। इसके द्वारा मध्यभारतमें खरतर रौद्रके आतपसे हरा-भरा वृक्ष रक्षित रहता है। शेषको ६।८ वत्सरके बाद जब अच्छा वृक्ष स्वयं रौद्र सह्य करनेको समर्थ पाता, तब कदलीवृक्ष काट डाला जाता है। यहां सुपारीके खेतमें भी कदलीवृक्ष लगता है। कारण, इसकी छायासे सुपारीकी कोपल शीतल रहती है। एक प्रकारके केलेको सुखा डालते हैं। राजेली नामक केलेको पकनेपर एक सन्दूकमें टुकड़े-टुकड़े काट और घास-फूससे ढांक ७।८ दिन रख छोड़ते हैं। फिर उसकी छिलका उतार समुद्रतीर मञ्चपर सुखाते हैं। सारे दिन रौद्रमें सुखा, सन्ध्यासमय उठा और घृत लगा रातभर चटाई तथा केलेके पत्तेसे दबा उसे रख देते हैं। इसीप्रकार सात दिन तक उसको बराबर रौद्र दिखाया और सन्ध्याको उठा तथा घृत लगा चटाई एवं केलेके पत्तेसे रात भर दबाया करते हैं। ७।८ दिनमें केला खूब सूख जाता है। यह खानेमें बुरा नहीं लगता। सूखा केला अति चमत्कारक और शैत्यनिवारक होता है। फिर गाम कूच जानेपर भी यह बड़ा उपकार करता है। समुद्रकी यात्रामें सूखा केला विशेष व्यवहार्य है। बम्बईके रहनेवाले घरमें खानेको पका केला बांसकी छुरीसे पतला पतला और धूपमें सुखाकर रख छोड़ते हैं। इससे जो मुरब्बा बनता, वह खानेमें बहुत अच्छा लगता है। पिसकेली केलेको सुखा कूटपीस कर बम्बईवाले एकप्रकारका खिमांदा बनाते हैं। वह शिशु, रोगी और सद्यप्रसूता कामिनीके लिये अति उपकारक एवं बलकारक खाद्य है। मारिशस, पश्चिम-भारतीय द्वीप और दक्षिण-अमेरिकामें भी ऐसा ही खिमांदा बनता है। मिस्रकी देशमें क्या केला सुखाकर रखा नहीं जाता। इसको पके केलेकी मिष्टि वा मण्डका उपादेय समझ खाते हैं। दक्षिण-अमेरिका, अफ्रीका और पश्चिम-भारतीय द्वीपमें

इसका चूर्ण बनता है। फिर दक्षिण-अमेरिकामें उक्त चूर्णसे विस्कुट तैयार होता है। वृटिश गीनियामें कच्चा केला प्रधान खाद्य गिना जाता है। इक्षुके बाद इसीको अधिक लगाते हैं। वृक्षके रससे क्षार या लवणवत् द्रव्य प्रस्तुत होता है। दक्षिण-अमेरिकामें पक्के केलेसे ताड़ीकी तरह एकप्रकार मद्य बनता, जो तीव्र नहीं पड़ता। फिर पक्के फलका शस्य धूपमें लगा सुखाते और छोटे-छोटे टुकड़े काटकर बनाते हैं। प्रयोजनके अनुसार एक टुकड़ा तोड़ पानीमें घुलानेसे शर्बत तैयार हो जाता है। यह शर्बत शुभ्र शीतल और श्रमापहारक रहता है। भारतवर्षमें इसके छिलकेसे चमड़ेका काला रङ्ग बनता है।

वैद्यक गुण—पक्के केलेमें अनेक गुण हैं। यह बलकारक, शीतल, पित्तास्रनाशक, गुरुपाक, अजीर्णरोगमें अपथ्य, सद्य शुक्रादिवर्धक, तृष्णा एवं श्रमहारक, लावण्यवर्धक, कफकर, आमकर, दुर्जर, खानेमें ईषत् कषायसंयुक्त और मधुररसविशिष्ट होता है। दधि, दुग्ध और घोलके साथ कदली खानेसे अतिशय दुष्पथ्य निकलती है। अम्लक वातपित्तको मिटाता और अति शीतलता लाता है।

मोचा—कफ, कृमि, कुष्ठ, शोथ, वातपित्त, एवं ज्वरनाशक, अग्निहद्विकार और उदरदोषनिवारक है। काण्ड बलको बढ़ाता और वातपित्तको दबाता है। अम्लक बहुमूत्ररोगमें उपकारप्रद है। मुसलमान् हकीम भी केलेको पित्त, वायु, रक्त और हृद्रोगनाशक मानते हैं। डाक्टर प्ले-फेयरके कथनानुसार यह शुक्रवृद्धिकर और मस्तिष्कदोषनाशक है। किन्तु मोचा दुष्पथ्य होती है। हकीम कदली-भोजन जनित दोषके लिये मधु, आर्द्रक और निर्यास खानेको बताते हैं। इसके कच्चे पत्तेकी आवरणी चक्षुरोगमें उपकार करती है। डालके रससे बहुमूत्र रोगका कदम्बाद्यघृत बनता है।

अन्यान्य—कदलीसे फल, काण्ड, मोचा और पत्रबीजको छोड़ दूसरा भी एक सुन्दर प्रयोजनीय वस्तु उत्पन्न होता है। इसको केलेके पेड़का सूत कह सकते हैं। पाश्चात्य लोग अपने अध्यवसायसे यह शस्य आविष्कृत होनेपर बड़ी चोरता देखाते और कितने ही उन्हें इसके लिये चोर भी बताते हैं। किन्तु प्राचीन भारतवासी निश्चय यह विषय समझते और किसी-किसी कर्ममें इसे व्यवहार करते थे। मंगल माल अंशुमत्फला और मालाकारोंका व्यवहार देखनेसे इस एकमात्र कथाका प्रमाण मिलता है। माली आज भी केलेके सूतसे माला पिरोते, फूलोंके पत्ते लपेटते, लताद्रुमोंके मञ्च बांधते और आवश्यकतानुसार दो-तीन धागे एकमें लगा रस्सी बट डालते हैं।

कदलीवृक्षके सूतसे कागज, रस्सी, प्रभृति प्रस्तुत होता है। विदेशीय वणिकों द्वारा यह निम्नलिखित उपायसे बनता है। केलेका सूत तैयार करनेको दो उपाय हैं—(१) वृक्षको जलमें सड़ा और (२) कलमें पिसाकर। प्रथम उपायसे सूत निकालनेको वृक्ष काट खेतमें डाल देते और कुछ दिन सुखा लेते हैं। फिर शेषोक्त उपायसे वृक्षको काट कलमें पीसना पड़ता है। पिसाई और सड़ाई हो जानेसे वृक्षको सोडा तथा चूनेकी कलईके जलमें पका सूत काढ़ा करते हैं। पकाते समय सूतसे अन्यान्य अंश छूट जाता है। ६५ मनके एक बेलरसे एक ही दिनमें २१ मन सूत बन सकता है। सूत परिष्कार करनेको पांच बार कदली पकाना पड़ती है। २१ मन सूत तैयार करनेमें १ मन सोडा और १ मन चूनेको कलई डालते हैं। पकानेमें तरह तरहका सूत छांटकर निकालना पड़ता है। फीके रङ्गका सूत ६ घण्टे धानेसे परिष्कार होता है। किन्तु गहरा रंग रहते १८ घण्टेसे कम समय नहीं लगता। बेलरका सिद्ध सूतयन्त्रके सहारे जलके होजमें धोया जाता है। फिर सूतको छायामें सुखाते हैं।

कदलीके काण्ड, विटप, पत्र और सकल ही अंशसे सूत निकलता है। काण्डकी अपेक्षा शाखाका सूत परिमाणमें अधिक पड़ता और अधिक मूल्यवान् भी ठहरता है। पत्रका सूत अति सूक्ष्म रहता और क्षुद्र होनेसे बिना कागज बनानेके दूसरे काममें नहीं लगता। १८६४ ई०को डाक्टर क्रेने इससे एकप्रकार

चिट्ठी लिखनेका कागज़ बनाया, जो अति सुन्दर आया। १८५१ ई०को डाक्टर हण्टरने महाप्रदर्शनीमें मन्द्राजसे केलेके सूतसे प्रस्तुत रस्सा, कागज़ और कई तरहका नमूना भेजा था। उसमें एक कागज़ चांदीके वर्क़-जैसा पतला तथा चिकना और दूसरा पार्चमेण्ट-जैसा कड़ा एवं जलमें भीजनेसे बिगड़नेवाला न रहा। नमूनेका सूत भी नाना वर्णोंमें रञ्जित था। रस्सी और रस्सेके कितने ही अंशमें अलकतरा लगा रहा। डाक्टर हण्टरने परीक्षासे देखकर कहा—केलेके सूतका कागज़ अति उत्कृष्ट होता है। दूसरी कोई चीज न मिला केवल केलेके सूतसे पतला और मज़बूत कागज़ बन सकता है। कल घूमते समय इसमें नहीं पड़ती। इच्छानुसार आकार और वर्णका कागज़ तैयार होता है। मोड़नेसे यह कागज़ नहीं फटता और सकल स्थान समान रहता है। कलकत्तेके समीप बालीके कारखानेमें भी इसकी परीक्षा हुई। उसमें बङ्गाल और आन्दामान द्वीपके केलेका सूत लगा था। फल भी सन्तोषप्रद निकला। प्रति वृक्षमें २ सेर सूत हो सकता है।

रस्सी या रस्सा बनानेमें भी देशी केलेका सूत स्वच्छन्द व्यवहृत होता है। किन्तु फिलिपाइन द्वीपके मुसा टेक्सटिलिस (Musa Textilis) नामक कदलीवृक्षका सूत्र ही इस सम्बन्धमें सर्वश्रेष्ठ है। इसे अंगरेज़ोंमें मानिला हेम्प (Manilla hemp) कहते हैं। इसका फल खाया नहीं जाता। बङ्गाल, मन्द्राज और बम्बई प्रान्तके स्थान-स्थान पर आजकल इस जातिकी कदली उपजती है। बम्बईमें इसके काण्डका भीतरी अंश खाते हैं। इसके बीजसे किला टते भी कलम लगाना ही अच्छा रहता है। यह केला पार्वत्य भूमि और ऐसे स्थलपर अधिक बढ़ता, जहां अन्यान्य वृक्ष सड़ पड़ता है। इस श्रेणीमें फल आनेसे सूत अच्छा नहीं होता। इसका सूखा पत्ता ३ इञ्च चौड़ा चीर और पोस रौद्रमें सुखाते तथा सूत निकालते हैं। इस जातिके सूतसे सूक्ष्म वस्त्र प्रस्तुत हो सकता है। इसका सूत सनसे ढाई गुण भारी पड़ता है।

ढाकेमें एकप्रकार कदलीके सूतसे वस्त्र प्रस्तुत होता है। ढाकेके पटकार (जुलाहे) कभी कभी इस वस्त्रपर नाना कारुकार्य कर अपने गुणका उत्कर्ष देखाते, जिसके दर्शनसे लोग मोहित हो जाते हैं। १८८४ ई०को कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें ढाकेके पटकारोंने केवल कदलीके सूतसे एक रूमाल बुन और सच्ची ज़रीका काम कर भेजा था। कलकत्तेके अजायबघरमें यह रूमाल आज भी रखा है। यह बिलकुल टसर-जैसा देख पड़ता, किन्तु उससे कुछ खुरखुरा लगता है। ऐसे ही ३६ इञ्च लम्बे-चौड़े कपड़ेका दाम ५०) रु० मक़र्र है।

कठिन, नीरस और केवल बालुकामय स्थानको छोड़ अन्य सकल-प्रकार भूमिमें कदली लग सकती है। गीली और तालाबकी निकली मट्टीमें यह बहुत अच्छीतरह उत्पन्न होती है।

खादकी बात—कदलीमें कचिला मट्टी और राखकी खाद दी जाती है।

रोपणका समय—बङ्गालमें वैशाखसे श्रावण मास पर्यन्त कदलीको रोपण करते हैं। खनाने कहा है—(१) फाल्गुन मासमें कदलीको स्थूल मूल काटकर न लगानेसे लोगोंका परिश्रम वृथा जाता है। किन्तु उक्त नियम पालन करनेपर इतना फल आता, कि उसका स्कन्ध ढोते-ढोते टूट जाता है। (२) फिर फाल्गुनमें कदली लगानेसे पञ्च ही मासमें फल दिया करती है। (३) आषाढ़ और श्रावण मासमें कदली रोपण करना न चाहिये। कारण रोपण करने भी न तो कोई केला खायेगा और न उसके नीचे आयेगा। कीड़ा लग जानेसे कदली गिर पड़ेगी। (४) सिंह और मीनके सूर्य छोड़ कदली लगानेसे फल खानेको मिलता है। (५) भाद्र मासमें कदली लगानेसे ही सवंश रावणको मरना पड़ा है।

उक्त नियमोंमें फाल्गुन मासको स्थूल मूल काट कदली लगानेका समय बताता है। ऐसा करनेसे यह अति शीघ्र फलती और काण्ड एवं गुच्छकी वृद्धि बढ़ती है। तृतीय नियम आषाढ़ एवं श्रावण मास कदली लगानेको रोकता है। कारण इससे

कीड़ा पड़ जानेकी सम्भावना है। कीड़ा लगनेसे कदली सूख जायेगी। अतएव नियममें चैत्र एवं आश्विन मास छोड़ कदली लगानेका विधि रखा गया है। फिर प्रथम नियममें भाद्र मासको भी छोड़ दिया है। किन्तु खनाने तो अपने दूसरे वचनमें आषाढ़ एवं श्रावण मास कदली लगानेको उपदेश दिया है।

रोपणका नियम—केलेका बाग् लगानेको प्रथम खेतमें ८ हाथके अन्तर एक-एक श्रेणी बनानेके लिये कमसे कम १ हाथ मट्टी उठाना चाहिये। फिर कुदालसे ढोले तोड़ और घेरा छोड़ खेतको समतल करते हैं। कलम लगानेको हरेक कलमके साथ एक-एक प्राचीन वृक्ष या स्थूल मूलका कियदंश रखना आवश्यक है। फिर स्थूल मूल लगानेको उसे ऊर्ध्वाधोभावसे चार या आठ खण्ड कर खेतमें गाड़ देते हैं। हरेक कलम या मोटी जड़का टुकड़ा ८ हाथके अन्तर लगाया जाता है। कलमका पेड़ बड़ा होता है। फिर स्थूल मूलका वृक्ष क्षुद्र रहते भी फल अधिक दीर्घ और सुस्वादु निकलता है। बाग् लगानेकी सुविधा न होनेसे किसी स्थानमें श्रेणी बना कदलीको रोपण कर सकते हैं। श्रेणी बनानेमें अड़चन पड़ने पर किसी भावसे लगाते भी कदली फला करती है। किन्तु खाद देना आवश्यक है। रोपणके समय खोदी हुई मट्टीमें थोड़ी कपिला मट्टी मिला सकनेसे अच्छा रहता है। उसके बाद बीच बीच पौदेकी जड़में राख डालते रहनेसे काम चल जाता है। इस सम्बन्धमें खनाके वचन हैं—

(१) सात हाथके अन्तर पर डेढ़ हाथके गढ़ेमें कलमके साथ पुराना पौदा लगाना चाहिये। (२) आठ हाथके अन्तर पर दो हाथ गहरे गढ़ेमें कदली रोपण करनेसे फल खानेको मिलता है। (३) सात हाथके अन्तर पर पौने दो हाथ गहरे गढ़ेमें केला लगानेसे कृषक अपने परिश्रमका फल पाते हैं।

फिर कदली वृक्षके सम्बन्धमें खनाने दो अति सुन्दर और यथार्थ उपदेश दिये हैं,—

(१) कदलीको लगा कर पत्ते काटना न चाहिये। क्योंकि उसीसे कृषकोंको दाल-रोटी और कपड़े-लत्तेका सुभीता पड़ता है। (२) तीन सौ साठ केलेके झाड़ लगानेसे गृहस्थ घरमें पड़े सोता और कोई दुःख नहीं होता।

पत्र कटते ही कदलीवृक्ष निर्बल पड़ जाता है। सुतरां मोचा निकलनेमें विलम्ब लगता है। अतएव यथा समय फल खानेसे लाभ होना सम्भव है। ३६० केलेके झाड़ लगानेसे आठ मास बाद सकल फल दिया करते हैं। सुतरां एक ही समय ३६० गहर उतरनेपर अति अल्प पड़ते भी १५०) रु० नकद आय होगा। पल्लीग्राममें यदि प्रति मास १२) रु० नकद कोई खर्च करे,तो उक्त आयसे अति सुख और स्वच्छन्द से एक वर्ष उसका काम चले। फिर दो बीघे ज़मीन्‌में ३६० केलेके झाड़ अच्छी तरह हो सकते हैं।

एकबार लगा देनेसे उसी भूमिमें प्रायः ५ वत्सर पर्यन्त कदली फला करती है। किन्तु उसके बाद अन्य भूमिमें इसे लगाना पड़ता है।

बम्बई प्रदेशके लोग रसीली मट्टीमें कदली लगाते हैं। झाड़में कभी एक और कभी दो किले छोड़ बाक़ी काट डाले जाते हैं। फिर फलका बीज डाल किलोंपर छाया रखनेको प्रत्येक बीजके पार्श्वपर एक एक कदली वृक्ष लगा देते हैं। पीछे पौदा बढ़नेपर कुछ वत्सर बाद जब उक्त कदलीवृक्ष उसके रस-सञ्चारमें बाधा पहुंचाता, तब वह काट डाला जाता है। सुपारीके खेतमें भी इसी प्रकार वृक्षके मूलपर छाया पहुंचानेको कदली रोपण करते हैं। यहां इसकी वृद्धिमें लोग बड़ा यत्न लगाते हैं। ऊख और धानकी खेतीके पीछे उसी भूमिमें इसे रोपण करते हैं। प्रथमतः धान काटकर ऊख बोई जाती है। ऊख कटते पीछे ज़मीन् थोड़े दिन खाली पड़ी रहती है। फिर वृष्टिके बाद वैशाख-ज्येष्ठ मास दाक्षिणात्यमें इसी समय पानी बरसता है। लम्बे और गहरे ५ फुट गहरे कलम लगाया जाता है। कलम लगाते समय फलीके छिलके, सड़ी मछली और गोबरको खाद डाल देते हैं। भिन्न भिन्न जातीय कदलीको

देख-भाल कलम लगानेका नियम है। एक एकर परिमित भूमिमें बसरैया केलेके १००० और तांबड़ी केलेके ५०० कलम लगाये जाते हैं। अन्यान्य जातीय प्रत्येक वृक्षके मध्य ७ फीट अन्तर रखते हैं। कलम लगानेके समयसे ४ मासतक खाद पड़ती है—प्रथम तीन मास फलोंके छिलकी और ४र्थ मास सड़ी मछली-की। प्रत्येकबार खाद डाल ऊपर असली मट्टी दबाते हैं। मछलीकी खाद देनेसे बहुत कीड़ा पड़ जाता है। इसीसे यह खाद डालने पीछे ८। १० दिन जल नहीं देते। जल न पानेसे रौद्रमें कीड़ा मर मिटता है। कलम लगाने बाद सप्ताहमें दो बार जल दिया जाता है। पीछे जितने दिन पानी नहीं बरसता, उतने दिन सप्ताहमें कदलीको एकबार सींचना पड़ता है।

मन्द्राजमें दो प्रकार इसकी कृषि होती है। उच्च भूमिमें 'पत्ता थलई' और निम्न भूमिमें 'सुरुवलई' लगाया जाता है। वहां कदलीके क्षेत्रमें लाल आलू वगैरह बो देते हैं। फिर हल न चला कुदालसे ही कदलीकी भूमि तैयार करते हैं। ५ वत्सर पीछे कदलीको खोदखाद दूसरी चीज़ बोई जाती है।

ब्रह्मदेशवासी इसके लगानेमें कोई यत्न नहीं करते। किन्तु हरेक आदमीके घरमें केलेका पेड़ रहता है। यत्न न करते भी वहां स्वच्छन्द अपर्याप्त उत्तम फसल तैयार हो जाती है।

पूर्व-भारतीय द्वीपमें लोग इसकी कृषि बड़े यत्नसे करते हैं। तीन तीन वत्सर पीछे क्षेत्र बदल नया कलम लगाया जाता है। पुरातन स्थूलमूलसे खादका काम लेते हैं। वहां इतना यत्न न करनेसे फलमें बीज पड़ जाता है। किसी द्वीपमें पुरातन स्थूल-मूलकी खाद डालते हैं सही, किन्तु उसे अच्छा नहीं समझते। उससे भूमि खट्टी पड़ जाती है।

पश्चिम-भारतीय द्वीपमें पुरातन वृक्षको खण्ड खण्ड कर जला डालते हैं। फिर कलम काट उसी पुरातन वृक्षकी खाकमें २ हाथके अन्तर गर्त बना लगा देते हैं। दूसरी कोई चेष्टा की नहीं जाती।

मुसा टेक्सटिलिस (Musa textilis) अर्थात् अबक सूतकी कदली ६से ८ फीट अन्तर पर लगाना पड़ती है। अल्पको उस अन्तरमें भी किल्ला फूटता है। दो वत्सरमें ही सूत्र निकल सकता, किन्तु चार वत्सर बीतनेपर कुछ अच्छा पड़ता है। इसमें फल आने नहीं देते। क्योंकि फल लगनेसे सूत बिगड़ जाता है। फलका आना बन्द करनेको केवल दो पत्र छोड़ बाकी सब काट डालते हैं।

कदलीके सम्बन्धमें प्रवाद—बङ्गालियोंमें कदलीके सम्बन्ध-पर अनेक प्रवाद चलते हैं। एक प्रवादके अनुसार कदलीवृक्षपर गिरनेसे फिर वज्र स्वर्गको उठकर जा नहीं सकता। चोर लोग इस वज्रको रात्रिके समय चुपके उठा खिड़कीसे लोहारके घर डाल आते हैं। फिर लोहार उससे चोरीका खन्ता बना उन्हीं खिड़की-में रख देते हैं। चोर भी रात्रिको आ चुपके वह खन्ता उठा ले जाते हैं। इसीसे कहते हैं—चोर और लोहार कभी नहीं मिलते। दूसरा प्रवाद केलेको यक्षो देवीका प्रिय खाद्य बताता है। फिर तीसरे प्रवादके अनुसार केला बुड्ढोंको खानेमें बहुत अच्छा लगता है।

'तालिफ-शरीफ़' नामक फ़ारसीके चिकित्साग्रन्थमें लिखा—केलेसे कपूर होता है। किन्तु आईन-अकबरी इस बातको नहीं मानता। इधर हिन्दीके ब्रज-चन्द्र नामक किसी कविने भी नायिकाभेदमें नहाका वर्णन करते कहा है—"कपूर पायो कदली।"

अंगरेजोंमें लोग इसे बाइबिलोक्त निषिद्ध फल बताते हैं। मडलफके कथनानुसार बाइबिलोक्त 'दुदो-इम' (Dudoim) फल ही कदली है। फिर कोई कोई इसे निषिद्ध फल न मान स्वर्गोद्यानमें मानवका प्रथम प्रधान खाद्य समझते हैं। अस्तको जो चाहे सो हो, किन्तु स्वर्गोद्यानका संस्रव रहनेसे ही सम्भवतः कदलीका नाम पारादिसिका (Paradisica) पड़ा है। क्योंकि अंगरेजीमें पाराडाइस् (Paradise) स्वर्गको कहते हैं।

कदलीका टोटका—केलेका एक पौदा किसी जगह लगा-इयेगा। इस वृक्षके मूलमें जितने दिन किल्ला न निक-लेगा, उतने दिन कुछ करना भी न पड़ेगा। किन्तु किल्लेको बढ़ने न दीजिये, निकलते ही उसे नष्ट

कीजिये। पीछे मूल वृक्षको जड़से १ हाथ छोड़ समस्त काट डालते हैं। फिर प्रत्यह इस वृक्षमें एक घट जल देते जाइये। इससे फिर पौदा उपजेगा। १ हाथ बढ़नेसे पुनः पूर्व-कीर्तित स्थानसे काट प्रत्यह जल डालते रहिये। इसी प्रकार बार-बार काटते काटते जब मोचा निकले, तब फिर न काट मूल वृक्षको मट्टीसे ढांक दे। फिर एक ओर काण्ड और मोचा दोनों बढ़ेंगे, किन्तु इधर-उधर अवलम्बन न पा और ऊर्ध्वको उठ न सका भूमिपर ही फैल पड़ेंगे। इससे केला लताकी भांति दृष्टिगोचर होगा। इसपर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

चौशीरा—चार जातीय केलोंके चार वृक्ष मोटी जड़के साथ ले आइये। फिर वृक्षोंको काटिये और प्रत्येक जड़से इस प्रकार बारह आने हिस्सा निकालिये, जिससे चारोंको मिलानेपर एक पूरी जड़ बना डालिये। पीछे चारोंको जोड़ और रस्सीसे अच्छीतरह बांध ऊपर गोबर लपेट दीजिये। जिस स्थानपर इसे लगाते, उस स्थानमें १ हाथ गभीर एक गर्त बनाते हैं। गर्तका अर्धांश मट्टी घाससे भर इस जड़को जमा और ऊपर मट्टी दबा देते हैं। कुछ दिन पीछे किल्ला फूटता है। जबतक मोचा नहीं आती, तबतक दूसरी कोई तदबीर भी की नहीं जाती। केवल इतना ध्यान रखना पड़ता, कि वृक्ष बराबर चला चलता है। फिर मोचा आनेका उपक्रम होनेसे वृक्षका अग्रभाग दृढ़ रस्सीसे बांध देते हैं। अन्तको उससे एक ही काण्ड आती और चार जातीय मोचा निकलेंगी। मोचाकी शाखाओंके नीचे तीन-तीन लकड़ियां लगा देना चाहिये, जिसमें शाखायें मोचाके भारसे टूट न जावें।

केलाफूल—किसी मर्त्य वा उन्नत कदलीका छोटा कुलम एक गमलेके पेंदेमें बड़ा छिद्रकर इस प्रकार लगी, जिसमें कुलमके नीचे पेंदेमें बहुत थोड़ी अर्थात् ८।१० अङ्गुलसे अधिक मट्टी न रहे। जितने दिन कुलम खूब नहीं पनपता, उतने दिन अल्प अल्प जल देना पड़ता है। जब कुलम खूब पनप जाता, तब १ हाथ ऊंचे बांसके मचानपर उसे चढ़ा जल छोड़ना बन्द कर दिया जाता है। पीछे समस्त पत्र डण्ठलके साथ काट डालते हैं। फिर पत्र आनेसे फिर काटा करते हैं। उधर गमलेके छेदसे डाल लटक पड़ती है। प्रत्यह इस डालपर जल छिड़कते हैं। फिर अग्रमोचा निकलनेसे अग्रभाग काट डालते हैं। अन्तको इससे जो मोचा निकलेगी, वह कदलीवृक्षके मस्तकपर छत्राकार बन फूल-जैसी देख पड़ेगी।

२ कदलीमृग, एक हिरन। इसके चर्मका आसन बनता है। ३ पृश्निपर्णी।

कदलीकन्द (सं० पु०) रम्भामूल, केलेकी जड़। यह शीतल, बल्य, केश्य, अम्लपित्तजित्, वह्निकृत्, मधुर और रुचिकारक होता है। (मदनपाल)

कदलीकुसुम (सं० क्ली०) रम्भापुष्प, केलेका फूल। यह स्निग्ध, मधुर, तुवर, गुरु एवं शीत और वातपित्त, रक्तपित्त तथा क्षयको दूर करनेवाला है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीचता (सं० स्त्री०) कर्कटीभेद, किसी किस्मकी ककड़ी।

कदलीजल (सं० क्ली०) कदलीरस, केलेका पानी। यह शीतल एवं ग्राहक रहता और मूत्रकृच्छ्र, मेह, तृष्णा, कर्णरोग, अतिसार, अस्थिस्राव, रक्तपित्त, विस्फोट, योनिदोष तथा दाहका नाश करता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीदण्ड (सं० पु०) मोचाके वृक्षगर्भका कोमल दण्ड-जैसा भाग, केलेका भीतरी हिस्सा। यह शीतल, अग्निवर्धन, रुच्य, रक्तपित्तहर, योनिदोषहर और असृग्दरनाशक है।

कदलीमास, कदलीदण्ड देखो।

कदलीमूल (सं० क्ली०) रम्भाका मूल, केलेकी जड़। यह बल्य, वातपित्तघ्न और गुरु होता है।

कदलीमृग (सं० पु०) शबलमृग, एक हिरन। यह अधिकतर पूर्वदेशमें प्रसिद्ध है। कदलीमृग हस्ताम बिडाल-जैसा और विलेशय होता है। (सुश्रुत)

कदलीवल्कल (सं० क्ली०) कदलीत्वक्, केलेकी छाल। यह तिक्त, कटु, लघु और वातहर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कदलीसार (सं० पु०) कदलीरस, केलेका निर्यास।

कदलीस्कन्ध (सं० पु०) इन्द्रजालविशेष, धोखेकी टट्टी।

कदश्व (सं॰ पु॰) कुत्सिताश्व, खराब घोड़ा।

कदा (सं॰ अव्य॰) किस समय, कब, कौन वक्तपर।

कदाकार (सं॰ त्रि॰) कुरूप, बदसूरत।

कदाख्य (सं॰ क्लो॰) १ कुष्ठौषध, एक दवा। (त्रि॰) २ निन्दित, बदनाम।

कदाच, कदाचन देखो।

कदाचन (सं॰ अव्य॰) किसी समय, एक दिन, एक बार।

कदाचार (सं॰ पु॰) कु: कुत्सित: आचार:, को: कदादेश:। १ कुत्सित आचार, मन्द व्यवहार, बुरा चालचलन। (त्रि॰) कुत्सित आचारो यस्य, बहुव्री॰। २ कदाचारी, बदचलन, बुरा काम करनेवाला।

कदाचारिणी (सं॰ क्लो॰) कदाचारिन्-ङीप् प्रत्यय। अति मन्द व्यवहारवाली स्त्री, जिस औरतके बहुत बुरा चालचलन रहे।

कदाचारी (सं॰ त्रि॰) कुत्सित आचारो ऽस्यास्ति, कदाचार-इनि। मन्द व्यवहारकारी, बुरी चाल चलनेवाला।

कदाचित् (सं॰ अव्य॰) कदा अनिर्धारिते चित्। दूसरे समय, एकबार। इसका संस्कृत पर्याय—जातु और कर्हिचित् है।

"न पादौ धारयेत् क्वापि कदाचिदपि भाजने।" (मनु ४।६५)

कदान—बम्बईप्रान्तके रेवाकण्ठ ज़िलेका एक देशीय राज्य। यह अक्षा॰ २३° १९´ ४´´ से २३° ३०´ १०´´ उ॰ और देशा॰ ७३° ४३´ से ७३° ५४´ पू॰के मध्य अवस्थित है। कदान राज्यसे उत्तर डुंगरपुर तथा मेवाड़ राज्य, दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्व ग्रण्ठ राज्य और पश्चिम तथा दक्षिण-पश्चिम लोनावर एवं रेवाकण्ठ राज्य लगता है। भूमिका परिमाण १३० वर्गमील है।

यह प्रदेश बन्धुर (ऊंचा-नीचा) है। पर्वत और वन चारो ओर परिव्याप्त है। राज्यके दक्षिणभागमें महानदी बहती है। इधरकी भूमि उर्वरा है। उत्तरांशमें नदीके उपकूलपर एक अप्रशस्त भूभागको छोड़ दूसरा समस्त भाग अनुर्वर और पर्वतमय है। ई॰के १२श शताब्द लिङ्गदेवजी (लिमदेवजी)ने यह राज्य स्थापित किया था। वह पांवमहलके अन्तर्गत भालोद नगरके स्थापनकर्ता भाभिमसिंहके वंशसम्भूत और उन्होंके एक कनिष्ठ भ्राता रहे।

आजकल कदान राज्य भारत-गवरनमेण्टको कर देता है। राजधानी कदान नगर महानदीके पश्चिम तीर पर अवस्थित है।

कदापि (सं॰ अव्य॰) समय-समय पर, कभी-कभी, जब-तब। यह शब्द प्रायः 'न' के साथ आता है।

क़दामत (अ॰ स्त्री॰) १ पुरातनत्व, पुरानापन। २ प्राचीन समय, पुराना ज़माना।

कदामत्त (सं॰ पु॰) कदाचित् मत्त:। करिविशेष।

कदिन्द्रिय (सं॰ क्लो॰) कुत्सितमिन्द्रियम्, कर्मधा॰। कुत्सित इन्द्रिय, खराब हवास।

कदी (हिं॰ वि॰) कद्दी, हठी, कद रखनेवाला।

क़दीम (अ॰ वि॰) १ प्राचीन, पुराना। (हिं॰ पु॰) २ लौहदण्ड, लोहेको छड़। इससे जहाजोंमें बोझ उठाया जाता है।

कदुष्ट्र (सं॰ पु॰) कुत्सित उष्ट्र:, को: कदादेश:। को: कत्तत्पुरुषेऽचि। पा ६।३।१०१। मन्द उष्ट्र, खराब ऊंट।

कदुष्ण (सं॰ क्लो॰) कु ईषत् उष्णम्, ईषदर्थे को: कादादेश:। १ ईषत् उष्ण, ज़रासी गर्मी। इसका संस्कृत पर्याय कोष्ण, कवोष्ण और मन्दोष्ण है। (त्रि॰) २ ईषत् उष्णविशिष्ट, कुछ गर्म, जो ज़्यादा जलता न हो।

"कदुष्ण: सरस: स्निग्ध: कटुक: कर्षैर्युक्त:।" (सुश्रुत)

कदूर—महिसुर राज्यका एक ज़िला। यह अक्षा॰ १२° १२´ से १३° ५८´ उ॰ और देशा॰ ७५° ८´ से ७६° २५´ पू॰के मध्य अवस्थित है। कदूर महिसुरके नगरविभागका दक्षिण-पश्चिमांश है। इस ज़िलेसे उत्तर शिमोग ज़िला, दक्षिण हसन ज़िला, पूर्व चितल दुर्ग और पश्चिम पश्चिमघाट पड़ता है। भूमिका परिमाण २९८४ वर्गमील है।

इस ज़िलेके पश्चिम-प्रान्तमें कुद्रेमुख (६२१५ फीट उच्च) एवं मेरुतिगुड़ (५४५१ फीट उच्च) और मध्यभागमें बाबाबुदन (६३१७ फीट उच्च) तथा कालहस्ती (६१५५ फीट उच्च) गिरि खड़ा है। फिर इनके छोटे-छोटे कितने ही दूसरे पर्वत भी विद्यमान

हैं। यहांका मलनाद नामक स्थान पर्वत और उपत्यकासे समाच्छन्न है।

प्रधान नदी—तुङ्ग और भद्रा नामकी दो नदी मिल तुङ्गभद्रा नामकी लम्बी नदीमें आ गिरी हैं। जिलेके दक्षिणांशमें हेमवती और पूर्वांशमें वेदवती नदी बहती है।

शस्य—बाबाबुदन गिरिप्रदेश ही आजकल अत्युत्कृष्ट उर्वरा भूमि है। यहां कहवेकी खेती होती है। प्रवाद है—बाबा बुदन नामक किसी फकीरने, मक्केसे कहवेका पेड़ ला यहां लगाया था।

कदूरके वनमें मूल्यवान् चन्दन, शिशु प्रभृति उत्तम काष्ठ उत्पन्न होता है। फिर १४ प्रकारका धान, गेहूं, रुई, ऊख, सुपारी वगैरह चीजें भी उपजती हैं। किन्तु कहवेकी खेतीका ही आदर अधिक है। क्योंकि उससे आय बहुत आता है। इस जिलेमें ७८ वर्गमील सरकारी जङ्गल है। जङ्गलमें हस्ती, वन्य महिष, व्याघ्र, तरक्षु, शिया नामक एकप्रकार भल्लूक, वन्यशूकर, हरिण, शशक (खरगोश) और मयूर देख पड़ता है। स्थानीय नदी एवं जलाशय मत्स्य परिपूर्ण हैं। यहां कम्बल, तेल, खदिर, अतर और लोहेका व्यवसाय होता है।

यह जिला पहले जनराजोंसे समाच्छन्न रहा। जनप्रवाद है—यहां ऋष्यशृङ्गका जन्म हुआ था। स्थानीय तुङ्गनदीके तटस्थ शृङ्गेरीको कितने ही लोग ऋष्यशृङ्ग गिरिका अपभ्रंश मानते हैं। यह स्थान पूज्यपाद शङ्कराचार्यका लीलाक्षेत्र रहा। यहां दाक्षिणात्यवासी स्मार्त ब्राह्मणोंके 'जगद्गुरु' रहते हैं।

यहां रत्नपुरी और शकरायपट्टन स्थानमें प्राचीन नगरादिका चिह्न विद्यमान है। उसके देखनेसे स्थानीय पूर्वसमृद्धिका कुछ आभास मिलता है। उक्त दोनों स्थान पहले बल्लाल राजाओंकी राजधानी रहे। उसी समय दाक्षिणात्यके कितने ही महापुरुष यहां आकर बसे थे। बल्लाल राजाओंके अभ्युदयसे वह प्राचीन समृद्धि बिलकुल लोप न हुई। किन्तु विजय-नगरके मुसलमानोंकी दृष्टिसे प्राचीन नगरोंकी समृद्धि मिट गयी। क्योंकि अभ्युत्थानसे बल्लाल-राजवंश भी बिलकुल बिगड़ा था। कदूर और सकल निकटस्थ जनपद मुसलमानोंने अधिकार किये। कुछ दिन पीछे बदनूरके पलिगारोंने कदूर जिलेके अधिकांशपर आक्रमण मारा था। किन्तु जीतने भी अधिक दिन वह राज्यभोग कर न सके। १६९४ ई०को महिसुरके राजाने उन्हें फिर हराया था।

१७६३ ई०को हैदर-अलीने समस्त कदूर जिला अधिकार किया। फिर १७९९ ई०को टीपू सुलतानके मरनेपर तत्कालीन गवरनर जेनरल वेलेसलीने स्थानीय मित्र-राजको यह जिला दे डाला। कुछ दिन हिन्दू राजाओंने सुख-स्वच्छन्दसे राज्य चलाया था। मध्यमें किसी राजाने एक ब्राह्मणका अपमान किया। उससे स्थानीय लिङ्गायत और कृषक बिगड़ उठे हुये। उन्होंने घोषणा की थी—वह हिन्दू राजा राज्यके उपयुक्त नहीं, जो ब्राह्मणका अपमान कर सके। १८२१ ई०को लिङ्गायतोंने विद्रोह उठाया। तरिकेरीके प्राचीन पलिगारवंशका एक व्यक्ति भी उनसे आ मिला था। व्यापार कुछ गुरुतर हो गया। राजद्रोहियोंने अनेक स्थान आक्रमण किये थे। हिन्दू राजाओंने सोचा—अपना सिंहासन बचाना चाहिये। फिर अंगरेजी सैन्यकी आवश्यकता लगी थी। अंगरेजोंने आकर विद्रोह रोका। फिर अंगरेज गवरनमेण्टने समझ लिया—स्थानीय हिन्दू राजा किसी कामके नहीं। उसी समयमें कदूर राज्य खास अंगरेजी बन गया।

१८६३ ई०को चिकमगलूर नामक स्थान इस जिलेका सदर मुकाम हुआ।

इस जिलेमें सब मिलाके कोई १०१ नगर और ग्राम हैं। प्रधान नगरोंके नाम यह हैं—चिकमगलूर, तरिकेरी, कदूर, आदिमपुर, अयीनकेरी, बिरूर, हरिहरपुर और कोरेमगलूर क्रमसे। यहांका जलवायु सकल स्थानोंमें समान नहीं। मलनादमें प्रतिवर्ष एकप्रकार भयानक वन्य रोग होता है। उसके प्रकोपसे कोई परित्राण नहीं पाता। अपर स्थान अच्छा है। कदूर जिलेका प्राचीन नगर कदूर है। यह एक गण्डग्राम समझा जाता है।

प्राचीन शिलालिपि और भग्न स्तम्भ देखनेसे विदित होता—ई०के १०म शताब्द यहां जैन प्रबल हो गये थे। पहले यहां सदर थाना रहा, जो १८६१ ई०को चिकमगलूर उठ गया। यह नगर अक्षा० १३° ३१´ उ० और देशा० ७५° २५´ पू० पर अवस्थित है।

कदूरत (अ० स्त्री०) वैमनस्य, अनबन, मैल, फर्क।

कदूहि (सं० पु०) गोत्रप्रवर ऋषिविशेष।

कद्दावर (फा० वि०) प्रशस्त शरीरयुक्त, असीम, जिसके बड़ा और भारी जिस्म रहे।

कद्दी (अ० वि०) कद्द रखनेवाला, हठी, जो मनमानी करता हो।

कद्दू (फा० पु०) १ कद्दू, लौकी। २ लिङ्ग, घण्टा। गंवार इस शब्दको शेषोक्त अर्थमें व्यवहार करते हैं।

कद्दूकश (फा० पु०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। इसमें लौकीका लच्छा उतारा जाता है। यह लोहे या पीतलका बनता और छोटी चौकी-जैसा रहता है। कद्दूकशमें लम्बे-लम्बे छिद्र होते हैं। इनको एक ओर उठा और दूसरी ओर दबा देते हैं। इस यन्त्रपर लौकी रगड़नेसे पतला-पतला लच्छा उतर आता है। यह लच्छा रायता और मिठाई बनानेमें लगता है।

कद्दूदाना (फा० पु०) कृमिभेद, एक कीड़ा। यह श्वेत एवं क्षुद्र रहता और उदरमें पड़ मलके साथ गिरता है।

कद्रथ (सं० पु०) कुत्सितः रथः, कोः कदादेशः। रथवदयोश्च। पा ६।३।१०२। कुत्सितरथ, खराब गाड़ी।

कद्रु (सं० पु०) कद्-रु। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा या गेहुआं रङ्ग। २ ऋषिविशेष। (त्रि०) पिङ्गलवर्ण-विशिष्ट, गन्दुमी, भूरा। (स्त्री०) ४ नागमाता। यह दक्षकी कन्या एवं कश्यपकी पत्नी थीं। ५ वृक्ष-विशेष, एक पेड़।

कद्रुक, कद्रुव देखो।

कद्रुण (सं० त्रि०) कद्रुरस्त्यस्य, कद्रु-न। लोमादिपामादि-पिच्छादिभ्यः शनेलचः। पा ५।२।१००। पिङ्गलवर्णयुक्त, गन्दुमी, भूरा।

कद्रुपुत्र (सं० पु०) कद्रोः पुत्रः, ६-तत्। नाग, सर्प, सांप। इसका संस्कृत पर्याय काद्रवेय, कद्रुवालु और कद्रुसुत है।

कद्रुसुत (सं० पु०) कद्रोः सुतः, ६-तत्। सर्प, सांप।

कद्रू (सं० स्त्री०) कद्रु-ऊङ्। कद्रुकमण्डल्वोश्छन्दसि। पा ४।१।७१। सर्पमाता, सांपोंकी मा।

कद्वाच (सं० त्रि०) कश्चिदञ्चति, किम्-अञ्च्-क्विप् अद्यादेशः किमः कद्। १ अनिश्चित देशको गमन करनेवाला, जो किसी नामालूम मुल्कको जाता हो। (स्त्री०) २ अनिश्चित देशका गमन, नामालूम मुल्ककी सफर।

कद्वत् (सं० त्रि०) क अस्त्यस्य, क-मतुप् मस्य वः। कशब्दयुक्त, 'क' लफ्ज़ रखनेवाला।

कद्वती (सं० स्त्री०) कद्वत्-ङीप्। कशब्दयुक्त मन्त्र प्रभृति।

कद्वद (सं० त्रि०) कुत्सितं वदति, कु-वद् पचाद्यच् कोः कदादेशश्च। १ कुत्सित वक्ता, खराब बोलनेवाला, जो ठीक कहता न हो। २ कर्कशभाषी, कड़ी बात कहनेवाला। ३ दुःश्रवशब्दयुक्त, सुननेमें अच्छा न लगनेवाला। ४ अति कुत्सित, निहायत खराब।

कद्वर (सं० स्त्री०) कं जलमिव आचरति, क-क्विप् तदा कता म्रियते वत-म्रि-अच्। १ दधिक्षेदयुक्त तक्र, पानी मिला मट्ठा। २ दूधका पानी, आब-शीर, पन्छा, तोड़।

कधप्रिय (सं० त्रि०) स्कन्धं प्रीणाति, प्री-क्विप् पृषोदरादित्वात्। स्कन्धप्रिय।

कधप्री (वै० त्रि०) कन्धं प्रीणाति, प्री-क्विप् पृषो-दरादित्वात्। स्कन्धप्रिय।

कधी (हिं० क्रि० वि०) कभी, किसी वक्त।

कधी-कधार (हिं० क्रि० वि०) समय-समयपर, कभी-कभी, जब-तब।

कन (हिं० पु०) १ कण, ज़र्रा, बहुत छोटा टुकड़ा। २ अनाजका दाना। ३ अनाजके दानेका एक टुकड़ा। ४ उच्छिष्ट भोजन, जूठन। ५ भिक्षा, मांगा हुआ दाना। ६ विन्दु, क़तरा, बूंद। ७ बालुकाका खुदांश, बालूका किनका। ८ क्षुद्राङ्कुर, दाना-जैसी कोंपल। ९ शक्ति, ताक़त, ज़ोर। यौगिक शब्दोंमें 'कन'से कर्णका बोध होता है, जैसे—कनफटा, कनटोप, कनगुज, कनसराई।

कनई (हिं० स्त्री०) १ नवशाखा, नई डाल, किल्ला, कोपल। २ आर्द्र मृत्तिका, गीली मट्टी, कीचड़।

कन-उंगली (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, हाथकी सबसे छोटी उंगली, छिंगुनिया। कान खुजलानेमें प्रायः काम आनेसे हाथकी सबसे छोटी उंगली 'कनउंगली' कहलाती है।

कनउड़ (हिं० वि०) कनौड़ा, कृतज्ञ, एहसानमन्द।

कनक (सं० क्ली०) कनति दीप्यते, कन्-वुन्। १ स्वर्ण, सोना। स्वर्ण देखो। (पु०) २ रक्तपलाशवृक्ष, टेसूका पेड़। ३ नागकेशरवृक्ष। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ काञ्चनार वृक्ष, कचनारका पेड़। ६ कालीयवृक्ष, काले अगुरुका पेड़। ७ चम्पकवृक्ष, चम्पेका पेड़। ८ कासमर्दक्षुप, कसौंदेका पेड़। ९ कनकगुग्गुलु। १० लाक्षातरु, लाखका पेड़। ११ जयपालवृक्ष, जमालगोटेका पेड़। १२ कृष्णधुस्तूर, काला धतूरा। १३ सप्तालेय।

"कनकार: शिर: सर्व: कनक: काञ्चनप्रभ:।" (भारत १३।१४८२१)

१४ यदुवंशीय दुर्दम राजाके पुत्र। (हरिवंश ३३।८) १५ एक चोलराजा। (हिं०) १६ गोधूमचूर्ण, गेहूंका आटा, कनिक। १७ गेहूं।

कनककदली (सं० स्त्री०) रम्भाभेद, किसी किस्मका केला।

कनककन्दर्परस (सं० पु०) वाजीकरणका एक औषध, नामर्दीकी एक दवा। पारद एवं गन्धक प्रत्येक सम भाग और कान्तलौह, वैक्रान्त तथा स्वर्ण प्रत्येक पारदसे चतुर्थांश पहले कज्जली करे। फिर ताम्रपात्रपर गूलरके रस, सरसोंके तेल और धतूरेके रसमें प्रत्येकको तीन दिन घोटते हैं। सूखनेपर वालुका यन्त्रमें धीमी आंचसे सबको पकाना चाहिये। वालुका लाल पड़नेसे आग बुझा देते और शीतल होनेपर नीचे उतार औषधको खा लेते हैं। अनुपान घृत, शर्करा और मधु है।

कनककर्णी (हिं० स्त्री०) सोनेकी लौंग। यह एक आभूषण है। इसे कर्णमें धारण करते हैं।

कनककशिपु (सं० पु०) हिरण्यकशिपु, एक दैत्य।

कनककुण्डला (सं० स्त्री०) कार्त्तिकेयकी माता।

कनककुसुम—एक जैन ग्रन्थकार। यह विजयसेन सूरिके शिष्य रहे। इन्होंने ज्ञानपञ्चमीमाहात्म्य ग्रन्थ बनाया था।

कनककेशरी—उत्कलके एक राजा। यह चलाङ्ग-केशरीके पुत्र थे।

कनकक्षार (सं० पु०) कनकस्य द्रावणार्थं क्षारः, मध्यपदलो०। टङ्कणक्षार, सोहागा। सोहागा देखो।

कनकक्षीरी (सं० स्त्री०) स्वर्णक्षीरी, किसी किस्मकी सिरनी।

कनकगिरि (सं० पु०) सम्प्रदायविशेषके प्रतिष्ठाता।

कनकगैरिक (सं० क्ली०) स्वनाम रक्तगैरिक, बहुत लाल गेरू।

कनकचम्पक (सं० पु०) चम्पकविशेष, किसी किस्मका चम्पा। (Pterospermum accrifoleum) यह वृक्ष भारतवर्षके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है। कनकचम्पक बहुत बड़ा वृक्ष है। काष्ठसे सुन्दर और दृढ़ तख्ते बनते हैं। पुष्प सुगन्धविशिष्ट रहता है। हिन्दीमें इसे कनियारी कहते हैं। वल्कल पिङ्गलवर्ण होता है। पत्र छत्राकार रहते हैं। वसन्त एवं ग्रीष्म ऋतु इसके फूलनेका समय है। आर्द्र भूमिमें यह प्रायः पनपता है।

कनकचम्पा (हिं०) कनकचम्पक देखो।

कनकचूर (हिं० पु०) धान्यविशेष, किसी किस्मका धान। इसका आकार सूक्ष्म, किन्तु कुछ अधिक दीर्घ होता है। अन्यान्य आमन धान्यकी अपेक्षा यह विलम्बसे पकता है। अधिक उर्वर और निम्नभूमि न रहनेसे इसकी कृषि करना कठिन है। कनकचूरकी लाईसे मुड़की बनती है।

कनकजीरा (हिं० पु०) धान्यविशेष, एक धान। यह अति सूक्ष्म होता है। इसको मार्गशीर्ष माघमें काटते हैं। कनकजीरेका तण्डुल बहुत दिन नहीं बिगड़ता।

कनकझाटक (सं० पु०) राल, सोहाग।

कनकझिट्टा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। (Polygonum elegans)

कनकटङ्क (सं० पु०) स्वर्णकुठार, सोनेका तबर।

कनकटा (हिं॰ वि॰) १ कर्णरहित, बूचा, जो कान कटा चुका हो। २ कर्ण काटनेवाला, जो कान काट लेता हो।

कनकतालाभ (सं॰ त्रि॰) स्वर्णके तालवृक्षकी भांति प्रभाविशिष्ट, जो सुनहले ताड़की तरह चमकता हो।

कनकतैल (सं॰ क्लो॰) क्षुद्ररोगाधिकारका एक तैल, छोटी-छोटी बीमारियोंपर चलनेवाला तेल। मधुकके काथमें एक कुड़व तैल पाक करना चाहिये। फिर उसमें प्रियङ्गु, मञ्जिष्ठा, रक्तचन्दन, नीलोत्पल और नागेश्वर प्रत्येकका चार-चार तोले कल्क डालनेसे यह तेल बनता है। कनकतैल मुखकी कान्ति बढ़ाता और चक्षुःशूल, शिरःशूल प्रभृति रोग मिटाता है। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

कनकदण्डक (सं॰ क्लो॰) कनकस्य दण्डो यत्र, बहुव्री॰। राजच्छत्र, शाही आफतावी।

कनकध्वज (सं॰ पु॰) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकन (हिं॰ पु॰) शब्द विशेष, एक आवाज। किसी विषयपर हठपूर्वक बोलते रहने और दूसरेकी बात न सुननेको कनकन कहते हैं।

कन-कना (हिं॰ वि॰) भङ्गुर, नाजुक, टूट-फूट जानेवाला।

कनकना (हिं॰ वि॰) १ कनकनानेवाला, जो कनकनाहट लाता हो। २ चुन-चुनाहट लानेवाला, चुनचुना। ३ असह्य, बरदाश्त न होनेवाला, जो खानेमें बुरा लगता हो। ४ असहनशील, चिड़चिड़ा, चिढ़ उठनेवाला।

कनकनाना (हिं॰ क्रि॰) १ कनकनाहट मालूम पड़ना, चुनचुनाहट उठना, मुंहका जायका बिगड़ना। जमींकन्द, घुइयां वगैरह चीजें कची खानेसे मुंह कनकनाने लगता है। २ अच्छा न लगना, बुरा मालूम पड़ना। ३ चकित होना, भड़कना, कान खड़े करना। ४ रोमाञ्च आना, सनसनाना।

कनकनाहट (हिं॰ स्त्री॰) कनकनानेकी हालत, कनकनी।

कनकपत्र (सं॰ क्लो॰) कनकनिर्मितं पत्रं पत्राकारं भूषणमित्यर्थः। कर्णालङ्कारविशेष, कानका पात।

कनकपराग (सं॰ पु॰) सुवर्णरेणु, सोनेका बुरादा।

कनकपल (सं॰ पु॰) कनकस्य पलं मानविशेषः। १ स्वर्णादि परिमापक षोड़शमाषक, सोलह माशे सोनेकी तौल। इसका अपर नाम कुरुविस्त है। २ मत्स्यविशेष। इसका मांस स्वर्ण-जैसा होता है।

कनकपिङ्गल (सं॰ क्लो॰) तीर्थविशेष। (हरिवंश ११२०८)

कनकपुर—ग्रामविशेष, एक गांव। यह कपिलवस्तुसे १ योजन दूर अवस्थित है। यहां कनकमुनि नामक बुद्धने जन्मग्रहण किया था।

कनकपुरी (सं॰ स्त्री॰) कनकनिर्मिता पुरी, मध्यपदलो॰। १ स्वर्णपुरी, सोनेका शहर। २ लङ्का।

कनकपुष्पिका (सं॰ स्त्री॰) १ गणिकारिका, छोटी अरनी। २ द्रुमोत्पल, कमल-कमल।

कनकपुष्पी, कनकपुष्पिका देखो।

कनकप्रभ (सं॰ पु॰) सोमलताभेद। सोम देखो।

कनकप्रभा (सं॰ स्त्री॰) कनकस्य प्रभेव प्रभा यस्याः, मध्यपदलो॰। १ महाज्योतिष्मतीलता, बड़ी रतन-जोत। २ पीतयूथिका, सोनजुही। ३ ज्वरातिसारका एक रस, बुखारके दस्तोंकी एक दवा। सुवर्णबीज, मरिच, मरालपाद, कणा, टङ्कण, विष और गन्धक समान भाग ले भांगके रसमें घोटने और गुञ्जाप्रमाण वटिका बनानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। इसके सेवनसे अतीसार, ग्रहणी और अग्निमान्द्य रोग छूट जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) ४ छन्दोविशेष। इसमें तेरह-तेरह अक्षरके चारपाद रहते हैं।

कनकप्रसवा (सं॰ स्त्री॰) कनकवत् प्रसवः पुष्पं यस्याः, बहुव्री॰। स्वर्णकेतकीवृक्ष, सुनहली केवड़ेका पेड़।

कनकप्रसून (सं॰ पु॰) धूलीकदम्ब, जिसी किस्मके कदमका पेड़।

कनकफल (सं॰ क्लो॰) १ धुस्तूरफल, धतूरेका फल। २ जयपाल, जमाल-गोटा।

कनकभङ्ग (सं॰ पु॰) स्वर्णखण्ड, सोनेका टुकड़ा।

कनकमय (सं॰ त्रि॰) कनकस्य विकारः, कनक-मयट्। स्वर्णनिर्मित, सोनेका बना हुआ, सुनहला।

कनकमुनि (सं॰ पु॰) बुद्धविशेष।

कनकमृग (सं॰ पु॰) कनकवर्णो मृगः, मध्यपदलो॰

स्वर्णवर्ण मृग, कुमकुमके रङ्गका हिरन। सीताहरणके समय मारीच नामक राक्षसने मायाबलसे स्वर्णवर्ण मृगका रूप बना सीताको प्रलोभित किया था।

कनककरम्भा (सं॰ स्त्री॰) कनकवर्णकलिका रम्भा, मध्यपदलो॰। सुवर्णकदली, चम्पा केला।

कनकरस (सं॰ पु॰) कनकवर्णो रसः उपरसः। १ हरिताल। २ गलित स्वर्ण, गला हुआ सोना।

कनकरेखा (सं॰ स्त्री॰) कनकध्वजाकी बेटी।

कनकलोद्भव (सं॰ पु॰) कनति दीप्यते इति कना, कना दीप्ता कला अवयवः तया उद्भवति, कनकला-उद्-भू-अच्। सर्जरस, लोबान, धूना।

कनकवती (सं॰ स्त्री॰) कनकमस्त्यस्याः, कनक-मतुप् मस्य वः ङीप्। १ स्वर्णभूषित स्त्री, सोनेसे लदी औरत। २ कनकवर्ण राजाकी राजधानी।

कनकवटीरस (सं॰ पु॰) अर्शोधिकारका एक रस, बवासीरकी एक दवा। पारा, गन्धक, हरिताल, सैन्धवलवण, ब्राह्मी, इन्द्रयव एवं शुण्ठी प्रत्येक १ पल और सबन ४ पल कारवेल्ल (करेले) पत्रके रसमें १ दिन घोटनेसे यह रस प्रस्तुत होता है। वटी गुञ्जा-प्रमाण बनती है। कनकवटी रसकी एक वटी प्रत्यह सेवन करनेसे रक्त, वात एवं कफ तीनोंके विकारसे उत्पन्न होनेवाला अर्शोरोग मिट जाता है। (रसाकर)

कनकवर्ण (सं॰ पु॰) कनकस्य वर्ण इव वर्णो यस्य, बहुव्री॰। १ राजविशेष, एक राजा। नेपालके बौद्ध इन्हें शाक्यसिंहका पूर्व अवतार मानते हैं। (त्रि॰) २ स्वर्णकी भांति वर्णविशिष्ट, सुनहला, सोनेकी तरह चमकनेवाला।

कनकवाहिनी (सं॰ स्त्री॰) काश्मीर राज्यकी एक नदी। (राजतरङ्गिणी ११११०)

कनकविषह (सं॰ पु॰) विशालपुरीके एक राजा।

कनकबीज (सं॰ क्ली॰) धुस्तूरबीज, धतूरेका बीज।

कनकशक्ति (सं॰ पु॰) कनकवर्णा शक्तिरायुधविशेषो यस्य, बहुव्री॰। कार्तिकेय।

कनकशिख (सं॰ पु॰) रामायणोक्त एक पहाड़। (किष्किन्धा ४० स॰)

कनकसहोदररस (सं॰ पु॰) कुष्ठाधिकारका रस, कोढ़की एक दवा। शुद्ध स्वर्ण एवं ताम्र प्रत्येक १।१ भाग, पारा ३ भाग, और गन्धक ३ भाग चक्रके रसमें पीस गोली बनाये। फिर इस गोलीको बोध पांवमें सर्पके तेलसे पकाते हैं। जब औषध अच्छी तरह भुन जाता, तब चूल्हेसे नीचे उतार वैद्य उसका चूर्ण बनाता है। बनाके उक्त चूर्णमें चित्रकमूल, त्रिकटु, गुड़त्वक्, विडङ्ग एवं विष १।१ भाग और त्रिफला ३ भाग डाल छागमूत्रसे गुञ्जा-प्रमाण वटी बांध लेते हैं। निष्कपरिमाण बाकुची-तेलके साथ कनकसहोदररसकी एक गोली सेवन करनेसे कुष्ठरोग आरोग्य होता है। (रसरत्नाकर)

कनकसुन्दररस (सं॰ पु॰) अतिसारके अधिकारका रस, दस्तोंकी एक दवा। हिङ्गुल, मरिच, गन्धक, पिप्पली, टङ्कण (सोहागेकी लाई), विष एवं धुस्तूरबीज समस्त द्रव्य समभाग एकत्र भांगके रसमें एक याम घोट चनेकी बराबर गोली बना लेते हैं। यह औषध अग्निकार और ग्रहणीरोगनिवारक है। इसके व्यवहारकाल दधि, तक्र,घोल प्रभृति पथ्य भोजन करना चाहिये। (भैषज्यरत्नावली)

कनकसूत्र (सं॰ क्ली॰) कनकनिर्मितं सूत्रम्, मध्यपदलो॰। स्वर्णसूत्र, सोनेका तार।

कनकसेन—एक प्राचीन राजा। इन्होंने मेवाड़के राणा-ओंका कुल प्रतिष्ठित किया था। राणाओंके कुलतालिका-ग्रन्थमें लिखा—कनकसेनने भारतवर्षके किसी उत्तर-प्रदेशसे आ सौराष्ट्र प्रायद्वीपमें पदार्पण किया और वहां एक उपनिवेश बना दिया। उस समय सौराष्ट्र प्रायद्वीपमें परमारवंशीय कोई राजा राजत्व करते थे। कनकसेनने बलपूर्वक उनका राज्य छीन वीरनगर बसाया। इन्हींके वंशीय राजाओंने विजयनगर, वल्लभीपुर प्रभृति कई नगरोंकी प्रतिष्ठा की। प्रवाद—कनकसेनने ही पहले संवत् चलाया था।

कनकस्थलादचिर (सं॰ त्रि॰) स्वर्णके समान प्रकाश-मान, जिसमें सोनेकी तरह चमक हो।

कनकस्तम्भा (सं॰ स्त्री॰) स्वर्णकदलीवृक्ष, चम्पा-केलेका पेड़।

कनकस्थली (सं॰ स्त्री॰) स्वर्णभूमि, सोनेकी खान।

कनकाङ्गद (सं॰ क्ली॰) कनकमयं अङ्गदम्, मध्यपदलो॰। १ स्वर्णनिर्मित केयूर। (पु॰) २ धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकाङ्गदी (सं॰ पु॰) कनकाङ्गदमस्यास्ति, कनकाङ्गद-इनि। विष्णु।

"महावराहो गोविन्दः सुषेणः कनकाङ्गदी।" (विष्णुसह॰)

कनकाचल (सं॰ पु॰) कनकमयो अचलः, मध्यपदलो॰। १ सुमेरु पर्वत। २ धान्यादि दश दानोंमें एक दान। इसका प्रमाण तीन प्रकार है। सहस्र पल स्वर्णदानको उत्तम कनकाचल कहते हैं। इसी प्रकार पांच सौ पलमें मध्यम और ढाई सौ पलमें अधम कनकाचल दान होता है। फलितिकोंको ऐसे ही कनकाचल दान देनेसे सब पाप मिटता और ब्रह्मलोक मिलता है। (स्मृति)

कनकाञ्जलि (सं॰ स्त्री॰) कनकपूर्ण अञ्जलिः, मध्यपदलो॰। एक माङ्गलिक दान।

कनकाञ्जली (सं॰ स्त्री॰) कनकाञ्जलि-ङीप्। एक माङ्गलिक दान। किसी देवार्चनाके पीछे प्रतिमा विसर्जनकाल अथवा गृहकर्त्री स्वयं वेशभूषा बना अन्यान्य सधवा स्त्रियोंके साथ प्रतिमा वरणपूर्वक अपना अञ्चल फैला देती हैं। उसी समय गृहस्वामी प्रतिमाके पश्चात्‌से उक्त अञ्चल पर मुद्रायुक्त तण्डुलपात्र किञ्चिद करता है। कर्त्री अञ्चल उठा और मस्तकपर लगा गृहको चली जाती हैं। उस समय उन्हें जलकी धारासे ले जाना पड़ता है। इसीका नाम कनकाञ्जली है। विवाहको यात्राके समय भी इसीप्रकार कनकाञ्जली दान करनेकी प्रथा है।

कनकाद्रि (सं॰ पु॰) कनकमयो अद्रिः, मध्यपदलो॰। सुमेरु पर्वत।

कनकाद्रिखण्ड (सं॰ क्ली॰) स्कन्दपुराणका एक अंश।

कनकाध्यक्ष (सं॰ पु॰) कनकस्य रक्षणे अध्यक्षः, मध्यपदलो॰। स्वर्णरक्षक, सोनेका मुहाफिज। इसका संस्कृत पर्याय भारिक है।

कनकानी (हिं॰ पु॰) अश्वभेद, किसी किस्मका घोड़ा। यह आकारमें गर्दभसे अधिक बड़ा नहीं होता। कनकानी एक कदम चलता और हवाकी तरह उड़ता है।

कनकाम्लक, कनकारक देखो।

कनकायु (सं॰ पु॰) धृतराष्ट्रके एक पुत्र।

कनकारक (सं॰ पु॰) कनकमिव सर्वतः अरच्छति व्याप्नोति दीप्यते शेषः, कनक-ऋ-अण् स्वार्थे कन्। कोविदारवृक्ष, सुनहले कचनारका पेड़।

कचनार और कोविदार देखो।

कनकालुका (सं॰ स्त्री॰) कनकनिर्मित आलुः सलिलाद्याधारपात्रविशेषः, कनकालु संज्ञायां कन् टाप्। सुवर्णभृङ्गार, सोनेकी सुराही।

कनकासव (सं॰ पु॰) हिक्काश्वासका आसव, हिचकी और दमेकी बीमारीका एक अर्क। फल, मूल, पत्र एवं शाखा सहित धुस्तूर ४ पल, वासकके मूलकी छाल ४ पल, पिप्पली, यष्टिमधु, कण्टकारी, नागकेशर, शुण्ठी, भार्गी तथा तालीसपत्रका चूर्ण २।२ पल, द्राक्षा २० पल, जल १२८ शरावक, शर्करा साढ़े १२ शरावक और मधु सवा ६ सेर एकत्र घड़ेमें १ मास भरकर रखनेसे यह आसव प्रस्तुत होता है। कनकासव छानकर पीनेसे हिक्का और श्वासरोग छूट जाता है। (भैषज्यरत्नावली)

कनकाह्व (सं॰ क्ली॰) कनकस्य आह्वा नाम यस्य, बहुव्री॰। १ श्वेत धुस्तूर, सफेद धतूरा। २ तण्डुलीय शाक, चौराई। ३ जयपालवृक्ष, जमालगोटेका पेड़। ४ धुस्तूरवृक्ष, धतूरेका पेड़। ५ नागकेशरवृक्ष।

कनकाह्वय (सं॰ पु॰) कनकं आह्वयो यस्य, बहुव्री॰। बुद्धदेवका एक नाम। कनक शब्दके निचे कनकमुनि देखो।

कनकी (हिं॰ स्त्री॰) १ क्षुद्र कण, छोटा टुकड़ा। प्रधानतः तण्डुलके क्षुद्र कणोंको 'कनकी' कहते हैं।

कनकूत (हिं॰ पु॰) कणोंका अनुमान, दानेको अन्दाज़। खेतमें उठे अन्नके अनुमान करनेका नाम कनकूत है। ज़मीन्दार स्वयं वा किसी दूसरेसे अपनी फ़सलमें होनेवाले अनाजको अन्दाज़ लगा छपककी मूल्य दे देता और अनाज ले लेता है।

कनखल (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष।

कनकैया (हिं० स्त्री०) छोटा कनकौवा, गुड्डी।

कनकोद्रव (सं० पु०) महासर्जवृक्ष, असनेका पेड़।

कनकौवा (हिं० पु०) बड़ा पतङ्ग, बड़ी गुड्डी। यह पतङ्ग कागज़का बनता है। कागज़को गोल-गोल काट बीचमें बांसकी एक कुछ मोटी-जैसी खपाच लेईके सहारे लगाते हैं। इसका नाम ठड्डा है। फिर बांसकी दूसरी पतली खपाच लचाकर कमान-जैसी बनाते और गोल कटे कागज़के सिरेपर रख दोनों कोने लेईसे चपकाते हैं। नीचे दाहरे कागज़का एक पत्ता भी लगा दिया जाता है। ऊपर जहां दोनों खपाचें मिलतीं और नीचे पत्तेके पास दो-दो छेद कर सूतकी पतली डोरसे कन्ना बांधते हैं। ऊपरके छेद ऐसे रहते जिसमें डोर डालनेसे दोनों खपाचें फंस जाती हैं। फिर कन्नेको डोर बराबर तान नीचेको एक अङ्गुल हटा गांठ लगा देते हैं। इससे कनकौवा हवा लगनेसे खूब बढ़ता और काट चलता है। कन्नेकी गांठके ऊपर दूसरी डोर बांध कनकौवा बढ़ाया जाता है। जिसे अभ्यास रहता, वह हाथोंसे ही कनकौवा बढ़ा सकता है। किन्तु नये खेलाड़ीको ढील मंगाना पड़ती है। एक आदमी डोरसे बंधे कनकौवेको दूर ले जा और ऊपर उठाकर छोड़ देता है। उसके ऊपर उठाकर छोड़ते ही कनकौवा उड़ानेवाला डोरको तानता है। इसीका नाम ढील है। इससे कनकौवा बढ़नेमें विलम्ब नहीं लगता। डोर दो प्रकारकी होती है—एक सादी और दूसरी मञ्झेदार। कांचका कूट-पीस और लेईमें लाल कोई रङ्ग मिलानेसे मञ्झा बनता है। डोरका एक सिरा किसी चीज़में बांध और दूसरा सिरा बायें हाथमें रख लेईमें सना हुआ कांच रगड़नेसे मञ्झा चढ़ता है। मञ्झा कनकौवा लड़ानेमें काम आता है। इससे दूसरेका कनकौवा काट देते हैं। जिस यन्त्रपर डोर चढ़ाकर रखते, उसे हुचका या लटाई कहते हैं। हुचका बांसकी खपाचोंका बनता है। लटाईमें सिर्फ लकड़ीके पतले-पतले टुकड़े लगते हैं। कनकौवा दो तरहसे लड़ाया जाता है—खींचसे और ढीलसे। खींचवाले नीचे और ढीलवाले ऊपरके पेच लेते हैं। पहले लोग प्रायः ढीलसे ही कनकौवा लड़ाते थे। किन्तु आजकल खींचकी चाल ज़ियादा देख पड़ती है। लखनऊका कनकौवा प्रसिद्ध है। कनकौवा कई तरहका होता है—सफेद, लाल, पीला, नीला, कटारीदार, गिलासदार, अधरङ्गा इत्यादि। दमड़ीका दमड़वी, छदामका छदमवी, धेलेका धेलवी, पैसेका पैसेहल, टकेका टकेहल और गण्डेका कनकौवा गण्डेहल कहलाता है। ज़ियादा बड़े कनकौवेको भर्रा कहते हैं। ज़रदार कनकौवेका नाम तुक्कल है। इसे प्रायः रातमें उड़ाते हैं। सन और रेशम मिलाकर बनायी जानेवाली डोर नख कहाती है। यह बड़ी मुश्किलसे कटती है। पहले लोग सूतकी पतली डोरपर मञ्झा चढ़ाते थे। किन्तु आजकल विदेशी रीलके सामने उसे कोई नहीं पूछता। कनकौवा उड़ानेमें बड़ा डर रहता है। कारण उड़ानेवाले आकाशको ओर ताका करते और कभी-कभी कोठेसे गिरकर मर मिटते हैं।

कनक्षक (वै० पु०) विषविशेष, एक ज़हर।

कनखजूरा (हिं० पु०) शतपदी, हज़ार-पा, कानगोजर, कनसलाई (Centipede)। इसकी बाहरी रक्षाकी ऊपरी रगोंमें पश्चात् कोष रहता, जो प्रायः दो अनुबन्धोंसे प्रबल पड़ता है। पाचन कोषपर शिर:कमल होता है। इसीमें चक्षु देख पड़ते हैं। कनखजूरेके कई पैर रहते हैं। इनमें कोई छोटा और कोई बड़ा होता है। इसीसे इसको संस्कृतमें शतपदी (सकड़ों पैरवाला) और फारसीमें हज़ारपा (हज़ारों पैरवाला) कहते हैं। इसका पद प्रायः छह खण्डमें विभक्त है। कनखजूरा अपनी टांगोंसे दूसरेका मार और अपनेको बचा भी सकता है। इसके प्रायः चक्षु नहीं होते। किन्तु जिसके चक्षु रहते, उसके एकसे चालीस तक देख पड़ते हैं। यह काट खाता और चिपक भी जाता है। भारतवासी कनखजूरेको लक्ष्मीपुत्र कहते हैं। जहां यह निकलता, वहां धनराशि रहनेका अनुमान लगता है। कनखजूरेको हिन्दू नहीं मारते।

कनखना (हिं० क्रि०) अप्रसन्न होना, बुरा मानना, रूठना।

कनखल—युक्तप्रदेशके सहारनपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २९° ५५′ ४५″ उ० और देशा० ७८° ११′ पू०पर अवस्थित है। कनखल हरिद्वारसे आधकोस दक्षिण गङ्गाके पश्चिमओर पड़ता है। भूमिका परिमाण ६३ एकर है। नगरके दक्षिण भागमें दक्षेश्वर महादेवका मन्दिर बना है। इसी मन्दिरके निकट सतीके प्राण छोड़नेपर शिवने दक्षयज्ञ ध्वंस किया था। भारतवासी कनखलको एक पुण्यतीर्थ मानते हैं। यहां स्नान करनेसे सर्वपाप छूट जाते और लोग मुक्ति पाते हैं। (भारत, अनु० २५ अ०)

कूर्म और लिङ्गपुराणके मतसे कनखलमें दक्षयज्ञ हुआ था। (कूर्म १।१८ अ०, लिङ्गपु० १००।८)

कनखलके मकान् बहुत सुन्दर हैं। अनेक प्राचीरोंमें पौराणिक चित्र खिंचे हैं। यहां गङ्गाके कूलपर मनोहर उद्यान शोभित हैं। गङ्गासे उनका दृश्य बहुत अच्छा लगता है।

कनखलमें अधिकांश ब्राह्मण रहते हैं। यह हरिद्वार-मन्दिरके पुरोहित या पण्डा हैं। हरिद्वारमें सुविधा न पड़नेसे उन्होंने अपने लिये यहां मकान् बना लिये हैं। जवलपुरी ब्राह्मणोंके साथ उनको कन्याका आदान-प्रदान चलता है। किसी अपर स्थानके ब्राह्मणोंको वह प्रायः अपनी कन्या नहीं देते।

हरिद्वारके अनेक यात्री कनखल दर्शन करने आते हैं। हरिद्वार देखो।

कनखला (सं० स्त्री०) गङ्गा नदीकी एक शाखा। यह नदी खाण्डवीपुरमें प्रवाहित है। (कालिकापु० ८८।१०)

कनखिया (हिं० स्त्री०) कनखी, कटाक्ष, तिरछी नजर।

कनखियाना (हिं० क्रि०) कनखी मारना, कटाक्ष करना।

कनखी (हिं० स्त्री०) कटाक्ष, आंखका इशारा, तिरछी नजर।

कनखूरा (हिं० पु०) तृणविशेष, रोहा, एक घास। यह आसाममें अधिक उत्पन्न होता है।

कनखैया (हिं० स्त्री०) १ कनखी, कटाक्ष, तिरछी नजर। (वि०) २ कनखी मारनेवाला, कटाक्ष करनेवाला, जो आंखकी पुतली घुमाकर इशारा करता हो।

कनगुज (हिं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी।

कनगुरिया (हिं० स्त्री०) कनिष्ठिका, हाथकी सबसे छोटी उंगली।

कनछेदन (हिं०) कर्णवेध देखो।

कनटी (सं० स्त्री०) रक्तवर्ण मल, लाल मल्लिका।

कनटोप (हिं० पु०) एक बड़ी टोपी। इससे दोनों कान ढंक जाते हैं। इसे प्रायः शीत ऋतुमें व्यवहार करते हैं।

कनदेव (सं० पु०) एक बौद्धमुनि।

कनधार (हिं०) कर्णधार देखो।

कनन (सं० त्रि०) कन-युच्। काण, काना।

कनप, कणप देखो।

कनपट (हिं० पु०) १ कर्ण एवं चक्षुका मध्यस्थल, कान और आंखके बीचकी जगह। २ तमाचा, थप्पड़।

कनपटी (हिं० स्त्री०) कनपट देखो।

कनपेड़ा (हिं० पु०) कर्णरोगविशेष, कानकी एक बीमारी। इसमें कर्णके मूलपर एक चपटी गिलटी पड़ती, जो न बैठनेपर पकती है।

कनफटा (हिं० पु०) एक शैव उपासक सम्प्रदाय। शैव-उपासक सम्प्रदायमें साधारणतः दो श्रेणी देख पड़ती है—सन्यासी और योगी। योगी योगकी पकड़ साधनाका पथ अवलम्बन करते हैं। फिर यह योगी-श्रेणी भी नाना श्रेणियोंमें विभक्त है। कनफटा ऐसी ही एक श्रेणीके योगी होते हैं। उभय कर्णोंमें छिद्र रहनेसे ही कनफटा नाम पड़ा है। यह नहीं, कि केवल कनफटा योगियोंको ही कान छेदाना होता है। किन्तु सभी श्रेणियोंके योगी कान छेदा लेते हैं। अन्य श्रेणीवालोंसे इनमें कुछ विशेषत्व रहता है। कनफटे अपने कर्णके छिद्रोंमें कुण्डल पहनते हैं। यह कुण्डल पत्थर, बिल्लोर, गैंडेके शृङ्ग, मट्टी या लकड़ीके बनते हैं। दीक्षाके समय इन्हें प्रथम धारण करना पड़ता है। कुण्डल मुद्रा या दर्शन कहाते हैं। इसीसे कनफटोंका नाम 'दर्शन-योगी' भी है। इन कुण्डलोंका भार यह २।१

अङ्गुलिप्रमाण एक कृष्णवर्ण पदार्थ पशमके डोरेमें बांध अपने गलेमें डाले रहते हैं। उक्त कृष्णवर्ण पदार्थको 'नाद' और पशमके डोरेको 'सेली' कहते हैं। नाद, सेली और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे ही कनफटा मालूम होते हैं। सिवा इसके यह गेरुश वस्त्र सजाते, जटा बढ़ाते, भस्म चढ़ाते और विभूतिका त्रिपुण्ड्र लगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरक्षनाथको शिवका अवतार मानते हैं। फिर गोरक्षनाथने ही हठयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

संन्यासियोंकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुवोंमें कोई शिष्यको मस्तक मुंड़ाने, कोई कर्णमें मुद्रा लटकाने और कोई ज्योत्मार्गमें जानेका आदेश देता है। 'जोगमा' देखो।

भारतवर्षके पश्चिमांचलमें इस श्रेणीवाले योगी अकसर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम लगाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकत्र रह भिक्षा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके उद्देश्यसे देश-देशान्तर घूम-फिर आते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरक्ष-क्षेत्र नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षक्षेत्र द्वारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'हुड़क' पड़ता है। यह हुड़क और द्वारकाका गोरक्षक्षेत्र कनफटे योगियोंका अति श्रद्धेय तीर्थ है। नेपालके पशुपतिनाथ, मेवाड़के एकलिङ्ग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इन्होंके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कच्छके पास दंकदमें 'गोरक्ष-बांसरी' नामक एक स्थान है। वहां तीन मनुष्यमूर्ति और शिव, काली एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्षनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिचिनोसे ४५ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेश्वर नाम एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेश्वर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेश्वरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान है। जमीन्दारीकी भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगीराज कहते हैं। योगी राजावोंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिग्रह नहीं करते। योगीराजके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख था गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात् महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवतावोंने उस शब्दसे चौंक और वहां पहुंच जटेश्वर लिङ्ग तथा वशिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-माहात्म्यके वर्णनस्थलपर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मीन, गोरक्ष, विरूपाक्ष, विलेशय, मन्थन भैरव, सिद्धबोध, कन्थड़ी, कोरण्टक, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कर्ण-पुज्यपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, कापालि, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वरमय, अलय, प्रभुदेव, घोड़ाचुली, टिण्टिणी, भल्लटी, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

युक्तप्रदेशका गोरखपुर कनफटोंका प्रधान स्थान है। पहले वहां इनका एक मन्दिर रहा। अला-उद्दीनने उसे तोड़ फोड़ उसी जगह एक मसजिद बना दी। कुछ काल पीछे उनी जगह फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़-फोड़ मुसलमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अन्तको बुद्धनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और हनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आजकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक आनेसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुंकवा, कनफुंका देखो।

कनफुंका (हिं० वि०) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु०) ३ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुची (Confusius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अव्यय एवं अचल भावसे समान बलसे चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुओंको रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वश्रेणीके लोगोंके लिये उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे हहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी यह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और शृङ्खलाबद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानी उन्नतिशील-विद् कहते—उस आशाका अनुसरण कर सिद्धिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनावोंको देखनेसे यह विषय नितान्त अमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुचीके शिक्षाबलसे वह उस आशाका नाम नहीं जानते। अथच तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, शृङ्खलाबद्ध और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेकी अपेक्षा मानव जीवनकी मनोहारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। वह कहते रहे,—"अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आत्मीय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध असमसाहसिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिसङ्गत है।" महात्मा कनफुची केवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विचक्षण और नीतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालसे लोगोंको चमत्कृत और अभिमुग्ध कर ही पर्यवसित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिकांश अधिवासी-समन्वित राज्यमें अक्षुण्ण भावसे चल रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक पर्यन्त समान सम्मानके साथ प्रतिपालित होते आयी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके सकल स्थलमें आज भी उसी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-साम्राज्य वर्तमान विस्तारका एक-चतुर्थ मात्र था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य १३ प्रधान और अन्यान्य अनेक क्षुद्र अंशोंमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरोपादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्‌का

अङ्गुलिप्रमाण एक कृष्णवर्ण पदार्थ पशमके डोरेसे बांध अपने गलेमें डाले रहते हैं। उक्त कृष्णवर्ण पदार्थको 'नाद' और पशमके डोरेको 'सेली' कहते हैं। नाद सेली और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे ही कनफटा मालूम होते हैं। सिवा इसके यह गैरुआ वस्त्र लगाते, जटा बढ़ाते, भस्म चढ़ाते और विभूतिका त्रिपुण्ड्र लगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरक्षनाथको शिवका अवतार मानते हैं। फिर गोरक्षनाथने ही हठयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

इस्माइलियोंकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुवोंमें कोई शिष्यको मस्तक मुंडाने, कोई कर्णमें मुद्रा लटकाने और कोई ज्योत्-मार्गमें लानेका आदेश देता है। 'जोगमार्ग' देखो।

भारतवर्षके पश्चिमाञ्चलमें इस श्रेणीवाले योगी अक्सर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम जमाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकत्र रह भिक्षा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके उद्देशसे देश-देशान्तर घूम फिर आते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरक्ष-क्षेत्र नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षक्षेत्र द्वारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'दुड्ड' पड़ता है। यह दुड्ड और द्वारकाका गोरक्षक्षेत्र कनफटे योगियोंका अति श्रेय तीर्थ है। नेपालके पशुपतिनाथ, मेवाड़के एकलिङ्ग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इन्हींके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कच्छके दास टम्हमिमें 'गोरक्ष-बासरी' नामक एक स्थान है। वहां तीन मनुष्यमूर्ति और शिव, काली एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्ष-नाथ और मत्स्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिवेणीसे ४।५ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेश्वर नाम एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेश्वर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेश्वरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान है। जमीन्दारीकी भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगीराज कहते हैं। योगी राजावोंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिग्रह नहीं करते। योगीराजाके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख आ गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात् महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवतावोंने उस शब्दसे चौंक और वहां पहुंच जटेश्वर लिङ्ग तथा वशिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-माहात्म्यके वर्णनस्थलपर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मीन, गोरक्ष, विरूपाक्ष, बिलेशय, मन्थन भैरव, सिद्धबोध, कन्थड़ी, कोरण्टक, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कानेरी, पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, कापालि, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वरमय, अल्लाम, प्रभुदेव, घोड़ाचुली, टिण्टिणी, भल्लटी, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

युक्तप्रदेशका गोरखपुर कनफटोंका प्रधान स्थान है। पहले वहां इनका एक मन्दिर रहा। अला-उद्दीनने उसे तोड़ फोड़ उसी जगह एक मसजिद बनवा दी। कुछ काल पीछे उसी जगह फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़-फोड़ मुसलमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अन्तको बुद्धनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और हनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आजकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक आनेसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुंकवा, कनफुंका देखो।

कनफुंका (हिं॰ वि॰) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु॰) ३ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुची (Confusius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अव्यय एवं अचल भावसे समान वक्तमें चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुओंकी रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वदेशोंके लोगोंके लिये उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे बृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी यह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और शृङ्खलाबद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानी उन्नतितत्त्व-वित् कहते—उस आशाका अनुसरण कर सिद्धिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनाओंको देखनेसे यह विषय नितान्त अमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुचीके शिष्य-गणसे वह उस आशाका नाम नहीं जानते। अथच तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, शृङ्खलाबद्ध और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेकी अपेक्षा मानव जीवनकी शोभा-कारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—"अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आत्मीय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध असम-साहसिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिसङ्गत है।" महात्मा कनफुची केवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विचक्षण और नीतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालमें लोगोंको चमत्कृत और मन्त्रमुग्ध कर ही पर्यवसित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिकांश अधिवासी-समन्वित राज्यमें अक्षुण्ण भावसे फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक पर्यन्त समान सम्मानके साथ प्रतिपालित होती आयी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके सकल स्थानमें आज भी उसी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-साम्राज्य वर्तमान विस्तारका एक-षष्ठांश मात्र था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य ११ प्रधान और अन्यान्य अनेक क्षुद्र अंशोंमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरोपादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्‌ईश

अङ्गुलिप्रमाण एक लम्बवर्ण पदार्थ पशमके डोरेसे बांध अपने गलेमें डाले रहते हैं। उक्त लम्बवर्ण पदार्थको 'नाद' और पशमके डोरेको 'सेली' कहते हैं। नाद, सेली और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे ही कनफटा मालूम होते हैं। सिवा इसके यह गेरुआ वस्त्र संभालते, जटा बढ़ाते, भस्म चढ़ाते और विभूतिका त्रिपुण्ड्र लगाते हैं।

गुरु गोरक्षनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरक्षनाथको शिवका अवतार मानते हैं। फिर गोरक्षनाथने ही हठयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

संन्यासियोंकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुओंमें कोई शिष्यको मस्तक मुंडाने, कोई कर्णमें मुद्रा लटकाने और कोई व्योम्-मार्गमें जानेका आदेश देता है। 'योगमार्ग' देखो।

भारतवर्षके परिमाणमें इस श्रेणीवाले योगी अकसर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम लगाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकत्र रह भिक्षा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके उद्देश्यसे देश-देशान्तर घूम-फिर आते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरक्षनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरक्ष-क्षेत्र नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरक्षक्षेत्र द्वारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'डङ्गर' पड़ता है। यह डङ्गर और द्वारकाका गोरक्षक्षेत्र कनफटे योगियोंका अति श्रेय तीर्थ है। नेपालके पशुपतिनाथ, मेवाड़के एकलिङ्ग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इन्हींके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कच्छके पास टङ्करमें 'गोरक्ष-धामरी' नामक एक स्थान है। यहां तीन मनुष्यमूर्ति और शिव, काली एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरक्षनाथ और मत्स्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिवेणीसे ४॥ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेश्वर नामक एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेश्वर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेश्वरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान हैं। जमींदारी की भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगीराज कहते हैं। योगी राजाओंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिग्रह नहीं करते। योगीराजाके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख आ गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात् महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवताओंने उस शब्दसे चौंक और वहां पहुंच जटेश्वर लिङ्ग तथा वशिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-माहात्म्यके वर्णनस्थलपर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मीन, गोरक्ष, विरूपाक्ष, बिलेशय, मन्थान भैरव, सिद्धबोध, कन्थड़ी, कोरण्टक, स्थिरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कार्ण-पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, कापालि, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वर, अल्लम, प्रभुदेव, घोड़ाचुली, टिण्टिणी, भल्लटी, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

युक्तप्रदेशका गोरखपुर कनफटोंका प्रधान स्थान है। पहले वहां इनका एक मन्दिर रहा। अला-उद्दीनने उसे तोड़ फोड़ उसी जगह एक मसजिद बनवा दी। कुछ काल पीछे उसी समय फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़-फोड़ मुसलमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अल्मको बुद्दनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और हनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आजकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक आनेसे यह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुंकवा, कनफुंका देखो।

कनफुंका (हिं० वि०) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु०) ३ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुची (Confusius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अव्यय एवं अचल भावसे समान बलसे चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुवोंकी रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वलोकोंके लागोंके लिये उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे वृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी वह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और शृङ्खलाबद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानी तत्त्ववित् कहते—उच्च आशाका अनुसरण कर सिद्धिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनावोंको देखनेसे यह विषय नितान्त अमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुचीके शिष्य-गणसे वह उच्च आशाका नाम नहीं जानते। अथच तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, शृङ्खलाबद्ध और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुची ईश्वरके प्रेमसे उदासीन रहनेकी अपेक्षा मानव जीवनकी मनो-हारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। यह कहते रहे,—"अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आत्मीय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध असम-साहसिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिसङ्गत है।" महात्मा कनफुची केवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विचक्षण और नीतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालमें लोगोंको चमत्कृत और मन्त्रमुग्ध कर ही पर्यवसित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिकांश अधिवासी-समन्वित राज्यमें अक्षुण्ण भावसे फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक पर्यन्त समान सम्मानके साथ प्रतिपालित होते आयी है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके प्रत्येक स्थानमें आज भी अभी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-साम्राज्य वर्तमान विस्तारका एक-षष्ठांश मात्र था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य १३ प्रधान और अन्यान्य अनेक क्षुद्र अंशोंमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरोपादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः उच्चादर्श

अङ्गुलिप्रमाण एक कृष्णवर्ण पदार्थ धागेके छोरमें बांध उसको गलेमें डाले रहते हैं। उक्त कृष्णवर्ण पदार्थको 'नाद' और धागेके डोरको 'सेली' कहते हैं। नाद, सेली और दर्शन रखनेवाले योगी दूरसे ही कनफटा मालूम होते हैं। सिवा इसके वह गेरुआ वस्त्र लगाते, जटा बढ़ाते, भस्म चढ़ाते और विभूतिका त्रिपुण्ड्र लगाते हैं।

गुरु गोरखनाथ इस सम्प्रदायके प्रवर्तक थे। कनफटे गोरखनाथको शिवका अवतार मानते हैं। फिर गोरखनाथने ही हठयोग भी चलाया था। इसीसे कनफटे योगी आदि गुरुका प्रचारित पथ पकड़ योगाभ्यास किया करते हैं।

संन्यासियोंकी भांति कनफटे योगी भी नाना गुरु मानते हैं। फिर इन गुरुवोंमें कोई शिष्यको मस्तक मुंडाने, कोई कर्णमें मुद्रा लटकाने और कोई ज्योत्-मार्गमें लानेका आदेश देता है। 'योगी' देखो।

भारतवर्षके पश्चिमांचलमें इस श्रेणीके योगी अधिकतर देख पड़ते हैं। यह सभी शिवकी पूजामें समय बिताते और किसी न किसी शिवमन्दिरमें अपना आश्रम लगाते हैं। कहीं कहीं अनेक कनफटे एकत्र रह भिक्षा द्वारा अपना जीवन चलाते और कोई तीर्थभ्रमणके उद्देशसे देश-देशान्तर घूम-फिर आते हैं। कनफटा योगियोंमें अधिकांश उदासीन होते हैं। फिर कोई-कोई विषयकार्यमें भी लिप्त रहते हैं। इनका उपाधि नाथ है।

गुरु गोरखनाथके नामपर युक्तप्रदेशमें अनेक स्थानोंका नामकरण हुआ है। यह सकल स्थान कनफटे योगियोंकी तीर्थभूमि हैं। पेशावरमें गोरख-क्षेत्र नामक एक स्थान है। फिर दूसरा गोरखक्षेत्र द्वारकाके निकट अवस्थित है। हरिद्वारके निकट एक 'दुङ्ग' पहाड़ है। यह दुङ्ग और द्वारकाका गोरखटिल्ला कनफटे योगियोंका अति श्रेष्ठ तीर्थ है। नेपालके पशुपतिनाथ, मेवाड़के एकलिङ्ग प्रभृति विख्यात शिवमन्दिर भी इन्होंके सम्प्रदाय संक्रान्त हैं। कच्छके धारदरदमें 'गोरख-बांसरी' नामक एक स्थान है। वहां तीन मनुष्यमूर्ति और शिव, काली एवं हनुमान् प्रभृति देवमूर्ति विद्यमान हैं। स्थानीय पूजक उक्त तीनों मनुष्यमूर्तियोंको दत्तात्रेय, गोरख-नाथ और मत्स्येन्द्रनाथ बताते हैं। त्रिचिनोंसे ४।५ कोस दक्षिण महानाद ग्राममें जटेश्वर नामक एक शिवमन्दिर है। यह मन्दिर भी कनफटा योगियोंके अधिकारमें है। जटेश्वर मन्दिरके निकट वशिष्ठ-गङ्गा नामक एक जलाशय विद्यमान है। योगी और तीर्थयात्री इस जलाशयको प्रकृत गङ्गाकी भांति पवित्र मानते हैं। जटेश्वरके मन्दिरमें एक योगी रहते हैं। उनके यथेष्ट विषयादि विद्यमान हैं। जमीन्दारीकी भी धूमधाम रहती है। लोग उन्हें योगीराज कहते हैं। योगी राजावोंका वंश बहु कालसे प्रचलित है। वह दारपरिग्रह नहीं करते। योगीराजके मरनेपर शिष्योंमें एक मन्दिर और विषयादिका उत्तराधिकारी होता है। जटेश्वर शिव और वशिष्ठगङ्गाकी उत्पत्तिपर एक प्रवाद है—किसी समय महानाद ग्राममें एक दक्षिणावर्त शङ्ख आ गिरा था। वायु लगने पर उससे 'महानाद' अर्थात् महाशब्द निकल पड़ा। फिर देवतावोंने उस शब्दसे चौंक और वहां पहुंच जटेश्वर लिङ्ग तथा वशिष्ठ-गङ्गाको प्रतिष्ठित किया। शङ्खके महानादसे ग्रामका नाम भी महानाद रखा गया।

कनफटे योगियोंमें चौरासी सिद्ध योगियोंका नाम विशेष विख्यात है। हठयोगप्रदीपिकामें हठयोग-माहात्म्यके वर्णनस्थलपर निम्नलिखित कई नाम पाये जाते हैं—आदिनाथ, मत्स्येन्द्रनाथ, सारदानन्द, भैरव, चौरङ्गि, मीन, गोरख, विरूपाक्ष, विलेशय, मन्थान भैरव, सिद्धबोध, कन्थड़ी, कोरण्टक, सुरानन्द, सिद्धपाद, चर्पटी, कर्ण-पूज्यपाद, नित्यनाथ, निरञ्जन, कापालि, बिन्दुनाथ, काकचण्डीश्वरमय, अल्लम, प्रभुदेव, घोड़ाचुली, टिण्टिणी, भल्लटी, नागबोध और खण्डकापालिक। यह सब महासिद्ध रहे।

युक्तप्रदेशका गोरखपुर कनफटोंका प्रधान स्थान है। पहले वहां इनका एक मन्दिर रहा। अला-उद्दीनने उसे तोड़ फोड़ उसी जगह एक मसजिद बनवा दी। कुछ काल पीछे उसी जगह फिर एक

मन्दिर बना था। किन्तु औरङ्गजेबने उसे भी तोड़ा-फोड़ मुसलमानोंका भजनालय निर्माण कराया। अन्तको बुद्धनाथ नामक किसी योगीने एक मन्दिर बनवा उसके दक्षिण पशुपतिनाथ नामक शिवलिङ्ग और हनुमान-मन्दिरकी प्रतिष्ठा की। यह तीनों मन्दिर आज भी विद्यमान हैं।

कनफटे योगी कहते—आजकल भी अनेक सिद्ध योगी पृथिवीपर रहते और नाना स्थान घूमते फिरते हैं।

राजस्थानीय एकलिङ्गके गोस्वामी कनफटोंके ही अन्तर्गत हैं। दारपरिग्रहसे दूर रहते भी वह वाणिज्यादि करते हैं। उनके अधीन सैकड़ों योगी हैं। आवश्यक आनेसे वह दल बांध युद्धादि भी करते हैं।

कनफुंकवा, कनफुंका देखो।

कनफुंका (हिं० वि०) १ मन्त्रोपदेश करनेवाला, जो दीक्षा या मन्त्र देता हो। २ दीक्षा लेनेवाला, जो अपना कान फुंका चुका हो। (पु०) ३ गुरु। ४ शिष्य।

कनफुची (Confusius)—चीनदेशके एक महात्मा। हमारे भगवान् मनुकी भांति महात्मा कनफुची चीनदेशके धर्म, राज्य, न्याय एवं आचार-व्यवहार—सकल ही विषयोंके नियम-विधि-प्रतिष्ठाता और शिक्षादाता रहे। मनु-प्रवर्तित धर्मशास्त्रको शत शत वत्सरका प्राचीन होते भी जैसे हिन्दू शिरोधार्य समझते, वैसे ही महात्मा कनफुचीके धर्मशास्त्रपर आजतक अक्षय, अव्यय एवं अचल भावसे समान बलसे चीना चलते हैं। कालके प्रभावसे हिन्दुवोंकी रीतिनीति स्थानविशेषमें मानवशास्त्रसे इन दिनों कुछ बदल गयी है। किन्तु महात्मा कनफुचीका शास्त्र इतना सर्वकाल एवं सर्वश्रेणीके लोगोंके लिये उपयोगी ठहरा, कि तीन सहस्र वर्ष बीतते भी आज उसमें कोई व्यतिक्रम न पड़ा। इनकी प्रदत्त शिक्षाका अक्षय फल लगा है। चीन-जैसे बृहत् साम्राज्यका कोई सामान्य अधिवासी वह शिक्षा छोड़ अन्य मत अवलम्बन कर नहीं सका है। इन्हींकी शिक्षाके गुणसे चीनवासी प्राचीन रीतिनीतिपर अचल भक्ति रख जगत्के मध्य सर्वापेक्षा धर्मप्राण और शृङ्खलावद्ध समझे गये हैं। पाश्चात्यसभ्यताभिमानी उन्नतितत्त्वविद् कहते—उस आशाका अनुसरण कर सिद्धिकी चेष्टासे ही मनुष्य उन्नत होते रहते हैं। किन्तु चीनावोंको देखनेसे यह विषय नितान्त अमूलक समझ पड़ता है। कारण महात्मा कनफुचीके शिक्षाबलसे वह उस आशाका नाम नहीं जानते। अथच तीन सहस्र वर्ष पहले उक्त महात्मासे जो उपदेश पाया, उसीके अनुसरणसे पृथिवीके मध्य आज भी उनका दल धार्मिक, शृङ्खलावद्ध और शान्तिप्रिय कहाया है। महात्मा कनफुची ईश्वरके प्रेममें उदासीन रहनेकी अपेक्षा मानव जीवनकी मनोहारिता और चमत्कारिता सम्पादन करनेको ही मानवका कर्तव्य कर्म समझते थे। वह कहते रहे,—"अप्रमेय, अचिन्त्य एवं अवाङ्मनसगोचर ईश्वरको पानेके लिये वैरागी हो और पितामाता आत्मीय स्वजन तथा कन्यापुत्र छोड़ नानाविध असमसाहसिक एवं अतिमानुषिक क्रियाकलापके अनुष्ठानकी अपेक्षा इहजीवनकी विचित्रता तथा मनोहारिता सम्पादन करना ही युक्तिसङ्गत है।" महात्मा कनफुची केवल सदुपदेशक, दार्शनिक, विचक्षण और नीतिकुशल ही न थे। इनमें यथार्थ व्यक्तित्व और स्वातन्त्र्य भी रहा। फिर इनका कार्य प्राचीन कालसे लोगोंको चमत्कृत और भक्तिमुग्ध कर ही पर्यवसित नहीं हुआ। आज भी इनका कार्य पृथिवीके मध्य सर्वापेक्षा अधिकांश अधिवासी-समन्वित राज्यमें अक्षुण्ण भावसे फल दे रहा है। इनकी प्रवर्तित रीतिनीति चीनदेशमें बराबर सम्राट् और सामान्य भिक्षुक कर्तृक समान सम्मानके साथ प्रतिपालित होते पाती है। इनके उपदेशका प्रभाव राज्यके सकल स्थलमें आज भी उसी प्रबल भावसे पड़ रहा है।

इन महात्माके जन्म लेते समय चीन-साम्राज्य वर्तमान विस्तारका एक-षष्ठांश मात्र था। राज्यमें सर्वत्र सामन्तप्रथा प्रचलित रही। उस समय समस्त राज्य १३ प्रधान और अन्यान्य अनेक क्षुद्र खण्डोंमें विभक्त था। किन्तु प्राचीन कालको चीन देशमें युरोपादि महादेशोंकी भांति सामन्त-प्रथा न रही। तीन विषयोंमें प्रभेद लक्षित होता था। प्रथमतः सम्राट्‌वंश

बहुदिनावधि परिवर्तन न पड़नेसे उद्यम, अध्यवसाय एवं उत्साहशून्य हो गया और इसीसे अपने अधीनस्थ सामन्त राजाओंके मध्य शान्तिरक्षा कर न सका। इसी प्रकार क्रमान्वयसे पञ्च शताब्दी बीती थीं। सामन्त राजाओं और अधीनस्थ सरदारोंमें चिरविवाद बद्धमूल रहा। सर्वदा युद्ध चलनेसे देशके मध्य दुःख, कष्ट, दुर्भिक्ष और कुशासनकी धूम थी। द्वितीयतः बहुविवाह प्रचलित रहा। स्त्रियां अत्यन्त हेयवत् व्यवहृत होती थीं। उनके ऊपर नानारूप निषेध-विधि प्रवर्तित रहा। इसकी इयत्ता कर नहीं सकते, उक्त कारणसे कितने षड़यन्त्र, गृहविवाद और राज्य राज्य एवं वंश वंशमें युद्ध-विग्रह चलते थे। प्राचीन युरोपीयोंकी भांति भूत-प्रेत न मानते या किसी प्रकारके धर्ममत परिवर्तनपर देशके मध्य विप्लव न डालते भी चीना पृथिवीसे अतीत दूसरे वस्तुके होने न होनेसे अज्ञात रहे। कार्यतः वैसे वस्तुपर उन्हें विश्वास भी न था। स्वर्ग नरकादिके ज्ञानसे वह दूर रहे। सुतरां उनके सम्बन्धमें उन्हें किसी प्रकारकी कामना वा घृणा भी न थी।

कनफुचीके जन्म-समय चीनराज्यमें चाउ या चु वंश सम्राट्-पदपर अधिष्ठित रहा। जिस समयसे चीन राज्यका इतिहास मिलता, उसमें यह राजवंश ही तृतीय पड़ता है। उस समय इस वंशको उन्नति अपनी पराकाष्ठापर पहुंच गयी थी। शासनका दण्ड दृढ़भावसे इसी वंशके हस्त न्यस्त रहा। पांच श्रेणीके सामन्त-सरदार थे। वह सभी सम्राट्को कर और सैन्य द्वारा साहाय्य पहुंचाते रहे।

अध्यवसायसम्पन्न, उत्साही और क्षमतावान् सम्राट् न रहनेसे राज्यमें स्वभावतः विशृङ्खला पड़ जाती है। उस समय चीनकी भी ऐसी ही दशा रही। साधारणतः शासनक्रिया दुर्बल पड़ी और प्रत्येक विभागमें अल्प अल्प विशृङ्खला बढ़ी थी।

किन्तु ऐसे मन्द समय भी चीनदेशमें साहित्य एवं शिल्पचर्चाकी सम्यक् उन्नति होती थी। सम्राट्से लेकर सामान्य सामन्तकी सभा पर्यन्त गायक और ऐतिहासिक उपस्थित रहे। शिक्षा देनेको विद्यालयोंकी भांति पाठागार भी यथेष्ट थे।

ई०से ५५० या ५५१ वत्सर पूर्व लु* राज्यमें महात्मा कनफुचीने शोतकालको जन्म लिया था। इनका वंशगत उपाधि वा नाम कङ्ग वा कङ्ग रहा। फिर देशके लोग इन्हें कनफुची अर्थात् दार्शनिक वा शिक्षादाता कहने लगे।

इनके पिताका नाम हेहो† रहा। यह अपने समयके एक विख्यात वीर थे। इतिहासमें भी इनका नाम मिलता है। उनके तुल्य साहसी और बलवान् पुरुष अति अल्प ही रहे। ई०से ५८२ वर्ष पूर्व वह पेईयाङ्ग नगर अवरोध कर लड़ते थे। उसी समय विपक्ष-पक्षीय किसी दलने कौशलपूर्वक नगरका द्वार खोल दिया। लोग अवरोधकारियोंके नगरमें घुसते ही द्वार बन्द कर देना चाहते थे। घटना भी वैसी ही हुयी। समस्त सैन्य नगरमें जाकर ही भी घुसे थे। फिर ठीक उसी समय विपक्षीय फाटकका द्वार बन्द करने लगे। हेहोने देखा—महाविपद् है। फिर उन्होंने निमिषमात्र विलम्ब न लगा निज भुजयुगसे विराट् कपाटको खींचकर पकड़ लिया और स्वपक्षीयोंको नगरसे निकलनेका आदेश दिया।

कनफुचीकी माताका नाम इचेन-सिङ्ग माई रहा। उन्होंने चीनदेशके 'इयेन' नामक प्राचीन सद्वंशमें जन्म लिया था। हेहोने ७० वत्सरके वयःक्रमपर उनसे विवाह किया। इसीसे लोगोंने सोचा था—अब इनके सन्तानादि न होगा। अवशेषका महात्मा

* यह लु राज्य वर्तमान शानटङ्ग प्रदेशके अन्तर्गत है। यहां चयाङ् नामक नगरमें कनफुचीने जन्मग्रहण किया था। इसी समय युरोपमें भी पश्चिमतटपर विद्यार्थियोंमें कोई विद्यावृद्धि केन्द्र प्रमुख बन जाता। कनफुचीने बहुत सामान्य वंशमें जन्म लिया न था। पहले कहा जा चुका—इनके जन्मकाल चीनदेशमें चाउ या चु नामक तृतीय राजवंश राजत्व पर अधिष्ठित था। चु वंशसे पूर्व "शाङ" नामक द्वितीय राजवंश राजत्व करते रहा। इसी शाङवंशके महर्षिमति सम्राट् तीन नामक राजाके विख्यात कुलीनवंशमें कनफुचीका जन्म हुआ।

† कोई कोई इनके पिताका नाम शुलियांग हीह बताता है। यह चीनदेशमें इस नामके किसी स्थानका अधिपति रहे।

कनफुचीके जन्म लेने पर हद्ध दम्पतीके प्रतिवेशी आनन्दसे फूल उठे।

कनफुचीके जन्मकाल-सम्बन्धीय अनेक गल्प सुन पड़ते हैं। चीन-ग्रन्थकारोंने इस सम्बन्धपर अपने अपने ग्रन्थोंमें विस्तारित वर्णना लिखी है। अन्यान्य प्रवादोंके मध्य निम्नलिखित विषय सकल ही ग्रन्थकार लिपिबद्ध कर गये हैं—कनफुचीके जन्म दिनसे पूर्व-रात्रिको चिङ्गसाईने एक स्वप्न देखा था। इसी स्वप्नके उपदेशानुसार वह किसी पर्वतगुहामें जा उपनीत हुईं। गुहामें उन्हें दैत्योंने घेर लिया था। उसी जगह दैत्योंने चिङ्गसाईसे उनके पुत्रको महिमा, भविष्यत् कीर्ति और सम्मान-कथा कही। फिर अप्सराके हस्त महात्मा कनफुचीने जन्मग्रहण किया।

इनकी बाल्यजीवनीके सम्बन्धमें हम कुछ विशेष समझ नहीं सकते। फिर भी बाल्यकालसे ही देशीय आचार-व्यवहार पर इन्हें आस्था रही। तीन वत्सर वयःक्रम कालमें यह पितृहीन हुये। उस समय भी इनके पितामह जीते थे। शैशवको वयसके साथ साथ इनमें इतिहासपाठका अनुराग भी बढ़ने लगा।

अल्प वयसको ही इनमें महात्माके सकल पूर्व लक्षण झलकते थे। बाल्यकालमें देशप्रचलित धर्मविश्वास और आचार-व्यवहारके प्रति इन्हें दृढ़ आस्था रही। इनके निज प्राणमें भक्तिका बड़ा प्राबल्य था। पूजा-र्चनापूर्वक इष्टदेवको निज आहार्य निवेदन किये विना यह किसी प्रकार खाते न रहे।

कनफुचीके पितामह अति धार्मिक एवं परम पण्डित थे। बाल्यकालमें उन्होंके निकट इनकी शिक्षाका विधान हुवा। पितामहके प्रदत्त शिक्षा-बलसे कनफुची विविध शास्त्र पढ़ सदाशयताका अनु-करण करनेको विशेष यत्न लगाते थे। पितामहके मरनेपर यह तत्कालीन चीन-पण्डिताग्रगण्य 'चेङ्गसो' नामक पण्डितके शिष्य बने। स्वीय अपरिमेय बुद्धि एवं मेधाबलसे १५ वत्सर वयःक्रमकालको ही कन-फुची असाधारण विद्वान् हो गये। फिर इसी वयसमें लिख-पढ़ इन्होंने इयाओ और सांग नामक सम्राट्द्वय-रचित 'नीतिगर्भ' प्राचीन ग्रन्थ एवं शास्त्र-समूहमें सम्यक् व्युत्पत्ति लाभ की।

१९ वत्सरके वयसमें इन्होंने सानराज्यकी किसी कुमारीसे विवाह किया था। किन्तु स्त्रीके साथ कन-फुची अधिक दिन न रहे। एक पुत्र सन्तान होते ही इन्होंने स्त्रीसङ्ग छोड़ दिया।

विवाहके पीछे इनका गुणराशि झलकने लगा। इसी समय चीनदेशमें साधारणके लिये अन्नका एक भाण्डार रहा। सर्वापेक्षा न्यायपरायण व्यक्तिको ही उक्त भाण्डारका भार मिलता था। कनफुचीको वह पद दिया गया। यह पिताके मरने पर अपनी वंश-गत कौलीन्य-मर्यादाको छोड़ दूसरे किसी पैतृक धनके अधिकारी हो न सके। इसीसे अन्नकी चेष्टामें इन्हें उक्त पद स्वीकार करना पड़ा। दूसरे वत्सर इनके पदकी उन्नति हुयी। कनफुचीको साधारण भूमि और खेतकी अध्यक्षता मिली थी। इसी समय इनके पुत्रका जन्म हुआ। देशके मध्य कनफुचीने इतना सम्मान पाया, कि तथाकार प्रधान सामन्तोंने पुत्र होनेका समाचार सुनते ही एक पुष्परेणो का मत्स्य उपहार पहुंचाया था। इसी घटनाके कारण इन्होंने पुत्रका नाम 'लि' या 'पियो' (पुष्प रेणो का मत्स्य) रख दिया।

उस समय चीनदेशकी अवस्था अत्यन्त शोचनीय रही। न्यायपरता देशसे उठ गयी थी। अत्याचार और अविचार सर्वत्र फैल पड़ा। मन्त्री राजाको और पुत्र पिताको मार राज्य छीन लेता था। यह सकल उपद्रव देख कनफुची कांपने लगे। अवशेषका इन्होंने प्रतिज्ञा की—किसी न किसी प्रकार स्वजातिका चरित्र सुधारेंगे।

अपनी प्रतिज्ञा सफल करनेको यह उपाय ढूंढ़ने लगे, किन्तु स्त्रीको एक विषम अन्तराय मानके। उस समय स्त्री-पुत्रको मायासे संसारमें फंस जाने पर इन्होंने कोई कार्य बनते न देखा। इसीसे कनफुची स्त्रीपुत्र एवं राजकार्य छोड़ साधारणको शिक्षा देनेके लिये प्रस्तुत हुये थे। उस समय अपनी माताके जीवित रहनेसे यह कहीं जा न सके, घरमें ही छात्रमण्डलीको

शिक्षा देने लगे। किन्तु कनफुची प्राचीन शास्त्र ही पढ़ाते थे। इन्होंने अपने मनमें सोचा—प्राचीन धर्मकर्मपर प्रथमतः दृढ़ अनुराग बढ़ा और सकल विधिनिषेधादि प्रत्येकके द्वारा प्रतिपालन करा सकनेसे लोगोंका चरित्र क्रमशः सत्कार्यकी ओर चलेगा। इसी समय इन्होंने कार्यका भार छोड़ा था। छात्र पाये हुये स्वल्पसामान्य वेतनके अवलम्बनसे ही दिन बिताने लगे।

२२ वत्सरके वयःक्रमकाल कनफुचीने शिक्षकताका अवलम्बन किया था। उसी वत्सर (ई०से ५२४ वर्ष पहले) इन्हें मातृवियोग देखना पड़ा। इस घटनाके कारण यह समस्त कार्यसे विरत हुये। क्योंकि उस समय चीनमें प्रथा रही—पिता और माता दोमें एकके भी मरनेपर पुत्रको कोई कार्य करनेका अधिकार नहीं। फिर कनफुचीने स्वयं प्राचीन रीति-नीति पुनः चलानेको प्राणपणसे चेष्टा लगायी। सुतरां ऐसे समय यह उक्त प्राचीन नियमादि पालन करनेमें पश्चात्पद न हुये।

अतिरिक्त इन्होंने यह भी ठहरा लिया था—निकटवर्ती किसी पवित्र भूमिमें मातृदेह समाहित कर रीतिके अनुसार आयोजन और महोत्सवसे अन्त्येष्टिक्रिया बनायेंगे। अन्तमें भी ऐसा ही हुआ। देशके साधारण लोगोंने देखकर समझा था—अधिकतर कनफुचीके अवलम्बन करनेसे यही प्रथा शास्त्रानुमोदित और हमारा भी अवलम्बनीय कार्य है। इनका भी गूढ़ उद्देश्य यही रहा। कारण इन्होंने देखा—देशके लोगोंकी धारणाशक्ति इतनी घटी, कि केवल उपदेशसे कोई काम बननेको नहीं। सुतरां कनफुची स्वयं पुङ्खानुपुङ्खरूपसे प्राचीन शास्त्रकी नीतिपर चलते थे। इसी घटनाके पीछे एकान्त हीनावस्थाके लोगोंको छोड़ सकल ही अपनी शक्तिके अनुसार अन्त्येष्टिक्रियाका उत्सव करने लगे। वही प्रथा आज भी चल रही है।

अवश्य कनफुचीको आडम्बर अच्छा लगता न था। इन्होंने अन्त्येष्टिक्रियाकी जो प्रथा चलायी, उसमें एक अति सुन्दर व्यवस्था लगायी है। भक्तिश्रद्धा देखानेको समाधिस्थल या एतद् उद्देश्यसे निर्दिष्ट निज सम्बन्धके किसी गृहमें [illegible] मृत व्यक्तिके लिये कितना ही कार्य बनाना और गुणादि गाना पड़ता है। इसीसे वर्तमान काल चीन देशमें आपामर साधारणके मध्य मृत व्यक्तिके उद्देश्यपर वार्षिक उत्सव मनाने और अपने भवनमें 'पितृपुरुषका गृह' बनानेकी प्रथा चल गयी है।

इसी प्रकार शोक उद्देश्य कार्यमें परिणत करनेपर सक्षम होते देख यह कुछ आह्लाद एवं आगामी कुछ और कार्यशान्तिसे अशौचके तीन वत्सर अपरत ही अपने गृहमें ही रहने लगे।

अशौचका काल बीतनेपर कनफुचीने लु राज्यमें ही ठहर इतिहास, साहित्य और सङ्गीतविद्याकी आलोचना चलायी। जो लोग सीखने आते, वह अति यत्नसे उपदेश पाते थे। अधिक वेतन देने पर भी यह किसीका पक्षपात करनेसे दूर रहे। कनफुची सबको समान यत्नसे बराबर उपदेश देते और अपनी निर्मलता तथा शास्त्रप्रियता कार्यसे देखा लोगोंका मनोवेग खींच लेते थे। उस समय देशके मध्य यह सर्वापेक्षा शास्त्रवित्, साधुतम और सत्कर्मचारी पण्डित बन गये। सुतरां किसी विषयपर विरोध पड़नेसे लोगोंको इनके निकट मीमांसा लेने आना पड़ता था। ऐसे सुयोगमें यह यथारीति उपदेश दे अपना उद्देश्य निकालते रहे। इनके उपदेशकी महिमासे मुग्ध हो क्रमशः लोग इच्छा या अनिच्छासे देशकी प्राचीन रीतिनीतिपर आस्था और श्रद्धा बढ़ाने लगे।

२५ वत्सरके वयस (ई०से ५२१ वर्ष पहले) पर कनफुचीने 'सियाङ्ग' नामक किसी सङ्गीतवेत्तासे सीख सङ्गीतविद्यामें पूर्णक्षमता पायी थी। बाल्यकालसे ही इन्हें सङ्गीतपर बड़ा अनुराग रहा। एकादिक्रमसे १५ वत्सर साधना करने पर इन्हें सङ्गीतमें आशानुरूप सिद्धि मिली।

लु राज्यमें किसी प्रधान मन्त्रीके होकी और नानकुङ्गसी नामक दो पुत्र इनके शिष्य हुये। उनको शिष्य कर कनफुची देशके मध्य सदा सम्मान और

श्रद्धाके पात्र बन गये थे। पूर्वापेक्षा लोग इन्हें द्विगुण भक्तिकी दृष्टिसे देखने लगे।

ऐसे ही समय इनके मनमें एक नूतन भाव उठा। पहले ही बता चुके—इस समय प्रत्येक देशके अधिपति नाममात्र सम्राट्‌के अधीन रहे, किन्तु कार्यतः सभी स्व स्व प्रधान और राज्यनियम चलानेमें स्वतन्त्र थे। यह नियम अविकृत भावसे पालन कर देशके मध्य शृङ्खला बांधनेमें कठिनता पड़ी। अधिपति सर्वदा स्वार्थपर, अर्थलोलुप, अविमृष्यकारी, प्रतारक, यथेच्छाचारी और दुष्टबुद्धि पारिषदोंसे परिवृत हो केवल कुप्रवृत्तिके दास बने थे। कनफुचोने सोचा—जितने दिन राजाओंका चरित्र न सुधरे, उतने दिन प्रजाके मध्य भी प्रकृत परिवर्तन न पड़ेगा। सुतरां इन्होंने ठहरा लिया—किसी राज-दरबारमें घुस उद्देश्यकी सिद्धिका पथ ढूंढेंगे। किन्तु सुकी मध्यस्थतासे इनका उद्देश्य सफल हुवा। इन्हें चाउ राज्यके सामन्त राजाकी सभामें स्थान मिला था। वहां यह राजनीति-कुशल न कहाये। कनफुचो सामन्तवंशके प्रतिष्ठाताका उद्देश्य और न्यायव्यवहार देखनेको एक वत्सर उक्त राज्यमें रहे। फिर यह स्वदेश लौट अध्यापनाके कार्यमें लगे थे। इनका यशः चारो ओर फैल गया। छात्र भी प्रायः ३८०० एकत्र हुये।

इसी समय लुके राजाने गुणसे मोहित हो इन्हें राज्यके विचारक पदपर नियुक्त कर दिया। कनफुचो सकल समय विचारकके पदपर बैठते न थे। जब यह उक्त पदपर बैठ देशको कुछ न कुछ सुविधा पहुंचा सकते, तभी कार्यका भार अपने ऊपर रखते और जितने दिन अभीष्टसिद्धिके पथमें व्याघात न लगते, उतने दिन पदको परित्याग न करते।

नानारूप चेष्टा चलाते भी कनफुचो सम्यक् फल पा न सके थे। लु राज्यमें 'कि', 'सु' और 'मङ्ग' नामक तीन वंशके लोग प्रधान राजपुरुष रहे। वह राजासे सद्भाव रखते न थे। शेषको सबने एकत्र हो राजासे युद्ध किया। युद्धमें हारे लुके राजा अपना राज्य छोड़ सि-राज्यको भागे थे। कनफुचोने भी उनका अनुगमन किया।

कनफुचो सि-राज्यको द्वितीय उद्देश्यसे गये। इन्होंने सुना था—शान सम्राट्‌की पदावली इन दिनों केवल सि-राज्यके गायक ही जानते हैं। उक्त पदावली सीखनेको यह बहु दिवसावधि चेष्टा करते रहे। राजधानीके प्रवेशकाल इन्हें पदावलीका एक गान हठात् सुन पड़ा। उससे यह इतने मोहित हुये, कि गानके उद्देशानुसार तीन मास मांसस्पर्शसे अलग रहे। पदावलीके स्वरसम्बन्धमें कनफुचो कहते—सङ्गीतस्वरके इतने सुमिष्ट और सर्वाङ्गसुन्दर होनेकी धारणा हम रखते न थे।

सि-राज्यको जाते समय ताई पर्वतपर एक घटना हुयी। इस स्थानपर उसका विशेष विवरण दिया गया है। इसीसे स्पष्ट समझ लेते—कितने सामान्य सामान्य विषय उठा कनफुचो स्वीय छात्रोंको सदुपदेश देते थे। शिष्योंमें अनेक इनका साथ छोड़ते न रहे। सि-राज्य जाते समय भी वह कनफुचोके साथ थे।

सब लोग ताई पर्वत अतिक्रम करते किसी समाधिस्थानके निकट उपस्थित हुये। उसी स्थानपर बैठी एक स्त्री रोती थी। कनफुचोने स्वदलके साथ निकट पहुंच उससे शोकका कारण पूछा। स्त्रीने उत्तर दिया—इसी स्थानपर हमारे श्वशुरने व्याघ्रके मुखमें प्राण-विसर्जन किया, इसी स्थानपर हमारे पतिको श्वापदने खा लिया और इसी स्थानपर हमारे एकमात्र सन्तानका रक्त किसी व्याघ्रने पिया है। इन्होंने कहा—फिर माता! तुमने ऐसे भयङ्कर स्थलपर क्यों अवस्थान किया है। स्त्री बोल उठी—यहां रहनेमें कोई विशेष कष्ट नहीं, किन्तु प्रजापीड़क अत्याचारी राजाके राज्यमें ठहरना कठिन है। कनफुचोने अपने शिष्योंको बोला कर समझाया था—वत्सो! सुना तो सही, अत्याचारी प्रजापीड़क राजा व्याघ्रको अपेक्षा भी अधिक भयङ्कर होता है।

अपने राज्यमें आते सुन सिके राजाने इनकी अभ्यर्थना करनेको लोग भेजे थे। कनफुचो राजसभामें आये। सिके राजा इनसे कथनोपकथन कर अत्यन्त प्रसन्न हुये। फिर उन्होंने इन्हें स्वराज्यमें प्रतिष्ठित करनेको 'लिनकिउ' नामक नगर समस्त

आयके साथ देना चाहा था। किन्तु पण्डितवर कनफुची कहने लगे—'विज्ञ लोग उपदेश देते और जबतक उसके अनुसार उपदेश सुननेवाले कार्य नहीं करते, तबतक उनका दान किसीप्रकार नहीं लेते। हमने राजाको उपदेश दिया है सही, किन्तु उन्होंने न तो अभीतक उसके अनुसार कार्य किया और न उसका उद्देश्य ही समझ लिया।' फिर राजासे राजनीतिपर कथनोपकथन होनेपर यह बोले—जिस देशमें राजा राजाका, मन्त्री मन्त्रीका, पिता पिताका और सन्तान सन्तानका कर्तव्य देख कार्य कर सकता, उसी देशको सब कोई यथार्थ सुशासित कहता है। इस राजाने उत्तर दिया—'इस देशमें राजाका राजा, मन्त्रीका मन्त्री और सन्तानका सन्तान न होना असम्भव है। किन्तु प्रजासे प्राप्त करको हम उपभोग क्यों न करेंगे!'

इन्होंने देखा—सि राज्यमें रहना नहीं अच्छा। उधर राजाने कनफुचीको अर्थदानसे वशीभूत कर रखना चाहा था। किन्तु यह उस धातुके लोग न रहे और किसी प्रकार कोई दान लेनेको लोलुप न हुये। राजाने नाना उपायोंसे अर्थवृत्ति और भूमिवृत्ति देना चाही थी। किन्तु कनफुचीने यही कहकर प्रत्याख्यान किया—जबतक राजा हमारे उपदेशके अनुसार न चलेंगे, तब तक हम उनका दिया कोई द्रव्य कैसे ग्रहण करेंगे! उस समय सिके राजा और प्रजावर्ग अत्यन्त विलासासक्त रहे। कनफुचीके उपदेशानुसार चलना उनके लिये असम्भव था। किसी प्रकार दोनों ओर मनोमिलन होते न देख यह स्वदेश लौट आये। लु राज्य उस समय भी अशान्तिपूर्ण रहा। शासनका भार राज्यके प्रधान पुरुषोंके हाथ पड़ा था।

देश आकर इन्होंने १५ वत्सरकाल कार्यके झगड़ेसे अवसर लिया और केवल शास्त्रकी चर्चा, देशके इतिहास-प्रणयन एवं सङ्गीत-पुस्तककी रचनामें कालयापन किया।

फिर लु राज्यमें (ई०से ५०५ वर्ष पूर्व) शान्ति स्थापित हुयी थी। राज्यके प्रधान प्रधान व्यक्तियोंने इस बार इन्हें देशका दोष सुधारनेको, मन्त्रीके पदपर बैठाया। कनफुचीने जिसको आदर्श मान लगाया, उसीको पाया था। राज्यके सम्बन्धमें स्थिर किये हुये नियम और देशके लोगोंका चरित्र सुधारनेको स्थिर किये हुये उपाय कार्यमें परिणत करनेका सुयोग देख यह महा-आह्लादित हुये। इस बार इन्होंने बड़े सुनियमसे कार्य चलाया था। कुछ मासोंके मध्य ही क्या राजा, क्या प्रजा, क्या महत् और क्या इतर—सभीका आचार-व्यवहार एवं चरित्र इतना सुधरा, कि राज्यमें नूतन चमत्कार तथा नूतन भाव देख पड़ा। फिर लु राज्यकी कार्यप्रणालीसे लोग अत्यन्त सन्तुष्ट हुये थे। वह निज निज अन्तरमें कनफुचीका गुणगान निज हृदयकी अपूर्व कृतज्ञताका परिचय देने लगे।

लु राज्यकी श्री और समृद्धि देख पार्श्ववर्ती भूपाल हिंसासे जल उठे। इन्होंने भी कनफुचीके प्रवर्तित नियम चलाकर अपना अपना राज्यकी श्री बढ़ाना चाही थी। किन्तु कार्यतः वैसा न हुआ। पार्श्ववर्ती सि-राजने लु राज्यका सौभाग्य देख कहा था—'यदि कुछ दिन कनफुची मन्त्रित्व करते जायेंगे, तो सामन्त राज्योंके मध्य हम लु राज्यको सर्वप्रधान पायेंगे। फिर समीप पार्श्ववर्ती हमारा राज्य भी उसके हाथमें पड़ेगा। इस समय लु-राजके राज्य छोड़ शान्ति अवलम्बन की चेष्टामें लगनेमें ही हमारा मङ्गल है।' सि-राजके मन्त्रीकी बुद्धि अति कुटिल रही। उन्होंने राजाको समझाया—किसी गतिसे लुराजके साथ कनफुचीका विवाद लगा देनेसे आपको यह आपदा मिट जायेगी। सि-के राजा इस पर सम्मत हुये थे। फिर मन्त्रीने रूपलावण्यसम्पन्ना पूर्णयौवना चित्ताकर्षिणी मनोहर-नृत्यगीतादि निपुणा, मधुरभाषिणी एवं कोकिलकण्ठी ८० कामिनी और अत्युत्कृष्ट १२० अश्व संग्रहकर लुके राजाका उपढौकन पहुंचाया। पण्डितवर कनफुचीने इस उपढौकनका भावी परिणाम सोच राजासे प्रत्याख्यान करनेको उपदेश दिया था। किन्तु दुरदृष्टवशतः लुके राजाका मतिभ्रम पड़ गया। उन्होंने कनफुचीका परामर्श न मान युवतियोंको अन्तःपुरमें बैठाया था। अन्तको यह युवतियोंके

मोहजालमें फंसे। राजकार्य दिन दिन उत्सन्न होने लगा। राजपुरुष उच्छृङ्खल बने थे। विलासिनियोंके प्रीत्यर्थं राजा नित्य नूतन महोत्सवका अनुष्ठान करने लगे। इसीप्रकार राज्य श्रीहीन हुआ था। राजा विलासियोंमें अग्रगण्य बने। कनफुचीने उनकी मति-गति फिरनेकी यथेष्ट चेष्टा की थी। किन्तु समस्त आयास वृथा गया। कुछदिन पीछे राजा रमणी-कुहक-से अत्यन्त हतबुद्धि हुये। कनफुचीके उपदेश देनेको जानेपर उन्हें क्रोधोद्रेक उठता था। अवशेष राजा कनफुचीको सुपथका कण्टकस्वरूप समझ मारने या आमरण कारागारमें डालने पर कृतसङ्कल्प हुये।

इतने दिनोंमें इन्होंने स्थिर कर लिया था—लु राज्यमें रहनेसे हमारा या राजाका—दोमें किसीका कल्याण न होगा। इसीसे कनफुचीने वह देश छोड़ने-को ठहरायी। यह इस बहाने अपना पद छोड़ चल दिये—'राज्यके मङ्गलार्थं देशदेशसे बलि चढ़ता है। किन्तु राजा बहुत दिनसे बलिका मांस राज्यके भिन्न भिन्न प्रदेशोंको भेजनेमें शैथिल्य देखाते हैं।' कनफुचीने मनमें सोचा था—सम्भवतः राजा और मन्त्रीकी मतिगति फिरनेसे हम फिर बोलाये जायेंगे। किन्तु वैसा सुयोग न लगा। यह ५५ वत्सरके वयसमें देश घूमने निकले थे।

शासनप्रणालीके सम्बन्धमें कनफुचीकी धारणा अतीव मनोहर रही। यह कहते—राजाके राजा, मन्त्रीके मन्त्री, पिताके पिता और पुत्रके पुत्र रहते ही राज्यमें अधिक सुख होता है। समाजके सम्बन्धमें भी कनफुचीका मत अति उच्च था। यह समाज बांध वास करनेको ईश्वराभिप्रेत बताते रहे। पांच सम्बन्धोंसे ही समाज बनता है—राजा-प्रजा, पति-पत्नी, पितापुत्र, ज्येष्ठकनिष्ठ और बन्धु। राजा प्रभृति प्रथम चार लोगोंका धर्म कर्तव्य और प्रजा प्रभृति शेष चारका धर्म वश्यता है। न्यायपरता तथा दयापर कर्तव्य और न्यायपरता एवं ऐकान्तिकी श्रद्धा-भक्ति-पर वश्यता स्थापित होनेसे समाजमें सुखस्वाच्छन्द्य रहता है। फिर बन्धुभावसे दोनोंमें परस्पर उन्नतिकी चेष्टा करनेसे ही समाजमें कोई गड़बड़ पड़ नहीं सकता। लोगोंके मोहमें फंस उक्त सम्बन्ध बिगाड़नेसे समाजमें इतनी विशृङ्खला आती है। किन्तु मनुष्यमें सत्यके अवलम्बनकी स्पृहा स्वभावतः अधिक है। सुतरां सत्पथके अवलम्बनकी सुविधा मिलने पर वह अपनी इच्छासे कभी मोहमें नहीं पड़ता। कनफुची कहते,—'वायुभरसे दीर्घ दीर्घ तृण झुकनेकी भांति ज्ञानी व्यक्तिके सामने साधारण लोग अवनमित होते हैं। राज्यमें आदर्श राजा रहनेसे प्रजा भी आदर्श प्रजा बन जाती है। हम आदर्श राजा बना और उसका गुण बता सकते हैं। हम यह भी देखा देंगे—प्राचीन काल आदिवंश-स्थापयिता स्याङ्गि-वंशके आदिपुरुष विख्यतम स्याङ्गि और चीन देशमें प्रथमतः वंशानुक्रमिक राज्यके प्रतिष्ठाता पण्डिततर 'इयाउ'ने किस प्रकार कार्य किया था। इन सकल आदर्श लोगोंके अनुकरण और हमारे उपदेशानुसार यदि कोई चले, तो वही देशके मध्य प्रधान राजा बने तथा सुखी प्रजाके साथ महासुखसे अपना कालयापन करे। एक वत्सर हमारे उपदेशानुसार राजाके कार्य करनेसे हम राजश्री बदल सकते हैं। फिर तीन वत्सर हमारे वशमें रहनेसे राजा उक्त सकल सुख उपभोग करेगा।'

यह ५६ वत्सरके वयस पर लु राज्यसे निकल वि, सुंग, लु प्रभृति राज्योंमें स्वीय मत फैलाते घूमने लगे। कनफुचीको आशा रही—किसी न किसी राजाको हस्तगत कर स्वीय सम्राट बनायेंगे। किन्तु उस आशाके पूर्ण होनेका सुयोग कहीं देख न पड़ा। कनफुचीकी धर्मनीति वा राजनीतिका अवलम्बन विलासियोंके लिये दुःसाध्य हो गया। इनके सकल नियमों पर चलना तो दूर रहा, उनके नामसे ही लोगोंको भय और सन्ताप लगा। राजपुरुष सोचते थे—कहीं इसी समय कनफुची आकर हमारे कार्यका प्रतिवाद न लगायें और इतने दिनके लाभ एवं आमोद-प्रमोद-को हानि पहुंचायें। राजा विचारते रहे—क्या इसी समय कनफुची आ और शासनकार्य वा प्रजापालनका दोष देखा हमें व्यतिव्यस्त तो कर न डालेंगे। साधारण लोग समझते थे—'इतने दिन हम बड़े सुख-

अच्छन्दी रहे हैं। सम्भवतः इसीको बिगाड़नेके लिये यह व्यक्ति इधर-उधर घूमते फिरता है। इसी प्रकार सकल स्थलोंमें राजासे ले सामान्य प्रजा पर्यन्त आपामरसाधारणमें कुछ तो कनफ्यूशीका उपदेश अग्राह्य करने लगी। फिर कतिपय स्थलोंमें दुष्ट लोगोंने इनके प्राणविनाशकी चेष्टा भी की थी। किन्तु ईश्वरकी इच्छासे कोई कृतकार्य न हुआ।

कनफ्यूशी वृथा घूमते न रहे। प्रत्येक नगर और प्रत्येक ग्राममें इनके दो-चार शिष्य हो जाते थे। कनफ्यूशी साधारण लोगोंको नीतिशिक्षा तथा धर्मशिक्षाके लिये इयाओ, शान, इउ, चिङ्गटाङ्ग और मिङ्गमाङ्ग प्रभृति चीना मनीषियोंके न्याय एवं दृष्टान्त प्रचार करते रहे। इसीसे ज्ञानी व्यक्ति इन्हें उक्त सकल प्राचीन महात्माओंका प्रतिनिधि मान आदर देते थे।

क्रमशः इनके शिष्योंकी संख्या तीन हजार हो गयी। वह सकल भ्रमणकालपर गुरुके साथ ही साथ घूमते थे। इन्होंने शिष्योंको शिक्षा देनेकी सुविधाके लिये चार श्रेणियोंमें विभाग किया। सकल विषयोंमें पारदर्शी, बुद्धिवृत्तिकी चालनामें यथेष्ट निर्मलताप्राप्त, विशुद्ध धर्मपथावलम्बी एवं ऐकान्तिक चित्तसे ईश्वरके प्रति भक्तिमान् प्रथम श्रेणीके शिष्य गिने जाते थे। द्वितीय श्रेणीमें वाक्पटुता, शास्त्राभ्यास तथा सुतर्कके पारदर्शी रहे। तृतीय श्रेणीके छात्रोंको यह केवल राजनीति अतिविशदरूपसे सिखा मांदारिनों* (शासकताके कार्यमें लगा देते थे। फिर चतुर्थ श्रेणीके शिष्य लोगोंको सिखानेके लिये साधारणके योग्योपयोगी सरल भाषामें नीति तथा धर्मशास्त्र बनाते रहे। फिर ग्रामों, नगरों और राज्योंमें प्रायः ५०० शिष्य प्रधान प्रधान पदोंपर नियुक्त भी थे। इन चारों श्रेणियोंके शिष्योंमें दश जन प्रधान समझे जाते हैं—प्रथम श्रेणीके येनिईन, मिंचेकन, चीनपिनिउ एवं चुङ्कङ्ग, द्वितीय श्रेणीके चेंगो तथा चुकङ्ग, तृतीय श्रेणीके इइनिन एवं किन् और चतुर्थ श्रेणीके चिहेन तथा सिहिया। द्वितीय श्रेणीके टिशुन् और टिजिकन बड़े अनुसन्धित्सापरायण एवं तार्किक थे। यह सर्वदा गुरुसे सामान्य सामान्य विषयोंपर तर्क उठा सन्देह मिटा लेते रहे। इधर प्रथम श्रेणीके येनिईन गुरुके अत्यन्त प्रियपात्र थे। कनफ्यूशी उन्हें पुत्रकी भांति चाहते रहे। ३१ वत्सरके वयसमें येनिईनके अकाल प्राण छोड़ने पर शोकदुःख-विजयी ज्ञानीपुरुष होते भी यह प्रियशिष्यकी मायासे अत्यन्त अभिभूत हुये थे। एक दिन कनफ्यूशीने अन्य सकल शिष्योंको बोला कह दिया—देखो! इतिपूर्व हमने नानाविध दुर्गति पायी और दुःसह यन्त्रणा उठायी है सही, किन्तु ऐसी मनोवेदना कभी नहीं पायी। येनिईनके मरनेपर इयेनङ्ग नामक शिष्यने इनके उच्च श्रेष्ठका स्थान अधिकार किया था। गुणसे वशीभूत हो यह येनिईनकी भांति इयेनङ्ग को भी चाहने लगे।

भ्रमणकाल कनफ्यूशीके जीवनमें कई घटनायें हुयीं। वृहत् शिष्यदलके लिये इन्हें बहुत विपत सहना पड़ता था। प्रायः सर्वदा आश्रयका अभाव रहता और मध्य मध्य तीन दिन तक खानेको अन्न न मिलता, जिससे दीन हीनकी भांति इनका समय निकलता। एक बार इनका दल विषम अभावमें आ महाक्लेश पा रहा था। उसी कष्टसे अभिभूत हो एक दिन टिशुन् नामक शिष्यने पूछा—गुरु! सर्वश्रेष्ठ और सर्वापेक्षा बुद्धिमान् मनुष्यको भी क्या अभावमें आना पड़ता है। इन्होंने उत्तरमें कहा—'अभावमें आते भी यह व्यक्ति सर्वश्रेष्ठ और सर्वापेक्षा बुद्धिमान्की भांति कार्य करता है। साधारण लोग ऐसे स्थलपर अभिभूत हो अपनी सुधबुध भूल जाते हैं।'

कनफ्यूशी अपने व्रतनियमादि अभ्रान्त एवं ईश्वर-प्रेरित समझते और कभी कभी शिष्योंके मध्य यह बात कहते थे। किन्तु अनेक यह बात मानते न रहे। एक दिन कथाके प्रसङ्गमें टिजिकङ्ग नामक शिष्यने कहा—'आपके नियमादि सर्वापेक्षा उत्कृष्ट होते भी किसी राज्यके लोग किसी प्रकार पालन कर न सकेंगे। सुतरां उन्हें कुछ बदल लोगोंके अवलम्बनोपयोगी बना देना अच्छा है।' इन्होंने उत्तर दिया—'कृषक धर्म एवं परिश्रम उठा खेतको उत्तम-

* मांदारिन शब्दसे चीनके कर्मचारीका बोध होता है।

इसमें जीत-सो सकता है। किन्तु वह पच्छी उसके लिये दायी नहीं। फिर शिल्पकार सुन्दर कारकार्य कर, इत्यादि बना सकते हैं। किन्तु यह ठहराना कठिन है—बाजारमें उनको छोड़ दूसरा कोई वस्तु न बिकेगा। इसीप्रकार ज्ञानी व्यक्ति सुनीतिकी व्यवस्था बता सकते, किन्तु इसके दायी कैसे ठहरते—लोग उसे ग्रहण कर सकेंगे या नहीं।'

उइ राज्यमें घुसते समय 'पु' नामक स्थानपर कितने ही लोगोंने इनको आक्रमण किया था। सब शिष्योंके मिलकर भी रोक न सकनेपर उन्होंने कनफुचीको पकड़ लिया। यह उनके फन्देमें पड़ शपथ उठानेको बाध्य हुये—फिर कभी हम उइ राज्यकी ओर जाने न पड़ेंगे। किन्तु मुक्ति मिलते ही कनफुचीने उसी ओर चलनेको उद्यम किया था। जो विशृङ्खलता और सत्यताकी नीतिका प्रथम पथ बता उपदेश देते रहे, इन्हींको इस प्रकार सत्य छोड़ते देख शिष्य चौंक उठे। फिर टिलिकइने पूछा था—शपथ छोड़ना क्या उचित है। इन्होंने उत्तर दिया—यह शपथ दूसरोंने बलपूर्वक कराया है, हमारे प्राणमें यह शपथ नहीं।

संन्यासी पृथिवीके किसी कार्यमें नहीं फंसते। वह चारो ओर पापकी लीला देख कांपने लगते और उससे दूर भगते हैं। फिर वह लोगोंको भी ऐसा ही करनका उपदेश देते हैं। उस समय संन्यासी कनफुचीको लोकके विरुद्ध लड़ते देख हंसते और ज्ञानशून्य एवं तुच्छ समझते थे। किसी समय यह घूमते घूमते तृष्णार्त हो जलाशय ढूंढ़ते रहे। दूरसे एक संन्यासी खेतमें अपना काम करते देख पड़े। इन्होंने टेलिङ्गको उनके निकट जलका संवाद लेने भेजा। संन्यासीने टेलिङ्गको देख और कनफुचीका शिष्य समझ कहा था—'विशृङ्खला समुद्रके तरङ्गकी भांति एक राज्यसे दूसरे राज्यमें पहुंच जाती है। कोई उसे रोक नहीं सकता। उचित परामर्श न माननेपर जो व्यक्ति एक राजाके द्वारसे अपर राजाके द्वारपर घूमफिर पहुंचता, उसका अनुसरण करनेसे तुम्हें क्या फल मिलता है। इससे तो उसीको सेवा करना अच्छा ठहरता, जो पुरुषानुपुरुषरूपमें देश-भाव और अचल-अटल मान नश्वरतासे पीछे हटता है। ऐसा करनेसे तुम्हें अवश्य फल मिलेगा।' संन्यासी यह बात कह अपने कर्ममें लगे। फिर उन्होंने जलका कोई संवाद दिया न था। टेलुङ्गने वापस आ कनफुचीसे सब बात कही। इन्होंने उत्तर दिया—'बात ठीक है। किन्तु पृथिवीसे हट कैसे खड़े होंगे। मनुष्यका समाज छोड़ वनमें कैसे रहेंगे। साथी न होनेसे मनुष्य जी नहीं सकता। फिर वनके पशुपक्षीसे मनुष्यका सम्पर्क क्या है। सुतरां उनके साथ कैसे ठहरेंगे। यदि साथीके पास ही मनुष्यको रहना पड़ता, तो दुर्दशाग्रस्त मनुष्यके निकट अवस्थान करना उचित:संगता है। देशदेशमें विशृङ्खला रहनेसे ही हमारे कार्यकी आवश्यकता है। समस्त देशमें शृङ्खला लगने और नीति चलनेसे हमें एक राजाके द्वारसे अन्यके द्वारपर जाना न पड़ेगा। फिर हमारा कोई विशेष कार्य भी न रहेगा। उसी समय हम यथार्थ विषयविरागी, पृथिवी-परित्यागी और निर्लिप्त वैरागी समझे जायेंगे।' सोङ राज्यको जाते समय कोयाङ्ग नगरमें सदल कनफुचीपर बड़ी विपद् पड़ी। उस समय उक्त नगरमें इयाङ्गहू नामक किसी डाकूने भीषण उपद्रव उठाया था। लोग उसके उत्पातसे अत्यन्त उत्यक्त रहे। किन्तु दुःखसे कहना पड़ता, कि कनफुची और हुयाङ्गहूका शरीर मिलता-जुलता था। इसीसे लोगोंने जिस गृहमें इन्होंने आश्रय लिया, उसे चारो ओरसे घेर दिया। शिष्य बहुत डरे, किन्तु यह निर्भीक चित्तसे कहने लगे—'हमारे सम्बन्धमें सत्य कभी छिपा न रहेगा। परमेश्वर यदि इतना शीघ्र इस सत्कार्यमें बाधा लाता, तो हमें ऐसी अवस्थाको क्यों पहुंचाता। उसकी इच्छासे सत्य खुल जायेगा। कोयाङ्गरके लोग हमारा कुछ बना न सकेंगे।' यही कहकर कनफुचीने अपनी वीणाका स्वर मिलाया था। फिर यह प्राचीन सम्राटोंकी महिमासूचक निज रचित पदावली गाने लगे। घर घेरनेवाले लोग कहते कहते चले गये—यह हुयाङ्गहू नहीं, कोई दूसरा व्यक्ति है।

१९ वत्सर पीछे घटनाक्रमसे कनफुचीको स्वदेश लौटना पड़ा। उस समय ल राज्यमें किकङ्ग नामक एक व्यक्ति राजाके अति विश्वास बन बैठे थे। उन्हींके परामर्शपर राजा सकल कार्य करते रहे। घटनाक्रमसे इयेनयउ नामक कनफुचीके एक शिष्यको किकङ्गके अधीन सैन्यविभागमें कोई कर्म मिला। फिर इयेनयउने सिराज्यके विरुद्ध युद्धयात्रा कर अति कौशलसे जय पाया। किकङ्गने उनको युद्धप्रणाली देखी थी। वह इयेनयउको नूतन-प्रकार युद्धरीति देख एक दिन पूछने लगे—तुमने इस प्रकार युद्ध करना कहां सीखा था। इयेनयउने उत्तर दिया—कनफुचीने हमको यह युद्धप्रणाली सिखायी है। कनफुचीका नाम सुन उन्होंने कहा था—वह कैसे आदमी हैं। इसपर इयेनयउ बोल उठे—'किसी कार्यमें उन्हें नियुक्त कर लेनेसे आपका यश चारों ओर फैल जायेगा। आपके सैन्यसामन्त अकुतोभयसे देवदानवके सम्मुख खड़े हो सकेंगे और किसीसे न डरेंगे। फिर यदि आप स्वयं उनके उपदेशानुसार कार्य चलायें, तो देशीय शत-शत पण्डितोंके परामर्शपर भी किसीको कोई कष्ट न पावें।'

उक्त सकल कथा सुन किकङ्गने भविष्यत् सुफलकी आशासे कनफुचीको नियुक्त करनेको ठहराया था। किन्तु इयेनयउने उनसे कहा,—यदि उन्हें नियुक्त करना ही चाहते, तो स्मरण रखिये—आप दोनोंके परामर्शमें कोई नीचमना व्यक्ति घुसने न पावे। इसके पीछे ही किकङ्गने कनफुचीको लानेके लिये दूत भेज दिये।

उस समय कनफुची वइ राज्यमें रहे। वहां वह कङ्गयोयान् नामक उसराज्यके किसी सेनापतिके व्यवहारसे विरक्त हो अपना देश लौटनेको राह देखते थे। उधर कङ्गयोयान् अपनी संग्रामप्रियताका परिचय दे इनके पास आते और केवल एकमात्र युद्धकी बातपर ही आलोचना उठाते रहे। किन्तु कनफुचीको युद्धशास्त्रका उपदेश देना अच्छा लगता न था। इसीसे वह अत्यन्त विरक्त रहे। शेषको इन्होंने स्थिर किया—यदि हम यह राज्य न छोड़ेंगे, तो इस विपदसे कैसे मुंह मोड़ेंगे। जिस समय कनफुचीके मनकी अवस्था ऐसी रही, उसी समय किकङ्गकी दूतमण्डली आ पहुंची। इन्होंने द्विरुक्ति न उठा उनका प्रस्ताव ग्राह्य किया और बिन्दुमात्र भी विलम्ब न लगा शिष्योंके साथ स्वदेशकी ओर पद फेर दिया।

कनफुचीके राजसभामें पहुंचनेपर राजा ने (नैकङ्ग) शासनकार्यके सम्बन्धपर नानाविध प्रश्न उठाने लगे। इन्होंने यथायथ उत्तर देते देते स्पष्ट ही सङ्केत किया था—यदि इन्हें किसी कर्ममें लगावोगे, तो राज्यमें यथेष्ट मङ्गल देख पावोगे। फिर कनफुचीने कहा—उपयुक्त मन्त्री निर्वाचन कर सकनेसे ही राज्यमें सुशासन चलता है। किकङ्गके भी पूछनेपर इन्होंने बताया था,—'उन्नतमनाको रख लीजिये और नीचमनाको निकाल दीजिये। फिर आप अल्प दिनके मध्य ही देखेंगे—नीचमनाका मन उन्नत हो गया है।' किन्तु किकङ्ग ऐसी बातसे समझ न सके—कैसे क्या करना पड़ेगा। उसी समय लु राज्यमें डकैतीका भी प्रादुर्भाव हुआ। किकङ्ग समझ न सकते थे—कैसे इस डकैतीको निवारण करेंगे। इसीसे कनफुचीने कुछ खोलकर कहा—यदि आप स्वयं लोभी न बनें और अपनी प्रजाको पुरस्कार दे प्रलोभित करें, तो वह डाके कैसे पड़ें। इस उत्तरसे इन्होंने स्वयं नैकङ्गपर भी कुछ कटाक्ष किया था। कारण कनफुची समझते रहे—'दो वत्सरसे राजा किकङ्गके अत्यन्त वशीभूत हो गये हैं। जो वह कहते, राजा उससे द्विरुक्ति नहीं करते।' किन्तु शेषको यह लु-राजकी सभामें ठहर न सके। कारण वैसे लोगोंके बगलमें रहनेवाले प्रभुके निकट कनफुची जैसे व्यक्तिका टिकना असाध्य था।

इस बार भी सुराजके निकट मनोभीष्ट सिद्ध न होनेसे कनफुची राजकार्यको त्याग कुछ दिन और अवसर ले घरमें बैठ रहे। फिर इन्होंने स्वदेशके प्राचीन इतिहास शुकिङ्ग ग्रन्थकी टीका और भूमिका लिखी। केवल इतिहास ही नहीं, कनफुचीने उस समय दूसरे भी अनेक विषयोंमें हाथ लगाया था।

आजकल कनफ़चीके जो पुस्तक मिलते, वह प्रधानतः दो श्रेणीके निकलते हैं। किन्तु प्रथम श्रेणीका आदि पुस्तक सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है। हिन्दुवोंके वेदकी भांति चीना भी इस आदिपुस्तकको परम-पूज्य समझते हैं। आदि पुस्तकमें पांच ग्रन्थ विद्यमान, हैं—इकिङ्ग, सुकिङ्ग, सिकिङ्ग, लिकिङ्ग और सुङ्गछिउ। इकिङ्गमें चीनदेशके आमूल परिवर्तनका विषय लिखा है। किन्तु इस पुस्तकका मूल इन्होंने नहीं बनाया। यह उसके टीका एवं भाष्यकार रहे। लोग चीन राज्यके स्थापयिता फोहीको उसका प्रणेता बताते हैं। पुस्तकके प्रसङ्ग प्रहेलिकामें रचित हैं। किन्तु भाषा अति कठिन है। साधारण लोग उसका अर्थ लगा नहीं सकते। भाष्य न रहनेसे जैसे वेद समझमें नहीं आता, वैसे ही कनफ़ुचीका भाष्य बिना देखे इकिङ्ग दुर्बोध माना जाता है। इसके भाष्यकी भूमिकामें स्वयं कनफ़ुचीने ही लिखा है—'यदि हमारे वयसका परिमाण कुछ बढ़ता, तो ५० वत्सर अभी 'इकिङ्ग'का पढ़ना चलता; फिर जो टीका वा भाष्य बनाते, उसमें कोई वृहत् भ्रम देख न पाते।' यह पुस्तक चीना ग्रन्थोंमें सर्वापेक्षा प्राचीन और पवित्र है। ई०से पूर्व द्वादश शताब्दीको मेभाङ्ग नरपतिने एकबार इनके अर्थसंग्रहकी चेष्टा लगायी थी। किन्तु वह किसी प्रकार सफल न हुयी। कनफ़चीसे पहले दूसरा कोई इसका भार उठा न सका था। आजकल साधारणतः जैसे हिन्दुस्थानी ब्राह्मण वेद नहीं समझते, वैसे ही पहले चीना भी इकिङ्गका अर्थ करनेमें अटकते रहे। यह इकिङ्गको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते थे।

आदि पुस्तकका द्वितीय ग्रन्थ 'सुकिङ्ग' है। यह संग्रहमें बनाया गया है। सुकिङ्ग ही चीनावोंका सर्वोत्कृष्ट प्राचीन इतिहास है। इसमें चीन-राज्यकी स्थापनासे कनफ़ुचीके समय पर्यन्त समस्त इतिहास वर्णित है। हिन्दुवोंके पुराण-शास्त्रकी भांति इसमें धर्मनीतिका उपदेश भी मिलता है। इन्होंने प्राचीन ग्रन्थादिसे संग्रह कर सुकिङ्ग लिखा था।

'सिकिङ्ग'—आदि पुस्तकका तृतीय ग्रन्थ है। इसमें कनफ़ुची-रचित नीतिगर्भ काव्य लिखा, जो सङ्गीतसे भरा है। एतद्भिन्न सिकिङ्गमें प्राचीन कविता, काव्य और सङ्गीत-संग्रह भी है। चीना उक्त गीत और कविता कण्ठस्थ कर लेते हैं। इसमें सङ्गीतका उद्धार करनेको कनफ़ुचीने कितने ही यत्न लिखे हैं। चीना इनके गीतादि उत्सवोंपर व्यवहार करते हैं। चीनावोंका न्यायक्रम और आचार-व्यवहार यह पुस्तक पढ़नेसे यथेष्ट समझ पड़ता है।

कनफ़ुचीका 'लिकिङ्ग' नामक चतुर्थ ग्रन्थ सर्वापेक्षा वृहत् है। पूर्वोक्त तीनों पुस्तक एकत्र करनेसे भी इसकी बराबर नहीं होते। यह चीनावोंकी स्मृति और व्यवस्थाका ग्रन्थ है। इसमें धर्मकर्मकी रीतिनीतिका विधि वर्णित है। निर्णय करना कठिन है—इसका मूलांश स्वयं कनफ़ुचीने बनाया था या नहीं।

सुङ्गछिउ नामक पञ्चम ग्रन्थमें कनफ़ुचीकी जन्मभूमि लु राज्यका इतिहास दिया गया है। चुङ्ग शब्दसे वसन्त और छिउसे शरत्कालका बोध होता है। वसन्तसे आरम्भ कर शरत्कालको शेष करनेसे ही इन्होंने इसका नाम सुङ्गछिउ रखा है। यह पुस्तक कनफ़ुचीने वृद्धावस्थामें लिखी थी। इसमें इन-राजके समयसे गैराजके राजत्वकाल (चतुर्दश वत्सर) पर्यन्त इतिहास मिलता है। इस ग्रन्थको स्वयं कनफ़ुचीने ही बनाया था। इसमें एक भी शब्द दूसरेका नहीं। इसीसे इन्होंने इसको बना और शिष्योंको देकर कहा था,—यदि हमारी रचनासे कोई यश चलेगा, तो वह इसी सुङ्गछिउसे मिलेगा और यदि अपयश आवेगा, तो वह भी इसीसे फैल जायेगा। इस पुस्तकमें कनफ़ुचीने ऐश्वरिक या आध्यात्मिक तत्त्वपर कोई उपदेश नहीं दिया। अलौकिकी शक्तिकी महिमा बता इन्होंने कुछ विषयोंकी मीमांसा लगायी है। फिर प्रत्येक विषयकी मीमांसामें कनफ़ुचीने कार्यकारण देखा दिया है। 'केवल मृत्यु क्या है' प्रश्नके उत्तरमें किसी स्थानपर इन्होंने लिखा—जब हम 'जीवन क्या है' नहीं समझते, तब 'मृत्यु क्या है' कैसे समझ सकते हैं!

ई०से ४४१ पूर्वाब्द इनके एकमात्र पुत्र की चल बसे थे। कनफ़ुचीकी जीवनीमें पत्नीका विशेष उल्लेख नहीं

मिलता। निम्नलिखित विषय देखानेको केवल एकमात्र घटना लिखी है—कनफुची अपने पुत्रको उपदेश देनेके लिये कौन प्रथा चलाते थे। एकबार किसी शिष्यने पीछे पूछा—हमें जो सकल उपदेश मिलते, उनको छोड़ आप अपने पुत्रको दूसरे विषय सिखाते हैं या नहीं। लोगे उत्तर दिया,—'नहीं। किसी दिन वह एक स्थानपर खड़े थे। मैं उनके निकटसे लपट झपट जाता रहा। मुझे देख कर उन्होंने पूछा—तुमने गीतिपुस्तक पढ़ा है। मेरे इनकार करनेपर उन्होंने कहा—यदि तुम गीतिपुस्तक न पढ़ोगे, तो कथोपकथनके उपयुक्त बात कैसे बकोगे। दूसरे दिन भी उन्होंने पूछा था—तुमने आचार-व्यवहारके विधिका ग्रन्थ पढ़ा है। मेरे फिर इनकार करनेपर वह कहने लगे—यह ग्रन्थ न पढ़नेसे तुम्हारा चरित्र स्थिर कैसे होगा।'

यह सुनकर शिष्य बोल उठा—हमें भी दोनों उपदेश मिले हैं। किन्तु निम्नलिखित उपदेश अधिक है—विज्ञ मनुष्य अपने पुत्रको शिक्षा देनेके लिये कोई विशेष प्रबन्ध नहीं करते।

पुत्र मरनेके अनन्तर हयेनहिउ नामक कनफुचीके सर्वापेक्षा प्रिय छात्रका भी मृत्यु हुआ। यह संवाद मिलते ही इन्होंने अत्यन्त व्यथित हो कहा था—हाय! ईश्वरने हमें नष्ट कर डाला। इसके एक वत्सर पीछे शिकारी शिकार खेलने गये थे। वह एकशृङ्गविशिष्ट कोई अद्भुत जीव पकड़ लाये। कोई यह न समझा था—यह कौन प्राणी है। फिर कनफुची बोलाये गये। इन्होंने आते ही कहा था—यह 'लिकिन' नामक प्राणी है। प्रवाद है—यह प्राणी कनफुचीके जन्मसे पहले इनकी माताको स्वप्नमें देख पड़ा था। फिर इन्होंने भी स्वप्नमें इसके शृङ्गपर एक फीता बांधा। आश्चर्यका विषय है—उस प्राणीके शृङ्गपर उस समय भी फीता बंधा था। द्वितीय बार उस प्राणीको देख सब लोग आश्चर्य करने लगे। कनफुचीने विस्मय होने भी वर्तमान घटनासे घबरा और कौतुकपूर्वक उसकी ओर देख बोल उठे—तू किसके लिये आया है। फिर अन्तमें जब भर इन्होंने कहा—हमारे उपदेश तो चले, किन्तु हम अपरिचित ही रह गये।

इस पर शिष्यने पूछा—आपके अपरिचित रहनेकी बात कैसी।

कनफुचीने उत्तर दिया—हम इसके लिये ईश्वरको दोष नहीं देते। मनुष्य हमारी शिक्षा नहीं मानता। अथच यह सफलता पानेके लिये व्यग्र हो गया है। किन्तु इसके लिये हम उसको भी दोषी नहीं ठहराते। ईश्वर हमें पहचानता है। किसी महात्माका नाम कभी नहीं मिटता। किन्तु हमारे नियमादिका उपयुक्त प्रचार रुका है। सुतरां हम समझ नहीं सकते—भविष्यत्में लोग हमें किस दृष्टिसे देखेंगे।

किसी दिन प्रातःकाल सुन पड़ा—महात्मा कनफुची उठ और पश्चाद्दिक्‌की कमरपर हाथ रख अपने गृहके द्वार घूमते हैं। उनके हाथमें लकड़ी है। वह मट्टीमें घिसट रही है। कनफुची गाते और कहते हैं—

"ऊंची शिखर पहाड़की चूर चूर हो जाय।
टूटे बिटपी ज्यों गिरे भूमितल आय ॥
मनई तिनकी भांति हो सूखहिगो मरझाय।
जिसकी प्रदत्त है बड़ी ज्ञानवान् अभिराम ॥"

कियत्क्षण पीछे कनफुची घरमें सुन द्वारके सम्मुख बैठ गये। शिष्य इसी समय गुरुके निकट आते थे। वह इनको बात सुन सोचने लगे,—'यदि गिरिका उच्च शिखर चूर-चूर हो जायेगा, तो मैं देखनेमें क्या आयेगा। फिर जो विशाल विटपी टूटे अथवा महात्मा मानवका इस घासके सदृश भांति सूखेगा, तो मेरा विश्राम कहां छूटेगा।' ऐसे ही सोचते-सोचते शिष्य गुरुके निकट जा खड़े हुये। कनफुचीने उन्हें देखकर कहा था—'शि आज तुमने इतना विलम्ब क्यों लगा? इतने दिन पीछे एक सुबुद्धि राजा आ पहुंचा है। वह हमें अपना शिक्षक बनायेगा। हमारा अन्तिम समय उपस्थित है।' यह बात सत्य ठहरी। कनफुची खाटपर जाकर सो गये। फिर सात दिन पीछे इनको लोक-लीला शेष हुयी।

शिष्योंने महासमारोहसे इन्हें समाहित किया था। कितने ही शिष्य कुण्ड बना १८ वत्सर समाधिके निकट रहे। पितृतुल्य गुरुदेवके मृत्युसे शिष्य वास्तविक अभिभूत हुये थे। उस समय कनफ़ुचीके तीन प्रियतम शिष्योंमें एकमात्र जिकङ्ग ही जीवित रहे। वह किसी प्रकार शोकको सम्वरण कर न सके। इसीसे उन्होंने फिर तीन वत्सर समाधिके निकट ही वास किया। मृत्यु हो जानेसे देशके लोगोंको इनका अभाव समझ पड़ा था। इसीसे समग्र देश इनके लिये शोकसन्तप्त हो गया।

किउफो नगरके बहिर्भागमें कङ्गवंशका समाधि-स्थान था। उसी स्थानपर किसी स्वतन्त्र विस्तृत क्षेत्रमें कनफ़ुचीका समाधि लगा, पीछे एक वृहत् एवं उच्च स्तम्भ भी बना। स्तम्भके सम्मुख मरमर पत्थरसे बनी इनकी प्रतिमूर्ति स्थापित हुयी। समस्त



कनफुचीकी मरमर-मूर्ति।

स्थान घेर कुञ्जवाटिकामें परिणत किया गया है। प्रवेश-द्वारसे स्तम्भ पर्यन्त साइप्रेस वृक्षकी श्रेणी शोभित है। प्रवेशके द्वारपर अति सुन्दर कारुकार्य बना है।

मरमरकी मूर्तिके नीचे 'सियाङ्ग' नामक राजवंश प्रदत्त कनफ़ुचीका महाप्राभोगणापगस्य प्राचीन शिक्षक और सर्वविद्यानिपुण एवं सर्वज्ञ-सम्राट् नामक उपाधि खोदा है।

कनफ़ुचीके समाधि-स्तम्भकी दोनों ओर दूसरे भी दो क्षुद्र स्तम्भ खड़े हैं। उनमें पहला इनके पुत्र और दूसरा पौत्रका समाधिस्थल है। पौत्रके समाधि-स्तम्भकी दाहनी ओर एक मकान् बना है। लोग कहते—ठीक इसी स्थानपर जिकङ्ग कुटीर निर्माणकर और गुरुके शोकसे पागल बन ६ वत्सर काल रहे थे।

समाधि-स्तम्भके सम्मुख जो प्रतिमूर्ति आती, उसको देख कनफ़ुचीकी आकृति स्पष्ट समझी जाती है। यह दीर्घच्छन्द, बलिष्ठ एवं सुगठित पुरुष रहे। मुखमण्डल रक्ताभ एवं पूर्णताप्राप्त और मस्तक वृहत् था। इनके शरीरमें ४९ विशेष चिह्न रहे।

कनफ़ुची अपने प्रभु राजासे जिस भावमें व्यवहार करते, उससे आत्मनिर्भरताके गुण झलकते थे। किन्तु राजाका सम्मान रखते समय इन्हें बड़ा अस्वाच्छन्द्य उठाना पड़ता रहा। जब यह राजसभामें जाते या शून्य सिंहासनके निकट आते, तब मुखके भाव परिवर्तित देखाते थे। उस समय इनके पैर कांपते रहे। कण्ठका स्वर इतना मृदु लगता, मानो बात करनेमें इन्हें कष्ट पड़ता था। घटनाक्रमसे राजचिह्न वहन करते समय कनफ़ुचीका शरीर अवश हो जाता, उसका भार किसी प्रकार सहनेमें न आता रहा। यदि किसी पीड़ाके समय राजा इन्हें आकर देखते, तो अस्वस्थ शरीर पर भी अपनी पदोचित वेशभूषा लगा यह पूर्वमुख लेटते थे। किसी राज-अतिथिको सादर आह्वान करनेको राजा जब इन्हें बोलाते, तब इनके भाव बदल जाते रहे। उस समय यह उत्साहित हो राजाके अन्यान्य कर्मचारियोंके साथ आगे बढ़ते थे। जब अतिथिको आह्वान करनेके लिये यह स्वयं भेजे जाते, तब सर्वाग्र द्वारके निकट पहुंच क्षिप्रगतिसे स्वीय वस्त्र-शस्त्रादि देखाते रहे। दुर्भिक्षादिके निवारणार्थ देशमें वार्षिक उत्सव होनेपर कनफ़ुची स्वयं उसका मूलोद्देश्य देख उत्साह देते और पदोचित वस्त्रादि परिधानपूर्वक अपने गृहको पूर्व ओर खड़े हो उत्सवके मतवाले लोगोंको निकट आनेपर महासमादरसे लेते थे। पानाहारादिके कार्यमें यह अधिक सावधानतासे चलते रहे। कनफ़ुची कभी

बाजारसे खरीदे मांसमें हाथ लगाते न थे। इनका खाद्यादि पदार्थ परिष्कार कर बनाया और प्रत्येक प्रकारका मांस निर्दिष्ट आकारमें कटाया जाता रहा। यह बहुत ज्यादा खा न सकते थे। भोजनपर बैठ कर बात करना इन्हें बुरा लगता रहा। फिर कनफुची भी रूखा चावल या सामान्य साग होते भी देवताको चढ़ाते थे। बिना देवताके नाम उत्सर्ग किये यह कोई चीज खा न सकते रहे! मद्यपानके लिये कोई निर्दिष्ट समय न था। यह जब चाहते, तभी शराब पी लेते रहे। किन्तु अधिक मात्रामें शराब पी कनफुची कभी मस्त बनते न थे। यह बड़े दयालु रहे। सबको कुछ न कुछ कनफुची दे ही देते थे। जब लोगोंके अभाव किसीका सत्कार होते न देखते, तब यह स्वयं शीघ्र शीघ्र काम करने चल देते रहे। किसीको धनाभाव पड़ने पर कनफुची कार्य यथासाध्य साहाय्य पहुंचानेमें हिचकते न थे।

यह जब गाड़ीपर चढ़कर चलते, तब किसी अपरिचित व्यक्तिको देखते ही अवनत हो नमस्कार करते थे। यह किसीको कभी अभिवादनके लिये अङ्गुलि उठाते न रहे। इनके निकट सबका ही समान आदर पाते थे। कनफुचीके मतानुसार श्रेष्ठ और नीच लोगमें वायु एवं घासका सम्बन्ध रहता है। वायु चलनेसे घास झुक ही पड़ता है। सदय व्यवहार करनेसे नीच लोग निश्चय वशीभूत हो जाते हैं।

इनकी कार्यावली देखनेसे भी ऐसा ही समझ पड़ता है। इन्होंने केवल उपदेशसे नहीं—स्वयं आदर्श कार्यादिद्वारा लोगोंको सिखाया था।

कनफुची सङ्गीतविद्यामें बड़े पारदर्शी रहे। सङ्गीत भिन्न इनके मतमें सबकी शिक्षा अधूरी रहती है। यह कहते थे—'सङ्गीत भिन्न किसी प्रकार मनको आनन्दित कर नहीं सकते। नीतिके अवलम्बनसे चरित्र भी गठता, किन्तु सङ्गीत भिन्न वह गठन अधूरा ही रहता है।' सङ्गीतकी तान चलनेसे कनफुची एक प्रकार पागल हो जाते थे। किसीके विरोध उठानेपर यह जोर शोर कमर बांध तर्क करने लगते रहे।

कनफुची नीतिकी शिक्षा देते थे। इन्होंने जो उपदेश दिया, उसमें केवल दर्शन-विज्ञानसम्बन्ध आचार-नीति, समाजनीति और राजनीतिको छोड़ धर्म-कर्म किंवा मत एवं विज्ञान-सम्बन्धीय कोई विशेष विषय नहीं लिया। इन्होंने साधारण लोगोंके लिये एक व्यवहार शास्त्र बनाया था। इस शास्त्रका नाम लिकि या लिकिङ्ग है। मनुष्यके जीवनमें जो कर्तव्य ठहरता, करना पड़ता या किया जा सकता, इस पुस्तकमें उसका सब नियम लिखता है। लिकिङ्गमें पितामाता एवं अपर लोगके व्यवहार और सामान्य जीवनके चरित्रको शोभावर्धनका जो उपदेश तथा नियम लिखा, वह अति सुन्दर एवं अति प्रशंसनीय समझ पड़ा है। पिताके निकट पुत्रकी बाध्यताको ही कनफुचीने समस्त विषयोंका मूल ठहराया है। इनके मतमें एक परिवार किसी जातिका क्षुद्र आदर्श है। परिवारके मध्य पिता जैसे पुत्रपर प्रभुत्व चलाता और पुत्र जैसे पिताकी बाध्य चलता, वैसे ही समस्त जातिका व्यवहार राजाके निकट सन्तानवत् उचित माना तथा राजा भी समय प्रजापर पिताका अधिकार पाता है। इसी मूल-भित्तिपर इनके समस्त सामाजिक एवं राजनैतिक नीति स्थापन करनेमें चीनमें कभी कोई विशेष विशृङ्खला नहीं पड़ती।

किसी किसीके मतसे कनफुची ईश्वरकी सत्ता मानते न थे। किन्तु अपने दर्शनसम्बन्धीय सकल ग्रन्थोंमें इन्होंने लिखा है—वास्तविक शून्यसे किसी वस्तुका उद्भव कैसे सम्भव है। निश्चय किसी प्रकारका मूलपदार्थ आदि अनन्त कालसे विद्यमान है। कारण या मूल इन्द्रियग्राह्य वस्तुसे पृथक् स्वभावसे रहता है। सुतरां कारण भी अनादि अनन्त कालसे चला आता है। यह कारण अनन्त, अचल, असीम, सर्वशक्तिमान् और सर्वत्र विराजित है। नील आकाश ही शक्तिका केन्द्रस्थान माना अर्थात् इसी स्थानसे प्रधानतः कारणके कार्यका आरम्भ हो जाता है। आकाशसे समस्त जगत्के कारणकी शक्ति फैलती है। इसीसे मध्य मध्य विशेषतः उत्तरायण एवं दक्षिणायनके समय जो दो दिन दिवारात्र समान पड़ते,

उनको आकाशके उद्देश्यसे राजा पूजादि प्रदान करते हैं। क्योंकि दोनोंमें एक दिन अन्न वपन किया और दूसरे दिन काट लिया जाता है।

कनफ्‌चीके मतमें मनुष्यका देह दो विषयोंसे बना—पहला सूक्ष्म, अदृश्य एवं ऊर्ध्वगामी और दूसरा स्थूल, इन्द्रियग्राह्य तथा निम्नगामी है। इन दोनों मूल-विषयोंके पृथक् होनेसे सूक्ष्म देह आकाशको उड़ और स्थूल देह पृथिवीमें मिल जाता है। इनके दर्शनमें 'मृत्यु' नामक कोई बात नहीं। स्थूल देह मट्टीसे मिल जगत्‌के अंशमें गण्य होता है। किन्तु सूक्ष्म देह चिरवर्तमान रहता और मध्य मध्य पृथिवी-पर अपने पूर्व वासस्थानको आ पहुंचता है। यह सकल सूक्ष्म देहभूत पूजा पानेपर अपने वंशधरोंका मङ्गलविधान करते हैं। इसीसे चीनावोंके पितृ-मन्दिरमें उत्सवादि मनानेकी व्यवस्था है। चीना इन सकल उत्सवोंपर इतनी भक्ति और चेष्टा देखाते, कि दूसरे लोग आश्चर्यमें आ जाते हैं।

चीनावोंको विश्वास है—यदि हम ऐसा न करेंगे, तो पूर्वपुरुषोंके सूक्ष्म देह पितृमन्दिरमें कैसे घुसेंगे अथवा वंशधरोंका प्रेम एवं यत्न कैसे ग्रहण कर सकेंगे।

कनफ चो वा शिष्य ईश्वरकी कोई आकृति किंवा प्रतिमा मानते न थे। यह साधारणतः लोगोंको सिखाते रहे—दूसरेसे जैसे व्यवहारकी प्रत्याशा रखें, दूसरेके साथ व्यवहार करते समय वैसे ही आप भी चलें। कनफ्‌ची अदृष्टवाद स्वीकार करते थे।

यह अपने शिष्योंसे कथनोपकथनके समय बहु-मूल्य मन्तव्य प्रकाशित करते रहे। पीछे उन्हीं सबको जोड़ 'दर्शनशास्त्रका कथनोपकथन' नामक ग्रन्थ बना। उक्त मन्तव्य अति सुन्दर एवं बहुमूल्य रहनेसे नीचे उद्धृत करते हैं। उन्हें पढ़नेसे कनफ्‌चीके भूयोदर्शन और सर्व विषयकी विचक्षणताका परिचय मिलेगा।

१। जो किसीमें अशान्ति देख न सके, उसे यदि कोई आह्य भी न करे, तो उसके पूर्ण धार्मिक होनेमें क्या सन्देह पड़े!

२। चिकनी-चुपड़ी बातोंमें प्रकृत सत्य नहीं रहता।

३। विश्वास और दृढ़ताको ही जीवनका प्रथम लक्ष्य ठहराना चाहिये।

४। मनुष्यके हमें न पहचाननेसे कोई दुःख नहीं; दुःख इसी बातका है—हम मनुष्यको पहचान न सके।

५। चिन्ताशून्य विद्यामें वृथा ही परिश्रम नष्ट होता है। विद्याशून्य चिन्ता भी सर्वनाशकार है।

६। क्या हम तुमको सिखायेंगे—ज्ञान किसे कहते हैं! ज्ञान वही है, जिसे तुम जानो उसे मानो और जिसे तुम न जानो उसे पहचानो। अर्थात् किसी व्यक्ति-विशेषको ज्ञानी मानने, अपनी अज्ञता जानने और किसीके भ्रमका यथार्थत्व पहचाननेसे ज्ञानका सच्चा स्वरूप देख पड़ता है।

७। दृष्टि पड़नेसे गुणवान् लोगोंमें हमें समता दर्शन करना उचित है। फिर यदि विपरीत स्वभावके लोग देख पड़ें, तो हम अन्तर्दृष्टिसे अपनी आप परीक्षा करें।

८। प्रथम व्यवहारमें लोगोंकी बात सुनना और उनके आचरणकी प्रशंसा करना पड़ती है। फिर उनकी बात सुन उनके आचरणपर लक्ष्य रखना आवश्यक है।

९। जिकिङ्गने कहा—मैं जैसा व्यवहार पाना वैसा ही व्यवहार देखाना भी चाहता हूं। कनफ्‌चीने उत्तर दिया—किन्तु उससे दूर अग्रसर होनेकी दृढ़ता तुम्हें कहां है।

१०। ज्ञानी लोग बातमें कड़े, किन्तु व्यवहारमें बड़े रहते हैं।

११। इसप्रकार अपने मनमें ठहरा आराधना करना चाहिये—भगवान् हमारे सामने बैठे हुये हैं।

१२। आराधनाके समय यदि अपना मन उसमें न लगे, तो आराधनासे दूर ही रहना उचित है।

१३। अन्नके लिये मोटे चावल, पानके लिये सामान्य जल और शयनके लिये तकिया बना अपने हाथसे काम चला सकते हैं। किन्तु खोया हुआ धर्म,

धन और मान मिलते भी इन्हें शरत्‌के टूटे-फूटे मेघकी भांति देख पड़ता है।

१४। ज्ञानी अपनेमें और अबोध दूसरेमें प्रामध्य विषयको ढूंढते हैं।

१५। जो पढ़ो, उसे अपने कार्यमें परिणत करो और प्रतिदिन कुछ कुछ नूतन विषय सीखते रहो। फिर आप शिक्षादाता बन सकेंगे और लोग आपकी बात सुनेंगे।

१६। अपने हृदयमें विश्वास और दृढ़ता न रखनेवाला हमारे देखते चक्रहीन शकटके समान है। वह जीवनके पथपर कैसे चलेगा।

१७। तीन प्रकारसे तीन लोगोंके एकत्र होनेपर शिक्षामें सुविधा पड़ती है। शिक्षार्थी सद्‌व्यक्तिका अनुकरण और असद्‌व्यक्तिको देख अपना दोष संशोधन कर सकता है।

१८। मनुष्यको बलपूर्वक सत्कार्यमें लगा सकते, किन्तु बलपूर्वक उसमें उसको प्रवृत्ति पहुंचा नहीं सकते।

१९। स्वभावसे मनुष्य एक ही देखाता, किन्तु व्यवहारसे भिन्न भिन्न बन जाता है।

२०। ईश्वरके निकट अपराधी होनेवाला व्यक्ति किसके पास शरण लेगा।

२१। राजा धार्मिक रहनेसे न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य करेगा और साहसके साथ बात कहेगा; किन्तु अधार्मिक होनेसे सावधान बात कहते भी न्याय एवं युक्तिके साथ कार्य न करेगा।

२२। ज्ञानी लोग इसी भयसे लज्जित रहते—हम अपने कार्यमें पिछली कथाकी अपेक्षा हीन पड़ते हैं।

सहस्र दोष और सहस्र भ्रम मानते भी कनफुचीके आदर्श पुरुष होनेमें कोई सन्देह नहीं। फिर यह थोड़े विस्मयकी बात कैसे हो सकती है—किसी प्रकार ऐश्वरिक चमताकी दोहाई न दे चीना आजतक इनका उपदेश पालन करते आते हैं। सोचनेसे विस्मित होना पड़ता है—चीना इनके प्रति ६७१६८ पुरुष बीतते भी समभावसे सम्मान देखाते हैं। प्रति ग्राम और प्रति नगरमें इनका चित्र एवं मन्दिर स्थापित है। मान्दारन (मन्त्री), देशके विप्र एवं राजपुरुष इनकी प्रतिमूर्ति पूजते हैं। कनफुचीके मन्दिरमें धूप, चन्दन-काष्ठ एवं गुग्गुल जलाया और सम्मुख परिष्कार पात्रमें पुष्प, फल तथा मद्य सजाकर लगाया जाता है। उक्त पात्रमें निम्नलिखित कई विषय खोदित रहते हैं—हे कनफुची! हे हमारे सम्मानार्ह शिक्षक! तुम इस स्थानपर आ कर अधिष्ठित हो और भक्तिपूर्वक दी हुई हमारी यह पूजा ग्रहण करो।

इन्होंने किसी दिन भूत भविष्यत् परकाल वा सृष्टि-तत्त्व, मनस्तत्त्व, वस्तुतत्त्व इत्यादि विषयों पर मीमांसा करनेको चेष्टा लगायी न थी। कनफुची वर्तमानके सेवक रहे। यह इहजीवनकी उन्नति और अवनति-पर ही उपदेश दे गये हैं। इन्होंके उपदेश-बलपर चीनवासी वर्तमानकी उपासना उठा और इहजीवनकी उन्नतिमें शरीर लगा महासुखपूर्वक उस कालसे आजतक निर्वाह करते चले आते हैं।

कनफुसका (हिं० पु०) १ धीरे-धीरे बोलनेवाला, जो कानसे लगकर बताता हो। २ निन्दक, चुगलखोर।

कनफुसकी (हिं० स्त्री०) १ धीरे-धीरे बोलनेवाली, जो कानसे लगकर बताती है। २ निन्दा करनेवाली, जो बुरायी करती हो। ३ कानाफूसी, कानमें धीरे-धीरे कही जानेवाली बात।

कनफूल (हिं० पु०) कर्णभूषणविशेष, करनफूल, तरवन, कानका एक गहना।

कनफेड़ (हिं० पु०) कनपेड़ा, कानके पास पड़नेवाली गिलटी।

कनफोड़ा (हिं० पु०) कर्णस्फोट देखो।

कनबिधा (हिं० पु०) १ कर्णछेदन करनेवाला, जो कान छेदता हो। २ कान छेदाये हुआ।

कनभेंड़ी (हिं० स्त्री०) क्षुपविशेष, एक पौदा। यह अमेरिकासे भारतमें आयी है। दूसरा नाम 'बन-भेंड़ी' है। बम्बईप्रान्तमें इसकी कृषि अधिक होती है। कनभेंड़ी एक प्रकारका पटसन है। रेशा ५।८ फीट लम्बा बैठता है। किन्तु कनभेंड़ी पटसनसे अच्छी नहीं ठहरती। पत्र, पुष्प एवं फल भिंडीसे मिलते हैं।

कनयून (हिं॰ पु॰) तण्डुलभेद, किसी किस्मका चावल। यह काश्मीरमें उपजता और श्वेतवर्ण रहता है। लोग इसे बहुत अच्छा समझते हैं।

कनरयी (हिं॰ स्त्री॰) वृक्षविशेष, एक पौदा। इसे गुलू भी कहते हैं। कतीरा यानरयीसे ही उत्पन्न होता है।

कनरश्याम (हिं॰ पु॰) रागविशेष, किसी किस्मका गाना। इसमें समस्त स्वर शुद्ध रहते हैं।

कनरस (हिं॰ पु॰) १ सङ्गीतका आनन्द, गाने-बजानेका मज़ा। २ सङ्गीत अवणका व्यसन, गाना-बजाना सुननेका चसका।

कनरसिया (हिं॰ पु॰) सङ्गीतप्रेमी, गाना-बजाना सुननेका शौक़ रखनेवाला।

कनल (सं॰ वि॰) कन्-अलच्। प्रदीप्त, रौशन, चमकीला।

कनवई (हिं॰ स्त्री॰) छटांक, पांच तोले।

कनवक (सं॰ पु॰) शूरपुत्रविशेष, वीरके एक लड़के।

कनवा (हिं॰ पु॰) कनवई, छटांक।

कनवांसा (हिं॰ पु॰) दौहित्रपुत्र, नवासेका बेटा, लड़कीके लड़केका बेटा।

कनवास (अं॰ पु॰ = Canvas) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह मोटा रहता, पटसनसे बनता और जूते या नावके पाल तैयार करनेमें लगता है।

कनवी (हिं॰ स्त्री॰) कार्पासभेद, किसी किस्मकी कपास। यह गुजरातमें अधिक उत्पन्न होती है। कनवीका बिनौला बहुत छोटा रहता है।

कनवोकेशन (अं॰ पु॰ = Convocation) विश्वविद्यालयका महोत्सव, युनिवरसिटीका एक जलसा। यह प्रति वर्ष हुआ करता है। इसमें बी॰ ए॰ आदिकी परीक्षा पास करनेवालोंको सनद मिलती है।

कनसलाई (हिं॰ स्त्री॰) १ कीटभेद, एक कीड़ा। यह छोटे कनखजूरे-जैसी होती है। सोते आदमीके कानमें घुस जानेसे ही इसका नाम कनसलाई पड़ा है। २ कुश्तीका कोई पेंच। इसमें एक पहलवान् दूसरे पहलवान्के अपनी कमर पर रखे हाथोंके नीचे अपना एक हाथ डाल बगलको राह उसकी गर्दनपर पहुंचाता और अपने शरीरको घुमा टांग खड़ा कर उसे चित्त फटकारता है।

कनसार (हिं॰ पु॰) ताम्रपत्रका लेख खींचनेवाला, जो तांबेके पत्तरपर लिखता हो।

कनसाल (हिं॰ पु॰) चारपाईका टेढ़ा छेद। इसके कारण चारपाई कुछ टेढ़ी पड़ जाती है।

कनसुई (हिं॰ स्त्री॰) खटक, टोह, आहट।

कनसुर (हिं॰ वि॰) १ मन्दस्वरयुक्त, जिसके अच्छी आवाज़ न रहे। २ अप्रसन्न, नाराज़।

कनस्तर (अं॰ पु॰ = Canister) टीनका बकस, टीनका पीपा। यह चतुष्कोण-विशिष्ट रहता और घृत, तैल प्रभृति वस्तु रखनेमें लगता है। मट्टीका तेल इसीमें भरकर आता है।

कनहा (हिं॰ पु॰) फसलकी उपजका अन्दाज़ लगानेवाला, जो फसल कूतता हो।

कनहार (हिं॰ पु॰) कर्णधार, केवट, पतवार थामनेवाला मल्लाह।

कना (सं॰ स्त्री॰) कनिगास धातु-अच्। १ कनिष्ठा, सबसे छोटी उंगली। (वै॰) २ कन्या, लड़की।

कना (हिं॰ पु॰) १ कण, दाना। २ काण्ड, सरकण्डा।

कनाई (हिं॰ स्त्री॰) १ कोमल शाखा, पतली डाल। २ मवपल्लव, कल्ला, टहनी। ३ पगड़ेके गेरांवका एक हिस्सा।

कनाउड़ा (हिं॰ वि॰) उपकृत, एहसानमन्द, कनौड़ा।

कनागत (हिं॰ पु॰) पितृपक्ष, क्वार महीनेका अंधेरा पाख। इसमें भारतवासी मृत पितरोंके उद्देशसे श्राद्ध-तर्पण किया करते हैं।

क़नात (तु॰ स्त्री॰) स्थूलवस्त्रका आवरण विशेष, मोटे कपड़ेका परदा। इसमें थोड़ी थोड़ी दूरपर बांसकी कड़ियां सी-सी कर लगायी जाती हैं। उनमें डोरी बंधी रहती है। इसी डोरीके सहारे क़नात खींच कर खड़ी करते हैं। यह प्रायः डेरे या तम्बूमें लगती है।

कनार (हिं॰ पु॰) अश्वरोगविशेष, घोड़ेकी एक बीमारी। घोड़ेको सर्दी या जुकाम होनेका नाम कनार है।

कनारक—कोणार्क देखो।
कनारी (हिं० स्त्री०) १ किनारी, गोट। २ मन्द्राज प्रान्तके कनाड़ा जिलेकी भाषा या बोली। ३ कण्टक, कांटा। (वि०) ४ कनारेका अधिवासी, जो कनारेमें रहता हो।
कनाल (हिं० पु०) चौथाई बीघा, घुमाव का ८वां हिस्सा। ज़मीन्‌की यह नाप पञ्जाबमें चलती है।
कनावड़ा (हिं० पु०) उपकृत, एहसानमन्द, दबैल, कनौड़ा।
कनासी (हिं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, एक औज़ार। कनासी एक प्रकारकी रेती है। इससे नारियलके टुकड़ेका मुंह बढ़ाते हैं। फिर एक प्रकारकी दूसरी कनासीसे आरेके दांत भी पैनाये जाते हैं।
कनिआरी (हिं० स्त्री०) कर्णिकार, कनकचम्पा। कर्णिकार देखो।
कनिक (हिं० स्त्री०) गोधम-चूर्ण, गेहूं का मोटा आटा। गेहूंके मोटे आटेको कनिक और महीनको मैदा कहते हैं। कनिक प्रायः रोटी बनानेमें काम देती है। इसकी पूरी भी अच्छी होती है। किन्तु देखनेमें वह साफ़ नहीं आती।
कनिका (हिं०) कणिका देखो।
कनिक्या (सं० स्त्री०) समिता, मैदा, कनिक।
कनिक्रन्द (सं० वि०) क्रन्द यङ्लुक् अच् तुलाभावः निगागमश्च। अत्यन्त क्रन्दनशील, फूट-फूट कर रोनेवाला। (ऋक्‌ १।१७८)
कनिगर (हिं० पु०) मर्यादारक्षक, स्वीय कीर्ति स्थायी रखनेवाला, जिसे अपनी इज्ज़तका ख़याल रहे।
कनिधि (सं० स्त्री०) शूरण, जिमींकन्द।
कनियां (हिं० स्त्री०) क्रोड़, गोद।
कनियागिरि (हिं०) कन्यागिरि देखो।
कनियाना (हिं० क्रि०) १ साथ छोड़ना, अलग होना। २ कतराना, हट जाना, तिरछे पड़ना। ३ कन्नी खाना, एक ओरको झुक जाना। ४ गोद लेना, कनियां उठाना।
कनियार (हिं०) कर्णिकार देखो।
कनिष्क—भारतके एक प्राचीन सम्राट्। पञ्जावका जालन्धर नगर इनका अवस्थान है। अर्हत् सुदर्शन कनिष्कके शिक्षागुरु रहे। इन्होंने अपने भुजबलके प्रभावसे भारतमें नाना स्थान जीते थे। मानिक्याल, काश्मीर, मथुरा, भावलपुर प्रभृति नाना स्थानोंकी शिलालिपिमें कनिष्क राजाका नाम मिलता है। राजतरङ्गिणीके मतसे यह तुरुष्क-जातीय बौद्ध रहे। काश्मीरमें बहुदिन इन्होंने राजत्व किया था। इन्होंके समय काश्मीरमें बौद्धधर्म प्रबल पड़ा। इन्होंने अपने नामपर कनिष्कपुर नगर बसाया था।

पालि बौद्धग्रन्थमें इनका नाम 'चन्दन कनिक' लिखा है।

कनिष्क एक कट्टर बौद्ध रहे। बौद्ध धर्म उद्धार करनेके लिये इन्होंने काश्मीर आ नाना स्थानोंसे अर्हतों और श्रमणोंको बुलाया था। फिर अनुशासन-पत्र चारो ओर भेजा गया। कई देशोंसे बौद्धपण्डित कनिष्कको सभामें आये थे।

प्रथम इन्होंने राजगृह या महासभाका अधिवेशन करना चाहा। किन्तु आर्यपार्श्विक प्रभृति अर्हतोंने इनके प्रस्ताव पर असम्मत हो कहा था,—"राजगृहमें इस समय महासभाका अधिवेशन हो नहीं सकता। आजकल वहां विभिन्न मतावलम्बी रहते हैं। अतएव गिरिमेखला-वेष्टित, यक्षराजरक्षित और सिद्धर्षि-सेवित इस काश्मीर राज्यमें ही महासभा होना चाहिये।"

अनेक तर्क-वितर्कके पीछे सब लोगोंने कनिष्कका मत माना। जहां सूत्र, विनय और अभिधर्मके विभाषा-सूत्र करनेको तर्कवितर्क उठा था, वहीं कनिष्कने एक सङ्घाराम बनवाया। उसी समय प्रसिद्ध बौद्ध पण्डित वसुमित्र आ इनसे मिले। असाधारण क्षमता देख सबने उन्होंको सभापति मनोनीत किया था। वसु-मित्रने विभाषासूत्र प्रकाश किया और कनिष्कराजने उसे लोहित ताम्रफलकपर खोदवा प्रस्तरके आधारसे रखा दिया। जहां यह धर्मग्रन्थ रखाया, वहीं कनिष्क-ने एक स्तूप भी बनवाया था।

अभ्यागत बौद्धोंके विश्रामको इन्होंने चीनपति नामक स्थानमें तीन बृहत् सङ्घाराम निर्माण कराये।

एतद्‌व्यतीत गान्धार राज्यमें एक अति वृहत् देवालय,* और कई सङ्घाराम भी कनिष्कने बनवाये। फाहियान प्रभृति चीनके प्राचीन परिव्राजक उक्त देवल और सङ्घाराम देख गये हैं।

कनिष्कके मरनेपर छत्योंने काश्मीर अधिकार किया था।

आज भी स्थिर कर न सके—कनिष्क किस समय विद्यमान रहे। इस सम्बन्धमें अनेक लोग अनेक बातें कह चुके हैं। चीन-परिव्राजक सुङ्गयूनके मतमें बुद्धनिर्वाणसे ३०० वर्ष पीछे कनिष्क विद्यमान थे। हिउएन सियाङ्ग कहते—बुद्धनिर्वाणसे ४०० वर्ष पीछे कनिष्क गान्धारके राजा बने। किन्तु पञ्जाब प्रान्तीय रावलपिण्डी ज़िलेके अन्तर्गत माणिक्याल नामक एक ग्राममें कनिष्कको रोमक-मुद्रा मिली है। यह मुद्रा ई०से ३३ वर्ष पहलेकी है। पाश्चात्य पुरातत्त्वविदोंके मतसे यह युइचि (Yuei-chi)के राजा रहे। शिलालिपिमें इन्हें 'कनिष्क कुषाण' या गुषाण-वंशीय कनिष्क लिखा गया है।

मोक्षमूलरके मतसे कनिष्क शकराजा थे। इन्हींके समय शकाब्द प्रचलित हुआ।

कनिष्कपुर—बाहराज कनिष्क-प्रतिष्ठित काश्मीरका एक नगर। (राजतरङ्गिणी ११६८)

इस नगरका वर्तमान नाम कामपुर है। यह श्रीनगरसे ५ कोस दक्षिण और पश्चात् गिरिके पथपर अवस्थित है। आजकल कनिष्कपुर एक सामान्य ग्राम गिना जाता है। यहां एक सराय बनी है।

कनिष्ठ (सं० वि०) अतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन् अल्पो वा-इष्ठन् कनादेशश्च। युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम्। पा ५।३।६४। १ अतियुवा, निहायत कमसिन, बहुत छोटा। २ अल्प, कम। ३ लघु, छोटा। ४ पश्चात् जात, पीछे पैदा हुआ। ५ वयसमें छोटा, उम्रमें कम। (पु०) ६ अनुज, छोटा भाई। इसका संस्कृत पर्याय यवीयान्, अनुज, अवरज, जघन्यज, कनीयान्, कनिष्ठ और यविष्ठ है। ७ महादेव।

"कनिष्ठ' विशिष्टश्च कनिष्ठ: कनिष्ठश्च।" (भारत १३।१७।११)

कनिष्ठक (सं० क्ली०) कनिष्ठमिव कायति प्रकाशते, कनिष्ठ-कै-क। १ शूकतृण, सूकड़ी घास। (त्रि०) २ अति अल्प, निहायत कम, सबसे छोटा।

कनिष्ठता (सं० स्त्री०) १ अति युवावस्था, निहायत कमसिनी, छोटाई। २ अल्पता, कमी।

कनिष्ठपद (सं० क्ली०) १ बीजगणितोक्त ज्येष्ठापेक्षा अल्प संख्या-युक्त पदका वर्गमूल। कनिष्ठपदका वर्ग निर्धारित गुणकसे गुणित होने और निर्धारित संयोजक मिलाया या निर्धारित शोधक घटाया जानेपर निश्चित वर्गमूल प्रदान कर सकता है। २ अत्यल्प या प्रथम मूल, निहायत छोटी या पहली जड़।

कनिष्ठमूल, कनिष्ठपद देखो।

कनिष्ठा (सं० स्त्री०) कनिष्ठ-टाप्। १ दुर्बल अङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली। २ नायिका विशेष। जो परिणीता नायिका स्वामीका अल्प स्नेह पाती, वही कनिष्ठा कहाती है। यह तीन प्रकारकी होती है—धीरा, अधीरा और धीराधीरा।

धीरा कनिष्ठा—

"है प्यारी देखो कहा कहो हमारो दोष।
जाते इतनो कर रही हमपर बिरथा रोष॥
कौन भांति परितोष हो हमको देहु बताय।
नहीं बिना रतिको कोई चहत बोल दिखाय॥
कोप कियो अनजानते नहीं कियो उपरोध।
पुनजनमो नहिं जानकर राखहु हिरदै बोध॥

अधीरा कनिष्ठा—

बिना दोषको मानिनी हैती हो मुंह फार।
अरी मोरे बलदको इतनो कीनी वार॥
काको सुख देखनाहें आज भरनके काज।
कारो कंवरो तुम नहीं बाको राखो लाज॥
स्वामीका मानो नहीं हैतो किती बहीन।
कौन देखको रीति यह चीन हुए बिन होय॥
बिरथ मानिके है छिपे नहिंहै क्रोध अपार।
नहीं तो कहिहै कोउ हूं अपनो घर बरबार॥

धीराधीरा कनिष्ठा—

एक मानमें रोष है दूजेमें परितोष।
हमको छुब नहिं जानती अपनो दुख या दोष॥

* कनिष्कनामके नगरमें वर्तमान देवाल्य अहरसे १ मील दक्षिण-पश्चिम एक प्राचीन देवका ध्वंसावशेष पड़ा है।

कौन भांति झगड़ा मिटे मोहिं बतायो बाम।
सब मन धनकी कहुं'जो बड़ो तुम्हारो काम॥
अहत पद्मिनी समरकी फिर भी रैत भगाय।
विरहमें व्याकुल जब भयो हाय-हाय चिल्लाय॥
तासे तजिके क्रोधको आलिङ्गन करिदेहु।
बीती ताहि बिसारिके मोहिं क्षमा अब देहु॥

कनिष्ठिका (सं० स्त्री०) कनिष्ठा एव, कनिष्ठ स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। दुर्बल अङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली।

कनी (सं० स्त्री०) कन्-अच् गौरादित्वात् ङीष्। कन्या, लड़की।

कनी (हिं० स्त्री०) १ क्षुद्रकण, छोटा टुकड़ा। २ हीरकका, हीरेका छोटा टुकड़ा। ३ किनकी, चावलका छोटा टुकड़ा। ४ तण्डुलका मध्यभाग, चावलका दरमियानी हिस्सा। यह प्रायः कम गलता है। ५ बिन्दु, बूंद।

कनीचि (सं० स्त्री०) कन बाहुलकात् इचि दीर्घश्च पृषोदरादित्वात्। १ गुञ्जालता, घुंघची। सपुष्प-लता, फूलदार बेल। ३ शकट, गाड़ी।

कनीन (वै० त्रि०) कन्-ईनन्। कमनीय, मनोहर, खूबसूरत।

"सद्योऽजातो वृषभः कनीनः।" (ऋक्)
'कनीनः कमनीयः।' (सायण)

कनीनक (सं० पु०) १ चक्षुकी कनीनिका, आंखकी पुतली। २ बालक, लड़का।

कनीनका (सं० स्त्री०) १ कन्या, लड़की। २ कमनीय शालभञ्जिका, गुड़िया, कठपुतली।

कनीनिका (सं० स्त्री०) कनीन संज्ञायां कन्-टा अत इत्वम्। १ अक्षितारक, आंखकी पुतली। २ कनिष्ठाङ्गुलि, छिगुनी, सबसे छोटी उंगली। ३ अश्वकी नासाके समीपका भाग, घोड़ेकी नाकके पासका मुकाम।

कनीनी (सं० स्त्री०) कन्-इन्-ङीप्। कनीनिका देखो।

कनीयःपञ्चमूल (सं० क्ली०) विकण्टक, वृहतीद्वय, पृथक्पर्णी और विदारिगन्धाका मूल, गोखुरू, दोनों कटैया, सरवन और कड़वी तोंबीकी जड़।

कनीयस (सं० क्ली०) कनः सूर्यः तस्येदं कनीयं तद्रूपत्वेन सीयते अवसीयते, कनीय-सो घञर्थे क। १ ताम्र, तांबा। ताम्रके अधिष्ठातृ-देवता सूर्य हैं। (त्रि०) २ अल्पतर, ज्यादा छोटा। ३ अपेक्षाकृत-अल्पवयस्क, ज्यादा कमसिन।

कनीयान् (सं० त्रि०) अयमनयोरतिशयेन युवा अल्पो वा, युवन्-अल्प वा ईयसुन् कनादेशः। १ अनुज, पीछे पैदा होनेवाला। २ अतियुवा, निहायत कम-सिन। ३ अति अल्प, निहायत कम। ४ वयसमें लघु, उम्रमें कम। ५ लघु, छोटा। (पु०) ६ कनिष्ठ सहोदर, छोटा भाई। ७ सोमलता-भेद।

कनु (हिं० पु०) १ कण, दाना, टुकड़ा। २ शक्ति, बल।

कनूज—कान्यकुब्ज देश।

कने (हिं० क्रि० वि०) १ निकट, क़रीब, पास। २ ओर, तर्फ़। यह शब्द क्रिया-विशेषण होते भी सम्बन्ध कारकमें संज्ञाकी भांति आता है। जैसे—मेरे कने, किसके कने।

कनेखी (हिं० स्त्री०) कटाक्ष, कनखी, आंखका इशारा।

कनेठा (हिं० पु०) १ काम, कातरकी एक लकड़ी। यह घिसते हुये कोल्हूकी चारो ओर चक्कर लगाता है। (त्रि०) २ काण, काना। ३ ऐंचाताना, घूमी आंखवाला।

कनेठी (हिं० स्त्री०) कानकी घुमाई, गोशमाली, कानागोशी।

कनेती (हिं० स्त्री०) धन, रुपया। यह शब्द दला-लोंकी बोलीमें चलता है।

कनेर (सं० पु०) कर्णिकार, एक पेड़। यह लम्बा हक्ष हिमालयके नीचे यमुनासे बङ्गाल, चट्टग्राम और ब्रह्मदेश पर्यन्त मिलता है। कोङ्कनमें भी कनेर पाया जाता है। पत्र १२ अङ्गुल दीर्घ, १ अङ्गुल पर्यन्त प्रशस्त, तीक्ष्णाग्र, कठोर, चिक्कण और घोर हरिद्वर्ण होते हैं। फिर शाखासे दो पत्र आमने-सामने फूटा करते हैं। शाखासे श्वेत दुग्धभी वहिर्गत होता है। किसी कनेरमें श्वेत एवं किसीमें रक्तवर्ण पुष्प

बारहो मास फूला करते हैं। यह एक विषवृक्ष है। श्वेतवर्ण पुष्पके कनेरकी जड़ अधिक विषैली होती है। जब पुष्प गिर जाते, तब ८।१० अङ्गुल दीर्घ एवं अस्थूल फल आते हैं। फलोंके अन्तर्गत सूक्ष्म बीज रहते हैं। अश्वके लिये औषध विष होनेसे ही संस्कृतमें कनेरके नाम—अश्वघ्न, हयमार, तुरङ्गारि प्रभृति पड़े हैं। कनेर कई प्रकारका होता है। किसीमें सफेद, किसीमें लाल, किसीमें गुलाबी और किसीमें काले फूल लगते हैं। एक दूसरा वृक्ष भी इससे मिलता-जुलता है। किन्तु उसके पत्र अधिक अस्थूल, सुदृढ़ और भासुर रहते हैं। फिर उसका पुष्प भी अधिक पृथु एवं पीतवर्ण होता है। पुष्प झड़ जानेसे गोलाकार फल आते, जिनमें गोलाकार और समस्त बीज पाये जाते हैं। इन बीजोंको हिन्दीमें गुल्ल कहते हैं। बालक गोलियोंमें 'गुल्ल-टीप' खेला करते हैं। गुलाबी फूलवाला कनेर लाल फूलवालेसे मिलता है। किन्तु काले फूलवाले कनेरका उल्लेख निघण्टुरत्नाकर भिन्न दूसरे ग्रन्थमें नहीं। कनेर कटु, तिक्त, लघु, शोधन, तुवर, व्रणघ्न, सुखद और शोथ, रक्तक्षय, कुष्ठ एवं कण्डूनाशक है। (राजनिघण्टु) पत्रके कोमल रोमको सिकिमके पहाड़ी लोग जख्मसे रक्त बहना रोकनेमें व्यवहार करते हैं। कोङ्कनमें पत्र एवं वल्कल कुनसा और कमलके साथ मिला चेचक पर लगाया जाता है। बङ्गाल और बम्बई प्रान्तके लोग पत्रोंको तम्बाकू बांधनेमें व्यवहार करते हैं। फिर बङ्गाली विषघ्न समझ पुष्पादि कीड़े-मकोड़े दूर रखनेका काम लेते हैं। पत्रोंमें जलको सान्द्र बनानेका भी गुण विद्यमान है। शङ्करपर सिवा कनेरके दूसरा कोई रङ्गदार फूल नहीं चढ़ता। इसका सारकाष्ठ श्वेतवर्ण और हृदकाष्ठ मृदु एवं ईषत् कठिन होता है। बङ्गालमें कभी-कभी कनेरकी लकड़ीके तख्ते तैयार किये जाते हैं। लोग कहते—इसकी लकड़ीपर खोदाईका काम अच्छा चलता और बढ़िया साज-सामान् बनता है।

कनेरा (सं॰ स्त्री॰) १ हस्तिनी, हथिनी। २ वेश्या, रण्डी।

कनेरिया (हिं॰ वि॰) कर्णिकारके पुष्पकी भांति रक्तवर्ण, लाल, कनेरके फूलका रङ्ग रखनेवाला। कनेरिये लाल रङ्गमें कुछ स्याही रहती है।

कनेव (हिं॰ पु॰) वक्रभाव, टेढ़ापन। प्रायः चारपाईके टेढ़ेपनको ही कनेव कहते हैं। यह पायोंके छेद टेढ़े लगने और ताना छोटा पड़नेसे चारपाईमें आ जाता है।

कनौज, कन्नौज देखो।

कनौजिया (हिं॰ वि॰) १ कनौजका अधिवासी, जो कनौज प्रान्तमें रहता हो। (पु॰) २ कान्यकुब्ज ब्राह्मण। यह कान्यकुब्ज देशमें रहनेसे ही कनौजिया कहाये हैं। इनमें खाने-पीनेका बड़ा विचार रहता है। अपने आत्मीय एवं सम्बन्धीय व्यतीत कोई किसीके हाथकी बनी पूरी-तरकारी या रोटी-दाल खा नहीं सकता। इसीसे लोग कहा करते हैं—आठ कनौजिया नौ चूल्हा। किन्तु कनौजिया ब्राह्मण अपने घरकी बनी पूरी-तरकारी एक जगहसे दूसरी जगह ले जानेमें फलकी भांति शुद्ध समझते हैं। इसीसे गङ्गा नहानेको राह लोग पूरी-तरकारी गठरीमें बांध लिये चले जाते और अभिमत स्थानपर पहुंच शुद्ध भावसे बैठ हाथ-पैर धो खोलकर खाते हैं। कनौजिये चिलम-तम्बाकू भी नहीं पीते। कारण यह काम बहुत अशुद्ध समझा जाता है। विवाहमें कन्यापक्ष वरपक्षको दहेज देता है। दूसरे ब्राह्मणोंकी तरह इनमें कन्यापक्षवाले वरपक्षसे रुपया-पैसा कुछ नहीं लेते। फिर उच्च कुलवाला जब किसी नीचकुलवालेकी कन्या लेता, तब उसका साखका घर लोक भी कर देता है। बहुतसे कनौजिये इसीमें मर मिटते हैं। कन्याका पिता वरके घरकी न तो कोई चीज छूता और न उसके ग्रामका पानीतक पीता है।

कनौजिया ब्राह्मण पांच शाखामें विभक्त है—१ कनौजिया, २ सरवरिया, ३ जझौतिया, ४ सनाढ्य और ५ बङ्गाली कनौजिया।

१ कनौजिया—यह युक्तप्रदेशमें उत्तर-पश्चिम—शाहजहांपुर तथा पीलीभीत, उत्तर—रामपुर एवं फतेहपुर,

पश्चिम—बांदे, दक्षिण—हमीरपुर और दक्षिण-पश्चिम—इटावे जिलेतक रहते हैं। अपनी कुल-कारिकाके मतानुसार कनौजिये षट्कुलमें विभक्त हैं। किन्तु इन्होंने साढ़े छह कुल मान रखे हैं।

गोत्र	उपाधि
गौतम	अवस्थी
शाण्डिल्य	मिश्र, दीक्षित
भारद्वाज	शुक्ल, त्रिवेदी, पाण्डेय
उपमन्यु	पाठक, द्विवेदी
काश्यप	त्रिवेदी, त्रिपाठी
कात्यायन	वाजपेयी
गर्ग	चतुर्वेदी

फिर यह अवस्थ्यादि उपाधिधारी कनौजिये कई प्रकारके होते हैं, जैसे प्रभाकरके अवस्थी, खेचरके अवस्थी; भंभगैयाके मिश्र, धोबिहा मिश्र; बालाके शुक्ल, कन्नेके शुक्ल; लहुरीके त्रिवेदी, खोरके पाण्डेय, लखनऊके वाजपेयी, काशीरामके वाजपेयी, गोवर्धनके त्रिपाठी, दमाके त्रिपाठी, गोपालके त्रिपाठी, इत्यादि इत्यादि।

इनकी मर्यादा २० अंशों या बिस्वोंमें विभक्त है। इसीसे उच्च एवं नीच कुलका विधान होता है। उच्च कुलका कान्यकुब्ज नीच कुलवालेको अपनी कन्या दे नहीं सकता। फिर बराबरवालोंमें ओतप्रोत सम्बन्ध चलता है। अपनी-अपनी मर्यादाके अनुसार दहेज बंधा है। किन्तु जितना ही छोटा कान्यकुब्ज रहता और जितने बड़ेके साथ सम्बन्ध लगानेकी चेष्टा करता, उतना ही उसे अधिक धन: दहेजमें देना पड़ता है।

कान्यकुब्जोंमें यज्ञोपवीत संस्कार सम्यक सम्पन्न होनेपर व्यवहारी टिकावन करने आते हैं। संस्कृत बालकके मस्तक पर रोचनाक्षत लगा अपने-अपने व्यवहारके अनुसार सामने रखी थालीमें वह रुपया डालते हैं। इसीका नाम टिकावन है। फिर संस्कृत बालकके मध्यावधायक व्यवहारियोंको मिठाई बांटते हैं। संस्कार होते समय भी शर्बत-पान चला करता है। बाजे-गाजे धूम धड़ाकेसे बजते हैं। फिर संस्कृत बालक सात दिन तक खड़ाऊंपर चढ़, जामा पहन और पगड़ी बांध अपने व्यवहारियोंके घर भिक्षा मांगने जाता है। स्त्रियां उसकी झोली मिठाईसे भर दिया करती हैं।

कान्यकुब्जोंमें सबसे बड़ा गुण प्रतिग्रह न लेना है। लोग प्राण जाते भी दान-दक्षिणा लेना बुरा समझते हैं। इस बातकी कई बार परीक्षा हो चुकी है। कनौजियोंने दानमें हजारों रुपये लेनेसे इनकार किया है। इसीसे भिक्षुक कान्यकुब्ज देख नहीं पड़ते।

कनौजिये युद्ध करनेसे भी मुंह नहीं मोड़ते। पुरानी बात हम नहीं कहते। आज भी सरकारी फौजमें कान्यकुब्ज ब्राह्मणोंकी 'गायत्री' नामक पलटन विद्यमान है। यह खूब कसरत (व्यायाम) करते और अखाड़ोंमें लड़ते-भिड़ते हैं। बालक ८।१० वर्षका होते ही लंगोटा बांधने और दण्ड-बैठक मारने लगता है।

विद्यामें कान्यकुब्ज अग्रसर न होते भी अधिक पश्चात्पद नहीं। कितने ही कान्यकुब्ज संस्कृत, अरबी, फारसी, अंगरेजी आदि प्रधान-प्रधान भाषाओंका अच्छा ज्ञान रखते हैं।

१ सरवरिया—यह कन्नौजसे चल अयोध्यामें जाकर रहे थे। आजकल सरवरिया अयोध्याप्रान्तके बहराइच जिले, नेपालके प्रान्त, काशी एवं प्रयागप्रदेश और दक्षिण बुंदेलखण्डमें वास करते हैं। गोरखपुरमें यह अधिक मिलते और इनमें १८ घर चलते हैं।

अनेक लोग सरवरिया शब्दको 'सरयूपारीण' या 'सरयूपारिया'का अपभ्रंश बताते हैं। प्रवाद है—राम रावणको मार अयोध्या आये और कान्यकुब्जसे कुछ ब्राह्मण बोलाये थे। वह ब्राह्मण आकर सरयूके परपार रहे। इसीसे उनका नाम सरयू-पारीण या सरवरिया पड़ गया। इनमें भी भिन्न गोत्र और भिन्न उपाधि विद्यमान है।

गोत्र	उपाधि
गर्ग	पाण्डेय (इतिय)
गौतम	द्विवेदी (कछजिया)
शाण्डिल्य	पाण्डेय (त्रिफला)

शाण्डिल्य	त्रिपाठी (पिण्डी)
भारद्वाज	द्विवेदी (हृदग्राम)
वत्स	मिश्र (पियासी)
,,	द्विवेदी (समदारी)
काश्यप	मिश्र (राड़ी)
,,	पाण्डेय (माला)
कौशिक	मिश्र (धर्मपुरा)
चन्द्रायन	पाण्डेय (चपना)
सावर्ण	पाण्डेय (इतारी)
पराशर	पाण्डेय

एतद्भिन्न पुलस्त्य, भृगु, अत्रि, अङ्गिरा प्रभृति दूसरे गोत्रीय भी सरवरिया होते हैं।

उपरोक्त गोत्रोंके मध्य गर्ग, गौतम और शाण्डिल्य गोत्रीय ही कुलीन समझे जाते हैं।

२ जझौतिया—बुंदेलखण्डमें रहते हैं। उत्तर एवं पश्चिम कनौजियों और पूर्व सरवरियोंसे जझौतिये मिले हैं। इस शाखामें रूपरम्के चौबे (चतुर्वेदी), दरयाके दुबे (द्विवेदी) और हमीरपुर तथा करौमके मिश्र श्रेष्ठवंश माने जाते हैं।

गोत्र	उपाधि
उपमन्यु	पाठक (रोरा)
,,	वाजपेयी (बिनवारी)
काश्यप	पतेरिया (शाहपुर)
,,	पस्तोरा (वंगवा)
गौतम	चौबे (रूपनौयाल)
,,	गङ्गली (मराई)
शाण्डिल्य	मिश्र (हमीरपुर)
,,	अधेरिया (कोटके)
सौमस	मिश्र (करिया)
भारद्वाज	तेवारी (एजक)
,,	दुबे (छठासनी)
वत्स	तेवारी (पठरेसी)
एकाविंशिट	नायक (पियरी)

३ सनाढ्य—ब्राह्मण बुंदेलखण्डके मध्यप्रदेशसे दुआबके उत्तर एवं मध्यभाग, पीलीभीतसे ग्वालियर, रामपुरके उत्तरपश्चिमांश, रीवा, इलाहाबाद तथा गवाद-गञ्ज, बरेलीसे रामगङ्गा, सलीमपुर एवं मोरादाद, गङ्गाके निम्नतटसे कान्यकुब्ज, कालीनदीके कूलसे अलीपुरपट्टी, भाई-गांव, सोग, इटावे तथा मोरामक और दक्षिण यमुनासे चम्बल नदीके सङ्गमस्थान तक रहते हैं।

गोत्र	उपाधि
वशिष्ठ	व्यास
,,	गोस्वामी
,,	मिश्र
,,	पराशर
,,	कतारी
,,	देवलिया
,,	दुबे
,,	क्षेमर्य
,,	उपाध्याय
भारद्वाज	वैद्य
,,	चौबे
,,	दीक्षित
,,	त्रिपाठी
,,	चतुर्धर
काश्यप	मिश्र
सावर्ण	तेवारी
उपमन्यु	दुबे
गौतम	उपाध्याय
शाण्डिल्य	पांडे

एतद्भिन्न कौशिक, विश्वामित्र, जमदग्नि, धनञ्जय, कौशल, सौंगिया, मेशाया प्रभृति गोत्र और पाठक, स्वामी, समाध्याय, ममस्, मिरधारी, चंमपुरी, भोटिया, बरसिया, ओझा, मोदिया, सेंधिया, उदेलिया, अर्जौदिया प्रभृति उपाधि भी होते हैं।

४ गौड़ी कनौजिया—यह चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं—१ वारेन्द्र, २ राढ़ीय, ३ पाश्चात्य और ४ दाक्षिणात्य वैदिक। किन्तु पाश्चात्यों और दाक्षिणात्योंको अनेक लोग कनौजिया ब्राह्मण नहीं मानते।

पहली दोनों श्रेणियोंके ब्राह्मण अर्थात् वारेन्द्री और राढ़ीयोंने आदिशूरके समय कन्नौजसे बङ्गाल आ

उपनिवेश किया था। इनके आदिपुरुष चितीश, वीतराग, सुधानिधि, सौभरि और मेधातिथि रहे। उक्त पांचों लोगोंके वंशधर बल्लालसेनके समय १५६ घरोंमें बंट गये। उनसे १५० घर वरेन्द्रभूम और ५६ घर राढ़में रहते हैं।

वारेन्द्र ब्राह्मणोंमें ८ घर श्रेष्ठ वा कुलीन हैं। यथा—१ मैत्र, २ भीम कालि, ३ रुद्रवागची, ४ सञ्चामिनी या सान्याल, ५ लाहिड़ी, ६ भादुड़ि, ७ साधु वागची और ८ भादड़। फिर वारेन्द्रोंमें ८ घर शुद्धश्रोत्रिय और ६४ घर कष्टश्रोत्रिय भी होते हैं।

राढ़ीयोंमें ६ घर कुलीन रहते हैं—१ मुखुटी वा मुखोपाध्याय, २ गाङ्गलि (गङ्गोली), ३ काञ्जिलाल, ४ घोषाल, ५ वन्दीवाटी वा वन्द्योपाध्याय और ६ चाटुति वा चट्टोपाध्याय। एतद्व्यतीत १० घर श्रोत्रिय भी हैं। ब्राह्मण, कुलीन, वारेन्द्र, राढ़ीय प्रभृति शब्द देखो।

कनौठा (हिं० पु०) १ कोण, कोना, किनारा। २ कनिष्ठ, छोटा हिस्सेदार।

कनौड़ा, कनवड़ देखो।

कनौती (हिं० स्त्री०) १ पशुओंके दोनों कान या उनकी चलफिर। २ मुरकी, कानकी छोटी और मोटी बाली।

कन्त (सं० त्रि०) कं सुखं अस्यास्ति, कं-त। कंशंभ्यांबभयुस्तितुतयसः। पा ५।२।१३८। १ सुखी, प्रसन्न, खुश। (हिं० पु०) २ पति, स्वामी, ईश्वर, मालिक।

कन्ति (सं० त्रि०) कं सुखमस्यास्ति, कं-ति। सुखवाला, खुश-खुर्रम।

कन्तु (सं० पु०) कामयते, कम्-तु। कमिमनिजनि-गाभायाहिभ्यश्च। उण् १।७३। १ कामदेव। २ हृदय, दिल। ३ धान्यागार, खत्ती, खलयान। (त्रि०) कं सुखं अस्यास्ति। ४ सुखी, खुश।

कन्त (हिं०) कंत देखो।

कन्थक (सं० पु०) एक प्राचीन ऋषि।

कन्थरी (सं० स्त्री०) कम्-अ-रम्-युक् पृषोदरादित्वात् साधु। वृक्षविशेष, एक पेड़। इसका संस्कृत पर्याय—कन्थारी, कन्था, दुर्धर्षा, तीक्ष्णकण्टका, तीक्ष्णगन्धा और दुष्प्रवेशा है। राजनिघण्टुके मतसे यह कटु, तिक्त, उष्ण, अग्निदीपक एवं रुचिकारक और कफ, वायु, शोथ, रक्त, ग्रन्थि तथा ज्वरनाशक होती है।

कन्था (सं० स्त्री०) कम् बाहुलकात् थन्-टाप्। १ स्यूतकर्पट, कथरी, गुदड़ी। कितने ही फटे कपड़े इकट्ठा कर यह सी जाती है। दरिद्र भिक्षुक इसे ओढ़ शीत काटते हैं। २ मृत्तिकाका क्षुद्रप्राचीर, मट्टीकी छोटी दीवार। ३ उशीनर राज्यका एक नगर। ४ चीर, ओढ़नी। ५ तूलपूर्ण गात्रवस्त्र, रुईका कपड़ा। ६ वृक्षविशेष, एक पेड़। ७ देश-विशेष, एक मुल्क।

कन्थाधारी (सं० पु०) कन्था-धृ-णिनि। भिक्षुक, फकीर।

कन्थारी (सं० स्त्री०) कम्-अरन्-युक्। वृक्षविशेष, एक पेड़। कन्थरी देखो।

कन्थेश्वरतीर्थ (सं० क्ली०) एक प्राचीन तीर्थ।

कन्द (सं० पु०-क्ली०) कन्दयति जिह्वाया वैक्लव्यं जनयति, कदि-णिच्-अच्। १ ओल, जिमीकन्द। ओल देखो। २ रक्तमूलक, लाल मूली। ३ काष्ठालुक, रतालू। ४ श्वेतच्छत्र-बहुपुटक कन्दविशेष, एक सफेद, उमदा और कई तहकी कन्द। लोग इसे सर्पच्छत्रक (सांपका छाता) कहते हैं। ५ हस्ति-कन्द, सफेद बड़ी मूली। ६ शालूक, शलगम। ७ गृञ्जन, गाजर। ८ सुगन्धितृणविशेष, एक खुशबू-दार घास। ९ गुड़। १० शर्करा, शकर। ११ पिण्डा-लुक, गोल आलू। १२ मुखनोति नामक कन्द। १३ शस्यमूल, अनाजकी जड़। १४ फलहीनौषधि-मूल, फल न देनेवाली बूटीकी जड़। १५ मेघ, बादल। १६ छन्दोविशेष। इसमें तेरह तेरह अक्षरके चार पाद होते हैं। १७ योनिरोगविशेष, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। (Prolapsus uteri) दिवानिद्रा, अतिरिक्त क्रोध, व्यायाम, अतिमैथुन एवं नख दन्तादिके घातसे वायु, पित्त और कफ भड़क योनिदेशमें पूयरक्तवर्ण मन्दारके फल जैसा जो रोग उठ आता, वही कन्द कहाता है। वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक भेदसे

·यह रोग वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिक—चार प्रकारका होता है। वातिक कन्द रुक्ष और स्फुटित अर्थात् फटा फटा रहता है। पैत्तिक कन्द अधिक रक्तवर्ण लगता और ज्वर तथा दाह उत्पन्न करता है। श्लैष्मिक कन्द तिल-पुष्प तुल्य और कण्डुयुक्त होता है। सान्निपातिक व्यतीत तीनों प्रकारके अन्य कन्द चिकित्सासे आरोग्य हो जाते हैं।

चिकित्सा—गेरु, आमकी गुठली, विड़ङ्ग, हलदी, रसाञ्जन और कट्फल सबका चूर्ण मधुके साथ योनिमें भरने और त्रिफलाके क्वाथमें उक्त सकल द्रव्योंका चूर्ण मधु मिला योनिको प्रक्षालन करनेसे कन्दरोग निवारित होता है। फिर इन्दुरका मांस एवं तैल एकत्र रौद्रमें पका योनिपर मलने और इन्दुरके मांस तथा तैलावसे योनिमें स्वेद प्रदान करनेसे भी योन्यर्श अर्थात् कन्दरोग मिट जाता है। (भावप्र°)

फारसीमें जमी हुई चीनी या मिसरीको कन्द कहते हैं।

कन्दक (सं° पु°) कन्द स्वार्थे कन्। १ कन्द। कन्दमी। २ वितान, तम्बू। ३ सुखालु, शकरकन्द। ४ वनशूरण, जङ्गली जिमींकन्द।

कन्दगुडूची (सं° स्त्री°) कन्दोद्भवा गुडूची, मध्यपद-लो°। गुडूची विशेष, किसी किस्मकी गुर्च। इसका संस्कृत पर्याय—कन्दोद्भवा, कन्दामृता, बहुच्छिन्ना, बहुपत्रा, पिण्डालु और कन्दरोहिणी है। कन्दगुडूची कन्दोद्भव, कटु एवं उष्ण और सन्निपात, विष, ज्वरभूत तथा वलीपलितनाशक है। (राजनिघण्टु)

कन्दग्रन्थि (सं° पु°) १ पिण्डालु नामक कन्दशाक, शकरकन्द। २ श्वेतराजालुक, लहसुन।

कन्दज (सं° त्रि°) कन्दात् जायते, कन्द-जन-ड। कन्दके मूलसे उत्पन्न, जो कन्दकी जड़में निकला हो।

कन्दजविष (सं° क्ली°) कन्दजात विष, कन्दका जहर। यह अष्टविध होता है। यथा—कालकूट, मुस्तक, कौमर्य, दर्वीक, सर्षप, सैकत, वत्सनाभ और शृङ्गी। इसको शुद्धिके लिये उक्त द्रव्यके भाग भपक-वत् स्थूल बना भाजनमें गोमूत्रके साथ छोड़ दे, फिर अतीव आतपमें पहले रख तीन दिन प्रत्यह नूतन गोमूत्र डाल सुखा ले। यह विष प्रयोगोंमें भागके मानसे पड़ता है।

कन्दट (सं° क्ली°) कन्दि-अटन्। श्वेतोत्पल, खानेके लायक सफेद नीलोफर।

कन्दतृण (सं° क्ली°) तृणविशेष, एक घास।

कन्दद (सं° त्रि°) कन्द बनाने या पहुंचानेवाला, जो हला बनाता या पहुंचाता हो।

कन्दनालिका (सं° स्त्री°) गोजिह्वा, गोभी।

कन्दपञ्चक (सं° क्ली°) पांच कन्द, पांच डली। तैलकन्द, धर्दिनेत्रकन्द, सुकन्द, क्रोडकन्द और रुदन्तीकन्दके समूहको कन्दपञ्चक कहते हैं। यह ताम्रादिरसमारक, स्निग्ध और सर्वरोगहर होता है। (वैद्यनिघण्टु)

कन्दपत्र (सं° पु°) महातालीशपत्र।

कन्दफला (सं° स्त्री°) कन्दात् कन्दमारभ्य फलं यस्याः, बहुव्री°। १ क्षुद्रकारवेल्लक, करेलो। २ विदारी, बिलाईकन्द।

कन्दबहुला (सं° स्त्री°) कन्दादारभ्य कन्देन कन्देषु वा बहुला, ५मी ३या व ७मी तत्पुरुष। त्रिपर्णी, एक डलेदार पौदा।

कन्दमूल (सं° क्ली°) कन्दएव मूलमस्य, बहुव्री°। मूलक, मूली। नेपालकी तराईमें बहुत बड़ी मूली होती है। हिन्दीमें कन्द और मूल दोनोंको 'कन्द-मूल' कहते हैं।

कन्दर (सं° पु° क्ली°) कं जलमिरः दीर्यते अनेन, कं ह कर्मणे अप्। १ अङ्कुश, हाथीका आंकुस। २ गुहा, खो। प्राकृतिक वा निर्मित दोनों प्रकारकी गुहा कन्दर कहाती है। इसका संस्कृत पर्याय—दरी, कन्दरा, कन्दरी, दर और गुहा है। ३ आर्द्रक, अदरक। ४ अङ्कुर, किल्ला। ५ ओल, जिमींकन्द। ६ गाजर। ७ घाटी, दो पर्वतोंके मध्यका पथ। ८ श्वेतखदिर, सफेद खैर। ९ गण्डी, सोंठ। १० रोग-विशेष, एक बीमारी। कदर देखो।

कन्दरवान् (सं° पु°) कन्दरा अस्त्यस्य, कन्दर-मतुप् मस्य वः। पर्वत, पहाड़। (त्रि°) २ गुहा-युक्त, जो खो रखता हो।

कन्दरा (सं० स्त्री०) कन्दर-टाप्। गुहा, खो।
कन्दराकर (सं० पु०) कन्दरस्य आकरः, ६-तत्। पर्वत, पहाड़, खोका खजाना।
कन्दरान्तर (सं० पु०) कन्दरका भीतरी भाग, खोका अन्दरूनी हिस्सा।
कन्दराल (सं० पु०) कन्दराय अङ्कुराय अलति, कन्दर-अल-अच्। १ प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़। २ गर्दभाण्डवृक्ष, गजहन्द, पारस-पीपल। ३ अखरोटका पेड़।
कन्दरालक (सं० पु०) प्लक्षवृक्ष, पाकरका पेड़।
कन्दरी (सं० स्त्री०) कन्दर-ङीष्। गुहा, खो।
कन्दरूल (सं० पु०) कटु शूरण, कड़वा जिमींकन्द।
कन्दरोग (सं० पु०) योनिरोगविशेष, औरतके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। कन्द देखो।
कन्दरोद्भवा (सं० स्त्री०) कन्दरे उद्भवति, कदर-उत्-भू-अच्-टाप्। १ क्षुद्र पाषाणभेदवृक्ष, छोटा पथरचटा। २ गुड़ूचीविशेष, किसी किस्मकी गुर्च। (त्रि०) ३ कन्दरोत्पन्न, खोसे निकला हुआ।
कन्दरोहिणी (सं० स्त्री०) कन्दगुड़ूची, कलेकी गुर्च।
कन्दर्प (सं० पु०) कं कुत्सितो दर्पो यस्मात्, बहुव्री०। १ कामदेव। प्रवादानुसार ब्रह्माने कामदेवका यह नाम इसलिये रखा, कि उसने उत्पन्न होते ही कहा था,—मैं किसको मदसे मत्त करूं।

"कं दर्पयामीति मदाज्जातमात्रो जगाद च।
येन कन्दर्पनामानं तं चकार चतुर्मुखः॥" (कथासरित्सागर)

२ सङ्गीतका ध्रुवविशेष। यह रुद्रतालका एक भेद है।

"दतोधिंथति धर्धो हुं हुं थः कन्दर्पसंज्ञकः।
बोरे वा करुणे वा स्यात् रुद्रताले विधीयते॥" (सङ्गीतद०)

कन्दर्पकूप (सं० पु०) कन्दर्पस्य कूप इव, उपमि०। योनि, सुक़ाम-मख़्सूस।
कन्दर्पकेतु (सं० पु०) एक राजा।
कन्दर्पकेलि (सं० पु०) कन्दर्पस्य केलिः, ६-तत्। १ कामवशतः होनेवाला एक केलि, प्यारका खेल। मैथुनादिको कन्दर्पकेलि कहते हैं। २ एक प्रहसन, दिल्लगीकी कोई किताब।
कन्दर्पजीव (सं० पु०) कन्दर्पं जीवयति वर्धयति, कन्दर्प-जीव-णिच्-अच्। १ कामवृक्ष, एक पेड़। २ कटहल। ३ कामवृद्धिकारक द्रव्य, ताक़त बढ़ानेवाली चीज़।
कन्दर्पज्वर (सं० पु०) कन्दर्पविकारजो ज्वरः, मध्यपदलो०। १ कामके विकारसे उत्पन्न ज्वर, जो बुख़ार धातुके बिगाड़से आया हो। २ काम, ख़्वाहिश, चाह।
कन्दर्पदहन (सं० पु०) कन्दर्पस्य दहनं वर्णितं यत्र। शिवपुराणका एक अंश। दक्षयज्ञमें सतीके देह छोड़नेपर महादेवने योग अवलम्बन किया था। उधर सती भी हिमालय पर जन्म ले महादेवकी परिचर्यामें लग गयीं। उसी समय ताड़कासुरके अत्याचारसे देव अत्यन्त उत्पीड़ित हुये। शिवतेजोजात एकमात्र कार्तिकेयके व्यतीत उसके दमनका दूसरा उपाय न रहा। इसीसे देवोंने महादेवका योगभङ्ग करने रति, वसन्त और कन्दर्पको भेजा था। देवाज्ञाके अनुसार शरीरपर पुष्पबाण मारते ही महादेवके ललाटसे निकल अग्निशिखाने कन्दर्पको जला डाला। (शिवपुराण)
कन्दर्पनारायण—चन्द्रद्वीपके एक प्रबल बङ्गाली राजा। यह एक बारभुंया रहे। इनके पितामह परमानन्द वसुराय दक्षिण एवं पूर्ववङ्गीय कायस्थ-समाजके समाजपति थे। यह अपनेको कान्यकुब्ज-समाजगत कायस्थ-प्रवर दशरथ वसुके वंशधर बताते रहे। आईन-अकबरीमें भी इनका नाम मिलता है। १५८८ ई०को कन्दर्पनारायण बाकला चन्द्रद्वीपमें राजत्व करते थे। यह एक महावीर रहे। विशेषतः इन्हें तोप चलाना बहुत अच्छा लगता था। इनके गुणका परिचय तत्कालीन पाश्चात्य भ्रमणकारी भी दे गये हैं। (Hacklyt's Voyages, Vol. II. p. 257)

कन्दर्पनारायणकी पीतलवाली तोप आज भी चन्द्रद्वीपमें रखी है। उस पर कन्दर्पनारायण और निर्माताका नाम खोदा है। तोपकी लम्बाई पौने

आठ फीट, घरके जड़की चौड़ाई सवा दो फीट, और मुंह साढ़े छत्तीस इञ्च है।

(Jour. As. Soc. Bengal, Vol. XLIII. p. 207)

कन्दर्पमथन (सं० पु०) कन्दर्पं मथ्नाति, कन्दर्प-मथ-ल्यु। महादेव।

कन्दर्पमूषल (सं० पु०) कन्दर्पस्य मूषल इव, उपमि०। उपस्थ, लिङ्ग, पुरुष-ननासुल।

कन्दर्परस (सं० पु०) वैद्यकोक्त एक औषध। पारद, गन्धक, प्रवाल, गेरिक, वैक्रान्त, रौप्य, शङ्ख एवं मुक्ता बराबर बराबर ले और वटकी लटके क्वाथसे सात बार भावना दे २ रत्ती प्रमाण वटिका बनाये। इस रसको त्रिफला और कबाबचीनीके क्वाथसे सेवन करनेपर औपसर्गिक मेहरोग सत्वर नाश होता है।

कन्दर्पशर्मा—भट्टिकाव्यटीका 'वैजयन्ती'के रचयिता।

कन्दर्पशृङ्खल (सं० पु०) कन्दर्पाय शृङ्खलः। रतिबन्धविशेष, एक डौल।

कन्दर्पसारतैल (सं० क्ली०) कुष्ठाधिकारका वैद्यकोक्त तैलविशेष, कोढ़का एक तेल। सप्तपर्ण, काली, गुडूची, विसुमर्दक, शिरीष, महातिक्ता, जया, तुम्बी, भृगादनी तथा निशा १०।१० पल एक द्रोण जलमें पका १६ सेर रहनेसे उतार ले। फिर उसमें १ प्रस्थ तैल, चार प्रस्थ गोमूत्र, १।१ प्रस्थ भारङ्गव, भृङ्गराज, जया, धुस्तर, हरिद्रा, सिद्धि, खर्जूर, गोमय, चित्रक, अर्क एवं सुहीका रस और कल्कार्थ २।२ तोले मात्र इन्द्रायण, वचा, ब्राह्मी, तुम्बी, चित्रक, चट्टपुत्रिका, कुचेला, पटोलपत्र, हरिद्रा, मुस्तक, ग्रन्थिका, गम्भारक, पर्णचार, कासुन्दमूलक, ईश्वरमूलक, शाल, सच्छिका, महातिक्ता, विशाला, हस्तिकाली, पूतिका, आस्फोत, मूर्वा, सप्तपर्ण, शिरीष, कुटज, विसुमर्द, महानिम्ब, गुडूची, चन्द्ररेखा, सोमराट्, चक्रमर्दक, गुग्गुल, भङ्ग, षट्चाङ्क, कन्दक, कटुरोहिणी, शटी, दार्वी, त्रिवृत्, ग्रन्थिका, अगुरु, पुष्कर, कर्पूर, कट्फल, मांसी, एला, वासक तथा उशीर डालनेसे यह औषध प्रस्तुत है। इसको मलनेसे अष्टादशविध कुष्ठ, पामा, स्फोटक, क्रिमिहादि, दद्रु, रक्तमण्डल, गलगण्डार्बुद, गण्डमाला, भगन्दर आदि रोग आरोग्य हो जाते हैं। (भैषज्यरत्नावली)

कन्दर्पसिद्धान्त—सुपद्म व्याकरणके एक टीकाकार।

कन्दल (सं० पु०-क्ली०) कदि-कलच्। १ कलध्वनि, धीमी और सुनायम आवाज। २ उपराग, छोटा राग। ३ गण्डदेश, गाल, कनपटी। ४ कलाप, झगड़ा। ५ नवाङ्कुर, नया किल्ला। ६ अपवाद, धिक्कार। ७ कदलीविशेष, किसी किस्मका केला। ८ स्वर्ण, सोना। ९ वाग्युद्ध, जबानी झगड़ा। १० समूह, झुण्ड, ढेर। ११ पृथिवी, जमीन। १२ कृष्णसारमृग, एक हिरन। १३ गिलीपुष्प, कालीका फूल। १४ कमलबीज। १५ कदलीपुष्प, केलेका फूल, छाता। १६ आर्द्रक, अदरक। १७ सूरण, जिमीकन्द। १८ कोमलशाखा, नम डाल। १९ अपशकुन, बदफाली।

कन्दलता (सं० स्त्री०) कन्दप्रधाना लता, मध्यपदलो०। १ मालाकन्द, एक लता। २ क्षुद्रकारवेल्ल, करैली।

कन्दलायन—एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकार। 'सर्वदर्शनसंग्रह'में इनका उल्लेख है।

कन्दलित (सं० त्रि०) कन्दलो ऽस्य सञ्जातः, कन्दल-इतच्। १ कन्दलयुक्त, डलेदार। २ प्रस्फुटित, खिला हुआ। ३ निर्गत, निकाला हुआ।

कन्दलिन् (सं० त्रि०) कन्दलो ऽस्त्यस्य, कन्दल-इनि। कन्दलयुक्त, डलेदार।

कन्दली (सं० पु०-स्त्री०) कन्दल-ङीप्। १ मृगविशेष, किसी किस्मका हिरन। २ पक्षीविशेष, एक चिड़िया। ३ गुल्मविशेष, एक पोदा।

"आविर्भूतप्रथममुकुलाः कन्दलीश्चानुकच्छम्।" (मेघदूत)

४ कदली, केला। ५ पताका, झण्डा। ६ पद्मबीज, कमलगट्टा। ७ और्व मुनिकी एक कन्या। इन्होंने दुर्वासाके शापसे भस्मीभूत हो कदली तरुरूपसे जन्मग्रहण किया था।

कन्दलीकार—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। चित्सुख और पद्मनाभने इनका उल्लेख किया है।

कन्दलीकुसुम (सं० क्ली०) कन्दल्या इव कुसुमं यस्य, बहुव्री०। छिलोन्ध्र, कुकुरमुत्ता, सांपकी टोपी।

कन्दलीभाष्यकार—संस्कृतके एक प्राचीन विद्वान्। हेमाद्रिने इनका उल्लेख किया है।

कन्दवर्ग (सं॰ पु॰) कन्दजातिमात्र, हरेक किस्मके डलेका कुलीरा। विदारीकन्द, शतावरी, मृणाल, बिस, कशेरु, शृङ्गाट, पिण्डालु, मध्वालु, हस्त्यालु, शङ्खालु, रक्तालुक, इन्दीवर और उत्पल आदि कन्दोंके समूहको 'कन्दवर्ग' कहते हैं। उक्त कन्द रक्तपित्तहर, शीत, मधुर, गुरु, बहुशुक्रकर और स्तन्यवर्धन होते हैं। (सुश्रुत)

कन्दवर्धन (सं॰ पु॰) कन्देन वर्धते, कन्द-वृध-ल्यु। १ शूरण, जिमींकन्द। ओल देखो। २ कटुशूरण, किनकिना जिमींकन्द।

कन्दवल्ली (सं॰ स्त्री॰) कन्दाकारा वल्ली, मध्यपदलो॰। १ वन्ध्याकर्कोटकी, कड़वी ककड़ी।

कन्दविष (सं॰ पु॰) विषाक्त कन्दका वृक्ष, ज़हरीले डलेका पौदा। कालकूट, वत्सनाभ, सर्षप, पालक, कर्दम, वैराटक, मुस्तक, शृङ्गी, पुण्डरीक, मूलक, हलाहल, महाविष और कर्कटशृङ्ग—तेरह कन्दविष होते हैं। इनमें ४ वत्सनाभ, २ मुस्तक, ६ सर्षप और १ शिष्ट है। सब कन्दजविष उग्रवीर्य, रूक्ष, उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, आशुव्यवायी, विकाशी, विशद, लघु और अपाकी होते हैं। कालकूटसे स्पर्शाज्ञान, वेपथु और स्तम्भ पड़ता है। वत्सनाभ ग्रीवास्तम्भ लगाता और विट्, मूत्र तथा नेत्रमें पीतता लाता है। सर्षपका कन्द वातवैगुण्य, आनाह और ग्रन्थि उत्पन्न करता है। पालकसे ग्रीवादौर्बल्य और वाक्सङ्ग होता है। कर्दमसे प्रसेक, विड्भेद और नेत्रपीतताका वेग बढ़ता है। वैराटक अङ्गदुःख और शिरोरोग लगा देता है। मुस्तकसे गात्रस्तम्भ और वेपथु होता है। शृङ्गीविष अङ्गसाद, दाह और उदरको बढ़ाता है। पुण्डरीकसे आंखोंमें रक्तत्व आता और उदर बढ़ जाता है। मूलक वैवर्ण्य, छर्दि, हिक्का, शोफ और मूढ़ता उपजाता है। हलाहलसे मनुष्यको सांस रुकती है। महाविष हृदयमें ग्रन्थि उपजाता और शूल बढ़ाता है। कर्कटशृङ्गसे मनुष्य चित गिर जाता है। (सुश्रुत)

कन्दशाक (सं॰ क्ली॰) कन्दप्रधानं शाकम्। शाकमें व्यवहृत होनेवाला कन्द, जो डला तरकारीमें लगता हो। कन्दवर्ग देखो। समस्त कन्दशाकमें शूरण श्रेष्ठ होता है। (भावप्रकाश)

कन्दशूरण (सं॰ पु॰) कन्द एव शूरणः। शूरणकन्द, जिमींकन्द। ओल देखो।

कन्दसंज्ञ (सं॰ क्ली॰) योन्यर्श, औरतोंके पेशाबकी जगह होनेवाली एक बीमारी। कन्द देखो।

कन्दसम्भव (सं॰ वि॰) कन्दसे उत्पन्न होनेवाला, जो डलेसे पैदा हो।

कन्दसार (सं॰ क्ली॰) कन्दानां सारो यत्र, बहुव्री॰। १ नन्दनवन। २ ओल प्रभृति कन्दसमूह, जिमींकन्द वगैरह डले। ३ इन्द्रका उद्यान।

कन्दा (सं॰ स्त्री॰) कन्दगुडूची, डलेकी गुर्च।

कन्दाढ्य (सं॰ पु॰) कन्देन आढ्यः। भूमिकुष्माण्ड, भुयिंकुम्हड़ा।

कन्दामृता (सं॰ स्त्री॰) कन्दप्रधाना अमृता, मध्यपदलो॰। गुडूचीविशेष, डलेकी गुर्च।

कन्दारा—कर्णाटी ब्राह्मणोंकी एक श्रेणी। कर्णाटब्राह्मण देखो।

कन्दार्ह (सं॰ पु॰) कन्दशूरण, जिमींकन्द।

कन्दालु (सं॰ पु॰) कन्दमय आलुः, मध्यपदलो॰। १ काष्ठालु, एक रतालू। २ भूमिकुष्माण्ड, भुयिंकुम्हड़ा। ३ विषपर्णिका, एक डला।

कन्दिरी (सं॰ स्त्री॰) कन्द-इरच्-ङीप्। लज्जालुवृक्ष, लाजवन्ती।

कन्दी (सं॰ पु॰) कन्दो ऽस्यास्ति, कन्द-अच्। कटुशूरण, किनकिना जिमींकन्द।

कन्दु (सं॰ पु॰-स्त्री॰) स्कन्द-उ सलोपश्च। कन्देः सलोपश्च॥ उण् ११५। १ स्वेदनपात्र, तवा। इसका अपर संस्कृत नाम स्वेदनी है। २ लौहनिर्मित पाकपात्र, लोहेकी कड़ाही। ३ भर्जनपात्र, भूंजनेका बरतन। ४ सुराकरणपात्र, शराब तैयार करनेका बरतन।

कन्दुक (सं॰ पु॰) कं सुखं ददाति, दा-डु संज्ञायां कन्। १ गेण्डुक, गेंद। (क्ली॰) २ गलतकिया। ३ अङ्कुर, कोंपल। ४ पूगफल, सुपारी। ५ छन्दोविशेष। यह त्रयोदश अक्षरविशिष्ट होता है।

कान्दुकप्रस्थ (सं॰ पु॰) नगरविशेष, किसी शहरका नाम।

कान्दुकलीला (सं॰ स्त्री॰) कन्दुककी क्रीडा, गेंदका खेल।

कान्दुकेय (सं॰ पु॰) एक प्राचीन हिन्दू राजा।

कान्दुकेश्वर (सं॰ पु॰) काशीधामका एक शिवलिङ्ग। किसी समय पार्वती कौतुकवश कन्दुक खेलती थीं। क्रीड़ाके श्रमसे उनका केशपाश शिथिल और नयनद्वय आकुल हो गया। ऐसे भावादि देख उनको हरण करनेके लिये दो दैत्य शाम्बरीमाया अवलम्बनपूर्वक अन्तरीक्षसे उतरे थे। देवताओंने दोनों दैत्योंके विनाश साधनको भगवतीसे इङ्गित किया। भगवतीने इङ्गित पाते ही हस्तस्थित कन्दुक फटकार उन्हें मार डाला था। फिर वह कन्दुक भूमिपर गिर लिङ्ग बन गया। (काशीखण्ड)

कान्दुपक्क (सं॰ स्त्री॰) विना जलके उपमेक केवल पात्रमें अग्निसे भ्रष्ट तण्डुलादि, बहुरी, भूंगड़ा, भुना हुआ दाना।

"कान्दुपक्कानि तैलानि पायसं दधि सक्तवः।
द्विजैरेतानि भोज्यानि शूद्रगेहकृतान्यपि॥" (कूर्मपुराण)

भुने हुये द्रव्य, तेल, दुग्ध, दधि और सक्तुको शूद्रके घरमें तैयार होते भी द्विज खा सकते हैं।

कान्दुशाला (सं॰ स्त्री॰) कन्दुपाकार्थं शाला, मध्यपदलो॰। द्रव्यादि भूननेका स्थल, भाड़की जगह।

"गोकुले कन्दुशालायां तैलयन्त्रे इक्षुयन्त्रयोः।
अमीमांस्यानि शौचानि स्त्रीषु बालातुरेषु च॥" (स्मृति)

स्त्री, आतुर, बालक, गोकुल, कन्दुशाला, तैलयन्त्र और इक्षुयन्त्रके मध्य शौचकी कोई मीमांसा नहीं।

कान्दूक (सं॰ पु॰) कन्दुक, गेंद।

कान्दूरोदय—एक प्रसिद्ध चोल राजा। इन्हींके वंशमें रुद्रदेव प्रभृतिने जन्म लिया था।

कान्देक्षु (सं॰ पु॰) काशभेद, एक लम्बी घास।

कान्दोट (सं॰ पु॰-स्त्री॰) कन्दि-ओटन्। १ श्वेतोत्पल, सफ़ेद कमल। २ नीलोत्पल, आसमानी कमल। ३ कुमुद, कोकाबेली, बघोला।

कान्दोत (सं॰ पु॰) कन्दे मूले जातः, कन्द-वेत्-क्त। १ कुमुद, कोकाबेली, बघोला। २ श्वेतपद्म, सफ़ेद कमल।

कान्दोत्थ (सं॰ क्ली॰) नीलोत्पल, आसमानी कमल।

कान्दोद्भवा (सं॰ स्त्री॰) कन्दादुद्भवो ऽस्याः, बहुव्री॰। १ कन्दगुडूची, एक गुर्च। २ क्षुद्रपाषाणभेदी, छोटा पथरचटा।

कान्दौषध (सं॰ क्ली॰) आर्द्रक, अदरक।

कान्ध (सं॰ पु॰) कं जलं दधाति धारयति, कं-धा-क। १ मेघ। २ मुस्तकभेद, किसी किस्मका मोथा।

कान्धजाति—उड़ीसेकी एक असभ्य जाति। अंगरेज ग्रन्थकारोंने इसकी आख्या नानाविध लगायी है। किसीने खन्द, किसीने खांद, किसीने गण्ड, किसीने खोंड और किसीने कन्द नाम लिखा है। किन्तु यह निश्चय करना कुछ विचार-सापेक्ष देखाता, कन्धोंका वास्तविक श्रेणी-परिचायक नाम क्या आता है।

उड़िया इन लोगोंका नाम 'कान्ध' रखते हैं। 'कान्ध' शब्दका अर्थ पहाड़ी है। अनेक लोग समझते—तामिल भाषामें 'कन्दम्' पर्वतको कहते हैं। इसी 'कन्दम्' शब्दसे 'कान्ध' बना है। फिर दूसरोंके कथनानुसार तामिल भाषाके 'कन्द्र' शब्दका अर्थ तीर है। सुतरां इस जातिको मृगयादिमें धनुर्वाण व्यवहार करते देख 'कन्द्र'से कान्ध कहने लगे हैं। कोई कहता—दशपल्ला, बौद और गुमसर प्रदेशके मध्य एक स्थानका नाम किन्ति-रामपुरके कन्धोंमें 'कन्द्र' चलता और उस कन्द्र स्थानके नामसे ही इनका नाम 'कान्ध' पड़ता है।

किन्ति-रामपुरका प्राचीन नाम भी 'कान्द्रदण्डपत' है। कोई कुछ भी कहे, किन्तु यह लोग अपना परिचय 'कान्ध' नामसे नहीं देते। कान्ध अपनेको 'क्वी' जाति बताते हैं। स्वजातीयोंमें जातिके अनुसार किसीका परिचय देनेको 'क्विङ्गा' या 'कुइङ्गा' नाम चलता है। डाल्टन और हण्टरका पद्यानुसरण करनेसे इन्हें 'कान्ध' कहना अनुचित है। फिर प्राचीन शास्त्रादिका प्रमाण देखनेसे निश्चय किया जाता—वास्तविक इनका नाम कान्ध ही आता है। पुराणादिमें केशकान्धार*

* एसियाटिक सोसाइटीका हस्तलिखित ब्रह्मपुराण, ११ अ०।

नामसे एक असभ्य जातिका परिचय मिलता है। बोध होता—प्राचीन उड़ियोंने केशकन्धर शब्दसे 'कन्ध' मात्र रख छोड़ा है। पुराणादिका प्रमाण नीचे उद्धृत है—"अद्रोणा प्राविशया मालकेशकन्धरा:।"

उड़ीसेके पार्वत्यप्रदेशमें इनका प्रधान वासस्थान है। एतद्भिन्न उड़ीसेके दक्षिणांश महानदीके उत्तर किनारे ३४०० वर्ग मील भूमिपर यह देख पड़ते और पूर्व चिलका ह्रद, पश्चिम बरार प्रदेश, सम्बलपुरके गंदोरे वा कालहण्डी प्रदेश और अस्ते जिलेमें भी यह रहते हैं।

अपने देशके मध्य केवल कन्ध ही वास नहीं करते। वहां शबर, कोल, डोम, पान और अन्यान्य असभ्य भी रहते हैं। किन्तु वह कन्धोंको आंखमें अत्यन्त घृण्य लगते और नीच श्रेणीके लोग समझ पड़ते हैं। कन्ध उनसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रखते। फिर वह अति सामान्य हस्त-शिल्प पर जीवन चलाते और अपनी बनायी द्रव्यसामग्रीके विनिमयमें कन्धोंसे शस्यादि पाते हैं।

आजकल कन्ध हिन्दुवोंकी निम्नश्रेणीमें गिने जाते हैं। इस सम्बन्धमें अनुसन्धान करना उचित है—पहले कन्ध कहां थे। इनमें कोई कहता—पहले मध्यभारतमें हमारा दल रहता था, जो ताड़ित होनेपर पूर्वकी ओर उड़ीसेतक भग आया। फिर दूसरोंके कथनानुसार पहले कन्ध उड़ीसेके दक्षिणांशमें ही रहे, विताड़ित होनेपर पश्चिमकी बरार प्रदेश पर्यन्त हट गये। इन दोनों मन्तव्योंसे समझ पड़ा—जब उड़ीसे और मध्यभारतमें आर्यजातिका प्रभुत्व बढ़ा,तब कन्धोंका दल विताड़ित हो मध्यप्रदेशमें जाकर बसा। जो हो, किन्तु प्राय: चार पुरुष गुज़रे बौद प्रदेशको ही इन्होंने अपना प्रधान वासस्थान मान रखा है। बौद प्रदेश आजकल एक हिन्दू राजाके अधीन है। यह राज्य महानदीके दोनों किनारे प्राय: ३५ मील विस्तृत है। स्थानीय राजा महानदीका कर देते हैं। इसी प्रदेशके निकटवर्ती पर्वतोंमें कन्ध रहते हैं। इनके ग्राम क्षुद्र क्षुद्र पर्वत-शिखर वा घनवनमें परस्पर पृथक् होते हैं। पृथक् पृथक् रहनेसे प्रत्येक ग्रामका शासनकार्य सुशृङ्खलासे चलता है। अन्यान्य असभ्योंकी भांति यह भी दो-चार ग्रामोंको मिला एक विभाग बनाते और उसका एक नायक ठहराते हैं। कन्ध कहते—इसी नियमसे हम एकसाथ समस्त बौद राज्य शासन करते थे।

कोई ८५ वर्ष पहले अंगरेज कन्धजातिके सम्बन्धमें कुछ अधिक जानते न थे। वह केवल इतना ही समझते—समुद्रोपकूलके बौद और गुमसर नामक दोनों हिन्दू राज्योंके पश्चिम यह असभ्य लोग रहते हैं। गोदावरी एवं महानदीके मध्यवर्ती प्राय: ३०० मील दीर्घ और ५०से १०० मील प्रस्थ भूभागमें शबर तथा कन्ध वास करते हैं। यह देश—वन एवं पर्वतमय होनेसे दुर्गम पड़ता है। विदेशीय इस देशमें थोड़े महीने ही ठहर सकते हैं। १८३५ ई०को गुमसरके राजाने बाकी राजस्व देनेके लिये विद्रोही हो कन्धोंका ही आश्रय लिया था। इसी घटनामें अंगरेज कन्धोंसे परिचित हुये और लोगोंको रख इनके आचार, व्यवहार, नियम, न्याय, धर्म, कर्म एवं देशादिका विषय समझे।

अपने आवासकी मध्यस्थ भूमिमें जो कन्ध रहते, वह अधिक दिन एक स्थलपर नहीं ठहरते; इधर उधर देशके नाना स्थानोंमें घूमा करते हैं। यह न तो गवरनमेण्टको कुछ कर देते और न उसके किसी कर्मचारीसे कोई संस्रव रखते हैं। किन्तु अनेक स्थलपर इनमें अर्धकर्ता-प्रधान और अर्ध-सामन्त-प्रधान मिश्रित शासनप्रणाली देख पड़ती है। इस श्रेणीके कन्ध अपने जातीय भावके प्रति एकान्त अनुरागी होते हैं।

हिन्दू राजाओंसे दूरीभूत किये जानेपर कन्ध तीन श्रेणियोंमें बंट गये। इनमें जो सर्वापेक्षा दुर्बल पड़ते, वह हिन्दू राज्यके अधीन अति नीच श्रेणीके लोगोंकी भांति रहते, अपनी भूमि नहीं रखते और दूसरोंके निकट दैनिक रीतिसे परिश्रम उठा, या वनमें काठ लुटा जीवन धारण करते हैं। दूसरी श्रेणीके कन्ध युद्धके समय हिन्दुवोंके निकट सैन्य

पहुंचा लड़नेकी प्रतिज्ञापर जागीर पाते हैं। यही उड़ीसेमें मुसलमानोंके आक्रमण-समय अपने-अपने राजाकी ओरसे लड़े थे। फिर तीसरी श्रेणीके कन्ध पराजित होते भी स्वाधीन भावसे मित्र-सामन्तकी भांति रहा करते हैं। यह भी युद्धके समय अपने-अपने मित्र राज्यको साहाय्य देते, किन्तु उसके लिये कोई वेतन या जागीर नहीं लेते। १म श्रेणीके कन्ध 'भेटिया' कहाते हैं। यह पूर्वघाट-पर्वतकी निम्न-भूमिमें रहते हैं। २य श्रेणीके कन्ध 'बनिया' नामसे ख्यात हैं। यह पर्वतके ऊपर ही रहते हैं। फिर ३य श्रेणीके कन्धोंका कोई स्वतन्त्र नाम नहीं। एतद्भिन्न वासस्थानके भेदसे भी इनका भिन्न-भिन्न नाम रखा जाता है। पर्वतपर रहनेवाले 'मालिया कोइङ्गा', समतल भूमिपर रहनेवाले 'सासी कोइङ्गा' और महानदीके दक्षिण रहनेवाले केवल 'कोइङ्गा' कहाते हैं। तेलङ्गी इन्हें 'कदुलू' या 'कदुवोतुलू' कहते हैं। इस शब्दका अर्थ 'पहाड़ी लोग' है।

कन्धोंकी शासनप्रणाली—कन्ध आजकल अंगरेजोंके अधीन तो रहते, किन्तु वस्तुतः उनके शासनपर नहीं चलते। यथार्थ इन्होंने शासनकी प्रणाली अपने ही अधीन रखी है। इन लोगोंमें शासनके कार्यको सुविधाकी एक सुन्दर शृङ्खला है। कन्धोंमें वंशगत जातिविभाग लगा रहता है। फिर प्रत्येक वंशमें शाखाभेद पड़ता और प्रत्येक शाखामें एक एक गृहस्थ-को ले एक एक भाग चलता है। बहुतसे गृहस्थोंको मिलाकर एक ग्राम बनता है। प्रत्येक ग्राममें प्रायः एक ही वंशके लोग रहते हैं। इस वंशकी प्रत्येक शाखामें एक अध्यक्ष निर्धारित होता है। फिर अध्यक्षोंमें जो व्यक्ति ज्येष्ठवंश-सम्भूत रहता, वही ग्रामका 'मण्डल' ठहरता है। इन्हीं मण्डलको बोद राज्यमें 'खोंड' चिन्ताकिमेडी प्रदेशमें 'मांझी' और गुमसर राज्यमें 'मुलिको' कहते हैं। इसी प्रकार बहुतसे ग्रामोंका एक नायक होता है। फिर बहुतसे नायकोंपर एक सरदार रहता और कितने ही सर-दारोंपर एक राजा-जैसा व्यक्ति अधिकार रखता है। राजाको 'बिसाई' कहते हैं।

कन्धोंका समाज-बन्धन—प्रत्येक गृहस्थके मध्य प्राचीन वा ज्येष्ठ ही कर्ता होता है। पुत्रपौत्रादि सकल ही उसके अनुगत रहते हैं। सभी एकान्नवर्ती होते हैं। पितामही वा माता सबके लिये अन्नपाक करती हैं। पुत्रपौत्रादि पिता वा पितामहकी जोतइगामें जो कमाते, उसपर पिता वा पितामह ही अधिकार पाते हैं। एक वंशोद्भूत बहुतसे ऐसे ही गृहस्थोंसे शाखा बनती है। गृहस्थोंके कर्ताओंसे कोई व्यक्ति प्रत्येक शाखाका अध्यक्ष निर्वाचित होता है। इसी प्रकार बहुतसे अध्यक्षोंमें एक मण्डल, बहुतसे मण्डलोंमें एक नायक, बहुतसे नायकोंमें एक सरदार और बहुतसे सरदारोंमें एक बिसाई ठहराया जाता है। यह सकल पद वंशानुक्रमिक धारावाहिकरूपसे निर्दिष्ट रहते भी यदि कोई अपने पदके उपयुक्त गुण नहीं रखता, तो उसे तत्क्षणात् निकाल देना पड़ता है। वंशके मध्य ज्येष्ठ पुत्र ही सामान्यतः इन सकल पदोंका अधिकारी होता है। किन्तु उपयुक्त गुण न रहनेसे उसका भ्रातुष्पुत्र उक्त पद पाता है। निर्वाचनके समय सबका मतामत लेना नहीं पड़ता। कार्यको गतिसे सबको अपनेसे अकर्मण्य न देख और उपयुक्त व्यक्तिके अनुगत रह चलना पड़ता है।

इनका समाजबन्धन अति सुन्दर और दृढ़ है। अधिकांश सभ्य जातियोंमें ऐसी दृढ़ता देख नहीं पड़ती। इनमें गुणका जैसा आदर और सम्मान है, वैसा सभ्यताभिमानी अनेकानेक जातियोंमें कहीं नहीं। कन्धजातिके पूर्वोक्त प्रधान व्यक्ति ही अपने अपने अधीनस्थ लोगोंके वंशकर्ता, मजिष्ट्रेट और पुरोहितका कार्य करते हैं। वंश और निर्वाचनकी प्रथाका उद्देश्य एकत्र मिल इन सकल प्रधान पद-वियोंके लोगोंको धार्मिक बना डालता है। कन्ध प्रधान पदोंपर बैठ जो कर्तव्य कर्म करते, उसके लिये कोई वेतन वा विशेष सुविधा नहीं रखते। विचारक, पुरोहित और शासकको केवल कुछ सम्मान मिल जाता है। प्रत्येक गृहस्थके संसारमें कर्ता ही प्रधान रहता है। बाकी लोग समपदवोंके लिये जाते

हैं। नायकों और सरदारोंका भी यही हाल है। इनके सम्मान-सूचक कोई आड़म्बर नहीं रहता। अन्यान्य लोगोंकी भांति यह भी सामान्यभावसे कालयापन करते हैं। इनके स्वतन्त्र वासस्थान वा दुर्ग, प्रबन्धकारी सैन्य और विषयादि नहीं होता। पैतृक भूमिकी कृषिमें अपने और पुत्रपौत्रादिके परिश्रमसे उत्पन्न अन्न ही कन्धोंका प्रधान आय है। इन्हें कोई किसी प्रकारका साहाय्य वा कर नहीं देता। किसी उत्सव वा क्रियाकाण्डके समय यह यथोचित सम्मानादि पाते और उसीसे परितुष्ट हो जाते हैं। प्रति ग्राममें 'डिगालू' निर्वाचित होते हैं। सरदारोंके समक्ष वही स्व-स्व ग्राम या जातिका अभाव और अभियोग उपस्थित करते हैं। फिर वही ग्रामीण लोगोंके मुखपात्र भी ठहरते हैं।

सरदार या बिसाई एकान्त आवश्यक न आते अपनी अपनी जातिके किसी विषयमें हस्तक्षेप करनेसे अलग रहते हैं। किसी कार्यमें वह मनमानी चला नहीं सकते। उन्हें अधीनस्थ नायकों और मण्डलोंसे परामर्श ले कर्तव्यावधारण करना होता है। सब सरदार और बिसाई अपनी अधीनस्थ और अपरापर जातिका सम्बन्ध देखते रहते हैं। युद्धादिके विषयमें कर्तव्य ठहराना, किसी हिन्दू राजाको साहाय्य देनेकी सम्बन्धमें मीमांसा लगाना, अपनी जातिमें सकल विषयोंके नियम, न्याय, आचार एवं व्यवहारकी शृङ्खला-रक्षाके प्रति दृष्टि दौड़ाना, अपराधीको दुष्कर्म करनेपर विचारपूर्वक दण्ड दिलाना और परस्परका विवाद मिटाना भी उन्हींका काम है।

उक्त सकल विचार एवं मीमांसाकार्यके निर्वाहको वह अपने अधीनस्थ अध्यक्ष एवं नायक एकत्रकर परामर्श लेते हैं। विषयका गुरुत्व देख परामर्शदाताओंकी संख्या घटायी-बढ़ायी जाती है। जातिके सरदार ही अपने संसारका सामान्य कर्तृत्व, अपने ग्रामके मण्डलका कार्य और अपनी शाखाकी अध्यक्षता किया करते हैं।

क्या ग्रामके मण्डल, क्या शाखाके अध्यक्ष और क्या जातिके सरदार—सभी अपने-अपने अधीनस्थ लोगोंको गृहधर्म और वाह्यधर्म बनानेके लिये विशेष चेष्टित रहते हैं। कन्धोंको विश्वास रहता—जिन जातियोंके साथ प्रकाश्य-रूपसे कोई सन्धि-नियम नहीं ठहरता, उनमें स्वच्छन्द युद्ध चल सकता है। यहांतक, कि उसी बिसाई या ग्रोड़की अधीनस्थ भिन्न जातियोंमें सन्धि न रहते एक-दूसरेके सरदार परस्पर लड़ जाते हैं। सुतरां इनके मध्य परस्पर प्रकाश्य सन्धि न रहनेसे सकल ही युद्ध-विग्रहमें डूब विशृङ्खला डाल सकते हैं। किन्तु सरदारों या अध्यक्षोंका प्रभुत्व अक्षुण्ण रखनेको सर्वदा ऐसा होने नहीं पाता।

शान्तिरक्षाके लिये कन्धोंमें जो नियम-विधि चलता, वह अन्यान्य असभ्य जातियोंसे नहीं मिलता। किसीका हत्या होनेपर अन्य जातिमें जैसे हतव्यक्तिके आत्मीय प्राणके बदले प्राण लेनेपर बाध्य पड़ते, वैसे यह कभी नहीं करते। हत्याके बदले कन्ध अर्थ लेकर भी विवाद मिटा देते हैं। साङ्घातिक आघातादि लगनेपर अपराधीके विषयसे आहतको क्षतिपूरणस्वरूप अर्थ दिलाया जाता और जबतक वह आरोग्यावस्थामें नहीं आता, तब तक अपराधीके व्ययसे ही अपनी संसारयात्रा चलाता है।

इनमें व्यभिचारके दोषपर किसीप्रकार क्षतिपूरणकी प्रथा नहीं। स्त्री व्यभिचारिणी रहने और पकड़ी जा सकनेसे स्वामी उपपतिको मार डालनेपर बाध्य है। व्यभिचारिणी स्त्री स्वामीके गृहमें स्थान नहीं पाती और बात खुल जानेसे उसी क्षण अपने पिताके घर भेज दी जाती है। विषयादिगत अपराधमें अपराधीके निकटसे हृत वा नष्ट वस्तु उद्धार कर देते ही न तो कोई झगड़ा रहता और अपहृत वस्तु अपहारकसे ले अधिकारीको देनेपर न कोई दावा चल सकता। इससे चोरको प्रश्रय तो मिलता, किन्तु प्रथम अपराधमें ही ऐसा नियम चलता है। कारण द्वितीय बार चोरी करनेसे अपराधी व्यक्तिविशेषके प्रति अत्याचारी या सामान्य चोर ही समझा नहीं जाता, वरं समस्त समाजके प्रति अत्याचार करनेका अभियोग आता और स्वजातिसे निर्वासन-

देख पाता है। साधारणतः कन्धजातिके मध्य विषयगत अपराध दो प्रकार होता है—(१) कृषिजात सामग्री अपहरण और (२) अन्यायपूर्वक दूसरेके क्षेत्रका अधिकार। शस्यापहरण करनेसे अपराधीको शस्य वापस देना पड़ता और जिस स्थानमें वापस देनेका उपाय नहीं रहता, उस स्थलमें अपराधी अपना शस्यपूर्ण क्षेत्र क्षतिग्रस्तको समर्पण करता है। जितने दिन उसका क्षतिपूरण हो नहीं जाता, उतने दिन वह उस क्षेत्रका उत्पन्न शस्यादि ले जाता है। क्षेत्र ले क्षतिग्रस्त कन्ध अपराधीको सपरिवार मृत्युके मुखमें नहीं डालते, वरं प्रतिवर्ष उत्पन्न शस्यादि इसप्रकार बांटते, जिससे उसको सपरिवार अन्नकष्ट झेलना न पड़े। किसी-किसी स्थलमें अन्यायसे क्षेत्र अधिकार कर लेनेपर अधिकारीको कोई शास्ति नहीं मिलती। केवल उसके हाथसे क्षेत्र निकाल यथार्थ अधिकारीको दिला दिया जाता है। इन लोगोंमें अधिकारका प्राचीनत्व देख भूमिके स्वत्वका निर्णय होता है। खामदनी दे दूसरेकी भूमि भोगनेकी प्रथा कन्धोंमें नहीं। प्रत्येक गृहस्थ अपनी भूमि रखता, जिसके लिये कोई स्वतन्त्र जमीन्दार नहीं रहता। जो व्यक्ति जिस भूमिमें अधिक दिन कृषि करता, उसका उसमें स्वत्व ठहरता है।

इनकी कृषिप्रणाली अधिकतर भ्रमणशील अवस्थासे मिलती है। कन्ध जब किसी स्थानकी भूमिमें अधिक उर्वरा शक्ति नहीं पाते, तब उसे छोड़ जाते हैं। चौदह वत्सरमें वह अपने ग्राम भी बदल डालते हैं। इसीप्रकार कन्ध प्रदेशमें पतित भूमिका परिमाण बहुत बढ़ जाता है। किसी स्थानकी लोकसंख्या बढ़ने पर वह पार्श्ववर्ती पतित भूमि आपसमें खण्ड-खण्ड बांट भोग करते हैं। एकबार छोड़ देनेसे भूमि या ग्राममें पूर्वाधिकारीका स्वत्व नहीं रहता। फिर जो लोग उसपर नूतन अधिकार करते, वही अपने अधिकारके प्राचीनत्वसे स्वत्व भी रखते हैं। एक जातिसे अधिकृत प्रदेशकी पतित भूमिपर अपर जाति अधिकार करने नहीं पाती। जिस जातिके अधिकृत प्रदेशमें भूमि रहती, उसीके मध्य प्रयोजनानुसार पतित भूमि बंटती है। भूमिका स्वत्व जैसे सहज ही उपजता, वैसे ही विक्रयका नियम भी अति सरल पड़ता है। भूमिविक्रय करनेकी इच्छा रखनेवाला व्यक्ति अपना अभिप्राय अध्यक्ष या सरदारसे कहता है। इसप्रकार अपना अभिप्राय उसकी अनुमतिके अहणार्थ कहा नहीं जाता। किन्तु सर्व साधारणमें अधिकारीको प्रचार करना आवश्यक है—मैं अपनी भूमि बेचता हूं। फिर बेचनेवाला खरीदारको बिकनेवाली भूमिपर लेकर पहुंचता है। वह ग्रामके ५।६ गृहस्थ-कृषक बोला अपने क्षेत्रको एक मुट्ठी मट्टी खरीदारके हाथपर देता और उसी समय मूल्य लेता है। मूल्य ले और ग्राम्य देवताको साक्षी दे विक्रयकर्ता उच्चःस्वरसे कहता है—इस भूमिपर चिरकालके लिये मेरा कोई स्वत्व नहीं।

भूमिके विषयपर जो विवाद-विसंवाद आते, उन्हें ग्रामके मण्डल मिटाते हैं। वह लोग उभयपक्षके प्रश्नोत्तर पर कान दे और साक्षीका साक्ष्य ले विचार करते हैं। सहजमें मीमांसा न होनेसे अनेक परीक्षायें चलती हैं। साधारणतः कन्ध व्याघ्रचर्म छूकर शपथ उठाते हैं। इसप्रकार शपथ उठानेसे व्याघ्रमुखमें मिथ्यावादीका मृत्यु अवश्य होता है। यदि कभी कोई कन्ध व्याघ्रके मुखमें पड़ता, तो वह मिथ्यावादी एवं चोर ठहरता है। लोग ऐसे परिणामपर सन्तोष देखाते और उसके परिवारवर्गको जातिसे निकाल भगाते हैं। किन्तु ग्राम्य पुरोहित (डोमने) दयापूर्वक यथासर्वस्व ले मिथ्यावादियोंको फिर जातिमें मिला सकते हैं। कभी-कभी गिरगिटका चर्म छूकर भी शपथ किया जाता है। ऐसे शपथमें मिथ्या कहनेसे. मिथ्यावादीके शरीरमें कुष्ठ-जैसा चर्मरोग उठ खड़ा होता है। एतद्भिन्न कन्धोंके विश्वासानुसार पृथ्वी देवीके उद्देश्य यदि विचारक मीमांसा चढ़ा और उसके रक्तमें ग्राम्य भिन्न विचारकाल खाता, तो उसी स्थानपर यथार्थ अपराधी मर कर गिर जाता है। फिर विवादी-भूमिकी मट्टीसे विचारकके अपने हाथ कर्दमका ताल बनानेसे भी उक्त ही फल होता है। इन दोनों व्यवहारों पर

कन्ध इतना दृढ़ विश्वास रखते, कि इनका आयोजन देखते ही यथार्थ अपराधी आत्मप्रकाश करने लगते हैं।

उत्तराधिकारित्वके नियमानुसार जो व्यक्ति स्वयं कृषिकार्य वा भूमिरक्षा करनेमें असमर्थ रहता उसे पैतृक भूमिका अधिकार नहीं मिलता। किसीके मरनेसे पुत्र ही विषयाधिकार पाता और ज्येष्ठ पुत्रके ही अंशमें अधिक भाग आता है। किसी-किसी जातिमें सबको समान भाग भी मिलता है। पुत्र-सन्तान न रहनेसे मृत व्यक्तिके भ्राता अधिकारी होते हैं। कन्यायें अलङ्कारादि, अस्थावर सम्पत्ति और गृहकी सामग्री अंशानुसार बांट लेती हैं। मृत्युके समय किसीकी कन्या अविवाहिता रहनेसे जितने दिन विवाह नहीं ठहरता, उतने दिन उसे पितृगृहमें ही ठहरना पड़ता और भोजन, वस्त्र तथा विवाहका व्यय मिलता है।

इन लोगोंमें सम्भ्रम रक्षार्थ अधिक मानमर्यादा नहीं। इसका कोई नियम कहां पाते—निम्नश्रेणी-वाले उच्च श्रेणीवालोंको देखते ही सम्मानके लिये अपना मस्तक झुकाते हैं। किन्तु पथमें चलते समय स्वश्रेणीके मध्य वयोवृद्धको देख इतना कहना पड़ता है—मैं जाता हूं। वयोवृद्ध भी उत्तर देता है—जावो। प्रणाम करते समय कन्ध ऊर्ध्ववाहुकी भांति दक्षिण हस्त ऊपरको उठाते हैं। कभी-कभी यह हिन्दुवोंकी रीतिनीति अवलम्बन करते हैं। पूर्व-पुरुषके प्रति कन्ध विशेष सम्मान देखाते हैं।

कन्धोंके तुल्य कष्ट-सहिष्णु दूसरी जाति नहीं। दुर्भिक्ष वा गृहविवादमें छिन्न-भिन्न पड़ते भी कोई साधारण विपद् आनेपर सब लोग नवोत्साहसे उसके विपक्ष उठ खड़े होते हैं। सुननेसे आश्चर्य आता है—जब अंगरेजोंसे कन्धोंका युद्ध हुआ, तब प्रत्येक सरदारने अपूर्व साहसका परिचय दिया और कैसी बड़ी दृढ़ताके साथ अवशेष कष्ट उठा जीवनके शेष मुहूर्त पर्यन्त युद्ध किया था।

जन्म, मृत्यु और विवाह—तीनों कर्मोंमें कन्धोंके यथेष्ट उत्सवादि होते हैं। आसन्न-प्रसवा कामिनी ग्रामके देवताको पूजादि चढ़ाती हैं। प्रसव होनेमें विलम्ब पड़ने या क्लेश मिलनेसे पुरोहित आकर स्त्रीको दो झरनोंके सङ्गमपर ले जाते, जलसे छींट लगाते और जनन-देवताको पूजादि दिलाते हैं।

नामकरणके लिये इनमें बड़ा उद्वेग उठता है। कन्ध ऐसा-वैसा नाम नहीं रखते। पुरोहित एक पात्रमें जल डाल शिशुके आदिपुरुषसे प्रत्येकका नाम ले जलमें एक-एक धान्य फेंकते हैं। सभी धान्य जलमें डूब जाते हैं। किन्तु जिसके नामका धान्य फेंकते ही तैर आता, वही शिशुका नाम रखा जाता है। इनको विश्वास रहता—उसी व्यक्तिने फिर आकर जन्म लिया है। सप्तम दिवस नव शिशुके कल्याणार्थ ग्रामके लोगों और पुरोहितोंको भोज खिलाते-पिलाते हैं। इस भोजमें कन्ध महुवेकी शराब पीते हैं।

विवाहके विषयमें यह बहुत सतर्क रह सम्बन्धादि जोड़ते हैं। वंशकी गुरुता और वीर्यवत्ता बचानेके लिये कन्ध कभी स्वश्रेणी वा आत्मीय कुटुम्बमें विवाह नहीं करते। किन्तु जिन दो जातियोंमें चिरविवाद रहता, उनके मध्य विवाह सम्बन्ध गंठ सकता है। भयानक युद्ध चल जाते भी विवाहकी सभामें उभय जातिके लोग एकत्र हो पानामोद लगाते हैं। इस बातको कोई नहीं देखता—प्रभात होते ही फिर द्विगुण उत्साहसे युद्ध बढ़ेगा। ऐसी घटना प्रायः पड़ते रहती है। १०।१२ वत्सरके वयसमें पुत्रका विवाह होता है। पुत्रकी अपेक्षा वधूका वयस अधिक होता है। १० वत्सरवाले बालकके साथ अभाव पक्षमें १४ वत्सरकी कन्याका विवाह करना चाहिये। इसकी अपेक्षा अल्पवयस्काका विवाह नहीं होता। फिर भी १५।१६ वत्सरसे अधिक वयस्का कोई कन्या अविवाहिता नहीं रहती। सम्बन्ध स्थिर करनेके दिन वरकर्ता अपना आत्मीय कुटुम्ब ले कन्याकर्ताके घर पहुंचते और कन्याका मूल्य-स्वरूप तण्डुल, मद्य तथा १०।१२ पशु अपने साथ रखते हैं। कन्यापक्षके पुरोहित अपने यजमानके द्वारपर खड़े हो उनकी अभ्यर्थना करते हैं। फिर पुरोहित वरकर्ताका प्रदत्त मद्य पी विवाह-देवताको

मद्यादि चढ़ा देते हैं। अन्तको उभय वैवाहिकोंमें परस्पर हाथ मिलनेपर विवाहका सम्बन्ध स्थिर होता है। रातको सब लोग कन्या-कर्ताके घर ही आहारादि करते हैं। सारी रात नृत्य, गीत, वाद्य और मद्यकी धूम रहती है। शेष रात्रिको पुरोहित वर-कन्याके हाथ हरिद्राक्त सूत्र बांधते और धानसे चावल तैयार होनेवाले घरमें खड़ाकर दोनोंके मुखपर हरिद्राके जलकी छींट मारते हैं। प्रातःकाल होते ही वर एवं कन्याके चचा दोनोंको अपने-अपने स्कन्धपर बैठा महासमारोहसे नाचते-गाते वरके घरको ओर चलते हैं। कन्यापक्षीय भी साथ साथ जाते हैं। राहमें वर और कन्याका चचा अपना-अपना भार बदल वरके घरको भागता है। इधर कन्यापक्षीय कन्याको न देख वरपक्षसे उसे देखानेके लिये झगड़ा लगाते हैं। समस्त आमोद उत्सव रुक जाता है। दोनों दल पृथक् हो परस्पर युद्धार्थ खड़े होते हैं। युद्धमें लोगोंके मरते-कटते भी कुछ देर बाद पुरोहितोंकी मध्यस्थतासे विवाद मिट जाता है। कन्यापक्षीय वापस चले जाते हैं। यदि पथमें पार करनेको कोई नदी पड़ती, तो निम्नलिखित व्यवस्था चलती है—पुरोहित वरके घर जा वरकन्याको गात्रमें रक्षाबन्धन एवं शान्तिपाठ कर जलदेवताके उपद्रवसे उद्धार कर आते हैं।

विवाहके बाद जितने दिन पुत्र स्त्रीसहवासके उपयुक्त नहीं ठहरता, उतने दिन घरकर्ताके अनुरोधसे पुत्रवधूको घरका समस्त काम करना पड़ता है। पीछे वयःप्राप्त होनेसे पुत्र और पुत्रवधू दोनोंको संसारके मध्य पूर्ण क्षमता मिलती है।

कन्धोंमें स्त्रियां कुछ विशेष सम्मान पाती हैं। जितने दिन स्वामी छोटा रहता, उतने दिन उसपर स्त्रीका प्रभुत्व चलता है। विवाहके समय वर-कर्ता जो द्रव्य वधूका मूल्यस्वरूप कन्याकर्ताको दे आता, वह वापस होते ही विवाहका बन्धन टूट जाता है। स्त्री पतिगृह छोड़ पितृगृहको चल देती है। स्त्रीके गर्भवती रहते भी कोई आपत्ति नहीं उठती। इस प्रकार एक बार विवाहबन्धन टूट जानेसे स्वामीका स्त्रीपर कोई स्वत्व नहीं ठहरता। किन्तु वह स्त्री भी दूसरा विवाह करनेसे वञ्चित रहती है। स्वामी द्वितीय बार विवाह करता है। व्यभिचार दोष लगते ही इस प्रकार विवाह-बन्धन तोड़ देते हैं। किसी अन्य कारणसे ऐसा हो नहीं सकता। एक पत्नी रहते दूसरी ग्रहण करना असम्भव है।

वेश्या रखनेकी प्रथा इन लोगोंमें निन्दार्ह नहीं। स्त्रीवाला पुरुष वेश्या रखने नहीं पाता। किन्तु स्त्रीको अनुमति ले वह यह काम कर सकता है। ऐसे स्थलमें वेश्यापुत्रोंको औरस-पिताके विषयका समान भाग मिलता है। रखनेकी प्रथा निन्दित न होते भी कन्धोंमें वेश्याओंकी संख्या कम है। फिर व्यभिचार और बलात्कारकी बात सिवा दो-एक जगहके कहीं सुन नहीं पड़ती।

पतिके वयःप्राप्त होनेपर स्त्रियां बड़ी भक्तिसे सेवा करती हैं। भोजनके समय स्त्री पतिको बैठकर खिलाती और समस्त गृहकर्म अपने हाथ चलाती है। जब स्वामीको खेतके काममें एकान्त अवसन्न होते देख पाती, तब दुग्ध-पोष्य सन्तानकी उपेक्षा कर स्त्री उसकी सहायताके लिये दौड़ जाती है। ऐसे समय स्त्रियां कमरमें कपड़ेसे सन्तानको लपेट लेती हैं।

कोई कोई कहता—अविवाहिता अवस्थामें पुत्रवती रहते भी स्त्रीका विवाह होता है। उस स्त्रीकी निन्दा भी सुन नहीं पड़ती। किन्तु ऐसी कन्याका विवाह करनेपर लोग सहज ही स्वीकृत नहीं होते। कन्धोंकी कन्यायें इच्छा करते ही स्वामीका गृह छोड़ पिताके घरको वापस जा सकती हैं। फिर घर पहुंचते ही उनके पिताको विवाहकालीन प्राप्त द्रव्यादि लौटा देना पड़ता है। इसीसे यह कन्यासन्तानसे बड़ी घृणा रखते हैं। इन्हें स्त्रीपर विश्वास नहीं। लोग कहते हैं—नितान्त मित्र कुठारका आघात लगते भी गोपनीय विषय प्रकाश नहीं करता। किन्तु स्त्रियां—कितनी ही बुद्धिमती क्यों न हों—सामान्य प्रलोभन पाते ही अतिगोपनीय कथा कह देती हैं।

अपनी जातिके मध्य किसी सामान्य व्यक्तिके मरनेपर यह यथासम्भव शीघ्र ही देहको जलाते और

दशम दिवस ग्रामके सब लोगोंको खिलाते हैं। किन्तु सरदार या मण्डलके मरने पर ढोल बजा मृतके अधीनस्थ समस्त ग्रामोंमें मृत्युका संवाद फैलाते और अन्यान्य ग्रामोंके मण्डल तथा जातीय सरदार बोला मिल-जुल शवको श्मशान ले जाते हैं। बहुत बड़ी चिता बना और उसके मध्यस्थलमें ध्वजा एवं जातीय पताका लगा शवको रखते हैं। फिर मृतका पुत्र शवकी ओर पीठ फेर चितामें अग्नि देता है। उसी समय मृतके यावतीय वस्त्रादि, तैजस तथा अस्त्रादि ला और चावलको भूसीपर जमा चिताके निकट लगाते हैं। अस्तको जबतक पताकादि पर्यन्त नहीं जलते, तबतक मृतके आत्मीय चिताको चारो ओर नृत्य करते हैं। फिर मृतके अधीनस्थ प्रधान उसकी उक्त सकल सम्पत्ति अपने मध्य मान्यके चिह्नको भांति बांटते और ८ दिन पर्यन्त मध्य मध्य वहां पहुंच तथा मृतके वंशसे मिल चिताभस्मको चारो ओर नाचते एवं शोकसङ्गीत अलापते हैं।

दशम दिन मृतके समय अधीनस्थ एवं ग्रामके प्रधान जुटते और एक सरदार मनोनीत करते हैं। मृतका ज्येष्ठ-पुत्र ही प्रायः मनोनीत होता है।

कन्धजातिमें दो प्रधान गुण हैं—विश्वस्तता और साहस। आतिथ्य इन लोगोंमें इतना प्रबल रहता, जो अनुमानसे समझ नहीं पड़ता। कन्ध कहते—धन, मान और जन देकर अतिथिकी सेवा करना चाहिये। सन्तानकी अपेक्षा भी अतिथि यत्नका वस्तु है। अतिथि पर पड़नेसे विपद्को अपने प्राण देकर भी दूर कर देना उचित है। ग्राममें आ पहुंचनेसे किसी विदेशी पथिकको प्रत्येक गृहके कर्ता भोजनके लिये बोलाते हैं। जिसके घर अतिथि आता, उसके आनन्दका पार कोई नहीं पाता। वह जितने दिन चहता, उतने दिन टिकता है। उससे कोई 'जाओ' कह नहीं सकता। यह उन लोगोंको भी आश्रय देते, जो युद्ध वा प्राणदण्डके भयसे भाग शरण लेते हैं। फिर अपने पिता, आत्मीय या सन्तानको मार डालनेवाला यदि कन्धोंके निकट आश्रय मांगने आता, तो कभी विमुख होकर नहीं जाता। किसी-किसी जातिमें दुष्ट व्यक्ति अपने ऐसे ही दुष्कार्यके फलसे परित्राण पानेकी चेष्टा करते हैं। इसीसे कन्धोंने नियम बना रखा है—यदि कोई हत्याकारी आ इसप्रकार आश्रय ले, तो गृहस्थ उसको आश्रय प्रदान कर सपरिवार अपना घर छोड़ चल दे; किन्तु खाद्यादि प्रेरण न करे। आततायी जबतक घरमें रहता, तब तक कोई कुछ नहीं कहता। किन्तु अनाहारपीड़ित हो घरसे निकलते ही गृहस्थ उसे मार प्रतिशोध लेता है। दो-एक जगह हो जाते भी कन्ध इस प्रथाको इतना बुरा समझते, कि नियमानुसार कभी कभी कार्य करते हैं। फिर जो इस नियमसे चलता, वह स्वजातिके मध्य घृणित ठहरता है। आतिथ्यके कारण समय-समयपर पहले इनमें युद्ध होने लगता था। एक बार इसी सूत्रसे एक श्रेणिका दूसरी श्रेणिके साथ युद्ध चला। जो दल हटा, वह अपना ग्राम छोड़ पार्श्ववर्ती ग्राममें जा टिका। ग्रामके अधिवासियोंने अतिथियोंको एक वत्सर आश्रय दिया था। फिर जयलाभ करनेवाले दल शत्रुओंको आश्रय देनेवालोंसे लड़ने लगे। किन्तु आश्रय देनेवालोंने अपने आश्रितको छोड़ा न था। अवशेषको एक वत्सर बीतनेपर जेतृदलने दयापरवश उनका ग्राम त्याग किया। स्वग्राम वापस आ विजित दलने जेतृदलसे आश्रय मांगा था। फिर क्या शत्रुता रह सकी! देवभावपूर्ण कन्धोंने समस्त शत्रुता भूल विजितोंको अधिकार की हुई भूमि वापस दी और अपने शस्यसे बीज बोनेको सामग्री प्रदान की। इस महानुभव जातिको पदरेणुके योग्य क्या कोई सभ्य वा सभ्यतम जाति हो सकती है!

यह विश्वस्तताके कारण ही आज स्वाधीनता खो बैठे हैं। १८३५ ई०को गुमसर राज्यवालोंने अंगरेजोंसे लड़ इनका आश्रय लिया था। उस समय इन्होंने जिन लोगोंको आश्रय दिया, उन्होंके हाथ निज स्त्रीपुत्र और कन्या सौंप मृत्युके मुखमें पतन किया। अंगरेज गुमसर राज्यके व्यक्ति ढूंढ़नेको इनके पीछे लगे। पहले इन्होंने समझ न सकनेसे

अंगरेजोंको देशमें घुसने दिया था। पीछे जब अंगरेजी फौजका अभिप्राय पाया, तब आश्रितोंको रक्षाके लिये अपनी विपद् न देख गुमसरराज्यके परिवारवर्गको इन्होंने गुप्त भावसे पर्वत पर्वत घुमाया। समय-समय पर युद्धमें असंख्य कन्ध मरने लगे, फिर भी आश्रितोंको शत्रुके हाथ सौंप 'अविश्वासी' न बने थे। शेषको कन्ध अपने प्रान्तवासी किसी हिन्दू सरदारकी विश्वासघातकतासे अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण करने पर बाध्य हुये।

कृषि एवं युद्ध ही इनके मध्य सम्मानका कार्य है। कृषि और युद्ध न करनेवाले लोग इनमें घृण्य होते हैं। प्रत्येक कन्ध अपनी खेतीबारीके लिये थोड़ी-बहुत भूमि रखता और उसीसे साम्राज्यका सुख उपभोग करता है। अपनी थोड़ीसी भूमि रक्षा कर फसल काटा सकनेसे यह जितना सन्तोष पाते, उतना किसी विस्तीर्ण साम्राज्यके सम्राट् भी नहीं उठाते। कन्धोंके प्रत्येक ग्राममें कुछ नीच श्रेणीके लोग रहते हैं। वह दूसरेका दासत्व कर अपनी जीविका चलाते हैं।

एतद्भिन्न प्रत्येक कन्ध-ग्राममें कितने ही वंशानुक्रमिक जुलाहे, कर्मकार (लोहार), कुम्भकार (कुंभार), ग्वाले और शौण्डिक (कलवार) भी बसते हैं। वह लोग ग्रामके मध्य रहने नहीं पाते। ग्रामके प्रान्तदेश अथवा किनारे पर किसी स्थानमें पक्की छान वास करते हैं। कन्ध न तो उनका अन्न खाते और न व्यवसाय ही चलाते हैं। निम्नश्रेणीवालोंमें तंबोली ही अधिक काम देते हैं। वह ग्राममें पञ्चायत पड़ने या युद्ध चलनेके समय दूतका कार्य करते हैं। उत्सवादिमें बाजे-गाजे लाना उन्हींके हाथ रहता है। ग्रामीण लोगोंके लिये जुलाहे वस्त्र बुनते और दूसरे भी अनेक कार्य करते हैं। पहले इनमें नरबलिकी प्रथा प्रचलित थी। उस समय जुलाहोंमें प्रत्येक वंश वंशानुक्रमसे अपने ग्रामके लिये बलिका पात्र संग्रह करते रहा। वह लोग अपने लिये भूमि जुटा अथवा उच्च जातिका अवलम्बनीय दूसरा कोई कार्य उठा नहीं सकते। इस लिये उच्च जातिके कन्ध भी उनसे कुछ दयाके साथ व्यवहार करते हैं। कोई उत्सवादि आ पड़ने पर सब लोग उन्हें निमन्त्रण देते हैं। फिर हठात् दोषका कोई कार्य कर डालने पर उनसे प्रतिशोध भी लिया नहीं जाता। यह कन्ध जातिसे स्वतन्त्र श्रेणीके लोग समझ पड़ते हैं। उभयजातिमें किसी प्रकारका वर्णसङ्कर दोष न लगनेसे आज भी यह स्वतन्त्रता स्पष्ट प्रतीत होती है। अनेक लोग उन्हींको इस प्रदेशके आदिम अधिवासी अनुमान करते हैं। कन्धोंने पूर्वकाल उनको हरा स्वयं देश ले लिया था। उसी समयसे वह दासकी भांति कन्धोंके अधीन रहते हैं। सकल नीच श्रेणियोंमें कन्धी और उड़िया दोनों भाषायें चलती हैं। कारण वह उभय जातिसे सद्भाव रखते और उभय जातिके वशीभूत रहते हैं।

कन्ध बालककालसे ही कृषिकार्य सीखते हैं। फिर बाल-सुलभ क्रीड़ामें इन्हें युद्धादिकी शिक्षा भी मिलती है। खेत बोने और काटनेके समय यह बड़े तड़के उठ खिचड़ी-जैसा एक आहार बनाते-खाते और जङ्गलको चले जाते हैं। इस आहारमें दाल, चावल और शूकरका मांस डालते हैं। खेतका लोहार सूखते न सूखते हल चलाने लगते और अविश्राम तीन बजेतक कन्ध अपना कार्य किया करते हैं। जब जङ्गल काट नूतन खेत बनाते, तब दो पहरको कुछ विश्राम लेते समय आहार भी पकाते हैं। अन्य समय यह तीन बजेतक काम चला किसी निकटवर्ती नदीमें नहाते और घर वापस आ आहार पाते हैं। उसी समय इनमें एक प्रकारका रस बनता, जिसमें तम्बाकूका अर्क पड़ता है।

ग्राम-पत्तनके लिये भूमि निर्णय करनेमें कन्ध बड़ा यत्न लगाते हैं। प्रायः पर्वतके पार्श्व या बहु उपलताकीर्ण स्थानमें उच्च भूमिपर ग्राम बसाया जाता है। प्रति ग्राममें दो पंक्ति गृह बनते हैं। मध्यस्थलमें ग्राम्यपथ घूमघाम निकलता है। इस पथको दोनों ओर बन्द करनेको काष्ठ-निर्मित दृढ़ कपाट लगते हैं। प्रायः सकल ग्रामोंके मध्यस्थलमें ही प्रधानके रहनेका घर उठता है। ग्रामपत्तनके समय ग्राममध्यस्थलमें एक आपीतवर्ण लगा अधिष्ठात्री देव-

ताके नाम उत्सर्ग करते हैं। उसी वृक्षके नीचे प्रधानके रहनेका घर होता है। उक्त कार्पास वृक्ष इनके निकट देवतुल्य पूजित है। निम्नश्रेणीके लोग पूर्वोक्त पथके दोनों मुखोंके निकट रहते हैं।

तीस वत्सरसे पहले कन्ध मुद्राका व्यवहार जानते न थे। फिर व्यवसाय-वाणिज्य क्या इनमें अधिक रहा। मुद्राके व्यवहारको सर्वप्रथम अन्या कौड़ी भी चलती न थी। इनके क्रय-विक्रयका कार्य विनिमयसे निर्वाह होते रहे। मेष वा गवादि पशु देनेसे ही अधिक परिमाणके मूल्यका आदान-प्रदान चलता था। अन्यान्य स्थलोंमें चावल दाल प्रभृतिके विनिमयसे मूल्य लिया-दिया जाते रहा। इस प्रकारके विनिमयका हिसाब बहुत टेढ़ा है।

युद्धमें इनका साहस अपरिसीम रहता है। समराङ्गणमें अपने अपने सरदारके निकट यह जिसप्रकार वाध्य आते, उससे इनकी विश्वस्तताका चूड़ान्त परिचय पाते हैं।

कन्ध उच्चतामें हिन्दुवों-जैसे होते हैं। सुगठित शरीर, दृढ़ मांसपेशी, द्रुतपादक्षेप, विस्तृत ललाट और पूर्णायत ओष्ठाधर देखनेसे यह दृढ़प्रतिज्ञ, बलिष्ठ एवं बुद्धिमान् समझ पड़ते हैं। इनकी कथा भी मिष्ट और सरस होती है। सुतरां इनके साथ रहनेसे अधिक आमोद पाता है। युद्धमें कन्ध अत्यन्त भयानक बन जाते हैं। इनके युद्ध वा उत्सवकी वेशभूषा एक ही प्रकार रहती है। लम्बे बाल समेट मस्तकके दक्षिण पार्श्व अलकको भांति झोंटा बांधते हैं। फिर उसपर पक्षीके पालकका मुकुट पहना जाता है। युद्धके पूर्व सरदार कई द्रुतगामी जुलाहे हाथमें वाण दे एक ग्रामसे अपर ग्राम संवाद पहुंचानेको भेजते हैं। दूतके हाथ वाण देख कन्ध ग्रामग्राम युद्धका संवाद समझ लेते हैं। युद्धमें लगनेसे पहले उभय दल जयलाभकी आशासे पृथिवी देवताके निकट एक एक मानसिक नरबलि चढ़ाते हैं। [illegible] युद्धका भी एक देवता रहता है। उसके निकट भी मानता करते—जय मिलनेसे तत्क्षणात् उसी युद्धस्थलमें आपके नाम छागल और पक्षी बलि देंगे। उभय दलोंमें आरम्भ होनेपर जब तक कोई पूर्ण रूपसे हार नहीं खाता, तब तक युद्ध चला जाता है। दूसरे दिन यह फिर नूतन युद्ध आरम्भ करते हैं। युद्ध शेष न होनेपर आगामी दिनको अपेक्षा कर महा उत्कण्ठासे रात बिताते हैं। प्रथम दिन आरम्भ हो पूरा न पड़ने पर द्वितीय दिन आरम्भ होनेसे पहले युद्धक्षेत्रमें एक रक्ताक्त वस्त्र फैला उभय दलोंके योद्धावोंको उत्तेजित करते हैं। दोनों दलोंके पीछे अपने अपने पक्षके वृद्ध एवं स्त्रीकन्यादि अस्त्र-शस्त्र तथा खाद्यादि ले प्रस्तुत हो जाते हैं। युद्धकालमें अस्त्रादि टूटने या काम पड़नेसे अथवा योद्धावोंको तृष्णादि लगनेसे यह तत्क्षणात् उपकरणसामग्री पहुंचाते हैं। युद्धमें प्रथम हत होनेवाले व्यक्तिके रक्तमें आग्रह-सहकारसे उभयपक्षीय वीर अपना-अपना कुठार डुबो लेते हैं। फिर जो व्यक्ति युद्धमें प्रथम किसीको मार लेता, वह हतयोद्धाका दक्षिण हस्त काट अति शीघ्र अपने दलके पीछे जा पुरोहितको देता है। पुरोहित इस हस्तको युद्ध-देवताका अति प्रियवस्तु बताते हैं। केवल प्रथम हत योद्धाका हो नहीं; युद्धमें मारे जानेवाले प्रत्येक व्यक्तिका दक्षिण हस्त हस्ता काट अपने दलके पुरोहितको प्रदान करता है। इसी प्रकार जितने दिन युद्ध चलता, उतने दिन प्रति सन्ध्याकालको दोनों दलोंके पीछे हत वीरोंके दक्षिण हस्तोंका ढेर लगता है। इनके युद्धास्त्रोंमें वक्षाप कृपाण, धनुर्वाण और कुठार व्यवहृत होता है। कन्ध किसी प्रकारकी ढालसे लड़ना अच्छा नहीं समझते। आपसे वाण निकल और भूमि छूते ऊर्ध्व-मुख उठ दृष्टिरेखाके नीचे लक्ष्य मारने पर शिक्षाको यथेष्ट मान प्रशंसा की जाती है। युद्धमें जय पा कभी कोई कन्धवीर अपने कौशल वा बलकी प्रशंसा न तो करता और न सुनता है। सब लोग दृढ़ रूपसे विश्वास रखते—युद्धदेवताकी कृपासे जय हुआ है।

सभ्यजातिके लोभजनक इतने सद्गुण रहते भी कन्धोंमें पानदोष बहुत प्रबल है। महुवेकी शराब इनके प्रति उत्सवमें यथेष्ट परिमाणसे चलती है। इनको विश्वास रहता—मद्य भिन्न ग्रामका कोई

उत्सव और व्यक्तिगत संस्कार पूरे नहीं पड़ता। इनकी स्त्रियां शराब नहीं पीतीं, केवल किसी-किसी उत्सवमें अनुरोधवश जिह्वा द्वारा स्पर्श कर लेती हैं। स्त्रियां मद्यपान करनेसे समाजमें निन्दनीय हो जाती हैं। महुवा फूलनेसे कन्ध बड़ी दुर्दशामें आते हैं। नूतन मधुका नूतन मद्य पी गली-कूचे और मैदानमें इनके दल पुरुष अचेतन पड़े रहते हैं। फिर स्त्रियां गृहके संस्कारका कार्य निबटा इनकी शुश्रूषा किया करती हैं।

कन्धोंके चरित्रमें एक ओर ऐकान्तिकी स्वाधीनता-प्रियता, सरदारोंकी वाध्यता, अटल प्रतिज्ञा, साहस, आतिथ्य, अकृत्रिम बन्धुता तथा परिश्रमशीलता गुण और दूसरी ओर मद्यपान एवं प्रतिहिंसा-परायणता दोष देख मुग्ध होना पड़ता है। दो-एक क्षुद्र विभागोंको छोड़ कहीं चौर्य वा दस्युता-जैसा दूसरा कोई अपराध नहीं। फिर सन्देह रहता—व्यभिचारके अभियोग व्यतीत समस्त कन्ध जातिमें कभी किसीके नाम कहीं क्या दूसरा कोई पाप लगता है।

धर्म और देवता—कन्धोंके यावतीय धर्मकर्ममें बलि ही प्रधान है। इनके देवतावोंकी संख्या भी अधिक है। जल, स्थल, अन्तरीक्ष एवं पाताल सकल स्थानोंमें देवतावोंका वास है। फिर सभी देवतावों पर जीवबलि चढ़ता है। इनके देवतावोंकी तीन श्रेणी हैं। प्रथम श्रेणीमें १४ देवता होते हैं—१ बेरापेनु (पृथिवीदेवता), २ लोहापेन (लौहदेवता या युद्धदेवता), ३ गादजूपेनु (ग्रामाधिष्ठाता), ४ बेल्ला पेनु (सूर्य) एवं दानजू पेनु (चन्द्र), ५ सांदे पेनु (सीमा-देवता), ६ जुगा पेनु (वसन्तरोगके देवता, शीतला), ७ सोरूपेनु (पर्वतदेवता), ८ जोरी-पेनु (नदीदेवता), ९ गस्सा पेनु (वनदेवता), १० सुन्डा-पेनु (पुष्करिणीदेवता), ११ मुगू या चिदराजू पेनु (निर्झरदेवता), १२ पिदजू पेनु (वृष्टिदेवता), १३ पिलागू पेनु (आखेटदेवता) और १४ गारीपेनु (जन्मदेवता)।

उक्त सकल देवता ही कन्धोंके भाग्यविधाता हैं। किन्तु बेरापेनु, लोहापेनु और गादजूपेनु सर्वापेक्षा प्रधान समझे जाते हैं। उनके पीछे सूर्य, चन्द्र एवं सीमा और नदी, वन, पुष्करणी, निर्झर तथा वृष्टिके देवता गणनीय हैं। फिर आखेट, वसन्तरोग और जन्मके देवता भी पूजना पड़ते हैं।

द्वितीय श्रेणीमें ग्यारह देवता हैं—१ बिताबकदो (आदिपितृदेव), २ बांदरी पेनु, ३ दाडमन पेनु (ब्राह्मण), ४ बहमुण्डी पेनु, ५ डूंगरी पेनु, ६ मोंगा पेनु, ७ दमोसिंघानी, ८ पतारपर, ९ पिंसाई, १० काझानी और ११ जसोंदा सलोंदा। बिताबकदो की एकप्रकार प्रतिमा बनती है। हिन्दुवोंके विल्व, वट वा अश्वत्थके नीचे एकखण्ड प्रस्तरको सिन्दूर चन्दनादि लगा शिव, षष्ठी, धर्म प्रभृतिकी प्रतिमा माननेकी भांति यह भी ग्रामके मध्य किसी बृहत् वृक्षके नीचे एकखण्ड प्रस्तर हरिद्रा लगा रखते और आदिपितृदेवकी प्रतिमा कल्पना करते हैं। ग्रामवासी लोगोंके कथनानुसार यह प्रतिमा स्थापित होनेके स्थानपर पहले उक्त देवता कभी कभी आविर्भूत और भूमध्य अन्तर्हित होते थे। बांदरी पेनुकी भी प्रतिमा है। किन्तु कोई निर्णय कर न सका—उसमें क्या लगा है। काष्ठ, प्रस्तर वा लौहादि कोई धातु उक्त मूर्तिमें मिलना कठिन है। डूंगरी पेनुकी पूजा वत्सरमें केवल एकबार होती है। प्रत्येक वंशके लोग मिल-जुल किसी उच्च पर्वतपर चढ़ते और उक्त देवताके उद्देशसे बलि दे प्रार्थना करते हैं—पितृपुरुषोंके जीवन बितानेकी भांति हमारे सन्तान भी अपना जीवन निर्वाह कर सकें। मोंगा पेनु संहार-देवता हैं। व्याघ्र उनकी मूर्ति है। पृथिवीके मध्य वह लोह रूपसे रहते हैं। युद्धमें लोह अस्त्र चलाने और व्याघ्रके मुखमें पड़ अनेक मर जानेसे ही कन्धोंने सम्भवतः दोनोंको संहार-देवताकी मूर्ति ठहराया है। मोंगा पेनुकी भी प्रतिमूर्ति होती है। कन्धोंके विश्वासानुसार जिन वृक्षोंके नीचे उनकी प्रतिष्ठा करते, वह अल्प दिन बाद ही मरते हैं। फिर उनकी पूजामें नियमित रूपसे नियुक्त पुरोहित भी बहुत नहीं जीते। इसीसे लोग चार वत्सर उनकी पूजामें अग्रसर होते हिचकते

हैं। उनके साथ शाहग्र देख अनेक कन्म कालो-देवीको पूजा करने लगे हैं। इनके जातीय देवता अधिकांश पृथिवी या पातालमें रहते हैं। इसीसे पुरोहित भूमिमें स्फोटन पड़ते हो यजमानोंको देखा कहते हैं—इसी स्फोटनसे देवताका आविर्भाव और तिरोभाव हुवा है। एकमात्र बेरा पेनू या पृथिवी-पूजाके दिन सब लोग एकत्र होते हैं। कारण उनकी पूजामें बलि चढ़ाना ही पड़ता है। कन्धोंमें वह प्रधान देवता, स्वभावोत्पादक वीर्य, सर्वमङ्गलालय और समस्त भुवनके स्रष्टा हैं। उनको अकेली स्त्रीका नाम तारा देवी है। बेरा पेनू निरीह देवता हैं। वह कभी किसीका कोई अपकार नहीं करते। किन्तु तारा देवी बिलकुल उनसे विपरीत पड़ती हैं। कन्धोंके कथनानुसार तारा देवीके कारण मनुष्य समाजमें यावतीय दोष या पाप घुसे हैं।

कन्धोंके मतमें सृष्टिका आरम्भ इस प्रकार हुआ है—किसी समय बेरा पेनूने अपनी स्त्रीको अधिक भक्तिमती देखा न था। सुतरां उन्होंने भी उनसे विरक्त हो मनमें ठहरा लिया,—"पृथिवीको उद्भिज्ज-शालिनी बना जीवकी सृष्टि करेंगे। यह जीव हमें सृष्टिकर्ता और आहारदाता समझ भक्तिसे पूजेंगे। ऐसा होनेपर हमारी पत्नी भक्तिभावमें जो त्रुटि करतीं, वह भी जाती रहेगी।" इसके पीछे ही पृथिवीमें प्रथम उद्भिद् उपजा था। फिर जीवकुल निकल पड़ा। मनुष्य निष्पाप और निर्मल रहे। इसीसे उनके साथ बेरा पेनूका साक्षात्कार एवं कथनोपकथन अबाध चलता और आहारके लिये परिश्रम उठाना पड़ता न था। पृथिवी बिना चेष्टा और कृषिकार्य स्वयं अपर्याप्त शस्य उत्पन्न करते रहीं। सर्वत्र निरापद् और शान्ति थी। मनुष्य उस समय नग्न फिरते, किन्तु अपना अनावृतत्व समझते न रहे। शेषको तारा देवी उनका सुख देख न सकीं। उन्होंने मनुष्यके मनमें पाप छोड़ा दिया था। जो उस समय तारा देवीके प्रलोभनसे स्वतन्त्र रह सके, वही एकप्रकार द्वितीय श्रेणीके देवता गिने गये। फिर उन्हें पापासक्तोंपर कर्तृत्व करनेका भार भी मिला था। मानव पापान्वित हो अत्यन्त विषम अवस्थामें पड़ा। पृथिवीने प्रचुर शस्य उत्पन्न करना रोक दिया। पहले मनुष्य मरते न थे। वह आकाशमें पक्षीकी भांति उड़ और जलपर चल सकते रहे। किन्तु पीछे वह क्षमता चल बसी। सब लोग मृत्युके वशीभूत हो गये। यह समस्त घटना होनेपर तारादेवी और बेरा पेनूके मध्य विवाद उठा था। उसी विवादके कारण मनुष्योंमें भी दोनों देवता-ओंके उपासक दो दल बने। बेरा पेनूके उपासक कहते,—"बेरा पेनूने तारा देवीको शाप दिया है—स्त्रियां अति कष्टसे सन्तान धारण और प्रसव करेंगी।" ताराके उपासक बताते—बेरा पेनूमें तारा देवीको हरानेकी क्षमता नहीं। तारादेवीकी उपासनासे रिझा सकने पर मनुष्यका दुर्भाग्य दूर हो जाता है। सुतरां वही सर्वाग्र पूज्य हैं।

बेरा पेनू और तारा देवीका यह विवाद बहुत दिन चला न था। दोनोंके मिलनेसे छह पुत्र उत्पन्न हुये। वह भी छह देवता समझे जाते हैं—(१) पिदजू पेनू—वृष्टि या जल-देवता। उनकी कृपासे देशमें वृष्टि होती है। (२) बुरभी पेनू—वसन्त ऋतु-देवता। यह वृक्षमें नूतन पत्र लाते और रस पहुंचाते हैं। (३) पिमोबी पेनू—लाभ या वृद्धि देवता। (४) कलम्ब या पिलामू पेनू—आखेट-देवता। (५) लोहा पेन—लौह या युद्ध-देवता। (६) सूंदी या सांदे पेनू—सीमा-देवता। बेरापेनूके डोंगा पेनू नामक अपर पुत्र भी हैं। वह हिन्दुवोंके यमकी भांति मृत व्यक्तिका पाप-पुण्य देखते हैं।

एतद्व्यतीत अपर श्रेणीके भी देवता होते हैं। वह मायायुक्त आदि मनुष्य हैं। ग्राम, वन, नदी, पर्वत, गुहा और उद्यानादिके अधिष्ठातृरूपसे उनकी पूजा होती है।

बेरा और तारा देवीका वासस्थान स्वर्ग है। छिन्ना समुद्र पार किसी पर्वतपर रहते हैं। कन्धोंके मतानुसार उसी पर्वतसे सूर्योदय होता है। फिर मरनेपर जीव उसी समुद्र वैतरिणीको पार करता है। कन्ध उसे गृपलसी या लम्फपर्वत कहते हैं। अन्यान्य

देवता पृथिवीपर रहते हैं। किन्तु उनमें कोई मनुष्यको देख नहीं पड़ता। पशु-पक्षी उन्हें देखते हैं। उत्सर्गके द्रव्यादि खा कन्धोंके देवता अपना काम चलाते हैं। फिर भी समय समय वह स्वयं आहारान्वेषणको पृथिवी पर आते रहते हैं। खेतमें बांझ बाल लगनेसे कृषक सिद्धान्त करते—कोई देवता आकर इसका शस्य ले गये हैं।

कन्ध प्रति पूजामें बलि चढ़ाते हैं। जिस पूजामें बलिकी आवश्यकता नहीं पड़ती, व्यवहारवशतः उसमें भी शूकरहत्या चलती है। शूकर इनके निकट बलिकी आवश्यकता, प्रत्येक पूजाके उपकरणका अङ्गमात्र कहाता है।

यह सर्वापेक्षा उत्कृष्ट बलि पृथ्वीदेवताको उत्सर्ग करते हैं। पृथ्वी देवताकी दो प्रकार पूजा होती है। समग्र जाति एकत्र हो एक प्रकार पूजा करती, फिर प्रत्येक गृहस्थके घर अपने-अपने स्वार्थके लिये दूसरी पूजा चढ़ती है। नरबलि व्यतीत अन्य बलि भी इन्हें देना पड़ता है। खेत बोने और काटनेके समय बलि देनेका नियम है। किन्तु उसमें सामान्य ही बलि लगता है।

पहले मारीका भय वा दुर्भिक्ष लगने अथवा समग्र जातिके प्रतिनिधिस्वरूप प्रधानके संसारपर अकस्मात् कोई विषम विपद् पड़नेसे नरबलि चढ़ाते थे। फिर साधारण लोग भी अपनी अपनी सांसारिक विषम दुर्घटनाके हस्तसे उद्धार होनेको नरबलि देते रहे। जब किसीको व्याघ्र खा जाता, तब उसके परिवारवर्गको विश्वास आता था—पृथ्वी देवताको एक नरबलिका प्रयोजन है। तत्पश्चात् बलिका पात्र संगृहीत न होनेसे गृहस्थ किसी छागलका कान कटा और रक्त भूमिपर बहा प्रतिज्ञा करते—एक वत्सरके मध्य हम नरबलि देंगे। कोई कोई निज-पुत्रका कान काट भी ऐसी ही प्रतिज्ञा करता था। यदि एक वत्सरमें बलिका पात्र न मिलता, तो गृहस्थको अपना एक पुत्र चढ़ा देवऋण चुकाना पड़ता।

उक्त समस्त देवताओंकी पूजा समय-समय वा निर्दिष्ट कालपर हुआ करती है। जो उत्कृष्ट द्रव्य देवताओंको चढ़ते, उनमें प्रत्येकका स्वतन्त्र स्वतन्त्र मन्त्र पढ़ते हैं।

यह लोग आत्माका अस्तित्व स्वीकार करते हैं। किन्तु उसके चार भाग हैं। आत्माका प्रथमांश निजकृत सुकर्मका सुख तथा द्वितीयांश दुष्कर्मका दुःख उठाता, तृतीयांश फिर जन्म पाता और चतुर्थांश मर जाता है।

प्रति ग्राममें इनके पुरोहित रहते हैं। केवल बेरापेन और तारा देवीके पूजाकाल ही पुरोहित आता है। किसी दूसरे कर्म वा अन्यान्य देवताकी पूजामें प्रति गृहस्थके गृहकर्ता ही पुरोहितका कार्य चलाते हैं। पहले ऐसा न रहा। कोई कोई वंश पुत्रपौत्रादिक्रमसे किसी न किसी देवताका पूजक था। किन्तु आजकल बेरा-पेन और तारा देवीकी पूजाको छोड़ पुरोहित नामक स्वतन्त्र व्यक्ति दूसरे स्थानपर देख नहीं पड़ता। तारा और बेराके पूजक लड़ने-भिड़ने तथा साधारण लोगोंके साथ एकत्र भोजन करनेसे दूर रहते हैं। वह ऐसे-वैसेके हाथका बना खाद्यादि भी खा नहीं सकते। कन्ध सबको पुरोहित बना लेते हैं। किन्तु पुरोहित होनेवालेको अपना पद ग्रहण करनेसे पहले लोगोंके मनमें विश्वास जमाना पड़ता—स्वयं देवताने मुझे स्वप्नमें दर्शन दे अपने पुरोहित पदपर नियुक्त किया है। पुरोहितोंकी कोई वृत्ति नहीं होती। उन्हें केवल दक्षिणापर निर्भर कर चलना पड़ता है। किन्तु शान्ति स्वस्त्ययन करा यदि कोई पारितोषिक वा पारिश्रमिक स्वरूप कुछ देनेको आता, तो ले लिया जाता है। हिन्दू पुरोहित इन लोगोंमें ओझाका काम करते हैं। उपदेवताके आविर्भावमें यह झाड़ते-फूंकते रहते हैं। इनमें एक श्रेणीके लोग दैवज्ञका कार्य भी करते हैं। प्रायः निम्नश्रेणीके बढ़िया ही दैवज्ञ बन जाते, किन्तु कर्मपह और कुमहा नामक स्थानपर कन्ध-दैवज्ञ भी देखनेमें आते हैं। बढ़िया दैवज्ञ (जानी या देसोरी) दवाइयोंका व्यवहारमें लाते, किन्तु कन्ध दैवज्ञ शरीरगत लक्षणादि देख कर ही

शुभाशुभ फल बताते हैं। उड़िया दैवज्ञ कोष्ठी बना देते हैं।

पूर्वकाल पृथ्वीदेवता और युद्धदेवता पर नरबलि चढ़ता था। बेरापेनूके उपासक बेरापेनूको और तारा-देवीके उपासक तारादेवीको ही पृथ्वी देवता बताते हैं। फलतः पृथ्वीके उद्देश्यसे उभय दल एकत्र होते भी बेरा-पेनूके उपासक मन ही मन नरबलि चढ़ानेकी प्रथाको बहुत बुरा समझते थे। ताराके उपासक कहते हैं,—'पहले पृथिवी अत्यन्त कठिन और कृषिके लिये अनुपयुक्त थी, कहीं भी उर्वरता न रही। ताराने भक्तोंकी दुर्दशा देख एक खेतपर अपना रक्त टपका दिया। उसीसे पृथिवीमें उर्वरता आयी। फिर उस दिनसे उनके उद्देश्यपर खेत बोते और काटते समय नरबलि देना चल पड़ा।' कोई कोई कहता—पृथिवीकी कठिनता और अनुर्वरता देख सब लोग पृथ्वी-देवताके निकट जा रोने लगे थे। उन्होंने लोगोंके दुःखसे घबरा कह दिया—प्रत्येक खेतमें मनुष्यका रक्त छिड़को। सबने लौटकर एक बालककी बलि चढ़ाया और रक्तसे खेत छिड़काया था। देवताने फिर आदेश लगाया—इस प्रथाको तुम चिरदिन अव-लम्बन करोगे। उसी समयसे नरबलि चला है।

नरबलिका नाम मेरिया उत्सव है। मेरिया उड़िया भाषाका शब्द है। उसका अर्थ बलिपात्र लगता है। कन्ध-भाषामें बलिके पात्रको ठोकी वा केदी कहते हैं। पान वा पनवोया जातिके लोग ही इस बलिका पात्र संग्रह करते थे। अर्थ दे क्रय करनेका नियम रहते भी अधिक स्थलोंमें वह चोरीसे बलिका पात्र ले आते, किन्तु न मिलनेसे लोभ-वशतः अपना सन्तान पर्यन्त सौंप जाते थे।

बलिके लिये कन्ध किसी जातीय स्त्री वा पुरुषको निर्वाचित कर सकते रहे। किन्तु अल्पवयस्क बालकबालिका ही जुटाते थे। पान नाना स्थानोंसे बलिके पात्र लाते रहे। समय पाकर एकबारगी ही बहुतसे पकड़ रखते थे। बलिके पात्र जितने दिन ग्राममें ठहरते, उतने दिन सब लोग उनसे आदर व्यवहार करते रहे। लोग स्वयं जो द्रव्य खाते, उससे अच्छा उनको खिलाते थे। वह स्वच्छन्द सर्वत्र घूमते रहे। किन्तु अल्पवयस्क घरसे बाहर निकलने पाते न थे। कभी कभी पान बलिके निमित्त आनीत युवक-युवतीको एकत्र रख सहवास करने देते। उस गर्भसे जो सन्तान निकलते, वह भविष्यत् बलिके लिये रक्षित रहते थे।

बलिसे १०।१२ दिन पूर्व कन्ध निर्वाचित पात्रका मस्तक मुंडा डालते। फिर समस्त ग्रामवासी एकत्र हो और नहा-धो उसको पुरोहितके पवित्र आश्रम-पर ले जाते थे। पुरोहित उसी समय देवताको सूचना देते—बलि प्रस्तुत होता है। पुरोहितके आश्रममें ६ दिन उत्सव मनाया जाता था। अबाध नृत्य, गीत, मद्यपान और आहारादि चलते रहा। इस उत्सवके पीछे बलि चढ़नेसे पूर्व दिन पात्रको रात्रिमें उपवासी बना और प्रातःकाल भली भांति स्नान करा नव वस्त्र पहनाते, फिर सब मिल-जुल नाचते नाचते पुरोहितके साथ बलिस्थान पर ले जाते थे। किसी पुरातन वनका कियदंश उक्त उद्देश्यसे सुरक्षित रखते और वृक्षादि काट कुठाराघातसे कलङ्कित न करते। लोगोंको विश्वास रहा—यहां उपदेवता वास करते हैं। बलिस्थानके बिलकुल मध्यस्थलमें एक खूंटा गाड़ते थे। खूंटेकी दोनों ओर अपने देशका पांकीगार नामक कंटीला पेड़ लगाते। पीछे पुरोहित खूंटेके पास बालकको बैठा भली भांति बांधते थे। फिर उसके हलदी और तेल लगाया जाता। कन्ध उक्त तेल-हरिद्रा वा उस दिनके बलिका अङ्गस्पृष्ट कोई द्रव्य अति पवित्र मानते। सुतरां प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति उससे कुछ न कुछ लेनेके लिये आग्रह देखा बड़ा कोलाहल मचाता। उस दिन बलिको समग्र रात बंधा ही रखते थे। फिर अन्यान्य उपस्थित व्यक्ति खाने-पीने और नाचने-गानेमें लग जाते। परदिन दो-पहर तक आमोद चलता था। पीछे सब लोग गड़बड़ बन्द कर केवल गाते-गाते बलि चढ़ानेको प्रस्तुत होते। बलिको बांधकर मारना मना है। इसीसे हाथ-पैर काटा या अफीम खिला उसे

गर्भमें घूरकर डालते थे। फिर पुरोहित देवताके निकट शस्य, पुत्रकन्या एवं गवादि पालित पशु-पक्षीके मङ्गल और सर्पव्याघ्रादिके कवलसे उद्धार होनेकी प्रार्थना करते। दर्शक भी उस समय अपने-अपने अभीष्टकी सिद्धिके लिये देवताको मनाते थे। पुरोहित साधारणके मध्य इतिहास सुना बलि चढ़ानेकी आवश्यकता देखा देते। फिर पुरोहित और बलिपात्रके मध्य तर्क उठता था। पुरोहित बलिसे कहते,—'एक व्यक्ति मारनेसे यदि इतने लोगों—नहीं नहीं—समस्त देशको उपकार पहुंचे, तो वह मारा जानेवाला क्या अनुयोग करे। फिर इसी लिये तुम्हें खरीद भी लाये हैं।' बलि उत्तर देता था,—'मुझे छलसे लोग ले आये हैं। मुझसे दास बनानेकी बात कही गयी है। मैंने स्वयं आत्मविक्रय नहीं किया, दूसरेने मुझे कैसे खरीद लिया।—इत्यादि।' शेष पर पुरोहित उसे किसी प्रकार समझा-बुझा देते थे। उसके पीछे पुरोहित किसी प्रधानके साथ वृक्षकी एक हरी शाखा काट मध्यभाग पर्यन्त फाड़ते और चिरे हुये दोनों किनारे बलिके गलेमें डाल रस्सीसे कसकर बांधते। अन्तको स्वयं पुरोहित कुठारसे उसका कण्ठ काट डालते थे। कण्ठ कटनेसे पहले सब लोग मिलकर बलिसे कहते—'देवताके प्रीत्यर्थ हम अर्थ लगा तुम्हें खरीद लाये हैं। अतएव तुम्हें मारनेसे हमको पाप नहीं पड़ता।' इसके पीछे दर्शक मस्तक एवं उदर व्यतीत शरीरके प्रत्येक भागका अस्थि-मांस छोड़ा अवशिष्टांश दूसरे दिन जला देते। चिता पर एक मेषका बलि चढ़ाते थे। चिताका भस्म समस्त खेतपर छोड़ा जाता। उससे धान्यागार और गृहका मध्यभाग लीपते-पोतते। बलिके पिता या संग्रहकारको एक सांड उपहार मिलता था। फिर दूसरे सांडको मार सब लोग बड़ा आनन्दसे खाते। भोजके पीछे उत्सव शेष होता था। एक वत्सर बाद उसी दिन तारा देवीके उद्देश्यसे एक शूकरबलि देते।

किसी किसी स्थिमें बलिको जीते-जी जला डालते। लोगोंमें प्रवाद था—बलिकी आंखसे जितना जल पड़ेगा, पृथिवीपर वृष्टिका वेग भी उतना ही बढ़ेगा। चेमाडिनेडी नामक स्थानपर बलिको खौंच अर्धमत्त कान्ध चीत्कार करते करते अस्थिसे मांस छोड़ा शस्यमें मिला देते। इससे सम्भवतः शस्यमें कीड़ा लगता न था। मार्शी प्रान्तमें (बौद और घटनेके बीच) बलि चढ़नेके दिन कान्ध हाथमें धातुनिर्मित बड़े बड़े वलय पहनते। उन्हीं वलयोंसे सब लोग बलिके मस्तक पर आघात लगाते थे। उससे भी मृत्यु न आनेपर वंशखण्डसे श्वास-रोक बलिको मार डालते थे। पीछे प्रत्येक थोड़ा थोड़ा मांस ले अपने अपने खेतमें या नदी किनारे खूंटे पर लटकाते। अवशिष्ट अंश भूमिमें गाड़ा जाता। फिर प्रति वत्सर बलिके श्राद्धका न्याय होता था।

साधारणतः कान्धोंके नियमानुसार बलिका मांस गाड़नेसे खेतका दोष नष्ट होता है। ताराके उपासक किसी ग्राममें भेरिया उत्सव होनेका संवाद सुन ५०।६० कोस दूर रहते भी डाक लगा बलिका मांस अपने ग्राम पहुंचाते थे। बलि घटनेके दिन ही ग्राममें मांस आ जानेसे विशेष उपकार माना जाता।

जयपुर नामक स्थानमें भी पहले मानिकसोरा नामक युद्ध-देवताको बलि चढ़ता था। वहां लकड़ीका ६ फीट ऊंचा खूंटा गाड़ पास ही एक अप्रशस्त नाला बनाते। बलिका मस्तक मुंडाया जाता न था। लम्बे बाल खूंटेसे इस प्रकार बांधते, जिससे मुण्ड कटते ही निपतित उसी नालेमें जा गिरे। फिर बलिके दक्षिण पार्श्व खड़े हो पुरोहित युद्धके जय-लाभ और राजा तथा कर्मचारी-गणके अत्याचार-निवारणकी प्रार्थना करते थे। एक एक प्रार्थना शेष होते एक एक आघात लगाते, पहले ही आघातमें मुण्ड काट न डालते। प्रार्थना शेष होते भी बलि मरता न था। अन्तको सब लोग उसके कानमें लग कह देते—'आप आपका कैसा भाग्य है। मानिकसोरा देवता हमारे सामने आपको

अन्तर्गत एक है। प्रभासखण्डके किसी-किसी पुस्तकमें यह कर्पकुल नामसे उक्त है। कर्पकुल देखो।

कन्यना (वै० स्त्री०) कन्या-मायष्टे, कन्या-णिच् भावे युच्। कन्या, बेटी, लड़की।

कन्यला (वै० स्त्री०) कन्यं कमनीयतां लाति गृह्लाति, कन्या ला-क-टाप्। कन्या, बेटी, लड़की।

कन्यस (सं० पु०) कन्यत्वेन शीयते अवसीयते, कन्य-सो घञर्थे क। १ कनिष्ठ भ्राता, छोटा भाई।

"रामस्य कन्यसो भ्राता सुमित्रा येन सुव्रता:।" (रामायण ३।१२।१८)

(त्रि०) २ अधम, कमीना। ३ अङ्गुलिपरिमाण, आंगुरभर।

कन्यसा (सं० स्त्री०) कन्यस-टाप्। १ कनिष्ठा भगिनी, छोटी बहन। २ कनिष्ठाङ्गुलि, सबसे छोटी उंगली।

कन्यसी (सं० स्त्री०) कन्यस-ङीप। कनिष्ठा भगिनी, छोटी बहन।

"दक्षिणित् सर्वमाता तु रोहिण्याः कन्यसी समा।"

(भारत, वन २२८।१)

कन्या (सं० स्त्री०) कन्-यक्-टाप्। अघ्न्यादयश्च। उण् ४।१११। १ दशमवर्षीया कुमारी, दश वर्षकी लड़की। २ अविवाहिता स्त्री, बेब्याही औरत। भारतमें भी कन्या शब्दका ऐसा ही अर्थ लगाया है,—"सकलकी कामना कर सकनेसे अविवाहिता स्त्रीको कन्या कहते हैं।" तन्त्रमें नवकन्याका प्राधान्य वर्णित है—

"नटी कापालिकी वेश्या रजकी नापिताङ्गना।
ब्राह्मणी शूद्रकन्या च तथा गोपालकन्यका।
मालाकारस्य कन्या च नवकन्या प्रकीर्तिताः॥"

(गुप्तसाधनतन्त्र १म पटल)

नटी, कापालिकी, वेश्या, रजकी (धोबन), नापितिनी, ब्राह्मणी, शूद्रा, गोपी (ग्वालिनी) और मालाकारकी कन्या नवकन्या नामसे प्रसिद्ध हैं। तन्त्रके मतसे यह कुलाङ्गना होती हैं। ३ स्त्रीमात्र, कोई औरत। ४ घृतकुमारी, घीकुवार। ५ स्थूलला, बड़ी इलायची। ६ वाराही नाम महाकन्दशाक, सुर्थि-कुम्हड़ा। ७ वन्ध्याकर्कोटकी, बांझ-ककोड़ा। ८ महौषधिविशेष, एक जड़ी-बूटी। सुश्रुत कहते—कन्यामें मयूरके पक्षकी भांति बारह मनोज्ञ पत्र लगते हैं। और स्वर्णवर्ण निकलता है। कन्दसे इसकी उत्पत्ति है। ९ नारीशाक। १० वन्दा, बांदा। ११ कन्दगड़ूची, एक गुर्च। १२ मेषादि द्वादश राशिके अन्तर्गत षष्ठ राशि। उत्तरफल्गुनीके शेष तीन पाद, हस्ताके सम्पूर्ण पाद और चित्रा नक्षत्रके प्रथम एवं द्वितीय पादपर इस राशिको अवस्थिति रहती है। इसकी अधिष्ठातृदेवता जलके मध्य नौकारूढ़ा और शस्य एवं अग्निधारिणी हैं। कन्याका अपर नाम पाथेय है। मतान्तरसे इसको शीर्षोदया, दिनवला, पिङ्गलवर्णा, दक्षिणदिक्स्वामिनी, वायुप्रकृति, शीतलस्वभावा, शुद्धभूमिचारिणी, वैश्यवर्णा, रूक्षा, शयाङ्गी, षट्च्छन्दा, अल्पप्रसवा और अल्पपुंसङ्गा कहते हैं। इस राशिमें जन्म लेनेसे मनुष्य वेदशास्त्रमें महावान्, यथास्थानके कोपपर भी अनुतापकारी, पत्नीके प्रति सर्वदा विरत, नाना शास्त्रविशारद, सर्वाङ्गसुन्दर, सौभाग्यशाली और सुरतप्रिय होता है।

१३ सुता, बेटी। विवाह व्यतीत कन्याके अन्य संस्कारकालको वृद्धि-श्राद्धका निषेध है। इसका नामकरण, अन्नप्राशन एवं चूडाकरण कार्य बिना मन्त्र निष्पादन करना चाहिये। निष्क्रामण संस्कार एकबारगी ही निषिद्ध है।

१४ तीर्थविशेष। इस तीर्थमें स्नान करनेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है।

"तथा गच्छेत धर्मज्ञ कन्यातीर्थमनुत्तमम्।
कन्यातीर्थे नरः स्नात्वा गोसहस्रफलं लभेत्॥" (भारत ३।८३।१०३)

१५ चतुरक्षरी छन्दोविशेष। इस छन्दमें ग (एक गुरुवर्ण) और म (तीन गुरुवर्ण) अर्थात् चार गुरुवर्ण हो रहते हैं। "ग्मौचेत् कन्या।" (वृत्तरत्नाकर)

कन्यका (सं० स्त्री०) कन्यैव, कन्या स्वार्थे कन् अनुक्तपुंस्कत्वात् न ह्रस्वः। १ कन्या, बेटी। २ कुमारी, लड़की।

कन्याकाल (सं० पु०) कन्यायाः कालः, ६-तत्। अविवाहिता रहनेके नियमका समय, शादी न होनेका वक्त। यह दशम वर्ष पर्यन्त रहता है।

कन्याकुब्ज (सं० पु०) कन्याः कुब्जा यत्र, बहुव्री०। १ कान्यकुब्ज देश, कनौजियोंके रहनेका मुल्क। २ कनौज नगर। यह फरुखाबाद जिलेमें काली नदीके तटपर अवस्थित है। प्राचीनत्वमें अयोध्यासे कान्यकुब्ज द्वितीय समझा जाता है। अपनी कामुक अभिलाषके पूर्ण किये न जानेपर वायुने इस नगरके राजा कुशनाभको सौ कन्याओंको कुब्ज बना दिया था। ध्वंसावशेषमें वर्तमान लन्दन नगरसे भी अधिक स्थान देख पड़ता है। कनौज और कान्यकुब्ज देखो।

कन्याकुब्जदेश (सं० पु०) कान्यकुब्ज नगरको चारो ओरका प्रान्त, कनौज शहरके इर्द-गिर्दका मुल्क।

कन्याकुमारी (सं० स्त्री०) १ दुर्गा देवी। २ अन्तरीपविशेष, एक रास। यह भारतके दक्षिण रामेश्वरके निकट अवस्थित है। रामेश्वर देखो।

कन्याकूप (सं० पु०) तीर्थविशेष। (भारत, अनु० २५० अ०)

कन्यागत (सं० त्रि०) १ कुमारीसम्बन्धीय, लड़कीसे तालुक रखनेवाला। २ कनागत, कन्याराशिपर पहुंचा हुआ।

कन्यागर्भ (सं० पु०) कन्यायाः गर्भः, ६-तत्। अविवाहिता स्त्रीका गर्भ, क्वांरी लड़कीका हमल।

कन्यागिरि—मन्द्राज-प्रान्तके नेलूर जिलेकी एक तहसील। इसका क्षेत्रफल ७२६ वर्ग मील है। कन्यागिरि अक्षा० १५° १´ से १५° ३२´ उ० और देशा० ७९° ८´ से ७९° ४४´ पू०के मध्य अवस्थित है। इसमें फौजदारी अदालत और थाना मौजूद है।

प्रधान नगरका नाम भी कन्यागिरि ही है। यह नगर अक्षा० १५° १२´ उ० और देशा० ७९° ३२´ पू०पर अवस्थित है। ई०के १०म शताब्द गजपतिवंशीय काकतीय रुद्रदेवके पुत्रने इसे बनाया था। ई०के १६वें शताब्द छत्ररायने इसको आक्रमण किया। पहले यहां अच्छे-अच्छे भवन बने थे। किन्तु हैदरअलीने उन सबको ध्वंस कर डाला। लोकसंख्या प्रायः ३००० है। अधिकांश हिन्दू देख पड़ते हैं।

कन्याग्रहण (सं० क्ली०) कन्याया ग्रहणम्, ६-तत्। विवाह, शादी।

कन्याट (सं० पु०) कन्या अटति अत्र, कन्या-अट-आधारे घञ्। १ आभ्यन्तर गृह, जनानखाना। २ लम्पट, लड़कियोंके पीछे-पीछे फिरनेवाला।

कन्यात्व (सं० क्ली०) कन्याया भावः, कन्या-त्व। तस्य भावस्त्वतलौ। पा ५।१।११९। कन्याका भाव, क्वांरापन।

कन्यादाता (सं० पु०) कन्यादान करनेवाला, जो बेटी ब्याह देता हो।

कन्यादान (सं० क्ली०) कन्याया दानं वराय सम्प्रदानम्। पात्रके हस्त कन्याका सम्प्रदान, लड़कीको शादी करनेका काम। अग्निपुराण कन्यादानके फलाफलपर इस प्रकार लिखता—जो व्यक्ति विवाहकाल आनेसे उपयुक्त वरको अलङ्कृता कन्या प्रदान करता, उसे शतयज्ञका फल मिलता है। पितृपितामह कन्यादानकी कथा सुननेपर सब पापसे छूट ब्रह्मलोक पहुंचते हैं।

ब्राह्मविवाह द्वारा कन्या देनेपर मनुष्य ब्रह्मादि देव कर्तृक पूजित हो ब्रह्मलोक जाता है। फिर दिव्य विवाहसे कन्या सम्प्रदान करनेपर स्वर्लोकका द्वार भेद स्वर्ग पहुंचते हैं।

गान्धर्व विवाहसे कन्या देनेपर गन्धर्वलोक जा देवताकी भांति चिरदिन क्रीड़ा करते हैं। जो व्यक्ति शुल्कग्रह कन्या देता, वह अनन्तकाल किन्नरों और गन्धर्वोंके साथ क्रीड़ा करनेका आनन्द लेता है।

ब्राह्मविवाहमें कन्या देनेसे वरके गृह भोजन करना निषिद्ध है। जो मोहवशतः भोजन करता, उसे नरक जाना पड़ता है। फिर भी दौहित्रकी उत्पत्ति होनेपर खाने-पीनेमें कोई निषेध नहीं। अन्यथा कन्याके गृह चिरदिन भोजन करना न चाहिये।

कन्यादूषक (सं० पु०) अविवाहिता बालिकाको बिगाड़नेवाला, जो बेब्याही लड़कीको खराब करता हो।

कन्यादूषण (सं० क्ली०) कन्याया दूषणम्, ६ तत्। अविवाहिता बालिकाका अभिचार, बेब्याही-लड़कीका बिगाड़।

कन्यादोष (सं० पु०) कन्यादूषण देखो।

कन्याधन (सं० क्ली०) कन्याकाले लब्धं धनम्, मध्यपदलो०। अविवाहितावस्थाका स्त्रीधन, लड़कीको

दौलत। अधिकारियोंके मरनेपर भाई इस धनको पाते हैं।

कन्यान्तःपुर (सं॰ क्ली॰) कन्याया अन्तःपुरम्, ६-तत्। कन्याका वासस्थान, बेटीके रहनेकी जगह।

"कन्यान्तःपुरमेधनाय यदभिज्ञाताद दोषादयम्।" (नैषध ४)

कन्यापति (सं॰ पु॰) कन्यायाः पतिः, ६-तत्। जामाता, दामाद, लड़कीका शौहर।

कन्यापाल (सं॰ पु॰) कन्याप्रधानः पालः, मध्यपदलो॰। १ शूद्रजातिविशेष। पाल देखो। २ कन्याका पति, बेटीका शौहर। ३ कन्याका पिता, लड़कीका बाप। ४ अविवाहिता बालिका बेचनेवाला, जो वेश्याकी लड़कियां फरोख्त करता हो। (त्रि॰) ५ कन्याका प्रतिपालक, लड़कीकी परवरिश करनेवाला।

कन्यापुत्र (सं॰ पु॰) कन्यायाः पुत्रः, ६-तत्। १ कन्याका पुत्र, दौहित्र, नाती, पोता, बेटीका बेटा। २ अविवाहिता स्त्रीका पुत्र, बेव्याही औरतका लड़का।

कन्यापुर (सं॰ क्ली॰) कन्यायाः पुरम्, ६-तत्। कन्याका घर, बेटीका मकान्।

कन्याप्रदान (सं॰ क्ली॰) कन्यायाः प्रदानं वराय सम्प्रदानम्। कन्यादान, बेटीका विवाह।

कन्याभर्ता (सं॰ पु॰) कन्याभिः प्रार्थनीयो भर्ता, मध्यपदलो॰। १ कार्तिकेय। अतिशय रूपवान् रहनेसे कन्यामात्र कार्तिकेयकी भांति पतिकामना करती हैं। २ जामाता, दामाद, लड़कीका शौहर।

कन्याभाव (सं॰ पु॰) कन्याया भावः, ६-तत्। कन्यात्व, कन्यावस्था, बकारत।

कन्यामय (सं॰ त्रि॰) कन्या-मयट्। १ कन्यास्वरूप, लड़की-जैसा। २ कन्याविशिष्ट, लड़कियोंसे भरा पूरा।

कन्यारत्न (सं॰ क्ली॰) कन्यारत्नमिव, उपमि॰। श्रेष्ठ कन्या, असाधारण रूप या गुणवती कन्या, अच्छी लड़की।

कन्याराम (सं॰ पु॰) बुद्धविशेष।

कन्याराशि (सं॰ पु॰) कन्याख्यः राशिः, कर्मधा॰। राशिविशेष, बुर्ज-सुम्बुला। कन्या देखो।

कन्याराशीय (सं॰ त्रि॰) कन्या राशेरिदम्, कन्याराशि-छ। कन्याराशि-सम्बन्धीय, बुर्ज-सुम्बुलाके मुताल्लिक्।

कन्याराशी (हिं॰ त्रि॰) १ जन्मके समय कन्याराशिमें चन्द्रमा रखनेवाला, जिसके पैदा होते वक्त चांद बुर्ज-सुम्बुलामें रहे। २ निर्बल, कमज़ोर। ३ क्षुद्र, छोटा। ४ नपुंसक, नामर्द।

कन्यालीक (सं॰ पु॰) कन्याके विवाह सम्बन्धमें मृषावाद, लड़कीकी शादीके लिये झूठी बात। यह मत जैन स्वीकार करते हैं।

कन्यावेदी (सं॰ पु॰) कन्यां दुहितरं आविन्दति, कन्या-आ-विद्-णिनि। जामाता, दामाद।

कन्याशुल्क (सं॰ क्ली॰) कन्यायाः शुल्कम्, ६-तत्। कन्याका मूल्य, लड़कीका दाम। विवाहके समय वरसे कन्याका पिता जो धन पाता, वही कन्याशुल्क कहाता है। किन्तु भारतके सुसभ्य लोगोंमें यह प्रथा निन्द्य है।

कन्याश्रम (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें संयत हो ब्रह्मचर्य-निष्ठासे त्रिरात्र उपवास करनेपर मनुष्य शत कन्या पाता और अन्तको स्वर्ग जाता है।

"ततः कन्याश्रमं गच्छेन्नियतो ब्रह्मचर्यवान्।
त्रिरात्रोपषितो राजन् नियतो नियताशनः।
लभेत् कन्याशतं दिव्यं स्वर्गलोकञ्च गच्छति॥" (भारत, वन ८३ अ॰)

कन्यासंवेद्य (सं॰ क्ली॰) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें नियमानुसार नियताशन होनेसे ब्रह्मलोक मिलता और कन्यार्थ अणु-परिमित भी दान करनेसे द्रव्य अक्षय रहता है।

"कन्यासंवेद्यमासाद्य नियतो नियताशनः।
मनोः प्रजापतेर्लोकमाप्नोति पुरुषर्षभ॥
कन्यायां ये प्रयच्छन्ति दानमण्वपि भारत।
तदक्षयमिति प्राहुर्ऋषयः संशितव्रताः॥" (भारत)

कन्यासमुद्भव (सं॰ पु॰) अविवाहिता स्त्रीका पुत्र, बेव्याही औरतका बेटा।

कन्यासम्प्रदान (सं॰ क्ली॰) कन्यायाः सम्प्रदानम्, ६-तत्। कन्यादान। कन्यादान देखो।

कन्यास्वयम्वर (सं॰ क्ली॰) कन्याया स्वयं त्रियते यत्र, कन्या-स्वयं-वृ-अच्। कन्याकर्तृक स्वयं पतिग्रहण, जिस शादीमें लड़की खुद अपना शौहर चुने।

कन्याहरण (सं॰ क्लो॰) कन्याको निकाल ले जानेका कार्य, लड़की ले भागनेका काम।

कन्याकूट (सं॰ पु॰) तीर्थविशेष। इस तीर्थमें वास करनेसे देवलोक जाते हैं।

कन्यिका (सं॰ स्त्री॰) कन्या एव, कन्या स्वार्थे कन्-टाप् अत इत्वम्। कन्या, बेब्याही लड़की।

कन्युप (सं॰ क्लो॰) कन-इन्, कन्या कान्ता शोपति इव, उप-क। १ हस्तपुच्छ, कलाईके नीचेका हाथ। २ वन्ध्याकर्कोटकीफल, बांझ खेखसा।

कन्हड़ी (हिं॰) कर्णाटी देखो।

कन्हाई (हिं॰ पु॰) कृष्ण, कन्हैया।

कन्हावर, कंधावर देखो।

कन्हैया (हिं॰ पु॰) १ श्रीकृष्ण, कन्हाई। २ प्रिय व्यक्ति, प्यारा शख्स। ३ सुन्दर बालक, खूबसूरत लड़का। ४ वृक्षविशेष, एक पेड़। यह एक पार्वत्य वृक्ष है। पूर्वहिमालय पर्वतपर ८००० फीट ऊंचे कन्हैया उत्पन्न होता है। काष्ठ अति सुदृढ़ निकलता है। उसपर रक्त वा हरिद्वर्ण रेखायें रहती हैं। आसाममें कन्हैयेका काष्ठ नौका बनानेमें लगता है। उसके चायके सन्दूक भी तैयार होते हैं। कभी कभी वह गृहके निर्माण कार्यमें लग जाता है।

कप (सं॰ पु॰) कानि जलानि पाति, क-पा-क। १ वरुणदेव। २ एक असुर। (भारत, अनु॰ १५० अ॰) (त्रि॰) ३ जलपायी, पानी पीनेवाला।

कप (अं॰ पु॰—Cup) १ पात्र, प्याला, कटोरा। २ सिड्डी, खप्पर।

कपट (सं॰ पु॰-क्लो॰) कप-अटन्, कं सत्यं सद्भाव-मपि पटति आच्छादयति, क-पट-अच् वा। १ मिथ्या-व्यवहार, धोका, फरेब। इसका संस्कृत पर्याय—व्याज, दम्भ, उपधि, छद्म, कैतव, कूट, कल्क, छल, मिष, कैरव, व्यपदेश, लक्ष, निभ, माया, शठता, शाठ्य, कुसृति और निकृति है। २ दनुपुत्र, कोई दानव। ३ चोड़ादेवदारु।

कपटचारी (सं॰ त्रि॰) कपट-चर-णिनि। प्रवञ्चक, फरेबी, धोकेबाज़।

कपटचोड़ा (सं॰ स्त्री॰) चोड़ा नामक देवदारु।

कपटता (सं॰ स्त्री॰) कपटस्य भावः, कपट-तल्-टाप्। कपटका भाव, कापट्य, धोकेबाज़ी।

कपटतापस (सं॰ पु॰) कपटेन तापसः। छलपूर्वक तपस्वी बननेवाला व्यक्ति, जो शख्स धोका देनेको फ़कीर बना हो।

कपटधारी (सं॰ त्रि॰) कपटं धारयति, कपट-धृ-णिनि। कपटयुक्त, धोकेबाज़।

कपटना (हिं॰ क्रि॰) १ शिरःछेदन करना, तोड़ना, नोचना। २ पृथक् करना, अलग निकाल रखना।

कपटपटु (सं॰ त्रि॰) कपटे पटुः, ७-तत्। १ प्रतारणा करनेमें निपुण, जो धोका देनेमें होशियार हो। २ इन्द्रजालकारी, बाज़ीगर।

कपटप्रबन्ध (सं॰ पु॰) छल, फरेब, धोकेकी बात।

कपटलेख्य (सं॰ क्लो॰) अनृत पत्र, झूठी दस्तावेज़, बनाया हुवा काग़ज़।

कपटवचन (सं॰ क्लो॰) कपटपूर्णं वचनम्। प्रतारणा-वाक्य, धोकेकी बात।

कपटवेश (सं॰ त्रि॰) कपटो वेशो यस्य, बहुव्री॰। १ छद्मवेशी, शक्ल बनाये हुवा, जो रूप बदले हो। (पु॰) २ छद्मवेश, तलबीस-लिबास।

कपटवेशी (सं॰ त्रि॰) कपटवेशोऽस्यास्ति, कपटवेश-इनि। छद्मवेशी, शक्ल बनाये हुवा, जो रूप बदलता हो।

कपटा (सं॰ स्त्री॰) क्षुद्रबृहती, छोटी कटाई।

कपटा (हिं॰ पु॰) कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह कीड़ा धानके पौदोंको कपटता है।

कपटिक (सं॰ त्रि॰) कपटः विद्यते ऽस्य, कपट मत्वर्थे ठन्। कपटविशिष्ट, फरेबी, धोकेबाज़।

कपटिनी (सं॰ स्त्री॰) कपटो ऽस्यास्ति, कपट-इनि गौरादित्वात् ङीप्। चोड़ा नामक गन्धद्रव्य वा देवदारु।

कपटी (सं॰ त्रि॰) कपटो ऽस्यास्ति, कपट-इनि। १ प्रतारक, वञ्चक, दग़ाबाज़, फरेबी। (स्त्री॰) कप-अटन्-ङीप्। २ परिमाणविशेष, एक नाप। इसमें दो अञ्जलि परिमित द्रव्य आता है।

कपटी (हिं॰ स्त्री॰) १ कृमिविशेष, एक कीड़ा। यह धानके पौदेको कपटती है। २ कर्मभेद,

कोड़ी कोड़ा। यह तम्बाकूके पौदेको खराब करती है।

कपटेश्वर—काश्मीरस्थ जनपदविशेष। इस स्थानमें पापसूदन नाग रहते थे। राजतरङ्गिणी-वर्णित यही पापसूदनतीर्थ है। (राजतरङ्गिणी १।३२) यह स्थान कोटहार परगनेके अन्तर्गत इसलामाबादसे दूर नहीं।

कपटेश्वरी (सं॰ स्त्री॰) कमिव शुभ्रः पटः वसनं तत्तुल्यं फलं यस्य, कपट-ईश-क्षप्-ङीप्। १ श्वेत-कण्टकारी, सफेद कटाई। २ क्षुद्रदुग्धी, छोटी कटाई।

कपड़कोट (हिं॰ पु॰) शिविर, खीमा, डेरा, कपड़ेका किला।

कपड़गन्ध (हिं॰ स्त्री॰) वस्त्रका गन्ध, कपड़ेके जलनेकी बदबू।

कपड़छान (हिं॰ पु॰) वस्त्रसे किसी चूर्णको छनाई, कपड़ेसे किसी बुकनी छाननेका काम।

कपड़द्वार (हिं॰ पु॰) वस्त्रका भाण्डार, कपड़ा रखनेकी जगह।

कपड़धूलि (हिं॰ स्त्री॰) वस्त्रविशेष, एक कपड़ा। यह रेशमसे बनती और बारीक रहती है। इसे करेब भी कहते हैं।

कपड़मिट्टी (हिं॰ स्त्री॰) कपड़ौटी, किसी द्रव्यको कपड़े और गीली मट्टीमें लपेट फूंकनेका काम।

कपड़विदार (हिं॰ पु॰) १ दरजी, कपड़ेको काटने-वाला। २ रफ़ूगर, फटे कपड़ेको धागेसे भर देनेवाला।

कपड़ा (हिं॰ पु॰) १ वस्त्र, पट, आच्छादन। यह रुई, ऊन, रेशम या सनके धागेसे बनता है। २ पोशाक, पहननेका वस्त्र।

कपड़ौटी, कपड़मिट्टी देखो।

कपन (सं॰ पु॰) कप-ल्यु। १ कम्पन, कंपकंपी। २ घुणादि कीट, घुन वगैरह कीड़ा।

कपना (वै॰ स्त्री॰) कीट, कीड़ा।

कपरिया (हिं॰ पु॰) नीचजातिविशेष, एक कमीना कौम। कपाली देखो।

कपरौटी, कपड़मिट्टी देखो।

कपर्द (सं॰ पु॰) कर्पे पूरणे भावे क्विप् बमापः इति पर् पूर्ति, कस्य गङ्गाजलस्य परा पूरणेन दापयति शुद्धति, क-पर्-दैप-क। उण् कोषः। पा ३।३।११। १ शिव-जटा। २ कौड़ी। कपर्दक देखो।

कपर्दक (सं॰ पु॰) कपर्द-कन्। १ वराटक, कौड़ी। इसे हिन्दी तथा गुजरातीमें कौड़ी, बंगलामें कड़ि, तामिलमें कवदि, तेलङ्गमें गवल, सिंहलीमें बिल्ली, मलयमें बेया, फारसीमें खरमोहरा, अरबीमें वुदा, अंगरेजीमें कौरी (Cowrie), फरासीसीमें कोरिस या बौगेस (Coris, Cauris or Bouges), ओलन्दाजीमें कोरिस, स्लाङ्गेनहुफेस (Kauris, Slaugenhoofdges), रोमकमें कोरी वा पोर्सेलेङ्क (Cori, Porcellenc) जर्मनमें कौरिस (Kauris), स्पेनिशमें सिक्वे या बुसियोस (Siqueyes, Bucios), पोर्तुगीज़में बुसियोस वा जिम्बोस (Zimbos), डेनिश, सुरस और रूसीमें कोरिस (Kauris) कहते हैं।

कपर्दक सामुद्रिक जीव है। यह पृथिवीके नाना स्थानोंमें नानाप्रकार देख पड़ता है। किन्तु सकल ही एक जातीय हैं। कौड़ीका वैज्ञानिक अंगरेजी नाम साइप्रिडी (Cyprœdœ) है।

यह जीव एकलङ्गी अर्थात् अपने ही सङ्गमसे सन्तानोत्पादन करनेवाले हैं। इनमें स्त्रीपुरुषकी भांति कोई विभिन्नता नहीं होती। कौडियोंका मस्तक स्वतन्त्र भावसे बाहर रहता है। उसीके साथ दोनों पार्श्वोंपर दो कोणाकार रेखायुक्त स्थान होते हैं। वह स्पर्श और घ्राणेन्द्रियका कार्य करते हैं। फिर उन्हींके बाहर दोनों पार्श्वोंपर दो अति क्षुद्र चक्षु रहते हैं।

कपर्दककी तीन अवस्था होती हैं। प्रथम वा बाल्यावस्थामें बहिरावरण स्वच्छ, पिङ्गलवर्ण और अतिमसृण देख पड़ता है। आवरणपर तीन लम्बी रेखायें खिंची रहती हैं। द्वितीय वा यौवनावस्थामें यह कितना ही स्वाभाविक आकार पाता है। उसी समय कपर्दकका बहिरोष्ठ मोटा पड़ता, किन्तु बहिरावरण फिर भी वैसा कठिन नहीं लगता। तृतीय वा पूर्णावस्थामें इसका बहिरावरण

अत्यन्त कठिन हो जाता है। आवरणपर छोटे-छोटे विन्दु देखनेमें आते हैं। श्रेणीके अनुसार वर्ण भी परिस्फुट होता है।

राजनिघण्टुके मतसे कपर्दक पांच प्रकारका है। १—सोनेकी भांति चमकनेवाला कपर्दक सिंही कहाता है। २—धूम्रवर्ण कपर्दकका नाम व्याघ्री है। ३—उपरिभागमें पीत और निम्नभागमें श्वेतवर्ण कपर्दक मृगी है। ४—केवल श्वेतवर्ण कपर्दक हंसी कहा जाता है। ५—अधिक बड़े न होनेवाले कपर्दकको विदण्डा कहते हैं।

पाश्चात्य तत्त्वविदोंके मतसे कपर्दक तीन प्रधान श्रेणियोंमें विभक्त है। प्रथम—जिस श्रेणीके कपर्दकका वहिरावरण अति मसृण और मेरुदण्ड (Columella) अत्यन्त विस्तृत रहता, उसका नाम साइप्रिया (Cypraea) पड़ता है। इस श्रेणीमें अनेकप्रकार कपर्दक होते हैं। इनमें १ गोल कपर्दक (*Cypraea* mappa), २ गन्धमुखी (C. Talpa), ३ भक्षक (C. Cicercula), ४ खनक (C. Childreni) प्रभृति साइप्रियाके ही अन्तर्गत हैं।

गोल कपर्दक भारत-महासागरमें मिलता है। इसमें कोई गुलाबी, कोई काला और कोई नारङ्गी रङ्गका होता है। मरिचखण्डमें एकप्रकार मृगकी भांति वर्णविशिष्ट कपर्दक देख पड़ता, जो अति सुन्दर लगता है। गन्धमुखी कपर्दकका गठन कितना ही छछूंदरकी भांति रहता है। मध्यके दन्त काटे या काले होते हैं।

द्वितीय श्रेणीके कपर्दकको आरिसया (Aricia) कहते हैं। इस देशमें जो कौड़ी बाज़ार या दुकानपर द्रव्यादिके मूल्यस्वरूपसे चलती, वह इसी श्रेणीके अन्तर्गत पड़ती है। अंगरेजी वैज्ञानिक नाम साइप्रिया मोनेटा (Cypraea moneta) है। यह कपर्दक अति पूर्वकालसे इस देशमें सामान्य मुद्राके बदले चल रहा है। २० गण्डा कौड़ीका एक पैसा होता है। इस समयकी अपेक्षा पहले कौड़ीका बड़ा आदर और अधिक मूल्य था।

भास्कराचार्यने लिखा है—

"वराटकानां दशकद्वयं यत् सा काकिणी ताश्च पणश्चतस्रः।
ते षोडश द्रम्म इहावगम्यो द्रम्मैस्तथा षोडशभिश्च निष्कः॥"

(लीलावती)

२० कौड़ीमें १ काकिणी, ४ काकिणीमें १ पण, १६ पणमें १ द्रम्म और १६ द्रम्ममें एक निष्क गनते हैं।

रघुनन्दनके प्रायश्चित्ततत्त्वमें भी ८० कौड़ीका १ पण कहा है—

"अशीतिभिर्वराटकैः पण इत्यभिधीयते।
तैः षोडशैः पुराणं स्याद्रजतं मतमिह मे॥"

पहले दक्षिणामें कपर्दक दिया जाता था। शुद्धि-तत्त्वमें लिखा है—

"दक्षिणोचितं दानं दत्तो दक्षस्तु दक्षिणः।
तस्मात् पदं काकिणीं वा कर्म्म पुष्पदापि वा।
अदत्त्वा दक्षिणां दत्ते तथा न सकलो भवेत्॥"

पहले अफ़रीकामें भी कौड़ी मुद्रारूपसे चलती थी। आजकल कौड़ी क्रमशः सस्ती पड़ती जाती है। १८४० ई०को एक रुपयेमें २४००से अधिक कौड़ियां मिलती न थीं। किन्तु आजकल एक रुपयेमें प्रायः ६००० कौड़ियां आती हैं।

तृतीय श्रेणीके कपर्दकका नाम नेरिया (Naria) है। इस श्रेणीकी कौड़ीका मेरुदण्ड सूक्ष्म, दन्त तीक्ष्ण और वहिरावरण अति विकृत होता है। फिर इस श्रेणीमें नाना आकारके कपर्दक देख पड़ते हैं। इनमें अण्डे जैसी कौड़ी ही ज़्यादा बड़ी होती है। मुक्ताकी भांति छोटी छोटी कौड़ी भी इसी श्रेणीके अन्तर्गत है।

चीनदेश और आष्ट्रियालिक सागरमें लम्बी लम्बी कौड़ियां होती हैं। वहां लोग देखने पर उन्हें कौड़ी कभी कह नहीं सकते। उक्त कपर्दक पपीतेकी बांसुरी-जैसा लगता है।

वैद्यकके मतसे कपर्दक कटु, तिक्त, उष्ण और कर्णशूल, व्रण, गुल्म, शूल एवं नेत्ररोगनाशक है। (राजनिघण्टु)

२ महादेवकी जटा।

कपर्दकरस (सं॰ पु॰) रक्तपित्त अधिकारका एक रस। कार्पास-पुष्पके रससे एक दिन मर्दित-मूर्च्छित २ तोले पारद कौड़ीमें भर मुखको बन्द कर दे।

"पुरोडाशकपालेन तुषानुपवपति।"

पुरोडाशाङ्गकपाल द्वारा तुष परित्याग करना चाहिये।

इन दोनों श्रुतियोंमें संशय उठता—पुरोडाशपाक एवं तुषपरित्याग दोनों कपालके प्रयोजक हैं अथवा केवल पुरोडाशपाक। इस संशयसे तो दोनों ही कपालके प्रयोजक होते हैं। क्योंकि एकका प्रयोजकत्व ठहरानेमें कोई विशेष हेतु देख नहीं पड़ता। इसी पूर्वपक्षका सिद्धान्त करते हैं—

"अर्थाभिधानकर्म च भविष्यता संयोगस्य तन्निमित्तत्वात्तदर्थो हि विधीयते।" (मीमांसासू० ४।१।२८)

'अर्थाभिधान' प्रयोजनसम्बन्धमभिधानं तच्च यथा पुरोडाशकपालं इति, पुरोडाशार्थं कपालं पुरोडाशकपालम्। कथमेतदवगम्यते? पुरोडाशस्यात् तद्धितम् अर्थे भाति। येन वर्तमानः सम्बन्धः कपालेन स्यात्, तेनैव हेतुना न भूतः, स एव कपालस्य पुरोडाशेन भविष्यता सम्बन्धः, भविष्यता सम्बन्धस्य तन्निमित्तत्वं भवति। तस्मात् पुरोडाशेन प्रयुक्तं यत् कपालं तेन तुषा उपवपनीयाः—इति एवञ्च सति यदि पुरोडाशाभावे यदा तुषानुपवप्तुं कपालमुपादीयते न तत् पुरोडाशकपालं स्यात्, नचेत्, न तेन तुषा उपवपनीया भवन्ति। तस्मात् न तुषोपवापः कपालानां प्रयोजकः प्रयोजकत्वम् इति'

"पुरोडाशकपालेन तुषानुपवपति" श्रुति वाक्यमें जो पुरोडाशके कपालका अभिधान हुआ, वह प्रयोजन-विशिष्ट पुरोडाश ही प्रयोजन ठना है। जिस समय तुष परित्याग किया जाता, उसी समय पुरोडाश निकल नहीं आता। फिर उससे पूर्व भी पुरोडाश कहां हुआ था! किन्तु पीछे पुरोडाश होगा। अतएव भावी पुरोडाशके साथ कपालका सम्बन्ध इस श्रुतिसे मानना पड़ेगा। भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध उसी वस्तुके निमित्त रहता है। (पुरोडाशरूप भविष्यत् वस्तुका सम्बन्ध वर्तमान कपालमें होता है) पुरोडाश-कपाल शब्दका अर्थ पुरोडाशके लिये आनीत कपाल है। सुतरां शब्द द्वारा ही समझ पड़ता—पुरोडाश कपालका प्रयोजक लगता है, तुषपरित्याग कपालका प्रयोजक नहीं ठहरता। मीमांसादर्शनके मतसे जिस कार्यके लिये जो उपादान किया जाता, वही कार्य उसका प्रयोजक कहाता है। इस स्थलमें पाकके लिये उपादान होनेसे कपालका प्रयोजक पुरोडाश होगा। यदि पुरोडाशके कपालका प्रयोजक होनेका सिद्धान्त ठहरे, तो कहना पड़ेगा—पुरोडाशार्थ आहृत कपालद्वारा तुषका परित्याग चलेगा। फिर जिस यागमें पुरोडाश नहीं रहता, उसमें यदि तुषपरित्याग करनेको कपाल आया करता, तो उसे कोई पुरोडाशका कपाल नहीं कहता। क्योंकि यागमें पुरोडाशका अभाव होनेसे उसके लिये कपालका लाया जाना ठीक नहीं ठहरता। ऐसेसे स्थलमें तो केवल तुषपरित्यागके लिये कपाल आया करता है। अतएव पुरोडाशके लिये न आनेपर कपालसे यज्ञाङ्ग तुष परित्याग करना मना है। यही इस अधिकरणका स्थिरीकृत सिद्धान्त है।

कपालास्त्र (सं० क्लो०) १ अस्त्रविशेष, एक हथियार। २ चर्म, ढाल।

कपालास्थि (सं० क्लो०) समासव्यात शरीरके मध्यका कर्परसदृश एक अस्थि, जिसके बीचकी एक खपड़ेजैसी हड्डी। जानु, नितम्बांस, तालु, गण्ड, शङ्ख और शिरके अस्थिको यह संज्ञा है। (सुश्रुत)

कपालि (सं० पु०) कं ब्रह्म शिवः पालयति, कपाल-इनि। महादेव।

कपालिक (हिं०) कापालिक देखो।

कपालिका (सं० स्त्री०) कपाल-कन्-टाप् अत इत्वम्। १ कर्पर, खपड़ा। २ घटादिका उभय मृत्तिकाखण्ड, घड़ेकी मिट्टीका एक हिस्सा। ३ दन्तरोगविशेष, दांतोंकी एक बीमारी।

"दन्तान्ति दन्तवल्कानि यदा शर्करया सह।
ज्ञेया कपालिका सैव दशनानां विनाशिनी॥" (सुश्रुत)

शर्करा नामक रोगके पीछे दन्तसे सकल शर्करा छूट पड़ते समय वल्क भी दलित हो मिट जाता है। इस रोगका नाम दन्तशर्करा भी है।

विचित्रवादि दन्तरोगमें देखो।

कपालिनी (सं० स्त्री०) कपालिन्-ङीप्। १ दुर्गा। २ नीच जातिकी स्त्री। ब्राह्मणीके गर्भ और धीवरके औरससे उत्पन्न स्त्री कपालिनी कहाती है।

कपाली (सं० पु०) कपालो ऽस्यास्ति, कपाल-इनि। १ महादेव। २ जातिविशेष, एक कौम। यह जाति

धीवरके औरस और ब्राह्मण-कन्याके गर्भसे उत्पन्न है। (पराशरपद्धति) हिन्दीमें इसे कपरिया कहते हैं। ३ योगिविशेष।

"कपाली विन्दुनाथश्च काकचण्डीश्वराह्वयः।" (हठयोगदीपिका)

४ उपासकसम्प्रदायविशेष। कापालिक देखो। (त्रि०) ५ कपालविशिष्ट, खोपड़ीवाला। ६ भाग्यवान्, खुश-बख़्त। (स्त्री०) ७ विड़ङ्ग।

कपालेश्वर (सं० पु०) १ शिव। २ उड़ीसे प्रान्तका एक प्राचीन ग्राम। यह महानदीके उत्तरकूल कटकसे थोड़ी दूर अवस्थित है। यहां कपालेश्वर नामक एक पुरातन दुर्ग खड़ा है।

कपास (हिं०) कार्पास देखो।

कपासी (हिं० वि०) १ कार्पासतुल्य वर्णविशिष्ट, कपासका रङ्ग रखनेवाला, जो रङ्गमें कपासकी तरह देख पड़ता हो। (पु०) २ वर्णविशेष, एक रंग। यह रंग कपासके फूलसे मिलता और हलका पीला रहता है। हरिद्रा, पलाशपुष्प एवं शुष्क आम्रफलके संयोगसे इसे बनाते हैं। कहीं कहीं हरसिंगारसे भी यह तैयार होता है। कपासी रंग देखनेमें बहुत सुहावना लगता है।

(स्त्री०) ३ वातामवृक्ष विशेष, बादामका एक पेड़। इसे मोटिया कहते हैं। कपासीका आकार-प्रकार समान रहता है। काठ पाटल निकलता और पीठ तथा फलक बनानेमें लगता है। फल भक्ष्य पदार्थ है। कपासीको प्रायः लोग मोटिया-बादाम कहते हैं।

कपि (सं० पु०) कपि-इ नलोपश्च। कुम्बिकम्पिभ्यो नलोपश्च। उण् ४।१४४। १ वानर, बन्दर। २ हस्ती, हाथी। ३ करञ्जविशेष, किसी क़िस्मका करोंदा। ४ सिह्लक, शिलारस। यह एक गन्धद्रव्य है। ५ सूर्य, आफताब। ६ मधुसूदन। ७ आम्रातक, आमड़ा। ८ शूक-शिम्बी, केवांच। ९ वराह। १० पिङ्गलवर्ण। ११ रक्त-चन्दन। १२ आमलकी। (त्रि०) १३ पिङ्गलवर्ण-युक्त, भूरा।

कपिकच्छु (सं० स्त्री०) कपीनामपि कच्छूर्यस्याः, बहुव्री०। शूकशिम्बी, केवांच, कौंछ, करेंच, वानरी, मर्कटी।

कपिकच्छुफल (सं० क्ली०) शूकशिम्बीका बीज, केवांचका तुख़्म।

कपिकच्छुफलोपमा (सं० स्त्री०) कपिकच्छुफलस्य उपमा यत्र, बहुव्री०। जतुकालता, पापड़ी।

कपिकच्छुरा (सं० स्त्री०) कपिभ्योऽपि कच्छुं कण्डुं राति ददाति, कपि-कच्छु-रा-क। शूकशिम्बी, केवांच।

कपिकन्दुक (सं० क्ली०) कपि-कदि-उक अतोलोपः, कस्य शिरसः पिकन्दुकं अस्थि वा। मस्तकका अस्थि, खोपड़ा।

कपिका (सं० स्त्री०) कपिवर्णराग इव कायति प्रकाशते कपालात्, कपि-कै-क-टाप्। १ नीलसिन्दुवार वृक्ष, नीला संभाल। २ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़।

कपिकेतन (सं० पु०) कपिर्हनुमान् केतने यस्य, बहुव्री०। १ अर्जुन। "मासपूर्णमिदं यावदसौ कपिकेतनः।" (भारत, आद० ८८ अ०) २ कपिचिह्नित ध्वज, जिस निशानपे बन्दरकी तसवीर रहे।

कपिकेतु, कपिकेतन देखो।

कपिकोलि (सं० पु०) कपीनां प्रियः कोलिः, मध्य-पदलो०। शृगालकोलिका, किसी क़िस्मका बेर।

कपिचूड़ (सं० पु०) कपिचूड़ा देखो।

कपिचूड़ा (सं० स्त्री०) कपीनां चूड़ाइव, उपमि०। आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिचूत (सं० पु०) कपीनां चूत इव सेव्यमति-प्रियत्वात्। १ आम्रभेद, किसी क़िस्मका पौधा। २ आम्रातक, आमड़ा।

कपिज (सं० पु०) कपितो जायते, कपि-जन्-ड। १ सिह्लक, शिलारस, लोबान। (त्रि०) २ वानर-जात, बन्दरसे पैदा।

कपिजङ्घिका (सं० स्त्री०) कपेः वानरस्य जङ्घा इव जङ्घा यस्याः, संज्ञायां कन्। तैलपिपीलिका, तिलचट्टा।

कपिञ्जल (सं० पु०) कपिरिव जवते वेगेन गच्छति कं श्रुतिसुखदं पिञ्जयति वा पृषोदरादित्वात्। १ चातकपक्षी, पपीहा। इसका मांस शीतल, मधुर और लघु होनेमे रक्तपित्त, हृद्रोगविकार एवं मन्द-वातविकारमें लगता है। (चरकसंहिता) कपिञ्जलका मांस हृद्य, रोचक और पटवकके मांससे शीतल होता

है। (राजनिघण्टु) २ तित्तिरिपक्षी, तीतर। इसका मांस सर्वदोषनाशक, धारक, वर्ण-प्रसन्नताकारक और हिक्का, श्वास, तथा वायुरोगनाशक है। गौरतित्तिरि अन्यान्य तित्तिरिकी अपेक्षा अधिक गुणशाली रहता है। (सुश्रुत) कोई कोई काकातूवाको भी कपिञ्जल कहता है। ३ एक ऋषिकुमार। बाणभट्ट-रचित कादम्बरी उपाख्यानमें यह श्वेतकेतु ऋषिके पुत्र और पुण्डरीकके इष्टकी भांति वर्णित हैं। ४ शिलारस, लोबान।

कपिञ्जलन्याय (सं० पु०) बहुत्वके त्रित्व संख्यामें पर्यवसित किये जानेका-न्याय, जिस तरीकेमें तीनसे ज्यादा अदद होने भी अददपर खतम करें। वेदमें एक श्रुति है—

"वसन्ताय कपिञ्जलानालभेत्।"

वसन्त यागके निमित्त बहु कपिञ्जल हनन करें। इस श्रुतिसे प्रथम दृष्टिमें स्पष्ट समझ नहीं पड़ता—कितने कपिञ्जल हननका विधि लगता है। क्योंकि त्रित्वसे परार्द्धत्व पर्यन्त सकल संख्यापर बहुत्व चलता है। जैमिनिके "प्रथमोपस्थितपरित्यागे प्रमाणाभावात्" सूत्रको देखते इस स्थलपर 'बहुत्व'से वैदिक तात्पर्य 'त्रित्व' निकलता है। फिर ऐसा न समझनेसे वेदपर अप्रामाण्यापत्ति आती है। क्योंकि 'त्रित्व'से 'परार्धत्व' पर्यन्त सकल संख्यामें 'बहुत्व' रहते लोग यह ठहरा न सकनेसे निश्चय वेदपर प्रवृत्तिशून्य हो जायेंगे—'बहु कपिञ्जल'से कितने कपिञ्जल आयेंगे। मीमांसाकारने इस विरोधकी अच्छी मीमांसा देखायी है—

"त्रित्वोपस्थितेरल्पत्वात्।" (मीमांसासू०)

त्रित्वकी उत्पत्ति होनेपर त्रित्वके साथ एकत्वके ज्ञानद्वारा चतुष्ट निकलता है। सुतरां चतुष्ट प्रभृति संख्या निकलनेसे पहले नियमतः त्रित्वका अस्तित्व मानना पड़ता है। यही कारण है—त्रित्व संख्यामें ही वेदबोध्य बहुत्व पर्यवसन्न है। अर्थात् वेदमें जिस स्थलपर बहुत्व आवेगा, उस स्थलपर प्रथमोपस्थितत्वसे त्रित्व लिया जायेगा। जिनके मतमें त्रित्वविशिष्ट एकत्वज्ञान चतुष्टका कारण नहीं ठहरता, उनके मतसे भी त्रित्वमें ही बहुत्वका पर्यवसान मानना पड़ता है। उनके मतमें एकत्वत्रय विषयक ज्ञान त्रित्व और एकत्व चतुष्टय विषयक ज्ञान चतुष्टका कारण है। सुतरां त्रित्वके अन्तर्गत चतुष्टमें बहुत्वके कारण एकत्वका लाघव होगा। यदि चतुष्टादि संख्यामें भी बहुत्व मान जाये, तो एकत्व चतुष्टय ज्ञान चतुष्टका कारण ठहरते गौरव पाये। एकत्व चतुष्टय ज्ञानमें लघुत्व रहता है। इसलिये त्रित्वमें ही वेदबोध्य बहुत्वका पर्यवसान है। फिर ऐसा होनेपर बहुत्व समझना दुःसाध्य न लगेगा। यदि बहुत्वका ज्ञान आ जायेगा, तो बहुकपिञ्जलके हननमें प्रवृत्तिका दूसरा अप्रामाण्यरूप बाधा न आयेगा। सुतरां वेदके अप्रामाण्यकी शङ्का उठ नहीं सकती।

कपिञ्जला (सं० स्त्री०) शालिधान्यविशेष, एक धान। यह श्लेष्मकरी होती है। (अत्रिसंहिता)

कपितैल (सं० क्ली०) शिलारस, लोबान।

कपित्व (सं० क्ली०) कपिका भाव, रीस, हिर्स।

कपित्थ (सं० पु०) कपिस्तिष्ठति फलप्रियत्वात् यत्र, कपि-स्था-क पृषोदरादित्वात् सलोपः। १ स्वनामख्यात वृक्ष, कैथेका पेड़। यह मधुर, अम्ल, कषाय, तिक्त, शीतल, लघु, संग्राही एवं वातल और पित्त, अनिल, तथा व्रणघ्न होता है। फिर आमकपित्थ अम्ल, उष्ण, ग्राही, वातल, जिह्वाजाड्यकर, त्रिदोषवर्धन, रोचक और कफ एवं विषघ्न है। पक्व कपित्थ मधुर, अम्लरस तथा गुरु, और दीपक, श्वास, वमि, श्रम, हिक्कारोग तथा क्षमङ्कर होता है। (राजनिघण्टु)

कपित्थका संस्कृत पर्याय—दधित्थ, ग्राही, मन्मथ, दधिफल, पुष्पफल, दन्तशठ, कपित्थ, मालूर, मङ्गल्य, नीलमल्लिका, ग्राहिफल, चिरपाकी, ग्रन्थिफल, कुचफल, कपीष्ट, गन्धफल, दन्तफल, करभवल्लभ, काठिन्यफल और करण्डफलक है।

इस वृक्षकी हिन्दीमें कैथा, महाराष्ट्रमें कौयत्, दक्षिणीमें कवित, मलयमें वेलङ्, तामिलमें वेल-मरम्, विलम् वा विलङ्, तैलङ्गमें वेलगाकेलु, कपित्थम् वा पुलि, सिंहलीमें देवल, ब्रह्ममें ग्रन्, श्यामीमें मा-कयेत्, पोर्तगीजमें वलम और अंगरेजीमें उड आपल (Wood apple) कहते हैं। इसका अंग-

ज़ीमें वैज्ञानिक नाम फेरोनिया एलिफाण्टम् (Feronia Elephantum) है।

यह भारतवर्षके नाना स्थानोंमें उत्पन्न होता है। बाग़में इसे लगाया करते हैं। एक एक वृक्ष अतिशय बृहत् होता है। इसका काष्ठ सुदृढ़, स्थायी और देखनेमें ज्यादा रहता है। विशाखपत्तनमें इसके काठसे स्तम्भका निर्माणकार्य चलता है।

भावमिश्र कच्चे कैथेको धारक, कषायरस, लघु और लेखनगुणयुक्त बताते हैं। फिर पक्का कैथा गुरु, अम्लकषायरस, कण्ठशोधक एवं दुष्पच और पिपासा, हिक्का, वायु तथा पित्तनाशक होता है।

कपित्थके पत्रका संस्कृत नाम कपित्थपत्री, फणिज्ज, सुरभिका और क्षोवपत्रिका है। वैद्यशास्त्रके मतसे यह पत्ती तीक्ष्ण, उष्ण और कफ, मेह एवं विषहर होती है।

हकीम कैथेको शीतल, शुष्क, तेजस्कर, तीक्ष्ण, बलकारक, कफनिःसारक, कण्ठशोधमें हितकर और दन्तमूलदृढ़कारक समझते हैं। इसका शर्बत भूक बढ़ाता और तरह-तरहकी बीमारियां घटाता है। पत्र अतिशय तीव्र है। विषाक्त कीटपतङ्गादिके काटनेसे पत्रका कोमलांश वा शस्य दष्ट स्थानमें लगाने पर उपकार पहुंचता है। शस्य न मिलनेसे इसकी छाल कूट-पीस प्रयोग करना चाहिये।

कपित्थसे उत्कृष्ट गोंद निकलता, बम्बई अञ्चलके बाज़ारोंमें बिकता है। दक्षिणाञ्चलमें सब लोग इसे व्यवहारमें लाते हैं। तामिलके कविराज अन्त्रमें एकाएक वेदना उठनेसे कैथेका गोंद प्रयोग करते हैं।

२ हस्त एवं अङ्गुलिका एक विलक्षण संस्थान, हाथों और उंगलियोंकी एक अनोखी सूरत। यह भारतलमें अङ्गुष्ठ और तर्जनीका अग्रभाग मिलानेसे पाता है। ३ कुशद्वीपवाले राजा ज्योतिष्मान्‌के पुत्र। (विष्णु०, २ अंश, ४ अ०) ४ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। (क्लो०) ५ कपित्थफल, कैथेका फल।

कपित्थक (सं० पु०-क्लो०) १ कपित्थ, कैथा। २ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़। ३ अवन्तिका एक स्थान, उज्जैनकी एक जगह।

कपित्थतैल (सं० क्लो०) कपित्थबीजतैल, कैथेके तुख्‌मका तेल। यह तुवर, स्वादु और वायुविनाशक होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

कपित्थत्वक् (सं० क्लो०) कपित्थस्य त्वगिव त्वक् यस्य, मध्यपदलो०। १ एलवालुक, एक खुशबूदार चीज़। २ कैथेकी छाल।

कपित्थपत्रा, कपित्थपर्णी देखो।

कपित्थपर्णी (सं० स्त्री०) कपित्थस्य पर्णमिव पर्णं पत्रं यस्याः, बहुव्री०। वृक्षविशेष, एक पेड़। महाराष्ट्रमें इसे कवटपत्री कहते हैं। इसका संस्कृत पर्याय—विराजा, सुरभा और चित्रपत्रिका है। यह तीक्ष्ण, उष्ण, पाकमें कटु, तुवर एवं रसमें तिक्त और कृमि, कफ, मेद, मेह तथा स्नायुरोगनाशक है।

(वैद्यकनिघण्टु)

कपित्थानी (सं० स्त्री०) कपित्थपत्री, गन्धविरजाका पेड़।

कपित्थाम्र (सं० पु०) आम्रभेद, किसी क़िस्मका आम।

कपित्थार्जक (सं० पु०) श्वेतार्जक, सफ़ेद बबई। २ तुलसीभेद, किसी क़िस्मकी तुलसी।

कपित्थाष्टकचूर्ण (सं० क्लो०) अतीसार रोगका एक वैद्योक्त औषध, दस्तकी एक दवा। अजवायन, पिपरामूल, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेसर, सोंठ, कालीमिर्च, चीता, सुगन्धबाला, कालाजीरा, धनिया तथा सोचर नमक एक-एक भाग एवं इमली, धायके फूल, पीपल, बेलगिरी, अनार तीन-तीन भाग, चीनी ६ भाग और कैथा ८ भाग एकत्र मिला खानेसे अतीसार, ग्रहणी, क्षयरोग, गुल्म, गलरोग, कास, श्वास, अरुचि तथा हिक्कारोग निवारित होता है। (चक्रदत्तसंग्रह ग्रंथ)

कपित्थास्य (सं० पु०) कपित्थवत् गोलाकारं आस्यं मुखं यस्य, बहुव्री०। १ वानरविशेष, एक बन्दर। इसका मुंह कैथे-जैसा गोल होता है। २ मृगविशेष, एक चौपाया।

कपित्थिनी (सं० स्त्री०) कपित्थो ऽस्त्यत्र देशे, कपित्थ-इन्-ङीप्। पुष्करादिभ्यो देशे। पा ५।२।१३५। १ कपित्थवृक्ष

देश, जिस जगहमें कैथेका पेड़ बहुत रहे। २ कपित्थ-पर्णी।

कपित्थास्य (सं० त्रि०) कपित्थ काशादित्वात् इल्। [illegible] (सा ११।१८०) कपित्थयुक्त, कैथासे भरा हुआ।

कपिध्वज (सं० पु०) कपिर्हनुमान् ध्वजे यस्य बहुव्री०। अर्जुन। (भारत, वन १२१ अ०)

कपिनामक (सं० पु०) कपिनामन् स्वार्थे कन्। शिलारस, लोबान्। (वाग्भट)

कपिनामा (सं० पु०) कपेर्नामेव नाम यस्याः बहुव्री०। शिलारस, लोबान।

कपिपिप्पली (सं० स्त्री०) कपिवर्णा रक्ता पिप्पलीव, उपमि०। १ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा। २ वानर-पिप्पली। ३ सूर्यावर्तक्षुप, सूरजमुखी।

कपिप्रभा (सं० स्त्री०) कपिरिव प्रभा निजगुण-प्रकाशो यस्याः, बहुव्री०। १ शूकशिम्बी, केवांच। २ अपामार्ग, लटजीरा।

कपिप्रभु (सं० पु०) कपीनां हनुमदादीनां प्रभुः, ६-तत्। १ रामचन्द्र। २ वालि। ३ सुग्रीव। ४ वानरोंका स्वामी, बन्दरोंका मालिक।

कपिप्रिय (सं० पु०) कपीनां प्रियः, ६-तत्। १ आम्रा-तकवृक्ष, आमड़ा। २ कपित्थवृक्ष, कैथा।

कपिभक्ष (सं० पु०) कपीनां भक्षः, ६-तत्। १ वानरों-का भक्ष्य द्रव्य, बन्दरोंके खानेकी चीज। २ कदली, केला। यह वानरोंका अति प्रिय खाद्य है।

कपिमूल (सं० पु०) पारिशाश्वत्थ, किसी किस्मका पीपल।

कपिरक (सं० पु०) कपिल स्वार्थे कन् लस्य रत्वम्। कपिलवर्ण, पिङ्गलवर्ण, भूरा रंग।

कपिरथ (सं० पु०) कपिर्हनुमान् रथस्य वाहनो यस्य, बहुव्री०। १ रामचन्द्र। २ अर्जुन।

कपिरस (सं० पु०) शिलारस, लोबान।

कपिरसाढ्य (सं० पु०) आम्रातकवृक्ष, आमड़ेका पेड़।

कपिरोमफला (सं० स्त्री०) कपीनां रोमेव रोम-फले यस्याः, मध्यपदलो०। कपिकच्छु, केवांच। इसका फल वानरके लोमकी भांति पिङ्गलवर्ण शूकसे आवृत रहता है।

कपिरोमा (सं० स्त्री०) १ कपिकच्छु, केवांच। २ रेणुका, बालू।